110474

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वर्ष ८ | वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़ १९८४ | मई, जून, जुलाई १९२७ ई० | संख्या १, २, ३

110474

"दिव्य ज्योति"

(श्री पं. वागीश्वर जी विद्यालंकार)

देखूं वही ज्योति इकबार ॥
जिसकी दिव्य छटा से पूरित है यह सब संसार ।
जिसे देख कर खुल जाता है बन्द हृदय का द्वार ॥
जिसकी सुन्दरता के आगे सब सौन्दर्य असार ।
जिसे देख कुछ और देखने का रहता न विचार ॥
वह आ जावे इन नयनों में तुरत पलक दूँ डार ।
बाहर जाने फिर न उसे दूँ मैं बस किसी प्रकार ॥
आँधी उठे, घिरे घनमाला, छा जावे अँधियार ।
किन्तु उसी पर दृष्टि किये मैं जा पहुंचूं उस पार ॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वेद और ज्योतिः सिद्धान्त

(ले०-प्रो० विश्वनाथ जी विद्यालंकार)

सामान्य ज्योति के स्थूल दृष्ट्या वेद में चार विभाग किये हैं।

(१) प्रथम ज्योति तो इस पृथिवी पर रहने वाली है। जाठराग्नि, ओषधि आदिमें रहने वाली अग्नि, वाडवानल (जो समुद्र में रहती है) तथा पृथिवी के गर्भ में रहने वाली अग्नि इसी ज्योति के भिन्न २ रूप हैं। इन में सर्वजन प्रत्यक्ष ज्योति आग ही है। इन्हें वेद में "पार्थिवाग्नि" शब्द से कहा है।

(२) द्वितीय ज्योति अन्तरिक्ष में रहने वाली है। जिस का विशेषतया प्रत्यक्ष वर्षा ऋतु में होता है। इस का निवास स्थान अन्तरिक्ष में रहने वाले जल कण हैं, ऐसा ही वेद में वर्णन आता है। यह भाव (१) अपां मित्रम् (२) अप्सु ते सधिः (३) अप्सु अग्निः (४) अपां नपात् इत्यादिक वैदिक नामों तथा अन्य वर्णनों से प्रतीत होता है। अन्तरिक्ष की इस अग्नि को "वैद्युताग्नि" कहते हैं। जिसका भाव है "विद्युत्रूपी आग"।

(३) तृतीय ज्योति सूर्य है, जो प्रतिदिन प्रातः काल पूर्व दिशा में दर्शन देता है।

(४) चतुर्थ ज्योति से वेद में रात्रि की ज्योति का वर्णन किया है। इस ज्योति में चन्द्र, नक्षत्र तथा तारागण सम्मिलित हैं।

इन सब ज्योतियों का वर्णन ऋग्वेद ३ अष्टक, १ अध्याय, २२ वर्ग, द्वितीय मन्त्र में एक साथ पाया गया है, वह मन्त्र निम्नलिखित है।

"अग्ने ! यत्ते दिवि वर्चः, पृथिव्यां, यदोषधीष्वप्स्वा, यजत्र। येनान्तरिक्ष मुर्वाततन्थ, त्वेषः स भानुर्णवो नृचक्षाः॥

इस मन्त्र में दिवि वर्चः से (१) सूर्य रूप ज्योति का ग्रहण है, यत् पृथिव्यां से (२) पार्थिव अग्नि का, यत् ओषधीषु से भी उसी पार्थिव अग्नि का ग्रहण है, जो कि रूपान्तर से ओषधियों में रहती है, तथा जिन ओषधियों के जलाने से यह पार्थिव अग्नि का रूप धारण कर लेती है। यत् अप्सु अर्थात् जो जलों में निवास करती है, इस से (३) अन्तरिक्ष की विद्युत् का ग्रहण किया है।

"येनान्तरिक्षमुर्वाततन्थ" इस से (४) र्थ ज्योति का ग्रहण है जो कि ज्योति विस्तृत अन्तरिक्ष में चारों ओर व्याप्त है, और रात्रि को जब हम अपनी चक्षु को अन्तरिक्ष में फैंकते हैं, तो बड़ा भारी अन्तरिक्ष जिस चन्द्र, नक्षत्र, तथा तारा मण्डल रूपी ज्योति से सर्वतो व्याप्त प्रतीत होता है।

अर्णवः शब्द से समुद्र में रहने वाली ज्योति का ग्रहण किया है, जिसे संस्कृत में वाडवानल कहते हैं।

इन उपरोक्त ज्योतियों में से पृथिवी, ओषधी और समुद्र में रहने वाली ज्योतियों का ग्रहण पार्थिवाग्नि शब्द से हो सकता

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हैं। क्योंकि पार्थिव अग्नि ही इन तीनों में सर्वजन प्रत्यक्ष होने से प्रधान है। बहुत सम्भव है कि उपरोक्त मन्त्र में यत् पृथिव्यां से पृथिवी के गर्भ में रहने वाली अग्नि का भी ग्रहण हो, जो कि कभी २ ज्वालामुखी पर्वतों के रूप में भी प्रत्यक्ष होती है, जिसे अंग्रेज़ी में "सबटैरेनियन हीट" कहते हैं। किन्तु इस विषय में, यतः कोई स्पष्ट प्रमाण नहीं मिला, अतः यह बात विवादास्पद अवश्य है।

इस प्रकार हमने देख लिया कि वेद में ज्योति के चार मुख्य भाग किये गये हैं। इन चारों में चन्द्र, नक्षत्र तथा तारा गण की ज्योति को भी द्युलोक की ज्योति में शामिल कर लेते हैं। इस लिये वेद में बहुत स्थानों पर त्रिज्योति का ही वर्णन है।

तीनों ज्योतियों का सामान्य कारण

इस प्रकार द्युलोक, अन्तरिक्षलोक तथा भूलोक की ज्योतियों के वर्णन के पश्चात् हम इस प्रश्न पर आते हैं कि "क्या ये तीनों ज्योतियां एक दूसरे से अत्यन्त भिन्न हैं या सामान्यकारण रूप से अत्यन्त भिन्न नहीं। जिस प्रकार जल, भाप और बर्फ़ यद्यपि नाम रूप से भिन्न हैं, किन्तु जल रूप से सब अभिन्न हैं। या घड़ा, मटका, कसोरा, दीवा ये नाम रूपसे तो एक दूसरे से भिन्न हैं, किन्तु मट्टी रूपसे सब एक हैं। इसी प्रकार क्या द्युज्योति, अन्तरिक्षज्योति तथा भूज्योति केवल नाम रूप से भिन्न होती हुई भी, किसी सामान्यकारण के रूप से एक हैं? या लोहा चाँदी और कोयले की तरह सर्वथा ही एक दूसरे से भिन्न हैं। दूसरे शब्दों में हम इस प्रश्न को इस रूप में भी रख सकते हैं कि "क्या अनादि काल से ही ये तीनों ज्योतियां एक दूसरे से नितान्त विलक्षण हैं, या ये तीनों किसी एक सामान्यकारण के कार्य हैं।

वेद और इस प्रश्न का हल

(१) ऋ० ३। १। २२। २ में कहा गया है कि द्युलोक, अन्तरिक्ष लोक तथा भूलोक की ज्योतियों का कारण एक है और उस सामान्य कारण का नाम अग्नि है।

(२) ऋ० ७। ८। २८। १ मन्त्र निम्न-लिखित है:—

दिवस्परि प्रथमं जज्ञे अग्निः, अस्मद् द्वितीयं परि जातवेदाः। तृतीय मप्सु नमणा अजस्रमिन्धानः एनं जरते स्वाधीः॥

इस का अभिप्राय यह है कि अग्नि ने प्रथम द्युलोक में आदित्य का रूप धारण किया। तदनन्तर पार्थिव अग्नि तथा वैद्युत अग्नि का। इस वर्णन में भी तीनों ज्योतियों का एक सामान्य कारण बताया गया है, जिस को अग्नि शब्द से कहा है।

(३) दुर्गाचार्य, नैगम काण्ड, अध्याय ४, खंड २४, शब्द ५२ में लिखते हैं यथा:—

"अयमेक एव त्रिषु स्थानेषु जायते"

इस का अर्थ यह है कि यह सामान्यकारण अपने रूप से एक ही हैं, किन्तु तीन ज्योतियों में परिणत होता है।

(४) ऋ० ६। ३। ३६। १६ का मन्त्र निम्न लिखित है:—

"अग्निर्मूर्धा, दिवः ककुत्, पतिः पृथिव्या अयम्। अपां रेतांसि जिन्वति"

अर्थात् अग्नि सब से श्रेष्ठ है। द्युलोक में सूर्यरूप से बढ़ा हुआ भाग अग्नि ही है। तथा

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पृथिवी का पति जो आग है, वह भी अग्नि ही है। तथा अन्तरिक्ष में जलों का सारभूत जो विद्युत् है वह भी अग्नि का रूपान्तर ही है। इस वर्णन से भी उपरोक्त बात ही सिद्ध होती है।

(५) दुर्गाचार्य निरुक्त, दैवतकाण्ड, अध्याय ७, खंड २६ में लिखते हैं:—

"एक मेवेदं ज्योतिः ज्योतिष्ट्वाविशेषात्। तत्पुनरेत ज्जगदयात्रासिद्धये त्रिधा विभक्तं पृथिव्यामन्तरिक्षे दिवि च। विभक्ताभिधानं सम्पद्यते अग्निर्विद्युदादित्य इति॥

अर्थात्-ज्योति वास्तव में एक ही है। वही तीन रूपों में परिणत हो कर, पृथिवी, अन्तरिक्ष और द्युलोक में रहती है। उन परिणत रूपों का नाम अग्नि, विद्युत् और सूर्य है।

(६) ऋ० २। ३। १४ में निम्न लिखित मन्त्र आया है:—

"अस्य वामस्य पलितस्य होतुः, तस्य भ्राता मध्यमोऽस्त्यग्निः, तृतीयोभ्राता घृतपृष्ठो अस्यात्रापश्यं विश्पतिं सप्तपुत्रम्॥

इस मन्त्र में सूर्य, विद्युत्, और अग्नि को एक दूसरे का भाई कहा है। यह भाई शब्द इन के एक सामान्यकारण को सूचित करता है, जिस के कि ये तीनों पुत्रस्थानापन्न हैं।

इस प्रकार हमें ज्ञात हुआ कि वेद में इन तीनों ज्योतियों को एक दूसरे से सर्वथा भिन्न नहीं माना, किन्तु वेद के मन्तव्य के अनुसार इन सब में एक सामान्यरूप अनुस्यूत है, जो वास्तव में इन तीनों रूपों का कारण है। और इस सामान्यकारण को वेद में अग्नि शब्द से पुकारा गया है।

सामान्य कारण का स्वरूप

अब हम इस प्रश्न पर आते हैं कि इस सामान्य कारण का स्वरूप क्या है। क्या यह सामान्य कारण शक्तिस्वरूप है या द्रव्य स्वरूप?। इस प्रश्न का उत्तर लेनेके लिये हमें वेद में से ऐसे मन्त्रों को ढूंढना चाहिये जिन में इन तीन ज्योतियों की उत्पत्ति बताई गई हो। निम्न मन्त्रों में इस पार्थिव अग्नि के विशेषण निम्नलिखित हैं—

(i) सहसः पुत्रः। ऋ० २। ५। ३८। ६
(ii) सहसः सूनो। ऋ० ६। ५। ३५। ३
(iii) सहसो यहो। ऋ० १। ५। २७। ४
(iv) सहस्कृत। ऋ० ६। ३। ३८। ११
(v) ऊर्जोनपात्। ऋ० ६। ३। ३९। १३
(vi) सहसा जायमानः। ऋ० १। १५। ९६। १
(vii) ऊर्जः पुत्रम्। ऋ० १। १५। ९६। ३

इन सब विशेषणों का अर्थ है "बल से पैदा हुआ, या बल का पुत्र"। कई मन्त्रों में यह भी वर्णन आता है कि यह पार्थिव अग्नि मंथन करने से या एक पदार्थ को दुसरे पदार्थ पर रगड़ने से पैदा होती है। अतः वेद के मन्तव्य के अनुसार पार्थिव अग्नि का कारण बल अर्थात् शक्ति है।

विद्युत् का कारण

अब हम यह देखना चाहते हैं कि विद्युत् का कारण वेदानुसार द्रव्य है या शक्ति।

ऋ० ८। ३। ४। ५ वाँ मन्त्र निम्न लिखित है, जो कि विद्युत् का वर्णन करता है।

अश्वादियायेति यद्वदन्त्योजसोजात मुतमन्य मनम्।
मन्योरियाय हर्म्येषु तस्थौ यतः प्रजज्ञे इन्द्रो अस्य वेद"

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

इस मन्त्र में विद्युत् के विषय में कहा है ओजसो जातम्"। इस का अर्थ है बल से पैदा हुआ। इस पर दुर्गाचार्य लिखते हैं।

कुतश्चिदति महतो बलराशेः जातम्।"

इसका अर्थ यह है कि विद्युत् (जो अन्तरिक्ष में है) बड़ी बल की राशि से पैदा हुई है। इस वर्णन से भी प्रतीत होता है कि विद्युत् के पैदा करने का कारण भी शक्तिरूप है न कि द्रव्य रूप।

सूर्य की उत्पत्ति का कारण

ऋ० ३।१।१७।५ में विद्युत् के वर्णन में निम्नलिखित शब्द आए हैं "द्वितीया च सत्ता"। इस पर निरुक्त, नैगम कांड, अध्याय ५, खंड ३, शब्द १९ पर यास्काचार्य लिखते हैं-

"द्वैधं सत्ता, मध्यमे च स्थाने, उत्तमे च"

अर्थात् विद्युत् की सत्ता दो स्थानों में है, एक अन्तरिक्ष में तथा द्वितीय द्युलोक में। इस पर दुर्गाचार्य लिखते हैं-

"मध्यमे च स्थाने विद्युद्भावेन, उत्तमे च स्थाने सूर्य भावेन" अर्थात् अन्तरिक्ष लोक में तो विद्युत् विद्युत् रूप से ही रहती है, परन्तु द्युलोक में सूर्य रूप से रहती है। इस वर्णन से स्पष्ट प्रतीत होता है कि सूर्य के तेज का कारण विद्युत् ही है। जब विद्युत् का कारण शक्ति है तो सूर्य का कारण शक्ति स्वतः सिद्ध है। अतः वेद द्वारा यह सिद्धान्त अत्यन्त पुष्ट है कि तीनों ज्योतियों का सामान्य कारण शक्ति रूप है, न कि द्रव्य रूप, और वेद में इस सामान्य शक्ति को भी अग्नि शब्द से सूचित किया है।

परस्परोत्पाद्योत्पादकभाव

ज्योतिः सिद्धान्त का सबसे आवश्यक प्रश्न अभी अवशिष्ट है। वह यह कि इन ज्योतियों में प्रत्येक ज्योति, अन्य ज्योति के रूप में परिणत होसकती है या नहीं ?। अर्थात् क्या सूर्य-ज्योति से पार्थिव-ज्योति-और वैद्युत्-ज्योति; या वैद्युत्-ज्योति से पार्थिव-और सूर्य-ज्योति; या पार्थिव ज्योति से अन्य ज्योतियाँ पैदा हो सकती हैं या नहीं ?। यह प्रश्न बहुत महत्व का है। अब हमें देखना चाहिए कि वेद इस प्रश्न के बारे में क्या सम्मति रखते हैं।

विद्युत से पार्थिव ज्योति की उत्पत्ति

निरुक्त दैवतकाण्ड, अध्याय ८, खण्ड २ में द्रविणोदा शब्द पर विचार करते हुए यास्काचार्य लिखते हैं—

"तत्को द्रविणोदा इन्द्र इति क्रौष्टुकिः अथा प्यग्निं द्राविणोदस माह, एष पुनरेतस्मात् जायत इति"।

इसका अर्थ यह है कि क्रौष्टुकि आचार्य के मत में द्रविणोदा शब्द से विद्युत् लेनी चाहिये। क्रौष्टुकि आचार्य द्रविणोदा पद से विद्युत् अर्थ लेने में कारण यह देते हैं कि इस पार्थिव अग्नि के लिये वेद में "द्राविणोदस" शब्द आया है। और द्राविणोदस का अर्थ है, "द्रविणोदा से पैदा हुआ"। यतः पार्थिव अग्नि, विद्युत् से पैदा होती है, अतः विद्युत् का नाम ही द्रविणोदा होना चाहिए। इस प्रकार क्रौष्टुकि आचार्य के मतानुसार हमें यह प्रतीत होता है कि प्राचीन आर्यों को यह ज्ञात था कि पार्थिव-अग्नि विद्युत् से भी पैदा हो सकती है। क्रौष्टुकि आचार्य अपने मत की पुष्टि में एक वेद मन्त्र भी पेश करते हैं, जो कि निम्नलिखित है—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

"यो हत्वाहिमरिणात्सप्तसिन्धून्यो गा उदाजदपधा बलस्य। यो अश्मनोरन्तर्ऋग्निं जजान संवृक् समत्सु स जनास इन्द्रः"। ऋ. २। ६। ७। ३॥

इस मन्त्र का अभिप्राय यह है कि जो अन्तरिक्ष के मेघ को काट कर, उसमें से जलों को नीचे की ओर बहाता है, वह विस्तृत द्यावापृथिवी में अग्नि को भी पैदा करता है। इस वर्णन से स्पष्ट है कि विद्युत् को ही यहाँ पार्थिव अग्नि का कारण बताया गया है। क्योंकि वही अन्तरिक्ष में मेघों को छिन्न भिन्न कर वर्षा का कारण होता है। दुर्गाचार्य भी इसपर लिखते हैं—

"एष पुनः अग्निः एतस्मादिन्द्रात् जायत इति"।

अर्थात् यह पार्थिव अग्नि इस विद्युत् से पैदा होती है।

(२) इसी प्रकार यजुर्वेद अ० १२, मन्त्र ३६ भी इसी बात की पुष्टि करता है। वह मन्त्र निम्नलिखित है—

"अप्सु अग्ने! सधिष्टव सौषधीरनुरुध्यसे, गर्भे सन् जायसे पुनः"।

इस पर महीधर लिखता है—

"अप्सु जलेषु तव सधिः स्थानं; स त्वमोषधीः यवाद्याः अनुरुध्यसे, ओषधि परिणाम मनु परिणमसे किञ्च गर्भे अरण्ययोर्मध्ये स्थितः सन् पुनर्जायसे"।

इस वेद मन्त्र का तथा महीधर का अभिप्राय यह है कि अग्नि जिसका कि स्थान जल है वह अर्थात् विद्युत् रूप अग्नि ही ओषधियों में रूपान्तर से विद्यमान है। तथा वही विद्युत् जो कि रूप बदल कर ओषधियों में रहती है ओषधियों के जलाने पर पार्थिव अग्नि का रूप धारण कर लेती है। इस वर्णन से भी यह प्रतीत होता है कि वेदानुसार पार्थिव अग्नि का कारण विद्युत् है। हां पूर्व मन्त्र में तो विद्युत् को पार्थिव अग्नि का साक्षात् कारण कहा था, परन्तु इस मन्त्र में साक्षात् नहीं प्रत्युत परम्परया विद्युत् को पार्थिव अग्नि का कारण बताया है।

पार्थिव अग्नि का कारण सूर्य

निरुक्त दैवतकाण्ड में वैश्वानर शब्द पर यास्काचार्य ब्राह्मण ग्रन्थों में से निम्न-लिखित वाक्य उद्धृत करते हैं।

"देव सवितरेतं त्वा वृणते ऽग्निहोत्राय सह पित्रा वैश्वानरेण"।

इस पर यास्काचार्य टिप्पणी चढ़ाते हैं "इममेवाग्निं सवितार माह सर्वस्य प्रसवितारं मध्यमं वोत्तमं वा पितरम्"।

अर्थात् पार्थिव अग्नि को सविता शब्द से कहा है। विद्युत् तथा सूर्य को इस पार्थिव अग्नि का उत्पादक कहा है। इस से यह बात स्पष्ट है कि पार्थिव अग्नि का उत्पादक सूर्य भी वेदाद्यभिमत है।

इस प्रकार हमें ज्ञात हुआ कि वेद में पार्थिव अग्नि की उत्पत्ति विद्युत् से बताई गई है, और सूर्य्य से भी। इस सिद्धान्त की पुष्टि के लिये यास्काचार्य ने निरुक्त में निम्नलिखित शब्दों में एक बहुत रोचक परीक्षण भी दिया है।

अयमेवाग्निः वैश्वानर इति शाकपूणिः। विश्वानरावेते उत्तरे ज्योतिषी, वैश्वानरोऽयं यताभ्यां जायते। कथंन्वेताभ्यां जायतेः—यत्र वैद्युतःशरणमभि

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हन्ति यावदनुपक्तो भवति मध्यमधर्मैव तावद्वृति, उदकेन्धनः शरीरोपशमनः, उपादीयमान एवायं सम्पद्यते उदकोपशमनः शरीरदीप्तिः। "अथादित्यादुदीचीप्रथमसमावृत्ते आदित्ये कांसं वा मणिं वा परिमृज्य प्रतिस्वरे यत्र शुष्कगोमयमसंस्पृशन् धारयति तत् प्रदीप्यते, सोऽग्नेय सम्पद्यते"

इस संस्कृत का भाषानुवाद न करते हुए, इसका केवल भाव मात्र उपस्थित करता हूं। इन वाक्यों में प्रथम तो यास्काचार्य ने यह सिद्ध किया है कि पृथिवी पर रहने वाली विद्युत् तथा अन्तरिक्ष में रहने वाली विद्युत् में कई समानताएँ हैं। यह परीक्षण बेन्जमिन फ्रैंङ्कलिन ने भी किया था। उसके बाद यास्काचार्य कहते हैं कि जब यह सिद्ध होगया कि पृथिवी की विद्युत् तथा अन्तरिक्ष की विद्युत् समान कार्य करती है, तो चूंकि पृथिवी की विद्युत् का जब हम उपादान करते हैं अर्थात् इसे अपने कार्यों में प्रयुक्त करते हैं तो यह आग का रूप धारण कर लेती है, इससे हम अनुमान करते हैं कि अन्तरिक्ष की विद्युत् भी इस पार्थिव अग्नि का रूप धारण कर सकती है। इस परीक्षण द्वारा बहुत बुद्धिमत्ता से यास्काचार्य ने विद्युत् को पार्थिव अग्नि का कारण सिद्ध किया है। द्वितीय परीक्षण में यास्काचार्य इस पार्थिव अग्नि का सूर्य से भी पैदा होना सिद्ध करते हैं। मैं यहाँ उनके इस परीक्षण का आशय मात्र उपस्थित करता हूँ। वे कहते हैं— "जब सूर्य अपनी प्रखर किरणों के साथ विद्यमान हो, या अन्तरिक्ष में बादल या कोहरा न हो। उस समय यदि बिलकुल साफ़ कांसी के पात्र को लेकर सूर्य की किरणों के सामने रखें और उस कांसी के पात्र के Focus या केन्द्र में जहाँ पर किरणें आकर इकट्ठी हों सूखा गोबर रखें, तो गोबर में आग लग जायगी। इस परीक्षण में कांसी के पात्र द्वारा सूर्य की किरणें एक बिन्दु पर इकट्ठी होजाती हैं, और इस प्रकार उनमें ताकत बढ़ जाती है, और इस लिए सूखा गोबर या सरकण्डा जल उठता है। क्या ही बुद्धिमत्ता से यास्काचार्य ने इस वैदिकसिद्धान्त की पुष्टिकी है कि यह पार्थिव अग्नि सूर्य से भी पैदा हो सकती है।

नोट्— इस परीक्षण में विचार यह उपस्थित है कि कांसी का बर्तन किस आकार का होना चाहिये। जिन्होंने आजकल के विज्ञान में कुछ भी प्रवेश किया है, वे जानते हैं कि यदि घड़े के ऊपर के भाग तथा पार्श्व के भागों को तोड़ दिया जाय, तो जो निचला भाग (जिसके कि पार्श्व चारों ओर से कुछ ऊपर उठे हुए हों) रह जावेगा, ठीक उसकी शकल का यह कांसी का पात्र होना चाहिये, नहीं तो किरणें इकट्ठी एक केन्द्र में नहीं हो सकतीं, और न परीक्षण ही सिद्ध हो सकता है।

२. इसी उपरोक्त सिद्धान्त की पुष्टि यास्काचार्य ने एक और परीक्षण से भी की है। उस परीक्षण में कांसी के बर्तन के स्थान में "मणि" का प्रयोग किया है। "कांस्यं वा मणिं वा"। यह मणि वह है, जिसमें से सूर्य की किरणें आर-पार गुज़र कर मणि के दूसरे ओर एक केन्द्र में इकट्ठी होजाती हैं, और इस प्रकार किरणों के इकट्ठे हो जाने से उनमें ताकत बढ़ जाती है, और दूसरी ओर पड़ी हुई दाह्य वस्तु जल उठती है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

इस मणि की रचना पर यदि हम विचार करना चाहें तो हमारी कल्पना में यह आज कल के पाश्चात्य विज्ञान में Lens का प्रति रूप है। और उन Lenses में से भी यह यास्काचार्य का Lens वह है जो मध्य में मोटा तथा पार्श्वों में पतला होता है जिसे संस्कृत में उन्नतोदर और अँग्रेजी में Convex कहते हैं। इन Lenses का वर्णन अन्य संस्कृत साहित्य में भी आता है, पर स्थान के पर्याप्त न होने से मैं उनका वर्णन यहाँ नहीं कर सकता। परन्तु न्यायदर्शन का प्रमाण उद्धृत कर देना आवश्यक समझता हूँ। इस सम्बन्ध में न्यायदर्शन अ० ३, आन्हिक १, सूत्र ४७ निम्नलिखित है—

स्फटिकान्तरितेऽप्यादित्यरश्मेः दाह्येऽविघातात् ॥

इसमें भी यही बताया है कि सूर्य की किरणें स्फटिक में से गुज़र कर दूसरी ओर पड़ी दाह्य वस्तु को जला देती हैं। यह स्फटिक भी Lens के सिवाय अन्य कोई वस्तु नहीं।

विद्युत् सूर्य्य से पैदा होती है

इस सम्बन्ध में एक भाग शेष रह गया वह यह कि विद्युत् का कारण वेद में क्या बताया है। वेद के आलोचन से विद्युत् के तीन कारण प्रतीत होते हैं—

१. जल के कणों की परस्पर रगड़।

२. जल के कणों की वायु के साथ रगड़।

३. सूर्य की किरणों की वायु के साथ रगड़।

विद्युत् के इन तीन कारणों में से पहले दो कारणों को पाश्चात्य विज्ञानवेत्ता भी मानते हैं, परन्तु तीसरे कारण पर अभी तक पर्याप्त परीक्षण नहीं हुए। स्थान अल्प होने की वजह से मैं प्रथम दो कारणों को वेद द्वारा प्रमाणित नहीं करना चाहता। किन्तु अन्तिम कारण के विषय में कुछेक प्रमाण आपके सम्मुख उपस्थित करता हूं।

१. ऋ० ४। ८। २५। १ का निम्नलिखित मन्त्र स्मरणीय हैं—

"वड़ित्था महिमा वां मित्रा्ग्नी पनिष्ठ आ समानो वां जनिता युवं यमा विहेह मातरा"

इस पर दुर्गाचार्य जी लिखते हैं—

"वां समानो जनिता, जनयिता सूर्यः। तौ युवा मेवं कृत्वा, एक पितृकौ, एक जन्मानौ "यमौ भ्रातरौ।" "इह २ मातरा" इह च पृथिवी लोके, इह च अन्तरिक्षलोके अवस्थितौ 'मातरौ' सर्वस्य लोकस्य निर्माण कर्त्र्यौ। एवमिह मंत्रे पितृत्वेन सूर्यो व्यपदिष्टः। इन्द्राग्नी यमौ इति यम शब्देन मध्यम स्थानपृथिवी स्थानयो र्ग्रहणम्।

इसका अभिप्राय यह है कि पार्थिव अग्नि तथा मध्यम अग्नि अर्थात् विद्युत्, ये दोनों सूर्य की किरणों से पैदा होते हैं।

२. दूसरा मन्त्र ऋ० ४। ५। १०। ४ का है। यथाः—

"अपामुपस्थे महिषा अगृभ्णत विशो राजानमुपतस्थु र्ऋग्मियम्। आदूतो अग्निमभरद्विवस्वतो वैश्वानरं मातरिश्वा परावतः।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

इसका भाव यह है कि अन्तरिक्ष लोक में जहाँ कि जल उपस्थित हो, वायु द्वारा सूर्य की किरणें विद्युत् का रूप धारण कर लेती हैं।

३. महर्षि दयानन्द ऋग्वेदके निम्नलिखित मन्त्र पर भाष्य करते हुए भी इस सिद्धान्त की पुष्टि करते हैं। वह मन्त्रनिम्नलिखित है—

"त्वामग्ने ! पुष्करादध्यथर्वा निरमन्थत, मूर्ध्नो विश्वस्य वाघतः।"

इस मन्त्र का भाव ऋषि निम्नलिखित शब्दों में बताते हैं।

"जैसे पदार्थ विद्या के जानने वाले जन सूर्य आदि के समीप से, बिजुली को ग्रहण करके कार्यों को सिद्ध करते हैं, वैसे ही आप लोग भी सिद्ध करो"।

इस प्रकार इस लेख * में वेद में ज्योति के सम्बन्ध में कुछेक सिद्धान्त मैंने उपस्थित किये हैं। अवसर मिलने पर और सिद्धान्त भी उपस्थित किये जायँगे।

* यह लेख गुरुकुलीय साहित्य परिषद् की ओर से सन् १९१५ के गुरुकुलोत्सव के समय पर पढ़ा गया था।

अम्बे !

श्री केदारनाथ मिश्र गौड़ "प्रभात"

अम्बे ! तेरे चरणों की-
शीतल-छाया में शयन करूँ।
तेरी तन्त्री के तारों में,
स्वीय मूक-संगीत भरूं ॥१॥

दिनभर घूम-घूम कर वन-वन,
कर संकलित सुमन सुन्दर।
सन्ध्या को तेरे चल-अंचल में
सादर सस्नेह धरूँ ॥२॥

लीन अनवरत विश्व-खेल में,
धूलि-धूसरित होने पर।
तेरे मृदु-मुस्कान-मयूषों से,
अपनी विश्रान्ति हरूं ॥३॥

मैं तो एक अकिञ्चन हूँ माँ !
तेरी इच्छा पर निर्भर।
ज़रा सहारा दे दे तो,
माया-सागर से शीघ्र तरूँ ॥४॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वैदिकेश्वरवाद

(ले०-श्री पं० लोकनाथ जी आर्योपदेशक, पिण्डदादनखाँ)

जब से संसार के मनुष्य समुदाय ने इस सृष्टि के आरम्भ काल में प्राणिमात्र के कल्याणार्थ अग्नि-वायु-आदित्य तथा अङ्गिरः नामक आदि-ऋषियों के द्वारा वितरण किए गये ऋग्-यजुः-साम-अथर्वन्-रूप ईश्वरीय ज्ञान वेद में वर्णित परमात्मा के वास्तविक स्वरूप को भूल कर मनोविनोद के लिए महाप्रभु के कल्पित नानारूप तथा व्यवहार मानने प्रारम्भ कर दिए हैं, तब से ही जगतीतल पर साम्प्रदायिक संग्राम का अभिनय खेला चला जारहा है, । विस्पष्ट शब्दों में यह कह देना सर्वथा उचित प्रतीत होता है कि विभिन्न मत मतान्तरों में जो धार्मिक संघर्ष हो रहा है, उस का मूल कारण परमेश्वर ही है। इन शब्दों को कर्ण कटु तथा उच्छृंखलता पूर्ण भले ही कहा जाय किन्तु इन की सत्यता में सन्देह नहीं किया जा सकता। क्यों ? इस लिए कि यदि ईश्वर वादी आस्तिकों के साथ अनीश्वरवादी नास्तिकों का विवाद चलता है जो उस में भी ईश्वर का होना-न होना तथा सृष्टि का कर्त्तृत्व -अकर्त्तृत्व ही विवाद के कारण भूत हैं। ईश्वर वादियों की भी जो अनेक शाखायें हैं, उन में से एक का यह विचार है कि एक ही अद्वितीय ब्रह्म है उसी से ऊर्णनाभ कृमि के तन्तु जाल की भाँति निखिल जगजञ्जाल उत्पन्न होकर पुनः उसी ही ब्रह्म में लय हो जाया करता है, यही सृष्टि की उत्पत्ति और विनाश है, इस के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है। एक शाखा विशिष्टाद्वैत अर्थात् प्रकृति रूप विशेषण वाले ब्रह्म के अद्वयत्व का प्रतिपादन करती एक है। शाखा द्वैतवाद के द्वारा ब्रह्म से जीवात्मा का पृथक्त्व स्वीकार करती है। इसी प्रकार विशुद्धाद्वैत तथा द्वैताद्वैत आदि विचारों को मानने वाली ईश्वर वादियों की अनेक शाखायें हैं। इस अनेकता के अतिरिक्त अन्य भी अवान्तर बहुत्व उपस्थित है, कुछ लोग प्रकृति पूजा से ब्रह्म प्राप्ति मानते हैं तो कुछ लोग हृदयाकाश में ब्रह्म का साक्षात्कार करना ठीक समझते हैं, इत्यादि सब विवाद ईश्वर विषयक ही हैं । इस विस्तृत जगड्वाल को छोड़ कर केवल इतना कह देना ही पर्याप्त प्रतीत होता है, कि यह समग्र विवाद उस अन्ध समुदाय की भाँति है, जो चक्षु रहित होने से हस्ति के वास्तविक स्वरूप को न देखते हुए पारस्परिक विवाद बढ़ा कर एक दूसरे पर लांच्छन लगा रहे थे। इसी प्रकार वैदिकेश्वर वाद के वास्तविक स्वरूप को न जान कर जनता में पारस्परिक धार्मिक विद्वेष बढ़ रहा है।

ईश्वर का बहिष्कार

आज कल के जैन विचारक परमात्मा के अस्तित्व को तो स्वीकार करने लग पड़े हैं, किन्तु उसका सृष्टिकर्तृत्व अभी तक स्वीकार नहीं करते । पाश्चात्य दार्शनिक विद्वान् तथा पूर्वीय अनीश्वर वादी पंडित समुदाय अभीतक ईश्वर का अस्तित्व भी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्वीकार नहीं करते। उन लोगों का यह कथन है कि निखिल जगत् प्राकृतिक नियमों से अपना नैत्यिक व्यवहार चला रहा है, इस को नियम में रखने के लिए जगत् से भिन्न किसी अन्य चेतन शक्ति के मानने की आवश्यकता नहीं है। उन का यह भी कथन है कि प्राकृतिक परमाणु जब स्वयं विकृत हो जाते हैं तब सृष्टि का लय काल होता है, और जब पुनः वही विकृत परमाणु स्वयं संयुक्त होकर नानाप्रकार के रूप धारण कर लेते हैं, तब सृष्टि का वर्त्तमान स्वरूप हमारे सामने आजाता है, इत्यादि। अब इस पर यह विचार करना आवश्यक प्रतीत होता है कि क्या वस्तुतः परमाणु पुञ्ज में यह शक्ति विद्यमान है कि वे स्वयं बनें और बिगड़ जावें ? जहां तक विज्ञान का सम्बन्ध है जड़ पदार्थों में स्वभावतः एक ही व्यवहार हो सकता है, या तो विकृतावस्था से संयुक्त होने की शक्ति, अथवा संयुक्तावस्था से छिन्नभिन्न हो जाने की शक्ति, बस यही एक परमाणु पुञ्ज का नियम हो सकता है। इस प्रकार एक शक्ति के स्वीकार कर लेने पर अवश्यमेव इस प्रकृति से भिन्न किसी अन्य चेतन शक्ति का स्वीकार करना अवश्यं भावी हो जायगा उसी प्रकृति से भिन्न चेतन शक्ति का नाम हम ईश्वर रखते हैं। अनीश्वर वादियों का यह मत ठीक नहीं प्रतीत होता है कि प्रकृति ही सब कुछ स्वयं करती कराती है। यदि प्रकृति में दोनों प्रकार के परस्पर विरोधी गुण स्वाभाविक माने जावें तो वर्त्तमान दृश्य जगत् कभी भी इस अवस्था में दिखलाई न दे जैसा कि अब विचार करने के लिए उपस्थित है, इस पर यह लोकोक्ति ठीक चरितार्थ हो जाय कि "न हो बांस न बजे बांसुरी"। क्योंकि जब हम यह स्वीकार कर लेंगे कि परमाणुवों का स्वभाव से परस्पर मिलना व्यवहृत हो रहा होगा वहां उसी क्षण में उसी प्रकार स्वाभाविक समशक्ति से परमाणुवों का भिन्न होना भी उसी प्रकार से अपना कार्य कर रहा होगा; इस लिए यह जगत् इस अवस्था में न देखा जा सकेगा। और यदि यह स्वीकार कर लिया जाय कि परमाणुवों में परस्पर मिलने की स्वभाविक शक्ति तो अधिक मात्रा में है और पृथक् होने की शक्ति अल्प मात्रा में तब यह जगत् एक समय ऐसा परिपक्व हो जायगा कि उस के परमाणु किसी प्रकार से भी पृथक् न हो सकेंगे, क्योंकि उन की सांयौगिकी स्वाभाविक शक्ति उन्हें पूर्ण रूपेण सम्बद्ध कर देगी। उदाहरणार्थ हम स्वीकार कर लेते हैं कि परमाणु पुञ्ज का भार १५ सेर है उस में प्रतिवर्ष अर्द्ध रत्ती संयुक्त होने की शक्ति अपना प्रभाव उत्पन्न करती है और चौथाई रत्ती स्वाभाविक रूप से प्रति वर्ष वियुक्त होने का कार्य करती है तो प्रति वर्ष की सांयौगिकी शक्ति की चौथाई रत्ती की मात्रा सारे परमाणु पुञ्ज को चार लाख साठ हजार आठ सौ वर्षों में ऐसा सुसंगठित करेगी कि फिर उस का विभिन्न होना असम्भव हो जायगा। और यदि परमाणु पुञ्ज में विपरीत नियम से रत्ती के चतुर्थ भाग की मात्रा संयुक्त होने की हो और आधी रत्ती की मात्रा वियुक्त होने की

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हों तो उतने ही (४६०८००) वर्षों में परमाणु पुञ्ज सर्वदा के लिये वियुक्त हो जायगा पुनः उसका संयुक्त होना संभवातीत हो जायगा। जैसा कि ऊपर कहा गया है न यह जगत् इस दशा में होगा न हम होंगे और न ईश्वर सिद्धि के लिये हमारा समुदाय इकट्ठा हो सकेगा दोनों अवस्थाओं में एक स्वाभाविक शक्ति का लय मानना पड़ेगा, अर्थात् यदि परमाणु पुञ्ज संयुक्त हो जायगा तो उस अवस्था में भिन्न होने की शक्ति विनष्ट हो जायगी और यदि विभिन्न करने की शक्ति केआधिक्य से परमाणु पुञ्ज विकृतावस्था में सिद्ध हो जायगा तो संयुक्त करने की शक्ति सर्वथा विलुप्त हो जायगी, इन दोनों अवस्थाओं में किसी भी एक शक्ति के विलुप्त होने पर वह शक्ति स्वाभाविक नहीं कही जासकेगी, क्योंकि स्वाभाविक गुण सर्वदा अपने गुणी के साथ रहेगा यह एक सर्वतंत्र सिद्धान्त है। भेदक शक्ति के आधिक्य मानने पर यह दृश्य जगत् फिर नहीं बन सकेगा अतः अनीश्वर वादियों का यह विचार कि विना परमात्मा के वर्त्तमान सृष्टि स्वयं बनती और बिगड़ती है युक्ति शून्य तथा असम्भव प्रतीत होता है। जड़ परमाणुओं में स्वयं बनने और बिगड़ने की परस्पर विरोधिनी स्वाभाविक शक्तियां सिद्ध नहीं हो सकतीं तो उनका उपरोक्त सिद्धान्त असत्य ही प्रामणित होता है। परमेश्वर के स्वीकार करने के बिना जगत् का सब का सब वर्त्तमान व्यवहार ही नहीं चल सकता इस लिये परमात्मा का मानना अत्यावश्यक है जो सृष्टि को अपने नियम में रख सके, इसी भाव को स्पष्ट करने के लिए वेद में निम्नलिखित मंत्र है:—

पुरुष एवेद ꣳ सर्वं यद्भूतं यच्चभाव्यम्
उतामृतत्व स्येशानो यदन्नेनातिरोहति ॥

य० ३१—२ ॥

अर्थात् जो उत्पन्न हुआ, जो उत्पन्न होने वाला है, और जो पृथिवी आदि के सम्बन्ध से अत्यन्त बढ़ता है, उस प्रत्यक्ष-परोक्ष रूप समस्त जगत् को, अविनाशी-मोक्ष सुख या कारण का अधिष्ठाता सत्यगुण कर्मस्वभाव से परिपूर्ण परमात्मा ही रचता है। इस मंत्र का भावार्थ वर्तमान युग के सब से बड़े वैदिक विद्वान् महर्षि दयानन्द जी ने अपने यजुर्वेद भाष्य में निम्न लिखित प्रकार से किया है-हे मनुष्यो ! जिस ईश्वर ने जब जब सृष्टि हुई तब २ रची, इस समय धारण करता है फिर विनाश करके रचेग, जिस के आधार से सब वर्त्तमान है और बढ़ता है, उसी सब के स्वामी परमात्मा की उपासना करो इस से भिन्न की नहीं। अन्य वेद मंत्रों में भी परमात्मा के सृष्टि कर्त्तृत्व सम्बन्ध में निम्न-लिखित वर्णन है:—

(१) चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोः सूर्यो अजायत।
श्रोत्राद्वायुश्च प्राणश्च मुखादग्निरजायत ॥

यजु० ३१-१२

(२) नाभ्या आसीदन्तरिक्षꣳ शीर्ष्णोद्यौः समवर्त्तत।
पद्भ्यांभूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथालोकाँ २ अकल्पयन्

य० ३१-१३

(१) अर्थात् इस पूर्ण ब्रह्म के ज्ञान स्वरूप सामर्थ्य से चन्द्रलोक उत्पन्न हुआ, ज्योति स्वरूप सामर्थ्य से सूर्य मण्डल उत्पन्न हुवा, श्रोत्र नाम अवकाश रूप सामर्थ्य से वायु

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

तथा आकाश प्रदेश, और जीवन के निमित्त प्राण-और मुख्य ज्योतिर्मय भक्षण स्वरूप सामर्थ्य से अग्नि उत्पन्न हुआ।

(२) इस पुरुष परमेश्वर के, अवकाश रूप मध्यम सामर्थ्य से लोकों के बीच का आकाश हुवा, शिर के तुल्य उत्तम सामर्थ्य से प्रकाश युक्त लोक, पृथिवी के कारण रूप सामर्थ्य से भूमि-सम्यक् वर्त्तमान हुई, और अवकाश रूप सामर्थ्य से पूर्वादि दिशाओं की कल्पना होती है, ईश्वर के सामर्थ्य से अन्य लोकों को भी जानो।

यदि इन वेद मंत्रों के आधार पर प्रकृति से पृथक् चेतन परमात्मा को सृष्टि का नियामक कर्त्ता-धर्त्ता-और संहर्त्ता न माना जाय तो जगत् की उत्पत्ति, स्थिति और लय का सिद्ध करना असम्भव है इस लिए जगद्भिन्न सच्चिदानन्द परमात्मा का मानना अत्यन्तावश्यक है,।

कल्पित ईश्वरवाद

ईश्वर वादी लोग ईश्वर को सृष्टि का कर्त्ता और पालयिता मान कर अपने विचारों के आधार पर वेद में आये हुवे राम कृष्णादि शब्दों से यह सिद्ध करने का यत्न करते हैं कि ईश्वर समय २ पर अपने भक्तों की सहायता और पापियों के विनाश के लिए देह धारण करते हैं तथा संसार को फिर से नियम में चला कर धर्म का प्रचार करते हैं। वस्तुतः वेद में ऐसा कोई भी विचार नहीं पाया जाता जिस से यह सिद्ध हो सके कि परमात्मा किसी प्रकार का कोई ससीम देह धारण करता है। परमात्मा की सर्वव्यापकता का प्रमाण वेद के अनेक मंत्रों में मिलता है,। अलङ्कार रूप से परमात्मा के विराट् स्वरूप का वर्णन भी यजुर्वेद के ३१ वें अध्याय में आया है और उस परमात्मा के ही सामर्थ्य से सारे देह धारियों का निज कर्म फल भोगने के लिये शरीर धारण करना सिद्ध होता है। ब्रह्माण्ड की भौतिक भावना से परमात्मा के विराट् स्वरूप का वर्णन इस बात का प्रमाण नहीं होसकता कि परमात्मा पाञ्च भौतिक देह धारण करता है। परमेश्वर के देहधारी होने की कल्पना करना वेद विरुद्ध है अवतार वादी लोग जिस प्रकार अपनी मनः कल्पना से ईश्वर के देह धारण करने के सिद्धान्त को मानते हैं वह निम्नलिखित प्रकार से है;—

भद्रोभद्रया सचमान आगात् स्वसारं जारो अभ्येति पश्चात्। सुप्रकेतैर्द्युभिरग्निर्वितिष्ठन्नुषद्भिरभिराममस्थात्॥

इस मंत्र का यह तात्पर्य है कि सीता के साथ व्यवहार करता हुवा राम लङ्का में गया इत्यादि। इस मंत्र में न कहीं रामावतार का वर्णन है और न ही वेद के किसी अन्य मंत्र से ईश्वर का अवतार लेना सिद्ध होता है। इस वेद मंत्र का अर्थ सायणाचार्य जी ने अपने भाष्य में, अवतार वादियों के मन माने अर्थ के अनुकूल नहीं किया है उन्होंने राम शब्द का अर्थ अन्धकार किया है उनका भाष्य इस प्रकार से है—

(भद्रः) भजनीयः कल्याणः (भद्रया) भजनीयया सचमानः (आगात्) आगच्छति, ततः पश्चात् (जारः) जरयिता शत्रूणां सो अग्निः स्वसारं स्वयं सारिणीं भगिनीं वा आगता मुषसं अभ्येति, अभिगच्छति,

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

तथा सुप्रकेतैः सुप्रज्ञानैः द्युभिः तेजोभिः .... रामं कृष्णं शार्वरंतमः अभ्यख्यात् सायं होम काले अभिभूय तिष्ठति ॥

अर्थात् प्रकाश उषा के साथ२ आता है और रात्रि के काले अन्धकार को सायं कालीन होम काल में तिरस्कार करके स्थित होता है। इस के अतिरिक्त अवतार वादी लोग

'इदं विष्णुर्विचक्रमेत्रेधानिदधेपदम् ।
समूलमस्य पाꣳसुरे ॥ य०—५—१५

इस मंत्र से ईश्वर का वामनावतार सिद्ध करते हैं। सायणाचार्य ने भी इस मन्त्र से वामनावतार को सिद्ध किया है और महीधर ने भी इस मंत्र से ईश्वर का त्रिविक्रमाव धारण करना स्वीकार किया है महीधरने निजभाष्य में लिखा है "विष्णु स्त्रिविक्रमावतारं कृत्वा इदं विश्वं विचक्रमे विभज्य क्रमतेस्म" अर्थात् व्यापक ईश्वर ने त्रिविक्रमावतार धारण करके सारे संसार को तीन पदों से मापा था। उक्त मंत्र का अर्थ महीधर से पूर्व भाष्यकर्त्ता उबटाचार्य ने वामनावतार पदक नहीं किया उन्होंने इस मंत्र को यज्ञ पर पर लगाया है वे लिखते हैं 'त्रेधानिदधेपदं । पद्यते ज्ञायतेऽनेनेतिपदं । भूम्यन्तरिक्षद्युलोकेषु-अग्नि-वायु-सूर्य रूपेण त्रिधानिहितवान् पदम् ॥

अर्थात् संसार का उपकारक यज्ञ पृथिवी पर अग्नि रूप से, अन्तरिक्ष में वायुरूप से, द्युलोक में सूर्य रूप से विद्यमान होता है। ऐसा ही अर्थ शाकपूणि के मत को लेकर यास्काचार्य और दुर्गाचार्य जी ने निरुक्त और निरुक्त के भाष्य में किया है इस मंत्र में वामनावतार का गन्ध तक भी नहीं पाया जाता। ऋषिदयानन्द जी ने इस मंत्र का अर्थ ईश्वरपरक किया है वे लिखते हैं। (विष्णुः) सब जगत् में व्यापक जगदीश्वर जो कुछ यह जगत् है उसको तीन प्रकार का धारण करता है प्रकाशवान्, प्रकाश रहित और अदृश्य, तीन प्रकार के परमाणु आदि रूप अच्छे प्रकार देखने और दिखाने योग्य जगत् का ग्रहण करता हुआ इस अच्छे प्रकार विचार करने योग्य अदृश्य जगत् को अन्तरिक्ष में स्थापित करता है। इस से ईश्वर के सामर्थ्य का ज्ञान होता है न कि उस के अवतार धारण करने का इन मंत्रों के अतिरिक्त

'प्रजापतिश्चरति गर्भे अन्तर—
जायमानो बहुधा बिजायते ।
तस्ययोनिं परिपश्यन्ति धीरा-
स्तस्मिन्ह्तस्थुर्भुवनानि विश्वा ॥ य० ३१-१९॥

इस वेद मंत्र को भी उपस्थित कर के ईश्वरावतार सिद्ध करने का यत्न करते हैं। इस मन्त्र का अर्थ इस प्रकार करते हैं कि प्रजापति जो परमात्मा है उत्पन्न न होता हुआ भी गर्भ में जाता है और रूप धारण करता है उसके स्वरूप को विद्वान् लोग देखते हैं उस में सारे भुवन स्थित हैं। महीधरने भी इस मंत्र का अर्थ अपने भाष्य में ऐसा ही किया है वे लिखते हैं।

"यः सर्वात्मा प्रजापतिः, अन्तर्हृदि स्थितः सन् गर्भे चरति गर्भ मध्ये प्रविशति"

अर्थात् चराचर का आत्मा प्रजापति परमेश्वर हृदय में स्थित होता हुआ गर्भ में प्रवेश करता है। इस पर विचारना यह है कि यदि परमात्मा गर्भ में प्रवेश करता है

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

तो प्रवेश से पूर्व उसका गर्भ में उपस्थित होना सिद्ध नहीं हो सकता । यदि वहाँ पहले से परमात्मा की उपस्थिति मानी जाय तो प्रवेश करना असङ्गत हो जाता है, क्योंकि निष्क्रमण प्रवेशन यह आकाश के लिङ्ग हैं, अवकाश होने पर ही प्रवेश हो सकता है, और निष्क्रमण होने पर अवकाश मिलता है, आकाश सर्वत्र भौतिक पदार्थों में विद्यमान् रहता है और परमात्मा को वेद में समग्र भूतों से परे माना है, भूतों में आकाश की भी गणना है परमात्मा आकाश से भी परे है ।

'परीत्य भूतानि परीत्य लोकान् परीत्य सर्वाः प्रदिशोदिशश्च उपस्थाय प्रथमजा मृतस्यात्मनात्मानमभिसं विवेश ॥ य० ३३-११ ॥

अर्थात् प्राणियों को सब ओर से व्याप्त हो कर, पृथिवी सूर्यादि सब लोकों को व्याप्त हो, ऊपर और नीचे सब आग्नेयादि उप-दिशाओं तथा पूर्वादि दिशाओं को सब ओर से व्याप्त हो कर परमात्मा विराजमान है, इत्यादि । शतपथ ब्राह्मण में भी 'विरजः पर आकाशात्' अर्थात परमात्मा आकाश से भी परे है ऐसा वचन मिलता है जिस से उप-रोक्त वेद मंत्र का अनुमोदन होता है । यजुर्वेद ४० वें अध्याय के ५ वें मंत्र में "तद्दूरे तद्वन्तिके" परमात्मा को दूर से दूर और समीप से समीप माना है जब परमात्मा की व्यापकता के सम्बन्ध में इन मंत्रों के अतिरिक्त भी अन्यान्य अनेक मंत्र उपस्थित हैं तो फिर 'चरति' शब्द का यह अर्थ कि परमात्मा गर्भ में प्रवेश करता है कैसे संगत हो सकता है । यह वेदार्थ से अनभिज्ञ लोगों की स्वार्थ परावृत्तिका ही परिचायक है । वस्तुतः चरित शब्द का अर्थ यह है कि पर-मात्मा गर्भ में व्याप्त है क्योंकि धातु गत्यर्थक होने से ज्ञान-गमन-प्राप्ति तीनों अर्थों का बोधक है । इस लिये इस का सत्यार्थ यही है कि परमात्मा न उत्पन्न होता हुवा गर्भ में उपस्थित है । यदि पूर्व वर्णित अर्थ ठीक माना जाय तो इस से परमात्मा का गर्भ में व्यापक होना सिद्ध न होगा, क्यों कि गर्भ में प्रवेश करने से पूर्व परमात्मा की अनुपस्थिति स्वीकार करनी पड़ेगी, तब पर-मात्मा का प्रवेश करना सिद्ध हो सकेगा ऐसी अवस्था में परमात्मा की सर्वव्यापकता पर आपत्ति आ जायगी । ऋषि दयानन्द जी ने इस मंत्र का सुसङ्गत अर्थ निम्नलिखित प्रकार से किया है "अपने स्वरूप से न उत्पन्न होने वाला प्रजा का रक्षक ईश्वर गर्भस्थ जीवात्मा और सब के हृदय में विचरता है अर्थात् उपस्थित है उस प्रजापति के जिस स्वरूप को ध्यान शील विद्वान् सब ओर से देखते हैं" यह अर्थ सर्व प्रिय और सरलता पूर्ण है, यदि ईश्वर का भौतिक देह स्वीकार किया जाय तो देह होने से उसका सीमाबद्ध होना और एक देशी होना आवश्यक होगा क्योंकि कोई भी पदार्थ जो इन्द्रिय ग्राह्य हो व्यापक नहीं हो सकता इस से परमात्मा की सर्व व्यापकता में बाधा उपस्थित होगी परन्तु वेद परमात्मा की व्यापकता का तथा उसके अतीन्द्रिय होने की साक्षी देता है । यथा—

अनेजदेकं मनसो जवीयो नैनद्देवा आप्नुवन् पूर्वमर्षत् ।
तद्धावतोऽन्यानत्येति तिष्ठत्तस्मिन्नपो मातरिश्वादधाति
य० ४०-४

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थात् जो एक अद्वितीय परमात्मा है वह कंपायमान नहीं होता, मन के वेग से भी अतिवेगवान् सब के आगे चलता हुवा अर्थात् जहां कोई चल कर जाय वहां प्रथम ही सर्व व्याप्ति से पहुँचा हुवा ब्रह्म है। उस ईश्वर को चक्षु आदि इन्द्रिय प्राप्त नहीं होते वह पर ब्रह्म अपने आप स्थिर हुवा २ अपनी अनन्त व्याप्ति से मन-वाणी आदि इन्द्रियों का उल्लङ्घन कर जाता है और उसी व्यापक ईश्वर में रहने वाला जीव अपने कर्मों को धारण करता है। इस मंत्र का भावार्थ ऋषि दयानन्द ने इस प्रकार किया है कि ब्रह्म के अनन्त होने से जहां २ मन जाता है वहाँ ब्रह्म वर्त्तमान है, उस का ज्ञान शुद्ध मन से होता है, चक्षु आदि इन्द्रिय और अविद्वानों से देखने योग्य नहीं है, उस के अति सूक्ष्म इन्द्रिय गम्य न होने से धर्मात्मा विद्वान् योगी को ही उसका साक्षात् ज्ञान होता है, अन्य को नहीं। जब वेद में यह आज्ञा है कि परमात्मा अति सूक्ष्म और व्यापक है तो उस के भौतिक देह की कल्पना कर के स्थूलता में लाना युक्ति युक्त प्रतीत नहीं होता देह नाश-वान् होता है इस लिये परमात्मा कदापि देह धारण नहीं कर सकता यदि परमात्मा का देह मानने वाले लोग परमात्मा को मनुष्य देह धारी तक ही रहने देते तो सम्भव है लोगों के चित्ताकर्षण का साधन हो सकता, परन्तु उन लोगों ने तो मत्स्य-कच्छप-वराहादि पशुवों के रूप धारण करने वाला भी परमात्मा को बना डाला है जैसा कि वे कहते हैं—

यस्यालीयत शंख सीम्नि जलधिः पृष्ठे जगन्मंडलम्
दंष्ट्रायां धरणी नखेदितिसुताधीशः पदे रोदसी।
क्रोधे क्षत्र गणः शरेदशमुखः पाणौ प्रलम्बासुरो
ध्याने विश्वमसावधार्मिक कुलं कस्मै चिदस्मै नमः॥

अर्थात् जिस परमात्मा के पीठ के कांटे या पीठ की खाल पर समुद्र विराजमान् है ऐसे मत्स्य भगवान्, जिनकी पीठ पर जगन्मण्डल है ऐसे कूर्म भगवान्, जिनकी दाढ़ पर पृथिवी है ऐसे वराह भगवान, जिनके नखों के आगे हिरण्यकश्यपु है ऐसे नृसिंह भगवान्, जिसने तीन पैरों में त्रिलोकी नाप ली है ऐसे वामन भगवान्, जिनके कुल्हाड़े की धारा से क्षत्रिय समुदाय भाग निकला ऐसे परशुराम भगवान, जिनके तीरों से रावण की मृत्यु हुई ऐसे रामचन्द्र भगवान्, जिन्होंने केशों से पकड़ कर कंस को पछाड़ा ऐसे कृष्ण भगवान्, जिसने ध्यानावस्थित होकर सम्पूर्ण विश्व को देखा ऐसे बुद्ध भगवान्, और जिनकी असि धारा से म्लेच्छ वंश का विध्वस होगा ऐसे आगे होने वाले कल्कि भगवान् को बारम्बार नमस्कार हो। इस श्लोक में कल्पित परमात्मा को किस विलक्षणता से दर्शाया गया है, परमात्मा की क्रूरता कपहता, पशुता और साधुता को एक ही स्थान पर ढाल कर रख दिया है। इस विचित्रता से पाणिनिमुनि तथा गोप कन्या का वह सम्बाद सहसा स्मरण हो आता है जब पाणिनि मुनि अष्टाध्यायी के प्रचार का परिचय लेने को निकले और एक गोप कन्या को एक ही सूत्र में काचमणि तथा

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्वर्ण को पिरोते देखकर आश्चर्यान्वित हुए और प्रश्न किया—

'काचं मणिं काञ्चनमेक सूत्रे
ग्रथनासिबाले ! किमिदं विचित्रं ।,

इस पर गोपबाला ने उत्तर दिया—

'अशेषवित् पाणिनिरेक सूत्रे-
श्वानं-युवानं-मघवानमाह' ।,

अर्थात् मुनि ने पूछा ऐ कन्यके ! क्या विचित्रता है कि तू एक सूत्र में काच-मणि और सुवर्ण पिरो रही है ? गोप कन्या बोली महाराज ! मेरा क्या दोष है ? जब कि व्याकरणाचार्य पाणिनि मुनि ने एक ही सूत्र में श्वान, युवक और इन्द्र को एकत्र कर दिया है । ठीक यही भाव अवतार वादियों ने इस श्लोक में दर्शाया है मत्स्य कच्छप और वराह से परमात्मा की पशुता -नृसिंहावतार से मनुष्यत्व और पशुता का संमिश्रण-वामन से कपटता परशुरामावतार से अज्ञतापूर्ण क्रूरता, रामचन्द्र से वियोगिता-कृष्णावतार से कुछ और दर्शा कर बुद्ध से सभ्यता का परिचय दिया है और आगे होने वाले कल्कि अवतार को एक सैनिक के रूप में खड़ा कर दिया है । इस निखिल कल्पना का मूल वेद के वास्तविक सत्यार्थ को न समझना तथा वेद में वर्णित परमात्मा के वास्तविक रूप को न पहिचानना ही है ।

ऋग्वेद में मंत्र है—

कयानश्चित्र आभुव दूति सदावृधः सखा ।
कया शचिष्ठयावृता ॥ ऋ. ४-३१-१

अर्थात् महान् से महान् तथा आश्चर्य वर्द्धक ईश्वर कल्याणमय रक्षण और कल्याणमयी शक्ति से बारम्बार कर्म कराने के द्वारा हमारा मित्र होता है । वेद के इस मन्त्र से प्रतीत होता है कि परमात्मा हमारा मित्र है और उस से हमारा कल्याण होता है, परन्तु अवतारवाद के अनुसार अवतारों के रूप में अवतरण हुआ २ परमात्मा हमारे ऊपर नाना प्रकार के कटाक्ष करवाता है । इसका स्पष्ट प्रयोजन यही हो सकता है कि अवतार वाद की कल्पना निराधार, वेदविरुद्ध और हास्य जनक है । आनन्दमय परमात्मा में क्रूरता, कुटिलता तथा क्षुद्रता तो हो ही नहीं सकती । जो आस्तिक लोग ईश्वर के अस्तित्व को स्वीकार करते हैं उन सबका यह भी निश्चित सिद्धान्त है कि परमात्मा आनन्दमय है ऐसा स्वीकार कर लेने पर परमात्मा को शारीरिक बन्धन में आने वाला मानना अच्छा नहीं जँचता । इसलिये भौतिक देह धारण करना ईश्वर के लिए संभव नहीं है अपितु कर्मफल भोगने वाले जीवात्माओं के लिए ही है । अब प्रश्न यह होगा कि यदि परमेश्वर के नाना रूप न माने जायें तो अनन्तरूपी तथा अनन्दनामा ये परमात्मा के विशेषण कैसे सार्थक हो सकेंगे ? इसका समाधान यह है कि जैसे जल की अपनी कोई आकृति नहीं है परन्तु उसे जिस प्रकार के पात्र में डाल दिया जाय उसकी वैसी आकृति बन जाती है, ठीक इसी प्रकार सर्व व्यापक होने से जितने विभिन्न आकृतियों वाले भौतिक पदार्थ हैं परमात्मा उन सब में व्यापक है इस लिए परमात्मा भी उन २ आकृतियों

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वाला है वस्तुतः उसकी अपनी निजू आकृति कोई भी नहीं है, परमात्मा का अपना निजू नाम "ओ३म्" ही है यही परमात्मा का मुख्य नाम है। योग दर्शन में—

"तस्यवाचकः प्रणवः"

ऐसा लिखा है, अर्थात् परमात्मा का निज नाम 'ओ३म्' है, परमात्मा के इसी मुख्य नामको स्मरण करने के लिये यजुर्वेद के ४०वें अध्याय (ओं क्रतो स्मर) अर्थात् हे कर्म करने वाले जीव ! तू ओ३म् इस नाम वाले ईश्वर का स्मरण कर, इस से भिन्न शेष अग्नि—वरुण इन्द्र—आदि जितने भी ईश्वर के नाम हैं सब के सब परमात्मा के तद्गुण विशिष्ट होने से गौण नाम हैं अथवा सर्व गुण सम्पन्न परमात्मा उन २ गुणों का अग्नि-वरुण आदियों में प्रकाश होने से उन के अग्नि-वरुण इन्द्रादि नाम हैं, ये सब के सब अग्नि वायु-चन्द्रमा आदि परमेश्वर के गौण नाम हैं, अग्नि-आदित्य आदि के गुण ईश्वर में हैं इस लिये परमात्मा का नाम अग्नि है, इसी प्रकार शुक्र, जल, चन्द्रमा और प्रजा पति आदि भी नाम हैं । इसका स्पष्ट वर्णन यजुर्वेद ३२ वें अध्याय के प्रथम मंत्र में है।

यथा

तदेवाग्निस्तदादित्यस्तद्वायुस्तदुचन्द्रमाः ।
तदेवशुक्रंतद्ब्रह्म ता आपः स प्रजापतिः ॥ य०३२-१॥

इस मंत्र का अर्थ पौराणिक भाष्यकार उवटाचार्य ने इस प्रकार किया है;

"विज्ञानात्मा परेणात्मना विशिष्टाग्न्यादिषु ओतप्रोतत्वेनोपास्योऽभिधीयते, तदेवकारणमग्निः, तदादित्यः- तद्वायुः-तत्-उ-चन्द्रमाः तदेव शुक्रं जयीलक्षणं तद्ब्रह्म परम् ता आपः स प्रजापतिः"

अर्थात् परमात्मपने से विज्ञानात्मा परमात्मा जो अग्न्यादियों में ओत प्रोत है वही उपास्य देव है, वही परमात्मा अग्नि है, वही आदित्य है, वही वायु वही चन्द्रमा, वही शुक्र, वही ब्रह्म, वही जल और वही प्रजापति है। महीधर ने भी किञ्चिन्मात्र विस्तार के साथ इस मंत्र का ऐसा ही अर्थ किया है। महर्षि दयानन्द जी ने भी इस मंत्र का अर्थ तथा भावार्थ ऐसा ही किया है वह लिखते हैं परमात्मा जगत् का स्रष्टा और सर्वान्तर्यामी होने से तथा ज्ञानस्वरूप और स्वयं प्रकाशित होने से अग्नि है,वही प्रलय समय में सबको ग्रहण करने से आदित्य, अनन्त बलवान् होने से वायु आनन्द स्वरूप होने से चन्द्रमा शीघ्र कारी होने से शुक्र, महान् होने से ब्रह्म, सर्व व्यापक होनेसे चन्द्रमा, शीघ्रकारी होने से आप और वही परमात्मा सब का स्वामी होने से प्रजापति है, भावार्थ-जैसे ईश्वर के अग्नि आदि गौण नाम हैं, वैसे और भी इन्द्रादि नाम है; उसी की उपासना फल वाली होती है। इस मंत्र के अतिरिक्त एक और ऋचा है, जिस में ओ३म् इस मुख्य नाम वाले परमात्मा के गौण नामों का वर्णन है।

यथा

इन्द्रं मित्रं वरुणमग्निमाहुरथोदिव्यः स सुपर्णो गरुत्मान्
एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्त्यग्निं यमं मातरिश्वानमाहुः ॥

इस पर यास्काचार्य लिखते हैं कि "इममेवाग्निं महान्तमात्मानं बहुधा मेधाविनो वदन्ति, मित्रं-वरुणं-अग्नि-दिव्यं-च गरुत्मन्तं, इति"

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थात् एक आद्वितीय परमात्मा ही इन्द्र—मित्र—वरुण इत्यादि नामों वाला है परमात्मा के विभिन्न नामों की वास्तविकता वेद मंत्रों में इस प्रकार वर्णित है। इसका यह प्रयोजन कदापि नहीं हो सकता कि परमात्मा भौतिक देह धारण कर के इन नामों वाला शरीर धारी बन जाता है, यही ईश्वर की बहुरूपता तथा बहुनामता है, अवतार वाद कल्पना मात्र ही है।

ईसाई और मुसलमान

पुराणों में वर्णित ईश्वरावतार आदि आख्यानों से प्रभावित हो कर ईसाइयों ने भी ईश्वर को देह धारण करने वाला मान कर उसका वार्त्तालाप करना लिखा है, तौरेत में लिखा है कि "जब ईश्वर इब्राहीम से बातें कर चुका तो ऊपर चला गया" और आगे चल कर तौरेत में फिर लिखा है कि "याकूब अपने रास्ते पर गया और ईश्वर का दूत उसे आ मिला याकूब ने देख कर कहा कि यह ईश्वर की फ़ौज है" आगे चल कर योहन्ना के प्रकाशित वाक्यों के ७ वें प्रकरण की १५ वीं आयत में लिखा है कि "इस कारण वे ईश्वर के सिंहासन के आगे हैं- उसके मंदिर में रात दिन उसकी सेवा करते हैं, और सिंहासन पर बैठने हारा उनके ऊपर डेरा देगा" इत्यादि अनेक उल्लेख तौरेत और बाइबल में मिलते हैं। जिन से यह परिणाम निकलता है कि ईसाइयों ने भी पौराणिक शिक्षा की भाँति अपने ईश्वर को नरतनुधारी मान कर उसके मानुषी व्यवहारों की कल्पना की है, इस शिक्षा से भी ईश्वर के सत्यस्वरूप को समझने में सिद्धि प्राप्त नहीं हो सकती, इसी लिये अमेरिका के ग्रेजुएटों को पारितोषक रूप में जो बाइबलका पुस्तक दिया जाता था, उन्होंने यह कह कर कि इस पुस्तक से और ऐसे ईश्वर से हमें शान्ति प्राप्त नहीं हो सकती चर्च की ओर से दिये जाने वाले बाइबलरूप पारितोषक को लेने से इन्कार कर दिया है। अमेरिकन पादरियों का यह विचार मिट्टी में मिल गया है कि ग्रेजुएट बाइबल को पढ़ कर ईसाई धर्म और ईसाई ईश्वर पर विश्वास करेंगे, ईसाइयों का ईश्वर भी विज्ञान वादी पंडितों को शान्त के स्थान में भ्रान्त ही करता है।

मुसलमान

मुसलमानी खुदा के मानने से भी यही अवस्था होती है। कुरान मंजिल १, सिपारा १, सूरत १, आयत ६, ७ में लिखा है कि "या खुदा दिखा उन लोगों का रास्ता जिन पर तूने इनायत की और उनको रास्ता मत दिखा कि जिन पर तूने ग़ज़ब किया और न गुमराहों का रास्ता दिखा हमको" और आगे कुरान मंजिल १, सिपारा २, सूरत २, आयत १९७ में लिखा है कि "खुदा जिसको चाहे बेशुमार रिज़क देवे" इत्यादि इससे कुरानी खुदा पक्षपाती सिद्ध होता है, क्योंकि कुरानी विचारों से खुदा सब कुछ स्वयं करने कराने वाला है, फिर उसका किसी पर दया करना और किसी पर क्रोध करना, किसी को कंगाल और किसी को धनी बनाना, पक्षपात का ज्वलन्त प्रमाण है। आगे चलकर कुरान से यह भी पता चलता है कि जब कुरानी खुदा पक्ष-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पात करता है तो उसकी असलियत को जान लेने वाले उसकी आज्ञा मानने से भी विमुख होजाते हैं, जैसा कि कुरान मं०१, सि० १, सू० २, आ० ३२ से ज्ञात होता है। उस में लिखा है खुदा कहता है कि "जब हमने कहा फरिश्तों को कि करो सिजदा आदम को, खेदा किया सिजदा सबने, लेकिन न माना शैतान ने, और अभिमान किया, क्योंकि था वह भी एक काफ़िर," इस से 'जैसा करे वैसा भरे' वाली लोकोक्ति अक्षरशः सिद्ध होती है, यदि कुरानी खुदा पक्षपात न करता तो उस को छकाने वाले मोमिन भी न मिलते। वैदिक ईश्वर का कैसा सुन्दर न्यायनियम है कि कुरानी खुदा को तत्काल ही अपनी करनी का फल दे दिया, उसकी रैय्यत (प्रजा) ही उसकी मुनकिर होगई, यही कारण है कि पढ़े लिखे लोग कुरान से तंग आकर उसे ईश्वरीयज्ञान न मानते हुवे, कुरान और कुरानी खुदा के सम्बन्ध में, स्वतन्त्र संमतियाँ प्रगट करने लग पड़े हैं, जैसा कि इस्लामी दुनियाँ के माने हुवे विद्वान कई पुस्तकों के रचयिता मिस्टर खुदाबख़श एम. ए. ने अपनी पुस्तक 'इलाज़ो शोरश' के पृष्ठ ६३ पर लिखा है कि "कुरान रसूल पाक की महज़ एक रफ़ डायरी है जो २ बातें उनकी तबीयत में आईं वह दर्ज करने लगे"। एक और मुसलमान विद्वान् ने लिखा है कि "खुदा का सातवें आसमान में तख्त पर बैठना एक फ़र्जी बातहै," इत्यादि २। यदि कुरानी खुदा मेरी सम्मति माने तो मैं उसे यह सम्मति दूँ कि आप के बन्दों के विचारानुकूल सन् हिजरी चौदवीं शताब्दि में तो क़यामत आ ही जानी है और टर्की में जो इस्लामी आशाओं का केन्द्र था इस्लामी विचारों की कयामत आनी प्रारम्भ भी हो गई है, वहाँ महम्मद साहब की तथा उसके चचा हमज़ा की कबरें भी उखाड़ डाली गई हैं। इस लिये क्या ही अच्छा हो कि कुरानी खुदा स्वयं यह घोषणा करदें कि ऐ खुदा के बन्दो! मैं तो एक मनुष्य हूँ, ईश्वर के वास्ते मेरे गले में खुदाई का तौक़ मत डालो, वेद में बयान किये गये ईश्वर को ही वास्तविक ईश्वर समझो, महर्षि दयानन्द जी की कृपा से अज्ञता के समय के साथ २ कल्पित परमात्माओं के मानने का समय भी समाप्त हो चुका है, सूर्य के देदीप्यमान प्रकाश के सामने टिमटिमाते हुवे दीपकों की आभा विनष्ट होने को है, इस लिये मैं कुरानी खुदा मुसलमानों को घोषणा करता हूं कि वे सब के सब दाढ़ी के स्थान में सिर पर शिखा धारण करा के आर्य समाज मन्दिर में जाकर और शुद्ध हो कर आर्य बन जावें और शान्ति दायक आनन्दमय वेद प्रतिपाद्य परमात्मा के वास्तविक स्वरूप को समझें, उसी से संसार का कल्याण हो सकेगा अन्य से नहीं, मैं हूँ आपका कुरानी खुदा।

वैदिकेश्वर वाद

वेद में परमात्मा के सत्य स्वरूप का निम्न लिखित प्रकार से वर्णन किया गया है—

सपर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविर ꣳ शुद्धमपाप विद्धम्। कविर्मनीषी परिभूः स्वयंभूः याथा तथ्यतोऽर्थान् व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः॥ य० ४०-८

इस मंत्र का अर्थ वेदाचार्य महर्षि दया-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

110474

नन्द जी ने इस प्रकार से किया है अर्थात् जो ब्रह्म शीघ्रकारी, सर्वशक्तिमान, सूक्ष्म, स्थूल और कारण शरीर से रहित है, छिद्र रहित और छेदन करने योग्य नाड़ी आदि के साथ सम्बन्धरूप बन्धन से रहित, अविद्यादि दोषों से रहित होने से सदा पवित्र और जो पाप युक्त पापकारी पाप में प्रीति करने वाला कभी नहीं होता उसे सब ओर से व्याप्त है। सर्वत्र सब जीवों के मनों की वृत्तियों को जानने वाला, दुष्ट पापियों का तिरस्कार करने वाला और अनादि स्वरूप, जिसके संयोग से उत्पत्ति वियोग से विनाश, माता-पिता-गर्भ वास, जन्म-वृद्धि-मरण नहीं होते वह परमात्मा सनातन अनादि स्वरूप अपने २ स्वरूप से उत्पत्ति और विनाशरहित, प्रजाओं के लिये यथार्थ भाव से वेद द्वारा सब पदार्थों को बनाता है, वही परमेश्वर तुम लोगों के उपासना करने योग्य है, इस वेद मंत्र का अर्थ उवट्टाचार्य तथा महीधर ने भी इसी प्रकार से किया है। इस से अवतारवादियों की सारी कल्पनायें निरर्थक हो जाती हैं। उवट्ट और महीधर जीने 'अकाय' शब्द को भली प्रकार खोल कर परमात्मा के शरीर धारण करने का स्पष्ट खण्डन किया है। पौराणिक सनातनियों के दोनों ही मान्य भाष्यकारों ने लिखा है कि (अकायं) न विद्यतेकायः शरीरं यस्य स तथोक्तः, इस शब्द को और भी विस्पष्ट किया है "अकायत्वादे वा व्रणमक्षतम्"

अर्थात् जिस का शरीर नहीं है ऐसा परमात्मा है, शरीर न होने से उस में कोई व्रण या आघात भी नहीं है। इस वेद मंत्र से ईश्वर के कल्पित तीनों रूपों का सर्वथा निराकरण हो जाता है। (शुक्रं) इस शब्द से परशुराम अवतार का खण्डन हो जाता है क्यों कि उनकी रामचन्द्र जी के आगे सर्वशक्तिमत्ता ढीली पड़ गई थी, वहाँ एक ईश्वर का अवतार बढ़िया और एक ईश्वरावतार घटिया साबित हुवा था; (अव्रणं) इस शब्द से कृष्ण महाराज ईश्वरावतार सिद्ध नहीं हो सकते क्योंकि प्रभास क्षेत्र में व्याध के तीक्ष्ण बाण से कृष्ण चन्द्र के चरणारविन्द का छिद जाना और रक्त धारा का बह निकलना वैष्णव भागवत में पाया जाता है। (शुद्धं) इस शब्द से मत्स्य-कच्छप-वराह-नृसिंह-इन अवतारों का खण्डन हो जाता है, क्यों कि विद्याविहीन मनुष्यों को भी पशु कह कर पुकारा जाता है, "विद्याविहीनः पशुः" ये अवतार तो अर्द्धपशु और साक्षात्पशु ही हैं,(अपापविद्धं) इस शब्द से वामनावतार का खण्डन हो जाता है, क्योंकि वामनावतार का पौराणिकविचारानुकूल लघुकलेवर ब्राह्मण का देह धारण कर के बलिराजा को कपट से छलना पुराण सिद्ध है।(कविर्मनीषी) इन शब्दों से रामचन्द्रावतार का खंडन हो जाता है, रामचन्द्र जी का सारे संसार को यथार्थ रूप से जानना तो क्या अपनी धर्म पत्नी जानकी के अन्वेषण करने में भी कठिनताओं का सामना करना पड़ा था। (स्वयंभूः) इस शब्द से मुख्य दशावतारों के अतिरिक्त ऋषभदेव—धन्वंतरि—नारद हंसावतारादि शेष सारे अवतारों का भी सर्वथा खंडन हो जाता है क्योंकि अवतारों

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

के माता-पिता का होना इतिहास सिद्ध है। 'अकायं' और 'अस्नाविरं' शब्द तो इतने स्पष्ट हैं कि इनसे निखिल २४ अवतारों के खण्डन के साथ २ ईसाइयों के देहधारी परमात्मा का ही खण्डन नहीं होता अपितु अर्शनुअल्ल पर बैठे हुवे कुरानी खुदा का तख्त भी चकनाचूर हो जाता है। इस लिये अत्यावश्यक प्रतीत होता है कि परमात्मा सम्बन्धी कल्पित विचारों का सर्वथा परित्याग कर के वैदिक ईश्वर के वास्तविक स्वरूप को समझाजाय और आनन्द प्राप्त किया जाय, यह मेरी मनः कामना है। यथार्थ रूप से उस परमात्मा का जानना—अमृतत्वाय कल्पते—मोक्षफल को। देने वाला है।

ओ३म् ॥ खम्ब्रह्म ॥

"मेरा यह उपदेश कभी तुम भूल न जाना"

इस समस्या की पूर्ति में लिखित

[ले०—आ.युर्वेदाचार्य सन्तलाल दाधिमथ, वैद्यराज, लुधियाना]

(१)

व्यर्थ न आवश्यकताएँ हे वत्स ! बढ़ाना
चाहे बिन उद्योग तुम्हें मिल जाय ख़जाना,
अधिक खर्च होने से होंगे सङ्कट नाना
मेरा यह उपदेश कभी तुम भल न जाना

(२)

आता जिस ने विकट विपत् बातूल† न जाना,
जाती जिस से जमी उखड़ती मूल न जाना
जीवन के उस ने कुछ भी प्रतिकूल न जाना
मेरा यह उपदेश कभी तुम भूल न जाना !

---

† बातूल—आँधि

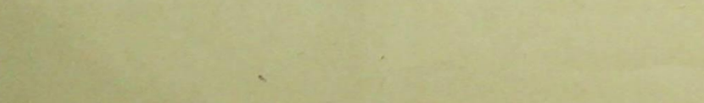

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

१. शिव सङ्कल्प का विजय

(ले०— श्री हरिशरण जी सिद्धान्तालङ्कार गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ)

सङ्कल्प का कोई महत्त्व है या नहीं ? यह प्रथम प्रश्न है, जिस पर कि हमने कुछ विचार करना है। यहाँ प्रसङ्ग वश संस्कृत साहित्य के सौंदर्य का भी दिग्दर्शन होजायगा। सं० साहित्य में प्रत्येक शब्द अपने अर्थ के गुणों का प्रकाशन करता है। उदाहरणार्थ जल वाचक 'वारि शब्द पानी के रोग निवारक गुण का प्रतिपादन कर रहा है। स्वयं जल शब्द 'जल घातने' धातु से सिद्ध होकर पानी को रोगकृमिनाशक बतला रहा है। इसी प्रकार सङ्कल्प के महत्व को देखने के लिये हमें बहुत दूर नहीं जाना, यह संकल्प शब्द ही हमारे प्रश्न का उत्तर देरहा है। सम् उपसर्ग पूर्वक क्लृप् सामर्थ्ये धातु से इसकी निष्पत्ति होती है। सम् का अर्थ है अच्छी प्रकार, और क्लृप् का अर्थ है सामर्थ्य। संकल्प से अच्छा सामर्थ्य पैदा होजाता है। यह भाव संकल्प पद की रचना से सूचित होरहा है। सो संकल्प का महत्त्व यही है कि यह मनुष्य को समर्थ बना देता है। हमारा दृढ़ संकल्प होगा तो यह हो नहीं सकता कि हम अपने कार्य में सिद्धि को प्राप्त न कर सकें। एक रोगी दृढ़ संकल्प द्वारा अपने रोग को दूर कर सकता है। एक निर्बल व्यक्ति अपने अन्दर बल को उत्पन्न कर सकता है। एक निर्धन धनी बन सकता है। शैतान से सताया जाने वाला मनुष्य दृढ़ संकल्प होने पर शैतान को पराजित कर सकता है। एक अबला एक बड़े बलवान् गुण्डे पर विजय पासकती है। एक पराजित जाति स्वातन्त्र्य को प्राप्त कर सकती है। एक मुमुक्षु वृद्धावस्था की जञ्जीरों को तोड़कर मुक्ति लाभ कर सकता है। संक्षेपतः दृढ़ संकल्परूपी तीक्ष्ण तीर के लिये कोई भी अभेद्य लक्ष्य नहीं। लिङ्गार्चन तन्त्र के संकल्प विषयक निम्न शब्द वास्तव में ही सत्य हैं:— "संकल्पं मानसं देवि चतुर्वर्ग प्रदायकम्"। इसमें कहा है कि धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चारों पुरुषार्थों की सिद्धि संकल्प से होती है। "संकल्पमूलः कामो वै यज्ञाः संकल्प संभवाः। व्रतानि यमनियमाश्च सर्वे संकल्प जाः स्मृताः"। इस मनु के श्लोक में संकल्प को क्रमशः काम, यज्ञसम्भव अर्थ, तथा धर्म का उत्पादक बतलाया है।

इसके साथ ही यह भी देखना चाहियें कि संकल्प के बिना किया हुआ कर्म पूर्ण रूप से सिद्ध नहीं होता, वस्तुतः सिद्धि सङ्कल्प की समानुपातिनी होती है। जितना अधिक संकल्प होगा उतनी ही अधिक सिद्धि होगी। पद्मपुराण में कहा है कि

संकल्पेन बिना राजन् यत्कर्म कुरुते नरः।
फलमल्पाल्पकं तस्य धर्मस्यार्धक्षयो भवेत्॥

इसका भावार्थ यही है कि संकल्प के बिना कर्म का फल थोड़ा होता है। धर्म का भी अर्धनाश होजाता है।

(I) एवं सङ्कल्प से सामर्थ्य की वृद्धि

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

होती है। और परिणामतः कार्यसिद्धि अच्छी प्रकार होती है। (II) संकल्प के न होने पर सामर्थ्य के न बढ़ने से कार्य सिद्धि आधी ही होती है। (III) इससे आगे तृतीत स्थान विकल्प का है। उसके होने पर विद्यमान सामर्थ्य भी नष्ट होजाती है। और कार्य सिद्धि तो दूर रही उसका परिणाम नाश होता है। विकल्प, संशय जिसके अन्दर बहुत उत्पन्न होते हैं वह 'संशयात्मा विनश्यति' इन शब्दों के अनुसार अवश्य नाश को प्राप्त होता है।

संकल्प और विकल्प ये दोनों विरोधी शक्तियाँ हैं। संकल्प सामर्थ्य को केन्द्रित कर प्रभावोत्पादक बनाता है। इसके विपरीत विकल्प उसको तितर-बितर कर निष्प्रभाव कर देता है। इन दोनों के न होने पर सामान्य प्रभाव उत्पन्न होता है। एवं संकल्प की उपादेयता तथा विकल्प की हेयता अत्यन्त स्पष्ट है। संकल्प से सिद्धि विकल्प से विफलता; संकल्प से मोक्ष' विकल्प से बन्ध; संकल्प से स्वातन्त्र्य, और विकल्प से परतन्त्रता उपजती है।

संकल्प और विकल्प ये दोनों धर्म मन के हैं 'संकल्प विकल्पात्मकं मनः' इससे ये दोनों ही मन के स्वरूप बतलाये गये हैं। इस बात के ध्यान में होनेपर 'मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः' इस वचन की सत्यता स्पष्ट होजाती है। दैवी प्रवृत्ति संकल्प है। आसुरी प्रवृत्ति विकल्प है। मनरूपी क्षेत्र में इन दोनों का संग्राम ज़ारी है। यही दैवासुर संग्राम है। अँग्रेज़ी में इसे Struggle between 'betterhalf' and' Lower half' यह नाम दिया जाता है। यदि हमारे इस धर्मक्षेत्र में चलने वाले युद्ध में देवों का विजय हुवा तो हमारी उत्तम गति होगी, विपरीतावस्था में गति भी विपरीत ही होगी।

मन (हृदय) क्षेत्र है।

इसमें

देव	तथा	असुर	लड़ रहे हैं।
संकल्प	"	विकल्प	ऊपर नीचे हो रहे हैं।
Better half	"	Lower half	में युद्ध जारी है।
राम	"	रावण	का संग्राम हो रहा है।
युधिष्ठिर	"	दुर्योधन	बुरी तरह से भिड़ रहे हैं।
God	"	Satan	कार्य की उधेड़बुन में लगे हैं।
बुद्ध	"	मार	एक दूसरे को हटाने के प्रयत्न में हैं।
प्रताप	"	मानसिंह	
श्रद्धा	"	कुतर्क	ये सब एक दूसरे के मुकाबले में खड़े हैं।
सत्य	"	अनृत	
अमरता	"	मृत्यु	

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उत्पन्न हो जाती है। घोड़े भी इस शाबाश से प्रोत्साहित होते देखे जाते हैं।

७. अकबर बीरबल के नाम से प्रसिद्ध भेड़िये के पास रहनेवाला उदाहरण भी भयरूप मानसिक विकल्प के शारीरिक प्रभाव को स्पष्ट कर रहा है।

८. वैद्यों द्वारा 'बिना रुधिर बहाये मृत्यु' वाला किया हुआ परीक्षण भी विकल्प के शरीर पर घोतक परिणाम को बतलाता है।

९. संकल्प विकल्प का शारीरिक प्रभाव इस से भी स्पष्ट है कि विद्यार्थियों का भार यात्रा के दिनों के आस पास बढ़ जाता है। पर परीक्षा के दिनों के आस पास न्यून हो जाता है।

इन सब उदाहरणों से शरीर पर संकल्प विकल्प का प्रभाव स्पष्ट है।

सूक्ष्म शरीर पर मन का प्रभाव

बुद्धि पर

शिव संकल्प के मन्त्रों में मन को 'यत्प्रज्ञानम्' ऐसा कहा है। उसी के भाष्य में श्री स्वामी जी ने 'ऋतम्भरा प्रज्ञा साधनम्' इन शब्दों का उल्लेख किया है। 'प्रजा नाति येन तत्प्रज्ञानम्' इस व्युत्पत्ति से मन ही सम्पूर्ण ज्ञान का साधन है। ऐसा स्पष्ट विदित हो रहा है। वस्तुतः मन का यदि संयम करके उसे एक विशेष दिशा में प्रेरित करें तो उस के लिये मार्ग में किसी प्रकार की भी रुकावट नहीं हो सकती। 'अतीता नागत विप्रकृष्ट' सब वस्तुओं का वह ग्रहण कर सकता है। योग विद्या का तत्त्व यही है उस में योगी मन पर पूर्ण काबू पाकर परोक्ष वस्तुओं का भी ज्ञान कर लेता है। उससे कोई बात छिपायी नहीं जा सकती। वेद मन्त्र भी "येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत् परिगृहीतममृतेन सर्वम्" इन शब्दों द्वारा उपरोक्त कथन को स्पष्ट कर रहा है।

यह बात हुई संकल्प की इसके विपरीत यदि प्रतिक्षण मनुष्य विकल्प Imeginations ही में उड़ता रहे तो वह अन्त में कुछ पागलपन की ओर झुक जाता है। उसकी बुद्धि में विकार उत्पन्न होजाता है। Great wits are sure to madness near allied' यह लोकोक्ति हमारे कथन को पुष्ट कर रही है। वस्तुतः कल्पनाओं को मर्यादा में रखने से जहाँ बुद्धि पर अच्छा परिणाम उत्पन्न होता है, उसके विपरीत अमर्यादित कल्पनायें विकार का कारण हो जाती हैं।

इससे भी बढ़कर मन में काम, क्रोधादि विकल्पों के अधिक होने पर तो बुद्धि का बिलकुल नाश ही होजाता है। 'क्रोधाद्भवति सम्मोहः' इस गीता वचन में मूढ़ता का मूल क्रोध रूप विकल्प को ही बतलाया है। क्रोध में ज्ञान का इतना नाश होजाता है कि पिता अपने पुत्र को भी, तिमञ्जले मकान से गिरा कर नष्ट कर सकता है। युधिष्ठिर वनपर्व में द्रौपदी से कहते हैं—

"हिंस्यात्क्रोधादवध्याँस्तु वंध्यान्सम्पूजयेत च।
आत्मानमपिच क्रुद्धः प्रेषयेद्यमसदनम्" ॥ ३९।१

उसके लिये सब कुछ सम्भव होजाता है जो एक क्रूर अज्ञानी पशु के लिये सम्भव है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

४. मन का चित्त पर प्रभाव

वेद में 'यत्प्रज्ञानम्' के साथ २ 'उतचेतः' इन शब्दों का भी प्रयोग हुवा है जो कि मन को चित्त का मूल बतला रहे हैं। 'चेतति स्मरति येन' इस व्युत्पत्ति से उपरोक्त भाव स्पष्ट है। इसी की व्याख्या 'तस्मिञ्चितं सर्वमोतं प्रजानाम्' यह मन्त्र भाग कररहा है।

यह प्रत्येक विद्यार्थी का अनुभव है कि मन के सहयोग होने पर पाठ अच्छी तरह स्मरण होता है तथा मन के अन्यत्र विचरते हुए होने पर पिछला स्मरण किया हुआ पाठ भी भूल जाता है। इस सामान्य अनुभव से ही मानसिक संकल्प विकल्प का स्मृति-विस्मृति पर प्रभाव स्पष्ट है।

५. अहंकार पर

मन ज्ञानोत्पत्ति के द्वारा 'अहंकार' पर प्रभाव डालता है। मानसिक संकल्प द्वारा उत्तम ज्ञान के होने पर अहम्भाव का बिलकुल नाश हो जाता है। इसके विपरीत, विकल्प की सत्ता में मिथ्याज्ञान के होनेपर मनुष्य पूर्ण अहंकारी होजाता है। 'अहम्भावो दयाभावः ज्ञानस्य परमावधिः' इस उपनिषन्मन्त्र में अहम्भावाभाव तथा ज्ञान की पराकाष्ठा को पर्याय बतलाया है इसके साथ 'अथाज्ञानमविद्याहंमतिः स्त्रियाम्' इस अमरकोष के वाक्य में अज्ञान तथा अहंकार को भी पर्याय बतलाया है। कहने का अभिप्राय यही है कि उत्तम ज्ञान के उत्पन्न होजाने पर अहम्भाव का बिलकुल नाश होजाता है। गीता के कर्मयोग का आधार भी यही है कि मनुष्य मन के संयम द्वारा उत्तम ज्ञान उत्पन्न करके कर्तृत्व के अहंकार का नाश करदे। बस फिर उसमें कर्मों का लेप न होगा। 'यस्यनाहं कृतोभावः बुद्धिर्यस्य न लिप्यते। हत्वापि स इमाँल्लोकान्न हन्ति न निबध्यते' १८। १७। इसके विपरीत 'यदा किंचिज्ज्ञोहं द्विप इव मदान्धः समभवम्। तदा सर्वज्ञोऽस्मित्यभवदवलिप्तं मम मनः'॥ इस प्रकार अल्पज्ञान की सत्ता में अहंकार की उत्पत्ति होती है। उस समय मनुष्य 'यक्ष्ये दास्यामि मोदिष्ये' "ओ! मैं यज्ञ करूँगा, दान दूँगा, मुझे बड़ा यश और आनन्द मिलेगा"। 'आढ्योभिजनवानस्मि कोन्योऽस्ति सदृशो मया' अरे! मैं धनी तथा कुलीन हूँ, मेरे जैसा और है कौन? इस प्रकार घमण्ड करता है। इस घमण्ड के कारण उसमें कर्मों का लेप होता है और वह बन्ध को प्राप्त होता है।

इस प्रकार मन ही अहंकार को नष्ट या उत्पन्न करके मोक्ष वा बन्ध का कारण होता है। वस्तुतः "मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः" यह कथन बिलकुल सत्य है।

६. मन का प्रभाव हृदय पर

मन जिस प्रकार बुद्धि के द्वारा अहंकार पर प्रभाव डलाता है, उसी प्रकार चित्त के द्वारा ये हृदय पर निरन्तर प्रभाव डालता रहता है। चित्त में मृत्यु की स्मृति बनी रहे तो मनुष्य के हृदय में अशुद्ध भावनायें उत्पन्न नहीं होने पातीं। इसके विपरीत परमेश्वर के उग्ररूप वा यम (मृत्यु) की विस्मृति के होने पर हृदय कुभावनाओं (Vicious motions) का घर बन जाता

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

देखें देवों का विजय होकर हमें अमरता प्राप्त होती है अथवा असुरों के बोलबालेसे मृत्युका भागी बनना पड़ता है।

२. संकल्प शक्ति का 'सामर्थ्य को केन्द्रित कर सिद्धयुत्पादकता' का गुण हमने सामन्यतः देख लिया इसके गुण-माहात्म्य को विषय का उपसंहार करते हुए हम पुनः देखेंगे। यहाँ इसके व्यापक प्रभाव को देखने के लिए यह आवश्यक है कि हम अपने सब स्थूल शरीरावृत्त साधनों का विश्लेषण करें। वे साधन क्रमशः बुद्धि मन तथा इन्द्रियाँ हैं। इनकी स्पष्टता निम्न कोष्ठक से होजायगीः—

आत्मा के पास साधन हैं।

१. कारण शरीर — १. अन्तः करण। — हृदय, मन, बुद्धि चित्त अहंकार।

२. सूक्ष्म शरीर — मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार (इन्द्रियाँ) — २. बाह्य करण, ज्ञानेन्द्रियां।

३. स्थूल शरीर

एवं शरीरों की दृष्टि से भेद करें तो तीन शरीर हैं स्थूल, सूक्ष्म तथा कारण। करणों की दृष्टि से भेद करें तो अन्तःकरण तथा बाह्यकरण। इन में भी अन्तःकरणान्तर्गत ५ उपविभाग हैं हृदय, मन, बुद्धि, चित्त तथा अहंकार। इन सब पर मानसिक संकल्प का प्रभाव होता है। सङ्कल्प के द्वारा इनकी उन्नति तथा विकल्प से अवनति साधी जाती है। ऊपर कह ही चुके हैं कि मानसिक संकल्पों के द्वारा एक रोगी नीरोग तथा नीरोग रोगी बन सकता है। उस से संकल्प का स्थूल शरीर पर प्रभाव स्पष्ट है। यहाँ एक दो उदाहरण इसी बात के स्पष्टीकरण के लिये और भी देखेंगे।

स्थूल शरीर पर मानसिक संकल्प विकल्प का प्रभाव

१. सब से प्रसिद्ध उदाहरण बेचारे गदर्भ का है जो अपने चारों ओर हरियावल के होने पर भी क्षुधा से पीड़ित हुआ २ दुर्बल हो जाता है। परन्तु शरद्ऋतु में सब शस्यों के शीर्ण होने पर हृष्ट पुष्ट शरीर वाला हो जाया करता है। कारण यह कि वह अपने चारों ओर खाली मैदान देख कर सोचता है कि मैंने तो खाकर सारा मैदान ही खाली कर दिया। संकल्प से ही उसका पेट भर जाता है और वह हृष्ट पुष्ट हो जाता है।

२. द्वितीय उदाहरण भी प्रसिद्ध है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जिस में कि विद्यार्थियों ने पढ़ाई से अवकाश लेने के लिये अपने अध्यापक महोदय को "मास्टर जी आज तो आप कुछ अस्वस्थ हैं" इस प्रकार वारंवार कथन से, उनके मन में विकल्प उत्पन्न कर के उन्हें सचमुच अस्वस्थ बना दिया।

३ काम क्रोधादि विकल्पों का प्रतिबिम्ब झूठ चेहरे में दीख पड़ता है। भय के विकल्प से चेहरा पीला पड़ जाता है। अंगों में कम्प हो उठता है। और अधिक भय के होने पर बीमारी भी होजाती है। भूत प्रेतों के आक्रमण से बीमार होजाने का रहस्य 'विकल्प के शरीर पर अनिष्ट परिणाम उपजाने' के सिद्धान्त में ही है। एक अवास्तविक वस्तु की भी जब आप मन में कल्पना कर लेंगे तो वह आप पर प्रभाव डाले बिना न रहेगी, यहाँ प्रभाव का कारण वह वस्तु नहीं अपितु उस वस्तु की कल्पना ही है। इसी प्रकार आप के मन में उत्पन्न हुवा क्रोध तथा आप के मन की प्रसन्नता भी आपके चेहरे से पढ़ी जा सकती है। वस्तुतः Face is the index of mind यह लोकोक्ति सत्य है। और मन के शरीर पर प्रभाव को स्पष्ट बतला रही है।

'मानसिक चिकित्सा' द्वारा रोगों की निवृत्ति

यह विषय को स्पष्ट करने के लिये सब से प्रबल प्रमाण है। इसमें मैं स्वस्थ हूं इस संकल्प द्वारा ही रोगों को दूर भगाया जाता है। मानसिक चिकित्सक रोगी के दिल में यही दृढ़ निश्चय उत्पन्न करने का प्रयत्न करता है कि बस मेरे छूते ही तेरा रोग भग जावेगा। "अयं मे हस्तो भगवान् अयं मे भगवत्तरः अयं मे विश्व भेषजः, अयं शिवाभिमर्षणः"। इन विश्वासात्मक शब्दों का उच्चारण करके वैदिक चिकित्सक रोगों का रोग हस्तस्पर्श द्वारा दूर करता है। इस चिकित्सा का रहस्य भी संकल्प के प्रभाव में ही है।

यद्यपि अभी तक रोगी के दिल में संकल्प को उत्पन्न करके दूर करने का प्रचार अधिक नहीं हुआ तथापि रोगी के दिल में विकल्प उत्पन्न नहो इस बात का तो प्रत्येक प्रयत्न करता है। इसी दृष्टि से ही Indoor games prescribe की जाती हैं। कारण यह कि यदि रोगी यही सोचता रहा कि मैं रोगी हूं, तो रोग दूर कैसे होगा। वह तो बढ़ता ही जायगा।

निद्रा के अनन्तर रोगविश्रान्ति का अनुभव प्रायः सब को होता है। यहाँ भी रहस्य निद्रा की अवस्था में मैं रोगी हूँ इस प्रकार संकल्प के न उत्पन्न होने में ही है।

पाँचवाँ उदाहरण फलित ज्योतिष सम्बन्धी है जिस में कि ज्योतिषी महाराज की अपार दया से "मैं ३७ साल की अवस्था में मर जाऊँगा" इस निरन्तर के विकल्प से उस अभागे को मृत्यु का शिकार बनना पड़ता है।

६. शाबाश देने से भी क्या होता है? खिलाड़ी के दिल में विश्वास तथा विजय का सङ्कल्प उत्पन्न हो जाता है। परिणामतः उसके शरीर में एक विशेष प्रकार की स्फूर्ति

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सुषुप्ति— कारण (प्राणिमात्र में समान)
↓
स्वप्न— सूक्ष्म
↑
जागृत— स्थूल

जागृतावस्था में स्थूल शरीर कार्य करता है। ठीक इसी प्रकार सूक्ष्म शरीर स्वप्नावस्था में कार्य करता हुवा दीखता है। शरीर की सूक्ष्मता के कारण ही स्वप्नावस्था के भोग भी सूक्ष्म होते हैं। इतने सूक्ष्म कि दिन में वे भोग पदार्थ दीखते भी नहीं। साधारणतया जिन पदार्थों का दिन में हम निरन्तर ध्यान करते हैं रात में स्वप्नावस्था में उन्हीं को हम भोग कर आनन्दित होते हैं। उदाहरणार्थ— एक रोगी सहभोज वाले दिन चूँकि बूँदी का ही ध्यान करते २ सो जाता है, इसलिये वह रात में सूक्ष्म बूँदी को खाता है। परन्तु प्रातः जागृत होने पर कहता है:—

"यत्स्वप्नेऽन्नमश्नामि न प्रातरधिगम्यते।
सर्वं तदस्तु मे शिवं न हितद्दृश्यते दिवा॥"

ऐसे स्वप्न हुआ ही करते हैं। परन्तु कभी २ उन चीज़ों को स्वप्नों में देखकर जिनका कि हमारे से किसी प्रकार का सम्पर्क नहीं, आश्चर्य हो उठता है। उस आश्चर्य की शान्ति के लिये ऊपर का चित्रपट हमारी सहायता करता है। यह ठीक है कि स्वप्नावस्था में साधारणतया सूक्ष्म शरीर ही काम करता है परन्तु सोते हुए भी मेरे हाथ खाज होने पर खुजाते हैं; मैं करवट ले लेता हूं, कई व्यक्ति सोते २ बोलते हुए भी देखे जाते हैं; कइयों को ऐसी भी बीमारी होती है कि जिसमें वे सोते सोते दो दो मीलों की सैर कर आते हैं। सो यह तो काम स्थूल शरीर का है। यह क्यों? यह इसलिये कि शरीरों की शृङ्खला में सूक्ष्म शरीर बीच की कड़ी है। स्थूल शरीर रूप कड़ी का भी उससे कुछ सम्बन्ध है। उसके हिलने पर यह भी हिल जाती है। ठीक इसी प्रकार कारण शरीर रूप कड़ी भी इससे सम्बद्ध है। इसके गति में होने पर उसमें भी गति उत्पन्न होजाती है। और चूँकि वह शरीर प्राणिमात्र का एक है इसलिये दो अरब मनुष्यों में से किसी ने भी कोई भी चीज़ देखी हो उसका भी मुझे स्वप्न होजाता है।

यहाँ एक प्रश्न होता है कि यदि यही बात है तो वह एक व्यक्ति को स्वप्न में क्यों दीखती है? औरों को क्यों नहीं? यह प्रश्न ठीक है। परन्तु कर्म सिद्धान्त को मानने वालों के लिये इसका उत्तर देना कठिन नहीं। श्री हर्ष, नै० च० में 'अदृष्ट मप्यर्थमदृष्टवैभवात् करोति सुस्रिर्जन दर्शनातिथिम्' इस श्लोक भाग में धर्माधर्म को ही उपरोक्त बात का कारण बतलाते हैं।

एवं कारण शरीर की सत्ता इस युक्ति से भी सिद्ध है।

यह कारण शरीर Ether के समान सर्वत्र व्यापक है। होसकता है कि यह हो भी Ethereal. मन वे यन्त्र विशेष हैं जिन के द्वारा इस Etherial शरीर पर विशेष प्रकार के प्रहार किये जाते हैं। ठीक Wireless telegraphy के समान यहाँ सारा कार्य होता है। यहाँ दिल्ली में यन्त्रविशेष से वायु मण्डल पर प्रहार किये जाते हैं। लण्डन में ऐसा ही

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

यंत्र इन प्रहारों को ग्रहण करता है। वायु मण्डल में प्रहार तो सर्वत्र फैल जाते हैं। यंत्र भी लण्डन के सिवाय अन्यत्र कई स्थानों में विद्यमान हैं। प्रहार उन यन्त्रों पर भी होते हैं। परन्तु उनको ग्रहण लण्डन का करता है। ठीक इसी प्रकार एक मन से किये हुए प्रहार सारे कारण-शरीर में व्याप्त हो जाते हैं। मन भी बहुत हैं, परन्तु एक विशेष मन से किये हुए प्रहारों को एक विशेष मन ही ग्रहण करता है सब मन नहीं। जिन मनों में (receptivity) ग्रहण योग्यता है, वे ही एक दूसरे के किये हुए प्रहारों को समझते हैं। उदाहरणार्थ शान्ति पर्व में जहाँ युधिष्ठिर और व्यास बात चीत कर रहे हैं वहाँ एक दम जब कि शरशय्या गत भीष्म मन द्वारा कारण शरीर पर प्रहार करते हैं तब व्यास उनको समझा कर युधिष्ठिर से कहते हैं "शरतल्पगतो भीष्मः शाम्यन्निव हुताशनः। मां ध्याति पुरुषः व्याघ्रः ततो मे तद्गतं मनः"।

*प्रभाकर पन्त को जिस समय वैरागी मारता है उस समय वह भी मन द्वारा कारण शरीर पर प्रहार करता है। उन प्रहारों को दूरस्थ माता लेलेती है और समझती है। इस प्रकार प्रायः माता पिता वा अन्य प्रिय सम्बन्धी की मृत्यु रात्रि में स्वप्नावस्था में जान लेते हैं। कारण यही है कि उस समय मन अपेक्षया शान्त होने के कारण प्रहारों को लेने के लिये तय्यार होता है।

एवं मन का प्रभाव अत्यन्त व्यापक है। ऐसे प्रभाव शाली भृत्य को यदि हम अपने वश में रक्खेंगे तो जो हम चाहेंगें कर लेंगें, पर यदि इस के वश में हो गये तो हमारा कल्याण नहीं, यह हमारी चटनी बना देगा।

इस मन को वश में करके हम उन्नत हो सकते हैं। परन्तु उतने ही उन्नत होंगे जितना कि हमारा सङ्कल्प उच्च २ होगा। नदी अपने उद्गम स्थान से कभी ऊपर नहीं जा सकती ठीक इसी प्रकार हम अपने मानसिक भावों की अपेक्षा कभी अधिक ऊपर नहीं उठ सकते। इस लिये सब से प्रथम आवश्यक बात यह है कि हम "दीनता हीनता" के भावों को परे फेंक कर "अहमिन्द्रो न पराजिग्य इद्धनं" इन उच्च भावों को अपने मन में स्थान दें। आत्मसम्मान करना सीखें Optimism को धारण करें। इस बात को भी हम भूल न जाँय कि Like attracts Like का सिद्धान्त यहाँ काम कर रहा है। (जैसे हमारे भाव होंगे वैसे ही हम बन जायेंगे) दीनता का भाव हमारी ओर दीनता को खैंचेगा और हमें दीनता का घर बना देगा। इसके विपरीत विजय का भाव विजय को आकर्षित कर हमें अवश्य विजयी बनायेगा। इस में सन्देह नहीं कि शिव सङ्कल्प विजय होकर ही रहेगा।

*शिव संकल्प का विजय २ य अध्याय (श्री पं० सातवलेकर जी कृत)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

है, इसलिये यह आवश्यक है कि मनके द्वारा चित्त में मत्यु की स्मृति हम सदा जागृत रक्खें। इसी बात को ध्यान में रखते हुए ही कबीर महाराज प्रत्येक अर्थी के साथ श्मशान तक जाया करते थे।

एवं मन का प्रभाव अवशिष्ट सम्पूर्ण अन्तःकरण पर हम देख चुके। उस सम्पूर्ण विषय को स्मरण रखने के लिये निम्न पट्टिका में रख सकते हैं:—

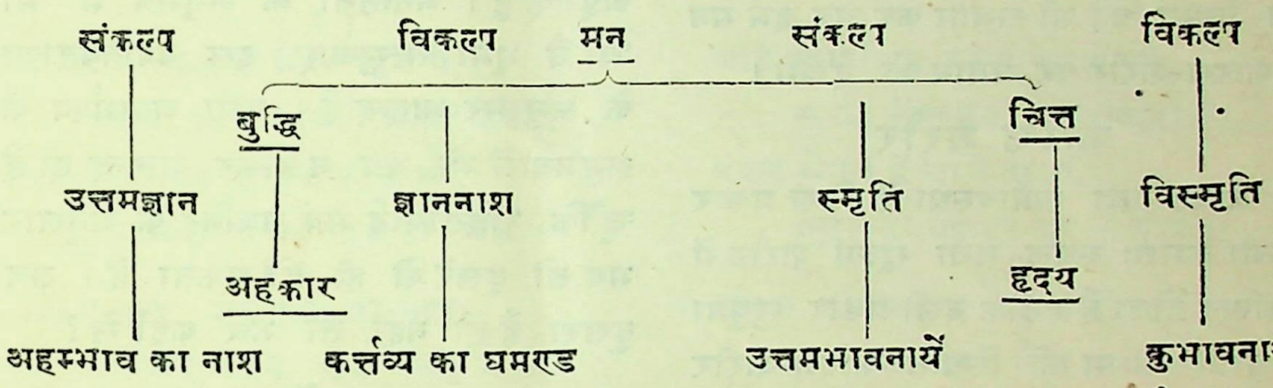

७. मन का प्रभाव बाह्य करणों पर

पहिले की तरह प्रथम हमें यह देखना है कि इस विषय में श्रुति हमें क्या ज्ञान देती है। शिव संकल्प के मन्त्रों में हमें कहा है कि 'येन कर्माण्यपसो मनीषिणः यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः' अर्थात् मन के वश में करने वाले (अपः कर्म तद्वन्तः अपसः) कर्म काण्डी तथा मन के वश में करने वाले (धिया रमन्ते) ज्ञानी जिसके द्वारा कर्म यज्ञ तथा (विदथेषु) ज्ञान यज्ञों में कर्मों को करते है। अर्थात् यह मन ही कर्मेन्द्रियों तथा ज्ञानेन्द्रियों का अधिष्ठाता है। यही (यक्षं-यज-संगति करण) 'यक्ष' इन्द्रियों का पदार्थों के साथ मेल कराने वाला है। आँख का रूप के साथ, श्रवणों का शब्दों के साथ, नासिका का गन्धों के साथ, मुखस्थ जिह्वा का रस के साथ एवं यह ज्ञानेन्द्रियरूप सप्तहोताओं वाला यज्ञ इसी मन के द्वारा विस्तृत किया जा रहा है। (कर्णा त्रिमौनासिके चक्षणी मुखम्) इसके साथ ही साथ 'यस्मान्न ऋते कश्चन कर्म क्रियते' इन शब्दों के अनुसार कर्मेन्द्रिय रूप होताओं का यज्ञ भी इसी मन के द्वारा सिद्ध होता है।

अनुभव भी श्रुति की यथार्थता को पुष्ट करता है। जैसे कि मुझे रणवीर बुलाये, मेरा ध्यान न हो, कुछ अस्पष्ट सी प्रतीति हो, तो मैं थोड़ी देर बाद कहता हूँ "अपि मित्र किं त्वमाह नाश्रौषम् अन्यत्र मना अभूवम्"। इसी प्रकार 'नापश्यम्' 'नाहं वेद रसं गन्धं वा' 'अन्यत्र मना अभूवम्' ऐसे भी शब्द हमने आपस में एक दूसरे को कहते हुए सुने सुनाये हैं। सो यहाँ स्पष्ट है कि मन ही इन्द्रियों का अर्थों के साथ संयोग कराने वाला है। यदि हम इन्द्रियों को विषयों में जाने से रोकना चाहें तो बस मन काबू करलें तब 'यस्मिन् जिते जितावेतौ भवतो दशकौ गणौ' इस बचन के अनुसार

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

यह सब इन्द्रियाँ हमारे काबू में होजावेंगी इसके विपरीत मन को काबू न करने पर, मन हमें इधर उधर भगाकर विषय पंक में गिरा देगा। एवं इस दृष्टि से भी बन्ध और मोक्ष दोनों मन से ही होते हैं। साथ ही यहाँ 'मन का सूक्ष्म शरीर पर प्रभाव' इस विषय को भी समाप्त कर अब हम मन के कारण-शरीर पर प्रभाव को देखेंगे।

कारण शरीर

जाग्रत तथा स्वप्नावस्था में जिस प्रकार आत्मा क्रमशः स्थूल तथा सूक्ष्म शरीर में अवस्थित होता है। ठीक उसी प्रकार सुषुप्तावस्था में आत्मा की स्थिति कारण-शरीर में होती है। यह कारण-शरीर सब प्राणी मात्र का एक है। इस अवस्था में व्यक्ति एकत्व के अन्दर बहुत्व के तथा बहुत्व के अन्दर एकत्व के उच्चज्ञान को प्राप्त करके आनन्दित होता है। 'सुषुप्त स्थान एकीभूतः (प्राणिमात्रेण) प्रज्ञानघनएवानन्दमयो ह्यानन्द भुक् चेतो मुखः प्राज्ञस्तृतीयः पादः' मा. ५. माण्डूक्य के इस मंत्र में आये हुए "एकी भूतः, प्राज्ञः, आनन्द भुक्" इन शब्दों से उपरोक्त भाव स्पष्ट विदित है। इस समय वह प्राणिमात्र को 'मैं हूँ' ऐसा ही अनुभव करता है। जैसा कि हम जाग्रतावस्था में अपने को ही 'मैं' अनुभव करते हैं ; चूँकि इस समय हम स्थूल शरीर में होते हैं ; और स्थूल शरीर हमारा औरों से पृथक् होता है परन्तु ठीक उसी प्रकार सुषुप्तावस्था में कारण शरीर काम करता है। और चूँकि कारण शरीर प्राणिमात्र का एक है इसलिये मैं "प्राणिमात्र में, मैं हूं" ऐसा ध्यान करता हूँ। इस समय 'एकोऽहमेको म आत्मा०' ऐसा न कह करके 'अयुतोहमयुतो म आत्मा अयुतं मे चक्षुरयुतं मे श्रोत्रमयुतो मे प्राणोऽयुतो मे ऽपानोऽयुतो मे व्यानोऽयुतोहंसर्वः' अर्थात् मैं अनन्त हूं। अथवा मैं औरों से अपृथक् हूँ। अनन्तता के अनुभव में भी 'यो वै भूमा तत्सुखम्' इस उपनिषद्वाक्य के अनुसार आनन्द है। तथा अपार्थक्य के अनुभव में भी भय न होकर आनन्द ही है चूँकि "द्वितीयाद्वै भयं भवति" के अनुसार भय तो दूसरे से ही हो सकता है। जब दूसरा है ही नहीं तो भय कहाँ से?

एवं सुषुप्तावस्था में आनन्द का अनुभव सब प्राणिमात्र में समान, कारण शरीर की सिद्धि करता है।

इस शरीर की सिद्धि में दूसरा प्रमाण स्वप्न विज्ञान से हमें मिलता है। ऐसा प्रायः हम सबका अनुभव होता है कि कभी २ स्वप्न में हम उन चीज़ों को भी देखते हैं जिनको कि हमने कभी भी देखा नहीं। कदाचित् उन शब्दों को भी सुनते हैं जिन से कि हमारा किसी प्रकार का सम्बन्ध नहीं होता। 'दृष्टश्चादृष्टश्च श्रुतश्चाश्रुतश्च' इन शब्दों द्वारा छान्दोग्य में उपरोक्त वार्त्ता कही गई है। सो जब हम आश्चर्यित होकर अदृष्ट दर्शन के निमित्त की खोज करते हैं तभी हम कारण शरीर की सत्ता को जान कर अपने प्रश्न का उत्तर प्राप्त कर लेते हैं। इस बात को अधिक स्पष्ट करने के लिये हमें निम्न लिखित चित्रपट तैयार करना चाहियेः—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्रभात-प्रताप

(श्री हरिदत्त मिश्र "मित्र")

(१)

विपुल-विश्व विदारण कालिमा,
विमल दिव्य प्रकाशन लालिमा।
सुखद-सुन्दर-स्वच्छ-प्रभात है,
अवनि पै प्रकटा रवि साथ में।

(२)

अरुणिमा झलकी गिरि शृंग पै,
लख पड़ीं किरणें मनमोहिनी।
परिमलान्वित शीतल वायु भी,
परम-शान्त प्रवाहित हो चला।

(३)

विहग-वृन्द प्रफुल्लित हो महा,
निकल पादप नीड़ निकुंज से।
सरस गायन गाकर मोद से,
गगन-मंडल में उड़ने लगा।

(४)

मृदुल-मञ्जुल-मालति, मोतिया,
सरस-सौरभवान गुलाब भी।
विविध भाँति प्रसूनन की कली,
विकसिकै हँसने बन में लगी।

(५)

विविध रंगन-रञ्जित-पद्म की,
नवल कान्तिमयी कलियाँ खिलीं।
मधुप मञ्जुल पी मकरन्द को,
मुदित-हो उड़ने सर में लगे।

(६)

कलित क्रीडन में शुक हैं पगे,
ललित कोकिल राग अलापती।
मधुर-वादन मञ्जु-मयूर भी,
विपिन में करता प्रिय-नृत्य है।

(७)

विकट-मर्कट-यूथप वृक्ष पै,
किलकिला कर के फिरने लगे।
सुघर-कोमल हैं शशकादि भी
विचरते प्रिय कानन भूमि में।

(८)

अति अलौकिक मञ्जु कुरङ्ग की,
सरल चित्तमयी बहुपंक्तियां।
नवल खेतन में चरने लगीं,
प्रमुदिता वह हो कर के महा।

(९)

सकल मानव-वृन्द प्रसन्न हो,
उठ,लगा करने निज कार्य को।
विमल चित्त मुनीशन के हुए,
समुद-भक्त लगे प्रभुध्यान में।

(१०)

नगर, कानन, ग्राम्य, कुटीर में,
विकट-शोर मचा चहुँ ओर से।
विपुल-बालक-वृन्द प्रमोद का,
कल-निनाद सुना पड़ने लगा।

(११)

सुरभि-वृन्द लिये अति मोद में,
विपिन मध्य गया अब ग्वाल है,
कृषक भी करने निज कार्य को
चल पड़े गृह से सब खेत को।

(१२)

सुमन, पत्र, तृणादिक पै गिरी,
कलित-कान्ति मयी मृदु ओस है।
सलिल गर्भ पड़ीं रवि-रश्मियाँ,
प्रिय 'प्रभात-प्रताप' बता रहीं।

(१३)

नभ-सराङ्कित मंजुल-कंज की,
अरुणिमा मन मोहत प्रात में।
विमल-बुद्धि-विकाशक काल ये,
प्रकृतिका शुभ, सुन्दर-रत्न है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अनोखा परिवर्तन

(लेखक—विश्वम्भर सहाय प्रेमी वैदिकधर्म विशारद)

*****ठको ! तनिक ध्यान से देखिए। **पा** लो देखो ! सामने से भोली भंगिन ***** बड़े प्रेम से उस छोटी बालिका को खिला रही है जिसका नामकरण संस्कार अभी तक हमारे लिए नहीं हो पाया है। वह कभी उसको घुटनों पर बिठाकर उसके मुख को निहारती है, कभी उसके कोमल हाथ को उठाकर अपने मुख पर फेरती है, कभी अपने वस्त्र से उसके कान के ज़ख्म को पोंछती है। इस प्रकार वह अपने समय का उपयोग कर रही है।

सामने से एक नवयुवक आता दिखाई पड़ा "भोली" ने बड़े सन्मान के साथ उसको एक मोढ़े पर बैठने का संकेत किया, यह नवयुवक बड़े नम्र भाव से सलाम कहकर भोली भंगिन का मिजाज़ पूछने लगा भोली ने उसको आशीर्वाद दिया उसको अनेक प्रकार की विद्याएँ प्राप्त हों इस प्रकार दुआ माँगी।

(२)

युवक का नाम मिस्टर स्टीफन है आप पहिले फरीदनगर ग्राम के एक उच्चवर्ण में उत्पन्न हुए थे आपकी आयु लगभग १ - वर्ष की ही होगी जब कि आपके पिता इस लोक से बिदा होगए माता पर ही आपका सारा बोझ आ पड़ा। आपके रूप गुण की ग्राम में बड़ी प्रतिष्ठा थी। आप लगभग वहाँ के सभी कामों में भाग लेते थे विचार पलटते देर नहीं लगती, आपने माता का सारा भार अपने बड़े भाई हरद्वारी पर सौंप दिया। आपके भाई का विवाह संस्कार हो चुका था इसीलिये उनके भाई को अपनी माता तथा स्त्री का सारा भरण पोषण का भार सम्भालना कठिन होगया।

मिस्टर स्टीफन का थोड़ा सा परिचय ऊपर हमने दे दिया है यहाँ पर उनके पहिले नाम को प्रकट कर देना भी आवश्यक प्रतीत होता है, आपके पिता को बड़े पुत्र हरद्वारी की अपेक्षा आप पर विशेष स्नेह था, आपको प्यार में बाबू कह कर पुकारा करते थे इनकी इच्छा थी कि यह पुत्र पढ़ लिख कर बड़ा होने पर यथा नाम तथा गुण वाला हो। बाबू बनकर हमारा गौरव बढ़ावे।

बाबू महाशय का पूरा नाम बाबूराम था। आपके पिताजी ने ग्राम की पाठशाला में पढ़ा कर वहीं पर मिडिल परीक्षा करादी थी परन्तु मृत्यु के पश्चात् अवसर प्राप्त न हुआ जिससे यह और विद्याध्ययन करते।

बाबूराम ने ग्राम से जाकर पास ही के नगर में एक अछूत पाठशाला में विद्या पढ़ाना प्रारम्भ कर दिया दो तीन मास के उपरान्त फ़रीदनगर ग्राम में यह समाचार बिजली की तरह दौड़ गया। समस्त ग्राम वाले महाशय बाबूराम को क्रिस्तानहुआ

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मानने लगे। माता ने जिस समय इस प्रकार का समाचार सुना तो वह भी व्याकुल होगई।

दैवयोग से महाशय बाबूराम ग्राम में माता से मिलने चले आए। अनेक प्रकार के ग्राम निवासी प्रश्न करने लगे। बाबूराम को यह तनिक भी ध्यान न था कि अछूत पाठशाला में पढ़ाने से ही हिन्दू-धर्म से भ्रष्ट होने का कलङ्क लग जायगा। उसको बड़ा आश्चर्य हुआ। ग्राम निवासियों ने उसकी माता पर बल दिया, कि तू इस लड़के से यदि अपने बड़े पुत्र के समान व्यवहार करेगी, उसको अपने पात्रों में खिलावेगी तो तू भी हिन्दू-समुदाय से पतित कृष्टान समझी जायगी।

इस प्रकार के भय को सुनकर उसका हृदय काँप उठा। मन दुखी होगया, मातृ-प्रेम से विवश होकर उसने पुत्रवत उसको खिलाया-पिलाया। साथ ही उसको पाठ-शाला छोड़कर घर चले आनेपर विवश किया।

महाशय बाबूराम अपने कार्य को अपूर्ण छोड़कर आना पाप समझता था। वापिस जाकर फिर अपने कार्य को दूने उत्साह से करने लगा, परन्तु जिस स्थान पर उसने वह पाठशाला खोल रक्खी थी उस स्थान के रहने वाले हिन्दू समुदाय का बर्ताव भी अपने प्रति अनुचित तथा कठोर समझा तो उसको भिन्न २ विचारों ने घेर लिया—

इन्हीं दिनों हापुड़ में जहाँ महाशय बाबूराम पढ़ाते थे ईसाई मिशन के प्रचारार्थ कई बड़े पादरी आए हुए थे। महाशयबाबूराम से प्रायः मिलते उसके कार्य्य की सराहना करते तथा उसके प्रति सहानुभूति तथा प्रेम प्रदर्शित करते।

बाबूराम भी उनके संसर्ग में आता ही गया बराबर उनके साथ मिलता। अछूतों में शिक्षा-प्रचार करने पर घंटों विचार करता।

मुख्य पादरी जोन स्टाक ने महाशय बाबूराम को ईसाईधर्म ग्रहण करने पर तैय्यार कर लिया। बाबूराम जिसने हिन्दू समुदाय का इस प्रकार कठोर बर्ताव देखा बड़ी प्रसन्नता से उस समुदाय में जिसमें जान देखी, प्रेम देखा, सहानुभूति देखी, सम्मिलित होने पर तत्पर होगया। और बाबूराम से बदल कर वही मिस्टर स्टीफन बन गया जो कि भोली भंगन के पास बैठा हुआ है।

(३)

मिस्टर स्टीफन ने भोली भंगिन द्वारा उस लड़की का भली प्रकार पालन पोषण कराया जिसको एक बड़े रहस्य के साथ उसने प्राप्त किया था जिसका वृतान्त यहाँ पर प्रकट करना असंगत न होगा।

हापुड़ के समीप एक छोटे से ग्राम में लाला शिवदयाल एक प्रतिष्ठित ज़मीदार वैश्य कुल उत्पन्न रहते थे। उनके बड़े भाई की मृत्यु ठीक ऐसे समय हुई जब कि उनकी स्त्री सुशीला पूर्ण युवती थी। पति की मृत्यु के उपरान्त उसको दो वर्ष कठोर तपस्या में व्यतीत करने पड़े। परन्तु फिर उसपर शिवलाल की कुवासनाओं का चक्र चल गया।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ईश्वर की महिमा अपार है कुछ समय के पश्चात् सुशीला के एक लड़की उत्पन्न होगई। मिस्टर स्टीफन को लड़की उत्पन्न होने से पूर्व ही इस घटना का किसी प्रकार समाचार ज्ञात हो चुका था, उसने सुशीला को अपने एक मित्र के यहाँ पन्द्रह दिवस के लिये रखा दिया था। सुशीला, जब वह कन्या दस दिन की होगई थी वहीं झोंपड़ी में छोड़कर फिर अपने ग्राम में शिवलाल के पास चली गई।

मिस्टर स्टीफन ने उसे लेकर भोली भंगिन को दिया और उसके पालन-पोषण का सारा भार भोली पर रखा केवल पाँच रुपये मासिक भोली को देने स्वीकार किए।

(४)

भुवन भास्कर की सुनहरी किरणें पृथ्वी की वनस्पति पर पड़नी ही प्रारम्भ हुई होंगी जबकि हमने उस बालिका को गले में पुस्तकों का बस्ता डाले हुये पाठशाला जाते देखा। इस समय उस बालिका की आयु लगभग दस बर्ष की होगी। बालिका के मुख पर गुलाब के पुष्प के समान लाली है, होंठों पर मन्द २ मुस्कान है। उसको यह तनिक भी चिन्ता नहीं कि संसार में कहाँ क्या होरहा है। इस समय वह चौथी कक्षा में पढ़ रही है। उसका बदन इस समय ऐसा प्रतीत होता है कि कोई उसका वारिश अवश्य है देखने में स्पष्टतया वह सनाथा प्रतीत होती है।

शनैः २ दो बर्ष और भी बीत गए बालिका की आयु १२ वर्ष की हो चुकी है। इस समय वह बालिका मिस्टर स्टीफन के पास ही रहती है वही स्वयं उस के भरण पोषण का प्रबन्ध करते हैं।

मिस्टर स्टीफन की छोटी झोंपड़ी के सामने प्रायः समीप के रहने वाले भंगी जाति के बच्चे खेलते रहते हैं उन के प्रति उनका बड़ा स्नेह था। वहीं पर स्टीफन ने कुछ फुलवाड़ी लगा रखी थी।

दैव योग से एक दिन वह उस बालिका से वार्तालाप कर रहे थे। स्वयं उसके भाग्य पर विचार करते जाते थे। बालिका ने स्टीफन को इस समय तक पिता समझा था। उस भोली भंगिन को माता मान रखा था। परन्तु इस समय से जब से वह भोली जुदा हुई थी अपनी माता को जानने में उत्सुक थी। वह सोचती थी कि यदि मेरी यही माता होती तो क्यों मैं उस से अलग की जाती।

प्यार २ में उसने स्टीफन से पूछा "मेरी माता कहाँ है" स्टीफन सुन कर चुप हो गया परन्तु उस से फिर पूछा जिस के उत्तर में स्टीफन ने कहा "तुझे आगे चलकर स्वयं पता चल जायगा"।

बालिका उस दिन से कुछ अन्य मनस्क रहने लगी। माता के जानने को उसका मन हर समय उत्सुक रहता।

प्रति सप्ताह रविवार को मिस्टर स्टीफन निकट के ग्रामों में प्रचार करने जाया करते थे कभी २ अपने साथ उस बालिका को भी ले जाया करते थे जिस समय का वृतान्त हम लिख रहे हैं उस समय हिन्दू संप्रदाय में बहुत अन्तर पड़ गया था। साधारण छूत छात को कुछ भी परवाह नहीं रही ग्रामीण

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

नवयुवक जो नगरों की अंग्रेजी पाठशालाओं में पढ़ रहे हैं, कुछ भी ईसाई लोगों से मिलने में संकोच नहीं करते।

मिस्टर स्टीफन हापुड़ के निकट वाले ग्राम में प्रचार कर रहे थे दैव योग से उन की दो तीन नई रोशनी में पले हुए नव युवकों से मुठभेड़ हो गई। इनके विचारों को सुन कर मिस्टर स्टीफन बड़े प्रसन्न हुए। नवयुवकों ने इन का पूर्व वृतान्त सुन कर अत्यन्त खेद प्रगट किया और हिन्दू धर्म की महानता को बतलाया। मिस्टर स्टीफन कथन मात्र से सन्तुष्ट न हुए उन्होंने क्रियात्मक रूप में उस धर्म की विशेषता को उनके सन्मुख प्रकट किया जिस में वह हिन्दू धर्म परित्याग करके दीक्षित हो चुके थे।

नव युवकों ने बड़े आदर के साथ उनको अपने स्थान में बिठाया और साथ ही साथ फिर हिन्दू धर्म में वापिस आने की प्रेरणा की

मिस्टर स्टीफन जिसने हिन्दू धर्म की अनेक पुस्तकों का अवलोकन किया था यद्यपि भली प्रकार समझते थे कि हिन्दू धर्म महान है परन्तु वह उन लोगों के व्यवहार से दुखी हो चुके थे, जो धर्म के नाम पर मन माने अत्याचार हिन्दू भाइयों पर कर रहे हैं। उन्होंने उन नवयुवकों को उस बालिका की दुखित कहानी भी कह सुनाई, जो उन के साथ उनकी पुत्री बनी हुई थी।

नवयुवक सुन कर दंग रह गए। उन्होंने स्टीफन को विश्वास दिलाया कि वह उन दोनों को हिन्दू धर्म में वापिस लेकर दम लेंगे। मिस्टन स्टीफन सायंकाल के ६ बजे लौट कर अपने स्थान पर आगए।

(५)

"सुशीला तुम अपनी कोख से उत्पन्न हुई लड़की को अपने पास रखो। देखो उस को हिन्दू धर्म में वापिस लेने से हमारा एक और भाई हिन्दू हो सकता है"। इतना कह कर वह नवयुवक उत्तर की प्रतीक्षा करने लगा।

सुशीला ने कहा, "हाय इस पापमय जीवन से अब छुटकारा मिलने वाला है। उसको क्यों पाप रूपी कीचड़ में फँसाते हो"?

इतना कह कर वह देवी आंसू टपकाने लगी।

नवयुवक ने कुछ सन्तावना देते हुए कहा "माता इतनी निराश क्यों होती हो। परमात्मा की कृपा से उस बालिका की रक्षा करो"।

सुशीला ने सँभल कर कहा "इस झूठे हिन्दू धर्म के ढकोसले को क़ायम करने वाले लोगों से इस का छुटकारा हो चुका है अब क्यों बन्धन में उसे जकड़ते हो।"

नव युवक ने उसे समझाया "माता उस लड़की को वापिस लो हम तुम्हारे रक्षक हैं।"

सुशीला ने फिर लज्जा को परित्याग करके कहा "इस दुष्ट दुराचारी शिवलाल से रक्षा करो उसे बन्धन में न फँसाओ यह कदापि उसे ग्रहण न करने देगा"। नवयुवक अनेक प्रकार से उसको समझाता बुझाता रहा। अन्त में वह कुछ निश्चय कर के घर चला गया। इस का रहस्य पाठकों को

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

आगे ज्ञात हो जायगा कि उसने क्या निश्चय किया था।

(६)

मिस्टर स्टीफन् उस बालिका के हठ को बार २ सान्त्वना देकर रोकता परन्तु वह बड़ी समझदार हो चुकी थी। इस कारण विवश हो मिस्टर स्टीफन ने उस का पूर्व परिचय सुना दिया। वह बालिका इस समय युवावस्था को प्राप्त हो चुकी थी। यौवन के तमाम चिन्ह उसके मुख पर झलकते थे। स्टीफन उसको बचपन से ही बिटिया कह कर पुकारा करते थे।

बिटिया अपनी माता के सम्बन्ध में सुन कर आंसू टपकाने लगी। स्टीफन ने उस के पिता के सम्बन्ध में एक अक्षर भी न कहा।

रविवार के तीन बजे होंगे परमात्मा की ओर से कुछ संयोग का समय उपस्थित हो गया। स्टीफन ने उसी ग्राम में जाकर प्रचार करना प्रारम्भ किया ही था कि आँधी मेंह जोर से आगया, ऐसी दशा में स्टीफन तथा बिटिया दोनों पास के एक टूटे हुए झोंपडे में जिस में एक चर्मकार अपने परिवार के पालनार्थ बैठा जूते बना रहा था। झपट गए, वहां जाकर वर्षा से अपने को बचाया।

उसी झोंपड़ी के पास एक अच्छा पक्का मकान था जिसका पक्का द्वार सामने से दिखाई पड़ रहा था। दैवयोग से स्टीफन ने एक स्त्री को द्वार पर खड़ी देख कर बिटिया को संकेत कर के कहा—"देखो! सामने तुम्हारी जन्म दात्री खड़ी है।"

स्टीफन पूरे तौर से कह भी न पाया था कि समझदार बिटिया झपटती हुई उस स्त्री के पास पहुंची और बिना संकोच उस के चरणों को पकड़ लिया। उस स्त्री ने भी अपनी कोख से उत्पन्न की हुई पुत्री को कुछ पल के लिए पुत्रीवत् प्रेम किया परन्तु ज्योंही हिन्दू समुदाय का भय उसे प्रतीत हुआ त्योंही उसने बिटिया को अलग हट जाने को कहा।

बिटिया रोने लगी आँधी पानी का ज़ोर था। शिवलाल वहाँ पर नहीं था। उस नवयुवक ने जिसने सुशीला को समझाया था आँधी पानी के समय ही फिर समझाने की ठानी।

सुशीला के मन पर भारी प्रभाव पड़ा, उसने लोक लाज को परित्याग कर दिया, शिवलाल का झूठा भय भी उसने दूर भगा दिया और सप्रेम बिटिया को गले लगा लिया। उस के मुख को अवलोकन किया। और एक गहरी सांस भर कर पृथ्वी पर गिर पड़ी। स्त्री जाति की बुद्धि का पता लगाना दुष्कर कार्य होता है। प्राणों को तुच्छ समझने वाली स्त्री साध्वी महिलाएं बड़ी से बड़ी विपत्ति को सहन कर लेती हैं परन्तु अपमान सहन करना उन को कठिन होता है। अपमान का ध्यान आते ही मूर्च्छित होकर सुशीला सदैव को ही परमात्मा की गोद में सो गई।

समस्त ग्राम में हाहाकार मच गया कोई जादू समझने लगा कोई कुछ और शंका करने लगा। बिटिया जो बहुत समय से माता के मिलने को, उस की प्रेम मयी गोद में कुछ शेष लड़कपन बिताने को

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उत्सुक हो रही थी । निराशा के गम्भीर सागर में निमग्न हो गई ।

(७)

शिवलाल को दो तीन दिन पश्चात् सुशीला की मृत्यु का समाचार ज्ञात हुआ वह भी अनेक प्रकार की चिन्ताओं में पड़गया । लज्जा के कारण वह जिन दुष्कर्मों को प्रकट न होने देता था । वे सभी सब पर प्रकट हो गए । उस की सारी मान प्रतिष्ठा भंग हो गई नवयुवकों ने मिस्टर स्टीफन तथा बिटिया को पवित्र वैदिक धर्म में फिर से प्रवेश कराया ।

मिस्टर स्टीफन के कोमल हृदय पर सुशीला की अकस्मात् मृत्यु से गहरी चोट पहुंची । भारत की महिलाओं ने अनेक कठिनाइयों के पड़ने पर अपमान को सहन न करके अपने प्राण त्याग दिए हैं; परन्तु इस घटना ने स्टीफन के अन्दर नव जीवन का संचारकर दिया ।

वही स्टीफन स्वामी मुक्तानन्द बन कर आज ऋषिकेश के पर्वतों में कार्य्य कर रहा है । वह बिटिया सुशीला की कोख से उत्पन्न हुई आज महादेवी के नाम से अपना पवित्र जीवन वैदिक धर्म की सेवा करती हुई व्यतीत कर रही है । दोनों नवयुवक जिन्हों ने इस पर्वत्र कार्य को पूर्ण कराया था दक्षिण अफ्रीका में वैदिक धर्म-प्रचार कर रहे हैं । पाठको ! घर जाकर आप भी क्रियात्मक रूप से अछूतों की उन्नति की ग्रन्थि को सुलझाइये । इस से अनोखा परिवर्तन होगा ।

कौन?

(श्री रामजीवन शर्मा "जीवन")

छू के भी अछूतों को अछूती अस्थियाँ जो रहें,
विश्व में कहेगा हा हमें तो "विप्रवर ! " कौन ?
चार भुजा वाले को चमार पूजने जो लगें,
चर्च की विदेशियों के लेगा तो ख़बर कौन ?
जाने दिए जायँ मंदिरों में जो अछूत लोग,
पूजेगा कवारी कूंजरों की तो कबर कौन ?
हिन्दू जो गिनाने लगें आज ये अछूत मित्र !
मुल्ला पादरी को तो बँधावेगा सबर कौन ?

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

व्यापारे वसते लक्ष्मीः ।

(ले०—भोलानाथ कपूर, प्रयाग)

आज बी० ए० का गज़ट निकलने वाला है। मोहन बड़ी उत्सुकता में है। कभी बाहर जाता है तो कभी भीतर। इतने में मोहन बाहर देखता है कि उनका एक मित्र गज़ट हाथ में लिये बैठा है। मोहन ने देखा कि बी० ए० का परीक्षा-फल उस में प्रकाशित है। मोहन अव्वल दर्जे में और उनका मित्र कृष्ण दूसरे दर्जे में उत्तीर्ण हुए। मोहन ने पहिले पिता जी के पैर छुए पश्चात् घर जाकर माता जी के चरण छूकर यह सुसंवाद उन्हें सुनाया सब लोग मोहन की प्रशंसा करने लगे किन्तु मोहन फूल कर कुप्पा नहीं बन गए पर उनके सिर पर यह चोट लगी कि अब क्या करना चाहिये। नौकरी करना नहीं तो फिर जीविका का उपाय ढूँढ़ना चाहिये। बहुत सोच विचार के पश्चात् अपने मित्रों की सम्मति से कार्य्य स्थिर किया। उनके एक मित्र ने यह सम्मति दी कि "उत्तम खेती मध्यम बान" इसको मोहन ने कण्ठ कर लिया और कहा कि इसी के अनुसार खेती या व्यापार करूँगा नौकरी का नाम भूल कर भी न लूँगा।

मोहन के पिता A. G. Office में क्लर्क थे उन्होंने मोहन से नौकरी दिला देने के लिये कहा।

मोहन—पिताजी मैं नौकरी न करूँगा।

पिता— तो फिर क्या करोगे ?

मोहन— अपने मित्र की सम्मति के अनुसार खेती या व्यापार करूँगा।

पिता— मोहन बावले मत बनो, बी. ए. होके हल जोतोगे या खेत काटोगे।

मोहन— पिता जी बी. ए. हो के हल जोतना और खेत काटना अपने को काट न खावेगा।

मोहन के पिता के पास इतना धन नहीं कि चार हज़ार रुपये लगा कर कोई व्यापार किया जाय। आप की आय का अधिकांश भाग मोहन के पढ़ाने में व्यय होगया था। अब मोहन के पिता मोहन से रुष्ट रहने लगे। एक दिन उन्होंने स्पष्ट कह दिया कि यदि मैं जानता कि तुम पढ़ कर ऐसे निकम्मे बनोगे तो बी. ए. क्या ए, बी, सी, डी भी न पढ़ाता। इधर मोहन पिता के वाक्यों से विचलित थे उधर उनकी माँ मोहन से कहा करती हैं कि अब ब्याह करलो।

एक दिन रात्रि में मोहन अपने घर से एक लोटा, एक गिलास और दो एक साधारण कपड़े लेकर चल पड़े। कानपुर पहुँच कर मोहन ने एक सेठ के हिस्से के साथ दुकान खोली। ठीक छः मास पश्चात् हिसाब हुआ २५) रुपये मासिक खर्च खाते में डाल कर बिना एक कौड़ी लगाए मोहन को ६ मास में तीन, या चार सौ के लग भग लाभ के मिले।

अब क्या था कुछ खाते कुछ दुकान में लगाते उन्हें दो तीन हज़ार के लग भग आमदनी होने लगी। अब मोहन ने अपनी दुकान अलग करनी चाही। एक दिन मोहन अपने घर आए।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

माता— मोहन, मेरा तो तू कहना नहीं मानता इस से मै कुछ न कहूंगी।

मोहन— अब समय है कि मैं आप की आज्ञा का पालन करूँ।

माता— अच्छा शीघ्र ही व्याह कर के बहू लादे।

कुछ दिन घर रहने के बाद मोहन फिर व्यापार करने के लिये कानपुर चले गए।

एक दिन सेठ के मुनीम ने अपनी लड़की की शादी की चर्चा चलाई।

बात होते मालूम हुआ कि मोहन अविवाहित हैं।

सेठ—मोहन तुमने अब तक व्याह क्यों न किया?

मुनीम— आप अंग्रेजी पढ़े हैं इस से अब तक कुमार हैं।

सेठ— नहीं, कोई अंग्रेजी पढ़ने से क्या व्याह नहीं करता अरे कुल में दोष होगा।

मोहन उस समय तो कुछ भी न बोले पीछे उन्होंने सब हाल मुनीम को बता दिया। दूसरे दिन मुनीम ने मोहन के पिता के पास जाकर मोहन की शादी ठीक कर ली व्याह हो जाने के पश्चात् मोहन ने सेठ से अलग हो कर अपनी अलग दुकान खोल ली।

मोहन की दुकान ने छः वर्ष में इतनी उन्नति की कि दूकान की पूंजी डेढ़ लाख रुपये के लगभग हो गई। ५०) रु० मासिक एक नौकर रहने लगा।

अब एक दिन मोहन का रेल में अपने पुराने मित्र कृष्ण का मिलाप हो गया। मोहन ने दशा पूछी तो ज्ञात हुआ कि ६०) रु० मासिक मिलते हैं और हेडमास्टर छाती पर सवार रहते हैं।

मोहन— कितना रुपया इतने दिनों में इकट्ठा कर लिया।

कृष्ण— दो तीन सौ से अधिक मेरे पास नहीं हैं। आपके पास?

मोहन— आपने बहुत थोड़ा बचाया आप की कृपा से मेरी कोठी में इस समय दो लाख के करीब है और यदि भगवान की कृपा हुई तो कुछ दिन के पश्चात् दूनी हो जायगी।

कृष्ण— क्यों मुझे चिढ़ाने की कोशिश करते हो?

मोहन— अच्छा चल कर देख लो। मोहन कृष्ण को कोठी पर ले गये, कृष्ण के होश हवोश जाते रहे।

मोहन— यदि आप चाहें तो मेरे यहाँ १००) रु० मासिक पर आ जायँ।

कृष्ण— अजी कौन झगड़े में पड़े।

मोहन— झगड़ा नहीं "व्यापारे वसते लक्ष्मीः" यदि लक्ष्मी का दर्शन करना चाहते हो यदि स्वतन्त्रता के साथ जीवन व्यतीत करना चाहते हो तो कुछ महीने की छुट्टी लेकर काम कर देखो, मन भरे तो करना नहीं तो नहीं।

कृष्ण ने मोहन की बात मान ली। १ वर्ष में खा पी कर ७०० रु० बचे अब तो मोहन

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

की तरह कृष्ण को भी व्यापार का चसका पड़ गया। धीरे धीरे कृष्ण ने भी एक फर्म खोली जिसकी उन्नति हुई। किन्तु मोहन की तरह इन में अध्यवसाय न था इसी से उस कोठी के सदृश इन्होंने धन न कमा पाया।

मोहन के दो वर्ष का बालक है। मोहन की माता उसे बड़े आनन्द से गोद में लिये दिनभर खिलाती रहती है। मोहन जब बाहर जाते हैं तब पिता की विशेष देख रेख करनी पड़ती है। मोहन के माता पिता कहते हैं कि नौकरी व्यापार के पासंग भर है। तहसीलदारों के वेतन के नौकर मेरे यहाँ हैं। अच्छा हुआ कि मेरा मोहन नौकरी पर न गया।

---

* अनुरोध *

(श्री पं० गयाप्रसद जी शाक्षी साहित्याचार्य "श्रीहरि")

कहते हैं, प्रेमासव पीकर, सुध-बुध सब खो जाती है।
प्रेमी-प्रेमपात्र में केवल, एकवृत्ति हो जाती है॥
मैं पागल हूँ, मतवाला हूँ, जग कहता तो कहने दे।
प्रियतम! अपनी प्रेमकुटी में, मुझको बैठा रहने दे॥

* * *

ये आँसू मोती हैं मेरे, माला मुझे बनाने दे।
हैं टूटी लड़ियाँ पर इन से, अपना कण्ठ सजाने दे॥
हृदयदेव! उपहार-हार यह, मेरा बस, अपना लेना।
मेरे तेरे भेदभाव का—अन्त अन्त में कर देना॥ २॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्राचीन तथा असली श्रीमद्भगवद् गीता

(ले० श्री वीरहरि विद्यार्थी)

जितने प्राचीन धर्म ग्रन्थ देखे जाते हैं, वे प्रायः स्वार्थी, लोलुप तथा यशेच्छुक लोगों के द्वारा इस प्रकार बिगाड़े गये हैं कि उन्हें पढ़कर कोई भी विद्वान् उनकी सत्यता पर ही नहीं, बल्कि उनके अस्तित्व तक पर भी विश्वास नहीं करता। महाभारत रामायण को ही लीजिए, देखिए कितना मसाला धन-लोभी पोपों ने अपनी गाँठ से मिला दिया है। बात भी ठीक है, यदि वे ऐसा न करते तो उनकी पेट-पूजा कहाँ से होती। भारतवर्ष में प्राचीन ग्रन्थों को तो यह रोग ही है, बिना प्रक्षिप्त-वर्णन के ग्रन्थ पाये ही नहीं जाते ऐसे उदरचेता, उद्भट विद्वानों ने संस्कृत ग्रन्थों में ही कृपा नहीं की, अपितु हिन्दी ग्रन्थों में भी अपना हस्त-लाघव दिखला दिया है। गोस्वामी तुलसीदास विरचित रामचरित मानस को देखिए। उस में कितना प्रक्षिप्त वर्णन है? यह विद्वानों से छिपा नहीं। सप्तमकाण्ड तो, जिस में *भगवान् रामचन्द्र के राज्य-शासन-काल से मरण पर्यन्त वृत्तान्त है, बिलकुल ही प्रक्षिप्त है।

सम्प्रति श्रीमद्भगवद्गीता में ७०० श्लोक तथा अठारह अध्याय पाये जाते हैं। इतने विस्तृत वर्णन पर कोई भी विद्वान् विश्वास नहीं कर सकता, कि श्रीकृष्ण ने घण्टे दो घण्टे में धनुर्धर-अर्जुन को कर्मयोगमयी गीता के रहस्य को समझाया होगा। यह हो सकता है कि पहिले गीता का आकार छोटा हो जो इतने समय में अच्छीतरह वर्णन किया जा सकता था। महात्मा लोकमान्य तिलक आदि विद्वानों की भी यही सम्मति है।

सुमात्रा जावा के समीप एक बालीद्वीप है। वहाँ हिन्दुओं की आबादी है तथा हिन्दू राजा ही राज्य करते हैं। डाक्टर नरहर गोपाल सर देसाई को जब ज्ञात हुआ कि बालीद्वीप में हिन्दू रहते हैं, उनके आचार विचार सब हिन्दुओं के सदृश ही हैं, तब वे उक्त द्वीप को खोजते हुए रवाना हुए। वहाँ पहुंचने पर देशाई जी एक राजा के आतिथ्य-सत्कार में रहे। राजा ने उन्हें भारतवर्ष (स्वदेश) से आया जान अत्यन्त आनन्द मनाया था। बालीद्वीप में जो धार्मिक-ग्रन्थ हैं, वे सभी हैं तो संस्कृत में ही, परन्तु लिपि "कवि" भाषा में है, जो वहाँ की एक प्रधान-भाषा है। कागज़ों के स्थान पर ताड़-पत्रों का काम लिया गया है देशाई जी ने उक्तद्वीप के एक उद्भट विद्वान् पण्डित पडंडा-वयान-पिडड Padanda Wayan Pidad के द्वारा महाभारत के भगवद्गीता का स्थल पढ़वाया। वहाँ उनको ७०० श्लोकों के स्थान में केवल ७० श्लोक ही मिले। देशाई जी ने उन्हें नोट कर लिया।

* ऐश्वर्यस्य समग्रस्य धर्मस्य यशसः श्रियः। ज्ञानवैराग्ययोश्चैव षण्णां भग इतीरणम्॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

और यहाँ सन् १९१४ ई० के जुलाई मास के माडर्न-रिव्यू Modern Review कलकत्ता में The Bkagavad Gita from the Island of Bali शीर्षक एक लेख निकलवाया, जिसके आधार से स्वामी मंगलानन्द पुरी सन्यासी ने हिन्दी में 'प्राचीन भगवद् गीता' के नाम से ७० श्लोकों का एक संग्रह प्रकाशित करवाया। उस में प्रति श्लोक पर महत्वपूर्ण टीका-टिप्पणी भी की है। इसके अतिरिक्त एक विचारणीय भूमिका भी जोड़ दी है।

इस प्राप्त हुई गीता में अध्याय नहीं हैं। हाँ, विषय-क्रम अवश्य है। सनातनधर्मी तथा अवतारवादी इसे देखें और विचार करें। जिन श्लोकों का आश्रय लेकर वे अवतारवाद सिद्ध करते हैं, उन का इसमें नामोनिशान भी नहीं है।

रामायण में सेनापति सुग्रीव सीतान्वेषणार्थ अपने सैनिकों से कहता है—

"यत्नवन्तो यवद्वीपं सप्तराज्योपशोभितम्।
सुवर्णरूपकद्वीपं सुवर्णाकर मंडितम्॥"

रामायण किष्किंधा काण्ड

इसमें यवद्वीप, जो उस समय सात राज्यों से अलंकृत था तथा सुवर्ण रूपक द्वीप का वर्णन है। 'यव' शब्द से 'जव' और कुछ काल में उच्चारण बदलते २ जावा पड़ गया। संस्कृत 'य' को अब भी अधिकाँश पंडित 'ज' कहते हैं। प्रमाण देते हैं—"यकारे जकारे च भेदो नास्ति।" इसी प्रकार 'सुवर्ण रूपक' द्वीप का नाम बिगड़ते बिगड़ते सुमात्रा होगया। ये दोनों द्वीप हिन्दमहासागर में स्थित हैं। पूर्वकाल में यहाँ आर्य्य (हिन्दू) रहते थे और वे वैदिक धर्मावलम्बी थे। अरब के मुसलमानों ने इन पर आक्रमण किया और बरज़ोरी से मुसलमान बना लिया। उनके धर्म-ग्रन्थों को जलाकर नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। एक दो धर्म-प्रेमी पंडितों ने बालीद्वीप भागकर अपनी जान बचायी और बचे-खुचे प्राचीन धर्म-ग्रन्थ सुरक्षित रक्खे। ज्ञात होता है प्राचीनकाल में इन द्वीपों के साथ भारतवर्ष का पूरा सम्बन्ध था। यहाँ से वहाँ, लोग जाया-आया करते थे। समुद्र-यात्रा का वृतान्त तो मिलता ही है। इससे यह नहीं कहा जा सकता है कि वे लोग नाविक-विद्या नहीं जानते थे।

ब्रह्म-ज्ञान, रसायनं स्वरधरान्वेदाँस्तथा ज्योतिषम्
ह्येषं व्याकरणं धनुर्जलतरङ्गं वैद्यकं स कृषिः।
कोकं वाहन वाजिवृत्यनटनं चेत्येवमेताः कला
विद्यानाम चतुर्दश प्रतिदिनं कुर्वन्तु नो मंगलम्॥

इस श्लोक से स्पष्ट प्रतीत होता है कि जहाँ अन्य अन्य विद्याओं में निपुण थे, वहाँ जल-विद्या (नाविक-विद्या) में भी पारंगत थे। पौराणिक समुद्र-मथन-विवरण तथा १४ रत्नों की प्राप्ति, लम्बी सामुद्रिक-यात्रा का तथा उपहार में पायी गयी अनमोल वस्तुओं का सूचक है।

अब कौन आश्चर्य की बात है। यदि महाभारत-रामायण आदि ग्रन्थ यहाँ से उक्त द्वीपों में पण्डितों द्वारा पहुंचाये गये हों अथवा पण्डित लोग ही अपने साथ लेगये हों। कुछ हो, प्राचीन आकार-प्रकार इन ग्रन्थों का उक्त द्वीपों में तो वैसा ही रहा;

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

परन्तु यहाँ (भारतवर्ष) हज़ारों-लाखों जातीय, धार्मिक, व्यक्तिगत तथा जातिगत आघातों से परिवर्त्तित होगया। पोपों ने अपनी स्वार्थ-सिद्धि के लिए उन्हें असली आकार से कई गुना बड़ा कर दिया। इससे यह निर्विवाद सिद्ध होता है कि असली गीता यही ७० श्लोकों वाली ही है।

पश्यामि देवांस्तव देव देहे
सर्वांस्तथा भूत विशेष संघान् ।
ब्रह्माणमीशं कमलासनस्थ
मृषींश्च सर्वानुरगाँश्च दिव्यान् ॥ श्रीमद्०
गीता ११ । १५

अनेक बाहूदरवक्त्रनेत्रं
पश्यामि त्वां सर्वतोऽनन्तरूपम् ।
नान्तं न मध्यं न पुरस्तवादिं
पश्यामि विश्वेश्वर विश्वरूप ॥
भगवद्गीता. ११ । १६

किरीटिनं गदिनं चक्रिणं च
तेजोराशिं सर्वतो दीप्तिमन्तम् ।
पश्यामि त्वां दुर्निरीक्ष्यं समन्ताद्
दीप्तानलार्कद्युतिम प्रमेयम् ॥
भगवद्गीता. ११ । १७

रुद्रादित्या वसवो ये च साध्या
विश्वेऽश्विनौ मरुतश्चोष्मपाश्च ।
गन्धर्व यक्षासुर सिद्धसंघा
वीक्षन्ते त्वां विस्मिताश्चैव सर्वे ॥
भगवद्गीता. ११ । २२

अमी च त्वां धृतराष्ट्रस्य पुत्राः
सर्वे सहैवावनिपाल संघैः ।
भीष्मो द्रोणः सूतपुत्रस्तथासौ
सहास्मदीयैरपि योधमुख्यैः ॥
भगवद्गीता. ११ । २६

वक्त्राणि ते त्वरमाणा विशन्ति
दंष्ट्रा कराणानि भयानकानि ।
केचिद्विलग्ना दशनान्तरेषु
संदृश्यन्ते चूर्णितैरुत्तमाङ्गैः ॥
भगवद्गीता. ११ । २८

आदि बहुत से श्लोक इस प्राप्त हुई प्राचीन गीता में नहीं हैं; जो बिलकुल ही असंगत जान पड़ते हैं।

इतिहास-प्रेमियों तथा विद्वानोंको चाहिए कि वे दूसरे देशों और द्वीपों की भूमि में स्थित (अप्रगट) भारत के समुज्ज्वल-ग्रन्थ-रत्नों की खोज कर निकालें। बालिद्वीप में ही अभी और भी ग्रन्थ ऐसे हैं, जिनसे आधुनिक विवर्द्धित धर्म-ग्रंथों का असली स्वरूप का ज्ञान हो सकता है। इस द्वीप में विद्वान् जावें और वहाँ की 'कवि' भाषा कुछ दिनों में सीख कर खोज करें। जावा के Batavia Museum में ही संस्कृत की प्राचीन बहुत सी पुस्तकें रक्खी हैं। विद्वानों को चाहिए, वहाँ जावें और संस्कृत-साहित्य के अमूल्य रत्नों को प्रकाशित करें। भारत-वर्षमें ही इस प्रकार से अप्रगट (अप्रकाशित) संस्कृत-साहित्य-ग्रन्थ थोड़े नहीं; किन्तु कोई खोज करने वाले भी तो हों!

परमात्मा वह समय शीघ्र लावे; जब संस्कृत का साहित्य एकबार पुनः अपनी उज्ज्वल कांति से संसार को देदीप्यमान करदे।

अभी बंगला के 'सुबज-पत्र' नामक एक मासिक पत्र में बाली-द्वीप के सम्बन्ध में एक प्रसिद्ध लेखक का लेख निकला है। उसमें उक्त द्वीप के सम्बन्ध में जो बातें लिखी हैं, उसमें वहाँ की हिन्दू-सभ्यता, आचार-बिचार आदि का पता लगता है। —लेखक

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ओ कंगले तू क्या पीवेगा ।

[२]

मांग मांग दो दमड़ी लाया,
इतने पर फिरता इतराया ।
'तेरी' बोतल के संग गई खुमारी,
थैली के सङ्ग दौर ॥

[३]

ऐसी बोतल का क्या लेना,
सवा लाख का एक रहेना ।
बाज चिड़ी से ठोकर खावे,
रख अपना बिल्लौर ॥

[४]

ना भट्टी न खुला मैखाना,
घट ही में भरते पैमाना ।
यों पीते हैं मद के राजा,
बैठ नदी के डौर ॥

[५]

एक पी गया बंसी वाला,
छोड़ गया गीता का प्याला ।
उलग पलट जिसने मुंह लाया,
हुआ और का और ॥

[६]

कलगी वाले ने मुंह लाई,
चिड़ी बाज़ सङ्ग लड़ने आई ।
सवा लाख को एक यों खावे,
ज्यों हलवे का कौर,

[७]

दो रण हँसकर प्राण गँवाए,
दो दिवार के बीच चिनाए ।
बोले परम पुरुष के दासा,
सङ्गत इन के ठौर ॥

[८]

नभ मण्डल के मेघ उड़ाए,
पर्व्वत ठोकर मार गिराए ।
ऐसी पी वेदों वाले ने,
अजहूँ जग हिय हौर ॥

[९]

इस बूटी से जग थर्राया
भोलों ने कुछ भेद न पाया ।
बूंद पड़ी जिस सूखे बन में,
वहीं बसन्ती बौर ॥

[१०]

जोगी ने घट फोड़ उड़ाई,
एक ठीकरी इसने पाई ।
उसे चाट कर बना फिरे है,
पगले का सिर मौर ॥
ओ कंगले तू क्या पीवेगा ॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

देव समाज की शिक्षा

(ले०— श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज)

शेषांश

वाँ यज्ञ देवगुरु यज्ञ है, इसमें देवगुरु का पूजन और उसके सम्बन्ध में श्रद्धादि का प्रचार तथा जीवन को उनके अनुकूल बनाने का यत्न किया जाता है। इस यज्ञ का मैं अधिक पाठ देवशास्त्र से लिखना चाहता हूँ क्यों कि यह यज्ञ देव समाज में महायज्ञ माना जाता है।

"महायज्ञ साधन कर्ता के लिये आवश्यक है, कि वह देवजीवनप्राप्त श्री देव गुरु भगवान् को अपने आत्मा के रूप और उसके जीवन के विषय में सब प्रकार के अज्ञान विषयक अंधकार से मोक्ष और सत्य ज्ञानदर्शक पूर्णदेव ज्योतिदाता और अन्धकारहर्ता जान कर उन्हें इस विषय में अपना परम शिक्षक, परम गुरु, परम नेता वा जीवन पथ दर्शक और अपने आप को उनका शिक्षार्थी शिष्य समझो" पृ० ५८७

"उन्हें अपना सत्य और पूर्ण उपास्य वा परम पूजनीय परम आदर्श और अपने आप को उनका उपासक और अनुगामी जानो।" पृष्ठ ५८८

"जहाँ तक संभव हो जीवन दायक उच्च भावों में विकसित करने और जीवन नाशक नीच गतियों से मोक्ष देने के लिए देवजीवन प्राप्त श्री गुरुदेव भगवान के जीवनप्रद देव प्रभावों को ग्रहण और जो २ भाव जहाँ तक उनके ग्रहण करने में प्रतिबंधक वा उसके आत्मिक जीवन के लिये हानिकारक हों उनके वहाँ तक त्याग करने की आवश्यकता है।" पृष्ठ ५९१, २

"आवश्यक है कि वह श्रीदेवगुरु भगवान् के देव प्रभावों के लाभ करने की कुछ भी योग्यता रखने पर अपने किसी नीच भाव का साथी बनकर और अपने आत्मा और उसके जीवन के सम्बन्ध में उनकी उच्च वा शुभपथदर्शक देव ज्योति और नीचगति विनाशक और उच्चगतिविकाशक किसी प्रेरणा शक्ति का निरादर करके अपने आत्मा की हानि न करे किन्तु उनका पूर्ण आदर करके और उनका पूर्ण साथ देकर प्रत्येक आवश्यक त्याग के द्वारा उन्हें अपने प्रत्येक नीचगतिदायक भाव पर सदा विजयी करने की चेष्टा करे।" पृष्ठ ५९२, ३

"श्री देवगुरु भगवान् के देव प्रभावों के लाभ से बढ़कर और लाभ वा कोई सौभाग्य नहीं और उनके देव प्रभावों से बंचित होने से बढ़कर और कोई हानि वा दुर्भाग्य नहीं।"

पृष्ठ ५९२

"श्री गुरुदेव भगवान् के अद्वितीय आविर्भाव, अद्वितीय देवरूप और उनके अद्वितीय जीवन व्रत के सम्बन्ध में जो २ लेख उन्हीं के लिखे हुए हों और जिन्हें वह समझ वा उपलब्ध कर सकता हो उन्हें विचार पूर्वक पाठ करनेका अभ्यास करना।"

पृष्ठ १०, ११

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

"श्री देवगुरु भगवान् ही उसके परम पूजनीय वा परम उपास्य हैं और एक मात्र उन्हीं की सत्य पूजा वा उपासना करने से वह जहाँ तक संभव हो अपने आत्मा को सत्य मोक्ष और उसके अन्य विकाश के लिए उनके मोक्षदायक और विकाशकारी देव प्रभावों को लाभ कर सकता है।" पृ० ६०५

"श्री देवगुरु भगवान की छवि के आगे खड़े होकर वा बैठ कर उनके देवरूप पर भलीभाँति चिन्तन करके और उन्हें अपने और अपने सब प्रकार के सम्बन्धियों से असंख्य गुना बड़ा उपलब्ध करके उन्हें बारम्बार प्रणाम करना। पृष्ठ ६०६

'श्री देवगुरु भगवान् की छवि उनकी रचित पुस्तकों और उन से सम्बन्ध रखने वाली जो जो वस्तुएँ उस के पास हों उन्हें बहुत सन्मान पूर्वक अच्छी अवस्था में रखना और जहाँ कहीं उनका किसी और के द्वारा निरादर व अपमान होता हो वहाँ उन्हें उस से रक्षा करने के लिए उचित रूप से चेष्टा करना।' पृष्ठ ६०८,६।

"श्री देव गुरु भगवान की अपेक्षा अपने आपको किसी विषय में झूठ मूठ बड़ा जान कर वा उन से ज्योति और बल पाकर उन से अपने किसी शुभ काम में जो कुछ सफलता लाभ की हो उसे झूठ मूठ अपने साथ प्रयोग करके अपने महाहानिकारक घमंड को न बढ़ाना।" पृष्ठ ६०६, १०

इत्यादि पाठ देव शास्त्र में विस्तार से लिखे हुए हैं इस प्रकरण में श्री देव गुरु भगवान जी को अद्वितीय माना है। प्रष्टव्य यह है कि यह किस बात में अद्वितीय हैं इनका शरीर इनका व्यवहार साधारण लोगों की भांति ही होता है रोगादि भी कष्ट देते हैं संतान का रोग, पुत्र कलत्र का मोह भी साधारण मनुष्यों वत् है इन में तो कोई अद्वितीयता प्रतीत नहीं होती है। यदि कोई अद्वितीयता दुर्जनता दुर्जनतोषन्यायेन माननी हो तो अपने मुंह से अपनी प्रशंसा, धन संग्रह करते हुए भी अद्वितीय त्यागी, साधारण मनुष्यों का धन छल से लूटना, विचारार्थ सम्मुख न आना इत्यदि मानी जासकती हैं।

और श्री देव गुरु भगवान जी से संबध रखने वाली वस्तुएं भी विशेष आदरणीय हैं यह अज्ञानियों को बहकाकर उन्हें अज्ञानान्धार में धकेलना है।

श्री देवगुरु भगवान जी अपने आप को उपास्य पूजनीय लिखते हैं और आदेश है कि इन से देव भावों का ग्रहण करें, जो दैवी गुणगीता में लिखे हैं वह तो इन में प्रतीत नहीं होते हैं संभव है अद्वितीयदेव के गुण भी कोई लोकोत्तर ही हों।

मुझे इस के मानने में कोई संकोच नहीं है। श्री देव गुरु जी मनुष्य पूजा के परम पक्षपाती हैं वह भी अपनी व्यक्ति के। उनके भक्त भी विचित्र हैं जो उन्हें अलौकिक ज्ञानियों का आश्रय मान कर अपने मनुष्य जन्म को निष्फल सिद्ध कर रहे हैं।

जिस समय श्री देव गुरु भगवान की किसी देव लीला को जो अन्य किसी मनुष्य में न हो, प्रगट न करें उस समय तक देव गुरु जी घर के ही तीस मारखां है विचार

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

शून्य गाजर पंथियों के अतिरिक्त अन्य इसे कोई मानने को उद्यत न होगा।

अन्य मतावलंबियों के विषय में जो कुछ देव समाज का विचार है वह आगे लिखता हूँ।

(६)

१६ यज्ञों के पश्चात् देव शास्त्र में परिशिष्ट लिखा है। उस भाग में देवसमाज की बातों को संक्षेप से बताने का यत्न किया है उस से पाठकों को कुछ भेंट किया जाता है आशा है पाठकों को रुचि कर होगा।

उस में ईश्वरवादियों पर विशेष कृपा की है जैसे लिखा है:—

"प्रश्न—पापों के परिशोध के सम्बन्ध में ऐसी सत्य शिक्षा तो आज तक पृथिवी में आपके भिन्न किसी ईश्वर वा मनुष्य ने नहीं दी।

उत्तर? ईश्वर तो एक कल्पित अस्तित्व है और कल्पित अस्तित्व के लिए कोई शिक्षा देना असंभव है, परन्तु उसके विश्वासियों ने उस के वा अपने वा किसी अन्य के नाम से इस विषय में भी बहुत झूठी शिक्षाएं दी हैं।" पृष्ठ ६४७--६४८

"इस परम सत्य से अन्धे रह कर ईश्वर वादी और अन्य शिक्षकों ने पाप और उस से मुक्ति के विषय में जिस जिस प्रकार की शिक्षाएं दीं हैं उस २ पर विश्वास कर के और पाप और उस के फलों और पाप के परिशोध के विषय में नाना बोधों की देव धर्मप्रवर्तक जो विज्ञानमूलक सत्य शिक्षा देते हैं उस से अज्ञानी वा उदासीन रह कर लाखों और करोड़ों लोग अपने अपने आत्माओं की जैसी कुछ हानि कर रहे हैं उसका भी अनुमान हो सकता है।" पृष्ठ ६५३, ५४

इस लेख में लेखक महोदय ईश्वर को सत्य न मान कर कल्पना मात्र मानते हैं किसी पुस्तक को ईश्वर की ओर से नहीं मानते हैं और ईश्वर के स्थान में स्वयं धर्म के प्रवर्तक बन कर जो उन की कपोल कल्पित बातों को न माने उसे अंधा अज्ञानी आदि शब्दों से प्रकट करते हैं प्रथम इसी पर विचार करना चाहिये।

ईश्वर एक सत्ता है जो इस संसार को नियम में रखता है और उस सत्ता के अभाव से इस संसार में कुछ नहीं हो सकता है वह सत्ता ज्ञान स्वरूप है, इसी कारण जीवों को उन के कर्मानुसार फल भी नहीं देता है। यह सामान्य रूप से ईश्वरविश्वासियों का विश्वास है जिसे देवशास्त्र खण्डन करता है। देव समाज के प्रवर्तक महोदय अपनी शिक्षा को विज्ञान मूलक बतलाते हैं और अपने आप को अद्वितीय मानते हैं, प्रथम प्रष्टव्य तो यह है श्रीदेव गुरु भगवान् जी किस बात में अद्वितीय हैं क्योंकि उन का शरीर अन्य मनुष्यों की भाँति है और उनका जन्म माता पिता से हुआ, किसी असाधारण रीति से उन का जन्म नहीं हुआ है और अब भी अन्य मनुष्यों की भाँति उनका व्यवहार है विद्या में वह अद्वितीय नहीं क्योंकि उन से अधिक विद्वान् इस समय भी मिलते हैं और विवाह करने में वह अद्वितीय नहीं हैं आजीवन ब्रह्मचारी भी मिलते हैं और अनेक विवाह में भी उनको पराजित करने वाले विद्यमान हैं और यदि संतानोत्पत्ति में लें

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

तो भी उनसे संख्या में अधिक संतानोत्पन्न करने वाले हैं। यदि कहें उनकी संतान रोगी और नीरोग उभय प्रकार की है तो इसी भाँति की संतान और अनेक मनुष्यों की है। इनसे अच्छी संतान और इनसे बुरी संतान वाले भी अनेक मिलते हैं और धन संग्रह करने में भी और धनी मिल जावेंगे। यदि यह कहें इन्होंने जो धन कमाया है वह परिश्रम से नहीं कमाया केवल भक्त जनों को मोहित करके उनके धन के स्वामी बन गए हैं तो इस में भी नीचा दिखाने वाले पादरी, मुल्लां, पुजारी अनेक ठगी करने वाले मिलते हैं जो लोगों का धन लूटते रहते हैं। इस लिये इन में कौन सी अद्वितीयता है जिस के लिये यह मान्य हैं और दूसरे अमान्य हैं।

जब ईश्वर कल्पना मात्र है तो श्री देव गुरु भगवान जी में अद्वितीयता कल्पना मात्र नहीं है इस का क्या प्रमाण है। प्रतीत तो यही होता है अपनी कल्पना मात्र अद्वितीयता की आड़ में सब को खण्डन कर रहे हैं।

आगे चल कर लिखते हैं:—

प्र०—कोई जन अपनी किसी प्रार्थना में सफलकाम कब हो सकता है?

उत्तर—जब वह अपनी प्रार्थना किसी ऐसे अस्तित्व तक पहुंचावे कि जो

१. सच मुच हो और कल्पित न हो।

२. उसकी प्रार्थना को पूर्ण कर देना चाहता हो और

४. जिस तक उसकी प्रार्थना का भाव वा उस की लहरें पहुँच सकती हों

इन बातों के बिना कोई जन अपनी सच्ची प्रार्थना में सफलकाम नहीं हो सकता पृष्ठ ६६०।

प्रार्थना पूर्ण होने के लिए जो नियम लगाए हैं वह देव गुरु जी में नहीं घट सकते हैं, क्योंकि उनकी अद्वितीयता कल्पित है और सच्ची अद्वितीयता ईश्वर में ही है। दूसरा नियम सामर्थ्य रखने का है श्री देव गुरु भगवान जी में कौन सा सामर्थ्य है जो प्रार्थनाओं को पूरा करेगा यदि ऐसा होता तो अपने बन्धुओं की मृत्यु पर कष्ट अनुभव न करते और प्रतियोगियों से परास्त न होते जब स्वयं अपनी इच्छाओं को पूर्ण नहीं कर कर पाए तो औरों की प्रार्थनाओं का तो कहना ही क्या है यदि किसी भोले भाले जन की प्रार्थना पूरी भी हो जाय तो घुणाक्षर न्याय है कोई सामर्थ्य वामर्थ्य नहीं है।

शेष रह गई कथा चाहने की, यदि चाहने से हो जाता है तब तो श्री देव भगवान् जी जो चाहें करलें और यदि यह कहें जो प्रार्थना करे उसे श्रीदेव गुरु भगवान जी पूरा करना चाहते हैं तो देव समाजी सज्जन सब को निरीश्वर वादी बनाना चाहते हैं। प्रार्थना भी करते हैं और चाहने वाले उन्हें श्री देव गुरु भगवान् जी मिल गए हैं फिर उन की प्रार्थनाएं क्यों पूर्ण नहीं होती?

इस भाँति इस पुस्तक में दूसरे मतावलंबियों को भूतप्रेतादि योनियों में जाने वाला माना है जिस का उल्लेख अगले लेख में किया जायगा।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

(७)

देव समाज की प्रतिज्ञा है कि वह उन सिद्धान्तों का प्रचार करते हैं जो विज्ञान मूलक हैं फिर चुडैलादि का वर्णन किस विज्ञान के आधार पर है ? इस लेख में जो हमने लिखना है उस में यही दिखाना चाहते हैं कि देव समाज में विज्ञान मूलकता कितनी है।

प्रश्न— क्या भूत चुडैल आदि अधम आत्माओं के ही नाम हैं ?

उत्तर— हाँ ! और यह सब महानीच और अधम जीवन व्यतीत करते हैं।

प्रश्न— क्या उनमें ऐसे लोग भी होते हैं, कि जो इस पृथिवी में इस वा उस धर्म मत के मानने वाले कहलाते हैं।

उत्तर— हां प्रायः ऐसे ही लोग बहुत से होते हैं अर्थात् लाखों जन जो पहले ईसाई कहलाते थे, लाखों जन जो मुसलमान कहलाते थे; लाखों जन जो हिन्दू अथवा सिख, जैनी, कबीर पंथी, दादूपंथी, शैव, शाक्त, योगी, वैरागी, साधु, सन्यासी और विद्वान् अधिक कहलाते थे, अपने अधम जीवन के कारण उस में वास करते हैं।

पृष्ठ २२५-२६।

प्रथम प्रष्टव्य है भूत चुडैल जो अधम योनिएँ हैं यह तो आप मानते नहीं हैं। आप मानते हैं, इन्हीं नामों वाले अपने सूक्ष्म शरीर बनाकर उस लोक में वास करते हैं, और वह सहायता भी करते हैं। इस में प्रमाण क्या है ? प्रमाण शून्य बात को कौन मानेगा शास्त्र प्रमाण में तो आप किसी पुस्तक को मानते ही नहीं हैं और आप के देव शास्त्र को दूसरे स्वीकार नही करते हैं, इस लिये शास्त्र से भिन्न कोई अन्य प्रमाण ही देना होगा बतलाइए कौन सा प्रमाण है ? प्रत्यक्ष से तो वह प्रतीत नहीं होते हैं। आज कल जो प्रेतात्मा बुलाए जाते हैं वे उसी लोक में आते हैं और आकर अपने समाचार और उपदेश देते हैं। इस विषय में मेरा यही उत्तर है कि मैंने प्रेत-आत्माओं के बुलाने का दृश्य स्वयं देखा है वह केवल ढोंग है और चालाकी है। भारत वर्ष में प्रसिद्ध व्यक्ति जो यह काम करता है वह बी. डी. ऋषि हैं उन्हों ने लाहौर में स्वयं अपने करकमलों से महाशय नारायणसिंह जी को लिख कर दिया कि यह सब धन कमाने का ढंग है न कोई आता है न जाता है जो पत्रों में नारायणसिंह जी ने छपवा दिया था उस मूल पत्र को भी मैंने देखा है इस अवस्था में इसे कौन सत्य स्वीकार करेगा।

दूसरी बात यह है देव शास्त्र के लेखक महोदय ईसाई मुसलमान, हिन्दुओं को इसी लोक में भेजते हैं क्या देव समाजी इस लोक में नहीं जाते हैं। यदि आप उत्तर दें कि जिनके जीवन उत्तम हैं वही जाते हैं तो क्या देव समाज में सब ही उच्च जीवन वाले हैं और देव समाज से भिन्न कोई उच्च जीवन वाला नहीं है। यह ठीक नहीं है क्योंकि देव समाज की अपनी डायरियाँ इस बात की साक्षी हैं जो उन में नीच गति वाले प्रधान संख्या में हैं यदि कोई इस विषय से परिचित होना चाहे तो देव समाज के पुराने कार्य कर्ता

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

महाशय देवरत्न जी के पत्र 'उच्च जीवन' के पुराने अङ्क पढ़ले।

इसी प्रकरण में इनके भोजन का वर्णन है यथा—

प्रश्न— भला अधर्म आत्माओं को आहार किस प्रकार मिलता है ?

उत्तर— वह हम लोगों के आहार और पृथिवी आदि के फलों आदि से जो सूक्ष्म परमाणु निकलते हैं उन्हें खाते हैं! इनके भिन्न जो पशु मर कर अधर्म लोक में ही रहते हैं, अथवा मनुष्यों के जो छोटे २ बच्चे मरते हैं और जिनका कोई रक्षक नहीं होता उन्हें भी चट कर जाते हैं। पृ० २३२

इस लेख में प्रथम तो मनुष्यों के आहार और फलों में से खाते हैं यह लिखते समय सूक्ष्म परमाणु भी बिशेषण दिया है। इन परमाणुओं को वे खाते है, इस में भी केवल देव समाज की श्रद्धा ही प्रमाण है और तो कोई प्रमाण नहीं है। आगे मनुष्यों के बच्चों को चट करने का विधान है वहाँ कोइ बिशेषण नहीं है यदि अनुवृत्ति लावें तो "जिनका कोई रक्षक नहीं होता" निर्धन हैं क्योंकि जिनकी रक्षा होती है उनके शरीर से भी सूक्ष्म परमाणु निकलते हैं यदि अनुवृत्ति न करें तो उस शब्द के भक्षक कोई स्थूल होंगे जिनका प्रत्यक्ष होना चाहिये।

इस प्रकार ये विज्ञान मूलक सिद्धान्त हैं जिन पर यह विज्ञान के अद्वितीय नेता हैं और जिस विज्ञान के आधार पर यह चले थे इस समय यह विज्ञान ही बदल गया है इनका उतना ही अन्तर है जितना कि शिव नारायण जी अग्निहोत्री नाम वाले शरीर का सत्यानन्द जी अग्निहोत्री का वा श्री देव गुरु भगवान जी के शरीर का है, उभय कथन तो एक हैं परन्तु वास्तव में प्रथम का दूसरे में अभाव है किन्तु यह विज्ञानी अपनी उसी मंज़िल पर बैठे हुए विज्ञान की डुगडुगी बजा रहे हैं उचित तो यह है अब यह भी आगे बढ़ें और अंध श्रद्धा को छोड़ कर विचार शील हों।

प्रेमोपहार

(श्रीश्यामसुन्दर श्रीवास्तव "रमेश" इलाहाबाद)

कलित कुञ्ज से सरस सुमन को चुन २ कर के आई हूं।
प्राण नाथ ! तव पहिनाने को हार बना कर लाई हूँ॥
होता है प्रत्येक पुष्प से सरल मानसिक प्रेम प्रकाश।
प्राण नाथ स्वीकृत कर लेगें है मुझ को हार्दिक विश्वास॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

आर्य समाज के नियमों का महत्व

(लेखक—कृष्णानन्द)

आर्य समाज इस नाम से ही स्वामी दयानन्द की दूरदर्शिता का पता चलता है। साम्प्रदायिक संकीर्णता से बचाने के लिए ही, मत या पन्थ सूचक नाम न रख कर समूहात्मक नाम "आर्य-समाज" रक्खा है। अब नियमों के सम्बन्ध में संक्षेप से लिखता हूं—

१. पहले नियम में पदार्थ विद्या का नाम लेकर साइन्स से अविरोध प्रकट कर दिया है और सब को साइन्स जानने के लिए प्रेरित कर दिया है। साथ ही यह भी बतला दिया है कि चाहे आप बुद्धि कितनी ही दौड़ाइए, सब का मूल परमेश्वर है, उस से परे आप की बुद्धि नहीं जा सकती।

२. दूसरे नियम में यह बतलाया है कि ईश्वर का स्वरूप है और उसका गुण कर्म कैसा है तथा इस बात पर ज़ोर दिया है कि सिवाय ईश्वर के और किसी की उपासना न करनी चाहिए।

३. तीसरे नियम में अपनी सभ्यता के आदि मूल ग्रन्थों को पढ़ना अनिवार्य कर दिया है जिस से जातीय जीवन की ज्योति बराबर बनी रहे और अपनी मूल सभ्यता को भूल न जायँ।

४. चौथे नियम में सच्ची बातों को मानने के लिए बड़ा जोर दिया है। प्रायः सभी मतवादी मतवाद के आग्रह में पड़कर दूसरे की सच बात को नहीं मानते। यह नियम हमें मतवाद के आग्रह से बचाता है।

५. पाँचवें नियम में सत्याचरण पर ज़ोर दिया गया है अर्थात् मिथ्या दम्भ और आडम्बर से एकदम अलग रहने की शिक्षा दी गई है।

६. छठा नियम हमारे लक्ष्य और ध्येय को बतलाकर कर्त्तव्य और कार्यक्षेत्र को निश्चित करता है।

७. सातवां नियम हमें व्यवहार कुशल बनाता है, किस के साथ कैसा बर्ताव करना चाहिए यही हमें सिखलाता है। पहले प्रीति पूर्वक व्यवहार करना चाहिए, यदि वह इसके अयोग्य हो तो धर्मानुसार अर्थात् शिष्टता-पूर्वक या न्यायपूर्वक व्यवहार करें और यदि वह शिष्टता पूर्ण व्यवहार के भी अयोग्यहो तो उस से यथायोग्य (जैसा उचित हो वैसा) व्यवहार करें। "यथायोग्य" शब्द इसी हेतु है कि संसार में बहुत से लोग ऐसे भी होते हैं जो शिष्टता को नहीं मानते, आप के शिष्टाचार से अनुचित लाभ उठाना चाहते हैं। ऐसे अभद्र पुरुषों तथा दुष्टों के साथ चाहे आप कितनी ही न्यायशीलता या भलमनसाहत करें वे अपनी दुष्टता से बाज न आवेंगे। उनके साथ यथायोग्य व्यवहार

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

"दुष्टे दुष्टं समाचरेत् का सिद्धान्त" ही ठीक है। इस नियम में "यथायोग्य" बड़ा ही महत्वपूर्ण शब्द है।

८. आठवाँ नियम हमें ज्ञान को बढ़ाने के लिए उत्साहित करता और अज्ञान व अन्धविश्वास को दूर करने के लिए प्रेरित करता है।

९. नवाँ नियम हमें विशाल हृदय बनाता है। प्रायः लोग अपनी ही उन्नति व मुक्ति की इच्छा करते हैं, दूसरे लोगों की उन्हें कुछ चिन्ता नहीं होती। यह नियम हमें उस संकीर्ण विचार से बचाकर उदार बनाता है।

१०. दसवाँ नियम समाज संगठनके मूलमंत्र को बतलाता है। आजकल लोग "संगठन संगठन" चिल्ला रहे हैं परन्तु उसके असली नियम को तो भूले बैठे हैं। मैं दावे से कहता हूं कि इसी एक नियम का अच्छी तरह पालन करने से विशाल हिन्दू समाज का संगठन हो सकता है।

"अन्योक्तियाँ"

(श्री पं० 'वीरहरि' विद्यार्थी)

[१]

वि-धवाओं का नाम है, पति-हीना इस लोक।
'वि' के आगे 'धव' लगा, पुनि क्यों इतना शोक॥
पुनि क्यों इतना शोक, 'विशेष' 'वि' पति 'धव नामा।
बुद्धि-वियर्यय[1] यहाँ, न माने अर्थ ललामा[2]॥
पति-हीना जो नारि, अन्य नर से हो स-धवा[3]।
उसको पण्डित, शास्त्र, 'वीरहरि' कहते वि-धवा[4]॥

[२]

बैठा छुताछूत का, भारत में जब भूत।
श्रमजीवों[1] तब सभी, कहने लगे अछूत॥
कहने लगे अछूत, भाव कुछ समझन पाया।
'अ' का नहीं है छूत' 'अशुद्ध' नार्थ[2] अपनाया॥
लोभी-पण्डितपोंगों[3]ने, जनता को ऐंठा[4]।
तभी 'वीरहरि'-अर्थ[5] अनर्थ हृदय में बैठा॥

---

[१] १ बुद्धि की प्रतिकूलता, उल्टी अक्ल। २–पति सहित स्त्री या पति वाली स्त्री। ४ विशेष है पति जिस का, अर्थात् अन्य (द्वितीय) पति वाली।

(२) १ छोटा काम कर के जीने वाले, अन्य जाति। २ न × अर्थ + ३ आडम्बरी। ४ भुलाया, चक्कर में डाला। ५ अछूत नहीं है अशुद्ध जो (शुरू), इस का अर्थ अशुरू गढ़ लिया। पापा

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वैद्यनाथ धाम की यात्रा

(ले०—श्री रामजीवन शर्मा, श्री जगदीशचन्द्र शास्त्री)

वैद्यनाथ धाम, बिहार प्रान्त के 'संताल परगना' जिले का सबडिवीज़न है। सुप्रसिद्ध ई. आई. आर. रेलवे का एक जंकशन जसीडीह है। कलकत्ता-दिल्ली लाइन पर ही यह जंकशन है। जसीडीह से एक ब्रांच लाइन वैद्यनाथ धाम तक गई है। जसीडोह पहुंचते ही अमीर पंडों के गुमाश्ते एवं ग़रीब पंडे स्वयं मुसाफिरों को घेर लेते हैं। भादों एवं वैशाख में तो ये महोदय गण कयूल जंकशन एवं मोकामा जंकशन से ही पीछे पड़ जाते हैं। परन्तु साधारण दिनों में जाने के कारण हम इन संकटों से बरी हो गए थे।

गाड़ी से उतरते ही ये पूछ बैठते हैं—"क्यों बाबूजी! आपका मकान कहाँ है।" आप प्रान्त का नाम लीजिए तो ये पूछ बैठेंगे कि 'जिला कौन है?' इसी प्रकार क्रमशः हल्का, परगना, थाना, गाँव तथा नाम, पिता का नाम, दादा का नाम आदि पूछने लगते हैं। अन्त में पूछते हैं कि आप का पंडा कौन है? यदि आगन्तुक ने पंडे का नाम बतला दिया तब तो कुशल है, अन्यथा ये उसका पीछा छोड़ते ही नहीं। आपस में लड़ने लगते हैं और जहाँ जहाँ यात्री जायें, ये दुम की तरह पीछे लगे रहते हैं।

हम अपने पंडा का नाम जानते थे। नाम क्या जानते थे उनसे खासा परिचय भी था। बस, ट्रेन से उतरते ही घोड़ा गाड़ी लिया और पंडा के घर पहुंचे।

पहुँचते ही एक कमरा मिल गया। उन दिनों पंडों का घर प्रायः खाली ही रहता है। फिर भी हमारे पंडा के यहाँ दो तीन का परिवार आया हुआ था। पूछने पर मालूम हुआ कि वे बंगाली हैं।

प्रसंगवश इस बात का भी ज़िक्र हम यहाँ किए देते हैं कि वैद्यनाथ धाम है तो बिहार में, परंतु मालूम होता है, जैसे बंगाल का कोई नगर हो। जहाँ देखिए वहीं बंगाली सभ्यता दीख पड़ती है। पंडा लोग परस्पर बंगला में ही बात करते हैं। शहर की अधिकाँश कोठियाँ बंगालियों की हैं। शहर से बाहर बंगाल प्रदेश के धनी विद्वान् और प्रसिद्ध पुरुषों की कोठियाँ बनी हुई हैं। कलकत्ते के सुप्रसिद्ध व्यापारी कविराज नगेन्द्रनाथ सेन का भव्य भवन मन को मोह लेता है। जगत्प्रसिद्ध रवीन्द्रबाबू साल में यहाँ (सिमर तल्ला स्टेशन के पास) कुछ दिन रहते हैं। प्रसिद्ध औपन्यासिक शरत्-बाबू भी अपने ग्रन्थों में से अधिकांश की रचना यहीं करते हैं। अस्तु, वह दिन आराम करने में बीता। दूसरे दिन के सबेरे ही हम पूरब की ओर जंगलों में गए। शहर के आस पास तो हलके जंगल हैं, किन्तु कुछ ही दूर

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

निकल जाने पर अत्यधिक घने जंगलों के दर्शन होने लगते हैं। परन्तु हम समीप ही से चले आए। फिर शिवगंगा में स्नान किया। यह एक बड़ा तालाब, महाराज गिद्धौर का बनवाया हुआ नगर के पूर्वीय भाग में स्थित है। सुन्दर पाषाण के घाट बने हुए हैं। स्त्रियों के लिये अलग और पुरुषों के लिये अलग। वैद्यनाथ धाम में आने वाले श्रद्धालु पुरुषों के लिए यहाँ नहाना लाजिमी है। अतः हमने भी वहाँ स्नान किया और गुमाश्ते के साथ (जो पुलिस की तरह हमारे साथ था) मन्दिर की ओर चले। गलियाँ बनारस की तरह हैं, परन्तु दूकानें भद्दी और बेढंगी।

मन्दिर के निकट पहुंचने पर दिल खुश होजाता है। जो मन्दिर आजकल है उसको महाराज गिद्धौर ने बनवाया था। उस मन्दिर में जो महादेव का लिङ्ग स्थापित है उसका नाम रावणेश्वर है। रावणेश्वर नाम पड़ने की कथा पुराणों में इस प्रकार है:—"लंकानरेश रावण प्रतिदिन शिवजी की पूजा करने कैलासपर्वत पर जाया करता था। एकबार उसकी इच्छा हुई कि यदि लंका ही में मैं इनको लेचलूं तो नित्य के परिश्रम से बचूं। यह सोचकर वह कैलास पर्वत पर जाकर तप करने लगा। यज्ञकुण्ड में शाकल्य के बदले मस्तकों को काटकर चढ़ाने लगा और जब दसवाँ मस्तक भी काटने पर तैयार हुआ तो शिवजी ने दर्शन दिया और वरदान माँगने की आज्ञा दी। रावण ने उनसे लंका में चलने की याचना की। उन्होंने स्वीकार कर लिया और एक पाषाण लिंग देकर बोले—'रास्ते में इसको कहीं भी पृथ्वी पर रक्खोगे तो यह उसी जगह अचल होजायगा। अतएव सावधानी से जाना।' फिर क्या था, रावण खुशी खुशी घर चला। मस्तक पूर्ववत् ही होगए थे। इस स्थान (वैद्यनाथ) पर पहुंचने पर उसको पेशाब लगा। मूर्त्ति को लिए पेशाब कर नहीं सकता था अतएव इधर-उधर नज़र दौड़ाने लगा कि कोई मिल जाय। 'विष्णु' ब्राह्मण रूप धारण कर पहुंच गए। उन्हीं के हाथ में फौरन प्रतिमा देकर वह पेशाब करने लगा। कई घंटे उसको पेशाब करते होगए। इधर विष्णु ने प्रतिमा भूमि पर रख अपने घर की राह ली। विष्णु के हाथ से स्थापित होते ही वह लिंग पाताल तक चला गया और पृथ्वी के ऊपर केवल आठ अंगुल ऊँचा रह गया।"

इस मन्दिर के आस पास बीस पच्चीस और मन्दिर हैं। उनमें भिन्न २ देवताओं की प्रतिमाएँ हैं। मन्दिर के अहाते में एक कूप है, जहाँ का जल महादेव जी पर चढ़ता है। अन्यान्य किसी भी कूप, किम्वा, तालाब का पानी चढ़ाना मना है।

हाँ, गंगाजल बिकता है। गंगोत्तरी, हरिद्वार, प्रयाग, काशी, सिमरिया आदि से पंडा लोग मँगाकर उसे बेचते हैं। मूल्य भी स्थान २ के अनुसार जल का अधिक व न्यून है। गंगोत्तरी के जल का मूल्य हमें शायद २५) शीशी बतलाया गया था।

हमने कूप ही से जल लेकर चढ़ाना

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उचित समझा।† फिर मन्दिर की परिक्रमा आदि समाप्त कर अपने वासस्थान पर आगए।

सन्ध्या को 'लीला मन्दिर' नामक स्थान देखने चले। लगभग साढ़े सात बजे वहाँ पहुँचे। यह स्थान दुमश रोड़ पर है। एक सुनसान मैदान के बीच बहुत ऊँचा और भव्य भवन बना हुआ है। चारों तरफ़ बाग़ है। वैद्यनाथ धाम शहर में इलेक्ट्रिसिटी अभी नहीं पहुँची है किन्तु इस भवन में इलेक्ट्रिसिटी का स्पेशल प्रबन्ध है। पाठक उत्सुक हो रहे होंगे, यह जानने के लिए कि आख़िर वहाँ होता क्या है? उसका उत्तर इस प्रकार है—

यहाँ पर लगभग साढ़े तीन सौ बंगाली विधवाएँ रहती हैं। नाम इसका, जैसा कि हम कह चुके हैं, 'लीला मन्दिर' है। इसके संस्थापक ठाकुर दयानन्द एक बंगाली ब्रह्मचारी हैं। आप आँग्लभाषा के अच्छे पण्डित और अन्य भारतीय भाषाओं के भी जानकार हैं। इस आश्रम में दस बीस पुरुष भी हैं। जो सब के सब ब्रह्मचारी हैं। सिर और दाढ़ी के बाल वे कभी नहीं कटाते। सन्ध्या को ये सब देवियाँ विविध वाक्यों के साथ कीर्त्तन करती हैं। गोलाकार परिधि स्वयं बनाती हैं और बीच में पुरुष रहते हैं। कोई भी कीर्त्तन-प्रेमी इसमें भाग ले सकता है। जिस दिन हम गए थे उस दिन बहुत कम देवियाँ थीं। फिर भी पंडों के दस बीस लड़के आ ही गए थे।

एक सम्पादक महोदय ने, जो हमारे साथ थे बतलाया कि इनको एशिया, अमेरिका आदि से पर्याप्त सहायता मिलती है। कई एक जगह इस आश्रम के ब्रांच भी हैं। इनकी शिक्षा दीक्षा का प्रबन्ध आदि विषयों पर हम किसी स्वतन्त्र लेख में प्रकाश डालेंगे। यहाँपर वैद्यनाथ धाम के दो चार स्थानों का ज़िक्र कर इस यात्रा वृत्तान्त को समाप्त करते हैं।

गुरुकुल—यह सातर नामक ग्राम में है जो वैद्यनाथ धाम के समीप ही है। यह गुरुकुल काँगड़ी आदि से सम्बद्ध न होकर स्वतन्त्र है। बिहारबंग प्रतिनिधि सभा इस का प्रबन्ध करती है।

तपोवन—यहाँ पर एक बहुत सुन्दर झरना है जिसकी झनत्कार मनको मोह लेती है। यों तो सारे वैद्यनाथ धाम पर ही प्रकृति की दयादृष्टि है परन्तु इस जगह कुछ और ही आनन्द प्राप्त होता है। यहाँ जाने के लिये मोटर लौरियाँ तैयार रहती हैं। अन्य सवारियाँ भी सुभीते के साथ मिलती हैं।

रामकृष्ण मिशन—यह नगर से उत्तर की ओर है। अन्य मिशनों की तरह यहाँ भी शिक्षा, सेवा आदि का प्रबन्ध है।

बालिका विद्यालय—एक भव्य और उच्च भवन में यह विद्यालय स्थित है। बिहार के इने गिने कन्या विद्यालयों से यह सर्वोत्तम

† आर्य्यसमाजी होने के कारण इस क्रय विक्रय से हम साफ़ बच गये।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

है। यदि काम करने वाले चाहें तो वह रूप दे सकते हैं।

धर्मशालाएँ—कई हैं। परन्तु शिवगंगा के तटपर की उत्तम है। यहाँ सर्वदा लोग भरे रहते हैं।

इनके अतिरिक्त अन्य भी कितने दर्शनीय स्थान हैं। प्राकृतिक शोभा तो हाथ पाँव तोड़कर यहाँ बैठ गई है। छोटी बड़ी पहाड़ियाँ, साखु के कहीं पतले और कहीं घने जंगल, मनोहर झरने भला किस का मन नहीं मोह लेते ? यही कारण है कि मूर्त्तिपूजक सनातनियों के अतिरिक्त रवीन्द्र बाबू जैसे ब्राह्मसमाजी भी यहाँ कुछ दिन रहने का कष्ट उठाते हैं।

यहाँ की प्रधान भाषा बँगला ही है। फिर भी दोचार हिन्दी-प्रेमी सज्जन यहाँ मौजूद हैं। हिन्दीभाषा में एक पत्र भी निकलता है जिसका नाम 'झङ्कार' है। एक 'सार्वजनिक' पुस्तकालय एवं वाचनालय भी है। पुस्तकालय में हिन्दी की छः सात सौ पुस्तकें तथा वाचनालय में बँगला तथा हिन्दी की पत्र पत्रिकाएँ आती हैं। दो एक बँगला पत्र यहाँ से निकलते भी हैं।

इसके अतिरिक्त झुमका ज़िला काँग्रेस कमेटी एवं सबडिविज़नल काँग्रेस कमेटी का दफ़्तर भी यहाँ है।

कुसुम-कामना

होते किसी प्रेमी गल-माला के तरल हम
जाते सींचे आँसुओं की झड़ी के लगाव से।
देवी के मन्दिर के चढ़ावन-सुमन होते
रौंदे जाते चाहे वहाँ पूजकों के पाँव से।
गंध का गुमान भरे सुन्दरताभिमान में
खाये जाते क्यों न किसी सौम्य मृगशाव से।
बस, सूने मसान में मेंहदी के फूल होते
हवा की थपेड़ से झड़ते हम चाव से॥

"वनमाली"

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अन्ध विश्वासों को त्यागिये

(ले०— श्री कृष्णानन्द)

हमारी जाति की अवनति वा अधोगति के जितने कारण हैं उन में से भ्रमपूर्ण विश्वासों का अस्तित्व भी एक बड़ा कारण है। यद्यपि अन्य जातियों और अन्य देशों में भी इन का अस्तित्व है पर हिन्दू जाति में हज़ारों प्रकार के भ्रममूलक विश्वास फैले हुए हैं। जिन से बहुत से लोग नैतिक आर्थिक, शारीरिक और मानसिक उन्नति करने में असमर्थ हैं। बहुत से लोगों के सुख और सफलता के मार्ग में ये ही अन्धविश्वास बाधक रूप हैं। इन में फँसकर लोग छोटी से छोटी बातों और तुच्छ से तुच्छ कार्य्यों से बहुत चिन्तित और भयभीत हो जाते हैं। कार्यों की असिद्धि और विपत्ति के असली कारणों को न जानकर वे अहेतु को हेतु मान बैठते हैं। बड़ा आश्चर्य है कि लाभ न होने पर तथा बार २ हानि उठाने पर भी लोगों को चैत नहीं होता और विद्वानों वा बुद्धिमानों के समझाने पर भी लोग भ्रमजाल में फँसे रहना चाहते हैं। यह अविवेक वा दुराग्रह उनकी उन्नति और हित में बड़ा ही विघ्न कारक है। संस्कृत में जो "विवेकभ्रष्टानांभवति विनिपातः शत मुखः" कहा है वह बहुत ही ठीक है। यहाँ पर मेरा तात्पर्य किसी प्रकार की उपासना के सम्बन्ध में नहीं है क्योंकि मन की तृप्ति के लिये बहुदेवोपासना उचित हो सकती है। यहाँ पर मेरा तात्पर्य जिस प्रकार के अन्ध विश्वासों से है उनका उल्लेख नीचे करता हूं—

एकादशी को चावल खाने में पाप मानना। बुध वा सनीचर को कोई नया या शुभ कार्य्य करने में भय करना। बुध का दिन खाली समझना [विचार कीजिए कि मङ्गल के दिन कौन सी वस्तु संसार में भरी रहती है जो बुध का दिन आते ही खाली हो जाती है? जिस भाँति मङ्गल वा शुक्रवार को लाखों मनुष्य जन्मते, मरते, सुख, वा दुख पाते हैं उसी प्रकार बुध वा सनीचर को भी सुखी दुखी रोगी वा स्वस्थ होते हैं। बुधने कोई कसूर नहीं किया लोगों ने बुध को नाहक बदनाम कर रक्खा है] दीपावली को द्यूत न खेलने से छछून्दर का जन्म मानना। दीपावली की रात बीतते ही तड़के घर के कोने कोने में सूप बजाने से दरिद्रता दूर होने का विश्वास यदि सूप बजाकर दरिद्रता को भगा देते हैं तो उसी प्रकार सूप बजाकर बीमारी को क्यों नहीं भगा देते? जिस से वर्ष भर तक कोई बीमार पड़ने ही न पावे। और देखिए लाखों मनुष्य अपनी समझ से दरिद्रता को भगा देते हैं। पर अगले वर्ष भर तक वे ज्यों के त्यों दरिद्र ही बने रहते हैं, मानो दरिद्रता फिर उनके घर में घुस आती है। दिशाशूल के विरुद्ध यात्रा करने में अशुभ वा कार्य्य की असिद्धि मानना। यात्रा में प्रस्थान रखने का ढकोसला करना। जहाँ लड़की ब्याही हो उस ग्राम वा स्थान के कुएँ का पानी पीने में पाप मानना। भादों सुदी चतुर्दशी को चन्द्रमा देखने से कलङ्क मानना। उन्माद रोग को

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

भूत प्रेत मान लेना। आश्चर्य है कि आजकल कई वैज्ञानिक भी भूत-प्रेत मानने की मूर्खता कर रहे हैं ऐसे लोगों को "सनकी" समझना चाहिए। दूर जाते समय खाली घड़ा देखने, छींकने वा तेल का नाम सुनने को अमङ्गल जनक या विघ्नसूचक मानना। शूद्र की छाया अपने शरीर पर पड़ने से अपने को अपवित्र मानना [मद्रास के ब्राह्मण ऐसा मान कर स्नान करते हैं] हाथ पर नमक रखने से लेने-देने वाले में झगड़े का लक्षण मानना। साही का काँटा छप्पर में खोंसने से उससे हानि मानना। फलित ज्योतिष की साइत वा मुहूर्त्त को कार्य की सिद्धि का हेतु मानना और उस साइत में कार्य न करने को कार्य की असिद्धि का कारण मानना। वर कन्या की आयु, सुख और समृद्धि का हेतु "कुण्डली गणना" को मानना और बिना कुण्डली मिलाए विवाह करने से वर कन्या का अशुभ मानना गुरुमंत्र न लेने को नरक का हेतु मानना। गुरुमंत्र न लिये हुए मनुष्य से घृणा करना वा उसके हाथ का जल अग्राह्य मानना। जन्मभर पाप करके मरते समय राम नाम उच्चारण मात्र से मुक्ति मानना। निर्दयी, अन्यायी वा अत्याचारी पुरुष को गङ्गा स्नान से मुक्ति मिलने का विश्वास करना। मरते समय मुख में तुलसी पड़ने से वा मृतशरीर को गङ्गा में छोड़ने से मुक्ति मिल जाने का विश्वास, अपने सत्कर्मों पर भरोसा न करके पुत्र के भरोसे मुक्ति पाने का विश्वास। महापापी के भी काशी में मरने में मुक्ति मिलने का विश्वास। प्रयाग जाकर मूंड़ न मुड़ाने में दोष मानना। जगन्नाथ पुरी में जाकर जूँठ न खाने में वा अलग भोजन पकाने में पाप वा दोष मानना। कर्मनाशा नदी में स्नान करने से धर्म्म का लोप मानना गोभी तरकारी को अभक्ष्य मानने का यह हेतु बतलाना कि इसमें "गो" शब्द है। मगह में मरने से गधे का जन्म मानना। माघ में प्रयाग और ग्रहण के समय काशी गङ्गास्नान करने से अत्यन्त पुण्य [पापका क्षीण] होना मानना। यमद्वितीया को मथुरा में यमुनास्नान करने से बैकुण्ठ की प्राप्ति मानना। लाल पीली रेखा वा तिलक मस्तक पर लगाने को धर्म्म का अङ्ग मानना और न लगाने को अधर्म समझना। सनीचर को तेल वा लोहे के दान को अत्यन्त पुण्यजनक मानना। सिरहाने तकिया के नीचे सोवा नामक साग रखकर सोने पर तुरन्त नींद आने का विश्वास। पूसापाँड़र [पौष के प्रथम दिन] को कोई वस्तु दूसरे को देने से साल भर तक अपने धन अन्न का क्षय मानना [ज़ि० मिर्जापुर वाले ऐसा मानकर उस दिन किसी को कोई पदार्थ नहीं देते और पूड़ी मिठाई आदि खाते हैं, समझते हैं कि सालभर तक बराबर ऐसा ही उत्तम पदार्थ खाने को मिला करेगा]। खर बाँस लगने पर एक मासतक चारपाई बनवाना, लड़की बिदा करना, नए घर में प्रवेश आदि अनेक कार्यों को अशुभ वा अमङ्गल सूचक समझना। तीज को दिनरात निराहार निर्जल व्रत न रहने से पतिका अशुभ मानना। मूल नक्षत्र में उत्पन्न पुत्र का मुख देखने से माता वा पिता का अशुभ वा

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विपत्ति सूचक मानना। बार बार पुत्र उत्पन्न हो कर मर जाने पर वर्त्तमान पुत्र के नाक में नथुनी पहनाने को मृत्यु से रक्षा करने वाला मानना [यदि नथुनी मृत्यु को रोकदे तब तो समस्त वृद्ध युवा और बालक को नथुनी पहन लेना चाहिए]। काशी में किये हुए पाप की निवृत्ति पंच क्रोशी से मानना। पञ्च कन्या के स्मरण को महापातक का नाशक मानना। दुर्गापाठ मृत्युंजय अथवा दान मात्र से रोग की निवृत्ति मानना। बाप दादा फूस के मकान में रहते आये हों तो स्वयं खपड़ा छवाने में अपना अशुभ मानना। कुण्ड वा तालाब के स्नान से पुण्य मानना। रमल, शकुन और स्वप्नविचार आदि के सम्बन्ध में जो पुस्तक और प्रवाद प्रचलित हैं उन्हें सत्य मानना। फलित ज्योतिष को सत्य मानना इत्यादि।

इस प्रकार के हज़ारों भ्रमात्मक विश्वास हिन्दू जाति में फैले हुए हैं जिन का प्रचार वा विस्तार पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों में अधिक है। स्त्रियों के हृदय में बिना उत्तम संस्कार पैदा किये इस प्रकार के भीतरी दोष दूर नहीं हो सकते। सत्पुरुषों का कर्त्तव्य होना चाहिए कि ऐसे भ्रमजालों में न स्वयं फँसें और न स्त्रियों को फँसने दें। यदि कहा जाय कि ऐसी बातें कभी कभी सत्य हो जाती हैं तो समाधान यह है कि काकतालीय न्याय से एक बार कोई घटना हो जाय तो उसे नियम वा सिद्धान्त मान लेना ठीक नहीं है। एक बार सवेरे कोई कंजूस का नाम सुन लेवे और संयोग से उस दिन उसे भोजन न मिले तो यह परिणाम निकालना कि "सबेरे कंजूस का नाम लेने वा सुनने से दिन भर भोजन नहीं मिलता" अज्ञानता है। इसी प्रकार एक बार खाली घड़ा देखने से यात्रा में विघ्न पड़े तो यह नियम बनाना कि "खाली घड़ा देखने से यात्रा में अवश्य ही कष्ट वा विघ्न होता है" अनुचित और अन्याय है। यात्रा आरम्भ करने के समय यदि नाक पर मक्खी बैठ जाय या कौआ काँय काँय करने लगे या कुत्ता भूँकने लगे तो ऐसे कार्यों से शुभ वा अशुभ परिणाम निकालना मूर्खता है। शुक्र वार को खिचड़ी पकावे और संयोग वश गिर पड़े तो यह नतीजा निकालना कि "शुक्रवार को खिचड़ी नहीं पकानी चाहिए" बिलकुल भूल और मूर्खता है। नहाने, फाका करने और पवित्र स्थान में मरने से मुक्ति मिलने का सिद्धान्त न्याय विरुद्ध, युक्तिविरुद्ध और शास्त्र विरुद्ध है। शास्त्र का तो अटल सिद्धान्त है—"ऋते ज्ञानान्नमुक्तिः" यह बात सर्वथा न्यायसंगत युक्ति युक्त और अकाट्य है। अतः उपर्युक्त भ्रम जालों में न फँसना ही श्रेयस्कर है। विश्वास ही फल दायक या भावनानुसार सिद्धि मानी जाय तो यह भी मानना पड़ेगा कि जिन लोगों का ऐसी बातों पर विश्वास नहीं है उन्हें ऐसे कार्यों का फल अशुभ नहीं मिल सकता। जब ऐसी बातें हमें पग पग में रुकावटें डालतीं और क्षण क्षण में अशुभ फल देती हैं तब हम इन कुविश्वासों के जाल में क्यों फँसें! इन की भावना न करना इन पर विश्वास न रखना ही उत्तम और सुखद सिद्ध हुआ है। दूसरी बात यह है कि भावनानुसार सिद्धि या विश्वासानुसार फल

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वहीं तक हो सकता है जहाँ तक कि ईश्वरीय वा प्राकृतिक नियमों का अविरोध हो। अर्थात् ये दो बातें ईश्वर वा प्रकृति के नियमों का उल्लंघन नहीं कर सकतीं। यही कारण है जिस से पूर्ण विश्वास और दृढ़ भावना होने पर भी बहुत से कार्य्य असिद्ध होते हैं और विश्वास या भावना न होने पर भी बहुत से कार्य्य सिद्ध हो जाते हैं। संसार में ऐसे सहस्रों उदाहरण मिल सकते हैं जिस में लोगों का पूर्ण विश्वास या दृढ भावना थी पर कार्य सिद्ध न हुवा। निष्कर्ष यह कि जो जिस का कारण नहीं उसे उसका कारण मान लेना भारी भ्रम है। निश्चय है कि जब तक लोग उपर्युक्त प्रकार के भ्रमजालों से मुक्त न होंगे तब तक कठिनाइयों से भी पूर्णतया मुक्त न होंगे, एवं पूरा सुख या पूरी सफलता न प्राप्त कर सकेंगे।

आकाङ्क्षा

[लक्ष्मीप्रसाद त्रिवेदी "मधु"]

ओ३म् अर्य्यमा अलख आदि अक्षर अविनाशी।
व्यापक ब्रह्म विशुद्ध, विश्व-वर-विभा-विकाशी॥
सत्य सनातन साम, सोम शम शङ्कर स्वामी।
पुरुष प्राण उद्गीथ, प्रेम प्रभु अन्तर्यामी॥
भगवान्! वीरता बुद्धि-बल, हम लोगों को व्याप्त हो।
गत आर्य्य धर्म्म-वैभव विमल, अखिल विश्व में प्राप्त हो॥१॥

वैदिक-वैभव आर्य्य-अवनि में, फिर विकसित हो।
पूर्व आर्य्य-सभ्यता ईश! फिर से विलसित हो॥
दिव्य हव्य से हवन करें, हम प्रमुदित प्रति दिन।
साम-गान सानन्द पवित्र करें हम निशिदिन॥
निर्भय हो कर के सदा वेद-धर्म्म पर दृढ़ रहें।
निज उन्नति के हेतु ही, कठिन कर्म्म पर दृढ़ रहें॥२॥

धर्म्म-पताका उड़ा विश्व में धर्म्म वीर हों।
कर्म्म-मार्ग में विजय प्राप्त कर कर्म्म वीर हों॥
रण-कौशल में कुशल पूर्ण रणवीर कहावें।
दृढ़ प्रतिज्ञ हो सदा प्रभो प्रणवीर कहावें॥
सब प्रकार ही पूर्ववत्, बढ़ै बुद्धि-बल वीरता।
पुरखाओं के तुल्य ही, धरैं-धर्म्म-धुर धीरता॥३॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अद्भुत यन्त्र

(ले०— पं० कृष्णदत्त आयुर्वेदालङ्कार)

पाठक वृन्द ! आपने बहुत से तरह तरह के यन्त्र इस दुनिया में देखे हैं परन्तु आज जिस यंत्र का वर्णन मैं आपके सामने करना चाहता हूँ वह अपने ढंग का ही है वैसा यंत्र आपने अन्यत्र कहीं न देखा होगा । आप प्रतिदिन षड् रसों का भिन्न २ रूपों में उपभोग करते हैं। आप को यह तो पता रहता है कि आपने क्या खाया और उस का स्वाद कैसा था परन्तु आप को यह ज्ञात नहीं होता कि गले से उतरने के बाद वह भोजन कहाँ जाता है ? उस पर कौन सी रासायनिक क्रियाएँ होती हैं ? और वह किस तरह पच कर आपके शरीर को पुष्ट करता है ? बड़ा आश्चर्य है कि यह यन्त्र हम सब के पास है फिर भी हमें इस की आकृति और कार्य का परिज्ञान नहीं है !

हम जो भी पदार्थ खाते हैं वे सब इन पाँच नामों के अन्तर्गत हो जाते हैं । i. कर्बोज [Carbohydrates.] ii. प्रोटीन [Protein] iii. वसा [Fat] iv. लवण [Salts.] v. जल [Water]। हमारे मुख से गुदा तक एक प्रणाली होती है जिस में इन सब भोज्य पदार्थों का पचन होता है इसे महास्रोतस् [Alimentary canal] कहते हैं।

मैं आपके सम्मुख एक साधारण लगी लगाई Typical थाली लेता हूँ जिस में उल्लिखित पाँचों पदार्थ क्रमशः खांड, गेहूं की रोटी तथा दाल, मक्खन, नमक और ठंडे जल के भरे हुए गिलास के रूप में रक्खे हैं। रोटी की बेला आती है, आप नहा धोकर ठंडे होकर प्रसन्नता पूर्वक इस थाली को समाप्त करने के लिए रसोई में जा पहुंचते हैं । मनुभगवान् के कथनानुसार आप थाली को देख कर "दृष्ट्वा हृष्येत् प्रसीदेच्च प्रतिनन्देच्च सर्वशः ।" अर्थात् खूब खुश होते हैं तथा उस प्रसन्नता को अपनी भिन्न २ चेष्टाओं द्वारा प्रकाशित करते हैं। और थाली में विद्यमान चीजों का स्वाद लेते हुए उस परम पिता परमात्मा का हार्दिक धन्यवाद करते हैं जिसकी यह सब माया है, इतने में थाली समाप्त हो जाती है। बस, यहाँ पर आपका काम समाप्त होता है और मेरा कार्य प्रारम्भ होता है।

मेरा कार्य आपको यह बताना है कि भोजन के पचने की प्रक्रिया हमारे शरीर में किस तरह होती है ? कई यह समझते है कि भोजन पेट में जाकर पचना शुरु होता है इसलिए येनकेन प्रकारेण भोजन को पेट में धकेल देना चाहिए, आगे वह स्वयमेव पच जायगा परन्तु ऐसा समझना बड़ी भारी भूल है भोजन का पाक वस्तुतः मुख से ही प्रारम्भ होता है। हमारे मुख में एक रस होता है जिसे लाला [Saliva] कहते हैं। जो मनुष्य जितना अधिक भोजन को चबाता है

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उस के मुख से उतना ही अधिक लालारस [Saliva] निकल कर भोजन के पचाने में भाग लेता है इसी लिए साधारणतः कहा जाता है कि भोजन को खब चबा कर खाना चाहिए। भोजन में प्रसन्न रहने का जो मनु का आदेश है वह भी इसी लिए कि जब भोजन करते हुए मनुष्य प्रसन्न होता है तो उस के मुख में लालारस अधिक निकलता है और यही कारण है जिस से भोजन का स्वादु होना भी आवश्यक है। क्योंकि जिस भोजन में कुछ स्वाद नहीं या बेस्वाद है उस के खाने पर लाला ग्रन्थियों का रस नहीं निकलता या कम निकलता है। इस के साथ ही यह भी समझना चाहिए कि स्वादु होते हुए भोजन स्वास्थ्य की दृष्टि से हानि कारक न होना चाहिए। इस लाला रस के दो कार्य हैं। पहला तो यह कि यह मुख की श्लेष्मकला [Mucous membrane] को गीला करता है, बोलने में सहायता देता है, भोजन के घुलन शील पदार्थों के घोलने में भाग लेता है तथा इस में विद्यमान म्यूसिन [Mucin] भोजन के ग्रास को चिकनाई से लपेट कर निगलने योग्य बना देती है। दूसरा कार्य लाला रस में विद्यमान टायलिन [Ptyalin] नामक पदार्थ के कारण होता है और वह निशास्ते [Starch] का तोड़ना है, निशास्ता टूट कर पहले डेक्सट्रिन [Dax-trin] और माल्टोज़ [Maltose] के रूप में आती है और फिर डेक्सट्रिन भी माल्टोज़ के रूप में आ जाता है। इस तरह आप की खाई हुई खाँड और रोटी का बड़ा भाग माल्टोज़ के रूप में आ गया।

मुख से चल कर भोजन गले और भोजन प्रणाली में से होता हुआ जिस स्थान पर पहुंचता है उसे आमाशय [Stomach] कहते हैं। आमाशय के पाचक रस का नाम आमाशयिकरस या Gastric-juice है। इस में पेप्सिन [Pepsin] नामक एक ऐन्द्रियिक पदार्थ है, जिसका मुख्य कार्य प्रोटीन का तोड़ना है। यह पाचकरस इस प्रोटीन को तोड़ कर पेप्टोन [Peptone] की शकल में बदल देताहै। इस प्रकार आप ने जो दाल और कुछ रोटी खाई थी वह आमाशय में जाकर पेप्टोन में बदल जाती है। आमाशय से निकल कर जब भोजन छोटी आँतों के प्रारम्भिक भाग–जिसे ग्रहणी [Deodenum] कहते हैं—में पहुँचता है तब यहाँ पर जिस पाचक रस की उस पर क्रिया होती है उसे अग्न्याशय-रस [Pancreatic juice] कहते हैं। यह रस अग्न्याशय [Pancreas] नामक एक ग्रन्थि में उत्पन्न होता है। इस रस में बहुत सारे ऐन्द्रियिक पदार्थ होते हैं जिन में सब से आवश्यक तीन हैं १. ट्रिप्सिन [Trypsin] २. अमाइलेज़ [Amylase] ३. लाइपेज़ [Lipase] आप इन नामों से घबड़ायें नहीं क्योंकि मैं अभी इनका मतलब स्पष्ट किए देता हूँ १. ट्रिप्सिन के वही कार्य हैं जो कि आमाशयिक रस में रहने वाले पेप्सिन [Pepsin] के हैं भेद केवल इतना है कि ट्रिप्सिन अधिक शक्ति शाली है। पेप्सिन की क्रिया के बाद जब ट्रिप्सिन की क्रिया प्रोटीन पर होती है तो प्रोटीन के पचन में जो कुछ कमी रही होती है, वह

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सब पूर्ण हो जाती है। [२] अमाइलेज़ [Amylase] का कार्य अर्थात् निशास्ते का माल्टोज़ में बदलना, जो कि लाला ग्रन्थियों का भी कार्य था, अग्न्याशयिक रस [Pancreatic juice] का सब से मुख्य कार्य है। लाला ग्रन्थियों की अपेक्षा इस में यह शक्ति बहुत अधिक है यहाँ तक कि यह बिना उबले हुए स्टार्च को भी तोड़ देता है। इस तरह कर्बोज का पचन यहाँ पूर्ण हो जाता है। [३] अग्न्याशयिक लाइपेज़ के द्वारा वसा [fat] अर्थात् मक्खन जो कि आपकी थाली में परोसा गया था, ग्लिसरोल [Glycerol] और वसा-अम्लों [Fatty acids] में बदल जाता है तथा वसा-अम्ल क्षारीय भस्मों से मिल कर Saponification प्रक्रिया द्वारा साबुन बनाते हैं। ये तो वसा में रासायनिक परिवर्त्तन हुए। अब यह देखना है कि इसमें भौतिक परिवर्त्तन शरीर के अन्दर क्या होते हैं? भौतिक परिवर्तन यही होता है कि वसा छोटे छोटे कणों [globules.] के रूपमें टूट जाती है जैसा कि प्राकृतिक घोल [emulsion] दूध में दिखाई देता है, इसे emulcification कहते हैं।

छोटी आँतों के पाचक रस का नाम क्षुद्रान्त्रीय रस [Succus Entericus] है Succus = पाचक रस और Entericus = छोटी आँतें। इसका मुख्य कार्य माल्टोज़ को ग्लुकोज़ [glucose] नामक खांड में बदलना है। इस के अतिरिक्त इस का एक आवश्यक कार्य अग्न्याशयिक रस के कार्यों को प्रबल करना भी है, विशेषतः यह प्रोटीन के तोड़ने में उस की सहायता करता है।

यकृत् [Liver] में जो पाचक रस बनता है उसे पित्त [Bile] कहते हैं। यह अपने आप भोजन के पचाने में कोई भाग नहीं लेता परन्तु अग्न्याशयिक रस के साथ मिल कर उस की शक्ति को बढ़ा देता है। वसा के पचन में यह उक्त पाचक रस की विशेष सहायता करता है।

इस प्रकार छोटी आँतों के प्रारम्भिक भाग ग्रहणी में अग्न्याशय [Pancreas] का पाचक रस, छोटी आँतों का पाचक रस और यकृत् का पाचक रस इन तीनों की क्रिया होने के बाद कर्बोज, प्रोटीन और वसा का पचन हो जाता है। परन्तु जल और लवणों का पचन बड़ी आँतों में होता है। अन्न का मल भाग बड़ी आँतों में से होता हुआ गुदा [Rectum] में पहुँचता है और गुदा के गुदद्वार से जब बाहर निकलता है तब हमें मलविसर्जन का अनुभव होता है।

इस तरह हमें पता लगा कि हमने जो कुछ खाया था वह किन भिन्न २ रूपों में जा कर पचता है। अब प्रश्न यह है कि कर्बोज, प्रोटीन, वसा, लवण और जल हमारे अन्दर जज़्ब [Absorb] कैसे होते हैं और हमारे शरीर का भाग किस तरह बनते हैं? इस विषय में यहाँ संक्षेप से इतना कहना ही पर्याप्त है कि जल और लवण तो उसी रूप में बड़ी आँतों में जाकर जज़्ब हो जाते हैं तथा प्रोटीन और कर्बोज अपने विश्लिष्ट रूप में रक्त वाहिनी धमनियों तथा शिराओं के द्वारा और वसा लसीकावाहिनियों [Lymphatic channels या Lacteals.] के द्वारा जज़्ब होते हैं। और अन्त में हमारे शरीर का भाग बन जाते हैं। इस प्रकार प्रतिदिन भोजन हमारे अन्दर पचता और खपता है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

"तुम्हें मोहनिद्रा बड़ी आरही है"

पं० भूरालाल जी कथाव्यास

खड़े चोर हैं और खिड़की खुली है। तुम्हें नींद है खूब आँखें घुली है ॥
डायन पड़ोसिन की दानत डुली है। बहू छोकरे छीनने पर तुली है ॥
उठो जागने की घड़ी जा रही है।
तुम्हें मोह निद्रा बड़ी आरही है ॥ १ ॥

पड़े स्वार्थ में सन्तरी भाग्य फूटे। लफङ्गे लुटेरों ने सब माल लूटे ॥
तिजोरी के ताले तड़ातड़ हैं टूटे। सकल सम्पदायें पड़ीं मार्ग छूटे ॥
ठगों को मज़े में पड़ी पारही है।
तुम्हें मोह निद्रा बड़ी आरही है ॥ २ ॥

जगो! अबतो निद्रा रही दो घड़ी की। अरे गिर चुकी बल्लियाँ झोंपड़ी की ॥
बातें न समझो लला चोपड़ी की। ज़ल्दी हिफ़ाजत करो खोपड़ी की ॥
बिपद गीत सिर पर खड़ी गा रही है।
तुम्हें मोह निद्रा बड़ी आरही है ॥ ३ ॥

सबल बान्धवों को भगाते हो घर से। स्वयं खाट नीचे दुबकते हो डर से ॥
घृणा घोर घर से, बड़ी प्रीति पर से। परस्पर हृदय में महाद्वेष बरसे ॥
वृथा की लड़ाई लड़ी जा रही है।
तुम्हें मोह निद्रा बड़ी आरही है ॥ ४ ॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जीवन संग्राम

मनुष्य और उसके शत्रु

(ले० श्री० डा. रामकृष्ण पारिख बी. ए; एम.बी.बी.एस.)

प्राणि शास्त्र वेत्ताओं का मत है कि जगत् और जीवन संग्राममय हैं। इस संसार के वनस्पति और पशु जगतों के अनेकानेक वर्गों, जातियों, उपजातियों और व्यक्तियों के बीच घोर संग्राम छिड़ा हुआ है। इनमें से प्रत्येक जाति और व्यक्ति की समस्त इच्छा शक्ति और कार्य कारिणी शक्ति एकमात्र इसी उद्देश्य की पूर्त्ति में दत्तचित्त है कि अपने सब प्रतिद्वन्द्वियों को जीवन संग्राम में जड़ मूल से नाश करके अपनी संतति से संसार को भर दे—अपने सजातियों का पृथ्वीमंडल पर एक छत्र आधिपत्य स्थापित करें। एक ओर तो प्रत्येक जाति इस महत्वाकांक्षा से प्रेरित हो रही है दूसरी ओर इस की पूर्ति के साधन,जीवन की आवश्यक सामग्रियाँ, परिमित हैं। इस कारण वश उनके बीच जीवन संग्राम अनिवार्य है। और, वनस्पति वर्ग के प्राणियों के लिए तो अहिंसात्मक जीवन व्यतीत करना संभव है, क्योंकि पृथ्वी, जल, वायु से तत्व ग्रहण करके सूर्य के ताप की सहायता से उन को जीवन की आवश्यक सामग्रियों में परिणत कर डालने की सामर्थ्य उन में मौजूद है, किन्तु पशु वर्ग के प्राणियों के लिए जीवित रहने का एक मात्र उपाय अन्य प्राणियों— वनस्पतियों अथवा पशुओं का भक्षण करना है, इस लिए उन को अनिवार्य रूप से हिंसात्मक जीवन व्यतीत करना होता है। इस प्रकार से समस्त पशु-जगत् के जीवन का एक मात्र अवलम्ब, प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से, वनस्पति जगत् ही है, प्रकृति ने ही वनस्पतिओं को पशुओं का शिकार बना रक्खा है। फिर वनस्पतियों के आहार से संतुष्ट न रह कर पशुओं की अनेक जातियां अपने से निर्बल पशुओं का भक्षण करती हैं, और वे अपने से निर्बलों का शिकार करती हैं। इस प्रकार से पशुओं पशुओं में घोर जीवन संग्राम छिड़ा हुआ है। यद्यपि वनस्पतियाँ सिद्धान्त रूप से अहिंसात्मक जीवन व्यतीत कर सकती हैं, किन्तु व्यवहार में जीवन की आवश्यक सामग्रियों की प्राप्ति के लिए वे एक दूसरे से निरन्तर युद्ध में प्रवृत्त हैं। और, वनस्पति वर्ग के कुछ अत्यन्त सूक्ष्म प्राणियों ने, कदाचित् पशुओं के अत्याचारों का बदला लेने के उद्देश से ही, रोगों का रूप धारण करके पशुओं पर धावा बोल दिया है, और घोर हिंसात्मक जीवन व्यतीत करते हैं। इस प्रकार से हम देखते हैं कि पशुओं पशुओं के बीच, वनस्पतियों वनस्पतियों के बीच, और पशुओं वनस्पतिओं के बीच अत्यन्त उग्र जीवन संग्राम छिड़ा हुआ है।

उपरोक्त मत से सर्वथा विपरीत मत कवियों, भक्तों और धार्मिक पुरुषों का है। वे

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अखिलविश्व में प्रेम का ही साम्राज्य देखते हैं—प्रकृति के समस्त व्यापारों में उनको एक मङ्गलमय विधान स्पष्ट दृष्टि गोचर होता है। निष्पक्ष मत से विचार करने पर पता चलता है कि दोनों ही मतों में सत्यांश मौज़ूद है—यथार्थ में संग्राम और प्रेम, ये दोनों शक्तियां प्रकृति में कार्य कर रही हैं, और इन्हीं के द्वन्द्व से प्रकृति के चक्र इस शीघ्र गति से घूम रहे हैं। विशेषतया मनुष्य में तो इन दोनों शक्तियों का कार्य पृथक् पृथक् और स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। एक ओर तो मनुष्य संग्राम के भाव से प्रेरित होकर अन्य मनुष्यों और जातियों के साथ निरंतर अर्थिक युद्ध-जीवन की आवश्यकताओं पर अधिकार जमाने के संघर्ष—में प्रवृत्त रहता है, जो कि इतिहास में अनेकानेक बार वास्तविक युद्ध का रूप भी धारण कर चुका है, और पिछला महायुद्ध जिसका उदाहरण मात्र था; दूसरी ओर परिवार-प्रेम के भाव से प्रेरित होकर अपने निजी स्वार्थों का बलिदान करता हुआ मनुष्य सामान्यतया देखा जाता है, और अनेकानेक मनुष्यों ने स्वदेश और स्वजाति प्रेम से प्रेरित होकर अपने प्राणों की भी आहुति दे दी है। जो कुछ भी हो जीवन-संग्राम एक ऐसा स्पष्ट, ऐसा प्रबल और स्वयं सिद्ध सत्यहै कि इस के माने बिना छुटकारा ही नहीं है। मनुष्य भी सदा ही से इस संग्राम में प्रवृत्त रहा है, और मनुष्य ने इस पृथ्वी पर जो एक विशेष गौरव का स्थान प्राप्त कर लिया है वह इस जीवन-संग्राम में सफलता-लाभ का ही परिणाम है। मनुष्यों और अन्य प्राणियों के बीच जो संग्राम चला आ रहा है, उस पर ही विचार करना हमें इस स्थान पर अभीष्ट है। वे सब प्राणी जो मनुष्य को किसी भी प्रकार की हानि अथवा कष्ट, चाहे आर्थिक अथवा शारीरिक, पहुँचाते हैं, मनुष्य के शत्रु हैं। मनुष्य के शत्रु-समुदाय में वनस्पतियों और पशुओं की कौन कौन सी जातियाँ सम्मिलित हैं, वे किन किन प्रकारों से मनुष्य के प्रति शत्रुता का आचरण करती हैं, उनके कारण मनुष्य को क्या २ और कितनी २ हानियां उठानी पड़ती हैं, उन्होंने किस २ प्रकार से मानव जीवन में अत्यन्त विकट समस्याएं, जीवन और मरण के प्रश्न, उपस्थित कर दिए हैं, इन बातों पर—सृष्टि व्यापी जीवन संग्राम के इस पहलू पर-हमें इस स्थान पर विचार करना है।

अत्यन्त प्राचीन काल में, अपने जीवन के प्रारम्भिक युग में, मनुष्य को अपने शत्रुओं के साथ घोर युद्ध में प्रवृत्त होना पड़ा था, किंतु वह सब इतिहास अतीत के गर्भ में छिपा पड़ा है, और आज कलके सभ्य मनुष्यों को उस को कल्पना द्वारा भी हृदयङ्गम करना कठिन है। उस समय के प्राणियों की जो ठठरियां भूगर्भ में दबी हुई मिली हैं, और उस समय के मनुष्यों के जो अस्त्र-शस्त्र तथा अन्य चिन्ह प्राप्त हुए हैं, तथा कुछ गुफाओं में पशुओं और शिकार के जो अत्यन्त प्राचीन चित्र अंकित पाये गए हैं उन से हम उससमय का कुछ अन्दाज़ा लगा सकते हैं। उस युग में पृथ्वी बड़े बड़े घने जङ्गलों से ढकी हुई थी, और वे जङ्गल असंख्य पशुओं से भरे पड़े थे। उन पशुओं में से अनेकों

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जातियाँ तो कभी की लुप्त हो चुकी हैं। वे इतने बड़े थे कि उनकी गर्दनें ऊँचे २ वृक्षों की चोटियों तक पहुँचती थी। छिपकली के परिवार के इतने बड़े बड़े प्राणी थे कि मनुष्य उनके सामने एक भुनगा-सा था। आज कल जो हिंसक पशु पाये जाते हैं, यथा शेर, गैंड़ा, चीता इत्यादि, वे सब अथवा उन के पूर्वरूप अगणित संख्या में मौजूद थे। इन भीमकाय और भूधराकार हिंसक पशुओं से मनुष्य घिरा हुआ था। बनों में, नदियों के किनारे, प्राकृतिक आश्रय स्थानों में, अकेले, दुकेले, सदा ही उस की इन भयंकर शत्रुओं से मुठभेड़ होती रही होगी। उस समय जो दृश्य उपस्थित होता होगा उसकी कल्पना से ही हमारे रोंगटे खड़े हो जाते हैं। आज कल जब कभी कोई चीता लागू हो जाता है तब वह बीसियों मनुष्यों को खा जाता है, और उस के कारण इतना आतङ्क छा जाता है कि गाँव के गाँव ऊजाड़ हो जाते हैं। जब हम इस बात का विचार करते हैं तो हमेंअत्यन्त आश्चर्य होता है कि उस समय के साधन और आश्रय विहीन मनुष्य ने अपने पत्थर और हड्डियों के भद्दे अस्त्रों से, इतनी प्रतिकूल परिस्थितियों के बीच अपनी जाति की रक्षा किस प्रकार की होगी। किन्तु उस समय के मनुष्यों की आजकल के सभ्य मनुष्यों से तुलना करना व्यर्थ है। परंपरागत संस्कारों से उन परिस्थितिओं में अपनी रक्षा करने की क्षमता उनमें मौजूद थी। निदान मनुष्यों और हिंसक पशुओं का संग्राम हजारों-लाखों वर्षों तक चलता रहा, किन्तु अन्त में मनुष्यों की ही विजय हुई। वे हड्डी और मांस के चलते फिरते पहाड़ जीवन संग्राम के सर्वथा अयोग्य थे। उनके विशाल शरीरों के पोषण के लिए भोजन प्राप्त होना असंभव होगया। जिससे उनकी संख्या घटने लगी और कालान्तर में उनके वंश निर्बीज हो गये। इस जीवन संग्राम में अग्नि ने मनुष्य की बड़ी सहायता की होगी। जंगलों को साफ़ करने के उद्देश्य से मनुष्य ने जब उन में आग लगाई होगी तब जंगल के हज़ारों लाखों जीव एक ही बार में जल कर भस्म होगये होंगे, और इस अस्त्र की अत्यन्त सफलता देखकर उसका उपयोग भी ख़ूब हुआ होगा। निदान जैसे २ जंगल सफा होते गए, जंगली जीवों का नाश होता गया, और मनुष्य के बसने के लिए भूमि निकलती आई। इस महासंहार से जो जंगली पशु बाकी बचे उनमें से अनेकों को मनुष्य ने पालतू बना लिया, और अवशिष्ट मनुष्य की बस्तियों से दूर घने जंगलों में जा छिपे और इस पृथ्वी का निर्विवाद और निष्कंण्टक राज्य मनुष्य के लिए छोड़ते गए।

कालान्तर में मनुष्य को उस जीवन संग्राम की स्मृति भी शेष न रही, अपने जीवन के उस लंबे और अत्यन्त भीषण अध्यायको उसने सर्वथा विस्मरण कर दिया। अब तो कई हज़ार वर्षों से उस की यह दृढ़ धारणा है कि यह पृथ्वी और और उस पर की समस्त वस्तुएँ और प्राणी सनातन से मनुष्य के उपभोग की सामग्री मात्र हैं। अन्य सचेतन प्राणी स्वतन्त्र जीवन तथा सत्ता रखते हैं, और वे पृथ्वी के साम्राज्य

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

के लिए मनुष्य से युद्ध में प्रवृत होते हैं, उनके द्वारा लाखों करोड़ों मनुष्यों की मृत्यु होती है, ये बातें तो उसकी कल्पना में भी न आती थीं। किस प्राणी में इतनी धृष्टता हो सकती है कि इस अखिल सृष्टि के मुकुट मणि, ईश्वर के प्रिय-पुत्र, पृथ्वी के स्वच्छन्द प्रभु, मनुष्य के साथ शत्रुता करने का दावा भी कर सके। मनुष्य के इस मिथ्या अहंकार को चूर चूर करने, उस की अज्ञान जनित मोह-निद्रा को तोड़ने और परिस्थिति की वास्तविक भयंकरता की ओर उस का ध्यान आकर्षित करने के लिए प्रकृति की ओर से अनेकानेक प्रयत्न होते रहे। अनेकों वार महामारी का रुद्ररूप धारण कर के मनुष्यों में रोग फूट निकला और हज़ारों लाखों मनुष्यों को यमराज के यहाँ भेजता गया, सैंकड़ों बार मनुष्य की फसलें खड़े खड़े नष्ट हो गईं, और उस के पालतू पशु लाखों की संख्या में मर गये। किन्तु फिर भी वास्तविक कारण तक मनुष्य की बुद्धि न पहुँची-उसको यह गुमान तक न हुआ कि इन भीषण व्यापारों का मूल कारण मनुष्यों और कुछ प्राणियों का जीवन संघर्ष है। वह इन को दैवी-कोप अथवा प्राकृतिक उत्पात का परिणाम-स्वरूप समझता रहा, और इन को भी भूकंप, तूफान, बाढ़ इत्यादि प्राकृतिक घटनाओं की भाँति अनिवार्य तथा अवश्यम्भावी समझता रहा। इस प्रकार से जब कि मनुष्य बेख़बर पड़ा हुआ अपने आप को पृथ्वी का स्वामी समझ रहा था, उस के शत्रु भीतर ही भीतर मनुष्य जाति की जड़ें खोखली कर रहे थे, और मृत्यु के रूप में हज़ारों लाखों की भेंट ले रहे थे।

आख़िरकार मनुष्य की मोहनिद्रा तोड़ने और रोगों की प्रकृति के विषय में सृष्टि के प्रारम्भ से ही जो अज्ञान चला आरहा था उसे दूर करके वास्तविकता को सामने रखने का श्रेय आधुनिक विज्ञान को प्राप्त हुआ। कोई पचास वर्ष हुए कि पैस्चयुर नामक फ्रैंच वैज्ञानिक ने यह खोज निकाला कि एन्थ्रैक्स नामक संक्रामक रोग एक अत्यन्त सूक्ष्म प्राणी के आक्रमण से उत्पन्न होता है। तब से इस विषय में बहुत कुछ खोज बराबर होरही है, और प्रत्यक्ष प्रमाण द्वारा यह सिद्ध होचुका है कि प्रायः सभी संक्रामक रोग विभिन्न प्रकार के सूक्ष्म प्राणियों के आक्रमण से होते हैं। इस थोड़े से ही काल में इस विषय ने इतना महत्व पाया है कि इन सूक्ष्म प्राणियों के अध्ययन में सैंकड़ों वैज्ञानिक लगे हुए हैं। इस विषय की दूसरी बड़ी खोज २५-३० वर्ष पूर्व डाक्टर मेन्सन और रौस ने की। मेलेरिया नामक रोग को मनुष्यों में फैलाने का काम मच्छर का ही है, यह उन्होंने खोज निकाला। तब से सैंकड़ों वैज्ञानिक मच्छरों और अन्य कीट-पतंगों की खोज में लगे हुए हैं, और रोगों के फैलाने में इस वर्ग के प्राणी जो बड़ा भाग लेते हैं उसके विषय में अत्यन्त महत्वपूर्ण ज्ञान प्राप्त होचुका है। इस प्रकार से पिछले ४०-५० वर्षों में वैज्ञानिक खोजों द्वारा जो तथ्य प्राप्त हुए हैं उन्होंने हमारे चिरकालीन विचारों और धारणाओं में क्रान्ति उत्पन्न करदी है। उन्होंने सिद्ध कर दिया है कि जिन्हें हम रोग कहते हैं वे और कुछ नहीं हैं

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

केवल नाना प्रकार के प्राणियों के आक्रमण का परिणाम है—जिन्हें हम रोग कहते हैं वे मनुष्यों और अन्य प्राणियों का जीवन संग्राम है। अनेकानेक प्राणियों ने मनुष्य पर चारों ओर से धावा बोल दिया है, और जब कि उनकी अत्यन्त सूक्ष्मता तथा अपने अज्ञान के कारण मनुष्य को उनके अस्तित्व तक का पता न था, वे रोग और मृत्यु के रूप में लाखों-करोड़ों मनुष्यों की बलि ले रहे थे, मनुष्य की फ़सलों और खाद्य सामग्री को नष्ट-भ्रष्ट करके कल्पनातीत आर्थिक हानि पहुँचा रहे थे। ये मनुष्य के शत्रु जितने ही सूक्ष्म हैं उतने ही भयंकर हैं। इनकी संहार-कारी शक्ति के सन्मुख प्रागैतिहासिक काल के भूधराकार हिंसक पशु नगण्य हैं। पृथ्वी के कुछ भागों में इस संग्राम ने इतना उग्र रूप धारण किया है कि उन भागों में मनुष्यों के जीवन-मरण का प्रश्न उपस्थित होगया है यदि शत्रुओं के प्रतिकार का कोई उपाय न किया गया तो उन स्थानों में मनुष्य का सर्वथा नाश अवश्यम्भावी है। अभी तक यह संग्राम एकतर्फ़ा था—मनुष्य के शत्रु मनमानी कर रहे थे और मनुष्य की ओर से कुछभी नहीं होरहा था। किंतु अब विज्ञान की सहायता से मनुष्य ने अपने शत्रुओं का प्रतिकार करना प्रारम्भ कर दिया है, जिससे मनुष्यों और अन्य प्राणियों के संघर्ष ने अब वास्तविक युद्ध, दुतर्फ़ा युद्ध, का रूप धारण किया है।

मनुष्य के शत्रु मुख्यतया दो प्रकार की हानि पहुँचाते हैं—एक शारीरिक हानि, दूसरी आर्थिक हानि। शारीरिक हानि के अन्तर्गत एकाध बूँद ख़ून चूस लेना अथवा साधारण सी पीड़ा पहुँचाने से लेकर अत्यन्त भयंकर रोग और मृत्यु तक सम्मिलित हैं। आर्थिक हानि के अन्तर्गत फ़सलों तथा उपयोगी सामग्रियों का नाश तथा पालतू पशुओं के रोग और मृत्यु सम्मिलित हैं। यहाँ पर हमारा विशेष संबन्ध शारीरिक हानि और उसे पहुंचाने वाले प्राणियों से है। किन्तु यह बात ध्यान में रखनी चाहिये कि शारीरिक हानि और आर्थिक हानि में घनिष्ठ सम्बन्ध है। शारीरिक हानि के कारण रोग होता है, और जो मनुष्य अथवा जातियाँ रोगी रहती हैं उनकी उत्पादक शक्ति घट जाती है—वे दरिद्र हो जाती हैं। रोग के कारण अथवा आर्थिक शत्रुओं के नुकसान पहुंचाने के कारण जो मनुष्य अथवा जातियाँ दरिद्र होजाती हैं वे पोषक पदार्थों के अभाव के कारण निर्बल पड़ती जाती हैं, और निर्बलता की दशा में वे और अधिक रोग ग्रस्त होती हैं, और शीघ्रता से मृत्यु पाती हैं। इस प्रकार से रोग से दरिद्रता बढ़ती है और दरिद्रता से रोग बढ़ता है। जो जाति रोग और दरिद्रता के कार्य-कारण सम्बन्धी दुष्ट-चक्र (Vicious circle) में फँस जाती है उसका ईश्वर ही मालिक है। मेलेरिया इत्यादि रोग जिन जातियों में फैलते हैं उनको न केवल रोग ही मारते हैं किन्तु दरिद्रता—इस दुधारी तलवार से भी उनकी संहारकारी शक्ति बहुत बढ़ जाती है, और मनुष्य की रोग-प्रतिषेधक शक्ति बहुत घट जाती है।

मनुष्यों और अन्य प्राणियों का जो

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जीवन-संग्राम चल रहा है उसको हम दो मुख्य भागों में विभक्त कर सकते हैं ; पहिला स्थूल जीवन-संग्राम और दूसरा सूक्ष्म जीवन-संग्राम। स्थूल जीवन-संग्राम और उसमें जो प्राणी भाग लेते हैं वे स्थूल दृष्टि को गोचर हैं और मनुष्य उनसे चिरकाल से परिचित है; इसके विपरीत सूक्ष्म जीवन-संग्राम का और उसमें भाग लेने वाले प्राणियों का पता मनुष्य को पिछले ५०-६० वर्षों में ही लगा है। स्थूल वर्ग के प्राणियों में मुख्य स्थान जंगली हिंसक जन्तुओं का है। हम देख चुके हैं कि मानवी जीवनके प्रारंभिक काल में मनुष्यों और हिंसक पशुओं के बीच अत्यन्त उग्र जीवन-संग्राम चला था, किन्तु जंगली जानवरों के धीरे-धीरे लुप्त-प्राय हो जाने से अब कई हज़ार वर्षों से यह संग्राम समाप्त सा हो चला है। पृथ्वी के जिन भागों में घनी बस्ती हैं वहाँ तो जंगली जानवर सर्वथा लुप्त होगये हैं, किन्तु भारतवर्ष के कुछ भाग, अफ्रीका और ध्रुवों के पास के प्रदेशों में अब भी जंगली जानवर पाये जाते हैं और यह संग्राम न्यूनाधिक परिमाण में ज़ारी है। मनुष्यों की ओर से संग्राम का भाग उनकी शिकार खेलने की इच्छा से प्रकट होता है, और जंगली जानवरों की ओर से मनुष्यों और उसके पालतू पशुओं पर आक्रमण और उनको मार डालने के द्वारा। भारतवर्ष में अभीतक प्रतिवर्ष दो-ढाई हज़ार मनुष्य जंगली जानवरों के शिकार होते हैं। इन पशुओं में से सन १९१० में चीतों द्वारा ८३५, बघेलों द्वारा ३६०, भेड़ियों द्वारा २७७, रीछों द्वारा १००, मगर-मच्छों और घड़ियालों द्वारा २४४, हाथियों द्वारा ७७ और सुअरों द्वारा ५१ और कुल २२१० मनुष्य मारे गये और उसके पूर्व २५ वर्षों में कुल ६८१६६ मनुष्य मारे गये। इस प्रकार से मनुष्यों की एक अच्छी संख्या इस जीवन-संग्राम में प्रतिवर्ष बलिदान होती है। और दूर दूर देशों से लोग भारतवर्ष में शिकार खेलने आते हैं, इस प्रकार से दोनों ओर से यह जीवन-संग्राम चलरहा है।

स्थूल वर्ग के अन्तर्गत एक अन्य प्राणी भी है जो उपरोक्त सब प्राणियों से कहीं अधिक भयंकर है, और उसके द्वारा होने वाली मृत्युओं की संख्या जङ्गली जानवरों द्वारा होने वाली मृत्युओं से कई गुना अधिक है। वह प्राणी साँप है। सन १९१० में अकेले साँपों द्वारा भारतवर्ष में २१५७१ मनुष्य मारे गये अर्थात् जङ्गली जानवरों की अपेक्षा दस गुने के लगभग, और उससे पूर्व २५ वर्षों में कुल ५४१८१६। इन संख्याओं से इस शत्रु की भयंकरता का पता लगता है। यदि सरकार उद्योग करे और जिन भागों में जंगली जानवरों की संख्या अधिक है वहाँ यह समस्या शीघ्र ही हल की जा सकती है, किन्तु साँपों की समस्या बड़ी टेढ़ी है। इनकी प्रजोत्पादन शक्ति इतनी अधिक है और इनके रहने के ढंग ऐसे हैं कि इनका नाश कर सकना मनुष्य के लिये बहुत कठिन है। जीवन-संग्राम में अभीतक तो यह मनुष्य से बाज़ी ले रहे हैं, संग्राम की दृष्टि से इनका रहन-सहन उनके बहुत उपयोगी है। दूसरे इस प्राणी ने भारतवासियों के हृदय पर एक विशेष प्रभाव जमा लिया है, उनको एक

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्रकार से मेस्मेराइज़ कर लिया है। लाखों मनुष्य इनकी पूजा करते हैं और इनको मारने को कभी भी उद्यत नहीं होते।

शारीरिक हानि के अतिरिक्त जंगली जानवरों द्वारा मनुष्य को आर्थिक हानि भी पहुँचती है। १९१० में जंगली जानवरों द्वारा ६०,००० और साँपों द्वारा १०,००० पालतू पशुओं की मृत्यु हुई, और पिछले २५ वर्षों में इन दोनों के द्वारा २२ लाख से अधिक की। इसके अतिरिक्त जो जंगली जानवर मांस भक्षक नहीं हैं, वे फ़सलों को हानि पहुँचाते हैं। जो गाँव जंगलों के पास हैं उनमें जंगली ढोरों, नीलगाय, हिरन, सूअर और खरगोश से खेतों की रक्षा करना बहुत कठिन होजाता है। जंगली जानवरों के उत्पात तथा मलेरिया के कारण हिमालय की तराई के अनेक भाग उजाड़ होगये हैं। जीवन संग्राम में मनुष्य वहाँ अयोग्य सिद्ध हुआ है।

स्थलवर्ग के प्राणियों में कदाचित् मनुष्य का सब से भयंकर शत्रु चूहा है। इसके द्वारा जो आर्थिक हानि होती है उसी ही का ध्यान कीजिये। जिस समय अनाज खेत में होता है उस समस्त काल में, खलिहान में, मण्डियों की खत्तियों में, हमारे घरों में, बन्दरगाहों की गोदियों में, जहाज़ों में, समुद्र पार के देशों में, आटा पीसने की चक्कियों में, आटे में, आटे से बने हुए पदार्थों में अर्थात् खेत में अनाज बोने के समय से लेकर हमारे मुंहके अन्दर पहुंचने के समय तक हमारे धान्य की राशि में से चूहे का हिस्सा बराबर लगता रहता है। इसके साथ ही जब हम इसकी अति शीघ्र संख्या वृद्धि को ध्यान में रखते हैं तो हम पर सहज ही प्रकट होजाता है कि इसके बराबर मनुष्य का आर्थिक शत्रु कोई नहीं है, और इस के द्वारा होने वाली अकेले भारतवर्ष की हानि जो २४० करोड़ रुपये प्रतिवर्ष अनुमान की जाती है, इस अन्दाजेमें कदाचित् अतिशयोक्ति से काम नहीं लिया गया है। फिर आर्थिक हानि पर ही बस नहीं है, इस प्राणी द्वारा फैलने वाले प्लेग रोग से भारतवर्ष में ही करोड़ से अधिक मनुष्य मृत्यु पाचुके हैं। जब हम असंख्य वर्षों से चली आने वाली कल्पनातीत आर्थिक हानि, और पिछले २५-३० वर्षों की ही महान् जनहानि पर विचार करते हैं, और जब हम इस बात पर ध्यान देते हैं कि किस प्रकार से इसके द्वारा उत्पन्न रोग ने एक चिरस्थायी महामारी का रूप धारण करके पिछले २५-३० वर्षों से भारत में आतङ्क जमा रक्खा है और लाखों घरों को तबाह कर दिया है, तब यह क्षुद्र प्राणी हमारी कल्पना में महाभयंकर रुद्र मूर्त्ति धारण करता है-साक्षात् यमराज के रूप में दृष्टिगोचर होता है। इस क्षुद्र प्राणी में अपने आपको अखिल सृष्टि का मुकुटमणि और बुद्धि का एकमात्र अधिकारी मानने वाले मनुष्य के साथ अत्यन्त सफलतापूर्वक जीवन-संग्राम चलाने की असाधारण क्षमता है।

सूक्ष्म जीवन-संग्राम में जो प्राणी भाग लेते हैं उनमें से कुछ पशु वर्ग के हैं और कुछ वनस्पति वर्ग के। इन सबका आकार

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

छोटा है, और अनेकों तो इतने सूक्ष्म हैं कि जो अणुवीक्षण यन्त्र वस्तुओं को हज़ार से भी अधिक गुना बड़ा कर देते हैं उनके द्वारा भी वे दिखाई नहीं पड़ते, और इनमें से बहुत अधिक स्थूल चक्षुओं को अगोचर हैं। ये प्राणी मनुष्य का आश्रय ग्रहण करते हैं। इनमें से कुछ मनुष्य के शरीर के अन्दर प्रविष्ट होजाते हैं, कुछ त्वचा में घर कर लेते हैं, और कुछ भोजन के लिए मनुष्य के शरीर पर आते हैं। किसी भी प्रकार से हो वे मनुष्य के शरीर में से खाद्य पदार्थ ग्रहण करते हैं, और मनुष्य के खर्च पर जीवित रहते हैं और वंश-वृद्धि करते हैं। इस प्रकार के प्राणी पराश्रयी जीव (Parasites) कहलाते हैं, और जिस प्राणी से वे खाद्य पदार्थ ग्रहण करते हैं वह उनका यजमान (Host) कहलाता है। पशु जगत के पराश्रयी जीवों को हम तीन श्रेणियों में विभक्त करते हैं। प्रथम कीट इत्यादि (Worms), दूसरे पतंग इत्यादि (Insects) और तीसरे निम्नतम श्रेणी के पशु (Protozoa)। वनस्पति जगत के पराश्रयी जीव जीवाणु, कीटाणु या Bacteria कहलाते हैं। इन पराश्रयी जीवों की संख्या इतनी अधिक है, उनके जीवन यापन के रंग-ढंग इतने जुदा-जुदा हैं, उनके आक्रमण की विधियाँ इतने जुदा-जुदा प्रकारों की हैं, उनके द्वारा उत्पन्न शारीरिक विकारों और रोगों के लक्षण इतने भिन्न-भिन्न हैं कि इन सबका वर्णन इस स्थान पर असम्भव है। इनमें से जिन्होंने अपनी भीषणता प्रबलता तथा संहारशक्ति के कारण मनुष्य-जगत में हलचल मचा दी है, जो जीवन-संग्राम की दृष्टि से विशेष महत्त्व के हैं, उन्हीं के विषय में, तथा उनके कारण उत्पन्न समस्याओं के विषय में, हम कुछ वक्तव्य करेंगे।

कीटवर्ग की अनेक जातियों और उपजातियाँ मनुष्य के अन्दर पराश्रयी जीवों की भाँति रहती हैं। राउन्ड वर्म केंचुए को सब कोई जानता है, जो ६-१२ इञ्च लम्बे और गोल होते हैं, तथा मनुष्य की आँतों में रहते हैं। उनके अण्डे मल के साथ बाहर निकलते हैं, और भोजन के पदार्थों के साथ अन्य मनुष्यों की आँतों में पहुँचते हैं, और वहाँ बढ़ने लगते हैं। टेपवर्म लम्बे और पतले फीते के सदृश होते हैं। उनके बीज रूप गाय, सूअर और मछलियों के दूषित माँस में रहते हैं, और उस दूषित माँस द्वारा मनुष्य को आँतों में पहुँचते हैं, और वहाँ चिपटकर रक्त चूसते हैं और अपरिमित रूप से बढ़ने लगते हैं। उनके अण्डे मल द्वारा बाहर निकलते हैं। जब उस मल को कोई उपयुक्त जानवर खा लेता है, तब अण्डे उसके माँस में पहुँच कर उन्नत होते हैं, और फिर माँस द्वारा मनुष्य के शरीर में पहुँचते हैं। थ्रेडवर्म ½ इञ्च लम्बे सूत के धागे के से होते हैं और गुदा के आसपास रहते हैं। गिनीवर्म एक २०-३० इञ्च लम्बा पतला कीड़ा होता है जो बहुधा टाँग की त्वचा में छिद्र करके धीरे-धीरे बाहर निकलता है। बिलहार्जिया हीमेटोबिया एक ½ लम्बा कीड़ा होता है जो दूषित पानी द्वारा शरीर में पहुँचता है और जिगर की शिराओं में

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

76148

रहता है और मूत्राशय की शिराओं में अण्डे देता है, जो मूत्र के साथ बाहर निकलते हैं और फिर पानी को दूषित कर देते हैं। यह मिश्रदेश का जातीय रोग है, कुछ भागों में ९० प्रतिशत लोग इससे पीड़ित हैं। ये तथा अन्य अनेक कीड़े पराश्रयी जीवों की भाँति पृथ्वी के अनेक भागों में पाये जाते हैं, और उनसे पीड़ित रोगी अनेक कष्ट और रोग भुगतता है तथा उसके स्वास्थ्य को बड़ा धक्का पहुँचता है। बहुत से मनुष्य इन कीड़ों से आक्रान्त होते हैं, किंतु जब तक मल-परीक्षा नहीं की जाती तब तक रोग का कारण ज्ञात नहीं होता, और उनका स्वास्थ्य बिगड़ता चला जाता है। कलकत्ते के एक सर्जरी के अस्पताल के रोगियों की मल-परीक्षा की गई तो पता लगा कि उनमें से ५० प्रतिशत के लगभग विविध प्रकार के आँत्र पराश्रयी जीवों से आक्रान्त थे।

कीट वर्ग का एक अन्य प्राणी है। जो जीवन संग्राम की दृष्टि से अत्यन्त महत्व का है। इसने पृथ्वी के बड़े २ भागों में मनुष्यों की समूची जातियों पर बड़ा विकट आक्रमण कर रक्खा है। इसका नाम हुक वर्म है। यह एक $\frac{1}{3}$ इञ्च से $\frac{1}{2}$ इञ्च लम्बा बेलानाकार सूत-सदृश कीड़ा होता है जिस के मुख में चार दाँत होते हैं, जिनके द्वारा यह आँतो की श्लेष्मिक कला को पकड़ लेता है और उसको खाता रहता है तथा रक्त चूसता रहता है। इसके अण्डे मल के साथ शरीर से निकलते रहते हैं। जिन मनुष्यों के शरीर में यह कीड़े अच्छी संख्या में होते हैं, उनके प्रत्येक मलमें ४०लाख तक अण्डे बाहर निकलते हैं। बाहर निकल कर अण्डों का विकाश होता है और उन में से लार्वा निकल कर चारों ओर के पदार्थों—पत्तियों, शाखाओं, झाड़ियों, शाक भाजियों इत्यादि पर चढ़ बैठते हैं और किसी मनुष्य के शरीर में प्रवेश पाने की बाट जोहते रहते हैं। मनुष्य के शरीर के अन्दर ये दो मार्गों से प्रवेश पासकते हैं, मुख द्वारा अथवा त्वचा द्वारा। इन कीड़ों से दूषित पदार्थों को मनुष्य खाता है, और रोग ग्रस्त हो जाता है। किन्तु इस रोग के अत्यधिक विस्तार का कारण त्वचा द्वारा इन कीड़ों का प्रवेश पाना है। इन कीड़ों में अत्यन्त शीघ्रता पूर्वक मनुष्य के शरीर के अन्दर घुस जाने की विलक्षण शक्ति होती है। जिस वस्तु पर यह चढ़े हुए हैं उसके साथ मनुष्य की त्वचा का सम्पर्क-मात्र होने से यह चट त्वचा के अन्दर घुस जाते हैं। त्वचा में प्रविष्ट होकर रक्त वाहिनियों द्वारा हृदय में पहुँचते हैं, वहाँ से फेफड़ों में, फिर श्वास नलियों द्वारा मुख में और फिर थूक के साथ निगले जाकर आँतों में पहुंच जाते हैं, और वहाँ वृद्धि करते हैं। जिन मनुष्यों में यह रोग होता है है वे निरन्तर दुर्बल होते जाते हैं, उनके शरीर का रक्त घटता जाता हैं, और बराबर रक्त के घटने से अन्य रोग घेर लेत हैं। वे चिर रोगी हो जाते हैं। और जीवन संग्राम के सर्वथा अयोग्य, और अन्त में इस के कारण मृत्यु पाते हैं।

यह रोग एक संसार व्यापी समस्या है। यह कीड़ा एशिया अफ्रीका और अमेरिका के समस्त उष्ण और शीतोष्ण

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

भागों में पाया जाता है, और यूरोप में भी मौजूद है। भारतवर्ष में यह बहुत अधिकता से पाया जाता है। बङ्गाल और आसाम में तो प्रायः समस्त जनता न्यूनाधिक परिमाण में इस कीड़े का शिकार है। अनुमान लगाया गया है कि वहां ३½ से ४ करोड़ व्यक्ति इस कीड़े द्वारा आक्रान्त हैं। जब हम इस बात पर विचार करते हैं कि प्रत्येक रोगी के प्रत्येक मल के साथ इसके लाखों अण्डे बाहर निकलते हैं, वहमल बस्तिओं के आसपास खेतों और मैदानों में खुला पड़ा रहता है जिस से अंडे विकसित होकर आसपास के सब पदार्थों पर चढ़ बैठते हैं; और इन कीड़ों द्वारा दूषित स्थानों और पदार्थों के बीच समस्त जनता नङ्गे पाँव और नङ्गे शरीर फिरती है, और अज्ञातरूप से इन कीड़ों को नित प्रति अपने शरीर में ग्रहण करती रहती है। जब मनुष्य के अज्ञान तथा असावधानी से इन कीड़ों के प्रचार में इतनी सुविधा की जाती है तब इस में आश्चर्य ही क्या है कि समूची की समूची जातियाँ इन कीड़ों से आक्रान्त हैं। यह क्षुद्र प्राणी समूची जातियों का रक्त चूस चूस कर उन को निर्बल अशक्त और रक्त हीन बना रहा हैं, उनको जीवन संग्राम के सर्वथा अयोग्य और चिर रोगी बना रहा है, उनको धीरे २ किन्तु निश्चित रूप से मृत्यु की ओर धकेल रहा है। जब हम इन बातों पर विचार करते हैं तो स्पष्ट हो जाता है कि जीवन संग्राम में इस तुच्छ प्राणी ने मनुष्य को बुरी तरह से पछाड़ रखा है।

जीवन संग्राम में पतङ्गों का वर्ग एक विशेष स्थान रखता है, क्योंकि इसमें जितनी सफलता इसको प्राप्त हुई है उतनी कदाचित ही किसी अन्य वर्ग को प्राप्त हुई हो। हिसाब लगाया गया है कि पशुओं के निम्नतम वर्ग प्रोटोज़ोआ के अन्तर्गत ४००० जातियाँ हैं, उससे उच्चवर्ग मौलस्क के अन्तर्गत २५०००, पक्षिवर्ग में १००००, स्तन पोषी वर्ग में ३,०००, और पतङ्ग वर्ग के अन्तर्गत २ लाख से १० लाख तक, अर्थात् पशु जगत् के अन्य सब वर्गों की संयुक्त जातियों की अपेक्षा अकेले पतंगों की जातियां दुगनी से पचगुनी है। फिर पतंगों की अनेकानेक जातियों के व्यक्तियों की संख्या इतनी अधिक है कि उसका कोई अन्दाजा ही नहीं हो सकता। गर्मियों के प्रारम्भ होने पर जब मक्खियों का प्रकोप होता है और चारो ओर मक्खियाँ ही मक्खियाँ भिनभनाती फिरती हैं क्या उनकी संख्या का कोई अन्दाज़ा हो सकता है। वर्षा की समाप्ति पर चारों ओर असंख्य ताल-तलैयें भर जाती हैं, और मच्छर उन में अण्डे देता है। प्रत्येक ऐसी ताल तलैया में प्रति दिन कितने मच्छर उत्पन्न होते हैं इसका अन्दाज़ा ही कठीन है। फिर देश भर की तलैयों में प्रतिदिन जितने नये मच्छर उत्पन्न होते हैं उनकी संख्या के आगे तो हमारे गणना-शक्ति हार बैठती है। कभी २ इतना बड़ा टिड्डी दल निकलता है कि उस के कारण आकाश पट जाता है, सूर्य्य छिप जाता है, और दिन में अन्धेरा-सा छा जाता है; उनकी बाढ़को रोकने में आग और पानी असमर्थ रहते हैं उनकी आहुति से आग बुझ जाती है, और पानी पट जाता है,

CC-0: Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उनके कारण सैकड़ों मील के भूभाग में एक भी हरी वस्तु शेष नहीं रह जाती—सब सफा चट हो जाता है। क्या उनकी संख्या का कोई अन्दाज़ा हो सकता है। यह सब बातें जीवन संग्राम में पतङ्ग वर्ग की असाधारण सफलता का परिचय देती हैं। आत्म-रक्षण और आक्रमण दोनों की दृष्टि से उनकी स्थिति अत्यन्त प्रबल है।

पतङ्ग वर्ग की अधिकाँश जातियाँ परा श्रयी जीव हैं। वे वनस्पतिओं, पशुओं, और मनुष्यों के शरीर पर आश्रय ग्रहण करती हैं और उनमें से अपने खाद्य पदार्थ संग्रह करती हैं। उन में से अधिकांश से मनुष्य का कोई संबन्ध नहीं है, किन्तु अनेक मनुष्य से घनिष्ट सम्बन्ध स्थापित करती हैं। उनके कारण हरे भरे खेत उजाड़ हो जाते हैं, बाग़ बगीचे नष्ट हो जाते हैं, और हरे भरे जङ्गल मरु भूमि बन जाते हैं, और अनेकों प्रकार से हमारी खेती को बड़ा भारी नुक़सान पहुँचता है। हिसाब लगाया गया है कि पतङ्गों के कारण अमेरिका को ३०० करोड़ रुपये प्रतिवर्ष की हानि होती है। अनेक प्रकार के पतङ्ग हमारे पालतू पशुओं को काट काट कर उनका रक्त चूसते रहते हैं और इस प्रकार से उन्हें इतना तङ्ग करते हैं कि उनका जीवन कठिन कर देते हैं। इसके अतिरिक्त वे उन में अनेक भयंकर रोग फैलाते हैं, जिससे हज़ारों पशुओं की मृत्यु हो जाती है।

कुछ पतंग मनुष्य से घनिष्ट सम्बन्ध स्थापित करते हैं। वे मनुष्य के शरीर में से रक्त चूसते, अन्य प्रकार से अपने लिये खाद्य पदार्थ संग्रह करते तथा विशेष शारीरिक और मानसिक कष्ट तो देते ही हैं, किन्तु उनकी भयङ्करता इस बात में है कि वे बड़े बड़े भयंकर रोगों को मनुष्य में फैलाने का काम करते हैं। जूं [lice] हमारे शिर और शरीर पर रहती है तथा रक्त चूसती है। शारीरिक कष्ट देने के अतिरिक्त अनेक रोगों यथा टाइफस और रिलेप्सिङ्ग फीवर की फैलाने वाली मानी जाती है। खुजली का जो अत्यन्त दुष्ट रोग होता है वह एक पतंग के कारण होता है जो हमारी त्वचा में घुस कर अपने रहने के लिये स्थान बना लेता है। खटमलों के उपद्रव के कारण जो हमें कष्ट होता है उस से आप भली भाँति परिचित हैं; इसके अतिरिक्त इन पर अनेक रोगों के फैलाने का भी अपराध लगाया गया है, यथा ऐन्थेक्स, काला आज़ार, कोढ़ त्वचा रोग इत्यादि। पिस्सू काट काट कर तो कष्ट देता ही है, किन्तु चूहे का पिस्सू प्लेग फैलाने का मुख्य साधन है। अफ्रीका में एक प्रकार की मक्खी होती है जो एक अत्यन्त भयंकर रोग फैलाती है जिसका नाम निद्रा रोग (Sleeping Siekness) है। मच्छर अपना राग तो हमें सुनाता ही है, इसके अतिरिक्त तीन भयंकर रोगों का फैलाने वाला है, यथा मेलेरिया, येलोफीवर और फाइलेरियासिस। साधारण मक्खी काटती तो नहीं है, किन्तु अनेक रोगों की फैलाने वाली मानी जाती है। यह अशुद्ध से अशुद्ध स्थानों पर बैठती हैं। जिस से उनके पैरों और पङ्खों पर अनेक प्रकार के रोगों के जीवाणु लगजाते हैं और फिर भोजन के

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पदार्थों पर बैठ कर उनको दूषित कर देती हैं। जो जीवाणु भोजन द्वारा शरीर में पहुंचते हैं उनके फैलाने में यह बहुत सहायता दे सकती है, यथा हैज़ा, डिसेंटरी, टाइफोयड, डायरिया, इत्यादि। कुछ मक्खियां घावों में अण्डे दे देती है जहां वे विकसित होकर लार्वा बन जाते हैं और घाव की दशा बहुत खराब कर देते हैं।

इस प्रकार से हम देखते हैं कि पतंग वर्ग के अनेक जीव मनुष्यों और पशुओं में अनेकानेक रोग फैलते हैं। इन सब में तीन विशेष उल्लेखनीय हैं, क्योंकि उनकी रोग फैलाने की शक्ति इतनी बढ़ी चढ़ी है कि बड़े बड़े महाद्वीपों पर उनका अतङ्क छाया हुआ है। इन में सर्वप्रथम स्थान मच्छर का है। मच्छर के कारण ऐशिया, अफ्रीका, और अमेरिका का अधिक भाग संत्रस्त है। यह तीन भयंकर रोग फैलाता है— मलेरिया, येलो फोबर और फाइलेरियासिस। मेलेरिया एक अत्यन्त विस्तृत रोग है, जिसने मनुष्य की अनेकों जातियों को अपने शिकंजे में कस रक्खा है। इसके कारण वे निरन्तर रोग ग्रस्त रहती हैं, उनका स्वास्थ बिगड़ता जाता है, वे दरिद्री और जीवन संग्राम के अयोग्य होती जाती हैं। इस रोग का कारण पशुओं के निम्नतम वर्ग का एक अत्यन्त सूक्ष्म प्राणी है, जो रोग ग्रस्त लोगों के रक्त में रहता है, और जिसे मच्छर रक्त के साथ चूस कर स्वस्थ लोगों में फैलाने का कारण होता है। मलेरिया के कारण भारतवर्ष में १०–११ लाख मनुष्य प्रतिवर्ष मरते हैं।

येलो फीवर एक अत्यन्त भयंकर संक्रामक रोग है, जो अमेरिका के उष्ण प्रदेश और अफ्रीका में पाया जाता है। पनामा की नहर बनाते समय जितने मज़दूर वहां भेजे गये उनमें से अधिकांश बहुत शीघ्र ही येलोफीवर के शिकार हो गये, और काम बन्द करना पड़ा। जब इसके फैलाने वाले मच्छरों को अनेक उपायों से नष्ट कर डाला गया, तब रोग बन्द हो गया, और काम जारी हो सका। १९०६ में येलो फीवर का अन्तिम केस हुआ। मच्छर फलेरियारिस रोग को भी फैलाता है। इस रोग से पीडितव्यक्ति के लसी कासंस्थान में कीट जाति के लंबे सूत-सदृश प्राणी, फाईलेरिया रहते हैं। इनके कारण वह अत्यन्त अदर्शनीय दशा उत्पन्न होती है जिसे Elephantiasis या फ़ीलपा कहते हैं। रोगाक्रान्त व्यक्ति के प्रान्तस्थ रक्तसंचार में रात्रि के समय इसके लाखों बीज-रूप प्रकट होते हैं। उस समय मच्छर काटता है और कुछ बीज रूपों को भी अपने साथ ले जाता है। वहां वे विकसित होते हैं, और जब मच्छर किसी अन्यव्यक्ति को काटता है तो उसके शरीर में पहुंच कर रोग उत्पन्न कर देते हैं। यह रोग भारतवर्ष और अफ्रीका में अधिकता से पाया जाता है। कुछ दक्षिणी द्वीपों में ३०–४० प्रतिशत व्यक्ति इस से आक्रान्त हैं। इस प्रकार से एक दो नहीं किन्तु पूरे तीन ऐसे भयङ्कर और बहुव्यापी रोगों को फैलाने का उत्तरदायित्व मच्छर पर है। जीवन संग्राम में यह मनुष्य को अकथनीय हानि पहुँचा रहा है।

चूहे का पिस्सू चूहे से मनुष्य में प्लेग के

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जीवाणु पहुँचाता है। चूहा, चूहे का पिस्सू और प्लेग का जीवाणु–इस त्रिमूर्ति ने गज़ब ढा रक्खा है। अत्यन्त प्राचीनकाल से पृथ्वी के अनेक देशों में जब तब महामारी का रूप धारण करके प्लेग फूट पड़ा है, और जातियों की जातियों की सफ़ाई कर चुका है। सन् १८९६ से इस शनिश्चर ने भारतवर्ष में प्रवेश किया है, और इसके कारण असंख्य जीवहत्या हुई है। संहारकारी शक्ति में अन्य सब रोगों की अपेक्षा इन्फ्लुएंजा और प्लेग सब से बढ़े चढे हैं। १८९७–१९१० तक प्लेग द्वारा भारतवर्ष में ९५ लाख मनुष्य मृत्यु पा चुके थे और उसके बाद अभी तक वह सिलसिला जारी है। और १९१३–१९१८ तक १९ लाख।

अफ्रीका अन्धकार-ग्रस्त महाद्वीप कहलाता है। केवल मिश्र को छोड़ कर, सो भी अत्यन्त प्राचीनकाल में, आजतक अफ्रीका के किसी भी भागमें सभ्यता अपना आसन नहीं जमा सकी है। भारतवर्ष से अफ्रीका का अत्यन्त प्राचीन सम्बन्ध है। अपने विलिक्षण विस्तार के काल में बौद्ध धर्म अफ्रीका भी अवश्य पहुंचा होगा, किन्तु वहां रत्ती भर भी अपना प्रभाव न जमा सका। ईसाई और मुसलमान सभ्यता भी पहुंचीं, किन्तु अफ्रीका को अभी तक वे भी सभ्य न बना सकी हैं। कारण स्पष्ट है। अफ्रीका के गरम भागों में वर्षा तथा गर्मी बहुत अधिक होती है, जिससे वनस्पति जीवन और निम्न वर्गों के पशु खूब फलते फूलते है, किन्तु ऊँचेवर्गों के पशु और विशेषतया मनुष्यों का मरण है। वहाँ अन्य प्राणियों और मनुष्य का घोर जीवन संग्राम चल रहा है, और उस संग्राम में मनुष्य की स्पष्ट हार होरही है। इन शत्रुओं में मच्छर मलेरिया और येलोफीवर के जीवाणु इत्यादि अनेक हैं, किन्तु सब से बिकराल निद्रा रोग है। इस रोग का कारण पशु जगत् के निम्नतम वर्ग प्रोटोज़ोआ का एक अत्यन्त सूक्ष्म प्राणी है जो ट्रायपेनोसोमा कहलाता है और मनुष्यों में इस रोग को फैलाने का काम एक मक्खी करती है जो ग्लौसिना कहलाती है। रोगी मनुष्यों की रक्तधारा में इसके जीव रहते हैं, और यह मक्खी रक्त चूस चूस कर इसे फैलाती है। इस रोग से पीड़ित व्यक्ति को बराबर बुख़ार आता रहता है वह दुर्बल होजाता है, वह नशे की सी हालत में रहता है, और निद्रा अधिक आती है। अन्त में उसकी तन्द्रावस्था गहरी होती जाती है, वह बेसुध सा पड़ा रहता है, और इस प्रकार से कुछ महीनों से लेकर दो तीन वर्षों तक घिसट घिसट कर मृत्यु पाता है। अफ्रीका के पूर्वी भागों में विशेषतया यह रोग इतना फैला हुआ है कि पिछले दस वर्षों में पाँच लाख मनुष्य इस से मर चुके हैं। और उन भागों के निवासियों में ३० से ५० प्रति शतक इस रोग द्वारा आक्रान्त हैं और उनकी मृत्यु अवश्यम्भवी है। मृत्यु के कारण तथा रोग के भय से भाग जाने के कारण अफ्रीका के बड़े २ भाग वीरान पड़े हुये हैं। इस रोग तथा अन्य रोगों की दुष्ट छाया अफ्रीका महाद्वीप के ऊपर शताब्दियों से पड़ी हुई है और उस के कारण वहां मनुष्य अभी तक पनपने नहीं पाया है।

पशु जगत् के निम्नतम वर्ग प्रोटोज़ोआ, एक कोष्ट वाले पशुओं में से भी कुछ मनुष्य

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

के अत्यन्त भयंकर शत्रु हैं। उन में से मलेरिया और निद्रा रोग के जीवों का वर्णन होचुका है। शेषों में से उपदंश और काला-आज़ार रोगों के प्राणी महत्व के हैं। उपदंश रोग का कारण स्पायरोकीटा नाम का प्राणी है, जो कि लैङ्गिक संबध द्वारा आक्रान्त व्यक्तियों से स्वस्थों में फैलता है। यह रोग समस्त शरीर को विकारयुक्त कर देता है, और इस रोग से पीड़ित व्यक्ति को जब तक जीवित रहता है कोई न कोई विकार होता रहता है। इस के रोगी की सन्तति जीवित नहीं रहती है, और यदि जीवित रहती है तो विरले में यह रोग पाती है। यह एक अत्यन्त प्राचीन रोग है किन्तु इस सभ्यता के युग में इसने विशेष प्रचार पाया है, और बड़े २ शहरों में तो यह बहुत अधिक फैला हुआ है। यह रोग सन्तान पर प्रभाव डालने के कारण जाति को जड़ पर कुल्हाड़ा मारता है। काला आ-ज़ार भयंकर रोग है जो चीन, बर्मा अफ्रीका भारतवर्ष, विशेषतया बंगाल और आसाम में पाया जाता है। यह लीशमेन डोनोवन बौडीज़ (Leishman Denovan Bodies) नाम के प्राणियों से होता है, जो कदाचित् खट मलों द्वारा फैलते हैं। इस रोग से पीड़ित व्यक्तियों में से ९० प्रतिशत बुखार, रक्त हास, प्लीहा-यकृत वृद्धि इत्यादि के कारण एक दो साल में मर जाते हैं। जो इस के चुंगल में फंस जाता हैं उस का अन्त ही समझो। इसी ही कारण यह काला आज़ार अर्थात् रोग कहलाता है।

अब हम वनस्पति वर्ग के निम्न-तम प्राणी Bacteria अर्थात् जीवाणुओं पर आते हैं। ये एक अत्यन्त सूक्ष्म प्राणी हैं जिन में से कुछ तो इतने सूक्ष्म हैं कि अच्छे अच्छे अणुवीक्षण यंत्र द्वारा भी नहीं दिखाई पड़ते हैं। ये पृथ्वी के अन्दर, पृथ्वी के तल पर, वायु में, जलमें, हमारे शरीरों पर, हमारे फेफड़े और आंतों में, हमारे भोजन और कपड़ों में, सर्वत्र समान रूप से पाये जाते हैं—सर्व व्यापी हैं। केवल अग्नि से इनका वैर है नहीं तो सब ही जगह इनकी पहुँच है। इस पृथ्वी पर जितने प्राणी हैं इन सब का जीवन इन जीवाणुओं पर अवलम्बित है। यह जो आप शस्य-श्यामला वन-राजि-शोभित असंख्य प्रकार के वनस्पतिओं से हरी भरी, लहलाती वसुन्धरा देखते हैं, यह जो आप असंख्य प्रकारके पशु-पक्षियों से भरी हुई पृथ्वी देखते हैं, यह जो आप मनुष्य की अगणित संतति, सभ्यता का अद्भुत विकास तथा नानाविध व्यापार-उद्योगों से पूरित पृथ्वी देखते हैं, वह इन जीवाणुओं बिनाएक शुष्क, जीवनशून्य मरु भूमि होती— उस पर किसी भी प्रकार का जीवन न होता। इसका मुख्य कारण यह है कि जीवन का एक-मात्र आधार जो प्रोटोप्लाज्म है, जिस से समस्त सचेतन प्राणी बने हुए हैं, उस की रचना में नाइट्रोजनकी आवश्यकता होती है, और केवल जीवाणुओं में ही यह शक्ति है कि वायु की नाइट्रोजन को ग्रहण करके उसके रसायनिक योग बना सकें, और इस प्रकार से अन्य प्राणियों के लिए उसे सुलभ बना सकें। दूसरे जितने प्राणी मरते हैं उन को जीवाणु विश्लेषण कर के मूल तत्त्वों में परिणत कर देते हैं। इस प्रकार से पृथ्वी की उर्वरा

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

शक्ति को क़ायम रखते हैं और बढ़ाते भी हैं।

जो जीवाणु जीवन के लिये इस प्रकार से अनिवार्य हैं वही जीवन-संग्राम में मनुष्य के सब से भयङ्कर शत्रु हैं। जो एक रूप में विष्णु के समान प्राणीमात्र का पालन पोषण करते हैं, वही दूसरे रूप में शङ्कर के समान सृष्टि का संहार करते हैं। बात यह है कि कुछ जीवाणुओं ने पराश्रयी-जीवन अख्तियार कर लिया है, वे जीवित प्राणियों पर आक्रमण करते हैं। जीवाणुओं द्वारा उत्पन्न रोगों की संख्या बहुत अधिक है, और उन रोगों के कारण होने वाली मृत्युओं की संख्या भी बहुत अधिक है। जीवाणुओं की इस प्रचण्ड संहार-कारिणी शक्ति के दो मुख्य कारण हैं। एक तो उनकी प्रजोत्पादन शक्ति बहुत ही बढ़ी चढ़ी है, जिस के कारण परिस्थिति सम्बन्धी अनुकूलताओं में कुछ ही घंटों के अन्दर एक जीवाणु से असंख्य जीवाणु उत्पन्न हो जाते हैं। जीवणुओं का उत्पत्ति काल आध घंटे के लगभग है। प्रति आध घंटे में वे दुगने हो जाते हैं। इस प्रकार से एक जीवाणु के १६ घंटों में ४३० करोड़ जीवाणु हो जाते हैं। दूसरे वे एक प्रकार का विष बनाते हैं जो आक्रान्त व्यक्ति के शरीर की समस्त क्रियाओं पर अपना दूषित प्रभाव डालता है। इस कल्पनातीत संख्या बल, तथा विष निर्माण के कारण इस क्षुद्रातिक्षुद्र प्राणी की संहारकारिणी शक्ति इतनी अधिक होगई है कि इस के कारण जितने रोग और जितनी मृत्युयें होती हैं उन के मुक़ाबिले में अन्य कारण कुछ भी नहीं हैं। ये मनुष्य के सब से बड़े, सब से कट्टर शत्रु हैं।

इन के कारण जो रोग होते हैं उन की यदि सूची बनाई जाय तो बहुत अधिक रोग उस के अन्तर्गत आजांय। मस्तिष्क, आंख, कान, नाक, मुंह, गला, फेफड़े और उनकी नलियां, हृदय और रक्तवाहिनियाँ, आमाशय, आंतें, जिगर, तिल्ली, वृक्ष, मूत्राशय गर्भाशय इत्यादि इत्यादि शिर से लेकर पैर तक शरीर के जितने अङ्ग और अवयव हैं उन सब में इन जीवाणुओं के कारण रोग उत्पन्न होते हैं। हमारे शरीर के बाहर त्वचा पर सदा ही अनेक प्रकार के रोगोत्पादक जीवाणु रहते हैं। इसी ही प्रकार से हमारी आँख, कान, नाक, मुंह, श्वास-मार्ग और फेफड़े, भोजन मार्ग—आमाशय और आंतों में भी अनेक प्रकार के जीवाणु रहते हैं, किन्तु साधारणतया इन की उपस्थिति मात्र से कोई रोग नहीं होता। रोग के लिये आवश्यक है कि यह जीवाणु शरीर के रचना-तंतुओं में प्रवेश करें। जीवाणुओं का प्रवेश पाना आक्रमण करना कहलाता है। जीवाणुओं के आक्रमण करने पर उनमें और शरीरके रचना-तंतुओं में संग्राम चलता है। जीवाणु विषैले पदार्थ बनाते हैं, और शरीर के रक्षक अङ्ग उनको मार डालने की चेष्टा करते हैं। यदि जीवाणु जीत जाते हैं तो रोग हो जाता है, और यदि हार जाते हैं तो मनुष्य स्वस्थ रहता है। त्वचा तथा श्लैष्मिक कलाओं के ज़ख्म द्वारा जीवाणु बहुत सुगमता से शरीर के अन्दर प्रविष्ट हो जाते हैं, और रक्त-संचार के साथ मिलकर सारे शरीर में फैल जाते हैं। बड़ी आँतों के अन्दर असंख्य जीवाणु होते हैं, और वे मल के साथ

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

निकलते रहते हैं। साधारणतया मल के ठोस भाग में से $\frac{1}{3}$ भाग जीवाणुओं के शरीरों का होता है। इन जीवणुओं की औसत लंबाई $\frac{1}{15000}$ इञ्च है, जिस से प्रति मनुष्य के मल में प्रति दिन कम से कम ६ लाख करोड़ जीवाणु निकलते हैं जिसमें से केवल १०००० करोड़, जीवित होते हैं, शेषमृत

B. Tuberculosis एक जीवाणु है जो मनुष्य के कट्टर शत्रुओं में से है। इस की लंबाई $\frac{1}{5000}$ इञ्च होती है चौड़ाई $\frac{1}{20000}$ इञ्च। अत्यन्त ठंडे प्रदेशों को छोड़ कर यह पृथ्वी के सब भागों में पाया जाता है। इस के कारण अनेक रोग होते हैं जिन में से मुख्य यक्ष्मा या तपेदिक है। शरीर का कदाचित ही कोई ऐसा अङ्ग अवयव है जिस में इस जीवाणु के कारण रोग उत्पन्न न होता हो। उपदंश और ट्यूबरक्युलोसिस ऐसे रोग हैं जिन से शरीर का कोई भी भाग मुक्त नहीं है। इन दो रोगों का पूर्ण ज्ञान होने से आधी से अधिक मेडिसिन और सर्जरी आजाती है। इस जीवाणु के शरीर में पहुँचने के दो मुख्य मार्ग हैं, एक और मुख्य श्वास द्वारा दूसरा भोजन द्वारा। यक्ष्मा के रोगियों के थूक में इस के हज़ारों कीड़े होते हैं, जो वायु के साथ मिल कर फेफ़ड़ों का ट्युबरक्युलोसिस या यक्ष्मा उत्पन्न करते हैं। यक्ष्मा से पीड़ित गायों के दूध में भी यह कीड़े होते हैं जो शरीर में पहुँच कर, विशेषतया बच्चों में, गर्दन या आंतों की लसीका-ग्रन्थियों में रोग उत्पन्न कर देते हैं। जिन के शरीर में इस के जीवाणुओं ने अड्डा कर लिया है, उस के किसी भी अङ्ग में किसी कारण-वश कमज़ोरी आने से वहाँ ये जीवाणु पहुंच जाते हैं और उस भाग पर आक्रमण कर देते हैं। इस प्रकार से अस्थियों, संधियों मांस-पेशियों, आंतों, आमाशय, मूत्राशय मस्तिष्क इत्यादि शरीर के प्रत्येक भाग में रोग का आक्रमण हो सकता है।

उन्नीसवीं शताब्दी में यक्ष्मा यूरोप में बहुत अधिक प्रचलित था और यह श्वेत-प्लेग कहलाता था। उस समय वहां जितने आदमी मरते थे उन में से चौथाई इसी ही जीवाणु के कारण। आजकल यह रोग वहां घट रहा है और २०-२५ वर्ष में आधा रह गया है। अब वहां इस रोग के कारण होने वाली मौतें कुल मृत्युओं की $\frac{1}{5}$ से $\frac{1}{10}$ हैं, और उन की कुल संख्या ४ लाख के लगभग है। भारतवर्ष में यह रोग बराबर बढ़ रहा है। बड़े बड़े शहरों में इसके बढ़ने के लिए सब सुविधाएं मौजूद है। तंग गलियां, ऊँचे ऊँचे मकान, छोटी छोटी कोठरियों में अनेकों मनुष्यों का रहना, प्रकाश और शुद्ध वायु का अभाव, गन्दगी और दरि-द्रता और उस पर परदे के कारण स्त्रियों का घर में पड़े रहना, ये सब इस रोग के फलने फूलने के लिए आदर्श दशाएं हैं। आश्चर्य नहीं नहीं है कि इस दशा में स्त्रियों में यह रोग बुरी तरह से फैल रहा हैं। साधारणतया यह रोग मनुष्य के मारने में जल्दी नहीं करता है। फेफड़ों का ट्यूबर-किल अपने शिकारों को एक दो अथवा अधिक सालों तक घुला घुला कर मारता है। अन्य भागों का ट्युबरकिल मनुष्यों को

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

चिर-रोगी और जीवन के प्रतिदिन के व्यापारों के अयोग्य बनाता है। उन में से अनेकों जीवन मृत्यु के मध्य की दशा में वर्षों तक पड़े रहते हैं, तब कहीं मृत्यु के साथ उन का इस रोग से छुटकारा होता है। इस रोग की भीषणता इस के कारण होने वाली मृत्युओं की संख्या से प्रकट नहीं होती। इस की भीषणता उन लाखों मनुष्यों के अस्थि पंजरावशेष-शरीर और आनन्द-शून्य जीवन से प्रकट होती है जो इस के कारण अपने काम-धंधों और अभ्यस्त जीवन से छूट कर, स्वास्थ्य-लाभ की आशा छोड़ कर चिर-रोगी बन कर जैसे तैसे अपने शेष जीवन के दिवस पूरे करते हैं। इस रोग द्वारा अमेरिका को ६० करोड़ वार्षिक की हानि होती है।

कोढ़ एक अत्यन्त व्यापक रोग है, जिससे पृथ्वी का कोई भी भाग बचा हुआ नहीं है। एक समय यह रोग—११ वीं १२ वीं शताब्दियों में—योरोप में बहुत अधिक प्रचलित था। उस समय वहाँ कोढ़ियों के अलग रहने के लिए आश्रम बना दिये गए थे, और इस प्रकार के १९,००० आश्रम थे। अब योरोप के अनेक देशों में यह रोग लुप्त हो चुका है। अब यह चीन, जापान, भारत, अफ्रीका, दक्षिणी योरोप के कुछ भाग, अमेरिका के कुछ भागों में पाया जाता है। अनुमान है कि सारे संसार में ३० लाख कोढ़ी हैं। जिनमें से २० लाख केवल चीन में हैं और दो लाख भारतवर्ष में। यह रोग लेप्रावेसिल्लस नामक जीवाणु के कारण होता है। यह एक अत्यन्त दुष्ट रोग है। इसके रोगी की जितनी दुर्दशा होती है, उसको जो मानसिक व्यथा और अपमान सहना होता है वह अकथनीय है। अत्यन्त प्राचीन काल से मनुष्य इसको संक्रामक मानते आए हैं, जिससे रोग के लक्षण प्रकट होते ही सगे-सम्बन्धी सम्बन्ध-विच्छेद कर देते हैं, जाति के लोग अपने में से च्युत कर देते हैं, समाज के लोग दूर-दूर करते हैं। इस प्रकार से अत्यन्त अपमानित और लाञ्छित होकर, समस्त संसार की घृणा और तिरस्कार का शिकार बनकर, जीवन-निर्वाह के साधन से छूट जाकर, सम्बन्धियों और समाज द्वारा परित्यक्त वह अभागा व्यक्ति मनुष्य समाज के निकृष्टतम अंश में सम्मिलित होकर दूसरों की कृपा-भिक्षा का पात्र बनकर पशुओं से भी कहीं गया गुज़रा जीवन व्यतीत करने के लिए बाधित होता है। फिर मृत्यु द्वारा छुटकारा पाने का भी उन अभागों को सौभाग्य नहीं है। अत्यन्त घृणा उत्पन्न करने वाली आकृति, गले-सड़े अङ्ग, और जीवन लिये सर्वथा अयोग्य शरीर लेकर उनको वर्षों तक जीवित रहना होता है। फिर इस प्रकार के अभागों की संख्या ३० लाख है। इस संसार के विधाता के लिये, मनुष्य समाज के लिये, अपने सम्बन्धियों के लिये, उनके मन में क्या विचार उठते होंगे? इस जीवाणु द्वारा मनुष्य की जितनी दुर्दशा होती है, वह जिस प्रकार से समस्त समाज के घृणा और तिरस्कार का पात्र बन जाता है, उसे जितना नीचा बनना पड़ता है, उसे जितना क्लेश और क्षोभ

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

होता है, उससे हम यही कर सकते हैं कि इससे अधिक दुष्ट और नीच शत्रु की कल्पना भी नहीं हो सकती।

चेचक एक अत्यन्त भयङ्कर संक्रामक रोग है जो पृथ्वी के समस्त देशों में फैला हुआ है। चेचक का टीका निकलने के पूर्व इसके बड़े २ आक्रमण होते थे जिनमें लाखों की मृत्यु होती थी। बालकों का यह विशेष शत्रु है। टीका लगने से पूर्व जितने बालक मरते थे उनमें से ५० प्रतिशत की मृत्यु का कारण यह रोग होता था। फिर जो मृत्यु से बच जाते थे, वे जन्म भर के लिये कुरूप, अङ्ग-भङ्ग—विशेषतया काने और अंधे,—होजाते थे। जिन देशों में उचित प्रकार से और अनिवार्य रूप से टीका लगता है, उनमें भावी प्रजा के इस प्रबल शत्रु का प्रायः सर्वथा लोप होगया है। किन्तु बहुत से मनुष्य ऐसे अक़्ल के दुश्मन हैं कि वे इस अत्यन्त उपयोगी प्रथा का विरोध करते में, और इस शत्रु के जीवित रहने में सहायता देते हैं। कदाचित् भारतवर्ष में ऐसे लोग अधिकता से हैं, जभी यहाँ लाखों मनुष्य इसका शिकार होते हैं। १८९१–१९१० तक यहाँ चेचक द्वारा लगभग १८½ लाख मृत्युएँ हुईं और १९१३–१९१८ तक ४⅞ लाख।

हैज़ा एक संक्रामक रोग है, जो मनुष्य के सबसे भयंकर शत्रुओं में है। अनेकोंबार महामारी का भीषण रूप धारण करके यह फूट निकला है, और अनेकों देशों में फैलता हुआ लाखों की मृत्यु का कारण हुआ है। इसकी तीव्रता इतनी बढ़ी-चढ़ी है कि इसके आक्रमण के आगे मनुष्य को कुछ घंटों तक भी जीवन क़ायम रखना कठिन हो उठता है। जहाँ यह फूट निकलता है, वहाँ बात की बात में हज़ारों की सफ़ाई कर देता है। इसका मूल कारण एक जीवाणु है जो हैज़े का जीवाणु कहलाता है। इसके रोगी को जो दस्त और क़ै होती हैं, उनमें यह अगणित संख्या में निकलता है। फिर उन दूषित पदार्थों के सम्पर्क में जो वस्तु आती है वह दूषित होजाती है। इस प्रकार से बर्तन वग़ैरह जीवाणु-दूषित होजाते हैं और उनको कुएँ में डालने से पानी दूषित होजाता है। भारतवासियों की आदतें ऐसी हैं कि उनमें हैज़ा फैलते ही उनके पानी के स्थान शीघ्र ही दूषित होजाते हैं, और फिर जो उस पानी को पीते हैं उनमें हैज़ा फैल जाता है। फिर इस रोग से डर कर जब मनुष्य इधर-उधर भागते हैं, तब उन स्थानों के जल को दूषित करके वहाँ भी इस रोग को फैलाते हैं, और इस प्रकार से यह रोग अत्यन्त शीघ्रता पूर्वक फैलता है। सैंकड़ों वर्षों से भारतवर्ष के किसी न किसी भाग में यह रोग सदा बना रहता है और प्रतिवर्ष इसके कारण ३-४ लाख की मृत्यु होती है। १८९१ से १९१० तक के २० वर्ष के अर्से में ८६½ लाख मनुष्य भारतवर्ष में ही इसकी भेंट चढ़े। और १९१३ से १८ तक २१ लाख।

इन्फ्लुएन्ज़ा संक्रामक रोगों का शिरोमणि है। इसकी बिकरालता, इसकी संहार-शक्ति अद्वितीय है। जिस समय यह अपने दलबल

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सहित निकलता है, उस समय अन्य रोगों की भांति छोटे-बड़े भूभागों में सीमाबद्ध नहीं रहता है, किन्तु 'अपनी' विजय-वाहिनी द्वारा देश-देशान्तरों को पार करता हुआ समस्त पृथ्वी में अपने दिग्विजय का नाद उद्घोषित कर देता है, और लाखों प्राणों को कर के रूप में ग्रहण करता है। इसी ही प्रकार का एक दिग्विजय १९१८ में स्पेन से प्रारम्भ हुआ था, जो यूरोप और ऐशिया के अनेक देशों को पार करता हुआ भारतवर्ष भी पहुँचा था। बम्बई से प्रारम्भ होकर अत्यन्त प्रचण्ड वेग से यह समस्त देश में व्याप्त होगया—जैसे सारे देश में एक साथ ही आग लगगई हो। फिर क्या था बड़े २ नगरों में प्रति दिन सैंकड़ों मनुष्य मरने लगे, और समाचार पत्र इन मृत्यु के समाचारों से भरे रहने लगे, श्मशानों में दिन रात एक प्रचंड ज्वाला जलने लगी, मुर्दों को उठाने के लिये आदमी न मिलते थे और जलाने के लिये लकड़ियाँ मिलना मुश्किल हो गया। गांव के गांव तबाह हो गये, और रोगियों को किसी भी प्रकार की औषधि तथा सेवा-शुश्रूषा प्राप्त नहीं हुई। इस प्रकार से प्लेग द्वारा चौदह वर्षों में जितने मनुष्य मरे उस से कहीं अधिक मनुष्य इन्फ्लुएन्ज़ा के एक ही आक्रमण में खेत रहे। इस रोग ने अपनी दरांती से बात की बात में समस्त संसार में फैली हुई मनुष्य रूपी फसल को काट कर गिरा दिया। इस प्रचण्ड और अत्यन्त उग्रशत्रु के सम्मुख मनुष्य बिलकुल बेबस लाचार था। जब कि वह हक्का-बक्का बना हुआ इस की प्रचण्डता को देख रहा था, यह काम तमाम करके चलता बना। एक ही आक्रमण में ७० लाख से १ करोड़ के बीच मनुष्यों की भेंट अकेले भारतवर्ष से ही लेता गया, और अपने पीछे विरसे में निर्बलता और अन्य रोग छोड़ता गया। १९१८ से पूर्व के वर्षों में समस्त कारणों से भारत में ७० लाख के लगभग मृत्यु होती थी किन्तु इस अकेले वर्ष में १५० लाख के लगभग हुई, अर्थात् ८० लाख बढ़ गई। इससे पूर्व के वर्षों में प्रति १००० व्यक्तियों में से ३० या ३२ मरते थे किन्तु इस वर्ष ६२ मरे। इनसे इनफ्लुएन्ज़ा के कारण जो भीषण नर-संहार हुआ था उसका पता लगता है।

अन्त में हम इस बात का अन्दाज़ा लगाना चाहते हैं कि मनुष्यों और अन्य प्राणियों के इस महा-भयङ्कर संग्राम में प्रति वर्ष कितने मनुष्य अकेले भारतवर्ष में ही मृत्यु पाते हैं। उदाहरण के लिये हम १९१७ का साल लेते हैं। इस में कुल मृत्युएं ७८ लाख हुई जिस में से हैजे द्वारा २,६७,००० चेचक द्वारा ६२,०००, बुखारों द्वारा ४५,५५००० आंव दस्त द्वारा २,१०,०००, प्लेग द्वारा ४, ३७,०००, श्वांस संस्थान के रोगों द्वारा ३,१६,०००। इन में सब से अधिक मृत्युएं ४५,५५,००० । बुख़ार द्वारा हुईं। बताना न होगा कि संक्रामक रोगों का सब से स्पष्ट और मुख्यलक्षण बुख़ार होता है, और प्रायः यह सब मृत्युएँ उस जीवन संग्राम में ही हुई हैं। इसी ही प्रकार से श्वास संस्थान और आंवदस्त के कारण होने वाली प्रायः सब मृत्युएं इसी ही के अन्तर्गत हैं। इस

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्रकार से कुल ७८ लाख मृत्युओं में से ५८,८०,०००, तो अवश्य ही मनुष्य के इन सूक्ष्म शत्रुओं के द्वारा हुईं, और अवशिष्ट १९ लाख २० हजार में से भी बहुत अधिक इन्हीं के कारण हुई होंगी। इस प्रकार से अकेले भारत वर्ष में ही प्रति वर्ष कम से कम ६० लाख व्यक्ति मनुष्यों और अन्य प्राणियों के जीवन संग्राम में जान से हाथ धो बैठते हैं, और कुल आहतों की, रोग-ग्रस्त व्यक्तियों की, संख्या तो इस से भी कहीं अधिक है। इस के अतिरिक्त इन के कारण इस अत्यन्त ग़रीब देश को जो आर्थिक हानि होती है उसका तो अन्दाजा ही नहीं हो सकता।

हमने अब तक मनुष्य के अनेकों शत्रुओं को सरसरी तौर पर देख लिया है। उनके स्वभाव और मनुष्यों के प्रति आचरण में बहुत अन्तर है। उनमें से कुछ तो आंधी तूफान की भांति सहसा उपस्थित हो जाते हैं और चटपट अपना भीषण कार्य करके सहसा ही विलीन हो जाते हैं, फिर उनका कुछ पता ही नहीं चलता, यथा इन्फ्लुएन्ज़ा। कुछ ऐसे हैं जो थोड़े—बहुत किसी न किसी भाग में विद्यमान रहते हैं, किन्तु कभी कभी भीषण रूप धारण करके चारों ओर फैल पड़ते हैं, और फिर शान्त होकर अपनी पूर्व-दशा पर पहुंच जाते हैं। प्लेग और हैज़े ने आजकल यही रूप धारण कर रक्खा है। कुछ देश में अपना अड्डा ही जमा लेते हैं और प्रायः साल भर समान-रूप से अपना कार्य करते रहते हैं। इन में से यक्ष्मा, हुकवर्म कालाआज़ार मलेरिया इत्यादि हैं। फिर कुछ का उद्देश यह होता है कि शीघ्र से शीघ्र मनुष्य को मार कर समाप्त कर दें। जितने व्यक्ति इनके चुंगल में फसते हैं, उनकी जीवन-लीला को यह समाप्त कर देते हैं, अवशिष्ट समाज के स्वास्थ पर इनका कोई प्रभाव नही पड़ता। उदाहरण इनफलुयेन्ज़ा, प्लेग, हैजा तथा अन्य संक्रमक रोग हैं। कुछ का उद्देश मारना तो होता है, किन्तु बहुत घिसटा घिसटा कर, महीनों अथवा वर्षों तक धीरे धीरे जीवन को सोखकर। इनके उदाहरण— काला आज़ार, निद्रारोग, यक्ष्मा इत्यादि हैं। इनके कारण देश को आर्थिक हानि बहुत होती है क्योंकि रोगी-जन महीनों अथवा वर्षों तक उपार्जन तो कुछ करते ही नहीं उल्टे उनकी सेवा-शुश्रूषा में बहुत खर्च होता है। तीसरे वे हैं जिनका उद्देश मारना तो नहीं है किन्तु अपने शिकारों को वर्षों तक चिर-रोगी, निर्बल, जीवन संग्राम के अयोग्य, बेकार और लाचार बनाए रखना है, यद्यपि परोक्ष रूप से मृत्युएँ भी होती हैं। इनके उदाहरण मेलेरिया, हुकवर्म उपदंश इत्यादि हैं। इनकी चेष्टा यही रहती है कि सम्पूर्ण जातियों को अपना शिकार बनावें। इनके कारण बहुत ही अधिक दरिद्रता फैलती है। यथार्थ में दरिद्रता को यह अपने अस्त्र के रूप में प्रयोग करते हैं। इन्फ्लुएन्ज़ा के प्रकार के रोगों से भी ये अधिक भयंकर है। ये जातियों की जड़ों को खोखली कर देते हैं और धीरे धीरे किन्तु निश्चित रूप से उनको मृत्यु के गड्ढे की ओर धकेलते हैं। इनका बैर जातियों के साथ है।

——:*:——

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

निद्रा

(श्री पं० रमाशंकर जी मिश्र)

गोद में किसकी अहो भूले हुये भव-ताप थे।
सान्त्वना पाकर सुखद हा खो चुके सन्ताप थे।
स्वर्ग में क्या सौख्य है इस का न कुछ भी ज्ञान था।
नर्क है दुख पूर्ण इस पर भी न मेरा ध्यान था॥

* * *

पुण्य पाप सुकीर्ति अपयश आदि में क्या भेद है।
धर्म-शास्त्र पुराण क्या कहते किसे हम वेद हैं।
हैं किसे हम शत्रु कहते मित्र अपना कौन है।
बन्धु सेवक शिष्य पत्नी पुत्र अपना कौन है॥

* * *

अग्नि में चिन्ता-चिता की दग्ध थे जो हो रहे।
मोद से तव गोद में आ दुःख सारा खो रहे।
दीन याचक भूप भी तेरी शरण आते अहो।
धीर, वीर, अधीर, कायर त्राण सब पाते अहो॥

* * *

अङ्क में आसीन हो, रहती न कोई कामना।
राज्य वैभव, स्वर्ग अथवा मोक्ष की सद्भावना।
देवि निद्रे! आर्त्त को केवल तुम्हारी आस है।
गोद है तव मोद-मय रहता न कोई त्रास है॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विचित्र शुद्धि

(ले०—श्री पं० वागीश्वर जी विद्यालंकार)

"आनन्द बाबू ! यह ठीक है कि तुम मेरे दोस्त हो। मैं तुम्हारे नज़दीक कितना ही अहसानमन्द हो सकता हूँ मगर तुम्हारी क़ौम के बारे में मेरी जो राय है उसे साफ़ साफ़ कहने से मैं हरगिज़ बाज़ न आऊँगा। 'हिन्दू' नाम सुनते ही मेरा जी मिचलाने लगताहै। मेरी राय में हिन्दुओं जैसी अदना, बुज़दिल और ज़ाहिल कौम इस दुनिया के तख़्ते पर दूसरी न होगी। खुदा ने इसे पिटने, लुटने और बेइज़्ज़त होने के लिए ही पैदा किया है। उसके साथ जीती जागती मुसलमानों की क़ौम का क्या मेल मिलाप ?"

"मिस्टर यूसुफ़ ! इतने तैश में क्यों आ गये ? जहाज़ का सफ़र चुपचाप बैठे भारी हो रहा है यह देखकर दिलबहलाव के लिए मैं तुम्हारे पास आबैठा, एक सवाल बातचीत में हिन्दू-मुसलिम युनिटी पर भी कर लिया तुम इसी पर बिगड़ बैठे।"

बाबू आनन्दमोहन मिश्र और मिस्टर यूसुफ़अली बचपन के साथी हैं। दो-एक सालों को छोड़कर शिक्षा के प्रायः सारे साल दोनों के एक साथ ही कटे हैं। दोनों ने इसी साल अलीगढ़ कालेज से उच्चतम परीक्षा प्रथम विभाग में उत्तीर्ण की है। आनन्द बाबू और मिस्टर यूसुफ़ क्रमशः प्रथम और द्वितीय नम्बर पर आये हैं। मिस्टर यूसुफ़ एक अच्छे और धनी ख़ानदान में पैदा हुए हैं। अँग्रेज़ी की उच्च शिक्षा प्राप्त किए हुए धनी हिन्दुस्तानियों का प्रायः कोई मज़हब नहीं होता। नीति के लिए वे किसी एक सम्प्रदाय से अपना थोड़ा बहुत संबंध भले ही बनाए रक्खें। परन्तु मिस्टर यूसुफ़ के विषय में यह सिद्धान्त लागू नहीं होता। शायद इसका कारण कुछ हद तक अलीगढ़ कालेज की शिक्षा हो। मतलब यह कि वे पक्के मुसलमान हैं। क़ाफ़िरों के सम्बन्ध में उनकी सम्मतियाँ कितनी कठोर हैं यह ऊपर की बातचीत से मालूम होसकता है। दूसरी ओर आनन्दबाबू यू० पी० के ब्राह्मण हैं। उन्होंने एक मध्यम श्रेणी के परिवार में जन्म लिया है। किन्तु धर्म के सम्बन्ध में उनकी सम्मतियां बड़ी उदार हैं। वे बड़े प्रतिभाशाली तथा परिश्रमी हैं। उन्होंने प्रायः सारी परिक्षाएँ बड़ी प्रतिष्ठा के साथ उत्तीर्ण की हैं। मिस्टर यूसुफ़ के साथ उनकी घनिष्ठ मित्रता है। इसीलिए जब मिस्टर यूसुफ़ अली अमेरिका जाने के लिए तैयार हुए तो पहले की तरह अब भी आनन्द बाबू को उनका साथ निभाना पड़ा। वे भी ज्यों त्यों कर कुछ रुपया घर से, कुछ अपने इष्ट मित्रों से उधार लेकर अमेरिका चलने को तैयार होगये। दोनों मित्र एक ही जहाज़ से रवाना हुए। कई दिन से स्थल के दर्शन नहीं हुए, दोनों की ही तबियत परेशान हो उठी। समुद्र की बीमारी में, रह रहकर घर के आरामों की याद आने लगी। और

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

यात्रा का उत्साह फीका पड़ने लगा। मगर अब क्या होसकता था। ऐसी ही हालत में एक दिन दोनों मित्र इकट्ठे हुए बातचीत कर रहे थे। कितने ही प्रसंग आये, बीच में ही आनन्द बाबू ऊपर वाला सवाल कर बैठे जस का जबाब उन्हें बड़ा मँहगा पड़ा। मगर उन्होंने कुछ बुरा न माना। क्योंकि वे जानते थे कि मिस्टर यूसुफ़ कुछ तुनुक मिज़ाज आदमी हैं। इसीलिये वे कभी २ उनकी उलटी सीधी बातें सुनने के लिये ही उन्हें चिढ़ा दिया करते थे। दोनों दोस्तों में सुलह भी जल्दी ही होजाती थी। ऊपर वाले सिलसिले में ही मिस्टर यूसुफ़ कहने लगे—

"आनन्द बाबू! तुम मेरा स्वभाव ख़ूब जानते हो इसलिये तुमने मुझे बनाने के लिए ही यह सवाल उठाया है। पर यहाँ तो कोई मेरा तमाशा देखने वाला है नहीं। तमाशबीनों में ही बन्दर नचाने से बाज़ीगर को फ़ायदा होता है न कि बन्द कोठरी में।"

"तुम ठीक कह रहे हो मगर बात यह है कि जब तक कोई गरमा-गरम बहस का सवाल न छेड़ा जावे तुम्हारा दिमाग़ ठिकाने नहीं आता। खूंटी ऐंठने पर ही सितार अच्छी आवाज़ देता है।"

"आनन्द बाबू! दिल्लगी बड़ी अच्छी चीज़ है। मगर बेमौके दिल्लगी कभी २ बड़ा उलटा नतीजा पैदा करती है, क्या यह तुम नहीं जानते? मेरी तबियत ख़राब होरही है, खाया पीया कुछ पचता नहीं, उसपर घर-बार की याद अलग परेशान किए डालती है, ऐसे वक्त तुम्हें दिल्लगी सूझ रही है।"

"मिस्टर यूसुफ़! इससे बढ़कर दिल्लगी के लिये कोई दूसरा मौक़ा मेरी नाकिस राय में होही नहीं सकता। तकलीफ़ के वक्त दिलबहलाव की दो एक बातें होजाने से तबियत ज़रा हरी होजाती है। इसीलिये मरीज़ को ज़्यादह दिलबहलाव की ज़रूरत होती है। हाँ, एक बात तो कहो—तुम्हें घरबार की याद क्यों सता रही है। काले लोगों से तुम्हारा पीछा छूटा यह तो अच्छा ही हुआ। तुम्हें तो इस बात का पछतावा हुआ करता है कि खुदा ने तुम्हें टर्की, योरुप या अमेरिका में पैदा न करके हिन्दुस्तान में क्यों ला पटका। हिन्दुस्तान तो हिन्दू यानि काले चोरों के रहने की जगह का नाम है। मज़ा यह है कि हम लोगों को चिढ़ाने के लिए इस देश का यह नाम तुम्हीं लोगों ने रक्खा था और अब इसके अच्छे या बुरे जो भी माने हैं वे तुम पर ही लग रहे हैं। 'मियाँ की जूती मियाँ की चाँद' वाली मसल सामने आरही है। अगर तुम हमारे देश का नाम न बिगाड़ते तो आज तुम हिन्दू न कहलाकर आर्य कहलाते।"

मिस्टर यूसुफ़ कहने लगे कि हम लोगों को हिन्दू कौन कहता है? हम तो मुसलमान हैं। आनन्द बाबू ने कहा— मियाँ घबराओ मत। बाल अभी सामने आये जाते हैं। हिन्दुस्तान में तुम भले ही अपने आपको मौलाना, मियाँ, ग़ज़नवी, बुख़ारी कहो, पर बाहर तो सब हिन्दुस्तानी हिन्दू ही कहे जाते हैं। हिन्दू नाम से तुम्हारा जी मिचलाता है या नहीं, वे लोग इसकी परवाह

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

नहीं करते। यकीन न हो तो अब अमेरिका चल कर ही इतमिनान कर लेना।

मिस्टर यूसुफ़ बोले— अच्छा यार ! जाने भी दो इस रगड़े झगड़े को। तुम तो आर्यसमाजियों की तरह बहस करने लगे। मैं आर्यसमाजियों को बहुत बुरा समझता हूँ। ये हिन्दू मुसलमानों को लड़ाकर आप खड़े तमाशा देखा करते हैं। "भुस में चिनगी डाल जमालो दूर खड़ी" वाली कहावत क्या किसी ने इन्हीं के लिये बनाई थी ?

आनन्द बाबू ने कहा— भाई ! कुछ भी हो, इनकी कुछ बातें तो मुझे बहुत पसन्द हैं। मैं तो अमेरिका से लौटते ही आर्यसमाजी होजाऊँगा। गोबर खाने से तो जान बचेगी। एक बात तुम्हें भी कहे देता हूँ। अबतक मैंने तुम्हारा साथ दिया है अब तुम्हें मेरा देना पड़ेगा। तुमहम—दोनों, साथ ही शुद्ध होंगे। इन में शुद्ध हुए लोगों की ख़ातिर-दारी भी ख़ूब होती है। कहो कैसी कही ? है पसन्द कि नहीं ?

मिस्टर यूसुफ़ बोले— अभी दिल्ली दूर है। वक्त तो आने दो।

[२]

दिसम्बर का महीना है। जाड़ा पूरे ज़ोरों पर है। कोहरे के कारण दिन रात में फ़र्क करना मुश्किल हो रहा है। सामने पड़ी चीज़ दिखाई नहीं देती। ठण्ड के मारे हाथ पैर जमे जारहे हैं। लोग अँगीठियां बाल २ कर आग सेक रहे हैं। कोई राज़ी खुशी से बाहर निकलना नहीं चाहता है। ऐसे समय में अमेरिका के एक बड़े शहर की एक सड़क पर कोई युवक कदम बढ़ाये चला जारहा है। एकाएक पीछे से मोटर के आने की आहट हुई। जानेवाला एक ओर को बच गया। मगर अचानक एक भारी सी आवाज़ को सुन कर वह चौंक पड़ा। कोहरे के सबब दीखता कुछ भी न था तो भी उसे सन्देह न रहा कि उस से २०-३० कदम के फ़ासले पर ही वह मोटर किसी बड़ी चीज़ से टकरा गई है। युवक घटना स्थल पर शीघ्रता से जा पहुंचा और आवश्यकता के अनुसार सहायता के लिये उसने अपने आप को प्रस्तुत किया। ड्राइवर से उसे मालूम हुआ कि इसी शहर के एक बड़े प्रतिष्ठित लखपति रईस की कन्या, कुमारी हेलेन, आज सवेरे ही एक दूसरे मुहल्ले में अपने किसी आत्मीय से मिलने गई थीं। बहुत समय आमोद प्रमोद में व्यतीत कर जब वे लौट रही थीं तभी मार्ग में उपर्युक्त दुर्घटना घटित हो गई, अर्थात् बिजली के तार के खम्भे से टकरा कर उनकी मोटर उलट गई। कुमारी हेलेन को ऐसी चोट आई है कि वे अभीतक बेहोश पड़ी हैं। स्वयं मोटर ड्राइवर की भी अवस्था अच्छी नहीं है। युवक बड़े चक्कर में पड़ा। कुछ क्षण तक वह निश्चय नहीं कर सका कि एक अपरिचित सभ्य महिला की क्या सहायता वह ऐसी दशा में कर सकता है। मोटर ड्राइवर ने युवक के शिष्टाचार के लिये उस का धन्यवाद किया और कृतज्ञता पूर्वक कहा कि महाशय ! आप स्वयं कोई परदेशी मालूम होते हैं। ऐसी अवस्था में आप हमारी क्या सहायता कर सकते हैं। हमारा स्थान यहां से काफ़ी दूर

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

घर है। इन्हें अभीतक होश नहीं आया है, मुझ में भी अब इतनी सामर्थ्य नहीं है कि स्वयं मोटर हाँक कर घर पहुँच सकूं।

युवक ने कहा कि तुम कुछ चिन्ता न करो। मैं एक हिन्दुस्तानी विद्यार्थी हूं। यहां बिलकुल पास ही एक किराये के मकान में रहता हूं। तुम चाहो तो कुछ समय वहां आराम कर सकते हो। यदि तुम्हारे स्वामी की कन्या को इस में कुछ आपत्ति न हो तो मैं बड़ा अनुगृहीत होऊँगा। किन्तु यदि तुम्हें घर पहुँचने की ही शीघ्रता हो तो तुम्हारी जगह मैं ही मोटर हाँक कर तुम्हें ठिकाने पर पहुंचा सकता हूं। तुम्हारी जैसी सम्मति हो वैसा ही किया जावे।

ड्राइवर ने प्रसन्नता से कहा कि महाशय! आप को कष्ट देना उचित प्रतीत नहीं होता, तो भी यह आपत्ति का समय है इस लिए मैं यही प्रार्थना करूँगा कि यदि आपका मकान बहुत निकट ही है तो आप कृपा कर कुमारी हेलेन को वहां ले जाकर शीघ्र ही होश में लाने की चेष्टा करें। उनके कुछ स्वस्थ हो जाने पर हमें घर पहुँचने में कुछ भी विलम्ब न होगा।

उक्त निश्चय के अनुसार ही कार्य किया गया। अपने मकान पर पहुँच कर युवक ने ड्राइवर की सहायता से कुमारी हेलेन को एक साफ़ सुथरे पलङ्ग पर लिटा दिया और पास ही रहने वाले अपने एक मित्र डाक्टर को फ़ोन कर दिया। अंगीठी में आग बाली गई। इतने में डाक्टर महाशय भी आ पहुँचे। चोट अधिक होने पर भी भयंकर न थी। डाक्टर महाशय की चिकित्सा से विशेष लाभ हुआ। कुमारी हेलेन ने शीघ्र ही आंखे खोल दीं। ड्राइवर ने संक्षेप में ही उन्हें भली भांति समझा दिया कि वे किस परिस्थिति में हैं। उन्हें यह भी आश्वासन दिया कि अब कोई चिन्ता की बात नहीं है। मालिश और सेक से ड्राइवर को भी बहुत फ़ायदा हुआ। कुछ देर में कुमारी हेलेन उठ बैठीं और ऐसी आपत्ति के समय सहायता करने वाले नवयुवक का बार बार धन्यवाद करने लगीं।

परिचय पूछने पर युवक ने कहा कि वह एक हिन्दुस्तानी विद्यार्थी है। उसका नाम है यूसुफ़ अली। वह लगभग डेढ़ वर्ष से इसी विश्वविद्यालय में इलैक्ट्रिक इंजिनीयरिंग की शिक्षा प्राप्त कर रहा है, इत्यादि। यह सुन कर कुमारी हेलेन को बड़ा आश्चर्य हुआ। वे कहने लगीं कि मैं भी तो कई वर्षों से इसी विश्वविद्यालय में पढ़ रही हूं किन्तु अभी तक आप के दर्शनों का सौभाग्य मुझे प्राप्त न हो सका इस का मुझे दुःख है। इसी प्रकार की इधर उधर की कुछ बातें कर के और अन्त में फिर बारबार धन्यवाद देकर कुमारी हेलेन अपने घर चली गईं। शायद यह लिखने की आवश्यकता ही नहीं कि कुमारी हेलेन जाते हुए अपना पूरा पता देगईं और मिस्टर यूसुफ़ को अपने घर पर आने के लिए बड़े आग्रह के साथ निमंत्रण देगईं।

[३]

आज क्रिसमस की छुट्टी है। सभी घरों में यह त्यौहार बड़ी धूमधाम के साथ मनाया जा रहा है। लोग मोटरों में सवार होकर

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

निमंत्रणों में सम्मिलित होने जा रहे हैं। सभी ने नए २ वस्त्र पहिने हैं। सभी प्रेमी अपने प्रेमियों को अच्छी अच्छी भेंटें देने की चिन्ता में हैं।

कुमारी हेलेन के पिता मिस्टर जेम्स ने मिस्टर यूसुफ़ अली को भी विशेष बुलावा भेजा है। इसी लिए वे भी ठीक समय पर निमंत्रण में जा पहुँचे। उचित शिष्टाचार के पश्चात् मिस्टर जेम्स ने उस दिन की घटना का निर्देश करते हुए और उन की सज्जनता को सराहते हुए उनका धन्यवाद किया और सब उपस्थित सज्जनों से उनका परिचय कराया और अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट की। सभी लोगों ने बड़ी उत्सुकता के साथ उन से हिन्दुस्तान के विषय में बहुत से प्रश्न किये और उत्तर पाकर बड़े प्रसन्न हुए। उत्सव समाप्त हो चुकने पर जब सब अतिथि विदा होने लगे तब गृहपति महाशय ने मिस्टर यूसुफ़ से प्रार्थना की कि यदि आप को घर पर कुछ विशेष कार्य न हो और आप यहां कुछ अधिक ठहर सकें तो बड़ी कृपा होगी। मिस्टर यूसुफ़ ने कहा कि जेम्स महाशय ! यह मेरे सौभाग्य का विषय है कि आप मुझ से स्नेह करते हैं और मेरे देश की बातों में इतनी रुचि रखते हैं। ग़रीब हिन्दुस्तान की दुर्दशा को मैं आप सरीखे महानुभावों के सामने जितना ही अधिक खोल कर रख सकूं उतना ही अच्छा है। कड़े कानूनों के शिकंजे में जकड़े हुए हम अपने देश में रोभी नहीं सकते। रोना भी वहां राजद्रोह समझा जाता है। इतनी दूर बैठे हुए आप हमारे देश के विषय में क्या जान सकते हैं ?

मिस्टर जेम्स ने सहानुभूति प्रकट करते हुए कहा कि मिस्टर यूसुफ़ ! मेरे हृदय में तो आपके देश के लिए बड़ी श्रद्धा है। मेरा विश्वास है कि अब भी यदि संसार को शान्ति प्राप्त होगी तो वह आपके ही देश से। मैंने स्वामी विवेकानन्द के दर्शन किए हैं और उनके व्याख्यान सुने हैं। मुझे रविबाबू की रचनाओं में अलौकिक आनन्द प्राप्त होता है मेरी समझ में नहीं आता कि जिस देश की इतनी ऊंची फ़िलासफ़ी, इतना ऊँचा आदर्श और ऐसी ऊंची सभ्यता हो वह कैसे दूसरों के आधीन रह सकता है। मैंने अपनी जवानी में संसार के सब सुख भोग लिए हैं मेरे लिए उन में कुछ भी नवीनता, कुछ भी जादू, कुछ भी चमत्कार नहीं है। पश्चिम के भोगवाद से मुझे घृणा हो गई है। आप देखही रहे हैं कि मिसेज़ जेम्स का भी रहन सहन कितना सादा है। ये आडम्बर को बिलकुल पसन्द नहीं करतीं। हमारे घर में मांस का भी बिलकुल बहिष्कार है।

मिस्टर यूसुफ़ ने आश्चर्य के साथ कहा कि हैं ! आप माँस बिलकुल नहीं खाते ? आप के देश में तो यह बड़ा कठिन कार्य है।

मिस्टर जेम्स ने कहा कि, हां हम लोग मांस बिलकुल नहीं खाते। इस का भी एक इतिहास है। एक दिन हमारा सारा परिवार सैर करता हुआ संयोग से उस बड़े बूचर घर में जा पहुँचा। वहां हेलेन और हम सबने हज़ारों निरपराध पशुओं का एक कतार

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

में वध होते हुए देखा। उनके गलों से रुधिर के फुहारे छूट रहे थे। सारा फ़र्श रक्तरंजित हो रहा था। जो कर्मचारी वहां कार्य कर रहे थे वे इस लोक के प्राणी नहीं मालूम होते थे। इस कारुणिक, घृणित और भयानक दृश्य को देखकर बालिका हेलेन एक चीख मार कर वहीं मूर्छित होगई। मेरे हृदय में भी यह विचार उठा कि ओह! मनुष्य कितना पापी है। पेट और जिह्वा के लिए यह कितना पाप करता है। मैंने उसी दिन से मांस का एक दम परित्याग कर दिया है। कुमारी हेलेन का हृदय तो बड़ा ही कोमल है। यह किसी भी जीव को दुखी नहीं देख सकती। किसी का चेहरा उदास देखते ही इसकी आंखों में आंसू आ जाते हैं। किसी को रोते देखकर तो इसका हृदय फटने लगता है। इस ने कहीं से यह सुन लिया है कि आप के देश में ऐसे लोग भी हैं जिन से यदि भूल से कोई कीड़ी भी मर जाय तो वे उस का प्रायश्चित करते हैं। यह बात इसके दिल को लग सी गई है। मेरे पुस्तकालय से चुनचुन कर यह हिन्दुस्तान और हिन्दू सभ्यताके सम्बन्ध में पुस्तकें पढ़ा करती है। रविबाबू के विश्वप्रेम के सिद्धान्त पर यह लट्टू हो रही है। जब से आप के साथ इस की भेंट हुई है यह कई बार आपको बुलाने के लिए हठ कर चुकी है। आज अच्छा अवसर देख कर आप को कष्ट दिया गया है। आशा है आप क्षमा करेंगे। और कभी २ बिना संकोच इधर आकर अपने देश के समाचारों तथा बिचारों से हमें लाभ पहुँचाया करेंगे।

मिस्टर यूसुफ़ अली अपने मन ही मन बड़ी उलझन में पड़ रहे थे। हेलेन-परिवार की सहृदयता सरलता तथा मिलनसारी पर वे मुग्ध थे। उन का चित्त वहां से उठने को न चाहता था किन्तु दूसरी ओर मिस्टर जेम्स तथा कुमारी हेलेन का हिन्दू धर्म तथा हिन्दू संस्कृति की ओर झुकाव और इन्हीं के सम्बन्ध में उनकी अपनी विमुखता और अनभिज्ञता उन्हें दुःखित कर रही थी। उन की दशा "भई गति सांप छुछुन्दर केरी" वाली हो रही थी। उन्हें यह स्पष्ट दीख रहा था कि इस्लाम या हेलेन परिवार में से एक को ही वे अपना सकते हैं। या यूं कहिए कि हेलेन के साथ सम्बन्ध बनाये रखने के लिए उन्हें बहुत अंशों में हिन्दुत्व स्वीकार करना पड़ेगा। अब हिन्दू शब्द से उन्हें उतनी घृणा नहीं रही है जितनी अपने देश में थी क्योंकि इस नए देश में आकर उन्हों ने यह देख लिया है कि हिन्दुस्तान के सभी निवासियों को चाहे वे हिन्दू, मुसलमान या ईसाई कोई भी क्यों न हों दुनिया के लोग हिन्दू नाम से ही पुकारते हैं। हिन्दू एक ख़ास मज़हब का नाम न होकर एक जाति का नाम होगया है। और वह जाति उन लोगों की है जिनको हिन्दुस्तान पर उतना ही हक है जितना हिन्दुस्तान को उन लोगों पर है। यही सब-कुछ सोचते हुए मिस्टर यूसुफ़ वहां से विदा हुए। देखिये अब ऊंट किस करवट बैठता है।

(४)

"अरे यार तुम तो बिलकुल ही ईद के चाँद होगए। हमारी तुम्हारी दोस्ती जानो

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कभी हुई ही नहीं थी। आजकल किधर छनती है ? कभी हमारी भी सुध ले लिया करो। जब कैंची सम्हाली है तो सुई धागा भी लेना चाहिए।' लड़ाई में घायल दुश्मनों की मरहम पट्टी करना दुश्मन भी अपना फ़र्ज़ समझते हैं। तुम अजब सूरमा हो कि घायल करना जानते हो मगर मरहम-पट्टी नहीं। अच्छा यह तो कहो कि आज इधर कैसे भूल पड़े ? परिस्तान में सैर करते हुए कबरिस्तान की याद कैसे आई ? मिस्टर यूसुफ़ ! तुम्हारी कसम, तुम तो बहुत ही दुबले होगये।"

"अरे अब बस भी करोगे कि अपनी ही अलापते जाओगे। आनन्द बाबू ! इसीलिए मैं तुम्हारी तरफ़ आने से कतराता हूँ। जानता हूं कि तुम अपना मरसिया लेकर ऐसे हाथ धोकर पीछे पड़ते हो कि दूसरे को तोबा ही करनी पड़ती है। अच्छा कहो तो कैसी कट रही है ?"

"मिस्टर यूसुफ़ ! तुमही कहो। हमारी तो जैसी कट रही है कटती ही जावेगी। आज कैसे इधर आने की तकलीफ़ की है ?"

"भाई ! तुम्हारी ही तलाश में आया था।"

"यह तो मैं पहले ही जानता हूँ 'लग गई जब भूख तब तन्दुर की सूझी। भरगया जब पेट, बड़ी दूर की सूझी।' अब यह कहो कि आज अचानक मेरी तलाश की ज़रूरत क्यों आ पड़ी ?"

"आनन्द बाबू ! तुम तो जानते ही हो कि मेरी मुलाकात एक ऐसे ख़ानदान से होगई है जिसे हिन्दू-मज़हब हिन्दू-तहज़ीब में बड़ी दिलचस्पी है। वहाँ मुझसे इन्हीं के मुतल्लिक रोज़ सवाल जवाब होते हैं। मैं भी इधर-उधर से सुनसुनाकर जो कुछ थोड़ा बहुत तुम्हारे मज़हब व तवारीख़ के बारे में जान पाया हूँ वही उनके सामने हाँक आता हूँ। अभी तक तो मेरी बात उनके लिए पत्थर की लकीर रही है मगर अब ज़्यादह देर तक दाल गलने की उम्मीद नहीं है। मिस हेलन को तुमने देखाही है। आहा ! कैसी भोली-भाली लड़की है। वह मुझसे बड़ा प्रेम करती है और बारबार दमयन्ती, सीता और लक्ष्मण वग़ैरह के बारे में सवाल करती है। भाई ! तुम्हीं बताओ कि मैं तुम्हारी दमयन्ती और सीताके बारेमें क्या जानूं ? अगर तुम बरायेमेहरबानी मुझे इनकी कहानी सुना सको या कोई किताब ऐसी दे सको जिसमें इनके बारे में कुछ लिखा हो तो मैं तुम्हारा बड़ा एहसानमन्द रहूंगा।"

आनन्द बाबू ने हँसकर कहा कि भाई ! इतना ग़म क्यों पालते हो ? परमेश्वर ने हम दोनों से ही मज़ाक किया है। मेरी मुलाकात भी एक ऐसे परिवार से होगई है जिसे टर्की और मिश्र से बड़ी दिलचस्पी है। इस्लाम की कितनी ही बातें उसे बहुत पसन्द हैं। मैंने तो निश्चय कर लिया है कि भाई ! 'मैं बाज़ आया मुहब्बत से उठालो पानदान अपना।' मैं तो अब उस घर की ड्योढ़ी न झाँकूंगा। अगर तुम्हें मंज़ूर हो तो मैं एक तज़वीज़ पेश करूँ, वह यह कि हम आपस में अदला-बदली करलें।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मिस्टर यूसुफ़ अब समझे कि आनन्द-बाबू की बात 'अ' से लेकर 'क्ष' तक उनके दिमाग़ की इसी क्षण की उपज थी। वे ज़रा संजीदगी से कहने लगे—"आनन्दबाबू! तुम कभी तो इस दिल्लगी से किनारा किया करो। ज़रा मौक़े बे मौक़े को ही देख लिया करो। अमेरिका जैसे शिष्टाचार के देश में रहकर भी तुम अनाड़ी ही रहे।

आनन्द बाबू ने कहा—भाई! हमने तो दिल्ली में बारह साल रह कर भाड़ ही झोंका है। हम नाज़, नखरे और नज़ाकतों की बारीकियों को क्या जानें? बाक़ी रही दिल्लगी-यह तो नील का रंग है कपड़े के साथ ही जायगा। मैं देखता हूँ कि मेरी हँसी से तुम्हें तक़लीफ़ पहुँची है। अच्छा, उसके बदले में मैं पुराने ऋषियों की तरह तुम्हें एक वर देता हूं। तुम, जो जी चाहे सो माँग लो।

अब मिस्टर यूसुफ़ का चेहरा खिल उठा। उन्होंने कहा कि भाई! मारो हाथ-पर-हाथ और वादा पक्का हो। देखो अब पीछे न हटना। तुमने अमेरिका आते हुए मुझे शुद्ध करने की बात चलाई थी। इस लामज़हब मुल्क में रहकर मेरा सारा वहम काफ़ूर हो गया। मैं देखता हूं कि मज़हब कुछ चालाक लोगों के हाथ का हथियार है। वे अपने साँसारिक स्वार्थ सिद्ध करने के लिए उसकी सहायता लेते रहते हैं। मैं इस्लाम को भी एक ऐसे ही ढोंग के सिवाय कुछ नहीं समझता।

इन शब्दों को सुनकर आनन्द बाबू एका-एक चौंक उठे। उन्हें अपनी आँखों और कानों पर विश्वास नहीं हुआ। पर जब दुबारा पूछने पर भी मिस्टर यूसुफ़ ने वही बात कही तो उन्हें पता लगा कि उनका मित्र कितनी दूर जा भटका है। उन्होंने हँसते हुए कहा कि मिस्टर यूसुफ़! अगर तुम्हारी बात ठीक है तो इसका मतलब यह है कि अब तुम भी हिन्दू-धर्म से उसी हथियार का काम लेना चाहते हो।

यूसुफ़ ने कहा कि सूत्रकार खुद भाष्य नहीं किया करते। तुम मतलब पीछे निकालते रहना पहले अपना वादा पूरा करो। मैं हेलेन के साथ ज़्यादह धोखा नहीं करना चाहता।

आनन्द बाबू बोले—ख़ुदा के साथ धोखा भले ही हो जावे। क्यों यही बात है न? भाई! मैं तो इस्लाम को बड़ी आदर की दृष्टि से देखता हूँ। मैं उसे छोड़ने की सलाह तुम्हें नहीं दे सकता। हाँ, यदि तुम्हें उस में विश्वास नहीं रहा और हिन्दूपन तुम्हें पसन्द आगया हैं तो तुम ख़ुद ही हिन्दू हो गए क्योंकि धर्म तो विश्वास की चीज़ है वह बाहर के किसी रस्म रिवाज़ में नहीं रहता। तुम समझलो कि आज से तुम हिन्दू हो गए। तुम ने हिन्दुस्तान में जन्म लिया है। दुनियाँ की नज़र में तुम पहिले ही हिन्दू थे सिर्फ़ तुम्हारी अपनी ही राय इस के खिलाफ़ थी जब वह भी बदल गई तो तुम सोलहों आना हिन्दू होगए। गवाह की ज़रूरत हो तो मैं तैयार हूँ।

यूसुफ़ ने कहा कि भाई! इतने ही से छुटकारा नहीं है। अभी तो बहुत सी कवायद बाक़ी है। देखो! एक दिन मेरे घर से ख़त आया। उस वक़्त मैं मिस्टर जेम्स के घर पर ही मौजूद था। ख़त देखते ही कुमारी हेलेन मेरे पास आपहुँचीं और बड़े मधुर-आग्रह से कहने लगीं कि मिस्टर यूसुफ़!

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मुझे आप की राष्ट्रभाषा हिन्दी से बड़ा प्रेम है। मैं आशा करती हूँ कि आप का ख़त हिन्दी में ही होगा अगर आप को अनुचित प्रतीत न हो तो क्या आप यह ख़त मुझे दिखाने और सुनाने की कृपा करेंगे? यह सुनते ही मैं पानी पानी हो गया। वह ख़त अंग्रेज़ी में था। पर बचाव का कोई चारा न था। मुझे वह दिखाना ही पड़ा। मैंने कहा-कुमारी हेलेल न! हमारे देश के पढ़े लिखे लोग सब काम अंग्रेज़ी में ही करते हैं। और इसी में गौरव समझते हैं। देश के बड़े २ लीडर भरी सभा में खड़े होकर यह कहने में 'कि मुझे बड़ा शोक है कि मैं हिन्दी नहीं जानता। इसलिए मैं अंग्रेज़ी भाषा में ही आप के सामने भाषण करूँगा' अपनी बड़ी शान समझते हैं। देशी भाषाएँ गँवारू समझी जाती हैं। बदक़िस्मती से मैं भी इस मर्ज़ से बचा हुआ नहीं हूँ। यह सुन कर हेलेन को बहुत दुःख हुआ। वे कहने लगीं कि अब मेरी समझ में आगया कि आप का इतना बड़ा देश क्यों पराधीनता में जकड़ा पड़ा है। जब आप की कोई राष्ट्रभाषा ही नहीं तो आप क्या उन्नति कर सकते हैं? हेलेन के चेहरे की वह विषादपूर्ण रेखा अब भी मेरी आँखों के सामने उतनी ही गहरी बनी हुई है। अब तक तुम्हारी सहायता से मैंने इतनी परीक्षाएँ पासकी हैं। इस परीक्षा में भी मेरा खिवैया तुम्हें ही बनना पड़ेगा मैं आज ही हिन्दी के अक्षर सीखूंगा और हेलेन को भी सिखाऊँगा।

आनन्द बाबू ने कहा— तथास्तु !

(५)

मिस्टर यूसूफ़ और आनन्द बाबु को अमेरिका आये हुए लग भग चार वर्ष हो चुके। दोनों ही अपनी परीक्षाओं में उत्तीर्ण हो गए अब स्वदेश लौटने की चिन्ता में हैं। विलम्ब इस बात का है कि अगले क्रिसमस पर जेम्स परिवार में एक हिन्दू नाटक खेलने का आयोजन हो रहा है। सावित्री सत्यवान् की कथा को लेकर इङ्गलिश में एक छोटा सा नाटक आनन्द बाबू ने तैयार कर दिया है। उसे ही खेलने की सब की इच्छा है। हमारे पूर्व परिचित दोनों मित्रों को छोड़ कर शेष सभी पात्र जेम्स-परीवार के ही हैं। खूब अभ्यास किया जारहा है। अन्त को निश्चित दिन आपहुंचा। हेलेन ने सावित्री का पार्ट लिया और सत्यवान का पार्ट मिस्टर यूसुफ़ के हिस्से पड़ा। पर्दे और पोशाक भी हिन्दुस्तानी ढंग से तैयार किए गए थे। बनारसी साड़ी पहिन कर कुमारी हेलेन जब स्टेज पर आई तो सब दर्शक चित्र लिखित से रह गए। मिस्टर यूसुफ़ की गौर सुन्दर आकृति की शोभा भी किसी देवकुमार से न्यून न थी। सारा नाटक बड़ी उत्तमता से समाप्त हो गया। सावित्री की कठोर तपस्या को देख कर दर्शक गदगद होगए। सावित्री और सत्यवान का पार्ट इतना अच्छा हुआ कि लोग अपने आप को भूल गए। परन्तु अन्त में एक ग़लती-नहीं नहीं, बड़ी भारी गलती होगई। जब सावित्री यमराज से वर माँग रही थी उस समय- "सत्यवान के सम्बन्ध से मेरे ..... पुत्र हों" इस की जगह "मिस्टर यूसुफ़

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

के संबन्ध से....." ये शब्द कुमारी हेलेन के मुख से निकल गए। सारी नाट्यशाला में खलबली पड़ गई। स्वयं हेलेन को अपनी भूल पर अत्यन्त आश्चर्य और पश्चात्ताप हुआ। पर अब इसका उपाय ही क्या था। मिस्टर यूसुफ़ को कहीं मुंह छिपाने की जगह न रही। किन्तु वृद्ध मिस्टर जेम्स ने इसी समय स्थिति को सम्भाल लिया। वे एक दम स्टेज पर आगए और उन्होंने दोनों पात्रों का एक एक हाथ अपने एक एक हाथ में पकड़ लिया। वे कहने लगे कि— सज्जनो ! दो ढ़ाई वर्ष से मैं इन दोनों प्रेमियों की गति मति का निरीक्षण कर रहा हूं। दोनों का प्रेम शुद्ध है दोनों का स्वभाव भी प्रायः मिलता है। मिस्टर यूसुफ़ भी हमारी ही तरह के एक धनी और उच्च घराने में पैदा हुए हैं। कुमारी हेलेन को हिन्दू सभ्यता से प्रेम है; मुझे आशा है कि मेरी पुत्री इन की पत्नी बन कर दुःखी न होगी। ये सब बातें पहिले से ही सोच कर मैंने इन के रास्ते में कोई रुकावट न खड़ी की। मैं चाहता तो इस का प्रबन्ध पहले ही कर सकता था। मिस्टर यूसुफ़ ! आज से दो वर्ष पूर्व ठीक इसी उत्सव में आप एक अतिथि की भाँति इस गृह में आये थे और आज हमारे निकटतम होकर भी बहुत दूर चले जाने के लिए तैयार हैं। इस समय मेरा हृदय सुख और दुःख के एक मिश्रण में डुबकियाँ लगा रहा है। अस्तु, मैं अन्त में आशीर्वाद देता हूँ कि आप की यह नई जोड़ी परमेश्वर की कृपाओं की अनन्त वृष्टि में अपनी जीवन यात्रा का मार्ग सकुशल बनाती रहे।

(६)

अमेरिका से लौट कर आनन्द बाबू आज बम्बई पहुँचेंगे इस लिए उनके इष्टमित्र स्वागत के लिए पहिले ही वहाँ जा पहुँचे। मिस्टर यूसुफ़ के रिश्तेदारों को जब आनन्द बाबू के लौटने का समाचार मिला तो वे भी पीछे न रहे। यद्यपि मिस्टर यूसुफ़ के पिता को कोई पत्र अपने पुत्र का नहीं मिला था तो भी उन्हें पूरी आशा थी कि यूसुफ़ अली ज़रूर ही अपने मित्र के साथ आवेगा, यदि न भी आवेगा तो उसके एकाएक ख़तो-किताब बन्द कर बैठने और लौट कर न आने का सबब तो मालूम होगा ही।

जहाज़ आपहुँचा। कितने ही मनुष्य अपने २ बन्धुओं का स्वागत करने के लिए पुष्पमालाएँ हाथ में लिए हुए वहां उपस्थित थे। दोनों ओर से आनन्द सूचक संकेत होने लगे। थोड़ी ही देर में आनन्द बाबू, मिस्टर यूसुफ़ अली और उन की बाँयीं ओर हमारी पूर्व परिचिता कुमारी हेलेन उतरते हुए दिखाई दिए। चिरकाल के बिछुड़े हुए बन्धु दौड़कर गले लग गये। मिस्टर यूसुफ़ से उनके नए साथी का परिचय पाकर उन के सभी रिश्तेदार बहुत प्रसन्न हुए और और कहने लगे कि भाई ! तुम ने इस बात की ख़बर हमें पहिले ही क्यों न दी। मिस्टर-यूसुफ़ ने कहा कि शायद आप को कुछ तकलीफ़ हो इस लिए पहिले वैसा न किया गया। अब आनन्द बाबू ने संक्षेप में अपने मित्र के शुभविवाह का ब्यौरा सब के सामने रख दिया। किन्हीं को खुशी हुई, कइयों को दुःख हुआ, कितनों को केवल आश्चर्य ही हुआ। कुछ वृद्ध लोग कहने लगे कि हम तो

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पहिले ही कहते थे कि ऐसे छोकरों को परदेश नहीं भेजना चाहिए। ये वहाँ जाकर बिगड़ जाते हैं। वृद्ध पिता को बुढ़ापे में इस प्रकार अपने इकलौते बेटे से हाथ धो बैठने का बड़ा दुःख हुआ। पर अब क्या हो सकता था।

आनन्द बाबू ने एकान्त में मिस्टर यूसुफ़ से कहा कि तुम अपने पिता के साथ घर क्यों नहीं जाते? उन्होंने उत्तर दिया कि मेरा उस घर में गुजर होना मुश्किल है। मेरा विश्वास और रहन सहन सब बदल गए हैं। मुझे उस घर का परित्याग करना पड़ेगा।

आनन्द बाबू ने कहा कि नहीं यह सब कुछ न होगा। तुम अब भी पहिले की तरह ही अपने पिता के पुत्र हो। तुम्हारी शुद्धि होगी। वह शुद्धि हिन्दू मुसलमानों में लड़ाई का बीज न बोएगी। चलो हम सब काशी चल कर प्रायश्चित्त करलें।

(७)

आनन्दबाबू सब साथियों सहित काशी में एक विशाल मन्दिर के द्वार पर पहुँचे। मुसलमान सज्जनों को भीतर जाने से संकोच होने लगा। पर आनन्द बाबू के आग्रह से सब को अन्दर जाना पड़ा। यह मन्दिर भी विचित्र है जिस में और मन्दिरों की तरह किसी भी संप्रदाय वालों का जाना निषिद्ध नहीं। उस में सभी अभ्यागतों का स्वागत समान भाव से किया जाता है। मन्दिर में प्रवेश करते ही भारत माता की विशालमूर्ति दृष्टिगोचर हुई। उस सुजला सुफला शस्यश्यामला जननी के चरणों में अनायास ही सब का मस्तक अवनत होगया। प्रवासप्रत्यागत तीनों व्यक्ति वेदी के सामने खड़े होगये। वृद्ध पुजारी गंभीर स्वर में बोले—

मुझे प्रसन्नता है कि आज तुम सम्प्रदायों के क्षुद्र बन्धनों को तोड़कर जातीयता के उस विशाल धर्म में दीक्षित हो रहे हो जिस में सङ्कुचित और अनित्य व्यवस्थाओं की बाधा नहीं है। यह भारत का जातीय-धर्म है। इसमें सब एक होंगे। क्या हिन्दू क्या मुसलमान क्या ईसाई सब की एक हिन्दी ही राष्ट्रभाषा होगी। सबको एक ही शुद्ध आर्य्य-वेश धारण करना होगा। सब के नाम एक ही ढंग के, भारतीय परिपाटी के अनुसार होंगे। भिन्न २ सभी सम्प्रदायों के प्रवर्त्तक सामयिक सत्यताओं के प्रतिनिधि थे। उनका उचित सत्कार करना संसार का कर्त्तव्य है। उनसे उतर कर अपने ही देश के महापुरुष जिन्होंने भारतीय सभ्यता का निर्माण किया वे हमारे आदर्श हैं। भारत का इतिहास ही उसके सब सम्प्रदायों का इतिहास होगा। भारतीय साहित्य ही सबका साहित्य होगा। समुद्र में मिलकर नदियों के अपने अपने विशेष गुण छूट जाते हैं इसी प्रकार तुम लोग किसी भी देश से या किसी भी जाति से यहाँ आये हो इस भारतीय धर्म में दीक्षित होकर भारतीय होगये। इन सिद्धान्तों को मानते हुए कोई भी भारतवासी अपने ईश्वर की पूजा किसी भी ढंग से करता हुआ भारतीय या हिन्दू ही कहलायेगा। भारतीय धर्म की ऐसी विस्तृत व्याख्या सुनकर मिस्टर यूसुफ़ के सब सम्बन्धी भी बड़े प्रभावित हुए। उन्होंने इस नवीन धर्म में दीक्षित होने की इच्छा प्रकट की। तदनुसार वे भी हिन्दू बना लिये गये। सब उपस्थित लोग कहते थे कि यह भी एक विचित्र किंतु आदर्श शुद्धि है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

देशभक्त की कामना

होते मातृभूमि की पताका-रखवाले हम,
जाते रक्षा करने में हम भर घाव से।
फिर भी झुकाने वाले झण्डे को न हम होते,
सुवीर रणक्षेत्र में होते डटे राव से।
वैरियों की गर्व-घटा के लिए पवन होते,
लोभों के गढ़र को रौंदते हम पाँव से।
मरने पै यदि दो आँसू बहाने वाले होते,
बार बार मरते ले ले जनम "चाव से" ॥

वनमाली

दिखा दिया

सुरधुनि-तीर एक मुनि-वीर हीरक ने,
प्रेम-नीर दे करके काव्य पनपा दिया।
आर्य भारती को मेघ दूत का सँदेशा दे के,
कविगुलगुरु कालिदास ने दिखा दिया।
तुलसी से सूरमा ने चूर चूर कर भर,
हिन्दी कविताई को जुन्हाई बरसा दिया।
हाय! भारत की भोरी सभ्यता का नंगा नाच,
नंगे निरे हो कर के नांगों ने 'दिखा दिया'॥

वनमाली

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सुदूर पूर्व की समस्या

(लेखक गुरुकुल का एक ब्रह्मचारी)

राजनीतिज्ञों के दिमाग को चक्कर खिलाने वाली तीन अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं में से 'सुदूर पूर्व की समस्या' अन्यतम गहन और जटिल है। भूमध्य सागर और बालकन रियासतों की उथल पुथल और हलचलों से योरप की शक्तियों का ही विशेष सम्बन्ध है। यह एक सुप्त ज्वालामुखी है, आज जो धीरे धीरे जागृत हो रहा है। जब यह ज्वालामुखी फटेगा तब संसार की वही हालत होगी जो आज से चार साल पूर्व जापान की भूकम्प, तूफान और ज्वालामुखी के फटने से हुई थी। सारा संसार इस से निकले लावा से व्याप्त हो जायगा। फिर नए सिरे से नवीन संसार की सृष्टि होगी। यह वह भट्टी है जो सदा सुलगती रहती है, जिस से बहुत क्षीणकाय धूम राशि सदा निकलती रहती है। हवा का हल्का सा झोंका दहकते शोलों पर से राख के पर्दे को हटाने में समर्थ रहता है। एक आध सुलगती चिनगारी ही संसार को भयानक अग्निकाण्ड की सूचना देती रहती है। आज फिर संसार की आँखें चीन की ओर फिरी हैं। ४५ करोड़ की जन संख्या वाले देश को अंगड़ाई लेते देख कर संसार के कान खड़े हो गए हैं। रूस सदृश देशों ने 'संसार व्यापी क्रान्ति दीर्घायु हो, (Long live the world revolution) शब्दों में इस का स्वागत गान प्रारम्भ कर दिया है। हम भारतीय बड़ी आशा और उत्सुकता से इस के परिणामों की प्रतीक्षा कर रहे हैं। हम लोग अपनी क्रियात्मक सहानुभूति का परिचय देने के लिए भी व्यग्र हैं। बृटेन की डिप्लमेसी आज बगलें झांक रही है। चीन के बन्दरगाह आज संसार की मुख्य शक्तियों के जंगी बेड़ों के अड्डे बन रहे हैं। विस्मयपूर्ण नेत्रों से राजनीतिज्ञ इस महान् क्रान्ति को देख रहे हैं जिस से चीन जन और धन की बहुत कम हानि किए सफलता के साथ अपने उद्देश्य पथ की ओर शीघ्रता से बढ़ रहा है।

इसलिए चीन की समस्या का असली रूप क्या है, उसका किस राष्ट्र के साथ क्या और कितना सम्बन्ध है और कितना प्रभाव पड़ेगा तथा नूतन चीन की वर्तमान हलचल का क्या परिणाम होगा यह जानना हमारे लिए विशेषतः भारतीयों के लिए आवश्यक हो गया है।

समस्या क्या है?— संसार पर प्रभुत्व करने वाली शक्तियों के प्रचारक एजेन्सियों द्वारा भेजे गए समाचारों को समाचार पत्रों में पढ़कर, चीन की वर्तमान हलचल का यह रूप ध्यान में आये बगैर नहीं रह सकता कि चीन का सारा उद्योग बिदेशी शक्तियों को चीन से बाहर निकालने का है। पर चीन की वस्तुस्थिति को जानने वाले जानते हैं कि यह बात सत्य से दूर है। यह हलचल चीन के सब क्षेत्रों में व्याप्त हो गई है। क्रान्ति के प्रबल ज्वार ने पुराने संस्कारों और अन्ध विश्वासों तथा बुद्धा के मन्दिरों और किलों को ढाह दिया है। इस हल चल को हम सुगमता से तीन रूपों में बांट सकते हैं। प्रथम (I) आन्तरिक (II) अन्तर्राष्ट्रिय (III) आर्थिक। हम क्रमशः इन तीनों पर यहां विचार करेंगे।

आन्तरिक समस्या— भौगोलिक दृष्टि से चीन की एकता है राजनैतिक या राष्ट्रीय दृष्टि से चीन की दैशिक एकता नहीं है। चीन में केन्द्रीय राज्य सत्ता की स्थापना ही इस चीनी हलचल का मुख्य उद्देश्य है। यह समस्या आज या कल से उत्पन्न नहीं हुई। पर यह समस्या उतनी ही पुरानी है जितना चीन का इतिहास पुराना है। सम्पूर्ण चीन में एक शासन विधान की स्थापना करना इस हल चल का प्रथम उद्देश्य है। अतः इस को हम Constitutional कह सकते हैं। चीन का प्रारम्भिक, मध्ययुग और वर्तमान काल का इतिहास साक्षी है कि चीन में कभी भी केन्द्रिय राज्य सत्ता की सुसंगठित आधार पर

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्थापना नहीं हुई। बड़े २ चीनी नैपोलियन, सीजर और सिकन्दर सारे चीन में एक साम्राज्य की स्थापना करने में असमर्थ रहे। हन, थंग, सूंग, मंगोल और मांचू राज्यवंश आए और चले गए पर चीन के इतिहास का कोई ऐसा पन्ना नहीं जो ऐसे काल की ओर निर्देश कर रहा हो जब चीन के प्रान्तीय शासक सुकदन या पेकिङ्ग के विरुद्ध विद्रोह का झण्डा लेकर न खड़े हुए हों। होली रोमन एम्पायर (Holy Poman Empire) के समान चीन के सब प्रान्त केन्द्रीय सरकार से असम्बद्ध, विच्छिन्न और स्वतन्त्र थे।

चीन का सम्पूर्ण इतिहास प्रान्तीय बलवान सरदारों और पेकिङ्ग सरकार के युद्धों का इतिहास है। जब किसी गवर्नर ने अपनी शक्ति को अनुभव किया तभी मौके बेमौके केन्द्रीय सरकार के विरुद्ध खड़ा हो गया। इस विशृङ्खलता और अनैक्यता का कारण, हम भारतीयों के लिए और भारत का साधारण इतिहास जानने वालों के लिए जानना कठिन नहीं है।

प्रथम तो चीन एक उपमहादेश के समान एक विस्तृत प्रदेश है। दूसरा प्राकृतिक बाधायें प्रान्तों के परस्पर सम्बन्ध में बाधक है। व्यवसायिक युग से पहिले ये बाधायें अलंघ्य और अगम्य थीं। इस कारण राजधानी से प्रान्तों का सम्बन्ध निरन्तर जारी रहना अत्यन्त कठिन था। कानून, आय और लगान की एक व्यवस्था सारे देश में प्रचलित करना उस समय कल्पना का विषय था। इस अवस्था में महान् बलवती सेना के कठोर नियन्त्रण के द्वारा भी साम्राज्य में एकता स्थापित करने में उस समय के राजनीतिज्ञ अपने स्वप्न-साम्राज्य में ही सफल हो सके होंगे। तीसरा कारण था जातियों और बोल चाल की भाषा की विभिन्नता। मध्य युग में जो अवस्था विभिन्न जातियों और विभिन्न भाषा के कारण योरप की थी वही चीन की थी। जिस प्रकार यह विभिन्नता योरप में युद्धाग्नि को प्रज्वलित रखती थी, उसी प्रकार चीन में यह समराग्नि को धधकती रखने में सहायक होती थी। अतः चीन का सदा से प्रयत्न रहा है कि सम्पूर्ण चीन में एक राष्ट्रीय शासन विधान की स्थापना की जावे। आज भी चीन बड़े २ ६ सेनापतियों का रङ्गभूमि बना हुआ है। (i) चांग-त्सो-लिन— यह सोवियट रूस का कट्टर शत्रु है। इसकी सेना सब से ज्यादा संगठित और सुशिक्षित है। (ii) चियांग-काई-शेक यह अभी राष्ट्रीय सरकार से अलग हुआ है। (iii) फेंग-यू-हें-सिंग यह शांसी प्रान्त का शासक है। ५०००० इस के पास सैनिक हैं। इस का क्यू मिन टांग के नर्माति-नर्म दल के साथ सम्बन्ध है। (vi) मार्शल वू-पी-फू इसने यांग-टी-सो घाटी में राष्ट्रीय सरकार से हार स्वीकार कर अनिच्छा के साथ चांग-त्सो-लिनकी अधी-नता स्वीकार करली है।

(v) मार्शल सन-चूआन-फेङ्ग यह अभी शंघाई से खदेड़ा गया है।

(v) चांग-त्संग-चंग शांटुंग का शासक है।

परन्तु हम भूल करेंगे यदि आज से ४० वर्ष पहिले आरम्भ हुए आन्दोलन की हम उपेक्षा करें, जिस आन्दोलन को वर्तमान रूप देने में डा० सन-यात-सेन ने अपना जीवन अर्पित कर दिया और उन के द्वारा स्थापित 'क्यू-मिन-टांग' नामक संस्था आज तक चीन की स्वतन्त्रता के लिए प्रयत्न कर रही है और इस के लिए संसार की शक्तियों से मोर्चा लेने के लिए भी उद्यत है।

इस आन्दोलन का दूसरा रूप है चीन में जनतन्त्र के भावों का समावेश। यद्यपि जिस साल १८७० के मध्य योरप के युद्ध ने जर्मन साम्राज्य की स्थापना की उसी साल जनतन्त्र की भावना की प्रबल लहर ने चीन में प्रवेश किया, पर वस्तुतः आज से ४० साल पूर्व मांचू शासन के अन्दर कांग-यू-वी ने सुधारों का समावेश किया। १९११ में डा. सन-यात-सेन के प्रयत्नों ने चीनी राज्य क्रान्ति को जन्म दिया और मांचू राज्यवंश भूत काल के इतिहास का विषय हो

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

गया। पर जनतन्त्र पद्धति की स्थापना न हो पाई। प्रत्युत 'यू आन शिकाई' के रूप में पुराने सैनिक शासन का फिर से उदय हुआ। जिससे चीन आज भी पीड़ित, दुःखी और सन्तप्त तथा त्रस्त है। इस प्रकार इस समय चीन की वर्तमान हलचल की तह में Constitutional और Democracy की प्रबल और वेगवती लहरें काम कर रही हैं जो सैनिक शासन को ढाहने का घोर प्रयत्न कर रही हैं। इस में सन्देह नहीं कि चीन में जनतन्त्र पद्धति के प्रति प्रेम की भावना बहुत ही निर्बल है और इस का वेग बहुत धीमा है। क्योंकि जनता अशिक्षित है। गाँवों में कोई राजनैतिक संस्था नहीं है जो गाँव वालों में राजनैतिक भावना को सदा जीवित और जागृत बनाये रखे। आदि काल की ग्राम्य संस्थायें जनतन्त्र पद्धति के भावों के प्रचार करने में सर्वथा असमर्थ और अयोग्य हैं। व्यापारिक केन्द्रस्थलों में व्यापारियों और व्यवसाइयों की गिल्डस (Guilds) हैं। पर ये सर्वथा आर्थिक ढंग की हैं। इनका आन्तरिक संगठन किसी हद तक जनतन्त्र पद्धति पर है। पर ऐसा कोई भी कानून या शासनविधान का सूत्र नहीं जिस के द्वारा ये संस्थायें देश की राजनैतिक संस्थाओं के साथ अपने आप को सम्बद्ध कर सकें और लोकमत को प्रगट करने वाली संस्थायें बन सकें। चीन में आज से कुछ साल पहिले वर्तमान युग की पार्लिया-मेण्ट्री राजनैतिक, व्यवसायिक और आर्थिक संस्थाओं का सर्वथा अभाव था।

आज चीन में जनतन्त्र भावना की वेगवती लहर तीव्र प्रवाह से प्रवाहित हो रही है पर यह केवल दस हजार शिक्षितों के अन्दर है। इस के पुरस्कर्ता और प्रारम्भ करने वाले 'सन्धि युक्त बन्दर गाहों' (Treaty ports) के रहने वाले हैं। नवीन चीन की यही लोग सृष्टि कर रहे हैं। इन्हीं लोगों ने डाक्टर सन-यात सेन के नेतृत्व में 'क्यूमिनटांग' नामक संस्था की स्थापना की है। जिस की यांग-टी-क्री की घाटी की विजयों ने संसार की मदोन्मत्त शक्तियों को चीन के साथ नर्मी और सन्मान के साथ वर्ताव करना सिखाया है। इस संस्था में प्रत्येक प्रान्त से प्रतिनिधि आते हैं। प्रतिनिधियों का निर्वाचन दैशिक आधार और पेशों के आधार (Territoriol basis and vocaticnal basis) पर होता है। इस प्रकार की निर्वाचन पद्धति के कारण प्रत्येक राष्ट्रीय, व्यापारिक व्यावसायिक और शिक्षण संस्थायें इस में बैठने का अधिकार रखती हैं।

चीन की चाह— प्रश्न यह है कि इस राष्ट्रीय विप्लव में चीन किस उद्देश्य से प्रवृत्त हुआ है? उसने इस कठोर व्रत की दीक्षा किस अभीष्ट की सिद्धि के लिए ग्रहण की है? इस महान् साधना के फल रूप चीन चाहता क्या है? आज चीन के दृष्टिकोण में परिवर्तन आगया है। अब वह विदेशी अधिकृत प्रदेशों, और तट कर नियन्त्रण की स्वतन्त्रता पा कर ही सन्तुष्ट होने वाला नहीं। अब वह विदेशियों के बड़प्पन के अहंकार को एक क्षण भर के लिए भी सहने को तय्यार नहीं है। डा. सनयात के शब्दों में चीन के सामने तीन उद्देश्य हैं। स्वतंत्रता (Independence) जनतन्त्र पद्धति की स्थापना (Democracy) और आर्थिक उन्नति (Economic Development)। इस प्रकार से चीन जहां विदेशियों के प्रभुत्व से स्वतन्त्रता चाहता है वहां इस के साथ २ आन्तरिक स्वतन्त्रता भी चाहता है। चीन सैनिक प्रभुओं के शासन से तंग आचुका है। चीन गृहयुद्धों से जर्जरित हो चुका है। ये युद्ध निर्जन और मरु-भूमि या जंगल में नहीं होते पर आबाद, जनाकीर्ण धनधान्यपरिपूर्ण गांवों, नगरों और ऊपजाऊ हरे भरे खेतों में होते हैं। १९१३-१४ से लेकर आज तक १५० से कम छोटे मोटे युद्ध और ३७ से कम बिराट् संग्राम नहीं हुए। चीनी जनता ने बड़ी आशा से चू-पी-फी और फेंग-यू-शिआन नामक सेना पतियों को क्रमशः अपना रक्षक समझा, पर घटनाओं ने इस के विपरीत सिद्ध किया। अन्त में विवश होकर जनता ने डा० सन यात सेन और उन के

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

द्वारा स्थापित क्यू-मिन टांग नामक संस्था को अपनाया और अब उनको अपना रक्षक और उद्धारक समझती है। आज चीन इन आन्तरिक युद्धों से सर्वथा और सदा के लिए मुक्ति चाहता है। चीन अपनी इस नवोदित क्रान्ति के मध्य 'चीनी जागृति के पिता डा० हू-शी के शब्दों में चाह रहा है—"हमएक सर्वथा नई क्रान्ति चाहते हैं, यह एक आध्यात्मिक क्रान्ति है। यह ऐसी नई क्रान्ति है जिसका चीन आज स्वागत कर रहा है। हमें आध्यात्मिक आधारभूत तत्वों और वर्तमान काल की सभ्यता की सम्भावित भावनाओं, प्रेरणाओं और आशा की आवश्यकता है। हमें प्राकृतिक उन्नति के नूतन गुणों और अविष्कारों की जरूरत है, धन कमाने के लिये नहीं, प्रत्युत अपने जीवन रक्षा के लिये और शोचनीय युद्धों से छुटकारा पाने के लिए, और अपने जीवन को अधिक उत्कृष्ट बनाने के लिए। हमें गवर्मेन्ट के नवीन भावना और प्रेरणा की आवश्यता है, जो व्यक्तिगत शक्ति बढ़ाने का ज़रिया न होकर अधिक से अधिक लोगों के अधिक से अधिक सुख को करने वाली हो। हमें विज्ञान के नवीन विचारों की आवश्यकता है, पर उस की नहीं जिस के ज़रिये बिना धूआँ वाली विषैली गैस, चूर्ण या नाशक जहाज या विनाशक वायुयान बनावें, प्रत्युत उस विज्ञान की जो हमें न्याययुक्त सत्य पथ पर ले जाने वाला हो और मनुष्य की आत्मा और मन को दासता से मुक्त करने वाला हो। हमको अपने विचारों और विश्वासों को राष्ट्रीय बनाना चाहिये। और अपनी संस्थाओं को मनुष्यमात्र के कल्याण के लिये बनाना चाहिये। सर्वतोधिक हमको आत्म-प्रवञ्चना से बचना चाहिये। और हम को सचाई और तत्परता से वर्तमान अवस्थाओं से असन्तुष्ट होना चहिये। हमारे अन्दर दैवीय असन्तोष सदा जागृत रहना चाहिये और हमको नवीन व्यवस्था में पूर्ण विश्वास होना चाहिये, जिस की कि हम सृष्टि कर रहे हैं। हमें नवीन दर्शन और नूतन साहित्य की आवश्यकता है जो हमारे इस नवीन विश्वास का प्रचार करे और फैलाये। इस प्रकार की आमूलचूल परिवर्तनकारी क्रान्ति चीन चाहता है।"

चीनी विप्लव का यह स्पष्ट स्वरूप है। आज चीन पुराने चोले को फेंक कर नए चोले को धारण कर रहा है। अब वो दिन गए जब २५ वर्ष पहिले कोई विदेशी शक्ति चीन के हाथ या पांव को बिना बाधा के काट सकती थी और चीन इस के दुःख दर्द को अनुभव भी न करता था पर अब तो यदि अंगुली के अग्र भाग में पिन भी चुभोई जाय तो-मांस काटने की बात तो दूर की है— इस दुःख दर्द को महसूस करता है और प्रतीकार के लिए सब साधनों का उपयोग किए बगैर शान्त होने का नहीं। चीन राष्ट्रीय ऐक्य, की अक्षुण्णता और अभङ्गता के लिए लड़ रहा है। यह सत्य है कि जब से चीन में मनुष्य जाति ने अपने पैर रखे हैं तभी से उत्तर पर दक्षिण ने चढ़ाई की है। उन युद्धों का कारण दक्षिण और उत्तरीय चीन की कुछ मौलिक भेद और असमानतायें हैं। परन्तु आज उत्तर पर दक्षिण की चढ़ाई अपनी महत्वाकाँक्षा की पूर्ति के लिए या अपना प्रभुत्व स्थापित करने के लिए नहीं अपितु सम्पूर्ण चीन और मानव जाति के स्थिर कल्याण और मङ्गलमय शान्ति स्थापना के लिए है।

अन्तर्राष्ट्रीय समस्या— चीन की घटनाओं को आवश्यकता से ज़्यादा महत्व दिया जारहा है। इसमें सन्देह नहीं कि अफीम युद्ध और बक्सर युद्ध के बाद से विदेशियों के साथ घृणा की मात्रा बढ़ गई है। परन्तु इस समय जिन राष्ट्रों का स्वार्थ चीन के साथ सम्बद्ध है वे अपनी सैनिक शक्ति—जल, स्थल और आकाशीय शक्ति—का प्रदर्शन करने का मौका ढूंढ रहे हैं। बृटेन विशेषतः इसके लिए प्रयत्न कर रहा है। बृटिश साम्राज्यवाद की सदा से यह नीति चली आरही है कि वह दूसरों को अपने पर आक्रमण करने के लिए बाधित करता है और फिर अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा या अपने अपमान के परिशोध के व्याज से दूसरे देशों पर आक्रमण कर अपना स्वार्थ

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सिद्ध करने आता है। उसको इस राजनैतिक कौशल पर अभिमान है। बृटिश लेखक अभिमान से कहते हैं कि इङ्गलैण्ड को बाँध दो, पीस दो, आग में फूंक दो, इसकी राख को समुद्र में फेंक दो, वह बच निकल आयगा, वह पुनर्जीवित हो उठेगा, वह फिर पवित्र बीज के समान उत्पन्न हो जायगा, अब तक जो उत्पन्न नहीं हुए उन जीवनों को स्वर्गीय भावों और अमर चमक से प्रकाशित कर देगा। पर इङ्गलैंड शान्त चीन को अपने विरुद्ध उत्तेजित नहीं कर सका है। चीन ने अपनी शान्त प्रकृति नहीं छोड़ी। बृटिश सैनिक चीनियों को उत्तेजित करने के लिए सब उपायों का उपयोग कर रहे हैं।

चीन के शासक क्या राष्ट्रीय और क्या सेनापति शासक सब एक दूसरे को दबाने के लिए विदेशी शक्ति का आश्रय और सहायता लेने से नहीं चूकते। विदेशी राष्ट्र भी अपने स्वार्थों की रक्षा के लिए इनको आपस में लड़ाते रहते हैं और एक दूसरे को सहायता देकर अपना उल्लू सीधा करते हैं। विदेशियों के विरुद्ध तीव्र घृणा और विद्वेष के भाव चीन में सर्वत्र फैले हुए हैं। जनता विदेशियों की सत्ता को सहन नहीं कर सकती। उसकी मर्म वेदना डा० सनयात सेन के इन शब्दों में प्रगट हुई है—"मुझे कौन बता सकता है कि चीन का कौन राष्ट्र स्वामी है? वह सब सन्धि करने वाली शक्तियों (Treaty poweres) के अधीन है इससे अधिक मैं और नहीं कह सकता। क्या अच्छा है, एक की सेवा करना या बहुतों की? कोरिया हम से कम दुःखी हैं। मैं चीन को एक उप उपनिवेश (By Colony) कहूंगा।" इससे यह सहज ही अनुमान किया जा सकता है कि विदेशियों के प्रति चीन की घृणा अकारण नहीं है। विदेशियों के जुल्म और अत्याचार तथा अपमान-जनक बर्ताव ही इसके कारण हैं। विदेशियों ने चीनियों को उनके देश में ही विदेशी बना दिया है। चीन की अन्तर्राष्ट्रीय बस्ती में (International Settlement) में केवल ३०,००० विदेशी हैं। जिसमें आधे के लगभग जापानी हैं, ६००० अँग्रेज़, १००० अमेरिकन, और चीनी ११,००,००० और आस पास के शहरों में दो तीन मिलियन के लगभग हैं। परन्तु ये चीनी इस बस्ती में विदेशियों के समान रहते हैं। अँग्रेज़, अमेरिकन, फ्रेंञ्च और जापानी अपने कानूनों को मानते हैं। इनके अपने न्यायालय हैं और डाकखाने हैं। अँग्रेज़, अमेरिकन, जापानी और फ्रेंञ्च जिस प्रकार अपने देश में रहते हैं उसी प्रकार यहाँ रहते हैं। इस अधिकार का नाम Extra-territoriality है। यह ध्यान रखने की बात है कि वे अधिकार इनको बन्दरगाहों में अधिकता से Opened by treaties के कारण प्राप्त हैं। ये जगहें अन्तर्राष्ट्रीय बस्ती कहाती हैं। इन जगहों में शङ्घाई अन्यतम है। शङ्घाई की चीनी आबादी १ मिलियन है। और ये लोग कर का ७०% देते हैं। परन्तु इनको मताधिकार प्राप्त नहीं है। इससे साफ ज़ाहिर है कि चीनियों की यहाँ क्या अवस्था होगी। यदि दो विदेशी राष्ट्रों के आदमियों में झगड़ा हो तो उनका फैसला उन दोनों देशों द्वारा की गई सन्धि के अनुसार होगा। चीनी कानून और चीनी अधिकार इस विषय में ज़रा भी दखल नहीं दे सकता। चीनी अधिकारी किसी विदेशी की तलाशी नहीं ले सकता। इसके कारण चीनियों में अपने अधिकारियों और कानूनों के प्रति घृणा और अवज्ञा के भाव पैदा हुए अब उनमें विदेशियों के प्रति भय और घृणा के भाव समा गए हैं।

तीसरी शिकायत यह है कि आयात कर और निर्यात कर यानी तट कर लगाने की स्वाधीनता चीन को प्राप्त नहीं है। चीन उसी सीमा तक तट कर बैठा सकता है जिस मात्रा तक की विदेशी शक्तियाँ इजाजत दें। वाशीङ्गटन कान्फ्रेंस के अनुसार इस समय चीन साधारण चीज़ों पर २½% और विलासिता की सामग्री पर ५% तक कर लगा सकता है। चीन विदेशियों की यह गुलामी सहने में असमर्थ है। इस कारण चीन विदेशियों के विरुद्ध खड़ा हुआ है। अवस्था भयानक होगई है। [शेष]

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वैज्ञानिक संसार

१. सत्य बुलवाना

पोलैमिन नाम की एक औषध है जिस के सेवन से अभिच्छित गवाहों से सत्य प्रगट कराया जा सकता है। चाहे कितना भी रोको मुँह से सत्य निकल ही पड़ता है।

मनोविज्ञान विशारदों का मत है कि मनुष्य शरीर में एक शक्ति है जिसको "नीति नायक" का नाम दे सकते हैं यह सदैव सजग रहती है, जो कि प्रत्येक वस्तु को जिसे आप देखते हैं प्रत्येक कार्य को जिसे आप करते हैं, और प्रत्येक विचार को जिसे आप सोचते हैं देखती रहती है। यही शक्ति आपको किसी भी असावधानी के समय में जब कि हमारी जिह्वा से वह बात निकलने ही वाली होती है जो कि आप की मूर्खता की सूचक हो और हमें न कहनी चाहिये रोक देती है। स्कोपोलैमिन इसी नीति नायक को शिथिल और तेज हीन बना देती है और स्वतन्त्रता होने पर जो कुछ मन में होता है जिह्वा से कहा जाता है।

२. संसार के सब से नन्हे शिशु

वैस्ट हैम स्थान में एक वर्ष के लगभग हुआ एक बालिका ने जन्म लिया था। उस समय उस का बोझ केवल १२ छटाँक था। जहां तक पता है यह संसार में सब से अधिक छोटी बालिका है। पाँच मास की आयु तक इस को प्रति दिन जैतून की तेल से मालिश होती थी और इसे रुई में लपेट कर रखा जाता था। अब वह ५ सेर की है।

ग्लासगो में श्रीमती डासन के एक लड़की उत्पन्न हुई थी। जन्म समय उस का बोझ एक सेर था और लम्बाई केवल १० इञ्च, दो मास में यह बोझ में २½ सेर और लम्बाई में १५ इन्च की हो गई।

आकलैण्ड की श्रीमती जान्स्टन के एक लड़की है जो कि जन्म के समय एक सेर तोल में और १४½ इंच लम्बी थी। गत दिसम्बर में एक और लड़की उत्पन्न हुई थी जो कि जन्मके समय तोल में १३ छटाँक और लम्बाई में १५ इंच थी। वह भी रुई में लपेट कर गरम पानी की बोतलों से चिमटा कर रखी जाती थी। अब वह दो सेर की होगई है।

३. अरबों रुपया मूल्यकी जीवन वृद्धि

हमारे देश में मनुष्य आयु घट रही है परन्तु योरोप तथा अमरीका इत्यादि स्वतन्त्र महाद्वीपों के देशों में जनता की सामान्य आयु बढ़ रही है। इस के कारण वहाँ का प्रत्येक पुरुष अधिक प्रतिभा शाली, अधिक सम्पन्न और अधिक सुखी हो रहा है। यदि इस आयु के बढ़ने को केवल अधिक धन कमाने की शक्ति की दृष्टि से ही मापा जाय तो आश्चर्यजनक राशि प्राप्त होती है। अमरीका में केवल पुरुषों की इस एक ही जीवन में ६६०००००००० रुपये प्रति वर्ष की अधिक आमदनी हुई है। स्त्रियों की आमदनी सूचक ठीक २ संख्या का पता नहीं, परन्तु एक इन्श्युरैन्स कम्पनी की गणना के अनुसार १९०१ से लेकर स्त्रियों ने अब तक १०५०००००००० अधिक कमाये हैं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अधिक धनोपार्जन की शक्ति का कारण केवल सामान्य जीवन की वृद्धि है जो कि स्वास्थ्य सम्बन्धी नियमों पर अधिक ध्यान देने के कारण हुई है १९०१ में एक लड़के का जन्म के समय रुपयों में २२६५९ मूल्य था और आज यह २७९९९ है। ५३४० की वृद्धि का कारण यही है कि अब आशा की जाती है कि बालक इतने वर्ष की सामान्य आयु को अधिक भोगेगा और इस समय में इतना धन अधिक कमायगा।

साइन्स सर्विस

४. अन्तर्हित जीवन

यह सब जानते हैं कि बीजों में बहुत देर तक अङ्कुरित होने की शक्ति विद्यमान रहती है और कितने ही प्राणियों में बहुत अधिक समय तक सब जीवन क्रिया बन्द होने पर भी जीवन बना रहता है।

शीत रक्त प्राणियों में यथा केंचवा, जल टिड्डा, मेंढक मछली इत्यादि में अन्तर्हित जीवन के कई उदाहरण मिलते हैं। मछलियों के एक समूह को एक बर्फ़ के बड़े भारी टुकड़े में पानी जमने के तापमान से १६ दर्ज़े नीचे के ताप [१६°c.] में जमाया गया बर्फ के हटाने पर ज्यों २ सर्दी दूर होती गई उन में जीवन के लक्षण दिखलाई पड़ते गये और अन्त में उन में पुनः फुरती आगई। इसी प्रकार मेंढक को इस भाँति जमाया जा सकता है कि उसका शरीर इतना अकड़ जाय कि उसे एक टांग से लकड़ी की भाँति पकड़ा जा सके। परन्तु शीत दूर करने पर वह पुनः इस प्रकार फुदकने लगेगा जैसे कुछ हुआ ही नहीं।

भालू, कांटेदार जङ्गली चूहा, एक विशेष प्रकार का जंगली बन्दर इत्यादि कितने ही प्राणी सरदियों के आगमन से पहिले अपने शरीर पर बहुत सी चरबी धारण कर बहुत मोटे हो जाते हैं और आगामी बसन्त तक संसार से पृथक् हो हिमकन्दराओं में जा छिपते हैं, जहाँ उनकी अवस्था अन्तर्हित जीवन धारी प्राणी की सी हो जाती है। इसी प्रकार हमें कभी कभी ऐसे मनुष्यों के विषय में सुनाई पड़ता है जो कि ऐसी गहरी निद्रा में पड़ जाते हैं कि दिनों और सप्ताहों तक जागने का नाम नहीं लेते।

५. एक विचित्र मछली

समुद्र में एक विचित्र प्रकार की मछली होती है जिसकी पीठ पर एक पतली सी डोरी उठी रहती है। इसका सिरा कुछ फूला सा रहता है और जो कि शिकार को प्रलोभन देने के साधन (आमिष) का काम देता है, इन मछलियों में स्त्री-पुरुष दोनों का एक ही शरीर होता है। पुरुष की लंबाई चार इञ्च होती है और स्त्री की चार फुट। अभी इसका शरीर अपक्व ही होता है कि पुरुष स्त्री के शरीर के साथ जुड़ जाता है। प्रोफेसर पाईकाफ़ट का अनुमान है कि स्त्री के शरीर को भली प्रकार पकड़ने के लिये अल्पकाय पुरुष के निचले जबड़ों में एक प्रकार के बाल से उत्पन्न होजाते हैं जो बहुत ही चिप-चिपे होते हैं। इस उत्तेजनासे स्त्री के शरीर में स्तन मुख की भाँति उभरे हुवे दानों का एक गुच्छा सा बन जाता

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

है जो कि पुरुष के शरीर को भेदकर रक्त वाहिनियों का समूह बनकर पुरुष का-स्त्री के शरीर में घटने वाली सब जीवन क्रियाओं से सम्बन्ध जोड़ देता है। इस प्रकार पुरुष को स्वतन्त्र रूप से अपना भोजन प्राप्त करने की चिंता-यदि सर्वांश में न भी हो तो भी बहुत कुछ-दूर होजाती है अर्थात् पुरुष का इसी प्रकार पालन पोषण होता है जिस प्रकार रीढ की हड्डी वाले बड़े २ जानवरों के गर्भ स्थित बालक का। यह लघुकाय पुरुष भोजन की खोज में इधर-उधर भटकने की चिंता से रहित होकर, यहाँ तक कि खाने की क्रिया से मुक्त होकर केवल मात्र परिभ्रष्ट बन गया है। उसके जीवन का एक मात्र उद्देश्य मछली के दिये हुए अण्डों को सफल बनाने के लिए वीर्य्य का उत्पन्न करना ही रह जाता है। दूसरे शब्दों में वह एक परपिंडभोजी जीव की अवस्था को प्राप्त होजाता है यद्यपि यह एक परोपकार शील परपिंड भोजी जीव है जिसके अभाव से वंश का नाश अवश्यम्भावी है।

६. जनता के लिये विमान

आजकल मोटरों की ख़ूब वृद्धि होरही है। कोई ऐसा छोटा भी शहर न होगा जहाँ दस-पाँच मोटर गाड़ी न हों। जिनको परमात्मा ने धन दिया है वह जब कभी दस पन्द्रह दिन के लिये कार्य वश किसी बड़े नगर में जाते हैं अपनी मोटर साथ ले जाते हैं और उसी पर विशाल नगरों में इधर-उधर जाकर अपना काम कर लौट आते हैं। क्या यह काम कभी हवाई जहाज़ भी दे सकेंगे ?

सर ऐलन कोभम विलायत का प्रसिद्ध वायुयान वाहक है। उसने इङ्गलैंड से आस्ट्रेलिया और वापिस २८००० मील का सफ़र वायुयान में किया था जिस से महाराज जार्ज द्वारा उसका विशेष सम्मान हुआ। आजकल सर ऐलन अमेरिका में वायुयानों का प्रचार कररहे हैं। आप स्थान २ पर व्याख्यान देते फिरते हैं। कहते हैं कि आपके व्याख्यान बड़े मनोरञ्जक और शिक्षा-प्रद होते हैं। आपका कथन है कि वायुयान और बाई-सिकल में बहुत कुछ समानता है। कुछ वर्ष हुये बाईसिकल चलाना बड़ी कठिनता से सीखा जाता था, परन्तु आज तो मानों वह लड़कों के ख़ून में ही समाया हुआ है। यही अवस्था वायुयान की होगी और यह विद्या बड़ी साधारण सी बात बन जायेगी। अपने इस कथन की पुष्टि में कोभम महाशय जब और जहाँ चाहते हैं वायुयान द्वारा प्रत्यक्ष दिखलाते हैं। उनके पास "पतंग" नाम का विमान है। इसी में आप अमेरिका पहुँचे थे और इसी में आप तथा श्रीमती लेडी कोभम ने अमेरिका का बहुत बड़ा भाग देख डाला है।

अमेरिकन संयुक्त प्रान्त के प्रधान के निमन्त्रण पर आप कड़ाके की सर्दी में और ४० मील प्रतिघंटा की तेज़ हवा में किसी विशेष तैयारी के बिना केवल विशेष गरम कोट पहिन कर वाशिंगटन पहुँच गये थे।

आप इङ्गलैंड की विमान बनाने वाली 'डी हैवलैंड' कम्पनी के एजण्ट हैं। यह

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कम्पनी "पतंग" के विषय में अपने विज्ञापन में इस प्रकार घोषणा करती है— इसका चलाना इतना ही सरल है जितना कि एक छोटी मोटरकार का, उत्तम क्रियात्मिक सवारी है जिसमें सवारियों को सब प्रकार का सुख प्राप्त होगा, सामान रखने के लिये पर्याप्त स्थान है, सुगमता से यह चलाई और रोकी जा सकती है, किसी भी मौसम में ७० से ८० मील प्रति घंटा की चाल से उड़ती है। इसका दैनिक व्यय एक मोटरकार के व्यय से कम होता है। एक बार सब सामान भर लेने पर यह २५० मील तक बिना कहीं ठहरे चली सकती है। मूल्य लगभग १००००)

७. स्वास्थ्य के लिये चूने की आवश्यकता

मनुष्य शरीर में जड़ अथवा अप्राणिज पदार्थों—जैसा कि लोहा, फास्फोरस, नैल इत्यादि-में खटिक अथवा चूने का मूलतत्व जिसे कैलसियम कहते हैं, बड़ी महत्व पूर्ण चीज़ है। एक युवक अथवा युवती के शरीर का यह पचासवाँ भाग होता है। यह सब-का-सब प्रायः हड्डियों और दाँतों में ही मिलता है। रक्त तथा शरीर के सभी भागों में यह थोड़ी बहुत मात्रा में विद्यमान है।

अतः शरीर में इस तत्व की समानता स्थिर रखने के लिये यह आवश्यक है कि यह एक निश्चित भाग में शरीर में नियम पूर्वक पहुँचाया जाय। डाक्टर मैकम्बर का कथन है कि मनुष्य की आयु में तीन अवस्थाएँ ऐसी आती हैं जब कि शरीर को कैलसियम की विशेष आवश्यकता होती है— (१) शरीर की वृद्धि के समय जब कि यह प्रत्येक अंग के बनाने भाग लेता है। (२) गर्भ के समय जब कि माता को गर्भजात बालक की फैलती हुई हड्डियों के बनाने के लिये इसे देना पड़ता है और (३) बालक को दूध पिलाने के दिनों में जब कि माता के द्वारा ही बढ़ते हुए बालक की कैलसियम की आवश्यकता की पूर्ति हो सकती है।

आधुनिक अनुसन्धान द्वारा पता लगा है कि कैलसियम, फास्फोरस और विटामिन्ज़ शरीर में लवणों के उचित मात्रा में प्रयोग के लिये आवश्यक हैं। शरीर में कई प्रकार की गिल्टियाँ हैं जो कि इनकी मात्रा का नियन्त्रण करती हैं।

डाक्टर मैकम्बर ने चूहों पर कितने ही परीक्षणों द्वारा देखा कि कैलसियम की कमी के कारण कितने ही बच्चे माता के पेट में ही मर जाते हैं। जब कि चुहियाँ अपने अपने बच्चों को दूध पिलाती हैं तब उनके शरीर में विद्यमान कैलसियम की मात्रा कम पड़ने लगती है और यदि भोजन द्वारा उसे केलसियम न दी जाय तो बच्चे छोटे और अधमुये से हो जाते हैं और अन्त में मृत्यु को प्राप्त होते हैं।

इससे डाक्टर साहब परिणाम निकालते हैं कि गर्भ तथा बच्चों को दूध पिलाने के दिनों में स्त्रियों के भोजन में कैलसियम की पर्याप्त मात्रा होनी चाहिये, अन्यथा

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सन्तान की जन्मते ही मृत्यु, उनका दुर्बलेन्द्रिय होना तथा उनके दाँतों का ख़राब और खोखला होजाना इत्यादि स्वभाविक दुष्परिणाम होंगे।

कैलसियम गाय के दूध में विद्यमान है। गर्भिणी स्त्रीको और जब जन्मके पश्चात् बालक माता का दूध पीना नहीं छोड़ देता तब तक खूब दूध पीना चाहिये। हम तो यह कहेंगे कि गर्भ के रहने के समय से लेकर स्त्रियों को इतना दूध पीना चाहिये जितना दो जनों के लिये पर्याप्त हो और जन्म के पीछे बालक जितना २ ऊपर का दूध पीना आरंभ करदे उतना २ माता पीना कम करती जाय। इस अंश में हमारी भारतीय माताएँ बड़ी अपराधिनी हैं। वे वैसे ही बहुत कम दूध पीती हैं परन्तु इन अवस्थाओं में उन्हें अपने लिये नहीं वरन् अपनी सन्तान के लिये ख़ूब दूध पीना चाहिये। फास्फोरस भी दूध में रहता है और सब्ज़ तरकारियों से मिल सकता है और वाईटेमिन्ज़ जो कि कैलसियम के ठीक २ शरीर में पचने के लिये आवश्यक है। पत्तेदार और हरी सब्ज़ियों तथा साबुत अनाज और दालों में ख़ूब रहती है।

८. सूर्य्य स्नान और कांच

जब सूर्य्यकी किरणें त्रिपार्श्व शीशेके पर्शुक में से गुज़रती हैं तो वे इन्द्रधनुष के सात रंगों में अथवा बेंजनी, नीला, आस्मानी, हरा, पीला, नारंजी और लाल रंगों में विभक्त हो जाती हैं। परन्तु कुछ किरणें ऐसी भी हैं जो कि इस ओर लाल के नीचे और उधर बेंजनी के ऊपर रहती हैं यह अदृश्य प्रकाश की किरणें हैं। हमारी आँखें इन्हें नहीं देख सकतीं परन्तु फोटो के प्लेट अथवा अन्य यन्त्रों द्वारा इनका विद्यमान रहना सिद्ध होता है। यह बेंजनी से ऊपर की किरणें से हमारे स्वास्थ्य के लिये अत्यावश्यक हैं। इनकी उपयोगिता के सम्बन्ध में हम ज्योति के पिछले अङ्कों में लिख चुके हैं। जो मनुष्य बहुधा घरों के भीतर तंग और अन्धेरी गलियों में रहते हैं उनका शरीर दुर्बल और मुख पीला रहता है। इसका कारण उनके शरीर को इन किरणों का न मिलना ही है। इसीलिये आजकल के डाक्टर जिस प्रकार स्वास्थ्य के लिये जल-स्नान को अत्यावश्यक बतलाते हैं उसी प्रकार वह सूर्य्य स्नान भी परमावश्यक मानते हैं। उनका मत है कि शारीरिक स्वास्थ्य के लिये यह परमाश्यक है कि खुले नंगे शरीर से सूर्य्य के प्रकाश में भली प्रकार से बैठा जाय। जिस किसी भी अंग में कोई रोग अथवा दुर्बलता हो उसे भली प्रकार सूर्य्य के सामने रखकर सेंकना चाहिये। इस सूर्य्य स्नान का पूरा आनन्द तो अफ्रीका के हबशी अथवा अमेरिका के रक्तवर्ण आदम निवासी जिन्हें नंगे घूमने-फिरने में किसी प्रकार का संकोच नहीं, लेते हैं। हम ठहरे सभ्य और शरीर का खुला रखना हुई असभ्यता। इसीलिये तो आजकल की सभ्यता में ऐसे ही वस्त्र धारण किये जाते हैं जिससे अधिक से अधिक अङ्ग ढके जा सकें, हाँ रमणियों की छाती एक अवश्य अपवाद है जो कि दिन प्रति दिन अधिक निर्वस्त्र होती जाती है। फैशन की इस लहर को ध्यान में रखते हुए ही डाक्टर लोग सूर्य्य

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्नान की आवश्यकता पर अधिक बल दे रहे हैं। वे कहते हैं कि यदि बाहर नहीं तो घरों में यह स्नान कुछ समय के लिये अवश्य करना चाहिये। घरों अथवा अस्पतालोंमें एक कमरा ऐसा अवश्य होना चाहिये जिसमें सूर्य्य का खुला प्रकाश पहुँच सके। इस प्रकाश और मनुष्य शरीर के बीच काँच की खिड़कियों और दर्वाजों के अतिरिक्त और कुछ न होना चाहिये। शीशों में से प्रकाश छन कर शरीर पर पहुँचे। इसी धारणा के अनुसार यूरोप के कितने ही नगरों में सूर्य्य स्नान के लिये सार्वजनिक स्नानागार बन गये हैं जिनमें जो कोई भी जाय नियत फ़ीस देने पर निस्संकोच स्नान कर सकता है। कितने ही व्यक्तियों ने इस आयोजना से लाभ भी उठाया है। किन्तु अब पता लगा है कि इस लाभ का कारण मानसिक प्रवृत्ति ही थी बैंजनी से परे की स्वास्थ्यप्रद किरणें नहीं क्योंकि वह तो साधारण काँच के शीशों में से निकल ही नहीं सकतीं। जहाँ कि सात रंगों से मिलकर बना हुआ श्वेत प्रकाश साधारण शीशों में से निकल जाता है वहाँ यह परमावश्यक रश्मियें फोक की भाँति काँच के दूसरी ओर बाहर ही हर जाती हैं। तब क्या सूर्य-स्नान के लाभ से हम वञ्चित रहेंगे? यहाँ फिर विज्ञान ने हमारी सहायता की है। एक नवीन प्रकार का काँच जिसको "बाईटाग्लास" का नाम दिया गया है बनाया गया है जिसमें से यह स्वास्थ्यप्रद रश्मियें पार होजाती है और हम अपने घरों में ही दर्वाजों और खिड़कियों में इस काँच के शीशे को लगाकर सूर्य-स्नान का पूरा लाभ उठा सकते हैं। टांगों का टेढ़ापन, हड्डियों का मुड़ना अथवा दुर्बल होना इत्यादि अनेक प्रकार के रोगों से यह स्नान हमारी रक्षा करता है। अतः हम ज्योति के पाठक पाठिकाओं से बलपूर्वक आग्रह करेंगे कि वे यथासम्भव कुछ समय के लिये अवश्य खुले शरीर सूर्य-स्नान किया करें। अभी हिन्दुस्तानी घरों में आधुनिक सभ्यता इतनी नहीं आई है कि हम इस लाभ से सर्वथा वञ्चित हो जायें।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

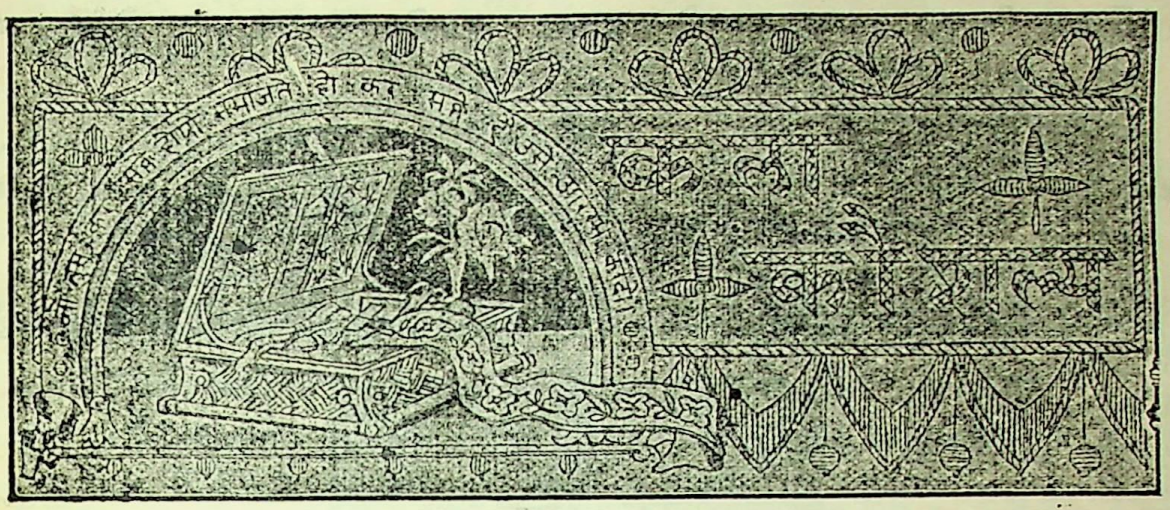

कमल लेस

शुरु में ८६ चेन करो

१ पंक्तिः— १ ते. ८ वीं चेन में १ और खाना ४ ते. १६ खाने ४ ते. ३ खुला लैस्पर (५ चे. ५ छोड़ो १ तेहरा) ४ तेहरा

२ पंक्तिः— ४ ते. [३ चे पहिले के लिये], ३ लैस्पर [३ चेन २ छोड़ो १ दोहरा ३ चेन २ छोड़ो १ तेहरा] ४ तेहरा। *२ खाने ७ तेहरे १३ खाने किनारा [४ खाने तेहरे १ खाने का]

३ पंक्तिः— १० चेन ८ वीं चेन में १ तेहरा, २ चेन १ तेहरा पिछली पंक्ति के पिछले तेहरे में ३ तेहरे अगले ३ तेहरों में* १५ खाने ७ तेहरा १ खाना, किनारा [पहिली पंक्ति में *चिन्ह से लेकर]

४ पंक्तिः— किनारा, [दूसरी पंक्ति के *चिन्ह तक १ खाना ४ तेहरा १७ खाने; किनारा [दूसरी पंक्ति की तरह]

५ पंक्तिः— [* चिन्ह तक तीसरी की तरह] १८ खाने ४ तेहरा १ खाने किनारा

६ पंक्ति— किनारा; १ खाना ४ तेहरे ४ खाने १० तेहरे ४ खाने, ७ तेहरे ६ खाने; किनारा

७ पंक्तिः— किनारा; ७ खाने १० तेहरे २ खाना १६ तेहरे, ३ खाने, ४ तेहरे, १ खाना किनारा

८ पंक्तिः— किनारा; १ खा., ४ ते., ३ खा. ७ ते., [१ खा. १० ते.] दो वार, ८ खाना, किनारा।

९ पंक्तिः— किनारा; ३ खा, १६ ते., [१ खा., १० ते.,] दो वार, २ खाना, ४ ते., ३ खा., ४ ते., १ खा., किनारा

१० पंक्ति—किनारा; १ खा., ७ ते., ५ खा., १० ते., १ खा., ७ ते., १ खा., २२ ते. ३ खा., किनारा।

११ पंक्तिः— किनारा; ३ खा., ७ ते., ४ खा., १६ ते., २ खा., १० ते., ३ खा., १० ते., १ खा, किनारा।

१२ पंक्ति— किनारा, २ खा., २२ ते, २ खा. २३ ते., ३ लैस्पट १ खा., ७ ते. ३ खा., किनारा

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

१३ पंक्तिः— किनारा ४ खा. १० ते., ३ बार, १ खा., १६ ते., ३ खा.; १० ते., ३ खाना किनारा।

१४ पंक्तिः— किनारा ; २ खा., ४ ते., २ खाना., २२ ते., १ खा., ४ लैस्पट, १० ते., १ खा., ४ ते., ३ खाने, किनारा।

१५ पंक्तिः— किनारा ; ३खा., १०ते., ३खा. ४बार, ६ खा., १० ते., १ खा., किनारा।

१६ पंक्तिः— १४ पंक्ति की तरह

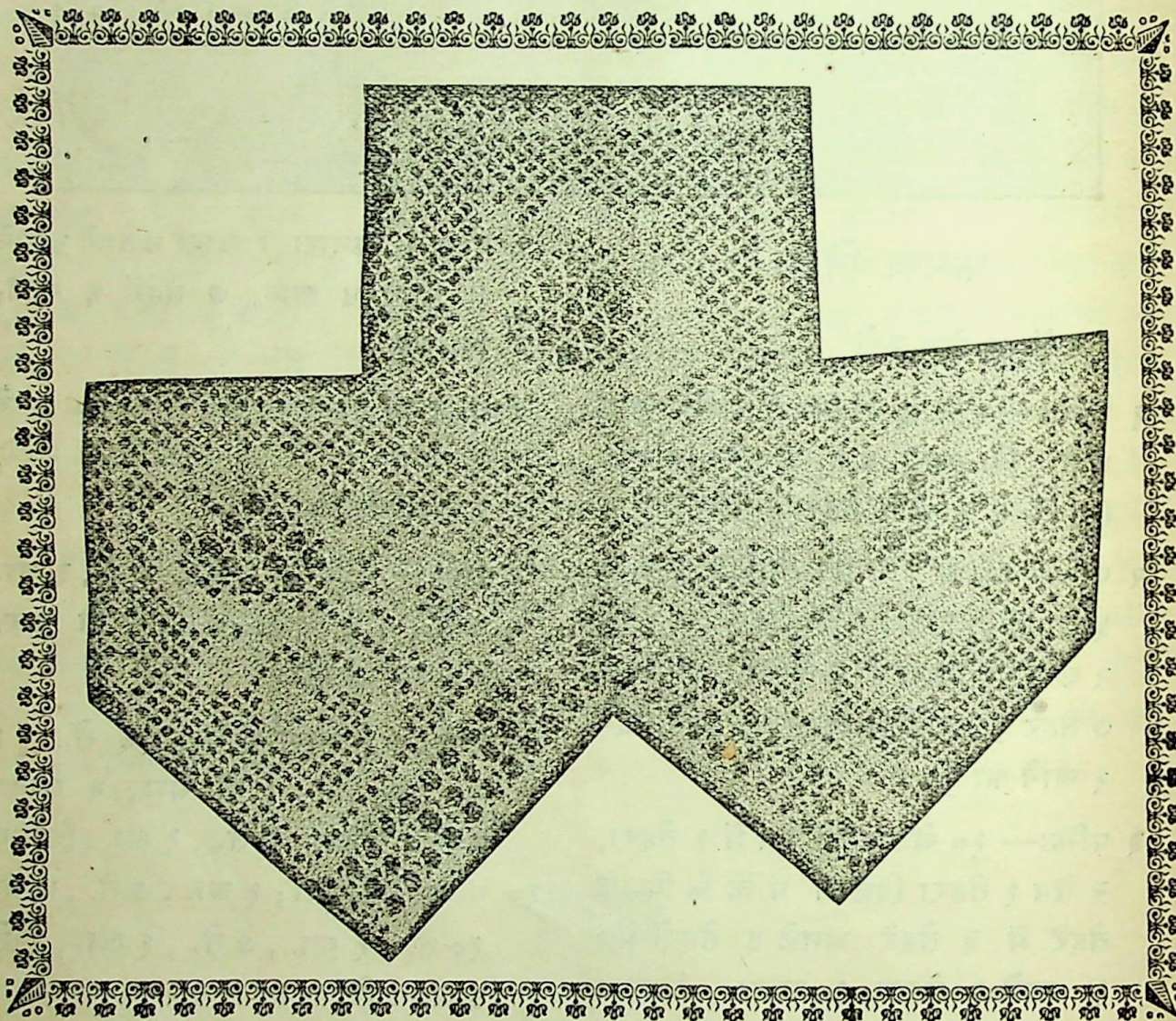

१७ पंक्तिः— किनारा ; [२ खा., ४ ते., का किनारा होगा क्यों कि किनारे की तरह किनारा बनाकर १३ पंक्ति की तरह बनाओ। अब नोक में घटाव शुरू हो जाता है] ४ खा., १० ते., ४ बार, १३ ते., ३ खा., १० ते., २ खा., किनारा।*

१८ पंक्तिः— किनारा, २खा., २२ते., २ खा., १० ते., ३ लैस्पट, १ खा., ७ ते., ३ खा. किनारा। यदि १७ पंक्ति १३ वीं की तरह बनाई हो तो १८ पंक्ति १२ वीं की तरह बनाओ, जिस में १० ते. और १ खा. की

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जगह १३ते. बनाओ। इस से कमल के दोनों तरफ़ एक से हो जायेंगे।

१९ से २८ पंक्तिः— ११ वीं से २ तक के अनुसार अथवा १९ वीं ११ वीं की तरह २० वीं १० वीं की तरह इत्यादि, केवल यह ध्यान रहे कि विषम [१९ १७, १५, इत्यादि पंक्तियों को आरम्भ में जो किनारा बनाया जाय वह १७ वीं पंक्ति की भाँति २ खा. ४ ते. का हो।

२९ पंक्तिः— २ खा., ४ ते., १६ खा., किनारा।

जितनी भी सीधी लेस बनानी हो दूसरी पंक्ति से लेकर २९ तक दोहराते जाओ।

कोना

कोने के लिये लेस की पहली २२ पंक्ति बीन कर इस प्रकार बीनोः—

१ पंक्तिः— २३ पंक्ति की तरह, अन्त में ३ लैस्पट से लौट पड़ो [किनारे के ४ तेहरे छोड दो]।

२ पंक्तिः— ३ बन्द लैस्पट या बार, [८ चेन पहली बार के लिये], ४ ते., २४ वीं पंक्ति में दिये कंगूरे की तरह।

३ पंक्तिः— २५ वीं की तरह, अन्त में ३ लैस्यट।

४ पंक्तिः— ३ बार के बाद २६ पंक्ति की तरह।

५ पंक्तिः— २७ पंक्ति की तरह, अन्त में ३ लैस्यट खुले

६ पंक्तिः— ३ बार [या बन्द लैस्यट] २८ वीं की तरह

७ पंक्तिः— २९ वीं की तरह अन्त में १६खा

८ पंक्तिः— ११ खा. १० ते., ३ खा., किनारा

९ पंक्तिः— किनारा [३ पंक्ति की तरह अब सिरा चौड़ा होता जायगा]; ३खा., १६ ते., १० खा.,

१० पंक्तिः— [४ खा., ७ ते.] २ दफ़ा, २ खा., ४ ते., ४ खा., किनारा।

११ पंक्तिः— किनारा, ८ खा., १० ते., २ खा., १३ ते., ३ खा.,

१२ पंक्तिः— ३ खा., [७ ते., १ खा.,] २ दफ़ा, १० ते., ९ खा. किनारा।

१३ पंक्तिः— किनारा, ४ खा., १६ ते., १खा. १० ते., १खा, १३ ते., ४ खा,।

१४ पंक्तिः— ५ खा., १० ते., १खा., ७ ते; १ खा., १९ ते., ५ खा., किनारा

१५ पंक्तिः— किनारा, ५ खा., ३१ ते., ९खा.

१६ पंक्तिः— ४ खा., २५ ते., ४ खा., १३ते., ५ खा., किनारा

१७ पंक्तिः— किनारा, ६ खा., १० ते., ३ लैस्यट, २८ ते., २ खा.,।

१८ पंक्तिः—१ खा., १९ ते., १ खा., ७ ते. १ खा., ३ बार १ खा., ७ ते., ७ खा., किनारा।

१९ पंक्तिः— किनारा, ८ खा., ७ ते., १ खा. ३ लेस्यट, २ खा; ७ ते., ४ खा., ७ ते., १ खाना,।

२० पंक्तिः— १ खा., ७ ते., ३ खा., १० ते., २ खा., ३ बार, १ खा., ७ ते., १ खा. ४ ते., ७ खा., किनारा

२१ पंक्तिः— किनारा, ७ खा., १० ते., ३ खा., ३ लैस्यट, २ खा., १० ते., २ खा., ७ ते., २ खा.,।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

२२ पंक्तिः— ७ खा, १० ते., २ खा. , ३ ते. , १ खा., ७ ते. , १ खा., ४ ते. , ७ खा. , किनारा

२३ पंक्तिः— किनारा [१७ वीं पंक्ति की तरह अब सिरा तङ्ग होता जायगा] ८ खा,, ७ ते., १ खा., ३ लैस्यट, १ खा., १३ ते., ६ खा, ।

२४ पंक्तिः— ४ ते., (३चे. पहिले के लिये) ५ खां., १६ ते., ७ खा., ७ ते., ७ खा., किनारा ।

२५ पंक्तिः— किनारा, ६ खा., १६ ते., १ खा. १६ ते., ६ खा., ४ ते., १ खा. ।

२६ पंक्तिः— २ खा., ४ ते., १६ खा., १६ ते., १ खा., १६ ते., ५ खा., किनारा ।

२७ पंक्तिः— किनारा, ६ खा., ४ ते., १०खा, किनारा (४ ते., १ खा. का) ।

२८ पंक्तिः— किनारा, [२ खा., ४ ते., का कोने के इस तरफ भी सिरा तंग होता जायगा] ८ खा., १० ते., ७ खा. ।

२९ पंक्तिः— १ खा., ४ ते., ते. में, ८ खा., ४ ते., ८ खा., किनारा ।

३० पंक्तिः— किनारा, १४ खा., ७ ते., १खा. ।

३१ पंक्तिः— २ खा., ४ ते., १३ खा., किनारा ।

३२ पंक्तिः— किनारा, ११ खा., किनारा ।

३३ पंक्तिः— किनारा, ९ खा., किनारा ।

३४ से ३७ पंक्तिः— ३२ और ३३ की तरह प्रत्येक पंक्ति में २ खा. घटाते जाओ ।

३८ पंक्तिः—२ खा., ४ ते., २ खा. ।

३९ पंक्तिः—सादा फन्दा २ खा. पर, १ खा ।

४० पंक्तिः—१ खा; धागा जोड़ दो । लेस के दूसरी तरफ के कोने से कमल के बिलकुल नीचे कुछ मिलता है वह इस लिये हैं कि जिसमें अगली नोक के लिये विषम गिनती के खाने आजांय और आगे से हिसाब ठीक रहे सीधी लेस फिर बनाने के लिये धागे को उन चार तेहरों में से पहिले से जोड़ दो जो कि कोने की ६ पंक्ति के ३ बार के पीछे बने हैं और दूसरी पंक्ति से आरम्भ कर वैसे ही बनाते जाओ ।

२ पंक्तिः—१ खा ; से दूसरी पंक्ति की भांति

३ पंक्तिः—३ पंक्ति की तरह तक अन्त में ३ ते., बार वाले ५ चेन में की तीसरी में से जोड़ दो, उसी बार के बाकी पर सादा फन्दा ।

४ पंक्तिः—३ ते., ३ ते. में (जोड़ का एक तेहरा होगा), चौथी पंक्ति की तरह बनाते जाओ ।

५ पंक्तिः—५ पंक्ति की तरह, से उसी तरह जोड़ दो, जैसा कि तीसरी पंक्ति में जोड़ा था ।

६ पंक्तिः—३ ते., ३ ते., में, अब ६ पंक्ति की तरह बनाते जाओ ।

७ पंक्तिः—७ वीं की तरह जोड़ो ।

८ पंक्तिः—३ ते., ३ ते. में; ८ वीं की तरह ।

९ पंक्तिः—९ वीं की तरह, ३ बार अन्त में, तीसरी बार की ५ चेन को २२ वीं पंक्ति की ३ चेन के ऊपर की तरफ़ जोड़ दो, सादा फन्दा चेन के नीचे ।

अब सीधी लेस की १० वीं पंक्ति से बनाते जाओ ।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्त्री जगत्

श्रीमती नैनादेवी जो कि हिन्दू विश्वविद्यालय काशी की छात्रा हैं उच्च शिक्षा के लिए विलायत जा रही हैं। आप पहली बिहारी महिला हैं जिन्हें सरकार अपने व्यय पर शिक्षा प्राप्ति केलिए बाहर भेज रही है।

* * *

कुमारी अपर्णा दास गुप्ता बी० ए० जो कि लाहौर के प्रोफ़ेसर एस० एन० दास गुप्ता की सुपुत्री हैं एक सरकारी वज़ीफ़ा लेकर उच्च शिक्षा प्राप्ति के लिए इंग्लैण्ड जाने वाली हैं।

* * *

कुमारी सीताबाई नारायण अगोन्कर ने १९२३ में बम्बई विश्वविद्यालय की संस्कृत में प्रतिष्ठा सहित बी० ए० की डिग्री प्राप्त की थी और तदुपरान्त वह आक्सफोर्ड चली गईं। वहाँ १९८४ में उन्होंने D. Litt. की डिग्री प्राप्त की। इस के लिए उन के निबन्ध की प्रोफ़ैसरों ने बड़ी प्रसंशा की थी। गत दिसम्बर मास में उन्हें "महाभारत काल में स्त्री जाति का स्थान" विषयक निबन्ध पर आक्सफोर्ड की डाक्टर आफ फिलासफी की डिग्री मिली। आप भारत की प्रथम और आक्सफोर्ड की तीसरी महिला हैं जिन्होंने यह उच्च पद प्राप्त किया है।

* * *

कुमारी जनक कुमारी जुत्शी इस साल पञ्जाब विश्वविद्यालय से अङ्गरेज़ी की एम० ए० परीक्षा में प्रथम रही हैं।

* * *

गत बंगाल नारी सम्मेलन बड़ी सफलता पूर्वक समाप्त हुआ। सरकार ने सब कन्याविद्यालयों में एक दिन की छुट्टी कर दी थी जिस से कि सब अध्यापिकाओं और निरीक्षकाओं को सम्मेलन में शामिल होने के लिए सुविधा मिल सके, यहाँ तक कि बाहर के नगरों से कलकत्ते आने वाली अध्यापिकाओं को रेल का किराया भी सरकार ने ही दिया। सम्मेलन के फल स्वरूप श्रीमती लेडीबोस की अध्यक्षता में एक स्थायी कमेटी बनाई गई है जो कि सरकार को शिक्षा सम्बन्धी विषयों पर सलाह देती रहेगी।

* * *

कलकत्ते में स्त्रियों की दस्तकारी की नुमायश बड़ी सफल रही। दो सहस्र से अधिक मनुष्य उपस्थित थे और यह एक मेला ज्ञात होता था। इस में बालाचरों ने बड़ा काम किया।

* * *

नारी शिक्षा समिति का विधवा सहायक आश्रम बड़ी उन्नति पर है, अब इस में एक दैनिक विभाग और खोल दिया है जिस में २० स्त्रियों की उपस्थिति होती है। श्रीमती बोस इस की बड़ी सहायता कर रही हैं।

* * *

उपरोक्त सम्मेलन के अवसर पर श्रीमती आर० एस० हुसैन ने मुसलमान लड़कियों की शिक्षा के लिए बड़ी ज़ोरदार वक्तृता दी। उन्होंने अपने शास्त्रों के अनुकूल स्त्रियों के अधिकारों पर प्रकाश डालते हुए बतलाया कि मुसलमानों की आजकल की गिरी हुई अवस्था का कारण उन में स्त्री शिक्षा का नितान्त अभाव है। उन्होंने मुसलमानों को अपनी स्त्रियों के प्रति अत्यन्त लापरवाही और अनुदार व्यवहार को छोड़ने के लिये कहा। उन्होंने कहा कि मुसलमान इस-लाम के नाम पर अथवा किसी मसजिद के एक टूटे हुये पत्थर की मानहानि के लिए अपने जीवन न्योछा-वर करने को तय्यार हैं परन्तु वे अपने रसूल की शिक्षा और उपदेशों पर चलने को इतने तय्यार नहीं। परदा कोयले से निकली विषैली कारबानिक एसिड गैस के समान है, जो कि मनुष्यों को दुःख रहित मृत्यु का द्वार खोल देती है। इसी प्रकार हमारी बहिनें परदे में रहती हुई इस परदा गैस द्वारा दुःख रहित मृत्यु का आश्रय पाती हैं।"

* * *

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

आगे चलकर श्रीमती हुसैन ने कहा कि मुसलमान स्त्रियों की किसी को तनिक भी चिन्ता नहीं। अछूतों के दुःखों से महात्मा गान्धी द्रवीभूत होते हैं, तीसरे दर्जे के रेल के मुसाफ़िरों का दुःख अनुभव करने के लिए वह स्वयं तीसरे दर्जे में सफ़र करते हैं। छोटे २ जानवरों को कष्ट से बचाने के लिए कितनी ही सोसाइटियाँ हैं। आपने देखा होगा की अङ्गरेज़ी अख़बार एक कुत्ते के कुचले जाने पर आँसू बहाते हैं। परन्तु, हा! सारे भारत में एक भी ऐसा व्यक्ति नहीं जो कि हम अभागी अबलाओं के दुःख पर जो कि परदे में बन्दी हैं, चार आंसू बहाये।

* * *

एक समय था जब कि अरब अपनी लड़कियों को जान से मार देते थे। इसलाम ने यह प्रथा तो रोक दी, परन्तु मुसलमान निर्बल होकर अपनी स्त्रियों के मन और बुद्धि का नाश कर रहे हैं, लड़कियों को अशिक्षित मूर्खा रखना, उन्हें घर की चार दीवारी में बन्द रखना और सब प्रकार की शिक्षा से वंचित रखना बड़े पुण्य का कार्य समझा जाता है।

* * *

अन्त में श्रीमती हुसैन ने कहा कि "मेरे मुसलमान भाई यह समझते हैं कि वे लड़कों के लिए ढाका अलीगढ़ इत्यादि स्थानों पर मुसलमान विश्वविद्यालय स्थापित करने या कलकत्ते में इसलामिया कालिज खोलने और अपनी लड़कियों और बहिनों को हैन्डबैग में डाल कर साथ ले जाने से बहिश्त में पहुंच जायेंगे। इसी कारण से उन्हें स्त्रीशिक्षा से उपराग है। जब कहीं किसी कन्याविद्यालय के लिए उन से चन्दा माँगा जाता है तब वे अपनी दरिद्रता का आश्रय लेते हैं।"

* * *

मैसूर में महाराजा ने वहाँ की कौंसिल के प्रस्ताव को स्वीकार कर स्त्रियों को प्रतिनिधि सभा तथा लैजिस्लेटिव कौन्सिल के लिए मताधिकार तथा उन को सदस्य बनने की अनुमति दे दी है और यह भी विश्वास दिलाया है कि नई सभा और कौन्सिल में सरकार स्त्रियां नियुक्त कर के भेजेगी।

* * *

ख़बर आई है कि कुमारी मालिनी बाई पानन्दीकर बी०ए०, बी० टी० नामक एक महाराष्ट्र ब्राह्मण कन्या का विवाह श्रीयुक्त गुलाब खाँ बी० ए०, बी० टी० से होने वाला है। यह विवाह सन् १८७२ ईस्वी के स्पेशल मेरेज एक्ट के अनुसार होगा। वधू-वर रजिस्ट्रार के सम्मुख उपस्थित हो कर यह घोषणा करेंगे कि वे हिन्दूमुसलिम धर्म्म के अनुयायी नहीं हैं।

* * *

१९ जून को भारतीय स्त्री विश्वविद्यालय (बंबई) के कनवोकेशन के अवसर पर भाषण देते हुए सर-शंकरन नायर ने इस बात पर ज़ोर दिया कि भारतीय विश्वविद्यालयों की शिक्षा का माध्यम देशी भाषा ही होनी चाहिये। आप ने स्त्रियों से अपील की कि वे देश के बाहर की स्त्रियों के उदाहरण से शिक्षा ग्रहण करें और सब प्रकार उन्नत और शिक्षित हो उच्च पद प्राप्त करें।

* * *

सिलहट में भी एक खड्गबहादुरसिंह पैदा होगया है। उसका नाम है शशिमोहन दे और उम्र १८वर्ष है। इस ज़िले में फ़ैयाज़ अली नाम का एक ज़मीदार रहता था जो स्त्रियों का सतीत्व नष्ट किया करता था पुलिस का कहना है कि चन्देरचक और राधारचक गाँवों में शायद ही कोई स्त्री इस से अछूती बची हो। कुछ दिनों से फ़ैयाज़ की नज़र पवित्र पत्नी नाम की एक विवाहिता लड़की पर पड़ी। फ़ैयाज़ और उसके दूत उसे कुपथ में ले जाना चाहते थे परन्तु लड़की बार बार इनकार करती थी। फिर भी यह बदमाश उसका पीछा नहीं छोड़ते थे। जब शशिमोहन को यह मालूम हुआ तब उसने उस लड़की को भरोसा दिया कि अगर दूसरी बार फिर वे बदमाश तेरे पास आवेंगे तो मैं इनका काम तमाम कर दूँगा। जब फ़ैयाज़ उसकी औंपड़ी में घुसा तब शशिमोहन अपने

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

तीन साथियों के सहित वहाँ पहुँचे और उसे यमपुर भेज दिया। शशिमोहन और उसके तीनों साथियों पर मुकद्दमा चला। मैजिस्ट्रेट ने दौरा सुपुर्द कर दिया, जूरी ने निर्दोष बतलाया और जज ने उन्हें छोड़ दिया, परमात्मा इस जाति में खड्ग बहादुरसिंह और शशिमोहन सरीखे वीर स्वार्थत्यागी पैदा हों जिस से हिन्दू जाति का सिर ऊँचा हो।

* * *

१७ जून को शिमला आर्य कन्यापाठशाला के नवीन भवन का उद्घाटन पंजाब के गवर्नर सर मालकम हेली महोदय ने किया। उस दिन एक बड़ा उत्सव किया गया, जिस में खूब भीड़ थी और कितने ही अंग्रेज़ तथा मुसलमान सज्जनों और देवियों ने भी भाग लिया था। श्रीयुत मोहनलाल जी एम० एल० सी० ने पाठशाला का इतिवृत्त सुना कर श्रीमान् गवर्नर साहब से भवन-उद्घाटन करने की प्रार्थना की। नये भवन का उद्घाटन करते हुए गवर्नर साहब ने पाठशाला की शुभ कामना पूर्वक उसे शीघ्र ही और भी अधिक उन्नत अवस्था में देखने की अभिलाषा प्रकट की। आर्य कन्यापाठशाला का यह भवन ४५ हज़ार रुपये की लागत से तैय्यार हुआ है। उस में इस समय २७५ कन्यायें पढ़ती हैं। पाठशाला की स्थापना १९०७ ई० में २५ कन्याओं से हुई थी। तब से अब तक उसने निरन्तर निःशुल्क शिक्षा द्वारा देवियों को विदुषी बनाने में बड़ा काम किया है।

भावनगर में पट्टन नाम का एक ऐसा नगर है जहाँ पानी की बड़ी कमी है। उस नगर की श्रीमती मनीबाई धर्मपत्नी स्वर्गवासी सेठ पूनमचन्द लल्लू भाई ने सरकार को नगर का सारा का सारा जल का किराया दे दिया है जिस से कि वहाँ के प्रत्येक निवासी को जल मुफ़्त में मिले।

* * *

मद्रासी लम्बोदरी ब्राह्मण श्रीयुत करुणा करम् ने कुमारी यार्पा के नाम की जर्मन स्त्री से विवाह कर लिया। इस प्रकार के अन्तर्जातीय विवाह ही हिन्दु धर्म को उदार बनाएंगे।

* * *

कलकत्ते के स्वतन्त्र दैनिक में एक स्त्री ने लिखा है कि हमारी रक्षा न तो मनुष्य कर सकते हैं और नाहीं सरकार। हमें अपनी रक्षा स्वयं शस्त्र धारण करके करनी चाहिये।

* * *

अभी हाल में कोटा राज में एक विवाह कानून ज़ारी किया गया है, जिसका अमल दरामद १ जुलाई से होगा। इसके अनुसार १२ वर्ष से कम अवस्था के लड़के तथा १८ वर्ष से कम उम्र की लड़की का उस से दुगनी से अधिक उम्र वाले पुरुष के साथ और ४५ वर्ष से अधिक उम्र के पुरुष का कुंवारी लड़की के साथ विवाह नाजायज़ करार दिया गया है। लड़की के लिये रुपया लेना और वर अथवा कन्या के शारीरिक अयोग्यता, संक्रामक रोग, दुराचरण आदि विशेष कारणों के बिना सगाई छोड़ देना भी निषिद्ध कर दिया गया है। एक विशेष बात यह भी रखी गई है कि यदि कोई प्रजाजन राज्य से बाहर जाकर भी कानून भंग करेगा तो वापिस आने पर उसे सजा दी जावेगी। १००० रुपये तक जुर्माना, ६ मास तक कड़ी अथवा सादी सा ज़का दंड रखा गया है।

* * *

यूरोपीय देशों में लड़कों के बदले लड़कियाँ ही गोद लीजाती हैं।

* * *

स्त्रियों को आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में भरती होने की आज्ञा थोड़े समय से ही मिली है। वहाँ एक नाटक मण्डली है जिस में स्त्री छात्रों को नाटक आदि में भाग लेने की आज्ञा नहीं थी। अब पहिले पहल एक स्त्री उपस्नातिका को यहकार्य सौंप कर स्त्रियों के अधिकार की ओर एक और पग उठाया गया है। इस आज्ञा से पहिले पेशाकरने वाली नटियों को बुलाया जाता था।

* * *

विमान द्वारा श्रीमती इलियटलिन्न अब तक सब से अधिक अथवा १६००० फुट ऊँचा उड़ सकी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हैं । उन के साथ श्रीमती बोली नाम की एक और महिला थीं । उड़ने में २ घण्टे और ३३ मिनट लगे ।

* * *

कुमारी सिलम्पा जो कि एक समय साधारण नौकरानी थीं आज फिनलेन्ड की नवीन राज सभा में व्यवसाय विभाग की सहायक मन्त्राणी हैं । उन्होंने छोटी सी आयु में ही सेविका का कार्य आरम्भ किया था और उस समय एक सेवक संघ भी बनाया था । उस के पश्चात् उन्होंने नौकरों के लिए एक विश्रामालय स्थापित किया और उन के हितों की रक्षा के लिये एक पत्र भी निकाला । फिर एक होटलों की मालिक कम्पनी के आधीन वह निरीक्षक नियत हुईं । कुमारी सिलम्पा पहिले फिन्लैण्ड की पार्लियामेण्ट की और फिर वहाँ की म्युनिसिपल कमेटी की सदस्या चुनी गईं ।

* * *

हवाई द्वीप में तरुण नारी ईसाई समिति का भवन सब से अधिक सुन्दर और मनोहर बतलाया जाता है । इस की रचना श्रीमती जूलिया मार्गन की कल्पना के आधार पर हुई और आप की ही देख रेख में यह तय्यार हुआ है ।

* * *

सहस्त्रों वर्षों से चीन में लड़कियों की सगाई बच पन में ही हो जाती थी । अब जवान होने पर इन लड़कियों को इस प्रथा की बुराई का ज्ञान होने लगा है और उनमें से कितनी बालाओं ने समाचार पत्रों द्वारा बचपन में की गई सगाई को तोड़ देने की घोषणा कर दी है ।

* * *

गत मार्च में नानकिंग में एक अन्तर्जातीय स्त्रीदिवस मनाया गया और बड़े २ जलसे हुए जिन में कि हज़ारों स्त्रियों ने भाग लिया । "स्त्री पुरुषों के अधिकारों की समानता" "बहुत सी स्त्रियों से एक पुरुष के विवाह का निषेध" "बाल विवाह का नाश" "विवाह और तलाक़ की स्वतन्त्रता" और "विधवा विवाह की स्वीकृति" इत्यादि स्त्रियों की मांगें थीं ।

* * *

जापान में स्त्री मताधिकार आन्दोलन के लिए टोकियो के दफ्तरों को ४०० लड़कियों ने एक सभा की ।

* * *

आस्ट्रेलिया में ८ मई को मातृदिवस मनाया जाता है । इस दिन कृतज्ञता पूर्ण उस त्याग को स्मरण किया जाता है जो कि प्रत्येक माता अपनी सन्तान के हितार्थ करती है । हम प्रायः माता की चिन्ता, कष्ट, और आत्मत्याग को जो कि सब से पहिले और पीछे अपनी सन्तान की ख़ातिर सहती है भूल जाते हैं अतः यह एक बड़ा उत्तम भाव है कि मातृ शक्ति की बन्दना के लिये समस्त देश में एक दिवस नियत किया जाये ।

* * *

फिजी में पिता की आज्ञा से पुत्रों को अपनी माता को मारना सिखलाया जाता है जिस से वह कायर न बनजावें । इसी प्रकार नामलेन्ड के हारन टाट अपने पुत्रों को निज माता के तीर मारना सिखलाते हैं और माता भी इस क्रिया से प्रसन्न होती है ।

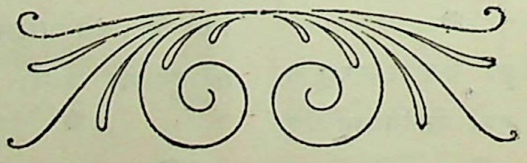

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

खिलौना-नगर

कालरैडो अमरीका के एक भुवन निर्माता ने, देखने में केवल मन बहलाव के लिये एक छोटे से खिलौना नगर की रचना की है। यह इतना मनोरञ्जक है कि उस ओर जाने वाला प्रत्येक यात्री उसे देखे बिना अपने भाग्य सफल नहीं मानता। साइन्टिफिक अमरीकन के एक संवाददाता ने इस खिलौने-नगर का निम्नलिखित वृत्तान्त भेजा है—

कालरैडो प्रान्त में, डैनवर के निकट टर्की क्रीक कैनयान में लखपति इन्जीनियर जार्ज टर्नर ने एक छोटे से नगर की रचना की है और वही इस नगर का स्वामी है। संसार के सहस्रों यात्री प्रतिवर्ष इस के दर्शन करते हैं।

इस की पक्के फर्श की सड़कें, मनोरम होटल, गिरजा, वाचनालय और भण्डार गृह से यह नगर दूर से एक छोटा सा पहाड़ी गाँव प्रतीत होता है। इस खिलौना नगर में दो तालाब हैं, जिन में नौकायें चलती हैं और हंस निवास करते हैं, इन झीलों पर कितने ही सुन्दर पुल बने हुये हैं और सुन्दर गलियें और सड़कें नगर में फैली हुई हैं। नगर के मध्य में एक बड़ा सुन्दर उद्यान है।

एक दो बुर्जों वाला गिरजाघर, वाचनालय, कोयले भरने का स्थान, मोटर रखने की जगह, पंसारी और नाई की दुकानें, म्युनिसिपल हाल, होटल यह इस लघु पहाड़ी गाँव की मुख्य २ इमारतें हैं।

नगर में एक छोटी सी रेल सब ओर चलती है जिसका कि छोटा परन्तु सब प्रकार से पूरा सुसज्जित स्टेशन है। सड़कों, उद्यानों झील और गलियों में बिजली की रोशनी होती है जो कि रात्रि के समय बड़ा मनोहर दृश्य उपस्थित करती है।

अन्धों के लिये संसार सुख

न्यूयार्क में अन्धों की सहायतार्थ एक समिति है, जिसने "प्रकाश गृह" नाम की एक संस्था खोली हुई है। इस संस्था का खर्च उनके कोमल हृदय सज्जनों पर है जो

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कि यह मानते हैं कि उन लोगों को जो कि आंखों से देख सकते हैं कर्तव्य है कि उनकी सहायता करें, जो अन्धकार में रहने के लिये विवश हैं। प्रकाश गृह में प्रतिवर्ष २७०० अन्धे या अर्ध अन्धे व्यक्तियों को अपने आप सहायता करने योग्य बनाया जाता है। साधारण जनता के अनुसार अमरीका में प्रति सहस्र पीछे एक व्यक्ति अन्धा है। इस हिसाब से न्यूयार्क में ५००० अन्धे हैं और कुल अमरीका में १०००००। परन्तु यह असहाय अवस्था में भी उसी प्रकार काम कर सकते और खेल सकते हैं जैसे कि हम और आप, यद्यपि इस के लिये दृढ़ता, साहस, प्रबल इच्छा, शक्ति, आनन्द और सुख में गूढ विश्वास की आवश्यकता है जो कि हम आंखों वाले भले ही ईर्ष्या से देखें। कितना ही वाणिज्य व्यापार अन्धों और अर्ध अन्धों द्वारा बड़ी सफलता से चल रहा है। क्या कभी आपने अन्धों को ताश खेलते, ७० शब्द प्रति मिनट के हिसाब से शार्टहैन्ड के नोट लेते और फिर उन्हें साधारण भाषा में लिखते, जल में तैरते, नाच करते देखा है। प्रकाश गृह में यह सब कुछ और अन्य कितने ही कार्य जो कि समझा जाता है आँखों वाले ही कर सकते हैं अन्धे बड़ी सुगमता से करते देखे जाते हैं। क्या हमारे दानप्रिय भारत में भी कोई ऐसी संस्था है जहां वास्तविक असहाय और दयापात्र व्यक्तियों को सहायता दी जाती हो।

पाश्चात्य सभ्यता और मानवजाति

श्रीयुत जे. पी. मिल्ज़ Man in India में 'मानव विज्ञान का ध्येय' शीर्षक लेख में लिखते हैं—

पश्चिम [योरोप और अमरीका] का वेश, जब कि वस्त्र नितान्त नवीन हो, सम्भवतः सब से अधिक कुरूप वस्तु है जो कि मनुष्य की बुद्धि ने रची है. जब कि यह फट जाय जैसा कि प्रायः होता है, जब कि असभ्य जंगली इसे पहन लेते हैं यह इतना भयानक हो जाता है कि जिस का वर्णन करना असम्भव है। इस से अधिक बुराई यह है कि गर्म देशों के लिये सर्वथा अनुचित है और रोग तथा मृत्यु का कारण बनता है। सस्ती मीनाकारी की वस्तुओं और भद्दी कमीज़ों के बनेकालरों से बढ़कर विनाश कारी वह सुधारक है जो कि प्रत्येक ऐसी रीति और रिवाज़ का जो कि उसकी अपने से भिन्न है नाश करना आवश्यक समझता है। बहुत से देशों में ऐसे आदमियों ने वहाँ की प्राचीन सभ्यता–जो उस देश में लाखों वर्षों के तजुर्बों का फल थी–को उस समय नाश कर दिया जब कि वहां के निवासियों ने नवीन सभ्यता को अभी समझ भी नहीं पाया था, उसको मन में स्थान देना तो एक ओर रहा, जिन्होंने स्वयं अपनी आंखों से नहीं देखा उनके लिये यह समझना बड़ा कठिन है कि कितने परिश्रम और योग्यता से देशी रसम और रिवाज़ों को केवल इस लिये कि वह देशी हैं नाश किया जा रहा है और चित्त आकर्षक विभिन्नता के स्थान में एक निर्जीव एकता की स्थापना की जा रही है। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि यह सुधारक देश, काल

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

और पात्र के नियम को सर्वथा तिलाञ्जलि देकर निश्चय कर देते हैं कि यहां अमुक प्रथा प्रचलित होनी चाहिये।" श्रीयुत मारिस प्राईस ने "ईसाई धर्मप्रचारक और पूर्वीय सभ्यता" एक पुस्तक लिखी है, उसकी भूमिका में डाक्टर पार्क लिखते हैं:—"ईसाई धर्म प्रचारकों का वास्तविक ध्येय एक ऐसी सर्वजातीय सभ्यता की शीघ्रातिशीघ्र स्थापना है जिस में समस्त जातियाँ और समस्त देश भाग ले सकें"। पुनः इसी पुस्तक में हमें लिखा मिलता है:—"समाज रचना के दृष्टिकोण से प्रोटस्टैन्ट ईसाई प्रचारक के उद्देश्य का यही अभिप्राय है कि वह [प्रथम] समाज के प्रचलित नियमों को जो कि उस का मुकाबला करते हैं और उसके आगे दबने से इन्कार करते हैं सर्वथा छिन्न भिन्न करदें मुकाबला और विध्वंस विशेष ध्येय हैं, जिस की पूर्ति के लिये नियम पूर्वक तदबीरें सोची जाती हैं और तय्यार की जाती हैं....." हम, मानव विज्ञान के विद्यार्थी जानते हैं कि यह सर्वथा अनुचित है। जहाँ यह कहना भी उचित नहीं कि प्रत्येक जाति की प्रत्येक प्रथा सत्य है वहां उस जाति की समस्त सभ्यता का नाश कर देना उस जाति का ही नाश कर देना है। किसी भी जाति को अपने को नवीन विचारों और नवीन सभ्यता के एकदम अनुकूल बना लेने की आशा रखना एक तालाब की मछली बना लेने की आशा करने के समान है। इस की मृत्यु हो जाती है और इसी प्रकार मानव जाति की भी। स्वर्गीय डाक्टर रिवज़े ने सिद्ध कर दिया है कि जातियों की अपनी प्राचीन रुचि अनुकूल स्मृति से हटा देना उनके शनैः नाश का कारण होता है।

मुसलिम भ्रातृभाव

"एक भारतीय मुसलमान" लिखते हैं—

हम भारतीय मुसलमान ऐसे बने हैं कि अपने देश की बड़ी से बड़ी विपत्ति भी हमारे हृदय पर ठेस नहीं पहुँचाती' परन्तु टर्की और अफ्रीका में ज़रा सी वृक्ष के पत्तों की सरसराहट भी हमारे दयापूर्ण हृदय को—अस्वभाविक रूप से—दो टूक किये बिना नहीं रहती। हमारे करोड़ों देशवासी बिना वस्त्र और भोजन के मृत्यु का ग्रास हो रहे हैं। हम वस्त्र और भोजन से उनकी सहायता नहीं कर सके क्यों कि हम बड़े ग़रीब हैं, परन्तु हम सहस्रों मील पर लड़े जाने वाले युद्धों की सहायता के लिये लाखों रुपया भेज सकते हैं क्योंकि इन लड़ाइयों का सम्बन्ध ऐसे मनुष्यों से बतलाया जाता है जो अपने को मुसलमान कहते हैं। ग़रीबों और विधवाओं का धन भेजने के लिये हमें कृतज्ञता सूचक दो शब्द भी प्राप्त नहीं होते, परन्तु हम इतने विशाल हृदय हैं कि हमें इस की कुछ भी परवाह नहीं। हमारे सहधर्मियों का हमारे लिये प्रेम इतना गूढ़ और सीधा है कि उन्हें हमारे प्रति अपनी कृतज्ञता प्रगट करने के लिये किसी दिखावट की आवश्यकता नहीं, अतः वे इसे अपने हृदय विचारक व्यापार का सब से अधिक महत्व पूर्ण भाग समझते हैं। एक मुसलमान ने बड़े दुःखित हृदय से कहा था:—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

"उनको हमारी रत्ती भर भी परवाह नहीं है। वे देखते हैं कि हम मूर्ख और मूढमति हैं अतः इस का लाभ उठाते हैं । परन्तु इस के अतिरिक्त उनके लिये हमारा कोई अस्तित्व नहीं । हम नाक रगड़ते और दुम हिलाते हुए कुत्तों की भाँति उनके पीछे दौड़ते जाते हैं, हम कितने पातकी मूर्ख हैं। शोक कि इच्छा होने पर भी मैं इन वचनों से असहमत नहीं हो सकता । कोई बिना देखे नहीं रह सकता कि यह महान् भ्रातृ-संघ केवल हम भारतीय मुसलमानों के ही लिये है। अन्य किसी को इसका किंचिन्मात्र भी पता नहीं। टर्की रहे चाहे इसका नाश हो जाये, परन्तु इससे इराक़ अथवा मिश्र निवासियों, फारस के रहने वालों अथवा और किसी को कुछ भी दुःख नहीं होता। परन्तु भारतीय मुसलमान बीच में अपनी टाँग घुसेड़ ही देते हैं । और ख़ूब हल्ला मचाते हैं । रिफी योधा अपने जीवन की बाज़ी लगाकर स्वतन्त्रता के लिये लड़ रहे थे। भारतीय मुसलमानों ने कुछ सहानुभूति सूचक घोषणा की, परन्तु मिश्र से लेकर चीन तक के और किसी भी मुसलमान ने अपनी छोटी उँगली तक नहीं उठाई। यदि आज अँग्रेज़ भारत से चले जायें और हम हिन्दुओं से लड़ना आरम्भ करदें तो हमारी सहायता के लिये हमारा एक भी "भाई" आगे नहीं आयेगा जब तक कि इससे उसकी अपनी भी कुछ स्वार्थसिद्धि न होती हो। परन्तु तो भी... मैंने परीक्षा लेने के लिये अपने एक पञ्जाबी मुसलमान दोस्त से प्रश्न किया कि यदि भारत पर मुसलमानों का आक्रमण हो जाय तो वह क्या करेगा। स्पष्ट उत्तर न देने के असफल यत्न के पश्चात् उसने मान लिया कि वह अफ़गानों का साथ देगा। इस प्रकार का अन्धा धार्मिक उन्माद पुराने मुसलमानों की अपेक्षा नये बने हुए मुसलमानों में अधिक है। यह दृश्य कितना हास्यजनक है जब कि हम एक ऐसे व्यक्ति को जिसका कि पिता मुसलमान हुआ था या जो स्वयं अभी-अभी मुसलमान हुआ हो "हमारी महान् इस्लामी सभ्यता", "हमारे महान् रीति-रिवाज़" और "हमारा महामुसलमान भ्रातृ-संघ" का गर्व करते हुए पाते हैं।

सारी अवस्था नितान्त असत्य और नितान्त असम्भव है।

टर्की, परदा और इस्लाम

श्री अतूलहक़ अपने 'उन्नत इस्लाम' शीर्षक लेख में जो कि मार्डन रिव्यू में छपा है, इस प्रकार उपरोक्त विषय पर अपने विचार प्रगट करते हैं—

जिसने मुसलमानों को सबसे अधिक दुःख पहुँचाया है वह नवीन तुर्किस्तान की धार्मिक संशोधन की इच्छा नहीं, वरन् वह वस्तु है जिसका प्रत्येक मुसलमान के जीवन से घनिष्ठ सम्बन्ध है । यह टर्की का परदे के विरुद्ध युद्ध, स्त्री जाति का पुनरोद्धार या दूसरे शब्दों में उस अत्याचार का अन्त है जो कि पति और पिता स्त्री-जाति पर करते थे। परदे और इस्लाम का कब और किस प्रकार गठ-जोड़ा हुआ यह पता नहीं, मुसलमानों को स्वयं भी पता

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

नहीं। परन्तु यह परदा विद्यमान है और समय के साथ अधिक मोटा और रिवाज़ के साथ अधिक पवित्र होता जाता है। अर्धशिक्षित अथवा अशिक्षित प्राचीन समाज में राजनियम स्त्री-जाति की शारीरिक रक्षा करने के लिये पर्याप्त न थे। जब कि मनुष्य कुटुम्ब और परिवार के झगड़ों, आपस की लड़ाइयों और क्रान्तिकारी युद्ध में मग्न थे। स्त्री हरण और उनके सतीत्व पर आक्रमण का दण्ड नहीं दिया जा सकता था। तब सम्भवतया उस समय परदे का रिवाज़ हुआ। स्त्री के शरीर का वह भाग जो कि उसके लिये शोभा और शाप दोनों का कारण है परदे से ढाँप दिया गया जिससे कि यह मनुष्य की विषयवासना के विरुद्ध ढाल का काम दे सके। अथवा इसकी उत्पत्ति किसी ऐसे पुराने मत में हुई जो कि प्रेम को पाप मानता था और इसलिए स्त्री की प्राणनाशक क्रान्ति को मलमल के परदे से ढाँप दिया और अजान में चाहे इस आज्ञा ने मनुष्य के हृदय में वर्जित फल के लिए अधिक प्रलोभन ही पैदा किया हो। अथवा यह किसी कामातुर की सूक्ष्म कल्पना का फल स्वरूप है जो कि यह मानता था कि नग्न सौन्दर्य कोई सौन्दर्य नहीं और जिससे मनुष्य अधिक प्रेम करते हैं वह अज्ञेय वस्तु है अथवा अन्तिम कल्पना के अनुसार यह समता का चिन्ह था जिस की उपज के लिये वे ईर्षापीडित स्त्रियें ज़िम्मेवार हैं जिन्होंने कि रोब और कोमलता से वञ्चित होकर परदे की आवश्यकता को पुण्य कार्य का स्थान दिया और अपना मुख छिपा कर परदे को अपने से अधिक सौभाग्यवती परन्तु सुन्दर रमणियों के बराबर लाभ की प्राप्ति का साधन समझा। योरोप के विद्वानों ने इस प्रथा के प्राचीन इतिहास के सम्बन्ध में कोई खोज नहीं की, परदे में उन्हें कोई मनोरञ्जन न था, यह एक त्याज्य कंटक था। परन्तु मुसलमानों ने इसे वरदान समझ कर इस का आवाहन किया— अब उनकी पत्नियां जो कि हरम या सराय की दीवारों में पहिले ही कम सुरक्षित न थीं और भी सुरक्षित हो गईं। इस का फल यह हुआ कि इस्लाम की पुत्रियों के शरीर और आत्मा दोनों की अवनति हुई और उन्होंने अपने पूर्वजों के अत्याचारों के बदले भावी जाति को दण्ड दिया मुसलमान यह कदापि न मानेंगे कि उनकी मानसिक और शारीरिक अधोगति का कारण उन के धर्म में परिमित स्त्री अधिकारों से है। वे तो यही कहेंगे कि यह तक़दीर में लिखा था परन्तु कुप्रथा को हटाने के लिये उनके पास पुरुषार्थ न था। टर्की से बुर्का और परदा निर्वासित कर दिये गये हैं, परन्तु टर्की में कमाल पाशा था। शेष मुसलमान जगत् अपने भरसक यत्न से उसे पकड़े हुए है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

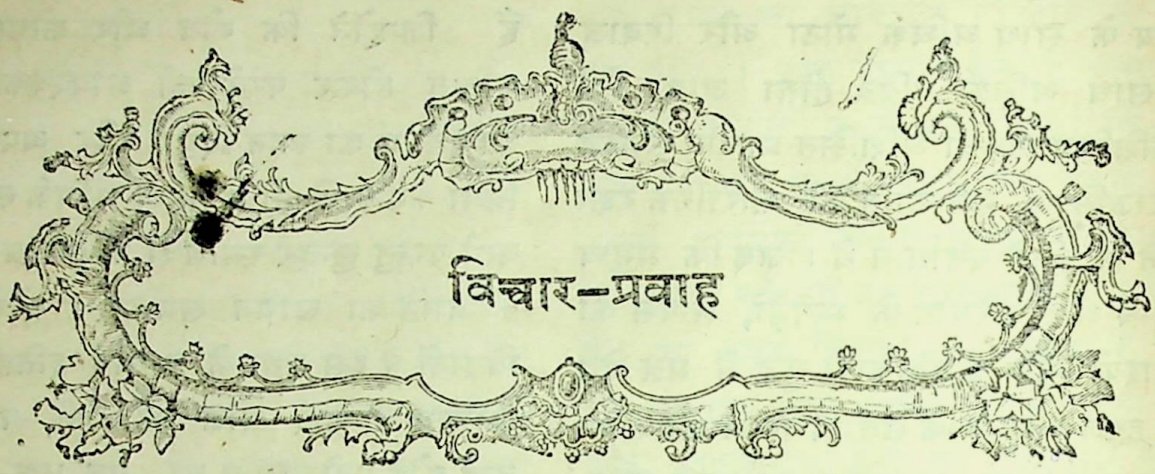

रँगीला रसूल अभियोग की प्रतिध्वनि.

"रँगीला रसूल" के प्रकाशक श्रीयुत राजपाल पर चलाये हुए अभियोग का निर्णय लाहौर हाईकोर्ट द्वारा दिया जा चुका है। जस्टिस कुंवर दिलीपसिंह की वैयक्तिक सम्मति के अनुसार पुस्तक नितान्त आक्षेप योग्य है परन्तु वर्तमान कानून की कोई धारा इस पुस्तक के लेखक या प्रकाशक को अपराधी निर्धारित नहीं करती। हाईकोर्ट के इस निर्णय के आधार पर यदि महाशय राजपाल चाहते तो वह इस पुस्तक की हज़ारों कापियाँ छपवाकर मुफ़ बाँट सकते थे, परन्तु उन्होंने ऐसा नहीं किया। अपने पड़ोसियों का दिल दुखाना उन्हें स्वीकार न था अतः उन्होंने न केवल भावी के लिये ही इस पुस्तक का प्रकाशन स्थगित कर दिया है अपितु पुस्तक की बची हुई कापियाँ बेचना भी बन्द कर दिया है।

अभियोग तो इस प्रकार पूर्णशान्ति के साथ समाप्त होगया। परन्तु उसकी प्रतिध्वनि वास्तविक अभियोग की अपेक्षा भी बहुत अधिक ऊँची हो उठी है। देश भर के मुसलमानों ने हाईकोर्ट के इस निर्णय के विरुद्ध मानों जहाद का झण्डा खड़ा कर दिया है। सब प्रान्तों में विराट् सभाएँ करके सरकार से प्रार्थना की जारही है कि वह जस्टिस दिलीपसिंह को पदच्युत करके रँगीला रसूल के लेखक को भारी दंड दे। विशेष कर पञ्जाब के केन्द्र में तो इस आन्दोलन ने बहुत ही उग्रस्वरूप धारण कर लिया है। मुसलमान लोग इसी मामले को लेकर सरकार के विरुद्ध सत्याग्रह (?) करने को तैयार होरहे हैं। किसी किसी सभा में तो म० राजपाल को फाँसी की सज़ा देने और चीफ़ जस्टिस सर शादीलाल को पदच्युत करने का अनुरोध भी किया जारहा है। हमें आश्चर्य है कि एक विराट् जनसमुदाय सहसा इतना उतावला क्यों कर हो उठा है। मुसलमानों का वर्तमान उग्र आन्दोलन इस ऐतिहासिक तथ्य का ज्वलन्त उदाहरण है कि धर्मान्धता बड़े-बड़े जनसमुदायों को भी एक साथ नितान्त

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विवेक शून्य बना देती है।

यह साधारण सा मामला इतना तूल क्यों पकड़ गया। हमारी सम्मति में इसके दो कारण हैं। पहला कारण पञ्जाब के वर्तमान गवर्नर मि० हेली की एक भयङ्कर भूल है। हाईकोर्ट के निर्णय के बाद जब मुसलमानों का एक डेपूटेशन मि० हेली के पास पहुँचा तब उन्होंने डेपूटेशन के सदस्यों के साथ स्वयं भी हाईकोर्ट के निर्णय को अपनी वैयक्तिक सम्मति में सन्देहास्पद और भ्रान्ति पूर्ण कहकर ख़ूब कोसा। गवर्नर का साथ पाकर मुसलमान लोगों का उत्साह ख़ूब बढ़ गया। इसमें सन्देह नहीं कि अपने शासन काल के गतवर्षों में मि० हेली अँग्रेज़ी शासन के लिये एक योग्यतम व्यक्ति सिद्ध हुए हैं, परन्तु उनसे यह एक ऐसी भारी भूल होगई है जिसका परिणाम स्वयं अँग्रेज़ी शासन के लिये भी हितकर नहीं है। दूसरा कारण कुछ मुसलमान नेताओं का वैयक्तिक स्वार्थ है। 'मुस्लिम आउट लुक' के भूतपूर्व सम्पादक मि० उपसन अपने जीवन काल में जिन थोड़े से न्यायपूर्ण परिणामों पर पहुँच पाये हैं उनमें से एक यह भी है कि मुसलमानों का यह वर्तमान आन्दोलन कुछ ऐसे मुसलमान वकीलों के दिमाग़ की उपज है जो कि पञ्जाब हाईकोर्ट में जस्टिस के पद को सुशोभित करने के इच्छुक हैं। इन नेता कहलाये जाने वाले स्वार्थपरायण व्यक्तियों को रँगीला रसूल का अभियोग एक आवरण के रूप में मिल गया है। इस समय पञ्जाब के अन्य सब सरकारी नौकरियों के क्षेत्र में मुसलमान लोग अपनी आबादी के अनुपात से भी अधिक स्थान पाचुके थे परन्तु केवल पञ्जाब हाईकोर्ट में ही उनकी दाल नहीं गलने पाई थी क्योंकि हाईकोर्ट के जस्टिस का पददेना पञ्जाब सरकार के आधीन नहीं अपितु भारत सचिव के अधिकार में है,-जस्टिस बनने के लिये प्रखर प्रतिभा आवश्यक है। इसी कारण ये मुसलमान नेता पञ्जाब हाइकोर्ट को हिन्दूकोर्ट कहने लगे थे। यह सौभाग्य की बात है कि संयोगवश चीफ़ जस्टिस सर शादीलाल इन दिनों विलायत में गये हुए हैं और जस्टिस कुंवर दिलीपसिंह भी हिन्दू न होकर ईसाई हैं। अन्यथा न जाने क्या उपद्रव उठ खड़ा होता।

यह वर्तमान आन्दोलन कुछ स्थानीय मुसलमान नेताओं के वैयक्तिक स्वार्थ का परिणाम है इसका एक प्रबल प्रमाण यह है कि हाईकोर्ट ने रँगीला रसूल का निर्णय मई मास के दूसरे सप्ताह में सुना दिया था परन्तु यह आन्दोलन जून के मध्य में अर्थात् लगभग एक मास के बाद खड़ा हुवा है। ११ जून के मुस्लिम आउट लुकमें "त्यागपत्र दो!" शीर्षक से उग्रतापूर्ण अग्रलेख प्रकाशित हुवा था। अगर अपने पैग़म्बर का प्रेम ही मुसलमानों को इतना उत्तेजित कह रहा है तो वह उत्कट प्रेम एक महीने तक कहाँ सोता रहा। फिर मि० उपसन के कथन से ज्ञात होता है कि "त्यागपत्र दो!" शीर्षक लेख मुस्लिम आउट लुक के सम्पादक ने नहीं अपितु एक और ग़ैर मुसलमान व्यक्ति ने लिखा और लाहौर के कुछ मुसलमान वकीलों द्वारा परिष्कृत और परिवर्धित

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

किया जाकर ही वह प्रकाशित होने पाया।

स्वयं मुसलमान लोग भी इस मामले में एकमत नहीं हैं। मौ० मुहम्मद अली जैसे कट्टर खिलाफ़ती नेता भी जस्टिस दिलीप सिंह को इस मामले में बिल्कुल निर्दोष समझते हैं। मुस्लिम आउट लुकके सम्पादक और प्रकाशक को दोषी बताने वाले मुसलमानों का भी अभाव नहीं है। जो हो, इस अभियोग की प्रतिध्वनि इस समय बड़ा विकट रूप धारण कर चुकी है। पञ्जाब का वर्तमान वायुमण्डल बहुत अधिक ज़हरीला और सन्देहपूर्ण है। दोनों सम्प्रदाय एक दूसरे का आर्थिक बायकाट भी कर रहे हैं। स्थिति नितान्त चिन्ताजनक हो उठी है।

सरकार का कर्तव्य

मालूम नहीं इस अन्धे आन्दोलन का परिणाम क्या होगा। मुसलमान लोग आज कल जो मनोवृत्ति प्रदर्शित कर रहे हैं उससे तो यही प्रतीत होता है कि वे लोग अब शान्ति भंग करने पर तुल गये हैं। प्रत्येक सभा में न्याय को अपने हाथ में लेने की धमकी दी जाती है। इसका स्पष्ट अभिप्राय ख़ून-ख़राबी और हत्या का है। मुसलमानी शरह तो बात-बात में ख़ून की सज़ा देता है। हम यह निरन्तर ख़ून-ख़ून की चिल्लाहट सुनकर ज़रा भी विचलित नहीं हुए हैं। हमें विश्वास है कि हिन्दू-जनता अब कायर और डरपोक नहीं रही। वह ख़ून करने वाले को खुद सज़ा देना सीख चुकी है। परन्तु फिर भी इस वर्तमान आन्दोलन ने हमें चिन्तित अवश्य किया है। यह चिंता हमें अपने लिए नहीं है, मुसलमानों के लिये नहीं है। हम चिन्तित हैं कि अब इस अभागे देश का क्या होगा? जिस देश में रहने वाले करोड़ों मनुष्यों का विराट् जनसमुदाय सहसा एक ज़रासी बात पर इतना विवेक शून्य हो उठता है, उस अभागे देश का क्या होगा? संसार भर की दृष्टि में द्वेष और कुत्सित बने रहकर भी हम लोग ज़रा-ज़रा सी बातों में धर्मान्ध होउठते हैं यही वर्तमान भारत का सबसे बड़ा दुर्भाग्य है।

हम पहले ही कह चुके हैं कि इस आन्दोलन में पञ्जाब के गवर्नर सि० हेली की एक राजनीतिक भूल का भी बहुत बड़ा हाथ है। सरकार आज कल जिस नीति को काम में लारही है वह नीति उस की अपनी दृष्टि से भी बहुत ख़तरनाक है। भारतवर्ष की अल्प संख्या को अपने साथ रखने के लिये उसे इस प्रकार न्याय अन्याय का बिल्कुल ध्यान छोड़ कर, शह देना उन के लिये भी हित कर सिद्ध न होगा। अंग्रेज़ी शासन की नींव भारतवर्ष में उस के तीव्र रोबदार तथा शान्ति रक्षा के आधार पर ही जमी थी। आज जनता को जब यह बात समझ आजायगी कि अंग्रेज़ बहादुर भी इस देश में शान्ति रक्षा करने में कामयाब नहीं हो सकते तो अंग्रेज़ी शासन की पाताल तक गई हुई जड़ें स्वयं आस्मान में उड़ने लगेंगी।

बम्बई का समझौता

अखिल भारतीय काँग्रेस कमेटी ने गत मई मास में हिन्दू मुस्लिम समझौते के सम्बन्ध में जो प्रस्ताव पास किया था उस

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पर देश में भिन्न २ दृष्टियों से विचार किया जा चुका है। हमारी सम्मति में यह प्रश्न इतना अधिक महत्वपूर्ण है कि इस पर कभी और लगातार दो वर्षों तक खूब गम्भीरता से विचार करना चाहिए मिण्टो मार्ले सुधार स्कीम के आधार पर जिस विशाल सम्प्रदायगत वैमनस्य की नींव डाली गई थी, उस का दुष्परिणाम आज इस दलित देश को भोगना पड़ रहा है। गत देशभक्ति में काँग्रेस ने ही मौण्ट फोर्ड कमीशन के सन्मुख जो प्रतिनिधित्व का अनुपात प्रस्तावित किया था, वह आज भारतवर्ष की उन्नति में सब से बड़ा बाधक कारण बना हुवा है। अतः वह आवश्यक है कि जातीय महासभा कोई नई आयोजना निर्धारित करने से पूर्व उस पर सब पहलुओं से पूर्ण विचार करले। हमारी तुच्छ सम्मति में बम्बई के समझौते पर अभी और अधिक विचार करने के लिये बहुत अवकाश था; उसे जिस शीघ्रता में स्वीकार किया गया है वह देश के लिये हानिकार भी सिद्ध हो सकता है। बम्बई के निर्णय में जो बात स्वीकार की गई है उस के औचित्य या अनौचित्य के सम्बन्ध में हम अपना कोई विचार प्रगट नहीं करना चाहते परन्तु यह प्रदर्शित करने के लिये कि इस समझौते पर अभी विचार करने के लिये बहुत अधिक गुंज़ाइश है हम एक बात का निर्देश करते हैं। इस प्रस्तावित समझौते में यह सिद्धान्त स्वीकार किया गया है कि हिन्दू मुसलमान दोनों सम्प्रदायों के लिये उन की जन संख्या के अनुपात से प्रान्तीय व्यवस्थापिका सभाओं में स्थान निश्चित कर दिये जायँ। जिन प्रान्तों में मुसलमान अल्पसंख्या में हैं उन में उन्हें अनुपात से अधिक स्थान दिया जाय। परन्तु बहुमत प्रत्येक अवस्था में बना रहना चाहिये। बड़ी व्यवस्थापिका सभा में भी मुसलमानों को अनुपात से अधिक स्थान दिये जायँ; सिन्ध जुदा प्रान्त बना दिया जाय और सीमा प्रान्त को सुधार दे दिये जाँय। पर सब शर्तें स्वीकार होने पर संयुक्त निर्वाचन का सिद्धान्त व्यवहार में लाया जाय।" इस समझौते के आधार पर भारतवर्ष के पाँच प्रान्तों में मुसलमानों की वह संख्या हो जायगी, अन्य प्रान्तों में उन्हें अपने अनुपात से अधिक स्थान प्राप्त हो जायँगे। इस अवस्था में भारतवर्ष के प्रतिनिधि-तन्त्र में जो दोष पैदा हो जायँगे उन की विवेचना छोड़ कर हम केवल एक बात की ओर ही अपने पाठकों का ध्यान आकर्षित करना चाहते हैं। बंगाल प्रान्त में मुसलमानों की जन संख्या का अनुपात ५५ प्रतिशत है परन्तु ये मुसलमान प्रायः उन दलित जातियों के हैं जो कि समय समय पर विशेष कारणों से हिन्दू धर्म का आश्रम छोड़ कर इस्लाम स्वीकार करती रही हैं। यही कारण है कि बंगाल के मुसलमान संख्या में अधिक होते हुए भी शारीरिकबल, धन, मस्तिष्क, शिक्षा, सभ्यता, आचार आदि सभी बातों में वहाँ के हिन्दुओं से बहुत पिछड़े हुए हैं। इसी बात का यह परिणाम है कि वर्तमान निर्वाचन नियमों के अनुसार बंगाल में मुसलमानों की जन संख्या ५५ प्रति शत होते हुए भी मुसलमान वोटरों की संख्या

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

केवल ३६ प्रतिशतक ही है। इस अवस्था में वहाँ मुसलमानों के लिये ५५ प्रतिशतक स्थान सुरक्षित कर देना प्रतिनिधि सभा की शर्तों पर भारी कुठाराघात होगा। बम्बई के समझौते पर इसी प्रकार अन्य बहुत से आक्षेप किये जा सकते हैं। सिन्ध का प्रश्न तो विवादास्पद बना हुवा है। हम चाहते हैं कि इस महत्व पूर्ण प्रश्न पर देश को अभी और अधिक विचार करने का अवसर दिया जाय।

क्षमा प्रार्थना

"ज्योति" के वैशाख, ज्येष्ठ, और आषाढ़ मास के ये तीन अङ्क एक साथ प्रकाशित किये जा रहे हैं। श्रीमती सम्पादिका जी के बीमार होने तथा "ज्योति" की छपाई का प्रबन्ध बदलने के कारण ही यह अवस्था उत्पन्न हुई है। आशा है उदार पाठक हमें इस के लिये क्षमा करेंगे। भविष्य में ज्योति ठीक समय पर उन की सेवा में पहुँच जाया करेगी।

स्वर्गीय सर गंगाराम

सर गंगाराम की आकस्मिक मृत्यु का समाचार सारे देश ने बड़े दुःख के साथ सुना है। सर गंगाराम का सम्पूर्ण जीवन आदर्श सफल जीवन सिद्ध हुवा है। उन्होंने अपने जीवन में ख़ूब धन कमाया और उस का उचित व्यय किया। सर गङ्गाराम जो कुछ थे वह उन के अपने यत्न का परिणाम था। वह एक सच्चे समाज सुधारक थे। समाज की वास्तविक दुर्बलताओं को दूर करने के लिये उन्होंने भरसक प्रयत्न किया। पञ्जाब के बहुत से समाज सुधार सम्बन्धी आन्दोलन उन्हीं के शुभ प्रयत्नों का फल है। अपने वसीयतनामे में भी आप २६ लाख रु० के मूल्य की जायदाद, जिस की वार्षिक आय १२५००० रुपया वार्षिक है, इन्हीं समाज सुधार सम्बन्धी कार्यों के लिये अर्पित कर गये हैं। आप की आत्मा को शान्ति प्राप्त होगी ही। हम आप के परिवार से अपनी हार्दिक समवेदना प्रकाशित करते हैं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

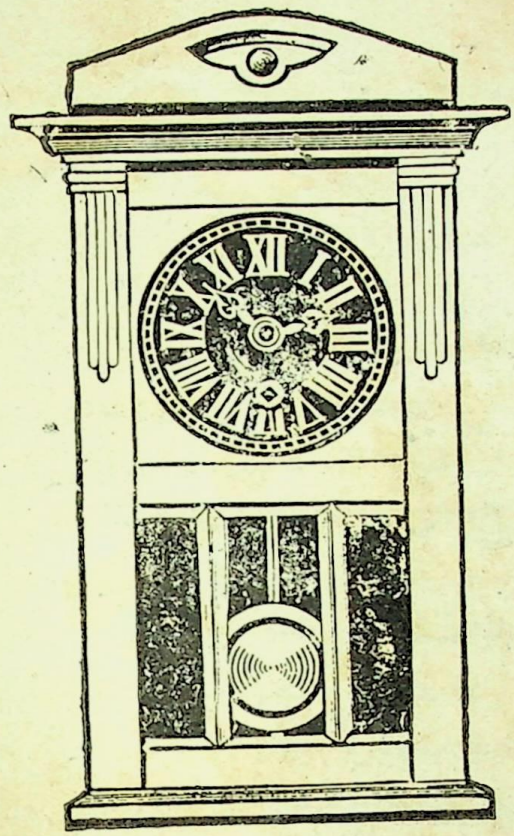

PRICE RS. 3.

Our ... The Best New The Cheapest Model ... and the Clock ... most economical wall Clock gives correct time and guaranteed for three years. Try once and convince yourself.

Price Rs. 3.

V. S. WATCH Co.,

P. B. 105. MADRAS.

मुफ़्त ! मुफ़्त !!

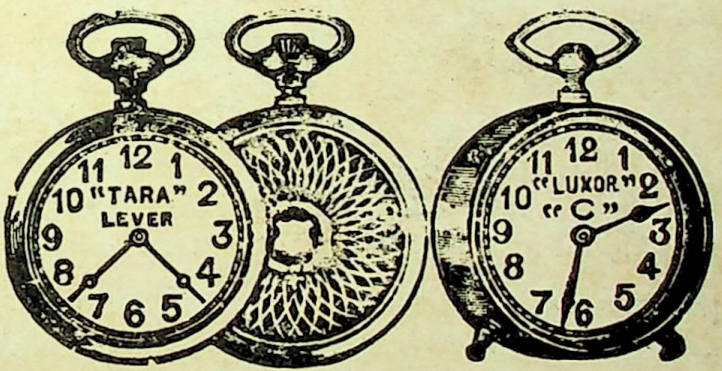

'सा' रजिस्टर्ड टाइमपीस

हर किसी को मुफ्त

हमारी "तारा, लिव्हर १८ करेंट गोल्ड गोल्ड पाकेट वाच" जिसके पीछे उत्तम नक्काशी की गयी है, गारण्टी ५ वर्ष मूल्य ५) रु०, मंगाने वाले को ऊपर की टाइम्पीस मुफ़्त दी जायगी।

पताः— केप्टेन वाच कम्पनी, पोस्ट बाक्स २६५ मद्रास।

Captain Watch Co. P. B, 265. Madras.

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अपने बच्चे को फुटबॉल खिलाओ।

तुम्हारा बच्चा बहुत मोटा ताज़ा और खुश मिज़ाज़ होगा यदि तुम हम से उस के लिए फुटबॉल खरीदोगे!

खेल के सब तरह के सामान का स्टाक हमारे यहां है। जल्द आर्डर भेजिये।

बी० डी० गुप्ता एण्ड को०

पंच कुई रोड, दिल्ली।

चौधरी हुलासराय प्रिन्टर तथा पब्लिशर के लिए गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में मुद्रित।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

Regd. NO. A 2717

वर्ष ८, खंड ८] अगस्त १९२७ [संख्या ४

वार्षिक मूल्य ४॥)
प्रति संख्या ॥)

सम्पादिका—
विद्यावती सेठ बी. ए.

स्त्रियों और विद्यार्थियों से ४)
विदेश का मूल्य ६

CC-0. Gurukul Kangri University Handwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विषय सूची।

विषय	लेखक	पृष्ठ
(१) प्रार्थना (कविता)—	[पं० वागीश्वर जी विद्यालङ्कार	१२९
(२) सृष्टि से पूर्व	[पं० धर्मदेव जी सिद्धान्तालङ्कार	१३०
(३) भारत की दशा (कविता)—	[श्री देवशर्मा	१३६
(४) आदि कवि महर्षि वाल्मीकि	[कुमारी शकुन्तला देवी हिन्दी प्रभाकर	१३७
(५) सन्देश (कविता)—	श्री सुखदेव वर्मा 'दिव्य'	१४०
(६) आशीर्वाद (गल्प)—	[श्री पं० निरञ्जनदेव जी आयुर्वेदालङ्कार	१४१
(७) गुलाब का फूल	[श्री बुद्धिसागर वर्मा बी. ए., एल. टी., तथा श्री शिवनारायण 'प्रेम' आयुर्वेद विशारद	१४३
(८) प्राचीन महिलायें (कविता)—	[श्री जगन्नारायण देव शर्मा, विशारद-साहित्य शास्त्री ...	१४८
(९) हमें भोजन कैसे करना चाहिए—	[पं० कृष्णदत्त जी आयुर्वेदालङ्कार	१४९
(१०) प्रलाप (कविता)—	[जगदीशचन्द्र शास्त्री	१५१
(११) भाषा का विकास—	[ब्र० सिंहेश्वर जी ...	१५२
(१२) उषा (कविता)—	[श्री पं० सत्यकेतु जी विद्यालङ्कार	१५६
(१३) घसियारी (गल्प)—	[ब्र० वेदप्रकाश जी	१५७
(१४) चेतावनी (कविता)—	[श्री पं० शिवनारायण 'प्रेम' आयुर्वेद विशारद, आयुर्वेद शास्त्री ...	१६०
(१५) सुदूर पूर्व की समस्या (गताङ्क से आगे)—	[एक गुरुकुल का ब्रह्मचारी	१६१
(१६) वैज्ञानिक संसार		१६६
(१) गायों के लिये बेतार द्वारा राग		
(२) वधू के लिये काँच के फूल		
(३) कीड़ों के आभूषण		
(४) स्त्रियों और पुरुषों के इन्द्रिय-ज्ञान में अंतर		
(५) समुद्र-रहस्य		
(६) विज्ञान की दासता		
(१७) गृह प्रबन्ध		१७१
(१८) कला कौशल		१७२
(१) पुरुष का साधारण स्वेटर		
(२) इमली लेस		
(१९) पुष्प-संचय		१७४
(२०) वनिता विनोद		१७५
(१) संसार की सब से धनी स्त्री		
(२) एकान्त वासिनी श्रीमती मनोलिनी		
(३) आश्रम में 'बा'		
(४) कुछ शिक्षित महिलाओं का परिचय		
(२१) विचार प्रवाह		१७६-१८४
(१) 'वर्तमान-अभियोग' का निर्णय		
(२) बरेली दिवस		
(३) अखिल भारतीय आर्यमहासभा		
(४) गुरुकुल में श्रीयुत प्रेमचन्द्र		
(५) श्रीयुत प्रेमचन्द्र और हिन्दू-मुसलिम समस्या		
(६) जनसंख्या के आधार पर प्रतिनिधित्व		

'ज्योति' सम्बन्धी पत्रव्यवहार—

आचार्या "कन्या गुरुकुल",
२१, राजपुर रोड़, देहरादून

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वर्ष ८ | श्रावण सं० १९८७ ॐ अगस्त १९३० ई० | संख्या ४

प्रार्थना

(श्री पं० वागीश्वर जी विद्यालङ्कार)

हे सत्स्वरूप ! सुधासलिल सुख का सदा वरसाइये ।
हम को हटाकर असत् से सत् मार्ग शुभ दरसाइये ॥ १ ॥
सूखे नहीं सन्ताप से मानस हमारा यह कभी ।
हे मेघ ! मंगलमूलमय ! इस को सदा सरसाइये ॥ २ ॥
जिस ज्योति से हे ज्योतिमय ! जगदीश ! जगमग है जगत्
तम से बचा उस ओर हम को लाइये हुलसाइये ॥ ३ ॥
मदमोहमय रजनी घनी तुम ज्ञान भानु समान हो ।
है चित्त पंकज की कली मुकुलित इसे विकसाइये ॥ ४ ॥
तुम हो अजर, तुम हो अमर, हम को बचाकर मृत्यु से ।
अमरत्व का वर दीजिये भय मृत्यु का विनसाइये ॥ ५ ॥
उत्साह, साहस से सदा सम्पन्न सब सज्जन बनें ।
हे सर्वसद्गुणधाम ! हम में सुगुण आप बसाइये ॥ ६ ॥
निज धर्म का, निज जाति का निज देश का अभिमान हो ।
तन, मन, वचन, धन से हमें उपकार में उकसाइये ॥ ७ ॥
हम परमपावन गोद में प्रभु ! आरहे हैं आप की ।
सिर पर हमारे पाणिपंकज प्रेममय परसाइये ॥ ८ ॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सृष्टि से पूर्व

(ले०—पं० धर्मदेव जी सिद्धान्तालंकार)

संसार एक विचित्र पहेली है। भिन्न २ विचारकों ने इस पहेली को भिन्न २ दृष्टि से सुलझाने की कोशिश की है। इस संसार से पहले क्या था। उस का क्या स्वरूप था। उस का रूपान्तर किस प्रकार हुआ— ऐसे २ विचार प्रत्येक विचारक के मन में चक्कर काटा करते हैं। संसार नित्य है, भौतिक वस्तुओं के स्वरूप में प्रति दिन परिवर्तन होता है इस से कोई इन्कार नहीं कर सकता। इसलिये यदि इस परिवर्तनशील अनित्य संसार की कभी उत्पत्ति हुई है तो उस से पूर्व क्या था? यह प्रश्न है जो बड़े विकट रूप में प्रकट होता है। यह प्रश्न उपस्थित होना स्वाभाविक ही प्रतीत होता हैं। मनुष्य इन भौतिक अवस्थाओं (Phenomena) से अपने को घिरा हुआ देखता है। यह (Phenomena) इतना ज़बरदस्त है कि इसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। इस की उत्पत्ति, प्रलय आदि के प्रश्न मनुष्य के मन में अनायास अपना स्थान निकाल लेते हैं।

मनुष्य के जीवन का सांसारिक घटनाओं से एक नित्य तथा अविच्छिन्न संबन्ध है। इस लिये इस पहेली का मनुष्य के जीवन से एक विशेष सम्बन्ध स्थापित हो जाता है। 'धर्म' मनुष्य की जीवन घटनाओं को सुखमय तथा लाभप्रद बनाने का साधन है अतः जीवन से सम्बन्ध रखने वाली प्रत्येक पहेली को हल करना धर्म का आवश्यक कर्तव्य है। इसी आधार पर प्रत्येक बड़े धर्म में इस पहेली को सुलझाने की कोशिश की गई है। प्रायः सभी धर्मों ने इस पहेली को परमेश्वर मानकर सुलझाने की कोशिश की है। परन्तु प्रश्न फिर वही उत्पन्न होता है कि यदि किसी अलौकिक शक्ति-परमात्मा-ने सृष्टि को रचा है तो किस वस्तु से रचा है। और यदि ऋग्वेद के शब्दों में इस प्रश्न को रखा जाए तो इस प्रकार कहा जा सकता है— 'किं स्विद्वनं क उ स वृक्ष आस यतो द्यावा पृथिवी निष्टतक्षुः॥ ऋ.१०.८१.४॥

इस प्रश्न को किस धर्म ने किस तरह हल किया है इसका संकेत करता हुआ अन्त में मैं वैदिक धर्म पर विचार करूँगा। आधुनिक मुख्य धर्मों में से ४ धर्म मुख्य गिने जासकते हैं। [१] बौद्धधर्म [२] ईसाइयत [३] इस्लाम [४] वैदिक (वा हिन्दू) धर्म। इस विचित्र पहेली को सुलझाने के लिये उपयुक्त धर्मों की धर्म-पुस्तक में क्या विचार पाये जाते हैं इस दृष्टि को मद्धे नज़र रखते हुए बौद्ध धर्म से हमें निराश होना पड़ता है। यद्यपि महात्मा बुद्ध के अनुयायियों में बड़े २ विचारक तथा दार्शनिक विद्वान् उत्पन्न हुए हैं, जिन्होंने इस प्रश्न का बड़ी गहराई तक विचार किया है तथापि मज्झिम निकाय आदि के आधार पर निश्चय पूर्वक कहा जा सकता है कि महात्मा बुद्ध इस विषय में चुप रहे।

इस लिये इस विषय में बौद्ध-धर्म को छोड़कर शेष धर्मों का इस विषय में विचार

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जानना आवश्यक प्रतीत होता है। यहूदी वा ईसाई धर्म में इस प्रश्न को महत्वपूर्ण समझा गया है और इस कारण यहूदियों की धर्म-पुस्तक होली बाइबल के प्रथम अध्याय का शीर्षक 'उत्पत्ति' (Genesis) है; जिस में सृष्टि-उत्पत्ति का वर्णन है। यहूदियों तथा ईसाईयों का कहना है कि सृष्टि से पूर्व परमात्मा के सिवाय और कुछ न था। परमात्मा ने कहा और यह सूर्य, चाँद, पृथिवी आदिलोक उत्पन्न हो गए। इसी प्रकार कुरान में (जिस का आधार यहूदी साहित्य ही है) लिखा है कि इस जहान से पहले खुदा के सिवाय और कुछ न था। कादिर ए मुतलक अल्लाह ताला ने 'कुन' उचरा और सब कुछ बनगया। अर्थात् इस सृष्टि से पूर्व इसका उपादान कारण कुछ न था। अभाव से भाव की उत्पत्ति होगई क्योंकि परमात्मा सर्वशक्तिमान् है।

परन्तु सृष्टि से पहले कुछ न था यह समझ नहीं आता। यह ख्याल करना कि यह संसार न पहले कुछ था और न पीछे कुछ रहेगा, असम्भव प्रतीत होता है। गीता के शब्दों के अनुसार यह तो कहा जा सकता है कि

अव्यक्तादीनि भूतानि व्यक्तमध्यानि भारत।
अव्यक्तनिधान्येव ॥ २। २८॥

परन्तु इस के साथ दूसरा विचार भी रखना पड़ता है कि 'नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः ॥ २। १६॥

अभाव से भाव की उत्पत्ति की कल्पना अचिन्त्य (Unconceivable) तथा अवैज्ञानिक (Unscientific) प्रतीत होती है। बौद्ध लोगों का बीज के नाश (अभाव) से वृक्षोत्पत्ति का दृष्टान्त देकर अभाव से भाव की उत्पत्ति सिद्ध करना भी अयुक्तिसंगत प्रतीत होता है। क्योंकि वे बीज के विकार को ही बीज का नाश या अभाव समझ कर दृष्टान्त उपस्थित करते हैं। यदि बीज का अभाव ही वृक्षोत्पत्ति में कारण है तो बिना बीज बोये भी वृक्षोत्पत्ति दिखाई देनी चाहिए। परन्तु इस बात का दावा भरना मूर्खता है। इस लिये इस्लाम तथा यहूदियों के सिद्धान्त सन्तोषजनक प्रतीत नहीं होते।

अब मैं हिन्दु वा वैदिक-धर्म में आता हूं। भारत के दर्शनकारों में भिन्न-भिन्न विचार पाये जाते हैं। इसलिए उनके आधार पर निश्चय करना कठिन है। इसलिये भारतीय आर्यों की धर्म-पुस्तक 'वेद' की कुछ ऋचाओं के आधार से इस प्रश्न पर प्रकाश डालने की कुछ कोशिश करूँगा। डाक्टर बी. एम. बरुआ डी. लिट. Pre-Bnddhistic Indian Philosophy में सृष्ट्युत्पत्ति विषयक ऋग्वेद के एक मन्त्र 'देवानां प्रथमे युगेऽसतः सदजायत'।१०·७१-१ मंत्र के आधारपर लिखते हैं—ब्रह्मणस्पति ऋषि अभाव (Nothing) से सृष्टि की उत्पत्ति मानते थे।

लेखक महोदय ने इस मन्त्र के असत् शब्द का अर्थ अभाव (Non Being) किया है। परंतु वास्तव में असत् शब्द का अर्थ अभाव (Non Being) है, यह कहना कठिन है। और नहीं तो वैदिक साहित्य के अनुशीलन के आधार पर इतना तो अवश्य कहा जा सकता है कि सत् और असत् शब्द का भाव तथा अभाव अर्थ में प्रयोग नहीं हुआ। उदाहरणार्थ कुछ एक मन्त्र भाग मैं आपके सन्मुख उपस्थित करता हूं, जिनमें सत् तथा असत् का इकट्ठा प्रयोग किया हुआ है। उनमें सत् और असत् का क्या वह अर्थ हो सकता है जो उपर्युक्त लेखक महोदय ने किया है, आप ही के निर्णय पर छोड़ता हूं। वे मंत्र ये हैं—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

(i) असच्च सच्च परमेव्योमन् दक्षस्य जन्मन्नदितेरुपस्थे। ऋ० १०। ५। ७.

(ii) असच्च यत्र सच्चान्तं स्कम्भंतं ब्रूहि कतमः स्विदेव सः। अ० १०। ७। १०.

(iii) सन्नुच्छिष्टे असंश्चोभौ। अथर्व वेद ११। ७। ३.

(iv) सतश्च योनिमसतश्च वि वः। अथर्व. ४। १। १

(v) नासदासीन्नोसदासी न्नासीद्रजो। ऋ. १०।१२९।१

अर्थात् सर्वोत्कृष्ट, सर्वाधार परमेश्वर के आश्रय में असत् और सत् है। बी. एम. बरुआ के अनुसार यह अर्थ होगा कि सर्वोत्कृष्ट सर्वाधार परमात्मा में भाव तथा अभाव दोनों आश्रित हैं। और परमात्मा असत् और सत् के कारण को अभिव्यक्त करता है। इसी प्रकार सृष्टि के आदि में न भाव था, न अभाव।

इसका क्या तात्पर्य ? यह तो केवल शब्दों से खिलवाड़ मात्र है।

इसलिए कम से कम असत् तथा सत् का वह अर्थ नहीं जो उपर्युक्त लेखक ने किया है।

हाँ, इन मंत्रों के आधार पर इतना अवश्य कहा जा सकता है कि 'असत्' से 'सत्' की उत्पत्ति हुई। इस स्थापना की पुष्टि के लिए लेखक महोदय के सामने अथर्व वेद के १७ वें काण्ड का 'असति सत् प्रतिष्ठितं सति भूतं प्रतिष्ठितम्।' यह मन्त्र भी उपस्थित किया जा सकता है, परन्तु असत् का अर्थ अभाव (Nothing) है—यह नहीं कहा जा सकता।

सत् और असत् का दार्शनिक परिभाषा में क्या अर्थ है इसके लिये षड् दर्शनों में व्यवहृत प्रयोग ही प्रामाणिक हो सकता है। षड् दर्शनकारों ने इनका प्रयोग भाव तथा अभाव अर्थ में किया है, परन्तु कई स्थलों में सत् का अर्थ स्थूल भूत तथा असत् का सूक्ष्म-भूत किया गया है।

इस अर्थ के अनुसार असत् में सत् प्रतिष्ठित है या असत् से सत् उत्पन्न होता है—यह बात बिल्कुल स्पष्ट हो जाती है। अर्थात् सूक्ष्म-लिंग पञ्चतन्मात्रादि से स्थूल-भूत पञ्चभूत उत्पन्न होता है, और प्रलयावस्था में न असत् होता है और न सत् अर्थात् न सूक्ष्मलिंग होता है न स्थूललिंग या स्थूलभूत। यही 'नासदासीन्नोसदासी न्नासीद्रजो नो व्योमा परोयत्। मन्त्र का यही भाव इन्हीं शब्दों में पातंजल योग दर्शन के वशिष्ठभाष्य में पाया जाता है—

प्रतिसंसृज्यमानाश्च तस्मिन्नेव सत्तामात्रे महति आत्मनि अवस्थाय यत्तन्निःसदसद् निरसद् अव्यक्तमलिंगं प्रधानं तत्प्रतियन्ति.....

परन्तु फिर भी प्रश्न वही है। यद्यपि इस संसार से हम अपने को तिरोहित करलेते हैं जहाँ न सत् है न असत् है, परन्तु उस समय,—सृष्टि से पूर्व—क्या सद्वस्तु (Positive) थी यह प्रश्न उसी तरह हमारे सामने उपस्थित है।

इस प्रश्न का उत्तर उसी नासदीय सूक्त में आगे चलकर दिया है— न मृत्युरासीदमृतं न तर्हि न रात्र्या अन्ह आसीत् प्रकेतः। आनीदवातं स्वधया तदेकं तस्माद्धान्यन्न परः किंचन आस ॥ २ ॥

तम आसीत् तमसा गूढमग्रे ऽप्रकेतं सलिलं सर्वमा इदम्। तुच्छ्येनाभ्वपिहितं यदासीत् तपसस्तन्महिना जायतैकम् ॥३॥

अर्थात् उस समय, सृष्टि से पूर्व, दिन और रात आदि का कोई भेद न था। उस समय नितान्त अन्धकार था, यह सब 'अप्रकेत सलिल' था। यह महान् संसार एक अत्यन्त सूक्ष्म वस्तु से पिहित था।

पूर्व इसके कि सलिल शब्द की आपके सामने व्याख्या करूँ—मैं एतद्विषयक कतिपय अन्य मन्त्र उद्धृत करना चाहता हूँ।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अथर्ववेद का मन्त्र है—

(ii) आपो अग्रे विश्वमायन् गर्भंदधाना अमृता ऋतज्ञाः । तासु देवीष्वधिदेव एकआसीत् कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ ४ । २ । ६ ॥

इस सृष्टि के गर्भ को धारण करते हुए नित्य 'आपः' सृष्टि से पूर्व सारे संसार को आवृत किये हुए थे और जिन 'आपः' में परमेश्वर विद्यमान् था, उस परमदेव की भक्ति द्वारा हम उपासना करते हैं ।

(iii) आपो वत्सं जनयन्तीर्गर्भमग्रे समैरयन् ॥ ४ । २ । ८ ॥

सृष्टि के आदि में इस संसार को उत्पन्न करते हुए 'आपः' ने अपने गर्भ को अभिव्यक्त किया ।

(iv) परमात्मा (राष्ट्री) के विषय में यह सूक्त है-यह सूक्त ऋग्वेद में भी पाया जाता है—

मम योनिरप्स्वन्तः समुद्रे । ४ । ३० । ७

अर्थात् मेरा घर समुद्र के बीच 'आपः' में है ।

(v) तमिद्गर्भं प्रथमं दध्र आपो यत्र देवा समगच्छन्त विश्वे । १० । १२ । ६

उसी परमात्मा को 'आपः' अपने गर्भ में धारण कर रहे थे जिसमें सब देव संगत हो जाते हैं ।

इन चार-पाँच मन्त्रों को उपस्थित करने का प्रयोजन यही है कि वैदिक फिलासफ़ी के अनुसार सृष्टि के आदि में 'सलिल' या 'आपः' विद्यमान् था और इसके अतिरिक्त चित् स्वरूप (Conscious Self) परमात्मा था ।

यही कल्पना हम भागवत आदि पुराणों में पाते हैं कि क्षीर सागर में विष्णु भगवान् बहुत काल तक सोते रहे । फिर उन की नाभि से एक कमल की उत्पत्ति हुई, जिस में ब्रह्मा जी पैदा हुए और उन्होंने संसार को पैदा किया ।

अर्थात् विष्णु या परमात्मा का निवास स्थान क्षीर सागर या आपः व सलिल है । सृष्टि से पूर्व क्षीर सागर (आपः) तथा विष्णु जी थे । इसी भाव का एक श्लोक मनुस्मृति में भी पाया जाता है; जो इस प्रकार है—

आपो नारा इति प्रोक्ता आपो वै नरसूनवः ।
ता यदस्यायनं प्रोक्तं तस्मान्नारायण उच्यते ॥

इतना ही नहीं, यदि और दूर तक अन्वेषण किया जावे तो, अन्य धर्मों में भी यही भाव पाया जाता है । ईसाइयों का कहना है कि सृष्टि से पूर्व परमात्मा के सिवाय और कुछ न था । वह सर्वशक्तिमान् है, अतः उस ने अभाव से भाव की उत्पत्ति कर दी । परन्तु मेरी सम्मति में, ईसाइयों का यह समझना अपनी धर्म पुस्तक को न जानना है । होली बाईबल में सृष्ट्युत्पत्ति वर्णन अभाव (Nothing) से जगत् की उत्पत्ति का प्रतिपादन नहीं करता । उस में यही वैदिक विचार पाया जाता है, जो कुछ विकृत हो गया है । Genesis में लिखा है

1. In the beginning God created the heaven and the earth.

2. And the earth was without form, and void; and darkness was on the face of the deep. And the Spirit of God moved upon the face of the waters.

यह वाक्य अक्षरशः 'तम आसीत् तमसा गूढमग्रे ऽ प्रकेतं सलिलं सर्वमा इदम्। तुच्छ्येनाभ्वपिहितं यदासीत् तपसस्तन्महिना जायतैकम् ॥' ऋ. १० । १२९ । ३ मन्त्र से मिलता नज़र आता है। इस के अतिरिक्त सब धर्मों में समान रूप से पाई

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जाने वाली जलप्लावन की कथा भी इसी विषय से सम्बद्ध प्रतीत होती है। शतपथ ब्राह्मण में कथा आती है—

एक बार मनु महाराज नदी के किनारे बैठे हुए संध्या कर रहे थे। इतने में जब उन्होंने आचमन करने के लिये अञ्जलि में जल लिया तब उस जल के साथ एक मछली भी उन की अञ्जलि में आगई और मनु महाराज से प्रार्थना करने लगी 'हे भगवन् मुझे बचाइये, इस के प्रतीकार में मैं तुम्हें शीघ्र आने वाले जलप्लावन से बचाऊंगी। इस विश्वास पर मनु ने उस मत्स्य को पाल कर बड़ा किया और वह "झष" बन गया। इसके बाद जब जलप्लावन आया तब उस झष ने मनु महाराज की नाव को पार लगाया और उन की रक्षा की।

इसी प्रकार की कथा कुछ भेद से महाभारत तथा भागवत पुराण में भी पाई जाती है।

इतना ही नहीं कि यह कथा केवल भारतीय साहित्य में पाई जाती हो, प्रत्युत थोड़े भेद से संसार के प्रायः सभी प्राचीन धर्मोंमें यह कथा पाई जाती है। पारसी धर्म की वैदिक धर्म से अत्यन्त घनिष्ट निकटताके विषय में किसी को सन्देह न होगा। दोनों धर्मों के अध्ययन से स्पष्ट प्रतीत होता है कि किसी काल में इन दोनों धर्मों के पूर्वज किसी एक स्थान में सम्मिलित निवास कर चुके हैं। इस कारण ज़िन्दावस्था में भी यही कथा आती है। जिस के उल्लेख करने की आवश्यता नहीं। इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि वहां मनु की जगह यिम का वर्णन आता है।

इस के उपरान्त यहूदी धर्म में भी नूह की किश्ती का बड़ा मनोहर वर्णन पाया जाता है, जिस का आधार ज़िन्दावस्था ही कही जा सकती है। और यहूदी वा ईसाई धर्म से कुरान में भी इस जलप्लावन की कथा को स्थान दिया गया है।

इतना ही नहीं, इस के अतिरिक्त रोमन, ग्रीक, स्केन्डेनेविया आदि की धर्म-पुस्तकों में भी यही सैलाब या जलप्लावन की कथा पाई जाती हैं।

यह जान कर अत्यन्त आश्यचर्य होता है कि संसार के धर्मों में और कोई विचार इतना समान (Common) नहीं पाया जाता जितना जलप्लावन, सैलाब वा Deluge का पाया जाता है।

इस कथा (Mythology) का क्या गूढ़ अन्तर्निहित अभिप्राय है और क्यों यह कथा इतनी प्रसिद्ध हो गई। इस का भिन्न २ विद्वानों ने भिन्न २ उत्तर दिया है।

मेरी सम्मति में यह जलप्लावन प्रलय का द्योतक है। इस सृष्टि से पूर्व 'आपः' था और अन्त में भी फिर 'आपः' हो जाएगा। इस वैदिक फिलासफ़ी के आधार पर इस की कल्पना की गई है। और क्योंकि मनुष्य एक विचारवान् प्राणी है। उसे सृष्टि, आत्मा तथा परमात्मा के प्रश्न किसी न किसी रूप में तंग किया करते हैं। अतः सृष्टि की समस्या का हल पाकर प्रत्येक धर्म ने इस कथा (Mythology) को अपने धर्म में स्थान दिया।

इतनी समानता दर्शाने के उपरान्त अब मैं आपः या सलिल के विषय में कुछ स्पष्ट कर देना चाहता हूं। डा० बेनीमाधव बरुआ लिखते हैं—

Parmesthin, like Thales, offered water (सलिल) as the fundamental principle of explanation....He refused accordingly to push his enquiry beyond water.

आगे लिखते हैं—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

Partly because of the legend of flood in the time of Manu, which lived so deep in the minds of Indo-Aryans, and partly because of the ordinary experiences concerning the existence, changeability, circulation, distributions, and mighty force of water in the world the answer which naturally suggests itself was—Water.

इस प्रकार उपर्युक्त लेखक महोदय के अनुसार 'आपः' का मतलब जल से हैं। क्योंकि मनु के समय जलप्लावन आया था और प्रति दिन जल शक्तिसम्पन्न अनुभव करने के कारण उस के कारण उन के लिये जल से की उत्पत्ति समझना स्वभाविक था।

परन्तु वास्तव में 'आपः' या सलिल का अभिप्राय जल है यह कहते हुए मुझे संकोच होता हे। क्योंकि यदि आपः या सलिल का वर्णन ध्यान से पढ़ा जाए तो किसी हालत मे 'आपः' का तात्पर्य जल से नहीं हो सकता। नासदीय सूक्त में प्रलय काल का वर्णन है। "नासदासीन्नो सदासीत् नासीद्रजो नो व्योमा परोयत्॥" अर्थात् प्रलय काल में न असत् (सूक्ष्म लिंग) था और न सत् (स्थूल भूत) था। न पृथिवी लोक था और न द्युलोक की उस समय सत्ता थी। इसप्रकार negative स्वरूप कह कर positive स्वरूप बताया है—'तमआसीत् तमसा गूढ़मग्रेऽप्रकेतं सलिलं सर्वमा इदम्।' उस समय अन्धकार था और उस अन्धकार में ही यह सारा संसार अनभिव्यक्त सलिल रूप में था।

यदि यहां पर सलिल का तात्पर्य साधारण जल मात्र से लिया जाए तो वह सत् और असत् से भिन्न कैसे कहा जासकता है। वह तो स्थूल या सत् स्वरूप है। जिस सलिल का नासदीय सूक्त में वर्णन है वह सत् और असत् दोनों से भिन्न है। अतः यहां सलिल का तात्पर्य साधारण जल से कदापि नहीं हो सकता।

प्रत्युत सलिल या आपः का अर्थ माया अथवा प्रकृति है। इस के पक्ष में दो प्रकार की युक्तियाँ पेश की जा सकती हैं।

(i) परमात्मा या इन्द्र की योनि को निम्न मंत्रों में 'आपः' कहा गया हैः- ममयोनिरप्स्वन्तः समुद्रे ॥ ४। ३। ७ ॥

(ii) तमिद्गर्भं प्रथमं दध्र आपो यत्र देवा समगच्छन्त विश्वे

(iii) आपो अग्रे विश्वमायन् गर्भं दधाना अमृता ऋतज्ञाः।
यासु देवीष्वधि देव एकआसीत् कस्मैदेवाय हविषा विधेम॥४।२।६

परन्तु ऋग्वेद के १०। ५४। २ में माया को इन्द्र की योनि बताया है—इस सूक्त का देवता इन्द्रहै

'मायेत्सा ते योनिः'-अर्थात् माया ही तेरा निवास स्थान है।

और माया शब्द दार्शनिक भाषा में प्रकृति के लिये प्रयुक्त होता है। यथा—'मायां तु प्रकृतिं विद्यान् मायिनं तु महेश्वरम्।'

अतः सलिल या आपः का अर्थ माया वा प्रकृति होना चाहिए।

इस के अतिरिक्त इस स्थापना में दूसरा कारण यह है कि नासदीय सूक्त का वर्णन बिलकुल उसी प्रकार का है जिस प्रकार पातञ्जल योगदर्शन के वाशिष्ट भाष्य में दिखाया जा चुका है। भेद केवल इतना है कि नासदीय सूक्त में प्रलयावस्था की वस्तु को सलिल कहा है और योग दर्शन में उसे अलिंग, प्रधान या प्रकृति नाम दिया है। इसके अतिरिक्त निम्न श्लोक भी ठीक उसी प्रकार माया या प्रकृति का वर्णन करता है

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जिस तरह योग दर्शन या नासदीय सूक्त में पाया जाता है:— 'नासद्रूपा न सद्रूपा माया नैवोभयात्मिका।'

इस लिये मेरी सम्मति में आपः या सलिल का अर्थ साधारण जल मात्र नहीं, प्रत्युत वह वस्तु है जिस का स्वरूप गहन है और जिसे सांख्य योग ने प्रकृति, प्रधान या अलिंग नाम दिया है।

इस बात को मन में रखकर यदि आप T. H. Griffith के नासदीय सूक्त के अनुवाद को पढ़ें तो उसे अच्छी तरह समझ सकते हैं—

Then was not non-existent nor existent: there was no realm of air, no sky beyond it. Darkness was there: at first concealed in darkness this All was indiscriminated chaos. All that existed then was void, and formless.

Note–Non-existeut and existent: all that possesses the potentiality of existence as well as all that actually exists. अ० १। ७। १०

इस प्रकृति का क्या स्वरूप है। किस तरह इस से सृष्ट्युत्पत्ति होती है यह एक स्वतन्त्र विषय है। सांख्य योग आदि दर्शनों से जो कुछ स्पष्ट या अस्पष्ट विचार मिलता है, दार्शनिक विद्वान् उस का यहां प्रतिपादन कर सकता है। इस लिये मैं ने 'आपः' शब्द को अर्थ को जानने के लिये कुछ विचार आपके सन्मुख उपस्थित किये हैं, आशा है आपके लिये कुछ लाभप्रद सिद्ध होंगे।

भारत की दशा

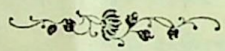

(श्री देवशर्मा)

बतादे देश अय भारत ! दशा कैसी तुम्हारी है.
घटा छाई अविद्या की प्रजा सारी दुखारी है ॥ १ ॥

हुआ क्या रङ्ग अय प्यारे ! तुम्हारे लाल चेहरों का।
पड़ी ज़र्दी जवानी में ज़िगर से आह जारी है ॥ २ ॥

जहाँ के विप्र पढ़ विद्या अविद्या को हटाते थे।
भुलाकर नाम वेदों का वे प्रेतों के पुजारी हैं ॥ ३ ॥

विदेशों–देश में जाकर जो सत उपदेश करते थे।
उन्हीं ऋषियों की सन्तानें धरम दिल से बिसारी हैं॥४॥

जहाँ के वीर महाराजे कुरीतों को नसाते थे।
नचाते हाय ! वे रंडी बुलाकर प्राण प्यारी है ॥ ५ ॥

जहाँ के क्षत्र-व्रतधारी प्रजाहित प्राण खो देते।
वही क्षत्री बने अय रूप रैयत को उजारी है ॥ ६ ॥

जहाँ के राज महफ़िल में सदा थे धर्म के ज्ञाता।
वहाँ अब चापलूसों का ज़माना हाय भारी है ॥ ७ ॥

जहाँ था सत्य का व्यापार वैश्यों में सदा जारी।
वहाँ अब सब तरह का छल कपट करना विचारी है॥८॥

बहाते रक्त के आँसू सदा "श्री देव" भारत पै।
कृपा कीजै जगत्–स्वामिन् यही विनती हमारी है॥९॥

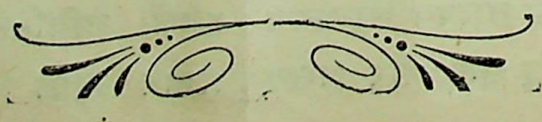

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

आदि कवि महर्षि वाल्मीकि

(ले०—कुमारी शकुन्तला देवी हिन्दी प्रभाकर)

में प्रकृति सिखाती है, कि रोना और गाना पुरुष समाज की एक स्वाभाविक और अनिवार्य वस्तु है। प्रत्येक हृदय रोने और गाने के लिये विवश है। वह ऐसा करना चाहे वा न चाहे, पर प्रकृति की अनन्त शक्ति उसे ऐसा करने के लिये बाधित करती है। सृष्टि की आदि दशा में यदि हमारे समाज में रोने या गाने की लहर उठती होगी तो अनुमान होता है यह सब काम अव्यक्त-सा होता होगा। बहुत समय के बाद हृदयों को यह अनुभव हुआ होगा कि गीतों के द्वारा अपने हृदय का दुःख वा खुशी प्रगट करने में अधिक आनन्द मालूम होता है। हृदय के उबाल को निपट मूर्ख भी निकालता है और एक कवि भी निकालता है। परन्तु अव्यक्त दशा में रोने वाले की अपेक्षा व्यक्त उद्गार निकालने वाले कवि को अधिक शान्ति मिलती है। वेदों के मंत्र पढ़ने से यही सब झलक उसमें भी आती है। परन्तु वैदिक गीत भी इस बात का एक अधूरा-सा नमूना जँचता है। धीरे-धीरे वह ज़माना भी आ पहुँचा कि रोना गाना भी एक अत्यंत नियमित दशा में होने लगा। उसके लिये बड़े २ नियम और उलझनें तैयार की गईं। इस नवीन आविष्कार के आचार्य हैं महर्षि वाल्मीकि जी।

एक बार आप जंगल में घूम रहे थे तब उन्हों ने एक वृक्ष पर प्रेमासक्त चकवा और चकवी को बैठे देखा। इतने में ही एक क्रूर व्याध ने आकर अपने तीर से चकवे को मार गिराया। करुणामय ऋषि का कोमल हृदय एक दम विदीर्ण हो गया। वे अपने आवेश को न रोक सके और पापी व्याध को शाप देने लगे। उनका आवेग कुछ विलक्षण था। उनके मुँह से शाप के अक्षर कुछ विचित्र ढंग से निकले। संसार के लिए एक अलभ्य चीज़ पैदा हो गई। महर्षि का वह आदि श्लोक यह था—

"मा निषाद प्रतिष्ठां त्वा मगमः शाश्वती समाः।
यत्क्रौञ्च मिथुना देकमवधीः काममोहितम्॥"

अर्थ— "हे व्याध! तू इस संसार में न रह। तूने प्रेम से विह्वल चक्रवाक के जोड़े में से एक को निर्दयता से मार गिराया है।

बस अब क्या था, देवताओं के भी आश्चर्य की सीमा न रही। ब्रह्मा जी ने ऋषि जी को इस नवीन रास्ते में और भी उन्नति करने को कहा, संसार में आप आदि-कवि कहा कर अमर हो गए। आदि कवि जी ने नवीन-नवीन छन्दों का प्रयोग करके एक बृहत् काव्य लिखा जिसका नाम है— "वाल्मीकि रामायण" इसके समय निर्णय में विद्वानों में अभी बड़े मतभेद हैं। कोई कहते हैं कि रामायण, महाभारत के बाद की है। पर यह ठीक नहीं, क्योंकि रामायण की बहुत-सी बातें महाभारत में पाई जाती हैं। किंतु रामायण में महाभारत की बातें बिलकुल नहीं।

दूसरा कारण यह है कि जब रामचन्द्रजी अयोध्या से लंका में गए तो रास्ते में आये हुए

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

किसी भी शहर का नाम नहीं आता। अधिकांश बन-ही-बन थे और महाभारत में सैंकड़ों शहरों का नाम आता है। जिन में से अब तक बहुत से आबाद हैं। महाभारत के समय में बहुत से अस्त्र-शस्त्रों के नाम मिलते हैं पर रामायण में उनका नाम कहीं भी नहीं आता है। इससे सिद्ध है कि रामायण ;, महाभारत से कई शताब्दि पहिले बनी। क्योंकि जो शहर पीछे से आबाद हुए-उनके आबाद होने में सैंकड़ों वर्ष लगे होंगे। रामायण छोटा होने के कारण बहुत बार बदला, जिससे उसका पुराना स्वरूप जाता रहा तथा काव्य की शैली में भी कुछ फ़र्क पड़ गया। परन्तु महाभारत बहुत बड़ा होने के कारण इतना अधिक नहीं बदला जा सका उसका पुराना स्वरूप ही रह गया। इसी कारण प्रायः लोगों को धोखा हो जाता है, और महाभारत को रामायण से भी प्राचीन कह डालते हैं। महाभारत की लड़ाई लग-भग १८००ई० पहिले हुई थी, इससे प्रतीत होता है कि रामायण वेदों से पीछे और महाभारत से पहिले बनी है। बहुत से यूरोपियनों का मत है कि रामायण में वर्णित कथा सच नहीं है। सिर्फ़ पुरानी बातों को लेकर एक बनावटी कथा बनाई हुई है। कुछ विदेशी कहते हैं कि राम की लंका पर चढ़ाई के बहाने से महाकवि ने उस पुरानी हालत का छिपा हुआ वर्णन किया है जब कि आर्यों ने सृष्टि के पहिले हिस्से में हिन्दुस्तान, लंका आदि के जंगली आदमियों को हराकर अपना राज्य जमाया था।

पर यह बात बिलकुल ग़लत है क्योंकि महाकवि का काव्य पढ़ने से यह ज़रा भी ज़ाहिर नहीं होता कि राम ने राज्य बढ़ाने के लिए चढ़ाई की थी जैसे कभी आर्य लोगों ने की होगी। प्रोफ़ेसर बीवर कहते हैं कि रामायण की बनावटी कथा राम के लङ्का पर चढ़ाई करने के बहाने से सिर्फ़ इस बात का ध्यान दिलाती है कि आर्य धर्म का ज़बरदस्त प्रचार लङ्का में भी पहुँचाया गया और इधर की सभ्यता उस दूर के टापू में भी यहां वालों ने पहुँचाई। इस के सिवाय सीता का वहां जाना राम की चढ़ाई आदि का कोई असली मतलब नहीं। पर यह भी बात ठीक नहीं क्योंकि रामायण पढ़ने से यह बिलकुल प्रतीत नहीं होता कि राम ने टापू का धर्म बदलने के लिये चढ़ाई की थी। राम की कथा में किसी के धर्म बदलने की झलक बिलकुल नहीं पाई जाती और लङ्का पहिले ही सभ्य थी क्यों कि राम के भेजे हुए दूत हनुमान ने वहां का जो वर्णन किया है वह भारत की सभ्यता के योग्य ही है, कम नहीं। इस से सिद्ध होता है कि रामायण मन घड़न्त कथा नहीं यह एक सच्ची घटना है।

वाल्मीकि जी की कविता महाभारत की कविता की तरह बहुत ही सरल और बहुत से च, वा, ह, आदि अक्षरों से ग्रस्त नहीं है। आदि कवि की कविता अन्त में जाने वाले महाकवियों की तरह ही प्रौढ़ और कवित्व पूर्ण है। इनकी कल्पना शक्ति बड़े २ महाकवियों से बढ़ी चढ़ी है। यदि कोई थोड़ी सी योग्यता वाला भी रामायण को पढ़ता है तो उसको एक अपूर्व आनन्द आता है। चाहे वह बहुत स्थलों पर अर्थ को नहीं भी समझता हो। आपकी कविता इतनी मधुर है कि बाद में होने वाली बहुत सी कविताओं में इतनी मधुरता नहीं मिलती। इनकी कविता का आनन्द लेना हो तो एक सुन्दरकाण्ड ही काफ़ी है। बहुत से घरों में इसका नित्य पुण्य पाठ होता है इनकी कविता का नमूना इन दोचार सुन्दर काण्ड के श्लोकों से दिखाकर अपने लेख को समाप्त करती हूं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

(१)

अनूपूर्येण वृत्तं च लांगूलं लोमभिश्चितम् ।
उत्पलिष्यन्निचिक्षेप पक्षिराज इवोरगम् ॥

(२)

तस्यलाँगूलमाविद्धमतिवेगस्यपृष्ठतः ।
ददृशे गरुडेनेव ह्रियमाणो महोरगः ॥

(३)

उरूवेगोत्थिता वृक्षा मुहूर्तं कपिमन्वयुः ।
प्रस्थितं दीर्घमध्वानं स्वबन्धु मिव बान्धवाः ॥

(४)

तमूरुवेगोन्मथिता सालाश्चान्ये नगोत्तमाः ।
अनुजग्मुर्हनूमंतं सैन्या इव महीपतिम् ॥

(५)

सुपुष्पिता ग्रैर्हुर्बभिःपादपै रन्वितः कपिः ।
हनुमान्पर्वताकारो बभूवाद्भुतदर्शनः ॥

(६)

सारवन्तोऽथ ये वृक्षा न्यमज्जल्लवणांभसि ।
भयादिव महेन्द्रस्य वर्तन्ते वरुणालये ॥

(७)

स नानाकुसुमैः कीर्णः कपिः सांकुरकोरकैः ।
शुशुभे मेघसंकाशः खद्योतैरिव पर्वतः ॥

(८)

विमुक्तास्तस्यवेगेन मुक्त्वा पुष्पाणि ते द्रुमाः ।
न्यब्ज शीर्यन्त सलिले निवृत्ताः सुहृदो यथा ॥

(९)

तस्यवानर सिंहस्य प्लवमानस्य सागरम् ।
कक्षान्तरगतो वायुर्जीमूत इव गर्जति ॥

अर्थ— (१) पहाड़ पर से (समुद्र पार करने के लिये) कूदते हुए हनूमान् की ऊपर को फेंकी हुई विशाल पूंछ इस तरह मालूम पड़ी जैसे गरुड़ ने नाग को फेंक डाला हो।

(२) वेग से जाते हुए उनके पीछे लटकने वाली पूंछ ऐसे मालूम देती थी जैसे गरुड़ भारी सांप को उठाये जा रहा है।

(३) बड़े भारी वेग से उखाड़े हुए वृक्ष मुहूर्त भर के लिये उनके पीछे इस तरह उड़ते चले गए जैसे दूर जाने वाले अपने जन को विदा करने बान्धव लोग जाते हैं।

(४) उनके आवेग की झपट से उखड़े हुए बहुत से साल आदि वृक्ष इस प्रकार पीछे २ जा रहे थे जैसे राजा के पीछे २ सेना।

(५) पुष्पों से लदे, पीछे आने वाले वृक्षों में घिर कर पर्वताकार हनूमान् बड़े ही अद्भुत दीखते थे।

(६) बहुत भार वाले वृक्ष समुद्र में इस तरह डूब गए मानों इन्द्र के डर से पहाड़ समुद्र में छिप गए।

(७) विचित्र पुष्प, अंकुर और कलियों से आच्छादित हनुमान् खद्योत से व्याप्त पर्वत की तरह शोभित होने लगे।

(८) वेग की झपट से निकले हुए वृक्ष अपने फूलों को बिखेरते हुए पानी में गिरने लगे जैसे किसी अपने प्रिय को विदा कर मित्र लोग लौट जाते हैं।

(९) वानरों में सिंह तुल्य, समुद्र पर से उड़ते हुए उस हनुमान् की बग़लों में से गुज़रती हुई हवा ऐसे शब्द कर रही थी जैसे बादल गर्ज रहे हों।

आदि कवि के जिस श्लोक को पढ़िये वही अद्वितीय मालूम होता है। उनका पूरा आनन्द लेने के लिये तो रामायण या कम से कम सुन्दर काण्ड अवश्य पढ़ना चाहिये। अहा, संस्कृत भाषा कैसी मधुर है और आदि कवि की कविता कैसी सरल और मधुर है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जिस समय हनुमान् सीता का पता लगा कर रामचन्द्र जी के पास आये हैं तो सीता जी की दशा का वर्णन करते हुए उन्होंने कहा है।

स्वभावादेव तन्वङ्गी त्वद्वियोगेन कर्शिता।
प्रतिपत्पाठशीलस्य विद्येव तनुतां गता ॥

अर्थात् हे राम ! सीता जी वैसे तो स्वभाव से ही सूक्ष्म भी हैं परन्तु अब तुम्हारे विरह से नित्य प्रतिपदा को दिन पढ़ने वाले की विद्या की तरह एक दम ही कृश हो गई हैं।

सन्देश

(श्री सुखदेव वर्मा 'दिव्य')

(१)

उपवन हो हर्षित क्यों इतने
है क्यों हिय में अति—उल्लास।
नूतन वस्त्र पहन कर मद से
जाते हो तुम किस के पास ॥

(२)

पहना है क्यों आज अनोखा
नव विकसित-पुष्पों का हार।
लेने चले हो किस आशा का
मञ्जुल-अनुपम शुभ-संभार ॥

(३)

आह ! तुम्हारी इस माया का
कारण मैं ने जाना है।
स्वागत करने जाते जिस का
उस जन को पहिचाना है ॥

(४)

देख तुम्हारी दशा निराली
मन करता है करुण—क्रन्दन।
क्षोभ स्थान बना चित मेरा
बंद हुआ हृदय—स्पंदन ॥

(५)

नव्य-मित्र के-प्रथम-मिलन की
आशाने यह किया कमाल ?
मन प्रफुल्लि तुम्हारा तो है
लगती मुझ को जान बवाल ?

(६)

दक्षिण-वात, सुमन ऐ तुझ को
प्रभात—कमल-सा खिलाता है।
पर मुझ को तो वैरी सम हो
जले-हृदय को जलाता है ॥

(७)

कहना उस ऋतुराज से जाकर
दग्ध हृदय का यह सन्देश।
मुख न दिखाये मुझ को आकर
पिया गये हैं मेरे विदेश ॥

(८)

इस भूतल पर यदि आने की
बसी हो मन में भरा—उमंग।
तो आओ चुपचाप अकेले
कभी न आना दलबल संग ॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

आशीर्वाद

(ले०—श्री पं० निरञ्जनदेव आयुर्वेदालङ्कार)

(१)

खनऊ के पास कमलापुर नामका एक छोटा-सा क़सबा है। बस्ती अधिकतर मुसलमानों की है किंतु अन्य देहातों की तरह यहाँ भी हिंदू, मुसलमान सभी के घर मिले-जुले हैं। क़सबे के बाहर की तरफ़ सफ़ेद ईदगाह बनी हुई है उसके आस-पास अन्य कई पीरों के मज़ार हैं। ईदगाह के साथ ही एक तरफ़ छोटी सी बरसाती नदी बहती है। इसपर काठ का पुल डला हुआ है। राहगीर इस पर से नदी पार करते हैं। इन्हीं आने-जाने वालों के आसरे पुल के दोनों ओर मँगते और अपाहज बैठे रहा करते हैं। भीड़ के कारण शोर-शराबा बना ही रहता है किंतु इस कोलाहल को चीरती हुई एक अन्धे फ़कीर की आवाज़ प्रायः हर एक रास्ता-गीर के कानों पर पड़ती है। बुड्ढा रह-रह कर एक विशेष ढंग से पुकारा करता है:—

"बाबा यही दिया-लिया तुम्हारे काम आयगा।"

(२)

सन्ध्या हो चुकी थी। आकाश में दो एक सफ़ेद बादल छितराये पड़े थे। सर्दियों में ७ बजे ही काफ़ी अँधेरा हो जाता है, इसलिये नदी के दोनों ओर जहाँ-तहाँ प्रकाश दिखाई देने लगा है। थोड़ी देर में ही नदी के किनारे वाले मज़ार पर भी किसी ने रोशनी कर दी। धीरे २ उस सफ़ेद इमारत की ओर से दो व्यक्ति आते हुए दिखाई दिये। पास आने पर मालूम हुआ दो मुसलमान कुमारियाँ हैं। इनमें से एक ने बुर्का डाला हुआ था किंतु उसके वस्त्राभूषणों की आभा बुर्के में से भी फूटी पड़ती थी। पहनावे-उढ़ावे से यह किसी ऊँचे घराने की अमीरज़ादी और दूसरी सादा लिबास में शायद बाँदी थी। वेष-भूषा से ऐसा प्रतीत होता था कि अमीरज़ादी का विवाह हो चुका है।

सहसा वृद्धावस्था के कारण कम्पित स्वर में सुनाई पड़ा—

"अल्लाह सबका भला करे, या परवर दिग़ार।"

"बाबा यही दिया लिया तुम्हारे काम आयगा।"

इस बिखरते हुये आशीर्वाद को देख कर दोनों युवतियाँ उस फ़कीर की ओर बढ़ीं। कुमारी ने बुर्के के अन्दर से अपनी ओढ़नी के आँचल को टटोल कर कहा—"बाबा! आज कुछ बचा नहीं। मैंने राह के फ़कीरों को ही सब कुछ दे डाला।" अन्त में ओढ़नी में अटके हुये 'नरगिस' के एक फूल को उसने बड़ी श्रद्धा से फ़कीर की झोली में डाल दिया। कहना न होगा कि अन्धे को इस फूल के गिरने का कुछ भी पता नहीं चला उसने अपनी करुणा भरी आवाज़ में कहा—"बच्चा! कोई

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

फ़िकर नहीं, अल्लाह तुम्हारा भला करेगा।" कुमारी आशीर्वाद को सुनकर अपनी परिचारिका के साथ चुपचाप चली गई।

(३)

अँधेरा काफ़ी हो चुका था। पुल पर से आदमियों का आना जाना भी कम हो चला था। इतने में एक ७–८ वर्ष के बालक ने आकर कहा—"अब्बा चलो शाम होगई।" परिचित स्वर को सुनकर बड़े प्रेम से फ़कीर ने कहा—"बेटा! रमज़ान! तू आ गया?" फिर अपनी झोली सँभाल कर लकड़ी हाथ में ले बालक की अँगुली के सहारे धीरे २ चल दिया।

कुछ दूर चल कर दोनों एक छोटी सी झोपड़ी में प्रविष्ट हुये। एक अन्धे और वृद्ध फ़कीर की झोपड़ी में क्या था इसका वर्णन न करना ही अच्छा होगा। कुटी में चिराग़ पहले ही से जल रहा था उसी के उजाले में लड़के ने बुड्ढे की झोली का सब सामान निकाला। पैसों और धेलों को उसने चुनकर बुड्ढे से कहा—"अब्बा यह फूल क्यों ले आये?" बुड्ढे ने कुछ सोचा, फिर एक गहरा श्वास लेकर कहा—"सब अच्छा है बेटा, यही दिया लिया सब के काम आयगा।

(४)

उस फूल वाली घटना को बीते आज ३ साल हो चुके हैं। सवेरे का समय है, अभी सूरज नहीं निकला है। कुछ-कुछ लाली आसमान में फैलकर बादल के छोटे २ टुकड़ों को रँग रही है। वही नदी का किनारा है। पानी मानव-जीवन की तरह धीरे २ खिसका जा रहा है। नदी के किनारे आज भी वही बुड्ढा फ़कीर उसी तरह आशीर्वाद की वर्षा कर रहा है।

सहसा बुर्का डाले हुए दो युवतियाँ फ़कीर के पास आकर खड़ी हो गईं। एक ने धीरे से छोटे शिशु को अन्दर से निकाल कर बुड्ढे के पैरों पर रख दिया, और बोली—

"बाबा! लो तुम्हारी ही दुआ का फल है"

बुड्ढे ने बालक के मस्तक पर हाथ फेर कर उसे टटोला, फिर किसी पुरानी स्मृति को जागृत करके भरी हुई आवाज़ में कहा—

"बेटी यह तेरा वही नरगिस का फूल है।"

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

गुलाब का फूल

(ले०— श्री बुद्धिसागर वर्मा बी. ए., एल. टी., तथा आयुर्वेद विशारद श्री शिवनारायण 'प्रेम')

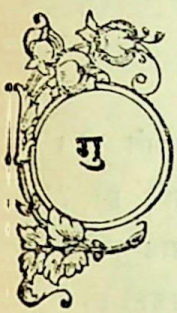

गुलाब ! प्यारे गुलाब !! आज मैं इस असार संसार की कठिन तथा उष्ण आशा वायु से संतप्त हो कर तुम्हारे सन्निकट किञ्चित् विश्राम करने आया हूं, आओ चलते चलते दो दो बातें ही करते चलें।

देखो ! तुम अपने सौन्दर्य्य के मद में मत्त हो कर कहीं मेरा तिरस्कार न कर देना। कदाचित् तुम अपने आप को पुष्प-राज समझते हो। परन्तु भाई यदि ज्ञान की दृष्टि से अवलोकन किया जाय तो सब पुष्प समान हैं। निस्सन्देह यह सत्य है कि किसी पुष्प में सौन्दर्य्य विशेष होता है तो सुगन्ध नहीं होती और किसी में सुगन्ध होती है तो रूप नहीं होता, परन्तु तुम दोनों गुणों से विभूषित हो। तोभी यह रूप और गन्ध कितने दिनों तक रहेगा ? कितने दिनों तक तुम इन को मोद में अठखेलियां करोगे ? भाई ! यह तो चार दिनों की चांदनी है, विनाशवान् है और असत्य है। इन पर इतराना बड़ी भारी भूल है।

अस्तु, इस अहंकार को त्यागो और सूक्ष्म दृष्टि से देखो, हम और तुम बहुत अंशों में तुल्य हैं और यही कारण है कि मैं अपना हृदय शीतल करने तुम्हारे पास आया हूँ।

हे सुपुष्प ! तुम्हारा शैशव नितान्त व्यतीत हो चुका और युवावस्था का आरम्भ है। सम्प्रति तुम पूर्ण रूप से खिल चुके हो और मत्त हो हो कर अपने आप में नहीं समाते। यही हाल मेरा भी है। मैं भी युवावस्था की प्रथम निसेनी पर चढ़ चुका और विकसित भी हो चुका हूं। किन्तु मुझे तुम्हारे समान मद तथा अहंकार नहीं है। क्यों नहीं है ? यह भी आगे चल कर प्रकट कर दूँगा। तुम से छिपाने की कौन बात है। परन्तु मुझे आशंका है कि कहीं क्यों का उत्तर पा कर तुम्हारी भी हमारी सी दशा न हो जाय। अच्छा सुनो कहता हूँ, रो रो कर दुःखभरी गाथा सुनाता हूं। धैर्य्य के साथ सुनो !

भाई ! हमारा तुम्हारा सुख और यौवन कुछ भी नहीं है ! अंधेका शिकार है। घोर कारागार है। मृगतृष्णा का जल है और सच पूछो तो संध्या कालीन अरुण अम्बर पटल है। देखते ही देखते बात की बात में ढल जाता है। जिन सरस मुख-मण्डलों को मैं बहुत प्यार करता था उन में से अनेकों का देखते ही देखते खोज मिट गया। उनकी वह जीवन सुगन्धि काल-वायु उड़ा लेगया और दिन प्रतिदिन यही दशा दृष्टि-गोचर होती जा रही है। जो आज सुख से बैठा है नहीं मालूम कल उस की क्या दशा होगी। मुझे स्वयं अपना ही भविष्य ज्ञान नहीं है। न जाने कब कालके भयंकर गाल में जाने का निमंत्रण आपहुँचे। हा ! वह सुन्दर मूर्त्तियाँ जिनको देख २ कर मैं प्रसन्न हुआ करता था, जिन से मैंने नाना भाँति की बातें की थीं, नहीं नहीं, प्रत्युत जिन पर मैंने कभी २ क्रोध का आवेग भी प्रकट किया था,

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

आज यहाँ नहीं है। कहाँ हैं ? कुछ ज्ञात नहीं। ढूँढने से उनका कहीं भी पता नहीं मिलता। उनकी आत्मायें न जाने कहाँ उड़कर विलुप्त होगईं और शरीर, जिसे वे नित्य धोकर सजाया करते थे, क्षार हो गया अथवा धूल में मिल कर अणु एवं परमाणुओं के रूप में उड़ गया। किसी ने भी साथ नहीं दिया ! कुछ भी साथ न जा सका। हाँ सुनते हैं कि इन्द्रियां और मन सूक्ष्म रूप से साथ गये हैं परन्तु ज्ञात नहीं क्या बात है। आश्चर्य्य है ! शोक का स्थान है ! किन्तु नहीं २ शोक व्यर्थ है, बड़े आनन्द की बात है। परन्तु इस से भी सन्तोष नहीं हुआ। तो फिर क्या कहें ? कुछ समझ में नहीं आता। अजब झमेला है।

क्या मैंने वह सब स्वप्न देखा था ? अब भी तो कभी २ वह मूर्तियां स्वप्न में दृष्टि गोचर होती हैं परन्तु वे क्या हैं ? क्या वे उन की प्रेतात्मायें हैं ? नहीं असम्भव। यह केवल स्मृति विभ्रम है। अब वे सब ऐसे दीखते हैं मानो संसार में थे ही नहीं। हाय ! क्या उन का अब पुनर्मिलन न होगा ? क्या उन से फिर कभी वार्तालाप न कर सकूंगा ? क्या दुबारा अब उन की प्यारी कण्ठ ध्वनि श्रवण गोचर न होगी ? नहीं २ यह केवल विडम्बनामात्र है। हाँ ! Had I ever known before, would I had loved them more. नहीं भाई मैं भूल गया, रोना धोना तो सब व्यर्थ है। अच्छा तो फिर अब मैं न रोऊंगा। बस ! अरे जब मूल ही नष्ट होगई तो फूल फल कैसे ? जब सर-सलिल ही शुष्क हो गया तो कमल की उत्पत्ति कैसी ? पुष्प ही सूख गया तब गन्ध कैसी ? जब प्रकाश हो गया तब अन्धकार कैसा ? जब सर्वस्व छिन गया तब हाय २ कैसी ? और भाई जब जीव ही निकल गया तब उसके लिये रोना कैसा ? पुनर्मिलन कैसा ? आशा कैसी ? और शोक कैसा ? सब व्यर्थ है।

अच्छा पुष्प राज ! तो फिर आओ हम तुम मिल कर हँसें। तुम अपने मद में चूर हो कर हँसो, मैं रोना व्यर्थ जान कर हँसूं। परन्तु भाई नहीं, मद में चूर हो कर न हँसना। देखो एक कवि क्या कहता है—

अहो ! कुसुम कमनीय ! कहो क्यों फूले नहीं समाते हो।
कुछ विचित्र ही रंग दिखाते मन्द २ मुसकाते हो ?
हम भी तो कुछ सुनें किस लिये इतना है उल्लास तुम्हें ?
बात २ पर खिल खिल कर तुम किसकी हँसी उड़ाते हो ?
कैसी हवा लगी यह तुम को क्षणिक विभव में भूलो मत।
अभी सवेरा है कुछ सोचो अवसर व्यर्थ गँवाते हो ॥
रूप रंग रस जिसके बल पर पैर न भू पर तुम रखते।
है दम भर का दृश्य जगत् में क्यों इतना इतराते हो ?
भौंरा रसिक पास आ आ कर करता है प्रार्थना अगर।
तो क्यों नहीं प्रेम से मिल कर अपना उसे बनाते हो ?
भौंरा काला है कुरूप है हम हैं सुन्दर मत समझो।
उस वसन्त का है वह साथी जिसके तुम कहलाते हो ॥
कर उपभोग और सब तुम को इधर उधर रख देते हैं।
पर यह सर धुनता है जब तुम दले मले कुम्हलाते हो ॥
कोमल हूं कमनीय कलेवर देवों के मन भाया हूं।
रसिकों का शृङ्गार सहज हूं यह जो मन में लाते हो ॥
रसिक और रसिकायें मुझ को आदर से अपनायेंगी।
बना गले का हार रहूंगा यही सोच इतराते हो ॥
तो इस पर भी तुम्हें फूलना या इतराना उचित नहीं।
धन्यवाद दो झुक कर उसको जिसका रूप दिखाते हो ॥

अब तनिक विचार कर देखो कि तुम्हारी भी यही दशा है जो मेरी। देखो न ! तुम्हारे ही निकटवर्ती कितने ही गर्वीले स्वरूपवान तुम्हारे सजातीय एक २ कर के लुप्त हो गये। उनका कहीं पता तक नहीं रहा। किसी को किसी ने

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

तोड़ कर नोंच डाला; कोई अनायास स्वयमेव ही शुष्क हो गया और इस प्रकार अपनी जीवन लीला को समाप्त कर चला। उसकी जीवनरूपी सुगन्धि, वायु उड़ा ले गया और वह कोमल कलेवर जो हँस २ कर पत्तियों के साथ अठखेलियां किया करता था छिन्न-भिन्न एवं शुष्क हो कर अदृश्य हो गया अथवा जल में गिर कर सड़गया और घोरतर दुर्गन्ध उत्पन्न करता हुआ दृष्टि से ओझल हो गया। यही नहीं तुम्हारे शेष साथी भी इसी भाँति एक २ कर के विलीयमान होते जा रहे हैं। और भाई तुम— तुम भी सदा ऐसे ही न रहोगे। तुम्हारा भी एक न एक दिन अन्त होना है, चाहे कलहो या आज, फिर यह मद क्यों? अहंकार क्यों? और गर्व की हँसी क्यों? रोना मत, हँसो, परन्तु गर्व के साथ नहीं। सब को अनित्य जान कर, निरहङ्कार हो कर उस प्रभु की लीला देख २ कर, और अपने आप को उसी की सुमधुर गोद में सौंप कर हँसो। और भाई हँसते ही हँसते सब की भाँति जीवन लीला को समाप्त कर के चल बसो।

प्रिय सुमनेश! जिन को हमने कुछ समय पहले बालक के रूप में देखा था। जो दिगम्बर हो कर, तोतरी बानी से बोल २ कर अपनी शब्द माधुरी से सब को मोहित किया करते थे। जिन के मुख मण्डल पर पवित्र सुकुमारता झलकती थी। जो संसार की चिन्ताग्नि से कोसों दूर थे आज उन्हीं को देखता हूँ कि युवक एवं युवती के वेष में घूम रहे हैं। उन की वह मधुर तोतरी बानी अब नहीं रही है प्रत्युत कठोरता, लज्जा एवं विषयासक्ति का उन में समावेश हो चुका है। मुखों पर वह कोमलता नहीं रही। अब तो वह संसार की भयावह चिन्ता, शोक, मोह, भय, ईर्ष्या एवं मदादि से परिपूर्ण होरहे हैं। नहीं मालूम वह बाल्यस्वरूप उन से किसने छीन लिया? वह मधुरता कहां चली गई? वह पवित्र सुकुमारता कहां विलीन हो गई? वह फूल कौन तोड़ ले गया? वह चांदनी सी कहां जा छिपी? वह जल की तरंग कहां विलुप्त हो गई? इसी भांति जो कल युवावस्था को प्राप्त था आज वही वृद्धावस्था को प्राप्त है। कल जिस युवक के स्वरूप को देख २ कर स्त्रियों के हृदयों पर बिजली सी दौड़ने लगती थी, जिस को देखते ही सभी का उस से एक दो बात करने को जी चाहता था, जो आप अपने पर मुग्ध था, जिस का स्वरूपाभिमान चरम सीमा को पहुंच चुका था, जो यह जानता था कि मैं जिधर ही सुमधुर मुसकान के छीटे फेंक दूँगा उधर ही हृदयों पर वज्रपात होने लगेंगे। जो अपने ऊपर फूला नहीं समाता था तथा यही सब सोच कर जो हमारे ऐसे प्राणियों से बात भी नहीं करता था, क्या जानते हो सुपुष्प! आज उस का क्या हाल है? भाई अब उस का वह यौवन नहीं रहा, वह सुषमा नष्ट हो चुकी, वह रूप का बाज़ार लुट गया है, वह देहाभिमान अभ्रच्छायावत् विलीन हो चुका, वह मद चूर चूर हो गया, संसार की निस्सारता प्रकट हो चली है। अब उनको कोई देखता भी नहीं। यदि कहीं युवकों में जा बैठते हैं तो सभी यह चाहते हैं कि बुड्ढा उठ जाय। वही पुत्र जिसे इन्हों ने हँस २ कर गोद में खिलाया था, जिस पर प्राण धन सर्वस्व न्योछावर करते थे, आज जवान है और चाहता है कि बुड्ढा खूंसट मर जाय तो झगड़ा मिटे। अब कहो रूप का कोई क्या घमण्ड करे? कहां एक वह समय था कि स्त्री अथवा पुरुष जो देखता था वही प्रसन्न होता था और कहाँ यह एक समय कि पुत्र भी चाहता है कि बुड्ढा मर जाय। कहाँ वह

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सुन्दर स्वरूप, वह मनोज की सी बड़ी २ आँखें, वह उन्नत ललाट, वह तेज, वह चमकीला रंग, वह सुमधुर हँसी और कहाँ आज यह कुरूपता और हीन अवस्था जिसे देख कर भय प्रतीत होता है, देखो ! खाल लटक पड़ी है, मुख पर सिमटे पड़ गये हैं , दन्तहीनता ने और भी आनन विकट बना दिया है, वह बड़ी २ आँखें भीतर धँस गई हैं , सुन्दर केश श्वेत हो गये हैं, बल का सत्यानाश हो गया, हड्डियाँ निकल आईं, और गात्र कम्पित हो रहा है। आशा नहीं रही, भरोसा नहीं रहा और भाई ! वह उद्वेग भी अब नहीं रहा यदि कुछ रहा है तो वह जगदीश का सहारा है, दिन रात का रोना है तथा बड़ी २ मौत का ध्यान है। विषयासक्ति से घोरतर घृणा हो गई है। अब वे ही लम्बा तिलक लगाये राम २ किया करते हैं जिन्होंने युवावस्था में सैंकड़ों निरपराध पशु पक्षियों को मार कर अपनी उदर-दरी में श्मशान बनाया था, आज मांस का नाम सुन कर हरे हरे करने लगते हैं। तो बतलाओ ऐसे रूप पर अहंकार क्या करें ?

और भी सुनोगे ! जिन्हें कल बालिका एवं युवती के रूप में देखा था, जिनकी सौंदर्य-रज्जु में सैकड़ों युवक बँधे २ फिरा करते थे, जिनकी ओढ़नी को पकड़ कर स्वयं तुम्हारी डालियाँ छेड़-छाड़ किया करती थीं, जिनमें तुम से भी अधिक लावण्य एवं कोमलता थी, जो अपने सन्मुख किसी को कुछ भी नहीं समझती थीं, जिनकी झलकों और पलकों में जादू भरा था, जिनके अंग २ से मायापति की अपार माया टपक रही थी, आज कुछ ही काल के उपरान्त उनके सौंदर्य का खोज मिट गया, आज उन्हें कोई नहीं पूछता, यत्र-तत्र बकती फिरती हैं, और सबकी आँखों में काँटे की भाँति खटकती हैं, पुत्र और पुत्र-वधू बोलना नहीं चाहते पड़ोसी देखकर मुँह फेर लेते हैं, हाय ! कैसा भयंकर समय है। दन्तावली के सदस्य एक-एक करके विदाई ले रहे हैं, मुख भयानक हो रहा है, बड़ी२ आँखें बैठ गई हैं, खाल में सिमटे पड़ गये हैं, रंग फीका पड़ गया है, सुन्दर गोल गुलाबी कपोलों का अब कोई मोल नहीं रहा, सरस मुख-मण्डल अब नीरस और कुरूप बन गया है, सर्वत्र झुर्रियाँ पड़ गई हैं, हड्डियाँ निकल आई हैं। वह रूप नहीं रहा, वह तेज नहीं रहा, यौवन भी नहीं रहा, और भाई ! वह दिन भी अब नहीं रहे । यदि कुछ शेष हैं तो केवल निःसत्व जीवन है, भयंकर वेदना है, पूर्व स्मृति है, चतुर्दिक् निराशा है, घोर अंधकार है, मृत्यु का भय है तथा सर्वत्र अपमान की आशङ्का है। अब कहो ऐसे रूप पर अहंकार क्या किया जाय ?

हमारी ही क्या अपनी जाति में ही देख लो कि यही चक्कर वहाँ भी चल रहा है। प्रिय पुष्पेन्दु ! तुम्हारे देखते-ही-देखते कितने ही तुम्हारे सहोदर खिलकर मुरझा गये। सूख गये। अब उन्हें कोई पूछता भी नहीं सब तिरस्कार की दृष्टि से देखते हैं और तुम्हारे कितने ही साथी कहते होंगे कि यह सूखा पुष्प झड़ जाय तो वृक्ष की शोभा और भी बढ़ जाय । हाय ! जो कभी सुन्दर डाली पर बैठ २ मधुर सुगन्ध बरसाया करते थे, और इस भाँति रसिकों का जी तरसाया करते थे, जो कोमलता के साथ झूम-झूम कर वायु के साथ क्रीड़ा किया करते थे तथा सुरभित गंध उपहार में दिया करते थे एवं जो आबाल, वृद्ध, वनिता सभी का चित्त लुभाया करते थे, जिनको मरन्दवृन्द आनन्द से मन्द २

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

नृत्य करके रिझाया करते थे, आज उदास भाव से अलग मुख लटकाये किये पर पश्चात्ताप-सा प्रकट कर रहे हैं। मनुष्य तो क्या कीटपतंगादि भी उसके पास नहीं जाते। साथ का खेलने वाला, गन्ध का लोभी वायु अब शुष्क पुष्प को गन्ध हीन देखकर ऐसी ठोकर मारता है कि हड्डी-पसली चूर-चूर हो जाती है। सच है—

स्वारथ के सब ही सगे, बिन स्वारथ कोउ नाहिं।
सेवैं पंछी सरस तरु, निरस भये उड़ि जाहिं॥

वह कोमलता नाश हो चुकी है, वह सुगंधि ज्ञात नहीं कहाँ चली गई, वह सौन्दर्य छिन्न-भिन्न हो गया। अब केवल उदासी, कुरूपता, एवं शुष्क पंखड़ियाँ ही अवशेष हैं। वह आशा कहाँ है? वह तेज कहाँ है? वह सौन्दर्य कहाँ है, वह यौवन कहाँ है? वह कोमलता कहाँ है? और भाई वह अहंकार ही अब कहाँ है? कुछ नहीं सब ही विलीन हो चुका। भला ऐसे रूप का मद ही क्या?

जो कलियाँ कल नेत्र मूंदे पड़ी थीं वही आज खिल-खिल कर हँस रही हैं। परन्तु उन्हें नहीं मालूम कल उनकी क्या दशा होनी है।

सुमनराज! यही सब सोच कर आओ अहंकार त्याग दें और मिल कर उस मायापति के गुण गावें जो यह सब लीला कर रहा है। हँसो २ बड़ा आनन्द है। हँसो! और आओ भाई! हँसते-ही-हँसते इस माया को योंही त्याग कर चल दें। नहीं २ उस आनन्द में मिल जायँ जहाँ से फिर इस चक्कर में आना नहीं होता। सूर्य को यों ही तपने दो, चन्द्रमा को यों ही घटने बढ़ने दो, तारों को यों ही टिमटिमाने दो और पृथ्वी को इसी प्रकार सविता के चारों ओर चक्कर लगाने दो। आओ एक बार इन सब को चक्कर और तपन में छोड़ हम-तुम उसी परमानंद में मिल जाने का प्रयत्न करें जो इन सब को तपा रहा है और चक्कर में डाल रहा है अन्यथा संताप से छुटकारा न मिलेगा।

देखो भाई! सूर्य्य में ताप है, शशाङ्क में कालिमा है, आकाश में मेघ हैं, मेघ में विद्युत है, बन में सर्प हैं, फूल में कीड़े हैं, अमृत में विष हैं, करील में काँटे हैं, गाय के सींग हैं, आशा में निराशा है, सागर में तूफ़ान है, सौंदर्य में अनित्यता है, माया में आसक्ति है, आसक्ति में बन्धन है, बन्धन में दुःख है, शरीर व्याधि मन्दिर है, उसमें मल-मूत्र है, दुर्गन्ध है और सर्व प्रकार की मलिनता है। जीवन में मृत्यु का भय है, संताप है, क्लेश है और नित्य की हाय-हाय है। तो फिर सुख कहाँ है! क्या सुख संसार में है ही नहीं? नहीं २ ऐसा नहीं है। आनन्द भी है, सुख भी है परन्तु वह मायापति की गोद में है, जिस पर उस प्रभु की दया है उसे सर्वत्र आनन्द है, जिस पर कोप है उसे दुःख-ही-दुख भोगने पड़ते हैं अतः आओ हम भी उसी से लौ लगावें। प्यारे उसको भुला कर संसार में सुख नहीं है। भला तुम्हीं विचारो कि उपरोक्त बातों में मैं किसे उत्तम कहूँ, कुछ भी तो संतोषदायक नहीं है। कैसा आश्चर्य है! प्यारे, इस जंगल में राह नहीं है। अंधकार में प्रकाश नहीं है। इस संसार में सार नहीं है। यह सांसारिक सुख नित्य नहीं है और भाई इस माया में वास्तविक आनन्द भी नहीं है। अतः आओ सब को त्याग कर उस मायापति से मिल कर माया को पार करने का यत्न करें, उसकी प्रार्थना करें, एवं उसके अद्भुत गुणों का गान करें। पुष्पराज! हँसो २ बड़ा आनन्द है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्रसन्न हो जाओ हम उस प्रभु के चरणों में आये हैं तो वह अवश्य अपनी सुमधुर गोद में स्थान देंगे आओ मिल कर गायें।

कहाँ हो दर्शन दो चितचोर।
हृदय जल उठा अनल है घोर॥

जहाँ मन बहलाने जाता, वहीं पर तुम्हें खड़ा पाता।
सवेरे सायं आधी रात, हृदय में करते हो आघात॥
पवन पथ में जाते देखा, गगन में अठलाते देखा।
चन्द्र-मण्डल में, तारों में, भानु में, ज्वलित अँगारों में॥

मेघ में देखा करते शोर।
हृदय जल उठा अनल है घोर॥

लजीली विकसित कलियों में, कुञ्ज में, वन में गलियों में।
ओस-कण में, हरियाली में, वृक्ष की डाली-डाली में॥
अनाथा विधवा के घर में, कहाँ तक कहूं जगत भर में।
समाते हो, मुसकाते हो, सभी को नाच नचाते हो॥

नचादो मेरा भी मन मोर।
हृदय जल उठा अनल है घोर॥

आप से भला छिपाना क्या, जानते हो, बतलाना क्या।
देख लो भरकर एक निगाह, विरह की आग, दरश की चाह॥
तरसता रहता हूं दिन रैन, तुम्हारे बिना न आता चैन।
जलाओ या कर दो उद्धार, रहूंगा पड़ा तुम्हारे द्वार॥

चन्द्र को कैसे तजे चकोर।
हृदय जल उठा अनल है घोर॥

प्राचीन महिलायें

दोहा

आर्य जाति की नारियाँ, हुई विश्व में धन्य।
इनकी समता कर नहीं, सकीं कहीं भी अन्य॥

(घनाक्षरी)

वीरों की प्रसूता और पूता सत्य तेज वाली,
सज्जन-सुबोधों की यहाँ थी धर्म-चालिका।
उत्तम विचार का प्रचार करती थीं घना,
सुन्दर घरों में दीपती थीं दीप-मालिका॥
शिक्षा औ' सुधार में पगी थीं धैर्य-बुद्धिमती,
दीन हीन लोग की रहीं जो प्रेम-पालिका।
ऐहो कवि पुष्कर दया की प्रतिमूर्ति थीं जो,
शत्रु के समूह के लिये थीं क्रूर कालिका॥

दोहा

कोई नीच न कर सका, यों उनका अपमान।
उनके आगे रह गया, क्या किसका अभिमान॥

जगन्नारायणदेव शर्मा, विशारद-साहित्य शास्त्री

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हमें भोजन कैसे करना चाहिए

(ले०—पं० कृष्णदत्त आयुर्वेदालंकार)

वर्त्तमान सभ्यता बहुत सी ऐसी बुराइयां ले आई है जिनका कि प्राकृतिक जीवन व्यतीत करने वाला पुरुष स्वप्न में भी ख़्याल नहीं कर सकता। उदाहरण के तौर पर एक जङ्गली प्राणी को ही ले लीजिए उसे यह बताने की आवश्यकता नहीं कि उसे क्या खाना चाहिए, कैसे खाना चाहिए और कितना खाना चाहिए। क्यों कि प्रकृति ने स्वयं ही उसके लिए उचित नियम किये हुए हैं जिनके कारण वह जो कुछ खाता है उस में से जीवनीय शक्ति की वह बड़ी राशि ग्रहण कर लेता है। भूख ही उसके भोजन को नियमित करती है और यही कारण है कि वह हमेशा अपने भोजन को स्वाद से खाता है। यदि वह हमारी तरह से ही प्राकृतिक भोजन को बहुत से अस्वाभाविक तरीक़ों में से निकाल कर खाया करे तो भोजन के विषय में किसी को कुछ कहने की ज़रूरत ही न पड़े। क्यों कि यदि हम अपने भोजन को प्राकृतिक अवस्था में ग्रहण करते हैं तो हम उसे चबाने के लिये बाधित होंगे और यही सुपचन के लिए आधारभूत सब से बड़ी आवश्यकता है।

कोई भी भोजन तब तक लाभदायक नहीं हो सकता जब तक कि उसे अच्छी तरह प्रसन्नता पूर्वक न खाया जाये। जो भोजन हम खायें वह स्वादु होना चाहिए। जो भोजन जितना अधिक स्वादिष्ट होगा वह उतना ही ज़ल्दी पच जायेगा। यहाँ पर यह कहना आवश्यक है कि स्वाद के साथ साथ हमें स्वास्थ्यकारी भोजन का भी ख़्याल रखना चाहिए क्योंकि केवल स्वादु भोजन बहुत दफ़े बड़े घातक परिणामों को उत्पन्न करने वाला होता है। कहने का मतलब यह है कि हमें अपने हित के लिए प्रिय और पथ्य भोजन करना चाहिए।

प्रसन्नता के साथ साथ भोजन को ख़ूब चबा कर खाना भी लाज़मी है। यह चबाना तब तक ज़ारी रखना चाहिए जब तक कि भोजन द्रव नहीं बन जाता और अपने आप ही बिना किसी यत्न के भोजनप्रणाली में फिसल नहीं जाता भोजन को कभी भी ज़ल्दी नहीं निगलना चाहिए। भोजन के सुपरिपाक के लिए भोजन को चबा चबा कर खाना नितान्त आवश्यक है।

जब कि कोई पुरुष भोजन को चबा रहा होता है तो पाचन संस्थान चबाये हुए भोजन को लेने के लिये तैय्यार हो रहा होता है। बहुत सी आमाशय की ग्रन्थियाँ (Glands) जो कि भोजन परिपाक का काम करती हैं अपने अपने रसों को आमाशय में गिराना आरम्भ करती हैं। इस प्रकार जब भोजन आमाशय में पहुंचता है तो इस के स्वागत के लिए सब तैयारियां हो चुकी होती हैं। अच्छी तरह चबाने से तथा लाला-स्राव के भोजन के साथ मिलने से कुछ अंश में भोजन का परिपाक मुँह में ही हो जाता है। ऐसी अवस्था में काम बड़ा हलका हो

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जाता है और पचन क्रिया शान्ति पूर्वक हो जाती है। आप को यह अनुभव नहां होता कि हमारे अन्दर कोई आमाशय नामक यन्त्र है जिस की सहायता से हमारा भोजन पचता है।

भोजन पर मानसिक अवस्था का भी बड़ा असर पड़ता है इस लिए भोजन के समय आपका मन सर्वदा प्रसन्न और प्रफुल्लित रहना चाहिए। तथा आपका ध्यान भोजन के अतिरिक्त और कहीं न होना चाहिए। कई भद्र पुरुषों की यह आदत होती है कि वे खाते भी जाते हैं और अख़बार भी साथ साथ पढ़ते जाते हैं अथवा किसी गम्भीर विषय पर भोजन में बात चीत करते रहते हैं। ऐसा करना उचित नहीं क्योंकि इस से पाचन क्रिया में विघ्न पड़ता है।

भोजन करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि भोजन चाहे थोड़ा ही खाया जाये परन्तु अच्छी तरह से प्रसन्नता पूर्वक चबा चबा कर खाया जावे। यदि आपके पास भोजन के लिए थोड़ा समय हो तो उस में बहुत सा भोजन ज़ल्दी २ निगलने की कोशिश न कीजिये बल्कि जितना भोजन अच्छी तरह से किया जा सके उतना ही करना चाहिए।

विशेषतः जब आपका मन उदास हो या आपको क्रोध आया हुआ हो उस समय भोजन न करना चाहिए। यदि अकस्मात् कोई ऐसी घटना हो जावे जिस के कारण कि भोजन के समय आपका दिल प्रसन्न न हो तो कुछ खाने की अपेक्षा भूखे रहना अधिक अच्छा है। और तब तक भूखे रहना चाहिए जब तक कि आपका मन प्रसन्न न हो जाये चाहे कितना समय क्यों न बीत जाये। परन्तु, इससे यह तात्पर्य नहां कि आप नियम पूर्वक भोजन करना छोड़ दें। वास्तव में ये दोनों बातें आपेक्षिक हैं। यदि आप ठीक समय पर भोजन करने का अभ्यास करेंगे तो आप को कभी चूकने का अवसर ही नहीं मिलेगा परन्तु यदि कभी किन्हीं विशेष अवस्थाओं के कारण आप को भूख की प्रतीति ही न हो तो भोजन न करना ही उत्तम है।

भोजन के समय यदि ऐसे विषयों पर बात चीत की जाये जिनके लिए विशेष मानसिक बल और मन की एकाग्रता की आवश्यकता न हो तो कोई नुक़सान नहीं है। दूसरे शब्दों में कोई भी ऐसा कार्य्य जो कि हमारी मानसिक प्रसन्नता में विघ्न न डालता हो भोजन के समय में किया जा सकता है। इस बात पर बहुत विवाद है कि भोजन के समय जल पीना चाहिये वा नहां। मैं ऐसे लोगों के विरुद्ध हूं जो कि भोजन के समय पानी इसलिए पीते हैं ताकि ज़ल्दी खाया हुआ भोजन गले से सुगमता पूर्वक नीचे उतर जावे। मेरी सम्मति में भोजन में जल तभी पीना चाहिए जब कि हमें वास्तविक प्यास लगी हो। जिन मनुष्यों का मेदा कमज़ोर हो, भोजन देर में हज़म होता हो या अपचन रहता हो उनके लिए सब से अच्छा उपाय यह है कि वे भोजन करने से १५ मिनट या आध घण्टा पहले गर्म जल पिया करें। इस प्रकार गरम जल पीने से आमाशय शुद्ध हो जाता है। और आमाशय की ग्रन्थियां उत्तेजित होकर पाचन शक्ति को बढ़ाती हैं। गर्म जल की मात्रा आध सेर से एक पाव तक होनी चाहिए। यह परिमाण अपनी अपनी शारीरिक अवस्था के अनुसार होना चाहिए।

भोजन के समय अत्यन्त ठण्डा पानी पीना अत्यन्त हानिकारक है। बहुत से लोग भोजन के साथ बर्फ़ का पानी पीते हैं। यह बहुत बड़ी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ग़ल्ती है, इस से आमाशय ठण्डा पड़ जाता है जिस से पाचन क्रिया में विघ्न पड़ता है जिसका परिणाम अपचन होता है। साधारण ठण्डे पानी का ही उपयोग करना चाहिए।

निस्सन्देह भोजन सम्बन्धी ग़ल्तियों में सब से बड़ी ग़ल्ती बिना भूख के भोजन करना है। सभ्यदेशों में अजीर्ण के बहुत होने का एक मात्र कारण यही है। मनुष्यों के सिवाय कोई भी प्राणी हमें ऐसा न मिलेगा जो कि अच्छी भूख लगे बिना भोजन करने को तैय्यार हो। हज़ारों मनुष्य भूख न होते हुए भी नियम पूर्वक भोजन सिर्फ़ इस लिए करते हैं क्यों कि भोजन की घंटी बज गई है, भोजन का समय हो गया है। भोजन करने को कभी कर्त्तव्य के रूप में न लेना चाहिए और न ही कभी भोजन करने की आदत के कारण भोजन करना चाहिए क्योंकि जब प्रसन्नता पूर्वक सच्ची भूख लगने पर भोजन नहीं किया जाता तो वह लाभदायक भी नहीं होता।

आपने यह बहुत दफ़े सुना होगा कि "Eat to keep up his strength" इस का तात्पर्य यह है कि अपने बल को कायम रखने के लिए ही भोजन करो। यहां पर इस बात का ख्याल करना चाहिए कि कोई आदमी अधिक भोजन करने से बलवान् नहीं बनता परन्तु भोजन को अपने अन्दर Assimilate करने से व जज़्ब करने से बलवान् बनता है और भोजन का जज़्ब करना व पचना भूख और मन की प्रसन्नता पर निर्भर है।

अब यह विचार करना चाहिए कि दिन भर में कितनी वार भोजन करना उचित है। यह केवल भूख का प्रश्न है। यदि कोई मनुष्य दिन भर कठिन शारीरिक परिश्रम में व्यतीत करता है और असली भूख लगती है तो वह दिन में तीन वार भी भोजन कर सकता है और यदि कोई मानसिक कार्य करता है और असली भूख दिन में एक ही वार लगती है तो उसे एक वार भोजन करना चाहिए। इस प्रकार कहने का तात्पर्य यह है कि यह कोई नियम नहीं बनाया जा सकता कि हमें दिन में इतनी बार ही खाना चाहिए परन्तु जितनी वार जिसको सच्ची भूख लगे उसे उतनी बार भोजन करना चाहिए और यदि सच्ची भूख न लगे तो भोजन न करना चाहिए चाहे कितने ही दिन क्यों न बीत जावें।

प्रलाप

आज न जाने क्यों मेरा मन और कहीं मैं और कहीं।
अब लाख करूं कोशिश तौभी दोनों होंगें इकठौर नहीं॥
मेरा मन लोहा या चुम्बक है कौन मुझे बतला सकता।
जिसने इस को निर्माण किया शायद इस का हो उसे पता॥
मैंने उस को था याद किया या उस ने मुझ को याद किया।
कैसे कह दे! किसने किस को था आने का संवाद दिया॥
हम यही जानते हैं अब तो दोनों दिल दुःख से हैं मिलते।
या क्षणिक देह को कहीं भूल दोनों अब सुख से हैं मिलते॥

जगदीशचन्द्र शास्त्री

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

भाषा का विकास

(ले०— ब्रह्मचारी सिंहेश्वर जी)

षा क्या है ? भाषा वास्तव में विचारों और भावों को प्रकट करने के लिये निश्चित किये गये चिन्हों की एक प्रक्रिया का नाम है।

मनुष्य सामाजिक प्राणी है। वह कभी भी बिना किसी दूसरे की सहायता या सम्बन्ध के नहीं रह सकता। इस सहायता की प्राप्ति के लिए, पारस्परिक सम्बन्ध के निबाहने के लिए तथा अपने भावों को व्यक्त करने के लिये किसी माध्यम की आवश्यकता होती है और इसी माध्यम के लिए किये गये चिन्हों के समूह का नाम भाषा है। ये चिन्ह इशारे, बोल चाल के शब्द या लिखित शब्द हो सकते हैं। इशारे प्राकृतिक चिन्हों [Natural signs] की भाषा को बताते हैं। प्रारम्भ में आदमी इन्हीं प्राकृतिक चिन्हों की सहायता से अपने भाव व्यक्त किया करते थे। प्यास को दिखाने के लिये जिस प्रकार आज कल भी अपरिचित मनुष्यों में एक मनुष्य अपने हाथ को मोड़ कर मुंह के पास लेजाता है एवं पानी पीने की प्रक्रिया का अनुकरण करता है, ठीक उसी प्रकार समाज-रचना से पूर्व जंगली मनुष्य अपनी आवश्यकता मात्र को दर्शाने के लिए इन्हीं चिन्हों का उपयोग करते थे। इन चिन्हों से केवल बाह्य मोटी २ बातें भूख प्यास आदि के प्रकट करने के लिए ही काम चल सकता था, परन्तु जितना अधिक मनुष्यों में सम्बन्ध बढ़ता गया उतनी ही अधिक इस बात की आवश्यकता प्रतीत होने लगी कि आन्तरिक बातों को या विचारों को किस प्रकार प्रकट किया जाय।

प्रकृति ने मनुष्य को पांच ज्ञानेन्द्रियाँ दी हैं। उनके देने का तात्पर्य यही है कि आदमी उन का उपयोग करे। मुख से चाहे कुछ भी स्पष्ट न बोला जाय तथापि बोलने की कुछ न कुछ प्रारम्भ में अवश्य प्रवृत्ति होती है। इस बोलने को मार्जित कर धीरे २ एक एक पदार्थ को प्रकट करने के लिए भिन्न २ शब्द निश्चित हो गये। आस पास के आदमियों ने उन शब्दों से एक विशेष भाव को द्योतित करना प्रारम्भ किया। "कुत्ता" इस शब्द में और इस से द्योतित प्राणी में यद्यपि कोई सम्बन्ध नहीं है तथापि कुत्ता बोलते ही हमारे सामने चार पाँव वाले, भौंकने वाले तथा प्रेम से पूंछ हिलाने वाले एक विशेष प्राणी का चित्र आ जाता है। इस का यही कारण है कि मनुष्यों ने उस प्राणी को द्योतित करने के लिए "कुत्ता" शब्द चिन्ह के तौर पर निश्चित कर दिया है और हम भी उसी शब्द का मनोवैज्ञानिक अनुकरण के नियम के अनुसार प्रयोग करते हैं।

प्रारम्भ में केवल एक शब्द से ही अपना भाव प्रकट कर दिया करते थे परन्तु जब किन्हीं अन्य इसी प्रकार के दो भावों को मिला कर प्रकट करने की आवश्यकता प्रतीत हुई, दो पदार्थों में तुलना की आवश्यकता पड़ी, उस

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

समय दो शब्दों को संबन्ध सूचक शब्द से जोड़ कर वाक्य प्रकट करने की रीति प्रचलित हुई और इस प्रकार आगे बढ़ते २ एक एक समाज में अपने चिन्हों के अनुसार पृथक् २ भाषाएँ बन गईं।

इस प्रकार की भाषा का नाम सांकेतिक भाषा या अँग्रेजी में Conventional Language है।

सांकेतिक भाषा पाँचों इन्द्रियों के विषयों के अनुसार हो सकती थी परन्तु मनुष्यों को सुविधा शब्दोच्चारण में थी तथा उस का प्रयोग दूर स्थिति में भी हो सकता था, इस लिए शब्दात्मक भाषा का प्रचार बहुत अच्छी तरह उन्नत होता चला गया। यदि भाषा रस के चिन्हों से होती तो स्वास्थ्य की दृष्टि से वह अत्यन्त हानिप्रद होती तथा एक रस, चखने के बाद, दूसरे चखे जाने वाले रस को प्रभावित करता और इस से ठीक बात का ज्ञान न होता। यही बात गन्धों की भाषा के साथ भी ठीक है। स्पर्श की भाषा अवश्य इन दोनों भाषाओं से अच्छी रहती और उस का उपयोग गूंगों के लिए आज कल होता भी है तथापि उस में इतनी सुविधा और स्वाभाविकता नहीं जितनी की शब्दों की भाषा में है इस लिए उस का प्रचार भी नहीं हुआ।

इस प्रकार शब्दों की भाषा बन चुकने के बाद मनुष्यों को यह भी आवश्यकता हुई कि हम कालान्तर में की गई बातों को स्मरण कर सकें एवं अत्यन्त दूरस्थित मनुष्य के पास भी अपने विचार पहुँचा सकें। इस आवश्यकता के अनुसार ही भिन्न २ वर्णों को सूचित करने के लिये अक्षरों का निर्माण हुआ या दूसरे शब्दों में दृष्टि-भाषा का निर्माण हुआ। ये चिन्ह भिन्न २ समाजों के अनुसार भिन्न २ बने और भाषा के सूचक वर्णमाला के नाम से प्रयुक्त हुये। लिखने की भाषा का आविष्कार बोलने की भाषा से पीछे हुआ है और यह एक बढ़ती सभ्यता का चिन्ह है, इस में कोई संदेह नहीं तथापि यह विषय विवादास्पद ही है कि शब्द-भाषा और दृष्टि-भाषा में किस की मुख्यता है। दोनों ही अपने २ स्थान पर प्रधान हैं, दोनों मिल कर ही भाषा को पूर्ण करती हैं।

भाषा की इस सामान्य रचनाविधि का दिग्दर्शन करा चुकने के बाद अब विचार का विषय यह है कि एक शब्द भिन्न २ अर्थों को किस प्रकार प्रकट करने लगा और भिन्न २ व्यक्तियों के लिये भिन्न २ शब्दों की योजना किस प्रकार हुई; अर्थात् दूसरे शब्दों में भाषा में शब्दों की वृद्धि और उन का अर्थ निश्चित किस प्रकार हुआ। इस विषय को जानने से पहिले यह जान लेना आवश्यक है कि शब्दों के सामान्यतया दो अर्थ हो सकते हैं,—

प्रथम गुणबोधकता [Connotation] की दृष्टि से एवं द्वितीय पदार्थ बोधकता [Denotation] की दृष्टि से।

किसी शब्द के पदार्थ बोधकता की दृष्टि से अर्थ का तात्पर्य यह है कि उस शब्द से कितने पदार्थों का ग्रहण हो सकता है। धातु शब्द से चाँदी, सोना, लोहा आदि का ग्रहण होता है; यह धातु शब्द का पदार्थ बोधकता दृष्टि से अर्थ है। धातु यह संज्ञा क्यों पड़ी? यह है गुणबोधकता दृष्टि से अर्थ, अर्थात् धातु की गुण बोधकता दृष्टि से अर्थ—

१—ताप तथा विद्युत् का वाहक होना,

२—विशेष चमक वाला होना,

३—विशेष घनता वाला होना इत्यादि हैं। इन दोनों अर्थों में क्या संबन्ध है इस बात के जान लेने की भी आवश्यकता होती है। धातु शब्द

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कहने से जो दोनों दृष्टियों से अर्थ हो सकते हैं वे ऊपर दिये जा चुके हैं। श्वेत धातु कहने से सोने की गणना पहले गण से पृथक् हो जाती है अर्थात् पदार्थ बोधकता की दृष्टि से अर्थ घट जाता है परन्तु श्वेत होना एक और गुण पहले गुणों में जुड़ जाता है अर्थात् गुण बोधकता की दृष्टि से अर्थ बढ़ जाता है। इस प्रकार दोनों अर्थों में सम्बन्ध निम्न प्रकार से हुआ—

किसी संज्ञा के गुण बोधकता तथा पदार्थ-बोधकता की दृष्टि से अर्थ आपस में व्यस्त अनुपात से बदलते रहते हैं।

इस विषय में एक बात ध्यान में रखनी चाहिये कि यह नियम गणित के नियमों के अनुसार निश्चित अनुपात स्थापित नहीं करता, अपितु सामान्य सम्बन्ध प्रदर्शित करता है। श्वेत धातु की जगह यदि पीली धातु कर दिया जाय तो गुण बोधकता की दृष्टि से तो अर्थ उतना ही रहा परन्तु पदार्थ बोधकता की दृष्टि से अर्थ घट गया क्योंकि श्वेत धातुयें पीली धातुओं की अपेक्षा बहुत अधिक होती हैं।

इन अर्थों को तथा उन के पारस्परिक सम्बन्ध को जान चुकने के बाद अब देखना चाहिये कि किस प्रकार भाषा के निर्माण में शब्दों की वृद्धि तथा उनके अर्थ निश्चित होते हैं।

सामान्यतया भाषा को नियमित करने वाले दो परस्पर सर्वथा विरुद्ध विधियें हैं—

१-सामान्यीकरण बिधि [Generalization]

२-विशेषीकारण विधि [Specialization]

सामान्यीकरण उस विधि को कहते हैं जिस से एक शब्द विस्तृत क्षेत्र में प्रयुक्त होने लगता है अर्थात् पदार्थ-बोधकता की दृष्टि से शब्द का अर्थ बढ़ जाता है और गुण बोधकता की दृष्टि से अर्थ घट जाता है। इस विधि के अनुसार एक शब्द जो पहिले संकुचित क्षेत्र के लिए प्रयुक्त होता था अब अधिक विस्तृत क्षेत्र में प्रयुक्त होने लगता है।

कोयले शब्द से पहिले सामान्यतया लकड़ी के कोयले का ग्रहण होता था पर पीछे से जब पत्थर का कोयला खानों से प्राप्त हुआ तो यही शब्द उस के लिए भी प्रयुक्त होने लगा।

Character शब्द पहिले ग्रीक मूल के अर्थानुसार केवल औजारों के लिये प्रयुक्त होता था पर फिर विचार-संबन्ध के नियम के अनुसार उन से बनाये अक्षरों के चिन्हों के लिये भी इस शब्द का प्रयोग होने लगा, जिस प्रकार अब भी Greek characters, Roman characters आदि शब्दों में इस का ठीक प्रयोग है। क्योंकि प्रत्येक पदार्थ अपने विशेष चिन्हों द्वारा ज्ञापित होता है इस लिये Character शब्द का प्रयोग सामान्यी-कारण विधि से प्रत्येक पदार्थ के सामान्य गुणों या चिन्हों को प्रकट करने के लिये होने लगा।

पाद शब्द का संस्कृत में प्रयोग पहिले मनुष्यों के पैरों के लिये ही होता था पर पीछे से घोड़े आदि जानवरों के लिये भी सामान्यी कारण विधि से प्रयुक्त होने लगा। बाद में घोड़े के चार पैरों की समानता से चतुर्थांश के लिये भी इसका प्रयोग होने लगा। इस विधि को यास्क ने अपने निर्वचन प्रकारों में—"अर्थ सामान्याद्वा परीक्षेत" से प्रकट किया है।

इस प्रकार का परिवर्तन कभी एक मनुष्य द्वारा एक विशेष प्रयोजन के लिये नहीं किया जाता अपितु मनुष्यों के एक समुदाय द्वारा अक्षत तौर पर प्राकृतिक नियमों के अनुसार किया जाता है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विज्ञान में जान बूझ कर इस विधि का प्रयोग किया जाता है।

क्षार और लवण शब्द का प्रयोग पहिले केवल राख और नमक के लिये ही होता था पर इस विधि के अनुसार क्षार शब्द का प्रयोग प्रत्येक Alkali केलिये—चाहे किसी धातु का हो—लवण शब्द का प्रयोग प्रत्येक Salt के लिये–चाहे किसी धातु का हो, होने लगा।

सामान्य बोल चाल में व्यक्ति विशेष का वाचक नाम भी सामान्यीकरण विधि से विस्तृत अर्थों में प्रयुक्त होने लगता है। जैसे कालिदास और न्यूटन उस प्रत्येक मनुष्य के लिये प्रयुक्त हो सकता है जो कविता या विज्ञान में विशेष योग्यता रखता हो।

विशेषी करण से तात्पर्य उस विधि का है जिससे एक सामान्य शब्द सीमित क्षेत्र-में, पहिले से स्वल्प व्यक्तियों के लिये–प्रयुक्त होने लगता है। इस विधि में शब्द गुण बोधकता दृष्टि से बढ़ जाता है। और पदार्थ बोधकता की दृष्टि से घट जाता है। इस विधिका प्रयोग उससमय अत्यधिक आवश्यक होता है जिस समय समाज में वृद्धि हो रही हो, नये नये काम धंधे निकल रहे हों, भिन्न भिन्न पेशे बढ़ रहे हों तथा वैज्ञानिक आविष्कारों में वृद्धि हो रही हो।

अंग्रेजी में [Physician] शब्द का पहले अर्थ प्राकृतिक विज्ञान का जानने वाला था परन्तु विज्ञान की उन्नति के साथ साथ इस शब्द का प्रयोग केवल औषधोपचार के जानने वाले के लिये ही रहगया तथा भौतिक विज्ञान वेत्ता के लिये एक नये शब्द [Physicist] का निर्माण हुआ।

कविराज शब्द सामान्यतया किसी कला में निपुण आदमी के लिये प्रयुक्त होता था परन्तु पेशे की वृद्धि के साथ विशेषीकरण विधि से यह शब्द वैद्यों के लिये ही प्रयुक्त होने लगा। मंत्री शब्द का प्रयोग भी इसी विधि का उदाहरण है।

इस विधि का प्रयोग प्रायः उस स्थान पर अधिक होता है जहां कि–बहुत से पर्याय वाची शब्द होते हैं और उन सब में आवश्यकतानुसार भेद करना उचित प्रतीत होता है। उदाहरणार्थ शिक्षक, अध्यापक, एवं कल्पना, अनुमान आदि को ले सकते हैं। इस विधि का विशेष नाम असमानीकरण [Desynonymization] है।

वास्तव में किसी भाषा के लिये एक ही शब्द के बहुत पर्याय होना हानिप्रद है। सभी पर्यायवाची शब्दों के बोधन में कुछ न कुछ अन्तर अवश्य होना चाहिये। इन दो विधियों को छोड़ कर एक तीसरी विधि "कल्पानिक विस्तार" की है। इस विधि से एक सामान्य शब्द का कल्पानिक या आलंकारिक विस्तार किया जाता है। हम कहते हैं कि यह मनुष्य सिंह है, इस वाक्य में सिंह शब्द का हमने बलवान् और निडर अर्थों में आलंकारिक विस्तार किया है। इस विधि से सब अन्तिम-सत्तावादात्मक शब्द स्थिरकिये जाते हैं। अच्छी गंध, अच्छा आदमी, अच्छी बात इन सब में अच्छा शब्द जुड़ा हुआ है, यद्यपि अच्छा शब्द सामान्यतया आचार-संबन्धी गुण को बताता है तथापि उस का "काल्पनिकविस्तार" की बिधि से अन्यत्र भी प्रयोग कर दिया जाता है।

इस तरह तर्क शास्त्र के अधार पर भाषा का विकास किस तरह से हुआ इस को संक्षेप से दिखाते हुये हम इस परिणाम पर पहुंचते हैं कि जिस प्रकार समाज की वृद्धि होती है, सभ्यता में परिवर्तन होता है, उसी प्रकार से उपरोक्त नियमों से भाषा की भी वृद्धि और स्थिरता होती है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उषा.

(श्री पं० सत्यकेतु जी विद्यालंकार)

कौन बालिका सी यह प्रति दिन, पूर्व दिशा में पर्वत पर।
नृत्य किया करती है अनुपम, धीरे धीरे से आ कर॥
केश सुनहरे से बिखरा कर, रंग विरङ्गी वस्त्र पहन—
मधुर हास्य करती है अद्भुत, दिव्यरूपिणी पुलकिततन॥

(२)

इसे देखते ही जग सारा, अपनी सब सुध बुध खोकर।
नीरव स्वर में गाने लगता, इस ही लय में लय होकर॥
पुष्प नाचने लग जाते हैं, खग करने लगते कलरव।
सकल विश्व में नूतन कोई, सञ्चारित होता अनुभव॥

(३)

मन्द पवन है ताल मिलाती, नाच नाच शाखाओं पर।
जल थल नभ सब एक तान में, गाने लगते मिल मिल कर॥
क्या कोई जादूगरनी यह, जिसके एक इशारे पर।
मन्त्र मुग्ध से हुये चराचर, फिरने लगते इधर उधर॥

(४)

या स्वर्गीय अप्सरा कोई, दिव्य—लोक से यहाँ उतर।
सुप्त विश्व को आन जगाती, मधुर मधुर गाने गाकर॥
कुछ भी हो ऐ दिव्य बालिके! इसी तरह आओ प्रतिदिन।
गाओ, विश्व नचाओ, चाहे-छिप जाओ अगले ही छिन॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

घसियारी

(ले०— ब्र० वेदप्रकाश जी)

कनखल के चौक से पश्चिम की ओर एक रास्ता जाता है। सायंकाल के समय उस रास्ते के दोनों ओर घास बेचने वालों की भीड़ जमा होती है। सारे दिन के श्रम से थक कर उस समय चार पैसे मिलने की आशा से ही वे बिचारे रात रात तक बैठे रहते हैं।

श्रावण के महीने में वर्षा होने के कारण घास की कमी नहीं रहा करती है। बाग बगीचे खेत और मैदान सब जगह घास ही घास दिखाई देने लगती है। जंगल भी हरियाली से भर जाते हैं। क्योंकि सब पशु जंगल में ही अघा जाते हैं इस लिए उन दिनों घास बहुत कम तथा सस्ते दामों पर बिका करती है।

श्रावण की ही घटना है। उसी पूर्वपरिचित सड़क के दोनों ओर घसियारों की भीड़ लगी हुई है। आज कल बरसात के कारण कोई मेला भी नहीं है इस लिए रोज़ बहुत से गरीब घसियारों को निराश होकर लौटना पड़ता है। आज भी ऐसा ही हुआ, घास न बिकने वाले अभागों में एक नन्हीं नाम की छोटी सी लड़की भी है। दुर्भाग्य-वश उस की घास किसी को पसन्द नहीं आई। वह जिस किसी को देखती है, अपनी घास उलट पलट कर बार बार दिखाती है, परन्तु जो घास प्रतिदिन ४-५ आने में बिक जाती थी उस के आज कोई दो आने भी लगाने को तय्यार न हुआ। इसी प्रकार घास लेने वाले की प्रतीक्षा करते २ रात उसे वहीं होगई। कनखल से उस का गाँव ३-४ कोस पर था। अमावस की रात और उस पर आकाश में काली घटा, ऐसे में बिचारी अकेली इतनी दूर चल कर घर कैसे पहुंचती? विवश होकर उसे वहीं घास के पास ही चबूतरे पर लेटना पड़ा। उस समय बालिका के मन में तरह तरह के विचार उठने लगे। सोचने लगी— "इस अँधेरी रात में मेरे माँ बाप मुझे घर न पाकर कितने दुःख और चिन्ता में पड़ गये होंगे। मेरे सिवाय उनका घर में कोई और है भी तो नहीं। मैं ही घास बेच बाच कर जो कुछ ले जाती थी उसी से सब का गुज़ारा होता था, आज तो घास भी नहीं बिकी, अब क्या होगा?" इसी निराशा और चिन्ता में उस की आँखों से आँसू टपक पड़े। सहसा उस मकान का दरवाजा खुला और कोई आदमी बाहर आया, बालिका सहम गई। अँधेरा होने के कारण उस मनुष्य की आकृति उसे और भी भयानक लगी। पास आने पर बिजली के प्रकाश में उस की चौड़ी देह और बढ़ा हुआ पेट देख कर उसे यह पहिचानने में देर न लगी कि मैं किसी बनिये के चबूतरे पर हूँ। एक अजनबी का अपने घर के चबूतरे को बिना अपनी आज्ञा के उपयोग में लाना बानये को सहन न हो सका। उस ने डाँट कर पूछा—"क्यों री! यहाँ कैसे लेटी है।" बालिका कुछ कहना चाहती थी किन्तु गालियों की बौछार के सामने उसको आप बीती

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कहने का अवसर ही नहीं मिला। बनिये ने क्रोध पूर्वक गालियों की बौछार कर के ठोकर मार कर कहा—"रात को यहाँ कैसे आई है? डायन कहीं की, क्या तू इस घर को ही निगल लेना चाहती है?" बालिका ने अपनी दुःख-गाथा कहने का फिर उद्योग किया, परन्तु निष्फल! संयोग से उसी समय इस चिल्लाहट की भनक चौकीदार के कानों में भी पड़ी। उसके आते ही चोरी के अपराध में बालिका सिपाही के सपुर्द करदी गई।

(२)

आधी रात बीत चुकी है परन्तु अभी तक नन्ही घर नहीं पहुंची। १०-११ बजे तक तो माँ धैर्य-पूर्वक बाट जोहती रही, परन्तु इसके आगे वह अपने वात्सल्यमय दुर्बल हृदय को काबू न कर सकी। इस समय उसका अपार स्नेह जाग उठा। चिन्ता और व्याकुलता के मारे उसकी आँखें भर आईं। सोचने लगी— "बेटी पर न जाने कौन-सी आफत आगई जो अब तक घर नहीं लौटी।" कभी ख़याल करती—"रास्ते में न जाने किस हालत में होगी! सुना है मुसलमानों के जत्थे लड़के-लड़कियों को उठा ले जाते हैं। कहीं वह बिचारी भी इनके जाल में न फँस गई हो। हे भगवान तुम्हीं रक्षक हो!" परन्तु उस बिचारी वृद्धा माँ को यह मालूम न था कि उन मुसलमानों के जाल से भी भयंकर एक और जाल है और वह है हिन्दुओं की अनुदारता, अपनी ही जाति के मनुष्यों से घृणा। उस बेचारी को क्या मालूम था कि उसकी प्यारी कन्या भी इसी हिन्दुओं की अनुदारता-रूपी कीचड़ में फँस गई है।

इसी प्रकार की विकलता और चिन्ता में उस बेचारी की वह रात जैसे-तैसे करके कटी। सवेरा होते ही उसने अपने सारे गाँव की एक २ कुटिया ढूँढ डाली परन्तु उसकी नन्ही उसे नहीं मिली। वह कनखल गई, बहुत खोजा पर कुछ पता न चला। इतने में चरवाहे पर किसी ने कहा— मैंने उसे जेलखाने की तरफ ले जाते हुए एक सिपाही को देखा है। यह सुनते ही वृद्धा दुश्चिन्ता और भय के मारे हतबुद्धि सी हो गई। कुछ देर बाद होश आने पर अपनी उन्हीं अशक्त टाँगों से वह जेलखाने पहुंची। उस समय वह जिसे भी लाल पगड़ी पहिने देखती उसी के पैरों पड़कर गिड़गिड़ाती— "ए भइया, मेरी भोली-भाली बिटिया चोरी क्या जाने, मुझ अभागी पर तरस खाओ, भगवान के लिये उसे छोड़ दो।" पर वहाँ उस बिचारी की कौन सुनता है!

न ही घास बेचकर जो कुछ लाती थी माता उसमें से प्रतिदिन २-४ पैसे बचा लेती थी इसी प्रकार उसने १५-२०) जोड़ लिये थे। इस छोटी-सी पूँजी को वह अपनी बिटिया के विवाह पर खर्च करना चाहती थी। इस समय उसने वह जीवन भर की कमाई भी पुलिस के हवाले की, पर इतनी छोटी रकम पुलिस के देवता को प्रसन्न करने के लिये पर्याप्त न थी। बिचारी रोते-रोते घर लौटी। आखिर ४-५ दिन बाद जज ने फैसला सुना दिया— नन्ही को ३ वर्ष की कड़ी कैद की सजा दी गई। सुनते ही वृद्धा माता चक्कर खाकर गिर पड़ी।

कई दिनों तक कनखल के बाजार में और नन्ही के गाँव में यही चर्चा रहती है कि सेठ लल्लूराम जी ने एक बेकसूर घसियारी को चोरी का अपराध लगा कर कैद करवा दिया। कोई कहता— ईश्वर सबको देखता है उसके दरबार में किये का

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

फल सब को मिलता है। अब न सही अगले जनम में सही।

कोई कहता—अरे भाई, अमीर ऐसे ही पत्थर होते हैं उनके दिलों तक गरीबों की आह नहीं पहुंचती। लक्ष्मी के आगे तो ईश्वर भी हार मानता है।

(३)

आज गंगा बहुत बढ़ रही है। बालक, युवा, वृद्ध सभी गंगा के किनारे इकट्ठे हो रहे हैं। ज्योतिषी लोग पत्रे खोल कर कह रहे हैं—"आज कल के दिन कनखल के लिये शुभ नहीं हैं? कोई बड़ी आफ़त आती दीखती है।" एक बुड्ढा बोल उठा—"भाई! हमने तो अपनी उमर भर में एक बार बहिया देखी है। अब की देखें क्या होता है। भगवान् मालिक हैं।" एक जवान बोल उठा—"अरे रहने दो। अभी पर के पानी बढ़ा था तब भी लोगों ने बहिया-बहिया का शोर मचा रखा था।" तीसरा बोला—"अजी राम कहो, ऐसे बाढ़ आवे तो आज दुनियाँ उठ चुकी होती। इससे ऊँचा पानी तो परके ही आया था।" एक ओर से धीमी-सी यह भी आवाज़ आई—"उसकी खेव कौन जाने, दुनियाँ के लिये उसका चुल्लू भर पानी भी बहुत है।" लोग कुछ निश्चित नहीं कर सके। आखिरकार जैसे-तैसे करके शंकित हृदयों से लौटने लगे। लोगों का जत्था अभी चौक तक ही गया होगा कि पीछे देखा तो सर्पराज की तरह सहस्रों जीभें लपलपाता हुआ पानी का प्रवाह नगर में घुसा आ रहा है। पल भर में चारों ओर पानी-ही-पानी हो गया। सारे नगर में हल्ला मच गया। लोग जान छोड़ कर भागने लगे। जिन लोगों के घरों के सामने अभी पानी नहीं पहुंचा था वे माल-असबाब बचाने की फिकर में पड़ गये।

सेठ लल्लूराम चिल्ला-चिल्लाकर कह रहे हैं—"अरे मैंने तो अभी २०० बोरी आटे की भरी थी। हाय! सब पानी में धँसा जा रहा है। अरे! उस खाँड के गोदाम का तो शरबत ही बन गया! अरे कोई दौड़ो तो सही।"

परन्तु उस समय कौन किसकी सुनता है देखते-ही-देखते उनका घर पानी से भर गया अब प्राणों के लाले भी पड़ गये। सामने मौत नाचती हुई दिखाई देने लगी। देखते-ही-देखते एक दीवार गिरी और बड़ा लड़का दबकर मर गया। अब तो उसके सामने सारा किया कराया घूमने लगा। लड़के की मृत्यु पर भी उसकी आँखों से आँसू नहीं निकल सके। जब सामने अपनी मौत दिखाई दे रही है तब दूसरे के लिये रोना कैसा?

आखिर दो-तीन दिन बाद गंगा की बाढ़ घट गई। सेठ लल्लूराम जैसे तैसे करके बच गए। लड़के की मौत का रोना धोना भी मच गया। इस समय सेठ जी के साथ उनकी स्त्री और दो लड़कियाँ भी बच गई थीं। पर खाने को एक पैसा भी पास नहीं बचा। जिस जमीन में रुपये गाड़े थे गंगा उस तक को काट ले गई थी। ऐसे वक़्त में किसी ने उधार देना भी न माना, और तो और जो लोग देनदार थे वे भी अपनी बात से टल गये।

[४]

हम समझते हैं कि संसार में निर्धन मनुष्य बहुत दुःखी होते हैं, परन्तु वास्तव में सुख दुःख धन के साथ सम्बन्ध नहीं रखते। उन का सम्बन्ध दिल के साथ होता है। एक घसि-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

यारे का निरन्तर धूप में घास काटने के बाद अपनी सबेरे की मोटी रोटियाँ खाने का सुख मोहनभोग से कम नहीं है। निरन्तर परिश्रम के बाद रात में जमीन पर सोने का सुख गदेलों पर सोने के सुख से कहीं बढ़कर है। आज जिस दिन की हम बात करने लगे हैं उस समय पौष का महीना है। कठोर सर्दियों की तड़के की ओस में भी घसियारे आनन्द से घास काट रहे हैं।

जिस दिन नन्ही कैद से छुटी पहले की तरह अपने साथियों के साथ काम पर जाने लगी। वह सोफ़ते में प्रायः अपने जेलखाने के दिनों की कहानी कहा करती है। आज भी वही बात चल रही है। उस के कष्टों की कहानी से उत्तेजित होकर घसियारे बीच २ में ही सेठ लल्लूराम को भली बुरी सुनाने लगते हैं। सब घसियारे इन्हीं आनन्दों में मग्न हैं परन्तु उन में एक घसियारा अपने सब साथियों से दूर बैठा चिन्ता मग्न है ऐसा मालूम पड़ता है कि वह अपने पुराने बीते हुए दिनों की स्मृति में लीन है। चिन्तित मनुष्य को सुख कहाँ? घसियारा बहुत देर तक अपने को सम्हाले बैठा रहा आखिर उससे रहा नहीं गया। वह भाग कर नन्हीं के पैरों में लिपट गया, साथ ही उसके मुँह से एक चीख निकली, थोड़ी देर बाद शब्द सुनाई पड़ेः— "मैं ही वह हत्यारा लल्लूराम हूं।" उस समय सब लोग आश्चर्य और करुणा से भरे हुये दिल लेकर खड़े रह गये। किसी के मुँह से एक शब्द भी न निकला।

चेतावनी

(श्री पं० शिवनारायण 'प्रेम')

(१)

वीरो उठ कर क्यों न देश का मान बढ़ाओ ।
नीचा भारत शीश यत्न करि उच्च उठाओ ।
फिरता दर दर हाय सभों की ठोकर खाता ।
तीस कोटि हैं पुत्र दुखी पर भारत माता ॥
क्या उसने पैदा किये इतने सुत बेकाज ही ।
हाय विधाता बुद्धि दे सोचें समझें आज ही ॥

(२)

वही यवन जन जो कि कभी थे शिष्य कहाते ।
करि करि अब अपमान हमें हा नीच बताते ।
सुन कर शर सम बैन नहीं क्यों फटती छाती ।
लादे उर पर हमें भारती अश्रु बहाती ॥
इस से तो यह था भला हा गिर पड़ती गाज ही ।
हे ईश्वर ! बल बुद्धि दे करुणाकर के आज ही ॥

(३)

भूल गये क्या हम प्रताप राना का बाना ।
जो बस कर इस देश नहीं भारत दुख जाना ।
तन मन धन से जुटो सहो दुख घोर अपारा ।
भारत पर बलिदान करो नर जीवन प्यारा ॥
दब्बू होना क्या कहीं वीरो ! तुम को छाज ही ।
कमर बांध तैयार हो प्यारो उठ कर आज ही ॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सुदूर पूर्व की समस्या

(गतांक से आगे)

[ले०— एक गुरुकुल का ब्रह्मचारी]

"शंघाई" में जिस प्रकार विदेशी राष्ट्र सशस्त्र अपनी जान माल की रक्षा करने को तैनात हैं वह बताता है कि कुछ काल की बात है जब चीनियों और विदेशियों में युद्ध छिड़ जायगा। यदि ऐसा हुआ तो सम्पूर्ण विदेशियों के विरोध में चीन लड़ाई छेड़ देगा।

पर हमें स्मरण रखना चाहिए कि चीन के नेता विदेशियों के प्रति घृणा को पसन्द नहीं करते, जहां तक बनता है रोकने का यत्न करते हैं। डा. चांग वो लिंग सदृश नेता नवयुवकों को उपदेश देते हैं—"नवयुवको ! विदेशियों को कुचलने से चीन की रक्षा न होगी। उठो और अपने आप को सुधारो, चरित्र का निर्माण करो, विनाश को बन्द करो, जनता को शिक्षित करो, देश को संगठित करो, चीन को मजबूत और दृढ़ बनाओ ताकि वह संसार को अपनी सभ्यता की भेंट अर्पित कर सके, फिर तुम्हें विदेशियों से डरने का मौका नहीं रहेगा।" इससे स्पष्ट है कि चीन अपने को संयम में रखने की कितनी कोशिश कर रहा है।

चीन सामरिक शक्ति की दृष्टि से यद्यपि संसार में नगण्य है पर ४५ करोड़ आदमियों की संगठित राष्ट्रीयता और स्वातंत्र्य की प्रबल भावना का विरोध करना किसी भी संसार की शक्ति का काम नहीं है। बलवती से बलवती शक्ति को भी एक दिन घुटने टेक देने पड़ेंगे। आज चीन यदि विदेशी शक्तियों को अपने बन्दरगाहों और अपनी जमीन पर नहीं देखना चाहता और उन को निकालने के लिए सब कुछ करने को उद्यत है तो उसका कारण भी योरोपियन राष्ट्र स्वयमेव हैं। वर्सेलीज़ की सन्धि के द्वारा जर्मनी को मित्र-राष्ट्रों ने क्यूचाऊँ से हटने के लिए बाधित किया। जर्मनी के क्यूचाऊँ खाली करने से चीनियों को विश्वास होगया कि अन्यान्य शक्तियें भी चीन की भूमि से हटाई जा सकती हैं। चीनियों में आत्मविश्वास और आत्मसम्मान का भाव पैदा हो गया है जो आज विदेशियों के लिए खतरनाक साबित हो रहा है।

चीन और रूस— बृटेन के समाचारपत्र दक्षिणीय चीन से उठी क्रान्ति को बोल्शेवी रूस का बृटेन के विरुद्ध प्रचार कार्य बताते हैं। उन का कहना है कि बोलशेविक सरकार चीन में बोलशेविज्म का प्रचार कर रही है, और हमारे विरुद्ध भड़का रही है। बृटेन के साम्राज्य को नष्ट करने के लिए यह सब कुछ किया जा रहा है। परन्तु बात ऐसी नहीं है। यह सत्य है कि आज चीन को प्रकृत सहायता रूस से मिल रही है। शंघाई के पतन से मास्को में खुशी मनाई जाती है। रूसी जनता उत्साह के साथ बधाई देती है। पर उस का कारण बोलशेविज्म का प्रचार नहीं है, योरोपियन राष्ट्रों की भूलें हैं। चीनी दूत-मण्डल प्रत्येक राष्ट्र के पास सहायता के लिए गया। अपनी सैनिक शक्ति की दृढ़ता के लिए सब के यहां अपने विद्यार्थी शिक्षा के लिये भेजे परन्तु रूस के सिवाय उसका स्वागत होना तो दूर रहा इस के विपरीत सब देशों में अपमान ही हुआ। यदि आज चीन रूस से सहायता ले रहा है तो अपने आप को बेचकर नहीं। उसने बोलशेविक होने की प्रतिज्ञा नहीं की है। डा० सनयात सेन के शब्दों में—"अपनी क्रान्ति को रचनात्मक सीढ़ी तक ले जाने के लिए हम क्यों न उनकी सहायता स्वीकार करें जो हमारी सहायता के लिए तय्यार हैं।" चीन इस उद्देश्य से सहायता ले रहा है। रूस और चीन का एक उद्देश्य है— सैनिक वाद को नष्ट करना, इसी लिये दोनों मिले हुए हैं। यदि कोई अराजकता वादी इन के साथ है तो इस का कारण C.H.Weu के शब्दों में "मैं अराजकतावादी की हैसियत से क्यूमिनटांग में सम्मिलित

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हुआ हूं, इस लिए नहीं कि मैं अराजकतावादी नहीं रहा, पर इस कारण कि इस सैनिकवाद के नीचे अराजकतावाद का कैसे प्रचार किया जा सकता है, यह समझ नहीं पड़ता।" यह बात नहीं कि रूस इस बात को समझता न हो। रूस जानता है कि बोलशेविज्म का प्रचार चीन में नहीं हो सकता। चीन की प्राचीन सभ्यता, आचारव्यवहार, सामाजिक संगठन ने उसे ऐसा बना दिया है जिस में बोलशेविज्म का पौदा शीघ्र ही फूल और फल नहीं सकता। इस बात को रूसी भी जानते हैं। आज से चार साल पहले रूसी प्रतिनिधि मण्डल स्व. डा. सनयात सेन से मिलने गया था। रूसी प्रतिनिधि मण्डल ने डाक्टर से पूछा कि आप का Three-people's doctrine कितने सालों में चीन में फैल जायगा। डाक्टर सनयात ने गम्भीरता से उत्तर दिया ५० साल में। यही प्रश्न सोवियेट के प्रतिनिधि मण्डल से पूछे जाने पर उसने कहा— "हम आशा करते हैं कि हमारा कम्यूनिज्म २०० साल के अन्दर (चीन में) फैलेगा।" चीन की यह हलचल सर्वथा राष्ट्रीय है इस बात को रूस ही नहीं लण्डन का Saturday Review भी समझता है। वह लिखता है "कैन्टन के आन्दोलन की यथार्थ-प्रकृति को पहलेपहल प्रेस के अन्धड़ से बोलशेविक अठपवस्था के पीछे छिपा दिया गया। वस्तुतः सत्य यह है— कैन्टन का आन्दोलन राष्ट्रीय है, बोलशेविक नहीं और इस के नेता प्रत्येक साधन को अपनी उद्देश्य सिद्धि के लिए उपयोग करने को उद्यत हैं चाहे वह मास्को ही क्यों न हो। हमने निरन्तर प्रचार किया है कि सत्य के प्रकाश में केन्टन के आन्दोलन को वर्तमान राष्ट्रीय चीन का केन्द्र समझना चाहिए।" ऊपर के उद्धरण इस बात के द्योतक हैं कि चीन का यह आन्दोलन राष्ट्रीय है, रूस का इस में कोई हाथ नहीं है। चीन यदि रूस से सहायता ले रहा है तो इस लिए कि मित्र राष्ट्रों ने बाधित किया है। जैसा कि एक प्रसिद्ध अमेरिकन प्रोफेसर और लेखक ने लिखा है। इस बात को रूसी दूतावास की पीकिङ्ग गवर्मेण्ट के द्वारा तलाशी लेना और उस पर भी रूस का शान्त रहना, जरा भी उत्तेजित न होना, 'चाँग की आई शेक' द्वारा सैकड़ों की संख्या में बोलशेविकों का कत्ल किया जाना और रूस का क्षुब्ध न होना, न शस्त्र उठाना, आदि घटनायें पुष्ट करती हैं। यदि आज रूस और चीन परस्पर आलिंगन कर रहे हैं तो केवल योरोपियन साम्राज्यवाद के पंजे से संसार को मुक्त करने के लिए और चीनी सेनानियों के सेनावाद को नष्ट करने के लिए। पर हमें स्मरण रखना चाहिए कि चीन को शस्त्रास्त्रों की सहायता के सिवाय और सहायता करने में रूस असमर्थ है। चीन को जन शक्ति की आवश्यकता नहीं। यदि कोई आवश्यकता है तो केवल शस्त्रास्त्रों की। सैनिक शिक्षा में निपुण जर्मन सेनापति चीनी सेना को निपुण बना रहे हैं। यह भी रूस की सहायता का फल है। पर बृटेन और रूस की नीति में महान् अन्तर है जिसे एक लेखक ने इसप्रकार व्यक्त किया है! वे ठीक हैं जो चीन में खेले जाने वाले नाटक में बृटेन और रूस का युद्ध देख रहे हैं। पर इस युद्ध में बृटेन व्यवसाय का प्रतिनिधि होकर खड़ा नहीं हुआ अपितु साम्राज्य का, और रूस कम्यूनिज्म का मित्र होकर खड़ा नहीं हुआ है प्रत्युत राष्ट्रीय स्वतंत्रता का।

चीन और बृटेन तथा संसार का भावी महायुद्ध— चीन के मामले में बृटेन सब से ज्यादा दिलचस्पी ले रहा है। उसी की सेना शंघाई पहुंची हुई है। चीनी समुद्र में बृटिश जहाज ही लंगर डाले पड़े हैं। बृटिश पार्लियामेण्ट में ही सब से ज्यादा कैन्टन की विजय और पराजय के समाचार आशा और निराशा का संचार करते हैं और खलबली मचाते हैं। इसका कारण क्या है? कारण स्पष्ट है। जापान की रूस पर विजय ने सम्पूर्ण एशिया के अन्दर एक उल्लास की लहर बहा दी। एशिया ने समझा कि यदि हम प्रयत्न करें तो हम भी श्वेतांगों के बोझ से छुटकारा पा सकते हैं। इस आत्मविश्वास और आत्मसम्मान की भावना ने भारतवर्ष में स्वराज्य आन्दोलन को जन्म दिया। कैन्टन की विजय का अर्थ है भारत का हाथ से निकल जाना। बृटेन इसके लिए उद्यत नही है। भारत का छोड़ना उसे सह्य नहीं है। भारत के कारण ही बृटिश साम्राज्य की सत्ता है, शोभा है और समृद्धि है।

चीन की अपार समृद्धि पर सब की आँखें हैं यह सत्य है। बृटेन चीन की राष्ट्रीय हलचलों और प्रवृत्तियों का

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सदा से ही विरोध करता रहा है। आज भी 'चांग कि याई शेक' के राष्ट्रीय दल से अलग हो जाने के कारण प्रच्छन्न रूप से अपार हर्ष प्रगट कर रहा है। डा० सनयात सेन ने बृटेन की इस प्रवृत्ति को देख कर हाँगकाँग बन्दर की प्रभुता को नष्ट करने के लिए पर्ल (pearl) नदी के मुहाने पर ह्वाम्पो (Whampoa) नामक बन्दरगाह को बनवाया और इस में किसी हद तक डा० सनयात सेन सफल भी हुए। आज बृटेन का व्यापार चीन में घट रहा है चीन के बाजारों में जापान और जर्मनी का प्राधान्य हो रहा है। रूस बिचारे को तो केवल १५ से २० % तक व्यापारिक लाभ हुआ है। चीन की अशान्ति, अव्यवस्था और अङ्गभङ्गी तथा छिन्न-विच्छिन्नता में बृटेन का स्वार्थ है। बृटेन ने ही सब से ज्यादा आज चीनी भूमि और चीनी बन्दरगाहों पर अधिकार कर रखा है। बृटेन ही चीन के राष्ट्रीय उद्देश्यों के मार्ग में बाधक है। अतः चीन और बृटेन का युद्ध होना अवश्यम्भावी है और इस का अर्थ है संसार के भावी महायुद्ध का छिड़ जाना, जिसका अभी समय नहीं आया है। संसार की शक्तियाँ अभी पूरी तौर पर इस की तय्यारी नहीं कर पाई हैं। सैनिकशक्ति के बड़े २ आयोजन तो अभी हो ही रहे हैं लण्डन से हाँगकाँग तक अभी विमानों की यात्रा का मार्ग निष्कण्टक नहीं हुआ है। सिंगापुर का अड्डा अभी पूर्ण रूप से तैयार नहीं हो पाया है। भारत के पूर्वीय तट पर तंजौर और विजगापट्टम के बन्दरगाह भी तैयार नहीं हुए हैं। इस कारण बृटेन अभी चीन से लड़ने को उद्यत नहीं है। इससे भी बड़ी बात यह है कि चीन में स्वार्थी सेनापतियों की सत्ता विद्यमान है जो बृटेन के इशारे पर और उसकी अप्रत्यक्ष सहायता से राष्ट्रीय चीन का गला घोंटने को तैयार हैं। इसलिए बृटेन को खुल्लमखुल्ला रणाङ्गन में कूदने की अभी आवश्यकता नहीं है। सैनिकशक्ति के प्रदर्शन और धमकी से ही अभी काम चलाने का अवसर है। बृटिश राजनीति अभी अप्रत्यक्ष रूप से अपने हथकण्डों की करामात दिखायेगी। शस्त्र लेने की अभी उसे आवश्यकता नहीं।

चीन और अमेरिका— अमेरिका के विषय में ख्याल किया जाता है कि उसकी चीन के साथ सहानुभूति है। अब तक भी वह चीन में हस्तक्षेप नहीं कर रहा न मित्र राष्ट्रों का सहयोग दे रहा है। बृटेन, अमेरिका की सहानुभूति पाने को उत्सुक है। बोल्शेविक हौआ का भय दिखाकर और चीनियों के अमेरिकनों पर अत्याचारों का वर्णन कर अमेरिका की सहानुभूति प्राप्त करने का यत्न कर रहा है। अमेरिकन पत्र भी कहते हैं कि असंगठित, अशिक्षित और कमज़ोर चीन पड़ोसियों के आक्रमण का शिकार होगा पर संगठित, स्वतन्त्र चीन अमेरिका की चीजों के लिए अच्छा बाजार होगा। अमेरिका भी अनुभव करता है कि जातीय एकता, रक्त सम्बन्ध, एक स्वार्थ और एक भाषा के नाते की बृटेन क्यों दुहाई दे रहा है। पर अमेरिकन कहते हैं कि हमारा चीन में क्या स्वार्थ है? अमेरिका का चीन में कोई ऐसा स्वार्थ नहीं जिसकी वह रक्षा करे। बृटेन का है। अमेरिका का वहाँ कोई अधिकृत प्रदेश नहीं है बृटेन के पास हाँगकाँग और उलून हैं। अमेरिका को कोई रियायत नहीं प्राप्त। बृटेन को समाय कैन्टन, हाँकों, क्यूकियाँग, टिन्तरीन, त्सिनकियाँग, न्यूचनाँग में रियायतें प्राप्त हैं। अमेरिका के पास किसी प्रदेश का ठेका नहीं, बृटेन को हे-ट पास वेहाइवी का है। अमेरिका की वहाँ कोई रेलवे नहीं है। बृटेन की कैन्टन से कोउलून तक है। अमेरिका ने ७० करोड़ डालर से ८० करोड़ डालर तक वहाँ लगाया हुआ है। और बृटेन ने १ अरब डालर लगाया हुआ है। हमारा व्यापार चीन के साथ २½ करोड़ का है बृटेन का आधे बिलियन (५ खरब) मार्क का है। फिर वो कहते हैं यह राग बेसुरा भी है। आज से पहले चीन को कहा जाता था कि हमारे प्रभावक्षेत्र में यांग्टीसी की घाटी में किसी को रेल बनाने देना, ठेका देना शत्रुता का कारण होगा। अमेरिका अपने चीन-स्थित देशवासियों को कह रहा है कि अपनी जिम्मेवारी पर वहाँ रहो। हमारा कर्तव्य तुम्हारी रक्षा करना नहीं। पर रूस अमेरिका को शङ्का की दृष्टि से देखता है—वह कहता है अभी अमेरिका मुल्तवी करेगा, प्रतीक्षा करेगा और आना-कानी करेगा। पर कहता है बृटिश-साम्राज्य की अमेरिका friendly services कर रहा है।

चीन और अन्य शक्तियाँ—इन दो महाशक्तियों के अतिरिक्त जापान, फ्राँस, इटली और जर्मनी का भी चीन के साथ सम्बन्ध है। चीन ने भी अपनी नीति

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उद्घोषित करदी है कि "विदेशी साम्राज्यवाद का जूआ हटाने में चीनी राष्ट्रीयता को विदेशी शक्तियों से लोहा लेने की आवश्यकता न होगी। इस कारण राष्ट्रीय सरकार विदेशी शक्तियों से सन्धि के द्वारा उत्पन्न समस्या को सुलझाना अधिक पसन्द करेंगी।" यह राष्ट्रीय चीन की मनोवृत्ति है। विदेशियों की मनोवृत्ति ऐसी नहीं है यह प्रत्यक्ष है। वे राष्ट्रीय सरकार की सत्ता मानने को उद्यत नहीं हैं; साथ ही कहते जाते हैं कि चीन में कोई संगठित और अधिकारयुक्त सरकार स्थापित नहीं जिससे सन्धि की बातचीत प्रारम्भ की जाय। चीन और विदेशी राष्ट्रों का सम्बन्ध बहुत आसानी से हल हो सकता है यदि वे इन तीन बातों को मान लें—

I. बृटेन की सन्धि करने की इच्छा ताकि वर्तमान सब सन्धियाँ दुहराई जाँय और इससे उत्पन्न प्रश्नों पर विचार किया जाय।

II. जिन शक्तियों का स्वार्थ चीन में है वे यह समझना छोड़ दें कि चीन की राजनैतिक और आर्थिक प्रगति उनके निरीक्षण और गुरुआई के बिना हो ही नहीं सकती। और वे चीन की कर लगाने की स्वाधीनता को स्वीकार करें।

III. सब शक्तियाँ चीन में हस्तक्षेप करने से अपने आप को रोकें और सन्धि के अक्षरों का पूर्णतः पालन करें।

पर ऐसा होता दीखता नहीं। प्रशान्त महासागर संसार की शक्तियों का युद्ध-क्षेत्र बन कर रहेगा। प्रशान्त महासागर में वड़वानल भभक कर रहेगा। इटली बृटेन को चीन के मामले में कुछ न कहेगा क्योंकि इटली की महत्वाकाँक्षाओं को भूमध्य महासागर में पूर्ण करने में बृटेन इटली की सहायता करेगा। फ्राँस बृटेन की उन्नति फूटी आँखों से भी नहीं देख सकता। सुदूरपूर्व में बृटेन का प्रभाव फ्राँस के लिए असह्य है। दूसरे यह कि भूमध्य महासागर में बृटेन इटली की सहायता कर रहा है और फ्राँस का विरोध। जापान और अमेरिका के व्यापारिक स्वार्थ चीन में टकराते हैं। बृटेन ने जापान की दोस्ती छोड़कर अमेरिका के गले में हाथ डाला हुआ है। बृटेन और अमेरिका दोनों के ही मार्ग में जापान बाधक है। सिंगापुर का नौ अड्डा जापान को लक्ष्य में करके ही तैयार हो रहा है। इस कारण जापान बृटेन की सहायता नहीं कर सकता। यही कारण है कि महायुद्ध के समय जर्मन से रक्षा करने के लिए बृटेन ने जापान की सहायता ली थी पर इस बार बृटिश जान-माल की रक्षा के लिए जापानी सेनाओं के समीप रहने पर भी उनसे सहायता न लेकर भारत और माल्टा तथा इङ्गलैंड से सेनायें भेजी गईं। बृटेन अमेरिका को अपने साथ रखने के लिए सब प्रयत्न कर रहा है। इधर महान एशिया-संघ की विराट् कल्पना मूर्त रूप धारण कर रही है और जापानी भावुक हृदय इसका समर्थन कर रहा है। जापान भी एशिया का नेता और बृटेन का प्रतिद्वन्दी होने में गर्व अनुभव करता है। समस्त एशिया का मङ्गल आशीर्वाद सुन कर उसकी छाती गर्व से फूल उठती है। यही कारण है कि वह बृटेन की सहायता में उदासीन है। इस प्रकार संसार के भावी महायुद्ध में चीन, रूस और जापान एक ओर होंगे तथा दूसरी ओर बृटेन, अमेरिका होंगे। इटली, फ्राँस और जर्मनी का पक्ष मध्ययोरप और भूमध्यसागर की समस्याओं पर निर्भर है। पर यह कहा जा सकता है कि इटली इंग्लैंड का साथ देगा और जर्मनी तथा फ्राँस चीन का साथ देंगे। पर इनकी सहायता नैतिक और अप्रत्यक्ष होगी। इस समय इन शक्तियों की स्थिति का—Great Britain has stirred up a lot of excitment. Washington is uncomfortably pleased. Paris is hesitatingly sceptical. Tokyo is frankly unenthusiastic. Moscow is pondering her next move— इन शब्दों में यथार्थ चित्रण कर दिया गया है।

आर्थिक समस्या— चीन की वर्तमान हल चल का तीसरा रूप आर्थिक है। सारे संसार के व्यवसायिक क्षेत्रों में युद्ध मच रहा है चीन का युद्ध भी उसी संसार-व्यापी आर्थिक युद्ध का एक अङ्ग है। श्रमी और पूंजीपतियों की लड़ाई आज संसार व्यापी है। आज चीन में भी श्रमियों और पूञ्जीपतियों के बीच युद्ध चल रहा है। चीन का यह युद्ध केवल गृहयुद्ध ही नहीं है अपितु संसार व्यापी आर्थिक और व्यवसायिक युद्ध का यह

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

एक परिच्छेद है। निस्सन्देह श्रमियों की सेना में केवल चीनी ही हैं परन्तु पूंजीपतिओं की सेना में केवल चीनी व्यापारी और व्यवसायपति ही नहीं अपितु विदेशी व्यापारी और व्यवसायपति भी शामिल हैं। जिस समय चीनी मजदूर हड़ताल करते हैं उससमय यह आक्रमण जहाँ चीनी पूञ्जीपतियों पर होता है वहाँ विदेशी पूंजीपतियों पर भी समान भाव से होता है। चीनी मजदूर भी कम घण्टे, अधिक वेतन और उन्नत अवस्था, अन्य संसार के श्रमियों के समान चाहते हैं। यही कारण है कि बोलशेविज्म का हौआ खड़ा करने से विदेशी राष्ट्र चूकते नहीं। यह पूंजीवाद के दृढ़ दुर्ग पर चीन की गोलाबारी है। इस हलचल का वही रूप है जो किसी भी वर्तमान समय के व्यवसायिक और अर्द्ध व्यवसायिक देश में इस का रूप है।

सफलता होगी— हमने चीन की वर्तमान हलचल के भिन्न भिन्न अङ्गों पर विस्तार से अब तक विचार किया है। अब स्वभावतः प्रश्न उठता है कि क्या वर्तमान हलचल सफल होगी ? क्या चीन को विदेशियों के पंजे से छुटकारा मिल जायगा ? क्या चीन के गृहयुद्ध शान्त हो जायंगे ? और स्वार्थी सेनापतियों की लीला समाप्त हो कर उस के स्थान पर सुसंगठित राष्ट्रीय सरकार की चीन में स्थापना होगी ? हम इस का उत्तर 'हां' में न देने के लिए दुःखित हैं।

१. चीन से आये समाचार हमारी पुष्टि करते हैं। परन्तु मान भी लिया जाय कि युद्ध के परिणामस्वरूप सम्पूर्ण चीन एक सुसंगठित सरकार के नियंत्रण में आ जाय तब भी चीनी उन्नति का पथ राजपथ नहीं है। चीन की जनता अपढ़ है उस को राजनीति में दिलचस्पी नहीं है। सर्वतोभावेन सर्वसाधारण जनता राजनीति से उदासीन है। चीन में आवागमन और यातायात के साधन सर्वथा न के बराबर हैं। इस अवस्था में चीन से Dictatorship का जन्म होना अवश्यम्भावी है जिस के कारण चीन फिर अनिश्चित अवस्था में परिणत हो जायगा।

२. यह सत्य है कि चीन में अपार समृद्धि भूगर्भ में निहित है, जिस के आधार पर चीन आर्थिक उन्नति कर सकता है। परन्तु इस के लिए पूंजी की आवश्यकता है। पूंजी विदेशी वस्तुओं के बहिष्कारों, सामयिक हड़तालों, और गलियों में जलूस निकालने से नहीं आ सकती। यह ठीक है कि इन प्रक्रियाओं से जाति की नसों में खून आता है, और इन की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए। परन्तु चीन की वास्तविक आर्थिक उन्नति तभी होगी जब चीन वर्तमान सभ्यदेशों के समान व्यवसायिक देश बन जायगा, चीन को एक दीर्घकाल के लिए अन्तर्राष्ट्रीय पूंजी और विदेशियों की शिष्यता स्वीकार करनी होगी।

३. चीन में सार्वभौमसत्ता की स्थापना जनतन्त्र या लोकतन्त्र के आधार पर होने के लिए भी चीन को विदेशियों की शिष्यता दीर्घकाल के लिए स्वीकार करनी होगी। जनतन्त्र के बीजके वपन के योग्य अभी चीनी जमीन नहीं हुई है।

इस प्रकार चीन को कुछ दीर्घकाल के लिए विदेशियों के प्रभाव में रहना होगा। विदेशियों से मुक्ति अभी चीन को नहीं मिल सकती।

चीन की यह हलचल सफल नहीं होगी तब भी एशिया की सभ्यता में महान् उलट फेर करने में समर्थ होगी यह बिना किसी हिचकिचाहट के कहा जा सकता है। भारत पर चीन की हलचलों का सब से ज्यादा प्रभाव पड़ेगा। भारत का भाग्य चीन के साथ एक अप्रत्यक्ष सूत्र से सम्बद्ध है। इस लिए चीन की वर्तमान हलचल के प्रत्येक रूप और अङ्ग का हमें मनोयोग पूर्वक अध्ययन करना चाहिए।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

१—गायों के लिये बेतार द्वारा राग

कैलीफोरनिया के एक किसान ने अपनी गोशाला में बेतार द्वारा समाचार सुनने का यन्त्र लगवाया है। उसका कहना है कि इस यन्त्र द्वारा गाना सुन कर उसकी गायें अधिक दूध देती हैं।

बिना तार के यन्त्र द्वारा राग सुनाने वाले गवैयों में किसी एक के लिये गायों के मन में प्रेम-विशेष नहीं है। उन्हें सब ही एकसे पसन्द हैं।

उस किसान का विचार है कि अब मुर्गियों पर इसका प्रभाव देखा जाय कि वे भी अधिक अण्डे देती हैं कि नहीं।

२—बधू के लिये कांच के फूल

बधू के लिये करना के फूलों की माला का बड़ा रिवाज है परन्तु अब ऐसा प्रतीत होता है कि इसका अन्त होने वाला है। अब तक काँच के फूल केवल कमरों और मेज़ों की शोभा बढ़ाते थे परन्तु अब नवविवाहिता लड़कियों को ये फूल माला, गजरे इत्यादि के रूप में बहुत पसन्द आने लगे हैं। विवाह के अवसर पर तो ये भेंट किए ही जाते हैं, परन्तु अब टोपियों और गाऊन में लगाने के भी काम आने लगे हैं। आँगल-साम्राज्ञी को फूलों का बहुत शौक है, उसको पूरा करने के लिये बहुत से कला-विशारदों ने काँच के फूलों के तजरुबे किये हैं।

यह न कहना होगा कि इन फूलों द्वारा अनेक प्रकार की सजावट की जा सकती है और किसी भी स्थान में देश-देशान्तरों में पैदा होने वाले फूलों का समूह प्रत्येक समय एकत्र किया जा सकता है।

३—कीड़ों के आभूषण

यदि तुम किसी स्त्री के कपड़ों पर मकड़ी अथवा तितली को बैठे देखो तो उसे उड़ाने का का यत्न न करो क्योंकि सम्भव है कि वह टिड्डियों या मकड़ियों से बना आभूषण हो।

फ्रान्स में कुशल कारीगरों द्वारा कर्णफूल, पिनें, गले की माला इत्यादि अनेक आभूषण प्रायः प्रत्येक प्रकार के विचित्र और बहुरंग-रंजित कीड़ों द्वारा बनाये जाते हैं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

यह नन्हे २ जीव मार कर कारखाने में पहुँचाये जाते हैं और उनको अलग-अलग छाँट कर रख देते हैं। फिर बारीक यन्त्रों द्वारा उनका सिर शरीर से अलग कर उसके भीतर का गूदा बाहर निकाल लेते हैं और एक विशेष प्रकार का द्रव्य उनके भीतर भर दिया जाता है, जिससे कि उनकी शक्ल में अन्तर न आये। काटने और साफ करने के पश्चात् एक ऐसी क्रिया की जाती है जिससे कि उनका रंग और शकल-सूरत पक्की हो जाता है।

४—स्त्रियों और पुरुषों के इन्द्रिय-ज्ञान में अन्तर

हममें केवल पाँच प्रकार का स्वाद परखने की शक्ति है, अर्थात् मीठा, कड़ुआ, खट्टा, क्षार और नमकीन। यह शक्ति बहुत तीक्ष्ण जुकाम में भी–जबकि सूंघने की शक्ति लुप्त-प्राय हो जाती है –बनी रहती है। प्रोफेसर फ्रेज़र हैरिस के मतानुसार स्त्रियों में स्वाद परखने की शक्ति उतनी ही तेज़ होती है जितनी कि पुरुषों में, परन्तु उनमें धारण-शक्ति की कमी होती है। प्रोफेसर महोदय लिखते हैं—

भोजन और अन्य खाद्य पदार्थों का आनन्द उठाना इनकी मृदु गन्ध और स्वाद का भली प्रकार अनुभव ही है। भोजन का पारखी वही मनुष्य हो सकता है जिसकी सूंघने की शक्ति भली प्रकार उत्तेजित हो, क्योंकि स्वाद शक्ति तो उसमें भी औरों की ही भाँति होती है।

यह बहुत देर से पता है कि स्त्रियों में भोजन की परख नहीं होती। हमें स्मरण रखना चाहिये कि स्त्रियाँ इतर और सुगन्ध के प्रयोग में बहुधा अधिक खुले हाथ होती हैं।

दूसरी शक्ति जिसमें स्त्रियाँ कम होती हैं स्नायु सम्बन्धी है अथवा गतिचेष्टा और बल प्रतिरोध की शक्ति है।

इस शक्ति द्वारा, उदाहरण के लिये, हमें पता लगता है कि अमुक कील को ठोकने के लिये कितना बल चाहिये, पेंच को कसने के लिये कितना जोर लगेगा, ताले की चाबी कितनी शक्ति से घुमानी चाहिये इत्यादि।

तीसरी और अन्तिम इन्द्रियों की शक्ति जिसमें स्त्रियें कम हैं ठंड के बोध की कमी है।

पुरुषों को ही अधिक सर्दी लगती है और जुकाम होता है। यह सब जानते हैं कि पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियाँ बहुत थोड़े कपड़ों में आनन्द से गुज़रा कर लेती हैं। स्त्रियों के शरीर में त्वचा के नीचे पुरुषों की अपेक्षा अधिक चर्बी रहती है और एक समय उन्हें सरदी कम लगने का यही कारण समझा जाता था। कुछ स्त्रियों की अवस्था में किंचित् यह ठीक भी हो, परन्तु इस बात का क्या उत्तर है कि आज-कल की दुबली-पतली रमणियें भी कम कपड़े पहरने में अपनी मोटी बहिनों का मुकाबला करती हैं।

और इससे, मिलता-जुलता अनुभव कि स्त्रियाँ दुःख अथवा पीड़ा को पुरुषों से अधिक योग्यता से सहती हैं, सिद्ध होता है क्योंकि सरदी और दुख सहने की शक्ति का बड़ा भारी सम्बन्ध है।

(डेली मेल)

५—समुद्र रहस्य

प्रत्येक नाविक को समुद्र में जहाज चलाने की आपदाओं का ज्ञान है परन्तु कुछ घटनाएँ ऐसी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हैं जो कि वैज्ञानिकों की बुद्धि को भी चक्कर में डाल देती हैं।

बैनकोवर द्वीप का दक्षिण भाग एक ऐसा आपत्ति-स्थल है कि वहाँ कितने ही जहाज चट्टान से टकरा कर नाश को प्राप्त हो चुके हैं। वहाँ के राज्य ने एक बहुत बड़ा प्रकाश-स्तम्भ भी बना दिया है जिसको देखकर जहाज उस स्थान से बच कर निकल जायें और धुन्द के समय के लिये आप-से-आप बजने वाले घण्टे लगे हुए हैं। ये इतना शब्द करते हैं कि जो बहुत दूर तक सुनाई देना चाहिये, परन्तु टक्कर खाकर टूटने पर जहाज के बचे हुये यात्रियों का कथन है कि उन्होंने कोई शब्द नहीं सुना। इसका यही कारण प्रतीत होता है कि वहाँ एक मूक-स्थल है जहाँ कि वायु शब्द को निःशब्द कर देती है। जब भी कोई जहाज इस स्थल के भीतर प्रवेश कर जायगा उसे कोई भी शब्द, चाहे वह कितना ही विकट हो, नहीं सुनाई देगा।

नकशों में समुद्रों में पानी के बहने के भाव को दिखलाने वाली लकीरें खिंची रहती हैं। किश्तियों और जहाजों के नाविक सूर्य के प्रकाश की अनुपस्थिति में इनके सहारे नावों को चलाते हैं। परन्तु समुद्र-व्यापी जल-धारा अपने वेग और मार्ग को बदल देती है। अमेरिका से इङ्गलैंड को आने वाली गल्फ स्ट्रीम नामक धारा की गति एक बार दुगुनी होगई।

१९२३ के सितम्बर में एक बड़ा भारी जहाज अटलान्टिक महासागर के मध्य में जा रहा था। वह अचानक रुक गया और इतने जोर से काँपने लगा जैसे किसी चट्टान से टकरा गया हो; इसके बाद वह आगे को बढ़ा और पुनः आगे से पीछे की ओर हिलोरे लेने लगा। यह समुद्रीय भूचाल का परिणाम था और क्योंकि समुद्र-तल कोई दो मील नीचे था इसलिये जहाज को कोई हानि नहीं पहुँची।

एक दूसरे जहाज का इससे भी खराब अनुभव था। अर्धरात्रि के समय, मारसिलेज़ से कुछ दूरी पर, नाविकों ने बड़ी भारी भक से उड़ने की आवाज़ सुनी और सामने बड़ी ऊँची ज्वाला की लाट समुद्र से निकलती देखी। इसके साथ-ही जहाज भी काँप उठा। उस समय यह अनुमान किया गया कि किसी अन्य दूसरे जहाज में आग लग गई है, परन्तु इस दुर्घटना का कोई चिन्ह न दिखलाई पड़ने पर यह समुद्र गर्भ में व्यापक ज्वालामुखी के फटने का कारण समझा गया। यदि जहाज उस समय घटना-स्थल पर होता तो कदापि नहीं बच सकता था।

जहाजों के लिये उल्कापात अथवा सितारों का टूटना एक और भय का कारण होता है कुछ देर हुयी कि हैमबर्ग को जाता हुआ एक जहाज इस घटना से बाल-बाल बच गया। इसी प्रकार १९०८ में हालैण्ड का एक जहाज अटलाण्टिक महासागर में जारहा था, कि एक उल्का उसके इतना निकट गिरा कि समुद्र में बहुत बड़ी २ लहरें उठीं और जहाज पानी से भर गया। जहाँ यह गिरा था वहाँ से धुयें के इतने घने बादल उठे कि ऊपर के यात्रियों को कमरों के भीतर घुसना पड़ा। थोड़ी देर के पश्चात् जब वे पुनः बाहर आये तो उन्होंने देखा कि जहाज के ऊपर की प्रत्येक वस्तु पर भूरी मिट्टी की एक मोटी तह जमी हुई है और जहाँ तक आँखें देख सकती हैं समुद्र का जल आँच की तरह चमक रहा है।

———

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

६—विज्ञान की दासता

उन्नीसवीं शताब्दी में विज्ञान की जिस श्रद्धा और भक्ति से पूजा होती थी वह अकथनीय है। इसके द्वारा मनुष्य ने प्रकृति पर विजय प्राप्त की, अपनी शक्तियों की उपज को सैकड़ों गुना बढ़ाया और संसार के रहस्य को खोलने के लिये एक बनी-बनाई चाबी को प्राप्त किया।

परन्तु उन्नीसवीं शताब्दी की शुभ भावनाओं का भ्रम दूर होरहा है। जहाँ विज्ञान से प्राप्त हुये लाभ उन्हें प्राप्त करने में व्यय होने वाले परिश्रम के बराबर होते हैं, वहाँ साथ ही इस से होने वाली दुर्घटना वास्तविक है और सदा बढ़ती जा रही है।

पहिले हम लाभ पर दृष्टि डालते हैं। प्रकृति पर विजय का अभिप्राय यह है कि रुई सस्ती होगई है और १५ मील प्रति घंटा चलने वाली घोड़ागाड़ी के स्थान में ६० मील प्रति घंटा चलने वाली रेल हमारे सन्मुख है।

परन्तु बड़े-बड़े नगरों की गन्दी हवा, मिट्टी और गन्दगी—जो स्थानाभाव से इस प्रकृति-विजय के साथ-साथ ही हमें मिलते हैं—से बचने के लिये हमें पुनः गाँव और जंगलों में जाना पड़ता है जहाँ कि अब भी प्रकृति का मनुष्य पर कुछ प्रभाव है।

आधुनिक जीवन की वेगवान् गति। यही सत्य है कि मशीन से अब हम बहुत अधिक वस्तु तैय्यार कर सकते हैं, यहाँ तक कि अब एक आदमी उतना पैदा कर सकता है जितना कि पहले सौ आदमी करते थे। इसका फल यह होना चाहिये था कि मनुष्य का कार्य-भार सौगुणा कम हो जाता परन्तु ऐसा नहीं हुआ।

जीवन का वेग—जैसा कि हमें बार-बार बतलाया जाता है—अधिक तीव्र होता जाता है और जीवन-संग्राम अधिक कठिन। संसारका ध्येय है अधिक कार्य कुशलता, और मुकाबला है अधिक तीव्र, जिसका परिणाम यह है कि हम उन खोजों के लिये, जिनसे कि हमारे जीवन में अधिक माधुर्य और सुरम्यता आनी चाहिये, थके हुए शरीर और चिड़-चिड़े स्वभाव की रचना कर रहे हैं।

हम एक उदाहरण से, जिससे कि सब परिचित हैं अपने कथन को स्पष्ट करते हैं। विज्ञान के प्रकृति-विजय से पहिले मनुष्य प्राकृतिक सौंदर्य का सुख उठाने के लिये अपने कार्य-स्थान से दो मील दूर रह सकता था और प्रति दिन आध घण्टे में वह अपने काम पर आ सकता था, एवं ग्रामीण-जीवन के सुखों को भोगता हुआ व्यायाम और अपना कार्य कर सकता था। विज्ञान से रेल बनी और फिर भू-गर्भ में चलने वाली रेल। अब पाँच मिनट में दो मील का सफर होने लगा। हमने समझा कि बड़ी उन्नति की, परन्तु दुर्भाग्य-वश उस उन्नति ने जिसके सहारे हम नगर से दूर जा सकते थे हमारा दूर जाना अनिवार्य बना दिया। उदाहरण के लिये लण्डन का केन्द्र अब बारह मील के भीतर-भीतर बड़ी सुगमता से प्राप्य हो गया। इसका परिणाम यह हुआ कि लण्डन का विस्तार उस बारह मील के अन्तिम सिरे तक हो गया।

यह सत्य है कि ग्राम-प्रिय व्यक्ति अब नगर के केन्द्र से अधिक परे रह सकता है परन्तु ग्रामों में पहुँचने के लिये अब उसे अधिक दूर जाना पड़ता है। इसके साथ ही जहाँ पहिले

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उसे खुली हवा में आधा घण्टा सैर के लिए मिल जाता अब उसे नेवले की भाँति जमीन में धँसना पड़ता है और आध घण्टा जमीन के भीतर भीड़ और दम घुटने वाली गाड़ियों में लुढ़काये जाने के पीछे दूसरे सिरे पर बाहर निकल कर, थके-माँदे अपने दिन भर का काम करना पड़ता है; साथ-ही यह भी भय लगा रहता है कि सायंकाल को पुनः यही कष्ट झेलना पड़ेगा।

विज्ञान की लाभदायक शक्ति का इस प्रकार दुःखदायी दुरुपयोग क्यों ? उत्तर स्पष्ट है। विज्ञान मनुष्य की वासनाओं को नही बदलता वरन् उनकी तृप्ति को अधिक सुलभ बना देता है।

यदि वे वस्तुयें जिनकी हम इच्छा करते हैं, सब कुछ विचार कर लेने पर सुखदायक हों तब तो उनकी प्राप्ति की यह अधिक शक्ति एक लाभ है, इसके विपरीत यदि वे हानिकारक हैं तो यह भी कष्टदायक होगी।

सभ्य मनुष्य प्रायः प्रत्येक आवश्यक बातों में जंगली है; उसकी उच्चशिक्षा—जैसा कि गत महायुद्ध ने जतला दिया है, केवल ढोंग-मात्र है; उसे हम केवल इसी लिये युक्ति-युक्त कह सकते हैं कि उसने, उस वस्तु की प्राप्ति के लिये जिसे वह चाहता है, बहाने बनाना सीख लिया है और उन विचारों के लिये जिन्हें वह ग्रहण करना चाहता है तर्क करना जान गया है।

हृदय के गूढ़तम प्रदेश में वह वैसा ही मूर्ख विश्वासी, वासना का दास व्यक्ति है, जैसा कि पहिले था। उच्चतम वीरता और अविश्वसनीय क्रूरता दोनों की समान शक्ति का वह स्वामी है। विज्ञान ने केवल इतना किया है कि उस जंगली के हाथ में बड़े तीक्ष्ण और शक्तिशाली हथियारों को दे दिया है और ये ऐसे हैं कि महाप्रज्ञा ही इनका ठीक प्रयोग कर सकती है; परन्तु अब मनुष्य के हाथ में ये केवल तेज धारदार हथियार हैं।

एक स्कूल में पढ़ने वाले लड़के के हाथ में हवाई बन्दूक दे दो तो वह केवल खिड़की का शीशा तोड़ देगा अथवा एक चिड़िया को मार गिरायेगा, परन्तु यदि उसे एक राईफल मिल जाय तो वह एक सार्वजनिक दुःखों का साधन बन जायगा। विज्ञान ने भी आधुनिक मनुष्य के लिये यही किया है, इसने एक शिशु के हाथ में दियासलाई की डिबिया दे दी है।

यह सदा-ही एक प्रश्न रहा है कि क्या मनुष्य जाति उस विद्या के द्वारा जो कि उसके महापुरुषों ने उसे दी है, अपना नाश न कर लेगी। अब यह प्रश्न और भी तीव्र होगया है क्यों-कि अब बीसवीं शताब्दी में विज्ञान की उन्नति के कारण मनुष्य के ज्ञान और उसके यथार्थ उपयोग करने की शक्ति में अधिक अन्तर आ गया है।

मशीन से काम लेने की शक्ति और कौशल ने सामाजिक बुद्धि और आध्यात्मिक उन्नति को बहुत पीछे छोड़ दिया है। मनुष्य बिना तार के समाचार पहुंचाने के यन्त्र खोज निकालता है परंतु उन्हें गप-शप और असभ्य जातियों के राग बखेरने के काम में लाता है। वह मोटर गाड़ी को पूर्ण करता है पर साथ ही प्रकृति की ग्राम्य शोभा का नाश करता है और स्वयं नगरों की भीड़ के कारण चलने, आगे बढ़ने में अशक्त हो जाता है; वह अपना गन्दा काम करने के लिये यन्त्र बनाता है और अपने को काम की पिसान और थकावट से बचाने के स्थान में स्वयं उनका दास बनकर उनकी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सेवा में अपना जीवन व्यतीत करता है।

सैम्युयल बटलर ने 'एरीवोहन' नाम की एक पुस्तक लिखी है उस में उस ने दिखाया है कि उस देश के निवासियों ने तंग आकर अपनी सब मशीनों को तोड़ डाला था कि कहीं मशीनें उनसे आगे न बढ़ जायें।

जो बात बटलर के लिये केवल एक कल्पना मात्र थी वह आज वास्तविक घटना-क्षेत्र में विद्यमान दिखलाई पड़ती है। हमें आशा रखनी चाहिये कि पचास वर्ष में हमारी सन्तान मनुष्य की मशीन दासता को पूर्ण कर सकेगी।

क्या अन्त में उन्हें इन मशीनों को तोड़ना पड़ेगा अथवा ये मशीनें युद्ध में प्रयुक्त हो कर मानवजाति का नाश कर देंगी? (डेली मेल)

गृह प्रबन्ध

एक डाक्टर का कथन है कि आज कल नींद न आने का रोग बढ़ रहा है। इस के इलाज के लिए उस की सम्मति में निम्न लिखित बातें करनी चाहियें:--

१. अपने मन में यह कभी न सोचो कि तुम्हें नींद नहीं आयेगी या नहीं आरही है।

२. एक तंग, सामान से भरे हुये, कमरे में न सोओ; पर्याप्त हवा लेते रहो।

३. कमरे में तेज रोशनी कभी न रखो।

४. यदि नींद न आयी हो तो लेटे मत रहो, उठ कर हाथ मुंह धों डालो, कुछ थोड़ी सी व्यायाम करलो। इस से तुम्हें सोने में बड़ी सहायता मिलेगी।

५. यदि मन में कोई चिन्ता हो अथवा उत्तेजना हो तो थोड़ी देर पढ़ने में लगा दो।

६. कभी २ एकरस शब्द नींद का बड़ा सहायक होता है जैसा कि उपदेश अथवा समुद्र का शब्द।

७. लड़ाई करके अथवा चिड़चिड़ेपन में कभी सोने के लिए न लेटो।

८. कई बार, बिछौना अथवा चारपाई का स्थान बदल देने से निद्रा आ जाती है।

९. अपनी नींद न आने का कारण स्वयं ढूंढने का यत्न करो। कभी २ घड़ी की आवाज़ अथवा अनुचित तकिया, अथवा ऐसा ही कोई और छोटा सा कारण इस के लिए उत्तरदायी होता है।

१०. बदहज़मी में नींद नहीं आती अतः अपने भोजन की पड़ताल करो।

११. भर पेट भोजन के पश्चात् तुरन्त मत सोने जाओ, यदि सम्भव हो तो कुछ भ्रमण करो।

१२. यदि रात को देर से सोये हो तो सबेरे देर से मत उठो। जल्दी सोओ और जल्दी उठो।

१३. बिस्तरे में बहुत से कपड़े मत रखो।

१४. नाक द्वारा सांस लो; मुंह बन्द रखो।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

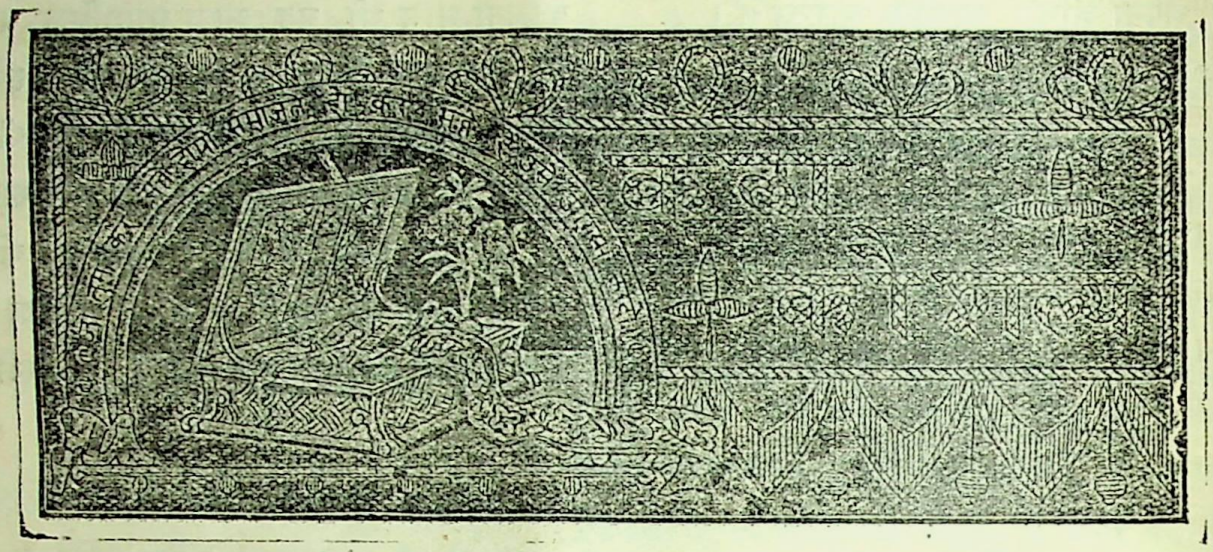

पुरुष का साधारण स्वेटर

आवश्यक वस्तु :—१½ पौंड ऊन बढ़िया हलका मेल, ४ हड्डी की ७ नं० की सलाइयां, २ लोहे की १२ नं० की सलाइयाँ कफ़ बनाने के लिए।

नाप :—कन्धे से नीचे के किनारे तक २७ इञ्च; बाँह कफ़ के ६ इञ्च सहित २४ इञ्च; गले की जगह २१ इञ्च; नीचे की चौड़ाई जहाँ धारीदार बिनावट है ३६ इञ्च। यह नाप बिना खींचे की है; ऊन की मोटाई पतलाई से नाप बड़ी छोटी हो जाती है।

देह का हिस्सा एक टुकड़े में दोनों तरफ़ का बनता है, बाँहें अलग बना कर साथ सी दी जाती हैं। सीधा कालर गले पर फन्दे उठा कर धारीदार बिनावट से बीना जाता है कफ़ और नीचे से मिलान करने के लिए।

जब तक कहा न जाय किसी भी पंक्ति का पहिला फ़न्दा सादा न उतारो।

सामने के नीचे के सिरे से आरम्भ करो नं० ७ वाली २ सलाइयों से ६६ फ़न्दे चढ़ाओ और एक सीधी पंक्ति बीनो फ़न्दों के पिछली तरफ़ के धागे में जिस में कसा हुआ किनारा आवे।

पहिली १८ धारीदार पंक्तियाँ:— १ सीधा, १ उलटा इस प्रकार बार बार ३ इञ्च धारीदार बनाकर चपटी बिनावट (अर्थात् १ पंक्ति सारी सीधी १ पंक्ति उलटी क्रम से बार २ बीनो) इस प्रकार बनाओ। १६ पंक्ति—सारी अन्त तक सीधी बीनो। २० पंक्ति —सारी उलटी बीनो। इन पंक्तियों को क्रम से बीनते जाओ अन्त में उलटी पंक्ति हो, जब तक कि कार्य २७ इञ्च लम्बा आरम्भ से लेकर न हो जाय। अगली पंक्ति [यहाँ से गले की जगह खुलती है] — २४ फ़न्दों को बीन लो अगले ४८ फ़न्दों को ढीले २ बन्द कर दो बाकी २४ फ़न्दों को बीन लो [२४ फ़न्दों के दो समूह सलाइयों पर होंगे जिनके बीच में ४८ बन्द किये हुवे फ़न्दे हैं] अगली पंक्ति:— २४ फ़न्दे उलटे बीनो और ४८ फ़न्दे नये बनाओ, पिछली पंक्ति में बन्द किए हुवे फ़न्दों के स्थान पर पिछले २४ फ़न्दों को उलटा बीनो [६६ फ़न्दे फिर सलाई पर होंगे] फिर चपटी बिनावट से २४ इञ्च बीनो फिर धारीदार बिनावट के ३ इञ्च (१८ पंक्तियां) बीनो और बन्द कर दो।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बाहें-[दोनों एक तरह]— ७ नं० की सलाइयों से ७२ फ़न्दे चढ़ाओ। चपटी बिनावट से १० पंक्ति बीन जाओ अन्त में उल्टी पंक्ति हो। ११ पंक्ति —पंक्ति के दोनों सिरों पर इस प्रकार घटाओ ‡ १ सीधा, २ इकट्ठा सीधा बीनो जब तक कि तीन फ़न्दे न रह जाँय, तब २ इकट्ठा बीन १ सीधा बीनो। ६ पंक्तियाँ बिना घटाये बीनो *। ‡ चिन्ह से *चिन्ह तक ६ दफ़ा और बनाओ [५८ फ़न्दे सलाई पर, ८० पंक्तियाँ आरम्भ से] ४० पंक्तियाँ और चपटी बिनावट की बनाओ बिना घटाये। अब लोहे की सलाइयाँ लगा लो और कफ़ के लिए धारीदार बिनावट की ४६ पंक्तियां व ६ इञ्च बीनो, ढीले हाथ से बन्द कर दो।

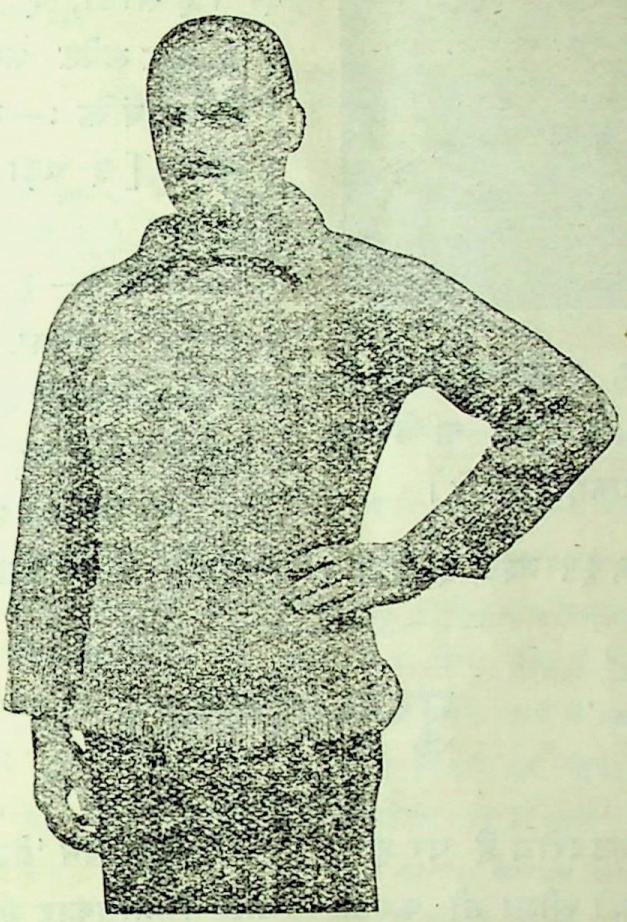

कालर के लिए :—गले के खुले हुए स्थान के सामने के बीच में से शुरू करो, ७ नं० की सलाइयों पर ६६ फ़न्दे चढ़ाओ (३२ प्रत्येक सलाई पर) अब धारीदार बिनावट के कफ़ की तरह आगे पीछे लौट लौट कर ३० पंक्तियाँ बीनो या जब तक कालर ५ इञ्च लम्बा न हो जाय बड़े ढीले हाथ से बन्द कर दो।

समाप्त करना :— किनारे की सिलाई १९ इञ्च तक कर डालो [१६ इञ्च लगभग बाँह का स्थान रख लो], बाँह की सिलाई सी दो कफ़ के पिछले हिस्से में सिलाई को उलट कर सीना। उलटी तरफ से बाँह को स्थान पर सी दो सिलाई को सिलाई पर सफ़ाई से रख कर सियो। इन सब सिलाइयों को मामूली गरम स्त्री से दबा दो कालर को पीछे की आधी दूरी तक घुमा दो फिर नोकों को सामने अच्छी तरह रख कर जरा स्त्री कर लो। कफ़ों को ३ इञ्च ऊपर उलट कर उन पर भी स्त्री कर दो।

इमली लेस

यह सलाइयों से बीनी गई लेस है।

आवश्यक वस्तु :—२ सलाइयां और रेशम, सूत व ऊन उसी की मुटाई के अनुसार सलाइयों की भी मुटाई हो।

आरम्भ में १६ फ़न्दे चढ़ाओ और २ सीधे, ११ उल्टे, ३सीधे बीनो।

१ पंक्ति:-१ सादा, १ सीधा, १ बढ़ाना, २ इकट्ठा, ३ सीधे, १ बढ़ाना, १ सादा, २ इकट्ठा, सादे को इकट्ठा पर से लंघा देना, १ बढ़ाना, ४ सीधे १ बढ़ाना, २ सीधे।

२ पंक्ति :— ३ सीधे. ११ उल्टे, ३ सीधे।

३ पंक्ति :— १ सादा, १ सीधा, १ बढ़ाना,

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

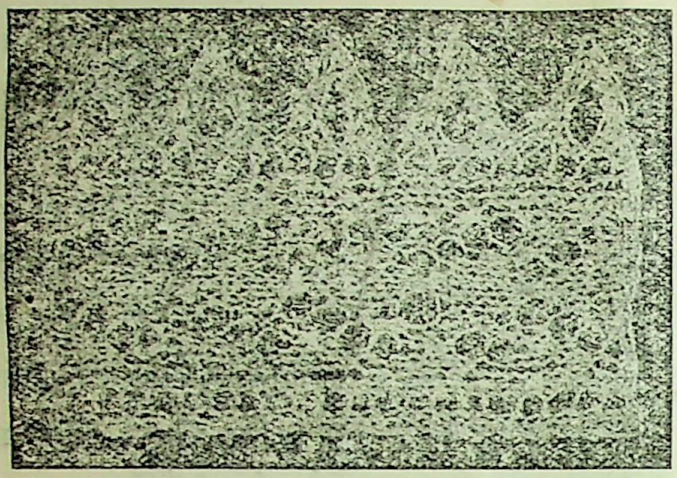

२ इकट्ठा, १ सीधा, २ इकट्ठा, १ बढ़ाना, ३ सीधे, १ बढ़ाना, १ सादा, १ सीधा, सादे को सीधे पर से लंघा देना, २ सीधे, १ बढ़ाना, ३ सीधे।

४ पंक्ति :— ३ सीधे, १२ उल्टे, ३ सीधे।

५ पंक्ति:— १ सादा, १ सीधा, १ बढ़ाना, २ इकट्ठा, १ बढ़ाना, ५ सीधे, १ बढ़ाना, १ सादा, १ सीधा, सादे को सीधे के ऊपर से लंघा दो। १ सीधा, १ बढ़ाना, २ इकट्ठा, ३ बढ़ाना (३ बार लपेट कर) २ सीधे।

६ पंक्ति :—२ सीधे, १ सीधा, १ उल्टा, १ सीधा [३ बढ़ा दे वाले में से] ११ उल्टे, ३ सीधे।

७ पंक्ति :— १ सादा, १ सीधा, १ बढ़ाना, २ इकट्ठा, १ सीधा, १ बढ़ाना, १ सादा, १ सीधा, सादे को सीधे पर से लंघा दो, ३ सीधे, २ इकट्ठा, १ बढ़ाना, २ सीधे, १ बढ़ाना, ७ सीधे।

८ पंक्ति :— ६ फन्दे बन्द कर दो, १ सीधा, ११ उल्टे, ३ सीधे॥

पुष्प-संचय

'शोक' की सीमा कण्ठावरोध है पर शुष्क और दाह युक्त, 'आनन्द' की सीमा भी कण्ठावरोध है पर आर्द्र और शीतल।

'प्रेम' एक भावना-गत विषय है, भावना ही से उसका पोषण होता है, भावना ही से वह जीवित रहता है और भावना ही से लुप्त हो जाता है। वह भौतिक वस्तु नहीं है। 'तुम मेरे हो' यह विश्वास मेरे प्रेम को सजीव और सतृष्ण रखने के लिये काफ़ी है, जिस दिन इस विश्वास की जड़ हिल जायगी उसी दिन इस जीवन का अन्त हो जायगा।

'सौन्दर्य' की सबसे मनोहर छवि वह है— जब वह सजल-शोक से आर्द्र होता है, वही उसका सब से मधुर रूप है और वही उसका आध्यात्मिक रूप में चित्रण होता है।

सम्मिलन 'प्रेम' को सजग कर देता है। 'प्रेम' में प्रतिकार नहीं होता, 'प्रेम' अनन्त क्षमा, अनन्त उदारता और अनन्त धैर्य से परिपूर्ण होता है। 'प्रेम' जितना ही आदर्शवादी होता है उतना ही क्षमाशील भी।

हास्य और मुस्कयान में जो अन्तर है, धूप और चाँदनी में जो अन्तर है, संगीत और काव्य में जो अन्तर है वही अन्तर 'अलंकृत' और 'परिष्कृत' सौन्दर्य में है। सौन्दर्य-प्रतिमा मोहित नहीं करती, वशीभूत कर लेती है।

विचार-शीलता स्वाभाविक सौन्दर्य को कितना मधुर बना देती है। विचारोत्कर्ष ही सौन्दर्य का वास्तविक शृङ्गार है।

संगीत से कल्पना चित्र-मय हो जाती है।

—प्रेमचन्द्र, 'रंगभूमि' से

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

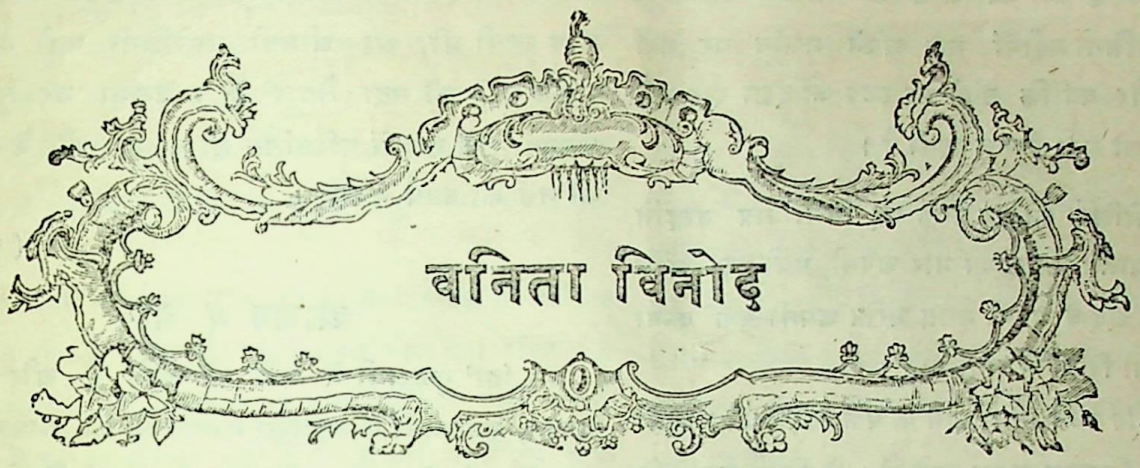

संसार की सब से धनी स्त्री

जापान की वणिक् महिला श्रीमती सुजाकी संसार में सब से धनाढ्य स्त्री है। १३ वर्ष की आयु में उसने एक ऐसे पुरुष से विवाह किया जिसने कि खांड साफ करने का एक छोटा सा कारखाना खोला। १९०५ में उस के पति की मृत्यु हो गई। उस ने कारखाने को बेच कर उस से प्राप्त धन से चुपके २ वाणिज्य आरम्भ किया और शीघ्र ही कितनी ही बनिज की कोठियों पर अधिकार जमा लिया। २० वर्ष के समय में वह जापान की प्रसिद्ध कम्पनी 'सुजाकी ऐण्ड को' के ९८ प्रतिशतक भाग की मालिक बन गई। इस समय वह ५१० करोड़ की धन सम्पत्ति की स्वामिनी है।

परन्तु जहां यह इतनी धनाढ्य है वहां जापान की स्त्रियों में सब से अधिक घृणा की दृष्टि से देखी जाती है। प्रथम तो जापान में स्त्रियों का बनिज में प्रविष्ट होना ही बुरा समझा जाता है, और फिर श्रीमती सुजाकी ने गत महायुद्ध के दिनों में देश की सारी चावलों की फसल को अपने अधिकार में कर १५ करोड़ के लगभग लाभ उठाया था। इस से जापानी गरीब लोग बिगड़ गये क्यों कि उनको अपने खाने के लिये चावल खरीदना असम्भव हो गया। १९१८ में यह विद्वेषाग्नि यहाँ तक बढ़ी कि कुपित जनता ने क्रोध में इस दफ़्तर के और महल को जला कर खाक कर दिया। वह रातों-रात भाग गई और अपने चाय के बागों में जाकर छिप गई। उसने अपने चाय के व्यापार में भी उसी नीति का अवलम्बन किया था अतः वहां उस को रक्षा न मिल सकी। उसने टोकियो में कितने ही होटलों के मालिकों को स्थान के लिये तार दिये परन्तु कोई भी होटल वाला जनता द्वारा अपने होटल को आग लगाये जाने के भय से उसे अपने होटल में रखने को तय्यार न हुआ।

इसी प्रकार का एक प्रार्थना-पत्र उसने एक ग्रामीण सराय के मालक को लिखा परन्तु वहां से भी कोरा जवाब मिला। तंग आकर उसने गृह सचिव को १५ लाख रुपये गरीबों की सहायता के लिये भेजे, परन्तु जनता ने उस स्त्री के धन को, जिसने अपने स्वार्थ के लिये उन्हें भूखों मारा था, हाथ लगाने से इन्कार कर दिया। अतः वह वेष बदल कर अपने छोटे से गाँव में रहने के लिये विवश हुई जहाँ से वह अपने व्यापार का जब तक कि जनता का जोश ठण्डा न पड़ गया संचालन करती रही।

उसके लाखों नौकर हैं और सारे संसार में उसका व्यापार फैला हुआ है। उसके कारखाने जापान, चीन, अमरीका, आस्ट्रेलिया और मलाया में हैं; दफ़्तर लण्डन, ग्लास्गो, पैरिस, मद्रास, कलकत्ता, बम्बई, मैलबारेन, ब्लैडीवास्टक, मनीला, बर्लिन, सान फ्रांसिस्को और सीटैल में हैं और जायदाद संसार के प्रत्येक भाग में है।

एकान्त वासिनी श्रीमती मसोलिनी

इटली के एक उच्च अधिकारी ने श्रीमती मसोलिनी का वर्णन इन शब्दों द्वारा किया था कि वे संसार में सब से अधिक अकेली पत्नी और चिंताग्रस्त स्त्री तथा माता हैं।

उनके अकेली होने का कारण यह है कि उन्होंने पति के आदेश को अपना कर्त्तव्य मान लिया है कि पत्नी का

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्थान उसका घर है और क्योंकि अनेक राजकीय कार्य्यों के कारण श्री मसोलिनी महीनों तक अपने मकान पर नहीं आ सकते। और क्योंकि उनके स्वास्थ्य की दशा खराब है इस से श्रीमती को सदा चिन्ता रहती है।

जब मसोलिनी को यह उच्च पद मिला तब उन्होंने अपने बच्चों के पालन पोषण का भार अपनी पत्नी पर छोड़ दिया। इसलिये अब वे अपनी समग्र शक्ति अपनी एक कन्या और दो पुत्रों की शिक्षा में लगाती हैं।

माता और बच्चे दोनों रोम के एक सिरे पर मामूली घर में जनता से बिलकुल अलग रहते हैं। वे किसी बहाने से कभी अपने पिता से मिलने के लिये चीगी महल में नहीं जाते। परन्तु प्रतिदिन उनको एक भारी आनन्द मिलता है। जब संध्या आती है टेलीफ़ोन की घण्टी बजती है और उनका सुप्रसिद्ध पिता पहले माता से बातें करता है, फिर लड़की से और फिर दोनों लड़कों से।

तब बड़े दिन के अवसर पर और गर्मी के महीनों में एक दो बार कुछ दिन आनन्द के आते हैं जब मसोलिनी छुट्टी मनाने के लिये ऐसे स्थान पर रहते हैं जो लोगों के शोर गुल से दूर हो।

मसोलिनी अपने बच्चों के साथ साथ इस प्रकार खट्टे बट्टे हैं जैसे स्कूल का बड़ा लड़का। पत्नी के साथ बड़ी लम्बी और गम्भीर बातें होती हैं और इस समय श्रीमती अपने को इटली में सब स्त्रियों से अधिक धन्य मानती है। ये बातें राजकार्य के अथवा इटली के भविष्य के सम्बन्ध में नहीं होतीं किन्तु घर के मामलों पर और बच्चों के पालन पोषण के सम्बन्ध में।

जो लोग मसोलिनी के बच्चों से भली भाँति परिचित हैं उनका कहना है कि उनकी चतुरता आश्चर्य जनक है। उनको केवल यह भय रहता है कि उनके पिता मारे न जांय क्योंकि उनकी हत्या के प्रश्नों का उन पर आतङ्क जमा हुआ है।

परन्तु इस एकान्तवासिनी वीर रमणी को दूसरी चिन्ता भी रहती है वे जानती हैं कि उनके पति रोग का इलाज करने से सदा दृढ़ता पूर्वक इनकार करते रहते हैं जिसके कारण उनका स्वास्थ्य गिरता जा रहा है।

जो उनकी निर्धनता और उनके भ्रमण में सदा उनके साथ रहती थी, वह श्रीमती मसोलिनी पत्नी का कर्तव्य पालन करने को सदा तैयार हैं। उनका घर तुरन्त एक अस्पताल के रूप में परिवर्तित हो जायगा और वे मसोलिनी की नर्स का कार्य करेंगी।

(अभ्युदय)

आश्रम में 'बा'

'बा' गुजराती में 'माँ' को कहते हैं और सत्याग्रह आश्रम, साबरमती में महात्मा गान्धी जी की धर्मपत्नी श्रीमती कस्तूरी बाई को सब 'बा' के नाम से पुकारते हैं। जीवन को पवित्र व स्वाभाविक बनाना और संयम द्वारा उसे जन-समाज के लिए अधिकाधिक उपयोगी बनाने का प्रयत्न करना यही आश्रम का मुख्य उद्देश्य है। इसी कारण आश्रम में कृत्रिमता का प्रायः अभाव है और आश्रम की सब से अधिक अकृत्रिम वस्तु 'बा' का सरल और सादा जीवन है। नदी के किनारे पत्थर पर बैठी हुई बर्तन मांजते हुए अथवा अपना पानी भरते हुए या अतिथियों को भोजन कराते हुए (महात्मा जी के यहां अतिथियों की कमी !) आप उनके पवित्र मुख-मंडल पर वही गम्भीरता, वही सरलता और स्वाभाविकता देखेंगे जो हमारे यहां की पुरानी चाल की बड़ी बूढ़ी स्त्रियों के चेहरों पर पाई जाती है। 'बा' के जीवन की विशेषता यही है कि वे अपने ढङ्ग की भारतीय स्त्रियों से इतनी अधिक समानता रखती हैं और फिर भी उन से इतनी अधिक ऊँची हैं। 'बा' ज्यादह पढ़ी लिखी नहीं। जिस तरह हमारी बूढ़ी माताएं तुलसीदास जी की रामायण की चौपाइयों को धीरे धीरे खोलकर पढ़ती हैं 'बा' भी धीरे धीरे थोड़ा थोड़ा पढ़ लेती हैं। बच्चों से स्नेह तथा मोहममता में भी हमारी अन्य माताओं के समान ही हैं यद्यपि महात्माजी के अनुपम स्वार्थ त्याग तथा संयम ने उनके जीवन पर पूरा प्रभाव डाला है। 'बा' की उच्चता कष्टों में प्रकट होती है और जितनी कठिनाइयों में उन्हें गुज़रना पड़ा है उतनी कठिनाइयाँ बहुत कम भारतीय स्त्रियों ने झेली होंगी। इन पंक्तियों का लेखक उस दिन का दृश्य कभी नहीं भूल सकता जब महात्मा जी पकड़ कर साबरमती जेल को भेज दिये गए थे। 'बा' के चहरे पर यद्यपि चिन्ता के चिन्ह थे

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पर वे धैर्य्य के द्वारा अपने हृदय के विषाद को सफलता पूर्वक रोके हुए थीं और उनका मुखमंडल आश्रम वालों के लिए उसी मातृ-प्रेम से परिपूरित था। महात्मा जी के जेल के दिनों में 'बा' ने जो तपस्यापूर्ण जीवन व्यतीत किया था उसका पता आश्रम के बाहिर बहुत कम आदमियों को होगा।

'बा' का अकृत्रिम भोलापन ही उनका सब से अधिक आकर्षक गुण है। एक बार कहीं राजनैतिक वाद विवाद के बीच में महात्मा जी ने कहा था "मेरी दृष्टि में 'बा' संसार की सब से अधिक सुन्दरी स्त्री है।" श्रीमती सरोजिनी देवी भी उस समय उपस्थित थीं। उन्होंने यह बात 'बा' से कही कि महात्मा जी कहते थे कि 'बा' संसार की सब से अधिक सुन्दरी स्त्री है। 'बा' ने बड़े भोलेपन से कहा. "क्या सचमुच बापू जी ऐसा कहते थे ?" श्रीमती सरोजिनी देवी ने यह बात पूर्व अफ्रिका में सुनाई थी।

यह बात ध्यान देने योग्य है कि महात्मा जी भी 'बा' को 'बा' कहते हैं और 'बा' भी बापू को 'बापू' ही कहती हैं।

'बा' को बच्चों से बड़ा प्रेम है। 'बा' के घर पर एक झूला है और आश्रम के बच्चों को जब कभी अवकाश मिलता है तो वे 'बा' के झूले पर जाकर झूलते हैं। 'बा' इससे बड़ी प्रसन्न रहती हैं और कभी कभी खाने की चीज़ भी उनको दे देती हैं। आश्रम में कोई स्त्री बीमार हो तो 'बा' उसके पास जाकर उसकी खबर पूछती हैं।

आश्रम में 'बा' का जीवन पूर्ण तपस्या का जीवन है। महात्मा जी की तपस्या से तो आज शिक्षित संसार परिचित है पर 'बा' की तपस्या पर समाचार पत्रों की कुदृष्टि अभी नहीं पड़ी और संसार शायद कभी भी न जानेगा कि महात्मा जी को 'महत्त्व' के उच्चतम शिखर पर चढ़ाने में 'बा' ने कितनी सहायता दी है। 'बा' महात्मा जी की हर बात से सहमत नहीं और कभी कभी उन में झगड़ा भी हो होजाता है पर महात्मा जी बड़े व्यवहार कुशल हैं और वे इस तरह के मौके प्रायः नहीं आने देते। पिछले 'यंग इंडिया' में महात्मा जी ने लिखा है:—

"सम्भवतः अब भी मेरी अनेक बातों से 'बा' सहमत नहीं। पर हम दोनों ऐसी बातों पर बहस नहीं करते। मुझे ऐसी बातों पर बहस करने में कोई नतीजा नहीं दीख पड़ता। 'बा' को न तो उसके माता पिता ने कुछ शिक्षा दी और न मैंने ही यथा समय कुछ शिक्षा देकर अपना कर्त्तव्य पालन किया। पर 'बा' में एक बड़ा गुण अच्छी मात्रा में है और वह गुण ऐसा है जो थोड़ी बहुत मात्रा में अधिकांश हिन्दू स्त्रियों में पाया जाता है। वह यह है कि मन, वेमन, समझे बेसमझे उसने इस बात में ही अपना सौभाग्य समझ रक्खा है कि मेरा अनुगमन करे और वह मेरे संयमित जीवन व्यतीत करने के प्रयत्न में कभी बाधक नहीं हुई।"

'बा' वस्तुतः 'बापू' की अनुगामिनी हैं। अपनी सरल स्वाभाविकता के कारण उन का जीवन भारतीय स्त्रियों के लिए आदर्श है।

(आर्य मित्र)

माडर्नरिव्यू के अगस्त के अंक में जो हमें अभी प्राप्त हुआ है कुछ भारतीय महिलाओं और कन्याओं के विषय में एक लेख छपा है। निम्न लिखित बातें उसी लेख से ली गई हैं:—

श्रीमती तारा बहन मानिकलाल प्रेमचन्द जे.पी

आप बम्बई में निवास करती हैं। सरकार ने हाल ही में आपको आनरेरी मजिस्ट्रेट बनाया है। बम्बई में जो संस्थाएं स्त्रियों के सुधार के लिये कार्य कर रही हैं उन में से बहुत सी संस्थाओं से आपका सम्बन्ध है। आप वहां की भगिनी समाज की प्रधान हैं।

श्रीमती ए० कैथेराइन सुतारायडूः—

आपको मदरास की सरकार ने कृष्णा के डिस्ट्रिक्ट बोर्ड का मेम्बर बनाया है।

श्रीमती ललितम बालसुन्दरम्:—

आपको सरकार ने कोइम्बटूर की जिला शिक्षासमिति का सदस्य बना दिया है। आप एक बड़े शिक्षित कुटुम्ब की हैं और स्वयं भी बड़ी विदुषी हैं। नगर के सामाजिक कार्यों में आप का विशेष हाथ है। बच्चों के हित के लिये आप बहुत उद्योग करती रहती हैं और नेशनल इण्डियन ऐसोसियेशन में भी काम करती हैं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

श्रीमती इन्दिरानी बालसुब्रह्मण्यम्:—

बोलचर आन्दोलन में खूब उद्योग कर रही हैं। आप 'असिस्टैन्ट-क्लब मास्टर' बनाई गई हैं।

श्रीमती श्यामकुमारी नैहरू:—

आप प्रयाग के पंडित श्यामलाल नेहरू की सुपुत्री हैं। आपने इसी वर्ष प्रयाग के विश्वविद्यालय से एम० ए० (प्रथम वर्ष) एल-एल० बी० (प्रथम वर्ष) की परीक्षाओं में सर्वोच्च स्थान प्राप्त किया है। सीनियर कैम्ब्रिज परीक्षा पास करके आपने प्रयाग के म्योर सैण्ट्रल कालेज में प्रवेश किया। आपका विचार आगे चल कर डाक्टरी पढ़ने का था। सन् १९२० में असहयोग के दिनों में आपने कालेज छोड़ दिया। १९२४ ई० में आपने एफ०ए० की परीक्षा पास की और कन्याओं में आपका नम्बर सर्वोच्च रहा। इस लिये आपको २०) महीने का वजीफा मिला। सन् १९२६ में आपने बी० ए० की परीक्षा पास की और उत्तीर्ण विद्यार्थियों में आपका नम्बर सब से ऊँचा रहा और आप को ३०) महीने की छात्रवृत्ति मिली। अब आप एम० ए० तथा एल-एल० बी० की द्वितीय वर्ष की परीक्षा पास करके वकालत करने का विचार करती हैं। आज तक आपको ७ पदक मिल चुके हैं।

कुमारी सुलभा परन्दीकर:—

आपने इसी वर्ष बम्बई विश्वविद्यालय से दर्शनशास्त्र में प्रथम कक्षा में एम० ए० की परीक्षा पास की है और इस लिये आपको चान्सलर साहब का पदक भी मिला है। बम्बई विश्वविद्यालय में दर्शनशास्त्र में प्रथम कक्षा में एम.ए पास करना कोई आसान काम नहीं। आज से तेरह वर्ष पूर्व श्रीयुत आर० डी० रानाडे नामक एक विद्यार्थी ने प्रथम कक्षा में बम्बई विश्वविद्यालय से एम० ए० पास किया था। आमलनेर के दर्शनशास्त्र सम्बन्धी विद्यालय की सहायता से अब आप अनुसन्धान का काम करेंगी। आपने "परमात्मा का व्यक्तित्व" नामक एक बड़ा विद्वत्तापूर्ण निबन्ध लिखा था।

कुमारी डाक्टर कुमुद मेहता एल.एम.एस.एम. आर. सी. पी.—

आप बम्बई से डाक्टरी की एल० एम० एस० परीक्षा पास करके विलायत गईं और वहाँ पर आपने ऐडिनबरा से एल० एम० की डिग्री प्राप्त की। गुजरात की हिन्दू कन्याओं में आप ने सब से पहले डाक्टरी में इतनी योग्यता हासिल की है।

कुमारी जुलैखा बानू:—

आप ढाका के नवाब असनुल्लाखाँ साहब की पोती हैं और आपने कलकत्ता विश्वविद्यालय से बी० ए० की परीक्षा पास की है। कहा जाता है कि संस्कृत में आपको बहुत अच्छे नम्बर मिले हैं।

कुमारी विश्वास:—

ढाका विश्वविद्यालय में आपने कानून पढ़ना प्रारम्भ किया है। आप पहली ही लड़की हैं जिन्होंने ढाका विश्वविद्यालय में यह विषय लिया है।

कुमारी मनीषा सेन:—

आप कलकत्ते के श्रीयुत सुनन्दसेन की पुत्री हैं, आप को ट्रिनिटी की गानविद्या शाला में पियानो बाजा सीखने के लिये एक छात्रवृत्ति मिली है।

इनके सिवाय कितनी ही कन्याओं ने एफ० ए० और मैट्रिक की परीक्षाएं पास की हैं।

(हम भारतीय कन्याओं को विश्वविद्यालय की उच्च परीक्षाओं के दिलाने के पक्ष में नहीं हैं क्योंकि अंग्रेजी शिक्षा प्रणाली बड़ी दूषित है फिर भी उपर्युक्त बातें यह सिद्ध करती हैं कि अवसर मिलने पर भारतीय कन्याएं शिक्षा क्षेत्र में भी युवकों का मुकाबला कर सकती हैं। —अनुवादक]

(आर्यमित्र)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

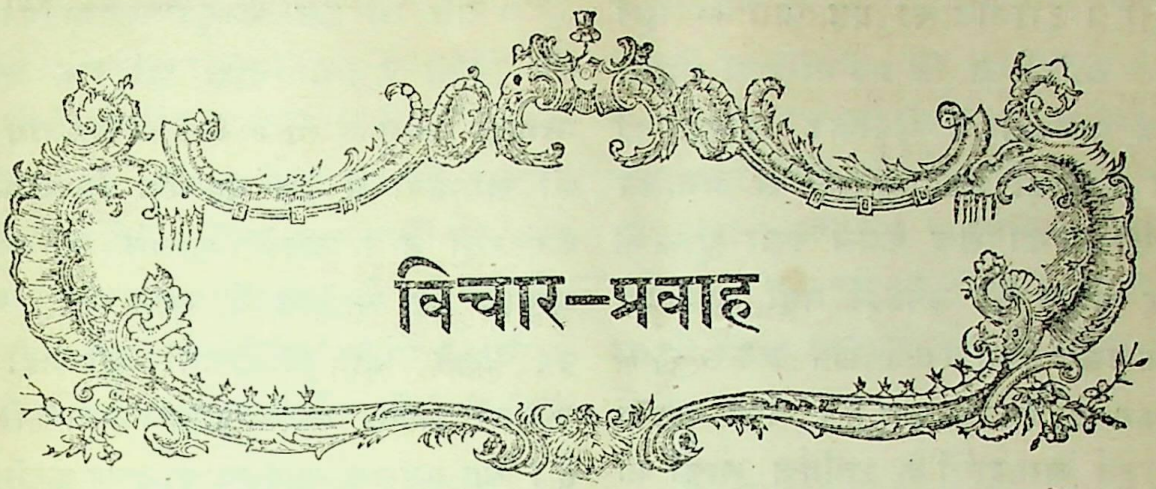

'वर्तमान-अभियोग' का निर्णय

लाहौर हाईकोर्ट ने 'वर्तमान-अभियोग' का जो निर्णय दिया है वह सम्भवतः मुसलमानों के लिये भी कल्पनातीत होगा। यह अभियोग 'परख अभियोग' था। इस अभियोग के निर्णय द्वारा भारतीय-दण्ड-विधान की १५३ 'अ' धारा का क्षेत्र स्पष्ट और विस्तृत कर दिया गया है। यद्यपि हमारी वैयक्तिक सम्मति में १५३ 'अ' धारा का वह अभिप्राय नहीं है जो अभिप्राय पञ्जाब हाईकोर्ट ने निश्चित किया है तथापि इस निर्णय द्वारा हमें यह सन्तोष है कि धर्माचार्यों की मान-रक्षा के लिये अब कोई नया कानून बनाने की आवश्यकता नहीं रही। सम्पूर्ण सम्प्रदायों के आचार्यों की ख्याति रक्षा के लिये कोई नया कानून बनाया जाय—यह विचार हमारी सम्मति में अत्यधिक आक्षेप योग्य था; इससे लाभ के स्थान पर हानि की अधिक सम्भावना थी।

१५३ 'अ' धारा की इस नई व्याख्या से सन्तुष्ट होते हुए भी 'वर्तमान-अभियोग' के इस निर्णय को हम दो दृष्टियों से आक्षेप योग्य समझते हैं। 'वर्तमान' के वकील श्रीयुत् पुरी ने अपनी जिरह में एक महत्वपूर्ण बात यह भी कही थी कि १५३ 'अ' धारा का यह नया स्वरूप सरकार ने केवल हिन्दुओं के लिये ही सुरक्षित कर रखा है। इस धारा के आधार पर केवल हिन्दू लेखक ही रगड़े गये हैं। मुसलमान लेखक 'दिल्ली से आदमाबाद' और "उन्नीसवीं सदी का महर्षि" जैसे निन्दनीय और घृणा-वर्धक लेख लिख कर भी इस धारा की लपेट में नहीं लपेटे गये। मि० पुरी की इस स्थापना पर हाईकोर्ट ने विप्रतिपत्ति की थी और उन्हें इस सम्बन्ध में और अधिक न कहने का आदेश दिया था। जस्टिस ब्रौडवे का कथन था कि हाईकोर्ट कोई राजनैतिक वेदी नहीं है; यहाँ सरकार पर आक्षेप करने के लिये हम लोग एकत्र नहीं हुए। परन्तु हमारी सम्मति में इस अभियोग में मि० पुरी की जिरह का यह पहलू अभियोग के विरोध में एक प्रबल-युक्ति थी। पञ्जाब सरकार जब "उन्नीसवीं सदी का महर्षि" जैसे कुत्सापूर्ण लेखों को आक्षेप योग्य नहीं समझती तब "सैर-ए-दोज़ख" पर उसकी ओर से अभियोग चलाए जाना सर्वथा अयुक्ति-युक्त है। "सैर-ए-दोज़ख" लेख "देहली से आदमाबाद" लेख के जवाब में लिखा गया है अतः इस लेख के गुण दोषों की विवेचना करते हुए कानून की दृष्टि से पहले लेख पर विचार करना भी आवश्यक

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हो जाता है। हाईकोर्ट को इस बात का पूरा ध्यान रखना चाहिये था कि जब भारतीय समाज में धार्मिक पैगम्बरों के वैयक्तिक चरित्रों की आलोचना करने की प्रथा बहुतायत से प्रचलित है तब इसी ढंग का लेख केवल इसी युक्ति के आधार पर कानून की लपेट में नहीं लाया जा सकता कि उसके द्वारा एक विशेष जन-समुदाय जान-बूझ कर उद्वेलित हो उठा है। अगर भारत-वर्ष के सम्पूर्ण सम्प्रदायों के धार्मिक भावों की रक्षा का भार सरकार इसी प्रकार उठाने को तैयार है तो अँग्रेज़ों को शीघ्र-ही भारतवर्ष छोड़ कर अपने घर चले जाना चाहिये क्योंकि आर्यसमाज के धार्मिक सिद्धान्त, राजनैतिक पराधीनता को भी असह्य मानते हैं। नहीं तो क्या मुसलमान लोग अभी तक श्रीराम, भगवान् कृष्ण और ऋषि दयानन्द आदि के चरित्रों पर मिथ्या आक्षेप नहीं करते रहे हैं।

एक और बात। इसी ढंग का एक अभि-योग, अभी कुछ-ही समय हुवा है, 'विचित्र जीवन' नामक पुस्तक के लेखक पं० कालीचरण शर्मा पर युक्तप्रान्त की सरकार ने चलाया था। अलाहाबाद हाईकोर्ट ने शर्मा जी को इसी धारा के आधार पर सिर्फ दो मास की सादी सजा दी थी। विचित्र जीवन की ६ हजार कापियाँ बिक चुकी थीं; वह पुस्तक हमारा अनुमान है कि, ५० हजार से भी अधिक लोगों द्वारा पढ़ी जाचुकी थी। दूसरी ओर "सैर-ए-दोज़ख" लेख रिसाला वर्तमान के जिस अङ्क में प्रकाशित हुआ था, उस अङ्क की केवल ५०० कापियाँ ही प्रकाशित हुई थीं, इनमें से भी बहुत-सी कापियाँ सरकार द्वारा जप्त कर ली गईं। यह सब होते हुए भी इस लेख के लेखक को १½ वर्ष की कड़ी कैद की सजा होगई।

हम तो इस सम्पूर्ण घटना को सरकार की पुरानी गूढ़ मनोवृत्ति का एक नया नमूना मात्र ही समझते हैं। अँग्रेजी सरकार इस बात को समझती है कि वह एक विदेश में शासन कर रही है। उसके शासन का आधार ही अन्याय पर आश्रित है अतः वह न्याय-मार्ग पर चलने की अभिलाषा ही नहीं रखती। उसे तो अपना शासन कायम रखने से मतलब है। यह मतलब यदि न्याचरण करते हुए पूरा हो जाय तब तो साँप भी मारा गया और लाठी भी न टूटी। परन्तु जहाँ न्याय से काम न चल सके वहाँ न्याय का ढोंग कर के काम निकालने की नीति को सरकार निन्दनीय नहीं समझती। सरकार का विचार है कि भारतवर्ष में मुसलमान लोग हिन्दुओं की अपेक्षा अधिक जानदार हैं। उसने जब देखा कि एक जरा-से मामले को लेकर हिमालय से रासकुमारी तक के भारत का यह जानदार भाग उद्वेलित हो उठा है; उसके आन्दोलन की गूंज लण्डन तक पहुंचने लगी है; सीमाप्रान्त में एक क्रान्ति-सी आगई है; तब उसे निष्फल और सूखे न्याय की अपेक्षा 'शान्ति-रक्षा' ही अधिक मूल्यवान् जान पड़ी। क्या हिन्दू लोग भी इस घटना से कुछ शिक्षा लेंगे।

बरेली दिवस

गत ७ अगस्त को सम्पूर्ण भारतवर्ष भर में बरेली-दिवस बड़े उत्साह के साथ मनाया गया। सभी शहरों में खूब बड़ी-बड़ी सभाएँ की गईं। कहीं-कहीं तो इन सभाओं की उपस्थिति ५० हजार तक भी जा पहुंची। इस दिन सभाएँ हुईं और खूब उत्साह के साथ हुईं, परन्तु केवल मात्र सभाएँ करने से ही कुछ नहीं बन सकेगा।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

यद्यपि हाल में ही मुसलमानों द्वारा की गई विराट् सभाओं द्वारा सफलता प्राप्ति का उदाहरण भी हमारे सामने है तथापि आर्यसमाज जैसी जीवित जागृत संस्था को केवल इतने से ही सन्तोष नहीं कर लेना चाहिये। फिर मुसलमानों की तरह आर्यसमाज सरकार का लाड़ला भी तो नहीं है। पिता भी अपने लाड़ले पुत्र के मचलने पर ही अधिक पसीजता है अँग्रेजी सरकार तो फिर विदेशी ही है।

बरेली की घटना जैसे सफेद अन्याय इस विदेशी-शासन में कम हुए होंगे। यह घटना तो स्पष्ट नादिरशाही है। यद्यपि सरकार ने स्वयं ही अपना यह कुत्सित अभियोग वापिस ले लिया है तथापि उन कर्मचारियों को इस गुरुतर अपराध करने का कोई दण्ड अभी तक नहीं दिया गया। जहाँ तक हमें ज्ञात है सरकार अभी ठीक मामले में कोई कार्रवाई करने का विचार भी नहीं कर रही। बरेली काण्ड के उत्तरदाता राजकर्मचारियों को कुछ वर्षों की सजा दिलाने का हमें कोई शौक नहीं है। उन्हें सजा देने या न देने से आर्यसमाज का कुछ भी बनता-बिगड़ता नहीं है। फिर आर्य-समाज को तो उस अमरगुरु का अनुयायी होने का गौरव प्राप्त है जो कि जहर पिलाने वालों को भी छाती से लगाता था। आर्यसमाज को उन आत्महुत नेताओं के अनुयायी होने का सौभाग्य प्राप्त है जो गोली चलाने वाले को ठण्डा पानी पिला कर ही उसका बदला लेना पसन्द करते थे। आर्यसमाज संसार को बंधनों में बँधवाने नहीं आया—मुक्त करवाने आया है। हम तो केवल इस घटना द्वारा सरकार की मनो-वृत्ति का प्रदर्शन कराना चाहते हैं।

भारतवासियों की सर्वतोमुखी उन्नति के लिये आर्यसमाज जिस गहराई तक यत्न कर रहा है उसे देख कर एक विदेशी सरकार तथा एक विदेशी सभ्यता का चौंक उठना स्वाभाविक ही है। आर्यसमाज को इससे घबराना नहीं चाहिये। यह आर्यसमाज की बल-परीक्षा का समय है, यदि इस समय यह प्रशंसनीय समाज अपनी शक्ति का पूरा परिचय सरकार को दे देगा तब इसकी उन्नति का कार्य और भी अधिक निष्कण्टक हो जायगा।

अखिल भारतीय आर्य-महासभा

आगामी अक्तूबर मास में सार्वदेशिक सभा की ओर से दिल्ली में 'अखिल भारतीय आर्य काँग्रेस' का प्रथम अधिवेशन करने का निश्चय किया गया है। इस काँग्रेस का संगठन लग-भग उसी ढंग पर किया जायगा जिस ढंग पर भारत-वर्ष की नैशनल काँग्रेस का संगठन है। इस काँग्रेस का अधिवेशन भी प्रतिवर्ष भिन्न-भिन्न स्थानों पर हुवा करेगा। दिल्ली में इस अधिवेशन के लिये जोर शोर की तैयारियाँ प्रारम्भ हो चुकी हैं। स्वागत-समिति का संगठन तथा उसके अधिकारियों का निर्वाचन भी हो चुका है। इस महासभा के लिये सम्पूर्ण आर्यसमाज में जो उत्साह दिखाई दे रहा है उसे दृष्टि में रख कर हम निश्चय पूर्वक कर सकते हैं कि अधिवेशन पूर्ण सफलता के साथ समाप्त होगा।

आर्यसमाज में इस समय एक ऐसे सुयोग्य नेता की माँग है जो प्रान्तीयता के आवरण को भेद कर निपुणता के साथ आर्यसमाज का नेतृत्व कर सके। अमर शहीद स्वामी श्रद्धानन्द जी की शहादत के बाद, हम कह सकते हैं कि, आर्यसमाज के सार्वदेशिक संगठन को सर्वमान्य नेता प्राप्त नहीं हो सकता। इन दिनों जब कि दो ओर से

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

एक साथ ही आर्यसमाज पर आक्रमण हुए हैं, यही-एक सर्वमान्य नेता का अभाव ही उसकी सब से बड़ी कमजोरी है। यह कमजोरी उसी प्रकार की है जिस प्रकार कि युद्ध के समय एक सुशिक्षित सेना में एक सर्वमान्य सेनापति का अभाव होना।

परन्तु इस बड़ी कमी को जबरदस्ती पूरा भी नहीं किया जा सकता। किसी को घोषणा करके तो नेता बनाया ही नहीं जा सकता। इस राजत्व विहीन दशा में 'प्रतिनिधितन्त्र' का आश्रय लेकर ही चला जा सकता है। जिस प्रकार भारतवर्ष की नैशनल काँग्रेस प्रतिवर्ष अपना नया सभापति चुन कर एक सर्वमान्य सार्वदेशिक नेता के अभाव को पूरा करती है उसी प्रकार आर्य-समाज भी इस नयी आयोजना द्वारा प्रतिवर्ष एक नया सार्वदेशिक नेता प्राप्त कर सकेगी। हमें पूर्ण विश्वास है कि आर्यसमाज जैसी सुशिक्षित और उन्नत संस्था इस नयी आयोजना द्वारा पूरा लाभ उठायेगी।

गुरुकुल में श्रीयुत प्रेमचन्द्र

गत मास हिन्दी संसार के सुप्रसिद्ध उपन्यासकार श्रीयुत प्रेमचन्द्र गुरुकुल में पधारे थे। गुरुकुलीय साहित्य-परिषद् ने अपने जन्मोत्सव के अवसर पर आपको विशेष रूप से निमन्त्रित किया था। यह पहला अवसर था जब श्रीयुत प्रेमचन्द्र गुरुकुल में पधारे थे; इन्हीं दो तीन दिन में उनका गुरुकुल से बहुत अधिक घनिष्ट सम्बन्ध होगया है। वह गुरुकुल के होगये हैं, गुरुकुल ने उनसे घनिष्टता उत्पन्न करली है। श्रीयुत प्रेमचन्द्र का स्थान हिन्दी-संसार में बहुत उच्च है। हमारा विश्वास है कि अभी तक हिन्दी-संसार ने अपने इस अपूर्व प्रतिभाशाली लेखक की पूरी तरह कदर करना नहीं सीखा। प्रेमचन्द्र यदि किसी और देश में पैदा होते तो आज उनका स्थान संसार के उपन्यासकारों की उच्चकोटि में गिना जाता। वह भारतवर्ष के लिये एक नया सन्देश लेकर पैदा हुए हैं; हिन्दी-साहित्य में उन्होंने एक नयी शैली को जन्म दिया है। वह दिन हिन्दी के इतिहास में सदैव अमर रहेगा जिस दिन प्रेमचन्द्र ने उर्दू का क्षेत्र छोड़कर हिन्दी में अपने ग्रन्थ लिखने का निश्चय किया था। साहित्य-परिषद् के जन्मोत्सव में परिषद् के सभा-पति आचार्य रामदेव जी ने अपने अतिथि का स्वागत करते हुए जो वाक्य कहे थे उनमें से कुछ वाक्य यहाँ उद्धृत करने के लोभ को हम संवरण नहीं कर सकते। उन्होंने कहा था—"श्रीयुत प्रेमचन्द्र का स्थान हिन्दी-साहित्य में सदैव अमर रहेगा। आपके उपन्यास ऐतिहासिक, वैज्ञानिक या भौगो-लिक नहीं हैं। भारतीय जीवन की मामूली २ बातों को लेकर ही आपने उनकी रचना की है। श्रीयुत प्रेमचन्द्र के उपन्यास भारतीयता के रंग में पूरी तरह रँगे हुए हैं। वे मौलिक हैं, उनपर नकल का अभियोग अनधिकार पूर्ण है। अँग्रेज़ी-साहित्य में थैकरे का जो स्थान है वही स्थान हिन्दी-साहित्य में प्रेमचन्द्र का है। आपके उपन्यासों में स्वाभाविक मनोविज्ञान कूट-कूट कर भरा हुआ है।" श्रीयुत प्रेमचन्द्र गुरुकुल आने से पूर्व समझते थे कि गुरुकुल साम्प्रदायिक कट्टरता का दृढ़ गढ़ होगा परन्तु गुरुकुल पहुँचते ही

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

Regd. NO. A. 1711
सितम्बर, अक्तूबर १९२७ [संख्या ५, ६
श्रावण सं० १९८४] विचार-प्रवाह

उनकी वह भावना पूरी तरह से दूर होगई। यहाँ तक कि वह जो भाषण लिखकर लाये थे, उसे भी इसी कारण पढ़ न सके। उन्हें लखनऊ बैठकर गुरुकुल के सम्बन्ध में लिखा हुआ अपना सम्भाषण सरासर अप्रासंगिक जान पड़ा। उनके अपने शब्दों में वह गुरु बनकर आये थे परन्तु यहाँ आकर शिष्य बन गये।

श्रीयुत प्रेमचन्द्र और हिन्दू-मुस्लिम समस्या

वर्तमान हिन्दू-मुस्लिम समस्या के सम्बन्ध में श्रीयुत प्रेमचन्द्र बहुत अधिक उदार विचारों के व्यक्ति हैं। यहाँ तक कि बहुत से सज्जन आधा मुसलमान तक कहते हैं। गुरुकुल की वाग्वर्धिनी सभा में आप का हिन्दू-मुस्लिम समस्या पर एक व्याख्यान हुआ था। इस व्याख्यान में आपने मुसलमानों की कई बातों को युक्ति युक्त सिद्ध करने का यत्न किया था। आपका कहना था कि मुसलमान स्वभाव से ही खराब नहीं हैं। वर्तमान शुद्धि आन्दोलन के कारण मुसलमानों का चौंक पड़ना स्वाभाविक है। यह शुद्धि आन्दोलन सार्वजनिक शान्ति के मुकाबले में बहुत मँहगा सौदा है। भारतवर्ष के अधिकांश मुसलमान प्रायः लफंगे हैं, उनसे लड़कर हिन्दुओं का ही नुक्सान होगा। हिन्दुओं को गोहत्या से चिढ़ना छोड़ देना चाहिये; नमाज के समय बाजा न बजाने से भी हिन्दुओं का कुछ जाता नहीं है। इस व्याख्यान में सभापति का आसन श्री आचार्य रामदेव जी ने ग्रहण किया था। आपने श्रीयुत प्रेमचन्द्र के उदार भावों की प्रशंसा करते हुए इस सम्बन्ध में अपने ये विचार प्रगट किये—"भारतीय मुसलमान यदि भारतीय सभ्यता को अपना लें तो हिन्दू लोग भली प्रकार उन्हें अपने में मिला लेंगे। भारतीय मुसलमान अरब से नहीं आये, वे भी रामचन्द्र और कृष्ण की सन्तान हैं। यदि वे लोग दिवाली, दशहरा, कृष्णाष्टमी आदि को भी अपना त्यौहार मानें, अरब की सभ्यता का त्याग करदें, तो यह समस्या स्वयं ही हल होजाय। इस्लाम की अरबी सभ्यता आचार की दृष्टि से भी आर्यसभ्यता की अपेक्षा बहुत अवनत है; इस सभ्यता को अपना कर मुसलमान लोग भारतवर्ष में शान्ति के साथ नहीं रह सकते। शुद्धि और तबलीग दोनों सम्प्रदायों के स्वाभाविक अधिकार हैं। दोनों हों, पर इनका रूप उग्र नहीं होना चाहिये।" आशा है हमारे पाठक इन दोनों पहलुओं पर स्वयं विस्तृत विचार कर सकेंगे।

जनसंख्या के आधार पर प्रतिनिधित्व

भारतवर्ष की वर्तमान व्यवस्थापिका सभाओं में प्रतिनिधित्व का आधार मुख्यतया जनसंख्या को माना गया है। परन्तु बड़ी व्यवस्थापिका सभा में जिस अनुपात से प्रत्येक प्रान्त को प्रतिनिधि भेजने का अधिकार दिया गया है, वह अनुपात किस आधार पर निश्चित किया गया है—इसे शासन सुधारों के सूत्रधारों को छोड़ कर और कोई नहीं समझ सकता। भारत के सर्वश्रेष्ठ मासिक पत्र 'मौडर्न रिव्यू' के सुयोग्य संपादक श्रीयुत रामानन्द चट्टोपाध्याय ने इस सम्बन्ध में एक लेख प्रकाशित किया है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उस के आधार पर हम कुछ बातें यहां उद्धृत करते हैं । वर्तमान बड़ी व्यवस्थापिका सभा में निम्न प्रान्त इस प्रकार अपने निर्वाचित प्रतिनिधि भेजते हैं—

प्रान्त का नाम	प्रतिनिधि	जनसंख्या
मद्रास	१६	४२३ लाख
बम्बई	१६	१६३ "
बंगाल	१७	४६७ "
युक्त प्रान्त	१६	४५४ "
पञ्जाब	१२	२०७ "
बिहार और उड़ीसा	१२	३४० "
मध्यप्रान्त और बरार	६	१३६ "
आसाम	४	७६ "
दिल्ली	१	५ "
ब्रह्मा	४	१३२ "
अजमेर मारवाड़	१	५ "

निर्वाचन का यह आधार किस सिद्धान्त पर है यह बात समझ नहीं आती। जनसंख्या, शिक्षा, आर्थिक स्थिति आदि किसी भी पहलू से यह अनुपात ठीक सिद्ध नहीं होता । यदि दिल्ली के अनुपात से अन्य प्रान्तों को भी निर्वाचन के अधिकार दे दिये जायें तो बंगाल, युक्तप्रान्त आदि के प्रतिनिधियों की संख्या बहुत अधिक बढ़ानी पड़ेगी । यदि बंगाल के अनुपात से यह संख्या संशोधित की जाय तो बम्बई आदि अन्य प्रान्तों की प्रतिनिधि संख्या बहुत कम करनी पड़ेगी । अच्छा हो यदि बम्बई के अनुपात से अन्य प्रान्तों को भी अपने प्रतिनिधि निर्वाचित करने का अधिकार दे दिया जाय । इस अवस्था में यह संख्या इस प्रकार हो जायगी—

बम्बई	१६
मद्रास	३४
बंगाल	३७
युक्त प्रान्त	३६
पञ्जाब	१६
बिहार उड़ीसा	२७
मध्यप्रान्त बरार	११
आसाम	६
दिल्ली	शून्य
अजमेर मारवाड़	"
ब्रह्मा	१०
योग	१६३

दिल्ली और अजमेर को विशेष रूप से एक एक प्रतिनिधि निर्वाचित करने का अधिकार दे दिया जाय; इस अवस्था में बड़ी व्यवस्थापिका सभा के निर्वाचित सदस्यों की संख्या १०५ के स्थान पर १६५ हो जायगी । यदि नामजद सदस्यों की संख्या ३० मान ली जाय तो बड़ी व्यवस्थापिका सभा के २२५ सदस्य हो जायेंगे । यह संख्या भी बहुत कम है। इङ्गलैण्ड की ५ करोड़ आबादी में वहां के हाउस औफ कौमन्स के सदस्यों की संख्या ६२५ है । भारतवर्ष की ३२ करोड़ जन संख्या पर २२५ का हाउस भी बहुत छोटा ही सिद्ध होगा । आगामी शाही कमीशन को इस समस्या का हल करना चाहिये ।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

Regd. NO. A. 1711

वर्ष ८, खंड ८] सितम्बर, अक्तूबर १९२७ [संख्या ५, ६

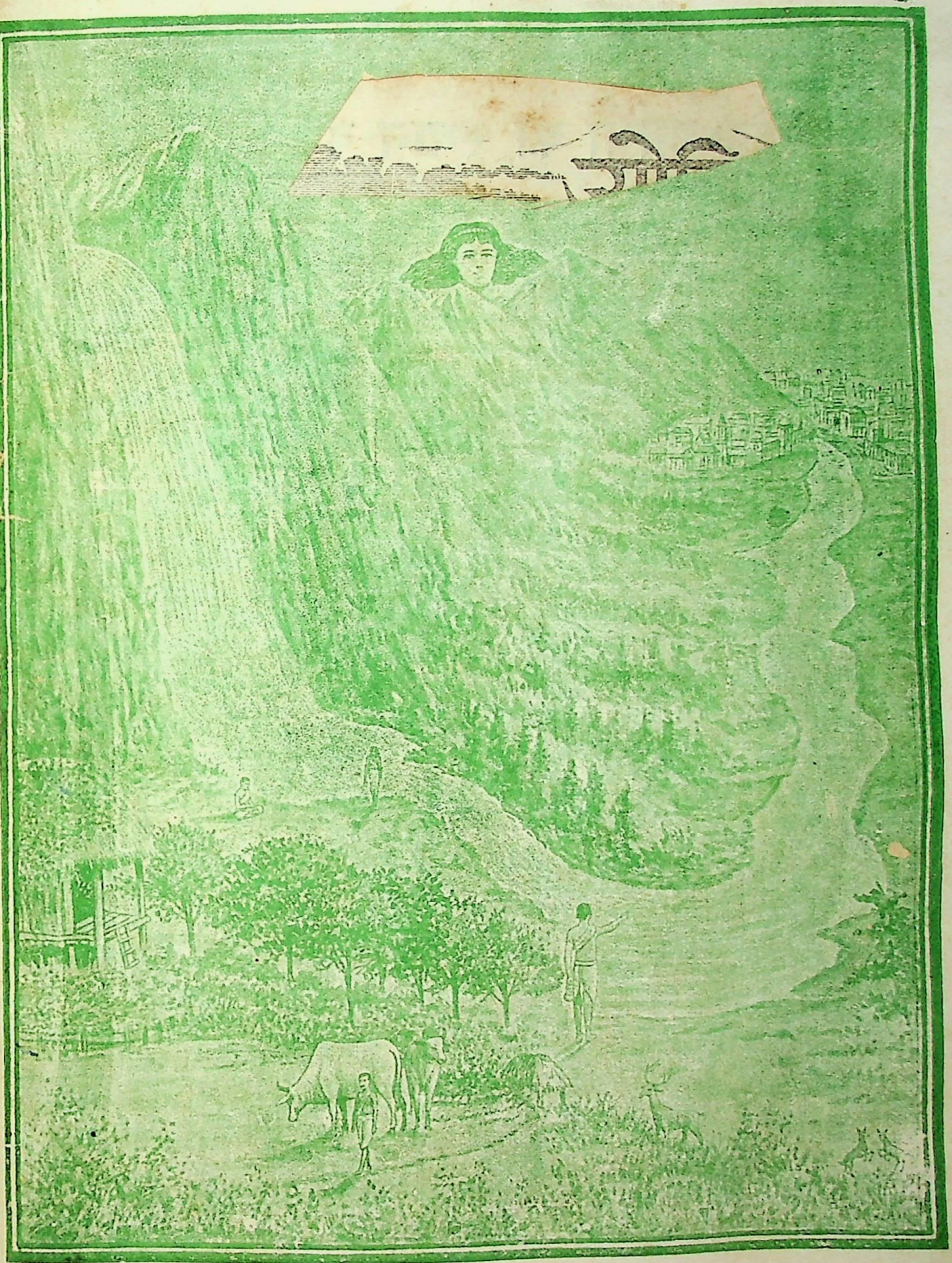

वार्षिक मूल्य ४॥)
प्रति संख्या ॥)

सम्पादिका—
विद्यावती सेठ बी. ए.

स्त्रियों और विद्यार्थियों से ४)
विदेश का मूल्य ६)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

[illegible] उद्- जाय। इस
[illegible]मान बड़ी व्यवस्थापिका हो जायगी—
[illegible]प्रकार अपने निर्वा- बम्बई

विषय सूची।

विषय	पृष्ठ
१. खोज में (कविता)—श्री ब्र० जनार्दन जी ...	१८५
२. वैदिक आर्यों का स्थान व समय— श्री प्रो० ज्वाला प्रसाद जी	१८६
३. बाल स्वर्ग कल्पना (कविता)—श्री योगेन्द्रपाल जी	१९२
४. प्रेम बन्धन—श्री सत्याचरण श्री वास्तव 'सत्य'	१९३
५. मूक रुदन (कविता)— श्री लक्ष्मी प्रसाद जी	१९९
६. धर्म की आवश्यकता— श्री ब्र० ओम्प्रकाश जी	२००
७. विनय (कविता) श्री कुमारी पुरुषार्थवती आर्य	२०२
८. परिस्थिति सिद्धान्त— श्री पं० इन्द्र जी ...	२०३
९. बाल विवाह (कविता)— श्री देवशर्मा जी	२१६
१०. युरोप में विद्या की पुनः जागृति-श्री ब्र० सर्वमित्र जी	२१७
११. प्रताप पञ्चक (कविता)-श्री कुमारी पुरुषार्थवती आर्य	२१९
१२. मोहिनी के आँसू— श्री सन्तलाल जी ...	२२०
१३. पथिक से प्रार्थना (कविता)— श्री जगन्नारायण देवशर्मा	
१४. महात्मा थोरियो— श्री प्रो० छबीलदास जी	
१५. नैराश्य (कविता)— श्री जगन्नाथ जी मिश्र	
१६. मक्खी— श्री डा० राधाकृष्ण जी ...	
१७. स्वप्न में (कविता)— श्री भुवनेश्वर सिंह जी	
१८. 'द्विज'—श्री पं० हरिशरण जी ...	
१९. मुरझाया हुआ हार	
२०. प्यारी पताका— एक ब्रह्मचारी ...	
२१. कुसुमोद्यान	
२२. मदर इण्डिया	
२३. कलाकौशल	
२४. मस्जिद के सामने ताजा ...	

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

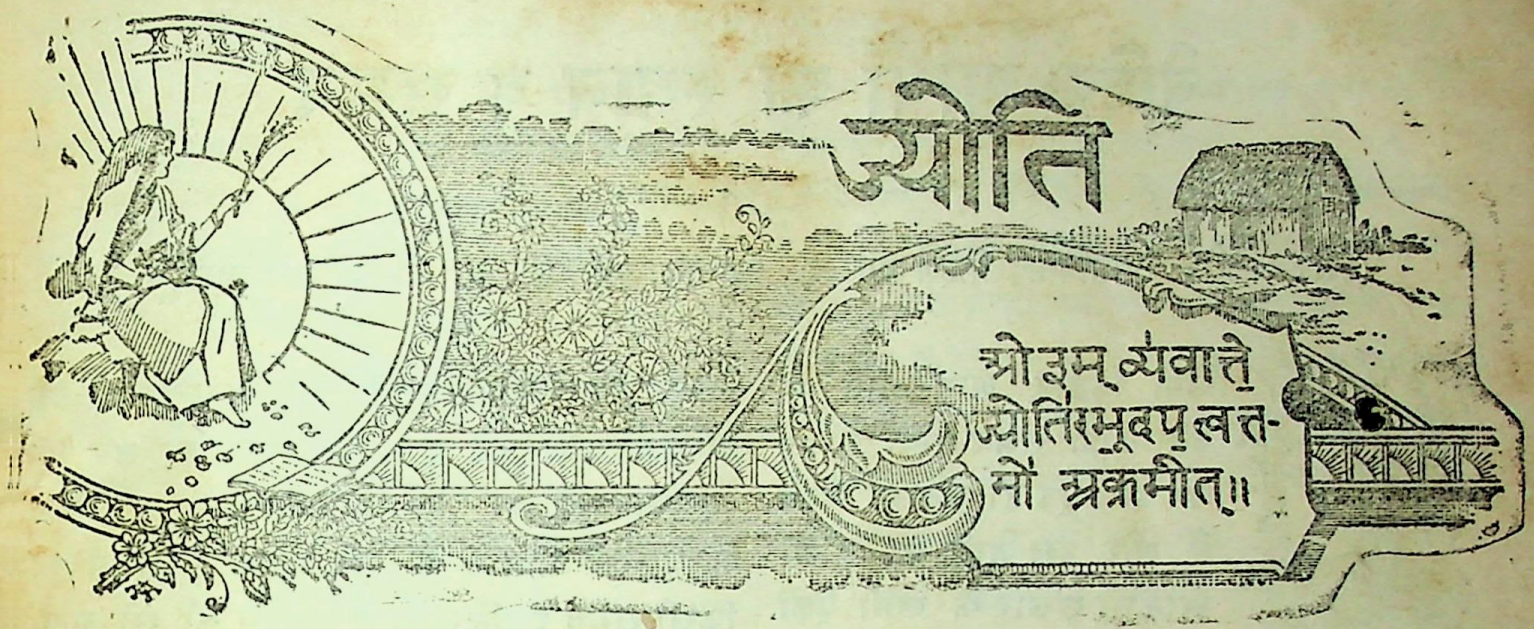

वर्ष ८ } भाद्रपद सं० १९८४ वि० * सितम्बर सन् १९२७ ई० { संख्या ५

खोज में

मैं तो तेरा प्रेम भिखारी।

दर दर घूमा हाथ पसारे-
वन उपवन सब छाने,
ढंग किये सब तेरी ख़ातिर।
पहन निराले बाने ॥ १ ॥

भस्म रमाई भगवा पहिना
फेरी निशि-दिन माला
आसन जप तप जोग किये सब।
हो तुझ में मतवाला ॥ २ ॥

देखी सारी दुनियाँ दारी
लेन देन के धन्धे
आखिर छोड़ा इहें जान बस-
जन्म-मरण के फन्दे ॥ ३ ॥

क़ाबा काशी घूम घूम कर
मेरा जी अकुलाया
ज़म ज़म गंगा की धारा में
पता न तेरा पाया ॥ ४ ॥

—श्री प्र० जनार्दन जी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वैदिक आर्यों का स्थान व समय

(ले०—प्रो० ज्वालाप्रसाद सिंहल एम. ए., एल.एल. बी., डी. ए. वी. कालिज देहरादून)

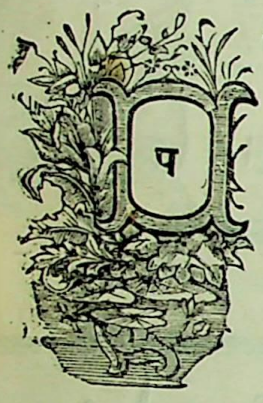

पश्चिमी विद्वान् आर्य-जाति के उत्थान का समय प्रायः ४००० वर्ष ईसा पूर्व ही बताया करते हैं और इस जाति का जन्म-स्थान तो संसार के सभी देशों में चक्कर लगाता रहा है। मध्य-एशिया से पश्चिमी एशिया, उत्तरी ध्रुव, तिब्बत होता हुआ अब मध्य योरुप के दक्षिणी भाग में ठहरा हुआ है परन्तु भारतीय विद्वान् इस मत से सहमत नहीं हैं और वे लोग समय-समय पर यह सिद्ध करने का प्रयत्न करते रहे हैं कि आर्य-सभ्यता बहुत पुरानी है, और इसका विकास भारतवर्ष में ही हुआ है; इसके लिये अनेक प्रकार के प्रमाण पाये जाते हैं और विशेष कर ज्योतिष सम्बन्धी प्रमाणों से यह सिद्ध किया जाता है कि आर्य-सभ्यता बहुत पुरानी है। श्रीयुत धीरेन्द्रनाथ मुकर्जी ने (वृषाकपी सूक्त Rv. x 68) से सिद्ध किया है कि ऋग्वेद की कुछ सूक्तियाँ तीस हजार वर्ष पूर्व बनी थीं। इसी प्रकार जन्म-स्थान के सम्बन्ध में यद्यपि लो० तिलक ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'The Arctic Home in the Vedas' में आर्यों का जन्म-स्थान उत्तरी ध्रुव में होना सिद्ध करने का प्रयत्न किया है परन्तु अधिकाँश विद्वत्-मण्डली इससे सहमत नहीं हुई। आधुनिक समय में भू-तत्त्व-विज्ञान सम्बन्धी अनुसन्धान से भी यह निश्चय हुआ कि संसार में ऋतु संबन्धी बड़े-बड़े परिवर्तन होते रहे हैं। कोई समय था जब कि अलास्का जो अब Arctic Circle उत्तरी ध्रुव के बर्फ़ानी प्रदेश में है गर्म देश था। इसी प्रकार किसी समय इङ्गलिस्तान में भारत की सी आब-हवा थी। कोई तीस हजार वर्ष पूर्व तिब्बत बर्फ़ से ढका हुआ था। इसका कारण यह कहा जाता है कि पृथिवी की Axis एकसी नहीं रहती वरन् उसका सूर्य की रेखा से कोण बदलता रहता है। जो कुछ भी कारण हो यह निश्चय है कि भारतवर्ष की आब-हवा सदैव ऐसी नहीं थी जैसी कि अब है। इसलिये केवल इसी प्रमाण पर आर्यों के जन्म-स्थान को उत्तरी ध्रुव आदि स्थानों में निश्चय करना आपत्ति रहित नहीं है।

हाल में कलकत्ते के विद्वान् श्रीयुत डा० अविनाशचन्द्र दास ने एक नवीन प्रकार का प्रमाण उपस्थित किया है। भू-तत्त्व-विज्ञान के विद्वानों का मत है कि पचास हजार वर्ष पूर्व संसार का मान-चित्र ऐसा न था जैसा कि अब है। उस समय दक्षिणी भारत उत्तरी भारत से दो समुद्रों से पृथक् किया हुआ था जहाँ अब गंगा-जमनी मैदान व राजपूताना है वहाँ पूर्व में समुद्र थे। यह दोनों जुड़े हुए थे। दक्षिण में जो अब दक्षिण भारत है वह पहले एक बड़े महाद्वीप का भाग था जो एक ओर अफ्रीका और दूसरी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ओर आस्ट्रेलिया से मिला हुआ था उत्तर में एक बड़ा भारी समुद्र था जिसके अब कश्यप सागर व Dead Sea चिन्ह रह गये हैं और तिब्बत व तुर्किस्तान का भाग बर्फ़ से ढका हुआ था। फिर कोई ३५००० से २५००० वर्ष पूर्व यह मान-चित्र बदल गया। कोई ऐसा भूचाल आदि कुछ आया जिससे कि राजपूताना व गंगा-जमनी समुद्र पीछे हटकर शनैः-शनैः बंगाल की खाड़ी व अरब समुद्र बन गये और गंगा-जमनी मैदान आहिस्ता-आहिस्ता निकल आया। डा० दास ने यह सिद्ध किया है कि ऋग्वेद के सूक्तों से पता लगता है कि जब वह सूक्त बने थे उस समय आर्यों के देश के चारों ओर चार समुद्र थे (IX 33,6 ; X 47,2) और सरस्वती नदी राजपूताना समुद्र में गिरती थी। इस प्रकार सिद्ध होता है कि कम-से-कम पच्चीस तीस हज़ार वर्ष पूर्व तो आर्य लोग पञ्जाब में ही रहते थे और सभ्यता में बढ़े हुए थे। यह समय ज्योतिष व भूत-त्त्व-विद्या दोनों के ही अनुसार सिद्ध होता है।

इस वैदिक वृत्तान्त को यदि पौराणिक इतिहास से मिलाकर देखा जाय तो और भी अद्भुत बातें मालूम होती हैं। इतिहास विशेष कर पुराणों का लक्षण है (भविष्य प्रथम भाग प्रथम अध्याय) वेदों में तो ऐतिहासिक बातें केवल प्रसङ्ग-मात्र से आ जाती हैं वरन् शृङ्खलाबद्ध इतिहास पुराणों से व महाभारत आदि से प्राप्त होता है और उनके देखने से दो बातें मालूम होती हैं जो ऊपर के विचार को पुष्ट करती हैं। एक तो यह कि जिस प्रकार का मान-चित्र में परिवर्तन भू-तत्त्व-विद्या के अनुसार कहा जाता है ठीक उसी प्रकार का पौराणिक इतिहास के अनुसार हुआ है। दूसरी बात यह कि प्राचीन जातियों के सम्बन्ध में आज-कल इतिहासज्ञों के लिये बड़ी-बड़ी समस्याएँ हैं वह पौराणिक वृत्तान्त से बड़ी अच्छी तरह हल हो जाता हैं और ये दोनों ही बातें उस वृत्तान्त के विश्वसनीय होने में प्रमाण हैं।

शतपथ ब्राह्मण में एक जलप्लावन का हाल है जो महाभारत, मत्स्य पुराण, भागवत पुराण में भी है। यह जलप्लावन वर्तमान मन्वन्तर के मनु के समय में हुआ। जल की बाढ़ आने से पूर्व एक मत्स्य ने मनु को खबर दी कि प्रलय होने वाला है और उन्हें एक बड़ी नौका बनाकर अपनी व अन्य जीवों व मनुष्यों की रक्षा करने के लिये कहा। उस नौका को वह मत्स्य ही लेकर शतपथ-ब्राह्मण के अनुसार उत्तरी पहाड़ की चोटी और महाभारत के अनुसार हिमालय की चोटी पर बाँध आया और मनु को आदेश किया कि जल के उतर जाने पर वह भी शनैःशनैः नीचे उतरे। अन्य ग्रन्थों में उस नौका को पहाड़ की चोटी पर ले जाने के बजाय जल पर ही चलाते रहने का लेख है। पहले यह जलप्लावन की कथा केवल कहानी मात्र प्रतीत होती थी और इसका ठीक-ठीक आशय समझ में न आता था। परन्तु अब यह उसी बड़े भूचाल का इतिहास मालूम होता है कि जिसमें प्रथम तो जल ऊपर चढ़ता हुआ पञ्जाब के भाग पर भी चढ़ आया और फिर उतर कर नवीन भूमि हिमालय के नीचे छोड़ गया, जिसमें कि उस महाद्वीप के भाग जो पहले दक्षिण भारत को अफ्रीका और आस्ट्रेलिया से मिलाता था डूब गये। इसका प्रमाण इस जलप्लावन की कथा को बाल्मीकि रामायण की उस घोषणा से मिलाने से प्राप्त होता है जिसमें कहा है कि अयोध्या को वैवस्वत मनु ने बसाया। चाहे वह अयोध्या जो वैवस्वत मनु ने बसाई थी वर्तमान अयोध्या हो, या अन्य नगर हो, परन्तु

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

इतना निश्चय है कि वह नगर नया बसाया गया और नवीन देश में बसाया गया जो हिमालय के नीचे गंगा-जमनी मैदान के उत्तरी प्रदेश में था। कदाचित् इस नये देश में आर्य-सभ्यता के विस्तार के कारण ही वैवस्वत मनु को मनु का पद प्राप्त हुआ। जलप्लावन से पूर्व यह मनु भागवत के अनुसार एक क्षत्रिय राजा सत्यव्रत थे। इससे प्रतीत होता है कि यह नगर मनु ने जलप्लावन के पीछे लौटने पर बसाया और लग-भग उसी प्रदेश में बसाया जो भू-तत्त्व-विद्या के अनुसार उस जलप्लावन के पीछे निकलना चाहिये। इसके अनुसार यह जलप्लावन लग-भग तीस हजार वर्ष पूर्व हुआ और इसी समय से वर्तमान मन्वन्तर वैवस्वत मनु का आरम्भ हुआ। परन्तु पौराणिक इतिहास में इससे पूर्व मन्वन्तर और हो चुके हैं जो स्वायंभुव, स्वारोचिष, उत्तम, तामस, रैवत व चाक्षुष हैं और इनमें से रैवत व चाक्षुष विशेष प्रयोजनीय हैं क्योंकि इनमें वह बातें हुईं कि जिनका प्रभाव सारे संसार के सारे इतिहास पर पड़ा। चाक्षुष के अन्त और वैवस्वत के आरम्भ के समय यह जलप्लावन हुआ। इससे पूर्व संसार की प्राचीन जातियों में देवता, दैत्य वा असुर, नाग, गरुड़ का वृत्तान्त पुराणों में आता है।

कुछ लोगों का विचार है कि आर्य लोग ही पहले देवता कहलाते थे, परन्तु इसमें भूल मालूम होती है क्योंकि देवता कश्यप की संतान थे और मनुष्य अथवा आर्य मनु के। इन दोनों के देश, सभ्यता, भाषा आदि सब पृथक् थे। देवासुर संग्रामों में मनुष्य राजे सहायता करने को जाया करते थे। कभी-कभी देवता व मनुष्यों में वैवाहिक सम्बन्ध भी हो जाता था। इन सब बातों से देवता मनुष्यों से पृथक् थे और कदाचित् चीन के रहने वाले थे। चीन वाले अब तक अपने देश को स्वर्गीय-राज्य (Celestial Empire) कहते हैं। जब कभी देवता भारत में आते थे अथवा मनुष्य देवलोक में जाते थे तो आकाश मार्ग से ही जाते थे। रावण ने जब देवलोक पर चढ़ाई की तो कैलाश को पार करके की। एक और अद्भुत् समानता है। इन्द्र को सदैव अपने देश व राज्य की चिन्ता लगी रहती थी। उसको किसी अजनबी का देवलोक में आना अच्छा न लगता था और कदाचित् इसी कारण से देवलोक का पूरा-पूरा हाल आर्यों को भी मालूम न था। अब चीन वाले अन्य देशवासियों को अपने देश में घुसने में अनेक आपत्ति करते हैं। इसके अतिरिक्त चीन का देवलोक होना दैत्यों के देश व विष्णु-लोक के स्थान से भी सिद्ध होता है। वैकुण्ठ विष्णु के रहने के लिये, रैवत मन्वन्तर में बनाया गया कहते हैं। विष्णु इन्द्र का छोटा भाई कहा जाता है और वैकुण्ठ इन्द्रलोक के समीप ही बनाया गया। वैकुण्ठ का एक नाम त्रिविष्टप भी है जो तिब्बत का पूर्व रूप मालूम होता है। पचास हजार वर्ष पूर्व तिब्बत बर्फ़ से ढका हुआ था इसीलिये कदाचित् विष्णु का स्थान क्षीर-सागर में बताया जाता है। यदि तिब्बत वैकुण्ठ था तो उसके समीप चीन-ही इन्द्रलोक होगा। दूसरे देवता और दैत्यों की सदैव लड़ाई छिड़ी रहती थी इस लिये इनके देश भी निकटवर्ती होने चाहिये। आधुनिक इतिहासज्ञों का विचार है कि दैत्यों का देश कश्यप सागर के निकटवर्ती देश था। कहा जाता है कि इस समुद्र के तट पर कैसपी-आई एक जाति रहती थी जिसके देश का नाम हिरकेनिया था और इसी नाम की इसकी राजधानी थी। कैसपीआई जाति के नाम पर 'कैसपीअन

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सी' और काकेशस पहाड़ के नाम पड़े, वर्तमान इतिहास का असुर का देश असीरिया देश भी इसी प्रदेश के लग-भग था। असीरिया, बैबिलोलोनिया, मिश्र, अमेरिका के माया लोग यह सब एक-सी सभ्यता की जातियाँ थीं और इनका एक मुख्य देवता "बाल" नाम का था। कदाचित् हिरकेनिया के बसाने वाला दैत्यों का प्रसिद्ध राजा हिरण्यकश्यप था और देवऋषि राजा बलि ही पीछे "बाल देवता" के नाम से प्रसिद्ध हुए। यदि असीरिया व हिरकेनिया इस प्रदेश में थे तो देवलोक का भी चीन में होना उचित मालूम होता है।

देवताओं और आर्यों में जान-पहचान कदाचित् रैवत मन्वतर में हुई क्योंकि इस मन्वन्तर में वैकुण्ठ को बनना कहा जाता है अथवा साधारण भाषा में इसी मन्वन्तर में आर्यों को वैकुण्ठ का ज्ञान हुआ। इसके पीछे ही चाक्षुष मन्वन्तर में हिरण्यकश्यप ने देवताओं को विजय किया और उनकी सहायता के लिये नरसिंह जाति के क्षत्रिय राजा ने हिरण्यकश्यप को उसी के नगर में जाकर मारा। नरसिंह जाति बाल्मीकि रामायण के समय तक जीवित थी वहाँ भी जब सुग्रीव ने सब देशों को गिनाया है तो नर-व्याघ्र क्षत्रियों का देश भी कहा है। इस का समर्थन अभी हाल में प्राप्त हुए एक शिलालेख से भी होता है मैसोपोटामिया में "ऊर" नाम प्राचीन नगर के खण्डहर प्राप्त हुए हैं जहाँ एक मन्दिर है जिसको लिखा है कि 'राजा अनन्यपाद ने देवि निंहार सग के वह मन्दिर अर्पण किया।' अनन्यपाद तो प्रत्यक्ष में संस्कृत नाम है और देवि निंहार सग कदाचित् नरसिंह का ही रूप है। यह अवश्य है कि यह मन्दिर नरसिंह के समय में नहीं बना वरन् सहस्रों वर्ष पीछे जब कि नरसिंह देवता के रूप को प्राप्त कर चुके थे बनवाया गया और इस कारण नाम का बिगड़ जाना भी स्वाभाविक है।

यह चाहे जो कुछ भी हो परन्तु इसमें कुछ सन्देह नहीं, कि असुर लोगों का एक मुख्य देवता "बाल" है और यदि यह राजा बलि है तो हिरण्यकश्यप को मारने वाले नरसिंह भी एक आर्य राजा थे। नरसिंह के पीछे ही दैत्यों में आर्य-सभ्यता का प्रचार हुआ मालूम होता है, उसी के पीछे दैत्य लोग वैदिक यज्ञ करने लगे थे। शुक्राचार्य उनके गुरु हुए। इससे ज्ञात होता है कि नरसिंह के साथ जो आर्य गये थे उनमें से बहुत से असुरों के देश ईरान में ही बस गये और वहीं आर्यों की दूसरी शाखा हो गई। नरसिंह ने राज्य को अपनाया नहीं वरन् हिरण्यकश्यप के पुत्र प्रह्लाद को ही राजा बना दिया इसलिये अब देवता दैत्य और आर्य तीनों में मेल हो गया।

राजा बलि के समय में देवता, दैत्य व नागों ने मिलकर समुद्र-मथन किया अथवा दूसरे देशों में समुद्र यात्राएँ कीं परन्तु उनसे जो रत्न प्राप्त हुए उनको देवता लोग हड़प गये दो एक नागों को दे दिये और दैत्यों को तो आँखें दिखा दीं। यह देवताओं की सरासर बेईमानी थी। इस पर बड़ी-भारी लड़ाई हुई जिसको देवासुर-संग्राम कहते हैं। इस लड़ाई में दैत्य लोग हार गये। दैत्यों में मय दानव, माली, सुमाली व माल्यवान् दैत्य व यक्ष दैत्य प्रधान सेनापतियों में से थे। इनमें से माली मारा गया। मय पाताल को भाग गया, सुमाली व माल्यवान् लंका को भाग गये और जब वहाँ से विष्णु ने मार भगाया तो वह भी पाताल भाग गया। मालूम होता है कि यक्ष ने देवताओं की आधीनता

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्वीकार कर ली क्योंकि उसकी जाति के लोगों को देवताओं ने लंका में बसा दिया और कुवेर उनका राजा बना दिया।

यह देवासुर-संग्राम आधुनिक इतिहास के लिये बड़े महत्व का है क्यों कि इससे उस कारण का पता चलता है जिससे कि Heliolithic Culture संसार भर में फैल गई। इस सभ्यता की विशेषता सूर्य की उपासना पिरामिड के रूप के बड़े-बड़े मन्दिर, भवन व स्तूप बनाना, मनुष्य-यज्ञ आदि थे और यह विशेषताएँ इस सभ्यता की सभी जातियों के खंडहरों में पाये जाते हैं। अमेरिका के माया लोग, मिश्र, बैबिलोन आदि देशों में इस प्रकार के चिन्ह मिलते हैं। वर्तमान इतिहासज्ञों के अनुसार सब से प्राचीन सभ्यता सुमेरियन लोगों की है परन्तु यह लोग कहीं बाहर से समुद्र के रास्ते आये और पश्चिमी एशिया में सुमेरियन-राज्य स्थापित किया परन्तु यह लोग कौन थे और कहाँ से आये यह निश्चय नहीं हो सका। सुमेरियन खंडहरों के समान खंडहर भारतवर्ष में भी हरप्पा और महेञ्जोदारो में प्राप्त हुए हैं और विद्वान लोग यह अनुसन्धान करने लगे हैं कि यह सुमेरियन लोग ही द्रेविडियन थे वा क्या और द्रेविडियन पश्चिम को जाकर सुमेरियन बने अथवा सुमेरियन भारत में आकर द्रेविडियन हुए। हम आगे दिखायेंगे कि यह सुमेरियन, द्रेविडियन व राक्षस जाति सब सुमाली दैत्य की सन्तान थे और पाताल से होते हुए पश्चिम को गये। इसी प्रकार माया लोगों के सम्बन्ध में विचार है कि वह कहाँ से आये और विद्वानों का एक दल उनका भारत से जाना मानता है। कदाचित् यह माया लोग देवासुर-संग्राम के मय दानव की सन्तान थे। उस समय पाताल एक देश का नहीं वरन् एक देश समूह का नाम था जैसे कि आजकल New World और Old World हैं। मय दानव व सुमाली माल्यवान् कदाचित् पाताल के भिन्न-भिन्न देशों में ही जा बसे होंगे।

इसके पीछे बलि बन्धन का वृत्तान्त है। राजा बलि हार कर अपने देश को चला गया और तैयारी करके उसने देवलोक को विजय किया। देवता लोग फिर आर्यों की शरण आये परन्तु अब आर्यों का दैत्यों से भी मेल था इसलिये लड़ाई न कर उन्होंने समझौते के लिये एक बड़े पंडित वामन को भेजा जिसने राजा बलि को वचन-बद्ध करके राज्य दान में माँग लिया और फिर बलि को सुतल लोक में रहने को स्थान दिया अथवा नजर-बन्द कर दिया। इस पर ईरान के रहने वाले आर्य, भारतीय आर्यों से रुष्ट होगये क्योंकि दोष तो था देवताओं का और दण्ड मिला बलि को। उन्होंने वामन को इस अनुचित कर्म से बन्द करने के लिये प्रयत्न भी किया स्वयं ब्रह्मा ने आकर भी बलि को छोड़ देने को कहा परन्तु पंडित वामन ने इस झगड़े को सदैव को दूर करने के लिये नहीं माना। यहीं से आर्यों की उन दोनों शाखाओं में भेद पड़ गया मालूम होता है कि जिसके कारण असुर शब्द भी बुरे अर्थों में दैत्य लोगों के लिये लगने लगा।

बलि बन्धन के पीछे चाक्षुष मन्वन्तर के अन्त में वही जलप्लावन हुआ जो भू-तत्त्व-विद्या के सिद्धान्त से ही ठीक ठहरता है और जिसमें दक्षिण महाद्वीप के कुछ अंश डूब गये। मालूम होता है कि उस समय में यही महाद्वीप पाताल कहाता था और मय व सुमाली आदि इसी के देशों में जा बसे थे और जब यह द्वीप डूब गया

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

तो वे फिर भारत में चले आये और कुछ अमेरिका की ओर चले गये। यह जो कुछ भी हो परन्तु यह निश्चय है कि वैवस्वत मन्वन्तर में यह लोग भारत में फिर आये। सुमाली राक्षस ने अपनी पुत्री पुलस्त्य के पुत्र को व्याही और रावण सुमाली का धेवता दैत्यों का राजा हुआ। उसने सुमाली दैत्यों की सहायता से लंका को यक्षों से जीत लिया और मय दानव ने उसकी राजधानी बनाई। यह तो स्पष्ट है कि यह मय और सुमाली वही मय और सुमाली नहीं थे वरन् उनकी सन्तान के पुरुष थे क्योंकि समय बहुत बीत चुका था अब दूसरा मन्वन्तर प्रारम्भ हो गया था।

परन्तु अब एक परम विचारणीय बात है। पहले तो सुमाली दैत्य कहलाता था परन्तु अब उसकी सन्तान राक्षस कहलाने लगी। यद्यपि वेदों में तो राक्षस बुरे अर्थों में आता है यहाँ राक्षस के अर्थ बुरे नहीं मालूम होते थे। और यह बड़ी अद्भुत बात है कि पौराणिक इतिहास में राक्षस जाति का वृत्तान्त इसी समय से आरम्भ होता है। अनुमान किया जा सकता है कि राक्षस यक्ष और 'रा' को मिला कर बनाया गया जिसका अर्थ उन यक्षों के थे जो 'रा' की पूजा करते हों और Heliolithic Culture में 'रा' नाम सूर्य देवता का है। रावण ने यक्षों को निकाला नहीं वरन् उन्हें अपने में ही मिला लिया। पीछे से राक्षस शब्द बुरे अर्थों में प्रयुक्त होने लगा, कारण यह कि सुमाली दैत्य पाताल में रह कर बहुदेव-उपासक हो गये थे, पशुओं और मनुष्यों का यज्ञ करते थे और आर्यों के शुद्ध यज्ञों में विघ्न डालते थे। कलकत्ता विश्वविद्यालय के श्रीयुत शेषायंगर ने अपनी पुस्तक में अनुमान किया है कि राक्षस लोग ही ड्रेविडियन लोग थे। राक्षस राजा रावण भी ड्रेविडियन था इसकी मुख्य-भाषा तामिल अधिकतर लंका में व दक्षिण भारत में है और उसका शुद्ध स्वरूप लंका में विशेषकर है। तामिल पुस्तकों के अनुसार भी तामिल लोग किसी दक्षिणी महाद्वीप से आये। यह लोग धीरे-धीरे समुद्र के किनारे-किनारे उत्तर भारत तक फैले और फिर पश्चिम को जाकर सुमेरियन लोग जो सुमालियन का बिगड़ा हुआ शब्द है बन गये। क्योंकि यदि ड्रेविडियन व राक्षस लोग आरम्भ में एक-ही थे तो इन का आना दक्षिण से हुआ न कि उत्तर से।

जलप्लावन के भू-तत्त्व-विद्या द्वारा प्रमाणित होने से यह पौराणिक इतिहास सुदृढ़ रूप से प्रतीत होता है और वर्तमान इतिहास की बड़ी-बड़ी समस्याओं को हल करता है। इससे यह भी सिद्ध होता है कि चालीस-पचास हजार वर्ष पूर्व भी भारत के चारों ओर समुद्र था। उसके उत्तर की ओर बड़ी बलवान् सभ्य जातियाँ बसती थीं। जिससे सिद्ध होता है कि भारतीय आर्य उन जातियों को पददलित करके भारत में नहीं आये वरन् भारत से उत्तर की ओर ही अपनी सभ्यता का विस्तार करते रहे और जब वैवस्वत मन्वन्तर में दक्षिण भारत पञ्जाब से मिल गया तब दक्षिण में भी आर्य-सभ्यता का विस्तार हुआ। यह विषय बड़ा गहन है। इस छोटे से निबन्ध में इसका विस्तार से लिखना सम्भव नहीं। सुचारु रूप से लिखने से एक ग्रन्थ ही बन जायगा। यदि भगवान् की कृपा हुई तो इसका भी शीघ्र-ही प्रयत्न होगा। अब तो अभीष्ट यही है कि विद्वानों का ध्यान इतिहास की उस अद्भुत् सामग्री की ओर आकर्षित किया जाय जो हमारी पुस्तकों में विद्यमान् है और भगवान् से यही प्रार्थना है कि वह इस प्रयत्न को सफल करे।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बाल स्वर्ग-कल्पना

(एक आँगल कविता का भाषानुवाद)

सुन्दर हँसमुख बालक रहते, अमर पुरी में कहती हो,
मात, कहाँ तट रम्य जहाँ पर, नहीं वेदना रहती हो?
क्या वह वहाँ जहाँ पर खिलते, नागरंग के सुन्दर फूल?
मैंदी की जिन शाखाओं में, जगमग करते जुगनू भूल।

वहाँ नहीं है, वहाँ नहीं है,
प्यारे बच्चे वहाँ नहीं हैं॥

क्या यह वहाँ जहाँ पर पंखों वाले उन्नत सरस खजूर?
दिव्य जलधि में, हरे द्वीप में, सौरभ से समीर भरपूर—
सुरभित करता कानन सारे, अतिचित्रित पंखों वाले—
रंग-बिरंगे पक्षी उड़ते नभ में होकर मतवाले।

वहाँ नहीं है, वहाँ नहीं है,
प्यारे बच्चे वहाँ नहीं हैं॥

दूर जहाँ पर स्वर्ण रेणु पर नदियाँ सुख से बहती हैं,
लाल हीरकों की किरणों से खान चमकती रहती हैं।
मूंगा मोती सुन्दर तट को उज्ज्वल जहाँ बनाते हैं,
प्यारी माता भूमि यही क्या स्वर्ग जिसे बतलाते हैं।

वहाँ नहीं है, वहाँ नहीं है,
प्यारे बच्चे वहाँ नहीं है॥

रूप न दृग ने देखा, नांही सुना कान ने वह संगीत,
सुपने भी चित्रित कर सकते ऐसा कभी न चित्र पुनीत।
हर्ष शोक को दुष्ट काल को अमर-पुरी में स्थान नहीं,
कलियाँ नहीं वहाँ मुरझातीं, जलधर कबरिस्तान नहीं।

स्वर्ग यही है, स्वर्ग यही है,
प्यारे बच्चे, स्वर्ग यही है॥

—श्री योगेन्द्रपाल जी आयुर्वेदालंकार.

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

76.79

प्रेम-बन्धन

(ले०—श्रीयुत सत्याचरण श्रीवास्तव "सत्य" विशारद)

(१)

विमलकुमार—"शैलेन्द्र ! मुझे कभी भी यह आशा न थी कि तुम इस प्रकार प्रणय-वञ्चित किये जाओगे। रात्रि की घटना से तो सचमुच सारी आशाओं पर पानी फिर गया।"

शैलेन्द्र—"भाई ! न जाने ईश्वर ने मुझे इतना सरल हृदय क्यों दिया ? बिना किसी की परीक्षा किये, उसके हाथ में इसे सहसा सौंप देता हूं। अन्यथा ऐसी अविवेकता के कारण कटुफल का आस्वादन क्यों करना पड़ता ?"

विमल—"तुम्हारी तो यह ध्रुव-धारणा थी कि उसकी सच्चरित्रता चन्द्र तथा सूर्य के सदृश अचल है।"

शैल०—"वास्तव में मेरा यही विश्वास था प्रेम के अञ्चल में क्रीड़ा करनेवाले को हृदय-हारी ललित दृश्य ही दिखाई दिया करते हैं। प्रत्येक वस्तु में उसे प्रेम का अलौकिक उद्भास दृष्टि-गोचर होता है। ऐसी अवस्था में मनुष्य की बुद्धि लुप्त हो जाती है। प्रेममय आवरण से आच्छादित उसे ईर्ष्या, मात्सर्य तथा कुटिलता का चक्र नहीं ज्ञात होता ?

विमल०—"क्या तुम्हें इस बात का पूर्ण निश्चय है कि वह तुम्हें प्यार नहीं करती ?"

शैल०—"मुझे तो गत रात्रि की घटना से यही ज्ञात होता है कि वह मुझे सर्वथा.....।"

विमलकुमार ने, बीच में ही रोक कर पूछा—"क्या सतीशबाबू और भी कभी वहाँ आते जाते थे ?"

शैल०—"नहीं मैंने और कभी नहीं देखा, केवल यही प्रथम अवसर है।"

विमल०—"अच्छा किसी कार्य में शीघ्रता नहीं करनी चाहिये उसकी परीक्षा कर तब कोई विषय निश्चित किया जावेगा।"

यह कह कर विमलकुमार ज्योंही बाहर जाने के लिये उद्यत हुए उसी समय शैलेन्द्र ने करुण स्वर में कहा—"विमल ! तुमसे उसका तथा मेरा प्रेम छिपा नहीं है। उसकी एक स्निग्ध दृष्टि पर मैं अपना सर्वस्व अर्पण करने के लिये सन्नद्ध था। मुझे यह गर्व था कि संसार में मेरी भी कोई प्रेमिका है। किन्तु समय-चक्र के कारण मेरे हृदय पर जो वज्राघात हुआ है उससे मुझे असह्य-यंत्रणा हो रही है। भाई मेरी जीवन नौका का.....

शैलेन्द्र इससे अधिक न कह सके उनका कण्ठ उष्ण वाष्प से रुद्ध हो गया।

विमल ने अश्वासन देते हुए कहा—"शैल ! तुम्हें धैर्य धारण करना चाहिये। मैं भी यथा-शक्ति इस अनुसन्धान में तुम्हारा साथ दूँगा।"

यह कहकर फिटन पर चढ़ अपने घर चले गये।

(२)

शैलेन्द्र लखनऊ के एक प्रसिद्ध बैरिस्टर के एकमात्र पुत्र थे। ईश्वर ने उन्हें विद्या तथा रूप दोनों प्रदान किया था अवस्था लगभग १९ वर्ष

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

की थी। सुशीलता और भावुकता तो इन में मानों कूट-कूट कर भरी थी। स्कूल की पढ़ाई समाप्त करने के पश्चात् स्थानीय क्रिश्चियन कॉलिज में भर्ती हो गये थे। विमलकुमार इनके सहपाठियों में से थे। शैलेन्द्र के परमप्रिय तथा विश्वस्त मित्र यही थे यही कारण था कि दोनों मित्र अपनी सुख-दुख की कहानी विक्षुब्ध भाव से एक-दूसरे को सुना देते थे।

निस्सन्देह शैलेन्द्र का हृदय सरल तथा सरस था। कदाचित् यही कारण था कि लीला शैल को हृदय से प्यार करती थी। उसका रोम-रोम शैल से मिलकर स्वच्छ-प्रेम की धारा बहाना चाहता था। लीलावती लखनऊ के एक धनाढ्य डाक्टर की लड़की थी। उसका पालन-पोषण तथा शिक्षण आधुनिक ढंग की भाँति हुआ था। इस कारण उस में थोड़ी स्वच्छन्दता अवश्य आ गई थी किन्तु स्वाभाविक भोलापन तथा लज्जा के कारण वह अन्य कन्याओं से कहीं उच्च थी। उस में इतनी बुद्धि थी कि वह शैल के गुण-दोषों का अच्छी तरह विश्लेषण कर सके। शैलेन्द्र भी उसकी कल्पित प्रतिमा की अन्तस्तल में सदा पूजा किया करता था। शनैः-शनैः दोनों में अधिक घनिष्टता हो गई और वे एक दूसरे को अभिन्न-हृदय समझने लगे।

गर्मी की छुट्टियों के कारण कॉलिज बन्द हो गया था। शैलेन्द्र तथा विमलकुमार सदा किसी-न-किसी खेल द्वारा हृदय को आनन्द पहुँचाना चाहते थे, किन्तु शैलेन्द्र का हृदय कभी-कभी अलक्ष्य उद्वेग से उद्विग्न हो उठता था। इस के मर्म को एक व्यथित हृदय ही जानता था। गर्मी की छुट्टियाँ प्रारम्भ हुई थीं। रात्रि के समय चन्द्र-बिचुम्बित आकाश अमृतमयी धवल धाराओं से संसार को सिञ्चित कर रहा था। ऐसी शुभ्र-ज्योत्स्ना में प्रेमी तथा प्रेमिकाओं की जो दशा होती है वह अवर्णनीय है। इसका वर्णन मनोविज्ञान तथा साहित्य ही का कोई उद्भट पण्डित कर सकता है। अस्तु, शैल के हृदय में लीलावती के दर्शन की प्रबल भावना उत्पन्न हुई। विमलकुमार ने भी इस विचार का समर्थन किया। दोनों मित्र लीलावती के घर की ओर चल पड़े।

शैल के मन में अनन्त कल्पनायें उठती थीं और विलीन हो जाती थीं। उसे अपने तन की सुध-बुध नहीं थी। यह उसे नहीं पता था कि वह कहाँ पैर रख रहा था। अकस्मात् दोनों मित्र एक गगनचुम्बी विशालभवन के सामने आ-उपस्थित हुए। शैल को नौकरों द्वारा यह पता लगा कि डाक्टर साहब कार्यवश इलाहाबाद गये थे। यों तो शैल डाक्टर साहब के यहाँ तथा लीला शैल के यहाँ बराबर आती जाती थी किन्तु डाक्टर साहब की अनुपस्थिति में शैल अधिक स्वतन्त्रता को अनुभव करने लगे। उन्होंने विमल को दीवानखाने में बैठने के लिये कहा और स्वयं लीला के कमरे की ओर बढ़े। हठात् वह लीला के कमरे से कुछ दूरी पर रुक गये। उनकी आँखों के सामने निराशा की एक काली जवनिका पड़ी हुई जान पड़ी। प्रेम और उत्कण्ठा क्रोध तथा घृणा के रूप में परिणत हो गये।

सतीश बाबू शैलेन्द्र के दूर के सम्बन्ध से चचेरे-भाई लगते थे। डाक्टर साहब सतीश को प्यार की दृष्टि से देखते थे, इसी कारण सतीश अनियन्त्रित रूपसे आ-जा सकते थे। सतीश को शैल तथा लीलावती का प्रेम अच्छा नहीं लगता था। वह मन-ही-मन शैल से कुढ़ा करते थे किन्तु प्रेमी तथा प्रेमिका के अविच्छिन्न स्वच्छ प्रेम-प्रवाह के अप्रतिहत वेग को रोक नहीं सकते थे।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

लीला अपने कमरे में बैठी हुई हारमोनियम बजा रही थी। सतीश की हृत्तन्त्री लीला के प्रत्येक सरिगम की मृदुलता पर बज उठती थी। बीच-बीच में हँसी-मज़ाक से कमरा प्रतिध्वनित हो उठता था। किसी को यह ज्ञात नहीं था कि कमरे से कुछ दूर पर कोई विप्रलब्ध प्रणय-भिक्षुक गहरी साँसें भर रहा है।

शैल अधिक देर तक न रुक सके। वह बैठक में उसी समय लौट आये तथा विमल से घर चलने के लिए आग्रह करने लगे। विमल को शैल की भर्राई हुई आवाज़ और खिन्न आकृति को देखकर बड़ा विस्मय हुआ। उनका साहस नहीं हुआ कि इसका कारण पूछें। मार्ग में शैल ने स्वयं ही सारी घटना को सुना दिया। शैल को यह पूर्ण विश्वास हो गया कि "लीला सतीश को चाहती है।" यह केवल कपटमात्र है जो वह मुझसे मीठी-मीठी बातें करती है।

दूसरे दिन प्रसंगवश लीला को नौकरों द्वारा पता लगा कि शैल तथा विमल आये थे और उससे बिना मिले ही चले गये। वह जानती थी कि शैल सतीश से घृणा करते हैं। कदाचित् उन्हें यह आशङ्का हो गई हो कि मैं सतीश को प्यार करती हूं। उसकी शङ्का उत्तरोत्तर दृढ़ होती गई। लगभग एक सप्ताह व्यतीत हो गया किन्तु शैल लीला के पास नहीं आये। इनके पूर्व शैल प्रायः प्रतिदिन लीला के घर जाया करते थे। लीला को भविष्य की कल्पना कर बड़ा क्षोभ होता था। जिस प्रेम की डोरी को वह सदा अपने जीवन का अवलम्ब मानती थी वह सहसा टूट गई। अन्त में उसने शैल के घर अपराधिनी की भाँति जाने के लिये निश्चय किया। निराशा में आशा की सूक्ष्म रश्मियाँ ही आश्वासन के लिये पर्याप्त होती हैं।

(३)

लखनऊ के सुन्दर सुसज्जित कमरे में बैठे हुए शैल अगाध विचार-सागर की लहरिकाओं के वेग में बह रहे थे। उन्हें ऐसा प्रतीत होता था कि मानो वह सारे दिन विषण्ण भाव से विचार में निमग्न थे। उन्हें इस पूर्व संकल्प को सोचकर कि, 'एक दिन वह लीला को हृदयेश्वरी बनावेंगे' ग्लानि होती थी। नीरवता के उस अखंड साम्राज्य में उन्हें लीला की प्रणय-स्मृति उद्विग्न कर देती थी और वह प्रत्येक क्षण उसकी मृदुल उपस्थिति का आनन्द उठाते। किन्तु कब तक? जब तक भव्य कल्पनाओं से पूर्ण स्वप्न-प्रदेश की स्वर्णमयी किरणें अपनी मोहक कान्ति द्वारा उनके मन-मन्दिर को आलोकित करती रहती थीं। कान्ति के विलुप्त होते ही पुनः आन्तरिक वेदना की तिमिरमयी जवनिका कल्पना-शक्ति को आच्छादित कर लेती थी। शून्य संसार के अतिरिक्त और कोई भी वस्तु उन्हें दिखाई नहीं पड़ती थी। इसी दमनीय दशा में बैठे हुए शैल का हृदय व्यवस्थित नहीं था। वह मार्मिक-वेदना के समक्ष इस बात को सर्वथा भूल गये थे कि लीला कितनी अनुपम सुन्दरी थी। जिस चन्द्रकरचुम्बित कपोलों के अरुण उद्भास की सौंदर्य-राशि का उन्होंने कई बार निस्तब्ध भाव से पान किया था आज वही घृणा की मूर्ति बन कर नेत्रों के सामने बीभत्स-ताण्डव करती थी।

सहसा लज्जा से अवनत मुख किये हुए लीला ने शैल के कमरे में प्रवेश किया। कौन जानता था कि उसने अपने आराध्यदेव की अभ्यर्थना के हेतु पहले ही अश्रु-मोतियों का हार बनाया था? किन्तु संसार की अनित्यता का परिचय देते हुए वे उसी स्थान पर लुप्त हो गये जहाँ पर कि उनके अस्तित्व की माला कुछ पूर्व व्यक्त हुई थी। लीला

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

का हृदय वृश्चिक-दंशन की भाँति वेदना से आक्रांत था। वह सोचती—"क्या यह एक हिन्दू-युवती के लिये उचित है कि वह किसी पुरुष के कमरे में अनियन्त्रित रूप से आवे? दूसरे ही क्षण में वह पुनः सोचती—नहीं, जिसे मैंने अपनी जीवन-नौका का माँझी हृदय से बनाया है, जिसकी प्रेम-डोरी से सदा के लिये अपने सूक्ष्म शरीर को आबद्ध कर लिया है तथा जिसकी प्रेम-वेदी पर अपने चिर-सञ्चित हृदय-पुष्प को चढ़ाया है क्या उसी से अपने अपराध के लिये क्षमा माँगने में लज्जा की जा सकती है? कदापि नहीं—संसार चाहे जो-कुछ कहे किन्तु जगन्नियन्ता इस बात को भली-भाँति जानता है कि मेरा प्रेम कितना शुद्ध एवं उच्च है। प्रेम के पुनीत लोक में झूठी लज्जा का स्थान नहीं है।" इसी प्रकार के सैंकड़ों विचार क्षणभर में सौदामिनी की भाँति उसके हृदय-प्रदेश में आविर्भूत होते और विलीन हो जाते।

शैल लीला की आकस्मिक उपस्थिति से चौंक उठा और पल भर के लिये अपने को भूल गया। हृदय की वेगवती तरङ्गिणी में सारी ईर्ष्या, द्वेष, ग्लानि तथा घृणा बह गई। आत्म-विस्मृति के पुण्य-नृत्य में शैल ने सहसा अपने बाहुओं को लीला के कोमल शरीर के मधुर आलिङ्गन के लिये फैलाया किन्तु दूसरे-ही क्षण में उसकी तंद्रा भंग हुई। अपना ध्यान आते ही ठिठक कर रुक गया और उसके शब्दों को सुनने के लिये प्रतीक्षा करने लगा।

लीला काष्ठ-प्रतिमा की भाँति खड़ी थी। जो कपोल लज्जा से कुछ पूर्व आरक्त-वर्ण हो रहे थे वेही अब करुणा की मूर्ति बने थे। किन शब्दों से वह वार्तालाप करे, यह उसकी समझ में नहीं आता था। अन्त में बड़ी कठिनता के साथ कुछ अव्यक्त शब्द बोली—

"आप एक सप्ताह से मेरे घर क्यों नहीं आये? क्या मुझसे कुछ अपराध हो गया है?"

"मेरे आने या न आने से क्या?"

शैल के इस संक्षिप्त किन्तु कठोर वाक्य ने लीला का हृदय विदीर्ण कर दिया। शैल ने उसी रूखे भाव से पुनः कहना आरम्भ किया—"मैं तुम्हारे भावों को भली प्रकार जानता था। मुझे तुम्हारी कोमल तथा निष्कपट प्रकृति के ऊपर निश्चिन्त विश्वास था—किन्तु मेरे विश्वास की गति कर्णवत् परिवर्तित हो गई। मैंने तुम्हारे साथ वार्तालाप में कई बार कहा था कि स्त्रियों को भी विचारों की उतनी ही स्वतन्त्रता है जितनी पुरुषों को। इस समय भी उसी का समर्थन करता हूं। तुम अपनी प्रेम-प्रगति को अपनी इच्छानुसार जिधर चाहो उधर मोड़ सकती हो। तुम्हारे प्रेम के ऊपर मेरा कोई अधिकारी नहीं है। हाँ, परस्पर विवाह के लिये मेरी धारणा तब तक थी कि जब मुझे सतीश का ज्ञान नहीं था। मैं किसी के प्रेम में बाधक नहीं होना चाहता।"

लीला अब अपने को अधिक न रोक सकी। हृदय ललकार कर रो उठा। आन्तरिक-वेदना अश्रु के रूप में विनिर्गत होने लगी। कण्ठ रुद्ध हो गया। फफक-फफक कर रोते हुए हृदय-वेग को दबाकर बोली—

"मैं अब उसको पुनः देखना अथवा उसका नाम सुनना नहीं चाहती। आप मेरे ऊपर विश्वास करें।

इससे आगे वह न कह सकी।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

शैल ने कोमलता से कहा—"तुम्हें मुझसे प्रार्थना करने की कोई आवश्यकता नहीं। मैं दृढ़ता के साथ इस बात को कहता हूँ कि मैं सतीश से अधिक योग्य नहीं हूँ किन्तु यदि किसी की यह धारणा हो कि मैंने तुम्हारी सौंदर्य राशि पर विमुग्ध हो अथवा विषय-लोलुपता से प्रेरित हो कर तुमसे प्रेम किया है तो यह सर्वथा झूठ है। मेरा संकल्प उच्च भावों की आधारशिला पर अवस्थित था। अच्छा, अब हमें भूत की सारी बातों को विस्मृत कर देना उचित है। मैं आगामी जुलाई मास के प्रथम सप्ताह में विलायत के लिये प्रस्थान करूँगा। अतएव कई वर्षों के लिये, जब तक कि मैं इञ्जीनियरी का कोर्स समाप्त न कर लूं अपने मित्रों के प्रेम-मिलन से वञ्चित रहना पड़ेगा।

लीला यह सुनकर स्तम्भित हो गई। उसका शरीर हिमवत् श्वेत हो गया और कुछ बोलने के पूर्व उसने अपने ओष्ठ को दो बार गीला करने का प्रयास किया। उसने करुण तथा कम्पित स्वर में कहा—

"क्या आप मुझे नहीं चाहते अथवा आपको मेरे साथ प्रेम-सम्बन्ध करने का क्षोभ है? आप अपने मार्ग में स्वतन्त्र हैं किन्तु.....।"

लीला को बीच-ही में रोक कर शैल ने रुखाई से कहा—

"मेरा आशय यह है कि तुम सर्वदा सुखी तथा प्रसन्न रहो, किन्तु वह तभी संभव है जब कि मैं तुम्हारे मार्ग से दूर रहूं।"

क्या आप मुझ पर किंचित्मात्र विश्वास नहीं करते?"

"करता हूं, किन्तु पूर्ववत् नहीं।"

लीला को ये शब्द बज्रवत् लगे। रमणी का हृदय शिरीष-पुष्प से भी अधिक कोमल होता है। वह अधिक समय तक कठोर शब्दों का आघात नहीं सह सकती। विह्वलता तथा निराश्रयता की दशा में वह अपने तप्त हृदय के भावों को अश्रुरूप में प्रवाहित करती है भारत-रमणी के लिये पति सर्वस्व है। उसी के सुख अथवा दुःख पर पत्नी का भी सुख-दुःख निर्भर है। यदि वही हृदय-धन रूठ कर अपने प्रेम को मोड़ ले तो उसकी क्या दशा होगी, इसे एक प्रेमार्ता-प्रेमिका ही अनुभव कर सकती है। लीला जिसको अपना चिरजीवन-संगी वरण कर चुकी थी, वही यदि उसके प्रति आशङ्का करते थे तो उसको परित्राण कहाँ मिल सकता था? अब उसने अपना रहा-सहा धैर्य भी छोड़ दिया और अश्रु-प्लावित नेत्रों से शैल के चरण को सिञ्चित करने लगी। दूसरे-ही क्षण उसका मस्तक शैल के चरण-रज से धूसरिता हो गया।

प्रेम के इस निष्कपट प्रकाशन की एक कठोर-से-कठोर व्यक्ति अवहेलना नहीं कर सकता। फिर शैल तो एक सहृदय एवं भावुक युवक थे। सारी कृत्रिम कठोरता पानी-पानी हो गई। वेग के साथ झुक कर उन्होंने लीला को अपने बाहुपाश में जकड़ लिया और मृदुलता के साथ धीरे-से खींच कर स्नेहालिंगन की नारायणी में उसके समस्त दुःख को प्रवाहित कर दिया। वही लीला जो कुछ पूर्व करुणा की मूर्ति बनी हुई खड़ी थी अब शैल के अंग में लज्जा की साक्षात् लावण्यमयी प्रतिमा दिखाई देती थी। जिस प्रकार लता किसी वृक्ष का सहारा पाकर द्विगुणित पुष्प-पत्तियों द्वारा परि-वर्धित होकर अनुपम सौंदर्य-मुक्त विस्तार को प्राप्त करती है उसी प्रकार युवती भी प्राणवल्लभ के विश्रब्ध आश्रय को पाकर अपनी प्रस्फुरित कान्ति द्वारा ज्योत्स्ना का विस्तार करती है। यौवन के प्रभात-काल में नवोन्मिषित कमलिनी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

के प्रथम विकाश के सदृश वह अपनी मन्द-मन्द मुसकान से हृदयेश के तृषार्त नेत्रों को तृप्त करती है। मादकता के नवीन पटल में प्रेम-क्रीडा का स्वर्गीय-दृश्य उपस्थित हो जाता है। प्रेमी तथा प्रेमिकाओं की आशा कलियाँ-प्रेममयी उषानटी के स्पर्श से चटख़ उठती है, उसी समय उनके प्रणय-वार्ता में कोकिला की संगीतमयी वाणी पञ्चमस्वर में गान करती हुई सुन पड़ता है।

लीला ने कहा—"प्रियतम"

शैल ने कहा—"प्रिये"

थोड़ी देर के लिये दोनों चुप हो गये। शान्ति को भंग करती हुई लीला बोली—

"यदि आप मुझे छोड़कर विलायत जायँगे तो मेरी दशा बहुत-ही बुरी होगी।"

शैल ने प्रेमभरी स्निग्ध-दृष्टि से लीला को देखा। पुनः शान्ति छा गई।

लीला ने अपने हाथ को लज्जा से उठाकर शैल के कोट के किनारे पर रखते हुए कहा—

"प्राणनाथ! आप विलायत क्यों जाना चाहते हैं? आप यहीं रहकर आनन्द उठाना क्यों नहीं चाहते? आपकी उपस्थिति से मुझे कितना सुख होगा?—क्या आप इसकी कल्पना कर सकते हैं?"

शैल उसके इस बालिकोचित् सरलता से और भी द्रवित हो गये और उसके केश सँभालते हुए बोले—

"मुझे आश्चर्य है तुम मेरे लिये इतना व्यग्र क्यों हो रही हो? तुम्हारे इस प्रेम के कारण मेरी ध्येय-पूर्ति भी कठिन प्रतीत होती है क्योंकि वह विलायत गये बिना सम्भव नहीं।"

क्षण भर के लिये लीला चुप रही और पुनः सकुचाते हुए शैल के कोट में अपने मुंह को छिपा कर कहने लगी—

"प्राणेश! क्या अब भी मेरी इच्छा को आप नहीं समझ सके? इस व्यग्रता का एकमात्र कारण यह है कि मैं आपको हृदय से चाहती हूँ मैंने जिस समय से आपके चरण में अपनी हृदय-पुष्पाञ्जली चढ़ाई है उसी समय से आपके दुःख तथा सुख में अपना भी भाग समझती हूँ।"

"प्रिये"

यह कह कर शैल ने उसके लज्जा से झुके हुए शीश को ऊपर उठाना चाहा किन्तु उसने रोक लिया और धीरे-धीरे सिसकियाँ भरती हुई कहने लगी—

"मैं आपकी क्षमा की अभिलाषिणी हूं। क्या आप मुझे क्षमा करेंगे?"

तुम इन शब्दों का क्यों प्रयोग करती हो। मेरे पास संसार में कौन-सी ऐसी वस्तु है जिससे तुम्हें क्षमा प्रदान करूँ। मेरी केवल यही हार्दिक अभिलाषा है कि तुम सदा सुखी रहो।"

लीला का अधरबिम्ब मधुर-मुसकान से राग-युक्त हो गया, और शैल की ओर एक तिरछी प्रेमपूर्ण-दृष्टि डालकर कहने लगी—

"तो आप मुझे अपने प्रणय-चिन्ह से वञ्चित क्यों रखते हैं?"

शैल ने उसे हृदय से लगाते हुए कहा—"हृदयेश्वरी! इसी कारण तुम्हें वञ्चित रहना पड़ा क्योंकि तुम उसको स्वयं-ही हृदय में अनुभव करती हो।"

थोड़ी देर के लिये दोनों आत्म-विस्मृति की अनन्त सरिता में बहने लगे।

सुध आते ही लीला सकुचाकर बिखरे हुए केश को सँभालती हुई बैठ गई और लज्जित होकर बोली—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

"क्या आप मेरे घर चलेंगे ?"

शैल उसके करकमल को दृढ़ता के साथ अपने हाथ में लेते हुए बोले—

"तुम्हारे ऐसे प्रश्नों का उत्तर देना आवश्यक नहीं समझता।"

"आप क्यों आवश्यक नहीं समझते ?"

शैल इसका उत्तर देने के पूर्व लीला को अपने हृदय के सन्निकट खींचते हुए बोले—

"लीले ! यह जान कर कि तुम मुझे शुद्ध भाव से प्यार करती हो मेरा हृदय प्रफुल्लित हो उठा। मुझे यह कहते हुवे गर्व होता है कि तुम मेरी सम्पत्ति हो और मेरा तुम्हारे ऊपर अधिकार है। आओ आज ईश्वर के समक्ष हम अपनी 'विवाह-क्रिया' का सम्पादन करें।"

शैल ने लीला के हाथ को अपनी ओर खींचा। उसकी अङ्गयष्टि शिथिल हो गई। शैल ने धीरे से अपनी अँगूठी उसकी अङ्गुली में डालते हुए उसके अरुण वर्ण कपोल पर एक मधुर चुम्बन का छाप अङ्कित कर दिया। उसी समय वृक्षों पर बैठा हुआ पक्षिवृन्द हर्ष से उल्लसित होकर बोल उठा—"प्रेम-बन्धन"। नदी की द्रुत-वेग से बहनेवाली उत्तुंग लहरिकायें ताल देती हुईं जलमयी बीणा से स्वर्गीय-निनाद करती हुई बोल उठीं "प्रेम-बंधन"।

मूक रुदन

(श्री लक्ष्मीप्रसाद त्रिवेदी "मधु")

(१)

नमक न छिड़को जले हृदय पर—
यों न पैर से ठुकराओ !
उलझी हुई ग्रन्थियाँ, कुछ तो
करुणा कर, हा सुलझाओ !!

(२)

इस अतीत के अञ्चल में हा !
कितनी सदियाँ बीत गईं !!
कितनी ही शुभ घड़ियाँ आ आ—
गा, जीवन-संगीत गईं !

(३)

आशा-पाश अकेले में हा !
चञ्चल मनुआँ उलझ गया;
जीवन का वह दिव्य सुमन पर,
पहिले ही था झुरस गया !

(४)

हृदय फटा जाता, देखो तो—
विस्मृत हुआ चेतना-धर्म !
कौन जान सकता हा ! जग में !!
मेरे मूक रुदन का·····मर्म

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

धर्म की आवश्यकता

(ले०—श्रीब्रह्मचारी ओम्प्रकाश जी)

कुछ लोगों का विचार है कि धर्म की कोई आवश्यकता नहीं है। क्योंकि धर्म की आवश्यकता इसी लिए मानी जाती है कि वह मनुष्य को सदाचारी बनाता है, किन्तु यह काम धर्म के बिना भी निकलता है। यदि हम उपयोगिता की दृष्टि से बुद्धि द्वारा विचार करके आचार सम्बन्धी नियम बना लें और सब लोग उनके अनुसार आचरण करें तो भी मनुष्य सदाचारी बन सकते हैं, इस अवस्था में धर्म के मानने की क्या आवश्यकता है ? दूसरी बात यह भी है कि धर्म की आवश्यकता मान लेने से धर्म की वाह्य बातों और रीति-रिवाजों पर अधिक ध्यान लग जाता है और यहाँ तक कि उस में वाह्याडम्बर की ही मुख्यता हो जाती है तथा सदाचार की ओर से बिलकुल ध्यान हट जाता है इस प्रकार धर्म से वह उद्देश्य पूरा ही नहीं होता जिस के लिए धर्म की आवश्यकता मानी गयी थी । धर्म की आवश्यकता सदाचार के लिए होती है किन्तु कई बार धर्म के नाम से बड़े २ अत्याचार किये जाते हैं। धर्म सत्य की शिक्षा देता है किन्तु बहुधा धर्म की ओट में ही सत्य का खून किया जाता है। धर्म उदारता तथा दयालुता की शिक्षा देता है। किन्तु धर्म के नाम पर सुकरात, दयानंद, ईसा तथा स्वामी श्रद्धानन्द जैसी महान् आत्माओं का घात किया गया है। इस प्रकार धर्म से दुनियाँ में सदाचार की उन्नति नहीं होती प्रत्युत् पाप ही फैलता हुवा देखा जाता है। जिस बुराई को मनुष्य का मन सोच भी नहीं सकता उसे एक धर्मान्ध मनुष्य बड़े गौरव के साथ कर डालता है। यदि विचार द्वारा सदाचार के अच्छे २ नियम बना लिए जावें और धर्म का सर्वथा त्याग कर के उन नियमों के अनुसार ही मनुष्यों को चलाया जाय तो मनुष्य सदाचारी भी बन सकते हैं और धर्म से उत्पन्न होने वाली बुराइयों से भी बच जा सकते हैं। इसी लिए कुछ मनुष्य समझते हैं कि धर्म एक बहुत बुरी चीज़ है इस का सर्वथा त्याग कर देना चाहिए।

किन्तु यदि विचार पूर्वक देखा जाय तो प्रतीत होता है कि उन्होंने धर्म के आवश्यक तथा उपयोगी दूसरे भागों पर विचार नहीं किया है। सदाचार के सार्वभौम विचार बना लेने से वह कार्य्य नहीं निकल सकता जो धर्म द्वारा होता है।

वस्तुतः सदाचार के नियमों का केवल ज्ञान हो जाने से ही कोई आदमी सदाचारी नहीं बन जाता। क्योंकि यह देखा जाता है कि मनुष्य एकमात्र युक्तियों द्वारा प्रभावित होकर कार्य नहीं करता प्रत्युत् Emotin (अनुभाव से प्रेरित हो कर भी काम करता है। युक्ति तथा विचार में वह प्रेरक-शक्ति (Mtin force) नहीं है जो Emotin में होती है। धर्म हमारे अन्दर Emotin को पैदा करता है। यही कारण है कि जो काम विचार द्वारा अत्यन्त कठिन होता है उसे धार्मिक मनुष्य बड़ी सरलता के सम्पन्न कर लेता है। उदाहरणार्थ—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मनुष्य स्वभावतः दुःख से दूर हटते हैं तथा सुख की ओर झुकते हैं। मनुष्य को विचार द्वारा यह अत्यन्त कठिन प्रतीत होता है कि एक मनुष्य अपने सुखों को औरों के सुखों के लिये छोड़ दे, तथा स्वयं दुःख उठा कर भी औरों को सुख दे, किन्तु धार्मिक मनुष्य को ऐसा करने में कोई कठिनता प्रतीत नहीं होती, वह अपना सारा जीवन परोपकार में ही व्यतीत कर देता है। विचार-शील मनुष्य यह जानता हुआ भी कि परोपकार अच्छा है परोपकारी नहीं हो सकता। इस के विपरीत एक धार्मिक मनुष्य परोपकारी क्यों होना चाहिये यह न जानता हुआ भी परोपकारी हो सकता है क्योंकि धर्म उसके Emotion को अपील करता है।

जिस प्रकार चिकित्सक स्वास्थ्य के सब नियमों को अच्छी प्रकार जानते हुए भी सबसे अधिक स्वस्थ नहीं होते उसी प्रकार सदाचार के सब नियमों को जानता हुआ मनुष्य भी सब से अधिक सदाचारी नहीं हो सकता। चिकित्सक लोग स्वास्थ्य के नियमों को जानते हुए भी उनका उल्लङ्घन करते रहते हैं उसी प्रकार मनुष्य सदाचार के नियमों को जानते हुए भी उनका उल्लङ्घन करते रहते हैं। सत्य बोलना अच्छा है यह जानते हुए भी बहुत से मनुष्य झूठ बोलते रहते हैं। कारण यही है कि मनुष्य विचार द्वारा प्रेरित नहीं हो सकते।

प्रचलित धार्मिक शास्त्रार्थ भी इसी बात के ज्वलन्त उदाहरण हैं कि मनुष्य विचारों से प्रेरित नहीं होता क्योंकि इनमें स्पष्टतया देखते हैं कि युक्तियों में पराजित होने पर भी कोई पक्ष अपने विपक्षी के धर्म को स्वीकार नहीं करता किन्तु दोनों पक्षवाले अपने-अपने धर्मों पर दृढ और कट्टर हो जाते हैं और एक बार हार होने पर दूसरी बार दुगुनी तय्यारी से लड़ने के लिये तय्यार हो जाते हैं और अपना धर्म नहीं बदलते।

यदि मनुष्य जीवन की दैनिक क्रियाओं पर गौर कर के देखें तो पता चलता है कि हमारी क्रियाओं में विचार की मात्रा बहुत कम पाई जाती है। हमारे विचार पहले से ही प्रथाओं और रीति रिवाजों-जो कि धर्म के अंश हैं-से परिमित होते हैं। हम सब समझते हैं कि जुआ खेलने से हानि होती है किन्तु यदि यह प्रश्न किया जावे कि जुये की क्या हानियां हैं ? तो इस विषय में बहुतों को कुछ पता नहीं होता। जुये के विरुद्ध जो युक्तियाँ दी जाती हैं कि जुआरी लोग जितना धन खर्च करते हैं उतना उत्पन्न नहीं करते और नाही उसके बराबर कोई कार्य समाज के लिये करते हैं। जुआ सामाजिक संगठन के विरुद्ध (Antisocial) है क्यों कि इस में एक के दरिद्र होने से ही दूसरा धनी होता है, एक के दुःख पर ही दूसरे की खुशी आश्रित है इत्यादि। इन विरुद्ध युक्तियों का किसी को ख्याल ही नहीं होता। वस्तुतः जुये के विरुद्ध हमारी सम्मति सामाजिक प्रथाओं के कारण ही बनी हुई है। यदि हम किसी ऐसे समाज में उत्पन्न होते जिस में जुआ प्रचलित होता तो हम सब भी जुआरी होते। कहने का अभिप्राय यह है कि हमारी सम्मतियां पूर्ण विचार द्वारा नहीं बनी होती, किन्तु सामाजिक रीति-रिवाजों द्वारा पहले से निश्चित बनी होती हैं और हम उन्हीं के अनुसार काम करते चले जाते हैं। इन रीतिरिवाजों की स्थापना भी धर्म द्वारा ही होती हैं। इसमें सन्देह नहीं कि कई अच्छी प्रथायें पीछे से दूषित रूप धारण कर लेती है किन्तु पहले उनका आरम्भ अवश्य किसी लाभ के लिये ही

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हुआ होता है और दूषित होने पर उन प्रथाओं का शीघ्र ही नाश होजाता है। लोग इन प्रथाओं को ही अपना वास्तविक धर्म समझ लेते हैं और इन दूषित प्रथाओं से भयभीत होकर धर्म की ही निन्दा करने लगते हैं किन्तु वास्तव में यह ठीक नहीं। इसका तो यही अभिप्राय है कि इन प्रथाओं का संशोधन होता रहना चाहिये। प्रायः देखा जाता है कि यह संशोधन का कार्य समाजों में स्वयं ही होता रहता है, उदाहरण के लिये आजकल वर्णव्यवस्था-पद्धति दूषित होगई है इसी लिये अब जगह २ जातपात-तोड़क-मण्डल अपना कार्य्य कर रहे हैं।

इस प्रकार हमने देखा कि मनुष्य के विचार और क्रियायें दोनों ही प्रायः सामाजिक रीति रिवाजों से परिमित होते हैं, वह स्वयं स्वतन्त्रतापूर्वक विचार करके कोई कार्य्य नहीं करता। अतः मनुष्य के लिये मार्ग बनाने के लिये भी धर्म की नितान्त आवश्यकता है।

इसप्रकार हमने देखा कि विचार से मनुष्य के मस्तिष्क की उन्नति होती है और धर्म से मनुष्य के हृदय (Heart) की उन्नति होती है अतः विचार और धर्म दोनों भिन्न २ चीजें हैं। विचार से धर्म का काम नहीं निकल सकता और धर्म विचार के स्थान पर काम नहीं देसकता। इसीलिये कहा करते हैं कि धर्म का सम्बन्ध श्रद्धा से है और विचार का सम्बन्ध युक्ति से है। Philosophy के इतिहास के देखने से पता लगता है कि Philosophy ने कई वार धर्म का स्थान लेने का प्रयत्न किया किन्तु कभी कृतकार्य नहीं हुई। इसी लिये मानव जीवन में धर्म की आवश्यकता है।

* * *

विनय

(कुमारी पुरुषार्थवती आर्य्य, वैदिकधर्म विशारदा)

(१)

नाथ ! पड़ा सूना मन-मन्दिर,
कब इस को अपनाओगे ?
नेत्र थक गये, राह देखते,
कब तुम फेरा पाओगे ?

(२)

हूँ पगली, मतवाली या मैं,
फिर भी हूँ दासों की दास।
प्रेम-तरंग हिलोरें लेती,
आओ, एक वार फिर पास।

(३)

मानस-सर के हंस तुम्ही हो—
हो मम हृत्तंत्री के तार।
मेरी जीवन-नौका के हो—
कर्णधार, पकड़ो पतवार।

(४)

देकर भूखे धैर्य नाथ ! अब
नहीं मुझे भरमाओगे।
देर करोगे, तो वचा होगा ?—
शून्य कुटी को पाओगे।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

परिस्थिति-सिद्धान्त

(ले०— श्री पं० इन्द्र विद्यालंकार)

(१)

गली मनुष्यों की प्रकृति का अध्ययन सभ्यता के विकास के सम्बन्ध में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। अफ्रीका या अमरीका में जो प्राचीन जातियाँ अब तक निवास करती हैं, उनकी प्रथाओं, रीति-रिवाजों, धर्म आदि का सहानुभूति से किया गया अनुशीलन वर्तमान सभ्य संसार के उन्नति-क्रम पर बहुत अधिक प्रकाश डालता है। उनकी रूढ़ियों का परिज्ञान हमारी अग्रिम उन्नति के विचारों में सहायक हो सकता है। इस समय हम किसी भी विज्ञान का विवेचन कार्यकारण शृङ्खला से प्रारम्भ करते हैं। तर्क की प्रधानता से हम सब विद्याओं की जाँच करते हैं। आयुर्वेद, रसायन, भौतिक विज्ञान, गणित शास्त्र, भू-गर्भ-विज्ञान आदि सब विज्ञानों में हम एक महान् नियम को ढूंढ निकालने का प्रयत्न करते हैं जो कि उनका शासन करे। हम किसी भी बात को तब तक उपादेय नहीं समझते जब तक वह तर्क अथवा युक्ति पर आश्रित न हो। यदि वृक्ष से फल नीचे ही गिरता है तो इसका शासक कोई तर्क-संगत नियम होना चाहिये। यदि पृथ्वी पर निश्चित समय के बाद भिन्न २ ऋतुएँ आतीं, भिन्न २ फल वनस्पतियों की उत्पत्ति होती है तो अवश्य इनके पीछे कोई कारण विशेष होना चाहिये, जिससे ये कार्य्य परिणत होते हैं। इसी प्रकार मनुष्य जाति में उन्नति, अवनति होती है, साम्राज्यों का उत्थान और पतन होता है, बड़े-बड़े देशों का अभ्युदय और पतन होता है, इन सबका भी कोई निर्धारक तत्त्व होना चाहिये। हम किसी भी क्रिया को जो इस भौतिक जगत् में घटित होती है दैवी अर्थात् निष्कारण नहीं मान सकते। सब घटनाओं का प्रेरक हेतु अवश्य कोई है।

असभ्य जातियाँ दैवी सत्यताओं पर अधिक विश्वास करती हैं। यदि कभी कोई भयंकर तूफान समुद्र के पृष्ठ पर उठे तो वे लोग इसे जल-देवता का प्रकोप मानते हैं। यदि कभी बिजली कड़के तो वे विद्युद्देवता को रुष्ट समझते हैं। इसी प्रकार यदि खेती पर ओले पड़ जायँ तो वे कृषि की अधिष्ठात्री देवता को क्रुद्ध बतलाते हैं। कभी ग्रह बिगड़ने से, कभी शनिश्चर के कुपित होने से, या कभी भाग्य फूटने से वे अपनी सामयिक असफलताओं पर संतोष करते हैं। उनके सन्मुख सबसे बड़ा न्यायाधीश कोई अदृश्य पुरुष है जो कि उनके सब कार्यों को देखता, चलाता, या बिगाड़ता है। वह ही उनके एक-एक कदम की जाँच करता और उन्हें अच्छे या बुरे फल देता है।

परन्तु वर्त्तमान सभ्य संसार किसी भी घटना को, किसी भी मानुषीय क्रिया को बिना किसी भौतिक कारण से शून्य नहीं मानते। उस विशाल संसार के पृष्ठ पर जो भी कुछ हो रहा है वह सब किन्हीं विशेष नियमों से नियन्त्रित है। इतिहास की समस्त गति किन्हीं विशेष कारणों से वैसी ही नियमित की जा रही है। मान्टेस्क्यो ने ही सब

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

से प्रथम इस विचार को अपनी प्रसिद्ध पुस्तक (The Spirit of Laws)में इन शब्दों में प्रकाशित किया था:—

The course of History is on the whole determined by general causes, by widespread and persistent tendencies by broad and deep undercurrents and only influenced in a feeble, secondary, and subordinate degree by single events, by definite arguments, by particular enactments, by any thing incidental, isolated or individual".

अभिप्राय यह कि इतिहास में घटित होती हुई कोई भी घटना आकस्मिक, अथवा सर्वथा निष्कारण नहीं होती। यद्यपि इतिहास, गणित या रसायन विज्ञान के सदृश बिल्कुल नियत (Exact) विज्ञान न हो, परन्तु इस को कार्य कारण के तर्क पर अनाश्रित कदापि नहीं कहा जा सकता है। इतिहास केवल नाटकशाला नहीं कही जा सकती जिस में भिन्न २ नट आते और अपना खेल दिखा कर चले जाते। यदि ऐसा होता तो कभी भी पथप्रदर्शकता तथा नियन्त्रण का मूल्य इस में न होता। हम क्यों इतिहास को अपने भविष्य के निर्माण के लिये बार २ देखते हैं ? केवल इसलिये कि हम अपने पूर्वजों की उन्नति या अवनति के प्रेरक हेतुओं का समझें तथा तदनुसार अपने इतिहास की गति को नियमित करें।

इतिहास का प्रयोजन यही है कि अपनी महान् परीक्षणशाला में किये गये परीक्षणों के परिणामों से हमें अधिक दूरदर्शी बनाये और उचित परिवर्त्तनों के करने में सहायक हो सके। विचारक बेकन ने समय को सब से बड़ा परिवर्त्तक कहा है। इतिहास उसी समय का केवल एक विस्तृत चिट्ठा है। बेकन के शब्द हैं:— "Time is the greatest innovator.....It were good therefore that men be their innovations would follow the example of time itself, which indeed innovateth greatly but quietly and by degrees scarce to be preceived."

गूज़िओ ने भी इतिहास को एक तर्क शील विधाता (Providence) कहा है जो कि शनैः २ अदृश्य रूप से मानुषीय क्रियाओं और प्रक्रियाओं में सूक्ष्म परिवर्त्तन लाता रहता है। ये सब परिवर्त्तन किन्हीं विशेष नियमों से शासित होते हैं। कोई भी आकस्मिक या असामयिक नहीं होता। यदि भारतवर्ष परतन्त्र हुआ तो किन्हीं कारण विशेषों से ही। राणा प्रताप, शिवाजी, होल्कर सिन्धिया प्रभृति वीरों ने देशभक्ति की ज्योति को उज्वल बनाए रखा तो किसी विशेष प्रयोजन के लिये। इतिहास में इन सब घटनाओं का तात्पर्य है। ये घटनाएं ही पुनः भारतवर्ष के उत्थान की प्रयोजक हो सकती हैं। हम इतिहास की सहायता से ही अपने राष्ट्र का पुनर्निर्माण कर सकते हैं। इसी के परीक्षणों के अनुभवों से हम अपनी जाति के भविष्य की गति नियमित कर सकते हैं।

लेखक फिर एक राजनीति विशारद का वाक्य उद्धृत करता है जिससे स्पष्ट है कि किस प्रकार इतिहास हमें पथप्रदर्शन करा सकता है। विचारक लीके का कथन है:—

"History is one of the best schools for that kind of reasoning which is most useful in practical life. It teaches men to weigh conflicting probabilities, to estimate degrees of evidence, to form a

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

sound judgenent on the value of authorities."

यह स्पष्ट है कि इतिहास आकस्मिक घटनाओं, अव्यवस्थित कथाओं का ही उल्लेखमात्र नहीं। यह एक तर्कपूर्ण, युक्ति सङ्गत नियमबद्ध विज्ञान है, जो सर्वतोमुखी मानुषीय उन्नति में सब से बड़ा सहायक तत्व है। इस का अध्यापन एक गम्भीर दर्शन शास्त्र के सदृश करना चाहिये। इस में उद्धृत घटना क्रमों के रहस्यों पर पूर्ण विचार करना चाहिये। उन कारणों की सत्ता की गवेषणा करनी चाहिये जिन्होंने मनुष्य जाति के वर्त्तमान शरीर की रचना में प्रभाव डाला। क्यों संसार के कुछ भाग समृद्ध, वैभव शाली, तथा उन्नति की पराकाष्ठा पर पहुंचे हुए हैं? क्यों कुछ और भाग अब तक दरिद्र, अवनत, दासता की स्थिति में विद्यमान हैं? क्यों कुछ देश व्यवसाय, व्यापार, कला कौशल में इतने अग्रणी हैं; और क्यों अन्य देश केवल कच्चे माल ही पैदा करने में लगे हुए हैं? क्या कारण है कि एशिया के सब देश अब तक कोई राजनीतिक, व्यापारिक या सामाजिक उन्नति नहीं कर सके और योरोप तथा अमेरिका के राष्ट्रों ने इतने चमत्कार पूर्ण अभ्युदय को प्राप्त कर लिया। इन सत्यताओं की गवेषणा के साथ ही हम इतिहास का पूर्ण तथा सच्चा अध्ययन कर सकते हैं। केवल तिथि-घटना का इतिहास, इतिहास नहीं। हमें कार्य्यकारण-शृङ्खला की सूक्ष्मताओं के सतत् परिज्ञान के साथ ही इसका अनुशीलन करना चाहिये। हमें उन भौतिक (Physical) और मानवीय (Human) कारणों का ज्ञान करना चाहिये जिन्होंने इतिहास की गति पर प्रभाव डाला।

भौतिक तत्वों अथवा एक शब्द में परिस्थिति का इतिहास के निर्माण में क्या भाग होता है? यही प्रश्न हमें विशेषतया विचारणीय है। बड़े २ पाश्चात्य विद्वानों ने गवेषणाओं के अनन्तर यही परिणाम उपस्थित किये हैं कि भौतिक तत्वों का मानवीय प्रकृति पर बड़ा असर होता है। वे किसी विशेष जाति की सांसारिक उन्नति में बहुत दूर तक सहायक या विघ्नकारी सामग्री होते हैं। परिस्थिति ऐतिहासिक घटनाओं में बहुत बड़ा हिस्सा लेती है।

परन्तु परिस्थिति का क्या अभिप्राय है? इसे हमें ठीक तरह से समझ लेना चाहिये। परिस्थिति (Environment) कई बाह्य तत्वों से मिल कर बनती है। प्रो. ब्राईस ने परिस्थिति के विषय पर विचार करते हुए इसे तीन भागों में विभक्त किया है:—

१. प्रथम भौगोलिक आकृति। किसी देश की भौगोलिक स्थिति उस के निवासी लोगों की राजनीतिक और नैतिक उन्नति में बड़ा प्रभाव डालती है। जिस देश की सीमाएं सुरक्षित हैं, वहाँ सैनिकव्यवस्था की बहुत आवश्यकता नहीं होती। जो देश समुद्र के किनारे नहीं होते उन्हें किसी जल-सेना, जहाज आदि शक्ति सञ्चय की जरूरत नहीं होती। एक पर्वतीय जाति की राजनीतिक प्रगति एक समुद्रीय जाति की राजनीतिक प्रगति से सर्वथा विभिन्न होती है। उनके नगरों, छावनियों, सेनास्थानों की व्यवस्था में बहुत बड़ा अन्तर होता है। उनके व्यवसायों आदि की स्थिति भी एक सदृश नहीं होती।

स्विटज़रलेण्ड के लिये बड़ी २ सामुद्रिक सेना मूर्खता होगी। इङ्गलैन्ड के लिये स्थल सेना के निर्माण में अधिक बल देना अनावश्यक होगा। भिन्न भिन्न देशों की भौगोलिक आकृति उसके जातीय विकास पर एक शक्तिशाली प्रभाव डालती है। भारतवर्ष की रक्षा के लिये बहुत बड़ा सैनिक व्यय

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

इसी कारण से अनुचित तथा हानिकर समझा जा सकता है।

डाक्टर ड्रेपर का कथन है कि योरोप भौगोलिक दृष्टि से एक प्रायद्वीप है और ऐतिहासिक दृष्टि से एशिया का आश्रित उपनिवेश (Dependency) है। एशिया के उत्तरीय मैदान जर्मन समुद्र तथा बाल्टिक तक ऐसे चले गये हैं कि एशिया की सेनाएं बिना किसी भारी रोकटोक के योरोप के हृदय में घुस सकती हैं। इन मैदानों में औसत ऊँचाई ११३२ फीट की है। स्थान २ पर पानी के झरने हैं। इनका तापमान (Temperature) भी ऐसा है कि सैनिक व्यवस्थाएं बहुत सुभीता तथा शीघ्रता से हो सकती हैं। अतएव डाक्टरड्रेपर मुसलमानी आक्रमणों की स्पेन में अत्यन्त स्वाभाविकता समझते हैं। योरोप तथा एशिया के भौगोलिक सम्बन्ध ऐसे हैं कि कोई भी अपनी सैनिक शक्ति बढ़ा कर बड़ी सरलता से दूसरे पर हमला कर सकता है।

स्पेन देश की अपनी भौगोलिक स्थिति ऐसी अद्भुत है कि इस में युद्ध में शत्रु को पराजित करना कठिन है, परन्तु आत्मरक्षा करना सरल है। इंग्लैण्ड के इतिहास के विद्यार्थी जानते हैं कि १८१० में वेलिङ्गटन ने टौरेस वेड्रस की पर्वतमालाओं (Lines of Toress Vedras) से कैसे अपनी रक्षा की थी। हेनिबाल के समय के ऐतिहासिक वृत्तान्तों से स्पेन की भौगोलिक स्थिति की यही विलक्षणता प्रतीत होती है। एक ऐतिहासिक विचारक ने स्पेन के बारे में लिखा है कि 'Spain is a country where large armies starve and small armies get beaten.

इंग्लैण्ड की अपनी भौगोलिक स्थिति ने उसके निवासियों पर कितना प्रभाव डाला है। उसका छोटा सा द्वीप होना, योरोप के अन्य देशों के साथ इंगलिश चैनेल द्वारा सम्बन्ध होना, हाईलैण्ड तथा लोलैण्ड के पारस्परिक सम्बन्ध, उसके समुद्रीय तट इन सब ने अंग्रेज जाति के आचार विचार के निर्माण में बहुत बड़ा हिस्सा लिया है। मि० ग्रीन, ने अपनी Short History of Englnd में दिखाया है कि यदि इंगलिश चेनेल न होती तो नेपोलियन-युद्धों में इङ्गलैण्ड की क्या अवस्था होती। नेपोलियन ने समस्त योरोप को अपने अधीन कर दिया। एशिया तक भी वह अपनी विजयाकांक्षा पूर्ण कर आया। परन्तु इङ्गलैण्ड उससे अन्त तक विजित न हो सका। कितनी वार उसने प्रयत्न किया, परन्तु सब वार असफल हुआ। यह इंगलिश चेनेल की अद्भुत स्थिति के कारण। यह स्पष्ट है कि यदि इंग्लैण्ड वर्त्तमान भौगोलिक आकृति में न होता, तो कदापि संसार का अग्रगण्य देश न होता।

२. जलवायु आदि परिस्थिति के दूसरे तत्व हैं। जलवायु से अभिप्राय ,गर्मी, सर्दी की अवस्था से है। यह मनुष्य के स्वास्थ्य पर सीधा प्रभाव डालती है, और उसके आचार विचार के निर्माण में अप्रत्यक्ष परिवर्तन करती है। गर्म देशों के लोग स्वभाव से आलसी तथा निश्चेष्ट होते हैं, वे अपने सांसारिक कर्त्तव्यों की तरफ अधिक निष्क्रिय होते हैं। इसमें सर्वथा सन्देह नहीं कि शीत प्रधान देशों के निवासी अधिक चुस्त, क्रियाशील तथा कर्मण्यताप्रिय होते हैं। वे स्वाभाविक रूप से अधिक सांसारिक उन्नति करने में तत्पर होते हैं।

३. तीसरा तत्व जो परिस्थिति को बनाता है वह किसी देश की उत्पत्ति है। जिस देश में खनिज पदार्थ बहुत होते हैं, वे स्वभावतः समृद्ध देश होते हैं। जिस देश में जलवायु पुष्टिकारक तथा

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बलवर्द्धक हो परन्तु वहाँ केवल भेड़ और घोड़ों के सिवाय कुछ न होता हो तो वह देश कभी वैभवशाली नहीं हो सकता। हालैण्ड जिसका मुख्य व्यवसाय पशुओं का पालन है, कदापि इङ्गलैंड सदृश अग्रगामी देश नहीं बन सकता। इसी प्रकार जो देश कृषि-प्रधान हैं, वे चाहे अपनी सीमा में सुख तथा चैन से रहें, परन्तु वे कभी अन्तर्जातीय जगत् में उन्नत नहीं हो सकते। इङ्गलैंड में यदि टीन, ताम्बा, लोहा तथा कोयले की इतनी खानें न होती तो वह कदापि अपनी कृषि-उत्पादन की अवस्था से ऊपर न उठ सकता। यदि वह इस बड़े साम्राज्य को स्थापित कर सका तो प्रकृति के इन्हीं वरदानों के कारण। प्रकृति ने इङ्गलैंड की उन्नति में बहुत सहायता दी है। न केवल वहाँ जल-वायु बहुत स्वास्थ्यप्रद है, परन्तु साथ ही व्यवसायों के लिये उचित सामग्री उपस्थित है। इतिहासज्ञ ग्रीन ने इसी विषय में लिखा है कि—

History strikes its root in Geography without a clear and vivid realization of the physical structure of a country the incidents of the life which man have lived in it can have no interest or meaning.

अर्थात् इतिहास का मूल भूगोल में है। बिना भौगोलिक परिस्थिति को ठीक तरह जाने कोई भी राजनीतिज्ञ किसी देश में सफल नहीं हो सकता। सब देश इस समय अपनी प्राकृतिक अवस्थाओं का पूर्ण अध्ययन करते हैं और उनके अनुकूल अपनी व्यावसायिक उन्नति करने में सचेष्ट होते हैं। अमरीका का उदाहरण किसी भी वर्तमान इतिहास के विद्यार्थी के सन्मुख है। किस प्रकार उसने एक दो शताब्दियों में ही अपनी भौगोलिक स्थिति का परिज्ञान कर, अपनी सम्पत्ति की वृद्धि में चमत्कार कर दिखाये हैं।

(२)

यह निश्चित करना कठिन है कि कहां तक मानुषीयकारण तथा कहां तक भौतिक कारण किसी देश की सभ्यता के विकास में प्रभाव डालते हैं। परन्तु इतना सत्य है कि वे संसार के इतिहास की रचना में प्रयोजक तत्व अवश्य हैं। इतिहास के भौगोलिक आधार पर भिन्न-भिन्न विचारकों ने समय २ पर अपने विचार प्रकाशित किये हैं। हम सुप्रसिद्ध विचारक अरस्तू का निम्न वाक्य इसी विषय में प्रस्तुत करते हैं:—

"This is a subject which can be easily understood by any one who casts his eye on the more celebrated states of Hellas and generally on the distribution of races in the habitable world. Those who live in the cold climate and in (northern) Europe are full of spirit, but wanting in intelligence and skill; and therefore they keep their freedom but have no political organization, and are incapable of ruling over others. Whereas the nations of Asia are intelligent and inventiue, but they are wanting in spirit and therefore they are always in a state of subjection and slavery."

इस कथन में बहुत कुछ सचाई है कि सर्दी के प्रदेशों में चाहे कर्मण्यता और चेतनता हो परन्तु वहां के निवासियों में प्रतिभा (Intelligence) तथा दक्षता (Skill) का होना आव-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

श्यक नहीं। इसी प्रकार गर्म देशों में यद्यपि लोग आलस्यप्रिय और आत्मसन्तुष्ट क्यों न हों तथापि उन के प्रतिभाशाली तथा दक्ष होने में कोई बाधा नहीं। वस्तुतः इस सम्बन्ध में कोई गणित का नियम तो स्थापित नहीं किया जा सकता कि अमुक देश के लोग अशिक्षित, जंगली, असभ्य ही रहेगें और अमुक देश के शिक्षित, पठित तथा सभ्य ही होंगे। कितने ही अपवाद उपस्थित किये जा सकते हैं जिन में अरस्तू के उपर्युक्त विचारों की अपूर्णता प्रगट हो। दार्शनिक बकल का मन्तव्य है कि वहीं पर सभ्यता का सरल विकास हो सकता है, जहाँ के लोगों के पास पर्य्याप्त समय, विशेष रुचि, तथा उपयुक्त साधन विद्यमान हों, जिन के द्वारा वे उन नियमों की खोज में लगें जिन से सभ्यता अथवा उन्नति का चक्र चलता है। जहाँ के निवासी जीवन संघर्ष-या सीधे शब्दों में-धनोपर्जन की कठोर चिन्ता में लगे रहते हैं, वहाँ किसी प्रकार की उन्नति-वैज्ञानिक, साहित्यिक या सामाजिक, नहीं हो सकती। धन में समृद्ध देश ही इस दिशा में कोई प्रयत्न कर सकते हैं और सफलता प्राप्त कर सकते हैं। किसी भी नयी गवेषणा की प्रारम्भिक अनिश्चितताओं को वे ही सहार सकते हैं जिन के पास पर्य्याप्त साधन तथा उपकरण हैं।

परन्तु धन की समृद्धि, प्राकृतिक अवस्थाओं पर निर्भर है। पृथ्वी की उपजाऊ शक्ति, वर्षा की स्थिति, भौमिक अवस्था इत्यादि सब मिल कर किसी विशेष देश को वैभवशाली बनाते हैं। परिणामतः वे देश सब से प्रथम सभ्य तथा उन्नत होंगे जो प्रकृति द्वारा उदारता से अनुगृहीत किये गये हैं। वहाँ स्वभावतः जीवनसङ्घर्ष की मात्रा कम होने से लोग समय, रुचि, तथा साधन उपलब्ध कर सकते हैं जिन से वे अपनी वैज्ञानिक अन्वेषणाओं में सफल हो सकें। बकल का कथन है कि ऐसी अवस्थायें हिन्दुस्तान, इजिप्ट, मध्य एशिया, मेक्सिको तथा पीरू में उपस्थित थीं, अतः वे देश सब से प्रथम सभ्यता के केन्द्र बने। हेरिडोटस ने इजिप्ट को नाईल की कृति (Gift of Nile) कहा है। भारतवर्ष को गङ्गा की कृति कह सकते हैं। इस नदी का हमारे देश की सभ्यता के विकास पर बहुत गहरा असर है। प्राचीन योगियों की दार्शनिक प्रकृति और मध्यकालीन कवियों की कविता-प्रियता की इसी नदी द्वारा व्याख्या की जा सकती है।

ग्रीस भी इस सम्बन्ध में एक उदाहरण हो सकता है। वहाँ चित्रकला, गान, पुरातत्त्व विज्ञान की अद्भुत उन्नति—और फिर वह ऐसे समय में जब समस्त योरोप अभी असभ्य तथा जँगली अवस्था में था—इसी तत्त्व पर प्रकाश डालती है कि किसप्रकार प्राकृतिक कारणों का इतिहास के निर्माण में प्रभाव पड़ता है। ग्रीस छोटा सा पेनिन्शुला है। इसमें कितनी झीलें और पहाड़ हैं। समुद्र का किनारा बहुत समीप है। प्राचीन काल में उसकी आबादी पांच लाख से ज्यादा न थी। इस के चारों तरफ के देशों की भौगोलिक स्थिति ऐसी है कि हम कुछ समझ सकते हैं कि क्यों ग्रीस में भौतिक [Material] चिन्ताएं अधिक न थीं। ग्रेस के समुद्रीय किनारों के पास एशिया माईनर, अफ्रिका और इटली हैं और ब्लैकसी के समीप अन्य छोटे मोटे द्वीप हैं। इजिप्ट आदि भी इतनी दूर नहीं कि कोई पारस्परिक सम्बन्ध दोनों देशों में न हो सके। इस विशेष भौगोलिक स्थिति के आधार पर ही बड़े २ इतिहासवेत्ताओं ने ग्रीक लोगों की मानसिक अग्रगण्यता की व्याख्या की है। उन में उप-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

निवेश बसाने की आदत, व्यापारप्रियता, आदि गुण इसी विशेष तत्व के जानने से स्पष्ट हो सकते हैं। परिस्थिति ने ग्रीस को सब से प्रथम सभ्य होने में सहायता दी। यदि यह विशेष प्राकृतिक स्थिति इस देश की न होती तो वह प्राचीन काल में इतना अग्रगामी देश न होता। परन्तु इस कथन में भी अत्युक्ति नहीं कि परिस्थिति ने ही ग्रीस की सभ्यता या उन्नति को चोट पहुंचाने में सब से बड़ा भाग लिया। हमने पहले बताया है कि यह देश बहुत पर्वतशृङ्खलाओं से आच्छादित है। इसी कारण कितनी घाटियां, कितने मैदान, अलग २ पड़े हुए हैं। प्राचीन ग्रीक लोगों ने अपने २ हिस्से में अपनी देशभक्ति को सीमित रखा। उन में एक बड़े देश की कल्पना स्थापित नहीं हुई थी। जिस घाटी में, जिस मैदान में जो रहता, उसी की समृद्धि उसका ध्येय होता था। स्वभावतः एक राष्ट्रीयता उत्पन्न नहीं हो सकती। ग्रीस छोटे २ उपराष्ट्रों का असङ्गठित देश प्रतीत होता था। परस्पर एक सूत्रित न होने से, वे इकट्ठे होकर कोई कार्य नहीं कर सकते थे। इन्हीं बातों का लाभ उठाकर बाह्य शक्तियों ने ग्रीस पर विजय प्राप्त किया और उसकी सभ्यता को नष्ट कर दिया। ग्रीस की सभ्यता के इतिहास को पढ़ने-वाले यह अनुभव कर सकते हैं कि किस प्रकार और क्यों ग्रीस में ही सब से प्रथम योरोप की सभ्यता का उद्भव हुआ, और फिर क्यों उस का उस देश में अवसान भी हुआ। परिस्थिति के तत्व की कभी उपेक्षा नहीं की जा सकती। इतिहास का बहुत सारा भाग इसी पर आश्रित है। बड़े २ नगरों की स्थिति इस सम्बन्ध में शिक्षापूर्ण है। एक लेखक ने तो राजधानियों की स्थापना को भौगोलिक चुनाव (Geographical Selection) के नियम से नियन्त्रित बताया है। यदि हम निष्पक्ष दृष्टि से, ऐतिहासिक रहस्यों की गवेषणा करें तो हम समझ सकते हैं कि देहली अब तक भारतवर्ष की राजधानी बनी रही है। रामायण के समय अयोध्या राजधानी थी, उसकी अपनी भौगोलिक स्थिति भी बहुत अनुपयुक्त नहीं थी। परन्तु देहली का भिन्न २ राज्यवंशों से इस तरह अपनाया जाना, इसकी किसी गुप्त विशेषता पर प्रकाश डालता है। गङ्गा की घाटी के उत्तरपूर्व में हिमाचल की श्रेणी है, जो बाह्य आक्रान्ताओं के लिये दुर्भेद्य है। उत्तरपश्चिम में सुलेमान की पर्वतशृङ्खलायें हैं, जिनमें कई दर्रे विजेता जातियों के हिन्दुस्तान में द्वार रहे हैं। सुलेमान के समानान्तर एक बड़ा भारी निर्जन मैदान है। इसी मैदान तथा हिमालय के बीच में एक बहुत उपजाऊ प्रदेश है। इसके पूर्वीय भाग पर गङ्गा का निकास प्रारम्भ होता है। निकास के सिरे के पास देहली स्थित है। यमुना तो इसके बिल्कुल साथ ही है। नदियों के सामीप्य से देहली का व्यापार-केन्द्र होना स्वाभाविक ही है। मुगल शासकों ने यदि इसे अपनाया तो इसीलिये कि इस में व्यापारिक सुविधाएँ अनेक थीं। उस समय रेल न होने से नहरें और नदियां ही काम में लाई जाती थी। पञ्जाब का तथा इन्डस का हरा भरा, उपजाऊ डेल्टा इस के पास होने से यह सरलता से ही व्यापार का मुख्य स्थान बन सकता था। हस्तिनापुर, इन्द्रप्रस्थ का निर्माण भी इन्ही हेतुओं से देहली के समीप किया गया था। इसके अतिरिक्त समस्त भारतवर्ष में यह केन्द्रस्थान (Central place) होने से भी राजधानी के लिये सर्वथा उपयुक्त है। आज कल भी हिसाब लगाया जाता है कि हिन्दुस्तान के मुख्य २ नगरों [मद्रास, कलकत्ता, बम्बई,

CC-0. Gurukul,Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

करांची आदि] से अपेक्षया स्वल्पतम समय में रेल एक यात्री को देहली पहुँचा देती है।

सिकन्दर ने भौगोलिक परिस्थिति का पूर्ण परिज्ञान प्राप्त करके ही अलेक्जेन्ड्रिया राजधानी को मेडीटरेनियन के किनारे बसाया था। प्राचीन समय में भारतीय तथा दूर पूर्व के व्यापार का मार्ग इसी राजधानी पर बहुत आश्रित था।

इटली में रोम की स्थिति बहुत रोचक है। सम्भवतः रोम गड़रियों से ही बसाया गया था, जो अन्यत्र चरागाहों के कम मिलने से टाईबर से सिञ्चित हरे भरे प्रदेश में आये थे। रोम बहुत सुन्दर तथा रमणीय पहाड़ियों से घिरा हुआ है। नदी के कारण व्यापार में बहुत सुभीता होता है समुद्र भी बहुत दूर नहीं है। यहां यदि सभ्यता का एकदम विकास हो गया तो कोई आश्चर्य नहीं है। प्रो० गोल्डविन स्मिथ का कथन है:—

In the first place her (Rome's) position was such as to bring her into contact from the outset with a great variety of races. The cradle of her dominion was a sort of ethnological microcosm. Latins, Etruscans, Greeks, *Campanians*, with all the mountain races and the Gauls made up a school of the most diversified experiance which could not fail to open the minds of the future masters of the world..... In the second place, the geographical circumstances of Rome combined with her character would naturally lead to the foundation of colonies and of that colonial system which form a most important and benificent part of her empire."

भिन्न २ जातियों के एक स्थान में सङ्गठन से स्वभावतः सङ्घर्ष उत्पन्न होता है, और सङ्घर्ष ही आविष्कार अथवा उन्नति का उत्तेजक तत्त्व है। प्राकृतिक अवस्थाओं की अनुग्रह दृष्टि के साथ २ रोमन लोगों ने व्यवसाय, व्यापार, साहित्य, कविता, कला आदि की आश्चर्यकारक उन्नति कर ली। रोम ने रोमन लोगों को उतना ही बनाया जितना 'रोमनष्ट' ने रोम को बनाया। रोम प्राचीन समय में उसी स्थिति में था, जिसमें अब लण्डन है।

मि० ग्रीन, जिन के इतिहास का हम पहले उल्लेख कर चुके हैं, इङ्गलैण्ड की वर्तमान राजधानी के भौगोलिक तत्त्वों पर विस्तार से प्रकाश डालते हैं। यह स्पष्ट है कि केवल आकस्मिक घटना या चुनाव से लण्डन को राजधानी नहीं बनाया गया। मि० मेकिन्डर का कथन है कि:—

That many causes conspire to maintain the greatness of London, is a fact to be marked. It is the secret of its persistent growth from the earliest times. The importance of the given geographical features varies with the degrees of man's civilization. A city which depends on one physical advantage may fall at any moment. A single mechanical discovery may effect the change"

लण्डन के राजधानी बनने में कई भौगोलिक कारण काम कर रहे हैं। उन में मुख्य समुद्र की समीपता है। समुद्र का इतिहास पर क्या प्रभाव पड़ता है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

इस पर विशद विचार केप्टेन माहन की "The Influences of Sea Power uopn History" नामक पुस्तक में मिल सकते हैं। इंग्लिश चैनेल के प्रभाव को इंग्लेण्ड के इतिहास के विद्यार्थी जानते ही हैं।

एटलान्टिक के किनारे, व्यापारकेन्द्र नगर न्यूयार्क के विषय में भी भौगोलिक परिस्थिति के सिद्धान्त का स्पष्टीकरण हो सकता है। संक्षेपतः जितने भी बड़े २ साम्राज्य, संसार के इतिहास मे खड़े हुए हैं, उनके भौगोलिक कारण विद्यमान हैं। हम यह नहीं कहते कि मनुष्य ने इतिहास की रचना में कोई आवश्यक भाग नहीं लिया। परिस्थिति सिद्धान्त का तो इतना ही अभिप्राय है कि भौगोलिक अवस्थाओं ने भी सब देशों की उन्नति अवनति, अभ्युदय तथा अधःपात में एक बहुत बड़ा हिस्सा लिया है। परिस्थिति भी सभ्यता के विकास में एक शक्तिशाली तत्व है।

(२)

भारतवर्ष के सम्बन्ध में योरोप के भिन्न २ लेखकों ने यह विचार प्रकट किये हैं कि यह भूमि सभ्यता के विकास के लिये अनुपयुक्त है। इस देश में जनतन्त्र-शासन-प्रणाली के सिद्धान्तों का परीक्षण नहीं किया जा सकता। यहाँ भौतिकवाद के उदात्त तत्त्वों का बीजारोपण तथा वृद्धि का होना कठिन है। उनकी मुख्य युक्ति परिस्थिति-सिद्धान्त पर ही आश्रित होती है। वे इस देश को गर्म कहते हैं और मानुषीय उन्नति के लिये गर्म स्थान को बाधक कल्पित करते हैं।

परन्तु हमें निष्पक्ष तथा उदार विवेचना करनी है। हमें उक्त कथन को सर्वथा सत्य स्वीकार करने से पूर्व इन प्रश्नों पर विचार करना होगा कि सभ्यता किसे कहते हैं ? इसका क्या अर्थ है ? भारतवर्ष क्या वास्तव में गर्म देश है ? और क्या गर्म देशों में सर्वथा सभ्यता का विकास असम्भव है ? क्या भारतवर्ष की परिस्थिति उस की सर्वतोमुखी उन्नति में बाधक है ?

सभ्यता के अर्थ के विषय में हम अधिक नहीं लिखना चाहते। इसके स्वरूप तथा लक्षण के बारे में कितने ही मतभेद हो सकते हैं। आवश्यकता-वृद्धि का नाम ही सभ्यता है, क्या आत्मिक सन्तोष और शान्ति ही उन्नति की कसौटी हैं, इत्यादि बड़े विवाद-ग्रस्त विषय हैं। हमारी अपनी स्थापना तो यही है कि भौतिक तथा आत्मिक उन्नति के सम्मिश्रण का नाम ही सभ्यता है। यदि कोई देश प्रकृति पर विजय प्राप्त कर अपना अभ्युदय करता है, वह निस्सन्देह सभ्य देश है। जिस देश के निवासी सुखी, सन्तुष्ट, दुर्भिक्ष, बीमारी आदि से बचे हुए, सच्चे राष्ट्रभक्त और राष्ट्रसेवक हैं, वह देश उन्नत है। जहाँ के नागरिक अपने राष्ट्र के प्रति कर्त्तव्यों का ज्ञान नहीं रखते और राष्ट्र भी जहाँ अपने नागरिकों की रक्षा, स्वास्थ्य-वृद्धि, आचार-विचार की समृद्धि एवँ भौतिक तथा आत्मिक उन्नति के साधन उपस्थित नहीं करता वह देश असभ्य है। न केवल आत्मिक ज्ञान की पिपासा में व्याकुल मनुष्यों की जाति सभ्य हो सकती है, और न ही प्रकृतिवाद के मद में अन्धी हुई जाति ही सभ्य कहला सकती है। सभ्यता का सच्चा अभिमान तो वही जाति कर सकती है जिस में जहाँ महान् राजनीतिज्ञों, राष्ट्रकर्णधारों की कमी नहीं वहाँ आध्यात्मिक पुरुषों की भी कमी नहीं जो कि समय २ पर संसार के संघर्ष में आत्मिक झलक को भी मिलाये रखे, जिससे वह संघर्ष अधिक अकलुषित तथा पवित्र

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बना रह सके। धन केवल साधन हो, उद्देश्य नहीं। सम्पत्ति की अभिलाषा प्रबल हो, परन्तु उस में अनौचित्य की गन्ध न हो। कमजोर व्यक्तियों को दबा कर, उन से अन्याय कर, धनोपार्जन करने वाली जाति अर्ध-सभ्य ही है। साम्राज्यवाद में हतचेतन होकर अपना भौतिक अभ्युदय करने वाला राष्ट्र भी अर्धसभ्य है। योरोप यदि इस समय अपने धार्मिक उद्देश्यों को भूल जाता है और केवल प्रकृति में ही लिप्त रहता है तो वह असभ्य नहीं, तो सभ्य भी नहीं कहा जा सकता। इस अन्धी दौड़ में जितने भी देश लगे हुए हैं वे किसी दिन इस सत्यता को अनुभव करेंगे कि प्रकृति ही सब कुछ नहीं, इस के ऊपर एक 'आत्मा' भी वस्तु है।

परन्तु इसके साथ वे देश भी एक बड़े भारी भ्रम में हैं जो प्रकृतिवाद के इन दृश्यों को सर्वथा गर्हणीय और अनुपादेय मानते हैं। प्रकृतिवाद के उदात्त स्वरूप का अपनाना सब देशों का कर्त्तव्य है। राष्ट्र का सब से प्रथम धर्म अपने नागरिकों के अन्न-भोजन का प्रबन्ध करना है। उन के स्वास्थ्य की रक्षा करना इसका दूसरा धर्म है। इसके पनन्तर उन की शिक्षा-आरम्भिक तथा उच्च-का इन्तजाम करना इसका तीसरा धर्म है। इसके बाद आत्मज्ञान के पिपासुओं को सुविधा देना आदिहै। जिस देश के लोग भूखे, कङ्गाल तथा निर्धन हैं वह देश असभ्य है चाहे उस में कितने ही आत्मज्ञानी क्यों न हों। हिन्दुस्तान अपनी प्राचीन महत्ता को स्मरण करके ही सुखस्वप्नों को लेता रहे तो वह अपने को धोखा देता है। हिन्दुस्तान को सबसे प्रथम अपनी राजनीतिक तथा आर्थिक स्थिति को सुधारना होगा, तदनन्तर अपनी धार्मिक अवस्था को भी संशोधित करना होगा। हमारे देश को सभ्य बनने के लिये प्रथम भौतिक उन्नति करनी होगी, क्योंकि उसीपर आत्मिक उन्नति अवलम्बित है, तदनन्तर ही हमारा देश सभ्य कहला सकेगा। इस समय निर्धन व्यक्तियों की संख्या देख कर हम अपने देश को सभ्य नहीं मान सकते।

परन्तु हम कुछ दूर चले गये। सभ्यता के उपर्युक्त अर्थों पर विचार करने के बाद अब हमें यह विचारणीय है कि क्या वस्तुतः-जैसे कि योरोपियन विद्वानों की सम्मति है-हमारे देश की भूमि सभ्यता के विकास के लिये अनुपयुक्त है? क्या सचमुच जनतन्त्रशासन-प्रणाली की संस्थाओं का उद्भव इस देश में नहीं हो सकता?

हमारा देश गर्म है। इस सम्बन्ध में हम इङ्गलैण्ड तथा योरोप में स्थित भिन्न २ विचारकों के इस विचार का प्रतिवाद करना चाहते हैं कि हमारा देश गर्म ही है। यहां की जलवायु उष्णता-प्रधान ही है।

साधारणतया जलवायु निम्न तत्त्वों पर निर्भर करती है :—

१. लैटीचुड (Latitude) की भिन्नता पर। जितनी भी ऊँची लेटीचुड होगी, उतनी ही जलवायु शीतप्रधान होगी।

२. ऊँचाई (Elevation) की भिन्नता पर। जितना कोई स्थान समुद्र के पृष्ठ से ऊँचा होगा उतना ही ठण्डा होगा।

३. मध्याह्न के समय के तिर्य्यक्पात (Slope) पर। यदि कोई स्थान दोपहर को सूर्य्य के समीप होता है तो वहाँ अधिक गर्मी पड़ती है।

४. हवाओं की भिन्न २ अवस्था पर।

५. वार्षिक वर्षा के मान पर।

६. पृथ्वी की स्थिति पर। रेतीली भूमि पर

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

संध्यासमय के अनन्तर बहुत शीत होती है।

७. वनस्पतियों की उत्पत्ति पर। क्योंकि कई वनस्पतियाँ बहुत ओस उत्पन्न करती हैं।

अब भारतवर्ष का भौगोलिक अनुशीलन किसी भी गम्भीर विचारक के सन्मुख स्पष्ट कर सकता है कि इस देश की कोई एक जलवायु नहीं कही जा सकती। यदि मद्रास भूमध्यरेखा (Equator) के समीप है, तो पञ्जाब और काश्मीर वहाँ से बहुत दूर हैं। सिन्ध और राजपुताने के प्रदेश यदि रेतीले हैं तो मध्यप्रान्त और बरार के प्रदेश भुरभुरी मिट्टी के ही हैं। इसी प्रकार यदि बंगाल में वर्षा की बहुतायत है तो पञ्जाब में यह बहुत कम मात्रा में होती है।

जलवायु की दृष्टि से भारतवर्ष एक देश नहीं, अनेक देश है। उपर्युक्त तत्त्वों की भिन्न २ स्थानों में भिन्न २ स्थिति होने से जलवायु की भिन्नता अत्यन्त स्वाभाविक है। अतएव भारतवर्ष को एकदम गर्म देश कहने का साहस भी अनुचित है।

हम नीचे प्रथम योरोप के देशों के तापमान की सूची सङ्कलित करते हैं। बड़े २ नगरों के अधिकतम गर्मी का तापमान तथा अधिकतम सर्दी का तापमान भिन्न २ कोष्ठकों में दिखाया गया है। वार्षिक वर्षा की स्थिति भी प्रदर्शित की गई है। पाठक ध्यान से देखेंगे कि योरोप के भिन्न २ मुख्य देशों के सर्दी, और गर्मी का मान लगभग एक जैसा है। इसके साथ दूसरे एशिया के नगरों के मान चित्र में यह भी पता लगेगा कि एशिया के भिन्न २ भागों में सर्दी और गर्मी की स्थिति में कितना अन्तर है। एक और भी बात अवश्य ध्यान में आयगी कि भारतवर्ष के उत्तरीय भाग में उतनी ही सर्दी पड़ती है, जितनी कान्टीनेन्ट के कई हिस्सों में।

योरोप तथा अमरीका की जलवायु

देशों के मुख्य नगर	अधिकतम गर्मी °F	अधिकतम सर्दी °F	वर्षा का औसतन मान
लण्डन [१००]	६४·५	३८	२५
आक्सफोर्ड [२००]	६२	३८	२४.५
एडिन्बरा [३००]	५८	३८	२६
डब्लिन	६०	४१	२८
पेरिस [२५०]	६६	३६	२२
लिस्बन [३००]	७१	५१	३९
बर्लिन [१००]	६७	३३	२३
म्यूनिश [१७००]	६४	२८	३५
मास्को [५००]	६६	१३	२१
मार्सेल्स [२५०]	७२	४४	२८
रोम [२००]	७७	४५	३०
न्यूयोर्क [१५०]	७४	३०	४३
हेलिफेक्स [१००]	६४	२२	५५
सान्फ्रांसिस्को	५९	५०	२३

एशिया के देशों की जलवायु

नाम मुख्य नगर	अधिकतम गर्मी °F	अधिकतम सर्दी °F	वर्षा
लाहोर (७००)	९३	५५	२१
कलकत्ता	८५	६५	६५
बम्बई	८४	७४	८३
मद्रास	८७	७६	४९
कोलम्बो	८३	७९	८८
पीकेन्ग [१००]	७९	२३	२४
टोकियो	७८	३६	६१
इरकुत्सक [१५००]	६६	−७	१४
टामस्क [२५०]	७६	−३	२०
बाकू	८०	३९	१०
स्मर्ना	८०	४७	२५
जेरोसलम [२५००]	७१	४८	२५
अदन	९५	७५	२.५

कोष्ठमें भिन्न २ नगरोंकी ऊँचाई का मान उद्धृत है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सब से सर्द प्रदेश इरकुत्सक और टामस्क एशिया में हैं। इन का तापमान क्रमशः-७° और-३° फारन हाईट है। लण्डन में-साधारणतया इङ्गलैण्ड में ३८° अंश की सर्दी है। डब्लिन की सर्दी टोकियो से कम है। पीकेन्ग में एडिन्बरा से अधिक सर्दी है। भारतवर्ष में पञ्जाब का हिस्सा ठण्डा है। लाहोर का तापमान सर्दी में ५५° अंश है। परन्तु यह लिस्बन से ज्यादा ही ठण्डा है। गर्मियों की दृष्टि से भी यह प्रथम है। ९३ अंश की गर्मी तो कोलम्बो में भी नहीं होती। औसतन भारतबर्ष में पञ्जाब सब से कम गर्म प्रदेश है। मद्रास की सर्दी भी ७६° अंश की है। इस जल-वायु का प्रभाव वहां के निवासियों के स्वास्थ्य पर पड़े बिना नहीं रह सकता। ध्यान से देखा जाय तो अमरीका में भी कम गर्मी नहीं होती। न्यूयार्क और टोकियो की गर्मी लगभग एक समान तापमान की है।

अब यदि ७४° और ७८° की जलवायु में अमरीको और जापान-इतने स्वल्प काल में-इतनी चमत्कारपूर्ण उन्नति कर सकते हैं तो कोई कारण नहीं कि ५५°, ६५°, ७४° और ७६° की जलवायु लाहोर, कलकत्ता, बम्बई, और मद्रास के लोग उन्नति न करलें। हम यह मानते हैं कि भारतवर्ष कई प्रान्त साधारणतया गर्म हैं। परन्तु कई ऐसे भी तो प्रान्त हैं जो साधारणतया सर्द हैं।

भारतवर्ष की जलवायु को Tropical Climate कहा जाता है। इस में योरोप से आनेवालों के लिये कई असुविधाएं हैं। भारतवर्ष के गर्म स्थान में काम करने वाले सिविल सर्विस के अधिकारियों को यहां आने के लिये वेतन से अतिरिक्त एक विशेष एलौंस मिलता है। बड़े २ डाक्टरों की राय है कि हिन्दुस्तान में काम करने वाले अंग्रेज बड़े त्याग से इस देश में रहे हुए हैं। अपने जीवनों को वे छोटा करते हैं, और अपनी शारीरिक शक्ति का वे यहां रहने से क्षय करते हैं।

१९१८ में इस विषय में जांच करते हुए ग्रेन्ड मेडिकल कालेज के मेजर गोर्डन टव्ड I.M.S. ने अपनी रिपोर्ट में इस तरह लिखा है कि:—

"In the tropics the amount of carbonic acid given off by the lungs is reduced. about twenty percent, the number of respirations per miunte is reduced and there is lessened activity of the lungs, This shows that there is less tissue change going on in the tissues, that is to say diminished heat-production.....Consequently practically all the work of losing heat which strikes the balance with the heat production and maintains the body at a normal temperature falls upon the sweat-glands which are therefore in a state of continued and abnormal activity..... But it is obvious that in order to keep the temperature of the body normal there must be increased flow of blood to the surface of the body, a state quite different from the coneditions under which the organs of the Europeon have been trained"

अभिप्राय यह कि क्यों कि गर्म मुल्कों में लंग्स तथा शरीर के अन्य अवयव कम कार्बोनिक एसिड छोड़ते हैं, उनमें कम गति होती, है अतः रुधिर का परिशोधन तथा परिवर्त्तन कम मात्रा में होता है। इसीलिये फिर शरीर में कम गर्मी उत्पन्न होती है। परन्तु शरीर के उचित (normal) तापमान के रखने के लिये रुधिर बाह्यपृष्ठ पर

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

दौड़ता है, और पसीने के कोष्ठ (Glando) अधिक जोर से क्रिया करने लगते हैं। ऐसी शारीरिक अवस्था योरोपियन लोगों के लिये सर्वथा अननुभूत होती है जो कि सर्द मुल्कों से आये होते हैं।

मेजर साहब का कथन है कि मलेरिया, डाई-सेन्ट्री, टाईफाईड, प्लेग और कालरा गर्म मुल्कों के अत्यन्त स्वाभाविक रोग हैं। गर्म जलवायु में इनकी बहुत वृद्धि होती है। इनसे बचने के लिये उन्होंने सिविल सर्विस के सदस्यों को इलाज भी बताये हैं। हम उनका एक और वाक्य उद्धृत करेंगे:—

To Sum up it will be seen that the effects of long residence in the tropics are real and permanent, not only in the dircetion of lowered bodily health but in undue wear of the Acroous System which may not be apparent during active service in duties involving strain, anxi-ty and responsibility, but also after retirement.

तात्पर्य यह कि सिविलसर्विस के अधिकारियों पर गर्म देश की जलवायु का प्रभाव चाहे प्रत्यक्षरूप में एकदम न दीखे, परन्तु उनके इङ्गलैण्ड वापिस जाने पर भी वह पड़ा रहता है अर्थात् वे हिन्दुस्तान में रह कर अपनी बहुत शारीरिक हानि करते हैं।

हम मान लेते हैं कि बाहर से आये योरोपियन लोगों पर हिन्दुस्तान की जलवायु बुरा प्रभाव डालती है। परन्तु यह सिद्ध नहीं करता कि यहां के निवासियों के क्रमिक-विकास में यह कोई हानि पहुँचाती है।

हम इस प्रसङ्ग में भारतवर्ष की प्राचीन कीर्त्ति का स्मरण नहीं कराना चाहते हैं। इतिहास साक्षी है कि कितने प्रजातन्त्र राष्ट्रों (Republics) की हमारे देश में स्थापना हुई। कपिलवस्तु, मगध, उज्जैन आदि नाम प्रत्येक भारतीय के हृदय में अपने नष्ट गौरव के प्रति अन्तर्वेदना उत्पन्न करने के लिये पर्याप्त हैं। यदि प्राचीन समय में भारत-वर्ष इतना उन्नत हो सकता था तो कोई कारण नहीं कि वह अब उन्नत न हो सके।

परन्तु वर्तमान समय की सूक्ष्म विवेचना भी यह स्पष्ट करती है कि गर्म जलवायु किसी भी प्रकार से एक अविजेय, अत्यन्त शक्तिशाली तत्व नहीं। इस समय सब कोई जानता है कि जितने शिक्षित तथा सभ्य मद्रासी लोग हैं उतने अन्य किसी प्रान्त के लोग नहीं। बंगाल पञ्जाब से अधिक गर्म स्थान है। परन्तु बंगाल में ही डा० बोस, सर प्रफुल्ल, तथा कविसम्राट् टागोर एवं बंकिम, द्विजेन्द्रलाल, मधुसूदनदत्त आदि का जन्म हुआ है। बंगाल आज मानसिक उन्नति में भारतवर्ष का गुरु है। इसमें कितने ही राजनीतिज्ञ उत्पन्न हुए और कितने ही त्यागशील हो रहे हैं। इसमें सन्देह नहीं कि स्वाधीनता स्थापित होने पर बंगाल और मद्रास ही नहीं, अपितु समस्त भारतवर्ष उन्नत, समृद्ध, वैभवशाली और सभ्यतम देश हो जायगा। परिस्थिति ऐसा बाधक तत्व नहीं है जिस पर विजय प्राप्त न किया जा सके। हमने दिखाया है कि अमरीका और जापान कोई बहुत सर्द देश नहीं, फिर भी उन्होंने चमत्कार पूर्ण उन्नति कर दिखाई है। वहां जनतन्त्र-शासनप्रणाली की संस्था इंग्लैण्ड, फ्रांस, जर्मनी आदि योरोप के देशों की अपेक्षा कम सफलता से नहीं चल रही। भार-तवर्ष में भी इसका सुचारु रूप से सञ्चालन हो

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सकता है, यदि इस के निवासियों के हाथ में पूरी शक्ति और उत्तरदायिता का प्रदान कर दिया जाय।

हमने परिस्थिति के तीन भाग किये थे १. जल वायु २. देश की भौगोलिक अवस्थिति ३. खनिज आदि पदार्थ की उत्पत्ति। जलवायु के बारे में हमने काफी कह दिया। भारतवर्ष की भौगोलिक अवस्थिति (Earth's surface etc.) पर हमें कुछ अधिक वक्तव्य नहीं। उत्तर में दुर्गम हिमाचल, तीन तरफ समुद्र होने से इस देश की बहुत सुरक्षित स्थिति है। किसी शत्रु का बहुत शीघ्रता से आक्रमण नहीं हो सकता। थोड़े ही सेनी व्यय से भारतीय राष्ट्र, बाहर के हमलों से अपनी रक्षा करने में समर्थ हो सकता है। इसके अतिरिक्त इस विशेष भौगोलिक अवस्थिति के कारण वह, भिन्न २ जलवायु के प्रान्तों से भिन्न २ वस्तुओं की उत्पत्ति कर सकता है। खनिज पदार्थों की दृष्टि से भी भारतवर्ष बहुत पीछे नहीं। इस विषय में परिस्थति अनुकूल है। लोहा, कोयला, सोना, चांदी की खानें इस देश में कम नहीं। यदि उन की प्राप्ति के लिये पूरा प्रयत्न किया जाय तो भारतीय व्ययसाय बहुत समृद्ध हो सकते हैं। हमारे पास संसार के खनिज पदार्थों के उत्पत्ति स्थानों की विस्तृत आलोचना करने का अवकाश नहीं। परन्तु यह हम निष्पक्ष होकर कह सकते हैं कि भारतवर्ष में खनिज की सम्भावनाएं कम नहीं है।

हमारी यही स्थापना है कि परिस्थिति सिद्धान्त अवश्य सभ्यता के विकास में एक प्रभावक तत्त्व है। परन्तु इसके नियमों का निर्णय नहीं किया जा सकता। इसके नियम रसायन शास्त्र के नियमों के सदृश निश्चित (exact) नहीं हैं। इस के अतिरिक्त परिस्थिति-सिद्धान्त के नियमों पर विजय भी प्राप्त किया जा सकता है। गर्म देशों के लोग आलस्य प्रकृति के होते हैं। परन्तु इस प्रकृति को दबाया जा सकता है। मानुषीय कारण भौतिक कारणों से प्रबल हैं। किसी भी देश में, किसी भी परिस्थति में मनुष्य—यदि उसमें इच्छा है,—सभ्यता का पूर्ण विकास प्राप्त कर सकता है।

× × ×

बालविवाह

(श्री पं० देवशर्मा)

(१)

पूछति नेह भरी बतियाँ रतियाँ कस बाजति बाँसुरियाँ,
मिलि गावति गीत अरी जबहीं हम नाच रहीं जस बानरियाँ।
बालक एक अचेत भरीं अँखियाँ घन नींद छुवै छतियाँ,
"अ्रीदेव" सखी वह कौन लगैं जिन के संग खेली हैं भाँवरियाँ॥

(२)

जाति कुटुम्ब सबै मिलि कै, सखि कौन सी बात भई रतियाँ,
मातु पिता सब ही मिलि कै, करसों कर सौंप दई सखियाँ।
मोसम बालक एक रहे पहिने रँग केसर झाँगुरियाँ,
"अ्रीदेव" सखी वह कौनलगैं जिन के संग खेली हैं भाँवरियाँ॥

(३)

एक कहै तुम ब्याह गई तुम्हरे कर लाल लसी चुड़ियाँ,
सुनि चौंकपड़ी धड़की छतियाँ, हँसि लोट पड़ी सुनि के बतियाँ।
आजहूं फुर लागति बात अरी, सपना सी जो बात भई रतियाँ,
"अ्रीदेव" सखी वह कौन लगैं जिन के संग खेली हैं भाँवरियाँ॥

(४)

रीति सनातन जानत है, तबहूं न तजैं हठ हाय अनारी,
दूध के दाँत पड़े मुख में, सिर सेन्दूर अँग कुशुम्बरी सारी।
आमन आन का ज्ञान नहीं जेही कामक नाम न जानत वारी,
ता सिर पै गृह भार धरैं जेहि पावक जावक लागत भारी॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

यूरोप में विद्या की पुनः जागृति

(लेखक— ब्रह्मचारी सर्वमित्र)

प्रातःकाल पूर्वदिशा के बादलों में छाई हुई लालिमा आने वाले प्रकाश की झलक होती है। इस लालिमा का प्रादुर्भाव अन्धकार से होता है। आगे अन्धकार और पीछे दिव्य-प्रकाश। यही अवस्था यूरोप के इतिहास में विद्या की पुनर्जागृति की है। यहां है मध्यकाल का अन्त और वर्तमान-काल का प्रारम्भ। यह आने वाले प्रकाश की, नूतन भावों की, नई क्रियाओं की, प्रथम रेखा है। इसके आगे अन्धकार, अज्ञान और अन्धविश्वास है, और पीछे प्रकाश, ज्ञान और तर्कशील बुद्धि।

मध्यकाल में चर्च ही विद्या के केन्द्र थे और पादरी ही उसके अधिष्ठाता। जिस समय विद्या पर इनका प्रभुत्व हो गया तो निश्चित था कि उसके अन्दर विकार उत्पन्न हो जाय। आम जनता लैटिन न जानती थी, अतः वह पढ़ने में असमर्थ थी। उसका ज्ञान श्रुति तक ही परिमित रहता था। परम्परागत किंवदन्तियां ही ज्ञान का भण्डार थीं। भिन्न भिन्न वस्तुओं के सम्बन्ध में इनकी विचित्र कल्पनायें थीं। उन्हीं को ये मानते आते थे। वैज्ञानिक तत्त्वों के सम्बन्ध में इन के बड़े अद्भुत विचार थे। इन का विश्वास था कि छिपकली जैसा एक जानवर होता है जिसे यदि आग में रख दिया जाय तो आग बुझ जायगी क्योंकि यह बहुत ठण्डा होता है। इन के मतानुसार बाज अपने अण्डों को सेते समय उनके साथ ही कुछ ठण्डे पत्थर रख लेता है ताकि बाज की गर्मी से अण्डे नष्ट न हो सकें। इसी प्रकार अन्य पक्षियों के विषय में भी इन के ऐसे ही विचित्र विश्वास थे। ग्रहों के शुभाशुभ फलों पर ये लोग विचार करते थे। डाक्टर भी ग्रहों के शुभ होने पर ही दवाई देता था। भूमि, वायु, जल और अग्नि से ही सब वस्तुओं को बना हुआ समझते थे। इस प्रकार का जो कुछ भी—ठीक या अशुद्ध—ज्ञान मध्यकाल में था, उसको निर्विकार रूप से ये मानते चले आते थे। इन में उनके सत्यासत्य के निर्णय के लिये कभी विचार न उठते थे क्योंकि इनकी मानसिक प्रवृत्तियां भिन्न प्रकार की थीं। ये लोग इस बात को सोच ही नहीं सकते थे कि मनुष्य में भी कुछ बुद्धि है, उस में किसी वस्तु को यथार्थ जानने की शक्ति है। इन में साधारण बुद्धि (Common sense) का अभाव था। अपढ़ लोगों में पढ़े हुओं की अपेक्षा मानवीय ज्ञान की मात्रा अधिक थी। पढ़े हुओं की पढ़ाई में, उनके ज्ञान में, कोई साहस और उत्साह न था जो कि ज्ञान में हुआ करता है। किसी वस्तु के असत्य सिद्ध होने पर भी ये लोग अपना सिर ऊपर न कर सकते थे। क्योंकि नास्तिक (Heretic) और विद्रोही होने का डर इन्हें कंपाता रहता था। चर्च के प्रतिशोध की तलवार इन पर लटकती रहती थी। अन्धविश्वास और मूर्खता में इन का जीवन बीत रहा था। इस प्रकार की अवस्था में ज्ञान का प्रसार सर्वथा असम्भव था। पर इन्हीं अवस्थाओं से ही विद्या की पुनर्जागृति का प्रारम्भ हुआ।

मध्यकाल की मुख्य संस्था रोमन केथोलिक

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

चर्च थी। विद्या और शिक्षा का कार्य इसी के आधीन था। मध्यकाल, धार्मिक-अन्धश्रद्धा का समय है। ऐसे ही समय, तुर्कों ने ईसाइयत के मुख्य तीर्थ-जैरूसलम-को अपने आधीन कर लिया और ईसाइयों का वहां आना जाना सर्वथा रोक दिया। पोप के आदेश से इस समय धर्मयुद्ध (Grusades) प्रारम्भ हुए। अपने धर्म पर आई हुई विपत्ति को देख सहस्रों योद्धा इन में शामिल हुए और धर्म पर निछावर हुए। इन में हार जीत चाहे किसी की हुई हो पर यूरोप को इस से बड़ा लाभ पहुंचा। जो लोग इन युद्धों में शामिल हुए उन का अपने से अधिक सभ्य जातियों से संसर्ग हुआ। इन सभ्य जातियों में अरब सब से मुख्य हैं। इन्हें भिन्न प्रकार के लोगों, बड़े २ शहरों और विचित्र रीतिरिवाजों को देखने का मौका मिला। इस से उन में लुप्त हुई विचारशक्ति फिर प्रकट होने लगी। परन्तु धर्मयुद्धों की अपेक्षा सिसली और स्पेन के मुसलमानों एवं कांस्टैंटीनोपल से ही यूरोप को बहुत कुछ मिला। सन् १४५३ में तुर्कों द्वारा कास्टैंटीनोपल के जीत लिये जाने पर आश्रय न पाकर ग्रीक पण्डित यूरोप में भाग आये। कौन्स्टैंटीनोपल ग्रीक-ईसाइयत का सब से बड़ा केन्द्र था। प्राचीन रोमन साम्राज्य के दो भागों में विभक्त होने पर ईसाइयत भी ग्रीक और लैटिन दो भागों में विभक्त हो गई। प्राचीन ग्रीक अध्ययन और साहित्य की परम्परा व अनुश्रुति कोन्स्टेन्टिनोपल में कायम रही। ईसाइयत से पूर्ववर्ती दार्शनिकों के ग्रन्थों का अनुशीलन कोन्स्टेन्टिनोपल में जारी रहा। इस प्राचीन नगरी के तुर्कों द्वारा अधिकृत होने पर वहां के ग्रीक पण्डित पाश्चात्य ईसाइयत के केन्द्र रोम में चले आये। यहां पर ही सबसे पूर्व विद्या की जागृति का प्रारम्भ होता है। ग्रीक पण्डितों ने प्लेटो और अरिस्टोटल को पढ़ाना प्रारम्भ किया। इस से लोगों के दृष्टिकोणों में फर्क आ गया। वे अपने पुराने विश्वासों को त्याग कर स्वतन्त्र विचार प्रारम्भ करने लगे। धीरे धीरे इन की ख्याति सर्वत्र फैल गई और लोग एल्प्स पर्वतमाला को पार कर विद्याध्ययन के लिये इटली में आने लगे। नये विचारों के आते ही पोप और चर्च से नास्तिक बनाये जाने का भय भी भाग गया। मुसलमानों ने ईसाइयत को कई फिलोस्फर और एलकेमिस्ट [Alchemists] दिये। इसके साथ ही मुसलमानों द्वारा पश्चिम को कागज भी प्राप्त हुये। प्रिन्टिङ्ग प्रैस का आविष्कार भी इसी समय हुआ। इन दोनों ने विद्या के प्रसार में बहुत सहायता दी। इसका पहला परिणाम यह हुआ कि बाइबल की खूब प्रतियां छपीं और बाइबल सर्वसाधारण के लिये सुलभ हो गई। सर्वसाधारण को अपने वास्तविक धर्म का पता लग गया। और इस के साथ ही पुस्तकें भी बहुत बड़ी संख्या में छपने लगीं। पुस्तकों को सर्वसाधारण की भाषा में कर दिया गया। पढ़ने में कठिनाई न रही। अब पुस्तकें रहस्य न थीं अपितु सर्वसाधारण की समझ में सरलता से आ सकती थीं। इस प्रकार सब से पूर्व यूरोप में ईसाइयत के गढ़ इटली में विद्या की जागृति का प्रारम्भ हुआ। अरबों का लैटिन और ग्रीक दोनों ही पण्डितों से सम्बन्ध था। ये लोग प्लेटो और अरिस्टोटल को ग्रीक से अरबी में अनुवादित कर पढ़ा करते थे। लैटिन पण्डितों ने अरबी से लैटिन में अनुवाद कर पढ़ाना प्रारम्भ किया। पर इससे वे लोग अरिस्टोटल और प्लेटो को ठीक तरह समझ न सकते थे। अतएव वे लोग उन ग्रन्थों के महत्व को नहीं पहचान सकते थे-वे किताबें इन के लिये सर्वथा रहस्य ही थीं। उनका सौन्दर्य-उनका ज्ञान इनके काम का न था। इसी बीच में एक तो

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कौंस्टैन्टीनोपल से भागे हुए ग्रीक पण्डितों ने इन्हें सहायता दी और दूसरे पेट्रार्क (Petrarch) के मनुष्यत्व (Humanism) के सिद्धान्त ने। विद्या की पुनर्जागृति में इस का बहुत बड़ा हाथ है, क्यों कि इस सिद्धान्त ने सर्वसाधारण की मानसिक प्रवृत्तियों को पलट दिया। इससे ईसाइयत के पूर्वकाल की स्फूर्ति का आविर्भाव हुआ। इसप्रकार 'मनुष्यत्व' के सिद्धान्त द्वारा इटली में नई स्पिरिट पैदा होगई। इसके लिये ग्रीक पण्डितों की पुस्तकों में ही उपयुक्त भोजन प्राप्त हुआ। अब इटली के व्यापारी अपने जहाजों में सामान आदि को छोड़ कर पूर्व से ग्रीक पण्डितों की किताबें लाद कर लाने लगे। अब पुस्तकालयों और अजायबघरों की सृष्टि हुई। इसके अनन्तर ही प्रिन्टरों और व्याख्यायकों का समय आया। इस समय ही ग्रीक का प्रचलित भाषाओं में बहुत कुछ समावेश हो गया। ग्रीक कविताओं की रचना प्रारम्भ हुई। और ग्रीक का पढ़ना-लिखना और जानना शान समझा जाने लगा। इस प्रकार इटली में विद्या की जागृति हुई। (अपूर्ण)

प्रताप-पञ्चक

(कुमारी पुरुषार्थ-वती आर्य, वैदिकधर्म्मविशारदा,)

(१)

मातृभूमि के पुत्र निराले, हिन्दु जाति के अनुपम वीर।
शुभ प्रसून मेवाड़-विटप के, रण-दुर्मद, विजयी, रणधीर।

(२)

सूर्यवंश के तिलक उजागर,
राजपूत जाती की शान।
थे प्रताप खल-यवन विनाशक,
देशबन्धुओं के प्रिय-प्रान।

(३)

क्रोध पूर्ण लख मूरति जिन की
यवन काँपते थे भय मान।
कोमल—आश्वासन से हिन्दू,
पा जाते थे जीवन-दान।

(४)

नेत्र-ज्वाल रक्ताक्त देख कर,
शत्रु विकम्पित होते थे।
चण्ड-छटा भाले की लख कर,
अपना साहस खोते थे।

(५)

जिन के गुण-गण अब भी हिन्दु,
उत्साहित हो गाते हैं।
उन के श्री चरणों में हम सब,
श्रद्धा-कुसुम चढ़ाते हैं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मोहिनी के आँसू

(खंड ७, संख्या ८ से आगे)

(ले०—श्रीयुत सन्तलाल दधिमथ वैद्यराज)

यह सुन लालाजी का हृदय हाथों उछलने लगा। इस वार रामप्रसाद भी फीके पड़ गये। इसी अवसर में एक कम्पौंडर चीर-घर से निकल, दुबकता हुआ आकर बोला—"भला चाहते हो तो इन्स्पैक्टर साहब के पास जाओ, वे डाक्टरजी के दोस्त हैं, बच जाओगे। अन्दर कुछ जहर के बारे में भी बात हो रही है।" यह कहता हुआ वह एक ओर चला गया। थोड़ी देर तक सब चुप रहे। फिर लाला शिवप्रसाद जी रुँधते हुए गले से बोले—"क्या जाने—क्या पाप उदय हुए हैं?" उनकी ऐसी दशा देखकर रामप्रसाद सान्त्वनामय शब्दों में बोले—"रुपये पैसे का ख़याल न करो। ताँगा कर इन्स्पैक्टर के पास चले जाओ।"

शिव०—"अच्छा" कह कर मुनीम से बोले—"देना" तब मुनीमजी ने एक तौलिये में लिपटे हुए कुछ कागज उनके हाथ में पकड़ा दिये। लालाजी तत्काल ताँगा कर, मि० कैरी के बँगलेपर पहुंचे। मि० कैरी बराँडे में आरामकुर्सी पर लेटे हुए अख़बार पढ़ रहे थे। इन्होंने जाते ही झुक कर सलाम किया और ये नीचे फ़र्श पर बैठ गये। अखबार टेबल पर रखते हुए, मि० कैरी ने पूछा—"क्यों, क्या बात है?"

शिव०—(हाथ बाँध, गिड़गिड़ा कर) "ग़रीब-परवर! वह एक तो मरी ही है, बाकी की जान व इज़्ज़त भी आपही बचा सकोगे। माई-बाप! बुढ़ापा है, इसकी....." कहते हुए पगड़ी पैरों में टेक दी, और रोकर बोले—"तुम्हारी गय्या हूं, बचालो।"

मि० कैरी—(मन्द हँसी होठों पर लाकर) "हम क्या करें?"

शिव०—"आप ज़रा दया की निगाह पसारें तो हम सब बच जाएँ।" कह, जेब में हाथ डाला, परन्तु बगल की ओर देख, रुक गए।

मि० कैरी—(पास खड़े सिपाही से) "जाओ, सोड़ा और थोड़ी बरफ़ ले आओ।"

सिपाही—"बहुत अच्छा, हुजूर।"

आज सन्ध्या को ला० शिवप्रसाद की स्त्री की अन्त्येष्टि-क्रिया हो चुकी। अकेली स्त्री ही नहीं मरी—सारे घरवालों के दिल मर-मिटे। इस चर्चा ने आस पास के गाँवों में अपना विशाल कलेवर कर, भारी कोलाहल मचा दिया। बातें तो जितने मुंह उतनी ही हुई, पर ठाकुर-साहब के यहाँ इस प्रकार संवाद छिड़ रहा था:—

"चौधरी जी! सुना है क्या? लाला शिवप्रसाद की स्त्री का दाह-कर्म तब हुआ, जब पाँच-पाँच सहस्र दोनों गुरुओं को, और दो सहस्र छोटे-मोटे जनों को दक्षिणा में प्रदान हुए।

चौधरी—"हाँ कुंवर साहब! सुना तो है। परन्तु इतना रुपया कहीं पुण्य में लगाते, तो क्या ठीक था—नाम हो जाता।"

कुंवर—हाँ, जी! पर अब भी निपटे नहीं हैं।

चौधरी—"नहीं जी! जो कुछ होना था,

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हो लिया। और था ही क्या— अपनी बेवक़ूफी से इस तरह दले गये हैं।"

कुंवर— "पर जनाब, सुना है— साहब ने बड़ी ही छीछालेदार की।"

चौधरी—"इन्हों ने भी क्या गाँव को कम तङ्ग किया हुआ था? ख़ैर अच्छा हुआ। इसी गाँव की पैदायश ने और कमीने घर की औलाद ने ऐसा मुंह तोड़ा है कि अब ऊँचे अकड़ कर, हरेक से बोल भी न सकेंगे। जीते ही मरे जैसे रहेंगे।"

× × ×

मिस्टर कैरी को इन्स्पैक्टरी के पद पर विराजते ३½ वर्ष व्यतीत हो गये। उस महादान का फल थोड़ा न पाया [कलिन्द-नन्दिनी के पुनीत-तट पर किये गये] फलतः कैरी 'मिस्टर' हो गये; कुछ से कुछ होगये। आपने खूब ही हाथ रंगे, आप का समुपार्जित धन यदि सुरक्षित रहे, तो भावी सन्तान की सन्तान सानन्द निर्वाह कर सकती है। कोई अढ़ाई, कोई तीन, कोई पाँच लक्ष योग-बद्ध अनुमान करता है। परन्तु कुछ हो ऐसी संभावना किसे थी?

संसार की विचित्र गति है। धन प्राप्त कर मनुष्य प्रसन्न-चित्त रहता है, कृतकृत्यता का अनुभव करता है। परंच यहाँ मि० कैरी पन्द्रह दिनों से ऐसी उलझन में पड़े हैं कि न भोजन भली भाँति कर सकते हैं, न निद्रा-सुख प्राप्त कर सकते हैं। अपने कमरे में आज संध्या से चारपाई पर लेटे हुए अविरत पीड़ा से प्रातः ५ बजे तक तड़पते रहे। अन्त में कुछ सोच समझ, साहस कर उठे। एक फुलिसकैप कागज़ ले लिखने लगे। लिखने के पश्चात्, कुछ सावधान होकर अनमने से बैठे रहे।

जब आप ऑफिस जाने लगे, तब उसे एक लिफ़ाफ़े में रख जेब में डाल लिया, और वहाँ पहुंचने पर बड़े दृढ़-संकल्प के साथ जनरल पुलिस इन्स्पैक्टर के पास भिजवा दिया।

× × ×

उपरोक्त घटना घटने के ठीक एक मास के पश्चात् का वृत्त पाठकों को सुना रहे हैं— उक्त समय में ही दुकान को यहाँ से उठा अन्यत्र भेज दिया है। परिवार भी प्रायः सब चला गया है। केवल आप और एक बाबर्ची यहाँ रह गये हैं।

कल संध्या को मिस्टर कैरी जब चार्ज देकर निवृत्त हुए तो अपने को कृतकृत्य मानने लगे। नगर में यह चर्चा विद्युत्-प्रकाश की भाँति सहसा सर्वत्र फैल गई। विशेष कर बड़े बड़े साहूकार रात्रि को अपनी कोठियों में अपने मित्रों, मंत्रियों तथा मुलाज़िमों के संग बड़ी २ मीमांसा करने लगे। एक जगह यह संवाद हो रहा था:—

"रायसाहब! मिस्टर कैरी अपने नैपुण्य से निकल ही गये।"

लाला जी— "हाँ, साहब ख़ूब निकले। जो कहीं लोभ में पड़े रहते, तो छठी-छठी का खाया निकल जाता। क्या जाने— खाँसाहब से भी बढ़ कर कहीं दुर्दशा हो जाती।"

मुनीम— "राय साहब! वह तो मुसलमान था। मुसलमान तो ज़रा आज कल इनकी निगाह में....." समग्र न कह कर, कुटिल-कटाक्ष से बात पूरी करदी।

लाला— "ख़ैर, ईसाई था तो रहे। बात तो बिगड़ ही जाती। वैसे बर्ख़िलाफ़ कई हो गये थे। बहुतों की आँखों में खटकने लगा था। कोई न कोई षड्यन्त्र रच ही देता।"

मुनीम— "पर साहब! खूब ही खुल्लम-खुल्ला हाथ मारे।"

लाला—"हाँ! मगर वजह क्या लिखाई?"

मुनीम— "क्या लिखता? अपने को कमज़ोर

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

और बीमार बताया है! आँख की कमज़ोरी के कारण भी काम करने में लाचारी बताई है। साथ में सिविल-सर्जन का सार्टीफिकेट लगा दिया।"

लाला— "सिविल-सर्जन भी तो उसी गाड़ी के पहिये हैं। सार्टिफिकेटों की माला पहनाते उन्हें देर क्या लगे?"

× × ×

इसी प्रकार यत्र—तत्र विविध बातें हो रहीं थीं। अस्तु!

एक मास पर्य्यन्त डाक्टर साहब के यहाँ बने रहे। अन्त में पहाड़ पर निवास करने के लिये प्रस्थान किया। साथ में डाक्टर साहब भी प्रेम-वश पन्द्रह दिवस का अवकाश ले कर चले। पन्द्रह दिन के अनन्तर डाक्टर साहब तो वापिस लौट आये, किन्तु वहां ३ मास मि० कैरी ने सशंक व्यतीत किये। इस बीच डाक्टर साहब के पत्र बराबर आते-जाते रहे। वे आवश्यक खबरें पहुंचाते रहे।

मि० कैरी ने ३ मास के पश्चात्, सर्वथा उचित जान, कलकत्ते को प्रस्थान किया। वहां स्टेशन पर पहुँचते ही सपरिजन मि०मार्टिन मिले। ाप सब के सब मकान पर पहुँचे। बड़े बाजार वही आपका वृहद् बूट भण्डार है। इन तीन ासों में उस का काम आशातीत चल गया। उसी तरह नीम-ईसाइयों, ईसाइयों, गोरों, और कालों के, बाबू समाज और व्यापारिक समाज के आर्डर आने लगे।

इधर मि० कैरी कुछ काल तक अपने चित्त को स्वस्थ और शान्त बनाते रहे। इधर उधर आना जाना, मेल-जोल बढ़ाना इनका काम था। इस-लिये ईसाइयों का अधिकाधिक आगमन होने लगा। बिक्री भी दिन-दूनी, रात-चौगुनी होने लगी। यहां भी निरन्तर डाक्टर साहब के पत्र आते रहे। कोई ८ मास के पश्चात् चित्त शान्त एवं निरुद्वेग, हुआ। निर्भीकता के भव्य-भवन में भली भाँति सुख पूर्वक वास करने लगे। अपनी बुद्धिमत्ता से प्राणों एवं प्रतिष्ठा की रक्षा हुई जान, परमानन्द का अनुभव करने लगे।

इधर मिस ऐलन [जन्म नाम मोहिनी] की भी लगभग पन्द्रह वर्ष की आयु हुई। मिडिल पास कर चुकी। एन्ट्रेन्स की तय्यारी कर रही है किन्तु अब कालानुकूल अधिक ब्रह्मचर्य को व्यर्थ मानने लगी। इसी कारण बीच ही में स्वयंवर करने की उलझन भी पड़ गई। उलझन भी साधारण सी नहीं— बड़ी भारी। जिस के संग सारी आयु व्यतीत करनी हो, [थोड़े से समय में उस के गुण कर्म स्वभाव का] परिचय प्राप्त कर लेना कोई साधारण सी बात नहीं। इस विषय में विचलित होकर कभी-कभी अपनी सहेलियों से स्पष्टतया यह शब्द कह बैठती:—

"·····हिन्दुओं का रिवाज़ अच्छा है। उस में पिता या कोई भी बड़ा आदमी, घर, वर उत्तम देख, विवाह कर देता है। हमारे यहां की प्रथा भयंकर है। परिणाम अधिकतर अभद्र एवं भयंकर होता है। अब मेरे समक्ष ही ये १० युवक हैं— सारे उत्तरोत्तर तरुण हैं, स्वस्थ हैं। उत्तरोत्तर रूप-बलशाली है। सब की कमनीयता, लावण्यता निराली है। सभी का मानस-सरस्नेह-प्रवर है। सभी की बातें प्यारी, मीठी हैं। ये सब हृदय से मुझे चाहते हैं और मैं भी इन को बुरा नहीं समझती। प्रातः सफाई: जब एक आकर मधुर-मधुर बातों से मुझे मुग्ध करता है, तब मुझे भी उस के रम्य प्रेम का प्रिय और सुन्दर-शब्दों में ही स्वागत करना पड़ता है। अभी एक कमरे से बाहर निकलने नहीं

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पाता—दूसरा बाहर टहलता रहता है। वह समय पाकर, आकर, उससे भी अधिक मेरे दिल को प्रेम-पाश से बाँधने के लिये कोशिश करता है सारांश यह कि-कोई दोपहर, कोई तीसरे पहर, कोई शाम, कोई रात को, कोई जब भी मौका पाता है तब, मेरे दिल पर विजय प्राप्त करने के लिये प्रयत्न शील होता है। अब मैं क्या करूं? किस के लिये आत्म-समर्पण करूँ? फिर आगे का क्या भरोसा है कि तब प्रणय-फल कैसा रहे? यह कैसे हो— कल की भी कुछ ख़बर नहीं। हा! हम अबोध बालिकाएं क्या जानें कि कौन कैसा रहेगा? भविष्य ज्ञान से महात्मा भी वञ्चित हैं, हम अल्पज्ञा अबला विवेक शून्याओं की तो फिर क्या कथा? हमारे सभ्य समाज की ओर से यह हम पर कैसा अत्याचार हो रहा है? हा! पत्नी बनने के पहले हमारा सभ्य-समाज हमें सतीत्व नष्ट करने के लिये प्रोत्साहित करता है, कुमारपने को ही कलङ्कित कराता है, सदाचार और व्यभिचार में अन्तर नहीं छोड़ने देता। 'सतीत्व' क्या है— यह जानने का समय तक नहीं आने देता। जो लोग इसे रोशनी ही रोशनी का जमाना बता रहे हैं, रोशनी ही रोशनी पुकारते हैं, उन्हें यह ज्ञात नहीं कि हम अबलाओं के जाज्ज्वल्यमान जीवन— ज्वाला की ही यह रोशनी है।'

इधर मिस्टर कैरी भावी आपत्ति-भय से तो मुक्त हुए, पर उनके हृदय से, हिन्दू जाति की सुलगाई हुई वह धधकती आग अभी शान्त नहीं हुई। जब कभी शान्त बैठते, मि० कैरी को हिन्दुओं के दुर्व्यवहार याद आते, उन का हृदय प्रचण्ड क्रोध के आवेग से कम्पित हो उठता! एतदर्थ उन्होंने अपनी आत्म-शान्ति के निमित्त एक भयंकर-युक्ति निकाली, और सर्वथा उसे समुचित समझ, कार्य-रूप में परिणत करने के लिये कटिबद्ध हो गये।

मिस्टर कैरी ही नहीं, उनका परिवार भी यह समझ रहा है कि इस समय हमारे पास इतना अर्जित द्रव्य है कि इस मूल-धन को सुरक्षित रख कर ब्याज मात्र से हमारी सात पीढ़ी परमानन्द के साथ निर्वाह कर सकती है। वैसे एक 'बूट भण्डार' की ही आय इस समय पर्य्याप्त है। घर के और दुकान के व्यय से तिगुना धन तो अवश्य बच रहता है। गृहस्थ आनन्द से चलता ही है— घर का एक सुन्दर ताँगा घोड़ा। घर और दुकान दोनों के तीस नौकर। ४०० रुपये घर और दुकान दोनों का मासिक किराया दिया जाता है। बस, इन सब का और घर का खर्च मिला कर जो खर्च उठ रहा है इसका तिगुना कितना हो सकता है यह अटकल से अनुमान किया जा सकता है। सारांश यह कि यह गृहस्थ सर्वोपकरण-संपन्न है। इतना व्यय आप के आगे कुछ भारी नहीं प्रतीत होता। कुछ क्लेश नहीं, कोई चिन्ता नहीं।

मि० कैरी गार्हस्थ्य-चिन्ताओं से बरी हैं। अतः गृहस्थ का संचालन-कार्य मि० मार्टिन पर छोड़, आप धार्मिक क्षेत्र में उतरे। ईसाई-मंडल से पूरी सहायता ले—अपने लिये नहीं, अपितु भारतीय बुभुक्षिताओं के लिये,—स्वयं तो अवैतनिक कार्य कर्ता हैं— अन्न-वस्त्रादिक की सहायता दे, ईसाई बनाने के लिये, अब उड़ीसा-प्रान्त में भ्रमण करने चले। निरन्तर धूप-शीत आदि मार्ग-यातनाएँ सहन कर, विस्तृत कार्य-क्षेत्र में उतर पड़े। जिनके संरक्षकों ने, घोर अकाल से पीड़ित हो जिन्हें छोड़ दिया है, जिन को तीन-तीन दिनों में भी मुट्ठी भर चावल न मिल सका, वे देवियाँ-जो बीसबीस दिनों से एक कोठे में बंद थीं, जिन के औरस-रत्न बुभुक्षा के मारे

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

काल-कवलित हो चुके थे, और जिन्हों ने स्वयं उसी कोठरी में कफ़न न मिलने के कारण और भूख के मारे बाहर ले चलने की ताक़त न होने के कारण उन्हें दबा दिया था, और जो अपने ही तन को धोती के टुकड़ों में लपेट कर अपने बुभुक्षित मृत वत्सों को धरा गर्भ में धर कर नग्न दशा में कोठे के अन्दर बंद थीं, जो लज्जा और शोक के कारण वहीं मरजाना चाहती थीं जो, ऐसे अकाल में बल वाले दुष्टों के द्वारा कपड़े छीन लिये जाने पर नग्न हो कर अपने कोठों में बंद हो गई थीं, जो इस नग्न दशा में लज्जा और बुभुक्षा के मारे अपने प्रियप्राण पखेरू उड़ा देना चाहती थीं, ऐसी देवियों को अन्न-वस्त्र की सहाता दे कर मि० कैरी ईसाई बनाने लगे। प्रतिदिन ऐसी सैकड़ों विधवाएँ-जो मुट्ठी भर चावल न मिल सकने के कारण अपना जीवन कलङ्कित कर रही थीं-ऐसी सहस्रों असूर्यम्पश्या कुल-वधुएँ जो मुट्ठी भर अन्न के वास्ते व्यभिचारिणी होगई थीं-वेश्यावृत्ति अंगीकार कर चुकी थीं- [दुष्काल के मारे जिन के स्वामी, बन्धु-बान्धव आदि अकेले छोड़ कर निकल गये ऐसी अनेक महिलायें] जो अन्न प्राप्त न कर सकने के कारण मरणशय्या पर पड़ी हुई थीं, जिन के बाल-लाल बुभुक्षा राक्षसी से सताये हुए अस्थिचर्मावशेष होकर तरुमूलों के घरों और द्वारों पर पड़े हुए कहरा कहरा कर प्राण देने के लिये उद्यत थे। ऐसे अभागों की अन्न-वस्त्रादि से सहायता कर ईसाई बनाने के लिये ख़ूब दौड़ धूप करने लगे। मि० कैरी के लिये धर्मोपार्जन का इस से अच्छा और कौन सा अवसर होता ? हिन्दुओं की जातीयता को मिटा कर 'प्रभु ईसामसीह' की मुमुक्षु सेना में भरती कर उन के दह्यमान हृदय में कुछ शान्ति होने लगी। उड़ीसा प्रायः अकालों की जन्मभूमि है। यहाँ मि० कैरी को अपने मिशन में खूब सफलता मिली। (क्रमशः)

पथिक से प्रार्थना

[जगन्नारायणदेव शर्मा, विशारद, साहित्यशास्त्री]

(१)

पथिक ! तेरा पथ है विस्तीर्ण,
न जाना इस में चल कर भूल।
पहुंचने पर पायेगा मान,
चढ़ेगा तेरे सिर पर फूल॥

(२)

तुझे रोकेंगे जो हैं तुच्छ,
और देने आवेंगे कष्ट।
न उन की सुनना कुछ भी बात,
भगाना कहके उन को स्पष्ट॥

(३)

तुझे नाम नहीं किसी रङ्ग,
तुझे है स्वतन्त्रता की भक्ति।
कुटिलता का तुझे न रोग,
जाति की तुझ में अविरल शक्ति॥

(४)

सफलता निश्चय तेरे हाथ,
बना रहना उत्साही धीर।
समय आयेगा जब अनुकूल,
कहायेगा तू सच्चा वीर॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

महात्मा थोरियो

[ले०—श्री० प्रो० छबीलदास जी बी. ए. भूतपूर्व प्रिंसिपल नैशनल कॉलेज लाहौर]

मुझे 'ज्योति' के पाठक तथा पाठिकाओंकी सेवा में आज एक ऐसे उच्चकोटि के महानुभाव का संक्षिप्त जीवन तथा उन की 'विचित्र' विचारप्रणाली रखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है, कि जिन का यश, कीर्ति तथा गौरव संसार के अन्य नररत्न महर्षि सुकरात, कर्मवीर मेजिनी, महर्षि टालस्टाय तथा स्वामी शंकराचार्य की न्याईं जगद्विख्यात है। ३२ करोड़ भारतवासियों के हृदयसम्राट्, अहिंसा तथा निष्क्रिय प्रतिरोध के प्रचारक, प्रेम तथा शान्ति के उपायों से देशों और जातियों को स्वाधीनता के पथप्रदर्शक महात्मा गाँधी जी भी उन को अपना गुरु मानते हैं। भारत के शिक्षित समुदाय में से कदाचित् बहुत ही अल्पसंख्या ने आपके नाम, धाम तथा काम के विषय में सुना वा पढ़ा होगा। आप का शुभ नाम हैनरी डैविड थोरियो था। जिस नाम से आप प्रसिद्ध हैं वह केवल थोरियो हो है।

जिज्ञासाशील पाठकों के मन में कई प्रकार के प्रश्नों का उठना स्वभाविक है। आख़िर यह थोरियो कौन था? कौन सा महान् कार्य इसने कर के संसार को चकित किया? जिससे कि उन का नाम सुकरात, टालस्टाय तथा गाँधी जैसे तपस्वी पुरुषों की पंक्ति में रखा गया है। क्या वह कोई भारी विजेता था? क्या उसने किसी देश वा जातिविशेष की दासता की जंजीरे काट डालीं? क्या उसने धर्म व सत्यसिद्धान्तों की रक्षा के लिये आत्म-बलिदान किया? क्या साहित्य का कोई अलौकिक ग्रन्थ लिख कर, या विज्ञान का कोई आविष्कार कर के उसने नोबल प्राइज़ (पारितोषिकविशेष) प्राप्त किया था? वह किस देश का निवासी था? उसके माता पिता कौन थे? इत्यादि २।

महात्मा थोरियो का जन्म संयुक्त-राज्य-अमेरिका (U. S. A.) की मैसूचोसट्स नामी रियासत के प्रसिद्ध ग्राम कान्कर्ड में जो कि अमेरिका के दो अन्य महापुरुषों (तत्त्ववेत्ता एमर्सन तथा गल्प लेखक हॉथर्न) की भी जन्मभूमि है। थोरियो का जन्म सन् १८१७ ईस्वी में हुआ। स्वाधीनता की घोषणा पश्चात् जनतंत्रता (Democracy) तथा समान अवसर-प्राप्ति (Equality of opportunity) की कृपा से निर्धन कृषकों तथा दस्तकारी करने वाले लोगों के झोंपड़ों में भी महापुरुष जन्म लेने लग गये हैं। अमेरिका के प्रथम राष्ट्रपति वाशिंगटन, अब्राहमलिङ्कन गारफील्ड और बुकरटी वाशिंगटन की तरह थोरियो भी निर्धन माता पिता का पुत्र था। उसका पिता पैंसिलें बना कर निर्वाह किया करता था। थोरियो की जन्मभूमि कान्कर्ड ग्राम पर प्रकृतिदेवी की विशेष कृपा थी। सुन्दर लहलाते शस्यपूर्ण खेत, कभी न सूखने वाले शीतल तथा निर्मल जल के स्रोत तालाब तथा झीलें, कुछ दूरी पर वृक्षों तथा लताओं से शोभायमान नीलवर्ण पर्वतमाला ने अल्पायुबालक थोरियो के कोमल हृदय पर जादू का सा प्रभाव डाला। इस बालक की प्रारम्भिक शिक्षा योगिराज

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

भगवान् कृष्ण की तरह गऊएं चराते हुए प्रकृति-माता की गोद में हुई। प्रकृतिमाता के शिक्षणालय में पढ़ने वालों को वास्तविक शिक्षा मिलती है। वर्तमान काल के विश्वविद्यालय तो लाईन के शब्दों में (Our universities polish pebbles and dim dimonds) मानसिक सत्यानाश कर के (army of *mediooaes*) साधारण भेड़ चाली श्रेणी के लोगों का समूह ही उत्पन्न करते हैं। दर्शन तथा शास्त्रों के रचयिता, उपनिषद्कार ऋषि, गुरु नानक, कबीर इत्यादि ने प्रकृति के विश्वविद्यालय में ही दीक्षा लेकर जगत् को आश्चर्यचकित कर दिया। मरुस्थल अरब में इस्लामधर्म के प्रवर्तक मुहम्मद भी तो वैसे निरक्षर ही थे। पशुचारण तथा प्रकृतिनिरीक्षण के साथ २ यह बच्चा घर पर अक्षर ज्ञान भी प्राप्त करता रहा। उस की जिज्ञासावृत्ति तथा ज्ञान-पिपासा इतनी बढ़ी हुई थी, कि कई २ मील चल कर आस पास के नगरों में होने वाले विद्वत् परिषदों, वादविवादों तथा शास्त्रार्थों को सुनने जाया करता था।

निर्धन होते हुए भी इस ने येन केन प्रकारेण कालिज में उच्चशिक्षाप्राप्ति का प्रबन्ध भी कर लिया, परन्तु कालिज की नियमित पढ़ाई से उस ने उतना लाभ नहीं उठाया जितना अपने कठिन तथा दुस्साध्य स्वाध्याय से। इसी स्वाध्याय की सहायता से उस के सब प्रकार के बन्धन कट गये और स्वतंत्र विचार करने की आदत पड़ गई। स्वतंत्र विचारों के कारण आप का सारा जीवन मां स्वतंत्रता देवी की गोद में व्यतीत हुआ। इसी स्वतंत्रता के कारण आपने आजीवन भीष्मवत् नैष्ठिकब्रह्मचर्यव्रत धारण कर के विवाह के बन्धन में पड़ना उचित नहीं समझा। इसी स्वतंत्रता के स्वाद ने उस को जीवन में बारी २ पेन्सिल बनाने वाला, अध्यापक, लेखक, क्षेत्र वनस्पति-विद्याविशारद, पुस्तक विक्रेता तथा कवि बनाकर अन्त में दार्शनिक तथा उच्च कोटि का महात्मा बना कर सन्तोष किया। वालडन झीलके किनारे तपस्वियों की भाँति एक छोटी सी रमणीक कुटिया बना कर, इस महात्मा ने दो ढाई वर्ष तक एकान्तवास कर अपने अमूल्य जीवन को सद्ग्रन्थावलोकन, प्रकृतिनिरीक्षण तथा सुहावने दृश्यों के दर्शनार्थ भ्रमण करने में लगा कर जीवन रहस्य और वास्तविक सुख तथा शान्ति का उपाय प्राप्त कर के अपने देशवासियों, नहीं २ संसार भर के नरनारियों के कल्याण का पथ दिखादिया। बली काल ने केवल ४५ वर्ष की आयु में ही उन को आ घेरा और अपनी अमल-धवल अमर कीर्ति छोड़ कर महात्मा थोरियो परलोक सिधारे।

थोरियो की मातृभूमि अमेरिका संसार का सब से धनी देश है। इस धनबाहुल्य ने अमेरिका-देशवासियों को लक्ष्मी का पुजारी तथा प्रकृतिवादी बना दिया है। एक साधारण अमेरिका निवासी अपने आस पास भौतिक ऐश्वर्य तथा सुखोपभोग के सामान गगन-चुम्बी प्रासाद तथा कोठियां, मोटरकारें, चमकीले भड़कीले वस्त्रभूषण, खान पान, मद्यमांस के असीम भण्डार इत्यादि देख कर स्वभावतया इन्हीं पदार्थों की प्राप्ति को ही अपने जीवन का लक्ष्य बना लेता है। परन्तु पूंजीवाद की प्रणाली में किसी विरले ही एक प्रतिशत व्यक्ति को अपनी धूर्तता तथा कौशल से सफल मनोरथ होने का अवसर प्राप्त होता है। शेष ९९ प्रतिशत जनता तो धनी लोगों की चौंचलेबाजी को ईर्ष्याभरी दृष्टि से देखते हुए उन के

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

आधीन रह कर दुःख उठाती रहती है। जगद्गुरु थोरियो का हृदय मानवसमाज को केवलसांसारिक भोगों की मृगतृष्णा के पीछे भटकता देख कर बड़ा दुखी होता था। वह सोचता था कि क्या यह अमूल्य मानवजीवन इतना भी गम्भीर नहीं है कि, इसे सारा का सारा पेट पालने की फ़िकर में (रोटी कपड़ा तथा मकान की प्राप्ति में) व्यर्थ खो दिया जावे। करोड़ों नर नारियों ने तो पेट भरना ही "काकोऽपि जीवति चिरंच बलिंच भुंक्ते" के अनुसार अपने जीवन का मुख्योद्देश्य बना रखा है। ऐसे लोगों की दुःखमय तथा शोकजनक अवस्था को देख कर थोरियो ने 'सरल जीवन तथा उच्च विचार' (Plain living and high thinking) की रामबाण ओषधि का अविष्कार किया। भारत के सर्वस्वत्यागी ऋषियों को इस उपाय का लाखों वर्षों से ज्ञान था। पाठक जान कर प्रसन्न होंगे कि थोरियो ने भी भारत वर्ष के ग्रन्थ गीता तथा उपनिषद् इत्यादि का अध्ययन किया था अतः वह भारत का शिष्य था। भारतवासियों को इस बात का अभिमान होना चाहिये और इसी कारण से अपने इस नई दुनियां (America) के शिष्य की शिक्षाओं पर विचार करना चाहिये। उन के सारे जीवन को फ़िलासफी का निचोड़ (Simplicity-and Sincerity) सरलता तथा निष्कपटता में पाया जाता है।

यों तो थोरियो ने शरद्, ग्रीष्म, हेमन्त वसन्त इत्यादि शीर्षक के सुन्दर, प्रभावशाली, गम्भीर विचारों से पूर्ण तथा प्रकृति के गुप्तरहस्योद्घाटन करने वाले कई ग्रन्थ लिखे हैं परन्तु आप के जीवनोद्देश्य पर पूरा प्रकाश डालनेवाला ग्रन्थ Thoreaus walden ही है। यह आपकी आत्म-कथा है। आपने वालडन झील के किनारे दो ढाई वर्ष के एकान्त वास के दिनों में इस की रचना की थी। पाठकों की जिज्ञासापूर्ति के लिये इसी अद्वितीय पुस्तक में से आप के विचार कुछ नमूने के तौर पर दिये जातेहैं।

थोरियो केभिन्न २ विचार

मनुष्य का सब से बड़ा दुर्भाग्य उस की पैतृक सम्पत्ति है। सारा जीवन तो उसी भौतिक जायदाद की रक्षा, वृद्धि तथा हानि की आशंका में नष्ट होगया तो मानसिक तथा आध्यात्मिक उन्नति का समय कब मिला? बहुत से लोग तो स्वर्ग के तङ्ग द्वार में इस लिए प्रवेश नहीं कर सकते क्यों कि उन के शरीर के (आत्मा के भी) साथ भौतिक सम्पत्ति का भारी बोझा बँधा हुआ है।

संसार में यदि एक ओर ऊंचे पहाड़ हैं तो दूसरी ओर गहरी अंधेरी खाइयाँ मौजूद हैं। यदि मनुष्य को स्वनिर्मित भव्य-भवनों पर अभिमान है तो निर्धनों की अन्धेरी कोठरियों पर लज्जा भी तो आनी चाहिये।

मिश्र के अमरकीर्ति स्तूपों (Pyramids) तथा ताजमहल के बनाने वाले मज़दूरों की दैनिक खुराक तो सूखे प्याज़ ही थे, तथा इस में संदेह है कि उन के सिर छिपाने को कुछ वर्गफीट की कोठरी भी थी वा नहीं।

वसन्तागमन के समय पक्षियों का कलरव तथा पुष्पों का खिलना मनुष्य को प्रकृतिमाता के विशाल स्थल पर आनन्द भोगने के लिए आवाहन करते हैं, परन्तु मन्दभाग्य अपने ईंट चूने और पत्थर के सड़े हुए मकान को नहीं छोड़ता।

क्या मनुष्यजीवन का उद्देश्य दुकानदार, किसान, क्लर्क वा जज बनना ही है। बहुत से लोग तो जीवन भर दुकानदार या किसान ही बने रहते हैं, मनुष्य बनने का तो उन्हें अवसर नहीं मिलता।

संसार में अपने पीछे कैसा स्मारक छोड़ना चाहते हो? पत्थर वा संगमरमर के स्तूपों का वा

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मकानों से परन्तु भगवद्गीता जैसा ग्रन्थ अधिक लाभदायक और स्थायी स्मारक है।

९९ प्रतिशत मनुष्य तो रेवड़ की भेड़ बन कर ही सन्तुष्ट रहते हैं। आत्मा की आवाज़ तो प्रत्येक व्यक्ति को नया मार्ग बनाने का अनुरोध करती है, परन्तु पहिले की बनी हुई सड़कों पर चलना सहज है। यही संसारिक दुःख का मूलकारण है। पुरानी बातें पुराने लोगों के लिये छोड़दो, तुम नये काम ही करो। मुझ से बड़े लोगों ने मुझे काम की कोई भी बात नहीं बतलाई। उन लोगों के अपने जीवन बिलकुल असफल और अधूरे रहे हैं।

यदि कोई विद्वान् मुझे समझादे कि छोटी सी पार्णकुटीर की अपेक्षा लाल पुलिस वाले प्रासाद की छतके नीचे सोने से अधिक गाढ़ तथा सुख की निद्रा आती है तो मैं भी एक अच्छा महल प्राप्त करने की बाबत सोचूंगा।

समाचारपत्रों के फ़िजूल समाचारों के पढ़ने तथा समय नष्ट करने वाले पत्रव्यवहार के कारण आधुनिक मनुष्य को कोई गम्भीर विषय के ग्रन्थ पढ़ने का, जीवन की जटिल समस्याओं पर विचार करने का तो समय ही नहीं मिलता। सारे जीवन में मैंने तो केवल दो पत्र लिखे हैं, जिन्हें सचमुच पत्र कहा जा सकता है।

करोड़ों रुपया तथा असीम जन शक्ति का व्यय कर के समुद्र के नीचे सुरंग द्वारा अमेरिका को योरुप से मिलाने का प्रयत्न किया जा रहा है। इस का परिणाम यह होगा कि 'कुमारी युजेन को खाँसी की शिकायत है' जैसी लच्चर ख़बरें ४००० मील की दूरी पर शीघ्र भेजी जा सकेंगी।

प्रायः शिकायत सुनता हूँ कि प्राचीन काल की तरह आजकल महापुरुष उत्पन्न नहीं होते। मेरी सम्मति में तो जीता गदहा मरे सिंह से अच्छा है।

मेरी दृष्टि में हजारों फ्राँस की राज्य क्रान्तियों की अपेक्षा वृक्ष से एक पत्ते का झड़ जाना अधिक महत्वपूर्ण घटना है।

इन विचारों को देख कर साधारण संसारी आदमी चौक उठेंगे और थोरियो को एक 'विचित्र' व्यक्ति पुकारने लगेंगे। असल बात यह है कि 'या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्ति संयमी।' संसार के सारे ही महापुरुषों में विचित्रता पाई जाती है। उन के दिमाग़ में एक विशेष प्रकार की सनक (mania) घुस जाती है। यही सनक कभी कुमार सिद्धार्थ को राज्य के ऐश्वर्य से छुड़ा कर संसार का मुक्तिदाता तथा शांतिदाता बुद्ध बना डालती है, कभी सत्य के जिज्ञासु सुकरात को विषपान करवाती है, कभी ईसा को फांसी पर लटकवाती है, तो कभी मार्कस को संसार से निर्धनता दूर करने की लगन लगा कर दर-दर भटकाती है। कभी लैनिन के हाथ में रक्त-मयी लाल क्रान्ति का झण्डा देकर रूस जैसे अत्याचारपीड़ित तथा पददलित महादेश पर वास्तविक (Liberty, equality and fraternity) स्वाधीनता, समानता तथा भ्रातृभाव का सुखमय राज्य स्थापन कर सकती है। थोरियो के सिर पर भी यही सनक सवार थी। समाज की वर्तमान दशा तथा सभ्यता से असन्तुष्ट हो कर उस ने ऐसे क्रान्तिकारी विचार लोगों के सामने रखे। मेरी सम्मति में प्रकृतिवाद (Materialism) में डूबे हुए पाश्चात्य देशों अमेरिका, फ्रांस तथा इङ्गलैण्ड को तो महर्षि थोरियो के संजीवन संदेश की आवश्यकता है ही, परन्तु मेरे भारतवासी भाई भी इन विचारों से लाभ उठा कर अपने जीवन को सुखी बना सकते हैं। वृद्ध भारतवर्ष भी अपने अध्यात्मवाद तथा जीवन की गम्भीरता की बातों को भूल सा रहा है। अतः भारत के प्राचीन ऋषियों के संदेश को स्मरण कराने के लिए ऐसे महानुभावों की विचार शैली का अध्यन करना ज़रूरी है।

थोरियो कितना बड़ा महापुरुष था यह दिखलाने के लिये दो एक अन्य महापुरुषों की

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सम्मतियाँ उद्धृत कर के लेख को समाप्त किया जाता है। अमेरिका के राष्ट्रपति जार्डन महोदय एक स्थान पर लिखते हैं "I know Mr. Thoreau quite well. He has a way of his own. He did-not care naught about money but if there is a gentleman alive, he is one" अर्थात् मैं महाशय थोरियो से भली भाँति परिचित हूँ। वह बिल्कुल ही स्वतंत्र विचार का पुरुष है उस को धन की रत्ती भर भी परवाह नहीं। यदि संसार में किसीसज्जन के दर्शन करने हों तो वह महाशय थोरियो को देखलें। महर्षि अमर्सन कहते हैं "As free and erect a mind as I have met, was his. His soul was made for the noblest society, he had in a short life exhausted the capabilities of this world; wherever there is knowledge wherever there is virtue, wherever there is beauty, he will find a home." अर्थात् थोरियो का हृदय अत्यन्त स्वतन्त्र और सरल था। प्रकृति ने उस की आत्मा की रचना संसार के कामों के लिये की थी। थोड़ी सी आयु में थोरियो ने जीवन में करने योग्य सब कार्यों को सफलता पूर्वक कर डाला। संसारमें जबतक ज्ञान, विद्या, विचार तथा सुन्दर जीवन की कदर है तब तक थोरियो की कीर्ति घर २ में गाई जावेगी।

नैराश्य

(श्री जगन्नाथ मिश्र "कमल" कविरत्न)

किसके हाथों से लग ढुलका, भरा प्रेम–रस–प्याला।
छिपा हुआ था कौन मौन अँधियारे में मतवाला॥
बैठा था दायें कह देता आओ बायें दब कर।
मैं सचेत हो जाता रखता, आगे पैर सम्हल कर॥
मुझ निर्धन का वह संचित–रस गिरने से बच जाता।
इष्ट–देव के आने पर मैं, भर–भर जाम पिलाता॥
बता, अरे! तू कौन? गिरा प्याला गिरने दे अज्ञानी!
बोल, बोल कुछ बोल, साथ मेरे क्यों की यह नादानी!!
क्षीण छपाकर ज्योति जगी, हाँ, रूप निहारा अब तेरा।
तू तो है नैराश्य यहाँ से लेजा झट अपना डेरा॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मक्खी

The common House-fly or Musca Domestica

[ले०—श्री० डा० राधाकृष्ण जी B. Sc. M. B. B. S.
अध्यक्ष आयुर्वेद महाविद्यालय गुरुकुल काँगड़ी]

मक्खी संबंधी प्रश्न केवल भारतवर्ष में ही नहीं है प्रत्युत संसार के प्रत्येक स्थान पर-शीतकटिबन्ध से उष्णकटिबन्ध तक-लोग इस से दुखी हैं। केवल यही नहीं कि यह मुख, चेहरे या शरीर पर बैठ कर ही बार २ तंग करती है अपितु यह भी निश्चय हो चुका है कि यह नाना रोगों को भी उत्पन्न करती है। सन् १६६६ ई० में सिडेनहम ने तो यह नियम ही लिख दिया था कि जिस ग्रीष्म ऋतु में मक्खियों की संख्या अधिक होती है, उस के पीछे आने वाली शरत् ऋतु में अवश्य कोई-न-कोई रोग फैलता है। लेखक को गुरुकुल का ही पर्याप्त अनुभव है कि कोई वर्ष ही, उत्सव के पीछे रोग विशेषतः टाइफाइड से खाली जाता था। गतवर्ष इस विश्वविद्यालय की रजत-जयन्ती पर बहुत ध्यान रक्खा गया तो जहाँ मक्खियों ने कम सताया वहाँ टाइफाइड का एक भी केस नहीं हुआ। अतः मक्खियाँ रोगों का कारण हैं इस बात का यह ज्वलन्त उदाहरण है।

मक्खी किस प्रकार रोग फैलाती है इस विषय पर सब से पहले हार्वर्ड ने ही प्रकाश डाला है।

मक्खी की रचना

मक्खियों के कई भेद हैं, परन्तु जो मनुष्य की विशेष शत्रु हैं वे मुख्यतः निम्न ५ ही हैं:—

१. The house-fly (musca demostica) यह बहुत संख्या में मिलती है और कुल मक्खियों की ९७ % होती है।

२. The lesser house-fly (Fannia canicularis) साधारण मक्खी से पहले दिखाई देती है तथा उसकी अपेक्षा इस का शरीर छोटा होता है।

३. The blue bottle or blow-fly (Calliphora Vomitoria) यह जहां भी मांस हो पहुंच जाती है और बहुत ढीठ होती है।

४. The green-bottle (Luciliar Caesar) यह सदा सड़ते हुए पदार्थों पर ही रहती है।

५. The striped-fly.

इन मक्खियों के विस्तृत रचना के वर्णन की आवश्यकता नहीं। इसकी आयुर्वेज्ञानिक (medical) दृष्टि से रचना संक्षेप में निम्न है:—

The House fly, the blue bottle तथा the green bottle की रचना लगभग एक जैसी हैं। इन में से किसी के भी काटने के अंग नहीं हैं। इन सबमें एक लम्बी नलकी जैसी रचना (Proboscis) होती है जिसकी सहायता से ये किसी द्रव को चूस सकती हैं। यह बहुत लचकीली तथा मांस निर्मित है जो सब ओर गति कर सकता है तथा लम्बी छोटी भी हो सकती है। इसकी रचना जटिल सी है परन्तु इतनी बात जानने योग्य है कि इस का सिरा फटा हुआ होता है और इस फटाव के बीच में नलकी का छिद्र है। इस छिद्र के आगे ये फटे हुए सिरे ऐसी छलनी सी बना देते हैं जिस से कोई ठोस पदार्थ (जो ·००6 m. m. से छोटा न हो) अन्दर प्रविष्ट नहीं हो सकता।

मक्खी का भोजन द्रव या अर्ध-द्रव होते हैं। जो भोजन द्रव न हो उसे मक्खी अपनी लाला (Saliva) से या पिये हुए द्रव को पुनः बाहिर निकाल कर उस भोजन को नर्म करके अपने में विलीन कर लेती है। यही कारण है कि मक्खी जिस भोजन पर बैठती है वह कुछ तर सा हो जाता है।

भोजन मक्खी के पूर्वआमाशय में पड़ा रहता और मक्खी इसे भर्ती रहती है। जिस समय यह खाने से तृप्त होकर विश्राम करती है तो उस समय भोजन को पूर्व आमाशय से पश्चिमआमाशय में प्रविष्ट कर देती है। १५ मिनिट में भोजन मक्खी की अन्तड़ियों में पहुंच जाता है और एक घंटे में पूर्णतया पच जाता है, परन्तु मक्खी के पूर्व

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

आमाशय में द्रव कई दिनों तक पड़ा रहता है जिस से यह बिना भोजन के कुछ समय व्यतीत कर सकती है। खेल के तौर पर भी मक्खी इस द्रव को बुलबुले के रूप में बाहर अन्दर करती रहती है।

मक्खी की टांगों पर बहुत सूक्ष्म अगणित बाल होते हैं जो पैरों के समीप इतने घने हो जाते हैं कि प्रत्येक पैर पर एक २ प्याला सा बना देते हैं जिस की सहायता से मक्खी जहां कहीं भी बैठती है गिरती नहीं। इस के अतिरिक्त इन बालों के प्यालों के अन्दर एक २ (पैड) या गद्दी सी होती है जिन में से एक लेसदार द्रव निकलता रहता है जिस से किसी स्थान पर मक्खी चिपट भी सकती है।

इस के अतिरिक्त मक्खी के शरीर पर भी बाल होते हैं ये बाल जल से गीले नहीं होते। यदि मक्खी को एक लैंस से देखा जावे तो इस के शरीर, नलकी और विशेषतः बालों पर धूल, विष्ठा, आदि के अणु दिखाई देते हैं, यदि सूक्ष्म-वीक्षक यंत्र से इसके बालों और नलकी को देखें तो इन पर अनेक कृमि भी दिखाई पड़ते हैं।

मक्खी अपना आहार सब स्थानों से ले लेती है वास्तव में कोई भी ऐसा स्थान नहीं जहाँ इसका भोजन नहीं होता। मल, थूक, बलग़म, पस, दूध, सब प्रकार के भोजन, नाक, आंखों की गीद, गोबर इत्यादि सब में से अपना भोजन ले लेती है। यही कारण है कि शौचालय, मूत्रालय, रसोई, गंदे बच्चों के नेत्र, नाक, मीठे, दूध, दुग्धशालाओं हलवाइयों की दूकानों और किसी भी स्थान पर जहाँ इस का आहार हो ये अगणित संख्या में मिलती हैं।

जब यह भोजन से तृप्त हो जाती है तो यह मलत्याग भी बहुत करती है। भोजन करने से १ घंटे के अन्दर २ दस बार मल त्याग करती है। यही कारण है कि जहां मक्खियें बैठी हों अपने पीछे उस स्थान पर छोटे २ काले २ धब्बे छोड़ जाती हैं। श्वेत वस्तु (जैसे पेड़ा, रेवड़ी इत्यादि) या श्वेत स्थान और गंदे बच्चों के चेहरे पर पर्याप्त दिखाई देते हैं, परन्तु अन्य स्थानों (जैसे रोटी) पर भी यह लैंस से दीख जाते हैं।

संक्षेपतया मक्खी की रचना में निम्न बातें विशेष तौर पर स्मरण रखने योग्य हैं:—

१. इस के शरीर पर अनेक बाल।
२. Proboscis (नलकी) का कार्य तथा इस पर गंदगी
३. बूर्वआमाशय से द्रव Regurgitation का स्वभाव।
४. बार २ मल त्याग करने का स्वभाव।
५. सब स्थानों पर भोजन के लिए पहुंच अर्थात् शौचालय से रसोई तथा चेहरे तक।

६. इस के शरीर, प्रोबोसकस तथा बालों पर कृमियों की उपस्थिति। ये कृमि अणुवीक्षणयंत्र से देखे गये थे। परन्तु इस के अतिरिक्त १९०७ में Castellani ने इस बात को कृमि-विज्ञान से भी सिद्ध कर दिया अर्थात् औत्पत्ति माध्यम (culture media) पर उसने मक्खी को रहने दिया तो देखा कि माध्यम को incubate करने पर कई प्रकार के कृमियों की श्रेणियाँ (Colonies) बन गई।

७. इस के मल तथा regurgitated fliud में भी कई प्रकार के कृमि होते हैं इसे भी कृमि-विज्ञान के द्वारा Firth ने १९०२ में सिद्ध कर दिया। यह भी देखा गया है कि जो कृमि शरीर के बाहर रहते हैं वे शरीर के सूखने से शीघ्र ही मर जाते हैं। परन्तु मक्खी की अंतड़ियों में कृमि कई दिनों तक जीवित रह सकते हैं। यही कारण है कि मक्खी के मल तथा वमन में भी कई दिनों तक कृमि निकलते रहते हैं। १९१० में ग्राहमस्मिथ ने मक्खियों को भिन्न २ कृमियों पर पाल कर देखा कि उनके अन्दर कितने दिन तक कृमि जीवित रह सकते हैं—उनने निम्न तालिका तय्यार की थी।

कृमि	टांगे	पर	शिर	Crop	आँत	मल
B. Typhosus	—	—	—	—	६ दिन	२ दिन
B. Enteridis	७ दिन	—	७ दिन	८ दिन	७ दिन	—
B. Tuberculosis(pure)	—	—	—	३ ”	१६ ”	१३ ”
” (Sputum)	—	—	—	—	७ ”	५ ”
Yeast	२½ घंटे	२½ घंटे	२½ घंटे	२ दिन	३ ”	२ ”
B. Diphth eriae	५ ”	५ ”	५ दिन	७ ”	५ ”	२ ”
B. Anthracis	२ दिन	—	” ४	५ ”	३ ”	२ ”
B. Cholera	३० घंटे	५ घंटे	५ घंटे	२ ”	२ ”	३० घन्टे

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

१९११ में Ledingham ने यह भी परीक्षण किया कि निम्न कृमि यदि मक्खी के बच्चे (larva) में प्रविष्ट किये जावें तो वे मक्खी बनने पर उस की अंतड़ियों में मिलेंगे:—

1. B. Pyocyaneus.
2. B. Typhosus.
3. B. Anthracis

इस तालिका पर यह शंका की जा सकती है कि औत्पत्तिक माध्यम पर उत्पन्न किये गये कृमि तीव्र होने के कारण कई दिनों तक जीवित तो अवश्य रह सकते हैं परन्तु प्रकृति में जो अवस्थाएं हैं उन में ऐसा नहीं होता अर्थात् कृमि शीघ्र ही मर जाते हैं। परन्तु निम्न परीक्षकों (observers) ने सिद्ध कर दिया है कि जब मक्खियों को उन की स्वाभाविक अवस्था में रोगियों के मल पर से पकड़ा गया तो भी लगभग यही दिन आते थे।

1. Tsuzuki—Cholera vibrios
2. Faichnie—B. Typhosis.
3. Buchanan—B. Tuberculosis
4. Cao—B. anthracis.
5. Yersin & Hunter.-B. Pestis (Plague).
6. Howe—Koch—weeles bacillus of opthalmia.
7. Axenfeld—Gonococci.

यह भी देखा गया है कि ये कृमि जीवित मक्खी के शरीर में ही नहीं अपितु मृत मक्खी के शरीर में भी मिलते हैं।

Life History of the fly.
(मक्खी के जीवन का इतिवृत्त)

मक्खी अपने अंडे उसी स्थान पर देती है जहाँ इस के लार्वी (larvae) के लिये पर्याप्त भोजन मिल सके। ये अंडे देने के समय शीघ्र ही उन स्थानों पर पहुंचती है जहां ऐन्द्रियिक पदार्थ गल-सड़ रहे हों जैसे गोबर का ढेर, विशेषतः घोड़े की लीद, रूड़ी, गलता हुआ फूस, पुराने रद्दी कागज़, गले-सड़े कपड़े, दुर्गंध युक्त मिट्टी के अन्दर, पुराने दरवाजों की दरारें, पशुओं के जख़्म, इत्यादि। यही कारण है कि गंदे तबेले, गोशाला, रसोई, शौचालय, मूत्रालय, घूरों इत्यादि स्थानों के पास से निकल जावें तो मक्खियों के झुण्ड के झुण्ड उड़ पड़ते हैं।

मक्खी अपने अण्डे छिपा कर लगभग ४-६ इंच नीचे देती है।

एक समय एक मक्खी १०० से १४० अण्डे देती है जो सब एक ही स्थान पर इकट्ठे गुच्छे के रूप में पड़े रहते हैं। प्रत्येक मक्खी ऐसे २, ३ या ४ समूह दे देती है।

प्रत्येक अण्डा १॥—२ m. m. लम्बा, ·३ से ·५ m. m. चौड़ा गोल सा होता है जिसका कि एक सिरा नोकीला श्वेत होता है। यदि भोजन और गर्मी पर्याप्त हों तो ८ से १२ घण्टे में यह पक जाता है, परन्तु भोजन के अभाव में या कम ताप परिमाण में (Low temperature) ३ या ४ दिन तक भी नहीं पकता।

अंडा पक कर एक २ m. m. लम्बा, फुर्तीला लार्वा बन जाता है। जिसके दोनों सिरे नोकीले होते हैं। यह श्वेत गोल २ छल्लों का समूह दिखाई देता है। इसकी टांगे नहीं होतीं। यह वानस्पतिक भोजन ही खाता है, जान्तविक पदार्थों में से केवल मनुष्य का मल ही खा सकता है। इस की वृद्धि के लिये गर्मी की आवश्यकता होती है। गोबर या मल के ढेर पर जब और गोबर या मल डाला जाता है उससे इस के लिए गर्मी का प्रबन्ध पर्याप्त हो जाता है। अनुकूल परिस्थितियों में लार्वा ४ या ५ दिन पीछे अपनी इस अवस्था को समाप्त करता है परन्तु प्रतिकूल परिस्थितियों में इसे ६ से ८ सप्ताह तक लग जाते हैं।

४ या ५ दिन के पीछे लार्वा कठोर और छोटा हो जाता है और प्यूपा (Pupa) बन जाता है जो ६ से ८ m.m. लम्बा तथा पहिले पीले रंग का तदन्तर लाल और अन्त में काले रंग का होजाता है। यदि भोजन और उष्णता पर्याप्त हो तो बड़ा हो जाता है अन्यथा छोटा ही रहता है। प्यूपा सैंकड़ों की संख्या में इकट्ठे मिल कर रहते हैं।

अनुकूल परिस्थितियों में ३ से ७ दिन और प्रतिकूल परिस्थितियों में १४ से २८ दिन के पीछे प्यूपा का आवरण फट जाता है और अन्दर से मक्खी निकल आती है। इस के सिर पर एक थैली भी होती है जिसकी सहायता से यह गोबर या राख में से मार्ग बनाती हुई ढेर के पृष्ठ (Surface) के समीप आ जाती है। वहाँ तक पहुंचते २ इसके पर निकल आते हैं और उड़ जाती है।

इस प्रकार अंडे से पूर्ण मक्खी के बनने में १० से १४ दिन तक लगते हैं परन्तु प्रतिकूल परिस्थितियों में कई सप्ताह तक लग जाते हैं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मक्खी बनने के १० से १४ दिन पीछे यह पुनः अंडे देने योग्य हो जाती है। संयोग से ४ दिन पीछे अण्डे दे देती है। एक मक्खी ६ मास तक अण्डे देती रहती है। और इस अन्तर में प्रत्येक मक्खी ७ बार अण्डे देती है। हावर्ड का विचार है कि एक मक्खी एक ऋतु में कुल ५, ५९८, ७२०, ०००, ०००, मक्खियें उत्पन्न कर छोड़ती है।

मक्खी अपने अंडे गंदे बालकों के नाक में भी देती है। जिस से maggots in the nose का रोग हो जाता है। इस से रोगी को नाकमें से रक्तस्राव, शिरदर्द और छींकने की बीमारी हो जाती है। नाक में व्रण तथा सडाँद (necrosis) होजाती है और अन्त में मस्तिष्कावरण शोथ (Meningitis) से मृत्यु भी हो जाती है।

अण्डे खाये जावें तो अंतड़ियों में भी Maggots हो जाते हैं जिस से वमन और अतिसार के अतिरिक्त मल में भीMaggots निकलते हैं।

ऊपर के वर्णन से निम्न बातें पूर्णतया स्पष्ट हो गई हैं कि:—

१. मक्खियाँ अपने प्रोबोसकस, टांगों तथा अंतड़ियों में पर्याप्त कृमि धारण करती हैं।

२. यह कृमि रोग जनक (Pathogenic) होते हैं।

३. अपने स्वभाव के कारण (बार २ मल त्याग, वमन, सर्व व्यापकता, हर प्रकार की वस्तु पर बैठ जाना, और मल में से भी भोजन ग्रहण कर लेना) तथा अपने जीवन-इतिवृत्त के कारण और अगणित संख्या में उत्पत्ति के कारण कृमियों को सब स्थलों पर पहुंचा सकती हैं अर्थात् मक्खी रोगों की वाहक (Carrier) है।

अतः निम्न प्रश्न भी विचारणीय हैं कि:—

१. मक्खियें किन २ स्थानों से कृमि लेती हैं और ये कृमि कौन २ हैं ?

२. मक्खियाँ इन कृमियों को किन २ स्थानों पर ले जाती हैं और क्या २ रोग उत्पन्न करती हैं ?

मक्खियें वैसे तो जहाँ जाती हैं वहीं के कृमियों की वाहक बनजाती हैं परन्तु निम्न स्थान और वस्तुएँ उल्लेखनीय हैं:—

I विष्ठा

वैसे तो विष्ठा से सबको घृणा है। साधारणतया इस घृणा का कारण विष्ठा संबन्धी स्वाभाविक घृणा तथा इस की दुर्गंध हैं। परन्तु विज्ञान ने सिद्ध कर दिया है कि मल वास्तव में घृणित वस्तु ही है क्योंकि इस में रोग जनक (Pathogenic germs) कृमि उपस्थित रहते हैं। यही नहीं कि कृमि रोगीव्यक्तियों के मल में ही होते हैं प्रत्युत कई स्वस्थ व्यक्तियों के मल में भी रोग जनक कृमि होते हैं विशेषतः टाईफाइड का कृमि। ऐसे व्यक्तियों को वाहक (Carrier) कहते हैं।

विष्ठा में निम्न मुख्य कृमि मिलते हैं:—

१. Typhoid bacilli जो टाइफाइड रोग उत्पन्न करते हैं। इस कृमि के वाहक प्रायः वे लोग होते हैं जिन को पहले कभी टाइफाइड हो चुका होता है अतः ये टाइफाइड वाहक जाति के लिये बहुत हानिकर हैं; विशेषतः पाचक जिनका कि काम भोजन संबन्धी भी हो।

ये कृमि मल तथा मूत्र में अगणित संख्या में मिलते हैं और इन की वृद्धि बड़ी शीघ्रता से होती है अर्थात् एक कृमि कुछ ही घंटों में हजारों कृमि उत्पन्न कर देता है।

मल से ये कृमि मक्खियों द्वारा मनुष्य के भोजन तक सुगमता से पहुंच जाते हैं परन्तु दूध में विशेषतौर पर वृद्धि करते हैं। क्योंकि इन कृमियों का कोई विशेष स्वाद और गंध नहीं होता इस लिये भोजन, दूध या जल आदि के गंध और स्वाद में भी कोई परिवर्तन नहीं होता। जिससे उनमें कृमि का सन्देह भी नहीं होता है।

मक्खियें टाइफाइड रोग की फैलाने वाली होती हैं इसके निम्न मुख्य उदाहरण हैं:—

क. गुरुकुल में प्रत्येक वार्षिकोत्सव पर मक्खियों की संख्या इतनी अधिक हो जाती थी कि सब परेशान हो थे, तथा उत्सव के पीछे Typhoid के Cases भी जान आफ़त में ले आते थे। परन्तु गतवर्ष रजत-जयन्ती पर मल नाश का पर्याप्त प्रबन्ध होने से टाइफाइड का एक भी केस नहीं हुआ।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ख. १८९८ में स्पेन-अमेरिका युद्ध में जो टाइफाइड रोग फैला उसके कारण Reed तथा Vaughan के अनुसार मक्खियें ही थीं। क्योंकि जो छोलदारियां औषधालय तथा मूत्रालयों के पास थीं उन स्थानों से मक्खियां पर्याप्त उड़ कर आती थीं। इन छोलदारियों में टाइफाइड के रोगी भी अधिक थे तथा जो स्थान शौचालय से दूर थे वहां टाइफाइड भी कम था।

ग. दक्षिण अफ्रीका के युद्ध में भी यही अवस्था थी। उस समय फर्थ ने यह परीक्षण किया कि जो मक्खियें शौचालय से आती थीं उन की टांगों पर की वस्तु से Cultures तय्यार किये तो वे टाइफाइड कृमि के पाये गये।

अतः उपरोक्त उदाहरणों से सर्वथा सिद्ध होता है कि टाइफाइड कृमियों की एक वाहक मक्खी भी है।

2. Dysentery germs.

3. Asiatic cholera.

ये दोनों कृमि भी मल में मिलते हैं और इन के वाहकों में से मक्खियें प्रसिद्ध हैं।

Dysentery germs के सम्बन्ध में तो Bahr ने फ़िजी द्वीप में सिद्ध कर दिया है कि जब मक्खियों की ऋतु होती है तभी Dysentery फैलती है।

हैजे में मक्खियों के वाहक होने के संबंध में ग्रेग (Greig) का कथन है कि पुरी में—

During the epidemic in July and August 1812, flies were extremely abundant, amounting almost to a plague. Bacteriological examination of the flies showed that cholera vibrios present in the external appen dages, and was also in the contents of the alimentary tracts, demonstrating that the fly was the chandel by which the virus was being conveyed from the infected to the uninfected."

हैजे के संबंध में १९२७ के कुम्भ से बढ़ कर अच्छा उदाहरण और क्या मिल सकता है। जब मल को दबाने का पूर्ण प्रबन्ध किया गया और मक्खियों की वृद्धि को भी रोका गया तो कुम्भ पर हरिद्वार में तथा कुम्भ के पीछे देश में हैजे के बहुत ही कम केस हुए। पूर्व के कुम्भ के मेलों के संबंध में तो यह प्रसिद्ध हो ही चुका था कि कुम्भ में हरिद्वार सारे संसार के हैजे का घर बन जाता है जैसा कि ओस्लर (Osler) ने कहा है:- 'Cholera is an endemic disease in India.' सदरलैंड (Sutherland) के विचार में 'India is the home of cholera'.

4. Epidemic diarrhoea— यह वह रोग है जिस से बालक पर्याप्त संख्या में मर जाते हैं। अमेरिका में १८९,८६५ बालकों की मृत्यु में से ५२, २१३ मृत्युयें केवल इसी रोग से हुईं। ग्राहम स्मिथ ने एक गणना तय्यार की है जिस से पता चलता है कि Epidemic diarrhoea भी उन्हीं दिनों में होता है जिन दिनों कि मक्खियों की संख्या बढ़ी हुई होती है।

5. Tuberculosis— फुफ्फुस के अतिरिक्त अंतड़ियों का भी क्षयरोग हो जाता है विशेषतः जब कि रोगी उगले हुए बल्गम को पुनः खा जाता हो। इससे मल में पर्याप्त क्षय रोग के कृमि आ जाते हैं।

संक्षेपतया मल से निम्न रोग मक्खियों द्वारा फैलते हैं—

1. Typhoid
2. Dysentery
3. Cholera
4. Epidemic diarrhoea
5. Tuberculosis

परन्तु स्मरण रहे कि मक्खियाँ कृमियों द्वारा ही रोग नहीं फैलातीं अपितु मक्खियें विष्टा को भी ले जाती हैं जो कि भोजन पर लग जाती है। दूध या जल में मिल जाती है अथवा सीधा चेहरे या आंखों पर लग जाती है। भोजन तथा दूध आदि के साथ विष्टा भी खायी जाती है जिससे एक विशेष गले का रोग हो जाता है जिसे गल-ग्रन्थि-वृद्धि या Goitre कहते हैं। विष्टा ही Goitre का कारण है इसे Major Mccarison ने पूर्णतया सिद्ध कर दिया है। उस ने जब चूहों को मल खिलाया तो उन्हें Goitre हो गया। मल के अन्तः सूची वेध से भी Goitre हो गया।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

II. बलग़म (Expectoration.)

दूसरी प्रसिद्ध वस्तु जिसमें से मक्खी कृमि ले जाती है थूक या बलग़म है। इस से निम्न रोग फैलते हैं:—

१. Tuberculosis वैसे तो मक्खियें हर प्रकार की बलग़म पर बैठती हैं परन्तु क्षय-रोगी के थूक पर बैठने की उनकी विशेष प्रवृत्ति होती है। क्षय रोग के कृमि केवल शरीर पर ही नहीं लगते अपितु मक्खी के मल द्वारा भी निकलते रहते हैं जिस से मक्खी जिस भोजन पर बैठती है उसे भ्रष्ट कर देती है। क्षय रोग के विस्तार में मक्खी का भी भाग है इसे सब से पहले Spillman और Haushalter ने सिद्ध किया है।

यह कल्पना की गई है कि क्षय-रोगी २० दिन में अपनी बलग़म द्वारा ४ अरब कृमि निकालता है। भारतवर्ष में तो जो कोई जहाँ चाहे बिना किसी सामाजिक दंड के बलग़म को थूक सकता है। दीवारें की दीवारें बलग़म से रंगी जाती हैं जिन पर मक्खियां अगणित संख्या में भिन-भिनाती रहती हैं।

ये मक्खियें प्रत्येक स्थान पर कृमियों को फैलाती हैं जैसे भोजन, दूध (दूध में कृमियों की वृद्धि विशेषतः अधिक होती है) आदि में। मक्खियें सीधी चेहरे पर भी आ बैठती हैं, विशेषतः भारतीय बालकों के—जिन के मुख के अन्दर और बाहर बिना रोक टोक मक्खियां घूमती फिरती हैं। हलवाइयों के खुले सौदे पर जो मक्खियें बैठती हैं वे खाद्य पदार्थों को दूषित कर देती हैं। मक्खी की विष्ठा का एक धब्बा रोग उत्पन्न करने के लिये पर्याप्त होता है। इस से यही नहीं कि दूषित भोजन खाने से अन्तड़ियों का क्षयरोग हो जाता है अपितु यदि खुले जख़्म पर मक्खियाँ क्षयरोग के कृमि ले जावें तो वह जख़्म Tuberculous ulcer में परिणित हो जाता है। इसी प्रकार Tuberculous eye sore तथा Tuberculous rhinitis हो सकते हैं। कभी २ त्वचा के आक्रांत होने से Tuberculous skin disease भी हो जाती हैं।

२. Diphtheria— यह एक गले, नाक और स्वरयन्त्र का रोग है जिस में झिल्ली सी बन जाती है। इस झिल्ली में इस रोग के कृमि होते हैं। यह एक घातक रोग है। इस झिल्ली के थूकने पर मक्खियाँ कृमि को स्वस्थ व्यक्तियों के नाक, गले इत्यादि तक पहुंचा देती हैं।

३. साधारण ज़ुकाम कभी २ मक्खियों द्वारा फैलता है विशेषतः जब कि नाक साफ़ कर के खुला फेंक दिया जावे। मक्खियें उस पर बैठती हैं फिर उनका वाहक बनना कठिन नहीं।

III पूय (Pus)

पूय को खुला फैंकने की दुष्ट प्रथा भारतवर्ष में ही है, यही कारण है कि भारतवर्ष के चिकित्सालयों के पास मक्खियाँ उड़ती फिरती हैं, जर्राह तो इस काम में विशेषतया लापरवाह हैं। पस या खुले जख़्मों से इतना ही नहीं कि रोग फैलता है अपितु साधारण जख़्म भयङ्कर जख़्मों में परिणित हो जाते हैं।

मक्खियों द्वारा निम्न मुख्य रोग फैलते हैं:—

1. Boils Etc.
2. Eczema.
3. Leprosy.

IV. नेत्र-मल (Eye discharges.)

नेत्र स्राव मक्खियों को प्रिय है। यह इस बात से पता चलता है कि नेत्र-रोगों में मक्खियें कितनी नेत्रों पर बैठती हैं। बालक तो मक्खियों से विशेषतया तंग होते हैं क्योंकि वे इन को हटा भी नहीं सकते। तंग आ आ कर बिचारे गंदे बालकों को ऐसा अभ्यास सा पड़ जाता है कि मक्खियों के आँखों पर बैठने की परवाह तक नहीं करते। यही कारण है कि जहां लोग मैले रहते हों तथा मक्खियाँ अधिक संख्या में हों वहाँ नेत्र-रोग भी अधिक होते हैं, विशेषतः Ophthalmia और Trichoma. हावर्ड का विचार है कि जब मक्खियें बढ़ती हैं तो आँखोंकी बीमारी के केस भी अधिक हो जाते हैं। गुरुकुल का उदाहरण भी इसे पुष्ट करता है। पिछले वर्षों में Ophthalmia (नेत्र रोग) के Cases (रोगियों) ने तंग किया हुआ था। जो केस भी हुए कई २ दिनों तक चले। परन्तु इस वर्ष रजत-जयन्ती पर मक्खियों का प्रबन्ध हो जाने से Ophthalmia के बहुत कम केस हुए और जो हुए भी वे शीघ्र ही स्वस्थ हो गए।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जिन देशों में मक्खियाँ कम हैं वहाँ नेत्र रोग भी बहुत ही कम होते हैं।

यदि केवल Ophthalmia ही होता तो इतना भय न होता। Trachoma जैसा चिरस्थायी रोग वास्तव में जाति के लिये हानिकारक है। यदि दुर्भाग्य से किसी को Gonorrhoeal ophthalmia हो और उसके नेत्रों पर से मक्खियाँ उड़ कर दूसरों के नेत्रों पर बैठें तो वास्तव में एक असह्य रोग हो जाता है जो प्रायः नेत्र नष्ट या अंधा कर के ही छोड़ता है।

इस से स्पष्ट है कि एक नन्ही सी मक्खी कितनी आफ़तों की परकाला है। इस का निम्न चक्र से पता चल जाता है:—

१. Surgeon general, American Health Buraeu की रिपोर्ट है कि अमेरिका में जिन स्थानों की इस उद्देश्य से Sanitation ठीक की गई कि वहाँ मक्खियाँ न रहें वहाँ रोग भी कम हो गए:—

Disease	Cleand up area	Filthy area
Total sickness	110	165
Non-communicable	36	40
Communicable	74	125
Fly-borne diseases	22	65

उन स्थानों में सब प्रकार के रोग कम हो गए परन्तु Communicable रोग ३ हट गए और Fly-borne केवल $\frac{1}{3}$ रह गए।

२. इसी प्रकार एक और स्थान जो मक्खी-रहित किया गया वहाँ पहले ५ वर्ष से कम आयु के बालक Epidemic diarrhoea से ९८४ दिन बीमार रहे। परन्तु मक्खी-रहित होने पर वहाँ बालक केवल २७३ दिन बीमार हुए।

३. एक और स्थान में देखा गया कि मक्खी-रहित करने से पूर्व बालक इतने निर्बल थे कि माताओंको उन्हें पर्याप्त समय तक विशेष पालन (Nurse) करना पड़ता था। औसत अवधि प्रति बालक ३ वर्ष थी परन्तु मक्खी-रहित होने के पीछे औसत अवधि प्रति बालक १ वर्ष से भी कम थी अर्थात् यही नहीं कि मक्खी-रहित होने से केवल बालकों को ही लाभ पहुंचा और वे स्वस्थ हो गए प्रत्युत माताएँ भी देर तक Nursing करने तथा तदनन्तर निर्बल होने से बच गईं।

अतः यह स्पष्ट है कि किसी स्थान को मक्खी-रहित करने से यही नहीं कि:—

१. Sanitation अच्छी हो जाती है क्यूंकि मक्खी-रहित करना और Sanitation एक साथ किये जाते हैं।

२. वहां बालक, माताएं और अन्य व्यक्ति स्वस्थ हो जाते हैं तथा

३. कई रोगों से बचने से धन का व्यय भी चिकित्सा में व्यर्थ नहीं जाता। अर्थात् आर्थिक दृष्टि से भी लाभकर है।

किसी स्थान को मक्खी रहित करने के उपाय

उपाय करने से पूर्व यह बात आवश्यक तथा स्मरणीय है कि जब तक एक स्थान पर रहने वाले सब मिल कर यत्न न करें किसी एक व्यक्ति का यत्न निष्फल जाता है क्यूंकि आप लाख उपाय करें यदि आप के पड़ौसी के कारण मक्खियों का तांता बन्ध जावे तो आप लाचार और बेबस हो जावेंगे ऐसे व्यापी जीव से लड़ाई कोई अकेला व्यक्ति नहीं कर सकता प्रत्युत समाज समूह ही का काम है।

संक्षेप से उपाय दो प्रकार के हैं:—

I. मक्खी संबंधी अर्थात् Prevention and control of the flies.

१. मक्खियों की उत्पत्ति को रोकना

२. मक्खियों को मारना

II. मक्खियों को अपने समीप वा अपनी खाद्य वस्तुओं के समीप न आने देना।

१. कमरों, रसोई, गोशाला इत्यादि को सुरक्षित रखना।

२. खाद्य पदार्थों को सुरक्षित रखना विशेषतः भोजन, दूध, इत्यादि

III. जिन स्थानों से मक्खियें कृमि ला सकती हैं उन का प्रबन्ध जैसे—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

१. मल मूत्र त्याग स्थान
२. बलग़म निष्ठीवन
३. पूय तथा अन्य Medical स्राव
४. मृत शरीर

I. मक्खी सम्बन्धी उपाय

ग्राहम-स्मिथ ने सच कहा है कि 'There is no virtue in the house-fly, and there is no reason why it should continue to exist, and its death knell ibeing sounded wherever communities care for the health of individuals'.

लॉर्ड एलेनबरी का कथन है कि 'Far from looking upon them as dipterous angels dancing attendance on Hygeine, regard them rather in the light of winged sponges spreading hither and thither tocarry out the foul behests of contagion'.

अतः अब यह प्रश्न नहीं रहा कि मक्खियों का मारना या उन की उत्पत्ति रोकना हिंसा है या अहिंसा प्रत्युत अब प्रश्न यह है कि मक्खियों की उत्पत्ति को कैसे रोका जावे। इसमें कोई भी सन्देह नहीं कि उत्पत्ति रोकने का सब से सुगम और अच्छा उपाय यह है कि उनके पलने तथा वृद्धि के स्थानों को सर्वथा नष्ट कर दिया जावे। मुख्य स्थान गोबर, गंदगी के ढेर तथा गोशाला और अस्तबल हैं।

गोबर

गोशाला, अस्तबल या जहाँ भी गोबर हो वहाँ से इसे अवश्य ही शीघ्र हटा लेना चाहिये। इसके संबंध में काश्तकारों को एक आपत्ति होती है कि क्यूंकि गोबर से उत्तम खाद बनता है अतः इसे नष्ट न करना चाहिये। सत्य है, परन्तु इसका यह अभिप्राय नहीं कि घर के समीप, या गोशाला, अस्तबल के पीछे इनके खुले ढेर लगा दिये जावें। इससे यही नहीं कि मक्खियों को उत्पत्ति-स्थान मिल जाता है। प्रत्युत वर्षा से गोबर घुल २ कर समीप के कूप में जाकर जल को ख़राब कर देता है। कृषि की दृष्टि से गोबर पर वर्षा बहुत ही हानिकारक है क्यूंकि इससे नत्रजनीय तत्त्व बह जाते हैं और शेष नत्रजन-रहित ऐन्द्रियिक पदार्थ ही रह जाता है। गोबर के गीले होने से सड़ांद भी आती है अतः सब से उत्तम यही है कि इसे गढ़ों में गाड़ कर ऊपर छत डाल दी जावे। छत से वर्षा रुक जावेगी और गोबर गीला न होगा। दबाने से कुछ वायु-रहित होने से नत्रजन नष्ट न होगी। सब से बढ़ कर मक्खियों को उत्पत्ति करने का स्थान न मिलेगा। जब आवश्यकता हो तो इस गढ़े में से गोबर निकाल कर खाद के काम लाया जा सकता है।

गंदगी के ढेर

इन्हें ज्वालक यन्त्रों (Incinerator) में जला देना चाहिये। इससे जहाँ मक्खियों का वृद्धि स्थान न होगा वहाँ जली हुई गन्दगी तथा सीमेंट मिलकर पक्के सीमेंट का काम देती है। गन्दगी को एकत्रित करने के लिये सञ्जायक (Dust bins) हों जिनमें से गन्दगी प्रतिदिन निकाल लेनी चाहिये।

गोशाला और अस्तबल

भारतवर्ष में जितनी दुर्दशा इनकी है वैसी किसी की नहीं। गन्दगी गोबर और लीद से दुर्गंध युक्त स्थान में जब मनुष्यों का ही श्वास घुटने लगता हो तो वहां पशु बिचारे कैसे स्वस्थ और प्रसन्नचित रह सकते हैं। वास्तव में गोशाला मच्छर और मक्खियों का उत्तम निवास स्थान है। यह पक्के, हवादार और प्रकाशयुक्त होने चाहियें। इनका फ़र्श पक्का हो जिसे प्रतिदिन धो कर साफ करना चाहिये। धोवन का पानी आच्छादित नालियों या सुरक्षित भरे हुए घड़ों में जाना चाहिये।

I. 2. मक्खियों को मारना

यदि आवश्यकता हो और थोड़ी-सी ही मक्खियें हों तो

a. Fly Flappr से मारें या

b. Fly paper द्वारा मारें परन्तु उक्त Fly paper non poisonous होना चाहिये या गंदाबरोज़ा २ भाग अलसी का तेल १ भाग उबाल कर काग़ज पर मल दें। या

c. Fly trap में पकड़ लें।

एक खुले मुंह की बोतल पर टीन या काग़ज़ पीक की न्याई बना कर रख दें, बोतल में केला डाल दें। मक्खियें फँस जावेंगी।

हर हालत में मक्खियों को मार कर जला देना चाहिये क्यूंकि मृत-मक्खियों के शरीर में भी कृमि होते हैं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

d. स्मरण रहे कि मक्खियों को प्रातः काल बहुत प्यास लगती है। यदि उस समय पानी या दूध आदि द्रव न हो तो जो भी द्रव होगा पी लेंगी इस बात का लाभ उठाने के लिये घर में कोई खुला द्रव न रखें। प्रातः किसी उथली थाली में ५० % फोर्मलिन को १५ गुने जल में घोल बना कर रख दें। मक्खी यही द्रव पीवेगी और थोड़ी दूर पर जा कर मर जावेगी। इस द्रव को स्वादु बनाने के लिये इस में थोड़ी खांड और थोड़ा सा दूध मिला दें। मृत मक्खी को जला दें।

e. आधा चम्मच काली मिर्च का चूर्ण लें और इसमें १ चम्मच बूरा तथा १ चम्मच मलाई मिला दें। अच्छी प्रकार मिला कर थाली में डाल कमरे में रख दें।

f. सब्ज़ चाय उबली हुई को ठंडा कर खाँड में मिला कर थालीमें रख दें। मक्खियें इस से बहुत आकर्षित होती हैं औरइस में मर जाती हैं।

g. यदि एक गर्म लोहे के टुकड़े पर २० बूंद कार्बोलिक एसिड डाल दें तो उसकी वाष्प से या तो मक्खियें मर जावेंगी या कमरे से बाहर भाग जावेंगी।

h. स्मरण रहे कि मक्खियें अपने pupa सहित सरदियों में प्रायः मर जाती हैं परन्तु जिन स्थानों में गर्मी हो वहाँ मक्खियें सर्दी भर छिपी रहती हैं और ग्रीष्म ऋतु के आने पर पुनः बढ़ जाती हैं। यदि इन गर्म स्थानों को ही न रहने दिया जावे और सर्दियों में बची-खुची मक्खियों को मार दिया जावे तो फिर मक्खियें बहुत न बढ़ेंगी। कमरों में वही स्थान गर्म रहते हैं जहाँ वायु का प्रवेश न हो या कमरों की दीवारों या दरवाजों के दराड़ों में। यह दराड़ें बन्द कर देनी चाहियें।

२. जिन स्थानों से मक्खियाँ कृमि लाती हैं उन का प्रबन्ध

मल-मूत्र

मल—मूत्र मक्खियों के लिए एक आवश्यक पदार्थ है क्योंकि जहाँ इस से मक्खियों को पर्याप्त भोजन मिलता है वहाँ पर मल में मक्खियाँ बड़ी प्रसन्नता से उत्पत्तिकरती हैं। वास्तव में मल मक्खियों की एक भाती वस्तु है। परन्तु हमारे लिये हानिकारक है क्यों कि:—

१. मल में मनुष्य के आन्त्र कृमि बहुत होते हैं विशेषतः typhoid, dysentery, cholera, diorrhoea इत्यादि के तथा मल से मक्खी उड़कर मल से लत-पत हमारे भोजन, दूध, चेहरे, इत्यादि पर आ बैठती है अतः मनुष्य के लिये एक भयंकर परिणाम उत्पन्न कर देती है। मक्खियों संबन्धी समस्या में मल का उचित प्रबन्ध एक आवश्यक भाग है।

मल का तो होना अनिवार्य ही है अतः यही कर सकते हैं कि मल को मक्खियों से सुरक्षित रखा जावे और यदि मल को शीघ्र नष्ट न कर सकें तो हानि रहित कर देवें।

यह स्मरण रक्खें कि प्रकृति स्वतः मल को नष्ट करती रहती है। हम प्रकृति के कार्य को शीघ्र करा सकते हैं। प्रकृति के मुख्य एजेण्टस्

१. सूक्ष्म पौदे और जीवाणु, जो धरती के ऊपर २ फुट तक गहराई में रहते हैं।
२. सूय की किरणें
३. धरती तथा
४. जल

सूक्ष्म पौदे और जीवाणु मल को अनैन्द्रियिक पदार्थों में परिणित कर देते हैं जो वनस्पति का भोजन बन जाते हैं। सूर्य की किरणों का मल के कृमियों पर सीधा प्रभाव है। मट्टी और जल मल को हल्का कर देती हैं जल में घुला हुवा मल फैल जाता है परन्तु मट्टी से एक ही स्थान पर पड़ा और छिपा रहता है। अतः मल त्याग करते समय निम्न बातों का ध्यान अवश्य रखना चाहिए:—

१. मल त्याग घरों से दूर हो।
२. मल त्याग ऐसे स्थान पर किया जावे जहाँ इस पर धूप सीधी पड़े।
३. इस पर मिट्टी डाल दें ताकि मिट्टी इसे प्रभाव-रहित कर दे और मक्खियों से सुरक्षित रक्खें।
४. जहाँ मल त्याग किया जावे वह ऐसा स्थान हो कि वहाँ की मिट्टी मनुष्य के शरीर पर १२ मास तक लगने की सम्भावना न हो।

इस के लिये सब से उतम यह है कि एक छोटा सा गड़ा खोद कर उस में मल त्याग किया जावे और उस गड्ढे

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

को ऊपर से भर दिया जाये। यह गढ़ा ६ से १२ इंच गहरा होना चाहिये और मल पर ६ से ९ इंच मट्टी अवश्यय होनो चाहिये।

यदि एक स्थान पर जाना कठिन हो और मल त्याग के लिये घर के समीप ही शौचालय हो तो यह स्थान ऐसा होना चाहिये जहाँ से मल बिखर न सके, समीप के जल को ख़राब न कर सके और मक्खियों के लिये उत्पत्ति तथा वृद्धि कर स्थान न बन सके अर्थात् इस में:—

1. Water—tight receptacles हों।

2. Fly Screening हो तथा।

3. मल को कृमि-रहित करने का प्रबन्ध हो।

४. तथा यहां से मल को खाइयों तक पहुंचाने का ऐसा प्रबन्ध हो कि न तो मल रास्ते में बिखरे और न ही इस पर मक्खियां बैठ सकें।

सबसे उत्तम यह है कि यदि संभवहो तो गर्त-शौचालय (Pit privy) का प्रयोग किया जावे। यह टट्टी ज़मीन पर १॥ फिट गहरा गढ़ा कर उस के ऊपर टिका देते हैं। प्रत्येक व्यक्ति मल त्याग के पीछे मल पर मिट्टी डाल देता है और जब गढ़ा ९ इंच मल से भर जाता है तो ऊपर से ९ इंच मिट्टी डाल कर उस गढ़े को भर कर टट्टी को दूसरे स्थान पर खिसका देते हैं। परन्तु ऐसी टट्टी में एक भय होता है कि कुत्ते या चूहे उसे खोद न डालें।

इस के अतिरिक्त यह भी आवश्यक है कि जिस गाड़ी में मल ले जाया जाता हो उसे कम से कम सप्ताह में दो बार धो देना चाहिये। भारत वर्ष में भंगिनें प्रायः डलों में घरों से मल एकत्रित करती हैं। वास्तव में यह हमारी अज्ञानता का एक स्पष्ट चिन्ह है। भंगियों के पास ढकने दार पीपे होने चाहियें जिन्हें वह प्रति दिन धो लिया करें। भारतवर्ष में सब से अधिक दुखदायी बात यह है कि माताएँ जहाँ भी चाहती हैं अपने बच्चों को टट्टी बिठा देती हैं चाहे सड़क हो या गली या मकान का आंगन या कमरा। कैसा दृश्य है कि मक्खियें बच्चे के नीचे से मल पर सहभोज कर के बच्चे के चेहरे, आँख, वस्त्रों पर आश्रय कर रही हों। क्या माता पिता बालकों के हितैषी हैं? इससे स्पष्ट उत्तर मिलता है।

बलग़म

पहले तो बार २ थूकने का अभ्यास ही ख़राब है यदि बलग़म हो तो उसे काग़ज़ पर थूककर जला देना चाहिये या एक पीकदान में थूकें जिसे बाद में साफ़ कर बलग़म को जला दें या Spitting box में कोई कृमि-हर लोशन डाल कर उस में थूकें, खुले थूकने से जहां बलग़म उड़ कर पास की चीज़, वस्त्रों और मनुष्यों पर पड़ती है वहां इस पर मक्खियें बैठ कर इस के कृमियों को दूर २ ले जाती हैं।

पूय इत्यादि

पूय को भी शीघ्र ही नष्ट कर देना चाहिये या कृमि नाशक द्रव में डालते रहना चाहिये।

मृत शरीर

मृत शरीर विशेषतः जो हैजा या टाइफाइड से मरे हैं, मक्खियों का उत्तम भोजन होने से बहुत हानि पहुंचाते हैं अतः उन्हें शीघ्र दबा दें या जला दें।

३. मक्खियों को अपने या अपनी खाद्य वस्तुओं के समीप न आने देना।

कमरे रसोई के दरवाज़ों और खिड़कियों पर चिकें या जालीदार स्वयं बन्द हो जाने वाले दरवाज़े होने चाहियें। घर के इर्द गिर्द ज़रा भी गंदगी न रहने दें, जो भी कूड़ा करकट हो उसे ढकनेदार मल-पात्र में ढक कर रक्खें घरों में कोई खाद्य चीज़ या गली सड़ी वस्तु बिखरी न रहनी चाहिये। बर्तनों को साफ़ कर के राख को शीघ्र ही मल-पात्र में डाल दें। इर्द-गिर्द की अस्पष्ट गदंगी में से मक्खी के लार्वी को मुर्ग़े बहुत अच्छी तरह से चुन २ कर खा जाते हैं। यदि राख या गदंगी को शीघ्र ढक न सकते हों तो इन पर सुहागा छिड़क दें।

घर के अन्दर या बाहर की दीवारों पर, छतों या समीप के वृक्षों पर यदि फोर्मलिन या निम्न लोशन छिड़का जावे तो मक्खियें नहीं आतीं:—

Treacle	१ पौंड
Honey	,, ,,
Arsenite of soda	½ ,,
Water	१० गैलन॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

Formaline ½ ounc
Milk 1 pint
Water 1 pint

खाद्य पदार्थों को विशेष तौर पर सुरक्षित रखना चाहिए और किसी सुरक्षित स्थान पर ही भोजन करना चाहिए। सब पदार्थ ढके होने चाहियें। भोजन करने के पीछे बर्तनों को शीघ्र ही साफ़ करके रक्खें या बर्तनों को सुरक्षित स्थान पर रक्खें, सब से अधिक दूध को ध्यान देने की आवश्यकता है क्योंकि दूध द्वारा कई रोग फैलते हैं जैसे अमेरिका में केवल दूध द्वारा १८८० से १९०७ तक २७ वर्ष के के समय में ५०० वार रोगों के आक्रमण हुए:—

Typhoid —317
Scarlet —125
Diphtheria—51
Sore throat—7

सारांश यह कि इस का पूर्ण निश्चय हो चुका है कि मक्खी:—

१. कई रोगों की वाहक है विशेषतः टाइफाइड ज्वर, रक्तातिसार, हैजा, संग्रहणी नेत्र रोग आदि।

२. मक्खी विष्ठा और गंद में ही पलती है, वहीं से कृमि लाती है और हमारे भोजन या शरीर पर बैठ कर हमें इन दोनों से पीड़ित करती है।

अतः मक्खियों की उपस्थिति इस बात की सूचक है कि हमारे यहाँ गंद है जहाँ मक्खियों की उत्पत्ति तथा भोजन के लिये पर्याप्त स्थान मिलता है। वास्तव में कोई भी सफ़ाई की विधि पूर्ण नहीं है जिस में मक्खियों को दूर करने या घटाने का साधन न बताया गया हो।

अन्त में इस बात की ओर पुनः ध्यान आकर्षित करने की आवश्यकता है कि मक्खियों की समस्या जाति का प्रश्न है किसी एक व्यक्ति पर निर्भर नहीं है। यदि इस बात की इच्छा हो कि जहाँ मैं सुखी रहूं, मेरे हमसाये भी सुखी रहें, live and let live का सिद्धान्त काम करे वहाँ मक्खियों के प्रश्न का हल कोई कठिन नहीं है।

याद रक्खें—

No Filth—No Flies
Less disease—Safe lives.

जहाँ गंदगी नहीं है वहाँ मक्खी नहीं है जहाँ मक्खी नहीं है वहाँ रोग नहीं है जहाँ रोग नहीं है वहीं जीवन सुरक्षित है। तब वास्तविक अर्थों में जीवन है।

References

1. Sanitation in India—Turner & Goldsmith
2. The Summer care of infants-Rucker & Pierce.
3. Practice of medicine—Osler.
4. Hygeine & Public Health—Ghosh & Dass.
5. Enquire within upon Everything.
6. Musca Domestices—Clinincal Society may. Dec 20.
7. Homeencyclopedia—Foote.
8. Hygeine& Public Health–Parkes & Kenwood
9. Hygeine & Public Health—Whitlegge
10. Ind. med. record. Leprosy No. Sptember 1926.
11. U. S. Public Health Rport—No. 7, 19 426.
12. Safe disposal of Human excreta— Lumsdern etc.
13. Throat, Nose, and Ear—Porter.
14. The modern family Doctor—Jack.

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्वप्न में

तू हँसती आयी थी,
लेकर कर में प्याला
तेरे रत्नारे नयनों ने
अद्भुत जादू डाला।
मद-पूरित वह प्याला॥
गाता था ! तुम्हें रिझाता था,
मुग्धा ! पर तू थी मौन।
सहसा आयी कौन ?
तुम्हारी प्रिय सहचरी सखी थी।
नाम तो अविदित ही रह गया,
किन्तु था कर में भोजन-पात्र।
कर रही थी वह कुछ अनुरोध।
मैं पागल था एक तुम्हारे लिये हो गया क्रोध।
डपट कर नष्ट-भ्रष्ट कर दी।
रंग बिरंगी खाद्य वस्तुएँ मिट्टी में धर दीं॥
अश्रु के झरने झरने लगे—
मुँह था मेरा बिल्कुल बन्द।
हुआ था कैसा मति मन्द॥
कभी रोता फिर हँसता था,
पुनः होता था सहसा मौन।
समझता इस रहस्य को कौन ?
भाव थे मेरे सभी पवित्र,
खींच रहा था हृदय में सरस प्रेम का चित्र।
परम रमणीय॥
एक थी अधर-सुधा की चाह !
किन्तु यह कैसी लीला आह !!

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

आये दो विकराल काल के सदृश काले दूत,
भूत थे, वे सचमुच अवधूत ॥
ले चले तुम्हें खींच कर हाय !
पड़ा था मैं हो कर निरुपाय !
कांपते थे अन्तर तक प्राण,
भूल सा गया पूर्व का गान ।
विकलता-मय तेरा क्रन्दन
जिस के द्वारा करती थी--
तू मेरा अभिवन्दन,
गूँजती कानों में अब तक ॥
रोती रोती चली गयी तू,
पीछे मैं धाया ।
बहुत दूर तक दौड़ लगाई,
पर, मैंने तुम्हें न पाया ॥
मेरा दारुण घोर विलाप,
सुन सुन कर सचराचर थे,
करते थर थर कांप ॥
कहीं से फिर तू थी आई,
तेरे खंजन सदृश नयन की
एक झलक थी पाई ।
रही फिर अधरामृत की चाह
चाह थी परम अथाह ॥
लालसा-तृप्ति हेतु ज्यों चला
मेरा नयन-कपाट खुला
कहाँ थी तू कहाँ था मैं ?
पड़ा सेज पर निरख रहा था
पूर्ण चन्द्र की ओर ।
रात थी अँधेरी घनघोर ॥

श्री भुवनेश्वरसिंह भुवन

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

द्विज

(ले० श्री पं० हरिशरण जी विद्यालंकार)

द्विज शब्द की व्युत्पत्ति

द्विज शब्द का सामान्य अर्थ है द्वि = twice + ज = born जो दो बार जन्म लेता है।

द्विज का अर्थ पक्षी

पक्षी प्रायः अण्डे देते हैं और फिर अण्डों से शावकों की उत्पत्ति होती है। एवं पक्षी एक बार अण्डे के रूप में, और दूसरी बार स्वरूप में पैदा होने से "द्विज" कहलाते हैं। इनके घोंसलों की 'द्विजालयः' [द्विज + आलयः] यह संज्ञा है। तथा हिन्दु समाज में कूओं पर पक्षियों के पानी पीने के लिये एक द्रोणि Trough बनवाने की प्रथा है। इसे संस्कृत साहित्य में 'द्विज-प्रथा' [पक्षियों का प्याऊ] यह नाम दिया जाता है। 'स तमानन्दमविन्दत द्विजः' इस नैषधीय वाक्य में द्विज शब्द पक्षी के लिये ही प्रयुक्त हुआ है।

दांत भी द्विज हैं

ऐसा प्रसिद्ध है कि दाँत छोटी उमर में धीमे २ टूट कर गिर पड़ते हैं और उनके स्थान में नवीन दाँतों की उत्पत्ति होती है। यह नवीन उत्पन्न हुए दाँत गिरकर फिर नये पैदा नहीं होते। एवं दो बार ही उत्पन्न होने से दाँत भी द्विज कहलाते हैं।

ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्य द्विज

वैदिक वर्णव्यवस्था के अनुसार मनुष्य माता पिता से उत्पन्न होकर शूद्र संज्ञा को प्राप्त करते हैं "जन्मना जायते शूद्रः"। इन में से जो वेद को पढ़ने के योग्य होते हैं आचार्य उनका उपनयन कर के उन्हें गर्भ में धारण करता है "आचार्य उपनयमानो ब्रह्मचारिणं कृणुते गर्भमन्तः"। और वहां ३ रातों तक धारण करके उन्हें गर्भ से बाहर करता है। "तं रात्री स्तिस्र उदरे बिभर्ति" [प्रथम रात–Primary department, द्वितीय High, तृतीय college] इस प्रकार इस समय ये दूसरी बार जन्म लेते हैं। इन में सौम्यता, उग्रता व अर्थलिप्सा की प्रधानता के कारण कई ब्राह्मण कई क्षत्रिय तथा कई वैश्य कहलाते हैं।

सत्व ..... सौम्यता ..... ब्राह्मण

रज { उग्रता ..... क्षत्रिय
{ अर्थ लिप्सा ..... वैश्य

[तम — अज्ञान ..... शूद्र]

परन्तु दो बार जन्म लेने से ये सब द्विज कहलाते हैं।

ब्राह्मण की संज्ञा द्विज—ऊपर यह दिखलाया जा चुका है कि किस प्रकार ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य को द्विज कहा जाता है इन तीनों में भी उत्तम संस्कारों से युक्त होने के कारण 'ब्राह्मण' विशेष रूप से द्विज कहलाता है "जन्मना ब्राह्मणो ज्ञेयः संस्कारैर्द्विज उच्यते,,।

एवं द्विज शब्द के भिन्न भिन्न अर्थों को हम देख चुके। अब यदि "द्विज" पर लेख लिखते हुए हम पक्षी, दाँत व ब्राह्मणादि सब पर विचार करना चाहें तो हमारा लेख विशेष रूप से विस्तृत हो जायगा अतः हमें द्विज शब्द के वाच्य ब्राह्मण–क्षत्रिय–वैश्य पर ही कुछ विचार कर के आज अपने लेख को समाप्त करना होगा इन में

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

भी विशेष कर 'ब्राह्मण' के विषय में ही लिखा जायगा।

द्विज शब्द तथा गुणकर्मानुसार वर्ण व्यवस्था

द्विज शब्द, 'गुण कर्मानुसार ही वर्णव्यवस्था होनी चाहिए' ऐसा प्रतिपादन करता है। 'ब्राह्मणादि को द्विज क्यों कहते हैं? यह हम देख चुके हैं। एक बार माता पिता से, तथा पुनः आचार्य से, एवं दो बार उत्पन्न होने से ही इन्हें द्विज कहा जाता है। अब यदि कोई केवल [ब्राह्मण] पितरों से उत्पन्न होकर भी आचार्य के गर्भ से उत्पन्न नहीं होता तो उसे द्विज कैसे कहा जा सकता है? वह तो सकृज्ज ही है न कि द्वि+ज। एवं जो दो बार उत्पन्न नहीं होता वह शूद्र ही कहला सकता है? 'ब्राह्मण' 'क्षत्रिय' 'वैश्य' नहीं।

एक ब्राह्मण की विशेषतायें

१. निरभिमानता—यद्यपि द्विजमात्र आचार्य गर्भ में निवास करके वेदों का अध्ययन करता है तथापि सत्व गुणाधिक्य के कारण जिस में ज्ञान दीप्ति अधिक होती है वह 'ब्राह्मण' [ब्रह्मवेत्ति ब्रह्मवित्-वेदज्ञ] कहलाता है। ज्ञान के अधिक्य के कारण इस में अहङ्कार का लेश भी नहीं होता। ज्ञान की वृद्धि के साथ २ अहंकार की कमी हो जाया करती है। ज्ञान-वृद्धि तथा अहंकार इन में व्यस्त अनुपात है। इसके विपरीत ज्ञान हीनता के साथ २ अहंकार बढ़ता जाता है, एवं ज्ञान हीनता और अहंकार में सम अनुपात है। वस्तुतः अज्ञान तथा अहंकार पर्याय वाची शब्द हैं। "अथा ज्ञान मविद्याहं मतिः स्त्रियाम्" (अमर) कम से कम इन में कार्य कारण भाव अवश्य है। इसके विपरीत ज्ञान तथा निरभिमानता भी पर्याय हैं "अहम्भावो दयाभावो ज्ञानस्य परमावधिः" ज्ञान की पराकाष्ठा यही है अभिमान का न होना। एवं ज्ञानी लोग अभिमान से रहित होते हैं 'मैंने यह कार्य किया' 'मैंने ही वह अमुक कार्य सफल बनाया' इस प्रकार कहने वाले (Egoist) वे नहीं होते। वे जानते हैं और भी हैं कि प्रत्येक कार्य की सिद्धि में वे भी एक तुच्छ कारण (factor) हैं; उनके अतिरिक्त कई factors हैं जो कि कार्य को सफल बनाया करते हैं। गीता में उनका उल्लेख "अधिष्ठानं (तथा कर्ता) करणञ्च पृथग्विधम्। विविधाश्च पृथक् चेष्टा दैवञ्चैवात्र पञ्चमम्" इस श्लोक में हुआ है। एवं ज्ञानी कार्य सिद्धि में अपनी तुच्छता को समझता हुआ अहंकार को छोड़ देता है "ब्रह्मणा अर्वाङ् विपश्यति" वह अपने ज्ञान के कारण ही नीचे दृष्टि करके चलता है। वृक्ष जिस प्रकार फूलों से उसी प्रकार यह ज्ञान से झुक जाता है। इसके अन्दर अभिमान का लेश भी नहीं होता। परन्तु अज्ञानी अभिमान का पुतला होता है। थोड़ा सा ज्ञान होने से ही वह सर्वज्ञता का घमण्ड करने लगता है। थोड़ा सा ऊँचा स्थान मिल जाने पर वह अपने को न जाने क्या समझने लगता है। "Higher the monkey rises more he shows his tail" इस लोकोक्ति में अज्ञानी का व्यवहार बड़ी अच्छी प्रकार चित्रित हुआ है। एवं ज्ञान तथा अज्ञान के साथ क्रमशः नम्रता तथा अभिमान का सम्बन्ध स्पष्ट है। यहाँ ब्राह्मण में ज्ञानाधिक्य के कारण निरभिमानता पायी जाती है। एवं "निरभिमानता" ब्राह्मणत्व का प्रथम चिन्ह है।

२. अनासक्ति तथा क्रोधाभाव अथवा राग तथा द्वेष का त्याग—जिस प्रकार ज्ञान से निरभिमानता उत्पन्न होती है उसी प्रकार 'विषयों में न

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

फँसना, अर्थात् अनासक्ति–यह भी ज्ञान का परिणाम है। मिथ्याज्ञान से रागद्वेष (दोष) की उत्पत्ति होती है। 'धन मिल जाने पर मैं बड़ा सुखी हो जाऊंगा, इस प्रकार धन से ही सुख को प्राप्य समझता हुआ मनुष्य धन को ही सब उपायों से प्राप्त करने में लग जाता है। धन के अन्दर उसे राग हो जाता है। इसी प्रकार जिन सांसारिक विषयों में क्षणिक सुख की प्रतीति होती है उन में मनुष्य फँस जाता है। ऊपर से चमकते हुए पदार्थ मिथ्याज्ञानी मनुष्य की आँखों को उपहत (dazzled) कर देते हैं तथा इन पदार्थों की प्राप्ति में जो भी विघातक हो उसके प्रति इनके अन्दर द्वेष व क्रोध उत्पन्न होता है। एवं साधारण मनुष्य मिथ्याज्ञान के कारण राग द्वेश के वश में हो जाते हैं। परन्तु एक ज्ञानी विषयों के वास्तविक स्वभाव (nature) को तथा अर्थ की अनर्थता को समझता हुवा उनके लिये राग युक्त नहीं होता, परिणामतः उसके अन्दर द्वेष भी पैदा नही होता। वह सांसारिक विषयों की असारता (triviality) तथा ऐकाहिकता (Ephemerality) को समझता हुआ, इन में फंसता नहीं। एवं 'अनासक्ति—क्रोधाभाव अथवा राग-द्वेष त्याग' यह दूसरा लक्षण है जिस से कि हम एक सच्चे ब्राह्मण को पहिचान सकते हैं।

३ ममता का अभाव—मिथ्याज्ञान से जिस प्रकार राग द्वेष की उत्पत्ति होती है उसी प्रकार ममता भी मिथ्याज्ञान का परिणाम है। मिथ्याज्ञान के कारण मनुष्य शरीर इन्द्रियों तथा विषयों में ममत्व बुद्धि करता है। वह उनके, अपने से पार्थक्य को समझता नहीं। 'यह भी वस्तु मेरी है, वह भी मेरी, 'वह मेरा भाई है', और वह मेरी बहिन' 'मेरा शरीर खूब हृष्ट पुष्ट है', इस प्रकार शरीर इन्द्रियों तथा इन्द्रियार्थों में ही ममत्व को करता हुआ, वह मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। "इति मे मे कुर्वाणं कालवृको हन्ति पुरुषाजम्।" परन्तु एक ज्ञानी विषयों से अपने पार्थक्य को समझता है। जनक महाराज इस पार्थक्य को समझते हुवे ही "मिथिलायां प्रदग्धायां न मे दह्यति किञ्चन।" इस प्रकार कह सके थे। ज्ञानी निज शरीर के अन्दर भी ममत्व बुद्धि नहीं करता। वह सदेह होता हुआ भी जनक महाराज की तरह विदेह बना रहता है। शरीर के पार्थक्य को समझता हुआ ही वह ज्ञानी ब्राह्मण 'कालानूस' इस साधारण रोग युक्त शरीर को निवास के अयोग्य समझता हुआ, अपनी इच्छा से ही, जलती चिता पर चढ़ गया था। एवं "ममता का न होना" यह तीसरा लक्षण है जो कि एक सच्चे ब्राह्मण की सूचना देता है।

४ प्राणिमात्र पर समदृष्टि—ऊपर यह हम देख चुके हैं कि किस प्रकार एक ब्राह्मण में अज्ञान के न होने से अहङ्कार, तथा मिथ्याज्ञान के न होने से रागद्वेष तथा ममता नहीं होती। अब जो चौथी बात देखनी है वह यह है कि वह ज्ञानी प्राणिमात्र में उस सर्वत्र व्यापक (All pervading) आत्मा को देखता हुवा, सम दर्शी होता है वह किसी को अपने से छोटा नहीं समझता। अछूतपन (Untouchability) उसके लिये कहीं भी स्थान नहीं रखती। 'रामकृष्ण परमहंस' की तरह वह ज्ञानी एक पेरियो[1] के घर में भी अपने बालों से झाड़ू दे सकता है। आचार्य रामानुज की तरह प्रत्येक प्राणी के शरीर को भगवान् का मन्दिर Temple of God समझता है। सर्वत्र परमात्मा

१. महाराष्ट्र की ओर एक अछूत जाति।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

को देखता हुआ, वह किसी से घृणा कैसे कर सकता है ? "विद्या विनय सम्पन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि । शुनि चैव श्वपाके च पण्डिताः समदर्शिनः' एवं, 'प्राणिमात्र पर समदृष्टि, तथा घृणा का लवलेश भी न होना यह चौथा लक्षण है जो कि हमें एक सच्चे ब्राह्मण के पहचानने में सहायक होता है।

५ एक रसता—ऊपर हम देख चुके हैं कि एक ब्राह्मण में अज्ञान के न होने से अभिमान बिल्कुल नहीं होता। "मैं कर्म करने वाला हूं" यह कर्तृत्व का अहंकार बिल्कुल विनष्ट (Vanished) हो जाता है। वह यह भी समझता है कि फल का होना या न होना यह भी मेरे आधीन नहीं। परिणामतः सिद्धि वा असिद्धि में वह प्रफुल्लित-(Elated) तथा म्लान (dejected) नहीं होता। उत्तम फल की प्राप्ति से वह फूल नहीं जाता। साथ ही आपत्ति से वह Castdown घ निरुत्साहित नहीं होता। वह सिद्धि व असिद्धि में—सुख व दुःख में—एक रस रहता है। देदीप्यमान सूर्य की तरह उदय व अस्त दोनों समयों में उसके मुख मंडल पर हर्ष की लालिमा दृष्टिगोचर होती है। तथा सूर्यकुल में उत्पन्न हुवे राम की तरह वह राज्य-प्राप्ति या अरण्य-गमन में सम ही सुख का अनुभव करता है। "समः सिद्धावसिद्धौ च।" एवं 'एक रसता' एक सच्चे ब्राह्मण का पाँचवाँ लक्षण है।

उप संहार

एवं जिस किसी भी व्यक्ति के अन्दर:—

"१ एक निरभिमानता, २ रागद्वेषाभाव, ३ ममता का अभाव, ४ प्राणिमात्र पर समदृष्टि, ५ एक रसता,, ये पाँच बातें मौजूद हैं वह ब्राह्मण (द्विज) है, चाहे वह किन्हीं पितरों से पैदा हुवा हो।

बुद्ध भगवान् भी कहते हैं "यस्स रागो च दोषो च मानो मक्खो च पतितो । सासपोरिव आरग्गा तमहं ब्रूमि ब्राह्मणम् ॥, अर्थात् जिस में राग द्वेष अभिमान नहीं वही ब्राह्मण है। तथा जटाहि, न गत्तेहि न जच्चा होति ब्राह्मण, जटाओं गोत्र व जाति से कोई ब्राह्मण नहीं होता।

एवं ब्राह्मण की विशेषताओं पर हमने यत्किञ्चित् विचार कर लिया अग्रिम लेख में क्षत्रिय वैश्य पर भी कुछ विचार करेंगे।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

"मुरझाया हुआ हार"

कुम्भ के मेले को केवल चार पाँच दिन रह गये हैं। सहस्रों यात्री प्रयाग की ओर खिंचे जा रहे हैं! यद्यपि इन मेले ठेलों में जाना मेरे सिद्धान्त के नितान्त विरुद्ध था परन्तु न मालूम किस झोंक में आकर माता पिता की आज्ञा लेकर मैंने भी प्रयागराज को प्रस्थान किया! तीसरे दिवस जा के कहीं ठिकाने से लगा! अब ठहरने की चिन्ता हुई! दैवयोग से एक पण्डा महाशय जान पहचान के निकल आये उन्हीं के यहां मैंने अपना डेरा लगाया! सायंकाल के समय मैं त्रिवेणी के दर्शन को निकला! इधर उधर घूम घाम कर मैं लौटना ही चाहता था कि मुझे पास ही एक अत्यन्त मधुर वाणी सुनाई दी! मेरा ध्यान उसी ओर आकर्षित हो गया! मैंने मुड़ कर देखा कि एक सुन्दर बालिका फूलों के हार बेंच रही है।

बालिका सांवली होने पर भी सर्वांग सुन्दरी है! उसका वदन भावपूर्ण है! उस के बड़े बड़े सुन्दर नेत्र बड़े मनमोहक हैं! उसकी ओर देखने से ऐसा भासता है कि जैसे उन में से एक बड़ी मनोहारिणी ज्योति निकल रही हो। अभी वह युवती नहीं है! परन्तु उसको अब बालिका कहना भी ठीक नहीं जँचता। उसके साथ एक छोटा बालक है जो मुखादि से उस का छोटा भाई मालूम पड़ता है। मैं क्षण भर तो उस की ओर देखता रहा, तत्पश्चात् समीप जाकर मैंने उससे पूछा "क्यों मालिन! इन हारों का मूल्य क्या है?" मेरा इन शब्दों का कहना था कि उसके नेत्र पल भर के लिये किंचित् अरुण हो गये, परन्तु दूसरे ही पल उसने अपने को सँभाल कर एक लम्बी सांस खींचते हुए नतमस्तक हो कर कहा "चार आने।" मैंने एक हार हाथ में लेकर देखा कि सचमुच वे बड़े ही सुन्दर रूप से गूँथे गये थे। न मालूम कितने हार मैंने चतुर से चतुर मालियों के बनाये देखे थे पर इस जैसी हस्त-पटुता मैंने कहीं भी न देखी! न जाने मेरे हृदय में किस भाव का उदय हुआ, मैंने झट एक स्वर्ण मुद्रा उस के करकमल पर रख दी। बालिका चौंक पड़ी। उसने मेरी ओर देख कर मस्तक नीचा कर लिया। मैं कांप उठा देखा कि उसके कमल सदृश नयनों में आँसुओं की बूँदें छल छला आई हैं! आँसुओं को पोंछ कर उस ने कुछ कहना चाहा ही था कि मेले की भीड़ ने हम दोनों को ठेल कर बलात् बिछोह कर दिया!

कई दिनों तक मैंने सारा मेला छान डाला परन्तु, फिर कहीं भी उसका पता न चला! अन्त को हार कर मैंने घर की ओर प्रस्थान किया।

मेरे पिता मिर्ज़ापुर के एक बड़े रईस हैं। मैं ही उनकी एक मात्र सन्तान हूँ! मेरा बड़ा ही मान

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

है, मुझे किसी वस्तु की कमी नहीं । मुझे कालेज में पढ़ते दो ही वर्ष व्यतीत हुये थे कि मैंने प्रयाग-राज को प्रस्थान किया । लोग कहते हैं, कि प्रयाग से मनुष्य प्रसन्नचित लौटता है, परन्तु मेरी प्रयाग यात्रा का तो फल इससे निरा विपरीत हुआ । मैं वहां से एक व्याधि लेकर लौटा ।

वहां से लौटने पर मेरी बुरी दशा हो गयी, मैं वह हार लिये उसी की याद में बैठा सोचता रहा । उसे खोज निकालने के लिये कई बार प्रयाग गया परन्तु सब व्यर्थ । अन्त में मैंने उस हार को एक सोने की डिब्बी में रख कालेज को प्रस्थान किया !

ऊपर लिखी घटना को बीते पाँचवाँ वर्ष है ! मैं एम. ए. पास कर के अब घर का काम काज देखता हूँ । कहावत है कि "दिनों के साथ साथ धीरे धीरे स्मृति भी विलीन हो जाती है;" परन्तु मुझे तो अब तक कुम्भ का वह मेला नहीं भूला ! जब कभी उस "मुरझाये हुए हार" को देखता हूँ उसकी वही मधुर मूर्ति नेत्रों के आगे नाचने लगती है । हृदय व्याकुल हो उठता है । मैं अब तक कुँवारा हूँ, क्योंकि पिता जी के बारम्बार कहने पर पर भी ब्याह करना मैंने अस्वीकार कर दिया था । अब की बार माता जी मेरे पीछे ऐसी बुरी तरह पड़ीं की मुझे अन्त को ब्याह करना स्वीकार ही करना पड़ा । मैंने भी कह दिया कि यदि मैं ब्याह करूँगा तो किसी निर्धन मनुष्य के यहाँ, और कन्या सांवली होगी । बहुत ढूँढढांढ के पश्चात् मेरे कहे अनुसार ब्याह तय हुआ ।

मेरा ब्याह हुए एक सप्ताह व्यतीत हो गया परन्तु अब तक मैंने अपनी पत्नी से साक्षात्कार नहीं किया ! मैं वही हार लिये उसी की स्मृति में बूड़ा उतराया करता । एक दिवस मैं अपने कमरे में बैठा एक अँगरेज़ी पुस्तक पढ़ रहा था । एकाएक अन्दर की ओर के कपाट खुले, और मुझे किसी की अलंकारमयी पद ध्वनि सुनाई पड़ी ! मैं हड़-बड़ा कर उठ खड़ा हुआ, और उधर देखने लगा; क्या देखा यह तो मुझ में बतलाने की शक्ति नहीं परन्तु मेरे हाथों ने आप ही आप वह "मुरझाया हुआ हार" आने वाले के गले में पहिना दिया और मैं सहसा कह बैठा "जा पर जा को सत्य सनेहू सो तेहि मिलत न कछु सन्देहू" । वह मूर्ति मुसकरा कर बीच ही में वीणाविनिन्दत स्वर से कह उठी "उहुक, यह सब **मालिन** के मुरझाये हुए हार की करतूत है ।"

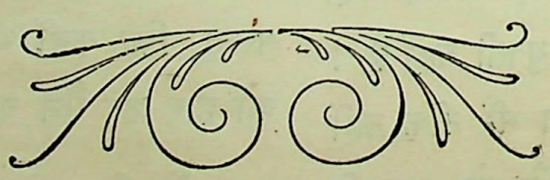

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्यारी पताका

[ले०—एक ब्रह्मचारी]

गपुर नगर के बाहर तिलक-पार्क में गोलाकार कुछ बेंचें पड़ी हैं। इन्हीं पर कुछ स्कूल और कालेज के तरुण बैठे हैं, पर सब चुप हैं। एक दूसरे की ओर ताक रहे हैं, पर शब्द किसी की जबान से नहीं निकलता। इसी चुप्पी को भंग करते हुए द्वारका ने कहा—"ललित! क्या अबभी सोचना शेष है? ज़ल्दी उत्तर दो न, तुम हमारे साथ झण्डा सत्याग्रह में होगे या नहीं? इस में हिचकिचाहट का क्या काम? तुम ही नें तो पहिले प्रतिज्ञा ली थी, अब हम लोगों को आगे धकेल कर तुम्हें पीछे भागना क्या शोभा देता है।"

हाँ भाई, हाँ, द्वारका ने बात बिलकुल पते की कही है, यदि तुम ही पशोपेश करोगे तो आगे कौन बढ़ेगा। तुम्हारी आख़िर क्या अड़चन है? क्या, यही न तुम्हारे पिता नाराज़ होंगे; तो पत्र लिख पूछ लो।

माखनलाल की इस बात से ललित के हृदय का बोझ बहुत कुछ हलका हो गया, उस को रात को घने जंगल में भटकते राही के समान रास्ता मिल गया। वह बल पाकर बोला यदि वह आज्ञा न दें तो?

"तो क्या तुम जन्म भर पिता के गुलाम होकर ही रहोगे? क्या अपने देश, धर्म और भाइयों के प्रति तुम्हारा कुछ भी कर्त्तव्य कर्म शेष नहीं रहा? क्या सारे देश की बौछारों से ज्यादा पिता की नाराज़गी है? अरे भाई! तुम से यह नहीं होना, विलासिता के चोंचलों से जेल में नहीं बैठा जा सकता, न संगीनों के सामने छाती तानी जा सकती, न मशीनगन के सामने खड़ा हुआ जा सकता है।" इतना कह कर छेदीलाल चुप हो रहा और ललित के मुँह की ओर देखता रहा, यह देख कर कि मेरी बातें असर कर रही हैं फिर बोला "अरे भाई! यदि तुम से यह नहीं हो सकता तो साफ़ २ कह दो तुम क्यों अपने कारण नाहक़ हम सबको सारे छात्र-समाज में बदनाम करा रहे हो, हम तुम्हारे कारण अब तक बैठे हैं हमें अब भाई छुट्टी दो!

ललित हृदय से भीरु न था, न अपने किसी साथी से कम जेल जाने को उत्सुक था पर उस का हृदय चिन्तित था। क्या मेरे कारण मेरे पिता पर आँच नहीं आसकती?

ललित के पिता गंगाप्रसाद एक जिले के मजिस्ट्रेट थे, आप की बदली इसी महीने के अन्त में नागपुर में होने वाली थी। ललित इसी से चिन्तित था। अपने कार्य से पिता को उन की रोजी और मान

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

से वञ्चित करने का उस को क्या हक़ है ? इसी समस्या को उस का तरुण हृदय हल नहीं कर सका था। पर छेदीलाल की मर्मभेदी बातों ने उस के हृदय को क्षुब्ध कर दिया। उस का चेहरा तमतमा उठा। बोला तुम मुझे विलासी, कायर और भीरु समझते हो, लो, चलो जहाँ चलना है, मैं तुम्हारे साथ हूँ, मेरा नाम अपने बैच में लिख लो और कल ही सत्याग्रह करने चलो।

द्वारका ने मुस्कराते हुए कहा, नाम तो हम लिखेंगे ही और तुम्हारी इच्छा न होने पर भी आज नहीं तो दस दिन बाद अपने साथ ले चलेंगे, पर शान्त होकर सोचो तो सही, कि तुम्हारे पिता इसी महीने नागपुर आने वाले हैं, यदि हम सब कैदी हो कर उन के सामने लाए गए तो उनकी क्या हालत होगी ? इस लिए बढ़ २ कर बातें न करो, मेरी बात मानो, उनको ख़त लिख कर पूछ लो माता तुम्हारी वकालत के लिए है ही, यदि तुम ख़त न लिखना चाहो तो वहाँ आज अभी मैं सायंकाल की गाड़ी से हो आऊँ और काका की आज्ञा ले आऊँ।

ललित ने कहा, द्वारका ! ना भाई इसकी ज़रूरत नहीं। चलो, रात होने लगी है। मैं अभी चल कर ख़त लिखे देता हूँ। तुम फ़िकर न करो। ललित की बात ख़तम होने से पहिले ही सब उठ खड़े हुए और मन्दिर में माता भवानी को नमस्कार कर शहर की ओर चल दिए।

× × ×

'देखो न लड़के का छिछोरापन,' कहते हुए गंगाप्रसाद पत्नी के घर में घुसे तो सामने उन की पत्नी लक्ष्मी मिली, उस को देखते ही उनका पारा १०० डिग्री का होगया। लाल-पीले होकर बोले—"तुम अपने लड़के को समझाओ, देखो अनर्थ करने जारहा है, जिस आग में हाथ डालते हुए बड़े २ नेता घबराते हैं, उसी में हाथ डालने जा रहा है, सिंह के दाँत उखाड़ना क्या मख़ौल है ? यह सब तुम्हारी ही करतूत है।"

लक्ष्मी इस बेसिर पैर की स्पीच सुनकर हक्का-बक्का होगई। उसे समझ न पड़ा कि आज सुबह २ क्या होगया है। उसने शान्ति से पति को कुरसी देते हुए पूछा आख़िर बात क्या है, कुछ बतलाइये तो सही। गंगाप्रसाद ने पत्नी के सामने पत्र फेंकते हुए कहा अपने आप पढ़ लो न, मेरी सारी सेवाओं को तुम्हारा लड़का मट्टी करने जा रहा है, लक्ष्मी ने पत्र खोला वह इस प्रकार था—

श्री पितृचरणेषु,

प्रणाम !

क्षमा कीजिएगा, अब और नहीं सहा जाता। सब मेरे साथी एक एक करके जेल जा रहे हैं, पहिले एक बार प्रतिज्ञा कर केवल आप के कहने से म० गान्धी की पुकार की अवहेलना कर चुका हूँ उसका शूल अभी तक नहीं मिटा है। झण्डा-सत्याग्रह के प्रति सरकार और योरोपियनों का रुख एक आत्मसम्मानी भारतीय नवयुवक को छेदे

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

देता है। मेरा मित्र तारानाथ पहिले ही जेल जा चुका है, आज उसकी आत्मा मुझे बुला रही है। मैं इस परतन्त्रता में रहना नहीं चाहता। यदि आप इस सरकार की नौकरी नहीं छोड़ सकते तो मैं कोई कारण नहीं देखता कि मैं क्यों देशकी स्वतन्त्रता के युद्ध में भाग लेना छोड़ दूं और अपने राष्ट्र के 'विश्वविजयी तिरंगे झण्डे' के सम्मान की रक्षा के लिए क्यों न प्राण भी विसर्जन कर दूं ? आप यदि सरकार को खुश करना चाहते हैं तो मैं देश को और अपनी अन्तरात्मा को सन्तुष्ट करना चाहता हूँ। हम दोनों का पथ अलग-अलग है। मैं आज से आपकी सम्पत्ति पर से भी अपना अधिकार छोड़ता हूँ। मैंने अपना नाम सत्याग्रही दल में लिखा लिया है। आपका मंगल आशीर्वाद सदा साथ रहे।

आपका विनीत पुत्र

ललित

लक्ष्मी ने पत्र को दो तीन वार पढ़ा, खुशी के मारे उस की आँखों से आँसू छलक पड़े। पुत्र का मातृ-सम्मान रक्षा के लिए जाना पढ़ कर उसकी छाती फूल उठी। उसने मन में कहा मेरा नौ महीने का कष्ट सहना व्यर्थ नहीं गया। पति से कहा, इसमें बुराई आप क्या देखते हैं ? मैं आप से कितनी बार कह चुकी हूँ कि यह समय दूसरा है, उस पर बहुत ज़ोर-जबर्दस्ती न कीजिए, जल के प्रवाह को आप कब तक रेत के बांध से रोक सकेंगे ? मेरी बात मानिए, खुशी-खुशी जाने की आज्ञा दीजिए, और आप भी इसमें शामिल होइये। सरकार की १२ साल से सेवा कर रहे हैं, नागपुर के मजिस्ट्रेट ही बन पाये हैं और उस पर भी हररोज़ हुक्कामों की नाक-भौं और लाल-पीली आँखें देखनी पड़ती हैं। अगर इतने साल देश की सेवा की होती तो आज सारा प्रान्त आपकी चरण-रज लेने आता।

लक्ष्मी से आगे न बोला गया, गला रुँध गया। गंगाप्रसाद जानते थे कि पत्नी मेरे विचारों की नहीं, पर उन्होंने यह स्वप्न में भी गुमान नहीं किया था कि आज ललित के जेल जाने की ख़बर पढ़कर के ऐसा उपदेश मुझे दे डालेगी। उन्होंने कहा— 'तब यह शान-शौक़त और साज-सामान, यह दो-दो मोटरें, फिटन, दर्जनों नौकर कहाँ से आवेंगे। तुम से क्या चुल्हे पर आँखें फोड़ते बनेंगी ? बातें बनाना सरल है, करना पड़े तो मालूम हो।'

पति के इन मर्मभेदी व्यंग्यों को सुनकर लक्ष्मी ने उत्तेजित होकर पर शान्ति से कहा, मुझे तो इस की ज़रूरत नहीं, क्या सदा से ही इतने नौकर-चाकर चले आ रहे हैं। १५, १६, साल पहिले क्या मैं रसोई नहीं करती थी ? पत्नी के ला-जवाब उत्तर को सुनकर गंगाप्रसाद चुप होगए। अन्त में जाते हुए बोले अच्छा, जो तुम्हारी मर्जी हो करो, तुम जानो, तुम्हारा ललित जाने। मैं उस से अब कोई सम्बन्ध नहीं रख सकता। मैं उस को यही लिखे देता हूँ।

लक्ष्मी ने इतना ही कहा भगवान् मालिक है।

गंगाप्रसाद अपने बैठक खाने में आए और उन्होंने इस प्रकार का एक पत्र ललित को लिखा—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्रिय पुत्रललित,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम, अपने साथियों के बहकाने से आग में कूद रहे हो, मैं तुम को पहिले भी सचेत करता आया हूँ। आज अन्तिम बार फिर भी करता हूँ। द्वारका, छेदीलाल आदि के पीछे अपने जीवन को मत ख़राब करो। पीछे पछताओगे। यदि मेरी बात तुम्हे न रुचे तो समझ लो तुम्हारा और मेरा सम्बन्ध आज से अब कुछ नहीं रहा।

तुम्हारा मंगलाभिलाषी पिता

गंगाप्रसाद

× × ×

नागपुर पताका-सत्याग्रह ज़ारी है। सरकार भी डटी हुई है इधर सत्याग्रही भी डटे हुए हैं। देश के बड़े २ नेता सत्याग्रह का संचालन कर रहे हैं। नागपुर के आजकल मजिस्ट्रेट के आसन पर गंगाप्रसाद हैं। गिर्जाघर और योरोपियन निवास स्थान की सड़कों पर जलूस जाने बन्द हैं। ५ से ज्यादा आदमी इन सड़कों पर इकट्ठे नहीं हो सकते। सड़क के दोनों ओर पुलिस हमेशा तैनात रहती है। शहर में फौज़ का पहरा है। स्थान-स्थान पर मैशीनगनें लगी हुई हैं। हररोज सत्याग्रही अधिक संख्या में भिन्न-भिन्न प्रान्तों से आ रहे हैं। खिली चाँदनी में इनकी लगी तम्बूटियाँ अनोखी शोभा दिखाती हैं। मालूम होता है, कि दुग्ध सागर लहरा रहा है। सत्याग्रहियों के संगीत से आकाश गूँजता रहता है। इधर गंगाप्रसाद बड़ी दुबिधा में पड़े हुए हैं। कमिश्नर के सामने उन्हें अपनी हाज़िरी हररोज देनी पड़ती है। कमिश्नर कठोर से कठोर दण्ड देने के लिए हर रोज़ कहता रहता है। यदि तुम नर्मी दिखलाओगे तो सरकार तुम को नौकरी से ख़ारिज़ कर देगी। जागीर जब्त करलेगी। तुम्हारा पुत्र से कोई सम्बन्ध नहीं है, इस के लिए गवर्मैण्ट को यही सबूत दो। तुम्हारी सेवाओं की गवर्मैण्ट कदर करती है,। सम्राट् के जन्म दिन तुम को C.I.E. दिलाने की कोशिश करूंगा। पर कर्त्तव्य का पालन कठोरता से करो। तुम्हारे धर्म शास्त्र में भी कहा है, कि कर्त्तव्य के सामने पुत्र, स्त्री और स्नेही कुछ नहीं हैं। गंगाप्रसाद भी श्रीमान् का जो हुक्म कह कर घर चले आते हैं। घर पर पत्रों का, कार्टूनों का, पत्नी द्वारा काटे गए अख़बारों की कटिंग का प्रति दिन अपनी मेज़ पर ढेर पाते हैं। उस में लिखा होता है, माता का अपमान करने वालों का साथ देना अधर्म है। त्यागपत्र दे दो। राष्ट्र का अपमान क्या तुम्हें नहीं खलता? तुम जयचन्द हो। जयचन्द-सी तुम्हारी भी गति होगी। कार्टूनों में देश सेवा का फल और सरकार सेवा का फल दिखलाया होता है। एक कार्टून में शव पर गिद्ध और चील झपट रहे हैं, देशवासी ठोकरें मार रहे हैं, और थूक रहे हैं। दूसरी ओर देश सेवक की प्रतिमा पर नरनारी फूल पत्तियां और बतासे चढ़ा रहे हैं। मातायें बच्चों को उस के चरणों में डाल कर कह रहीं हैं, मेरा पुत्र भी ऐसा हो तुतलाते बच्चे कहते हैं, मैं भी ऐसा बनूँगा। अख़बार वाले मोटे-मोटे अक्षरों में हेडिंग दे रहे हैं —'देश-द्रोही गंगाप्रसाद।' गंगाप्रसाद की तुलना

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जार और कैसर से कर रहे हैं। उनके आत्मसम्मान जागृत कर कह रहे हैं, कि तुम्हारे से पीछे आने वाले सिविलियन तुम्हारे हाकिम बन गये तुम अब तक यहीं पड़े हो, तब भी तुम्हारी आँख नहीं खुली ! जबलपुर के कमिश्नर मि० हैमिल्टन और नागपुर के कमिश्नर मि० फॉक्स गंगाप्रसाद की मातहती कर चुके हैं, पर गंगाप्रसाद उन के बूट के तस्मे खोलने में सौभाग्य समझ रहा है ? आत्म-सम्मान, आत्म भावना सब लुप्त होगई है। गंगाप्रसाद जब से नागपुर में आए हैं हर रोज़ ऐसे ही उनकी गुजरती है। वह पशो-पेश में पड़े हैं, न नौकरी छोड़े बनती है न पुत्र का रास्ता पकड़े बनता है। उनकी आत्मा सर्वदा मर नहीं गई थी। उन्होंने भी योरोप की स्वतन्त्रता बयार को अनुभव किया था। आज वलि–वेदि पर सहस्त्रों की संख्या में नवयुवकों और नवयुवतियों को अपने जीवन को अर्पण करते देख उनका दिल आल्हाद सेभर जाता। वे एक मिनट के लिए सोचते मैं भी इन में मिल जाऊँ, पर जब नौकरी और माता पिता की जायदाद का ख्याल आता तब मन मार कर बैठ जाते, सोचते बूढ़े होने पर देश सेवा कर लेंगे, दान पुण्य कर इस का प्रायश्चित कर लेंगे। पर आत्मग्लानि का धुआँ न बैठता, रात को स्वप्न में उनको सत्याग्रहियों की और भवानी की मूर्ति दीखती। रात को भय से कई बार बोल उठते, 'बचाओ बचाओ।' उन्होंने अपने घर के चारों ओर सशस्त्र पुलिस का पहरा लगवा लिया है। पर बेचैनी गई नहीं। उन्निद्र रोग हो गया है। मुख पीला पड़ गया है। बुद्धि उनकी काम नहीं करती, दिल कहता है नौकरी छोड दो, दिमाग़ कहता है यह खेल कितने दिनों का है, यह आतशबाजी कब तक छूटेगी, अपने आप लोग थक कर बैठ जायेंगे, तुम नाहक क्यों अपनी नौकरी गवांते हो, योरोपियन दोस्तों से नाता तोड़ते हो, मान-सम्मान को तिलाञ्जलि देते हो, ज़िन्दगी रही, रुपया है ही, यह बवण्डर शान्त होने पर एक दो स्कूलों अनाथालयों को रुपया दे देना, जनता खुश हो जायगी, सरकार भी नाराज़ न होगी। गंगाप्रसाद अन्तिम निर्णय न कर सके, जिधर से बलवती लहर आती उधर बह जाते। प्रबल तरङ्गों के बीच बे-पतवार की नौका के समान इधर से उधर डुल रहे थे।

× × ×

आज इजलास नरनारियों से भरा हुआ है, सब जगह गान्धी-कैप-धारी नरमुण्ड-ही-नरमुण्ड दीख रहे हैं। उमड़ता हुआ समुद्र दीखता था जिस में मगर के समान नरमुण्ड तैर रहे थे। सब लोग जज के कमरे की ओर कान लगा कर खड़े थे, सबकी आंखे उधर ही लगी थीं, सारा जन समूह कीलित सांप के समान अलक्षित जादू से, शान्त भाव से खड़ा था। कचहरी में कटघरे में तीन बैच सत्याग्रहियों के खड़े थे। सब के हाथ में तिरंगा झण्डा था। टोपी पर, जेब पर और कन्धे पर झण्डियां फहरा रही थी। पहिला बैच भारत के प्रान्तों के प्रतिनिधि रूप १५ नेता थे, दूसरे में मद्रास पंजाब और बिहार के

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सत्याग्रही थे, तीसरा दल नागपुर की युवक-समिति का था जिसका नायक ललित था। सब सत्याग्रहियों के मुख प्रसन्नता से चमक रहे थे, आंखों पर मुस्कराहट नाच रही थी, आंख बृटिश शासन की जंजीरों को जला देने वाले तेज से चमक रही थीं। सब की आँखें जज की खाली कुर्सी पर लगी हुई थीं।

घड़ी ने टन-टन ग्यारह बजाए, और द्वार से पर्दा हटा और एक ६० वर्षीय काला चोगा धारण किए, लज्जा और आत्म-ग्लानि के भार से चोले में समाते हुए एक आदमी ने प्रवेश किया, यही नागपुर के मजिस्ट्रेट गंगाप्रसाद हैं। आप अभी कमिश्नर के यहां से होकर आ रहे हैं। कठोर कर्तव्य को पालन करने के लिए तय्यार होकर आये हैं। आज आप की आत्मा और बुद्धि में जो अन्तर् द्वन्द-युद्ध चल रहा है, उसका कौन सी लेखनी चित्र खींच सकती है।

न्याय का स्वांग आरम्भ हुआ, सरकारी काउन्सल ने अभियोग लगाते हुए कहा कि अभियुक्त ताजिरात हिन्द की १४४ ए.१५१ए. और १५६ के अनुसार अपराधी है। वर्जित सड़कों पर निषिद्ध चीजों के साथ, शहर की शान्ति भंग करने के अपराधी हैं। अभियुक्तों के चेहरे पर कोई फ़र्क नहीं आया मुस्कराते हुए सब सुनते रहे। जज ने कोर्ट की वज्र-चुप्पी को तोड़ते हुए कहा—अभियुक्तों में से किसी को कुछ कहना है। कोर्ट शान्त रहा। काउन्सल ने तीसरे बैच को सम्बोधन कर के कहा—तुम अभी नौजवान हो, सरकार तुम को क्षमा कर सकती है यदि तुम अपने झण्डे अर्पण कर दो, और माफ़ी मांगो। सरकारी काउन्सल की बात सुन कर ललित ने आगे बढ़ कर कहा-माई लार्ड! क्या आपको हमारा कुछ और भी अपमान करना शेष रह गया है। इस पताका में हमारे प्राण बसते हैं, इस के अंचल की फरफराहट में हमारी चञ्चलता और श्वास बसते हैं, इसकी स्थिरता के साथ हमारी स्थिरता है, इस की शान के साथ हमारी शान है। मृत्यु ही इसे हम से जुदा कर सकती है। क्षमा की बाबत हम इस विदेशी न्यायालय से दया और न्याय की इच्छा नहीं करते। मंगलमय का न्यायालय ही हमारी तक़दीर का फैसला करेगा।

सारा कोर्ट चुप, किसी की जबान से शब्द नहीं निकलता। ललित के शब्दों ने सब के अन्दर नया जीवन, नई शान्ति फूँक दी।

गंगाप्रसाद के दिल में ललित के शब्द तीर से चुभे। क्या हमारा कुछ और भी अपमान करना शेष है, इस न्यायालय से दया और न्याय की भिक्षा नहीं चाहता। थोड़ी देर के लिए मानो उन्हें लकवा मार गया इस तरह अर्धचेतनावस्था में बैठे रहे। अन्त में अपने को सम्भाल कर उठे, सब की आँखें और कान जज की ओर लग हुए थे। "मेरी अन्तरात्मा इन सब को निर्दोष कहती है, कानून इनको दोषी बताता है अतः पहिले बैच को ३ वर्ष, दूसरे बैच को २ वर्ष, और तीसरे बैच को १ वर्ष की सजा देता हूँ क्योंकि इन्होंने हुक्म तोड़ा है और शान्ति भंग

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

की है, और सरकार के प्रति-अप्रीति फैलाई है।" इतना कहकर गंगाप्रसाद जल्दी से चले गए।

× × ×

आज गंगाप्रसाद का हृदय कठोर हुआ था, घर पर पहुँचते ही उन्होंने पुलिस को पहरा उठा देने के लिए कहा, कहा मुझे इसकी अब ज़रूरत नहीं। फिर उन्हों ने अपना मजिस्ट्रेट पद से त्याग पत्र तार द्वारा गवर्नर को भेजा और लिखा कि मैं भी सत्याग्रही दल में सम्मिलित होने जारहा हूँ। इस शासन से मेरा विश्वास उठ गया है। न्यायालय का निर्णय बिजली के समान शहर में फैल गया। अखबारों ने अपने सचित्र विशेषांक निकाले जिसमें गंगाप्रसाद को क्रूर, नृशंस, छली, देशद्रोही, कृतघ्न, और जालिम शब्दों से सम्बोधित किया गया था। पत्रों ने अपने गाली के कोष को आज खाली कर दिया था।

गंगाप्रसाद की आँखों के सामने से यह सब कुछ गुजरा। उन्होंने इतना ही कहा मेरे पापों का, मेरे दुष्कृत्यों का उचित पुरस्कार है। पत्नी के सामने आज जाने का उनको साहस नहीं होता था रात को बिना खाए पीए सो गए।

प्रातः काल होते ही पत्नी के कमरे में जाते ही कहा आओ अन्तिम वार मिल लूं फिर मिलना इस जीवन में हो या नहीं। लक्ष्मी अवाक् रह गई वह इस्तीफ़े की बात सुन चुकी थी। आज उस का हृदय गर्व से फूल उठा, और वह गर्वीले सिर से गंगाप्रसाद के चरणों में यह कहते हुए झुकी "नाथ मुझे भी साथ ले चलिए"।

गंगाप्रसाद ने पत्नी को उठाते हुए कहा, तुम्हारा समय अभी नहीं आया है, मेरा और ललित का शेष काम तुम्हें करना है। गाँव-गाँव में यशवन्तसिंह की रानी महामाया के समान तुम को इस राष्ट्रीय यज्ञ की अग्नि प्रदीप्त करनी होगी, अलख जगानी होगी, अब बिदाई दो। लक्ष्मी ने कहा अभी अन्तिम विदाई का समय नहीं आया सत्याग्रह कैम्प मे ही जाकर दूँगी। गंगाप्रसाद तथास्तु कह कर सत्याग्रह आफिस की ओर चले। सत्याग्रह कैम्प की तरफ गंगाप्रसाद को नंगे पैर अकेला सुबह २ आते देखकर सब के दिल आशंका, आतंक और तर्कना से भर गए। गंगाप्रसाद ने आफिस में सीधे जाकर अध्यक्ष सुन्दरलाल को कहा, भाई मेरा नाम भी अपने साथ लिखलो और आज के बैच में ही मेरा नाम लिखलो, मुझे अपना जीवन भार हो रहा है। इतने में सब सत्याग्रही दरवाजे पर आ जमा हुए थे। सब ने 'वन्दे मातरम्' के जयघोष से गंगाप्रसाद की वन्दना की और कहा कि आज का कप्तान भी गंगाप्रसाद हो। सारे सत्याग्रह कैम्प में नया उत्साह छा गया कल के अभियुक्तों के सन्मानार्थ आज गिर्जाघर के सामने तिलक-पार्क में सभा होने वाली थी, ठीक १ बजे १०० सत्याग्रहियों का बैच उधर ही रवाना हुआ। सब के आगे गंगाप्रसाद थे। लक्ष्मी ने अपने पति की आरती उतारी, माला पहिराई, गेरू से अभिषेक किया, चरण रज लेकर कहा आप का आदेश पालन करती हुई आपके पीछे आऊँगी।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बैच, बैण्ड और वन्देमातरम् के जयघोष के साथ रवाना हुआ। जीवन की आशा छोड़कर मृत्यु की ओर बैच प्रस्थित हुआ, सब के हृदय में पताका थी विराट् जन समूह पर पताकायें फहरा रही थीं। सब के दिल में उत्साह था, सब मृत्यु से खेलने को उद्यत थे, सरकार को आज अपना बल दिखाने को उत्सुक थे। भीड़ को संगीनधारी सिपाहियों ने रोका। गंगाप्रसाद के इन शब्दों ने "क्या अपने भाइयों पर वार करने में ही सरकार और देश की सेवा रह गई है" सिपाहियों पर बिजली का असर किया और यह दल बन्दूकें वहीं रख कर जन प्रवाह में मिल गया। ऐसा ही दो तीन दिन मोड़ों पर हुआ। हिन्दुस्तानी फ़ौज ने बन्दूक चलाने से इन्कार कर दिया। बैच तिलक-पार्क में पहुँच गया। पताका स्थापित की गई। गंगाप्रसाद के सभापतित्व में सभा आरम्भ हुई। "वन्देमातरम्" "भारत माता की जय" "गंगाप्रसाद की जय" के बीच में गंगाप्रसाद उठे, उधर कमिश्नर साहब ख़बर पाकर अंग्रेजी फौज लेकर आ पहुँचे और पार्क को घेर लिया; अभी गंगाप्रसाद ५, ६ वाक्य ही बोल पाए थे कि गोलियों की बौछार, आरम्भ हुई और एक गोली ने गंगाप्रसाद के शरीर को भी भूतलशायी कर दिया, गंगाप्रसाद के गिरते ही जनता जहाँ राह मिली भाग गई। ½ घण्टे के अन्तर शान्ति हुई।

इस समय तक अंधेरा हो गया था। हैमिल्टन और मि० फ्रान्स लाशों को उठवा रहे थे, 'कि एक ओर से आवाज़ आई पानी' दोनों जने उधर ही गए देख कर दंग रह गए यह तो और कोई नहीं मि. गंगाप्रसाद हैं। मि. हैमिल्टन के आँखों से आंसू छलक पड़े और वह गंगाप्रसाद की ओर नमस्कार के लिए झुके। अपने पुराने मित्र और अफ़सर की वीरता ने मि. हेमिल्टन को चकित और मुग्ध कर लिया था। मि. फॉक्स इस समय भी आपे से बाहर थे। बृटिश शासन का आतंक जमाने का कोई अवसर चूकना नहीं चाहते थे, उन्होंने गंगाप्रसाद की ओर घूरते हुए कहा यह पताका पहिले छोड़ दो फिर पानी मिलेगा।

मि. हैमिल्टन अपने को रोक न सके। उन्होंने कहा क्या यह शासन इतना आदमी को गिरा सकता है, इतना अधिक पतित बना सकता है ? गंगाप्रसाद ने इशारे से मना करते हुए कहा—"मि. हेमिल्टन, ललित का ध्यान रखना, मैंने भूल की जो पानी माँगा, पताका को मेरे से मृत्यु ही अलग कर सकती है, मैं जाता हूँ, बन्दे" हैमिल्टन ने कहा—"आज से मैं भी तुम्हारे पथ का पथिक बना, ललित को जानसन के समान समझूँगा।"

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

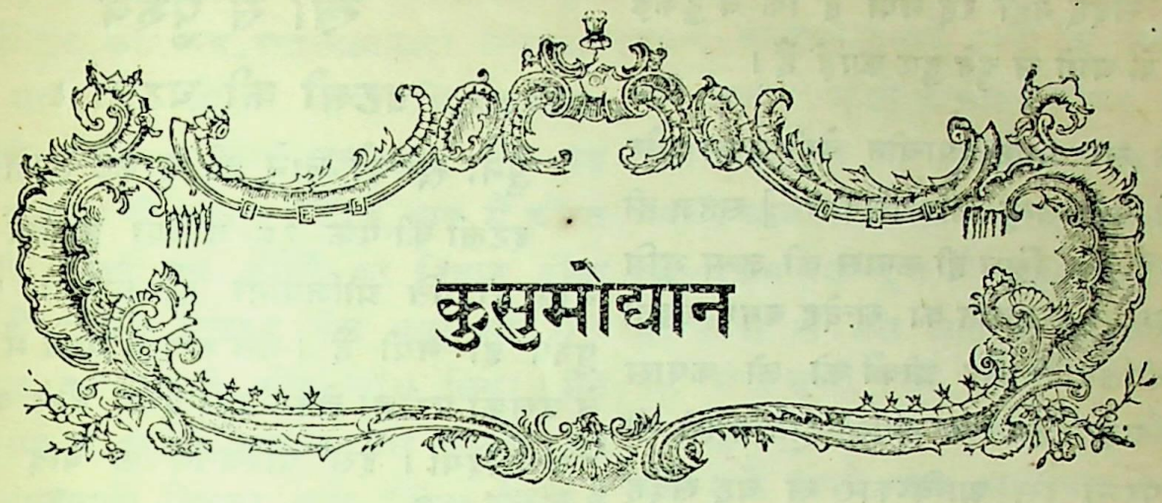

कुसुमोद्यान

"हिन्दू धर्म ही सर्व-श्रेष्ठ धर्म है"

प्रसिद्ध फ्रेंच दार्शनिक रोम्यां रोलांके विचार।

फ्रांस के प्रसिद्ध दार्शनिक रोम्यां रोलांने अपने एक लेख में लिखा है कि मैंने यूरोप और एशिया के प्रायः सभी धर्मों का अध्ययन किया है। लेकिन मुझे हिन्दू धर्म ही सर्वश्रेष्ठ धर्म मालूम होता है। इस का यह अभिप्राय नहीं कि मैं दूसरे धर्मों की निन्दा कर रहा हूं। यद्यपि मुझे बौद्ध धर्म से प्रेम है लेकिन उस में सिर्फ़ आत्मिक उन्नति के ही चिन्ह पाये जाते हैं। इस लिये मैं हिन्दू धर्म को प्यार करता हूं क्योंकि इसी में तमाम एशिया के धर्म समाये हुए हैं। ईसाई धर्म से दुनिया की भलाई होती है किन्तु वह निर्भ्रान्त नहीं है। उस में स्वर्ग का जो चित्र खींचा गया है वह पादरियों की दिमाग़ी उपज है। १९ वीं सदी के विज्ञान ने इस धर्म को कसौटी पर रख कर देख लिया है और उसी के अनुसार परिवर्तन भी कर डाले हैं। केवल हिन्दू धर्म ही ऐसा धर्म है जो आवागमन के मसले को प्रारम्भ से ही मानता चला आ रहा है और तमाम दुनिया को एक दिन इसके सामने सिर झुकाना पड़ेगा। इसी लिये हिंदू धर्म को मैं सर्वश्रेष्ठ मानता हूं और उस से प्यार करता हूं।

दकियानूसी ख़याल के जो हिन्दू अपने सिद्धान्तों का प्रचार नहीं करते वह ग़लती कर रहे हैं। उन्हें चाहिये कि वे इस धर्म का दरवाज़ा तमाम दुनिया के लिये खोल दें।

५ हजार वर्ष पहले का सूती कपड़ा

सिंध के खंडहर में चाँदी के पात्र में मिला

पुरातत्त्व विभाग ने हाल में ऐसी खोज की है जिस से साबित होता है कि भारत में सन् ईस्वी के ३ हजार वर्ष पहले रुई से कपड़ा बुना जाता था। इस बात का प्रमाण ऐतिहासिक काल के पहले के नगर मोहनजोदेरो से मिला है जहाँ हाल में खंडहर खोदने से चाँदी का एक नक्काशी दार बर्तन मिला है। उस बर्तन में जेवर रखे हुए थे और वह बर्तन बुने हुए कपड़े में लपेटा हुआ था जिस के कुछ टुकड़े अब भी उस धातु से सटे हुए थे। यह कहने की ज़रूरत नहीं कि वे टुकड़े ५ हज़ार वर्ष तक जमीन में गड़े रहने से बिलकुल सड़ गये थे परन्तु बम्बई के शिल्प शोधागार के डाइरेक्टर श्री. टर्नर की जाँच से

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

इस बात में संदेह नहीं रह गया है कि वे टुकड़े असली रुई के धागे से बुने हुए कपड़े हैं।

रुई के समान के प्राचीन बेबीलियन और ग्रीक नामों से [सिन्दू और सिंदना] सहज ही जान पड़ता है कि सिंध ही कपास की जन्म भूमि है परन्तु हमेशा इस बात का सन्देह बना रहता था कि बेबीलियनों और ग्रीकों को जो कपास मालूम थी वह रेशम से उत्पन्न होने वाली तो नहीं थी परन्तु इस आविष्कार से वह संदेह दूर हो गया और निश्चय हो गया कि असली कपास से सिंध में उस समय भी कपड़ा बुना जाता था जब कि लोहे का भी आविष्कार नहीं हुआ था।

बुद्ध भगवान की प्रतिमाएँ।

एक जर्मन विद्वान् की विलक्षण खोज।

जाति विज्ञान के प्रकाण्ड जर्मन पण्डित फान लेकाकने जो बरलिन के जाति विज्ञान सम्बन्धी संग्रहालय के भारतीय विभाग के डाइरेक्टर हैं, कहा है कि भारत और चीन की बुद्ध मूर्तियाँ यूनानियों के अपोलो और बाचूज की प्रतिमाओं का विकसित रूप हैं। यह बात उन्होंने लंडन के "स्कूल आफ ओरियंटल स्टडीज" (प्राच्यविद्यालय) की एक सभा में कही है। फान ले काक मध्य एशिया में खोज के लिये गये हुए तीन अन्वेषक दलों के अध्यक्ष रह चुके हैं। आप का कहना है कि यह बात असंदिग्ध रूप में प्रमाणित हो चुकी है कि भारत और चीन ने सभी प्राचीन यूनानी देवताओं की प्रतिमाएं अपने यहां ले जाकर उनका अपने धर्म और आवश्यकता के अनुसार परिवर्तन कर लिया।

स्त्री से पुरुष

इटली की घटना।

पुनः स्त्री हो जाने की उत्कट लालसा।

इटली की एक १८ वर्षीया कुमारी जिसका नाम रीनाति आजियाना है, क्रमशः बदल कर पुरुष हो गयी है। गत अगस्त मास में डाक्टरों ने उसकी परीक्षा लेकर उसे पुरुष होने का प्रमाण पत्र दे दिया। इस परिवर्तन के बाद के अपने अनुभव उसने इस प्रकार बयान किये हैं—(पुरुष हो जाने पर भी उसका भाव स्त्रियों का सा है, अतः उसके लिये स्त्रीलिङ्ग की क्रियाएँ लिखी जा रही हैं)

बचपन ही से मेरे मन में यह बात उठती थी कि क्या ही अच्छा होता कि मैं पुरुष होती जिस में स्वाधीन जीवन बिता सकती। पर अब जब प्रकृति ने मेरी साध पूरीकर विश्व की सबसे अद्भुत घटना घटित कर दी तब मुझे पुनः स्त्री रूप प्राप्त करने की इच्छा होने लगी है।

डाक्टरों की परिषद् ने तीन सप्ताह लगातार मेरी परीक्षा की। अन्त में एक स्वर से सब डाक्टरों ने यह व्यवस्था दे दी कि यह व्यक्ति स्त्री नहीं रहा, पुरुष हो गया। इस व्यवस्था को सुनकर मैं सुन्न हो गयी और फूट-फूटकर रोने लगी। मैंने अपना मुँह दोनों हाथों से छिपा लिया। मेरी हिचकी बंध गयी। मैं ज़ोर से चिल्ला उठी—"नहीं नहीं मर्द होना नहीं चाहती।"

एक डाक्टर ने मेरे कन्धे पर हाथ रख कर कहा—"अब ये जनाना कपड़े उतारो और हमारे जैसा कोट पतलून पहन लो। अब रेशमी जुराब और ऊंची एडीका जूता न पहनना, अब तुम हमारी तरह मर्द हो गये।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मेरी विपद की यहीं इति नहीं थी! अभी मुझे अपने मँगेतर को यह वज्राघातकारी समाचार सुनाना था। मैं सोचने लगी कि यह समाचार उसे किस प्रकार सुनाऊं। मैंने लड़खड़ाती आवाज़ में कहा— "मित्र, अब मैं औरत नहीं रही। अब हम लोगों का विवाह होना असंभव है।" वह ठठाकर हंस पड़ा और मेरा हाथ पकड़ कर अपनी ओर खींच लिया। मैंने गम्भीर भाव से सारा वृत्तान्त उसे सुनाया। वह क्रोध में पागल हो चिल्ला उठा "किस शैतान ने तुम से यह कह दिया है?" मैंने डाक्टरों का दिया प्रमाणपत्र निकाल कर उसे दिखाया। वह सुन्न हो गया। कुछ देर तक दोनों चुप चाप एक दूसरे को देखते रहे। हम अपने प्रेम, अपनी परस्पर प्रतिज्ञाओं का स्मरण कर भविष्य को सोचते। सब एक स्वप्न सा प्रतीत होता था। ऐसी दुःखद अवस्था कभी किसी पर न बीती होगी।

मैं पुरुष हो चुकी थी, पर अपने मंगेतर के प्रति मेरे मन में वैसा ही अनुराग था जैसा किसी स्त्री को हो सकता है, मेरे दुःख का पारावार न था। मैं सोच रही थी कि मेरा मंगेतर तो दूसरी स्त्री को अपनी पत्नी बना सकता है पर मैं कितना ही चाहूं अब किसी पुरुष को पति नहीं बना सकती। मेरा प्रेमी आवेश से खड़ा होकर चिल्ला उठा—"तुम पुरुष हो गये तो कुछ परवा नहीं; मैं तुम्हें अब भी प्यार करूंगा। तुम मेरी पत्नी नहीं बन सकते तो मित्र तो हो सकते हो। मैं तुम से ऐसा प्रेम करूंगा जैसा इस धरती तल पर किसी ने किसी से न किया होगा। मैं तुम्हारे नाम पर आजन्म कुंआरा रहूंगा।" फिर हमने प्रेम के पूर्ण आवेश में हाथ मिलाया पर— पुरुषों तरह।

जब मैंने पहली बार अपने जनाना कपड़े उतारे तो ऐसी रुलाई आयी कि फूट फूट कर रोने लगी। आइने के सामने जाकर अपनी सूरत देखी तो दुःख के मारे हृदय फटने फटने हो गया। आज मैं बाजार में अपनी सहेलियों को स्त्री-सुलभ वेश-भूषा में चलते फिरते देखती हूं तो ईर्ष्या से जल जाती हूं। स्त्री मात्र को देख कर मेरी छाती फटने लगती है।

युवा पुरुष जो पहले मुझसे प्रेम करते थे, और मुझे अपने साथ साभिमान थियेटर में ले जाते थे, अब मुझ से कहते हैं— "आओ हमारे साथ युवती कन्याओं से मिलो, क्योंकि तुम भी हमारी तरह पुरुष हो गये हो।" उन्हें नहीं मालूम कि यद्यपि मैं पुरुष हो चुकी हूँ, पर अब तक मेरी भावना स्त्री की है। मैं प्रत्येक रूपवती लड़की को देख कर डाह से जलने लगती हूं, वह मुझे प्रतियोगिनी सी प्रतीत होने लगती है।

पुरुष जीवन की स्थिति

मैं देखती हूं कि अब मेरा जीवन वैसा अनुग्रहमय नहीं रहा। पहले दूसरे मेरी सहायता करने की चिन्ता में रहते थे, अब दूसरों की सहायता करना मेरा कर्तव्य हो गया है। पहले मुझे बनाव सिङ्गार के सिवा और किसी बात की चिन्ता न होती थी। पहले मेरे थियेटर देखने का खर्च दूसरों के मत्थे होता था अब मेरे साथ जो स्त्रियां थियेटर में जाती हैं, उनका खर्च मुझे उठाना पड़ता है। पर हाँ, यह अवश्य है कि अब मेरी स्वाधीनता पहले से अधिक हो गयी है। अब मैं अपने जीवन की स्वामी हूं, जहाँ चाहूं जा सकती हूं और जितनी देर चाहूं घर से बाहर रह सकती हूं।

पहले मैं सोचती थी कि युवा पुरुष और स्त्रियाँ दोनों ही मुझ से घृणा करेंगे। मेरा यह जाति

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

परिवर्तन किसी को भी अच्छा न लगेगा। पर अनुभव से मालूम हुआ कि यह अनुभव भ्रम था। दोनों ही समुदाय मुझे चाहते हैं। पुरुष इस लिये कि अब मैं उनकी गोष्ठियों में उन्हीं की तरह शामिल हो सकती हूं। स्त्री इस लिये कि पहले मैं उन्हीं की तरह स्त्री थी। वह मेरे प्रति अधिक चाह दिखाती हैं और मेरे प्रेम की प्रार्थिनी हैं। पर स्त्रियों का यह कार्य मुझे तनिक भी अच्छा नहीं लगता, क्योंकि डाक्टरों से मर्द होने की सनद पा लेने पर भी मेरी भावना अभी तक स्त्री की सी है।

ज्योंही अखबारों में मेरे इस दुर्भाग्य का समाचार छपा कि विभिन्न नगरों से लगभग पचास स्त्रियों ने मेरे पास विवाह की दर्ख़ास्तें भेजीं। मुझे इससे आश्चर्य हुआ। सभी स्त्रियों ने लिखा था कि तुम पहले स्त्री थे. इसलिये स्त्रियों के भावों से भली भाँति परिचित हो। तुम संसार भरके पुरुषों से अच्छे पति हो सकते हो। पर मैं किसी से भी ब्याह करना नहीं चाहती। मैंने शपथ करली है कि अपने मंगेतर की तरह आजन्म अविवाहित रहूंगी।

इनाम के लिए पैदल पृथिवी प्रदक्षिणा।

पैदल पृथिवी प्रदक्षिणा करने के लिये इटली से निकला हुआ एंटोनियोगी टोकल कलकत्ते पहुंचा। यह २० वर्ष की उम्र में अपने नगर ट्रीस्टी से २४ दिसम्बर १९१९ को निकला था। उसके धनी चचाने उसे १० वर्ष की आयु में पैदल पृथिवी प्रदक्षिणा करने को उत्साहित किया था। इनकी यात्रा प्रायः समाप्त हो गयी है। वह शीघ्र ही भारत के प्रसिद्ध नगर देखते हुए रंगून सिंगापुर, पीनाँग होते हुए ट्रीस्टी चला जायगा और चचा से अपना इनाम माँगेगा।

'मदर-इण्डिया'

भारतवर्ष को बदनाम करने के लिये युरूप के अनेक देशों ने कमर कस ली है। पिछले दिनों समाचार पत्रों में प्रकाशित हुआ था कि जर्मनी में कुछ भारतीय ग़रीब बालकों को वहां के चिड़िया घरों में रखा गया है। ताकि साधारण जनता टिकट देकर उन्हें देखे। भारत के साथ इस अन्याय पूर्ण व्यवहार में अमेरिका भी अपना हाथ बँटा रहा है। अभी हाल ही में 'मदर-इण्डिया, इस नाम से एक पुस्तक युरोप में प्रकाशित हुई है। यह पुस्तक कहा जाता है कि इंग्लैण्ड में पार्लियामेंट के सदस्यों को मुफ़्त बाँटी गई है। इस की लेखिका मिसमेयो नामक एक अमेरिकन महिला है जिसने पिछले दिनों भारत में ४ मास तक पर्यटन कर के इसे लिखा है। इस ने भारत के सम्बन्ध में जो कुछ लिखा है वह महात्मा गांधी जी के शब्दों में गन्दी नाली के इंस्पेक्टर की रिपोर्ट है। भारतभर का कूड़ा करकट इकट्ठा कर इस पुस्तक रूपी गन्द की टोकरी में ला जमा किया है। यह युरोपियन जातियों की भारत के साथ राज नैतिक चाल है, जिसका उत्तर देने के लिये प्रत्येक भारतवासी को तय्यार हो जाना चाहिये।

'ज्योति' की पाठिकाओं को यह सुन कर हर्ष होगा कि भारत वर्ष के विषय में फैलाये गये इस विष को दूर करने के लिये जहाँ अन्य महानुभाव पुस्तकें लिख रहे हैं वहाँ एक भारतीय विदुषी महिला ने भी इस काम को अपनेहाथ लिया है। श्रीमती चन्द्रावती जी लखनपाल बी. ए. (धर्म पत्नी प्रो० सत्यव्रत जी सिद्धान्तालङ्कार, गुरुकुल कांगड़ी) ने मिस मेयो की इस पुस्तक का अनुवाद उत्तर सहित लिखा है, जो शीघ्र ही प्रकाशित होने वाला है। हमें पूर्ण आशा है कि हमारी विदुषी बहिन के उत्तर से भारतीय देवियाँ लाभ उठाएँगी।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

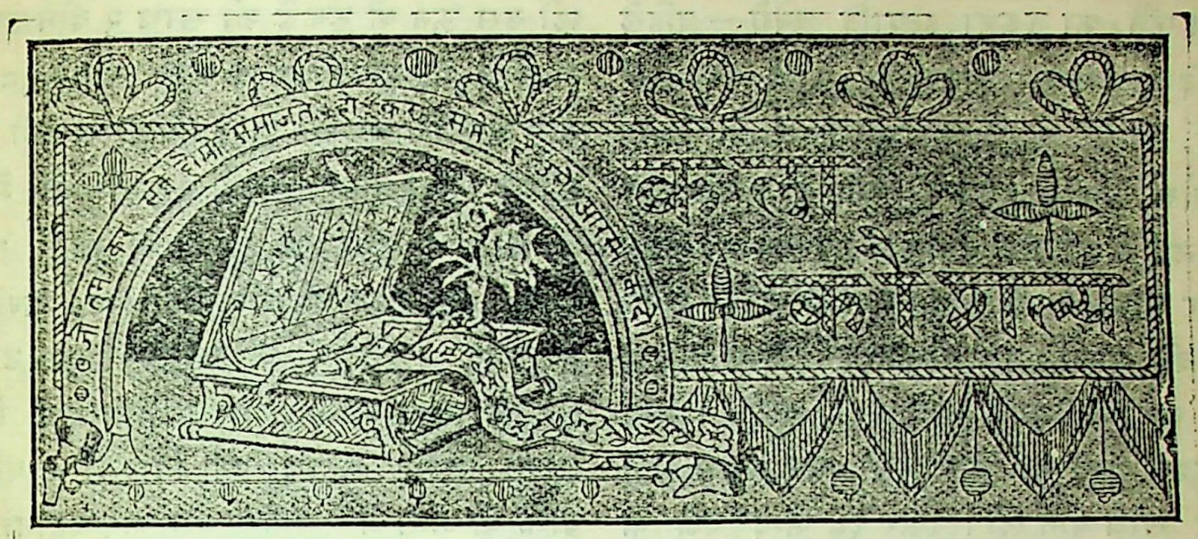

बच्चे के बूँट

यह बूट मुलायम सफेद ऊन के बहुत अच्छे लगते हैं। १ औंस ऊनमें बन जाते हैं। १६ नं० की सलाइयां आवश्यक हैं।

यह तीन या चार महीने के बच्चे के ठीक आ जांयगे परन्तु यदि इस से बड़े नाप के चाहिये तब बर्लिन ऊन और १५ नं० की सलाइयों से बनालो। आरम्भ में ५७ फन्दे चढ़ाओ और १ सीधी पंक्ति, १ उल्टी और १ सीधी पंक्ति बीनो।

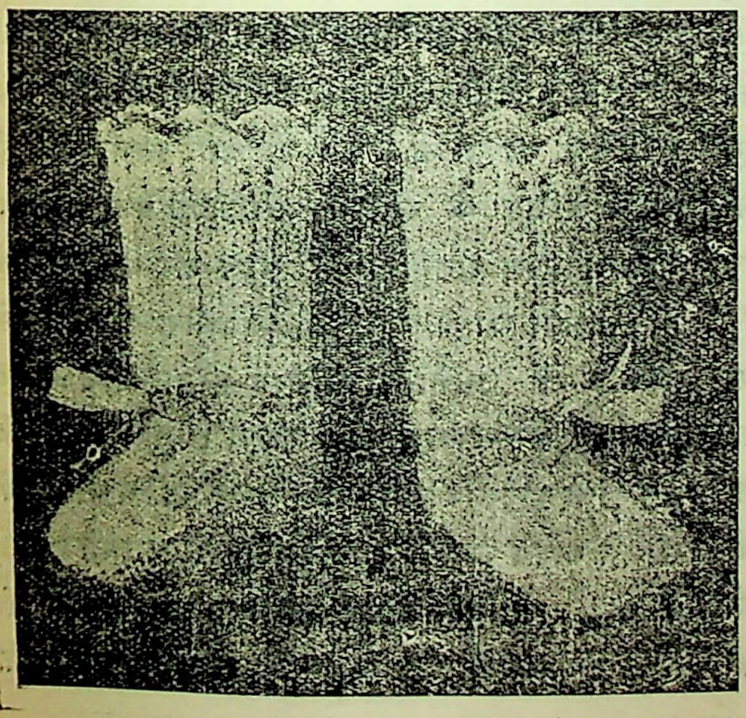

४ पंक्तिः—१ सीधा, १ बनाना (ऊन को सलाई पर लपेटना) १ सीधा, १ सादा, १ सीधा, सादे के सीधे पर से उतार दो, २ इकट्ठा १ सीधा, १ बनाना इस प्रकार पंक्ति के आरम्भ से ८ दफ़ा और बीनो अन्त में १ फन्दा सीधा लगाओ।

५ पंक्तिः—सादी उल्टी। ४ थी, और ५ वीं पंक्ति को ३ दफ़ा और बीनो।

१२ पंक्तिः—१ सीधा, * २ इकट्ठा, ५ सीधे * और *से * तक बार २ बनाओ अन्त तक। ४६ फ़न्दे रहते हैं। १ पंक्ति सीधी, २ पंक्ति उल्टी बीनो।

पैर पर के नमूने की पहिली पंक्तिः—सीधे तरफ़ से बीनते हुवे १ सीधा, १ उल्टा बार २ क्रम से सारी पंक्ति।

दूसरी पंक्तिः—१ सीधा, फिर २ सीधे, १ उल्टा बार २ सारी पंक्ति में। इन दो पंक्तियों को १२ दफ़ा और बीनो, अर्थात् २६ पंक्तियाँ सारी बीनो इस के बाद दो पंक्तियाँ सीधी बीनो। २ उल्टी बीनो।

डोरी व फ़ीता डालने के लिये एड़ी पर के छेद बनानाः— १ सीधा, * १ बढ़ाना, २ इकट्ठा, १ सीधा; *चिन्ह से बार २ अन्त तक। २ पंक्तियाँ उल्टी बीनो, १ पंक्ति सीधी बीनो, फिर ४ पंक्तियाँ पैर के नमूने की बीनो।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अब पंजे का टुकड़ा इत्यादि बनेंगे— पहिले १८ फ़न्दे एक अलग सलाई पर सीधे बीन कर रख लो अगले १३ फ़न्दे नमूने के अनुसार बीन लो और बाक़ी १८ फ़न्दे बिना बिने पड़े रहने दे । सलाई लेकर बीच के १३ फ़न्दों को २४ पंक्ति तक पैर के नमूने के बीन जाओ फिर १० पंक्ति सीधी बीन जाओ । ऊन तोड़लो कोई ३ व ४ इञ्च लम्बा रख कर फ़न्दे बन्द नहीं करो । अब पहिले रक्खे हुवे १८ फ़न्दों के पास जाओ ऊन तोड़कर सीधे बीन लो । फिर १८ फ़न्दे पंजे के बग़ल में से एक २ करके उठा लो । तथा ऊन खींच खींच कर बनाओ और पंजे के फ़न्दे बीन लो । फिर पंजे के दूसरी तरफ़ से भी १८ फ़न्दे उठा लो उस ऊन के टुकड़े को साथ २ बीन डालो जिस से जोड़ मज़बूत हो जाय और बाक़ी १८ फ़न्दे भी बीन डालो । अब ८५ फ़न्दे होंगे । अगली ३ पंक्तियाँ सीधी बीनो फिर अगली २० पंक्तियों में से एक में पंक्ति के बीच के फ़न्दे के दोनों तरफ़ दो इकट्ठा बीन कर घटाओ जैसे (४० फ़न्दे बीनकर २ इकट्ठा, १ सीधा, २ इकट्ठा फिर ४२ सीधे) १ पंक्ति सारी सीधी । इसी प्रकार क्रम से घटाते जाओ परन्तु घटाव की पिछली ८ पंक्तियों में पंक्ति के अन्त में २ इकट्ठा बीन कर घटाना चाहिये। एड़ी के लिए फ़न्दों को बन्द कर दो और मोज़े की शकल को सीकर ठीक कर दो ।

मसजिद के सामने बाजा ।

(ले० — श्री उमाशंकर जी उपसम्पादक "आज")

ति के अगस्त मासके "विचार-प्रवाह" स्तम्भ में श्री प्रेमचन्द्र जी के हिन्दू-मुसलिम समस्या सम्बन्धी मत की चर्चा की गयी है । जिस से मालूम होता है कि कुछ ऐसे भी सज्जन हैं जिन की सम्मति में नमाज़ के समय बाजा न बजाने से हिन्दुओं का कुछ जाता नहीं। वास्तव में यह बात इतनी छोटी नहीं है । जो इस देश में नहीं रहता या जिसे इस देश की स्थिति का ठीक ठीक ज्ञान नहीं है उसके लिये निश्चय ही यह बात बहुत छोटी मालूम होगी कि हिन्दुस्तान में हिन्दू लोग इस बात पर इतना आग्रह क्यों करते हैं कि नमाज़ के समय बाजा बजे ही । देश की इसी में भलाई है कि लोग इस प्रश्न पर गम्भीरता के साथ विचार करें और इसे बिल्कुल छोटी बात न समझें ।

वास्तव में यह मसजिद के सामने बाजे का ही प्रश्न नहीं है बल्कि यह हिन्दुओं के नागरिक अधिकार का प्रश्न है। अगर बात इतनी ही होती कि मसजिद के सामने नमाज़ के वक्त बाजा न बजे तो कुछ अवसरों को छोड़ कर यह सम्भव हो सकता था । हिन्दुओं के अनेक अवसर ऐसे होते हैं कि उनका बाजा बन्द होना थोड़े समय के लिये भी सम्भव नहीं होता। मुसल्मानों की यह बिल्कुल नयी ही आपत्ति है कि मसजिद के सामने बाजा न बजे । मसजिद के सामने नमाज़ के वक्त बाजा बजाने पर आपत्ति तो की ही जाती है इस के साथ ही ऐसी भी खबरें आती हैं कि

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

नमाज़ का वक्त न होने और मसजिद निकट न होने पर भी यह बिल्कुल नयी और विचित्र आपत्ति की जाती है। प्रयाग से ख़बर आयी थी कि कुछ हिन्दू अपने घर में हारमोनियम बजा रहे थे, इस पर भी मुसल्मानों ने आपत्ति की। काशी में पिछले मुहर्रम के दसवें दिन ८ बजे रात हिन्दू लोग एक मन्दिर में नियमानुसार बाजे के साथ रामायण गा रहे थे। मुहर्रम का जुलूस वगैरह निकल चुका था। यह ख़याल किया गया था कि अब मुहर्रम शान्ति पूर्वक बीत गया। अख़बार वालों ने ख़बरें भेज दी थीं कि काशी में मुहर्रम शान्ति पूर्वक बीत गया। लेकिन उक्त बाजे पर मुसल्मानों ने आपत्ति की। वह सोमवार का दिन था। हिन्दुओं ने कहा कि हम प्रति सोमवार को इस मन्दिर में इसी वक्त एकत्र होकर रामायण पढ़ते हैं और हम अपना यह नियम तोड़ नहीं सकते। हिन्दू लोग न माने और अपना रामायण पढ़ने लगे। इस पर मुसल्मानों ने मन्दिर में घुस कर हिन्दुओं को मारा पीटा। मुसल्मानों पर मुकद्दमा चला पर पीछे से समझौता होगया। मुसल्मानों ने १००) जुर्माना देना स्वीकार किया और हिन्दुओं के सब समय बाजा बजाने के अधिकार को स्वीकार किया। पीछे डलहौज़ी से यह भी ख़बर आई थी कि एक मुसल्मान ने अपनी दूकान के आगे आर्यसमाजियों को कीर्तन करने से रोका। ये केवल दो तीन उदाहरण हैं। ऐसी घटनाएँ बराबर देश में हो रही हैं। इन से पता चलता है कि केवल नमाज़ के समय मसजिद के सामने बाजा बजने न बजने का ही प्रश्न नहीं है बल्कि प्रश्न का रूप यह होता जा रहा है कि किसी भी समय और किसी भी स्थान में बाजा बजे या न बजे।

मुसल्मानों का चाहे गाने बजाने के बिना काम चल जाय लेकिन हिन्दुओं का इसके बिना काम नहीं चल सकता। हिन्दुओं के यहाँ तो रोज गाने बजाने का शग़ल रहता है। शादी विवाह पड़ने पर लगातार कई दिन गाना बजाना होता रहता है। हिन्दुओं के यहाँ बाजे गाजे के साथ जुलूस निकालने के अनेक अवसर होते हैं। उनके यहाँ बच्चे के जन्म होने पर गाना बजाना होता ही है पर जब कोई भाग्यशाली बूढ़ा मर जाता है तो भी खुशी में बाजे गाजे के साथ उस के मृतक शरीर का जुलूस निकाला जाता है। इस देश में मुसल्मान कहाँ नहीं हैं और मसजिदें कहाँ नहीं हैं। अगर उन की यह नयी माँग मान ली जाय तो हिन्दुओं का सारा सांसारिक और धार्मिक कार्य बन्द हो जायगा। हिन्दू लोग अपने इष्टदेव की पूजा करते हैं तो भी घण्टा-घड़ियाल बजाते हैं। मतलब यह कि गाना बजाना तो हिन्दुओं के धार्मिक और अन्य सांसारिक जीवन का बहुत ही महत्त्व पूर्ण अंग है; यह उनके धार्मिक और नागरिक अधिकार का प्रश्न है।

मुसल्मानों की यह नई माँग है कि मसजिद के सामने बाजा न बजे। उन्होंने यह आपत्ति धार्मिक आधार पर नहीं खड़ी की है। बड़े बड़े मुसल्मानों ने यह मान भी लिया है कि इस्लाम धर्म यह नहीं कहता कि मसजिद के सामने बाजा न बजे। पर हिन्दुओं के लिये तो यह धार्मिक प्रश्न भी है। उनके मन्दिरों में जब आर्ती होती है तो घण्टा घड़ियाल बजता है। प्रयाग के मुसल्मानों की इस नयी और अनुचित माँग के कारण और वहाँ के अधिकारियों के उनका पक्ष ग्रहण करने के कारण वहाँ दो बरसों से हिन्दुओं की धार्मिक रामलीला नहीं मनायी जा रही है। वहाँ

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

रामलीला का समारोह दस दिन तक बराबर रहता है। दसवें दिन बड़े बड़े रामदल निकलते हैं। पाँच छः दिन रात को श्रृङ्गार और रोशनी होती है। सब जगह मुसल्मान हैं और सब जगह मसजिदें हैं। भला बाजे के बिना यह सारा समारोह कैसे हो सकता है। कहाँ कहाँ बाजा बन्द किया जाय। दसवें दिन शाम के वक्त जो रामदल निकलते हैं वे बहुत बड़े बड़े होते हैं और उन में थोड़ी थोड़ी दूर पर बाजे वाले होते हैं और बराबर लोग "जय जय" की पुकार करते रहते हैं। जिस मार्ग से ये रामदल निकलते हैं उस मार्ग में स्थान स्थान पर मसजिदें भी हैं। जिन लोगों ने प्रयाग के रामदल देखें हैं वे जानते हैं कि रामदल के बाजों का नमाज़ के वक्त भी मसजिदों के सामने बन्द होना बिलकुल नामुमकिन है। अगर हिन्दू लोग अपना इतना बड़ा धार्मिक त्यौहार न मनावें तो बाजे न बजना ज़रूर मुमकिन है वहाँ तो गुण्डे मुसल्मान ज़िद्द किये हैं, और अधिकारी लोग उनकी पीठ ठोक रहे हैं। उनके लिये यह सर्वथा सम्भव है कि जब ये बड़े बड़े रामदल निकलने लगें तो वे अन्य स्थानों की मसजिदों में नमाज़ पढ़ लें और इस प्रकार उनकी नमाज़ में कोई बाधा न हो। लेकिन उन्हें तो उपद्रव करना रहता है इसी से वे बड़ी संख्या में मसजिदों में एकत्र हो जाते हैं और मौका पाकर चुप छिप कर उपद्रव कर देते हैं अधिकारी लोग इन उपद्रवियों का दमन करने में असमर्थ हैं। इसी लिये कहा जाता है कि वहाँ ब्रिटिश राज नहीं। बल्कि गुण्डों का राज स्थापित है।

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका कि यह मसजिद के सामने नमाज के वक्त बाजे का प्रश्न नहीं है। यह हिन्दुओं के नागरिक और धार्मिक अधिकार का प्रश्न है। सवाल यह है कि आम सड़क पर बाजा बजे या न बजे। प्रश्न यह है कि हिन्दुओं के धार्मिक जुलूस बाजे गाजे के साथ निकलें या बिना बाजे के निकलें। प्रश्न यह है कि हिन्दुओं के मन्दिरों में घण्टा घड़ियाल बजें या न बजें। प्रश्न यह है कि हिन्दुओं के शादी विवाह और अन्य अनेक उत्सवों के अवसरों पर गाना बजाना हो या न हो। सवाल यह है कि हिन्दू लोग बाजे के साथ रामायण आदि अपनी धार्मिक पुस्तकें पढ़ें या न पढ़ें। प्रश्न यह है कि हिन्दू लोग अपने घर में ही गावें या रोवें। ये ही सवाल हैं और ये हिन्दुओं के धार्मिक और नागरिक अधिकार के प्रश्न हैं। हिन्दुओं को चाहिये कि वे अपने धार्मिक और नागरिक अधिकारों की रक्षा करने में दृढ़ता दिखावें।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

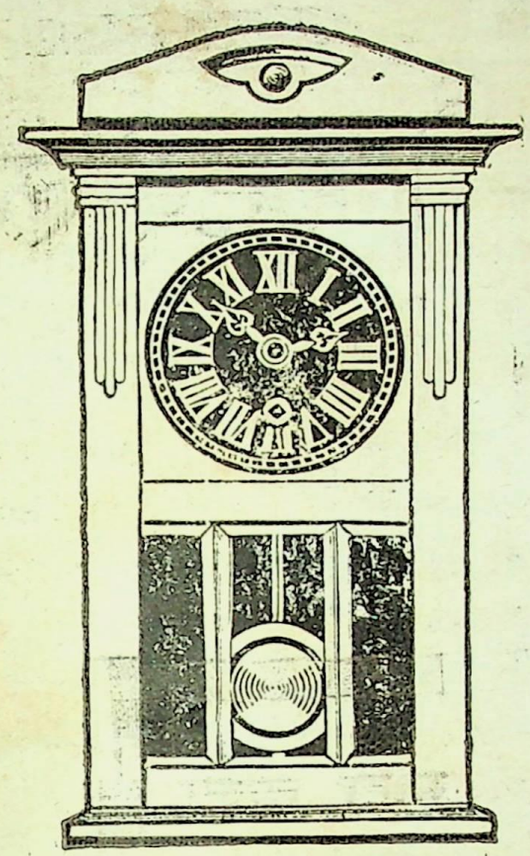

PRICE RS. 3.

Our ... The Best New The Cheapest Model ... and the Clock ... most economical wall Clock gives correct ime and guaranteed for three tyears. Try once and convinc yourself.

PriceRs. 3.

V. S. WATCH Co.,
P. B. 105, MADRAS.

मुफ्त ! मुफ्त !!

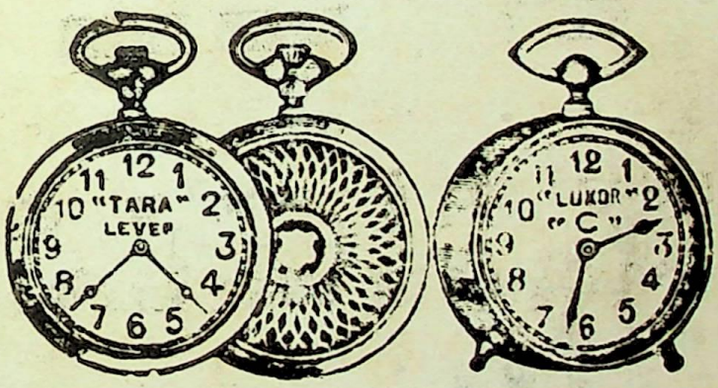

सी, रजिस्टर्ड टाइमपीस

हर किसी को मुफ्त

हमारी "तारा, लिव्हर १८ करेट रोल्ड गोल्ड पाकेट वाच" जिसके पीछे उत्तम नक्काशी की गयी है, गारण्टी ५ वर्ष, मूल्य ५) रु०, मंगाने वाले को ऊपर की टाइम्पीस मुफ़्त दी जायगी।

पताः— केप्टेन वाच कम्पनी, पोस्ट बाक्स २६५ मद्रास।

Captain Watch Co. P. B, 265. Madras.

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अपने बच्चे को फुटबॉल खिलाओ

तुम्हारा बच्चा बहुत मोटा ताज़ा और खुश मिज़ाज़ होगा यदि तुम हम से उस के लिए फुटबॉल खरीदोगे !

खेल के सब तरह के सामान का स्टाक हमारे यहां है। जल्द आर्डर भेजिये।

बी० डी० गुप्ता एण्ड को०

पंच कुई रोड, दिल्ली।

चौधरी हुलासराय प्रिन्टर तथा पब्लिशर के लिए गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में मुद्रित।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

Regd. NO. A. 1711

वर्ष ८, खंड ८] दिसम्बर, १९२७ [संख्या ७, ८

ज्योति

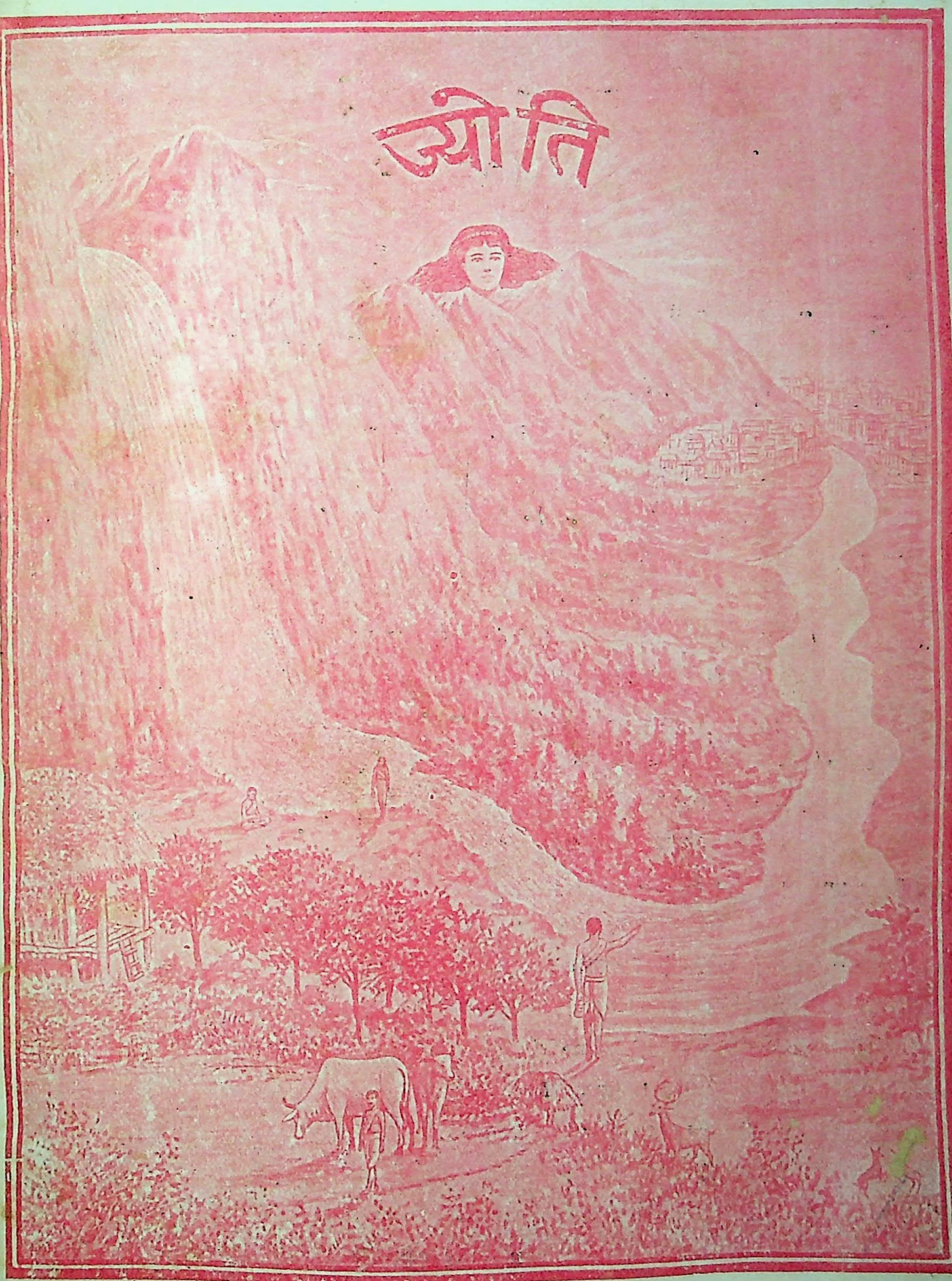

वार्षिक मूल्य ४।) सम्पादिका— स्त्रियों और विद्यार्थियों से ३)
प्रति संख्या ।।) विद्यावती सेठ बी. ए. विदेश का मूल्य ६)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विषय सूची।

विषय	पृष्ठ से
१. अर्तानुनय 'कविता' (श्री वीरहरि जी विद्यार्थी)	२६५
२. क्रियामय बनो (श्री पं० प्रियव्रत जी विद्यालङ्कार)	२६६
३. सरकार और हेमन्त 'कविता' (श्री कविवर श्री प्रेमी जी)	२७०
४. सती महिमा 'गल्प' (श्री विश्वम्भर सहाय जी)	२७१
५. श्री अमरनाथ यात्रा (श्री प्रो. सांझाराम जी)	२७७
६. पूज्य प्रभो 'कविता' (श्री जगन्नारायण देव शर्मा)	२८५
७. परिवर्तन 'गल्प' (श्री सत्यदेव शर्मा)	२८६
८. बलिदान का बीज 'कविता' (श्री जगन्नारायण देव शर्मा)	२८८
९. मेरा मिस हज़कैरी से सम्भाषण (श्रीमति अञ्जनादेवी जी)	२८९
१०. प्रेम पथिक 'कविता' (श्री पं० जगन्नारायण देव शर्मा)	२९१
११. स्त्री जाति और स्वतन्त्रता (श्री कुमारी सीता देवी जी)	२९२
१२. पाखण्डी 'गल्प' (श्री बांकेलाल जी कपूर)	२९५
१३. असहाय देवियां 'कविता' (श्री पंडित जगन्नारायण देव शर्मा)	२९७
१४. स्त्रियों के अधिकार (एक देवी)	२९
१५. सन्ध्या की अन्तिम किरण 'कविता' (श्री पं० प्रियहंस)	३०
१६. आर्यो ! बदला लो !! (श्री चतुरसेन शास्त्री)	३०२
१७. सामाजिक क्रान्ति के इतिहास का एक पृष्ठ (श्री पं० चन्द्रगुप्त जी विद्यालंकार)	३०४
१८. ईश्वर का नाम जपना (श्री कृष्णानन्द जी)	३०९
१९. सुखी जीवन की प्राप्ति, (श्री पं० ज्ञानचन्द्र जी शास्त्री)	३११
२०. अमर जीवन 'कविता' (श्री श्रीपति)	३१४
२१. मोहिनी के आंसू (गताङ्क से आगे)	३१५
२२. बालकों में अपराध विज्ञान, (श्री रामचन्द्र ऐयर सम्पादक ब्रह्मचर्य)	३२१
२३. कुमोद्यान	३२९
२४. वनिता विनोद	३३०
२५. वैज्ञानिक संसार	३३८
२६. कन्या गुरुकुल समाचार	३४५
२७. हमारी मञ्जुषा	३४९
२८. विचार प्रवाह	३४

ज्योति सम्बन्धि पत्रव्यवहार—

आचार्य्या कन्या गुरुकुल

कोठी नं० २१, २२, राजपुर रोड़
देहरादू

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वर्ष ८ } कार्तिक, मार्गशीर्ष सं० १९८४ * नवम्बर, दिसम्बर सन् १९२७ { संख्या ७, ८

आर्त्तानुनय

(श्री 'वीरहरि' विद्यार्थी)

नाथ ! अब दीजे यह वरदान ।

एक-वार, फिरसे प्रितयम को, देख करूँ रस-पान ।
युगपद-पद्म-पराग प्रेम से, सिर धर दे दूँ जान ॥
दुखों का हो जावे अवसान ।
नाथ ! अब दीजे । यह वरदान ॥ १ ॥

सच्चे, सीधे, सभी-मार्ग प्रिय ! हुए कण्टकाकीर्ण ।
उल्टी गंगा बहे आजकल, धर्म हुआ संकीर्ण ॥
नाश हो गर्वीलों का मान ।
नाथ ! अब दीजे यह बरदान ॥ २ ॥

सास, जिठानी, जेठ आदि से, पीड़ित हो अत्यन्त ।
आत्मोत्सर्ग हुआ निश्चय सब आशाओं का अन्त ॥
रहे तव दुखी जनों पर ध्यान ।
नाथ ! अब दीजे यह वरदान ॥ ३ ॥

भूख, प्यास सह सकती हूँ पर, प्रियतम का अपमान ।
सहन किसी विध नहीं, भले हो जीवन का बलिदान ॥
सफल हों सु जनों के अरमान ।
नाथ ! अब दीजे यह वरदान ॥ ४ ॥

धर्म, नीति की चाल चलूं पर, तोभी मैं बदनाम ।
'चुट्टनि' 'सुस्तनि,' 'सांपिनि,' 'वेश्या' तानेहों अविराम ॥
रखो कुछ महिलाओं का मान ।
नाथ ! अब दीजे यह वरदान ॥ ५ ॥

नारि-जाति पर नर-तनु-धारी, करते भारी पाप ।
द्विपद चतुष्पद बने सत्य ही, देते जो संताप ॥
सपदि हो अबलाओं का त्रान ।
नाथ ! अब दीजे यह वरदान ॥ ६ ॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

क्रियामय बनो !

[ले०—श्री० पं० प्रियव्रत जी विद्यालंकार]

अभी जब कि ऋषि दयानन्द की मृत्यु लोगों की आँखों में नयी थी, उस समय के उनके अनुयायीगण अमेरिका के प्रसिद्ध मुनि ऐण्ड्रो जैक्सन डेविस के उस लेख का दीपमाला या आर्य्यसमाज के जन्म-दिन जैसे महत्त्व-पूर्ण अवसरों पर बड़े गर्व के साथ वर्णन किया करते थे जिस में उसने आर्य्यसमाज को लक्ष्य में रखते हुए कहा है कि वह भारत में सुलगायी गयी एक ऐसी आग को देख रहा है जो थोड़े ही समय में सम्पूर्ण विश्व में फैल कर धर्मों, जातियों के और राज्यों की परम्परागत बुराइयों को क्षण-भर में जला कर राख कर देगी और तदनन्तर एक ऐसी मनुष्य जाति को जन्म देगी जिस के साथ कि उस की शुद्ध नैसर्गिक पवित्रता का दृढ़ सम्बन्ध रहेगा। उस समय के ऋषि के अनुयायी डेविस के उक्त लेख को पढ़ कर सचमुच समझा करते थे कि वह समय शीघ्र ही आने वाला है जब कि आर्य्यसमाज के माथे पर ऐसे उद्भट विजय का सेहरा बांधा जायेगा। आज भी ऐसे आर्य्य पुरुषों की कमी नहीं है जो समझते हैं कि अगर संसार का कभी भला हो सकता है, अगर पृथिवी पर कभी फिर सत्ययुग लाया जा सकता है, तो सिर्फ मनुष्य जाति के बच्चों तक वेदों का पवित्र सन्देश पहुंचाने से। और इस दुःसाध्य काम को कोई कर सकता है तो वह है केवल आर्य्यसमाज।

आज ऋषि को इस धरा-धाम को छोड़े आधी शताब्दी हो चुकी है। वे जिस आग को सुलगा गये थे उस की अब क्या अवस्था है इस का यदि हम गम्भीरता से निरीक्षण करें तो हमें डर लगता है कि कहीं मुनिवर डेविस की भविष्य वाणी और हमारी आशा केवल भविष्य वाणी और आशा ही न रह जायें। ऋषि की मृत्यु के पश्चात् शुरु शुरु में अवश्य ही आर्य्यसमाज की गति के भीतर जीवन दीखता था। आर्य्य-समाज बड़ी तीव्र गति से फैला। उस के प्रचार और संस्थाओं की देश में धूम मच गई। पर यह सब कुछ थोड़े समय के लिये ही रहा। उस के पश्चात् उस की गति बहुत ही धीमी पड़ गयी। और कहीं-कहीं तो स्थिरता के चिन्ह दीख पड़ने लगे, उस स्थिरता के जो कि अगर आरम्भ में ही सचेष्टता न दिखायी गयी तो वृद्धि की जगह नाश की ओर खींचेगी। हम जिस चाल से आगे बढ़ रहे हैं उस से तो इतनी भी आशा नहीं होती कि आर्यसमाज कभी अपना सन्देश उतने लोगों तक भी पहुंचा सकेगा जितने लोगों तक कि बौद्ध, मुसलमान और ईसाई लोगों ने अपने अपने धर्मों के सन्देशों को पहुँचाया था। आज आधी मनुष्य जाति आवश्यकता पड़ने पर "अहिंसा परमो धर्मः" और "बुद्धं शरणं गच्छामि" के झण्डे के नीचे इकट्ठी हो सकती है। पन्द्रह बीस करोड़ मनुष्य कुरान की शिक्षाओं के लिए सब कुछ करने धरने को तैयार हैं। महात्मा ईसा को

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अपना उद्धारकर्त्ता मानने वाले लोगों की संख्या चालीस पचास करोड़ से कम न होगी। तिस पर भी ये धर्म अपने विस्तार के लिए जितनी ज़बरदस्त कोशिश कर रहे हैं उसे जाने ही दीजिये। यह बात ध्यान में रखने की है कि इन धर्मों का इतना व्यापक प्रचार कोई गत दो तीन शताब्दियों की बात नहीं है। इन धर्मों ने अपना यह रूप महात्मा बुद्ध, मुहम्मद और ईसा के देहावसान के कुछ ही शताब्दियों बाद प्राप्त कर लिया था। इस हिसाब से ऋषि की मृत्यु से लेकर अब तक आर्य्यसमाजियों या वेदानुयायियों की जितनी संख्या हो चुकनी चाहिये थी उस का शतांश भी अभी नहीं हुआ है। प्रश्न उठ सकता है कि यदि आर्य्यसमाज जिस वेग से फैलना चाहिये था उस वेग से नहीं फैल रहा है और फैलने के स्थान में स्थान स्थान पर स्थिरता के चिन्ह दृष्टि में आते हैं तो इस का यही अर्थ क्यों न ले लिया जाय कि मनुष्य समाज को आर्य्य समाज की आवश्यकता ही नहीं। लोगों में वे ही सिद्धान्त अधिक से अधिक अनुयायी उत्पन्न कर सकते हैं जिनकी लोगों को ज़रूरत हो। अपने अपने समय में बौद्धधर्म, ईसाइयत और इस्लाम की लोगों को ज़रूरत थी और वे प्रचार पा गये। आर्य्यसमाज की शायद लोगों को ज़रूरत न हो और इसी लिए वह उस तीव्रता से न फैल रहा हो? प्रश्न ऐसा नहीं है जिस के उत्तर में कहा जा सके कि 'ठीक' है। आर्य्यसमाज की आवश्यकता है। भारत को उस की आवश्यकता है और भारत के बाहर दुनिया को भी उसकी आवश्यकता है। ऋषि दयानन्द की कोटि के महात्मा संसार को वह पाठ नहीं सिखाया करते जिस का सीखना उस के लिये आवश्यक न हो। आर्य्यसमाज की आवश्यकता है। भारत की जो अवस्था आज दीख रही है वह जब तक ऐसी ही बनी रहेगी तब तक आर्य्य-समाज की आवश्यकता है। ऋषि दयानन्द की कोटि के महात्मा संसार को वह पाठ नहीं सिखाया करते जिस का सीखना उस के लिए आवश्यक न हो। आर्य्यसमाज की आवश्यकता है। भारत की जो अवस्था आज दीख रही है वह जब तक ऐसी ही बनी रहेगी तब तक आर्य्यसमाज की आवश्यकता है। आज पवित्र धर्म—वह धर्म जिस के बिना मनुष्य जाति एक क्षण के लिए भी वास्तविक अर्थ में जी नहीं सकती—पाखण्डियों और धर्मध्वजियों की स्वार्थ-सिद्धि का साधन बना हुआ है। असंख्य धार्मिक और सामाजिक कुरीतियें हिन्दुजाति की जड़ों को खोखला कर रही हैं। उन्हें हटाकर यदि दूर न फेंक दिया गया तो हिन्दु जाति के विशाल वृक्ष के सदैव के लिए गिर जाने में अणु भर सन्देह नहीं है। आज अछूतों, बालविवाह और विधवाओं की समस्या हिन्दु जाति को परेशान कर रही है। जन्मानुसार वर्णव्यवस्था जिस ने हिन्दु-जाति को सैकड़ों भागों में बाँट रखा है उस की उन्नति के राह में हिमालय बन कर खड़ी हुई है। यह सब कुछ जब तक नहीं हट जाता तब तक आर्य्यसमाज की आवश्यकता है। "सनातनधर्म-महा-मण्डल" या "हिन्दु-महासभा" इस भारी भार को अपने कमज़ोर कन्धों पर नहीं उठा सकते यह वर्षों के अनुभव ने सिद्ध कर दिया है। हिन्दुओं के अन्दर वह शक्ति नहीं है कि वे अपनी रक्षा आप कर सकें, और जब तक हिन्दु अपने आप को दृढ़ और शक्तिशाली नहीं बना लेते तब क्या सामाजिक और क्या राजनीतिक किसी भी मार्ग में भारतीय आगे नहीं बढ़ सकते। इसलिये भारत को आर्य्यसमाज की परम आवश्यकता है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

भारत के बाहर संसार को भी आर्य्यसमाज की आवश्यकता है। बौद्ध-धर्म, अनुयायियों की दृष्टि से यद्यपि संसार में शायद सब से बढ़ कर है फिर भी उस के सिद्धान्तों में वह नवीनता नहीं रही है कि वह फिर से संसार को अपनी ओर खेंच कर शान्ति दे सके। उस के अपने अनुयायी ही उस के मुख्य और अधारभूत सिद्धान्तों से योजनों पिछड़े हुए हैं। और न ही आजकल का संसार उसके सिद्धान्तों को उस रूप में मान सकता है जिस रूप में कि वे कभी माने जा चुके हैं। इस्लाम आज अपने ही अनुयायियों से ठुकराया जा रहा है। ईसाइयत योरोप को भूमि-लोलुप जातियों की निन्दित इच्छाओं की पूर्त्ति का एक उत्तम साधन-मात्र होने के सिवा और कुछ रह नहीं गयी है। ऐश्वर्य से मत्त, भोगों में लिप्त और विलासिता से दली हुई मनुष्य समाज की आत्मा प्रकृति-वाद से खिझने लग पड़ी है; जिस के चिन्ह प्रकृतिवाद की मातृभूमि योरोप में ही वहाँ के अनेक विचारकों की प्रकृति-वाद की तीव्र समालोचना और उस से असन्तोष के रूप में प्रकट हो रहे हैं। आज पाश्चात्य सभ्यता से तंग आयी हुई मनुष्य जाति किसी नवीन सन्देश को माँग रही है जो कि उसे वास्तविक शान्ति दे सके। ईसाइयत या इस्लाम के सन्देशों से आज का जगत् संतुष्ट नहीं होना चाहता। तब संसार कहाँ से वह नया सन्देश प्राप्त करेगा? आर्य्यसमाज के पास एक सन्देश है जिसे कि वह संसार को दे सकता है वह सन्देश उतना ही पुराना होने पर भी जितना कि पुराना स्वयं विश्व ब्रह्माण्ड है, नवीन है। क्यों कि लोग उसे बहुत पुराने समय से भूल चुके थे। वह सन्देश है—"फिर वेदों की ओर लौट चलो।" जब तक मनुष्य जाति इस सन्देश को सुन कर, उस पर आचरण कर के, स्वर्ग के देवताओं तुल्य नहीं बन जाती तब तक संसार को आर्य्यसमाज की अवश्यकता है।

तो फिर आर्य्यसमाज उस द्रुत गति से क्यों नहीं बढ़ रहा जिस की ज़रूरत है? इस का उत्तर बहुत ही सुगम है। आर्य्यसमाज अपने आप को एक धार्मिक संस्था कहता है। और सच-मुच उस का काम है भी वैदिकधर्म का प्रचार करना। पर धर्म क्या वस्तु है और उस की चरितार्थता किस में है, इस बात को हम भूल रहे हैं। धर्म क्या वस्तु है इस की मैं यहाँ विवेचना नहीं करना चाहता। एक वैदिकधर्मी के लिये जो कुछ वेदों में करने के लिये कहा गया है, वह सब धर्म है। पर इतना निर्विवाद है कि धर्म की चरितार्थता क्रिया में है। यदि कोई धर्म क्रिया में नहीं आता तो इस के सिद्धान्त चाहे कितने ही उच्च क्यों न हों उस का मानना और न मानना एक जैसा ही है। संसार के किसी धर्म की उच्चता या हीनता उस के अनुयायियों के आचरण को देख कर परखेगा। मेरा धर्म देवदत्त के धर्म से तभी उच्चतर कहा जा सकता है जब कि वह मेरी क्रियाओं में आकर मुझे देवदत्त से ऊंचा बना दे। मुझे अपने से श्रेष्ठ समझ कर ही देवदत्त मेरे सिद्धान्तों को मानने के लिये तैय्यार हो सकता है। आर्यसमाज वैदिकधर्म का प्रचार करना चाहता है, वह चाहता है कि सब मनुष्य उन्हीं सिद्धान्तों को मानने लग जायें जिन्हें कि वह आप मानता है। वैदिकधर्म क्या है—इसके सिद्धान्त क्या हैं, इन सब बातों का सब के समझने योग्य भाषा में ऋषि दयानन्द ने अपने सत्यार्थप्रकाश आदि में प्रतिपादन किया है। उन सिद्धान्तों को क्रिया में लाने वाला व्यक्ति कहाँ तक ऊँचा उठ सकता है इस का दृष्टान्त-स्वरूप अपना जीवन

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उन्होंने आर्य्य जनता के सामने रख दिया है। तो क्या हम वैदिकधर्म को क्रिया में ला रहे हैं? क्या ऋषि का जीवन सदैव हमारी आँखों में रहता है? हर साल हम दीपमाला, ऋषि-उत्सव, ऋषि बोधोत्सव, आर्यसमाज के स्थापन दिवस आदि अवसरों पर वैदिक धर्म के तत्वों की आलोचना करते और सुनते हैं, ऋषि-जीवन को कथा करते और कराते हैं। हम तीन-तीन लाख की संख्या में इकट्ठे होकर दयानन्द जन्म-शताब्दि भी मना लेते हैं। पर कभी इस पर भी विचार करते हैं कि हम क्यों संसार को वैदिक-धर्म का सन्देश देना चाहते हैं और वह कौनसा जादू था जिसने ऋषि दयानन्द को ऋषिदयानन्द बना दिया था? क्या जब हम जन्मानुसारी जात-पात का तीव्र खण्डन कर रहे होते हैं, तब कभी हम सोचते हैं कि संसार हमारे घरों की ओर पहिले देखेगा? जब हम संस्कारों की फ़िलासफी का पाण्डित्य-पूर्ण मण्डन कर के लोगों से अपील करते हैं कि इन संस्कारों को क्रिया में लाओ, तब क्या कभी हमने सोचा है कि हमारे बच्चे किस तरह पैदा हो रहे और पल रहे हैं? अनीश्वरवादी और नास्तिकों का खण्डन करते हुए कभी हमने यह भी सोचा है कि हमारा ईश्वर पर विश्वास कितना पक्का और उस में भक्ति कितनी गहरी है? प्रकृति-वाद का खण्डन तो हम रोज़ करते हैं पर हमने अपने को अध्यात्म-वादी बनाने की चिन्ता भी कभी की है? किंबहुना, वैदिक धर्म की कोई एक भी ऐसी बात है जिसे हम क्रिया में ला रहे हैं? सच पूछो तो कहते ही कहते रहते हैं करते कुछ भी नहीं। आर्य्य समाजों का काम सिर्फ़ इतना ही रह गया है कि साल में एक वार्षिक उत्सव मना लिया करें। किसी ने हमारा नाम "जलसा धर्म" रखने में कोई ग़लती नहीं की है। तो फिर लोग हम में क्या देखें, किस बात में हमें अपने से श्रेष्ठ समझ कर उन सिद्धान्तों को मानने लगें जिनने हमें उन से श्रेष्ठ बनाया है? लोगों को दिखादो कि "देखो, हमने इन सिद्धान्तों को माना था और हमारी अवस्था इतनी उन्नत होगयी है"। लोग आप से आप तुम्हारे सिद्धान्तों को मानने लगेंगे। क्यों कि वे देखेंगे कि "हाँ, सच-मुच ये सिद्धान्त ऐसे हैं जिन्हें मानने वाले का काया पलट हो जाता है। फिर देखिये आर्य्यसमाज किस शीघ्रता से बढ़ने लगता है, कितनी जल्दी संसार वैदिकधर्म के झण्डे के तले आजाता है।

आदमियों के पहाड़-के-पहाड़ क्यों न सिर पर गिरने लग पड़ें, पर फिर भी अपने सिद्धान्तों पर आचरण करने से न रुकना यही एक ऐसी बात है जो किसी सिद्धान्त या धर्म को व्यापक बना सकती है। बौद्धों का एक मुख्य सिद्धान्त था "अहिंसा" या "सर्वभूतरक्षा"। इतिहास बतलाता है कि आरम्भ काल के बौद्धों ने किस तत्परता से इस सिद्धान्त को आचरण में ढाला था। बौद्ध भिक्षुओं ने समुद्र यात्रा करते समय दूसरे यात्रियों की नौकाओं के भग्न हो जाने पर आप समुद्र में मग्न होना स्वीकार करके भी उन लोगों की प्राण रक्षा करके अपने "सर्वभूत हित" के सिद्धान्त को बचाया था। एक बार नहीं अनेकों बार आरम्भ काल का ईसाइयत का इतिहास बतलाता है कि घोर से घोर आपत्ति के समय भी ईसा के अनुयायियों ने अपने सिद्धान्तों को रक्षा की थी। अनेकों उदाहरण हैं जब कि छोटी २ लड़कियों ने आग में जल जाना स्वीकार किया था पर प्रभु ईसा में विश्वास लाना नहीं छोड़ा और यह बात थी जो बौद्धधर्म और ईसाइयत को इतना फैला

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

गई। पर हम अपने सिद्धान्तों को क्रिया में लाने के लिये कुछ भी कष्ट सहना स्वीकार करते प्रतीत नहीं होते। स्थान-स्थान पर हमारे उत्सव सरकार द्वारा रोक दिये जाते हैं पर हम अपने अधिकार का रौंदा जाना नपुंसक की भाँति सह लेते हैं। सरकार से लोहा लेना तो दूर की बात है, हम अपने सिद्धान्तों पर इस लिये अमल नहीं करते कि कहीं घर की कुछ औरतें और संबन्धियों में से कुछ व्यक्ति हम से रूठ न जायें। तो आप में कौन सी बात है जिससे आप चाहते हैं कि दुनिया आप के सिद्धान्तों को मानने लग जाये ?

आज हम ऋषि दयानन्द के जीवन पर विचार करने के लिये बैठे हैं। उन का जीवन हमें किस बात की शिक्षा दे रहा है ? उन का जीवन घोषणा दे-दे कर कह रहा है कि जो कहो उसे पूरा करो। वे वैदिक धर्म का सन्देश संसार को सुनाते थे और उस का क्रियात्मक उदाहरण होता था उन का अपना व्यक्तित्व। यही कारण था कि उस महा-पुरुष-द्वारा प्रतिपादित वैदिक सच्चाइयों को जगत् सिर झुका कर मान लेता था। एक तरफ़ उन का जीवन उठा लीजिये और दूसरी तरफ वेदों को हाथ में ले लीजिये। आप देखेंगे कि सूक्त के सूक्त उन के जीवन में घट रहे हैं। भला जो व्यक्ति अपने सिद्धान्तों का स्वयं जीवित निदर्शन हो, कौन है जो उस के सिद्धान्तों के आगे सिर न झुका देगा ? कैसे हो सकता है कि उसे सफलता न मिले ?

आज ऋषि-उत्सव के दिन अगर हम इस शिक्षा को अपने जीवन का अङ्ग बना लें कि जो मानेंगे उसे पहिले अपने क्रियामय जीवन में ले आयेंगे तब दूसरों से उसे मानने के लिये कहेंगे, तो वह दिन दूर नहीं रहेगा जब वह स्वप्न पूरा होगा जो कि मुनिवर डेविस ने आज से पचास साल पहले आर्य्यसमाज के सम्बन्ध में लिया था। †

सरकार और हेमन्त

[कविवर श्री० 'प्रेमी']

उत जेल बना, जल सर्द महा इत
भोर का, भाप उठें जिस से ।
इत काले कानूनों के बाण चले,
उत पाले के बाण बुझे विष से ।
खुफिया से खुदा को भी ख़ौफ़ इतै,
उत घेरें कुहासो दसो दिस से।
सरकार हेमन्त ते होड़ पड़ी,
कि अनीति में कौन बड़ा किससे ।

इत है असहाय निहत्थों पै शस्त्र—
प्रहार सुशासन के मिस से ।
उत वस्त्र से हीन गरीबों के ऊपर,
वार प्रभंजन के मिस से ।
इत घूस की लेते पनाह दुखी,
उत फूस की जान बचै जिस से।
सरकार हेमन्त ते होड़ पड़ी,
कि अनीति में कौन बड़ा किस से ।

† ऋष्युत्सव के दिन पठित ।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सती महिमा

[ले०—श्री० विश्वम्भरसहाय]

(१)

प्रायः छोटे बच्चे सायंकाल होते ही सोने के लिये व्याकुल हो उठते हैं। गाय-भैंस भी जङ्गल से आकर अपने स्थान पर बँध कर खाने-पीने के काम में ही लग जाने पर सुख अनुभव करती हैं। इसी प्रकार पक्षियों को भी अपने घोंसले में पहुँच कर ही आनन्द मिलता है। हाँ, ऐसे भी जीव इस लोक में पाये जाते हैं जो सायंकाल को भ्रमण करते हुवे अपनी उदरपूर्ति में संलग्न हो जाते हैं।

वर्षाकाल बीत चुका है। गहरी अन्धियारी होते हुये तारागण का मन्द-मन्द प्रकाश दृष्टि पड़ रहा है। पूर्णा अपनी दो वर्षीया बालिका को थपक-थपक कर सुला रही है परन्तु वह न जाने क्यों नहीं सो पाती, खाट पर पड़ी हुई मन्द-मन्द रुदन-सा कर रही है। पूर्णा के चूल्हे में आग जल रही है। आटा वैसे ही पड़ा है। अभी तक भोजन भी न बन पाया है।

पूर्णा को प्रतीक्षा करते २ आठ बज गये परन्तु उसका पति अभी तक कार्यालय से लौट कर घर नहीं आया है। घर में केवल पत्नी, पति, पुत्री ३ प्राणी हैं। समय अधिक हुआ जान कर पूर्णा द्वार पर बार-बार आकर अपने पति की प्रतीक्षा करने लगी परन्तु आशा सर्वथा निष्फल ही रही।

जाड़े के समय में प्रायः घर से मनुष्य कम निकलते हैं। मार्ग का चलना बन्द सा हो जाता है। ग्रीष्म के समान गलियों में चहल-पहल नहीं होती। पूर्णा निराश होकर प्रतीक्षा करती-करती बिना भोजन किये ही अपनी प्यारी बिटिया के पास चिन्तित अवस्था में पड़ रही।

(२)

पाठको ! आइये ! सामने देखिये ! सेठ मदन मोहन की एक विशाल कोठी दिखाई पड़ रही है एक दो नहीं किन्तु अनेक कर्मचारी अपने अपने काम में लगे हुये हैं। सेठ जी भी अपने कर्मचारियों के साथ आवश्यक व्यापार सम्बन्धी पूछ-ताछ में लगे हुवे हैं। कोठी के एक कोने वाले कमरे में एक नवयुवक जिसका नाम सुबोध है, पाँच-चार अन्य साथियों के साथ एक प्रकार का बादविवाद करने में लगा हुआ है। वह कह रहा है "आप मुझे इस का कोई प्रमाण दीजीये।"

उस के साथी महेन्द्र ने उत्तर दिया "इससे अधिक और क्या प्रमाण होगा। लो देखो ! तुम्हारी सती के गले का यह आभूषण मैंने गजेन्द्र से प्राप्त किया है।"

सुबोध ने उस आभूषण को पहिचाना और ठंडी सांस भर कर मस्तक पर हाथ मारा। उसने व्यग्रता के साथ फिर पूछा "क्या आप यह बतलायेंगे कि आपने इसे किस प्रकार गजेन्द्र से पाया है ?"

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

महेन्द्र ने कहा "मैं आप को यह भी बताये देता हूँ। गजेन्द्र ने आज प्रातः मुझे यह दिया था। आप यह तो जानते ही हैं कि वह मद्य, मांस तथा द्यूतक्रिया में किस प्रकार अपना पैसा लुटाता है। अपने पूर्वजों की वर्षों की संचय की हुई सम्पति को नष्ट कर रहा है। आपको यह भी ज्ञात है कि उसका द्वेष आप के प्रति बढ़ता ही जाता है। आप का कथन उसके शरीर में तीर के समान लगता है। उसी ने मुझे देते हुये बताया कि यह आभूषण सुबोध की कुलटा स्त्री का है। मुझ से पचास रुपये ले गया है। कहिये अब आपका सन्देह मिट गया ?"

सुबोध निरुतर हो गया। लज्जावश पृथ्वी में धँस गया। शरीर ज्वर से पीड़ित होने लगा। बड़ी कठिनाई से कार्यालय का काम किया। सायङ्काल के ४ बजे कार्यालय के कर्मचारियों की छुट्टी हो जाती है। उस ने चार बजते ही अपने स्वामी के पास एक लिफ़ाफ़ा रख दिया और बिना उत्तर पाये न जाने कहाँ चला गया।

(३)

पाठको ! आप को सुबोध से परिचित करा देना आवश्यक प्रतीत होता है। आप ब्राह्मण कुलोत्पन्न पंडित कामेश्वर प्रसाद मिश्र के इकलौते पुत्र हैं। यद्यपि आपके एक भाई और एक बहिन और भी थीं परन्तु वे दोनों अल्पायु में ही मृत्यु-मुख में चले गये थे।

पण्डित कामेश्वर प्रसाद मिश्र ने अपने पुत्र सुबोध को बड़ी मेहनत से पढ़ाया था। एक उच्च-कुल में उसका विवाह किया था। उनका दो-चार सेठ-साहूकारों में ही नहीं किन्तु नगर के प्रायः सभी धनिकजनों में बड़ा मान था। इसी कारण आपको अपने पुत्र को नौकर करा देने में भी कुछ आपत्ति न पड़ी। उन्होंने उसे सेठ मदनमोहन जी के कार्यालय में बड़ी सरलता से ४५) मासिक पर नौकर करा दिया था। परन्तु दुर्भाग्यवश वह अपने पुत्र का कुछ सुख प्राप्त न कर सके और अकस्मात् ज्वर के भीषण प्रकोप में पड़कर केवल ४५ वर्ष की ही आयु में इस लोक से विदा हो गये। सुबोध की माता को मरे हुये कई वर्ष बीत चुके थे। घर में केवल सुबोध तथा इस की पत्नी पूर्णा दो ही शेष रह गये थे। हां, उन के आमोद प्रमोद में कुछ सहायता करने वाली उनकी सात मास की एक छोटी बालिका और थी।

सुबोध जिस समय कार्यालय में नौकर हुआ था उस समय सेठ जी ने गजेन्द्र को उस का कार्य असन्तोषजनक होने के कारण पृथक कर दिया था। इस कारण उसको निश्चय हो गया था कि सुबोध ने ही कार्यालय से पृथक कराया है। गजेन्द्र की प्रकृति बड़ी कुटिल थी उसका हृदय कपटी था। उसने पृथक होते समय यह प्रतिज्ञा कर ली थी कि प्राण रहते वह सुबोध के मान को चूर करेगा, उस को किसी-न-किसी प्रकार नीचा दिखायेगा। इस कारण वह सदैव सुबोध का सर्वनाश करने को उद्यत रहता था।

कार्यालय से पृथक होकर गजेन्द्र ने अपने अनेक मित्रों से सहायता माँगी, चाटुकारी करके उसने फिर से सेठ मदनमोहन को प्रसन्न कर लिया और फिर उसी कार्यालय में काम करने लगा जिस में पहिले करता था।

(४)

सुबोध कार्यालय से निकल कर अशान्त-मन सांसारिक उलझनों के भिन्न २ विचारों में उलझा हुआ जंगल की ओर चल दिया था। उसने तनिक भी यह नहीं सोचा कि वह कहाँ पहुँचेगा।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सायंकाल हो गई। पक्षीगण अपने घोंसलों में जाते दिखाई पड़ने लगे। अन्धकार भी अपनी तीव्र गति से बढ़ने लगा। परन्तु मातृपितृ-विहीन सुबोध आगे बढ़ता ही रहा। जिस समय उस के पैरों ने हतोत्साह होकर कार्य करना बन्द कर दिया तो वह सामने के एक वृक्ष से टकरा-कर पृथ्वी पर गिर पड़ा। मानसिक वेदना ने उसे मृतक समान बना दिया था। वहां पड़ा २ दुखिया सुबोध एक प्रकार की दुखद निद्रा में निमग्न हो गया।

पेड़ों में थोड़ी दूर पर कुछ मनुष्य अपना भोजन बना रहे थे। अग्नि जलने से जो प्रकाश उन वृक्षों के मध्य फैला हुआ था, उस में एक मनुष्य को वृक्ष के पास पड़ा हुआ सुबोध दिखाई पड़ा। वह मनुष्य पास आया और विस्मय के साथ थके हुये सुबोध को देखता रहा। उसने सुबोध की बाँह पकड़कर उठाना चाहा और चिल्लाकर पूछा "तू कौन है जो रात्रि में इस जंगल में पड़ा हुआ है।"

पहिले सुबोध उसकी आवाज़ सुनकर चौंका परन्तु फिर उसने आँखें बन्द कर लीं। पास से उस मनुष्य ने अपने एक और साथी को पुकारा। दोनों ने थके हुये व्यथित सुबोध को देखा। दयावश वे उसें उठाकर अपने स्थान पर ले गये।

(५)

पूर्णा रात्रिभर व्याकुलता में निमग्न रही। प्रातः होते ही फिर अपने प्राणनाथ की प्रतीक्षा करने लगी। ज्यों ज्यों दिन चढ़ता जाता था त्यों त्यों उस की व्याकुलता तथा चिन्ता बढ़ती जाती थी। उस के पास उसके स्वामी की खोज करने वाला कोई न था। निकट के मनुष्य भी उस दुखद समय उस के सहायक न हुये। कभी वह अबला घर के द्वार पर आकर आँसू बहाती और कभी फिर अन्दर जाकर अश्रुपात करती। उस समय परमात्मा के अतिरिक्त कोई भी धैर्य बंधाने वाला न था।

गंगासहाय प्रतिदन १० बजे सुबोध के मकान के पास से जाया करता था। यह उनका बड़ा शुभचिन्तक था। कार्यालय में सुबोध के पास ही चपरासी था। पूर्णा ने द्वार पर खड़े हुये उसे मकान के सामने से जाते देखा। धैर्य के साथ उस से कहा "बाबू जी कल से घर पर नहीं आये हैं तुम मुझे कार्यालय में देखकर उन की अभी सूचना देना।"

गंगासहाय कोठी पहुँचा और वहाँ पर सुबोध बाबू को खोजा परन्तु वे कहीं भी दृष्टि न पड़े। अन्य कर्मचारियों को भी उनका कुछ पता नहीं था। अन्त में सेठ जी को भी सुबोध के चले जाने का समाचार ज्ञात हुआ। सेठ जी ने सुबोध का दिया लिफ़ाफ़ा अभी तक नहीं खोला था, इस समय उन्होंने बड़ी व्यग्रता के साथ खोला। ज्ञात हो गया कि वह कार्यालय को छोड़ कर मानसिक वेदना के कारण कहीं चला गया है। यही उस का त्यागपत्र भी था।

सारे कार्यालय में सनसनी फैल गई। उस के सभी साथी आश्चर्य करने लगे। सभी को खेद था परन्तु गजेन्द्र को किसी प्रकार का भी शोक न था, किन्तु वह अन्य दिनों कि अपेक्षा आज अधिक प्रसन्न दिखाई दे रहा था।

गंगासहाय ने दुखिया पूर्णा को उस के पति के चले जाने का दुखद समाचार सुना दिया। वह बेचारी रात्रि भर चिन्ता में निमग्न रही थी। कोई भी उसको शान्ति देने वाला न था। पति के इस प्रकार बिना कारण चले जाने के समाचार ने उसे मृतक-समान कर दिया। परमात्मा पर विश्वास कर के अपने स्वामी की शुभ कामना करना ही उसका धर्म था।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

(६)

रात्रि के २ बजे होंगे। चद्रमा की किरणें नहर गंग के जल में पड़ने लगीं । मल्लाहों ने अपनी अपनी नौकायें खोलीं । अपनी यात्रा प्रारम्भ कर दी ।

यद्यपि सुबोध के मन में कार्यालय से चलते समय आत्महत्या कर लेने का विचार था, परन्तु कुछ विचार कर उसने ऐसा करना परित्याग कर दिया था । हाँ, यह उस ने निश्चय किया था कि ऐसी दशा में घर पर वापिस जाना कलंक की बात है, और वह इस अपयश से यह उत्तम समझता था कि उन कष्टों को सहन करे जो उसे साधु जीवन व्यतीत करने में मिलने सम्भव हैं ।

मल्लाह उसे अपने साथ नाव पर ले गये । उन के साथ उसे बड़ी शान्ति मिली। उनके उस परिश्रम को देखकर—जो उन्हें नौका खेने में करना पड़ता था—वह अपने दुःख को भूल गया। उन्हीं के साथ वह भी उनका काम करने में आनन्द मानने लगा । मल्लाहों ने भी सुबोध जैसे मिष्ट भाषी नवयुवक के प्रति बड़ी श्रद्धा तथा भक्ति प्रगट की वे। अपने आप को उसके सत्संग द्वारा धन्य मानने लगे ।

(७)

गढ़मुक्तेश्वर का गंगा का मेला दूर-दूर प्रसिद्ध है। अनेक स्थानों से लाखों मनुष्य पूर्णिमा स्नान को प्रतिवर्ष कार्तिक मास में जाते हैं। सब का विश्वास चाहे कुछ हो परन्तु अनेक उन में ऐसे भी ही होते हैं जो समझते हैं कि वर्ष भर के किए सभी पाप इस स्नान के करते ही नष्ट हो जाते हैं। गरीब पूर्णा भी अपने किसी पड़ोसी के साथ भाड़ा करके गंगा स्नान की तैयारी में लगी हुई थी। तैयारी ही उस दीना-असहाया को क्या करनी थी ? केवल इसी चिन्ता में है कि किसी न किसी प्रकार वह गंगा तट पर पहुँच जाय।

वैसे तो वह बेचारी उसी वर्ष गंगा स्नान के लिये उत्सुक थी जिस वर्ष उसके लड़की उत्पन्न हुई थी परन्तु किन्हीं कारणों से न जा सकी। उसके पश्चात् पतिदेव का कठिन वियोग बाधक बन गया। इस वर्ष तीन चार वर्ष व्यतीत हो जाने पर उसे यह अवसर मिला है । इसका भी एक कारण था। उसने निकट की अनेक वृद्धाओं से सुना था कि गंगा स्नान के मेले पर अनेक साधु महात्मा आते हैं सम्भव है वहाँ उस के पति देव मिल ही जाँय। यह आशा उसके उत्साह को बढ़ा रही थी। इसी कारण दुखिया पूर्णा गंगा जाने को उद्यत हुई।

(८)

गजेन्द्र को केवल मद्य का ही व्यसन न था किन्तु वह घुड़दौड़ का बड़ा व्यसनी था उसी में पिता की समस्त पूँजी लुटा दी। उसके दो मकान भी इसी की भेंट चढ़ गये परन्तु इस पर भी उस के नेत्र न खुले। उसका भरण-पोषण होना अब सेठ मदनमोहन की नौकरी पर ही निर्भर रह गया था उसने उस नौकरी की भी व्यसनों में पड़कर कुछ परवाह न की।

अनेक धनवानों का उस पर कर्ज़ हो गया था । उस की स्त्री को बड़ी कठिनाइयाँ उठानी पड़ी । उसने अपने पति को कुपथ से हटाने की यथेष्ट चेष्टा की परन्तु सब निष्फल था। अन्त में विपत्तियाँ इतनी बढ़ीं कि उसे भोजन भी मिलना कठिन हो गया । रोगशैया पर पड़ी-पड़ी व्याकुलता के साथ दैवयोग से परलोक सिधार गई ।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जब गजेन्द्र रुपया चुकाने में असमर्थ हो गया तो कर्ज़दारों ने उसे कारावास भिजवा दिया। उस से ही क्या होता था। उस पर दया कर के कर्ज़ का रुपया चुकाने वाला भला कौन था ? कार्यालय से नौकरी भी छूट गई। उस के शरीर की अवस्था बिगड़ गई। न जाने किस साध्वी महिला के श्राप का फल भोग रहा था। कारावास से छुटकारा पाकर भोजन बिना भटकने लगा। दो तीन वर्ष बीतने पर ही उस की यह दुरवस्था हो गई।

जो गजेन्द्र एक दिन सेठ मदनमोहन के कार्यालय में बड़ी सज धज के साथ कई सिगार फूंक आता था, सिगार की तो गणना क्या करें जिसने हज़ारों रुपये एक एक घुड़दौड़ में लगा दिये परन्तु कुटिल समय ने उसे भोजन के लिए भी भटका दिया। वही गजेन्द्र आज गंगा के किनारे पेट के लिए टुकड़े की खोज में साधुवेश धारण किये फिर रहा है।

(६)

अनेक यात्री नाव का पुल पार करके गंगा के दूसरे तट पर पड़ा हुआ मेला देखने जा रहे हैं। अनेक यात्री बड़ी उत्सुकता के साथ इसी लिए जा रहे हैं कि वहाँ पर आये हुये हरिद्वार के प्रसिद्ध साधुओं के दर्शन करें।

पूर्णा ने भी किसी से सुन लिया था। उसे यह भी बतलाया गया था कि वे अनेक ज्योतिष के प्रश्नों का उत्तर भी देते हैं। दुखिया पूर्णा अपनी बालिका को साथ लिये अपने पड़ोसियों के साथ न जाने किस आशा से पार मेला देखने चली जा रही है।

नौकाओं का पुल बड़ी सावधानी से बनाया जाता है। अनेक मल्लाह उस की रक्षा के लिए हर समय वहां विद्यमान रहते हैं। ऐसा न हो कि पानी का वेग रस्सों को तोड़कर नौकायें बहा ले जाय।

नौकायें दूर दूर से मंगाई जाती हैं। कई नौकाओं पर मल्लाहों ने अपनी प्रसिद्धि करने के लिए झण्डे लगा रक्खे थे।

गजेन्द्र जिस के शरीर पर फटे-पुराने वस्त्र थे, पुल पर होता हुआ गंगा के दूसरे तट पर जा रहा था। दैवात् उस ने एक पतवार पर मोटे अक्षरों में "सुबोध" लिखा देखा। फिर उसने अपने पूर्व परिचित एक व्यक्ति को नौका में खड़े देखा। ध्यान पूर्वक देखकर वह समझ गया कि यह वही कोठी में साथ २ काम करने वाला सुबोध है जिस की आत्मा को दुःखित करके मैं यह कठोर यंत्रणायें सह रहा हूं। जिस की धर्मात्मा साध्वी देवी पर मिथ्या दोषारोपण करके मैंने यह घोर नर्क की यातनायें सहन की हैं।

सुबोध ने भी एक बार उस की ओर देखा, परन्तु वह विस्मय में पड़ गया। इस पर गजेन्द्र समझ गया कि सुबोध ने उसे नहीं पहिचाना है। उस ने कातर स्वर में कहा "सुबोध! प्यारे धर्म्मात्मा सुबोध! मैं वही दुष्ट गजेन्द्र हूं। क्षमा करो! मुझे एकबार क्षमा करो। आपका अपराधी गजेन्द्र अपने दुष्कृत्यों का फल पा रहा है। मैंने आपको व्यर्थ सताया। हाय! आपको ही! उस साध्वी धर्मात्मा सती महिला को अपार दुःख पहुँचाया है। उसी का यह फल मुझे मिल रहा है। क्षमा करो।"

सुबोध विस्मय में पड़ गया। धनवान गजेन्द्र की यह अवस्था देख कर उसके नेत्रों में जल भर आया। पाँव पर पड़े गजेन्द्र को उठाया और उसकी समस्त दुःखद कहानी सुनी।

गजेन्द्र रोता हुआ पश्चात्ताप करता हुआ कहने लगा "मैं आपका अपराधी हूँ। मैंने आप की

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पवित्र सती पत्नी को सता कर महान दुःख पहुंचाया है। सुबोध उस देवी से क्षमा करा दो"।

सुबोध ने विस्मय के साथ पूछा उसे "सती साध्वी कहते लज्जा नहीं आती ? वह तो कुल्टा है।"

गजेन्द्र का शरीर कांपने लगा। उसने मस्तक पर हाथ रख कर कहा "नहीं भाई ऐसा न कहो। सती देवी को ऐसा न कहो। यह मेरा ही अपराध था कि उस पर मिथ्या दोषारोपण कर के उस के पवित्र चरित्र पर दोष लगाया। सुबोध! वह पूर्ण निर्दोष है।"

(१०)

पूर्णा ने नौका में खड़े हुये दो व्यक्तियों को परस्पर वार्तालाप करते देखा। एक व्यक्ति साधु वेशधारी थी। इसी कारण उसकी दृष्टि पूर्णतया उन पर पड़ी। उसने उन में से एक व्यक्ति को नेत्र भर कर देखा। उसने अपना खोया धन पाया हुआ समझ कर मन ही मन परमात्मा को धन्यवाद दिया।

गजेन्द्र ने सुबोध के पास आती हुई पूर्णा को देखा। उसने आज तक नेत्र भर कभी उसे नहीं देखा था। सुबोध ने अपनी छोटी बालिका को देख कर अपना पग आगे बढ़ाया। ममतावश उसे गोद में उठा लिया। पूर्णा अपने प्राणनाथ के चरणों में पड़ गई।

गजेन्द्र पूर्णा के पैरों में पड़ गया। उसने उस के चरणों की धूलि अपने मस्तक पर लगाई और बड़े गम्भीर भाव से कहा "माता! क्षमा करो सती साध्वी देवी! मैंने तुम्हारे प्रति घोर अपराध किया है उसे क्षमा करो। मैंने आप को व्यर्थ कलङ्कित किया था। आप से आप के पति का बिछुड़न कराने वाला मैं ही अभागा हूं। मुझे क्षमा करो"।

सुबोध पर भारी प्रभाव पड़ा। उस को ज्ञात हो गया कि किस प्रकार उसकी सती महिला का आभूषण कहारी द्वारा चोरी कराया गया था और किस प्रकार कार्यालय में उस पर मिथ्या-दोषारोपण किया गया था।

विश्वास हो जाने पर सुबोध ने पूर्णा से क्षमा मांगी। अश्रुपात करते हुये उसने कहा "मैंने बिना निश्चय किये तुम्हें परित्याग करके जो कष्ट पहुँचाया है उसे क्षमा करो"।

चार वर्ष पश्चात् पूर्णा का मलिन मुख फिर कमल के समान खिल गया। उस ने अपने भाग्य की सराहना की, परमात्मा को कोटि २ वार धन्यवाद दिया।

इस पूर्णमासी के गंगा स्नान पर सती पूर्णा का भाग्योदय हो गया। उसकी खोई हुई बहुमूल्य सम्पत्ति प्राप्त हो गई। मेला समाप्त होने पर अपने प्राणनाथ के साथ सहर्ष घर लौट आई।

गजेन्द्र सदैव के लिये साधु बन गया। उसने अपना लक्ष्य केवल सती महिमा को जन समुदाय में फैलाना बना लिया। उसी के मधुर गान गाता हुआ आज गजेन्द्र स्वामी गजानन्द के रूप में भ्रमण कर रहा है। इति।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

श्री अमरनाथ यात्रा

(पूर्णमासी श्रावण, १९८४ वि०)

[ले०—श्री० प्रो. सांझीराम जी एम. ए. एस. ऑरेगन, अमेरिका]

काश्मीर का महत्त्व जानने के लिये उसकी प्राकृतिक सुन्दरता तथा प्राचीनता का ज्ञान होना आवश्यक है। काश्मीर की घाटी किसी समय एक विस्तृत एवं गम्भीर झील के रूप में थी। कालांतर में कश्यप मुनि ने विशाल गिरिमाला को बारामूला नामक स्थान पर विदीर्ण कर के इस घाटी के जल को शुष्क किया। उन्हीं के नाम से यह प्रदेश काश्मीर कहलाया। यह प्राचीन हिंदू ऋषियों एवं मुनियों की गौरव-स्थली तथा तपोभूमि रह चुका है। वे इसे 'तत्त्वं सर्व भूम्याम्' इस संस्मरण से याद किया करते थे। जैमिनि पुराण में लिखा है कि पाण्डवों का चौदह वर्ष का अज्ञातवास यहीं हुवा था तथा राजा अश्वरथ का युधिष्ठिर से साक्षात्कार भी यहीं हुवा था। यह स्थान योगियों एवं तपस्वियों को अत्यन्त प्रिय था अतः उनके इष्ट देवताओं की अर्चना के निमित्त यहाँ अगणित देव-स्थान बनाये गये थे तथा इन देव-मन्दिरों में सब भिन्न-भिन्न देवताओं की प्रतिमायें स्थापित की गई थीं। नीलमथ पुराण में लिखा है कि 'पृथिव्यां यानि तीर्थानि तानि काश्मीरमण्डले' अर्थात् इस भूमि पर जितने तीर्थ हैं उतने ही काश्मीर में हैं। राजतरङ्गिणी में भी—जो कि काश्मीर का प्राचीन शृङ्खला-बद्ध इतिहास है— इस बात का उल्लेख है। इससे हम यह अनुमान कर सकते हैं कि काश्मीर देश किसी समय भारतवर्ष के अन्यतम तीर्थों का स्थान था।

भारत की प्राचीन सभ्यता के शान की साक्षियाँ जितनी काश्मीर के खँडरातों से अवगत होती हैं, उतनी अन्य किसी से नहीं। यद्यपि ये खँडरात आजकल काश्मीरी पण्डितों की दृष्टि में उतना मूल्य नहीं रखते जितना कि उन खँडरातों की उत्तम अवस्थिति, उनकी स्थापत्य-कृति की सुन्दरता तथा उनकी प्राचीनता यात्रियों के लिये चित्ताकर्षक होती है। ये मन्दिर किसी समय संख्या में अत्यधिक थे। अबुल फ़ज़ल ने अपने ग्रन्थ में ७०० की संख्या में तो केवल नागों (चश्मों) का वर्णन किया है। ईसा की चौदहवीं शताब्दी में मूर्ति-भञ्जक सिकन्दर ने इन मन्दिरों को नामावशेष करने तथा तलवार के बल पर हिंदुओं को मुसलमान बनाने का बीड़ा उठाया। अपनी ओर से तो उसने किसी व्यक्ति को भी हिंदू नहीं रहने दिया था परन्तु उसके अपने अनुयायियों तथा नव-मुस्लिमों ने कई ब्राह्मणों को छिपा लिया था। आजकल काश्मीर में इने-गिने जो ब्राह्मण देखने में आते हैं वे या तो इस प्रकार बचाये हुए ब्राह्मणों की संतान हैं या जो उस समय इधर-उधर भाग निकले थे उनकी संतति हैं। सिकन्दर की इस प्रचण्ड धर्मान्धता के निशान अब भी नदियों के बाँधों, मस्जिदों और मुसलमानों के भवनों की नींवों में तथा सम्पूर्ण घाटी भर में जहाँ-तहाँ बहुतायत से मिलते हैं!

ये निशानात उन असंख्य मन्दिरों की सत्ता के साक्षी हैं, जिन्हें काश्मीर के महाराजा दूसरी से दसवीं शताब्दि तक बनवाते रहे थे। अधिकतर

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मन्दिर शिव के उपासकों के हैं, जिन में कि शिवलिंग स्थापित हैं।

इन मन्दिरों में से सब से प्राचीनतम मन्दिर शङ्कराचार्य का है जिसे मुसलमान लोग तख़्ते-सुलेमान कहते हैं। काश्मीर के सब मन्दिरों का वर्णन इस स्थान पर नहीं किया जा सकता, परंतु जो मन्दिर श्रीनगर से अमरनाथ के मार्ग में पड़ते हैं उनका प्रसङ्गानुसार कुछ वर्णन इस लेख में किया जायगा।

अमरनाथ-माहात्म्य

अमरनाथ के माहात्म्य के सम्बन्ध में यह कथानक प्रसिद्ध है कि एक वार नारद मुनि जी ने देवी पार्वती जी से पूछा कि हे पार्वति! तूने जन्म-मरण के दुःख को इतनी देर तक क्यों सहन किया? जब कि तुम्हारे दिव्य पति महादेव जी जन्म-मरण के बन्धन से सर्वथा मुक्त हैं। इससे पार्वती जी ने महादेव जी को, इस स्थान पर अपनी अमर-कथा कहने के लिये बाधित किया, तब से यह भूमि काश्मीर में सब तीर्थों से उत्तम मानी जाती है। बर्फ़ के लिंग, जो इस गुफ़ा में स्वयमेव बनते हैं उनको महादेव, पार्वती तथा गणेश का अवतार समझा जाता है। प्रतिवर्ष यह स्थान हिम से सर्वथा आच्छादित रहता है। केवल अगस्त मास में ही इसका मार्ग यात्रियों के लिये खुलता है, जब कि यात्री हज़ारों की संख्या में अनपढ़ से लेकर विद्वान तक तथा रंक से लेकर राजा तक देवता के दर्शन के लिये इकट्ठे होकर जाते हैं। इस कठिन यात्रा में कई कमज़ोर आदमी बीच ही में मर जाते हैं और इस प्रकार परमधाम को प्राप्त करते हैं। अमरनाथ की गुफ़ा के प्रथमावलोकन से यात्री पर सहसा एक गम्भीर आतंक छा जाता है। कहीं तो कोई आदमी फिसलता दीख पड़ता है और कहीं कोई उसाँसें भरता नज़र आता है। थकाने वाली चढ़ाई-उतराई साधारण मनुष्य के लिये अत्यन्त कठिन होती है।

यात्रा की तैय्यारी

क्योंकि यात्रियों को कई प्रकार के वायुमंडलों, ढालों तथा वनस्पति-रहित जीव-शून्य पर्वतों में से गुज़रना होता है अतः उन्हें अपने शरीर-रक्षा के लिये पूरी तैय्यारी करनी आवश्यक होती है। घर-गिरस्ती वाले अपने साथ कैम्प का पूरा साज-सामान, सवारी-घोड़े, खच्चर, गर्म कपड़े आदि ले जाते हैं। परन्तु साधु तथा निर्धन लोगों की रियासत तथा धनी लोग सहायता करते हैं। पुलिस, अस्पताल, सेवासमिति तथा रियासत के ऊँचे अफ़सरों के लिये किये गये व्यय के अतिरिक्त १२ सहस्र रुपये निर्धनों की सहायता के लिये प्रतिवर्ष राज्यकोष में से दिये जाते हैं। इस वर्ष यात्रा में तीन लङ्गर साधुओं के वास्ते खुले हुए थे। छड़ी † के चलने से पूर्व सड़कों एवं पुलों की भलीप्रकार मरम्मत की जाती है। इतना होने पर भी यात्रियों की रक्षा के लिये आगे और पीछे सिपाही तैनात किये जाते हैं।

छड़ी का प्रयाण

इस वर्ष पञ्चमी के दिन छड़ी-पूजा और आरती के समाप्त होने पर लगभग दो हज़ार मनुष्यों के समूह ने श्रीनगर से अमरनाथ के लिये प्रयाण किया था। जैसे-जैसे छड़ी अग्रसर होती थी, विभिन्न स्थानों पर और भी स्त्री-पुरुष उस में

† छड़ी का शब्दार्थ छड़ी ही है, परन्तु इससे गदा का ग्रहण होता है। दो चाँदी की गदायें रियासत की ओर से जुलूस के आगे-आगे चलती हैं, इनसे आगे किसी व्यक्ति को जाने का अधिकार नहीं है। वहाँ के मुहावरे के अनुसार छड़ी से तात्पर्य जुलूस तथा यात्रा के होते हैं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सम्मिलित होते जाते थे और इस तरह बढ़ते-बढ़ते कोई ५ हज़ार संख्या तक पहुंच गये होंगे। आगे चलने पर मार्ग में श्रीनगर से लगभग ४ मील की दूरी पर एक वर्गाकार मन्दिर और सरोवर भग्नावस्था में पड़े मिलते हैं। इससे एक मील और आगे पाम्पुर—जिसका प्राचीन नाम पद्मपुर है—एक नगर आता है। यह स्थान अपने प्राचीन मंदिरों एवं केसर के खेतों के लिये प्रसिद्ध है। छड़ी का पहला पड़ाव यहीं होता है। अगले दिन यात्रा प्रारंभ करके श्रीनगर से १७ मील दूर स्थित अवन्तिपुर नामक नगर में पहुँचते हैं, जो कि अवन्तिवर्मन् नामक नरेश की राजधानी थी। यह यात्रा का दूसरा पड़ाव है। सन् ८५५ से ८८३ ई० तक अवन्तिवर्मन ने इस प्रदेश पर राज्य किया था। इस स्थान पर हालही में दो भव्य मंदिर खोद निकाले गये हैं।

८ मील और आगे बीजबिहारा नामक नगर है। प्राचीन काल में यहाँ पर एक मन्दिर था, जिसका अशोक ने जीर्णोद्धार किया था, किंतु पीछे से सिकन्दर ने उसको धराशायी कर दिया। प्राचीन ग्रन्थों में लिखा है कि यहाँ एक विश्वविख्यात विद्यापीठ था। यह वही पवित्रभूमि है जहाँ के पण्डितों को महाराजा युधिष्ठिर ने राजसूय-यज्ञ में पुरोहिताई के लिये बुलाया था। पहले बीजबिहारा के समीप ही विष्णु का एक प्रसिद्ध मन्दिर था, जिसमें मुसल्मानों के आक्रमण से संत्रस्त होकर लगभग ११२० हिंदुओं ने आश्रय लिया था, किंतु अन्त में मुसल्मानों ने उन्हें ढूँढ निकाला और मन्दिर समेत उन्हें भस्मीभूत कर दिया।

तृतीय दिवस, श्रीनगर से ३४ मील की दूरी पर अनन्तनाग में हम पहुंचते हैं तथा वहाँ दुपहरिया खाकर कुछ देर विश्राम करके अपनी मञ्जिल का रास्ता लेते हैं। जैसा इसके नाम से प्रतीत होता है यह स्थान अनेक सतत-प्रवाही स्रोतों के लिये प्रसिद्ध है जिन में से मुख्य ४ गंधक के हैं।

तीसरा पड़ाव मार्तंड-तीर्थ—जिसे आजकल मटन कहते हैं—में होता है। किसी समय यह विद्वान् ब्राह्मणों का घर था और अब उनकी सन्तान अमरनाथ के पण्डे बनकर जीवन-निर्वाह करती है। इस स्थान के समीप की पहाड़ियों के ऊपर मार्तण्ड-नहर बहती है, जो काश्मीर में सबसे अधिक ऊँचाई पर स्थित नहर है। ४०० से ४४० ई० के मध्य में-राजा रामदेव ने इसको बनवाया था। यह बात विशेषतया जानने योग्य है कि भारतवर्ष में इञ्जिनियरों की दृष्टि से दो ही पहाड़ी नहरें मुख्य हैं। उन में से एक यह भी है। मार्तण्ड के प्राचीन मन्दिरों के भग्नावशेष यहाँ विशेषतः दर्शनीय हैं। इन मन्दिरों में से एक प्रसिद्ध मन्दिर का आकार अत्यन्त भव्य है। मन्दिर का मध्यभाग ६ गज़ लम्बा तथा इतना ही चौड़ा है। उसकी अवशिष्ट ऊँचाई १७ फ़ीट है तथा ८४ खम्भे उसकी विशाल छत को धारण करते थे। प्राचीन मन्दिर-निर्माणकला के इन भग्नावशेषों को देखकर यात्री का हृदय सहसा शोक-ग्रस्त हो जाता है। यह इसलिये नहीं कि मूर्तियाँ तोड़ दी गई हैं अपितु पुरातन भारतीय स्थापत्यकला के गौरवमय स्मारकों का विध्वंस कर दिया गया है।

मार्तण्ड से १ मील आगे एक प्राचीन गुफा है। ऐसा कहा जाता है कि यह प्राकृतिक सुरङ्गों में संसार भर में सबसे बड़ी है। रहनुमाई यात्रा नामक पुस्तक के ३४ वें पृष्ठ पर लिखा है कि इस सुरंग का दूसरा मुख चीन में निकलता है। गुफा के मुख से २०० गज़ की दूरी पर आजकल मार्ग बन्द कर दिया गया है। एक साधु जिसने बारह वर्ष तक इसी गुफा में बैठ कर घोर तपस्या की

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

थी लगभग १ वर्ष पूर्व उसका यहीं देहान्त होगया। कहा जाता है कि एक अँग्रेज़ यात्री ने श्रद्धापूर्वक उसकी अस्थियों को हरद्वार में ले जाकर गंगा में प्रवाहित कर दिया था। लेखक जिस समय वहाँ पहुंचा गुफा बर्फ़ सदृश ठंडी, घोर अन्धकार में मग्न, पानी से साली हुई तथा चमगीदड़ों से भरी हुई थी। उस गुफा में एक शिवलिङ्ग विद्यमान था तथा पत्थर पर उस साधु का रेखा-चित्र अंकित था। वह साधु उस शिवलिङ्ग की अर्चना किया करता था। यह गुफ़ा हमारे हृदय में सहसा एक आतङ्कपूर्ण भाव को उत्पन्न कर देती है। इसके पास ही एक अन्य गुफ़ा है, जिसे घड़ कर मंदिर का रूप दे दिया गया है। इसका परिमाण २८×२७×१३ फीट है। इस मंदिर में लगभग ६ सहस्र वर्ष पुराना एक शिवलिङ्ग है।

चौथा पड़ाव जनक महल का है। जिसे मुसलमान ऐश-मुक़ाम कहते हैं। काश्मीरान्तर्गत किश्तवार नामक स्थान के राजा जनक ने एक गुफ़ा के ऊपर एक महल बनवाया था। जिस गुफ़ा में उसने बाद में तपस्या की थी। उसके महल को आजकल मुसलमानों ने मस्जिद बना लिया है। महाराजा की बैरागन (साधुओं की ख़ास लकड़ी) तथा खड़ाऊँ अब भी सुरक्षित हैं। इस महल के अन्दर एक निर्मल जल का झरना झरता है। जलवायु और पहाड़ों की नैसर्गिक सुन्दरता के कारण इस स्थान ने यात्रियों के हृदय में विशेष स्थान प्राप्त किया हुवा है।

जनक महल से आगे हम पहलगाँव में पहुंचते हैं। यह स्थान समुद्र पृष्ठ से ७३०० फीट ऊँचा तथा ग्रीष्म-निवास है। यह ग्रीष्म-निवास अँग्रेज़ों के समय नहीं बना है अपितु प्राचीनकाल में भृगु ऋषि को यहीं ब्रह्मज्ञान प्राप्त हुवा था तब से यह स्थान अति पवित्र समझा जाता है। श्रीनगर से ५६ मील की दूरी पर यह स्थित है तथा छड़ी का पञ्चम पड़ाव है। यहाँ मोटर का मार्ग समाप्त हो जाता है। इस स्थान पर छड़ी की शोभा द्विगुणित हो जाती है, क्योंकि यहाँ यात्रियों का ख़ूब जमघट हो जाता है। लम्बोदरी (लिदर) नदी के दूसरे तटपर मामर गाँव है जहाँ एक छोटे से स्रोत के समीप एक प्राचीन मन्दिर अवस्थित है, हाल ही में इसका जीर्णोद्धार हुवा है। इस मन्दिर की स्थिति, बनावट तथा पत्थर की क़िस्म सब उत्तम हैं। ऊपर के कुछ मर्ग (पहाड़ी मैदान) जैसे बैसराम तथा खिन्मत दर्शन के योग्य हैं। वहाँ से हिमालय के वनों की शोभा जिन में हिममयी सरितायें बह रही हैं—बहुत भली दीख पड़ती हैं।

लगभग ५०० स्त्री-पुरुष जिनमें चौथाई संख्या साधुओं की है छड़ी के साथ जाते हैं अब से आगे रास्ता ख़तरनाक है। साढ़े सात मील चल कर अब हम अपने छठे पड़ाव चन्दनवाड़ी पर पहुंचते हैं जो १२००० फीट ऊँचा है। यहाँ ख़ानाबदोश गूजरों के झोंपड़ों के अतिरिक्त किसी मानुषिक बस्ती का पता नहीं। ये झोंपड़े भी गिने-चुने और एक दूसरे से बहुत दूर हैं। गूजर भी केवल गर्मियों में अपने पशुओं को चराने के वास्ते यहाँ आते हैं क्योंकि जाड़े में यहाँ सब बर्फ़-ही-बर्फ़ होता है।

सातवें दिन हम पिस्सु घाटी में पहुँचते हैं। जिसकी दो मील की चढ़ाई बहुत खड़ी और फिसलानेवाली है। यहाँ यात्रियों का सिर चकराने लगता है। इसका कारण कुछ पहाड़ी पौधों की विषैली गन्ध बताई जाती है। ऊँचे स्थानों में ये पौधे ख़ूब फूलते-फलते हैं। चंदनवाड़ी से मील की दूरी पर दूधिया रंग की एक अत्यन्त

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सुन्दर झील है—जिसे शेषनाग कहते हैं। यह १२००० फीट की ऊँचाई पर स्थित है तथा इसके चारों ओर के पहाड़ कुछ बर्फ़ से तथा कुछ बनस्पति से आच्छादित हैं। पुराने बूढ़े शपथ खा कर कहते हुए सुने जाते हैं कि उन्होंने इसी झील में कई बहुमुखी सर्प देखे हैं। इस झील में स्नान करना एक बड़े साहस का काम है, किंतु फिर भी अनेक आदमी इसमें डुबकी लगाते हैं। यहाँ से आगे मार्ग वनस्पतिशून्य तथा कुछ भागों में प्रायः जीवन-शून्य है। इस स्थान से डेढ़ मील आगे वावजन नामक सातवाँ पड़ाव है। यहाँ बड़े ज़ोर की झंझा-वात चलती है तथा यह सबसे अधिक शीत जगह है। यहाँ का जल-वायू जब कि यहाँ तीखी धूप पड़ती है अनिश्चित है। अभी वर्षा हो रही है तो घड़ी भर में धूप चमकने लगती है। ठीक उसी समय सामने कोने पर काली घटा, इन्द्र भगवान् के वज्र फेंकते हुए रुद्र-रूप का दर्शन कराती है।

शेषनाग से आगे की चढ़ाई ४ मील की है जिसमें १६ हज़ार फीट ऊपर पहुँच कर फिर यात्री को पञ्चतरणी नामक पड़ाव के लिये नीचे उतरना पड़ता है। "पञ्च-तरणी" नाम पाँच छोटी-छोटी नदियों के संगम के कारण पड़ा है। यह स्थान १२६०० फीट की ऊँचाई पर है तथा यह यात्रा का अन्तिम पड़ाव है। यात्री-गण अपना सामान यहाँ छोड़कर आगे अमरनाथ की गुफा के दर्शन के लिए पूर्णमासी के दिन चल पड़ते हैं। यहाँ से गुफा की दूरी तो केवल ४ मील ही है परन्तु भैरव घाटी की चढ़ाई अत्यन्त सीधी तथा भयावह है।

भैरव पर्वत के शिखर पर एक विशाल चट्टान अवस्थित है—जो कि डाम्बेश्वर भैरव के नाम से प्रसिद्ध है—उसकी प्रदक्षिणा करनी होती है। इसके तीन ओर की प्रदक्षिणा तो सुगम है परन्तु चौथी ओर से कई एक यात्री फिसल कर अपने प्राण खो चुके हैं। डाम्बेश्वर चट्टान का माहात्म्य इस प्रकार है कि "एक दिन महादेव जी स्कन्द कुमारजू के साथ खेल में ऐसे मग्न हो गये थे कि उन्हें सन्ध्या काल का कुछ भी ध्यान नहीं रहा। डाम्बेश्वर जी प्रतिदिन नक्कारे पर चोट लगा कर सन्ध्याकाल की सूचना दिया करते थे, परन्तु उस दिन सूचना देना भूल गये। इस परमहादेव जी को क्रोध आया और उन्होंने हमेशा के वास्ते शाप देकर उसे पत्थर बना दिया। जैसी इस पर्वत की चढ़ाई दुर्गम है इसकी उतराई भी वैसी ही कठिन है। सारी उतराई समाप्त हो जाने पर अमरावती नदी को—जो कि बर्फ़ के नीचे ही-नीचे से बहती चली जाती है—पार करके अमरनाथ गुफा दीख पड़ती है।

अमरनाथ गुफा

अमरनाथ की गुफा १३००० फीट की ऊँचाई पर सफ़ेद रंग के जिप्सम नामक पत्थर की एक विशाल चट्टान में बनी हुई है। इसका परिमाण १५०′ × १५०′ × १५०′ है। यह चारों ओर से १७००० से १८००० फीट ऊँचे पहाड़ों से घिरी हुई है। गुफा की दरारों में कुछ सफ़ेद कबूतर रहते हैं। गुफा के अन्दर सदा बहने वाले कुछ स्रोत हैं जिनका पानी सर्दियों में अपने निकास से बाहिर आते ही जम जाता है परन्तु गर्मियों में सदा बहता रहता है। इन जलों के जमने से क्रमशः शिव, पार्वती, गणेश तथा शिवलिङ्ग की आकृतियाँ बनती हैं। इनमें से शिव, गणेश और पार्वती की मूर्तियों का निर्माण इस प्रकार होता है कि इन तीन स्थानों पर चट्टान में से जल बाहर निकलता है और जिन छिद्रों द्वारा निकलता है उनके मुख पर ही जमता जाता है। इसी प्रकार निकास से

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पानी निकलता रहता है और पहिले जमे हुए पानी पर जमता जाता है। इन जल के स्रोतों के जमते रहने से जो आकृतियाँ बनती हैं वे विशेष प्रकार की होती हैं। कट्टर-धर्मान्ध-विश्वासी विचार के लोगों का विश्वास है कि ईश्वर स्वयं इन हिमाकृतियों में मूर्तिमान होता है परन्तु मुझे तो यही समझ आता है कि इन मूर्तियों का आकार अन्यथा बन ही नहीं सकता।

इन मूर्तियों में से शिवलिङ्ग का निर्माण बड़ा ही विचित्र है। इस लिङ्ग के ऊपर छत में से बराबर जल की बूँदे टप-टप गिरती रहती हैं। इस मूर्ति के निर्माण की निम्नलिखित विधि युक्ति-संगत प्रतीत होती है। जब वातावरण अधिक नहीं होता है तब तो जल की बूँदें गिर कर गुफ़ा के फ़र्श पर फैल जाती हैं, और जम कर उस बर्फ़ की तह बना देती हैं। किंतु जब शीत अधिक हो जाती है तब बूँद को इतना समय नहीं मिलता कि वह फ़र्श पर फैल कर जमे—वह गिरते ही उसी स्थान पर जम जाती है। इस प्रकार से बूँद-बूँद जमते रहने से लिङ्गाकृति की मूर्ति बन जाती है। जाड़ों में तो इसका पृष्ठ खुर्दरा होता है, किंतु जब वसन्त ऋतु के आगमन पर बर्फ़ पिघलनी प्रारम्भ हो जाती है तब यह चिकना और चमकदार हो जाता है। डाक्टर अत्रि की "गाइड टु काश्मीर", पंडित दीनानाथ की "रहनुमा ए काश्मीर" तथा अन्य पौराणिक साहित्य को पढ़ कर अत्यन्त आश्चर्य होता है कि चन्द्रमा की कलाओं के घटने-बढ़ने का इस लिङ्ग के आकार पर बड़ा प्रभाव पड़ता है। इन पुस्तकों में लिखा है कि चन्द्र की कला की वृद्धि के साथ-साथ इस लिङ्ग का आकार भी उत्तरोत्तर बड़ा होता जाता है। अनेक योग्य व्यक्ति भी इस बात में विश्वास करते हैं। इस साल उदयपुर के वकील मुंशी अम्बालाल ने लिङ्ग के निर्माण का स्वयं निरीक्षण करने के लिये, और अपनी पूजा-अर्चना से देवादिदेव महादेव को प्रसन्न करने के लिये यथेष्ट समय पाने के उद्देश्य से पूर्णमासी के एक मास पूर्व से ही अपना डेरा गुफ़ा के अन्दर डाल दिया। पहिले दिन जब उन्होंने पूजा की तब लिङ्ग की ऊँचाई लगभग दो फीट थी। फिर प्रतिदिन उसकी ऊँचाई घटने लगी यहाँ तक कि बीस दिन पश्चात् उसका नामावशेष भी न रहा। इसके पश्चात् जितना भी जल वहाँ टपकता था वह गिरते ही इधर-उधर बह निकलता था, जिससे कि लिङ्ग का पुनः निर्माण हो ही नहीं पाया। सम्भवतः जब तक फिर जाड़ा न पड़ने लगेगा तब तक लिङ्ग का निर्माण प्रारम्भ ही नहीं होगा। यदि पुस्तकों में इस विषय में जो कुछ लिखा है उसे सत्य मान लिया जाय तो यह पहिला ही साल है जब कि लिङ्ग पूर्णतया विलीन हो गया है।

इस समस्त यात्रा में कुछ ऐसी विशेषताएँ हैं जिनके कारण हमारे नवयुवकों और नवयुवतियों को इसके प्रति आकर्षित होना चाहिये। मैंने अमेरिका हवाई द्वीप, जापान, फिलीपाइन-द्वीपसमूह तथा अन्य स्थानों की सैर की है, और मैं जानता हूँ कि अन्य देशों में अनेक ऐसे स्थान हैं जिन्हें देखने के लिये हज़ारों मनुष्य जाते हैं और जिनकी प्रसिद्ध-प्रसिद्ध पुरुषों ने प्रशंसा की है, किन्तु जहाँ तक मुझे पता है संसार में कोई भी ऐसा देश नहीं है जो पहाड़ी दृश्यों की भव्यता में, नैसर्गिक स्रोतों में, हरे-भरे जंगलों में, दुर्गम गुफाओं में, प्रभापूर्ण हिमराशियों में, तैरते हुए बाग़ों में, प्राचीन मंदिरों के भग्नावशेषों में, प्राकृतिक अध्ययनों में काश्मीर की समता में रखा जा सके। यदि कोई मुझसे

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पूछे कि "पहिले मैं यूरोप की सैर करूँ या काश्मीर की", तो उसे मेरी सलाह तो यही होगी कि "काश्मीर की"। किन्तु यात्रा या तो पैदल होनी चाहिये अथवा घोड़े पर चढ़ कर। इसका कारण निम्नलिखित है—यदि तुम मोटर इत्यादि में बन्द होकर सीधे श्रीनगर पहुँच जाओ; या तुम किश्ती में सवार होकर स्वच्छ और शांत झेलम, डल और बुलर में सैर करो; या तुम निशात बाग़, शाही बाग़, शालामार बाग़, गुलमर्ग़, बारा-मूला, अवन्तिपुर, अनन्तनाग, मार्तंड की झाँकी ले लो तो भी तुम्हें असली काश्मीर का दर्शन नहीं होगा।

काश्मीर यात्रा की सफलता तो तभी हो सकती है जब कि इसे या तो पैदल किया जाय या घोड़े की पीठ पर से, तीसरा कोई ढंग नहीं है। फिर इसमें भी यात्री का लक्ष्य घनी आबादी की ओर न होना चाहिये। मार्ग में आनेवाले नगरों का उपयोग विश्राम तथा दर्शन के लिये तो हो परन्तु अपना अधिकांश समय गाँव के नज़दीक जंगलों में, पहाड़ियों में और झीलों इत्यादियों के तट पर व्यतीत करना चाहिये। असली काश्मीर वस्तुतः शहरों की सीमा से बाहर-बाहर ही है। कहते हैं कि काश्मीर का जलवायु रोगनाशक, क्षुधा उत्तेजक और रुधिर-वर्द्धक है तो उनका अभिप्राय काश्मीर के होटलों से, किश्तीघरों से, या तम्बुओं के निवास से हरगिज़ नहीं होता। वास्तव में उनका मतलब काश्मीर की समस्त घाटी से होता है।

पाठक वृन्द! ज़रा देर के लिये कल्पना कीजिये कि आप काश्मीर की किसी पहाड़ी के पैदल-मार्ग पर जा रहे हैं, पसीना बह रहा है, आपका मार्ग चक्कर खाता हुआ अत्यन्त ढालू पहाड़ी पर चढ़ता है, इतने में आप छायादार हरे वृक्षों के कुञ्ज के समीप पहुँचते हैं—जिसके निकट ही एक झरना है, और अपने जल को इतने वेग से गोल-गोल पत्थरों से टकरा कर झाग निकालता है मानो प्रकृति वहाँ जल-मंथन कर रही है। जिससे आपको यह प्रतीत होता है कि वहाँ की सारी परिस्थिति आपका स्वागत कर रही है, और आपको विश्राम करने के लिये आह्वान कर रही है। आप भी थके-माँदे वहाँ आराम करने के उत्सुक हैं और मखमली हरी घास पर शरीर को खुला छोड़कर लेट जाते हैं। इस प्रकार वृक्षों की सुहावनी छतरी के नीचे जिसकी हरी-हरी पत्तियाँ पश्चिमी वायु द्वारा आप पर चँवर झुलाती हैं आपका अन्तरात्मा ऐसा अनुभव करने लगता है कि मैं ही इस सारी प्रकृति का राजा हूं और वह मेरी सेवा में संलग्न है। उस समय बीसवीं सदी का प्रकृतिवाद असार प्रतीत होने लगता है और ऐसा मालूम पड़ने लगता है कि—यह विनश्वर स्थूल-शरीर वास्तव में कुछ नहीं केवल भ्रमोत्पादक दिखावा है, केवल मैं-ही-मैं विराजमान हूं, जैसे कि स्पञ्ज में रहने वाला जन्तु ही वास्तविक होता है परन्तु उसके ऊपर का शरीर सिवाय इसके कि वह केवल स्लेट साफ़ करने के काम में आए व्यर्थ मालूम पड़ता है। इतना होने पर भी भौतिक इन्द्रियों से केवल ऊपर का आकार मात्र शरीर ही दृष्टिगोचर होता है और उसके अन्दर रहने वाला वास्तविक जीव अदृश्य ही रहता है। अहा! इस तपोभूमि के लिये हृदय का गुप्त-प्रेम किस अधिक मात्रा में प्रकट होता है। सचमुच उस समय आप भारतवर्ष को अपनी पैतृक और स्वभाव-सिद्ध सम्पत्ति, अपने पूर्व पुरुषों की तपोभूमि और पृथ्वी के हृदय का हीरा-रत्न पाते हैं और उसके

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

लिये सर्वस्व बलिदान करना भी एक तुच्छ भेंट समझते हैं। आपका अन्तरात्मा अपने आपको इस पवित्र भूमि का सच्चा स्वामी समझने लगता है। और नगर-निवासियों की झूठी देश-भक्ति देखकर अपने आपको उनसे भिन्न श्रेणी में गिनता है।

नवयुवक यात्रियों को चेतावनी

लेखक की सम्मति में नवयुवकों को चाहिये कि काश्मीर जाने के लिये कम-से-कम ५-६ साथियों सहित तैयारी करें। और इस उद्देश्य से चलें कि जहाँ तक हो सकेगा वह अपना काम अपने हाथ से करने को तैयार रहेंगे। यदि इतने नवयुवक एक खच्चर ही ख़रीद लें, जिसको वापिस आने पर फिर बेच भी दिया जा सकता है तो कुछ अनुचित न होगा। पहाड़ी सफ़र में लद्दू खच्चर, घोड़ों तथा गधों की अपेक्षा सस्ता और उपयोगी होता है। कभी घास-पात न मिलने पर भी यह अर्द्धगधा अपना पेट इधर-उधर के कूड़े-करकट से भर लेता है और फिर भी अपने वज़न से ज़्यादा बोझ पहाड़ों की चोटियों पर ले जाता है। स्काउट यात्रियों को अपना तम्बू आप लगाना, खाना पकाना, कपड़े धोना इत्यादि सब काम खुशी-खुशी से करने चाहिये और जहाँ तक हो सके एकही दिन में पड़ाव ख़तम करने का प्रयत्न न करें। यात्रा में नोटबुक तथा पेन्सिल साथ रखना अति आवश्यक है और जो-जो नवीन प्रतीत हो उसको जैसे-का-तैसा ही लिखना चाहिये। पूर्व-संस्कार प्रायः लेखक को ग़लत रास्ते पर ले जाते हैं, इस समय उन पर ख़ूब ध्यान रक्खें। शहर में पहुंचने पर यदि कोई पुस्तकालय मिले तो उसमें पूर्व यात्रियों के अनुभव का अध्ययन करने से नवयुवकों में एक नया उत्साह तथा ज्ञान होता है। ग्रामों में घूमते-घूमते अपने आपको बिल्कुल निष्पक्ष सेवकों की हैसियत में रखना चाहिये। उनकी ग़रीबी तथा उनकी त्रुटियों पर किसी प्रकार का आक्षेप नहीं करना चाहिये। जब कभी किसी घर में निमन्त्रित हो तो उस समय मिलनसार, प्रेम तथा नम्रता के स्वरूप बनकर दिखाओ। बात करते समय ऐसे शब्दों का प्रयोग करो जिन्हें वे सरलता से समझ सकें। मित्रों की तरह बात करने के लिये यह भी आवश्यक है कि उनके नाम तथा जाति से सम्बोधन किया जाय। ऐसा करने से आप उनके जीवन की सब बातों को समझ सकते हैं और इस प्रकार से मौजूदा लेखकों से भी अधिक ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। यदि आपके ऐसे बर्ताव से कुछ मित्र पैदा हो जायँ तो कोई काम जिससे कि उनका कुछ संबन्ध हो उनकी स्वीकृति बिना न किया जाय।

बहुत पुरुषों का यह कथन है कि धनी पुरुष या साधु-अभ्यागत दूर-दराज़ देशों में भ्रमण कर सकते हैं। लेखक की दृष्टि में यह बात बिल्कुल ग़लत है प्रतीत होती है। क्योंकि आजकल के धनी पुरुष इन देखने योग्य पर्वतों में विशेषकर जहाँ मोटर का इन्तिज़ाम नहीं हो सकता नहीं पहुँच पाते और साधू लोगों का पाँव वहाँ तक ही चलता दीखता है जहाँ तक कि इनके भिक्षा-पात्र में कुछ पड़ता रहे। यद्यपि भारतवर्ष के पूर्व पुरुषों ने यात्राओं का बहुत अधिक महत्त्व रक्खा हुआ है तो भी आधुनिक समय में बहुत से योग्य पुरुषों का फुर्सत का समय व्यर्थ नष्ट होता है। प्राचीन इतिहास की ओर देखने से निस्सन्देह सिद्ध होता है कि रामचन्द्र जी आदि पूर्व पुरुषों ने यात्राओं की आकाँक्षा बहुत गंभीरता से की है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

दूर-दराज़ पहाड़ी इलाकों में तो केवल अँग्रेज़-ही-अँग्रेज़ यात्री दिखाई देते हैं। गरमी की छुट्टियों में अँग्रेज़ लोग भारत की प्रत्येक दिशा में, जहाँ उनको ठंडक मिल जाय, जाते हैं। दस रुपये के शिकार पर सैंकड़ों रुपये ख़र्च कर देते हैं। पहाड़ों के फोटोग्राफ़, रास्तों के नक़शे, नये-नये लोगों से परिचय, मिशनरी संस्थाएँ इत्यादि से अपनी विद्या को बढ़ाते हैं और भावी संतति को भी इसी प्रकार यात्राओं के लिये उत्साह प्रदान करते हैं। यात्रा से न केवल मनुष्य का स्वास्थ्य ही बढ़ता है अपितु वह कठोर, अभय तथा परिश्रमी जीवन का स्वरूप हो जाता है। हमारे विद्यार्थियों को यह बात भलीप्रकार जान लेनी चाहिये कि नवयुवकोंके धर्म के विरुद्ध है कि इस अमूल्य मानव-जीवन में से सबसे उत्तम भाग में अपना फ़ुर्सत का समय नगरों के बाज़ारों में नष्ट करें जब कि वह इस समय को बहादुराना और देशभक्ति पूर्ण भ्रमणों में गुज़ार सकते हैं।

पूज्य प्रभो !

[जगन्नारायणदेव शर्मा, 'कवि पुष्कर' साहित्यशास्त्री]

जगदाधार विश्व के स्वामी।
प्रभुवर अलख अगोचर नामी।
सब की लाज बचाने वाले।
अनुपम दृश्य रचाने वाले ॥ १ ॥

हम महिलाओं की गति देखो !
पतित हो रहीं सुख से लेखो ॥
हमें कुदृष्टि देखते न पापी।
बल दिखलाते हम पर दापी ॥ २ ॥

अब हम सब को वह बल दीजे !
इतनी दया शीघ्र ही कीजे ॥
अबला बनी न हम दुःख पावें।
निज अधिकारों को अपनावें ॥ ३ ॥

देश-जाति की सेवा साधें।
धर्म-कर्म के बन्धन बाँधें ॥
पूज्य पिता हम को वर दीजे।
दुर्गुण सदा हमारा छीजे ॥ ४ ॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

परिवर्तन

[ले०—श्री० सत्यदेव वर्मा]

आज आदित्यवार था। सब कॉलेज, स्कूल, दफ़्तर तथा कचहरियों में छुट्टी थी। बाबू लोग बाज़ारों में सौदा ख़रीद रहे थे, बाज़ारों में भीड़भाड़ थी वैसे भी तो पेशावर फ्रन्टीयर की राजधानी है और बाज़ारों में भीड़ होना कोई आश्चर्य की बात नहीं।

बाबू रामशंकर के पुत्र का आज नामकरण-संस्कार था। बाबूजी के घर में स्त्रियाँ गीत गा रहीं थी। प्रातः ९ बजे आर्यसमाजी तरीके से नामकरण-संस्कार आरम्भ हुआ। पुत्र का नाम गोपाल रखा गया। लड्डू आदि बाँटे गये। बड़ी धूमधाम से संस्कार समाप्त हुआ।

बाबू रामशंकर एक अच्छे सेठों में से थे। छोटी-छोटी संस्थाओं को दान देने तथा समाज-सेवा से उन्होंने अपना नाम खूब कमा लिया था। वैसे भी आर्य ख्यालात के थे। उनके दो पुत्र थे, एक महेन्द्र और दूसरा गोपाल। इन दोनों को शिक्षा देने में उन्होंने कोई कसर न छोड़ी थी।

जब गोपाल ६ वर्ष का हुआ तो इन्होंने उसे स्कूल में दाख़िल कर दिया। १६ वर्ष की अवस्था में गोपाल ने मैट्रिक पास की और गवर्मेंट कॉलेज पेशावर में दाख़िल हो गया। दो साल में उसने एफ़. ए. की परीक्षा पास की। अब माता-पिता का विचार हुआ कि पुत्र को आगे क्या पढ़ाना चाहिये। माता तो कहा करती थी कि गोपाल को डाक्टर बनाना चाहिये किन्तु पिता की सम्मति थी कि बी. ए. या एम. ए. पास करा कर प्रोफ़ेसर बनाना चाहिये। इधर गोपाल सोचा करता था कि मैं बी. ए. पास कर इँग्लैंड जा बैरिस्टरी पास करूँगा। यही उसके मन में एक प्रबल इच्छा थी। उसने यह बात अपने माता-पिता को न बतलाई। आख़िर वह पंजाब युनिवर्सिटी की बी. ए. परीक्षा में उत्तीर्ण हुआ। अब उसके पिता ने उसे बैंक का काम सौंप दिया था। गोपाल स्वयं बैंक में जाकर रुपया जमा करा लाता और निकलवा लेता था। इन्हीं दिनों में उसका मित्र "सुभास" बम्बई में रहता था। उसका विचार भी इँग्लैंड जाकर पढ़ने का था। इन दोनों ने पत्रों द्वारा आपस में सलाह कर ली थी कि कौनसी तारीख को चलना चाहिये। एक दिन गोपाल किसी-न-किसी प्रकार से पंजाब नेशनल बैंक से १० हज़ार रुपया ले आया और अगले दिन प्रातः पंजाबमेल से बम्बई को रवाना हो गया। तीसरे दिन बम्बई पहुँचा। सुभास स्टेशन पर उसे लेने आया हुआ था, उसने बड़े आदर सत्कार पूर्वक गोपाल को अपने घर ठहराया। गोपाल ने बम्बई जैसे बड़े शहर को कभी नहीं देखा था अतः उसकी यह इच्छा थी कि वह इस शहर को अच्छी तरह

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

देखे। चार-पाँच दिन तक सुभास और गोपाल ने बम्बई की खूब सैर की। एक दिन दोनों मित्र बम्बई की नैशनल लाइब्रेरी में अख़बार पढ़ रहे थे। सुभास एकदम एक उर्दू के पत्र को लेकर गोपाल के पास उठ आया और उसे दिखाया। उसमें लिखा था—

५००) रुपये इनाम

मेरा पुत्र गोपाल, जिसने १९२४ में पंजाब युनिवर्सिटी की बी. ए. परीक्षा पास की है और जिस का रंग गन्धमी, दाँये हाथ पर नाम लिखा हुआ है तथा काला कोट, सलवार और क्रिस्टीकैप पहिने हुए है पंजाब नैशनल बैंक से १०हज़ार रुपया लेकर १२ जून की प्रातः से गुम है। जो आदमी उसे ढूँढेगा या उसका पता बतलायेगा उसे ५००) इनाम दिया जायगा।

मेरा पता—

बाबू रामशंकर सेठ

हुंडीवाला

काबुली दरवाज़ा पेशावर।

इसे पढ़ते ही दोनों लाइब्रेरी से बाहर निकल आये। उन्होंनें सलाह की, अब शीघ्र ही इँग्लैंड चल देना चाहिये। दोनों को पासपोर्ट भी मिल गया था। अतः २० जून को दोनों मित्र "पसैफ़िक" नामक जहाज़ से रवाना हो गये।

इधर सेठ रामशंकर ने गोपाल को बहुत ढूँढा किन्तु इसका कहीं पता न लगा। आख़िर माता-पिता ने अपने पुत्र की आशा छोड़ दी। अब सेठजी पर बहुत कर्ज़ा हो गया था क्योंकि १० हज़ार रुपया तो गोपाल उड़ा ले गया था, दिन-प्रति-दिन उनकी अवस्था बड़ी बुरी होती चली जा रही थी। अब उनका एक भूमि के बारे में मुक़द्दमा था। सेठजी ने बड़ा ज़ोर लगाया किन्तु इस मुक़द्दमे ने उनका पीछा न छोड़ा। अनेकों वकीलों के पास गये किन्तु वह इनका मुक़द्दमा न जिता सके। आख़िर दो वर्ष योंही बीत गये। उधर गोपाल भी इँग्लैंड से "बार–एट–ला" की डिग्री लेकर पेशावर आ पहुँचा। उसने अब अपना नाम मिस्टर केदारनाथ रख लिया था। पेशावर में एक बँगला किराये पर लेकर उसने वकालत आरम्भ की। थोड़े दिनों में इनका नाम बहुत प्रसिद्ध हो गया था, इनके पास बहुत से मुक़द्दमे आने लग गये। आख़िर सेठजी ने भी इनको अपना वकील बनाया, थोड़े दिनों में सेठजी मुक़द्दमा जीत गये वह बड़े प्रसन्न हुए। अब सेठजी गोपाल के घर प्रतिदिन आया-जाया करते थे और उनसे सलाह-मशवरा लिया करते थे। गोपाल को तो बहुत पहले पता लग गया था कि यह मेरे पिता हैं किन्तु अभी तक सेठजी को स्वप्न में भी पता न था कि यह वही गोपाल है। एक दिन बातचीत करते हुए गोपाल ने सेठजी से पूछा,—"सेठजी ! बतलाइये तो सही आपके कितने बाल-बच्चे हैं।" सेठजी बोले,—"सुनो केदारनाथ, मेरे दो लड़के हैं एक का नाम महेन्द्र और दूसरे का गोपाल। महेन्द्र तो आजकल लाहौर के डी. ए. वी. कॉलेज में पढ़ रहा है। किन्तु महेन्द्र से बड़ा गोपाल था। उसको बचपन में मैंने अच्छी प्रकार पाला-पोसा उसे

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बी. ए. तक की शिक्षा दिलवा मैंने उसे अपना बैंक का काम सौंपा था। न जाने उसके मन में क्या पाप आया कि वह १० हज़ार रुपया चालाकी से लेकर कहीं भाग निकला। अब दो वर्ष से लापता है। मैंने उसे बहुत ढूँढा किन्तु उसका कहीं पता न लगा" यह कह कर सेठजी रोने लगे। इसे देखकर अब गोपाल से भी न रहा गया उसकी आँखों से भी आँसू टपक पड़े। थोड़ी देर विचार कर वह सेठ जी के पैरों में गिर कर कहने लगा,—"पिताजी, क्षमा कीजिये मैं आपका वही गोपाल हूँ। जिसको आपने बचपन में पाला-पोसा था और बैंक का काम सौंपा था।" यह सुन सेठ जी आश्चर्य से चकित हो गये। अभी तक उनको विश्वास नहीं हुआ था किन्तु जब गोपाल ने अपने दाँये हाथपर लिखा हुआ नाम दिखाया तो उन्हें अच्छी तरह विश्वास हो गया, पुत्र को गले लगाया और बड़े प्रसन्न हुए मानो अब नया जीवन मिल गया। उसी समय गोपाल अपनी माता को मिलने गया। अगले दिन उसने अपने माता-पिता को ला उस बँगले में रक्खा और आनन्द पूर्वक जीवन व्यतीत करता हुआ तथा समाज-सेवा करता हुआ पेशावर में बैरिस्टरी करने लगा।

बलिदान का बीज

[जगन्नारायणदेव शर्मा, विशारद, साहित्यशास्त्री]

दोहा—गोली से मारे गये, स्वामी श्रद्धानन्द।
किन्तु न इतने से हुआ, शुद्धि-संघटन बन्द॥

(घनाक्षरी)

जाति का महत्त्व है मिटाने से मिटा न कहीं,
पाप्पियों का पाप तो उन्हें ही धर खाता है।
नाम है न होता और काम भी न होता कभी,
व्यर्थ दोनों लोक में कलंक हाथ आता है।
झूठे धर्म धारियों के मन में पड़े से सदा,
क्रोध और द्वेष में अबोध चित्त जाता है।
कहे कवि पुष्कर विवेक से विचार करो,
ज्ञान और कर्म से मनुष्य मुक्ति पाता है।

दोहा—बीज उच्च बलिदान का, होता कभी न नष्ट!
उपजाता जातित्त्व को, और नसाता कष्ट॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मेरा मिस हज़कैरी से सम्भाषण

[ले०—श्रीमती अंजनादेवी आर्या वैदिकधर्मविशारदा, सिद्धान्तविशारदा]

मिसहज़ कैरी ने मुझे कल कहा था, कि विक्टोरिया पार्क में मैं तुम्हें मिलूँगी और अपनी की हुई प्रतिज्ञा को पूर्ण भी करूँगी अतः मैं यथा समय पार्क में आकर मिसहज़ कैरी की प्रतीक्षा करने लगी। मुझे अधिक प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ी। पाँच मिनट में मिसहज़ कैरी की मोटर पार्क के गेट पर आकर खड़ी हो गई, मिस हज़ कैरी ने मोटर से उतर कर आगे पाँव रखा, मैं आगे ही खड़ी थी, दोनों ने हाथ मिलाया, और धीरे-धीरे चल कर एक बैञ्च पर बैठ गईं। मिस हज़ कैरी का मुख उदास देख कर मैंने कहा,—"आप आज कुछ उदास प्रतीत होती हैं।" मिस हज़ कैरी ने बनावटी हँसी हँसते हुए धीरे से कहा,—"अतीत स्मृतियाँ आज उदास बना रही हैं!" मिसहज़ कैरी के शब्दों ने मुझे कल की प्रतिज्ञा की याद दिलाई, मैंने कहा,—"हाँ, मिसहज़ कैरी! अपनी प्रतिज्ञा याद है, जो कल मेरे साथ की थी।" मिसहज़ कैरी ने गम्भीरता से उत्तर दिया, "हाँ, इसीलिये तो मैं आई हूं, सुनिये!"

"मेरी माँ एक उच्च-वंशीय-हिन्दू की कन्या थी। उनका विवाह हिन्दुओं के धर्मशास्त्रों की आज्ञानुसार सात वर्ष की आयु में कर दिया गया था, किन्तु माता-पिता की एकलौती पुत्री होने के कारण वह दो वर्ष तक श्वसुर-कुल में नहीं गई थी। मेरी नानी का देहान्त हो गया था, अचानक ही देश में प्लेग फैल गई सारा नगर हाहाकार कर उठा, लोग शहर छोड़ कर भागने लगे। मेरे नाना जी भी अपनी पुत्री को साथ लेकर देहली चले आये। दुर्भाग्य से जहाँ लोग भाग कर जाते वहाँ भी प्लेग फैलने लगता था अतः देहली में आकर अचानक प्लेग हो जाने से मेरे नानाजी की मृत्यु हो गई, गृह में कोई भाई-बहिन नहीं था अतः मेरी माँ पिता के मरने के १५ दिन पश्चात् सुसराल चली गई।

माता-पिता के लाड़-प्यार से पली हुई मेरी माँ सांसारिक बातों से सर्वथा अनभिज्ञ थी, वह अभी विवाह का नाम भी नहीं समझती थी अतः उन्हें नवीन गृह में, नवीन सम्बन्धियों से बहुत-कुछ दुःख उठाना पड़ा। किन्तु यह हिन्दू-नारी के लिये एक सामान्य बात है (यद्यपि इस ईसाई अवस्था में मेरी माँ या मैं उन व्यवहारों को कदापि सहन न करतीं) किन्तु हिन्दू-रमणी इन व्यवहारों को सहन करने में काफ़ी से ज़्यादा शक्ति रखती है। अतः मेरी माँ के लिये यह साधारण बात कही जा सकती है। ईसाई होने का विशेष कारण तो मेरी माँ का वैधव्य काल था। मेरी माँ को श्वसुर कुल में प्रवेश किये लगभग तीन वर्ष होने नहीं पाये थे, जब कि एक दिन अनायास ही दिल की हरकत के बन्द हो जाने से उनके पति का प्राणान्त हो गया। मेरी माता के साथ उनका बहुत स्नेह था। जब भी मेरी माँ को सास आदि के दुर्व्यवहारों से दुःखी होना पड़ता था तब वह माता को बड़े प्रेम से धैर्य दिया करते थे। मेरी माँ उनकी सांत्वना को पाकर शान्त हो जाया करती थी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वह प्रायः कहा करते थे, कि यशोदा एक बार मैं पास हो जाऊँ तो फिर ऐसे स्थान पर जाकर काम आरम्भ करूँगा जहाँ तुम्हें कोई दुःख न दे सकेगा जहाँ तुम रानी बनकर रहोगी । मेरी माता के दिन इसी सुख-स्वप्न में व्यतीत हो रहे थे, कि अनायास उनकी आशाओं पर तुषार फिर गया वह जहाँ खड़ी थी वहीं पत्थर की मूर्ति की भाँति धड़ाम से धरती पर गिर कर बेहोश हो गई। उनके सिर पर दुःख का पहाड़ टूट पड़ा, उनकी जीवन-नौका बिना मल्लाह की भाँति (जो समुद्र में डगमगा रही हो) हो गई, उनको निराशा की प्रत्यक्ष प्रतिमा दृष्टिगोचर होने लगी, दिन और रात उनके रोते ही कटती थी, वह पहले ही अपने दुःख से दुःखी होगई थी, इधर सास ननद आदि का व्यवहार भी पूर्व की अपेक्षा कई गुणा अधिक कठोर हो चला था जो सर्वथा असह्य था । सारा दिन काम करने पर भी उन्हें कभी किसी के स्नेह की आशा नहीं थी। ईसाई प्रचारिकायें ऐसे समय को प्रभु से माँगा करती हैं। अतः मेरी माँ के साथ साथ भी उन्होंने मेल-जोल बढ़ाया, जिसका परिणाम यह हुआ, कि एक दिन समय देख कर मेरी माँ गृह से भाग कर चली आई और ईसाई हो गई । यहाँ आकर उनका पुनर्विवाह किया गया, जिससे मेरा जन्म हुआ ।"

मैंने लम्बी आह भर कर कहा–"अपने पांव पर कुल्हाड़ी मार कर ही आज हम शक्ति हीन हो रहे हैं ।" कुछ देर तक हम दोनों चुप रहीं ।

सहसा शान्ति को भंग करते हुये मिसहज़ कैरी ने कहा—"पर फिर भी हम सुखी न हो सके यद्यपि उस समय मेरी माँ को ईसाई बना कर ईसाइयों ने बड़ा उपकार किया था और मेरी माँ वास्तव में उस समय सुखी होगई थी पर"—

इतना कह कर मिसहज़कैरी चुप होगई मैंने आश्चर्य से पूछा—"पर क्या?" मिसहज़ कैरी बोली–"यही, कि अब हम धोबी के कुत्ते की भाँति न गृह के न घाट के !" मैंने कहा—'क्यों' ! वह बोली—हिन्दुओं की दृष्टि में हम अपवित्र हैं, म्लेच्छ हैं, इस लिए उनके धार्मिक कार्य्यों में विवाहों में वैसे ही सम्मिलित नहीं हो सकते, विवाहादि नहीं कर सकते मन्दिरों में जाकर मस्तिक नहीं नवा सकते। और इधर अङ्गरेज़ लोग हम से घृणा करते हैं हमें काला आदमी कह कर पुकारते हैं, वहाँ भी हम उन लोगों के साथ विवाहादि नहीं कर सकते धार्मिक उत्सव सम्मिलित होकर नहीं मना सकते। हाँ, जो लोग विशेष पठित एवं धनवान होते हैं उन के साथ खाना पीना हो जाता है पर वह क्या ? जैसे कि हिन्दू लोग भी जो पश्चिमी शिक्षा के रङ्ग में रँगे जा चुके हैं किया करते हैं।

पर उससे क्या हो सकता है, हम दोनों ओर से बहिष्कृत हैं। साधारण प्रकृति के ईसाइयों के साथ तो वह भी दोनों ओर से नहीं हो सकता। वह दिन अङ्गरेज़ मिशनरियों के हमें नहीं भूले जब स्वार्थ के लिए हमारे वस्त्र तक धोने को उद्यत हो जाते थे ।"

मैंने धीरे से कहा—"बहिन एक बात कहूँ !" मिस इज़ कैरी ने कहा—"कहिये। क्या ?"

मैंने कहा—"अब तो हिन्दुओं में से वह बुराइयां बहुत कुछ निकलती जाती हैं, और निकल जावेंगी अब वह बात नहीं, कि जो धर्म से एक वार भ्रष्ट हो जावे तो पुनः उसे धर्म में न लाया जा सके ! हिन्दुओं के धर्म पर प्रत्येक मनुष्य का अधिकार है, हम लोग आर्य धर्म को सत्य सनातन समझते हैं और उस पर प्राणी मात्र का अधिकार समझते हैं ।"

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मिस हज़कैरी ने कहा—"ठीक है, होगा। पर अब मुझे किसी पर विश्वास नहीं है, दूर के ढोल सुहावने हुआ करते हैं हमारे में अब एक ऐसी पार्टी बन गई है, जो अपने को न हिन्दू समझती है न ईसाई!" मैंने कहा—"क्या आपका मतलब थियोसोफ़िकल सुसायटी से है!" उसने कहा—"नहीं, हम ऐसे झूठे ढकोसलों को नहीं मानते जो बातें हिन्दुओं की अच्छी हैं, जो ईसाईयों और अंगरेज़ों की अच्छी हैं हम उन्हें लेने का यत्न किया करते हैं और सदा अपनी बुराईयों से दूर भागना चाहते हैं? फिर न हमें चर्च की अवश्यकता है, न मन्दिर की। धर्ममन्दिरों और चर्चों को चौकीदार सम्भाल रखें! हमारा मन ही मन्दिर और चर्च हैं! बहिन बुरा न मानना! दूर से पहाड़ बहुत सुन्दर प्रतीत हुआ करते हैं, पर वास्तव में वह वैसे नहीं होते! मुझे हिन्दुओं पर विश्वास नहीं है। हम आप की शुद्धि को लेकर क्या करें! जब हमारे विवाहादि सम्बन्ध वहाँ भी स्वतन्त्ररूप से प्रत्येक के साथ नहीं हो सकते तो!"

"यही बात तो हमारी यहाँ है। हमें चर्च में प्रेम से बिठाया जावे पर फिर भी हम अलग के अलग हैं! हमारे विवाहादि आपस में ही हो सकते हैं। यदि हमारे पास आकर भी यही हो तो फिर व्यर्थ धर्म परिवर्तन से क्या लाभ! आप बतावें, कि यदि मैं चाहूं कि शुद्ध हो कर आप के परिवार की कन्या से अपने पुत्र का विवाह करूं तो क्या आप उद्यत हैं?"

मैंने कहा—क्यूं नहीं, ज़रूर पर एक शर्त पर यदि आप के लड़के का गुण कर्म स्वभाव हमारी कन्या के समान हो तो! इस बात पर मिस हज़कैरी बहुत ज़ोर से हँसी! वह हँसी उपेक्षा की हँसी थी, मैंने कहा—"आप हँसती क्यों हैं मैं सत्य कह रही हूं!" मिस हज़ कैरी ने गम्भीरता के साथ कहा—"हाँ बहिन क्षमा करें! मुझे आप की बात पर हँसी आई है! मैं पहले ही कह चुकी हूँ कि दूर के ढोल सुहावने हुआ करते हैं। ख़ैर अब तो देर हो गई है, कल फिर इस समय पर यहाँ आवें मैं आप को अपने हँसने का कारण प्रत्यक्ष प्रमाण के साथ बताऊँगी! (अपूर्ण)

प्रेम-पथिक

[श्री० पं० जगन्नारायणदेव शर्मा, 'कवि पुष्कर']

(१)

विकट संकट में टरता नहीं!
कुटिल कण्टक से डरता नहीं॥
पथिक! है तव कष्टमयी कथा—
सह रहा हठ के वश तू व्यथा॥

(२)

हृदय में प्रिय का बस ध्येय है।
सरस सुन्दरता-रस पेय है॥
भ्रमित भावुक है अनुराग में—
सुख मिला तुझको जगत्याग में॥

(३)

सुबुध हो कर भी छल में फँसा!
इस लिये बल गौरव है नसा॥
तप रहा नित ऐहिक ताप से,
विषय लोलुपता वश आप से॥

(४)

सुन सखे! अब संशय छोड़ दे!
दुखद बन्धन को झट तोड़ दे॥
विदित है नय-नाशक प्रेम है!
न इसके हित का कुछ क्षेम है॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्त्री-जाति और स्वतन्त्रता

[ले०—श्री० कुमारी सीतादेवी संस्कृत-हिन्दी-विशारदा]

ह संसार परिवर्तनशील है, इसमें नित्य नूतन परिवर्तन होते रहते हैं। इतिहासावलोकन से ज्ञात होता है कि प्राचीन काल में वीराङ्गनायें युद्ध में जाती थीं, कई वेदमन्त्रों की व्याख्यात्रियाँ भी स्त्रियाँ हो चुकी हैं। वर्तमान स्त्री-जाति की अवस्था देखकर हमें प्राचीन काल की बातें स्वप्नवत् मिथ्या प्रतीत होती हैं। इसमें स्त्री-जाति का किंचिन्मात्र भी दोष नहीं है। मुसलमानी शासनकाल में ऐसा समय आया जब कि यवनों की क्रूरता तथा दुराचार के कारण एक अल्पवयस्का बालिका भी घर से बाहिर पैर नहीं रख सकती थी। अतः बाल-विवाह इत्यादि प्रथायें भी प्रचलित हो गईं। उसी समय से स्त्रियों में स्वतन्त्रता आदि का ह्रास होता गया। लोग स्त्रियों को अति घृणा की दृष्टि से देखने लगे। तत्कालीन आचार्यों ने "द्वारं किमेकं नरकस्य नारी" यह वाक्य तक कहने में कसर न रक्खी। स्त्रियों को चारदिवारी के अन्दर बन्द रख कर, उनके स्वास्थ्य का सर्वनाश करने में ही पुरुष अपने कर्तव्य की इतिश्री समझते थे। उस समय कई आचार्य्य हुए, जिनका नाम आज तक स्वर्णाक्षरों में भारतीय इतिहास में अङ्कित है, जिसे आर्य्य-जाति बड़े गौरव के साथ पढ़ती है। उन्होंने भी स्त्री-जाति की शोचनीय दशा को सुधारने का किंचिन्मात्र भी प्रयत्न नहीं किया। उस समय ऐसा प्रतीत होता था कि संसार से स्त्री-जाति का लोप हुआ ही चाहता है। केवल पुरुष इस संसार-चक्र को चलायेंगे। इस तमोनिशा में दक्षिण दिशा से एक विद्युत्-रेखा चमकी। महर्षि दयानन्द का प्रादुर्भाव हुआ। उन्होंने इस जाति के सुधार का भरसक प्रयत्न किया, तथा समानाधिकारों की घोषणा की, इन्हें द्विज-पद प्रदान किया। कई प्रमाणों द्वारा स्त्रियों की महत्ता को दर्शाया। यथा—

उपाध्यायान्दशाचार्य आचार्याणां शतं पिता।
सहस्रं तु पितॄन्माता गौरवेणातिरिच्यते॥

अर्थात् उपाध्याय से दश गुणा अधिक आचार्य्य होता है, आचार्य्य से सौ गुणा अधिक पिता, पिता से हज़ार गुणा अधिक माता है। तथा—"मातृमान् पितृमानाचार्य्यवान् पुरुषो वेद" अर्थात् मनुष्य माता-पिता तथा आचार्य्य की शिक्षा से ज्ञानी होता है, इसमें भी सबसे ऊँचा दर्ज़ा माता का ही रक्खा गया है। इस प्रकार और कई प्रमाणों द्वारा स्त्रियों के प्रति अति सम्मान के भाव प्रकट किये हैं। स्वामीजी की महती कृपा तथा क्रियात्मक प्रेरणा से स्त्रियों की ओर से भी स्वतन्त्रता, शिक्षा तथा समानाधिकारों की माँग होने लगी। इसी प्रकार क्रमशः स्त्रियों में शिक्षा, स्वतन्त्रता आदि का प्रचार होता गया। शिक्षा के अति प्रचार से जनता को स्त्री-शिक्षा तथा स्वतन्त्रता की आवश्यकता अनुभव होने लगी। अब ऐसा समय आया कि शिक्षित सभ्य-समाज इस बात को सम्यक्तया समझने लगा है कि किसी देश की उन्नति वा अवनति वहाँ की स्त्री-जाति पर ही निर्भर है। आजकल व्याख्यानों

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

तथा लेखों में भी इस बात पर विशेष बल दिया जाता है कि स्त्रियों को समानाधिकार मिलने चाहिये। उनको पुरुषों के समान ही स्वतन्त्रता तथा विद्याध्ययन की आज्ञा होनी चाहिये। नैपोलियन बोनापार्ट ने भी कहा था कि देश की उन्नति स्त्रियों की उन्नति पर ही निर्भर है। गर्भावस्था से लेकर पाँच वर्ष तक माता सन्तान को जो कुछ सिखा सकती है वह सारी आयु में भरसक प्रयत्न करने पर भी शिक्षक नहीं सिखा सकते। जैसे कुम्हार आवे में रखने से पूर्व स्वेच्छानुसार घड़े को बना सकता है, उसी प्रकार बाल्यावस्था में ही मातायें सन्तान को जैसा चाहें बना सकती हैं। देशोद्धारनिमित्त बलि होने के लिये नवयुवक तथा नवयुवतियों की महती आवश्यकता है। इनको सुयोग्य तथा वीर बनाना स्त्रियों के हाथ में है। अतः सिद्ध हुआ कि भारतोद्धार ही स्त्रियों पर निर्भर है। सन् १९२१ में सत्याग्रह के दिनों में स्त्रियों के सहयोग से कुछ दिनों के अन्दर ही भारत का भाग्य पलट गया था, यद्यपि इससे पूर्व भी देशमें कई क्रान्तिकारी घटनायें होचुकी थीं, परन्तु यह घटना एक अपूर्व घटना थी। स्त्रियों के असहयोग के कारण वर्तमान काल में किसी नेता को भी महात्मा गाँधी के सदृश तुलनातीत सफलता प्राप्त नहीं हुई। अब भी यदि स्त्रियाँ इस कार्य्य को पूर्ववत् दत्तचित्त होकर करें तो भारत में फिर वही स्वराज्य का आशादायक दिवस कुछ समय में ही आ सकता है, जिसके लिये सारे नेता अपना तन, मन, धन लगा कर भरसक प्रयत्न कर रहे हैं। स्त्रियों के अन्दर एक विशेष शक्ति है जिससे कि वह जो कुछ चाहें कर सकती हैं। स्त्रियों के सहयोग के बिना भारत का उद्धार दुस्तर ही नहीं, अपितु असम्भव है। इतिहास से विदित होता है कि प्राचीन समय में भारतीय स्त्रियाँ ही थीं, जिन्होंने शिवा जी सदृश वीर रणधीर पुत्र को उत्पन्न किया। जिस औरङ्गज़ेब ने अपने अत्याचारों तथा क्रूरता से सब के नाक में दम कर दिया था, जिसकी पेचीली चालों से कोई भी विजय प्राप्त नहीं कर सका था, ऐसे म्लेच्छ यवन को अपनी अपूर्व वीरता तथा धीरता से परास्त करने वाला भारतजननी का सुपुत्र शिवा जी ही था। क्या कभी मेवाड़ सूर्य, भारत-रत्न, प्रतापी प्रताप की वीरता तथा मातृभूमि के लिये अपूर्वत्याग और देशोद्धार की सच्ची लगन कभी भुलाई जा सकती है। वर्तमान काल में भी निखिल जगत् को अकेला ही परास्त करने वाला भारतमाता की गुलामी की जंजीर को तोड़ने वाला आर्यसमाज का प्रवर्तक महर्षि दयानन्द; सर्वपूज्य नेता, त्यागमूर्ति, मातृभूमि की स्वतन्त्रता का मार्गदर्शक महात्मा गाँधी; देशहितैषी सच्चे सेवक तिलक तथा गोखले जैसे सुपुत्र भारतीय महिलाओं क कोख से ही उत्पन्न हुए हैं। ऐसे पुत्रों की उत्पादिकाओं को भला कौन अबला कह सकता है? क्या आज स्त्री-जाति इतिहासवर्णित वीराङ्गनाओं को भूल गई है, क्या अपनी पूर्व बहिनों का अनुगमन न करके शुभ्रज्योत्स्नासम उनकी अक्षय कीर्ति को कलङ्कित करेगी? राजपूती इतिहास आज भी पूर्व ललनाओं की अपूर्व वीरता की साक्षी देरहा है। यदि किसी समय पुरुष अपने पथ से च्युत भी हो जाते थे तो स्त्रियाँ उन्हें कर्त्तव्यपथ पर दृढ़ रहने का आदेश करती थीं। जिस समय कर्मदेवी का एकलौता पुत्र युद्ध में जाने से घबराता है, उस समय कर्मदेवी उसे उपदेश देती है कि यदि तू युद्ध से पराङ्मुख होगा तो मैं समझूंगी कि तू वीर क्षत्राणी के दूध को कलंकित करता है। हे मेरे वीर पुत्र! युद्ध में जाओ, देखो शत्रु को जीत कर आना, अन्यथा युद्ध में ही

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्राण दे देना। यदि रण से पराङ्मुख होकर घर लौटोगे तो तुम्हारे लिए द्वार बन्द है। ऐसे कायर पुत्र से तो मैं बन्ध्या ही भली हूँ। इसी प्रकार बहिन कर्णावती ने भी कर से तलवार बाँध कर अपने भाई को आशीर्वाद देकर उत्साहित कर के युद्ध के लिये भेजा। स्त्रियों को अबला कह कर पुकारने वाले लोग प्रायः कहा करते हैं कि जहाँ स्त्रियों में शारीरिक बल कम है वहाँ इनका मस्तिष्क भी पुरुषों से वज़न में कुछ औंस कम होता है, तथा बहुत भोगविलास में प्रिय होती हैं, क्या निम्नलिखित घटना उनकी बात को निर्मूल सिद्ध नहीं करती? विवाह के पश्चात् जिस समय पृथ्वीराज भोगविलास में मस्त होकर राज्यकार्य की ओर ध्यान नहीं देता, उधर से शहाबुद्दीन गौरी भारत पर आक्रमण कर रहा है, उस समय संयुक्ता पृथ्वीराज के हाथ में तलवार देकर युद्ध के लिए उत्साहित करती हुई कहती है कि—हे प्राणनाथ संसार में अक्षय कीर्ति को छोड़ कर कुछ भी चिरस्थायी नहीं है। आज हम पार्थिव शरीर से अनेकों सुख भोग रहे हैं, पर यह एक दिन अवश्य नष्ट हो जायगा। क्षणिक सुख के लिए चिरस्थायी कीर्ति को नष्ट करना उचित नहीं। वीर जन युद्ध में प्राण देने से नहीं घबराया करते। अतः हे आर्यपुत्र! युद्ध में जाओ, अपनी अपूर्व वीरता से शत्रुओं को पराजित करके अपनी अक्षय कीर्ति की रक्षा करो। यदि आप साहस और पराक्रम से मातृभूमि की रक्षा के लिये सहर्ष प्राण त्याग करेंगे तो मैं भी सुखपूर्वक मर सकूंगी। पाठकगण स्वयं निर्णय करें कि इस से स्त्रियों का मस्तिष्क न्यून विदित होता है या पुरुषों का। महाराणी दुर्गावती तथा लक्ष्मीबई ने तो बड़ी वीरता से युद्ध करते २ प्राण दे दिये। क्या यह घटनायें स्त्रियों की वीरता का प्रत्यक्ष प्रमाण नहीं दे रहीं। अब समय है कि स्त्रियाँ कार्य्यक्षेत्र में आकर विद्वत्ता तथा वीरता से कार्य्य करके अपने कलङ्क को दूर कर पुनः स्त्री-जाति के नाम को उज्ज्वल करें। आर्यकाँग्रेस में स्वीकृत प्रस्तावानुसार सर्व आर्य्यजाति को ही सत्याग्रह में भाग लेना चाहिये, परन्तु स्त्रियों की इस समय विशेष परीक्षा होगी। अब अतिवीरता तथा साहस से कार्य्य कर के दुर्गावती, लक्ष्मीबाई इत्यादि वीराङ्गनाओं के समान अपनी वीरता का परिचय दें। यदि इसी प्रकार की स्त्रियाँ भारत में होंगी तभी देशोद्धार हो सकेगा ईश्वर से प्रार्थना है कि हमें बल, बुद्धि तथा शक्ति दे, जिससे कि हम इस कार्य को पूर्ण करने में समर्थ हों।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पाखण्डी

[ले०—श्रीयुत बाँकेलाल जी कपूर कलकत्ता]

(१)

लती ब्राह्मण-कन्या थी। उसके पिता पण्डित शुकदेव मिश्र ने "अष्टवर्षा भवेद् गौरी" के कथनानुसार मालती का विवाह अल्पावस्था में ही कर दिया था, किन्तु विधाता से उसका यह सुख-सौभाग्य देखा न गया। मालती पन्द्रह वर्ष में कदम रखते-न-रखते विधवा हो गई। उसकी गोद में डेढ़ वर्ष का एक नन्हा-सा बच्चा था। वही उसकी आशा का अवलम्ब, आँखों की ज्योति, प्राणों का आधार और उसके भावी जीवन का टिमटिमाता हुआ चिराग़ था। किन्तु दैव जिस पर कुपित होता है, उसे सर्वश्रान्त करके भी निश्चित नहीं बैठता, जिसे जलाता है उसे तिल-तिल करके जलाता है। बेचारी मालती का वह सुकुमार नन्हा-सा बच्चा एक ही दिन की बीमारी में जीवन-लीला समाप्त कर चलता बना। मालती को सारा संसार अन्धकारमय दिखाई देने लगा। उसने रो-रो कर प्राण दे देना चाहा, किन्तु अभी तो संसार में अनेक दुःख झेलना बदा था, प्राण भी न निकले।

बच्चे की मृत्यु ने उस पर और भी दुःखों का पहाड़ ढाया। जेठ और देवर उसे कुलक्षणा कहते। देवरानी-जेठानी उस पर रात-दिन वाक्य-बाण बर्षाया करतीं। सुसराल में रहना उसके लिये असम्भव हो गया। वह जीते-जी ही मर चुकी थी, उसने पिता को पत्र लिखा और पीहर चली गई।

(२)

कोई कहीं भी जाय किन्तु भाग्य साथ ही लगा रहता है। भाग्य-रेखा का फल उसे भोगना ही पड़ता है। पीहर में आकर भी मालती सुखी नहीं हो सकी। भाभियों के ताने-तराने ने वहाँ भी रहना दूभर कर दिया। मालती के पिता अपने भरसक प्रयत्न से उसे उनके अत्याचारों से बचाने की चेष्टा करते, किन्तु नौजवान लड़कों और नयी कर्कशा बहुओं के सन्मुख उनकी एक न चलने पाती। अस्तु, यह अत्याचार अबाधगति से चलता रहा। बात बढ़ते-बढ़ते यहाँ तक बढ़ी कि एक दिन मालती के छोटे भाई शिवनाथ ने उसे मारपीट कर घर से बाहर निकाल दिया। बात सिर्फ़ इतनी ही थी कि मालती ने शिवनाथ की स्त्री को कुछ खरी-खोटी सुनादी थी। यही उसका सबसे बड़ा अपराध था। शुकदेव मिश्र अपने कमाऊ-पूत के दुर्व्यवहार का खुले कण्ठ से प्रतिवाद भी न कर सके।

मालती पथ की भिखारिणी हो गई।

(३)

डूबते को तिनके का सहारा ही काफ़ी होता है। मालती अपने पड़ोसी सेठ करोड़ीमल के साथ भाग कर कलकत्ते चली आई। सेठजी के यहाँ उसे रोटी बनाने का काम मिला। उसने सोचा कि ख़ैर, पेट भर अन्न और पाँच गज़ कपड़े का तो अभाव नहीं होगा। परन्तु उसे इस अन्न-वस्त्र के बदले में बहुत बड़ी चीज़ देनी पड़ी। करोड़ीमल, उसके रूप पर मोहित हो गया और उसे अपनी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्रेमिका बना लिया। बात दो कान, चार कान, होते-होते सारे समाज में फैल गई। उस बेचारी अज्ञातकुलशीला ब्राह्मणी पर तो कम, पर उस दुराचारी करोड़ीमल पर चारों ओर से धिक्कार की बौछारें पड़ने लगीं। बेचारे को समाज के सन्मुख अपना मुँह दिखाते भी शर्म्म आने लगी।

कुछ दिन इसी प्रकार कटे। मालती को अब अन्न-वस्त्र का कष्ट न रहा। उसके दिन चैन से कटने लगे। परन्तु उसकी आत्मा इतनी पतित हो गई थी कि उसने एक दिन भी नहीं सोचा कि उसे कितना बड़ा अमूल्य धन गँवा कर यह क्षण भर की लौकिक सुविधा प्राप्त करनी पड़ी है।

समय के साथ-साथ इस बात को लेकर जाति-बिरादरी में पैदा होनेवाली हलचल भी धीरे-धीरे दब गयी। सन्सार पूर्ववत अपनी साधारण गति से चलने लगा। लोग प्रायः इस ओर से उदासीन हो गये। चर्चा बन्द हो गयी।

(४)

कलकत्ते में उस दिन बड़ा जोश था। किसी आर्य्यसमाजी ने किसी सभा में व्याख्यान दे दिया कि विधवाओं का पुनर्विवाह अवश्य होना चाहिये। बस, अब क्या था? ज़मीन हिल गयी, आसमान फट पड़ा, बिना बादल के बिजली कड़क उठी। दुर्भाग्य से उस सभा का आयोजन किसी सनातन-धर्मी ने ही किया था; पर उस बेचारे को क्या ख़बर थी कि एक आर्य्यसमाजी भी इस भीड़ में से निकल कर इस प्रकार के विवादास्पद विषय को छेड़कर तूफ़ान खड़ा कर देगा? उस सीधे-सादे सज्जन का नाम था सेठ चम्मनलाल!

सेठ चम्मनलाल बड़े ही धर्मात्मा, दानी, परोपकारी और कट्टर सनातनधर्म्मावलम्बी थे; पर चूँकि उनकी आमन्त्रित सभा में एक आर्य्यसमाजी अण्डबण्ड बातें बक गया, इसलिये उसी बेचारे पर आफ़त ढाने का षड्यन्त्र रचा जाने लगा। इस षड्यन्त्र के रचयिता हुये हमारे सेठ करोड़ीमल जी!

करोड़ीमल ने काशी से एक बहुत बड़े धर्मोपदेशक बुलाकर बहुत बड़ी सभा का आयोजन किया जिसमें पूर्वोक्त सभा के साथ-साथ सेठ चम्मनलाल की भी ख़ूब निन्दा की गई। ख़ूब तालियाँ पिटीं। पं० जी को बड़ी-बड़ी फूलमालायें पहनायी गईं। पाँच हज़ार की थैली भी पुरस्कार स्वरूप भेंट की गई। उन्होंने गला फाड़ कर वह व्याख्यान दिया कि सोया हुआ धर्म भड़भड़ाकर जग पड़ा।

सभा का आयोजन सेठ करोड़ीमल जी के विशाल भवन में ही हुआ था और वे काशी वाले पंडित जी भी उन्हीं के यहाँ डेरा डाले हुये थे। दो-चार दिन उनका आतिथ्य स्वीकार कर, जगह-जगह दो-चार व्याख्यान देकर पंडित जी काशी लौट जाने को तैयार हो गये। आज दो बजे दिन की गाड़ी से वे घर चले जायेंगे, यह निश्चित हो गया है। सेठ चम्मनलाल के ऊपर तो वे वज्र गिरा हो चले। बेचारा इस अज्ञानकृत अपराध के लिये निरपराध ही जाति-बहिष्कृत कर दिया गया।

(५)

उपदेशक जी आज चले जायेंगे। सबेरे से दल-के-दल लोग उनसे मिलने आ रहे हैं। स्त्रियाँ भी उनके दर्शन कर कृतार्थ हो रही हैं। सब के चले जाने पर अपने घर से निकल कर मालती उनके पास पहुंची और उन्हें एक नन्हें बच्चे की भाँति प्यार करती हुई बोली—"बेटा! अब भला तू मुझे काहे को पहचानेगा? अब तो तू पंडित होकर बड़े-बड़ों को ज्ञान सिखाता चलता है, अब तुझे अपनी बुआ की याद थोड़े ही आयगी?"

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पं० जी की भवें तन गईं, नासान्ध्र फड़क उठे, बोले—"यह क्या हरकत है ? तुम कैसी बातें करती हो ? तुम मेरी बुआ काहे को होने लगीं ?"

मालती—तू उस समय गोद में खेलता था। मैंने वर्षों तुझे अपने इन्हीं हाथों से खिलाया है। मैं तेरे दादा शुकदेव मिश्र की कन्या मालती हूं। तेरा बाप शिवनाथ मेरा छोटा भाई है। तेरे बाप ने जब मुझे घर से बाहर निकाल दिया, तब से मैं अपना जीवन-जन्म, धर्म-कर्म, सबकुछ इसी सेठ के हाथ बेचकर इसकी दासी बनकर रहती हूं।"

× × ×

उपदेशक जी बिना और किसी से मिले-जुले काशी चले गये। उसके बाद ही सुनने में आया, कि उन्होंने आत्म-हत्या कर ली है!

असहाय देवियाँ

[श्री पं० जगन्नारायणदेव शर्मा, 'कवि पुष्कर' शास्त्री]

(१)

देवियों की दुर्दशा है हो रही,
काँप जाती देख कर जिस को मही !
पर हमारी जाति के दृग बन्द है,
या हमारे भाग्य बल ही मन्द हैं ॥

(२)

हैं हमारे अंक से हा ! छिन रही—
मृत्यु की घड़ियाँ विचारी गिन रही ।
हम पुरुष फिर भी बने, धिक्कार है !
क्या कहें ! सब बात ही बेकार है ॥

(३)

वे बिलखती हैं हमें क्या ध्यान है !
हानि का किंचित् न होता ज्ञान है ॥
हम रसातल में दिनों दिन जा रहे !
मौन हम कब तक रहेंगे यों गहे ॥

(४)

बन रही हैं द्वेषियों की दासियाँ !
हो रहीं जग में हमारी हाँसियाँ ॥
घर हमारे हीन इन से नस रहे !
या विधर्मी पर इन्हें हैं बस रहे ॥

(५)

हा ! हमारी श्रीमती सह-धर्मिणी !
बन रहीं हत भागिनी दुष्कर्मिणी ॥
दुष्ट इन पर लोभ कर के टूटते—
हैं पतिव्रत हाय ! इन के लूटते ॥

(६)

पर हमीं जीते मृतक हैं हो रहे !
वंश की मर्याद अपने खो रहे ॥
क्यों नहीं अन्यायियों को डाँटते,
और धर कर के गढ़े में पाटते ॥

(७)

क्या ! हमारा आर्य-जीवन गत हुआ ?
या हमारा शास्त्र है अवनत हुआ ॥
जो मनुज हम हैं मनुजता दें दिखा ,
उच्चतम साहस खड़े हो दें सिखा ॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्त्रियों के अधिकार

[लेखिका—एक देवी]

आज कल हमारी स्त्री जाति अपने धन पर क्या अधिकार रखती है वर्तमान "हिन्दू ला" के अनुसार स्त्रियों को कौन कौन सा धन प्राप्त है वह पाठकों के सन्मुख रखती हूं इस के पश्चात् आपको पता लगेगा कि "ला" के अनुसार क्या स्त्रियों को यह सब प्राप्त है। यदि नहीं प्राप्त होता तो इस का क्या कारण है। और साफ ही साफ यदि "ला" हमें कुछ अधिकार देता है, तो वह स्त्रियों से कौन छीनता है और क्यों छीना जाता है। और हमें पुनः प्राप्त करने का क्या उपाय करना चाहिये। यदि हम पुराने शास्त्र कारों के शास्त्रों का निरीक्षण करने बैठें तो हमें पता लगेगा, कि केवल कात्यायन को छोड़ कर बाकी मनु और विष्णु आदि शास्त्रकारों ने १० प्रकार के अधिकार माने हैं।

१. वह जो विवाह के समय प्राप्त !
२. गौने के समय प्राप्त !
३. श्वसुर कुल में जाते ही बड़ों की बन्दना से प्राप्त !
४. पिता द्वारा अन्य प्रकार का दिया हुआ धन!
५. माता का दिया हुआ धन ?
६. भ्राता से प्राप्त धन ! विष्णु चार और भी धनों को स्त्री धन मानते हैं।
७. जब पति दूसरा विवाह करें ? और पहली को प्रसन्न करने के लिये जो दे !
८. विवाह के पश्चात् किसी सम्बन्धी से प्राप्त
९. शुल्क कई तरफ रिवाज है कि विवाह से पहले पिता अपनी पुत्री के लिये कुछ धन लिखा लेता है, अथवा जब वृहद विवाह होता है, या एक स्त्री के जीते जी दूसरा विवाह होता है, तो पिता पुत्री के लिये या तो इकट्ठा कुछ धन लेता है, या मासिक !
१०. पुत्र या किसी अन्य सबन्धी से दान स्वरूप प्राप्त !

कात्यायन केवल साध्वव्य अवस्था में स्त्री धन को स्त्री धन नहीं समझते उन के मतानुसार कौमारावास्था में और वैधव्य में वह धन स्त्री धन कहलाते हैं। जो कन्या या विधवा कमावें या किसी से प्राप्त करें वह धन भी स्त्री धन मानते हैं।

इसी प्रकार कई शास्त्रकार हो चुके हैं, और उन के शास्त्रों का प्रभाव समय समय पर "ला" पर रहा है। किन्तु इन सब में से विचारणीय बात यह है, कि वर्त्तमान "हिन्दू ला" किन शास्त्रों का अधिक सम्मान करता है। और निर्णय किन शास्त्रों के आधार पर हुआ करते हैं। प्रोवी कौन्सिल आज कल प्रायः मनुस्मृति-स्मृति-चन्द्रिका-व्यवहार मयूख-दाय भाग भिताक्षरा का ही विशेष सहारा लिया करती है। पर इन सब के होते हुए भी एक बात और याद रखने योग्य है। कि विशेष अवस्थाओं में इनके विपरीत भी निर्णय हो जाया करते हैं। यह सब पुस्तकें अपने-अपने प्रान्त में माननीय हैं। पञ्जाब और यू. पी. में एक ही "ला" माना जाता है। मैं अन्य प्रान्तों को छोड़ कर पञ्जाब प्रान्त को ही लेती हूं। यह बात भी ध्यान में रखने योग्य है, कि

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

समय पर शास्त्रों से भी बढ़कर रिवाज़ों की कदर की जाती है। रिवाज़ प्रत्येक प्रान्त में भिन्न भिन्न हैं। जैसे देहली में कास्तगरों के विवाहिक नियम कुछ और ही हैं, तो ऐसे साधनों पर उनके रिवाज़ों की एक पुस्तक ही अधिक बनायी गई है, और ऐसे स्थानों पर निर्णय भी रिवाज़ों के अनुसार ही होते हैं। इसी प्रकार पञ्जाब के अर्न्तगत कई प्रकार के पृथक् पृथक् रिवाज़ हैं यदि कोई मनुष्य यह सिद्ध कर दें! कि हमारी तरफ दूसरे ही प्रकार का रिवाज़ है, तो फैसला रिवाज़ के अनुसार ही हो जायेगा। जैसे कि पहले १० धनों को गिना आई हूं? वह सब वर्तमान "ला" के अनुसार (यदि उस में पृथिवी अथवा मकानादि न हो) वह सब स्त्री धन कहलाते हैं। और स्त्री को यह पूरा हक है, कि वह इन को ले सके। जैसे विवाह के समय प्राप्त वस्त्राभूषण आदि! पञ्जाब में बहुत स्थानों में रिवाज़ है, कि जब कन्या प्रथम वार श्वसुर कुल में प्रवेश करती हैं, तो बड़ों को नमस्कार करने पर सम्बन्धा नुसार उसे कोई रु० कोई सात रुपये देता है और कई आभूषण भी देते हैं! रुपयों की गिनती सम्बन्धानुसार न्यूनाधिक हुआ करती है। "हिन्दू ला" के अनुसार उस धन पर किसी का अधिकार नहीं होता, स्त्री चाहे उसे जिस प्रकार भी व्यय करे। और किसी को व्यय करने का अधिकार नहीं होता। हमारी भोली बहिनें समझती हैं, कि यदि यह धन अभी से हमने अपने अधिकार में रखना आरम्भ किया तो लोग मुझे लोभिन आदि कहेंगे। वह चुप चाप वह धन सास के हाथ में दे दिया करती हैं। उस समय कहने को कह दिया जाता है, कि इस धन से तुम्हें आभूषण बनवा देंगे! किन्तु यह सब कहने को ही होता है। और शायद कई बनवा भी देते हों, परन्तु आम तौर पर वह धन पुनः लड़की के दृष्टि गोचर नहीं होता कई स्थानों पर रिवाज़ है कि पहिली वार लड़की ससुराल जाती है तो वह ससुरगृह के भीतर तभी प्रवेश करती है, जब ससुर या सास किसी आभूषण के बनवा देने की प्रतिज्ञा करें। या कुछ रुपया देने की प्रतिज्ञा करें। किन्तु कहने को कह दिया जाता है, और शायद सौ के पीछे पाँच लड़कियों को वह धन प्राप्त हुआ करता है, और कई तो उसी समय कह दिया करते हैं, कि सारा गृह इसी का है, उस की इच्छा है जो बनावे। या करे! किन्तु क्या सारा गृह उस कन्या का हो जाता है, कभी नहीं। इसी प्रकार दहेज प्रथा है, जो विवाह के समय कन्या को दिया जाता है, उस पर "ला" के अनुसार यद्यपि पूरा हक स्त्री का होता है, तथापि कन्याओं को प्राप्त नहीं होता। यहाँ तक कि वर्ष के भीतर यदि उससे अधिक वस्त्र धारण किये गये हैं तो बाकी उसे दिये ही नहीं जाते। वर्ष के भीतर क्या? कन्या को प्रत्येक समय यह भय रहता है, कि कहीं सास-ससुर वस्त्रों के लिये कुछ कहें नहीं! जो वस्त्र वह पिता से विवाह के समय दहेज मान कर लाती है वह भी इसलिये रख लिये जाते हैं; कि दूसरे लड़के के विवाह में लड़की को यही दे दिये जायेंगे। इसी प्रकार आभूषण भी हैं। यथा समय पुत्र के या पुत्री के विवाह पर वह भी लगा दिये जाते हैं, और कह दिया जाता है, तुम्हें सब दे दिया जावेगा, किन्तु कहां मिलता है। दिखाने के लिये लोगों के मांग कर वस्त्राभूषण सुसराल वाले कई समय पर लड़की को दे देते हैं किन्तु जब लड़की घर पहुंची तो न वस्त्र रहे! न आभूषण। और तो और रहा, यदि स्त्री कमा रही है! और वह धन घर में इकट्ठा ही रखा जाता है, पृथक् किसी बैंक में जमा नहीं किया जाता, तो समय पर वह भी स्त्री धन नहीं

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

रहता, वह भी पुरुष का हो जाता है। मुसलमानों के "ला" के अनुसार मुसलमान लड़की को पिता की जायदाद का शायद चौथा हिस्सा मिल जाता है, किन्तु "हिन्दू ला" में इसका भी विधान नहीं है। यदि किसी पुरुष के मर जाने पर उसकी विधवा रह जाती है, और वह पुरुष लाखों की जायदाद छोड़ कर पुत्रहीन मरता है, तो विधवा केवल निर्वाह के लिये आयु पर्यन्त धन ले सकती है, यदि उसकी पुत्री है तो उसके विवाह के लिये, पठन पाठन के लिये धन ले सकती है, किन्तु "ला" के अनुसार जायदाद पर उसका कोई हक नहीं। पति के मकानों में रह सकती है, आमदनी ले सकती है किन्तु खास हालतों को छोड़ कर बेच नहीं सकती। वे विशेष हालतें इस प्रकार हैं। यदि उसने पति का श्राद्ध करना हो, पिण्ड देना हो, पिण्ड देने के लिये तीर्थ यात्रा करनी हो, स्वजात पुत्री का विवाह करना हो, पति के सम्बन्धियों के विवाह के समय यथा रिवाज़ कुछ देना हो तभी पत्नी जायदाद को बेच सकती है। नहीं तो अपने किसी कार्य्य के लिये उसका कोई अधिकार नहीं। एक स्त्री का पति शुद्धाचरण स्त्री को छोड़ कर पुनः विवाह करता है, तो "ला" के अनुसार स्त्री पुरुष पर डिगरी प्राप्त करके धन ले सकती है। जब तक वह शुद्धाचरण रहेगी उसका हक होगा कि वह पुरुष से निर्वाह मात्र के लिये धन प्राप्त करे। हां एक हालत में पृथिवी भी स्त्री, धन हो जाती है, जब उसके निर्वाह के लिये उसे किश्तों के हिसाब से मासिक अथवा एक बार ही इकट्ठा धन या पृथिवी विर्वाह के लिये दे दी जाती है किन्तु वह भी संप्रदायों के अनुसार चाहे यह धन साध्य अवस्था में दिया हो अथवा वैध्य अवस्था में। ऐसी अवस्था में यह धन उसके उत्तराधिकारियों को मिलता है। आगे देखिये। जैसे एक पिता के पश्चात उसके पुत्र का पूर्ण अधिकार है कि वह उस जायदात का स्वामी बने और उसी प्रकार पीढ़ियों तक चलता जावे, यह नियम स्त्रियों में लागू नहीं है। यदि स्त्री खास २ अवस्थाओं में बेच, तोड़ भी सकती है। तो यद्यपि वह धन या जायदात पीछे पुत्री को मिलती है, परन्तु वह उसे किसी भी अवस्था में बेच तोड़ नहीं सकती क्योंकि धर्मशास्त्र के अनुसार उसे न पिता का श्राद्ध करना है न पिण्डदान ही देना है। यदि देना भी हो तो इस से विधवा को और विधवा की पुत्री को क्या लाभ हो सकता है। और यदि निर्वाह से प्राप्त धन बचा हुआ माता का पुत्री को मिलता है तो वह सामान्य धन माना जाता है स्त्री-धन नहीं। पुरुषों की तरह पीढ़ी पर पीढ़ी नहीं चलता। इससे यही सिद्ध होता है कि "हिन्दू ला" के अनुसार हमारा हक न पति की जायदाद पर है, न पिता की जायदाद पर ही हैं। जो अधिकार हमें अपनी प्राप्त हुई सम्पत्ति पर है, वह भी हमारे सम्बन्धी हम से छीन लेते हैं, यद्यपि यह अधिकार हमें जन्म सिद्ध है, और "हिन्दू ला" की आज्ञानुसार हमें प्राप्त है। अब दूसरी ओर देखिये। "हिन्दू ला" के अनुसार अथवा धर्मशास्त्रों के अनुसार एक पुरुष को अपनी सुन्दर, युवा तथा शुद्धाचरण स्त्री के होते हुए भी अनगिन विवाह करने की आज्ञा है और दूसरी ओर यदि इसी बात को कुछ पलट दिया जावे कि एक स्त्री यह देख कर अपना अधिकार जमावेंगी और जबरदस्ती लेने की चेष्टा करेंगी तभी हम अपने मनोवाञ्छित फल प्राप्त कर सकेंगी। और प्रत्येक बहिन के वर्ण-गोचर यह बात हो जानी चाहिये। इस के लिये जैसे भी कोई सहूलियत समझती है प्रचार करें। टैक्सों द्वारा, समाचारपत्रों द्वारा, पुस्तकालयों द्वारा व्याख्यानों द्वारा, भजनों द्वारा कई तरीके

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हैं जहां भी चार पांच स्त्रियां सम्मिलित हों वहां ही इस की चर्चा होनी चाहिये। ताकि हमारी स्त्री जाति भी कुछ-कुछ पददलित होने से बच सके। "हिन्दू ला" के अनुसार स्त्री पुरुष के समानाधिकार होने चाहियें। यह तभी हो सकता है, जब पहले हम प्राप्त धन पर अधिकार जमायें और फिर बाकि बातों में भी हस्ताक्षेप करें।

शान्तिः शान्तिः शान्तिः

संध्या की अन्तिम किरण

[रचयिता—श्री 'प्रियहंस']

ले चली विदा हो सजनि !
कहाँ किस ओर ?
किस जगती के कुंज वनों में
जा उतरोगी ?
कर दोगी प्रभात वेला यों
मृदुमुस्क्यान बखेर!
इधर क्या डालोगी न निगाह ?
यहाँ भी खड़ा हुआ है 'एक'
हृदय में भर कर आह।
तुम्हीं सा उतरा था जग बीच
बचपन का रख रूप
उषा की प्रथम किरण सा।
वह था माया जाल,
अनोखे जादूगर का
उसी के पास चली हो आज
कहने को निज व्यथा अनन्त ?
वहीं का मैं बना फ़कीर
चलो फिर साथ, कटेगी राह
उसी पगडन्डी पर चुपचाप
क्षितिज की ओर !
कभी तो पहुँच मिलेगा योगिन !
उस छलिया के द्वार !!

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

आर्यो ! बदला लो !!

[ले०—श्रीयुत चतुरसेन शास्त्री वैद्य]

बदला लेना और देना ज़िन्दा क़ौमों का स्वभाव है। जो क़ौम दोस्त को दोस्ती का और दुश्मन को दुश्मनी का ठीक बदला नहीं चुका सकती उस पर थू है। वह नामर्दों की जाति है और वह यदि दुनियाँ में जीती है तो झख मारती है।

स्वामी श्रद्धानन्द मार डाले गये ! बूढ़े और रोगी, लाचार और साधु, किस लिये ? इस बात को सोचो ! जब तुम अपने स्त्री-बच्चों से हँसने-खेलने लगो तब सोचो, जब एक घूँट पानी पीने लगो तब सोचो, जब आराम से सोने लगो तब सोचो, और तब तुम देखोगे कि इस ख़ून का बदला लेना तुम्हारे लिये कितना ज़रूरी है, और बिना बदला लिये तुम्हें एक साँस भी लेनी—तुम्हारी ग़ैरत के लिये मुनासिब नहीं है।

सार्वजनिक न्याय और शान्ति-रक्षा के नाम पर बदला लेना तुम्हारे लिये इन्सानियत के लिहाज़ से ज़रूरी है, और एक प्रशान्त धर्मोपदेशक के नाते बदला लेना तुम्हारे आर्यत्त्व के नाते ज़रूरी है। इसी प्रकार एक बूढ़े रोगी असहाय की हत्या का बदला लेना तुम्हारी युवक-वीर-आत्मा के लिये स्वाभाविक है।

पर बदला लोगे किससे ? अभागे हत्यारे से ? इस भावना का मन में आना भी घृणित है, यदि हमें बदला लेना ही है तो इस्लाम से लेना है। हम यह साहस पूर्वक कह सकते हैं ऐसा भयानक धर्म—जो ऐसे कमीने, हत्यारे पैदा कर सकता है दुनिया से जितनी जल्दी नष्ट हो उतना ही अच्छा।

धर्म के अन्धों ने कुछ शताब्दियों पूर्व मसीह के पवित्र नाम पर लाखों बेगुनाह नर-नारियों का ख़ून बहाया था। और उसके बाद इस्लाम की तलवार के आगे पृथ्वी का कोई देश न बचा था जिसने अपने बच्चों के ख़ून से लतपत शरीर तड़फते न देखे हों। अगर यूरोप के शेर इस्लाम के तूफ़ान को ज़मीदोज न कर देते तो आज इस्लाम की नारकीय हवा से जगत् के परित्राण पाने का क्या उपाय बचता ?

क्या धर्म ऐसी वस्तु है जो आत्मा के ऊपर अत्याचार करे ? धर्म तो वह है जो अमर आत्मा के असल रूप को प्रकट कर नश्वर शरीर को अमरत्व प्रदान कर सकता है। लाखों वर्षों बाद आज मानव जीवन का स्रोत शायद अपने उस स्वातन्त्र्य की पुनरावृत्ति कर रहा है जो उसके मनुष्यत्त्व को पशुत्व से पृथक् बनाता है। इस विकास युग में प्रवाहवाद अब क्यों ज़िन्दा रहे ! सदैव ही शान्ति और व्यवस्था से प्रथम क्रान्ति उत्पन्न हुआ करती

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

है, प्रकृति में आँधी के बाद शीतल जल के छींटे पड़ते हैं, व्यवस्था का जो युग आने वाला है उसके प्रथम एक क्रान्ति अवश्यम्भावी है। माण्डलिक जीवनों का भविष्यरूप प्रकाण्ड सामूहिक जीवन है। ब्रह्माण्ड भर के मनुष्य निकट भविष्य में एक समूह होंगे। वे प्रथम मनुष्य होंगे पीछे और कुछ। इस महाविधान में जो अन्धजातियाँ प्रयत्नशील हैं वे तो चकनाचूर होनी ही चाहियें। यह बात निर्विवाद है कि इस्लाम ही एक ऐसी जाति है जिसमें विवेचना और विकास की ज़रा भी गुंजायश नहीं है। उसमें यह भारी दोष है कि वह न केवल अपने विश्वासों पर अटल है किन्तु वह हर तरह सारी पृथ्वी को बलपूर्वक अपने विश्वासों के आधार पर नचाया चाहती है। कहना पड़ेगा कि हिन्दू भी कट्टरपन और अन्धविश्वास में कुछ कम नहीं हैं—परन्तु वे जगत् पर बलात्कार नहीं करते।

आर्यसमाज एक क्रान्ति का प्रारम्भ है, और प्रत्येक आर्य क्रान्ति का देवता है, अन्धविश्वास, मानवीय पराधीनता को नष्ट करके विकास और ज्ञान के प्रकाश में मनुष्यों को जीवित रखने के विधान बनाना और उन्हें समाज में सफलता पूर्वक प्रचारित करना—उसका एकमात्र धर्म है।

स्वामी श्रद्धानन्दजी की हत्या एक चेतावनी है, जो आर्यों को सावधान करके कहती है, तुम जिस गुरु के शिष्य थे, उसने "कृण्वन्तो विश्वमार्यम्" कहते-कहते प्राण त्यागे। पर तुम अपनी दलबन्दी के कीचड़ में पड़े उस बालब्रह्मचारी के नाम को लजाते रहे! यह रक्त की लाल झण्डी कहती है ठहरो! और सोचो कि तुम क्या आर्य हो? समझो और कर्तव्य का पालन करो।

इस ख़ून का बदला लो। ऐसा कि तुम चाहे संसार में रहो या न रहो—पर ऐसे कायर ख़ून कभी न हों। और यह तब होगा जब कि तुम इस्लाम को आर्यत्व की काया पलट कर दोगे। और यही तुम्हारा —तुम्हारी प्रतिष्ठा को सजाने-योग्य, बदला होगा।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सामाजिक क्रान्तिके इतिहास का एक पृष्ठ

(एक सच्ची घटना के आधार पर)

[ले०—श्रीयुत चन्द्रगुप्त विद्यालंकार]

(१)

कार्नवालिस स्ट्रीट
कलकत्ता
१२ जून १८५६.

प्रिय मित्र रौबर्ट,

तुम समझते होगे कि मैं यहाँ बड़े आनन्द में हूँ, परन्तु तुम्हारी यह धारणा नितान्त अशुद्ध है। इसमें सन्देह नहीं कि हम मिशनरियों के साथ भारत सरकार का व्यवहार सहानुभूति पूर्ण होने के कारण हम लोग बहुत से कष्टों से छुट्टी पा जाते हैं, तथापि इस देश के दुःखित निवासियों की सहायता करते हुए हमें बहुत से कष्टों का सामना करना पड़ता है। सबसे बड़ी आफ़त यह है कि ये लोग हमारी सेवाओं का मूल्य ही नहीं समझते ; इतना ही नहीं, साथ ही ये मूर्ख हमें घृणा की दृष्टि से देखते हैं। अगर तुम्हें कभी खुद इस मुल्क में आने का सौभाग्य या दुर्भाग्य प्राप्त हुवा तो तुम स्वयं ही हमारी दिक्कतों को समझ जाओगे।

आज मैं तुम्हें एक विशेष मतलब की चिट्ठी लिखने लगा हूं। मेरा यह आन्तरिक दृढ़ विश्वास है कि धर्म के दार्शनिक या आध्यात्मिक पहलू की दृष्टि से भी संसार का कोई भी धर्म हिन्दू-धर्म का मुकाबला नहीं कर सकता। साथ ही समाज के त्यागभाव तथा आचार की शुद्धता की दृष्टि से भी संसार की कोई सभ्यता भारतवर्ष की प्राचीन सभ्यता का मुकाबला नहीं कर सकती। परन्तु सदियों की गुलामी तथा दूसरे कुछ कारणों से हिन्दू लोगों में कुछ ऐसी बिमारियाँ घर कर गई हैं, जिनकी बदौलत हिन्दू-धर्म और अधिक देर तक अपनी सत्ता कायम नहीं रख सकता।

मेरी यह बात पढ़ते-पढ़ते शायद तुम ऊब गये होगे। मैं जानता हूँ कि तुम एक बहुत स्वतन्त्र प्रकृति के व्यक्ति हो। परन्तु जिस कारण आज मैं तुम्हें यह पत्र लिख रहा हूँ उसे जानकर तुम मेरा अभिप्राय भली प्रकार समझ सकोगे।—इस देश की स्त्रियाँ प्रायः अशिक्षिता हैं, वे सरलता से किसी भी बात पर विश्वास कर लेती हैं। उनकी हालत गुलामों से कुछ विशेष अच्छी नहीं है। मेरा विचार है कि किसी प्रकार हम लोग अगर हिन्दुओं के इस कमज़ोर पहलूपर अपना कुछ प्रभाव डाल सकें तो भारत में ईसाइयत की जड़ शीघ्रता से और मज़बूती के साथ कायम हो सकती है। इसी उद्देश्य से मैंने हिन्दू-घराने की एक लड़की को खुद लिखा-पढ़ा कर तैयार किया है। इसका जन्म मैसूर रियासत में हुवा था। लड़की के पिता एक प्रतिष्ठित ब्राह्मण थे ; उनका देहान्त हो चुका है। लड़की का नाम रमाबाई है। उसकी उम्र लगभग १८ बरस की है। वह बड़ी होनहार प्रतीत होती है। मैं चाहता हूं कि वह इङ्गलैण्ड में उच्च-शिक्षा प्राप्त करके फिर इसी देश में ईसाइयत का प्रचार करने में हमारी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सहायता करे। इसीलिये मैं शीघ्र ही इस लड़की को इङ्गलैण्ड भेजने वाला हूं।

यह तो तुम जानते ही हो कि हज़ारों मील दूर से इस लम्बे-चौड़े देश पर बिना अपनी सभ्यता फैलाये हम लोग शासन ही नहीं कर सकते हैं; अतः मैं आशा करता हूं कि "धर्म" के नाम से घृणा करते हुए भी तुम इतना अवश्य करोगे कि इस लड़की पर पूरी तरह निगरानी रखते हुए इसके आचरण और इसकी प्रवृत्तियों से मुझे समय-समय पर सूचित करते रहो। रमा तुम्हारे घर में ही ठहरेगी।

पत्र का उत्तर शीघ्र देना। रमाबाई अगस्त मास के अन्त तक इङ्गलैण्ड पहुँच जायगी।

तुम्हारा स्नेही सुहृद—
पी० केनिन

(२)

ट्रैफालगर स्क्वेअर
लण्डन
१७ सितम्बर १८५९

प्रिय मित्र केनिन,

उन दिनों जब कि हम दोनों एक साथ पढ़ा करते थे, मैं सदा तुम्हारे धार्मिक भावों की हँसी उड़ाया करता था। मैं कहा करता था कि वे लोग जिन्हें सारी दुनियाँ अधर्म और नाश की ओर जाती हुई दिखाई देती है—सबसे अधिक अभागे हैं। वे अपने को बहुत उच्च समझ कर शेष दुनियाँ के लोगों को घृणा के योग्य समझते हैं। वे गम्भीरता पूर्वक दुनियाँ को एक ऐसे मार्ग पर चलने का उपदेश करते हैं जिसे कि वे खुद भी नहीं समझ रहे होते। आज इस भारतीय कन्या को देख कर मेरी वह धारणा और भी अधिक दृढ़ हो गई है। मैं इस कन्या को देख कर बहुत अधिक प्रभावित हुआ हूँ; यह गम्भीर स्वभाव वाली भारतीय कन्या जिसके अङ्ग से नम्रता, सौजन्यता और गम्भीरता टपकती है—कौन सा नया धार्मिक भाव सीखने के लिये यहाँ भेजी गई है, इसे मैं बिलकुल नहीं समझ सका। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि यह कन्या इस देश की कन्याओं को अपने आचार की पवित्रता द्वारा बहुत कुछ सिखला सकती है। तुम मुझे लिखते रहे हो कि भारतीय स्त्रियाँ कायर, मूर्ख और दास हृदय की होती हैं, परन्तु इस भारतीय कन्या को देख कर मैं इससे सर्वथा विपरीत परिणाम पर पहुँचा हूं। मेरी सम्मति में इस होनहार कन्या को व्यर्थ के धार्मिक आडम्बरों में डाल कर तुम इसका जीवन नष्ट कर रहे हो। अगर तुम इस कन्या को कोई उच्च-शिक्षा देने के लिये यहाँ भेजते तो मुझे बहुत प्रसन्नता होती। परन्तु मैं तुम्हारे इस कार्य में कोई दखल नहीं देना चाहता। अपने धार्मिक पादरी मित्र की आज्ञा शिरोधार्य है। तुम्हारे निर्देशों का यथासम्भव पालन करता रहूंगा।—अपने खुदा से मेरे लिये भी थोड़ी सिफ़ारिश कर देना।

तुम्हारा वही दोस्त—
एच० रौबर्ट

(३)

ट्रैफालगर स्क्वेअर
लण्डन
२५ सितम्बर १८५९

प्रियवर भाई जी,
सादर प्रणाम.

मैं यहाँ आनन्द पूर्वक हूँ। केवल एक बात ही मेरे कष्ट का कारण बनी हुई है, वह है आपका वियोग। इसके अतिरिक्त यहाँ और कोई कष्ट नहीं है। मैं माननीय रौबर्ट के यहाँ ठहरी हुई हूँ; यह

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

एक बहुत उच्च विचारों और स्वतन्त्र प्रकृति के पुरुष हैं। इनके उदार विचारों से मैं बहुत प्रभावित हुई हूँ।

यह देश बहुत महिमाशाली है। मुझे यहाँ आकर प्रथमवार मनुष्य की महत्ता का अनुभव हुवा है। मनुष्य अपने उपजाऊ दिमाग़ की मदद से यहाँ तक उन्नति कर सकता है। यहाँ लोगों में सचमुच जीवन प्रतीत होता है ; सब लोग चुस्त-चालाक हैं ; कोई भी आलसी या निकम्मा प्रतीत नहीं होता। किसी के मुँह पर उदासी या निराशा के भाव प्रगट नहीं होते, ये लोग चलते तो इस प्रकार हैं कि मानों कहीं आग बुझाने जा रहे हों।

एक बात पर यहाँ आते ही मेरी दृष्टि पड़ी है—मुझे यहाँ धार्मिक शिक्षा लेने के लिये भेजा गया है परन्तु इस देश के निवासियों में धर्म-भीरुता के भाव मुझे बिल्कुल प्रतीत नहीं होते। ये लोग धर्म के प्रति बिल्कुल उदासीन जान पड़ते हैं ; गिरजों में लोग केवल शौकिया ही जाते हैं, धार्मिक भाव भरने के लिये नहीं। खुद माननीय रौबर्ट को मैंने आज तक कभी "धर्म" या "चर्च" का नाम लेते तक भी नहीं सुना। अस्तु ; फिर भी मेरा विश्वास है कि यहाँ की जीवित-जागृत सभ्यता के प्रसार से मेरी अभागिनी मातृभूमि का बहुत कुछ उपकार हो सकेगा।

लिखने को तो बहुत कुछ है, परन्तु अध्यापिका के आने का समय हो गया है, यहाँ के निवासी समय-पालन में बड़े पक्के होते हैं ; इसलिये यह पत्र समाप्त करना पड़ रहा है। अपने समाचार विस्तार से अवश्य लिखना ; आपके पत्रों की उत्सुकता से प्रतीक्षा किया करती हूँ।

आपकी प्यारी बहिन—
रमाबाई

(४)

चर्च रोड मद्रास
६ जून १८६१

प्रिय मित्र रौबर्ट,

तुम अपने पत्रों में सदैव मेरे विचारों की हँसी उड़ाते रहे हो। तुम्हारा यह विश्वास रहा है कि मैं न केवल अपना जीवन ही व्यर्थ नष्ट कर रहा हूँ ; परन्तु दुनियाँ के बहुत से मूर्खों को बहका कर उन्हें गुमराह कर रहा हूं। तुम धर्म को एक तुच्छ और हेय वस्तु समझते हो। मैं तुमसे इस विषय पर वाद-विवाद करने से सदैव घबराता हूँ। परन्तु आज मुझे अपने परिश्रम का सुफल मिलना प्रारम्भ हो गया है इसलिये मैं अब साहस के साथ इस सम्बन्ध में तुम्हें दो-एक पाठ पढ़ा सकता हूँ।

आज से छः वर्ष पूर्व जब मैंने रमा को इङ्गलैंड भेजा था, तुमने मुझे लिखा था कि मैं उसका जीवन नष्ट कर रहा हूँ। आज इतनी प्रतीक्षा के बाद मैं तुम्हारे उस आक्षेप का पूरी तरह जवाब देने लायक हो गया हूँ। आज वही रमाबाई अपनी जाति का ख़ूब उपकार कर रही है। भारतीय स्त्रियों में से अन्धविश्वास निकाल कर वह उन्हें ईसू का पवित्र मार्ग दिखला रही है। हिन्दू-जाति की दुःखित और अत्याचार पीड़ित विधवाएँ उसके आश्रम में आकर शान्ति प्राप्त करती हैं, वह उन्हें अन्धकार में से निकाल कर दिन के प्रकाश में लाती है। वह केवल अपनी जाति का ही उपकार नहीं कर रही ; वह जिस गहराई से हिन्दुओं में ईसाइयत का बीज बो रही है, उतनी गहराई से हम जैसे सैंकड़ों धर्म-प्रचारक मिलकर भी कभी न बो सके थे। इस कार्य के द्वारा भारतवर्ष में अँग्रेज़ी-राज्य की जड़ों को स्थिर कर रही है। मुझे विश्वास है अगर

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

इसी ढंग से कार्य होता रहा तो ५०, ६० वर्षों में सारा भारतवर्ष ईसाई-धर्म स्वीकार कर लेगा।

तुम सात समुद्र पार बैठे हुए ताने मारना तो ख़ूब जानते हो, कभी खुद यहाँ आकर इस देश के अभागे निवासियों की हालत अपनी आँखों से क्यों नहीं देख लेते। तमाशा तो यह है कि इस बुरी हालत में भी ये लोग धर्म के नाम पर लड़ने-मरने को तैयार रहते हैं। इन दस सालों में तुम दस बार अमेरिका की सैर कर आए हो, एकबार तो यहाँ भी दर्शन दे जाओ। यहाँ के मज़े निराले हैं, यहाँ आए बिना तुम उनकी कल्पना भी नहीं कर सकते।

तुम्हारा स्नेही—
पी० केनिन

(५)

वनिता आश्रम
मङ्गलौर
२१ नवम्बर १८६८.

मान्यवर भाई जी,

सादर प्रणाम.

कुछ दिनों से एक बड़ी-भारी समस्या सामने आकर खड़ी होगई है। उस समस्या के कारण बहुत दिनों से व्यवस्था-पूर्वक चले आते हुए कार्यक्रम में व्यवधान पड़ने लगा है। जिसे अब तक जीवन का उद्देश्य मानती रही हूँ, वही अब एक भ्रम-सा जान पड़ने लगा है। पहले जब मैं किसी बहिन को ईसाई-धर्म में सम्मिलित करती थी, तब मुझे यह सोचकर आत्मिक आनन्द प्राप्त होता था कि मैं एक आत्मा को अन्धकार से प्रकाश में लाई हूँ, परन्तु अब कुछ दिनों से यह कार्य करते हुए मुझे एक विशेष प्रकार का सन्देह भयभीत कर रहा है।

इस विकट समस्या का कारण एक विचित्र और तेजस्वी सन्यासी है। मैं उसे वर्तमान युग का आचार्य और ऋषि समझती हूँ। इस ऋषि का नाम तुमने सुना ही होगा। यद्यपि मुझे अभी तक उनसे मिलने का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुवा तथापि पत्रव्यवहार द्वारा मैं उनसे कुछ परिचिति प्राप्त कर चुकी हूँ। उनकी मुझ पर बड़ी कृपादृष्टि है। इसी तेजस्वी समाज-सुधारक ने मेरे विचारों में तीव्र क्राँति उत्पन्न करदी है। जो सभ्यता इस अवस्था में स्वामी दयानन्द जैसी महान आत्माओं को जन्म दे सकती है, वह कदापि हेय नहीं हो सकती।

अधिक क्या लिखूँ ? आज हृदय अशान्त है। मेरे पितृसम पूज्य केनिन महोदय जी अब मुझ से कुछ नाराज़ प्रतीत होते हैं। कुछ सूझ नहीं रहा है। परन्तु यह तो निश्चित ही है कि अब हिन्दू-धर्म में मैं वापिस नहीं जा सकती।

आपकी स्नेहमयी भगिनी—
रमा

(६)

ताजमहल होटल
बम्बई
३ मई १८६९

प्रियमित्र रौबर्ट,

तुम बड़े हठी हो, तुम्हें इतनी बार निमन्त्रण दिया, परन्तु तुमने कभी यहाँ आने का कष्ट नहीं किया, ख़ैर, तुम नहीं आये, न सही। मैं स्वयं शीघ्र ही तुम्हारे कान खींचने को लण्डन आरहा हूँ। आगामी जून मास के मध्य में मैं लण्डन पहुँच जाऊँगा।

बहुत बड़े अरसे के बाद अपनी मातृभूमि के दर्शन करने के लिये प्रस्थित हुवा हूँ। यहाँ के हालात बहुत नाजुक हो गए हैं। मैंने एक बार तुमको लिखा था कि अब ५०, ६० साल के अर्से में सारा

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हिन्दोस्तान ईसाई हो जायगा, परन्तु अब यह बात असम्भव होगई है। इस गुलाम क़ौम में भी, न जाने किस प्रकार, एक तीव्र ज्योति उत्पन्न हो गई है, जो हम लोगों के बुझाए बुझ नहीं सकती। यह ज्योति हिन्दुओं के एक साधु में प्रकट हुई है। इस साधु का नाम दयानन्द है, मैंने इस विचित्र शक्ति वाले साधु को अपनी आँखों से देखा है। इसमें सचमुच एक आकर्षण है ; इसकी ज़बान में जादू है, आँखों में ज्योति है। इसके शरीर से ब्रह्मचर्य और पवित्रता की आभा टपकती है। केवल हम लोग ही नहीं, हिन्दू-मुसलमान सभी इसके दुश्मन हैं ; परन्तु मुझे विश्वास है कि हम तीनों के सम्मिलित उद्योग से भी यह ज्योति दब नहीं सकती। इस प्राणी के सम्बन्ध में अधिक विस्तार से वहीं आकर बताऊँगा।

अब थोड़े समय के लिये बिदाई दो।

तुम्हारा स्नेही—
पी० केनिन

(७)

मद्रास.
६ फरवरी १८७०

श्रद्धेय स्वामी जी,

सादर प्रणाम.

आप का कृपा पत्र प्राप्त हुआ। उसे पढ़ कर हृदय में उत्साह और नवजीवन की बिजली सी दौड़ गई। आप की विद्वत्ता की मैं पहले से ही कायल थी, अब आप की एक तुच्छ भक्त बन गई हूं। अगर आप जैसे दो चार महात्मा इस अभागी हिन्दू जाति में और पैदा हो जांय तो यह मृत-प्राय जाति संसार की सर्वश्रेष्ठ जातियों में शिरोमणि हो उठे। धन्य है वह संस्कृति, जो आप जैसे पवित्र महात्मा को जन्म दे सकती है।

अभाग्य से मेरा जीवन जिस ढंग पर ढाला गया है वह आप के सिद्धान्तों से सर्वथा प्रतिकूल है। मैं इस मार्ग पर बहुत आगे बढ़ आई हूं; अब लौटना लगभग असम्भव है। फिर भी मैं पूरी शक्ति से अपना जीवन आप के दिखाए मार्ग पर ढालने का यत्न करूंगी।

अनुग्रहाभिलाषिणी
रमाबाई

(८)

कलकत्ता
२७ फरवरी १८७०

चिरञ्जीव रमाबाई,

आप का पत्र प्राप्त हुआ। आप ने मेरी प्रशंसा में जो वाक्य लिखे हैं, मैं अपने को उन के योग्य नहीं समझता। तथापि आप की मंगल कामनाओं के लिये धन्यवाद। मुझे आप के जीवन का इतिहास जान कर आप से बहुत सहानुभूति होगई है।

मुझे इस बात का हर्ष है कि आप मेरी तुच्छ सेवाओं का इतना आदर करती हैं।

मेरी ईश्वर से यह विनम्र प्रार्थना है कि वह आप को सत्य का प्रकाश दे और आप अपने देश की अभागिनी बहनों की सेवा कर सकें। अगला पत्र उदयपुर के पते से लिखना।

आपका शुभचिन्तक—
दयानन्द सरस्वती

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ईश्वर का नाम जपना

[लेखक—श्री कृष्णानन्द जी]

श्वर का नाम जपने की अपेक्षा संसार का उपकार करना श्रेष्ठ है। जो लोग केवल नाम ही जपा करते हैं और आत्मोन्नति वा परोपकार नहीं करते वे कर्तव्यभ्रष्ट अथवा संसार में भाररूप हैं। हां जो पूर्ण विरक्त हो, विश्वप्रपंच से या पापपुण्य से कुछ वास्ता न रखता हो अथवा गृहस्थों का अन्न न खाता हो वह यदि नित्य निरन्तर ईश्वर का नाम जपा करे तो कदापि निन्दनीय नहीं और उससे संसार की लेश भर भी हानी नहीं। परन्तु संसार में रहकर "केवल नाम जपना और अन्य धार्मिक कार्यों को न करना" धर्म वा न्याय की दृष्टि से प्रशंसनीय वा कल्याणकारी नहीं है। बहुत से लोग नाममाहात्म्य के भरोसे दुष्कर्मों को नहीं त्यागते। नाममाहात्म्य के विश्वास पर दुष्कर्म करना बड़ी धृष्टता और नीचता है। यह कभी नहीं हो सकता कि नाम जपने से पाप का फल न मिले। जाप से पापका फल टल नहीं सकता। विचार कीजिये, कोई झूठ बोल कर, चोरी या व्यभिचार कर के राम नाम जपने लगे तो इससे क्या उन कर्म्मों का फल नहीं मिलेगा? आप विचार कीजिए कि कोई आदमी आप से बेईमानी करके या आपको धोखा देकर नाम नाम जपने लगे तो क्या आप उसका विश्वास करने लगेंगे? राम नाम के जापसे यदि आप पाप कट जाना मानते हैं तो जो आदमी आपकी वस्तु चुरा कर या आपको ठग कर रुपया वसूल करके राम जपने लगे तो उसे आप क्यों नहीं क्षमा कर देते? क्योंकि जाप के प्रताप से उनका पाप तो कट गया, फिर इसमें आपको शंका या अविश्वास करने की क्या आवश्यकता? कोई पुरुष किसी स्त्री से व्यभिचार करके दोनों गंगास्नान कर लें तो इस सिद्धान्त के अनुसार दोनों को क्षमा कर देना चाहिए। गंगा की धारा यदि सचमुच पाप काटने की आरा है तो जो लोग व्यभिचार करके गंगास्नान कर लेते हैं, इस विश्वास के विश्वासी लोग उन्हें क्यों नहीं क्षमा कर देते? गंगास्नान से पाप दूर हो जाने में तो सन्देह रह ही नहीं गया फिर क्यों क्रोध करते वा दण्ड देते हैं? यदि आप कहें कि इन नियमों से बड़ा गड़बड़ होगा, तो ठीक इसी प्रकार ईश्वर के भी नियम कुछ भिन्न ही हैं। उसका ऐसा नियम नहीं है कि पाप करने वाला जाप करे तो पाप न मिले। नाम जपने का दूसरा फल है और पाप करने का दूसरा फल है। उसके यहां अदलबदल नहीं होता कि अन्याय वा अधर्म करके नाम जपने लगे तो पाप क्षमा हो जाय। जैसे पुस्तक पढ़ने का अन्य फल है और खाने पीने का अन्य फल है। यदि कोई खराब वस्तु खाकर पोथी पढ़ने लग जाय तो यह नहीं हो सकता कि खाई वस्तु का प्रभाव न पडे। ठीक इसी प्रकार नामस्मरण वा गंगास्नान का अन्य फल है। और पाप करने का अन्य फल है। महात्माओं ने

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जो नाम की महिमा लिखी है उसका तात्पर्य यह है कि लोग ईश्वर का नाम जपेंगे तो ईश्वर की ओर मन लगेगा जिससे अन्याय और अधर्म्म को त्याग देंगे। उनका यह आशय कदापि नहीं है कि लोग ईश्वर का नाम भी जपें और दुष्कर्म भी करें तो मुक्ति मिले। उनका यही आशय है कि नाम जपें परन्तु दुष्कर्मों को सदाके लिये त्याग दें तब अवश्य कल्याण होगा। जहां कहीं यह लिखा है कि नाम जपने से अमुक पुरुष ने सद्गति पाई वहां ज़रा बुद्धि से विचार कीजिएगा तो पता लग जायगा कि उस पापी ने सच्चे हृदय से पश्चाताप किया और सच्चे प्रेम से ईश्वर का नाम जपा और पापकर्मों को सदा के लिये छोड़ दिया तब उसकी उन्नति वा सुदशा हुई। आपको किसी ग्रन्थ में ऐसा उदाहरण नहीं मिल सकता जिसमें कोई व्यक्ति नाम जपता हो और पाप भी करता हो और उसे सद्गति मिली हो। हमको चाहिए कि सांसारिक दृश्यों और घटनाओं पर ध्यान देकर ईश्वरीय नियमों के जानने का यत्न करें। ईश्वरीय नियमों को जान लेने पर भ्रम वा संदेह नहीं हो सकता। ईश्वरीय नियमों को जानने वाला सब बातों को ठीक ठीक परख सकता और सत्यासत्य का निर्णय कर सकता है। जो ईसाई ईसा पर विश्वास रखने का दम भरता हो पर ईसा के उत्तम गुण प्रेम, दया और उदारता से रहित हो अथवा इंजील के उपदेश के विरुद्ध निष्ठुरता और अन्याय से अन्यों की सम्पत्ति और भूमि को हरण करता हो तो क्या वह ईसा का भक्त वा सच्चा ईसाई कहलाने योग्य है ? कदापि नहीं। जो मुसलमान अल्ला अल्ला चिल्लाता हो या रसूल और कुरान पर ईमान रखने का दावा करता हो लेकिन खुदा के उत्तम गुण रहम करम और इंसाफ़ को तथा रसूल के उत्तम गुण शिष्टता और सौजन्य को न धारण करे और कुरान के सदुपदेश के विरुद्ध बेरहमी, बेइन्साफी और जुल्म में लगा रहे तो क्या वह खुदा का बन्दा या सच्चा मुसलमान कहलाने का अधिकारी है ? कदापि नहीं। जो पुरुष हनुमान का भक्त बनता हो पर उनके उत्तम गुण ब्रह्मचर्य को न धारण करे अथवा एक पत्नीव्रत न करें तो क्या वह हनुमान का भक्त कहा जा सकता है ? नहीं। जो "शिव शिव" जपता हो परन्तु शिव जी के उत्तम गुण एक पत्नीव्रत, परोपकार और योगाभ्यास को न धारण करके व्यभिचार, अपकार और दुर्व्यसन में लिप्त हो तो वह शिव का सच्चा भक्त नहीं कहला सकता। जो 'कृष्ण कृष्ण" रटता हो पर श्री कृष्ण के अमृतोपम उपदेश (गीता के ज्ञान) से बिलकुल शून्य हो अथवा अन्याय वा परपीड़ा में रत हो तो क्या उसे श्रीकृष्ण का सच्चा भक्त कह सकेंगे ? कदापि नहीं। जो 'राम राम' नित्य जपता हो पर उनके सच्चरित्रों का अनुकरण न करता हो तो क्या वह श्री राम का सच्चा भक्त कहलाने योग्य है ? कदापि नहीं। ऐसे ही भक्तों के लिए महात्मा तुलसीदास जी कह गए हैं—वंचक भक्त कहा राम के, किंकर कंचन कोह काम के।

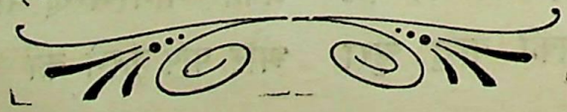

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सुखी जीवन की प्राप्ति

[ले०—श्री ज्ञानचन्द्र शास्त्री.]

सकल संसार पर दृष्टि डाल जाइये, प्रत्येक जीव के हृदय में सुखी जीवन प्राप्त करने की तथा अपनी आत्मा को शान्त रखने की इच्छा सदैव विद्यमान रहती है। कीट पतंगे से लेकर साधारण मनुष्य और अमीर वज़ीर, राजे महाराजे तक सभी प्राणी अपने प्राणप्रिय जीवन को दुःखों से रहित बनाने का प्रयत्न किया करते हैं। धन कमाना, आरोग्य रहने का अवलम्बन करना, कुटुम्ब की वृद्धि की उत्कटाभिलाषा रखना, और धर्म के कार्यों में योग देना इत्यादि सब कार्य सुख प्राप्ति के उद्देश्य की पूर्ति करने वाले समझे जाते हैं। जिन व्यक्तियों का विश्वास है कि मानव जीवन अनन्त है और उस का अन्त वर्तमान ज़िन्दगी की समाप्ति के साथ ही नहीं हो जाता, वह लोग अपने भविष्य जीवन को सुखी बनाने का कुछ न कुछ प्रयास किया ही करते हैं। जन्मान्तर अथवा परलोक के विषय में लोगों का भले ही विवाद हो, किन्तु वर्तमान तथा विद्यमान जीवन को शान्तिपूर्ण बनाने का लक्ष्य मनुष्य जाति के सभी सम्प्रदायों का है। यहाँ हम कुछ संकेत उन उपायों की ओर करेंगे जिन का अवलम्बन करने से परलोक में प्राप्त होने वाले सुख इहलोक अर्थात् इस जन्म में ही प्राप्त हो सकें। इस के साथ ही साथ यह बता देना भी अनुचित न होगा, कि उपर्युक्त मार्ग से चलने पर यह न होगा कि केवल इसी ज़िन्दगी में मनुष्य सुखी हों और उस का परलोक बिगड़ जावे। कदापि नहीं, लोक और परलोक दोनों के कल्याण को सिद्ध करना ही मनुष्य का पुरुषार्थ है। इसीलिये यहां जिन जिन बातों का उल्लेख किया जावेगा उन के द्वारा मनुष्य धर्म, अर्थ काम और मोक्ष इन चारों पुरूषार्थों को प्राप्त करने में समर्थ हो सकेगा।

सुख और दुःख के वास्तविक कारणों को विचारने से विदित होगा कि यथार्थ में यह दोनों मन के भाव हैं। लोग पदार्थों को सुख और दुःख के देने वाले समझते हैं और उन्हें दृढ़ विश्वास है कि संसार के भीतर पीड़ा और प्रसन्नता के कारण एक मात्र पदार्थ ही हैं, परन्तु ऐसा समझना नितान्त भ्रम का मूल है। यदि सचमुच पदार्थ ही सुखदायी अथवा दुःखदायी होते तो धन को कोई मनुष्य कभी छोड़ने के लिये कभी तय्यार न होता। परन्तु हमें दिखाई देता है कि कई मनुष्य उसे अनिष्टकर समझ तृण की भाँति त्याग देते हैं। इसी प्रकार जो वस्तु किसी एक मनुष्य को सुखदायी है वही दूसरे को दुःख का कारण हो जाती है। वास्तव में बाह्य पदार्थ केवल दुःख के कारण मात्र ही हैं सुख और दुःख मानना यह मन का धर्म है। जङ्गल में रहने वाले चरवाहे थोड़ा सा धन और आडम्बर प्राप्त न होने पर भी आनन्दपूर्ण नज़र आते हैं और बड़े बड़े सेठ साहूकार लाखों का द्रव्य पर्याप्त प्राप्त होने पर भी दुखी रहते हैं। इस से स्पष्ट है कि सुख अथवा दुःख यह अपने मन के ही भाव हैं, उस की सम्पत्ति हैं। यदि आत्मा शुद्ध बलवान् है तो बाहरी अनिष्ट सामग्री के उपस्थित होने पर भी वह सुखी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

और शान्त रह सकता है। यदि चित्तदुर्बल है, पापवासनाओं से पूर्ण और शंकाओं से क्षुब्ध है तो उसे स्वर्ग में भी सुख प्राप्त नहीं हो सकता। इसी कारण सुख के इच्छुक विचार शील मनुष्य अपनी आत्मा को उन्नत बनाने का सदैव यत्न किया करते हैं।

तनिक विचारिये आत्मा क्या वस्तु है ? दर्शनशास्त्र का बाल की खाल निकालने वाला तर्क उसे चाहे जो सिद्ध करे, और बड़े २ धुरन्धर विज्ञ चाहे जितनी मत्थापच्ची करें परन्तु बुद्धि के द्वारा विचारने से मालूम होता है कि मनुष्य के विचार और कार्य्यों के समूह का ही नाम आत्मा है। इस के अतिरिक्त आत्मा और कोई वस्तु है अथवा नहीं इस का बोध होना कठिन ही नहीं, वरन असम्भव है। जैसे विचार और कार्य्य हैं वैसा ही आत्मा है। यदि विचार और कार्य नीच हैं तो आत्मा भी नीच और दुर्बल होगा। यदि विचार और कार्य्य उन्नत और सुशील हों तो आत्मा भी बलवान् होगा। इसीलिये जो अपनी आत्मा को उन्नत करना चाहते हैं जो अपने मन को दृढ़ बनाना चाहते हैं उनका मुख्य कर्त्तव्य है कि वह अपने विचार और कार्य्यों की सम्भाल रक्खें, उन पर नियंत्रण का अंकुश रक्खें, निज चरित्र गठन, मनोबल, पुण्य, उन्नति और धर्म सभी इस उपाय के भिन्न भिन्न नाम हैं। इस प्रकार से आत्मा स्वच्छ विशुद्ध और बलवान होता है।

अब यहाँ पर यह शङ्का हो सकती है और कई लोग समझते होंगे कि "जिस आत्मा को हम देख नहीं सकते, जिस का हमें अनुभव नहीं है उस की उन्नति का उपाय करना क्या हमारी शक्ति के भीतर होगा ? ऋषि मुनि लोगों से भले ही यह काम बन सके, परन्तु विविध प्रकार के सांसारिक कार्यों में फंसे रहने पर क्या अस्मा दृश साधारण जन भी इस महान् कार्य्य को सम्पादन कर सकते हैं" अपने तईं इस प्रकार शक्ति-सत्त्वविहीन समझ लेने का दोष बड़े २ महात्माओं में भी पाया जाता है। बेचारे जनसाधारण को इस के लिये हम दोषी नहीं ठहरा सकते। आत्मविश्वास होना भी तो आत्मा की उन्नति का फल ही है। परन्तु ज़रा सोचो तो सही, तुम्हारे हृदय में बैठा हुआ वह भगवान् अनन्त शक्तिशाली, सच्चा परमेश्वर क्या नहीं कर सकता। उस की अनन्त शक्ति को भूल कर ही तुम आज पंगु बन रहे हो। देखो, विचार करो और उद्योग करो। संसार में ऐसा कोई कार्य नहीं जिस को तुम न कर सको, अपनी आत्मा की उन्नति कर लेना तो कोई बात ही नहीं। यदि एक बार भी दृढ़ निश्चय कर के तुम स्वर्ग का दरवाज़ा खोलने का प्रयत्न आरम्भ कर दो तो थोड़े ही समय में तुम अवश्य सदेह स्वर्ग में भी पहुंच सकोगे।

कार्य रहित, निश्चल और सुखी जीवन में पड़े पड़े लोग आलसी और डरपोक हो जाते हैं, शत्रु पर विजय प्राप्त करने के लिये जो यत्न किये जाते हैं उनका आनन्द ऐसे मनुष्यों को स्वप्न में भी दुर्लभ है, "संग्राम का आनन्द" इस वाक्य को सुन कर इस प्रकार के लोग भौंचक से रह जाते हैं, किन्तु यदि सत्य पूछो तो इस अकर्मण्यता का छा जाना ही मृत्यु का स्पष्ट निशान है। समझ लेना चाहिये कि ऐसे मनुष्यों की मृत्यु अब निक टही है। यदि जड़ संसार को यह बातें सत्य हैं तो चैतन्य संसार में भी इन्हें सत्य समझो। विचारशील मनुष्य यदि अपने हृदय में देखे तो उसे महाभारत का सच्चा दृश्य दिखाई दिये बिना न रहेगा। सदैव ही मानव हृदय में पापवासनाओं और शुद्ध आत्मिक-शक्तियों का तुमुल युद्ध मचा रहता है। दुर्बल आत्मा वासनाओं से पराजित होकर उनके दास

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बन जाते हैं। इस के विपरीत बलवान् आत्मा इन कुवासनाओं को दूर परे भगा आनन्दमय और सुखमय जीवन व्यतीत करते हैं।

इस संसार में जो मनुष्य अपनी वर्तमान स्थिति से सन्तुष्ट हैं और अकर्मण्य बन रहे हैं, उन लोगों से न तो कुछ लौकिक उन्नति ही हो सकती हैं और न पारलौकिक ही। उन्नति का मूल मंत्र यही है कि मनुष्य के हृदय में असन्तोष हो। अपनी वर्तमान स्थिति में जो दोष हैं, जो २ असुविधायें अथवा तक़लीफ़ें हैं उन से हृदय में जब तक सच्चा असन्तोष न पैदा हो जावे तब तक उन्नति की कल्पना ही नहीं हो सकती। दैनिक जीवन का यह सिद्धान्त आत्मिक उन्नति के मार्ग में भी अक्षरशः सत्य है। जब तक हम लोग अपने अवनत और गिरे हुवे चरित्र को देख उससे असन्तुष्ट हो कर उन्नति का उपाय न करेंगे तब तक सुखी जीवन की बातें कोसों दूर हैं। अपने आप पर भरोसा और विश्वास रखना, साहसी और उद्यमी बनना, अपने आचरण को पवित्र रखना, निरन्तर उद्योग करना, संक्षेप से ये बातें ही सुखी जीवन की प्राप्ति के लिये मूल मंत्र हैं। जिन लोगों ने इनको निजहृत्पटल में धारण कर लिया है वे अवश्य संसार में कल्याण के भागी हैं।

छप कर तय्यार है

कला-कौमुदी

क्रोशिये का कार्य सिखाने की सर्व श्रेष्ठ पुस्तक

बड़ा साईज़, बढ़िया मोटा चिकना आर्ट पेपर, ६० के लगभग चित्र

बहुरंगे चित्र से सुशोभित कवर

मूल्य केवल १॥)

विस्तृत विवरण के लिये देखो अन्तिम पृष्ठ

मैनेजर 'ज्योति'

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अमर-जीवन

["श्रीपति"]

(१)

बज रही रण-भेरी अब आज,
हो रहा वीरों का बलिदान,
बने कायर कब तक रणधीर !
सुरक्षित रख सकते हो प्रान !

(२)

किया अर्पण प्रियवर ! सर्वस्व—
जिन्होंने हम पर सह कर कष्ट,
उठाते संकट वे ही आज—
हो रहे सहसा हा ! वे नष्ट ।

(३)

पूज्य गुरुजन, नर पुँगव श्रेष्ठ,
देश के जो हैं प्राणाधार—
शीशयुत वीस कोटि के हन्त !
उन्हीं पर होता वज्र प्रहार ।

(४)

जा रही अबलाओं की लाज,
जाति, कुल, धर्म, कर्म, सम्मान ।
सभ्यता का सर पर रख ताज—
सहोगे कब तक यह अपमान ।

(५)

अहिन्सा का यह कैसा पाठ,
कर्म-पथ का यह कैसा ज्ञान ।
धर्म-वीरों का कैसा ध्येय ?
शूर-वीरों की कैसी शान ।

(६)

युधिष्ठिर कब हो बैठे मौन ?
कृष्ण का कब था यह आदेश,
"सुमति दे लंकेश्वर को ईश"
राम का क्या था यह उपदेश ?

(७)

हो लिये सुनकर नव बलिदान—
सहस्रों की संख्या मे साथ,
इसी पर कर लेते सन्तोष—
चिता की भस्म लगा कर माथ ।

(८)

व्यर्थ है जाति धर्म का ध्यान,
सुजनता, मानवता पर गर्व,
व्यर्थ सुख, सम्पति, शील, सनेह,
ज्ञान, गुण, गौरव गरिमा सर्व ।

(९)

दे रही गीता यह उपदेश,
आर्य्य-कुल-भूषण ! भारत रत्न !
"हृदय से कायरता कर दूर—
अमर बनने का करो प्रयत्न ।"

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मोहिनी के आंसू

(गतांक से आगे)

[१९]

स्टर मार्टिन अपनी सह-धर्मिणी एवं षड्वर्षीय प्रिय पुत्र बटलर [Batlar] के साथ सैर करने जा रहे हैं। जब मार्ग में आप एक विशाल एवं सुसज्जित भव्य-भवन के आगे से निकले तो उस में सहस्रों मनुष्यों का जनघोष सुनाई दिया। जिसे सुन मि. मार्टिन ने उस भवन को विशेष ध्यान से देखा— वह भवन बाहर से भीतर तक नवल-मृदुल कदली-दलों से, विविध पत्र-पुष्पों से, शिक्षाप्रद धर्म-तत्व-दर्शी संस्कृत वैदिक एवं इङ्गलिश के वाक्यों से—जो लाल और हरे वर्ण के वस्त्रों पर स्वर्णाक्षरों में बनाये गए थे-उन Mottoes से, एवं ध्वजा पताकादि नाना रम्य-उपकरणों से अलंकृत हो रहा था। जिसके समुन्नत शीर्ष पर विशाल झण्डा लहरा लहरा कर "ओंकार" के दर्शन करा रहा था। कूचे के सिरे से उस भव्य-भवन के मनोहर समुन्नत मस्तक पर्य्यन्त बांधी हुई लहलहाती कृत्रिम * कर्गल वल्लरियाँ स्वयमेव वहाँ के महोत्सव की शुभ सूचना दे रही थीं। वायु-वेग से हिल हिला कर नमस्ते करती हुई पथिकों को, समागतों को अन्तःप्रवेशार्थ संकेत कर रही थीं। उस भवन के विशाल दिव्य द्वार के मुख पर स्वर्णसम कमनीय कर्गल* के कटे हुए, स्वर्णाक्षरों से सुनिर्मित, निम्नवाक्य का रमणीय रक्त-पट, हँसता हुआ बता रहा था:—

आर्य्य-समाज

का

वार्षिक महाधिवेशन

इसे पढ़, मिस्टर मार्टिन का हृदय सहसा उत्कण्ठा-पूर्ण हुआ। वे आर्य-समाज को बिलकुल भूल चुके थे, किन्तु आज यहां यह सुन्दर शब्द पढ़ इस पवित्र समाज की अनुपम-उदारता का उन्हें स्मरण हुआ। इसी आर्य-समाज की वेदी पर छात्रावस्था के गाए हुए 'पद्य' भी सहसा मूर्तिमान हो उनके समक्ष उपस्थित हुए। ओः! रोमाञ्च खड़े होने लगे। आगे चलने के लिये टाँगों ने भी इनकार किया। यद्वा-तद्वा कुछ परे चले भी कि इधर हृदय ने रोक लिया। तब तो रुके, और अपनी प्राणेश्वरी की ओर देख, बोले—"क्या तुम जानती हो— यहां क्या हो रहा है?"

मिसेज़-मार्टिन—[जन्म नाम गङ्गा] "नहीं जी! कुछ हिन्दू खुशी मनाते होंगे?"

मि. मार्टिन— "यहां आर्य-समाज का जलसा हो रहा है, आओ देखते चलें।"

मिसेज़ मार्टिन— "अच्छा, चलिये।"

* कर्गल कागज़;

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पत्नी पुत्र सहित मि. मार्टिन अन्दर घुसे। वहां जाकर देखा कि सभा भवन ऊपर से नीचे तक पाँच छः हज़ार नर नारियों से ठसाठस भरा हुआ है। यत्र-तत्र आर्य स्वयंसेवक सब को जल-वायु पहुंचा रहे हैं। इतनी उपस्थिति में इस प्रकार सन्नाटा देख, मि. मार्टिन चकित हुए और जान गए कि निश्चय प्रभावोत्पादक वक्ता की वक्तृता से ही लोग निश्चल निर्वाक् से चित्रांकित से स्तब्ध बैठे हैं। एक-टक वक्ता के वाक्यामृत का पान कर रहे हैं।

द्वार के स्वयं सेवकों ने मि० मार्टिन को तथा उनके परिवार को समादर से वेदी (Plat form) के निकट ले जाना चाहा, परन्तु मि. मार्टिन "नो-नो, शान्ति भङ्ग होगी" कह, धीरे से दीवार के सहारे सहारे जा दीवार से लगी बेंच पर विराज गए। वे कुछ एक शब्द सुनते ही समझ गए कि उपदेशक महाशय संस्कृत के धुरंधर-पण्डित होने के अतिरिक्त आंग्ल भाषा में भी निपुण हैं। साहित्य के अनुभवी-पुरुष हैं। मतों और सम्प्रदायों के सारवेत्ता भी हैं। नैष्ठिक होने के कारण वर्चस्वी हैं। तपस्वी जीवन बनाए हुए हैं। तार्किक होते हुए श्रद्धालु और संयमी हैं। उस समय वे देश का चित्र जनों के हृदय पटलों पर अत्यधिक योग्यता से अंकित कर रहे थे। स्वतन्त्र रूप से उड़ीसा-बिहार देश की दशा का-जो शोचनीय हो रही थी-चित्रण कर रहे थे। जिस बिहार-भूमि में विकराल अकाल महादुख फाड़े अकाण्ड-ताण्डव कर रहा था, उसी का संक्षिप्त-रीत्या चित्रण था। आप भाव-भरे शब्दों में कह रहे थे:—

"……हा, दुर्दैव के दृश्य देखिए— यह वही भारत है, जो संसार भर को अन्न, वसन एवं विद्या देता था, जो सब प्रकार इतनी कर्मण्यता एवं कौशल रखता था कि जिस पर मुग्ध हो विदेशीय नृपाधिपों को यहां आकर शिर झुकाना पड़ता था, जो भारत पदार्थ-विद्या से अत्युच्च ब्रह्मविद्या का न केवल पूर्ण-पण्डित, प्रत्युत नव नवाविष्कारक रहा, जिसने पदार्थ-विद्या का समुद्धार कर प्रकृति देवी को अपने भारत के रमणीयाङ्गण में नाच नचाया था, जिसने संसार के तत्वों की सर्व-प्रथम पूर्ण-विवेचना कर, ईश्वर, जीव, प्रकृति के गहन रहस्य को १०-१० सफ़ों के ट्रैक्टों[1] पर अङ्कित कर (आत्म-तत्व, परमात्म-तत्व और भौतिक-विवेचना का पूर्ण-विज्ञान, सांसारिक मनुष्यों को प्राप्त कराने के लिये) उपकार किया। जिस भव्य-भारत ने भूगोल और खगोल के सूक्ष्म-विज्ञान के कमनीय[2] कुसुम गूंथ कर जो कभी म्लान न होंगे-मानव-जाति के लिये सर्व-प्रथम प्रस्तुत किये। यों आदि-काल में जिस ने अपने यशश्शरीर को महिमा-मण्डित किया।

"मध्यकाल में भी सब प्रकार सारे संसार का 'गुरु' रहा। सारे संसार का 'सम्राट्' रहा। अब यह वही भारत देश कराल-काल के चक्र में आकर दो २ सेर अन्न के वास्ते अपने बाल-लालों को विधर्मियों के हाथों बेच रहा है। अपनी प्यारी प्रजा को नंगी, बेहाल, दर दर की भिखारिन-बनी देख रहा है। आज इस की कुशल-पठित सन्तान भी विधर्मियों और विदेशियों के गुलाम (बहरे लोगों) के मन यदि प्रसन्न न करे तो, सम्भव है फ़ाके-मस्त ही रहना पड़े।

१—उपनिषदों। २—दर्शन सिद्धान्तादि ग्रन्थ।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

"आज वही यह वृद्ध-गुरु भारत, अपनी प्यारी प्रजा को यहाँ ही पूर्ण-विद्वान् बनी नहीं देख सकता, जब तक वह अन्य देशों की तन-मन और धन से शुश्रूषा तथा अन्तेवासिता न कर ले। "चढ़ चढ़ जैसे अन्त में अस्त होत है भानु" ठीक भारत भी ऐसे ही अस्तंगत हुआ। हा! भारत का सुकृत-क्षय काल भारतीयों को खूब देखना पड़ा

"हे भुवनेश्वर! तुम्हारी क्या इच्छा है? क्या भारतीयों द्वारा ही भारत-वध कराना चाहते हो? जैसे रावण कुल का सर्वनाश तत्कुलीन भीषण विभीषण द्वारा ही कराया था। परञ्च न्यायकारिन्! वह कुल प्रबल-दुराचारी रहा, यह भारत आदि-काल से चरित्रवान् है।

"इस में सन्देह नहीं कि–आप न्यायकारी हैं। कदापि अन्याय नहीं करते। जब हमने ईर्ष्या-द्वेष दुरभिमान-वश अपने दीन–हीन–सेवकों, सेवक-भ्राताओं को 'अछूत' समझ लिया, जब हमने उन से पूर्ण-असहयोग धारण कर लिया, तो वे बिचारे! कहां तक दुर्दशा-पंक में लिथड़े पड़े रहते? कहाँ तक अत्याचार–सहन करते? अवश्यमेव उन्हें पराश्रित होना था। जब अपने ही भाई पराश्रित होते हैं, विपक्षीपक्ष-सहायक बन जाते हैं, तो वे ही हमारी जड़ें काटने वाले, विपक्षियों के बने-बनाये औज़ार होते हैं। इसी लिए हमारा सुखोच्छेद होता आरहा है। हम स्वयमेव इसी पाप से निर्जीव (मुरदार) होते जा रहे हैं। और यदि हमने अपने इस (मनुष्य को 'अछूत' समझने के) पाप का पूर्ण-प्रायश्चित्त न किया तो आगे और भी हम निश्शोणित, निर्जीव होते जायंगे, मर जायँगे।

"हा! वे भी अबोध बिचारे (हमारे दलित भाई) यह न विचार सके, कि–'क्यों न हम विद्वानों का आश्रय लें, विद्वान बन, अविद्वानों के अत्याचारों के निर्मूल करने में यत्न-पर हों? उन बिचारों में भली भाँति अविज्ञान ने, अविद्या ने अपना साम्राज्य जमाया हुआ था, फिर भला वे सोच कैसे सकते? जो इन शताब्दियों में विद्वान कहे जाते थे वा जो स्वयं पंडितम्मन्य थे वे इन्हें शव (चिता) समझ, इन से, इनके विचारों से सहस्रों योजन दूर हो जाने में ही अपनी महत्ता, अपनी शुद्धि, अपना श्रेय, अपना कर्तव्य, और अपना धर्म्म मान बैठे। अन्त में वे ही (हमारे दलित बन्धु) विधर्मियों के मिथ्या-जाल में फँस, भारत-सर्व-नाश करने को उद्यत हुए। 'ईंट से ईंट मिला देना' ही उन्होंने कर्तव्य सोचा। वेद नष्ट हों, वेद के मानने वाले नष्ट हों, वैदिक-साहित्य नष्ट हो, हिन्दू-धर्म नष्ट हो, हिन्दू-जाति नष्ट हो, गो-वंश नष्ट हो यही उन का ध्येय हुआ, यही उनके जीवन का प्रोग्राम हुआ।

"देखो–आँखों वाले लोगो! देखो–ज़रा आँखें खोल कर देखो वे ही तुम्हारे अंग-भूत सेवक-भाई दलित-जन जिन्हें तुम 'अछूत' कह, पास न आने देते थे, अब 'मिस्टर' 'साहब बहादुर' और 'ख़ान बहादुर' बने कैसे तुम्हारे बाल लालों, को अबोध बालिकाओं को, रमणी-रत्नों को तुम से छीन, अधर्म कूप में डाल रहे हैं किस तरह जहाँ अव-सर पाते हैं—तुम्हारी छाती पर चढ़ कर, तुम्हारे धर्म और प्राणों को चूस लेने के लिये उद्यत रहते हैं। अब वे भीम बन कर, तुम्हारी गल–रक्त की २–४ घूंट ही पीने को तैयार नहीं होते, वे तो अब तुम्हारा धर्म और प्राण–धन पीना चाहते हैं। तुम्हें निर्जीव करना चाहते हैं। रोटी का टुकड़ा दिखा

१—पर शत्रु (शत्रुजनाश्रित);

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कर, उन्हीं तुम्हारे दलित दीन-हीन भाइयों को, भोले भाले भाइयों को, अबोध-बालकों को, बालिकाओं को, देवियों को, ईसाई और मुसलमान बना रहे हैं।

"हमारी सीता मातेश्वरी, रावण के राज्य में, रावण के अधिकार में, रावण की कैदिनी बनी, उसी राक्षस-राज रावण के 'सम्मुख' हो कर इसलिये उसके प्रश्नों का उत्तर तक नहीं देती है कि वह पर पुरुष है। परपुरुष के सम्मुख पतिव्रताएँ संभाषण तक नहीं करतीं, पाप समझती हैं। उनके उत्तर देने की विधि रामायण में बताई गई है:—

"तृणमन्तरतः कृत्वा प्रत्युवाच शुचि-स्मिता।"

\+ + + +

"रावणं पृष्ठतः कृत्वा, भूयोवचनमब्रवीत्॥"

"(अर्थात्, उस शुचिस्मिता विश्ववन्द्या-वैदेही ने घास की ओट करके रावण को उत्तर दिया × × × [फिर ऐसे भी उचित न समझ] रावण की ओर पीठ करके, कहने लगी .....)—तो कहने का सार यह है कि जो प्राक्कालीन हमारी माताएँ, बहिनें परपुरुष के सम्मुख हो कर 'सम्भाषण करना' पाप समझती थीं। हा! अब हमारे ही दौर्भाग्य से, हमारे ही महा पाप से, उसी सीता जैसी देवियों के अंशांश से उत्पन्न हुईं हमारी बहिनें, हमारे आगे पशुओं की तरह अनाच्छादित-वक्ष हो, आधी-आधी टाँगें नंगी कर, अर्थात् उच्च कोटि की बेहया बनीं, विधर्म का आश्रय ले, उसकी आड़ ले, जिस-तिस पुरुष के सँग सरे-बाज़ार राक्षसियों की भाँति विचरण करती हैं। हा! हमारे देश की बहिनों, पुत्रियों की यह ऐसी दुर्दशा, इस प्रकार पाप-प्रवाह में उन्हें बहते हमारी आँखें देखती हैं। हमारे कान सुनते हैं। हम अपने को जागने वालों में कहते हुए भी निद्रितों से अधिक ग़फ़लत में हैं। सजीव होकर भी 'निर्जीव' से अधिक निष्क्रिय हैं। हा! हम निन्दा-नद में डूबते हुए भी अट्टहास करते हैं। हम बुद्धि रखते हुए भी इधर कुछ ध्यान नहीं देते। रोगी होते हुए भी हम पूर्ववत् कुपथ्य-सेवी बने हुये हैं। सोचो—हमारा एक दिन नाम-शेष न हो जायगा तो क्या होगा? इस से अधिक और हमारे पाप क्या उदय होंगे? यदि, अब भी तुमने दलितों को 'अछूत' कहा, उन्हें प्रेम से समाश्लिष्ट न किया, गले न लगाया, तो अति शीघ्र ऐसा दिन आने वाला है, जिस में ईसाइयों, मुसलमानों के अतिरिक्त, एक भी भारतीय-जन, अपने को 'वैदिक-धर्मी' 'हिन्दू' वा 'आर्य' कहने वाला न मिलेगा।

"अब हम कैसे उन अपने भ्राताओं को समझाएं कि—ऐ अपने को ईसाई वा मुसलमान मान कर, आर्यावर्त्तीयों से (हिन्दुओं वा आर्यों से) अपने को भिन्न समझने वाले भोले भाइयो! तुम कुछ भी और नहीं बने—केवल अपने भाइयों के शत्रु बन गये हो। भीमसेन की तरह तुमने हमारे गल-शोणित-संचूषण की प्रतीज्ञा नहीं की, तुमने तो जैसे जामदग्नि-राम (परशुराम) ने क्षत्रि-कुल-विनाश करने का विचार किया था, चेष्टा की थी, वैसे ही भारत-सर्वनाश करने का संकल्प किया है, सो यह तुम्हें किसी अवस्था में भी उचित नहीं। भारत कृषि-प्रधान पुण्य-देश है। भारतीय हिन्दू-जाति, निरामिष रहती हुई पशु-पालन कर अत्युत्तम नव-शस्य-समुत्पादन के फलों से अपने को, भारत के भारतीय-सौख्य को, सम्पत्ति को बचाए हुए है। तुम भी इस भारतीया विशाल-देहा हिन्दू-जाति के अङ्ग हो, विधर्म की आड़ लेकर,

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

राक्षसोचित सामिष खान-पान, व्यवहार और आचार स्वीकार कर, अर्थात् 'राक्षसत्व' स्वीकार कर और औरों को इसी श्रेणी में लाकर, इस देव-भूमि पर 'राक्षसत्व' का विस्तार कर, इस की सुख सम्पत्ति सब की सब नष्ट कर दोगे। जो वृत्ति तुम ने अङ्गीकार की है, स्पष्ट है कि—उस से भारत का सर्व--नाश होगा। भारत का 'पशु-धन, उदर-गत कर लेने पर भारत का सर्वस्व स्वयं ही विनष्ट हो जायगा।

"जो कुछ, आर्य-जाति के द्वारा तुम लोगों से दुर्व्यवहार हुआ है, वह मध्यकालिकी अविद्या के कारण। अब क्षमा करो। तुम हमारे वही भाई हो। तुम्हें हमारे सँग सब प्रकार के समान व्यवहार रखने का उतना ही अधिकार है—जितना आदि-काल में था। कोई न सही, आर्यसमाज तुम्हें सोत्साह गले लगा रहा है। आओ! कहीं मत जाओ। [टेबल पर दो हाथ मार] यह Platform (प्लेटफ़ार्म) तुम्हारे लिये है। यहाँ हम में मिल बैठ कर, धर्माधर्म, कर्तव्याकर्तव्य का निर्णय करो। और ऐसा कर, उजड़ते हुए अपने प्यारे पवित्र-भारत को बचाओ।

"ईसाई वा मुसलमान बन अपने को वैदिक-धर्म के कट्टर शत्रु समझने वाले भोले-भ्राताओ! ज़रा तुम यह भी सोचलो और अपने आप फ़ैसला कर दो कि—सहोदर भाइयों की हनन-चेष्टा करने पर, जन्म-दा माता की दारुण हृदय वेदना किस प्रकार वृद्धिगत होती है? और जन्म देने वाला पालन-पोषण कर्ता पिता वैसा करने पर प्रसन्न होता है वा अप्रसन्न? क्या वह माता अपने को दुर्भागिनी न समझेगी जिस का एक पुत्र अपने और सहोदरों की अकल्याण-कामना करता हो, विपरीत बुद्धि होकर उस का विनाश चाहता हो, तुच्छ-स्वार्थ के लिये अनुचित-चेष्टाएँ करता हो। जहाँ एक को दूसरा भाई कूप में डाल उसका सर्वनाश करने पर तुला हो, वहाँ पिता और माता की छाती क्या ठंडी होती होगी, कदापि नहीं! विचार कीजिए—यह भारत-उर्वरा हम-तुम सब की जन्मदातृ-माता है। इसी ने जन्म दिया है। इसी ने अपने सुख समीर से प्रेम-पूर्वक थपकियाँ दे, सुलाया है। इसी ने जीवन दिया है। इसी ने अपने अन्न, जल, वस्त्र से हमारी-तुम्हारी देह-रक्षा की। हम-तुम ने इसी की गोद में अनेक खेल खेले। इतनी आयु, विद्यादि-जीवन-सामग्रियाँ भी इसी की कृपा से प्राप्त कीं। और अन्त समय में फिर इसी की विशाल-गोद में शरीर त्याग कर, पुनर्जन्म लेंगे। फिर इसी की प्रजा को, अपने सहोदरों को, इसी की गोद में रहते हुए इस के अन्न-जल से पलते हुए यदि बहका कर, बलात् छीन कर अन्ध-कूप में डालने लगो, जीवन और उनका धर्म नष्ट करने लगो तो इस से अधिक पाप क्या होगा, अहसान फ़रामोशी क्या होगी? कहाँ-कहाँ भाइयों में परस्पर वैमनस्य नहीं होता? परन्तु जहाँ एक दूसरे का जीवन और धर्म-नाश करने को उद्यत होजाए, वहाँ तो अनेकानेक उत्पात जन्म धारण कर तबाही करेंगे। यह भी तुम ज़रा विचार लेना कि ईश्वरीय (वैदिक) धर्म को छोड़ कर अन्यान्य मिथ्या जाल में स्वयं फँस कर औरों को फँसा कर उस भुवन-भावन भगवान के आगे क्या कह कर, क्षमा माँगोगे? ज़रा हम से तो कहो! वह पोषण-कर्ता पिता सब कुछ देख रहा है।

"एक बात और कह, मैं अपने स्थान पर बैठ जाऊंगा। वह यह कि-यह भूल कर भी मत सोचना कि इस्लाम को वा ईसाइयत को तिलाञ्जलि दे कर यदि फिर "वैदिक धर्म" को अङ्गी-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कार कर भी लें, तो हमारा साथी कौन होगा ? निश्चय रखिये कि जीवन-मरण की समस्याएँ भी आर्य-समाज हल करेगा। आप उसी तरह हम से मिले हुए हैं, जैसे-खून से माँस। ध्यान दे कर सुन लीजिये-कई सौ अछूत बालक हमारे अनाथालयों में पहुंच चुका है। कई सौ 'अछूत'-(जो पहले कहे जाते थे) बालक इसी आर्य-समाज माता की गोद में इसी की कृपा से 'शास्त्री' 'बी. ए.' आदि उच्च कक्षाओं में उत्तीर्ण हुए भारत के नगर-मन्दिरों को वेद-गान से गुञ्जा रहे हैं, कई सौ विधर्मी जन शुद्ध होकर, शरीर के प्राण उदान वायु की तरह मिले हुये आर्य-जाति का जीवन बढ़ा रहे हैं। आप लोग भी जो शेष हैं, शुद्ध चित्त से हमारे सहायक बन आ मिलेंगे तो अवश्यमेव भारत-सन्तान के धर्म-धन की, यशोवैभव की, विद्या बल की रक्षा हो सकेगी। तब ही भारत देश मुद-मंगल-मय होगा और गरिमा से औरों को प्रभावित करेगा। कारण यह कि-आप लोगों के आ मिलने से आर्य समाज का बल, धन कई गुणा वृद्धिंगत हो जायगा। जिस से हम वर्षों का काम महीनों में, महीनों का दिनों में, दिनों का घन्टों में, और घन्टों का मिन्टों में कर सकेंगे।

"यह बात भूलने की नहीं है कि जिन्हें हम 'अछूत' समझते हैं, वे ही यथार्थ में 'अछूत हैं। आप के लिये क्या और हमारे लिये क्या और किसी के लिये क्या ? वे 'अछूत' कौन हैं-हम बताते हैं। देखिए:—

'अछूत' है—आग। जो भी इसका स्पर्श करेगा वह अवश्य थोड़ा-बहुत जलेगा। और यह स्पृष्ट को जलाने में कोर-कसर न रखेगी। इसे हाथ से न छूना चाहिये। 'अछूत' है—बिच्छू। जिस से भीत रहना और जिसको न छूना ही श्रेयस्कर है। अन्यथा महा-दुःख भोगना पड़ता है। 'अछूत' है—सर्प जो लयंकरी मृत्यु का सहकारी है। यम का प्रधान दूत है। अतः सर्वथा मतिमानों के लिये 'अस्पृश्य' है। इसी प्रकार हमारे लिये 'सिंह', 'खूनी हाथी', 'व्याघ्र', 'गुहेरा', 'विद्युत्', 'विदेशी-वस्त्र', 'माँस,' 'मद्य', 'मस्जिदाङ्गण', 'गणिका', 'गिरजा घर', 'अंग्रेज़ी स्कूल', 'मेशनरी', 'मिलें', 'अदालतें', 'क़ब्रें', 'मूत्र', 'पुरीष' आदि 'अस्पृश्य' हैं। ज़रा सी भी समझ रखने वाला इन की 'अस्पृश्यता' अवश्य स्वीकार करेगा। भारतीय-जनता के लिये तो यह सर्वथा अस्पृश्य हैं। और यह निश्चय जानना कि समझाने पर भी यह 'अछूत विवेचना' जिसके समझ में न आए तो वह जाति निश्चय शीघ्र अधःस्तल को प्रयाण करने वाली है। ओं-शम्।"

उपदेशक महाशय यथास्थान विराज गए। यह सन्यासी उपदेशक वयोवृद्ध हैं। यथार्थ में इन की वक्तृता का श्रोता मात्र पर अद्भुत प्रभाव पड़ता है मि० मार्टिन ने देखा यद्यपि व्याख्यान देने से, आपका गला बहुत हा बैठ गया था, स्वर में घर-घराहट बहुत ही बढ़ गई थी किन्तु वक्तृता की सरसता से मि० मार्टिन के मस्तिष्क मण्डल में मानस-भवन में भी चारु-चमत्कार चमक उठा, परन्तु मसीमत के कठिन-कारागार से छूटने का अपने लिये साधारण सा साधन न देख, बड़ी दल दल में फँस गए। पर कुछ हो, श्री स्वामी जी महाराज ने अपनी विचक्षणता से इन दम्पति के हृदय-युगल को कठिन-यन्त्रणा से यन्त्रित कर दिया।

सन्ध्या हो चुकी थी। अतः एक भजन, और शान्ति-पाठ के पश्चात् सभा विसर्जित हुई। मि०

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मार्टिन एवं इनकी सहचरी ने कठिन-से-कठिन हिन्दी की तुलसी-कृत-रामायण-सी पुस्तकें साद्यन्त पढ़ी थीं। प्रतिभा प्रखर थी। इस कारण व्याख्यान का कोई शब्द ऐसा नहीं रह जो इनकी समझ में न आया हो। अस्तु! अतिकाल हो जाने के कारण अन्यत्र सैर को न जा कर, सपरिवार मार्टिन अपने आवास-स्थान को चल दिये।

कला-कौमुदी

समाचार पत्र मुक्त कण्ठ से प्रसंशा कर रहे हैं

यदि आप ने अभी तक न मंगाई हो

तो

एक प्रति अवश्य मंगाइये

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बालकों में अपराध विज्ञान

अध्यापकों और माता पिताओं के प्रति

चार शब्द

[ले०—श्रीयुत रामचन्द्र ऐयर, सम्पादक "ब्रह्मचर्य"]

द्रोह की स्पिरिट प्रकृति की देन है और वर्तमान परिस्थितियों के विरुद्ध संघर्ष और युद्ध के बिना जीवन असम्भव हो जाता है। बालक भी इस सार्वत्रिक नियमके अपवाद नहीं है। यही नहीं वे उसके मूर्तिमान स्वरूप हैं। किसी बालक या लड़के की किसी बुरी प्रवृत्ति को दबाने से पहले प्यारे माता पिता या उत्तरदायी अध्यापक को दोबार सोचना चाहिये। अमेरिका की कम उम्र की अदालत के जज लिंडसे ने संक्षेप से कहा है कि "बालक जन्म से ही स्वभावतः बाग़ी होते हैं"। वे सब प्रचलित रूढ़ियों और रिवाजों के प्रति बाग़ी होते हैं और उनकी यह प्रवृत्ति बालिग़ होने तक अर्थात् लगभग १४ वें वर्ष तक रहती है। इस अवस्था में वह अपने आप में भलाई और बुराई के बीजों की पुष्टि करता रहता है। इस के दो कारण हैं, एक यह कि उसे जिस संसार में प्रवेश करना है उस के आचार के नियमों का उसे ज्ञान नहीं होता, दूसरा यह कि वह जो शरारतें खेल खेल में करता है वे पक कर जुर्म नहीं बन जातीं कि वे मातापिताओं या अध्यापक का ध्यान आकर्षित कर सकें। किन्तु यदि कोई ग़ौर से उदारता और सहानुभूतिपूर्ण दृष्टि से बच्चे के शरीर की प्रत्येक हरकत, होठों के हिलने, माथे की सिकुड़न, आंखों का मटकाना और सबसे ऊपर बोलने चालने और काम करने के ढंग का निरीक्षण करे तो वह उस छोटे से शरीर में रहने वाली प्रसुप्त प्रवृत्तियों को देख सकता है।

मातापिताओं को बच्चों की आंखों को देख कर उन के मन की बात जानने के लिये न तो फ़ुर्सत ही है और न उन्होंने इसे सीखा ही है, उन्होंने अपनी संतान का हृदय जीत लेने के लिए विश्वास उत्पन्न नहीं किया। तब हम शिक्षक को दोष कैसे दे सकते हैं, जिसको कि थोड़ी सी तनख्वाह मिलती है और जो अपने परिवार की चिन्ताओं से दबा रहता है। बहुत से माता पिता ६ घंटे के लिये बच्चों की शरारतों से छुटकारा पाने के लिये ही उन्हें स्कूल भेजते हैं। और भी बुरी बात यह है कि बेकाबू लड़कों को ऐसी संस्थाओं के लिये जिनमें रहने का भी इन्तज़ाम हो, विशेष उपयुक्त समझा जाता है, मानों कि सब अध्यापक जेल के वार्डर हैं और सब गुरुकुल रिफ़ार्मेटरी (चरित्रहीन लड़कों को सुधारने के स्कूल)। माता पिताओं को अपनी जिम्मेदारियों का कुछ भाग दूसरों पर लाद देने की इस प्रवृत्ति का परिणाम पीछे से मिलता है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वस्तुतः जब बच्चा शरारत करता है तब उन दोनों को सब से सुगम उपाय यही सूझता है कि उसे दंड दिया जाय और फिर-फिर दंड दिया जाय, यह ऋषियों की भूमि है और ऋषि लोग सब से पहले शिक्षक थे और कुछ उससे पीछे यहां पर समझा जाता है कि अहिंसा सब के मन में विराजती है, किन्तु यहां पर इस समस्या को सुलझाने का एक बार भी सच्चे दिल से प्रयत्न नहीं किया गया, यही नहीं बल्कि इस के विपरीत मृदु कठोर आदि आदि नाना भेदों से दंड की अनेक श्रेणियां बना दी गई हैं और दंड देना एक अलग कला बन गयी है और उसको जायज़ करार देने के लिये कानून बना दिये गये हैं। अब समय आ गया है कि हम को गम्भीरता के साथ इस समस्या का सामना करके उसे सुलझाना चाहिए और युनिवर्सिटियों, अध्यापक-संघों तथा कान्फ़रेन्सों का कर्तव्य है कि वे माता पिताओं से (और विद्यार्थियों के प्रतिनिधियों से भी क्यों नहीं) मिल कर इस विषय के अध्ययन की चाट लगाएँ तथा पश्चिम के शिक्षाशास्त्र के पंडितों ने इस विषय पर जो भारी साहित्य पैदा किया है, उसका अध्ययन करें। हम को धैर्य और विद्वत्ता की मूर्तिस्वरूप इन बड़ी आत्माओं के आगे छोटे बच्चे के अन्दर परिपक्व होती हुई आत्मा के प्रति उनकी भक्ति के लिए सिर झुकाना चाहिये और उनके चरणों में बैठ कर उनसे शिक्षा लेनी चाहियें। अगस्त सन् १९२५ की "फ़िज़िकल कल्चर" नामक पत्रिका में जज लिंडसे ने कम उम्र लड़कों की अदालत के अपने लंबे अनुभव से जो निम्नलिखित शब्द लिखते हैं उन पर प्रत्येक मातापिता और अध्यापक को ध्यान देना चाहिये और विचारना चाहिये। वे लिखते हैं, "मैं न अनाचार का पक्षपाती हूँ और न किसी भी किस्म के समाज विरुद्ध व्यापार का। मैं सबसे ज़रूरी इस बात को समझता हूँ कि ऐसे उपाय निकाले जायं जिससे ये बालक दुबारा अपराध न करें और जिस दण्ड के देने से यह उद्देश्य सिद्ध नहीं होता उस से संभव है कि वे भयानक अपराधी बन जायं बालक का सुधार तभी हो सकता है, जब कि उस की विचारधारा को—उसके सोचने के तरीक़े को—बदल दिया जाय। वह जान बूझ कर अशुद्ध नहीं सोचता बल्कि इस लिए कि उस के तर्क की इमारत ही गलत होती है। यदि तुम उसको बदल दो तो बालक अपने आप ही सुधर जायगा क्योंकि सीधी, सहेतुक स्वाधीन और पुरानी रूढ़ियों के बंधनों से स्वतन्त्र विचार शैली बाल्यावस्था की देन है"। एक दूसरे स्थान पर वे कहते हैं "जब कभी बालक बग़ावत-शरारत करता है उसका कोई कारण होता है। उसको ढूँढ निकालो। मेरी दृष्टि में बच्चा जो कुछ सोचता है उसमें ईमानदारी सचाई और प्राणिशास्त्र के सिद्धान्तों को ठीक ठीक ज्ञान के लिए सबक मिलता है जिससे अन्य मनुष्य अच्छी तरह लाभ उठा सकते हैं.....बच्चों में परीक्षण की स्वतन्त्रता आविष्कार की खुशी, और 'तुम अपने काम का ख़याल रक्खो और मैं अपने काम का' यह स्पिरिट होती है, जो कि सच्चे प्रजातन्त्र की सूचक है।"

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

तब वे अपने लेख के अंत में, जिस का शीर्षक 'छोटे शरारतियों को बड़े अपराधी बनने से किस तरह बचावें' यह है, लिखते हैं "जिन मनुष्यों को पशुओं का अनुभव है वे एक विशेष प्रकार की स्थितियें रखने से पशु क्या करेगा यह पहिले ही से ठीक ठीक निश्चय से बतला सकते हैं। यही बात मनुष्यों के विषय में भी है, केवल इतना अंतर है कि उन में बहुत सी सूक्ष्म पेचीदगियां हैं और इसी कारण से कुछ अनिश्चितता भी है।"

माता पिताओं और अध्यापक को इस बात पर गम्भीरता से विचार करना चाहिये कि वे अपने ही अधैर्य और अज्ञान के कारण बच्चों को फौरन दंड दे देते हैं और इस का भयानक परिणाम यह होता है कि वे बच्चे सुधरते नहीं प्रत्युत जन्म भर के वास्ते दिखाऊ और छिप कर पाप करने वाले बन जाते हैं।

तब इस का प्रतीकार क्या है ?

कला-कौमुदी

'ज्योति' के ग्राहकों को विशेष रियायत

अथवा

१॥) के स्थान में केवल १।) में

आर्डर देते समय अपना ग्राहक नम्बर अवश्य लिखें

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कुसुमोद्यान

१. अमेरिका की सामाजिक अवस्था.

जकल मिस मेयो की पुस्तक "मदर-इंडिया" अर्थात् भारत-माता की बहुत चर्चा है। इसमें उसने भारतवासियों को बड़े ही अश्लील और घृणित रूप में पेश किया है। क्या मिस मेयो New York Herald Tribune के एक लेखक के इस प्रश्न का उत्तर देगी:—

"जब कि अमेरिका में १५ और २५ वर्ष की बीच की आयु के १२०० युवक और युवतियाँ एक वर्ष में आत्म-हत्या करते हैं; जब कि आजकल की गणना के अनुसार प्रत्येक विवाह का ११ वर्ष की औसत में तलाक हो जायगा; जब कि सब प्रकार के अपराधों में से ८० प्रतिशतक १८ वर्ष की कम आयु के बच्चों द्वारा किये जाते हैं; जब कि अविवाहित (कुंवारी) माताओं में से ४२ प्रति शतक १६ वर्ष से कम आयु की स्कूलों में पढ़ने वाली लड़कियाँ हैं तो क्या अब हमारे लिये यह उचित नहीं कि आत्म-श्लाघा को छोड़ कर आत्मत्याग की ओर अधिक ध्यान दें।"

× × ×

२. शिक्षा का माध्यम.

भारतीय विश्वविद्यालयों के स्नातकों में स्वतन्त्र-विचार-शक्ति की बड़ी न्यूनता है क्योंकि उनका अधिकांश समय एक विदेशी भाषा में अपने भाव प्रगट करने की शक्ति को प्राप्त करने के यन्त्रवत् प्रयत्न में ही नष्ट हो जाता है। विदेशी भाषा के व्याकरण और मुहावरों का ज्ञान प्राप्त करने में उनका इतना समय नष्ट हो जाता है कि मुख्य विषय की ओर उनका ध्यान ही नहीं रहता। इसका परिणाम यह होता है कि उनका मन केवल शब्दों से भर जाता है और वह विचार जिनके यह शब्द पर्यायवाची हैं पास नहीं आने पाते। इस कठिनता को दूर करने के लिये वह पुस्तकों में से बड़े-बड़े वाक्य और लम्बी-लम्बी रचनायें कण्ठस्थ कर लेता है। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि इस प्रकार बिना समझे कण्ठस्थ करने का यह स्वभाव उसकी मानसिक शक्तियों के लिये बड़ा अहितकर होता है।.....

यदि आप चाहते हैं कि कोई जाति अधिक उदार विचारों और अधिक उपयोगी तरीकों को प्राप्त करे तो आपको उसके मन को अधिक क्षमतापूर्वक शिक्षित करना चाहिये। परन्तु इस प्रकार की मानसिक शिक्षा ऐसी शिक्षा-पद्धति द्वारा

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

असम्भव है जिसका शिक्षा-माध्यम विदेशी भाषा के आधीन है। भारत उसी समय अपने जातीय बुद्धि-विकास को प्राप्त कर सकेगा जब हम अपनी देशी भाषाओं को उचित महत्त्व देंगे और शिक्षा का माध्यम बनायेंगे। जापान ने हमारे सामने ऐसा उदाहरण पेश किया है जिसका अनुकरण हमारे लिये लाभकारी होगा। उन्हीं तरीकों द्वारा भारत भी अपने जातीय आचार सभ्यता की उन्नति कर सकता है और संसार की जातियों में उस उच्च पद को प्राप्त कर सकता है जिसके लिये प्रत्येक भारत-सन्तान का हृदय लालायित रहता है।

(म. अकबर अली)

× × ×

३. कोयल के बच्चे.

कहते हैं कि कोयल आप नहीं सेती, उसके अण्डे दूसरे पक्षियों के घोंसलों में उन्हीं के द्वारा सेये जाते हैं। परन्तु कोयल के अण्डे इन पक्षियों के घोंसलों में पहुँचते कैसे हैं? यह अब तक एक रहस्य था। कई लोगों का विचार था कि कोयल उन घोंसलों में ही अण्डे देती है, परन्तु पक्षि-विद्या-विशारद फैबर महोदय का विश्वास था—यद्यपि इसका उनके पास कोई सबूत न था —कि कोयल पहले अपने अण्डों को निगल जाती है और फिर पुनः उगल देती है। मिस्टर बनयार्ड नाम के विद्वान ने अब इस रहस्य को जान लिया है और वह फेबर के सिद्धान्त की ही पुष्टि करते हैं। एक स्थान पर दो गायक पक्षियों का घोंसला था जहाँ पर कोयल प्रायः आया-जाया करती थी। इसके निकट ही इन्होंने अपने छुपने के लिये स्थान बना लिया और प्रति दिन राह देखने लगे। एक दिन उन्हें सफलता हुई। वह लिखते हैं कि:—

"इस घोंसले में इन पक्षियों के दो अन्डे थे। कोयल जब घोंसले के पास पहुंची तो उसकी चोंच में कोई अण्डा न था। पक्षी भयभीत होकर चीखने चिल्लाने लगे; कोयल घोंसले को चिमट गई और उसने अपना सिर और गर्दन घोंसले के भीतर डाला। पुनः इन्हें बाहर निकाल कर एक तरफ को हट गई और फिर दुबारा भीतर डाला। अब चोंच के बाहर निकालने पर मैंने देखा कि एक अण्डा था जिस को लेकर वह उड़ गई।" इस समय मिस्टर बानयार्ड अपने छुपने के स्थान से बाहर निकल आये और उन्होंने घोंसले के पास जाकर देखा तो उस में अब भी दो अण्डे थे, परन्तु उनमें से एक अण्डा कोयल का था। "कोयल ने घोंसले पर ८ सैकन्ड से अधिक नहीं लगाया, वह न तो घोंसले के ऊपर ही गई और न उसके चारों तरफ। केवल एक ही तरीके से उसका अण्डा घोंसले में पहुंच सकता था और वह हलक में से उगाल कर।"

× × ×

४. मोटरों द्वारा दुर्घटनायें

आजकल मोटरकारों का युग है। नगरों से निकल कर अब वे गावों तक में पहुंच गई हैं। देहात में जाने के लिये, पर्वतों की सैर के लिये, असंख्य संख्या वाले नगरों और निर्जन वनों में मोटरकार का ही आश्रय लिया जाता है। आज कल तो यह रेल का भी मुकाबला करती है, रेल से पहुँचती भी जल्दी है और किराया भी कम लेती है। परन्तु मोटरों द्वारा प्राप्त सफर में इस सुविधा का— इन के टकराने इत्यादि दुर्घटनाओं के रूप में— बड़ा भारी मूल्य देना पड़ता है। हम प्रायः सुनते रहते हैं कि अमुक स्थान पर दो मोटरें टकरा गईं और इतने आदमी मरगये; वहां

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पर मोटर चलती रेल से टकरा गई और टुकड़े २ हो गई; इतने आदमी लन्डन न्युयार्क में मोटर के नीचे आकर मर गये इत्यादि २।

इन दुर्घटनाओं से बचाने के लिये प्राविडैन्स नाम के नगर में एक रक्षा-समिति बनी है; परन्तु उसकी रिपोर्ट से पता लगता है कि मोटरकारों और मोटर बसों से भरी हुई सड़कों पर चलने की अपेक्षा घरों के भीतर रहना अधिक मौतों का कारण है। इस वर्ष के पहिले सात महीनों में नगर में १५ मृत्यु मोटरों द्वारा हुईं परन्तु इसी समय में घरों में ३२ दुर्घटनायें ऐसी हुईं कि जिनका अन्त मृत्यु हुआ। यह भी पता लगा कि मोटर वाली १५ में से केवल १ मृत्यु नगर के घनी आबादी वाले भाग में हुई शेष १४ देहात में। यह संख्या इस वर्ष के लिये विशेष नहीं है क्योंकि गत वर्ष भी इसका ऐसा ही परिमाण था।

इन दुर्घटनाओं का कारण भी दिया गया है। प्रथम घरों के भीतर बूढ़ों और दुर्बलों की अधिक संख्या है और यही घरों के भीतर की दुर्घटनाओं के लिये जिम्मेवार हैं।

देहात में मोटरों द्वारा अधिक संख्या में दुर्घटनाओं का होना भी सुगमता से समझ में आ सकता है। नगरों में पैदल चलने वाली जनता अधिक सावधान होती है और पोलिस का भी बड़ा पहरा रहता है अतः मोटरें बहुत तेज़ नहीं चलाई जा सकती देहात में ये दोनों बातें नहीं हैं।

घरों की अधिकांश मौतों में छतों और सीढ़ियों पर से गिरने से हुई, ६ मृत्यु जलने और दम घुटने से और केवल एक भूल से विष खा लेने से।

× × ×

५. जातीय शारीरिक और मानसिक उन्नति

आजकल पाश्चात्य देशों में जाति उद्धार का विषय (जो कि Eugenics के नाम से प्रसिद्ध है) बड़ा महत्व पकड़ता जा रहा है, सन्तति शास्त्र भी इसी के अन्तर्गत है। गत मास में इस शास्त्र के पंडित श्रीयुत मेजर लेयोनर्ड डार्विन ने लन्डन के वैडफोर्ड कालिज में व्याख्यान देते हुये कितनी ही बड़े महत्व की बातें कहीं। आपके श्रोताओं में से अधिकांश शिक्षित महिलायें थी। उन्होंने कहा कि अब तक विकासवादियों का सिद्धान्त 'संसार के संघर्ष में निर्बल स्वयं नष्ट हो जाता है' अक्षरशः सत्य माना जाता था। परन्तु वस्तुतः इस विषय पर यह अन्तिम शब्द नहीं है। इङ्गलैण्ड में 'चुनाव' अशुद्ध रीति से हो रहा है। शिक्षित और शुद्ध संस्कार वाले स्त्री पुरुषों की संख्या प्रायः घट रही है। यदि हम अपनी सभ्यता की रक्षा करना चाहते हैं तो हमें उच्च-संस्कृत कुलों में सन्तान वृद्धि की ओर अधिक ध्यान देना होगा और यह तभी हो सकता है जब कि ऐसे नियम बनाये जायें कि जाति के निर्बल, उज्जड्ड, कुसंस्कारों वाले भाग को सन्तान उत्पन्न करने से रोका जाय, और इस के विपरीत दूसरों को उत्साह दिया जाय। आज कल तो उच्च वर्णों के शिक्षित और सभ्य लोगों में सन्तान उत्पत्ति के पवित्र कार्य से अरुचि हो रही है। परन्तु उन्होंने आशा प्रगट की कि जब उन्हें इस बात का ज्ञान हो जायगा कि उनकी सन्तान के अल्पसंख्यक होने के क्या २ बुरे परिणाम हैं तो वे स्वयं ही शुद्ध नैतिक और देशहित के विचारों से प्रेरित होकर बहुसंख्यक परिवारों को रचने में सहायक होंगे। इसी ओर आशा की झलक दिखलाई देती है।

श्रोताओं में कितनीं ही कालिज में पढ़ने वाली

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

महिलायें थीं और दो या तीन भारतीय रमणियां भी थीं। उनको ओर आदेश कर के व्याख्याता ने कहा कि उनके जीवन का विशेष अनुष्ठान 'मातृत्व' है और यह पुरुषों के आक्रमण से सर्वथा सुरक्षित है। यह ऐसा कृत्य है जिसे वे ही पूरा कर सकतीं हैं। निःसन्देह किसी भी सभ्यता का आधार मानव समाज की स्वाभाविक अन्तरीय प्रवृत्तियाँ ही होती हैं, परन्तु सभ्यता के एक बार निर्माण हो जाने पर सभ्यता का प्रसार वंश परम्परा द्वारा ही होता है और गृह ही ऐसा स्थान है जहां आने वाली सन्तानों के आचार और विचारों का निर्णय होता है और माता ही इस की विशेष निणायिक है पुरुष की अपेक्षा माता पर यह अधिक निर्भर है कि किसी विशेष परिस्थिति में बालक ने संसार में जन्म लेना है कि नहीं। हमारी सभ्यता के लिये यह बड़े संकट का समय है क्यों कि इस का बड़ा ही शनैः २ और चुपके २ ह्रास हो रहा है, यदि इस की किसी प्रकार से रक्षा हो सकी है तो विशेषकर स्त्रियों द्वारा ही। अतः शिक्षित स्त्री जाति को इस प्रश्न की ओर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है।

× × ×

६. उपन्यास लेखिका महिलायें

अभी-अभी एक इटैलियन महिला को जो कि सारडिनिया के कृषिकों के जीवन के सम्बन्ध में उपन्यास लिखती है साहित्य सेवा के उपलक्ष्य में नोबल प्राईज़ मिला है। परन्तु यह बहुत कम अनुभव में आया है कि किसी स्त्री ने कोई ऐसा उपन्यास लिखा हो जिस ने साहित्य में अमर स्थान प्राप्त किया हो। निःसन्देह जेम आस्टन एक विशेष श्रेणी की प्रतिनिधि है तो भी यह प्रायः देखने में आया है कि स्त्रियों द्वारा लिखे हुये उपन्यास और कहानियाँ रचना के समय बड़ी सन्तोषजनक होती हैं और खूब बिकती हैं यद्यपि उन्हें एक बार पढ़ कर दुबारा फिर पढ़ने का मन नहीं होता। वह प्रायः अलमारियों की शोभा बढ़ाती रहती हैं। इस का क्या कारण है ? आजकल सफल उपन्यास लेखिकायें वे हैं जो कि जनता के मनोगत भावों को समझती हैं और अपनी मातृत्वदक्ष बुद्धि द्वारा उसके लिये वही भोजन तैय्यार करती हैं जो कि रुचिकर हो। जोज़ेफ कानरेड के कथनानुसार विशेष २ लेखिकाओं की पुस्तकों के अधिक बिकने का कारण यह है कि "वह साधारण जनता के विचारों को प्रगट करती हैं और जनता उन्हें इस लिये पसन्द करती है कि उन के लेखों में वह अपने विचारों का समर्थन पाकर इस विचार से प्रसन्न होती है कि ऐसे बड़े-बड़े विचारशील व्यक्तियों के भी वही विचार हैं जो हमारे हैं।'

एक समय था जब कि विशेष प्रकार के लेख लिखना और पढ़ना स्त्रियों के लिये बुरा समझा जाता था। अतः स्त्री लेखिकाओं का यह विशेष ध्यान रहता था कि उन की लेखनी से कोई ऐसी बात न निकले जो शिष्टाचार के विरुद्ध हो। परन्तु अब यह कहना बड़ा कठिन है कि आज कल की स्त्री अपने आप को किस चीज़ के पढ़ने और लिखने के लिये स्वतन्त्र समझती है। अब तो स्त्री लेखिका मानवस्वभाव के उन सब अङ्गों पर से परदा उठाने के लिये तय्यार है जिन्हें गोपनीय रहना चाहिये और जिन पर कुछ लिखने के लिये पुरुष भी तय्यार नहीं। सदाचार और साहित्य के दृष्टिकोण से यह कहां तक लाभदायक होगा यह एक विचारणीय विषय है। इस प्रकार से मनुष्य स्वभाव के अन्तरीय अङ्गों की चीरफाड़ करना और इन टुकड़ों को जनता की दृष्टि के सामने बिखेर देना व्यवसायिक दृष्टि से चाहे सफल समझा जाय परन्तु साहित्य कला की दृष्टि से तो यह अशुभ ही है।

× × ×

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

७. विशाल भारत

एक समय था कि भारतीय आचार, और शिक्षा कृत बुद्धिमत्ता का भारतेतर देशों में प्रचार था, अपितु साम्राज्य था। यह आवश्यक नहीं कि भारतीय संस्कृति वहां ही फैली हुई थी जहां भारतीय उपनिवेश थे या भारत का साम्राज्य था क्योंकि इस संस्कृति का उद्देश्य अन्य जातियों और देशों की शारीरिक और राजनैतिक स्वतन्त्रता हरण करना न था। वह अपने आचार विचार सम्बन्धी नियमों की उच्चता से ही दूसरों पर मानसिक विजय प्राप्त करना अपना ध्येय समझती थी। अतः अब यह विचार प्रबल रुप धारण करता जाता है कि भारत का राजनैतिक और धार्मिक इतिहास अपरिपूर्ण रहेगा जब तक कि हम भारतेतर देशों और उपनिवेशों में—जैसा कि चीन, तुर्किस्तान, जावा, सुमात्रा कम्बोडिया इत्यादि—भारतीय संस्कृति के प्राचीन और अर्वाचीन इतिहास का भी पूरा २ सदुपयोग न करें। यह हर्ष की बात है कि इस उद्देश्य की पूर्ति की ओर अब हमारे विद्वानों का ध्यान आकर्षित होने लगा है। गत वर्ष कलकत्ते में इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिये 'विशाल भारत' नाम से एक संस्था स्थापित हुई है जिसमें भारत के प्राचीन गौरव में श्रद्धा रखने वाले अनेक विद्वान् सम्मिलित हुये हैं। इस संस्था का लक्ष्य अनुसन्धान द्वारा प्राचीन समय में भारत का अन्य देशों और जातियों से जो मानसिक सम्बन्ध था उस की खोज करना है।

इसी विषय पर प्रोफ़ेसर फणीन्द्र नाथ बोस एम. ए. ने गुरुकुल विश्वविद्यालय हरद्वार में कई महत्वपूर्ण व्याख्यान दिये थे। इनमें से पहला व्याख्यान नवम्बर मास के वैदिक मैगज़ीन में छपा है। उस में से दो एक महत्वपूर्ण उद्धरण 'ज्योति' की पाठिकाओं और पाठकों के लिये नीचे दिये जाते हैं:—

"...भारतीय इतिहास के अज्ञात अध्यायों—जिनका सम्बन्ध विशाल भारत से है—के अध्ययन से भारत के मानसिक और औपनिवेशिक इतिहास पर नवीन प्रकाश पड़ता है। इस से पहले हमें बतलाया जाता था कि भारत का कोई उपनिवेश न था, यहाँ तक कहा जाता था कि भारत वासी कभी अपने देश की चार दीवारी से बाहर ही नहीं गये। परन्तु विशाल भारत का इतिहास पढ़ने पर पता चलता है कि इस प्रकार के वक्तव्य कितने निर्मूल और फिज़ूल हैं। फ्रान्सीसी विद्वानों के अन्वेषण से पता लगता है कि किसी समय भारत में कम्बोडिया, सियाम, चम्पा, जावा और सुमात्रा तथा पूर्वीय एशिया के अन्य देशों में भारत का भारी साम्राज्य था। परन्तु यह स्मरण रखना चाहिये कि भारत के उपनिवेशों का उद्देश्य मातृ-देश की राजनैतिक और आर्थिक महत्वकाँक्षाओं की पूर्ति न था।

यह उपनिवेश एक दूसरे से स्वतन्त्र रूप से पैदा हुये और इन्हें भारत के किसी भी राजघराने ने अपने राज्य का भाग नहीं बनाया। भारत और इन में कोई राजनैतिक बन्धन न था, किसी भारतीय महाराजा ने इन से कर वसूल नहीं किया। परन्तु संस्कृति के कोण से यह एक महान सभ्यता के भाग थे जिस में कि केवल सियाम, कम्बोडिया, चम्पा और जावा ही सम्मिलित नहीं थे वरन चीन, तिब्बत, जापान, कोरिया, मध्य एशिया और अन्य देश भी थे।

यद्यपि अंग्रेज़ी और भारतीय विद्वान भारतीय इतिहास का वैज्ञानिक अनुसन्धान गत सौ वर्ष से कर रहे थे, परन्तु कुछ समय पहले उन्हें भारतीय इतिहास के उज्वल समय का कुछ पता न था। हमें न तो भारत के प्राचीन प्रताप के विषय में कुछ बतलाया जाता था, और न हीं

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

भारतीय संस्कृति और सभ्यता के अन्य देशों में प्रसार के संबन्ध में, और न ही उन गगन-स्पर्शी मन्दिरों के विषय में जो कि हमारे पूर्व-पुरुषों ने अन्य देशों में बनाये थे। जब कि भारतीय विद्वानों का फ्रान्सीसी विद्वानों से सम्पर्क हुआ तभी उन्हें पता लगा कि एशिया की संस्कृति के इतिहास में भारत का कितना हाथ था।

विशाल भारत सम्बन्धी ज्ञान बिना हमारा भारतीय इतिहास का ज्ञान अधूरा है। हमें अपने इतिहास को एक नवीन प्रकाश में पढ़ना होगा। हम अब तक के विद्वानों द्वारा बतलाये हुये वर्णन से सन्तुष्ट नहीं हो सकते। हमें बतलाया जाता है कि भारतीय इतिहास हिन्दू, मुसलमान और अंग्रेज़ी काल एक दूसरे से सर्वथा भिन्न भागों और समयों में विभक्त है। बतलाया जाता है कि ईसा की प्रथम शताब्दी में भारत का इतिहास केवल मगध का इतिहास था, जब कि प्रतापी मौर्य वंश के अन्त के पश्चात संगों और कन्वों में आपस में युद्ध होता था। परन्तु अब हमें पता चलता है कि उसी समय में श्रीमार ने चम्पा में एक भारतीय-राज्य की स्थापना की थी। उसी समय एक दूसरे भारतवासी कुन्दन सोम ने कम्बोडिया में एक अन्य राजवंश की नींव डाली। हमें यह भी बतलाया जाता था कि भारत से बाहर हिन्दू धर्म कहीं नहीं फैला। परन्तु चीनी यात्री फाहियान कहता है कि चौथी शताब्दी में जावा में हिन्दू धर्म बड़ी उन्नत अवस्था में था। यह समझा जाता है कि मुसलमानों के आक्रमणों के साथ हिन्दु-गति रुक गई। परन्तु यह वास्तव में ऐसा नहीं है। उस समय जब कि मुसलमान भारत के द्वार को खटखटा रहे थे, भारत चीन में अनेक धर्म प्रचारक भेज रहा था। बौद्ध भिक्षुओं के समूह गोबी मरुस्थल को लांघ कर चीन में भगवान बुद्ध का सुधा सन्देश पहुंचा रहे थे। एक सहस्र वर्ष तक भारत ने चीन को आध्यात्मिक गुरु प्रदान किये। उस समय जब कि भारत में मुसलमान शासन कर रहे थे वर्मा उपनामधारी भारतीय राजवंश चम्पा, कम्बोडिया और सियाम पर राज्य कर रहे थे। भारतीय राजाओं ने कम्बोडियामें १३ वीं शताब्दि तक राज्य किया और सियाम में तो इस के कहीं पीछे तक। आज तक भी सियाम एक स्वतन्त्र एशियाई साम्राज्य है। आज भी बाली द्वीप में हिन्दू समाज का—जिस में कि चार वर्णों का रूप विद्यमान है—चित्र दिखलाई देता है। इसलिये हम भारतीय इतिहास के हिन्दू और मुसलमानी समय को अलग २ नहीं कर सकते। हम नहीं कह सकते कि यहां पर हिन्दु-काल समाप्त होता है और इस के आगे हिन्दुओं का कोई वर्णन करने योग्य कृत्य नहीं।

अब हमें भारत के धार्मिक इतिहास पर कुछ विचार करना है। हम प्रायः मान लेते हैं कि हिन्दू धर्म ने अन्य मतावलम्बियों के लिये कभी अपने द्वार नहीं खोले। परन्तु चम्पा, कम्बोडिया, जावा, बाली और अन्य देशों के इतिहास से हम इस परिणाम पर पहुंचते हैं कि ईसवी सन् की आरम्भिक शताब्दियों में हिन्दू धर्म इन देशों में पहुँच गया, और वहां के निवासियों को अपने में सम्मिलित कर वहां कितने ही स्थिर कीर्ति स्तम्भ तथा स्मारक चिन्ह छोड़ आया, जो कि अब भी कला विशारदों में प्रशंसा पात्र हैं। इस समस्त प्रायःद्वीप में ब्रह्मा, विष्णु, शिव और अन्य हिन्दू और बौद्ध देवी-देवताओं की मूर्त्तियां हैं। गया के 'विष्णुपाद' की भाँति कम्बोडिया में 'शिवपाद' है।

भारत ने सैकड़ों वर्षों तक बाहरी एशियाई देशों में आध्यात्मिक गुरु भेजे। यह एक आदर्श गुरुकुल

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

रहा, जहाँ से कि भिक्षुगण ज्ञान का प्रकाश संग लेकर जाते रहे। नालिन्दा, तक्षशिला और विक्रमशिला के विश्वविद्यालय वह केन्द्र थे जहां से कि अध्यात्म शिक्षा में प्रवीण नेता शास्त्र और शास्त्रों का ज्ञान ले बाहर जाते रहे। इन शास्त्रों का चीनी, तिब्बती, जापानी और अन्य भाषाओं में अनुवाद किया गया। अब भारत में असली शास्त्र तो नहीं मिलते परन्तु चीन और तिब्बत में इन के अनुवाद मिलते हैं। भारतीय साहित्य के इतिहास लेखक को इन्हें अवश्य देखना पड़ेगा। .....जावा की भाषा में महाभारत के मिलने ने भारतीय साहित्य के एक प्रश्न का उत्तर दे दिया है।

भारतीय उपनिवेश भारतीय संस्कृति के साम्राज्य का अटूट भाग हैं, जो कि मध्य एशिया तक फैले हुये थे। साम्राज्य के जो आजकल अर्थ किये जाते हैं, भारत ने वे अर्थ कभी नहीं किये अपने राज्य की सीमा बढ़ाने के लिये उस ने कभी सेनाओं को बाहर नहीं भेजा। समस्त साम्राज्य के साधनों और शक्ति से सम्पन्न सैनिकों के स्थान में उस ने शान्त स्वभाव–बौद्ध भिक्षुकों को जो कि युद्ध विद्या से सर्वथा अनभिज्ञ थे बाहर भेजा। इन्होंने एशिया के पूर्वीय और दक्षिणीय देशों में भारतीय संस्कृति को फैलाया। यह सभ्यता की विजय थी, जो कि बौद्धों ने चीन, तिब्बत, तुर्किस्तान, कोरिया और जापान में प्राप्त की। यदि भारत ने इन देशों में सुसज्जित सेना को भेजा होता तो वहां भारतीय संस्कृति और सभ्यता अब तक न बची होती। भारत से भेजी हुई सेना इन देशों में भारत के नाममात्र से अरूचि पैदा कर देती। बौद्ध और हिन्दू धर्म ने सियाम, कम्बोडिया चम्पा, जावा और अन्य स्थानों में भारतीय उपनिवेश निर्माण के लिये स्थान बना दिया। वहाँ पर भारतीय धार्मिक विचार भारतीय व्यापारियों के साथ २ गये। किसी भारतीय राज्यवंश की स्थापना से पहले ये देश भारतीय बन चुके थे।

× × ×

८. मध्य एशिया में आर्य सभ्यता

जिस समय बौद्ध-धर्म अपनी उर्जितावस्था में था, उस समय यूनान, रूम, मिश्र, काबुल आदि का तो कहना ही क्या, मध्य एशिया की राह उसके आचार्य चीन तक जाते और वहाँ अपने धर्म का प्रचार करते थे। अफ़गानिस्तान उस समय भारतीय साम्राज्य का एक अंग ही था। उस समय के भारतवासी बलख, बुखारा, खुरासान, खादोन और ताशकन्द तक फैले हुये थे। चीन और भारत के बीच आवागमन का मार्ग पूर्वी तुर्किस्तान में से था। .....इस प्रान्त में पहले कई बड़े २ नगर थे। बौद्धों के विहारों और मठों से यह सर्वत्र भरा हुआ था। इन मठों में बौद्ध विद्वान् हज़ारों विद्यार्थियों को विद्या दान देते थे। उन्होंने अपने मठों में बहुमूल्य पुस्तकालयों तक की स्थापना की थी। जो बौद्ध श्रमण चीन से भारत और जो भारत से चीन जाते थे वे इन्हीं मठों और विहारों में ठहरते हुये जाते थे। इन लोगों के काफिले के काफिले चलते थे। चीनी परिव्राजक ह्वेन सांग और इत्सिंग आदि इसी मार्ग से भारत आये थे। उन के यात्रा-वर्णनों में इस मार्ग में पड़ने वाले नगरों, नदियों, पर्वतों, रेगिस्तानों आदि का बहुत कुछ उल्लेख पाया जाता है।

कालान्तर में बर्बर में मुसलमानों का ज़ोर होने पर उन्होंने चीन और भारत के बीच के इस राज मार्ग को धीरे २ नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। मठों, स्तूपों और विहारों को उजाड़ दिया। हज़ारों बौद्ध-श्रमणों को तलवार के घाट उतार दिया। नगरों को तहस नहस करके उन्हें ज़मीदोज़ कर दिया। ये सभी स्था। बालू के टीलों में परिणत् हो गये। तूफानों

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

के कारण उड़ी हुई बालू ने इन सबको अपने नीचे यहाँ तक दबा दिया कि इन का नामोनिशान तक न रहा।

अपने ऊपर आई हुई या आने वाली विपत्ति से अपनी प्राण-रक्षा असम्भव समझ कर बौद्ध विद्वान् प्राण दान देने के लिये तय्यार होगये। परन्तु उन्हों-ने अपने एकत्र किये हुये ग्रन्थ और चित्रादि के समुदाय को अपने प्राणों से भी अधिक समझा। अतएव कहीं २ उन्होंने इस समुदाय को पर्वतों की गुफाओं के भीतर, कहीं २ ज़मीन के नीचे भूतलवर्तिनी कोठरियों के भीतर, और कहीं २ पत्थर की संदूकों के भीतर रख कर उन्हें छिपा दिया। उन में से अनेक वस्तुसमुदाय तो अवश्य ही नष्ट होगया पर जो गुफाओं के भीतर और पृथिवी के पेट में छिपा दिये गये थे, वे अब धीरे २ निकलते जाते हैं। इस का विशेष श्रेय बौद्ध और हिन्दू धर्म के अनुयायियों को नहीं, योरोप के पुरा-तत्व प्रेमी ईसाइयों को है। लाखों रुपया खर्च कर के और कठिन से भी कठिन क्लेश उठा कर ये लोग निर्जन वनों रेतीले स्थानों के ध्वंसों को खोद-खोद कर उन हज़ारों वर्ष के पुराने ग्रन्थों और काग़ज पत्रों को ज़मीन के पेट से बाहर निकाल रहे हैं। उन में से कितने ही तो विवरण और टीका टिप्पणी सहित छप कर प्रकाशित भी होगये हैं। परन्तु अभी अनन्त रत्न राशि प्रकाश में आने को बाकी है।

१८७१ ईसवी में जर्मन विद्वान् डाक्टर रेज़ल का ध्यान चीनी तुर्किस्तान के उजाड़ खण्ड की ओर आकृष्ट हुआ। वे वहाँ गये। उन्हें वहाँ कितने ही प्राचीन खण्डहरों का पता चला। इस के बाद रूस के रहने वाले दो पुरातत्व वेत्ताओं ने, १८९६-९७ ईस्वी में, उसी तुर्किस्तान के तुरफान प्रान्त में खोज की। उन्हें, अपनी खोज में जो-जो चीज़ें मिली उन का विस्तृत वर्णन उन्होंने अपनी भाषा में प्रकाशित किया। उनकी देखा-देखी फिनलैण्ड के भी कुछ पुरातत्वज्ञों ने उस रेगिस्तान में पदार्पण करके वहाँ का कुछ हाल लिखा। इस तरह, धीरे-धीरे, लोगों का कौतूहल बढ़ता ही गया। अन्त में रूसी विद्वान् रैडलफ ने १८९९ ईसवी में, पुरातत्व विशा-रदों की एक सभा में, इस बात का प्रस्ताव किया कि पूर्वी और मध्य एशिया के खण्डहरों की बाकायदा जाँच की जाय। यह प्रस्ताव "पास" हो गया। तब से इन प्रान्तों की जाँच के लिये कई देशों के विद्वानों के यूथ-के-यूथ वहाँ पहुँचे और अनेक बहुमूल्य पुस्तकों, मूर्तियों, चित्रों आदि का पता लगा कर उन्होंने उन पर बड़े मार्के के लेख प्रका-शित किये। यहाँ तक कि सुदूरवर्ती जापान ने भी कई विद्वानों को भेज कर वहाँ खोज कराई। वे लोग भी कितनी ही बहुमूल्य सामग्री अपने देश को ले गये।

१८९१ ईस्वी में ब्रिटिश गवर्मेंट के एक दूत चीनी तुर्किस्तान में थे। उनका नाम था कप्तान बावर। उन्हें भोजपत्र पर लिखा हुआ एक ग्रन्थ मिला। उसे उन्होंने बङ्गाल की एशियाटिक सोसा-इटी को भेज दिया। डाक्टर हार्नली ने उसे पढ़ा। मालूम हुआ कि वह गुप्त नरेशों के समय की देव-नागरी लिपि में है और ईसा की चौथी शताब्दी में लिखा गया था। अतएव उसकी रचना उसके भी बहुत पहले हुई होगी। एक-आध को छोड़कर इससे अधिक पुरानी हस्तलिखित पोथी भारत में कहीं नहीं पाई गई। जो पोथियाँ सब से अधिक पुरानी हैं वे ईसा के ग्यारहवें शतक के पहले की नहीं। यहाँ की आबोहवा में इससे अधिक पुरानी पुस्तकें रही नहीं सकतीं, वे टूट-फूट कर नष्ट हो जाती हैं। बावर साहब को मिली हुई पोथी में भिन्न भिन्न सात पुस्तक हैं। उन में से तीन वैद्यक विषय की

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हैं। अवशिष्ट पुस्तकें विशेष करके बौद्ध-धर्म से सम्बन्ध रखती हैं।

जब से बावर साहब की पोथी प्रकट हुई तब से तुर्किस्तान के रेगिस्तानी खण्डहरों की खुदाई आदि का काम और भी जोरों से किया जाने लगा। फ्राँस, रूस, स्वीडन, जर्मनी आदि के पुरातत्वज्ञ वहाँ से ऐसी-ऐसी प्राचीन वस्तु समुदाय, अपने अपने देश को उठा ले गये। चुनाचें ब्रिटिश गवर्मेण्ट भी इस सम्बन्ध में चुप नहीं रही। उसने इस काम के लिये कलकत्ता मदरसा के प्रधान अध्यापक, डाक्टर आरल स्टीन की योजना की। १९००-०१ ईसवी में डाक्टर साहब चीनी तुर्किस्तान को गये। वहां उन्होंने खुतन या खेटान के सूबे में जाँच पड़ताल की। उन्हें अपने काम में अच्छी कामयाबी हुई। अनेक पत्र-रत्न उन्हें प्राप्त हुए। उनका वर्णन उन की लिखी हुई पुस्तक–"प्राचीन खेटान" में सविस्तार पाया जाता है। इसके बाद डाक्टर साहब ने चीनी तुर्किस्तान पर दो चढ़ाइयाँ और कीं। उनकी तीसरी चढ़ाई १९१३ में हुई। १९०६ ईसवी वाली दूसरी चढ़ाई में उन्हें एक ऐसी कोठरी मिली, जो बाहर से बन्द थी, परन्तु जिसके भीतर पुस्तकें भरी हुई थीं। इन पुस्तकों का कुछ ही अँश डाक्टर स्टीन को मिला, अवशिष्ट अंश एम्० पेलियो नाम के एक फ्रेंच विद्वान् के हाथ लगा। इस चढ़ाई का बहुत ही विशद वर्णन डाक्टर स्टीन ने पाँच बड़ी बड़ी जिल्दों में किया है। वे प्रकाशित भी हो गई हैं। उनका नाम है "सेरैंडिया"।

अपनी दुसरी चढ़ाई में जिस समय डाक्टर स्टीन तुर्किस्तान में प्राचीन चिन्हों और वस्तुओं की खोज कर रहे थे, उसी समय मध्य एशिया में खोज करने के लिये फ्राँस की राजधानी पेरिस में एक परिषद् की स्थापना हुई। उस की सहायता फ्राँस की गवर्मेण्ट ने भी धन से की और कई एक अन्य सभाओं ने भी की। इस परिषद् ने एक चढ़ाई की योजना की। एम्० पोलियो, जिनका नाम ऊपर एक जगह आया है, इसके प्रधानाध्यक्ष नियत हुए। वे अपने दलबल समेत जून १९०६ में पेरिस से रवाना हुए और मास्को ताशकन्द होते हुए, पामीर के उत्तर काशगर तक पहुंच गये। वहाँ आस पास खोज करते हुए वे तुनहाँग नामक स्थान में पहुँचे। इसके कुछ ही समय पहले डाक्टर स्टीन एक गुफा से बहुत सी पुस्तकें प्राप्त करके लौट चुके थे। यह एक प्रसिद्ध प्राचीन स्थान था। इस की खबर पोलियो को पहले ही से थी। उन्होंने यह भी सुन लिया था कि डाक्टर स्टीन वहाँ से बहुत सी प्राचीन पुस्तकें लेकर पहले ही चम्पत हो गये हैं फिर भी उन्होंने वहाँ पर अपने मतलब की कुछ चीजें पाने की आशा न छोड़ी।

खोज करने पर पोलियो को मालूम हुआ कि वैगताऊ नाम का एक चीनी बौद्ध पुरानी पुस्तकों का स्थिति स्थान जानता है। पता लगाने पर वह बौद्ध साधु उन्हें मिल गया। पोलियो ने उस से हेलमेल करके पुस्तकों का अनुसन्धान लगाने की प्रार्थना की। उसने इस प्रार्थना को स्वीकार किया। वह उन्हें एक ऐसी जगह ले गया जहाँ पर कोई एक हज़ार वर्ष की पुरानी सैकड़ों बौद्ध गुफाएँ या कोठरियाँ थीं। उन में से किसी समय उस ने एक को खोल कर देखा था और वह उसे पुस्तकों से परिपूर्ण मिली थी। इसी गुफा को बैंग ने पोलियो के लिये खोला। खोलने पर जो दृश्य पोलियो को दिखाई दिया उससे उनके आश्चर्य और हर्ष की सीमा न रही। ईसवी सन् की दसवीं शताब्दी के अन्त में जब मुसलमानों ने बौद्धों के नाश का बीड़ा उठाया तब उस प्रान्त के बौद्ध विद्वानों ने अपना सारा ग्रन्थ और चित्र समुदाय लाकर उस गुफा में बन्द कर दिया। फिर उस का मुँह

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

चुनवा दिया और चुनी हुई जगह पर बेल-बूटे और चित्र खिचवा दिये। वह इस लिये किया, जिस में वह दीवार सी मालूम हो, किसी को यह सन्देह न हो कि यह गुफा है और इस के भीतर पुस्तकें भरी हुई हैं। मुसलमानों ने पुस्तकादि के इस संग्रह के स्वामी बौद्धों की क्या दशा की, कुछ मालूम नहीं तब से १९०६ ईसवी तक यह गुफा बराबर बन्द ही रही।

इस गुफा के भीतर कोई १५ हज़ार पुस्तकें—संस्कृत, प्राकृत, चीनी, तिब्बती तथा कई अन्य अज्ञात भाषाओं और लिपियों में—मिलीं, रेशम के टुकड़ों पर खिचे हुए सैकड़ों अनमोल चित्र भी प्राप्त हुए। पुस्तकें सभी ग्यारहवीं सदी के पहले की हैं। कितनी ही ब्राह्मी लिपि में हैं। अधिकतर पुस्तकों का सम्बन्ध बौद्ध-धर्म से है। परन्तु काव्य, साहित्य इतिहास, भूगोल, दर्शन आदि शास्त्रों से भी सम्बन्ध रखने वाली पुस्तकें इस पुस्तकालय से मिलीं। संस्कृत भाषा में लिखी हुई कितनी ही पुस्तकें इस में ऐसी हैं जो भारत में सर्वथा अप्राप्य हैं। यहाँ तक कि इसकी अनेक पुस्तकें, जो चीनी में भी दुर्लभ क्या अलभ्य ही हैं। पुराने बही खाते, रोज़नामचे और दस्तावेज तक यहाँ मिले। इन सब का प्रकाशन धीरे धीरे हो रहा है।

इस से स्पष्ट है कि प्राचीन भारत ने, मध्य एशिया की राह, चीन ईरान, सीस्तान (शकस्थान) और यूनान आदि को विद्यादान देने और उन्हें सभ्य बनाने का कितना काम किया था।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्त्री जगत्

संयुक्त प्रान्त की कौन्सिल ने भी महिलाओं को मताधिकार दे दिया है यह प्रस्ताव प्रधान द्वारा पेश होकर सर्व सम्मति से स्वीकृत हुवा।

—:*:—

श्रीमती मुथुलक्ष्मी अमल एम. एल. सी. ने इस वर्ष में देवदासी रूपी कुप्रथा का अन्त करने के लिये जो आन्दोलन शुरू किया था वह एक प्रकार से सफल रहा। मद्रास की नियामिका समिति ने सर्व-सम्मति से इस प्रस्ताव को स्वीकार किया कि उन मन्दिरों को जहां पर कि देवदासियों की प्रथा प्रचलित है सार्वजनिक कोष से कोई सहायता न दी जाय। शोक कि अब भी कुछ एक देवदासियां पुरानी लकीर पीटने के पक्ष में हैं उनके विचार में इस प्रथा के हट जाने से देवतागण गाने और नाचने के स्वाद से वंचित रह जांयगे।

—:*:—

मद्रास की महिलाओं ने कांग्रेस सप्ताह के अन्तिम दिन एक महिला-दिवस मनाने का निश्चय किया है उनकी इच्छा है कि उन सब विषयों पर जिनका कि स्त्री जाति से बड़ा गूढ़ सम्बन्ध है विचार किया जाय और वहां पर एकत्रित स्त्री समाज की उपस्थिति से लाभ उठाया जाय उन दिनों कांग्रेस के प्रतिनिधि तथा दर्शिकाओं के रूप में वहां पर बहुत सी स्त्रियां एकत्रित होंगी उन सब को इस महिला दिवस में सहयोग देने के लिये आमन्त्रित किया जायगा जिससे कि इस कार्य्य को अखिल-भारतीय रूप मिल सके स्वागत सम्बन्धी सब कार्य्य करने के लिये मद्रास की महिलाओं ने श्रीमती मालती पटवर्धन बी. ए. के मन्त्रित्व में एक सभा बनाली है। तीन में से दो बैठकों की स्वागताध्यक्ष का कार्य्य श्रीमती डा. बेसेन्ट तथा डा. मुथुलक्ष्मी करेंगी। इस महिला दिवस की सभानेत्री का पद श्रीमती सरोजनी ग्रहण करेंगी।

—:*:—

बम्बई कौंसिल की आगामी बैठक में तीन बिल पेश करना चाहते हैं:—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

(१) चौदह वर्ष से कम आयु की कन्या तथा अठारह वर्ष से छोटे लड़कों का विवाह नियम विरुद्ध ठहराया जावे; (२) प्रत्येक विवाह की सरकारी पत्रों में रजिष्टरी कराई जावे; और (३) विधवाओं को गोद लेने का अधिकार न रहे।

—:*:—

हमारी पाठिकाओं को पता होगा कि किस प्रकार श्रीयुत् खड्ग बहादुर सिंह ने युवती कन्याओं पर अत्याचार का बदला लेने के निमित्त कलकत्ते के एक धनवान वणिक् पर गोली चलाई थी। इस अपराध में इनको आठवर्ष की कड़ी कैद मिली थी। भारतवर्ष के प्रत्येक कोने से खड्ग बदादुर की वीरता की प्रशंसा हुई थी और बंगाल के गवर्नर महोदय से प्रार्थना की गई थी कि वह दया करके वीर के इस दण्ड को हटा दें। हमें यह जान कर प्रसन्नता हुई है कि सरकार ने यह निश्चय कर लिया है कि दो वर्ष के कारावास के पश्चात् इस विषय पर पुनः विचार होगा। पूरी आशा है कि उस समय इन्हें छोड़ दिया जायगा। शोक कि नेपाली कन्या राजकुमारी को सरकारी कचहरियों से उस मार्मिक वेदना के लिये जो कि उसे सहनी पड़ी किसी प्रकार का आश्वासन न मिला। उन हजारों स्त्रियों में से जो कि पुरुषों की शारीरिक और पैशाचिक काम-वासना का शिकार होती हैं इस कन्या का जीवन केवल एक उदाहरण है।

—:*:—

गत अक्तूबर मास की घटनाओं में से श्रीधन पाले मुडलियर के मुकाबिले में श्रीमती हेनन एंजलो का मद्रास म्युनिसिपल कमेटी की सदस्या चुना जाना एक उल्लेखनीय घटना है। इस से पहले श्रीमती एंजलो ईसाइयों के प्रतिनिधि रूप से कमेटी की सदस्या रह चुकी हैं परन्तु अब मिश्रित चुनाव में उन को अपना प्रतिनिधि चुन कर जनता ने उनके प्रति अपने विश्वास का परिचय दिया है।

—:*:—

भारतीय महिला समाज की बम्बई शाखा की सदस्याओं ने स्त्रियों से चालीस सहस्र रुपया गुजरात में गत बाढ़ पीड़ितों की सहायतार्थ एकत्र किये हैं।

—:*:—

मिस मेयो की घृणित पुस्तक "मदर इण्डिया" के प्रतिरोध में भारत के कई स्थानों पर महिलाओं ने एकत्रित होकर प्रस्ताव पास किये हैं।

—:*:—

बड़ोदा दरबार ने कन्याओं के विवाह के लिये न्यून से न्यून आयु चौदह वर्ष निश्चय की है यह नियम किसी अवस्था में भी शिथिल नहीं किया जायगा। जो माता पिता अथवा अन्य सम्बन्धी इस नियम की अवहेलना करेंगे उन्हें कारावास दण्ड दिया जायगा।

—:*:—

इस वर्ष मद्रास में होने वाली इंडियन सोशल कान्फरेंस की स्वागत समिति ने डा. मुथुलक्ष्मी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अमल को स्वागताध्यक्ष चुना है। आपने अपने प्रान्त में समाज सुधार सम्बन्धी बहुत कुछ कार्य किया है आप अन्तर्जातीय महिला समिति में भारत की प्रतिनिधि बन कर सम्मिलित हो चुकी हैं।

पंजाब सरकार ने कुमारी "जमीला मेरी सराजुद्दीन को स्त्री शिक्षणालयों में व्यवसाय विषयक शिक्षा की निरीक्षका नियुक्त किया है। आप लाहौर फारमन क्रिश्चियन कालिज के प्रोफेसर आर. सराजुद्दीन की पुत्री हैं। पंजाब युनिवर्सिटी से एम. ए. की उपाधि प्राप्त कर अधिक शिक्षा प्राप्त करने के हेतु आप विलायत गईं। वहां पर पहले तो आपने लंडन विश्वविद्यालय के व्यवसायिक शिक्षा का डिप्लोमा प्राप्त किया। और तत्पश्चात् एडिनबरा विश्वविद्यालय से डाक्टर की उपाधि ली। भारत में लौटने से पहले आपने फ्रांस, जर्मनी और स्विज़र लैंड के गृह प्रबन्ध की शिक्षा देने वाली संस्थाओं का अवलोकन किया।

कुमारी क्रूस को भारतीय संगीत अधिक पसंद है। वे कहती हैं पश्चिमीय गान मनुष्य के मनोविकारों को उत्तेजित करता है परन्तु इस के विपरीत भारतीय गान चित्त को शान्त कर परमात्मा के निकट पहुंचाता है।

आज कल योरुप में स्त्रियों में बाल कटाने की प्रथा बढ़ती जाती थी परन्तु अब ऐसा प्रतीत होता है कि पैरिस में शौक़ीन स्त्रियां पुनःलम्बे बालों की ओर झुक रही हैं।

गृह प्रबन्ध

१. कपड़ों में माया लगाने के लिये यदि इसे साबुन के पानी में मिला लिया जाय तो चमक अधिक आती है और इस्त्री चिमटती नहीं।

२. छातों पर से मट्टी के धब्बे उड़ाने के लिये यदि कपड़े से मैथिलेटिड स्पिरिट से रगड़ा जाय तो ये तुरन्त दूर हो जाते हैं।

३. लकड़ी अथवा चमकदार रोग़नी वस्तुओं पर से पैन्सिल के निशान ताजा काटे हुए निम्बू से रगड़ने और उसके पश्चात थोड़ा सा चूना फेरने से हट जाते हैं।

४. यदि कपड़ों पर चाय के धब्बे पुराने पड़ जायें तो साधारण रीति से धोने से नहीं जाते, परन्तु यदि जल में थोडा सा सुहागा मिला कर धोया जाय तो तुरन्त दूर हो जाते हैं।

५. लाल चमड़े के जूते के घिसने पर प्रायः सफेद चमडा चमकने लगता है। यदि इस स्थान पर थोडा सा टिंचर आयोडीन लगा कर और इसके सूकने पर रोगन किया जाय तो रंग पुनः ठीक हो जाता है।

६. यदि लाल जूतों को काला करना हो तो पहले उन्हें कच्चे कटे हुए आलू से रगड़ो और फिर साधारण रीति से पालिश कर दो।

७. चावलों को उबालते समय यदि पानी में नीम्बू का रस मिला दिया जाय तो इनका रंग बहुत सफेद हो जाता है और एक एक दाना अलग हो जाता है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

१. शरीर के आरपार देखना

डाक्टर ऐन्ड्री टाऊर्ज़ फ्रान्स के एक प्रसिद्ध डाक्टर हैं। उन्होंने एक खोज की है जिस से उन का कथन है कि रोगियों के औषधि द्वारा इलाज और चीर फाड़ के तरीकों में बड़ी भारी क्रान्ति उत्पन्न हो जायगी। कितने ही विद्वानों का कथन है कि यह खोज ऐक्स-रेज़ की खोज से भी कहीं महत्वपूर्ण है। इस के द्वारा मनुष्य शरीर के ऊपर का चमडा और माँस इतना पारदर्शी बन सकता है कि शरीर के भीतर के सब अङ्ग इस प्रकार काम करते हुए दीख सकेंगे जैसा कि हम किसी दर्पण में देख रहे हों। डाक्टर टाऊर्ज़ का विचार है कि वह शीघ्र ही अपनी खोज को बड़े-बड़े डाक्टरों और वैद्यों के सामने रखेंगे। यदि यह खोज वैसी ही हुई जैसा कि डाक्टर साहब का कथन है तो निःसन्देह यह तपेदिक, रसौली इत्यादि कितनी ही बिमारियों के ठीक ठीक निदान और चिकित्सा में अमूल्य साधन सिद्ध होगी।

× × ×

२. तैरने की नई ईजाद

कारिंथिया में वर्दर नाम की एक झील है। उस के जल पर दो पुरुषों और एक स्त्री को साथ-साथ चलते देखकर लोगों को बड़ा अचम्भा हुआ। झील प्रायः आधा मील चौड़ी है परन्तु यह बड़ी सुगमता से उस के एक किनारे से दूसरे किनारे पर पहुँच गये।

इन में से एक आदमी का नाम काल मैन था। यह जङ्गलों के महकमे में इन्जिनियर है और इस प्रकार चलने का तरीका आप ही की ईजाद है। यह ईजाद चौड़े २ चप्पुओं की भाँति के लम्बे-लम्बे पङ्खे से हैं जो कि साधारण बूटों के साथ जोड़े जा सकते हैं। और इनकी सहायता से चलने वाले को जल में डूबने का कोई भय नहीं रहता।

दर्शकों में से एक पुरुष ने इन पङ्खों को प्रयोग में लाने की आज्ञा प्राप्त की और बिना किसी विधि के बतलाने के वह झील में चला गया।

जल में क्षोभ था परन्तु उसको चलने में कोई कष्ट न हुआ और वह किश्तियों के बीच में से होता हुआ कोई पौने मील जल के ऊपर चलकर पुनः किनारे पर पहुँच गया।

इस के पश्चात् और भी कितने ही स्त्री पुरुषों ने उनका अनुकरण किया और उन्हें भी कोई कठिनाई नहीं हुई।

कालमैन का कथन है कि झील पर चलना

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कोई कठिन कार्य नहीं और तैरना न जानने वाले व्यक्तियों को भी किसी हानि की सम्भावना नहीं यदि वह बहुत दूर न जावें।

× × ×

३. वह पौदे जो कि पत्थर को खा जाते हैं

यह ध्यान में लाना भी कठिन है कि किस प्रकार गन्धमुखी, दीमक इत्यादि मट्टी के डेले की आड़ लेकर उस के नीचे पृथिवी में गहरा छेद कर लेते हैं, परन्तु यह ध्यान में लाना और भी कठिन है कि ऐसे भी प्राणी हैं जो कि पत्थर तक में आरपार छेद कर सकते हैं।

परन्तु यह ठीक ही है। यह छेद करने वाले कोई बड़े बलिष्ट जीव नहीं वरन इतने नन्हें-नन्हें कोमल पौदे हैं कि वे सूक्ष्म वीक्षण यन्त्र की सहायता द्वारा दिखलाई भी नहीं पड़ते।

यह आश्चर्य जनक छेद करने वाले जीव काई की प्रकार की वनस्पति श्रेणी से सम्बन्ध रखते हैं, जो कि सड़ने वाले जलाशयों पर जम जाती है। इन में यह विचित्र शक्ति है कि यह उस पत्थर को जिस पर यह उगते है—यदि उस पत्थर में चूने के लेश हों— घोल डालते हैं। यह देखा गया है कि जब यह असंख्यों की संख्या में समुद्र के किनारे उगते हैं तो बड़ी बड़ी चूने की पहाडियों को खोखला कर डालते हैं।

× × ×

४. बहिरों के लिये कानों का व्यायाम

डाक्टरों का यह विचार है कि यदि बहिरों के कान में लगातार शब्द पहुंचाया जाय तो वह कान के पर्दे पर जाकर एक प्रकार की खुजली सी उत्पन्न करता है जिस से कि उनकी श्रवण शक्ति में बड़ी उन्नति होती है। एक ऐसी मशीन बनाई गई है जिसके द्वारा बहुत से बहिरों के कानों में एक साथ यह उसकाहट पैदा की जा सकती है। यह बहिरों को शिक्षा देने वालों के बड़े काम की है। यह अनुमान किया गया है कि बीस प्रतिशतक जनता की श्रवण शक्ति में कुछ न कुछ दोष हैं यद्यपि उनकी संख्या बहुत कम है जिन्हें बिलकुल सुनाई न देता हो। उस मशीन द्वारा उत्पन्न वायु कम्पन्न इन के लिये बड़ा उपयोगी सिद्ध हुआ है। यह वायु कम्पन्न वाह्य कर्ण में सीधा पहुंचाया जाता है। यदि कान की कोमल हड्डियां और नसें कड़ी पड़ गई हों तो इस से यह नरम पड़ कर बलवती हो जाती हैं।

× × ×

५. रेडियो माल्ट

फेफड़ों की बीमारियों में और वैसे भी साधारणतया बल प्राप्ति के लिये डाक्टर लोग प्रायः काडलिवर तेल का प्रयोग बतलाते हैं। परन्तु अब रेडियो माल्ट नाम की एक ऐसी औषधि तैयार हुई है जो कि इस काडलिवर तेल मिश्रित माल्ट से कहीं उपयोगी है। उस में तीनों वाई टेमिन (A. B. और D. विद्यमान हैं। यह कहा जाता है कि इस में निम्न प्रकार की खूबियां हैं:—

१. इस में काडलिवर आयल और माल्ट से अधिक मात्रा में वाईटेमिन है।

२. इस की वाईटेमिन मात्रा सदा निश्चित रहती है जब कि काडलिवर आयल की बदलती रहती है।

३. इस नवीन औषधि का स्वाद बड़ा उत्तम है, जहां कि काडलिवर आयल बहुत ही गन्दा और बकबका है।

४. यह निरामिष है।

× × ×

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

६. अंधेरे में देखना

जैसा कि हम ज्योति के पाठकों को कई वार बतला चुके हैं सूर्य की किरण का प्रकाश इन्द्रधनुष के सात रंगों से मिल कर बना है। यदि त्रिपार्श्व शीशे में से निकलने दिया जाय तो दूसरी ओर छोटा सा इन्द्र धनुष बन जाता है जिस में कि ऊदा, नीला, आसमानी, हरा, पीला, नारंगी और लाल सातों रंग बड़े स्पष्ट रूप से दिखलाई देते हैं। क्या सफेद प्रकाश में केवल यही सात रंग हैं? रंग तो और भी हैं परन्तु हमारी इन आंखों को दिखलाई नहीं देते। ऊदा से आगे और लाल के इस ओर भी अदृश्य प्रकाश रश्मियाँ निकलती रहती हैं जिन्हें हमारी आंखें देख नहीं, सकतीं। प्रत्येक गरमी रखने वाले पदार्थ में से लालेतर किरणें निकलती रहती हैं। इस का अभिप्राय यह हुआ कि रात्रि के अन्धकार में भी बहुत से पदार्थों में से प्रकाश की किरणें निकलती हैं परन्तु हमारी आंखों के लिए वह न निकलने वाली रोशनी है। क्या कोई ऐसा उपाय नहीं जिस से हम इन आंखों द्वारा इस प्रकाश को देख सकें? यदि ऐसा हो सके तो "अंधे को आंखें मिलने वाली बात हो जाय। परन्तु विज्ञान के लिये यह भी सुगम है महाशय बेयर्ड ने 'रात्रि-ज्योति' नाम का एक यन्त्र बनाया है जिस की सहायता से पदार्थों के लालेतर प्रकाश को एक स्थानपर इकट्ठा करके साधारण प्रकाश में परिवर्तित कर दिया जाता है जिस का चित्र एक धुन्धले शीशे पर पड़ता है और इसे हमारी आंखें देख सकती हैं; इस अदृश्य प्रकाश दर्शक की सहायता से अमावस्या की रात्रि में भी दिन के समान पदार्थ दिखलाई देते हैं।

जब की दो लड़ने वाली सेनायें रात्रि के समय एक दूसरे के सामने पड़ी हों तो ऐसा प्रतीत होता है कि मानों वह नितान्त विश्राम कर रही हैं। परन्तु अंधकार का आश्रय लेकर अगले दिन के युद्ध के लिये नाना प्रकार की तय्यारी की जाति हैं। सेना का स्थान परिवर्तन होता है, तोपें और बन्दूके उचित स्थान पर लगाई जाती हैं, और अपनी रक्षा का सामान जोड़ा जाता है इत्यादि। यह सब कुछ होता है परन्तु शत्रु को इसका कुछ भी पता नहीं होता। परन्तु अब इस नवीन यन्त्र की सहायता से यह सब असम्भव हो जायगा। परन्तु यह यन्त्र शान्ति के समय में भी उपयोगी होगा। धुन्ध वाली रात्रियों से जहाज़ों को चलाने में बड़ा काम का होगा। और भी कई प्रकार से इस से मानव जाति को सुख पहुँचाने की सम्भावना है।

× × ×

७. सब से तीव्र कृत्रिम प्रकाश

'मनुष्य ने एक छोटा सा सूर्य बना लिया है' यह कथन कितना आश्चर्यजनक है, परन्तु है सर्वथा सत्य। यह एक ऐसा प्रकाश स्तम्भ है। जिस में प्रकाश की किरण निकल कर मीलों तक उजाला करती हैं। इस के बनाने का उद्देश्य एक ऐसा प्रकाश दायक यन्त्र रचना था जो कि हवाई जहाज़ों को पथदर्शन का काम दे सके। परन्तु भविष्य में इस से क्या-क्या काम लिये जा सकेंगे यह कहना बड़ा कठिन है।

यह प्रकाश की किरणों का गुच्छा चार्लटविल अमरीका में स्थापित किया गया है। अब तक बने हुए किसी भी प्रकाश-स्तम्भ से इसका प्रकाश पाँचगुना अधिक है। इस के प्रकाश में १३८५०००००० बत्ती

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

की रोशनी है जो कि आकाश की ओर फैल कर रात्रि के समय न केवल परमात्मा की महिमा को ही दर्शाती है वरन मनुष्य की बढ़ती हुई शक्तियों का भी आभास कराती है। साफ रात्रि में यह प्रकाश ३०० मील की दूरी से दिखलाई देता है और जब इसका मुंह सीधा वायु-मण्डल की ओर कर दें तो ७०० से १००० मील तक पहुँच जाता है। इस प्रकाश स्तम्भ के यन्त्र में एक नन्हा सा स्थान ऐसा है जिसका ताप सूर्य के ताप के बराबर है। रात्रि के समय प्रकाश के सहारे आकाश में नाना प्रकार के दृश्य दिखलाई देते हैं। सात मील की उंचाई पर बादलों की चादर दृष्टि गोचर होती है। यही नीचे आकर वर्षा का कारण बन जाते हैं। उस प्रकाश से बादलों में जल और नन्हें नन्हें पृथिवी के कण नापे जा सक्ते हैं।

ऊपर बतलाये इन्द्रधनुष के ऊदे प्रकाश से परे की अदृश्य किरणें मनुष्य और प्राणि मात्र तथा वनस्पति के लिये बड़ी आवश्यक हैं। यह प्रकाश-स्तम्भ इन किरणों का बड़ा भारी भण्डार है। यह प्रकाश इतना तेज़ है कि इसे देखने के लिये हमें विशेष प्रकार के शीशों में से देखना पड़ता है। यदि हमारे नंगे शरीर पर पड़ जाय तो उसे झुलस देता है चाहे वह कई सौ गज़ पर क्यों न हो। इस प्रकाश से ५० मील के फासले से समाचार पत्र पढ़ सकते हैं। जो हवाई जहाज दिन में दिखलाई नहीं देते वे इस प्रकाश से रात्रि को बड़ी सुगमता से दिखलाई दे सकते हैं। यह प्रकाश धुन्ध को नहीं चीर सकता परन्तु जहां धुन्ध हो वहां रुक कर यह एक प्रकाश का बड़ा तालाब सा बन जाता है। अमरीका में निःसन्देह यह एक आश्चर्यमयी वस्तु है।

× × ×

८. सांप के काटे का इलाज

आजकल बहुत से रोगों का टीका द्वारा इलाज किया जाता है। चेचक, प्लेग, राजयक्ष्मा, टाइफाइड इत्यादि ऐसे ही रोग हैं। टीके का सिद्धान्त यह है कि मनुष्य के शरीर में टीके द्वारा सीरम पहुंचाने से उस शक्ति पर हलका सा उसी रोग का आक्रमण हो जाता है। जिसका कि वह सीरम होता है। इस आक्रमण से मनुष्य तथा अन्य पशुओं के रक्त में जो रोग के जीवाणुओं का प्रतिरोध करने वाले "रक्षाणु" होते हैं वह उत्तेजित हो जाते हैं और उनकी संख्या बढ़ने लगती है। इस प्रकार द्वन्द युद्ध आरम्भ हो जाता है। यदि रोग के कीटाणु थोड़े और निर्बल होते हैं जैसा कि हल्के प्रकोप की अवस्था में होता है तो "रक्षाणु" इन्हें मार डालते हैं और मनुष्य बच जाता है। यदि रोग का आक्रमण बहुत तीव्र हो तो "रक्षाणुओं" का उत्तेजित होने और संख्या में बढ़ने का समय नहीं मिलता और कीटाणु विजय प्राप्त कर लेते हैं। यह सीरम का टीका कर के, हम रोग का इतना हलका आक्रमण करवाते हैं कि रक्त में "रक्षाणु" पर्याप्त समय पाकर यथोचित वृद्धि को प्राप्त हो सकें। एक वार पर्याप्त संख्या में उत्पन्न हो जाने पर यह भिन्न २ रोगों के अनुसार यह न्यूनाधिक समय तक रक्त में विद्यमान रहते हैं और उतने समय तक प्राणि भविष्यत में कभी हो जाने वाले उस रोग से निर्भय रहता है। कितने ही रोगों में—रोग होने के पीछे भी टीका करने से रक्त में विद्यमान "रक्षाणुओं" की वृद्धि में बड़ी सहायता मिलती है और वह रोग कीटाणुओं के प्रबल होने से पहले ही उन्हें दबा सकते हैं। राजयक्ष्मा, टाईफाइड इत्यादि का टीका इस के उदाहरण हैं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

इसी सिद्धान्त पर अब सांप के काटे का इलाज किया जाने लगा है। सांप का जो विष उस के मसतिष्क में रहता है यदि वह मनुष्य या अन्य पशुओं के शरीर में एक दम प्रवेश कर जाय तो यह प्राणि उसका प्रति रोध नहीं कर सकते, परन्तु यदि इसका आक्रमण बहुत हलका हो और इसके रोगानुरोग कीटानुओं को बढने का अवसर न मिले तो परिणाम भयङ्कर नहीं होता। यह तभी हो सकता है जब कि उस के शरीर में टीके द्वारा ऐसी औषध को पहुँचाया जाय कि जिस में रोग के 'कीटाणु' तो न हों परन्तु 'रक्षाणु' बहुत बड़ी मात्रा में हों। सांप के विष का "सीरम" इसी प्रकार का होता है। यदि किसी रोगी के रक्त को बाहर निकाल कर उबाला किया जाय तो रक्त के लाल अण्डे इकट्ठे होकर गुच्छा-सा बन जाते हैं और इनके साथ-ही रोग के कीटाणु भी मर जाते हैं परन्तु "रक्षाणुओं" को कोई क्षति नहीं होती। छानने पर एक सफेद रंग का पानी-सा निकल आता है जिसमें सब 'रक्षाणु' विद्यमान रहते हैं और इसे "सीरम" कहते हैं ;

बम्बई की सरकारी प्रयोगशाला में साँप के विष का सीरम बनाया जाता है। इस प्रयोगशाला में बहुत से साँप पाले हुये हैं। इनको एक-एक करके पिंजरे से बाहर निकाल कर सिर को एक बड़ी मोटी लाठी से दबाकर पूँछ को एक पैर से दबा लेते हैं। अब हाथ से उसके सिर को इस प्रकार पकड़ते हैं कि वह हिल कर काट न सके। सिर को उल्टा कर मसतिष्क में रहनेवाली विष की गिल्टियों को दबाकर विष को काँच के गिलास में निकाल लेते हैं। फिर सांप को पकड़े पकड़े ही मुंह में दूध डाल कर उसे दूध पिलाते हैं। इस से वह पुनः अपनी पहली अवस्था में आजाता है और कुछ समय बीतने पर पुनः विष देने योग्य बन जाता है। अब इस विष को कई बार बहुत थोड़ी थोड़ी मात्रा में परन्तु उत्तरोत्तर बढ़ने वाली मात्रा में पिचकारी द्वारा जीवित घोड़े के शरीर में (रक्त में) मिला देते हैं। शनैः २ रक्त में "रक्षाणु" बढ़ कर बहुत बड़ी संख्या में उत्पन्न हो जाते हैं। अब घोड़े के शरीर से कई सेर रक्त बाहर निकाल कर उस का सीरम तय्यार करते हैं। यह सीरम साँप के विष का प्रतिरोध करने वाली बड़ी उत्तम औषध है। इस के द्वारा सांप काटे का अब बहुत करके इलाज किया जाता है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कन्या-गुरुकुल समाचार

देहली से देहरादून आने के पश्चात कई अनिवार्य्य कारणों से ज्योति में कन्या गुरुकुल समाचार न दिये जा सके। इन में से मुख्य कारण सम्पादिका जी का रुग्ण होना था। ईश कृपा से अब उनका स्वास्थ उत्तरोत्तर उन्नति कर रहा है अतः अब ज्योति भी समय पर निकला करेगी और प्रतिमास पाठकों को गुरुकुल समाचार भी विदित होते रहेंगे।

निवास स्थान

देहरादून में राजपुर रोड पर २१ तथा २२ नं० की दो कोठियाँ किराये पर ली गई हैं, यह स्थान अति रमणीक तथा मनोहर है। समीप ही एक छोटी-सी नदी भी बहती है। सामने एक अति-उत्तुङ्ग शिखरों से युक्त हिमालय पर्वत इस कुल की भी महत्ता का परिचय देता हुआ, इसकी शोभा को द्विगुणित कर रहा है। यद्यपि यहां पर दो कोठियां किराये पर ली गई हैं, एक में विद्यालय तथा दूसरी में आश्रम विभाग है। तथापि स्थानाभाव के कारण कई हजार रु० व्यय करके एक विशाल-भवन बनाया गया है, जिसमें १३० ब्रह्मचारिणियां रह सकती हैं, उसे उपहोस में ताजमहल नाम से पुकारते हैं। अब नवीन कन्यायें प्रविष्ट हुई हैं। ताजमहल में स्थान पर्याप्त नहीं है अतः नये कमरे तैय्यार हो रहे हैं। स्थान की कमी निजी स्थायी-भवन बनने तक रहेगी। यहां पर एक विशेषता है जो कि देहली में नहीं थी। इस कोठी में अमरूद अनार आम मालदे इत्यादि के कई वृक्ष हैं, एक सुन्दर छोटा सा उद्यान भी है जिस में कई प्रकार की भाजिया इ ाद लगाई गई हैं। चारों ओर हरियावल ही हरियावल दिखलाई देती है। इस उद्यान ने कुल की शोभा को द्विगुणित कर दिया है।

व्यायाम

कन्याओं के व्यायाम के लिये अत्युत्तम प्रबन्ध हो गया है। ब्रह्मचारिणियां प्रातः तथा सायं गतका, लाठी, छुरा, तलवार इत्यादि चलाना सीखती हैं। सब कन्यायें अति उत्साह से व्यायाम करती हैं, क्रीड़ास्थल में खूब चहल पहल रहती है। छोटी झुला झूलती हैं, तथा रस्सियों से अन्य खेल करती रहती हैं।

स्वास्थ्य

यहां की जलवायु अत्युत्तम है अतः जब से कन्यायें यहां आई हैं बहुत ही स्वास्थ्य लाभ कर रही हैं, प्रायः सब का भार दो दो तीन २ सेर बढ़ गया है। रोगी शाला प्रायः बन्द ही रहती है

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

परीक्षायें

छोढ़ छोटी श्रेणियों की परीक्षायें १२ दिसम्बर से प्रारम्भ होगई हैं। कई श्रेणियों की समाप्त हो चुकी हैं, कईयों की हो रही हैं। बड़ी श्रेणियों की परीक्षायें १५ जनवरी से प्रारम्भ होंगी। सब अति परिश्रम से परीक्षा की तैयारी में संलग्न हैं। अध्यापिकायें भी कोर्स समाप्त कराने में लगी हुई हैं। आज कल पठन पाठन का कार्य्य अति तीव्रता से हो रहा है।

नवीन कन्याओं का प्रवेश

४ दिसम्बर को प्रवेश दिवस था। बहुत सी कन्यायें तो प्रविष्ट हो चुकी हैं, परन्तु कुछ कन्यायें जिन के प्रवेश फार्म भर के आचुके हैं वह अभी तक नहीं आई। भारतवासियों के अन्दर समय पर कार्य्य न करने का बड़ा भारी दुर्गुण है। प्राचीन समय में लोग समय पर कार्य करते होंगे! वर्त्तमान काल में तो समय पर कार्य न करने का व्यसन पड़ गया है, जिस से सब को हानि होती है। ४ दिसम्बर को दाखला (प्रवेश दिवस) था, उस दिन नवीन कन्याओं को प्रविष्ट कराने वाले संरक्षकों का कर्त्तव्य था कि समय पर पहुंचते परन्तु बहुत से संरक्षक अब पीछे से कन्याओं को ले ले कर आ रहे हैं। समय पर नियमानुकूल कार्य न करने से कुल को तथा कन्याओं को हानि पहुंचती है। पीछे प्रविष्ट हुई कन्यायें पढ़ाई में पीछे रह जाती हैं। प्रबन्धकर्त्ताओं को भी कठिनता होती है। अतः सब को समय पालन पर ध्यान देना चाहिए।

इस प्रकार के माता पिता अपने बच्चों से यह कैसे आशा रख सकते हैं कि उन की सन्तान कर्त्तव्य परायण तथा समय पालन करने वाली हो। हमें घड़ी की तरह समय पालन करने में आदर्श-मय बनना चाहिये।

कन्या गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ देहरादून में

बलिदान उत्सव

आज प्रातः ८ ½ बजे से ११ बजे तक सब ब्रह्मचारिणियों ने मिलकर श्रद्धानन्द बलिदान के उपलक्ष्य में सभा की।

सब से प्रथम ब्र० सुशीलादेवी का भाषण हुआ, उस में उन्हों ने बताया कि स्वामी जी को प्राचीन शिक्षा तथा संस्कृति से अति प्रेम था, अतः उन्होंने उसे उन्नत करने का अति प्रयत्न किया। अपने भाषण में सुशीला जी ने प्रमाणों सहित सिद्ध किया कि प्राचीन शिक्षा तथा संस्कृति से ही भारत का उद्धार हो सकता है। तदन्तर ब्र० शान्तीदेवी अष्टम श्रेणी का भाषण हुआ, उन्होंने उस में स्वामी जी की जीवनी का वर्णन करते हुए बताया कि हमारा कर्त्तव्य क्या है। तदन्तर ब्र० चन्द्रकला जी का भाषण हुआ, उन्होंने उस में स्वामी जी की जीवनी की महत्वपूर्ण घटनाओं का वर्णन करते हुए बताया कि स्त्री जाति स्वामी जी की अति ऋणि है, हमारा कर्त्तव्य है कि जो कार्य्य स्वामी जी अधूरा छोड़ गये हैं, उसे हम पूरा करें। तदन्तर ब्र० स्वर्णकला ब्र० सत्यवती ब्र० विद्यावती ब्र० इन्दुमती इत्यादि के भाषण हुए, उन में इन्होंने सम्यक् स्वामी जी की जीवनी पर प्रकाश डालते हुए बड़े जोशीले शब्दों में सिद्ध किया कि हम स्वामी जी के कार्य को पूरा करेगीं। उस के पश्चात् श्री अञ्जनादेवी जी वैदिक धर्म विशारदा कन्या गुरुकुल ने अपने भाषण में बताया कि वस्तुतः स्वामी जी उसी समय में हुए, जिस समय उनकी नितान्त आवश्यकता थी। तदन्तर सुप्रसिद्ध उपदेशिक लक्ष्मी देवी जी का प्रभावशाली भाषण हुआ, उन्होंने स्वामी जी के वाक्यों को स्मरण करते हुए बतलाया कि यह कन्या गुरुकुल उन्हीं की कृपा से स्थापित

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हुआ है, सब से पूर्व उन्हों ने ही इस प्रस्ताव को रक्खा था। अतः सारी जाति उनकी अति ऋणी है। हमारा कर्त्तव्य है कि हम उनके उद्देश्यों को पूर्ण करें, तदन्तर सुप्रसिद्ध उपदेशिका श्री ठाकुरदेवी जी का मनोहर व्याख्यान हुआ। उसके पश्चात् श्री प्रधान जी का अति प्रभावशाली व्याख्यान हुआ। उन्होंने बतलाया कि स्वामी जी तो अमर होगये हैं उन्होंने तो अपने उद्देश्यों को भलीभाँति पूर्ण कर लिया। अब हमारा कर्त्तव्य है कि जो कार्य वे छोड़ गये हैं उसे हम पूरा करें। बड़े जोश से कहा कि इस समय हमारा मुसलमानों तथा अंग्रेज़ों सरकार से संघर्ष है, मुसल्मान हमारे धार्मिक कार्य्यों में हस्तक्षेप करके हमें दबाना चाहते हैं, हमारा कर्त्तव्य है कि हम सब लोग मिलकर उनका मुकाबिला करें। यदि इसी प्रकार हम दबते गये तो किसी दिन आर्य्यजाति का नाश होजायगा। तदन्तर प्रधान जी ने आर्यकाँग्रेस में स्वीकृत सत्याग्रह के प्रस्ताव को सबके सन्मुख रक्खा आर्य्यवीर दल की सदस्य बनने के लिये कई ब्रह्मचारिणियों तथा अध्यापिकाओं ने अपने नाम लिखवाये। सारी ब्रह्मचारिणियां आर्य्यवीर दल की सदस्या बनने के लिए अत्युत्सुक थीं। आयु कम होने के कारण जिनका नाम नहीं लिखा गया वह अति दुःखित हुईं। उन्होंने सानुरोध प्रार्थना की कि १३ वर्षीय कन्याओं को भी सदस्या बनने की आज्ञा दी जावे। सार्वदेशिक सभा की आज्ञा न होने के कारण उनकी प्रार्थना अस्वीकृत की गई। तदन्तर भजन तथा शान्ति पाठ सहित सभा विसर्जित की गई।

निम्न लिखित कार्य्यकर्तृणि देवियां तथा ब्रह्मचारिणियाँ आर्य्यवीर दल की सदस्या बनीं।

१. श्री कु० विद्यावती जी सेठ बी. ए.
आचार्य्या कन्यागुरुकुल
२. श्री कु० सीतादेवी जी विशारदा मुख्याध्यापिका
३. श्री कु० अंजाना देवी जी वैदिक-धर्म विशारदा
अध्यापिका
४. श्री राधारानी जी मुख्याधिष्ठात्री कन्यागुरुकुल
५. श्री दुर्गादेवी जी नैने अध्यापिका
६. श्री लक्ष्मी देवी जी प्रबन्ध कर्तृणी
७. श्री चन्द्रवती जी अध्यापिका
८. श्री लक्ष्मी देवी जी

ब्रह्मचारिणियाँ

१. ब्र० सुशीलादेवी कच्छ (अष्टम श्रेणी)
२. ब्र० शान्तादेवी जैजैवन्ती (")
३. ब्र० सुलभा देवी ब्रह्मा (")
४. ब्र० सत्यवती अमृतसर (सप्तम श्रेणी)
५. ब्र० विद्यावती जाम्पुर (सप्तम श्रेणी)
६. ब्र निर्मला सूरत (षष्ठ श्रेणी)
७. ब्र० सुभद्रा बेलगाँव (पंचम श्रेणी)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्रेम-द्वादशी—लेखक श्री प्रेमचन्द; प्रकाशक गंगा-पुस्तकमाला कार्यालय लखनऊ; पृष्ठ संख्या २०६; मूल्य १।).

यह हिन्दी भाषा के सुप्रसिद्ध गल्प लेखक और सिद्धहस्त उपन्यासकार की समय-समय पर भिन्न-भिन्न पत्रिकाओं में प्रकाशित १२ कहानियों का संग्रह है, इनमें से कुछ कहानियाँ ऐसी भी हैं जो पहली वार इस संग्रह में छपी हैं। इस संग्रह में श्री प्रेमचन्द जी की सामाजिक, आध्यात्मिक, मनोविज्ञान सम्बन्धी इत्यादि सब प्रकार की कहानियों के नमूने हैं। लेखक के शब्दों में वह कहानी किसी काम की नहीं जो कि 'जीवन के किसी अङ्ग पर प्रकाश न डाले. जो सामाजिक रूढ़ियों की तीव्र आलोचना न करती हो, जो मनुष्य के सद्भावों को दृढ़ न करे या जो मनुष्य में कौतुहल का भाव न जाग्रत करे, यह प्रसन्नता और हमारी भाषा के सौभाग्य की बात है कि लेखक का यह उच्च-उद्देश्य उसकी रचनाओं में पूर्णतया सुरक्षित है। कहानियाँ सभी मनोरञ्जक हैं, शिक्षाप्रद हैं और आत्मा और मन को उभारने वाली हैं।

× × ×

बाल ब्रह्मचारिणी कुन्ती देवी—लेखक, श्री भगवानदास केला; प्रकाशक भारतीय ग्रन्थमाला वृन्दावन; पृष्ठ संख्या २२५; सजिल्द मूल्य १॥).

इस पुस्तक में एक ऐसी देवी का जीवनचरित्र है जिसने हमारे स्त्री-समाज के सन्मुख चरित्र-बल, धर्म-प्रेम, जाति-सेवा और देशानुराग का उज्ज्वल दृष्टान्त पेश किया है। उसने अपने जीवन से बतला दिया कि किस प्रकार एक नारी अपने पारिवारिक और सामाजिक जीवन को अपने बन्धुओं तथा जनता के लिये सुख का साधन बना सकती है। पति परिवार के विविध सज्जनों, पुरुषों तथा महिलाओं से यथेष्ट व्यवहार कर वह इस कुल में सदैव प्रेम तथा आदर का भाजन बनी रही; अपने सार्वजनिक जीवन में शिक्षिका लेखिका और उपदेशिका के रूप में उन्होंने बड़ा सराहनीय कार्य किया। अपने पतिदेव श्री आनन्दभिक्षु जी के साथ वानप्रस्थ आश्रम में प्रवेश कर प्राचीन विदुषी महिलाओं के समान, इस समय के लिये अनूठा और अद्वितीय उदाहरण पेश किया है। शोक कि ऐसी कर्त्तव्य परायणा रमणी-रत्न अल्प आयु में ही काल के कराल गाल में पड़ गई। यह पुस्तक सब गृहस्थी स्त्रियों के पढ़ने योग्य है।

× × ×

नवीन पद्य संग्रह—संग्रह कर्ता श्री पं० भवानीप्रसाद वाजपेयी; प्रकाशक हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन प्रयाग; पृष्ठ संख्या १४२ मूल्य ॥=).

कई वर्ष हुये हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन ने एक पद्य संग्रह प्रकाशित किया था जो प्रथमा की पाठ्य-पुस्तकों में था। आजकल यह संग्रह प्रायः अप्राप्य हो गया था अतः यह नवीन पद्य संग्रह प्रकाशित किया गया है। इस संग्रह में ८३ नवीन कवियों की एक-एक सर्वोत्तम कविता को स्थान दिया गया है। किसी भी कवि की एक सर्वोत्तम कविता को चुनना सहज काम नहीं और न ही कोई यह दावे से कह सकता है कि यह उसकी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सर्वोत्तम कविता है क्योंकि यह चुनने वाले की रुचि, कल्पना शक्ति और आलोचना की योग्यता पर निर्भर है तो भी इस संग्रह में दी हुई कविताओं के विषय में कहा जा सकता है कि बहुत से साहित्य मर्मज्ञ एक मत होंगे कि इसमें बहुत से नवीन कवियों की सर्वोत्तम रचना आगई है। संग्रहकार ने अपने कार्य में अपनी सुरुचि और योग्यता का परिचय दिया है। इस संग्रह की दी हुई कविताओं के आधार पर अपने नवीन कवियों पर हिन्दी-भाषा यथोचित अभिमान कर सकती है। पुस्तक में कवियों का संक्षिप्त परिचय भी दिया गया है जिससे पुस्तक की उपादेयता और भी बढ़ गई है। संग्रह अच्छा हुआ है और संग्रहणीय है।

× × ×

छत्रसाल-ग्रन्थावली—संपादक श्री वियोगी हरि; प्रकाशक श्री छत्रसाल-समिति-स्मारक; पृष्ठ संख्या १९५; मूल्य १) रुपया।

बुन्देलखण्ड केसरी महाराज छत्रसाल हिन्दू महाराजाओं के सिरमौर थे। आपकी वीरता, स्वार्थ-त्याग, देशभक्ति, न्याय प्रियता और शासन-कुशलता जगत् प्रसिद्ध है। इन पर हिन्दू-संसार जितना भी गर्व करे थोड़ा है। भारत से मुगल-राज्य की जड़ उखाड़ फेंकने और हिन्दू-राज्य की पुनः स्थापना में इनका बड़ा भारी हाथ है। परन्तु हमें बड़ा आश्चर्य होता है जब हम देखते हैं कि महाराज छत्रसाल का कवि-जगत में भी बड़ा ऊँचा स्थान है, और हमारा आश्चर्य और भी बढ़ जाता है जब हम देखते हैं कि महाराज का समस्त जीवन बीहड़ जंगलों, निर्जन उपत्यकाओं और भीषण रण-क्षेत्रों में ही बीता है। तो इन अवस्थाओं में ऐसी उच्च-कोटि की कविता, निःसन्देह यह महाराज की बहुमुखी प्रतिमा का उदाहरण है। महाराज छत्रसाल की कविता का विषय भक्ति, नीति और विशुद्ध-शृङ्गार है। इस पुस्तक में श्री वियोगी हरि ने आरम्भ में महाराज का जीवन-चरित्र देकर पश्चात् उनकी कविता पर तुलनात्मक विचार किया है और बाद में छत्रसाल कृत आज तक प्राप्त सर्व कविता-ग्रन्थों को दिया है। इस पुस्तक की रचना का आधार "महाराज छत्रसाल के काव्य" और "नीति मंजरी" नामक दो ग्रन्थ हैं छत्रसाल की रचनायें व्रज-भाषा में हैं जो कि बड़ी मधुर और शुद्ध है। पुस्तक बड़े सुन्दर मोटे टाइप में उत्तम काग़ज़ पर छपी है तो भी मूल्य कुछ अधिक मालूम पड़ता है।

× × ×

जनरल अवारी—लेखक व प्रकाशक श्री सत्यदेव विद्यालङ्कार असहयोग आश्रम नागपुर; पृष्ठ संख्या ५२; मूल्य =)।

इस छोटी-सी पुस्तक में लेखक ने शुद्ध ओजस्विनी भाषा में आधुनिक पारसी वीर अवारी के संक्षिप्त जीवन, कार्य और सिद्धान्तों का वर्णन किया है। आजकल भी राजनैतिक-क्षेत्र में पुस्तिका के चरित्र नायक जैसे त्यागी, दृढ़ प्रतिज्ञा, शुद्धाचारी, निडर और सादा जीवन रखनेवाले देशभक्त मौजूद हैं यह हमारे सौभाग्य की बात है। श्रीयुत अवारी का जीवन निःसन्देह हमारे नवयुवकों को आदर्श की ओर ले जानेवाला है। उन्हें अवश्य इस पुस्तक को पढ़ना चाहिये।

× × ×

अक्षर-तत्त्व—लेखक और प्रकाशक श्रीयुत गौरीशङ्कर भट्ट; भसवानपुर (कानपुर); मूल्य ॥)।

गत १७ वर्ष से पंडित गौरीशङ्कर जी हिन्दी लिपि को सुन्दर, नेत्रग्राही और मनोरञ्जक बनाने का जो प्रयत्न कर रहे हैं वह हिन्दी-संसार से छुपा नहीं है। आपने नागरी लिपि को वैज्ञानिक रीति से लिखने की ओर दृष्टि आकर्षित की और

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

यह प्रसन्नता की बात है कि आपको अपने उद्देश्य में पर्याप्त सफलता प्राप्त हुई। आपकी बनाई हुई सुलेख्य, आलेख्य, चित्रलिपि इत्यादि पुस्तकें अनेक पाठशालाओं, गुरुकुलों में प्रचलित हैं तथा कई प्रान्तों के शिक्षा-विभागों से स्वीकृत हैं। हमारे बालकों को सुन्दर हिन्दी अक्षर लिखना सिखलाने के सफल प्रयत्न का सहल कुछ श्रेय श्री भट्ट जी को है। श्री भट्ट जी निरन्तर इस प्रयत्न में लगे हुये हैं कि हमारी राष्ट्रीय-लिपि अधिक सुन्दर बनती जाये। यद्यपि आप हिन्दी कलम की लाग से बने अक्षरों को ही Standand मानते हैं, तो भी आपने इन अक्षरों को ज्यामितिक रूप से बनाने की विधि सिखाने का प्रयत्न किया है और इस प्रकार जो अक्षर बन सकते हैं वह कितने सुन्दर हैं, उनमें क्या-क्या त्रुटियाँ रह जाती हैं, कहाँ-कहाँ उन्नति की सम्भावना है, इन विषयों पर विद्वानों की सम्मति जानने के लिये अक्षर-तत्त्व पुस्तक लिखी गई है। भट्ट जी ने कोई ६० पृष्ठ में वर्णमाला के सब अक्षरों के ज्यामितिक रूप दिये हैं। हमें पूरी आशा है कि हिन्दी-भाषा के विद्वान् नागरी अक्षरों के रूप-सुधार सम्बन्धी अपने विचारों से भट्टजी को अवश्य सूचित कर उन्हें उत्साहित करेंगे।

× × ×

विश्व-धर्मशास्त्र—लेखक श्री आनन्द स्वामी B. A. (Nat); प्राप्तिस्थान— (१) दीनानाथ बुकसेलर भैरों-बाज़ार जालन्धर शहर, (२) वैदिक पुस्तकालय लाहौर; पृष्ठ संख्या १७०, तीन चित्र; मूल्य १=)।

गतवर्ष १९८३ में शिवरात्रि के पर्व पर स्वामी जी नैपाल गये थे। उसी अवसर पर मार्ग में उन्हें एक आप्त विद्वान् महर्षि घोर का सत्संग लाभ हुआ था। उन्हीं के उपदेश के आधार पर स्वामी जी ने उक्त ग्रन्थ लिखा है। ग्रन्थ का विषय भारत का वही आध्यात्मिक-ज्ञान, सृष्टिउत्पत्ति, आत्मा-परमात्मा का सम्बन्ध, कर्मफल, स्वर्ग-नरक, मुक्ति इत्यादि है जिनके विषय में हमारे पूर्व ऋषि गूढ़-मनन करने के उपरान्त भी नेति-नेति कह गये हैं। ग्रन्थकर्ता ने इन सब समस्याओं को उक्त महर्षि के उपदेश के आधार पर दार्शनिक और वैज्ञानिक ढंग से सुलझाने का प्रयत्न किया है जो युक्ति-युक्त जान पड़ता है। पुस्तक में तीन चित्रों (Diagrams) द्वारा सृष्टि उत्पत्ति के क्रम, आत्मा और ब्रह्म के सम्बन्ध, पुनर्जन्म, आत्मा की व्यापकता और विभुत्व आदि को सरलता पूर्वक समझाया गया है। इसके समझ लेने पर सभी दार्शनिक आर्ष-ग्रन्थों में एक अद्भुत संगति जान पड़ने लगती है। पुस्तक में आधुनिक समस्याओं, जन संख्या की वृद्धि, सामाजिक अशान्ति और विषमता आदि का विवेचन भी दार्शनिक दृष्टिकोण से आध्यात्मिक आधार पर किया गया है। ग्रन्थकार का दावा है कि यदि भविष्य में संसार में कभी शान्ति का साम्राज्य हो सकेगा तो वह इस पुस्तक में वर्णित सिद्धान्तों के आधार पर ही सम्भव होगा, चाहे सिद्धान्तों के प्रचार का कारण कुछ भी क्यों न हो, अध्यात्म और दर्शन में रुचि रखनेवाले सज्जनों के लिये यह पुस्तक बड़े काम की चीज़ है। पुस्तक के विशेष-विशेष स्थल यदि कुछ विस्तार से लिखे जाते तो सम्भवतः पुस्तक अधिक सरल हो सकती थी।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

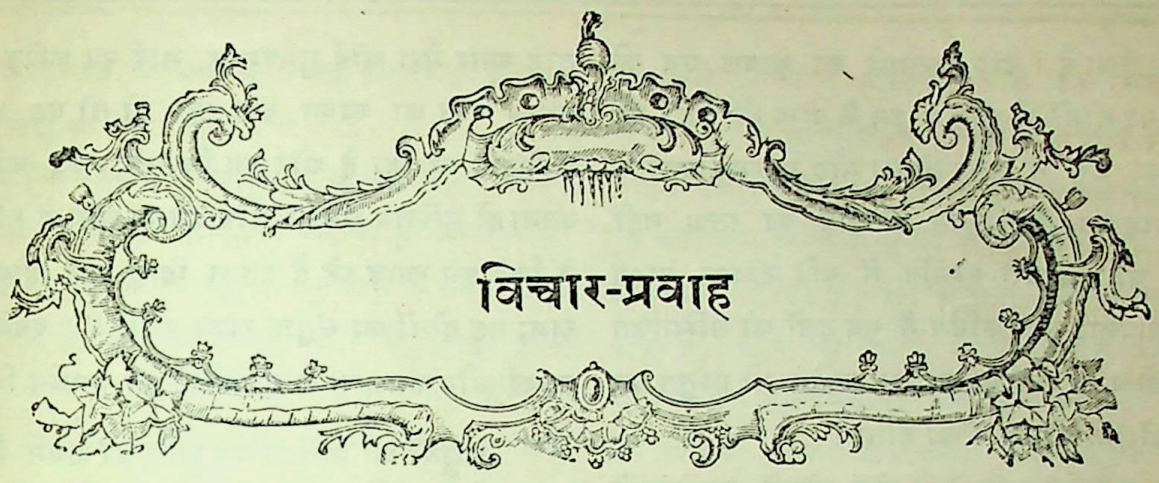

काँग्रेस का मद्रास अधिवेशन

रतवर्ष की जातीय महा सभा का बयालीसवाँ वार्षिक अधिवेशन डाक्टर अन्सारी के सभापतित्व में मद्रास नगर में बड़े समारोह और सफलता के साथ होगया। सभापति का भाषण, उपस्थिति, समारोह, उत्साह, प्रस्ताव आदि सभी दृष्टियों से काँग्रेस का यह अधिवेशन पूर्णतया सफल कहा जा सकता है। पिछले वर्ष जब गोहाटी में काँग्रेस का वार्षिक अधिवेशन हुवा था, दिल्ली में एक ऐसी कल्पनातीत दुर्घटना होगई थी कि सम्पूर्ण देश का ध्यान गोहाटी की ओर से हट कर उसी तरफ आकृष्ट होगया था, गोहाटी का अधिवेशन उस देश व्यापी शोक पूर्ण आतंक के सन्मुख बिल्कुल फीका पड़ गया था। परन्तु इस वर्ष शाही कमीशन की विचित्र नियुक्ति के कारण सारा देश मद्रास के निर्णयों की ही प्रतीक्षा कर रहा था, अतः मद्रास-अधिवेशन की सफलता निश्चित ही थी। 'लीडर' के अनुभवी सम्वाददाता का कथन है कि मद्रास काँग्रेस के पण्डाल में कम से कम ३० हज़ार व्यक्ति उपस्थित थे। उस का विश्वास है कि मद्रास में इस से पूर्व कभी किसी कार्य के लिये इतना बड़ा पण्डाल न बना होगा। पण्डाल एक छोटी मोटी पहाड़ी के समान प्रतीत होता था। केवल मञ्च पर ही ३ हज़ार व्यक्ति बैठे हुए थे। स्त्री-दर्शकों की संख्या भी ५ हज़ार से कम न होगी। काँग्रेस नगर कुम्भ के मेले के समान प्रतीत होता था। इस काँग्रेस में ३ हज़ार प्रतिनिधि सम्मिलित हुए, पिछले अधिवेशनों की अपेक्षा यह संख्या बहुत अधिक है। लोगों में अपूर्व उत्साह था। प्रातः काल स्त्रियाँ टोले बना कर काँग्रेस नगर में जातीय गीत गाती हुई घूमा करती थीं। सभापति का भाषण भी उस पद के सर्वथा योग्य था। कांग्रेस के निर्णयों की दृष्टि से भी इस अधिवेशन को पूरी तरह सफल कहना चाहिये। इस अधिवेशन से पूर्व देश में शाही कमीशन के प्रति तीव्र विरोध का भाव होते हुए भी कमीशन का पूर्ण बहिष्कार कर सकना एक असम्भव कार्य प्रतीत होता था, परन्तु काँग्रेस के निर्णयों की बदौलत अब बहिष्कार के मार्ग की बाधाएँ बहुत कम होगई हैं। हिन्दू मुस्लिम समझौते के प्रस्ताव का अभिनन्दन यद्यपि दोनों सम्प्रदायों ने पूर्ण रूप से नहीं किया, तथापि उस के द्वारा अवस्था अवश्य सुधरी है। इस से पूर्व बम्बई और कलकत्ता के समझौते को जो तिरस्कार दोनों सम्प्रदायों के नेताओं से सहना पड़ा था, वह इस समझौते का नहीं हुआ। बहुत से विचारशील हिन्दू तथा मुसलमान नेता, जो उन समझौतों से असन्तुष्ट थे, इस समझौते के पक्ष में हैं। महात्मा गाँधी ने काँग्रेस के प्रबन्ध पर कड़ी आलोचना की है। सम्भवतः इस का कारण आशातीत भीड़ होजाना ही हो; यदि इस एक न्यूनता को स्वीकार कर भी लिया जाय तो भी अन्य सब दृष्टियों से हम मद्रास-काँग्रेस को पूर्णतया सफल कह सकते हैं। ईश्वर करे कि इस वर्ष देश में आशा और उत्साह का सञ्चार रहे।

× × ×

सभापति का भाषण

कोकोनाडा के बाद अब मद्रास में महासभा ने एक मुसल्मान सज्जन को अपना सभापति निर्वाचित किया है। डा० अन्सारी वस्तुतः इस पद के सर्वथा योग्य थे; डाक्टर साहब उन थोड़े से सौभाग्यशाली नेताओं में से हैं, जिन पर अभी तक हिन्दू और मुसल्मानों का थोड़ा बहुत

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विश्वास बना हुआ है। डा० अन्सारी का भाषण उन की व्यक्ति तथा पद दोनों की दृष्टि से उन के योग्य ही था। वह न बहुत लम्बा था, न बहुत छोटा। मौ० मुहम्मद अली के भाषण की तरह उस में मुस्लिम इतिहास का ग्रन्थ नहीं लिखा गया था। हमारी सम्मति में यदि डाक्टर साहब कमीशन के बायकाट तथा काँग्रेस में सब दलों को सम्मिलित करने के सम्बन्ध में कोई व्यवहारिक स्कीम भी प्रस्तुत कर सकते तो और भी अधिक अच्छा होता।

बृटिश साम्राज्य वादियों की पोल खोलते हुए आपने कहा— "राज नीतिज्ञ और शासक सभ्य बनाने का बीड़ा, और 'श्वेताङ्गों का बोझ' आदि बातें बड़ी तमक के साथ कहा करते हैं पर दक्षणी अफ्रीका के अग्रिणी साम्राज्य वादी रोडिस ने यह कह कर कि मानवहित अच्छा ही है, परन्तु उस के साथ यदि फी सदी ५ रुपया लाभ भी हुवा करे तो वह उस से कहीं अच्छा है, उस की पोल खोल दी है। साम्राज्यवाद के बड़े पुजारी चैम्बर लेन ने साफ शब्दों में कहा है— 'साम्राज्य वाद का अर्थ रोज़गार है। भारत हमारा सब से बड़ा और अमीर ग्राहक है।' इस परोपकारी डकैती का इतिहास एशिया के सब देशों में खून से लिखा हुवा है।" स्वराजदल की नीति के सम्बन्ध में आपने कहा— "पर इस नीति के समर्थकों ने इस बात की ओर ध्यान नहीं दिया कि १९१९ के भारत शासन विधान ने जो सीमा बना दी है, उसी से इस तरह का सारा विरोध बेकार हो जाता हैं और वैध रुकावट वस्तुतः असम्भव हो जाती है। उन्हें और असहयोगियों को जान लेना चाहिये था कि जो प्रश्न कौन्स्टिच्यूशन या विधि के बाहर का है उस की लड़ाई सिर्फ वैध भूमि पर ही नहीं लड़ी जा सकती।" इस के बाद आपने आवश्यकतानुसार नीति में हेरफेर करने की आवश्यकता बतलाई है।

हिन्दू मुस्लिम समस्या पर विचार प्रकट करते हुए आपने कहा—"हमें यह न भूलना चाहिये कि हम भारत-वासी हैं। हमें भारत में ही रहना और भारत में ही मरना है ·····अगर मेरा कोई हिन्दू भाई समझता हो कि वह अपने सात करोड़ मुस्लिम भाईयों से अपना पिण्ड छुड़ा सकेगा तो वह बड़े भारी भ्रम में पड़ा है और यह भ्रम जितना ही जल्द दूर होगा उतना ही उस का और देश का लाभ है। इसी तरह अगर मेरा कोई मुसल्मान भाई २५ करोड़ हिन्दुओं पर प्रभुत्व करने का स्वप्न देख रहा हो तो वह मूर्खों के स्वर्ग में विहार कर रहा है और वह जितनी जल्द आँख खोलेगा उतना ही मुस्लिम समाज और देश का लाभ है। जिस स्वराज्य के लिये हम झगड़ रहे हैं वह न हिन्दू राज होगा न मुस्लिम राज; वह दोनों का संयुक्त राज्य होगा।" इसके बाद आपने बम्बई और कलकत्ता के समझौतों का समर्थन किया है।

अछूतों की समस्या पर आप का कथन है— "अछूत-पन दूर करने का प्रश्न यद्यपि हमारे हिन्दू भाइयों का ही प्रश्न है पर प्रत्येक भारत सन्तान के लिये भी यह प्रश्न गम्भीर चिन्ता का प्रश्न हुए बिना नहीं रह सकता, क्यों कि भयंकर सामाजिक और राजनीतिक अयोग्यता के नीचे दबे हुए इतने अधिक भाईयों का अस्तित्व ही देशोद्धार के प्रयत्न में बाधक हुए बिना नहीं रह सकता।"

ईसाइयों को भी कांग्रेस में सम्मिलित होने की सलाह देते हुए आप कहते हैं— "वर्षों तक मुसल्मानों ने राष्ट्रीय शक्ति (कांग्रेस) को छोड़ कर अन्य शक्तियों का साथ दिया था पर कड़वे अनुभव के बाद उन्हें मालूम हुआ कि कांग्रेस में सम्मिलित होकर तथा अन्य भाइयों के लक्ष्य को ही अपना कर वे निजी हित की रक्षा कर सकते हैं।" इस के बाद वह कांग्रेस में सब दलों को मिला लेने की अपील करते है— "कांग्रेस का द्वार सब दलों के लिये खोल देना चाहिये और प्रत्येक दल को कांग्रेस में लाने के लिये मूल सिद्धान्त के सिवा और कोई त्याग करने से हमें मुह न मोड़ना चाहिये। मत-भेद तो रहेंगे ही, परन्तु उन्हें मिटाने या उन के लिये झगड़ने का सर्वोत्तम स्थान कांग्रेस का मञ्च ही है जो इस देश की सब राजनैतिक संस्थाओं की जननी है।" इसके बाद आपने कौंसिलों में भी मिल कर कार्य करने की सलाह दी है।

शाही कमीशन के सम्बन्ध में आपका कहना है— "परमात्मा ने बड़ी दया कर के हमारे लिये बड़ा अच्छा इनाम भेजा है,·····इस से हम में से बड़े से बड़े आशावादी की भी आंखें खुल जानी चाहियें।···मुझे कमीशन की नियुक्ति से न निराशा हुई और न आश्चर्य।···प्रश्न यह नहीं कि कमीशन में किसी हिन्दू 'लार्ड' या मुसल्मान 'सर' को नियुक्त होना चाहिये। मूलसिद्धान्त कुछ और है। वह है अपने भविष्य

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

का निर्णय करने का अन्तिम अधिकार हमारा ही है। यह हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है।"

एशियाई संघ की समस्या पर डाक्टर साहब का कथन है—"यूरोप और एशिया के झगड़े में एशिया को प्रायः नीचा देखना पड़ा है इस का कारण यही है कि काम के समय सारा यूरोप मिल जाता है और ऐशियाई देशों के पृथक् पृथक् रहने के कारण उन्हें हार खानी पड़ती है।.....संस्कृति की समानता और हितों की समानता के कारण एशियाई राष्ट्रों के संघ की वह योजना सफल होनी चाहिये जो देशबन्धु चित्तरञ्जन दास ने अपनी दूरदृष्टि से प्रस्तुत की थी।"

डाक्टर अन्सारी एक अनुभवी चिकित्सक हैं अतः अपने भाषण में उन का ध्यान जातीय स्वास्थ्य की ओर जाना भी आवश्यक ही था। इस प्रकरण में आपने पर्दा, बाल विवाह आदि कुप्रथाओं का ज़ोरदार शब्दों में विरोध किया है।

पूर्ण स्वतन्त्रता का प्रस्ताव

मद्रास कांग्रेस की कतिपय विशेषताओं में से एक विशेषता यह भी है कि उस ने भारतवर्ष का ध्येय पूर्ण स्वतन्त्रता उद्घोषित कर दिया है। कांग्रेस पिछले पांच वर्षों से जिस प्रस्ताव को लगातार अस्वीकार करती आरही है उसे थोड़े बहुत हेर फेर के साथ मद्रास कांग्रेस ने बहुत बड़े बहुमत से, जिसे लगभग सर्व सम्मति ही कहना चाहिये, स्वीकार कर लिया। यद्यपि कांग्रेस के ध्येय में कोई परिवर्तन नहीं किया गया तथापि यह बात स्पष्ट कर दी गई है कि भारतीय 'स्वराज्य' का अभिप्राय पूर्ण स्वतन्त्रता से ही है। यहां तक कि पं० मालवीय तथा डा० बीसेण्ट जैसे नेताओं ने भी इस प्रस्ताव के पक्ष में ही हाथ उठाया। कांग्रेस में पं० जवाहरलाल नेहरू ने इस प्रस्ताव को उपस्थित किया था। आपने हाल ही में एक घोषणा द्वारा यह स्पष्ट कर दिया है कि पूर्ण स्वतन्त्रता का अभिप्राय साम्राज्य से बाहर स्वराज्य का है, ऐसे स्वराज्य का है जिस में सेनाओं तथा विदेशी नीति पर भी भारत का अपना ही अधिकार होगा। पं० जवाहरलाल नहरू के सुयोग्य पिता पं० मोतीलाल नहरू ने बर्लिन में एक समवाददाता से कहा है कि इस पूर्ण स्वतन्त्रता के प्रस्ताव द्वारा भी कांग्रेस की यह पुरानी घोषणा कि 'यदि सम्भव हो तो साम्राज्य के अन्दर और यदि आवश्यक हो तो साम्राज्य के बाहर' खण्डित नहीं होती। श्रीयुत श्रीनिवास एयंगर ने इस प्रस्ताव का अनुमोदन करते हुए कहा था कि इस के द्वारा कांग्रेस बर्किनहैड की चुनौती का जवाब दे रही है। महात्मा गान्धी इस प्रस्ताव से बेतरह खफ़ा हैं, आप का कथन है कि कांग्रेस का यह कार्य अविचारपूर्ण है, जिस बात को हम कर नहीं सकते उस की घोषणा करना स्वयं अपने को हास्यास्पद बनाना है। परन्तु हमारी सम्मति में महात्मा जी की यह बात युक्तिसंगत नहीं है। कांग्रेस का ध्येय जब तक स्वराज्य प्राप्ति था तब तक भी उस ने स्वराज्य प्राप्त नहीं कर लिया था, अब यदि उसने अपना ध्येय स्पष्ट कर लिया है तो इस में कोई हानि की बात प्रतीत नहीं होती। पिछले वर्ष श्रीयुत जमनादास ने भी विदेश से वापिस आकर इसी बात पर बल दिया था कि इङ्गलैंड के लोग भारतीय समस्याओं में ज़रा भी दिलचस्पी नहीं लेते अतः भारत को अपना ध्येय स्पष्ट शब्दों में साम्राज्य से बाहर स्वराज्य उद्घोषित कर देना चाहिये। हमें इस प्रस्ताव के विरोधियों की एकता के नाम पर की गई अपील भी प्रभावित नहीं करती। कांग्रेस के ध्येय में 'स्वराज्य' जैसा लचकीला—जिसे ज़बरदस्ती लचकीला बना दिया गया है— शब्द रहने मात्र से ही एकता नहीं हो सकती, उस के लिये अन्य बातें अपेक्षित हैं। हमारी सम्मति में कांग्रेस ने पूर्ण स्वतन्त्रता का प्रस्ताव पास कर के बड़ी बुद्धिमता का कार्य किया है।

× × ×

शाही कमीशन के बहिष्कार का प्रस्ताव

जैसी कि आशा की जाती थी, मद्रास कांग्रेस ने साइमन कमीशन के पूर्ण बहिष्कार का प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकार किया है। इस बहिष्कार को सफल बनाने के लिये यह योजना तैयार की गई है कि कमीशन जिस २ स्थान पर जाय वहां पूर्ण हड़ताल करके उसका आतिथ्य किया जाय। केन्द्रीय तथा प्रान्तीय व्यवस्थापिका सभाओं में, जिन की कार्रवाई का निरीक्षण करने के लिए शाही कमीशन फरवरी मास में आरहा है, कांग्रेस के सदस्य उपस्थित ही न हों। कांग्रेस की कार्य समिति को बहिष्कार के सम्पूर्ण उचित साधनों का निर्देश देने का अधिकार दिया गया है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हमारी सम्मति में कमीशन के बहिष्कार सम्बन्धी समस्या पर विचार करते हुए एक बात पर अवश्य ध्यान रखना चाहिये । सौभाग्यवश इस समय देश के सभी राजनीतिक संगठन कमीशन के बहिष्कार के पक्ष में हैं, इसी कारण कांग्रेस को भी बहिष्कार सफल होने की आशा हो गई है । अन्यथा देश की हालत को देख कर कमीशन का सफल बहिष्कार एक असम्भव बात जान पड़ती थी । यदि बर्किनहैड नीतिज्ञों की तरह दो तीन भारतीयों को भी कमीशन में नियुक्त का देता तो सम्भवतः देश के बहुत से राजनीतिक संगठन उसके बहिष्कार की चर्चा न करते । परन्तु कांग्रेस इस कमीशन का जो बहिष्कार करना चाहती है उस का कारण कमीशन में दो एक भारतीयों को नियुक्त न करना नहीं है । यदि सरकारभक्त भारतीयों द्वारा ही इस कमीशन की नियुक्ति की जाती तब भी कांग्रेस इस कमीशन का इसी प्रकार बहिष्कार करती । कांग्रेस का विश्वास है कि भारत के शासन विधान को तैयार करने का अन्तिम अधिकार भारतवर्ष को ही होना चाहिये, इसी अटल और जन्मसिद्ध अधिकार की रक्षा के लिये कांग्रेस कमीशन का बहिष्कार करने जा रही है । इस अवस्था में लार्ड बर्किनहैड की अनीतिमत्ता के कारण ही कांग्रेस को यह सुवर्णीय अवसर प्राप्त हुवा है कि सारा भारत एक स्वर से कमीशन का बहिष्कार करने को तैयार हो गया है । अतः यह आवश्यक है कि इस बहिष्कार को सफल बनाने के लिये कांग्रेस देश के अन्य सब दलों को भी अपने साथ रक्खे । हमें ज्ञात है कि नरम दल तथा इसी प्रकार कुछ अन्य दलों के प्रभावशाली व्यक्ति व्यवस्थापिका सभाओं में अनुपस्थित रहने की नीति का विरोध कर रहे हैं । अतः हमारी सम्मति में अपनी सामर्थ्य का सच्चा ज्ञान रखते हुए कांग्रेस को बहिष्कार की यह योजना तभी निश्चित करनी चाहिये जब कि वह इस के लिये अन्य दलों को भी अपने साथ रख सके, अन्यथा नहीं । इस ज़रा से मत भेद के कारण बहिष्कारवादी नेताओं में दो या तीन विभिन्न दल खड़े हो जाना देश के हित की दृष्टि से अच्छा न होगा । विशेष कर जिन प्रान्तों की व्यवस्थापिका सभाओं में कांग्रेसी सदस्य अल्प संख्या में हैं, वहां उन का अधिवेशनों से बाहर रहना अन्य देश हितकारी दलों के सरकार विरोध में बाधक सिद्ध होगा । हम चाहते हैं कि कांग्रेस अन्य दलों के बहिष्कार वादी नेताओं के साथ मिल कर ही बहिष्कार की योजना तैयार करे ।

हिन्दू-मुसलिम समझौता

पिछले वर्ष आल इण्डिया कांग्रेस कमेटी ने अपने बम्बई तथा कलकत्ता के अधिवेशनों में जिस हिन्दू मुसलिम समझौते को स्वीकार किया था, मद्रास कांग्रेस ने उस में कुछ हेर फेर कर दिया है । यह हेर फेर अच्छा ही हुआ है, जो राष्ट्रवादी नेता उन समझौतों से असन्तुष्ट थे उन में से कतिपय मुख्य २ नेता इस समझौते के पक्ष में हैं । इस समझौते का सार यह है कि भाषा के अनुसार सिन्ध, बृटिश बलोचिस्तान, तामिलनाड़, आन्ध्र तथा केरल-इन प्रान्तों को पृथक् प्रान्त बना दिया जावे; सीमा प्रान्त को सुधार दे दिये जावें; देश की सब व्यवस्थापिका सभाओं में सम्मिलित निर्वाचन प्रारम्भ कर दिया जावे; सब को धार्मिक स्वतन्त्रता हो । बाजे तथा गोबध के सम्बन्ध में निर्णय हुआ है कि मुसलमान हिन्दुओं के भावों की इज्जत करते हुए अपने मुसलमान भाइयों को गोकुशी न करने के लिये समझावें और हिन्दू अपने हिन्दू भाइयों को मस्जिदों के सामने बाजा न बजाने के लिये प्रेरित करें ।' हम समझौते के इन दोनों पहलुओं पर पृथक् २ विचार करेंगे ।

राजनीतिक समझौते में सम्मिलित निर्वाचन का सिद्धान्त स्वीकार कर लिया गया है हमारी सम्मति में भारतवर्ष में निवास करने वाली दोनों जातियों का संघर्ष समाप्त करने के लिये यह बात सब से अधिक आवश्यक है । इस तीव्र वैमस्य के जारी रहते हुए मुसलमान अपने साम्प्रदायिक हित की दृष्टि से इस सम्मिलित निर्वाचन की प्रथा को हानिकर कह सकते हैं । हम यह स्पष्ट शब्दों में स्वीकार करते हैं कि मुसलमानों का सम्मिलित निर्वाचन के सिद्धान्त को स्वीकार कर लेना वस्तुतः उन के लिये प्रशंसास्पद है । इस सम्मिलित निर्वाचन के एवज़ में मुसलमान नेता भारतवर्ष को १५ प्रान्तों में विभक्त कर के उन में से १० प्रान्तों में हिन्दुओं का बहुमत तथा ५ प्रान्तों में अपना बहुमत बना लेना चाहते हैं । इस के लिये भाषा के नाम पर उन्हों ने जो नये प्रान्त बनाने का प्रस्ताव किया है, उस के सम्बन्ध में इतना तो अवश्य कहा जा सकता है कि भाषा के आधार पर सिन्ध को बम्बई से पृथक् कर देना वस्तुतः युक्तियुक्त है ; परन्तु

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

साथ ही हम यह भी कहते हैं कि यदि भारतवर्ष के प्रान्तों का भाषा के आधार पर पुनर्विभाग किया जाय तो इस देश को कम से कम २५ या ३० प्रान्तों में बांट देना पड़ेगा। अतः भाषा की युक्ति को गौण समझते हुए भी हम सम्मिलित निर्वाचन के मूल्यरूप में ही सिन्ध को बम्बई से पृथक् प्रान्त बना देने के पक्ष में हैं। हमें ज्ञात है कि सिन्ध की आबादी बङ्गाल के मैमनसिंह ज़िले से भी कम है, उस की वार्षिक आय भी बहुत कम है, वृटिश बलोचिस्तान की आबादी तो बम्बई, कलकत्ता जुदा रहे, मद्रास और हैदराबाद (दक्खन) से भी कम है। यह होते हुए भी हमारी सम्मति में सिन्ध का क्षेत्रफल और प्राकृतिक दशाएं इस योग्य हैं कि वहां जन और धन दोनों की पर्याप्त वृद्धि हो सके, अतः सम्मिलित निर्वाचन को मुख्य उपयोगिता मान कर युक्ति की दृष्टि से भी सिन्ध को इसी समय बम्बई से पृथक् करना अनुचित प्रतीत नहीं होता। सभ्यता, समीपता, समान इतिहास, रीतिरिवाज या भाषा किसी भी दृष्टि से सिन्ध को बम्बई के साथ जोड़ देना युक्तियुक्त नहीं है। साथ ही हमें यह भी विश्वास है कि सिन्ध में मुस्लिम बहुमत हो जाने पर भी वहां के हिन्दुओं को कोई विशेष हानि न होगी क्योंकि सम्मिलित निर्वाचन द्वारा ये प्रतिस्पर्धा और वैमनस्य के भाव स्वयं ही कम हो जाँयगे।

समझौते का दूसरा पहलू बाजे और गाय कुशी से सम्बन्ध रखता है। इस प्रश्न पर विचार करते हुए हमें यह बात कदापि न भूलनी चाहिये कि आखिरकार यह है एक समझौता ही। समझौते में पूरी विजय किसी एक पक्ष की नहीं होती, दोनों पक्षों को कुछ प्राप्त होता है और दोनों को कुछ त्याग करना होता है दूसरी ओर यह बात भी स्पष्ट है कि गोहत्या और बाजे के प्रश्न को एक सी महत्ता देना अनुचित है। परन्तु गो-हत्या की समस्या को बहुत अधिक महत्वपूर्ण और आवश्यक मानते हुए भी इस बात से इन्कार तो नहीं किया जा सकता कि चाहे ठीक हो या अशुद्ध, बाजे का प्रश्न भी एक समस्या है। अतः यदि समझौते के रूप में हिन्दू नेताओं के समझाने से हिन्दू मस्जिदों के सामने बाजा बजाना छोड़ दें और उस के प्रतिफल में मुसलमानों के समझाने से मुसलमान गोहत्या सर्वथा छोड़ दें तो यह समझौता हिन्दुओं के लिए बहुत मंहगा नहीं है। इस दृष्टि से हम इस मद्रास के समझौते को कलकत्ता के समझौते से अधिक श्रेष्ठ समझते हैं।

इस प्रकार इस हिन्दू मुस्लिम समझौते की युक्ति युक्तता स्वीकार कर के भी हमारा यह कहना है कि इस धार्मिक समझौते का व्यवहारिक प्रभाव देश पर सम्भवतः शून्य के बराबर ही पड़ेगा। जो हिन्दू नेता अब हिन्दुओं को मस्जिदों के सन्मुख बाजा न बजाने के लिए कहेंगे और जो मुसलमान नेता मुसल्मानों को गोकुशी सर्वथा बन्द कर देने के लिए कहेंगे, उन में से अधिकांश पहले भी अपने सहधर्मियों को यही सलाह देते रहे हैं, परन्तु उस का कुछ असर नहीं हुआ। वास्तविक प्रश्न दोनों जातियों की मनोवृत्ति में परिवर्तन लाने का है; यह गोकुशी और बाजे का प्रश्न तो उसी कुत्सित मनोवृत्ति का बाह्य रूप मात्र ही है। यदि मनोवृत्ति में परिवर्तन न लाया गया तो ये दो प्रश्न मिट कर कोई और नये दो प्रश्न खड़े हो जायंगे। फिर इस समझौते के धार्मिक भाग में हमें कोई ऐसी क्रियात्मक बात भी दिखाई नहीं देती, जिस का देश की वर्तमान अवस्था पर गहरा प्रभाव पड़े।

× × ×

अन्य प्रस्ताव

मद्रास कांग्रेस में उपर्युक्त तीनों मुख्य प्रस्तावों के अतिरिक्त अन्य भी बहुत से प्रस्ताव पास हुए। इन में से भारत का शासन विधान बनाने का प्रस्ताव, कांग्रेस का साम्राज्य विरोधी संघ से सम्बन्ध स्थापित करने का निर्णय, चीन से सहानुभूति तथा काकोरी के अभियुक्तों से समवेदना के प्रस्ताव विशेष महत्व पूर्ण थे। सब से पूर्व स्वनामधन्य बंग केसरी देशबन्धु चित्तरञ्जन ने बङ्गाल की प्रान्तीय राजनीतिक कान्फ्रेन्स में स्वर्गीय गोपीनाथ सहा के देश भक्ति तथा आत्माभिमान के भावों की प्रशंसा का प्रस्ताव स्वीकार करवाया था। तब इस सम्बन्ध में बड़ी चर्चा हुई थी। इस वर्ष मद्रास कांग्रेस ने भी काकोरी के चारों फांसी पाये हुए अभियुक्तों से सहानुभूति प्रगट कर के उन के भावों की प्रशंसा की है। सचमुच वे चारों आत्म हुत वीर धन्य हैं, उन्होंने देश के नाम पर हंसते हंसते मृत्यु का आलिङ्गन किया। उनका मार्ग कितना ही हेय

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

और आलोच्य क्यों न हो परन्तु उनके देश भक्ति के भावों की प्रशंसा किये बिना नहीं रहा जा सकता।

× × ×

लिबरल फिडरेशन का बम्बई अधिवेशन

मद्रास कांग्रेस की स्वागत समिति के निमन्त्रण को अस्वीकार कर के नरम दल ने अपना वार्षिक अधिवेशन बम्बई में किया। अधिवेशन अच्छी सफलता से हुवा। सभापति सर तेज बहादुर सप्रू का भाषण बहुत योग्यतापूर्ण था। आपने अपने भाषण के अधिक भाग में साइमन कमीशन की तीव्र आलोचना की। कमीशन के पक्ष में दी जाने वाली दलीलों तथा बर्किन हैड के भाषण का आपने मुहतोड़ जवाब दिया। लिबरल फिडरेशन ने भी कमीशन के पूर्ण बहिष्कार का प्रस्ताव सर्व सम्मति से स्वीकार किया है, इस बहिष्कार को सफल बनाने के लिये कुछ व्यक्तियों की एक समिति बना दी गई है। जो आवश्यकतानुसार असहयोग को छोड़ कर अन्य सब वैध उपायों को अमल में लाकर बहिष्कार की सफलता के लिये यत्न करेगी।

× × ×

मुस्लिम लीग का कलकत्ता अधिवेशन

प्रत्येक देशभक्त के लिये यह एक बड़े सन्तोष का विषय है कि मुसल्मानों के अधिकांश नेता साइमन कमीशन के बहिष्कार के पक्ष में है। हाल ही में कलकत्ता नगर में मुस्लिम लीग का जो शानदार अधिवेशन हुवा है उस में बहुत बड़े बहुमत से आगामी शाही कमीशन का मुसलमानों की ओर से भी बहिष्कार करने का प्रस्ताव स्वीकृत हुआ है। लीग के इस अधिवेशन के सभापति का आसन श्रीयुत मुहम्मद याकूब ने ग्रहण किया था। पहले मीयां शफी को इस पद के लिये निर्वाचित किया गया था परन्तु वह लाहौर में ही अपनी ढाई चावल की खिचड़ी पकाते रहे अतः लीग के अधिवेशन से दो दिन पूर्व ही नवीन सभापति का निर्वाचन करना पड़ा। इस समस्या के कारण यद्यपि बड़ी कठिनाई उपस्थित होगई थी, यहां तक कि बहुत से मुसल्मान नेता लीग का अधिवेशन स्थागित कर देने का प्रयत्न करने लगे थे, तथापि मि० जिन्हा के प्रयत्न से यह अधिवेशन आशातीत सफलता के साथ समाप्त होगया। लीग ने कमीशन के बहिष्कार के सम्बन्ध में जो प्रस्ताव पास किया है, उसके संबन्ध में लीग के उत्साही कार्यकर्ताओं को साधुवाद देने के अतिरिक्त हमें कोई वक्तव्य नहीं है। परन्तु मुसलिम-हिन्दू समझौते के रूप में लीग ने जो प्रस्ताव स्वीकार किया है उस पर हमें तीव्र विप्रतिपत्ति है। प्रस्ताव का अभिप्राय यह है कि जब सिन्ध और बालूचिस्तान को पृथक् प्रान्त बना दिया जाय, सीमा प्रान्त को सुधार देदिये जांय और मुसल्मानों को केन्द्रीय व्यवस्थापिका सभाओं (Central Bodies) में कम से कम एक तिहाई स्थान दे दिये जांय तब मुसल्मान सम्मिलित निर्वाचन के सिद्धान्त को स्वीकार करने को तैयार हैं।' इस प्रस्ताव को लाहौर के श्रीयुत् बरकत अली ने प्रस्तुत किया था, आपने कहा कि जब तक उपर्युक्त शर्तें स्वीकार नहीं कर ली जातीं तब तक हम सम्मिलित निर्वाचन शुरू करने के पक्ष में नहीं हैं। हमारी सम्मति में लीग का यह प्रस्ताव युक्ति-युक्त नहीं है। मुसल्मानों को चाहिये था कि वे सम्मिलित निर्वाचन के सिद्धान्त को देश के लिये हितकर समझ कर उसे इसी दृष्टि से स्वीकार कर लेते। यदि सम्मिलित निर्वाचन को वह एक ऐसी चीज़ समझते हैं जिस के प्रतिफल में उन्हें कुछ अन्य विशेषाधिकार प्राप्त होने चाहिये तो वे उन की मांग भी शौक से करें। परन्तु यह करते हुए वे यह न भूल जांय कि आखिर कार उन की वे मांगें पूरा करने का अन्तिम अधिकार इस समय तक अंग्रेज़ सरकार के हाथ में ही है। अभी तक वे हिन्दुओं से अधिक से अधिक इतनी आशा ही कर सकते हैं कि हिन्दू लोग उन की इन मांगों में सहयोग दें अर्थात् हिन्दू भी इस बात को स्वीकार कर लें कि सिन्ध को जुदा प्रान्त बना दिया जाय, आदि। हिन्दुओं ने ऐसा किया भी है। इसी प्रकार मुसलमानों को चाहिए कि वे सम्मिलित निर्वाचन के पक्ष में पूरी सामर्थ्य से कांग्रेस का साथ दें। देश के सब दल मिल कर जो 'स्वराज्य विधान' तैयार करें उस में भी ये दोनों बातें स्वीकार कर ली जांय। ध्यान रखना चाहिये कि इन सब मांगों की पूर्त्ति अभी तक बृटेन की न्याय बुद्धि अथवा हमारी सम्मिलित शक्ति पर ही आश्रित है। अतः हिन्दुओं से समझौता करते हुए एक ऐसी शर्त रख लेना जिस का पूरा करना हिन्दुओं के हाथ में नहीं, कदापि युक्ति युक्त नहीं है। क्या हम मुसल्मान नेताओं से यह आशा करें कि वे इस संकट के समय अपनी भारत भक्ति का परिचय देंगे।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

एक और बात । मुसल्मानों के लोक प्रिय नेता सर आगाखान ने हाल ही में एक लम्बी विज्ञप्ति प्रकाशित की है, जिस में उन्होंने लिखा है कि वे प्रारम्भ ही से मुसल्मानों के जुदा संगठन करने के विरुद्ध थे; उन की सम्मति में मुसलमान यदि कांग्रेस के साथ रहते तो यही उनके तथा देश के हित की दृष्टि से अधिक अच्छा था। परन्तु दुर्भाग्य वश उस समय यह बात नहीं हो सकी, मुसल्मानों ने मुस्लिम लीग के रूप में अपना पृथक् संगठन बना लिया। सर आगाखान की सम्मति में अब मुसलमानों को अपना एक प्रामाणिक और प्रबल संगठन बना लेना चाहिये जो कि सदा विश्वास के साथ मुसल्मानों के प्रतिनिधि होने का दावा कर सके।' हमारी सम्मति में मुसलमानों को चाहिए कि वे अब अपना पृथक् राजनीतिक संगठन छोड़ कर कांग्रेस में ही सम्मिलित हो जाँय। पिछले ४२ वर्षों के अनुभव से यह भली प्रकार स्पष्ट हो गया है कि कांग्रेस मुसल्मानों के हितों का पूरा ख्याल रखती है। मुसलमानों का अपना पृथक् राजनीतिक सङ्गठन होते हुए भी वह बहुत बार मुसलमान सज्जनों का अपना प्रधान निर्वाचिन करती रही है। यदि हिन्दू मुसल्मान समान रूप से कांग्रेस को अपनी प्रतिनिधि संस्था स्वीकार कर लें तो बरसों की मंज़िल कुछ महीनों में ही तय हो सकती है।

× × ×

लाहौर आर्यसमाज का अर्धशताब्दी महोत्सव

सन १९२७ के अन्तिम सप्ताह में लाहौर आर्यसमाज का अर्धशताब्दी महोत्सव बड़े समारोह और उत्साह से मनाया गया। सन् १८७७ के एप्रिल मास में ऋषि दयानन्द ने स्वयं अपने करकमलों से इस पञ्जाब के केन्द्रीय आर्य समाज की स्थापना की थी। आज ५० बरस बाद हम देख रहे कि आर्यसमाज की शक्ति बहुत अधिक बढ़ चुकी है। आज यह विश्वास के साथ कहा जा सकता है कि पञ्जाब की राजधानी लाहौर में आर्यसमाज ही सब से अधिक शक्तिशाली, सुसंगठित और ज़िन्दा संस्था है। केवल लाहौर ही नहीं, सारे उत्तरीय भारत के लिये यही बात सत्य सिद्ध होती है। इस में संदेह नहीं कि आजकल आर्यसमाज पर आपत्ति के बादल मंडरा रहे हैं। कुछ ही मास पूर्व लाहौर के कुछ बिगड़े-दिल मुसलमान आर्यसमाज के विरोध में भयंकर तौर से प्रचार करते रहे; यह विरोध केवल बातों तक ही सीमित नहीं रहा, लाहौर के कतिपय आर्यपुरुषों का खून कर दिया गया, आर्यसमाज के एक सन्त प्रचारक पर छुरे से वार किया गया। यह सब होते हुए भी आर्य समाज अनुत्साहित और भयभीत नहीं हुआ। लाहौर की पिछली अर्धशताब्दी इस बात का एक प्रबल प्रमाण है। पिछले वर्ष मार्च मास में ५० हज़ार की संख्या में आर्यों का भागीरथी के तट पर 'श्रद्धानन्दतीर्थ' की रजत जयन्ती पर उपस्थित होना, उस के बाद नवम्बर मास के प्रारम्भ में दिल्ली नगर में अपनी समस्याओं का हल करने के लिये समाज के सम्पूर्ण अग्रिणी पुरुषों का एकत्र होना और उस के डेढ़ मास बाद ही लाहौर में इतने अदम्य उत्साह से स्थानीय आर्यसमाज की अर्धशताब्दी मनाना आर्यों की अतुल कार्यशक्ति और उत्साह को सूचित करता है।

× × ×

मीयां शफ़ी और इकबाल

मीयां मुहम्मद शफ़ी ने लाहौर में डेढ़ दो सौ मनुष्यों की उपस्थिति में विश्वामित्र की नयी सृष्टि की तरह एक नई मुस्लिमलीग की सृष्टि कर डाली! इस मुस्लिम लीग का वृत्तान्त बहुत ही मनोरञ्जक है। इस लीग का हाल पढ़ते जाइये,— आप की सारी उदासी झड़ जायगी। इस ढाई चावल की खिचड़ी का गान बहुत ही दिलचस्प है। हमें विश्वास है कि इस "लीग" (?) की कार्रवाई को थोड़ा बहुत हेर फेर कर के लिखने से एक बहुत बढ़िया प्रहसन की रचना की जा सकती है। कमीशन के स्वागत के प्रस्ताव पर सम्मति लेने से पूर्व सभापति महोदय ने प्रस्तावक से भी अधिक लम्बा भाषण दिया, इस पर उन्हें जब कहा गया कि सभापति का यह कार्य प्रथा के विरुद्ध है, तब आप तमक कर बोले—"मैं हाउस औफ कामन्स का सभापति थोड़े ही हूं, जो सिर्फ समय समाप्त होने पर घंटी बजाता रहूं। मुझे तो सारी जाति का राहनुमा बनना है!" क्या खूब! इस ढाई चावल की खिचड़ी का एक एक गान इसी ढंग से मज़ेदार है।

इकबाल के लिये हम क्या कहें। हमें याद है, एक दिन पञ्जाबी होने के नाते से हमें इकबाल पर नाज़ था। कितनी ही बार मस्त होकर हमने भी इकबाल का यह गीत गुनगुनाया है- 'हिन्दी हैं, हम वतन हैं, हिन्दोसतां हमारा!" परन्तु जजी की उमेदवारी ने इकबाल की काया ही पलट डाली। जजी की उमेदवारी भी कितना भयङ्कर विष है। इसी विष ने रङ्गीला रसूल का तूफान खड़ा करवाया, और इसी ने मुस्लिम

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

लीग की अलहदी आवृत्ति करवाई। इकबाल साहब साइमन कमीशन पर बोलते हुए भी नया मुसल्मान जज नियुक्त करने की बात कहने से बाज़ न आसके। यह खफ़ा ही ऐसा है। हे ईश्वर, तेरे जिस नरक की आग का भयङ्कर वर्णन हम यहां सुना करते हैं क्या उस की लपटें इस जजी की ख्वाहिश रूपी आग से भी अधिक तेज़ हैं।

यह सन्तोष का विषय है कि अखिल भारतीय मुस्लिम लीग ने लाचार होकर गल गये अंग की तरह से इस 'शफ़ी एण्ड कम्पनी' को अपने से जुदा कर दिया है। उस के स्थान पर पञ्जाब में नई मुस्लिम लीग की रचना कर दी गई है।

× × ×

प्रो० इन्द्र और पं० सत्यकाम को सज़ा

दिल्ली के ज़िला जज ने अर्जुन के सम्पादक तथा प्रकाशक प्रो० इन्द्र विद्यावाचस्पति और पं० सत्यकाम विद्यालङ्कार को जुर्माना प्रदान न करने पर क्रमशः पांच और ढाई वर्ष की कड़ी सज़ा दी है। अभियोग अभी चल रहा है अतः इस मामले के सम्बन्ध में कुछ आलोचना करना उचित नहीं, तथापि यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि १५३ अ धारा के नीचे इतनी भयङ्कर सज़ा देना एक अश्रुतपूर्व घटना है। क्या प्रो० इन्द्र और पं० सत्यकाम सचमुच ऐसे ही भयङ्कर व्यक्ति हैं। हमारे पाठक दिल्ली के राष्ट्रीय पत्र 'दैनिक अर्जुन' से भली प्रकार परिचित होंगे। 'अर्जुन' सच्चे अर्थों में हिन्दू मुस्लिम मेल का का कट्टर हिमायती है। प्रो० इन्द्र और पं० सत्यकाम से हमारा घनिष्ट परिचय है। हमें भली प्रकार ज्ञात है कि दोनों महानुभाव खरे सोने की तरह उज्वल चरित्र के हैं, उन के हृदय में देश भक्ति की ज्वाला हर समय धधकती रहती है। ऐसे सज्जनों पर जातिगत वैमस्य फैलाने का अपराध लगाना ही हास्यास्पद है। प्रो० इन्द्र और पं० सत्यकाम की नसों में आर्यसमाज के वन्दनीय नेता, अमर शहीद, कर्मयोगी श्रद्धानन्द का खून बह रहा है, अतः हमें पूर्ण विश्वास है कि दोनों वीर इस विपत्ति को बड़े धैर्य से सहेंगे।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सचित्र

सुचारु सूची शिल्प पत्रावली

सलाई और क्रोशिये की दस्तकारी सिखलाने की सस्ती और अनूठी विधि

इस प्रकार के पत्र इंग्लैण्ड अमरीका इत्यादि देशो में तो बहुत दिनों से निकलते हैं। परन्तु भारत में हिन्दी भाषा द्वारा प्रत्येक वस्तु के लिये अलग अलग कार्ड की रीति से इस कार्य को सिखलाने का यह पहला ही प्रयत्न है जो कार्य पसन्द हो उसी के अनुकूल दो तीन आने खर्च कर कार्ड खरीद लो और घर बैठे बिना किसी की खुशामद के बनालो अब तक निम्न लिखित कार्ड (१४×७) प्रकाशित हो चुके हैं:—

पत्र नं०	मूल्य	पत्र नं०	मूल्य
१—दीर्घ सूची प्रारम्भिक प्रयोग ११ चित्र	)	५—पुरुषों का लम्बा मौज़ा [सचित्र]	=)
२—बड़ी सादी बनियान [सचित्र]	=)॥	६—पुरुषों का सरल दस्ताना [सचित्र]	=)॥
३—पुरुषों का कुर्ता [सचित्र]	=)॥	७—स्त्रियों का फूलदार कालर [सचित्र]	≡)
४—बालिका की ऊनी जर्ज़ी [दुरंगा]	≡)	पुरुषों का नुन्दकीदार मौज़ा [सचि]	=॥)

८ कार्डों का पूरा सैट मूल्य १।=)॥ के स्थान में केवल १) रुपया

कुछ सम्मतियाँ—

सरस्वती इलाहाबाद— यह पत्रावली नारी मात्र के लिये बड़ी उपयोगी है। छपाई सुन्दर, भाषा सरल और मूल्य बहुत ही कम।

प्रताप लाहौर—कन्या पाठशालाओं और स्कूल की लड़कियों केलिये बड़े काम की चीज़ है

गृहलक्ष्मी प्रयाग—हम इन कार्डों का हृदय से प्रचार चाहते हैं।

महारथी देहली—यह कार्ड सस्ते होने के कारण कन्याओं के लिये बड़े उपयोगी हैं।

मैनेजर "ज्योति"

कोठी नम्बर २१, २२ राजपुर रोड देहरादून।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अपने बच्चे को फुटबॉल खिलाओ

तुम्हारा बच्चा बहुत मोटा ताज़ा और खुश मिज़ाज़ होगा यदि तुम हम से उस के लिए फुटबॉल खरीदोगे !

खेल के सब तरह के सामान का स्टाक हमारे यहां है । जल्द आर्डर भेजिये ।

बी० डी० गुप्ता एण्ड को०

पंच कुई रोड, दिल्ली ।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

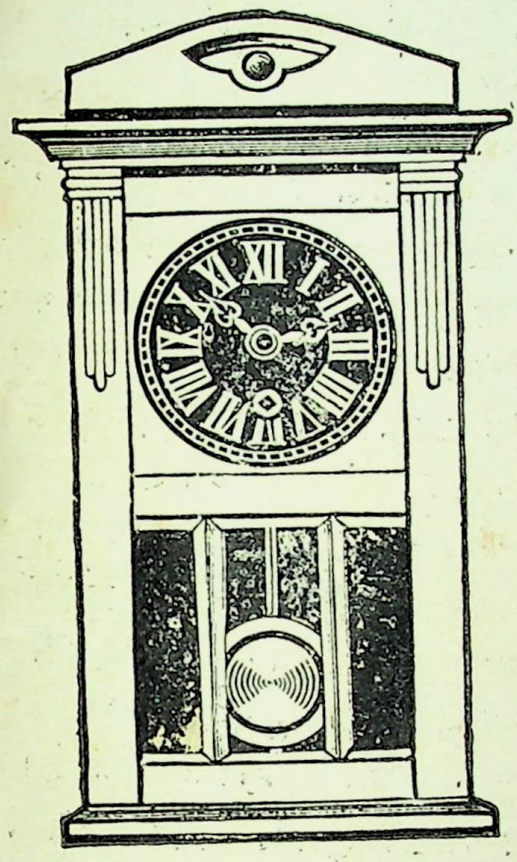

PRICE RS. 3.

Our ... The Best New The Cheapest Model ... and the Clock ... most economical wall Clock gives correct ime and guaranteed for three tyears. Try once and convinc yourself.

P riceRs. 3.

V. S. WATCH Co.,
P. B. 105, MADRAS.

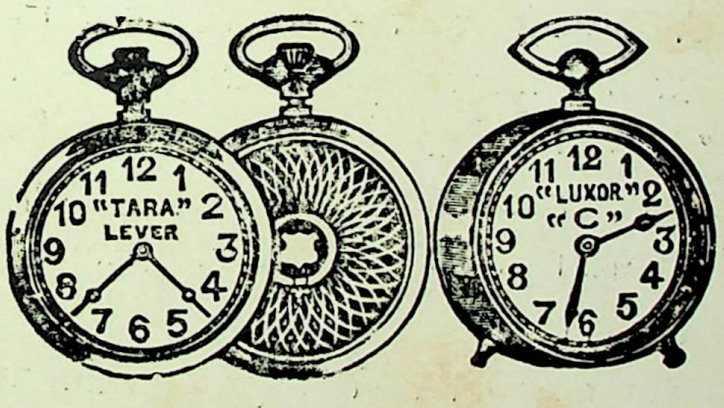

मुफ्त ! मुफ्त !!

सी. रजिस्टर्ड टाइमपीस

हर किसी को मुफ्त

हमारी "तारा, लिव्हर १८ करेट रोल्ड गोल्ड पाकेट वाच" जिसके पीछे उत्तम नक्काशी की गयी है, गारण्टी ५ वर्ष, मूल्य ५) रु०, मंगाने वाले को ऊपर की टाइम्पीस मुफ्त दी जायगी।

पताः— केप्टेन वाच कम्पनी, पोस्ट बाक्स २६५ मद्रास।

Captain Watch Co. P. B, 265. Madras.

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कला कौमुदी

लेखिका श्रीमती ओ३म्वती देवी

चित्र कला कौशल सम्बन्धी अनुपम पुस्तक-इस के द्वारा लेखिका ने क्रोशिये के कार्य को बड़ा ही सरल बना दिया है। बिना किसी प्रकार के पहिले ज्ञान के कन्यायें और स्त्रियें केवल इस की ही सहायता से अनेक प्रकार की बिनावट लेसें, फ़ीते, कपड़े इत्यादि बनाना सहज में ही सीख सकी हैं। पुस्तक में इतना विषय है कि किंचित इससे कई गुना दाम की पुस्तकों में भी न होगा। प्रत्येक वस्तु तथा बिनावट का बनाना चित्र देकर बड़ी सरल रीति से सिखाया गया है। देखिये समाचार पत्र इस के विषय में क्या कहते हैं।

"ट्रिब्यून" (अंग्रेज़ी का प्रसिद्ध दैनिक) लाहौर—स्त्रियों के लिये उपयोगी पुस्तक है। अनेक चित्रों द्वारा वस्तु बनाने की विधि बड़ी सरलता से समझाई गई है। सुन्दर नमूनों की लेसें, टेबल क्लाथ, बच्चों के सुन्दर कपड़े और अन्य कई वस्तुओं का बनाना बड़ी सुन्दर रीति से बतलाया गया है। पुस्तक की उपयोगिता के विचार से मूल्य बहुत कम है।

"मतवाला" (कलकत्ता)-यह पुस्तक हमारी बहिनों के बड़े समझ की है। छपाई बहुत अच्छी, कागज़ बहुत अच्छा मोटा चिकना आर्ट। सुचारु शिल्प पत्रावली कार्ड गृहस्थियों के बड़े काम की चीज़ है।

"कर्मवीर" (खांडवा)— ·····पुस्तक में सादे फन्दे से लगाकर तरह तरह की वस्तुओं के बनाने की विधि बड़ी सरलता से समझाई गई है जिसे पढ़कर साधारण पढ़ी लिखी स्त्री भी इस कार्य को सीख सकती है। इस का मूल्य लागत को देखते कम है।

"माधुरी" (लखनऊ)-ऐसी पुस्तकों की हिन्दी साहित्य के लिये बड़ी आवश्यकता है। आशा है इस पुस्तक का अच्छा प्रचार होगा जिस से इस प्रकार की और पुस्तकें भी प्रकाशित की जा सकें। लेखिका और प्रकाशिका दोनों को बधाई।

शीघ्र आर्डर भेजिये मूल्य १॥)

कला कौमुदी तथा शिल्प पत्रावली का पूरा सैट लेने पर २॥=)॥ के स्थान में केवल २।) में दिया जायगा।

कन्या पाठशालाओं और पुस्तक विक्रेताओं को विशेष रियायत।

मैनेजर ज्योति—

कन्या गुरुकुल

राजपुरा रोड कोठी नं० २१-२२ देहरादून

चौधरी दुर्गासहाय प्रिन्टर, पब्लिशर के लिये गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में मुद्रित।

CC-0. Gurukul Kangri Uniersity Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

Regd. NO. A. 1711

वर्ष ८, खंड ८] जनवरी, फरवरी १९२८ [संख्या ९, १०

वार्षिक मूल्य ४।)
प्रति संख्या ॥)

सम्पादिका—
विद्यावती सेठ बी. ए.

स्त्रियों और विद्यार्थियों से ४)
विदेश का मूल्य ६)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विषय सूची।

विषय	पृष्ठ से
१. ज्योति 'कविता' (रमाशंकर मिश्र)	३५७
२. भारतीय आनुश्रुतिक तिथियां— (श्रीआचार्य रामदेव जी)	३५८
३. स्वास्थ्य और उसके चिन्ह— (श्री डाक्टर राधाकृष्ण जी)	३६३
४. वृक्ष का आत्मा (श्री पं० चमूपति जी)	३७४
५. फ्रांस की राज्य क्रान्ति के कारण— (श्री ब्र० सर्वमित्र जी)	३८७
६. अब्दुल रसीद की डायरी के कुछ पृष्ठ— (श्री पं० वागीश्वर जी)	३९३
७. मेरा मिसहनकैरी के साथ संभाषण, गतांक से आगे— (अंजनादेवी आर्यवैदिक धर्मविशारदा)	३९९
८. सच्चा अछूतोद्धार (श्री बुद्धिसागर वर्मा)	४०३
९. सुक्तिमाला (श्री बुद्धिशागर वर्मा)	४०६
१०. विद्याओं का भण्डार वेद— (श्री पं० प्रियव्रत जी)	४०७
११. कुसुमोद्यान	४१३
१२. विचार–प्रवाह	४२१

ज्योति सम्बन्धि पत्रव्यवहार—

आचार्य्या कन्या गुरुकुल

कोठी नं० २१, राजपुर रोड़

(देहरादून)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वर्ष ८ } पौष, माघ सं० १९८४ * जनवरी फ़र्वरी, सन् १९२८ { संख्या ९,१०

ज्योति

(रचयिता—रमाशंकर मिश्र)

जाह्नवी का प्रिय पावन अंक,
सुखप्रद शीतल मलय समीर।
मरुस्थल हो अथवा सन्तप्त,
ज्वलित ज्वाला से प्राण अधीर॥ १॥

कोकिला कूजित कुञ्ज अनेक,
सुमन संवृत कमनीय वसन्त।
ग्रीष्म की अथवा हो दावाग्नि,
हिंस पशु युक्त अरण्य अनन्त॥ २॥

खचित मणियों से सुन्दर धाम,
जटित रत्नों से मुक्तामाल।
तपस्या में अथवा संलग्न,
दिगम्बर वेष भस्मयुत भाल॥ ३॥

प्रेम-तृष्णा में हो उन्मत्त,
प्रेम-प्रतिमा में हो तल्लीन।
त्याग तृष्णा अथवा एकान्त,
पड़ा हो सरिता तट स्वाधीन॥ ४॥

भुवन-व्यापक विस्तृत साम्राज्य,
हितैषी गाते हों यश गीत।
विपिन में अथवा मरणासन्न,
पास हो कहीं न अपना मीत॥ ५॥

स्वजन में अथवा निर्जन वास,
चन्दनार्चित काया या कीच।
बाल्य जीवन अथवा कृष गात,
अमरता, अमृत या विष, मीच॥ ६॥

कहीं भी, किसी दशा में देवि!
उच्च हूँ अथवा हूँ अति नीच।
दिव्य-द्युति-दामिनि सी तव ज्योति,
दिखाई दे मम मानस बीच॥ ७॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

भारतीय आनुश्रुतिक तिथियां

[ले० श्री आचार्य रामदेव जी]

भारतवर्ष के प्राचीन साहित्य में मुख्यतया निम्नलिखित १० सम्वत् प्राप्त होते हैं। ईसवी काल के अनुसार इन के प्रारम्भ का समय भी हम साथ ही उद्धृत करते हैं—

१. सृष्ट्याब्द	१९५५८८३१०१ ई० पू०
२. चतुर्युग सम्वत्	३८९११०२ ई० पू०
३. कलियुग सम्वत्	३१०२ ई० पू०
४. लौकिकाब्द	३०७८ ई० पू०
५. युधिष्ठिराब्द	३१३९ ई० पू०
६. शककाल	५५० ई० पू०
७. श्री हर्ष काल	४५७ ई० पू०
८. विक्रम सम्वत्	५७ ई० पू०
९. शालिवाहनाब्द	७८ ई० पू०
१०. कोल्लम सम्वत्	८२५ ई० पू०

इन सम्पूर्ण सम्वतों का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है—

१. सृष्ट्याब्द—वर्तमान सृष्टि का प्रारम्भ १९५५८८३१०१ वर्ष ईसवी पूर्व हुआ है। हिन्दू संस्कारों में काल गणना करते हुए यही सम्वत् कार्य में लाया जाता है।

२. चतुर्युग सम्वत्—भारतीय साहित्य के अनुसार काल को चार युगों में बांट रखा है। ये चारों युग कृत, त्रेता, द्वापर और कलि हैं। इन का काल १२००० ब्राह्मवर्ष, अर्थात् ४३२०००० वर्ष है। इन में से कृतयुग १७२८००० वर्ष, त्रेता १२९६००० वर्ष, द्वापर ८६४००० वर्ष तथा कलियुग ४३२००० वर्षों का है। सन् १९२७ तक इस के ५०२८ वर्ष बीत चुके हैं; इस प्रकार इस सम्वत् का काल ३८९११०२ ई० पू० हुआ।

३. कलियुग सम्वत्—कलियुग की सम्पूर्ण अवधि ४३२००० वर्ष है। यह ३१०२ ई० पू० में प्रारम्भ हुआ। दक्षिणी ज्योतिषियों के अनुसार इस का प्रारम्भ चान्द्र वर्ष की चैत्र प्रतिपदा को होता है, परन्तु इस के काल के सम्बन्ध में सभी ज्योतिषी एकमत हैं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

इन तीनों सम्वतों का हिसाब ब्राह्म वर्षों में मिलता है। मनुस्मृति तथा शान्ति पर्व के अनुसार एक ब्राह्म वर्ष ३६० साधारण वर्षों का होता है। मनुस्मृति में तथा महाभारत शान्ति पर्व में काल का विभाग तथा चारों युगों की अवधि आदि के सम्बन्ध में पूरा वर्णन प्राप्त होता है।[1]

---

१. निमेषा दश चाष्टौ च काष्ठा त्रिंशत्तु ताः कलाः।
त्रंशत काला मुहूर्तः स्यात् अहोरात्रं तु तावतः ॥६४॥
अहोरात्रे विभजते सूर्यो मानुष दैविके।
रात्रिः स्वप्नाय भूतानां, चेष्टायै कर्मणा महः ॥६५॥
पित्र्ये रात्र्यहनी मासः प्रविभागस्तु पक्षयोः।
कर्म चेष्टा स्वहः कृष्णः शुक्लः स्वप्नाय शर्वरी ॥६६॥
दैवे रात्र्यहनी वर्षं प्रविभागस्तयो पुनः।
अहस्तत्रोद गमनं रात्रिः स्याद्दक्षिणायनम् ॥ ६७ ॥
ब्राह्मस्य तु क्षपाहस्य यत्प्रमाणं समासतः।
एकैकशो युगानान्तु क्रमशस्तन्निबोधत् ॥ ६८ ॥
चत्वार्याहुः सहस्राणि वर्षाणान्तु कृतं युगम्।
तस्य तावच्छती संख्या संध्यांशश्च तथाविधः ॥६९॥
इतरेषु ससन्ध्येषु ससन्ध्यांशेषु च त्रिषु।
एकापादेन वर्तन्ते सहस्राणि शतानि च ॥ ७० ॥
यदेतत् परिसंख्यातमादावेव चतुर्युगम्।
एतद् द्वादश साहस्रं देवानां युगमुच्यते ॥ ७१ ॥
दैविकानां युगानान्तु सहस्रं परिसंख्यया।
ब्राह्म मेक महर्ज्ञेयं तावती रात्रिरेव च ॥ ७२ ॥
तद्वै युग सहस्रान्तं ब्राह्मं पुण्य महर्विदुः।
रात्रिं च तावतीमेव ते ऽहोरात्र विदो जनाः॥ ७३ ॥
(मनुस्मृति अध्याय १)

इसी प्रकार महाभारत शान्ति पर्व में—

काष्ठा निमेषा दश पञ्चचैव त्रिंशत्तु काष्ठा गणयेत् कलां ताम्
त्रिंशत्कलाश्चापि भवेन्मुहूर्तो भागः कलाया दशमश्च स्यात्यः ॥ २ ॥
त्रिंशन्मुहूर्तं तु भवेदहश्च रात्रिश्चसंख्या मुनिभिः प्रणीता।
मा सः स्मृतो रात्र्यहनी च त्रिंशत्-सम्वत्सरो द्वादशमास उक्तः ॥ १३ ॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

४. लौकिकाब्द— इस का दूसरा नाम सप्तर्षि-काल भी है। इस का प्रारम्भ कलियुग के २४वें वर्ष से हुआ है। यह मुख्यतया काश्मीर में प्रचलित रहा है। कल्हण ने अपनी राजतरंगिणी में इस सम्वत् का ही व्यवहार किया है। कुछ लोगों का मत है कि इस सम्वत् का प्रारम्भ २६ कलि सम्वत में हुआ।

५. युधिष्ठिराब्द— यह कलियुग के प्रारम्भ से ३७ वर्ष पूर्व शुरु हुआ। महाभारत के महायुद्ध की समाप्ति के अनन्तर सम्राट् युधिष्ठिर जब राज-सिंहासन पर आरूढ़ हुआ, तभी से इस सम्वत का प्रारम्भ होता है। ईसवी सन् से ३१३६ वर्ष पूर्व महाराज युधिष्ठिर सिंहासनारूढ़ हुए। जैन तथा बौद्ध लोग इस सम्वत का प्रारम्भ कलियुग के ४६८वें वर्ष, अर्थात् २६३४ ई० पू० में मानते हैं।

६. शककाल—उज्जैन के श्री हर्ष विक्रमादित्य ने जब शक लोगों को परास्त किया तब से इस सम्वत का प्रारम्भ हुआ। यह युधिष्ठिर के मृत्युकाल के २५२६ वर्ष बाद शुरु हुआ।[1] युधिष्ठिर का देहान्त ३१०२ ई० पू० में, श्रीकृष्ण के स्वर्गारोहण के एक दम बाद, हुआ था। इस प्रकार इस सम्वत की तिथि ५७६ ई० पू० निश्चित होती है। कल्हण के अनुसार श्री हर्ष विक्रमादित्य, हिरण्य, मात्रिगुप्त तथा प्रवरसेन द्वितीय का समकालीन था। उस ने सम्पूर्ण उत्तरीय भारत पर अपना शासन स्थापित किया, उसने शक लोगों को भारी हार दी तभी से शक सम्वत का प्रारम्भ हुआ। इसी कारण इस श्री हर्ष को विक्रमादित्य की उपाधि मिली। कविवर मात्रिगुप्त ने इस विक्रमादित्य को इसी कारण 'शकारि' लिखा है।

सम्वत्सरं द्वे त्वयने वदन्तिसंख्याविदो दक्षिणमुत्तरञ्च ॥ १४ ॥
अहो रात्रे विभजते सूर्यो मानुष दैविके।
रात्रिः स्वप्नाय भूतानां चेष्टायै कर्मणा महः ॥ १५ ॥
पित्र्ये रात्र्यहनी मासः प्रविभागस्तयो पुनः।
शुक्लोहः कर्मचेष्टायां कृष्णः स्वप्नाय शर्वरी ॥ १६ ॥
दैवे रात्र्यहनी वर्षं प्रविभागस्तयो पुनः।
अहस्तत्रोदगमनं रात्रिः स्याद्दक्षिणायनम् ॥ १७ ॥
ये ते रात्र्यहनी पूर्वं कीर्तिते दैवमानुषे।
तयो संख्याय वर्षाग्रं ब्राह्मे वक्ष्याम्यहं क्षपे ॥ १८ ॥
दिव्यै वर्ष सहस्रैस्तु कृतत्रेतादि संज्ञकम्।
चतुर्युगं द्वादशभि स्तद्विभागं निबोध मे ॥ १६ ॥
चत्वार्याहुः सहस्राणि वर्षाणां तत् कृतं युगम्।
तस्य तावच्छती संध्या संध्यांशश्च तथाविधः ॥ २० ॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

७. श्री हर्ष काल—का प्रारभ ४५७ ई०पूर्व से होता है। सुप्रसिद्ध विक्रमी सम्वत से ४०० वर्ष पूर्व यह सम्वत शुरु हुआ। मुसल्मान ऐतिहासिक अल्बरूनी के अनुसार विक्रमादित्य से ४०० वर्ष पूर्व नैपाल तथा अन्य उत्तरीय देशों में यह सम्वत प्रयुक्त किया जाता था। इस सम्वत के सम्बन्ध में विस्तार से हम तीसरे अध्याय में लिखेंगे।

८. विक्रम सम्वत— मालव के सम्राट् विक्रमादित्य ने ५७ ई० पू० में इस सम्वत का प्रारम्भ किया। इस के दो नाम-सम्वत और मालवकाल भी हैं। यह सम्वत सम्पूर्ण भारत में आज तक भी व्यवहृत होता है।

९. शालिवाहनाब्द— प्रस्थान के राजा शालिवाहन ने ७८ ई० पश्चात् में इसका प्रारम्भ किया।

१०. कोल्लम सम्वत्— ८२५ ई० पश्चात् कोल्लम (क्वीलन–Quilon) ने इसका प्रारम्भ किया।

भारतवर्ष में मुख्यतया यही सम्वत भिन्न २ समयों में, भिन्न २ प्रान्तों अथवा सम्पूर्ण देश में, प्रचलित रहे हैं। इन के अतिरिक्त कतिपय अन्य सम्वत भी भारतीय साहित्य में उपलब्ध होते हैं। इस देश के प्राचीन साहित्य में प्राप्त होने वाले अधिकांश सम्वतों की तिथि १ वैशाख १९८५ तदनुसार १३ अप्रिल १९२८ शुक्रवार के दिन निम्न लिखित है—

इतरेषु ससन्ध्येषु संध्यांशेषु ततस्त्रिषु।
एक पादेन हीयन्ते सहस्राणि शतानि च ॥ २१ ॥
तपः परं कृतयुगे त्रेतायां ज्ञानमुत्तमम्।
द्वापरे यज्ञमेवाहुर्दानमेकं कले युगौ ॥ २८ ॥
एतां द्वादश साहस्रीं युगाख्यां कवयो विदुः।
सहस्र परिवर्तं तत् ब्राह्मं दिवस मुच्यते ॥ २९ ॥
रात्रिमेतावतीं चैव तदादौ विश्वमीश्वरः।
प्रलये ध्यान मविश्य सुप्त्वा सोन्ते विबुध्यते॥३०
सहस्र युग पर्यन्त महर्यद् ब्रह्मणो विदुः।
रात्रिं युग सहस्रां तां तेऽहोरात्रविदो जना ॥ ३१ ॥

(शान्तिपर्व, २३१ अध्याय)

१. आसन मघासु मुनयः शासतिपृथवीं युधिष्ठिरे नृपतौ
षड्द्विक् पञ्च द्वियुतः शक कालस्तस्य राज्ञस्य ॥५६॥

(राजतरङ्गिणी अध्याय १)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

१. सृष्ट्याब्द— १९५५८८५०३०.
२. बार्हद्रथाब्द (मगध)— ५२२८.
३. श्री कृष्ण जननाब्द— ५१३४.
४. बार्हस्पत्यमान सृष्ट्याब्द— ५१०८.

(काश्मीर के गोनन्द प्रथम द्वारा प्रचालित)

५. युधिष्ठिराब्द (हिन्दुओं का) — ५०३७.
६. सौरमान शष्ट्याब्द— ५०४३.

(नैपाल के यलम्बरा द्वारा प्रचालित)

. श्री कृष्ण निर्वाणाब्द— ५०३१.
८. कल्याब्द (या परीक्षिताब्द)— ५०३०.
९. लौकिकाब्द— ५००९.

(काश्मीर के गोनन्द द्वितीय द्वारा प्रचाचित)

१०. युधिष्ठिराब्द (जैन आदि का)— ४५६२.
११. प्रद्योताब्द (मगध)— ४०५३.
१२. शैशुनागाब्द (मगध)— ३८८८.
१३. तृतीय गोनन्दाब्द (काश्मीर) ३८४७.
१४. पशुप्रेक्ष देवाब्द (नैपाल)— ३७९५.
१५. भूमवर्माब्द (नैपाल)— ३६४०.
१६. नन्दाब्द (मगध)— ३५२८.
१७. मौर्याब्द (मगध)— ३३४४.
१८. शुङ्गाब्द (मगध)— ३०२८.
१९. प्रतापादित्याब्द (काश्मीर)— २८४५.
२०. कण्वाब्द (मगध)— २७२९.
२१. आन्ध्राब्द (मगध)— २६८४.
२२. मेघवाहनाब्द (काश्मीर)— २६५३.
२३. शक काल (शकों का पराजय)— २५०४.
२४. श्री हर्षाब्द (उज्जैन)— २३८५.
२५. गुप्ताब्द (मगध)— २२५३.
२६. वसन्त देवाब्द (नैपाल)— २२२९.
२७. अंशुवर्माब्द (नैपाल)— २०२९.
२८. विक्रमाब्द (मालव)— १९८५.
२९. शालिवाहनाब्द (प्रस्थान)— १८५१.
३०. वीरदेवाब्द (नैपाल)— १६२९.
३१. कर्कोटाब्द (काश्मीर)— १३२७.
३२. हर्षवर्धनाब्द (कन्नौज)— १३२२.
३३. प्रताप रुद्राब्द (ओरङ्गल)— १२४१.
३४. गुणकाम देवाब्द (नैपाल)— १२०६.
३५. सदाशिवदेवाब्द (नैपाल)— ११७८.
३६. कोल्लाब्द (मालाबार)— ११०३.
३७. उत्पलाब्द (काश्मीर)— १०७३.
३८. नैपालाब्द— १०४८.

(नैपाल के जयदेवमल्ल द्वारा प्रचालित)

३९. नारायण देवाब्द (नैपाल)— १०३८.
४०. यशस्कर देवाब्द (काश्मीर) ९८९.
४१. प्रथम लोध्राब्द (काश्मीर) ९२५.
४२. भोज देवाब्द (धारा)— ९१४.
४३. द्वितीय लोध्राब्द (काश्मीर) ८२७.
४४. राम देवाब्द (देवगिरि)— ६२८.
४५. हरिसिंह देवाब्द (नैपाल)— ६०४.
४६. कृष्ण रायाब्द (विजय नगर)— ४००.
४७. पृथवीनारायणाब्द (नैपाल) १६०.

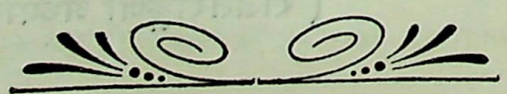

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्वास्थ्य और उस के चिन्ह

[डाक्टर राधाकृष्ण B. Sc., M.B., B. S. अध्यक्ष स्वास्थ्य]
रक्षा विभाग गुरुकुल काँगड़ी

प्रत्येक व्यक्ति जो स्वास्थ्य चाहता है प्राप्त कर सकता है। सब मनुष्य एक-समान स्वस्थ नहीं हो सकते क्योंकि जो प्रारम्भिक स्वास्थ्य माता-पिता से जन्म से ही मिला है उस का भी प्रभाव होता है। अतः यही कारण है कि कोई तो शीघ्र ही थोड़े से यत्न से स्वस्थ हो जाते हैं और किसी को अधिक परिश्रम करने पर ही स्वास्थ्य उपलब्ध होता है। सच मुच हमारी निर्बलता का हमारी सन्तान को भी फल भोगना पड़ता है।

स्वास्थ्य क्या है ? क्या रोग से मुक्त रहने को ही स्वास्थ्य कहते हैं ? यह भी है और इस के अतिरिक्त और भी है कि मनुष्य जीवन को घसीटे नहीं प्रत्युत इस से अधिक-से-अधिक लाभ उठावें जिस से हमें आत्म-अभिमान, आत्मविश्वास, और आत्मिक प्रसन्नता का अनुभव हो सके, तथा हम अपने और औरों के लिये लाभदायक हो सकें।

स्वास्थ्य कितनी अमूल्य वस्तु है, सब जानते हैं। स्वास्थ से तो धन कमाया जा सकता है परन्तु केवल धन से स्वास्थ्य प्राप्त नहीं होता। यश प्राप्ति का यह एक साधन है परन्तु केवल यश से स्वास्थ्य नहीं मिलता। क्या यह सच नहीं है कि एक निर्धन स्वस्थ मज़दूर अस्वस्थ महाराजा से अधिक भाग्यशाली है ? एक धनी पुरुष जब अपने गिरे हुये स्वास्थ्य के लिये चिकित्सकों के प्रति अपनी दीन अवस्था का वर्णन करते हुए स्वास्थ्य की आकांक्षा करता है तो करुणा का कितना पात्र बन जाता है। बुरे स्वास्थ्य के कारण ही कितने हितैषी और नेता जाति की सेवा करने में असमर्थ हो जाते हैं।

स्वास्थ्य का सब से अधिक लाभ वह असीम प्रसन्नता है जो मनुष्य अनुभव करता है। वह सृष्टि-मात्र को इस प्रसन्नता से पूर्ण देखता है। उदासी और निराशा उस से कोसों दूर रहते हैं। वह तो आशा और प्रसन्नता की जीवित मूर्ति है। निराशावादी तो वह हैं जिन्हें जीवन काटने दौड़ता है, और जिनके लिए कष्ट-दायक है। स्वस्थ व्यक्ति के लिए जगत् क्रीड़ा स्थल है। उस के प्रत्येक कार्य से उत्साह प्रत्यक्ष होता है। वह स्वयं हँसता है और दूसरों को हँसाता है। उस के लिये संसार मिथ्या, दुःखमय और स्वप्न नहीं है।

उत्तम स्वास्थ्य के लिए जहाँ पहिले स्वस्थ माता पिता की आवश्यकता है, और दूसरे हमारी परिस्थिति अर्थात् हमारा नगर, गली मुहल्ला, म्युसिपल जल इत्यादि साफ़ होने की, जिस जातीय स्वस्थवृत्त के लिये हैल्थ ऑफ़ीसर नियुक्त किये जाते हैं, वहाँ तीसरे यह भी अत्यन्त आवश्यक है कि हम अपने स्वास्थ्य का स्वयम् भी ध्यान रक्खें। बिना इस व्यक्तिगत स्वस्थवृत्तके स्वास्थ्य लाभ कठिन है।

अपने स्वास्थ की उन्नति के लिये यह अत्यन्त आवश्यक है कि हमें अपने स्वास्थ्य की वर्तमान अवस्था का पता हो। इस का पता कोई उत्तम चिकित्सक ही दे सकता है, जो शारीरिक विकारों और रोगों की अवस्था पर कुछ निर्देश भी करेगा। स्मरण रखें कि अपने स्वास्थ्य की ठीक अवस्था को जानने के लिये किसी योग्य और निपुण चिकित्सक

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

को उसके अवकाश के समय मिलना चाहिये, क्योंकि इस शारीरिक निरक्षण में एक दो घंटे अवश्य लग जाते हैं। (इस शारीरिक निरीक्षण के लिए फार्म गुरुकुल काँगड़ी के कार्यालय से पुरुषों के लिये और कन्या गुरुकुल के कार्यालय से स्त्रियों के लिये =) के टिकट भेजने पर मिल सकते हैं)

इस निरीक्षण में चिकित्सक ऊंचाई, भार, ताप-परिमाण, नाड़ी, रक्त दबाव तथा श्रवण शक्ति और दृष्टि आदि को मापेगा। केश, त्वचा, ग्रन्थियों, अंगों, दांत, मसूड़े, कान, नाक, गला, टौंसिल, हृदय, फुफ्फुस, कोष्ट, वृक्क, यकृत तथा उत्पादक अंगों की अवस्था का ज्ञान प्राप्त करेगा। शारीरिक पोषण तथा मानसिक रचनाओं का भी परीक्षण करेगा। इन सब की अवस्था के आधार पर वह ठीक बता सकेगा कि कौन कौन सी रचनाएं निर्बल हैं और विशेष ध्यान के योग्य हैं। यदि उचित होगा तो इन की चिकित्सा भी करेगा।

इस का अभिप्राय यह है कि उन्नति करने से पूर्व त्रुटियों का दूर होना अनिवार्य है। इस से वृद्धि सुगमता और शीघ्रता से होती है। इस का यह भी अभिप्राय है कि इन त्रुटियों को ऐसी अवस्था में ही दूर कर दिया जावे जब कि वह अभी जड़ पकड़ रही हैं। समय बीतने पर जब वे वास्तव में रोग के रूप में स्पष्ट होंगी तो फिर बहुत परिश्रम करने तथा पर्याप्त धन व्यय करने पर भी उन के कष्टदायक और कठिन-साध्य परिणाम से मुक्त होना असंभव सा होजायगा। कभी २ तो उपद्रव इतने भयंकर होते हैं कि जीवन ही समाप्त हो जाता है।

इस शारीरिक निरीक्षण के उत्तम फल को अमरीका की एक जीवन-बीमा कम्पनी ने १९१४ में कई वर्षों के एक परीक्षण से स्पष्ट सिद्ध किया था। २ वर्ष तक इस कम्पनी ने ७०,००० व्यक्तियों का शारीरिक निरीक्षण कर के उन्हें, प्रत्येक की अवस्था के अनुसार, स्वास्थ्य सम्बन्धी निर्देश दिये। तथा ऐसे व्यक्तियों का भी रिकौर्ड रखा जिन्होंने यह निरीक्षण नहीं कराया। ५ वर्ष के पीछे इस कम्पनी ने पुनः जांच की तो पता लगा कि निरीक्षित व्यक्तियों में से केवल २१७ मरे और बिना निरीक्षण वालों में से ४१२ मरे। तथा निरीक्षितों में मृत्यु संख्या ३९ प्रति शतक थी और अन्यों में ७० प्रति शतक।

इस परीक्षण से यह भी पता लगा कि जो व्यक्ति यह निरीक्षण प्रति पाँचवें वर्ष करवाते रहते हैं वे अधिक स्वस्थ होते हैं। यह भी कि प्रायः ७५ प्रतिशतक मनुष्य किसी न किसी शारीरिक विकार से ग्रस्त होते हैं।

वैसे तो चिकित्सक विस्तार से शरीर की की अवस्था का ठीक ज्ञान देगा परन्तु सर्व साधारण जनता भी निम्न मुख्य चिन्हों से स्वास्थ्य की अवस्था का अनुमान कर ही सकती है:—

१. भार तथा उंचाई

संलग्न चक्र अमरीकन बाल स्वास्थ्य सुधार समिति के हैं जो बालक तथा बालिकाओं दोनों के लिये हैं। यह माध्यम भार चक्र हैं। थोड़ा से अधिक या कम का तो कोई हर्ज नहीं परन्तु यदि भार कुछ ज्यादा अधिक या कम हो तो स्वास्थ्य ठीक न समझना चाहिये। साधरण नियम यह है कि बाल अवस्था में भार यदि थोड़ा-सा अधिक हो तो कम होने की अपेक्षा अच्छा है परन्तु युवा अवस्था से पीछे अधिक भार सर्वदा शोचनीय होना चाहिये। ३५ वर्ष की आयु से पीछे तो भार कम रखने का ही यत्न करना चाहिये।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

भार प्रति मास निश्चित समय पर और निश्चित अवस्था में ही लेना उचित है। वैसे तो भार प्रतिमास भी कुछ न कुछ घटता बढ़ता ही रहेगा परन्तु यदि प्रतिमास घटता ही जावे या शीघ्र घटना आरम्भ हो जावे तो यहकिसी रोग विशेषतः क्षय-रोग का सूचक है। तब चिकित्सक की सम्मति लेनी आवश्यक है।

भारचक्र बालकों के वास्ते (भार पौंड़ों में)

उंचाई इञ्चों में	आयु ५ वर्ष	६ वर्ष	७ वर्ष	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	आयु १९ वर्ष	उंचाई इञ्चों में
३८	३४	३४														३८
३९	३५	३५														३९
४०	३६	३६														४०
४१	३८	३८	३८													४१
४२	३९	३९	३९	३९												४२
४३	४१	४१	४१	४१												४३
४४	४४	४४	४४	४४												४४
४५	४६	४६	४६	४६	४६											४५
४६	४७	४८	४८	४८	४८											४६
४७	४९	५०	५०	५०	५०	५०										४७
४८		५२	५३	५३	५३	५३										४८
४९		५५	५५	५५	५५	५५	५५									४९
५०		५७	५८	५८	५८	५८	५८	५८								५०
५१			६१	६१	६१	६१	६१	६१	६१							५१
५२			६३	६३	६३	६४	६४	६४	६४							५२
५३			६६	६७	६७	६७	६७	६८	६८							५३
५४				७०	७०	७०	७०	७१	७१	७२						५४
५५				७२	७२	७३	७३	७४	७४	७४						५५
५६				७५	७६	७७	७७	७७	७८	७८	८०					५६
५७					७९	८०	८१	८१	८२	८३	८३					५७
५८					८३	८४	८४	८५	८५	८६	८७					५८
५९						८७	८८	८९	८९	९०	९०	९०				५९
६०						९१	९२	९२	९३	९४	९५	९६				६०
६१							९५	९६	९७	९९	१००	१०३	१०६			६१
६२							१००	१०१	१०२	१०३	१०४	१०७	१११	११६		६२
६३							१०५	१०६	१०७	१०८	११०	११३	११८	१२३	१२७	६३
६४								१०९	१११	११३	११५	११७	१२१	१२६	१३०	६४
६५								११४	११७	११८	१२०	१२२	१२७	१३१	१३४	६५
६६									११९	१२२	१२५	१२८	१३२	१३६	१३९	६६
६७									१२४	१२८	१३०	१३४	१३६	१३९	१४२	६७
६८										१३४	१३४	१३७	१४१	१४३	१४७	६८
६९										१३७	१३९	१४३	१४६	१४९	१५२	६९
७०										१४३	१४४	१४५	१४८	१५१	१५५	७०
७१										१४८	१५०	१५१	१५२	१५४	१५९	७१
७२											१५३	१५५	१५६	१५८	१६३	७२
७३											१५७	१६०	१६२	१६४	१६७	७३
७४											१६०	१६४	१६८	१७०	१७१	७४

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

माध्यम भार वृद्धि (बालक) जो एक वर्ष में उचाई के अनुसार होनी चाहियेः—

आयु६	७		८		६		१०		११		१२		
उ	वृ	उ	वृ	उ	वृ	उ	वृ	उ	वृ	उ	वृ	उ	वृ	
४३	३	४५	४	४७	५	४६	५	५१	५	५३	६	५४	६	यह उंचाई थोड़ी कहलाती ह
४६	४	४८	५	५०	६	५२	६	५४	६	५६	७	५८	६	" " माध्यम "
४६	५	५१	७	५३	७	५३	७	५७	७	५६	८	६१	१२	" " पर्याप्त "
१३		१४		१५		१६		१७		१८		१६		
उ	वृ	उ	वृ	उ	वृ	उ	वृ	उ	वृ	उ	वृ	उ	वृ	
५३	६	५८	११	६०	१४	६२	१३	६४	७	६५	३	६५		यह उंचाई थोड़ी कहलाती है
६०	११	६३	१५	६५	११	६७	८	६८	४	६६	३	६६		" " माध्यम "
६४	१६	६७	११	७०	६	७२	७	७२	३	७३	४	७३		" " पर्याप्त "

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

भारचक्र कन्याओं के लिये

उंचाई इञ्चों में	आयु ५ वर्ष	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८
३८	३३	३३												
३९	३४	३४												
४०	३६	३६	३६											
४१	३७	३७	३७											
४२	३९	३९	३९											
४३	४१	४१	४१	४१										
४४	४२	४२	४२	४२										
४५	४५	४५	४५	४५	४५									
४६	४७	४७	४७	४८	४८									
४७	४९	५०	५०	५०	५०	५०								
४८		५२	५२	५२	५२	५३	५३							
४९		५४	५४	५५	५५	५६	५६							
५०		५६	५६	५७	५८	५९	६१	६२						
५१			५९	६०	६१	६१	६३	६५						
५२			६३	६४	६४	६४	६५	६७						
५३			६६	६७	६७	६८	६८	६९	७१					
५४				६९	७०	७०	७१	७१	७३					
५५				७२	७४	७४	७४	७५	७७	७७				
५६					७६	७८	७८	७९	८१	८३				
५७					८०	८२	८२	८२	८४	८८	९२			
५८						८४	८८	८६	८८	९३	९६	१०१		
५९						८७	९०	९०	९२	९६	१००	१०३	१०४	
६०						९१	९५	९५	९७	१०१	१०५	१०८	१०९	१११
६१							९९	१००	१०१	१०५	१०८	११२	११३	११६
६२							१०४	१०५	१०६	१०९	११३	११५	११७	११८
६३								११०	११०	११२	११६	११७	११९	१२०
६४								११४	११५	११७	११९	१२०	१२२	१२३
६५								११८	१२०	१२१	१२२	१२३	१२५	१२६
६६									१२४	१२४	१२५	१२८	१२९	१३०
६७									१२८	१३०	१३१	१३३	१३३	१३५
६८									१३१	१३३	१३५	१३६	१३८	१३८
६९										१३५	१३७	१३८	१४०	१४२
७०										१३६	१३८	१४०	१४२	१४४
७१										१३८	१४०	१४२	१४४	१४५

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

माध्यम भार वृद्धि प्रति वर्ष कन्याओं की ऊंचाई के अनुसार

आयु ६		७		८		९		१०		११		
ऊं	वृ	उ	वृ	उ	वृ	उ	वृ	उ	वृ	उ	वृ	ऊंचाई
४३	४	४५	४	४७	४	४९	५	५०	६	५२	६	साधारण
४५	५	४७	५	५०	६	५२	७	५४	८	५६	१०	मध्यम
४७	६	५०	८	५३	८	५५	९	५७	११	५९	१३	पर्याप्त
१२		१३		१४		१५		१६		१७		
उ	वृ	उ	वृ	उ	व	उ	वृ	उ	वृ	उ	वृ	ऊंचाई
५४	१०	५७	१३	५९	१०	६०	७	६१	२	६१	१	साधारण
५८	१३	६०	१०	६२	६	६३	४	६४	३	६४	१	मध्यम
६२	९	६४	८	६६	४	६६	४	६७	१	६७	१	पर्याप्त

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

भार चक्र पुरुषों के वास्ते पौंडों में

ऊंचाई फुट	इञ्च	आय १५—१९	२०—२४	२५—२९	३०—३४	३५—३९	४०—४४	४५—४९	५०—५४	५५—५९
४	११	१११	११७	१२२	१२५	१२७	१३०	१३२	१३३	१३४
५	०	११३	११९	१२४	१२७	१२९	१३२	१३४	१३५	१३६
५	१	११५	१२१	१२६	१२९	१३१	१३४	१३६	१३७	१३८
५	२	११८	१२४	१२८	१३१	१३३	१३६	१३८	१३९	१४०
५	३	१२१	१२७	१३१	१३४	१३६	१३९	१४१	१४२	१४३
५	४	१२४	१३१	१३४	१३७	१४०	१४२	१४४	१४५	१४६
५	५	१२८	१३५	१३८	१४१	१४४	१४६	१४८	१४९	१५०
५	६	१३२	१३९	१४२	१४५	१४८	१५०	१५२	१५३	१५४
५	७	१३६	१४२	१४६	१४९	१५२	१५४	१५६	१५७	१५८
५	८	१४०	१४६	१५०	१५४	१५७	१५९	१६१	१६२	१६३
५	९	१४४	१५०	१५४	१५८	१६२	१६४	१६६	१६७	१६८
५	१०	१४८	१५४	१५८	१६३	१६७	१६९	१७१	१७२	१७३
५	११	१५३	१५८	१६३	१६८	१७२	१७५	१७७	१७८	१७९
६	०	१५८	१६३	१६९	१७४	१७८	१८१	१८३	१८४	१८५
६	१	१६३	१६८	१७५	१८०	१८४	१८७	१९०	१९१	१९२
६	२	१६८	१७३	१८१	१८६	१९१	१९४	१९७	१९८	१९९
६	३	१७३	१७८	१८७	१९२	१९७	२०१	२०४	२०५	२०६

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

भार चक्र स्त्रियों के वास्ते पोंडों में

ऊंचाइ फुट	इञ्च	१५—१६	२०—२४	२५—२६	३०—३४	३५—३६	४०—४४	४५—४६	५०—५४	५५—५६
४	११	११०	११३	११६	११६	१२२	१२६	१२६	१३१	१३२
५	०	११२	११५	११८	१२१	१२४	१२८	१३१	१३३	१३४
५	१	११४	११७	१२०	१२३	१२६	१३०	१३३	१३५	१३७
५	२	११७	१२०	१२२	१२५	१२६	१३३	१३६	१३८	१४०
५	३	१२०	१२३	१२५	१२८	१३२	१३६	१३६	१४१	१४३
५	४	१२३	१२६	१२६	१३२	१३६	१३६	१४२	१४४	१४६
५	५	१२६	१२६	१३२	१३६	१४०	१४३	१४६	१४८	१५०
५	६	१३०	१३३	१३६	१४०	१४४	१४७	१५१	१५२	१५३
५	७	१३४	१३७	१४०	१४४	१४८	१५१	१५५	१५७	१५८
५	८	१३८	१४१	१४४	१४८	१५२	१५५	१५६	१६२	१६३
५	९	१४१	१४५	१४८	१५२	१५६	१५९	१६२	१६६	१६७
५	१०	१४५	१४९	१५२	१५५	१५६	१६२	१६६	१७०	१७३
५	११	१५०	१५३	१५५	१५८	१६२	१६६	१७०	१७४	१७७
६	०	१५५	१५७	१५९	१६२	१६५	१६९	१७३	१७७	१८२

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

२. शारीरिक ताप-परिमाण भी स्वास्थ्य का एक चिन्ह है। साधारणतया यह ९८-६ °फ. होना चाहिये।

३. नाड़ी संख्या प्रति मिनट लगभग ६५ से ७५ हो सकती है परन्तु व्यायाम और शारीरिक परिश्रम के पीछे बढ़ जाती है।

४. वक्षस (छाती) का माप ऊँचाई से आधे से कम न होना चाहिये।

५. कमर (कटि) का माप वक्षस के माप से कभी भी अधिक न होना चाहिये। इसका अर्थ यह है कि जिनके पेट बड़े होते हैं वह तो अस्वस्थ हैं ही उनके अतिरिक्त कई ऐसे भी होंगे जिनका पेट वक्षस से बड़ा होगा, परन्तु कपड़े पहने रहने के कारण दिखाई नहीं देता, यह लोग भी अस्वस्थों में ही गिने जावेंगे।

६. सबसे उत्तम चिन्ह तो यह है कि किसी भी स्वस्थ व्यक्ति को शारीरिक कार्य करते हुए बहुत थकावट अनुभव न करनी चाहिये। यदि कार्य करते, भार उठाते, कुछ दौड़ने या सीड़ियों पर ही तेज़ चढ़ते दम उखड़ जाता है और श्वास फूल जाता है तो ऐसा व्यक्ति स्वस्थ नहीं।

ऊपरलिखित चिन्हों से स्वास्थ्य की अवस्था का कुछ अनुमान लग सकता है। यदि ज़रा भी संदेह हो तो तुरन्त ही सावधान हो जाना चाहिये और किसी अच्छे चिकित्सक से परामर्श करना चाहिये। स्मरण रहे कि यह आवश्यक नहीं कि चिकित्सक औषधियों का ही सेवन बताएगा प्रत्युत उत्तम चिकित्सक यथा सम्भव यही यत्न करेगा कि आपका स्वास्थ्य औषधियों की सहायता के बिना ही स्वास्थ्य संबन्धी नियमों के पालन से ही ठीक हो जावे। अतः चिकित्सक के पास जाने से भय न खाना चाहिये क्योंकि उसके पास केवल औषधियें ही नहीं प्रत्युत् स्वास्थ्य ठीक करने के और भी अनेक उपाय हैं।

स्वास्थ्य सम्बन्धी उपाय और नियम प्रत्येक व्यक्ति की शारीरिक अवस्था के अनुसार कुछ भिन्न भिन्न भी होते हैं जिनका निर्देश चिकित्सक करेगा, परन्तु सामान्यतः यह उपाय निम्न हैं। इनका यहाँ विस्तृत उल्लेख कठिन है अतः संक्षेप रूप में ही दिये जा सकते हैं:—

१. हर समय शुद्ध वायु का ही सेवन करना चाहिये।

२. खुले स्थान में, कमरे और घर से बाहर जितना रह सकें रहें।

३. जगत् में धूप सबसे बढ़कर क्रिमिहर और रोगजीवाणु-नाशक है। जब तक सह सकें धूप में रहने का प्रयत्न करें।

४. शुद्ध, उत्तम, बल्य भोजन पर्याप्त खावें परन्तु भूख से अधिक कभी न खाएँ।

५. जल जितना अधिक पी सकें पीवें क्योंकि यह शरीर के प्रत्येक स्थान को धोकर विष इत्यादि को घोल कर ले जाता है।

६. अपने भार को कभी भी अपनी ऊँचाई तथा आयु के अनुसार निश्चित भार से न बढ़ने दें। स्मरण रखें कि भार कम होना लाभदायक है और अधिक होना हानिकारक। परीक्षणों से सिद्ध हो चुका है कि अधिक भारवाले शीघ्रही किसी-न-किसी रोग से मृत होते हैं और अस्वस्थ भी रहते हैं।

७. स्वास्थ्य के लिये यह भी अत्यन्त आवश्यक है कि आपके अंग सर्वदा स्फूर्ति में रहें। अतः जो कार्य करें बलपूर्वक करें और पर्याप्त व्यायाम

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

करें। व्यायाम तो दिन-चर्या का एक आवश्यक भाग बनजाना चाहिये।

८. निद्रा पर्याप्त लें। स्मरण रहे कि रात्रि के प्रथम भाग की निद्रा स्वास्थ्यप्रद है अतः रात्रि को जल्दी सो जाना चाहिये। जहाँ तक सम्भव हो खुले स्थान में सोवें।

९. वस्त्र आवश्यकता से अधिक न पहनें और जो भी पहनें हलके, ढीले और सछिद्र हों ताकि इन छिद्रों द्वारा वायु का त्वचा पर स्पर्श होता रहे।

१०. सर्वदा प्रसन्न-चित्त और सन्तुष्ट रहनें का यत्न करें। संसार की कठिनाइयों को अपनी उन्नति का साधन समझें। स्मरण रहे कि क्षोभ, चिन्ता और क्रोध से जितना मस्तिष्क ख़राब होता है उतना और किसी रोग से नहीं।

११- अपने नेत्रों और अन्य प्रत्येक अंग का ध्यान रखें।

१२. शौच दिन में एक बार अवश्य पर्याप्त होना चाहिये।

१३. जिन लोगों को छूतदार रोग हों उनसे दूर ही रहें विशेषतः जुकाम, क्षय रोग, नेत्र शोथ, गुप्त रोग इत्यादि।

१४. विषैली और नशीली वस्तुएँ शरीर के लिये विष हैं।

१५. जब रोगी हों तो इधर-उधर पाखंडियों से चिकित्सा करा कर जीवन दुःखदायी न बनावें। उत्तम चिकित्सक से यदि लाभ न होगा तो हानि भी न होगी। स्वास्थ्य और जीवन जैसी अमूल्य वस्तुएँ मरम्मत के लिये किसी उत्तम कारीगर को ही सौंपनी चाहिये। इन्हें इधर-उधर व्यर्थ फेंकने या इनसे खेलने का अवसर नहीं है।

१६. अन्त में स्मरण रखना चाहिये कि स्वास्थ्य लाभ कोई सुगम कार्य नहीं है। कोई हलवा नहीं जो गर्म-गर्म मुख में डाल लिया जाय प्रत्युत् इस पर परिश्रम करने की आवश्यकता है और वह भी निरन्तर। स्वास्थ्य-मार्ग पर चलने से कई बार दिल बैठेगा, कई बार पीछे मुड़ जाने की इच्छा होगी, और कई बार निरुत्साहित भी होंगे परन्तु अन्त में जो उत्तम स्वास्थ्य से आत्म-आनन्द आता है जब उसकी एक बार चाट लगी तो फिर पीछे कोई नहीं मुड़ता।

केवल आत्म-आनन्द का ही प्रश्न नहीं प्रत्युत जीवन के सब कामों का आधार-स्तूप तो स्वास्थ्य ही है। संसार का कौनसा कार्य है जो इसके बिना हो सकता है। धन-उपार्जन में, यश और कीर्ति में, समाज-सेवा में और घर को स्वर्ग बनाने में इसी एक से तो सहायता मिलती है, इमर्सन ने सच कहा था कि स्वास्थ्य ही धन है—'Health is Wealth.' और यह कि मुझे स्वास्थ्य दो और मैं चक्रवर्ती सम्राटों की शान को तुच्छ बना सकता हूं —'Give me health and I will make the pomp of emperors ridiculous.'

पाठकगण! मानोंकि आप अपने गिरे हुए स्वास्थ्य ही में अपनी सुस्ती के कारण सन्तुष्ट पड़े हैं परन्तु क्या आप जानते हैं कि आपका शरीर अपना नहीं, यह तो उस जननी का है जिसके दर से आपको इतना अन्न, इतना सुख और इतनी प्रसन्नता मिली है। वह लक्ष्मी भारतमाता ही आपके शरीर की स्वामिनी है। आपका कोई अधिकार नहीं कि उसकी वस्तु को निर्बल रखकर इस दुखिया जननी को अन्य उन स्त्रियों के सन्मुख अपमानित करें जो कल इसके दर की भिखारिनें

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

थीं। इसके दिये शरीर को अस्वस्थ रखकर आप पाप करते हैं। क्या आपको पता है कि संसार में भ्रमण करनेवाले क्या कहते हैं। सुनकर लज्जा आएगी कि सारे संसार में यदि हड्डियों के पिंजड़ दिखाई देते हैं तो इसी अभागिनी भारतमाता की गोद में। जिसके लाल सपूतों की यह अवस्था हो क्या वह जाति कभी उठ सकती है। जिस जाति के व्यक्तियों का माध्यम जीवन काल २७ वर्ष है (जबकि अन्य जातियों का ५७ वर्ष है) वह जाति कब तक दूसरी जातियों के साथ भागेगी। उसे तो मार्ग में ही मूर्छित और मृत होकर इस संसार से नष्ट ही होना पड़ेगा।

अतः सोच लें कि आप क्या चाहते हैं—

१. स्वस्थ होकर जीवन-संग्राम में विजय और भारतमाता का उद्धार या

२. अस्वस्थ रह कर नित्य के लिये नाश।

छप कर तय्यार है

कला-कौमुदी

क्रोशिये का कार्य सिखाने की सर्व श्रेष्ठ पुस्तक

बड़ा साईज़, बढ़िया मोटा चिकना आर्ट पेपर, ६० के लगभग चित्र

बहुरंगे चित्र से सुशोभित कवर

मूल्य केवल १॥)

विस्तृत विवरण के लिये देखो अन्तिम पृष्ठ

मैनेजर 'ज्योति'

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वृक्ष का आत्मा

(श्री पं० चमूपति जी एम. ए.)

प्राचीन मत

अन्त्येष्टि के समय जीव की विविध गतियों पर विचार करने का स्वाभाविक, और अतएव सबसे उत्तम, अवसर होता है। उस समय एक मन्त्र पढ़ते हैं:—

सूर्यं चक्षुषा गच्छ वातमात्मना दिवं च गच्छ पृथिवीं चधर्मभिः।
अपो वा गच्छ यदि तत्र ते हितमोषधीषु प्रतितिष्ठा शरीरैः॥
अथर्व १८. २. १.

अर्थात् (हे जीव !) तू नेत्रेन्द्रिय के द्वारा सूर्य को प्राप्त हो, प्राण द्वारा वायु में। अपने धर्म द्वारा द्युलोक और पृथिवी में जा। या तो कर्म को प्राप्त हो, यदि तेरा वहाँ हित हो। अथवा ओषधियों में जा। शरीरों के साथ इन सब स्थानों का गमन तथा अधिष्ठान कर।

इस मन्त्र के पूर्व भाग में भौतिक शरीर तथा आत्मा का भिन्न-भिन्न धर्म बता कर आत्मा की दो गतियां वर्णन की हैं— एक वहाँ जहाँ क्रिया होती है, दूसरी ओषधियों में। जिस गति से आत्मा का कल्याण हो, वही उसको मिलती है। यदि उसके पूर्व जीवन की प्रवृत्तियां इतनी जघन्य हैं कि उन्मत्त रोगी के सदृश कुछ समय क्रिया-क्षेत्र से अलग रखने से उसका सुधार हो सकता है तो ओषधि जीवन उसके लिए उत्तम है। इसमें इच्छा पूर्वक क्रिया का अभाव रहता है। और यदि क्रिया-क्षेत्र में जीव के कल्याण की संभावना है तो उसे अन्य योनियों में लाया जाता है।

अथर्ववेद के ओषधिसूक्त (का० ८. सू० ७) मन्त्र ६ में कहा है:—

जीवलां नघारिषां जीवन्तीमोषधीमहम्। अरुन्धती-मुन्नयन्तां पुष्पां मधुमतीमिह हुवेऽस्मा अरिष्टतातये।

यहां भी 'ओषधी' के लिये 'जीवन्ती' विशेषण आया है जिसका अर्थ है जीनेवाली। कोई णिच् प्रत्यय कर इसका अर्थ जिलाने वाली कर सकते हैं, परन्तु उस अवस्था में 'जीवलाम्' विशेषण व्यर्थ होगा जिसका अर्थ है 'जीवन देनेवाली'। अतः 'जीवन्ती' का अर्थ जीने वाली ही करना चाहिए।

मनु अध्याय १२ में जीव की कर्मानुसार गतियों का वर्णन आता है। श्लोक ४२ में लिखा है

स्थावराः कृमिकीटाश्च मत्स्याः सर्पाश्च कच्छपाः।
पशवश्च मृगाश्चैव जघन्या तामसी गतिः॥

अर्थात् वनस्पति, कृमि, कीट, मछली, सांप, कछुआ, पशु, मृग सबसे नीच तामसी गति हैं।

ऋषि दयानन्द ने इस श्लोक का उद्धरण सत्यार्थप्रकाश के नवम समुल्लास में (सप्तम वार २७० पृष्ठ पर) कर इस सिद्धान्त का समर्थन किया है।

महाभारत शान्तिपर्व अ० १८२ में भारद्वाज के प्रश्न करने पर भृगु यह उत्तर देते हैं:—

ऊष्मतो म्लायते वर्ण त्वक्फलं पुष्पमेव च।
म्लायते शीर्यते चापि स्पर्शस्तेनात्र विद्यते॥ ११॥
वाय्वग्न्यशनिनिष्पेषैः फलं पुष्पं विशीर्यते।
श्रोणेत्र गृह्यते शब्दस्तस्माच्छृण्वन्ति पादपाः॥१२॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वल्ली वेष्टयते वृक्षं सर्वतश्चैव गच्छति ।
नह्यदृष्टेश्च मार्गोऽस्ति तस्मात्पश्यन्ति पादपाः ॥१३॥
पुण्यापुण्यैस्तथा गन्धैर्धूपैश्च विविधैरपि ।
अरोगाः पुष्पिताः सन्ति तस्माज्जिघ्रन्ति पादपाः ॥१४॥
पादैः सलिलपानाच्च व्याधीनाञ्चापिदर्शनात् ।
व्याधिप्रतिक्रियत्वाच्च विद्यते रसनं द्रुमे ॥ १५ ॥
वक्त्रेणोत्पलनालेन यथोर्ध्वं जलमाददेत् ।
तया पवनसंयुक्तः पादैः पिबति पादपः ॥ १६ ॥
सुखदुःखयोश्च ग्रहणाच्छिन्नस्य च विरोहणात् ।
जीवं पश्यामि वृक्षाणामचैतन्यं न विद्यते ॥ १७ ॥

अर्थात् गरमी से इनका रङ्ग बिगड़ता है त्वचा फल और पुष्प कुम्हलाते और झड़ते हैं । अतः वृक्षों में स्पर्श है ॥ ११ ॥ वायु, अग्नि और विद्युत के आघात से फल और पुष्प झड़ते हैं । शब्द के लिए श्रोत्र चाहिए । अतः इनमें श्रोत्रेन्द्रिय है ॥१२॥ वृक्ष को बेल लपेटती और उसके चारों ओर जाती है। रास्ता बिना दृष्टि के नहीं दीखता अतः वृक्ष देखते हैं ॥ १३ ॥ पवित्र अपवित्र गन्धों तथा धूपों से वृक्ष नीरोग और फलवान् होते हैं अतः वृक्ष सूंघते हैं ॥ १५ ॥ जड़ों से पानी पीने और रोगों के देखे जाने तथा उनके प्रतिकार से वृक्षों में रसनेन्द्रिय का अनुमान होता है ॥ १५ ॥ कोपल की डंडी को मुख बना कर जैसे ऊपर जल को ले जायं वैसे वायु के साथ मिल कर जड़ों से रस खींचते हैं॥१६॥ सुख दुःख के ग्रहण करने तथा टूटने पर न उगने से मैं वृक्षों में जीव देखता हूं । यह अचेतन नहीं है ॥ १७ ॥

महाभारत के लेख वैज्ञानिक नहीं हैं । केवल लोक-प्रचलित विज्ञान को अनिश्चित लोकभाषा में कह दिया है । वृक्षों में जीव की विद्यमानता है— इतना ही मूल सिद्धान्त है । इसके अतिरिक्त कल्पना का चमत्कार है । सर जगदीशचन्द्र वसु ने भी अपने परीक्षणों के आरम्भ काल में इसी प्रकार की कल्पनाएं उठाई थी, परन्तु पीछे, जैसे हम आगे चल कर दिखायंगे, वह सावधान हो गये । महाभारत का प्रामाण्य वैज्ञानिक नहीं, ऐतिहासिक है । जन साधारण के विश्वास का चित्र-मात्र है । वैज्ञानिकों के अङ्गीकार करने योग्य केवल अन्तिम श्लोक का उत्तरार्ध है:—

जीवं पश्यामि वृक्षाणामचैतन्यं न विद्यते ।

इस मूल तार्किक धारणा के चारों ओर कल्पना का ताना तना है । शब्द एक शक्ति है, उसका धमाका (जब कि उसकी प्रबलता पर्याप्त हो) अचेतनों पर भी पड़ता है । परन्तु श्रोत्रेन्द्रिय के पीछे मन है । उसके लिए शब्द का अर्थावगमन चाहिए । रंग अचेतनों का भी बदलता है । रास्ता अन्धे भी ढूंढ लेते हैं । इससे चेतनता पूर्वक स्पर्श और दृष्टि की कल्पना निराधार है । रसारोह तथा श्वासादि वास्तव में जीवन के लक्षण हैं । सुख दुःख की अनुभूति का विवेचन हम आगे चल कर करेंगे ।

उपर्युक्त प्रमाण हमने यह सिद्ध करने को दिये हैं कि आर्यसाहित्य में वनस्पतियों में आत्मा के अस्तित्व की भावना बहुत पुरानी हैं । जहाँ पाश्चात्य लोग पशुओं में भी जीव की सत्ता इन्हीं दिनों स्वीकार करने लगे हैं, और तो और स्त्रियों में आत्मा होती है, यह सचाई वहां का अर्वाचीन आविष्कार है, वहां हमारे यहां स्त्री और पशु का तो कहना ही क्या है, ओषधियों में भी चेतनता का अनुभव पुरातन काल से किया गया है ।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सर जगदीशचन्द्र वसु ने जब पिछले वर्षों यह प्रतिपादित किया कि ओषधियों की जीवन-क्रियाएं उसी जीवन-शक्ति का परिणाम हैं, जिसका करिश्मा पशुजगत् में रक्त-प्रवाह श्वासोच्छ्वास अङ्ग-प्रत्यङ्ग के युगपत् विकास, आदि के रूप में प्रकट हो रहा है, तो बड़े-बड़े वैज्ञानिकों ने वसु महाशय की खिल्ली उड़ाई थी। घोर विरोध के पश्चात् आज वैज्ञानिक संसार ने इस इस तथ्य को अङ्गीकार किया है कि प्राणी होने की दृष्टि से मनुष्य, पशु, और ओषधि-जगत् एक ही जीवन लड़ीके दाने हैं।

हम इस लेख में प्रथम उन परीक्षणों और युक्तियों का संक्षिप्त वर्णन करेंगे जो वसु महाशय के इस चमत्कारिक आविष्कार का आधार हैं। फिर वसु महाशय की धारणा की शास्त्रीय विवेचना कर पशुओं और ओषधियों की जीवनावस्था के भेद पर दृष्टि डालेंगे। अन्त में इस आविष्कार के जीवहिंसा पर प्रभाव अप्रभाव की आलोचना वसु महाशय के अपने लेखों की छाया में करेंगे। हमारे लेख का अभिप्राय सर्वसाधारण को इस विषय का बोध प्रदान करना है, तो भी विषय वैज्ञानिक है, कुछ परिभाषाओं के प्रयोग के लिए हम पाठकों से क्षमा चाहते हैं। विषय के महत्व को ध्यान में रख कर पाठकों को कुछ न कुछ परिश्रम तो सहना चाहिए ही।

जीवन क्या है ?

पाठकों की सुविधा के लिए हम सब से पूर्व जीवन-अजीवन के भेद का दिग्दर्शनमात्र कराते हैं जीवित प्राणियों में साधारणतया तीन विशेषताएं पाई जाती हैं—(१) स्वशरीर धारण की (Sustenant) (२) सन्तानोत्पत्ति की (Generative) (३) अंग प्रत्यंग के परस्पर सहकारित्व की (Correlative)।

(१) स्वशरीर-धारण की शक्ति का अभिप्राय यह है कि प्राणियों के शरीरों के अणु परिस्थिति के प्रभाव के कारण प्रतिक्षण क्षीण होते हैं। इस क्षय का प्रतिकार करने को इनके शरीरों ही में निरन्तर ऐसी क्रियाएं होती रहती हैं जो पल-पल में होने वाली त्रुटि की साथ-साथ पूर्ति करती रहती हैं। पूर्ति त्रुटि से अधिक हो तो ह्रास होता है। स्वयं जीवन में शरीर की सामग्री का व्यय होता है। और स्वयं जीवन द्वारा उस व्यय की स्थान-पूर्ति को आय भी होती है। यथा पशुओं को ओषजन और पौधों को प्रधानतया कार्बन चाहिए। श्वासोच्छ्वास से यह कार्य स्वयं हो जाता है। इसी प्रकार रक्त तथा जीवन-रस (Sap) के प्रवाह से क्रमशः इन दोनों प्रकार के प्राणियों के कायिक यन्त्रों की यथेष्ट स्थिति तथा वृद्धि होती रहती है।

२. सन्तानोत्पत्ति का अर्थ अपनी जाति के एक वा अनेक प्राणियों को जन्म देना है। मनुष्य ऐसा करते हैं, पशु ऐसा करते हैं, और पौधे भी ऐसा करते हैं, धातु ऐसा नहीं करते। जीवित प्राणियों की यह विशेषता वैज्ञानिकों को जीव की पृथक् सत्ता स्वीकार करने पर सबसे अधिक बाधित करनेवाला हेतु है। विकासवादियों की धारणा थी कि जीवन की उत्पत्ति अचेतन पदार्थों में किसी विशेष क्रिया का भौतिक फल सिद्ध हो जायगी। परन्तु अब तक अचेतन के चेतन में स्वतन्त्रतया परिणत होने को कोई साक्षि नहीं मिली। जीवन,

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जीवन ही से उत्पन्न होता है †, कहीं बीज कहीं वीर्य—जीवित देह का अंश ही दूसरे जीवित देह को प्रादुर्भूत करता है। बिना इस अंश के प्राणी की उत्पत्ति का कोई प्रकार देखा नहीं गया, चेतन अचेतन के विभेद का यह विशेष सबसे प्रबल साधन है।

३. अंग प्रत्यङ्ग का सहकारित्व उस विशेष सम्बन्ध का परिणाम है जो प्राणियों के शरीर के भिन्न-भिन्न अवयवों में केवल प्राकृतिक संयोग की ही सृष्टि नहीं करता, किन्तु उनके अन्योऽन्याश्रय तक का कारण होता है। वातनाडियों (Nerves) का जाल जो शरीर के समस्त अवयवों में छाया हुआ है जैवी चेतनता की भौतिक कला प्रतीत होता है। यह तन्तु कोष्ठों (Cells) के समूह हैं जो विविध रचनाओं के विविध रूपों में सारे प्राणिकाय को आच्छादित करते हैं। एक कोष्ठ को आघात (Impulse) हो जाए सही, सारा शरीर उससे सचेत होता है। बाह्य परिस्थिति का शरीर की वृद्धि तथा संकोच पर इन्हीं तन्तुओं (Nerves) की सूक्ष्म उत्तेजना (Excitement) द्वारा प्रभाव पड़ता है। ताप और वायु की आर्द्रता तथा शुष्कता इन्हीं वातिककोष्ठों द्वारा शरीर के अन्तःस्थ पट्ठों (Muscles) को सुकेड़ती तथा फैलाती हैं। इस सुकड़ाव तथा फैलाव का फल पशुओं में हृदय की धड़कन और पौधों में रस-नालियों की गति है जिससे क्रमशः रक्त एवं रस का समस्त देह में सञ्चार होता है।

इस प्रकार यह तीसरी विशेषता पहली विशेषता की सहायक है। प्राणियों के अवयवों में है तो संयोग-सम्बन्ध ही, जो अचेतनों के अंग-प्रत्यङ्ग में भी होता है, परन्तु जहाँ अचेतनों के अङ्ग एक दूसरे से अलग किये जा सकते हैं और उसका अङ्गी की भौतिक सत्ता पर कोई मार्मिक प्रभाव नहीं होता, वहाँ चेतनों के अंगों में एक विशेष प्रकार की पारस्परिक एकता है। एक अंग का जीवन अन्य अंगों के जीवन का सहायक है। यह सहायकता वातनाडियों की संकीर्णता (complexity) के साथ बढ़ जाती है। यथा किसी पशु का एक इन्द्रिय—उदाहरणतया श्रोत्र या घ्राण या चक्षु—बिगाड़ दीजिए। सारे शरीर के विकास पर उसका हानिकर प्रभाव होगा, अचेतनों में यह बात नहीं।

वातनाडी-संस्थान और रक्त-प्रवाह

हम ऊपर कह चुके हैं कि जीवित प्राणियों के देह के जीवन का आधार वातनाडियों का जाल है, जो हृदय आदि मर्मस्थानों के साथ जुड़ा है। ताप और वाष्प की एक विशेष सीमा इन वातनाडियों पर हितकर प्रभाव डालती है। इस प्रभाव का रूप विद्युत् है। विद्युत् का यह धक्का हृदय तक पहुँच कर उसे सुकेड़ता है, जिससे उसके अन्दर का

† The 'thoroughly logical evolutionist simply says, sometimes, somehow, somewhere, some way living matter, in its simplest form, arose form nonliving matter. But he has not seen that happening, nor does attempt to say when, where, or rsally how it happened. Evolution the Way the Man by Kellog p. III. Only life produces life.

'A Second difficulty which confronts the geologist is the lack of evidence as to the origin of the great phyla into which the animal and plant kingdom are divided.' Evolution in the Light of Nodern Knowledge. Chapter on Geology by Dr. William W. Watts D., Sc. L L. D. M. Sc. F. R. S.

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

रक्त बाईं ओर की निष्कासक धमनियों (arteries) में जाता है। रक्तवाहिनियों के घूम-घुमाव में रक्त अशुद्ध होता है। प्रवेशक सिराओं द्वारा फिर हृदय में पहुँचता है और बाईं ओर की निष्कासक धमनियों में चला जाता है पशु-जगत् की स्व-शरीर-धारक क्रिया का मूल यही हृदय का संकोच और विकास है।

रसारोह

पौधों में रक्त का स्थान रस (Sap) ने लिया है। सर जगदीशचन्द्र वसु के परीक्षणों से पूर्व रस के निरन्तर आरोह का कारण वृक्ष के मूल का दबाव समझा जाता था। वनस्पति-शास्त्रियों का विचार यह था कि मूल का कार्य एक पम्प का-सा है जो पानी को ऊपर फेंकता है। वसु महाशय ने मूल को काट कर पौधे का कटा सिर पानी में रखा। पानी का चढ़ाव दीर्घकाल तक स्थिर रहा। दूसरा सिद्धान्त यह था कि पौधे पत्रों के लोम कूपों द्वारा श्वासोछ्वास करते हैं। इस क्रिया में पोधा पानी बाहर निकालता है। निकसित-जल का स्थान रिक्त हो जाने से नीचे के पानी पर खिचाव पड़ता है। कल्पना यह थी कि जल का आरोह इसी खिचाव का फल है। वसु महोदय ने पत्ते नोच डाले और त्वचा द्वारा वाष्प के बहिर्गमन का निरोध पौधे पर वेज़लीन की अत्यन्त पतली परत लगा देने से किया। रसारोह स्थिर रहा। रसारोह की क्रिया वृक्ष के किसी अवयव-विशेष तक परिमित नहीं—इसके परीक्षण के लिये पौधे के प्रत्येक अंग का उपर्युक्त अवलोकन पृथक्-पृथक् किया। परिणाम यह निकला कि रसारोह की क्रिया किसी समस्त शरीर-व्यापी कला का चमत्कार है।

पौधे के इधर-उधर का ताप घटाया-बढ़ाया तो पता लगा कि पशु-शरीर के सदृश एक सीमा तक ताप की वृद्धि रसारोह की गति को तीव्र करती है और एक सीमा के नीचे ताप की न्यूनता रसारोह को रोक देती है। शेषोक्त सीमा विकसित पौधों में १४०० सें० है और विकास पारहों में २२०० सें०।

पौधे को क्लोरोफ़ॉर्म से अभिभूत कर देने पर उसका रसारोह धीमा पड़ जाता है। समय अधिक हो जाय तो सर्वथा निरुद्ध हो जाता है, जो पौधे की मृत्यु है। विष देने से शेषोक्त परिणाम शीघ्र घटित होता है।

वायुमण्डल की शुष्कता की अवस्था में पत्रों द्वारा जल का निकास बढ़ जाता है। यदि इस क्रिया का फल-स्वरूप पौधे की आन्तरिक आर्द्रता का ह्रास रसारोह का कारण होती तो शुष्कता (अवृष्टि) रसारोह की गति को तीव्र कर पौधे के विकास पर अनुकूल प्रभाव डालती। अवस्था इसके विरुद्ध है। शुष्कता वृक्षों के जीवन की प्रगति को घटाती है।

इस प्रकार यह तो सिद्ध हो गया कि पौधों का रसारोह कोई यान्त्रिक (Mechanical) क्रिया नहीं, किन्तु पशुओं के रक्त-सञ्चार के सदृश Protoplasmic कलल-रस सम्बन्धी क्रिया है। देखना यह चाहिये कि क्या पौधों में भी रस-प्रवाह का यन्त्र वैसा ही है जैसे पशुओं में ?

अन्वय-व्यतिरेक की विधि से वसु महोदय ने उस यन्त्र का पता भी लगाया है। उन्होंने Electric Probe वैद्युत एषणी नामक सूक्ष्म यन्त्र बनाया। उससे पौधे की छाल से डण्डी के केन्द्र तक एक-एक सूक्ष्मतम परत को टटोला। अन्त में Cortex नाम के त्वगवयव के सबसे अन्दर के

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

परत में उन्हें तन्तु मिले। उन तन्तुओं में धड़कन पाई गई। यह धड़कन पशु-शरीर के सदृश किसी एक पट्ठे तथा हृदय तक परिमित नहीं, किन्तु वृक्ष, उसकी, डण्डियों तथा नालियों सबकी लम्बाई में पाई जाती हैं। इस धड़कन का रूप कौष्ठिक गति के समान समझकर उन्होंने निश्चय किया कि वृक्ष का हृदय एक स्थान पर केन्द्रित नहीं किन्तु विकीर्ण है। (Physiology of the Aesent of Sap by J. C. Bose.)

हृदय की धड़कन का हेतु वाततन्तु हैं। पौधे में इनका स्थान Phloem में फैली हुई कोष्ठ-नलिकाएँ हैं, इनका स्थान-निर्णय अतीव सूक्ष्म विद्युत यन्त्रों से हुआ है, जिनका वर्णन इस लेख में करने से विस्तृत और जटिल हो जायगा।

(Life-Mechanism of Plants by J.C.Bose)

सार यह कि हमारे वाततन्तुओं के स्थान में पौधा अपने वाततन्तु रखता है। उनके उत्तेजन से हमारे हृदय की भाँति पौधे का विकीर्ण हृदय सङ्कुचित तथा विकसित होता है। इससे हमारे रक्त-सञ्चार की भाँति उसका रस-सञ्चार होकर उसकी जीवन-सामग्री का योगक्षेम किया जाता है। पौधे का रक्तवाही यन्त्र इस अंश में अधूरा अवश्य है कि इसमें निष्कासक नलिकाएँ तो हैं, प्रवेशक नलिका नहीं।

यह हुई पौधे की पशुओं से पहली विशेषता—अर्थात् स्व-शरीर धारण में समता। दूसरी और तीसरी विशेषता पर अधिक विस्तार से लिखने की आवश्यकता नहीं। दूसरी विशेषता स्वयं सिद्ध है और तीसरी पहली ही में समाविष्ट है।

वेदना का प्रश्न

इस प्रकार जहाँ तक प्राणित्व का सम्बन्ध है, पौधे और पशु में कोई मौलिक अन्तर नहीं। प्राणित्व के पश्चात् प्रश्न वेदना अर्थात् मानसिक क्रिया का है। हमारे पुराने शास्त्र तथा आधुनिक जीवन-विज्ञान इस विषय में सहमत हैं कि जीवन Life और वेदना Consciousness का आधार एक ही चेतन पदार्थ को मानना चाहिए,‡ एक ही चेतनता जीवन तथा वेदना का अवलम्ब है। पशुओं की वेदना का भौतिक साधन वाततन्तु ही माने जाते हैं। इन्हीं की उत्तेजना से—जैसे हम ऊपर कह चुके हैं—रक्त-सञ्चार तथा प्राणायाम आदि क्रियाएँ होती हैं। वैद्युत आघातों का प्रत्युत्तर जैसे पशु और पौधे देते हैं, ठीक उसी प्रकार धातु भी देते हैं। परन्तु धातुओं की उत्तेजना का फल न जीवन है न वेदना। इसलिए उन्हें चेतन नहीं कहा जा सकता। चेतन पौधे, पशु और मनुष्य हैं।

आत्मा का लक्षण

हमारे शास्त्रों में जीव का लक्षण 'चित्' किया गया है और लिङ्ग सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न ज्ञान (न्याय दर्शन) अथवा प्राण, अपान, निमेष, उन्मेष, इन्द्रियान्तर्विकार, मन, गति, इत्यादि (वैशेषिक दर्शन) बताए गए हैं। लक्षण तो पदार्थ का स्वभाव होता है। उसके अभाव में पदार्थ का अभाव माना जाता है। परन्तु लिङ्ग की वह बात नहीं। लिङ्ग का भाव तो पदार्थ के भाव ही में होता है, परन्तु अभाव के लिए पदार्थ का अभाव आवश्यक नहीं। उपर्युक्त लिङ्गों में कई ऐसे हैं जो जीवन से सम्बन्ध रखते हैं, यथा प्राणापान,

‡ Encyclopaedia Britannica-Article on Biology.

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

निमेषोन्मेष इत्यादि। कुछ वेदना से सम्बन्ध रखते हैं, यथा—सुख, दुःख, ज्ञान इत्यादि। कुछ उभयात्मक हैं, यथा—इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, इन्द्रियान्तर्विकार इत्यादि।

पशुओं में मन

पशुओं में जीवन के अतिरिक्त वेदना भी है। वेदना का साधन जिसे अन्तःकरण कहते हैं मन है। पशुओं में मन की विद्यमानता का सबसे स्पष्ट चिन्ह उनकी इच्छा है। उन्हें सिखाया और समझाया जा सकता है। जो क्रियाएँ उन्हें स्वभाव से नहीं आतीं, वह शिक्षण से आजाने की सम्भावना है। एलबर्फ्रेड के घोड़े Cube-root (घन मूल) के प्रश्न निकाल सकते हैं। Lola लोला नामक कुतिया को दिन की गति से समय का निश्चय करना समझा दिया गया हैं। यह बात पौधों में सम्भव नहीं है।

पौधों में मन नहीं

पौधों के वाततन्तुओं को वैद्युत आघात द्वारा उत्तेजित करने और उस आघात का सूक्ष्म प्रत्युत्तर पाने से वसु महाशय का प्रारम्भ में अनुमान यह था कि पौधे सुख, दुःख अनुभव करते हैं। महाभारत के ऊपर उद्धृत किये श्लोकों में भी ऐसा कहा गया है परन्तु वैद्युत आघात से उत्तेजित तो धातु भी होते हैं और यह भी उत्तेजना का प्रत्युत्तर ठीक पौधों की तरह देते हैं। सम्मोहन और विषप्रदान का प्रभाव भी उभयत्र एकसा है। वसु महाशय ने धातुओं के उत्तेजन की फल-स्वरूप कुछ स्थिर रेखाएँ देखकर आशा की थी * कि इस परीक्षण आधार पर प्राणि-जगत् की भाँति धातुओं तक में मानसिक क्रिया की विद्यमानता सिद्ध हो कर पशुओं में पाई जाती स्मृति-शक्ति का भौतिक स्पष्टीकरण हो जायगा, परन्तु अनुभव ने उन्हें बताया कि उनका क्षेत्र प्राणियों और पौधों की शरीर-रचना तो है, मनोवृत्तियाँ नहीं। शेषोक्त क्रियाओं की खोज किसी मनो-वैज्ञानिक का काम है।

'महाबोधी' नाम का आँगलभाषा का बौद्ध पत्र कलकत्ते से निकलता है। उसमें किसी प्रश्नकर्त्ता के उत्तर में श्री वसु महाशय का पत्र प्रकाशित हुआ था। उसका प्रासङ्गिक भाग हम नीचे दिए देते हैं—

'प्रतीत यह होता है कि चेतनता पौधे में पशु की अपेक्षा अधिक विकीर्ण है। भय मृत्यु से बुरा है। पौधों में भय की विद्यमानता की कल्पना का कोई आधार नहीं।'

(Modern Review for July 1925.)

कहाँ तो स्मृति-शक्ति का भौतिक स्पष्टीकरण करने की आशा और कहाँ अब यह स्थिति कि भय की कल्पना तक पौधे में नहीं की जा सकती! मनोवैज्ञानिक जानते हैं कि भय-प्रतिकूल अनुभव (दुःख की पूर्व वेदना) का परिणाम मात्र है—यह प्रतिकूल अनुभव चाहे इस जन्म में हुआ हो या पूर्व जन्म में। दुःख की स्मृति का फल भय है और सुख की स्मृति का आशा। वसु महाशय हिंसा अर्थात् दुःख की सम्भावना सम्बन्धी प्रश्न ही का उत्तर दे रहे थे। अतः उन्होंने केवल भय की वर्त्तमानता का निराकरण किया। अर्थापत्ति से यह निराकरण आशा की वर्त्तमानता का भी समझना चाहिये।

दिसम्बर १९२४ के माडर्न रिव्यू में वसु महोदय का एक लेख छपा है जिस में वह स्वयं

* The Response of the Living and the Non—Living by J. C. Bose.

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्रश्न करते हैं— 'क्या पौधों में अनुभूति है ?' इस का उत्तर दिया है:— 'इस में हां या ना करने के लिए स्वयं पौधा बनना चाहिए'। इसके आगे पौधे में जो-जो शक्तियां हैं उनकी सत्ता का वर्णन किया है। पौधे के बातनाडीसंस्थान में कमी है मस्तिष्क की, रीढ़ की ganglionic centres शिरास्फोटों की। यह इस संस्थान के वह अंश हैं जो संगठित ज्ञान (systematised consciousness) का भौतिक आधार कहे जा सकते हैं। दूसरे शब्दों में पौधों में एक ओर तो आशा और भय के न होने से यह निश्चय होता है कि इन में किसी सरल वेदना (Simple sensation) का, यदि वह उन में होती हो, कोई स्थिर प्रभाव नहीं होता। दूसरी ओर वातनाडीसंस्थान के उत्कृष्ट अवयवों के अभाव से यह धारणा स्थिर होती है कि पौधे वैद्युत आघात के सरल भौतिक प्रभावों को किसी संकीर्ण मानस वेदना की आधारभूत, संकीर्ण भौतिक उत्तेजना में भी परिणत नहीं कर सकते।

सुषुप्तावस्था

चेतनता का प्राथमिक परिणाम जीवन है। वह पशुओं में सुषुप्ति-अवस्था में भी पाया जाता है। उस समय वेदना का अभाव रहता है परन्तु जीवन यन्त्र वात-तन्तुओं की जीवन-जनक उत्तेजना द्वारा चलता रहता है। यही स्थिति स्थिर रूप में पौधों की है। अत्यन्त ताप में जीवन का निरोध भी हो सकता है, उस में मन्दता भी आ सकती है। सुषुप्ति का ताप की मात्रा से कोई सम्बन्ध नहीं। उदाहरण तया हम दिन में भी सोते हैं। और ध्रुव के निकटवर्ती मनुष्य तो बहुत कम ताप में मनमाना दिन और मन मानी रात बनाते हैं। अतः पौधों के ताप की न्यूनता के कारण मन्द जीवन को सुषुप्ति कहना भ्रम है। उन की सुषुप्ति स्थिर सुषुप्ति है। कारण कि उन में मन नहीं। ताप के घटने बढ़ने से सुषुप्तावस्था में ही जीवन की गति तीव्र तथा मन्द होती रहती है।

इस से पाठक जान गए होंगे कि पौधे पर आघात करने से उसकी हिंसा नहीं होती।

इसी बात को ऋषि दयानन्द इस प्रकार कहते हैं:—

"पीड़ा उन्हीं जीवों को पहुँचती है जिनकी वृत्ति सब अवयवों के साथ विद्यमान हो, इस में प्रमाणः—

पञ्चावयवयोगात्सुखसंवित्तिः॥सांख्य.अ० ५।सू० २७॥

जब पांचों इन्द्रियों का पांचों विषयों के साथ सम्बन्ध होता है तभी सुख वा दुःख की प्राप्ति जीव को होती है जैसे बधिर को गाली प्रदान, अन्धे को रूप वा आगे से सर्प्प व्याघ्रादि भयानक जीवों का चला जाना, शून्यबहिरी वाले को स्पर्श, पीनस रोगवाले को गन्ध और शून्य जिह्वा वाले को रस प्राप्त नहीं हो सकता, इसी प्रकार उन (वृक्षशरीरगत) जीवों की भी व्यवस्था है। देखो ! जब मनुष्य का जीव सुषुप्ति दशा में रहता है तब उस को सुख वा दुःख की प्राप्ति कुछ भी नहीं होती, क्योंकि वह शरीर के भीतर तो है परन्तु उसका बाहर के अवयवों के साथ उस समय सम्बन्ध न रहने से सुख दुःख की प्राप्ति नहीं कर सकता और जैसा वैद्य वा आजकल के डाक्टर लोग नशे की वस्तु खिला वा सुंघा के रोगी पुरुष के शरीर के अवयवों को काटते वा चीरते हैं, उसको उस समय कुछ भी दुःख विदित नहीं होता, वैसे वायुकाय अथवा अन्य स्थावर शरीर वाले जीवों को सुख वा दुःख प्राप्त नहीं हो सकता। जैसे मूर्छित प्राणी सुख दुःख को प्राप्त नहीं हो सकता वैसे वे वायुकायादि के जीव भी अत्यन्त मूर्छित होने से सुख दुःख को

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्राप्त नहीं हो सकते। फिर इनको पीड़ा से बचाने की बात सिद्ध कैसे हो सकती है ? जब उनको सुख दुःख की प्राप्ति ही प्रत्यक्ष नहीं होती तो अनुमानादि यहां कैसे युक्त हो सकते हैं। (प्रश्न) जब वे जीव हैं तो उनको सुख दुःख क्यों नहीं होगा ? (उत्तर) सुनो भोले भाइयो ! जब तुम सुषुप्ति में होते हो तब तुम को सुख दुःख प्राप्त क्यों नहीं होते ? सुख दुःख की प्राप्ति का हेतु प्रसिद्ध संबन्ध है, अभी हम इसका उत्तर दे आये हैं कि नशा सुंघा के डोक्टर लोग अङ्गों को चीरते फाड़ते और काटते हैं। जैसे उनको दुःख विदित नहीं होता इसी प्रकार अतिमूर्च्छित जीवों को सुख दुःख क्योंकर प्राप्त होवे क्योंकि वहां प्राप्ति होने का साधन कोई भी नहीं। (प्रश्न) देखो ! निलोति अर्थात् जितने हरे शाक, पात और कन्दमूल हैं उनको हम लोग नहीं खाते क्योंकि निलोति में बहुत और कन्दमूल में अनन्त जीव हैं जो हम उनको खावें तो उन जीवों को मारने और पीड़ा पहुँचाने से हम लोग पापी हो जावें। (उत्तर) यह तुम्हारी बड़ी अविद्या की बात है, क्योंकि हरित शाक खाने में जीव का मारना मन को पीड़ा पहुंचनी क्योंकर मानते हो ? भला जब तुम को पीड़ा प्राप्त होती प्रत्यक्ष नहीं दीखती है और जो दीखती है तो हम को भी दिखलाओ, तुम कभी न प्रत्यक्ष देख वा हम को दिखा सकोगे। जब प्रत्यक्ष नहीं तो अनुमान, उपमान और शब्दप्रमाण भी कभी नहीं घट सकता। फिर जो हम ऊपर उत्तर दे आये हैं वह इस बात का भी उत्तर है क्योंकि जो अत्यन्त अन्धकार महासुषुप्ति और महानशा में जीव हैं इनको सुख दुःख की प्राप्ति मानना तुम्हारे तीर्थंकरों की भी भूल विदित होती है जिन्होंने तुम को ऐसी युक्ति और विद्याविरुद्ध उपदेश किया है।"

सत्यार्थप्रकाश सप्तमावृत्ति पृ० ४८४-५।

वेद भगवान् की आज्ञा है:—

पयः पशूनां रसमोषधीनां बृहस्पतिः सविता मे नियच्छात्। अथर्व १८-३१-५

अर्थात् परमात्मा मुझे पशुओं का दूध और ओषधियों का रस दे।

हमने इस लेख में यह सिद्ध कर दिया है कि पौधा चेतन तो है जैसे पशु और मनुष्य। परन्तु पौधे की चेतनता का आविर्भाव केवल जीवन ही में होता है और पशु और मनुष्य की चेतनता का जीवन और वेदना दोनों में पशु और मनुष्य की सुषुप्तावस्था में अपनी चेतनता को पौधे की भांति केवल जीवन का आधार बनाते हैं। और पौधे सदा सुषुप्त होने से अपनी चेतनता का सदैव यही प्रयोग करते हैं।

जीव-दया का युग

हमने अपने सारे लेख में केवल वैज्ञानिक दृष्टि से इस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है। इस सिद्धान्त का कतिपय धार्मिक मन्तव्यों पर गहरा प्रभाव पड़ सकता है। श्री वसु महाशय अपने आविष्कारों द्वारा कृषि-शास्त्र की उन्नति की सम्भावना तो करते ही हैं। वैद्यक विद्या के परीक्षणों में भी उन्हें एक नए युग की प्रवृत्ति की आशा है। जब पशु और पौधा जीवन की दृष्टि से एक हैं और ओषधि-उपचार का प्रभाव दोनों पर एक सा पड़ता है तो आगे को वैद्यक शास्त्र के परीक्षणों के पात्र पशु न बन कर पौधे बनाए जायंगे। पौधों के जीवन की अपेक्षाकृत सरलता वैद्यों के लिये सुगमता पैदा करेगी और जीवदया-वाद का वैद्यक परीक्षणालयों में भी प्रवेश होगा। वसु महाशय दृढ़ दयावादी हैं। वह विज्ञान की उन्नति चाहते और करते हैं परन्तु

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्राणियों को मनुष्य के हिंसक आविष्कारों का आखेट नहीं बनाते।

प्राचीन भारतीयों ने घोर अहिंसावादी होते हुए वैद्यकशास्त्र को उत्कर्ष की पराकाष्ठा तक पहुंचाया था—इस का रहस्य वसु की उक्त उक्ति से झट समझ में आ जाता है। वैद्यक दया है— पूर्ण दयानन्दी दया। उस का आधार ऋषियों के हाथों प्राणि-हत्या-युक्त परीक्षण शृङ्खलाएं हुई हों, बुद्धि स्वीकार नहीं करती। ऋषि दयानन्द ने वृक्षों में जीव की सत्ता को तो स्वीकार किया ही है परन्तु उन में वेदना के अभाव की वैज्ञानिक युक्ति देकर प्राणियों को हिंसा से बचा दिया है। यह स्मरण कर ऋषि के चरणों में सहसा सिर झुकता है। वाणी मुग्ध है, मूक है, पर हृदय को कौन रोकेगा पौधों का विकीर्ण हृदय कहता है—दयानन्द की जय! पशुओं का केन्द्रित परन्तु दीन हृदय कहता है— दयानन्द की जय !! चमूपति का भक्तिलीन हृदय कहता है—दयानन्द की जय !!!

कला-कौमुदी

समाचार पत्र मुक्त कण्ठ से प्रसंशा कर रहे हैं

यदि आप ने अभी तक न मंगाई हो

तो

एक प्रति अवश्य मंगाइये

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अंधी-रतन

[ले०—श्री राजनारायण जी चतुर्वेदी]

रतन शूद्र-कन्या थी। उस के पिता रामनाथ ने चमड़े के व्यापार में अच्छा पैसा कमाया था। देश-विदेश में उस के कारखाने की धूम थी। सैकड़ों आदमी उस के कारखाने में काम करते थे। हज़ारों रूपये नित्य बैंक में जमा होते—साथ ही हज़ारों का भुगतान होता। किन्तु रामनाथ के चाल-चलन, आचार-विचार अथवा रहन-सहन में किसी प्रकार की अमीराना बू न आई थी।

रामनाथ हमारी ज़मींदारी में निवास करता था। उस ने बाल्यावस्था से लेकर बुढ़ापे तक वहीं व्यतीत किया था। अतुल ऐश्वर्य्य का स्वामी होने पर भी उस ने अपना पैतृक-स्थान नहीं छोड़ा था। वरन उसी जगह दो तल्ला पक्का मकान बनवा कर रहता था। प्रत्येक वर्ष ख़ज़ाना देने के लिए नंगे पाँव, एक मोटी-सी मामूली चद्दर ओढ़ कर आता और आते ही पिता जी को साष्टाँग दण्डवत कर ख़ज़ाने का रुपया उन के पैरों पर रख हाथ जोड़ कर कहता—प्रभो ! आशीर्वाद दीजिये, जिस से रतन सुखी हो !

पिता जी हँस कर उत्तर देते—अच्छा रामनाथ तेरे पास इतना रुपया होने पर भी ख़ज़ाने का सामान्य रुपया जमा करने के लिये कंगाली की तरह तू स्वयं क्यों आता है ? रामनाथ और नम्र होकर कहता—बाबू जी ! हम आप की प्रजा हैं, हमारे बाप-दादे तक आपके टुकड़ों से पले हैं। आप ही के आशीर्वाद से आज चार पैसों का मुँह देखा है। क्या इसी सामान्य स्थिति पर गर्व करके स्वयं न आऊँ ? आप के आशीर्वाद तथा बहूरानी जी की कृपा से ही आज मेरे पास सब कुछ है। आशीस दीजिये कि संसार में जब तक जिऊँ, आप ही की छत्र-छाया में रहूँ।

पिता जी के सदुद्योग से गाँव में एक पाठशाला स्थापित हुई थी, जिस में सब जाति के लड़के-लड़कियाँ बिना किसी भेदभाव का विचार किये एक साथ ही पढ़ते थे। उन्हीं के कहने-सुनने से ग्रामवालों की अनुमति लेकर रामनाथ ने भी अपनी कन्या रतन को पाठशाला में भर्ती कर दिया था। रतन मेरी समवयस्का तथा सहपाठिका थी। उसकी बाल सुलभा सरलता, गुलाब सदृश्य सुन्दर गोल कपोलों को देखकर उसे शूद्र-कन्या कहने का किसे साहस हो सकता था। वह प्रायः मेरे पास ही बैठती। तीन वर्षों में ही हम लोगों की निम्न प्राथमिक परीक्षा हो गई। फल स्वरूप रतन प्रथम और मैं द्वितीय हुआ। उस के बाद उच्च प्राथमिक कक्षा में भी प्रथम और मैं द्वितीय रहा। तत्पश्चात् पिता जी ने सरकार से लिखा-पढ़ी कर के पाठशाला को मिडिल स्कूल में तब्दील करा दिया। हम दोनों ने यथा समय परीक्षा दी और फल स्वरूप रतन प्रत्येक विषय में प्रथम हुई।

रामनाथ एक दिन पिता जी के पास आकर कहने लगा—प्रभो ! यदि आप की आज्ञा हो तो रतन को और आगे पढ़ाऊँ। कलकत्ते में मेरे एक चचेरे भाई सपरिवार रहते हैं। उन्हीं के यहाँ रह कर पढ़ेगी।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पिता जी ने उत्तर दिया—तुम अपनी कन्या को लिखना-पढ़ना सिखाओगे। इस में मेरी आज्ञा की आवश्यकता ही क्या है?

रामनाथ ने दाँत के नीचे ऊँगली दोब कर कहा—यह क्या कहते हो स्वामी! आप ही के आशीर्वाद से तो रतन सरीखी कन्या मिली है। प्रभू के आशीर्वाद बिना मैं क्या कोई काम कर सकता हूं!

पिता जी प्रसन्न होकर बोले—तो ठीक है, रतन को भेज दो—स्त्री शिक्षा की आवश्यकता भी है और आजकल तो सभी छोटे-बड़े अपनी सन्तान को शिक्षित बनाने के पक्ष में हैं। मैं भी श्याम को कलकत्ते भेजूंगा।

× × ×

उक्त वार्त्तालाप को चार वर्ष व्यतीत हो चुके हैं मैट्रिक की परीक्षा देकर मैं गाँव में आगया। रतन और उस के पिता इलाहाबाद चले गये।

जिस दिन परीक्षा का फल अँगरेज़ी गज़ट में प्रकाशित हुआ। देखा कि मैं और रतन दोनों प्रथम श्रेणी में पास हुए। कुछ दिन बाद ही सुबह उठ कर देखता क्या हूँ कि रतन और उस का बाप घर के आँगन में खड़े माताजी को प्रणाम कर रहे हैं। रामनाथ ने कहा—बहू जी! रतन इस बार भी परीक्षोत्तीर्ण हुई है। आशीर्वाद दीजिये।

माँ बहुत प्रसन्न हुईं इतने में पिता जी ने भी आकर इस आनन्दोत्स में योगदान दिया। गज़ट में छात्रवृत्ति की सूचि प्रकाशित हुई। रतन ने विश्वविद्यालय की परीक्षा में सर्वोत्तम स्थान प्राप्त किया।

× × ×

फर्स्ट आर्ट्स पढ़ते समय रामनाथ ने कहा था कि बीच २ में मैं कॉलेज में रतन को देख आया करूँ। रतन बेथून कॉलेज में पढ़ती थी और मैं पढ़ता था सेण्ट ज़ेमियार्स में, हफ़्ते में दो वार रतन से मिल आया करता था।

पहले ही लिख चुका हूं कि रतन और मैं प्रायः समवयसी थे। वह अब नितान्त बालिका नहीं थी, पूर्ण युवती—सौन्दर्य्य की साक्षात सजीव प्रतिमा थी।

मिलने के समय मेरे प्रश्नों का उत्तर वह बड़े ही धीरे और नम्र भाव से दिया करती। उच्च-शिक्षा का दाम्भिक भाव उस में तनिक भी न था।

रतन के यहाँ से वापिस आकर प्रायः उसी के सम्बन्ध में सोचता। नाना प्रकार के भाव हृदय में उठते थे। कभी सोचता कि कॉलेज में आकर ऊँच-नीच ब्राह्मण-अब्राह्मण का विचार नहीं रह जाता तो समाज में क्यों नहीं ऐसा होता?

इसी प्रकार कुछ दिन व्यतीत हुये। शनैः किसी अज्ञात शक्ति के आकर्षण में पड़ गया! धूप और छाया की भाँति परस्पर की संगति में सुख और शान्ति का अनुभव करता।

रतन और मैं बी० ए० की परीक्षा में ससम्मान उत्तीर्ण हुये। इन पाँच-छः वर्षों में कितने ही परिवर्तन हो गये। मेरी माता तथा पिताजी का स्वर्गवास हो गया था। ज़मींदारी आदि विषय सम्पत्ति का भार एक विश्वस्त कर्मचारी को सौंप कर मैंने कलकत्ते में ही रहकर वकालत करना आरम्भ कर दिया था।

रतन बाल्यावस्था में ही मातृ-पितृहीन होगई थी। उसके चाचा ने विषय-सम्पत्ति और सारा कारबार अपने हाथों में ले लिया। संसार में रतन को अपना कहनेवाला कोई न रहा। कलकत्ता विद्यालय से एम० ए० पास करके एक बालिका-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विद्यालय में प्रधान अध्यापिका होकर रतन स्वतन्त्रता-पूर्वक जीवन व्यतीत करने लगी।

× × ×

थर्ड इयर में पढ़ते समय रतन ने एक बार मुझसे पूछा था—क्या तुम विवाह न करोगे ?

मैं—तुम कब करोगी ?

रतन—मुझ अभागिनी, मातृ-पितृहीन अनाथा से विवाह कौन करेगा ?

मैं—कौन कहता है कि तुम अनाथा हो ? विद्यारूपी अमूल्य धन से जिसका भंडार पूरित हो—वह भी कभी अनाथा हो सकती है।

रतन—किन्तु फिर भी समाज की आज्ञा अन्य प्रकार की है। समाज शिक्षा नहीं देखता—समाज चाहता है धन—ऐश्वर्य ! रुपये की मार के सन्मुख उसकी मर्यादा टिक नहीं सकती। उसकी शान, उसकी आन तथा कर्त्तव्य, धन और ऐश्वर्य पर अवलम्बित है।

उस दिन और कोई बात नहीं हुई। आज तक उसने विवाह नहीं किया।

× × ×

इसी प्रकार समय बीत रहा था। एक दिन सम्वाद मिला कि रतन की आँखें उठ आई हैं। सुनते ही मैं अपने एक डाक्टर मित्र को लेकर देखने गया। आँखों की अवस्था अच्छी न थी। तीन-चार महीने दवा करने पर भी आँखें अच्छी न हो सकीं। लाचार रतन को अपने निवास-स्थान पर ले आया। लाख चेष्टा की किन्तु उसकी आँखों को बचा न सका। अभागिनी रतन—सर्वगुण-सम्पन्न रतन आज से दृष्टि हीन हो गई।

रतन आश्रय-हीन होकर मेरे ही पास रहने लगी। सन्ध्या समय कचहरी से वापिस आकर अक्सर उसके पास बैठकर बातें किया करता था। वह कहती—छोटे बाबू ! कैसी सुहावनी सन्ध्या है !

मैं उदास भाव से कहता—रतन ! तुम नीले आकाश की रक्त-रञ्जित लालिमा देख सकती हो ! आह रतन ! अब तुम प्रकृति देवी के अपूर्व सौंदर्य का उपभोग क्या कर सकती हो ?

वह कहती—क्यों नहीं कर सकती। मेरी आँखों में तुम्हारी आँखें हैं—और इन आँखों में तुम्हारी ज्योति है। फिर क्यों नहीं देख सकती ?

मेरी आँखें सजल हो आईं।

पाँच वर्ष पश्चात् एक दिन सवेरे रतन ने कहा —छोटे बाबू ! कलेज़े में मीठा-मीठा दर्द-सा मालूम पड़ता है।

मैंने फ़ौरन डाक्टर बुलाया, डाक्टर दवा देकर चला गया। दिनभर दर्द कम रहा। रात्रि होने पर फिर क्रमशः दर्द बढ़ने लगा। रातभर चारपाई पर छटपटाती रही और मैं चुपचाप कुर्सी पर बैठा उसके मलान मुख की ओर निहारता रहा।

क्षणभर को पलक लगी ही थी कि रतन दर्द के मारे चीख़ उठी। मैंने सादर कातर कण्ठ से पूछा —रतन ! क्या तकलीफ़ ज़्यादा है ? किन्तु कोई शब्द नहीं। सिर पर हाथ रखकर पुकारा—कोई शब्द नहीं। अधिक न सह सका—छाती पर सर रखकर रोते हुये पुकारा—"रतन" !—किन्तु आह ! सब शेष ! मैं बेहोश होकर गिर पड़ा।

मैंने ही उसका अग्नि-संस्कार किया। आज भी दृष्टि-हीन दो आँखें किसी की प्रतीक्षा में कभी-कभी टकटकी लगाये दिखाई देती हैं। रतन नहीं है—है केवल उसकी पुण्य-स्मृति !!

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

फ्रांस की राज्यक्रान्ति के कारण

[ले०—ब्र० सर्वमित्र जी, गुरुकुल विश्वविद्यालय]

संसार के इतिहास में आमूलचूल परिवर्तन कर देने वाली अद्भुत घटनाओं में फ्रांस की राज्यक्रान्ति का प्रमुख स्थान है। इङ्गलैण्ड का प्रधानमन्त्री बीकन्सफील्ड कहा करता था कि दुनियाँ के इतिहास में दो ही अजूबा खेल हैं एक तो ट्राय का घेरा दूसरा फ्रांसीसी राज्यक्राँति। १८ वीं सदी के उत्तरार्ध में इतिहास के रुख को बदल देने वाली अन्य क्रान्तियाँ भी हुई हैं। व्यावसायिक-क्राँति द्वारा मध्य श्रेणी का विकास हुआ और मानवीय आर्थिक संगठन में भूमि तथा भूमिपतियों का महत्व कम हुआ। वाणिज्य की वृद्धि हुई। अमेरिकन-क्रान्ति ने प्रजातन्त्र की ओर पग बढ़ाया। इन सब क्रांतियों का क्षेत्र सीमित था। परन्तु फ्रांसीसी राज्यक्रान्ति ने सब दिशाओं-राष्ट्रीय, मानसिक, आर्थिक एवं समाजिक-में अपना प्रभाव फैलाया। इस ने फ्यूडलिज्म (समान पद्धति) के आर्थिक और सामाजिक अवशेषों को मेट दिया। (सरदार लोग) नोबल्स के विशेषाधिकारों को रद्द कर दिया। एकता, स्वतन्त्रता और भ्रातृभाव का बिगुल बजाया। इस ने पुरानी संस्थाओं को उखाड़ दिया, गहरी नींद में सोते हुए संसार को जगा दिया और दीन, धनहीन, पददलित और शृङ्खलाबद्ध जन-समाज को मुक्ति का सन्देश सुनाया। इस कथन का मतलब यह नहीं कि फ्रांस की जनता अन्य देशों की अपेक्षा अधिक दबाई जा रही थी परन्तु उस में अन्य देशों से अधिक चेतनता थी जिस के परिणाम स्वरूप क्रान्ति का श्रीगणेश हुआ। इस क्रान्ति को फ्रांस की राज्यक्रान्ति कहा जाता है। यद्यपि इस का काल १७८९ से १७९९ तक ही है परन्तु इसका प्रभाव आज तक बना हुआ है। मायर के शब्दों में फ्रांस की राज्यक्रान्ति शान्त तालाब में फेंके हुए उस पत्थर के समान है जिस से सारे तालाब में विक्षोभ पैदा हो जाता है। इस प्रकार की विश्वतोमुखी घटनाओं के लिए काफी समय की अपेक्षा है—इनका बारूद अनेक सालों में एकत्रित होता है। फ्रांस की राज्यक्रान्ति के कारण १६ वीं और १७ वीं सदी की राष्ट्रिय व्यवस्थाओं में निहित हैं। यद्यपि इनका ठीक ठीक कारण बता सकना कठिन है फिर भी हम इस के कारणों को ढूंढ़ने का प्रयत्न करेंगे।

क्रान्ति को जन्म देने का सब से अधिक श्रेय तत्कालीन अनुत्तरदायी एवं स्वच्छन्द राजसत्ता को प्राप्त है। इस समय सारे यूरोप में राजाओं के "दैवीय अधिकार" का जोर था। फ्यूडलिज्म के खण्डहरों पर राजसत्ता का मन्दिर खड़ा हुआ था। राजा वंशपरम्परागत और अनुत्तरदायी होता था। राजा का इच्छा ही फ्रांस का कानून था। न्याय का स्रोत राजा ही था। सरकारी पदों की नियुक्ति राजा के हाथ में थी। वह अपनी इच्छानुसार कर लगा सकता था और इच्छित कार्यों में खर्च कर सकता था। सन्धि और विग्रह उस के हाथ में था। राजा की इच्छा मात्र से ही कोई भी व्यक्ति कैद या मृत्युदण्ड पा सकता था। लूई १६ वां कहा करता था—'यह कार्य वैध है क्योंकि मैं इसे चाहता हूं। सारी शासक शक्ति मेरे वैध्य-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

क्तिव में निवास करती है । मुझे ही कानून बनाने का अधिकार है। राष्ट्र के अधिकार और हित पूर्णतया मेरे आधीन हैं।" इस का स्पष्ट अभिप्राय यह है कि राष्ट्र का सम्पूर्ण सामाजिक, राजनीतिक, व्यावसायिक एवं आर्थिक जीवन राजा के अधिकार में था। ये लोग प्रजा पर रोब बढ़ाने के लिए अपने दर्बार पर खूब खर्च करते थे। बढ़िया महल और हजारों नौकर, दरबारों में खर्चीला सामान सुन्दर पार्क तथा कृत्रिम झीलें थी। इन्हीं पर $ १००,०००,००० खर्च होता था। राजा के दरबार में १५००० आदमी थे जिन पर सारी स्टेट की आमदनी का ⅓ खर्च होता था। रानी के ही ५०० नौकर थे। शाही अस्तबल पर $४,०००,००० खर्च होता था ऐशआराम और धूमधाम का खर्च लगभग $२०,०००,००० था। इस प्रकार प्रजा से लिए गए कर का उपभोग किया जाता था जब कि सारी प्रजा भूखी और नङ्गी थी। इसी शानशौकत को रखने के लिए (१) मुद्रापद्धति को घटिया बना दिया गया (२) और "राष्ट्रीय ऋण" लिए जाने लगे जिन की मात्रा इतनी बढ़गई कि अब उनका मिलना भी मुश्किल हो गया । प्रजा पर कुछ भी ध्यान नहीं दिया जाता था। इस प्रकार की फिजूलखर्ची से प्रजा में असन्तोष बढ़ गया । प्रजा "उपकारी राजसत्ता" (Benevolent dlespotism) को बुरी निगाहों से नहीं देखती, यदि प्रजा का सम्यक्तया ध्यान रखा जाय, उचित न्याय किया जाय। परन्तु वह अनुत्तरदायी एवं उच्छृङ्खल राजसत्ता को सहन नहीं कर सकती।

क्रान्ति को विकसित करने के लिए "नौकर-शाही" को उस का श्रेय देना आवश्यक है। "श्रेणी तन्त्र" को ही बुरे अर्थों में 'नौकरशाही' कहते हैं। जब श्रेणीतन्त्र-शासक अपनी श्रेणी के हितों को सम्मुख रख कर शासन करते हैं और शासितों के हितों की रत्ती भर परवाह नहीं करते तब उन्हें "नौकर-शाही" कहते हैं । इतना बड़ा देश एक ही राजा से शासित होना असम्भव था, अतः आर्थिक, न्याय और विदेशी मामलों में सहायता देने के लिए लूई ने ४ कौंसिलें बनाईं। इसी प्रकार सब विषयों का निरीक्षण करने के लिए एक प्रिवी कौंसल का निर्माण किया । इन नियमों में राजा और अपनी श्रेणी के हितों का ध्यान रखा जाता था, शासितों का नहीं।

राष्ट्रीय आयव्यय की अवस्था बहुत खराब थी। राजकीय व्यक्तियों और दरबार को पूर्ण करने के लिये भी पर्याप्त आय न थी। अतः ऋण लिया जाता था जिसका शानशौकत में अपव्यय होता था। करों को लेने का ढङ्ग बहुत ही अशुद्ध था। जिन व्यक्तियों—नोबल और क्लर्जी—में अधिक कर देने की हिम्मत थी उन से बहुत थोड़ा लिया जाता था और साधारण जनता से जिस में अधिक कर देने की क्षमता न थी- अधिक कर वसूल किया जाता था। यदि किसी राजकीय व्यक्ति के पास इतनी जमीन हो जिसका इन्कम टैक्स $ ५००००० हो उस से $ ४०००० ही लिये जाते थे। दूसरी ओर एक साधारण आदमी-जिसे न्यायतः $ १४ ही कर देना चाहिए-से $ १५२ कर लियाजाता था। सर्वसाधारणजनता जमीन के ⅕ की स्वामिनी थी जब कि उसे कुल कर का ⅘ हिस्सा देना पड़ता था। ⅘ भूमि के स्वामी क्लर्जी और नोबल लोगों से सिर्फ ⅕ भाग कर लिया जाता था। इसी प्रकार ये लोग कई करों से सर्वथा मुक्त थे। इस प्रकार हम देखते हैं कि जिन में कर देने की क्षमता अधिक थी उनसे कम और जिनमें कर देने की क्षमता कम थी उनसे अधिक कर लिया जाता था। गरीबों के लिए १) की बहुत कीमत है क्योंकि उनकी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

दृष्टि में उन की सम्पत्ति की सीमान्त राशि (Marginal incriment) की उपयोगिता (utility) धनियों की अपेक्षा बहुत अधिक होती है। यदि किसी गरीब के १०) खोजायें तो उसे बहुत शोक होगा पर-किसी धनी के १००) खोने पर भी सम्भवतः उसे रञ्ज न हो-इसी से हम कल्पना कर सकते हैं कि करों के इस अवैज्ञानिक बँटवारे से सर्वसाधारण में कितना असन्तोष उत्पन्न हुआ होगा।

न्यायालयों की दशा शोचनीय थी। न्यायाधीश या तो वंशपरम्परागत होते थे या उन्होंने उस पद को खरीदा हुआ होता था। अतः स्वाभाविक था कि न्यायाधीशों की दृष्टि में उनका वास्तविक कर्तव्य 'न्याय करना' न होकर रुपया कमाना हो जावे। चूंकि उन्होंने उस पद को खरीदा था अतः स्वाभाविक था कि वे लोग अपनी गई हुई पूंजी को वसूल करें और साथ ही मुनाफा भी प्राप्त करें। अतः घूस का बाजार गर्म था। रुपयों के बदले न्याय बिकता था। ये लोग स्वार्थी थे और राजा तथा नोबिलिटी के अधिकारों की रक्षा करते थे। न्यायालयों की ऐसी शोचनीय अवस्था के साथ ही Lettre de cachet नामक पत्रों ने न्याय का गला घोंट दिया था। राजा इन पत्रों को अपने प्रेमपात्रों को दे देता था। इन पर राजा के हस्ताक्षर होते थे। पत्र का स्वामी किसी भी अपने दुश्मन को पकड़वा सकता था। पत्रों में अभियुक्त के नाम का स्थान खाली रहता था, इसी पर पकड़े गये व्यक्ति का नाम लिख दिया जाता था। इस प्रकार कोई भी व्यक्ति-जो कि किसी भी प्रकार से राजा का कृपापात्र होता था-इन पत्रों को प्राप्त कर सकता था। इतने पर ही बस नहीं। क्रिमिनल लाँ कठोर और क्रूर थे। अपराध स्वीकार कराने के लिए अभियुक्त को सताया (Torture) जाता था। अभियुक्तों को मारने के लिये जंगली उपायों को काम में लाया जाता था।

चर्च का संगठन पर्याप्त दृढ़ था। यह एक राष्ट्र के अन्दर दूसरा राष्ट्र (State within state) था। फ्रांस के भिन्न २ क्षेत्रों में १% से लेकर ४०% तक भूमि चर्च के हाथ में थी। दशांश (Tithe) नामक कर चर्च वसूल करता था। जिस प्रकार आजकल प्रत्येक व्यक्ति स्थानीय सरकार को आमदनी आदि के अनुसार निश्चित कर देता है उसी प्रकार मध्यकाल में प्रत्येक व्यक्ति को अपनी आमदनी का $\frac{1}{10}$ भाग चर्च को देना पड़ता था। चर्च की सालाना आमदनी $१००,०००००० थी। चर्च पर किसी प्रकार का कर न था। कभी कभी आवश्यकता पड़ने पर चर्च कुछ रुपये राज्य को दे देता था। चूंकि ऊंचे पादरियों में न लिया जाकर भूमि के रूप में लिया जाता था अतः कृषि को हानि पहुंचती थी। High clear-को राजा ही नामज़द करता था ये लोग नोबल होते थे। और कई गांवों के स्वामी होते थे अतः (Feudal lords) के समान वार्सले में रहना पसन्द करते थे। अतः इनकी अनुपस्थिति से चर्च में धर्म का नाम भी न रहा। दूसरे ये लोग भी शानशौकत से रहते थे, अतः इन्होंने धर्म को भुला दिया। इन की गणना नोबल्स में होती थी। इस के साथ ही छोटे पादरी भी थे-जिनकी गिनती सर्वसाधारण में होती थी। ये लोग गांवों में शिक्षा और धर्म का प्रचार करते थे और ग्रामीणों के सुख दुःख में साथ देते थे। विशेषाधिकार प्राप्त होते हुए भी इन लोगों ने क्रान्ति का पक्ष लिया।

फ्रांस की जनता मुख्यतया दो भागों में विभक्त थी (१) सरदार लोग (Nobility) (२) सर्व साधारण। समाज का संगठन स्थिति (Status)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पर आश्रित था–अर्थात् मनुष्य न स्वतन्त्र थे और न समान ही। समाज का आधार विशेषाधिकार और असमानता थी। नोबिलिटी से अभिप्राय राजकीय परिवार, नोबल्स, पादरी और धनियों से है, और सर्वसाधारण जनता में देहाती किसान, बढ़ई आदि थे। सारी जन संख्या में इनका बहुत बड़ा भाग था। इसी लिये हम देखते हैं कि विशेषाधिकार और असमानता के विरुद्ध फ्रांस की क्रान्ति का लक्ष्य "स्वतन्त्रता, समानता और भ्रातृभाव बन गया।

फयूडल सिस्टम का आधार ही सामन्त व सरदार लोग (नोबिलिटी) हैं। मध्यम काल में नोबिलिटी एक शानदार वस्तु थी क्योंकि इन में वीरता (Chivalry) थी। ये लोग दरिद्रों और गरीबों के रक्षक थे। धर्म और अबलाओं के पहरेदार थे। किन्तु इस समय नोबल लोग गरीबों और स्त्रियों की रक्षा को छोड़ कर राजा के ऐश आराम में सम्मिलित होने वाले ही रह गए थे। लल्लोचप्पो से राजा को खुश करना ही इनका काम हो गया अब नोबिलिटी तलवार की नहीं अपितु पोशाक की बन गई थी। (Nobility of robe not of sword)। इस समय फ्रांस के नोबल्स में दो भाग थे (१) नए और (२) पुराने। पुराने नोबल तलवार के द्वारा टैक्स देते थे। यदि उन के पास कुछ धन हुआ तो वे शान के साथ राजा के दरबार में रहते थे अन्यथा अपनी जायदाद पर रहते थे। नए नोबल या तो नोबल पद खरीद कर नोबल बने हुए थे या उन पदों पर थे जिन पर नोबल्स की ठाप थी। दोनों एक दूसरे से घृणा करते थे। पर क्रान्ति के समय दोनों में विवाह आदि सम्बन्ध होने लग गए और ये आपस में एक हो गए। नोबल्स की यह अवस्था होने पर भी उन्हें विशेषाधिकार प्राप्त थे। केवल नोबल ही सेना, राज्य और चर्च के उच्च-पदों को पा सकते थे। वे कई प्रत्यक्ष करों से मुक्त थे। इन्हें फ्यूडल अधिकार प्राप्त थे। इन्हें बाजार और शिकार के सम्बन्ध में विशेषाधिकार प्राप्त थे, विशेष सम्मान मिलते थे। सर्वसाधारण इन विशेषाधिकारों को घृणा की दृष्टि से देखते थी क्योंकि नोबल्स को विशेषाधिकर इसी लिये मिले थे क्योंकि वे गरीबों की रक्षा करते थे। अब उनका काम राजा से ठकुरसुहाती बातें ही करना रह गया था। अतः सर्व साधारण इनके विशेषाधिकारों को नापसन्द करते थे। विशेषाधिकारों के प्राप्त होते हुये भी बहुत से नोबल गरीब थे क्योंकि प्रथा यह थी कि नोबल के मरने के बाद उसके सब से बड़े पुत्र को $\frac{2}{3}$ सम्पत्ति और शेषों को $\frac{1}{3}$ मिले। अतः एक तो धनी रहता था और शेष गरीब हो जाते थे। इसी प्रथा के कारण कई नोबल कबूतर, खरगोश और शिकारी कुत्ते के बराबर जमीन के स्वामी होते हुवे भी "शक्तिशाली शासक" समझे जाते थे। साधारण जनता धनियों के अत्याचारों को सह लेती है वह समझती है कि यह तो अमीरों का काम है। हम भारत में देखते हैं कि यदि कोई धनी बिरादरी के नियमों का उल्लंघन भी करे तो कोई उसे बहिष्कृत करने का साहस नहीं करता। परन्तु जब नोबिलिटी–गरीब नोबल–और मध्य श्रेणी की आर्थिक अवस्था एक जैसी थी तो वे क्योंकर उनके विशेषाधिकारों को सहन करते। इस भावना ने आग में घी का काम किया।

सर्वसाधारण जनता में व्यापारियों तथा किसानों की गणना की जाती थी। इस श्रेणी में कई लोग आर्थिक चिन्ता से शून्य होगये थे अतएव ये क्रान्ति के संचालक बने। हम देखते हैं कि प्रत्येक क्रान्ति में या नए सुधारों में मध्यश्रेणी ही अगुआ होती है, क्योंकि गरीब लोग पेट की चिन्ता को छोड़

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कर अन्य कोई काम कर नहीं सकते, और धनियों को अपनी सम्पत्ति के लुट जाने का डर रहता है अतः वे सदा तत्कालीन सरकार के पक्षपाती होते हैं और क्रान्ति के विरोधी। सर्वसाधारण जनता में दो भाग थे- (१) मध्यम श्रेणी एवं (२) देहाती मजदूर और किसान। मध्यम श्रेणी में वकील, हकीम, विद्वान्, व्यापारी, बैंकर, नट, आर्टिस्ट, और सरकारी अफ़सर थे। ये शहरों और कस्बों में रहते थे और फ्राँस के धन, दिमाग और व्यापार के प्रतिनिधि थे। यद्यपि इन्हें चर्च और राज्य के भार को उठाना पड़ता था तथापि इन्हें कोई राजनीतिक अधिकार प्राप्त न थे। इन्हें अपनी सामाजिक दीनता महसूस होती थी। राष्ट्र कहीं दिवालिया न हो जाय, इस डर से ये लोग राजा के ख़र्च को कम करना चाहते थे और धन पर स्वयं निरीक्षक बनने की इच्छा करते थे। ये लोग तत्कालीन संस्थाओं से असन्तुष्ट थे और सामाजिक एवं राजनीतिक अधिकार चाहते थे। यद्यपि नोबल इनसे किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं करना चाहते थे तो भी गरीब नोबल स्वयं या अपने पुत्र की किसी धनी बैंकर से शादी कर देते थे। इस प्रकार मध्यम-श्रेणी और नोबल एक सतह पर आ रहे थे।

इसके अलावा एक चौथी श्रेणी थी। इसकी अवस्था अर्धदासों से अच्छी न थी। ये लोग जमींदार को छोड़ नहीं सकते थे क्योंकि उसके बिना इनकी पेट-पूजा असम्भव थी। इनकी संख्या कम न थी। ये बहुत कष्टों से दुःखित थे। ये लोग दासत्व में ग्रस्त थे। उनके विचार से सामाजिक ऊँच-नीच ईश्वरेच्छा के अनुसार होती था। सबसे बड़ा दासत्व वह है जिसमें दास अपने दासत्व को अनुभव नहीं करता। यह दासत्व सदा उसकी गर्दन पर सवार रहता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि फ्राँस की जनता किन कष्टों को भुगत रही थी और उनकी क्या अवस्था थी। अत्याचारों से ही नवीन परिवर्तन नहीं हो जाते उन्हें दूर करने के लिये अनुभूति की आवश्यकता है। जब तक अत्याचार-पीड़ितों में यह विचार नहीं आता-"हम सब समान पैदा हुए हैं, हम सब स्वतन्त्र हैं, किसी को हम पर अत्याचार करने का अधिकार नहीं"-तब तक वे लोग उसी चक्की में पिसते रहेंगे उस दायरे से बाहर निकलने का प्रयत्न न करेंगे। हम देख चुके हैं कि फ्राँस की जनता में करों के अपव्यय, न्याय की अव्यवस्था, नोबिलिटीके विशेषाधिकार तथा अपनी सामाजिक एवं राजनीतिक हीनता के कारण असन्तोष था परन्तु इस क्षेत्र को तय्यार करने का श्रेय कुछ दार्शनिकों और लेखकों को है। उनमें माण्टैस्क्यू, वाल्टेयर, रूसो और डिडैरैटमुख्य हैं। माण्टैस्क्यू ने Spirit of Law नाम की पुस्तक लिखी। इसमें उसने प्रतिपादित किया कि राजा "दैवीय" नहीं है वह प्रजा की इच्छा से ही बना है। मध्यकाल में सब पर "दैवीय अधिकार" का असर था। वे लोग समझते थे कि राजा ईश्वर का प्रतिनिधि है। यदि आज तूफ़ान और वर्षा के कारण मकान नष्ट हो जायँ, कृषि ख़राब हो जाय तो हम किसी के पास फ़रियाद करने नहीं जाते, इसे ईश्वरेच्छा समझ कर मन-मसोस कर रह जाते हैं। वैसे ही जब राजा ईश्वर का प्रतिनिधि समझा जाने लगा तो स्वभावतः मनुष्यों में यह प्रवृत्ति हो गई कि वे राजा के उचित या अनुचित कार्यों का विरोध न करें। परन्तु जब जनता को यह बता दिया गया कि राजा ईश्वर का प्रतिनिधि नहीं अपितु राज्य कार्य को चलाने के लिये प्रजा ने उसे चुना है तो स्वभावतः ये विचार उत्पन्न हुवे कि जिसे भले के लिये राजा बनाया गया हो उसे बुरा काम करने

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पर गद्दी से उतारा जा सकता मी है। वोल्टेयर ने अपने ग्रन्थों में ग़रीबों की दयनीय दशा का चित्र खेंचा। जेल के कष्टों का वर्णन किया। इसके लेख क्या थे— जो विषैले तानों से भरे हुए तीर थे। प्रत्येक सुधारक के लिए आवश्यक होता है कि वह तानों द्वारा लोगों को उनकी भीषण अवस्था का ज्ञान करावे। मीठे बचन वह असर नहीं करते जो एक ताना कर जाता है। यह ईश्वर, चर्च और धर्म का विरोधी था, क्योंकि इन्हीं के नाम पर ये अत्याचार हो रहे थे। साम्यवादियों के पिता रूसो ने तत्कालीन सामाजिक अवस्था के आमूल-चूल परिवर्तन पर जोर दिया। वह गरीबी की अवस्था में सारे यूरोप में घूमा था अतः उसे गरीबों की अवस्था का भली प्रकार ज्ञान था। वह कट्टर साम्यवादी था। यह उस काल्पनिक युग का चित्र खेंचा करता था जिसमें सबके पास भूमि थी, सब स्वतन्त्र थे और समान अधिकारों का उपभोग करते थे। यह कहा करता था कि सभ्यता से ही अत्याचार, स्वार्थ, लोभ, वैयक्तिक-सम्पत्ति एवं दासत्व का प्रादुर्भाव हुआ है। डिडरैट ने एक विश्वकोष लिख डाला, जो कि मूर्तिमान अत्याचार का ख़ाका था। क्राँतिकारियों को पुराने शासन की राजनीतिक, धार्मिक और सामाजिक संस्थाओं को मट्टी-पलीद करने का अच्छा मौका मिल गया। यह कोष स्वेच्छाचार, असहिष्णुता, दासप्रथा, क्रूर क्रिमिनल लो, अनुचित कर और फ्यूडलिज्म पर धावे मारने के लिये हथियार का काम देता था।

यद्यपि इन लेखकों ने सर्वसाधारण में नई भावनाओं का उदय कर दिया, तो भी इन पर सबसे अधिक प्रभाव अमेरिकन क्राँति का हुआ। अमेरिकन राज्यक्रान्ति की सफलता ने उन्हें उन उदार विचारों का और भी अधिक पक्षपाती बना दिया जिनके लिए वे घर में लड़ रहे थे। अनेक फ्रैंच युवक अमेरिका की स्वतन्त्रता कायम रखने के लिये इस क्रान्ति में शामिल हुए थे। उन्होंने अमेरिकन प्रजातन्त्र की राजनीतिक और सामाजिक संस्थाओं में उन भावनाओं की विजयों का साक्षात्कार किया, जिनका फ्राँस के साहसी लेखकों ने प्रादुर्भाव किया था। जब वे लोग लौटे तो उनमें नई उमंगें थीं। अपने देश को नया और स्वतन्त्र राष्ट्र बनाने की चाह थी। वे लोग स्वाधीनता का मजा चख आए थे अतः अब वे इन अत्याचारों को सहन न कर सकते थे। जो कुछ नूतन-संसार में देखा उसे वे पुरातन संसार में लाना चाहते थे।

इस प्रकार सारी फ्रैंच जनता में नए भाव फैल रहे थे जिसके परिणाम स्वरूप क्रान्ति का उदय हुआ।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अब्दुल रशीद की डायरी के कुछ पृष्ठ

(ले०— श्री पं० वागीश्वर जी विद्यालंकार)

आप आम अक्सर खाते होंगे। वे आम किन पेड़ों के होते हैं और कहां से आते हैं यह जान सकना कुछ मुश्किल नहीं होता तो भी मुझे यकीन है कि आप ऐसा कभी नहीं करते क्यों कि इससे आपको कुछ मतलब नहीं। मतलब की बातें ही दुनिया में इतनी ज़्यादा हैं कि उनसे फुर्सत नहीं मिलती फिर बेमतलब की बातों में माथापच्ची करने से क्या फ़ायदा ?

डायरी

(१)

डायरी लिखने की मुझे आदत सी है। यह लिखे बिना मुझे कल नहीं पड़ती। २२ दिसम्बर सन् १९२६ की डायरी घर पर ही लिख दी थी। उसमें घर-बार रिश्तेदार सबके नाम हमेशा के लिये अलविदा लिख कर उसे ख़तम कर दिया था पर खुदा को अभी और भी लिखना मंजूर था। हां, २२ दिसम्बर से अबतक फिर लिखने का मौका न मिला। हवालात में और फिर ख़ूनी को अपने साथ जिस सलूक की उमीद रखनी चाहिये वैही मेरे साथ किया जाने लगा। जो कोई आता मुझे हिकारत की नज़र से देखता। मैं अपने आप को भले ही गाज़ी समझता था मगर दूसरे सब लोग मुझे पाजी कहते थे। ज़ोरों की तहकीकात जारी थी। मुझ से भी ख़ूब पूछताछ होती थी। नरम गरम सभी तरीकों से पुलिस मेरे पेट से बात निकलवाना चाहती थी पर मैं भी निरी कच्ची गोली का न था। जितना सब जानते थे— जो मैंने दिन दोपहरे सब के सामने किया था— वही कि "मैंने काफ़िर को मारा है" यह टकासा जवाब मैंने दे दिया और अड़ गया। पुलिस की परेशानी और बढ़ी। वह ज्यादा सरगर्मी से कोशिश करने लगी। मुझे डराया धमकाया भी जाने लगा।

मगर आज एकाएक न मालूम क्यों सब का रुख़ बदल गया। ऐसे बढ़िया दस्तरख़ानों पर ऐसी लज़ीज़ तश्तरियां मैंने अपनी ख़ास सुसराल में भी न चखी थीं जैसी की मुजरिमों की इस आम सुसराल में मुझे अब नसीब हो रही हैं। मेरे बहुत से दोस्तों को अगर इन ख़ातिरदारियों का हाल मालूम हो जावे तो मुझे पूरा यकीन है कि वे बड़ी खुशी के साथ अपनी सारी उमर यहीं गुज़ारने के लिये तय्यार हो जावें। ख़ैर, बहुत-सी और २ आज़ादियों के साथ, मेरे दरख़ास्त करने पर आज मुझे डायरी लिखने की भी इजाज़त मिल गई है इसलिये ये कुछ सतरें लिखने बैठा हूं।

काम मार लिया। बात जितनी मुश्किल समझी थी उतनी निकली नहीं। मेरा ख़याल था कि ये आरिये दूसरों पर पत्थर फेंकते हुवे खुद तो शीशे के मकान में न रहते होंगे। इनके बाक़ायदा जासूस होंगे जिनकी निगाहों से बच कर मैं वहां पहुंच ही न पाऊँगा। अगर किसी तरह पहुंच भी गया तो फिर वहां निज़ामुद्दीन की तरह पहरेदारों का बन्दोबस्त होगा अगर किसी तरह कामयाब भी होगया तो फिर मुझे देख कर तो वे ज़रूर ही कच्चा खाजावेंगे। मगर इनमें से एक भी बात न हुई। ये अब भी वैसे ही बेवक़ूफ़ हैं जैसे पृथिवीराज के ज़माने में थे।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

इस में शक नहीं कि मैं पकड़ा गया मगर अब क्या परवाह है। मैंने जो करना था कर गुज़रा। मेरी जान ले लेने से भी वह काफ़िर तो फिर लौट ही नहीं सकता। हूँ, और करो शुद्धि।

मेरे घर-बार का बन्दोबस्त हो ही गया है उसकी मुझे कुछ फ़िकर नहीं। यह ठीक है कि मैंने रुपये के लालच में पड़ कर यह काम नहीं किया, इस्लाम की ख़िदमत के लिये अपनी जान पर खेला हूं। तो भी वे लोग तो अपने वादे पर पक्के रहेंगे ही और जो कुछ ठहरा है उसे पूरा करेंगे। पाँच हज़ार! पाँच हज़ार कुछ कम नहीं। बैंक से ठीक उसी दिन तो वे मँगवाये गये थे। ठ...न्न, ठ...न्न, आहा कितनी मीठी आवाज़ थी। रुपये की सूरत भी क्या ही दिल पसन्द है। ओ हो! इकट्ठे इतने रुपये मैंने पहले कभी न देखे थे। ज़िन्दगी के बचे खुचे थोड़े से दिनों में मर-खप के इनका पाँचवा हिस्सा भी मैं न कमा सकता। मगर हाँ, मैंने यह काम इन रुपयों के लालच से नहीं किया। अब जान बच गई तो भी वाह-वाह चली गई तो भी वाह-वाह। घर से तो सिर पर कफ़न बाँधकर ही निकला था। अब होनहार खुदा के खुदा के बन्दों के हाथ में है। यूं मुझे तो अब जीने की कोई ख़ास ख़ाहिश नहीं। बहिश्त का दरवाज़ा मेरे लिये खुला हुवा है। हाथों में फूलों की माला लिये हुवे वे हूरें मुझे अपनी तरफ़ बुला रही हैं।

(२)

एक ओर शहादत की शान है दूसरी ओर सिर्फ़ पागलपन के ढोंग से बचती जान है। दोस्त कहते हैं कि एक ज़िन्दगी हज़ार न्यामत है। सच है, यह बार-बार तो मिलती नहीं। बड़े-बड़े लीडर कह रहे हैं कि बस, एकबार पागल बनकर दिखादो, फिर हम रुपया पानी की तरह बहा देंगे, किसकी मजाल है जो तुम्हें फाँसी दिला सके। दिन को रात और रात को दिन कर दिखाना क़ानून के बायें हाथ का खेल है। रुपये से क्या नहीं हो सकता। हम समुन्दर पर रुपयों का पुल बाँध देंगे और प्रिवी-कौंसिल तक जाकर लड़ेंगे।

मगर मैं तो अँग्रेज़ अफ़सरों के सामने अपना जुर्म कबूल कर चुका हूँ। खुद पुलिस के आदमी ने मेरे हाथ से पिस्तौल छीनी है। आँखों देखा बयान करनेवाले गवाह मौजूद हैं ऐसी हालत में क्या उम्मीद हो सकती है। यह भी सुना गया है कि काफ़िर को मारकर भी अगर गाज़ी के दिल में अपनी जान बचाने का ख़याल पैदा हो जावे तो सब सवाब मिट्टी हो जाता है इसलिये शान ही बचानी चाहिये। कहीं ऐसा न हो कि शान भी जावे और जान भी जावे। उधर कहते हैं कि अगर यह साबित हो जावे कि मैंने पागलपने के दौर में यह काम किया है तो मैं साफ़ छूट सकता हूँ। और दिन-दोपहरे, लोगों के सामने गोली चलाना और पूछे जाने पर बिना किसी हिचकिचाहट के इसको कबूल करना ही पागलपन का काफ़ी सबूत है क्योंकि कोई सही दिमाग़ का आदमी ऐसा नहीं कर सकता। उसके लिये जान से बढ़कर प्यारी चीज़ कोई नहीं होती। और पागल को न तो अपनी जान का ख़याल होता है न इस बात का कि वह क्या कर या कह रहा है। अच्छा, तो फिर यही सही। मैं ही कौनसा अपनी ज़िन्दगी से बेज़ार हो बैठा हूँ। मुझे भी इसका एक-एक लहमा उतना ही प्यारा है जितना औरों को। मुझे भी काँटा लगने से उतना ही दर्द होता है जितना औरों को। मुझे भी अपने घरवालों से उतनी ही मुहब्बत है जितनी औरों को। फिर वे—जिन्होंने फ़तवे लिख-लिखकर मुझे दिये, वे—जिन्होंने तरह-तरह

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

के लालच देकर मुझे पक्का किया, वे—जिन्होंने जान बचा लेने का पूरा-पूरा भरोसा दिलाकर मुझे फुसलाया, क्यों दुनियाँ की मौजें लूटते रहें और मैं फाँसी पर लटकाया जाकर क़यामत तक कब्र में पड़ा सड़ता रहूँ। अगर वे इस काम को अच्छा समझते थे तो खुद ही क्यों न कर बैठे। श्रद्धानन्द ने मेरा क्या बिगाड़ा था। अगर मेरा कुछ बिगाड़ा था तो वह तो उनका भी उतना ही। तो फिर वे ही पिस्तौल लेकर क्यों न निकल पड़े। मैंने सुना है कि मेरे बहुत से काग़ज़ात आर्यों के हाथ लग गये हैं और जिन लोगों ने मुझे तय्यार किया था उनमें से भी बहुतों का सुराग पुलिस ने पा लिया है। यह भी अच्छा ही हुवा। एकही नाव में चढ़नेवाले बहुत-से मुसाफ़िर हो जावें तो डर ज़रा कम लगता है। तो क्या मैं भी सब भेद देदूँ? मगर एक बहुत बड़े लीडर तो यह राय देगये हैं कि वे सरकार के इन्साफ़ में विश्वास नहीं करते इसलिये वे अगर मेरी जगह होते तो कोई बयान न देते। इसका क्या मतलब है? क्या भेद न दूँ? मगर अब तो कोई पूछता भी नहीं। अच्छा देखा जावेगा। पहले पागलपने का नाटक ही सही।

(३)

कोई बी. ए., एम. ए., कोई वकालत, डाक्टरी का इम्तिहान देने लाहौर जाते हैं मैं पागलपन का, या यूं कहो कि अपनी किस्मत का इम्तिहान देने वहाँ गया था। अफ़सोस कि फ़ेल होगया। मगर एक बात ज़रूर लिखूंगा कि मेरा इम्तिहान ठीक नहीं हुवा। यह माना कि श्रद्धानन्द को क़त्ल करने के वक्त मैं पागल नहीं था लेकिन अपने नादान-दोस्तों के हाथों की कठपुतली बनते हुवे और पागलपन का इम्तिहान देते हुवे मैं पागल ज़रूर था।

कुछ दिनों पागलपन का ढोंग करने का नतीज़ा यह हुवा की अब मैं खुद अपने आप को पागल समझने लगा हूँ। मेरा दिमाग़ कुछ काम नहीं करता है। नींद ठीक नहीं आती और डरावने ख़्वाब बहुत दीखते हैं। सोते की बात ही क्या, मैं जागते हुवे भी यकायक चौंक पड़ता हूँ। मेरा दिल धड़कने लगता है और जिस्म काँप उठता है।

कम्पनी के मैनेजर का हुक्म है कि अब मुझे नया पार्ट प्ले करना होगा। पागल का पार्ट कुछ अच्छा नहीं हुवा। अब राहगीर बनकर स्टेशन की ओर से आना होगा और कहना होगा कि आर्यों ने खुद श्रद्धानन्द को मार डाला और मुझे—राह-चलते अनजान को ऊपर बुला लिया। मेरे हाथ में पिस्तौल पकड़ा दी। मुझे दबा लिया और मेरे सिर पर किसी चीज़ से इस क़दर मारा कि मेरे होश बिगड़ गये। दिमाग़ ठिकाने नहीं रहा। और उसी हालत में पुलिस ने डरा-धमकाकर मेरा बयान ले लिया। अच्छा यह भी कर देखूं। पञ्च कहें बिल्ली तो बिल्ली ही सही। शायद यूंही निशाना ठीक जा बैठे। डूबते को तिनके का सहारा।

(४)

अब खेल थोड़ा ही बाकी है। मैंने तो लोगों से बहुत कहा कि अब मुझे कोई उम्मीद नहीं, क्यों रुपया ख़राब करते हो। मगर वे नहीं मानते। कहते हैं कि यह तुम्हारा ज़ाती काम नहीं, इस्लाम की ज़िन्दगी या मौत का सवाल है। हम इस्लाम पर कुर्बान होनेवालों के सामने यह मिसाल रख देना चाहते हैं कि मुसलमान उनके लिये क्या-क्या सकते हैं। रँगे-हाथों पकड़े जाने पर भी उन्हें कैसे छुड़ाया जासकता है। मगर मुझे तो कोई उम्मीद नहीं। ढाक के वही तीन पात। जो कानून यहाँ है वही विलायत में है। और कुछ दिनों का

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

दिलबहलाव सही। बकरे की माँ कब तक ख़ैर मनावेगी। क्या सचमुच ही एक दिन मुझे फाँसी दी जावेगी। हाय! यह तो सोचकर भी मेरे रोंगटे खड़े होते हैं। यूं तो मुर्ग़ी को तड़प-तड़प कर जान देते हुवे मैंने बहुत बार देखा है पर आदमी को कितनी तकलीफ़ होती है इसका अन्दाज़ मुझे न था। हाय! क्या मैं भी उन्हीं मुर्ग़ियों की तरह हलाल किया जाऊँगा। यूं तो किसी दिन सभी ने मरना है पर मैं ही एक साल, नहीं-नहीं एक दिन या एक सेंकण्ड भी पहिले क्यों मरूँ? मेरे ही सिर पर कोन-सा उल्लू बोला है? क्या यह सारी दुनिया हमेशा के लिये छूट जावेगी। क्या अपने इन अज़ीज़ों को फिर कभी न देख पाऊँगा। दुनियाँ के लोगो! कातिल के साथ बेइन्साफ़ी न करो। उसका दिल भी हमेशा एक-सा नहीं रहता, उसमें भी प्यार-मुहब्बत, ख़ौफ़, डर, रहम दया सभी जुज़ मिले रहते हैं। और मैंने तो सिर्फ़ एक लहर में आकर यह काम कर दिया। मैं असल में यह करना चाहता न था। हैं, मेरा हाथ क्यों काँपता है? यह दिल क्यों उमड़ने लगा? रोना रोकने की कोशिश करने से गला दुखने लगा। आँसुओं के मारे अब कुछ नहीं दीखता—लिखा नहीं जाता।

(५)

सुना है अजमेर, लाहौर वगैरह में बहुत से हिन्दुओं पर हमले किये गये हैं। जिनमें से कई मर भी गये हैं। क्या उन्हें भी वही तकलीफ़ हुई होगी जो मुझे होनी है। क्या उनका इतना ही कसूर था कि वे हिन्दू थे। मुझे खुशी मनानी चाहिये या ग़म। ख़ैर, यह बात मन्तक से तय करके अमल में नहीं लाई जाती। मगर सोचने की बात यह है कि अगर इस तरह रोज़मर्रा ही ये वारदात हुईं तो लोगोंका यह ख़याल फिर पक्का हो जावेगा कि इनकी जड़ में कोई साज़िश ज़रूर है। न्हिदू कह रहे हैं कि अगर किसी आदमी ने कोई छोटा-सा भी काम करना हो तो वह हफ़्तों उसे विचारता रहता है अपने मिलने-जुलने वालों से राय लेता है जगह-जगह से मदद माँगता है तब कहीं उस काम को करता है। एक आदमी को क़यल करना तो एक बहुत बड़ी बात है। मारनेवाला जब तक खुद मरने को तय्यार न हो तब तक यह काम हो नहीं सकता। दो-चार दिन को भी कहीं बाहर जाना हो तो पीछे घर पर बाल-बच्चों की फ़िक्र परेशान कर डालती है तो हमेशा के लिये उनकी फ़िक्र छोड़कर, हथेली पर जान रखकर निकलना कुछ मामूली बात नहीं। यह ग़ैरमामूली बात बिना ख़ूब जोश दिलाये, बिना ख़ूब लालच दिखाये, बिना ख़ूब ढारस बँधाये हो नहीं सकती इसलिये ऐसे मामलों के पीछे ज़रूर ही कोई बड़ी साज़िश होती है यह सचाई इतनी ही साफ़ है जितनी सूरज की रोशनी मगर उल्लू उसे अगर देखना ही न चाहे तो यह बात ही दूसरी है। मुझे तो खुद शुरू से ही इस बात का ख़तरा था मगर न-मालूम क्या बात है कि हिन्दुओं के इतना शोर मचाने पर भी पुलिस इस बात को मानना नहीं चाहती। क्या यह बात इतनी बारीक है कि पुलिस की मोटी अकल उस में घुस नहीं सकती या पुलिस की अकल इतनी बारीक है कि यह मोटी बात उस में दाख़िल नहीं हो सकती ख़ैर जो असली भेद है है वह तो मैं जानता ही हूं। मगर अब मुझे इन बातों से क्या लेना है। एक ख़ून तो मेरे माथे है ही अब नाहक और क्यों लूं। जिसका जो फ़ेल है वह खुद उस के आगे आवेगा। अल्लाह सब से बड़ा है वह सब को माफ़ करे।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

76179

(६)

होनी होकर रहती है टल नहीं सकती। उमीद के जिस कच्चे सूत में मेरी ज़िन्दगी का भारी बोझ लटक रहा था आज वह भी टूट गया। अब मैं नीचे ही नीचे गिरा जा रहा हूँ। प्रिवी कौन्सिल ने मेरी अपील ना मंजूर करदी यह सुनते ही मैंने अपने हाथों अपना सिर पीट लिया और दाढ़ी नोच डाली। मुझे फाँसी ज़रूर दी जावेगी यह तो मैं पहले ही जानता था पर आज मौत की इतनी डरावनी सूरत एकाएक इतनी नज़दीक देख कर मैं काँप उठा। मेरा जिस्म पसीने से तरबतर होगया। मैंने बहुत चाहा कि अपने दिल को थाम सकूं मगर सब बेकार। बालू की मुट्ठी से दरया का बहाव नहीं रुकता। मेरी कोठरी मुझे दोजख़ मालूम होने लगी। मैंने देखा कि मुझे जीते जी आग में डाल दिया गया है। मेरा तिल-तिल भर जिस्म चट चट कर जल रहा है। छाले पड़-पड़ कर फूट रहे हैं हज़ारों बिच्छुओं के एकसाथ काटने की-सी दर्द मेरी बोटी बोटी में हो रही हैं। मैं इतनी देर से जल रहा हूँ पर मरता नहीं। नीचे से नई नई खाल निकल आती है और जलने लगती है। मैंने हाथ जोड़कर गिड़गिड़ाते हुवे उन फ़रिश्तों से कहा— शायद आप ग़लती कर रहे हैं। मैंने तो एक बड़ेभारी काफ़िर को मारकर बहिश्त का हक़ हासिल किया है। आप मुझे यहां क्यों ले आये। मेरा नाम तो अब्दुल रशीद है। बड़े २ मुल्ला मौलवियों से फ़तवे लेकर मैंने श्रद्धानन्द को जहन्नुम रसीद किया है। हिन्दुस्तान के बड़े-बड़े मुसलमानों ने मुझे काज़ी और गाज़ी के ख़िताब दिये हैं। मस्ज़िदों में हज़ारों मोमिनों ने एक दिल होकर मेरे लिये दुआयें मांगी हैं। कुरान की शरह के मुताबिक मुझे बहिश्त मिलना चाहिये। क्या खुदा के घर में ही खुदा की हुक्म अदूली की जावेगी।

उन्होंने डाटकर कहा—चुप रह बदज़ात कुत्ते! खुदा का पाक नाम अपनी गन्दी ज़बान पर मत ला। उसके एक प्यारे को मारकर तूने बहुत बड़ा गुनाह किया है। मैं चौंक पड़ा। मेरी हैरत का कुछ ठिकाना न रहा। मैंने कहा—क्या इस्लाम से बाहर भी खुदा के प्यारे हो सकते हैं? मैंने तो अबतक यही पढ़ा है कि खुदा एक है मुहम्मद उसका रसूल है उस में ईमान लाये बिना इन्सान काफ़िर है उसकी नजात नहीं हो सकती। तो क्या वह झूठ था? उन्होंने कहा— अरे कूवे के मेंढक! यह कौन कहता है कि खुदा एक नहीं लेकिन पैगम्बर वक्त-वक्त और जगह-जगह के लिहाज़ से बदलते रहते हैं। पानी एक ही समन्दर का है मगर कहीं वह कूवे से, कहीं नदी से, कहीं तालाब से और कहीं सोत से हासिल होता है। बुद्ध, ईसा, मुहम्मद, दयानन्द सब उसी एक खुदा का पैग़ाम लाने वाले थे। अगर तुझे यकीन न होतो एक वार आँख बन्द कर अपने दिल के अन्दर देख। यह कह कर उनमें से एक ने मेरे मुँह पर हाथ फेर दिया। मेरी आँखें बन्द होगईं। मैंने देखा एक ऊंचे तख़्त पर खुदा बैठा है। सभी पैग़म्बर उसके चारों ओर आस पास बैठे हैं। मुहम्मद और श्रद्धानन्द ख़ूब घुलघुल कर बातें कर रहे हैं। मेरी पिस्तौल की गोलियां जहां लगी थीं वहां फूलों का ओ३म् लिखा हुवा है।

इतने ही में मैंने देखा कि चारों तरफ़ से मुझ पर गोलियों की बौछार आने लगी। एक एक गोली मेरे जिगर को छेद कर पार होने लगी। मैंने दौड़ कर प्यारे रसूल का दामन पकड़ना चाहा पर उन्होंने मुझे झिड़क कर अलग कर दिया। तब श्रद्धानन्द जी ने गोलियों की बाढ़ को अपनी छाती पर लेकर मुझे अपनी आड़ में कर लिया। मगर रसूल कहने लगे कि— नहीं स्वामी जी! इस पाज़ी को अपना बोया काटने दीजिये ऐसे ही नासमझ

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

इस्लाम-परस्तों ने जहान में मुझे बदनाम कर रक्खा है। मैंने दुनिया को एक भाईपने का सन्देशा दिया था ये उसकी मिट्टी यूं ख़राब कर रहे हैं। स्वामीजी ने हँस कर कहा—रशीद अब कोई डर नहीं। जिस पर प्यार होता है भूल होने पर उसी पर ज़्यादा गुस्सा किया जाता है इसीलिये ये तुमसे नाराज हैं। रसूल ने कहा— रशीद ! यूं तो हम सब पैग़म्बरों में कुछ फ़रक नहीं। शीशेमें देखने से अपना मुँह भी थोड़ा बहुत बदल जाता है उतना ही फ़रक हम में हो सकता है तौ भी इस वक्त इन्हीं स्वामी जी ने तुम्हें पनाह दी है इस लिये तुम इनकी कदम-बोसी करो। ये चाहेंगे तो तुम्हारा कुछ भला कर देंगे। शरम, डर, भक्ति वगैरह कई भावों ने मुझ पर एक साथ कब्ज़ा कर लिया। मैंने देखा—स्वामी जी के चेहरे पर एक ख़ास नूर है। उनकी आँखों से मुहब्बत टपकी पड़ती है। उनकी एक-एक मुस्कराहट में रहम हिलोरे ले रहा है उनके रोंये २ से माफ़ी-माफ़ी झलक रही है। उनकी छाती पर शुद्धि लिखा हुवा है। आहिस्ते २ स्वामीजो का जिस्म बढ़ने लगा। उनका सिर आसमानमें जा लगा। उनकी बांहें पूरब से पच्छिम तक फैल गईं। साथ ही साथ वे 'शुद्धि' के हरफ़ भी उतने ही बढ़ गये। सारी दुनिया शुद्धि में डूब गई। पर यह शुद्धि दिल की शुद्धि थी और कुछ नहीं। क्या इन्हीं को मैं मारना चाहता था। ओह ! मैं कैसा पागल था ! मेरा सिर झुक गया मैं उन के कदमों पर जागिरा। उन्होंने मुझे उठा कर गले लगा लिया। और कहा— रशीद ! अब से तुम्हारा नाम ऋषिदत्त रक्खा गया। हिन्दुओं के असूल के अनुसार पुनर्जन्म भी होना है। इन ऋषि दयानन्द जी की कृपा से तुम्हें नया जन्म प्राप्त होगा। जाओ शुभ कर्म करो और शुभ गति पावो।

जेल का घण्टा बजा, मेरी आंखें खुल गई। मैं बार बार आँखें मीच कर उस नज़ारे को देखने की कोशिश करने लगा मगर कामयाब न हुआ। अब मुझे मौत का डर नहीं। पुराना चोला फेंक कर नया पहनूंगा। मगर अपने भाइयों को इतना ज़रूर कहूंगा कि एक हाथी को छू कर जानने वाले उन ६ अन्धों की तरह मज़हब की छोटी २ बातों पर लड़ना छोड़ दो। अपने ख़ून की मैं तुम से यही क़ीमत मांगता हूं। मेरे हममज़हब भाइयो ! मेरे लिये खुदा से दुआ करो।

तुम्हारा बिछुड़ता हुआ भाई

रशीद

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मेरा मिसहज़कैरी के साथ सम्भाषण

(गतांक से आगे)

[ले० अंजना देवी आर्य्या वैदिक धर्म विशारदा, सिद्धान्त विशारदा]

अपने प्रण के अनुसार दूसरे दिन जब मैं पार्क में पहुंची तो मिसहजकैरी पूर्व ही आ चुकी थीं। आज उस के साथ एक और स्त्री थी, इस की आयु सम्भवतया २४, ३० की होगी मुझे दूर से ही आते देख कर मिस हज कैरी बेंच पर से उठ खड़ी हुई ख़ैर कुछ इधर उधर की हो जाने पर मिस हजकैरी अपनी बात पर आईं उन्होंने कहा— मैंने आप से कल कहा था कि मैं प्रत्यक्ष प्रमाण के साथ अपनी हंसी का कारण बतलाऊंगी, अतः यह बहिन के प्रमाण हैं। जिन का पूर्व नाम सरला देवी है और अब यह मिसजैम्स के नाम से प्रसिद्ध हैं। आपने मुझ से कहा था कि गुण कर्म स्वभाव का मिलान होने पर किसी भी वंश का वर या कन्या लेकर आप लोग विवाह कर सकते हैं मसलन मिसकैरी की शादी आप के लड़के के साथ हो सकती है यदि दोनों का गुण कर्म स्वभाव एक है, अतः आप की बात को काटने के लिए सरला देवी तो तैयार हैं, यह आप को अपना हाल सुनाने को उद्यत हैं जिस से आप मेरा कहने का कारण जान जायंगी, मिस हज़कैरी यह सब कुछ एक श्वास में कह गई। मिसहजकैरी के चुप हो जाने पर मिसजैम्स ने कहा—प्यारी बहिन आप नाराज़ तो नहीं हो गई मैंने कहा— नहीं आप अपना इतिहास कह जाइये मिसजैम्स ने कहना शुरू किया।

मैं अपने मां बाप की तीसरी सन्तान थी, मेरे माता पिता आर्य समाजी थे, उन्हें आर्य समाज में दाख़िल हुए कोई १२ वर्ष हो गये होंगे मेरा बचपन बड़े आनन्द से व्यतीत हुआ जब मैं पाँच वर्ष की हुई तो मुझे पाठशाला में पढ़ने के लिये भेजा गया पर मैंने पांचवीं क्लास तक शिक्षा ग्रहण की, बाद में मुझे मेरी माता ने पाठशाला से हटा लिया बुला लिया, कि मेरी काफ़ी लियाकत हो चुकी है। खैर बाद में मैंने घर का काम सीखना शुरु किया इस प्रकार होते २ मेरी आयु १४ वर्ष की हो गई। (एक बात जो मैं कहना भूल गई थी कि मेरी सगाई तभी करदी गई थी जब मेरी आयु ६ वर्ष के लगभग थी) जब मेरी आयु चौदह वर्ष की हुई तो मेरे विवाह के साज सजने लगे। खूब धूम धाम के साथ मेरी शादी हो गई मेरे पिता जाति के अरोड़ क्षत्रिय थे अतः मेरा विवाह भी जाति के भीतर ही हुआ विवाह में खूब पंडित आये। मेरे पति का नाम मोहनलाल था जो बी० ए० क्लास में पढ़ता था उनकी आयु अधिक से अधिक २२ वर्ष की होगी खूब दहेज दिया गया बड़ी धूम धाम से मुझे ससुराल में लाया गया! जब मैं ससुराल में गई तो हिन्दुओं की रस्मों के अनुसार दो घण्टे तक कुछ खेल जैसा होता रहा पश्चात् मुझे पति से परिचित होने का समय दिया गया मैं पहिले उन को जानती पहिचानती भी न थी खैर मैं कमरे में बैठी थी वह आये पर मैं वैसे ही घूंघट ओढे बैठी रहा

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उन्होंने पुनः बाते कहीं मैंने उत्तर न दिया इस के बाद कुछ देर सन्नाटा रहा पर थोड़ी देर के पश्चात् उन्होंने बैठते हुवे कहा—कि मुझे यह बुरका पोशी पसन्द नहीं है इसे उतार डालो, आज्ञा पालन अपना कर्तव्य समझ कर मैंने अपना घूंघट हटा दिया ।

घूंघट हटाते हुवे जब मेरी दृष्टि उन पर पड़ी, तो मैंने देखा कि वह मुझे बड़े ध्यान से देख रहे हैं, मुझे देखते ही उन्होंने कहा—उफ् बस इतना कह कर वह कमरे से बाहिर हो गये । (मैं एक बात लिखनी भूल गई मिस हज़जैम्स का रंग यद्यपि बहुत ही सख्त काला नहीं था पर हम उस रङ्ग को सफेद भी नहीं कह सकते) मैं स्तम्भित सी रह गई यह क्या हुआ मुझे कुछ भी समझ में न आया मैंने समझा कि अभी लौट कर आते होंगे पर घंटा भर व्यतीत हो गया वह न आये कुछ समय के पश्चात् मेरी सास ने धीरे २ कमरे में कदम रक्खा वह वैसे ही चुप चाप बैठी थी मेरी सास आकर मेरे पास खाट पर बैठ गईं उन्होंने मेरी कमर पर हाथ फेरते हुवे कहा—सरला बेटी मोहन को क्या कहा था—मैं हैरान हो गई मैं आश्चर्य से सास के दुःख की ओर देखने लगी मेरी सास ने फिर उन्हीं शब्दों को दोहराया मैंने धीरे से कहा—मैंने तो कुछ नहीं कहा वह बोली अच्छा कोई डर नहीं सो जाओ वह मेरी साथ वाली खाट पर सो गई और मुझे भी सोने का सा ढंग करना पड़ा पर मुझे सारी रात नींद नहीं आई । मैं मन में कहूं हे ईश्वर ! यह क्या हुआ, मैंने तो कुछ भी नहीं किया जैसे तैसे दिन हुआ नियमानुसार मुझे सात दिन सुसराल में रहना था, पर सात दिनों में मुझे एक वार भी ऐसा अवसर नहीं मिला जब कि मैं उन के दर्शन ही कर पाती । हां इतना अवश्य कि मुझे उन के रूठने का कारण मालूम हो गया आप देख रही हैं कि मेरी शकल कैसी है बस उन की नाराज़गी का यही कारण था मेरे दिल पर उस समय क्या गुजरी होगी आप सोच सकती हैं, यदि उन के और मेरे माता-पिता ने पहले हमारा परिचय करा दिया होता तो वह फल कभी न निकलता, खैर जैसे तैसे सात दिन काट कर पीहर में आ गई, तीन मास के लगभग मैं पीहर में रही पर मेरा दिल जानता है कि वह दिन मेरे कैसे कटा करते थे। मेरे माता पिता ने तीन मास के पश्चात् मुझे फिर—कुछ धन देकर मेरी सास के साथ सुसराल को भेजा, मेरी सखियों सहेलियों ने मुझे बहुत कुछ पाठ पढ़ाये थे मैंने वहाँ आकर उन सब को धीरे २ उपयोग में लाना शुरु किया, पर वहां तो पत्थर दिल थे जो कभी पिघलने का नाम ही न लेते थे, गरमियों की छुट्टियों में बड़ी कठिनता से उन्हें घर बुलाया गया था। एक दिन जब कि वह कमरे में अकेले बैठे हुए थे मुझे मेरी सास ने जान बूझ कर किसी कार्य के बहाने भेजा मैं भीतर गई वह कुछ सोच कर रहे थे मुझे देख कर चौंक पड़े। फिर एक ही वार उठ कर खड़े हो गये, मैं समझ गई कि मुझे भीतर आया जान बाहर जा रहे हैं मैंने गिर कर पांव पकड़ लिये और बैठने के लिये प्रार्थना। की पता नहीं उस दिन ईश्वर की कैसे कृपा हो गई वह मुझ से कुछ दूर उठ कर कुरसी पर बैठ गये उन्होंने कहा तुम क्या कहना चाहती हो मैंने कहा—यदि मेरा कुछ दोष होतो आप मुझे बता दें, मैंने तो उस दिन आप को कुछ भी नहीं कहा था उन्होंने लम्बी आह भर कर कहा—दोष तुम्हारा तो नहीं दोष तुम्हारे और हमारे

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

माता पिता का है या हम हिन्दु क़ौम के उलटे कानूनों का है। मैं कुछ भी नहीं समझी उन्होंने फिर कहा— तुम्हारा इतना सज सज कर मुझे प्रसन्न करने का फल व्यर्थ है मेरे दिल में वह भाव आ ही नहीं सकता, जिस की तुम आशा रखती हो दुनिया इस को चाहे धर्म का सम्बन्ध कहे तो कहे, पर मैं तो यह समझता हूं कि यह प्रेम का सम्बन्ध है। यदि मेरे दिल में तुम्हारे प्रति प्रेम ही नहीं तो मैं तुम्हें खुश रखना कोई फ़र्ज ही नहीं समझ ता प्रेम करने पर ही आदमी किसी के साथ आराम से आयु गुजार सकता है, बिना प्रेम के यह घर एक जञ्जाल हो जाता है जो मुझे पसन्द नहीं।

अफ़सोस कि मुझ से कोई राय नहीं ली गई थी और मेरी राय लेना कोई जरूरी नहीं समझा गया था, इस में चाहे तुम मेरी गलती कहो या न कहो, पर मैं मज़बूर हूँ मेरी ओर से तुम आजाद हो जहाँ चाहो, रहो न रहो मेरे साथ तुम्हारा कोई सम्बन्ध नहीं। इतना वह एक वार ही कह गये अन्तिम वाक्य के समाप्त होते न होते वह उठ कर कमरे से बाहिर चले गये मैं जहां की तहां धरती पर पड़ी रह गई न जाने कितने समय तक पड़ी हुई मैं अपने भाग्य को रोती रही, उस दिन की बात का मुझ पर बहुत बुरा या अच्छा जो भी आप समझें प्रभाव हुआ, मुझे पहिले अपने पति पर क्रोध आया करता, फिर सास ससुर पर, फिर माता पिता पर कभी अपने भाग्य पर! दिन २ निकलते मेरे विवाह को वर्ष व्यतीत हो गया अब मैं बिलकुल ही पीहर में रहने लगी, थी, इसी बीच में हमारे घर के पास एक मिशनरी ने आकर घर किराये पर लिया था वह मिशन की प्रचारिका थी, पहले पहल वह मुहल्लों में सद् गृहस्थों की तरह रहने लगी उस की वेश भूषा रहन सहन सब हिन्दुओं सा था केवल थी वह ईसाई, उस ने मुहल्ले की कन्याओं को सिलाई लिखाई शुरु की मैं भी उस के पास जाने लगी धीरे २ मेरा बोल चाल उस से बढ़ा, एक दिन मैंने उसे अपना सारा हाल सुनाया उस ने मुझे ईसाई धर्म की विशेषतायें बतलाईं उन्होंने कहा कि हमारे धर्म में ऐसा नहीं होता इत्यादि, धीरे २ मुझे इस की बात बहुत भाई। मुझे ले जाने के पांच छः दिन पूर्व उस ने उस गृह को छोड़ दिया और हमारे घर से बहुत दूर एक चर्च में चली गई पश्चात् एक दिन शाम को जिस का फैसला पहिले हो चुका था मुझे अपने साथ चर्च में ले आईं वहां पहुँचते ही मुझे ईसाई बना लिया गया और दो घण्टे बाद उस शहर को छोड़ कर बम्बई भेज दिया गया वहां पर मैं २२ साल की उमर तक रही वहां के कालेज में पढ़ती रही और मेरी इच्छा के अनुसार मेरा विवाह मिस्टर जैम्स के साथ हो गया इतना कह कर मिसेज़जैम्स चुप हो गई? मैं चुप चाप सिर झुका कर सुनती रही कुछ देर चुप रहने के पश्चात् मिसहज़ कैरी ने कहा—क्यों बहिन जी क्या मेरी हंसी फ़ज़ूल थी मैं तो अभी तक चुप चाप बैठी थी उन की इतनी बात सुन कर चौंक पड़ी मैंने कहा—बहिन मैं तुम्हें क्या कहूँ? आप की हंसी बिलकुल ठीक थी मेरा चेहरा बहुत कुछ उतर चुका था। मिस हज़जैम्स ने मेरे भाव को ताड़ कर कहा बहिन जी आप ऐसी क्यों हो गई हैं, आपने कोई असत्य नहीं कहा था आप की धर्म पुस्तकों में जरूर ऐसा विधान है, स्वामी दयानन्द ने अवश्य ऐसे रूल बनाये हैं और उस को लेकर आप कह सकती हैं, और शायद आप

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

इस बात के पालने को भी तैय्यार होंगी तभी तो आपने कहा है, पर इन का मतलब महज़ यह था, कि नियमों पर लोग नहीं चलते। आप समझ सकती हैं कि जिस की आँखों के आगे ऐसे उदाहरण मौजद हो कि जिस से हिन्दु जाति की कमजोरियां साफ़ जाहिर हो रही हैं। वह आप की इस बात को मुश्किल से ही ठीक मान सकता है। मैंने अपने आप को सम्हाल कर कहा ठीक है, बेशक यह हमारी कमजोरियां हैं जो हमें आगे कदम नहीं बढ़ाने देतीं पर आप देखेंगी कि कुछ देर में आप को ऐसी शिकायत आर्य्य जाति से करने का समय नहीं मिलेगा मिस हज़ कैरी ने कहा—प्रभु करे! ऐसा ही हो! तब मैं भी शुद्ध होने के लिये आऊंगी अभी तो हम ऐसे ही निभा रहे हैं। आप देखिए! कि हम ईसाई लोग।सारे तो ये ही हिन्दु या मुसल्मान हैं? महज़ ऐसी बातों से ही मजबूर हो कर दूसरे धर्म का सहारा लिये हैं। कोई ऐसे भी हैं जो रुपये के लोभ में ईसाई हुये हों पर आप को ऐसे लोग मिलेंगे जो अधिकतर केवल ऐसी बातों से ईसाई होते हैं। अस्तु।

बहुत देर हो जाने के कारण फिर हम सब वापिस लौट आईं।

इति

कला-कौमुदी

'ज्योति' के ग्राहकों को विशेष रियायत

अथवा

१॥) के स्थान में केवल १।) में

आर्डर देते समय अपना ग्राहक नम्बर अवश्य लिखें

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सच्चा अछूतोद्धार

[ले० बुद्धिसागर वर्मा विशारद बी. ए. एल. टी.]

किसी समाचार पत्र को उठाइये, किसी मासिक पत्रिका को पढ़िये, अछूतोद्धार और संगठन की आवाज़ बुलन्द की जा रही है। इस ओर काम भी बहुत हो रहा है। पूज्य स्वामी श्रद्धानन्द जी की कुर्बानी ने और भी जोश पैदा कर दिया है। किन्तु हमारी दृढ़ धारणा है कि जब तक हिन्दू-जाति की सामाजिक कुरीतियों का समुचित संशोधन न किया जायगा तब तक यह असमर्थ जाति मुसलमान जैसी संगठित जाति का पूर्णरूप से मुक़ाबिला नहीं कर सकती। कहावत है—"जो तू सींचे मूल को फूले फले अघाय।" रोग के आदि कारण को दूर करने से सारे शरीर का स्वास्थ्य आप ही आप सुधर जाताहै। हिन्दू-जाति के कर्णधारों को साथ-ही-साथ सामाजिक बुराइयों को दूर करने का भगीरथ प्रयत्न करना चाहिये। इसके विना न तो सच्चा संगठन हो सकता है, और न सच्चा अछूतोद्धार।

आजकल जिस ढंग पर अछूतोद्धार का काम हो रहा है, उस में हमारी समझ से कई त्रुटियां हैं। अछूतों को साथ बिठलाने, उनके साथ सहानुभूति दिखलाने उनके हाथ का छुआ खाने; उन्हें देव मन्दिरों पर चढ़ाने आदि का प्रयत्नादि, यहीं अधिकांश में अछूतोद्धार का कार्यक्रम समझा जाता है; समय को देखते हुये इन सभी बातों की आवश्यकता भी है। किन्तु केवल इन्हीं से अछूतों का उद्धार नहीं हो सकेगा।

हम देखते हैं, समय के हेरफेर से अछूतों में भी जागृति आरही है। वेभी अपने को श्रेष्ठ बनाने की फ़िकर में हैं। लेकिन तरीका जो इस्तेमाल किया जा रहा है वह नितान्त भ्रममूलक है। शिक्षा प्राप्त करना निस्संदेह उपयोगी है। मैं तो कहूँगा कि अछूतोद्धार के कार्यक्रम के साथ प्रत्येक ग्राम में, प्रत्येक नगर में, प्रत्येक मुहल्ले में रात्रि पाठशालाओं की आयोजना होनी चाहिये। इन पाठशालाओं में वैतनिक अध्यापक रखने की अपेक्षा शिक्षित समुदाय के लोग वारी २ से अपना कुछ समय दिया करें तो बहुत लाभ हो। यह बड़ी सुगमता से हो भी सकता है। आधा घंटा वकील साहब भी देसकते हैं। आधा घंटा डाक्टर साहब भी देसकते हैं। आधा घंटा मास्टर साहवान भी आसानी से दे सकते हैं। कम से कत इतना ही समय सेठ साहूकारों को भी देना चाहिये। इस प्रकार यह कार्यक्रम किसी एक व्यक्ति पर भाररूप न होकर मज़े में और बहुत थोड़े खर्च में चल सकता है। किन्तु पढ़ कर जो कुवासनायें उदय हो जाती हैं वही विष बुरा है और सच्ची उन्नति के पथ में रोड़ा अटकाता है। जहाँ एक नाई का लड़का मिडिल तक पढ़ गया, फिर वह नाईगिरी के काम में लजाने लगता है। एक चमार का लड़का इन्ट्रेन्स पास करके जूते बनाने की अपेक्षा १५) की गुलामी को कहीं अच्छा समझने लगता है। शिक्षित अछूत के लिए खेत की मेढ़ पर बैठना और हल में हाथ लगाना जघन्य कर्म हो जाता है। हम ४-५ ऐसे अछूत भाइयों को जानते हैं, जिनके यहाँ

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

खेती वारी आदि का काम मुद्दतों से हुआ करता था। किन्तु अब वे वरनाक्यूलर फाइनल पास कर चुके हैं। हम लोग उन्हें कुर्सी पर नहीं तो अपने मोढ़े या चारपाई पर अवश्य सहर्ष बैठाते है। वे उजले अंगरेजी काट के कपड़े पहिनते हैं। अब उन से हरी ऐनक के बिना धूप में चला नहीं जाता। देहात का बना जूता उन के पाँव को बड़ा कष्ट देता है। अब उन से खेती वारी का काम नहीं होता। इसके लिये उन्हें अपने निर्धन भाइयों को नौकर रखना पड़ा है। उन्होंने नौकरी के लिए डिस्ट्रिक बोर्ड में प्रार्थना पत्र दिये हैं। दो तो नौकर भी हो गये हैं।

एक बार ठाकुर मशालसिंह भूतपूर्व एम. एल. ी. चेयरमैन डिस्ट्रिक्टबोर्ड हरदोई से बात ीत में ज़िकर आया। उन्होंने कहा 'जो भी मिडिल पास करता है सीधा मेरे पास आता है कि कहीं नौकरी दिला दीजिए। उन्होंने यह भी कहा कि मेरे पास न जाने कितने प्रार्थना पत्र पड़े हुये हैं किन्तु नौकरी के लिये इतनी जगहें कहां से पैदा की जा सकती है। यह तो दशा है। सुधार कैसे हो सकता है।

अतः शिक्षा प्रचारकों का कर्तव्य होना चाहिए कि इन कुवासनाओं को मिटाकर रोज़गार धन्धों की ओर उन्हें प्रोत्साहित करें। धनी-मानी सज्जनों को आर्थिक सहायता प्रदान कर उत्साह बनाना चाहिये अन्यथा उन्नति के मार्ग पर चल कर अवनति के गढ़े में गिरने के अतिरिक्त और क्या परिणाम होगा ?

अछूतोद्धार का वास्तविक अर्थ तो यह होना चाहिये कि एक चमार का लड़का उच्चशिक्षा प्राप्त कर जूता गाँठने की बजाय Leather boot फैक्टरी खोले। हिन्दू जूता फ़रोश बहुत कम हैं ; यह भी हिन्दू-समाज में एक बड़ी न्यूनता है। इसकी भी पूर्ति होनी चाहिये। इसी प्रकार कोरी के लड़के को ऊँची शिक्षा प्राप्तकर कपड़ा बुनने का उच्चादर्श स्थापित करना चाहिये। धोबी के लड़के को भी अपने निजी काम में उन्नति करनी चाहिये। इसी भाँति अन्य सारी जातियों को भी अपने पेशे में उन्नतिशील होने का प्रयत्न करना चाहिये। विद्या का अभिप्राय ही यही है। इसी बात को लक्ष्य में रखते हुये मनु मनु महाराज ने कहा है—

'स्वधर्मे निधनं श्रेयः पर धर्म्मो भयावहः।'

अन्यथा हमारी दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति न हो सकने से कितना कष्ट होगा, इसका अनुमान सहज ही में किया जा सकता है।

दूसरी बात लीजिये। नाई पढ़-लिखकर अपने को ब्राह्मण कहलाना चाहते हैं। सुनार अपने को वर्मा लिखकर क्षत्रिय बनते हैं। धानुक कहते हैं कि हम अछूत नहीं हैं। हमारे पूर्वज 'धानुष्क' क्षत्रिय थे। पासी भी अपनी बहादुरी डींग मारकर क्षत्रियों के वंशज बनते हैं इत्यादि-इत्यादि। यह सारी बातें हमारी समझ में नितान्त बे सिर-पैर की हैं। हम मनु महाराज के इस वाक्य का खंडन नहीं करते कि—"शूद्रो ब्राह्मणातामेति ब्राह्मण-श्चैति शूद्रताम्।" शूद्र ब्राह्मण बन सकता है, वैश्य भी बन सकता है ; किन्तु गुण और कर्मों द्वारा खाली गला फाड़ने और ढोल पीटने से नहीं। कहार अपनी सभा में प्रस्ताव पास करते हैं कि चौका-बर्तन का काम हमें नहीं करना चाहिये। शहरों और गाँवों में कहारों के कान फूँके जाते हैं कि ठाकुर साहब का काम छोड़ दो। मैं पूछता हूँ क्या इस प्रकार कहार अपनी स्थिति को ऊँचा

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बना लेंगे ? पहले योग्य बनो, अधिकार स्वयं प्राप्त हो जायगा ; यही प्राकृतिक नियम है। इसमें कुछ थोड़ी हमारी भी ग़लती है। हममें से बहुत अदूर-दर्शी एषणाप्रिय महानुभाव इन लचर विचारों का समर्थन करने लगते हैं। पात्रापात्र का विचार छोड़कर जनेऊ तक दे देते हैं। इस प्रकार जिन्हें परीक्षा दिये बिना यों ही सनद मिल जाती है, उन्हें योग्यता प्राप्त करने की क्या आवश्यकता ?

इसी प्रकार और भी बहुत-सी बातें कही जा सकती हैं; जिन्हें दृष्टि-पथ में रखकर यदि अछूतोद्धार का काम उठाया जाय तो निस्सन्देह वास्तविक अछूतोद्धार कहा जा सकता है। एक बात और भी है। अछूतोद्धार का काम प्रायः दो प्रकार के प्रचारकों द्वारा होता है। (१) वैतनिक प्रचारकों द्वारा (२) लोकेषणाप्रिय अवैतनिक प्रचारकों द्वारा। यह दोनों प्रकार के प्रचारक धन-लिप्सा से अथवा यश-लिप्सा से काम करते हैं। ऐसे प्रचार में अन्तरात्मा की शक्ति का योग बहुत न्यून रहता है। अतः उसका परिणाम भी चिरस्थाई नहीं होता। यह मनोविज्ञान का अटूट सिद्धान्त है। आर्यसमाज और हिन्दूसभा की अवनति का यह भी एक कारण है कि सच्चे (Sincere) प्रचारकों का अभाव-सा है। इसके प्रतिकूल मुसलमान और ईसाइयों में सच्चे प्रचारकों की कमी नहीं ; जिसका परिणाम हमारे सामने है। हममें यह न्यूनता क्यों है ? हम वर्णाश्रमधर्म की मर्यादा भुला बैठे हैं। हमने वानप्रस्थाश्रम का नाम ही मिटा रक्खा है। हमें गृहस्थाश्रम में प्रवेश कर मधुमक्षिकावत शहद के एक किनारे पर बैठकर सांसारिक भोगों का रसास्वादन करना चाहिये। ताकि हमारे पंख हमारे सांसारिक मायामोह-रूपी शहद में लथड़कर बेकाम न हो जायँ और समय पड़ने पर हम आसानी से निकल सकें। किन्तु आज हमारी स्थिति उस मूर्ख मक्खी की-सी होरही है। जो बीच कटोरे में लोभवश कूद पड़ती है और फिर इच्छा रहते हुये भी निकल नहीं पाती और परिणाम यह होता है कि उसी में मर जाती है। प्रत्येक अवस्था में उन्नति के लिये त्याग की आवश्यकता होती है। हमें गृहस्थाश्रम का विधिवत पालन कर मायामोह के जाल को काटकर कुछ समय वानप्रस्थ के लिये अवश्य देना चाहिये। यदि हम ऐसा करें तो ये सारी कठिनाइयाँ सहज में ही दूर हो जायँ। सच्चा वानप्रस्थी ही इन कामों को भली प्रकार कर सकता है। हमें अछूतोद्धार के लिये पहले अपना सुधार करना होगा। तभी हम देश, जाति एवं समाज का कल्याण करने में समर्थ हो सकेंगे।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सूक्तिमाला

(ले०—बुद्धिसागर वर्मा विशारद बी.ए.एल.टी)

१. समय बीतने पर हमें वस्तुओं तथा मनुष्य के गुण दोषों का पता चलता है।

२. अधिक सावधान होने के साथ साथ हम तार्किक भी हो जाते हैं। छोटी से छोटी बातों पर हमारी दृष्टि पहुंचती है।

३. सुन्दरता प्रायः विवेक को नष्ट कर देती है।

४. स्वच्छता गृहस्थ का सब से बड़ा धर्म है।

५. एक ही चीज जो हमें बिना मूल्य मिलती है वह प्रेम है।

६. किसी देश का महत्व उसके आकार और उस के द्वारा शासित प्रदेशों की संख्या पर निर्भर नहीं होता वरन् उस के आदर्शों और भीतरी शक्ति पर निर्भर होता है।

७. प्राणियों के मन में प्रेम की उत्पत्ति स्वाभाविक होती है, उस का बीज हृदय क्षेत्र में परमात्मा ही बो देता है।

८. प्रेम अन्धा होता है— अन्धे को क्या रूप क्या कुरूप ?

९. जिस परिवार में आपस में ही मत भेद हो, वह सफल कभी नहीं हो सकता।

१०. व्यर्थ ही सन्देह करने का स्वभाव अन्त में भारी विपत्ति का कारण हो जाता है।

११. शत्रु के पंजे में फंस कर दास रहना अपमान की बात नहीं है। अप्रतिष्ठा वहीं आरम्भ होती है जहां तुम स्वेच्छा पूर्वक दास रहते हो।

१२. सौन्दर्य प्रेम को जाग्रत कर सकता है, पर उस का कारण नहीं हो सकता।

१३. माता पिता के वार्तालाप का अज्ञानतः सन्तान पर बड़ा प्रभाव पड़ता है।

१४. जीवन संगिनी भार्या के शुद्ध प्रेम की उपमा संसार में नहीं है।

१५. पाप कभी छिपाये नहीं छिपता।

१६. जब मनुष्य पाप में प्रवृत्त हो जाता है, आत्मा के विरुद्ध कार्य करने लगता है और मर्यादा के बन्धन तोड़ देता है, तब उसे घोर से घोर पाप करने में डर नहीं लगता।

१७. पाप शीघ्र ही पराजय स्वीकार नहीं करता।

१८. मनुष्य की वाह्य आकृति का कुछ न कुछ संबन्ध आभ्यंतरिक प्रकृति से अवश्य रहता है।

१९ द्वेष से भरा हुआ हृदय पवित्र आमोद भी नहीं सह सकता।

२०. गर्भिणी के सुख और स्वास्थ्य पर लड़के का सब कुछ निर्भर है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विद्याओं का भण्डार वेद

(लेखक— श्री पं० प्रियव्रत जी विद्यालङ्कार)

भारतीय आर्य लोगों का बहुत पुराना—शायद इतना पुराना जितनी पुरानी कि स्वयं सृष्टि है—विश्वास है कि करुणामय भगवान् ने मनुष्य जाति के कल्याणार्थ - उसे अभ्युदय और निःश्रेयस, ऐहिक और पारलौकिक चरम सुख, की प्राप्ति का सत्य और सरल मार्ग दिखाने के लिये—सृष्टि के आरम्भ में वेदों का प्रकाश किया था, और ये वेद अखिल विज्ञान का भण्डार हैं। ब्राह्मण और उपनिषदें, दर्शन और स्मृतिग्रन्थ, पुराण तथा रामायण और महाभारत, सब के सब वेदों के इस परम महत्व की ऊँची स्वर से उद्घोषणा कर रहे हैं। एक शब्द में, आर्य जाति का समग्र साहित्य वेदों की महिमा के गीत गा रहा है। आर्य्यों के विगत इतिहास में, कुछेक को छोड़ कर, कोई ऐसा नाम लेने योग्य नेता या विचारक नहीं हुआ जिसने वेदों के इस महत्व को मानने से इन्कार किया हो। "शथपथ ब्राह्मण" की वेदों के सम्बन्ध में राय है कि,

एवं अरे अस्य महतो भूतस्य निःश्वसितम्। एतद् यद् ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्वाङ्गिरसः। श० कां १४। अ० ५। ब्रा० ४। कं. १०

अर्थात् हे! मैत्रेयि! चारों वेद परमात्मा ने इस प्रकार अनायास उत्पन्न कर दिये हैं जिस प्रकार कि श्वास प्रश्वास की क्रिया अनायास होती रहती है। वेदों का ईश्वर-कर्तृत्व बताने के लिए ब्राह्मण-कार रूपकसे वेदों को ईश्वर का निःश्वसित ही कह देता है। एक दूसरी जगह यही ग्रन्थ कहता है—

स ऐक्षत प्रजापतिः, "त्रय्यां वाव विद्यायां सर्वाणि भूतानि। हन्त त्रयीमेव विद्यामात्मानमभि सस्करवै" इति। श० १०। ४। २। २१-२२

अर्थात सृष्टि के स्वामी प्रजापति ने सब भूतों (सृष्टि) को देखा और कहा—"त्रयी विद्या में सब भूत आजाते हैं अर्थात् वेदों में सब भूतों का ज्ञान है, इस लिये त्रयी विद्या को ही आत्मा की उन्नति और पूर्णता के लिए देता हूँ।" इसी प्रकार "तैत्तिरीय ब्राह्मण" में एक स्थान में लिखा है—

अथ सर्वाणि भूतानि पर्य्यैक्षत। स त्रय्यामेव विद्यायां सर्वाणि भूतान्यपश्यत्॥ अत्र हि सर्वेषां छन्दसा मात्मा सर्वेषांस्तोमानां सर्वेषां प्राणानाम् सर्वेषां देवानाम्। एतद्वै अस्ति, एतद्धयमृतं यद्धयमृतं तद्धयस्ति। एतदुत यन्मर्त्यम्।

यही शब्द श. १०। ४। २। २१ में भी आते हैं जिन का अभिप्राय यह है कि "प्रजापति ने सब भूतों को देखा। उसने सब भूतों को त्रयी विद्या में पाया। त्रयी विद्या को ही सब छन्द, स्तोम प्राण और देवों का आत्मा पाया अर्थात् त्रयी विद्या में इन सब का ज्ञान निहित देखा। त्रयी मरणधर्मा मनुष्यों के लिए है।" "तैत्तिरीय ब्राह्मण" ३। १०। ११। ३—४ में एक कथा इस प्रकार आती है—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

भारद्वाजो ह त्रिभिरायुभिर्ब्रह्मचर्य्यमुवास । तंह जीर्णं शयानमिन्द्र उपव्रज्योवाच, "भारद्वाज यत्ते चतुर्थमायुर्दद्यां किमेतेन कुर्य्या इति" । ब्रह्मचर्य्य मेवैतेन चरेयमिति होवाच । तं ह त्रीन् गिरिरूपान विज्ञातानिव दर्शयांचकार । तेषां ह एकैकस्मान् मुष्टिमाददे । सहोवाच भारद्वाजेत्यामंत्र्य । वेदा वै एते । अनन्ता वै वेदा । एतद्वै त्रिभिरायुभिरन्व वोचेथाः । अथ हीतरदनूक्तमेव । एहि इमं विद्धि । अयं वै सर्वा विद्या इति ।

अर्थात् "भारद्वाज ने तीन जन्मों में ब्रह्मचर्य्य पूर्वक वेदों का ही अध्ययन किया । जब वृद्ध होकर मृत्यु-शय्या पर पड़ा था तब इन्द्र ने उस से कहा कि अगर मैं तुम्हें चौथा जन्म और देदूँ तो क्या करोगे ? भारद्वाज ने उत्तर दिया कि उस जीवन में भी ब्रह्मचर्य पूर्वक वेदों का ही स्वाध्याय करूँगा । तब इन्द्र ने उसे उसे तीन बड़े बड़े पहाड़ से दिखाये और हरेक से एक २ मुष्टि लेकर कहा "भारद्वाज ! आओ, ये वेद हैं । ये अनन्त हैं । तूने तो तीनों जन्मों में भी इतना सा ही पढ़ पाया है । अधिकांश तो तेरे लिए अज्ञात ही पड़ा है । आओ इसे जानो इस में सब विज्ञान है ।"

इसी प्रकार आर्य्यों के प्रसिद्ध स्मृतिकार (Lawgiver)मनु महाराज की सम्मति है—

अग्नि वायु रविभ्यस्तु त्रयं ब्रह्म सनातम् ।
दुदोह यज्ञ सिद्धयर्थं ऋग्यजुः साम लक्षणम् ।
मनु० १।२३

अर्थात् "**सनातन**वेदों को परमात्मा ने सृष्टि के आरम्भ में अग्न्यादि ऋषियों पर प्रकट किया ताकि यज्ञ (व्यवहारों) की सिद्धि हो सके" । भगवान् मनु अपने धर्मशास्त्र के प्रथमाध्याय के २१ श्लोक में वेदों की सर्व-विद्या-प्रतिपादकता सिद्ध करते हुए कहते हैं—

सर्वेषां तु नामानि कर्माणि च पृथक् पृथक् ।
वेद-शब्देभ्य एवादौ पृथक् संस्थ श्चनिर्ममे ॥

अर्थात् "परमात्मा ने वेदों के अनुसार ही सब चीजों और प्राणियों के नाम और कर्म तथा लौकिक व्यवस्थाओं की रचना की" । वेदों की अखिल-विज्ञान-प्रतिपादकता इस से भी स्पष्ट शब्दों में भगवान् मनु अपने शास्त्र के १२वें अध्याय के ९७–१०० श्लोकों में इस प्रकार दर्शाते हैं—

चातुर्वर्ण्यं त्रयो लोकाश्चत्वार श्चाश्रमाः पृथक् ।
भूतं भवद् भविष्यच्च सर्वं वेदात् प्रसिद्धयति ॥
शब्दाः स्पर्शश्च रूपं च रसो गन्धश्च पञ्चमः ।
वेदादेव प्रसूयन्ते प्रसूति गुण कर्मतः ॥
बिभर्ति सर्वभूतानि वेदशास्त्रं सनातनम् ।
तस्मा देतत् परम्मन्ये यज्जन्तोरस्य साधनम् ॥
सैनापत्यं च राज्यं च दण्डनेतृत्व मेव च
सर्वलोकाधिपत्यं च वेदशास्त्रविदर्हति ॥

अर्थात् "चारों वर्ण, चारों आश्रम, तीनों लोक (पृथिवी, अन्तरिक्ष, द्यौ), भूत, भविष्य और वर्तमान में होने वाली सारी चीजें, ये सब वेद से ही जाने जाते हैं । शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गन्ध (इन के संबन्ध का सम्पूर्ण ज्ञान) वेद से ही जाने जाते हैं । सनातन वेद शास्त्र ही सब भूतों का पालन कर रहा है, इस लिये मनुष्य का उसे सिद्ध करना— सम्यक् रूप से जानना— ही मुख्य कर्तव्य है । वेद

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

शास्त्र-वित् ही सैनापत्य (Command of armies), राज्य (Royal athority), दण्डनेतृत्व (Administration of justice), और सर्वलोकाधिपत्य (Sovereignty-of the whole world) कर सकता है (अर्थात् वेद राजनीति (Politics) का सम्पूर्ण ज्ञान दे रहे हैं)।

इतना ही नहीं, भारतीय आर्यों के मन में वेदों का महत्व कितना अधिक था, वे वेदों को किस प्रकार अनेक विद्या-विज्ञानों का गम्भीर रत्न-निधि समझते थे, इसे समझने में सहायता देने के लिये वेदान्त-दर्शन शांकर-भाष्य से कुछ पंक्तियें उद्धृत की जाती हैं। दार्शनिक लोग ईश्वर-सिद्धि के लिये "सृष्टि-कर्तृत्व की युक्ति" दिया करते हैं। जिस प्रकार एक घड़ी स्वयं नहीं बन सकती— उस की जटिल और सूक्ष्म रचना हमें किसी रचयिता का अनुमान करने के लिये बाधित करती है, उसी प्रकार यह विश्व-ब्रह्माण्ड भी अपने आप नहीं बन सकता—इस की जटिल और सूक्ष्म रचना भी हमें किसी निर्माता का अनुमान करने के लिये बाधित करती है। वेदान्त-दर्शन के प्रथमाध्याय के दूसरे सूत्र "जन्माद्यस्य यतः" में ब्रह्म (ईश्वर) सिद्धि के लिये इसी "सृष्टि-कर्तृत्व की युक्ति" (Cosmological argument) का आश्रय लिया गया है। वेदान्त के रचयिता को मानो इतने से सन्तोष नहीं होता। वह ब्रह्म की सिद्धि के लिये एक दूसरी युक्ति देता है। वह है "वेदों का कर्तृत्व" (Authorship of the Vedas)। इसके लिये वेदान्त के लेखक अगला सूत्र बनाते हैं— "शास्त्रयोनित्वात्" अर्थात् वेद जैसी ज्ञान की भण्डार पुस्तकें अपने आप नहीं बन सकतीं, इस लिये कोई उन का कर्ता होना चाहिये, और वह कर्ता है ब्रह्म। इस सूत्र के शांकर-भाष्य की कुछ पंक्तियें देखने योग्य हैं—

"महत ऋग्वेदादेः शास्त्रस्य अनेक विद्यास्थानोपबृंहितस्य प्रदीपवत् सर्वार्थावद्योतिनः सर्वज्ञकल्पस्य योनिः कारणं ब्रह्म। नहीदृशस्य सर्वज्ञादन्यतः संभवोस्ति। यद्यद्धिस्तरार्थं शास्त्रं यस्मात् पुरुष विशेषात् संभवति—यथा व्याकरणादि पाणिन्यादेः क्षेयैक देशार्थ मपि— स ततोप्यधिकतर-विज्ञान इति। किमु वक्तव्यम्, अनेक शाखाभेदभिन्नस्य देव तिर्यङ्मनुष्य वर्णाश्रमादि प्रविभाग हेतोः ऋग्वेदाद्याख्यस्य सर्वज्ञानाकरस्य अप्रयत्नेनैव लीलान्यायेन पुरुषनिःश्वास वत् यस्मान्महतो भूतात् योनेः संभवः।"

इन पंक्तियों का संक्षेप में भावार्थ यह है कि "ऋग्वेदादि वेद अनेक विद्याओं से युक्त, सर्वज्ञान के खजाने और दीपक की भांति सब पदार्थों का बोध कराने वाले हैं। इन का सर्वज्ञ ब्रह्म के अतिरिक्त और कोई कारण नही हो सकता।"

दर्शन, विज्ञान और भाषा-विज्ञानों के क्षेत्रों में आर्यों ने जो उन्नति की थी वह सारी चार 'उपवेद' छः 'अंग' और छः 'उपांग' इन तीन शीर्षकों के नीचे आजाती है। इन तीनों को वेदों पर आश्रित माना जाता है। जिस का अभिप्राय यह है कि इन में जिन विषयों का वर्णन किया गया है वे सब मूल

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

रूप में वेदों में विद्यमान हैं, उन्हीं की व्याख्या इन में की गयी है। चार उपवेद निम्न हैं:—

(१) "आयुर्वेद" या Science of life, इस में जिन विषयों वर्णन आता है उन के आधुनिक नाम Medicine, Surgery, Hygene, Chemistry, Physiology, Anatomy आदि हैं।

(२) "अर्थवेद" या शिल्पविज्ञान--Science of Mechanics,

(३) "गन्धर्ववेद" या Science of Music and song, drama and dancing.

(४) "धनुर्वेद" Science of war and weapons.

६: अंग इस प्रकार हैं:—

(१) "शिक्षा" या Science of Phonetics and Orthoepy.

(२) "कल्प"

(i) "धर्मसूत्र" या Principles of Law.

(ii) श्रौत सूत्र" Rules of vedic ceremonies.

(iii) "गृह्य सूत्र" Rules of domestic-ceremonies

(iv) "शुल्व सूत्र" Principles of Geometry.

(३) "व्याकरण" Grammer.

(४) "निघण्टु" Phylology.

(५) "छन्द" Prosody.

(६) "ज्योतिष" Astronomy.

छः उपांग ये हैं:—

(१) न्याय (२) वैशेषिक (३) सांख्य (४) योग (५) मीमांसा और (६) वेदान्त दर्शन। इन छः दर्शनों में जिन विषयों का वर्णन हुआ है उन के आधुनिक पाश्चात्य नाम Logic, Metaphysics, Psychology, Ethics और Physics आदि हैं। ऊपर लिखा जा चुका है कि इन सब का आधार वेदों को माना जाता है। जिस का अर्थ यह है कि भारतीय आर्य विचारक वेदों में प्रायः उन सब विज्ञानों का मूल मानते रहे हैं जिन्हें कि अब तक का सभ्य संसार जान पाया है।

वेदों का इतना महत्व होने पर भी, सैंकड़ों शताब्दियों पूर्व, स्वयं भारत वर्ष में ही जो कि सदा वैदिक सच्चाइयों का परीक्षा-क्षेत्र और लीला-भूमि रहा है, किन्हीं अज्ञात कारणों से वेदों का गम्भीर स्वाध्याय बन्द होगया। इन सैंकड़ों--बल्कि हजारों-शताब्दियों में वेदों का जो स्वाध्याय होता रहा वह बहुत ही उथले ढंग का ओर वेदों के अभिप्राय को अधिकाधिक छिपाने वाला ही होता था। इस प्रकार के स्वाध्याय के परिणाम स्वरूप, सायण, महीधर उवट आदि के जो भाष्य वेदों पर मिलते हैं उन्हें देख कर, यह धारणा कि वेद 'अनेक विद्यास्थानोप बृंहित' 'सर्वज्ञ कल्प' 'प्रदीपवत् सर्वपदार्थाव द्योती' और 'सर्वज्ञानाकर' हैं शिथिल हो जाती है। मालूम होता है कि जिन नियमों के अनुसार इस काल में वैदिक शब्दों के अर्थ किये जाते रहे वे नियम वेदों का अभिप्राय समझने के लिये ठीक

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

नियम न थे। इसी लिये ये भाष्यकार वेदों में उस प्रकार की कोई बात न दिखा सके जिस प्रकार की बातों का वेदों में होना मनु आदि प्राचीन विद्वान् देखते थे।

ईसा की सत्रहवीं सदी से पाश्चात्य विद्वानों का ध्यान संस्कृत साहित्य की ओर आकृष्ट होना आरम्भ हुआ। कितने ही विद्वानों ने संस्कृत पढ़ी और उसके विभिन्न अंगों के अनुवादों का प्रकाशन और उन पर अपनी समालोचनाओं का लिखना प्रारम्भ किया। वैदिक साहित्य पर भी अनेक विद्वान् लगे। वेदों के जिस प्रकार के भाष्य और टीकायें इन लोगों के सामने आये उन के स्वरूप का संक्षिप्त वर्णन ऊपर किया जा चुका है। पौराणिक कथाओं और याज्ञिक कर्म-क्रियाओं के अतिरिक्त इन भाष्यों में तत्व की बातें बहुत कम थीं। इन्हीं भाष्यों की सहायता से पाश्चात्य विद्वानों ने वेदों के अनुवाद किये और उन पर अपनी समालोचनायें लिखीं। ये अनुवाद और समालोचनायें अधिकांश में वेदों के प्राचीन महत्व को कम करने वाली और उन के प्रति अरुचि उत्पन्न करने वाली थीं। अंग्रेज़ी शासन काल में पाश्चात्य विद्वानों की ये पुस्तकें अंग्रेज़ी भाषा के द्वारा भारतीय लोगों को भी पढ़ने को मिलीं। संस्कृत भाषा का प्रचार प्रायः सर्वथा कम होगया था। वैदिक भाषा का तो कहना ही क्या है। स्वयं भारतीयों को भी वेदों के संबन्ध में पाश्चात्य विद्वानों की सम्मति की अपेक्षा होने लगी। उन लोगों से जो सम्मति मिली उसने भारतीय नव-शिक्षितों के मनों में भी वेदों के प्रति अरुचि के भाव पैदा कर दिये। पुराने ढर्रे के संस्कृत पढ़े लिखे लोगों में यह यह सामर्थ्य न था कि इस पाश्चात्य-प्रभाव का विरोध और समाधान कर सकते।

यह अवस्था थी जब भारत वर्ष के रंग-मंच पर ऋषि दयानन्द का प्रादुर्भाव हुआ। उसने वेदों के महत्व का प्राचीन शंख फिर से फूँका। उसने फिर से गम्भीर घोषणा की कि "वेदों में सब विद्यों का मूल है।" फिर से उस ने शंकर कि आवाज़ में आवाज़ मिलाकर कहा—वेद "अनेकविद्यास्थानोपबृंहित" हैं, 'सर्वज्ञकल्प' हैं, और 'सर्वज्ञानाकर' हैं। लोगों ने कहा, पिछले भाष्यकार और पाश्चात्य विद्वान् जो रूप वेदों का दिखाते हैं वह तुम्हारी बात का विरोध करता है। उसने उत्तर दिया— ये लोग जिन नियमों का आश्रय लेकर वेदों को समझना चाहते हैं उन नियमों से वेदों के मर्म को नहीं समझा जा सकता। ये लोग मंत्र में आये 'विशेष्य' की अपनी पूर्व-कल्पित मूर्ति को सामने रखते हैं और उस के अनुसार 'विशेषण' शब्दों को तोड़ते मरोड़ते हैं। इस से अर्थ का अनर्थ हो जाता है। उचित विधि यह है कि 'विशेषण' शब्दों को सामने रखते हुए, उन के अनुसार 'विशेष्य' का अर्थ निर्धारित किया जाय। इस प्रकार वेद में रूढ़ि-वाद का स्थान नही रहने देना चाहिए। उसने निरुक्त, महाभाष्य, ब्राह्मण तथा दूसरे प्राचीन ग्रन्थों के प्रमाणों से अपने पक्ष को पुष्ट किया। इस का परिणाम यह हुआ कि जो लहर लोगों के मनों में वेदों के लिये

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अरुचि उत्पन्न करती और इन्हें आदिम आर्यों (Primitive Aryans) के विभिन्न प्राकृतिक शक्तियों की स्तुति में गाये गये गीतमात्र समझने को उन्हें प्रेरित करती थी, उसे एक ज़बरदस्त रुकावट मिली। अनेक लोग वेदों को नवीन रीति से—जो कि वस्तुतः अति प्राचीन थी—पढ़ने और विचारने लगे। इस नये अध्ययन से प्राचीन आर्य्य-विश्वास, कि वेदों में सब सत्य-विद्याओं का मूल है, पुष्ट होता हुआ मालुम हुआ। वेदों के अनेक स्थलों की नयी और वैज्ञानिक व्याख्यायें होने लगीं। यद्यपि इस दिशा में अभी तक इतना कार्य्य नहीं हुआ है कि अविश्वासी पाश्चात्य संसार वेदों के प्राचीन महत्व को पूर्ण रूप से स्वीकार करले। पर फिर भी इस ओर जो काम हो रहा है, और उस में जो आशा-जनक सफलता मिल रही है, उस से विश्वास होता है कि वह समय बहुत अधिक दूर नहीं है, जब कि संसार फिर से मुक्त कण्ठ से स्वीकार करेगा कि वेद वास्तव में "सर्वज्ञ कल्प" हैं— 'सर्वज्ञानाकर' हैं— और सृष्टि के प्रारम्भ में परम कारुणिक भगवान् ने मनुष्यों के कल्याणार्थ ही उन का पवित्र प्रकाश किया था।*

*लेखक की अप्रकाशित पुस्तक "वेदों के राजनैतिक सिद्धान्त" का एक अंश।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

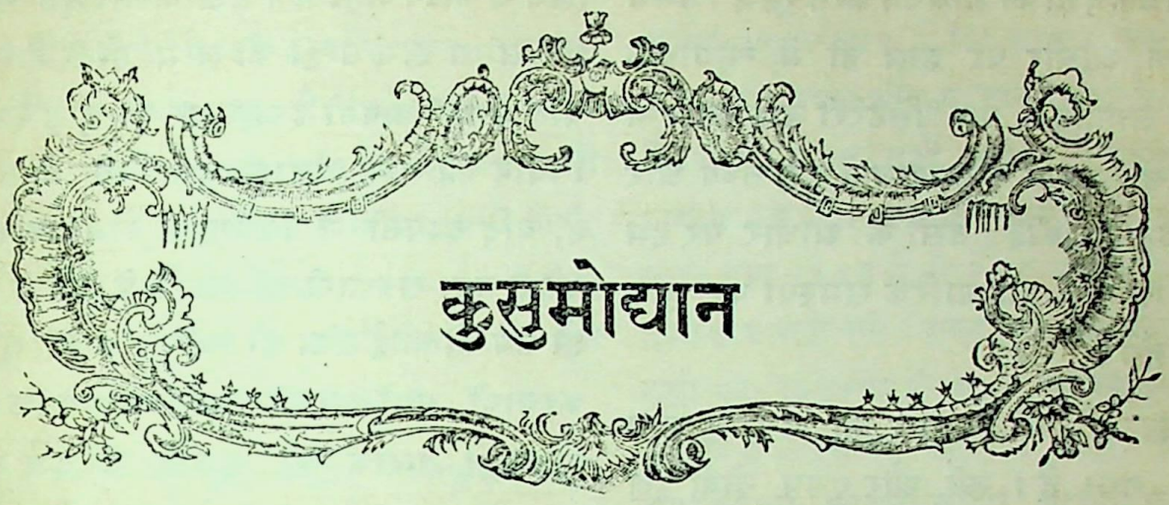

कुसुमोद्यान

१. रूस में अबाधित प्रेम के चमत्कार।

भारतीय विचारों के अनुसार विवाह केवल मात्र प्रेमका बन्धन नहीं, उस में प्रेम की अपेक्षा कर्तव्य का स्थान अधिक है। यहाँ विवाह संस्कार द्वारा पति पत्नी सदैव के लिये पारस्परिक उत्तर-दायित्व के बन्धन में बँध जाते हैं। हिन्दू समाज के आदर्शानुसार यह अटूट है, सदा के लिये स्थिर है, जन्म जन्मान्तरों तक साथ जाने वाला है। अर्वाचीन पाश्चात्य सभ्यता विवाह को प्रेम का बन्धन मानती है, वहाँ विवाह संबन्ध में कर्तव्य कीअपेक्षा प्रेम का स्थान अधिक है। भारतवर्ष क्रमशः व्यावहारिक रूप में अपने सिद्धान्त की चरम सीमा तक पहुंच गया, अर्थात् यहाँ विवाह बंधन में से प्रेम का स्थान सर्वथा निकाल डाला गया। सामाजिक बन्धनों की सीमा का उल्लघन न करते हुए स्त्री और पुरुष के जीवन को सदा के लिये एक अटूट सूत्र में बाँध देने का नाम 'विवाह' समझा जाने लगा। आँख मूंद कर धार्मिक बन्धन मान कर किये गये इन सम्बन्धों द्वारा भारत वर्ष के विवाह संस्कार में अवश्य ही बहुत से दोष पैदा हो गये। विवाह में प्रेमतत्व को उचित स्थान न मिलने से पारिवारिक शान्ति में निस्सन्देह भारी व्याघात पहुंचा। परन्तु विवाह बन्धन के यूरोपियन आदर्शों द्वारा भी वहाँ एक दूसरे प्रकार की विकट समस्या उत्पन्न हो गयी है। वह विकट समस्या भारतीय पारिवारिक समस्या की अपेक्षा भी बहुत अधिक गम्भीर और चिन्ताजनक है।

विवाह के सम्बन्ध में यूरोपियन आदर्श रूस देश में चरम सीमा तक पहुंच गये हैं। वहाँ विवाह संस्कार में से कर्तव्य का बन्धन सर्वथा निकाल डाला गया है। बोलशेविक सिद्धान्तों के अनुसार विवाह में एक मात्र प्रेम के अतिरिक्त और किसी बात की ओर ध्यान नहीं देना चाहिये। जब किसी स्त्री और पुरुष में परस्पर प्रेम हो जाय तब समझ लेना चाहिये कि दोनों में परस्पर विवाह हो गया। यदि कभी वह पारस्परिक प्रेम की गाँठ ढीली पड़ गयी तो स्वयं ही यह विवाह बन्धन टूट गया। इस स्पष्ट बात के लिये और किसी बन्धन या बाधा की आवश्यकता नहीं है। बोलशेविकों के इस सिद्धान्त को व्यवहार में लाकर आज कल का रूस एक अचिन्त्य दुरवस्था में पहुंच गया है। अमरीका के श्री एच० मालखुस बहुत समय तक रूस में रह कर वहाँ

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

की सामाजिक दशा का अध्ययन करते रहे हैं। उनके एक लेखके आधार पर हाल ही में न्यूयार्कके सुप्रसिद्ध साप्ताहिक पत्र "लिटरेरी डाइजेस्ट" ने रूस की इस समस्या के सम्बन्ध में कुछ तथ्य और गणनाएं उद्धृत कीहैं। उसी के आधार पर हम रूस की वर्तमान पारिवारिक समस्या पर कुछ प्रकाश डालेंगे।

रूस में पारिवारिक प्रथा का लगभग अन्त कर दिया गया है। स्त्री और पुरुष दोनों पूर्ण स्वाधीन हैं, किसी का किसी पर कोई अधिकार या दावा नहीं है। अतः घर और बाहर दोनों जगह स्त्री पुरुष दोनों का समान अधिकार है। जिस प्रकार पुरुष स्वतन्त्र आजीविका करके खाते पीते हैं उसी प्रकार विवाह हो चुकने पर भी स्त्री पति के कमाये धन पर आश्रित नहीं रह सकती, उसे स्वयं उपार्जित करके खाना होगा। इस प्रकार वहाँ विवाह हो जानेपर भी पति-पत्नी का एक ही घर में परिवार बना कर रहना आवश्यक नहीं है। दो घनिष्ठ मित्र आपस में जिस सम्बन्ध से जुड़े होते हैं, रूस में विवाहित स्त्री पुरुष सन्तानोत्पत्ति की एकमात्र विशेषता को छोड़ कर परस्पर ठीक वही सम्बन्ध मानते हैं।

जब कोई दो स्त्री पुरुष चाहते हैं कि उनका परस्पर विवाह हो जाय तब उनके लिये और किसी प्रकार के आडम्बर की आवश्यकता नहीं रहती। अपनी इस इच्छामात्र से ही वे विवाहित समझ लिये जाते हैं। न पादरी कुछ कहता है, न पुरोहित मन्त्र पढ़ता है, यहां तक कि परस्पर रूमाल वा अंगूठी का विनिमय करने की आवश्यकता भी नहीं समझी जाती। यदि नवविवाहित दम्पती चाहें तो सरकारी रजिस्टरों में अपने विवाह की बात दर्ज करवा सकते हैं, परन्तु इसके लिये वे बाध्य नहीं हैं। दर्ज करवा देने से तलाक देते समय स्वयं उन्हीं को लाभ होता है। अतः यह बात उनकी अपनी इच्छा पर ही छोड़ दी गयी है। विवाह की तरह तलाक देना भी बहुत आसान है, यदि दम्पती ने विवाह के समय अपने विवाह की सूचना सरकारी रजिस्टरों में दर्ज न करवायी हो तब तो कोई टंटा ही नहीं। यदि सूचना दर्ज करवायी गयी हो तो उन्हें चाहिये कि वे अवश्य ही अपने तलाक की सूचना भी दर्ज करवा दें। बस, सब झन्झट समाप्त हो गया। सोमवार को बिना किसी झन्झट के विवाह किया और मङ्गल वार को उठते ही आरम्भ में तलाक दे डाला। फिर कोरे के कोरे बन गये। परन्तु तलाक देने से पूर्व यदि सन्तान उत्पन्न हो चुकी हो तो कानून की दृष्टि से मामला उतना आसान नहीं, इस अवस्था में माता-पिता को— जो कि अब बालक से माता पिता का सम्बन्ध तोड़ लेना चाहते हैं— उस सन्तान के बालिग होने तक अपनी आय का तीसरा भाग देना आवश्यक है। तलाक पर केवल मात्र यहा एक बन्धन है। सन्तान के प्रति इस आर्थिक बन्धन को छोड़ कर वहां माता पिता पर नैतिक एक भी बन्धन नहीं है। वह एकमात्र आर्थिक बन्धन भी बहुत से मामलों में असफल सिद्ध होता है। बच्चों के बाप सन्तान उत्पन्न कर के स्वयं बाप बनने से ही इनकार कर देते हैं। जो विवाह दर्ज नहीं कराये जाते उनमें तो अधिकाँश बाप, कभी कभी माताएं भी, इसी मार्ग का अनुसरण करती हैं।

हम पहले ही कह चुके हैं कि विवाहित दम्पती विवाह के कुछ घन्टे बाद ही तलाक भी दे सकते हैं। इसका परिणाम यह हुआ है कि रूस में विवाह के बाद एक सप्ताह के अन्दर ही तलाक

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

दे देने वालों की संख्या भी बहुत अधिक है। गत वर्ष १००००० स्त्रियों ने न्यायालयों में इस आशय के आवेदन पत्र भेजे कि उनके पति उन्हें छोड़कर भाग गये हैं। आश्चर्य यह है कि इनमें ९०००० स्त्रियां या तो अपने अपने पतियों को प्राप्त नहीं कर सकीं या उन्हें अपनी सन्तान का पिता सिद्ध नहीं कर सकीं। इसी वर्ष लगभग २००००० तलाक ऐसे हुए, जिनमें पुरुषों ने अपने तलाक को दर्ज कराने की आवश्यकता नहीं समझी।

विवाह बन्धन को इस प्रकार बिलकुल ढीला कर देने का सब से अधिक घातक प्रभाव रूसके भावी पिता, वहां के बालकों पर पड़ा है। रूसमें इस समय तक ऐसे बालकों की संख्या ४००००० तक जा पहुंची है जिनके वास्तविक मां बाप अब उनके माँ बाप नहीं रहे। मां बाप के जीवित रहते हुए भी इन बालकों की दशा अनाथों के समान हो गयी है। गत वर्ष २०८००० ऐसी स्त्रियों ने अपने तलाक दर्ज कराये थे जो बालबच्चों वाली थीं। तलाक दे देने के बाद इन सब स्त्रियों के सम्पूर्ण बालक नितान्त निस्सहाय की सी हालत में डाल दिये गये। स्त्री को स्वभावतः ही पुरुष की अपेक्षा अपनी सन्तान से अधिक प्रेम होता है। अतः इन में से बहुत सी स्त्रियाँ आजकल स्वयं कमा कर जिस किसी प्रकार अपनी सन्तान का पालन करती हैं। बहुत सी स्त्रियां एक बार तलाक देकर विवाह से ही घृणा करने लगती हैं। संभोग की इच्छा से कृत्रिम उपायों का अवलम्बन करने वाले स्त्री पुरुषों की संख्या भी कम नहीं है। गीता के शब्दों में वर्तमान रूस में पूरी तरह वर्णसङ्करता का राज्य हो गया है।

रूस की सरकार राष्ट्र के बालकों की इस दुरवस्था से बहुत अधिक चिन्तित है इन बालकों का पालन करने के लिये सरकार अनाथलयों की तरह "राष्ट्रीय-गृहों" की स्थापना कर रही है। परन्तु मज़ा तो यह है कि बालक इस प्रकार के कृत्रिम नियन्त्रण और आडम्बर पूर्ण प्रेम के बन्धन में रहना पसन्द नहीं करते। उदाहरणार्थ एक राष्ट्रीय गृह में २८७ बालक प्रविष्ट किये गये थे, ३ मास बाद ही इन में से २७० बालक भाग गये या छोड़ कर चले गये। इतना ही नहीं, सरकार को इन गृहों की व्यवस्था में बहुत अधिक व्यय करना पड़ता है। एक दो वर्ष की आयु के दूध पीते बालकों का पालन करना आसान कार्य नहीं है। सरकार को इस कार्य में बड़ी तङ्गी का सामना करना पड़ता है। मास्को के एक 'गृह' में १२५ बालकों की गुञ्जाइश थी। बड़ा यत्न करने पर इस गृह में केवल ७५ बालक जमा किये जा सके। इन ७५ बालकों का पालन पोषण करने के लिये ४५-अधिष्ठाताओं का स्टाफ़ रखना पड़ा! तब जाकर कहीं काम चला। इस पर तुर्रा तो यह है कि सम्पूर्ण देश में इस प्रकार के गृहों की संख्या भी बहुत अपर्याप्त है। सन् १९२५ में जब कि रूस में लावारिस बालकों की संख्या ३५००००० के लगभग थी, इन गृहों में कुल मिला कर २९०००० बालकों की ही गुञ्जाइश थी।

इन पाँच छः वर्षों के परीक्षण से ही सरकार पूरी तरह निराश हो गयी है। अब व्यावहारिक रूप में नये राष्ट्रीय-गृह बनाना तो एक ओर रहा पुराने गृह भी क्षीण कलेवर होते चले जा रहे हैं। सरकार ने इन अनाश्रित बालकों की रक्षा के लिये रूसके उन पुरानी लकीर के फकीर किसानों की शरण लेनी प्रारम्भ की है, जिन्हें रूस की सभ्य कहलायी जाने वाली जनता अब तक 'अर्धसभ्य' गिनती रही है। इनके पुराने ढंग से बसे हुए

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

परिवारों में अनाश्रित बालकों को शरण देने का यत्न किया जा रहा है। परन्तु अनाश्रित बालकों की सख्या जिस अनुपात में बढ़ रही है उस के मुकाबले में ये शरण-गृह कुछ भी नहीं है। समस्या विषम से विषमतर हो चली है।

बोल्शेविक विचारकों का कथन है कि यह एक क्रिया के मध्य की अवस्था है। यद्यपि यह अवस्था निस्सन्देह हानिकर है तो भी इस क्रिया का अन्त मनुष्य-समाज के लिये हित कर ही सिद्ध होगा। परन्तु हमारे आदर्शों के अनुसार परिवार प्रथा में ही मनुष्य-समाज की उन्नति की व्यवस्था अन्तर्हित है। परिवार व्यक्ति की अपेक्षा अधिक महत्त्व-पूर्ण और उच्च है। यह परिवार प्रथा सभ्यता के समय से भी पुरानी है। विवाह केवल प्रेम का बन्धन नहीं है, प्रेम नष्ट हो जाने पर यह बन्धन नहीं टूट जाता। यह बन्धन पवित्र और स्थायी है। देखें, परिवार प्रथा का यह विरोध परीक्षण कहां तक सफल होता है।

(सरस्वती)

२. क्या भारतीय संगीत पाश्चात्य देशवासियों को प्रिय हो सकता है ?

यद्यपि आनन्द तथा रस का भाव सर्वत्र समान है, तथापि शिक्षा तथा संस्कार की भिन्नता के कारण एक देशवासी दूसरे देशवासियों की कला का रस सहज भाव से ग्रहण करने में असमर्थ होते हैं। किसी देश अथवा जाति का मूल-प्राण समझने के लिये उसकी शिक्षा तथा संस्कार से पूर्णतया अभिज्ञ होकर उसके प्रति सहानुभूति प्रदर्शित करनी पड़ती है, यह बात निर्विवाद सिद्ध है। मानसिक चिंता-धारा के साथ हृदय का बहुत कुछ संबन्ध है। यहाँ पर यह कहा जा सकता है कि मानव हृदय सर्वत्र समान है, इसलिये किसी देश की सुकुमार कलाओं का रस लेने के लिये किसी भी मानसिक चेष्टा की आवश्यकता न होकर, उनका प्रभाव दूसरे देश के लोगों के हृदय में स्वतः होना चाहिए। पर हम देखते हैं, ऐसा नहीं होता। कोई अच्छी कविता पढ़कर किसी छोटे बच्चे को सुनाइये तो वह उसका रस लेने में कदापि समर्थ न होगा। कारण यह है कि उसकी बुद्धि अभी इतनी संस्कृत नहीं हुई कि वह उसका रहस्य समझ सके। इसी प्रकार हम देखते हैं कि रवीन्द्रनाथ की कविता का रसास्वादन करने में बहुत कम लोग समर्थ हैं, अधिकांश पाठकों को उनकी कविता फीकी तथा क्लिष्ट जान पड़ती है। रवीन्द्रनाथ की श्रेणी के कवियों की कविता का आनन्द जिसे लूटना है, उसके लिये यह आवश्यक है कि वह रसिक हो, साथ ही उसका चित्त सुसंस्कृत हो।

यही बात गीत के संबन्ध में भी कही जा सकती है। जन-साधारण के सामने यदि उच्च श्रेणी का गीत अलापा जाय, तो उसका कुछ प्रभाव नहीं पड़ेगा। पर यदि दो चार अच्छी-अच्छी ग़ज़ले गाकर गलेबाज़ी दिखलाई जाय, तो जनता मुग्ध हो जाती है। संगीत का रस लेने के लिये भी मानसिक उत्कर्ष की आवश्यकता है। चित्त जितना सुसंस्कृत होता जाय, गीत की सूक्ष्मताओं का भी वह उतना ही अनुभव कर सकेगा। हमारे कहने का तात्पर्य यह है कि हृदय के आनन्द के लिये मस्तिष्क की सहायता लेनी ही पड़ती है।

यदि हम यह सोचते हैं कि भारतीय संगीत में विशेषता होने से योरोपवासी उसका रस अवश्य ग्रहण करेंगे, तो हम भूल करते हैं। हमारी विचार-धारा से जब तक वे परिचित न हों, तब तक उन्हें हमारे संगीत में विशेष आनन्द नहीं

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्राप्त हो सकता । इसमें संदेह नहीं कि जर्मनी फ्रांस तथा रूस के कुछ संगीत-विशेषज्ञ हमारे संगीत का रहस्य समझने में समर्थ हैं, और उस का रसास्वादन भी करते हैं; पर फिर भी अधिकांश लोग उसमें कुछ रस नहीं पाते । उसी प्रकार भारतवासियों को भी योरप का संगीत प्रिय नहीं मालूम देता।

संगीत में दो बातों की प्रधानता रहती है। एक भावावेग और दूसरा स्वर-वैचित्र्य। कुछ गीत ऐसे होते हैं, जिनमें स्वर-वैचित्र्य नहीं होता, पर जो अच्छी तरह से गाए जाने पर संगीत-विशेषज्ञ को भी मुग्ध कर देते हैं। ऐसे गीतों में भावावेग की प्रधानता रहती है, पर हमारे देश के दुर्भाग्य से यहाँ अधिकांश गायनाचार्य नीरस प्रकृति के लोग होते हैं। वे संगीत में आवेग के प्रति बिलकुल ध्यान न देकर अरसिक वैयाकरणों की तरह गीत के सूक्ष्मातिसूक्ष्म विश्लेशण द्वारा उसके टुकड़े २ करके स्वर-वैचित्र्य तथा गलेबाज़ी प्रदर्शित करने में ही अपना गौरव समझते हैं। पर विलायत में यह बात नहीं पाई जाती। वहाँ आवेग की तरफ़ अधिक ध्यान दिया जाता है । जो संगीतकार अपने गीतों की राग-रागिनियों में अधिक गंभीर आवेग भर सकता है, वहाँ उसी की अधिक क़दर होती है। बीटोफ़ेन की रचनाओं पर वहाँ के लोग इसीलिये मुग्ध हैं । इस जर्मन संगीताचार्य के गीतों में इतना गम्भीर भावावेग पाया जाता है कि भारतीय संगीतज्ञ भी उसकी मूर्च्छना पर मर मिटते हैं। यदि हमारी राग-रागिनियों में भी इसी प्रकार आवेग की प्रधानता भरने की चेष्टा की जाय तो उसे सुन कर योरप के लोगों के भी कान खड़े होने लगें।

योरप के संगीत में आनन्द-उत्सव के समय जीवन की चञ्चलता हिलोरें लेती हुई जान पड़ती है। भारतीय संगीत में विश्व की शांत-क्लांत आत्मा अपने को ध्वनित करना चाहती है। भावावेग की इन दो धाराओं को संयुक्त करके यदि सामंजस्य प्रतिष्ठित करने की चेष्टा की जाय, तो योरपवासी हमारे और हम योरप के संगीत का रस लेने में समर्थ हो सकेंगे। हमारे वर्तमान तामसिक, अलस तथा निरानंदमय जीवन को जागरित तथा उत्तेजित करने के लिये पाश्चात्य संगीत के भावावेग की आवश्यकता है। पाश्चात्य देशवासियों को अपने असंतोषपूर्ण, प्रतिहिंसामूलक, घोर राजसिक जीवन को संयत बनाने के लिये हमारे संगीत के अनंतोन्मुख आवेग की प्रशांत तथा गम्भीर धारा की आवश्यकता है।

पाश्चात्य देशवासियों को यदि हमें अपने देश की सभ्यता के मूल-रहस्य से परिचित कराना है, यदि अपने देश की आत्मा के अन्तरतम भाव से उन्हें प्रणोदित करना है, तो हमें अपने संगीत को ऐसा रूप देना होगा कि वह उनकी शिक्षा तथा संस्कार के अनुकूल भी हो, और उससे हमारे संगीत का मूल-प्राण भी अक्षत रहे।

(सुधा)

३. संसार के १२ सर्वोत्तम उपन्यास

प्रसिद्ध लेखक जॉन गैल्सवर्दी की राय में संसार के १२ सर्वोत्तम उपन्यास ये हैं—

सरवैंटिस — डॉनक्विकजॉट

टॉल्सटॉय — वार एंड पीस, एनाकेरानीना

डास्टोविस्की — ब्रदर्स कैरेमैज़ो

टूर्गेनिफ़ — फ़ादर्स एंड चिलड्रेन, स्मोक

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

डिकेंस — { पिकविक पेपर्स / डेविड कॉपरफ़ील्ड

डूमा { थ्री मस्केटियर सीरीज / या रेन मैगनेट सीरीज़

मार्क ट्वेन — { टॉम सायर / हकलेबेरी फ़िन

थैकरे वैनिटी फेयर

४. ज़ैकोस्लोवेकिया की जन-संख्या

१९२१ की मर्दमशुमारी के अनुसार ज़ेकोस्लोवेकिया में निम्नलिखित संख्या-सहित जन-भेद हैं:—

८,७६०,९५७ ज़ेकोस्लोवेक

३,१२३,४४८ जर्मन

७४७,०९६ मगियार (हंगेरियन)

४६१,४६६ रूथेनियन

७५,८५२ पोल्स

धार्मिक दृष्टि से भी बोहेमिया युरोप का बड़ा केन्द्र रहा है। प्रसिद्ध "तीस साल का युद्ध" यहीं से प्रारम्भ हुआ। परन्तु साधारणतः यहां कैथलिक लोग अधिक हैं। इधर कैथलिक लोगों की संख्या घट गई है। इस समय ज़ेकोस्लोवेकिया में १०,३८४,८६० कैथलिक, ९८२,०९३ इवांजेलिस्ट (प्रोटेस्टेन्ट) ५३२,५०८ ग्रीकचर्च, ३२,३३२ यहूदी और ७,२६९ ग्रीक (पुराने चर्च के) हैं।

५. नव—दम्पती के लिए

नवदम्पतियों की दाम्पत्य-जीवन-सम्बन्धी कई कठिनाइयाँ अक्सर सामने आया करती हैं। कहीं पति-पत्नी में आपस में मन-मुटाव हो जाता है; कहीं दूसरे लोग उन्हें एक दूसरे के ख़िलाफ़ बहका कर उनका गृह-जीवन क्लेशमय कर देते हैं, कहीं वे माँ-बाप से बिगाड़ लेते हैं; कहीं कच्ची उम्र में ही माता-पिता के पद को पहुँच कर दुःखी होते हुए देखे जाते हैं और कहीं तरह-तरह के गुप्त रोगों के शिकार हो जाते हैं। बाल्यावस्था में हुए विवाहों के ऐसे दुष्परिणाम बहुत देखे जाते हैं। एक ओर उन्हें सामाजिक और सांसारिक व्यवहार के नियमों का यथेष्ट ज्ञान नहीं होता और दूसरी ओर समाज की अलिखित मर्यादा उन्हें अपने बड़े बूढ़ों के सलाह- मशवरे से रोक देती है। ऐसी अवस्था में, कठिनाई, उलझन या संकट के समय, न स्वयं उन्हें प्रकाश-पथ दिखाई देता है और न दूसरों की काफ़ी सहायता उन्हें मिल पाती है। धूर्त और स्वार्थी लोग ऐसी परिस्थितियों से न केवल खुद बेजा लाभ उठाते हैं बल्कि दम्पती को भी बड़े संकट में डाल देते हैं, धनी और रईस लोगों के यहाँ ऐसी दुर्घटनायें अधिक होती हैं। क्योंकि उनका धन और ऐश्वर्य खुशामदियों, धूर्तों, स्वार्थियों के काम की चीज़ होता है। अतएव अपने नव-विवाहित भाई-बहनों के लाभ के लिए कुछ ऐसे व्यावहारिक नियम यहाँ दिये जाते हैं, जिनके ज्ञान और पालन से वे बहुतेरे संकटों से बच सकेंगे—

(१) सब से पहली और ज़रूरी बात यह है कि उन्हें आपस में खूब प्रेम बढ़ाना चाहिए। एक को दूसरे के गुण की क़द्र करनी चाहिए और दोषों को उदार दृष्टि से देखकर उन्हें दूर करने में परस्पर सहायता देनी चाहिए। पति बड़ा और पत्नी छोटी, यह भाव दिल से निकाल डालना चाहिए। प्रेम बढ़ाने का यह मतलब नहीं कि दिन रात भोग-विलास की बातें सोचते रहें, बल्कि यह कि एक-दूसरे का हृदय एक-दूसरे से अभिन्न होजाय। एक का दुख दूसरे को अपना दुःख मालूम होने लगे; एक-दूसरे को अपना सखा, हितैषी और सेवक समझे। एक-दूसरे की रुचि का खयाल

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

रक्खे। स्वभाव की त्रुटि या व्यवहार की भूलों को हृदय का दोष न समझ लें।

(२) दूसरी बात यह कि परस्पर इतना विश्वास पैदा करलें और रक्खें कि तीसरा कोई भी शख्श एक-दूसरे के बारे में उन्हें कुछ भी कह दे तो एकाएक उनके दिल पर उस का असर न हो। यदि असर हो भी जाय तो उस के अनुसार व्यवहार तो एकाएक हर्गिज़ न कर बैठना चाहिए। चरित्र-संबन्धी बुराई एक ऐसी बात होती है, जिसे स्वार्थी या नादान हितैषी इस तरह कह देते हैं कि सहसा विश्वास हो जाता है या होने लगता है। ऐसे समय ख़ास तौर पर सावधान रहने की ज़रूरत है। ऐसे मामलों में अत्युक्ति और अनुदारता की बहुत प्रबलता देखी जाती है। ऐसी बातें सुनकर, एकाएक आवेश में आकर, पति का पत्नी से या पत्नी का पति से बिगड़ कर लेना भारी भूल है। ऐसे मामलों में एकबार तो मनुष्य अपनी आँखों पर भी विश्वास न करे तो अच्छा। दोनों को एक दूसरे के हृदय पर इतना विश्वास हो जाना चाहिए कि कोई बुराई प्रत्यक्ष दिखाई देने पर भी उस पर सहसा विश्वास न बैठे। यह मालूम हो कि नहीं, मेरी आँखोंको, कुछ भ्रम हो रहा है। ऐसा विश्वास अपना हृदय परस्पर खोल देने से जमता है। पति-पत्नी दोनों का निजी जीवन एक-दूसरे के लिए खुली पुस्तक होना चाहिए। यदि दो में से किसी के मन में कोई कुविचार भी पैदा हो तो उस तक का ज़िक्र परस्पर में करने योग्य हृदयैक्य दोनों का होना चाहिए। दो में से जो ज्यादा समझदार और योग्य है उसे चाहिए कि ऐसे कुविचारों और कुविकारों की हानियां दूसरे को समझावे और उस के दूर करने में सहायता दे। दोनों को एक दूसरे के दिल का इतना इत्मीनान होना चाहिए कि वह निर्भय होकर अपनी बुराइयाँ उससे कहदे और विश्वास-घात का भय न रहे। विश्वास में कही गयी बातों की रक्षा अपने प्राण की रक्षा के समान करनी चाहिए।

(३) तीसरी और सबसे नाज़ुक बात है दो में से किसी से कोई नैतिक भूल होजाने के समय की व्यवहार-नीति। दुर्भाग्य से हमारे समाज में पुरुष की नैतिक भूल इतनी बुरी निगाह से नहीं देखी जाती, जितनी कि स्त्री की देखी जाती है। ऐसी बुराइयों की भयङ्करता तो दोनों दशाओं में समान है। यदि ऐसी कोई भूल हो जाय तो एका-एक लड़ पड़ने, बहिष्कार कर देने या आवेश में और कोई अनहोनी बात कर बैठने के पहले यह देखना चाहिए कि यह दोष भूल से हुआ है, या जान बूझ कर किया गया है, अथवा बाधित होकर हुआ है। यदि भूल से हुआ है तो भूल दिखाना और उसका प्रायश्चित कराना पहला उपाय है। यदि जान बूझ कर किया गया है तो इसका विचार अधिक गम्भीरता से करना चाहिए। इसके मूल कारण को खोजना चाहिए। कैसे लोगों की सङ्गति में अब तक का जीवन बीता है, कैसा साहित्य पढ़ने या देखने की रुचि है, कैसा आहार-विहार है, घर का वायु-मण्डल कैसा है, इत्यादि बातों की छान-बीन करके फिरभूल को नष्ट करने का उद्योग करना चाहिए। असफल होने की अवस्था में बहिष्कार या सम्बन्ध-विच्छेद अन्तिम उपाय होना चाहिए। यदि जब्र किया गया हो तो जब्र करने वाला असली अपराधी है, उसका इलाज करना चाहिए; और जिस पर जब्र हुआ है, उसे ऐसा सामर्थ्य प्राप्त कराने का उद्योग करना चाहिए जिससे किसी किस्म के

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बलात्कार का शिकार वह न हो पावे। ऐसे अवसरों पर मनोभावों का उत्कृष्ट हो जाना स्वाभाविक है; परन्तु ऐसे ही समय बहुत शान्ति, धीरज, गम्भीरता, कुशलता और दूरदर्शिता की आवश्यकता होती है। नवीन दम्पती ऐसे अवसरों पर कर्तव्य-विमूढ़ हो सकते हैं। उन्हें घर के समझदार विश्वास-पात्र बड़े-बूढ़ों की अथवा अनुभवी मित्रों की सहायता ऐसे समय ले लेनी चाहिए। बिना सोचे, तौले और आदमी देखे ऐसी बातों की चर्चा हलके दिल से न करनी चाहिए। दूसरे के घर की सुनी ऐसी बातों की चर्चा भी बिला वजह और बिना प्रयोजन के न करनी चाहिए।

(४) चौथी बात यह है कि नवीन दम्पतियों को या तो घर के किसी बड़े-बूढ़े को या किसी विश्वास-पात्र मित्र को या किसी महापुरुष को अपना पथ-दर्शक बनाना चाहिए। लज्जा और संकोच छोड़ कर अपनी कठिनाइयां उनके सामने रखना चाहिए और उनसे सलाह लेनी चाहिए। अक्सर देखा गया है कि झूठी लज्जा के वशवर्ती होकर कितने ही युवक-युवती बुराइयों, बुरी बातों, बुरे व्यवहारों और हरकतों को मन मसोस कर सहते रहते हैं— इससे स्वयं वे भी बुराई के शिकार होते रहते हैं और घर या समाज में भी गन्दगी फैलती रहती है। साथ ही उनकी आत्मा को भीतर ही भीतर क्लेश होता रहता है। कई बीमारियों में वे फंस जाते हैं और दुःख पाते रहते हैं। यह हालत बहुत ख़तर-नाक है। इससे बेहतर यह है कि निःसंकोच हो कर गुह्य बातों की भी चर्चा अधिकारी पुरुषों के सामने कर ली जाय।

(५) पाँचवाँ नियम यह होना चाहिए कि विवाह के बाद योग्य अवस्था होते ही पति-पत्नी को साथ रहना चाहिए। दूर देशों में अलग-अलग रहना, सो भी बहुत दिनों तक, भयप्रद है। साथ रहते हुए जहाँ तक हो संयम का पालन करना चाहिए। पर संयम के लोभ से अथवा खर्च-वर्च और असुविधा के ख्याल से दूर रहना और अनुचित और कुफलदायी है।

(६) गुप्त रोग हो जाने की अवस्था में अपने जीवन के दूसरे साथी को उससे बचाने की चिन्ता रखनी चाहिए। उसके इलाज का पूरा प्रबन्ध करके आइन्दा उसे न होने देने के लिये उसके कारणों को जड़ से उखाड़ डालना चाहिए। अनुचित आहार-विहार, असंयम, गन्दे स्थानों पर पाख़ाना-पेशाब, वेश्या सेवन आदि से गुप्त रोग हो जाया करते हैं। सादा और अल्प आहार, संयम, स्वच्छता के ज्ञान और पालन से मनुष्य ऐसे रोगों से दूर रह सकता है। विज्ञापनी दवाइयों से हमेशा बचना चाहिए।

(७) सातवीं बात यह कि अश्लील और कामुकता तथा विलासिता के भावों को बढ़ाने वाले नाटक, उपन्यास, कहानी आदि पढ़ने, ऐसे थियेटर, सिनेमा, चित्र आदि देखने से अपने को बचाना चाहिए। ऐसे मित्रों की सङ्गति और ऐसे विषयों की चर्चा से उदासीन रहना चाहिए।

(८) आठवीं बात यह कि पत्नी की रुचि अपने अङ्गीकृत कामों में धीरे-धीरे बढ़ानी चाहिए और उन्हें उसके ज्ञान और अनुभव का अवसर देना चाहिए। दोनों को एक-दूसरे के जीवन को बनाने और अङ्गीकृत कार्यों को पूर्ण करने में पूरी दिलचस्पी लेनी चाहिये। (त्यागभूमि)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

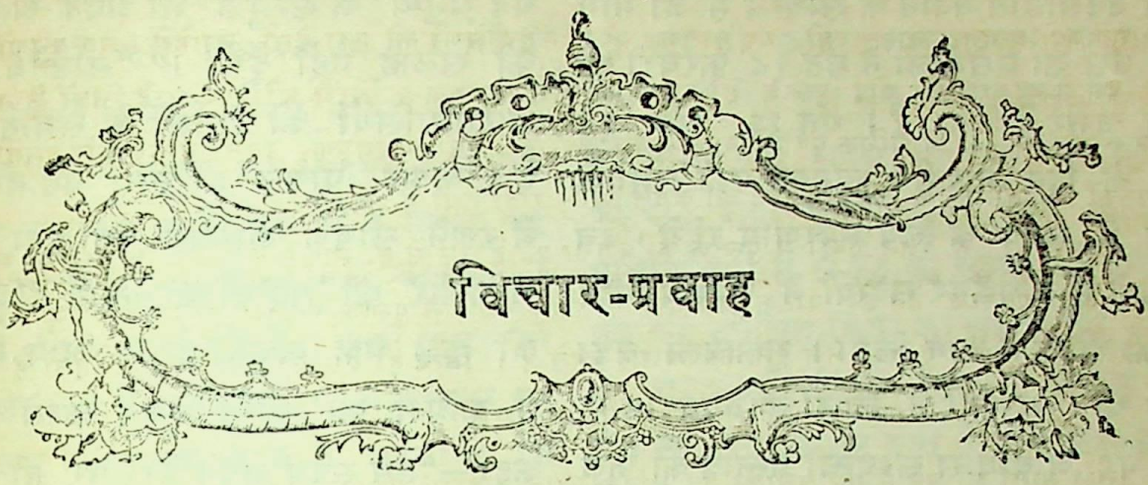

विचार-प्रवाह

जागृति के शुभ लक्षण

बरसों के बाद भारतवर्ष फिर से करवटें बदलता हुआ दिखाई दे रहा है। पिछले ५ वर्षों में अन्धी साम्प्रदायिकता के नाम पर सैंकड़ों मनुष्यों का खून हुआ, हज़ारों बुरी तरह से ज़ख्मी हुए। इतने दिनों तक जी खोल कर लड़ झगड़ लेने के उपरान्त आज प्रतीत होता है कि, दोनों पक्षों के लोग यह बात कुछ कुछ समझने लगे हैं कि धर्म के नाम पर किये गये इन उपद्रवों द्वारा हम दोनों में से किसी को भी लाभ नहीं है। चाहे लाख मतभेद और रुचिभेद क्यों न हो, आखिर रहना दोनों ने ही इसी देश में है। पिछले वर्ष के अन्त तक दोनों सम्प्रदायों के समझदार लोग उपर्युक्त तथ्य से अभी अवगत हुए ही कि थे कि लार्ड बर्कनहैड की अनीतिमत्ता से यह बात और भी अधिक स्पष्ट होगई कि यदि हिन्दु मुस्लिम फसादों से किसी को वास्तविक लाभ है तो वह इङ्गलैण्ड के साम्राज्यवादियों को ही है। लार्ड बर्किन हैड ने भारतवासियों को परस्पर लड़ता हुवा देख कर बड़े गर्व के साथ जो चुनौती दी, हमें यह सन्तोष है कि सम्पूर्ण देश ने उसका उचित उत्तर दिया था। इङ्गलैण्ड निवासियों ने आश्चर्य के साथ देखा कि जो भर कर आपस में लड़ने वाले भारतवर्ष के दोनों पक्ष सहसा परस्पर कन्धे से कन्धा मिला कर मोरचा लेने के लिए डट गये। गत ३ फरवरी के दिन सचमुच हमें १९२१ के सुवर्णीय युग की झलक एक वार फिर दिखाई दी। उसी दिन गोरे कमीशन ने भारतवर्ष की भूमि पर पैर रक्खा था। इसी उपलक्ष में देश भर के प्रायः सम्पूर्ण नगरों में बड़ी सफलता के साथ हड़ताल की गई, शहर शहर में विराट सभाओं का आयोजन किया गया। सम्पूर्ण राष्ट्र ने बड़े उत्साह से राष्ट्रीय गौरव की रक्षा के लिये भरसक प्रयत्न किया।

१९ का विराट असहयोग आन्दोलन ६ एप्रिल की देश व्यापी हड़ताल के साथ ही प्रारम्भ हुआ था। ईश्वर करे कि गत ३ फरवरी का ऐतिहासिक दिन भी भारतवर्ष के लिये एक सौभाग्यशाली दिवस का प्रारम्भ सूचक सिद्ध हो देश में यह जो नव-जीवन का सञ्चार हो रहा है, यह चिरस्थायी हो।

× × ×

एसेम्बली का निर्णय

गोरे कमीशन के प्रधान सर जान साइमन ने दिल्ली पहुंचने के कुछ दिनों बाद ही भारत वर्ष की बड़ी व्यवस्थापिका सभा से अपनी सहायता

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

के लिये उपसमिति बनाने के सम्बन्ध में जो मांग की थी, उस का एसेम्बली ने गत १८ फरवरी को समुचित उत्तर दे दिया है। गत १६ और १८ फरवरी के दिन भारतीय व्यवस्थापिका सभा के इतिहास में सदैव के लिये स्मरणीय रहेंगे। इन दोनों दिनों में अधिकतर सदस्यों ने व्यवस्थापिका सभा की बैठक में भाग लिया। मुकाबला बड़ा ज़बरदस्त था। सरकार ने लाला लाजपतराय के कमीशन पर अविश्वास सम्बन्धी प्रस्ताव को फेल करवाने के लिये सम्पूर्ण सम्भव उपायों का आश्रय लिया, परन्तु यह प्रस्ताव फेल न कराया जा सका। प्रस्ताव पर खूब गर्मागर्म बहस होने के अनन्तर ६८ मत पक्ष में और ६२ विपक्ष में आने से प्रस्ताव स्वीकृत उद्घोषित कर दिया गया। २ सदस्य तटस्थ रहे। इस ६ मतों की अधिकता से लाला जी का प्रस्ताव स्वीकार हुआ। इस प्रस्ताव द्वारा देश की प्रतिनिधिसभा ने बर्किन हैड की चुनौती का यथायोग्य उत्तर दे दिया है। देश के प्रतिनिधियोंने भारतवर्ष की वास्तविक ध्वनि द्वारा इस दिन बड़ी व्यवस्थापिका सभा के भवन को गुञ्जा दिया। इन दोनों दिनों में देश के नेताओं ने जो भाषण दिये उन्हें हम देश की सच्ची आवाज़ कह सकते हैं। पञ्जाब केसरी लाला लाजपतराय ने कहा— "सरकार हम भारतीयों को सब मामलों में नालायक बताती रहती है। हम ऊंचे अफसर नहीं बन सकते, शासन नहीं कर सकते, विदेशी राजनीति नहीं समझ सकते, यहां तक कि स्वभाग्य निर्णय भी नहीं कर सकते, तो क्या हम केवल कर (Tax) देने के योग्य ही हैं, और किसी बात के योग्य नहीं?" स्वराज्य दल के नेता माननीय पं० मोतीलाल नेहरू ने कहा— "मैं मानता हूँ कि सर साइमन एक बड़े और समझदार व्यक्ति हैं, परन्तु मैं देशभाइयों को संसार के किसी बड़े से बड़े मनुष्य के सन्मुख भी अपने अधिकार बेचने की सलाह नहीं दूँगा।" "लार्ड बर्किन हैड ने भारतवासियों को पागलों के समान समझ लिया है। केवल पागल ही क्या, वह तो हमें प्रदर्शनी में रखने लायक जानवर बना देना चाहता है। अधिकार का मद पी कर लार्ड बर्किन हैड चाहे जो कुछ बक सकता है।" आप ने इस सम्बन्ध में कांग्रेस की नीति स्पष्ट करते हुए अन्त में कहा—"हम स्वयं अपने पैरों पर ही खड़े हुए हैं। सरकार इतिहास के सत्य सिद्धान्तों की उपेक्षा कर रही है इस का परिणाम यही होगा कि संसार के इतिहास में एक और विनष्ट साम्राज्य की वृद्धि हो जायगी।" महात्मा पं० मदनमोहन मालवीय ने कहा—"कमीशन की नियुक्ति के लिये इङ्गलिस्तान की सरकार को सब से पूर्व भारत की बड़ी व्यवस्थापिका सभा से ही निर्देश मिला था, परन्तु कमीशन की रचना करते हुए, भारतीय राजभक्तों के बार बार चेतावनी देने पर भी भारत के अधिकार को ठुकरा दिया गया। इस प्रकार सभी राष्ट्रीय नेताओं के भाषण बहुत ही उच्च कोटी के थे। इस एसेम्बली को इस उचित निर्णय के लिये साधु वाद देते हैं।

क्या इंगलैण्ड का यही सब से बड़ा दिमाग़ है?

इन सात गोरे अक्लमन्दों की शाही कमीशन के रूप में नियुक्ति के समय लार्ड बर्कन हैड ने दिल खोल कर सर ज़ोन साइमन के दैवीय दिमाग़ के प्रशंसा-गीत गाये थे। उस के बाद भी इंग्लैण्ड के सभी पत्र सर साइमन को अपने देश के सर्वोत्तम दिमाग़ों में से एक कहते रहे। इस में सन्देह नहीं कि सर साइमन इंगलिस्तान के सर्वश्रेष्ठ वकील समझे जाते हैं। हमारे देश के सब से बड़े कानून दाँ पं० नेहरू भी साइमन महोदय की प्रतिभा के कायल हैं। परन्तु कमीशन के आधार रूप से इस

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

देश में आकर साइमन साहब आज कल जिस ढंग की बातें कह रहे हैं उसे देख कर इन दो बातों में से एक बात मानने के लिये बाध्य होना पड़ता है कि या तो इस देस में आकर सर साइमन के दिमाग़ की कोई कल अचानक ढीली पड़ गई है अथवा वह जो कुछ कर रहे हैं वह अपने को तथा संसार को धोखा देने के लिये कर रहे हैं। अभी पिछले ही दिन जब असेम्बली ने कमीशन पर अविश्वास का प्रस्ताव स्वीकार किया तब आप ने फरमाया कि ६ मतों की अधिकता से ही देश का भाग्य निर्णय नहीं हो सकता। क्या कहना है? क्यों जनाब, क्या आप के देश में एक ही वोट विपक्ष में अधिक होने से सरकार बदल नहीं जाती? ६ मतों के बहुमत को बहुमत न मानना किस कानून की उपज है? फिर असेम्बली का यह बहुमत केवल मतों के आधार पर ही तो नहीं है। प्रस्ताव के विरोध में जो ६२ मत थे उन में निर्वाचित भारतीय सदस्यों के मत बहुत ही कम थे। इन में अधिकांश मत जिन लोगों के थे उन की नियुक्ति का ढंग ही इतना दोष पूर्ण है कि अंग्रेज़ी सरकार की अयोग्यता प्रदर्शित करने के लिये अकेले उसी को ही प्रमाण रूप में उपस्थित किया जा सकता है। इन ६२ मतों में से २६ मत सरकारी अधिकारियों के थे जो सरकार की नमक हलाली की ही दोहाई दिया करते हैं, १३ मत उन गैर सरकारी नामज़द सदस्यों के थे जिन्हें सरकार स्वयं अपनी पीठ पर थपकी देने के लिये नामज़द किया करती है, ११ मत उन योरोपियनों के थे जिन का दिल ही भारत को गुलाम बनाये रखने में है। इन ५० मतों को दूसरे शब्दों में हम १ मत कह सकते हैं। क्योंकि प्रतिनिधि शासन को किसी भी परिभाषा के अनुसार इन्हें देश के भिन्न-भिन्न प्रतिनिधि सिद्ध नहीं किया जा सकता। इस प्रकार १ यह मत और अन्य १२ निर्वाचित प्रतिनिधियों के यह, अर्थात् कुल १३ मत ही लाला लाजपतराय के प्रस्ताव के विरोध में थे। क्या सर साइमन इस जरा सी बात को समझ नहीं सकती या समझ कर भी बेसमझी का पार्ट अदा करती है? क्या ८० निर्वाचित प्रतिनिधियों में से ६८ की संख्या को पूर्ण मत न कह कर उपेक्षित किया जा सकता है?

गरज़ आदमी को सचमुच बावला बना देती है। सर साइमन इस बात के जीते जागते उदाहरण हैं। जिस दिन आपने ६ अक्लमन्द साथियों के साथ भारत में पदार्पण किया उस दिन सारे देश ने हड़ताले कर के आप का स्वागत किया। अब भी आप जहाँ जाते हैं, गुप्तचरों की तरह लुक छिप कर जाते हैं, इस पर भी लोग आप का पीछा नहीं छोड़ते। कालिज़ों के विद्यार्थी काले झण्डे हाथों में लेकर आप को घेर लेते हैं और सैंकड़ों गले एक साथ चिल्ला कर कहते हैं— "साइमन! लौट जाओ। हमें तुम्हारी आवश्यकता नहीं।" बम्बई, दिल्ली, मेरठ, बनारस, कलकत्ता सभी जगह आप का यही हाल हुआ परन्तु इतने पर भी आप बार २ यही बात दोहराते हैं कि 'मेरा बड़ा स्वागत हो रहा है। प्रतिदिन बीसियों डैपूटेशन मिलने आते हैं। मेरे पास स्वागत के हज़ारों तार और पत्र आये हैं। सैंकड़ों अखिल भारतीय सभा समितियों ने मेरा हार्दिक स्वागत किया है।' वाह, भाई साइमन बलिहारी है। जिसे अपमान में भी अपना मान दिखाई दे उस से बढ़ कर मूर्ख और कौन होगा। हमें तो सर साइमन के यह कारनामें देख कर एक प्राचीन घटना स्मरण हो आई है। आज से कई सौ बरस पूर्व भारत के किसी नगर में एक पठान चोरी के अपराध में पकड़ा गया। अदालत ने उसे दोषी पाकर उस का सिर उस्तरे से मूंडने और गधे पर चढ़ा कर सारे शहर में से घुमाने का दण्ड दिया।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

इस दण्ड से दण्डित होने के उपरान्त जब वह पठान अपने देश में वापिस गया तब उसने अपने देश भाइयों से बड़े उत्साह के साथ कहा— "यारो, हिन्दोस्तान सचमुच बड़ा अच्छा मुल्क है। वहां मैं चोरी के अपराध में पकड़ा गया, इस पर बिना पैसे लिये ही मेरी हजामत बना दी गई और गधे की मज़ेदार सवारी घाते में मिली।" संसार की सम्पूर्ण बुद्धि के ठेकेदार सर साइमन का भी यही हाल हैं।

हाल ही में जब सर साइमन ने कलकत्ता पहुँच कर अपने स्वागत का बखान प्रारम्भ किया तो एक मनचले सम्वाद दाता ने पूछ लिया कि क्या आप उन सैंकड़ों अखिल भारतीय सभा समितियों के नाम मुझे दिखा सकेंगे ? इस पर आपने बड़े तपाक से उत्तर दिया— 'कभी नहीं, कभी नहीं। वे सब गुप्त हैं।' आमीन ! अमीन !

× × ×

प्रसिद्धि का एक आसान उपाय

साइमन साहब की कृपा से इस गए गुज़रे ज़माने में भी प्रसिद्धि प्राप्त करने का एक आसान तरीका ईज़ाद होगया है। कोई ५, ७ व्यक्ति मिल कर अपना एक अखिल भारतीय नाम रख लीजिये और साइमन साहब के पास चाहे २ पैसे के कार्ड पर ही गोरे कमीशन को कुछ स्तुति लिख भेजिये बस आप का नाम इंग्लिस्तान के अखबारों में बड़े २ अक्षरों में प्रकाशित हो जायगा, मानो आप ही इस दीन देश के भाग्यविधाता है यह क्या मज़ाक है ! भारतवर्ष के गण्य मान्य नेताओं के मुकाबले में सर साइमन झट से टके टके के आदमियों का नाम उपस्थित कर देते हैं। यह स्वयं अपने को धोखा देना नहीं तो और क्या है। सर साइमन भारत में रह कर अपने को धोखा देने का व्यर्थ प्रयत्न कर रहे हैं और लार्ड बर्कन हैड अपने देश वासियों को गोरे कमीशन के स्वागत की कल्पित बातें सुना सुना कर मुग्ध कर रहे हैं। भारत और विलायत के गोरे तथा अधगोरे अखबार भी यही तमाशा कर रहे हैं। हाल ही में अलाहबाद में थोड़े से जीहज़ूर मुसलमानों की एक सभा हुई थी। इस सभा का नाम उन्होंने "अखिलभारतीय मुस्लिम प्रतिनिधि सभा" रक्खा। इस के प्रधान भी मियां शफी के कोई दूर के रिश्तेदार ही थे। इस सभा में अलाहाबाद ही के ४० या ५० टटपूंजे क्लार्क, सरकारी दफ्तरों के चपड़ासी, स्कूलों के कुछ तमाश बीन विद्यार्थी अलाहाबाद के कुछ मुसलमान भंगी और सभापति आदि के कुछ घरेलू नौकर एकत्र हुए थे। सभापति ने बड़ी सञ्जीदगी से अपने भाषण में कहा—"दूर से आये हुए, संसार की एक सभ्यतम जाति के प्रतिनिधियों ! आप लोगों पर इस समय एक भारी उत्तरदायित्व है। आप यहां ७ करोड़ मुसलमानों की आवाज़ को बुलन्द करने के लिये जमा हुए हैं.....इत्यादि।" हमें आश्चर्य यह है कि सभापति महोदय को उपर्युक्त बातें कहते हुए हंसी क्यों न अगाई ! इस पर तुर्रा यह कि भारत तथा इंगलैण्ड के मुख्य-मुख्य पत्रों ने इस 'नाटकी सभा' के समाचारों को बड़े मोटे-मोटे टाइप में छापा, और अपनी सम्पादकीय टिप्पणियों में यह सिद्ध कर दिया कि वास्तव में भारत के सम्पूर्ण मुसलमान कमीशन का स्वागत कर रहे हैं !

इस सब पर हम क्या टिप्पणी करें ? हमें तो यही कहना है कि इस प्रकार अपने को धोखा देने से इंगलिस्तान को स्वयं ही भारी हानि उठानी पड़ेगी। सर साइमन की ये बातें तो बिल्ली के भय से कबूतर के आंख बन्द कर लेने से भी अधिक हास्पास्पद हैं !

साइमन महोदय की इन चालों के अधिकांश शिकार भारत की दलित कहलाने वाली जातियों

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ही बन रही हैं । यद्यपि हमें इस बात का पूर्ण विश्वास है कि इन दलितों के नेता कहलाये जाने वाले लोगों के पीछे दलितों का थोड़ा सा भी अनुगमत्व नहीं है । तथापि हमें यह बात अवश्य स्वीकार करनी होगी कि दलित लोग भारत का एक ऐसा कमजोर अंग है, जिस पर विदेशी प्रभाव की बीमारी बड़ी आसानी से अपना अधिकार कर सकती है । अतः इस दलित समस्या को हम लोग जितना शीघ्र सुलझा लें, भारत के हित की दृष्टि से यह उतना ही लाभ कर होगा । उच्च जातियों ने दलितों पर जो अत्याचार किये हैं, उन की दोहाई देकर सरकार उन्हें फाड़ने का प्रयत्न अवश्य करेगी । परन्तु दलितों को हिन्दु समाज की आन्तरिक सुधार प्रेमी धाराओं से ही कुछ आशा करनी चाहिये, विदेशी सरकार को उन से क्या हिताकांक्षा हो सकती हैं ? वह तो उन्हें अपनी स्थिरता का साधन मात्र ही बना सकती है; उन्हें मनुष्यत्व के अधिकार देना विदेशी सरकार को कभी अभीष्ट न होगा ।

× × ×

अंग्रेजी मजदूर दल की प्रवृत्ति

हमारे देश के कुछ नरम नेताओं को इंगलिस्तान के मज़दूर दल से बड़ी आशाएं थी । मज़दूर दल के नेता श्रीयुत-मैकडानल्ड स्वयं भी भारतवासियों को समय समय पर बड़ी बड़ी आशाएं बंधाते रहे हैं । परन्तु इस गोरे कमीशन की नियुक्ति से लेकर अब तक मज़दूर दल ने जो रुख दिखाया है उस से यह भली प्रकार स्पष्ट हो गया है कि यह दल भी अनुदार दल की तरह ही पक्का साम्राज्यवादी है । इङ्गलिस्तान के थोड़े से गिने चुने भद्रपुरुषों को छोड़ कर बाकी सम्पूर्ण देश भारत को अपने अधीन बनाये रखने में ही अपना हित समझता है । हमारी सम्पति में यह मज़दूर दल की मनोवृत्ति का स्पष्टीकरण भारत के लिये शुभ ही सिद्ध होगा । स्वतन्त्रता स्वयं अपने पैरों पर खड़े होने से ही मिल सकती है किसी दूसरे के आश्रय से नहीं । किसी दूसरे आश्रय पर जीने का नाम ही तो पराधीनता है ।

गुरुकुल कांगड़ी का आगामी वार्षिकोत्सव

गुरुकुल प्रेमियों में यह समाचार बड़े हर्ष और सन्तोष के साथ सुना जायगा कि नवीन गुरुकुल के निर्माण के लिये ४ बरस के निरन्तर प्रयत्न के बाद उसी स्थान पर यथेष्ट भूमि प्राप्त होगई है, जिस स्थान पर कि आर्यप्रतिनिधि सभा पञ्जाब की की अन्तरङ्ग सभा नये गुरुकुल की स्थापना करना चाहती थी । यह स्थान आबादी से यथेष्ट दूर, गङ्गा की बड़ी नहर के किनारे अवस्थित है । यहां से गंगा भी बहुत दूर नहीं, हिमालय का दृश्य जितना सुन्दर इस स्थान से दिखाई देता है उतना हरिद्वार भर में शायद ही किसी दूसरे स्थान पर से दिखाई दे । इस भूमि के लिये गुरुकुल को पर्याप्त धन व्यय करना पड़ा है । इस वर्ष के वार्षिकोत्सव के अवसर पर किसी भारतविख्यात महानुभाव द्वारा नये गुरुकुल की आधार शिला रखवा दी जायगी यह भी एक प्रकार से अच्छा ही हुवा कि गुरुकुल की रजत जयन्ती के अगले ही वर्ष नये गुरुकुल की आधार शिला रखदी जायगी । इस शिलान्यास के कारण गुरुकुल का यह आगामी वार्षिकोत्सव भी बड़ा महत्व पूर्ण होगया है ।

गत वर्ष नवम्बर मास में दिल्ली का आर्यकांग्रेस के अवसर पर जिस 'आर्यवीर दल' की रचना की गई थी, उस का प्रारम्भिक प्रदर्शन प्रधान दल पति श्री आचार्य ररमदेव जी की प्रध्यता में गुरुकुल के इसी वार्षिकोत्सव पर किया जायगा । आर्यवीर दल के सहस्रों 'आर्य वीर' अपने नियत वेश में इस शुभ कार्य के लिये गुरुकुलोत्सव पर आएगें । इस

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

दृष्टि से भी गुरुकुल का यह वार्षिकोत्सव एक स्मरणीय अवसर बन जायगा। हमें विश्वास है कि आर्य सज्जन अधिक से अधिक संख्या में इस अवसर पर गुरुकुल पधार कर कुल के अधिकारियों को उत्साहित करेंगे।

× × ×

देशभक्त हरचन्दराय विशनदास

असेम्बली के सदस्य सेठ हरचन्द राय बिशनदास की मृत्यु सचमुच वीरतापूर्ण मृत्यु है। पिछले दिनों आप सख़्त बीमार थे, डाक्टरों ने आप को इस अवस्था में यात्रा करने से रोका था। परन्तु जब लाला लाजपतराय के तार द्वारा आप को यह ज्ञात हुवा कि सरकार पूरी शक्ति से उन का प्रस्ताव अस्वीकार करवाने का यत्न कर रही है, तब आप डाक्टरों की सलाह की उपेक्षा कर के कराची से दिल्ली चले आये। दिल्ली पहुंचते ही आप का स्वास्थ्य बहुत गिर गया और दोपहर तक आप का देहान्त होगया। देश की पुकार सुन कर सेठ हरिचन्दराय विशनदास ने अपने जीवन की उपेक्षा कर के भी कर्तव्य पालन को अधिक महत्व पूर्ण समझा। असेम्बली में सेठ जी कराची के हिन्दुओं के प्रतिनिधि थे। आप आजीवन बड़े उत्साह से राष्ट्रीय कार्यों में भाग लेते रहे। सन् १९१३ में जब कांग्रेस का अधिवेशन कराची नगर में हुवा था सेठ जी ही स्वागत समिति के अध्यक्ष थे। मृत्यु के समय आप की अवस्था ६६ बरस की थी। लार्ड बर्कन हैड को ज्ञात होना चाहिये कि उन की सब चालाकियां अकेले इस देश भक्त की वीरतापूर्ण कुर्बानी की बदौलत ही असफल रह जांयगी। हमें विश्वास है कि सेठ हरचन्द राय का यह बलिदान निष्फल न जायगा।

"मदर इण्डिया" की फिल्म

अमेरिका से समाचार आया है कि वहां अब "मदर इण्डिया" की फ़िल्म बना कर एक सिनेमा कम्पनी भारत की दुरवस्था का सिनेमा दिखाया करेगी। इस सिनेमा में अछूतों से बुरा व्यवहार, भारतीयों के अन्ध विश्वास, सन्तानोत्पत्ति के दृश्य, बनारस के दृश्य, और सब से बढ़ कर भारतीय देवियों को अपमानित करने वाले अश्लील चित्र दिखाये जांयगे। हमें समझ नहीं आता कि इस बात से बढ़ कर भारतवर्ष का और अधिक क्या अपमान किया जा सकता है। यदि भारतवर्ष स्वतन्त्र होता तो क्या कभी यह सम्भव था कि बदमाश और बदतमीज़ विदेशी अधेड़ औरत इस मुल्क में सरकार की मदद से घूम फिर कर 'मदर इण्डिया' जैसी बाहियात किताब लिखती और फिर अमेरिकन सिनेमा कम्पनी उस का सिनेमा बना कर अपने देशवासियों का मनोरञ्जन करती। पराधीनता के परिणामों की इस से अधिक विकट कल्पना क्या की जा सकती है क्या ३२ करोड़ भारतीय यह मुंह सुजा देने वाली ठोकर खाकर भी न जागे?

शारदाजी का विवाह बिल

रायसाहब हरबिलास शारदा ने भारतीय व्यवस्थापिका सभा में यह प्रस्ताव उपस्थित किया है कि हिन्दु समाज में बालक बालिकाओं की उम्र विवाह के समय कम से कम क्रमशः १५ और १३ वर्ष की हो। इस छोटी उम्र में किये गये विवाह नाजायज़ समझे जांय, और ऐसा विवाह करने पर विवाह कराने वाले व्यक्ति दण्डित हों। हमारी सम्मति में शारदा जी को अपने बिल में बालक बालिकाओं के विवाह की न्यूनतया अवधि क्रमशः २४ और १६ वर्ष होनी चाहिये। हमारी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सम्मति में १५ वर्ष के बालक और १३ वर्ष के बालिका को विवाह करने का कानूनी अधिकार दे देना बहुत ही अनुचित है। तथापि क्योंकि अब तक इस सम्बन्ध में कोई भी प्रतिबन्ध नहीं था, अतः हमारी सम्मति में यह प्रतिबन्ध कुछ न कुछ लाभ अवश्य करेगा। अतः हम इस प्रस्ताव के भाव का हृदय से अभिनन्दन करते हैं।

हाल ही में दिल्ली नगरी में जो अखिल भारतीय महिला परिषद् हुई थी, उस की ओर से एक डैपूटेन भारतीय नेताओं, सरकारी अधिकारियों और वायसराय के पास गया था। इस डैपुटेशन का एक उद्देश्य यह भी था कि यह बालिकाओं के विवाह की न्यूनता अवधि १६ वर्ष निश्चित करवाये। सभी नेताओं ने ईसाइस डैपुटेशन को खूब आशाएं बंधवाई। क्या हम आशा करें कि राय साहब हरबिलास शारदा इस डैपुटेशन की प्रार्थना स्वीकार करके अपने प्रस्तुत बिल में उपर्युक्त संशोधन कर देंगे।

हिन्दी साहित्य में क्रान्ति

शीघ्रता करिए ! नहीं तो पछताना होगा !! शीघ्रता करिए !!!

"सोहागरात" या बहूरानी को सीख

केवल विवाहिता स्त्रियों के लिये

पञ्जाब केशरी लाला लाजपतराय जी लिखित भूमिका सहित

[लेखक—पंडित कृष्णकान्तजी मालवीय]

इस पुस्तक ने हिन्दी साहित्य में एक अद्भुत क्रान्ति मचादी है। पुस्तक में है क्या इसे इसका नाम ही चिल्ला २ कर कह रहा है। वैवाहिक ही नहीं; घरेलू जीवन किस प्रकार स्वर्गीय हो सकता है, पत्नी किन उपायों से पति को हाथ ही में नहीं रख सकती वरन् किस प्रकार पति के हृदय पर अखण्ड राज्य कर सकती है, आदि सभी बातों का पुस्तक में समावेश है। विवाह सम्बन्धी बातें, सोहागरात, जड़ मनुष्य पर अधिकार, शरीर आकर्षक कैसे हो, भोजन तथा वसन कैसा हो शृङ्गार, रजोधर्म, मानव मष्तिक पर अधिकार तथा स्त्री-जीवन का उद्देश्य, प्रेम की ग्रन्थि, लड़का या लड़की, सन्तान-निग्रह, समाज में व्यवहार, सतीत्व आदि शक्ति आदि अध्यायों में तथा पतिव्रता चरित, लक्ष्मी किन स्त्रियों के पास वास करती हैं, गर्भ में लड़का या लड़की, व्यायाम शिक्षा, स्त्री की महत्ता आदि परिशिष्ट भाग में। पं० कृष्णकान्त जी मालवीय ने सभी गूढ़ बातों को सरल कर दिया है। पुस्तक में "कामसूत्र" "रति-रहस्य" "अनङ्ग रङ्ग" "कन्दर्पचूड़ामणि" आदि प्राचीन भारतीय ग्रन्थों और यूरोपीय विद्वानों के उपदेश भरे पड़े हैं। सब से बढ़ कर विशेषता जो इस पुस्तक की है वह यह है कि इस विषय के यूरोप के नूतन आदर्शों को आंखों की ओट न करते हुए प्राचीन भारतीय और वैदिक आदर्शों को ही सामने रखा गया है और यह सिद्ध कर दिया गया है कि एक स्त्री इस तरह आचरण कर सुखी रह सकती है।

पुस्तक की और अधिक प्रशंसा न कर हम केवल यही कह देना आवश्यक समझते हैं कि पुस्तक को पण्डित—कृष्णकान्त जी ने अपनी पुत्र-बधू के लिए लिखी है और प्रायः सभी भाषा के पत्र-पत्रिकाओं तथा विद्वानों ने इसकी भूरि भूरि प्रशंसा की है। इसी लिए हम बलपूर्वक कहते हैं कि यह पुस्तक प्रत्येक विवाहिता स्त्री को पढ़नी ही नहीं बल्कि

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सदा मार्ग-प्रदर्शिका के रूप में अपने पास रखनी चाहिये और प्रत्येक पति को, जो अपने और साथ ही अपनी पत्नी के जीवन को सुखमय बनाना चाहता हो, यह पुस्तक अपनी सहधर्मिणी को पढ़ा देनी चाहिये। नव-वधुओं को भेंट करने के लिए तो इस से बढ़कर और कोई पुस्तक हो ही नहीं सकती। पुस्तक १ तिरंगे और १९ सादे चित्रों के साथ ३५ पौण्ड मोटे एण्टीक कागज़ पर ५०० से अधिक पृष्ठों में बहुत सुन्दर छपी है। ऐसी महत्वपूर्ण, इतनी सुन्दर और इतनी मोटी पुस्तक का मूल्य पाठकों के सुभीते के लिए सजिल्द का केवल ३॥) रखा गया है।

विद्वत्मण्डली ने जिन शब्दों में पुस्तक की प्रशंसा की है उस से ही मालूम होता है कि पुस्तक क्या है। हम यहां पर केवल कुछ अवतरण देते हैं, पाठक स्वयं देखें। जिन लोगों ने पुस्तक एकबार मंगाई है वे मुक्त कण्ठ से पुस्तक की प्रशंसा करते हुये दूसरी पुस्तक भेज देने का आग्रह करते हैं। नित्य ही ऐसे पत्रों की भरमार रहती है।

कुछ सम्मतियां

उत्तरी भारत का सब से प्रभावशाली पत्र "हिन्दुस्तान टाइम्स" लिखता है:—

"पुस्तक ज्ञान से भरी है और बड़ी सफाई से शुद्ध भाषा में अच्छे ढङ्ग से लिखी गई है। **अभी तक हमारे सामने इस पुस्तक के टक्कर की कोई भी पुस्तक अंग्रेजी अथवा देशी भाषाओं में नहीं आई जो** इस प्रकार शुद्ध भाषा में इस बारीक विषय पर लिखी गई हो। **पुस्तक को कोई भी पिता बिना संकोच के या भय के अपनी कन्या के हाथ में दे सकता है!** कानपुर के प्रसिद्ध राष्ट्रीय हिन्दी दैनिक में हिन्दी कविता के प्रकाण्ड विद्वान पं० गया प्रसाद जी शुक्ल "सनेही" लिखते हैं:—

".....भाषा और भाव की पवित्रता का जितना सुन्दर निर्वाह पण्डित जी ने किया है, वह उन की लेखनी की स्वयं सिद्ध सफलता है।.....हम हृदय से चाहते हैं कि यह पुस्तक प्रत्येक नर-नारी, बालक, युवक तथा वृद्ध के हाथ में पहुंचे और सचमुच वह **हिन्दी पाठक अभागा ही कहलायेगा जो इस पुस्तक को कम से कम एक बार आद्योपान्त न पढ़ सका।.....**" दिल्ली से प्रकाशित प्रसिद्ध हिन्दी दैनिक "अर्जुन" लिखता है:—

".....पण्डित जी ने यह पुस्तक अपनी पुत्र वधू के लिये लिखी है इसी से कल्पना की जा सकती है कि इस में कोई भी बात अनुचित अथवा अश्लील रूप में शामिल नहीं की जा सकती। विषय की दृष्टि से यह **पुस्तक केवल नव विवाहित दम्पतियों के ही नहीं बहुत से बालकों के माता पिताओं तथा अन्य गृहस्थियों के लिये भी उपयोगी साबित होगी।**" प्रयाग के प्रसिद्ध अंग्रेजी पत्र "लीडर" ने लिखा है:—

".....यदि यह पुस्तक यूरोप के इस विषय संबन्धी पुस्तकों से बढ़ कर नहीं तो घट कर भी नहीं है। पुस्तक प्रारम्भ से लेकर अन्त तक एक साहित्यिक रचना है। मेरे पास जितनी शक्ति है उतनी सब शक्ति लगाकर मेरा कहना है कि पुस्तक प्रत्येक विवाहित नारियों कों, जो अपना जीवन सुखी बनाना चाहती हैं अवश्य पढ़नी चाहिये।....."

सुप्रसिद्ध हिन्दी मासिक पत्रिका "माधुरी" ने अपने सम्पादकीय विचार में लिखा है:— "..... "सोहागरात" जैसे विषय पर अपनी पुत्रबधू को उपदेश देकर न केवल पं० कृष्णकान्त जी ने अपने उत्तरदायित्व का पालन ही किया है, वरन् उन्होंने अपूर्व नैतिक साहस का परिचय दिया है। ..... **हिन्दी साहित्य में यह पुस्तक अपने ढङ्ग की अद्वितीय है।** ..... पं० कृष्णकान्त जी ने जो प्रकथन लिखा है वह अपूर्व है। ..... अन्त में हमें यही कहना है कि पुस्तक उपादेय है और हिन्दी संसार में इसका आदर होना चाहिये।

पंजाब का प्रसिद्ध प्रभावशाली उर्दू दैनिक "वन्देमातरम्" लिखता है:—

".....पुस्तक न केवल स्त्रियों के लिए बल्कि हर एक गृहस्थ के पढ़ने योग्य है।

प्राप्ति स्थान:— "अभ्युदय" प्रेस प्रयाग.

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अपने बच्चे को फुटबॉल खिलाओ

तुम्हारा बच्चा बहुत मोटा ताज़ा और खुश मिज़ाज़ होगा यदि तुम हम से उस के लिए फुटबॉल खरीदोगे !

खेल के सब तरह के सामान का स्टाक हमारे यहां है। जल्द आर्डर भेजिये।

बी० डी० गुप्ता एण्ड को०

पंच कुई रोड, दिल्ली।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कला कौमुदी

लेखिका श्रीमती ओ३म्वती देवी

चित्र कला कौशल सम्बन्धी अनुपम पुस्तक-इस के द्वारा लेखिका ने क्रोशिये के कार्य को बड़ा ही सरल बना दिया है। बिना किसी प्रकार के पहिले ज्ञान के कन्यायें और स्त्रियें केवल इस को ही सहायता से अनेक प्रकार की बिनावट लेसें, फ़ीते, कपड़े इत्यादि बनाना सहज में ही सीख सकी हैं। पुस्तक में इतना विषय है कि किंचित इससे कई गुना दाम की पुस्तकों में भी न होगा। प्रत्येक वस्तु तथा बिनावट का बनाना चित्र देकर बड़ी सरल रीति से सिखाया गया है। देखिये समाचार पत्र इस के विषय में क्या कहते हैं।

"ट्रिब्यून" (अंग्रेज़ी का प्रसिद्ध दैनिक) लाहौर—स्त्रियों के लिये उपयोगी पुस्तक है। अनेक चित्रों द्वारा वस्तु बनाने की विधि बड़ी सरलता से समझाई गई है। सुन्दर नमूनों की लेसें, टेबल क्लाथ, बच्चों के सुन्दर कपड़े और अन्य कई वस्तुओं का बनाना बड़ी सुन्दर रीति से बतलाया गया है। पुस्तक की उपयोगिता के विचार से मूल्य बहुत कम है।

"मतवाला" (कलकत्ता)-यह पुस्तक हमारी बहिनों के बड़े समझ की है। छपाई बहुत अच्छी, कागज़ बहुत अच्छा मोटा चिकना आर्ट। सुचारु शिल्प पत्रावली कार्ड गृहस्थियों के बड़े काम की चीज़ है।

"कर्मवीर" (खांडवा)— ·····पुस्तक में सादे फन्दे से लगाकर तरह तरह की वस्तुओं के बनाने की विधि बड़ी सरलता से समझाई गई है जिसे पढ़कर साधारण पढ़ी लिखी स्त्री भी इस कार्य को सीख सकती है। इस का मूल्य लागत को देखते कम है।

"माधुरी" (लखनऊ) ऐसी पुस्तकों की हिन्दी साहित्य के लिये बड़ी आवश्यकता है। आशा है इस पुस्तक का अच्छा प्रचार होगा जिस से इस प्रकार की और पुस्तकें भी प्रकाशित की जा सकें। लेखिका और प्रकाशिका दोनों को बधाई।

शीघ्र आर्डर भेजिये मूल्य १॥)

कला कौमुदी तथा शिल्प पत्रावली का पूरा सैट लेने पर २॥=)॥ के स्थान में केवल २।) में दिया जायगा।

कन्या पाठशालाओं और पुस्तक विक्रेताओं को विशेष रियायत।

मैनेजर ज्योति—

कन्या गुरुकुल

राजपुरा रोड कोठी नं० २१—२२ देहरादून

चौधरी हुलासराय प्रिन्टर तथा पब्लिशर के लिये गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में मुद्रित।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

Regd. No. A. 1711

वर्ष ८, खंड ८] मार्च, १९२८ [संख्या ११

वार्षिक मूल्य ४॥)
प्रति संख्या ॥)

सम्पादिका—
विद्यावती सेठ बी. ए.

स्त्रियों और विद्यार्थियों से ४)
विदेश का मूल्य ६)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विषय सूची।

विषय	पृष्ठ से
१. कृतज्ञता 'कविता' श्री पं० चन्द्रकान्त जी	४२९
२. व्यक्ति और समाज [श्री पं० देवराज जी विद्यावाचस्पति]	४३०
३. आयुर्वेद की प्राचीनता— [श्री डा० राधाकृष्ण जी B. Sc. M. B.B. S.]	४३४
४. अद्वैतवाद के आधारभूत विचार— [श्री पं० सुखदेव जी वेदालङ्कार]	४३८
५. हो जाओ बलिदान 'कविता'— [श्री पं० वागीश्वर जी विद्यालङ्कार]	४४७
६. विभिन्न विचार [श्रीयुत छबीलदास जी B.A.]	४४८
७. ब्रह्मचर्य— [श्री युत धर्मदत्त जी विद्यालङ्कार]	४५०

विषय	पृष्ठ से
८. हमारे पतन का कारण— [श्री कैलाशचन्द्र जी सक्सेना]	४५८
९. संसार भर के धर्मों से एक आवश्यक प्रश्न धर्मों के सामने आने वाला खतरा— [श्रीयुत छबीलदास जी B.A.]	४६३
१०. कुसमोद्यान—	४६७
११. वैज्ञानिक संसार—	४७३
१२. गृह प्रबन्ध—	४८
१३. भारत में स्त्री जाति की समस्यायें—	४८६
१४. स्त्री जगत्—	४८३
१५. हमारी-मंजूषा—	४८६
१६. विचार प्रवाह [सम्पादकीय]	४९१

ज्योति सम्बन्धि पत्रव्यवहार—
आचार्य्या कन्या गुरुकुल
कोठी नं० २१, राजपुर रोड़
(देहरादून)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वर्ष ८ } फाल्गुन सं० १९८४ * मार्च सन् १९२८ { संख्या ११

कृतज्ञता.

खिले फूल पर भौंरा आकर मीठी तान सुनाता है।
बिठा हृदय में, खोल पाँखड़ी, पान मधुर करवाता है॥

(२)

रजकण से लतपत यह पागल, आँख फोड़ जब लेता है।
मान बचाने फूल बिचारा, मोड़ पाँखड़ी लेता है॥

(३)

कभी बनाने माला, माली, इसे तोड़ना चाहता है।
डाल फूल की ताना देती, "मुझे छोड़ना चाहता है"॥

(४)

ललक ललक यह कहता, माली ! ले ले चाहे कुम्हला जाऊँ।
फिकर नहीं है कृतज्ञता के, बोझ तले मसला जाऊँ॥

—श्री चन्द्रकान्त

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

व्यक्ति और समाज

[ले०— श्री पं० देवराज जी विद्यावाचस्पति]

समाज और व्यक्ति के साथ धर्म का सम्बन्ध मालूम करने से पहिले यह जानना आवश्यक है कि समाज क्यों है और कैसे है। समाज का प्रयोजन समाज के रचना प्रकार से ही प्रकट हो जावेगा। समाज के रचना प्रकार से ही समाज और व्यक्ति का सम्बन्ध मालूम होगा, कि समाज व्यक्ति के लिये है अथवा व्यक्ति समाज के लिये है अथवा दोनों एक दूसरे के लिये हैं एक समय समाज की प्रधानता होती है और अन्य समय व्यक्ति की इस प्रकार समाज और व्यक्ति के पारस्परिक सम्बन्ध निश्चित करने में ही सामाजिक और वैयक्तिक धर्मों का निश्चय होगा। ये धार्मिक सिद्धान्त वे सिद्धान्त होंगे जिन के आधार पर समाज और व्यक्ति का परस्पर निर्वाह हो सकेगा। समाज और व्यक्ति का परस्पर निर्वाह करने वाले धार्मिक सिद्धान्तों में देश काल और और सामर्थ्य के अनुसार होने वाला परिवर्तन स्वाभाविक धर्म के अनुसार होगा। इस प्रकार स्वाभाविक धर्म (Natural Religion) के साथ समाज और व्यक्ति का सम्बन्ध बताने के लिये पहिले समाज की उत्पत्ति और उस की आवश्यकता पर विचार किया जाता है।

समाज व्यक्तियों के मिलने से बना है। व्यक्ति अपनी २ आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये एक दूसरे से सहायता लेने के लिये और साथ ही दूसरे की आवश्कता को पूर्ण कर के आपस में संघठित होते हैं। कोई व्यक्ति अकेला अपनी शारीरिक और मानसिक आवश्यकताओं को स्वयं पूरा नहीं कर सकता, उसे दूसरे की सहायता की आवश्यकता होती है।

एक मनुष्य को भोजन की आवश्यकता है। यदि वह चाहे कि वह बिना किसी अन्य व्यक्ति की मदद के स्वयं ही अपने लिये भोजन प्राप्त कर ले तो वह नहीं कर सकता। भोजन के लिये वह अन्न तथा बर्तन की आवश्यकता रखता है। अन्न प्राप्त करने के लिये वह ज़मीन को साफ करके हल चला कर थोड़े से बीज बोकर अधिक अन्न पैदा करता है। मान लो थोड़े से बीज उसे जंगल में से मिल जाते हैं। वे उस के लिये दीर्घकाल तक पर्याप्त नहीं होते और जिस मौसम में जंगल में नहीं मिलते उस मौसम में अपनी उदर पूर्ति करने के लिये खेत बनाकर अन्न बोकर अधिक अन्न संग्रह करता है। खेत को साफ करने के लिये और हल चलाने के लिये उसे उचित साधनों की आवश्कता होती है। लकड़ी काटने के लिये कुल्हाड़ी चाहिये जिस से काट कर हल बना सके। कुल्हाड़ी वर्तन और हल के लिए लोहा वा अन्य धातु चाहियें। धातु किसी खनि से निकलती हैं। वहां से कच्ची धातु लेकर फिर उसे साफ कर

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

के और ढाल कर अपने लिये उपयोगी सामान तय्यार करना होता है। इस प्रकार एक मनुष्य कितना भी अधिक बुद्धिमान् और परिश्रमी क्यों नहो वह अकेला अपने लिए रोटी भी तय्यार नहीं कर सकता। एक मनुष्य में सब प्रकार के कार्य करने की सामर्थ्य और अक्ल भी नहीं होती। इस लिये एक मनुष्य का जीवन निर्वाह होने के लिये जितने सामान की आवश्कता होती है और उस सामान को उत्पन्न करने के लिये जितने पेशे (व्यवसाय) आवश्यक होते हैं उन में से किसी एक पेशे को अपनी सामर्थ्यानुसार मनुष्य ग्रहण कर लेता है। भिन्न २ पेशों के लोग भिन्न २ प्रकार की वस्तुएं तय्यार करते हैं। ये वतुएं एक दूसरे के साथ बदली जाती हैं वा इन वस्तुओं को किसी एक ही वस्तु के द्वारा आपस में बदलने के लिये कोई सिक्का निश्चित किया जाता है। इस प्रकार व्यक्ति अपनी सब आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये दूसरे व्यक्तियों के साथ मिलता है अथवा अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने वालों की स्थिति बनाये रखने के लिये दूसरों की आवश्यकताओं में से कम से कम किसी एक आवश्यकता को पूरा करने के लिये दूसरों का सहायक होकर समाज का निर्माण करता है। भिन्न २ पेशों को करने में तत्पर व्यक्तियों के संघटन से समाज बनती है। व्यक्तियों का संघटन उनकी अपनी आवश्यकताओं पर अवलम्बित है जिन्हें वह दूसरे से करता हुआ देखता है, दूसरे से करा सकता है अथवा दूसरे से पूरी की हुई अपनी आवश्यकता को प्राप्त करने की सामर्थ्य रखता है।

भिन्न २ प्रकार की वस्तुओं को उपस्थित करने (मुहय्या—Supply) में तत्पर मनुष्य इस बात को जानते हैं कि यदि उन के पास वह वस्तु उस समय पर न हुई जिस समय दूसरों को आवश्यक है तो ग्राहक समय पर चीज़ न दे सकने वाले आदमी का भरोसा छोड़ कर उसी का भरोसा करेंगे जो समय पर चीज़ दे सकता, है इस लिये प्रत्येक व्यवसायी को अपने पास उस वस्तु का इतना संग्रह रखना पड़ता है कि ग्राहक को हमेशा उसकी दूकान अपने लिये आवश्यक सामान से भरी हुई ही दिखाई देती हैं, क्योंकि ऐसा करने से ही वह विक्रेता अपने ग्राहकों को वस्तु विक्रय करके उस साधन को प्राप्त कर सकता है जिस साधन को अन्य विक्रेताओं को देकर अपने लिये आवश्यक सामान खरीद कर अपनी आवश्यकता पूर्ण कर सके। व्यवसायी विक्रेता अपने विक्रेय द्रव्य की राशि को पूर्ण करने के लिये अभीष्ट द्रव्य के निर्माताओं को धनादि वस्तु के दान पूर्वक प्रोत्साहन कर के विक्रेय द्रव्य का वहां तक संग्रह करता है जहां तक उस वस्तु का विक्रय होता है।

ऐसा प्रायः नहीं होता कि जो निर्माता हों वे ही विक्रेता हों। भिन्न २ प्रकार की वस्तुएं भिन्न भिन्न स्थान में बनती हैं। जहां उनके बनाने के लिये सामग्री सुगमता से उपस्थित हो सके। जहां २ जो वस्तु बनती हैं वहां ही दूर दूर से कई

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्रकार की वस्तुओं के खरीददार आकर वस्तु नहीं खरीद सकते, अतः किसी एक स्थान पर बनी हुई वस्तुएं इकट्ठी की जाती हैं। स्थिर विक्रेता जिन का कार्य माल को विक्रय करना ही है वे अपने स्थिर गृह बना कर रहने लगते हैं तथा दूसरों के लिये भी गृह बना कर उन गृहों की सम्पत्ति से अपनीसम्पत्ति को बढाते हैं । बहुत से मनुष्य सम्पत्ति बढ़ा कर उस से ज़मीन मोल ले कर ज़मीन में भिन्न भिन्न आवश्यक वस्तुएं तय्यार करके उसी स्थान में लाकर बेचते हैं जहां अन्य सब वस्तुएं लाकर बेची जाती हैं । इस प्रकार ज़मीनों के मालिक ज़मीनदार लोग अपने स्थिर मकान बना कर उन्ही विक्रय स्थानों में रहने लगते हैं । अनेक वस्तुयें, जिन का निर्माण उन्हीं स्थानों में आसानी से हो सकता है जहां विक्रय होता है वे छोटी बड़ी मैशीन वा फैक्ट्री वहां जारी करके, वहीं निर्माण की जाती हैं, उन के निर्माता भी वहीं अपने गृह बनाकर रहने लगते हैं। इन विक्रय स्थानों (नगरों) में चूंकि सर्व प्रकार की आवश्यक प्राप्य वस्तुएं प्रायः ताज़ी प्राप्त हो सकती हैं अतः शिक्षा सम्बन्धी कार्य पाठशाला, स्कूल, कालिज आदि भी नगरों में या उन के समीप ही आरम्भ किये जाते हैं।

निर्माता मनुष्य प्रायः नगरों से बाहिर रहते हैं इनके स्थान ग्राम वा कस्बे कहे जातेहैं। और विक्रेता मनुष्य प्रायः नगरों में रहते हैं । ग्रामीण लोग कच्चा माल तय्यार कर नगरों में विक्रेताओं के हाथ बेच जाते हैं। इस प्रकार ग्रामों और नगरों का निर्माण और उनका परस्पर सम्बन्ध होता है। भूमियों में भिन्न २ प्रकार के बीजों को उत्पन्न करने की शक्ति होती है, अतः सर्व ग्रामों में कच्चा माल एक जैसा नहीं होता। भिन्न २ प्रकार के कच्चे माल के भेद से नगरों में प्राप्य वस्तुओं में भी भेद हो जाता है। कोई वस्तु एक स्थान में प्राप्त होती है और कोई दूसरे स्थान में। इस प्रकार जिस नगर में जो वस्तु नहीं प्राप्त होती उस नगर में वह वस्तु अन्य नगर से लाई जाती है। वस्तु को स्थानान्तर लाने ले में जाने के लिये विविध वाहन तय्यार किये जाते हैं। इन से एक नगर का दूसरे नगर के साथ सम्बन्ध हो जाता है। बहुत से ग्रामों और नगरों का मिलकर कर एक प्रान्त और बहुत से प्रान्तों का मिल कर एक देश होता है । जैसे नगरों का सम्बन्ध होता है वैसे देशों का सम्बन्ध भी आपस में होता है।

सब मनुष्य एक जैसी वृत्ति के नहीं होते। कोई क्रिया शील हैं कोई सुस्त पड़े रहने वाले हैं और कोई न बहुत सुस्त हैं और न बहुत क्रिया शील हैं किन्तु विचार पूर्वक सोच समझ कर प्रत्येक कार्य को करते कराते हैं । इस प्रकार प्रायः एक जैसी आवश्यकताएं रखते हुए भी मनुष्य अपनी अपनी वृत्ति के अनुसार एक जैसा परिश्रम नहीं कर सकते । इस प्रकार एक ही व्यवसाय को करने वाले व्यक्तियों का लाभ उन के परिश्रम के अनुसार अथवा उस परिश्रम से उत्पन्न वस्तुओं के अनुसार भिन्न २ होता है। यदि मनुष्य की

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

आवश्यकता ऐसी हो जिस के पूर्ण करने के लिये वह दूसरों की उतनी आवश्यकता पूर्ण कर सके जिस से उस को अपनी आवश्यकता पूर्ण करने के लिये पर्याप्त धन न मिले तो वह मनुष्य अपनी आवश्यकता को पूर्ण करने के लिये अनुचित उपाय ग्रहण करता है। इस प्रकार संसार में असहायता, बेईमानी, जबरदस्ती, धींगाधींगी, छीनाझपटी और चोरी डाका चल पड़ता है। समाज में अव्यवस्था फैलाने वाली इन बुराइयों का मूल कारण मनुष्य प्रकृति में प्रकृति का वह तामसिक परिणाम है जो उद्यम शीलता को नष्ट कर के आलस्य प्रमाद और ढीले-ढालेपन का प्रादुर्भाव करता है। इस के अतिरिक्त अव्यस्था को उत्पन्न करने वाला प्रकृति के रजोगुण का वह परिणाम है जिस से मनुष्य प्रकृति में काम वासना, तृष्णा लोलुपता और क्रोध का प्रादुर्भाव होता है। समाज में सुव्यवस्था बना रखने के लिये यह आवश्यक है कि इन वृत्तियों का निरोध किया जाय और करवाया जाय।

वृत्ति सूक्ष्म रूप में आसानी से निरुद्ध होती है और स्थूल रूप में कठिनता से निरुद्ध होती है। वृत्ति की सूक्ष्मता और स्थूलता के अनुसार उस के निरोध के लिये साधन भी एक जैसे नहीं बरते जाते, पृथक् २ बरते जाते हैं। समाज में क्षत्रिय का कार्य ही रक्षा करना है वा सामाजिक कार्यों की सफलता में उत्पन्न हुए विघ्न स्वरूप कारणों को दूर करना है। उपदेश, सदाचार शिक्षा, विद्यालयों में विद्या का दान भी सामाजिक कार्यों की विघ्न-स्वरूप वृत्तियों के निरोध का उपाय ही हैं। ये उपाय वृत्ति को सूक्ष्म अवस्था में रोकने के हैं, और दण्ड प्रदान-कारावास, वेत्राघात, कठोर शारीरिक परिश्रम, देश से बहिष्कार, फांसी-ये उपाय वृत्तियों को स्थूल अवस्था में रोकने के हैं। अतः सामाजिक कार्यों के विघ्नों को दूर करने के लिये दो प्रकार के नियामकों की आवश्यकता है, एक वे जो सूक्ष्म अवस्था में वृत्तियों को रोक सकें और दूसरे वे जो स्थूल अवस्था में वृत्तियों को रोक सकें। सूक्ष्म अवस्था में वृत्तियों को रोकने वालों का नाम ब्राह्मण है और स्थूल अवस्था में वृत्तियों को रोकने वालों का नाम क्षत्रिय है। इस प्रकार व्यक्तियों से समाज का संघटन होता है। व्यवस्थापक ब्राह्मण होते हैं, रक्षक क्षत्रिय होते हैं, व्यवसायी और व्यापारी वैश्य होते हैं। इन तीनों के सहायक वा सेवक श्रमजीवी शूद्र होते हैं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

आयुर्वेद की प्राचीनता

[ले०— डा० राधाकृष्ण B.Sc., M.B.B.S. अध्यक्ष आयुर्वेद
महाविद्यालय गुरुकुल कांगड़ी]

सन् १९२७ आयुर्वेदिक विज्ञान में एक महत्वपूर्ण सन् हैं। यद्यपि आयुर्वेद ऐसा विज्ञान है, जिसे किसी विशेष प्रशंसा की आवश्यकता नहीं, और जिसके महत्व को भारतवर्ष से बाहर के विद्वान् यथोचित स्थान देने में सकुचाते थे, परन्तु इस सन् १९२७ में उनको भी मानना पड़ा कि यह आयुर्वेदिक विज्ञान इस जगत् में सब से प्राचीन विज्ञान है और अन्य देशों की चिकित्सा शैलियों का आधार और स्रोत है। यह 'हड़प्पा, (पञ्जाब और (मोहनजदारो सिन्ध) में धरती में से प्राचीन नगरों के निकलने से भारतवर्ष की प्राचीन और अन्य जातियों की सभ्यता की आधार सभ्यता का परिचय प्रमाण मिलते हैं वहां अब यह भी मालूम हुआ है कि भारतवर्ष ही आयुर्वेदिक ज्ञान का जन्मदाता है। अन्वेषण से यह भी मालूम हुआ साहित्य विज्ञान काव्य, दर्शन, धर्म आदि के अतिरिक्त, भारतवर्ष, आयुर्वेद में ऐसी उच्चतम अवस्था में पहुंच चुका था जिसका उदाहरण किसी और देश में नहीं मिलता। योरपीय विद्वानों को जो पहिले सब विद्याओं का स्रोत यूनान को समझा करते थे अब इच्छा न होते हुए भी स्रोत की पदवी भारत को ही देनी पड़ी है।

इस से पहिले भी कभी २ किसी पक्षपात रहित योरपीय विद्वान् ने कभी लिख ही दिया था कि सब देशों की चिकित्साशैली का भण्डार भारत है परन्तु महाशय दत्त और ठाकुर साहिब के निरन्तर यत्न से अन्त में नवीन योरपीय विद्वानों को भी यही मानना पड़ा।

अब यह सिद्ध हो चुका है कि आयुर्वेद का प्रारम्भ ऋग्वेद में हुआ। योरपीय विद्वानों का कल्पना है कि ऋग्वेद का समय ईसा से ४००० वर्ष पहिले था। उस समय के चिकित्सक युद्धक्षेत्रों में सेनाओं के साथ २ जाते थे, घायल और निरुपयोगी नेत्रों को निकाल सकते थे, नष्ट टांगों और भुजाओं को काट सकते थे, और उन के स्थान पर कृत्रिम टांगें लगा सकते थे। रण क्षेत्र में घायल पशुओं की भी चिकित्सा कर सकते थे।

इसी समय में चिकित्सा के दो भाग हो चुके थे जिसके अनुसार दो प्रकार के चिकित्सक थे अर्थात् शल्य वैद्य, और भिषक्। भिषक् अपने घर के आस पास जड़ी बूटियें भी उगाते थे। ऋग्वेद में भी जड़ी बूटियों का वर्णन मिलता है और लगभग कोई एक हज़ार बूटियों का वर्णन है यही नहीं प्रत्युत जल चिकित्सा के सम्बन्ध में भी मन्त्र हैं।

ऋग्वेद में रसौषधियों से चिकित्सा की विधि लिखी है। १ पूरा सूक्त क्षय रोग का वर्णन करता है। शल्य चिकित्सा प्रसूतितन्त्र बालरोग और स्वस्थ वृत्त के भी चिन्ह मिलते हैं।

ऋग्वेद में आयुर्वेदिक विषय शृङ्खला बद्ध नहीं हैं परन्तु अथर्ववेद में इन्हें क्रमबद्ध करके इनके ८ भेद कर दिये हैं।

(१) शल्यतन्त्र (Surgery)
(२) शालाक्य तन्त्र अर्थात् नेत्र, नाक, कान, और मुख के रोग

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

(३) ज्वर तथा अन्य रोग (Medicine)
(४) मानसिक रोग (Insanity and mental diseases)
(५) बालरोग (Diseases and mangement of children)
(६) विष ज्ञान (Toxicology)
(७) रसायन (Chemistry)
(८) वाजीकरण (Means of stengthening the Generative organs).

अथर्ववेद में अन्य औषधियों तथा कष्टरोग, कामला, शोफ इत्यादि रोगों का भी वर्णन है। कैथाटर द्वारा मूत्र निकालने की भी विधि लिखी है। अस्थियें भी शुद्ध वैज्ञानिक क्रम में गिनी हुई हैं। स्वास्थ्य सम्बन्धी नियम, रोगों के कारण, तथा उन की चिकित्सा का भी उल्लेख है। सर विलियम जोन्स अपनी "Essay on the Antiquity of Hindu Medicine," पुस्तक में लिखते हैं "I have myself met with curious fragments of that primeval work; and in the Vedas itself, I found, with astonishment, an entire Upnishad on the internal parts of the human body, with an enumeration of the nerves, veins, and arteries; a description of the heart, spleen and liver, and various disquisition on the formatio and growth of the fœtus

अर्थात् मैंने स्वयम् उस पुस्तक के कुछ अपूर्व भाग देखे हैं। बड़े विस्मय से मैंने उन में देखा कि एक पूरे उपनिषद् में शरीर के अन्तर अवयवों का वर्णन, नाड़ियों, शिराओं और रक्तवाहिनियों की गणना, और हृदय, प्लीहा, यकृत और भ्रूण की रचना तथा वृद्धि का वर्णन है।

वैदिक काल के पीछे आयुर्वेद के दो मुख्य विभागों का दो ऋषियों ने विशेष रूप से प्रचार किया। आत्रेय ने कायचिकित्सा (Medicine) का और धन्वन्तरी ने शल्य चिकित्सा (Suergery) का। आत्रेय ने आत्रेय संहिता निर्माण की जिस में लगभग ४६, ५०० श्लोक हैं। आत्रेय का मुख्य शिष्य अग्निवेष्य था और उस का शिष्य चरक था। चरक अपनी बुद्धि और योग्यता के बल से इतना प्रसिद्ध हुआ कि कभी २ कायचिकित्सा को ही चरक कह देते हैं। चरक की पुस्तक चरक संहिता कायचिकित्सा की ऐसी आधार पुस्तक है जिसे आज तक प्रमाण माना जाता है। इस के ८ भाग हैं जिन में १२० अध्याय हैं। इस में हृदय, चक्षस्, कोष्ठ, और अङ्गों के रोगों के कारण, लक्षण, और चिकित्सा के अध्यायों के अतिरिक्त भोजन, औषधियों, विषों, यन्त्र, शस्त्र, वस्ति आदि का भी वर्णन है। चिकित्सालय बनाने की रीति और उन में प्रसूति तथा शिशु सम्बन्धी कमरों का तो वर्णन है परन्तु आश्चर्य इस बात का है कि भाप और धूम्र (fumigation) वस्त्र, कमरे और सामान को शुद्ध करने की भी विधि लिखी है। इस बात का भी ध्यान रखा है कि शिशु और बालकों के कमरों में खिलौनों का भी प्रबन्ध हो और कमरे प्रकाशयुक्त, सुन्दर और रंगदार हों। औषधियों का वर्णन ऐसे क्रम मे हैं कि नवीन वैज्ञानिक भी विस्मित हैं।

धन्वन्तरी की पाठशाला काशी में थी और उस का मुख्य शिष्य सुश्रुत था। सुश्रुत शल्यतन्त्र में ऐसा अद्वितीय प्रवीण था कि उस का ग्रन्थ सुश्रुत संहिता आज तक प्रमाण माना जाता है। सुश्रुत ने शल्यकर्मों (operations) के भेद भी किये हैं और १०१ शस्त्र और २० तीक्ष्ण यन्त्रों का भी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वर्णन किया है । उस के समय में यन्त्र इतने तीक्ष्ण थे कि बाल [केश] के लम्बोतर दिशा में दो भाग कर सकते थे। सच तो यह है कि नवीन शस्त्र और यन्त्र सुश्रुत के शस्त्रों और यन्त्रों के परिवर्तित रूप हैं। शरीर (anatomy) का भी विशेष वर्णन है।

आत्रेय और धन्वन्तरी के अन्य कई शिष्य भी प्रसिद्ध हुए हैं वे राजा महाराजाओं के दर्बारों में, सेनाओं में नियुक्त थे।

इसी समय में त्रिदोष सिद्धान्त भी प्रचलित हुआ जिस में रोग किस एक, या दो या तीनों दोषों [वायु, पित्त और कफ़] के कुपित होने का परिणाम माना गया । यह ऐसी कल्पना थी जिसे सारे संसार ने किसी न किसी रूप में माना ।

यही नहीं प्रत्युत कैटेरैक्ट [मोत्या] का शल्यकर्म भी इसी समय में आरम्भ हुआ। कोष, भग्न अस्थियों, हर्णिया, अशमरी और बवासीर के शल्यकर्म भी किये गये । सम्मोहन औषधियों से अचेत कर के शल्य कर्म किया जाता था और पुनः संजीवनी औषधी से सचेत भी कर लिया जाता था। यही नहीं प्रत्युत कठिन प्रसूति अवस्था में भ्रूण को विशेष विधियों या शस्त्रों की सहायता से निकालना या आजकल के भयंकर शल्यकर्म कोष्ट द्वारा भ्रूण को निकालने (Caesanan Section)—का भी साहस था।

शव पर शवच्छेद या शल्यकर्म करने का ढंग भी प्राचीन है । शव के अतिरिक्त शल्य कर्म विधि अन्य साधनों से भी सिखाई जाती थी जैसे पुष्प पत्र का चीरना, जल की भी भरी थैलियों को छेदना, चमड़े का सीना इत्यादि।

रसायन में तो विद्या शिखर पर थी।

चरक और सुश्रुत के समय तक तो आयुर्वेद उन्नति की चोटी पर था। उन के पीछे बौद्ध काल में शल्यकर्म का ह्रास इसलिये होना आरम्भ हुआ कि रोगियों पर शल्यकर्म क्या प्रत्युत शव पर भी चीर फाड़ पाप समझा गया। अहिंसा के चक्र में शल्यतन्त्र भी पिस गया । परन्तु कायचिकित्सा की विशेष उन्नति हुई, स्थान २ पर औषधालय और चिकित्सालय खुल गये, वैद्य भ्रमण कर कर के स्थान स्थान पर चिकित्सा करते थे। यहां तक कि पशु चिकित्सा भी विज्ञान के रूप में आरम्भ हो गई। स्त्रियें भी चिकित्सक बन गईं ।

चन्द्रगुप्त के समय में इतने वैद्य हो गए कि उन के कार्य को नियन्त्रण में लाने के लिये राष्ट्र की ओर से नियम बनाए गए (medical ethics)। जन्म और मृत्यु के रजिस्टर रखे गए। वैद्यों को आज्ञा थी कि संक्रामय रोगों की सूचना तुरन्त दें अन्यथा दण्ड के भागी होते थे। यहां तक कि यदि कोई चिकित्सक असावधानी से रोगी को हानि पहुंचाता था तो भी दण्ड पाता था । न्यायालय में लड़ाई दंगों या विष से मरों की शवच्छेदन रिपोर्ट आती थी।

अशोक के समय में आयुर्वेद में निपुण चिकित्सक काशी, तक्षशिला नालन्दा आदि विश्वविद्यालयों से पढ़ कर यूनान, चीन, तिब्बत आदि स्थानों में जाने लगे । और अन्त में ख़लीफा अलमन्सूर ने ७८६ (A. D.)में चरक और सुश्रुत का अनुवाद अरबी में करवाया और वहाँ से आयुर्वेद यूनान, रोम, फारस में गया । यूनान से सारे योरप में फैला। परन्तु जैसे २ आयुर्वेद

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अन्य देशों में फैलता गया, भारत में इस का ह्रास होता गया। १५५० (A.D.) में भाव-मिश्र ने इसे पुनर्जीवित करने का पुनः उद्योग किया और हो भी गया। उस ने भाव प्रकाश पुस्तक लिखी जिस में कई नवीन रोगों का भी वर्णन किया। परन्तु राजनैतिक समस्यायें इतनी प्रबल थीं कि आयुर्वेद का पुनरुत्थान न हो सका। कुछ वर्षों से कविराज गणनाथसेन के प्रयत्न से तथा अखिल-भारतीय-आयुर्वेद-सम्मेलन से इस में पुनः जीवन आना आरम्भ हुआ है जिस से भिन्न प्रान्तों में सरकार ने समितियां बनाई है और विद्यालय खोले हैं। कई संस्थाओं ने भी यत्न किया है जैसे गुरुकुल कांगड़ी ने आयुर्वेद विद्यालय खोल कर आयुर्वेद को वैज्ञानिक आधार पर पुनर्जीवित करना आरम्भ किया है। परन्तु यह तो समय ही जतायेगा कि भारत में आयुर्वेद आयुर्वेद के रूप में रहेगा या वर्तमान योरपीय चिकित्सा पद्धति में मिल जायेगा। चाहे कुछ भी हो प्राचीन आयुर्वेद निम्न कारणों से सर्व स्मरणीय और अद्वितीय रहेगा:—

१. इस का संसार भर की चिकित्सा शैलियों का स्रोत होना और इतने प्राचीन काल से जिसका अनुमान भी अभी विवादास्पद विषय है। योरपीय विद्वान इसे ४००० (B. C.) समझते हैं।

२. इस में ऐसी बातों का उल्लेख है जिन का नवीन विज्ञान आज स्वतन्त्र अन्वेषणा कर रहा है और जो विज्ञान की कसौटी पर पूरी उतरती हैं जैसे रक्त संचार इत्यादि।

३. एक बात जो अभी तक भी योरपीय संसार नहीं जानता यह जिसे कि चरक ने स्पष्ट लिखा है कि चिकित्सा धन उपार्जन के लिये करना ऐसा ही है जैसे कि व्यापार में सोने के स्थान पर रेत का एकत्रित करना। यह तो समाज सेवा का साधन है न कि धन कमाने का, दुखियों की सेवा द्वारा आत्म उन्नति का न कि व्यापार का, और संसार में परमात्मा को देखने का न कि माया ढूंढने का। परन्तु शोक है कि उन्हीं ऋषियों की सन्तान जो अमृत प्याला हाथ में लेकर अमृत बांटा करते थे आज नाना उपायों से ठग वैद्य (quaces) बन कर पैसे २ गोली बेच कर दूसरों के जानलेवा हो रहे हैं। कहां वह भारत, संसार में आयुर्वेद का जन्म दाता और भण्डार और कहां आयुर्वेद की यह दुर्गति।

संसार चक्र तू धन्य है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अद्वैतवाद के आधारभूत विचार

(ले०— श्री पं० सुखदेव जी वेदालंकार)

"वितरति गुरुः प्राज्ञे विद्यां यथैव तथा जड़े,
न तु खलु तयोर्ज्ञाने शक्तिं करोत्यपहन्ति वा।
भवति हि पुनर्भूयान् भेदः फलं प्रति तद्यथा,
प्रभवति शुचिर्बिम्बग्राहे मणिर्न मृदादयः॥"
(उत्तर० २ अं० ४ श्लो०)

भवभूति के इस वाक्य के अनुसार परमात्मा ने प्राणिमात्र के लिए सृष्टि के प्रारम्भ में एक ही जैसा ज्ञान दिया। वह ज्ञान वेद के रूप में था। इस स्थापना की अन्तःसाक्षी स्वयं वेद इस प्रकार देता है—

"यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः।
ब्रह्मराजन्याभ्याꣳ शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय[1]॥"
(यजु० अ० २६। मं. २)

"परमेश्वर कहता है कि (यथा) जैसे मैं (जनेभ्यः) सब मनुष्यों के लिए (इमाम्) इस (कल्याणीम्) कल्याण अर्थात् संसार और मुक्ति के सुख देने हारी (वाचम्) ऋग्वेदादि चारों वेदों की वाणी का (आवदानि) उपदेश करता हूँ, वैसे तुम भी किया करो। यहां कोई ऐसा प्रश्न करे कि जन शब्द से द्विजों का ग्रहण करना चाहिये क्योंकि स्मृत्यादि ग्रन्थों में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य ही के वेदों के पढ़ने का अधिकार लिखा है, स्त्री और शूद्रादि वर्णों का नहीं। (उत्तर) (ब्रह्मराजन्याभ्याम्) इत्यादि देखो परमेश्वर स्वयं कहता है कि हमने ब्राह्मण, क्षत्रिय (अर्याय) वैश्य (शूद्राय) शूद्र और (स्वाय) अपने भृत्य वा स्त्री आदि (अरणाय) और अति शूद्रादि के लिए भी वेदों का प्रकाश किया है— अर्थात् सब मनुष्य वेदों को पढ़ पढ़ा और सुन सुना कर विज्ञान को बढ़ा के अच्छी बातों का ग्रहण और बुरी बातों का त्याग करके दुःखों से छूट कर आनन्द को प्राप्त हों॥"

(स्वामी दयानन्द सरस्वती)

परमात्मा ने प्राणिमात्र के लिये वेदों में आचारशास्त्र का उपदेश किया है—कि किस प्रकार मनुष्य समाज में रह कर समाज की उन्नति कर सकता है। हम आचार को धर्म के नाम से भी कह सकते हैं क्योंकि धर्म वह वस्तु है जिस से समाज धारण किया जा सके। किसी समाज का धारण किए जाने का यही अर्थ होगा कि वह समाज अपनी आवश्यकता के अनुसार बनाए हुए नियमों से इस प्रकार संगठित हो कि उस की अवनति न हो प्रत्युत उन्नति हो। इन्हीं अर्थों में हम आचार तथा धर्म को पर्यायवाची शब्द कह सकते हैं।

इस के साथ ही साथ वेदों में संसार का दर्शन (Philosophy) भी बताया गया है। "नासदीय सूक्त[2]" को देखने से स्पष्ट मालूम होगा कि सृष्टि की उत्पति का कैसा अच्छा वर्णन है।

अब विचारणीय बात यह रह जाती है कि क्या दर्शन (Philosophy) तथा आचार या

१ यह मन्त्र भाष्यसहित सत्यार्थप्रकाश ३य समुल्लास में द्रष्टव्य है।
२. नासदीय सूक्त (ऋ० १० मण्डल १२९ सूक्त)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

धर्म शास्त्र में परस्पर कोई सम्बन्ध भी है या नहीं ?

सभी भारतीय वैदिक षड्दर्शन वेदों को प्रामाणिक मानते हैं । प्रत्येक दर्शन में आचार तथा दर्शन की साथ २ व्याख्या की गई है । इन छः दर्शनकारों का, जिन्हें हम वेदानुकूल चलने के कारण परमात्मा गुरु का शिष्य कह सकते हैं, कर्म के सिद्धान्त को मानना इस बात का पुष्ट प्रमाण है कि इस सारी सृष्टि प्रक्रिया के समझने में मनुष्य के पुण्य पाप बहुत बड़े सहायक साधन हैं । "सृष्टि ऐसी क्यों पैदा हुई" इस प्रश्न का उत्तर सभी दर्शनकार एक स्वर से यही देते हैं कि "क्योंकि पुरुष के कर्म ही ऐसे थे कि उन्हें भोगने के लिए इसी प्रकार की सृष्टि आवश्यक थी" । इस प्रकार इन भारतीय दर्शनों के पढ़ने से यह स्पष्ट मालूम हो जाता है कि दर्शन तथा आचार में पारस्परिक घनिष्ट सम्बन्ध माना गया है ।

जहां बाह्य देशों में यह प्रवृत्ति रही है कि दर्शन तथा आचार में कोई सम्बन्ध नहीं—वे सर्वथा परस्पर विरोधी हैं, वहां मध्ययुग में प्रत्येक के हृदय में यह लहर काम कर रही थी कि दर्शन तथा आचार एक ही हैं । इसका परिणाम स्वरूप फल यह हुआ कि अपने अपने दर्शन के अनुसार अपने अपने सम्प्रदाय खड़े हो गये । अर्थात् दर्शन के साथ साथ धर्म ने सम्प्रदाय का रूप धारण कर लिया । ब्रह्मसूत्रों पर ही लिखी गई प्राचीन बोधायन वृत्ति पर किए गये भाष्यों को पढ़ कर श्री रामानुज ने "विशिष्टाद्वैतवाद"[1] मत की स्थापना की । यह एक "रामानुज सम्प्रदाय" कहलाया । शङ्कर स्वामी ने उन्हीं सूत्रों के द्वारा अद्वैतवाद का प्रचार किया । इनका अपना सम्प्रदाय स्थापित हुआ । श्री वल्लभाचार्य ने उन्हीं ब्रह्मसूत्रों से शुद्धाद्वैतवाद का प्रचार किया । इन के सम्प्रदाय का नाम "वल्लभ सम्प्रदाय" हुआ । मध्व ने उन्हीं ब्रह्मसूत्रों से द्वैतवाद का प्रचार किया । यह "माध्वसम्प्रदाय" के नाम से पुकारा जाने लगा । इस प्रकार सभी ने अपने मत को वैदिक कहा । सभी सत्य नहीं हो सकते । कोई तो मणि के समान स्वच्छ होंगे जिन में सत्यता का प्रतिबिम्ब पड़ा है । कोई केवल उस ढेले के समान हैं, जिस में सत्यता का प्रतिबिम्ब नहीं पड़ा । इस का हम आगे विवेचन करेंगे ।

आज कल के नवीन युग में आवश्यकता इस बात की है कि दर्शन तथा आचार को एक भी न माना जाय और विरोधी भी न माना

---

१. विशिष्टं च विशिष्टं च विशिष्टे तयोरद्वैतं विशिष्टाद्वैतम् । कईयों का यह कहना है कि श्री रामानुजने बोधायन वृत्ति से ही 'विशिष्टाद्वैतवाद' की स्थापना की है । हमारे विचार में बोधायन विशिष्टाद्वैत को नहीं मानते थे, अपितु वे द्वैतवादी थे । शङ्कर ने अपने भाष्य में जहां कहीं भी बोधायन के सिद्धान्त का खण्डन किया है वहां उन्हें विशिष्टाद्वैतवादी के नाम से स्मरण नहीं किया । मालूम ऐसा होता है कि श्री रामानुज को भी भाष्य लिखते समय बोधायन वृत्ति उपलब्ध ही नहीं हुई थी, केवल मात्र उस पर किए गए संक्षिप्त भाष्य ही उपलब्ध हुए थे । इस बात का प्रमाण अपने श्री भाष्य में स्वयं रामानुज देते हैं—

"भगवद्बोधायनकृतां विस्तीर्णां ब्रह्मसूत्रवृत्तिं पूर्वाचार्याः
संक्षिप्तुस्तन्मतानुसारेण सूत्राक्षराणि व्याख्यास्यन्ते ॥"

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जाय । इन दोनों में परस्पर घनिष्ट सम्बन्ध अवश्य होना चाहिए । इन दोनों के सम्बन्ध का नाम "कार्यकारणभाव" हो सकता है। जिस देश में जैसा दर्शन होता है उसी के अनुसार धर्म भी अपना रङ्ग बदला करता है । अथवा समाज की उचित आवश्यकताओं के अनुसार जो समाज का आचार या धर्म होता है उसी के अनुसार दार्शनिक विचारों की व्याख्या की जाती है। हमें कर्म के सिद्धान्त को इसलिए मानना पड़ता है क्योंकि अन्यथा हम सांसारिक सुख दुःख की विषमता की व्याख्या नहीं कर सकते । भविष्य के सुख दुःख को दृष्टि में रख कर हम अच्छे कर्म करने के लिए प्रवृत्त होते हैं । हमें सद् आचार के नियम क्रिया में लाने पड़ते हैं। कर्म के सिद्धान्त को स्थिर करने के लिए हमें जीवात्मा को मान कर उसे नित्य मानना होता है। चोर कभी यह नहीं चाहता कि मुझे चोरी का फल स्वरूप यातना भोगनी पड़े । इस लिए जीव को उस के कर्मों का फल देने के लिए उसके अधिष्ठाता परमात्मा की आवश्यकता होती है। इस प्रकार आवश्यक बातों को स्थिर करने के लिये दर्शन के अन्दर नई नई कल्पनाएं की जाती हैं।

संसार में जीता हुआ मनुष्य केवल इसीलिए काम करता है कि वह चिरस्थायी सुख प्राप्त करे। उसे किसी प्रकार की आपत्ति न उठानी पड़े।

"यद्भद्रं तन्न आसुव"

हे परमात्मन् ! जो कुछ भी सुख या आनन्द है वह हमें प्राप्त हो ।

इस सुख के ढूंढने में जब मनुष्य को नाना प्रकार की आपत्तियों का सामना करना पड़ता है तब उस का अनुभवी मन संसार की विकट समस्याओं को खूब गम्भीरता से विचारता है । "क्या यह संसार ऐसा ही चला जायगा"? "क्या इस की कभी उत्पत्ति भी हुई या नहीं"? "यह स्वयं पैदा हो गया अथवा इस के बनाने वाला कोई दूसरा व्यक्ति है ? "वह कहां रहता है" ? "यदि वह है तो इस सृष्टि से पूर्व उस के पास कौन सी ऐसी वस्तु थी जिस से उसने इस बड़े भारी, समझ में न आने वाले, संसार को पैदा कर दिया"? "उसे इस संसार के पैदा करने की आवश्यकता ही क्या थी"? "क्या हम स्वयं इसे नहीं बना सकते"? "संसार में सभी माता के पेट से पैदा हुए हैं, फिर क्या कारण है कि कोई सुखी है और कोई दुःखी" ?

इत्यादि प्रश्न एक गम्भीर मन वाले आदमी को बाधित करते हैं कि वह उन को विचारने के लिए अपनी विचारशृङ्खला को एक विशेष मार्ग में ले जाय ।

मनुष्य के अन्दर श्रेणीकरण करने की बुद्धि स्वाभाविक है । जब उस का मन इन जटिल प्रश्नों पर विचार करने के लिए तय्यार हो जाता है उस समय उस की यह श्रेणीकरण करने वाली बुद्धि विकसित हो जाती है । सौ घोड़ों को अलग २ देखता हुआ भी वह उन में एक "अश्वत्व" समानधर्म देखता है, जिस से उन सब को वह अश्व कह कर पुकारता है। एवं सब अलग २ मनुष्यों में "मनुष्यत्व" समान धर्म देख कर उन सब को मनुष्यश्रेणी में डालता है । अपनी बुद्धि के विकास के अनुसार धीरे २ दोनों को वह प्राणी की श्रेणी में ले जाता है। कई वस्तुएं संसार में उसे ऐसी दीखती हैं जिन्हें वह प्राणी की श्रेणी में नहीं डाल सकता, उन्हें 'जड़' कह कर पुकारता है। इस प्रकार दुनियां में उसे दो वस्तुएं ऐसी दीखती हैं जिन से वह समझता है कि संसार

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

की व्याख्या हो सकती है। परन्तु इतने से ही मनुष्य की बुद्धि सन्तुष्ट नहीं होती।

यदि किसी आदमी के पास आठ नौकरों के लायक काम है और वह उसी की जगह बारह नौकर रखता है तो लोग उसे मूर्ख कहेंगे। प्रकृति के अन्दर भी हम इसी नियम को काम करते देखते हैं कि "कम से कम साधनों से अधिक से अधिक काम निकाला जाता है"। मनुष्य अपने एक ही सिर से काम कर सकता है— इसी लिए परमात्मा उसे दो सिर नहीं देता। यह एक बुद्धिमत्ता है कि प्रत्येक प्राकृतिक या अप्राकृतिक कार्य की व्याख्या के लिए थोड़े से थोड़े साधन पर्याप्त हो जांय। "एक पन्थ दो काज" की कहावत बुद्धिमत्ता की कहावत कही जाती है। प्रत्येक मनुष्य चाहता है कि मुझे सब बुद्धिमान् समझें। यदि वह इन उपयुक्त स्वाभाविक नियमों का अनुसरण नहीं करेगा तो उसे बुद्धिमान कौन कहेगा? इसी लिए कई विचारक यह सोचते हैं कि जगत् का कारण इन दो सत्ताओं (जड़ + चेतन) को क्यों माना जाय जब कि एक ही कारण मान कर इस संसार की उत्पत्ति की व्याख्या की जा सकती है।

जड़ वस्तु तो इसलिए संसार को स्वयं पैदा नहीं कर सकती क्योंकि वह स्वयं स्वतन्त्र नहीं- स्वयं उस के अन्दर क्रिया नहीं हो सकती।

"रचनानुपपत्तेश्च नानुमानम्" (ब्रह्म सू० २ अ० २ पा० १ सू०) की व्याख्या करते हुए शङ्कर स्वामी लिखते हैं—"नाचेतनं लोके चेतनानधिष्ठितं स्वतन्त्रं किञ्चिद्विशिष्टपुरुषार्थनिर्वर्तनसमर्थान्विकारान् विरचयद् दृष्टम्। गेहप्रासादशयनासनविहारभूम्यादयो हि लोके प्रज्ञावद्भिः शिल्पिभिर्यथाकालं सुखदुःखप्राप्तिपरिहारयोग्या रचिता दृश्यन्ते॥"

"प्रवृत्तेश्च" (ब्रह्म सू० २ अ० २ पा० २ सू०) की व्याख्या करते हुए शंकर स्वामी लिखते हैं—

"नहि मृदादयो रथादयोवा स्वयमचेतनाः सन्तश्चेतनैः कुलालादिभिरश्वादिभिर्वानधिष्ठिता विशिष्टकार्याभिमुखप्रवृत्तयो दृश्यन्ते। दृष्टाच्चादृष्टसिद्धिः। अतः प्रवृत्त्यनुपपत्तेरपि हेतोर्नाचेतनं जगत्कारणमनुमातव्यं भवति।"

इसलिए स्वभावतः यह बात सम्भवतः माननी होगी कि उपर्युक्त नियम के अनुसार केवल मात्र एक ही सत्ता जगत् का कारण होनी चाहिए।

इस में कोई शक नहीं कि थोड़े से थोड़े कारण से यदि संसार की व्याख्या हो सके तो बहुत अच्छा हो। परन्तु इस बात को ध्यान में रखना चाहिए कि प्रत्येक अच्छी से अच्छी बात की अति भी दुष्परिणाम को पैदा करती है। निःसन्देह कुनीन मलेरिया ज्वर को दूर करती है—परन्तु वही अधिक मात्रा में दी हुई रोगी की मृत्यु का कारण भी हो सकती है। संसार में सचाई के बिना कार्य नहीं चल सकता, परन्तु अन्धे को अन्धा कहना भी अच्छा नहीं। बहुत अधिक निडर आदमी की निडरता क्रूरता में परिणत हो सकती है। यदि परमात्मा दो आंख के स्थान पर एक ही आँख दे देता तो सम्भवतः काम न चलता। यदि पांच ज्ञानेन्द्रियों न हो कर दो होतीं तो भी कार्य में अपूर्णता होती। आठ आदमियों के लायक कार्य पर यदि बारह आदमी लगा दिए जाँय तो इतनी मूर्खता न होगी जितनी कि बारह आदमियों के कार्य पर आठ आदमी लगाने पर होगी। क्योंकि ऐसी अवस्था में तो कार्य भी पूरा नहीं होगा। पहिली हालत में कार्य अवश्य पूरा हो जायगा। इसी नियम को कि "प्रत्येक कार्य की व्याख्या थोड़े से थोड़े

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कारणों से होनी चाहिए" ठीक न समझ कर योरुप में भी एकत्ववाद (Monism) का प्रचार हुआ। भारतवर्ष में इस वाद के (जिस को वास्तव में एकत्ववाद कहना चाहिए था, पर पारिभाषिक नाम "अद्वैतवाद" रखा है[1]) मुख्य प्रवर्तक शंकराचार्य माने जा सकते हैं।

वैष्णव सम्प्रदाय के आचार्यों में वल्लभाचार्य का नाम भी प्रसिद्ध है। वे संसार को सत्य मानते हुए भी विशुद्धाद्वैतवाद मानते हैं। उनका कहना है कि प्रकृति तथा जीव का ब्रह्म के साथ भेदाभेद सम्बन्ध है। अतः प्रलयावस्था में केवल मात्र प्रकृति और जीव से अभिन्न ब्रह्म ही शेष रह जाता है।

वल्लभाचार्य ब्रह्म के साथ माया (अविद्या) का सम्बन्ध भी नहीं मानते। उन के सिद्धान्तानुसार ब्रह्म केवल मात्र अपनी इच्छा से ही जगत् को पैदा करता है। उन के लिए यह प्रश्न नहीं किया जा सकता कि लोक में तो हम देखते हैं कि कुलाल ने यदि घड़े को बनाना हो तो किसी उपादान कारण को लेकर ही घड़ा बनायगा, अन्यथा नहीं। वल्लभाचार्य "जन्माद्यस्य[2] यतः" (ब्रह्मसू० १ अ० १ पा० २ सूत्र) की व्याख्या करते हुए लिखते हैं—

"अनेकभूतभौतिकदेवतिर्यङ्मनुष्यानेकलोकाद्भुतरचनायुक्तब्रह्माण्डकोटिरूपत्य मनसाप्यकल्पितमशक्यरचनस्यानायासेनोत्पत्तिस्थितिभङ्गकरणं न लौकिकम्"[3]

वल्लभाचार्य को बौद्ध सिद्धान्त तथा शङ्कर का मायावाद दोनों ही अभीष्ट नहीं। इस की पुष्टि में निम्न प्रमाण है—

"नासदीतोऽदृष्टत्वात्" (ब्रह्म सू० २ अ० २ पा० २६ सू०) की व्याख्या में वल्लभ स्वामी लिखते हैं— "देवादयः स्वांशेनावतीर्य वैदिकेषु प्रविश्य विश्वार्थं वेदभागान् यथार्थानपि व्याख्याय सदसद्विलक्षणामसदपरपर्यायामविद्यां सर्वकारणत्वेन स्वीकृत्य तन्निवृत्त्यर्थं जातिभ्रंशरूपं संन्यासपाषण्डं प्रसार्य सर्वमेव लोकं व्यामोहितवन्तः, व्यासोऽपि कलहं कृत्वा शङ्करं शप्त्वा तूष्णीमास। अतोऽनेना मया सर्वतः सदुद्धारार्थं यथाश्रुतानि श्रुतिसूत्राणि योजयता सर्वो मोहो निराकृतो वेदितव्यः॥"

इसी भाष्य के टीकाकार गोस्वामी पुरुषोत्तम जी महाराज ने अपनी "भाष्य प्रकाश" नामक टीका में लिखा है कि शङ्कर (महादेव) ने पार्वती को निम्न वाक्य[4] कहे—

"मायावादमसच्छास्त्रं, प्रच्छन्नं बौद्ध मुच्यते।
मयैव कथितं देवि कलौ ब्राह्मणरूपिणा॥"
"वेदार्थवन्महाशास्त्रं, मायावाद मवैदिकम्।
मयैव वक्ष्यते देवि जगतां नाशकारणात्॥"

आगे जाकर वल्लभाचार्य "क्षणिकत्वाच्च"(ब्रह्मसू० २ अ० २ पा० ३१ सूत्र) का भाष्य करते हुए लिखते हैं "माध्यमिकस्तु मायादिवदसम्बद्धभाषित्वादुपेक्ष्य इति न निराक्रियत आचार्येण।"[5]

---

१. अद्वैतवाद की जो वास्तविक व्याख्या है वह आगे के अध्यायों में की जायगी।
२. अणुभाष्य सटीक पृष्ट ५६ पंक्ति ४
३. अणुभाष्य सटीक पृष्ट ६५१ पंक्ति ६
४. पद्मपुराण (उत्तर खण्ड)
५. अणुभाष्य सटीक पृष्ट ६५८ पंक्ति ३

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

इन उद्धरणों से हमारा केवल मात्र यह दिखाने का प्रयोजन है कि वल्लभाचार्य मायावाद को नहीं मानते। वे केवल "ब्रह्मवादी" हैं। इसीलिए वल्लभाचार्य इस मत का नाम "शुद्धाद्वैतवाद" रखते हैं।

यद्यपि शङ्कर स्वामी जगत् की उत्पत्ति के लिए ब्रह्म के साथ माया का सम्बन्ध मानते हैं, तथापि वे उसे अनिर्वचनीय कह कर अपने को अद्वैतवादी कहते हैं और द्वैतवादी कहलाने के दोष से छूटने का प्रयत्न करते हैं।

"तदनन्यत्व मारम्भणशब्दादिभ्यः" (ब्रह्म सू० २ अ० १पा० १४ सूत्र) की व्याख्या करते हुए शङ्कर स्वामी लिखते हैं—

"एवमविद्याकृतनामरूपोपाध्यनुरोधीश्वरो भवति, व्योमेव घटकरकाद्युपाध्यनुरोधि। स च स्वात्मभूतानेव घटाकाशस्थानीयान् अविद्याप्रत्युपस्थापितनामरूपकृतकार्यकरणसंघातानुरोधिनो जीवाख्यान् विज्ञानात्मनः प्रतीष्टे व्यवहारविषये। तदेवमविद्यात्मकोपाधिपरिच्छेदापेक्षमेवेश्वरस्येश्वरत्वं सर्वज्ञत्वं सर्वशक्तित्वं च, न परमार्थतो विद्ययापास्तसर्वोपाधिस्वरूप आत्मनीशित्रीशितव्यसर्वज्ञत्वादिव्यवहारउपपद्यते" ॥

"प्रत्येक कार्य की व्याख्या के लिए थोड़े से थोड़े साधनों का होना उपयोगी है" इस विषय को न समझने के कारण ही सम्भवतः शङ्कर स्वामी को षड्दर्शनों में विरोध मालूम हुआ। उन्होंने देखा कि गौतम तथा कणाद परमाणुवादी हैं। वे परमाणु जीव तथा परमात्मा, इन तीन सत्ताओं से जगत् की व्याख्या करना चाहते हैं। सांख्यकार कपिल नाना परमाणुओं को न मान कर, एकरस अव्यक्त प्रकृति तथा जीवात्मा से जगत् की व्याख्या करते[1] हैं। इस लिए कपिल ने उपर्युक्त नियम के अनुसार संसार की अच्छी व्याख्या की है। शङ्कर स्वामी के कथनानुसार वेदान्तसूत्रकार व्यास केवल ब्रह्म से जगत् की उत्पत्ति बताते हैं। अतः वे सृष्टि उत्पत्ति की व्याख्या करने में सब से अधिक सफल हुए हैं। यही कारण है कि शङ्कर स्वामी ने परमाणुकारणवाद तथा प्रकृतिकारणवाद का खण्डन करके केवल ब्रह्मकारणवाद की स्थापना की है। इनके मत को अद्वैतवाद कहते हैं। परन्तु यदि वास्तव में विचारा जाय तो छः दर्शनों में परस्पर कोई विरोध नहीं। प्रत्येक दर्शन ने सृष्टि के भिन्न २ कारणों में से एक-एक कारण की व्याख्या की है।

स्वामी दयानन्द सरस्वती सत्यार्थ प्रकाश के ८म समुल्लास में इस प्रकार लिखते हैं—

"छः शास्त्रों में अविरोध देखो इसप्रकार है। मीमांसा में—ऐसा कोई भी कार्य जगत् में नहीं होता कि जिसके बनाने में कर्म-चेष्टा न की जाय। वैशेषिक में—समय न लगे बिना बने ही नहीं। न्याय में—उपादान कारण न होने से कुछ भी नहीं बन सकता। योग में—विद्या, ज्ञान, विचार न किया जाय तो नहीं बन सकता। और वेदान्त में—बनाने वाला न बनावे तो कोई भी पदार्थ उत्पन्न न हो सके। इस लिए सृष्टि छः कारणों से बनती है। उन छः कारणों

१. शङ्कर के मतानुसार कपिल परमात्मा को नहीं मानते। इसी पक्ष को सांख्य सिद्धान्त का पूर्व पक्ष रख कर शङ्कर स्वामी ने सांख्य सिद्धान्त का खण्डन किया है—"रचनानुपपत्तेश्च नानुमानम्" "प्रवृत्तेश्च" "पयोम्बुवच्चेत्तत्र तेत्रापि" "व्यतिरेकानवस्थितेश्चानपेक्षत्वात्" "अन्यत्राभावाच्च न तृणादिवत्" "अभ्युपगमेऽप्यर्थाभावात्" "पुरुषाश्मवदिति चेत्तत्रापि" "अङ्गित्वानुपपत्तेश्च" "अन्यथानुमितौ च ज्ञशक्तिवियोगात्" (ब्रह्म सू० २ अ० २ पा० १, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, ९ सूत्र)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

की व्याख्या एक एक शास्त्र में है । इस लिए उन में विरोध कुछ भी नहीं।"

हमारे विचार में शङ्कर स्वामी को सन्देहवादी कहना चाहिए। इसका कारण यह है कि उसने देखा कि इस समय संसार में दो मुख्य सिद्धान्त ऐसे हैं, जिनसे कि लोग समझते हैं कि संसार की अच्छी व्याख्या हो सकती है। (१) परमाणु-कारणवाद (न्याय और वैशेषिक)। (२) प्रकृति-कारणवाद (सांख्य)। परन्तु उसने अपनी युक्तियों द्वारा यह सिद्ध करने का भरसक प्रयत्न किया कि न तो परमाणुओं से ही सृष्टि पैदा हो सकती है और न प्रकृति से। और कोई संसार में ऐसा कारण शेष नहीं रहता जिससे यह संसारोत्पत्ति की विकट समस्या हल हो सके। इस लिए शङ्कर स्वामी ने यह कह कर सन्तुष्ट करना चाहा कि यह संसार अनिर्वचनीय है। अर्थात् इसके विषय में कुछ कहा नहीं जासकता । इस तरह दुनियां को लोगों के सामने न समझ में आने वाली चीज़ बना दिया। इसको दूसरे शब्दों में इस तरह कहा जा सकता है कि बजाय इसके कि शङ्कर स्वामी इस संसार के कारण की व्याख्या करते, कुछ न बता कर सबको सन्देह में डाल दिया। यही कारण है कि हम शङ्कर स्वामी के या अन्य किसी एकत्ववादी या अद्वैतवादी के सिद्धान्त को सन्देहवाद के नाम से पुकारना भी अच्छा समझते हैं। चाहे वे संसार को मिथ्या तथा अनिर्वचनीय कहते रहें, परन्तु अपने जीवन में वे इस प्रकार के व्यवहार हर समय कर रहे होते हैं कि मानो वे दुनियां को सत्य समझ रहे हैं। यह उनके सिद्धान्त (Theory) तथा क्रिया (Practice) में विरोध है । इसी से उनके सिद्धान्त की निर्बलता झलकती है । इस की उपर्युक्त समालोचना हम आगे के अध्यायों में करेंगे।

सम्भव है कि शङ्कर स्वामी के पक्ष पोषक के रूप में उसके सिद्धान्त को कथञ्चित् अच्छे रूप में भी रखा जा सके कि शङ्कर स्वामी का हार्दिक अभिप्राय यह नहीं था कि वस्तुतः संसार मिथ्या है, अपितु वे केवल मात्र ज्ञान (ब्रह्म) की प्रधानता तथा महत्ता को ही लोगों के सामने रखना चाहते थे । यही वेदान्त शास्त्रकार व्यास का असली सिद्धान्त मालूम होता है।

पतञ्जलि मुनि कृत योग सूत्र "तदा सर्वावरण-मलापेतस्य ज्ञानस्याऽऽनन्त्यात् ज्ञेयमल्पम् ॥"

(कैवल्यपाद ४। ३१ सू०) का भाष्य करते हुए व्यासमुनि कहते हैं कि जिस समय योगी धर्ममेघ' अर्थात् पूर्णसमाधि की पराकाष्ठा को पहुँच जाता है, उस समय उसके ज्ञान का मलावरण सर्वथा नष्ट हो जाता है। ज्ञान की अनन्तावस्था आजाती है । ज्ञेय पदार्थ ज्ञान के सामने कुछ भी नहीं रहते। जैसे आकाश के सामने खद्योत कुछ भी नहीं। लकड़ी की बनी नौका में यद्यपि लोहे की कीलें अवश्य लगी होती हैं, तथापि वह लोहा कार्यसाधकता के रूप में तथा मात्रा में इतना थोड़ा होता है कि हम उस नौका को लकड़ी का बना कहते हैं, न कि लोहे का। ठीक यही अवस्था धर्ममेघ समाधि वाले योगी की ज्ञान तथा ज्ञेय के विषय में होती है । ज्ञान बहुत अधिक होता है और ज्ञेय विषय बहुत थोड़ा। अर्थात् यदि किसी प्रकार यह सम्भव हो कि संसार के पदार्थ जितने अब हैं उस से भी अधिक तय्यार किए जासकें तो वे भी योगी के ज्ञान के विषय हो जायंगे। धर्ममेघ समाधि वाले योगी के पास ज्ञान अत्यधिक है, परन्तु कमी इस बात की है कि दुनियां के पदार्थ उसके लिये थोड़े हैं । हम साधारण व्यक्तियों की ठीक इस से विपरीतावस्था है। हमारा ज्ञान बहुत थोड़ा है, परन्तु हमारे जानने

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

योग्य ऐसे विषय दुनियां में बहुत अधिक हैं जिन को हमने अभी तक नहीं जाना। इस बात को योगभाष्यकार महर्षि व्यास इसप्रकार लिखते हैं—

"सर्वैः क्लेशकर्मावरणैर्विमुक्तस्य ज्ञानस्यानन्त्यं भवति। आवरकेण तमसाऽभिभूतमावृतमनन्तं ज्ञानसत्वं क्वचिदेव रजसा प्रवर्तितमुद्घाटितं ग्रहणसमर्थं भवति। तत्र यदा सर्वैरावरणमलैरपगतं भवति तदा भवत्यस्यानन्त्यम्। ज्ञानस्याऽऽनन्त्यात् ज्ञेयमल्पं सम्पद्यते, यथाकाशे खद्योतः।

होसकता है कि इसप्रकार योगी में ज्ञानाधिक्य होने के कारण सब कुछ ज्ञान कह कर ज्ञान की प्रधानता बताई जा सके। परन्तु सर्वसाधारण के लिए "न बुद्धिभेदं कुर्यादज्ञानां कर्मसङ्गिनाम्" इस गीतावाक्य का पालन नहीं किया गया। शङ्कर स्वामी ने स्वयं अथवा उसके अनुयायियों ने ही इस सिद्धान्त को लोगों के सामने इस रूप में रखा कि वह सबके लिए घातक सिद्ध हो रहा है। यदि इन शब्दों में उसके सिद्धान्त को "सन्देह वाद" कह दें तो कोई अत्युक्ति न होगी।

यदि गहरी दृष्टि से देखा जाय तो हमें मालूम होगा कि शङ्कर स्वामी का यह अद्वैतवाद (ब्रह्मवाद) कोई नया सिद्धान्त नहीं है। प्रत्येक विचारक या सुधारक अपने समकालीन विचारों की शृङ्खला की सर्वथा उपेक्षा नहीं कर सकता। उस के विचारों में उन विचारों की रङ्गत अवश्यमेव आजाती है, जो उसके समय के लोगों के हृदयों में स्थान पा चुके हों। शङ्कर स्वामी भी उसी समय हुए जब कि बौद्ध दर्शन के सिद्धान्तों का सिक्का संसार भर में था। इसलिये यह बात अत्यन्त स्वभाविक थी कि उनके सिद्धान्तों में बौद्ध सिद्धान्तों की गन्ध आती, जिस को वे सर्वथा दूर नहीं कर सकते थे। अतः कतिपय विद्वान् इन्हें "प्रच्छन्न बौद्ध" के नाम से पुकारते थे। बौद्धदर्शन से ही इनको अपने दर्शन का मार्ग मिला।

अणुभाष्य के टीकाकार गोस्वामी पुरुषोत्तमजी "नासतोऽदृष्टत्वात्" (ब्रह्म. सू. २ अ. २ पा. २६ सू.) के भाष्य की टीका में लिखते हैं कि पद्मपुराण के उत्तर खण्ड में शङ्कर ने पार्वती के प्रति निम्न वचन कहे हैं—

"मायावादमसच्छास्त्रं प्रच्छन्नं बौद्धमुच्यते।
मयैव कथितं देवि कलौ ब्राह्मणरूपिणा"

अर्थात् कलियुग में साक्षात् महादेव ने शङ्कर का रूप धारण करके मायावाद (प्रच्छन्नबौद्ध) शास्त्र को बनाया। इस का कारण यह है कि महादेव की इच्छा थी कि सारे संसार को भ्रम में डाला जाय—
"सर्वस्य जगतोऽप्यत्र मोहनार्थं कलौ युगे"।

अब विचारना यह है कि बौद्ध दर्शन की क्या समानता शङ्कर दर्शन में झलकती है। विज्ञानवादी बौद्ध का सिद्धान्त यह है कि नाना तथा क्षणिक विज्ञान के अतिरिक्त संसार में और किसी वस्तु की सत्ता नहीं। उन क्षणिक विज्ञानों से बनी विज्ञान धारा का आश्रय कोई नित्य आत्मा भी नहीं। हर समय विज्ञान के पश्चात् दूसरा विज्ञान आता है और वह नष्ट होकर तीसरे विज्ञान को उत्पन्न करता जाता है। यही क्रम संसार में चल रहा है। ज्ञेय पदार्थ ज्ञान से भिन्न सत्ता नहीं रखते इसका प्रतिपादन करते हुए विद्यारण्यमुनि विवरण-प्रमेयसंग्रह में ७५ पृ० पर लिखते हैं—

"सहोपलम्भनियमादभेदो नीलतद्धियोः
अन्यत्वेत् संविदो नीलं न तद्भासेत संविदि।
भासते चेत् कुतः सर्वं न भासेतैकसंविदि
नियामकं न सम्बन्धं पश्यामो नीलतद्धियोः॥"

१. अशुक्लाकृष्णं धर्मं मेहतीति सिञ्चतीति वर्षतीति वा इति धर्ममेघः।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

संसार में हमें जो व्यवहार करते हुए ज्ञान और उसके विषय में भेद मालूम होता है वह भ्रम है। उसका कारण यही है कि अनादि काल से हम में भेद वासना रूप अविद्या का सम्बन्ध है। इन्हीं संस्कारों के कारण हम ज्ञान तथा ज्ञेय में भेद समझते हैं। सायणमाधवाचार्य सर्वदर्शनसंग्रह के बौद्ध दर्शन में इसी बात का प्रतिपादन करते हुए लिखते हैं—"यश्चायं ग्राह्यग्राहकसंवित्तीनां पृथगवभासः स एकस्मिश्चन्द्रमसि द्वित्वावभास इव भ्रमः। अत्रापि अनादिरविच्छिन्नप्रवाहा भेदवासनैव निमित्तम्"।

शङ्कर स्वामी ने इस सिद्धान्त में दोष देखे, कि यदि केवलमात्र विज्ञान धारा को ही माना जाय और उसका आश्रय कोई नित्य आत्मा न माना जाय तो इसका यही मतलब होगा कि कर्म फल की प्राप्ति के समय जिस विज्ञान ने कर्म किया था वह नष्ट हो चुका होगा। अतः उसका फल दूसरे विज्ञान को भोगना होगा। दूसरे शब्दों में यों कह सकते हैं कि जिस विज्ञान ने जो कर्म नहीं किया उसका वह फल भोग रहा है। इस दोष को दार्शनिक पारिभाषिक शब्दों में "अकृताभ्यागम" दोष कहते हैं। और जिस पूर्व विज्ञान ने जो कर्म किया है उसका उसे फल नहीं मिला क्योंकि वह तो क्षणिक (एक क्षण तक ठहरने वाला) होने के कारण फल मिलते समय नष्ट हो चुका है। इसे दार्शनिक परिभाषिक शब्दों में "कृतहानि" दोष के नाम से कहा गया है। इन दो दोषों को देख कर अच्छा तो यह होता कि शङ्कर स्वामी इन क्षणिक विज्ञानों का आधार एक नित्य आत्मा को मानते जो कर्म करता हुआ भी फल प्राप्ति समय तक विद्यमान रह सकता था। परन्तु उन्होंने सोचा कि नित्य आत्मा को विज्ञान से पृथक् मानने की अपेक्षया अच्छा यही होगा कि उस नित्यात्मा को विज्ञानस्वरूप मान लिया जाय। इस प्रकार शङ्कर स्वामी ने क्षणिक विज्ञान के स्थान पर एक नित्य विभु विज्ञान मान लिया जिसे उन्होंने ब्रह्म का नाम दिया। बौद्धों की तरह अविद्या का सम्बन्ध मानना इनके लिए भी अनिवार्य हुआ।

इस प्रकार इस प्रकरण में हमने यह दिखाने का प्रयत्न किया है कि अद्वैतवाद तथा उसके स्वरूप के बनाने में किन किन विचारों ने मुख्य रूप से भाग लिया।

"अक्षण्वन्तः कर्णवन्तः सखायो मनोजवेष्व-
समा बभूवुः।
आदघ्नास उपकक्षास उ त्वे हृदा इव स्नात्वा
उ त्वे ददृशे॥"
ऋग्वेद १०. ७१. ७

"(अक्षण्वन्तः कर्णवन्तः सखायः मनोजवेषु) प्रशस्त आंखों, तथा कानों वाले एक ही श्रेणीके विद्यार्थी मन की गतियों में विषम होते हैं। (त्वे आदघ्नासः, उ उपकक्षासः हृदा इव ददृशे) एक, मुख के बराबर पानी से भरे हुए तालाब के समान दीखते हैं, और दूसरे काँख के बराबर पानी से भरे हुए तालाब के समान दिखाई देते हैं। (उ त्वे स्नात्वाः) और तीसरे, स्नान—योग्य प्रभूत जल से भरे हुए तालाब के समान दीख पड़ते हैं।"

भावार्थ—मन और बुद्धि की शक्तियें प्रत्येक मनुष्य में भिन्न २ हैं। समान आंखों और कानों वाले एक ही श्रेणी के विद्यार्थी ज्ञान-प्राप्ति में विषम होते हैं। अर्थात् मध्यम, अधम और उत्तम भेद से प्रत्येक मनुष्य ज्ञान में विषम होता है।

इस वेद मन्त्र प्रतिपादित सामान्य नियम के अनुसार महर्षि व्यास ने वेदानुकूल ब्रह्मसूत्रों का अगाध ज्ञान सबके लिए समान रूप से

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

दिया। विषममतियों के अनुसार उन्हीं सूत्रों में से भाष्यों के द्वारा विशिष्टाद्वैतवाद, अद्वैतवाद, शुद्धाद्वैतवाद, और द्वैतवाद नामक सिद्धान्त निकाले गए, जिनका हम पूर्व निर्देश कर आए हैं। आगे के अध्यायों में हम यह दिखाने का प्रयत्न करेंगे कि द्वैतवाद ही सब वादों से श्रेष्ठ तथा वैदिक है। प्रधानमल्लनिवर्हणन्याय से प्रायः अद्वैतवाद की ही समालोचना की जायगी। क्योंकि अधिकतर प्रचलित यही सिद्धान्त है। इस पर किए गए आक्षेप यथाकथञ्चित् दूसरों पर भी लागू हो सकेंगे। अपूर्ण

नोट— लेखक की अप्रकाशित "अद्वैतवाद की समालोचना" नामक पुस्तक का एक प्रारम्भिक भाग।

हो जाओ बलिदान

हो जाओ बलिदान वीरवर, हो जाओ बलिदान॥
जिसकी पावन रज से है यह देह हुई निर्माण।
जिसका पवन निरन्तर चलता इसमें बन कर प्राण।
उसी तुम्हारी मातृभूमि पर आई विपद महान।
स्वार्थ परायण करते इसका पद पद पर अपमान।
कुछ भी तुम में है मनुष्यता कुछ भी है अभिमान।
यदि अपनी जननी जनकों की हो असली सन्तान।
तो तुरन्त इन अत्याचारों का करदो अवसान।
जगत चकित हो तुम को देखे हो जावे हैरान॥

—श्री पं० वागीश्वर जी विद्यालङ्कार

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विभिन्न विचार

Chhabil Das B.A. Formerly principal of the National College Lahore.
Life member S.P. Society. (Firozepure City)

जिस राज्य में जून जुलाई की कड़ी धूप में हल चला कर शरीर का पसीना बहानेवाले लोग तो दाने दाने को तरस कर भूख से तड़प तड़प कर मर जावें तथा निरुद्यमी, निकम्मे मक्खियां मारनेवाले लोग गुलछर्रे उड़ा रहे हों, निकम्मे तथा आलसी भोगी विलासी जीवन व्यतीत करने वाले की मामूली सिर दर्द के होने पर सात सात उच्च डिग्रीधारी डाक्टरों के बुलाने के लिये टेलीफोन खड़क जावें तथा परिश्रमी परन्तु कंगाल मजदूर का इकलौता पुत्र तपेदिक से बीमार होने पर भी यथायोग्य औषधि तथा चुल्लू भर दूध न मिलने से मर जावे, उसे हम कैसे "न्यायकारी परमेश्वर" का राज्य कह सकते हैं वह तो साक्षात् शैतान का राज्य है।

२. मनुष्य जब शेर तथा चीते पर आक्रमण करता है तो उसे मनोरंजन वा शिकार खेलना कहते हैं, परन्तु यदि शेर वा चीता मनुष्य पर हमला कर दे तो उसे पशुपन, बर्बरता, वा खूंखार-पन कहा जाता है।

३. जब तक धनी पूंजीपति, शक्तिमान् लोग किसानों मजदूरों तथा श्रमजीवियों की कमाई को लूटते रहते हैं उस का नाम सभ्यता, राज्यव्य-वस्था, शान्ति तथा उन्नति रखा जाता है, परन्तु यदि कोई अभागा मजदूर वा किसान निद्रा से जागकर लूट का सिलसिला बन्द करने का प्रयत्न करने लगता है उस का नाम शान्ति भङ्ग, अराजकता, असभ्यता, अन्धेरगर्दी तथा विद्रोह रखा जाता है।

४. ऐ स्त्री जाति! सृष्टि के आरम्भ से ही तुझ पर अन्याय पर अन्याय ही होते आरहे हैं। कवियों, चित्रकारों, गायकों तथा लेखकों ने न जाने तुझे क्या का क्या बना दिया। तुझे मातृत्व के उच्च सिंहासन से च्युत करके उन्होंने पुरुष के लिए एक कौतूहल की वस्तु वा खिलौना बना दिया है।

५. स्त्री का सब से बड़ा अपमान जो पुरुषों की ओर से किया जा सकता था वह उन को स्वर्ण-रत्नों से आभूषित करके वा सुन्दर कपड़े पहिनाकर तितली बना रखना है जिस से कि वह जीवन संग्राम में कोई भाग न ले सके। सचमुच मूर्ख स्त्रियों ने अपनी महानता, समानता तथा स्वतंत्रता को कितने क्षुद्र दाम पर पुरुषों के हाथ बेच डाला।

६. मनुष्य समाज ने अपने महापुरुषों का जो सब से बड़ा अपमान किया है वह उनको अवतार, पैगम्बर वा महात्मा बना देना है। इस का अर्थ यह है कि केवल वही लोग महान् कार्य कर सकते हैं अन्य नहीं। परन्तु A man can do what a man has done. इतिहास पुकार-पुकार कर कहता है जो कठिन से कठिन वा दुष्कर से दुष्कर कार्य एक व्यक्ति ने कर दिखाया है वही कोई भी दूसरा व्यक्ति कर सकता है।

७. नये कपड़े, नये बूट नये फैशन ग्रहण करने में मनुष्य नहीं झिझकते परन्तु नये विचारों का

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ग्रहण करना बड़ा बोझल काम है। बूढ़े माता पिता अपने नवयुवक पुत्र के आधुनिक फैशनों को सहन कर सकते हैं परन्तु उस के नये विचारों पर आग बगूला हो उठते हैं।

८. प्रकृति ने प्रत्येक नरनारी, छोटे बड़े, धनी कंगाल की खोपड़ी में मस्तिष्क तथा मस्तिष्क में सोचने की शक्ति दी है। प्रकृति माता का उद्देश्य तो प्रत्येक व्यक्ति से सोच-विचार करवा कर अपना जीवनमार्ग निश्चित कराना है। यदि यह न होता तो सोचने का काम करने के लिये केवल घर के बड़े बूढ़े प्रपितामह या नानी को ही बुद्धि दी जाती, शेष सब खोपड़ियां खाली तथा खोखली रख दी जातीं। इसी में तो विचार स्वातंत्र्य तथा क्रान्ति के बीज पाये जाते हैं।

९. धनी लोगों को दान, दक्षिणा, दशांश वा ज़कात (आय का $\frac{१}{४०}$ भाग धर्मार्थ) देने तथा निर्धनों को सन्तोष तथा शान्ति का उपदेश देकर प्राचीन धर्माचार्य्य तथा समाज व्यवस्था करने वाले समझते होंगे कि अब संसार में असमानता तथा आर्थिक प्रतिद्वन्द्विता सदैव के लिये बन्द हो गई परन्तु यह पुरानी सामाजिक बिमारी कुछ काल के लिये दब बेशक गई हो समूल नष्ट नहीं हो गई थी। धनियों की लोलुपता तथा वैज्ञानिक लूट से व्याधि का ज्वालामुखी फट पड़ा है।

१०. "क्रान्ति" शब्द से भयभीत होजाने वाले शायद गणित से कोरे ही प्रतीत होते हैं। करोड़ों मनुष्यों का ऐतिहासिक काल के हजारों वर्षों में जितना रक्त शोषण हुआ है वा हो रहा है, क्रान्ति से तो उसका शतांश वा सहस्रांश भी रक्त प्रवाह नहीं होता।

११. क्रान्ति तो 'ओपरेशन' की तरह अन्तिम साधन है। यदि खून साफ करने वाले काढ़े से, वा पुलटिस से फोड़ा फट जावे तो अच्छा है। यदि नहीं, तो डाक्टर का चाकू ही गन्दे मादे तथा पस को निकाल देगा। यदि चाकू न लगाने दिया गया, तो फोड़ा सारे शरीर में फैल जावेगा।

१२. भविष्य का भव्यभवन बनाने के लिये पुराने खंडहरों में से जो अच्छी ठोस तथा मजबूत ईंटें मिल सकती हैं बेशक ले लो परन्तु उसी खंडहर के पास बैठ कर उस के विशाल भूतपूर्व गौरव पर अश्रुपात करने वा खंडहरों की लीपा-पोती में धन तथा शक्ति का खर्च करना बुद्धिमत्ता से दूर है।

१३. यदि संसार के धर्मों वा मजहबों का उद्देश्य संसार से चोरी डाकेजनी, झूठ, व्यभिचार तथा वेश्याओं इत्यादि को दूर करने का है तो निस्संदेह उन को इस कार्य में कदापि सफलता नहीं हो सकती। इन सब बुराइयों की जड़ तो व्यक्तिगत सम्पत्ति है जिस को वह छूते तक नहीं। जड़ को छोड़ कर शाखाएँ काटने वाले इतिहास में बहुत मूर्ख हो चुके हैं।

१४. लाहौर की ठण्डी सड़क पर प्रातः वायु-सेवन के लिये जाते हुए मुझे एक तीतरवाला मिला करता है। खाली पिञ्जरा उसके हाथ में होता है और तीतर उससे तीस-चालीस गज की दूरी पर उस के पीछे २ दौड़ता आता है। चकित होकर मैंने पूछा क्यों भई! यह तीतर उड़ कर भाग क्यों नहीं जाता? उत्तर मिलता है कि इस अभागे का प्रेम तो पिञ्जरे की तीलियों से हो गया है। मेरी तरफ से खुला छोड़ देने पर भी यह पक्षी अवसर से लाभ नहीं उठाता।

१५. यदि पुनर्जन्म का सिद्धान्त ठीक है तो यह भी मानना पड़ेगा कि परस्पर लड़ने वाले

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कुत्ते पूर्वजन्म में अवश्य ही भारतवर्ष के हिन्दु ही रहे होंगे।

१६. "भाई मुसाफिर इतनी तेजी से कहां दौड़े जाते हो" ? "जहां सड़क ले चलेगी" मूर्ख मुसाफिर ने उत्तर दिया। मुझे हँसी आ गई। क्रोध से यात्री कहने लगा कि क्या तेरे देशवासी नवयुवक बिना किसी उद्देश्य को निश्चित किये अपना धन, शक्ति, तथा यौवन को कालिजों तथा स्कूलों में नष्ट नहीं कर रहे ?

१७. श्रीमन् ! हम अछूतों को पुलीस तथा सेना में भरती क्यों नहीं किया जाता ? क्या हमारा अधिकार नहीं कि हम सैनिक बने ? मेरी औंधी खोपड़ी ने कहा "हां भोले भाइयो ! तोप का ग्रास (Cannon fodder) बनने वा नरहत्या के यज्ञ में आहुति डालने का आप का भी वैसा ही अधिकार है जैसा कि किसी उच्चवर्णाभिमानी का। निस्संदेह अब आप की अस्पृश्यता शीघ्र धुल जावेगी।"

१८. अछूतोद्धार करते करते अछूतों की आर्थिक दशा सुधारने के लिये तथा उन के ऋण के बोझ को हलका करने के लिये सहकारी बैंक (Cooperative Bank) खोले गये। जब समय पर अछूतों ने कर्ज की किस्त अदा न की तो उन को दीवानी कैद कराने के लिये कुछ लोहे के बर्तन तथा लालइमली के कारखाने के कम्बल खरीदने पड़े। खूब अछूतोद्धार हुआ।

ब्रह्मचर्य

[ले०—प्रो० धर्मदत्तजी विद्यालंकार, उपाध्यक्ष आयुर्वेद-महाविद्यालय गुरुकुल कांगड़ी]

विषय-वासना के संयम करने का नाम ब्रह्मचर्य्य है। विषय का संस्कार बीजरूप से प्रत्येक बालक के मन में विद्यमान रहता है। उसके युवावस्था में आने पर कुछ-कुछ अङ्कुरित होने लगता है और पूर्ण युवा हो जाने पर अधिक विकसित हो जाता है। इस प्रकार विषय-वासना प्रत्येक मनुष्य के अन्दर स्वभावतः ही उत्पन्न होती है। पर इसके आधीन हो जाना ब्रह्मचर्य्य का नाश और इसे अपने आधीन रखना ही ब्रह्मचर्य्य है।

जब बालक के शरीर में शुक्र उत्पन्न होने लगता है तब उसका स्वभाव भी बदलने लगता है। पहले वह माता-पिता की आँख के नीचे रहना पसन्द करता था, अब स्वतन्त्र और उच्छृङ्खल रहना पसन्द करता है। अब उसे किसी की आधीनता और किसी का आश्रय अखरता है ; जिन माता-पिता के बिना वह थोड़ी देर में व्याकुल हो जाता था वे ही यदि उसे आधीनता की बेड़ियों में रखना चाहें तो उनके विरुद्ध द्रोह करने लगता है। स्कूलों के मास्टर बालक के इस स्वभाव-परिवर्तन को न समझ कर उन्हें बलात्कार जकड़ कर रखना चाहते हैं, जिससे बालक उनके विरुद्ध विद्रोह कर देते हैं और उनके तथा विद्यार्थियों के बीच झगड़े उत्पन्न हो जाते हैं। अध्यापकों को जानना चाहिये कि यह स्वतन्त्रता की प्रवृत्ति युवावस्था प्रारम्भ होने का

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

एक ज़रूरी परिणाम है। गुरुओं को चाहिये कि वे इस आयु में बालक की नियन्त्रण-रज्जु को न तो बहुत ढीला करें और न ही बहुत खींच कर रखें, क्योंकि दोनों ही अवस्थाओं में बालक के बिगड़ने का डर है।

बालक के अन्दर अब साहस भी आने लगता है। जो पहले रात को बाहर नहीं निकल सकता था, वह अँधेरे में निकल कर बड़े-बड़े उपद्रव करने लगता है। प्रायः कर बालक शैतानी के कामों में इस साहस को प्रकट करते हैं, यह साहस भी युवावस्था का एक परिणाम है।

परन्तु एक विशेष परिवर्तन और भी होता है। जो बालक अब तक विषय की बात नहीं जानता था वह अब विषय की बातों में दिलचस्पी लेने लगता है। जननेन्द्रिय के लिये एक प्रकार की उत्सुकता अनुभव करने लगता है और सुन्दर बालकों तथा सुन्दर कन्याओं की ओर आकर्षण भी अनुभव करने लगता है।

बारहवें वर्ष से सोलहवें वर्ष के बीच किसी समय में यह विषय सम्बन्धी विचार प्रत्येक बालक में उत्पन्न होने आरम्भ होते हैं। इन विचारों के झोंके उसे डगमगाने लगते हैं। परन्तु यदि माता पिता और आचार्य्य की तीव्र आँखें बालक पर हर समय लगी रहें और यदि इन के अमृतमय उपदेश उसे प्राप्त होते रहें तो बालक इन झोंकों द्वारा गिरने से बच जाता है। पर यदि दौर्भाग्य से माता पिता अपने कामधन्धों में लगे रह कर और आचार्य्य दूसरे प्रबन्ध के काम में लगे रह कर ऐसे संकटमय काल में बालक को अकेला छोड़ दें तो वह इन झोंकों से डगमगाया हुआ ऐसे अन्धेरे कुएं में जा गिरता है जिस में से फिर उसे उबारना कष्ट-साध्य हो जाता है। अभिप्राय यह है कि बारहवें से सोलहवें वर्ष के बीच जब कि अण्डग्रन्थियां शुक्र को बनाना आरम्भ करने लगती हैं, और युवावस्था आरम्भ होने लगती है तब बालक पुरुष बनना आरम्भ होता है। इस अवस्था में स्वाभाविक तौर से उस के अन्दर कुछ विषय सम्बन्धी विचार उत्पन्न होने लगते हैं।

शुक्रोत्पत्ति का प्रयोजन

युवावस्था में— यह ठीक है कि शुक्रोत्पत्ति के साथ विषय सम्बन्धी विचार भी आरम्भ होने लगते हैं, परन्तु शुक्रोत्पत्ति का एकमात्र प्रयोजन बालक की मानसिक तथा शारीरिक अभिवृद्धि करने का होता है। यदि इस आयु में शुक्र उत्पन्न न हो तो बालक सदा के लिये बालक ही रह जाय और पुरुष न बन सके।

शुक्र उत्पन्न हो कर शरीर में विलीन हो जाता है और शरीर की मांसपेशियों, नसों और अस्थियों के निर्माण में सहायक होता है, अतः इसे 'जीवनीय रस' कहते हैं। यदि यह जीवनीय रस शरीर में उत्पन्न न हो तो कितना ही पौष्टिक भोजन खाया जावे तब भी शरीर और मस्तिष्क की वृद्धि न हो। परीक्षण से देखा गया है कि यदि किसी प्राणी के युवाकाल के आरम्भ में ही उसकी अण्ड-ग्रन्थियां निकाल दी जावें तो उसके शरीर और मन की वृद्धि सर्वथा रुक जाती है और वह बालक के समान ही रह जाता है। पर यदि फिर उसकी किसी जगह की त्वचा को काट कर त्वचा के नीचे किसी दूसरे प्राणी की अण्डग्रन्थियाँ स्थापित कर दी जावें और ऊपर से त्वचा सी दी जावे तो उस की रुकी हुई शारीरिक और मानसिक वृद्धि फिर से आरम्भ हो जाती है, जिस से पता लगता है

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कि अण्डग्रन्थियों का रस या शुक्र शरीर और मस्तिष्क की अभिवृद्धि का अत्यावश्यक कारण है।

शरीर और मस्तिष्क की अभिवृद्धि बारहवें से बीसवें वर्ष तक विशेष तौर से होती है। बीसवें वर्ष के पीछे अभिवृद्धि की मात्रा कुछ मन्द हो जाती है, किन्तु चौबीसवें या पच्चीसवें वर्ष तक जारी रहती है। अतः २४ या २५ वर्ष की आयु तक शुक्र का एकमात्र प्रयोजन शरीर और मस्तिष्क की अभिवृद्धि करना ही है। इस अभिवृद्धि काल में विषय सम्बन्धी विचार और चेष्टाएं उत्पन्न होने लगती हैं। परन्तु जो युवक उनको अपना परम शत्रु समझ कर उनको दबाये रखता है वह जहां अपने शरीर और मस्तिष्क की उन्नति में रुकावट नहीं आने देता वहां अपनी इच्छाशक्ति को भी प्रबल बनाता और इस प्रकार अपने आप को पूर्ण मनुष्य बनाता है।

परन्तु जो युवक पच्चीस वर्ष की उमर से पहिले इस अभिवृद्धि-काल में विषय सम्बन्धी विचारों और चेष्टाओं में अपने जीवनीय रस का व्यय करना आरम्भ कर देता है, वह याद रखे कि वह अपने शरीर और मस्तिष्क के ख़र्च पर यह काम कर रहा है। यदि कोई युवक विषय सम्बन्धी विचारों और चेष्टाओं में आनन्द अनुभव करता है, वह अपना ही खून चूस कर समझता है कि मैंने अपना पेट भर लिया, अपने ही घर की अमूल्य सामग्री को जला कर समझता है मैंने तमाशा देख लिया।

अण्डग्रन्थियों को शरीर में से निकालने अथवा उन के रस को शरीर में से निकालने का परिणाम एक ही होता है। जिस प्रकार अण्डग्रन्थियों को निकालने से बालक मनुष्य नहीं बन सकता, उसी प्रकार चौबीस वर्ष से पहिले अण्डग्रन्थियों के रस के व्यय कर देने से बालक मनुष्य नहीं बन सकता; जो पुरुष शुक्र के बिन्दु २ को शरीर में लीन होने देता है वही सच्चा पुरुष बन सकता है।

युवावस्था के बाद— चौबीसवें या पच्चीसवें वर्ष के बाद शुक्र के दो कार्य हो जाते हैं:—
(१) शरीर का रक्षण (२) प्रजनन।

इन में से रक्षण का कार्य मुख्य, और प्रजनन का कार्य गौण होता है। यह ठीक है कि यदि विषय सम्बन्धी चेष्टाओं में शुक्र का व्यय किया जाय तो शरीर को इतनी क्षति नहीं होती जितनी युवावस्था में, पर तो भी यदि अधिक व्यय किया जावे तो शरीर के रक्षण में न्यूनता अवश्य आ जाती है।

देखा गया है कि यदि पच्चीसवें वर्ष के बाद भी अण्डग्रन्थियों को निकाल दिया जाय तो पुरुष में पुरुषत्व के गुण नष्ट हो जाते हैं; वह भीरु और कमज़ोर हो जाता है, उस के अन्दर से उत्साह, साहस, वीरता, आत्माभिमान आदि पुरुषोचित गुण नष्ट हो जाते हैं; वह दूसरे के आक्रमण से अपनी रक्षा आप नहीं कर सकता और उसके अन्दर से विषय सम्बन्धी आनन्द तथा प्रजननशक्ति भी नष्ट हो जाती है, जिस से मालूम होता है कि शुक्र का मुख्य प्रयोजन पुरुष के पुरुषत्व को कायम रखना है, अर्थात् पच्चीस वर्ष तक पुरुषत्व बनाना और पच्चीस के पीछे पुरुषत्व को कायम रखना शुक्र का मुख्य काम है। इस से जहां मनुष्य दूसरे पुरुषों के आक्रमण को रोक सकता है वहां उसी पुरुषत्व से नाना प्रकार की व्याधियों के आक्रमण को भी रोकने में समर्थ होता है। इसी लिये जब ऋतु-परिवर्तन होता है, और रोगों का अधिक भय रहता है अथवा चारों तरफ कोई संक्रामक रोग फैला होता है तो जो पुरुष यत्न से

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वीर्य की रक्षा करते हैं वे रोग के आक्रमण से बच जाते हैं जब कि दूसरे लोग शीघ्र ही रोग का शिकार हो जाते हैं, इस से स्पष्ट है कि युवावस्था के पीछे भी शुक्र का मुख्य प्रयोजन आत्मसंरक्षण है और प्रजनन गौण है।

शरीररूपी दीपक में शुक्र एक तैल है। यदि उसे उलट कर फैंक न दिया जावे तो वह शरीर में जला करता है। उसकी आग में सब रोगों के जीवाणु नष्ट हो जाते हैं, उस की ज्योति आँख और चेहरे पर दीखने लगती है, उस के तेज से चेहरा धधकता रहता है, उसके ज्वलन से शरीर में दिव्य शक्ति उत्पन्न होती है, जीवन में उत्साह और उमङ्ग की विद्युत् संचार किये रहती है, और यदि कोई आकस्मिक कारण न हो जावे तो जीवनरूपी दीप १०० वर्ष तक अखण्ड रूप से चमकता दमकता रहता है।

शुक्र की उत्पत्ति के साथ विषयवासना की उत्पत्ति और स्थिति उस का लक्षणमात्र है, उद्देश्य नहीं। विषय वासना के होते हुए उसे आठों याम काबू रखना घर के सिंह को वश में रखने के सदृश है, और यही सच्चा ब्रह्मचर्य है।

माता-पिता का कर्तव्य

कई बार माता, दाई या दूसरे लोग बच्चे की उपस्थेन्द्रिय को हिला हिला कर खुश हुआ करते हैं, परन्तु यह सर्वथा अनुचित है। जब बालक तीन या चार वर्ष का हो जावे तो उसे दाई या नौकरों के पास सर्वथा नहीं छोड़ना चाहिये; अनेक बालकों के चरित्रनाश का बीज इन्हीं नौकरों ने बोया है। जब बच्चा तीन वर्ष से बड़ा हो जावे तो उसे कभी किसी दूसरे के पास न सुलावें। अनेक मूर्ख माता-पिता तो आठ या दस वर्ष के बालकों को भी एक ही चारपाई पर सुला देते हैं, इस से उनके चरित्र के नष्ट होने का भारी भय रहता है। जब बालक पाँच वर्ष से बड़ा हो जावे तो उसे उठाना, प्यार करना और चूमना सर्वथा छोड़ देना चाहिये, इन बातों से उस में सोई हुई विषयवासना के उत्तेजित होने का भय रहता है।

आठ वर्ष तक माता बालक की प्रत्येक क्रिया को अपने सामने रखे, और आठ वर्ष की उमर के पीछे आने वाले भय को सम्मुख रखती हुई माता अपने बालक को सावधान करती हुई प्यार से समझावे कि "ऐ मेरे प्यारे बेटे! तेरी यह उपस्थेन्द्रिय बड़ी पवित्र इन्द्रिय है, यदि इसे हाथ से स्पर्श किया जावे या कोई दूसरा इसे हाथ से स्पर्श करे तो यह अपवित्र हो जाती है, जो बच्चे इसे छूते या दूसरों को छूने देते हैं वे बच्चे ही रह जाते हैं, मनुष्य नहीं बन सकते, अतः यदि तू मनुष्य बनना चाहता है तो मेरी शपथ खाकर कहो कि न तो कभी इस इन्द्रिय को छूवेगा और न किसी को छूने देगा।" बालक की श्रद्धा माता पर अगाध होने से वह माता की बात को मान लेगा। इसप्रकार की शिक्षा को आचार्यकुल में गुरुवर्ग भी समय २ पर देते रहें।

सात या आठ साल की उमर के पीछे बालकों को गुरुकुल में प्रविष्ट कर दें। गुरुकुलों की श्रेणियों के अध्यापकों या शिक्षकों को भी यह समझना चाहिए कि पुस्तक पढ़ाने की अपेक्षा बालक के चरित्र पर ध्यान देना उन के लिए अधिक आवश्यक है। वे याद रखें कि यदि उन के आधीन एक भी बालक में दुर्व्यसन आ जावेगा तो वे परमात्मा और दुनियाँ, दोनों के सामने इस लापरवाही के ज़िम्मेदार होंगे।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्रायः आठ या दस वर्ष के बालकों को यह शंका उत्पन्न होती है कि "हम कहाँ से, कैसे उत्पन्न हुए?" माता पिता यदि उन के इस प्रश्न को टाल देंगे तो बालकों की इस प्रश्न सम्बन्धी उत्सुकता और भी अधिक बढ़ जावेगी, अतः 'उत्पत्ति' का अपने बालकों को ठीक ठीक ज्ञान करा देना चाहिए। उन को वनस्पतियों के फूल दिखा कर बताना चाहिये कि फल कैसे उत्पन्न होते हैं? पशुओं और पक्षियों की उत्पत्ति का भी इशारा कर देना चाहिये, क्योंकि यदि बालक अपने आप इन बातों की उत्सुकता में पड़ा रहेगा तो इस से अधिक हानि है।

यदि माता पिता तथा आचार्य चौबीस घंटे जाग्रत रह कर बालक के प्रति अपना कर्तव्य पूरा करेंगे तो निश्चय है कि बालक के मन-मन्दिर में सोया पड़ा विषयवानसारूपी सिंह शीघ्र जाग्रत न होगा। परन्तु इस आयु के बाद युवावस्था के आरम्भ होते ही यह मन से उत्पन्न होने वाला 'मनसिज सिंह' स्वयमेव कुछ २ जाग्रत होने लगता है। तेरह से बीस वर्ष तक की आयु न केवल बालक प्रत्युत उनके माता-पिता और आचार्य, सब के लिए परीक्षा का काल है। यदि वे इस काल में से बालक को ऐसी सावधानी से ले जावेंगे कि जिस से उस में जागता हुआ यह सिंह उत्तेजित होने न पावे तो वे महाधन्य होंगे, परमात्मा के दरबार में आशीर्वाद के भागी होंगे। परन्तु यदि वे इस काल में बालकों के प्रति लापरवाह रहेंगे तो वे याद रखें कि परमात्मा के दरबार में क्रोध और धिक्कार के पात्र होंगे।

यदि बालक किसी दूसरे लड़के से अधिक मिले या मित्रता दिखावे तो सावधान हो जाना चाहिये, इस उमर के लड़कों में यारी सदा चरित्र को भ्रष्ट करने के लिये होती है। माता-पिता को घर में खेलने और मनोरञ्जन करने के लिए इतना सामान घर में रखना चाहिये कि बालक को इसके लिये बाहर न जाना पड़े। सायंकाल के समय माता-पिता को कहीं बाहर न जाना चाहिये, घर पर रह कर बच्चों के मनोरञ्जन और खेल में उन्हें भी शामिल होना चाहिए। बालकों को खिलाने के साथ साथ मनोरञ्जक वार्तालाप से उनका ज्ञान भी अच्छा बनाया जा सकता है। यदि बालकों का पर्याप्त मनोरञ्जन हो जावे तो वे कभी दूसरे लड़कों के साथ खेलने बाहर न जावेंगे।

२० वर्ष की आयु तक लड़के को कभी नाटक, सिनेमा, नाच आदि देखने न भेजना चाहिये; गन्दा उपन्यास, अश्लील साहित्य और गन्दे चित्र तथा गन्दी गल्पें हाथ में न देनी चाहियें, क्योंकि ये विषय-वासना सम्बन्धी विचारों को भड़काने वाले हैं।

यदि माता पिता और आचार्य के दिन रात सावधान रहने पर भी युवक में यह विषयवासना रूपी सिंह उत्तेजित हो जावे और वह किसी प्रकार का दुष्कृत्य कर बैठे तो उसको मारना या धमकाना नहीं चाहिये, इस से कुछ भी लाभ न होगा। उस को तो इस सिंह के विरुद्ध लड़ने और काबू करने के लिये उत्साहित करना चाहिये, पिता वा गुरु उसको एकान्त में बुला कर इस विषय में उत्तम २ उपदेश दे कर समझाने की पूर्ण चेष्टा करें। प्रेम से समझाने पर युवक अपनी कठिनता को आप ही कह देता है, तब पिता या आचार्य इस शत्रु के विरुद्ध लड़ने के लिये जिस प्रकार से भी बन सके उसकी सहायता करे।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

युवकों का कर्तव्य

जो हस्तमैथुन के द्वारा शुक्र का नाश करते हैं उनके शरीर और मस्तिष्क को बड़ा धक्का लगता है। उन के शरीर की वृद्धि रुक जाती है जिससे उनका चेहरा पीला, शरीर कृश, और शरीर के कृश हो जाने से पाचन आदि के अंग भी निर्बल हो जाते हैं, पचन आदि के क्षीण होने से स्मरणशक्ति क्षीण हो जाती और बालक पढ़ाई में निर्बल हो जाते हैं। उत्साह, साहस, तेज और ओज की मात्रा घट जाती और वह डरपोक हो जाता है, आँखों से आँख मिला कर नहीं देख सकता। उसका सारा आत्मविश्वास नष्ट हो जाता है और इस लिये वह उद्योगहीन, परिश्रमहीन हो कर आलसी हो जाता है।

जननेन्द्रिय का दुरुपयोग करने से युवकों में स्वप्नमेह का रोग उत्पन्न हो जाता है। इससे शरीर और मस्तिष्क और भी अधिक निर्बल होने लगते हैं। कई युवक तो अधिक हस्तमैथुन करने से गृहस्थ में प्रवेश करने से पहिले ही अपने आप को नपुंसक बना लेते हैं। इस प्रकार यह स्मरण रखना चाहिये कि यह आदत मनुष्य के जीवन को सदा के लिये दुःखमय बना देती है।

माता पिता और आचार्य को चाहिये कि ऐसे बालक को प्रेम से समझावें, न कि डरावें और दण्ड दें; क्योंकि प्रायः युवक को यह पता नहीं होता कि इस आदत से उसके शरीर और मन की क्या हानि होती है। यदि इस से होने वाली हानियों को उस के सामने रखा जावे तो वह अवश्य ही इस आदत को छोड़ देता है।

यदि युवक यह समझता हो कि हस्तमैथुन आदि द्वारा शुक्रनाश करने में कोई आनन्द है तो उसे स्मरण रखना चाहिए कि यह आनन्द वही है जो कुत्ते को सूखी हड्डी चबाते समय हड्डी के द्वारा मुख में से निकले खून चूसने में आता है। उसे यह भी याद रखना चाहिये कि वह इस झूठे आनन्द से भविष्य में आनेवाले आनन्द को खो रहा है। इस क्रिया को अपने शरीर और मस्तिष्क के लिये घातक समझ कर इस से मुक्त होने के लिए प्रयत्नशील होना चाहिये, यदि मुक्त होने का दृढ़ निश्चय कर लेगा तो वह अवश्य ही मुक्त होगा। उसे अपने दिल में जमा लेना चाहिये कि यदि वह पच्चीस वर्ष से पहिले इन बातों से शुक्र का नाश करे तो पच्चीस वर्ष के बाद गृहस्थ के योग्य न होगा।

सब से प्रथम उसे व्यसनी युवकों के साथ मिलना छोड़ देना चाहिये और उन्हें अपना परम शत्रु समझना चाहिए। दृढ़ निश्चय कर लेने से भी यदि श्रवण, स्पर्शन, दर्शन आदि से कामविषयक विचार उत्पन्न होने लगें तो उसी समय शत्रु को समीप आया जान बैठा हो तो उठ खड़ा हो जाय, खड़ा हो तो दौड़ना आरम्भ कर दे; ऐसे समय में लेटे रहना या बैठे रहना उचित नहीं है; अथवा खुली हवा में आकर दो एक प्राणायाम कर लेने चाहियें। हर समय कार्य में लगे हुए युवक को विषय सम्बन्धी विचार अधिक नहीं तङ्ग करते, अतः अपना खाली समय खेती, फुलवारी, चित्रकारी या दस्तकारी में लगाये रखना चाहिये।

युवक को दूसरों से अलग एकान्त में भी नहीं रहना चाहिये। हँसी, खेल, सभा, सोसायटी और समाज आदि में सभ्य पुरुषों के साथ अच्छी तरह मिलना जुलना चाहिये। जो एकान्त में रहते हैं वे प्रायः इस दुर्व्यसन का शिकार हो जाते हैं। यदि

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

युवक से कभी विषयसम्बन्धी चेष्टा हो जावे तो पश्चात्ताप करना चाहिए; एक समय या एक दिन भोजन का परित्याग कर देना चाहिये; ऐसा करने से दूसरी वार फिर प्रलोभन आने पर वह अपने को अधिक बलवान पाता है।

वीर्य-रक्षा के कुछ साधन

१. भोजन-सम्बन्धी—मद्य, मांस, तैल, खटाई, लाल मिर्च, गरम मसाले, चाय, काफी, तमाखू तथा सब तले हुए गरिष्ठ भोजन, ये गर्म, उत्तेजक और जननेन्द्रिय को भड़कानेवाले भोजन हैं। इनका भोजन सभी को कम करना चाहिये और युवकों को तो सर्वथा न करना चाहिये। यदि भोजन अधिक मात्रा में खाया जावे तो भी रक्त का दबाव बढ़ जाता है, इसलिये वीर्य की रक्षा करना कठिन हो जाता है, अतः भोजन सदा थोड़ी मात्रा में करना चाहिये, रात्रि को तो इसका विशेषतः ध्यान रखना चाहिये।

२. व्यायाम सम्बन्धी— निर्बल युवक और पुरुषों के लिये वीर्य-रक्षा करना अपेक्षया कठिन होता है, क्योंकि शरीर की निर्बलता के साथ उत्पादक अङ्ग भी निर्बल होते हैं और शरीर के बलवान होने के साथ उत्पादक अङ्ग भी बलवान होते हैं। उत्पादक अङ्गों की निर्बलता को हटाने के लिये सीधे खड़े होकर या पेट या पीठ के भार लेटकर टाँगों को आगे या पीछे या पार्श्वों की ओर धीरे-धीरे उठानेवाली व्यायाम करनी चाहिये। ज्यों-ज्यों जङ्घायें बलवान् होती हैं त्यों-त्यों उत्पादक अङ्ग भी बलवान होते हैं, अतः दौड़ना भी बड़ा लाभदायक है। इसके अतिरिक्त पीठ या रीढ़ की हड्डी की भी व्यायाम से अन्य वातनाड़ियों के साथ-साथ उत्पादक अङ्गों की वातनाड़ियाँ बलिष्ठ होती हैं। ऐसे व्यायाम और आसन जिनमें पीठ को आगे या पीछे की तरफ़ झुकाया जाता है प्रतिदिन कुछ काल करनी चाहिये। शीर्षासन से भी वीर्य-रक्षा में बड़ी सहायता मिलती है। यदि सायंकाल या सोने से ५ या १० मिनट पूर्व शीर्षासन किया जाये तो रात्रि को स्वप्नमेह या शिश्नहर्ष का भय नहीं रहता, क्योंकि इससे शुक्राशय और अन्य उत्पादक अङ्गों में रक्त का सञ्चय कम हो जाता है।

३. प्राणायाम सम्बन्धी—सिद्धासन में अर्थात् बाँयें पैर की एड़ी को गुदा और उपस्थेन्द्रिय के मध्य-स्थान पर और दाहिने पैर की एड़ी को उपस्थेन्द्रिय पर ऐसा रखकर बैठे कि बांयें पैर की एड़ी से सीवन-प्रदेश अच्छी तरह दबा रहे; इस स्थान के दबने से भी वीर्य-रक्षा में बड़ी सहायता मिलती है। इसी प्रकार सीधा बैठकर एक नासिका से गहरा श्वास लेकर कुछ क्षण अन्दर रोक कर दूसरी नाक से कुछ धीरे-धीरे बाहिर फेंके। अन्दर लेते समय पेट और छाती को फूलने दे, और श्वास फेंकते समय पेट और छाती को अन्दर सिकुड़ने दे। परन्तु सारे समय में उपस्थेन्द्रिय और गुदा को ऊपर खींच रखे।

४. स्नान सम्बन्धी—एक टब में ताजा कूप का जल भर कर ऐसे बैठे कि टाँगें तथा धड़ पानी से बाहिर रहें और जङ्घा से नाभि तक का प्रदेश पानी में डूबा रहे। फिर एक तौलिये से पेडू तथा शिश्न और गुदा के मध्यवर्ती प्रदेश को अच्छी तरह मलें, इस प्रकार पाँच या दस मिनिट स्नान करना पर्याप्त है। इससे उत्पादक अङ्गों में नवीन बल प्राप्त होता है। शिश्न के अग्र-चर्म के नीचे वर्तमान मल को भी साफ़ करते रहना चाहिये, क्योंकि उसके सञ्चित होने से शिश्न के क्षोभ का भय रहता है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

५. निद्रा सम्बन्धी—सोने से न्यून-से-न्यून दो घण्टा पहिले तक भोजन दूध या पानी आदि द्रव न पीने चाहियें, क्योंकि भरे हुए पेट और भरे हुए मूत्राशय का दबाव शुक्राशय पर पड़ सकता है जिससे स्वप्नमेह का भय रहता है। यदि तीव्र स्वप्नमेह की शिकायत हो तो रात्रि का भोजन कुछ दिन के लिये बन्द कर देना चाहिये। सोने से पहिले पेशाब होकर हाथ-मुँह धोकर थोड़ी देर शान्ति से बिस्तर पर बैठना चाहिये; सारी चिन्ताओं को मन से हटा कर चित्त को ख़ूब प्रसन्न करना चाहिये और अपने शरीर के सब अङ्गों पर हाथ फेरते हुए और विशेषतः निर्बल अङ्गों पर हाथ फेरते हुए कल्पना करनी चाहिये कि ये सब अङ्ग बलवान हो रहे हैं। कुछ काल के लिये चिन्ताओं से रहित आनन्द-मग्न हो अपनी रुचि के अनुसार भगवच्चिन्तन करना चाहिये और इसी निश्चिन्तता की स्थिति में लेटते ही सो जाना चाहिये। जिस प्रकार की अवस्था सोने से ठीक पहिले रहती है वैसी-ही प्रायः सारी रात रहती है, अतः निश्चिन्त होकर सोनेवाले को अच्छी नींद आती है। स्वप्नमेह की चिन्ता सर्वथा न करनी चाहिये, जो जितनी अधिक चिन्ता करता है, यह भूत उसे उतना ही अधिक लिपटता है। सदा करवट पर ही सोना चाहिये, पीठ पर सोने से मूत्राशय और मलाशय के बीच में वर्तमान शुक्राशय पर दबाव पड़ता है जिससे कि स्वप्नमेह का भय रहता है।

रात्रि को एक या दो बजे के लगभग प्रायः प्रत्येक आदमी की निद्रा खुलती है, उस समय उठकर एक बार अवश्य पेशाब कर लेना चाहिये; अधिक स्वप्नमेह की शिकायत हो तो जितनी बार नींद खुले उठकर एक बार अवश्य पेशाब कर लेना चाहिये। जिस समय शिश्न-हर्ष का पता लगे उस समय लेटे न रह कर उठकर बैठ जाना या कुछ कदम चल लेना चाहिये।

६. आचार-विचार सम्बन्धी—जिस प्रकार यदि आरम्भ में आँख को धूयें और धूल आदि से न बचाया जावे या उससे अधिक उपयोग या दुरुपयोग लिया जावे तो आँख कमज़ोर पड़ जाती है और फिर थोड़े से धूयें के लगने से लाल होकर पानी बहाने लगती है, फिर यदि कुछ काल आँख को पूरा आराम दिया जावे और उससे किसी प्रकार का उपयोग न लिया जावे तो आँख अपनी साधारण अवस्था में आ जाती है, इसी प्रकार यदि युवक अपनी उपस्थेन्द्रिय को दर्शन, स्पर्शन, श्रवण अथवा हस्तमैथुन आदि से और गृहस्थ अति-स्त्री-सङ्ग से क्षुब्ध करता रहे तो जनन-सम्बन्धी अङ्ग इतने निर्बल हो जाते हैं कि थोड़े से भी क्षोभक कारण से क्षुब्ध हो जाते हैं, इसलिये पहिले तो ऐसे आचार-विचार से बचना चाहिये जो जननेन्द्रिय को क्षुब्ध करनेवाले हैं। यह समझ लेना चाहिये कि ये सब उत्तेजनाएँ उत्पादक अङ्गों को अधिकाधिक निर्बल और असहन-शील कर जाती हैं। गृहस्थियों और युवकों में उत्पादक अङ्गों को अधिक उत्तेजित करने से ही शीघ्र-स्खलन और पुंस्त्वनाश के रोग हो जाते हैं, अतः जनन-सम्बन्धी अङ्गों को बलवान करने और इन्हें उत्तेजनाओं से बचाने के लिये पूर्ण विश्राम देना चाहिये। ब्रह्मचर्य्य से ही वास्तव में भोग की शक्ति और भोग का आनन्द प्राप्त होता है।

७. औषध सम्बन्धी—दिन में तीन या चार माशे आमलकी या हरीतकी का चूर्ण मधु के साथ खा लेने से वीर्य-रक्षा में सहायता मिलती है। बबूल की भुनी हुई गोंद को बेसन के लड्डू आदि में

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

डालकर खा लेना इसके लिये हितकर है। अच्छा बना हुआ चन्दनासव एक या दो तोला थोड़े जल में मिला कर दिन में एक-दो बार पी सकते हैं; ये सब उत्पादक अङ्गों के लिये शामक औषधियें हैं।

वङ्ग, अभ्रक, प्रबाल, मुक्ता और शुक्ति आदि की भस्में तथा इनके बने हुए प्रयोग भी वीर्य-रक्षा में बड़े सहायता होते हैं। ये उत्पादक अङ्गों के लिये उत्तम बल्य-द्रव्य हैं। उत्पादक अङ्गों को उत्तेजित करनेवाली दवाइयाँ न खानी चाहियें क्योंकि वे थोड़ी देर के लिये उत्तेजित करके उन्हें चिरकाल के लिये निर्बल कर जाती हैं।

हमारे पतन का कारण 'आलस्य'

[ले०—श्रीयुत् कैलाश चन्द सक्सैना, गुरुकुल काँगड़ी]

आलस्य शब्द में संसार की अधोगति का इतिहास छिपा हुआ है, जितने भी शक्तिशाली राष्ट्र हुये हैं उन सब के अधः पतन का इतिहास पढ़ने से यह बात स्पष्टतया मालूम हो जाती है कि उनके नाश का प्रधान कारण आलस्य ही था। यदि सूक्ष्म दृष्टि से इस ओर विचार किया जाय तो हमें भी पता लगेगा, कि हमारे भी पतन का कारण आलस्य ही है। आलस्य ने कहां तक पतन किया, इस का उत्तर आपको किसी बज्र आलसी या किसी व्यसनी पुरुष स्त्री से पता लगेगा कि आलस्य ने ही उन्हों ऐसी दुर्दशा तक पहुँचाया।

जैसे पड़ी-पड़ी लकड़ी में घुन लग जाता है, पड़े हुये लोहे को जङ्ग चाट जाता है, ठीक उसी प्रकार आलसी मनुष्यों की दशा है। वह संसार में आकर किसी प्रकार की विजय प्राप्त नहीं कर सकते। यही नहीं बल्कि इसी से सब प्रकार के भद्दे और अश्लील विचारों की उत्पत्ति होती है, इसी से उन मनुष्यों को दुर्व्यसन लग जाते हैं। जो आलसी हैं, समझ लीजिये कि उन्होंने अपने सर्व नाश का मार्ग पकड़ लिया। यह निश्चय ही अपने को नरक की गहरी खाई में गिरा कर चकना चूर कर देगा। फिर ऐसी कोई शक्ति नहीं जो आपको उस दोष से क्षमा कर सके। उस समय आप स्वयं विचारेंगे कि हमें अपने नियमों पर, स्थिर न रहने के कारण यह दुःख भोगने पड़ रहे हैं। यदि आपको किसी योग्य बनना है, यदि आपको संसार में आकर कुछ लाभ उठाना है, यदि आपको वास्तविक और सच्चे सुखों तक पहुंचना है, तो इसी समय से परमात्मा को साक्षी बना कर दृढ़ प्रतिज्ञा कीजिये कि मैं आलस्य कभी नहीं करूँगा। याद रखिये आलस्य ही गरीबी की जड़ है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

इसलिये सब से पहिले जड़ ही का नाश करना आवश्यक है। निर्धनता ही के प्रश्न को ले लीजिये, जो आलसी नहीं है वह कर्म भी निर्धन नहीं हो सकता यदि निर्धन भी है तो कभी न कभी निरन्तर प्रयत्न करते २ अवश्य ही अपने निश्चय और लक्ष्य पर पहुँचेगा ही उसको असफलता कभी भी नहीं हो सकती वह कभी निराशा के शब्द निकाल नहीं सकता— क्योंकि काम ही जीवन का विजय मन्त्र है। संसार में जो कुछ स्थाई चिरजीवी, कीर्तिकर, और महान है वह सब का इसी मन्त्र का प्रताप है। आप किसी पुरुष का नाम लीजिये। किसी आदर्श जीवन की ओर उँगली उठाइये, किसी प्रसिद्ध ग्रन्थ कविता, अथवा, चित्र का गुण बखानिये, तो आप उनकी यश सुरभि फैलाने का कारण क्या पाते हैं? कर्म वीरता के सिवाय और कुछ नहीं, उद्योग, परिश्रम, अध्यवसाय, और मेहनत ही विजय पताका उड़ाने का मुख्य साधन है। क्या ऐसी दशा में निर्धन रहना सम्भव हो सकता है? कभी नहीं। ऐसी ही अपनी आत्मा की आवाज़ है।

प्रकृति और आलस्य— प्रकृति की ही ओर देख लीजिये कि क्या उस में कहीं भी आलस्य के चिन्ह दिखाई देते हैं? पशु पक्षी कीट, पंतग, सभी काम में लग हुये हैं, जो कोई उस काम से भागता है, उसको कैसा दण्ड माता प्रकृति देती है प्रकृति के नियम अटल हैं उन में कभी भी किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं होता। उस में कहीं भी आलस्य का चिन्ह दिखाई नहीं देता। परन्तु जब हम आलस्य के कारण प्रकृतिक नियमों की अवहेलना करनी प्रारम्भ कर देते हैं, उसी समय से हमारा पतन शुरू हो जाता है। इन विचारों को लेते हुये हमें प्रकृति के नियमों का पालन करना आवश्यक है। यदि हम उन नियमों की अवज्ञा करते हैं, तो उस की सज़ा भी हमें सहनी पड़ती है चाहे हम लाख प्रार्थना करें, किन्तु प्रकृति के दरबार में हमें कदापि क्षमा न मिलेगी। संसार में हमारा स्वामी हमारे अपराधों को जो हम भूल से अथवा अज्ञानता से कर बैठते हैं, क्षमा भी कर देता है, परन्तु प्रकृति न भूल को क्षमा करती है, और न अज्ञानता को प्रकृति ने हमको बुद्धि दी है, हमारा कर्तव्य है कि हम उसे काम में लायें। प्रकृति के नियमों को केवल जान लेने ही काम नहीं चलता हमको उसके अनुसार वर्तना चाहिये। सर्वसक्तिमान परमात्मा हमारी अज्ञानता के कारण अपने नियमों में परिवर्तन नहीं करता। उसने हमको बुद्धि दी है, जिसे कि हम काम में लाये। उसके अनुसार अपने भावी की जीवन को बनायें। दूसरे रूप में कर्म्म योग ईश्वरी सृष्टि का अटल नियम है। इसी की महिमा के सारा ब्रह्माण्ड नाच रहा है। वास्तव में कर्म्म योग ही जीवन है। आलस्य ही मौत है।

प्रकृति हमको बनाती है, कि जो कोई काम अच्छा हो जाता है, वह सर्वथा कभी नष्ट नहीं होता इस लिये आज हम उनको याद करते है जो पूर्व में

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अपने परिश्रम से सफलता प्राप्त करके परमात्मा की गोद में शयन कर रहे हैं। वे आर्य्य वीर जिन्होंने भारत वर्ष के महान राष्ट्र की बुनियाद डाली थी, पक्के कर्म योगी थे। खेती करना, गाय पालना, जंगल पहाड़ों में निर्द्वन्द घूमना उसका मुख्य कर्म था। उन्होंने बड़े २ शहर आबाद किये, उँचे २ पर्वतों पर दिव्य मन्दिरों का निर्माण किया। अलौकिक ग्रन्थों की रचना की उच्च सर्व श्रेष्ठ सभ्यता की बुनियाद डाली— वह सब कुछ यह उन्होंने कर्म्म योग के बल पर किया था। यद्यपि वे आज इस संसार में जीवित नहीं हैं। किन्तु उनकी अजर अमर कीर्ति सर्वत्र विद्यमान है। परन्तु जब कर्म्म योग का सहारा छोड़ कर आर्य्य सन्तान ज्ञान गपोड़ों में डूब गई तो आलस्य ने उन पर अपना अधिकार जमा लिया, मेहनत, मजदूरी करने वाले शूद्र बना दिये गये, और आलसी निकम्मे लोग ब्रह्मज्ञानी बन बैठे। उन श्रमजीवी शूद्रों पर अधर्म का टेक्स लगा कर वह मुफ्त खोरे कर्म्म योग के विरुद्ध पोथे लिखने लगे और मजदूरी से घृणा का भाव सर्व साधारण में फैला दिया। उसी आलस्य की महामारी से भारत का मनुष्यत्व नष्ट हो गया, और कर्मों का नास मानने वालों की बेतरह संख्या की वृद्धि हुई। यही भारत के अधः पतन का दो टूक इतिहास है।

अतएव प्रत्येक मनुष्य को आलस्य से दूर भागना चाहिये। यदि वह निर्धनता और अन्य दुर्व्यसनों से बचना चाहते हैं तो उनसे हमारा अनुरोध है कि वह आलस्य को घोर शत्र समझे, उन्हे सदा अपने काम में लगे रहना चाहिये समय को व्यर्थ नष्ट न करना चाहिये। जो शारीरिक परिश्रम से घृणा करता है, वह मनुष्य कर्म्म सचरित्र नहीं बन सकता। शारीरिक परिश्रम से भागने वाले मनुष्यों को अत्यन्त संकुचित हृदय पुरुष समझना चाहिये। जो बज्र आलसी है, जो किसी तरह का परिश्रम नहीं किया चाहते, उसके शरीर का प्रत्येक अंग निकम्मा हो जाता है। ऐसे बहुत से मनुष्य हैं जो श्रम के नियम पर दूषण लगाते हैं। किन्तु वह नहीं समझते कि यह केवल ईश्वर की इच्छा के ही अनुकूल नहीं किन्तु बुद्धि की वृद्धि और अपने स्वभाव से पूर्ण लाभ उठाने के लिये अत्यन्त आवश्यक है। दुनियाँ में आलसी मनुष्यों से बढ़ कर कोई दूसरी निंद्य वस्तु नहीं। उसका जीवन बिलकुल पोच और लचर है, उसके लिये इन्द्रियपोषण को छोड़कर और कोई काम नहीं। क्या ऐसे मनुष्य सब से ज्यादा अभागे और असन्तोषी नहीं है? वे सदा शिथिलता और श्रान्ति की दशा में पड़े रहते हैं न तो स्वयं अपने लिये कुछ करते हैं। और न दूसरों को कुछ लाभ पहुंचा सकते हैं। वह एक ऐसे स्तम्भ के समान हैं, जिसने जमीन को व्यर्थ घेर रखा है। उसके जीवन से न किसी के जीवन को खुशी और, उसके मरने से किसी को रंज। "सच है दुनियां में आलसी मनुष्यों के बढ़ कर कोई निंदित और

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

घृणित नहीं है।" इसलिये आलस्य को त्याग कर परिश्रमी बनना आवश्यक है। परिश्रम की आवश्यकता पर इतना ही कह कर हम यह दिखाना चाहते हैं कि इससे जो लाभ होता है उसका किस प्रकार उपयोग किया जाता है। बड़े से बड़े काम से लेकर छोटे से छोटे काम तक में परिश्रम की जरूरत है। सभ्यता शिष्टाचार परोपकार आदि सब की उन्नति परिश्रम पर निर्भर है। जितने उपयोगी और बहुमूल्य विचार हैं, वे सब श्रम और अनुभव के परिणाम हैं। कोई चाहे काम छोटा हो चाहे बड़ा, चाहे शारीरिक हो चाहे मानसिक बिना परिश्रम के नहीं होता। कोई बड़ा काम एकदम नहीं हो जाता किन्तु लगातार उद्योग और श्रम के पश्चात् अवश्य हो जाता है। यदि बाप से न हुआ तो बेटे से हो जायगा। यदि आज सफलता नहीं हुई तो कल हो जायगी। परिश्रम से छोटे दरजे के मनुष्य भी बड़े दरजे तक पहुंच जाते हैं और गौरव तथा प्रतिष्ठा के पात्र हो जाते हैं। विद्या तथा कलाकौशल के इतिहास में प्रायः उन्हीं लोगों का नाम है, जो अपने जीवन काल में परिश्रमी थे। जैसे एक लुहार ने स्टीम इंजिन बनाया। एक नाई ने रूई कातने की कल जारी की और बहुत से कारीगरों ने लगातार एक के बाद दूसरे ने यन्त्र विद्या में सफलता प्राप्त की। परिश्रम ही से छोटे से छोटा आदमी बड़े दरजे तक पहुंचता है, ज्ञान विज्ञान की वृद्धि होती है, सभ्यता और दूसरे लोगों को अनुकरण करने का साहस होता है। इनका हाल सुनकर मुरदे से मुरदे दिल में भी जोश पैदा होता है। निराशा और आलस्य का मुंह काला हो जाता है। और हम से यह न हो सकेगा, यह हमारी शक्ति के बाहर है, ऐसे वाक्यों का मानो देश निकाला हो जाता है। इनका जीवन-चरित्र प्रत्यक्ष इस बात को सिखलाता है कि उठकर आलस्य को त्यागो, कुछ काम करो, चाहे तुम कितने ही नीच क्यों न हो, एक दिन ऊंचे दरजे पर पहुंच जाओगे। एक नहीं, दो नहीं, दश नहीं, पचास नहीं, सैंकडों उदाहरण उन के मौजूद हैं, जो शुरू में कारखाने में या खानों में कुलियों और मज़दूरों का काम करते थे अन्त में बड़े २ दरजों पर पहुंचे। कोई इंजिनियर हुआ, कोई डाक्टर हुआ, और कोई पार्लियामेन्ट का मेम्बर हुआ। जार्ज स्टेफेंशन जिसने रेलगाड़ी का आविष्कार किया, शुरू में कुली का काम करता था। उसने श्रम से कुछ रुपया पैदा कर पढ़ना लिखना प्रारम्भ किया। आगे उसकी मजदूरी १२ शिलिंग हो गई। इंगलेन्ड जैसे महँगे देश में उस ने इस थोड़ी सी मजदूरी से अपना तथा अपने परिवार का निर्वाह किया और अपनी शिक्षा का खर्च चलाता था। धीरे धीरे उनका वेतन १५) सप्ताह हो गया। अब तो वह अपने को एक धनवान समझने लगे। वास्तव में उनका ख्याल भी ठीक था। जो मनुष्य खर्च करके कुछ बचा सकता है उसे धनवान समझना चाहिए। जार्ज बराबर उन्नति करता गया। जब उस को अपने इन्जिन बनाने की आवश्यकता हुई तब उसकी सुचरितता और कार्य्यकुशलता के कारण एक महा-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

शय ने तत्काल उसकी जरूरत को पूरा कर दिया। इसी प्रकार जेम्स वाट जिन्होंने स्टीम इंजिन का आविष्कार किया, शुरू में एक साधारण पुरुष थे, और छोटे २ औजार बेचा करते थे। उन्हीं की बिक्री से अपना खर्च चलाया करते थे। साथ में पढ़ते भी जाते थे। कई वर्ष तक लगातार उद्योग करने पर उन्होंने स्टीम इंजिन में सफलता प्राप्त कर ली। केवल परिश्रम करने से और आलस्य को त्याग देने ही से सफलता प्राप्त हो सकती है। जिन मनुष्यों ने अपने देश तथा जाति की किसी प्रकार भी सेवा की है वे बड़े परिश्रमी थे। उन्होंने अपने जीवन के एक २ मिनट से लाभ उठाया।

प्रत्येक मनुष्य का यह पहिला कर्तव्य है, कि अपनी उन्नति के लिये तथा अपने भाइयों की बढ़ती के लिए उचित उपायों को काम में लावे। प्रत्येक मनुष्य में स्वतन्त्र विचार करने और स्वतन्त्र कार्य्य करने की शक्ति है। इस का प्रमाण उन हजारों आदमियों की जीवनी से मिल सकता है, जिन्होंने आपत्तियों से घेर युद्ध किया और उन पर विजय प्राप्त करके अपने को उच्च बनाया। केवल दृढ़ संकल्प और स्थिर विचारों की जरूरत है। निःसन्देह हमारे को शुरू में बड़ी बड़ी कठिनाईयां आवेंगी परन्तु हमें उन्हें धीरता से सहन करते जाना चाहिए। सम्भव है कुछ काल के लिये हमें दुःख मालूम हो परन्तु यदि हम साहस और उद्योग को न छोड़ें तो बहुत जल्द सफलता प्राप्त कर लेंगे। पहिले हम को खुद मिसाल बन कर दुनिया को दिखाना चाहिए जिससे कि लोग हमारा अनुकरण करने लगे और धीरे २ सब उन्नति के मार्ग पर चलने लगे। विशेष न लिख कर केवल मैं यह लिख कर इस लेख को समाप्त करता हूं कि व्यक्ति की उन्नति परिश्रम से हो सकती है इस के विपरीत हमारे पतन का कारण आलस्य है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

संसार भर के धर्मों से एक आवश्यक प्रश्न

धर्मों के सामने आने वाला खतरा।

ले०—श्रीयुत छबीलदास जी बी. ए. (भूतपूर्व प्रिन्सिपल नैशनल कालेज लाहौर)

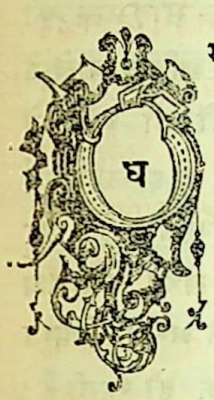

र्म शब्द को मैं चर्च के अर्थों में प्रयुक्त कर रहा हूँ। इस प्रकार संसार के धर्मों में बौद्ध धर्म, ईसाई धर्म, यहूदी धर्म, इस्लामी धर्म, हिन्दु धर्म तथा उसकी भिन्न २ शाखाएँ यथा आर्यसमाज, ब्रह्मसमाज, प्रार्थनासमाज, देवसमाज, राधास्वामी, सिक्खसम्प्रदाय, रामानन्दी, कबीरपन्थी इत्यादि २ सभी सम्मिलित हैं।

इतिहासकार Conflict between science and religion) अर्थात् धर्म तथा विज्ञान के पारस्परिक संघर्षण का वर्णन करते हैं। विज्ञान तथा बुद्धिवाद (Rationalism) के अच्छे करारे थपेड़े समय समय पर धर्म वा विज्ञान की कमज़ोर नाव को लगते रहे हैं। कहा नहीं जा सकता कि धर्म वा विज्ञान की जय हुई है। दोनों पक्षों के लोग Even though vanquished, he could argue still के अनुसार अपनी अपनी हांके जा रहे हैं। विज्ञान की गोलाबारी ने धर्म के समर्थकों को अपने प्रत्येक सिद्धान्त के लिए नई नई तथा विचित्र वैज्ञानिक व्याख्या (Scientific explanation) देने पर लाचार कर दिया। धर्मप्रवर्तकों की करामातों के मानने वाले तथा धर्म को गूढ़ रहस्यमय (Mystic and mysterious) विषय बनाने वाले लोग तो विज्ञान की ढिठाई, दुस्साहस तथा अशान्तकर प्रश्नावलि (Uncomfertable questioning) से खूब सटपटाये और अपने धर्म की रक्षा का उपाय Holy Inquisition (धार्मिक न्यायालयों) की स्थापना तथा विरोधियों के प्रश्नों का उत्तर उनको तलवार के घाट उतारना ही समझने लगे, जिससे उन के सारे प्रयत्न निष्फल ही साबित हुए और बुद्धिवाद की जड़ें दिन प्रतिदिन पाताल को जाती रहीं।

उन्नीसवीं शताब्दि के अन्त तथा बीसवीं शताब्दि के प्रारम्भ से धर्म को एक और प्रबलतर शत्रु का सामना आ पड़ा है। वह शत्रु तथा विरोधी प्रकृतिवाद (Materialism), साम्यवाद, कम्यूनिज़म तथा बोलशेविज़म इत्यादि नामों से प्रसिद्ध है।

यह प्रकृतिवादी वा साम्यवादी कहते हैं कि सृष्टि के आरम्भ से लेकर आज तक धर्म (Religions and churches) ने संसार में असमानता, अशान्ति तथा दुःख को न केवल जन्म दिया है वरन् उन की वृद्धि की है। प्राचीनकाल से लेकर आज तक संसार के धर्म ही दासता (Slavery), Feudalism (जमींदार शाही) Capitalism (पूँजीवाद) तथा Militarism (सैन्यवाद) तथा Imperialism साम्राज्यवाद इत्यादि का दायाँ हाथ रहे हैं और इनको ईश्वरीय संस्थाएँ कहते रहे हैं। धर्म का झण्डा लेकर महमूद गज़नवी, तैमूर और नादिर करोड़ों नरनारियों का रक्तपात करते हैं, सहस्रों बस्तियाँ

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

रसातल की जाती हैं । धर्म के नाम पर भारत की करोड़ों विधवाओं तथा करोड़ों अछूतों पर अमानुषिक अत्याचार किये जा रहे हैं । यदि एशिया, अफ्रीका तथा अन्य किसी महाद्वीप पर योरुप के नीतिकुशल चालाक पूंजीपतियों की गृध्रदृष्टि पड़ती है तो उन इलाकों में शान्ति के अवतार मसीह का सन्देश भेजने का आयोजन किया जाता है । तभी तो किसी स्पष्टवादी ने कहा है कि 'In our territorial aggrandisment the cross precedes the union jack.' अर्थात् किसी देश पर अधिकार करने के लिए सिपाही भेजने से पूर्व पादरी भेजने चाहिएँ ।

संसार की पददलित, निर्धन तथा निस्सहाय जातियाँ जब कभी भी अपने अधिकार प्राप्ति का प्रश्न करने लगीं झट धर्म के ठेकेदारों ने अहिंसा, दया, शांन्ति, मानवजीवन की बहुमूल्यता की दुहाई देकर संसार की उन्नति को कई शताब्दियों पीछे धकेल दिया ।

सचमुच ही (*Religion is the opium for masses—Karl Marx*) धर्म जनसाधारण के लिए एक प्रकार की अफीम का नशा है । (*Religion is the fog in the* human brain) धर्म मानव दिमाग़ में एक प्रकार की धुन्ध है, जिस के कारण लोग संसार को स्पष्टतया न देख सकें । (*Religion is a plaything invented by the propertied class for the masses to play with*) धर्म सर्वसाधारण के खेलने के लिए धनी लोगों का बनाया हुआ एक खिलौना है । लोग खिलौने से जितने समय तक चाहें खेल सकते हैं इससे स्वार्थी धनी लोगों को कोई हानि नहीं प्रत्युत् लाभ ही लाभ है क्योंकि जनता का ध्यान तो धर्म के गोरखधन्धे में ऐसा फँसाया जाता है कि शताब्दियों तक कई पीढ़ियाँ दुःख के कुमार्ग में भटकती फिरें ।

धर्म के ठेकेदार सनातन धर्मी, ईसाई, बौद्ध, मुसलमान इत्यादि मनुष्यमात्र की तथा अपने २ धर्म की भेड़ों को समानता और भ्रातृभाव की घोषणा किया करते हैं, इस से अधिक धोखे में डालने तथा करोड़ों गरीब कङ्गालों की आँखों में धूल झोंकने का दूसरा उपाय नहीं । इस्लाम धर्म के मानने वाले एक कुरान तथा एक रसूल पर ईमान वाले लोगों की समानता तथा भ्रातृभाव केवल मसजिद की चार दीवारी के अन्दर निमाज पढ़ने, धर्म की अफीम खाने तक ही रहती है । जहां निमाज की समाप्ति हुई कि धनी और नवाब मुसलमान अपने सातमञ्जिले मकान को मोटर पर चढ़ कर चल दिये, जहाँ कि उसकी लोलुप जिह्वा के लिए हलवा पुलाव वा मांस कोफ़्ते तैय्यार हो रहे हैं और ५-६ आने रोज कमाने वाला मजदूर अपनी किराये की अन्धेरी ठण्डी तथा अस्वस्थकर झोंपड़ी में खाली पेट लेटकर बिना दीपक के सारी रात करवटें बदल बदल कर और तारे गिन गिन कर गुजार देता है । ३-४ लाख की जायदाद का मालिक एक आर्यसमाजी दूसरे निर्धन आर्य-समाजी भाई के साथ मिल कर समाज के साप्ता-हिक अधिवेशन में "सहनाववतु सहनौ भुनक्तु" इत्यादि वेदमन्त्रों का उच्चारण तो कर सकता है । परमेश्वर की उपासना प्रार्थना में सब आर्य्यभाइयों के प्रभु के अमृत पुत्र होने की बात कही जाती है परन्तु शान्तिपाठ की समाप्ति पर तो 'प्रभु का धनी पुत्र' तो परिश्रमी लोगों के गाढ़े पसीने की कमाई

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

को मित्रों के निमन्त्रण में फूंकेगा परन्तु गरीब "प्रभु का पुत्र" घर जाकर ठण्डी साँस भर भूखे पेट पड़ रहेगा। एक ईसाई कारखाने का मालिक ईसाई धर्मावलम्बी अपने सहधर्मियों का लहू चूसता रहता है। अर्थात् हवा फांकने, स्वर्ग नरक आत्मा परमात्मा इत्यादि काल्पनिक तथा अनर्गल विचार करते समय सब भाई भाई हैं। परन्तु संसार के पदार्थों को उपभोग करते समय 'तुम अपने घर, हम अपने घर' वाली बात हो जाती है। जिस समय संसार के मजदूरों, किसानों तथा अन्य दरिद्र श्रमजीवियों की समझ में यह बात आ जावेगी उसी दिन स्वार्थी पराया लहू चूसने वाली जोंकों का महाप्रलय समझो। रूस देश के मजदूरों ने *If a man will not work, neither shall he eat* अर्थात् यदि कोई अभागा परिश्रम करने से कतराता है तो उसे रोटी खाने का कोई अधिकार नहीं। इस सुनहरे सिद्धान्त को समझ लिया है और मजे ले रहे हैं। हजारों लाखों वर्षों से तो पूर्वजन्म के कर्मों के तथा परमेश्वर की इच्छा, किस्मत, प्रारब्ध तथा दैव की महिमा के गीत गाकर बदमाशों ने अपना उल्लू सीधा किया परन्तु अब संसार की आँखें खुलती जा रही हैं अब तो निर्धन लोगों की समझ में आ रहा है कि *(Churches serve as auxiliary police Shaw)* धर्म तो सहायक पुलीस का काम देता है। स्वार्थी धनी लोगों के लूट के सिलसिले को चिरस्थाई रखने के लिए पुलीस, सेना, राजव्यवस्था, कारागार, शस्त्रास्त्र ने इतना काम नहीं किया जितना कि लोगों को शान्ति, सन्तोष, अहिंसा, भावी जीवन के काल्पनिक सुख तथा अमीरों के नरक की अग्नि में जलने की बातों ने किया है। फ्रांस देश के सम्राट् नैपोलियन बोनापार्ट के मन में एक बार विचार पैदा हुआ कि क्या कारण है कि मैं अकेला ही एक विशाल महल में निवास करता हूँ जहाँ कि सहस्रों नरनारियों के रहने के लिए काफी स्थान नहीं है। मैं एक बार के खाने पर इतना खर्चकरता हूं कि जिससे सैकड़ों आदमी पल सकें। मेरे महल के बाहर लोग भूख तथा सरदी से तड़प रहे हैं परन्तु मैं आनन्द लूट रहा हूँ। इस का कारण ? लोगों का सारा ध्यान धर्म की ओर लगा हुआ है। इसलिए ऐसे लाभदायक तथा शान्ति वर्धक चर्च वाले लोगों को अधिक से अधिक आर्थिक सहायता करनी चाहिए।

यही कारण है कि सरकारें तथा धनी पूंजीपति लोग धर्मविभाग (church) की पुष्टि के लिए सार्वजनिक धन में से लाखों रुपये की मञ्जूरी दे देते हैं। इटली का शाहनशाह स्वेच्छाचारी मुसोलिनी अपनी मनमानी चलाने के लिए अविद्यान्धकार से पूर्ण Divine rights, Pope, Predestination (ईश्वरेच्छा, धर्माधिकारी, दैववाद) इत्यादि लचर सिद्धान्तों से पूर्ण कैथोलिक सम्प्रदाय का पुनरुत्थान भी आवश्यक समझता है। इसी लिए विज्ञान बुद्धिवाद तथा विचार स्वातन्त्र्य के युग इस बीसवीं शताब्दि में धूर्त लोग भोलीभाली जनता के लिए प्रार्थना पुस्तक (Prayer book) तैय्यार करवा रहे हैं। भारत की सरकार भी इसी कारण से हिन्दु, मुसलमानों, सिक्खों तथा ईसाइयों के धार्मिक स्वत्वरक्षा का ढोंग रचती है। अत्याचारी लोगों का स्वार्थ तो इसी में है कि लोगों का सारा ध्यान व शक्ति मन तथा बुद्धि परलोक के

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

झंझटों के आने वाले जन्म की हवाई, अनिश्चित, रहस्यमय फिजूल बातों की ओर लगा रहे तथा इस निश्चित, ठोस, भासमान सुन्दर जगत् की ओर से इन की उपेक्षा ही रहे।

इसी कारण से कोई २ माई का लाल ही अत्याचारियों को सीधा सामने इहलोक के प्रश्नों पर ही ललकारता है।

धर्म के गूढ़ विषयों पर (जिससे कि अत्याचारियों का बाल भी बाँका नहीं होता) बुद्धि तथा जीवन न्योछावर करने वाले हजारों नवयुवक मिल जायेंगे। नवयुवक क्यों, विदेशी सरकार की अपने देश पर निष्कण्टक राज्य करने में सहायतार्थ अपना सारा जीवन तथा जवानी नष्ट कर देने वाले पैन्शनी लोग और ख़िताबी (उपाधिधारी) लोग धार्मिक सभाओं के अधिकारीपन की पदों को शोभित करते हैं। यदि कभी भी सरकार की तरफ से लाल आँखें दिखाई जाती हैं तो ये वाग्वीर नीतिपटु धर्मावतार झट कह देते हैं कि श्रीमन्! हमारी तो धार्मिक सभा है हमारा सम्बन्ध राजनीति से किञ्चित भी नहीं अर्थात् हे प्रभो! हम लोगों से आप को बिलकुल भय न होना चाहिए। आप बेखटके अत्याचार तथा दमन की नीति जारी रखिए, आप के धनशोषण के विरुद्ध हम छोटी अङ्गुलि भी नहीं उठाएंगे। हम तो प्रार्थनाओं, समाज सुधार का काम वा परलोक की गुत्थियाँ सुलझाने में स्वयं भी मस्त हैं। तथा जनता का ध्यान, धन, तथा समय भी हम उधर ही लगा रहे हैं। क्या संसार की धार्मिक सोसाइटियाँ इन गम्भीर प्रश्नों का सन्तोषजनक उत्तर दे सकेंगी? यदि केवल "स्वर्गराज्य" के लिये ही धर्म मन्दिर में बैठ कर समानता तथा भ्रातृभाव सीमित रहेगा तथा इस संसार के भौतिक सुखों में सब को बराबर भाग नहीं दिया जायगा तो ऐसे सब धर्मों का *(Death knell)* मृत्यु का घण्टा बजा ही समझो। साम्यवाद के यह सिद्धान्त अब किसी दार्शनिक के मनोरञ्जन की वस्तु नहीं रही। अब तो यह सिद्धान्त विद्युद्वेग से संसार के सब देशों के द्वारों को खटखटा रहे हैं अब तो *Many that are great, shall be small, and small great* का युग आ गया है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कुसुमोद्यान

१. भारत का शिक्षादर्श

श्रीयुत बाकुईखां एक अमरीकन पत्र में लिखते हैं:—

'शक्ति' जर्मन शिक्षापद्धति की कुंजी थी; नैपोलियन ने अपने नवयुवकों में 'यश और कीर्ति' के भावों को उत्तेजना दी; प्राचीन रोम में 'जातियों पर राज्य' की इच्छा प्रबल थी और प्राचीन यूनान में स्पार्टा के बालकों से 'उत्तम योद्धा' बनने की आशा रक्खी जाती थी। वह शिक्षा जो कि बल को मुख्य स्थान दे, वह विज्ञान जो कि केवल नाश करे और वह संस्कृति जो कि मारने का उद्देश्य रखे सभ्यता के लिए बड़े भयदायक साधन हैं। इन से सब सभ्यता नष्ट भ्रष्ट हो जाती है। हम तो जनता के लिए ऐसी शिक्षा का प्रचार चाहते हैं जो कि उसे मनुष्यत्व प्रदान कर सके। वह शिक्षा जो कि मनुष्यजाति की सेवा की वेदी पर चढ़ कर पवित्र हो चुकी है भारत और आने वाली अन्य जातियों का भला कर सकेगी।

(पटना टाईम्स)

२. समाज में स्त्री-पुरुषों का मेल जोल

स्त्रियों की स्वतन्त्रता और स्त्री-पुरुषों के आपस में मिलने के विषय पर विचार करते हुये स्वामी ईश्वरानन्द लिखते हैं:—

पुराने विचार के लोग इस से बहुत डरते हैं और समाज सुधारक कुछ भी व्यय करना पड़े समाज में लाना चाहते हैं। सनातनी लोग इस से क्यों भयभीत हैं? उन को डर है कि कहीं उनकी पुत्री और पुत्र अपने सतीत्व और पवित्रता न खो बैठें। यह विचार है जो कि उन के मन में कार्य करता है। परन्तु क्या यह सम्भव नहीं कि हमारी देवियाँ अपने जीवन में पाश्चात्य स्वतन्त्रता के साथ उस सदाचार और पवित्रता का सम्मिश्रण करें जिस के लिए हिन्दु देवियें जीने और मरने को तैय्यार रहती हैं। क्या सीता राक्षसों के बीच महीनों और वर्षों नहीं रही? क्या सावित्री अपने लिये उत्तम वर की खोज में स्थान २ पर नहीं घूमी? क्या प्राचीन समय की ब्रह्म-वादिनी देवियाँ निर्भय होकर उस समय के विद्वानों को शास्त्रार्थ के लिये आह्वान करती हुईं एक राजदर्बार से दूसरे में नहीं जाती

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

थीं। इन दृष्टान्तों से पता चलता है कि हमारी स्त्रियों के लिये स्वतन्त्रता का विचार कोई नवीन विचार नहीं, परन्तु समाज सुधारक भूल जाते हैं कि स्वतन्त्रता का आधार एक दृढ़ मानसिक शक्ति और पवित्रता एवं संयम की अग्नि थी जो कि प्राचीन ब्रह्मचर्य की प्रणाली में उत्पन्न हुई थी। जहां पर वह उपस्थित न हो स्त्री पुरुषों का आपस में मिलना अवश्य हानिकारक हो जाता है जैसा कि पाश्चात्य जातियां स्वयं भी अनुभव करने लगी हैं और आप देखेंगे कि इस रक्षा का प्राचीर के होते हुये कोई भी पुराने विचार का व्यक्ति इस सुधार का विरोध नहीं करेगा। अतः यह सिद्ध है कि जहाँ जाति के आदर्श को स्वरक्षित रखा जाता है वहां हम अन्य अवस्थाओं में यथा-सम्भव परिवर्तन की आज्ञा दे सकते हैं। अतः सुधारकों का पहला कर्तव्य यह होना चाहिये कि वह स्त्रियों को जाति के प्राचीन आदर्शों की शिक्षा दें और फिर उन्हें स्त्री जाति सम्बन्धी समस्याओं को स्वयं ठीक करने दें। (वेदान्त केसरी)

३. अफ्रीका के बोयर और भारत विरोधिनी हलचल

डाक्टर तारक नाथ दास लिखते हैं:—

किसी को इस भ्रम में न रहना चाहिये कि ये डच तथा बोयर लोग हैं जो कि दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों का विरोध कर रहे हैं। यद्यपि ब्रिटिश सरकार ने इस बहाने से बोयर लोगों से लड़ाई की थी कि वो ट्रांसवाल में भारतीयों के साथ उनके बुरे सलूक को सह नहीं सकती, परन्तु नैटाल, केप कालोनी और अन्य अंग्रेज़ी उपनिवेशों के भारतीयों के साथ जो सलूक किया जाता था वह कम घृणित नहीं था। डच, अंग्रेज़, आयरिश या दूसरे शब्दों में समस्त योरुप-निवासी (उन में से बहुपक्ष) भारत-विरोधी अथवा एशिया-विरोधी नीति के कट्टर हिमायती हैं। इस के बहुत कम अपवाद हैं, बहुत ही कम मनुष्य ऐसे होंगे जो कि यह चाहते हों कि दक्षिण अफ्रीका में हिन्दुस्तानियों के साथ न्याय किया जाय, उन के अधिकारों की रक्षा की जाय। अफ्रीका के प्रतिज्ञाबद्ध कुली-प्रथा के दिनों से लेकर बोयर-युद्ध, मता-युद्ध और उसके पीछे के समय का भारत और अफ्रीका के संबन्ध का इतिहास भारतीयों को सताने और उनके अधिकारों को खोसने का इतिहास है। और यह अनेक सन्धिपत्रों के रहते हुये भी उसी प्रकार उस समय तक बना रहेगा जब तक कि भारत अपने घर में निज अवस्था को ठीक नहीं करता और दक्षिण अफ्रीका की भाँति स्वतन्त्र नहीं हो जाता। जब तक कि भारत एक स्वतन्त्र राष्ट्र नहीं बन जाता और अभ्यन्तरीय एवं बाह्य अन्तर-जातीय सम्बन्ध तथा जातीय रक्षा का भार अपने हाथ में नहीं लेता तब तक दक्षिण अफ्रीका और अन्य देश भारतीयों को कुछ भी मान और न्याय से नहीं देखेंगे। आज कल के संसार में पराधीन और निर्बल जातियों के लिये कोई न्याय नहीं है।

(कलकत्ता रिव्यू)

४. अमरीका में हबशियों के विरुद्ध भाव

सारे ही हबशी काले रङ्ग के नहीं हैं। एक करोड़ दस लाख में से साठ लाख के शरीर में गौरांगों का रक्त प्रवाहित हो रहा है। इन में से बहुत बड़ी संख्या के मुख की आकृति और शरीर के रङ्ग को देख कर कोई नहीं कह सकता कि वे हबशी हैं, केवल उन के सिर के बाल घुंघराले होते हैं। कितनी ही अवस्थाओं में यह भेद भी नहीं मिलता परन्तु मुखाकृति की कितनी भी समानता हो, रंग कितना भी गोरा हो, उन से गौरांगों की ओर से समानता का व्यवहार नहीं किया

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जाता। उन के रक्त में किंचिन्मात्र भी हबशी अंश का मिश्रण उन्हें बिरादरी से निकालने के लिये काफी है। गोरे या काले सब हबशी एक ही झाड़ू से दुतकारे जाते हैं। भारत में जो यूरेशियनों (भारतीय और अंग्रेज़ माता पिता की सन्तान) से बर्ताव किया जाता है वह अमरीका में हबशियों के साथ किये गये सलूक से कितना विपरीत है। यहां यूरेशियन से इतना लाड़ किया जाता है कि जिस से दोनों जातियों के सदाचार-विहीन सम्बन्ध को प्रोत्साहन मिलता है। इस लाड़ प्यार के होते हुये भी अमरीका के ६० लाख हबशियों के मुकाबले में भारत में केवल २ लाख यूरेशियनों का होना सिद्ध करता है कि यहां सदाचार का आदर्श कितना ऊँचा है।

हबशियों के साथ जो बुरा बर्ताव किया जाता है वह अमरीका के आदिम निवासियों के साथ नहीं किया जाता यद्यपि वह काले रंग के हैं। परन्तु यह आदिम निवासी संख्या में बहुत थोड़े हैं। इन में से कितने ही बहुत अमीर हैं और कितनों के नाम पर दासता का कोई धब्बा नहीं। इन के साथ मेल जोल से न तो सामाजिक पतन होता है और ना ही बिरादरी से बाहर किया जाता है। कोई भी लड़की बड़े गर्व से कह सकती है कि वह अमरीका के प्राचीन वंशजों की सन्तान है। परन्तु कोई भी गोरी मेम यदि किसी हबशी से विवाह करले तो उससे कोढ़ी से भी बढ़ कर बुरा बर्ताव किया जाता है।

५. विलायत में स्त्रियों के लिये एक नया काम

आजकल जहां एक ओर बेकारी बढ़ रही है इस के साथ दूसरी ओर काम न करने वालों की भी कमी हो रही है। इस का कारण यही है कि जो काम अधिकांश व्यक्ति करना चाहते हैं उस के लिये स्थान नहीं और जो काम मिल सकता है वह उनको पसन्द नहीं। उदाहरण के लिये हम इंगलैण्ड की अवस्था को ही लेते हैं। वहां लाखों की संख्या में स्त्री पुरुष विद्यमान है, परन्तु घर का काम करने के लिये नौकर नहीं मिलते। घरेलू काम को वे या तो निकृष्ट समझते हैं या इतना वेतन मांगते हैं कि जिसे साधारण स्थिति के परिवार देने में असमर्थ हैं। ऐसी अवस्था में न काम ही होता है और न पेट ही भरता है। इंगलैण्ड में तो स्त्रियों की संख्या पुरुषों की संख्या से अधिक होने के कारण अवस्था और भी खराब होती जा रही है। वहां पर नौकर भी नित्य नये कार्य सोचते रहते हैं जिन को करने में उन्हें कोई लज्जा न आये। एक स्त्री ने भी इसी प्रकार का एक नया कार्य ढूंढ़ निकाला है। लण्डन के आस पास की बस्तियों में कितने परिवार ऐसे रहते हैं जिन में नौकर और नौकरानी रखने की सामर्थ्य नहीं अतः कितने ही नवीन दम्पति, जो कि चाहते हैं कि हम सायंकाल के समय कहीं घूमने फिरने या सैर करने जा सकें, वह घर से बाहर नहीं निकल सकते क्योंकि पीछे घर पर बच्चों की देख भाल करने वाला कोई नहीं। यह स्त्री सायंकाल को आ जाती है, परिवार के बच्चों को सम्भालने का कार्यभार अपने ऊपर ले लेती है और जब तक दम्पति लौट न आवें सब प्रकार से उनकी निगरानी करती है। जिस दिन किसी परिवार को बाहर जाने की आवश्यकता हो उस दिन के लिये पहिले से ही उससे बालक-बहलाव के लिए फैसला कर लेते हैं। इस प्रकार उन स्त्रियों के लिये, जिन के पास रात को समय खाली है, इस विचार में धन भी है और अच्छे परिवारों से मेल जोल भी।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

६. एक आदर्श विवाह

ता० २७ जनवरी को महात्मा गाँधी के तृतीय चिरंजीवी पुत्र भाई रामदास का विवाह जो साबरमती आश्रम में हुआ था उसका विशेष हाल जानने योग्य होने के कारण "हिन्दी नवजीवन" से उद्धृत कर नीचे दिया जाता है:—

सगाई हुए दो साल हो चुके हैं मगर जब तक कन्या १७ साल की न हो लेवे तब तक गाँधी जी विवाह करने को राजी हुये नहीं थे। इसलिए कन्या पक्ष को बरबस रुकना पड़ा था। वर की उम्र विवाह के समय ३० वर्ष की थी। जिस में पूरी सादगी और गम्भीरता रहे इसलिये कन्या पक्षवालों ने लड़की को विवाह के लिए आश्रम में लाना स्वीकार किया था। वे कुल ५ या ६ आदमी आए थे। आश्रम में कुछ घंटे रह कर, उसी दिन लौट भी गये। संस्कार आठ बजे सवेरे शुरु हुआ था और साढ़े नौ बजे समाप्त हो गया, मगर विवाह के पहले वर कन्या को कहा गया था कि इस पवित्र अवसर के उपलक्ष्य में आप लोग पहले इतने काम कर लीजिये–(१) उपवास (२) सूत कातने और कुएँ की जगह और उसके आसपास की सफाई के रूप में कुछ शारीरिक काम, (३) गोशाला की सफ़ाई का काम, (४) पेड़ पौदों को पानी सींचना यानी सारी सृष्टि से एकता का भाव प्रदर्शित करना और (५) गीता का एक अध्याय पढ़ लेना। विवाह संस्कार में मुख्य बात थी यज्ञाग्नि और गुरुजनों के सामने वर कन्या का सेवाव्रत लेने की प्रतिज्ञा करनी। नाच बाजा तो कुछ था ही नहीं और प्रीतिभोज वगैरह जैसी भी कोई बात नहीं थी। शहर में से कुछ मित्र जिन्हें विवाह की खबर मिल गई थी, आशीर्वाद देने आ गये थे। गाँधी जी ने वर-कन्या दोनों को अपने हाथ के कते सूत की एक एक मंगलमाला, भगवद्गीता और आश्रम भजनावलि की एक एक प्रति और एक एक तकली उपहार में दी थी। कन्या की माता ने एक चर्खा दिया था। इस के सिवा वर या कन्या किसी को और उपहार नहीं दिये गये थे। दोनों ही दूध के समान उजली खादी पहने हुये थे। उन में से किसी के बदन पर सोने चाँदी के गहनों का नाम भी नहीं था।

ठीक ६॥ बजे प्रार्थनास्थल में सभी कोई आ जुटे और गाँधी जी ने छोटे से संक्षिप्त भाषण में वर बधू को आशीर्वाद दिया। अवसर के अनुकूल ही वह भाषण भी गम्भीर था। गाँधी जी के सब से अधिक हृदय हिलाने वाले दृश्यों में से यह एक था। वहाँ उपस्थित लोग देख सकते थे कि ऐसे प्रसंगों पर गाँधी जी किसी दूसरे आदमी के समान विह्वल मनुष्य बन जाते हैं। यह कहते समय कि "मेरे लड़कों में रामदास और देवदास खास कर मेरे नीचे मेरे छारा पले हैं"। उनकी आँखों में आँसू भर आये। इस ज्ञान से कि उनके इस लड़के ने उन्हें कभी नहीं ठगा है अपनी भूलें अपनी त्रुटियाँ कभी नहीं छिपाई हैं, गर्व से उनकी छाती फूल उठी, कण्ठ गद्गद हो आया। उन्होंने कहा "तुमने अपने दोष मेरे सामने कबूल किये हैं, मगर मैं उन से कभी शंकित नहीं हुआ हूँ क्योंकि तुम्हारी स्पष्ट कबूलियत ने मेरी आँखों में तुम्हारे दोष धो दिये हैं। मुझे इसका हर्ष है कि तुम्हें चाहे सारी दुनियाँ भले ठगे, पर तुम किसी को ठगने वाले नहीं होगे। मैं चाहता हूं कि तुम ऐसे ही भले बने रहो।

"तुम अपनी पत्नी की आबरू की रक्षा करना और उस के मालिक मत बन बैठना। उस के

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सच्चे मित्र बनना। तुम उस का शरीर और आत्मा वैसे ही पवित्र मानना जैसे कि वह तुम्हारे मानेगी। इस के लिये तुम्हें परिश्रमशील सादा और संयम जीवन बिताना पड़ेगा। तुम लोग परस्पर एक दूसरे को विषयवासना की पूर्ति के साधन मत मान लेना।"

"तुम दोनों को यही शिक्षा मिली हुई है। तुम अपना जीवन मातृभूमि की सेवा में लगा देना, मातृभूमि की सेवा में अपने शरीर गला देना गरीबी का व्रत लिया है। इसलिए तुम दोनों ही गरीबों के समान पसीने की ही रोटी खाना। तुम दोनों परस्पर एक दूसरे को दैनिक काम में सहायता देना, उसी में आनन्द मानना।

"मैंने तुम्हें कुछ उपहार नहीं दिया है। तकली तथा मेरे प्रिय ग्रंथ गीता और आश्रम भजनावलि की प्रतियों के सिवाय मैं तुम्हें और कुछ दे भी नहीं सकता हूं। सूत की ये मालायें तुम्हारे लिये रक्षाकवच बनें। मैं चाहता तो मित्रों से भीख माँग कर तुम्हें कीमती चीज़ें भेंट कर सकता था, मगर उस में तो संसार मेरा हलकापन झाँप लेता, मगर मैंने जो चीज़ें तुम्हें दी हैं उन्हें ही मैं अपना सर्वस्व मानता हूँ, वे इस बात की साक्षी होंगी कि मैंने तुम्हें वे ही वस्तुएँ दी हैं, जो देना मेरे लिए उचित होता। "गीता रत्नों की खान है। तुम्हारे लिए भी वह रत्नों की खान बन जाय, जीवन पथ में गीता तुम्हारी सतत संगिनी रहे, पथ-प्रदर्शिका रहे। इससे तुम अपना रास्ता देख सको, प्रकाश पा सको, भगवान् तुम्हें सेवा करने के लिए चिरञ्जीवी बनावें।"

सन्ध्या को उन्होंने विवाह के प्रश्न के सार्वजनिक पहलू का उल्लेख किया। उन्होंने चार मूल वर्णों के विभाग करके नाना जातियों और उपजातियाँ बनाने की चाल पर बातें कीं और आशा की कि आश्रम में एक ही जाति के वर-कन्या का यह अन्तिम विवाह होगा। आश्रम के लोगों को इस मामले में आगे बढ़ना चाहिये क्योंकि औरों को कितनी कठिनाइयाँ हैं जो आश्रमवालों को नहीं हैं। आश्रम में यह नियम होना चाहिए कि भिन्न-भिन्न उपजातियों में विवाह को उत्तेजन दिया जाय और एक ही जाति में विवाह की उपेक्षा की जाय। लड़कियाँ अगर २० या २५ साल तक कुंवारी रक्खी जा सकें तो अच्छा होगा। अन्त में वे फिर इस विषय की गम्भीरता पर आ गये और उन्होंने कहा, "यह मत मानो कि आश्रम का ध्येय विवाह को लोकप्रिय बनाना है। इसका उद्देश्य तो आजीवन ब्रह्मचर्य है और रहेगा। आश्रम विवाह का वहाँ तक आदर करता है जहाँ तक वह संयम का अंग बने, न कि भोगविलास का। और संयमी का जीवन भोगी के जीवन से अलग होगा। याद रखिये कि भोग-विलास की कोई मर्यादा है, हद्द है, मगर संयम की कोई हद नहीं है।"

७. अमेरिका में पुरुषों पर स्त्रियों का राज्य

दुनियाँ में आजकल जो उथल-पुथल हो रही है उसे देखकर दंग रह जाना पड़ता है। क्या ज़माना आ गया है? राजाओं को कोई नहीं पूछता, सब जगह रिआया का राज्य हो रहा है। फ्राँस में, अमेरिका में, जर्मनी में, टर्की में, ईरान में, चीन में सब जगह प्रजातन्त्र-राज्य कायम हो गया है। इँगलिस्तान में भी बहुत हद्द तक प्रजा का राज्य है और अब पार्लियामेंट में मज़दूरों की तादाद इतनी बढ़ती जाती है कि ख़्याल किया जाता है कि अगले चुनाव में वहाँ मज़दूर-सरकार क़ायम हो जायगी यानी मज़दूरों का राज्य हो जायगा। रूस में तो सोलहों-आने किसानों और मज़दूरों का राज्य है। ज़मींदारों, साहूकारों का पता तक नहीं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

दूसरी तरफ़ दुनियाँ भर में स्त्रियों का ज़ोर बढ़ता जा रहा है। यूरुप और अमेरिका के करीब-क़रीब सब मुल्कों में हर बात में औरतें मरदों की बराबरी करती हैं। क़ानून से जो हक़ मरदों को हासिल हैं वे ही सब औरतों को भी मिले हुए हैं। औरतें जहाँ चाहें, नौकरी कर सकती हैं, पार्लियामेंट की मेम्बर हो सकती हैं, वकालत कर सकती हैं, डाक्टरी कर सकती हैं। वोट देने का जो हक़ पुरुषों को है वही स्त्रियों को भी है। इँगलैंड की स्त्रियों में सिर्फ़ इतनी कमी है कि वे पच्चीस वर्ष की होने के पहले वोट नहीं दे सकतीं। इस पर वहाँ इतनी हलचल मची हुई है कि स्त्रियाँ आफ़त मचाये हुए हैं बहुत शीघ्र उन्हें उसी उम्र में वोट देने का हक़ मिल जायगा जिसमें पुरुष दे सकते हैं। हिन्दुस्तान तक में एक महिला मदरास कौंसिल की डिप्टी प्रेसीडेन्ट है। दो-एक बैरिस्टरी भी करने लगी हैं। श्रीमती नायडू और श्रीमती बीसेन्ट काँग्रेस की प्रेसीडेन्ट रह चुकी हैं।

परन्तु स्त्रियों का सबसे ज़्यादा ज़ोर अमेरिका में है। वहाँ की बाबत कुछ लोगों का कहना है कि वहाँ पुरुषों पर स्त्रियों का राज्य है। उन्हीं के ऐश-आराम और उन्हीं की सेवा के लिए अमेरिका के पुरुष सानन्द धन-संग्रह करने में तेली के बैल की तरह जुटे रहते हैं। काउण्ट हर्मन कैसर लिङ्ग नाम के एक नामी जर्मन लेखक ने न्यूयार्क के "World" नाम के अख़बार में लिखा है कि:—

"इस युग में एकाएक स्त्रियों का प्रभुत्व बढ़ गया है। वर्तमान युग में, संसार और जीवन की समस्त दिशाओं में धीरे-धीरे स्त्रियों का प्रभुत्व बढ़ रहा है। स्त्रियों का यह कहना झूठ है कि वे बराबरी का दर्ज़ा चाहती हैं। असल में वे पुरुषों पर प्रभुत्व पाने के लिए प्रयत्न कर रही हैं।

अमेरिका में मर्दों का राज्य है लेकिन वास्तविक जीती-जागती शक्ति पीछे है और वह औरतों के हाथ है स्त्रियाँ नियम बनाती है पुरुष उन्हें तोड़ते हैं।"

न्यूयार्क के "ईवनिङ्ग पोस्ट" नाम के अख़बार ने भी लिखा है कि—"हम पर औरतें राज्य कर रही हैं।" न्यूयार्क के "ईवनिङ्ग वार्ड" नाम के अख़बार ने तो यहाँ तक लिखा है कि "हम लोग दुनियाँ में सबसे अधिक सुखी और सम्पन्न हैं। कभी-कभी हम लोग आश्चर्य से पूछते हैं कि यह बात क्या है? काउण्ट ने आज उसका जवाब दे दिया, क्योंकि हमारे यहाँ स्त्रियों का राज्य है इसलिए हम दुनियाँ में सब से आगे हैं। पेड़ फल से जाना जाता है। राज्य परिणामों से। इस तरह स्त्रियों का राज्य अच्छा साबित हुआ। उन्हें राज्य करने दो। वे राज्य करेंगीं। हम चाहे कुछ करें।" "कॉलेज ह्यूमर" नामक एक अख़बार में मिसेज़ अथर्टन ने लिखा है कि "पुरुष चाहे भले ही यह कहते रहें कि स्त्रियाँ अबला होती हैं परन्तु वास्तव में वे उतनी ही सबला हैं कि जितने पुरुष। संसार में चढ़ा-ऊपरी का चक्र हमेशा चलता रहता है। कभी स्त्रियों की चढ़ बनती है, कभी पुरुषों की। जबसे दुनिया बनी है तब से कई बार स्त्रियों ने पुरुषों को बुरी तरह दबा लिया है। चक्र इस तरह चलता है। पुरुषों ने स्त्रियों को दबा लिया। फिर दोनों बराबर हुए। इसके बाद स्त्रियों ने पुरुषों को दबा लिया। फिर दोनों बराबर हुए। अन्त में फिर पुरुषों ने स्त्रियों को दबा लिया इसी तरह चक्कर चला करता है। इन दिनों, पुरुष स्त्रियों को दबाये हुए थे। अब उनके दिन लद गये। अब चक्र दूसरी तरफ चल रहा है। आज दुनियाँ के सब से अधिक सभ्य राज्यों में स्त्रियाँ शारीरिक और मानसिक बल तथा राजनैतिक अधिकारों में पुरुषों के बराबर हैं। इसके बाद स्त्रियाँ पुरुषों पर राज्य करेंगी।"

(सैनिक से उद्धृत)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

१. बच्चों के लिये संतरे

संतरे के रस में ३ प्रकार की वाइटेमिन होती है। यह तीनों मनुष्य शरीर की उचित वृद्धि और पालन पोषण के लिये आवश्यक है। चिकागो विश्वविद्यालय के जिन बालकों को तीसरे पहर नाशते के साथ संतरे भी दिये जाते थे उनके बोझ में दूसरों की अपेक्षा अधिक वृद्धि हुई।

इस का वैज्ञानिक कारण खोज करने से पता लगा कि संतरे का रस भोजन में से अधिक मात्रा में चूने और प्रस्फुरक को शरीर में हज़म करता है। इन दो पदार्थों से ही हड्डियाँ बनती हैं। अतः दुर्बल और नन्हें बालकों को लाल शर्बत इत्यादि चूना और प्रस्फुरक वाली औषधियों का विशेष लाभ तभी होगा यदि उन्हें इसके साथ सन्तरा, माल्टा, निम्बू, मीठा इत्यादि फल भी पर्याप्त भाग में खाने को दिये जावें।

२- गाय और संगीत

जर्मनी के प्रसिद्ध जन्तु शास्त्र निपुण वैज्ञानिकों डाक्टर न्युबर्ट और कोच का कथन है कि राग अथवा संगीत का गाय के मन पर बड़ा प्रभाव पड़ता है और वह संगीत के समय अधिक दूध देती है। वह कहते हैं कि यह आवश्यक नहीं कि दूध देने वाले पशुओं को लगातार संगीतगृह के पास रखें, परन्तु परीक्षा से पता लगा है कि गाय का दूध दोहते समय गौशाला में संगीत का प्रबन्ध कर देने से बहुत लाभ होता है। अभी तक यह नहीं कहा जा सका है कि उन्हें कौन सा राग अधिक पसन्द है। यह नतीजा आशा के विरुद्ध नहीं क्योंकि पशुओं के मनोभावों का उनके दूध देने पर बड़ा प्रभाव पड़ता है। यह बात तो साधारण तौर पर प्रसिद्ध है कि गाय जिस क्रिया या वस्तु से भड़क उठती है उस से वह दूध कम देती है। इसके विरुद्ध यदि वह ऐसे स्थान में रहती हो जहाँ कि उन्हें पूरी शान्ति मिल सके और किसी प्रकार का भय न हो तो वह दूध अधिक देती है।

३. धूलिकण

बड़े २ नगरों में, विशेष कर सायंकाल के समय, एक प्रकार की धुन्द सी दिखलाई पड़ती है। जब यह आंखों में लगती है तो उन्हें बड़ा कष्ट पहुँचाती है। यह धुन्द क्या वस्तु है। निस्सन्देह

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

धुआँ इसका एक बड़ा भारी भाग होता है, परन्तु यह केवल धुआँ ही नहीं होता । इस के कण बहुत ही छोटे होते हैं और साधारणतया वह देखे नहीं जा सकते । वैज्ञानिक इन कणों के स्वरूप को जानने के लिये अनेक परीक्षण कर रहे हैं । एक इंच स्थान में रहने वाले कणों की उन्होंने गिनती भी कर ली है । उन्हें अनुसन्धान से पता चला है कि प्रति घन इंच स्थान में ५४०० से लेकर ६४०० तक गणना में यह पाये जाते हैं । यह बहुत ही बारीक धातुरेणु और उड़ने वाली मट्टी के ही बने होते हैं । इस के अतिरिक्त, फूलों की गन्ध, कीटाणुओं के शरीर, चूने के पत्थर के टुकड़े इत्यादि भी पाये जाते हैं ।

पाठकों के मन में संशय होगा कि वैज्ञानिकों के इस परिश्रम का क्या लाभ । इस के दो लाभ तो स्पष्ट हैं जो कि इन के स्वरूप का ज्ञान प्राप्त कर इनको दूर करने पर प्राप्त होंगे । आज कल वायु-यान के वाहक १० मील से अधिक दूरी पर स्थित पदार्थों को नहीं देख सकते अतः उन्हें कितनी बार वायु मण्डल की ठीक अवस्था का ज्ञान न होने से मृत्यु तक का सामना करना पड़ता है । आपदा से बचाने का कोई उपाय निकाल सकेगा । दूसरे बड़े बड़े नगरों में टिकट नाम का रोग बढ़ता जाता है । बच्चों पर इस रोग का अधिक आक्रमण होता है । इस में उनकी कोमल हड्डियाँ प्रायः टेढ़ी हो जाती हैं । पता चला है कि बजनी से परे प्रकाश की किरणों द्वारा इस रोग का इलाज किया जा सकता हैं । यह किरणें सूर्य के प्रकाश में भी रहती हैं और धुलिरेणु सूर्य प्रकाश को रोक कर इस रोग की वृद्धि का साधन बनते हैं ।

४. बालकों के लिये गाय का दूध

बालकों और बालिकाओं के लिये-जिनके शरीर अभी बढ़ रहे हैं— दूध का प्रयोग कितना लाभ दायक है यह सब ही जानते हैं, परन्तु इस विचार को प्रसिद्ध करने के लिये जो परीक्षण किये गये हैं उन से जो फल निकले हैं वह बहुत ही आश्चर्य-जनक है ।

डाक्टर मैन ने ब्रिटिश मैडिकल अनुसन्धान समिति को अपने परीक्षणों की-जो कि बड़े विस्तृत रूप में गत चार वर्ष में किये गये थे— रिपोर्ट की है । इस अनुसन्धान से पता लगा है कि बालकों के दैनिक भोजन में आध सेर दूध सम्मिलित करने से उनके तोल में १.६८ सेर से लेकर ३.४६ सेर तक अधिक वृद्धि हुई और ऊँचाई की वृद्धि १.८४ इंच से लेकर १.३२ इंच तक थी ।

५०० लड़कों पर ये परीक्षण किये गये थे । परीक्षण आरम्भ करने से पहिले यह देख लिया गया था कि सब का स्वास्थ्य बड़ा उत्तम था । उन्हें बहुत कम अवकाश दिया गया था जिस से की वे बहुत समय तक आँखों से ओझल न हो सकें । बालकों को निम्नलिखित समूहों में बाँटा गया था—

(१) केवल ऐसे भोजन पर रहने वाले जो कि साधारण मज़दूरी पेशा लोगों के घरों में मिलने वाले भोजन से कुछ उत्तम था ।

(२) उपरोक्त भोजन में खाँड अधिक करके ।

(३) ताजा मक्खन अधिक करके ।

(४) 'वनस्पति घी' अधिक करके ।

(५) दूध अधिक करके ।

दूध और मक्खन खाने वाले बालकों ने सब से अधिक उन्नति की । वह प्रायः साल में ३½ सेर तोल में और २½ इंच माप में बढ़े । इनकी उन्नति साधारण रूप से देखने पर ही पता लग जाती थी । इन को कोई रोग नहीं हुआ जब कि अन्य बालक समूह में कितने ही रोगी रहे ।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

५. बिना पैट्रोल का हवाई जहाज़

कप्तान विक्टर डिवोवेस्की रूस के सेनाविभाग में एक वायुयान-वाहक था। उसने हवाई जहाज़ से सम्बन्ध रखने वाली कई कलों और पुर्ज़ों का आविष्कार किया है। उस का कहना है कि इस प्रकार का विमान बनाया जा सकता है जिसे मनुष्य बिना एञ्जिन की सहायता के, केवल अपने भुजाबल से ही चला सकेगा। उस की मशीन जो कि अभी बनाई जायगी १३ गज लम्बी और २५ फुट चौड़ी होगी। इस में एक व्यक्ति लेट कर चला सकेगा। इस का अगला भाग कुछ दबा हुआ होगा और इस के ही कारण यह स्वयं आगे को धकेली जा सकेगी। किसी तिर्छी चिकनी जमीन पर १०० गज़ तक चल कर यह शान्त वायुमण्डल में ऊपर उठ सकेगी। इस की गति १२ से १५ मील तक होगी। इसकी रचना एलबैट्रास नाम के समुद्री पक्षी की शरीररचना के सिद्धान्त पर हुई है। यह पक्षी भी १२ फुट लम्बा होता है और इसके फैले हुये पङ्खों की एक सिरे से दूसरे सिरे तक चौडाई २५ फुट होती है। यह समुद्र में स्थल से हज़ारों मील की दूरी पर मिलता है। इस का अग्र भी कुछ दबा हुआ सा होता है। और कप्तान डिवोवेस्की के यन्त्र का यही बड़ा भारी भेद होगा। अभी तक यह मशीन तैय्यार नहीं हुई और वैज्ञानिकों को पूरा-पूरा विश्वास भी नहीं कि ऐसी मशीन तैय्यार हो सकेगी। देखिये भविष्य क्या सिद्ध करता है।

६. कूड़े से धन

प्रत्येक घर में सब्ज़ी भाजी के छिलकों, गन्दे सड़े फलों इत्यादि के अतिरिक्त रसोई घर की बहुत सी जूठन और गन्दा कूड़ा गिराया जाता है। भङ्गी अथवा मेहतर इस को भी अन्य गन्दगी के साथ मिलाकर खाद के लिये बाहर गिरा आते हैं। परन्तु अमरीका में एक कोलम्बिया ऐसा ज़िला है—जहाँ पर कि पहली प्रकार के कूड़े को गन्दगी से न मिला कर अलग इकट्ठा कर लिया जाता है और फिर उस में तेल और चिकनाई को अलग कर बेच डाला जाता है। नगर का सारा कूड़ा बड़े २ हौजों में जमा कर लारियों द्वारा नगर से तीस मील बाहर कारखाने में पहुँचाया जाता है। यहां इस को बहुत बड़े २ पतीलों में-जो कि ६ फुट चौड़े और १४ फुट ऊँचे होते है—डाल कर खूब गरम गरम भाप में ८ घन्टे तक पकाया जाता है। पकने पर सब घी और तैल पदार्थ अलग होकर पानी में आ जाते है। पानी को छान कर जुदा कर लेते हैं और फोक को खूब दबा कर निचोड़ लेते हैं जो कि पीछे से खली की भाँति सूका रह जाता है। तेल मिले पानी को बड़े-बड़े हौज़ों में डाल कर रख छोड़ते है। पानी नीचे आ जाता है और तेल ऊपर आ जाता है, जिस को खुरच के अलग कर लेते हैं। पहिले देगों से बची हुई खली को खाद के लिये बेच दिया जाता था परन्तु अब इसे इसी कारखाने में कोयले के स्थान में इन्धन के रूप में जलाया जाता है। इस प्रकार एक तिहाई के लगभग कोयले की बचत हो जाती है और इस प्रकार इन्हें खाद के रूप में बेचने की अवस्था से अधिक आमदनी होती है।

गत वर्ष २०४४००० मन जूठन और कूड़ा इकट्ठा किया गया था। इन में से १८००००० मन से तेल अलग किया गया जिस में से १९१५००० सेर अथवा ४७८७५ मन तेल निकला, जो कि ५७५७७१०१ रुपये को बेचा गया। इस प्रकार कोलम्बिया की म्युनिसिपल कमेटी ने खर्च निकाल कर १½ लाख से

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

२ लाख रुपया तक प्रति वर्ष अपने नगर के कूड़ा करकट से पैदा किया।

पाठक यह जानने के लिये उत्सुक होंगे कि इस तेल को किस काम में लाया जाता है। इस तेल में एक प्रकार का लाल रंग का तेल, ग्लेसरीन, और स्टीयरण (एक प्रकार का मोम) रहता है। यह सब पदार्थ साबुन और मोमबत्ती बनाने के काम में आते हैं। इस प्रकार जूठन और कूड़ा करकट से शरीर को साफ करने के लिये मन लुभाने वाले और सुन्दर साबुन बनाये जाते हैं।

७. निद्रा-रोग

सन् १९१८ की शरद् ऋतु में गत महायुद्ध की समाप्ति से पहिले इँग्लैंड और फ्रान्स में एक नवीन प्रकार के रोग की उत्पत्ति हुई। इस रोग से पीड़ित व्यक्ति के चेहरे और मुख की नसें कड़ी पड़ जाती थीं अथवा गरदन से ऊपर के शरीर के भाग को लकवा मार जाता था। आँखों में भी गापन आ जाता था और आधा मुंह कड़ा पड़कर आकृति में एक विशेष प्रकार की कुरूपता आ जाती थी। साथ ही शरीर में बड़ी भारी शिथिलता और निद्रा की उत्कट इच्छा उत्पन्न हो जाती थी। बातें करते करते, मेज़ पर बैठे हुए, पाठ पढ़ते समय अथवा अन्य दैनिक कार्य करते करते रोगी को नींद आ जाती थी। ज्यों २ रोग बढ़ता जाता था निद्रा भी तीव्र होती जाती थी और अन्त में वह इतनी गाढ़ हो जाती थी कि रोगी कई कई दिन सोया रहता था। इस अवस्था में केवल भोजन करने के लिए ही उसे बड़ी कठिनता से जगाया जा सकता था। वह कुछ समय के लिए जाग कर पुनः उसी गाढ़ी निद्रा में डूब जाता था। रोग का अन्त भी भिन्न प्रकार का होता था। रोगियों का चौथाई भाग तो निद्रा की समाप्ति से पहिले ही मृत्यु को प्राप्त हो जाता था, एक बड़ा भाग मृत्यु से तो बच जाता था परन्तु इतना दुर्बल हो जाता था, कि सदा के लिए रोगों का लक्ष बन जाता था, शेष सर्वथा अच्छे हो जाते थे।

इँग्लैण्ड में इन दिनों पहिले पहिल टीन के डिब्बों में बन्द होकर बाहर से आये हुए भोजन पदार्थों के खाने का रिवाज चला था। अतः समझा गया कि इस रोग का इस प्रकार के खाद्य पदार्थों से बड़ा सम्बन्ध है। लड़ाई के अन्त होने पर पता लगा कि अन्य देशों में भी इस रोग ने बड़ी हानि पहुँचाई है। वियाना के एक डाक्टर ने १९१७ में इस रोग पर एक पुस्तक लिखी थी। इस रोग से मृत व्यक्तियों के शिरों को चीर फाड़ कर जांच करने से पता लगा कि दिमाग़ में सूजन हो जाती है। अमरीका में १९१९ में यह रोग पहुंचा, १९१९ और १९२६ के बीच तो यह वहां इतना बढ़ा कि हज़ारों व्यक्तियों पर इस ने आक्रमण कर लिया। इसी समय चीन, जापान और अन्य देशों से भी इस रोग के आक्रमण के समाचार आने लगे। १९२४ में जापान में तो इस ने बड़ा भयानक रूप धारण कर लिया, ७००० रोगियों में से ४००० की मृत्यु हो गई।

इस रोग का एक और रूप भी अब प्रगट हुआ है, जिस में कि निद्रा के स्थान में इस के सर्वथा विपरीत रोगी बहुत ही उत्तेजित हो जाता है और सदा चलने फिरने, काम करने को तैय्यार रहता है। रोग का यह रूप सरलतया समझ में आ जाता है जब हम रोग के मस्तिष्क सम्बन्धी कारण पर विचार करें यदि मस्तिष्क के एक भाग में सूजन होगी तो निद्रा का परिणाम सुस्ती और निद्रा होगा और यदि मस्तिष्क के दूसरे भाग पर आक्रमण हो तो अधिक उत्तेजना।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

इस रोग का सब से अधिक भयानक परिणाम मृत्यु से बचे हुये रोगियों की अवस्था में—उन के मस्तिष्क के कोषों का सदा के लिए बिगड़ जाना है। बच्चों में, जो कि रोग से पहिले बड़े सरल स्वभाव और सदाचारी बालक थे, उदारता तथा आज्ञा न मानने इत्यादि की प्रवृत्ति का उत्पन्न हो जाना इस रोग का बड़ा चिन्ताजनक परिणाम है।

डाक्टरों का विश्वास है कि यह भी कीटाणु-जनक रोग है। बड़े उत्साह और लगन से संसार में भिन्न २ देशों के कीटाणु विशारद उन कीटाणुओं की खोज में दत्तचित्त हैं, जिन से यह रोग उत्पन्न होता है। आशा है वे अवश्य ही इस खोज में सफल होंगे और इस रोग का इलाज सरल हो जायगा।

८. चमकीले कीटाणु

वाशिंगटन में जातीय-वैज्ञानिक महासमिति के भवन में एक ऐसा बिजली का लैम्प है जो कि संसार में सब से छोटा लैम्प है। उस का नाम "गेहूँ का दाना लैम्प" है। क्योंकि यह गेहूँ के एक दाने से बड़ा नहीं। यह एक चौथाई इञ्च लम्बा है। जिस प्रकार चीड़ फाड़ करते समय इसे शरीर के छोटे से छोटे छेद में रख देते है जिस से कि वह छिद्र चमक पड़ता है और आपरेशन भलीभाँति किया जा सकता है। यद्यपि यह लैम्प इतना छोटा है परन्तु इस की समस्त बनावट तेज़ आँखों द्वारा भली प्रकार देखी जा सकती है, किसी सूक्ष्मवीक्षण यन्त्र की आवश्यकता नहीं। मनुष्य की बनाई हुई प्रत्येक चीज़ को, चाहे उस से प्रकाश, ताप अथवा बिजली कुछ भी निकले, हम अपनी आंखों से भली प्रकार देख सकते हैं।

कितने ही जीवित प्राणी भी निज शरीर से प्रकाश, ताप अथवा बिजली को निकालते रहते हैं। परन्तु इन के पुरज़े बड़े ही पेचीदा होते हैं। कोई भी इन्जिनियर बिजली उत्पन्न करने वाली मशीन अथवा डाइनेमो के भिन्न २ पुर्जों, को बड़ी सरलता से पृथक कर परीक्षा कर सकता है, परन्तु हमें समझ नहीं आता कि हम, उदाहरण के लिए जुगनू के प्रकाशोत्पादक यन्त्र समूह को किन औज़ारों की सहायता से पृथक कर सकते हैं। अभी हमें जुगनू से एक हज़ार गुणे छोटे प्राणियों का पता है जो इसी प्रकार चमकते हैं। ये समुद्र में रहते हैं और जल की शान्ति भंग होने के समय प्रायः किश्तियों के पीछे इनको प्रकाशमान पंक्ति देखने में आती है। जिस प्रकार बटन के दबाने से बिजली का लैम्प जल उठता है उसी प्रकार से उत्तेजित करने से ये भी चमक उठते हैं।

इन से भी छोटे प्रकाशमान जीव है और वे भास्वर कीटाणु हैं। ये इतने छोटे हैं कि किसी यन्त्र की सहायता से भी हम किसी एक कीटाणु से निकलते हुये प्रकाश को नहीं देख सकते। यदि यह कई हजार एक स्थान पर एकत्र हों तो इन से इतनी रोशनी निकलती है कि उस का प्रकाश आँख की पुतली पर प्रभाव डाल सकता है। ये इतने छोटे हैं कि ऊपर बतलाये "गेहूँ के दाना लैम्प" में—४०००००००००० कीटाणु समा सकते हैं। ५०००००००००००० कीटाणु इतना प्रकाश देते हैं जितना कि एक मोमबत्ती से निकलता है। इस से अन्दाजा लगाया जा सकता है कि इन सूक्ष्म प्राणियों के शारीरिक यन्त्र को जांचना कितना कठिन काम है। तो भी हम इनको समूह रूप में जाँच सकते हैं और इस प्रकार हमें इन के विषय में अनेक बातें पता लगी हैं। यद्यपि ये समुद्र में रहते हैं तो भी हमें इन के प्रकाश का तभी ज्ञान होता है जब कि यह किसी मरी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हुई मछली अथवा अन्य खाद्य पदार्थ पर अपनी संख्या वृद्धि करते हैं । उस समय अन्धेरे में समस्त मछली चमकने लगती है । इन प्राणियों को प्रकाश उत्पत्ति करने के लिये उसी प्रकार आक्सीजन (ओषजन) की आवश्यकता होती है जिस प्रकार लकड़ी, कोयले अथवा तेल के जलने के लिए । परन्तु जहाँ इन पिछली वस्तुओं से प्रकाश के साथ ताप अधिक मात्रा में पैदा होता है वहां इन कीटाणुओं से प्रकाश ही अधिक उत्पन्न होता है । ताप तो एक डिग्री का हज़ारवाँ हिस्सा भी पैदा नहीं होता । इन का प्रकाश "शीतल प्रकाश" है ।

यह कीटाणु नितान्त भी हानिकारक नहीं, यद्यपि ये सड़ते हुये मांस अथवा अन्य ऐन्द्रियिक पदार्थों पर जन्म लेते और निज संख्या वृद्धि करते हैं । ये आक्सीजन की सहायता से ही अपना प्रकाश प्रकट कर सकते हैं । यदि यह गैस न मिले तो इन की चमक नहीं निकलती । इसलिये ओषजन गैस की उपस्थिति जांचने के लिये ये कीटाणु बड़े उत्तम साधन हैं । यदि किसी और जड़ गैस के १४३००० भाग में १भाग भी आक्सीजन का हो तो इन की सहायता से उस का पता चल जाता है ।

कभी २ ये अन्य जीवित प्राणियों के शरीर पर भी पलते और संख्या वृद्धि करते हैं । जिस प्राणी पर ये बसेरा करते हैं वह कभी २ तो इनके कारण मर जाता है और कभी २ जीता भी रहता है । यदि इन कीटाणुओं का कृत्रिम घोल बना कर, मछली, मेंडक इत्यादि अन्य जन्तुओं के शरीर में पिचकारी को सुई से डाला जावे तो वहां पर जाकर भी ये 'फलने फूलने' लगते हैं और ये जन्तु चमकने लगते हैं ।

ऐसे भी जन्तु हैं जिन के शरीर पर यह कीटाणु सदैव विद्यमान रहते हैं । वन्दा नाम के अमरीकन समुद्र में ऐसी दो मछलियां मिली थीं जिनके शरीर में एक ऐसा अङ्ग होता है जो कि केवल चमकीले कीटाणुओं को बसेरा देने के काम आता है । मछलियों को प्रकाश मिल जाता है और इस के बदले में कीटाणुओं को बिना मूल्य का भोजन और रहने को घर । बहुत बारीक नसों द्वारा इस अंग में कीटाणुओं के लिये भोजन ओषजन पहुँचता रहता है । इन कीटाणुओं का प्रकाश चौबीस घन्टे बराबर चमकता रहता है परन्तु मछलियों को सदा इस प्रकाश की आवश्यकता नहीं होती । अतः परमात्मा ने उनके शरीर में इस प्रकाश के अंग को इच्छानुसार खोलने और अपने के लिये आँखों के ढकनों की भाँति झिल्ली सी दी है । उस समुद्र की मछली पकड़ने वाले इन मछलियों के प्रकाश देने वाले अंगों को काटकर उनकी झिल्ली उतार देते हैं और फिर उन्हें काँटे में फँसा कर अन्य मछलियाँ पकड़ने के लिये जल में जाल डाल देते हैं । मछलियाँ समझती हैं कि यह प्रकाश उनकी जीवित मछलियों से आता है और इस धोके में आकर वह जाल में फँस जाती है ।

ये भास्वर कीटाणु बहुत क्षीण ताप में वृद्धि को प्राप्त होते हैं । इसीलिये ये कई बार बर्फ से ठण्डे रखे हुये भोजन में भी पैदा हो जाते हैं । इन्हें मांस और अण्डे खूब भाते हैं, बहुत समय पहिले की बात है जब की शरीर की चीर फाड़ द्वारा चिकित्सा ने इतनी उन्नति नहीं की थी यह कीड़े प्रायः मनुष्यों के ज़खमों और फोड़ों पर एकत्र हो जाते थे और ऐसे फोड़े रात के समय खूब चमका करते थे । उस समय के डाक्टरों का विश्वास था कि चमकने वाले बिना किसी कष्ट के नियम पूर्वक

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अच्छे हो जाते हैं। यह विश्वास सत्य ही था क्योंकि ये चमकने वाले कीटाणु किसी प्रकार के रोग को उत्पन्न नहीं करते वरन स्वयं फोड़ों पर इतनी संख्या में एकत्र हो जाते हैं कि रोगोत्पादक कीटाणुओं के लिये कोई स्थान ही नहीं रहता। जुगनू इत्यादि चमकने वाले जन्तुओं को मारकर जो रस निकाला जाता है उसको दो भागों में विभक्त कर सकते हैं। एक तो जो चमक पैदा करने का मूल कारण है और दूसरा जिस की सहायता से उस में रासायनिक परिवर्तन द्वारा चमक उत्पन्न होती है। अर्थात् यह पहला जलने वाला और दूसरा कोयले या लकड़ी का स्थानापन्न कहा जा सकता है। इस रस को उबालने से पहिला नष्ट हो जाता है दूसरा नहीं।

जैसा हम ऊपर कह चुके हैं जब हम तेल के लैम्प जला कर या बिजली के द्वारा प्रकाश पैदा करते हैं तो प्रकाश के साथ साथ ताप भी उत्पन्न होता है और इन्धन का ९७ प्रति शतक ताप उत्पन्न करने में व्यय होता है। इस से अनुमान किया जा सकता है कि हमारे प्रकाश पैदा करने के यन्त्रों द्वारा इन्धन का कितना बड़ा भाग अनावश्यक व्यय होता है। क्या प्रकाशमय कीटाणु भी इतना ही इन्धन का (खाये हुये भोजन) अपव्यय करते हैं। परीक्षणों से पता चला है कि इन कीटाणुओं की प्रकाशजनक शक्ति भोजन का केवल १६ प्रति शतक है। शेष ९९. ८४ प्रतिशतक प्रकाश के दृष्टिकोण से व्यर्थ जाता है परन्तु यह स्मरण रहे कि इसकी बड़ी भारी मात्रा कीटाणुओं के अन्य शारीरिक और ऐन्द्रियिक क्रियाओं में व्यय होता है, यह सब का सब केवल ताप पैदा करने में ही व्ययनहीं हो जाता।

क्या यह कीटाणु संसार की एक अद्भुत वस्तु नहीं। कितने नन्हे और कितने महान!

गृह प्रबन्ध

कुछ जानने योग्य बातें

कई बार घरों में थोड़ी सी असावधानी से ऐसी दुर्घटनायें हो जाती है जिनका अन्त बहुत बुरा होता है। यदि इन छोटे २ कामों में थोड़ी सी सावधानी बर्ती जाय तो कितने ही कष्टों से बच सकते हैं।

किसी कपड़े के लेस को बुनते समय गृहिणी सलाईयों समेत कुर्सी पर रख देती है। यदि कोई बालक उस पर आकर बैठ जाय और उस के सूई चुभ जाय तो रक्त में विष चढ़ सकता है। भोजन बनाने के पीछे रात के समय यदि लकड़ियों को चूल्हे के सामने सूखने के लिए रख दो तो एक चिनगारी से आग लगने का डर है।

कई लड़के पैन्सल को खूब तेज़ करके बास्कट की जेब में सिरा ऊपर की ओर रख, डाल लेते हैं। कोट पर बुरश फेरते समय यदि नोक हाथ में चुभ जाय तो भी रक्त में जहर चढ़ सकता है।

इस प्रकार तनिक सी सावधानी से कितने ही दुष्परिणाम रोके जा सकते हैं। जैसा कि बूट के फीते बिना बाँधे कभी मत चलो क्योंकि यदि तुम्हारे दूसरे पैर के नीचे आकर फीता दब गया तो तुम चलने में अवश्य गिर पड़ोगे।

अपने घुटने का सहारा देकर कभी किसी लकड़ी को मत तोड़ो क्योंकि यदि वह लचक के कारण लौट कर घुटने पर आई तो बहुत चोट लगेगी।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

चाकू को पोंछते समय तेज़ धार को हाथ से दूर रखो। कीलों को तोड़ते समय आँखें बन्द कर लेनी चाहियें। कलम में से सख़्त निब को उँगलियों में पकड़ कर नहीं निकालना चाहिये परन्तु किसी लकड़ी से दबाकर खींच लो। रेल के प्लेट फारम पर रेल आने के समय एञ्जिन की ओर पीठ कर के कभी न खड़े हो इस से खुले हुये दर्वाज़ों और उतरते हुये मुसाफिरों से टकराने का भय रहता है। बाज़ार में सौदा खरीदते समय जल्दी २ एक ओर से दूसरी ओर की सामने वाली दूकानों पर न जाओ, परन्तु एक ओर का काम समाप्त कर फिर दूसरी ओर जाओ इत्यादि अनेक बातें हैं जो कि हमें बहुत से कष्टों से बचा सकती हैं।

भारत में स्त्री जाति की समस्यायें

[ले०—श्री लाला लाजपत राय]

भारतवर्ष में समाज सुधार आन्दोलन १८३०ई० में आरम्भ हुआ। विचारों में तो काफ़ी उन्नति होगई है, परन्तु वास्तविक सुधार बहुत कम हुआ है। आज भी हिन्दू समाज इसी विषय पर विचार कर रहा है कि लड़कियों की शादी किस आयु में करनी चाहिये (जब कि वेद, स्मृति और चरक, सुश्रुत पुकार पुकार कर कह रहे हैं कि विवाह १६ वर्ष की आयु से न्यून आयु में करना घोर पाप है– सम्पादिका–ज्योति)

हिन्दू सभा को उसके नाश की धमकी दी जाती है यदि वह इस विषय में हस्तक्षेप कर पुराने विचार के हिन्दुओं के आन्तरिक भावों को ठेस पहुंचावेगी परन्तु यह कोई नहीं सोचता कि क्या ऐसे व्यक्ति के भी जो कि बारह बरस से कम आयु की कन्या का विवाह करता है कोई ऐसे भाव हो सकते हैं जिनका कि आदर कर सके। हिन्दू महासभा विधवा विवाह को एक अस्पृश्य विषय समझती है जो व्यक्ति विधवा विवाह करते कराते अथवा समर्थन करते हैं उनको बिरादरी से निकाला जाता है और अन्य प्रकार की धमकी दी जाती हैं।

बिचारे नेकीराम जी के साथ इसके समर्थन के लिये क्या क्या दुर्व्यवहार नहीं किया गया। हिन्दू मसजिदों के सामने बाजा ले जाने के प्रश्न पर, अथवा गौओं को सजा कर बाजारों में से ले जाने पर शुद्धि और संगठन पर सिर फोड़ने को तैयार हो जाते हैं परन्तु अपने लड़के लड़कियों को जो कि उन के अपने रक्त और मांस के बने हैं भेड़ियों के आगे डालने को तैयार हैं। इनके लिए उनके हृदय में कोई दया नहीं। अगर कोई विधवा पुनर्विवाह कर ले या मानुषी प्रवृत्तियों के वश में होकर उसका पांव फिसल जाय तो उस पर नाना प्रकार के अत्याचार किये जाते हैं उसको घर से बाहर धकेल कर सदा के लिये दर्वाज़ा बन्द कर दिया जाता है। स्वामी श्रद्धानन्द जी की आत्मा इनके लिये रोती थी परन्तु हिन्दुओं का पत्थर दिल न पसीजा। मैंने मालवीय जी को इनकी अवस्था पर आंसू बहाते और बच्चों की तरह रोते देखा है परन्तु उनकी आत्मा में भी इतनी शक्ति नहीं कि खुल्लम खुल्ला इनके पक्ष का समर्थन करें। वह उनके भोजन, वस्त्र और रक्षा के लिये तो तैयार हैं लेकिन उनको वह वस्तु देने को तैयार नहीं जिस के बिना वे अपने जीवन का उद्देश्य पूर्ण करने में असमर्थ हैं। हिन्दू समाज में विधवाओं का इतनी बड़ी संख्या में होना समाज की शक्ति, मान-मर्य्यादा और रक्षा के लिए बड़ा हानिकारक है। इन्हीं के कारण से कितने हिन्दु मुसलिम फ़िसाद

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

और दंगे होगये हैं। एक छलांग में स्वराज प्राप्त करने के बहुत से हिमायती हैं जो कि इसी क्षण सत्याग्रह करने को तैयार हैं परन्तु बाल विधवाओं को भी स्वतन्त्रता और पुनर्विवाह का अधिकार देने के कट्टर विरोधी हैं। वे उस महान सचाई से अपनी आँखें बन्द कर लेते हैं जो किसी भी व्यक्ति को उस स्वतन्त्रता का कोई अधिकार नहीं जिसे वह दूसरों को देने को उद्यत न हो है।

स्त्री शिक्षा के विषय में तो हमारी लापरवाही असीम तक फैली हुई है। पञ्जाब में एक भी ऐसा महाविद्यालय या कालिज नहीं जिसका कि हम गर्व कर सकें। कन्या महाविद्यालय जालन्धर ने स्त्री-शिक्षा के प्रचार में बड़ा भारी कार्य्य किया है परन्तु मुझे विश्वास है कि इसके संचालकों का यह दावा कदापि नहीं हो सकता कि यह एक बहुत उत्तम हाईस्कूल या कालिज है। बाल विवाह की प्रथा भी उच्च शिक्षा के मार्ग में बड़ी भारी रुकावट है परन्तु इससे हम लापरवाही के दोष से बच नहीं सकते। फिर हम अधेड़ स्त्रियों की शिक्षा के विषय में क्या कर रहे हैं। इस क्षेत्र में कार्य्य के लिये तो बहुत धन की भी आवश्यकता नहीं। स्त्रियों का स्वास्थ्य किसी भी जाति की बड़ी भारी पूंजी है, क्योंकि स्वस्थ्य स्त्रियों से ही हृष्ट पुष्ट संतान हो सकती है। हमारी स्त्रियों का सारा जीवन बहुत ही अस्वस्थ गन्दे गृहों और स्थानों में बीतता है। उन में से बहुत सी तो पुरुषों की अपरिमित कामातुरता का शिकार बनती हैं उन्हें केवल संतान उत्पन्न करने की मशीन ही समझा जाता है। स्वामियों और महात्माओं के अनेक उपदेशों के होते हुवे भी हिन्दू ब्रह्मचर्य व्रत का पालन नहीं करते और न करेंगे, न वे कर ही सकते हैं। कोई भी जाति नहीं कर सकती, अतः यह आवश्यक है कि सन्तान निग्रह के लिये बल पूर्वक आन्दोलन किया जाय। सन्तान निग्रह शब्द से बहुत से लोगों को खीझ है। यह कहा जाता है कि संतान उत्पन्न करना स्त्री के जीवन का उद्देश्य है, हम इसे किस तरह रोक सकते हैं। बच्चों की संख्या का परिमित करना एक पाप है यह सर्वथा शास्त्र की आज्ञा के विरुद्ध है। लेकिन मैं पूछता हूं कि शास्त्रों की कहां आज्ञा है कि रुग्ण, असहाय और दीन स्त्रियों से सन्तान पैदा की जाय। कर्तव्य का अभिप्राय यह है कि उसकी पूर्ती के लिये सर्व साधन उपस्थित हों। शास्त्रों में हमारे अनेक कर्तव्य बतलाये गये हैं उन में से चुनने और छांटने का हमारा अधिकार नहीं है। हम स्त्रियों को शास्त्र विहित अधिकार तो नहीं देंगे और नहीं उनके प्रति अपने कर्तव्य का पालन करेंगे परन्तु अपनी काम-पूर्ती के लिये अवश्य शास्त्रों का सहारा लेंगे। कहा जाता है कि वह भी अपनी इच्छा से इस में सहयोग देती है परन्तु इस में उनकी इतनी ही इच्छा है जितनी कि हमारी इंग्लैण्ड के पराधीन रहने में। सच तो यह है कि इस क्षेत्र में आत्म-संयम एक बड़ी कठिन क्रिया है इस पर वाद विवाद करना तो सहल है परन्तु कार्य्य करना बड़ा कठिन है। ब्रह्मचर्य का आन्दोलन सहस्रों वर्षों से इस देश में होता आया है और अब भी बड़े बल पूर्वक हो रहा है। यह होना भी चाहिये क्योंकि इसकी परम आवश्यकता है। परन्तु इतना होने पर भी इसका फल कुछ बहुत नहीं दीखता है। कारण यह है कि अधिकांश पुरुष चाहे वे एशिया के रहने वाले हों चाहे यूरोप के, अब तक पशु हैं। विशेष कर ऐसे देशों में जहां स्त्रियां अब तक परतन्त्र हैं और अपने दैनिक भोजन के लिये भी पुरुषों पर निर्भर हैं। मैं संतान निग्रह के कृत्रिम

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

तरीकों के दुरुपयोग की सम्भावना से अनभिज्ञ नहीं हूं (दुराचार का प्रचार और स्त्रियों के लिये जिस उत्तम स्वास्थ्य को लाला जो परम आवश्यकता समझते हैं उसका नाश इन में से मुख्य दुष्परिणाम हैं। पाश्चात्य देश भी जो कि इस प्रणाली के निर्माता हैं इसी परिणाम पर पहुंचे हैं। सं.ज्यो.)परन्तु तो भी संतान निग्रह परम आवश्यक है और यदि हम और कुछ नहीं कर सकते तो इतना तो अवश्य करना चाहिये कि छोटे परिवारों के पक्ष में और स्त्री के केवल सतान उत्पत्ति की मशीन बनने से इन्कार करने के अधिकार की पुष्टि में तत्र आन्दोलन करें। स्वराज्य प्राप्ति पर इस देश की स्वास्थ्य सम्बन्धी उन्नति होगी या नहीं यह कहना कठिन है। बालकों की बहुत संख्या में मृत्यु, जो कि हमारे देश के लिए बड़े अपमान और घृणा की बात है, इस से दूर होगी या नहीं यह भी निश्चित नहीं है तथापि मुझे विश्वास है कि इन दोनों अंशों में हम अवश्य उन्नति करेंगे क्योंकि स्वराज्य पा लेने से हमारा बहुत सा धन जो कि अब मूर्खता पूर्ण अनावश्यक दिखलावट पर खर्च होता है वह अधिक उपयोगी कार्यों के लिये बच रहेगा। परन्तु जाति का स्वास्थ्य एक ऐसे महत्व का विषय है कि स्वास्थ्य सम्बन्धी नियमों के प्रचार के लिए हमें स्वराज की प्रतीक्षा नहीं करनी चाहिये। जाति के भविष्य के लिये स्त्रियों का स्वास्थ्य बड़ा महत्व पूर्ण विषय है। घर घर फिर कर भी हमें उन को स्वास्थ्य सम्बन्धी वास्तविक ज्ञान की शिक्षा देनी चाहिये। इस में हमें क्षण का भी विलम्ब नहीं करना चाहिये। यह कार्य्य इसी क्षण आरम्भ हो जाना चाहिये इस में शिक्षित स्त्रियों को ही पुरुषों की सहायता से अग्रगामी बनना होगा। यह एक इस प्रकार का कार्य्य है जिस में गवर्मेन्ट के सहयोग करने में कोई आपत्ति नहीं अपितु ऐसा करना योग्य है यदि इस को अपनी राजभक्ति दिखलाने का साधन न बनाया जाय। इस कार्य्य में सरकार की विरोधी अथवा पक्ष की किसी प्रकार की भी राजनीति का समावेश नहीं होना चाहिये।

(The People)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्त्री-जगत्

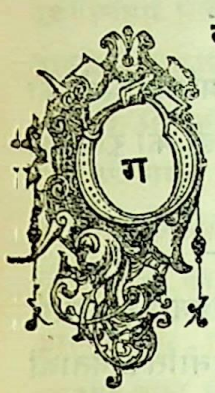

गत बड़े दिनों में मद्रास में जो नारी दिवस मनाया गया वह बड़ा सफल रहा। कांग्रेस को छोड़ कर इस उत्सव को जितना सफलता रही वह शायद और किसी को ही प्राप्त हुई हो। कोई ३००० महिलायें इस में सम्मिलित हुईं और अनेकों को स्थानाभाव के कारण लौटना पड़ा। इस की कृतकार्यता को देख कर कहा जा सकता है कि हमारी स्त्री जाति में अपूर्व संगठन की शक्ति विद्यमान है; उन के हृदय में शिक्षा, शक्ति और परिवर्तन के लिये एक बड़ी इच्छा है। और शिक्षित महिलाओं के हृदय में क्रियात्मक आदर्श के भाव प्रबल रूप से उपस्थित हैं। इस के साथ २ हमें अनेक और शिक्षायें भी मिलती हैं:—(१) हमारी स्त्री जाति की अशिक्षित दशा की असीम वेदना का दृश्य कितना करुणा जनक है (२) किसी भी सार्वदेशीय सभा में भाषा विभिन्नता बड़ी भारी रुकावट है (३) भारत सरकार उन महिलाओं को जो इस की नौकरी में है सुधार सम्बन्धी सभाओं में सम्मिलित होने का अवकाश नहीं देती और इस का कारण उन सरकारी पदों पर किसी महिला का नियुक्त न होना है (४) स्त्रियों की आवाज़ इतनी बलवती नहीं होती कि वह सुगमता से ऐसी महान सभाओं में सुनी जा सके (५) श्रीमती सरोजनी नायडू तथा डाक्टर बेसेन्ट इत्यादि स्त्रियों पर किसी प्रकार से निर्भर नहीं रह सकते क्योंकि वह किसी भी समय और कामों के लिये बुलाई जा सकती हैं।

———:*:———

भारतीय सुधार समिति की स्वागतकारिणि सभा की नेत्री श्रीमती डाक्टर मथुलक्ष्मी अमल थीं। इन की वक्तृता बड़े महत्व की थ। श्रीमती सरोजनी नायडू ने परदे के विरुद्ध व्याख्यान दिया जो कि बड़ा प्रभावशाली था। उन्होंने सर्व संसार की स्त्रियों का ध्यान इस की ओर आकर्षित किया कि जितना भी ऊपर का परदा उठाया जायगा उतना ही उन्हें आत्म संयम और लज्जा का अभ्यन्तरीय परदा ग्रहण करना होगा और उतना ही पुरुषों को पवित्र वीरत्व प्रदर्शन की आवश्यता होगी और उन्हें भी लज्जा की और शील की शिक्षा ग्रहण कर स्त्रियों के मुखों को ताकने से बचना होगा। श्रीमती चन्द्रशेखर आयर ने तामिल में बालविवाह के विरोध में वक्तृता दी थी। श्रीमती रुक्मणी लक्ष्मीपति तथा श्रीमती कमला देवी चट्टोपाध्याय की अध्यक्षता में ६० स्त्री स्वयं सेवकों ने भारतीय राष्ट्र महासभा के अधिवेशन पर बड़ा उत्तम कार्य किया। इतने बड़े मेले में ६० अबलाओं का रक्षा काभार लेना कोई कम उत्तरदायित्व का काम नहीं था। यह हर्ष की बात है कि यह हमारी बहिनें बिना किसी प्रकार की रोक टोक के, बिना किसी प्रकार के भय और आतंक के स्वतन्त्रता पूर्वक इधर उधर फिरती और अपना कार्य करती रही हैं। इस से पता चलता है कि पुरुषों से स्त्री जाति को भय का भूत इतना भयानक नहीं जितना कि समझा जाता है।

———:*:———

श्रीमती मालती पटवर्धन नारी दिवस की मन्त्रीणी थी। आप को मद्रास का आनरेरी मैजिस्ट्रेट नियुक्त किया गया है। चार वर्ष हुये

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

आप रोम में होने वाली अन्तर्जातीय स्त्री मताधिकार कान्फरेंस में भारत की ओर से प्रतिनिधि के रूप में सम्मिलित हुई थीं। आप कई प्रकार के खेलों में दक्ष हैं, मोटर कार बड़ी अच्छी तरह से चला सकती है, टैनिस बहुत उत्तम कोटि का खेलती है, कुमारी संघ में आन्दोलन में बड़ा उत्साह रखती हैं, इन की भाषण शक्ति बड़ी मनोहर है और आप स्त्रियों के अधिकारों की बड़ी पोषक है

———:*:———

बम्बई में एक बाल सहायक सभा है जिसका काम दुखित, पीड़ित, रोगी, असहाय और अनाथ बालक बालिकाओं की सहायता देना और उनका लालन पालन करना है। इस सभा के आधीन कुमारी डेविस ने बड़ा काम किया है जिस के उपलक्ष में सरकार ने उन्हें 'कैसरेहिन्द' पदक प्रदान किया है।

———:*:———

लाला लाजपतराय जी ने मिस मेयो की 'मदर-इन्डिया' के जवाब में 'अनहैपी इन्डिया' (दुखी भारतवर्ष) नामक एक पुस्तक लिखी है, जो छप रही है और शीघ्र ही प्रकाशित होगी। भारत, अमेरिका और ब्रिटेन में एक ही समय प्रकाशित होगी।

———:*:———

श्रीमती वासन्ती देवी (स्व० देशबन्धु दास की पत्नी) ने देशवासियों से विदेशी चीज़ों के बहिष्कार के लिए ज़ोरदार आन्दोलन करने की अपील की है।

———:*:———

बड़ौदा राज्य में "विवाह सम्बन्धी कानून" में यह संशोधन किया जाने वाला है कि विवाह कराने वाले पुरोहित वेदों के मन्त्रों के साथ उन का अर्थ भी ऐसी भाषा में समझाया करें कि वर और वधू उन्हें अच्छा तरह समझ जायें।

———:०:———

महिला कान्फ्रेन्स के २२ स्त्री प्रतिनिधियों का एक डेपूटेशन ११ फरवरी को मन्डी की रानी की अध्यक्षता में वाइसराय से मिला।

———:*:———

महिला सम्मेलन का एक डेपूटेशन ११ फरवरी को डा० अन्सारी के मकान पर राजनीतिक नेताओं से मिला। उस ने नेताओं से अनुरोध किया कि एसेम्बली में १६ वर्ष से कम उम्र के लड़के लड़कियों का विवाह रोकने और सहवास सम्मति की उम्र १६ साल कराने के लिये जो बिल पेश किया जाय, वे उन का समर्थन करें। खबर है कि नेताओं ने आमतौर से इस पर रज़ामन्दी प्रकट की है।

———:*:———

शिकागो की स्त्रियों ने अमरीका के राष्ट्रपति मि० कूलिज को उनकी किफायतशारी के प्रेम के लिए टाट के बने हुए पायजामे और वास्केट भेंट की है और यह आशा प्रकट की है कि वे सदा इनको ही धारण करेंगे।

———:*:———

गुरदासपुर के निकट एक नगर में एक कन्या विवाह योग्य थी। उस की मंगनी हो चुकी थी। परन्तु इस बीच उस के माता पिता की धन सम्बन्धी दिशा बिगड़ गई अतः उन्होंने यह मंगनी हटाकर किसी अन्य पुरुष के साथ इस का विवाह करने का निश्चय किया। कन्या को जब पता लगा तो उसने अपने माता पिता को बहुत समझाया और कहा कि मैं जिस की हो चुकी हूँ उसी के साथ मेरा विवाह करें। परन्तु उस की बात न

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मानी गई और विवाह की तिथि निश्चित हो गई। जब कन्या ने देखा की उस का वश नहीं चलता तो उसने अपने गले में रस्सी डाल कर आत्महत्या करली और निम्न पत्र लिख कर छोड़ गई।

"मैं ऐसी जगह जा रही हूं जहाँ विवाह शादी के झमेले नहीं, माता, मेरी प्यारी माता। दुखी पिता को विवाह के खर्चों से बचाने के लिये तेरी पुत्री अकेली परलोक यात्रा को जा रही है।

———:*:———

गत मास कोई ३०० के लग भग अमरीकन यात्री भारत में आये। उन में "औटावा सिटिज़न" नामक पत्र के सम्पादक की बहिन भी थी जिन्होंने समाचार पत्र के प्रतिनिधि से कहा कि जहाज़ पर हमने मिस मेयो की "मदर इण्डिया को पढ़ा और इस पर बड़ी ऐसी उड़ती रही" ऐसी पुस्तक लिखना स्पष्ट मूर्खता है। हिन्दुस्तान जैसे विशाल देश में बुराईयों का होना आवश्यक है, परन्तु इन्हें जातीय दोष कहना अति भूल है। न्यूयार्क के हस्पताल में इस से भी बुरे दृश्य दिखलाई देते हैं, परन्तु इस के लिये सारी अमरीकन जाति की निन्दा नहीं की जा सकी। मैं अनुभव करती हूं कि पुस्तक से अधिक हानि नहीं हो सकती। ऐसे मनुष्यों की संख्या बहुत कम हैं जो इन बातों को सत्य मानते हैं। दूसरे देशों के बुद्धिमान मनुष्य भारत और उसकी प्राचीन सभ्यता को भली प्रकार जानते हैं और सौभाग्य से ऐसे व्यक्तियों की संख्या बहुत अधिक है।

———:*:———

पञ्जाब के लाट साहब ने हज़रु में व्याख्यान देते हुए कहा कि सरकार ने अब सम्पूर्ण रूप से निश्चय कर लिया है कि पञ्जाब के प्रत्येक ज़िले में एक स्त्री हस्पताल और प्रत्येक तहसील में स्त्री दवाखाना खोला जावेगा।

———:*:———

संयुक्त प्रान्त के गवर्नर ने श्रीमती महमद-शाह को ईसाईयों के प्रतिनिधि के रूप में कौन्सल की सदस्या नियत किया है। आप संयुक्त प्रान्त में पहली और भारत में दूसरी महिला है जिन्हें यह उच्च पद प्राप्त हुआ है।

———:*:———

आसाम में नौगन्ग नगर के सिविल सर्जन की पुत्री कुमारी लिंगर्डा ब्रह्मपुत्र नदी के किनारे खडी थी कि पाँव फिसलने के कारण नदी में गिर पड़ी उनकी चाची ने उन्हें बचाने का यत्न किया। परन्तु वह अपने को संभाल न सकी और पानी में गिर गई। एक सज्जन महाशय सबी ने उन्हें बचाने का यत्न किया परन्तु वह भी डूब गये। डाक्टर का बहरा डूबते २ बचा तीनों लाशें मिल गई हैं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हमारी मंजूषा

१. सोहागरात या बहूरानी को सीख—लेखक, पण्डित कृष्णकान्त मालवीय ; अभ्युदय-प्रेस, प्रयाग से प्राप्त। मूल्य सादी का ३।), सजिल्द का ३॥) ।

टाईटिल पर एक तिरंगा चित्र है, अन्दर १५ के लगभग हाफ़टोन स्वास्थ्य सम्बन्धी चित्र हैं। छपाई-सफ़ाई उत्तम है और एन्टिक पेपर लगाया गया है। इस पुस्तक की आलोचना करना मानो सूर्य्य को दीपक दिखाना है, फिर भी सत्कार की इच्छा से मधुपर्कवत् दो-चार शब्द लिखना आवश्यक है। नवविवाहिता वधुओं तथा इस सूत्र में शीघ्र बँधने योग्य कन्याओं के लिये यह पारिजात कुसुम है। इसका विषय अत्यन्त गहन है। जिस महत्त्वपूर्ण विषय की शिक्षा देना अब तक अनुचित और लज्जास्पद समझा जाता था उसी परम आवश्यक विषय का निचोड़ इस पुस्तक में दिया गया है। आरम्भ में ३० पृष्ठ की भूमिका में योग्य लेखक ने इस विषय की महत्ता, इस की शिक्षा की आवश्यकता और उस के साधनों पर अपने विचार प्रकट किये हैं। शेष पुस्तक पत्रों के रूप में लिखी गई है, जो कि बड़ी बहिन ने अपनी नवविवाहिता छोटी बहिन को उपदेश के रूप में लिखे हैं, जिनमें स्त्री-पुरुषों से सम्बन्ध रखने वाले प्रत्येक गूढ़ विषय की विवेचना की गई है। प्रथम मिलन से लेकर, पारस्परिक प्रेम जो कि गार्हस्थ्य-जीवन की कुञ्जी है, स्त्री-पुरुषों के अधिकार, वस्त्राभूषण, खान-पान व्यवहार प्रभृति तथा रजस्वला होने के समय से लेकर गर्भाधान, सन्तानोत्पत्ति, लालन-पालन, सन्ताननिग्रह, सतीत्व-रक्षा, स्वास्थ्य और व्यायाम-शिक्षा तथा अन्यान्य उचित विषयों पर बड़ी सरल भाषा में बड़े उत्तम विचार प्रकट किये गये हैं। जो लड़कियाँ इन पर अनुकरण कर चलेंगी उन का भावी जीवन अवश्य सुखमय बन सकता है।

हर्ष की बात है कि प्रस्तुत पुस्तक का सार महर्षि स्वामी दयानन्द द्वारा प्रतिपादित शास्त्रोक्त मर्यादाओं पर ही निर्धारित है। हमें यह जान कर बड़ी प्रसन्नता हुई है कि माननीय पण्डित जी जो कि सनातन-धर्म के स्तम्भ हैं, युवावस्था प्राप्त होने पर ही विवाह के सिद्धान्त तथा "अष्टवर्षा" की "सनातनी" और भारतवर्ष को मृत्यु की ओर खींचने वाली प्रथा के कुचक्र से बाहर निकल कर वैदिक आदर्श को अपना लक्ष्य मानने लगे हैं।

एक समय था जब कि गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन इत्यादि संस्कारों को प्राचीन शास्त्रोक्त रीत्यनुसार करने पर बल देने के लिये आर्यसमाजियों की हँसी उड़ाई जाती थी; हर्ष का विषय है कि आज इस विषय की आवश्यकता को भली प्रकार अनुभव किया जाने लग पड़ा है। (पृष्ठ १५ से ४६)

पुस्तक अनेकानेक उपयोगी उपदेशों से भरी हुई है, अतः विशेष स्थलों का उल्लेख करना बड़ा कठिन है, परन्तु तो भी हम यह कहे बिना नहीं रह सकते कि स्त्रियों को उस में लिखे हुये उपदेश हर समय अपने हृदय में धारण कर लेने चाहिये।

कुछेक बातें ऐसी हैं जिन पर कि हम चाहते हैं कि लेखक महोदय पुस्तक के दूसरे संस्करण में विशेष ध्यान देंगे—

(१) क्या ही उत्तम होगा यदि वे अपने पढ़ाई में लगे हुए लड़कों अथवा २५ वर्ष से न्यून

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

आयु वाले अर्ध विकसित और अपरिपक्व बालकों के—जो कि अपने आप अपने पैरों पर खड़े होने में अशक्त हैं और सर्वथा माता-पिता के आधीन हैं—विवाह के विरुद्ध भी घोर आन्दोलन करें। हमें शोक है कि लेखक ने इस ओर उतना ध्यान नहीं दिया जितना कि उन्होंने लड़कियों की आयु की ओर दिया है। क्या ही अच्छा होता यदि किसी पत्र द्वारा बड़े ज़ोरदार शब्दों में यह भी बतलाया जाता कि स्कूलों, कॉलिजों में पढ़ते हुए अथवा अपनी जीविका कमाने में असमर्थ अर्ध युवक जिस समय कई बच्चों के पिता हो जाते हैं तब किस प्रकार उनके जीवन का आनन्द फीका पड़ जाता है। "पत्नी अपनी किताबें पढ़े और उस को पढ़ने का उपदेश दे।" पुस्तक में तो किंचित् सम्भव जँचता हो परन्तु क्रियात्मक जीवन में सर्वसाधारण के लिये यह कितना कठिन है यह थोड़ा-सा ही विचार करने से पता लग सकता है। न तो आजकल के पश्चिमी शिक्षा-दीक्षा के रंग में रंगे हुवे फ़ैशनेबिल युवक ही सीधी-साधी युवतियों को पसन्द करते हैं और न ही लड़कियाँ विदेशी सजधज के रंगों से नाता तोड़ती हैं। अतः उन में इतना बल होने की सम्भावना कहाँ कि विवाह होने के पश्चात् अपने तईं शीघ्र माता बनने से बचा सकें। यह बड़ा आवश्यक विषय है कि जहाँ लड़कियों की विवाहावस्था समय के प्रभाव से, वरों के न मिलने के कारण स्वयं ही बढ़ गई है, वहाँ युवकों की भी विवाह योग्य आयु तदनुकूल न्यून-से-न्यून २५ वर्ष तक बढ़ जानी चाहिये। यह एक प्राणिशास्त्र का नियम भी है कि जितनी किसी प्राणी की समस्त आयु होती है उस के एक चौथाई भाग में उसका शरीर परिपक्व होता है। मनुष्य की आयु सौ वर्ष मानी जाती है इस लिये इस सिद्धान्त के अनुसार भी २२ वर्ष से कम आयु में तो लड़कों का विवाह कभी न होना चाहिये।

(२) रजस्वला सम्बन्धी विषय में भी हमें पुरानी छूतछात मानने वाली प्रणाली ही ठीक मालूम पड़ती है, यदि उस में से घृणा के अंश को निकाल कर और अन्य उचित परिवर्तन कर दिये जांय तो लाभ ही अधिक हो। लड़कियों को इन दिनों अवश्य अनध्याय करना चाहिये, स्नान इत्यादि तथा व्यायाम से बचना चाहिये और आराम से बैठना चाहिये। हम अपने अनुभव के आधार पर कह सकते हैं कि अपने शिक्षा काल में हमें जिन अमेरिकन, इंगलिश या पाश्चात्य सभ्यता की अनुयायिनी योरुपियन, क्रिश्चियन, हिन्दू और मुसलमान रहा है उन में से अधिकांश रज सम्बन्धी रोगों से पीड़ित रहती थीं। इधर पंजाब में भी छूत का अभाव होने से प्रायः वे नहा धो लेती हैं और प्रत्येक कार्य्य में भाग लेती हैं, अतः उनमें से भी अधिकांश इस प्रकार के रोगों से ग्रस्त रहती हैं। पहिले यह रोग इतना फैला हुआ नहीं था जितना कि अब है।

(३) आजकल कृत्रिम उपायों द्वारा संतान-निग्रह पर बहुत बल दिया जाता है, जो कि पश्चिमी सभ्यता की ही एक झलक है, लेखक ने भी इस प्रथा का कुछ समर्थन सा ही किया है, यद्यपि उन्होंने कई जगह इन कतिपय कृत्रिम उपायों को ठीक भी नहीं बतलाया है, परन्तु यह भी स्पष्ट नहीं बतलाया कि ठीक क्या है। इन कृत्रिम उपायों द्वारा स्त्रियों की स्वास्थ्यरक्षा हो जाय इस में तो बड़ा संशय है, ऐसा ही युरुप और अमरीका के डाक्टरों का मत है। परन्तु अविवाहित स्त्री-पुरुषों के पारस्परिक व्यवहार में सदाचारशीलता के टूट जाने के कारण सामाजिक दुराचार का फैलना

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बड़ा सम्भव है, अतः हमें भारत के ब्रह्मचर्य के प्राचीन ऊँचे आदर्श को गिराना नहीं चाहिये, बल्कि उसी पर चलने का आदेश देना चाहिये। उपदेश द्वारा आदर्श को नीचा करना सदैव हानिकारक हुआ करता है।

(४) लेखक ने भूमिका में तथा पुस्तक के अन्तिम भाग में लड़के और लड़कियों के इकट्ठा शिक्षा प्राप्त करने की प्रथा को देश के लिए आवश्यक बताया है। यह एक ऐसा विषय है कि जिस पर क्या योरुप और क्या भारत सभी स्थानों के विद्वानों का संघर्ष रहता है। अमरीका की मिश्रित-पाठशालाओं में पढ़ने वाली अविवाहित लड़कियों के आचार में शिथिलता के अंक इतने भयानक हैं कि उन से हम आंखें नहीं बन्द कर सकते और इस आचार शिथिलता का मुख्य कारण वहां के विद्वानों की दृष्टि में ये मिश्रित-पाठशालायें ही हैं; अतः अच्छा होता यदि लेखक ऐसे विवादास्पद विषय को एक साधारण जनता के लिए लिखी हुई पुस्तक में न लाते। इस विषय में एक और बात भी विचारणीय है। कन्याओं का शारीरिक और मानसिक विकास लड़कों की अपेक्षा से भिन्न २ प्रकार की शिक्षा चाहता है। उन की पाठविधि में भी भिन्नता और अन्तर का होना लेखक स्वयं मानते हैं; फिर केवल इसी विचार से मिश्रित पाठशालाओं में होने वाले श्रम और समय के अपव्यय को किस प्रकार रोक सकेंगे। लड़कियां प्राकृतिक नियम के अनुसार १६ वर्ष की आयु में माता बनने के योग्य हो जाती हैं परन्तु लड़कों को यह योग्यता उन के २५ वर्ष के शारीरिक और मानसिक विकास के पीछे ही आती है अतः लड़कियों के पास केवल ९ या १० वर्ष ही होते हैं जब कि लड़कों के पास अठारह या उन्नीस वर्ष होते हैं। अब यह सोचने की बात है कि १९ वर्ष की शिक्षा १० वर्ष में कैसे दी जा सकती है; यदि पाठविधि में भेद किया जाय तब मिश्रित शिक्षणालयों की क्या ज़रूरत।

पुस्तक की भाषा बड़ी सरल है थोड़ा सा भी पढ़ी स्त्रियों के समझ में आ जायगी परन्तु कहीं २ "मर्दुए" शब्द बहुत खटकते हैं जिन से घृणा का ही आभास होता है; ऐसी सुन्दर पुस्तक में यह न होना चाहिये।

२. मानसी— (श्री पं० रामनरेश त्रिपाठीजी की कुछ कविताओं का संग्रह) संग्रहकर्ता श्री गोपाल नेवटिया। प्रकाशक हिन्दी-मन्दिर, प्रयाग पृष्ठ ८२ मूल्य ॥)।

इस संग्रह में हिन्दी भाषा के प्रसिद्ध कवि श्रीयुत रामनरेश जी त्रिपाठी की चुनी हुई ५० कवितायें हैं। त्रिपाठीजी का हिन्दी भाषा के लेखकों और कवियों में ऊँचा स्थान है। आप की कविताओं में बालपन की कोमलता, प्रेमी की कल्पना और भक्त की आराधना शक्ति है। कविताओं में सरलता है, रस हैं, भाव हैं, और इन से बढ़कर सहृदयता। अतः इन के पाठ से एक अनुपम आनन्द और शान्ति प्राप्त होती है। कुछ कवितायें तो ऐसी हैं कि जिन की तीक्ष्ण मधुरता और कठोरता मन को बांधती है, मसलती हैं और मोह लेती है। 'प्रियतम', 'उपचार', 'आकाँक्षा', 'रहस्य', 'ज्ञान का दण्ड', इत्यादि अनेक कवितायें ऐसी रचनायें हैं जो हमारी भाषा का गौरव हैं। हिन्दी मंदिर ने यह संग्रह प्रकाशित कर हिन्दीभाषा भाषियों पर बड़ा उपकार किया है। पुस्तक प्रत्येक घर में होनी चाहिये क्योंकि इस का पाठ दुःख में सुख, निराशा में आशा, अन्धकार में प्रकाश और निर्बलता में बल है। पुस्तक की आकृति मनोहर, छपाई सुन्दर और कागज़ बढ़िया है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

३. शुद्धि-चन्द्रोदय—लेखक व प्रकाशक श्री कुंवर चाँदकरण शारदा बी. ए. एल. एल. बी. अजमेर। पृष्ठ संख्या लगभग ३००, मूल्य १॥), पुस्तक सचित्र है।

श्री चाँदकरण शारदा जी हमारे राजनैतिक और समाज सुधारक कार्यकर्ताओं में एक बड़ा आदरणीय स्थान रखते हैं। आप में अपने विचारों को कार्य में लाने की शक्ति है। राजनैतिक क्षेत्र में कई वर्ष तक निरन्तर और साहस पूर्ण कार्य करने के फलस्वरूप आपको जेल में जाना पड़ा। वहां और उस से बाहर निकल कर आपके विचारों ने पल्टा खाया और आप को विश्वास हो गया कि हिन्दुजाति की वर्तमान असंगठित और निर्बल अवस्था में भारत के लिये स्वराज्य प्राप्त करना सर्वथा असम्भव है। तब से आपने अपना सारा बल इस ओर लगा दिया है। प्रस्तुत पुस्तक आप के चिरकाल के पठन पाठन और मनन का फल है। इस में शुद्धि के विषय पर प्रत्येक दृष्टि कोण से विचार किया गया है। शुद्धि सनातन है और भारत में प्राचीन काल से लेकर, मुसलमानी राज्य काल, राजपूतों और मरहटों के समय में और आज तक होती आई है, इस विषय को आपने अनेक ऐतिहासिक प्रमाणों द्वारा सिद्ध किया है। पुस्तक का यह भाग बड़ा ही रोचक और शिक्षाप्रद है। इस के पश्चात् आपने शुद्धि क्यों करनी चाहिये, वर्तमान युग में शुद्धि के मार्ग में क्या रुकावटें हैं, शुद्धि और काँग्रेस, हिन्दु-मुसलिम एकता और शुद्धि सिक्ख इतिहास और शुद्धि, अंग्रेज़ी सरकार और शुद्धि इत्यादि जानने योग्य विषयों पर विद्वत्तापूर्ण प्रकाश डाला है और बड़ी गंभीरता से विचार किया है। अन्त में आजकल भिन्न २ प्रान्तों में शुद्धि का जो कार्य हो रहा है उस का व्योरा दिया है। पुस्तक उपन्यास की भाँति रोचक है और इतिहास की भाँति आनन्द-दायक है। एक वार आरम्भ कर समाप्त किये बिना मन नहीं मानता। प्रत्येक हिन्दु को और विशेषकर शुद्धि-क्षेत्र में कार्य करने वालों के लिये इस उपयोगी पुस्तक का पाठ और इसे अपने पास रखना अत्यन्त आवश्यक है।

४. क्षार-निर्म्माण-विज्ञान— लेखक स्वामी हरिशरणानन्द वैद्य, प्रकाशक दी पञ्जाब-फार्मेसी, अमृतसर, पृष्ठ संख्या ७०, मूल्य ॥)

क्षार क्या वस्तु हैं, ये किस प्रकार बनाये जाते हैं, इन का क्या उपयोग है और क्या इतिहास है, यह इस पुस्तक में बतलाया गया है।

पुस्तक वैद्यों के लिये लिखी गई है। यह उन के लिये उपयोगी होगी या नहीं वे स्वयं ही बतला सकते हैं। पुस्तक का विषय रासायनिक है और लिखने का ढंग भी आजकल के रसायनशास्त्र की पद्धति के अनुसार है। परन्तु हमारे वैद्यों को इस ढंग से शिक्षा नहीं दी जाती अतः हमें सन्देह है कि रसायन-शास्त्र के साधारण ज्ञान बिना वह इसे समझ भी सकेंगे। लिखने का ढंग भी बहुत स्पष्ट और सरल नहीं। उदाहरण के लिये पृष्ठ २३ में क्षार बनाने की विद्युत-विश्लेषण-विधि का वर्णन दिया गया है जो बड़ा भ्रम मूलक है। SHO_3 और PHO_3 से न जाने क्या अभिप्राय है। आधुनिक रसायन में उन संकेतों को कोई वस्तु नहीं। पृष्ठ २४ पर नौसादर को क्षार कहा गया है परन्तु यह एक लवण है। पृष्ठ २६ पर पोटासीय बाईकार्ब और कार्बोनेट आफ पोटाशियम को एक ही लिखा है जो कि अशुद्ध है। कई रासायनिक द्रव्यों के हिन्दी नाम घड़े गये हैं जो कि या तो अब तक प्रचलित नामों से भिन्न हैं या

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अंग्रेज़ी शब्दों द्वारा भावों के पर्यायवाचि नहीं, यथा Calcium के लिये चूर्णजम, Sulphuric acid के लिये नमक का तेज़ाब (गन्धक का तेजाब होना चाहिये) Platinum के लिये पररौप्यम् इत्यादि। छापे की भी कई अशुद्धियाँ है जो कि विज्ञान विषयक पुस्तक में बड़ी हानिकारक हैं। पुस्तक की छपाई साधारण और मूल्य अधिक है।

(र० नारायण)

५. व्याकरण-प्रभाकर—लेखिका तथा प्रकाशिका श्रीमती शकुन्तला देवी प्रभाकर; भूपेन्द्र नगर, पटियाला; पृष्ठ संख्या १०२; मूल्य १)।

इस पुस्तक में हिन्दी व्याकरण के सब अंगों का सरल भाषा में ज्ञान प्राप्त कराने की चेष्टा की गई है। व्याकरण के अन्तर्गत विषयों के, परिभाषाओं, उनका स्वरूप उदाहरणों की सहायता से बड़ी सरल रीति से बतलाया गया है। पुस्तक के उत्तरार्ध में प्रस्ताव, पत्र तथा कथा इत्यादि लिखने की रीति समझाई गई है। पुस्तक पाठशालाओं और स्कूलों में पढ़ाने योग्य है। भूमिका की भाषा में कृत्रिमता दिखलाई देती है जो कि इस व्याकरण जैसे गूढ़ विषय के अनुकूल नहीं। पुस्तक का मूल्य अधिक है।

६. शिशु-कथा-मञ्जरी— लेखिका श्रीमती शकुन्तला देवी गुप्ता हिन्दी-प्रभाकर, भूपेन्द्रनगर, पटियाला। पृष्ठ ४१ मूल्य ॥)

इस छोटी सी पुस्तक में २० बालोपयोगी कहानियों का संग्रह है। भाषा सरल है और कहानियां ऐसी हैं कि जिन से बालकों का अच्छा दिल बहलाव हो सके और साथ ही शिक्षा भी मिल सके। पुस्तक का मूल्य बहुत अधिक है।

७. कृषि-रत्नावली—संकलन कर्ता, रायबहादुर मुकन्दीलाल गुप्त, प्रकाशक-ज्ञानमण्डल, काशी, पृष्ठ ५४ मूल्य ।=)।

इस पुस्तक में घाघ इत्यादि अनुभवियों की कृषि विद्या सम्बन्धी उक्तियों का संग्रह किया गया है। इन उक्तियों द्वारा कृषि विद्या के अनेक श्रेष्ठ और अनुभव सिद्ध सिद्धान्तों को सुव्रत सरल कविता की भाषा में पिरोया गया है। इस से इन के स्मरण में बड़ी सुविधा रहती है और सैंकड़ों वर्षों का अनुभव समय आने पर तुरन्त याद आ जाता है। इन उक्तियों के पाठ से पता चलता है कि कितने ही ऐसे सिद्धान्त हैं जो कि हमारे पूर्वजों को पता थे जो कि वैज्ञानिक कृषिविद्या के विशारद अब पता लगा रहे हैं। प्रायः भारत की प्रत्येक भाषा में इस प्रकार की कृषि—उक्तियाँ विद्यमान है और यह हमारे कृषकों की अतुल धरोहर है। लेखक ने इन उक्तियों को पुस्तक के रूप में छाप कर बड़ा अच्छा काम किया है।

८. सुधा— वर्ष १ संख्या ७, सम्पादक-श्री दुलारेलाल भार्गव और श्री रूपनारायण पांडेय, पृष्ठ संख्या १२०, वार्षिक मूल्य ६॥) ।

प्रस्तुत संख्या से सुधा के प्रथम वर्ष का दूसरा खंड आरम्भ होता है। गत ६ मास में 'सुधा' ने हिन्दी मासिक पत्रों में अपने लिए एक विशेष स्थान बना लिया है। इस की लिखाई छपाई, रूप रंग, लेख, कविता, चित्र और विज्ञापनों को देख कर यह भ्रम हो जाता है कि क्या यह अभी ६ मास की बालिका है। यह सब सम्पादक द्वय के अनुभव, कर्मशीलता, विद्वत्ता और योग्यता का ही फल इतने थोड़े से समय में सुधा की इतनी उन्नति है। इस संख्या में कितने ही उत्तम उत्तम लेख और कवितायें हैं, लेखों में से 'क्या यूरोप उन्नति

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कर रहा है', 'हिन्दी साहित्य की वर्तमान दशा,' 'माँ की आत्मा' विशेष उल्लेखनीय हैं। 'परलोक', 'सन १९२७ का रूस' शीर्षक लेख जानने योग्य सामग्री से भरपूर हैं। कविताओं में रत्नाकर जी की "गणेश-गुणगान" और श्रीधर पाठक जी की 'एक मित्र को' बड़े मार्के की हैं। विशेष स्तंभों में 'विज्ञान वैचित्र्य' 'ललित कला' 'समाज सुधार' इत्यादि स्तम्भों की सृष्टि बड़ी उत्तम हुई हैं।

इस अङ्क से सुधा का प्रमुख पृष्ठ बदल दिया गया है। प्रस्तुत टाइटल पेज चित्रकला और भावादर्शन दोनों ही दृष्टि कोण से बहुत बढ़िया हुआ है। इस की स्वाभाविक कोमलता और पवित्रता मनमोहक है। शोक कि हम 'प्रभात' चित्र के लिए सुधा को बधाई नहीं दे सकते। स्त्री जाति के नग्न रूप राशि की छवि एक गोपनीय पवित्रता है जिस को कि पाप की कुत्सित आँखों से बचाना ही उचित है। कला की दृष्टि से यह चित्र चाहे कितना ही उत्तम हो परन्तु एक लज्जाशीला कुलवधू के शयनागार में जाकर उस के गोपनीय अंगों की सुन्दरता को छिप कर देखना आचार की दृष्टि से कभी स्तुत्य नहीं हो सकता है। चित्रकार, प्रकाशक तथा दर्शक सब के लिये ही संसार की सब से सुन्दर वस्तु-स्त्री जाति-की सुन्दरता-आदरणीय है। आशा है सम्पादक महोदय इन भावों को ठीक २ समझ कर नम्र निवेदन पर ध्यान देंगे।

९. बाल सखा— विशेषाङ्क जनवरी, १९२८, प्रकाशक, इन्डियन प्रेस, प्रयाग, पृष्ठ संख्या ६४। वार्षिक मूल्य २॥)।

यह बालोपयोगी पत्रिका गत ११ मास से प्रकाशित हो रही है। आज कल तो कितने ही पत्र बालकों के लिये निकल रहे हैं, परन्तु साहित्य के इस आवश्यकीय अङ्ग की पूर्ति की ओर पहला पग 'बाल सखा' ने ही उठाया था। यह बाल-सखा सञ्चालकों के लिये कुछ कम गर्व की बात नहीं। प्रस्तुत अङ्क चार रंगों में सुन्दर टाईप में छपा है, ३ रंगीन और ३ दर्जन के लगभग सादे चित्रों से सुशोभित है। तीन दर्जन के लगभग उत्तम २ सरल, शिक्षादायक, और मनोरञ्जक लेख और कवितायें हैं जिन में कि देश प्रेम, विनोद, सदाचार, इतिहास, शिक्षा, विज्ञान इत्यादि सभी विषयों पर बालकों के समझने योग्य सरल भाषा में चर्चा है। यह विशेषांक बड़ा ही सुन्दर निकला है और इस के लिये सञ्चालक बधाई के पात्र हैं।

विचार-प्रवाह

१. श्री शारदा जी का बाल-विवाह निषेध बिल

गतवर्ष बड़ी व्यवस्थापक सभा के शिमला अधिवेशन में श्रीयुत हरविलास शारदा ने जो हिन्दू-विवाह बिल उपस्थित किया था वह इस दिल्ली अधिवेशन में एक उपसमिति द्वारा संशोधित रूप में प्रस्तुत किया जाकर पुनः जनता की राय मालूम करने के लिये आगामी शिमला अधिवेशन तक स्थगित कर दिया गया है। उप समिति ने शारदाजी के मूल प्रस्ताव में प्रस्तावित बालिका तथा बालकों की आयु को बढ़ाकर क्रमशः १४ और १८ वर्ष कर दिया है। और इसे हिन्दू जाति तक ही सीमित न रख कर सम्पूर्ण भारतीयों के लिए बना दिया है। इसी कारणअपने को हिन्दू-धर्म का ठेकेदार समझने वाले कतिपय महानुभावों ने उपसमिति द्वारा संशोधित इस

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्रस्ताव का विरोध करना अपना कर्तव्य समझा। स्वराज्य-दल के प्रमुख सदस्य श्रीयुत एम० के० आचार्य महाशय की दृष्टि में तो यह प्रस्ताव हिंदू-धर्म पर इतना प्रबल आघात था कि वह अपने दल की कौंसिल-भवन से बाहर चले जाने की नीति का उलङ्घन करके इस प्रस्ताव का विरोध करने के लिये ही अपने स्थान पर डटे रहे, हलाँकि स्वराज्यदल के अन्य सम्पूर्ण सदस्य इस अवसर पर सभा-भवन को छोड़कर बाहर चले गए थे। प्रस्ताव केवल इसी रूप में रक्खा गया था कि उपसमिति द्वारा निर्धारित बाल-विवाह-निषेध विधान जनता की सम्मति जानने के लिये प्रचालित (Circulate) किया जाय। आचार्य महोदय ने इस प्रस्ताव का तीव्र विरोध हिन्दू-धर्म के अधिकारों की रक्षा के नाम पर किया। यह आचार्य महोदय वही हैं जो गतवर्ष निर्वाचन के दिनों में पञ्जाब पधारे थे और पञ्जाब निवासी हिन्दुओं पर आपने अहिन्दू होने का लाँछन लगाया था। अब पञ्जाबी हिन्दुओं को आचार्य महोदय से यह सीख लेना चाहिये कि सच्चा हिन्दू किस प्रकार का होता है।

हिन्दू-कुल-भूषण महामना मालवीय जी ने भी इस प्रस्ताव का इस आधार पर विरोध किया कि इसमें बालिकाओं की आयु अभी से १४ वर्ष न रखनी चाहिये थी। आप सब काम धीरे-धीरे करने के पक्षपाती हैं, परन्तु बालविवाह जैसी राष्ट्र को क्षीण करनेवाली भयंकर कुप्रथा को दूर करने के लिये भी २० बरसों की और मुहलत माँगना हमारी सम्मति में सर्वथा अनुचित है। हमारी सम्मति में जिस प्रकार सरकार ने सतीप्रथा को कानून द्वारा एक दम रोक दिया था उसी प्रकार साधारण जनता के मत की अपेक्षा किये बिना भी बालविवाह को सर्वथा नियम-विरुद्ध करार देना चाहिये। फिर, हमें इस बात का सन्तोष है कि हिन्दू-जनता का बहुमत अब पूरी तरह से बालविवाह का कट्टर विरोधी हो गया है। थोड़े-से अपवादों को छोड़कर शेष सम्पूर्ण हिन्दू जनता अब बालविवाह को कानूनन बन्द कर देने में ही अपना हित समझने लगी है। हमें स्मरण है कि पिछले ही दिनों, जब कि दिल्ली में अखिल भारतीय महिला-परिषद् का अधिवेशन हुवा था, कतिपय प्रमुख भारतीय महिलाओं का एक डैपुटेशन सरकारी उच्च-पदाधिकारियों तथा भारतीय नेताओं से मिला था। इस डैपुटेशन की यह माँग थी कि छोटी बालिकाओं का विवाह कानूनन नाजायज़ करार दे दिया जाय। यह डैपुटेशन महामना मालवीय जी की सेवा में भी गया था—इस डैपुटेशन को भी मालवीय जी ने अपना "धीरे-धीरे" वाला सन्देश ही सुनाया था। इस अवस्था में हम नहीं समझ सकते कि मालवीय जी का यह बेसुरा राग कहाँ तक राष्ट्र का भला कर सकेगा।

हमारी सम्मति में तो बालिकाओं के विवाह की न्यूनतम आयु १६ वर्ष नियुक्त होनी चाहिये, यही अखिल भारतीय महिला परिषद् की मांग है। बालकों के आयु की अवधि निश्चित करने का अधिकार स्वयं पुरुषों को है। हमारा तो पुरुषों से यही विनम्र निवेदन है कि वे हमें चाहे कोई और अधिकार देने की कृपा करें या न करें परन्तु अपने विवाह की न्यूनतम अवधि निश्चित करने का अधिकार हमें अवश्य प्राप्त होना चाहिये। यह हमारा जन्मसिद्ध और सर्वसम्मत अधिकार है, यही भारतवर्ष की प्राचीन परम्परा है और इसी बात पर हमारे राष्ट्र का भविष्य पर्याप्त अंश तक, आश्रित है। इसी प्रश्न पर हमारा सम्पूर्ण जीवन निर्भर करता है। हम आशा करते हैं कि हिन्दू-देवियों की

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कोख से उत्पन्न हुआ कोई भी लाल अपनी माताओं की इस तुच्छ-सी माँग की उपेक्षा नहीं करेगा। क्या हम आशा करें कि पुरुष भाई हमारे इस विनम्र निवेदन पर ध्यान देंगे। १६ बरस की माँग फिर कभी सही, अब कम-से-कम १४ बरस की न्यूनतम अवधि का तो विरोध न कीजिये।

२. साइमन कमीशन का पञ्जाब में दौरा

हमें याद है कि बड़ी व्यवस्थापिका सभा के एक प्रतिष्ठित सदस्य ने थोड़े ही दिन पूर्व पञ्जाब को हिन्दू मुस्लिम वैमनस्य के कारण भारतवर्ष का प्लेग-स्थल कहा था। परिस्थितियों को देख कर यही बात ठीक भी जंचती थी। पञ्जाब पिछले दिनों वास्तव में राष्ट्रीय आन्दोलनों से शून्य होगया था, वहीं शफ़ी एण्ड कम्पनी का जन्म हुआ, पिछले निर्वाचन के दिनों में पञ्जाब में ही कांग्रेस को सब से अधिक असफलता हुई, साइमन कमीशन के साथ सहयोग करने का प्रस्ताव भी केवल पञ्जाब कौन्सिल में ही स्वीकृत हुआ, सम्भवतः यही सब कुछ देख कर भारत सरकार ने साइमन कमीशन को पञ्जाब का दौरा कराने का प्रबन्ध किया था। परन्तु हमें इस बात का पूर्ण सन्तोष है कि पञ्जाबी जनता ने कमीशन का जिस ढंग से स्वागत किया है वह पंजाब की शान बढ़ाने वाला है, वह हमारे लिये आशातीत है। सब से पूर्व साइमन महोदय अपनी टीम के साथ लाहौर पहुँचे थे, उस दिन ३० हज़ार से ऊपर जनता ने स्टेशन के बाहर काली झंडियां लेकर आप का स्वागत किया। कमीशन के सदस्यों को पहले जिस मार्ग से ले जाने का निश्चय किया गया था, वह मार्ग जनता का यह रुख देख कर बदल दिया गया। लोगों को धोखा दिया गया, तो भी उन्होंने साइमन सप्तर्षि को ढूंढ़ ही निकाला। लोगों ने काली झंडियां साइमन साहब की मोटर में घुसेड़नी शुरु कीं, साइमन महोदय भी धन्यवाद पूर्वक उन्हें लेते चले गये। इस के बाद ३० हज़ार का वह मजमा एक जुलूस बना कर शहर की ओर रवाना हुआ, कुछ जीहजूरों की कृपा से जनता के नेताओं को पीटा तक गया, परन्तु तब भी शान्तिभंग न हुई, जनता ने पुलीस को गोली चलाने का बहाना न ढूंढ़ने दिया। लाहौर के बाद लायलपुर, जडांवाला, मोगा, गुजरांवाला, रावल पिण्डी और पेशावर सभी स्थानों पर कमीशन का पंजाबी जनता ने काली झंडियों से ही स्वागत किया। रावलपिण्डी में कमीशन के सदस्यों का उतरने का विचार नहीं था, स्टेशन पर ही वे जीहजूरों से मिल कर आगे चले जाना चाहते थे, स्थानीय सरकारी कर्मचारियों ने बहुत से जीहजूरों को स्टेशन पर ला जमा किया, परन्तु रावलपिण्डी के आत्मगौरव पूर्ण नेताओं से अपने नगर का यह अपमान देखा न गया। वे लगभग १० हज़ार की संख्या में जनता को साथ लेकर स्टेशन के बाहर से ही "साइमन लौट जाओ" आदि वाक्यों द्वारा कमीशन के सदस्यों का 'राष्ट्रीय स्वागत' करने लगे। पुलीस यह सह न सकी। निश्शस्त्र और शान्त जनता को पीटा भी गया तो भी लोग न तो भयभीत हुए और न उत्तेजित ही। हमारे इस कथन का यह अभिप्राय नहीं कि किसी भी पञ्जाबी ने कमीशन का स्वागत नहीं किया, हमें ज्ञात है कि पञ्जाब में ऐसे देश द्रोहियों की संख्या अन्य प्रन्तों से अधिक है जो कि कमीशन की जूतियां चाट कर अपने को पवित्र समझते हैं। लाहौर में कमीशन के सदस्यों को ऐसे ही भारतीयों की ओर से इतने अधिक निमन्त्रण मिले कि उन में से बहुतों को निराश होना पड़ा। तथापि वीर पंजाबी जनता ने जो कुछ किया, उस के लिए हम उसे साधुवाद देते हैं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

३. साइमन कमीशन के लिये पूरक माँग

गत १४ मार्च को बड़ी व्यवस्थापिका सभा ने माननीय पं० नेहरू जी का प्रस्ताव स्वीकार करके कमीशन के लिये ३ लाख ४० हज़ार की माँग को ७ मतों की अधिकता से अस्वीकृत किया था। इससे कुछ दिन पूर्व बड़ी व्यवस्थापक सभा इस साइमन सप्तक पर तीव्र अविश्वास का प्रस्ताव पास कर चुकी थी। यह होते हुए भी २८ मार्च को सरकार की ओर से साइमन कमीशन के लिए ५५ हज़ार की पूरक माँग बड़ी व्यवस्थापक सभा में पेश की गई। राष्ट्रीय दलों ने यह कह कर कि जब बड़ी व्यवस्थापक सभा दो बार कमीशन के सम्बन्ध में अपना निश्चित मत प्रकाशित कर चुकी है, फिर तीसरी बार उसी प्रश्न को लाना नितान्त अनुचित है—इस माँग के सम्बन्ध में कोई बहस नहीं की। सभापति महोदय ने भी इस बात की घोषणा कर दी थी कि इस माँग का पहले के दोनों प्रस्तावों पर कोई असर न पड़ेगा। अतः बिना विभाग के ही यह माँग स्वीकार हो गई। सर बासील ब्लैकेट के यह माँग उपस्थित करते ही व्यवस्थापिका सभा के उपाध्यक्ष श्रीयुत याकूब हसन ने यह व्यवस्था-सम्बन्धी विप्रतिपत्ति उठाई थी कि जब साइमन कमीशन के लिये की गई वास्तविक माँग सभा द्वारा अस्वीकार कर दी गई है तब उसकी पूरक माँग पेश की ही नहीं जा सकती। परन्तु सभापति ने इस विप्रतिपत्ति को स्वीकार नहीं किया। हमारी सम्मति में यह विप्रतिपत्ति सर्वथा युक्ति-युक्त थी। जब वास्तविक चीज़ ही नहीं रही तो उसका पूरक भाग कहाँ से हो सकता है। हम पूछते हैं कि यह ५५ हज़ार की माँग किस माँग की पूरक है?

४. जन-सेवक-संघ लाहौर का द्वितीय वार्षिकोत्सव

सन् १९२१ में लाला लाजपतरायजी ने देश की सेवा के लिये नवयुवकों को तैयार करने के उद्देश्य से एक जन-सेवक-सङ्घ (Servants of Peaple Society) की स्थापना की थी। इसकी रचना लगभग उसी प्रकार की थी जिस प्रकार की रचना स्वर्गीय गोखले के भारत-सेवक-सङ्घ पूना (Servants of India Society) की है। प्रारम्भ में लालाजी को स्वयं ही इस सङ्घ की पूर्ण सफलता पर सन्देह था अतः वह शान्तिपूर्वक, बिना अधिक विज्ञापन दिए, इस सङ्घ को सुसंगठित और स्थिर बनाने का कार्य करते रहे। गतवर्ष उन्हें इस बात का सन्तोष हो गया कि अब इस सङ्घ के टूट जाने का कोई ख़तरा नहीं है, अतः उन्होंने पिछले वर्ष इस सङ्घ का प्रथम वार्षिकोत्सव मनाया था। इस वर्ष गत २४ और २५ मार्च को श्रीयुत जयकर तथा महामना मालवीय जी की अध्यक्षता में इस सङ्घ का द्वितीय वार्षिकोत्सव मनाया गया। इस वर्ष सङ्घ की ओर से लालाजी ने जो वार्षिक वृत्तान्त प्रकाशित किया है उससे ज्ञात होता है कि इस समय १८ नवयुवक इस सङ्घ की अध्यक्षता में लोक-सेवा तथा समाज-सेवा का कार्य कर रहे हैं। सङ्घ की ओर से १ दैनिक तथा ३ साप्ताहिक पत्र प्रकाशित होते हैं। सङ्घ की स्थिर-निधि २ लाख रु० से कुछ अधिक है। लालाजी ने अपनी पुरानी कोठी तथा पुस्तकालय सङ्घ को दान दे दिये हैं। सङ्घ की ओर से मुख्यतया पञ्जाब, युक्तप्रान्त और उत्कल तथा साधारणतया भारत के सम्पूर्ण प्रान्तों में कार्य किया जाता है। इसी अवसर पर लालाजी ने एक स्त्री-चिकित्सालय के लिये अपनी निजी सम्पूर्ण—१ लाख १० हज़ार की—जायदाद में से १ लाख के दान की घोषणा की। लालाजी का यह त्याग यथार्थ में सराहनीय है। हम आशा करते हैं कि धीरे धीरे देश के राष्ट्रीय-जीवन में यह सङ्घ वही स्थान प्राप्त कर लेगा जो कि स्वर्गीय गोखले के भारत-सेवक-सङ्घ को प्राप्त है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अपने बच्चे को फुटबॉल खिलाओ

तुम्हारा बच्चा बहुत मोटा ताज़ा और खुश मिज़ाज़ होगा यदि तुम हम से उस के लिए फुटबॉल खरीदोगे !

खेल के सब तरह के सामान का स्टाक हमारे यहां है। जल्द आर्डर भेजिये।

बी० डी० गुप्ता एण्ड को०

पंच कुई रोड, दिल्ली।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कला कौमुदी

लेखिका श्रीमती ओ३म्वती देवी

चित्र कला कौशल सम्बन्धी अनुपम पुस्तक-इस के द्वारा लेखिका ने क्रोशिये के कार्य को बड़ा ही सरल बना दिया है। बिना किसी प्रकार के पहिले ज्ञान के कन्यायें और स्त्रियें केवल इस की ही सहायता से अनेक प्रकार की बिनावट लेसें, फ़ीते, कपड़े इत्यादि बनाना सहज में ही सीख सकी हैं। पुस्तक में इतना विषय है कि किंचित इससे कई गुना दाम की पुस्तकों में भी न होगा। प्रत्येक वस्तु तथा बिनावट का बनाना चित्र देकर बड़ी सरल रीति से सिखाया गया है। देखिये समाचार पत्र इस के विषय में क्या कहते हैं।

"ट्रिब्यून" (अंग्रेज़ी का प्रसिद्ध दैनिक) लाहौर--स्त्रियों के लिये उपयोगी पुस्तक है। अनेक चित्रों द्वारा वस्तु बनाने की विधि बड़ी सरलता से समझाई गई है। सुन्दर नमूनों की लेसें, टेबल क्लाथ, बच्चों के सुन्दर कपड़े और अन्य कई वस्तुओं का बनाना बड़ी सुन्दर रीति से बतलाया गया है। पुस्तक की उपयोगिता के विचार से मूल्य बहुत कम है।

"मतवाला" (कलकत्ता)-यह पुस्तक हमारी बहिनों के बड़े काम की है। छपाई बहुत अच्छी, कागज़ बहुत अच्छा मोटा चिकना आर्ट। सुचारु शिल्प पत्रावली कार्ड गृहस्थियों के बड़े काम की चीज़ है।

"कर्मवीर" (खांडवा)— ·····पुस्तक में सादे फन्दे से लगाकर तरह तरह की वस्तुओं के बनाने की विधि बड़ी सरलता से समझाई गई है जिसे पढ़कर साधारण पढ़ी लिखी स्त्री भी इस कार्य को सीख सकती है। इस का मूल्य लागत को देखते कम है।

"माधुरी" (लखनऊ)-ऐसी पुस्तकों की हिन्दी साहित्य के लिये बड़ी आवश्यकता है। आशा है इस पुस्तक का अच्छा प्रचार होगा जिस से इस प्रकार की और पुस्तकें भी प्रकाशित की जा सकें। लेखिका और प्रकाशिका दोनों को बधाई।

शीघ्र आर्डर भेजिये मूल्य १॥)

कला कौमुदी तथा शिल्प पत्रावली का पूरा सैट लेने पर २॥=)॥ के स्थान में केवल २।) में दिया जायगा।

कन्या पाटशालाओं और पुस्तक विक्रेताओं को विशेष रियायत।

मैनेजर ज्योति—

कन्या गुरुकुल

राजपुरा रोड कोठी नं० २१-२२ देहरादून

चौधरी हुलासराय प्रिन्टर तथा पब्लिशर के लिये गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में मुद्रित।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

Regd. No. A. 1711

वर्ष ८, खंड ८] एप्रिल, १९२८ [संख्या १२

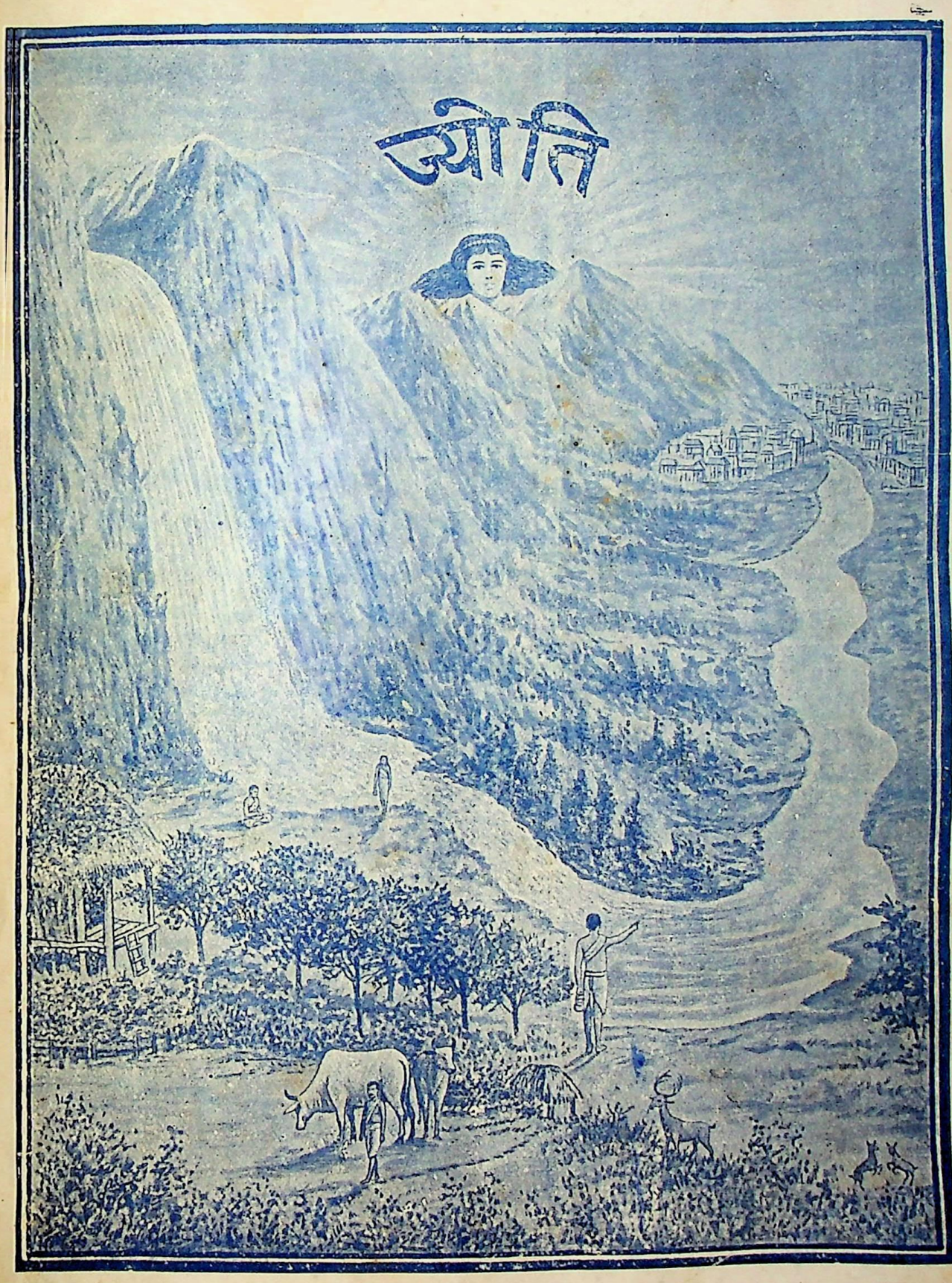

वार्षिक मूल्य ४॥)
प्रति संख्या ॥)

सम्पादिका—
विद्यावती सेठ बी. ए.

स्त्रियों और विद्यार्थियों से ४)
विदेश का मूल्य ६)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

विषय सूची।

विषय	पृष्ठ से
१. तद् दूरे ततु अन्तिके [कविता] श्री पं० वागीश्वर जी विद्यालंकार	४६५
२. पर दोष दृष्टि— श्री पं० हरिशरण जी सिद्धान्तालंकार	४६६
३. वर्तमान शिक्षणालयों तथा गुरुकुल में भेद— श्री कुमारी सरस्वती देवी	४६६
४. आर्य-धर्म प्रचार के साधन—श्री महाराज कुमार उमेद सिंह जी शाहपुरा	५०३
५. मनु तथा इन्द्र— श्री पं० सत्यव्रत जी सिद्धान्तालङ्कार	५०६
६. मतवाले हैं [कविता]— श्री ब्र० सत्यपाल जी ११श श्रेणी	५१२
७. दान के विषय में वेद का उपदेश	५१४
८. शुद्धि— श्री महाराज कुमार उमेदसिंह जी, शाहपुरा	५१६
९. स्वदेशानुराग [कविता]	५१६
१०. अथर्व वेद संहिता [भाषाभाष्य]— श्री ब्र० चन्द्रकान्त जी १३श श्रेणी	५२०
११. गौरव महिमा—श्री साधुवर वासवानी जी	५२६
१२. स्त्री जगत्	५३३
१३. वैज्ञानिक संसार	५१६
१४. विचार-प्रवाह— [सम्पादकीय]	५४०
१५. कन्या गुरुकुल [देहरादून] समाचार	५५१

लेखकों से निवेदन—

१. ज्योति में लेख कविता आदि भेजने वाले महानुभावों को अपने लेख सुस्पष्ट अक्षरों में कागज़ के एक ओर ही हाशिया छोड़ कर लिख कर भेजने चाहियें।

२. लेख बहुत लम्बे न होने चाहिए। 'ज्योति' पत्रिका के लगभग चार पृष्ठों के लायक लेख हों तो अति उत्तम है।

३. लेखों को घटाने बढ़ाने तथा संशोधित करने का संपादक को पूर्ण अधिकार है।

ज्योति सम्बन्धि पत्र व्यवहार—

आचार्य्या कन्या गुरुकुल

कोठी नं० २१, राजपुर रोड़

(देहरादून)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वर्ष ८ } चैत्र सं० १९८४ * अप्रैल सन् १९२८ { संख्या १२

"तद्दूरे तदु अन्तिके"

(श्री पं० वागीश्वर जी विद्यालंकार)

दूर से दूर, पास से पास।
बाहर भीतर, जगह जगह पर, हे प्रभु! है तेरा ही वास॥
दृग में अंजन रूप, निरंजन! मन में रहता है भय-भंजन।
प्रातः सायं क्षितिज-तटी में, होता है तेरा आभास॥
खिली लता के फूल फूल में, तरल नदी के कूल कूल में।
कोमल शीतल मलयानिल में, करता है तू ही उल्लास॥
उषा-दुलारे ओस कणों में, निशा-कुसुम नक्षत्र गणों में।
नव शिशु के निष्पाप अधर में, दिखता है तेरा मृदु हास॥
तुहिनाचल के तुहिन पटल में, अतल जलधि जल मुक्ताफल में।
प्रकृति-नटी के रूप रूप में, तेरा है स्वच्छन्द विलास॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

परदोष दृष्टि

(ले०— श्री पं० हरिशरण जी सिद्धान्तालंकार)

यन्मे छिद्रं चक्षुषो हृदयस्य मनसो
वाऽतितृण्णं बृहस्पतिर्मे तद्द धातु ॥
शंनो भुवनस्य यस्पतिः ॥

परोक्त मन्त्र का भावार्थ यह है कि पूत्येक व्यक्ति अपने दोषों को देखे। ज्ञानोपार्जन द्वारा उनको दूर करने का पूयत्न करे। एवं सब के निर्दोष होने पर सब को शान्ति की पूाप्ति होगी। इसके विपरीत यदि सब दूसरों के दोषों को देखेंगे, किसी को अपने दोषों का ज्ञान न होगा, सब कोई दिन व दिन दोषों का आकर बनता जायेगा। समाज को शान्ति का पूाप्त होना तो दूर रहा, पूत्युत इस कलियुग में पूत्येक क्षण कलि (quarrel) मय हो जायेगा। यह भाव निम्न चित्र पट से स्पष्ट है—

मन्त्र का उपदेश	विपरीत भाव
१. सब कोई स्वदोषों का आलोचन करे	१. दूसरे के दोषों को देखना
२. ज्ञानोपार्जन द्वारा उन को दूर करना	२. वमण्ड रूप अज्ञान में मग्न हो दोषीकर बनना
३. पवित्रता से वैयक्तिक तथा सामाजिक शांति का होना।	३. अपवित्रता के कारण सम्पूर्ण वायु मण्डल का दुर्गन्धित अशान्त अस्वस्थ्यपूद होना।

उपरोक्त स्थिति हमारे सामने है। हम स्वतन्त्र हैं— चाहे जिसको पसन्द करने लगें, तो उस से पूर्व निम्न बातें हमे ध्यान में कर लेनी चाहियें।

२. संसार में एक व्यापक नियम काम करता हुआ दिखाई देता है। वह है Like attracts like का जो जैसा है वो तैसे को अपनी तरफ खैंचता है। एक विद्यार्थी एक नवीन विद्यालय में पूवेश करता है, वहां झट पट अपनी जैसी तबीयत वाले विद्यार्थियों को अपनी ओर आकृष्ट कर लेता है।

संसार में एक व्यापारी व्यापारी, का क्षत्रिय क्षत्रिय का, तथा दार्शनिक दार्शनिक का साथी बनता है। बच्चा बच्चे का युवा युवा का, तथा वृद्ध वृद्ध का मित्र बनता है। Birds of a feather flock to gether ऐसी लोकोक्ति ही बन चुकी है **"मृगा मृगैः सङ्ग मनु व्रजन्ति। गावश्च गोभिस्तुरगास्तुरंगै मूर्खाश्च मूर्खैः सुधियः सुधीभिः। समान शील व्यसनेषु सख्यम्"** ॥ यह कमि वचन भी उपरोक्त भाव को सु-विशद कर रहा है। महाभारत में आया हुआ शकुन्तला-दुष्यन्त सम्वाद इस विषय में देखना बड़ा रोचक होगा। वहां शकुन्तला दुष्यन्त से कहती है:—

"मूर्खो हि जल्पतां पुसां श्रुत्वा वाचः शुभा शुभाः।
अशुभं वाक्यमादत्ते पुरीष मिव सूकरः ॥"

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मूर्ख शुभाशुभ शब्दों में अशुभ शब्दों को सुन लेता है।

इसके विपरीत

प्राज्ञो हि जल्पतां पुंसां श्रुत्वा वाचः शुभाशुभाः।
शुभं हि वाक्यमादत्ते हंसः क्षीरमिवाम्भसः॥

परन्तु हंस शुभ वचनों को ही स्वीकार करता है।

ठीक इसी प्रकार प्राणिमात्र-भूत मात्र के अन्दर गुण दोष दोनों विद्यमान हैं:—

"दृष्टं किमपि लोकेस्मिन् न निर्दोषं न निर्गुणम्"।

ऐसी अवस्था में यदि हम गुणों को न लें, दोषों का उपादान करते हैं, तो हमारा आचरण सूखों की तरह सूकरों की तरह होगा, हमें चाहिये कि हंस बने-सज्जन बनें गुणों को ही ग्रहण करें।

शकृत् तथा शक्कर दोनों वस्तुएं पड़ी हों तो इतर मक्खी शकृत पर बैठेगी। परन्तु मधुमक्षिका शक्कर को ही अपनायेगी ठीक इसी प्रकार हम दोषैक दृक होकर दोषों पर बैठते हैं तो हमारा आचरण इतर मक्षिकावत है। हमें चाहिये कि पुरोभागी न बन कर गुण ग्राही बनें। और अपने मधुमक्षिका तुल्य होने का परिचय दें।

एवं यह स्पष्ट है कि यदि हम दूसरे के दोषों को देखते हैं तो वस्तुतः **अपना ही परिचय** दे रहे होते हैं। कि हम कैसे हैं। सो हमें उचित है कि हम दूसरे के दोषों का उद्घोषण कर अपनी दुष्टता खलता-का advertisemeut न करें।

२. इतना ही नहीं। पुरोभागी बनने से मनुष्य का अधः पतन भी अवश्यम्भावी है। उसका कारण यह है कि 'मनुष्य का जैसा लक्ष्य Ideal होता है, वैसा ही वह बन जाता है। यदि हम दूसरों के दोष रूप लक्ष्यों का ही वेधन, निज चक्षु वृत्ति रूप शरों से पूति क्षण करते रहें तो हम नीचलक्ष्य होने से, बच कैसे सकेंगे? अवश्य हमारा अधः पतन होगा इन दोषैकदृक त्रिशंकुओं को मध्यस्थान में स्थित करने के लिये विश्वामित्र भी संसार में नहीं हैं। ये अवश्य मध्यलोक ही नहीं अपितु अधोलोक में पहुँच कर ही रहेंगे। तो यदि हम अपना अधः पतन नहीं चाहते तो गुण ग्राही बनें अवगुण विचेता नहीं।

३. और भी देखिये। कर्म सिद्धान्त में एक नियम काम करता है वह है 'दुरुपयोग से शक्ति के छिन जाने का'

"अन्न हर्ताऽऽमयावी स्यात् मूको वाग्-पहारकः"।
आ० २१०

पूतिवक्त्रस्तु सूचकः। २११।

'अव गुणाः छिन्न हस्तः' इत्यादि स्मृति वाक्य उपरोक्त बात की साक्षी दे रहे हैं।

ऐसी अवस्था में हम यदि चक्षु का प्रयोग दोषों के देखने, वाणी का प्रयोग उन्हीं के चिन्तन में करेंगे तो हमारे से चक्षु वाणी तथा मन की शक्ति छिन क्यों कर न जायेंगे। सो यदि हम इन शक्तियों का नाश नहीं चाहते तो उचित है कि 'हम' आंख से गुणों का निरीक्षण करें, वाणी से गुणों का गायन करें। सज्जन लोग सब के गुणो का मनन

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कर अपने को गुणागार बनाया करते हैं। गधे से भी गुण सीख सकते हैं, तो मनुष्य से क्यों नहीं ?

४. अन्त में दोषैक निरीक्षण के भयंकर परिणाम को सोचिये तो सही ! हम परिवार के २० व्यक्ति यदि सब एक दूसरे के अन्दर दोषों ही दोषों को देखेंगे तो सब एक दूसरों से घृणा वाले होगें। मेल असम्भव हो जायेगा। वियोग-वियोग ही विस्तृत हो जायेगा। दूसरे शब्दों में नाश उपस्थित हो जावेगा। ईर्ष्या द्वेष का वायु मण्डल घृणा का वायुमण्डल-वह दुर्गन्धित वायुमण्डल परमेश्वर करें कि हमारे समाज में उपस्थित न हो।

अवस्थिति स्पष्ट है, ऐसी अवस्था में कौन विपरीत भाव को पसन्द करेगा। इस लिये उचित है कि हम मन्त्र के उपदेश को अपने जीवनों में चरितार्थ करें। बुद्ध भगवान् भी यही उपदेश दे गये हैं। कुरान का भी यही आदेश है।

'आवृणुध्व मतोदोषान् विवृणुध्वं गुणान्वुधा» सूत्र शब्दों में काव्य भी यही उपदेश दे रहा है।

अन्त में यह कह देना आवश्यक है कि 'मनुष्य जैसा सोचता है वैसा ही बन जाता है'। As a man thinketh so is he,' सो दोषों का विचार कर हम कभी गुणवान् न बन सकेंगे, इस लिए उचित है कि हम दोषों के लिये अन्धे बन जायं परमेश्वर हमें Hauth blindness प्रदान करें।

"खलः सर्षपमात्राणि परच्छिद्राणि पश्यति।
आत्मनो बिल्वमात्राणि पश्यन्नपि न पश्यति" ॥

खल इस प्रकार के हुआ करते हैं। परमेशानुकम्पा से हम खल न बनें। दुर्जन न हों। यही हमारी प्रार्थना है। हमारा आचरण महादेव की तरह हो। हम अवगुण रूप विषों को जिव्हा से उद्गीर्ण भी न करें नाहीं उन्हें नीचे, हृदय में पहुँचने दें। शान्ति प्राप्ति का यही उपाय है। यही उपनिषत् है।

---

१. Not the perversities of others not their sins of commission or omission but his own misdeeds and negligences should a sage take notice of. (English translation of धम्मपद)

२. Pry not into other men's failings neither let any of you traduce another in his absence. (Teachings of Islm में पृष्ठ 4342. कुरान की आयत XLIX, 11, 12)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वर्त्तमान शिक्षणालयों तथा गुरुकुल में क्या भेद हैं।

लेखिका—कुमारी सरस्वती देवी जी काव्य तीर्थ साहित्याचार्य अध्यापिका कन्या गुरुकुल

आधुनिक जगत अपनी वर्तमान अवस्था से अति असन्तुष्ट है। नौकरीवाले अपनी नौकरी से सन्तुष्ट नहीं; स्वतन्त्र व्यापारियों को अपने व्यापार से गृहस्थियों को घरों से तथा विद्यार्थियों को अपनी विद्या से तात्पर्य किसी को भी अपने अपनत्व से सन्तोष अथवा सुख दृष्टिगोचर नहीं होता। यदि किन्हीं इने-गिने महानुभावों को है भी तो उन के विषय में इस प्रस्तुत लेख में हमें कुछ विशेष कथनीय नहीं। निःसन्देह वे अवश्य एक उच्च-कोटि के लोकोत्तर महापुरुष हैं जो कि वर्तमान विपरीत परिस्थियों में रहते हुए भी उसके दुष्प्रभाव से अपने आप को बचाये हुवे हैं।

हमारे इस असन्तोष तथा अशान्ति का कारण भी सुस्पष्ट है। संसार में जितनी वस्तुयें हैं उन सब में कोई न कोई गुण अथवा अवगुण किसी न किसी रूप में अवश्य विद्यमान है। अतएव जिस पदार्थ के समुचित सम्यग् व्यवहार से हम लाभ उठा सकते हैं तथा जिस को उत्तमोत्तम उपयोगों में ला सकते हैं वही हमारे सर्वनाश और अखिल अधोगति का अति भयङ्कर विषमय तथा कदर्हित रूप भी धारण कर सकता है। इस के उदाहरण पद २ स्थान २ पर प्राप्त होते हैं। दृष्टान्त स्वरूप में प्रेम को ही लीजिये। प्रेम की हमारे ऋषि मुनियों ने बड़ी महिमा गाई है, उनका कथन है और न केवल कथन ही है अपितु उन्हों ने अपने चरित्र से साधुतया प्रदर्शित कर दिया है कि किस प्रकार केवल मात्र प्रेम से ही समस्त संसार का मस्तक निज चरण-तल पर झुकाया जा सकता तथा प्राणीमात्र को अपना वंशगामी एवं पदानुसारी बनाया जा सकता है और तो और स्वयं जगदीश भी किस प्रकार अपने सच्चे प्रेमी भक्त की पवित्र प्रेममयी हृदय वेदी पर आकर विराजमान होने तथा प्रेम रश्मियों से बद्ध की भांति सतत वहीं आसीन रहते हैं जिस प्रेम के प्रभाव से परस्पर विरोधी प्राणी अपने सहज विरोध को विस्मृत होकर अकृत्रिम मित्रों की भांति व्यवहार करते हों उस के महत्वपूर्ण सुन्दर स्वरूप की जितनी महिमा गान की जावे जितनी प्रशंसा की जावे अपर्याप्त है अनिश्चय है। किन्तु उसी प्रेम का लक्ष्य एवं स्वरूप यदि थोड़ा सा परिवर्त्तित कर दिया जावे तो वहीं निखिल भूतल की घृणा का तथा परम पिता के प्रचण्ड कोप का पात्र एवं कारण बन सकता है। इसमें सन्देह नहीं कि वह विसुद्ध पवित्र प्रेम का स्वरूप नहीं होता पर तो भी उस में प्रेम का भी कुछ न कुछ भाग होना अवश्य है। जो वस्तु जैसी है उसे उसके स्वाभाविक स्वरूप में ही स्वीकृत करना चाहिये यह एक सिद्धान्त की बात है। परन्तु संसार बहुत भूलता चला जाता है। कृत्रिमता ने जगत में बहुत बड़ा स्थान ले लिया है, किसी भी वस्तु के वास्तविक दर्शन में अब लोगों को एक प्रकार का श्रद्धापन और गँवारपन दिखलाई देने लग गया है। इसी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्रकार द्वितीय दृष्टान्त में विद्या को लिया जावें। जहां विद्या से मनुष्य आत्मवान् जितेन्द्रिय पुरुषार्थी बन सकता एवं अपने विचारों को अत्युच्च तथा उदार बना सकता है वहां साम्प्रतिक विद्या हमें दासत्व की कठिनतर वज्रमयी शृङ्खलाओं में बद्ध करने वाली एक प्रकार का व्यवसाय मात्र, या नाम के साथ शोभा देने मात्र को रह गई है । जो शिक्षा हमें भारतवर्षीय शिक्षणालयों में पाश्चात्य रीति से दी जाती है, उस से हमें कितने लाभ हैं, इसे अनुभवी तथा विज्ञ पाठक स्वयं ही समझते हैं। है तो यह भी एक प्रकार की विधि ही, पर उस से हमें आत्मिक मानसिक शारीरिक एवं सामाजिक धार्मिक जो जो लाभ या हानियां हुई हैं उन को यदि विचार तथा विवेक दृष्टि से देखा जाये तो दुःख से कहना पड़ता है कि जो जो लाभ हुवे हैं उन की अपेक्षा हानियों की मात्रा कहीं अधिक है। निः सन्देह पढ़ लिख कर मनुष्य इस योग्य हो जाता है कि समय पड़ने पर उसे उदर पूर्ति के लिये कुछ विशेष चिन्ता नहीं रह जाती जो कि इस समय सब से बड़ी चिन्ता समझी जाती है। पर विचारना तो यह है कि क्या वास्तव में हमारा लक्ष्य यही है खाना,पीना, सोना,जगना,जन्म ग्रहण करना और मर जाना। यदि यही बात है तो कम से कम हमारे शास्त्र तो हमें मनुष्य की श्रेणी देवेंगे नहीं, क्योंकि वे तो साफ शब्दों में कह रहे हैं कि:—

आहार निद्रा भय मैथुनञ्च
सामान्य मेतत्पशुभिर्नराणां।
धर्मो हि तेषामधिको विशेषो
धर्मेण हीनाः पशुभिः समानाः ॥

भाव यह है मनुष्य और पशु में केवल मात्र धर्म का ही भेद है अन्य आहार इत्यादि क्रियाएं दोनों की एक समान ही है, सो जो लोग धर्म से रहित हैं वे पशुओं के सदृश हैं। इसी प्रकार अन्य स्थल पर

यज्जीव्यते क्षणमपि पूथितं मनुष्यैः
विज्ञान शौर्य्य प्रभवार्य्य गुणैः समेतम्।
तन्नाम जीवित मिह प्रवदन्ति तज्ज्ञाः
काकोऽपि जीवति चिरञ्च बलिञ्च भुङ्क्ते॥

इत्यादि २ कई उदाहरण प्राप्त होते हैं कि जिन में धर्म गुण विवर्जित मनुष्य को मनुष्य अथवा जीवित भी न मानने के लिये आदेश है। इस भाँति हमारे शास्त्र हमें मनुष्य अथवा जीवन संयुक्त मानने को भी उद्यत न होंगे। आदर्श पुरुषोत्तम श्रीराम, योगीराज श्री कृष्ण की सन्तान की इतनी हीन दशा ! इतनी अधोगति !! इतना पतन इस पर विश्वास करने को मन नहीं होता। मन की भले ही इच्छा हो या न हो उस की किसे परवाह है पर है वास्तव में यह एक अप्रिय सत्य का स्वरूप ही है। मानव जाति अपने जीवन का लक्ष्य केवल भोग विलास एवं विषय तृष्णा को ही न समझले इस लिये परम कारुणिक भगवान् ने अपने सदुपदेशों तथा आदेशों को वेद के रूप में हमें प्रदान किया। ईश्वर का आदेश है कि—

ईशा वास्य मिदं सर्वं यत्किञ्चिज्जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जिथाः मा गृधा कस्यस्विद्धनम्॥

यजुः। अ. ४०। मंत्र १

अर्थात् जो कुछ भी इस जगती में जगतत्व है उस सर्व में ईश्वर व्याप्त हैं। हे मनुष्यों तुम लोग उस से भोग तो करो परन्तु त्याग भाव से युक्त हो कर उन में लिप्त हो कर नहीं तथा किसी के धन को मत ग्रहण करो।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

इसी प्रकार—

यत्र कामा निकायाश्च यत्र वध्नस्य विष्टपम् ।
स्वधा च यत्र तृप्तितत्र यामृतं कृधिन्द्रायेन्द्रो परिस्रव ॥

अर्थात्— हे सुख स्वरूप जगदीश्वर जिस आप में सब कामनायें तथा अभिलाषायें छूट जाती हैं। तथा जिस आप में सब से बड़े प्रकाश मान आदित्य का विशिष्ट सुख तथा जिस आप में आप काली धारण एवं पूर्ण तृप्ति है उस अपने स्वरूप में मुझे मुक्ति को प्राप्त कराइये एवं सब दुःखो के निवारण के लिये मुझ पर करुणा वृत्ति कीजिये। इसी प्रकार के कई मन्त्र हैं कि जिन में मोक्ष की अभिलाषा तथा सांसारिक भोगों से विरक्त होने इच्छा करने के लिये ईश्वर आदेश करने एवं अपने से प्रार्थना करने के लिये कहते हैं। अस्तु हमारी सांप्रतिक विद्या हमें उक्त आदर्श पर पहुंचने के लिये हमारा कहाँ तक साथ देती है पर बात किसी से छुपी नहीं है। भला जहाँ प्रारम्भ से ही ऐसी पवित्र श्रुति पावनी उपदेशावलियों को गो पालों के गीत कह कर उनके विषय में विद्यार्थियों को विमनस्क श्रद्धाहीन एवं उपेक्षित कर दिया जावे वह शिक्षा हमें उक्त आदेशों को सिद्धान्त रूप में मनाने के लिये वहां तक सहायिका एवं पथ प्रदर्शिका हो सकती है। संस्कृत तो इतनी पढ़ाई ही नहीं जाती कि जिसके सहारे स्वयं वेदादि सच्छास्त्रो का अध्ययन करने का रास्ता कुछ सुगम हो सके इसके विपरीत उन के प्रति अश्रद्धा एवं कुत्सित भावनाये अवश्य उत्पन्न करदी जाती हैं। यही कारण है कि इतने अनुपम अमूल्य और असंख्य रत्नो के कोष को रखते हुवे भी हम उन्हें कङ्कर मट्टी के ढेले तथा लेप वस्तुओं का समूह समझ कर के उस को उद्घाटित करने तक का प्रयत्न नहीं करते। यही सब से बड़ी क्षति हमारी वर्तमान शिक्षा से है जिस की पूर्ति करने के लिये गुरुकुल का निर्माण किया गया है। इसके अतिरिक्त एक और भी बड़ी भयंकर क्षति है और वह है आचार के प्रति उपेक्षावृत्ति की ब्रह्मचर्य के प्रति अभक्ति की। हमारे प्राचीन काल में सदाचार तथा ब्रह्मचर्य की बड़ी महिमा पाई गई है। प्राचीन सभी शास्त्र सब रोगो का नाशक सब बलों का वर्द्धक एक मात्र ब्रह्मचर्य ही को मानते हैं। वैद्य राज धन्वन्तरी जो कि आयुर्वेद के बड़े प्रसिद्ध और आदि आचार्य समझे जाते हैं। एक दिन उन के किसी शिष्य ने उनसे प्रश्न किया कि गुरु महाराज! कोई ऐसी औषध बनाइये कि जिस एक ही के सेवन से सब रोग जाते रहें इस प्रश्न से वे अति प्रसन्न हुवे और बोले कि—

मृत्यु व्याधि जरानाशी पीयूषं परमौषधम् ।
ब्रह्मचर्यं महद् यत्न सत्यमेव वदाम्यहम् ॥

अर्थात् मृत्यु, रोग, तथा बुढ़ापे का नाश करने वाली अमृत तुल्य सब से बड़ी औषधि ब्रह्मचर्य ही, है यह बात मैं बिल्कुल सत्य सत्य कहता हूं। आगे चल कर फिर कहते हैं—

शान्ति कान्ति स्मृति ज्ञानं मारोग्यञ्चापि सन्ततिम् ।
य इच्छति महद्धर्मं ब्रह्मचर्यं चरेद्धि सः ॥

जो मनुष्य शान्ति सौन्दर्य स्मरण शक्ति आरोग्यता एवं अच्छी सन्तान को इच्छा करता है उसे चाहिये कि वह सब से बड़े धर्म ब्रह्मचर्य का यथावत् पालन करे।

वेद में स्वयं भगवात् कहते हैं कि—

ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमुपाघ्नत ।
इन्द्रोह ब्रह्मचर्येण देवेभ्यः स्वराभरत् ॥

अर्थात् ब्रह्मचर्य के बल से देवों ने मृत्यु पर विजय प्राप्त की इन्द्र को इसी के प्रभाव से देवताओं

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

में उच्चासन अभिगत हुआ । 'ब्रह्मचर्येण विद्यया ब्रह्मलोकम्' इत्यादि जिस ब्रह्मचर्य का वेद शास्त्र तथा विद्वान्मण्डल इतना महत्व समझते हैं उस एक अति महत्व पूर्ण विषय की तरफ हमारी वर्तमान शिक्षा का अणुमात्र भी ध्यान नहीं इसी ब्रह्मचर्य के खो देने से आज भारत गारत हो गया संसार शिरोमणि चक्रवर्ती भारत आज दासत्व की कठिनतर शृङ्खला में प्रति बद्ध हो गया और भी अधिक होता जावेगा यदि इस ने अब भी अपनी मोह निद्रा को न त्यागा अपने पुरातन आदर्श गुणों को न अपनाया तो ब्रह्मचर्य के ही प्रबल प्रताप से अकेले भीष्म दस सहस्र मनुष्यों को संग्राम में प्रतिदिन संहार किया करते थे उसी के लोप से भारत में से स्वतन्त्रता, लक्ष्मी, विद्या, शक्ति सब का प्रस्थान हो गया है हम इतने अकर्मण्य हो गये हैं कि अपने जान माल स्त्री परिवार और अपने आप तक की रक्षा करने की सामर्थ्य हमारे बाहुओं में नहीं रही। यहां पर प्रश्न हो सकता है कि ब्रह्मचर्य अर्थात् विवाह न करने का नाम ही ब्रह्मचर्य नहीं ब्रह्मचर्य का बड़ा व्यापक अर्थ है विवाहित एवं गृहस्थी मनुष्य भी ब्रह्मचारी हो सकते हैं इस बात को पूर्ण स्पष्ट करने के लिये यहां ब्रह्मचर्य की व्याख्या करनी आवश्यक है । और ब्रह्म और चर्य इन दोनो शब्दों के संयोग से ब्रह्मचर्य पर एक शब्द बना है इन दोनों शब्दों के कई अर्थ हैं परन्तु उन में से प्रधान ही नहीं है । ब्रह्म का अर्थ है ईश्वर वेद और वीर्य तथा चर्य्य का अर्थ है चिन्तन अध्ययन और क्षण इन के अतिरिक्त अन्य भी बहुत से अर्थ है पर प्रधान रूप से इन्हीं तीनों अर्थों के लिये ब्रह्मचर्येण शब्द का प्रयोग किया जाता है सो ब्रह्मचर्य्य इस शब्द का अर्थ हुवा ईश्वर चिन्तन, वेदाध्ययन एवं वीर्य्य रक्षण, इन, तीनों में से एक का भी परित्याग करने वाला पूर्ण ब्रह्मचारी नहीं कहा जा सकता । इस से विद्वान् जन स्वयं ही विवेचन कर सकते हैं कि हमारे वर्तमाम शिक्षणालयों में हमारे किस प्रकार के ब्रह्मचर्य्य की कितनी और किस अंश तक रक्षा की जाती है। उक्त ब्रह्मचर्य का पुनरागमन कराने के लिये अपनी खोई हुई नष्ट प्रायः शक्तियों को पुनरपि हस्तगत करने के लिये गुरुकुलों की परमावश्यकता है। हमारे पूज्यपाद गुरु आदर्श ब्रह्मचारी ऋषि दयानन्द एक ही थे परन्तु उन्होंने सकल जगतीतल को अपनी तेजस्विनी वाणी अपनी अपूर्व प्रतिभा शक्ति से प्रकम्पित कर दिया इस समय ऐसा कोई नहीं जो कि ऋषि दयानन्द की अकाट्य युक्तियों का खण्डन कर सके और दिल से उसे एक सच्चा वीर न समझे । सो उन्हीं के पदानुगामी जन उत्पन्न करने के लिये गुरुकुल की सृष्टि है।

मातृमान् पितृमान् आचार्यवान् पुरुषो वेद ॥

के अटल सिद्धान्त का वास्तविक रूप दर्शाने का गुरुकुल आदर्श रखता है । जहाँ माता पिता जानते भी न हों कि हमारा बालक प्रातः से घर से गया है, स्कूल गया है या कहीं टक्करें ही मार रहा है। जो माता पिता केवल बालक को स्कूल या कालेज में भेज कर ही अपने कर्तव्य की इतिश्री समझते हों जो गुरु पुस्तकें रटवा कर अपने विषय को तैयार करवा लेने मात्र में अपना परिश्रम सफल समझते हों वहां से पुरुषो वेद इस सिद्धान्त के सफल होने की आशा अति कठिन है, यह बात किसी भी संस्था विशेष के अनुचित पक्ष पात वश या पर शेष निरूपण बुद्धि से नहीं की गई बल्कि जो चीज जैसी है उस का वास्तविक स्वरूप

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्रदर्शित करना मात्र ही इस का उद्देश्य है। वर्तमान जगत को बड़ी बड़ी उपाधियों की आवश्यकता नहीं है आवश्यकता है केवल आत्मिक मानसिक तथा शारीरिक तुष्टि की जो कि इस समय आकाश कुसुम सदृश हो रही है और वह प्राप्त हो सकती है केवल पूर्ण ब्रह्मचर्य के पालन और वेद के कथनानुसार चलने से, अन्य कोई भी उपाय इस अनमोल रत्न को प्राप्त करने का नहीं। पूर्ण ब्रह्मचर्य्य तथा वेद विद्या के पिपासु जनों की कामनाओं को पूर्ण करने में तथा अन्यों के मन में इन दोनों बातों की इच्छा को उत्पन्न कराने में संकटानुकूल विविध बाधा संकुल या हमारा यह नागरिक जीवन अथवा अंगरेजी की उच्चाति उच्च शिक्षा कदापि समर्थ नहीं। उसी के प्राप्त कराने के उद्देश्य को लक्ष्य में करके गुरुकुल की निर्मित है। इस में सन्देह नहीं कि जो २ विद्यायें कलायें गुरुकुल में पढ़ाई लिखाई जाती हैं। वे सभी उसी रूप में बल्कि इस से भी बढ़े चढ़े रूप में सर्व साधारण जनता घर बैठे भी पा सकती है। पर गुरुकुलों का आदर्श तथा अन्यों से विशेष वैदिक धर्म का पुनरुद्धार ही है जो अनुपम रत्न काल चक्र से धूलि में छिपे पड़े हैं उन्हें खोज निकालना तथा परिणाम स्वरूप आत्मिक मानसिक शान्ति का समधिगम करना है। जो कि पूर्व शिक्षणालयों में दुर्लभ रही। इसको कोई नहीं कह सकता कि गुरुकुल अपने इस उद्देश्य में कहाँ तक सफल हुवा और पूर्ण सफल कब तक हो सकेगा पर एक दिन ऐसा अवश्य होगा कि वैदिक धर्म के उद्धारक होंगे, आनन्द कन्द ऋषि दयानन्द सरस्वती जी महाराज तथा उस के प्रचारक गुरुकुलों के शिक्षित तथा पूर्ण ब्रह्मचारी होंगे और तभी संसार से कलि का साम्राज्य दूर होकर सब युग का पुनरपि पदार्पण होगा।

आर्य-धर्म-प्रचार के साधन

[श्रीयुत महाराज कुमार उम्मेदसिंह जी शाहपुरा स्टेट]

मान्य देवियो और भद्र पुरुषो ! मैं अपना परम सौभाग्य समझता हूँ कि स्वर्गीय पूज्यपाद धर्मवीर स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज द्वारा स्थापित इस गुरुकुल के वार्षिकोत्सव में सम्मिलित होने का मुझे उत्तम अवसर प्राप्त हुआ है। मेरी अपेक्षा बहुत अधिक योग्य अनुभवी और प्रसिद्ध महानुभावों के होते हुए भी आपने इस आर्य-धर्म-प्रचार-सम्मेलन के सभापतित्व के लिये मुझे चुनने की कृपा की है इस के लिये मैं आपको शतशः धन्यवाद देता हूँ और इसे केवल आपके मुझ पर स्नेह का, न कि अपनी योग्यता का सबसे बड़ा प्रमाण समझता हूँ। इस सम्मेलन का मुख्य उद्देश्य आर्य-धर्म के प्रचार के साधनों पर विशेष विचार करना है। प्रारम्भ में आर्य-धर्म के महत्व और उसके प्रचार की आवश्यकता के सम्बन्ध में दो-चार शब्द कहना अनुचित न होगा।

आर्य-धर्म का सबसे बड़ा महत्व यही है कि यह सब आर्यों में सार्वभौम है। इसमें यही शिक्षा

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मुख्यतया दी गई है कि सब-के-सब मनुष्य चाहे वे किसी देश व जाति वा रंग के हों एक ही परमेश्वर के पुत्र और इसलिये आपस में भाई हैं उनमें जन्म से किसी तरह की ऊँच-नीच नहीं है। 'शृण्वन्तु विश्वे अमृतस्य पुत्राः' 'अज्येष्ठासो अकनिष्ठास एते सं भ्रातरो वावृधुः सौभगाय' इत्यादि वेदों के पवित्र मन्त्र स्पष्ट शब्दों में इसी उच्च-शिक्षा को हमारे सामने रखते हैं। आर्य-धर्म की इस पवित्र शिक्षा को भुला कर हजारों जातियों और उप-जातियों में अपने को बाँट लेने से ही अब हमारी इतनी दुर्गति हो गई है। इसमें ज़रा भी सन्देह नहीं। आर्य-धर्म का पवित्र सन्देश मनुष्य-मात्र के लिये है। आर्यसमाज के द्वार सबके लिये समान रूप से सदा खुले हुए हैं। वेदों को पढ़कर और सुनकर अपने जीवन को पवित्र बनाना यह प्रत्येक व्यक्ति का अधिकार और कर्तव्य है।

आर्य-धर्म की दूसरी विशेषता यह है कि यह विशुद्ध रूप से एक ईश्वर की उपासना करना सिखाता है। इसकी शिक्षा है कि परमेश्वर इस जगत् का कर्ता-धर्ता और संहारक है। वह सर्वव्यापक सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान् है। उसी एक की सबको श्रद्धा-भक्तिपूर्वक उपासना करनी चाहिये। इस पवित्र शिक्षा को भुलाकर सैंकड़ों देवी-देवताओं की पूजा से जो विरोध-भाव बढ़ता है और दूसरे नुक्सान होते हैं उनको आप अच्छी तरह जानते हैं। अन्य सम्प्रदायों की तरह ईसा-मसीह इत्यादि व्यक्तियों की ईश्वर के समान पूजा करना यह धर्म नहीं सिखाता।

आर्य-धर्म की तीसरी विशेषता यह है कि यह ज्ञान और कर्म, त्याग और भोग, श्रद्धा और तर्क इत्यादि के परस्पर विरोध को न मानकर मध्य मार्ग का उपदेश करता है, जिस पर चलने से ही मनुष्य-मात्र का कल्याण हो सकता है और संसार में शान्ति के राज्य की स्थापना हो सकती है। एक आर्य-धर्म ही है जिसका यह दावा है कि इसके सिद्धान्तों का सायन्स और फ़िलासफ़ी से विरोध नहीं और इसके सब विश्वास तर्क की कसौटी पर कसे जा सकते हैं।

इस प्रकार की सैंकड़ों विशेषताएँ इस पवित्र आर्य-धर्म की हैं जिनके विस्तार से वर्णन करने का यह समय नहीं। इसमें कोई शक नहीं हो सकता कि ऊपर कही हुई शिक्षाओं के द्वारा ही संसार में सुख और शान्ति को फैलाया जा सकता है, इसलिये आजकल जब कि सब जगह देश और विदेशों में अशान्ति फैली हुई है, कल्पित ऊँच-नीच के भावों से प्रेम घट रहा है, जातियों और राष्ट्रों में परस्पर ईर्ष्या-द्वेष की आग भड़कती हुई दिखाई देती है, इस बात की बड़ी भारी आवश्यकता है कि आर्य-धर्म की पवित्र शिक्षाओं का अच्छी प्रकार प्रचार किया जाए, वेद का पवित्र सन्देश जनता के सामने रक्खा जाए और सारी बुराइयों को दूर करने का भरसक यत्न किया जाय।

प्रचार के मुख्य साधन और ईसाईमत के इतिहास से शिक्षा

आर्य-धर्म के महत्व और उसके प्रचार की

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

आवश्यकता पर दो-चार शब्द कहने के बाद अब हमें प्रचार के साधनों पर थोड़ा विचार करना चाहिए। इस सम्बन्ध में यदि हम दूसरे मतों के प्रचार के इतिहास पर दृष्टि डालें तो उससे भी हमें बहुत फ़ायदा हो सकता है। उदाहरण के तौर पर हम बौद्धमत के प्रचार के इतिहास को ले सकते हैं। क्या कारण है कि इस समय भी संसार का लगभग ⅓ हिस्सा बौद्धमत का मानने वाला अपने को कहता है यद्यपि इसमें सन्देह नहीं कि अब उसमें कई विकार पैदा हो गये हैं! क्या कारण है कि बौद्धमत का भारत में ही नहीं बल्कि चीन, जापान, ब्रह्मा, आसाम, सीलोन, यूनान तथा संसार के अन्य भागों में अब से भी कई गुणा ज्यादह प्रचार हो चुका था? इसके मुख्य कारण ४ थे। पहला यह कि इसके अनुयायियों में स्वार्थ-त्याग और अपने धर्म के लिये उत्साह बहुत ही अधिक था। प्रचारक अथवा भिक्षु बनने को बहुत पवित्र और ऊँचा काम समझा जाता था और बड़े-बड़े धनी प्रतिष्ठित घरानों में से लोग इसके लिये तय्यार होते थे। महाराज अशोक के पुत्र-पुत्रियों ने किस तरह अपने सांसारिक सुखों को लात मारकर प्रचार के काम में अपने को लगा दिया इस बात को आप अच्छी तरह जानते होंगे। हज़ारों कष्टों को खुशी से झेलते हुए बुद्ध भगवान् के अनुयायी दूर-दूर देशों में जाकर अपने आचार्य का शान्तिदायक सन्देश लोगों को सुनाते थे इसलिये बौद्धमत का इतना अधिक और इतनी जल्दी संसार में प्रचार हो गया।

दूसरा मुख्य-साधन जो बौद्धमत के प्रचार के लिये काम में लाया गया वह नालन्दा और विक्रमशिला जैसे बड़े-बड़े विश्वविद्यालयों और विद्यापीठों की स्थापना थी, जहाँ विज्ञान, ज्योतिष, गणित, इतिहास, तर्कशास्त्र इत्यादि विषयों के साथ-साथ बौद्ध-साहित्य को पढ़ाने का विशेष रूप से प्रबन्ध था। जिन महानुभावों ने आगे भिक्षु वा प्रचारक बनकर देश-देशान्तरों और द्वीप-द्वीपान्तरों में बुद्ध भगवान् के सन्देश को पहुँचाने का बीड़ा उठाया वे प्रायः सब-के-सब इस प्रकार के विश्वविद्यालयों में विद्या पाये हुए थे। दूर-दूर देशों से विद्यार्थी इन संस्थाओं में पढ़ने के लिये आते थे और इस प्रकार बौद्धमत के प्रचार में पूरी सहायता देते थे।

तीसरा मुख्य-साधन जिसे बौद्धमत के प्रचार के लिये काम में लाया गया वह बौद्ध-साहित्य का संसार की सब प्रचलित प्रसिद्ध भाषाओं में अनुवाद करना था। पाली, चीनी, तिब्बती, संस्कृत इत्यादि भाषाओं में बौद्धमत विषयक अच्छे-अच्छे ग्रंथ हज़ारों की संख्या में तय्यार कराये गये और उनके द्वारा प्रचार में बड़ी भारी सहायता मिली। ऊँचे-से-ऊँचे विचारकों का भी बौद्धमत की ओर झुकाव कराने के लिये बौद्ध-दर्शन इत्यादि सैंकड़ों पुस्तकें दार्शनिक दृष्टि से लिखी गईं।

चौथा साधन जो बौद्धमत के प्रचार और खासकर बौद्धों के संगठन को दृढ़ कराने तथा उनके आपस के झगड़ों को निपटाने इत्यादि के लिये काम में लाया गया। वह समय-समय पर महासभाओं का

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बुलवाना था जिनमें सब विषयों और समस्याओं पर मिलकर विचार किया जाता था और फिर निश्चय की घोषणा की जाती थी। इसके अतिरिक्त धर्मार्थ औषधालय इत्यादि के द्वारा भी बौद्धमत के प्रचार का यत्न किया गया। आर्य-धर्म के प्रचार के लिये हम इन सब साधनों को काम में भली प्रकार ला सकते हैं। सबसे पहले इस बात की ज़रूरत है कि आर्यों में अपने धर्म के लिये सच्ची लगन पैदा हो। धर्म के प्रचार को वे अत्यन्त पवित्र कार्य समझें। अच्छे-अच्छे प्रतिष्ठित कुलों के व्यक्ति अपने पुत्रों को इस पवित्र कार्य के लिये प्रेरित करें। आज अभी ऐसी अवस्था नहीं है। धर्म-प्रचार के लिये उतना उत्साह, त्याग और जोश हमारे अन्दर नहीं पाया जाता। जितना बुद्ध-भगवान् के अनुयायियों में पाया जाता था। प्रचारक के कार्य को अभी उतने आदर की दृष्टि से नहीं देखा जाता जिसके यह योग्य है जिसका एक कारण कइयों का अपनी ज़िम्मेवारी को ठीक तौर पर न समझना भी है।

बौद्धमत के प्रचार के लिये जिस दूसरे साधन का ऊपर ज़िकर किया गया है वह बड़ा ही महत्व-पूर्ण है जिस प्रकार नालन्दा, विक्रमशिला इत्यादि विश्वविद्यालयों द्वारा बौद्धमत के प्रचार में सबसे अधिक सहायता मिली। इसी तरह मेरा विश्वास है कि गुरुकुल जैसी संस्थाओं से ही आर्य-धर्म के प्रचार में सबसे अधिक सहायता मिल सकती है। जो प्रचारक बनना चाहते हैं उनकी योग्यता बहुत-ही अधिक होनी चाहिये। सब आवश्यक विषयों और धर्म-ग्रंथों का ज्ञान होना चाहिये। आवश्यक प्रचलित भाषाओं का जानना भी उनके लिये बहुत ज़रूरी है। इन सब आवश्यकताओं को गुरुकुल जैसी संस्थाएँ ही पूरा कर सकती हैं। इस प्रकार की संस्थाओं के विद्यार्थियों के अन्दर जितनी उदारता और किसी भी विषय को ठीक तौर पर अनेक दृष्टियों से विचार करने की शक्ति आ सकती है उसकी दूसरी जगह उतनी सम्भावना नहीं है इस-लिये गुरुकुल जैसी संस्थाओं की तन-मन-धन से सहायता करना प्रत्येक धर्म-प्रेमी आर्य का एक आवश्यक कर्तव्य है इस कर्तव्य का जितनी अच्छी तरह से पालन किया जायगा उतना ही अधिक लाभ होगा।

तीसरा आर्य-धर्म को फैलाने का साधन इस के अच्छे साहित्य को तय्यार करना है। बौद्ध मत का प्रचार करने के लिए उस समय की सब मुख्य मुख्य प्रचलित भाषाओं में उस का साहित्य तैयार किया गया। आज आर्य-धर्म के साहित्य की जो अवस्था है उसे कौन सन्तोष जनक कह सकता है? इस समय अंग्रेजी भाषा संसार की अत्यन्त आवश्यक भाषाओं में से है इस से कोई इन्कार नहीं कर सकता परन्तु अभी तक अंग्रेजी में आर्य-धर्म का साहित्य कितना थोड़ा है? सब आर्य वेदों को ईश्वरीय ज्ञान और परम पवित्र धर्म ग्रन्थ मानते हैं, उन की शिक्षाओं के प्रचार होने से ही संसार का सच्चा कल्याण हो सकता है ऐसा सब का विश्वास है। तो भी वेद के विषय में कितनी भाषाओं में

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हम ने साहित्य तय्यार कराया है ? आर्य समाज के प्रचारक जब वेदों का महत्व जनता के सामने रखते हैं तो बहुत से विद्वानों की वेदों को पढ़ने की इच्छा उत्पन्न होती है। आर्य भाषा अथवा संस्कृत का ज्ञान न रखने वालों के लिए आज हम वेदों का कौनसा अनुवाद रख सकते हैं ? सारे वेदों के अनुवाद की तो बात ही जाने दीजिये उनके चुने हुए भागों की व्याख्या भी सिवाय एक आध पुस्तक के अब तक अंग्रेजी में नहीं हुई। आर्य-समाज के सिद्धान्तों की व्याख्या में भी अभी तक अंग्रेजी में बहुत ही थोड़ी पुस्तकें लिखी गई हैं जिन्हें अंगुलियों पर गिना जा सकता है। वैज्ञानिक और दार्शनिक दृष्टि से लिखी हुइ पुस्तकें और भी थोड़ी हैं। गुजराती बंगाली मराठी तथा मद्रास प्रान्त की भाषाओं में भी आर्यसमाज का साहित्य अभी बहुत ही थोड़ा है। आर्य-धर्म के प्रचार में यह एक बड़ी भारी रुकावट है, जिसे जितनी जल्दी दूर किया जा सके उतना अच्छा है। इस बात का भी ख्याल रखना चाहिये कि पुस्तकों का मूल्य इतना थोड़ा रक्खा जाए जिस से सर्वसाधारण गरीब लोगों को भी उन्हें लेने में दिक्कत न हो। इस विषय में ईसाई प्रचारक संस्थाओं से हम बहुत कुछ सीख सकते हैं।

प्रचार के ऊपर कहे हुए साधनों को ही ईसाईयत के प्रचारार्थ भी काम में लाया गया। आज लाखों की संख्या में सुशिक्षित, योग्य, प्रतिष्ठित कुलों के ईसाई प्रचारक प्रायः अविवाहित रह कर दूर २ देशों में प्रचार कर रहे हैं। हजारों संस्थाएँ इसी के लिये अपना सर्वस्व खर्च कर रही हैं। सैकड़ों विद्यालय और महाविद्यालय ईसाई प्रचारकों को शिक्षित करने के लिए खुले हुए हैं। छोटी से छोटी ग्रामीण भाषाओं में बाइबल के अनुवाद तैय्यार हैं जो नाम मात्र दाम पर बेचे जाते हैं। हजारों अनाथालय और धर्मार्थ औषधालय तथा कारखाने इत्यादि ईसाईयों की ओर से खुले हुए हैं जो ईसाईयत के प्रचार के साधन बनाये जा रहे हैं। कथा कहानी, प्रश्नोत्तरी नाटक, उपन्यास, दार्शनिक हर तरह की पुस्तकों के द्वारा ईसाईयत का प्रचार जोर शोर से किया जा रहा है। आवश्यकता है कि आर्यों में भी धर्म के लिये वह सच्ची लगन और स्वार्थ त्याग का भाव उत्पन्न हो। आर्य विद्वान बड़ी संख्या में प्रचार के कार्य को महत्व पूर्ण समझते हुए अपने हाथ में लें। भारत के सब प्रान्तों के अतिरिक्त अफ्रीका, फ़िजी, मारीशस, ब्रिटिश ग्याना इत्यादि उपनिवेशों और यूरोप, अमेरिका आदि में भी आर्य-धर्म के प्रचार का अच्छी तरह प्रबन्ध किया जाए। प्रत्येक आर्य-परिवार में से यदि कम से कम एक योग्य व्यक्ति इस पवित्र कार्य के लिए अपने जीवन को अर्पण करने का निश्चय करे तो बहुत जल्दी प्रचारकों की एक बड़ी संख्या तैय्यार हो सकती है। आर्य-धर्म के प्रचार के साथ साथ आर्यभाषा का प्रचार और आर्य-सभ्यता की रक्षा का यत्न भी जारी रहना चाहिये। उपनिवेशों में जहाँ लोग अपनी सभ्यता को लगभग भूल चुके हैं और अपनी भाषा से भी इतने ही अनभिज्ञ हैं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

इन दोनों की बड़ी सख्त ज़रूरत है।

एक और बात जिस की ओर आर्य-धर्म-प्रचार के इस प्रकरण में ध्यान खैंचना आवश्यक मालूम होता है, वह यह है कि स्त्रियों के अन्दर भी आर्य-धर्म के लिये प्रेम पैदा करने का विशेष यत्न किया जाए। स्त्रियों के हृदय में श्रद्धा का भाव साधारण तया पुरुषों की अपेक्षा ज्यादह होता है इस लिये यदि वे आर्य-धर्म के महत्व को समझकर उसके अनुसार अपने जीवनों को बनाने लगें तो आर्य-धर्म के प्रचार में बहुत ही सहायता मिल सकती है। स्त्रियों के लिए विशेष तौर पर बहुत सुगम भाषा में और सरल तरीके पर धार्मिक साहित्य तय्यार किया जाना चाहिये। पारिवारिक उपासना इत्यादि तरीकों से स्त्रियों में धर्म-प्रेम पैदा किया जा सकता है। इस आवश्यक विषय की ओर अभी तक काफ़ी ध्यान न देने का ही यह परिणाम है कि अब तक सच्चे आर्य-परिवारों की संख्या बहुत कम है और लोगों को इस विषय में तरह २ के आक्षेप करने का मौका मिलता है।

उपसंहार—

अन्त में मैं इतना ही कहना चाहता हूँ कि आर्य-धर्म के सब साधनों को काम में लाकर इसे सार्वभौम बनाने की शीघ्र कोशिश करनी चाहिये। 'सारे संसार को आर्य बनाते हुए तुम विचरण करो' वेद भगवान के इस पवित्र आदेश का शीघ्र पालन होना चाहिये। दलितोद्धार, शुद्धि इत्यादि आन्दोलनों को और अधिक जोर के साथ चलाना चाहिए। इस बात की ओर मैं विशेष ध्यान सब आर्यों का खैंचना चाहता हूँ कि केवल शुद्धि-संस्कार कर लेने से ही शुद्धि नहीं हो जाती। जिन विधर्मियों अथवा दलित भाईयों को शुद्ध किया जाता है उन्हें पूरी तरह अपने में मिला लेना चाहिए, ऐसा न हो कि वे न इधर के ही रहें न उधर के और उन्हें बाधित होकर फिर अपने पुराने मत में जाने की ज़रूरत पड़े अथवा उन की अलग ही एक जाति बन जाए जिस के कई उदाहरण मिलते हैं। इस प्रकार के उदाहरण आर्य-धर्म के प्रचार में बाधक है। इस लिये इस विषय में हमें सावधान होने की आवश्यकता है।

परमेश्वर करे कि सब के अन्दर इस परम पवित्र आर्य-धर्म के लिये ऐसा प्रेम पैदा हो जाए कि वे इस के लिये सर्वस्व तक अर्पण करने को उद्यत रहें। इस के लिये बड़े से बड़े कष्टों को भी प्रसन्नता पूर्वक सहन करें और अपने पवित्र जीवनों द्वारा इस के प्रचार में विशेष सहायक हो सकें।*

*गुरुकुलविश्वविद्यालय के गत वार्षिकोत्सव पर ६ एप्रिल १९२८ को आर्य-धर्म प्रचार सम्मेलन सभापति पद से दिया हुवा भाषण।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

'मनु' तथा 'इन्द्र'

[ले० प्रो० सत्यव्रत जी सिद्धान्तालंकार]

प्रत्येक भारतीय ने 'मनु' महाराज का नाम कई वार सुना है । उन्हीं के नाम से 'मनुस्मृति' नामक ग्रन्थ प्रसिद्ध है जिस में वैयक्तिक, सामाजिक, धार्मिक तथा राजनैतिक नियमों का विधान है। प्रायः यह समझा जाता है कि मनु महाराज कोई एक व्यक्ति हुए है जिन्होंने भारत में शासन के नियमों का निर्माण कर अव्यवस्था को दूर किया। प्रकरण प्राप्त न होने के कारण हम यहां पर इस विषय की आलोचना नहीं करना चाहते । हमारा मत यह है कि मनु नाम से कोई एक ही व्यक्ति हुए हों, ऐसा नहीं है। व्यास,—गद्दी का नाम पड़ गया, शंकराचार्य भी गद्दी का नाम ही है, इसी प्रकार 'मनु' शब्द भी एक गद्दी के लिए प्रयुक्त होता रहा है। मनु शब्द की व्युत्पत्ति 'मन्' धातु से होती है। संस्कृत में इस शब्द का अर्थ मनन करना, नियम बनाना अथवा legislate करना है । मनु शब्द का धात्वर्थ ही नियामक अथवा legislator है। इन अर्थों में मनुस्मृति उस ग्रन्थ का नाम है जिस में भारत के प्रसिद्ध मनुओं के बनाए हुए नियमों का संग्रह हो। मनु जो कोई भी बन सकता था, परन्तु ऐसा बनने के लिए देशान्तरों के शासन सम्बन्धी नियमों का तुलनात्मक अध्ययन करने की योग्यता अपेक्षिक होती थी। जिस व्यक्ति में इतनी योग्यता पायी जाती थी उसी को 'मनु' अर्थात् legislator की पदवी से विभूषित किया जाता था और उस के निर्दिष्ट किए हुए नियमों पर यथावत् विवेचन करके उनका समाज में प्रयोग प्रारम्भ हो जाता था । जिस प्रकार ईजिप्ट के राजाओं को फैरोहा कहा करते थे, पारसियों के शक्तिशाली राजाओं को क्सरसी कहते थे, हिन्दुओं में शस्त्र से देश–रक्षा तथा देश–विस्तार करने वालों को क्षत्रिय नाम से पुकारते थे, इसी प्रकार नियमों के निर्माण में प्रचुर गति रखने वाले विद्वानों को मनु कहा करते थे।

ईजिप्शियन, यहूदी तथा ग्रीक हमारे कथन की पुष्टि करते हैं। ईजिप्ट को शासन के नियम देने वाला मेनीज़ [Manes] था, जो कि मनु के अतिरिक्त दूसरा कोई न था । हमारे कथन का यह अभिप्राय नहीं कि भारतवर्ष से मनु महाराज ही ईजिप्ट चले गये थे। अभिप्राय इतना ही है कि भारतवर्ष में नियमों की रचना करने वाले को 'मनु' कहा जाता था, इस लिये ईजिप्शियन लोगों ने भी अपने देश में शासन की व्यवस्था करने वाले को 'मेनीज' नाम देना पसन्द किया। यहूदियों

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

में नियमों का विधान करने वाला (law-giver) मूसा (Moses) है । बाइबल के पुराने अहदनामे के अनुसार 'मूसा' ही परमात्मा (जिहोवा) के पास जाकर दस आज्ञाओं [Ten Commandments] को लाया था । यहूदियों ने भी अपने नियमों के उपदेष्टा को मनु का ही नाम दिया जो उनकी भाषा में 'मूसा' के रूप में प्रचलित हुआ । ग्रीक लोगों का नियम-प्रवर्तक माइनोस (Minos) कहाता है । ग्रीक इतिहास के अनुसार 'माइनोस' पूर्व की तरफ से क्रीट शहर में आकर रहने लगा । उसकी विद्वत्ता से प्रभावित होकर शहर के निवासिओं ने उस से नियन्त्रण के नियम बना देने का अनुरोध किया । इस अनुरोध को देख कर उसने उनसे कुछ मोहलत माँगी और यात्रा करता हुआ ईजिप्ट जा निकला । ईजिप्ट में जाकर उस ने उस देश के नियमों का खूब बारिकी से अध्ययन किया । ईजिप्ट से लौट कर वह एसिया, पर्शिया होता हुआ सिन्धु नदी के तटों पर भ्रमण करता रहा । इतने लम्बे चौड़े पर्यटन के अनन्तर वह फिर क्रीट को लौट कर चला गया जहाँ जा कर उसने देश के लिये नियमों की रचना की । उन नियमों को सारे ग्रीस ने स्वीकार कर लिया । इन घटनाओं को पढ़ते हुए विद्यार्थी के हृदय में तरह २ के भाव उठते हैं । ग्रीस का वह विद्वान् ईजिप्ट के शासकों से मिलता हुआ भारत में पहुंचा । हो न हो, अवश्य ईजिप्ट के धुरन्धर पण्डितों ने उसे अपने पाण्डित्य को पूर्ण करने के लिए विद्या की खान भारतवर्ष की तरफ संकेत किया होगा । इसी लिये तो वह महानुभाव एशिया को पार कर सिन्धु के किनारों की राख छानता रहा । जब सब देशों में भ्रमण कर देश को नियन्त्रण म रखने वाले नियमों का उस ने तुलनात्मक अध्ययन कर के उन्हें ग्रीस की प्रजा के सन्मुख रखा होगा तब उस पूजा ने भी स्वाभाविक तौर से उसे मनु (Minos) की पदवी से विभूषित किया होगा ।

इस प्रकार समझ आ जाता है कि हिन्दुओं का 'मनुः' ईजिप्शियनों का 'मेनीज़' , ग्रीक लोगों का 'माइनोस' तथा यहूदियों का 'मोज़ेज'-चारों के चारों एक ही मनु शब्द के अपभ्रंश हैं और उन २ देशों में व्यवस्था के नियम बनाने वाले भिन्न २ व्यक्तियों के लिये प्रयुक्त होते रहे हैं। 'मेनीज़' 'माइनोस' और 'मोज़ेज़' ये नाम बचपन से ही नहीं रखे गये थे परन्तु जब वे २ व्यक्ति नियमों के निर्माता बने तब भारतवर्ष की प्रचलित प्रथा के अनुसार उन का नाम मनु या Legislator रखा गया ।

जिस प्रकार 'मनु' का नाम भिन्न २ रूप धारण कर संसार की समुन्नत सभ्यताओं का शासन करता रहा है । इसी प्रकार 'इन्द्र' देवता का विचार भी प्रायः सभी पुराने धर्मों में पाया जाता है । दूसरे धर्मों में इन्द्र का स्थान समझने के लिये हमें भारतीय देवमाला में इन्द्र का स्वरूप समझ लेना चाहिये । संस्कृत में इन्द्र के लिये 'द्यौः' 'दिवस्पितर' 'इन्द्र'-'वज्री' आदि शब्द पाये जाते हैं। पुराणों ने

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

इन्द्र को स्वर्ग का अधिपति बतलाया है—वह स्वर्ग का राजा है, देवताओं में बहुत ऊँचे स्थान का अधिकारी है। इन्द्र के कब्जे में बहुत सी अप्सरायें भी हैं। साधु, सत्पुरुषों का व्रत-भंग करने के लिये इन्द्र उन का दुरुपयोग करता ही रहता है। द्युलोक में उस का निवास-स्थान है। वह बिजुली की कड़क में कभी-कभी अपने उग्र-रूप की झाँकियाँ दिखलाया करता है।

'द्यौः' की विसर्गों को यदि 'स्' कर दिया जाय तो 'द्यौः' शब्द का रूप 'द्यौस्' हो जाता है द्यौस् का अपभ्रंश 'द्युस्'-'दिउस्' होना कठिन नहीं है। 'दिउस्' बन कर ग्रीस में यही देवता 'ज़िउस' (Zeus)बनगया और पूजा जाने लगा। ग्रीक-शब्द-शास्त्र के अनुसार (Zeus) शब्द की व्युत्पत्ति (Dios) से होती है अतः यह मानने में तनिक भी सन्देह नहीं रह जाता कि ग्रीक लोगों का सब से मुख्य देवता 'जीयस' वैदिक 'द्यौस्' का ही अपभ्रंश है। ग्रीक लोगों को छोड़ दें, रोमन लोगों के यहां भी इन्द्र देवता की पूजा होती दिखाई देती है। रोम का मुख्य देवता 'जुपिटर' (Jupiter) था। यह 'जुपिटर'-'द्युपितर'-दिवस्पितर' नहीं तो और क्या है ? इन्द्र देवता ही 'ज़ीयस' नाम से ग्रीस में तथा 'जुपिटर' नाम से रोम में पूजा जाता था, इस में क्या अब कुछ भी सन्देह रह जाता है ? इन सब शब्दों की परस्पर समता विलक्षण है, उसे देख कर किसी भी ढंग से उसे आकस्मिक नहीं कहा जा सकता। इस के अतिरिक्त इन भिन्न भिन्न देवताओं को सन्मान भी तो इन्द्र का सा ही दिया गया है ! इन सब से काम भी वही कराये गये हैं। रोम के प्रसिद्ध कवि ओविड ने जुपिटर को देवताओं में मुख्य दर्शाया है। सारी देव-मण्डली उसे अपना मूर्धन्य मानती है। जुपिटर बारम्बार बिजली की सी गर्जन करता है— स्मरण रहे कि इन्द्र भी वज्री है 'वज्र' अर्थात् 'विद्युत्' के शस्त्र को धारण कर नभोमण्डल में हृदय को कंपा देने वाले घनघोर नाद को किया करता है। ओविड ने जुपिटर को आचार में भी शिथिल दिखाया है। जब हम स्मरण करते हैं कि इन्द्र के दरबार में भी अप्सराओं की भरमार रहा करती थी, वह दूसरों के आचारों को गिराने के लिये प्राणपन से प्रयत्न किया करता था। और साथ ही स्वयं भी कई वार आचार भ्रष्टता के गढ़ों में गिरा करता था, तब तो हमें इस बात में ज़रा भी सन्देह नहीं रहता कि हो न हो, यह जुपिटर पुराणों के इन्द्र देवता के अतिरिक्त दूसरा कोई नहीं है।

ग्रीकों का 'ज़ीयस' रोमनों का 'जुपिटर' हिन्दुओं के 'इन्द्र' देवता के ही दूसरे नाम हैं। इन के अतिरिक्त यहूदियों का जिहोवा 'Jehovah' भी 'द्यौः' का ही अपभ्रंश मालूम पडता है। जिस प्रकार 'द्यौः' का अपभ्रंश 'जीयस' हो सकता है इसी प्रकार 'जिहोवा' भी हो सकता है— शब्द समानता तो इस कल्पना में समर्थक है ही परन्तु जिहोवा का वर्णन भी उसे हिन्दुओं के 'द्यौः' (इन्द्र) का ही अपभ्रंश सिद्ध करता है। यहूदियों के पुराने अहदनामे (Old Testament) में जिहोवा का

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वर्णन बादल, आग और बिजली के रूप में पाया जाता है। पुराना–अहकनामा इस विषय में तो कम से कम बड़ी परिपुष्ट सम्मति देता है कि जिहोवा कोई भी हो-वह 'वैदिक-देवता' तो अवश्य था। बाइबल की (Exodus) पुस्तक के तीसरे अध्याय की चौथी आयत में जिहोवा मूसा को सम्बोधन कर के कहता है कि मेरा नाम— 'I Am That I Am' या 'I Am' है। इस के लिये जिन शब्दों का प्रयोग है वे ध्यान देने योग्य हैं। वे शब्द हैं। 'Ehyeh ashar ehyeh' 'अयः अशर अयः'। पारसियों की ज़िन्दावस्था में परमात्मा अपने बीस नाम गिनाता हुआ प्रथम नाम 'अह्मि' गिना कर आगे चल कर 'अह्मि यद् अह्मि' यह नाम गिनाता है। पारसी साहित्य से परिचिति रखने वाले पाठकों को विदित होगा कि संस्कृत का 'स' ज़िन्द भाषा में जाकर 'ह' बन जाता है। इस प्रकार 'अह्मि यद् अह्मि' का रूप-'अस्मि यद् अस्मि'-यह बनता है। यह नाम ही यहूदियों के यहां उस रूप में पाया जाता है जिस का हमने ऊपर उल्लेख किया परन्तु प्रारम्भ में यह यजुर्वेद से लिया गया ! यजुर्वेद के २ रे अध्याय का २८ वां मंत्र है, "इदमहं य एवास्मि सोऽस्मि"। क्या यह वेदमंत्र और पारसियों का 'अह्मि यदह्मि' एक ही नहीं है ? यदि एक ही है तो मानना पड़ता है कि पारसियों तथा यहूदियों ने इसी मंत्र के आधार पर अपने देवता का नाम 'अह्मि यदह्मि'— 'I Am That I Am' रखा। कम से कम इस में सन्देह नहीं रह जाता कि यहूदियों का 'जिहोवा' कोई न कोई वैदिक देवता था। जो कुछ हम ऊपर लिख आये हैं उसके आधार पर हम यह कहने का साहस करते हैं कि वह देवता इन्द्र ही था। इन्द्र ही का 'द्यौः' नाम ग्रीकों के यहां 'ज़ीयस' पड़ा, इन्द्र ही का 'दिवस्पितर' नाम रोमनों के यहां 'जुपिटर' पड़ा और इन्द्र का 'द्यौः' नाम ही यहूदियों में जा कर 'जिहोवा' पड़ गया।

समस्या— **मतवाले हैं** छन्द—घनाक्षरी

श्री ब्र० सत्यपाल

गोकुल में गोकुल को मुग्ध करि बीन लिये,
पीछे २ सभी को भगाए लिये जाते हैं।
उथल पुथल सी मचाय सुर मीठी करि,
कभी कर बन्द भगवान तरसाते हैं॥
सांवली सलौनी छवि मोहिनी मुरति करि,
नटवर थिति ठाढे लसत निराले हैं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

तृषित नयन अकुलाय सब गोकुल को,
बीन झनकार करि मीठी मतवाले हैं ॥ १ ॥

* * *

चावल की पोटली जो कोख में दबाए राखी,
तुच्छ सी यह भेंट किमि देउ शरमाय हैं ।
चीथड़े फटे बसन मैले औ कुचैले सभी,
याही सोच राखि नहीं कण्ठ सों लगाय हैं ॥
देख यों अलग ठाढ़े लाज सों सुदामा दीन,
करि मुसक्यान मीठी बने उजियाले हैं ।
कीनी आनाकानी पटरानी बानी दूर करि,
कण्ठसों लगाय भगवान् मतवाले हैं ॥ २ ॥

* * *

पञ्चवटी की कुटी सब सूनी भई,
चाल दैव जोग भई पूरन जो रावन की ।
जानकीजी मृग-छल-जाल से जो छली गईं,
झरी अश्रुधार जिमि जलधर सावन की ॥
पाहन, विटपि पर पंछियों से पूछ २,
अहो ! अकुलाय रहे जग रखवाले हैं ।
पीस दांत रावन की खोटी करतूत लखि,
आग के अंगारे राम क्रोध मतवाले हैं ॥ ३ ॥

* * *

धरम करम सब दूर से तलाक करि,
नरम नरम सजी सेज पर सोते हैं ।
खद्दर प्रचार मिस धन बरबाद करि,
स्वारथ सँवार हिन्द नाव को डुबोते हैं ॥
लहर असहयोग, सहयोग, वीर दल,
कर दल भारत के खण्ड कर डाले हैं ।
औरन की और अहो ! भारत के यह नेता लोग,
छार खार देश करि सब मतवाले हैं ॥ ४ ॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

दान के विषय में वेद का उपदेश

हमें अपने मन को दान में-त्याग में-लगाना चाहिये। कृपणता का भाव हृदय को संकुचित करता है। संकुचितता ही अपवित्रता है। अतः हमें त्याग-उदारता-के भाव से हृदय को महान् बनाना चाहिये ताकि हमारा हृदय पवित्र हो, उस पवित्र हृदयमन्दिर में परमेश्वर की ज्योति प्रकट हो।

दान के विषय में यहां हम संक्षेप में विचार करेंगे:—

दान के लाभ

१. श्रदस्मे वचसे नरो दधातन यदाशोदी दम्पती वाम मश्नुतः (यजुर्वेद।५।८) अर्थात् हे मनुष्यो! इस बात में तुम विश्वास करो कि पुष्कल दान देने वाले मनुष्य उत्तम सन्तान को प्राप्त होते हैं। एवं 'पुत्रैषणा की पूर्ति' यह दान का प्रथम लाभ है।

२. जुहोत प्र च तिष्ठत (२६।२२) दान दो और प्रतिष्ठा प्राप्त करो। यक्ष-युधिष्ठिर संवाद में भी 'दानमेकपदं यशः' (वनपर्व) ऐसा कहा है। एवं लोकैषणा की पूर्ति' यह दान का द्वितीय लाभ है।

३. अनुशासनपर्व में भीष्म युधिष्ठिर से कहते हैं कि:—

'दानेन द्रविणाधिकः' (६२।१२)

दान से मनुष्य का धन बढ़ता है।

'दक्षिणां दुहते सप्तमातरम्।'

दान दिये हुए धन को मनुष्य सप्त-गुणित हुआ २ उपलब्ध करते हैं। ऐसा वेद कहता है। बलि के शरीर से निकली हुई श्री इन्द्र से अनुयुक्त हो कर कहती है:—

"सत्ये स्थिताऽस्मि दाने च व्रते तपसि चैव हि।
पराक्रमे च धर्मे च पराचीनत्ततो बलिः"।
'प्रश्रिते दानशीले च सदैव निवसाम्यहम्'

शान्ति०।२३९।२३॥

अर्थात् मेरा निवास दानशील व्यक्ति में ही होता है। एवं दान से 'वित्तैषणा' की पूर्ति' रूप तृतीय लाभ होता है। इस के विपरीत दान न देने का परिणाम दरिद्रता होता है। वनपर्व में पुलस्त्य भीष्म से कहते हैं:—अदत्वा काञ्चनं गाश्च दरिद्रो नाम जायते (८३।१८) वेद भी कहता है कि:—'उतो रयिः पृणतो नोपदस्यति।' (ऋग्वेद १०।११७।१) दान देने वाले का धन नष्ट नहीं होता।

४. दान का चौथा लाभ है 'चित्तशुद्धि'। यजुर्वेद में कहा है:—

सा संस्कृतिः प्रथमा विश्ववारा।७।१४।

दान देने की वह वृत्ति चित्तशुद्धि के लिये सब से मुख्य है। सब को उस को स्वीकार करना चाहिये। वस्तुतः नानाविध कष्टों से उपार्जित धन को—हिरण्मय रूप से लुभाने वाले धन को-जिस समय मनुष्य त्यागेगा उस का चित्त क्यूं कर पवित्र न होगा? लोभमूलक ही सारी अपवित्रता होती है। लोभनाश से अपवित्रता का भी नाश हो जाता है। दान से बढ़ कर दुष्कर कर्म और कोई नहीं। यदि इसे कर लिया तो पुण्यों की प्राप्ति कठिन नहीं। (वन०।२५९।२८-३१) दान निःसन्देह मनुष्य को पापों से बचाता है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

'दानानि हि नरं पापान्मोचयन्ति न संशयः' (अनु० । ९४।६।) ऐसा व्यास महर्षि कहते हैं । ५. एवं पापमोचन से दान मनुष्य को दुर्गति से भी मुक्त करता है।

'प्रयच्छन्ति न याचन्ते दुर्गाण्यति तरन्ति ते'। (शान्ति०११०।५) ऐसा महाभारत में कहा है। वस्तुतः वैतरणी जो नरक की नदी है, जिस को (विगता तरणिर्नौर्यत्र) तैरने के लिये कोई भी नाव नहीं है वह वैतरणी नदी (वितरणेन लङ्घ्यते) दान से ही तैरी जाती है।

६. केवल दुष्ट अवस्थाओं से तैरना ही नहीं, अपितु 'सम्पूर्ण इच्छाओं की पूर्ति' इस दान से होती है।

'सत्याः सन्तु यजमानस्य कामाः'। (यजु० १२ । ४४।) अर्थात् दान देने वाले की सब इच्छायें पूर्ण हों।

७. अन्त में शत्रुता के नाश का भी दान एक अद्वितीय उपाय है। नारायणोपनिषद् में कहा है:— 'दानेनारातीरपानुदन्त, दानेन द्विषन्तो मित्रा भवन्ति।' ७९। दान से शत्रु भी मित्र बन जाते हैं। इस लोक में शान्ति का राज्य हो जाता है। परलोक में भी यही दान मनुष्य का कल्याण करता है। 'दानं मित्रं मरिष्यतः।' ऐसा युधिष्ठिर यक्ष के 'किंस्विन्मित्रं मरिष्यतः।' (३१३ । ६४) इस प्रश्न का उत्तर देते हैं। 'दानमस्य परायणम्।' (३१३।७२) दान ही मनुष्य का अन्तिम श्रेय करने वाला है।

रामायणकाल में राम राज्य का त्याग करते हैं। परिणामतः उस समय पृथ्वी पर एक स्वर्ग की स्थापना होती है। इस के विपरीत महाभारतकाल में दुर्योधन की कृपणता पृथ्वी को एक नरक बना देती है। साथ ही साथ यही दुर्योधन की कृपणता भारत की अवनतिरूप वृक्ष के लिये बीज का काम करती है। कृपणता अवनति की ओर ले जाती है। इस के विपरीत त्याग ही संसार में उन्नति का आधार है। एक पथिक यदि पिछले स्थान का त्याग न करे तो उस के लिये आगे बढ़ना असम्भव हो जाय। इसलिये उन्नति के लिये त्याग आवश्यक है।

दान के भाव की उत्पत्ति के लिये प्रार्थना तथा उपाय।

अथर्ववेद में कहा है:- 'यथा वः सर्व इज्जनः संगत्या सुमना असत् दानकामश्च नो भुवत्' हे परमेश्वर! हमारे सब मनुष्य दानरुचि वाले हों।

'अस्मद्राता देवत्रा गच्छत' यजु०।७।४६। हमारे धनो! तुम देवों में जाओ।

'भूताय त्वा नारातये' १।११। जो वस्तु हम प्राप्त करें उस के लिए हम कहें कि सब प्राणियों के कल्याण के लिये मैं तेरा स्वीकार करता हूँ, अदान के लिये नहीं।

'देव सवितः प्रसुव यज्ञम्।' हे सवितृदेव! आप हमारे अन्दर दान की प्रवृत्ति को पैदा करें।

एवं वेद में अनेक स्थानों पर यह प्रार्थना उपलब्ध होती है।

वेद में कृपणों की निन्दा।

'अपारहं पृथिव्यै देवयजनाद्ध्यासम्।' (यजु० १।२६) कृपण को मैं पृथिवीस्थ देवशाला से दूर हटा दूँ।

'प्रत्युष्टा अरातयः...निष्टप्ता अरातयः।'१।७। इस पर श्री स्वामी जी लिखते हैं कि राजा को

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

चाहिये कि 'दान न देने वाले व्यक्तियों को खूब पीड़ित करे तथा जला दे।'

"अविद्यमाना रातिर्दानं येषु ते शत्रवः प्रत्यक्ष—तया दग्धव्याः। नितरां संतापयुक्ताः कार्याः।"

राजा का कर्त्तव्य

'विषये दानरुचयो नरा यस्य स पार्थिवः'। ऐसा शान्ति पर्व के ५६वें अध्याय में कहा है। राजा का कर्तव्य है कि वह मनुष्यों में दान की रुचि को पैदा करे।

'असद्भ्यश्च समादाय सद्भ्यस्तु प्रतिपादयेत्।' कृपणों के धनों को छीन कर सज्जनों को दे दे।

वेद का आदेश

वस्तुतः दान-त्याग-के महत्त्व का प्रतिपादन वाणी से पूर्ण रूप से होना असम्भव है। त्याग के बिना उन्नति के मार्ग पर एक कदम भी नहीं रक्खा जा सकता। अतएव वेद आदेश करता है-

'ऋतस्य पथा प्रेत चन्द्रदक्षिणा' ७।४९। स्वर्ण का दान देते हुये सत्य के मार्ग से चलो।

'पृणीयादिन्नाधमानाय तव्यान्
द्राघीयांसमनुपश्येत पन्थाम्।
ओ हि वर्तन्ते रथ्येव चक्राऽन्य-
मन्यमुपतिष्ठन्त रायः। ऋ० १०।११७।५

समर्थ मनुष्य याचक को अवश्य दान दे। तब वह दाता दीर्घ मार्ग को देखेगा। धन सदा एक ही व्यक्ति के पास नहीं रहते। सम्पत्तिका लोभ न कर के मनुष्य को दान देना ही चाहिये।

'श्रद्धया देयम्। अश्रद्धया देयम्। श्रिया-देयम्। ह्रिया देयम्। संविदा देयम्।'

ऐसा तैत्तिरीयोपनिषद् का उपदेश है। मनुष्य किसी भाव से प्रेरित होकर दान दे। दान उसे उन्नति के मार्ग की ओर ले जावेगा। इस से उसे अन्त में शान्ति की प्राप्ति होगी। इसी लिये

'उषो ये ते प्रयामेषु युञ्जते मनो दानाय सूरयः।' ऋ० १।४८। विद्वान् लोग प्रातः से ही अपने मनों को दान में लगाते हैं। हे! परमेश! आप हमारे मनों को भी दान के लिये प्रेरित कीजिये।

शुद्धि

ले० महाराजकुमार श्री उमेदसिंह जी शाहपुरा स्टेट

ओ३म् इन्द्रं वर्धन्तोऽप्तुरः कृण्वन्तो विश्वमार्यम्।
अपघ्नन्तो ऽराव्णः॥ ऋग्वेद॥

ओम् आसंयतमिन्द्रणः स्वस्ति
शत्रुतूर्याय बृहतीममृध्नाम्।
यथा दासानार्याणि वृत्रा करो
वज्रि-सुतुक नाहुषाणि। अथर्व॥

वेद भगवान के इन दो मन्त्रों में ईश्वर मनुष्य को आज्ञा करता है कि वह उत्तम गुणों का प्रचार करके संसार को आर्य बनाने का यत्न करे। वेद उपदेश करता है कि मनुष्य मात्र को परमात्मा की सन्तान समझ कर, जीवन को कर्मशील बना कर, संसार में शान्ति और सन्तोष का राज्य स्थापित करने के लिए किसी भी देश व जाति के मनुष्य को आर्य बनाने में संकोच मत करो। वेद के अनुसार

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वैदिकधर्मावलम्बियों का कर्तव्य है कि परमात्मा ने उन्हें जो सच्चा ज्ञान दिया है, उसका प्रचार देश और जाति के भेद भाव को भुला कर करें।

इसी वैदिक-आज्ञा के अनुसार प्राचीन समय से ऋषि मुनि अशिक्षित जङ्गली जातियों को आर्य जाति का अङ्ग बनाने का यत्न करते आए हैं। प्राचीन-आर्यों के इस प्रकार के यत्न का वर्णन भविष्य-पुराण, प्रतिसर्गवर्ग, खण्ड ३य, अध्याय ४र्थ में इस प्रकार किया है।

अग्निवंशस्य विस्तारो बभूव बलवत्तरः।
द्वापराख्यसमः कालः सर्वत्र परिवर्तते॥
गेहे गेहे स्थितं द्रव्यं धर्मश्चैव जने जने।
आर्यधर्मपरा म्लेच्छा बभूवुः सर्वतोमुखाः॥

अग्नि-वंश का विस्तार द्वापर युग में हुआ। प्रजा धनसम्पन्न तथा धर्मपरायण थी। अनेको म्लेच्छों ने आर्य-धर्म को स्वीकार किया।

इसी के आगे वर्णन आता है:—

कलिरुवाच—
मत्पुत्राश्च स्मृता म्लेच्छा आर्यधर्मत्वमागताः।

मेरे म्लेच्छ पुत्रों ने आर्य-धर्म को स्वीकार किया। म्लेच्छ कौन थे:— इसके लिए मनु-स्मृति का यह श्लोक हरेक को याद रखना चाहिए।

शनकैस्तु क्रियालोपाद् द्विजा क्षत्रियजातयः।
वृषलत्वं गता लोके ब्राह्मणानामदर्शनात्॥

अर्थात् आर्यों के सदाचार को छोड़ने वाले ही दस्यु, दास या म्लेच्छ कहलाते थे। इनकी शुद्धि का अभिप्राय यही है कि उन्हें फिर से आर्य-जाति का अङ्ग बनाया जाय, उनके आचार को आर्य-धर्म के अनुसार ढाला जाय।

इतना ही नहीं यदि हम ब्राह्मणों का अध्ययन करें तो वहाँ व्रात्य स्तोम विधि का वर्णन पाते हैं। 'सावित्रीपतिताः व्रात्याः' व्रात्य उन्हें कहते थे जो गायत्री मन्त्र या विद्या का अध्ययन छोड़ देते थे। सामवेद के ताण्ड्य ब्राह्मण में ऐसे व्रात्यों को फिर से आर्य बनाने की विधि का वर्णन आता है।

१८९६ ईस्वी में राजाराम शास्त्री भागवत ने इसी विषय पर एक लेख १२ पृष्ठ का लिख कर प्रकाशित किया था। इस लेख में सामवेद के १७वें अध्याय के ताण्ड्य-ब्राह्मण-सूत्र लाट्यायन सूत्र के व्रात्यस्तोम संस्कार के मन्त्र देकर लेख को इन पंक्तियों के साथ समाप्त किया था:—

"यदि हम उन आर्यों के सच्चे वंशज हैं तो हमें सारे संसार को वैदिक-धर्म का अनुयायी बनाने का यत्न करना चाहिए। वैदिक-साहित्य के आपस्तम्ब श्रौतसूत्र, कात्यायन वाजसनीय संहिता, तैत्तिरीय ब्राह्मण, अथर्ववेद १५ वाँ काण्ड आदि में अनेक स्थानों पर इसी प्रकार के भावों का उल्लेख किया गया है

परन्तु बहुत देर से आर्य-जाति इन सचाईयों को भूल चुकी थी। वर्तमान समय में वैदिक-सभ्यता तथा वैदिक-साहित्य के पुनरुद्धारक ऋषि दयानन्द ने इन विचारों का प्रचार किया। आज का शुद्ध आन्दोलन ऋषि दयानन्द के इन्हीं विचारों का परिणाम है। शुद्धि आन्दोलन का भाव यह है कि हम सब मनुष्यमात्र में आर्य सभ्यता के भावों तथा आर्य-संस्कारों का प्रचार करना चाहते हैं। आर्य-सभ्यता के प्रवर्तकों का भाव यह था कि जिस सिद्धान्त को हम अच्छा समझते हैं, उसका अधिक से अधिक प्रचार किया जाय। अधिक से अधिक मात्रा में संसार में आर्य पुरुषों की संख्या बढ़ाई जाय। यह शुद्धि आन्दोलन केवल हिन्दू जाति तक ही सीमित नहीं है। ईसाई मुसलमान सब सम्प्रदायों को हम इस शुद्धि में निमन्त्रण देते हैं। केवल भारतवर्ष में ही नहीं संसार के प्रत्येक देश

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

में हम आर्य-सभ्यता का प्रचार करना चाहते हैं। जिसप्रकार प्राचीन समय में कण्व ऋषि ने मिश्र में जाकर १०००० म्लेच्छों को आर्य बनाया था, अर्थात् उन में आर्य-संस्कारों तथा आर्य-सभ्यता के विचारों को फैलाया था, उसी प्रकार हम चाहते हैं कि यह शुद्धि आन्दोलन देश देशान्तर तथा द्वीप द्वीपान्तरों की सीमाएँ लाँघ कर सब जगह फैले। इस शुद्धि आन्दोलन का उद्देश्य सांसारिक या राजनैतिक नहीं है। इस का उद्देश्य यह है कि मनुष्य मात्र को आत्मप्रधान आर्य-सभ्यता की शीतल छत्रछाया में निमन्त्रित किया जाय।"

शुद्धि आन्दोलन की दूसरी विशेषता, जिसकी तरफ़ हमें विशेष ध्यान देना चाहिए, यह है कि हमें मतभेद या विचारभेद के कारण सदा के लिए किसी से द्वेष नहीं करना चाहिए। यह समझना कि, जो व्यक्ति आज मुसलमान हो गया है फिर आर्य नहीं बन सकता या जो आज किसी धर्म को मानता है दूसरे धर्म में प्रवेश नहीं कर सकता, ठीक नहीं है। शुद्धि आन्दोलन का आधार विचारस्वातन्त्र्य है। भिन्न-भिन्न संप्रदायों तथा मत-मतान्तरों के बीच में जो अभेद्य दीवार खड़ी हो गई है, उसको दूर करना भी शुद्धि-आन्दोलन का उद्देश्य है।

ये विचार आज इस सदी के विशेष विचार नहीं हैं। हमें ये विचार नये इसलिये मालूम पड़ते हैं कि कई सदियों के बाद आज हमें इन विचारों को क्रियात्मक रूप देने की आवश्यकता प्रतीत हुई है।

भारतवर्ष के प्राचीन तथा मध्यकालीन इतिहास को पढ़िये। समय-समय पर हमारे पूर्वजों ने इन विचारों को क्रियात्मक रूप दिया था।

यूची, हूण, शक—इन सब जातियों को आर्य-जाति का अंग बनाया गया। रुद्रदामन, कनिष्क आदि विदेशी राजाओं को वैदिक संस्कारों के प्रभाव से आर्य बनाया था।

श्री. देवदत्त भाण्डारकर ने ग्वालियर के भिलसा शहर के नज़दीक के सनभर गाँव में गड़े हुए शिलालेख के सम्बन्ध में लिखा है:—

"मध्यदेश में यूनानी ग्रीक का सीमपुत्र भागवत आया। इसने भागवत-धर्म को स्वीकार किया। इस धर्म-स्वीकृति की स्मृति में गरुड़ध्वज स्थापना की।"

इससे स्पष्ट है कि अनुदार विचारोंवाले पौराणिक भी समय-समय पर विधर्मियों को आश्रय देते रहे हैं।

प्रश्न यह है कि यदि प्राचीन समय में इस प्रकार की विचार-पद्धति विद्यमान थी तो मध्यकाल में यह प्रथा क्योंकर लुप्त हो गई।

इस के दो कारण हैं:—प्रथम हमारे पूर्वजों ने वर्णव्यवस्था को जन्ममूलक मानना शुरू किया। अर्थात् शूद्र आदि को उन्नति का मौका नहीं दिया गया। परिणाम यह हुआ कि ब्राह्मण और क्षत्रिय बिना यत्न के प्रतिष्ठा पाने लगे। उन्हें बाहर जाने की आवश्यकता न रही। अर्थात् जाति के शरीर में रूढ़िवाद की लहर चल गई। इसने सारी जाति की मनोवृत्ति को बदल दिया। इसलिये यदि हम चाहते हैं कि वास्तव में शुद्धि-आन्दोलन सर्वत्र फैले तो हमें वर्णव्यवस्था को जन्म और जतियों के बन्धन से मुक्त कर कर्मानुसार मानना चाहिये।

दूसरा कारण मुसलमानों तथा ईसाईयों का आर्यजाति की इस मनोवृत्ति का दुरुपयोग करना

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

था। इन विधर्मियों ने यह गुर समझ लिया था कि जिसे हम छू देंगे वह भ्रष्ट हो जायगा। यदि उस समय आर्य जाति इन विधर्मियों को भी अपनी व्यापक वर्णव्यवस्था का अङ्ग बना लेती तो हमें आज शुद्धि आन्दोलन की विशेष आवश्यकता न होती।

परन्तु अब आर्य-जाति के सौभाग्य के दिन आ गए हैं। महर्षि दयानन्द सरस्वती, पं० लेखराम जी तथा श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी के महाप्रयत्नों से यह आन्दोलन आर्य-जाति के हरेक सम्प्रदाय का प्यारा बन गया है। आर्य समाज तो शुरू से ही विदेशियों तथा विधर्मियों को आर्य बनाने का पक्षपाती था। अब सनातनी और हिन्दू भाई भी अपने अपने विचारों के अनुसार इस तरफ़ आरहे है। हमें इस परिवर्तन पर अत्यन्त प्रसन्नता है। अब आर्य-जाति के हृदय में अपने विचारों को फैलाने की इच्छा पैदा की गई।

परमात्मा करे कि यह फैलाने की इच्छा दिन२ बलवती होती जाय और हम वैदिक आदेश के अनुसार संसार भर में आर्य-सभ्यता का प्रचार कर, मनुष्य मात्र को आर्य बनायें। यही मेरी हार्दिक प्रार्थना परमपिता परमात्मा के चरणों में है।

परमात्मा हमें बल दे कि हम अपने आप को पवित्र करते हुए शुद्धि आन्दोलन के प्रचार में प्रवृत्त हों।

ओं शान्तिः ! शान्तिः !! शान्तिः !!!

गुरुकुल के २६ वें वार्षिकोत्सव पर शुद्धि सम्मेलन में सभापति के आसन से दिया गया भाषण।

॥ स्वदेशानुराग ॥

घिस जाय सिल पर क्यों न, चन्दन की महक जाती नहीं।
बंध जाल में भी बुलबुलों की, वह चहक जाती तहीं ॥
अभिजात मित्र, अमित्र हो, दुःख बीज को बोता तहीं।
प्रिय देश के दुःख से जला, सुख नींद से सोता नहीं ॥ १ ॥

* * * *

मद मत्त करि-वर-वृन्द में भी, सिंह शिशु डरता नहीं।
बलिदान हो जो जन्म भू पर, वह अमर मरता नहीं ॥
परमार्थ प्रेमी स्वार्थहित नित, पाप को ढोता नहीं।
प्रिय देश के दुःख से जला, सुख नींद से सोता नहीं ॥ २ ॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अथर्ववेद संहिता

प्रथम काण्ड

(ले० ब्रह्मचारी चन्द्रकान्त १३ श्रेणी, गुरुकुल कांगड़ी)

प्रथम सूक्त

स सूक्त में, ब्रह्मचर्याश्रम में निवास करने वाले ब्रह्मचारी, अध्यात्मतत्त्व के जानने वाले आचार्य के चरणों में उपस्थित हो, त्रिविध बल और उत्तम गुणों के आधान की याचना कर रहे हैं।

१. ये त्रिषप्ताः परियन्ति विश्वा रूपाणि बिभ्रतः
वाचस्पतिर्बला तेषां तन्वो अद्य दधातु मे ॥

पदपरिचय—ये । त्रिषप्ताः । परियन्ति । विश्वानि । रूपाणि । बिभ्रतः । वाचस्पतिः । बलानि । तेषाम् । तन्वः । अद्य । दधातु । मे ।

अन्वयार्थः—(ये त्रिषप्ताः) जो त्रिसप्त (विश्वानि रूपाणि बिभ्रतः) सब रूपों को धारण करते हुवे (परियन्ति) चारों ओर घूम रहे हैं। (वाचस्पतिः) आचार्य (तेषां तन्वः बलानि अद्य मे दधातु) उनके शरीरों के बलों को [उपनयन के समय में] आज मुझ में स्थापित करे।

त्रिषप्ताः = तीन प्रकार के सात । प्रकृति के विकार "महत्, अहंकार और पञ्चतन्मात्रा" मिल कर सात होते हैं । ये सात सात्विक, राजसिक और तामसिक रूप से "तीन प्रकार के" कहलाते हैं।

विश्वा = विश्वानि । बला = बलानि—"सुपां सुलुक्" से शि का लुक् हो गया है।

वाचस्पतिः = विद्याओं का पति अर्थात् वेद विद्या का रक्षक आचार्य।

इस मन्त्र में ब्रह्मचारी गुरु से शारीरिकबल की भिक्षा मांगता है । सम्पूर्ण शरीरादि दृश्य पदार्थ सत्व, रजस् और तमोगुण से युक्त हुए २ "महत् अहंकार और पञ्चतन्मात्रा" के ही भिन्न २ रूप हैं ।

२. पुनरेहि वाचस्पते देवेन मनसा सह ।
वसोष्पते निरमय मय्येवास्तु मयिश्रुतम् ।

पदपरिचय—पुनः । आ । इहि । वाचस्पते । देवेन । मनसा । सह । वसोष्पते । निरमय । मयि । एव । अस्तु । मयि । श्रुतम् ।

अन्वयार्थः—(वाचस्पते) हे आचार्य! (पुनः देवेन मनसा सह आ इहि) तत्पश्चात् देव मन के साथ आ। (वसोष्पते) हे वसुपति ! (निरमय) मेरा नितरां रमण कर, मुझे खूब आनन्द दे। (मयि श्रुतं अस्तु एव) मुझ में अवश्य वेद विद्या हो, (मयिश्रुतम्) मुझ में वेद विद्या हो।

मन दो प्रकार का होता है, देवमन और असुरमन । शिवसंकल्प वाला मन देवमन होता है । जिसके लिए वेद में "तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु" कहा गया है। शारीरिकबल की याचना के बाद, गुरुकुल के छोटे २ बालक, आचार्य से मानसिक शिक्षा की भिक्षा मांगते हैं । यहां पर वाचस्पति आचार्य से मानसिक शिक्षा मांगी गई है।

वसोष्पते = आठ वसु सम्बन्धी ज्ञानों के पति अर्थात् भिन्न २ विज्ञानों के विद्वान्।

इस मन्त्र में "वाचस्पते" और "वसोष्पते" इन दो शब्दों से मानसिक शिक्षा के दो अंगों की तरफ़

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

निर्देश है। एक Moral अर्थात् आचार सम्बन्धी, और दूसरा Educational अर्थात् शिक्षासम्बन्धी। उत्तम शिक्षा और आचार से ही देवमन बना करता है। वाचस्पति और बसोष्पति आचार्य क्रमशः उत्तम आचार और उत्तम शिक्षा की दीक्षा देता है। "एव" शब्द का अन्वय अगले शब्द के साथ है। यथा— "अस्तु एव"। "द्विर्बद्धं सुबद्धं" तथा "अभ्यासे भूयांसमर्थं मन्यन्ते यथाहो दर्शनीयाहो दर्शनीया" के अनुसार विशेष ध्यान दिलाने के लिये "मयि एव अस्तु" दुबारा पढ़ा गया है।

३. इहैवाभि वि तनूभे आर्त्नी इव ज्यया।
वाचस्पतिर्नियच्छतु मय्येवास्तु मयि श्रुतम्।

पदपरिचयः—इह। एव। अभि। वि। तनु। उभे। आर्त्नी। इव। ज्यया। वाचस्पतिः। नियच्छतु। मयि। एव। अस्तु। मयि। श्रुतम्।

अन्वयार्थः—(इह एव) यहां ब्रह्मचर्याश्रम में ही (ज्यया आर्त्नी इव, [ज्यया आर्त्नी] अभि वितनु) ज्या द्वारा धनुष की दोनों कोटियों की न्याईं, जिह्वा द्वारा प्रणवधनुष की दोनों कोटियों को तान दे। (वाचस्पतिः नियच्छतु) वाचस्पति आचार्य मुझे नियमों में चलावे।

ज्या=जिह्वा ; "जिह्वा ज्या भवति" अथर्ववेद ५--१८--८। आध्यात्मिक अर्थ में "प्रणवो धनुः शरोह्यात्मा" इस उपनिषद्वाक्यानुसार ओंकार ही धनुष है। इसकी दो कोटियां होती हैं। (१) प्रत्यक्ष (२) अप्रत्यक्ष। "प्रत्यक्ष प्रणव" प्रकृति और विकृति रूप जगत् है, और "परोक्ष प्रणव" तुरीय ब्रह्म है। ब्रह्मचारी, मानसिक शिक्षा लेने के बाद ब्रह्मचर्याश्रम में ही अध्यात्मविद्या की भिक्षा मांगता है। वेद की अध्यात्मविद्या प्रकृति और ब्रह्म की विद्या का मेल ही है। इन दोनों की विद्या के ज्ञान से ही पूर्ण अध्यात्म ज्ञान होता है। यह अध्यात्मविद्या विना यम नियमों के आ नहीं सकती। अतः शिष्य स्वयमेव आचार्य से प्रार्थना करता है कि आप मुझे नियमों में चलाईये। "आर्त्नी इव ज्यया" यहां पर उपमालंकार है।

४. उपहूतो वाचस्पतिरुपास्मान् वाचस्पतिर्ह्वयताम्।
संश्रुतेन गमेमहि मा श्रुतेन विराधिषि॥

पदपरिचयः—उपहूतः। वाचस्पतिः। उप। अस्मान्। वाचस्पतिः। ह्वयताम्। सम्। श्रुतेन। गमेमहि। मा। श्रुतेन। वि। राधिषि।

अन्वयार्थः—(वाचस्पतिः उपहूतः) वाचस्पति का सत्कार पूर्वक हमने आह्वान किया है, (वाचस्पतिः अस्मान् उपह्वयताम्) वाचस्पति हमारा सत्कार पूर्वक आह्वान करे। (श्रुतेन संगमेमहि) हम सुने हुए वेद के साथ संगत रहें। (श्रुतेन मा विराधिषि) उस सुने हुवे वेद से वियुक्त न हों।

विराधनम्=वियोग। अध्यात्म विद्या की याचना के अनन्तर शिष्य कहते हैं कि हम दोनों (आचार्य और शिष्य) परस्पर एक दूसरे का यथोचित सम्मान करें। आचार्य हमारी विनति सुने और हम आचार्य की शुभाज्ञा सिर पर धारण करें। और आचार्य की आज्ञा में रहते हुवे हम वेदविद्या में श्रद्धा रक्खें और निरन्तर अध्ययन करते रहें। "स्वाध्यायान्मा प्रमदः" के अनुसार कभी भी प्रमाद न करें।

सूक्तसार—प्रथम मंत्र में स्पष्ट बताया गया है कि आचार्य के चरणों में जाकर ब्रह्मचारी शारीरिक बल को प्रथम धारण करें। क्योंकि "शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्" इस उक्ति के अनु-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सार शरीर ही सब धर्म कर्म का आधार है। शरीर एक रथ है। इसके विना आत्मरथी का अभ्युदय और निःश्रेयस् नहीं हो सकता । शरीर-रथ के कल-पुर्ज़े ठीक रहने चाहियें । तदनन्तर वाचस्पति और वसोष्पति आचार्य से मन की सदाचार सम्बन्धी और शिक्षा सम्बन्धी उन्नति के लिये प्रार्थना की गई है। शरीर के बाद मन ही आता है। नीरोग शरीर में ही देव-मन का निवास हो सकता है। अतः दूसरे मंत्र में मन को देव बनाने की शिक्षा मांगी गई है । तीसरे मन्त्र में वैदिक अध्यात्म-शिक्षा की याचना की गई है । वैदिक "अध्यात्म-शिक्षा" प्रकृति के विज्ञान तथा ब्रह्मविद्या की प्राप्ति के विज्ञान का मेल है । और यह अध्यात्मविद्या की प्राप्ति विना ब्रह्मचर्य के नियमपालन के सर्वथा असम्भव है । संयत-चित्त में ही वेदज्ञान स्फुरित होता है। अन्त में प्रार्थना की गई है कि हम दोनों गुरु शिष्य एक दूसरे का यथोचित सत्कार करते रहें, और सर्वदा वेद के अनुसार आचरण करें ।

* * *

द्वितीय सूक्त

इस सूक्त में आचार्य से भक्ति पूर्वक अध्यात्म-विद्या को उपार्जित करने वाले शिष्यों की उक्तियां हैं:—

१. विद्मा शरस्य पितरं पर्जन्यं भूरिधायसम् ।
विद्मो ष्वस्य मातरं पृथिवीं भूरिवर्पसम् ॥

पदपरिचयः—विद्म । शरस्य । पितरम् । पर्जन्यम् । भूरिधायसम् । विद्म । उ । सु । अस्य । मातरम् । पृथिवीम् । भूरिवर्पसम् ।

अन्वयार्थः—(शरस्य पितरं, पर्जन्यं (इव) भूरिधायसं विद्म) हम ब्रह्मचारियों ने शर अर्थात् आत्मा के पिता को, जो कि पर्जन्य की न्याईं बहुपोषक है—जान लिया है। (उ अस्य मातरं पृथिवीं (इव) भूरिवर्पसं सु विद्म) और इस शर अर्थात् आत्मा की माता, जो कि पृथिवी की न्याईं नानारूपों को पैदा करने वाली है, उसे भी भली भांति जान लिया है ।

पिता = परमात्मा । माता = प्रकृति । "अग्रवन्तु सर्वेऽमृतस्य पुत्राः" के अनुसार परमात्मा हमारा पिता है। "प्रणवो धनुः शरो ह्यात्मा" इस उपनिषद्वाक्य में आत्मा को शर कहा है। अतः रूपण होने से शर = आत्मा । परमात्मा रूपी पिता, प्रकृति रूपी माता में, कामना-रूपी वीर्य का सिञ्चन करके जगत् को पैदा करता है। जगत् के ये नानारूप, प्रकृति के परिणाम है। प्रकृतिमाता नानारूपों को धारण करने वाली नटी के समान है। परमात्मा पर्जन्य अर्थात् मेघ के समान शान्ति को देनेवाला तथा रक्षक है। इस मंत्र से यह भी ध्वनित होता है कि आत्मा को परमात्मा से ही संग करना चाहिये, क्योंकि वह रक्षक है। प्रकृति तो नटी के समान मोहक है। अतः उससे दूर होना चाहिये ।

२. ज्याके परि णो नमाश्मानं तन्वं कृधि
वीलुर्वरीयोऽ रातीरप द्वेषांस्याकृधि।

पदपरिचयः—ज्याके। परि। नः। नम। अश्मानम्। तन्वम्। कृधि। वीलुः। वरीयः। अरातीः। अप। द्वेषांसि। आ। कृधि।

अन्वयार्थः—(ज्याके) हे गुरु की वाणी! (नः परिणम) हमें ख़ूब नम्र कर। (तन्वं अश्मानं इव कृधि) हमारे शरीरों को पत्थर की भांति दृढ़ कर। (वीलुः वरीयः अरातीः (इव) द्वेषांसि

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अपा कृधि) दृढ़ तू हे आचार्य ! अच्छे प्रकार से शत्रुरूप द्वेषभावों को हमसे हटा।

वीलुः = दृढ़। वरीयः = "उरुतरम्" "वरतरम्" वा, क्रियाविशेषण है। अश्मानम् = अश्मानं (इव), लुप्तोपमा है। ज्याके = यहां अल्पार्थ में क प्रत्यय है। इससे यह ध्वनित होता है कि गुरु की छोटी सी वाणी भी बड़े २ कामों को करती है। परिणम् = यहां "व्यवहितोश्च" इस पाणिनीय शास्त्र के अनुसार परि तथा नम के बीच में "नः" का व्यवधान होनेपर भी उपसर्गका धातु के साथ अन्वय है। परिणम = परिणमय, यहाँ णिकालुक् है। पूर्वोक्त विद्याओं के ज्ञाता शिष्य इस मन्त्र द्वारा कहते हैं हे गुरु ! आप ऐसा उपदेश करें कि हम में इन विद्याओं के ज्ञान से अभिमान न आजावे, और हम सुदृढ़ रहें, हम में द्वेषभाव न रहे।

३. वृक्षं यद्गावः परिषस्वजाना अनुस्फुरं शरमर्चन्त्यृभुम्। शरुमस्मद्यावय दिद्युमिन्द्र॥

पदपरिचयः—वृक्षम्। यत्। गावः। परिषस्वजानाः। अनुस्फुरम्। शरम्। अर्चन्ति। ऋभुम्। शरुम्। अस्मत्। यावय। दिद्युम्। इन्द्र।

अन्वयार्थः—(वृक्षं परिषस्वजानाः गावः यत् अनुस्फुरं ऋभुं शरं अर्चन्ति) वृक्ष को चारों ओर लिपटी हुई गौएँ, जब स्फुरण अर्थात् तत्वज्ञान की स्फूर्ति के पश्चात् बहुत भासमान शर अर्थात् आत्मा की आर्चना करती हैं उस समय (इन्द्र अस्मत् दिद्युं शरुं यावय) हे इन्द्र ! तू हम से पाप-वज्र को हटा।

वृक्ष = शरीर। इसी प्रकार उपनिषदों तथा वेदों में प्रायः शरीर और संसार को वृक्ष से उपमित करते हैं। गौ = इन्द्रियें ! शरु = पाप, शृ हिंसायाम्। दिद्यु = वज्र। इन्द्र = आत्मा। "इन्द्रियलिङ्गम्" इत्यादि पाणिनी सूत्र से स्पष्ट है कि इन्द्र का अर्थ जीवात्मा भी होता है। इस मन्त्र में इन्द्रियों को अन्तर्मुख करने का वर्णन है। इन्द्रियों के अन्तर्मुख होने पर ही हमारा पाप दूर हो सकता है।

ऋभु = उरु भाति। यावय = यु मिश्रणामिश्रणयोः।

४. यथा द्यां च पृथिवीं चान्तस्तिष्ठति तेजनम्। एवा रोगं चास्रावं चान्तस्तिष्ठतु मुञ्जइत्॥

पदपरिचयः—यथा। द्याम्। च। पृथिवीम्। च। अन्तः। तिष्ठति। तेजनम्। एवा। रोगम्। च। आस्रावम्। च। अन्तः। तिष्ठतु। मुञ्जः। इत्।

अन्वयार्थः—(यथा द्यां च पृथिवीं च अन्तः तेजनं तिष्ठति) जैसे द्यु और पृथिवी लोक के मध्य में व्यवधायक रूप से तेजन स्थित है, (एवा रोगं च आस्रावं च अन्तः मुञ्ज इत् तिष्ठतु) वैसे ही रोग और वीर्य के आस्राव के मध्यम में मुञ्ज निश्चय करके स्थित हो।

तेजन = आकाश या ईथर। क्योंकि यह तेज का वाहक है, सूर्य के तेज को लाने का माध्यम है, इस लिये इसे तेजन कहते हैं। इस मन्त्र में बताया गया है कि जिस प्रकार द्यु और पृथ्वी के बीच खाली स्थान में Ether है ठीक इसी प्रकार से रोग और वीर्यास्राव इन दोनों के बीच में "मुञ्ज" नामक औषधि व्यवधायक रूप से स्थित होती है। शारीरिक रोग और वीर्य के आस्राव का परस्पर सम्बन्ध है। शारीरिक रोग वीर्य के स्खलित होने का कारण हुआ करता है। मुञ्ज द्वारा रुधिर के पित्त सम्बन्धी रोग शान्त हो कर वीर्य सम्बन्धी दोषों को दूर करते हैं। इस पर आयुर्वेदज्ञों को परीक्षण करना चाहिये।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सूक्तसारः—शरीर, मन और आत्मा से बलवान् ब्रह्मचारी, प्रथम मन्त्र में, कथन करते हैं कि हमने प्रकृति तथा आत्मा और परमात्मा का ज्ञान पा लिया है, प्रकृति हमारी माँ है और परमात्मा हमारा पिता तथा रक्षक है। इसके अनन्तर दूसरे मन्त्र में, ब्रह्मचारी, अपने में अभिमान को हटाकर नम्रता के लिये गुरु से आशीष माँगते हैं, और शारीरिक बल की प्राप्ति तथा द्वेष-भावों को दूर करने का सामर्थ्य चाहते हैं। इन उपर्युक्त सब साधनाओं के अनन्तर ही इन्द्रियाँ अन्तर्मुख हुवा करती हैं। जब तक इन्द्रियाँ बहिर्मुख हैं तब तक इनसे काम, क्रोधादि पाप होते ही रहते हैं। परन्तु अन्तर्मुख होते ही द्वेष-भाव दूर होने लगते हैं। अतः इन्द्रियों की अन्तर्मुख वृत्ति के लिये तीसरे मन्त्र में प्रार्थना की गई है। यदि किसी प्रकार के शारीरिक रोग द्वारा वीर्यस्राव होना सम्भव हो, या इन्द्रियों के बहिर्मुख होने से वीर्य-स्राव होता हो तो उसका उपाय मुञ्ज का सेवन करना है। सब से मुख्य वस्तु ब्रह्मचारी के लिये "वीर्यकी रक्षा" है—इस बात को इस सूक्त के अन्त में ध्वनित किया गया है।

द्वितीय सूक्त के अन्तिम मन्त्र में ब्रह्मचर्य के लिये आवश्यक, वीर्य-रक्षा के, साधन का वर्णन किया गया है। और निम्नलिखित तृतीय सूक्त में वीर्य-क्षय के प्रधान कारण मूत्र-बद्धता के निवारण के उपाय बताये जाते हैं। यथाः—

* * *

तृतीय सूक्त

(१) विद्मा शरस्य पितरं पर्जन्यं शतवृष्ण्यम्।
तेना ते तन्वे शं करं पृथिव्यां ते निषेचनं
बहिष्टे अस्तु बालिति ॥ १ ॥

पदपरिचय—विद्म। शरस्य। पितरम्। पर्जन्यम्। शतवृष्ण्यम्। तेन। ते। तन्वे। शम। करम्। पृथिव्याम्। ते। निषेचनम्। बहिः। ते। अस्तु। बालु, इति।

अन्वयार्थ—हम गुरुजन (शरस्य पितरम्) शर के रक्षक, (शतवृष्ण्यम्) बहुत वर्षा करनेवाले, (पर्जन्यम्) अभ्रक को (विद्म) जानते हैं। (तेन) उसके द्वारा (ते तन्वे) तेरे शरीर के लिये (शंकरम्) मैं कल्याण करता हूँ। (ते निषेचनम्) तेरा मूत्र (पृथिव्याम्)पृथिवी पर पड़े, (ते निषेचनं बहिः) तेरा मूत्र बाहर हो, (ते निषेचनं बालु) तेरा मूत्र बाहर हो।

विद्मा = विद्म 'द्व्यचोऽतस्तिङः' से दीर्घ होगया। पर्जन्य = अभ्रक। शतवृष्ण्य = बहुत वृष्ण्य अर्थात् वर्षा करनेवाला (मूत्र की), या वीर्य बढ़ानेवाला। करम् = अकरम्, करता हूँ। निषेचनम् = मूत्र। बालु = बाहर होना, To emerge। शरस्य पितरम् = शर अर्थात् जीवात्मा। यथा—प्रणवोधनुः शरोह्यात्मा"। और पिता अर्थात् पाता अर्थात् रक्षक। अतः शर का पिता = अभ्रक। क्योंकि अभ्रक मूत्रावरोध के निवारण में बहुत अच्छा है, अतः आत्मा का रक्षक कहा गया है।

२. विद्मा शरस्य पितरं मित्रं शतवृष्ण्यम् तेना
ते तन्वे शंकरं पृथिव्यां ते निषेचनं बहिष्टे
अस्तु बालिति

पदपरिचय—विद्म। शरस्य। पितरम्। मित्रम्। शतवृष्ण्यम्। तेन। ते। तन्वे। शंकरम्। पृथिव्याम्। ते। निषेचनम्। बहिः। ते। अस्तु। बालु। इति।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अन्वयार्थ—हम गुरुजन (शरस्य पितरम्) शर के रक्षक, (शतवृष्ण्यम्) बहुत वर्षा करने वाले, (मित्रम्) मित्र को (विद्म) जानते हैं। (तेन) उस द्वारा (ते तन्वे) तेरे शरीर के लिये (शं करम्) मैं कल्याण करता हूँ। (ते निषेचनं पृथिव्याम्) तेरा मूत्र पृथिवी पर पड़े, (ते निषेचनं बहिः) तेरा मूत्र बाहर हो, (ते निषेचनं बाल्) तेरा मूत्र बाहर हो।

मित्र = इसके विषय में विद्वानों को अन्वेषण करना चाहिये कि यह कौन सी औषध है।

(३) विद्मा शरस्य पितरं वरुणं शतवृष्ण्यम् ।
तेना ते तन्वे शं करं पृथिव्यां ते निषेचनं
बहिष्टे अस्तु बालिति ॥ ३ ॥

पदपरिचय—विद्म । शरस्य । पितरम् । वरुणम् । शतवृष्ण्यम् । तेन । ते । तन्वे । शम् । करम् । पृथिव्याम् । ते । निषेचनम् । बहिः । ते । अस्तु । बाल् । इति ।

अन्वयार्थ—हम गुरुजन (शरस्य पितरम्) शर के रक्षक, (शतवृष्ण्यम्) बहुत वर्षा करने वाले, (वरुणम्) वरणा औषध को (विद्म) जानते हैं। (तेन) उस के द्वारा (ते तन्वे) तेरे शरीर के लिये (शंकरम्) मैं कल्याण करता हूँ। (ते निषेचनं पृथिव्याम्) तेरा मूत्र पृथिवी पर पड़े, (ते निषेचनं बहिः) तेरा मूत्र बाहर हो, (ते निषेचनं बाल् इति) तेरा मूत्र बाहर हो।

वरुण = वरणा औषध। वरणा से भी वीर्यरक्षा होती है और इस का मूत्र पर प्रभाव भी होता है।

४. विद्मा शरस्य पितरं चन्द्रं शतवृष्ण्यम् ।
तेना ते तन्वे शंकरं पृथिव्यां ते निषेचनं
बहिष्टे अस्तु बालिति ॥

पदपरिचय—विद्म । शरस्य । पितरम् । चन्द्रम् । शतवृष्ण्यम् । तेन । ते । तन्वे । शंकरम् । पृथिव्याम् । ते । निषेचनम् । बहिः । ते । अस्तु । बाल् । इति ।

अन्वयार्थ— हम गुरुजन (शरस्यपितरम्) शर के रक्षक, (शतवृष्ण्यम्) बहुत वर्षा करने वाले, (चन्द्रम्) कपूर को (विद्म) जानते हैं। (तेन) उस के द्वारा, (ते तन्वे) तेरे शरीर के लिये (शंकरम्) मैं कल्याण करता हूँ। (ते निषेचनं पृथिव्याम्) तेरा मूत्र पृथिवी पर पड़े। (ते निषेचनं बहिः) तेरा मूत्र बाहर हो, (ते निषेचनं बाल्) तेरा मूत्र बाहर हो।

चन्द्र = कपूर ।

५. विद्मा शरस्य पितरं सूर्यं शतवृष्ण्यम् ।
तेना ते तन्वे शंकरं पृथिव्यां ते निषेचनं
बहिष्टे अस्तु बालिति ॥ ५ ॥

पदपरिचय—विद्म । शरस्य । पितरम् । सूर्यम् । शतवृष्ण्यम् । तेन । ते । तन्वे । शंकरम् । पृथिव्याम् । ते । निषेचनम् । बहिः । ते । अस्तु । बाल् इति ।

अन्वयार्थ—हम गुरुजन (शरस्यपितरम) शर के रक्षक, (शतवृष्ण्यम) बहुत वर्षा करने वाले, (सूर्यम्) अर्क को (विद्म) जानते हैं। (तेन ते तन्वे शंकरम्) उस के द्वारा तेरे शरीर के लिये कल्याण करता हूं। (ते निषेचनं पृथिव्याम्, ते बहिः, बालिति) तेरा मूत्र पृथिवी में पड़े, तेरा मूत्र बाहर हो, बाहर हो।

सूर्य = अर्क अर्थात् आक वृक्ष।

इन पांचों मंत्रों में, बस्ति में रुके हुए मूत्र को बाहर करने के लिये उपयोगी ५ औषध बताए गए हैं। यथा—"अभ्रक, मित्र, वरणा, कपूर और आक"। ये औषधियां मूत्र की बहुत वर्षा करती हैं (उसे बाहर

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

करने वाली हैं)। इस प्रकार मूत्र रोग को हटा कर और वीर्यवर्धन द्वारा ये जीवात्मा की रक्षा करती हैं। गुरु ब्रह्मचारी को कहता है कि इन औषधियों की बहुवर्षकता को मैं जानता हूँ और उनके द्वारा तेरा कल्याण करता हूं। इन औषधों द्वारा तेरी मूत्र सम्बन्धी बिमारी को हटाता हूँ ताकि तेरा मूत्र पृथिवी पर पड़े और बस्ति के बाहर हो । इस प्रकार मूत्र निकलने से वीर्य पर दबाव कम होने से वीर्य सम्बन्धी रोग भी दूर हो जावेंगे।

६. यदान्त्रेषु गवीन्योर्यद्वस्तावधि संश्रुतम् ।
एवा ते मूत्रं मुच्यतां बहिः बाल् इति सर्वकम् ॥

पदपरिचयः—यत्। आन्त्रेषु। गवीन्योः । यद्। बस्तौ । अधि । सं श्रुतम् । एवा । ते । मूत्रम् । मुच्यताम् । बहिः । बाल् इति । सर्वकम् ।

अन्वयार्थः—(यत् ते मूत्रं आन्त्रेषु) जो तेरा मूत्र आन्तों में, (यद् गवीन्योः) जो गवीनियों में, (यत् बस्तौ अधि) और जो बस्ति में रुका हुआ (संश्रुतम्) सुना गया है, (ते एवा मूत्रं मुच्यताम्) तेरा वह मूत्र मुक्त हो । (एवा ते सर्वकं मूत्रं बहिः बाल् इति) ऐसा तेरा सारा मूत्र बाहर हो, बाहर हो।

आन्त्र=वृक्क में मूत्र लानेवाली छोटी २ नाड़ियां। गवीनी = मूत्रमार्ग । बस्ति = मूत्राशय । अधि = अधिष्ठितम्। सर्वकम् = सब, स्वार्थेकन्।

इन सब औषधियों के प्रयोग द्वारा, शिष्य की आन्त्र, गवीनी और बस्ति में रुके हुए मूत्र को, गुरु बाहर कर देता है। गुरु इस मंत्र द्वारा कहता है कि हे ब्रह्मचारी ! आन्त्र, गवीनी और बस्ति इन स्थानों में रुका हुआ तेरा सारा मूत्र बाहर निकले।

(७) प्र ते भिनद्मि मेहनं वर्त्रं वेशन्त्या इव ।
एवा ते मूत्रं मुच्यतां बहिर्बालिति सर्वकम् ॥ ७ ॥

प्र। ते। भिनद्मि । मेहनम् । वर्त्रम् । वेशन्त्याः। इव। एवा ते। मूत्रम्। मुच्यताम्। बहिः । बाल् इति। सर्वकम् ।

(वेशन्त्या वर्त्रं इव) वेशन्ती अर्थात् तालाब के वर्त्र अर्थात् बांध की न्याईं (ते मेहनं भिनद्मि) तेरे मूत्र द्वार को तोड़ता हूं, (एवा ते सर्वकं मूत्रं मुच्यतां बहिः बाल् इति) इस प्रकार तेरा सारा मूत्र मुक्त हो, बाहर हो।

वर्त्र = बान्ध ।

मेहन = गुह्येन्द्रिय ।

(८) विषितं ते बस्तिबिलं समुद्रस्योदधेरिव ।
एवा ते मूत्रं मुच्यतां बहिः बाल् इति सर्वकम् ।

पदपरिचयः—विषितम्। ते। बस्तिबिलम् । समुद्रस्य । उदधेः । इव । एवा । ते । मूत्रम्। मुच्यताम्। बहिः । बाल् इति । सर्वकम्।

(उदधेः समुद्रस्य इव ते बस्तिबिलं विषितम्) जलाधार समुद्र का बिल जिस प्रकार ऊपर को खुला होता है ऐसे ही तेरा बस्ति-बिल खुल जाय। (एवा ते सर्वकं मूत्रं मुच्यतां बहिः बाल् इति) इस प्रकार तेरा सारा मूत्र मुक्त होवे तथा बाहर हो, बाहर हो।

उदधेः समुद्रस्य = निरुक्त में अन्तरिक्षीय तथा भूतलीय इस प्रकार से दो समुद्र बतलाए गये हैं। उनमें से "उदधेः समुद्रस्य" द्वारा जल को धारण करनेवाले भूतलीय समुद्र का वर्णन है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

समुद्र का बिल अर्थात् मुख ऊपर को जिस प्रकार खुला होता है इसी प्रकार तेरा बस्तिबिल खुल जाय और सारा मूत्र बाहर हो जावे, यह आचार्य शिष्य के लिए कह रहा है ।

९. यथेषुका परापतदवसृष्टाधि धन्वनः ।
एवा ते मूत्रं मुच्यतां बहिर्बालिति सर्वकम् ॥

(यथा धन्वन अधि अवसृष्टा इषुका परापतत्) जिस प्रकार धनुष से छोड़ा हुआ इषु दूर जा पड़ता है (एवा ते सर्वकं मूत्रं मुच्यताम्) इसी प्रकार तेरा सारा मूत्र मुक्त हो, (बहिः बाल् इति) बाहर हो, बाहर हो ।

जिस प्रकार धनुष से छोड़ा बाण दूर जा गिरता है उसी प्रकार वेशन्ती द्वारा तेरे मेहन का भेदन होने पर मूत्र बाहर गिरे ।

सूक्तसार—

इस सूक्त में मूत्र रोध सम्बन्धी बिमारियों का, प्रथम ५ मन्त्रों में, ५ औषधों के द्वारा निवारण बताया है । साथ २ यह भी दर्शाया है कि वेशन्ती (कैथेटर) के प्रयोग द्वारा मेहन-भेदन कर बस्ति बिल को खोल देना चाहिए जिससे कि सारा मूत्र धनुष से छोड़े बाण के समान, बाहर आ पड़े ।

* * *

चतुर्थ सूक्त

१. अम्बयो यन्त्यध्वभिः जामयो अध्वरीयताम् ।
पृञ्चतीर्मधुना पयः ॥ १ ॥

तृतीय सूक्त में वीर्य निग्रह के विघातक बद्धमूत्र रोग को दूर करने का वर्णन था । इस सूक्त में, वीर्य-रक्षा के लिये उपकारी, उत्तम जल के प्रयोग का वर्णन है।

पदपरिचय—अम्बयः । यन्ति । अध्वभिः । जामयः । अध्वरीयताम् । पृञ्चतीः । मधुना । पयः ।

अन्वयार्थः—(पयः मधुना पृञ्चतीः अम्बयः) दूध को माधुर्य गुण के साथ मिलाती हुई मातायें (अध्वरीयतां जामयः) जो कि नियत मार्गों में चलने वालों की बहने हैं, (अध्वभिः यन्ति) वे जैसे नियत मार्गों से चलती हैं, वैसे ही, (पयः मधुना पृञ्चतीः अपः अध्वभिः यन्ति) जलों को माधुर्य गुण के साथ सम्पृक्त करते हुए जल नियत मार्गों से चलते हैं ।

अम्बयः = लुप्तोपमा या रूपक है, अम्बय इव । अध्वरीयताम् = अध्वन् + रि गतौ + श्यन् + शत् + आम् = (नियत) मार्गों में चलनेवालों की । यह अध्वरीयताम् शब्द अध्वर शब्द से न बनकर अध्वन् से बना है। क्योंकि इसी मंत्र में "यन्त्यध्वभिः" में अध्वन् शब्द का प्रयोग है । पयः = जल, और दूध । अम्बि = अम्बा, माता । वेद में अम्बि, अम्बा दोनों शब्दों का प्रयोग है । जामयः = भगिन्यः अर्थात् बहिनें ।

इस सूक्त के तृतीय तथा चतुर्थ मन्त्र में "आपः" शब्द का प्रयोग है, जो कि नियमतः स्त्रीलिङ्ग में और बहुवचन में प्रयुक्त होता है । इस मन्त्र में जलों का रूपण "अम्बयः" अर्थात् माताओं से किया है । इस रूपण द्वारा "माताएँ कैसी होनी चाहियें" इस विषय में भी मन्त्र ने उपदेश कर दिया है । माताओं को चाहिये कि वे नियत धार्मिक मार्गों पर ही चलें । यह तब सम्भव हो सकता है जब कि पितृकुल में ही वे इन नियत धार्मिक मार्गों पर चलना सीख चुकी हों । कन्याएँ उस पितृगृह में धार्मिक मर्यादा में नहीं चल सकतीं जिसमें रहनेवाले उनके भाई कुमार्ग-गामी हैं । इसीलिये इस मन्त्र में कहा है कि नियत धार्मिक मार्गों पर चलनेवाले भाईयों की ही बहिनें माता बनने पर नियत मार्ग पर चल सकती हैं,

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अन्य नहीं। ऐसी माताएँ ही अपने दूध को अमृत बना कर पुत्रों को पिलाती हैं। ऐसी माताओं का ही दूध मधुर होता है, कुमार्ग-गामी माताओं का नहीं। मन्त्र में जल को भी माता कहा है। वास्तव में वे ब्रह्मचारी जो कि अपने ब्रह्मचर्य के नियत मार्ग में चलते हैं उनके लिये जल का औषधरूप से सेवन मातृवत् हितकारी है। जल-चिकित्सा, वीर्य सम्बन्धी कई भयङ्कर रोगों को दूर कर देती है। इस मन्त्र में यह भी दर्शाया है कि चलते हुए जलों का ही सेवन करना चाहिये ठहरे हुओं का नहीं। क्योंकि चलते हुए जल मधुर होते हैं।

२. अमूर्या उपसूर्ये, याभिर्वा सूर्यः सह।
ता नो हिन्वन्त्वध्वरम् ॥ २ ॥

पदपरिचय—अमूः। याः। उपसूर्ये। याभिः। वा। सूर्यः। सह। ताः। नः। हिन्वन्तु। अध्वरम्।

अन्वयार्थ—(अमूः याः आपः उपसूर्ये) वे जल जो कि सूर्य के समीप हैं, (वा याभिः सह सूर्यः) या जिन जलों के साथ सूर्य है, (ताः) वे जल (नः अध्वरं हिन्वन्त) हमारी अहिंसा को बढ़ायें।

अध्वरम् = 'ध्वरतिः हिंसाकर्मा, अकारः तत् प्रतिषेधः' = अहिंसा को। अर्थात् वीर्यस्राव जन्य हिंसा न होना।

सूर्य के समीप के जल अर्थात् आकाशस्थ जल या पृथिवी के वे जल जिन के कि साथ सूर्य है, अर्थात् जो खुले सूर्य के प्रकाश में पड़े हुए हैं वे जल हमारी "वीर्य नाश जन्य हिंसा" को रोक, अहिंसा बढ़ावें। अन्धकार में पड़े हुए जल औषध तथा पान के रूप में सेवन करने के योग्य नहीं, यह इसका अभिप्राय है। इस मन्त्र में भी जलों द्वारा वीर्य रक्षा की प्रार्थना गुरु से की गई है।

३. अपो देवीरुपह्वये यत्र गावो पिबन्ति नः।
सिन्धुभ्यः कर्त्वं हविः ॥

पदपरिचय—अपः। देवीः। उपह्वये। यत्र। गावः। पिबन्ति। नः। सिन्धुभ्यः। कर्त्वम्। हविः।

अन्वयार्थ—(देवीः अपः उपह्वये) दिव्य गुणों वाले जलों को हम बुलाते हैं, (यत्र नः गावः पिबन्ति) जहां पर कि हमारी गौवें भी पानी पीती हैं। (सिन्धुभ्यः कर्त्वं हविः) जो कि नदियों से काटा हुआ जल है।

देवीः = दिव्यगुणों वाले जल

सिन्धुभ्यः = नदियों से। कर्त्वम् = काटा हुआ 'कृती छेदने'; अर्थात् नहरों के रूप में नदियों से काटा हुआ। दिव्य गुणों वाले जल की नहर के किनारे जिस पर कि गौआदि पशुओं के जलपान के स्थान भी बने हों, गुरुकुल बनाने चाहियें। ताकि ब्रह्मचारी जलस्नान तथा जल चिकित्सा का पूरा लाभ उठा सकें।

४. अप्स्वन्तरमृतमप्सु भेषजम्। अपामुत
प्रशस्तिभिरश्वा भवथ वाजिनो गावो भवथ
वाजिनीः ॥ ४ ॥

पदपरिचय—अप्सु। अन्तः। अमृतम्। अप्सु। भेषजम्। अपाम्। उत। प्रशस्तिभिः। अश्वाः। भवथ। वाजिनः। गावः। भवथ। वाजिनीः।

अन्वयार्थ—(अप्सु अन्तः अमृतम्) जलों के अन्दर अमृत है और (अप्सु भेषजम्) जलों के अन्दर भेषज है। (अश्वाः) हे पुरुषो! (अपां प्रशस्तिभिः वाजिनः भवथ) तुम पूर्वोक्त जलों की प्रशस्तियों द्वारा बलवान् हो जाओ। (गावः) हे स्त्रियो! (वाजिनीः भवथ) तुम भी बलवान हो जाओ।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्रशस्तिः = स्तोत्र । जलों की प्रशंसा जो ऊपर के मंत्रों में की गई है उस प्रशंसा के अनुसार हे पुरुषो ! तथा स्त्रियो ! तुम बलवान् होवो ।

अश्वाः = वात्स्यायन कामसूत्र में अश्व, शश आदि ४ प्रकार के मनुष्य कहे गये हैं । जो वीर्यवान् पुरुष हैं वे अश्व हैं । गावः = स्त्रियां, लुप्तोपमा। वाजिनः = वाजीकृत अर्थात् पुरुषत्व से युक्त गृहस्थी ।

सूक्तसारः—

बहते हुए जल गुणों में मधुर होते हैं । सूर्य के प्रकाश से संस्पृक्त दिव्य गुण वाले जलों से नहरें निकाल उसके किनारे गुरुकुल बनाने चाहियें । गुरु, शिष्य के स्नान तथा जल सेवन पर विशेष दृष्टि रक्खे, ताकि ब्रह्मचारी, वीर्य सम्बन्धी रोगों से मुक्त रहे । क्योंकि जल-सेवन से आयु दीर्घ होती है और यह भेषज अर्थात् औषध का कार्य करता है । ब्रह्मचारिणीयां तथा ब्रह्मचारी जल के नियम पूर्वक सेवन से बलान् तथा हृष्ट-पुष्ट बन सकते हैं । जल-सेवन मनुष्यों तथा स्त्रियों को वीर्यवान् तथा बलवान् बनाता है ।

एवं इस सूक्त में जल को भी वीर्य की रक्षा का साधन बताया गया है । ब्रह्मचारी को जल का सेवन करना चाहिये । वीर्य की बिमारियों के लिये जल चिकित्सा बहुत उपयोगी है । वेद में जल के प्रभावकारी गुण जगह २ पर वर्णित हैं ।

गौरव महिमा

"ओ३म् उपहरे गिरीणां संगमे च नदीनाम् । धिया विप्रो अजायत ॥" "चरित्रांस्ते शुन्धामि" यजु०

एक नये राष्ट्र का निर्माण

वर्तमान भारत के शिक्षा क्षेत्र में गुरुकुल बहुत से बड़े २ उपहारों में से एक है । इस युग में सब से पहले ऋषि दयानन्द ने गुरुकुल के भाव को स्पष्ट शब्दों में प्रकाशित किया था । मैं उस ऋषि को प्रणाम करता हूँ । वह बाल-ब्रह्मचारी, वह प्राचीन ऋषियों का आत्मिक पुत्र—केवल सुधारक ही न था, वह तपस्वी योगी ! उस की बुद्धि कितनी तीव्र थी ! मेरे विचार में ऋषि दयानन्द का का दूसरा नाम विद्यानन्द था, विद्या में उसे आनन्द आता था । उस का हृदय भारत के लिये प्रेम से कितना परिपूर्ण था । वह इस बात के लिये बड़ा उत्सुक था कि पुराने ज्ञान के बल से भारत पूर्व और पश्चिम की जातियों को फिर से शिक्षित करने के लिये प्रवृत्त हो । एक अत्यन्त धनी का पुत्र होते हुए भी वह भारत के लिये फ़कीर बना । उसने अनुभव किया कि सारी बुराइयों की जड़ अविद्या है । क्या सचमुच अविद्या ने ही वर्तमान भारत की मानसिक दासता को पैदा नहीं किया ? राजनैतिक स्वतन्त्रता मन और हृदय की अन्दरूनी आज़ादी का बाह्य प्रकाश मात्र है और इस सचाई को अब अनुभव किया जा रहा है कि एक नये राष्ट्र के निर्माण के लिये शिक्षा आवश्यक है । ऋषि

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

दयानन्द ने पुराने ऊंचे आदर्शों को ले कर प्रचलित शिक्षा के बल से शक्तिप्राप्त भारत का स्वप्न लिया था। ऋषि दयानन्द का यह स्वप्न स्वामी श्रद्धानन्द जी ने कार्य रूप में परिणत किया। गुरुकुल के उस महान् प्रवर्त्तक को मैं प्रणाम करता हूं। मैं राष्ट्र निर्माता (Nation builder) के रूप में उस महान् आत्मा का बड़े प्रेम से स्मरण करता हूं। किसी भी जाति के निर्माण में शिक्षा का सब से बड़ा असर होता है। इसके उद्देश्यों तथा आदर्शों से जाति की प्रतिभा को दबाना नहीं चाहिये बल्कि प्रकट करना चाहिये।

अनुकरण करना मरणसम है।

इस देश में प्रचलित वर्तमान शिक्षा पद्धति अस्वाभाविक है। यह एक नकल—बड़ी भद्दी नकल-है और नकल नपुंसकता है। भारत की कमज़ोरी के जमाने में वर्तमान शिक्षा प्रणाली को उस पर ज़बरदस्ती डाल दिया गया। नैपोलियन के समय में फ्रांस में इस शिक्षाप्रणाली का जन्म हुआ था। इङ्गलैण्ड ने इसे भारत में भी प्रचलित करना चाहा। इसका उद्देश्य लोगों की शक्तियों का विकास करना नहीं, बल्कि विदेशी सरकार को मज़बूत करना था। इस लिये मुख्यतया यह नौकरशाही से सम्बद्ध (Bureaucratie) थी इस शिक्षा का उद्देश्य ब्रिटिश शासन की सहायता के लिए सस्ते (थोड़ा वेतन लेने वाले) क्लर्क और छोटे २ अधिकारियों को तय्यार करना था। यही वर्तमान पद्धति की बड़ी त्रुटि है। लोगों की आत्मा से इसका कोई सम्बन्ध नहीं है। यह लोगों को मिलाने वाली नहीं बल्कि अलग करने वाली है। श्रीकृष्ण महाराज ने गीता में ठीक कहा है "स्मृति भ्रंशाद् बुद्धिनाशो, बुद्धिनाशात् प्रणश्यति।"

यह गुरुकुल प्राचीन पुण्यभूमि की कई बड़ी जातीय स्मृतियों की चमकती हुई साक्षि रूप है। इसीलिये मेरा विश्वास है कि नई भारतीय जागृति के विकास में, जो कि नये भारतीय राष्ट्र के लिये बहुत ही आवश्यक है, गुरुकुल एक बड़ा महत्व-पूर्ण भाग लेगा और ज़रूर लेगा। क्योंकि इस बात को कभी नहीं भुलाना चाहिये कि राष्ट्र एक मानसिक सत्ता (Psychic entity) है और जातीय ज्ञान तथा परिस्थिति द्वारा प्रकाशित भावों और आदर्शों से यह बनाया जाता है। ये ही भाव और आदर्श किसी क़ौम का निर्माण करते हैं।

गुरुकुल की स्वतः सिद्ध विशेषताएं

इस गुरुकुल विश्वविद्यालय की कई विशेषताएं हैं जो भारत और सारे संसार के लिये महत्व पूर्ण होने के कारण मुझे खास तौर पर प्रभावित करती हैं।

(१) गुरुकुल, प्राचीन आर्य संस्कृति के अनुशीलन के लिये प्रेरणा करता है। प्रारम्भिक ईसाई चर्च की संस्कृति के साथ युनानी और रोमन सभ्यताओं के योग ने यूरप में वर्तमान सभ्यता की नींव रक्खी। यह सभ्यता आज बिलकुल नष्ट प्राय हो चुकी है। रोमान रोलैण्ड ने लिखा था कि यूरोप में बहुत से ऐसे सज्जन हैं जिन की सम्मति में यूरोपीय सभ्यता अपर्याप्त है। एक दूसरे बड़े विचारक कैसर लिंग ने जो वर्तमान पश्चिम के सब से बड़े विचारकों में से एक हैं लिखा है 'यूरप अब मुझे बिलकुल आकृष्ट तथा उत्साहित नहीं करता। मेरा विश्वास है कि एक नई जागृति जिस में वैदिक-बौद्ध-अरबी संस्कृतियों के साथ साथ वर्तमान युग की वैज्ञानिक उन्नति का मिश्रण हो आधुनिक जीवन के आधार को विशाल बनाने और भ्रातृ-भाव तथा मनुष्यमात्र में प्रेममय। सभ्यता के निर्माण में सहायक होगी जिसकी कि संसार उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रहा है। वर्तमान शिक्षा

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

में साहित्य, इतिहास, अर्थशास्त्र और राजनीति के क्षेत्रों में पाश्चात्यों के अनुभव को भारतीय अनुभवों के साथ सम्बद्ध किये बिना, भारतीय विद्यार्थियों पर ज़बर्दस्ती डाल दिया जाता है। यह भुला दिया जाता है। कि अन्य जीवन के क्षेत्रों की तरह शिक्षा में भी अनुभव ही का नियम लागू होता है। गुरुकुल प्रणाली भारत के अपने अनुभवों, भारतीय आदर्शों और परम्परागत विश्वासों पर ज़ोर देती है। जब परम्परागत विश्वास (Tradition) पक्षपात और अन्धविश्वास का साथी होता है तब वह सङ्कुचित भाव को उत्पन्न करता है। परन्तु यही जब एक बड़े आदर्श को प्रकट करता है और बड़ी जाति की उत्कृष्ट उन्नति को सूचित करता है उस समय यह बड़ा उत्तेजक होता है। मैं भारतीय परम्परागत विश्वासों (Traditions) के शिक्षा सम्बन्धी महत्व का मानने वाला हूं। वर्तमान शिक्षा प्रणाली विद्यार्थियों को उन से अलग करती है। इस उन्नत प्राचीन जाति के वीरों और मुनियों की स्मृति जागृत करके विद्यार्थी का अपने उज्वल भूत के साथ सम्बन्ध अवश्य रखना चाहिये।

(२) गुरुकुल नवजीवनप्रद शिक्षा सिद्धान्त का प्रचारक है। आधुनिक शिक्षा में सदा भय और दबाव का साम्राज्य रहता है, किन्तु गुरुकुल तो नियन्त्रणमयी स्वतन्त्रता का कट्टर पोषक है। नियन्त्रण और स्वतन्त्रता में सम्बन्ध है। नियन्त्रणमयी स्वतन्त्रता का आधार पारस्परिक सहानुभूति और विश्वास है। प्राचीन काल में गुरुओं के शिक्षणालयों में विद्यार्थियों को इसी आधार पर शिक्षा दी जाती थी। इस गुरुकुल में भी गुरु लोग अपने शिष्यों को उसी की शिक्षा और दीक्षा देते हैं। इस प्रकार से गुरुकुल ने उन हज़ारों स्कूलमास्टरों और कौलिज प्रोफेसरों के सामने एक अनुकरणीय उदाहरण पेश किया है जो कि नियन्त्रण के नाम पर विद्यार्थियों के साथ सहानुभूति और विश्वास करने से इनकार करते हैं और परिणामतः शिक्षा को एक मैशीन, तथा स्कूलों को कारागार बनाते हैं। गुरुकुल में शिक्षकों और विद्यार्थियों का सम्बन्ध पिता पुत्र का सम्बन्ध होता है शिक्षा का प्रेममय सहवास से बहुत घनिष्ट सम्बन्ध है। इस सचाई को गुरुकुल ने प्रत्यक्ष कर दिखाया है। वेदों में लिखा है कि "गुरु शिष्य को अपने गर्भ में रखता है" "आचार्य उपनयमानो ब्रह्मचारिणं कृणुते गर्भमन्तः" गुरु अपने शिष्य पर वही कार्य करता है जो कि माता अपने गर्भस्थ बच्चे पर करती है। गुरु का काम सिर्फ किताबें रटाना नहीं है। सच्चा गुरु वह है जो पिता माता की तरह अपने शिष्यों की रक्षा, पालन और शिक्षण सदा प्रेम और बुद्धि पूर्वक करता है। गुरुकुल विद्यार्थियों के जीवन को अस्वाभाविक भागों में विभक्त नहीं करता किन्तु उनके शारीरिक, मानसिक, आत्मिक, तथा सामाजिक आदि हर प्रकार के विकास की पूरी उत्तरदायिता अपने ऊपर लेता है। स्कूल और घर के जीवनों को मिला कर एक करने के लिये गुरुकुल एक अनुपम और आश्चर्यजनक प्रयत्न कर रहा है।

(३) गुरुकुल में शिक्षा का माध्यम हिन्दी है। आजकल सरकारी शिक्षणालयों में शिक्षा का माध्यम अँग्रेज़ी को बनाया गया है, परन्तु यह बात मनोविज्ञान-शास्त्र के सिद्धान्तों के सर्वथा प्रतिकूल है। जहाँ तक मैं समझता हूँ शिक्षा का मूल सिद्धान्त यह है कि "ज्ञात से अज्ञात की तरफ़ बढ़ना"। मेरा यह हर्गिज़ मतलब नहीं कि अँग्रेज़ी-भाषा सर्वथा निकम्मी और अनुपयोगी है। जिस अँग्रेज़ी-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

भाषा को मिल्टन, शेक्सपीयर, शैली, बर्नार्ड शा, बेकन और बर्क आदि विद्वानों ने अपनाया है वह अवश्य ही सद्विचारों और अनुभवों का खज़ाना है। अँग्रेज़ी हमें शेष सारे संसार से सम्बद्ध करती है। अँग्रेज़ी-भाषा द्वारा ही हम आधुनिक विज्ञान, राजनीति, समाजशास्त्र तथा पाश्चात्य सभ्यता का परिचय प्राप्त करते हैं। किन्तु अँग्रेज़ी को शिक्षा का माध्यम बनाये बिना भी हम लाभ प्राप्त कर सकते हैं। अँग्रेज़ी पढ़ो किन्तु उसे एक गौण भाषा की तरह पढ़ो। हमारी मातृभाषा हिन्दी है, उसका स्थान अँग्रेज़ी नहीं ले सकती। गुरुकुल द्वारा हिन्दी को शिक्षा माध्यम बनाना, मेरी समझ में, हिन्दुस्तान के शिक्षा सम्बन्धी और सामाजिक जीवनों में बहुत शीघ्र एक मौलिक क्रान्ति पैदा करेगा। जर्मनों ने जब पोलैण्ड को जीत लिया तो वहाँ के लोगों में से राष्ट्रीयता के भावों को समूल नष्ट करने के लिये उन्होंने यही सर्वोत्तम उपाय समझा कि पोलैण्ड के स्कूलों में शिक्षा का माध्यम जर्मन भाषा प्रचलित कर दी गई। स्कूलों के उन नन्हें नन्हें बालकों को जर्मन मास्टरों ने बहुत ही निर्दयता से पीटा जो कि पोलैण्ड की भाषा में प्रार्थना के भजन गाते थे। भाषा का मनुष्यों के विचारों और जीवनों के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध है। अगर एक विदेशी भाषा को शिक्षा का माध्यम बना दिया जावे तो विद्यार्थियों में से स्वतन्त्र विचार करने की शक्ति अवश्य नष्ट हो जायगी। वे विदेशियों के विचारों और रीति रिवाज़ों की नकल करने लगेंगे और उन में से मानसिक और आत्मिक विकास का सर्वथा लोप हो जावेगा। स्वाधीन आयर्लैण्ड के मन्त्रिमण्डल ने बिना कुछ विचारे ही यों ही गैलिक-भाषा को आयर्लैण्ड की मातृ भाषा नहीं बनाया था, न ही "नवीन यहूदी युवक सङ्घ" के नेताओं ने, बिना किसी मसलहत के, हिब्रू-भाषा को अपने प्राथमिक तथा उच्च श्रेणी के स्कूलों में भी शिक्षा का माध्यम बनाया था। परन्तु वे लोग वस्तुतः समझते थे कि उनकी सभ्यता और राष्ट्रीयता की उन्नति उनकी ही मातृभाषा द्वारा हो सकती है।

(४) गुरुकुल ब्रह्मचर्य की आवश्यकता पर विशेष बल देता है। ब्रह्मचर्य ही प्राचीन भारतीय सभ्यता का आधार है। संसार की ऊंची ऊंची सभ्यताएँ भोगविलास में पड़ कर तबाह होती हैं। परन्तु हिन्दु सभ्यता के आचार्यों ने इस बात को भली प्रकार समझ लिया था कि इन्द्रिय संयम ही उन्नति शील सभ्यता का एकमात्र आवश्यक सिद्धान्त है। मेरी सम्मति में प्राचीन ब्रह्मचर्य शब्द का अर्थ ही अत्यन्त भावपूर्ण है। संस्कृत के अनेक शब्दों में आश्चर्यजनक सौन्दर्य होता है। और उनके अन्दर अत्यन्त गम्भीर रहस्य भरे हुए होते हैं। "ब्रह्मचर्य" शब्द के धात्वर्थ पर ज़रा विचार कीजिए। यह दो शब्दों के मेल से बना है। ब्रह्म और चर्य। जिस का अर्थ है "ब्रह्म के साथ गति"। ब्रह्म का अर्थ है वृद्धि या विकाश। ब्रह्म शक्ति का स्रोत है। ऐ नवयुवको! तुम में भी उस प्रजापति की दैवी शक्ति का अंश मौजूद है। क्या तुम उस के साथ सहयोग करते हो या भोगविलास तथा क्षणिक सुखों और स्वार्थों के लिये उसका दुरुपयोग करते हो। ब्रह्मचर्य ही सभ्यता और सदाचार का मूल है। यही राष्ट्रीयता का मूल मन्त्र है। यही शक्ति का रहस्य है। संसार के सारे डाक्टरों की सारी दवाएं स्वास्थ्य की इतनी रक्षा नहीं कर सकतीं जितनी एक ब्रह्मचर्य द्वारा की जा सकती है। पुरुषत्व की शक्ति इन्द्रियसंयम से ही प्राप्त होती है। हिन्दू समाज और हिन्दू सभ्यता का प्राण ब्रह्मचर्य ही था। हिन्दु सभ्यता के प्राणस्वरूप ब्रह्मचर्य का हमने

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अपमान किया है। इसीलिये हमारा हर तरह से अधः पतन हो गया है। मुझे पूरा निश्चय है कि भारत सम्बन्धी सारी समस्याएँ नवीन पुरुषत्व और नवीन शक्ति के सञ्चार से हल हो सकती हैं। जो जाति स्वतन्त्र होना चाहती है उसे पहिले बलिष्ठ बनना चाहिये। सत्य तो यह है कि दौर्भाग्य से आधुनिक प्रचलित शिक्षा प्रणाली ने ब्रह्मचर्य पर कुछ भी ध्यान नहीं दिया। हमें इस बात पर हैरान नहीं होना चाहिये कि स्कूलों और कालिजों से खूब चालाक व्यक्ति पैदा होते हैं। देश को चालाकों की नहीं किन्तु सरल लोगों की आवश्यकता है, जो कि बलिष्ठ हों और देश की सेवा में अपने आप को बलिदान कर सकें। एक बात मैं साफ़ साफ़ कह देना चाहता हूं कि पाश्चात्य सभ्यता की नकल करने से हिन्दुस्तान का कुछ भी नहीं बन सकता। भारत माता को उन ब्रह्मचारियों के समूहों से ही आशा है जो कि संसार के कोने कोने में जाकर धर्म पिपासु लोगों को ऋषियों का पुनीत संदेश सुना सकें।

स्त्री-जगत

मुसलमान लड़की कानून की परीक्षा में

कलकत्ता विश्वविद्यालय की कानून की परीक्षा में एक मुसलमान लड़की—जिस का नाम बेगम 'फरुख सुलतान सकीना मुबैयद ज़ादा' है— ने प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण विद्यार्थियों में द्वितीय पद प्राप्त किया है। आप विश्वविद्यालय की विशेष आज्ञा प्राप्त कर घरेलू तौर पर कानून का अध्ययन करती रही हैं। किसी कालेज में आपने शिक्षा प्राप्त नहीं की। आप के पिता कलकत्ते के एक समाचारपत्र 'हबलुल मतीन' के सम्पादक हैं। आप एम. ए. की परीक्षा में भी विश्वविद्यालय के सब छात्रों में सर्वोपरि रह कर प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुई थीं।

× × ×

लंडन में स्त्रियों के पुरुषों के साथ समानता

समान अधिकार

हाउस आफ़ कामन्स से स्त्रियों को पुरुषों के ही तरीके के मताधिकार देने का बिल पास हो रहा है। इस के अनुसार पति के रोजगार करने की ज़मीन तथा अपने निवास स्थान की रजिस्ट्री स्त्री के नाम पर हो सकेगी और स्त्री की रोजगारसम्बन्धी जमीन की रजिस्ट्री करा लेने का अधिकार पति को होगा।

विश्वविद्यालयों के सम्बन्ध में मताधिकार स्त्री पुरुषों के समान ही होंगे। विश्वविद्यालय की शिक्षा प्राप्त मताधिकारिणी स्त्रियों की संख्या १०००० और मताधिकारी पुरुषों की ४७००० होगी। नया रजिस्ट्री का नियम १९२९ से लागू होगा जब आगामी वर्ष का साधारण निर्वाचन होगा।

इस बिल को पेश करने वालों ने कहा कि हम नहीं मानते कि आज कल कोई भी व्यक्ति ऐसा होगा जो यह कहे कि स्त्रियां मानसिक उन्नति में तथा उचित परामर्श देने में पुरुषों की अपेक्षा न्यून शक्ति रखती हैं। विपक्षियों ने कहा कि यदि यह बिल पास हो गया तो देश के राष्ट्रीय जीवन की कर्णधार स्त्रियां ही बन जावेंगी। तथा

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जब दश पुरुष देश की सम्पति बढ़ाते हैं तो कहीं एक स्त्री। परन्तु इस कानून से देश की सम्पत्ति पर स्त्रियों का मताधिकार हो जायगा। ऐसा होने से भारतीय विप्लवकारी लोग भारतीयों को, विशेषतया साम्राज्य के मुसलमानों को, भड़का कर कहेंगे कि वे स्त्रियों द्वारा शासित हो रहे हैं। पक्ष में बहुत अधिक वोट होने से बिल का दूसरा पाठ पढ़ा ही गया।

× × ×

यूरोप के राजनैतिक क्षेत्र में स्त्रियों का भाग

आस्ट्रिया के वियाना नगर में व्यापार विनिमय में तो स्त्रियों को शामिल कर लिया गया है लेकिन स्टाक विनिमय में अभी तक उन्हें पृथक् ही रखा गया है।

फिनलैण्ड से खबर मिली है कि वहां की स्त्रियां डिप्लोमैटिक सर्विस में बिना रोक टोक प्रविष्ट हो सकेंगी।

फ्रांस में स्त्रियां डिप्लोमैटिक सर्विस में प्रविष्ट हो सकेंगी परन्तु वर्तमान समय में डिप्लोमैटिक सेना की वास्तविक सदस्य के रूप में अभी नहीं हो सकती।

हंगरी में सरकार एक कानून बनाने वाली है जिस से स्त्रियां स्थानीय राज्य-निर्वाचन में वोट दे सकेंगी लेकिन विविध विभागों में नहीं। इस से स्त्रियों में बड़ी सनसनी फैल रही है क्योंकि स्त्रियों को पार्लियामेन्ट के मताधिकार तथा सदस्य बनने का अधिकार कुछ बन्धन के साथ पहले से ही प्राप्त था।

× + ×

अमरीका

संयुक्त राज्य में १२६ स्त्रियां भिन्न २ देशों की नियम बनाने वाली सभाओं की सदस्य हैं। १९२७ की अपेक्षा १९२८ में दो स्त्रियां अधिक हैं। वर्जिनिया में एक नीग्रो स्त्री पहली सदस्य बनाई गई है।

एक हिन्दू-लड़की घुड़दौड़ में प्रथम हुई

पेरिस से केविज़ तक ६२५ मील की स्त्रियों की घुड़दौड़ में एक सोलह वर्ष की 'कुमारी गायत्री' नाम की हिन्दु-कन्या प्रथम हुई है जिसने १३ दिन में रास्ता पार किया है। घुड़दौड़ लगानेवाली कुल छै स्त्रियाँ थीं लेकिन दो ने तो बीमार होने के कारण दौड़ छोड़ दी। एक और देवी का घोड़ा बीमार होने लगा इसलिये उसे डाकृरों ने २४ घण्टे रोक दिया। फिर भी वह गायत्री देवी से ६ घण्टे बाद लक्ष्य पर पहुँच गई। इसने १२५ मील लगातार घोड़ा दौड़ाया सिर्फ़ घोड़े को खिलाने के लिये ज़रा ठहरी थी। भारत की देवियों को इससे उत्साह लेना चाहिये।

× × ×

एक महिला बैरिस्टर

पेरिस में एक युवा तथा सुन्दरी महिला बैरिस्टर ने दो डाकुओं— जिन्होंने हत्या तथा राक्षसी व्यवहार किये थे—की पैरवी की और उनके साथ साथ फाँसी के स्थान पर आयी। यह देवी पहली ही महिला हैं जो बैरिस्टर की ड्यूटी करती हुई फाँसी देने के कार्य में सम्मिलित हुईं।

× × ×

बूढ़ों को युवा पत्नियाँ नहीं चाहिये

बम्बई की सरकार शीघ्र ही एक क़ानून बनाने वाली है जिससे असमान आयु के विवाह रुक जायँ अर्थात् ४० वर्ष के बुढ्ढे के साथ १८ वर्ष की कन्या का विवाह अपराध समझा जायगा। इस अपराध के लिये क़ैद तथा जुर्माना दोनों ही दण्ड होंगे।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

× × ×

रावलपिण्डी में स्त्री-सम्मेलन

स्त्री उद्धार-सम्मेलन का प्रथम अधिवेशन रावल-पिण्डी आर्यसमाज की रजत-जयन्ती के अवसर पर बड़े समारोह से हुआ। श्रीमती गुरदासराम शाहनी सभाध्यक्षा थीं। स्त्री और पुरुष दोनों ही प्रतिनिधि बनकर आस-पास के ज़िलों से एकत्र हुये थे।

इस सम्मेलन में बड़े उत्तेजनापूर्ण वाद-विवाद के बाद प्रथम प्रस्ताव पास हुआ कि स्त्रियाँ भी आर्यसमाज की कार्यकारिणी समितियों तथा कन्यापाठशालाओं की प्रबन्ध-कमेटियों की सदस्य बन सकती हैं। दूसरा प्रस्ताव था कि स्त्रियों की पाठविधि में परिवर्त्तन होने चाहियें। इस सम्बन्ध में कहा गया था कि इन ५० वर्षों में आर्यसमाज ने स्त्री-शिक्षा के सम्बन्ध में प्रायः नहीं के बराबर कार्य किया है। तीसरा प्रस्ताव मि० शारदा के हिन्दू-विवाह-बिल का समर्थन करना था। उसके बाद यह प्रस्ताव रखा गया कि आर्य्यसमाज का कोई सदस्य एक पत्नी की विद्यमानता में दूसरा विवाह न करे। तथा मृतपत्नीक पुरुष कुमारियों से पुनर्विवाह न करे बल्कि विधवाओं से करे।

इस के बाद श्रीमती शिवदेवी जी प्रधान ने ५०००) पुत्री-पाठशाला की उन्नति के लिये दान दिये।

हम रावलपिण्डी की बहिनों को उनके इस कार्य के लिये बधाई देते हैं और सब स्त्री-समाजों का ध्यान इधर खींचना चाहते हैं कि वे भी ऐसे प्रस्तावों को पास कर आर्यसमाज की त्रुटियों को दूर करें।

× × ×

स्त्रियों का पति-परित्याग करने तथा कन्याओं का पिताकी सम्पत्ति का अधिकार-प्राप्ति के लिये आन्दोलन

बम्बई में हाल में ही बहुत-सी स्त्रियों ने इकट्ठा होकर एक प्रस्ताव पास किया है कि कौंसिल और असेम्बली दोनों में गैरसरकारी सदस्य यह प्रस्ताव रक्खें कि विवाह के बाद सम्पत्ति पर अधिकार के सम्बन्ध के क़ानून की जाँच करने के लिये एक समिति बने जो कि स्त्रियों के अधिकार की रक्षा करनेवाले क़ानून पर अधिक ज़ोर देकर बल दे कि एक समय में एक से अधिक पत्नियाँ न हो सकें, जो परित्यक्त पत्नी हो उसे गुज़ारे के लिये उपयुक्त द्रव्य की सहायता दी जावे तथा पत्नी को भी पति-परित्याग करने का अधिकार हो और पुत्री को पिता की, दादे-परदादों से प्राप्त सम्पत्ति पर आयु-भर ब्याज प्राप्त करने का अधिकार हो।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

१. लकडी से खांड ।

स्टाक होलम में कोयला और लकड़ी कांफरेन्स के अवसर पर प्रोफेसर एबो ने अपने भाषण में लड़की के बुरादे से खांड बनाने की नई विधि का विवरण दिया है। उन्होंने बतलाया कि जेनेवा में इस विधि द्वारा बड़े भारी परिमाण में बुरादे से इस प्रकार खाँड बनाई जाती है और बुरादे का दो तिहाई भाग खाँड का रूप धारण कर लेता है।

स्वीडन एक ऐसा देश है जहां लकड़ी का बड़ा व्यापार होता है और जहां कि देश के लिये आवश्यक प्रायः सारी खांड बाहर से आती है। इस देश के लिये यह विधि बड़ी उपयोगी सिद्ध होगी। प्रोफेसर महोदय ने कहा कि बड़ी सुगमता से प्राप्त होने वाले बुरादे से कई करोड़ मन खाँड पैदा की जा सकती है ।

* * * *

२. कांच को ठंडा होने में एक वर्ष

ऐनकों, दूरवीक्षण और सूक्ष्मवीक्षण यन्त्र इत्यादि अनेक यन्त्रों में जो शीशे लगाये जाते हैं वे विशेष प्रकार से बनाये जाते हैं और फिर उन्हें रगड़ २ कर आवश्यक पार्श्व का शीशा बना लिया जाता है । ये शीशे दूर अथवा निकट से वस्तु देखने के काम आते हैं । दूरबीनों में ये शीशे बहुत बड़े बड़े होते हैं । पिछले वर्ष मई मास में अमरीका में भी एक ऐसा ही शीशा ढाला गया था जो कि अभी तक ठंडा नहीं हुआ। यह ७० इञ्च व्यास (गोले की चौड़ाई) का शीशा है, और बनने के पीछे साल भर तक यह ठंढा नहीं हुआ। मोटे शीशे को बनाने के पश्चात् ठंडा करना एक विशेष चतुराई का कार्य है। यदि इसे एकदम ठंडा करना आरम्भ कर दें तो ऊपर का भाग तो शीघ्र ठंडा हो जाता है परन्तु भीतर गरम बना रहता है अतः ऊपर से छोटे छोटे टुकड़े टूट कर गिरने लग पड़ते हैं। इस प्रकार शनैः २ सारा ही शीशा टूट जाता है । अतः इन शीशों को विशेष रीति से ठंडा किया जाता है । ढालने के पीछे इसे बड़ी सावधानी से रेत और पकाई हुई मिट्टी में दबा दिया जाता है जिस से कि भीतर और बाहर से यह बहुत ही धीमे धीमे ठंडा हो। इस क्रिया में कई मास लग जाते हैं और फिर भी भय रहता है कि अन्त में शीशा टूटा न निकले ।

* * * *

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

३. पालक का शाक।

योरोप और अमरीका में सहस्रों ऐसे स्त्री पुरुष हैं जो कि मास, मक्खन और कहवे पर ही रहते हैं और बहुत ही कम न के बराबर हरे शाक अथवा सब्ज़ी खाते हैं। इस कारण वे खुजली, अंगों को टेढ़ा हो जाना इत्यादि रोगों से ग्रसित रहते हैं। विज्ञान का आदेश है कि मनुष्य को अपने शरीर की रक्षा के लिये वाईटेमिन्ज़ की बहुत आवश्यकता है और यह अधिकांश हरी भाजियों में ही होते हैं। इन भाजियों में वाईटेमन्स की दृष्टिकोण से पालक का बड़ा ऊंचा स्थान है। इस में न केवल शरीर की वृद्धि करने वाला वाईटेमन "ए" ही विद्यमान है वरन खुजली को रोकने और अन्य बीमारियों के आक्रमण से बचाने वाला वाईटेमिन "बी" भी बहुत बड़ी मात्रा में विद्यमान है। इन के अतिरिक्त हमारे शरीर को जितनी चूने की आवश्यक्ता है उस का दो तिहाई से अधिक भाग पालक में मिल सकता है। अतः कुछ भाग में पालक दूध का भी स्थानापन्न है।

* * * *

४. रोगियों को सन्तानोत्पत्ति से रोकना

वरजीनीया में एक राज-नियम है कि ऐसे व्यक्तियों को जो स्वयं रोगी अथवा दुर्बल शरीर और मस्तिष्क रखते हैं आप्रेशन कर के सन्तान उत्पत्ति के अयोग्य बना दिया जावे जिस से कि रोगी और दुर्बलेन्द्रिय बालक न पैदा हों। इस नियम के अनुसार वहाँ की एक १८ वर्षीया स्त्री पर ऐसा आप्रेशन किया गया। उस की माता भी दुर्बलेन्द्रिय थी और उस की लड़की भी। इस मुक़दमे पर वहां के सब से बड़े न्यायालय की सम्मति ली गई। उसने अपनी सम्मति देते हुये एक बात बड़े महत्व की कही कि युद्ध, दंगे फिसाद इत्यादि के समय में यदि जाति को अपने सर्वोत्तम नागरिकों की जीवनाहुति लेने का अधिकार है तो क्या यह उस से कहीं कम भेंट लेने का अधिकार नहीं? ऐसे अयोग्य व्यक्तियों की तीन पीढ़ियां पर्याप्त हैं।

यह तो आशा नहीं कि इस प्रकार के आप्रेशनों से पागलपन दुर्बलेंन्द्रियता देश से सर्वथा दूर हो जायेगी। परन्तु इतनी आशा अवश्य है कि इस में बड़ी भारी न्यूनता हो जायगी। देश में जितने जुर्म और अपराध होते हैं और जिसको वश में करने के लिये जाति के करोड़ों रुपये व्यय होते हैं उनका बहुत बड़ा भाग जनता के ५ प्रति शतक व्यक्तियों द्वारा ही किया जाता है और इन अपराधियों में अधिकांश दुर्बल मस्तिष्क वाले होते हैं। और यह ऐसा रोग है जो कि माता पिता से सन्तान में आता है अथवा अन्य रोग-पीड़ितों के संग से उत्पन्न होता है। समाज कितने समय तक इन ५ प्रतिशतक की खातर ९५ प्रतिशतक पर अन्याय करता रहेगा?

* * * *

५. संसार की सब से छोटी मोटर।

बिजली के एञ्जिन को—जो कि कारखानों मे अन्य छोटी बड़ी मशीनों को चलाती हैं मोटर कहते हैं जिस प्रकार भाप से चलने वाले अञ्जनों के लिये भाफ दूसरे बर्तनों में—जिन्हें बायलर कहते हैं पैदा की जाती है इसी प्रकार बिजली की मोटर को चलाने वाली बिजली अन्य स्थान पर पैदा की जाती है। यह मोटर तो मशीनों को बिजली द्वारा चलाने का साधन मात्र होती है। इन मोटरों पर एक पहिया होता है जिस पर माल अथवा पट्टा डाल कर दूसरी मशीनों को

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

चलाते हैं । ये मोटरें बहुत छोटी और बहुत बड़ी सभी तरह की होती हैं । प्रायः प्रतिदिवस के काम में आने वाली छोटी मोटरें ऐसी होती हैं कि आठ या सोलह मिल कर इतना काम कर सकें जितना एक घोड़े की शक्ति से होता है। बड़ी मोटरें हज़ारों घोड़ों की शक्ति का काम करती हैं ।

नैबरासका में इमैन्युएल काहम नाम का एक घड़ीसाज़ है जिस के पास संसार की सब से छोटी मोटर है । १५ वर्ष हुये उस ने एक छोटी सी मोटर बनाई थी, परन्तु उसकी दूकान में आग लगने के साथ ही यह भी नष्ट होगई । इस से दुखित होकर इसने पहले से भी छोटी एक और मोटर की रचना की । जहां पहिली मोटर का तोल दश माशे के लगभग था वहां यह नवीन मोटर केवल ५ माशे के लगभग है । यह एक तिहाई इञ्च ऊंची है और इसके भिन्न २ भाग-जो कि संख्या में ५८ हैं-सोने, चान्दी और लोहे के बने हैं । इन भागों में से कितनेही इतने छोटे हैं कि इन को बनाते समय सूक्ष्मवीक्षण यन्त्रों की सहायता ली गई थी । इस के ५८ भाग १६ पेचों से अपने २ स्थान में जुड़े हुये हैं । सब से बड़े पेंच में इञ्च में २२० के हिसाब से चूड़ियां हैं और छोटे में २६० जिस मशीन को यह मोटर चलाती है वह मोटर सहित एक २½ इञ्च लम्बे और १½ इञ्च चौड़े लकड़ी के टुकड़े पर जड़ी हुई है । पट्टे के स्थान में ६० नम्बर की रील का धागा डाला हुआ है । इस मोटर द्वारा, एक मिनट में ४०० चक्कर पहिया लगाता है और यह बिना गरम हुये बहुत देर तक चलती रहती है । इसे बनाने में ३ वर्ष लगे थे ।

६. हानिकारक कीड़े मकौड़ों का पालन पोषण

अमरीका में कृषि सम्बन्धी जितने भी कार्य होते हैं सब विधिपूर्वक होते हैं । यह हो भी क्यों न ? अमरीका कृषि प्रधान देश है और स्वतन्त्र ! यदि हम अपने पाठकों से कहें कि संसार में एक ऐसा थान है जहां पर कि बड़ी सावधानी से पिस्सू, मच्छर, खटमल, जुयें, दीमक खपरा इत्यादि अनेक हानिकारक छोटे २ जन्तुओं को पाला जाता है, जिन वस्तुओं पर इन जन्तुओं का जीवन निर्भर है या जो इन्हें रुचिकर हैं वे सब ही बड़े यत्न से जुटाई जाती है तो यह सुन कर उन्हें आश्चर्य अवश्य होगा । परन्तु अमरीका की राजधानी वाशिंगटन से थोड़ी ही दूरी पर वर्जिनिया प्रान्त के वायना नगर में एक बहुत सुन्दर उद्यान है जिस में अनेक फल फूलों के वृक्ष और पौदे हैं, अनेक प्रकार की सब्जी भाजियों की क्यारियां हैं और इन पर अनेक जन्तुओं को पाला जाता है। परन्तु इस कीट जन्तु उद्यान में इन जन्तुओं पर जो कि मनुष्य को सब प्रकार से हानि पहुंचाते हैं— इतनी कृपा के विशेष कारण हैं । इन जन्तुओं में से अधिकांश खेती को नाश करते हैं, अतः इन को मारने के लिये कई प्रकार की जन्तुमारक औषधियां निकलती रहती हैं । कई लोग केवल व्यवसाय की दृष्टि से ही इन औषधियों को बेचते हैं और कितने ही किसान इन के लच्छेदार विज्ञापनों में फंस कर बड़े भारी मूल्य में कितनी ही निकम्मी औषधियां खरीद बैठते हैं । वहाँ की सरकार चाहती है कि ज़मीदार इस प्रकार न लूटे जायें । अतः जब कभी भी वह किसी नवीन औषधी का विज्ञापन देखती है वह उसे तुरन्त खरीद लेती है और उन सब दवाओं की जो इस के सम्बन्ध में किये जाते हैं परीक्षा करती है ।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जिस जन्तु के मारने के लिये इसे उपयोगी बतलाया जाता है उसी जन्तु पर इस का प्रयोग कर के इस की परीक्षा की जाती है। यदि यह जांच में ठीक उतरे तब उसे बिकने दिया जाता है अन्यथा बेचने और बनाने वालों दोनों को चेतावनी दी जाती है कि वह इसका बेचना बन्द कर दें अथवा इसके सम्बन्ध में केवल उतने ही दावे करें जितने सत्य हों। यदि वे न मानें तो उन पर मुक़द्दमा चला कर उन्हें कड़ी सज़ा दिलाई जाती है। एक सजग सरकार इस प्रकार अपनी प्रजा की धोखे बाजों के हथकन्डों से रक्षा करती है।

७- विज्ञान की असफलता

श्रीयुत जेम्स आडम्स ने 'हार्पर मन्थली मैगज़ीन' में एक लेख लिखा है जिसका शीर्षक रखा है "क्या विज्ञान एक ऐसी गली है जिस में भीतर जाने और बाहर निकलने के लिये केवल एक ही मार्ग है?" इस लेख में आप लिखते हैं कि जीवन के सम्बन्ध में कुछ प्रश्न ऐसे हैं जो कि मनुष्य सदैव पूछता रहता है, कुछ इच्छायें और भोग ऐसे हैं जिनकी पूर्ति के लिये वह सदा लालायित रहता है, कुछ ध्येय है जो कि सदा उस के सन्मुख विद्यमान रहते हैं और कुछ अनुभव हैं जिन पर वह सदा बल देता रहता है। अतीत समय से मानव प्रगति के उतार चढ़ाव में, आचार विचार के साधारण परिवर्तनों में हम कभी २ इन मौलिक प्रश्नों को भूल जाते हैं, परन्तु यदि हम मनुष्य को सभ्यता के भिन्न २ केन्द्रों-में अफ्रीका की असभ्य जातियों और योरोप के सभ्यदार्शनिकों में ध्यान से देखें तो हमें मनुष्य स्वभाव के कुछ ऐसे अंश दिखाई देंगे जोकि सर्वथा अपरिवर्तनशील हैं।

उन में से एक मत है कि वह निज अस्तित्व और उस संसार का जिस में वह विचरता है स्वरूप जानने के लिये सदा ही इच्छुक रहा है; जीवन और मृत्यु क्या है? इस प्रश्न पर उसने कभी विचार करना नहीं छोड़ा है, उसे अपनी आत्मा का कविता में, चित्र कला में तथा कला के अन्य रूपों में प्रकट करने की सदा ही उत्सुकता रही है; उसने इस बात पर सदैव बल दिया है कि उस का वैयक्तिक अस्तित्व है और उस की जीवन लीला का विशेष उद्देश्य है।

"विज्ञान का मानव हृदय के इन नैसर्गिक विचारों से क्या सम्बन्ध है। संसार क्या है, हम क्या हैं इत्यादि प्रश्नों पर विज्ञान ने किंचित् भी प्रकाश नहीं डाला। जिनको यह 'कारण' बतलाता है वे केवल पूर्ववर्ती घटनायें हैं। यह केवल घटना चक्र का ही चित्र खेंचता है। न केवल किसी घटना के 'क्यों' पर ही मौन है वरन् यह भी नहीं बतलाता कि यह किस प्रकार होती है। यह जो कुछ बतलाता है वह तो केवल इतना ही है कि यदि इस समय एक विशेष घटना समूह व्यापक है तो इस के पश्चात् एक और घटना समूह उपस्थित होगा। निस्सन्देह यह ज्ञान बड़ा लाभदायक है। मैं एक विशेष प्रकार के ज्ञान की जिसको विज्ञान ने एकत्र किया है निन्दा नहीं करता।

"यह हो सकता है कि मनुष्य को अपने कितने ही "यह ऐसा क्यों होता है?" प्रश्नों का उत्तर नहीं मिलेगा। परन्तु यह विचारणीय विषय नहीं। विचारणीय तत्व यह है कि मनुष्य, प्रत्येक समय में, इन प्रश्नों का उत्तर पाने का उत्सुक रहा है, अज्ञेयतावाद ने कभी भी उस को शान्ति नहीं दी। अब प्रश्न यह है कि क्या मानव स्वभाव एक दम

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

इतना बदल गया है कि अब वह सदा के लिये विज्ञान के उन उत्तरों से सन्तुष्ट हो जायगा जो कि वास्तविक उत्तर नहीं है।

"एक और विचारणीय बात है। मनुष्य के हृदय में एक विचित्र भाव अंकित है, कि संसार में वस्तुओं का मूल्य है, कि कुछ वस्तु, कुछ विचार, कुछ आचार सम्बन्धी क्रियायें ऐसी हैं कि उन का अन्य वस्तु, विचारों और क्रियाओं से अधिक मूल्य है। एक महती कविता का किसी दीवार पर लिखे गन्दे तुकों से अधिक मूल्य है, एक सज्जन योधा का एक तुच्छ का पुरुष से अधिक मूल्य है। परन्तु, वैयक्तिक रूप से कोई वैज्ञानिक निज जीवन में विज्ञान के संकेतों को चाहे कितना ही विस्मरण करदे विज्ञान में मूल्य का कोई स्थान नहीं।

"मुझे यह विश्वास नहीं होता कि कोई भी सिद्धान्त-समूह, आध्यात्मिक दृष्टि से और साधारणतया विचार की दृष्टि से इतना सार हीन हो जितना कि विज्ञान। मानव हृदय की विभिन्न रुप धारण करने वाली अभिलाषाओं को सदा के लिये सन्तुष्ट कर सकेगा। विज्ञान की घटनायें बड़ी ही मनोहर हैं, और बहुत ही लाभदायक हैं, परन्तु मनुष्य को सदा के लिये सन्तुष्ट करने में उनका मूल्य भूलभुलैयां के चित्र से अधिक नहीं है।

विचार-प्रवाह

गुरुकुल का वार्षिकोत्सव

गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी का २६ वां वार्षिकोत्सव ईस्टर की छुट्टियों में ५ से ६ अप्रैल १९२८ तक खूब धूमधाम से मनाया गया। उत्सव को सब दृष्टियों से सफलता मिली। इस वर्ष गुरुकुल का वार्षिकोत्सव गुरुकुल की नई जमीन पर मनाया गया था। जनता का अपूर्व समारोह था। पण्डाल हमेशा भरा रहता था और बाजार में हमेशा भीड़ लगी रहती थी। इस वर्ष सरस्वती सम्मेलन में ब्र० अवनीन्द्र कुमार ने 'साम्राज्यवाद' पर निबन्ध पढ़ा। निबन्ध संसार के इतिहास मानव-समाज की सभ्यता की विशद और गम्भीर आलोचना थी। इस के सभापति डा० ज़ाकिरहुसैन प्रिन्सिपल जामिया इस्लामिया दिल्ली थे। आप के विनय सरलता और शिष्टता ने सब को मुग्ध कर लिया था। संस्कृत सम्मेलन के सभापति पं० बुद्धदेव विद्यालंकार और पं० प्रियव्रत विद्यालंकार के भाषणों के समय प्रतीत होता था, कि हम उस जमाने में रह रहे हैं जब गली गली में संस्कृत बोली जाती थी और तोते तक संस्कृत में बोलते थे। गुरुकुल पताका की स्थापना श्री आचार्य रामदेव जी ने की थी। जब आप बोल रहे थे आप की आंखों से अश्रुधारा बह रही थी। प्रत्येक बूंद के अन्तराल में गुरुकुल के भूत इतिहास के पन्ने अंकित थे और भविष्य छिपा था। राष्ट्रिय शिक्षा सम्मेलन के सभापति श्री प्रकाश काशी थे। इस सम्मेलन में विविध राष्ट्रीय शिक्षणालयों के कार्यकर्ताओं ने अपने विचार प्रकट किये थे। सर्व-धर्म-सम्मेलन के सभापति श्री स्वामी वेदानन्द जी थे। जैन, मुसलमान, ईसाई, और आर्य समाज के प्रतिनिधियों ने 'धर्म की समानता, विषय पर निबन्ध पढ़े थे। प्रचार-सम्मेलन के सभापति श्री उम्मेदसिंह शाहपुराधीश के पुत्र थे। इस में विदेश-प्रचार, दक्षिण प्रचार, दलितोद्धार आदि विषयक प्रस्ताव

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्वीकृत हुए। आर्य कांग्रेस में दिल्ली आर्य कांग्रेस के निर्णयों को कार्यान्वित करने का निश्चय किया गया। महाराज शाहापुराधीश को आर्य जाति की ओर से उनकी समाज की सेवाओं के उपलक्ष्य में अभिनन्दन पत्र दिया गया। महाराज ने गुरुकुल की आधार शिला वाद्य घोस और जयनादों के बीच रखी। वृद्ध महाराज प्रतिदिन समय पर पण्डाल में आते थे और कार्यवाही के अन्त तक बैठते थे। आपको देख कर आर्य जनता फूली नहीं समाती थी। महाराज कुंवर तो गुरुकुल परिवार के एक घनिष्ट आदमी होगये हैं।

दीक्षान्त संस्कार इस वर्ष धूम धाम से हुआ। बीस स्नातकों को उपाधियां दी गईं। श्री आचार्य जी ने अति प्राचीन काल में स्नातकों को दिये जाने वाले उपनिषद् वाक्यों से स्नातकों को उपदेश दिया। दीक्षान्त अभिभाषण देते हुए साधु वास्वानी ने सेवा, ब्रह्मचर्य और प्राचीन आदर्शों को पुनरुज्जीवित करने का उपदेश दिया। नवीन भारत के निर्माण के लिए तय्यार होने के लिए जोरदार शब्दों में अपील की। वक्ता का प्रत्येक शब्द हृदय से निकल रहा था। भाषण कवितामय था। साधु जी भाषण देते हुए अपने आपको भी भूल गये थे। मालूम होता था कि अदृश्य शक्ति में लीन होगए हैं। प्रत्येक शब्द अग्नि के दहकते शोलों के समान जीवन संचारी था। पं० बुद्धदेव विद्यालंकार ने पुराने स्नातकों की ओर से नवस्नातकों का स्वागत किया। आपने देश धर्म और जाति की सेवा के लिये कहा। नव स्नातकों की ओर से ब्र० शंकरदत्त ने कवितामय भाषा में उत्तर देते हुए कहा, हम संसार को नहीं जानते हम दिये लेकर घूम रहे हैं, इन्हें आप जलाइये इनके अमर प्रकाश में हम अपना मार्ग तय करेंगे। आचार्य कृपलानी ने 'सत्य' को अपना ध्येय बनाने का स्नातकों को उपदेश दिया। श्री जवाहर लाल नेहरु ने पुराने विचारों, पुरानी रूढ़ियों और पुरानी व्यवस्थाओं के विरुद्ध बगावत करने का उपदेश दिया। डा० ज़क़िरहुसैन ने कहा कि उस धर्म को फैलाइये जिस से मनुष्य मनुष्य को भाई समझे और प्रेम से गले लगावे, उस को नहीं जिस से यह दुःखी संसार और दुःखी हो और भी इस में ईर्षा द्वेष फैले। श्री स्वामी सत्यानन्द जी ने धर्म पर दृढ़ रहने के लिये कहा। प्रधान पं० विश्वम्भरनाथ जी ने सम्पूर्ण मानव समाज को अपना भाई समझने के लिये कहा। इस के साथ संस्कार समाप्त हुआ।

शुद्धि सम्मेलन श्री काला कांकर नरेश की अध्यक्षता में हुआ। महाराज अभी नवयुवक हैं। इनकी सादगी और साधुता देख कर आश्चर्य होता था। आप में लगन है, उत्साह है, और जनता से सहानुभूति है। श्री आचार्य जी की अपील के उत्तर में २॥ लाख रुपया आया। जिस में १ लाख ५६ हज़ार नकद था। इस वर्ष ४० ब्रह्मचारी नवीन प्रविष्ट हुए। इनका वेदारम्भ संस्कार कर श्री आचार्य जी ने इनको गायत्री मन्त्र का उपदेश दिया। पं० जवाहर लाल नेहरू की अध्यक्षता में मद्रास कांग्रेस द्वारा स्वीकृत हिन्दू-मुस्लिम पैक पर बहस हुई। पं० जवाहरलाल नेहरु ने बताया कि इस समय इस से अधिक अच्छी योजना बननी सम्भव नहीं है। वर्तमान सम्प्रदायिक झगड़ों का इस से अधिक अच्छा हल होना सम्भव नहीं है। इस लिये इस को काम में लाना चाहिये। आचार्य कृपलानी की अध्यक्षता में अन्तर्महाविद्यालय-वाद-विवाद-सम्मेलन हुआ। वाद विवाद का विषय था कि 'क्या साम्राज्यवाद मनुष्य जाति के लिए हित कर सिद्ध हुआ है'। दिल्ली के जामिया इस्लामिया के विद्यार्थी विजयी रहे। विजयोपहार

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

लेते हुए डा० ज़किरहुसैन ने कहा कि यह विजयो पहार उस महान् आत्मा के नाम पर है जिस को हमारी जाति के एक पथभ्रष्ट आदमी ने मार दिया है मैं इस को ऐसी जगह रक्खूंगा जहां से प्रत्येक आदमी गुजरे और इस पवित्र आत्मा के चरणों पर अपनी श्रद्धाञ्जलि चढा सके और उस गुमराह कार्य के लिये पश्चात्ताप कर सके। उत्सव के अन्त में संगीत-सम्मेलन समारोह से हुआ। अन्तिम समय भी ख़ूब रौनक रही। अग्नि-देवता और वायु-देवता ने गुरुकुल की परीक्षा ली और ख़ूब तकड़ी परीक्षा ली पर गुरुकुल इस परीक्षा से और भी अधिक खरा, सचेत और धैर्यशाली बनकर निकला। उत्सव पर होनेवाले अग्निकाण्ड ने यह जानने का अवसर दिया कि गुरुकुल और जनता में कितना गहरा और अटूट सम्बन्ध है।

वार्षिकोत्सव का प्रबन्ध बहुत उत्तम और व्यवस्थित था। सड़कें साफ़ और सुन्दर थीं। लोगों के रहने के लिये बनीं झोपड़ियाँ और लगे तम्बू एक तरतीब में थे, जिसके कारण बड़े सुन्दर मालूम होते थे। इसका सारा श्रेय श्री पं. चन्द्रमणि विद्यालंकार और श्री रामजीलाल जी (गुरूजी) को है। उन्हीं के अविरल परिश्रम का यह फल था कि उत्सव नई-भूमि पर हो सका। उत्सव की सफलता के लिये हम गुरुकुल के कार्यकर्त्ताओं को सादर बधाई देते हैं।

× × ×

वीर मगनलाल गाँधी

सत्याग्रह आश्रम के प्राण, चर्खा आन्दोलन के आत्मा, पूज्य महात्माजी के दाहिने हाथ श्री मगनलाल गाँधी अब इस संसार में नहीं है, यह लिखते हुए हमारा दिल फटा जाता है। भाई मगनलाल गाँधी ने अपने प्राण, एक वीर की नांई समाज-सेवा में, प्राचीन रूढ़ियों के विरुद्ध लड़ते हुए, स्त्री-जाति की स्वतन्त्रता के लिये उद्योग करते हुए दिये हैं। भाई मगनलाल गाँधी देश के उन निस्पृह और चुपचाप काम करने वाले सेवकों में से थे जिन्होंने कर्त्तव्य की वेदी पर अपना सब-कुछ होम कर दिया है। पार्थिव ही नहीं प्रत्युत यश की आकाँक्षा भी चढ़ा दी है। आपका जीवन सरल, संयमी, तपस्वी और अनुशासित था। चर्खा आन्दोलन को व्यापक और स्थिर बनाने में आपका महत्त्वपूर्ण हाथ है। इसके सिवाय आपने चर्खा-आन्दोलन को व्यवसायिक ढंग पर चलाने के लिये जिन वैज्ञानिक अन्वेषणों को किया है, उनके कारण आपका नाम अमर रहेगा। सारा भारत भाई मगनलाल के वियोग में दुःखी है। पूज्य महात्माजी और आश्रमवासियों को कौन आश्वासन दे सकता है? इस समय तो पूज्य महात्माजी ही विह्वल देश को ढ़ाढ़स बँधानेवाले हैं। मंगलमय भगवान् सबको शान्ति दे।

× × ×

प्रताप-जयन्ती

अरावली की चोटियाँ आज फिर एक बार प्रताप के गौरव से चमक उठीं हैं। चोटियाँ, फिर, एक, बार प्रताप के गौरव-गीत से गूंज उठी हैं। अरावली के झरनों के साथ राजपूताना ही नहीं प्रस्तुत समस्त भारतवर्ष प्रताप की पुनीत गौरव-गाथा को आज गा रहा है। अरावली फिर एक बार स्वतन्त्रता-प्रेमी वीरों की शरणस्थली होने की आशा से, उत्सुक नयनों से निहार रहा है। अरावली की घाटियाँ उत्सुकता से स्वतन्त्रता के लिये मर-मिटनेवालों के आगमन की प्रतीक्षा कर रही हैं। स्वतन्त्रता के पुजारियों के स्वागत के लिए

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विशेष सूचना

कन्या गुरुकुल देहरादून का ४थ वार्षिकोत्सव २४,२५ तथा २६ जून १९२८ तदनुसार ११,१२ और १३ आषाढ़, रविवार, सोमवार और मंगलवार को कोठी नं० २१, राजपुर रोड़, देहरादून में बड़े समारोह के साथ मनाया जावेगा। आर्य-समाज के प्रसिद्ध सन्यासी, विद्वान, व्याख्यातागण तथा भारत की विदुषी देवियाँ निमंत्रित की गई हैं। उस अवसर पर सरस्वती-सम्मेलन, आर्य-नारी-सम्मेलन आदि सम्मेलन होगें, जिसमें गुरुकुल की ब्रह्मचारिणियों तथा अध्यापिकाओं के हिन्दी, तथा संस्कृत में व्याख्यान तथा वाद-विवाद और शारीरिक खेलादि होगें।

स्त्रीशिक्षा के प्रेमियों तथा प्राचीन शिक्षाप्रणाली के पक्षपातियों से सानुरोध प्रार्थना है कि वे इस शुभ अवसर पर दर्शन देकर अनुगृहीत करें।

निवेदिका—

विद्यावती सेठ आचार्या

कन्यागुरुकुल, २१राजपुर रोड़, देहरादून।

संरक्षकों के प्रति निवेदन

श्रीमन्नमस्ते,

आपको यह जान कर हर्ष होगा कि दो वर्ष के पश्चात् कन्या गुरुकुल का चतुर्थ वार्षिकोत्सव इस वर्ष मुहर्रम की छुट्टियों में २४ तथा २५ जून को मनाना निश्चित हुआ है। कन्या गुरुकुल के लिए देहरादून में यह उत्सव मनाना नवीन बात है। इस नई भूमि में जहां कि आर्य-समाज का विशेष प्रचार नहीं है, गुरुकुल के कर्मचारियों को बिना आप की सहायता के सफलता प्राप्त करना कठिन है। यह विचार कर मैं अपना परम कर्त्तव्य समझती हूं कि एक संरक्षक के नाते से मैं आप से भी प्रार्थना करूँ कि आप इस कार्य में हमारा हाथ बटाइये। कन्या गुरुकुल अभी बाल्यावस्था के कारण कार्य जनता से अपरिचित सा है। फिर देहली से स्थान परिवर्त्तन हो जाने के कारण नवीन स्थान में मैत्रि संगठित करने में कठिनाई हैं। संरक्षक महोदयों की सेवा में इससे पूर्व कई वार गुरुकुल की आर्थिक दशा का परिचय दिया जा चुका है किन्तु गुरुकुल की ओर केवल पाँच सात महाशयों के अतिरिक्त अन्य किसी ने भी ध्यान नहीं दिया। गुरुकुल को वर्त्तमान आर्थिक दशा बहुत शोचनीय है। गतवर्ष बजट में १३०००) का घाटा उठा कर गुरुकुल ने अपना कालाक्षेप किया है। यदि इसी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्रकार आर्य-जनता तथा संरक्षकों की सहानुभूति से गुरुकुल वंचित रहा तो क्या आशा हो सकती है कि जिन आशाओं से प्रेरित होकर आप सज्जनों ने इस कुल की स्थापना की है वह पूर्ण हो सकेगी ? अस्तुः, उत्सव के लिए केवल आधा मास रह गया है, इस थोड़े से समय में हमें बहुत कार्य करना है, मैंने पूर्व भी तीन पत्रों द्वारा आपकी सेवा में निवेदन कर दिया है कि प्रत्येक संरक्षक महाशय गुरुकुल की सहायता के लिए एक एक सौ प्रदान करें। यह प्रत्येक संरक्षक आर्थिक दशा तथा इच्छा पर निर्भर है कि चाहे वह उक्त धन अपने कोष से दे या पुरुषार्थ निधि में एकत्र करें। धन-संग्रह करने के लिए गुरुकुल ने बहुत सी रसीद बुकें छपा रखीं हैं।

यदि आप अपने पास से न दे सकते हों तो रसीद बुक मँगवा कर बाहर से मँगवा सकते हैं। पत्र के आयतन को बहुत न बढ़ाकर अन्त में मैं यह निवेदन कर देना चाहती हूं कि गतवर्ष का १२०००) का घाटा, और आगामी बजट की पूर्ति के लिए २००००) तथा स्थायी भवन के लिए धन संग्रह करना अथवा प्रदान करना आप लोगों के उपर निर्भर हैं। मुझे पूर्ण आशा है कि इस पत्र के प्राप्त होते ही आप धन संग्रह के कार्य में लग जावेंगे और उत्सव से दो चार दिन पूर्व ही धन कार्यालय में भेज देंगे ताकि अपने संरक्षकों की सफलता तथा गुरुकुल प्रेम का परिचय हम उत्सव पर पधारे हुये आर्य नरनारियों को दे सकें। उत्सव पर आप के पधारने की पूर्ण आशा है। उस उत्सव पर कन्या गुरुकुल के स्थायी भवन निर्माण का भी निश्चय होगा, कृपया यह भी लिखें कि आपके नाम से कितने कमरे बनवाने की घोषणा कि जावे। किं बहुना।

भवदीया

विद्यावती सेठ

आचार्या—कन्या गुरुकुल

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अरावली पर्वत के वृक्ष लताएँ और पक्षी चञ्चल हो उठे हैं। क्या उनकी आशा सफल होगी ?

प्रताप एक आदर्श का पुजारी था। उस आदर्श को चरितार्थ करने के लिये निरन्तर २५ वर्ष तक पहाड़ों में भटकता रहा। मरणपर्य्यन्त जिस व्रत का उद्यापन किया था निबाहता रहा। 'हल्दी घाटी' उसकी तपस्याओं और कष्टों की साक्षी दे रही है। अरावली के भील और राजपूताने के चारण प्रताप की लड़ाइयों को प्रेम से गद्-गद् होकर आज भी सुनाते हैं। प्रताप के नाम में एक जादू है जो मुर्दादिलों को जिला देता है कर्महीनों को कर्मनिष्ठ बना देता है भीरुओं को निडर और साहसी बना देता है। उसके जीवन का प्रत्येक पृष्ठ भारतीय इतिहास की अमर-कहानी है। मुगल-शासन अपने पैर जमा चुका था। राणा-संग्राम का किया विरोध सफल नहीं हुआ यह जानते हुए भी राणा प्रताप ने अपनी टेक नहीं छोड़ी और भूखों मरना पसन्द किया, पर अपने को बेचना पसन्द नहीं किया। स्वतन्त्रता का वह पुजारी था, उसी की पूजा में उसने अपना जीवन उत्सर्ग कर दिया। सब सुख और ऐश्वर्य छोड़ने पसन्द किये, पर अपनी आन नहीं छोड़ी। 'प्रताप' एक आदर्श के लिये जिया और उसी के लिये मरा। स्कोटलैण्ड के इतिहास में वालेस का, इटली के इतिहास में गेरीबाल्डी का, अमेरिका के इतिहास में वाशिंगटन का जो स्थान है वही—नहीं उससे भी अधिक—उच्च-स्थान भारत के इतिहास में प्रताप का है।

'प्रताप-जयन्ति' भारत में आई स्वाधीनता की लहर को अधिक वेगवती बनाने में सहायक हो। नवयुवकों को आदर्श पर जीने के लिये और आवश्यकता आने पर अपने प्राणों को उत्सर्ग करने के लिये 'प्रताप' का नाम प्रेरक हो। स्वाधीनता के प्रेमियों और स्वाधीनता के पुजारियों के लिये यह दिन स्वाधीनता के विकट पथ में एक पग आगे बढ़ानेवाला हो। स्वाधीन-भारत को देखने के उत्सुकों के लिये 'प्रताप' का नाम एक अमर-ज्योति हो।

× × ×

सम्मेलन के सभापति

मुजफ्फ़रपुर में होने वाले हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के सभापति पद के लिये सम्मेलन की स्वागत-समिति ने गुरुकुल विश्वविद्यालय काँगड़ी के हिन्दी-उपाध्याय श्री पं. पद्मसिंह शर्मा को चुना है। पण्डित जी की विद्वत्ता, साहित्य-मर्मज्ञता और समालोचना शक्ति हिन्दी के लिये गौरव की वस्तु है। पण्डितजी हिन्दी के उन निस्पृह और निष्कामभाव से सेवा करनेवाले सज्जनों में से हैं जो नाम की चिन्ता नहीं करते। वे एक साहित्य-सेवी हैं। अपने विचारों और अपने पथ के पक्के हैं। हिन्दी में तुलनात्मक-समालोचना-पद्धति के आप जन्मदाता हैं। आपकी साहित्य-सेवा का मंगला-प्रसाद पारितोषक द्वारा सम्मेलन सब से पूर्व सम्मान कर चुका है। आपको सभापति बनाकर सचमुच उसने अपना गौरव बढ़ाया है। ऋषि दयानन्द ने हिन्दी की सेवा का जो बीड़ा उठाया था उस के भक्त और शिष्य किस श्रद्धा और तत्परता से उसे पूरा कर रहे हैं, उसका यह एक प्रमाण है। आर्य-समाज अपने साहित्य-सेवी के सम्मान पर आज गर्व कर सकता है। हम सम्मेलन की स्वागत-समिति और आदरणीय पण्डित जी को इस निर्वाचन पर सादर बधाई देते हैं और सम्मेलन की हृदय से सफलता चाहते हैं।

× × ×

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

राष्ट्र-भाषा और माडर्न-रिव्यू

दिल्ली के सर्व-दल-सम्मेलन के निर्णयों पर सम्मति प्रकट करते हुए उसके भाषा विषयक निर्णय के बारे में 'माडर्न-रिव्यू' लिखता है—"भारतीय-साम्राज्य की भाषा हिन्दुस्तानी और अँगरेज़ी दोनों हो। प्रान्तों में प्रान्तीय भाषाओं के साथ इङ्गलिश भी व्यवहृत हो। हिन्दुस्तानी भाषा-भाषी प्रान्तों में हिन्दी के साथ इङ्गलिश का भी योग हो इसी प्रकार अन्यान्य प्रान्तों में अपनी प्रान्तीय भाषा के साथ इङ्गलिश व्यवहृत हो। हमारा अभिप्राय यह है कि जिस प्रकार—हिन्दुस्तानी भाषा-भाषी दो भाषाओं के जाननेवाले हों। समिति के इस निर्णय का— "In the provinces, the local languages will naturally take pride of place, but Hindustani and, if necessary, English can be used."—उल्लेख कर 'माडर्न रिव्यू' लिखता है, कि जिन प्रान्तों की मातृभाषा हिन्दुस्तानी नहीं है, उनमें हिन्दुस्तानी व्यवहृत न हो, पर हम यह चाहते हैं कि हिन्दुस्तानी का व्यावहार लाज़िमी न हो। इङ्गलिश और हिन्दुस्थानी में किसका व्यवहार किया जाय, यह इच्छा पर छोड़ दिया जाय। इसके लिये युक्ति भी सुनिये—संसार के साथ राजनैतिक, व्यावसायिक और बौद्धिक सम्बन्ध बनाये रखने के लिये किसी-न-किसी योरोपियन-भाषा का ज्ञान होना आवश्यक है, इङ्गलिश हमारे यहाँ चालू है, और व्यवहृत हो रही है, तथा शिक्षित समुदाय इससे परिचित है इस कारण, इङ्गलिश का व्यवहार किया जाय। हिन्दुस्थानी भाषा-भाषी प्रान्तों के निवासियों को अपनी मातृभाषा के अतिरिक्त केवल एक ही भाषा सीखनी होगी, परन्तु जिनकी मातृभाषा हिन्दुस्थानी नहीं—जैसे बंगाली और तामिल—उनको अपनी मातृभाषा के अतिरिक्त दो भाषाएँ—एक राष्ट्र-भाषा और एक योरोपियन-भाषा का जानना आवश्यक होगा। इस प्रकार हिन्दुस्थानी भाषा-भाषियों के अलावा अन्य प्रान्तीय भाषा-भाषियों पर एक अधिक भाषा का भार पड़ेगा। यह बेजा है, इसलिये अन्य प्रान्तीय भाषा-भाषियों की इच्छा पर छोड़ दिया जाय कि वे हिन्दी और इङ्गलिश में से जिसका चाहें व्यवहार करें।"

लिपि के सम्बन्ध में 'माडर्न रिव्यू' का मत है "जिस प्रकार उर्दू लिपि को स्वीकार करने में हम अपनी हतक नहीं समझते उसी प्रकार इङ्गलिश-भाषा और रोमन लिपि को स्वीकार करने में भी हमें अपने गौरव की हानि नहीं समझनी चाहिए।"

'माडर्न रिव्यू' के कथन का यह सार है। यह सम्मति हिन्दी के लिए कितनी घातक है यह प्रत्येक हिन्दी प्रेमी जान सकता है। पर इसके साथ-साथ राष्ट्रीय काम-काज के लिये व्यावहारिक-दृष्टि से भी कितनी घातक है, यह भी किसी से छिपा नहीं रहेगा। 'माडर्न रिव्यू' के विद्वान् सम्पादक हिन्दुस्थानी भाषा-भाषी प्रान्तों के समान अन्य प्रान्तों को भाषा ज्ञान में समकक्ष रखने को उत्सुक हैं, वे नहीं चाहते कि उन पर एक अतिरिक्त भाषा का भार पड़े। पर प्रश्न यह है कि इसका निर्णय कैसे होगा। तामिल के लोग दूसरी भाषा के रूप में इङ्गलिश सीखें और केरल के लोग हिन्दुस्थानी ही सीखें। फिर निर्णय हो भी जाय तो भी जो भारतीय नौकरियों में जाना चाहेंगे उनको तो तीनों भाषाओं का ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक ही होगा इसके बिना काम चल सकना सम्भव न होगा। भारतीय साम्राज्य का कारबार भी तीन लिपियों और दो भाषाओं में करना पड़ेगा। हम जिस कठिनाई को

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हटाना चाहते हैं वह तो वैसी-की-वैसी बनी रही फिर आधुनिक हालत ही क्यों न रखी जाय, इसी हालत में 'माडर्न रिव्यू' का मत चरितार्थ हो सकता है, वरना नहीं। हम चाहते हैं कि जो स्थान भारत में आज अँगरेज़ी को प्राप्त है वह हिन्दी को प्राप्त हो। क्या मातृभाषा द्वारा ही संसार से व्यापारिक, व्यावसायिक, बौद्धिक और राजनैतिक सम्बन्ध नहीं बनाये जा सकते? क्या आवश्यकता है कि प्रत्येक भारतीय बच्चा किसी योरोपियन-भाषा को सीखे? क्या मातृभाषा के साहित्य को ही ऐसा समृद्ध नहीं बनाया जा सकता कि बिना किसी योरोपियन-भाषा का ज्ञान प्राप्त किये, संसार का समस्त ज्ञान अपनी भाषा में प्राप्त कर सकें?

क्या प्रत्येक जापानी किसी न किसी योरोपियन भाषा को जानता है, और न जानने के अभाव में संसार से अपने को पृथक समझता है? क्या प्रत्येक अंग्रेज़ फ्रेंच या जर्मन जानता है? यदि नहीं तो प्रत्येक भारतीय बच्चे के लिये यह क्यों आवश्यक समझा जाय? हमारा व्यापार भी प्रतिदिन अंग्रेज़ों से घट रहा है, अंग्रेज़ी शक्ति भी प्रतिदिन घटती चली जाती है, और अंग्रेजी से फ्रेंच और जर्मन भाषा अधिक समृद्ध है, फिर हम अंग्रेजी को ही क्यों अपनाएं? टर्की ने फ्रेंच को अपनाया है, जापान ने जर्मन को, तब भारतवर्ष अंग्रेज़ी को अपनावे क्योंकि वह अंग्रेजों का गुलाम है, और सदा उसे अपनी गुलामी याद आती रहे और उसके गौरव को धक्का लगता रहे। उर्दू और अंग्रेज़ी को अपनाने में भेद है। मुसलमान यहां बस गए थे हम में मिल गए थे। भारत को अपनी मातृभूमि मान लिया था। हमारे सुख में सुखी और हमारे दुःख में दुःखी होते थे। उनका और हमारा स्वार्थ एक था। हम दोनों ने एक ही देश की मिट्टी में मिल जाना था, और हम दोनों एक ही देश के नदियों और पहाड़ों तथा जंगलों को पार करते थे। पर अंग्रेज लोग १०० साल के बाद भी यहां नहीं बसे हैं। अपने काम से आते हैं और काम समाप्त कर चले जाते हैं। इस कारण इन दोनों में तुलना सम्भव नहीं। हम दूसरी किस भाषा को स्वीकार करें यह हमारे भावी राजनैतिक व्यावसायिक और आर्थिक सम्बन्धों पर निर्भर होगा। अभी से इसका निर्णय घातक होगा।

एक बात और है। क्या जितना समय हिन्दी ज्ञान के लिये आपेक्षिक है उतना ही अंग्रेजी के लिये भी अपेक्षित है। हिन्दी का ज्ञान तीन मास में हो सकता है, इसका ज्ञान प्राप्त करना अन्य प्रान्त वालों को भारी न मालूम होगा। पर इंगलिश का ज्ञान प्राप्त करने के लिये कितने वर्ष चाहियें यह बताने की जरुरत नहीं। यदि अन्यान्य भाषा भाषी चाहें कि हिन्दुस्थानी भाषा भाषी भी अन्य प्रान्तीय भाषाओं में से एक सीखें ताकि भार समान हो तो हमें कोई आपत्ति न होगी। इस से प्रान्तों का सम्बन्ध घनिष्ट ही होगा। अंग्रेजो को लादना भारतीय राष्ट्रियत्व की नींव को खोदने के बराबर है।

हमारा ध्येय

मद्रास कांग्रेस के बाद से ध्येय सम्बन्धी वाद-विवाद जोरों से उठ पड़ा है। पञ्जाब और महाराष्ट्र ने पूर्ण स्वाधीनता का खुले आम समर्थन किया है। श्री त्यागमूर्ति नेहरू जी पूर्ण स्वाधीनता के समर्थन हैं पर वे औपनिवेशिक स्वराज्य पा कर भी सन्तुष्ट हो सकते हैं। आप का कहना है कि—"Iwould welcome Swaraj within the empire, and haye expressed my readiness

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

to accept it unhesitatingly, if offered on terms similar to those accepted by Canada, Australia, South Africa or Ireland."

हम नहीं जानते कि बृटिश साम्राज्य में क्या जादू है, जिस पर हमारे मान्य वृद्ध नेता मुग्ध हैं। वे इससे निकलते हुए क्यों घबड़ाते हैं। संसार में अकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया जोरों पर है, छोटे से छोटे राष्ट्र अपनी स्वतन्त्र हस्ती कायम रखने को उत्सुक हैं, फिर यदि भारत, जिस के पास धन बल, जन बल, संसार में सर्वोपरि है क्यों एक छोटे से देश के साम्राज्य में रहना पसन्द करे। हमारे पड़ोसी अफगानिस्तान, ईरान, टर्की, अनाम, स्याम और योरप में स्विटजर्लैण्ड, जेचोस्लोविका, युगोस्लोविया, बेल्जियम, हंगरी आदि देश स्वतन्त्र सत्ता चाहते हैं। तब नहीं मालूम हमारे नेता किस लाभ को सोच कर बृटिश साम्राज्य में रहना पसन्द करते हैं। आस्ट्रेलिया के समान हम को बृटिश फौजों की रक्षा की आवश्यकता नहीं। भारतीय सिपाही और भारतीय धन बृटिश साम्राज्य की सत्ता और गौरव का कारण है। फिर क्यों हम इस साम्राज्य में रहना पसन्द करें ? कनाडा और दक्षिण अफ्रीका सर्वथा स्वतन्त्र होने का अवसर ढूंढ रहे हैं, और हम बृटिश-साम्राज्य में रहना पसन्द करते हैं। हमारी सम्मति में औपनिवेशिक स्वराज्य के लिये यत्न करना अपने हाथों अपना गला घोटना है। बृटिश साम्राज्य से स्वतन्त्र होकर अमेरिका संसार की प्रमुख शक्ति बन गया जिसकी प्रसन्नता के लिये इंगलैण्ड भी निहोरे करता है, और जिस की नाराजगी से वह खौफ खाता है, और कनाडा बृटिश साम्राज्य के अन्दर रह कर भी सब प्रकार की अमेरिकनों के समान शक्तियों के रखते हुए भी संसार में पिछड़ा हुआ है।

क्या यह उदाहरण हमारे चिताने के लिये काफी नहीं ? क्या वह औपनिवेशिक स्वराज्य मिश्र की स्वाधीनता के समान नकली न होगा। और हमारी स्वाधीनता को कुचलने के लिये, हमारा गला घोटने के लिए बृटिशजहाज भारतीय समुद्र में नजर न आयेंगे इसका क्या प्रमाण है ? इँगलैण्ड और भारत में परस्पर न भाषा का, न साहित्य का, न संस्कृति का, न सभ्यता का और न रक्त का सम्बन्ध है। हम दोनों के स्वार्थ परस्पर टकराते हैं। हमारे से उनका गौरव है पर हमारा उनके बिना काम चल सकता है, ऐसी हालत में बृटेन का दामन पकड़ना अपने गले में अपने हाथ से फांसी लगाने के समान है। हम तो श्री सुभास बाबू के इन वाक्यों का पूर्णतः समर्थन करते हैं—मैं स्वतन्त्रता पूर्वक संयुक्त प्रजातन्त्र के लिये खड़ा हूँ, यही अन्तिम ध्येय है जिसको मैं अपने सामने रखता हूँ। मैं चाहता हूँ कि भारत अपने प्राचीन गौरव समय के समान अपने भाग्यों का स्वामी हो और अपनी उन्नति अपनी राष्ट्रीय-वृद्धि के साथ करे। मैं चाहता हूँ कि भारत वर्ष निर्बन्ध पूर्ण स्वतन्त्र हो ताकि संसार के राष्ट्रों के बीच में सिर ऊंचा करके खड़ा हो सके। मैं चाहता हूं कि भारत पूर्ण स्वतन्त्रता के आनन्द को प्राप्त करे ताकि उस आनन्द से अपने लिये और संसार के लिये महान् वस्तुओं को उत्पन्न कर सके। मैं चाहता हूं कि भारत का अपना झण्डा हो, अपनी नौ सेना हो, अपनी सेना हो, और प्रत्येक स्वतन्त्र देश की राजधानी में अपना राजदूत हो। स्वतन्त्रता अपने आप में मेरे लिये एक ध्येय है। यह सीमा से परे बहुमूल्य है। स्वतन्त्रता मानवीय आत्मा के लिये उतनी आवश्यक है जितनी ओषजन फेफड़ों के लिये। स्वामी विवेकानन्द ने ठीक कहा है—'स्वतन्त्रता आत्मा का

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सङ्गीत है। स्वतन्त्रता कब्र के इस पार वास्तविक अमृत है।' नवयुवक भारत का हृदय इनके साथ सहमत है, और इन्हीं के साथ स्पन्दित होता है।"

देहाती जीवन की समस्या

डा० हेरालडमैन भारत के पश्चिमीय प्रान्त के कुछ जिलों के ग्रामीण जीवन का निरीक्षण कर इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं—'देश के बहुत बड़े भाग में, गांव अच्छी स्थिति में नहीं हैं, और वहाँ उन्नत संगठनों के बावजूद भी, यही हालत रहेगी, इस के आगे वे लिखते हैं—

"वर्तमान समय में अवस्था यह है, कि ऐसे गाँवों में लोग अपने जीवन के आदर्शों से नीचे का जीवन बिता रहे हैं, अपने स्वास्थ्य की रक्षा के लिये जितना खाना जरूरी समझते हैं, उस से कम खाते हैं, अपने और अपने बच्चों के तन ढांकने के लिये जितना कपड़ा जरूरी समझते हैं, उस से कम कपड़ा व्यवहृत करते हैं। इस प्रकार निराशामय देहाती जीवन, बच्चों की अधिक संख्या में मृत्यु (एक उच्च चिकित्सक अधिकारी द्वारा इस का कारण माता पिताओं के नियमित तौर पर निरन्तर भरपेट न खाना बताया गया है) और निराशा का साधारण भाव ग्रामीण जीवन में प्रवेश कर रहा है।" यह उस प्रान्त की बात है जहां खेतों पर कम भार है। व्यवसाय का जोर है। जिन प्रान्तों में अभी व्यावसायिक युग आरम्भ भी नहीं हुआ वहां इस से भी बदतर अवस्था होगी यह निश्चित है। इस अवस्था के कारणों की विवेचना करते हुए आप कहते हैं—इस दुरवस्था के जो प्रधान कारण बताये जाते हैं—खेतों का छोटे छोटे टुकड़ों में विभक्त हो जाना, जमीन पर आवश्यकता से ज्यादा बोझ, जमीन्दारी पद्धति, बनिये और साहूकारों की कठोरता, इत्यादि दुःखी ग्रामीण जीवन के सम्भवतः मुख्यकारण नहीं हैं। आप का कहना है—

"वर्तमान भयावह स्थिति को उत्पन्न करने में इन सब कारणों का स्थान है, पर प्रत्येक का इस बुरी अवस्था को उत्पन्न करने में कितना स्थान है, यह निश्चय करने के साधन अभी पूरे प्राप्त नहीं हुए हैं। परन्तु फिर भी इन के सिवाय एक और कारण है जो इन सालों में बहुतायत से नजर आया है, जो कि सम्भवतः उतना ही महत्व-पूर्ण है, जितना कोई और कारण, और सब से अधिक महत्व पूर्ण हो सकता है-वह है-दूसरे सहायक पेशों का का अभाव।" प्रयाग का लीडर इस पर टिप्पणी करता हुआ कहता है इस खतरनाक अवस्था की ही औषधि महात्मा जी ने चर्खा बताई है। डा० मान कुटी-व्यवसायों की उन्नति के लिये जोर देते हुए कहते हैं—"बहुत सालों से इस प्रश्न की मीमांसा करने के पश्चात् बिना इन दो चीजों के अवस्था सन्तोष जनक नहीं हो सकती चाहे किसी हद्द तक उन्नति हो जाय। वे दो अवस्थायें ये हैं—प्रति एकड़ जमीन की वृद्धि और गाँव में सहायक व्यवसाय की फिर से उन्नति करना। यदि ये दोनों बातें की जाँय तो बहुत से गांव इस अवस्था से मुक्ति पाजायेंगे। इस के अभाव में ग्रामीण जनता—भारतीय जनता की जो रीढ़ की हड्डी है और शक्ति है-की जीवनी शक्ति घटती जायगी, चाहे उन की संख्या कम न हो। मैं कुटी व्यवसायों की उन्नति की ओर तुरन्त लग जाने की ओर ध्यान खैंचना चाहता हूँ। महान राष्ट्रीय नेता महात्मा गान्धी ने सूत कातने और उस से सम्बद्ध खादी बुनने के व्यवसाय पर कई सालों से बल दिया है। विषय की ओर पहुँचने का यह

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ठीक मार्ग होसकता है, पर मैं इस विषय के दूसरे पार्श्व पर ध्यान खींचना चाहता हूं।"

डा० मैन ने बताया है कि हम को वैज्ञानिक तौर पर इसका अनुसन्धान करना चाहिये कि इस समय तक कौन कौन से कुटीर व्यवसाय मौजूद हैं। यदि इंगलैण्ड के लिये इनकी खोज आवश्यक हो सकती है तो भारतीय देहाती जनता के सुख के लिये इस की खोज बीस गुणा आवश्यक और हितकर है। प्रश्न यह है कि क्या गवर्मेण्ट इधर ध्यान देगी ? यदि गवर्मेण्ट इधर ध्यान न देगी तो क्या यह काम ऐसा ही पड़ा रहेगा ? क्या काँग्रेस इस काम को अपने हाथ में नहीं ले सकती विशेषज्ञों की कांग्रेस के पास कमी नहीं है। सरकारी सहायता चाहे न भी प्राप्त हो पर भारतीय जनता की पूरी मदद मिलेगी, यह निस्संकोच कहा जा सकता है। पर तब तक क्या देहाती जनता को भाग्य के भरोसे छोड़ दिया जाय क्या अच्छा न होगा कि पूज्य महात्मा जी के चलाये आन्दोलन को सम्पूर्ण शक्ति से चलाया जाय।

मिश्र फौलादी पञ्जे के बीच में

मिश्र एक स्वतन्त्र देश है। कानून और विधान की दृष्टि से मिश्र के पास किये गये या मिश्र की पार्लियामेण्ट में पेश किये जाने वाले कानूनों को निषेध करने का बृटेन को कोई अधिकार नहीं है। पर बृटेन के पास शक्ति है, महान् शक्तिशाली जंगी बेड़ा है, वहां जागरण देखना है कि वह गुर्रा उठता है। मिश्र की पार्लियामेण्ट में सार्वजनिक सभाओं और प्रदर्शन के बारे में एक बिल पेश हुआ था। इस का आशय यह था मिश्री लोगों की वाक् स्वातन्त्र्य पर जो प्रतिबन्ध लगे हैं वे हटा दिये जाँय। पर बृटेन मिश्र की स्वाधीनता देखना नहीं चाहता था। बृटिश परराष्ट्र सचिव श्री चैम्बर लेन ने बृटिश जंगी बेड़े के द्वारा इस बिल को स्थगित करने का कारण यह बताया है, कि यह कानून वर्तमान कानूनों को, जो कि पांच वर्ष तक लागू रहेंगे, बदल देगा। वर्तमान कानूनों के द्वारा मिश्री शासक मण्डल पर बिना किसी ज्यादती और मिश्री जनता की स्वाधीनता पर बिना आघात किये सार्वजनिक शान्ति और सुरक्षा कायम रह सकती है। पर इस बिल के द्वारा शासकों की शक्ति छिन जायगी और पुलिस कमजोर हो जायगी। जिस के कारण मिश्र में अव्यवस्था और जुल्म का राज्य हो जायगा। मिश्र की अव्यवस्था और अशान्ति की चिन्ता बृटेन को क्यों है इसके उत्तर में श्री चैम्बरलेन का कहना है कि हम १९२२ के "शर्तनामे से बंधे हैं। १९२२ के शर्तनामे में जहां सूडन पर बृटिश नियंत्रण, मिश्र में अंग्रेज़ी सेना, स्वेज पर बृटिश अधिकार, नाइल के तटवर्ती प्रदेशों और रेलों पर बृटिश अधिकार स्वीकार किया गया है वहां मिश्र में बसे योरोपियनों के जान माल की रक्षा का भार भी बृटेन ने अपने ऊपर लिया है। योरोपियन लोगों के जान माल की रक्षा के बहाने बृटेन मिश्रियों के अपने देश के एक विद्वान् जज के इस राय कि—"The power of communication of thought is the gift of God. और वह—Human laws ought not to interpose to prevent the communication of sentiments and opinions involuntary assemblies" अवहेलना करने को उद्यत हो गया है। उसने मिश्री प्रधान मन्त्री नहशतपाशा के इस वचन और आश्वासन का कि "वस्तुतः, मिश्री गवर्मेण्ट सदा से अँग्रेजों और परदेशियों को विश्वास दिलाती रही है कि तुम्हारे

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जान की सुरक्षा और शान्ति, और तुम्हारे स्वार्थों की रक्षा की ओर गवर्मेण्ट का विशेष ध्यान रहा है और विशेष चिन्ता का विषय रहा है। इस सम्बन्ध में अगर उन्होंने अपने आप या परम्परागत व्यवहार से इसको अनुभव नहीं किया है तो मिश्री पार्लियामेण्ट अपनी सुनिश्चित प्रवृत्ति से मिश्री गवर्मेण्ट का विदेशियों की रक्षा एक अत्यावश्यक कर्तव्य बना देगी। मिश्री गवर्मेण्ट सदा से अपनी घोषणाओं और कार्यों से साबित करती आ रही है कि मिश्र में विदेशियों के साथ अन्यान्य देशों में जो इन से व्यवहार होता है उस से यहाँ घटिया व्यवहार नहीं होता है, यहां सदा भद्रता और आतिथ्य का बर्ताव होता रहा है जो मिश्र की एक विशेषता रही है।" सर्वतोभावेन उपेक्षा की है। बृटेन ने दिखा दिया है कि कृपा से प्राप्त स्वाधीनता असली स्वाधीनता नहीं है। वह एक खिलौना है, जो आन्दोलनों को शान्त करने के लिये दिया जाता है। क्या हमारे उदार नेता और वृद्ध गर्म नेता अब भी औपनिवेशिक स्वराज्य के स्वप्न लेने छोड़ देंगे और इस माया जाल से बचेंगे?

नवीन आन्दोलन

असहयोग आन्दोलन के शिथिल हो जाने पर समस्त भारत में एक व्यापक जड़ता छागई थी। पर अब फिर जागृति की लहरें उठती दीख रही हैं। आज नवीन जागरण, स्पन्दन और अनुभूति का आरम्भ दीख रहा है। पिछला आन्दोलन यदि देश के सन्तप्त तिरस्कृत मध्यम श्रेणी के लोगों ने उठाया था तो इस बार आन्दोलन के सूत्रधार राष्ट्र की अन्तरात्मा, राष्ट्र के प्राण और भारतीय-जनता किसान और मजदूरों ने उठाया है। यह सत्य है कि वर्तमान आन्दोलन व्यापक सिद्धान्तों पर नहीं उठाया गया है। और देश में इधर उधर आन्दोलन चल रहे हैं उनमें प्रत्यक्ष तौर पर परस्पर सम्बन्ध नहीं है, न उन के साथ देश के अग्रगण्य नेताओं का नाम जुड़ा हुआ है पर हमें याद रखना चाहिये कि प्रत्येक आन्दोलन का आरम्भ किसी व्यापक सिद्धान्त को लेकर नहीं होता। पर आन्दोलन की शक्ति और वेग की वृद्धि के साथ व्यापक और महान् सिद्धान्तों को अपना लेते हैं। इन सब आन्दोलनों के मूल में एक भाव काम कर रहा है,–हम अब और नहीं सह सकते। वर्तमान अवस्था में जीवन यापन अब और ज्यादा दिन नहीं कर सकते। और अधिक दिन हम अपने अधिकारों को कुचलते नहीं देखना चाहते। देश का शिक्षित समुदाय भी चुप नहीं है। वह बृटिश वस्तु बहिष्कार का आन्दोलन चला रहा है। ये सब आन्दोलन परस्पर सम्बद्ध हो सकें और भारत व्यापी बनाये जा सकें तो कितना व्यापक प्रभाव होगा, इस की कल्पना कर हमारा दिल भविष्य की आशा से खिला जाता है।

बारडोली-सत्याग्रह

'भारतीय-किसान' इस शब्द के कहने से आँखों के सामने जो मूर्ति आती है, उसे देख कर मनुष्यता कांप उठेगी, लज्जा लजायगी, और करुणा रो पड़ेगी, वह दीनता और विवशता की अत्याचारों से सताई मूर्ति है। 'भारतीय-किसान' एक अधिकार शून्य प्राणी है। सब सुख समृद्धि और विलासों की चीजें वह उत्पन्न करता है पर स्वयं इन से महरूम है। करों और नाजायज़ भेंटों के रूप में दिये जाने वाले करों के बोझ से लदा प्राणी है। समाज और सरकार की निर्दयता और निर्भयता का शिकार है। पर उस ने आज तक कभी शिकायत नहीं की। वह चुपचाप सहता रहा

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

है । 'भारतीय किसान' गूंगा है । पर अत्याचार असह्य हो गया है, इस कारण 'प्रताप' के शब्दों में, न 'बारडोली में किसानों की जो गति इस समय देश भर की दृष्टि के सामने आ रही है, वह कोई अलग वस्तु या अलग जाति नहीं है। देश के विविध अंगों में जो पीड़ा हो रही है, उसी की यह एक आह है । बारडोली देश के किसान-जीवन का हृदय स्थल है । बारडोली देश के किसान-जीवन की दीन-हीन दशा का जीता जागता चित्र है। बारडोली देश के किसान जीवन पर होने वाले भीषण अत्याचार का नंगा प्रदर्शन है। बारडोली देश के किसान-जीवन के ऊपर होने वाली सदियों की भीषणता, और समाज और गवर्मेण्ट की निर्भयता के विरुद्ध विशुद्ध विद्रोह है।' इसी कारण पूज्य महात्मा जी कहते हैं कि बारडोली का आन्दोलन भारतीय आन्दोलन है। बारडोली का वर्तमान आन्दोलन बेजा बन्दोबस्त के विरुद्ध है। गवर्मेण्ट हर बार बन्दोबस्त के समय लगान बढ़ाती आती है, इस बार २२% पिछले साल से बढ़ा दिया है । आज जो अवस्था बेजा बन्दोबस्त के कारण बारडोली की हो रही है, अगले साल गुजरात के किसी और तालुके की हो सकती है। गुजरात के अन्य तालुके' जिनकी अगले साल बारी है, इसी लिये भयभीत है । इस लिये यह आन्दोलन एक तालुका, एक प्रान्त का नहीं पर सम्पूर्ण भारत के किसानों का है। पंजाब में भी किसान दुःखी हैं। लगान के भार से दब रहे हैं। डा० सत्यपाल आदि नेता पंजाब के किसानों में जागृति के बीज बखेर रहे हैं । संयुक्त प्रान्त के किसान रबी की फसल खराब हो जाने से भयङ्कर अकाल की कल्पना से त्रस्त हैं। सरकार उसी प्रकार लगान लेने के लिये कठोरतम उपायों को काम में ला रही है। बंगाल के बाँगुड़ा जिले में अकाल मुंह बाये खड़ा है। इसलिये अच्छा हो कि समस्त देश में व्यापक होने वाले इस आन्दोलन को कांग्रेस साहस करके ले और किसानों को संघटित, और सरकार और निर्भय समाज से लोहा लेने के लिये तय्यार करे। बारडोली में जो कुछ हो रहा है वह आश्चर्य-जनक है । बारडोली के किसान जिस आत्म संयम और निष्ठा को दिखा रहे हैं वह इतिहास में स्मरणीय रहेगी। हम इस आन्दोलन की हृदय से सफलता चाहते हैं । हमारा विश्वास है कि प्रत्येक भारतवासी इस आन्दोलन की सहायता कर पुण्यभागी होगा । अपने अन्नदाताओं के साथ प्रत्यक्ष और व्यक्त सहानुभूति दिखाने से कोई पीछे न रहेगा। वर्तमान युग की 'हल्दी घाटी' में किसानों की विजय होगी और यह सिद्धान्त मान लिया जायगा कि किसान अपनी जमीन के मालिक हैं यह हमारा पूरा विश्वास है ! समय लगेगा, पर इस सिद्धान्त के बिना माने इस आन्दोलन की समाप्ति भी न होगी, यह ध्रुव है।

हड़तालें ।

देश के व्यवसायिक केन्द्रों में हड़तालें जारी हैं। लिलुआ जमशेदपुर और बाम्बे में हजारों की संख्या में मजदूर हड़ताल किये बैठे हैं। बाम्बे में इस ने भीषण रूप धारण किया हुआ है। सब कपड़े की मिलें बन्द हैं । ८० हजार से ऊपर मजदूर बाम्बे छोड़ कर घर चले गये हैं । इस हड़ताल का कारण है मिलों में नये सुधारों के होने से वेतन के कम होने की आशंका। मजदूरों के रहने के घर अच्छे नहीं, उनको मजदूरी कम मिलती है। रोगी होने पर चिकित्सा का प्रबन्ध नहीं। बूढ़े होने पर पेन्शन नहीं मिलती है । बच्चों को पढ़ाने की व्यवस्था नहीं। शिशुओं को पालने का कोई यत्न नहीं किया जाता। ये शिकायतें नहीं हैं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

आज तो हड़ताल है पेट के लिये। पहिले जो मजदूरी मिल रही है वही कम है यदि और कम हो गई तो वे भूखे मर जायंगे। जीवन रक्षा के लिये यह हड़ताल है। बाम्बे के मिल मालिकों का विश्वास है कि इस हड़ताल का मूल कारण वर्तमान मुद्रा विनियम दर है। सर पुरुषोत्तमदास ने 'मुद्राबिल' पर बोलते हुए कहा था कि 'The Hon. the Finance Member, warned us about strikes. Nothing else can lead to strikes more surely and more unmistakably than if you try to push through this 1S. 6 d. and stabilise it.' इसी कारण मिल मालिक शीघ्र समझौता चाहते भी नहीं हैं, ताकि गवर्मेंट बाधित होकर विनिमय दर के अनुपात को बदल दे। एक बार गवर्मेंट ने पहिले मजदूरों की हड़ताल से बाधित होकर 'एक्सा-इज ड्यूटी' हटाई थी, इसबार भी कदाचित् मुद्रा विनिमय के अनुपात को बदल दे। उनका यह भी कहना है कि वस्त्र व्यवसाय की जो रक्षा की गई है वह १८ शि. के अनुपात ने सब नष्ट कर दी है। मिल मालिक इस कारण झगड़े से भी अपना फायदा उठाना चाहते हैं। इस लिये शान्ति के लिये ज्यादा उत्सुक नहीं हैं। देश के व्यवसाय को उन्नत करने के लिये श्रम और पूञ्जी में अधिकतम सहयोग की आवश्यकता है। गवर्मेण्ट चाहे तो पञ्च बैठाकर निर्णय कर सकती है। पर गवर्मेंट का क्या बिगड़ता है। यदि वस्त्र व्यवसाय नष्ट होता है तो वस्त्र-बहिष्कार के आन्दोलन को धक्का लगता है। इस में गवर्मेण्ट को लाभ ही है।

कन्या-गुरुकुल समाचार

स्वास्थ्य—आजकल कन्याओं का स्वास्थ्य अच्छा है। हर्ष है कि ऋतु परिवर्तन होने पर भी अस्पताल में रोगी कन्याओं की संख्या तीन चार से अधिक नहीं हुई। वे भी साधारण रोगी हैं। प्रायः अस्पताल खाली ही रहता है।

व्यायाम— कन्यायें प्रतिदिन सायंकाल भ्रमणार्थ जाती हैं। खेल सिखानेवाले बाबाजी ने कई प्रकार के खेल-यथा लाठी, गतका चलाना, तलवार चलाना, ढाल से रक्षा करना, इत्यादि—सिखायेहैं। बड़ी श्रेणी की कन्याओं को लाठी चलाकर सब ओर से अपनी रक्षा करना और पुनः दूसरों पर वार करना आदि का अच्छा अभ्यास हो गया है। बाबा जी कुछ दिनों की छुट्टी लेकर गुरुकुल कांगड़ी गये हुए हैं उनके आने पर कन्यायें अन्य नवीन खेल सीखेंगी। छोटी श्रेणी की कन्यायें भ्रमणार्थ जाती हैं तथा मैदान में खेलती हैं। इस प्रकार खेल तथा स्वास्थ्य में उन्नति हो रही है।

वार्षिक परीक्षायें—गत मास की ज्योति में लिखा था कि कन्याओं की वार्षिक परीक्षायें प्रारम्भ होने वाली हैं। अब सब कन्याओं की परीक्षायें हो चुकी हैं, सप्तम श्रेणी की कन्याओं तक का परिणाम भी निकल चुका है। तीन चार कन्यायें अनुत्तीर्ण हो गई हैं। शेष सब परिश्रम में सफल हुईं। अनुत्तीर्ण कन्यायें इस शर्त पर, कि त्रैमासिक परीक्षा में उन्हीं विषयों की जिन में वे रह गई हैं पुनः परीक्षा होगी, अगली श्रेणी में चढ़ा दी गई हैं। वे परीक्षा में सफल होने पर अगली श्रेणी में चढ़ा दी जायेंगी।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

६ ता० को त्रैमासिक परीक्षायें प्रारम्भ हो जायँगी। कन्यायें पठन-पाठन में संलग्न हैं। वार्षिक परीक्षा के अनन्तर अधिकारी कन्याओं की परीक्षा हुई। अधिकारी परीक्षा में चार कन्यायें बैठीं। परीक्षा १६ मार्च से २ अप्रैल तक रही। परिणाम नहीं निकला है। आशा है उक्त परीक्षा में सब कन्यायें सफल होंगी।

मास के अन्तर्गत विशेष सभायें— प्रथम २६ मार्च को आर्य्य समाज स्थापना के उपलक्ष्य में अन्य सामाजिक स्थानों की तरह यहां पर भी छुट्टी हुई। इस उपलक्ष्य में प्रातः काल ८ बजे से ११ बजे तक श्री पूज्या आचार्या जी के सभापतित्व में बालसभा हुई जिस में कई कन्याओं के जोशीले व्याख्यान हुए। उपदेश देने वाली सब कन्यायें तैयार होकर आई थीं अतः बहुत उत्तम भाषण हुए। पुनः कई अध्यापिकाओं ने वाद विवाद द्वारा कन्याओं को समझाया जिस से कई प्रकार की शंकायें दूर हुईं। अन्त में सभाध्यक्षा जी का प्रभावशाली व्याख्यान हुआ। इस भाषण को सुन उपस्थित बहिनें प्रसन्न हुईं। इस प्रकार सभा विसर्जन की गई।

३० ता० को रामनवमी की सभा प्रातः काल ८॥ बजे से ११॥ बजे तक हुई। इस में भी कई कन्याओं के उत्तमोत्तम भाषण हुए। कन्याओं ने केवल रामायण की कथा को ही नहीं कहा वरन् उस समय की तुलना महाभारत तथा आज पर्यन्त की घटनाओं के साथ की। पुनः दो तीन अध्यापिकाओं के भाषण हुए अन्त में सभाध्यक्षा जी का भाषण होकर सभा विसर्जन की गई।

इस के अनन्तर ६ अप्रैल से राष्ट्रिय सप्ताह के उपलक्ष्य में रात्रि को ७½ बजे से १० बजे तक भजन तथा कथा होती थी। दिन में कन्यायें बड़े उत्साह से सूत कातती थीं। कई कन्यायें चर्खा संघ की सदस्या बनने के लिये तैयार हैं। इस प्रकार सारे सप्ताह कार्य होता रहा है। १३ अप्रैल को प्रातः ८ बजे से ११½ बजे तक बालसभा हुई। जिस दिन अमृतसर में डायर ने सैंकड़ों निरपराध नारियों तथा बाल-वृद्धों का वध किया उस दिन को स्मरण कर अब हमें क्या करना चाहिये, किस प्रकार से हम स्वाधीन हो सकते हैं इत्यादि बातों पर कई कन्याओं के व्याख्यान हुए। गुरु जनों ने अपने भाषण से अन्य उपस्थित सज्जनों को प्रभावित किया। अन्त में सभापति जी का मनोहर भाषण हुआ और भजन हो कर सभा समाप्त की गई।

श्री सेठ जमुनालाल जी बजाज का आगमन

३ अप्रैल को अकस्मात् श्री पूज्य सेठ जमुनालाल जी बजाज का आगमन हुआ। कन्यायें उनके दर्शन करने तथा उनके भाषण द्वारा आत्मशान्ति प्राप्त करनेको अत्यन्त उत्सुक थीं, अतः जहाँ पर उनको ठहराया गया था वहाँ, अध्यापिकायें तथा बड़ी श्रेणी की कन्यायें दर्शनार्थ उपस्थित हुईं। सेठजी ने 'खादी पर वादविवाद करो' ऐसा सब बहिनों को सम्बोधन कर कहा। एक दो अध्यापिकाओं के साथ सेठ जी का सम्भाषण हुआ जिस से उपस्थित सब बहिनों को उनके भाषण से अत्यन्त तृप्ति हुई तथा नूतन बातों का ज्ञान हुआ।

कांगड़ी गुरुकुल का उत्सव— इस वर्ष कांगड़ी उत्सव पर कन्यायें नहीं गईं। अध्यापिकायें तथा अधिष्ठात्री वर्ग छुट्टी लेकर चली गई। विद्यालय का कार्य्यक्रम बड़ी श्रेणी की कन्याओं ने

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सम्भाला। क्लास पूर्ववत् लगते रहे। अब के वर्ष उक्त उत्सव नई भूमि में मनाया गया था अतः ईश्वर ने अग्नि द्वारा सबकी परीक्षा ली अतः सब को उत्साह होना चाहिये कि हम विपत्तियों का सामना करने में सदा तत्पर रहें। इस प्रकार उक्त उत्सव की समाप्ति पर सब लौट कर आगये।

दर्शकों का आगमन—क्योंकि इस वर्ष कन्यायें उत्सव पर नहीं गईं अतः कई संरक्षक विशेषकर कन्याओं से मिलने के लिये आये थे। उन में से कई संरक्षकों ने अपनी कन्याओं को आग्रह करके काँगड़ी उत्सव पर ले जाना चाहा परन्तु नियमानुकूल नहीं ले जा सकते थे। अतः सब संरक्षक यहीं आकर कन्याओं से मिल गये उन दिनों यहां पर क्वारन्टीन लगाया गया था क्योंकि भिन्न-भिन्न स्थानों से लोगों का आगमन हुआ था अतः बीमारी होना सम्भव था अतः कोई भी गुरुकुल आश्रम तथा विद्यालय विभाग में इन्फेक्शन ला सकता था अतः दर्शक कन्या-गुरुकुल को भीतर जाकर न देख सके। जब यहां का उत्सव होगा तब विशेष प्रबन्ध द्वारा दिखाया जायगा। लोगों की संख्या बहुत होगई थी ऐसा मालूम होता था कि मानों इन्हीं का ही उत्सव हो रहा है। ३ दिन तक नित्य प्रति मोटर लारी तथा टांगों की भरमार रही। खाने पीने का प्रबन्ध अच्छा रहा। सब संरक्षक प्रसन्न चित्त हो अपने अपने स्थान पर लौट गये।

पठन पाठन—कन्याओं की संख्या १४६ तक हो गई है। चतुर्थ श्रेणी में कन्याओं की संख्या अधिक होने से दो विभाग कर दिये गये हैं। इस प्रकार सब श्रेणियां मिला कर ११ हैं। कोठी में पर्याप्त कमरे नहीं हैं अतः बरान्डे में क्लास लगते हैं। वर्षा तथा धूप होने से तंगी तो होती है परन्तु जब तक सुरक्षित स्थान नहीं बन जायगा तब तक कठिनाइयां सहनी पड़ेंगी। अध्यापिकायें ११ हैं जिन में से ३ अध्यापिकायें पर्याप्त स्थान न होने से बाहर से आती हैं शेष इसी कुल में रहती हैं। कन्यायें परिश्रम से पढ़ाई कर रही हैं।

कन्या गुरुकुल का वार्षिकोत्सव—ज्योति पाठकों को विदित हो कि कन्या गुरुकुल का वार्षिकोत्सव २४, २५, २६ जून को होगा। दो वर्ष से अनेक विघ्नों से इस उत्सव में बाधा पड़ती रही इसीलिये इससे पहिले वर्ष उत्सव नहीं हो सका अब यहां पर रहने के स्थान इत्यादि सबका पक्का पूरा प्रबन्ध होने की आशा है अतः सब संरक्षक तथा ज्योति की पाठिकायें अपने परिवार तथा अन्य मित्रों सहित पधार कर गुरुकुल की शोभा बढ़ायें। इस उत्सव पर महापुरुषों के भाषण तथा उत्तमोत्तम भजन होंगे। स्त्री-सम्मेलन पृथक होगा उसमें कन्याओं के निबन्ध तथा हृदयाकर्षक खेल होंगे।

धन के लिये अपील—पाठकों को विदित हो कि कन्यागुरुकुल देहली से देहरादून आगया है। पहले जब कन्यायें भ्रमणार्थ यहां आती थीं तो नियत समय के लिये कुछ वस्त्र तथा अन्य आवश्यक पदार्थ साथ आते थे अतः बहुत खर्च न होता था। परन्तु जब सब सामान एक स्थान से दूसरे स्थान पर लाना हो तो आप समझ सकते हैं कि किस प्रकार कठिनता होती है और कितना व्यय होता है, मार्ग में कितना फर्नीचर टूट फूट गया तथा अन्य कई वस्तुएं अस्त व्यस्त हो गईं उन को ठीक करवाने में कई सौ रुपयों का व्यय हुआ। आपको गतमास की ज्योति से विदित हो गया होगा कि प्रथम ढ़ाई तीन हज़ार रुपये खर्च करके एक टिनशेड़ बनवाया गया था। इस पर भी स्थान की

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कमी रही तब लगभग इतने ही रुपयों का एक और टिनशेड़ बना। यद्यपि वह स्थान उस समय के लिये पर्याप्त था परन्तु नवीन कन्याओं के प्रवेश होने से कन्याओं की संख्या अधिक होगई। पुनः स्थान की कमी होगई। इस प्रकार रहने तथा पढ़ाई के लिये पर्याप्त स्थान न होने से संकट उपस्थित है। एक कोठी में सब अध्यापिकायें रहती हैं, दूसरी में विद्यालय है। स्थान की कमी होने से एक और कोठी लेने का विचार है। अधिकारी परीक्षा की कन्याओं के लिये महाविद्यालय विभाग की आवश्यकता है। कन्यायें जब प्रार्थना के समय खड़ी होती हैं तो धूप आजाती है। बराण्डे में क्लास लगने से और कोई स्थान नहीं इस प्रकार कई संकट हैं। कन्याओं के अतिरिक्त अध्यापिकाओं और अधिष्ठात्रियों के लिये भी पर्याप्त स्थान न होने से कार्य्य में बड़ी गड़बड़ तथा असन्तोष होता है इस प्रकार अनेक कार्यों की पूर्ति के लिये धन की आवश्यकता है। प्राचीन समय में गुरुकुलों की सहायता राजा लोग करते थे तथा प्रत्येक गृहस्थी बड़े शौक से ब्रह्मचारिणियों के लिये उत्तमोत्तम वस्तुएं देना ही अपना कर्त्तव्य समझता था। क्योंकि आजकल विदेशी राज्य है उनसे कोई सहायता मिलने की आशा नहीं है अतः प्रत्येक गृहस्थी का कर्तव्य है कि तन मन धन से गुरुकुल की सेवा करे। प्रत्येक आर्य तथा संरक्षक तथा समाजें अपनी सामर्थ्यानुसार ५०) १००) भेज कर इस अनुपम शिक्षा प्रणाली के चलाने के लिये धन देकर सहायता करें। कई हजार रुपयों का खर्च हो चुका है आप नहीं देंगे तो गुरुकुल किस प्रकार चलेगा ? स्त्री जाति किस प्रकार उन्नत होगी। दो वर्ष से हमारा उत्सव भी नहीं हुआ अतः आवश्यक है कि इस वर्ष के उत्सव को सफल बनाने का प्रयत्न किया जावे और गुरुकुल इतना धन लाभ करे जिस से हमारी अपनी भूमि खरीदी जासके और उसी में यह गुरुकुल रूपी वाटिका फूले फले। अन्त में सब से प्रार्थना है कि सब सज्जन इस ओर ध्यान देकर इस कुल को समृद्ध करें। आशा है कि इस प्रार्थना को सब सज्जन स्वीकार कर हमारी सहायता में तत्पर होंगे।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अपने बच्चे को फुटबॉल खिलाओ

तुम्हारा बच्चा बहुत मोटा ताज़ा और खुश मिज़ाज़ होगा यदि तुम हम से उस के लिए फुटबॉल खरीदोगे !

खेल के सब तरह के सामान का स्टाक हमारे यहां है। जल्द आर्डर भेजिये।

बी० डी० गुप्ता एण्ड को०

पंच कुई रोड, दिल्ली।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कला कौमुदी

लेखिका श्रीमती ओ३म्वती देवी

चित्र कला कौशल सम्बन्धी अनुपम पुस्तक इस के द्वारा लेखिका ने क्रोशिये के कार्य को बड़ा ही सरल बना दिया है। बिना किसी प्रकार के पहिले ज्ञान के कन्यायें और स्त्रियें केवल इस की ही सहायता से अनेक प्रकार की बिनावट लेसें, फ़ीते, कपड़े इत्यादि बनाना सहज में ही सीख सकी हैं। पुस्तक में इतना विषय है कि किंचित इस से कई गुना दाम की पुस्तकों में भी न होगा। प्रत्येक वस्तु तथा बिनावट का बनाना चित्र देकर बड़ी सरल रीति से सिखाया गया है। देखिये समाचार पत्र इस के विषय में क्या कहते हैं।

"ट्रिब्यून" (अंग्रेज़ी का प्रसिद्ध दैनिक) लाहौर—स्त्रियों के लिये उपयोगी पुस्तक है। अनेक चित्रों द्वारा वस्तु बनाने की विधि बड़ी सरलता से समझाई गई है। सुन्दर नमूनों की लेसें, टेबल क्लाथ, बच्चों के सुन्दर कपड़े और अन्य कई वस्तुओं का बनाना बड़ी सुन्दर रीति से बतलाया गया है। पुस्तक की उपयोगिता के विचार से मूल्य बहुत कम है।

"मतवाला" (कलकत्ता)-यह पुस्तक हमारी बहिनों के बड़े समझ की है। छपाई बहुत अच्छी, कागज़ बहुत अच्छा मोटा चिकना आर्ट। सुचारु शिल्प पत्रावली कार्ड गृहस्थियों के बड़े काम की चीज़ है।

"कर्मवीर" (खांडवा)— .....पुस्तक में सादे फन्दे से लगाकर तरह तरह की वस्तुओं के बनाने की विधि बड़ी सरलता से समझाई गई है जिसे पढ़कर साधारण पढ़ी लिखी स्त्री भी इस कार्य को सीख सकती है। इस का मूल्य लागत को देखते कम है।

"माधुरी" (लखनऊ)-ऐसी पुस्तकों की हिन्दी साहित्य के लिये बड़ी आवश्यकता है। आशा है इस पुस्तक का अच्छा प्रचार होगा जिस से इस प्रकार की और पुस्तकें भी प्रकाशित का जा सकें। लेखिका और प्रकाशिका दोनों को बधाई।

शीघ्र आर्डर भेजिये मूल्य १॥)

कला कौमुदी तथा शिल्प पत्रावली का पूरा सैट लेने पर २॥=)॥ के स्थान में केवल २।) में दिया जायगा।

कन्या पाटशालाओं और पुस्तक विक्रेताओं को विशेष रियायत।

मैनेजर ज्योति—

कन्या गुरुकुल

राजपुरा रोड कोठी नं० २१—२२ देहरादून

चौधरी हलासराय प्रिन्टर तथा पब्लिशर के लिये गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में मुद्रित।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

Regd. No. A. 1711

वर्ष ६,] मई, जून, १९२८ [संख्या १, २

वार्षिक मूल्य ४॥) सम्पादिका— स्त्रियों और विद्यार्थियों से ४)
प्रति संख्या ॥) विद्यावती सेठ बी. ए. विदेश का मूल्य ६)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

विषय सूची।

विषय	पृष्ठ से
१. तान (कविता) कुमारी पुरुषार्थयती आर्य श्रीनगर	१
२. कुरान में वेदांश— ले० श्री प्रो० चमुपति जी एम.ए	२
३. रूस के सोवियट शासन में स्त्रियों का भाग— एक प्रसिद्ध रूसी महिला के लेख के आधार पर	१७
४. सन्तान-पालन— ले० श्रीमति सुशीला देवी गुप्ता	२३
५. अश्रु आवाहन— ले० श्री महावीर प्रसाद 'मंजुल' लुधियाना	२५
६. नव बधु को उपदेश 'ब्रह्मचर्य'— ले० श्रीयुत निरञ्जन देव जी	२७
७. भाषा समस्या— ले० श्री पं० अवनीन्द्र कुमार जी विद्यालङ्कार	३०
८. स्त्री-जगत्	३५
९. वैज्ञानिक संसार	३८
१०. कुसमोद्यान	३९
११. अष्टादश हिन्दी साहित्य सम्मेलन में भाषण— सभापति श्री पं० पद्मसिंह जी शर्मा	४३
१२. मुहम्मद साहब का जीवन-चरित्र— लेखक एक विद्यार्थी	६६
१३. विचार प्रवाह	७४

लेखकों से निवेदन

१. ज्योति में लेख कविता आदि भेजने वाले महानुभावों को अपने लेख सुस्पष्ट अक्षरोंमें कागज़ के एक ओर ही हाशिया छोड़ कर लिख कर भेजने चाहियें।

२. लेख बहुत लम्बे न होने चाहिए। 'ज्योति' पत्रिका के लगभग चार पृष्ठों के लायक लेख हों तो अति उत्तम है।

३. लेखों को घटाने बढ़ाने तथा संशोधित करने का संपादक को पूर्ण अधिकार है।

ज्योति सम्बन्धि पत्र व्यवहार—

आचार्य्या कन्या गुरुकुल

कोठी नं० २१, राजपुर रोड़

(देहरादून)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वर्ष ६ | वैशाख सं० १९८५ * मई सन् १९२८ | संख्या १

तान

[कुमारी पुरुषार्थवती आर्य्य, श्रीनगर]

छेड़ दो एक बार फिर तान ॥
सुन्दर, सुखद, सरस, शुचि, सुमधुर, देशभक्ति की तान ॥ १ ॥
झूम २ कर स्वर-लहरी में, गाओ ऐसा गान ।
मत्त हो उठें भारतीय सब, होवें मुदित महान ॥ २ ॥
निर्जीवी जीवित हों जिससे, निर्बल हों बलवान ।
तज कर वैर-विघ्न सब होवें, नेही एक समान ॥ ३ ॥
दृष्टि कोण, फिर जाए सब का करें आत्म-सम्मान ।
मातृ-भूमि के हित समझें सम, मान और अपमान ॥ ४ ॥
हृदय-तन्त्रियाँ बजें छेड़ कर, वही सुरीली तान ।
उसी गान की लय में ही हो जावें लय तन प्रान ॥ ५ ॥
तभी होगा भारत-उत्थान ॥ छेड़ दो० ॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कुरान में वेदांश*

(ले० पं० चमूपति जी M.A.)

प्रस्तावना

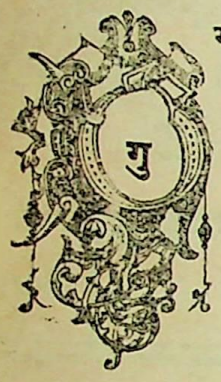

गुरुकुल से शिक्षा पाने की आशा और अभिलाषा तो बहुत समय से थी ही। बिना यहां का नियमित ब्रह्मचारी हुए भी प्रत्येक आर्य-समाजी अपने आप को श्रद्धानन्द विद्यापीठ का विद्यार्थी मानता है। सम्भवतः "विश्वविद्यालय" शब्द में स्वयं गुरुकुल के सञ्चालकों ने शिक्षा-लोलुपों की ऐसी भावनाओं के लिये पुष्कल स्थान रख छोड़ा है। गुरुकुल आर्य समाज का विद्या-तीर्थ है। इस से आशा केवल यही नहीं की जाती कि यह आर्य सन्तान को पुरातन आर्यविद्याओं का फिर से दायभागी बनायगा, किन्तु विश्वविद्यालय होने से गुरुकुल का सम्बन्ध सारे संसार से है। जहां वेद वेदाङ्गों की, पुराने ऋषियों के दृष्टि-कोण से, गवेषणा और व्याख्या की आकांक्षा इस विश्व-विद्यालय से की जाती है, वहां ऋषि दयानन्द द्वारा प्रदर्शित भिन्न-भिन्न धर्मों की तुलनात्मक दृष्टि से अनुशीलन-रीति को विस्तार-सहित क्रियात्मक रूप देने का भार भी संसार की आँखें इसी विश्व-विद्यालय के कन्धों पर रखती है। भिन्न २ धर्मों में मौलिक एकता का दर्शन ऋषि ने अपने अनूठे ढंग से किया था। ऋषि का विश्वास था कि धर्म-सुरसरि का आदिम स्रोत वेद-मानस है। भिन्न २ सम्प्रदायों में जो २ सत्यता मिलती है, वह वेद की है। हमारे धर्म-ग्रन्थ केवल भारतीय ऋषियों के रचे तथा प्रचलित किये पवित्र पुस्तक ही नहीं, किन्तु संसार भर की सचाई हमारी धार्मिक दाय है। आज ऋषि के इस दर्शन को सुविस्तृत, मूल प्रमाणों की ज्योति से चमत्कृत, सर्वसाधारण-सुबोध, रूप देने की आवश्यकता है। इस ज्योति का स्रोत गुरुकुल न होगा तो और कौन होगा? विविध धर्मों की विविध व्याख्याएं हो रही हैं। यह लहर कई अंशों में ऋषि दयानन्द की उपर्युक्त दृष्टि ही लाई है। आर्य समाज का इस व्याख्या में क्या पक्ष है? क्या मति है? इस प्रश्न का उत्तर 'ब्राह्मणोऽस्य मुखम्' के सिद्धान्तानुसार गुरुकुल देगा। अपनी अयोग्यता का मुझे पूर्ण अनुभव है? परन्तु इन धर्मों की तात्विक सचाईयों के साथ मेरी अयोग्यता भी प्रकाश के क्षेत्र में आ जाए तो उसका मान ही है। तत्वान्वेषियों को 'अनार्य' धर्म-सम्प्रदायों की छाया के साथ २ इस अयोग्यता के आवरण में भी वेद की कोई चमकती किरण मिल जायगी। सम्भव है, व्याख्या के मिष से कुछ स्वयं समझ जाऊँ। सिखाते २ मुझ से बड़े भी तो बहुत कुछ सीखते रहे हैं। इस विचार से 'कुरान में वेदांश' शीर्षक कुछ व्याख्यान देने स्वीकार किये हैं।

धर्माध्ययन में नया अध्याय

जिस व्याख्यान-माला की प्रस्तावना आज के व्याख्यान से होगी, उस का विषय ऐसा है, जिस से सम्भवतः आर्य समाज के अन्य-धर्माध्ययन

* गुरुकुल विश्वविद्यालय में लेखक का एतद् विषयक प्रथम व्याख्यान।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

में एक नए अध्याय का श्रीगणेश होगा । अपने आप को स्पष्टतया वेदानुयायी न कहने वाले मतों के सम्बन्ध में हमारा दृष्टि-कोण प्रायः विरुद्ध आलोचना का दृष्टि-कोण रहा है । इन शब्दों को कहते हुए मेरे सम्मुख श्री गङ्गाप्रसाद एम. ए. की वह सुन्दर सुव्यवस्थित पुस्तक आती है, जिस में लेखक महोदय ने पारसी धर्म से लेकर इसलाम तक का सकल-धर्म-स्रोत वेद से निःसृत होना सिद्ध किया है । पण्डित जी की धारणाओं का आधार अधिकतया इन मतों की धर्म पुस्तकों पर अन्य विद्वानों की टिप्पणियां तथा सम्मतियां हैं । मेरे विचार में टीकाकारों की सम्मतियों की अपेक्षा मूल पुस्तकें पण्डित जी की धारणाओं की कहीं अधिक पोषक हैं । मूल पुस्तकों की अन्तः साक्षि, उनके कुछ सन्दर्भों को अपने धर्मग्रन्थों से उद्धृत किये वाक्यों से शाब्दिक तुलना, उन की विचार-शृङ्खला का साक्षात् परिज्ञान, इत्यादि २ वे लाभ हैं जो अध्येता को अपनी धारणा स्थिर करने के लिये अधिक सामग्री दे सकते हैं । पण्डित जी का प्रयत्न सदैव आदरणीय रहेगा परन्तु यह प्रयत्न मूल पुस्तकों की ओर मानो निर्देशाङ्गुलि ही है । इन पुस्तकों के सम्बन्ध में आर्य समाज का प्रामाणिक मत इनके साक्षात् अध्ययन के पश्चात् ही स्थिर हो सकेगा । गुरुकुल विश्वविद्यालय के श्रद्धेय आचार्य श्री रामदेव जी ने अपने भाषणों और लेखों में दूसरे मतों के सिद्धान्तों का वैदिक विचार से समन्वय प्रदर्शित करने में सराहणीय परिश्रम किया है, परन्तु विविध कार्यों में व्यग्र रहने, और इस समन्वय को सुगठित रूप देने के लिये पर्याप्त समय न पा सकने, के कारण आचार्य महोदय अपने तुलनात्मक धर्माध्ययन के परिणामों को अभी पूर्ण सुव्यवस्थित समीक्षा का रूप नहीं दे सके हैं ।

इसलाम का व्यतिरेकात्मक अध्ययन

इसलाम के विषय में विशेषतया हमारी नीति समन्वयात्मक नहीं, व्यतिरेकात्मक अध्ययन की नीति रही है । हमने वैदिक-धर्म और इसलाम के भेदों पर इन दो धर्मों की समानताओं की अपेक्षा अधिक बल दिया है । इस नीति के कारण स्वाभाविक हैं । इन कारणों में से कुछ का सम्बन्ध तो देश तथा काल की परिस्थिति से है । आर्य समाज का प्रादुर्भाव ऐसे देश में हुआ है जहां इसलाम आक्रामक धर्म था । फिर इस धर्म का आधार तत्व-विचार पर नहीं, किन्तु कुछ अलौकिक सत्ताओं के अवैज्ञानिक चमत्कार पर था । कुरान अल्लाह की आज्ञा है, मुहम्मद अल्लाह का अन्तिम पैग़म्बर है, मुसलमान अल्लाह की प्यारी उम्मत हैं, इसलाम बहिश्त का सीधा मार्ग है, इसलाम के बाहर शैतान का निष्कण्टक राज्य है, जिस की परिणति दोज़ख़ की कभी न बुझने वाली आग में होगी, मुस्लिमेतर न बख़शा गया है न बख़शा जायगा, वह 'लानती' है, अल्लाह का अनादि अनिवार्य शाप सदैव उसके गले का हार बना रहेगा—यह वह मुख्य विचार थे जिन के आधार पर तात्कालिक इसलाम गरदन अकड़ाए खड़ा था । अल्लाह और इस्लाम स्वभावतः विजेता थे । अनल्लह, जिसका इस्लामिक पर्याय शैतान था, और अनिस्लाम, जिस को इसलाम की परिभाषा में कुफ्र अर्थात् नास्तिकता अथवा अधर्म वा विद्रोह कहते थे, अपनी नैसर्गिक बनावट में ही हार के, अवश्यंभावि मृत्यु के, नैसर्गिक बीज लेकर पैदा हुआ था । ऐसे गर्वीले मोहमद-ग्रस्त संप्रदाय के साथ पृष्ठ-पोषक सहानुभूति का व्यवहार लज्जाजनक गिड़गिड़ाहट का व्यवहार होता । हां ! ऋषि दयानन्द का आसन इस लौकिक व्यवहार की

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मानव दुनिया से ऊंचा है।

चांदापुर का शास्त्रार्थ

ऋषि दयानन्द जहां सत्य-प्रियता और निर्भय स्पष्ट-वक्तृता के मूर्त अवतार थे, वहां नीति और शिष्टाचार के भी अद्वितीय धनी थे। चान्दापुर नामक ग्राम में ऋषि का शास्त्रार्थ एक ओर ईसाई पादरियों और दूसरी ओर मुसलमान मौलवियों से एक ही समय और एक ही स्थान पर हुआ। यह पहिली रणस्थली थी, जहां आर्यधर्म ने अपने पुराने तर्कास्त्र को फिर से सँभाला, और गर्वीली भैंस से विनम्र बुद्धि को फिर से अधिक बलशाली सिद्ध किया। तीनों पक्षों के लेखों को, जो उस समय के लेख-संग्रहों में अब तक सुरक्षित हैं, पढ़ने से पता लगता है कि सामी Semitic धार्मिक विचार तर्क की भित्ति से कितना दूर जा पड़ा है। पादरी स्काट साहब ने स्पष्ट कहा:-"मेरे विचार में इन समस्याओं का उत्तर देना व्यर्थ है"। और अन्त में स्वीकार किया कि "पण्डित जी (ऋषि दयानन्द) इसका उत्तर हज़ार तरह से दे सकते हैं और तुम हज़ारों मिल कर इन से बात करो तो निरुत्तर रहोगे।"

नई प्रवृत्ति

ऋषि दयानन्द के उस समय के भाषण में गम्भीर शील, सुस्पष्ट और विवेचना-पूर्ण तार्किक विचार है। कठोरता नाम को नहीं। आत्म-विश्वास शब्द शब्द पर लिखा हुआ है। यह शास्त्रार्थ उस धार्मिक विचार-विनिमय की भूमिका थी जो आर्यसमाज की प्रवृत्ति के परिणाम-रूप में भारतवर्ष में फिर से एक अदम्य वेग के साथ प्रारम्भ हुआ। ईसाइयों के साथ वाद-विवाद राजा राममोहन राय ने भी किया था, परन्तु मुसलमानों को शास्त्रार्थ के क्षेत्र में ऋषि दयानन्द का आह्वान ही घसीट लाया। ऋषि के पूर्व की इन दोनों पक्षों की पारस्परिक चोटें अश्लील हैं, शील-शून्य हैं, उन्हें विचार नहीं, अनाचार कहना चाहिये। इस गाली प्रदानाध्याय का श्रीगणेश एक मौलवी के "रद्दे हिन्दु" से होता है, जिसका उत्तर चौबे बद्रीदास ने "रद्दे मुसलमान" से दिया। इन दो पुस्तकों के पश्चात् उभय पक्ष से गालियों की झड़ी लगती है। दोनों ओर विरोध का भाव तो था ही, ऋषि ने उसे इस गर्हणीय गाली-गलौच की गन्दी-नाली से निकालकर शुद्ध तार्किक-वाद की प्रकाशमयी प्रवृत्ति दे दी। कोरे वैर-विरोध की भावना को ऋषि ने निर्माणात्मक दार्शनिक विचार-विनिमय का रूप प्रदान किया।

धार्मिक ऐक्य सम्मेलन

लार्ड लिटन के दर्बार (१८७७ ई०) में ऋषि के निमन्त्रण पर तात्कालिक मतों के प्रतिनिधियों का ऋषि के डेरे में इकट्ठा होना और उनके सामने धार्मिक ऐक्य का प्रस्ताव रखा जाना एक ऐसी घटना है कि इस सुपठित श्रोतृ-समाज के सम्मुख उसके विस्तार में जाना विद्वान् श्रोताओं के ज्ञान का अपमान होगा। ऋषि की धर्माध्ययन में समन्वयात्मक दृष्टि का यह धार्मिक-ऐक्य सम्मेलन उज्ज्वल प्रमाण है।

सर सैयद

इस सम्मेलन में उपस्थित होने वालों में एक महाशय सर सैयद अहमद ख़ाँ थे। यह महाशय अलीगढ़ के विख्यात कॉलेज—जो अब विश्वविद्यालय का रूप धारण कर चुका है—के संस्थापक के रूप में प्रसिद्ध हैं। इन्हें भारतीय मुसलमानों की वर्तमान जागृति का जन्म-दाता कहना चाहिये। मुसलमान होने पर भी इन महाशय के विचार ख़ूब उदार थे। यह ऋषि के भक्त थे। जहाँ कहीं ऋषि का शुभागमन उसी नगर अथवा बस्ती में हो जाता, जहाँ सर सैयद विराजमान हों, वहाँ ऋषि के सत्संग का लाभ उठाना यह अपना परम कर्तव्य मानते। ऋषि के देहान्त

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पर इन्होंने भी भारत के अन्य उदार हितेच्छुओं की भाँति हार्दिक शोक प्रकट किया था ।

सर सैयद का कुरान-भाष्य

सरसैयद ने कुरान का भाष्य किया जो इस समय दुष्प्राप्य है । इस बात का पता लगाने के लिये कि ऋषि के सत्संग का सर सैयद के धार्मिक विचारों पर कितना गहरा, कितना विप्लवकारी, प्रभाव पड़ा, सर सैयद के कुरान-भाष्य को एक दृष्टि पढ़ जाना पर्याप्त है। इस भाष्य के विषय में मैं अपनी निजू सम्मति आपके सम्मुख न रख सर सैयद के मित्र और भक्त मौलाना अलताफ़ हुसैन हाली—जिनसे सर सैयद ने सुप्रसिद्ध उर्दू काव्य 'मुसद्दस हाली' लिखवाया था और अपनी इस महत्त्वपूर्ण प्रेरणा पर उन्हें इतना गर्व था कि वह विना झिझक कहते थे कि यदि अल्लाह ने 'क़यामत' में पूछा कि तुम्हारे जीवन का एक अद्वितीय पुण्य-कार्य क्या है तो मैं 'मुसद्दस' पेश करूँगा और कहूँगा 'या अल्लाह ! क्या एक मनुष्य-जीवन का यह छोटा परिणाम है ?'—के शब्द उनके लिखे सर सैयद के जीवन-चरित्र से, जिसका नाम लेखक ने अपनी भावुकता में 'हयाते-जावेद' अर्थात् अमर-जीवन रखा है—उद्धृत करूँगा। हाली ने उक्त चरित के पृष्ठ २५६ से २६२ तक एक सूची दी है। उसमें उन सब भेदों का दिग्दर्शन कराया है, जो सर सैयद के कुरान-भाष्य को अन्य तफ़सीरों से अलग, एक ओर, खड़ा कर देते हैं। कुछ भेद मुसलमानों में प्रचलित ऐसी साम्प्रदायिक धारणाओं के सम्बन्ध में हैं, जिनमें आपको स्वारस्य नहीं और हमें इस व्याख्यान-माला में उनसे कुछ विशेष काम भी नहीं। परन्तु सर सैयद की तफ़सीर की अधिकाँश विशेषताएँ ऐसी हैं जो ऋषि की मानसिक छाप का उज्वल, सन्देहातीत प्रमाण हैं। इन्हें अभी हाली के शब्दों में आपके कर्ण-गोचर कराऊँगा। हाली का कहना है कि "अन्य मुसलमान अन्वेषणाकार ('मुहक्किक') इन भेदों-इख्तिलाफ़ों-के विषय में सर सैयद से सहमत हैं"। इस कथन में दो शब्द विशेषतया ध्यान देने योग्य हैं। 'एक मुहक्किक' दूसरा 'इख्तिलाफ़'। मुहक्किक़ का शब्दार्थ है 'सत्यान्वेषी'। ऋषि से पूर्व सत्यान्वेषी कहां थे ? यह एक समस्या है। इस सत्यान्वेषण का—जिस के साथ हाली के कथनानुसार अन्य विद्वान् सहमत थे—सर सैयद को कितना कठोर फल भोगना पड़ा ? इस का वर्णन आगे किया जायगा। न जाने उस सहमति को सर सैयद की स्पष्ट सहायता करने में हिचकिचाहट क्यों हुई ? 'इख्तिलाफ़'—भेद—शब्द इस सहमति का स्पष्ट खण्डन कर रहा है। इन इख्तिलाफ़ों की तालिका निम्न प्रकार दी है—

"४. कुरान की कोई आज्ञा जो एक आयत में कही गई थी किसी दूसरी आयत से मनसूख़ (प्रत्याख्यात) नहीं हुई। और न कुरान की किसी आयत का पाठ निषिद्ध हुआ। सूरा बक़र की इस आयत से कि 'हम मनसूख़ करते हैं आयतों में से और देते हैं भुला' कुरान की किसी आयत का निराकर्त्री या निराकृता होना अभिप्रेत नहीं, किन्तु उस (कुरान) की कतिपय आयतों द्वारा उस से पूर्ववर्ती धर्मशास्त्रों के कुछ विधानों का मनसूख़ होना अभिप्रेत है।

५. कुरान में किसी प्रकार की वृद्धि या ह्रास या हेर फेर नहीं हुआ।.....। जिन साक्षियों से वृद्धि या ह्रास या परिवर्तन होना.....पाया जाता है, वह सब असत्य मनघड़न्त हैं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

६. हदीस की छैः (सिहाह-सित्ता †) या दो भी सच्ची पुस्तकों (सहीहैन) की सब साक्षियों को, जब तक हदीस-शास्त्र के नियमानुसार उन की जांच न की जाए, विश्वस्य न समझना चाहिये।

७. शैतान या इब्लीस का शब्द जो महान् कुरान में आया है, उस से कोई मनुष्येतर सत्व अभिप्रेत नहीं, किन्तु मनुष्य में जो आसुरी प्रवृत्ति या पशु भाव है, वह अभिप्रेत है।

८. सिवाय उन काफ़िरों और मुश्रिकों के—जिन का वर्णन कुरान की इस आयत में हुआ या जिन पर यह आयत लागू है कि 'खुदा तुम को मनाई नहीं करता किन्तु उन लोगों की मित्रता की जो तुम से धर्म के सम्बन्ध में लड़े और जिन्होंने तुम्हें तुम्हारे घरों से निकाल दिया और तुम्हारे निकालने में औरों की मदद की'—सब काफ़िरों और मुश्रिकों से मित्रता की अनुज्ञा है।

१४. पहरावे आदि में काफ़िरों का सादृश्य शास्त्रानुसार निषिद्ध नहीं।

१५. कुरान की किसी आयत से मनुष्य की (कर्म तथा भोग में) पराधीनता और (अनादि निश्चित) दैव को सिद्ध करना शास्त्रकार के अभिप्राय के विरुद्ध है। .....

१६. आकाशारोहण और हृदय-विदारण ‡ दोनों स्वप्न में हुए थे न कि जाग्रत् अवस्था में।.....

१७. यद्यपि सम्भव है कि जिस प्रकार मनुष्य से अधम प्राणी विद्यमान है, इसी तरह मनुष्य योनि से उत्तम योनियां भी हों जिनका हमें ज्ञान नहीं है, परन्तु 'फरिश्ता' आदि शब्दों से, जिन का कुरान में व्यवहार है, यह अभिप्राय नहीं कि वह कोई मनुष्योत्तर पृथक् प्राणी हैं। किन्तु परमेश्वर ने जो भिन्न २ शक्तियां अपने पूर्ण सामर्थ्य से प्रकृति को प्रदान की हैं, जैसे पहाड़ों की कठोरता, पानी का द्रवत्व, वृक्षों की वृद्धि, विद्युत् में आकर्षण विकर्षण का गुण इत्यादि २, इन्हीं को 'मलाइक'—फ़रिश्ते—शब्द से वर्णित किया गया है।

१८. आदम और फ़रिश्तों और शैतान की कथा जो कुरान में वर्णन की गई है वह किसी घटना का समाचार नहीं किन्तु एक रूपक है, जिस के मिष से मनुष्य के स्वभाव, उस की उत्तेजनाओं और पाशविक शक्तियों की ..... दुष्टता या विरोध का वर्णन है। इसी प्रकार के और भी कई रूपक कुरान में वर्णित हैं।

१९. चमत्कार पैग़म्बरी का प्रमाण नहीं।

२०. कुरान में मुहम्मद साहिब के किसी चमत्कार का वर्णन नहीं किया गया।

२३. जो लोग रोज़ा कठिनता से रखते हैं..... वे रोज़ों के बदले फ़िदिया—दान—दे सकते हैं।

२४. जिस व्याज का निषेध कुरान में किया है, उस से अभिप्राय वह कुसीद-जीविता है जो अविद्या के समय—(अर्थात् मुहम्मद के आने से पूर्व)—अरब में प्रचलित थी।.....इस से उस लाभ का निषेध नहीं जो हुंडियों पर लिया

† मुसलमान हदीस की इन छैः पुस्तकों को सच्ची प्रामाणिक पुस्तकें मानते हैं और उन्हें 'सिहाह-सित्ता' कहते हैं:—
बुखारी, मुस्लिम, मिश्कात, इब्न माजा, इब्न सऊद, इत्क़ान। प्रथम दो का स्थान अधिक उत्कृष्ट है और उन्हें 'सहीहैन' अर्थात् दो सच्ची किताबें कहा जाता है।

‡ प्रचलित विश्वास यह है कि मुहम्मद साहिब एक रात बुराक़ नाम के खच्चर पर चढ़ कर जिब्राइल फरिश्ते के साथ पहिले यरूशलम और फिर क्रमशः सब आसमानों पर गए। अन्त में अल्लाह मियां के सम्मुख हुए और उनका अल्लाह मियां से दो कमानों का अन्तर रह गया। इसे 'मेराज' कहते हैं। नबी होने से पूर्व मुहम्मद साहिब का हृदय जिब्राइल ने उन की छाती से निकाल कर धोया था। इसे 'शक़उल क़ल्ब' कहते हैं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जाता है । इसके अतिरिक्त किसी राज्य या संघ को जो देश की उन्नति के लिये रुपया ऋण ले, व्याज पर रुपया देना या किसी समाज का जो लोकहित के कार्य के लिये धन एकत्रित करे, व्याज पर धन लगाना और उस व्याज से परोपकार करना निषिद्ध व्याज के अन्तर्गत नहीं ।

२६. शहीदों के विषय में जो कुरान में आया है कि उन्हें मरा नहीं, जीता समझो, इस से उनका पारलौकिक पदोत्कर्ष तथा आध्यात्मिक आनन्द और संसार में अनुकरणीय उदाहरण छोड़ना अभिप्रेत है, यह नहीं कि वे वस्तुतः जीते हैं और जीवितों की भाँति खाते पीते हैं ।

२७. 'सूर'—नरसिंहा—का शब्द जो कुरान में कई वार आया है, उस से कोई वास्तविक वाद्य शंखादि अभिप्रेत नहीं, किन्तु अलंकार रूप में—जैसे शंख की ध्वनि पर सेना एकत्रित हो जाती है—परमात्मा की इच्छानुसार (क़यामत में) प्राणियों का उठना और इकट्ठा होना इष्ट है।

२८. परमेश्वर के अस्तित्व और गुणों तथा नामों और कार्यों के विषय में जो कुरान और हदीस में आया है वह सब अलंकार और रूपक के ढंग से आया है। इसी प्रकार परलोक के विषय में लोगों का उठना, इकट्ठा होना, लेखा जोखा, तुला, पुल, स्वर्ग, और नरक आदि—यह सब भी अलंकार है, परमार्थ नहीं।

२९. कुरान में जो खुदा का पृथिवी और आकाश को छैः दिन में बनाना लिखा है, इस से किसी घटना का समाचार देना अभिप्रेत नहीं, किन्तु यहूदियों के इस विश्वास का खण्डन इष्ट है कि परमेश्वर ने पृथिवी और आकाश को छैः दिन में बनाकर सातवें दिन विश्राम किया।

३०. कुरान में जो स्थान २ पर प्राचीन जातियों में दुष्टता और दुराचार के फैल जाने के अनन्तर उन पर तरह २ की आपत्तियों का आना और किसी जाति का आँधी और बाढ़ से, किसी का टिड्डियों और अन्य कीटादि से, नाश को प्राप्त होना लिखा है, उस का अर्थ यह नहीं कि वस्तुतः उन के पाप और दुष्कर्म इन आपत्तियों के कारण बने थे, किन्तु सृष्टि के आरम्भ से यह विश्वास प्रत्येक जाति में प्रचलित रहा है कि जो भयंकर घटनाएँ संसार में होती हैं, वे मनुष्यों के पापाधिक्य के कारण होती हैं, और पैग़म्बरों का काम यह है कि जिन विचारों पर लोगों का स्वाभाविक विश्वास आश्रित है—यदि वे विचार उन के संदेश के बाधक न हों तो—.....उन के अनुसार जनता को सम्बोधित करें ।

३१. परमेश्वर का दर्शन क्या इस लोक और क्या परलोक में न बाह्य चक्षुओं से होना सम्भव है न अन्तश्चक्षु से ।

३२. महान् कुरान में जो बदर और हुनैन के संग्रामों में फ़रिश्तों की सहायता का वर्णन है, उस से फ़रिश्तों का (वास्तविक) आगमन सिद्ध नहीं होता ।

३३. कोई घटना परमेश्वर के (नित्य) व्यवहार और सृष्टि-नियम के प्रतिकूल कभी नहीं होती ।

३४. कुरान में जो यह कहा है कि इस (कुरान) के सदृश कोई सूरत या आयतें लाओ, इस से, जैसे प्रायः मुसलमान समझते हैं, यह अभिप्रेत नहीं कि ऐसी साहित्यिक रचना नहीं की जा सकती, किन्तु यह अभिप्राय है कि ऐसी रचना जो विद्वानों और दार्शनिक तत्व-वेत्ताओं

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

से लेकर अनपढ़ों, वनवासी बद्दुओं, और ऊँट चराने वालों तक सब के पथप्रदर्शन के लिये समान लाभदायक हो ..... तुम से होनी असम्भव है।"

इस तालिका से आप दो प्रकार के परिणाम निकाल सकते हैं। (१) यह तालिका सर सैयद के, प्रचलित भाष्यकारों से, 'इख़्तिलाफ़ों' की है। अतः यह सिद्ध है कि प्रचलित इसलाम का विश्वास इन मन्तव्यों के विपरीत था। (२) एक ओर सर सैयद के क़ुरानानुवाद के आधारभूत इन सिद्धान्तों को रखिये और दूसरी ओर इनके विपरीत प्रचलित इसलाम के विश्वासों की कल्पना करते जाइये। आपको यह स्पष्ट प्रतीत होगा कि यह इसलाम पर आर्य समाज ही की छाया है। हाली महाशय अपनी उक्त पुस्तक के परिशिष्ट के पृष्ठ ६० पर लिखते हैं:—

"कुछ लोग जो सर सैय्यद के विषय में कहते हैं कि जो अर्थ क़ुरान के उन्होंने लिखे हैं, वे न ख़ुदा को सूझे न रसूल को, सम्भवतः सर सैयद की कुछ व्याख्याओं के सम्बन्ध में यह कहना ठीक है, परन्तु उनके सम्पूर्ण भाष्य के सम्बन्ध में ऐसा कथन क्रूरोपहास मात्र है।"

इस लेख से आप यह भी समझ सकते हैं कि सर सैयद के भाष्य का साधारण इसलामी जनता में कैसा स्वागत हुआ होगा। सृष्टि-नियम को परमात्मा के स्थायी स्वभाव के साथ समकोष्ठक करने से सर सैयद का नाम रखा गया 'नेचरी'। भारत वर्ष ही नहीं, भारतवर्ष के बाहर से भी व्यवस्थाएं आईं कि सर सैयद काफ़िर है। 'अमर जीवन' के पृष्ठ २८२ पर हाली लिखते हैं:—

"देखने से पता लगता है कि मुसल्मानों के जितने सम्प्रदाय भारत वर्ष में हैं, क्या सुन्नी, क्या शीआ, क्या मुक़ल्लिद, क्या ग़ैर मुक़ल्लिद, क्या वहाबी, क्या बिदअती, सब सम्प्रदायों के प्रसिद्ध और अप्रसिद्ध विद्वानों और पण्डितों की इन व्यवस्थाओं पर मुद्राएं या हस्ताक्षर हैं।"

पृष्ठ २८७ पर एक व्यवस्था से कुछ उद्धरण दिया हैं जो अरब के चार मुफ़्तियों ने दी थी। उस व्यवस्था का संक्षेप यह है:—

"यह पुरुष भटका हुआ और भटकानेवाला है। यही नहीं, वह शुद्ध शैतान का स्थानापन्न है जो मुसल्मानों के बहकाने का इच्छुक है। इस का उपद्रव यहूदियों और ईसाइयों के उपद्रव से बढ़कर है। परमेश्वर इस को समझे। शासक का कर्तव्य है, इस से बदला ले। इसे झिड़कना चाहिये। मूर्ख हो तो समझाना चाहिये। समझ जाए तो अच्छा, नहीं तो मारना और क़ैद करना चाहिये।" इत्यादि।

एक और व्यवस्था में सर सैयद के वध का विधान भी किया है। यह है मुसलमान सत्यान्वेषियों की उस सहमति की सत्यता जिसकी ओर हाली ने ऊपर संकेत किया था। इस कथन से हमारा अभिप्राय यह नहीं कि किसी और मुसलमान ने इन अर्थों को अङ्गीकार किया ही नहीं, परन्तु उस अंगीकार का प्रभाव प्रचलित इसलामी विचार पर, या सर्वथा नहीं, या नहीं के समान, रहा।

हाली ने अपनी पुस्तक के पृष्ठ २६३ से २६४ तक सर सैयद के क़ुरान-भाष्य की उन विशेषताओं का वर्णन किया है जो उनके कथनानुसार सर सैयद की मौलिक अछूती उपज हैं। इन पर भी हाली इतना बन्धन अवश्य लगाते हैं कि "विश्वासपूर्वक नहीं कहा जा सकता कि प्राचीन (भाष्यकारों) में से कोई इस ओर नहीं गया।" वे विशेषताएं ये हैं:—

"१. इसलाम ने दासता को सदा के लिये वर्जित किया है। .....

२. .....दुआ की स्वीकृति से उस इष्ट का, जिसके लिये दुआ की है, प्राप्त होना अभिप्रेत नहीं.....

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

३. चमत्कार या चिन्हादि शब्द, जो कुरान में स्थान २ पर व्यवहृत हैं, उनसे वे आज्ञाएँ या उपदेश और शिक्षाएँ इष्ट हैं जो परमेश्वर ने ज्ञानाविष्कार द्वारा नबियों पर उतारी हैं।.....चमत्कार नहीं।

५. यदि पुरुष को सन्देह भी हो कि वह अनेक भार्याओं में न्याय न कर सकेगा तो उसे एक से अधिक विवाह की अनुज्ञा नहीं।

७. कुरान में 'जिन' आदि शब्दों से गुप्त या पर्वतीय या मरुस्थलीय लोग अभिप्रेत हैं, न कि वह भ्रमात्मक सृष्टि जो भूत प्रेतादि नाम से कही जाती है।

८. सूरा फ़ील में जिन शब्दों से हस्ति-सेना पर अबाबीलों का पत्थर फेंकना इष्ट समझा जाता है, वह वस्तुतः चेचक रोग का आलङ्कारिक वर्णन है।

इत्यादि। अनेक विशेषताओं का उल्लेख किया है।

इन लंबे तथा थका देने वाले उद्धरणों के लिये मेरे विचार में क्षमा-याचना की आवश्यकता नहीं। कारण कि सर सैयद ऋषि दयानन्द के समकालीन मुसलमान भक्तों में से एक गिने जाते हैं। कहा जाता है कि वह ऋषि को भारत का आध्यात्मिक सम्राट् और मनुष्य-समाज का एक ऐसा मौलिमणि व्यक्ति समझते थे जिस पर ईश्वरीय ज्ञान का अव्यवहित आविष्कार होता है। उन के विचारों पर ऋषि का प्रभाव होना स्वाभाविक था।

कादयानी संप्रदाय

ऋषि के समकालीनों में कादियान के मीर्ज़ा गुलाम अहमद का नाम भी अवश्य उल्लेख करने योग्य है। सर सैयद तो इस्लामी विचार के आर्यसमाजी सुधारक मात्र ही हुए हैं। मीर्ज़ा गुलाम अहमद ने इस्लाम में एक नए संप्रदाय की स्थापना की है। मीर्ज़ा इतने विचारवान् न थे जितने सर सैयद। शिक्षा साधारण थी। एक कचहरी में मुंशी रहे थे। उन का आचार व्यवहार कतिपय सामी (Semitic) पैग़म्बरों का सा था। वही परमात्मा से सीधे सम्बन्ध की कल्पना; भौतिक परन्तु अलौकिक चामत्कारिक साधनों से अल्लाहमियां का साक्षात्कार, यथा मुंशी बन कर परमात्मा की कचहरी में जाना और काग़ज़ पेश करना, लाल सियाही से उन पर अल्लाहमियां के हस्ताक्षर कराना और लाल सियाही के छींटे (उन के विचार में) समाधयुत्तर जाग्रत् अवस्था में अपनी चादर पर लगे पाना ; अपने पैग़म्बर होने की साक्षि में अपनी दो बीमारियों— जिन में से एक प्रमेह थी— को प्रमाण के रूप में पेश करना कि यह वह दो चादरें हैं, जो पुरानी भविष्यवाणियों में, आने वाले नबी के चिह्न रूप में, वर्णन की गई हैं*; वही आचार की निर्बलता और उस पर पैगम्बरी का आवरण चढ़ा कर उसे परम सदाचार का विश्वस्य रूप देना, वही प्रतिकूल विचार की असहिष्णुता— प्रतिपक्षी से शास्त्रार्थ नहीं, मुबाहिला करना, अर्थात् उसे सम्मुख बैठा कर उस से दुआ करानी और स्वयं दुआ करनी कि जो पक्ष असत्य हो, उस पर उसी समय परमात्मा की मार पड़े, और यदि अकस्मात् प्रतिपक्षी का कोई अनिष्ट दो चार साल में भी हो जाय तो उसे परमात्मा की मार का स्पष्ट प्रमाण उद्घोषित करना ; यही नहीं, साधारण अवस्था में भी प्रतिपक्षियों की मृत्यु आदि की भविष्यवाणी करते रहना कि यह परमात्मा के शत्रु हैं और परमात्मा ने स्वयं या फ़रिश्ते के मुख से मुझ से कहा है कि इन्हें शीघ्र नष्ट किया जायगा। मीर्ज़ा

* नसीम-दावत

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

गुलाम अहमद के इस प्रकार के अद्भुत वृत्तान्त को पढ़ते हुए हँसी भी आती है और भारतीय मुसलमानों के तात्कालिक धार्मिक अज्ञान का परिज्ञान भी होता है। मीर्ज़ा का किया हुआ कुरान के कुछ भागों का अनुवाद कई अंशों में प्रचलित अनुवादों से उत्कृष्ट है, परन्तु साधारणतया इन महाशय की धर्म-दृष्टि उतनी ही भ्रान्तिपूर्ण है जितनी इनके पूर्ववर्त्ती तथा समकालीन सामान्य मुसलमानों की। मीर्ज़ा फरिश्तों, जिनों चमत्कारों इत्यादि में उतना ही विश्वास रखते हैं, जितना कोई भ्रम-ग्रस्त पुराने ढंग का अनपढ़ मुसलमान। उन का ऐसा करना स्वाभाविक है क्योंकि उन की अपनी पैगम्बरी का आधार इसी प्रकार की अलौकिक सत्ताएं और घटनाएं हैं। मुसलमानों में प्रसिद्ध है कि मुहम्मद साहिब ने एक वार उङ्गलि के संकेत से चाँद के दो टुकड़े-कर दिये थे। मीर्ज़ा इस की साक्षि में महाभारत का धर्म-पर्व पेश करते हैं* । आप सब संस्कृत-साहित्य के विद्वान् हैं। आप में से कोई कोई पुरातत्त्व विभाग के उत्तरोत्तर होने वाले अन्वेषणों का परिज्ञान भी रखते हैं। कहीं इस पर्व का पता मिले तो हमें भी बताइयेगा।

मीर्जा का ऋषियों पर आक्षेप

ऋषि ने पुराने आर्य आचार्यों की भांति अपने धर्म के स्थापन के साथ २ दूसरे मतों की समालोचना भी की थी। मीर्ज़ा साहब ने इसी ढङ्ग का एक ग्रन्थ रचा जिस का नाम है 'बुरादीन अहमदीया'। उस पुस्तक का एक भाग जो ऊपर २ से देखने से मूल पुस्तक प्रतात होता है, मोटा छपा था और दूसरा भाग पाद-टिप्पणियों के सदृश पादटिप्पणियों के स्थान में ही सूक्ष्म अक्षरों में। इन दो भागों में परस्पर कोई सम्बन्ध नहीं। मानो दो अलग २ पुस्तकें चल रही हैं। इन दोनों भागों के कुछ अध्याय वैदिक धर्म के अर्पण हुए हैं। वेद के विल्सनकृत अनुवाद का एक भ्रष्ट भाषान्तर उर्दू में लछमनदास नामक एक स्कूल-मास्टर ने प्रसिद्ध किया था। उस का कुछ बेजोड़ सा उद्धरण कर मीर्ज़ा महोदय ने वेद के ऋषियों को "मजानीन" और "मसाली बुलहवास"-पागल और उन्मत्त— की पदवी दी हैं। भगवान् ईसा, जिनका मीर्ज़ा अपने आप को अवतार कहते थे, के सम्बन्ध में लिखा है कि उनकी 'तीन दादियां और नानियां व्यभिचारिणी थीं'। गन्दी से गन्दी गालियां और गर्हित से गर्हित सिठनियां मीर्ज़ा साहब की पुस्तकों में भरी पड़ी हैं।

बुराहीन अहमदीया के एक हिस्से के प्रकाशित होने पर मीर्ज़ा ने विज्ञापन दिया कि इस का सन्तोषदायक उत्तर देने वाला १०००) पारितोषिक का अधिकारी होगा और जब ऋषि दयानन्द का देहान्त हुआ तो आप ने लिखा कि इस विज्ञापन के सम्बोध्य ऋषि दयानन्द थे। ऋषि दयानन्द के निर्वाण का, जिस पर सारे देश ने मार्मिक शोक के आंसू बहाए थे, मीर्ज़ा साहब ने इन शब्दों में वर्णन किया है:—

मैं डरता हूं कि आप लोगों का ऐसा अन्तन हो जैसा पं० दयानन्द आर्य्यों के यूथ-नायक का हुआ, क्योंकि इस दास ने उन को उन के देहान्त से पूर्व सुपथ का निमन्त्रण दिया और (भावि) परलोक की दीनता स्मरण कराई और उनके धर्म और मन्तव्य का पूर्णतया झूठा होना अकाट्य युक्तियों से प्रकट किया और अत्यन्त सुन्दर और दोष-रहित तर्कों से पूर्ण शिष्टाचार के साथ सिद्ध किया कि प्रकृतिवादियों के पीछे सारे संसार में आर्यों से बुरा और कोई धर्म-संप्रदाय नहीं। (बुराहीन अहमदीया पृ० ५३१)

* सुरमा चहम आर्य

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हम चकित होते हैं जब ऋषि के ग्रन्थों और व्याख्यानों में मीर्ज़ा गुलाम अहमद से पूर्ण उपेक्षा का व्यवहार पाते हैं। ऋषि ऐसे जागरूक सुधारक को मानो यह पता ही नहीं कि मीर्ज़ा साहिब भी कोई धार्मिक क्षेत्र में उठ रही आवाज़ है। वास्तव में इन साधना और भावनाओं के मालिक के साथ ऋषि धार्मिक वाद नहीं छेड़ सकते थे।

पं० लेखराम

ऋषि ने इसलाम की समालोचना की, बेधड़क निस्संकोच समालोचना की। उसका परिणाम सर सैयद अहमद हुए। मीर्ज़ा की ओर ध्यान गया तो पण्डित लेखराम का। इन दो महामल्लों में काग़ज़ी घोड़े भी चले और साक्षात् साम्मुख्य भी हुआ। एक हिन्दू मीर्ज़ा साहब की इस धमकी में आकर, कि मुसलमान न हुआ तो मर जायगा, धार्मिक द्विविधा में पड़ा था। गिरतों का सहारा, भटकतों का मार्गदर्शक, अपनी औरस सन्तान से भारत-सन्तान का कहीं अधिक हित-चिन्तक, लेखराम उस हिन्दु के निमित्त कादियान गया और न केवल उसी का त्राण कर आया किन्तु लगे हाथ कई झूठ मूठ की साक्षियों का, जो मीर्ज़ा अपनी करामात के प्रमाण रूप में उद्घोषित कर रहे थे, भण्डा फोड़ भी कर आया। स्वयं मीर्ज़ा के स्थान पर जाकर उन्हें शास्त्रार्थ के लिये आहूत किया। लेखराम के लेख-संग्रह में एक 'मुबाहिले' का हाल मिलता है। उसमें पण्डित लेखराम और मीर्ज़ा गुलाम अहमद के हस्ताक्षरों से इन दोनों की की हुई पृथक् २ प्रतिज्ञा और प्रार्थना छपी है। क्रमशः अपने और प्रतिपक्षी के सिद्धान्तों का उल्लेख कर दोनों ने सत्य का निर्णय प्रभु पर छोड़ा है। मीर्ज़ा गुलाम अहमद लिखते हैं:—

हे छलीवर प्रभो! हे मक्के के पालनहार! हे बलात्कारी और क्रोधी! तू हम दोनों पक्षों में सच्चा निर्णय कर। और हम दोनों में से जो अपने मत में झूठा और पक्षपात अथवा अन्य स्वार्थ से ऐसी बातें मुख पर लाता है, अन्यथा पाप पर विश्वास करने को कोई निश्चायक युक्ति उस के पास नहीं, और न उसका हृदय श्रद्धा ज्योति से भरा है, उस पर हे शक्तिमन्! एक वर्ष तक कोई आपत्ति ला और कष्ट से भरे दुःख की मार ऐसे व्यक्ति को पहुंचा।.....

इसके प्रतिकूल पं० लेखराम की प्रार्थना है:—

हे परमेश्वर! हम दोनों में सच्चा निर्णय कर। जो तेरा सत्य धर्म है, उसे तलवार से नहीं, किन्तु प्रेम और प्यार से, और युक्तियुक्त तर्क के प्रकाश से प्रचलित कर, और विधर्मी के हृदय को अपने सत्य-ज्ञान से प्रकाशित कर, जिस से अज्ञान, पक्षपात, तथा बलात्कार का नाश हो.....

इन्हीं दो उद्धरणों से पता चल सकता है कि पक्ष प्रतिपक्ष दोनों की ओर से प्रचार तथा वाद के मूल में किन भिन्न २ भावों की प्रेरणा काम करती थी। मीर्ज़ा साहब ने 'बुराहीन' लिखी तो पण्डित लेखराम ने "तकज़ीम-ए-बुराहीन" से उसका उत्तर दिया। उधर से सुर्मा-ए-चश्म-ए-आर्य अर्थात् "आर्यनेत्राञ्जन" निकला तो इधर से "नुस्खाख़ब्त-अहमदीया" अर्थात् "अहमदीयोन्मादौषध" प्रकाशित हुआ। मौलाना सनाउल्ला और पादरी आथम की तरह हमारे धर्मवीर की मृत्यु की भी घोषणा हुई। २ एप्रिल १८९३ई० की प्रातःकाल एक 'स्थल क्रूर देवदूत'—फरिश्ता शद्दाद व ग़ल्लाज़—आया और मीर्ज़ा मियां से लेखराम का पता पूछ गया। * चार वर्ष न जाने लाहौर की गलियों की भूलभुलय्यों में भटकता रहा। १८९७ में शुद्धि के शौक़ के मिष से हमारे प्रातःस्मरणीय वीर का धर्म की वेदी पर अमर अभिषेक कर गया।

* बरकातुद्दुआ।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पं० लेखराम के वध के पश्चात् १९०७ ई० का राजनैतिक उपद्रव एक स्मरणीय घटना है जब कि आर्यसमाजी होना विद्रोह समझा जाता था, आर्यसमाजियों पर आपत्तियों की कुछ घटनाओं के लिये महात्मा मुन्शीराम—जो पीछे स्वामी श्रद्धानन्द हुए और उसी वेदि पर अपनी बलि दे अमर-पद को प्राप्त किया, जो इसे पूर्व स्व० लेखराम के पवित्र रक्त से सिद्ध हुई थी—के दो व्याख्यान पठनीय हैं जो उनके लिखे 'आर्यसमाज और उसके बदनाम करनेवाला' नामक पुस्तक में छपे हैं। इस पुस्तक के पूर्व भाग में आचार्य रामदेवजी लिखते हैं:—

जब कभी कोई कट्टर पादरी या मुसलमान आज किसी हज़ूर (सरकारी अफ़सर) से मिलता, वह इस साझे शत्रु (आर्यसमाज) के विरुद्ध ज़हर उगलने से न टलता।

इन धमकियों, इन घुड़कियों, इन ढोंगों, इन स्वांगों, इन छुरियों, इन तलवारों के गर्वीले आह्वान् का प्रत्युत्तर आर्य प्रचारकों और वैदिक समालोचकों ने हँस कर, गरज कर, ललकार कर और खुले मैदान में शत्रु को पछाड़ कर दिया। युद्ध के क्षेत्र में यदि कोई काम आवश्यकता से अधिक आवेशवश कर दिया गया हो और वह अधिक आघातकारी सिद्ध हुआ हो तो इस में दोष दुरवस्था का है। आर्यसमाज का अभिमान है कि इस क्रूर द्वन्द्व में भी जहां शत्रुओं ने चुग़ली और चाटु, छल, और न जाने क्या क्या अन्य कुत्सित साधन प्रयोग किये हैं, आर्य योद्धाओं के हृदय में कपट की कालख नहीं लगी, आर्य विजेताओं के हाथ किसी निरपराध, या अपराधी के भी, खूनसे लतपत नहीं हुए।

पं० लेखराम की हार्दिक भावनाओं का सारभूत तकज़ीब बुराहीन अहमदीया का निम्नलिखित उद्धरण है—

ऐ मुहम्मदी भाइयो! ऐ हमारे बिछड़े हुए दोस्तो! आर्य सन्तान के टुकड़ो और भारत के हृदयाशो! हिन्दोस्तान के प्यारो! परमात्मा ने हम को और आप को एक ही प्रकार के पञ्च भूतों से पैदा किया है। एक ही अन्न पानी हमारे प्रयोग में आता है। एक ही हवा पर हमारा आधार है। एक ही पृथिवी हमारे विश्राम का आश्रय है। तथापि हम एक दूसरे के रक्त के प्यासे हैं।

जो काम सर सैयद की अवस्था में ऋषि के उदार व्यवहार और विश्वासदायक तर्क ने कर दिया था, अहमदी संप्रदाय में लेखराम के, आत्मोत्सर्ग के भाव से विह्वल, कलेजे से निकली तड़पती फड़कती खून की गर्म बूंदों ने किया। मीर्ज़ा साहिब की मृत्यु के पश्चात् इस संप्रदाय के दो भाग हो गये। लाहोरी टोला मीर्ज़ा की भविष्यवाणियों को छोड़कर और किसी चमत्कार का कायल न रहा। उसी चाँद के दो टुकड़े होने की घटना पर, जिस का प्रमाण मीर्ज़ा मियाँ ने महाभारत के कपोलकल्पित धर्मपर्व से दिया था, मौलाना मुहम्मद अली, जो लाहोरी अहमदी समाज के प्रधान हैं, स्वरचित कुरानानुवाद के पृष्ठ १०२२ पर लिखते हैं:—

इस घटना की संभावना पर वैज्ञानिक आपत्तियों का उत्तर थोड़े से शब्दों में दिया जा सकता है। सम्भव है वह कोई विशेष प्रकार का चन्द्रग्रहण हो.....या चन्द्र में कोई और महान् विप्लव हुआ हो। या कोई और असाधारण घटना हुई हो।.....चाँद के टुकड़े होना, चाहे उस का रूप कुछ हो मक्का वासियों की शक्ति के नाश का द्योतक है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मौ० मुहम्मद अली का कुरानानुवाद

इतनी वैकल्पिक सम्भावनाओं से ही आप समझ सकते हैं कि मौलाना का हृदय कुरान निर्दिष्ट इस घटना के सम्बन्ध में कितना डाँवाँडोल है। कम से कम उपर्युक्त घटना के प्रचलित रूप में उन्हें विश्वास नहीं। कोई वैज्ञानिक विश्वासकारी समाधान चाहते हैं।

मौलाना ने अपने अनुवाद से कुरान की कायापलट कर दी है। प्रचलित व्याख्याओं की अपेक्षा इनकी व्याख्या की विशेषताओं के कुछ उदाहरण आप के सम्मुख रखता हूं:—

१. मुसलमानों का विश्वास है कि आदिम एक व्यक्ति-विशेष था जिस की प्रजा संपूर्ण मानव जाति हुई। मौलाना आदम शब्द को व्यक्तिवाची नहीं, मानव जाति के प्रतिनिधि-रूप में प्रयुक्त हुआ मानते हैं। हौवा को उस के शरीर से निकली नहीं, किन्तु आदम जाति की अर्धांङ्गिनी समझते हैं।

२. दोज़ख़ और बहिश्त को स्थान-विशेष नहीं, अवस्था-विशेष बताते हैं जिसका आरम्भ इसी जीवन में होता है।

३. हूरों को कहीं तो परमात्मा के दिये आध्यात्मिक वर—जिन्हें उन की सुन्दरता और पवित्रता के कारण सुन्दरता और पवित्रता की मूर्ति स्त्री का रूप दिया गया है—स्वीकार करते हैं और कहीं उच्च कुलों की सुशील नारियाँ, जिनसे मुस्लिम विजेताओं के सीरिया की विजय के पश्चात् विवाह हुए। बहिश्त को भी शेषोक्त अवस्था में दजला और फ़रात नामक नदियों से सिक्त हरे भरे उद्यान माना है। और दोज़ख़ का अर्थ किया है मुस्लिमों के शत्रुओं की युद्ध में दुर्गति।

४. कुरान में वर्णन आया है कि कयामत के दिन अल्लाहमियाँ का सिंहासन ८ वाहक उठायेंगे। आपने कल्पना की है कि वे वाहक परमात्मा के ४ मुख्य गुण—दयालुता, फलप्रदातृता, प्रभुता, और मालिकता—होंगे जो ऐहिक और पारलौकिक दो प्रकार के कुछ २ भिन्न रूपों के कारण ८ हो जायेंगे।

५. मुसलमानों का विश्वास है कि कयामत के दिन पैग़म्बर साहब उनकी सिफ़ारिश कर उन्हें बख़्शवा लेंगे। यह सिफ़ारिश का अर्थ लेते हैं अनुकरणीय उदाहरण बन जाना जिस से स्वयं अनुकरणकर्ता की मुक्ति का साधन हो जाय।

६. कुरान में एक पैग़म्बर का वर्णन है कि उसने अल्लाहमियाँ की आज्ञा से चार पक्षियों के टुकड़े २ कर अलग अलग पहाड़ों पर धर दिये परन्तु पैगम्बर के बुलाने पर वे टुकड़े मिल गये और वे प्राणी फिर से जीवित हो कर पैग़म्बर के पास दौड़े आए। मौलाना यहाँ टुकड़े करना स्वीकार न कर केवल हिलाना अर्थ करते हैं।

७. कुरान में जमीन और आसमान का छैः दिन में बनना लिखा है। यह वहाँ छैः दिनों का अर्थ छैः अवस्थाएं मानते हैं।

८. मुहम्मद के आकाशारोहण का अभिप्राय इन्होंने किसी अश्वतर-विशेष पर चढ़कर एक आसमान से दूसरे आसमान तक जाना न मान केवल आध्यात्मिक उन्नति और इसलाम का भावी उत्कर्ष माना है।

९. कुरान में भोग-पत्नियाँ रखने की स्पष्ट आज्ञा होने का विश्वास सब श्रेणियों के मुस-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

लमानों में है। मौलाना मुहम्मद अली इस का खुला विरोध करते हैं।

१०. धर्म के सम्बन्ध में बलात्कार के सिद्धान्त का इन्होंने सर सैयद की भाँति निराकरण कर दिया है।

११. कुरान में नूह की आयु का परिमाण कई सहस्र वर्ष कहा है। यह उसे उस के धर्म के प्रचलित रहने की अवधि बताते हैं।

१२ तकदीर का प्रसिद्ध सिद्धान्त, जिस के अनुसार प्रत्येक पुरुष न केवल भाग्य, किन्तु कर्म में भी, परमात्मा के अनादि लेख द्वारा बद्ध है और जिसके होने से कोई स्वतन्त्र पुरुषार्थ या प्रयत्न न केवल व्यर्थ किन्तु असम्भव है, इनके हाथों में परमेश्वर द्वारा केवल अविचलित नियम-निर्माण का रूप धारण करता है, जिस का क्रियात्मक लाभ मनुष्य अपने स्वेच्छा-पूर्वक किये कर्मों द्वारा उठाता है।

इत्यादि २ अनेक भेद हैं।

ऋषि के उपदेश का जो जादू सर सैयद पर ऋषि के जीते जी काम कर गया, उसे हमारे अहमदी बन्धुओं ने लेखराम के बलिदान के पश्चात् अपने ऊपर कारगर होने दिया है। मुहम्मदअली का कुरान बहुत अंशों में आर्यसमाजी कुरान है। ऋषि ने मुहम्मद उमर की शुद्धि-उसे अलखधारी बना कर-की और सर सैयद की शुद्धि उसके कुरान को वैदिक व्याख्या की दीक्षा देकर। परन्तु अहमदी विश्वास की शुद्धि व धर्म-वीर लेखराम के हृदय से टपके लहू से हुई।

कुरान का वैज्ञानिक भाष्य

इस्लाम के ईसाई विद्वान् मिष्टर ज़्वम्मर 'मुस्लिम-वर्ल्ड' नामक पुस्तक में मिश्र से प्रकाशित हुए कुरान के एक भाग के एक ऐसे अनुवाद का वर्णन करते हैं जिस में कुरान के शब्दों से वैज्ञानिक तथ्यों तथा कलाओं के निर्माण का विधान निकाला गया है। हम इस प्रयत्न की तुलना पुण्यचन्द्र गौड़ की 'बीसवीं शताब्दी के सन्देश की भूमिका' में वर्णित इस धारणा के साथ कर सकते हैं कि वैदिक यज्ञ का अभिप्राय वैज्ञानिक परीक्षण है। दोनों धारणाएं ऋषि को वेद-व्याख्या के मनोमोहक फल हैं। इनमें से कोई फल वास्तविक—परीक्षण-साध्य—सत्ता भी रखता है या नहीं? यह हमारी आज की विवेचना का विषय नहीं।

मैंने सर सैयद, मौलाना मुहम्मदअली और मिश्र के एक व्याख्याकार के कुरान-भाष्यों की ओर संकेत यह दिखाने के लिये किया है कि वर्तमान युग में अन्य दूसरे धार्मिक सम्प्रदायों के सदृश इसलाम में भी गहरी हलचल हो रही है। इस हलचल का श्रेय कितना ऋषि दयानन्द और उन के अनुयायियों के प्रचार को और कितना स्वयं इस नूतन वैज्ञानिक युग को है, इस का निर्धारण करना कठिन है। हां! इन भाष्यों के रूप में इसलाम आर्यसमाज की ओर सरका है, इसमें सन्देह नहीं।

कुरान में वैदिक अंश

मैं अभी हाली के प्रमाण से कई मुसलमान मौलवियों की सम्मति आप के सम्मुख रख चुका हूं कि सर सैयद के किये अर्थ न कभी खुदा को सूझे थे, न रसूल को। प्रश्न होता है कि क्या यह नूतन भाष्य खैंचातानी नहीं? कुछ अंशों में है। सर्वांश में नहीं। मैंने कुरान का स्वतन्त्र अध्ययन किया है। मुझे इस मुहम्मदी शास्त्र के बहुत से स्थलों पर ऐसे स्पष्ट वाक्य मिलते हैं जिन का सरल शब्दार्थ वर्तमान इसलाम के अनेक अशुद्ध विश्वासों का प्रबल, अपरिहार्य, खण्डन है। अन्य

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्थलों पर इन वेदानुकूल वाक्यों के विरुद्ध भी शिक्षा दी गई है। मुसलमान मौलाना उसी शेषोक्त वेद-तर्क-विरुद्ध शिक्षा को वास्तविक इसलाम समझ कर उस शिक्षा के प्रतिकूल आदेशों को कई प्रकार की लक्षणाओं द्वारा स्वसम्मत इसलाम से समन्वित करते हैं। यह कहना कठिन है कि अरबी सन्देशहर का वास्तविक सन्देश क्या था? सम्भव है, रसूलका अपना हृदय भ्रान्त हो? द्विविधा-ग्रस्त हो? किसी ऐतिहासिक धर्म की शिक्षा के सम्बन्ध में उसके पूर्ववर्त्ती तथा समकालीन धर्मों की विविध शिक्षाओं पर ध्यान देना और उस नूतन सम्प्रदाय में आये परस्पर विरोधी सिद्धान्तों का समन्वय उस सम्प्रदाय के मूल-भूत इन भिन्न २ स्रोतों की विविध आहुतियों से करना संगत विवेचना है।

इस में किसी को सन्देह नहीं कि इसलाम अपने अविकल रूप में मुहम्मद साहबके मस्तिष्क की स्वतन्त्र कल्पना नहीं, किन्तु तत्कालीन पारसी धर्म, ईसाई धर्म, साबी धर्म और मूल अरबी रीतियों से प्राप्त किये भिन्न २ सूत्रों का बुना अरबी चोला है। इस वस्त्र में गांठें हों, उलझाव हों, ताना बाना व्यवस्थित न हो, यह सब कुछ सम्भव है। परन्तु कौन सूत्र किस चरखे का है? यह पहिचानना कठिन नहीं।

पारसी धर्म वैदिक धर्म का औरस है। ईसाई धर्म पारसी तथा बौद्ध शाखाओं के नाते पीढ़ी प्रपीढ़ी के अन्तर पर आर्यधर्म का पोता या पर-पोता है।

मुझे आश्चर्य यह नहीं कि परिवर्तन की इन परिस्थितियों में से गुज़र कर वैदिक शिक्षाओं का रूप इतना विकृत कैसे हुआ? मुझे तो आश्चर्य इस बात का है कि वेद का स्वच्छ स्फटिकवत् शुभ्र अभिप्राय इतने अनुवादों, इतनी देशकालानुकूल टीका-टिप्पणियों के प्रतिक्षेपों और प्रतिबिम्बों का छाया से प्रभावित हो हो कर भी अपने विशद मौलिकस्वरूप में स्थित कैसे रहा।

इस व्याख्यान-माला में जिस का प्रस्तावमात्र आज हुआ है, कुरान के वे वाक्य आप के सम्मुख उपस्थित किये जायँगे जो मुझे वेद की आज्ञा का अनुवाद प्रतीत होते हैं। उन के साथ २ वेद के वे मन्त्र या मन्त्रांश भी उद्धृत किये जायँगे जो मेरी सम्मति में कुरान के उक्त वेदानुकूल उपदेशों का मूल हैं।

सर सैयद और मौ० मुहम्मद अली के रूप में इसलाम ने आर्यसमाज की ओर हाथ बढ़ाया है। मैं चाहता हूं, आपकी सहायता से, उस हाथ का स्वागत करूं। इस धार्मिक विकलता का, जिस का प्रादुर्भाव शिव रात्रि के घोर अन्धकार में जिज्ञासु मूलशंकर के नन्हे हृदय में हुआ था, रामबाण-समाधान ऋषि के वेद-व्याख्यान में है, ऋषि की गुणग्राहिणी दोषत्यागिनी हंसवत् नीरक्षीरविवेकिनी बुद्धि में है। ऋषि ने कहा ही तो है :—

जैसा मैं पुराण, जैनियों के ग्रन्थ, बाइबल और कुरान को प्रथम ही बुरी दृष्टि से न देख कर उन में गुणों का ग्रहण और दोषों का त्याग तथा अन्य मनुष्य जाति की उन्नति के लिये प्रयत्न करता हूं, वैसा सब को करना योग्य है। (सत्यार्थप्रकाश—भूमिका)

जो कुछ इस (कुरान) में थोड़ा सा सत्य है वह वेदादि विद्या पुस्तकों के अनुकूल होने से जैसे मुझ को ग्राह्य है, वैसे अन्य भी मजहब के हठ और पक्षपात-रहित-विद्वानों और बुद्धिमानों को ग्राह्य है। (स० प्र० १४ समुल्लास)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

क्या मुसलमान भाष्यकार हमारे इस स्वागत को स्वीकार न करेंगे ? यह शंका निराधार है । मौलाना हाली अनेक मुसलमान पण्डितों के प्रमाण से लिखते हैं:—

"महान् कुरान के असंख्य भाष्यों के रहते जो गत १३०० वर्षों में लिखे गये, अब एक नए भाष्य के लिये स्थान है।"

यह निर्धारण करना कि मुसलमान मौलाना हमारे, उन की ओर बढ़ाए, वेदालोक को किस दृष्टि से देखें, और इस स्नेह-सुधा-संजीवन संपन्न ज्योति का क्या प्रयोग करें, हमारा काम नहीं, उन का अपना काम है। यदि वे इन वेदानुकुल वाक्यों को कुरान का प्राण समझ कर शेष वचनों की भी इन्हीं के वेद-तर्कानुमोदित अभिप्राय से प्राण-प्रतिष्ठा करलें, और जहां इस की सम्भावना न हो, मौलाना रूम के शब्दों * में सार २ ग्रहण कर गुठली को व्यर्थ समझ फेंक दें, तो दोनों जन-समुदायों का ऐसा ऐक्य हो कि शरीर चाहे दो रहें, परन्तु आत्म-दृष्ट्या भेद मिट जाए।

तन दो २हें मन एक हो,
यह साधना है प्रेम की।

संगीत का स्वर साध लो,
लय एक है बाजे कई॥

---

* मनजि़ कुरआं मग़ज़ रा बरदाश्तम्।
उस्तरवां पेशे सगां अन्दाख्तम्॥
मौलाना रूम

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

रूस के सोवियट शासन में स्त्रियों का भाग

(एक प्रसिद्ध रूसी महिला के लेख के आधार पर)

रों के समय में रूस की स्त्रियाँ विविध प्रकार के बन्धनों में जकड़ी हुई अपना जीवन व्यतीत करती थीं । जातियों, कुटुम्बों और कुलों के आश्चर्य-जनक जाल में, जो कि बड़े विस्तृत राज्य में फैला हुआ था और जिस में कई प्रकार के सामाजिक भेद थे, स्त्रियों की स्थिति हर जगह विषमताओं से भरी हुई थी । ये विषमताएँ भौगोलिक विशेषताओं के कारण हुई थीं, जिन में संस्कृति और आर्थिक अवस्थाएँ भेद डालने वाली थीं । प्राचीन जमाने के रूस में शिक्षा-प्रेमी स्त्रियों ने न केवल अपने कुटुम्ब में ही बल्कि सामाजिक तथा राजनैतिक क्षेत्र में भी अपने लिये स्वतन्त्र स्थिति पैदा कर ली थी । विज्ञान, कलाकौशल और साहित्य में उन्होंने पहिले ही से ख्याति प्राप्त कर ली थी । शिक्षित स्त्रियों का यह समुदाय केवल उच्च कुल में और बड़े २ नगरों ही में उपलब्ध होता था। किसानों की स्त्रियों का जीवन बिल्कुल भिन्न प्रकार का था, क्योंकि ज़ार के राजतन्त्र में स्त्रियाँ बहुत दबी हुई थीं और उन की दशा क्रीत दासियों की तरह थी । नगरों और फैक्टरियों में कार्य्य करने वालियों की दशा और भी अधिक शोचनीय थी, चूंकि यहां पर धनवान, लुटेरे मिलमालिकों ने उन पर तथा उनके बच्चों पर बहुत ही प्रभाव डाला हुआ था ।

ज़ार के समय की दशा

आओ, क्षण भर के लिये दूर फैंके गये ज़ार-साम्राज्य के समय स्त्रियों की दशा पर दृष्टिपात करें । याकुटक्स एक प्रान्त था, जो जर्मन से सात गुना अधिक बड़ा था, जिस में ३ लाख के लगभग जनसंख्या थी । इस में ९६ प्रतिशतक जंगली लोग रहते थे । वहां की स्त्रियाँ वस्तुतः क्रीत दासियाँ थीं, अपने कुटुम्ब में उन के कोई अधिकार नहीं थे और वे अपनी सम्पत्ति की अधिकारिणी नहीं मानी जाती थीं । तब भी लोग बड़ी अधीरता से उस दिन की प्रतीक्षा करते थे जब लड़की विवाहयोग्य हो और उस के बेचने से उन को बहुत मूल्य मिल सके। जो कि इस प्रकार था:—मक्खन के ५० पौण्ड, भोजन के ३५ पौण्ड और ३ सिक्के । अपने पतिगृह में पहुंच जाने पर युवा लड़की का अपने पिता के घर से सर्वथा सम्बन्ध टूट जाता था । लोग पिता के घर रहती हुई उसे बचपन ही से भारस्वरूप समझते थे और उस से कड़ी से कड़ी मेहनत करवायी जाती थी । गरीब दशा में जीवन व्यतीत करना, स्वास्थ्यरक्षा के नियमों का ध्यान न रखना, रूखा-सूखा खाना-पीना, तीव्र जलवायु तथा

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्त्रियों और बच्चों के रहने के तंग स्थानों ही के साथ साथ पशुओं का रखना, आदि बातों ने जीवन को असह्य बना दिया था। बच्चों की मृत्यु तो पचास प्रतिशतक से भी अधिक होती थी, और युवा स्त्रियों की मृत्युसंख्या युवा पुरुषों की अपेक्षा दुगनी थी। प्रोफेसर इलडन ने याकुटक्स के स्त्री-पुरुषों की मृत्यु-संख्या की तालिका इस प्रकार दी है:—२० से २९ वर्ष की अवस्था में २०८ स्त्रियाँ मृत्युग्रास हुईं तो १०० मनुष्य; और ३० से ३९ वर्ष की अवस्था में १६९ स्त्रियां मृत्युग्रास हुईं तो १०० पुरुष। जैसा कि अनुमान किया जा सकता है आधी से अधिक स्त्रियाँ क्षयरोग से मृत्यु का ग्रास होती थीं। इतने पर भी याकुटक्स की स्त्रियाँ अपने पति के दरजे से नीची रहती थी बल्कि अपने पुत्र के भी आधीन समझी जाती थीं। यहां तक कि उन के जीवन का एकमात्र उद्देश्य यही समझा जाता था कि वे सन्तानोत्पत्ति करें, और सब बोझल और अरोचक कामों को करती रहा करें।

मध्य एशिया में मुसल्मानों के समय में

मध्य एशिया और काकेशियस में रहने वाली मुसल्मान जातियाँ भी अपनी स्त्रियों को प्रायः इसी दशा में रखती थीं। वहां पर भी स्त्रियों को बिकाऊ पदार्थ ही समझा जाता था, यद्यपि कुछ रीतियां रूस की स्त्रियों से कम भयंकर थीं। यहां पर स्त्रियों के सतीत्व पर सब से अधिक ध्यान रक्खा जाता था, जब कि याकुटक्स में कुमारीपन और सतीत्व का कोई विशेष मूल्य नहीं था। मुसल्मान जातियों में इन बातों के न होने पर आपस में गले कट जाते थे। एज़र वाइजन प्रान्त में यह रीति थी कि यदि पति को विवाह की प्रथम रात्रि ही में यह पता लग जाता था कि उस कि नवविवाहिता स्त्री अपने सतीत्व को विवाह के पूर्व ही नष्ट कर चुकी है तो उसे जान से मार डाला जाता था। परदे की प्रथा ने स्त्रियों को पुरुषों के समाजों से एकदम पृथक् कर दिया। इसी कारण बहुत से राजनैतिक और सामाजिक झगड़े भी उत्पन्न हो गये, और स्त्रियों के क्रय विक्रय ने पुरुषों को बेहद शक्ति प्रदान कर दी। यद्यपि याकुटक्स और साइबेरिया के अन्य विभागों की अपेक्षा मुसल्मानी नगरों में स्त्रियों की आर्थिक स्थिति कुछ थोड़ी सी उन्नत थी तथापि स्वास्थ्य रक्षा सम्बन्धी नियमों का उक्त देशों की ही तरह ध्यान नहीं रखा जाता था। रोगी स्त्रियों को देखने के लिये किसी भी डाक्टर को आज्ञा नहीं थी। इस का परिणाम यह था कि स्त्रियों और बच्चों की मृत्यु-संख्या उक्त देशों की तरह ही हृदयविदारक थी। ज़ार के राज्य में नीच कुलों की प्रायः स्त्रियाँ अशिक्षिता होती थीं। साइबेरिया के जंगलियों में सौ प्रतिशतक स्त्रियां न पढ़ सकती थीं, न लिख सकती थीं। एज़र वाइजन में ९६ प्रतिशतक स्त्रियां अन-पढ़ थीं। किन्तु साम्राज्य के अन्य कई भागों में इस से कुछ कम स्त्रियाँ अनपढ़ थीं। सर्वांश में यह कहा जा सकता है कि प्राचीन शासन प्रणाली में यूरोपीय रूस में, और एशिया में साइबेरिया में मध्य एशिया

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

तथा काकेशियस की अपेक्षा स्त्रियों की दशा सामाजिक और राजनैतिक क्षेत्र में बड़ी ही हीन थी।

अक्टूबर का विप्लव

अक्टूबर के विप्लव का पहिला परिणाम यह था कि स्त्री और पुरुषों के सब प्रकार के सामाजिक और राजनैतिक भेदभाव दूर कर दिये गये। शासन-प्रणाली में कानून ऐसे बन गये, जिन में स्त्री पुरुषों की बिल्कुल समानता थी; लेकिन राजनैतिक जीवन में इस का उपयोग लाना बड़ा कठिन और लम्बा काम था। सोवियट की घोषणाओं द्वारा स्त्रियों की वास्तविक स्वाधीनता का रास्ता तो साफ हो गया परन्तु बहुत दिनों से प्रचलित सामाजिक कुरीतियाँ, रूढ़ियाँ और धार्मिक विश्वास, रीति-रिवाज ये सब बातें उन्नति के मार्ग में बाधा डालने वाली थीं। इन बाधाओं को दूर करना बड़ा दुस्तर और लम्बा काम था, जिस में स्त्रियों को स्वयं ही भाग लेना पड़ा। अक्टूबर के विप्लव को हुए आज दस वर्ष व्यतीत हो चुके हैं। १९२१ में जब कि घरेलू लड़ाई का अन्त हुआ उस समय से स्त्रियों की स्वाधीनता का आन्दोलन नियमित रूप से प्रारम्भ हो गया। इन सब कार्यों का परिणाम इस समय क्या है और सार्वजनिक कार्यों में स्त्रियों को भाग लेने की आज्ञा मिलने से, उन की आर्थिक और मानसिक उन्नति करने से, उन में मृत्युसंख्या घटाने और शिक्षा-प्रचार करने से, तथा उन की साधारण ज्ञानशक्ति को उन्नत करने से क्या लाभ हुए हैं?

राजनैतिक शिक्षा

सब से पूर्व हम यह बतलाना चाहते हैं कि श्रमजीवी स्त्रियों और किसान स्त्रियों ने क्या काम किया? हम ने उन को अपने राजनैतिक और आर्थिक क्षेत्र में लाभों की रक्षा के लिये भाग लेने के लिये कैसे उद्यत किया है? तथा सोवियट शासन-प्रणाली के निर्माण करने में उनका कितना हाथ है? श्रमजीवी स्त्रियों के राजनैतिक कार्यों में पहली सीढ़ी तो उन की प्रतिनिधिसभायें बनाना था। ये सभायें अपने अधिवेशन विविध प्रकार के बड़े २ उद्योगों की संरक्षता में करती थीं। और छोटी २ व्यापार-मंडलियाँ अपना समुदाय बनाकर कार्य करती थीं। जो श्रमजीवी स्त्रियां इन दोनों प्रकार की संस्थाओं की सदस्य नहीं थीं। वे तीसरी प्रकार की सभायें अलग बना लेतीं जिन में उन्हें राजनैतिक शिक्षा मिल सकती है। इन प्रतिनिधियों की सभाओं और समितियों के अधिवेशनों की स्थानीय कम्यूनिस्ट पार्टी की सभायें चलती हैं। खेतों में इसी प्रकार की संस्थायें किसान स्त्रियों के लिये बनाई गईं। इन का सम्बन्ध प्रतिनिधि सभाओं और शिक्षा समितियों से भी है। प्रतिनिधियों की सभा का विशेष कार्य्य श्रमजीवी और किसान स्त्रियों को राजनैतिक और अर्थशास्त्र की शिक्षा देना है। परन्तु इन सभाओं का कार्य्य केवल स्त्रियों को राजनैतिक तत्वों के बतलाने मात्र तक ही सीमित नहीं है। वरन यह अशिक्षित लोगों को नित्य के जीवन सम्बन्धी प्रश्नों के हल

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

करने और सिद्ध करने में रुचि पैदा करती हैं। इस कारण से इनके शिल्प, कारीगरी की शिक्षा, कानून, आदि बहुत से विभाग हैं। माताओं को अपने बच्चों की रक्षा, पालन तथा अपने गृहस्थ के कार्य्य को संगठित करने पर विशेष ध्यान दिलाया जाता है। निम्न लिखित तालिका से इस बात का बड़ी अच्छी तरह से दिग्दर्शन होता है कि ये सभायें क्या काम कर रही हैं? इनमें कितनी स्त्रियां भाग ले रही हैं? १९२४-१९२५ ई० में ३७८७०२ स्त्रियां, १९२५-१९२६ ई० में ५ लाख स्त्रियां, १९२६, १९२७ में ६२०००० स्त्रियां प्रतिनिधि बनी थीं और प्रत्येक स्त्री अपने सहित ५ अन्य श्रमजीवी स्त्रियों की प्रतिनिधि बन कर आई थी।

निर्वाचन में रुचि

सभाओं और शिक्षा-समितियों के कारण राजनैतिक क्षेत्र में विशेषतया निर्वाचन के कार्य्य में स्त्रियां अधिकाधिक भाग ले रही हैं। निम्न लिखित तालिका से स्पष्ट विदित होता है कि उन वर्षों के निर्वाचनों में कितनी वोट देने वाली स्त्रियों ने भाग दिया। १९२४ ई० में २७ प्रतिशतक, १९२५ १९२६ ई० में २८.१ प्रतिशतक स्त्रियों ने भाग लिये। १९२६-१९२७ ई० में ग्रामों में ३० प्रतिशतक स्त्रियों ने और शहरों में ५१.४ प्रतिशतक स्त्रियों ने वोट दिये। इन्हीं समय ओहदों के लिये जो स्त्रियों का चुनाव हुआ उसमें देहातों में १० से ११ प्रतिशतक की उन्नति हुई और शहरों में १९.४ प्रतिशतक। स्त्रियों की उन्नति का दूसरा प्रमाण यह भी है कि स्कूलों में पढ़ने वाली लड़कियों की संख्या बढ़ रही है। पेशा सिखाने वाले स्कूलों में १९२६ और १९२७ में जितनी लड़कियां पढ़ रही थीं उनमें से ४० प्रतिशतक पेशा सीखती रहीं औद्योगिक स्कूलों में ४१.५ प्रतिशतक। किसान और श्रमजीवी स्त्रियों की दशा सुधारने के लिये और उन को घर धन्धे का काम सिखाने के लिये बड़ा प्रयत्न हो रहा है। इस काम को पूरा करने के लिये सोवियट सरकार ने श्रमजीवी स्त्रियों के बच्चों को पालने के लिये स्थायी-भवन बनाये हुये हैं। जनवरी १९२६ में इस प्रकार के गृह ७३९ थे और ४१०१ सामयिक पालन-गृह बनाये गये थे जो कि ग्रीष्म ऋतु में ग्रामों में ले जाये जाते थे। स्त्रियों की दशा सुधारने का सर्वथा ध्यान रखते हुए सरकार ने प्रसूतिका-गृह भी बनाये हुए हैं और माताओं और बच्चों के भी इलाज का प्रबन्ध किया है। बच्चों के रोगों के विषय में परामर्श देने के कार्य्यालय ५८५ हैं और माताओं के रोगों के विषय में परामर्श देने के २८१। शहरों में ९५ प्रतिशतक स्त्रियाँ इन्हीं प्रसूतिकागृहों में जाकर बच्चे उत्पन्न करती हैं। इस प्रकार बच्चों और माताओं की मृत्युसंख्या बहुत ही कम हो गई है।

स्त्री सम्बन्धी समाचारपत्र

दूर २ की स्त्रियों के साथ सम्बन्ध बनाये रखने के लिये तथा उनके कार्यों में रुचि उत्पन्न करने के

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

लिये चतुर स्त्रियों की संस्थाओं ने छापेखाने से भी अधिक लाभ उठाया है। मास्को और लैनिनगार्ड में श्रमजीवी और किसान स्त्रियों के लिये चार समाचार पत्र हैं जिनकी ३ लाख २५ हजार प्रतियों की बिक्री होती है। सारे सोवियट प्रजातन्त्र में स्त्रियों की के समाचारपत्रों की संख्या १५ है जिन में से ६ समाचारपत्र पूर्वीय भाषाओं में निकलते हैं। १९२७ ई. में १२७०० श्रमजीवी स्त्रियों ने और ८००० किसान स्त्रियों ने इन समाचार पत्रों के सम्वाददाता का काम किया। इन सम्वादों में साईबेरिया, मध्यएशिया और काकेशस में स्त्रियों के लिये किये हुये कार्यों पर विशेष आलोचनायें थी। अगर स्त्रियों की ओर से निजु तौर पर कार्य्य प्रारम्भ न किया गया होता, और भिन्न भिन्न जिलों और प्रान्तों की स्थानिक जनता के साथ सभाओं द्वारा राजनैतिक सम्बन्ध न जोडा गया होता तो इस प्रकार श्रमजीवी और किसान स्त्रियों की आर्थिक, राजनैतिक, और सामूहिक रूपसे उन्नति कभी न हो सकती।

लिखित भाषा

दूसरी उन्नति इस बात में हुई है कि जिन लोगों के पास किसी प्रकार की लिपि नहीं थी उन के लिये लिखित भाषा और वर्णमाला बना ली गई है। इस प्रकार जातीय संस्कृति को उन्नत करने का एक अमोघ शस्त्र प्राप्त हो गया है। जो जंगली लोग अपनी जातीय संस्कृति के अभाव में पराई जाति के संस्कृति के टुकड़ों पर पल कर कभी उस से अधिक उन्नत अवस्था की आशा ही नहीं कर सकते थे और अन्धकार में मग्न थे, उन के लिये नयी जागृति और नया आनन्द पैदा हो गया। सरकार ने वाल्गा घाटी तथा साइबेरिया में रहने वाले जंगली लोगों के जीवनसुधार के लिये बड़ा प्रथत्न किया है। उन के लिये शिक्षा प्राप्त करने के साधन उत्पन्न किये गये हैं और स्थिति को उच्च करने का मौका दिया गया है, बहुत सा कार्य्य तो वैज्ञानिक संस्थाओं द्वारा ही किया गया है। इन देशों की राजनैतिक संस्थाओं को उन्नत करने, व्यापार के तरीकों में सुधार करने, शासन के केन्द्रों का निर्माण करने, स्कूल और हस्पताल तथा औद्योगिक धन्धों के खोलने में विशेष ध्यान दिया गया है। क्योंकि अधिक मृत्यु संख्या रोकने के लिये घरों में सफाई रखना अत्यन्त आवश्यक है, इसलिये बहुत सी सफाई की स्थानिक संस्थाएं बना बना कर साइबेरिया और मध्य एशिया की जंगली जातियों में मनुष्यों और पशुओं को एक साथ रखने की प्रथा का उन्मूलन किया गया है; और इस काम को पूर्ण करने के लिये अनुकूल चुंगीघर बनाये गये हैं। और क्योंकि स्थानीय संस्थाओं के पास ऐसे कामों के लिये बहुत रुपया नहीं होता, इसलिये सोवियट सरकार ने जातीय बजट में से स्थानीय अफसरों को सहायता देना प्रारम्भ किया, जिसका परिणाम यह हुआ कि साइबेरिया, मध्य एशिया, और काकेशस के सभी प्रान्त मास्को के कृपापात्र बन गये। स्त्रियों की स्थिति में भी याकुटक्स, तुर्किस्तान, अज़वेग तातारी और

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अरज़क वाइज़न बहुत आगे बढ़ रहे हैं, और सोवियट संघ बना बना कर उन को सिविल और राजनैतिक कार्य्यों में बराबरी का दर्जा दे देने की घोषणा सरकार कर रही है। इन घोषणाओं में से सबसे अधिक महत्वपूर्ण घोषणा वह है जिसके कारण स्त्रियों को पुरुषों के समान ही जमीन पर अधिकार प्राप्त हो गया है। स्त्रियों को बेचा और खरीदा नहीं जा सकता। कानून द्वारा ऐसे कार्य्य को दास वा व्यापार नाम दिया गया है। परदे की प्रथा को उठा देना सहल काम नहीं था, इसलिये वह अभी तक पूरा नहीं हुआ; क्योंकि पुरुषों के दिलों में यह भाव बैठा हुआ है कि परदा उठाना एक धर्म-विरुद्ध कार्य्य है। १९२५ ई० में एज़र वाइजन में स्त्रियों की १८ सभाओं में १०८० स्त्रियाँ सभासद् हुई थीं। उसी वर्ष उसी प्रान्त में शिक्षाप्रचार के लिये ३४ संस्थाएं बनाई गईं जिनमें ४७९ सभासद् थीं। अब स्थानीय सोवियट के सदस्यों में स्त्रियों की संख्या १३.६ प्रतिशतक है, जो कुल मिला कर ६०० बन जाती है। १९२५ में तुर्किस्तान में सोवियट की सभासद् केवल पाँच स्त्रियां थीं दूसरे वर्ष उन की संख्या १२ हो गई और १९२७ में २१ हो गई। चुनाव में ४५५००० स्त्रियों को मताधिकार प्राप्त था, उनमें से १३००० अथवा २८ प्रतिशतक ने वोट दिये। यहां पर यह नहीं भूल जाना चाहिये कि एज़र वाइज़न का प्रजातन्त्र शासन, जिस की राजधानी बाकु है, एशिया के सब प्रजातन्त्र शासनों में सब से अधिक धनवान है, और इसलिये अन्य प्रान्तों में स्त्रियों के उत्थान की आशा धीरे २ बढ़ सकती है, याकुटक्स में सबसे कम। याकुटक्स के प्रजातन्त्रशासन में १९२५ में स्त्रियों के कम्यूनिष्ट संघ में केवल ३३ सदस्याएं थी। पहिले साल स्थानीय सोवियट में जो स्त्रियां सदस्य चुनी गईं उनकी संख्या ४ से लेकर १६ प्रतिशतक तक थी। इसी समय याकुटक्स के केन्द्रीय प्रजातन्त्रशासन में ३ याकुटक्स की स्त्रियां निर्वाचित हुईं। स्त्रियों के कम्यूनिष्टसंघ ने एक शिशुपालन-गृह बनाया और एक दरजी की दुकान खोली, जिस में ३० याकुटक्स स्त्रियों को काम मिला। इस प्रजातन्त्रशासन में जहां कि मनुष्यसंख्या सारे विस्तृत देश में बिखरी हुई है, पाठशालायें खोल कर शिक्षा देना कठिन है, इसलिये जनता की शिक्षा को उन्नत करने के लिये चलती-फिरती पाठशालाएँ बनवाई गईं। रिपोर्ट से पता लगता है कि याकुटक्स की स्त्रियों में पढ़ने की रुचि अधिक है। प्रायः बहुत दूर २ के प्रान्तों से लड़कियां केन्द्रीय सभाओं में आकर पढ़ना भी सीखती हैं तथा काम करना भी। इन दिनों में लड़कियां २० दिन पाठशाला जाती हैं और १० दिन काम करती हैं।

स्त्रियों की स्वतन्त्रता के उदाहरण एशिया के केवल दो प्रजातन्त्र शासनों से दिये गये हैं। इन में से अब एज़र वाइज़न ने सब से अधिक उन्नति की है और याकुटक्स ने सब से कम। सुधार के लिये वास्तविक पुरुषार्थ ३-४ वर्षों ही से हो रहा है। लेकिन इतने समय में भी यह पर्याप्त रूप से पता लग जाता है कि काकेशस पहाड़ से लेकर ध्रुवीय वृत्त तक और नीचे हिमालय की पहाडियों तक रूस की स्त्रियों का भाग्योदय करने का प्रयत्न हो रहा है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सन्तान-पालन

(ले०— सुशीला देवी गुप्ता)

विवाह के पश्चात् स्त्री-पुरुष को माता-पिता कहाने का सौभाग्य प्राप्त होता है।

प्यारे शिशु का मुखावलोकन कर माता-पिता का हृदय आनन्द से परिपूर्ण हो जाता है, इसके साथ ही साथ उनका कर्तव्य भी बढ़ जाता है। उनके हृदय में हर समय यही विचार रहता है कि हमारी सन्तान गुणवान्, बुद्धिमान् तथा दीर्घजीवी हो।

सन्तान उत्पन्न होने से पहले ही माता के हृदय में ऐसा स्नेहबीज भगवान बो देते हैं कि सन्तान उत्पन्न होने पर वही स्नेहबीज बाहर निकलता है और सन्तान को जीवन प्रदान करता है। बिना किसी के कहे सुने माता सन्तान के नीच-से-नीच काम करने के लिये तैयार हो जाती है।

हमारी सन्तान हृष्ट-पुष्ट हो यह सभी की इच्छा रहती है। परन्तु शोक कि इस बात को बहुत ही कम माता-पिता जानते हैं कि किस प्रकार की शिक्षा देने से हमारी सन्तान जीवन-भर सुखी रह कर संसार में एक आदर्श हो सकती है।

इसी अज्ञानता के कारण माता-पिता सन्तान की भलाई करते हुए भी बुराई का कारण बन जाते हैं।

माता अपने पुत्र तथा कन्याओं का दीर्घ-जीवन चाहती है। परन्तु अत्यन्त शोक की बात है कि उसी जननी के दोष से कितने ही हज़ार बच्चे अकाल मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं।

सन्तान के पालन-पोषण में माता का अधिकार पिता से अधिक होता है, क्योंकि गर्भ से ही माता के स्वभाव का प्रभाव बच्चे के स्वास्थ्य एवं मन पर पड़ता है। इसलिये माता को इस कार्य में पूर्ण विज्ञ होना चाहिये। गर्भावस्था के समय स्त्री को उचित है कि अपने मन में भूलकर भी चोरी, चुगली, क्रोध आदि बुरे विचार धारण न करे। खाना भी हल्का-जो शीघ्र पच सके-खाये, ऐसे समय में माता प्रसन्नचित्त नियमपूर्वक रहेगी तो सन्तान हृष्ट पुष्ट, बुद्धिमान होगी। जो स्त्रियाँ ऐसी दशा में नियमपूर्वक नहीं रहतीं उनकी सन्तान निर्बल, रोगी तथा चिड़चिड़े स्वभाववाली होती है। गर्भावस्था से जबतक बच्चा माता का दूध पीता है तब तक माता के साथ बच्चे का यही सम्बन्ध वर्तमान रहता है।

दाँत निकलने तक बालक का आहार केवल माता का दूध है अगर माता के इतना दूध न हो कि वह बच्चे का पेट भर सके तो बच्चे को गाय का दूध समयानुसार देना आवश्यक है।

जब तक बच्चे के दाँत न निकल आये और वह अच्छी प्रकार खाने के योग्य न हो जाये तब तक उसे अन्न कदापि नहीं देना चाहिये। प्रायः देखने में आता है कि मातायें तीन चार मास के बच्चे को ही पूरी, कचौरी, मिठाई खिलाने लगती हैं, जिस से कितने ही बच्चे सदैव रोगी बने रहते हैं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बहुत-सी स्त्रियाँ इस प्रकार भी करती हैं कि जिस बिछौने पर बच्चे ने मूत्र किया उसी को उलट-पुलट कर पुनः उसी दुर्गन्धयुक्त भीगे बिछौने पर बच्चे को सुला देती हैं। मल-मूत्र शरीर से उत्पन्न एक प्रकार का विष है। मूर्ख माता आलस्य के कारण अपने प्राणतुल्य बच्चे को विषशय्या पर सुलाकर धीरे-धीरे उसे मृत्यु के मुख में डाल देती है। इसलिये बच्चे को सदैव स्वच्छ और कोमल बिस्तरे पर सुलाना अत्यन्त लाभदायक है।

नित्यप्रति बच्चे के शरीर में सरसों के तेल की मालिश करके विशुद्ध जल से स्नान कराना चाहिये।

प्रत्येक अङ्ग भली भाँति मल कर धोने से चर्म सम्बन्धी रोग भी नहीं होते और बच्चा भी प्रसन्न रहता है। बहुत सी मातायें इस डर से कि—बच्चे को स्वच्छ कपड़े पहिनाने तथा मुँह धोने से नज़र लग जायेगी— कई-कई दिन तक मुँह तक भी नहीं धोती, बल्कि स्याही का टीका लगा देती हैं।

बच्चे को स्वच्छ रखने से नज़र लग जायगी यह माताओं का बहुत भारी भ्रम है। अगर बच्चा साफ़ होगा तो प्रत्येक मनुष्य का मन उसको खिलाने के लिये चाहेगा, गन्दा होने पर बहुत से आदमी उससे घृणा करेंगे।

बच्चा के सम्मुख कभी गाली या बुरी बात मुखसे न निकालनी चाहिये। बच्चों को कहानी सुनने का बहुत शौक होता है, उनको प्राचीन स्त्री-पुरुषों के जीवन-चरित्र सुनाओ, इसके सुनने से परिणाम यह होगा कि बच्चे वैसे ही उच्च गुणधारी होने का भाव अपने हृदयमें उत्पन्न करेंगे। जातीय अभिमान तथा आत्मश्लाघा का भाव मन में उत्पन्न होगा। बचपन में जैसे भावों की नींव हृदय में पड़ जाती है वह जीवन पर्यन्त नहीं टूटती। जिस प्रकार कुम्हार मिट्टी से अनेक प्रकार के मनमाने बर्तन बना, उनपर नाना प्रकार के चित्र खींच, सुन्दर बना देता है इसी प्रकार माता-पिता भी अपनी सन्तान को मनमाना बना सकते हैं।

देश और जाति की यही सब से उत्तम सेवा है कि माता-पिता अपनी सन्तान को, जिन पर देश का उत्थान तथा पतन निर्भर है, योग्य बनावें।

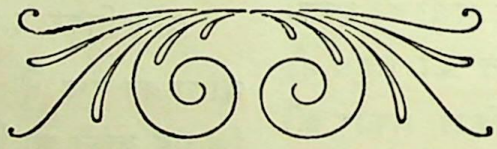

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अश्रु-आवाहन

[ले० श्री० महावीरप्रसाद 'मंजुल' लुधियाना]

(१)

त्राम्बु—हे प्रेम-लता-सिञ्चक अश्रु! मैं आप के विरह-काल में जिस दशा में हूँ उस को किन शब्दों में वर्णन करूँ? उस दशा को प्रकाशित करने के लिये किस वाणी का आश्रय लूं? गूंगे की भाँति मुख में जिह्वा होते हुए भी मूकता धारण कर रही हूं। हे अश्रु! आप के तेज का प्रभाव ऐसा ही है। हे विरह-काल के सहायक! दुःख नाशक, सुखशान्तिप्रदायक अश्रु! आओ मैं तुम्हारे स्वागत के लिये आप के प्रेम से बाधित होकर तन को, मन को आप पर वार दूँ। आपके आगमन पर आप के पथ में अपने लोचन बिछाये आप की प्रतीक्षा में विकल हो रही हूं।

आओ मेरे प्रिय-सहायक! एक वार अमृत-वर्षा कर जाओ। आओ! हे मेरे नयनों में वास करने वाले! मनोभावों के अनुवादक! आओ, और मुझे अपनी सहचरी बनाओ। हैं? आप तनिक भी मेरी पुकार नहीं सुनते। कोई कारण? क्या रुष्ट होगए? नहीं! नहीं! रुष्ट न होना। आप को मेरी शपथ! मुझ पर रोष न करना। मैं आपके क्रोध को शान्त कर प्रेम में परिणत करने के लिये सब प्रकार से, सर्वदा, सर्वत्र उद्यत हूँ! आह! हे अश्रु! हे परमोपकारी! मुझे न त्यागो मैं आप के उपकारों की आभारी हूँ—

आह! मुझे वह समय याद है, भूला नहीं, जब कि मैंने आप के पहली वार दर्शन किये थे, आप का दर्शन करते ही नेत्र बिछा दिये थे। आह मुझे वह समय याद है, जब कि मैंने आपको दृष्टि से गिरने न दिया था। इस विचार से कि आप का कहीं निरादर न हो जाएँ और आप का सम्मान बच रहे इसलिये मैंने आप को नेत्रों से झरने न दिया। परन्तु जब आप स्वयं ही नेत्रासन से तले उतरे तब भी मैंने तुम्हें प्रेम-वश, बलात् अपने कपोलों पर धारण किया। हा अश्रु! वह समय कितना भयानक था? जब कि सब ओर अन्धेरा छाया हुआ था। उस समय जब कि मेरे प्रभु ने अपना, और मैंने अपना भाव भुलाया हुआ था। उस समय जब कि मैं क्षमा-याचना में कहती थी—'मेरे प्रभु! मेरे स्वामी'! प्रेमबन्धनों से जकड़ी हुई, उनके चारु चरणकमलों में औंधे मुँह पड़ी हुई, उनकी चरण-रज मस्तक से रगड़ रही थी और कह रही थी—'मेरे प्रभु! मेरे स्वामी!' उस समय जब वह अपने को मुझसे छुड़ाते थे, मैं उन्हें छोड़ती न थी, जब वे अनेक प्रकार के प्रलोभनों से मुझे अपने से विमुख करते थे परन्तु मैं विमुख न होती थी। हा! उस समय जब कि मैंने उनसे और उन्होंने मुझसे कतिपय प्रण किये थे। हा! हे अश्रु! वह समय कितना रोमहर्षक था जब मेरा प्रियतम, मेरा स्वामी मुझसे पृथक् होकर कुछ समय के लिये मुझे मेरी मातृभूमि में ही छोड़कर सब प्रकार के सम्बन्धों को तोड़कर, मुख मोड़कर एक अज्ञात स्थान की ओर प्रस्थान कर गया था। मेरी स्मरण-शक्ति की चादर पर वह चित्र अभी तक लिखित है, भली भाँति, पहले की न्याईं, अभी तक

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अङ्कित है, जब कि उन्होंने मुझको सर्वसहायक की सहायता में सौंपा और पग बढ़ा दिया। उन्होंने प्रस्थान करते समय पीठ मोड़-मोड़ कर जब मेरी ओर देखा और फिर देखा, उस समय आप ही मुक्तामणिरूप धारणकर, मेरे हृदय के भीतर से भावों के सरोवर से सान्त्वनादायक होकर मेरी सहायता के लिये, नेत्र-द्वार खोलकर, एक पल में आ पहुँचे।

आह ! हे अश्रु ! अमूल्य-मुक्ता-मणि-सी आभा-वाले हृदय-धन ! मुझ पर आप ही ने कृपा की। आपने ही मुझे अमृत पिला कर, उन्नत बनाकर, निद्रा-माता की गोद में सुला दिया था। आह—हे अश्रु ! आओ—आओ, आपको मेरी शपथ, मेरे प्रेम-की शपथ। आओ, तनिक आओ। अपना मुक्ता-मणि रूप दिखाओ। हे अश्रु ! देखो मैं आपको किस प्रकार चाहती हूँ ? हे शान्ति-प्रदायक ! आओ ! आकर मुझे अपनी सहचरी बनाओ ! आपके आने से हम तुम दोनों अमर-सुख भोगें।

(२)

हे अश्रु ! जब आपने मुझे दुःखों से छुड़ाकर, भूमि पर लिटा कर, उन्मत्त बना दिया, तब आप कहाँ चले गये ? मुझ अभागिनी को त्याग कर, मुझे निद्रा की गोद में छोड़कर, कहाँ, कब चले गये ?

आह अश्रु ! यदि मुझे यह ज्ञात होता तो मैं तुम्हें पाकर, निज को भूलती। आह प्रियतम प्रभु के विरह-काल में ही वह भीषण-वियोग अपने शूल से, सायकों से प्राणों को छलनी बना चुका था, परन्तु हे अश्रु ! मैं आप पर बलिहारी जाऊँ, आपने उस समय भी मुझ विह्वला को सान्त्वना देकर सञ्जीवनी पिलाई। मैं आप पर दोष कदापि न लगाती, मुझे मेरी ही शपथ थी, परन्तु आह ! उस समय भी आपने मेरा साथ छोड़कर, मुख मोड़कर किस ओर प्रस्थान किया ?

हे विरही के सहायक ! उस समय जब कि सन्तोष और धैर्य की डोर मेरे शिथिल हाथों से छूटने को थी और जब मेरी निराशा ही मेरा गृह लूटने को थी, मुझे स्मरण है कि मैं विचित्र तर्क-वितर्क से मनोभावों के उतार-चढ़ाव के झूले पर झूल रही थी। मैं मन की चञ्चलता का, मन मेरी दशा का दृश्य निहारने में आसक्त हुए २ स्वयं ही एक दृश्य बन गये थे। आह ! वह समय ऐसा नहीं था कि जिसको मस्तिष्क की भट्टी में डाल, लेखनी-रूप स्रुवा से पकड़कर, शब्दों के शरीर में ढालकर, मूर्ति बना कर, किसी को दिखा सकती !

हा ! उस समय जब कि मेरा स्वामी विरह से अकुलाया हुआ, शोकानल से जलाया हुआ मेरी ओर लौटा और स्थगित गति से गृह-द्वार तक आ पहुंचा, आह ! मैं क्या वर्णन करूँ ? उस समय मेरे हृदय पर क्या बीती ? मेरी और मेरे भावों की किस प्रकार से क्या प्रश्नोत्तरी हुई ? हाँ, उस समय मेरी दृष्टि, आशामृत से छलकते हुए कटोरों में खेलनेवाली दृष्टि, चक्षु के दोनों किवाड़ों को खोलकर कुटिया के द्वार पर पड़ी। उस सुख-दायक, आनन्द-प्रदायक समय में खुशी का सन्देश लानेवाले, मेरे मन से उठकर मेरे नेत्रों में आनेवाले, जब आँधी की भाँति मुझसे आ लिपटे तब मेरी वही चञ्चल दृष्टि जल-प्लावित हो गई।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

नव वधू को उपदेश

ब्रह्मचर्य

[ले०—श्रीयुत निरञ्जननाथजी]

घोर कलियुग का साम्राज्य है, मनुष्यों की कर्म-गति विलक्षण हो रही है। इसका फल भी स्पष्ट मिल रहा है:—अर्थात् आयु दिनोंदिन घट रही है और वयोवृद्ध नर-नारियों की संख्या न्यून हो रही है। किसी-ही-किसी भाग्यशाली गृह में कोई-कोई पुण्यवान् वृद्ध प्राणी दिखाई देता है। हमारी दृष्टि आर्य-नगर की जीवनबाई पर है। जीवनबाई के कारण उसका सारा परिवार प्रसिद्ध हो रहा है। जीवनबाई सचमुच स्वनाम-धन्या है। उसी के प्रभाव से गली-मुहल्ला क्या ग्राम-भर सजीव है। श्रीमती जीवनबाई का परिवार लखपति असामियों में से नहीं है; परन्तु ऐसा भी नहीं कि उसके व्यक्तियों को रात को पेट भर भोजन की चिन्ता बनी रहे। जीवनबाई वृद्धा है। उसने संसार के कई रंग देखे हैं। वह नित्य नियम तथा कर्मकाण्ड का निरन्तर अभ्यास करती है। वह शान्त-स्वभाव, बुद्धिमत्ता, सरलता, सत्यपरता, निःस्वार्थता आदि अनेक गुणों से सुभूषित होने के कारण प्रत्येक बाल-वृद्ध, नर-नारी का प्रेम-केन्द्र बन रही है। ग्राम में किसी प्रकार की घटना हो, वादी-प्रतिवादी का जीवनबाई के पास जाकर छुट-कारा होता है। जीवनबाई अपनी अलौकिक प्रतिभा से सबको सन्तुष्ट कर देती है। यह उसी का सामर्थ्य है कि उद्दण्ड-से-उद्दण्ड को भी अपनी अमृत-वाणी से नम्र बना देती है। सब प्रकार के संस्कारों और यज्ञों में वही पथप्रदर्शिका है। घर-बाहर की लड़कियाँ रात के समय जीवनबाई के इर्द-गिर्द बैठ कर उस से विविध प्रकार की कथा-कहानियाँ सुन-सुनकर मन बहलाया करती हैं। एक समय एकत्र बालिकाओं में से एक ने कह दिया—"दादी! आज नई बहू सुलभा भी हमारे साथ आई है।"

दूसरी—"आज तो कोई नई बात सुनाइये। कोई सुन्दर उपदेश हो तो बहुत अच्छा!"

कृष्णा—"ना दादी! कोई मन के बहलाने की कहानी कहो, उपदेश का कौन-सा समय है। सुलभा क्या कोई बड़ी-बूढ़ी है। वह भी हम में से है न? हाँ, उसका विवाह अभी हुआ है। अच्छा खावेगी, पहनेगी। अब तक वह एक घर की लाडली थी, अब दो घराने उसका आदर करेंगे। उसे उपदेश की क्या आवश्यकता है।"

सुवीरा—बहिन तेरी जिह्वा-देवी मुख-मन्दिर में विश्राम नहीं ले सकती। क्या उपदेश अच्छी बातों का द्योतक नहीं होता।

कृष्णा कुछ और तर्क करना चाहती थी कि रजनी ने उसका मुख बन्द कर दिया और सुवीरा ने उसकी गालों पर प्रेम की चपत लगाई। वह बेचारी चुपचाप सुलभा की ओर देखने लगी। सुलभाने कुछ ऐसा इशारा किया कि वह मौन साध बैठी। सब की सब दादी की मनोहारिणी वाणी की प्रतीक्षा करने लगीं।

दादी—सुनो! विवाह शब्द बड़ा प्यारा है। विवाह का नाम सुनकर वर-वधू, माता-पिता, इष्ट-मित्र, सम्बन्धी जन, ब्राह्मण, नाई, रसोइया, कहार,

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बनिया, हलवाई, सुनार इत्यादि सभी लोगों में हलचलसी हो जाती है। कोई तन-वदन सँवार रहा है, किसी को सुपुत्र की चिन्ता है, कोई लेन-देन का हिसाब कर रहा है, किसी को कपड़े-लत्ते का शौक़ सता रहा है, कोई दक्षिणा के लिये आतुर हो रहा है, कोई दान के लिये हाथ पसार रहा है। कहने का तात्पर्य यह है कि प्रत्येक अपने-अपने स्वार्थ के अनुसार मन को डुलाया करता है। कोई वर-वधू का दिल खोलकर देखे कि उनके मन-मन्दिर में क्या ऊधम हो रहा है। कभी मिलन की उमंग, कभी आशा की घड़ियाँ, कभी भावी का कार्यक्रम, कभी आनन्द का प्रवाह। इस प्रकार की तरङ्गों से प्रेम-सागर उमड़ा करता है, पर विवाह-रूपी बन्धन से क्या उत्तरदायित्व पैदा हो जाता है इस पर बहुत कम सज्जनों की दृष्टि पड़ती है। इस नवीन जीवन-यात्रा को किस प्रकार सुलभ बनाया जा सकता है इसकी ओर किसी का ख़याल नहीं जाता। चार दिन की वाह-वाह के पीछे सब अपने-अपने काम-काज में लग जाते हैं। रहे वर-वधू, वे भी अपने सामने कोई लक्ष्य नहीं रखते। विषय-वासना से ऊपर उनकी दृष्टि ही नहीं जाती। मेरी समझ में सबसे पहला विचार, जो नव-वधू को अपने मन में धारण करना चाहिये, वह ब्रह्मचर्य है। सब शुभकामनाओं की यह नींव है, सब सिद्धियों का यह एकमात्र साधन है। युवती का यही सौंदर्य है, यही उसका भूषण है, यही उसकी पूँजी है, यही उसकी मर्यादा है! यह है तो सब कुछ है। जिसका ब्रह्मचर्य नष्ट हुआ उसका सब कुछ भ्रष्ट हुआ। ब्रह्मचारिणी सत्य-निष्ठा होती है।

ब्रह्मचारिणी का चन्द्रवदन हृदयान्धकार को दूर करता है। ब्रह्मचारिणी का स्वास्थ्य, सुदृढ़ शारीरिक-बल अनेक कष्टों को दमन करनेवाला होता है। ब्रह्मचारिणी का आत्मिकबल अकाट्य स्निग्ध और उसकी अन्तरिक ज्योति का द्योतक होता है, जो उसे सब विघ्नों से सुरक्षित रखता है। जरा आजकल की अनजान नव-वधुओं को देखो जिनका 'चार दिन की चाँदनी फिर अँधेरी रात' का सा हाल हो जाता है। विवाह क्या हुआ, मानो उन्हें विषय-वासना के लिये प्रमाणपत्र मिल गया। उनका खाना-पहनना सब इसी निमित्त हो जाता है। उनके लिये वही ध्येय, वही काम, वही विचार रह जाता है। दिन-रात इसी केन्द्र के गिर्द उनकी मनोवृत्तियाँ चक्कर लगाया करती हैं। फल यह होता है कि उनका रंग पीला पड़ जाता है, गालें पिचक जाती हैं, सौन्दर्य लुप्त होने लगता है। एकाध बालक हुआ तो शरीर ढीला पड़ने लग जाता है, हाथ-पाँव निस्तेज हो जाते हैं। काम-काज से उनका जी चुराने लगता है, बूढ़ी माता सा मुखड़ा बन जाता है क्योंकि सतोगुण का ह्रास हो जाता है, मस्तिष्क शुभ-विचार-शून्य होने लगता है, संसार उन्हें निराशा-जनक प्रतीत होने लगता है। उनकी सब उमङ्गों पर पानी फिर जाता है। बने-बनाये आदर्शों के भवन उनके देखते-देखते हवाई क़िले हो जाते हैं।

बेटियो! देखो, आज माता सीता अपने तपो-बल से जगद्-विख्यात हो रही है। माता पार्वती की कहानी तुमने पौराणिक गाथाओं में सुनी होगी। सुलभा का राजा जनक के साथ कैसा सम्वाद हुआ था। अनेकानेक रण-वीराङ्गनाओं के चरित्र तुमने सुने होंगे। धन्य हैं वे मातायें जिन्होंने इन देवियों को जन्म दिया। मैं चाहती हूँ हरेक नव-वधू इन देवियों के चरण-चिह्नों पर चलने की प्रतिज्ञा करे, मर्यादा की मूर्त्ति बनकर दिखाये। सन्तानोत्पत्ति की कामना के अतिरिक्त

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जो वासना होती है वह अवश्य विनाशकारी होती है। नव-वधू अगर ब्रह्मचारिणी है तो अभाग्यवश प्राप्त हुआ उसका उच्छृंखल पति भी समझदार बन जाता है। सती का तेज, उसके हृदय की पवित्रता, उसका अगाध-प्रेम निष्फल नहीं जाया करते। प्रायः मनुष्य स्वयं कमज़ोर होते हैं, वे देवियों के विषय में भी कुत्सित अनुमान किया करते हैं। इसीलिये वे नित्य नई रचना, नित्य नई धारणा उपस्थित कर देते हैं। परन्तु तपस्विनी भारत-माता की तपस्विनी बेटियाँ डोला नहीं करती, बल्कि अपने आसन पर सुदृढ़ रहकर माता के नाम को चार-चाँद लगाया करती हैं।

बेटियो! सुनो, गृहस्थ जीवन सब सुखों की कान कहा जाता है, और गृहस्थाश्रम सब आश्रमों का सहारा बतलाया गया है। यदि गृहस्थी के जीवन से ब्रह्मचर्य का निकास हो जावे तो दुःखों का पहाड़ टूट पड़ता है। ब्रह्मचर्य-हीन गृहस्थी दूसरों को सुख देने के स्थान में स्वयं दीन और सहायता का पात्र बन जाता है। दूसरों की सेवा की इच्छा करता-करता स्वयं सेवा कराने के लिये आतुर हो जाता है। बेटियो! अगर अपने जीवन को धन-धान्य से परिपूर्ण और सर्वोपरि मान्य बनाना चाहती हो, अगर खाने और पहनने का वास्तविक आनन्द उठाना चाहती हो, अगर संसार में स्वस्थ, सुन्दर, सुडौल सन्तान उत्पन्न करना चाहती हो, अगर अपने जीवन से अपनी जन्मदात्री का नाम उज्ज्वल करना चाहती हो, अगर निर्मल, निर्दोष कान्ति की स्वामिनी होना चाहती हो, अगर दीर्घायु का सुखभोग चाहती हो, अगर स्वाधीनता का स्वाद चखना चाहती हो तो ब्रह्मचर्य का व्रत धारण करो। सब व्रतों में यही श्रेष्ठ व्रत है। इसी व्रत की दृढ़ता के लिये नित्य सायं-प्रातः परमेश्वर से प्रार्थना करनी चाहिये।

नव-वधू का अपने प्राणप्यारे के साथ प्रेमालाप हो, मगर उसके मानसरोवर में विषय-वासना की तरङ्ग न उठे। शोक! पति-पत्नी का प्रेम कामदेवता की भूमिका समझा जाता है। समझा क्यों न जावे, जब कि चारों ओर इस प्रेम का आदर्श ही निकृष्ट दिखाई देता है। शुद्ध प्रेम, उच्चादर्श, सफल जीवन कदापि विषय-वासना के समर्थक नहीं। सती सीता कितने वर्ष अपने प्यारे के साथ जंगल में रही। क्या उस समय उनमें प्रेम नहीं था। प्रेम भी था, प्रेमालाप भी था, नित्य सहवास भी था, पर मनोमालिन्य नहीं था। उनमें शुद्धाचार था और ब्रह्मचर्य व्रत विराजमान था। अगर माता सीता का नाम विस्मरण नहीं हो सकता तो उनके गुण भी अनुकरणीय और प्रातःस्मरणीय होने चाहियें। अपने ही इर्द-गिर्द दृष्टि उठाकर देख लो। जिसका जीवन जितना ही मर्यादा के निकट है, उतना ही उसे सुख है। एक बार मन में यह दृढ़ संकल्प कर लो, फिर उसके लिये साधन स्वयं विद्यमान हो जायँगे। मन का साक्षी मन हो जाता है। सन्मार्ग के लिये सुगमता उपस्थित हो जाती है। जैसे तपस्वी को गुरु स्वयं आ मिलता है ऐसे ही ब्रह्मचारिणी के पास सब सिद्धियाँ हाथ बाँधे खड़ी हो जाती हैं।

दादी ने जब ज़रा विश्राम लिया तो कृष्णा झट बोल उठी—"दादीजी! यह तो आपने साध्वी के नियम वर्णन कर दिये। ऐसा ब्रह्मचर्य तो वन में सेवित हो सकता है। भला विवाह न हुआ, वनवास हुआ।

दादीजी ने गम्भीर वाणी से उत्तर दिया—"बेटी ब्रह्मचर्य की सब आश्रमों में, एक सी आवश्यकता है, जैसे अध्ययनकाल में वैसे ही गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यासाश्रम में। गृहस्थ में कई एक

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विशेष भोगों की आज्ञा है परन्तु उनके लिये भी मर्यादा बाँध दी है। मर्यादा का उल्लङ्घन दुःख-दायक होता है।" सुलभा ने सारा उपदेश ध्यान पूर्वक सुना। दादीजी ने कहा—आज तो मुझे यही कहना है, कल कुछ और कहा जावेगा। कृष्णा बोली, कल दादीजी वनवास का उपदेश करेंगी। इस पर दादी मुस्कराई और सखियाँ भी कृष्णा की चुटकी भरती हुई खिलखिलाती अपने-अपने घरों को विदा हुईं।

भाषा-समस्या*

(ले०— श्री पं० अवनीन्द्र जी विद्यालंकार)

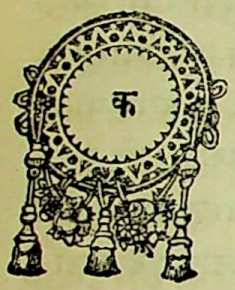

विकुलगुरु कालिदास ने 'वागर्थाविव सम्पृक्तौ' उपमा में जिस सचाई की ओर निर्देश किया है, वह एक चिरन्तन सत्य है। भाषा और साहित्य का पारस्परिक सम्बन्ध अटूट, अमिट और अविच्छिन्न है। भाषा ही एक ऐसा साधन है, जो हमारा अतीत और भविष्य के साथ सम्बन्ध जोड़ती है। इसकी वृद्धि में ही रक्षा है। इसकी वृद्धि बन्द हो जाय तो इसका अस्तित्व भी मिट जाता है। संसार परिवर्तनशील है, क्योंकि वह गतिमान् है, उन्नतिशील है। जो जड़ नहीं वे जङ्गम हैं, उनकी गति अवरुद्ध नहीं होती। मानव-जीवन का जो स्रोत अनादि काल से बह रहा है वह उद्देश्यहीन नहीं है। वह किसी लक्ष्य की ओर प्रवाहित हो रहा है, अबतक इस अजस्र स्रोत में बह कर असंख्य मनुष्य काल के अनन्त गर्भ में लीन हो गये हैं; परन्तु वे सब इस स्रोत में अपना चिह्न छोड़ गये हैं, उनके मत और विचार भाषा के रूप में वर्तमान हैं। मानवसमाज अपने उत्पत्तिकाल से भावों को प्रकाशित करने की चेष्टा करता रहा है। भाषा उसी प्रयत्न का फल है। मनुष्य के भावों के विकास और वृद्धि के साथ-साथ भाषा का विकास और अभिवृद्धि हुई है। इसलिये किसी भाषा के स्वरूप का निश्चय करते हुए हमें उन भावनाओं का भी ध्यान करना चाहिये जिनके कारण भाषा की गति दिशा स्थिर हुई है और उसका स्वरूप बना है।

भाषा का स्वरूप सदा बदलता रहता है। आज जिस भाषा को हम बोल रहे हैं, और लिख रहे हैं, वह वैदिक युग के आर्यों के बोलचाल की भाषा का परिवर्तित रूप है। यह परिवर्तन जान बूझ कर किसी सम्मेलन, परिषद् या विद्वानों ने नहीं किया, परन्तु देश-काल के प्रभाव और जनता के भावों के परिवर्तन से हुआ है। यह ठीक है कि साहित्यिक भाषा में परिवर्तन नहीं होता पर वह भाषा जन साधारण की भाषा नहीं रहती और मृत हो जाती है। विद्वानों का कहना है कि वैदिक युग की भाषाओं में से एक ने विशेष उन्नति की, वह विद्वानों ने अपना ली, वही भाषा संस्कृत हुई। संस्कृत विद्वानों की भाषा हो गई, इसका सम्पर्क जनसाधारण से नहीं रहा, इस कारण अन्यान्य प्राकृत भाषाएँ उन्नति करती गईं, प्राकृत भाषाओं ने संस्कृत को दबा दिया। प्राकृत भाषाओं से अपभ्रंश-भाषाओं की उत्पत्ति हुई, उनमें से एक से

* गुरुकुलीय दशम हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के सभापति-पद से दिये गये भाषण का एक अंश।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हिन्दी की उत्पत्ति हुई। यह भाषा सर्व साधारण की बोल चाल से सम्बन्ध रखती है, पर इसका रूप अभी स्थिर नहीं हुआ है। इसी कारण हिन्दी में सबसे बड़ी समस्या भाषा की है।

भाषा की उन्नति में भाषा की पराधीनता सब से बड़ी बाधा है। जिस प्रकार देश की उन्नति और समद्धि के लिये राजनीतिक और आर्थिक स्वराज्य की आवश्यकता है, उसी प्रकार भाषा की उन्नति के लिये भाषा के स्वराज्य की आवश्यकता है। जब कोई जाति दूसरी जाति को जीत लेती है, तब वह विजित जाति की भाषा पर भी आक्रमण करती है और उसको जीतने का यत्न करती है। इस कारण भाषामें विशृङ्खलता उत्पन्न हो जाती है। इस विशृङ्खलता को दूर कर भाषा के स्वराज्य को स्थापित करना है।

भाषा का स्वराज्य क्या है? हिन्दी भारत की राष्ट्रभाषा है। इस कारण हिन्दी को इस योग्य बना देना चाहिये, कि उस के द्वारा भारतीय राष्ट्रीयता अक्षुण्ण रहे, भारतराष्ट्र की विशेषता उसके द्वारा स्थिर रहे, राष्ट्र की सर्व मनोगत भावनाएं, राष्ट्र की सब चेष्टाएं, सब प्रकार की इच्छाएं और सब प्रकार की राष्ट्रशरीर की हलचलें व्यक्त हो सकें। हमें अपने धर्म, इतिहास, राजनीति, अर्थशास्त्र, दर्शन, और विज्ञान के लिये किसी और भाषा का मुंह न जोहना पड़े। यही भाषा का स्वराज्य है। इसी को स्थापित करना हमारा सब से प्रथम कर्त्तव्य है।

भाषा के स्वराज्य को स्थापित करने के लिये हमें तीन अवस्थाओं, तीन स्टेजों, तीन सोपानों से गुजरना होगा। तभी हमारी भाषा की विशेषता परिस्फुरित होगी, उसका पूर्ण विकास होगा, उसमें पूर्णतया चमक आयगी। सर्वप्रथम मृत भाषा के प्रभाव को दूर करना होगा। कोई भाषा तब मृत होती है, जब वह समूचे देश की भावनाओं को व्यक्त नहीं करती, वह केवल कुछ विद्वानों की सम्पत्ति हो जाती है, देश की प्रचलित भाषा न रह कर केवल साहित्यिक भाषा रह जाती है। दूसरे विदेशी भाषाओं के संसर्गज दोषों को दूर करना होगा। तीसरे अपनी भाषा की कृत्रिमता दूर करनी होगी।

यह एक उदाहरण से स्पष्ट हो जायगा। योरप में वर्तमान युग से पूर्व विद्वानों की भाषा -साहित्यिक भाषा- लैटिन थी। सर्व-साधारण में प्रचलित भाषा को शिक्षित लोग साहित्यिक भाषा नहीं गिनते थे। बेकन, स्पाइनोजा, न्यूटन तक ने अपनी रचनाओं के लिये लैटिन का आश्रय लिया। बर्गसन ने अपना प्रसिद्ध ग्रन्थ 'काल और इच्छा' लैटिन में लिखा। यही अवस्था भारतवर्ष की हुई। बुद्ध भगवान् के बहुत पहिले से ही संस्कृत प्रचलित भाषा न रही थी परन्तु फिर भी १८ वीं सदी तक उच्च कोटि के विद्वान् लोग अपने ग्रन्थ संस्कृत में ही लिखते रहे। मृत भाषा के प्राधान्य के नष्ट होने पर भी प्रचलित भाषाएँ स्वतन्त्र नहीं होतीं। प्रायः राजनैतिक प्रभुत्व के कारण विदेशी भाषा विजित जाति की भाषा और साहित्य पर अपना आधिपत्य स्थापित कर लेती है। इसके सिवाय कभी-कभी कोई भाषा अपने ऐश्वर्य के कारण दूसरी भाषा को दबा लेती है। योरप में लैटिन के प्राधान्य के नष्ट होने पर वहाँ की प्रचलित भाषाओं पर फ्रेंच भाषा और साहित्य का दब-दबा छागया। राजनीतिक भाषा का आन्तरिक वैभव और प्रभुत्व धार्मिक आन्दोलनों से भी स्थापित हो जाता है। साहित्य का विकास भी उत्थान और पतन के भागों के मध्य से होता है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

साहित्य की धारा इसी कारण सदा समतल भूमि पर बिना बाधा के नहीं बहती । यही कारण है कि 'दाँते' को उत्पन्न करनेवाले इटली को फ्रेञ्च भाषा की प्रभुता स्वीकार करनी पड़ी । यहाँ तक कि इटली में नवयुग का शंख फूंकने वाले कविवर अलफियेरी ने भी अपनी प्रथम-प्रथम नाटक रचनाओं के लिये फ्रेंच का आश्रय ग्रहण किया । पर वह अपनी भूल समझ गया । जर्मनी भी इसी मार्ग से गुजरा है । १०० वर्ष तक जर्मनी फ्रेंच भाषा पर मुग्ध रहा । फ्रेडरिक दी ग्रेट ने जर्मनी को राजनीतिक स्वतन्त्रता दी, उसने भी फ्रेञ्च के सार्वभौम आधिपत्य को स्वीकार किया । जिस भाषा में कान्ट दर्शनशास्त्र की रचना कर अमर हो गया, उसी भाषा को जर्मनी के प्रसिद्ध तत्त्ववेता लैवीनीज़ ने किसी समय अपनी रचना के अक्षम और अयोग्य समझा । लूथर ने जर्मनी को धार्मिक स्वतन्त्रता दी और कान्ट ने भाषा का स्वराज्य स्थापित किया ।

हिन्दू साम्राज्य के नाश होने पर संस्कृत का आधिपत्य हिन्दू-धर्म पर रह गया । मुगलकाल में फ़ारसी के राजभाषा होने के कारण फ़ारसी का विशेष प्रचार हुआ । अंग्रेजी शासन में अंग्रेजी का प्रभुत्व स्थापित हुआ और शिक्षा के लिये यही उपयुक्त भाषा समझी गई । इस मायाजाल को बङ्किम के नेतृत्व में शिक्षित समाज ने छोड़ा । इधर ऋषि दयानन्द और उनके द्वारा स्थापित आर्यसमाज ने इस चकाचौंध को दूर किया और कान्ट के समान ऋषि दयानन्द ने भी हिन्दी भाषा के स्वराज्य को स्थापित किया ।

प्रत्येक नवीन धर्म की वृद्धि के साथ किसी भाषा-विशेष की उन्नति होती आई है । बौद्ध धर्म के कारण पाली की, तथा जैन धर्म के कारण मागधी की वृद्धि हुई । पोप के उदय के साथ रोम योरप की राजनीति और धर्म दोनों का केन्द्र हो गया । इस कारण लैटिन योरप की सर्वमान्य भाषा हो गई । लूथर ने जर्मन भाषा का आश्रय लिया इस का यह परिणाम हुआ कि जिन भाषाओं का उदय लैटिन से है उनके बोलने वाले रोमन केथोलिक हैं और जिन जातियों की भाषा का सम्बन्ध जर्मन भाषा से है वे प्रोटेस्टेंट हैं । बौद्ध भारत में बौद्ध धर्म के नष्ट होने पर ब्राह्मण धर्म की वृद्धि हुई, इस कारण संस्कृत की भी वृद्धि हुई । मृत भाषा यदि धार्मिक भाषा हो तो प्रभुत्व अखण्डित रहता है । यही कारण है कि हिन्दी की उत्पत्ति अपभ्रंश भाषा से होते हुए भी उस पर संस्कृत का इतना अधिक प्रभाव है । ब्राह्मण धर्म के प्रभुत्व के विरुद्ध वैष्णव धर्म का विराट् आन्दोलन हुआ, जिसके कारण सम्पूर्ण भारत में भक्ति की गङ्गा प्रवाहित होने लगी । संस्कृत में ज्ञान और कर्म की मीमांसा मिल सकती है, पर भक्ति के मार्ग के लिये हिन्दी को चढ़ना होगा । भक्तिमार्ग की प्रधानता ने ही हिन्दी को संस्कृत से स्वतन्त्र किया । इसी काल से हिन्दी का अभ्युदय होता है । जब ज्ञान कुछ लोगों तक परिमित होजाता है तब क्रान्ति उत्पन्न होती है । धर्म और ज्ञान की भाषा सदा लोकभाषा होनी चाहिये । यही कारण है कि आज हिन्दी में कृत्रिमता के विरुद्ध इतना आन्दोलन है ।

आज भारत में नया जागरण है, नवीन स्पन्दन है । आकाश से बदली फट चली है, किरणें छिटकी हैं, हवा चल रही है, उबार आ रहा है । जिसे चलना है अपनी नौका खोल दे, उस विराट् अनन्त की ओर, उस स्वाधीन दिगन्त की ओर । वह धारा पलट नहीं सकती, वह हवा बदल नहीं सकती । भारत के प्रांगण में नवीन सूर्य का उदय

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हुआ है, नवीन धर्म का फूल खिला है, यदि इस नवीन उषा की लाली को, नवीन फूल के सौरभ को हिन्दी-भाषा फैलाने का काम करेगी, तो निश्चय से भारतव्यापी होगी। लोकमान्य का निम्न कथन कि 'जो भाषा राष्ट्रियता के स्थापन में, भारत के भिन्न-भिन्न सम्प्रदायों को एक वेदी पर लाने में, भारत के भिन्न-भिन्न प्रान्तों को एक झण्डे के नीचे लाने में सर्वाधिक सफल होगी वही भारत की राष्ट्रभाषा होगी।' हिन्दी-भक्तों को सदा स्मरण रखना चाहिये।

हमें इस बात को न भूलना चाहिये, कि भाषा का स्वराज्य स्थापित करने से, धर्म और ज्ञान-विज्ञान पर एक मातृभाषा का आधिपत्य स्थापित होने से, विदेशी भाषाओं और संस्कृत जैसी भाषाओं से उसका सम्बन्ध और सम्पर्क नहीं छूट सकता। योरप के प्रत्येक देश की भाषा स्वाधीन है, परन्तु वहाँ सबका परस्पर सम्मेलन होता रहता है। उनमें आदान-प्रदान बराबर जारी रहता है क्योंकि अतीतकाल का रहस्य प्राचीन भाषाओं के साहित्य के अन्तर्निहित है और वर्तमान ज्ञान-विज्ञान और प्रकृति के रहस्य विदेशी भाषाओं के साहित्य में अन्तर्गत है। हमें साथ ही भारत की प्रान्तीय भाषाओं से भी घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित करना होगा। संस्कृत-साहित्य को हम छोड़ नहीं सकते क्योंकि इसमें हमारा प्राचीन इतिहास, हमारी जातीय आकाँक्षाएँ छिपी हुई हैं। विदेशी भाषाओं को छोड़ देने से हम वर्तमान सभ्यता की प्रकृति से अवगत न होंगे हमारा ज्ञान सङ्कुचित हो जायगा। प्रान्तीय भाषाओं का परस्पर सम्मिलन भी अवश्यम्भावी है। इसे कोई रोक नहीं सकता। इस सम्मिलन से हमारी वृद्धि ही होगी, पुष्टि ही होगी, मंगल ही होगा। हिन्दी अपनी विशेषता को अक्षुण्ण बनाये रखकर सबसे ग्रहण कर सकेगी। इस आदान-प्रदान से उत्तरोत्तर वृद्धि ही होगी।

कुछ विद्वान् भाषा की एक मर्यादा स्थिर करना चाहते हैं उनको वर्तमान उच्छृङ्खलता सह्य नहीं है, वे भाषा को नियम के दायरे से बन्द करना चाहते हैं, वे चाहते हैं कि नियम-रूपी शिव भगवान् के जटिल जटाजूट में भाषा का गङ्गाप्रवाह घूमता रहे। दूसरे इसको सर्वथा नापसन्द करते हैं, वे सर्वथा मुक्ति चाहते हैं, बाधा उपस्थित करनेवालों की सत्ता को स्वीकार करने को तय्यार नहीं, भाषा के शब्दभण्डार के विस्तार के लिये अन्य भाषाओं से सम्पर्क आवश्यक समझते हैं। कुछ संस्कृतमय हिन्दी को देखकर नाराज होते हैं। कोई कोई हिन्दी उर्दू के भेद को ही मिटा देने के लिये तुले बैठे हैं। समय-समय पर व्याकरण सम्बन्धी समस्यायें उठती हैं। कभी-कभी आदर्शों की विभिन्नता के कारण वाद-विवाद उठ खड़ा होता है। ये सब कुछ अवश्यम्भावी है, ये उन्नति के चिन्ह हैं, इन से घबड़ाना नहीं चाहिये, पर हमें स्मरण रखना चाहिये कि भाषा का स्वरूपनिर्णय न तो कोई सम्मेलन कर सकता है, न कोई परिषद् कर सकती है, न कोई विद्वानों का समूह कर सकता है। भाषा पर विद्वानों का एकाधिकार नहीं है, निरक्षरों का भी उस पर अधिकार है। विद्वान् लोग एकाधिकार जमाने की चेष्टा करेंगे तो केवल छूछा कोष पायेंगे, सम्पत्ति जनताके पास जायगी। भाषा जनता का अनुगमन करेगी और विद्वान् भाषा का अनुकरण करेंगे। जहाँ इस का उल्टा होगा—यानी भाषा विद्वानों का अनुसरण करेगी—तब भाषा जीवित नहीं रहेगी। वह लोक-भाषा न होकर साहित्यिक भाषा, विद्वानों की भाषा हो जायगी।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

भाषा का सम्बन्ध मनुष्य के अन्तर्जगत् से है। आन्तरिक भावनाओं का भाषा बाह्य रूप है। इस लिये आन्तरिक भावनाओं के साथ साथ भाषा में परिवर्तन होना आवश्यक है, वरना वह जीवित न रहेगी। परन्तु प्रकृति का नियम है कि जहां गति है वहां स्थिति भी है। इसलिये एक विद्वान् का कथन है कि 'जो लोप होगया है, वह उत्पन्न नहीं होने का, और जो स्थिर हो गया है, उस का लोप भी नहीं होने का।' क्या यह कथन हिन्दी पर पूर्णतया चरितार्थ होता है? भाषा में स्थिरता मनुष्य के धार्मिक संस्कारों के कारण होती है। हिन्दी पर से वैदिक युग, पौराणिक युग, हिन्दू मुसलमानों का सम्मिलन युग, पाश्चात्य-प्रभाव से युक्त वर्तमान युग, इनके प्रभावों की छाप कभी मिटाये नहीं मिट सकती। प्रत्येक युग की अपनी विशेषता है। हिन्दी भाषा में इन सब युगों की विशेषताओं का समावेश होगा। परन्तु हमारा आदर्श सतीशचन्द्र विद्याभूषण के शब्दों में संस्कृत भाषा ही रहेगी, जैन और बौद्ध इस से अपना पल्ला न छुड़ा सके, क्योंकि भारतीय सभ्यता और राष्ट्रियता का समस्त भाव संस्कृत भाषा में ही है। इस कारण संस्कृत से हमारा अपरिहार्य और आवश्यक सम्बन्ध है। इसी प्रकार मुसलमानों की धार्मिक भाषा अरबी और उर्दू से भी हम बच नहीं सकते। दोनों के शब्द हमारी भाषा में आएंगे। कुछ लोग कहा करते हैं कि अनावश्यक संस्कृत और उर्दू के शब्द न डाले जायँ। पर प्रश्न यह है कि आवश्यक और अनावश्यक की कसौटी क्या है? जब हम यह कह रहे होते हैं उस समय लेखक के व्यक्तित्व को सर्वथा भूल जाते हैं। प्रतिभाशाली लेखक सब मर्यादाओं और नियमों का उल्लङ्घन कर भाषा की नवीन रचना तक कर डालते हैं। सरलता के विचार से भी यहां हम कोई सीमा नहीं बांध सकते जो प्रतिभा के लिये अलंघ्य न हो। इस कारण भाषा संकुचित करने की चेष्टा व्यर्थ है। भारत सदा से भाव और भाषा में दूसरों को अपनाता आया है, किन्तु सब को अपनाते हुए भी उसकी विशेषता नष्ट नहीं हुई, अभी तक अक्षुण्ण है। समय २ पर परिवर्तन होने पर भी, सब के साथ अपना सम्पर्क बनाये रखने पर भी वह हिन्दी ही रहेगी, और कोई भी अन्य भाषा न बनेगी। इस कारण अन्यों के सम्मिलन से हिन्दी के अनिष्ट होने की सम्भावना नहीं, उसे कोई खतरा नहीं, मङ्गल ही मङ्गल है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्त्री-जगत्

गहनों के लालच में एक १३ वर्षीया बालिका की हत्या कर देने के अभियोग में, गुरदूर की अदालत में एक स्त्री को फाँसी की सजा दी गई।

* * *

कलकत्ता के 'हिबलुल मनीत' नामक फारसी पत्र के सम्पादक की लड़की, बेगमफुरूख सुलतान सकीना मुबाइयज़ादा, कलकत्ता युनिवर्सिटी की इण्टरमीजियेट ला की परीक्षामें, खानगीतौर से प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुई। आपने अपने कॉलेज जीवन में बी० ए० और एम० ए० की परीक्षायें भी पहिले दर्ज़े में सम्मान के साथ पास की थीं।

* * *

मिस मेयो कहती है कि मैंने तो "अपनी जाति, और भारत के प्रति कर्तव्य-पालन के तकाजे पर 'मदर-इण्डिया' लिखी।" श्री० आर० पी० परांजपे पूछते हैं,—"क्या श्रीमतीजी! इस बार, अपनी अभ्रान्त योग्यता से, अपनी जाति और पड़ोस के देशों की समस्याओं को हाथ में लेंगी, और अमरीका के नीग्रो तथा अन्य रङ्गीन जाति, शिकागो के अमन और कानून, तथा स्टेटों की दशा पर अपनी तेज रोशनी डालेंगी?"

* * *

कुमारी अनुसूयाबाई महिला आश्रम की मुख्य अधिष्ठात्री थीं। कई वर्ष हुये आप ईसाई हो गई थीं। कुछ समय बीता इन्दौर आर्यसमाज ने आप को शुद्ध कर लिया है, इस अवसर पर एक सहभोज भी हुआ जिस में १५० स्त्रीपुरुष सम्मिलित हुए।

* * *

श्रीमती पुष्पावती—डाक्टर भारद्वाज विद्यालङ्कार (स्नातक गुरुकुल काँगड़ी), ब्रिटिश-इण्डिया स्टीम नैवीगेशन कम्पनी कलकत्ता के मैडिकल ऑफ़िसर की धर्मपत्नी—गुरदासपुर और लाहौर के सर गंगाराम-हस्पताल की भूतपूर्व अध्यक्षा—अब डब्लिन के रोटण्डा हस्पताल में स्त्री-सम्बन्धी रोगों तथा दाईगिरी का काम सीखने के लिये विलायत गई हैं।

* * *

१९२६-२७ में पञ्जाब के सरकारी शिक्षा विभाग से सम्बन्ध रखने वाले स्कूलों में ८९५१७ लड़कियाँ शिक्षा पाती थीं और स्वतन्त्र स्कूलों में ३९३६३; अर्थात् सब मिलाकर १२८८८०। १९२०-२१ में सरकारी स्कूलों में ६२,२४४ थी और स्वतन्त्र स्कूलों में १२,८८८ अर्थात् सब मिलाकर ७५,१३२ थीं अर्थात् ६ वर्ष में ५७ प्रतिशतक की वृद्धि हुई।

* * *

१४ अप्रैल को, बेतूल म्युनिसिपैलिटी का चुनाव हो गया। चुनाव में कुछ सज्जन बिना विरोध चुने गये। वे श्रीमती नायडू, सेठ मिश्रीलाल जी, ठाकुरप्रसाद जी अवस्थी, श्रीयुत बाबूलाल वर्मा, और श्रीयुत गजाधर प्रसाद मुख्तार हैं। हमें आशा है, इन सज्जनों पर जनताने जो अपना अटल विश्वास प्रगट किया है उस विश्वास को अपने कर्तव्य-पालन द्वारा सच्चा साबित करेंगे। तिस पर भी, श्रीमती नायडू के खड़े होनेपर, उसी मुहल्ले से खड़े होने वाले उन सज्जन की प्रशंसा करनी चाहिये, जिन्होंने बेतूल-म्युनिसिपैलिटी की प्रथम महिला सदस्य के गौरव की रक्षा की, और विरोध में खड़े नहीं हुए। बेतूल के म्युनिसिपल-मत-दाता श्रीमती नायडू के चुनाव के लिये धन्यवाद के पात्र हैं।

* * *

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

इन दिनों गया जिले में परदा प्रथा को तोड़ने का एक जबर्दस्त आन्दोलन उठ खड़ा हुआ है। दरभङ्गा जिले के श्रीरामनन्दन मिश्र ने, जो सत्याग्रह आश्रम साबरमती में रहते हैं, अपनी स्त्री को अपने साथ रखने की इच्छा प्रकट की थी। आप की पत्नी आप के साथ आश्रम में जाने के लिये राजी भी हो गई थीं, पर उनके पिता श्री बाढोसिंह, जो मझवाई (गया) के एक भूमिहार ब्राह्मण जमीदार हैं, इस का घोर विरोध कर रहे हैं। इस खबर को पाकर महात्मा गान्धी ने अपनी भतीजी, पोती आदि को वहां भेजा है। महात्मा जी ने आदेश दिया है कि वे इस प्रथा के विरुद्ध ऐसा आन्दोलन करें कि सभी लोग इस सुधार के हामी हो जायँ। इसके अनुसार यह दल श्री रामनन्दन जी के साथ वहां यह कार्य कर रहा है। हम श्री रामनन्दन मिश्र जी को उनकी दृढ़ता और साहस के लिये बधाई देते हुए हृदय से उन की सफलता चाहते हैं।

* * *

बङ्गलौर की खबर ह कि वहाँ के दीदनालपुर नामक कस्बे के एक मुहल्ले की एक झोपड़ी में आग लग गई। बनु नाम की एक ६ वर्ष की लड़की पास ही खेल रही थी। झोपड़ी में आग लगते देख, वह तुरन्त झोपड़ी में घुसी और अपने तीन वर्ष के भाई को निकाल कर सड़क पर ले आई। वह फिर अपने ६ महीने के भाई को बचाने के लिये जलती झोंपड़ी में घुसी और उसे भी आग की लपटों से साफ़ निकाल लाई। पर इस बार जलती झोपड़ी में घुसने से वह वीर बालिका झुलस गई थी। बालिका अस्पताल में है। उसकी दशा अच्छी हो रही है। वहाँ के डिप्टी कमिश्नर ने घटना को अपनी आँखों देखा था। अब बालिका को पाँच एकड़ ज़मीन पुरस्कार में दी गई है।

* * *

श्रीमती अनुसूयाबाई काले मध्यप्रान्त की व्यवस्थापक सभा की सदस्या चुनी गई हैं। सभा के अधिवेशन में आपको कई सज्जनों ने बधाई दी। उनके भाषण के उत्तर में आपने उनको धन्यवाद दिया और कहा कि वह स्त्री-जाति की सेवा करने का भरसक यत्न करेंगी और पुरुष-समाज से पूर्ण सहायता पायेंगी।

* * *

श्रीमती हामिद अली की अध्यक्षता में २० महिलाओं के एक डेपूटेशन ने स्थानीय स्वराज्य के मन्त्री मलिक फीरोज़ खाँ नून से भेंट की और प्रार्थना की कि म्यूनिसिपल कमेटियों और डिस्ट्रिक्ट बोर्डों में स्त्रियों को सदस्या नियुक्त किया जाय। मन्त्री महोदय ने उत्तर में उन्हें विश्वास दिलाया कि सरकार ने इन संस्थाओं में स्त्रियों को नियुक्त करने का फैसला कर लिया है और यदि लाहौर कमेटी का कोई पुरुष-सदस्य अपना त्याग-पत्र दे दें तो वे उसके स्थान पर स्त्री को नियुक्त कर देंगे।

* * *

रंगून विश्वविद्यालय में बी. एल्. डिग्री (वकालत की सनद) प्राप्त करनेवाली श्रीमती डा. मेम भीखिन बी. ए. पहिली महिला हैं। इन्हें असली दावे के विभाग में असिस्टेंट रजिस्ट्रार की पदवी मिली है। हिन्दुस्तानी स्त्रियों का ऐसा पद पाने का यह पहला उदाहरण है।

* * *

जामनगर दरबार ने आज्ञा निकाली है कि कोई विवाह ऐसा न किया जाय, जिसमें वर की आयु सोलह वर्ष और कन्या की चौदह वर्ष से कम हो। इस आज्ञा को भंग करने के अपराध में ५००) तक जुर्माना या ६ मास तक कैद की सज़ा हो सकती है।

* * *

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

78.79

श्रीमती अमुकुहि अम्मल, काँजीवरम कन्या-पाठशाला की प्रधान अध्यापिका वहाँ की म्यूनिसिपल सभा की मेम्बर नियुक्त हुई हैं।

* * *

कोलम्बो में हाल में 'विमेन्स फ्रेञ्चाइज़ यूनियन' नाम की स्त्रियों की सभा स्थापित हुई है। सीलोन की स्त्रियों का वोट प्राप्त करने का यह पहला प्रयत्न है। इस सभा ने वहाँ के सुधार के स्पेशल कमीशन के सामने एक पत्र उपस्थित किया है, जिसमें उसने प्रार्थना की है कि लैजिस्लेटव कौंसिलों, म्यूनिसिपल कौंसिलों और डिस्ट्रिक्ट बोर्डों में वोट देने का उन्हें जो सङ्कुचित अधिकार प्राप्त है उसे बढ़ाया जाय।

* * *

इन दिनों जापान की स्त्रियाँ चुनाव का अधिकार प्राप्त करने के लिये ज़बर्दस्त आन्दोलन कर रही हैं। इस सम्बन्ध में आन्दोलन करते हुए कई स्त्रियाँ गिरफ़्तार भी की गई हैं।

* * *

इङ्गलैण्ड की कई स्त्रियों की सहयोग समितियों ने हिन्दुस्तानी स्त्रियों की राजनीतिक उन्नति के स्वागत का प्रस्ताव पास किया है और समाज-सुधार तथा राष्ट्रों की ब्रिटिश कामनवैल्थ में स्वराज्य की आकाँक्षा से सहानुभूति प्रकट की है।

* * *

उस दिन लाहौर की एक सभा में व्याख्यान देते हुए, लाला लाजपतराय ने मिस मेयो की 'मदर-इण्डिया' की बड़ी कड़ी आलोचना की। आपने कहा कि यह पुस्तक बुरी नीयत से लिखी गई है, और बुरी-बुरी बातें ही इसमें रक्खी गई हैं। इस पुस्तक का प्रत्येक पृष्ठ झूठी बातों से भरा हुआ है। निश्चय ही भारत पर शासन करते रहने के इच्छुक कुछ साम्राज्य-लोलुपों के इशारे से यह लिखी गई है।

* * *

लैन्टन में एक स्त्री आइवी क्लार्क की १४ दिन के उपवास के बाद मृत्यु हो गई। उसने अपनी एक सखी को बतलाया कि उसने ४० दिन का उपवास रखना है क्योंकि प्रभु मसीह ने भी ऐसा ही किया था। परन्तु शोक कि इस श्रद्धा और विश्वास का कोई फल नहीं मिला।

* * *

अमेरिका की स्टैंडर्ड ऑयल कम्पनी विख्यात मिट्टी का तेल बेचनेवाली कम्पनी है जिसका तेल हम भारत में भी बहुत काम में लाते हैं। मिस्टर राकफैलर के साथ मिस्टर हारकनैस भी इस कम्पनी के मालिकों में से थे। कुछ वर्ष हुए महाशय हारकनैस की मृत्यु हुई। वे १४ करोड़ रुपये की ज़ायदाद छोड़कर मरे थे। अब उनकी धर्मपत्नी का भी देहान्त हो गया है। इन्होंने १५ करोड़ से अपनी ज़ायदाद को ३२ करोड़ की बनाई है। उनके पुत्र को इस ज़ायदाद पर अधिकार प्राप्त करने के लिये ५ करोड़ टैक्स देना पड़ा है।

* * *

स्कॉटलैण्ड की श्रीमती मैत्यट ने १५ लाख डंडी को कमेटी को इस लिये दिया है कि वह इसकी आमदनी से डंडी के मकानों को अधिक खुला बना सके, ३० लाख से संगीत, हवाई ज़हाज, विद्युत और इञ्जीनियरिङ्ग की शिक्षा के लिये छात्रवृत्ति दी जाय। इसके अतिरिक्त उन्होंने और भी बहुत सा दान दिया है।

* * *

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अफ़ग़ानिस्तान की महारानी जब से यूरोप पहुँची हैं, घूंघट को त्याग, नाच-तमाशे, थियेटर इत्यादि में खूब सम्मिलित होती हैं। देखें भारत के मुसलमान उसकी मृत्यु का फतवा कब देते हैं।

* * *

इङ्गलैण्ड में इस समय १८६२ स्त्रियाँ मैजिस्ट्रेट हैं।

* * *

नार्वे पुलीसने एक होटल पर धावा किया जहाँ पर कि व्यभिचार का अड्डा था जिसमें स्त्री पुरुष सम्मिलित होते थे। पुलीस ने स्त्रियों को तो पकड़ लिया और पुरुषों को छोड़ दिया। इस पर नगर के स्त्री-पुरुषों की एक बड़ी भारी सभा हुई जिसमें बड़े बलपूर्ण शब्दों में यह प्रस्ताव पास हुआ कि सरकार अपने कानून को इस प्रकार बदल डाले जिससे पापाचरण करनेवाले स्त्री-पुरुषों को एक सा दण्ड मिला करे।

दक्षिण-अफ्रीका के ब्राज़ील नगर के रायोग्रैण्ड डीनार्ट प्रान्त की स्त्रियों को वोट देने का अधिकार प्रदान किया गया है।

* * *

श्रीमती हावर्ड हारपर हब्शी जाति की पहली ही स्त्री हैं जो अमेरिका की स्टेट-नियामक-सभा की सदस्या चुनी गई हैं।

* * *

टर्की में एक स्त्री पहले-पहल बैरिस्टर हुई है। एक अन्य स्त्री को फ़ौज में दाँतों का डाक्टर बनाया गया है।

* * *

बैलग्रेड में श्रीमती ज़ीनिया एटेनासविच को फ़िलॉसफ़ी का प्रोफ़ेसर नियुक्त किया गया है।

* * *

वैज्ञानिक संसार

कच्चे मार्गों को पक्का बनाना

देहात और गाँवों में सड़कें कच्ची ही होती हैं। यह अवस्था प्रायः प्रत्येक देश में एक सी है। जब इन कच्ची सड़कों पर बोझ से लदी हुई बैलगाड़ियाँ चलती हैं तो इनके बोझ से नीचे की मिट्टी खूब बारीक पिस जाती है और पैदल चलनेवालों की आँख और नाक में घुस कर बड़ा कष्ट देती है, चलनेवाले के पैर बहुत दूर तक मिट्टी में घुस जाते हैं। बड़े-बड़े नगरों में तो पानी द्वारा छिड़काव करने का भी प्रबन्ध हो जाता है परन्तु गाँव में यह भी सम्भव नहीं। अतः वहाँ पर कच्ची सड़कें बड़ा कष्ट का कारण होती हैं।

मिशीगन में इन कच्ची सड़कों को सुव्यस्थित रखने के लिये मिट्टी में एक विशेष रसायनिक द्रव्य मिला दिया जाता है जो कि वायु में से जल को चूस लेता है। इससे वह इतनी मुलायम और गीली हो जाती है कि उड़ने नहीं पाती।

श्रीयुत वरिज ने ही—जो कि वहाँ की सड़कों के विभागाध्यक्ष हैं—इस विधि को प्रचलित किया है। जो रसायनिक द्रव्य मिट्टी में मिलाया जाता है उसका नाम कैलसियम क्लोराइड है। यह प्रायः १५० मन प्रति मील के हिसाब से डाला जाता है। इससे सड़कों पर छिड़काव करने की आवश्यकता नहीं रहती।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कुसुमोद्यान

१. संसार के बड़े-बड़े पुस्तकालय

पैरिस की नैशनल लाइब्रेरी स्टेट के सब पुस्तकालयों की शिरोमणि है क्योंकि इसमें ३७००००० पुस्तकें हैं। ब्रिटिश म्युज़ियम का दर्ज़ा दूसरा है। इसमें २३००००० पुस्तकें हैं। वाशिङ्गटन की कांग्रेस लाइब्रेरी में भी उतनी ही पुस्तकें हैं। लेनिनग्राड के सार्वजनिक पुस्तकालय में २००००० पुस्तकें हैं। प्रशियन स्टेट लाइब्रेरी में १७७०००० पुस्तकें हैं। म्युनिक के पुस्तकालय में १४००००० पुस्तकें हैं। स्ट्रास विश्वविद्यालय में १२००००० पुस्तकें हैं। मेड्रिड के जातीय पुस्तकालय में ११००००० पुस्तकें हैं।

बडे २ पुस्तकालय इस प्रकार विभक्त हैं।

योरप में ६६६ पुस्तकालय ऐसे हैं जिन में ११६००००० से अधिक पुस्तकें हैं। अमेरिका के संयुक्त राज्य में ३१४ पुस्तकालय ऐसे हैं, जिन में ५४००००० पुस्तकें हैं। २२ तो मध्य और दक्षिणी अमेरिका में, २३ एशिया में, ७ आस्ट्रेलिया में और ३ अफ्रीका में हैं।

योरप में जर्मनी सब से बढ़ कर है।

क्योंकि उसमें १६० पुस्तकालय ऐसे हैं जिन में ३०००००० से भी अधिक पुस्तकें हैं। उस के बाद फ्रान्स का नाम है जिसमें १११ पुस्तकालय ऐसे हैं जिन में २००००००० से अधिक पुस्तकें हैं। इङ्गलैन्ड का दर्ज़ा तीसरा है जिस में १०१ पुस्तकालय ऐसे हैं जिनमें ११७००००० पुस्तकें हैं। इटली का दर्ज़ा चौथा है। क्योंकि उसमें ८५ पुस्तकालय ऐसे हैं जिन में १३००००००० पुस्तकें हैं।

पैरिस का जातीय पुस्तकालय सब से प्राचीन है। यह सन् १३६७ में स्थापित हुआ था। वीआना का पुस्तकालय सन् १४४० में स्थापित हुआ था। मान्टिन् सीमों के कुछ साधुओं के पुस्तकालय ६ ठी शताब्दी में स्थापित होने से कुछ इन से भी अधिक प्राचीन हैं।

विश्वविद्यालय के पुस्तकालयों में से स्पेन का सैलेमैंका का पुस्तकालय सब से अधिक प्राचीन है। यह १२५४ में स्थापित हुआ था। परन्तु स्ट्रासवर्ग का पुस्तकालय सब से बड़ा है। संसार के सब पुस्तकालयों में से संसार प्रसिद्ध वैटिकन पुस्तकालय है जिसमें ५०००० पुस्तकें हैं। वह इसलिये प्रसिद्ध है कि वे अति प्राचीन हैं और उसमें दुर्लभ पुस्तकों का संग्रह किया गया है। संसार भर के सब पुस्तकालयों की पुस्तकों को जोड़ा जाय तो उनकी कुल संख्या संभवतः १८१००० ००००० हो जाय।

× × ×

२. मदुरा की कल्हार जाति

मदुरा की कल्हार जाति के लोग लगभग दो लाख हैं। और आसपास के ज़िलों के लोगों भी जो इनके सम्बन्धी हैं उनकी भी संख्या इतनी ही होगी। ये सब कल्हार लोग वर्णानुसार ऊँचे ही गिने जाते हैं! किन्तु आर्थिक दृष्टि से इनकी अवस्था अच्छी नहीं, और लोग इनको नीची निगाह से देखते हैं। इनका पैत्रिक पेशा पशु चराना है। परन्तु ये ग्रामीण लोगों के पशुओं की चोरी से रक्षा भी करते हैं और अगर चोरी हो भी जाय तो उसे ढूंढकर ला देते हैं, और उसके उपलक्ष्य में कुछ सालाना मिलता है। परन्तु वर्त्तमान

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

परिस्थितियों में जाति की वृद्धि होने के कारण इस काम से इनका गुज़ारा होना असम्भव हो रहा है। इसलिये प्रायः सभी कलहार या तो इस काम के साथ गौणरूप से खेती करते हैं या उन्होंने खेती को ही आजीविका का मुख्य साधन बनाया है। लेकिन मदुरा के कलहारों की ज़मीन बहुत सूखी और पहाड़ी पर है। वहाँ वर्षा भी अच्छी नहीं होती इसलिये इनको खेती में आनन्द नहीं आता। और न ही इन्हें कुछ गर्व ही है। इसलिये उनकी प्रवृत्तियाँ पशुओं की चोरी व डकैति और लोगों के घरों की चोरी करने की ओर ही प्रायः लगी रहती है। और यह इस प्रलोभन में प्रायः इसलिये ही फंस जाते हैं कि यह पीढ़ी-दर-पीढ़ी से बड़े वीर और जीवन को सङ्कट में डाल कर अपनी इच्छा-पूर्त्ति करने के लिये प्रसिद्ध हैं। इनका एक खेल "साँडों की लड़ाई" के नामसे प्रसिद्ध है जिसमें एक बैल की एक मनुष्य के साथ लड़ाई होती है, जिसमें सांड के लिये तो तमाशा होता है, परन्तु मनुष्य का जीवन संकट में पड़ जाता है। छोटे लेकिन बड़े जोशीले, नोकीले सींगोंवाले साँडों को खास इसीलिये तैय्यार किया जाता है ये ग्रामों के अन्दर या आसपास छोड़ दिये जाते हैं। उनके सींगों की जड़ में रुपयों की थैलियां बांध दी जाती हैं। पारितोषिक उस मनुष्यको मिलता है जो बिना शस्त्र के एकाकी ही साँड के कन्धे को पकड़ कर इतनी देर तक दबाये रक्खे कि थैली खोल दे। बहुत से घाव लग जाते हैं और जीवन को संकट में डालने वाले ज़ख्म हो जाते हैं। लेकिन कलहार जाति की लड़की ऐसे ही वीर को अपना पति बनाती हैं। जो इससे डरता है उसकी तरफ़ वह दृष्टिपात भी नहीं करती, वास्तव में कलहार जाति के विवाह और तलाक की प्रथायें बहुत साधारण, न्याय युक्त और बुद्धिमत्ता पूर्ण होती हैं! मदुरा की कलहार जाति में एक और भी कुलीनता का चिह्न पाया जाता है। वे सुरापान नहीं करते। उनकी जातीय पञ्चायतें जाति के नियम तोड़ने में जितनी सख्ती के साथ बर्ताव करती हैं उतनी ही सुरापान करनेवाले के साथ भी। यद्यपि कलहार जाति में यह प्राचीन गुण है तथापि पड़ोसियों को इनका व्यवहार प्रायः असह्य ही हो रहा है। ५० वर्षों तक पुलिस घूमती रही लेकिन इनका मुख्य पेशा जो पशुओं की चोरी है इनसे नहीं हटाया जा सका। १० वर्षों से यह प्रयत्न हो रहा है कि इनको पशुओं की चोरी के स्थान में कोई और आजीविका का साधन दिया जाय और उनको उसके लिये बाधित भी किया जाय, इस प्रकार एक तरफ़ तो कलहार लोगों का जरायम पेशा जाति कानून के भीतर लाकर पुलिस के द्वारा उनके दिन और रात के जीवन को निरीक्षण और नियम के भीतर रखने का प्रयत्न किया जा रहा है। दूसरी तरफ़ एक खास पुलिस का अफ़सर नियत किया गया है और उसको धन तथा शक्ति भी दी गई है जिससे वह उनकी आर्थिक दशा को भी उन्नत करे। उनके ग्रामीण धंधों के लिये उधार रुपये भी दिये जाते हैं और खेती के लिये आदर्श खेत तय्यार करने के लिये भी उनको रुपये उधार दिये जाते हैं। इन ग्रामीण लोगों के सदाचार का प्रमाण पुलिस के अफ़सर को देने के लिये ग्रामीण पंचायत भी बनाई गईं। इन पंचायतों द्वारा अपनी इच्छा से एकत्रित किये द्रव्य का किन २ बातों में उपयोग किया जाय, सभायें भी बनाई गईं। अकाल के समय इनको सड़कें मरम्मत करने के काम पर या रेलवे के कार्य में भी लगाया गया। जहाँ कुएँ खुदवाने की आवश्यकता

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

थी वहाँ पर इन्हें लगाया गया। परीक्षण से यह ज्ञात होता है कि कल्हार लोग सूखी जमीन पर खेती करने में सुस्ती दिखाते हैं पर जहाँ पानी मिलता हो वहाँ उनकी खेती के कार्य में आनन्द उत्पन्न होता है इसलिये यह पता चलता है कि कल्हार जाति को दुर्गुणों से दूर करने के लिये सब से बढ़ कर और सबसे आवश्यक पानी देना है। कुएँ से थोड़ी सी भूमि को कुछ जल मिल सकता है इसलिये वहाँ पर नदी से काटकर सिंचाई की नहर बनाने की आवश्यकता है। इस जिले में सिंचाई का काम एक नदी से होता है जो कि कभी पश्चिमी किनारे की तरफ़ इण्डियन स्टेट—देशी रियासतों—में होकर व्यर्थ ही बहती रही और उसमें पानी वर्षा से आता था। ४० वर्ष हुए इस रियासत की आज्ञा से इञ्जिनियरों द्वारा इस नदी को हाथ में लिया गया और पूर्वी किनारे की तरफ़ लाई गई जिससे १२०००० एकड़ भूमि की सिंचाई हो रही है। इञ्जिनियरों का विश्वास है कि सूखे कल्हार के शेष भाग को भी सींच कर कृषि योग्य बनाया जा सकता है।

(लिविङ्ग एज)

× × ×

३. इंग्लैण्ड में राक्षसी स्त्रियाँ

"स्त्रियश्चरित्रं पुरुषस्य भाग्यं,
दैवो न जानाति कुतो मनुष्यः।"

विलायत में यह एक बड़ा भारी प्रश्न बन रहा है कि उन राक्षसी स्त्रियों को जो छोटी २ बच्चियों को चोरी डकैती सिखाती हैं! कैसे रोका जाय? एक अंग्रेज नाटककार का कथन है कि तिरस्कृत स्त्री के क्रोध के आगे रौरव नरक की यातना भी फीकी पड़ जाती है। इसी बात को स्पष्ट शब्दों में रखा जाय तो हम यह कहेंगे कि एक पतिता स्त्री का क्रोध दश गुना अधिक नाशकारी और खतरनाक होता है। इस प्रकार की कुछ राक्षसी स्त्रियाँ हमारे समय में भी मौजूद हैं, जिनके कारण इंग्लैण्ड के सामाजिक प्रश्न हल करने में बड़ी कठिनाई हो रही है। अभी हाल ही में मिसेज़ ऐलिस विलसन जो प्रेस्टविच की रहने वाली हैं, मैन्चेस्टर में एक दुकान पर चोरी करती पकड़ी गई हैं। उन के साथ उनकी एक १३ वर्षीया सौतेली कन्या भी थी, जिसे वह चतुर चोर बनाने का यत्न कर रही थी। एक और राक्षसी स्त्री—राक्षसी इसलिये कि हमें और कुछ नाम सूझता ही नहीं-लंडन के ईस्ट एन्ड नामक प्रदेश में जा २ कर छोटी २ कन्याओं को जो १२ वर्ष के लगभग हों थैलियाँ चुराना, दुकान काटना, लोगों की जेब काटना आदि कार्यों में निपुण करती थी। प्रायः वह देखने में सुन्दर और अच्छे कपड़े पहिने हुये कुलीन घरानों की बच्चियों को ही ढूंढती थी क्योंकि इस प्रकार उसे उनको शुद्ध भाषा बोलना और सद्व्यवहार करना सिखाने का कष्ट उठाना नहीं पड़ता था।

उस का यह ढंग था कि दो कन्याओं को किसी बड़े स्टोर में ले जाती और प्रत्येक दिन भिन्न २ ज़िलों में जाती थी और वहाँ से दर्जी के कपड़ों को देखने लग जाती। इस शैतान को, जो अब जेल में है, स्त्री पुरुषों की मनोवृत्तियों का बहुत अधिक परिज्ञान है। उसको पता था कि जब कोई स्त्री एक नई टोपी नापने लगती है तो हमेशः अपना बटुवा मेज़ या तख़्ते पर रख दिया करती है। तो जब यह स्त्री और एक लड़की दुकानदार का ध्यान अपनी ओर खींचें रहती थी, दूसरी लड़की धीरे २ थैली को कोट में छिपा कर भाग जाती। यदि उसी समय थैली की ढूंढ होने लगती तो यह स्त्री और

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

लड़की बिलकुल निर्दोष सिद्ध हो जाते क्योंकि उनके पास कुछ निकलता ही नहीं। और उनके विरुद्ध भी कोई दोषारोपण नहीं किया जा सकता था। वह कह देती थी कि वह लड़की तो परिचित नहीं थी हाँ केवल मैं उसी समय आई जब कि वह भी यहाँ पहुँची थी। जब लंडन में इस की बहुत चर्चा होने लगी तो यह एक दो महीने अन्य प्रान्तों के शहरों में चक्कर लगाने लगी और वहाँ पर भी बच्चों को यही सिखाती थी। उसे इस काम के लिये बच्चों को प्राप्त करने में कोई कठिनाई न होती थी। वह गलियों में या गलियों के बाहर मिठाई की दुकानों पर उन्हें फुसला लेती, उन्हें तस्वीरें दिखाती, उनके साथ अच्छा व्यवहार करके उनके दिमाग़ को उलट देती थी।

इससे बढ़ कर भी एक और स्त्री है जिस ने अपनी कन्या को नौकरानी बना कर चोरों की सहयोगी बना दिया है। यह दैत्य स्त्री—जो शिक्षित भी है और किसी समय अच्छी स्थिति में थी,—भिन्न २ स्वांग रचती है। कभी तो वह लड़की की स्वामिनी बन जाती है। कभी झूठे नाम रख लेती है और युरोप में उसे इस अपराध में जेल भी मिल चुकी है। एक ही चोर को बार २ चोरी में लगाना ख़तरनाक समझ कर यह पहिले तो प्रान्तीय समाचारपत्रों में सादी ग्रामीण लड़की को नौकर रखने का विज्ञापन निकालती है उसे रसोई बनाने और स्थान साफ करने के लिये नौकरानियां रखने का स्वभाव पड़ गया है। जब वह आ जाती है तो उन्हें कहीं २ नौकर रखा देती है, उनका किराया भी दे देती है और चोर प्रेमी के साथ इसका परिचय कराके उस को चोरी करने के पदार्थों का यथेष्ट ज्ञान दिलाकर चोरी का कार्य सुगम तथा निष्कण्टक बना देती है। इस स्त्री का परिचय झगड़ालू घरों के लड़ाकू लड़कों से, घुड़-दौड़ के चोरों से, ठगों और नीच गुण्डों से भी है। एक वार कोई लड़की चंगुल में फंस जाय तो वह जकड़ी जाती है और उसे धमकी, भेद खोलने का डर और झूठे झूठे अपराध लगा कर भयभीत कर वशीभूत कर लेती है। परन्तु बड़े दुःख और लज्जा की बात तो यह है कि कभी २ बाहर से सभ्य दीखने वाले पिता माता अपने बच्चों को कुपथ पर जाते हुए जान कर भी आँख मूंद लेते हैं। मनुष्य स्वभावतः कमजोर हैं और धर्म और अधर्म के भेद बड़े सूक्ष्म हैं। पाठको! यह सभ्य कहलाने वाले देशों का रहस्य है। इससे तो असभ्य रहना कहीं अच्छा है।

× × ×

४. लक्ष्मी किन स्त्रियों में रहती है—

(१) स्त्रियाँ जो पति की प्यारी, शान्त हृदया, देव द्विजों की पूजिका, घर के बर्तनों को शुद्ध रखने वाली, पशु और अनाज के संभालने वाली हैं, उन में सदा वास करती हूँ।

(२) जिस के बर्तन इधर उधर बिखरे रहते हैं, जो विना विचारे कार्य करती हैं, जो पति के प्रति-कूल बोलती हैं, जो पराये घर से प्रीति करती हैं जो लज्जाहीन हैं, ऐसी स्त्री को परित्याग किया करती हूँ

(४) चञ्चल, अनिपुण, अभिमानिनी, शौचहीन, कलहप्रिया, निद्रालु, सोई रहने वाली स्त्री को परित्याग करती हूं।

(५) सत्य वादिनी, प्रियदर्शना, सौभाग्यवाली, गुणोंवाली, पतिव्रता, कल्याणवाली, वस्त्र भूषणों को उत्तम रखने वाली स्त्रियों में वास करती हूं।

(महाभारत अनुशासन पर्व)

× × ×

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

५. सारे धर्मों का, अपने जनों का, घर के सुखों का पितृ देव और अतिथि पूजा का मूल

(१) सत्पुरुषों को चाहिये कि शील चरित्र, विद्या, योनि और कर्म की परीक्षा करके गुणवान् वर को कन्या देवें।

(२) मनुष्य तो कोई भी बेचना नहीं चाहिये, क्या फिर अपनी सन्तान? अधर्ममूल धनों से कभी कोई धर्म नहीं होता।

(३) पिता, भाई, पति, देवर सब को चाहिये कि स्त्रियों का आदर सत्कार करें और उनको अच्छे वस्त्र भूषण दें, जो बहुत कल्याण चाहते हों।

(४) जहाँ स्त्रियाँ पूजी जाती हैं वहाँ देवता वास करते हैं और जहाँ इनकी पूजा नहीं होती, वहाँ सारे कार्य निष्फल होते हैं।

(५) स्त्रियाँ मान के योग्य हैं। हे मनुष्यो उनका मान करो, गृहस्थ धर्म और सुख भोग का कारण केवल स्त्रियाँ हैं।

(६) सन्तान का उत्पादन और उत्पन्न हुए का पालन, लोक-यात्रा का प्रीति का स्त्री प्रत्यक्ष मूल है।

(७) स्त्रियों के लिये न यज्ञ क्रिया है, न श्राद्ध है। न उपवास है। अपने पति की सेवा उनका धर्म हैं, उससे वे स्वर्ग को जाती हैं।

(८) ये जो स्त्रियों हैं, ये साक्षात् लक्ष्मियाँ हैं, वृद्धि चाहने वालो को इन का सत्कार करना चाहिये रक्षा की हुई और गुणों से वश में की हुई स्त्री साक्षात् लक्ष्मी होती है।

(महाभारत अनुशासन पर्व)

अष्टादश हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन में भाषण

(ले०—श्री० पं० पद्मसिंह शर्मा)

यद्-भारती-भारत-पान-लीनः,
सुधाभुजां धाम न कामयेऽहम्।
स मुक्ति-कान्ता-परिलोभनानि,
ज्ञानानि मे कृष्णमुनिस्तनोतु॥

स्वागत-समितिके सम्मान्य सभापतिमहोदय, समागत सज्जनो और प्रतिनिधि भाइयो!

इस महनीय मान और समादरणीय सत्कारके लिये जो मुझ सरीखे अधन्य सामान्य व्यक्तिका अपनी असाधारण उदारता से आपने यह पद प्रदान करके किया है, कृतज्ञतापूर्वक सिर झुकाकर अन्तःकरणसे धन्यवाद कहता हूँ, पर इसका औचित्य स्वीकार करनेमें अब भी असमर्थ हूँ। इस प्रतिष्ठित पदपर अभिषिक्त करने योग्य बड़े-बड़े दिग्गज विद्वान्, एक से एक बढ़कर धुरन्धर साहित्यसेवी सज्जन वर्तमान थे, जिनसे सम्मेलन की शोभा और इस पदकी प्रतिष्ठा बढ़ती, मुझमें तो एक भी गुण इस पदप्राप्ति के योग्य न था। आश्चर्य है क्या समझकर आपने ऐसा अनुचित निर्वाचन किया है!

परम श्रद्धास्पद कविराज श्री 'शंकर' जी महाराज, श्रीयुत श्रद्धेय पण्डित अम्बिकाप्रसाद जी वाजपेयी, सुप्रसिद्ध श्री भानु कवि जी, रत्नाकर जी, हिन्दीके राष्ट्रिय कवि श्रीमैथिलशरण जी गुप्त, कविवर दीनजी, श्रीमान् सुकवि सनेही जी, श्री गोस्वामी श्रीकिशोरीलालजी, विद्यावयोवृद्ध

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

भूपकवि श्रीसीतारामजी, विद्वद्रत्न श्रीजायसवाल जी, इतिहासके मार्मिक विशेषज्ञ श्रीहीरालाल जी, लब्धप्रतिष्ठ लेखक पं० श्री श्यामबिहारी मिश्र जी, प्रतापी श्रीविद्यार्थी जी, सुयोग्य विद्वान् सम्पादक श्रीपराड़कर जी, ज्ञानमण्डलके प्रतिष्ठापक सुसमर्थ साहित्यसेवी हिन्दीसंसारके सामयिक कर्ण श्री गुप्त जी, हिन्दी के विवेचक विद्वान् पं० रामचन्द्र जी शुक्ल, रामचरितमानसके मराल श्रीगौड़ जी, रहस्यमयी लकीरोंको हृदयोंपर अङ्कित करने वाले श्री भारतीय आत्मा, अभ्युदयशाली श्रीकृष्णकान्त मालवीय जी, उपन्यासविधाता श्रीप्रेमचन्द जी, उपादेय अनुवाद ग्रन्थोंसे हिन्दीके भण्डारको भरने वाले पण्डित श्रीरूपनारायण जी पाण्डेय, तथा सरस्वती, माधुरी, विशालभारत और सुधाके सम्पादकगण, श्री पण्डित लक्ष्मीधर जी वाजपेयी, मुसलमान हिन्दीसेवियों में मीरी सुकवि मीर जी, प्राचीन महारथी पं० लज्जारामजी महता, साहित्य-वाटिकामें काव्य कल्पद्रुमको रोपनेवाले श्री पोद्दार जी, व्याकरणकी बाड़ लगानेवाले श्री गुरुजी, शिष्टशिरोमणि श्रीगर्दे जी, श्रीयुत सम्पूर्णानन्द जी, श्री श्रीप्रकाशजी और श्रीमूलचन्द्रजी अग्रवाल इत्यादि। यहाँ क्रम विवक्षित नहीं है, जो नाम याद आता गया लिखता गया हूँ, कोई गण्यमान्य व्यक्ति इस साहित्य-सुमरनीका मनका बननेसे रह गये हों तो क्षमा करें।

"करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी,
करहु कृपा निज सेवक जानी।"

हाँ, तो साहित्याकाशके इन तेजस्वी नक्षत्रोंपर —साहित्य-सागरके इन प्रकाश-स्तम्भों पर आपकी निर्वाचन-दृष्टि क्यों न पड़ी ! आपने एक क्षुद्र खद्योतको—काव्यप्रदीपके तुच्छ पतंगको क्यों पसन्द किया ! मालूम नहीं इसमें आपने क्या लाभ सोचा है ? मैं तो जितना ही सोचता हूँ उतना ही आश्चर्य होता है। भगवान् आपका भला करें, पर मुझ असमर्थ—अशक्त व्यक्ति पर यह भारी भार लाद कर साहित्य-सम्मेलनका आपने भला नहीं किया। अस्तु—

मैंने विवश होकर आपकी आज्ञाकी वेदिपर अपने भय, शङ्का, शालीनता और संकोचकी बलि चढ़ाकर 'आत्मसमर्पण' तो कर दिया है—इस अग्निपरीक्षा में पड़ तो गया हूँ— पर डर रहा हूं कि क्या होगा ! निर्वाह आपही के हाथ है। मैं तो इस साहित्यशकटका 'बींडिया' बनाया गया हूं, धुरन्धरता आप ही के कन्धों पर है, औघट घाटी से खींचकर इसे पार लगाइये, मैं भी यथाशक्ति सहारा लगाऊँगा।

शोक-स्मृति

सम्मेलनके अधिवेशनपर प्रतिवर्ष किसी न किसी साहित्यसेवी बन्धुके वियोग पर आँसू बहाने ही पड़ते है—आँखोंके अर्घेमें तिलोदक भर कर वियुक्त बान्धवोंको तर्पण करना भी दुर्दैवने सम्मेलन के कार्यक्रम का एक अ बनाङ्ग दिया है—

'बहना कुछ अपनी चश्म का दस्तूर होगया,
दी थी खुदा ने आँख तो नासूर होगया।"

उत्सव हर्षके लिये होता है पर दैवी दुर्घटनाओंसे हमारा यह उत्सव भी शोकसमाज में परिणत होगया— मुहर्रममें पड़कर मुहर्रमी बन गया है। देखते देखते साहित्याकाशके कई चमकते तारे अस्त होगये। सुहृद्वर पं० राधाकृष्णझाको—जिनके नामके आगे 'स्वर्गीय' शब्द जोड़ते हुए हृदयपटल फटा जाता है, आँखें ढूंढ रही हैं, उनके बिना यह सम्मेलन सूना सा मालूम होता है, किस से पूछें कि कहाँ गये, कहाँ खोजें कि वह पा जायँ,

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उनकी स्निग्धमूर्ति आँखों में फिर रही है, उनके सद्गुण, सौम्य स्वभाव, प्रचण्ड पाण्डित्य रह रह कर याद आरहे हैं, वियोगवेदनाका बाण हृदयको छेद रहा है। दुर्दैवको इतनेपर ही सन्तोष न हुआ कि एक और चर्का लगा दिया, घाव पर नमक छिड़क दिया— पं० ईश्वरीप्रसादजी शर्मा को भी हमसे छीन लिया! आज वह यहां होते तो आप देखते कि उत्सव में उत्सवता कैसे आती है! शर्मा जी हास्यरस की मूर्ति और ज़िन्दा-दिली के पुतले थे, साहित्यसेवा उनके जीवनका एक लक्ष्य था, इस थोड़ी उम्र में भी वह साहित्य की इतनी सेवा कर गये जो सदा स्मरणीय रहेगी। झा जी और शर्मा जी, बिहारबसुन्धरा ही के रत्न नहीं, भारत जननीके सच्चे लाल थे। अभाग्य है कि वह हम से सदा के लिये जुदा हो गये, उनके रिक्त स्थान की पूर्ति किससे होगी!

यहाँ आकर मुझे एक और मित्र की याद भी तड़पा रही है। दुर्घटना पुरानी पड़ गई थी, दिल के ज़ख़्म कुछ सूख चले थे कि फिर हरे हो गये, उनके लिए भी दो आँसू बहा लूँ तो आगे बढ़ूँ। कई वर्ष पूर्व सुहृद्वर पाण्डेय जगन्नाथप्रसादजीसे पहली वार यहीं मुज़फ़्फरपुर में मुलाक़ात हुई थी। पाण्डेय जी भारी विद्वान सच्चे सुहृद् मिलनसार और उदार सज्जन थे। उनकी बहुत सी बातें इस समय याद आरही हैं। अफ़सोस कि वह नहीं हैं, पर उनकी याद हमेशा रहेगी। पाण्डेयजीका वियोग पुराना होने पर भी आज मुझे नया सा भास रहा है, उनकी यादसे जी भर आया है—

"आँखोंमें आके कौन इलाही! निकल गया,
किसकी तलाशमें मेरे अश्के-रवाँ चले"!

यह शोक सूची आगे बढ़ रही है और कलेजेको छेद रही है। खड्गविलास प्रेस के सर्वस्व अनन्य हिन्दीहितैषी मित्रवर बा० गोकर्णसिंह जी का स्वर्गवास भी कुछ कम दुःखप्रद दुर्घटना नहीं है, गोकर्णसिंह जी ने जिस लगनसे चुपचाप हिन्दी की सेवा की है वह चिरस्मरणीय रहेगी।

श्रीयुत पं० रघुवर प्रसाद जी द्विवेदी भी हिन्दीके एक प्रधान स्तम्भ थे, हिन्दीकी सेवामें ही उनके बाल सफेद हुए थे, इन वृद्ध महारथीके उठ जाने से हिन्दीको बहुत हानि पहुंची है।

पं० पद्मधर अवस्थी एक बड़े ही होनहार कवि थे, अफ़सोस खिलने भी न पाये थे कि मुरझा गये।

प्रोफेसर मणिराम गुप्त भी अचानक चल बसे, आप फ़ारसी के अच्छे विद्वान् और हिन्दी के सुकवि थे और अभी नौजवान ही थे।

परमात्मा इन स्वर्गीय साहित्य-बान्धवोंकी आत्माओंको सद्गति दे और हमें वियोग सहने की शक्ति।

कवितामें परिवर्तन

हिन्दी भाषाके पूर्व इतिहास—संस्कृत, प्राकृत और हिन्दी के परस्पर सम्बन्ध पर—पहले कई विद्वान् सभापति बहुत कुछ कह गये हैं, मैं हिन्दी के सामयिक पद्य साहित्य पर पहले कुछ कहकर पीछे दूसरे आवश्यक विषयों पर निवेदन करूँगा।

हिन्दीके पद्य भाग में इस समय सर्वाङ्गीण परिवर्तन हो रहा है, प्रत्येक भाषा का पद्य भाग महत्वपूर्ण और स्थायी समझा जाता है, उसके परिवर्तनका प्रभाव साहित्यके दूसरे अङ्गोंपर भी पड़ता है इसलिये उसकी रक्षा और सुधार पर भारतीय भाषाओंमें खास कर संस्कृत और हिन्दी उर्दू में जितने ग्रन्थ लिखे गये हैं उतने गद्यके सम्बन्धमें नहीं। यह परिवर्तन और क्रान्ति का युग है। सब विषयोंमें नित्य नये परिवर्तन हो रहे हैं, कवितामें भी क्रान्ति हो रही है और

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बड़े वेगसे हो रही है, हिन्दी कविताका तो एक-दम काया-कल्प हो रहा है, दूसरी भाषाओंकी कविताओंमें भी परिवर्तन हुआ है पर हिन्दीमें परिवर्तनका ढङ्ग कुछ निराला ही है। मैं परिवर्तन का विरोधी नहीं हूँ, पर परिवर्तन सोच समझ कर करना चाहिये, मनमाने प्रकारसे नहीं, मेरे इस निवेदन का यही तात्पर्य है।

स्वर्गीय मौलाना 'हाली' उर्दू-कविता के आदर्श क्रान्तिकारी कवि हुए हैं, उर्दूमें सामयिक कविताका सूत्रपात उन्होंने ही किया है। नये ढङ्ग की नेचुरल कविताके वही आदिम आचार्य हैं, अपने उपनाम (हाली) के अनुकूलही उन्होंने कविताको सामयिकताके साँचेमें ढाला है। प्रारम्भमें पुराने रंगके गुलोबुलबुल के शैदाई शाइरोंने उनका बड़ा घोर विरोध किया, लखनऊ का 'अवध पंच' वर्षों तक उनके पीछे पड़ा रहा, पर हाली अपने व्रत से विचलित नहीं हुए। 'दीवाने-हाली' का 'मुकद्दमा' (भूमिका) पढ़ने लायक पुस्तक है, सामयिक कविता कैसी होनी चाहिये, पुरानी कविता में क्या ग्राह्य है, क्या त्याज्य है, इसका उसमें बहुत विशद और विस्तृत विवेचन है।

मौलाना हालीने अपने मुकद्दमेमें लिखा है—

"आजकल देखा जाता है कि शेरके लिबासमें अक्सर नये ख़यालात जो हमारे अगले शोरा (कवियों) ने कभी नहीं बाँधे थे, ज़ाहिर किये जाते हैं। मगर चूंकि वह उस ख़ास ज़बानमें जो शोराकी कसरत इस्तेमालसे कानोंमें रच गई है, अदा नहीं किये जाते, बल्कि नये ख़यालात जिन अलफ़ाज़में बराहे-रास्त ज़ाहिर होना चाहते हैं उन्हीं अलफ़ाज़ में ज़ाहिर कर दिये जाते हैं इसलिये यह मक़बूल ख़ासो-आम (सर्वप्रिय) नहीं होते।"

फिर आगे लिखते हैं—

"यह मुमकिन है कि किसी क़ौमके ख़यालातमें दफ़ातन् एक नुमायाँ तरक्क़ी और वसअत (विचारोंमें सहसा परिवर्तन और विकास) पैदा हो जाय, मगर ज़बानमें (भाषामें) दफ़ातन् वसअत पैदा नहीं हो सकती, बल्कि नामालूम तौर पर बयानके उसलूब (कहनेके ढंग) आहिस्ता-आहिस्ता इज़ाफ़ा किये जाते हैं और उनको रफ़्ता-रफ़्ता पब्लिक के कानोंसे मानूस (परिचित) किया जाता है और क़दीम उसलूब (रीति-प्रकार) जो कानोंमें रच गये हैं उनको बदस्तूर क़ायम और बरक़रार रक्खा जाता है, यहाँ तक कि अगर इल्मकी तरक्क़ीसे बहुतसे क़दीम शाइराना ख़यालात महज़ ग़लत और बेबुनियाद साबित होजायँ तो भी जिन अलफ़ाज़के ज़रियेसे यह ख़यालात ज़ाहिर किये जाते थे वह अलफ़ाज़ तर्क नहीं किये जाते।"

इसके आगे कई उदाहरण इस बातके देकर फिर लिखा है—

"शाइरका यह काम नहीं कि इन ख़यालातसे बिलकुल दस्तबरदार हो जाय बल्कि उसका कमाल यह है कि हक़ायक़ व वाक़आत (वास्तविकता-वस्तुस्थिति) और सच्चे नेचुरल ख़यालातको उन्हीं ग़लत और बेअसल बातोंके पैरायेमें बयान करे और उस तिलस्मको जो क़दमा (प्राचीन) बाँध गये हैं हरगिज़ न टूटने दे। वर्ना वह बहुत जल्द देखेगा कि उसने अपने मन्तर (मन्त्र) में से वही अक्षर (अक्षर) भुला दिये हैं जो दिलोंको तसख़ीर करते थे।"

इस बातको आगे दीवानके दीबाचेमें फिर यों समझाया है—

"नाज़रीनको मालूम रहे कि जब किसी मुल्क या क़ौम या शख़्सके ख़यालात बदलते हैं तो ख़यालातके साथ तर्ज़ बयान नहीं बदलती, गाड़ीकी रफ़्तारमें फ़र्क़ आ जाता है मगर पहिया और धुरा बदस्तूर बाक़ी रहता है.....यह मुमकिन है मुताख़रीन (अर्वाचीन) क़दीम शोरा (प्राचीन कवियों) के बाज़ ख़यालातकी पैरवीसे दस्तबरदार हो जायँ मगर उनके तरक़ीए-बयानसे दस्तबरदार नहीं हो सकते। जिस तरह किसी ग़ैर मुल्कमें नये वारिद होनेवाले सय्याह (नवीन विदेशी-पथिक) को इस बातकी ज़रूरत है कि मुल्कमें रूशनास (परिचित) होने और अहले-मुल्क (देश-वासियोंके) दिलमें जगह करनेके लिये उसी मुल्ककी ज़बानमें गुफ़्तगू करनी सीखे और अपनी वज़ा, सूरत और लिबास

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

(चालढाल और वेषभूषा) की अजनबीयत (विचित्रता-विदेशीपन) को ज़बानके इत्तहादसे बिलकुल ज़ायल (तिरोहित-विनष्ट) करदे, इसी तरह नये ख़यालातके शाइरको भी सख़्त ज़रूरत है कि तर्ज़ बयानमें क़ुदमाकी (प्राचीनोंकी) तर्ज़ बयानसे बहुत दूर न जा पड़े, और जहाँ तक मुमकिन हो अपने ख़यालातको उन्हीं पैरायोंमें (परिष्कृत, अलङ्कृत प्रकारसे) अदा करे जिनसे लोगोंके कान मानूस हों और क़ुदमाका दिलसे शुक्रगुज़ार हो जो उसके लिये ऐसे मँझे हुए अलफ़ाज़ व महावरात व तशबीहात (उपमा) इस्तआरात (रूपक) वग़ैराका ज़ख़ीरा छोड़ गये।"

कवीताकी भाषाके सम्बन्धमें मौलाना हालीने लिखा है—

"शाइरीका मदार (आधार) जिस क़दर अलफ़ाज़ (शब्द) पर है उस क़दर मानी (भाव, अर्थ) पर नहीं, मानी कैसे ही बुलन्द (उच्च) और लतीफ़ (सूक्ष्म, सुन्दर) हों अगर उम्दा अलफ़ाज़में बयान नहीं किये जायँगे हरगिज़ दिलोंमें घर नहीं कर सकते, और एक मुब्तज़ल (तुच्छ) मज़मून पाकीज़ा (परिष्कृत) अलफ़ाजमें अदा होनेसे क़ाबिल तहसीन हो सकता है।"

पण्डितराज जगन्नाथ त्रिशूलीने भी रसगङ्गाधर काव्यमें काव्यका लक्षण यही किया है।

"रमणीयार्थ-प्रतिपादकः शब्दः काव्यम्।"

—रमणीय अर्थ का प्रतिपादक शब्द ही काव्य है।

हिन्दी-कविताको नये साँचेमें ढालनेकी इच्छा रखनेवाले हिन्दी-कवि हालीकी शैलीका अनुशीलन करें—उनके इस निर्दिष्ट मार्ग पर चलें, तो अच्छा हो। उर्दू-कवियोंने हालीके रंगको अपना लिया है बल्कि उसे और चमका दिया है। उर्दू-पत्रोंमें देश-भक्ति और अध्यात्मवादकी जो नज़्में निकलती हैं वह पढ़नेवाले भावुकको अपनी ओर खींचती हैं, दिल पर असर करती हैं, बारबार पढ़नेको जी चाहता है। हिन्दीकी नवीन रचनाओंमें यह बात अभी नहीं आयी, आये भी कहाँसे लानेकी कोशिश ही नहीं की जाती! उर्दूवाले कवितामें भावोंकी नवीनता भरते हैं, पर भाषा और रीति वही प्राचीन परिष्कृत है, उनकी गाड़ीकी गति बदल गई है—रफ़्तारमें फ़र्क़ आगया है—पर धुरा और पहिये बदस्तूर वही हैं।

हमारे हिन्दीके नवीन कवियोंकी मति गति बिलकुल निराली है, वह कविताकी गाड़ीके धुरे और पहिये भी बदल रहे हैं। अपने अद्भुत छकड़ेमें पीछेकी ओर मरियल टट्टू जोतकर गन्तव्य पथपर पहुँचना चाहते हैं। प्राचीनोंका कृतज्ञ होना तो दूर रहा उन्हें कोसनेमें ही अपना गौरव समझा जाता है, प्राचीन-शैलीका अनुसरण तो एक ओर, जान बूझकर अनुचित रीतिसे उसका व्यर्थ विरोध किया जाता है। भाषा, भाव और रीतिमें एकदम अराजकताकी घोषणा की जारही है। यह उन्नतिका नहीं मनोमुखताका लक्षण है। इससे कविताका सुधार नहीं, संहार होरहा है। सुधार उसी ढंग से होना चाहिये जिसका निर्देश महाकवि हालीने किया है, और जिसके अनुसार उर्दूके नवीन कवियोंने अपनी कविताको सामयिकताके मनोहर साँचेमें ढालकर सफलता प्राप्त की है।

हिन्दीकी नवीन कवितामें भाषा, भाव, शैली सभी कुछ नया है—अपरिचित है। वह कुछ कह रहे हैं, यह तो सुन पड़ता है, पर क्या कह रहे हैं, यह समझमें नहीं आता:—

"मज़ा कहनेका जब है,
एक कहे और दूसरा समझे;
अगर अपना कहा वह आपही,
समझे तो क्या समझे!"

(वह स्वयं भी अपना कहा समझते हैं कि नहीं, इसमें भी सन्देह है!)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वह कहते हैं—"बुलबुल बोलती है, मस्तीमें गाती है, कोई समझे न समझे, इससे उसे मतलब नहीं, वह अपने भावोंकी व्याख्या नहीं करती फिरती।"—ठीक है, पर बुलबुल अपने गीतोंको छपाती भी तो नहीं, उसके सचित्र और विचित्र संस्करण नहीं निकालती, न किसीसे प्रशंसा या दाद ही चाहती है, न समझनेवालोंको कोसती भी नहीं—अपने प्रतिपक्षी शुक, सारिका और कोकिल आदि पक्षियोंपर व्यङ्ग्य-बाण भी नहीं छोड़ती, उनका उपहास भी नहीं करती। फिर कवि तो 'हैवाने-नातिक़'—व्यक्तवाक्—प्राणी है, वह तो जो कुछ कहता है दूसरोंको समझानेके लिये—अपने भाव दूसरों तक पहुँचानेके लिये कहता है, वह 'स्वान्तः-सुखाय'के उद्देशसे भी जो रचना करता है उससेभी और लाभ उठानेके अधिकारी हैं, भाषाका प्रयोजन भी तो शायद यही है—दूसरों तक अपने भाव पहुँचानेका साधन ही भाषाकी सर्वसम्मत परिभाषा है। जो बात किसीकी समझमें ही न आयेगी उसका प्रभाव ही क्या पड़ेगा! अज्ञेयता तो कविता का प्रधान दोष है, प्राचीन आचार्योंने पहेलीकी गणना इसीलिये कवितामें नहीं की—

"रसस्य परिपन्थित्वान्नालंकारः प्रहेलिका।

कविताका गुण, प्रसाद और चमत्कार या प्रभाव-शीलता है, जिस काव्यमें जितना चमत्कार होगा वह उतना ही उत्कृष्ट और आदरणीय होगा, उर्दू-कविताकी परिभाषामें इन्हीं गुणोंका नाम 'फ़साहत' और 'बलाग़त' है, महाकवि अकबरने कहा है—

"समझ में साफ़ आ जाये,
'फ़साहत' इसको कहते हैं;
असर हो सुनने वालों पर,
'बलाग़त' इसको कहते हैं!"

रहस्यवाद हो या छायावाद, वह समझमें तो आना ही चाहिये, आख़िर उपनिषदोंका परम-रहस्य भी तो समझमें आता ही है! यह सच है कि भावकी गम्भीरता कभी-कभी अर्थप्रतीतिमें बाधक होती है, श्रोताकी जड़तासे भी ऐसा होना सम्भव है, पर ऐसा किसी प्रसंगमें होता है, नहीं तो यही कहा जाता है—

"वक्तुरेव हि तज्जाड्यं श्रोता यत्र न बुध्यते।"

—यह वक्ता ही की जड़ता है कि श्रोता न समझ सके।

कविताके भी कुछ नियम हैं, नियम होने भी चाहिएँ। निःसन्देह कविको विधाता कहा गया है—पर विधाता भी नियति-परतन्त्र है—अपने नियमोंका पाबन्द है, सृष्टि-परम्पराके नियमोंका उल्लङ्घन नहीं करता—

सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्।"

यह श्रुति इसमें प्रमाण है। कवि-विधाताओंको भी सृष्टि-विधाताका अनुगामी होना चाहिये, विश्वामित्रके समान अनावश्यक और निराली सृष्टि रचकर काव्य-पुरुषको त्रिशङ्कुकी तरह दयनीय दशामें न पहुँचाना चाहिए, साहित्य-क्षेत्रमें कुत्सित कर्मनाशाकी नयी नदी न बहानी चाहिए। कविमें आत्मप्रशंसा प्रायः होती ही है, पर यह गुण या दुर्गुण आजकलके कुछ नवीन कवियोंमें अत्यधिक मात्रामें बढ़ता जारहा है, वह अपने सामने किसीको कुछ समझते ही नहीं, यह कुछ अच्छी बात नहीं है। महाकवि कालीदासने और गोस्वामी तुलसी-दासजी महाराजने विनयकी पराकाष्ठा दिखलाई है, प्राचीन कवियोंके सामने अपनेको मन्द और

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मूढ़ कहा है, पर संस्कृतमें और हिन्दीमें इनसे अधिक किस आत्मश्लाघी कविका आदर है!

अपने नये कवियोंसे एक नम्र-निवेदन है, वह क्षमा करें, बात कुछ कड़वी है, पर दिलका दर्द कराहनेके लिये मजबूर कर रहा है!—

"रखियो ग़ालिब मुझे,
इस तल्ख़नवायीमें मुआफ़।
आज कुछ दर्द मेरे,
दिलमें सिवा होता है॥"

कविता-वल्लीको प्रतिभाके वारिसे सींचकर 'पल्लव' निकालिये, खुशीसे उसकी छायामें बैठकर 'वीणा' बजाइये, पर काव्य-काननके कल्पवृक्षोंकी जड़पर—चन्दन, चम्पक और सहकार आदिके मूलपर—कुमति-कुठार न चलाइए! यह अत्याचार असह्य है। आपको इसकी गन्ध नहीं भाती, शिकायत नहीं, अपनी पसन्द, अपनी रुचि—"कीजै कहा करता से न चारो"—पर इनकी महकके मतवाले मधुप भी हैं, इन वृक्षोंपर न सही, इनपर ही दया कीजिये—'पल्लव'के नोकीले और ज़हरीले काँटे इनके दिलमें न चुभाइए, वीणामें सोहनीके स्वर छेड़िए, 'मारू-राग' न बजाइए—

"अभ्यर्थये वितथ-वाङ्मय-पांशु-वर्षै-
र्मामाविलीकुरुत कीर्त्ति-नदीः परेषाम्।"

* * *

"बद न बोले ज़ेरे-गर्दूं गर कोई मेरी सुने,
है ये गुम्बद की सदा जैसी कहे वैसी सुने।"

* * *

मैं नवीनताका विरोधी नहीं, समर्थक हूँ। कोई सज्जन मेरे इस निवेदनको 'रहस्यवाद' पर आक्षेप न समझें, मैं रहस्यवादका परमप्रेमी हूँ, उसकी खोजमें रहता हूँ, कहीं मिल जाता है तो भावावेश की सी दशामें पहुँच जाता हूँ, सिर धुनता हूँ और मज़े ले-लेकर पढ़ता हूँ, जी खोलकर दाद देता हूँ, दूसरोंको सुनाता हूँ। पर हिन्दीकी नवीन रचनाओं में ऐसा रहस्यवाद कम—पैसेमें पाईसे भी बहुत कम—सो भी कभी किसीकी रचनामें मिलता है, और वह भी उस दर्ज़ेका नहीं जैसा उर्दूमें तसव्वुफ़का रंग है। मैं हिन्दीमें हृदयस्पर्शी उच्चकोटिके रहस्यवादका इच्छुक हूँ, पहेलियोंसे बेशक पहलू बचाता हूँ और काग़जके पत्तेको पारिजातका पुष्प नहीं कहता। अपने नौजवान कवियोंसे अकबरके शब्दोंमें प्रार्थना करता हूँ—

"मगर एक इल्तमास इन,
नौजवानों से मैं करता हूँ;
ख़ुदा के वास्ते अपने,
बज़ुर्गों का अदब सीखें।"

कवि-सम्मेलन

आजकल कवि-सम्मेलनोंकी धूम है। किसी प्रसंगमें कोई भी उत्सव हो, उसके साथ कवि-सम्मेलनकी प्रथासी पड़ गई है, कविताके प्रचारकी दृष्टिसे यह प्रथा प्रशंसनीय है, हिन्दी-कविताकी ओर शिक्षित-समाजका ध्यान आकृष्ट हो रहा है, कवि-सम्मेलनोंसे इसका परिचय मिलता है। इन कविसम्मेलनोंमें नवाभ्यासी नवयुवक ही प्रायः सम्मिलित होते हैं और अपनी रचनाएँ पढ़ते हैं, उनके हृदयमें उत्साह है, इसमें सन्देह नहीं, पर वह कविताका नियमपूर्वक—'काव्यज्ञशिक्षया' अभ्यास नहीं करते, पढ़नेसे पहले उनके गुण-दोषपर गम्भीरतासे विचार नहीं करते, बुरी-भली जैसी बन पड़ी, सुनाने लगते हैं, इससे कविता परिष्कृत नहीं होती। बहुतसे कवि तो अपनी इस आशुका-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

रितापर गर्व करते हैं—कविता पढ़नेसे पहले यह कहनेकी कुछ चालसी पड़ गई है कि—"मुझे अभी-अभी इधर आते हुए मार्गमें मालूम हुआ कि आज कवि-सम्मेलन है, बस चलते-चलते हो यह पँक्तियाँ लिख ली हैं। आशा है आप ध्यानसे सुनेंगे और त्रुटियोंके लिये क्षमा करेंगे।" शालीनताके कारण श्रोता चुपचाप सुन लेते हैं और दिल खोलकर दाद भी दे डालते हैं, इससे यह आशुकवित्वका रोग और बढ़ रहा है, इस प्रवृत्तिको रोकना चाहिये। कविता कुछ हँसी-मज़ाक़ नहीं है कि यों ही चलते-फिरते बन जाय, सिद्ध और सतत अभ्यासी कवियोंको भी घण्टों समाधि लगानी पड़ती है, तब कहीं अच्छी कविता बनती है, महाकवि 'अमीर मीनाई' आप बीती कहते हैं।

"ख़ुश्क सेरों तने-शाइर का लहू होता है,
तब नज़र आती है इक मिसरए-तर की सूरत।"

हमारे आशु-कवियोंके माथेपर पसीना भी नहीं आता और पलक मारते कविता-वाटिका लहलहाने लगती है!

उर्दू के कवि वर्षों अभ्यास करते हैं, उस्तादसे सलाह लेते हैं, जब अभ्यास दृढ़ हो जाता है, उस्ताद आज्ञा देता है तब कहीं मुशाइरोंमें जाकर पढ़ते हैं। 'काता और ले दौड़े' की लोकोक्तिको चरितार्थ नहीं करते, इसीसे उनकी कविता सुन्दर सुघड़ और सुहावनी होती है।

नवाभ्यासी कवियोंको सद्यःकविताके चक्करमें पड़कर पथ-भ्रष्ट न होना चाहिये, पहले कविता-सम्बन्धी ग्रन्थोंका अभ्यास करें, प्राचीन उत्तम-काव्योंका निरन्तर अनुशीलन करें, किसी सत्कविसे परामर्श—सलाह लेते रहें, अपनी रचनाको बार-बार समालोचक-दृष्टिसे देखते रहें, उसमें आवश्यकतानुसार काटछाँट और परिवर्तन करते रहें। इस प्रकार सतत-अभ्याससे जब कवितामें चमत्कार-चारुता और बन्धसौष्ठव आजाय तब इस अखाड़ेमें उतरें। कवि-सम्मेलन कविताकी एक प्रदर्शनी है, प्रदर्शनीमें शिल्पकलाके सर्वोत्कृष्ट नमूनेही रक्खे जाते हैं, निकृष्ट और भद्दे मालको कोई आँख उठाकर देखता भी नहीं। महात्मा गाँधी सादगीके अवतार हैं, पर खादी-प्रचारके लिये वह भी बारीक और सुन्दर सूत कातनेके पक्षपाती हैं, उनकी खादी प्रदर्शनियोंमें वही सूत प्रशंसा पाता है जो उत्तम हो, वहाँ उलझा-सुलझा, कहीं मोटा कहीं पतला, कहीं गठीला, तार-तार टूटा, कमज़ोर सूत पसन्द नहीं किया जाता, फिर कवि-सम्मेलनों में ही यह "काता और ले दौड़े" का रिवाज़ क्यों अच्छा समझा जाता है! कुछ हर्ज नहीं, यदि आज की रचना आज ही कवि-सम्मेलनमें न सुनाई जा सके, या किसी पत्रमें प्रकाशित न हो सके, इससे स्वराज्य-प्राप्तिमें कुछ भी बाधा न पहुँचेगी, न मुक्तिका द्वार ही रुद्ध हो जायगा। गवर्नमेंट भी इसके लिये कोई आर्डिनेन्स जारी न करेगी, न वह कविता ही बासी होकर बुस जायगी। निश्चय रखिये शब्द नित्य है!

मुर्ग़ी भी नियत समय तक अण्डा सेती है तब कहीं सही-सालिम बच्चा निकलता है, नहीं तो अण्डा गन्दा और निर्जीव हो जाता है। तब क्या हमारे आशुकवित्वाभिलाषियोंमें इतना—मुर्ग़ी जितना—सब्र भी न होना चाहिये! प्राचीन और अर्वाचीन अनेक महाकवियोंके विषयमें सुना और देखा गया है कि वह प्रकाशित करनेसे पहले अपनी रचनाको बार-बार बराबर सुधारते और सँवारते रहे हैं, प्राचीन काव्योंकी प्रतियोंमें जो अनेक प्रकारके पाठान्तर मिलते हैं, यह भी इसीके सूचक हैं कि

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उन कवियोंने अपने काव्योंमें कईवार और कई प्रकारसे संशोधन और परिवर्तन किये थे।

योरपमें शेक्सपियर आदि महाकवियोंके हाथके लिखे हुए ऐसे काग़ज़ मिले हैं जिनमें कविताके पाठमें काट-छाँट और संशोधन-परिवर्तन किये हुए हैं। उर्दूके सुप्रसिद्ध महाकवि सर 'इक़बाल'की एक कविताके बारेमें उनके अन्तरङ्ग मित्र 'सर अब्दुल क़ादिर' लिखते हैं कि—

"मख़ज़नमें प्रकाशित करनेके लिये मैंने उनसे (इक़बालसे) एक नज़्म माँगी, उन्होंने कहा अभी कोई नज़्म तैयार नहीं, मैंने कहा "हिमालय"वाली नज़्म दे दीजिये, उन्होंने उस नज़्मके देनेमें पसोपेश (आगापीछा) की, क्योंकि उन्हें ख़याल था कि इसमें कुछ ख़ामियाँ (त्रुटियाँ) हैं, मगर मैं देख चुका था, इसलिये ज़बरदस्ती वह नज़्म उनसे लेली।"

यद्यपि वह (हिमालय-शीर्षक) कविता बहुत पसन्द की गई, पर विद्वान् कवि उसे संशोधनीय समझकर छिपाये हुए थे, छपाना नहीं चाहते थे।

काव्यमीमांसाके आचार्यका मत है—

"वरमकविर्न पुनः कुकविः स्यात्,
कुकविता हि सोच्छ्वासं मरणम्"।

—कवि न होना अच्छा, पर कुकवि कहलाना अच्छा नहीं, कुकविता जीते जीकी मात है—अपकीर्तिका कारण है।

प्रतिभा और व्युत्पत्तिसे सम्पन्न कवि ही कवि कहलानेका अधिकारी है, जैसा कि राजशेखरने लिखा है—

"प्रतिभाव्युत्पत्तिमाँश्च कविः कविरित्युच्यते।"

इनमें 'व्युत्पत्ति' अभ्यास साध्य है पर 'प्रतिभा' ईश्वर प्रदत्त-शक्ति है, यह अभ्याससे बढ़ तो सकती है पर उत्पन्न नहीं की जा सकती। इस कारण कविता करनेसे पहले प्रतिभाशक्तिकी पड़ताल कर लेना अत्यावश्यक है, जिसमें यह स्वाभाविक शक्ति न हो, उसे इस झंझटमें कभी भूलकर भी न पड़ना चाहिये, ठोक-पीटकर 'वैद्यराज' चाहे बन भी जाय, पर कवि कदापि नहीं बन सकता!

महाकवि क्षेमेन्द्रने काव्यकण्ठाभरणमें लिखा है—

"यस्तु प्रकृत्याश्मसमान एव कष्टेन वा व्याकरणेन नष्टः।
तर्केण दग्धोऽनल-धूमिना वाप्यविद्धकर्णः सुकविप्रबन्धैः॥
न तस्य वक्तृत्व-समुद्भवः स्याच्छिक्षाविशेषैरपि सुप्रयुक्तैः।
न गर्दभो गायति शिक्षितोऽपि संदर्शितं पश्यति नार्कमन्धः॥"

—जो स्वभावसे ही पत्थरके समान है—सहृदयता-शून्य है—कष्टप्रद व्याकरणके घोखनेमें ही जिसने सारी आयु बिताई है, या कर्कश तर्कके अग्निधूमकी चर्चाने (पर्वतो वह्निमान् धूमवत्त्वात्) जिसकी सरसता जलादी है, और सुकवियोंके काव्योंसे जिसके कान पवित्र नहीं हुए हैं, उसे अच्छे प्रकारसे शिक्षा देनेपर भी कविता नहीं आ सकती। क्योंकि सिखानेसे भी गर्दभ गा नहीं सकता, दिखानेपर भी नेत्रहीन सूर्यको नहीं देख सकता। उर्दू-महाकवि हालीने भी यही राय दी है—

"जबतक शायरकी फ़िक्रमें इतनी भी उपज न हो जितनी एक बयेमें घोंसला बनानेकी और मकड़ीमें जाला पूरनेकी होती है, उसको हर्गिज़ मुनासिब नहीं कि इस ख़याल ख़ाममें अपना वक़्त ज़ाया करे, बल्कि ख़ुदाका शुक्र करना चाहिये कि उसके दिमाग़में यह ख़लल नहीं है।"

हमारे कुछ नवीन हिन्दी-कवियोंके दिमाग़में यह ख़लल बहुत बढ़ रहा है, इसका कुछ इलाज होना चाहिये। कविता एक क़ुदरती जन्मान्तरीण रोग है, इसे संक्रामक—छूतका रोग नहीं बनाना चाहिये। ऐसेही प्रसङ्गपर किसी दिलजले-विदग्धने कहा है—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

"काव्यं करोषि किमु ते सुहृदो न सन्ति,
ये त्वामुदीर्णपवनं न निवारयन्ति ।
गव्यं घृतं पिब निवातगृहं प्रविश्य,
वाताधिका हि पुरुषाः कवयो भवन्ति ॥"

निःसन्देह क्षेत्रिय रोगके असाध्य रोगी—सिद्ध-कवि—इस उक्तिके अपवाद हैं, अतः क्षन्तव्य हैं। और इस अप्रिय सत्यके लिये 'उम्मीदवार रोगी' क्षमा करें।

अबसे कई वर्ष पूर्व युक्तप्रान्तीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलनके षष्ठ अधिवेशनपर अपने भाषणमें मैंने वर्तमान हिन्दी-कविताके सम्बन्धमें जो निवेदन किया था उसे अब फिर दोहराता हूँ, तबसे दशा सुधरी नहीं और बिगड़ी ही है—

"हिन्दी-कवियोंकी महिमा और भी विचित्र है, खड़ी बोलीमें कविता न हो, यह कोई नहीं कहता, पर उसके लिये भी किन्हीं नियमोंकी पाबन्दी ज़रूरी है, कविता चाहे सामाजिक हो या राजनीतिक 'कविता' होनी चाहिये, कोरी तुकबन्दीका नाम कविता नहीं है। पद्य-रचनाको कविताका पर्याय समझ लिया गया है, जो सठता है वही टूटी-फूटी तुकबन्दी करके कवि होनेका दम भरने लगता है। न छन्दःशास्त्र का ज्ञान है, न भाषा पर अधिकार है, न व्याकरणका बोध है, न रस और रीतिसे कुछ परिचय है, फिर भी जिस विषयपर कहिये सद्यः कविता सुनानेके लिये फ़ौरनसे पहले तय्यार हैं। यह हास्यजनक और करुणोत्पादक दृश्य आर्यसमाज और सनातनधर्मसभाके उत्सवोंपर प्रायः सर्वत्र देखनेमें आता है। (अबकविसम्मेसलनोंमें भी) वहाँ हरएक भजनीक सद्यः कवि है। प्राचीन साहित्यकारोंने ख़ास-ख़ास रसोंके वर्णनके लिये ख़ास छन्दोंका निर्देश कर दिया है, संस्कृतमें तो इसका विस्तृत विवेचन है, हिन्दीमें भी इसके उदाहरणोंकी कमी नहीं है, पर आजकल छन्दःशास्त्रकी पूरी छीछालेदर हो रही है, किसीको 'सुथरा शाही' छन्द पसन्द है तो वह उसी काँटे में सब रसोंको बैठा तोल रहा है, किसीको शार्दूल-विक्रीडित की चाल आ गई है तो वह उसीसे सब विषयोंका शिकार खेलता फिरता है। हिन्दीके पूरे पाँच छन्दोंपर तो अधिकार नहीं और संस्कृतके अनुष्टुप् और आर्या-छन्दोंके अकबरी गजसे हिन्दी-कविताकी गर्दन नापी जा रही है। कोई फ़ारसी बहरोंकी लहरोंमें पड़ा बह रहा है, कहीं बँगलासे 'पयार' और मराठीसे 'अभंग' माँगा जा रहा है, मानो हिन्दी-छन्दों का दिवाला निकल गया है! वेदकी ऋचाओंका अनुवाद दादरे और ठुमरी टप्पोंमें हो रहा है, अजब तमाशा है!—

"उन्हें शौक़ इबादत भी है
और गानेकी आदतभी,
निकलती हैं ऋचाएँ
उनके मुँहसे ठुमरियाँ होकर!"

तुक न मिली क़ाफ़िया तंग हो गया तो इस झंझटमें पड़नेकी भी क्या ज़रूरत है, बेतुकी उड़ाने लगे! जब संस्कृतमें बेतुकी कविता होती है, अँगरेज़ीमें ब्लैंकवर्स है, तो फिर हिन्दीमें वह क्यों न हो। अच्छा साहब, यह भी सही, बेतुकी ही सही, पर कुछ कहिये तो, निरे शब्दाडम्बर या कोरी तुकबन्दीका नाम तो कविता नहीं है, कविताका प्राण जो 'रस' है उसकी कोई बूंद भी आपके इस प्यालेमें है या नहीं? आप जो कुछ बकार रहे हैं सो क्या पुरस्कारकी प्रेरणासे शब्दोंके गोले उगल रहे हैं या नासमझोंकी बेमानी वाह-वाहके उभारनेसे यह कवित्व-प्रसव-वेदना सह रहे हैं, या सचमुच अन्दरवाला कुछ कहनेको बेताब कर रहा है! पिछली बात हो तो शौकसे कहिए, नहीं तो कृपाकर चुप रहिए, कवितामें नक्क़ालीसे काम नहीं चलता, जो कविता चोट खाये हुए दिलसे नहीं निकलती वह स्यापेकी नायनका रोना है—

'तुम्हे-कलाम क्या जो न हो
दिलमें ज़ख़्मे इश्क़,
बिस्मिल नहीं है तू तो
तड़पना भी छोड़ दे।"

आजकल हिन्दीमें जिस ढंगकी कविता हो रही है (दोचार अच्छे कवियोंको छोड़कर) उसका अधिकाँश निकृष्ट कविताका सर्वोत्कृष्ट उदाहरण है, फिर भी वह समाजमें आदरपूर्वक

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्रचार और प्रसार पा रही है, इससे अधिक आश्चर्यकी बात और क्या होगी। कविताके लिये इससे बुरा समय शायद ही कभी आया हो इसका प्रतिकार होना चाहिए। भावहीन और भद्दी तुकबन्दियोंपर पुरस्कार या प्रोत्साहन दे-देकर जो लोग इस अनर्थमें योग दे रहे हैं, वह इसके दुष्परिणाम पर ध्यान दें तो अच्छा हो, कविता पर पुरस्कार देना बहुत अच्छी बात है, पर पंक्तियाँ गिनकर पुरस्कारके पैसे देना, पत्रोंके कालम भरनेके लिये मैटर हासिल करनेकी ग़रज़से बढ़ावे दे-देकर जो वास्तवमें कवि नहीं हैं, उन्हें कवि बननेके लिये ख़्वाहम ख़्वाह मजबूर करना, अच्छा नहीं है। कवि बनानेसे नहीं बनते, क़ुदरती तौर पर बने-बनाये पैदा होते हैं, जिनमें कविताका क़ुदरती माद्दा हो, उनके सिवा दूसरोंको इस कूचेमें भूलकर भी क़दम न रखना चाहिये।

कविताके नामसे जो बहुत-सा कूड़ा-करकट हिन्दीमें इकट्ठा होता जा रहा है, इसकी बाढ़को रोकनेके लिये प्रयत्न होना चाहिये, जिस प्रकार 'गोरक्षा'के लिये कलकत्तेमें एक अनुकरणीय सदनुष्ठान हुआ था, एक बहुत बड़ा फण्ड खोला गया था, इसी तरह हिन्दी-साहित्यकी रक्षाके लिये भी कुछ होना चाहिये। कविता-वाणी भी 'गौ' है। साहित्यकी रक्षा सब जगह समालोचनासे होती है, पर हिन्दीमें समालोचनाका आदर नहीं है, इसलिये कुछ दूसरे उपायसे काम लिया जाय, जो लोग रोज़ीके लिये साहित्य-हत्यापर उतारू हों, उन्हें वज़ीफ़ा या वृत्ति देकर इस कामसे रोका जाय, जो नाम या प्रसिद्धिके लिये इस अनर्थ पर कमर बाँधें, उन्हें बड़ी-बड़ी उपाधियाँ और क़ीमती मैडल देकर चुप किया जाय, यदि फण्ड काफ़ी हो, इससे रुपया बचे तो वह प्राचीन साहित्यके उद्धारमें लगाया जाय, और सच्चे कवियोंकी सहायतामें खर्च किया जाय, उससे अच्छे साहित्यके सुन्दर, शुद्ध और सुलभ संस्करण प्रकाशित किये जायँ।"

ब्रज-भाषाका विरोध

खड़ी-बोलीके प्रचण्ड पक्षपाती या ब्रज-भाषाके प्रबल विरोधी कुछ सज्जनोंकी यह धारणा है कि वीर-भावोंके प्रकाशनके लिये ब्रज-भाषा उपयुक्त नहीं है, यह 'ज़नानी-ज़बान' है, शृङ्गार-रसकी लीलाके लिये ही यह गढ़ी गई है, इसमें केवल विरह वेदनाका रोना ही रोया जा सकता है, प्रेम-पचड़ोंका राग ही अलापा जा सकता है, देशभक्ति वीर-रसके 'कड़खे' नहीं समा सकते। यहीं तक नहीं, ब्रजभाषाके विरोधमें कुछ वीरपुङ्गव इससे भी आगे बढ़े हैं। उनका कहना है कि देशकी वर्तमान अधोगतिके—क्लीवता-सञ्चारके—कारणोंमें ब्रज-भाषा भी एक कारण हुई है, इसकी कविताके प्रचारने हिन्दुओंको नपुंसक बना दिया। इस धारणाके दो कारण बतलाये जाते हैं, एक तो ब्रजभाषाकी स्वाभाविक मधुरता, दूसरा शृङ्गार-रसके काव्योंकी अधिकता। निःसन्देह ब्रजभाषा मधुर और कोमलकान्त पदावलीवाली भाषा है, पर संसारमें और भी कई भाषा हैं जो मधुरतामें ब्रजभाषाके समकक्ष समझी जाती है, फ़ारसी-भाषा एक ऐसी ही भाषा है, माधुर्यके आधिक्यसे इसका नाम ही "क़न्दे-पारसी" पड़ गया है। शृङ्गार-रसकी कविता—इश्क़िया ग़ज़लोंके लिये फ़ारसी वेतरह बदनाम है, पर उसीमें महाकवि फ़िरदौसीका 'शाहनामा' भी है, जो वीर-रसका एक उमड़ता हुआ दरिया (नद) है, मधुरभाषाके इस महाकाव्य शाहनामे पर महमूद ग़ज़नवी जैसा क्रूर-वीर इतना मोहित था कि वीर-भाव जागृत रखनेके लिये इसे सदा साथ रखता था, युद्धभूमिमें भी सिराहने रखकर सोता था। यूरोपियन भाषाओंमें फ्रेञ्चभाषा अबसे अधिक मधुर कही जाती है, उसमें भी वीर-रसके काव्योंकी कमी नहीं। जगद्विजयी वीर नेपोलियनकी मातृभाषा यही मधुरभाषा थी, फ्रेञ्च-माधुरीका उपासक फ्राँस किसी भी कर्णकटु कठोर भाषा-भाषी देशसे वीरतामें कम नहीं है।

कविमें कवित्वशक्ति चाहिये वह किसी भी भाषामें समानरूपसे सफलतापूर्वक शृङ्गार और

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वीररसका वर्णन कर सकता है, भाषा उसके भावों को सङ्कुचित नहीं कर सकती। जो लार्ड बायरन 'सुहाग रात'में अश्लीलताकी सीमाको उल्लङ्घन करनेवाले संयोगशृङ्गारका नग्न चित्र खींचकर पाठक पाठिकाओंके लाजके जहाजको शृंगाररस की खाड़ीमें डुबो सकता है, वही बायरन उसी भाषामें उत्तेजना उत्पन्न करनेवाली वीररसकी कविता द्वारा यूनानको तुर्कोंके पराधीनता-पाश से मुक्ति भी दिला सकता है!

आर्यभाषाओंकी जननी संस्कृत भाषाका साहित्य शृङ्गार रससे भरा पड़ा है, शृङ्गार रसके इतने काव्य शायद ही संसारकी किसी नई पुरानी भाषामें हों, मधुरिमा भी इसकी अतुलनीय है, पर रामायण और महाभारतके जोड़के वीररसके काव्य किसी कड़वी और कठोर भाषामें हैं? जिस भाषामें आदि कविने करुणरसकी महानदी बहाई है, वीररसकी उत्तुङ्गतरङ्गशाली शोणभद्र भी उसी में हिलोरे ले रहा है! ज्ञान-गंगाके उद्गम भगवान् कृष्णद्वैपायनका पञ्चम वेद (महाभारत) शान्तरस का प्रशान्त महासागर भी है और वीर रसका प्रलय-पयोधि भी!! भारतकी आधुनिक भाषाओं में बंगभाषा कोमलतामें कुछ काम नहीं है। इसके शृंगाररसके उपन्यासोंकी बाढ़ने भाषान्तरके रूपमें खड़ी बोलीको भी शराबोर कर रक्खा है, फिर भी उसमें वीररसके महाकाव्य 'मेघनाथ-वध' की रचना हो सकती है। जो बात इन भाषाओंमें सम्भव है वह व्रजभाषामें ही क्यों असम्भव समझी जाती है? इसलिये व्रजभाषा-विरोधियों का उक्त तर्क कोरा हेत्वाभास है, अन्वय व्यतिरेक द्वारा किसी प्रकार भी इसकी सत्यता प्रमाणित नहीं की जा सकती। व्रजभाषामें अधिकतर काव्य शृंगार रसके ही हैं, यह ठीक है, पर इसमें भाषा बेचारीका क्या अपराध है! यह अपराध यदि है तो उस समयकी लोक-रुचिका है, जब जैसी लोक-रुचि होती है वैसे ही काव्य बनने-लगते हैं, जिस जिन्स की मांग और खपत होती है वही बाज़ारमें आती है, तथापि व्रजभाषामें वीररस का सर्वथा अभाव नहीं है, अनेक प्राचीन कवियोंने व्रजभाषामें वीररसकी कविता की है, इसके कई उदाहरण दिये जा सकते हैं। यथा—कुलपति मिश्र का द्रोणपर्व, रघुनाथ बन्दीनजका ४ जिल्दोंमें पूरा महाभारत, लाल कविका छत्रप्रकाश, श्रीधर और चन्द्रसेखर वाजपेयी का हमीर हठ, पद्माकर की हिम्मत बहादुर बिरदावली, श्रीधरका जंगनामा, भूषणका हजारा (जो दुर्भाग्यसे अब अप्राप्य है) और भूषण ग्रन्थावली, तथा स्वर्गीय नकछेदी तिवारी द्वारा संगृहीत वीरोल्लास, इत्यादि वीररस के अनेक ग्रन्थरत्न आजभी प्राप्य हैं, महाकवि गंग और सेनापति आदिके बचे खुचे बहुसंख्यक फुट-कर पद्य व्रजभाषाके विलुप्त वीरसाहित्यका पता अलग दे रहे हैं, पर इनके पढ़नेवाले कितने हैं? शायद इन इने-गिने उपलब्ध ग्रन्थोंकी संख्या के बराबर भी नहीं फिर आप ही इन्साफसे कहिये यह किसका अपराध है? भाषाका कि लोकरुचिका? जिनकी कविताका मुख्य विषय वीर-रसका वर्णन था, उन्हें जाने दीजिये, महात्मा सूरदास ही को लीजिये, वह शृङ्गार-रसके मुख्य भक्त कवि थे, शृङ्गार, करुण, और वात्सल्य रसमें ही उनकी कविता डूबी हुई है, फिरभी वीर रसका जहाँ कहीं प्रसंग आगया है, चित्रसा खींच दिया है, भीष्म-प्रतिज्ञाका यह पद देखिये, कितना ज़ोरदार है—

"आजु जौ हरिहँ न शस्त्र गहाऊँ॥
तौ लाजौं गंगा जननी को
सन्तनुसुत न कहाऊँ।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सर धनु तोड़ि महारथ खंडौं
कपिध्वज सहित गिराऊँ,
पाण्डव सैन समेत सारथि
सोणित सरित बहाऊँ ।
जीवौं तो जस लेहुँ जगतमें
जीत निसान फिराऊँ ।
जीवौं तो मण्डल भेदि
भानुको सुरपुर जाय बसाऊँ ।
इती न करौं सपथ मोहि हरि
की छत्रिय गति हि न पाऊँ ।
'सूरदास' रण विजयसखा को
जियत न पीठ दिखाऊँ ॥"

आधुनिक कवियोंमें श्रीभारतेन्दु, पं० प्रताप-नारायणजी मिश्र, और पं० नाथूराम शंकर शर्मा 'शंकर' इत्यादिने विशुद्ध व्रजभाषा में देशभक्ति पर बड़ी ओजस्विनी कविता की है। व्रजमाधुरी के परम पारखी श्रीवियोगी हरि जीने "वीर सतसई" रचकर अच्छी तरह सिद्ध कर दिया है कि व्रजभाषा में आज भी वीर रसकी उत्तम कविता हो सकती है। कविके हृदयमें उत्साह भारा हो तो व्रजभाषा भी अपना पराक्रम दिखा सकती है और उत्सा-हीन हृदयों को खड़ी बोली भी उठाकर खड़ा नहीं करसकती, ऐसों को तो डिंगलका डंका भी नहीं जगा सकता !

सामयिक परिस्थिति और देशकी दशाका प्रभाव कविता पर भी अनिवार्य रूप से पड़ता है, नायि-का भेद में लीन, विरहवेदनासे मूर्छित शृङ्गारी, कवि भी परिस्थितिसे विवश होकर वीणाकी मधुर झंकार में ऐसा मारूराग अलापने लगते हैं, जो क्रान्ति का कारण बन जाता है, इतिहास इसका साक्षी है, समय पड़ने पर कुसुमसुकुमारी कोकिल कण्ठी कुल-ललनाओं ने अपनी मधुर पर ओजपूर्ण भर्त्सनासे कायर पुरुषों को पुरुषसिंह बनादिया है, रणभीरुओं को समराङ्गण में हँसते हँसते प्राणाहुति देने पर उद्यत कर दिया है, जो काम प्रचण्ड रणवाद्य नहीं करासका वह एक हृदयवेधी मधुरो-पालम्भ और मीठी चुटकीने करादिया है, मानव हृदयके इसी रहस्य को लक्ष्यमें रखकर प्राचीन आचार्योंने काव्य-प्रयोजनों में "कान्ता-सम्मिततयोप देशयुजे' को स्थान दिया है, जिन मत्त हृदयों पर राजाज्ञा और गुरूपदेश का कठोर अङ्कुश असर नहीं करता वह भी कांन्ता के कोमल कान्त परामर्श की अवहेलना नहीं कर सकते। जो कविता या संगीत श्रोताकी हृत्तन्त्री के तारको नहीं छू सकता—जिसमें हृदयङ्गमता नहीं है—वह चाहे जिस भाषा में हो, कविकी भावना कितनी ही उदात्त क्यों न हो, उसका कुछ भी प्रभाव न पड़ेगा। अरण्यरोदन होकर रह जायगा। किसी भाषासे केवल इसलिये घृणा करना उसे किसी कामकी न समझना कि उसमें एक कविताकी अधिकता है जो मानव-चरित को उदात्त बनानेमें बाधक है या चरितभ्रंशका कारण हुई है, ठीक नहीं है । रागविद्याकी उपादेयता में औंधी खोपरीके कुछ पुराने खूसटों को छोड़कर किसी सहृदय विवेकी का मतभेद नहीं है, इसी रागविद्या या संगीत कला को लीजिये, इसने न जाने कितने शौकीन नवयुवकोंको अपनी मादकता से अनयके गर्तमें गिराकर नष्ट नहीं किया, विलासी अमीरोंकी नीच वासनाओं को उत्तेजना देकर यह उनके सर्वनाशका कारण नहीं बनी, पर इससे क्या इन कलाओंकी उपादेयता में किसी सहृदय विवेकी का मतभेद हो सकता है ! संगीत-कलाका दुरुप-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

योग ही निन्द्य और त्याज्य है तथा उसका सदुपयोग अभिनन्दनीय और वाञ्छनीय है। जहाँ संगीतकला के दुरुपयोगसे अनेकोंका अनिष्ट हुआ है वहाँ इसीके सदुपयोगसे परमानन्द-पयोधिके मीन— अनिर्वचनीय आनन्द में लीन होने वाले आदर्श महात्माओंकी संख्या भी कम नहीं है।

व्रजभाषा के वैष्णव कवियों ने उस समय के नृशंस शासकों के असह्य अत्याचार से पीडित 'किंकर्तव्य-विमूढ़' हिन्दू-जातिके भग्न हृदयको अपने मधुर कीर्तनसे भयहारी असुरारि भगवान् के चरणोंमें लगाकर जो उपकार किया है वह सहस्र मुखसे प्रशंसनीय है। उस समय की परिस्थितिका ध्यान करने पर भी ही इस का औचित्य समझ में आसकता है, जबकि खुले शब्दों में अपने धर्म की महत्ताका प्रतिपादन करना—उत्तेजनाका एक शब्द भी मुँहसे निकालना मौतको निमंत्रण देना था। नृशंसताके उस साम्राज्यमें जहाँ यह कहने वाले की ज़बान काट दी जाती थी कि "हिन्दू के लिये हिन्दु-धर्म और मुसलमान के लिये इस्लाम, दोनों सच्चे हैं"—रणभेरी बजाने का अवसर ही कहाँ था! निराशाके उस अपार सागर से पार पाने का उपाय भगवद्भक्तिका प्रचार ही था, इसीने जातिकी डगमगाती नैया को बचाया था, व्रजभाषामें भक्ति-भावना भरी प्रेम-पूरित मधुर कविताके प्राधान्यका यह भी प्रधान कारण है। नायिकाभेद और कुरुचि-संचारक साहित्य को जाने दीजिये, जो उपादेय है उसेही ग्रहण कीजिये, अपने प्राचीन साहित्य का संहार नहीं, सुधार कीजिये। हिन्दी भाषा का सिर आज भी अपने प्राचीन साहित्य के कारण ही ऊँचा है, तुलसी, सूर, केशव, बिहारी, मतिराम, देव और घनानन्द आदि प्राचीन कवियों को निकाल दीजिए और उसी शैली की आधुनिक कवियों की—भारतेन्दु आदिकी कविता को पृथक् कर दीजिए फिर देखिये हिन्दी के साहित्य में कोरे उपन्यासों के और भावहीन भद्दी तुकबन्दी के अतिरिक्त और क्या रह जाता है! बंगला आदि प्रान्तीय भाषाओं का वर्तमान साहित्य अन्य सब विषयोंमें राष्ट्रभाषा हिन्दी के साहित्य से कहीं बढ़ा चढ़ा है। हिन्दी का गौरव प्राचीन साहित्य पर निर्भर है, तुलसी और सूर आदि प्राचीन कविविधाताओं की समानता करनेवाले कवि भारत की अन्य किस भाषा में है! अपने आदरणीय प्राचीन साहित्य की अवहेलना द्वारा हिन्दीभाषा की इस विशेषता का नाश न कीजिये। कोई भी प्राचीनता का पक्षपाती यह नहीं कहता कि नये ढङ्गके साहित्य का निर्माण न किया जाय, निवेदन इतना ही है कि उस विस्मृत साहित्य की रक्षा की जाय, उसे विलुप्त होने से बचाया जाय। कविता खड़ी बोली में ही कीजिए पर व्रजमाधुरी का स्वाद न भुलाइए, उसमें भी बहुत कुछ लेने लायक़ है, सदियों तक व्रजभाषा कविता की भाषा रही है, आज भी अनेक सत्कवि उसी में कविता करते हैं। व्रजभाषा मुरदा भाषा नहीं है जैसा कि कुछ मनचले महाशय कह बैठते हैं, उसके बोलने वाले अब भी लाखों की संख्या में है। व्रजभाषा से वर्तमान खड़ी बोली का और उर्दू का घनिष्ट सम्बन्ध है, इस बात को मौलाना आज़ाद आदि अनेक भाषा-विज्ञानी विद्वानों ने मुक्तकण्ठ से स्वीकार किया है। उर्दू के पुराने-कवि मीर, सौदा और इन्शाकी कविता पढ़िये सब में व्रजभाषा के ठेठ मुहाविरे मिलेंगे, इन मुसलमान महाकवियों को व्रजभाषा के शब्दों से इतना ही प्रेम था जितना आज कल के कुछ हिन्दी-कवियोंको उनसे द्वेष है, यह अच्छे लक्षण नहीं हैं, सङ्कीर्णता या अनुदारता साहित्य की और भाषा की विघातक है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अनिष्ट साहित्य

हिन्दीमें पद्यकी अपेक्षा गद्यकी दशा सन्तोष-प्रद है उसमें उपयोगी और आवश्यक साहित्य का निर्माण हो रहा है जो हिन्दी के अभ्युदयका सूचक है। पर साथ ही कुछ साहित्य ऐसा भी बढ़ रहा है जो किसी प्रकार अभिनन्दनीय नहीं है, उससे सुधार और सुरुचि संचारके स्थानमें कुरुचि और अनाचार का प्रचार हो रहा है। ऐसे साहित्य के निर्माताओं की नीयतपर मैं हमला नहीं करता, वह समाज में फैले हुए अनाचार और दुराचारके मूलोच्छेद के उद्देश से ही ऐसा कर रहे हैं, यह माना जा सकता है, पर अनाचार के रोकने का यह उपाय अच्छा नहीं है, वायसकोपमें आत्महत्या, भीषण-डकैती आदि कुकर्मोंके जो रोमाञ्चकारी दृश्य दिखलाये जाते हैं अनुभवी मनोवैज्ञानिकोंकी सम्मतिमें उनका परिणाम नासमझ नवयुवकों पर अच्छा नहीं, बुरा ही पड़ता है, जिन कुकर्मोंके दृश्य वायस्कोप और सिनेमामें वह देखते हैं उनसे बचनेकी शिक्षा नहीं प्रत्युत उनमें (कुकर्मों) में फँसनेकी उत्तेजना मिलती है, समय-समय पर समाचारपत्रोंमें ऐसी दुर्घटनाओंके समाचार प्रकाशित होते रहते हैं। गन्दा साहित्य गन्दगीसे बचाता नहीं, उसमें और फँसाता है, दुराचारका नग्न-चित्र—(भले ही वह दुराचारसे बचानेके लिये चित्रित किया गया हो) देखनेवालेके मनोविकार का ही कारण होता है। किसी रोगके नुसख़ेमें रोगके निदानका वर्णन ऐसे मनोमोहक और आकर्षक ढंगसे नहीं लिखा जाना चाहिये जिसे पढ़कर भले चंगे आदमी भी उस रोगका अनुभव करनेके लिये उत्सुक हो उठें। समाजके दुर्भाग्यसे कुछ भड़कीले और चमकीले पत्र स्त्री-समाजमें भी सदाचार-विघातक और स्वेच्छाचारोत्पादक अनिष्ट साहित्यका प्रचार नाना उपायोंसे कर रहे हैं। यूरोपकेस्त्री-समाजकी निरङ्कुशता और स्वच्छन्दता —(जिसके हाथों यूरोप भी तंग है) भारतीत कुललनाओंमें भी लानेका भगीरथ प्रयत्न किया जा रहा है और बुरी तरहसे किया जा रहा है। यह भारतीय सदाचार और सभ्यता पर प्राणघाती आक्रमण है। भले आदमियोंको ऐसे पत्रोंका बाय-काट उसी तरह करना चाहिये जैसे विदेशी-वस्त्रका और मादक वस्तुओं का। यदि इसका प्रतिकार न किया गया तो एक दिन यह समाजको ले डूबेगा। शिक्षित-समाजकी निन्दनीय उपेक्षासे साहित्यमें गन्दगीका यह रोग दिन-दिन बढ़ रहा है, देशनेताओं का कर्तव्य है कि इससे समाजकी रक्षा करें, आश्चर्य है इस अनर्थको देखते हुए भी वह क्यों चुप हैं? इसके विरुद्ध घोषणा क्यों नहीं करते?

इस विषयमें प्रभावशाली पत्रोंकी उदासीनता भी कम आश्चर्यजनक नहीं है, इस ओर तुरन्त ध्यान देनेकी आवश्यकता है।

* * *

हिन्दी-उर्दू या हिन्दोस्तानी

बड़े-बड़े भाषाविज्ञानवेत्ता विद्वानोंकी सम्मति है कि उर्दू और हिन्दीमें कोई ऐसा भेद नहीं है, उर्दूकी उत्पत्ति ब्रजभाषासे हुई है, हिन्दीने भी उसीसे जन्म लिया है, दोनों जोड़ियाँ बहनें हैं, शुरू-शुरूमें हिन्दी-उर्दू एक थीं, लिपिका भेद था। प्राचीन उर्दू-कवियोंकी कविता पढ़िये, मीरतक़ी, सौदा और सैयद इन्शाने ठेठ हिन्दी महावरोंका इस अधिकतासे प्रयोग किया किया है कि आजकल के ठेठ हिन्दी-लेखक भी वैसा नहीं करते। आजकल इसपर विवाद होता है कि हिन्दी और उर्दू कोई बिलकुल जुदा भाषा हैं, उर्दूके बहुतसे हिमायती तो हिन्दीका अस्तित्व ही स्वीकार नहीं करते, कहते हैं कि हिन्दी नामकी कोई भाषा न पहले थी न अब

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

है, उर्दू के विरोधके लिये कुछ कलह-प्रिय हिन्दुओंने हिन्दीका नया बखेड़ा खड़ा कर दिया है। पर पहले लोग ऐसा न समझते थे, उनके मतमें ठेठ हिन्दी ही असली उर्दू थी। उर्दू-कविताके बाबा आदम मीरतक़ी एक जगह फ़र्माते हैं—

"क्या जानूं लोग कहते हैं किसको 'सुरूरे क़ल्ब'
आया नहीं है लफ़्ज़ यह हिन्दी ज़बां के बीच।"

दुनियाँकी मुसीबतोंसे मीर साहब हमेशा तंग रहे, उनके दिलका कमल कभी न खिला, यही बात उन्होंने शाइराना ढंगसे इस शेरमें ज़ाहिर की है, यानी 'सुरूरे-क़ल्ब' दिलकी खुशी मेरे लिये एक अजनबी-विदेशी शब्द है, मेरी हिन्दी ज़बानका नहीं, मैं इसके अर्थ (वाच्यसे) अपरिचित हूँ—अर्थात् मेरी कभी सुखसे भेंट नहीं हुई।

सय्यद इन्शाने 'रानी केतकी की कहानी' ठेठ हिन्दी में यह प्रतिज्ञा करके लिखी है—

'जिस में हिन्दी छुट किसी और बोली की पुट न मिले'।

सय्यद इन्शाके बयान में मौलाना आज़ाद ने आबेहयात में इसी कहानी के बारे में लिखा है—

"एक दास्तान नस्र उर्दू में ऐसी लिखी है कि एक लफ़्ज़ भी अरबी फ़ारसी का नहीं आने दिया, बावजूद इसके उर्दू के रुतबे से कलाम नहीं गिरा"—

यह बात ध्यान देने लायक है, इन्शाकी प्रतिज्ञा के अनुसार जिस कहानी में हिन्दी छुट और किसी बोली की पुट नहीं मिलने पाई, आज़ाद कहते हैं कि "एक लफ़्ज़ भी उस में अरबी फ़ारसी का नहीं आने दिया" उस कहानी की भाषा आज़ाद की राय में अच्छी ख़ासी फ़सीह उर्दू है, "उर्दू के रुतबे से कलाम नहीं गिरा" इसका इसके सिवाय और क्या मतलब है कि ठेठ हिन्दी ही असली उर्दू है।

सय्यद इन्शा की इस कहानी की भूमिका से एक बात और भी मालूम हुई कि उस वक्त भाषा या भाखा से हमारी इस वर्तमान खड़ी बोली या हिन्दी भाषा की ग्रहण नहीं होता था, 'भाखा' से व्रजभाषा मुराद थी और 'हिन्दी' से खड़ी बोली या उर्दू। इन्शा लिखते हैं—

'हिन्दीपन भी न निकले और भाखापन भी न छुट जाय"—

हिन्दी और उर्दूमें भेदकी बुनियाद उस वक्तसे पड़ी जबसे उर्दूमें अरबी-फ़ारसी शब्दोंका और हिन्दीमें संस्कृत शब्दोंका आधिक्य बढ़ा। जिसमें फ़ारसी-अरबीके शब्द अधिक हों, वह उर्दू और जिसमें संस्कृतके शब्दोंकी भरमार हो वह हिन्दी। इस तरह हिन्दी हिन्दुओं की और उर्दू मुसलमानोंकी ज़बान समझी जाने लगी। हिन्दी-लेखक, फ़ारसी अरबी से हिन्दी में आये हुए शब्दों का, बायकाट करने लगे और उर्दू लेखक ठेठ हिन्दी या संस्कृत शब्दोंका, यह तास्सुब यहाँ तक बढ़ा कि साधारण बोलबाल की भाषा पर भी इसका असर पड़ने लगा। इस सम्बन्धकी एक घटना मुझे अक्सर याद आजाती है। एक बार गाँव में कुए पर दो मुसलमान लड़कियाँ पानी भर रहीं थीं, एककी उम्र कोई बारह साल होगी दूसरी की दस साल, छोटी लड़कीने बड़ी लड़की से बातों बातों में कहा— 'रात मैंने ऐसा सपना देखा था'। इसपर बड़ी लड़कीने झिड़क कर कहा— "अरी ख़्वाब देखा था कह, सपना हिन्दू देखा करते हैं !! इस घटना के बहुत दिनों बाद हज़रत अकबरका एक पुरानी शेर देखने में आया—

"ऐ बिरहमन ! हमारा तेरा है एक आलम,
हम ख़्वाब देखते हैं तू देखता है सपना।"

उर्दू की जन्मभूमि दिल्ली मानी जाति है, दिल्ली व्रज-भूमिके समीप है, इसलिये व्रजभाषा और खड़ीबोली का जितना असर दिल्ली की उर्दू पर पड़ सका है उतना लखनऊ की शाखावाली उर्दू

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पर नहीं। लखनऊ वालों ने जान बूझकर प्रयत्न पूर्वक अपनी भाषा में दिल्लीकी भाषा से भेद किया है। मौलाना हाली अपने दीवानके मुक़द्दमे में लिखते हैं—

"× × × जब दिल्ली बिगड़ चुकी और लखनऊ से ज़माना मुवाफ़िक हुआ और दिल्लीके अक्सर शरीफ़ ख़ानदान और एकआधके सिवा तमाम नामवर शोरा लखनऊ ही में जा रहे और दौलत व सरवत के साथ उलूम क़दीमाने भी एक ख़ास हद तक तरक्क़ी की, उस वक्त़ नेचरल तौरपर पहले लखनऊको ज़रूर यह ख़याल पैदा हुआ होगा कि जिस तरह दौलत और मन्तिक़ व फ़िलसफ़ा वगैरा में हमको फ़ौक़ियत हासिल है, इसीतरह ज़बान और लबोलहजे में भी हम दिल्ली से फ़ायक़हैं, लेकिन ज़बान में फ़ौक़ियत साबित करने के लिये ज़रूर था कि अपनी और दिल्ली की ज़बान में कोई अमर माबउल् इम्तियाज़ पैदा करते चूंकि मन्तिक़ व फ़िलसफ़ा न लिब व इल्मे कलाम वगैरा की मुमारसत ज्यादा थी, खुद बखुद तबीयतें इस बात की मुकतज़ी हुई कि बोलचालमें हिन्दी अलफ़ाज़ रफ्ता-रफ्ता तर्क और उनकी जगह अरबी अलफ़ाज़ कसरत से दाखिल होने लगे, यहाँ तक कि सीधी सादी उर्दू उमरा और आहले इल्म को सोसायटी में मतरूक ही नहीं होगई बल्कि जैसा सक़ात से (मौतबिर लोगों से) सुना गया है मायूब और बाज़ारियों की गुफ्तगू समझी जाने लगी और यही रंग रफ्ता-रफ्ता नज़्म और नसरपर भी ग़ालिब आगया"।—

यह तो पुरानी बात हुई जब लखनऊ वालों ने दिल्ली की उर्दूसे अपनी उर्दू की शान बढ़ाई थी, आजकल के मुसलिम उर्दू लेखकोंने तो इस कला में और भी कमाल कर दिखाया है। इनके मुसलिम पत्रोंने तो विदेशी भावों और शब्दों के प्रचारका ठेकाही ले रक्खा है, उन्हें पढ़ते हैं तो मालूम होता है कि भारत के नहीं अरब फ़ारिस या टर्की के पत्र पढ़ रहे हैं, उर्दू भाषाको क्लिष्ट और भ्रष्ट करने में मुसलिम पत्र (और उनकी देखा देखी कुछ हिन्दु उर्दू पत्र भी) एक दूसरेसे बढ़े जा रहे हैं उर्दू में जो शब्द प्रचलित हो चुके थे उनकी जगह भी ढूंढ ढूंढ कर विदेशी अरबी टर्की के शब्द भरती किये जारहे हैं— 'एडीटर' और 'एडीटरी' के स्थान में 'मुदीर' और 'इदारत' लिखा जाता है, बायकाट या बहिष्कार की जगह 'मक़ातअ' को मिली है, असहयोग से 'तर्के-मवालात' हो ही चुका है! किसी भी मुसलिम पत्र को देखिये दर्जनों शब्द नये और अप्रचलित मिलेंगे, जिन्हें सर्वसाधारण तो क्या पढ़े लिखे मुसलमान पाठक भी कठिनता से समझते हैं और नहीं भी समझते। एक मुसलमान समालोचक के कथनानुसार—

"वह एक नई उर्दू का इन्तज़ाम कर रहे हैं जिसको उनकी औलाद भी महफूज नहीं रख सकती"—

इस तरह यह मुसलिम पत्र हिन्दी ही से नहीं, उर्दू से भी उर्दू को अलग करने में दिनों दिन बड़ी मुस्तैदी से लगे हैं। वह ख़ालिस मुसलिम संस्कृति के प्रचारक हैं, भारतीयता से उनका इतना ही वास्ता है कि भारतमें प्रकाशित होते हैं और बस। हिन्दी-पत्रों में उर्दू और फ़ारसी साहित्य पर बराबर लेख निकलते हैं, उर्दू कविताएँ उद्धृत होती है। हिन्दी में प्राचीन और नवीन उर्दू काव्यों का सारसंग्रह प्रकाशित होता है, पर उर्दू मासिक पत्रों में हिन्दी या संस्कृत साहित्य की चर्चा तक नहीं की जाती, इतने पर भी सारा दोष हिन्दुओं और हिन्दी-पत्रोंके ही सिर मढ़ा जाता है! ज़माने के जुबली नंबर की आलोचना करते हुए, गोरखपुर के मुसलिमपत्र 'मशरिक़' ने टिप्पनी चढ़ाई है—

"हम उन सख़ुनसंज न सख़ुनशनास हिन्दु असहाबके शुक्रगुज़ार है जो बावजूद मालवी-परस्ती और हिन्दुसभाके इक्तदारके उर्दू अदबके शैदा और हिन्दु-मुसलिम इत्तहादके सच्चे आशिक़ नज़र आते हैं।"

मशरिक़ के सम्पादक को इस पर सन्तोष नहीं है कि एक हिन्दुने उर्दू-साहित्य की इतनी सेवा

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

की है, जितनी किसी मुसलमान लेखक ने भी नहीं की, वह चाहता है कि सब हिन्दु इसी तरह उर्दू ही के प्रचार में लग जायँ, वह मुसलमान भाइयों से यह अनुरोध नहीं करता कि वह भी हिन्दी की ऐसी ही सेवा करें जैसे हिन्दू उर्दू की करते हैं, यदि हिन्दु अपनी संस्कृति की रक्षा और अपने साहित्य का प्रचार करते हैं तो "मालवीय-परस्ती" में मुब्तला है! एकता के विरोधी हैं! कैसा विचित्र निष्पक्ष न्याय है। अतुलनीय तर्क है।

* * *

'हिन्दोस्तानी'

हिन्दी और उर्दू के विवाद-वृक्षमें एक नयी शाखा फूटी है, एक नवीन आन्दोलन उठा है, हिन्दु मुसलमानोंको हिन्दी और उर्दू के लिये लड़ता देख कर दिल्लीकी एकता-परिषद्में लीडरोंने फ़तवा दिया है— भाषाका नया नामकरण-संस्कार किया है— कि न हिन्दी कहो, न उर्दू, दोनोंका एक नाम हो, "हिन्दोस्तानी"। अच्छी बात है, पर इससे क्या यह विवाद शान्त हो जायगा? पञ्चों का कहा सिर माथे पर परनाला तो वहीं बहेगा! भोले भाले हिन्दू भाई भले ही मान जायँ पर क्या मुसलमान भाई इसे स्वीकार नहीं करेंगे? जब वह सदियोंसे प्रचलित उस हिन्दी नामका विरोध करते हैं जिसे मीरतकी, इन्शा और आज़ाद जैसे मुसलिम विद्वानों ने उचित समझकर प्रयुक्त किया है, फिर वह उर्दू की जगह 'हिन्दोस्तानी' को कैसे दे देंगे! आख़िर 'हिन्दी' नाम तो मुसलमानोंने ही रक्खा था, बहुत से हिन्दुविद्वान् इस नामके विरोधी थे, वह इसकी जगह देवनागरी, भाषा या 'आर्यभाषा' कहना पसन्द करते थे, आर्यभाषाने तो हिन्दी नामका बहुत दिनों तक विरोध किया था, पर अब उसने भी समझौतेके ख़यालसे इसे स्वीकार कर लिया है। 'हिन्दोस्तानी' नाम तो हमारे शासकोंके दिमाग़ की उपज है, इसकी अनुपादेयतामें यही एक कारण पर्याप्त है। यदि यह नया नाम दो जातियोंकी एकताका साधन होता तो वह इसे पसन्द करके अपनी ओरसे क्यों पेश करते! आश्चर्य है यह मोटी बात एकता-परिषद्वाले महानुभावोंको क्यों न सूझी! सच है—

"योरपवाले जो चाहें दिलमें भरदें,
जिसके सर पै जो चाहें तोहमत धरदें।
बचते रहो इनकी तेज़ियों से 'अकबर'
तुम क्या हो खुदाके तीन टुकड़े करदें।"

गवर्नमेंटने अपनी भेद-नीतिका परिचय इसी प्रकार अनेक बार दिया है, मनुष्य-गणनामें नये-नये कल्पित नामोंसे अनेक जातियाँ खड़ी करदी हैं। हिन्दोस्तानी नामसे हिन्दी-उर्दू का भेद दूर न होगा बल्कि एक तीसरी भाषा और उत्पन्न हो जायगी। जिसे 'सरकारी बोली' कहना उचित होगा। 'स्टैन्डर्ड टाइम'की तरह गवर्नमेंट स्टैन्डर्ड-भाषा भी प्रचलित करना चाहती है, यह इसीका सूत्रपात्र है, यदि यह चाल चल गई तो हिन्दी-उर्दू-साहित्यका सर्वसंहार हो जायगा। उर्दू-हिन्दी दोनों 'बहक़ सरकार ज़ब्त' हो जायँगी। यह नया नाम किसी किसी प्रकार स्वीकार करने योग्य नहीं है, इस प्रस्तावका प्रतिवाद होना चाहिये। "हिन्दी" जैसे व्यापक और प्रचलित नामको छोड़कर जिसके प्रयोगसे समस्त साहित्य भरा पड़ा है, जो अनेक संस्थाओंके नामोंमें इस प्रकार सम्मिलित हो चुका है कि पृथक् नहीं किया जा सकता, एक नया और सन्दिग्ध नाम ग्रहण करना नितान्त अनुचित है। 'हिन्दी' कहनेसे केवल हिन्दीभाषा ही का बोध होता है 'हिन्दोस्तानी'में यह बात नहीं है, इसके

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

साथ जब तक 'भाषा' 'ज़बान' या 'बोली' शब्द न जोड़ा जायगा, काम न चलेगा, अन्धेको न्यौतकर दो जने बुलाने पड़ेंगे !

* * *

बिहारमें उर्दूका विवाद

बिहारमें जो हिन्दी-उर्दूका आन्दोलन उठा है इसमें भी गुप्त रूपसे गवर्नमेंटकी भेद-नीति काम कर रही है, मुसलमान भाई ज़रा शान्तचित्त होकर इसपर विचार करें तो उन्हें मालूम हो जायगा कि इससे लाभके बदले हानि ही होगी, यदि बिहारमें यह आन्दोलन सफल होगया तो पंजाब और सिन्धमें हिन्दी और नागरी लिपिके लिये आन्दोलन प्रारम्भ होगा, जहाँ इस समय उर्दूका साम्राज्य है। बिहारमें तो मुसलमानोंको उर्दू पढ़नेकी स्वतन्त्रता पहले ही से है, अदालतोंकी भाषा भी उर्दू ही है, सिर्फ़ लिपि नागरी है, इससे अच्छा समझौता और क्या होगा ! पंजाब और सिन्धमें तो इतना सुभीता भी नहीं कि हिन्दू अपने बच्चोंको सरकारी स्कूलोंमें हिन्दी पढ़ा सकें, वहाँ तो 'श्रीमान्' और 'निवेदन' शब्दोंके प्रयोगपर भी आपत्ति की जाती है ! यदि बिहारमें अल्पसंख्यक मुसलमानोंको यह अधिकार मिलना न्यायसंगत समझा जाता है तो फिर सिन्ध और पंजाबमें हिन्दुओंको यही अधिकार क्यों न दिया ? पंजाबमें हिन्दुओंके सब पत्र उर्दूमें ही निकलते है, क्या बिहारके मुसलमान भाई उसी अनुपातसे बिहारमें हिन्दी-पत्र निकालनेको तैयार हैं ?

साहित्य-सम्मेलनको स्वागत-समितिके मन्त्री महोदयने मुझे सूचना दी थी कि सभापतिके भाषणमें हिन्दी-उर्दूके नये विवादपर भी (जो बिहारमें इस समय चल रहा है) कुछ अवश्य कहा जाय, इस आवश्यक विषयपर प्रकाश डालनेका मेरा विचार स्वयं भी था, इसके लिये उन्होंने 'देश'में इस विषयपर प्रकाशित लेखमाला पढ़नेकी सम्मति भी दी, तदनुसार मैंने अपने विद्वान मित्र प्रोफ़ेसर बदरीनाथ वर्मा एम. ए. काव्यतीर्थ 'देश'-सम्पादक को 'देश'के वे अङ्क भेजनेके लिये लिखा, उन्होंने ढूंढ-भालकर वे अङ्क भी भेजे और बिहार-प्रान्तीय साहित्य-सम्मेलनके सभापतिके पदसे दिए हुये अपने सुन्दर भाषणकी कापी भेजनेकी भी कृपा की, मैंने उस लेखमाला और भाषणको पढ़ा तो मुझे वह बहुत ही महत्त्वपूर्ण और पठनीय प्रतीत हुआ। हिन्दीभाषा और देवनागरी लिपिपर इतना विशद विवेचन हिन्दीमें किसी जगह देखनेमें नहीं आया, विद्वान् लेखकने भाषा और लिपिके प्रश्नकी चतुरस्र मीमांसा बड़ी योग्यतासे की है, इस विषयपर इससे कम कहनेसे काम नहीं चल सकता, इस कारण मैंने अपने भाषणमें इसपर विस्तारसे कहने का विचार छोड़ दिया, व्यर्थ पिष्ट-पेषण होता, कोई बात इस सम्बन्धमें कहनेको बाक़ी नहीं रही थी, मुझे इतना अवकाश और समय भी न था। मैंने वर्माजीसे अनुरोध किया कि यह लेखमाला पुस्तकाकार प्रकाशित करके सम्मेलनके अवसरपर वितीर्ण की जाय तो भाषा और लिपिकी कठिन समस्याको सुलझानेमें सुगमता होगी। हर्षकी बात है कि वर्माजीने मेरी बात मान ली—वह लेखमाला पुस्तकाकार प्रकाशित कर दी। सम्भव है उसके किसी अंशपर किसीको मतभेद हो, पर विवेचना बड़ी सहृदयता और व्यापक दृष्टिसे की गयी है, समझौतेकी कोई बात सुझानेसे रह नहीं गयी है, राष्ट्रभाषा और राष्ट्रलिपिके बारेमें किसीको कुछ कहनेकी गुंजाइश नहीं छोड़ी है। मेरा अनुरोध है कि प्रत्येक हिन्दी-हितैषी और देशभक्त उसे ध्यानसे पढ़े और राष्ट्रभाषा तथा राष्ट्रलिपिके इस

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विवादको (जो दुर्भाग्यसे इस समय विशेष रूपसे बिहारमें चल रहा है) समुचित रूपसे शान्त करनेमें सहायक हो।

हमारे मुसलमान भाइयोंको यह भ्रम होगया है कि हिन्दू उर्दूका विरोध करनेके लिये ही हिन्दीका प्रचार कर रहे हैं, उन्हें जानना चाहिये कि आज भी लाखों हिन्दू उर्दू पढ़ते-लिखते हैं, हिन्दुओंने उर्दूकी सेवा मुसलमानोंसे कम नहीं की, उर्दूका सर्वश्रेष्ठ मासिकपत्र 'ज़माना' एक हिन्दू विद्वान्की सम्पादकता ही में निकलता है। हिन्दुओंमें आज भी मुन्शी सूर्यनायण साहब 'महर' और पण्डित ब्रजमोहन दत्तात्रय 'कैफ़ी' और 'बिस्मिल' जैसे उर्दूके महाकवि मौजूद हैं, दूर जानेकी क्या ज़रूरत है आपके इस मुजफ़्फ़रपुरमें ही श्रीयुत प्रोफ़ेसर अवधबिहारीसिंहजी अरबी-फ़ारसीके पारदर्शी विद्वान् वर्तमान हैं, जिनके जोड़के विद्वान् मुसलमानोंमें भी दोचार ही निकलेंगे! क्या मुसलमान भाई बतलाते हैं कि उनमें संस्कृत और हिन्दी के कितने पण्डित हैं? कितने कवि और लेखक हैं, वह हिन्दी की कितनी सेवा कर रहे हैं! भारत के करोड़ों मुसलमानों में श्रीयुत 'मीर' मूनिस और ज़हूरबख़्शके सिवा हिन्दी-सेवा के लिये और कितने सज्जनों के नाम लिये जासकते है! मैं मुसलमान भाइयों पर ही इसका इन्साफ़ छोड़ता हूँ और उनसे पूछता हूँ—

"तुम्हें तक़सीर मेरी है,
कि मुसलिम की ख़ता लगती,
मुसलमानों! ज़रा इन्साफ़,
से कहना ख़ुदा लगती।"

* * *

अपने मुसलमान भाइयों का ध्यान महाकवि अकबरकी इस सारगर्भित और तथ्यपूर्ण उक्तिकी ओर दिलाता हूँ और प्रार्थना करता हूँ कि वह इस सचाई को समझें—

"हिन्दू व मुसलिम एक हैं दोनों,
यानी यह दोनों एशियाई हैं।
हम-वतन हम ज़बां, व हम क़िस्मत,
क्यों न कह दूं कि भाई भाई हैं।"

* * *

शिक्षा का माध्यम

कोई देश भी मातृभाषा को शिक्षा का माध्यम बनाये बिना सुशिक्षित नहीं हो सकता, भारत को छोड़ कर संसार का कोई ऐसा अभागा देश नहीं है, जहाँ विदेशी भाषा द्वारा शिक्षा दी जाती हो, भारत के सरकारी विद्यालयों में सब विषयों की उच्च-शिक्षा अंग्रेज़ी ही में दी जाती है, जिस से विद्यार्थियों का आधे से अधिक समय भाषा की तोता रटन्त में नष्ट हो जाता है। उच्चशिक्षा की समाप्ति तक वह अपने, स्वास्थ्य से हाथ धो बैठते हैं। फिर भी उन विषयों में उतने निष्णात नहीं होते। यहाँ जिन विद्यालयों में शिक्षा का माध्यम मातृभाषा है, उनमें काँगड़ी का गुरुकुल विश्व-विद्यालय मुख्य है, यहाँ सब विषयों की शिक्षा मातृभाषा हिन्दी ही में दी जाती है, इसीसे उच्च शिक्षा का जो कोर्स दूसरे विद्यालयों में ६ वर्ष में पूरा होता है, वह इस गुरुकुल में ४ वर्ष में ही समाप्त हो जाता है। दूसरे विश्व विद्यालयों में जो कई पुस्तकें बी० ए० के कोर्स में नियत हैं वह यहाँ एफ० ए० में पढ़ाई जाती हैं और विद्यार्थी बड़ी सफलता से उन में उत्तीर्ण होते हैं, बाहर के विद्वान् परीक्षकों ने अनेक बार इस पर सन्तोष प्रकट किया है और इस बात को स्वीकार किया है कि मातृभाषाके माध्यम ही का यह महत्व है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

निःसंन्देह गुरुकुल के स्नातकों की अंग्रेज़ी भाषा में उतनी ऊंची योग्यता नहीं होती जितनी सरकारी विद्यालयों के ग्रेजुएटों में, पर अंग्रेजी भाषा में असाधारण योग्यता-लाभ तो शिक्षा का उद्देश नहीं है !

गवर्नमेण्ट तो अंग्रेज़ी भाषा की शिक्षा किसी और उद्देशसे देती है, उस उद्देश की व्याख्या महाकवि अकबर ने की है—

"नौकर को सिखाते हैं मियाँ अपनी ज़बान,
मतलब यह है कि समझे उनके फ़र्मान।
मक़सूद नहीं मियाँ की सी अक्ली-तमीज़,
इस नुक्ते को क्या वह समझें जो हैं नादान"।

* * *

दुर्भाग्य है कि राष्ट्रिय-शिक्षा का इतना देश व्यापी घोर आन्दोलन होने पर भी यह 'नादानी' अभी दूर नहीं हुई। अंग्रेज़ी भाषा की शिक्षा के पक्षपातियों ने 'मियाँ' (स्वामी, सरकार) के मतलब को अब तक समझा नहीं, शिक्षाप्राप्ति का लक्ष्य अभी तक पास होकर अंग्रेज़ी का ग्रेजुएट बनना ही समझा जा रहा है, अर्थात्—

अस्माल' नहीं 'ग्रेट' होना अच्छा।
दिल होना बुरा है पेट होना अच्छा।
पण्डित हो कि मौलवी हो दोनों बेकार,
इन्सान को ग्रेजुएट होना अच्छा।

अँग्रेजी भाषाके 'ग्रेजुएट' बनने का यह महा-मोह शिक्षाके लिये सचमुच साढ़सती का 'शनैश्चर' है। जब तक इससे पिंड न छूटेगा भारत शिक्षित न होगा, और यह तभी होगा जब सब विषयों की शिक्षा मातृभाषा द्वारा दी जायगी, समस्त देशके लिये शिक्षा का माध्यम बनने की पात्रता यदि किसी भाषा में है तो राष्ट्रभाषा-हिन्दी ही में है। शिक्षा-विज्ञान के समस्त विद्वान् इस पर सहमत हैं। खेद है कि इस महत्त्वपूर्ण विषय के लिये जिस भगीरथ-प्रयत्न की आवश्यकता है वह नहीं होरहा, कोरे प्रस्ताव पास होकर ही रह जाते हैं। हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन का और शिक्षाप्रेमी देशभक्तों का परम कर्तव्य है कि अपनी सब शक्ति हिन्दी को शिक्षाका माध्यम बनाने में लगावें।

हिन्दी के साथ ही हमें अपनी अमरभाषा देव-वाणी संस्कृत को भी न भुलाना चाहिए, उस की शिक्षाके बिना हिन्दुजाति की गति नहीं, समस्त आर्यभाषाओं की जननी संस्कृत ही है, हमारे पूर्वजों का इतिहास, हमारी संस्कृति का आदर्श संस्कृत में ही है, हिन्दी का शब्द-भण्डार भरने के लिये भी संस्कृत शिक्षा की अत्यन्त आवश्यकता है। यही नहीं, अँग्रेजी भाषा को जो स्थान भारत में इस समय प्राप्त है वह संस्कृत को मिलना चाहिए, भारत के शिक्षित समुदाय की एक भाषा संस्कृत ही हो सकती है। मैसूर के विद्वान् मुसलमान दीवान श्रीयुत असमाईल साहब ने इस बात को मुक्तकण्ठ से उस दिन भरी सभा में स्वीकार किया है।

* * *

हिन्दी-साहित्यकी प्रगति

यह देखकर सन्तोष और हर्ष होता है कि हिन्दीका साहित्य उत्तरोत्तर उन्नति कर रहा है। हिन्दीके मासिक-पत्र और पत्रिकाएँ, सरस्वती, माधुरी, सुधा, त्यागभूमि, विशाल-भारत, समन्वय, विद्यार्थी और महारथी इत्यादि साहित्यकी आदरणीय सेवा कर रहे हैं। हिन्दीके दैनिक-पत्रोंकी दशा भी बहुत सन्तोषप्रद है, हमारे आज, स्वतन्त्र और विश्वमित्र, किसी भी प्रान्तीय-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

भाषाके दैनिकोंसे मुक़ाबला कर सकते हैं। हिन्दू-संसार, वर्तमान और अर्जुनका दम भी दैनिकोंमें ग़नीमत है। साप्ताहिक-पत्रोंमें प्रताप, अभ्युदय, श्रीकृष्णसन्देश, देश, स्वदेश, लोकसंग्रह, शिक्षा, हिन्दी बङ्गवासी, श्रीवेंकटेश्वर समाचार, कर्मवीर, आर्यमित्र, महावीर और सैनिक सभी अपनी-अपनी जगह सफलतासे सँभाले हुए हैं—राष्ट्रकी और राष्ट्रभाषाकी उन्नतिमें तत्पर हैं। हास्य-रसकी पूर्तिमें 'मतवाला' मुख्य है, इसकी नोक-झोंक "अवधपञ्च" की याद दिलाती है। मतवाला बेहोशीमें भी होशियारीका काम कर रहा है। 'हिन्दू-पञ्च'भी इस मैदानमें उसके पीछे-पीछे है। शिशु—साहित्यके निर्माणका बालसखा, बालक, खिलौना, और शिशु अभिनन्दनीय उद्योग कर रहे हैं। साहित्य-प्रचारक संस्थाओंमें काशीका ज्ञानमण्डल, प्रयागका इंडियन-प्रेस, लखनऊकी गंगा-पुस्तक-माला, कलकत्तेकी हिन्दी-पुस्तक एजेन्सी, बम्बईका हिन्दी-ग्रन्थरत्नाकर कार्यालय और लहेरियासरायका पुस्तक-भण्डार, हिन्दीका भण्डार भर रहे हैं, अजमेरमें सस्ता-साहित्य-मण्डलने साहित्यको सस्ता और सुलभ करनेका बीड़ा उठाया है।

काशीकी नागरी-प्रचारिणी-सभा तो हिन्दी-आन्दोलनकी जननी ही है, नागरीके प्रचारका सर्वाधिक श्रेय उसे ही प्राप्त है, अनेक प्राचीन ग्रन्थोंके प्रकाशनके अतिरिक्त हिन्दी-पुस्तकोंके खोजका काम भी उसीने सबसे पहले प्रारम्भ किया है। उसकी त्रैमासिक-पत्रिका भी हिन्दीमें अपने ढंगकी एक ही है। नागरी-प्रचारिणीके सर्वस्व उद्योगवीर श्रीश्यामसुन्दरदासजीकी हिन्दी-सेवाके सम्बन्धमें जितनी प्रशंसा की जाय थोड़ी है।

यह देखकर हर्ष होता है कि कुछ उच्च-कोटिके विद्वान् भी हिन्दीको अपनाने लगे हैं—यानी पी.एच. डी. उपाधिधारी विद्वान् भी अब हिन्दीमें लिखने लगे हैं। श्रीयुत डाक्टर मंगलदेव शास्त्री एम. ए. पी. एच. डी. ने 'भाषा-विज्ञान'पर पुस्तक लिखकर हिन्दीको गौरवान्वित किया है।

व्रजभाषाके विरोधकालमें भी इस बीचमें व्रजभाषाके दो उत्तम काव्य-ग्रन्थ प्रकाशित हो ही गये—इससे पता चलता है—"अभी कुछ लोग बाक़ी हैं जहाँमें" कविवर और सुहृद्वर श्रीयुत रत्नाकरजीके "गंगावतरण" ने अपने अवतरणसे कविता-क्षेत्रको गंगाके समान पवित्र किया है, गंगावतरण एक उत्तम कोटिका पठनीय काव्य है। श्रीवियोगी हरिजीको 'वीरसतसई' तो श्रीमंगला-प्रसाद-पारितोषिक पाकर मैदान मार ही चुकी है, उसकी चर्चा तो इस प्रसंगमें पुनरुक्त है। श्रीयुत पं० कृष्णविहारी मिश्रजी भी इस प्रसंगमें स्मरणीय हैं, वह अपने समालोचकमें व्रजभाषाके प्राचीन साहित्यकी चर्चा बराबर करते रहते हैं।

इस प्रकार कुल मिलाकर हिन्दी-साहित्यकी दशा सन्तोष-जनक है, फिर भी किसी बातकी कमी है जो जीमें खटक रही है, हिन्दीमें सितारे-हिन्द, भारतेन्दु, पं० रुद्रदत्त, बा० बालमुकुन्द गुप्त और श्रीगुलेरीजी जैसे विद्वान् और हृदयहारी आदर्श लेखक न जाने अब क्यों पैदा नहीं होते! इस दृष्टिसे तो हमारा साहित्य-शकट वहीं है, जहाँ यह लोग छोड़ गये थे!

* * *

साहित्य-सम्मेलन

ने बहुत काम किया है। पर अभी दिल्ली दूर है। जो कुछ अब तक हुआ है वह भूमिकामात्र है। परीक्षा और प्रचारके काममें सम्मेलनको अच्छी सफलता प्राप्त हुई है, इससे हिन्दी-संसारमें एक जागृतिसी पैदा हो गई है। सम्मेलनके नाम और

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कामका प्रचार पर्याप्त हो चुका, अब जो कर्तव्य है उसकी ओर अग्रसर होना चाहिये। सम्मेलनके सामने इस समय मुख्यकाम ये हैं—हिन्दीविद्यापीठ, संग्रहालय और इतिहासका निर्माण और प्राचीन साहित्यका प्रकाशन। श्रीअवध उपाध्यायजीके सहयोगसे विद्यापीठकी शिक्षाका काम चल रहा है, कृषिके लिये भूमि भी बहुत अच्छी मिल गई है, आशा है शीघ्र ही कृषिका कार्य चल निकलेगा।

संग्रहालय और इतिहासके लिये अभी कुछ नहीं हुआ, ख़ाली प्रस्ताव ही होकर रह गये हैं। यह दोनों ही काम जितने आवश्यक हैं, उतने ही व्यय और परिश्रमसाध्य हैं, इसके लिये विद्वानोंकी और उदार दानियोंकी समवेतशक्ति अपेक्षित है, केवल सम्मेलन-कार्यालय और मन्त्री-मण्डल ही को इसके लिये उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता, मन्त्री-मण्डलके हाथमें ख़ाली दफ़्तरके सिवा और क्या है? कोई भी मन्त्री-मण्डल हो जबतक उसे बाहरसे यथेष्ट सहायता न मिलेगी कुछ न होगा। इसमें स्वार्थ-त्यागी और सुसमर्थ सहायकोंकी आवश्यकता है जो सम्मेलनको अभी प्राप्त नहीं हो सकी, सम्मेलनके हितैषियोंका कर्तव्य है कि परस्परके सब मतभेद भुलाकर संग्रहालयकी पूर्ति और इतिहास-निर्माणके महत्व-पूर्ण कार्यमें अपनी सारी शक्तियों समेत लग जायँ। दक्षिण-भारतमें हिन्दी-प्रचारके कामसे सम्मेलनको छुट्टी मिल गई है, यह उचित हुआ या अनुचित इसपर विचार करनेसे अब कुछ लाभ प्रतीत नहीं होता। जो कुछ हुआ हो गया, उसकी चिन्ता छोड़कर सम्मेलनको अब अपनी शक्ति प्राचीन साहित्यके उद्धार और प्रचारमें लगा देनी चाहिये। सबसे पहले "सूरसागर"का सम्पादन और प्रकाशन आवश्यक है, यह ग्रंथ-रत्न आजकल अप्राप्य हो रहा है, सूरसागरका एक भी प्रामाणिक और विशुद्ध संस्करण आजतक प्रकाशित नहीं हो सका, यह साहित्य-सेवियोंके लिये दुर्भाग्यकी बात है। प्राचीन साहित्यके और भी अनेक सद्ग्रन्थ छिपे पड़े हैं, जो अबतक एकबार भी कहीं प्रकाशित नहीं हुए, कुछ ऐसे हैं जो कभी प्रकाशित हुए थे, पर अब नहीं मिलते, उनके विशुद्ध सुलभ और सटिप्पन संस्करणोंका प्रबन्ध सम्मेलनको करना चाहिये। प्राचीन-साहित्यके पढ़नेकी रुचि दिन-दिन बढ़ रही है—पर पुस्तकें नहीं मिलतीं, उनके पढ़ानेवाले भी कम हैं, इसके लिये ब्रजभाषाका एक कोष बनना चाहिये जिसकी सहायतासे साहित्य-प्रेमी प्राचीन साहित्यको पढ़ सकें और समझ सकें।

प्राचीन-साहित्यका उद्धार तथा नवीन उपयोगी साहित्यका निर्माण और उसका प्रचारही साहित्य-सम्मेलनका मुख्य काम है, जिसकी ओर सम्मेलन ने अभी तक समुचित ध्यान नहीं दिया, सम्मेलन की सब शक्ति अबतक केवल प्रचार कार्य ही में लगती रही है, अब उसे अपने मुख्य उद्देश्यकी ओर अग्रसर होना चाहिये, इस अवसरपर यदि कर्तव्य-कार्यकी कोई योजना तैयार करके उसे कार्य रूपमें परिणत करनेका उपाय सोच लिया जाय तो अच्छा हो, नये-नये प्रस्ताव प्रस्तुत करनेका काम कुछ दिनोंके लिये स्थगित रहे तो कोई हानि नहीं, कुछ काम होना चाहिये, इसीमें सम्मेलनकी सफलता है।

आप सब सज्जनोंसे यही प्रार्थना करके मैं अपना वक्तव्य समाप्त करता हूँ, और जो कुछ असम्बद्ध कह गया हूँ, उसके लिये क्षमा चाहता हूँ।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मुहम्मद साहब का जीवन-चरित्र

(लेखक—एक विद्यार्थी)

ईसाइयत के प्रचार के अनन्तर यह कहना कठिन था कि कोई दूसरा भी धर्म स्थापित होगा। क्योंकि ईसाइयत के बाद इसलाम के अतिरिक्त अन्य कोई धर्म स्थापित भी नहीं हुआ, इससे यही समझ पड़ता है कि इस धर्म का उदय मानव-समाज की किसी आवश्यक माँग को पूरा करने के लिए ही हुआ होगा। ये माँगे क्या थीं, और इन को पूर्ण करना मुहम्मद के हिस्से में कैसे पड़ा, इस का भी हमें पता लगाना होगा। इसलाम के विषय में यह विचार करते हुए यहूदी तथा ईसाई धर्म के इतिहास को दृष्टि में रखना होगा क्योंकि एक प्रकार से इन्हीं ने इस धर्म को जन्म दिया।

मुहम्मद से पूर्व अरब की अवस्था

अरब लोगों के एक तरफ एशिया तथा दूसरी तरफ अफ्रिका था। अतः इन दोनों जातियों के धार्मिक विचारों से उन का प्रभावित होना स्वाभाविक था। मुहम्मद से पहले ही अरबियों में मूर्तिपूजा, पशुपूजा, प्रकृतिपूजा, नक्षत्र-पूजा तथा वीरपूजा प्रचलित थी। अपने समय की वर्तमान अवस्थाओं को दृष्टि में रखते हुए ही मुहम्मद ने अपने नवीन कार्य को प्रारम्भ करना था। अपने कार्य को सफल बनाने में मुहम्मद को जो कृतकार्यता प्राप्त हुई उसका इसी से अनुमान किया जा सकता है कि उसने तथा उस के अनुयायियों ने एक सर्वथा अज्ञात भाषा को ऐसे उच्च पद पर पहुंचा दिया जो रोमन-साम्राज्य के समय लैटिन भाषा को प्राप्त था। अब भी मुसलमानों तथा अरब के लोगों की तरफ़ से नये-नये मैदान मारे जाते हैं, और कीर्ति पताकाएँ फहरायी जाती हैं।

अरबों के देवी-देवता

अरब की प्रारम्भिक जातिएँ अलग-अलग टुकड़ों में रहती थी, अतः उनके देवता-सम्बन्धी विचारों में भी पर्याप्त विभिन्नता थी। प्रत्येक जाति के अपने-अपने देवता थे, जिन का उसी जाति के लोगों से विशेष सम्बन्ध था और जो युद्धों में दूसरी जाति के देवताओं से लड़ते थे। ज्यों-ज्यों इन जातियों का पारस्परिक मिलाप होता गया त्यों-त्यों एक ही जाति में अनेक देवताओं की पूजा भी प्रारम्भ हो गई। बहुत सम्भवतः जाति के देवता कोई पुरातन पुरुष ही होते थे जिन्हें देवता का स्थान मिलता था। अरब के लोगों में विश्वास था कि उन का अपने देवताओं से किसी खास प्रकार का रुधिर का सम्बन्ध है अतएव वे रुधिर से सम्बद्ध देवता की सहायता करना तथा खून का बदला खून से लेना एक धार्मिक कृत्य समझते थे। इन के देवता कुछ देवी के रूप में और कुछ देव के रूप में पूजे जाते थे जिन में से कई स्त्री-देवता समयान्तर में पुरुष-देवता के रूप में परिवर्तित हो गये। नैपेतियन अरब जाति की देवी 'अल्लात' थी जो अन्य देवताओं की माता समझी जाती थी, एक दूसरी देवी का नाम 'अलऊज़ा' था। देवियों की पूजा में जैसा सर्वत्र पाया जाता है, आचार की शिथिलता इन लोगों में भी पायी जाती थी। अरब के लोग ख़ाना-बदोश थे। वे शहर के किसी देवता की पूजा करने के लिये विशेष

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

समयों में यात्रा किया करते थे; जिस का परिणाम यह हुआ कि शहरों के देवताओं की पूजा प्रधान हो गई, मन्दिर बन गये, पुजारी नियत हो गये, पूजा के लिए उपहार लाये जाने लगे। इन उपहारों को कभी वृक्ष पर टाँग दिया जाता था और यदि कभी वह रुधिर अथवा अन्य किसी द्रव के रूप में होता तो उसे पवित्र पत्थर पर डाल दिया जाता था।

जिन का विचार

इस स्थल पर यह कह देना भी प्रकरणान्तर न होगा कि अरब लोगों में विश्वास था कि प्रकृति में भूत-प्रेत और जिन भरे हुए हैं जो इच्छानुसार भिन्न-भिन्न रूप धारण कर सकते हैं। अतएव इसलाम ने अन्य धर्मों के सब देवताओं को जिनों का रूप दे दिया। अरब के लोग बड़े-बड़े रेगिस्तानों में रहते थे जिन में पहाड़ और गुफाएँ भी कम न थीं। इस प्रकार की प्राकृतिक परिस्थिति भूत-प्रेतों के विचार के लिए बहुत उपजाऊ है। अतएव जिनों के विचार ने अरब लोगों के मनों पर इतना प्रभाव डाला कि अब तक वे इस विचारसे मुक्त नहीं हो पाये।

अरबों की पूज्यवस्तुयें तथा पूजा का रूप

प्राचीन अरब लोग जिनों के अपने-अपने स्थान मानते थे। कोई जिन किसी खेत में रहता था, कोई किसी घाटी में और कोई किसी शहर में। इन स्थानों में वृक्ष का काटना और पशु का मारना निषिद्ध था। इन्हीं स्थानों में एक जगह पर एक वेदी बनायी होती थी जहाँ बलि के रुधिर को किसी पवित्र पत्थर पर लगा दिया जाता था अथवा किसी वृक्ष पर देवता के उपहार के लिए टाँग दिया जाता था। मुख्यतः झरनों, कुओं, वृक्षों, खम्भों तथा पत्थर के ढेरों को चिन्ह मान कर पूजा की जाती थी। किसी-किसी जगह यह सब इकट्ठे होते थे। मक्का में 'जम-जम' नाम का एक स्रोत था जो कि पवित्र समझा जाता था। 'नज़रान' में एक खजूर का पवित्र वृक्ष था जिस की प्रतिवर्ष पूजा होती थी। उस पर स्त्रियों के आभूषण तथा उत्तम वस्त्र टाँगे जाते थे। मक्का के लोग इसी प्रकार के वृक्ष पर शस्त्र, वस्त्र तथा शतुर-मुर्ग के अण्डे टाँग दिया करते थे। अरब के लोग आजदिन भी वृक्षों की पूजा करते हैं, उन पर जिनों और भूतों का रहना मानते हैं और इनके इर्द गिर्द नाचते गाते हैं। उन वृक्षों की शाखा तोड़ना भया-वह समझते हैं। उन पर बलि चढ़ाते हैं। बीमार लोग उनके नीचे सोते हैं और उनको जो स्वप्न आते हैं उन्हें स्वस्थ या अस्वस्थ होने का सूचक मानते हैं।

अरब लोगों में अग्नि का संस्कार अधिक प्रचलित न था, केवल प्रस्तर की वेदी पर रुधिर का छिड़कना ही पर्याप्त समझा जाता था। कभी २ बलि-पशु का मांस जंगली जानवरों के खाने के लिए छोड़ दिया जाता था, पर प्रायः पुजारी ही उस का भोग लगा लिया करते थे। अरब की कई जातियों में किसी भी प्राणी के प्रथम बच्चे को भेंट चढ़ाने का रिवाज़ था। कभी २ मूर्त्ति के चरणों पर भोजनादि के साथ भेंट चढ़ाने वाले के बाल भी काट कर चढ़ा दिये जाते थे और मूर्त्ति पर दूध डाला जाता था। धर्म के संघ में लेने के लिए युवक के बाल काट कर मूर्ति पर चढ़ाने की अरब में बहुत पुरानी प्रथा है। 'तैफ़' के लोग जब कभी यात्रा करके लौटते थे सिर मुंडा लेते थे।

अरब लोगों की मूर्तिपूजा

पुराने अरब लोगों की दस प्रकार की मूर्तियों का वर्णन कुरान में पाया जाता है। वे निम्न हैः—

१. अलजीबल, २. अलतधूप, ३. अल्लात, ४. अलोज़ा, ५. मनात, ६. वाद, ७. सुवा, ८ यघूस

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

६. योद्य, और १० नसर। प्रथम दो कुरेशियों की मूर्त्तियां थी, । अल्लात 'तैफ' लोगों की थी। अलोज़ा वीनस की प्रतिनिधि समझी जाती थी। मनात एक बड़ा भारी पत्थर था। पिछली पांच अरबियों के किन्हीं पूर्वजों की प्रतिनिधि समझी जाती थीं, जिनमें से कई पशुओं के रूप में पूजी जाती थीं। यघूस की शक्ल शेर की, नसर की गिद्ध की ओर योद्य की घोड़े की थी। हब्बाह नाम का एक पत्थर था जिस पर ऊँट की बलि चढ़ती थी। मक्का का काला पत्थर 'संगे असवद' भी पूजा जाता था। मक्का के काबा मन्दिर में 'अब्राहम' और 'इस्माइल' की मूर्तियां भी बनी हुई थीं।

बहुदेव-पूजा तथा मूर्तिपूजा के इन विचारों में एकेश्वरवाद का विचार धीरे २ विकसित हो रहा था। उस एक देवता को 'अल्लाह' के नाम से पुकारा जाता था और अन्य देवताओं को उसका पुत्र समझा जाता था। यदि अल्लाह का विग्रह अल + इलिहा किया जावे तो इसका अभिप्राय The strong one और यदि इस का विग्रह अल + लाह किया जाय तो The Sacred one होता है। उसी के नाम से सब प्रतिज्ञाएं तथा सन्धियां की जाती थीं। शत्रु को अत्याचार से रोकने के लिए अल्लाह की याद करायी जाती थी। 'अल्लाह का दुश्मन' यह कहना गाली समझी जाती थी। पूजा में अल्लाह का सब से ऊंचा और पिछला स्थान था। पहिले अन्य देवताओं को पूज कर फिर अल्लाह की पूजा की जाती थी।

एकेश्वरवाद और अल्लाह का विचार

मुहम्मद के समय मक्का के निवासी धर्म को एक व्यापार की वस्तु समझते थे। उस समय कुछ व्यक्ति तैफ, मक्का और मदीने में अल्लाह की पूजा किया करते थे। उन्हें 'हानीफ़' कहा जाता था। ये हानीफ बहुदेवतावाद को नहीं मानते थे; पाप से बचने का प्रयत्न करते थे, अपने आपको ईश्वर की इच्छा पर छोड़ देते थे और कयामत (Resurrection) पर विश्वास करते थे। यह नहीं कहा जा सकता कि इन लोगों के विचार कहां तक यहूदियों, ईसाइयों से लिए हुए थे। 'हेज़ाज़' और 'येमन' में यहूदियों की संख्या काफ़ी थी और उन के विचारों से अरब के बुद्धिमान् पुरुष कुछ अंशों तक परिचित थे। अरब में ईसाइयत ने बहुत प्रभाव नहीं जमाया था तथापि दूर २ देशों में घूमे हुए अरबी लोग ग्रीस, सीरिया और एबिसीनिया में ईसाइयों के संपर्क में आचुके थे। अरब के उत्तरीय रेगिस्तानों के निवासी ईसाई साधुओं का मुहम्मद से पूर्व पर्य्याप्त प्रभाव हुआ दीखता है। वे लोग God, Resuerrection और Judgement में विश्वास करते थे। उन का तपस्यामय जीवन, पवित्र जीवन के लिए अपने आप को तैय्यार करना, भावी जीवन के लिए कोशिश करते रहना और लगन, यह सब ऐसी बातें थी जिन का अरबों पर बहुत प्रभाव पड़ा और जिन के उद्योग से मानो इस्लाम के पैगम्बर की शिक्षाओं के लिए अनुकूल सामग्री तैय्यार हो गई।

मुहम्मद के लिये क्षेत्र-निर्माण

मक्का अरबियों का प्रधान पूजा-केन्द्र था। इसी मक्का के शहर से कुरेशियों के वंश में से—जो कि मक्का में प्रधानता से पाये जाते थे—मुहम्मद था। मुहम्मदका दादा अब्दुल मुतालिब ६ ठी शताब्दी ई० प० में कुरेशियों के खान-दान का सरदार था। उस के सब से छोटे लड़के का नाम अब्दुल्ला था, जिसने वाहब की लड़की अमीना से शादी की थी। उस का

मुहम्मद का जन्म तथा पालन-पोषण

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

लड़का मुहम्मद हुआ । मुहम्मद की उत्पत्ति से पूर्व ही उस का पिता मर चुका था और उसके पैदा होने के थोड़े दिनों बाद ही उस की माता भी मर गई। मुहम्मद ५७० ई० प० में पैदा हुआ। ५ वर्ष की अवस्था में वह अपनी माता के साथ मदीना गया जहां से लौटते हुए उस की माता का देहान्त हो गया । दादा की मृत्यु के बाद उसकी संरक्षा उसके चचा अबुतालिब ने की जिसके साथ वह ५८२ ई० प० में सीरिया की यात्रा को गया।

खादिजा से विवाह

२५वें वर्षकी उमर में उसके चचा ने 'खादिजा' नाम की एक विधवा से सिफ़ारिश कर के उसके काफ़िले के साथ उसे भेजा। काफिले को लेकर वह डैमास्कस की तरफ गया। उसे जो कृतकार्यता हुई उससे प्रभावित हो कर खादिजाने उससे शादी करने की इच्छा प्रगट की। यद्यपि ख़ादिजा उससे १५ वर्ष बड़ी थी, तो भी यह विवाह सुखी कहा जा सकता है। खादिजा के दो लड़के और चार लड़कियां हुईं जिनमें सब से प्रसिद्ध फ़ातिमा है। दैवीय कार्य प्रारम्भ करने से पूर्व मुहम्मद का जीवन ऐसी जाति में बीता था जिन के लिए बदला लेना धार्मिक कर्त्तव्य समझा जाता था और खून कर देना एक मामूली बात थी। शराब खोरी और जुआ बहुत फैला हुआ था। लड़की को पैदा होते ही जीता गाड़ दिया जाता था। स्त्री को घर की वस्तु समझा जाता था। बहु-विवाह तथा तलाक़ का प्रचार था। मूर्तिपूजा, फलितज्योतिष, खून की बलि, और पिता का पुत्रों तक को बलि पर चढ़ा देना प्रचलित थे। मुहम्मद के जीवन की घटना देख समझमें आजाता है कि उसका हृदय परिस्थियों को देख कर निराश और खिन्न होता होगा और वह इन बातों को दिल में ही सोचा करता होगा।

काबे के झगड़े का निपटारा

जब मुहम्मद ३५ वर्ष का था तो मक्का का काबा एक जल-विप्लव से टूट फूट गया। झगड़ा खड़ा हो गया कि काले पत्थर को अपनी जगह पर कौन रखे। मुहम्मद को फैसले के लिए कहा गया। उसने अपना चोग़ा बिछा, उस पर पत्थर रख दिया और झगड़ा करने वालों से कहा कि तुम्हारे प्रतिनिधि उस के चारों कोनों को उठायें। उस के बाद उसने स्वयं उस पत्थर को यथास्थान रखा। इस घटना से उस का प्रभाव और भी बढ़ गया । उस के जीवन में उस की बुद्धिमत्ता की इस प्रकार की घटनाएँ बहुत पायी जायी हैं।

मुहम्मद की ध्यान में प्रवृत्ति

४० वर्ष की अवस्था में उस की ध्यान की तरफ प्रवृत्ति बढ़ने लगी और वह मक्का के पहाड़ों में ध्यानार्थ जाने लगा । मक्का में उत्तर की तरफ हीर नामक पहाड़ी के पास की गुफा उसे अतिप्रिय थी और कुरान की बहुत सी शिक्षाप्रद आयतें उसी अवस्था में उसी स्थान पर उस की रची प्रतीत होती हैं। मुहम्मद में सत्य, न्याय के लिए प्रेम और बुराई, असत्य तथा अन्याय के लिए घृणा थी । अपनी जाति में विश्वास इत्यादि बातें उस में पायी जाती थीं। जितना ही वह ध्यान में बैठता था उतना ही उसे विश्वास होता जाता था कि उस की जाति को एक विचारक या मार्गदर्शक की आवश्यकता है और उसे मालूम होता था कि वही उसके लिए योग्य है। वह कभी आशा में और कभी निराशा में से गुज़रता हुआ सोचा करता था कि सारे अरब में उस की शिक्षायें प्रचलित हो सकती हैं। मूर्ति-भञ्जन तथा अन्य जातियों का विजय होसकता है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जिबराइल का प्रकट होना तथा इलहाम का आना

कथानक प्रचलित है कि एक रात जब वह रमज़ान के मास में हीर नामक पहाड़ी में था, 'जिबराइल' एक रेशमी पट्टे को ले उसके सामने प्रगट हुआ और उस पर जो लिखा था उसे पढ़ने को कहा। इस के बाद वह अपनी स्त्री के पास आया और उसे सारी घटना सुनाई। खादिजा को छोड़ किसी ने इस बात पर विश्वास न किया और मुहम्मद पुनः ध्यान-मग्न होने लगा। एक बार जब वह मुँह लपेटे चटाई पर लेटा था, जिबराइल आया और कहने लगा कि तू लेटा क्यों है? उठ, प्रचार कर, परमात्मा की महिमा को फैला, अशुद्धि दूर कर। अब ईश्वर की तरफ से प्रेरणाएं जल्दी २ आने लगीं। कुछ देर के बाद मुहम्मद के विचारों में फिर परिवर्तन हुआ। ईश्वर की प्रेरणाएँ आनी बन्द हो गईं और वह आत्मघात का विचार करने लगा। कहा नहीं जा सकता कि इन बातों का उस की बीमारी से कहां तक सम्बन्ध था। पर इतना निश्चय है कि बचपन में उसे मृगी थी और संभवतः रात में जागने, उपवास करने तथा चिन्ता में पड़े रहने के कारण बीमारी बढ़ गयी हो। एक बार जब कि वह आत्मघात के लिए तैयार था उस ने अचानक द्युलोक तथा पृथिवी-लोक के बीच में एक फरिश्ते को सिंहासन पर बैठे देखा, जिस ने चिल्ला कर कहा कि मुहम्मद! तू अल्लाह का पैगम्बर है और मैं जिबराइल हूँ। इलहाम आने के समय महम्मद की अवस्था विचित्र हो जाया करती थी। वह शराबी या निद्रालु की तरह ज़मीन पर गिर पड़ता था और ठण्डे से ठण्डे दिन में भी उस के माथे पर पसीने के बिन्दु दिखाई देते थे। ऐसी अवस्था उस की अचानक ही रोज़ हो जाया करती थी। इस के विषय में उसने स्वयं कहा है कि "इलहाम मुझे दो तरह से होता है। कभी २ जिबराइल मुझ से बात करता है जैसे एक आदमी दूसरे आदमी से। और कभी २ मुझे ऐसा मालूम पड़ता है कि मानों मेरे चारों ओर घण्टानाद हो रहा हो। आवाज़ हृदय चीर कर अन्दर पहुंचती है और ऐसा मालूम पड़ता है कि मेरे टुकड़े २ हो रहे हों। यह अवस्था बहुत दुःख जनक प्रतीत होती है।"

प्रचार कार्य

अब मुहम्मद अपने सिद्धान्तों का गुप्त रूप से मित्रों में प्रचार करने लगा। उसकी स्त्री का दास 'जैद', उसका भतीजा 'अली', उसका मित्र 'अबूबक्र' तथा और दो चार मित्र मिल कर एक छोटी सी पार्टी बन गयी। धीरे-धीरे उसने कुरेशियों तक अपील करनी शुरू की। जो लोग यहूदी तथा ईसाई-धर्म से कुछ-कुछ परिचित थे वे उसकी बातों को मानने लगे, परन्तु मक्का के लोग मुहम्मद के नये सिद्धान्तों के कारण उससे घृणा करने लगे। मुहम्मद की शिक्षाओं के मानने का अभिप्राय मक्का के लोगों के लिये अपने विचारोंमें सर्वथा परिवर्तन करना था जिस के लिये वे तैयार न थे। ज्यों-ज्यों वे लोग मुहम्मदसे घृणा करने लगे त्यों-त्यों उसने कुरेशियों के झूठे देवताओं का जोर से खण्डन करना प्रारम्भ किया और कहने लगा कि यदि वे उसकी बात न सुनेंगे तो उन पर खुदा का कोप होगा। कुरेशियों ने उसके चचा 'अबुतालिब' से प्रार्थना की कि या तो इसे चुप करा दो या इसके सिर पर से हाथ हटा लो। अबुतालिब ने अपने भतीजे से बात की तो उसने कहा कि यदि वे लोग मेरे दायें हाथ में सूरज और बायें में चाँद दे दें तो भी मैं यह काम करने से न हटूंगा। यह कह कर वह रो पड़ा और

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अपने रास्ते पर जाने लगा। उसके चचा ने करुणा-पूर्ण हृदय से बुलाया और कहा कि "बेटा, मत घबराओ। तुम्हारे दिल में जो आवे वह कहो। मैं परमात्मा की शपथ खाकर कहता हूँ कि तुम्हारा साथ किसी हालत में न छोड़ूंगा।"

कुरेशियों से समझौता और उसका टूटना

इस समय मुहम्मद तो अपने अनुयायी 'अरकुन' के मकान पर, जो कि काबा के समीप था, लोगों को इकट्ठा कर उपदेश देता था और लोग उसका तिरस्कार करते थे। इसी समय कुछ अनुयायी भाग कर 'ऐबीसीनिया' चले गये, जिनका कि ईसाइयों ने स्वागत किया। मुहम्मद अनुत्साहित होकर समझौते का यत्न करने लगा। एक दिन वह काबा के समीप मक्का के लोगों में बैठकर उन्हें ५३ वाँ 'सूर' सुनाने लगा। जिब्राइल उसके पास सबसे पहले कैसे आया था इसका भी जिक्र किया। उसके बाद वह आयत सुनाई जिसमें 'अल्लात' 'अलओज़ा' और 'मनात' का वर्णन आता है। ये उस समय के कुरेशियों के पूज्य देवताओं के नाम हैं। कथानक है कि उस समय शैतान ने मुहम्मद से कहलवा दिया कि ये तीनों उपास्य देवियाँ (Sublime females) हैं, जिन की प्रार्थना से अनिष्ट का निवारण हो सकता है। कुरेशी अपने देवताओं का यह सम्मान देख खुश हो गये और मुहम्मद ने जब 'अल्लाह' के सामने झुकने को कहा तो वे भी झुक गये, क्योंकि उन्होंने समझा कि अपने उपास्य देवों को पूजने की उन्हें स्वतन्त्रता मिल गई है। शाम को जिब्राइल मुहम्मद के सामने प्रकट हुआ और उससे कहा कि यह तू क्या कर बैठा? जो बातें तुझे नहीं कही गईं थी वे भी तूने कह डालीं। मुहम्मद को इस पर दुःख हुआ। अल्लाह ने इस आयत के अगले हिस्से को मिटा कर तीनों देवताओं का नाम लेने के बाद यह पाठ कर दिया कि क्या तुम्हारे देवता स्त्रीलिङ्ग ही होंगे? ये तो नामों के अतिरिक्त कुछ भी नहीं हैं और इन्हें तुमने और तुम्हारे पूर्वजों ने ऐसे ही घड़ लिया है। जब मक्का के लोगों ने यह सुना तो उनका क्रोध और भी अधिक भड़क उठा। इस घटना का अभिप्राय यही प्रतीत होता है कि किसी समय समझौता शुरू किया होगा, पर वह मक्कावालों के जिद्दी होने से टूट गया होगा। मुहम्मद ने सोचा होगा कि सुधार अधकचरा नहीं होता। ऐबीसीनिया में भागे हुये अनुयायी समझौते के समाचार को सुन कर लौटे थे, पर ईरान में विद्वेष के समाचार को सुन पुनः भाग खड़े हुये। इन में मुहम्मद की लड़की 'रोकैय्या' और उसका पति 'उसमान' भी था। कुरेशियों का क्रोध बढ़ता गया। वे कहने लगे कि यह अपने आप को अल्लाह का पैगम्बर बतलाता है! हम इस की बात मानते तो हमें अपने देवताओं से छुड़वा देता। यह सचमुच धोखेबाज है। इन घटनाओं से मुहम्मद में निराशा ने अपना स्थान बनाया। परन्तु फिर भी उसने दो नये अनुयायी बनाये, जिन में से एक उस का चचा 'हमज़ा' और दूसरा 'उमर' था। उमर २६ वर्ष का नवयुवक था। उसका बड़ा प्रभाव था। वह न बहुत धनी और नाहीं बहुत गरीब था। जब उसे मालूम हुआ कि उसकी बहिन 'फ़ातिमा' और उसका पति 'सैद' मुहम्मद के अनुयायी हैं तो वह भी अनुयायी बन गया। उमर ने खुले तौर पर इसलाम को स्वीकार किया और दूसरों ने भी उसका अनुसरण किया। कुरेशी लोग यह देख कर डरे और उनकी मुहम्मद से शत्रुता बढ़ चली। मुहम्मद ने भी नये-नये इलहामों से कुरेशियों पर आक्रमण प्रारम्भ किया और ये इलहाम यहूदी धर्म-पुस्तकों से समर्थित थे। इस समय के लिखे हुये कुरान के बहुत से अध्याय पुराने अहदनामे

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

(Old Testament) के बहुत से कथानकों को तोड़ मरोड़ कर बनाये गये हैं। बार-बार मुहम्मद यहूदियों तथा ईसाइयों की तरफ निर्देश करता है और कई स्थानों पर कहता है कि यहूदियों के विद्वान् भी मेरी बात मानते हैं। सम्भवतः कई यहूदी जो उससे परिचित थे और जो किसी पैगम्बर की प्रतीक्षा करते थे समझने लगे हों कि यह वही है। मुहम्मद ने पुराने अहदनामे की मूल प्रति का सम्भवतः अध्ययन नहीं किया था फिर भी उसके कथन में यहूदी कथायें टूटे-फूटे रूप में प्रवेश करने लगीं। उसके शत्रु कहते थे कि इन पुरानी कहानियों को कोई लिखा देता है और मुहम्मद कहता था कि ये मुझे उसने बताई हैं जो कि द्युलोक एवं पृथिवी लोक के गहन रहस्यों को जानता है।

डर और धमकियां

मुहम्मद बड़े-बड़े डर दिखला कर मक्का के लोगों को धमकाता था। उन्हें नरक की धमकी देता था। ये धमकियाँ इतनी बार दोहराई गईं थी कि लोग उन से दिक आगये थे। अन्त में उन्होंने मुहम्मद और हाशमाइट से असहयोग करने का संकल्प किया। उनके साथ अन्तर्विवाह, लेन-देन आदि बन्द कर दिये गये। इस आशय की आज्ञा निकाल कर उस पर तीन मोहर लगा कर काबा के मन्दिर पर लगा दी गई ताकि उसके अनुयायियों से सहयोग करना धर्म विरुद्ध समझा जावे। ये लोग डर कर अबुतालिब के मकान में इकट्ठे होने लगे और एक प्रकार से सम्पूर्ण समाज से कट गये। कोई बाहर नहीं जा सकता था। केवल रमज़ान के मास में ही निकल सकते थे। इस प्रकार हाशमाइट दो तीन साल तक कैदी की तरह रहे और मक्का के कुछ लोग उनकी सहायता करते रहे। मुहम्मद अपने प्रचार में लगा रहा और अपने अनुयायियों की संख्या बढ़ाता रहा। यात्राओं के समय मक्का में जो लोग बाहर से आते थे उनके सामने भी उसका प्रचार कार्य जारी रहा। वह उन्हें मूर्तिपूजा से बचने तथा एकेश्वर-पूजा के लिये कहता था और ईमान लाने पर स्वर्ग के नज़ारे दिखाता था। बाहर के यात्री कहा करते थे कि अपने भाइयों को प्रथम समझा लो, यदि तुम्हारे कथन में सत्य है तो वे क्यों नहीं मान लेते? इसी समय काबा में पड़े हुये भूर्जपत्र पर कीड़े लग गये और कुरेशियों के तीन चार मुखिया अबुतालिब के मकान पर गये और मुहम्मद के अनुयायियों को सानुरोध लौटा लाये क्योंकि उन्होंने इसे मुहम्मद की धमकियों का प्रभाव समझा। ६१९ ई० प० में खादीजा और उसके बाद अबुतालिब का देहान्त हो गया। अनुयायियों की रक्षा का भार उस पर आ पड़ा।

निराशा के बादल

मक्का से ६० मील दूर 'तैफ़' स्थान पर मुहम्मद ने प्रचार किया पर इसके विपरीत उस पर पत्थर फेंके गये और तालियाँ पीटी गईं। उस समय की उसकी प्रार्थना निराशा भरी है। वह कहता है "हे दयामय, अनाथ-नाथ, मेरे स्वामी! मुझे कहाँ छोड़े जाते हो! इन अजनबियों में जिनसे मैं घिरा हूँ और इन शत्रुओं में जो मुझसे बली हैं, मैं तुम्हारे मुख के प्रकाश की आशा में रक्षा चाहता हूँ।" तैफ़ से लौटते हुये रास्ते में एक रात को उसने स्वप्न देखा कि बहुत से 'जिन' इसलाम धर्म सुन रहे हैं और कुरान को मानने के लिये तैयार हैं।

बहुविवाह प्रथा

मक्का लौटकर मुहम्मद ने खादीजा की मृत्यु के दो मास बाद ही अपने अनुयायी 'सकरन' की विधवा 'सौध' से शादी करली और अपने परम मित्र अबूबक्र की लड़की 'आयशा' से सगाई कर ली, आयशा से विवाह तथा

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जिसकी उम्र अभी ७ बरस की थी। इस प्रकार मुहम्मद ने इसलाम के सबसे बड़े दाग बहुविवाह को अपने हाथों लगाया। हज का समय जब फिर आया, मुहम्मद ने यात्रियों में पुनः प्रचार प्रारम्भ किया। मक्का से २५० मील उत्तर में 'मदीना' शहर है जहाँ से कुछ यात्री आये थे, जो उपदेशों को बड़े ध्यान से सुनते थे। मुहम्मद को पता लगा कि उनका मदीने के अनेक यहूदियों से परिचय है। उसने उनसे पूछा यदि मैं वहाँ जाऊँ तो क्या सुरक्षित रहूंगा? उन्होंने अगले साल उत्तर देने का वायदा किया। ये यात्री मुहम्मद से सीखे सिद्धान्तों को सर्वसाधारण में फैलाने लगे। उन्हें पता लगा कि यहूदी लोग किसी मसीहा के आने की प्रतीक्षा में हैं अतः उन्होंने मुहम्मद को ही मसीहा बना दिया।

ऐकबा की प्रथम प्रतिज्ञा

जब दूसरी यात्रा का समय आया तो बारह व्यक्तियों ने मुहम्मद के समीप निम्न प्रतिज्ञायें कीं जिनका नाम 'ऐकबा की प्रथम प्रतिज्ञा' है क्योंकि, ये प्रतिज्ञायें ऐकबा में ही पहले की गई थीं:—

"१. हम एक के अतिरिक्त किसी देवता की पूजा न करेंगे।

२. चोरी, व्यभिचार न करेंगे।

३. बच्चे न मारेंगे।

४. चुगली न करेंगे और पैगम्बर के पैगाम का उल्लङ्घन न करेंगे।"

मुहम्मद का कथन था कि यदि तुम इस प्रतिज्ञा को निबाहोगे तो बहिश्त मिलेगा और यदि न निभा सकोगे तो खुदा चाहे तो दण्ड दे या क्षमा करे। बारहों शिष्य मुहम्मद के प्रचारक होकर मदीना पहुँचे और उन्हें अपने कार्य में इतनी सफलता हुई कि थोड़े ही दिनों में उन्होंने मुहम्मद से कुरान में दक्ष एक मौलवी माँगा जो उन्हें कुरान की शिक्षा दे सकता हो।

मुहम्मद का प्रसिद्ध स्वप्न

इस समय मुहम्मद को मदीना जाने के स्वप्न आने लगे और इसी समय उसे वह प्रसिद्ध स्वप्न भी आया जिस में जिब्राइल एक पङ्खों वाले घोड़े पर उसे बैठाकर मदीना से परे 'जैरूसलम' के मन्दिर में ले गया, जहाँ पर सब पैगम्बरों ने उसका स्वागत किया। वहाँ से वह एक के बाद दूसरे आसमानों को चीरता हुआ सातवें आसमान तक पहुँचा, जहाँ अल्लाह ने पाँच बार नमाज़ पढ़ने की आज्ञा दी। उठने पर उसने स्वप्न का साथियों से वर्णन किया जिसे सुन कइयों ने उस पर विश्वास किया और कइयों ने न किया। मक्का में दुर्भिक्ष पड़ा और उसने कहना शुरू किया कि यह तुम्हारे अविश्वास के कारण है। थोड़े दिनों में दुर्भिक्ष शान्त हुआ और उसने कहा कि परमात्मा ने तुम्हें पुनः अवसर दिया है, अब भी सुधर जाओ। इस समय मुहम्मद का दिमाग चढ़ने लगा और परमात्मा के मुँह से वह कहलाने लगा कि यदि उसने अपनी तरफ से भी गढ़ा हो तो उसका सत्यानाश हो जाय।

ऐकबा की दूसरी प्रतिज्ञा और हिजरत

६२२ ई० प० के मार्च में जब मदीना के यात्री पुनः आये तो उसे मुहम्मद को पता लगा कि उसके अनुयायी पर्याप्त मात्रामें बढ़ गये हैं। जो सभा की गई उसमें ७० से अधिक व्यक्ति उपस्थित थे। उन्होंने मुहम्मद के लिये अपने जीवन को कुर्बान करने की प्रतिज्ञा की और यह 'ऐकबा (Acaba) की दूसरी प्रतिज्ञा' कहाती है। वह उनके साथ मदीना जाने को तैयार हो गया। मुहम्मद ने अपने १२ शिष्यों से कहा "मूसा ने अपने लोगों में से १२ नेता चुने थे।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ईसा ने १२ शिष्य चुने थे। वे अपने समय के लोगों की रक्षा करना चाहते थे। मैं भी तुम्हें चुनकर अपनी जाति का बचाव करूँगा।" इतने में बाहर शोर मचा और सभा बर्ख़ास्त हुई। कुरेशियों को जब मालूम हुआ कि इस सभा में क्या हो रहा था तो उन्होंने मदीना के यात्रियों का पीछा करना प्रारम्भ किया। मक्का में मुहम्मद के अनुयायियों पर अत्याचार शुरू किये गये। मुहम्मद ने उन लोगों को मदीना चले जाने की सलाह दी क्योंकि वहाँ पर उन्हीं के से विचारवाले और भाई मौजूद थे।

हिजरत का प्रारम्भ

६२२ की अप्रैल से मुहम्मद के अनुयायियों ने मक्का छोड़ मदीने जाना शुरू किया और उसी समय से मुसलमानोंका हिजरी सम्वत् शुरू हुआ। गुप्तरीति से लोग घरों को छोड़ रात में निकल भागते थे। दो महीनों में १५० के लगभग घर खाली होगये। अन्त में मुहम्मद, अबूबक्र, अली तथा उनके घराने ही मक्का में बच गये। कुरेशियों ने इन्हें मारने या निकाल डालने का विचार किया। यह पता लगते ही मुहम्मद अबूबक्र के साथ घर की पिछली बारी से निकल गया और 'थोर' नाम की पास की गुफा में दो तीन दिन तक छिपा रहा। जब वे दोनों गुफा में थे तो मुहम्मद ने अपने साथी से कहा, घबराओ मत, परमात्मा हमारे साथ है। गुफा के एक छिद्र से आते प्रकाश को देख अबूबक्र ने कहा कि यदि शत्रुओं में से कोई चलता हुआ नीचे झाँक ले तो हमें अपने पैरों के नीचे ही पाये। मुहम्मद ने कहा, मत समझो हम दो हैं, तीसरा, परमात्मा भी हमारे साथ है। उनके मित्र उनको चुपके से खाना दे जाते थे। अन्त में ६२२ की २८ जून को वे मदीना पहुँचे और हिजरत समाप्त हुई।

(शेष फिर)

विचार-प्रवाह

१. बारदौली का देवासुर-संग्राम

बहुत समय के बाद देश में एक फड़कती हुई घटना हो रही है। असहयोग आन्दोलन के मन्द पड़ जाने के बाद 'गुरू के बाग़ का सत्याग्रह', 'जैतो-संग्राम', 'नागपुर का झण्डा-सत्याग्रह', 'पटुआखाली का सत्याग्रह' आदि अनेक उपयोगी आन्दोलन हुए परन्तु वर्तमान बारदौली के कर न देने के आन्दोलन के समान सजीव और देश के भविष्य पर सीधा प्रभाव डालनेवाला उनमें से एक भी आन्दोलन न था। सम्भवतः राष्ट्रीयता की दृष्टि से बारदौली का यह कर अदा न करने का आन्दोलन नागपुर के झण्डा-सत्याग्रह की अपेक्षा कम उत्कृष्ट होगा, तथापि इस आन्दोलन का महत्व हमें पिछले छः वर्ष के सम्पूर्ण आन्दोलनों की अपेक्षा अधिक प्रतीत होता है। कारण यह है कि बारदौली का यह सत्याग्रह एक बड़े प्रश्न का निर्णय करेगा; यह प्रश्न है, कर-वृद्धि का अधिकार जनता के प्रतिनिधियों को है या सरकार को? संसार भर के प्रत्येक राष्ट्र में यह कर निश्चित करने का कार्य उनकी प्रतिनिधि-सभाओं के अधीन होता है, परन्तु हमारे पराधीन देश की सरकार यह करना अपना कर्तव्य नहीं समझती। एक और दृष्टि से भी हम बारदौली के इस देवासुर-संग्राम को बहुत अधिक महत्व देते हैं, यह दृष्टि है किसानों की जागृति की। इस देश के

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

किसानों के समान तपस्वी और आजन्म दुखी जन-समुदाय संसार के किसी अन्य देश में शायद ही कहीं प्राप्त हो। भारतवर्ष के किसान इस समय तक मूक-पशु समझे जाकर पीड़ित किये जाते रहे हैं। वैसे तो इस अभागे देश में बसने वाले सभी पेशों के लोगों को सरकार सामर्थ्य-शून्य समझकर, उनके लिये मनमाने नियम घड़ती है, तथापि अन्य पेशेवाले लोगों की प्रसन्नता और नाराज़गी का थोड़ा-बहुत ध्यान सरकार, मौके-बेमौके रखती रही है। परन्तु भारतीय किसान आज तक सर्वथा असहाय समझे जाकर कानूनों और करों के भारी बन्धनों में बाँधे जाते रहे हैं। हमारे देश के किसान लोग स्वयं भी अभी तक असंगठित और अबोध बने हुए थे, उनमें सामूहिक रूप से अपना असन्तोष प्रगट करने की शक्ति थी ही नहीं। स्कूलों की पहली श्रेणी के छोटे बालकों की तरह वे असंगठित थे। परन्तु बारदौली के इस आन्दोलन द्वारा देश भर के किसानों में सचमुच एक नवजीवन का सञ्चार हो गया है। अब वे मूक-पशुओं के समान असहाय और असंगठित नहीं रहे। हमें यह भली प्रकार ज्ञात है कि देश भर के किसान बारदौली के समाचारों को बड़े प्रेम, सहानुभूति और आशा के साथ सुनते हैं। हमने ग्रामीण किसानों की टोलियों में होती हुई इस बारदौली-संग्राम के सम्बन्ध की चर्चा को सुना है। किसान लोग इस आन्दोलन द्वारा अपने में जीवन और उत्साह का अनुभव करने लगे हैं। हमारी तुच्छ सम्मति में इस सोये हुए महादेश की जागृति में बारदौली का यह किसान-आन्दोलन चिरस्मरणीय करेगा।

हमारी यह स्थिर-सम्मति है कि बारदौली के इस आर्थिक आन्दोलन को राजनीति से पृथक् रखना चाहिये। हमें इस बात का सन्तोष है कि बारदौली-सत्याग्रह के माननीय नेता लोगों का भी यही मन्तव्य है और उन्होंने अभी तक अपने आन्दोलन में राजनीति का स्पर्श तक भी नहीं होने दिया। परन्तु अपने को देश का सर्वश्रेष्ठ समाचार-पत्र कहनेवाला बम्बई का "टाइम्स ऑफ़ इण्डिया" नामक पत्र बड़े ही नीच और क्रोध-जनक उपायों द्वारा इस शुद्ध आर्थिक आन्दोलन को रूस के बोलशेविक-आन्दोलन से मिला रहा है। लाला लाजपतराय के शब्दों में वह इसके द्वारा जहाँ बारदौली-आन्दोलन के विरुद्ध विष उगल रहा है, वहाँ अपने जाति-भाई शासकों से भी छल कर रहा है। क्योंकि उसके द्वारा शासक लोग बहक कर यदि सम्मानास्पद उपायों से किसानों की माँगें स्वीकार न करेंगे तो यह चिनगारी के समान आन्दोलन भयंकर अग्निकाण्ड का रूप भी धारण कर सकता है। 'टाइम्स ऑफ़ इण्डिया' ने लिखा है—"माननीय वल्लभ भाई पटेल भारतीय लेनिन का पार्ट अदा करना चाहते हैं। वह सारे बारदौली ताल्लुके में अराजकता और बोलशेविज़्म के विषैले बीज बो रहे हैं।" मालूम नहीं कि टाइम्स ऑफ़ इण्डिया का सम्वाददाता किन आधारों पर यह बकवाद करता है। क्या श्रीयुत हृदयनाथ कुंज़रू और मि० वज़े जैसे नरम-दल के नेताओं ने घटनास्थल का स्वयं निरीक्षण करके इस आन्दोलन की युक्ति-युक्तता और केवल आर्थिक प्रकृति को स्वीकार नहीं किया? क्या सर तेजबहादुर सप्रू और श्रीयुत् चिन्तामणि जैसे प्रभावशाली और सरकार की अपनी सम्मति में भी समझदार नेताओं ने इस आन्दोलन में सरकार को झुक जाने की भली सलाह नहीं दी? क्या विदेशों में सरकार का अपना मुख-पत्र समझा जानेवाला 'पायोनियर' इस मामले में बम्बई-सरकार की सरासर ज़्यादती

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बयान नहीं कर रहा? हम तो यह भी साफ़ कह देना चाहते हैं कि—यद्यपि हमें अभी तक इस बात की न तो सम्भावना दिखाई देती है और न आवश्यकता ही, तथापि—यदि भारतवर्षके आर्थिक, सामाजिक या राजनीतिक हित के लिये इस देश में बोल्शेविज़्म का प्रचार करने की आवश्यकता हुई तो नवीन भारत के तपस्वी नवयुवक उसे भी अपना परमध्येय बनाने में संकोच न करेंगे। माननीय वल्लभ भाई न सही, कोई और लेनिन इस देश में उत्पन्न हो जायगा।

बम्बई के इस गोरे अखबार के सम्वाददाता ने एक और मज़ेदार बात लिखी है। उसका कहना है—"इसमें सन्देह नहीं कि बारदोली के किसानों ने सचमुच बहुत बड़े-बड़े कष्ट जान-बूझकर अपने पर लिये हैं। किसान लोग आजकल वहाँ छोटे-छोटे बन्द कमरों में एक साथ रहते हैं। इन घरों में दो से अधिक दरवाज़े नहीं होते। अन्दर अन्धकार से भय प्रतीत होता है, बदबू से नाक फटती है। वे इन कमरों में अपने गाय, बैल और भैंसों को भी साथ रखते हैं, (ताकि ज़प्ती-अफ़सर उन्हें छीन न सकें।) मनुष्य और पशु एक साथ भूखे मर रहे हैं। कंकाल शेष रह गए हैं। पशुओं को आहार न मिलने से उनका रंग बदल गया है, उनकी हड्डियाँ निकल आई हैं। सम्भवतः संसार के इतिहास में आजतक पशुओं के साथ इतना भयंकर अन्याय न हुआ होगा, जितना कि बारदोली के किसान उनके साथ कर रहे हैं।" हमें इस सम्वाददाता के दिमाग़ पर तरस आता है। पशुओं की इस पीड़ा को देखकर तो माँस-भक्षी होते हुए भी उसका हृदय दया से उमड़ पड़ा; परन्तु मनुष्यों के इस बुरे हाल पर उसे दया न आई। बारदोली के किसानों ने पहले स्वयं भूखा रहना और कष्ट झेलना शुरू किया है उसके बाद लाचार होकर उन्होंने अपने पशुओं को भी अपना साथी बना लिया है। भारत के किसान अपने पशुओं को अपने पुत्रों से कम प्यारा नहीं समझते। आपत्ति आनेपर परिवार के सब लोग एक साथ कष्ट झेला ही करते हैं।

माननीय वल्लभ भाई पटेल ने इस आन्दोलन द्वारा देश की जो सेवा की है वह भारतके इतिहास में सदैव स्मरणीय रहेगी। बारदोली का यह आन्दोलन उन्हीं के अनथक परिश्रम का परिणाम है। बारदोली ताल्लुके के किसान ईश्वर के बाद श्रीयुत् वल्लभ भाई पटेल को ही अपना देवता मानते हैं। उन्हें वहाँ 'सरदार' नाम से बुलाया जाता है। उनका संगठन कितना प्रबल है, इसका एक उदाहरण टाइम्स ऑफ़ इण्डिया के सम्वाददाता के निम्न वर्णन से ही मिल जाता है। उसका कहना है—"पहले जब ज़प्ती-ऑफ़िसर बारदोली के गाँवों में ज़प्ती के लिये आया करते थे, तब किसानों को इस बात की सूचना देने के लिये गाँव के बाहर ढोल बजाये जाते थे। ढोल की आवाज़ सुन कर सब किसान अपने चरते हुए पशुओं को अपने घरों में बन्द कर लेते थे। जब सरकारी कर्मचारियों ने ढोल बजाना बन्द करवा दिया तब से गाँव के लड़के गाँव के चारों ओर खड़े कर दिये जाते थे, वे इन अफ़सरों को देखकर मुँह से सीटी बजाया करते थे, उसे सुनकर गाँव वाले सतर्क हो जाते थे। फिर सीटी बजाना भी गैरकानूनी करार दे दिया गया, तब से अपनी खुशी से स्वयं-सेवकों का काम करनेवाले छोटे-छोटे बालक दौड़-दौड़कर लोगों को इस बात की सूचना देने लगे। परन्तु आजकल ज़प्ती का काम बन्द है।"

हम देश के करोड़ों किसान भाइयों के हार्दिक आशीर्वादों के साथ बारदोली के किसानों के सरदार श्रद्धेय वल्लभ भाई पटेल को साधुवाद देते हैं।

× × ×

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

२. हड़तालों का युग

संसार की व्यावसायिक उन्नति में हड़तालों का बड़ा हाथ है। यदि मज़दूरों में एक साथ एका करके आवश्यकता पड़ने पर हड़ताल करने की शक्ति न होती तो हमें सन्देह है कि व्यावसायिक जगत इतनी उन्नति न कर पाता या नहीं। यन्त्र युग जब संसार में शुरू २ में प्रारम्भ हुआ था तब मज़दूरों को पशु समझ कर, उन्हें थोड़ी भूमि पर ही सामर्थ्य से अधिक कार्य करने को बाधित किया जाता था। मज़दूरों ने अपने दुख निवारण का जो अमोघ अस्त्र निकाला, उसी का नाम हड़ताल है। इन्हीं हड़तालों की बदौलत ही श्रमियों की कार्य कुशलता में वृद्धि हुई है, इसी कारण हम कहते हैं कि संसार की व्यावसायिक उन्नति में हड़तालों का बड़ा हाथ है।

सभ्य देशों के मज़दूर भारतीय मज़दूरों की अपेक्षा बहुत अधिक सम्पन्न तथा सुखी होने पर भी हर समय हड़ताल करने के लिये तैयार रहते हैं, मानो वह इस के लिये मौका देख रहे हों। सन्तोश का विषय है कि भारतीय मज़दूरों में भी इतना संगठन हो चुका है कि वे यत्न करने पर हड़तालें कर सकें। भारत के व्यावसायिक केन्द्रों में इन्हीं थोड़े से दिनों में प्रायः सभी स्थानों पर हड़तालें हुई हैं। बम्बई की हड़ताल इन में सब से अधिक मुख्य है। इस में बम्बई के लगभग २,००,००० मजदूरों ने एक साथ काम करना छोड़ दिया था। इस देश में सम्भवतः अब तक इतनी बड़ी हड़ताल कभी न हुई थी। नासमझ लोग इन हड़तालों में भी बौलशेविज़्म के कीटाणु देखकर चिन्तित हो रहे हैं। परन्तु हमारी दृष्टि में भारतवर्ष जागृति के लिये अब जो करवटें बदल रहा है, देश के भिन्न २ प्रान्तों में संक्रामक बीमारी के समान व्याप्त ये से हड़तालें उसी का चिन्ह हैं।

परन्तु मज़दूरों के इस बढ़ते हुए संगठित असन्तोश को देख कर हमें एक व्यथा भी अनुभव होती है। आधुनिक व्यावसायिक उन्नति का श्रेय यूरोप को प्राप्त है। वहां स्वाभाविक रूप से धीरे २ व्यवसाय का विकास हुवा, उसके साथ ही क्रमशः यह मज़दूर जमात बनी और उस जमात की तकलीफ़ों ने उन्हें संगठित करके हड़तालों को जन्म दिया। भारतवर्ष में वह व्यावसायिक उन्नति उस प्रकार धीरे २ नहीं हो रही। यह देश पाश्चात्य देशों के अनुभावों से लाभ उठाकर अपना व्यवसाय उन्नत कर रहा है। इस अवस्था में क्या हम अपने पूञ्जीपतियों से यह आशा करें कि वे जहां यूरोपियन व्यवसाइयों के अनुभवों के आधार पर मशीन आदि के संचालन में नये से नये उपायों का अवलम्बन करते हैं, वहां वे यूरोप के मज़दूरों की वर्तमान उन्नत अवस्था तक अपने मज़दूरों को भी यथासम्भव शीघ्र स्वयं ही पहुंचा दें, ताकि उनका व्यवसाय और भी अधिक निश्चिन्तता से उन्नति कर सके। भारत के व्यावसायिक हित को दृष्टि में रखते हुए प्रत्येक देश प्रेमी यही चाहेगा कि इस देश में यथा सम्भव मज़दूरों और मिल मालिकों में परस्पर लड़ाई न हो। परन्तु इस का एक मात्र उपाय यही है कि मिल मालिक यह अनुभव करने लगें कि एक भारतीय मज़दूर का सम्मान और कीमत एक अंग्रेज़ मज़दूर से कम नहीं है।

× × ×

३. थोथा लालच

पञ्जाब कौंसिल द्वारा निर्वाचित शाही कमीशन की 'पूंछ कमेटी' ने सर जोन साइमन के पास अपनी कुछ माँगें लिख कर भेजी थी। साइमन महोदय ने

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अपनी अपार दया से इस कमेटी की अधिकाँश माँगों को स्वीकार कर लिया है। अब पञ्जाब की इस 'पूंछ कमेटी' के सदस्य फूले नहीं समा रहे। शाही कमीशन की पञ्जाब सम्बन्धी रिपोर्ट के साथ इस कमेटी की रिपोर्ट भी छप जायगी और प्रायः गवाहियाँ लेते हुए भी अब इस कमेटी के सदस्यों को कमेटी हाल से बाहर न निकाला जायगा। फिर भी कुछ ख़रीते तो गुप्त रक्खे ही जाँयगे। सिर्फ इतना ज़रा सा लालच पाकर ही पञ्जाब की पूंछ कमेटी के ये सदस्य इतना फूल उठे हैं कि मानों उन्हें स्वराज्य मिल गया।

हमें यह सोच कर बड़ा शोक होता है कि हमारे देश के साधारणतया अच्छा दिमाग़ रखने वाले इन लोगों की इस आशुतोशता को देख कर बाकी संसार के लोग भारतवर्ष के सम्बन्ध में क्या धारणाएं कर लेते होंगे। उन्हें सम्भवतः भारतीय लोग झट से बहका लिये जाने वाले प्रतीत होते होंगे। पञ्जाब की इस कमेटी के सदस्य अपने को कमीशन से नीचे की स्थिति में पाकर बड़े लाल पीले हो रहे थे, परन्तु साइमन महोदय का यह थोथा सा लालच मिलते ही वह इस तरह ठण्डे पड़ गए जिस तरह कि खौल कर कढ़ाई से नीचे गिरता हुआ दूध ठण्डे पानी का एक ज़रा सा छींटा पाकर ही शान्त होजाता है। हम पूछना चाहते हैं कि यदि सर साइमन प्रान्तीय समितियों को अपने समान दर्जे के होने को सान्त्वता देते हैं तो भारत सचिव ने शाही कमीशन की नियुक्ति के समय पार्लियामेण्ट की बहस में हिन्दोस्तानियों की पारस्परिक फूट का हवाला देते हुए उनकी नितान्त अयोग्यता सिद्ध करने का प्रयत्न क्यों किया था। यह तो स्पष्ट ही है कि इन प्रान्तीय कमेटियों की नियुक्ति शाही फरमान द्वारा नहीं अपितु सर जोन साइमन की इच्छा पर, भारत सचिव की स्वीकृति से, भारत सरकार की आज्ञा द्वारा हो रही है। अतः साइमन कमीशन और इन कमेटियों को एक समता पर तो स्वप्न में भी नहीं लाया जा सकता।

हम तो एक ही सिद्धान्त पर साइमन कमीशन के बायकाट के पक्षपाती हैं। वह सिद्धान्त भारतीय राष्ट्र प्रतिनिधि सभा द्वारा स्वीकृत सिद्धान्त है। हमारा विश्वास है कि भारतवर्ष के भाग्य निर्णय करने का अधिकार भारतवासियों के अपने हाथ में होना चाहिये। सर जोन साइमन के इन थोथे लालचों द्वारा भारतवर्ष की यह साधिकार माँग ज़रा भी पूरी नहीं होती, अतः इस अवस्था में कमीशन के साथ सहयोग करना देश विद्रोह करना होगा।

× × ×

४. अ० भा० हिन्दी-साहित्य सम्मेलन का अठारहवां वार्षिक अधिवेशन

पिछले दिनों मुज़फ़्फ़रपुर (बिहार) में अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य-सम्मेलन का अठारहवाँ वार्षिक अधिवेशन बड़े समारोह और सफलता के साथ समाप्त हुवा। सभापति का आसन गुरुकुल विश्वविद्यालय काँगड़ी के हिन्दी साहित्य के उपाध्याय श्री पं० पद्मसिंह जी शर्मा ने ग्रहण किया था। पण्डित जी अपनी परिमार्जित साहित्यिक रुचि, सरल स्वभाव और साहित्यिक सेवाओं के लिये हिन्दी जगत में प्रसिद्ध हैं। उन की भाषा सजीव और बोलती चालती भाषा है। उन का सभापति पद से दिया भाषण पढ़ जाइये; उनके किसी विचार से आपको मत भेद हो सकता है, उन की कोई बात आप को ना पसन्द भी आसकती है, परन्तु आप उनके विचारों से लाख मतभेद रखते हुए भी उन की शैली और भाषा लालित्य पर 'वाह' कहे बिना न रह सकेंगे। उन का यह साहित्यिक आलोचनापूर्ण भाषण किसी श्रेष्ठ उपन्यास से कम मनोरञ्जक नहीं है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पण्डित जी से व्यक्तिगत परिचिति प्राप्त होने के आधार पर हम यह कह सकते हैं कि हिन्दी जगत में उनके समान निरभिमान, साधुस्वभाव और निष्पक्ष सच्चे ब्राह्मण बहुत कम हैं। उनका निवास स्थान आचार्य चाणक्य की पर्णकुटी का स्मरण दिला देता है। उन की बातचीत की शैली और नम्रता थोड़ी ही देरमें किसी अपरिचित व्यक्ति को भी अपनी ओर आकृष्ट कर लेती है। हमें उनके साथ सम्मेलन में जाने की अवसर प्राप्त हुआ था। हमें ज्ञात है कि अपने साधु और सरल स्वभाव के कारण वह अनेकवार रेल में अकेला सफर कर रहे होने की वजह से रेलवे के कर्मचारियों द्वारा तंग भी किये गये। पण्डित जी के स्वभाव की सरलता के कारण ही मुज़फ्फ़रपुर के क्रोध और लड़ाई के वातावरण में भी, किसी दल का कोई व्यक्ति सभापति के व्यवहार पर ज़रा भी उङ्गली न उठा सका। मुज़फ्फ़रपुर का यह अधिवेशन सम्मेलन के इतिहास में सदैव स्मरणीय रहेगा। इस में अनेक परिवर्तन हुए हैं। सम्मेलन के साधारण नियमों से लेकर मन्त्रिमण्डल तक में बड़ा उलट फेर कर दिया गया है। ये परिवर्तन सम्मेलन को किस दिशा में ले जांयगे, इस का उत्तर भविष्य ही दे सकेगा। अभी तक उनके सम्बन्ध में कुछ भी कहना उचित न होगा।

× × ×

५. आगामी कांग्रेस का सभापति कौन हो ?

लक्षणों से प्रतीत होता है कि इस वर्ष की कलकत्ता कांग्रेस बड़ी सफल, महत्त्व पूर्ण और रौनकदार रहेगी। हमें इस बात का सन्तोष है कि हमारा यह वर्ष क्रिया-शून्य और उदासीनतापूर्ण नहीं गुज़रा। इस वर्ष जनता में जागृति उत्पन्न करने का कार्य थोड़ी बहुत मात्रा में अवश्य हुआ है। अपने आशावादी स्वभाव के कारण, हम समझते हैं कि साइमन सप्तक की कृपा से देश का अगामी वर्ष, अर्थात् सन् १९२९ का साल, और भी अधिक जागृति और उत्साह का वर्ष सिद्ध होगा। आगामी कांग्रेस के दिनों में साइमन सप्तक के देवता इसी देवभूमि में विचरण कर रहे होंगे अतः यह तो निश्चित ही है कि इस वर्ष की कांग्रेस खूब सफल और उत्साह पूर्ण होगी। फिर कलकत्ता जैसा नगर ठहरा; यदि देश में ज़रा भी जागृति न होती तो भी कलकत्ते वाले अपनी कांग्रेस को खूब आकर्शक बनाने का प्रयत्न करते, कम से कम युक्तियों से उस की महत्ता सिद्ध अवश्य कर देते। अस्तु;

कलकत्ता की कांग्रेस के लिये सभापति कौन चुना जाय, यह प्रश्न आजकल सभी प्रान्तीय समितियों के सन्मुख विचारार्थ प्रस्तुत है। हमारी सम्मति में इस वर्ष की कांग्रेस का सभापति कोई बहुत ही प्रतिभाशाली और प्रभावशाली प्रथम श्रेणी का नेता होना चाहिए, क्योंकि अगले वर्ष देश को उस के प्रतिभापूर्ण नेतृत्व की अत्यधिक आवश्यकता रहेगी।

प्रतिवर्ष कांग्रेस का सभापति निर्वाचित करते हुए मुख्यतया दो बातों का ध्यान रक्खा जाता है। i. जिस मान्य नेता ने पिछले वर्ष कोई असाधारण महत्त्वपूर्ण कार्य किया हो उसे अगले वर्ष कांग्रेस का सभापति निर्वाचित किया जाता है; अथवा ii. किसी उच्चकोटि के उत्साही देश भक्त को, उस की भूत सेवाओं का सामूहिक रूप से आदर करने और उसे भविष्य के लिये प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से राष्ट्रपति निर्वाचित किया जाता है। इनमें से पहली परख के उदाहरण देशबन्धु चित्तरञ्जन दास, डाक्टर अन्सारी आदि हैं। दूसरी परख के

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उदाहरण श्रीमती सरोजनी नायडू, मौ० मुहम्मद अली आदि हैं। इस वर्ष भी इसी उद्देश्य से आगामी कलकत्ता कांग्रेस के लिये श्री सुभाशचन्द्र बोस तथा श्री जवाहरलाल नहरू आदि के नाम लिये जा रहे है।

इस वर्ष देश में दो व्यक्तियों द्वारा दो विशेष महत्वपूर्ण कार्य हुए हैं। पहला कार्य श्रद्धेय वल्लभ भाई पटेल का बारदौली का किसान सत्याग्रह है। दूसरा कार्य भी कम महत्वपूर्ण नहीं है। यह है देश के सभी दलों की ओर से एक सम्मिलित राष्ट्रीय विधान तैयार करना। यह कार्य माननीय पण्डित मोतीलाल नेहरू की अध्यक्षता में हुवा है अतः इस कार्य का मुख्य श्रेय उन्हीं को देना होगा। इस दृष्टि से इन्हीं दोनों महानुभावों में से किसी को इस वर्ष राष्ट्रपति निर्वाचित कर के सम्मानित करना चाहिये।

बारदौली का महत्वपूर्ण संग्राम अभी समाप्त नहीं हुवा। कहा नहीं जा सकता कि यह महान संग्राम अभी और कितने दिनों तक खिचेगा, यह भी सम्भव है कि काँग्रेस के दिनों तक भी यह संग्राम समाप्त न हो पावे। फिर अगला वर्ष कानूनी और शासन सम्बन्धी लड़ाई करने का वर्ष है। श्रद्धेय वल्लभ भाई पटेल निश्चित रूप से, अपने सिद्धान्तों और मन्तव्यों के अनुसार, इस दल-दल में फँसना पसन्द न करेंगे। अतः हमारी यह दृढ़ सम्मति है कि माननीय पं० मोतीलाल नेहरू ही इस वर्ष राष्ट्रपति के पद पर आसीन किये जायँ।

× × ×

६. कन्या-गुरुकुल देहरादून का वार्षिकोत्सव

कन्या-गुरुकुल देहरादून का वार्षिकोत्सव हाल ही में आशातीत सफलता के साथ समाप्त हुआ है। इस सफलता के लिये स्त्री-शिक्षा की प्रेमी आर्य-जनता धन्यवाद की पात्र है। वार्षिकोत्सव में २३ हज़ार रुपया नक़द दान की राशि सुनाए जाना और ७२ नवीन ब्रह्मचारिणियों का वेदारम्भ-संस्कार में दीक्षा ग्रहण करना इस बात का प्रबल प्रमाण है कि काँगड़ी के गुरुकुल विश्वविद्यालय की तरह आर्यजनता ने इस कन्या-गुरुकुल को भी पूरी तरह से अपना लिया है। जिन महानुभावों को इस वार्षिकोत्सव में सम्मिलित होने का सुअवसर प्राप्त हुवा था, उन्होंने वहाँ एक अदृष्टपूर्व नज़ारा देखा। उन्होंने देखा कि बालिकाओं की यह नवीन सन्तति, जिन पर भविष्य का राष्ट्र निर्भर करता है, राजनीति जैसे गहन विषय पर निबन्ध लिख सकती है, उस पर वाद-विवाद कर सकती है; शुद्ध और ललित संस्कृत में धाराबाहिक रूप से भाषण कर सकती है।

भारतवर्ष की एक बहुत बड़ी आवश्यकता इस देश की माताओं का शिक्षित होना है। देहरादून का कन्या-गुरुकुल इसी बात के लिये यथाशक्ति प्रयत्न कर रहा है। इस कुल की सबसे बड़ी विशेषता है, कन्याओं में भारतीय संस्कृति का अनुराग भरते हुए उन्हें नवीनता और सुधारों का प्रेमी बनाना। हमें इस बात का सन्तोश और और अभिमान है कि हमें इसमें सफलता प्राप्त हो रही है। कन्या-गुरुकुल का यह नवीन वार्षिकोत्सव इस कुल की सफलता और अभिवृद्धि का सन्देश दे रहा है। अपने प्रयत्नमें यह यत्किञ्चित सफलता देख कर हमारा रोम-रोम उस दयालु प्रभु के लिये कृतज्ञ हो रहा है।

× × ×

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सचित्र

सुचारु सूची शिल्प पत्रावली

सलाई और क्रोशिये की दस्तकारी सिखलाने की सस्ती और अनूठी विधि

इस प्रकार के पत्र इंग्लैण्ड अमरीका इत्यादि देशों में तो बहुत दिनों से निकलते हैं। परन्तु भारत में हिन्दी भाषा द्वारा प्रत्येक वस्तु के लिये अलग अलग कार्ड की रीति से इस कार्य को सिखलाने का यह पहला ही प्रयत्न है जो कार्य पसन्द हो उसी के अनुकूल दो तीन आने खर्च कर कार्ड खरीद लो और घर बैठे बिना किसी की खुशामद के बनालो अब तक निम्न लिखित कार्ड (१४×७) प्रकाशित हो चुके हैं:—

पत्र नं०	मूल्य	पत्र नं०	मूल्य
१—दीर्घ सूची प्रारम्भिक प्रयोग ११ चित्र	।)	५—पुरुषों का लम्बा मौज़ा [सचित्र]	=)
२—बड़ी सादी बनियान [सचित्र]	=)॥	६—पुरुषों का सरल दस्ताना [सचित्र]	=)॥
३—पुरुषों का कुत [सचित्र]	=)॥	७—स्त्रियों का फूलदार कालर [सचित्र]	≡)
—बालिका की ऊनी जर्ज़ी [दुरंगा]	≡)	पुरुषों का नुन्दकीदार मौज़ा [सचि]	=॥)

८ कार्डों का पूरा सैट मूल्य १।=)॥ के स्थान में केवल १) रुपया

कुछ सम्मतियाँ—

सरस्वती इलाहाबाद— यह पत्रावली नारी मात्र के लिये बड़ी उपयोगी है। छपाई सुन्दर भाषा सरल और मूल्य बहुत ही कम।

प्रताप लाहौर—कन्या पाठशालाओं और स्कूल की लड़कियों केलिये बड़े काम की चीज़ है।

गृहलक्ष्मी प्रयाग—हम इन कार्डों का हृदय से प्रचार चाहते हैं।

महारथी देहली—यह कार्ड सस्ते होने के कारण कन्याओं के लिये बड़े उपयोगी हैं।

मैनेजर "ज्योति"

कोठी नम्बर २१, २२ राजपुर रोड देहरादून।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कला कौमुदी

लेखिका श्रीमती ओ३म्वती देवी

चित्र कला कौशल सम्बन्धी अनुपम पुस्तक-इस के द्वारा लेखिका ने क्रोशिये के कार्य को बड़ा ही सरल बना दिया है। बिना किसी प्रकार के पहिले ज्ञान के कन्यायें और स्त्रियें केवल इस की ही सहायता से अनेक प्रकार की बिनावट लेसें, फ़ीते, कपड़े इत्यादि बनाना सहज में ही सीख सकी हैं। पुस्तक में इतना विषय है कि किंचित इस से कई गुना दाम की पुस्तकों में भी न होगा। प्रत्येक वस्तु तथा बिनावट का बनाना चित्र देकर बड़ी सरल रीति से सिखाया गया है। देखिये समाचार पत्र इस के विषय में क्या कहते हैं।

"ट्रिब्यून" (अंग्रेज़ी का प्रसिद्ध दैनिक) लाहौर—स्त्रियों के लिये उपयोगी पुस्तक है। अनेक चित्रों द्वारा वस्तु बनाने की विधि बड़ी सरलता से समझाई गई है। सुन्दर नमूनों की लेसें, टेबल क्लाथ, बच्चों के सुन्दर कपड़े और अन्य कई वस्तुओं का बनाना बड़ी सुन्दर रीति से बतलाया गया है। पुस्तक की उपयोगिता के विचार से मूल्य बहुत कम है।

"मतवाला" (कलकत्ता)-यह पुस्तक हमारी बहिनों के बड़े समझ की है। छपाई बहुत अच्छी, कागज़ बहुत अच्छा मोटा चिकना आर्ट। सुचारु शिल्प पत्रावली कार्ड गृहस्थियों के बड़े काम की चीज़ है।

"कर्मवीर" (खांडवा)— ·····पुस्तक में सादे फन्दे से लगाकर तरह तरह की वस्तुओं के बनाने की विधि बड़ी सरलता से समझाई गई है जिसे पढ़कर साधारण पढ़ी लिखी स्त्री भी इस कार्य को सीख सकती है। इस का मूल्य लागत को देखते कम है।

"माधुरी" (लखनऊ)-ऐसी पुस्तकों की हिन्दी साहित्य के लिये बड़ी आवश्यकता है। आशा है इस पुस्तक का अच्छा प्रचार होगा जिस से इस प्रकार की और पुस्तकें भी प्रकाशित का जा सक। लेखिका और प्रकाशिका दोनों को बधाई।

शीघ्र आर्डर भेजिये मूल्य १॥)

कला कौमुदी तथा शिल्प पत्रावली का पूरा सैट लेने पर २॥।=)॥ के स्थान में केवल २।) में दिया जायगा।

कन्या पाठशालाओं और पुस्तक विक्रेताओं को विशेष रियायत।

मैनेजर ज्योति—

कन्या गुरुकुल

राजपुरा रोड कोठी नं० २१—२२ देहरादून

चौधरी हुलासराय प्रिन्टर तथा पं० रमेशचन्द्र पब्लिशर के लिये गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में मुद्रित।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

Regd. No. A. 1711

वर्ष ६] जौलाई, १९२८ [संख्या ३

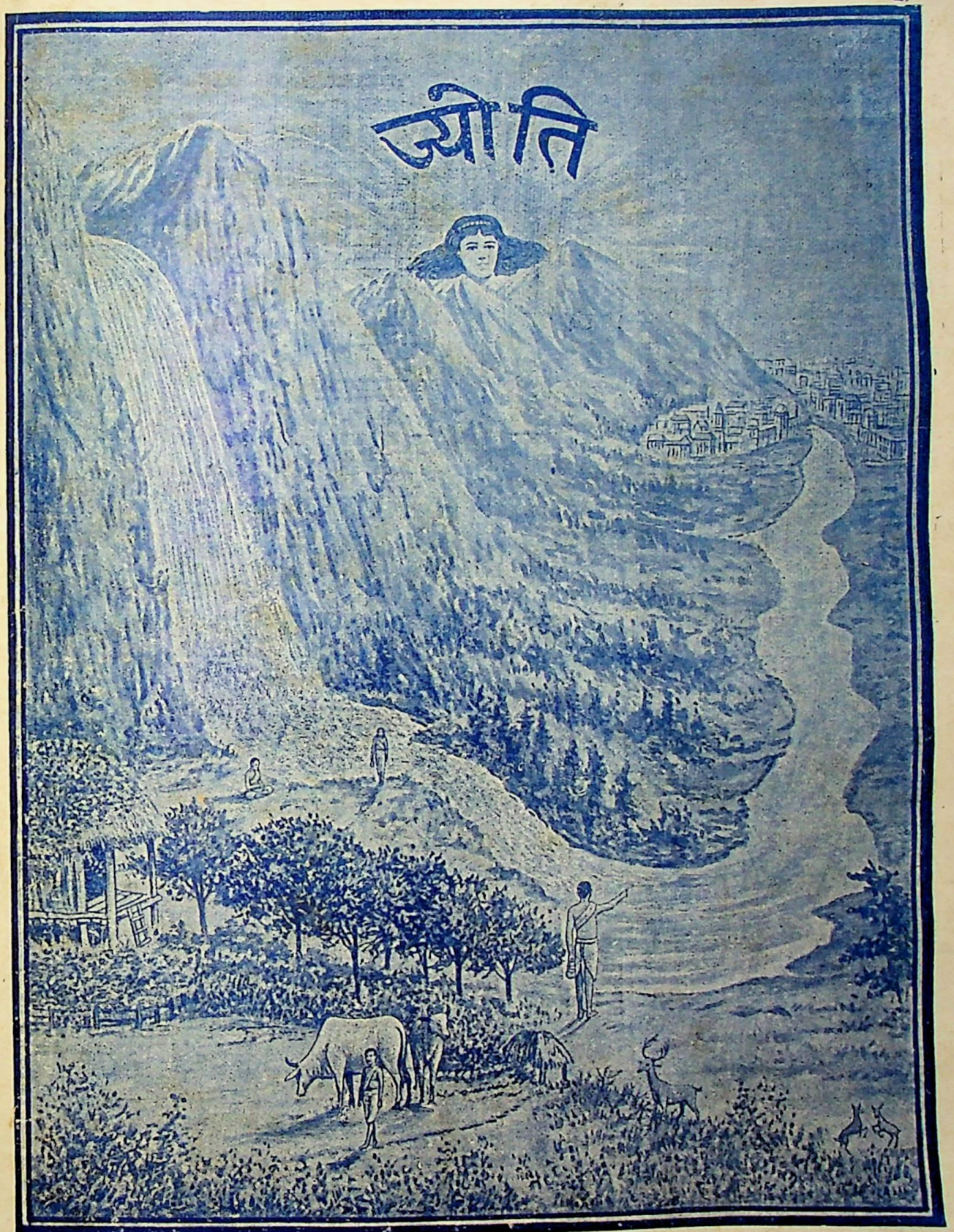

वार्षिक मूल्य ४॥)
प्रति संख्या ॥)

सम्पादिका—
विद्यावती सेठ बी. ए.

स्त्रियों और विद्यार्थियों से ४)
विदेश का मूल्य ६)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विषय सूची।

विषय	पृष्ठ से
१. अभिलाषा 'कविता' श्री पं० शंकरदेव जी विद्यालंकर	८१
२. भारत की प्राचीन सभ्यता— (लेखककुमारी सीतादेव जी विशारदा)	८२
३. मिट्टी का दिया 'कविता'— (श्री पण्डित चमूपति जी एम. ए.)	९५
४. घर की बहु— (लेखक श्री प्रो० सत्यव्रत जी सिद्धान्तालंकार)	९६
५. वे इक-तरफा उच्च-आदर्श— (ले० श्रीमती चन्द्रावती जी लखनपाल एम. ए.)	१०२
६. मुहम्मद साहब का जीवन-चरित्र— (लेखक एक ब्रह्मचारी)	१०६
७. शिक्षा— (लेखिका श्रीमती चन्द्रकला)	११२
८. कन्या गुरुकुल— (ले० कुमारी स्वर्णलता देवी)	११६
९. वैज्ञानिक संसार	१२०
[१] क्या स्त्री जाति का विश्वास नहीं किया जा सकता।	
[२] तार द्वारा फोटो।	
[३] प्राकृतिक भाप।	
[४] वायुयानों की गति वृद्धि।	
१०. कन्या गुरुकुल समाचार	१२४
११. विचार-प्रवाह	१२५
[१] बारदौली की विजय।	
[२] नहरू कमेटी की रिपोर्ट।	
[३] सेठ जमनालाल बजाज का एक वीरता पूर्ण कार्य	
[४] महात्मा गाँधी और आर्यसमाज।	

लेखकों से निवेदन

१. ज्योति में लेख कविता आदि भेजने वाले महानुभावों को अपने लेख सुस्पष्ट अक्षरोंमें कागज़ के एक ओर ही हाशिया छोड़ कर लिख कर भेजने चाहियें।

२. लेख बहुत लम्बे न होने चाहिए। 'ज्योति' पत्रिका के लगभग चार पृष्ठों के लायक लेख हों तो अति उत्तम है।

३. लेखों को घटाने बढ़ाने तथा संशोधित करने का संपादक को पूर्ण अधिकार है।

ज्योति सम्बन्धि पत्र व्यवहार—

आचार्य्या कन्या गुरुकुल

कोठी नं० २१, राजपुर रोड़

(देहरादून)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

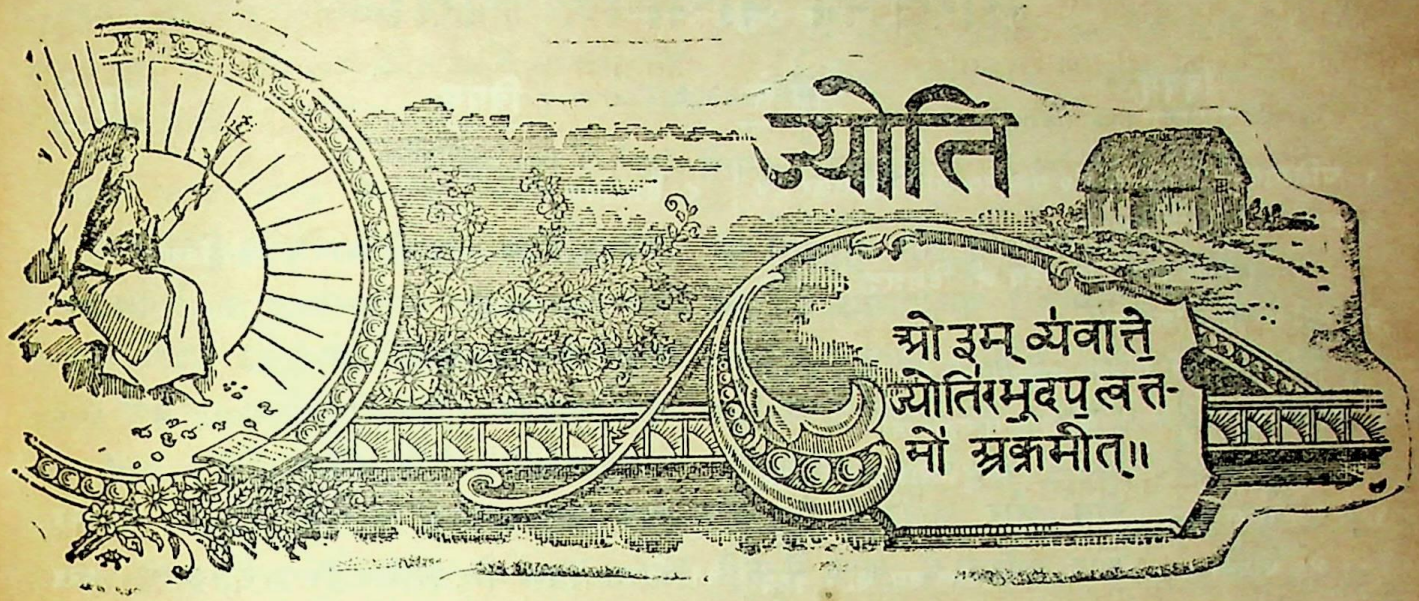

विविध विषय विभूषित सुन्दर मासिक पत्रिका.

वर्ष ६ | आषाढ़ १९८५ * जौलाई १९२८ | संख्या ३

अभिलाषा

(श्री. स्नातक शंकरदेव जी)

अन्तरिक्ष के उन दीपों से कैसी आभा बरस रही है ।
सुधासिन्धु उस चन्द्रदेव से रस-सरिता यह निकल रही है ॥
जगनायक की विपुल विपञ्ची बजनी अब आरम्भ हुई ।
जिसकी सुनकर मधुर रागिनी दुनियाँ सारी सुप्त हुई ॥

* * *

क्यों ना मैं भी इसी तरह से दीपक बनकर जल जाऊँ ।
किसी भटकते राही जन को सच्ची राह गहा जाऊँ ॥
दीन कृषक की पर्ण-कुटी को क्यों ना स्वर्ग बना जाऊँ ।
दुनियाँ के गुरुतर घावों में मरहम बन कर भर जाऊँ ॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

भारत की प्राचीन सभ्यता*

[लेखिका—कुमारी सीतादेवी विशारदा]

भारतीय संस्कृति और सभ्यता की प्राचीनता आश्चर्यजनक है। जब सारा संसार अज्ञान और असभ्यता के अन्धकार से आच्छादित हो रहा था। जिस समय यूनान, रोम और यूरोप के निवासी घोर बर्बरता के जाल में फँसे हुए थे, जब उनका राष्ट्र की दृष्टि से अस्तित्व ही नहीं था, उस समय यहाँ दिव्य-संस्कृति और अपूर्व सभ्यता की किरणें, अपनी ज्योति के साथ प्रकाशमान हो रही थीं। जब यहूदी-जाति की नींव भी उसके आदि-पुरुष इब्राहीम द्वारा नहीं डाली गई थी, उस समय आर्य्यसभ्यता भारतवर्ष की उपत्यकाओं घाटिओं और तराईयों में फैल चुकी थी। जिस समय यवन देश के प्राचीन कवि होमर और वनिश्रायेल के मधुर-गायन की उत्पत्ति भी नहीं थी, उस समय गङ्गा और यमुना के पवित्र तटों पर, जराधारी ऋषि-मुनियों ने मन के उच्छ्वास द्वारा जातीय-गौरव के काव्य को रचा और गाया था। जिस समय मिश्र और असुर देश सभ्यता को प्राप्त कर लेने पर भी, घोर मूर्ति-पूजा तथा रीति-रस्मों के बन्धनों में जकड़े हुए थे, उस समय भारत अलख-अगोचर, और अलख गति के अन्वेषण में निमग्न था। भारतीय संस्कृति और सभ्यता की अधिक प्राचीनता को देखकर एक सुप्रख्यात इतिहासज्ञ ने कहा है कि मिश्र देश के भव्य पिरामिड और आधुनिक यूरोपीय विद्वानों का माना हुआ शिक्षा-युग, भारतीय सभ्यता की प्राचीनता के सन्मुख कल की वस्तुएँ हैं। पृथ्वी की आयु की गणना लाख-दो-लाख वर्षों से नहीं, करोड़-दो-करोड़ वर्षों से नहीं, अपितु अरबों वर्षों से की जाती है। इतने प्राचीन पृथ्वी-मण्डल पर इतिहास ने जिन-जिन संस्कृतियों का अन्वेषण और उल्लेख किया है, उसमें निःसन्देह भारतीय-संस्कृति और सभ्यता सबसे अधिक प्राचीन है। इस पृथ्वी-मण्डल पर अनेक राष्ट्रों का उत्थान और पतन हुआ, अनेक साम्राज्यों का उदय और अस्त हुआ, अनेक सभ्यताओं का प्रकाश और लोप हुआ, परन्तु भारतीय-सभ्यता कई विशेषताओं के कारण अभी तक अपना थोड़ा-बहुत अस्तित्व बनाये हुए है, यदि हम प्राचीन तथा अर्वाचीन सभ्यता की तुलना करते हैं तो यह अन्तर प्रतीत होता है। प्राचीन भारत की अवनता-वस्था की तुलना भी वर्तमान भारत के साथ करना दुस्तर है। महाभारत काल जिस समय कि भारत हीनावस्था को प्राप्त हो चुका था, उस समय भी सम्पूर्ण भारतवर्ष भौतिक सभ्यता की दृष्टि से जितना उन्नत था, उन अङ्गों में वह उससे अधिक उन्नत पूर्व कभी न हो पाया था। युद्ध-नीति शस्त्रास्त्र, प्राकृतिक-विज्ञान, शिल्प, वाणिज्य, व्यवसाय, आवागमन का प्रबन्ध इन अङ्गों में इतनी उन्नति थी कि वर्तमान यूरोप १८ वीं सदी के अन्त तक भी न कर पाया था। सेना का प्रबन्ध

* यह निबन्ध कन्या-गुरुकुल देहरादून के चतुर्थ उत्सव पर सरस्वती-सम्मेलन में पढ़ा गया।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

नियमित रूप से था। सेना दो प्रकार की होती थी—(१) स्थिर-सेना (२) स्वयं-सेवक-सेना। स्थिर-सेना का प्रबन्ध पूर्ण था। सभापर्व में नारद ने युधिष्ठिर से प्रश्न किया है कि—

क्वचिद्बलस्य भक्तञ्च वेतनञ्च यथोचितम्।
सम्प्राप्तकाले दातव्यम् ददासि न विकर्मसि ॥१॥

अर्थात्—क्या तुम अपने सैनिकों को उनका पूरा वेतन और भोजन का हिस्सा ठीक समय पर देते हो? सैनिकों का वेतन उन्हें सदैव ठीक समय पर दे देना चाहिये अन्यथा राजा पाप का भागी बनता हैं।

स्वयं-सेवक सेना के विषय में उद्योगपर्व में लिखा है कि—

सेना कर्मण्यभिज्ञोऽस्मि व्यूहेषु विविधेषु च।
कर्म कारयितुं चैव भृतामभृतांस्तथा ॥

उस समय देश पर आपत्ति हुई देखकर देश के नवयुवक स्वयं-सेवक बनकर सेना में भरती होते थे। बहुत से स्वयं-सेवक बिना वेतन लिये देश-प्रेम से वशीभूत होकर सेना में सम्मिलित होते थे। भीष्म कहते हैं कि 'मैं सेना के सब कार्यों से परिचित हूँ। मैं स्थिर वेतन-भोगी सैनिकों और अवैतनिक स्वयं-सेवकों से भी कार्य करा सकता हूँ। कई लोगों का मत है कि भारतवर्ष में बारूद और बन्दूक आदि का प्रयोग मुसलमानों के इस देश में आने के बाद से ही शुरु हुआ, वे लोग बारूद के आविष्कार का श्रेय अरबवासियों को ही देते हैं। उनका कथन है कि मुसलमानों के साथ युद्ध करते हुए, भारतवासियों को बारूद का परिचय प्राप्त हुआ। परन्तु यह सिद्धान्त अयुक्तियुक्त और प्रमाण-विरुद्ध है। शुक्रनीति में बारूद बनाने की विधि लिखी है—

सुवर्चिलवणात् पञ्च पलानि गन्धकात् पलम्।
अन्तर्धूम विपक्वार्क स्नुह्यादयङ्गारतः पलम् ॥ २०१ ॥
शुद्धात् संग्राह्य संचूर्ण्य सम्मील्य प्रपुटेद्रसैः।
स्नुह्यर्काणां रसोनस्य शोषयेदातपेन च ॥
पिष्ट्वा शर्करवच्चैतदग्निचूर्णं भवेत् खलु ॥ २०२ ॥
सुवर्चिलवणात् भागाः षड्वा चत्वार एव वा।
नालाशास्त्रार्थाग्नि चूर्णे तु गन्धाङ्गारौ तु पूर्ववत् ॥

अर्थात्—बारूद बनाने के लिये इस अनुपात से निम्नलिखित सामान लेना चाहिये—सुवर्चीं नमक के पाँच हिस्से, गन्धक का एक हिस्सा और आक, स्नुही या किसी ऐसे ही पेड़ की लकड़ी के कोयले का एक हिस्सा, यह कोयला इस तरह बनाना चाहिये जिससे कि धुआँ न निकला हो, इन तीनों चीज़ों को अलग-अलग स्वच्छ बर्तनों में खूब बारीक पीस लेना चाहिये और फिर इन्हें मिला देना चाहिये। इस चूर्ण में स्नुही या आक का रस डालकर इसे धूप में सुखाना चाहिये और फिर इसे खाँड की तरह चूर्ण बना लेना चाहिये। यही बन्दूक में छोड़ने का बारूद है। कुछ यूरोपियनों के प्रमाण देकर मैं इस बात की सत्यता सिद्ध करूँगी।

सन् १७९८ में महाशय लैले ने फ्राँस की साहित्य-परिषद् के सामने एक निबन्ध पढ़ा था, जिसमें उन्होंने सिद्ध किया था कि अरब लोगों ने भारतवासियों से बारूद बनाना सीखा, और फिर उनसे अन्य देशों ने। इसी को जे. वैकमैन ने अपनी पुस्तक में सिद्ध किया है। मनुस्मृति में एक श्लोक आता है जो इस प्रमाण की पुष्टि करवा है—

न कूटैरायुधैर्हन्यात् युध्यमानो रणे रिपुम्।
न कर्णिनीपि दिग्धैर्नाग्नि ज्वलित तेजनैः ॥

अर्थात्—लड़ाई में कोई व्यक्ति अपने शत्रु को छिपे हुए—हथियारों या विष में बुझे हुए तीरों से, अथवा आग फेंक कर न मारे। इस श्लोक से

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्पष्टतया ऐसे शस्त्र की झलक मिलती है जिसके द्वारा कि अग्नि-वर्षा की जाती होगी। और भी कई प्रकार के अस्त्रों का तथा तोप का वर्णन आता है।

नालिकं द्विविधं ज्ञेयं बृहत् क्षुद्र विभेदतः।
तिर्य्यगूर्ध्वं च्छिद्रं शूलं नालं पञ्च वितस्तिकम्॥
मूलाग्रयोर्लक्ष्य भेदि तिल बिन्दुयुतं सदा।

अर्थात् बड़ी नालिका के एक सिरे पर कील लगा होता है। जिस के द्वारा उसका मुँह यथेच्छ घुमाया जा सकता है। इस का खाका मजबूत लकड़ी का बना होता है, इसे छकड़ों पर उठा कर ले जाया जाता है, युद्ध में विजय प्राप्त करने का मुख्य साधन है!

प्रादुरासंस्ततो बाणाः दीप्ताग्राश्च सहस्रशः।
पाण्डवान् क्षयमिष्यन्तः दीप्तास्या इव पन्नगाः॥ १७॥
ते दिशः खं च सैन्यं च समावृण्वन् महादवे।
तत्रापरे द्योतमाना ज्योतींषीवाम्बरेऽमले॥ १८॥

इसमें तोप का वर्णन किया गया है। द्रोण-पर्व में नारायणास्त्र का वर्णन आता है कि प्रथम अगले भागों से जलते हुए बाण प्रगट हुए और सारी दिशाओं में फैल गये, इसके बाद तारों की तरह दीप्यमान सीसे की तरह चमकते हुए गोले छोड़े गये, फिर चार चक्र वाली विचित्र प्रकार की शतघ्नियाँ, बड़े २ गोले और ऐसे चक्र जिनकी धाराएं छुरे के समान तेज की प्रगट हुए। वनपर्व में लिखा है—

नारायणास्त्र ऐसा था कि उसने विस्तृत होकर सब को अग्नि के समान दग्ध कर दिया। इस विशालास्त्र के वर्णन को पढ़ कर हम आश्चर्य चकित हो जाते हैं। इसी प्रकार अशनि अन्त-र्धानास्त्र इत्यादि और कई प्रकार के अस्त्रों का वर्णन आता है। जब हमें इस प्रकार के प्रबल प्रमाण मिलते हैं तो युरोपीय विद्वानों का यह निर्मूल कथन कैसे सत्य हो सकता है कि प्राचीन आर्य्य जंगली थे, असभ्य थे, वह लोहे तथा लकड़ी के शस्त्र बना कर अपनी रक्षा कर लिया करते थे। उन्हें शस्त्रास्त्र-विद्या तथा सेना संचालन आदि कार्य्य हीं आता था। हमें ऐसे प्रमाण मिलते हैं कि क्षत्रिय को विशेषतया रणशिक्षा दी जाती थी। महाभारत में आता हैं कि कौरव तथा पाण्डव युद्ध-विद्या सीखने के लिये द्रोणाचार्य के पास गये। अर्जुन की वीरता तथा युद्धकौशल से प्रसन्न हो कर गुरु ने उसको विशेष प्रकार का अस्त्र प्रदान किया था। द्रोणपर्व में व्यूह का वर्णन इस प्रकार आता है—

दीर्घो द्वादशगव्यूतिः पञ्चार्धे पञ्चविस्तृतः।
व्यूहः सचक्रशकटो भारद्वाजेन निर्मितः॥
नाना नृपतिभिर्वीरैः यत्र तत्र व्यवस्थितैः।
रथाश्वगजपत्त्योघैः द्रोणेन निहितः स्वयम्॥
सूचीपद्मस्य गर्भस्योगूढो व्यूहः कृतः पुनः॥
एवमेतं महाव्यूहं व्यूह्य द्रोणो व्यवस्थितः।
सूचीमुखे महेश्वासः कृतवर्मा व्यवस्थितः॥

अर्थात् भारद्वाज वंश उत्पन्न द्रोणाचार्य्य ने इस प्रकार का चक्र सहित शकट-व्यूह बनाया जो ४८ मील लम्बा और २० मील चौड़ा था। उस व्यूह में अनेक राजा और वीर अपने २ स्थान पर नियत किये थे, अगला भाग सूचि की तरह से था। सूचि के मुख में वीर कृतवर्मा स्थित था। वाद्यों द्वारा उन्होंने ऐसे संकेत बनाये थे जो कि अपने सिवाय और कोई न समझ सकता था। क्या यह प्रमाण भारतीयों की शस्त्रास्त्र निपुणता तथा रण-कुशलता को सम्यक् सिद्ध नहीं करते। कई लोगों का विचार है कि जहाज तथा भवनों इत्यादि का आविष्कार अंग्रेजों ने ही किया है। प्रमाण द्वारा यह भी निर्मूल सिद्ध हो जायगा। असीरिया की रानी सेमरेमिस ने भारत पर आक्रमण किया, तो उस समय चार हज़ार भारतीय जहाजों ने

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

इसका प्रतीकार किया था । प्रसिद्ध मुसलमान लुटेरे मुहम्मद ने भी पञ्जाब पर धावा किया तब वहां की जलसेना ने अति साहस के साथ उसका प्रतिकार किया। रामायण काल में भी राम तथा लक्ष्मण १२ वर्ष की अवस्था में विश्वामित्र के यज्ञ में रक्षार्थ गये थे। इसी प्रकार अन्य कई प्रमाण मिलते हैं। क्या इन प्रमाणों से यह सिद्ध नहीं होता कि क्षत्रिय बाल्यावस्था से ही दक्ष होते थे।

* * *

भवन-निर्माण

प्राचीन काल में विश्वकर्मा बड़ा निपुण शिल्पी तथा इञ्जिनियर था, वर्तमान काल के शिल्पी बड़े अभिमान से अपने को उसका वंशज कहते हैं। मय की शिल्प-विद्या तो प्रसिद्ध ही है। उसका निर्मित भवन ही महाभारत युद्ध की जड़ है। दुर्योधन को यह नहीं पता लगा था कि यह पृथ्वी है या जल। प्राचीन शिल्पियों के साथ वर्तमान शिल्पियों की तुलना असम्भव है ग्रन्थों में लिखा है कि गृह— निर्माण इत्यादि विद्याएँ सिखाई जाती थी। शब्द रहित चलने वाले रथ भी होते थे। इन प्रमाणों से कौन यह सिद्ध कर सकता है कि शिल्पविद्या के आविष्कारक अंग्रेज हैं। इस प्रकार भौतिक सभ्यता की उन्नति में चरम सीमा तक पहुँचे हुए थे।

* * *

विद्या की उन्नति

प्राचीन भारतीयों ने विद्या में भी आश्चर्यजनक उन्नति करली थी। समाधि द्वारा वेदमन्त्रों के अर्थों को जान लेना, उनके लिये साधारण बात थी। सब विद्याओं का उन्हें ज्ञान होता था। कई योरपीय विद्वानों का कथन है कि वह केवल व्याकरण के अध्ययन में ही बारह वर्ष व्यतीत कर देते थे। उनका यह कथन निम्नलिखित प्रमाण से सर्वथा अमूलक सिद्ध होता है—

छान्दोग्योपनिषद् प्रपाठक में जहां महर्षि सनत्कुमार और ऋषि नारद का सम्वाद है, वहाँ सनत्कुमार के पूछने पर नारद ने उत्तर दिया हैं—

सहोवाचर्ग्वेदं भगवो ऽध्येमि यजुर्वेदꣳसामवेद माथर्वणं, चतुर्थमितिहासं, पुराणं, पञ्चमं वेदानांवेदं, पित्र्यꣳ राशिं, दैवं, निधिं, वाकोवाक्यमेकायनं, देवविद्यां, ब्रह्मविद्यां, भूतविद्यां, क्षत्रविद्यां, नक्षत्रविद्यां ꣳ सर्पदेवजन विद्यामेतद् भगवो ऽध्येमि।

अर्थात्, हे भगवन्! मैंने ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, इतिहास, पुराण, वेदों के अर्थविधायक ग्रन्थ, पितृविद्या, राशिविद्या, दैवविद्या, निधिविद्या, वाकोवाक्य विद्या, एकायनविद्या, ब्रह्मविद्या, भूतविद्या, क्षत्रविद्या, नक्षत्रविद्या, तथा सर्पदेवजन आदि विद्याओं का अध्ययन किया है। इससे सिद्ध होता है कि—प्राचीन काल में सब विद्यायें पढ़ाई जाती थी, यदि एक ही विद्या में १२ वर्ष व्यतीत किये जाते तो इतनी विद्याओं का ज्ञान किस प्रकार हो सकता था। शिक्षा-पद्धति भी अत्युत्तम थी। ब्रह्मचारियों के अध्ययनार्थ परिषदें थी। अर्वाचीन विश्वविद्यालयों की अपेक्षा उनका अधिक महत्व था। उनमें २१ उपाध्याय पढ़ाते थे। और कई विद्यालय भी थे जिन्हें वानप्रस्थियों ने ब्रह्मचारियों की शिक्षार्थ खोला हुआ था। ब्रह्मचारी विद्या ग्रहण करते हुए, अपने गुरुजनों की सेवा भी करते थे। विशेष विद्या ग्रहण कर लेने पर वैज्ञानिक तथा आध्यात्मिक विषयों पर शास्त्रार्थ करते थे। उन्हें अपने गुरुओं के साथ ही रहना पड़ता था। उपाध्यायों तथा विद्यार्थियों के लिये बड़े २ पुस्तकालय और आश्रम विद्यमान थे। परिषदों का व्यय राजा ही देते थे। उस समय ब्रह्मचा-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

रियों का इतना मान था कि जब भिक्षा का समय निकट आता था तो देवियाँ भिक्षा लिये द्वार पर खड़ी होकर उनकी प्रतीक्षा करने लगती थीं। ग्रामों के सब स्त्री-पुरुष विद्यार्थियों के आचार के लिये अपने को उत्तरदात्ता समझते थे। हमें अन्य पश्चिमीय सभ्यदेशों में भी इसी शिक्षा की झलक मिलती है। वहाँ के लोग जो नवीन २ सिद्धान्त तथा शिक्षा की रीतियों का आविष्कार कर रहे हैं, वस्तुतः उसमें नवीनता कुछ भी नहीं है। इसी शिक्षा का रूपान्तर है। यूनान देश में पैथागोरस की शहर की पाठशाला का वर्णन भी प्राचीन गुरुकुलों के साथ मिलता है। विद्यार्थियों की पढ़ाई, सन्ध्योपासना, सादगी इत्यादि नियमों में बहुत समानता है, प्लेटो ने शिक्षा के जिन आधारभूत सिद्धान्तों का वर्णन किया है वह भारतीय शिक्षा के प्राचीन सिद्धान्तों से सर्वथा मिलते हैं। उदाहरणार्थ मैं आपके सन्मुख कुछ नियमों का वर्णन करती हूँ—

१. शिक्षा बाधित होनी चाहिये।

प्राचीन काल में भी बाधित शिक्षा ही होती थी, क्योंकि यह राज-नियम था कि ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, नियत अवस्था में शिक्षा न देने से व्रात्य हो जाते थे, उसके साथ वेद तथा योनि का सम्बन्ध भी कोई न करता था। प्राचीन काल में पुण्यरूप से कर ग्रहण किया जाता था, गुरुकुलों में जो विद्यार्थी पढ़ते थे, वह भिक्षार्थ गृहस्थियों के पास जाते थे, नियम से नित्य भिक्षा देना गृहस्थियों का कर्त्तव्य था, अतः शिक्षा के लिये वह पुण्यरूप से कर देते थे। परिषदों को चलाने के लिये व्यय राजा ही देता था, अतः राजा प्रजा दोनों की ओर से शिक्षा बाधित होती थी।

२. शिक्षा देना राष्ट्र का कर्तव्य है।

मनुस्मृति में लिखा है कि "कन्यानां सम्प्रदानं च कुमाराणां रक्षणम्" अर्थात् राजा का कर्तव्य है कि अपने राष्ट्र की कन्याओं की रक्षा करे तथा उन्हें योग्य बनायें, तदनन्तर उत्तम स्थान पर उन्हें प्रदान करे।

वानप्रस्थियों तथा ब्रह्मचारियों के भोजन का व्यय भी प्रजा पर ही था। अतः यह सिद्ध हुआ है कि शिक्षा देना राष्ट्र का कर्तव्य था।

३. बालक बालिकाओं की एक साथ शिक्षा नहीं होनी चाहिये।

प्राचीन गुरुकुलों का नियम था कि लड़कों की पाठशाला में लड़कियाँ, तथा लड़कियों की पाठशाला में लड़के न जा सके। इतना कठोर नियम था कि ब्रह्मचारिणी पुरुष का दर्शन न करे। "स्त्रीणां च प्रेक्षणालम्भमुपघातं परस्य च" अर्थात् स्त्री का दर्शन तथा आश्रय यह भी मैथुन है। ब्रह्मचारी तथा ब्रह्मचारिणियों के लिये इस प्रकार के नियम थे तो यह कैसे सम्भव हो सकता है कि उनकी एकत्र शिक्षा हो।

४. शिक्षा-काल में विद्यार्थियों के आचार पर कठोर नियन्त्रण रखना चाहिए।

प्राचीन काल में भी गुरुकुलों में ब्रह्मचारियों पर कठोर नियन्त्रण होता था, उन्हें बड़ा तपस्वी जीवन व्यतीत करना पड़ता था।

५. चाहे राजा के लड़के हों चाहे किसान के सबको एक साथ शिक्षा देनी चाहिए।

प्राचीन गुरुकुलों में सबके साथ समान व्यवहार किया जाता था। श्रीकृष्ण तथा सुदामा दोनों ही गुरुकुल में पढ़ते थे। उनके साथ ही सम व्यवहार किया जाता था।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

६. शिक्षा का मुख्यसिद्धान्त सादा रहना तथा उच्च विचार रखना है ।

गुरुकुलों में सादगी से ही रहते थे उनके विचार भी बहुत उच्च होते थे, तपस्या से जीवन को व्यतीत करते थे ।

७. विद्यार्थियों को दोनों समय सन्ध्योपासना करना आवश्यक है ।

यह बात तो स्पष्ट ही है ।

* * *

इन प्रमाणों से भारतीय शिक्षा-पद्धति की सर्वव्यापकता सिद्ध होती है । इस बात को पश्चिमीय विद्वानों ने भी मुक्तकण्ठ से स्वीकार कर लिया है कि प्राचीन आर्य्यों ने ज्योतिष में बहुत उन्नति कर ली थी। सुविख्यात पाश्चात्य ज्योतिषी केलीनी, बेलीजेंटिल इत्यादि के मत से ई० सन् के ३ हजार वर्ष पहिले भी भारत ने ज्योतिष में बहुत उन्नति कर ली थी । सर डब्ल्यू हण्टर का मत है कि भारत ग्रीक से भी अधिक ज्योतिष में बढ़ा हुआ है। जिस बात को आधुनिक ज्योतिषी बड़े अभिमान से कहते हैं कि इनके नवीन सिद्धान्त का आविष्कार किया है— वह बात हमारे पूर्वज हजारों वर्ष पहिले से ही जानते थे । अर्वाचीन ज्योतिष-शास्त्र के ज्ञाता जानते हैं कि सूर्य्य उदय और अस्त नहीं होता, उसका उदयास्त होना पृथ्वी की गति के कारण हमें दिखाई देता है, इस बात को स्थूलरूप से हमारे पूर्वज जानते थे । ऐतरेय ब्राह्मण में कहा है—

स वा एष न कदाचनास्तमेति नो देति तं यदस्त— मेतीतिमन्यं तेन्ह एव तदन्तमित्वाथात्मानं विपर्यस्यते रात्रीमेवावस्तात् कुरुतेहः परस्तादथ यदेनं प्रातरुदेतीति मन्यंते रात्रिरेवं तदन्तमित्वाथात्मनं विपर्यस्यते ऽहेवावस्तात कुरुते रात्रीं परस्तात् स वा एष न कदाचन निप्रोचहि ।

अर्थात् सूर्य्य कभी अस्त तथा उदय नहीं होता पृथिवी का भाग जब सूर्य्य के सन्मुख आ जाता है, तो रात्रि हो जाती है, जब नीचे की ओर चला जाता है तो दिन हो जाता है । पृथ्वी की आकर्षण शक्ति के विषय में हमारे भारतीयों ने न्यूटन और गेलिलिओ से सैकड़ों वर्ष पहिले आविष्कार कर लिया था । यथा—

आकृष्टशक्तिश्च महितयापत् स्वाभिमुखं स्वशक्त्या ।
आकृष्यते तत्पततीव भाति समे समन्तात् कृपत्तत्विथं स्वेः ॥

अर्थात् पृथ्वी में आकर्षणशक्ति होने से वह आकाश के पदार्थों को अपनी ओर आकर्षित करती हैं, इस से यह गिरते हुए दिखलाई पड़ते हैं । सूर्य्य एक है, इसके विषय में भी ऋग्वेद में प्रमाण मिलते हैं—

एक एवाग्निर्बहुधा समिद्धि एकः सूर्य्यो विश्वमनुद्रप्रभूतः ।
एकै वोषा सर्वमिदं विभाति । ऋ० स० ८, ५८ ।

अर्थात् हमारी पृथ्वी के साथ सम्बन्ध रखने वाला एक सूर्य्य है। एक ही उषा विश्व को प्रकाशित करती है ।

वैद्यक में भी आर्य्यों ने अत्यधिक उन्नति कर ली थी, वैद्यक द्वारा सिर का आपरेशन कर लेते थे । सर्प काटे हुए मनुष्य को भी जिसे कि अब मुर्दा समझा जाता है, वह जीवित कर देते थे । शतपथ ब्राह्मण में भी धन्वन्तरि वैद्य का वर्णन आया है। उनके रचित ही चरक सुश्रुत ग्रन्थ है, जिनका आश्रय वर्तमान काल के वैद्य लोग लेते हैं । व्याकरण में भी आप पाणिनीकृत अष्टाध्यायी पर ही दृष्टि डालें तो आश्चर्य होता है । सहस्रों वर्षों से कोई मनुष्य यह सिद्ध नहीं कर सका कि व्याकरण के किसी भी नियम की इसमें न्यूनता रह गई है । अन्य भी व्याकरण के कई ग्रन्थ है । अङ्कगणित तथा रेखागणित में भी बहुत उन्नति की थी । अङ्कगणित इल्म

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हिन्दसा नाम से अरब में अब तक प्रचलित है। वहाँ से ही वह योरुप में गया। बीजगणित में इतनी उन्नति की थी कि रेखा-गणित के प्रश्नों को भी इसके द्वारा ही हल करते थे। तर्कशास्त्र में न्याय इत्यादि कई उत्तम ग्रन्थ रचे थे। साहित्य के विषय में कोअन्ट जानस्टर्जन ने लिखा है कि भारतीय साहित्य हमें भूतकाल के महान् राष्ट्र का परिचय देता है, भारतीय साहित्य में ज्ञान की विभिन्न शाखाओं का समावेश है। प्रो० मेकडानल अपने ग्रन्थ में लिखते हैं कि संस्कृत-साहित्य के प्रति यूरोप ऋणी है—वह निस्सन्देह महान् है, उसकी कृतज्ञता भविष्य में और बढ़ जायेगी, यह रोम और ग्रीस के संयुक्त-साहित्य से भी उच्च है। श्री मेनिङ्ग का कथन है कि प्राचीन भारतवासियों की मस्तिष्क शक्ति उतनी ही विशाल होती थी, जितनी कि मनुष्य की अधिक से अधिक हो सकती है। सर हण्टर महोदय को जब यजुर्वेद की एक प्रति प्राप्त हुई थी तब उन्होंने यह उद्गार निकाले थे, कि यह देन दरअसल अमूल्य है अतः पाश्चात्य राष्ट्रों को भारत का कृतज्ञ होना चाहिये। कालिदास और भवभूति संसार के सर्वोत्कृष्ट नाटककारों में से थे, इनकी रचित पुस्तकों का अवलोकन कर बड़े २ विद्वान् मुक्तकण्ठ से इनकी प्रशंसा करते हैं। संसार की प्रायः सब सुसभ्य तथा उन्नत भाषाओं में इन ग्रन्थ रत्नों के अनुवाद हो चुके हैं। श्री मेकडानल महोदय ने अपने ग्रन्थ में लिखा है कि— इन दोनों काव्यों में जैसी उच्च श्रेणी की भाषा और भाव-सौन्दर्य्य है तथा उसमें मानवीय-प्रकृति का जैसा सूक्ष्म अध्ययन है उससे अधिक किसी भी ग्रन्थ में कल्पना करना असम्भव है। किसी कवि ने कहा है—

उपमा कालिदासस्य भारवेर्थगौरवम्।
दण्डिनः पदलालित्यं माघे सन्ति त्रयो गुणाः॥

अर्थात् कालिदास की कविता में उपमा, भारवि की कविता में अर्थ-गौरव, दण्डी कवि की कविता में पदलालित्य है तथा माघ कवि में तीनों गुण हैं। कालिदास तो आशुकवि थे। शकुन्तला नाटक के विषय में प्रो० मेकडानल महोदय ने लिखा है कि—इस ग्रन्थ-रत्न द्वारा भारत ने सारे सहृदय संसार को अपने गहरे ऋण में बाँध दिया। अन्य भी कई उत्तमोत्तम ग्रन्थों की रचना हुई है।

* * *

अध्यात्मवाद

कई यूरोपीय विद्वानों का मत है कि प्राचीन आर्य्य अध्यात्मवाद के स्वप्न देखते थे, यह कथन सर्वथा निर्मूल है। वे अध्यात्मवाद के स्वप्न नहीं देखते थे प्रत्युत् योग द्वारा आत्मा से परमात्मा को साक्षात् करके ब्रह्मानन्द का अनुभव करते थे। राजर्षि जनक राजा होते हुए भी अध्यात्मवादी थे। बृहदारण्यक उपनिषद् में लिखा है—

एक समय दृप्तबालाकि नामक ज्ञातक ने जब काशी के राजा अजातशत्रु से कहा कि "ब्रह्म ते ब्रवाणिति" अर्थात् तुम्हारे लिये ब्रह्म का उपदेश करूँगा, तब अजातशत्रु ने उक्त अनूचान से कहा कि "जनको जनक इति वै जना धावन्तीति" अर्थात् इस ब्रह्म-विद्या के लिये तो लोग जनक की ओर दौड़े चले जाते हैं। जनक की सभा में याज्ञवल्क्य का सत्संग हुआ करता था। छान्दोग्योपनिषद् प्रपाठक ५ खण्ड ३ में पाञ्चालों के राजा जैबलि प्रवाहण का वर्णन आता है कि—

"श्वेतकेतु ह आरुणेयः पाञ्चालानां समितिं इयाय, तं ह प्रवाहणो जैवलिरुवाच—कुमार! अनुत्वाशिषत् पितेत्यनु हि भगव इति आरुणे।"

अर्थात् श्वेतकेतु पाञ्चालों की समिति में आये, तथा उनसे पाञ्चालों के राजा जैवलि प्रवाहण ने

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पूछा कि कुमार—क्या तुम्हें पिता ने शिक्षित बना दिया। श्वेतकेतु बोले—"हाँ" तब राजा ने उससे ५ प्रश्न किये, परन्तु उनमें से किसी का भी श्वेतकेतु उत्तर न दे सका, तब उसने अपने पिता से जाकर उन प्रश्नों को पूछा—गौतम भी उन प्रश्नों से अनभिज्ञ थे अतः "स ह गौतमो राज्ञो ऽर्द्धमियाय" वह प्रसिद्ध ऋषि गौतम राजा के स्थान पर पहुँचे, तथा उन प्रश्नों का उत्तर पूछा। राजा जनक से ऋषि गौतम को सम्यक्तया समझाया। अतः सिद्ध होता है कि राजा जनक ब्रह्म-विद्यादि गंभीर विषयों के ज्ञाता थे। महर्षि याज्ञवल्क्य भी अध्यात्मवादी थे, अपनी सम्पूर्ण आयु ब्रह्म-विद्या की प्राप्ति में ही व्यतीत कर दी। कई विदुषी देवियाँ भी ब्रह्मवादिनी हो चुकी हैं। राजा जनक की सभा में गार्गी ने महर्षि याज्ञवल्क्य से प्रश्न किया, "कस्मिन्नु ब्रह्मलोकाः ओताश्च प्रोताश्च"? महर्षि कहते हैं—"गार्गी मातिप्राक्षीः"—हे गार्गी! अब मत पूछ। वानप्रस्थ में प्रविष्ट होते हुए महर्षि याज्ञवल्क्य ने अपनी धर्म-पत्नी मैत्रेयी को बहुत सम्पत्ति इत्यादि देने की इच्छा की। उस समय मैत्रेयी ने प्रश्न किया कि यदि अनन्त वैभवों से भरी हुई यह सारी पृथ्वी मुझको मिल जाय तो क्या इससे मैं मोक्ष प्राप्त कर सकती हूँ। याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया कि मोक्ष प्राप्ति न होगी। मैत्रेयी ने कहा—"येनाहं नामृता स्याम् किमहं तेन कुर्याम्" अर्थात् जिससे मुझे अमृत (मोक्ष) प्राप्त न हो, उसको लेकर मैं क्या करूँगी? अन्य भी कई प्रमाण मिलते हैं—तैत्तिरीयोपनिषद् में लिखा है—

गोधा घोशा विश्ववारा पालोपनिषन्निषत्।
ब्रह्मजाया जुहूर्नाम्नो अगस्त्यस्य स्वसादितिः॥
इन्द्राणी वेन्द्र माता च सरमा रोमसोर्वशी।
लोपामुद्रा च नद्यश्च यमी च शश्वती॥
श्रीर्लाक्षा सार्परराज्ञी वाक् श्रद्धा मेधा च दक्षिणा।
रात्री सूर्या च सावित्री ब्रह्मवादिन्य ईरिताः॥

इन प्रमाणों से सिद्ध होता है कि पुरुष नहीं, अपितु देवियाँ भी इतनी योग्य तथा उच्च विचारों की होती थीं कि अति गहन ब्रह्म-विद्या में पुरुषों से भी अधिक उन्नत थीं। गार्गी के प्रश्न का उत्तर याज्ञवल्क्य न दे सके थे, ऐसे प्रबल प्रमाण होने पर भी यह कैसे सिद्ध हो सकता है कि प्राचीन आर्य्य अध्यात्मवाद के स्वप्न देखते थे।

* * *

प्राचीन काल में ब्राह्मणों का भी बहुत प्राधान्य था, चारों वर्णों में ब्राह्मण ही सर्व-श्रेष्ठ माना गया है। ब्राह्मण का पद राजा से भी अधिक मान्य है। ब्राह्मण की उपमा सिर के साथ दी गई है, जिस प्रकार शरीर में शिर सर्व-श्रेष्ठ है, उसी प्रकार वर्णों में ब्राह्मण है। प्राचीन काल में कर्मानुसार वर्ण माने जाते थे। ब्राह्मण के निम्नलिखित कर्म हैं—

अध्यापनमध्ययनं यजनं याजनं तथा।
दानं प्रतिग्रहश्चैव षट्कर्म्माण्यग्रजन्मनः॥

अर्थात् पढ़ना-पढ़ाना, दान देना तथा लेना, यज्ञ करना-कराना इत्यादि छः ब्राह्मणों के कर्म हैं। वह चारों वेदों को साङ्गोपाङ्ग पढ़कर अन्य भी सब विद्याओं के ज्ञाता होते थे। शासन कार्य में सम्मति लेने के लिये ब्रह्म-सभा होती थी, किसी विवादास्पद विषय का अन्तिम निर्णय इसी सभा में होता था। ब्राह्मणों का इतना मान था कि राज्याभिषेक के समय राजा की पीठ पर ब्राह्मण धीरे-धीरे दण्ड लगाता था। शतपथ ब्राह्मण में लिखा है—

एवं पृष्ठतस्तूष्णीमेव दण्डैर्घ्नन्ति, तदण्डैर्घ्नन्ते दण्डबधमतिनयन्ति तस्माद्राजा दण्डघ्नो यदेनं दण्डबधमतिनयन्ति।

अर्थात् ब्राह्मण धीरे-धीरे राजा की पीठ पर दण्ड लगावे। इस प्रमाण से सिद्ध होता है कि राजा को ज्ञात होना चाहिये यदि वह कोई धर्म-विरुद्ध कार्य करेगा तो ब्राह्मण को अधिकार है

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उसे दण्ड दे सके। महाभारत-काल में यद्यपि नियम-पालन में शिथिलता आ गई थी, तथापि ब्राह्मणों को आदर की दृष्टि से देखा जाता था। ब्राह्मण को युद्ध कराने तथा रोकने का पूरा अधिकार था। द्रोणपर्व में लिखा है—जो ब्राह्मण की आज्ञा का उल्लङ्घन करता है, वह सनातन मर्यादा को तोड़ता है। यदि नीच क्षत्रिय इस मर्यादा को तोड़ दे तो उसकी गणना क्षत्रियों में नहीं करनी चाहिये और न उसे किसी समाज में बैठने योग्य समझना चाहिये। शान्तिपर्व में लिखा है—

अनीकयोः संहतयो यदीयाद् ब्राह्मणोऽन्तरा।
शान्तिमिच्छन्नुभयतो न योद्धव्यं तदा भवेत् ॥ ८ ॥

मर्य्यादां शाश्वतीं भिन्द्यात् ब्राह्मणं यो ऽभिलङ्घयेत्।
अथचेल्लङ्घयेतां मर्य्यादां क्षत्रिय ध्रुवः ॥ ९ ॥

असंख्येयस्तदूर्ध्वं स्यादनादेयश्च संसदि ॥ १९ ॥

अर्थात् दोनों पक्षों की सेनायें युद्ध करने के लिये तैयार खड़ी हों और दोनों के मध्य में शान्ति कराने की इच्छा से ब्राह्मण आ जाये तो दोनों को युद्ध नहीं करना चाहिये। जो ब्राह्मण की आज्ञा का उल्लङ्घन करता है वह सनातन मर्य्यादा को तोड़ता है। मनुस्मृति में ब्राह्मण को श्वेत वस्त्र धारण करने की आज्ञा है अतः श्वेत झण्डी की महत्ता बढ़ गई है, वर्तमान काल में भी युद्ध इत्यादि बन्द करने के लिये श्वेत झण्डी ही प्रयोग में लाई जाती है। धर्म-ग्रन्थों में ब्रह्म-हत्या का पाप अति गुरुतर कहा गया है, जो कोई ब्राह्मण को मारे वह कृच्छ्र-व्रत तथा तप्त कृच्छ्रव्रत करे, १२ वर्ष तक वह अभिशस्त जंगल में रहे, केवल भिक्षार्थ ही ग्राम में जाये। इस प्रकार अति दुःसाध्य प्रायश्चित का विधान किया गया है। इन प्रमाणों से सिद्ध होता है कि ब्राह्मणों को बहुत मान की दृष्टि से देखा जाता था। तत्कालीन ब्राह्मण भी वस्तुतः त्यागी निस्पृह तथा तपस्वी होते थे।

* * *

वर्णाश्रम-व्यवस्था

प्राचीन काल में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र चार वर्ण होते थे। कर्मानुसार ही वर्ण माना जाता था। इस प्रकार विभाग होने से सम्पूर्ण कार्य्य उत्तम रीति से होता था। ब्राह्मण पढ़ना-पढ़ाना, यज्ञ करना-कराना इत्यादि कर्मों में तथा क्षत्रिय अपने बाहुबल से रक्षा करने में तथा वैश्य धन इत्यादि कमाकर प्रजा-पोषण में, शूद्र सेवा कर्म में निरत रहता था, अतः राज्य-प्रबन्ध में कोई बाधा न होती थी। प्रजा सुख, धन-धान्यादि से सम्पन्न थी। वर्णव्यवस्था के बिना शासन-कार्य ठीक नहीं चल सकता। कोई व्यवस्था ही न रहेगी धर्म का लोप हो जायगा। मिश्र और यूनान ने भी इस सत्यता को स्वीकार किया है। प्लेटो ने लिखा है कि (१) समाज को चलाने के लिये सबसे पूर्व समाज का शासन आवश्यक है, तदन्तर शासक की आवश्यकता है। (२) शत्रुओं से रक्षा करने के लिये योद्धाओं की आवश्यकता है। (३) समाज का पोषण होना चाहिये अतः भौतिक वस्तुओं की उत्पत्ति की आवश्यकता है। इनको पूर्ण करने के लिये तीन वर्ग होने चाहियें—(१) शासकवर्ग (२) योद्धावर्ग (३) उत्पादकवर्ग। शासकवर्ग ऐसा होना चाहिये जो ज्ञान-पूर्ण हो, और मानवान्तर्गत विकारों से परे हो, परन्तु यह सांसारिक उलझनों से अलग ही हो। अन्यथा यह कौशल-पूर्वक कार्य न कर सकेंगे अतः आवश्यक है कि यह सांसारिक झगड़ों से मुक्त कर दिये जायँ। इनके भरण-पोषण का उत्तरदायी राजा हो। विवाहादि बन्धन में पड़ने की भी इन्हें आवश्यकता न रहे, इस आवश्य-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कता की भी राज्य ही पूर्ण करे। इस प्रकार कार्य्य में दत्तचित्त रहने के कारण आन्तरिक कलह उत्पन्न न होगा। ऐसे धार्मिक, तपस्वी शासक वर्ग को न्यायाधीश नियुक्त करना चाहिये। इस प्रमाण से स्पष्ट सिद्ध होता है कि प्लेटो ने वर्ण-व्यवस्था के सिद्धान्त को मुक्तकण्ठ से स्वीकार किया था। इसने जो तीन वर्ग बतलाये हैं वे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य के ही रूपान्तर हैं। वर्णव्यवस्था होने से ही शासन-कार्य तो ब्राह्मण के हाथ में होगा अतः कार्य उत्तम रीति से चलेगा। क्योंकि ब्राह्मण के पास धन नहीं है कि जिस दुरभिमान से प्रभुत्व जमा कर अन्याय कर सके। धनाभाव के कारण उसके प्रति किसी को ईर्षा भी न होगी। उसके पास सेना तथा बल नहीं, जिससे की वह प्रजा पर अत्याचार कर सके, ब्राह्मण तपस्वी, त्यागी तथा निस्पृह होते थे। उनके पास विद्या-बल की अधिकता होती थी। उन्हें यश की इच्छा नहीं होती थी। मनुस्मृति में लिखा है—

संमानाद् ब्राह्मणो नित्यमुद्विजेत् विषादिव।
अमृतस्येव चाकाङ्क्षेदवमानस्य सर्वदा॥

अर्थात् ब्राह्मण मान को विष के समान तथा अपमान को अमृत के सदृश समझें। निस्पृह होने के कारण ब्राह्मण ही न्याय का कार्य्य ठीक कर सकता है। प्लेटो ने भी ब्राह्मण को ही शासक तथा न्यायाधीश बनाया है। यह तो सम्यक्तया सिद्ध हो गया है कि प्राचीन काल में वर्णव्यवस्था मानी जाती थी। अब यह साध्य है कि वर्ण कर्मानुसार समझा जाय या जन्म से। प्राचीन ग्रन्थों में कर्मानुसार वर्णव्यवस्था के हमें अनेकों प्रणाम मिलते हैं। यदि कोई शूद्र कुल में उत्पन्न होकर श्रेष्ठ कर्म करे तो वह ब्राह्मण बन सकता है। इसमें भी हमें कई प्रमाण मिलते हैं। ऐतरेय ब्राह्मण में लिखा है कि—

ऋषयो वै सरस्वत्यां सत्रमासत, ते कवषमैलूषं सोमादनमह्न—दास्याः पुत्रः कितयोऽब्राह्मणः कथं नो मध्ये दीक्षिष्टेति.....ते वा ऋषयोऽब्रुवन् विदुर्य इमे देवाः।

अर्थात् किसी समय ऋषि लोग सरस्वती नदी के किनारे यज्ञ कर रहे थे, उस समय ऐलूष नाम पुरुष का पुत्र कवष उनके बीच में आ बैठा। ऋषि लोग बोले— यह दासी का पुत्र अब्राह्मण है, हम लोगों के बीच में बैठ कर किस प्रकार यज्ञ कर सकता है.....पुनः वे सब ऋषि लोग बोले इसको तो देवता लोग भी जानते हैं। उक्त प्रमाण से सिद्ध होता है कि कवष और ऐलूष इतना ज्ञानी हो गया था कि उसकी प्रसिद्धि देवताओं में फैल गई थी। ऋग्वेद मण्डल के ३०; ३१, ३२, ३३ सूक्त के मन्त्रों का अर्थ समाधि द्वारा जान कर इन का प्रचारक कवष ऐलूष हुआ था। जिसका नाम अति प्राचीन काल से सूक्तों के ऊपर लिखा चला आता है। दासी का पुत्र बुद्धिमान ज्ञानी तथा परमात्मा का उपासक होने से यदि मन्त्रद्रष्टा ऋषि बन सकता है तो उसके लिये अन्य कौनसी महत्ता शेष रह गई। इस प्रकार शूद्र ओशिक के पुत्र कक्षिवान् ने कई वेद-मन्त्रों की व्याख्या की है। छान्दोग्योपनिषद् ४र्थ प्रपाठक में स्पष्ट लिखा है—

सत्यकाम जाबाल की माता को ज्ञात नहीं था, कि सत्यकाम का पिता कौन है। अज्ञात पिता होने पर भी गौतम ऋषि ने कर्म से ब्राह्मण होने के कारण जाबाल को पढ़ाया। ऋषि विश्वामित्र क्षत्रिय थे, मातंग ऋषि चाण्डाल थे, कर्म से यह दोनों ब्राह्मण बन गये। यदि शूद्रा के पुत्र ज्ञानी होने से ऋषि बन सकते हैं तो अन्य अधिकारों को प्राप्त करना तो सामान्य बात है। सूत्रग्रन्थों

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

के प्रमाणों से सिद्ध होता है कि शूद्र का पुत्र ज्ञान धारण करने के कारण यदि उत्तम कर्म करे तो वह उत्तम बन सकता है, और द्विज कुलोत्पन्न यदि मूर्ख हो वा निकृष्ट कर्म करे तो वह पतित हो जाता है। यथा—

धर्मचर्य्यया जघन्यो वर्णः पूर्वं पूर्वं वर्णमापद्यते जाति परिवृत्तौ। अधर्मचर्य्यया पूर्वो वर्णो जघन्यं वर्णमापद्यते जाति परिवृत्तौ॥

अर्थात् धर्म्माचरण से निकृष्ट वर्ण अपने से उत्तम २ वर्ण को प्राप्त होता है, और वह उसी वर्ण में गिना जावे कि जिस २ के योग्य होवे। वैसे अधर्म्माचरण से पूर्व अर्थात् उत्तम वर्णवाला मनुष्य अपने से नीचे २ वाले वर्ण को प्राप्त होता है और उसी वर्ण में गिना जावे। मनुस्मृति में लिखा है—

शूद्रो ब्राह्मणतामेति, ब्राह्मणश्चैति शूद्रताम्।
क्षत्रियाज्जातमेवं तु, विद्याद्वैश्यात्तथैव च॥

अर्थात् शूद्र कुल में उत्पन्न होके ब्राह्मण, क्षत्रिय, वा वैश्य, के समान गुण कर्म स्वभाव वाला हो, वह शूद्र ब्राह्मण, क्षत्रिय वा वैश्य हो जाय। वैसे जो ब्राह्मण, क्षत्रिय वा वैश्य कुल में उत्पन्न हुआ हो और उसके गुण, कर्म, स्वभाव शूद्र के सदृश हों तो वह शूद्र हो जाये इत्यादि। कर्मानुसार वर्णव्यवस्था से ही कल्याण हो सकता है।

* * *

आश्रम-व्यवस्था

वर्ण-व्यवस्था से देश में शान्ति रहेगी, परन्तु राष्ट्रों में शान्ति स्थापित करने के लिये आश्रम-व्यवस्था की आवश्यकता है। आश्रम-व्यवस्था से अन्तर्राष्ट्रीयता उपस्थित हो सकेगी, इस कार्य के लिये संन्यासी अति उपयोगी होंगे। किसी देश या जाति विशेष के प्रतिनिधि न होने से वह निष्पक्ष व्यवहार कर सकेंगे। अपने देश के प्रति अवश्य ही पक्षपात के भाव का आना सम्भव है। जापान देश का प्रधान मन्त्री मार्क्स इटो यूरोपियनों से अपने देश की रक्षा करना चाहता था, अतः उसने हरबर्ट स्पेन्सर से पूछा कि आप हमें इस विषय में क्या सम्मति देते हैं, उसने उत्तर दिया कि इसका मुख्य उपाय यही है कि किसी यूरोपियन को विशेषतया अँगरेज़ों के राज्य के अन्दर न आने दीजिये, यह लोग वहाँ जाकर अपना प्रभुत्व स्थापित करना चाहते हैं। अतः इस अवस्था में आपके राष्ट्र में शान्ति उत्पन्न होना असम्भव है। स्पेन्सर ने यह भी कहा कि यह बात मेरे मरने के पश्चात् प्रकाशित करना, अन्यथा अँगरेज़ मेरे शत्रु हो जायेंगे। इससे सिद्ध होता है कि उसे भी राष्ट्रीयता का इतना अधिक विचार था, अतः वह अँगरेज़ों से डरता था। यह कार्य तो सबको समान समझने वाला व्यक्ति ही कर सकता है। वर्तमान काल में अन्तर्राष्ट्रीयता स्थापित करने के लिये तो सब लालायित हो रहे हैं, परन्तु इस कार्य को सुचारु-रूपेण सम्पादित करने के लिये कोई भी अन्तर्राष्ट्रीय नेता नहीं है। सब नेता अपने-अपने राष्ट्र को विशेष पक्षपात की दृष्टि से देखते हैं। इस कार्य को करने के लिये तो सबको सम-दृष्टि से देखनेवाले संन्यासी ही होने चाहियें। महाभारत काल में वर्णन आता है कि राजा विशेष कार्य में सम्मति लेने के लिये संन्यासियों की एक कौंसिल रखते थे। शान्तिपर्व में लिखा है—

सर्वार्थ त्यागिनं राजा कुले जातं बहुश्रुतम्।
पूजयेत्तादृशं दृष्ट्वा शयनासन भोजनैः॥ २७॥
तस्मिन् कुर्वीत विश्वासं राजा कस्याञ्चिदापदि।
तापसेषु हि विश्वासमपि कुर्वन्ति दस्यवः॥ २८॥
अन्यः कार्य्यः स्वराद्रेषु परराष्ट्रेषु चापरः।
अटवीषु परः कार्य्यः सामन्तनगरेष्वपि॥ ३०॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थात् राजा का यह कर्तव्य है कि वह अभिमान रहित निष्काम और निष्पक्ष संन्यासियों की सम्मति आदर सहित सुने, सदैव उनका भोजन वस्त्र इत्यादि से सम्मान करे, आपत्ति में उनका पूर्ण विश्वास करे। क्यों कि साधु जन पर तो दस्यु भी विश्वास कर लेते हैं। एक अपना अर्थ-सचिव बनाये। विशेष कार्य में सम्मति ले, एक विद्वान् संन्यासी को स्वराष्ट्र-सचिव और एक को परराष्ट्र दूत नियत करे। एक को वनाध्यक्ष तथा एक को उपनिवेश-सचिव नियुक्त करे। राजा इनके साथ सम्मान का व्यवहार करे, इनकी आवश्यकताओं का पूर्ण ध्यान रक्खे। इस से सिद्ध होता है कि प्राचीन काल में राजा लोग भी संन्यासियों का कितना मान रखते थे, उन्हें मंत्रियों से भी अधिक समझा जाता था। आजकल लोग ऑफ़ नेशन्स (अन्तर्राष्ट्रीय महासभा) बनाई गई है। सब राष्ट्रों के नेता उसके सभासद हैं, अतः स्वार्थ-तत्परता के कारण उस सभा द्वारा कोई कार्य्य नहीं हो रहा। वह निष्पक्ष होकर किसी भी झगड़े का निर्णय नहीं कर सकते। प्राचीन भारतीय-राज्य-प्रणाली ने इस बात को क्रियात्मक रूप से सिद्ध कर दिया है कि संन्यासी ही इस कार्य को कर सकते हैं, उनके हृदय में किसी भी राष्ट्र के लिये, स्नेह या द्वेष का भाव नहीं होता, वह अपने को किसी भी जाति, राष्ट्र या देश विशेष का प्रतिनिधि नहीं समझते थे, उनका तो यह सिद्धान्त था कि—

मित्रस्य चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षामहे।

अर्थात् हम सब को मित्र की दृष्टि से देखें। अतः प्राचीन काल में संन्यासी ही न्याय करते थे। आजकल तो सब के हृदय द्वेष भाव से पूरित हैं, एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र को हानि पहुँचाने में ही अपना श्रेय समझता है। यथा दक्षिण अफ्रीका के शासकों ने वहाँ के निवासी भारतवासियों के साथ दुर्व्यवहार किया। कुछ वर्ष व्यतीत हुए कि जर्मनी और इङ्गलैण्ड का महायुद्ध हुआ, दोनों राष्ट्र एक दूसरे का नाश करना चाहते थे। इन सब युद्धों का कारण अन्तर्राष्ट्रीय नेता का अभाव ही है, यदि कोई भी नेता होता तो देश की यह अधोगति न होती। अन्तर्राष्ट्रीयता स्थापित करने के लिये निम्न बातों की विशेष आवश्यकता है।

(१) अन्तर्राष्ट्रीय नेता
(२) " सभा
(३) " भाषा

प्राचीन काल में यह तीनों ही विद्यमान थी अतः शान्ति-पूर्वक कार्य्य चलता था, यह तो सिद्ध हो चुका है कि तत्कालीन संन्यासी ही अन्तर्राष्ट्रीय नेता हुआ करते थे। अन्तर्राष्ट्रीय भाषा संस्कृत ही थी, क्योंकि यह किसी देश विशेष की भाषा नहीं है। सब भाषाओं का आदि स्रोत है, अंग्रेजी, फ़ारसी, उर्दू इत्यादि की जननी है। यथा संस्कृत की गम् धातु से अंग्रेजी का गो शब्द बना है। इसका अर्थ है जाना है, संस्कृत में भी यह धातु गमन अर्थ में प्रयुक्त होती है। दर्जी— दरं छिद्रं जयति इति दर्जी, अर्थात् जो छिद्र को जीते वह दर्जी कहाता है, संस्कृत की जि जये धातु से ही हिन्दी में दर्जी बना है। संस्कृत के लेर खपने धातु से हिन्दी में लेर बना है, इसका अर्थ है सोना। इस प्रकार और भी कई शब्द धातुओं से ही बने हैं। किसी देश विशेष की भाषा न होने से इसको व्यवहार में लाने के लिये किसी को भी आपत्ति न होगी।

* * *

अन्तर्राष्ट्रीय सभा

प्राचीन काल में चक्रवर्ती राजा की एक सभा होती थी, सब देशों के प्रतिनिधि उस में

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सम्मिलित होते थे, सब राष्ट्रों पर इसका शासन होता था, राष्ट्रों के झगड़ों का निर्णय इसी सभा द्वारा होता था। चक्रवर्ती राजा के पास सेना भी होती थी, जो लोग उनकी आज्ञा का उलङ्घन करते थे उन्हें सेना द्वारा विजित किया जाता था। महाभारत में वर्णन आता है—

और्णाञ्च, वैलाञ्च, पार्वदेशाञ्च, काम्भोजः प्रददौ बहून्।
बलिञ्चः सकृत्समादाय भरुकच्छ निवासिनः॥
उपनिन्युर्महाराज हयाञ्च गान्धार देशजान्॥ ९॥
प्राग्ज्योतिषाधिपः शूरोम्लेच्छानामधिपो बली।
यवनैः सहितो राजा भगदत्तो महारथः॥ १०॥

इत्यादि बहुत से देशों के राजाओं के नाम लिखे हैं। युधिष्ठिर ने राजसूय यज्ञ किया तो ऊपर लिखित राजा लोग अपनी-अपनी भेंट होकर आये और जिन्होंने युधिष्ठिर की आधीनता को स्वीकार नहीं किया उन्हें सेना द्वारा पराजित किया गया। यदि वर्तमान काल में भी इसी पद्धति का अनुकरण किया जाय तो अन्तर्राष्ट्रीयता स्थापित हो सकती हैं। देश में अशान्ति का प्रधान कारण पूँजीपति तथा श्रमियों का झगड़ा है। पूँजीपति श्रमियों पर अत्याचार करके उनका रक्त-पान कर रहे हैं, वह विचारे निर्धन हैं अतः कुछ भी प्रतीकार नहीं कर सकते, अतः पूँजीपति उन पर स्वेच्छा, नुसार अत्याचार कर रहे हैं। योरुप में भी यही आन्दोलन हो रहा है। रूस में तो श्रमियों ने पूँजीपतियों के विरुद्ध आन्दोलन करके उन्हें निकाल दिया है, यदि वर्णव्यवस्था हो तो न्यायकर्ता ब्राह्मण होंगे, अतः ठीक २ न्याय होने से पूँजीपति और श्रमियों का झगड़ा शान्त हो जायगा। वर्तमान काल में तो वैश्यों के पास धन है अतः वह सबको आधीन करना चाहते हैं, ब्राह्मण भी उन्हीं के हाथ में हैं, वह जो नवीन नवीन मशीनों इत्यादि का आविष्कार करते हैं, वह भी श्रमियों को हानि पहुँचाते है, यदि वर्णव्यवस्था हो तो यह न होगा।

* * *

आजकल साम्राज्यवाद का सिद्धान्त दूसरे देशों की स्वतन्त्रता का नाश कर रहा है। यथा अंग्रेजों ने भारत का नाश कर दिया है, हमारी स्वतन्त्रता को सर्वथा अपहरण कर इन पर मनमाना शासन कर रहे हैं। चक्रवर्ती राज्य में सबको स्वतन्त्रता होती थी, साम्राज्यवाद की तरह एक राष्ट्र पर शासन नहीं होता था, अपितु उनके आधीन जो राष्ट्र होते थे, वह स्वतन्त्रता पूर्वक अपना राज्य प्रबन्ध करते थे केवल कर के रूप में कुछ देते थे। सब राष्ट्र चक्रवर्ती राजा के आधीन होते थे। यदि कोई राजा अपने पराक्रम से अन्य राज्य को जीत लेता था तो, वहीं के किसी योग्य व्यक्ति को राज्य दे दिया जाता था। यथा युद्ध में रावण के मारे जाने के पश्चात् श्री रामचन्द्र जी ने विजित राज्य विभीषण को दिया न कि अंग्रेजों की तरह उस पर अपना अधिकार कर लिया। वर्णव्यवस्था के अभाव तथा साम्राज्यवाद से ही सब का नाश हो रहा है, राष्ट्रों के परस्पर झगड़ों का मूल कारण भी यही है। एशिया का नाश महाभारत युद्ध से हुआ। उस समय वर्णव्यवस्था नहीं थी। वस्तुतः सच्चे संन्यासी भी नहीं थे, जिस समय राजसभा में भीष्म, द्रोण इत्यादि सब ब्राह्मण उपस्थित थे, उनके समक्ष ही द्रौपदी का चीर हरण हुआ, यदि वहाँ पर सच्चे ब्राह्मण होते तो उनसे यह अन्याय असह्य होना चाहिये था, परन्तु वहाँ पर तो सब शान्तिपूर्वक इस बीभत्स दृश्य को देखते रहे और किसी का भी साहस नहीं हुआ कि उस अन्याय का प्रतीकार करें। वर्णाश्रमव्यवस्थाके अभाव से ही योरुप का नाश हो

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

रहा है। इटली में एक-सत्तात्मक-राज्य की स्थापना का भी मूल कारण यही है। वर्तमानकाल में भारत के नाश का भी यही कारण है यदि यहाँ पर भी यही अवस्था रही तो कुछ ही काल में अन्य देशों की भाँति भारत का भी केवल नाम ही शेष रह जायगा। भारत में वर्तमान युग के प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द ही थे जिन्होंने वर्णाश्रमव्यवस्था तथा वैदिक-सभ्यता का प्रचार किया। देश का इसी में कल्याण है कि वर्णाश्रमव्यवस्था तथा वैदिक-सभ्यता का पुनः प्रचार हो। महर्षि दयानन्द सरस्वती की आज्ञा का पालन हो, तथा देश का सुधार हो।

मिट्टी का दिया

[रचयिता—श्री० पं० चमूपति जी एम० ए०]

(१)

चपला, चन्द्र, सूर्य, तारागण !
विस्तृत व्योम ललाम !!
मुझ मिट्टी के क्षुद्र दीप का,
लो सप्रणय प्रणाम ॥

(२)

मैं बिछुड़ा जिस ज्योतिपूर से,
हूँ घर घाट गुलाम।
तुम उसमें स्वच्छन्द विचरते,
निसदिन रमते राम ॥

(३)

सभ्य कहा कर सार्थ-भ्रष्ट मैं,
भूला निज घर गाम।
ढूँढ रहा पथ भटक-भटक कर,
व्याकुल आठों याम ॥

(४)

अशुभ-शकुन हूँ टिमटिमा रहा,
फड़क रही दृग वाम।
कर पसार लो आत्म-अंश को,
मिले तनिक विश्राम ॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

घर की बहू

[ले०—श्री० प्रो० सत्यव्रतजी सिद्धान्तालंकार]

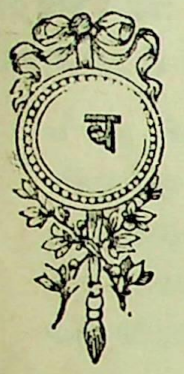

बहू का मुँह देखने के लिये कौन नहीं तरसता ? मेरे एक मित्र हैं, वे विवाह का नाम सुनते ही 'छिः-छिः' करने लगते थे, परन्तु 'ट्रिब्यून' तथा 'लीडर' के 'मैट्रीमोनियल नोटिसों' को लोगों से आँख बचाकर रोज़ बिला नागा पढ़ लिया करते थे। मैंने उन्हें कई बार कहा, बनो मत, लेकिन यह सुनते ही वे ऐंठ जाते ; कहते, तुम्हारी तरह नहीं हूँ, मैं जानता हूँ, इन्सान की शादी के बिना गुज़र हो सकती है। यह कहने के दस दिन बाद ही उन्होंने मुझे अपने शुभ-विवाह में सम्मिलित होने का निमन्त्रण दे दिया। अब क्या छिपाते ? रोज़ घुल-घुल कर बातें करने लगे। उन्हें इस बात का ख़्याल तक न रहता कि मैं किसी आवश्यक काम में लगा हूँ, जब चाहते बे-तकल्लुफ़ी से आ धमकते और अपनी बीवी की तारीफ़ों के पुल-पर-पुल बाँध जाते। मैं कभी-कभी अपने काम में ही लगा रहता, परन्तु इससे उनके उत्साह में रत्ती-भर कमी न आती, वे जैसे-के-तैसे, मानो किसी नशे में चूर, बैठे-बैठे बहुत-कुछ बड़बड़ा जाते। उनकी बीवी क्या थी, आस्मान की परी थी ; उसका हँसना क्या था, फूलों का बरसना था ; उसकी लियाकत क्या थी, वह स्वयं 'सरस्वती' का अवतार थी। ऐसी ही ऊत-पटाँग बातें उनके मुखसे निकला करतीं। बेचारों के विवाह से पहले के दिन युगों की चाल से बीते। घड़ियाँ गिनते-गिनते वह शुभ-मुहूर्त भी आ गया। उनका विवाह धूम-धाम से हो गया।

विवाह से दो महीने बाद तक मुझे उनसे मिलने का मौका ही नहीं मिला। मैं सोचता था, अपनी बीवी को सामने बैठाकर वे कभी उसकी गालों पर, कभी आँखों पर, कभी उसके कपोलों पर, कभी होठों पर, उत्प्रेक्षाएँ करते-करते दिन बिता देते होंगे ; भौंरे की तरह फूल का रस चूसते होंगे ; अमृत के घूँट भर-भर कर पीते होंगे ; आनन्द-सागर में गोते लगाते होंगे। एक दिन उनका स्वर्ग-सुख देखने को जी ललचा उठा। उनके घर जाना ही चाहता था कि अचानक वे ही मेरे घर की तरफ़ आते दिखलाई दिये। मैं सहसा बोल उठा—'किधर रास्ता भटक गये !' बोले—'मज़ाक मत करो।' मैंने कहा,—'तुम्हें तो आजकल मरने की भी फ़ुर्सत नहीं होनी चाहिये—नई बहू लाये हो !' बिगड़ कर बोले—'तुमसे मज़ाक नहीं छूटता। शादी क्या की, बर्बादी हो गई ; बहू क्या लाये, झगड़ा मोल ले आये ; जँजाल में ही नहीं फँसे, आफ़त में आ पड़े।' मैंने पूछा—'कहो तो, क्या हो गया ? तुम तो उसकी तारीफ़ों के पुल बाँधते-बाँधते नहीं थकते थे।' बोले – 'मैं क्या जानता था, स्त्रियाँ स्वभाव से ही सड़ियल होती हैं, पता होता तो शादी कभी न करता। उसे जब देखो रूठी रहती है, मुँह बनाये रहती है। पूछो तो कुछ बोलती ही नहीं, चुपचाप आँसू बहाने लगती है मानो रोने के लिये ही पैदा हुई हो। दिन-रात अन्दर-ही-अन्दर जलती-भुनती रहती है, कुढ़-कुढ़ कर ही सूख रही है। मैं सोचता था, बहू आयगी, उससे हँसूगा, खेलूँगा, प्यार की बातें करूँगा—इस निगोड़ी को तो ठुकराने को जी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

चाहता है। वैसे सब तरह से अच्छी है, देखने को बुरी नहीं, परन्तु आगे भी कुछ हो तब न! इस जली-भुनी के साथ जीवन का निर्वाह किस प्रकार होगा इसी से परेशान हूँ, शादी के अगले दिन से ही आफ़त में फँसा हूँ।'

अपने मित्र की इस समस्या को ले मैं एक अनुभवी वृद्ध के पास पहुँचा। उनसे पूछा, क्या स्त्रियाँ स्वभाव से ही रोने-धोने और कुढ़नेवाली होती हैं? उन्होंने कहा, होती नहीं परन्तु बना दी जाती हैं! पूछा, कैसे, तो वे आप-बीती सुनाने लगे। बोले—

"इस समय बाल पकने लगे हैं, साठ साल की आयु हो गई है। इस आयु में आकर मनुष्य या तो सब कुछ भूल जाता है या बहुत कुछ सीख जाता है। ईश्वर की कृपा से मैंने भुलाया कम है, सीखा ज़्यादह है। जीवन की वे घड़ियाँ मुझे नहीं भूलतीं जब मेरी भी वैसी ही अवस्था हो गई थी जैसी इस समय तुम्हारे दोस्त की है। सारी घटनाएँ मेरी आँखों के सन्मुख ऐसे फिर रही हैं जैसे कल की हों। मैं भी तुम्हारे मित्र की तरह शादी नहीं कराना चाहता था, परन्तु उसकी तरह अख़बारों के नोटिस उठा-उठा कर नहीं देखा करता था। मेरा अनुभव था कि गृहस्थ स्वर्ग का नहीं परन्तु नरक द्वार है। उस ज़माने में भी मैंने किसी गृहस्थी को सुखी नहीं देखा था। मेरी विवाह के प्रति इस उदासीनता को देखकर मेरी माँ मुझे लाख-लाख समझाने की चेष्टा करती। वह कभी-कभी तो आँसुओं की झड़ी लगा देती। कहती, बेटा, ब्याह कर ले, तेरी बहू का मुखड़ा देखने को तरस रही हूँ। मैं कभी की मर चुकी होती—इसी एक आस से अब तक जीती हूँ। जब इन बातों का मुझ पर कुछ असर न हुआ तब वह मुझे धमकियाँ देने लगी। स्त्रियों की धमकियाँ भी विचित्र होती हैं। वे यह नहीं कहतीं कि ऐसा न करने से वे तुम्हारा गला घोंट देंगी, परन्तु यह कहती हैं कि ऐसा न करोगे तो वे खुद ज़हर खा लेंगी। बस, एक दिन मेरी माँ ने इसी तरह का 'अल्टीमेटम' मुझे दे दिया, —अगर मैं ब्याह न करूँगा तो वह कुएँ में छलाँग मार देगी, आत्म-घात कर लेगी। स्त्रियाँ स्वभाव से दुराग्रही भी होती हैं—मैं माता की इस भीषण प्रतिज्ञा को सुन काँप उठा। मुझे अब तक यह अनुभव न हुआ था कि मेरे ब्याह न कराने का दुःख माता को इतना व्याकुल कर रहा है। आख़िर, मैं मान गया, शादी हो गई, बहू घर आ गई, माता का कलेजा ठण्डा हुआ!

"परन्तु बहू के घर में आने के बाद कुछ और ही गुल खिलने शुरु हुए। कुछ दिनों तक तो उसकी सास ने उसे लाड-प्यार से रखा—परन्तु फिर! फिर कुछ मत पूछो! उसके मेहमानी के दिन समाप्त हो गये! घर में एक नौकर था, उसे छुट्टी दे दी गई। घर में झाड़ू-बुहारी देने, रोटी बनाने, चौका-बर्तन करने, कपड़े धोने, बिस्तर बिछाने—ग़रज़ यह कि एक-एक करके सब काम बहू को दे दिये गये। मेरी माता कहती, घर में बहू का यही तो काम है, सबको आराम में रखना ही तो उसका धर्म है। पति, सास, ससुर, ननद—यही तो असली देवता हैं, इन्हीं की तो पूजा करनी चाहिये। बहू सास के सामने सिर झुकाती और सब कुछ करती परन्तु मेरे सन्मुख आते ही जल-भुन कर कोयला हो जाती। मैं देखता था कि वह अकेली इतना काम नहीं कर सकती थी परन्तु माँ के सन्मुख कुछ कहने की हिम्मत भी नहीं पड़ती थी। धीरे-धीरे मामला और बढ़ने लगा। माँ ने आवश्यक समझा कि बहू पर उसका रोब जमा ही न रहे परन्तु दिन-प्रतिदिन जमता भी रहे। वह

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

नाहक उसे हरेक काम में टोकने लगी। यदि वह काम कर रही होती तो माँ झिड़ककर कहती, दिन-भर काम ही किया करती है, कभी बैठकर कुछ आराम नहीं करती ; यदि वह थक कर सुस्ताने लगती तो माँ झुँझला उठती और कहती, भैंस की-सी पड़ी खटिया तोड़ा करती है, घर के काम-काज का कुछ फ़िक्र ही नहीं। यदि वह मैले कपड़े पहने रहती तो माँ कहती, किस घर में यह चुड़ैल जन्मी थी, कपड़े तक पहनने न आये ; यदि वह किसी दिन सिंगार कर बैठती तो माँ चीख़ उठती, अच्छे घरों की बहू-बेटियाँ भला इस प्रकार रहा करती हैं ! यदि वह भूख के अनुसार भर-पेट खाती तो माँ कहती इस हाथिन को कौन पालेगा ; यदि वह थोड़ा ही खाकर उठ जाती तो माँ चिल्ला पड़ती, मेरे सिर मौत काहे को बुलाती है ! उस बेचारी का किसी तरह गुज़र न था। उसके हरेक काम में कोई-न-कोई कसूर ज़रूर निकल आता था। आफ़त यह कि उस पर रोब जमाने की धुन सास पर ही नहीं, ननदों पर भी सवार थी। वे ज़रा-ज़रा सी बातों में उसकी खिल्ली उड़ातीं, और यदि वह चीं-चपड़ करती तो फ़ौरन माँ के पास जा शिकायत करतीं। बेचारी भीगी बिल्ली की तरह सब कुछ सहन कर लेती। एक दिन उसकी ननद से घी का मर्तबान टूट गया। सारा कमरा घी से लतपत हो गया। माँ को जब पता चला, कहने लगी, आख़िर लड़कियों से नुक्सान हो ही जाता है ! दूसरे ही दिन बहू से आचार की एक फाँक ज़मीन पर गिर गई। माँ ने चिल्ला-चिल्ला कर पड़ोसियों तक को ख़बर दे दी कि बहू बिल्कुल निगोड़ी है, चीज़ को सम्हाल ही नहीं सकती। इस प्रकार चीज़ों को ख़राब करने लगी तो कुछ ही दिनों में दिवाला निकल जायगा। इस संग्राम में दिन बिता कर जब बहू रात को मेरे पास आती तो उसका अङ्ग-अङ्ग टूटा हुआ होता, वह कुढ़-कुढ़ कर राख हो चुकी होती, आँसू बहाने के सिवाय उसके मुख में एक शब्द न होता ! हमारे घरों की बहुएँ घर की लाज होती हैं, वे संसार-भर के दुःख को अपने सिर पर झेलकर दर्द-भरी 'आह' तक नहीं भरतीं, अपने मुख से किसी की शिकायत भी नहीं करतीं। मैं उसकी यह अवस्था देख कर सब कुछ समझ जाता लेकिन उसका दुःख दूर करने में अपनेको असमर्थ पाता। मुझे इस बात का खेद होता कि मैंने शादी करके एक प्राणी को संकट में क्यों डाल दिया, परन्तु इससे भी कोई छुटकारा न था। मेरी माता जिस बहू को लाने के लिये इतनी उत्सुक थी उसीकी वह अब एक प्रकार से शत्रु बनी हुई थी। मैं अपने जीवन में इस समस्या का कोई हल नहीं कर सका, हल होने से पहले ही बहू का स्वर्गवास हो गया !"

इन वृद्ध महानुभाव की आप-बीती सुनकर मुझे अपने मित्र की समस्या का तो हल मिल गया, परन्तु कुछ ही देर बाद मुझे अनुभव होने लगा कि वह हल वास्तव में हल नहीं था, उससे मेरे सन्मुख एक दूसरी विकटतर समस्या उत्पन्न हो गई। घर में बहू को किस प्रकार रखा जाय, सास-बहू का आपस में क्या सम्बन्ध हो, ननदें अपनी भावज से कैसे बर्तें, गृहस्थी के घर में शान्ति किस प्रकार स्थापित हो ? इन प्रश्नों को हल करना केवल पति-पत्नि का ही काम नहीं, गृहस्थ के एक-एक व्यक्ति का काम है। मैंने सोचा, या तो पुरुष शादी न करें, यदि करते हैं तो उन्हें किसी प्राणी को जीवन-पर्यन्त संकट में डाल रखने का क्या अधिकार है ; या तो माताएँ और सासें, अपने लड़के-लड़कियों को विवाह करने के लिये विवश न करें और यदि

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

करती हैं तो पीछे दंगे-फ़िसाद क्यों खड़े करें? अब वह अवस्था नहीं रही कि पुरुष शादी भी कर लें और स्त्री के प्राण संकट में भी टाँग दें—स्त्रियाँ जाग रही हैं, वे अपने प्रश्नों को हल कर रही हैं, सीधे ख़ुद हल नहीं कर रहीं तो अपने ज़ोर से पुरुषों से हल करा रही हैं। वह कैसे?—सुनिये!

बाइबल में लिखा है, पुरुष स्त्री के लिये सब कुछ छोड़ देगा, अपने माता-पिता तक को छोड़ देगा। भारतवर्ष के इतिहास में अब तक तो ऐसा नहीं हुआ परन्तु जब से बाइबल यहाँ आयी है तब से यहाँ भी यह बात नई नहीं रही। लड़के माता-पिता के ख़र्च पर पढ़ लिख कर, कमाने लायक होकर, अपनी बीवी को लेकर अलग जा बसते हैं। वे कहते हैं, बाप-दादों के घर में न रहेंगे तो क्या नाक कट जायगी? उल्टा, अच्छा ही रहेगा। वे घर ही ऐसे बने हैं जिनमें न हवा आ सके, न रोशनी। जब मा-बाप से अलग रहेंगे, तो बहू को उसकी सास कैसे दिक करेगी? न नौ मन तेल, न राधा नाचे! आजकल पढ़े-लिखे नौ-जवानों की स्त्रियाँ इसी प्रकार की मेम-साहिबा बन रही हैं। वे सदियों की कसर, शायद अपनी सारी जाति की कसर, इसी एक जन्म में निकाल रही हैं। अब तक बहुएँ सासों की झाड़ें सुनती थीं। अब ये नये जुग की महिलाएँ पहले तो 'बुढ़िया' के मुख ही नहीं लगतीं, और यदि कभी बरस में एक-आध बार घर जाना ही पड़े तो उसे ऐसा बनाती हैं कि युगयुगान्तरों की सासें काँप उठती हैं। सासें भी याद करती होंगी कि कोई ज़माना आया है! अब बहुएँ दिल के पूरे अरमान निकालती हैं। कभी उन पर सारी गृहस्थी का बोझ होता था परन्तु अब तो पति चालीस ही रुपये का बाबू क्यों न हो, घर में केवल दो ही आदमी क्यों न हों, वे नौकर ज़रूर रखती हैं और हर महीने पति-देव के सिर कम-से-कम बीस रुपये का कर्ज़ ज़रूर चढ़वा लेती हैं। अच्छा खाती हैं, अच्छा पहनती हैं; आख़िर ज़िन्दगी और किस लिये है? उन्हें देख कर कई बुढ़ियाओं के दिल में रश्क पैदा होती है कि वे भी इस ज़माने में क्यों न पैदा हुईं। उन बेचारियों ने तो जवानी में नौकरी ही की, और अब जब बुढ़ापे में ऐश करने का समय आया तो ये नई बुलबुलें हाथ ही से निकल गईं! पुरानी स्त्रियाँ आँखें फाड़ २ कर देखती हैं, यह ज़माना कौन-सा आ गया? लड़के बहुओं को लैसदार चमकती हुई रेशमी साड़ियाँ पहना कर उनके साथ सड़कों पर घूमने निकलते हैं; ससुर आ रहा होता है तो उन की बहू नंगे सिर उन की तरफ़ टक-टक ताकती हुई, पर्दा बिना किये, सामने से निकल जाती है! इतना घोर कलिकाल!! परन्तु यह कलिकाल घनी-भूत होता जाता है। लड़के घरों में रहना पसन्द नहीं करते। किराये का मकान नहीं मिलता तो होटलों में रह जाते हैं; शादी के बाद मा-बाप के साथ नहीं रहना चाहते!!

परन्तु क्या इस प्रकार के जीवन से हमारी समस्या हल हो जाती है? क्या इस प्रकार बहू को घर में अपनी उचित स्थिति मिल जाती है? क्या यह गृहस्थ को सुखी बनाने का सर्वोत्तम उपाय है? इस में सन्देह नहीं कि मा-बाप से पीठ फेर लेनेवाले युवकों की स्त्रियाँ तितलियों के समान स्वतन्त्र उड़ती फिरती हैं, उन्हें सारी गृहस्थी की सेवा में ही दिन-रात नहीं लगे रहना पड़ता, उनका दिल सास और ननद के तानों से छलनी नहीं होता, वे अन्दर-ही-अन्दर जलती-भुनती नहीं रहतीं, हँसती हैं, खेलती हैं, प्यार से बातें करती हैं और जीवन को मज़े से काटती हैं; परन्तु इस में भी सन्देह नहीं कि माता-पिता की छत्र-छाया में रह कर उन

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

के पथ-प्रदर्शन से फ़ायदा न उठाना सब से बड़ी हिमाकत है, उन के पालन-पोषण से बड़े होकर उनकी सेवा न करना सबसे बड़ी कृतघ्नता है। जब नव-दम्पती, बड़ों की देख-रेख से मुक्त हो कर, स्वच्छन्द विचरने लगते हैं तब भयंकर प्रलोभनों में फँसकर उनके सर्वनाश की आशंका प्रतिक्षण बनी ही रहती है। वे गृहस्थ को आत्मिक उन्नति का साधन न बना कर विषय-भोग का साधन बना बैठते हैं। उन्हें किसी तरफ़ से रोकनेवाला कोई नहीं होता। ऐसा अनियन्त्रित जीवन पति-पत्नी दोनों को कुपथ में डाल सकता है। इसलिये यह उच्छृङ्खल जीवन हमारी समस्या का हल नहीं है। हमें सोचना यह चाहिये कि क्या ऐसा उपाय नहीं निकल सकता जिस से बहू घर की ही रहे, वह किराये के मकान की या होटल की न हो जाय; लेकिन हाँ, उसके 'घर की' रहते हुए घर में शान्ति भी बनी रहे, वह जलती-भुनती और कुढ़ती अपने प्राणों को संकट में न डाले रहे?

इस प्रश्न का उत्तर पाने के लिये हमें प्राचीन भारत के गृहस्थों की तरफ़ नज़र उठानी पड़ेगी।

सदियाँ बीत गईं जब भारत में 'आश्रम-व्यवस्था' चली हुई थी। आजकल जीवन का प्रारम्भ गृहस्थ से होता है, उसकी समाप्ति भी गृहस्थ से ही होती है; उस समय जीवन का प्रारम्भ ब्रह्मचर्य आश्रम से और समाप्ति वानप्रस्थ या सन्यास आश्रम से होती थी। गृहस्थ के लिये जीवन का केवल एक-चौथाई हिस्सा था। गृहस्थी जब अपने बाल सफ़ेद होते देखता था, और जब उस के लड़के का भी लड़का हो जाता था, वह अपने पुत्र को घर सम्हाल कर साधना के लिये शहर से दूर जंगल में धूनी जा रमाता था। मनु में लिखा है:—

गृहस्थस्तु यदा पश्येद्वलीपलितमात्मनः
अपत्यस्यैव चापत्यं तदारण्यं समाचेरत्।

वानप्रस्थी अपनी पत्नी को या तो अपने साथ ही ले जाता था, या उसे—'पुत्रेषु भार्यां निक्षिप्य'—अपने पुत्रों के सुपुर्द कर जाता था। वानप्रस्थ लेने से पूर्व माता घर को सम्हालती थी, उस के बाद वह घर का काम-काज अपनी बहू को सम्हाल देती थी, स्वयं भगवान् के भजन में लीन हो जाती थी। स्त्री स्वभाव से कोमल होती है, बन के कष्टों को वह सहन नहीं कर सकती, इसलिये उस का जङ्गल चला जाना आवश्यक नहीं, परन्तु हां, घर में रहते हुए घर से ममता तोड़ लेना आवश्यक है। वृद्धावस्था में उसे घर में ऐसे ही रहना होता था जैसे वह जङ्गल में रहती हो, अब घर बहू का हो जाता था और वह घर में रहते हुई भी जंगल की। अब तक वह वृद्धा घर की रानी थी, अब बहू को रानी के स्थान पर अभिषिक्त कर वह कर्तव्य-भार से मुक्त होजाती थी। अथर्ववेद में लिखा है:—

साम्राज्ञी एधि श्वशुरेषु साम्राज्ञी उत देवृषु,
ननान्दुः साम्राज्ञी एधि सामाज्ञी उत श्वश्वाः।

हे वधू! तेरे श्वसुर, देवर, ननद और सास तुझे 'रानी' बना कर रखें। जब बहू को 'रानी' बना दिया जायगा तब वह क्यों जलती-भुनती दिन काटेगी। अब तक उस की सास रानी थी, घर की चाबी उसी के पास रहती थी, गृह-चक्र का संचालन उसी के इशारे से होता था। बहू के आने पर सास अपने हाथ से अपनी रानी को उसके उचित स्थान पर बैठाती है, घर की चाबी उसके हाथ में दे देती है और आशीर्वाद देकर भजन में लग जाती है। अब संग्राम काहे को मचेगा, अब अशान्ति क्यों होगी, अब बहू कुढ़ २ कर दिन-रात क्यों जलेगी?

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

यह जलन तभी तो होती है जब सास बहू को दासी बना कर स्वयं रानी बनने की कोशिश करती है! यदि सास आचार की एक-एक फांक को गिनती रहेगी, दियासलाई की एक तीली ज़्यादह ख़र्च होने पर खीझ उठेगी, सूई के अचानक टूट जाने पर ज़मीन--आस्मान एक कर देगी तो उसकी, आख़िर, गति क्या होगी ? उसे तो अपनी आयु का ध्यान कर के प्रकृति के इन छोटे २ बन्धनों को तोड़ गिराना चाहिये, गृहस्थ की चिन्ताओं से मुक्त हो कर भजन में रम जाना चाहिये। इन चिन्ताओं को करे बहू। अब सास को क्या पड़ी जो ज़रा-ज़रा सी बात में दख़ल दे कर अपनी आत्मा को व्याकुल करे। उसे अपना पेट-भर खाने को मिल जाना काफ़ी है ! आज-कल जो स्थिति घरों में सास की है, वेदों के अनुसार वह स्थिति बहू की होनी चाहिये, तब घर में शन्ति ही शान्ति होगी। शायद कई कुढ़ी हुई बहुएँ कह बैठें कि आज कल जो स्थिति बहुओं की है वही सदा के लिये नहीं तो कम-से-कम कुछ दिनों के लिये सासों की हो जानी चाहिये ! परन्तु नहीं। वेद ने जहाँ सास, ससुर, देवर और ननद को आदेश दिया है कि वे बहू को रानी बना कर रखें वहां बहू को भी आदेश दिया है:—

स्योना भव श्वसुरेभ्यः स्योना पत्ये गृहेभ्यः
स्योनास्यै सर्वस्यै विशे स्योना पुष्टायैषां भव।

हे बहू ! सास, ससुर तथा पति के घर के एक-एक व्यक्ति को सुख पहुँचाना तेरा कर्तव्य है ! इस में सन्देह नहीं कि स्त्री के लिये अस्ली तीर्थ, अस्ली देवता, पति, ससुर और सास ही हैं। इन की उसे पूजा करनी चाहिये। इन के आशीर्वाद से ही वह रानी बन कर घर का राज्य चला सकती है। जिस घर में बहू की यह स्थिति होगी उस घर पर देवता पुष्पवृष्टि करेंगे।

तो फिर, समस्या का हल यही है ! मुझे इस से बहस नहीं कि लोग वानप्रस्थ लें या न लें। कम-से-कम जब उनके घर में बहू आ जाय तो वे यह न समझें कि एक नौकरानी आ गई, परन्तु यह समझें कि उनके चलाये हुए गृहस्थ रूपी राज्य-चक्र को चलाने के लिये एक रानी आ गई। वे यह भी न समझें कि वह रानी पराये घर की है; यही समझें कि वह अपने ही घर की है। बहू को घर में बहू बना कर न रखा जाय, अपनी लड़की ही बना कर रखा जाय। यह तभी हो सकता है जब सास सास बन कर न रहे, माँ बन कर रहे; ससुर ससुर बनकर न रहे, पिता बन कर रहे; ननदें ननद बन कर न रहें, बहिन बनकर रहें। जिस घर में बहू की यह स्थिति होगी उसी घर में बहू को 'घर की बहू' कहा जा सकेगा। तब अपने घर का काम करते हुए उसे यदि चौबीस के पच्चीस घण्टे भी काम करना पड़ेगा तो वह हँसती हुई करेगी और अपने ससुर और सास को अस्ली अर्थों में "अपना" कह सकेगी ! तब मेरे मित्र की शिकायत भी दूर हो जायगी और नव-युवकों को विवाह करते ही किराये का मकान ढूंढने की भी ज़रूरत न रहेगी !!

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वे इक-तरफ़ा उच्च-आदर्श !

[लेखिका—श्रीमती चन्द्रावती लखनपाल एम. ए.]

डॉक्टर गौड़ ने बड़ी व्यवस्थापिका सभा में एक बिल पेश किया है जिसके अनुसार हिन्दू-स्त्रियाँ भी, किन्हीं ख़ास अवस्थाओं में, तलाक़ ले सकेंगी। यह सुनकर कई लोग झुँझला उठे हैं। वे कहते हैं, ग़ज़ब हो जायगा, स्त्रियाँ पतियों को छोड़ने लगेंगी तो गंगा समुद्र से हिमालय को बहने लगेगी, सूर्य्य पश्चिम से उदय होने लगेगा, मेरु पृथिवी में धँस जायगा, अनर्थ हो जायगा! उनसे पूछो, इतनी आफ़त काहे को आ पड़ेगी, तो वे कहते हैं, स्त्रियाँ पतियों को छोड़ दें,—भला यह भी कभी हो सकता है?—यह किस शास्त्र में लिखा है? जिस दिन ऐसा होगा उस दिन भारत की स्त्री-जाति के उच्च-आदर्श धूलि में मिल जायँगे, पातिव्रत-धर्म शर्म के मारे मुँह छिपा लेगा, हिन्दू-समाज का गौरव मलियामेट हो जायगा! परन्तु क्या मैं स्त्री-जाति की प्रतिनिधि होकर पूछ सकती हूँ कि आज तक, जब से मनुष्य-समाज को वेद दिया गया था तब से अब तक, कभी ऐसा दिन भी आया है जिस दिन पुरुष-जाति के उच्च-सिद्धान्त ख़तरे में पड़े हों, जिस दिन पुरुषों के घृणित तथा भयंकर कुकृत्यों से हिन्दू-धर्म की पुरानी नय्या डगमगायी हो? पुरुषों ने क्या-क्या नहीं किया, और किस बात में कसर रखी? इसी हिन्दू-समाज में ऐसे व्यक्ति मौजूद हैं जिनकी दो-दो स्त्रियाँ हैं, परन्तु यह कहता कोई सुनाई नहीं देता कि इससे हिन्दू-धर्म का कोई ऊँचा सिद्धान्त ख़तरे में है; इसी नय्या में ऐसे लोग बैठे हैं जिन्होंने एक पाँव कबर में रखकर दूसरे पाँव से विवाह-मण्डप की यज्ञ-वेदी की प्रदक्षिणा की है, परन्तु अब तक यह नय्या भँवरों को चीरती हुई बड़े वेग से चली जा रही है, बाल-भर भी डाँवाडोल नहीं होती! साठ वर्ष के कोढ़ी के हाथ सोलह वर्ष की युवती बेच दी जाती है, और हिन्दू-धर्म अपूर्व गौरव से मस्तक ऊँचा कर तिलक लगाता है! जिस धर्म पर अब-तक कलङ्क का टीका नहीं लगा उस पर अब कैसे लग जायगा; जो नय्या बड़े-बड़े तूफ़ानों में नहीं डगमगाई वह छोटी-छोटी लहरों से कैसे डोल जायगी? परन्तु नहीं,—पुरुष-जति के आदर्श ख़तरे में पड़ते हैं तो पड़ते रहें, उन्हें चिन्ता है स्त्री-जाति के उच्च आदर्शों को ख़तरे से बचाने की; पत्नीव्रत-धर्म चूल्हे-भाड़ में जाय-तो-जाय, उन्हें फ़िक्र है पातिव्रत-धर्म की! कोई इन भलेमानसों से पूछे—तुम्हें अपनी भी फ़िक्र है?—तुम्हें यह भी पता है कि तुम्हारी करतूतों से हिन्दू-धर्म के उज्ज्वल मुख पर कितनी कालिख पुत रही तथा पुत चुकी है? स्त्रियों के उच्च-आदर्शों को स्त्रियाँ समझती हैं और समझ लेंगी;—क्या पुरुष अपने को मापने के लिये भी कुछ आदर्श बनाएँगे कि नहीं?

* * *

भारतवर्ष में १६ वर्ष से छोटी आयु की ७२५२४८ विधवाएँ हैं। इनमें से अधिकाँश का विवाह तब हो गया था जब वे विवाह को वैसा ही खेल समझती थीं जैसा गुड्डे-गुड्डियों का। बहुतों को तो बड़े होकर बतलाया गया कि वे

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विधवा हो गई हैं, और इसी से उन्होंने अनुमान किया कि उनका विवाह हुआ होगा ! यदि कोई कह दे, इन विधवाओं का विवाह हो जाना चाहिये, तब भी कई धर्म-प्रेमियों को आस्मान फटता नज़र आता है। वे समझते हैं, बस, अब पृथिवी रसातल को चली ! इतना घोर कलिकाल—विधवाएँ व्याह करने लगें ! भारतीय स्त्रियों के तप से ही तो अब तक प्राचीन-सभ्यता कायम थी, जो देवियाँ पतियों के साथ चिता की लपटों में कूद पड़ीं उन्हीं के सतीत्व से ही तो स्त्री-जाति का गौरव बना हुआ था, क्या उस आदर्श का अब गला घोंट दिया जायगा, विधवाएँ व्याह रचाने लगेंगी ? परन्तु क्या मैं उन विधवाओं के मूक-चीत्कारों की प्रतिध्वनि को दोहराती हुई पूछ सकती हूँ कि आज तक कितने पतियों ने पत्नी के मर जाने पर आन्तरिक वियोग को अनुभव करते हुए उसकी चिता को अपनाया है ? चिता को अपनाना दूर रहा, मैं पूछती हूँ, आज तक कितने पतियों ने पत्नी-वियोग के बाद दूसरा विवाह करना पाप समझा है ? यहाँ तो शास्त्र ही उल्टे बना रखे हैं। पति के मर जाने पर स्त्री का आजन्म उसकी स्मृति की आराधना करना धर्म है—पति को उसने देखा हो या न हो—उसकी काल्पनिक स्मृति ही पत्नी के लिये पर्याप्त है—परन्तु पत्नी के मर जाने पर उसे जल्दी-से-जल्दी स्मृति-पट से मिटा देना पति का धर्म है ! जिस मृत-पत्नीक पुरुष की श्मशान से लौटते-लौटते रास्ते में ही एकदम सगाई नहीं हो गई वह पुरुष ही क्या ? मैं पूछती हूँ, जो आदर्श, इन सब करतूतों के होते हुए भी, अब तक हिन्दू-धर्म के नक्षत्र-मण्डल में तारा-समूह के समान ज्योति का पुञ्ज बरसा रहे हैं, वे एक बाल-विधवा के, जिसका गर्भावस्था में ही वाग्दान हो गया था, जिसके पति का उसके पैदा होने से पहले ही स्वर्गवास हो गया था, विवाह कर लेने से कैसे लुप्त हो जायँगे ? पुरुष की एक के बाद दूसरी स्त्री मरती जाय और वह नये-नये सिरे से सेहरा बाँधता जाय ; स्त्री का पाँच वर्ष की अवस्था में ही पति क्यों न मर जाय वह विवाह का भाव भी हृदय में न आने दे—यही स्त्री का धर्म है ! यह धर्म गया नहीं, और हिंदू-धर्म की योजनों लम्बी नाक कटी नहीं ! पुरुषों को यही फ़िक्र सता रहा है कि कहीं विधवाएँ इस उच्च-आदर्श से न डिग जायँ ! धन्य हैं पुरुष जिन्हें अपनी तबाही का कोई फ़िक्र नहीं परन्तु जिन्हें स्त्रियों के आदर्शों को सुरक्षित बनाये रखने की चिन्ता हर आन व्याकुल किये रहती है !

* * *

स्त्रियों के लिये एक और ऊँचा आदर्श है, और वह है 'पति-सेवा' का। स्त्री का सबसे बड़ा धर्म पति की पूजा करना है, वही उसका आराध्य-देवता है, परमेश्वर है। स्त्री को इस जन्म में ही नहीं, जन्म-जन्मान्तरों में भी उसी पति की सेवा करनी चाहिये। पति चाहे कुछ कह दे, पत्नी का धर्म उसके चरणों में शीश नमा कर उसकी आज्ञा का पालन करना है। पति अपने चरणों पर पड़े पत्नी के सिर को भले ही पाँवों से ठुकरा दे, पत्नी का धर्म है, ज़बान से आवाज़ न निकलने दे। पति, अपनी पत्नी को बालों से पकड़ कर घसीट सकता है, उसकी छाती पर चढ़ कर उसका ख़ून पी सकता है, उसके गले पर छुरी चला सकता है—राज-नियम ऐसे व्यक्ति को चाहे राक्षस कह कर फाँसी पर लटका दे, परन्तु स्त्री का धर्म ऐसे नर-पिशाच को भी देवता समझ कर ही पूजना है ! हिन्दू-धर्म की लाज इसी तरह रखी जा सकती है। नित्य-प्रति की घटनाओं को पुरुष-समाज सुनता है और सुनकर भारत की स्त्री-जाति

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

के उच्च-आदर्शों के सन्मुख सिर झुकाता है ! आज अमुक पुरुष ने क्रोध में आकर अपनी स्त्री को मारते-मारते अधमरा कर दिया परन्तु, धन्य है उसकी स्त्री, उसने आँखें खोलते ही पति के चरणों पर माथा रख दिया ! कल फ़लाने ने अपनी स्त्री को धक्के देकर घर से बाहर निकाल दिया परन्तु, शाबास है उसको, उसने चूँ तक नहीं किया ! परसों उसने घर के दरवाज़े पर खड़े होकर अपनी स्त्री की ज्यों गालियाँ बकनी शुरू कीं, बे-लगाम बकता ही चला गया, लेकिन वाह रे 'देवी', उसने कानों में रुई डाल कर सब-कुछ सुन लिया ! ये कहानियाँ रोज़ सुनाई जाती हैं और स्त्री-जाति को अपने आदर्शों के पीछे मर-मिटने के लिये सराहा जाता है। परन्तु क्या मैं उन मारी-गई, पीटी-गई, लताड़ी-गई, आदर्शों पर मारी जा रहीं और मिटाई जा रहीं अबलाओं की तरफ़ से पूछ सकती हूँ कि यदि शराब पीकर, जुआ खेलकर, पत्नी के ज़ेवर बेचकर और फिर पत्नी को ठुकराकर हिन्दू-धर्म की नौका नहीं डूबी तो, ऐसे पतियों को यदि पत्नियाँ ठुकरा दें तो, यह नौका क्योंकर डूब जायगी ? यदि अपनी बेकसूर पत्नी को खुले-बाज़ार गालियाँ देने से हिन्दू-धर्म की लाज ख़तरे में नहीं पड़ती तो ऐसे पति की ज़बान खींच लेने से वह लाज किस प्रकार ख़तरे में पड़ सकती है ?—परन्तु नहीं, वे कहते हैं, दोनों का धर्म ही भिन्न-भिन्न है। पति चाहे कैसा ही हो, उसकी सेवा करना, उसके लिये प्राण तक वार देना पत्नी का धर्म है—आख़िर, इस ऊँचे आदर्श को स्त्रियाँ नहीं पालेंगी तो और कौन पालेगा ! परन्तु कोई इन आदर्शवादियों से पूछे—तुम्हारे भी कुछ आदर्श हैं, या स्त्री को पति-सेवा का उपदेश देते रहना ही तुम्हारा एकमात्र आदर्श रह गया है ?

* * *

मेरा यह अभिप्राय कभी नहीं कि स्त्रियों को तलाक़ का अधिकार मिल जाना चाहिये, मेरा यह अभिप्राय भी नहीं कि विधवाओं की शादी हो ही जानी चाहिये, नाही मेरा यह अभिप्राय है कि स्त्रियों को पति-सेवा छोड़ कर पति के साथ 'जैसे-को तैसा' का व्यवहार करना चाहिये। तलाक़ का प्रस्ताव स्वीकृत भी हो जाय तो भी मेरी बहिनें इतनी गौ हैं कि उन्हें जिस खूँटे के साथ बाँध दिया जायगा उसके रस्से से उनका गला भले ही घुँट जाय वे उस खूँटे से अलग न होंगीं; विधवाओं के विवाह के लिये कितने ही लेख लिखे जायँ, कितने ही लेक्चर झाड़े जायँ, जिस क्षण उन्हें मालूम हो गया वे विधवा हैं, चाहे वे दस वर्ष की बच्ची ही क्यों न हों, उसी क्षण वे सुहाग के चिन्ह उतार कर सम्पूर्ण जीवन के लिये कठोर तपस्या का व्रत लेकर बैठ जायँगी ; उनका पति कितना ही क्रूर क्यों न हो—चोर हो, जार हो, कोढ़ी हो, अपाहिज हो—वे प्रातः-सायँ उसकी आरती उतारेंगी, उसे आराध्य-देव ही कहेंगी, उसे अपना ईश्वर समझ कर ही उसकी पूजा करेंगी ! भारत की स्त्रियाँ इन्हीं विचारों में पाली गई हैं, ये विचार उनकी आदत के हिस्से हो गये हैं, वे इन विचारों को छोड़ नहीं सकतीं। परन्तु क्या इन आदर्शों को पालने का ठेका सदा स्त्रियों के ज़िम्मे ही रहेगा ? मैं मानती हूँ, तलाक़ का विचार एक अत्यन्त क्षुद्र तथा नीच विचार है ; स्त्री-पुरुष का सम्बन्ध जन्म-जन्मान्तरों का सम्बन्ध है ; तलाक़ इस उच्च-आदर्श का उपहास है। परन्तु मैं यह मानने के लिये तय्यार नहीं कि इस उच्च-आदर्श को निभाना केवल स्त्री का काम है। यह उच्च-आदर्श है तो स्त्री तथा पुरुष दोनों के लिये है, केवल स्त्री के लिये नहीं ! पुरुषों ने इस आदर्श को निर्दयता-पूर्वक पैरों तले

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कुचला है ; स्त्री ने—कम-से-कम भारत की सती नारी ने—इस आदर्श को स्वप्न में भी कुचलने का साहस नहीं किया। मैं यह भी मानने के लिये तय्यार नहीं कि पुरुषों द्वारा तो इस उच्च-आदर्श का तिरस्कार किये जाने पर हिन्दू-धर्म की नौका अब तक नहीं डगमगायी, यदि स्त्रियाँ इस आदर्श को छोड़ बैठेंगी तो वह नौका मँझधार में जा डूबेगी। मैं समझती हूँ कि यदि इस आदर्श को कुचलने से धर्म की नौका डूबती है तो वह पुरुषों की मेहरबानी से कभी की डूब चुकी है ; अब स्त्रियों के पास तो डुबाने के लिये कोई नौका ही नहीं है ! मैं मानती हूँ, विधवाओं को—कम-से-कम जिनकी बड़ी उम्र में शादी हुई हो—पुनर्विवाह के लिये प्रेरित करना कोई अच्छा काम नहीं है। वे अपने पति की स्मृति को भुला नहीं सकतीं। उन्हें विवाह के लिये कहना स्त्री-हृदय की गहराई को न पा सकना है। परन्तु मेरी समझ में यह नहीं आता कि जिन बहनों को 'विवाह' शब्द का अर्थ ही नहीं पता था, जिनके माता-पिता ने अपनी नासमझी से उन्हें विधवा बनाया, उनके विवाह कर लेने में हिन्दू-धर्म की नाक क्यों कट जाती है ? यदि एक बार विवाह हो जाने पर—चाहे वह समझ-बूझकर हुआ हो, चाहे वे समझे-बूझे—फिर किसी एक के मर जाने पर विवाह करना अनुचित है तो वह स्त्री तथा पुरुष दोनों के लिये अनुचित है, किसी एक के लिये ही नहीं। जिस धर्म-शास्त्र में लिखा हो कि पुरुष रँडवा होता जाय और नये-नये विवाह रचता जाय, परन्तु स्त्री विधवा होते ही सिर मुँडा ले, आभूषण उतार दे, सफ़ेद कपड़ा धारण कर ले, माला हाथ में ले ले, वह धर्म-शास्त्र इक-तरफ़ा है, अन्याय-पूर्ण है। मैं यह नहीं समझ सकती कि जो धर्म-नौका लाखों पुरुषों के दस-दस बार विवाह कर लेने पर भी शास्त्र-समुद्र पर तैरती चली जाती है वह किसी, विरली, एक-आध स्त्री के विधवा होने पर दोबारा शादी कर लेने से कैसे रसातल में जा डूबती है ! अब रही पति-सेवा। मैं मानती हूँ, पति स्त्री का देवता होता है—पति में स्त्री के प्राण बसते हैं ! परन्तु पति-सेवा के लिये स्त्रियों को उपदेश देने की तो कोई ज़रूरत नहीं। भारत की स्त्रियाँ तो दिन-रात मनाती ही यह रहती हैं कि उन्हें पति के चरणों की सेवा से कभी वञ्चित न किया जाय, वे अपने पति को लिखती हैं,—'आपके चरणों की दासी' ! इसी तन-मन अर्पण करनेवाली दासी को हिन्दू-घरों में जिस प्रकार ठुकराया जाता है उसे देखकर रोंगटे खड़े हो जाते हैं। इसमें सन्देह नहीं कि यह दासी अपनी सेवा का कुछ प्रतिकार नहीं चाहती, वह जितनी ठुकराई जाती है उतनी ही पति के चरणों की धूल लेकर माथे पर चढ़ाती है, निष्काम-भाव से पति की सेवा में प्राण त्याग देना उसके जीवन की सबसे बड़ी कामना होती है। परन्तु क्या इतनी अबलाओं का पतियों से ठुकराए जाकर उनके चरणों में पड़े-पड़े बिलख-बिलख कर आँखें सूँद लेना हिन्दू-धर्म की नौका को कुछ भी विचलित नहीं करता ? पति की सेवा करना बड़ा ऊँचा आदर्श है, इस आदर्श के देवता पर लाखों अबलाओं ने अपने को बलिरूप से चढ़ा दिया है, परन्तु मेरे हृदय में प्रश्न उठता है, क्या ये बलियाँ पत्थर के देवता की आराधना में ही तो नहीं चढ़ाई जा रहीं ?—क्या देवता असल में देवता है, या निरा मिट्टी का माधो ?

दो शब्दों में मेरी शिकायत केवल यह है: जीवन-यात्रा में चलते हुए कई आदर्श हमारे सन्मुख आते हैं। पुरुष-समाज इन आदर्शों से अब तक बचने की कोशिश करता रहा है। शायद, कइयों को

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

यह कहना अधिक संगत प्रतीत होगा कि, कम-से-कम, इस समय पुरुष-समाज इन आदर्शों से अपनी जान बचा रहा है। इन आदर्शों को मढ़ा गया है स्त्री-जाति के सिर! बड़े-बड़े धुरन्धर पण्डित दोनों हाथ उठाकर चिल्ला रहे हैं, स्त्रियों का धर्म है, पति की जीवन-पर्यन्त सेवा करें; स्त्रियों का धर्म है, पति के मर जाने पर भी उसकी स्मृति की पूजा करें! मैं सोचती हूँ, कहीं 'धर्म' की इस दुहाई के पीछे पुरुष की अपनी कमज़ोरी तो नहीं छिपी हुई? यदि स्त्री-जाति के प्रतिनिधि इकट्ठे होकर यह निश्चय करें कि पुरुषों के बहु-विवाह करने से हिन्दू-धर्म की नय्या डाँवाडोल हो रही है; उनके, पत्नी के मर जाने पर फिर-से शादी कर लेने से हिन्दू-धर्म की नाक कट चुकी है और बची-खुची भी कटने-वाली है; पति अपनी सेवा-परायणा स्त्रियों को भी पैर से ठुकराते हैं इससे धर्म 'त्राहि-त्राहि' पुकार रहा है—यदि सब स्त्रियाँ मिलकर यह पास करदें तो पुरुषों के पास क्या उत्तर है?

पुरुषों ने स्त्रियों के लिये उच्च-आदर्श बना दिये हैं। वे उच्च हैं, इसमें सन्देह नहीं, परन्तु साथ ही वे इक-तरफ़ा हैं। स्त्रियों की तरफ़ से माँग उठ रही है—इन आदर्शों का पालन पुरुषों को भी करना होगा! यदि पुरुष इन आदर्शों को पालने से चूकेंगे, जैसा कि वे चूक रहे हैं, तो वही होगा जो आज हमारी आँखों के सन्मुख हो रहा है।

मुहम्मद साहब का जीवन-चरित्र

[गतांक से आगे]

(लेखक— एक विद्यार्थी)

मदीने में गमन

मदीने में खजूरें और अन्य प्रकार के वृक्ष भरे हुये थे। यहां अरब की दो जातियाँ रहती थीं जिन में से मुख्य जाति 'खजराज' थी और यही मुहम्मद की अनुयायिनी थी। यहां के यहूदी भी उस के सिद्धान्तों में विश्वास करने लगे थे। अतः मक्का की अपेक्षा मदीना मुहम्मद को बहुत पसन्द आया। मुहम्मद शुक्रवार को अबूबकर के साथ ऊँट पर चढ़ा हुआ मदीना में प्रविष्ट हुआ। रास्ते में एक स्थान पर उसने नमाज पढ़ी और इस कारण उसी दिन से शुक्रवार को मुसलमानों के यहां छुट्टी मनाई जाती है। इसके बाद बड़ा भारी जलूस निकला और इतने लोगों ने पैगम्बर को निमन्त्रण दिया कि उस के लिए यह निश्चय करना कठिन हो गया कि वह किस घर में जा कर विश्राम करे? अतः इसका निर्णय उसने ऊँट पर ही छोड़ दिया। वह ऊँट पूर्वीय दिशा में अबुअय्युब के घर के सामने के मैदान में बैठ गया और मुहम्मद ने उस के ही घर में विश्राम किया। पीछे से उस मैदान को मुहम्मद ने ख़रीद लिया और जब वहाँ उसके तथा उस की स्त्रियों के लिए मकान बन गये तो वहाँ रहने लगा। मक्का के खुश्क जलवायु से मदीना की गीली हवा में आना उस के अनुयायियों के स्वास्थ्य के लिए बहुत बुरा सिद्ध हुआ इसलिये उसने एक तज़बीज़ निकाली। एक प्रकार की भ्रातृ-सभाएँ कायम की गईं जिन के अनुसार मक्का का प्रत्येक व्यक्ति मदीना के किसी व्यक्ति को अपना भाई समझ कर उसे अपने रुधिर के सम्बन्धी से भी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अधिक समझने लगे । इस प्रकार मक्का से भागे हुए तथा मदीना में रहने वाले लोगों में जो भाव उत्पन्न हो गये, उनके सामने जलवायु की खराबियों को लोग भूल गये । लग भग १½ वर्ष के बाद यह भ्रातृ-संघ टूट गया ।

ऐतिहासिक मसजिद की स्थापना तथा नमाज का तरीका

उस समय जहां प्रथम मस्जिद बनायी गई थी वहां इस समय भी एक विशाल मस्जिद बनी हुई है । उस समय यह १५० वर्गफीट की थी । भक्त लोग उत्तर की तरफ मुंह कर के जरुशलम की तरफ देखते थे । मुहम्मद उनके सामने खड़ा होता था । उपदेश देते हुए उन के सामने मुंह कर लेता था और नमाज पढ़ते हुए उन की तरफ़ पीठ कर लेता था । नमाज के समय सब लोग जरुशलम की ओर मुंह करते थे । मस्जिद के पूर्वीय हिस्से में मुहम्मद की स्त्रियों तथा लडकियों के लिये कमरे बने हुए थे । अब तक आयशा के साथ शादी हो चुकी थी । मस्जिद के उत्तरीय हिस्से में गरीबों के लिए स्थान बना हुआ था । यह मस्जिद यद्यपि उस समय छोटी थी परन्तु इस्लाम के इतिहास में इस ने बड़ा काम किया है । मुहम्मद तथा उस के साथियों ने बहुत समय इस में गुज़ारा । यहीं नमाज पढ़ते थे, यहीं प्रति सप्ताह इकट्ठे होते और मुहम्मद के कँपाने वाले परमात्मा-विषयक उपदेश सुनते थे । यहीं पर आयशा के कमरे में उस की मृत्यु हुई थी और यहीं पर वह गाड़ा गया था ।

किब्ले का जरूशलम से मक्का में परिवर्तन

मुहम्मद का यहूदियों से वर्ताव धीरे-धीरे बदलने लगा । प्रथम वह उन से समझौता करना चाहता था, उन से अपनी स्वीकृति लेना चाहता था, समान सिद्धान्तों पर जोर देता था, उन से सन्धि भी कायम की थी पर ज्यों-ज्यों उसका पैगम्बरी का दावा बढ़ने लगा त्यों-त्यों कहने लगा कि उनकी पुस्तकों में पैगम्बर के नाम से उसी को इशारा किया गया है । मदीना के यहूदी यह बात न स्वीकार करते थे क्यों कि वे कहते थे कि उस का खून यहूदी नहीं है । कई यहूदी मुहम्मद से विमुख हो गये और इस समय में प्रगटित कुरान की आयतों में वे खूब कोसे गये । लिखा गया था कि यहूदी मूर्त्ति-पूजक हैं, परमात्मा की आज्ञा नही मानते । एक दिन नमाज पढ़ते पढ़ते उसे एक दम इलहाम हुआ और उसने उत्तर से एक दम दक्षिण को मक्का की तरफ मुंह कर लिया । तब से यहूदी और मुसलमानों में कशमकश बढ़ गई । पहिले मुहम्मद ने यहूदियों से उपवास का दिन लिया था पर पीछे से रमज़ान का मास अपनी तरफ से चुना । महीने के अन्त में उपवास तोड़ने का उत्सव मनाया जाता था जिस में गरीबों को दान दिया जाता था । मक्का की यात्रा के समाप्ति के दिन दो मोटे बकरे मारे जाते थे ; एक सब के लिए और दूसरा मुहम्मद तथा उसके घर वालों के लिए । नमाज़ की दिशा बदलने के बाद बांग देने की प्रथा शुरु की गई जो पाँचों नमाज़ों के समय दी गई थी । मुहम्मद के लिए खास प्लेटफोर्म बना दिया गया जिस पर तीन सीढ़ियां थीं और यह वेदी मुसलमानों के लिये पवित्र समझी जाने लगी, प्रतिज्ञायें ली जाने लगीं ।

जहाद की आज्ञा

मुहम्मद का पिछला जीवन युद्ध तथा राजनीति में लगा रहा । मदीना से भागने के बाद से उसने कहना शुरू किया कि परमात्मा का क्रोध उसके शत्रुओं पर पड़ेगा । उसके जत्थे मक्का के गिरोहों पर छापे मारते थे और इन्हीं में से एक छापा

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

रमजान के पवित्र मास में एक कुरैशी जत्थे पर मारा गया। इस में एक कुरैशी मरा और दो कैदी हुए। पवित्र मास में किये गये आक्रमण की समालोचना से अनुत्साहित हो उसने एक आयत उतारी जिस में लिखा था कि यद्यपि ऐसे मास में युद्ध करना अनुचित है तो भी परमात्मा का मार्ग रोकना उस से भी ज्यादा अनुचित है। एक के बाद दूसरी आयत विरोधियों का संहार करने के लिये उतरने लगी जिन में लिखाथा—Kill them wheresoever ye find them and expell them from that out of which they have expelled you. Yet fight not against them beside the holy temple until they fight with you thereat. जो लड़ाई में मरते थे उन के लिए बहिश्त में स्थान था। युद्ध के लिए चन्दे मांगे जाते थे और इन चन्दों में जो ज्यादह देता था उसे परमात्मा के राज्य में दुगना मिलता था। कुरान में लिखा है—Who is he that leadeth unto the Lord a goodly loads ? He shall double the same, and he shall have an honourable recompense."

इस नवीन सम्प्रदाय के लिये पहला युद्ध बदर का था जो ६२३ ई.प.के दिसम्बर में हुआ। मुहम्मद के साथ ३०८ सिपाही थे जिन्हों ने ६५० कुरैशियों पर आक्रमण किया। उन के वीर योद्धाओं को इन्हों ने मार भगाया। दो योद्धा जिन्हें मुहम्मद घृणा की दृष्टि से देखता था मरवा दिये गये और दूसरों को एवज़ पर छोड़ा गया। इस प्रकार इस्लाम में खून की नदी बहाने का उपक्रम हुआ जो कि ईसाइयों में क्रूसेड के समान क्रूरता का इतिहास है। क्रूसेड की अपेक्षा इस्लाम के अत्याचार अधिक भयङ्कर है। किसी धर्म ने भी युद्ध से अपना विस्तार इतना नहीं किया जितना इस्लाम ने। अवस्था यहां तक आ पहुंची कि मुहम्मद के कहने पर भाई भाई को मारने पर उतारू हो गया। यह नवीन संगठन प्रत्येक चीज़ के ऊपर समझा जाने लगा। इस्लाम पर विश्वास न लाने वालों के साथ किसी प्रकार की भी नरमी न की जाती थी। जिस प्रकार बौद्ध धर्म में शान्त-प्रकृति के लोग आगे बढ़ जाते थे इस प्रकार इसलाम में ऐसे लोगों की कुछ न सुनी जाती थी। यह नया धर्म मानवीय दुर्भावों एवं अभिमान और दुराग्रह पर आश्रित था; यद्यपि इस के साथ ही इस के आधार में सत्य को सरल बनाने और परमात्मपूजा के ढंग को बदलने के भाव भी जोर से काम कर रहे थे। पहली लड़ाई में विजय ही मुहम्मद के हाथ में शस्त्र के रूप में आगई और उस से उसे आगामी युद्धों में प्रोत्साहना मिली। मदीना में मुहम्मद की रक्षा के प्रण को मदीना वासियों ने निम्न शब्दों में और बढ़ा दिया—"हे खुदा के पैगम्बर जिधर तेरी इच्छा हो कदम उठा। जहाँ मरजी हो कैम्प डाल। जिस से इच्छा हो युद्ध वा सन्धि कर हम उस खुदा के नाम पर जिसने तेरे हाथ में सच्चाई देकर तुझे भेजा है शपथ खाते हैं कि यदि तू इतना भी चले कि हमारे ऊँट थक कर गिर पड़ें और मर जायें तो भी हम संसार के अन्तिम छोर तक तेरे साथ जाएंगे। "इन युद्धों में जो लूट की सामग्री मिलती थी उनके लिए आयतें उतरने लगीं जिनके अनुसार लूट का पाँचवा भाग परमात्मा, पैगम्बर, उसके रिश्तेदार, अनाथ तथा गरीबों के लिए रखा जाता था। अब मुहम्मद किसी प्रकार का विरोध सह नहीं सकता था। यहूदियों की एक कौम के बाद दूसरी कौम या तो मुसलमान

बदर का युद्ध और धर्म के नाम पर अत्याचार

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बनादी गई या निकाल दी गई अथवा नष्ट कर दी गई। ख़ून का प्यासा व्यभिचार की तरफ़ झुक जाता है। मुहम्मद के अन्तःपुर (हरम) में नई स्त्रियाँ आने लगीं। अब ६२४ ई० प० में हरेक साल एक न एक नई स्त्री उसके अन्तः पुर में प्रविष्ट होती थी।

ओहद की लड़ाई और मुहम्मद का पराजय

मक्का के लोगों ने रो-धो कर ६२५ ई०प० में युद्ध करने की ठानी और दोनों सेनाओं का मदीना के बाहर ओहद में संग्राम हुआ। मक्का के लोग जीत गए। ओहद की लड़ाई में जो मारे गये उन्हें शहीद की उपाधि दी गई। कुरान में आयतें उतारी गईं जिन में लिखा था कि परमात्मा जय पराजय अपने अनुयायियों की परीक्षा के लिए देता है। ६२७ ई० प. में यहूदी और कुरेशियों ने मिल कर-लगभग दस हजार ने-मदीना में मुहम्मद पर आक्रमण किया। मुहम्मद ने खाई के पीछे अपने सिपाहियों को छिपा लिया और ऐसी चतुराई से लड़ा कि १५ दिन में ही शत्रु पराजित हो गए। इस युद्ध के बाद मदीना के छः सात सौ यहूदी जिन्हों ने बाहर के यहूदियों को कुछ सहायता दी थी समूल उच्छेद कर दिये गये। स्त्री बच्चे बेच दिए गए। अब मुहम्मद मक्का पर धावा करने की सोचने लगा।

मक्का पर आक्रमण

६२८ ई.प.की मार्च में १५०० आदमी लेकर उस ने मक्का की यात्रा प्रारम्भ की परन्तु कुरेशियों ने उसे बाहर ही रोक दिया। इस समय उसे संदेह हुआ कि उसके अनुयायियों में कुछ एक द्रोही हैं अतः सबसे मृत्युपर्यन्त स्वामिभक्त रहने की प्रतीज्ञा करवाई गई। कुरेशियों ने उसके अनुयायियों के इस संकल्प को देख कर यह समझौता पेश किया कि इस साल मुहम्मद लौट जाए और अगले साल यात्रा करे, लेकिन मक्का में वह तीन दिन ही ठहर सकता है। इस सन्धि में मुहम्मद को खुदा के पैगम्बर कहने के स्थान में अब्दुल्ला का बेटा कहा गया था : परन्तु वह सन्धि करने के लिए राजी था अतः चुप रहा। इस सन्धि के अनुसार १० वर्ष तक सब को स्वतंत्रता दी गई थी कि चाहे वे मुहम्मद की तरफ हो जावें या चाहे कुरेशियों की तरफ़। यद्यपि उसके अनुयायी इस संधि से असन्तुष्ट थे तो भी यह देख कर कि इसके अनुसार वह एक स्वतंत्र शक्ति वाला स्वीकार कर लिया गया था, चुप रहा। इस समय एक आयत उतरी जिसमें इन शर्तों को मुहम्मद की विजय कहा गया था। इधर से लौट कर मुहम्मद मदीना के उत्तरीय विभाग के धनी यहूदियों पर टूट पड़ा और उन पर बड़े २ अत्याचार किए। रोमन राजा हिरेक्लीयस के पास संदेश भेजा कि मुझे पैगम्बर स्वीकार करो, ईसा की पूजा छोडो और एक अल्लाह को इष्टदेव मानो। परशिया के राजा सिरोज के पास भी यही संदेश भेजा गया। ईजिप्ट के रोमन गवर्नर के पास भी संदेश भेजा गया। ईजिप्ट में यद्यपि दूत का बड़ा सत्कार किया गया और मुहम्मद के उपहार के लिए दो लड़कियां भेजी गई जिन में से एक स्त्री को उसने अपने हरम में रखा परन्तु मुहम्मद का संदेश वहाँ भी स्वीकार न किया गया। कहते हैं कि ऐबिसीनिया के राजा ने उस समय यह धर्म स्वीकार कर लिया। यह घटनायें मुहम्मद के बढ़ते प्रभाव को सिद्ध कर रही हैं।

६२९ ई.प. को मार्च में मुहम्मद ने पिछली संधि के अनुसार दस हजार आदमियों के साथ मक्का में प्रवेश किया, काबा का सात बार चक्कर काटा। मरवा पहाड़ी पर बकरों को बलिदान किया और अपना

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सिर मुंडवाया। दूसरे दिन काबा में प्रवेश किया, बेलालने बड़े जोर से बांग दी और मुसलमानों ने अपनी नमाज़ पढ़ी। इस प्रकार काबा में इसलाम प्रविष्ट हुआ। संसार के धन्धों से थक जाने के कारण उसने इस समय ५० वर्ष की एक बुढ़िया मोमिन से शादी की। यह उसकी अन्तिम शादी थी। मक्का के कई मुख्य व्यक्ति इस में शामिल हुए।

६३० ई.प.की जनवरी में मुहम्मद १० हजार आदमी ले चुपके से मक्का पर जा चढ़ा, काबा में जा कर पवित्र पत्थर के सामने प्रणाम किया, मन्दिर के ७ चक्कर काटे और बाद में मक्का की एक-एक मूर्ति को तुड़वाना शुरू किया। फिर मन्दिर के अन्दर और बाहर पूजा करके अपने अनुयायी अल्लाह के उपासकों को आज्ञा दी कि मक्का में प्रत्येक घर की मूर्तियां तोड़ दी जावें। मक्का के चारों तरफ के थंभों का-जो कुछ २ टूटे हुये थे- जीर्णोद्धार करवाया। चार आदमियों को जान से मारा गया, बाकी उसकी शरण में आए क्यों कि उसकी शक्ति उनसे अधिक थी।

होनीन की लड़ाई

मुहम्मद के जीवन में अगली मुख्य घटना होनीन की लड़ाई है जो कि हवाज़ीन नामक जाति से हुई। यद्यपि उसकी फ़ौज हार रही थी तो भी जब उसने सिपाहियों को उनकी की हुई प्रतिज्ञायें याद दिलाईं तो हारते २ वे जीत गये। मुहम्मद ने कहा कि कई फरिश्तों ने उसकी ओर से लड़ाई की है अतः वह जीता है। होनीन की लूट में मक्का के लोगों के साथ खास रियायत होते देख मदीना के लोग गड़बड़ मचाने लगे। इस पर मुहम्मद ने उन्हें यह कह कर सन्तोष दिया कि चाहे किसी को कितनी ही रियायत क्यों न दिखाई जावे पर तुमने मेरे जीवन की रक्षा की है अतः मैं तुम्हें छोड़ अन्य किसी का नहीं हो सकता। ईजिप्ट से जो दो लड़कियां लाई गई थीं उन में से एक को मुहम्मद ने अपने हरम में डाला था जिस से उसकी स्त्रियों में गड़बड़ मच गई क्योंकि वह इस से अधिक प्यार करता था। इस लड़की से इब्राहीम हुआ और मदीना में मुहम्मद के यही लड़का हुआ। १६ मास में ही यह बच्चा चल बसा अतः उसे बहुत दुःख हुआ। इस समय एक आयत उतरी जिस में लिखा था कि मुहम्मद का 'कौप्टिक लड़की' के साथ वर्ताव बिलकुल उचित है अतः उसके लिए गड़बड़ मत मचाओ।

इसलाम बढ़ती पर

मुहम्मद का रोबदाब बढ़ने लगा और एक साम्राज्य का रूप धारण करने लगा। जो इसलाम स्वीकार करते थे वे धार्मिक कर्तव्य के तौर से उसे कर भी देते थे, जो दान तथा मुहम्मद के खर्च के लिए काम में आता था। जो नहीं देते थे उन्हें बाधित किया जाता था। अरब के भिन्न-भिन्न प्रान्तों से मुहम्मद की मुख्यता स्वीकार करने के लिए दूतगण आने लगे। जिन ईसाइयों ने उसकी प्रधानता को स्वीकार कर लिया उन में कइयों की स्वधर्म में रहने की आज्ञा मिल गई। कइयों से कहा गया कि तुम चाहे ईसाई रहो पर अपने बच्चों को बपतिस्मा मत दो। जो दूत बाहर से आते थे उनके साथ इसलाम में दक्ष मौलवी भेजे जाते थे। ६३० ई.प.में मुहम्मद की अध्यक्षता में एक फ़ौज ने पेलस्टाइन के दक्षिण की तरफ के ईसाई और यहूदियों से अधीनता स्वीकार करवाई। इस आक्रमण में मुहम्मद की फ़ौज के जो लोग भाग खड़े हुए थे उनको कुरान में बुरा भला कहा गया। तैफ़ के लोग अभी तक मूर्तिपूजक ही थे। वहाँ का उरवा नाम का व्यक्ति मदीना में इसलाम स्वीकार कर तैफ़ में प्रचार करने लगा। उसने तैफ़ में जाकर बांग दी तो

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

धनुष बाणों से उसे बींध दिया गया। मुसलमानों ने उसे शहीद बना दिया। अन्त में उनके कुछ दूत मुहम्मद के पास गये। मुहम्मद ने कहा कि अपनी बुरी आदतों को छोड़ो और साथ ही उनकी अपने खुदा अल्लात की तीन साल पूजा करने की प्रार्थना को अस्वीकार किया। उन्हों ने कहा कि हमें खुद मूर्ति तोड़ने को न कहा जावे। मुहम्मद ने यह बात स्वीकार की और उसने एक आदमी भेजा जिसने स्त्री बच्चों के शोर के बीच में मूर्ति उखाड़ कर फेंक दी। अबूबक्र ३०० यात्रियों के साथ ६३१ ई.प. में मक्का की यात्रार्थ भेजा गया क्यों कि अभी तक मक्का में कई जातियां मूर्तिपूजा करती थीं। मुहम्मद स्वयं साथ न गया। इस समय यह घोषणा करदी गई कि आगे से जितनी यात्रायें होंगी उसमें एक अल्लाह की ही पूजा हो सकेगी और दूसरों के साथ लड़ा जायेगा। यह आज्ञा सर्वत्र उद्घोषित कर दी गई और संपूर्ण अरब में फैल गई। ईसाइयों और यहूदियों को कर देने की आज्ञा दी गई। गिरजे तोड़ने का हुक्म हुआ। भिन्न-भिन्न हुक्काम ईसाई जाति में भेजे गए ताकि वे वहां पर इस नये धर्म का प्रचार करें और इस के अनुसार वहां के न्याय एवं सामान्य संगठन की रचना करें।

मुहम्मद की अन्तिम यात्रा

६३२ ई.प. में मुहम्मद ने अन्तिम यात्रा प्रारम्भ की। इस यात्रा में उस की सब स्त्रियाँ उसके साथ थीं। १०० ऊँट बलिदान के लिए साथ थे। रास्ते में स्थान स्थान पर मस्जिदें बनी हुई थीं। वह उपदेश देता था। काबा के नज़दीक आते ही उसने आकाश की तरफ हाथ उठा के कहा कि इस देव-स्थान की मर्यादा को हे खुदा! और बढ़ा और जो इसकी यात्रा करे उसकी सम्पत्ति बढ़ा। यात्रा के प्रथम दिन उसने काबा में प्रचार कर रात खेमे में काटी। अगले दिन अराफत पहाड़ की चोटी पर जाकर, उसे यात्रा-स्थान बनाया। रात का जब चांदनी छिटक रही थी वह उतरा। यह सारा कार्य इस समय के यात्रा करने वाले करते हैं। मीना में उसने एकबा की तरफ पत्थर फैंका, जो पशु बलिदानार्थ लाए गए थे बलिदान किए, सिर मुंडाया, कुछ डाढ़ी तथा नाखून कटवा यात्री का वेष उतारा और बलिदान के मांस को बांट कर त्यौहार मनाया गया। अगले दिन मीना की घाटी में व्याख्यान दिया और कहा याद रखो कि हरेक मुसलमान मुसलमान का भाई है। तुम सब एक हो, भाई भाई हो। तुम्हारा जीवन और तुम्हारी सम्पत्ति एक दूसरे के लिये पवित्र है। इसके बाद वह मदीना लौट आया। अरब में कई पैगम्बर उठे जिन में से मुहम्मद ने कइयों का खण्डन किया। अपनी मृत्यु से कुछ ही पूर्व असवाद को जिसने विद्रोह का झण्डा उठाया था कतल कर दिया। उसने सीरिया के किनारे पराक्रम करने का सोचा था पर वह बीमार हो गया।

मुहम्मद का अन्तकाल

एक रात को वह मरघट (श्मशान) गया और वहां सब गड़े हुओं के लिए दुआ मांगी और लौटते हुए कहा कि मुझे कहा गया है कि या तो सदा जीते रहो या सीधा खुदा के पास चले जाओ। मैंने दूसरी बात स्वीकार की है। बीमारी बढ़ने लगी। यह आयशा के कमरे में चला गया जो लगन से उस की सेवा करती थी। ७-८ दिन तक तो बुखार साधारण रहा और वह प्रार्थना में जाता था पर अन्त में उसने मरने का समाचार सुना दिया। अबूबक्र रोने लगा। मुहम्मद ने कहा कि मेरे भक्तों में सब से ज्यादा प्रेमी भक्त अबूबक्र है। यदि मुझे कोई

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

दोस्त चुनना पड़े तो मैं उसे ही चुनूं पर तुम्हारी इसलाम की बिरादरी इस दोस्ती से भी ज्यादा गाढ़ी होनी चाहिए। अगले दिन अबूबक्र को नमाज़ कराने के लिए कहा गया और मरने से पूर्व मुहम्मद ने कहा कि हे खुदा मेरी कब्रपरस्ती शुरू न हो जावे। कुछ अच्छा होने पर उसने फिर मसजिद में आकर मुस्कराते हुये कहा कि खुदाने मुझे प्रार्थना से ताजा कर दिया है। अन्त में उसने लोगों से कहा कि मैंने खुदा की आज्ञाओं को ही चलाया है। परमात्मा ने जिसको मना किया है उसी को मैंने मना किया है। मसजिद में जाने के एक दो घण्टे बाद ही वह ६३२ ई. प. की ८ जून सोमवार को मर गया।

मुहम्मद की मृत्यु के बाद ही उसका स्थान-अबूबक्र का खलीफा होना

पन्न ख़लीफ़ा चुनना आवश्यक था जो मुहम्मद का प्रतिनिधि होता। मदीना के लोग स्वयं अपना मुखिया चुनना चाहते थे परन्तु उमर तथा अबूबक्र के अपना प्रभाव इस्तेमाल करते ही सब ने अबूबक्र को ही ख़लीफ़ा चुना। मुहम्मद को जिस जगह वह मरा था वहां कब्र खोद कर प्रतिष्ठा-पूर्वक दफन किया गया। मुहम्मद ख़ादिजा के समय में चाहे कुछ भी था परन्तु पीछे से स्त्रियों से उसे ख़ास प्रेम हो गया दीखता है और अपने इस पाशविक भाव के लिये उसने आयतें तक उतारने में संकोच नहीं किया। अपने स्वीकृत बेटे जैद की स्त्री पर भी उसका मन ललचा गया और उसके साथ विवाह करने के लिये उसने आयत उतारी तथा उस से शादी की। तो भी यह कहना अनुचित न होगा कि वह अपनी सभी बीबियों से मुहब्बत करता था। उस ने अपने धर्म को तलवार से फैलाया और पीछे जा कर तो अपनी शक्ति-संग्रह करने में लग गया। फिर भी कहा जा सकता है कि वह बड़ा आदमी था।

शिक्षा

(लेखिका— श्रीमती चन्द्रकला, कन्या-गुरुकुल)

वर्तमान समय में हमारे देश में शिक्षा की अत्यन्त आवश्यकता है। शिक्षित मनुष्यों के अभाव से ही भारत पतित हुआ है। अतः जब तक शिक्षित मनुष्य पैदा नहीं होंगे हमारे देश का कभी उद्धार नहीं हो सकेगा। यह तो मानी हुई बात है कि जैसी शिक्षा देश के बच्चों को दी जायगी उसी के अनुसार देश की राजनैतिक अवस्था में और देश की सभ्यता में उन्नति या अवनति होगी। यदि शिक्षा वर्तमान जीवन-संग्राम में खड़े करने योग्य नहीं है तो उस शिक्षा में शिक्षित हुये व्यक्ति जीवन-संग्राम के भयंकर युद्ध में कभी भी विजयी न हो सकेंगे।

गति जीवन का दूसरा नाम है। जो सभ्यता गतिवान्—जिसकी शिक्षा काल की गति के अनुसार है, उसका नष्ट होने का भय नहीं है। शिक्षा प्रणाली भी नये २ आविष्कारों से विभूषित नई २ आवश्यकताओं को पूरा करने वाली होनी चाहिये।

जीवन तथा वेदान्त की लापरवाही की शिक्षा ने भारत के राष्ट्रीय जीवन पर कुठाराघात कर यादि है। इस देश में मुसीबतों की भरमार होने लगी थी। सारे देश में अराजकता कुप्रबन्ध और

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अशान्ति फैल गई थी। किसी को राष्ट्रीय कर्तव्य का उचित मार्ग नहीं सूझता था। उस समय लोगों के मन में संरक्षकता के भाव उत्पन्न हुवे। लोगों ने देखा कि उस समय में यदि वे राष्ट्रीय उन्नति नहीं कर सकते तो प्राचीता के कट्टर संरक्षक बन कर हिन्दु संस्थाओं का अस्तित्व तो बचा सकते हैं। उन्नति न सही अस्तित्व बचा रहे यही बहुत है। उस समय के इतिहास को पढ़ने से हमें भली भाँति विदित हो जाता है, कि जोते जागते राष्ट्र ने अपनी अवनति किस प्रकार करली और केवल लकीर के फकीर बनकर भारत ने अपने आप को किस प्रकार गारत किया। भारत उस समय अपनी शक्तियों को न पहचान सका, अपनी बुद्धि और युक्ति को काम में न ला कर आँख मूंद कर बैठ गया। फिर क्या था देश में चारों ओर ज्ञान और प्रकाश के बदले अज्ञान और अन्धकार फैल गया, इस अज्ञान युग का जोर बढ़ता ही गया। यहां तक की राष्ट्रीय जीवन तहस नहस हो गया। उस समय हिन्दुस्तान अपनी बुद्धि और शक्ति में अत्यन्त जीर्ण शीर्ण दशा को प्राप्त हो गया, लोगों को यही प्रतीत होता था और बहुतों को अब भी यही प्रतीत होता है कि प्राचीन समय में हमारे पूर्वज उन्नति के शिखर पर आसीन थे। अब हमारे लिये कोई उन्नति का मार्ग ही नहीं है। सतयुग अथवा स्वर्णयुग तो पहिले ही हो गये, अब कलियुग का जमाना है। इस युग में उन्नति के विषय में अपना मस्तिष्क खपाना व्यर्थ नहीं बल्कि अधर्म है।

तात्पर्य यह है कि ज्ञान का भण्डार बन्द हो गया। संसार भर में होने वाला व्यापार रुक गया राष्ट्रीय स्वाधीनता नष्ट होगई और प्रायः सम्पूर्ण भारत मृत्यु के मार्ग का अनुसरण करता रहा। हमारे अभागे देश की यह दशा ही, अंग्रेजी राज्य के पूर्व का इतिहास है।

शिक्षा की महिमा— मनुष्य पशुपन से जिन बातों में ऊपर उठता है, उनमें एक यह कि वह स्वाभाविक संस्कारों पर निर्भर न रह कर अनेक प्रकार से विकास को प्राप्त होता है और अपने भाग्य का सुधार करता है। प्रत्येक घटना के अन्दर वर्तमान कार्य-कारण के भाव को समझ कर वह अपनी चमत्कारिणी बुद्धि के प्रभाव से अपना मार्ग शुद्ध कर लेता है। यह सारी महिमा उस शिक्षा की ही समझनी चाहिये जो उसे अनुकूल परिस्थिति में प्राप्त हो सकती है। भिन्न २ प्रदेशों में और भिन्न २ जातियों में इस विषय में उत्कट तारतम्य में देख पड़ता है। एक ही जाति के अन्दर समय के फेर से भेद पड़ जाता है। एक ओर वे प्रतापी मानव बसते है जिन के आगे जल, अग्नि तथा वायु आदि भातिक देवता हाथ बाँधे खड़े रहते हैं। वहां दूसरी ओर उन अभागों की भी मनुष्य-समाज में ही गणना है जिन्हें अपने नंगे तन को आच्छादित करने के लिये वस्त्र प्रयोग करने तक का भी परिचय नहीं है। जहां बड़े २ नगरों में लाखों जन आराम के साथ रहते हैं वहां पर जङ्गलों तथा पर्वतों में घूमने वाले यात्रियों ने वन्य मृगों की भाँति मनुष्यों के झुण्डों को भी भागते हुए देखा होगा। यह ठीक है कि मनुष्यों ने विशाल पर्वतों के पेटों को फाड़ २ कर अति रमणीय सुरंगे निकाली हैं और चोटियों को तराश २ कर सुन्दर राजपथ बनाये हैं, पर चित्र को दूसरा पार्श्व देख लो, मनुष्य ही मिट्टी, पत्थर तथा जल से भयभीत हो रहा है। एक वे हैं जिनके लिये बड़ी २ नदियों में पुल बाँधना साधारण बात है पर दूसरे हमारे वे भाई भी है

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जो उन पुलों पर चढ़ते चढ़ते घबराते हैं और नदी नालों में धन बहाते जाते हैं' ।

इस सारे तारतम्य का मूल शिक्षा का प्रकर्ष तथा अप्रकर्ष ही है। वैज्ञानिक तथा सामाजिक शिक्षा का अभाव बड़े २ मनुष्य समुदायों को पशुपन से आगे नहीं बढ़ने देता। अच्छी शिक्षा ही साधारण से साधारण मनुष्य को उन्नति के शिखर पर चढ़ा देती है। विद्या ही दस्यु से मनुष्य तथा मनुष्य से देवता बनाने वाली मायाविनी शक्ति है।

मानव इतिहास में एक समय ऐसा भी हो चुका है कि जब भारतीय आर्य्यों के उत्कर्ष का सूर्य्य अपनी प्रखर किरणों के साथ सारी पृथ्वी पर चमक रहा था। चारों दिशाओं में विद्या के प्रसार का श्रेय तथा यश इन्हीं को प्राप्त था। दूर २ देशान्तरों में यहाँ के कला-कौशल की चर्चा थी। आज इसी परम पुनीत भूमि-तल पर अविद्या ने ऐसा अड्डा जमा रक्खा है कि कोटिशः नरनारी अपना नाम लिखना तक भूल गए हैं। आज अन्य जातियों का डंका बज रहा है क्यों कि उनके सिरों पर ज्ञान-भानु का प्रकाश हो रहा है।

हमारा पुनरुत्थान तथा सुधार शिक्षा के विस्तृत प्रचार में है, जब तक सर्वसाधारणमें शिक्षा सम्बन्धी सुधार नहीं होता, तब तक सारा धर्मोपदेश, स्वराज्य-सन्देस तथा सत्याग्रह-निर्देश वन में रोने के समान है।

अब तक जिस प्रथानुसार देशीय तथा सरकारी संस्थाओं द्वारा कोई सौ वर्ष से यहाँपर जो विद्या प्रचार हो रहा है ,हमारे विचार में यह पूर्ण शिक्षा नहीं कहीं जा सकती। इस का कारण हमें यह प्रतीत हो रहा है कि इस में जातीय दृष्टि से अनेक प्रकार के हानिकारक अंश विद्यमान हैं। अब तक जिस प्रणाली के अनुसार जिस ज्ञान का प्रचार हुआ है उसका मुख्य सम्बन्ध हमारे मानसिक विकास के साथ समझा जाता है। पर तनिक विचार स्थिति पर दृष्टिपात करें तो यह भी जान पड़े गा कि क्यों कि एक मनुष्य साक्षर है इसीलिए उसे शिक्षित कहलाने का अधिकार नहीं हो सकता। एक या अनेक भाषाओं से लाभ कर मनुष्य अपने तथा दूसरों के लिये अधिक उपयोगी बन जाता है। संसार में उनका मूल्य अधिक पड़ सकता है, उसे उन भाषाओं के वाङ्मय के आन्तरिक रस का आस्वादन हो सकता है। यह भी हो सकता है कि वह इधर उधर के पत्रों को लेकर गाँठ गठाकर कुछ कविता अथवा कथा बना ले और लेखक प्रसिद्ध हो जाय । पर वास्तव में विज्ञान तथा मौलिक विचार में ही मानसिक उन्नति समझनी चाहिये। यदि सहस्त्रों रसायन-शास्त्रियों तथा भौतिक-विद्या के विद्वानों के होते हुए भी हमारी यह दशा है कि एक फटा हुआ कपड़ा सिलाने के लिये सुई तक भी विदेश से मंगानी पड़ती है और यदि किसी मशीन का पुर्ज़ा टूट जाये तो बाहर ही आर्डर देना पड़ता है, फिर भला हमारे बड़े २ विद्यालयों के कलाभवनों तथा विज्ञान-शालाओं में प्रतिदिन चक्कर घुमाने से तथा शीशा तोड़ने से क्या लाभ ? सम्पत्ति-शास्त्र के जगतविख्यात पण्डितों के देखते २ हमारा नित्य निर्धनता के जाल में फँसते जाना क्या इस बात का साक्षी नहीं है कि हम केवल पुस्तकों के ही विद्वान हैं, वास्तविक ज्ञान से हमारा कोई सम्बन्ध नहीं है।

इस में ज़रा भी संदेह नहीं है कि राजकीय शक्ति के पराधीन होने पर बहुत सा पुण्य-संकल्प मध्य में ही नष्ट हो जाता है। यदि राज्य अपना हो तो यही विद्या अधिक उन्नत होकर हमारे लिये अधिक लाभदायक बन सकती है। फिर भी जैसी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अवस्था है उसके अनुसार शिक्षित समाज के आदर्श तथा विचार-प्रवाह में परिवर्त्तन की आवश्यकता है। सहानुभूति, त्याग, आत्मगौरव, विनय और सदाचरण ही शिक्षा के स्वाभाविक फल होने चाहिये। हमारी विद्यमान शिक्षा प्रणाली बहुत अंश में इन आवश्यक गुणों के सम्पादन करने में समर्थ नहीं है। हाथ से कार्य करने वाला स्वभावतः स्वाधीनता से अधिक प्यार करता है। दूसरों पर निर्भर नहीं होता, जिस दशा भी वह अपने को पाता है उसके अनुकूल अपने निर्वाहार्थ कोई न कोई मार्ग निकाल ही लेता है।

अंगरेजी स्कूलों में शिक्षा पाये हुये लाखों भारतीय युवक आज गवर्मेंट के भिन्न २ विभागों में नियुक्त हैं। हज़ारों रेलवे कर्मचारियों का काम करते हैं। भला यह शिक्षित कहलाने वाले देश का क्या उपकार करते हैं? अदालतों के मुन्शी, मुहर्रिर, पेशकार और बहुत से तहसीलदार और डिपटी कलक्टर के रूप में गरीबों पर कैसा अत्याचार करते हैं? पुलीस की तो बात ही निराली है। यूनीवर्सिटियों से डिगरी लेकर कानून का पेशा करने वाले लोगों की रक्षा करते हैं या उन्हें उल्टा लूटते हैं? ये रुपये के लिये जान बूझ कर देश के बन्धुओं का गला काटते हैं। वेश्याओं की तरह धन के लिये शरीर और आत्मा को बेचना ही इनका काम है। हा! यदि भारत का शिक्षित समाज अंग्रेजी के श्रेष्ठ शब्द ड्यूटी का महान और पुनीत अर्थ समझा होता, भारत का भी पुनरुत्थान जापान तरह ५० वर्षों में हो गया होता। कहने का तात्पर्य्य यह है कि शिक्षा बहुत अच्छी अंगरेजी और संस्कृत बोलने में नहीं है, काले या गोरे के चेहरे में नहीं है। शिक्षा बहुत से विद्वानों का नाम रट लेने में नहीं है। शिक्षा लम्बे २ व्याख्यानों में नहीं है। शिक्षा कोट अचकन और पतलून पहनने में नहीं है।

हमारी शिक्षा का आदर्श सादगी, विनय और सदाचार होना चाहिये। विद्वान् मनुष्य धनके पीछे भागने वाले न हो, उनके अन्दर त्याग और सहानुभूति हो, वे दूसरों के दुख को अपना दुख समझें और उत्तम शिक्षा प्राप्त करके देश की उन्नति के लिये तय्यार रहे।

वर्तमान शिक्षाप्रणाली हमें इस आदर्श तक यह पहुंचाने में असमर्थ पाई गई है। अतः इन आदर्शों को पूरा करने की इच्छा से ही इस कुल की शुभ स्थापना की गई है और इन आदर्शों सफल करने का पर्याप्त प्रयत्न किया जा रहा है। *

* कन्या गुरुकुल के ४र्थ वार्षिकोत्सव में सरस्वती सम्मेलन के अवसर पर पढ़ा गया।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कन्या गुरुकुल *

(कुमारी स्वर्णलता देवी अष्टम श्रेणी द्वारा)

प्राचीन समय अत्यन्त महत्वपूर्ण था। जब भी कभी हम इतिहासावलोकन करते हैं तो प्रतीत होता है कि उस काल में स्त्रियों का स्थान कितना ऊँचा था–यहाँ तक कि पुरुषों से पूर्व उन का नाम आता था—'मातृमान पितृमान् आचार्य्यवान् पुरुषो वेद'–यहाँ पर पिता तथा आचार्य्य से पूर्व माता का नाम आया है। और गङ्गा नदी को 'माता गङ्गे' के नाम से पुकारा है परन्तु हिमालय को 'शैलराज' एवं 'सब पर्वतों का जनक, के नाम से विख्यात होने पर भी 'पिता हिमालय' के नाम से कोई नहीं पुकारता। इङ्गलेण्ड में टेम्स नदी को फादर टेम्स कहते हैं और रोम में ट्राइब नदी को फादर ट्राइब कहा है। परन्तु भारत वर्ष ही एक ऐसा देश है, जहाँ स्त्रियों का अन्य देशों की अपेक्षा अधिक सन्मान होता था। संसार में तीन वस्तुओं की इच्छा होती है— विद्या, युद्ध-कौशल, धन। किन्तु इन तीनों में से किसी को भी पुराणों में देवता नहीं माना गया, परन्तु सरस्वती, भवानी, लक्ष्मी इन तीनों को देवी माना गया है और सिंह पर देवी को सवार किया गया है। उस समय उपाध्याय की अपेक्षा दशगुणा अधिक प्रतिष्ठित आचार्य्य और आचार्य्य से सौ गुणा प्रतिष्ठित पिता और पिता से सहस्र गुणा अधिक प्रतिष्ठा के योग्य माता होती थी। उस समय स्त्रियों के अधिकार पुरुषों के बराबर होते थे। उस महान उन्नति के समय स्त्रियाँ पुरुषों के बराबर पढ़ी लिखी हुआ करती थीं। उनकी योग्यता, उनकी शिक्षा पुरुषों के समान अत्यन्त ऊँचे दर्ज की थी। उस वैदिक समय में, जब भारत की विद्वत्ता बहुत बढ़ी चढ़ी थीं, जब उपनिषद् न्याय और दर्शन शास्त्र लिखे जा रहे थे, जब धर्म शास्त्र और उपनिषद् मन्त्रों की रचना हो रही थी, जब भारत की आत्मविद्या पूर्णता के सब से ऊँचे शिखर पर विराजमान थी, उस समय स्त्रियाँ पुरुषों की बराबरी करती थीं और उन में समानता का सभ्य व्यवहार था। स्त्रियों और पुरुषों के सामाजिक और आत्मिक अधिकार बराबर थे। वे स्वतन्त्रतापूर्वक साहित्य तथा विज्ञान को पढ़ती थीं, वेदों के अध्ययन में सचेष्ट रहती थीं, वे ब्रह्मविद्या में निपुण थीं, वे राजनीति जानती थीं और पुरुष उनसे सम्मति लेते थे, साराँश यह है कि प्राचीन समय में स्त्रियाँ सब प्रकार से सुशिक्षिता होती थीं। देखिये—बाल ब्रह्मचारिणी गार्गी ने याज्ञवल्क्य ऋषि से कैसा मनोरञ्जक शास्त्रार्थ किया था, किस प्रकार उच्च शिक्षा तथा गहरी ब्रह्म विद्या के ज्ञान से तथा अपनी योग्यता से ऋषिवर याज्ञवल्क्य से 'कस्मिन्नु ब्रह्म लोका ओताश्च प्रोताश्च' इस प्रश्न पर हे गार्गी 'माति प्राक्षीः' कहलवा कर परास्त किया था।

महारानी गान्धारी श्रेष्ठ राज्य-कर्मचारियों की भरी सभा में—जहाँ विचार हो रहा था कि सन्धि हो या युद्ध, उस गम्भीर राजनैतिक

* यह निबन्ध कन्या-गुरुकुल के चतुर्थ उत्सव पर सरस्वती सम्मेलन की द्वितीय बैठक में कुमारी स्वर्णलतादेवी (अष्टम श्रेणी) द्वारा पढ़ा गया।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विषय पर विचार करने के समय जिस पर समस्त भारत का जय या क्षय निर्भर था-इस लिए बुलाई गई थीं कि अपने पुत्र दुर्योधन को उस राजनैतिक विषय पर उपदेश देकर उन्हें युद्ध से रोकें। सचमुच ही बड़ी योग्यता से उन्होंने उपदेश दिया था।

मानव इतिहास में एक समय ऐसा भी हो चुका है जब भारतीय ललनाओं का उत्कर्ष सूर्य्य अपनी शिक्षा की प्रखर किरणों के साथ चमक रहा था। चारों दिशाओं में ज्ञान के प्रसार का सौभाग्य स्त्रियों को प्राप्त था। दूर २ देशों में इन्हीं के कला-कौशल की चर्चा थी। प्राचीन समय में स्त्रियों की क्या दशा थी यह मैं बतला चुकी हूँ। रामायण काल में स्त्रियों की क्या स्थिति थी अब यह आपके सामने उपस्थित करती हूं—

बाली को मार कर रामचन्द्रजी जिस समय वर्षा काल के आजाने पर सीता के अन्वेषण के कार्य्य को स्थगित कर अन्य स्थान पर चले गये थे। फिर वर्षा ऋतु व्यतीत हो जाने पर भी सुग्रीव ने सीता की खोज का कोई उपाय न किया तो रामचन्द्र जी ने अति क्रुद्ध होकर लक्ष्मण को सुग्रीव के पास भेजा और कहलवाया कि तुम बड़े स्वार्थी हो, अपना काम निकल जाने पर मेरी सुध नहीं लेते। लक्ष्मण को अति क्रुद्ध देख कर सुग्रीव सहित सब मन्त्री भयभीत हो गये और किसी का साहस न हुआ कि सामने आकर कोई बात कर सके। तब सुग्रीव ने तारा को कहा तुम लक्ष्मण के पास जाओ, तुम्हें देखते ही लक्ष्मण का क्रोध शान्त हो जायगा। और सचमुच ही तारा के सम्मुख आते ही लक्ष्मण का क्रोध शान्त हो गया और वह नत-मस्तक हो गए। लक्ष्मण ने भरत को अधन्य इसलिए कहा था कि उसने मन्थरा को क्रोध की दृष्टि से देखा था।

इन्दुमती के स्वर्गारोहण पर अज इस प्रकार विलाप करता है—गृहिणीसचिवः सखि मिथः प्रियशिष्यो ललिते कलाविधौ करुणाविमुखेन मृत्युना हरता त्वं वद किं न मे हृतम्।

उपरोक्त वाक्यों को पढ़ कर प्रतीत होता है कि रामायण काल में भी स्त्रियाँ अति सुशिक्षिता एवं गुणवती होती थीं। उस समय भारत सब के ऊपर शासन करता था, दिन रात स्वतन्त्रता के सुखों का अनुभव करता था चूंकि स्त्रियाँ सुशिक्षित होती थीं, इस कारण वे सुशिक्षित बच्चों को पैदा करती थीं, उन्हें देवता-बुद्धि प्रदान करती थीं और वे ही भारत को सुखागार बनाते थे। परन्तु इस के बाद समय आया कि जिन स्त्रियों द्वारा भारत सुखागार था उन्हीं के अशिक्षित होने से उनकी सन्तति द्वारा दुःखागार बन गया, उनके अपमान के कारण भारत का अधःपतन हो गया।

पाण्डु, विचित्रवीर्य, अर्जुन आदि ने दो २ विवाह करके स्त्री जाति का कुछ कम अपमान नहीं किया। तिस पर भी द्रौपदी के बाल पकड़कर खींचना और फिर नग्न करने की चेष्टा करना, न केवल स्त्री जाति का अपमान ही था, किन्तु घोर अत्याचार था। इस अत्याचार को सभासदों ने देखते हुए मौन धारण किया! जिस देश में ऐसे जनों का प्रादुर्भाव होता है निश्चय उस देश का अधःपतन होता है। अच्छा अब आगे चलिये देखिये बुद्धदेवजी ने स्त्रियों को किस दृष्टि से देखा। बुद्धदेवजी के पास जब भिक्षुणी होने की अभिलाषा से उनकी धर्मपत्नी और माता ५०० स्त्रियों समेत आई थीं, प्रथम उन्होंने भिक्षुणी उन्हें बनाने से निषेध कर दिया परन्तु परम भक्त आनन्द के कहने पर ८ नियमों का पालन करवाते हुए भिक्षुणी बनाया। उन में से एक नियम यह बनाया कि वृद्धा से वृद्ध भिक्षुणी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जवान से जवान भिक्षु के आगे नमन करे। यह कोई कम अपमान था कि एक वृद्ध स्त्री जवान भिक्षु को नमन करे। और भी देखिए शंकराचार्य्य ने स्त्रियों की परतन्त्रता का पोषण करते हुए शूद्रपद प्रदान किया है। स्त्री जाति की जितनी निन्दा वेदान्त के आचार्य्य ने की है भूतल पर कदाचित ही ऐसी दूसरे ने की होगी। इन्हों ने स्त्रियों को 'स्त्रियो हि नरकस्य द्वारः के पद से भूषित किया है। परन्तु ऐसा करते समय वह यह भूल गये थे कि ब्रह्म-सूत्र के भाष्य बनाने में उन को मण्डन मिश्र की स्त्री विद्याधरी से सहायता मिली थी। और हिन्दी के प्रखर कवि ने भी 'शूद्र गवाँर ढोल पशु नारी, यह सब ताड़न के अधिकारी' इस पद से स्त्रियों को कलंकित कर दासी के नाम से पुकारा है। और भी अन्य कई नामधारी आचार्यों ने 'स्त्रीशूद्रद्विजबधूनां त्रयी न श्रुतिगोचरा' इस वाक्य को कह कर शिक्षा से वंचित रक्खा है। अगर यह महात्मा स्त्री जाति के उठाने में प्रयत्नशील होते तो अवश्य भारत परतन्त्रन होता वरँच स्वतन्त्रता के ऊँचे शिखर पर विराजमान होता।

मैं आपको पूर्व बता चुकी हूँ कि पूर्व समय में स्त्रियाँ राजनीतिक विषयों पर विचार करती थीं। क्या आज भी हमारी मातायें राजनीतिक विषयों पर विचार कर सकती हैं। क्या आज आप अपने लड़कों को असावधानी से राजनीतिक भूल करते देख कर उसकी माता से सदुपदेश करा उसे हानि से बचा सकते हैं, या शर्म से सिर झुका कहेंगे कि स्त्रियों का राजनीति से क्या सम्बन्ध? स्त्री जाति कितनी ही पतिव्रता स्वार्थ-त्यागिनी सत्यवती क्यों न हों परन्तु मनुष्य समाज में उसका कोई सन्मान नहीं, उससे राजनीतिक तथा देशसम्बन्धी कार्यों में सम्मति लेना नहीं चाहते, क्योंकि आपको उससे कुछ हार्दिकता नहीं। वह जन्म से अज्ञान नहीं है, परन्तु आपने उसे शिक्षा न देकर अज्ञान बना रक्खा है। क्या अब भी भारत सुखागार बन सकता है और स्वतन्त्र हो कर सब के ऊपर शासन कर सकता है। यदि हमारे देश की पाठशालाओं में आर्यभाषा के द्वारा भारत का इतिहास पढ़ाया जाता, रसायनशाला और पदार्थ विज्ञान आदि विषयों की उसी आर्यभाषा में शिक्षा मिलती, अपना साहित्य, अपने आदर्श पूर्वजों का जीवनचरित्र, अपने देश का गौरव भारतीय बच्चों के सामने उपस्थित किया जाता तो भारत आत्मरक्षा की युक्तियों में ढीला न पड़ता, आज हमारा प्यारा देश संसार से पीछे न रहता, न हम अन्य जातियों के घृणापात्र बनते और न ही उनकी कृपा की अभिलाषा रखते। जब संस्कृत विद्या का लोप हो गया था 'स्त्री-शूद्रौ नाधीयाताम् इति श्रुतिः' ऐसा कहकर उनके पाठन में विघ्न डाला जाता था, उस समय एक महापुरुष का प्रादुर्भाव हुआ जिसने स्त्रियों को सुशिक्षा देकर सुशिक्षिता बनाने की विधि सोची, उस महापुरुष का नाम था स्वामी दयानन्द। स्वामी जी के हृदय में स्त्रियों के प्रति अतिशय सन्मान था। उन्हों ने स्त्री जाति के सम्बन्ध में कभी समालोचना तक नहीं की। सब आचार्यों में से स्वामी दयानन्द ही एक ऐसे आचार्य थे, जिन्हों ने स्त्रियों के गौरव को बढ़ाया और समान अधिकारों की घोषणा की। यह स्त्री जाति के पूर्ण स्वतन्त्रता के पक्षपाती थे। इन्होंने स्त्री जाति को द्विजपद प्रदान किया है। ऋषि दयानन्द ने जिस समय कर्मक्षेत्र में अवतरण किया था, उस समय उन्हों ने स्त्री जाति को अज्ञान कूप में गोते खाते देखा था, उन्हों ने विचारा जिस पुनीत भूमितल पर संस्कृत विद्या

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पूर्ण रूप से उपस्थित थी आज उसी भूमि पर अविद्या ने ऐसा अड्डा जमाया है कि अनेक नारियाँ अपना नाम भी नहीं लिख सकतीं। आज अन्य जातियों का डंका बजता है, क्योंकि उनके सिर पर ज्ञान भानु का प्रकाश होता है। सैकड़ों अबलाओं की सजीव देहें चिता पर जल रही हैं। बाल विवाह होने से सैकड़ों विधवायें कुमार्ग पर चलने के लिये सन्नद्ध हैं। पूर्व समय में जो दुष्ट पुरुष स्त्रियों की तरफ क्रोध की दृष्टि से देखता था वह अधन्य माना जाता था परन्तु आज कल सदाचारिणी स्त्रियों को भी बलात्कार से भगाया जाता है और ब्रह्मचर्य्य का लेश नहीं है। इन्हीं कारणों से उन्होंने अनुभव किया कि आजकल देश में जहाँ तहाँ अशान्ति के चिन्ह दिखाई देते हैं उन सबका मूल कारण स्त्रियों का अशिक्षित होना है तभी से वह एक ऐसी आवश्यकता पूर्ण संस्था को स्थापन करना चाहते थे, जो देवियों को धार्मिक जीवन प्रदान करने वाली हो, संसार को उन्नति के मार्ग पर लाने वाली हो। उस समय तो अपनी इच्छा पूर्ण नहीं कर सके, परन्तु उनके स्वर्गारोहण के पश्चत् आर्य समाज ने उस आवश्यकता पूर्ण संस्था को सम्वत १९८१ में स्थापित किया क्योंकि ऋषि के कोटि के महात्मा संसार को वह पाठ नहीं पढ़ाते जिसकी संसार को आवश्यकता न हो। भारतीय शिक्षा के युग में गुरुकुल की शिक्षा की स्थापना एक महत्व, पूर्ण घटना है क्योंकि भारत में आधुनिक शिक्षा विदेशीय है। अन्य शिक्षणालयों की अपेक्षा कन्या गुरुकुल में ये विशेषतायें हैं—

(१) ब्रह्मचर्य्य का पालन

(२) संस्कृत को विशेष स्थान दिया गया है।

(३) शिक्षा का माध्यम आर्यभाषा है जिसका फल यह होता है कि अधिकारिणी का इतिहास लगभग बी. ए. के बराबर होता है।

(४) आचार्य्या और शिष्य की प्रणाली प्रेमसिंचित एवं सुदृढ़ है।

(५) यह संस्था सर्वप्रिय है न्यून वयस्क कन्याओं को लेने पर भी ४ वर्ष के भीतर १५० कन्यायें हो गई हैं।

(६) यहाँ सब कन्याओं से समव्यवहार होता है चाहे वह राजकुमारी हो चाहे दरिद्र कन्या।

(७) यही एक संस्था है जो देवियों को आत्म सन्मान सिखलाती है, क्योंकि अन्य संस्थाओं में पुरुष कार्य कर्ता काम करते हैं, यहाँ सब कार्य-कर्त्री देवियाँ हैं।

इस संस्था में जो विशेषतायें आपको बतलाई हैं वे और संस्थाओं में दृष्टिगोचर नहीं होतीं। उन संस्थाओं में आचार्या और शिष्य की प्रणाली न तो इस प्रकार प्रेमसिंचित होती है, न दृढ़ ही होती है। उनमें ऊँचे कुल की कन्याओं के साथ उच्चता का व्यवहार होता है और नीच कुल की कन्याओं के साथ असाधारण व्यवहार होता है। न ही वे संस्थायें सर्वप्रिय होती हैं, क्योंकि उनमें अधिक उमर वाली कन्याओं को लेने पर भी कम कन्यायें प्रविष्ट होती है। कन्या गुरुकुल की विशेषतायें क्या हैं यह आपको दर्शा चुकी हूँ। अब मैं आपके सन्मुख कन्या गुरुकुल के उद्देश्य क्या हैं यह उपस्थित करती हूँ।—

(१) कि यहाँ से विद्याध्यन करके जो देवियाँ निकलें वे सुयोग्य ब्रह्मचारिणी बनकर अपने पवित्र धार्मिक जीवन द्वारा भारत की मृतप्राय आर्य जाति के रगों में अमृत का संचार कर पुनः बलिष्ठ बनावें।

(२) वर्त्तमान पाश्चात्य शिक्षाप्रणाली के अनुकरण से जो दुर्गुण आगये हैं उनसे ब्रह्मचारिणियां पृथक रहें और आर्य जाति के उत्कर्ष के समय

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थात् सभ्यता के समय स्त्री जाति के जो गुण थे उनसे पुनः सुभूषित हो कर जगत के गौरव को बढ़ावें और कुल की मर्य्यादा की रक्षिका बनें।

(३) ब्रह्मचर्य्य द्वारा स्वास्थ्य को उन्नत कर देशोन्नति अथवा समाज संगठन के लिये सच्ची देवियाँ बनें।

(४) सादगी से जीवन व्यतीत करें।

(५) देश, जाति तथा धर्म सम्बन्धी परोपकारी कार्यों में अप्रमाद से लीन हों।

(६) मानसिक विकास हो प्रतिभा शालिनी बनें।

मैंने आपके सम्मुख उद्देश्य जो रक्खे हैं उनका फल अत्यन्त ऊँचा है। अगर आप भारत में फिर से गार्गी और सीता जैसी देवियों को देखना चाहते हैं, इस वाटिका को हरी भरी कर उत्तम फल की प्रतीक्षा करते हैं, तो इस कुल की ओर ध्यान देकर इसकी आवश्यकताओं को पूर्ण कीजिये।

वैज्ञानिक संसार

१. क्या स्त्री जाति का विश्वास नहीं किया जा सकता ?

स्त्री जाति परमात्मा की सब से अद्भुत, विचित्र और रहस्यमय कृति है। अनेक पुरुष इसको भली प्रकार समझने में अपनी असमर्थता प्रगट कर चुके हैं। प्रोफैसर फ्रेज़र हैरिस एम. डी. डी. एस सी. के मतानुसार ऐसे पुरुष जो कि अपनी आधी आयु व्यतीत कर चुके हों प्रायः यह कहते सुने जाते हैं कि "जितनी अधिक हमारी आयु होती जाती है उतना ही कम हम स्त्रियों को समझते हैं।"

केवल यद्यपि पुरुष निर्मित उपमान के आधार पर स्त्रियाँ अविश्वसनीय नहीं हैं, तथापि वे बदलने वाली अवश्य हैं। प्रत्येक समय स्त्रियों का वही अभिप्राय नहीं होता जो वे कहती हैं, परन्तु कई वार उनका अभिप्राय उस से सर्वथा विपरीत होता है जो वे शब्दों द्वारा प्रगट करती हैं।

इस का कारण जान बूझ कर धोखा देने की प्रवृत्ति नहीं। प्रायः अवस्थाओं के कारण स्त्रियों के मुख से निकले हुये वाक्यों पर उतना विश्वास नहीं किया जा सकता जितना कि पुरुषों के।

एक स्त्री बहुधा ऐसे वचन कहती है जो कि वास्तविक स्थिति के सूचक होते हैं यद्यपि उस की वह कल्पनामात्र ही होती है। स्त्री के मन में वास्तविकता और कल्पना के बीच बहुत अन्तर नहीं होता; उस के मन का झुकाव उस अपरीक्षात्मक रूप की ओर होता है जिस को सीधी साधी वास्तविक स्थिति की अपेक्षा ऐसी स्थिति अधिक रुचिकर होती है जिसे सुन्दर वस्त्रों से सुसज्जित किया गया हो।

अतः आरम्भ में ही कुछ मिथ्या ज्ञान का प्रकाश होता है जब कि पुरुष स्त्रियों के वचनों को अधिक वास्तविक मानते हैं। उन की "ना" सर्वदा "ना" सूचक नहीं होती, कई वार उसका अभिप्राय "हाँ" होता है। इस का अभिप्राय यह नहीं कि स्त्रियाँ जान बूझ कर धोखा देना चाहती हैं, परन्तु कभी कभी उन के वचन और क्रिया में बड़ा भारी अन्तर हो जाता है।

अभागा पुरुष, अधिक यथार्थ वादी मन का स्वामी, इस को बहुत भ्रम मूलक पाता है।

हम स्त्री जाति का कोई अपमान नहीं करते, जब कि हम यह कहते हैं कि उन के वचन उन अर्थों में प्रतिज्ञावाचक नहीं होते जिन अर्थों में

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

एक सच्चे पुरुष के होते हैं, क्योंकि स्त्रियों को अपने शब्दों को स्पष्ट अर्थों से बन्धाने में एक विशेष अरुचि होती है।

स्त्रियों के मनोभावों के सम्बन्ध में एक और बात है, जो कि हमें स्मरण रखनी चाहिये। स्त्रियों में दिन प्रतिदिन परिवर्तन होता रहता है, उनके शारीरिक स्वास्थ्य, उनकी चित्तवृत्तियों, स्वभाव, इच्छाओं और अभिलाषाओं में दिन दिन परिवर्तन होता रहता है। इसी लिये कवियों ने इनकी परिवर्तनशाली चन्द्र से उपमा दी है।

एक पुरुष इस से बढ़ कर कोई भूल नहीं कर सकता यदि वह यह समझे कि चूंकि किसी महिला ने सोमवार वाले दिन यह कहा था कि उसे अमुक कार्य बड़ा प्यारा है तो शुक्रवार को वह उस कार्य को करने की किञ्चित भी इच्छा प्रगट करेगी। स्त्रियाँ आज वह नहीं होतीं जो कल थीं और न वह कल वही रहेंगी जो आज हैं। स्त्रियों में साधना के क्रम की न्यूनता बहुधा अधिकाँश एकरस मानसिक पुरुष के अनुमान को सर्वथा उलट पुलट कर देती है और उसे महान असमंजस में डाल देती है।

उन के प्रण में भी पुरुषों के प्रणों की सी दृढ़ता नहीं होती और यदि कोई पुरुष स्त्रियों को भी उसी मान से मापेगा जिस से वह पुरुषों को मापता है तो वह आगे या पीछे कष्ट में पड़ेगा।

इस का यह कारण नहीं कि स्त्रियों की अपने कार्य को करने की कोई स्पष्ट रीति नहीं; उन के कार्य करने के ढंग हैं जिन्हें वे स्वयं कल्पनाशून्य सदा एक-ही-लकीर पर चलने वाले पुरुषों के ढङ्ग से कहीं उत्तम समझती हैं क्योंकि वे समयानुकूल बदलते रहते हैं।

यह कहना कि स्त्री बड़े उच्च दर्जे की दृढव्रता, भक्तिपरायणा और विश्वसनीया नहीं, हो सकती है, उस के साथ बड़ा भारी अन्याय करना होगा। जब कभी भी उसे कोई ऐसा व्यक्ति मिल जाता है, जिसे वह अपनी भक्ति और स्थिर प्रेम का पात्र समझती है, तो वह चाहे प्रलय भी आ जाय उसे कभी न छोड़ेगी।

स्त्री स्वभाव में यह विपरीतता का मिश्रण है जो कि उसे पुरुष की समझ से बहुत दूर ठहराता है।

जब भी स्त्री इस बात का निश्चय करले कि उसने अमुक कार्य करना है तो यह निश्चय समझिये कि वह अवश्य होगा; परन्तु वह उसे इस लिये नहीं करती कि उसे इसे करना चाहिये वरन् केवल इसलिये कि ऐसा करने की उसकी इच्छा है।

कई पुरोभागी बड़े बलपूर्वक कहते हैं कि स्त्रियां स्त्रियों के प्रति वफादार नहीं होती। परन्तु वास्तविक बात यह है कि जहां स्त्री का मन लग जाये तो वह मृत्युपर्यन्त वफादार रहेगी।

किसी ने कहा है कि स्त्रियों के शब्द जल पर लिखे होते हैं और उन के प्रण रेत की लकीर के समान हैं। परन्तु वह पुरुष जिस ने उन के स्वभाव को सहृदयता से समझने का यत्न किया है, निस्संकोच भाव से कह सकता है, कि उन का उत्साह, स्थिरता और वफादारी केवल शब्दों द्वारा अङ्कित करने का विषय नहीं है, वरन् ये जीवित कृतियों में लिखे हुये हैं जो कि त्याग के आकाश में इस प्रकार देदीप्यमान रहेंगे जिस प्रकार कि दोपहर का सूर्य।

२. तार द्वारा फोटो

भारत के प्रायः सभी बड़े २ नगरों में टैलीफोन लगी हुई है। इस की दूसरी बहिन टैलीफोटोग्राफी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

है जिस के विषय में हम ज्योति में पहिले भी एक बार लिख चुके हैं। इस के द्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान पर फोटो अथवा चित्र भेजे जा सकते हैं। अमरिका में न्यूयार्क और सानफ्रांसिसको के बीच तार और टैलीफोन की भान्ति टैलीफोटोग्राफी द्वारा चित्र भेजने का क्रियात्मक प्रबन्ध है। विचार था कि इस से समाचार पत्र अधिक लाभ उठावेंगे, क्योंकि एक स्थान में बीती घटना का चित्र उसी समय अपने पाठकों तक पहुंचाना समाचारपत्रों की मनोरञ्जकता और उपादेयता की वृद्धि का कारण होगा। परन्तु यह ऐसा नहीं हुआ। कारण यह कि अभी इस पर व्यय अधिक होता है और विशेष मनोरञ्जक घटनायें नियम पूर्वक प्रति दिन घटित नहीं होतीं। परन्तु बड़े २ साहूकार और बैंक इत्यादि ही इसका अधिक प्रयोग करते हैं इस विधि का एक विचित्र प्रयोग बहुत लम्बा तारों के स्थान में है। एक १५०० शब्दों का संदेश साधारण पत्र लिखने के कागज़ पर टाईप कर के दो भागों में चित्रकला द्वारा दूसरे नगर में पहुँचाया जा सका और वहाँ से हवाई जहाज़ों द्वारा आस पास के नगरों में वही शीघ्रता से पहुँचाया जा सकता है। इस विधि से इस पर तार से कम खर्च आता है। उदाहरण के लिये शिकागू में तीसरे पहर एक दस्तावेज़ लिखी गई थी और न्यूयार्क में इस की उसी समय आवश्यकता थी जो कि केवल ६०) के व्यय से चित्र द्वारा तुरन्त भेजी गई। इस प्रकार बहुत सी द्रव्य हानि बच गई। नवीन से नवीन टोपियाँ, पहिले के वस्त्रों, जन्म दिवस के तथा बड़े दिन के शुभागमन सूचक संदेशों के नमूनों के चित्र इस विधि द्वारा भेजे जा चुके हैं।

३. प्राकृतिक भाप

भाप द्वारा अनेक कल और कारखानों के इन्जन चलते हैं। रेल के इन्जन भी भाप द्वारा ही चलते हैं। यह बहुत बड़े २ बर्तनों में पानी को उबाल कर तय्यार की जाती है और बड़ी २ नालियों द्वारा इन्जन में पहुंचाई जाती है। यह सब बातें भाप को तरीकों से पैदा करके की जाती हैं परन्तु अब अमरीका के कैलीफोरनिया प्रान्त में प्राकृतिक भाप को साधने का विचार हो रहा रहा है। हमारे पाठकों ने कई स्थानों पर गरम पानी के चश्मे देखे होंगे। निस्सन्देह इन जलों को गरम करने वाली जमीन के अन्दर अग्नि विद्यमान है। क्या इस अग्नि से पानी को इतना गरम नहीं किया जा सकता कि वह भाप बन सके। अमरीका में ऐसे कुये हैं जहां से कि जल के स्थान में गरम गरम भाप निकलती है। ऐसा प्रतीत होता है कि इन जलों के नीचे बहुत गहरा दबा हुआ ज्वालामुखी पर्वतों से निकलता हुआ लावा है जो कि अभी तक पिघला हुआ है। जिस तरह पानी निकालने के लिये आजकल ट्यूब वैल लगाये जाते हैं इसी तरह इन स्थानों पर भाप निकालने के लिये नलकियाँ लगाई जाती हैं। देखा गया है कि एक ही स्थान पर थोड़ी थोड़ी दूर पर नलकियाँ लगाने से किसी में भाप की कमी नहीं होती। क्या इस भाप से कारखानों के इन्जन नहीं चलाये जा सकते? इटली में भी इस प्रकार के कुये हैं और उन से तो कलों को चलाया भी जाने लगा है। परन्तु इन कुवों की भाप में कुछ तेज़ाब के भी वाष्प मिले रहते हैं अतः पहिले उन्हें विशेष विधि से शुद्ध किया जाता हैं। कैलफोरनिया के कुओं में यह बात नहीं है। उन की भाप बड़ी शुद्ध होती है।

४. वायुयानों की गति वृद्धि

इङ्गलैण्ड के एक छोटे से नगर की पुष्प वाटिका में बैठा हुआ एक मनुष्य अपने मित्र से कहता है:—"मेरी गोला-गाड़ी में सैर करने के लिये

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

चलो। हम चीन के शंघाई नगर में चाय पीकर भोजन के समय तक लौट आयेंगे "

क्या भविष्य में इस प्रकार के निमन्त्रण दिये जायेंगे, जब कि जिस प्रकार तोप से गोला चलाया जाता है, सवारी गाड़ियां भी इसी प्रकार बड़े २ यन्त्रों से गोले की भाँति दूर दूर फेंक दी जाया करेंगी। अंग्रेजो के प्रसिद्ध पत्र टिट-बिट्स में लिखते हुये एक लेखक कहता है कि इस प्रकार के प्रश्नों को हम उपहास की दृष्टि से नहीं देख सकते।

कुछ समय हुआ पैरिस में वैज्ञानिकों की एक सभा हुई जिस में इस बात पर विचार किया गया कि किस प्रकार चान्द अथवा मंगल को गोले से बींधा जा सकता है।

सात वर्ष हुए जब कि इटली ने सब से अधिक गति वाले यान का आविष्कार कर प्रथम पारितोषिक प्राप्त किया था। उस समय उस की गति १०७ मील प्रति घण्टा थी। पिछले वर्ष इङ्गलैण्ड के लिये वैब्स्टर महाशय ने २८१ मील प्रति घण्टा चलने वाले यन्त्र की रचना कर यह पदक प्राप्त किया था और यह बड़े निश्चय से कहा जा सकता है कि १९३० तक हम ३०० मील प्रति घण्टा की गति प्राप्त करने में सफल हो जायेंगे।

वैज्ञानिक इस बात का अनुसन्धान कर रहे हैं कि क्या मनुष्यकृत यान की गति को परिमित करने वाली सीमा है। कुछ वैज्ञानिकों का विचार है कि हम कोई स्वयं ऐसा चलने वाला यन्त्र नहीं बना सकते जो कि ७५० मील प्रति घण्टा से अधिक चल सकते। इस प्रकार स्वयं चलने वाले यन्त्र वायु को प्रतिक्रिया के आधार पर चलते हैं और वायु की लहरें स्वयं ७५० मील प्रति घण्टा चलती है। यदि कोई ऐसा यान बनाया गया जो कि ७५० मील प्रति घण्टा से अधिक चले तो वह वायु की लहरों को पीछे छोड़ देगा और इसलिये उनमें कोई प्रतिक्रिया न होगी। उसका क्या प्रभाव होगा इस विषय में अभी कुछ नहीं कहा जा सकता।

वैज्ञानिकों का मत है कि यदि हम ७५० मील से अधिक चलने वाले यान बनाना चाहते हैं तो हमें गोलों के साथ यन्त्रों से फेंके जाने वाले यान बनाने होंगे। यदि यह कभी सम्भव हो सका तो ऐसे यानों पर बैठ कर हम निस्तब्धता से यात्रा कर सकेंगे, हमारे कानों तक कोई शब्द न पहुंच सकेगा क्योंकि शब्दवर्ती लहरों की गति इस से कहीं कम है। इस अवस्था में युद्ध के समय तोपों की मार से कोई भय न होगा, क्योंकि आज कल के तरीकों से बनाई हुई तोपों से कोई गोला इतनी गति से नहीं चल सकता।

कोरी कल्पना! क्या यही आप के विचार हैं? परन्तु यदि आप वायुयान बनाने वाले बड़े बड़े कारखानों की ओर ध्यान से देखें तो पता चलेगा कि गति वृद्धि की ओर किस प्रकार ध्यान दिया जारहा हैं। १९१९ में यात्री को उड़ा कर ले जाने वाला वायुयान पहिले पहिल पैरिस से हान्सला को उड़ कर गया था। चार मास पीछे पोस्ट आफिस की मोहर लगी पहिली चिट्ठी इसी मार्ग से भेजी गई। परन्तु आज केवल ८ वर्ष के थोड़े से समय में एक ऐसे वायुयानों का बेड़ा तय्यार हो रहा है, जो कि इंग्लैण्ड से आस्ट्रेलिया तक १०,००० मील की यात्रा करेंगा और प्रत्येक हवाई जहाज़ में १५ यात्री होंगे।

सर्वथा धातु से बनी मशीन भविष्य में वायु का पुत्र होगा। सम्भव है कि यह इतना ऊंचा और इतना तेज चल सके जितनी कि अब तक कोई मशीन नहीं गई। फाम्बरो में एक ऐसी मशीन बनाई गई है जो कि २०००० फुट की दूरी पर गोला फेंक सकती है।

ऐसे हवाई जहाजों के नकशे तो अब भी बनाये जा रहे हैं जो कि १०० यात्रियों को बैठा कर ले जा सकें। इन के द्वारा इङ्गलैण्ड से कैनेडा २ दिन में, भारत ४ दिन में और आस्ट्रेलिया ७ दिन में पहुंच सकेंगे।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कन्या गुरुकुल समाचार

ऋतु

ऋतु बहुत सुहावनी है और चारों ओर हरा मखमली गलीचा बिछा हुआ है। लगभग १५ दिन से वर्षा बन्द है, अतः कभी २ दिन में खूब गर्मी अनुभव होने लगती है। अब तीन दिन से बादल आ रहे हैं। आकाश प्रायः हर समय मेघाच्छादित रहता है। दो दिन वर्षा भी हुई है। अधिक वर्षा के चिन्ह दृष्टिगोचर हो रहे हैं।

स्वास्थ्य

वर्षा बन्द होने के कारण अथवा वर्षा के दिन होने के कारण अन्य नगरों के समान देहरादून शहर में कई प्रकार के रोग हो रहे हैं, किन्तु यहां कन्या-गुरुकुल में रोगियों की संख्या बहुत कम है। कभी एक आध को मलेरिया ज्वर हो जाता है। किन्तु पता नहीं यहां के पहाड़ी पानी का प्रभाव से या अन्य किसी कारण से यहां पर इस समय कन्याओं में गलग्रन्थि का रोग फैल रहा है और टाइफाइड के भी एक दो केस हो रहे हैं, परन्तु परमात्मा का धन्यवाद है कि सब रोगी स्वास्थ्य लाभ कर रहे हैं। गलग्रन्थि को दूर करने के लिये और अन्यों पर इसका प्रभाव न पड़ सके इस हेतु से सारे आश्रम में उबाला हुआ और क्लोरीनेटेड पानी पीने के लिये बर्ता जा रहा है। गलग्रन्थि वाली ब्रह्मचारिणियों को लगाने और पीने की दवा दी जा रही है। इस से बहुतों का रोग घट रहा है। आशा है कि इस प्रबन्ध से अन्यों में इस का प्रचार न होगा।

खाँसी जुकाम भी दो चार कन्याओं को हो गया था परन्तु अब अच्छा हो गया है।

चर्खे की शिक्षिका श्रीमती वसुमती बहिन लगभग डेढ मास से रुग्ण हैं, उन्हें ज्वर, खांसी, जुकाम आदि ने बहुत पीड़ित कर रखा था, किन्तु हर्ष का विषय है कि वे अब सर्वथा निरोग हैं किन्तु निर्बलता अभी शेष है।

परीक्षायें

मासिक परीक्षायें हो चुकी हैं। बहुत सी ब्रह्मचारिणियों ने अच्छे अंक लिये हैं। न्यून अङ्क लेने वाली ब्रह्मचारिणियाँ विशेष परिश्रम कररही हैं।

ग्रीष्मावकाश

१म सितम्बर से ग्रीष्मावकाश का प्रारम्भ होगा। महाविद्यालय की प्रथम श्रेणी तथा विद्यालय की सप्तम अष्टम श्रेणी की कन्याओं के लिये यह अवकाश इस वर्ष न होगा क्योंकि उन्हें अवकाश कई मास रह चुका है। कई विषयों की पढ़ाई बन्द रही है अतः पूरी करनी है।

अध्यापिका वर्ग

कन्या-गुरुकुल में अध्यापिकाओं की न्यूनता हमेशः ही रही है। इस वर्ष इधर दो मास से यह बहुत थी। श्रीमती यज्ञवती जी भी दो मास की छुट्टी पर चली गई हैं अतः अधिकारी परीक्षोत्तीर्ण ब्रह्मचारिणियों ने अधिकाँश अध्यापिकाओं की न्यूनता को पूर्ण किया है। वे प्रतिदिन चार अन्तर पढ़ा रहीं हैं। और भी एक दो नई अध्यापिका आगई हैं और आनेवाली हैं। कुमारी सरस्वती देवी काव्यतीर्थ साहित्याचार्या तो कई महीनों से ही संस्कृत साहित्य बड़ी योग्यता से पढ़ा रही हैं। किन्तु अब श्रीमती डा० गार्गी देवी बी. ए. पीएच. डी. (लंडन) ने केवल निर्वाह लेकर कन्या-गुरुकुल की सेवा करना स्वीकार किया है। वह महाविद्यालय तथा विद्यालय की उच्च श्रेणियों में इतिहास, अर्थशास्त्र, भारतीय शासन आदि तथा महाविद्यालय में आँगल भाषा भी पढ़ा रही हैं (आप के आने से गुरुकुल में इन विषयों की शिक्षा का प्रबन्ध अति उत्तम हो गया है) एक मैट्रिक तथा इन्टरमीडियेट टीचर भी गणित भूगोल आदि के सिखाने के लिये आरही हैं। इस प्रकार पाठन का प्रबन्ध बड़ी उन्नति कर रहा है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

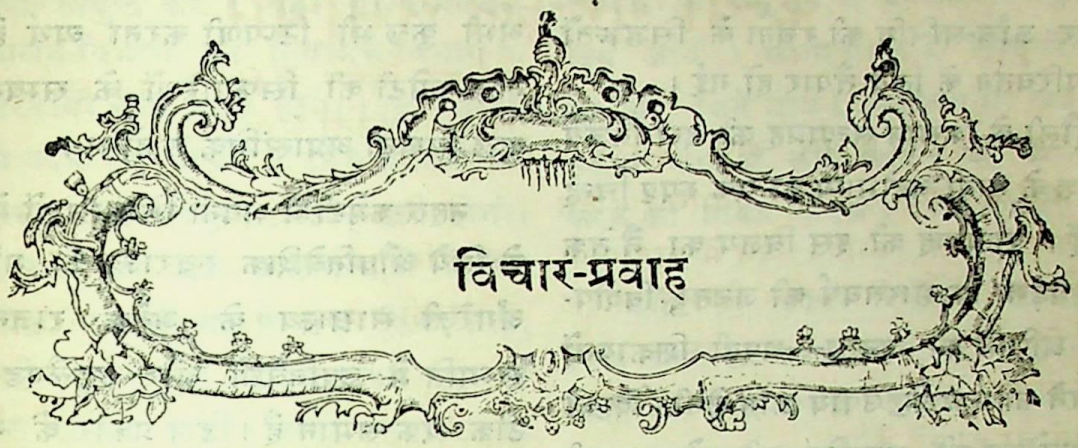

१. बारदौली की विजय

प्रसिद्ध राजनीति-शास्त्रज्ञ मिल ने अपनी 'प्रजातन्त्र शासन' नामक पुस्तक में एक स्थान पर लिखा है कि एकतन्त्र शासन या नौकर-शाही में स्वेच्छाचारी शासकों की सत्ता न्यायानुकूल आचरण करनेवाले शासकों की अपेक्षा अधिक वाञ्छनीय है। कारण यह है कि स्वेच्छाचारी शासक के राज्य में प्रजा में असन्तोष बढ़ता है जिसका परिणाम एकतन्त्र शासन अथवा नौकर-शाही सत्ता की जड़ पर कुठाराघात करना है, परन्तु न्यायानुकूल आचरण करनेवाले शासकों के शासन में प्रजा को उनसे बहुत कम शिकायतें रहती हैं—परिणाम यह होता है कि उपर्युक्त अवाञ्छनीय पद्धतियों के विनाश का काल बहुत दूर चला जाता है। हम इसी दृष्टि से वर्तमान भारत सचिव लॉर्ड बर्कनहैड के परम भक्त हैं। उनके टस-से-मस न होनेवाले स्वभाव से हमें यह पूर्ण विश्वास था कि वह बारदौली के मामले में भी सरकार की हार कभी न होने देंगे। इस सम्बन्ध में उनकी पूर्वनीति देखकर हमारे मुख से बे-अख़्तियार निकल पड़ता था—"शाबास पट्ठे, शाबास! प्रजा की उपेक्षा इसे कहते हैं।" परन्तु एक दिन अचानक मालूम हुवा कि बर्कनहैड जैसा नाज़ुक मिजाज़ भारत-सचिव भी अपनी पराजय स्वीकार कर बैठा है। हमारे लिये यह समाचार आश्चर्य, शोक और प्रसन्नता—ये तीनों भाव लिये हुए था। आश्चर्य था बर्कनहैड की उदारता पर, शोक था संग्राम की समाप्ति पर, हर्ष था सत्याग्रह की विजय पर।

बारदौली के वीर सत्याग्रहियों की सम्पूर्ण शर्तें प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप में सरकार ने स्वीकार कर ली हैं। अनेक शर्तें सरकार ने स्वयं स्वीकार नहीं कीं, परन्तु अपने कुछ एक उन्हीं मुरीदों से—जिनके द्वारा वह सत्याग्रह को दबा देने में मदद ले रही थी—पूरी करवा ली हैं। एक शर्त एक शान्तिप्रिय और देशभक्त भारतीय धनी ने स्वयं पूरी कर दी है। कुछ शर्तों में सरकार ने प्रत्यक्ष रूप में पराजय स्वीकार की है। बढ़े हुए लगान के सम्बन्ध में जाँच करने के लिये जो कमेटी बनाई जायगी उसकी रचना के सम्बन्ध में सरकार ने स्पष्ट रूप में पराजय स्वीकार की है। कुछ दिन पूर्व ही बम्बई के गवर्नर विलसन साहब ने बड़े स्पष्ट शब्दों में यह घोषणा की थी कि यह जाँच लगान के अधिकारियों द्वारा ही कराई जा सकती है, इस सम्बन्ध में सरकार कोई अन्य समझौता करने को

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

तैयार नहीं। परन्तु इस घोषणा के १४ दिन बाद ही सरकार जाँच-समिति की रचना के सिद्धान्तों में भारी परिवर्तन के लिये तैयार हो गई।

बारदौली के किसान-सत्याग्रह की इस विजय को हम देश के भावी अहोभाग्य का एक स्पष्ट चिन्ह समझते हैं। सत्याग्रह की इस विजय का नैतिक असर यह पड़ेगा कि भारतवर्ष की जनता, विशेषकर गरीब श्रेणियों की जनता—अपनी शिकायतों को दूर करने का एक श्रेष्ठ उपाय जान लेगी। पिछले असहयोगान्दोलन की समाप्ति की घोषणा भी इसी बारदौली के रण-क्षेत्र में की गई थी; आज अवसर पाकर बारदौली की जनता ने यह सिद्ध कर दिया है कि उस रण क्षेत्र से पीछे लौटने की नीति के उत्तरदायी हम नहीं, अन्य प्रान्तों के निवासी हैं। बारदौली के निवासियों में आज इस गए-गुज़रे ज़माने में भी इतना नैतिक बल है कि वे आपस के सब भेदभाव भुलाकर एक सामान्य कार्य-क्रम को पूरा करने के लिये सब प्रकार का बलिदान कर सकते हैं, युद्ध का अवसर आने पर अपने नेता की, प्रत्येक आज्ञा का पूर्ण रूप से पालन कर सकते हैं। 'सत्यमेव जयते नानृतम्' के भारतीय आदर्श का क्रियात्मक उदाहरण देकर बारदौली के वीर निवासियों ने जिस साहस का परिचय दिया है उसके लिये भारतीय-राष्ट्र सदैव उनका ऋणी रहेगा।

× × ×

२. नेहरू-कमेटी की रिपोर्ट

आज, जब ये पंक्तियाँ लिखी जा रही हैं, लखनऊ में नेहरू-कमेटी की रिपोर्ट पर विचार करने के लिये भारतवर्ष के सम्पूर्ण मुख्य-मुख्य दलों के नेता अथवा प्रतिनिधि एकत्र हो चुके होंगे। हमें ज्ञात नहीं कि यह सर्व-दल-सम्मेलन भारत के भाग्य का क्या निर्णय करेगा, अतः इस सम्बन्ध में अभी कुछ भी टिप्पणी करना व्यर्थ है। तथापि नेहरू-कमेटी की सिफ़ारिशों के सम्बन्ध में यहाँ कुछ लिखना अप्रासंगिक न होगा।

नेहरू-कमेटी ने अपनी सिफ़ारिशों में भारतवर्ष के लिये औपनिवेशिक स्वराज्य की माँग की है। अँगरेज़ी साम्राज्य के अनेक राजनीतिज्ञों की सम्मति में उपनिवेशों और इङ्गलैण्ड की स्थिति ठीक एक समान है। इस प्रकार के राजनीतिज्ञों का कथन है कि बृटिश साम्राज्य में इङ्गलैण्ड, कैनाडा, आस्ट्रेलिया, आयरलैण्ड और दक्षिण-अफ्रीका की स्थिति ठीक एक समान है। साम्राज्य किसी समय किसी नीति का अवलम्बन करे, इस पर इन सब राष्ट्रों की सम्मति का मूल्य एक समान है।' परन्तु अन्य राजनीतिज्ञ इस बात से सहमत नहीं हैं, उन्हें उपनिवेशों और इङ्गलैण्ड की स्थिति में स्पष्टतः भारी भेद प्रतीत होता है। हमें इस विवाद में पड़ने की आवश्यकता नहीं है। नेहरू-कमेटी भारतवर्ष के सम्पूर्ण दलों की प्रतिनिधि-रूप थी, वह काँग्रेस की उपसमिति नहीं थी। अतः यह आवश्यक था कि राष्ट्र के अन्य दलों को अपने साथ रखने के लिये वह औपनिवेशिक स्वराज्य का मसविदा ही तैयार करती। इसी दृष्टि से स्वयं पूर्ण स्वतन्त्रता के पक्षपाती होते हुए भी हम इस योजना का हार्दिक अभिनन्दन करते हैं।

इस कमेटी की सिफ़ारिश है कि केन्द्रीय भारत सरकार के व्यवस्थापक विभाग को 'हाउस ऑफ़ रिप्रेज़ेन्टेटिव' और 'सीनेट', इन दो भागों में विभक्त किया जाय। इनमें क्रमशः ५०० और २०० सदस्य रहें। इनके कार्य-काल की अवधि ५ वर्ष और ७ वर्ष हो। हाउस ऑफ रिप्रेज़ेन्टेटिव में जिस दल का बहुमत हो उसका नेता अपने सहित सदस्यों का

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मन्त्रि-मण्डल नियुक्त करे। यही मन्त्रि-मण्डल राष्ट्र के शासन-विभाग का नियामक-विभाग के सन्मुख उत्तरदायी कार्य-कर्ता होगा। वायसराय पद का नाम बदल कर केवल गवर्नर जनरल नाम कर दिया जाय, इसकी नियुक्ति सम्राट् द्वारा होगी। प्रान्तों में १ लाख पर एक प्रतिनिधि के हिसाब से व्यवस्थापिका सभाओं का निर्माण किया जाय, परन्तु किसी प्रान्त की व्यवस्थापिका सभा में १०० से कम सदस्य न हों। यही व्यवस्थापिका सभाएँ अपने प्रान्त की आबादी के अनुपात से सीनेट में अपने प्रतिनिधि भेजें। प्रान्तों के गवर्नरों की नियुक्ति भी सम्राट् द्वारा होगी। प्रान्तों का शासन 'चीफ़ मिनिस्टर' अपने सहित ४ मिनिस्टरों के मन्त्रि-मण्डल के द्वारा करेगा। यह मन्त्रि-मण्डल व्यवस्थापिका सभा के सन्मुख उत्तरदायी होगा। मत देने का अधिकार २१वर्ष से बड़ी आयु के प्रत्येक भारतीय व्यक्ति—चाहे वह पुरुष हो या स्त्री—रहेगा। इन नियामक सभाओं के अन्य नियम स्वाधीन देशों की नियामक सभाओं के समान हैं।

न्याय के लिये भारत में एक 'सुप्रीम कोर्ट' की स्थापना की जायगी। सेना, जल-शक्ति और वायु-शक्ति पर नियन्त्रण करने के लिये स्वराज्य स्थापित होते ही एक उपसमिति बना दी जायगी, यह उपसमिति ही इस सम्बन्ध की सब बातों का निर्णय करेगी। सेना का व्यय भी केन्द्रीय व्यवस्थापिका सभा की अनुमति से ही हो सकेगा।

हिन्दू-मुस्लिम समस्या को हल करने के लिये नहरू-कमेटी ने ये सिफ़ारिशें की हैं—बलोचिस्तान, करनाटक और सिन्ध यदि आर्थिक दृष्टि से जुदा प्रान्त बनाये जा सकें तो बना दिये जायँ। बंगाल और पञ्जाब के अतिरिक्त अन्य प्रान्तों में सम्मिलित निर्वाचन-क्षेत्र हों परन्तु इनमें मुसलमानों की आबादी के अनुपात से उनके स्थान सुरक्षित कर दिये जायँ। सीमा प्रान्त में हिन्दुओं के लिये सुरक्षित किये जायँ। निर्वाचन में मि० हेअर की स्कीम कार्य में लाई जाय। यह स्थान सुरक्षित करने का नियम केवल १० वर्ष तक ही रहेगा।

कमेटी ने अपनी रिपोर्ट में जगह-जगह यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया है कि हमारी सिफ़ारिशों के कार्य-रूप में परिणत हो जाने पर भी मुसलमानों को किसी दृष्टि से कोई हानि न होगी। मुसलमान लोग इस देश में अल्प संख्या में हैं—उन्हें भय है कि स्वराज्य मिलने पर हिन्दू बहु-संख्या उन्हें पीस डालेगी, मुसलमानों की इस आशंका का नहरू-कमेटी ने जगह-जगह समाधान किया है। यह बात सम्भवतः, मुसलमानों को अपने साथ रखने के लिये आवश्यक भी थी।

नहरू-कमेटी की रिपोर्ट का सम्पूर्ण देश में ख़ूब स्वागत हुवा है। कुछ एक मुर्दादिल हिन्दू और मुसलमानों को छोड़कर सभी दलों के लोगों ने इस रिपोर्ट का हार्दिक अभिनन्दन किया है। यहाँ तक कि 'पायोनियर' और 'स्टेट्समैन' जैसे पत्रों ने भी इस स्कीम का स्वागत किया है। पार्लिया-मेण्ट के सदस्य मि० स्कर और मि० वेजवुड जैसे लोगों ने तो इस स्कीम की अत्यधिक तारीफ़ की है। देश में इस रिपोर्ट की प्रतीक्षा कितनी उत्सुकता से की जा रही थी, यह बात इसी तथ्य से ज्ञात हो जाती है कि इस रिपोर्ट की २००० प्रतियों का प्रथम संस्करण केवल ५ दिन में ही समाप्त हो गया। भारतवर्ष के इतिहास में इतना अधिक अभिनन्दन या इतनी उत्सुकता से प्रतीक्षा इससे पूर्व शायद ही किसी कमीशन या कमेटी की रिपोर्ट की की गई हो।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

नहरू-कमेटी की यह रिपोर्ट आजकल देश के सन्मुख विचार के लिये प्रस्तुत है, हम चाहते हैं कि सारा देश राष्ट्रीयता की दृष्टि से इस स्कीम पर खूब गम्भीरता से विचार करे। अन्त में हम महात्मा गाँधी के शब्दों में यह कहना चाहते हैं कि सम्पूर्ण भारतवर्ष की आँखें इस समय लखनऊ पर लगी हुई हैं। इस सर्व-दल-सम्मेलन के हिन्दू या मुसलमान सदस्य इच्छा करते ही इस बड़े यत्न से तैयार किये गए मसविदे का एक मिनट में संहार कर सकते हैं। परन्तु उनका यह कार्य राष्ट्रीयता की दृष्टि से घातक सिद्ध होगा। भारतवर्ष का स्वराज्य इस अवस्था में बहुत पिछड़ जायगा।'

× × ×

३. सेठ जमनालाल बजाज का एक वीरतापूर्ण कार्य

सेठ जमनालाल बजाज भारत-माता के उन थोड़े-से, गिने-चुने पुत्रों में हैं, जिनपर माता को गर्व हो सकता है। उनकी निस्वार्थ सेवा, धनी होते हुए भी त्यागमय जीवन, सरलता और सत्य-स्नेह अनुकरणीय हैं। आपके हृदय में दलितों और अत्याचार पीड़ितों के लिये सहानुभूति और प्रेम भरा है। हाल ही में आपने एक सुप्रसिद्ध मन्दिर में अछूतों के प्रवेश के निषेध की आज्ञा उठवा दी है। काशी के अच्छे-अच्छे पण्डितों ने सेठजी के इस कार्य को शास्त्रानुकूल कहा है, यह आशा का चिन्ह है। हमारी दृष्टि में सेठजी का यह कार्य अत्यधिक महत्व पूर्ण है, इसक लिये हम उन्हें अपने अन्तःकरण से धन्यवाद देते हैं।

× × ×

४. महात्माजी और आर्यसमाज

महात्मा गाँधी ने हाल ही में अहमदाबाद के ब्रह्मसमाज की शताब्दी में भाषण देते हुए आर्य-समाज को ब्रह्मसमाज की अपेक्षा असहिष्णु कहा है। इसका कारण आपने आर्यसमाज का चारों वेदों को ही ईश्वरीय-ज्ञान मानना बताया है। अपने इसी व्याख्यान में महात्माजी ने आर्यसमाज के सामाजिक कार्यों की तारीफ़ भी की है। महात्माजी ने यह भी कहा कि ब्रह्मसमाज में भी दोष हैं, परन्तु उनको बताने का यह समय और स्थान नहीं।' सम्भवतः आर्यसमाज के दोष, वह भी सिद्धान्तों के आधार पर, बताने का वही समय था। ओ कुछ भी हो, हमें महात्माजी की सेवा में यही निवेदन करना है कि उनका इस प्रकार किसी समुदाय के वार्षिकोत्सवों में जाकर दूसरे सम्प्रदायों के धार्मिक सिद्धान्तों की आलोचना करने से कोई लाभ न होगा।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सचित्र

सुचारु सूची शिल्प पत्रावली

सलाई और क्रोशिये की दस्तकारी सिखलाने की सस्ती और अनूठी विधि

इस प्रकार के पत्र इंग्लेण्ड अमरीका इत्यादि देशों में तो बहुत दिनों से निकलते हैं। परन्तु भारत में हिन्दी भाषा द्वारा प्रत्येक वस्तु के लिये अलग अलग कार्ड की रीति से इस कार्य को सिखलाने का यह पहला ही प्रयत्न है जो कार्य पसन्द हो उसी के अनुकूल दो तीन आने खर्च कर कार्ड खरीद लो और घर बैठे बिना किसी की खुशामद के बनालो अब तक निम्न लिखित कार्ड (१४×७) प्रकाशित हो चुके हैं:—

पत्र नं०	मूल्य	पत्र नं०	मूल्य
१—दीर्घ सूची प्रारम्भिक प्रयोग ११ चित्र	।)	५—पुरुषों का लम्बा मौज़ा [सचित्र]	=)
२—बड़ी सादी बनियान [सचित्र]	=)॥	६—पुरुषों का सरल दस्ताना [सचित्र]	=)॥
३—पुरुषों का कुत [सचित्र]	=)॥	७—स्त्रियों का फूलदार कालर [सचित्र]	≡)
—बालिका की ऊनी जर्ज़ी [दुरंगा]	≡)	पुरुषों का नुन्दकोदार मौज़ा [सचि]	=॥)

८ कार्डों का पूरा सैट मूल्य १।=)॥ के स्थान में केवल १) रुपया

कुछ सम्मतियाँ—

सरस्वती इलाहाबाद— यह पत्रावली नारी मात्र के लिये बड़ी उपयोगी है। छपाई सुन्दर भाषा सरल और मूल्य बहुत ही कम।

प्रताप लाहौर—कन्या पाठशालाओं और स्कूल की लड़कियों केलिये बड़े काम की चीज़ है।

गृहलक्ष्मी प्रयाग—हम इन कार्डों का हृदय से प्रचार चाहते हैं।

महारथी देहली—यह कार्ड सस्ते होने के कारण कन्याओं के लिये बड़े उपयोगी हैं।

मैनेजर "ज्योति"

कोठी नम्बर २१, २२ राजपुर रोड देहरादून।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कला कौमुदी

लेखिका श्रीमती ओ३म्वती देवी

चित्र कला कौशल सम्बन्धी अनुपम पुस्तक इस के द्वारा लेखिका ने क्रोशिये के कार्य को बड़ा ही सरल बना दिया है। बिना किसी प्रकार के पहिले ज्ञान के कन्यायें और स्त्रियें केवल इस की ही सहायता से अनेक प्रकार की बिनावट लेसें, फ्रीते, कपड़े इत्यादि बनाना सहज में ही सीख सकी हैं। पुस्तक में इतना विषय है कि किंचित इस से कई गुना दाम की पुस्तकों में भी न होगा। प्रत्येक वस्तु तथा बिनावट का बनाना चित्र देकर बड़ी सरल रीति से सिखाया गया है। देखिये समाचार पत्र इस के विषय में क्या कहते हैं।

"ट्रिब्यून" (अंग्रेज़ी का प्रसिद्ध दैनिक) लाहौर—स्त्रियों के लिये उपयोगी पुस्तक है। अनेक चित्रों द्वारा वस्तु बनाने की विधि बड़ी सरलता से समझाई गई है। सुन्दर नमूनों की लेसें, टेबल क्लाथ, बच्चों के सुन्दर कपड़े और अन्य कई वस्तुओं का बनाना बड़ी सुन्दर रीति से बतलाया गया है। पुस्तक की उपयोगिता के विचार से मूल्य बहुत कम है।

"मतवाला" (कलकत्ता)-यह पुस्तक हमारी बहिनों के बड़े काम की है। छपाई बहुत अच्छी, कागज़ बहुत अच्छा मोटा चिकना आर्ट। सुचारु शिल्प पत्रावली कार्ड गृहस्थियों के बड़े काम की चीज़ है।

"कर्मवीर" (खांडवा)— ·····पुस्तक में सादे फन्दे से लगाकर तरह तरह की वस्तुओं के बनाने की विधि बड़ी सरलता से समझाई गई है जिसे पढ़कर साधारण पढ़ी लिखी स्त्री भी इस कार्य को सीख सकती है। इस का मूल्य लागत को देखते कम है।

"माधुरी" (लखनऊ)-ऐसी पुस्तकों की हिन्दी साहित्य के लिये बड़ी आवश्यकता है। आशा है इस पुस्तक का अच्छा प्रचार होगा जिस से इस प्रकार की और पुस्तकें भी प्रकाशित का जा सक। लेखिका और प्रकाशिका दोनों को बधाई।

शीघ्र आर्डर भेजिये मूल्य १॥)

कला कौमुदी तथा शिल्प पत्रावली का पूरा सैट लेने पर २॥=)॥ के स्थान में केवल २।) में दिया जायगा।

कन्या पाठशालाओं और पुस्तक विक्रेताओं को विशेष रियायत

मैनेजर ज्योति—

कन्या गुरुकुल

राजपुरा रोड कोठी नं० २१—२२ देहरादून

चौधरी हलासराय प्रिन्टर तथा पं० रमेशचन्द्र पब्लिशर के लिये गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में मुद्रित।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

Regd. No. A. 1711

वर्ष ६] अगस्त, १९२८ [संख्या ४

वार्षिक मूल्य ४॥)
प्रति संख्या ।)

सम्पादिका—
विद्यावती सेठ बी. ए.

स्त्रियों और विद्यार्थियों से ४)
विदेश का मूल्य ६)

CC-0. Gurukul Kangri Vishwavidyalaya Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विषय सूची।

विषय	पृष्ठ से
१. प्रार्थना 'कविता' (पं० वागीश्वर जी विद्यालंकार)	१२६
२. कुरान में वेदांश— (ले० श्री पं० चमूपति जी एम. ए.)	१३०
३. हिन्दी साहित्य का संदेश— (श्री पं० अवनीन्द्र कुमार जी विद्यालङ्कार)	१४१
४. जन्म रात्री 'कविता'— (श्री हरिशरण जी श्रीवास्तव्य 'मराल')	१४५
५. स्त्री (ले० श्रीमती विद्यावती सेठ बी. ए. आचार्य्या कन्या गुरुकुल)	१४७
६. लक्ष्मी का खून— (हिन्दी गल्प लेखक श्री विश्वम्भर सहाय प्रेमी वैदिक धर्म विशारद)	१५०
७. कृष्ण की मित्रता— (ले० श्री पं० वागीश्वर जी विद्यालंकार)	१५३
८. वशीकरण— (ले० श्री ब्र० धर्मेन्द्र जी द्वादश श्रेणी)	१५६
९. जन्माष्टमी और कृष्ण–(ले०श्री हरिशरण श्रीवास्तव्य 'मराल' बी. ए. एल. एल. बी. वकील मेरठ)	१६६
१०. वैज्ञानिक संसार—	१६६
११. गृह-प्रबन्ध	१७५
१२. कुसुमोद्यान—	१७६
१३. हमारी मंजूषा—	१७६
१४. विचार-प्रवाह—	१८३

लेखकों से निवेदन

१. ज्योति में लेख कविता आदि भेजने वाले महानुभावों को अपने लेख सुस्पष्ट अक्षरोंमें कागज़ के एक ओर ही हाशिया छोड़ कर लिख कर भेजने चाहियें।

२. लेख बहुत लम्बे न होने चाहिए। 'ज्योति' पत्रिका के लगभग चार पृष्ठों के लायक लेख हों तो अति उत्तम है।

३. लेखों को घटाने बढ़ाने तथा संशोधित करने का संपादक को पूर्ण अधिकार है।

ज्योति सम्बन्धि पत्र व्यवहार—

आचार्य्या कन्या गुरुकुल

कोठी नं० २१, राजपुर रोड़

(देहरादून)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

लूटो ! लूटो !! ६१ इनाम लूटो !!!

दौलतका खून ! सिर्फ नामके लिये

३॥≡) दर्जन दाद की दवा पर ६१ बहुमूल्य वस्तुवें इनाम !

फैशनेबिल "ट्वाय" रिस्टवाच और पाकेटवाच भी इनाम में ही शामिल हैं ॥

इनाम की चीजों को देखते ही दिल फड़क उठेगा ।

कैसा ही नया पुराना ख़राब से ख़राब दाद क्यों न हो इस दवा के लगाते हो २४ घण्टे में बिना किसी कष्ट के जड़ से मिट जाता है । दादकी १२ डिबियोंकी कीमत ३॥≡) है और साथ में नीचे की बहुमूल्य ६१ चीजें मुफ्त इनाम में दाद की दवा के साथ भेजी जाती हैं इनामकी चीजें :—

१ ट्वाय पाकेट वाच । २घड़ीकी चैन । अंगुठी ४बढ़िया तास । ५झुनझुना । ६ सुतका गट्ठा । ७सुन्दर सुइज बन्डल । ८नगीनेवाली अंगूठी । ९बहुत बढ़िया चस्मा । १०खूबसूरत जलछवी । ११बढ़िया इत्रसी शीशी । १२ खुशबूदार साबुन । १३ बहुत बढ़िया ब्रश । १४ फाऊनन्टे पेन । १५ खूबसूरत रुमाल ।

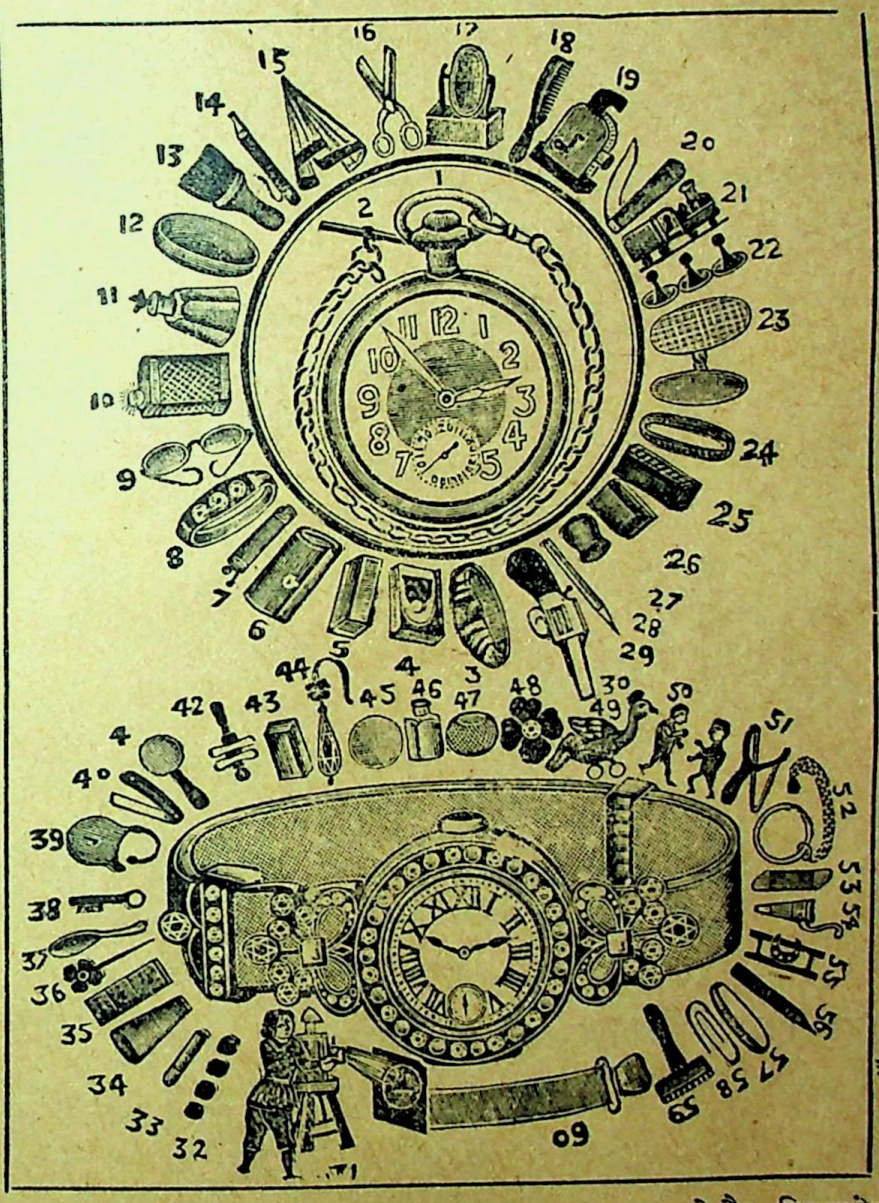

१६ बहुत बढ़िया कैंची । १७ खूबसूरत शीशा । १८ सुन्दर कघा । १९ सुन्दर खिलौना २० खूबसूरत चाकू । २१ सुन्दर विचित्र । शीशा । २२ सुन्दर बदाम । २३बहुत बढ़िया कफके बटाम । २४ खूबसूरत बाली । २५ बहुत बढ़िया पियानो जरमनी हारमोनियम । २६बालउड़ानेकासाबुन २७ बढ़िया शीशेका दवात २८सुन्दरपेनसिल क्लिप २९खूबसूरत पेन्सिल ३० बढ़िया पिस्तौल । ३१पचास तमासवाला बायसकोप । ३२ बहुत बढ़ियारबड़कीगेंद । ३३ खूबसूरत बांसुरी । ३४ बढ़िया जर्मनी सीटी । ३५ खूबसूरत मनीबेग । ३६ सुन्दर सिरमें लगाने का काटा । ३७ खूबसूरत चम्मच । ३८ चाभी

३९ मजबूत ताला । ४० सुन्दर चिमटी । ४१ दूध या चाय छाननेका यन्त्र । ४२ कानसे मैल निकालनेका यंत्र । ४३ खूबसूरत घुघरु । ४४ खूबसूरत इयर रिङ्ग । ४५ गोली । ४६ खुशबूदार तेलकी शीशी । ४७ सुन्दर, तमाशेकी गेंद । ४८ खूबसूरत नाकका फूल । ४९ आटोमेटिक सुन्दर वत्तक । ५० मस्खरा । ५१ विचित्र जिभो । ५२ चाभीका रींग । ५३ दांतसे मैल निकालनेका यंत्र । ५४ फौण्टेनबेनकी क्लिप । ५५ छाती पर लगानेका सेफ्टीपेन ५६ नीबी । ५७ बेंठदार सुन्दर छड़ा । ५८ पेपर क्लिप । ५९ हजामत बनाने का सेफ्टी रेजर । ६० सुन्दर फीता । ६१ बढ़िया 'दवाय' रिष्टवाच ।

पता—दो फ्रेण्डस आफ इण्डिया, २८१, अपर चितपुर रोड, कलकत्ता ।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विविध विषय विभूषित सुन्दर मासिक पत्रिका.

वर्ष ६ | श्रावण १९८५ * अगस्त १९२८ | संख्या ४

प्रार्थना

(पं० वागीश्वर जी विद्यालंकार)

हे ! आनन्दघन ! चहुं ओर, सुख की वर्षा करो ।

पाप ताप सब दूरि नसावो,
फेरी कृपादृगकोर ॥ सुख० ॥

दूर करो शुभद्युति से अपनी ।
मोहतिमिर घनघोर ॥ सुख० ॥

सुरभित शीतल धर्म-पवन हो ।
उपवन छवि चितचोर ॥ सुख० ॥

व्रतपति ! व्रत हम ब्रह्मचर्य का ।
पाल सकें सुकठोर ॥ सुख० ॥

मातृभूमि सुख सम्पति साजे ।
विनति यही करजोर ॥ सुख० ॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कुरान-में वेदांश *

[ले०—श्री० पं० चमूपति जी एम. ए.]

(२)

ज्ञानारंभ और धर्म-ग्रन्थ

भाषा और ज्ञान का प्रारंभ मानवीय तत्वज्ञान हृदय और मन की गूढ़ पहेली है। कई विद्वानों का

की भाषा

विचार है कि पशु भी बोलते हैं। वे अपनी वेदनाओं को कई शब्दों से इङ्गित करते हैं। पशुओं की बोलियों को समझने के प्रयत्न भी हुए हैं। इन की शब्दभंगी, इन के स्वर और लय से विविध भावों की अभिव्यक्ति होती है। पशुओं में वेदना (Feeling) है, विचार नहीं। है भी तो उस की अवस्था नितान्त प्रारंभिक है। वेदना की अभिव्यक्ति कतिपय ध्वनियों से होती है जिन्हें अंग्रेज़ी में इंटर्जेकशन (Interjection), वेदनोत्पन्न ध्वनि, कहा जाता है। ये ध्वनियाँ हृदय की भाषा तो हैं, मन की नहीं। आगे चल कर मैं भाषा-विज्ञान सम्बन्धी एक ऐसे वाद का वर्णन करूंगा जिस के अनुसार मानव भाषा का मूल-निदान ये ही वेदनोत्पन्न ध्वनियाँ हैं। यह पक्ष भाषा-शास्त्रियों की दृष्टि में अंगीकार करने योग्य नहीं है। परन्तु पशु-संसार के साथ मनुष्य की समानता का इस पक्ष के प्रतिपादकों के अन्तश्चक्षु को पूरा दर्शन हुआ प्रतीत होता है। समानताओं के मनोमोहक चमत्कार ने असमानता को दृष्टि से ओझल कर दिया है। विचार—संकीर्ण सुव्यवस्थित सुसंगत विचार—मनुष्य की विशेषता है। यदि हम भावना और विचार—या दार्शनिक दृष्टि से और अधिक निश्चित भाषा का प्रयोग करते हुए, वेदना और विचार—का भेद अपनी दृष्टि के सन्मुख रखें और इस भेद को कवियों की भाषा में हृदय और मस्तिष्क का भेद कह दें तो एक शब्द में पशु संसार से मनुष्य की उत्कृष्टता का द्योतक उसका संकीर्ण मस्तिष्क या मन कहा जायगा। मनुष्य भी हृदय की भाषा बोलता है। गहरी वेदना के समय मन की भाषा विवश हो कर रह जाती है। तब भावावेश में ज्ञानी मूक हो जाता है और अज्ञानी या अधकचरा ज्ञानी हाँ हूँ करके अपने हृदय को हलका कर लेता है।

क्या भाषा से आई ? मन का—मस्तिष्क विकास का परिणाम है ?

यह मन की—सुसंगत विचार की—भाषा कहाँ का—प्रपञ्च कैसे हुआ ! कट्टर विकास-वादियों का कहना है कि शरीर की अन्य क्रियाओं की तरह यह मानसिक व्यापार भी जीवनोत्क्रान्ति (Biological evolution) का फल है। पशु की वेदनाओं ने मानव-शरीर में एक संगठित तन्तुसंस्थान का आश्रय ग्रहण कर संकीर्ण विचार का रूप धारण किया। परन्तु पशु से मनुष्य-जीवन में यह परिवर्तन इतना आकस्मिक, इतना आश्चर्यकारी, इतना नूतनता-द्योतक है कि और तो और, विकास-वादियों के परम पुरुष—विकास वाद के दो जन्मदाताओं में से एक—एल्फ्रेड वालेस ने विकास वाद की शेष शृंखला को नैसर्गिक मानते हुए भी

* गुरुकुल विश्वविद्यालय में लेखक का इस विषय पर द्वितीय व्याख्यान।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

इस अन्तिम कड़ी के उद्भव में किसी अलौकिक शक्ति का विशेष हस्ताक्षेप माना है। वालेस महाशय का कहना है कि:—

जब केवल पशु अवस्था में उस (प्राणी) का भौतिक विकास पूर्णता की दशा को पहुंच गया, तब आत्म-प्रवेश (Spiritual influx) हुआ जिस ने प्राणी को मानसिक और नैतिक (Moral) विकास की उस सरणी (पर चलने) तथा प्राकृतिक शक्तियों के उस चमत्कारक वशीकरण करने का प्रारंभ किया जिस में भाषा और लिपि और इन दो के पीछे मुद्रण ऐसे महत्वपूर्ण सहायक हुए हैं।[1]

दार्शनिक लॉक का कहना है कि:—

मैं निश्चय से कह सकता हूं कि अमूर्त (Abstract) विचार की शक्ति उन (पशुओं) में नहीं, और कि सामान्य विचार (General ideas) वह (विशेषता) है जो मनुष्य और पशु में पूर्ण भेद करती है। यह वह उत्कर्ष है जिसे पशुओं की शक्तियां किसी प्रकार प्राप्त नहीं करतीं।[2]

अध्यापक मैक्समूलर यह स्वीकृत करने के पीछे कि 'निर्विकल्पक अनुभूति (Sensation) ऐन्द्रियिक प्रत्यक्ष (Perception), स्मृति (Memory), प्रयत्न (Will), और बुद्धि (Intellect) पशुओं में है,[3] इस विषय में लॉक के साथ सहमति प्रकट करते हैं कि अमूर्त विचार, जिसका नाम इन्होंने तर्कणा (Reason) रखा है, मनुष्य का पशु से भेदक स्वभाव है।[4]

इस सादृश्य तथा भेद को ध्यान में रखते हुए अध्यापक महाशय ने पशुओं में आत्मा की सत्ता तो मानी है परन्तु उसका मानव आत्मा से अभेद आवश्यक नहीं समझा।

सम्भव है यहां कोई महानुभाव प्रसिद्ध एल्ब्रेड पशु और मनुष्य के घोड़ों और लोला नामक का आत्मा कुतिया का दृष्टान्त उपस्थित करें कि पूर्वोक्त प्राणी (घोड़े) तो घनमूल के प्रश्न निकाल सकते हैं और शेषोक्त (कुतिया) घड़ी देख कर समय बता सकती है। इस से अध्यापक मैक्समूलर के मानव और पाशव आत्माओं के असमीकरण का निराकरण तो हो जायगा और यह भी सिद्ध हो जायगा कि किसी जन्म में यह प्राणी मनुष्य रह चुके हैं जिस से उन्हें गणित की कुछ क्रियाओं का संस्कार है परन्तु इस से यह प्रमाणित नहीं होता कि इस घोड़े की बुद्धि एक गणितज्ञ की बुद्धि है क्योंकि इस एक क्रियाविशेष के अतिरिक्त अन्य गणित सम्बन्धी विचार उन से उतने ही दूर हैं जैसे पंजे और सींग।

वालेस महाशय उसी पुस्तक के उसी पृष्ठ पर फिर लिखते हैं कि:—

ऐसा मस्तिष्क और बुद्धि (मनुष्य से) निकृष्ट प्राणियों के लिये आवश्यक न थे। यह प्राणी कुत्ते, घोड़े, हाथी और बंदर के रूप में अपने विकास की उत्कृष्टतम दशाओं को प्राप्त कर चुके। परन्तु इन उत्कृष्टतर (मानवीय) शक्तियों की प्राप्ति के निकट पहुंचने का कोई निश्चित चिन्ह इन में प्रकट नहीं हुआ।

आगे चल कर फिर कहा है कि

(हमारी) कल्पना यह है कि सारी (मानव) जाति ने (आरम्भ में ही) आत्म-प्रवेश (Spiritual influx) प्राप्त किया जिसने उसे बहुत थोड़े काल में— सम्भवतः थोड़ी सी पीढ़ियां या एक ही पीढ़ी के अन्दर अन्दर—विशुद्ध मानव विकास की सरणी पर डाल दिया। पृ. ३७

1. Social Environment and Moral Progress p. 30
2. Essay Concerning Human Understanding
3. Scince of Language Vol I. p. 488.
4. Ibid p. 492

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विकासवादी इस मानस विकास की मानव ज्ञान में विकास नहीं हुआ

विचार के प्रथम प्रारम्भिक झलकी देने मात्र पर ही इति श्री नहीं करते। वे विकास को मानव विचार-प्रपञ्च का केवल आदि-निदान ही नहीं मानते किन्तु उसे सम्पूर्ण उन्नति या शनैः शनैः बढ़ते जाने वाली संकीर्णता के सारे पथ का साथी, न छूटने वाला साथी, न चूकने वाला सहायक या सहारा मानते हैं। उनका कहना है कि पशु-देह से निकल कर मानव-शरीर में आया मन पहिले अत्यन्त सरल था। इसका व्यापार भी उसी अनुपात से सरल-प्रारम्भिक (Primitive)—था। इस से पूर्व का विकास अन्तर्योनीय था। उस का क्षेत्र एक योनि नहीं, अनेक योनियाँ थीं। अब वह विकास एक योनि में परिमित हो गया। परन्तु इस क्षेत्र-संकोच ने उन्नति का बाध अथवा संकोच नहीं किया। मानव जाति का इतिहास मानव मन की उत्तरोत्तर उन्नति का इतिहास है। क्या भौतिक विज्ञान, क्या सामाजिक संस्थान, क्या धर्म, क्या तत्वविचार, सभी क्षेत्रों में मनुष्य क्रमशः अधिक पैनी, अधिक गहरी, अधिक विस्तीर्ण और अधिक विशाल दृष्टि का अधिकारी बनता आया है।

आल्फ्रेड वालेस जहाँ पाशविक मन से मानव मन की उत्क्रान्ति के सिद्धान्त के विरुद्ध हैं, वहाँ स्वयं मानव जाति के इतिहास में भी बुद्धि की गहराई या पैनेपन के विकास की कल्पना से पूर्णतया असहमत हैं। उन्हों ने मिश्र के बुर्जों की विचित्र वैज्ञानिक बनावट को इस में उदाहरण रूप से उपस्थित किया हैं। वे कहते हैं :—

मैंने इन बुर्ज-निर्माताओं की कृति का विस्तृत सा वर्णन इस लिये किया है कि यह मेरी उस युक्ति का जिसे मैं ऐतिहासिक समय में, मानव बुद्धि की स्थिर अनुन्नतिशील अवस्था के सम्बन्ध में विस्तार दे रहा हूं, एक महत्व पूर्ण अंश है।

शिक्षित मनुष्यों का बहुपक्ष इस सम्मति का है कि कला और विज्ञान के प्रत्येक विभाग में हमारी आश्चर्यकारक गवेषणाएं और आविष्कार सिद्ध करते हैं कि हम वस्तुतः गत युगों के मनुष्यों की अपेक्षा अधिक मानसिक शक्ति-संपन्न और बुद्धिमान् हैं—हमारी मानसिक शक्तियों का बल बढ़गया है। परन्तु यह विचार सर्वथा निराधार है। हम सारे भूत युगों के सञ्चित ज्ञान के दायभागी हैं और यह पूर्णतः संभव और तर्कणीय है कि इस विस्तीर्ण मानसिक निधि के एकत्रीकरण के प्राम्भिक प्रयत्नों के लिये वर्तमान काल के प्रयत्नों की अपेक्षा अधिक विचार और उत्कृष्टतर मानसिक शक्ति की अपेक्षा रही हो।[1]

निरन्तर वृद्धि-शील मानसिक शक्ति का कोई प्रमाण नहीं है।[2]

वालेस महाशय जिस परिणाम पर मिश्र के मीनारों की विचित्र बनावट के कारण पहुँचे हैं, उस की पुष्टि कंबोदियाँ के आँकोर (ओंकार) मन्दिर, जावा के बोरोबादर, ग्रानाडा के अलमामाबारा, कर्नाक और पालमीरा के महान् पत्थरों से, जो वहां के मन्दिरों में लगे हैं, मध्य अमेरिका के पुरातन नगरों और अब तो मोहन जोदरो और मिनोअन सभ्यता के खंडहरों से पुष्टि होती है। इन प्रमाणों में से कुछ एक का विस्तृत वर्णन और कुछ और प्रमाण मेरे रचे अंग्रेजी पुस्तक 'दी टेन कम्माण्डमेंट्स ऑफ दयानन्द' में दिये गए हैं। इन प्रमाणों के आधार पर कतिपय प्रसिद्ध वैज्ञानिकों का मत मानसिक विकासवाद के विरुद्ध हो गया है।

1. Social Enviromment and Moral Progress p. 25
2. Ibid p. 26

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

यदि मानसिक विकास के सिद्धान्त को न

ज्ञान ईश्वर- माना जाय--और इस सिद्धान्त के

प्रदत्त है स्वीकार करने के लिये कोई वैज्ञानिक युक्ति है ही नहीं—तो वालेस की भाँति मानव सृष्टि के आरम्भ में ही मानव देह में किसी आध्यात्मिक शक्ति का प्रवेश मानना होगा। यह दूसरे शब्दों में मानव ज्ञान के ईश्वर-प्रदत्त होने की स्वीकृति है।

भाषा की समस्या ज्ञान की समस्या के साथ

भाषा का प्रारम्भ सम्बद्ध है। कई विद्वानों की

दृष्टि में ये दोनों समस्याएं एक दूसरे का रूपान्तर हैं। ऐतरेय आरण्यक में लिखा है:— वाक् च वै मनश्च देवानां मिथुनम्।

ए. ५. २३। जैमिनीय

उपनिषद् में लिखा है:—

वागिनि मनः। जै० उ० ४. २२. ११

अध्यापक मैक्समूलर ने लॉक के इस मत को स्वीकार न कर कि 'किसी समय मनुष्य बिना भाषा के विचार करता था और पीछे के लोगों ने एक दूसरे पर अपने भाव प्रकट करने की इच्छा से भाषा का निर्माण किया'[1] अपना मत इन शब्दों में प्रकट किया है:—

वस्तुतः हमें कहीं सार्थक शब्द बिना निश्चित विचारों से संयुक्त हुए नहीं मिलते, न निश्चित विचार ही सार्थक शब्दों में मूर्त्त हुए बिना मिलते हैं।[2]

यही मत शैलिङ्ग का है, यथा:—

बिना भाषा के दार्शनिक, नहीं नहीं, किसी भी मानव, चेतना का विचार करना असम्भव है।[3]

वालेस महाशय की सम्मति भी इन दो तत्वदर्शियों से मिलती है। वे लिखते हैं:—

यदि ऐसा 'आत्म प्रवेश' न होता तो हमें भाषा-विहीन मनुष्यों के कुछ विरले समूह मिल जाने की आशा हो सकती, परन्तु ऐसे समूहों का कोई उदाहरण नहीं।[4]

यह दूसरे शब्दों में इस सिद्धान्त का स्वीकार करना है कि ज्ञान-शक्ति के साथ साथ भाषा का प्रदान भी प्रारम्भ में ईश्वर ही की ओर से हुआ था। अध्यापक मैक्स-मूलर का कहना है कि—

हम प्लेटो की भाँति कह सकते हैं कि यह (धातु) नैसर्गिक रूप से रहते हैं, यद्यपि प्लेटो की भाँति हम इतना और भी कहेंगे कि हमारा 'नैसर्गिक रूप से' कहने से अभिप्राय है 'परमात्मा के हाथ से'।[5]

अन्यत्र अध्यापक महोदय कहते हैं:—

विचार करना धीरे धीरे भाषण करना है और भाषण करना ऊँचे स्वर से विचार करना।[6]

भाषा और विचार की एकता का उल्लेख इस

भाषा और विचार से और सुन्दर और सारगर्भित

का घनिष्ठ सम्बन्ध शब्दों में नहीं हो सकता। अध्यापक मैक्समूलर वैज्ञानिक वालेस से भी आगे बढ़ जाते हैं जब वे कहते हैं—

मनुष्य बोलता है परन्तु किसी पशु ने कभी एक शब्द का भी उच्चारण नहीं किया। भाषा वह खाड़ा है जिसे कभी किसी पशु ने पार नहीं किया। यह हमारा उन लोगों को व्यवहार-सिद्ध उत्तर है जो विकास विकास कहते रहते हैं और जो समझते हैं कि बन्दरों में समस्त मानव शक्तियों के कम से कम बीज अवश्य पाये जाते हैं।[7]

शब्द की नित्यता का विचार हमारे यहाँ के दार्शनिकों ने बहुत स्थलों पर किया है। उनके लेखों का

1. Locke, On the Human Understanding iii 2, 1
2. Science of Language vol. ii p. 70
3. Ibid p. 83 में उद्धृत
4. Social Environment and Moral Progress p. 39
5. Science of Language Vol i p. 518
6. Ibid p. 527
7. Ibid p. 490

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उद्धरण इस आर्य-दर्शन-विज्ञश्रोतृ-समाज के सम्मुख अनावश्यक है। परा, पश्यन्ती, मध्यमा तथा वैखरी के भेद से भाषा के चार प्रकारों के समझने में भी सम्भवतः शब्द और विचार की एकता के उपर्युक्त विचार से सहायता मिले।

विचार और भाषा की एकता का सिद्धान्त धर्म-पुस्तकों में स्पष्ट या अस्पष्ट रूप से सर्वत्र स्वीकार किया गया प्रतीत होता है। यहूदियों के पवित्र पुस्तक ओल्ड-टेस्टामेंट में इस धारणा का प्रमाण निम्न-लिखित उद्धरणों के समन्वित अनुशीलन से मिलेगा:—

प्रभु के शब्द से आकाश बने हैं और इनका सारा समूह उस के मुख के सांस से उत्पन्न हुआ है।[1]

परमात्मा ने बुद्धि से पृथिवी की स्थापना की है, विचार से आकाश दृढ़ किये हैं।[2]

मैं—बुद्धि—दूर-दर्शिता के साथ रहती हूं! मेरे द्वारा राजा राज्य करते हैं और अधिपति न्याय करते हैं।[3]

शतपथ का १४ अ० २ ब्रा० ४ क० १० में भी आया है:—

एवं अरे अस्य महतो भूतस्य निश्वसितमेतद्यद् ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्वाङ्गिरस इतिहासः पुराणं विद्या उपनिषदः श्लोकाः सूत्राण्यनुव्याख्यानानि व्याख्यानान्यस्यैवैतानि सर्वाणि निःश्वसितानि।

इस वाक्य और बाइबल के उपर्युक्त लेख, कि आकाशों का समूह प्रभु के सांस से बना है, में तुलना किसी ऐतिहासिक परिणाम की ओर निर्देश करती है। ऐसे ही बाइबल में आए बुद्धि के उपरि-लिखित कथन और वेद में कहे वागाम्भृणी के निम्न लिखित वाक्य में भी परिणाम-जनक समता पाई जाती है:—

यं कामये तं तमुग्रं कृणोमि। ऋ. १०. १२५. ५.

बाइबल से संगृहीत उक्त उद्धरणों में जिस कार्य का साधन एक स्थान पर शब्द को बताया है, उसी का निमित्त अन्यत्र बुद्धि और विचार को ठहराया है। प्रतीत होता है कि परमात्मा की वाणी और विचार तथा क्रिया को एक समझा गया है। यथा आर्य साहित्य में 'ज्ञानमयं तपः', स्वाभाविकी ज्ञानबलक्रिया' और 'ईक्षण' अथवा 'काम' को पर्यायवाची समझा जाता है।

यूनानी दर्शन में इसी भाव के लिये 'लोगस' शब्द का प्रयोग हुआ है। लोगस का अर्थ कहीं परमात्मा का ज्ञान (reason) है और कहीं शब्द और इसे रचयिता और रचित को आपस में जोड़ने वाली शृंखला समझा गया है।

बाइबल में 'लोगस' का अनुवाद किया है शब्द, यथा

आरंभ में शब्द था, शब्द ईश्वर के साथ था, शब्द ईश्वर था।

काठक संहिता में आता है:—

प्रजापतिर्वा इदमासीत्तस्य वाग् द्वितीयासीत्तामिथुनं गर्भमधत्त सास्मादपाक्रामत् सेमाः प्रजा असृजत सा प्रजापतिमेव पुनः प्राविशत्।

का. सं. १२. ५. २७. १।

प्रजापति था। वाणी उस के साथ दूसरी थी उस के साथ जोड़ा किया। उसे गर्भ हुआ। वह हट गई। उस ने यह सब प्रजा पैदा की। फिर वह प्रजापति में प्रवेश कर गई।

वेद में कहा है:—

उच्चिष्टे नामरूपं। अ० ११. ७. १

उपनिषद् में भी कई स्थलों पर इसी भाव का उल्लेख हुआ है, यथा—

आकाशोवै नामरूपयोर्निर्वहिता ते यदन्तरा तद्ब्रह्म।

छा० ८. १.४. १.

नामरूपे व्याकरवाणि। छा० ६. ३. ३

1. Old Testament. Psalms xxxiii 6.
2. Ibid Proverbs iii 19
3. Old Testament. Proverbs viii 12,15

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सर्वाणि रूपाणि चिचित्य धीरो नामानि कृत्वा अभिवदन् यदास्ते । तै० आ० ३. १२. ७

इन उद्धरणों के आलोक में मनुस्मृति का निम्न लिखित श्लोक कितना सारगर्भित प्रतीत होने लगता है:—

सर्वेषां चैव नामानि कर्माणि च पृथक् पृथक् ।
वेदशब्देभ्य एवादौ पृथक् संस्थाश्च निर्ममे । मनु. १. २३.

भाषा ईश्वर-प्रदत्त है ।

इस प्रकार यह तो सिद्ध हो ही गया कि वाणी और विचार का प्रारम्भ परमात्मा की ओर से होने का सिद्धान्त, जहां दर्शन और धर्म की पुरानी परम्परागत विचारावली का आवश्यक अङ्ग बना हुआ है, वहां आधुनिक वैज्ञानिकों की बुद्धि भी इस कल्पना से परे नहीं जा सकी ।

विविध पत्रों की समालोचना

इस प्रकरण को समाप्त करते हुए मैं अपने पुस्तक 'दयानन्द के दश आदेश' से एक उद्धरण उपस्थित करता हूँ जिस से संक्षेपतः इस विषय के पक्ष विपक्ष का दिग्दर्शन हो सके:—

जिन भाषा-विज्ञानियों ने भाषा के आरम्भ का पता लगाने का प्रयत्न किया है, उन्हें इस (उन की अपनी भाषा में) मनुष्यता के चमत्कार के मूल-निदान की गवेषणा में असफलता हुई है । इस चमत्कार के स्पष्टीकरण के लिये दो वैकल्पिक सिद्धान्त प्रस्तुत किये गये.....। प्रथम सिद्धान्त आपस के समझौते का है । इस मत के अनुसार मनुष्य आरम्भ में गूंगा था । उस के प्रथम भाव-व्यक्ति के साधन इङ्गित और ज्ञात या अज्ञात आकृति-विकार थे । ज्यों २ मानव विचार उन्नत हुआ और इतना संकीर्ण या मिश्रित होता गया कि उस की अभिव्यक्ति इङ्गितों और आकृति-विकारों से होनी असम्भव हो गई तो पारस्परिक सहमति से विचारों की अभिव्यक्ति के लिये शब्द निश्चित हुए । यह सिद्धान्त लॉक का है । एडेम स्मिथ ने भी यह स्वीकार किया और कुछ परिवर्तनों के साथ स्टयूअर्ट ने भी । इस बात को समझने की असमर्थता के भागी मैक्समूलर के साथ हम भी हैं कि क्योंकर बिना भाषा के संकीर्ण विकल्प पहिले बनाए गये और फिर इन को व्यक्त करने के लिये भिन्न २ शब्दों का प्रस्ताव कर उनके सापेक्षक गुणों की विवेचना की गई ? दूसरा सिद्धान्त है ध्वन्यात्मक शब्दों का । वौ वौ और पूः पूः (हमारे विचार में) एक ही कल्पना के दो प्रकार हैं । इस सिद्धान्त के अनुसार भाषा का निर्माण उन प्राकृतिक ध्वनियों के अनुकरण से हुआ जो जड़ पदार्थ और पशु क्रमशः किसी क्रिया-विशेष के होते (वौ वौ) या किसी आकस्मिक वेदना से अभिभूत हो कर (पूः पूः) करते थे । किसी भी भाषा में ऐसे शब्दों का अत्यन्त उपेक्षणीय संख्या में होना और उस भाषा के शब्द-कोष के बड़े भाग के निर्माण का कारण इन शब्दों द्वारा निश्चित न हो सकना इस सिद्धान्त का अतीव स्पष्ट खण्डन है ।[1] मैक्समूलर भारतीय भाषा-विज्ञान के नैरुक्त संप्रदाय के साथ सहमत हैं कि शब्दों का मूल धातु हैं । भाषा के प्रारम्भ के सम्बन्ध में उन की अपनी सम्मति यह है कि भाषा आदि काल में परमात्मा द्वारा दी गई थी । वह सारी भाषाओं का मूल एक होने का सिद्धान्त भी स्वीकार करते हैं ।.....

(मैक्समूलर लिखते हैं:—

'यदि तुम यह कहना चाहते हो कि भाषा के प्रारम्भ अनेक हुए तो तुम्हें यह बात असम्भव सिद्ध करनी चाहिये कि सब भाषाओं का एक ही आदि मूल था । ऐसी असम्भावना कभी सिद्ध नहीं की गई । [2]

'४०० या १००० धातु जो भाषाओं की भिन्न शाखाओं के वैज्ञानिक विश्लेषण के परिणाम रूप में रह जाते हैं और जिन्हें हमारा मानव भाषा के घटक अवयव समझना न्याय्य है हम प्लैटो की भांति कह सकते हैं कि वे नैसर्गिक रूप से रहते हैं यद्यपि हम प्लेटो की तरह इस में इतना

१. यही दोनों पक्ष यास्कीय निरुक्त के ३. १८ में उठाकर अन्त में निर्णय वही किया गया है जो मैक्समूलर को अभिमत है, यथा 'काक इति शब्दानुकृतिस्तदिदं शकुनिषु बहुलम् । न शब्दानुकृतिर्विद्यते इत्यौपमन्यवः । काको अपकालयितव्यो भवति' ।

2. Science of Language vol 1 p. 666

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

और बढ़ायेंगे कि "नैसर्गिक रूप से" कहने का हमारा अभिप्राय है, 'परमात्मा के हाथ से'[1] इस प्रकार मैक्समूलर का विश्वास है कि आरम्भ में एक सर्वसामान्य धातु-कोष था जिस से सब जातियों ने अपनी अन्तरीय अनुभूतियों और बाह्य परिस्थितियों की प्रेरणा के अनुसार अपनी विविध भाषाएं निर्मित कीं इस कल्पना की पुष्टि में कोई प्रत्यक्ष साक्षी नहीं है। मनुष्य संस्कृति की पिछड़ी से पिछड़ी अवस्था में भी अपनी भाषा विषयक आवश्यकता की पूर्ति केवल धातुओं द्वारा करता कहीं नहीं पाया जाता। भाषा के साधन रूप में धातुओं का प्रयोग और उपयोग उन से निकले शब्दों की अपेक्षा कहीं अधिक कठिन है। धातुओं द्वारा प्रकट किये जाने वाले विचार अत्यन्त सूक्ष्म, अमूर्त, होते हैं तो क्या प्रारम्भिक विचार अमूर्त था? यदि शब्द और विचार एक साथ विकसित हुए हों, (जैसा हमारे ऊपर दिये उद्धरणों के अनुसार मैक्समूलर का विश्वास है कि हुए हैं) तो मैक्समूलर के इस नये सिद्धान्त के अनुसार अमूर्त विचार, जिन की अभिव्यक्ति धातुओं से होती है, अवश्य उन मूर्त विचारों से जो धातुओं द्वारा निर्मित शब्दों से व्यक्त किये जाते हैं, पूर्व आए होंगे। हमारी सम्मति में रूढ़ि और यौगिक अर्थों की प्रक्रियाएं मनुष्य की प्रारम्भिक चेतना में एक साथ उदित हुई होंगि। सरलतम प्रक्रिया पदार्थों के नामकरण की है, जिसके विचार-पूर्ण होने के लिये आवश्यक है कि उसके आधार में प्रयुक्त नामों के यौगिक अर्थों की तात्कालिक अनुभूति हो। परमात्मा ने पदार्थों, गुणों और क्रियाओं के नाम रखे और मनुष्यों के प्रारम्भिक दशा के मनों में इनका संबन्ध धतुओं से कर दिया। इसी लिये सब भाषाओं में यह प्रवृत्ति पाई जाती है कि इनका विश्लेषण अन्ततः धातुओं के रूप में किया जा सकता है। यदि समान धातुओं का मनुष्यों के लिये ईश्वर द्वारा प्रदान सम्भव था तो पूरी भाषा के ईश्वर द्वारा प्रदान में क्या अड़चन थी?[2]

इस वैज्ञानिक विवाद ने आप के धैर्य की परीक्षा तो अवश्य की है परन्तु इस के विना आज के विषय का महत्व प्रतिपादित न हो सकता। ऋषि दयान्द ने सकल-धर्म-प्रतिपादित ईश्वरीय ज्ञान के सिद्धान्त को फिर से उसके मूल रूप में प्रस्तुत किया है। उस का आधार मनुष्य की ज्ञान तथा भाषा सम्बन्धी आवश्यकता पर स्थिर किया है।

वैदिक सिद्धान्त

वेदानुयायियों का विश्वास है कि मानव ज्ञान का आरम्भ सृष्टि के साथ साथ परमात्मा के विद्या-प्रदान से होता है; वेद परमात्मा का प्रारम्भिक ज्ञानाविष्कार है। ऋग्वेद के दसवें मण्डल में कहा है:—

बृहस्पते प्रथमं वाचो अग्रं यत्प्रैरत नामधेयं दधानाः।
यदेषां श्रेष्ठं यदरिप्रमासीत्प्रेणा तदेषां निहितं गुहाविः॥

ऋ. १०. ७१. १

हे वाणी के स्वामी प्रभो! वाणी का पहिला (आविष्कार) वह होता है जो (ऋषि) आरम्भ में (पदार्थों और क्रियाओं आदि के) नाम रखते हुए प्रकट करते हैं। उन के हृदय में निहित श्रेष्ठ निष्पाप भाव प्रेम से प्रकाशित होता है।

'नामधेयं दधानाः' इन शब्दों का महत्व मैक्समूलर के इस कथन से और स्पष्ट होगा।

इस वास्तविक ज्ञान की ओर प्रथम पग, वह पग जो चाहे देखने में कितना छोटा हो, मनुष्य को अन्य सब प्राणियों से हमेशा के लिये विभक्त कर देता है, किसी पदार्थ का नामकरण अर्थात् उस पदार्थ को ज्ञेय बनाना है। समस्त नामकरण वर्गीकरण है, अर्थात् व्यक्ति को जाति में समाविष्ट करना। जो कुछ हम ज्ञान से या अनुभूति से जानते हैं, उस के जानने का साधन हमारे सामान्य विचार हैं।[1]

यज्ञेन वाचः पदवीयमायन् तामन्वविन्दन् ऋषिषु प्रविष्टाम्।
तामाभृत्या व्यदधुः पुरुत्रा तां सप्तरेभा अभि संनवन्ते॥

ऋ. १०. ७१. ३

(ऋषियों ने) पूज्य प्रभु द्वारा वाणी के रास्ते को प्राप्त किया। तदनन्तर ऋषियों (के हृदय) में प्रविष्ट हुई उस वाणी

1. Ibid vol I. p. p. 527, 528
2. The Ten Commandments of Dayananda pp. 37-41

1. Science of Language p.52

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

को लोगों ने पाया। उसे लेकर स्थान स्थान में उस का विस्तार किया। सातों स्वर उसी वाणी की महिमा गाते हैं।

कुरान की भाषा में आदिम आत्मा का नाम कुरान में इस "आदम" है। मेरे विचार में यह सिद्धान्त का नाम व्यक्ति-वाची नहीं, जाति-वाची उल्लेख है। इस का प्रमाण मैं आगे चलकर दूंगा। इस आदिम आत्मा के सम्बन्ध में कुरान में कहा है:—

और सिखाए आदम को नाम सब (भावों) के। कु. २. ३१.

इस आयत का समन्वय वेद के 'वाचो अग्रं प्रेरत नामधेयं दधानाः' से कीजिये और देखिये, वैदिक भाव किस प्रकार कुरान की भाषा में अनूदित हुआ है? यह सच है कि इस आयत के प्रकरण में आई फरिश्तों और शैतान आदि की कहानी वेद में वर्णित नहीं। परन्तु सृष्टि के आरंभ में परमात्मा की ओर से ज्ञान दिये जाने का सिद्धान्त दोनों स्थानों पर समान है। इसी बात को कुरान में फिर कहा है:—

और सीखे आदम ने स्व-पालक से शब्द। कु. २. ३७

इस आयत को वेद के 'यज्ञेन वाचः पदवीयमायन्।' से मिलाइये या यजुर्वेद का यह मन्त्र स्मरण कीजिये:—

तस्माद्यज्ञात् सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे।

उस पूज्य, सब के स्वीकार्य, प्रभु से ऋक् और साम पैदा हुए।

कुरान में उस अवस्था का वर्णन आता है जब प्रारम्भिक मानव जाति एक थी। कहा है:— ऋषियों का ये लोग एक जाति। तब भेजे प्रभु ने एक पुस्तक ऋषि रोचक और भयानक सन्देश वाले और उतारी उन के साथ पुस्तक सच्ची। कु. २. रु २६.

यहां 'नबीयीन' शब्द बहुवचनान्त आया है, जिस से स्पष्ट है कि ऋषि एक नहीं, अनेक थे। वेद में भी तो 'ऋषिषु प्रविष्टाम्' 'पदवीयमायन्' कहा है। फिर इन अनेक ऋषियों की पुस्तक एक है। वह सिवाय वेद के और क्या हो सकती है? वेद ही तो चार ऋषियों द्वारा प्रकट होने से चार पुस्तकें होता हुआ फिर एक है। यजुर्वेद में आया है:—

वेदोऽसि येन त्वं देव वेद वेदोऽभवस्तेन मह्यं वेदो भूयाः। य. २. २१.

तू वेद है। हे प्रकाश स्वरूप वेद! जैसे तू विद्वानों के लिये ज्ञान का आधार होता है, वैसे मेरे लिये ज्ञान का साधन बन।

यहाँ भी वेद एक वचनान्त है। अनेक ऋषियों की एक पुस्तक वेद ही तो है। वह मानव जाति के ऐक्य-काल में आता है। कुरान के शब्दों में वह सच्ची पुस्तक है।

कुरान की यह प्रतिज्ञा ही नहीं कि वह कोई पुराने धर्म का नया धर्म प्रवृत्त करे, किन्तु और पुनरुज्जीवन धर्म-पुस्तकों की न्याईं कुरान भी कहता है:—

चाहता है प्रभु कि प्रकट करे तुम पर और पथ-प्रदर्शक हो रीतियों का उन लोगों की जो तुम से पहिले थे। कु. ४. रु. ५

वेद की आज्ञा भी तो यही है—

देवा भागं यथा पूर्वे सञ्जानाना उपासते। ऋ. १०.१९१.२

जैसे पूर्व पुरुष (अनादि काल से) भजनीय भाव की उपासना करते रहे हैं।

वेद की नित्यता इस अनादि ज्ञान के सम्बन्ध में प्रभु कहते हैं:—

अन्ति सन्तं न जहात्यन्ति सन्तं न पश्यति।
देवस्य पश्य काव्यं न ममार न जीर्यति॥

अथर्व. १०. ८. ३५

इस निकटस्थ (काव्य) को मनुष्य छोड़ता नहीं। इस निकटस्थ को देखता भी तो नहीं। प्रकाश स्वरूप के काव्य (की महिमा) देख, न मरता है न जीर्ण होता है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थात् न इस के नाश की सम्भावना है न समय के प्रतिकूल होने के कारण प्रत्याख्यात होने की ही। कुरान में यही बात यों कही है:—

निश्चय हमने प्रकट किया है शब्द और हम उस के रक्षक हैं। सू० हजर रु० १

अन्यत्र कहा है:—

किन्तु प्रशस्त कुरान सुरक्षित पट पर (आश्रित) है।

सू०बुरूज. २१

मेरे विचार में "सुरक्षित पट" (लौहे महफ़ूज़) वेद माता वेद ही का नाम है क्यों कि इस पट को अनादि और अमर कहा गया है, इसी पट का दूसरा नाम 'उम्मुल् किताब' 'पुस्तकों की मां' है। लिखा है:—

और पास है उस प्रभु के पुस्तकों की मां। सू.राद.रु.६

इस आयत पर कुरान के प्रसिद्ध भाष्यकार जलाल-बन्धु लिखते हैं:—

जिस में कुछ बदल नहीं सकता और यही है जो अज़ल (सनातन काल) से लिख दिया।

'उम्मुल्-किताब' शब्द का मूल अथर्ववेद-कथित अथर्व०

'स्तुता मया वरदा वेद माता' अथर्व०

मैं ने पुस्तकों की मां वेद का ज्ञान दिया है।

को समझना स्वाभाविक है। यदि आप 'वेद माता' और 'उम्मुल्किताब' को पर्याय मानलें, तो कुरान के सूरा ज़ख़रफ़ में आए निम्न लिखित वाक्य का अनुवाद स्वभावतः यों करेंगे:—

निश्चय हमने बनाया है कुरान अरबी कि तुम समझो। और निश्चय यह (कुरान) है ग्रन्थ-माता पर (आश्रित) जो भगवती ज्ञान वाली अर्थात् (वेद भगवान्) है।

सू० ज़ख़रफ़ रु० १

नित्य सार्वभौम सर्वज्ञानाकर वेद अपनी स्तुति में कहता है:—

सा प्रथमा संस्कृतिर्विश्ववारा। य. ७. १४

वह अनादि संस्कृति है जिसे सब को ग्रहण करना चाहिये

अन्यत्र कहा है:—

सा विश्वायुः सा विश्वकर्मा सा विश्वधायाः। य० १.

वह विश्व की आयु वाली (अर्थात् नित्य); वह सब कर्मों का संग्रह, वह ब्रह्माण्ड का आधार है।

कुरान ने भी इस तथ्य को स्वीकार किया है, यथा—

नहीं कुछ आकाश में, नहीं इस से अणु नहीं परम महत् पर है प्रकट पुस्तक में। सू० युनस रु० ७

और जगह यही बात दोहराई है, यथा—

सब है बीच प्रकट पुस्तक के। सू०हूद०रु० १

शेषोक्त दो वाक्य 'सा विश्वधायाः' का भाषान्तर ही तो हैं। इन सब स्थलों पर यह स्मरण रखना चाहिये कि प्रकट पुस्तक सुरक्षित पट ही को कहा गया है। और यह सुरक्षित पट कुरान के अतिरिक्त कोई और पुस्तक है। कुरान तो उस पुस्तक पर आश्रित अथवा उस में समाविष्ट है।

इन उद्धरणों से आप यह तो समझ गए होंगे श्रुति और स्मृति कि कुरान में किसी नित्य पुस्तक का वर्णन है और वह वर्णन उन्हीं शब्दों में किया गया है जिन में हम वेद का वर्णन करते हैं। वेदानुयायी इस नित्य ज्ञान को 'श्रुति' भी कहते हैं। श्रुति से उतर कर हमारे धार्मिक साहित्य में 'स्मृति' का स्थान आता है। यह स्मृति देश काल के अनुसार बदलती रहती है। मानव जाति के प्रारम्भिक एक-जातित्व के पश्चात् इस में देशों के भेद के साथ साथ भाषा आदि का भेद आता है। वेद ने इस बात का वर्णन बड़े सुन्दर शब्दों में किया है:—

जनं बिभ्रती बहुधा विवाचसं नानाधर्माणं पृथिवी यथौकसम्। अ० १२. ४५

पृथिवी यथास्थान भिन्न भिन्न वाणियों और नाना धर्मों के मनुष्यों को आश्रय देगी।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

धर्म का मूल वैदिक रूप एक होते हुए देश-भेद के कारण स्मार्त धर्मों की भिन्नता वेद की दृष्टि में विद्यमान है। इस भिन्नता के साथ साथ भाषा की भिन्नता की भविष्योक्ति भी वेद करता है। कुरान में मेरे विचार में इसी स्मार्त धर्म को लक्ष्य में रख कर कहा है:—

वास्ते प्रत्येक जाति के बनाया हमने पूजा का ढंग

सू० हज० रु० ५

इन्हीं स्मृतिकारों के सम्बन्ध में कहा गया प्रतीत होता है:—

प्रत्येक जाति के लिये ऋषि है। सू० यूनस० रु० ५

फिर कहा है:—

और नहीं भेजा कोई ऋषि सिवाय उस जाति की अपनी भाषा में। सू० राद० रु० ५

जब मानव जाति एक थी तब उन की समान भाषा में उन्हें नाम सिखाए थे। जब अनेक जातियां हुईं तो प्रत्येक को उस की अपनी भाषा में स्मार्त व्यवहार सिखाया गया। आदिम नबी 'पूर्व ऋषि' पूर्व पुस्तक लाए थे। 'नूतन ऋषि' जिन्हें कुरान 'रसूल' कहता है, नूतन पुस्तकों के प्रणेता हुए। परन्तु वेद और कुरान दोनों के अनुसार उस पूर्व श्रुति और इन नूतन स्मृतियों में आधाराधेय का सम्बन्ध है। स्वयं कुरान के शब्दों में

कुरान की स्मृतिवत् प्रत्याख्येयता और लोप्यता

किन्तु वह प्रशस्त कुरान है सुरक्षित पट पर (आश्रित)।

सू. बुरुज. रु. २१

स्मृति के सम्बन्ध में परिवर्तन की सम्भावना भी है, पूर्ण प्रत्याख्यान की भी। कुरान में कहा है:—

और जो हम प्रत्याख्यात करते हैं आयतों में से या विस्मृत कराते हैं, देते हैं उन से अच्छी या उन जैसी। सू. बकर रु. १३.

फिर कहा है:—

और यदि हम चाहें तो लौटा लें जो उतारते हैं तुझ पर।

सू. बनी इस्राईल. रु. १०

स्मृति श्रुति के किसी भाग को ही ग्रहण करती है। कुरान कहता है:—

और तू छोड़ देता है कुछ भाग उस का जो तुझ पर प्रकट किया जाता है। सू. यूनस.रु. १०

कुरान देश विशेष तथा भाषा विशेष का पुस्तक है, यह निम्नलिखित वाक्य से और स्पष्ट है:—

और प्रकट किया तुझ पर अरबी कुरान कि डरे मक्का और उस का पड़ोस। सू. द्वारा. रु. १.

धर्म-पुस्तक के सम्बन्ध में इन्ही उद्धरणों से आप पर प्रकट हो गया होगा कि वेद और कुरान का इस विषय में मन्तव्य एक है। हमारे यहां सब से ऊँचा स्थान वेद माता का है, जो 'विश्वायुः', 'विश्वकर्मा', 'विश्वधायाः' 'प्रथम संस्कृति' 'विश्ववारा' 'ऋषिषु प्रविष्टा' है। कुरानमें यही स्थान 'सुरक्षित पट' 'उम्मुल् किताब' 'किताब मुबीन' का है। मैं इसे वेद का पर्याय मानता हूँ। हम इस से नीचे, परन्तु फिर भी पूजा का, स्थान स्मृति को देते हैं। यथा इस समय की स्मृति सत्यार्थ प्रकाश है। कुरान में यही स्थान उन पुस्तकों का है जो देश विशेष में उस देश की भाषा में प्रकट होती हैं। वह 'भुलाई' जा सकती हैं, 'निराकृत' हो जाती हैं, 'लौटाई' जा सकती हैं। पूर्वोक्त की परमात्मा रक्षा करता है, शेषोक्त का परिवर्तन भी सम्भव है, सर्वथा लोप भी। जहाँ वेद-माता या उम्मुल् किताब स्वतः प्रमाण है, वहां स्मृति का प्रमाण वेद-माता पर अश्रित होने के कारण है।

वेद और कुरान के उपर्युक्त समानार्थक वाक्यों की तुलना में इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिये कि वेद जहां अनादि, नित्यज्ञान का वर्णन करता है, उसे अपने आप से भिन्न नहीं कहता।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उसे 'वेदमाता' आदि शब्दों में अपना ही नाम देता है और पाणिनि सूत्र..... के अनुसार वेद में आया भूत काल भी नित्य भूत है अर्थात् उसका अभिप्राय परमात्मा की अनादि अभ्यस्त क्रिया की ओर निर्देश करना है, और कुरान अपने आप को उस नित्य ज्ञान से पृथक् देश-विशेष की भाषा का भुलाए, पलटाए, लौटाए जा सकनेवाला 'इलहाम' कहता है।

यह हुई वेद और कुरान की मन्तव्य सम्बन्धी प्रथम समानता। इसे मैं इन दो धर्मों की मौलिक-ज्ञान-मूलक समानता कहता हूं।

इन्हीं भावों के द्योतक प्रमाण दूसरे संप्रदायों कुरान कर्ता की के धर्म-पुस्तकों से भी उपस्थित अज्ञात कृपा किये जा सकते हैं, यथा बाइबल में आदम बनाए जाने के पश्चात् उस के मुख से पदार्थों के नामों का उच्चारण कराये जाने का उल्लेख है। यहाँ इन उद्धरणों का उल्लेख प्रसङ्ग से बाहर जाना होगा। प्रतीत यह होता है कि भाषा और ज्ञान के, प्रारम्भ में ईश्वर-प्रदत्त होने का यह सिद्धान्त पहिली बार वेद में प्रतिपादित हुआ। फिर उस का वास्तविक वैज्ञानिक अर्थ लोगों की दृष्टि में रहा हो या नहीं, परम्परागत विश्वास के रूप में अर्वाचीन धर्मों के पुस्तकों में भी इसे प्रतिष्ठा की जगह मिली है। इसलाम में कुरान के इन तत्व-पूर्ण शब्दों के गंभीर रहस्य का अनुशीलन किसी ने नहीं किया। तत्सम्बन्धी भ्रम-पूर्ण कथाओं से, जो स्वयं कुरान में इस विश्वास के वर्णन के साथ-साथ कह दी गई हैं, पता चलता है कि सम्भवतः यह गूढ रहस्य संस्थापक को भी ज्ञात न था, परन्तु जिस भी रूप में इस भाव की रक्षा कुरान द्वारा हुई है, उस के लिये कुरान का मान्य कर्ता धन्यवादार्ह है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हिन्दी साहित्य का सन्देश*

[पं० अवनीन्द्र कुमार विद्यालंकार]

न्दी साहित्य ने संसार को और विशेषतः भारत को दो सन्देश दिये हैं। इन सन्देशों के कारण हिन्दी साहित्य अमर रहेगा। पहिला सन्देश संसार व्यापी सन्देश है। विश्व मन्दिर में जगन्-माता के चरणों में यह अनमोल भेंट हैं, वह है मनुष्यत्व और देवत्व का सम्मिलन। दूसरा है भिन्न भिन्न संस्कृति धारी और सभ्यता को मानने वाले हिन्दू मुसल्मानों के एकत्व का पुनीत सन्देश।

'धर्म साहित्य का उपादान है' बिना धर्म के साहित्य का निर्माण संभव नहीं है संसार के साहित्य की नीव धर्म में है साहित्य की पुष्टि और विस्तृति अज्ञेयवाद और अध्यात्मवाद से होती है।' यह सिद्धान्त पुराना है। भारतवर्ष का इतिहास इस की पुष्टि करता है। बौद्ध धर्म एक हजार साल तक रहा इस का जन्म दुःख वाद से हुआ। संसार दुःख है क्यों कि मनुष्य जन्म जरा और व्याधि से ग्रस्त है। संसार से मुक्ति पाने का केवल मार्ग सन्यास ग्रहण ही है। बौद्ध वाद शून्यवाद में परिणत हो गया। सब लोगों के मन संशयापन्न हो गए बौद्ध संघ इस कारण से चित्र की संशयावस्था में अनाचार के स्थल हो गए सर्वसाधारण भी सदाचार की अवहेलना करने लगे। धर्म रहस्यमय हो गया शुष्क तर्क जाल का राज्य छा गया। शंकर ने इस अवस्था से उद्धार किया पर उन का मत माया पर अवलम्बित था। उन्होंने भी सन्यास पथ पर जोर दिया। उनके सिद्धान्तों से सर्वसाधारण का समाधान हो सकता था पर सन्तोष न हो सकता था। इस से पूर्व शैव और वैष्णव धर्म का प्रादुर्भाव हो चुका था। इसके सिद्धान्त संस्कृत में थे।

यह साहित्य सौन्दर्य मय था, मुग्ध कारी था, परन्तु प्राण हीन था, मुसलमानों का आगमन हुआ इस के कारण धारा का मुख बदला नहीं। धारा की दिशा उन के आने से पूर्व निर्दिष्ट हो चुकी थी उन के दो सौ साल बाद वर्तमान भाषाओं में वैष्णव साहित्य का प्रादुर्भाव हुआ समस्त भारत पर इसका राज्य छा गया। नानक, कबीर, दादू, तुलसी, दास चैतन्य, विद्यापति, तुकाराम आदि साधक कवियों ने इस का प्रचार किया। इस की विशेषता थी— कि प्रवृति, को ध्वंस नहीं करता पर उस की दिशा अध्यात्मिकता की ओर फेर देता था। स्वभाव की उपेक्षा कर अति मानवीय आदर्श को खो जाने में व्यस्त रहने से विपरीत फल होता है। इस लिए वैष्णव कवियों ने मनुष्यों के अन्दर भगवान् के स्वरूप को पाने का यत्न किया। परन्तु प्रारम्भ

* गुरुकुलीय दशम हिन्दी साहित्य सम्मेलन के सभापति पद से दिये गये भाषण का एक अंश।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वैष्णव धर्म में उच्च वर्ण के लोग ही प्रविष्ट होते थे और स्थानीय धर्म के प्रभाव से कृत्रिम आचार व्यवहार की बड़ी प्रबलता हो गई थी। ऊँच नीच का भाव जारी था। मुसलमानों के आगमन ने इस की और वृद्धि की। रामानन्द ने वैष्णव धर्म का सब के लिए द्वार खोल दिया। जुलाहे, मोची और डोम सब भगवान् को पाने और उपासना के अधिकारी हुए आचार व्यवहार की कृत्रिमता पूजा आडम्बर को कबीर ने उड़ा दिया। इस के अनन्तर निर्गुण उपासना आरम्भ हुई। निराकार वादी साधनों की उपासना शास्त्र के अनुशासन से युक्त थी, पर भाव और सौन्दर्य-प्रेम से परिपूर्ण थी।

इन सन्तों की वाणियों के कारण आधुनिक भारत का सम्बन्ध वैदिक युग से अविच्छिन्न चला आ रहा है। अनादि काल से भारत का में भावना का स्रोत बह रहा है, जिसका उद्गम स्थान ऋषियों का तपोबन है। प्रश्न यह कि भावना-स्रोत क्या है? सभी जातियों ने एक एक आदर्श की सृष्टि की है। वही आदर्श उनकी सभ्यता में विकसित होता है। ज्यों ज्यो आदर्श विकसित होता है त्यों त्यों सभ्यता की वृद्धि होती है। जैसे वृक्ष में जड़ से लेकर कर फूल पत्ति तक सब की यह चेष्टा रहती है कि फल में श्रेष्ट बीज हो जैसे वृक्ष की समस्त शक्ति का चरम परिणाम बीज होता है वैसे ही मनुष्य समाज भी एक मनुष्य में अपनी शक्ति का चरम परिणाम प्रत्यक्ष देखना चाहता है। वही उसका आदर्श है। भारतीय आदर्श जितने चरित्रों में पाया जाता है उनमें एक ही बात है। सर्वत्र त्याग की महत्ता पाते हैं। त्याग जीवन को शून्य करने के लिए नहीं प्रत्युत परिपूर्ण करने के लिये है। प्रेम की चरम सीमा धर्म की अन्तिम अबाध त्याग है। दुःख को दमन नहीं किया गया पर सुख में परिणात कर दिया गया है। त्याग के द्वारा विश्व को अपना लेना है क्षुद्र सीमा से ऊपर उठ जाता है। जीवन क्षीण नहीं होता पर पूर्ण हो जाता है। जल विन्दु तभी तक क्षुद्र है जब तक वह अपने को पृथक रखता है, किन्तु ज्यों ही अपने को अनन्त समुद्र के साथ मिला देता है, अपना स्वतन्त्र आस्तित्व लोप कर देता है, त्यों ही वह स्वयं अनन्त हो जाता है—

हद में पीव न पाइए बेहद में भर पूर।
हद-बेहद की गम लखे सासे पीव हजूर॥
हद में वैसा कथन है, बेहद की गम नाहिं।
बेहद की गम हो गयी तब कछु कथना नांहि॥

वैदिक युग के ऋषियों ने प्रश्न किया—कस्मैदेवाय हाविषा विधेम—उत्तर मिला—

यो देवोऽग्नौ योऽप्सु यो विश्व भुवन मानिवेश।
य ओषधीषु यो वनस्पयिषु तस्मै देवाय नमो, नम॥

'यही विश्व बोध की भावना भारतीय साहित्य का सर्वस्व है।' जब लोग इस विश्व बोध की भावना को भूल रहे थे तब कबीर ने चेतावनी दी—

संपुट मांहि समाइया सो साहिब होय।
सकल भाण्ड में रमि रहा, मेरा साहिब सोय॥

फिर क्या वैदिक और संस्कृत साहित्य से स्वतन्त्र सन्देश हिन्दी का कोई नहीं है?.....

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ऐसो अद्भुत मत कथो, कथो तो धरो छिपाय।
वेद कुरान ना, कहौं तो को पतियाय॥

सत्य चिरन्तन। हिन्दी के साधकों ने उसे अनुभव कर और साक्षात्कार कर प्रगट किया। हिन्दी की उत्पत्ति का काल वह है जब सत्य अनुभूति का विषय न रह कर तर्क का विषय हो रहा था। सत्य की खोज ग्रन्थों में की जाति थी मानव जीवन में नहीं। पर सत्य का मार्ग अनुभूति है—

कबीर का घर सिखर पर जहाँ सिलहली मैल।
पांव न टिके पिपीलिका, पण्डित लादे बैल॥
बिन पावन की राह है, बिन बस्ती का देश।
बिना पिण्ड का पुरुष है, कहै कबीर सन्देश॥

यह हिन्दी का सन्देश। धर्म को मिथ्या आडम्बर से मुक्त किया, जो जीवन में सत्य की प्राप्ति का उपदेश दिया—

कांकर पाथर जोरिकै मसजिद लई चुनाय।
ता चढ़ि मुल्ला बांगदे, क्या बहिरा हुआ खुदाय॥
पूजा सेवा नेम व्रत गुडियन का ऐसा खेल।
जब लगी दिल परिचय नहीं, तब लगी संसममेल॥

मनुष्य-जीवन में सत्य-प्राप्ति के प्रयत्न का फल यह हुआ कि मनुष्यों में सत्य को मूर्तिमान देखने की आकुलता पैदा हुई। राम और कृष्ण इसी सत्य की मूर्ति हैं। राम और कृष्ण आराध्य देव हैं। साधना और उपासना से लभ्य है। इनके साहित्य में अंकित चरित्र आध्यात्मिक हैं लौकिक नहीं। अतएव लौकिक रीति से उनका विश्लेषण नहीं किया जा सकता। इन्हीं के कारण देवत्व में मनुष्यत्व का और मनुष्यत्व में देवत्व का भाव आरोपित हुआ। यह अनुपम सम्मिलन ही हिन्दी की विशेषता है जिस पर रसखान मुग्ध हो गया और अपने आप को कृष्ण में मिला दिया उसकी हृततन्त्री इसी से इस स्वर लहरी के साथ बज उठी—

मानस हौं तौ वही रसखान बसौं,
बज गोकुल गाँव के ग्वारन।
जो पशु हौं तौ कहा बस मेरौ चरौं,
नित नंद की धेनु मँझारन॥
पाहन हौं तौ वही गिरी कौ,
जो भयौ व्रजछत्र पुरंदर धारन।
जो खग हौं तौ बसेरौ करौ,
उन कालिंदी-कूल कदंब की डारन॥

ग्वाल की लकुटी और कमरिन पर तीनों लोकों का राज छोड़ने को प्रस्तुत हो गया—

या लकुटी अरु कामरिया पर,
राज तिहूं पुर को तजि डारौं,
आठहूँ सिद्धि नवौ निधि को सुख
नंद की गाय चराय बिसारौं।
रसखान कबौं इन आँखिन सौं
व्रज के बन बाग तड़ाग निहारौं,
कोटिन हूँ कलधोत के धाम
करील के कुंजन ऊपर वारौं॥

इसी कृष्ण की मूर्ति के दर्शन से लाज की हृततन्त्री ने गाया—

छैल जो छबीला, सब रंग में रगीला,
बड़ा चित्त का अड़ीला कहूँ देवतों से न्यारा है;
माल गले सोहै, नाक मोति सेल सोहै,
कान मोहे मन कुडल मुकुट सीस धारा है;
दुष्ट जन मारे, संत जन रख वारे 'लाज',
चित्त हितवारे प्रेम प्रीति कर वारा है;

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

नंदजू का प्यारा, जिन कंस को पछारा,
वह वृंदावन वारा कृष्ण साहेब हमारा है;

'लाज' रागिनी का यहीं अन्त नहीं हो गया उसने आपको उसमें अन्तर्लीन कर दिया—

सुनो दिलजानी मेरे दिल की कहानी तुम,
इस ही विकानी बदनामी भी सहूँगी मैं।
देव पूजा ठानी मैं नाम जहू भुलानी तजे
कलमा कुरान सारे नुनन गहूँगी मैं।
श्यामला सलोना सिरताज सिर बुल्लेदार
तेरे नेह दाग में निदाघ ह्वै दहूँगी मैं।
नन्द के कुमार कुरबान ताणी सूरत पै
ताण नाल प्यारे हिन्दुवानी ह्वै रहूँगी मैं।

भक्ति और प्रेम की अविरल धारा में भारत सरावोर हो गया। भक्ति से आप्लावित हृदयों ने कबीर के साथ कहा—

कोई हिन्दू कोई तुरुक कहावै एक जमीं पर रहिए।
वही महादेव वही मुहम्मद ब्रह्मा आदम कहिए॥
वेद किताब पढ़ैं वे कुतवा वे मौलाना वे पाँडे।
विगम निगम के नाम धरायो यक माँटी के भाँडे॥

कबीर ने दोनों जातियों को अस्वाभाविक विरोधाग्नि में जलते देखा, कबीर ने दोनों को मनुष्यत्व के पुनीत पद पर ले जाने का प्रयत्न किया

हिन्दू कहूँ तो मैं नहीं मुसलमान भी नाहीं

कबीर ने समदृष्टि से देखा—

सम दृष्टि सतगुरु किया मेरा भरम बिकार।
जहँ देखौं तहँ एक ही साहेब का दीदार॥
सम दृष्टि तब जानिए सीतल समता होय।
सब जीवन की आतमा लखें एक सी सोय॥

हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य की समस्या का यही है, हिन्दी-साहित्य का नव-भारत के प्रति यही सन्देश है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जन्म रात्री

(श्री हरिशरण जी श्रीवास्तव्य 'मराल')

सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र, आदि नित
दिव्य-दीप्ति दर्शाते हैं ;
जल, थल, नभ, जन, प्राणी वर्ग में
व्यापक जिसे बताते हैं ;
निखिल-विश्व-व्यापार-विधाता--
वेद सदा यश गाते हैं ;
प्रथम पूज्य, पावन भगवन् को
भक्ति-भाव से ध्याते हैं ।

* * *

आज सभी, किस हेतु साज सज,
अतुलित हर्ष मनाते हैं ;
मंगल-महिमा-मुग्ध आर्य्य जन
फूले नहीं समाते हैं ।
प्रेम-भाव से प्रेरित जिसके
कलित-कीर्ति, गुण गाते हैं ;
कविता-कुञ्ज-बिहारी बन्धो !
वह ही कथा सुनाते हैं ॥

* * *

वर्षा-ऋतु थी, पञ्च तत्व ने,
हिल मिल कर अपनाई थी;
चारु-चञ्चला की ज्योर्तिमय
रेखा रुचिर सुहाई थी ।
नीरव-निशि में, निविड़-कालिमा
ने निज निधि दर्शाई थी ;
कृष्ण-मेघ-माला से सज कर,
श्याम-सुन्दरी आई थी ॥

* * *

समय शान्त, जग शान्त, ध्वान्त में
जीव चेतना खोते थे ;
विटप, बेल, वन, सरित सरोवर
सभी एक से सोते थे ।
अन्धकार चहुँ ओर गगन में
घोर घटा घिरि आई थी ;
जिस से उस विकराल-रात्रि की
भीषणता अधिकाई थी ॥

* * *

योगिराज का जन्म कठिन कारा-
गृह में उस काल हुआ ;
क्रूर कंस की कुटिल कला का
नाशक काल कराल हुआ ।
राज--नीति--मर्य्यादा—रक्षक
वह महान महिपाल हुआ ;
धर्म-धारणा, कर्म्म-योग का
शिक्षक जो गोपाल हुआ ॥

* * *

भरत भूमि के यश-सौरभ को
जिसने जग में फैलाया ;
मर्मज्ञों ने ही समझी है
जिस की गीता की माया ।
जिस के अमृत उपदेशों से
प्राणी मात्र ने सुख पाया ;
निखिल विश्व की एक वार तो
थी पलटी जिसने काया ॥

* * *

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उसी महज्जन को मथुरा में
इस तिथि ने जन्माया था ;
अत्याचार— पीड़िता— भू का
जिसने भार हटाया था ।
इसी हेतु, इस जन्म दिवस का
गौरव सब को भाया है ;
वर्तमान भारत ने भी अब
वैसा दृश्य दिखाया है ॥

* * *

अकर्मण्यता की भारत में
रात्रि तामसी आई है ;
ज्ञान-हीन अति घोर अविद्या
की प्रगाढ़-मसि छाई है ।
चपल-चमत्कृत-आडम्बर से
अंग अंग सुवराई है ;
ऐसी यह पाश्चात्य-सुन्दरी
नई सभ्यता लाई है ॥

* * *

कारागृह की क्लेश कहानी—
में भी वह निठुराई है ;
देवि-देवकी सम माता ने
विपत बड़ी ही पाई है ।
लोह-शृंखला की भी पग में
वैसी ही निगड़ाई है ;
हुई क्यों नहीं न्याय-सभा में
अब तक, ईश ! सुनाई है ॥

* * *

किन्तु, गर्भ से माता ही के
हां ! अवश्य होगा उत्पन्न ;
जग--हितकारी पुत्र--रत्न वह
देख जिसे हो हृदय प्रसन्न ।
बन्धन से स्वतन्त्र करने को
जो हो बन्दीगृह-आसन्न ;
जिसके श्रम द्वारा सुख पावें
निश्चय सारे दीन विपन्न ॥

* * *

सबल न होवें प्रबल निबल पर
खल-दल बिन जगती तल हो,
ध्येय यही मन्तव्य यही था
जन में कर्मों का बल हो ।
विषय-वासना-विगत विमल मन
सतत योग में निश्चल हो ;
रहे सदा कर्तव्य परायण
नहिं सोचे इच्छित फल हो ॥

* * *

राव-रंक सब एक अंक में
जग को समता प्राप्त हुई ;
पुण्य-कृत्य को देख नरों में
सच्ची निष्ठा व्याप्त हुई ।
अनुपम इस आदर्श जीवनी
से शिक्षा पर्य्याप्त हुई ;
'कृष्ण-कथा' अब ये 'मराल' की
मित्रो ! यहीं समाप्त हुई ॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्त्री

'प्राचीन अथवा नवीन'

लेखिका-श्रीमती विद्यावतीसेठ बी.ए. आचार्य्या कन्या गुरुकुल

आजकल सारे भारतवर्ष में यह विचार फैल रहा है कि स्त्रियों की शिक्षा का लक्ष्य उन्हें घर के काम से छुड़ाकर पबलिक काम में हिस्सा लेने के योग्य बनाना है। रोटी बनाना, झाड़ू लगाना, पानी भरना, कपड़े सीना, बच्चों का पालन पोषण करना, घर के सम्बन्धियों की सेवादि करना जो भी स्त्रियों के कर्तव्य हैं वे नीचे वर्ण की अशिक्षिता स्त्रियों के लिये हैं। यदि शिक्षिता स्त्रियाँ भी येही काम करें तो शिक्षा से क्या लाभ ?। किन्तु प्राचीन पुस्तकों और शास्त्रों के पढ़ने से ज्ञात होता है कि प्राचीन आर्य्य—सभ्यता में इन कर्तव्यों को बड़ा महात्वपूर्ण समझा जाता था—इनको घृणा की दृष्टि से नहीं देखा जाता था बल्कि स्त्रियों की महत्ता यही थी कि वे इन कामों को बड़ी योग्यता से कर सकती थीं।

ऋग्वेद के प्रथम मण्डल १६१ सूक्त के १४ वें मंत्र में लिखा है कि स्त्रियों को गृह के कामों में अधिक भाग लेना चाहिये उन्हें कुएं से पानी भर कर भी लाना चाहिये और शेष गृहकार्य भी बहुत अच्छी तरह से करने चहिये। उन्हें प्रातःकाल स्वयं उठकर घर के सब लोगों को जगाना चाहिये।

अथर्ववेद अध्याय १२.मंत्र ३ व १३ और ऋग्वेदमण्डल १.सूक्त १८.मंत्र ४. व ऋग्वेदमण्डल २सूक्त ३ मन्त्र ६ वा याज्ञवल्क्य स्मृति में लिखा है कि धान कूटना, पछोरना, दही बिलोना, बेलबूटा कसीदा निकालना और भिन्न २ प्रकार के रंग रंगना ये सब स्त्रियों के विविध भाँति के काम हैं।

अथर्ववेद में लिखा है कि विवाह के दिन घर वधू के हाथ का बुना हुआ सुन्दर किनारी वाला कपड़ा पहिने। और भी देखिये—ऋग्वेद के ६ वें मण्डल सूक्त ११३ मंत्र ३ में वर्णन है कि स्त्रियों को चक्की भी पीसनी चाहिये। शतपथ ब्राह्मण ने लिखा है कि बुनना और कातना भी स्त्रियों का ही कर्तव्य है।

इतना ही नहीं, महाभारत में द्रौपदी की दिन-चर्य्या का वर्णन करते हुए लिखा है कि उन्हें घर का बड़ी अच्छी तरह से इन्तजाम करना आता था। द्रौपदी ने कहा है कि मैं हमेशा घर के बर्तनों को साफ़ और पवित्र रखती हूं। और भोजन को भी बड़ी सफ़ाई और सुन्दरता से सरस और सुस्वाद बनाती हूँ। मैं चावल अच्छी तरह पकाती हूँ और समय २ पर भोजन परोसती हूं। मैं क्रोध में आकर कभी गाली नहीं देती, और बुरी स्त्रियों की कभी संगत नहीं करती,। मैं आलसी नहीं हूं। और हमेशा लाभकारी कामों में लगी रहती हूँ। सम्बन्धियों की तरफ़ अपने कर्तव्यों का पालन करना, भिक्षा देना, देवताओं की पूजा करना, श्राद्ध करना, त्यौहारों पर अतिथियों और मान्य पितरों के लिये रसीले भोजन बनाना, वृद्धों का आदर सत्कार, सेवा इत्यादि करना—सब मैं करती हूं।

किन्तु यहीं पर कर्तव्यों की इति श्री नहीं हो जाती, मुझे यह भी ज्ञान रहता है कि मेरी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

दासियाँ और भिन्न २ सेवक क्या करते रहते हैं। राजघर की गायें, भेड़े चराने वाले लोग क्या काम करते हैं यह भी मुझे पता रहता है। पांडवों के कुल में मैं ही एक वह व्यक्ति हूं जिसे शासन के कार्य्य क्रम का बहुत उत्तम ज्ञान है इसके कोष की सम्पत्ति का भी पता है।

व्यास जी ने भी स्त्रियों के कर्तव्य का विस्तार से वर्णन किया है। उन्होंने लिखा है कि गृहणी को उचित है कि अपने पति से पहिले ही बिस्तर से उठे, और नहाकर बिस्तरों को उठावे, घर में झाड़ू लगावे, घर की प्रत्येक वस्तु को ढंग से रखे, फिर यज्ञशाला में जाकर पहिले वेदी को झाड़ कर साफ़ करे, लेपन करे, घर के आंगन को गोबर मिट्टी से साफ़ करे। इसके बाद तेल व घी के चिकने बर्तनों को गर्म पानी से धो २ कर रखे, चूल्हे को मिट्टी और लेपन से ठीक करके फिर उसमें आग जलाया करे। इसके बाद नित्यकर्म करके यह सोचे कि आज क्या २ भोजन बनाने हैं और नौकरों को काम बाँटदे। फिर घरके दैनिक आय व्यय का हिसाब करके कुटुम्ब के वृद्ध पुरुषों को नमस्कार करे। इसके बाद श्वसुर, सास, पति, पिता, माता, मामा, दादी, आदिसे दिये गये आभूषणों से भूषित होकर, भोजन तय्यार कर चुकने पर अपने पति को भोजन के लिये बुलावे। जब पति बलि और आहुती दे ले तो वह पहिले बच्चों को प्रेम से खिलाये, फिर पति के लिये परोसे इसके बाद पति की आज्ञा से बचे हुए भोजन में से कुछ भोजन करे और शाम को घर के आय व्यय का हिसाब करले (व्यास अध्याय २ श्लोक २०, २५)

लेकिन पठकों को इसे यह नहीं समझ लेना चाहिये कि स्त्रियाँ दासी, पैर की जूती या नीचे दर्जे की समझी जाती थीं। वे घर की नौकरानी या पैर की जूती नहीं समझी जाती थीं और नाहीं वे चूल्हे चौके में वक्त खर्च करने के अतिरिक्त देश के विविध कामों से अनभिज्ञ रहती थीं। बल्कि यह समझना चाहिये कि स्त्रियों के लिये हर तरह के काम थे। वे इन सब कामों में निपुण होकर इन्हें अच्छी तरह करती थीं इसी लिये उनका यश, मान सत्कार और कीर्त्ति थी। उन्हें समाज में वह जगह प्राप्त थी जो कि आजकल के सभ्यताभिमानी पाश्चात्य देशों की स्त्रियों को भी नसीब नहीं है। नीचेलिखे श्लोक में स्त्रियों के विविध कार्यों का विशुद्ध रूप से वर्णन है:—

कार्येषु मन्त्री करणेषु दासी भोज्येषु माता शयनेषु रम्भा।
मनोनुकुला क्षमया धरित्री गुणैश्च भार्या: कुलमुद्धरन्ति ॥

याने बड़े से बड़ा और छोटे से छोटा काम भी स्त्री की सलाह लिये बिना नहीं हो सकता था। जिस तरह राजा के लिये मन्त्री जरूरी है इसी तरह पति के लिये पत्नी की सम्मति आवश्यक है। और स्त्री को चाहिये कि वह काम करते वक्त दासी से बढ़ कर सेवा करने को तैय्यार रहे, भोजन खिलाने के वक्त ऐसी प्रेम सेभर पूर हो जैसी कि माता अपने बच्चों के लिये होती है, ऐश व आराम देने के लिये अप्सराओं के समान हो और मन के अनकूल व्यवहार करे; शान्ति और क्षमा को धारण करती हुई सहन शील हो तथा शक्तिवान हो—ऐसी स्त्रियाँ अपने अनेक गुणों से कुटुम्ब को प्रसन्न करती हैं। प्राचीन काल में धार्मिक और आध्यात्मिक क्षेत्र में पति पत्नी का एक ही अधिकार था इसी लिये पत्नी को सह-धर्म-चारिणी कहते हैं। पत्नी के बिना कोई भी यज्ञ पूर्ण नहीं समझा जाता। इसी लिये अश्वमेध यज्ञ के समय सीता को जंगल में छोड़ जाने के पश्चात् राम ने सीता की सोने की मूर्ति को सीता का— स्थानापन्न बना कर यज्ञ किया था।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

आजकल धर्म की वेदी पर चढ़ने का अधिकार अभी तक योरोप में भी स्त्रियों को नहीं मिला है। स्त्रियाँ वहाँ पर लाट-पादरी नहीं बन सकतीं। कुछ वर्ष पहिले आक्सफ़ोर्ड यूनीवर्सिटी अपनी डिग्री किसी स्त्री को देने में हतक समझती थी परन्तु हमारी प्राचीन सभ्यता में कोई भी डिग्री, कोई भी अधिकार ऐसा नहीं जिसे स्त्रियां सिर्फ स्त्रियां होने के कारण न ग्रहण कर सकें—यह है प्रतिष्ठा की पराकाष्ठा ! यह है सभ्यता की असीम सीमा। मनु ने कहा है कि :—

'स्त्रियः श्रियश्च गेहेषु न विशेषोऽस्ति कश्चन'

अर्थात् घर की शोभा स्त्री ही है। ऋग्वेद मण्डल ३. सूक्त ५३. मन्त्र ४. में लिखा है कि हे भगवन् ! स्त्री ही घर और निवास स्थान है। ऋग्वेद मण्डल १०. सूक्त १५९. मन्त्र २.३ में लिखा है कि स्त्री घर की सम्राज्ञी है पताका है और शक्ति शाली न्याया धीश है और पति इसकी इच्छा के अनुकूल अपना क्षत्र बना लेता है। उनके पुत्र शत्रु-दमन करने वाले होते हैं और पुत्रियाँ घर में रानी बनकर शासन करती हैं और वह स्वंय अपने स्वामी के ऊपर सम्राज्ञी बनकर रहती हैं। और रामायण में आता है कि कौशल्या दशरथ के घर दासी नहीं थीं बल्कि वह उनकी मित्र, पत्नी, भगिनी और माता थीं। महाराज अज इन्दुमती के सम्बन्ध में कहते हैं कि :—

'गृहिणी सचिवः सखी मिथः प्रियशिष्या ललिते कला विधौ'

भगवान रामचन्द्र जी सीता जी से कहते हैं कि मैं तुम्हें दुख देकर प्राप्त होनेवाले स्वर्ग की भी इच्छा नहीं रखता। जब तुम मेरे साथ बन जाने को तय्यार बैठी हो तो तुम्हें पीछे नहीं छोड़ सकता। जैसे कि आत्मज्ञानी अपनी शक्ति को नहीं छोड़ सकता। इतना ही नहीं, स्त्री को राज्यशासन में भी वही अधिकार प्राप्त थे जो उसके पति राजा को थे। वशिष्ठऋषि रामायण में कहते हैं— चूंकि सीता रामजी की पत्नी हैं इसीलिये इनके वेही अधिकार और कर्तव्य हैं जो रामजी के थे। सीता बनको नहीं जाँयगी बल्कि वे रामचन्द्र की स्थानापन्न बनकर राज्य करेंगी। विवाहित पुरुषों की स्त्रियां उनकी दूसरी आत्मा होती हैं। सीता रामचन्द्र जी की आत्मा बनकर पृथ्वी का शासन करेंगी।

महाभारत शान्तिपर्व में लिखा है कि पत्नी के बिना घर जंगल के समान है। धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की मूल स्त्री ही है। पत्नीवान् ही यज्ञ कर सकते हैं, पत्नीवान् ही गृहस्थ सुख भोग सकते हैं। मीठाबोलने वाली पत्नी ही आनन्द के समय मित्र होती है, धार्मिक कामों में पिता बनती है, रोग और दुखः में माता के समान सेवा और प्यार करती है, घने निर्जनवन में थके माँदे यात्री के लिये पत्नी ही एक तरह आश्वासनदात्री और चेतनता देने वाली होती है। क्योंकि वह बहुत मूल्यवान वस्तु है। और भी देखिये—पत्नी वह पवित्र होती है जिससे पुत्र रूप से पति दुबारा अपने को उत्पन्न करता है। पत्नी को पति अपनी सम्पत्ति न समझे, बल्कि अपना दूसरा रूप समझे।

मनु महाराज कहते हैं कि स्त्रियों की पूजा करो। उनका सत्कार करो अगर, अपना कल्याण चाहते हो। स्त्रियाँ अघ्न्या हैं उन्हें हनन नहीं करना चाहिये। सुग्रीव तारा को कहता है—तुम्हें देख कर लक्ष्मण का क्रोध शान्त हो जायगा क्योंकि महा-पुरुषों को स्त्रियों के सामने क्रोध नहीं आता। शास्त्रों में लिखा है कि यदि गर्भ वती स्त्री और राजा एक रास्ते में आते हों तो राजा को चाहिये कि उसे रास्ता दे दे। मातृत्वशक्ति का इतना महत्व किस सभ्यता में आजकल है ?

इसलिये आजकल की शिक्षा प्रणाली में हमारी भारतीय देवियों के सामने यदि यही आदर्श रखा जाय तो भारतवर्ष में पाश्चात्य सभ्यता के अनुकरण से होनेवाली तथा वर्तमान जो कुछ भी बुराइयाँ हैं उन की जड़ न जमने पावे और भारत के गृहस्थसुख और शान्ति के धाम बनें।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

लक्ष्मी का ख़ून

(हिन्दी गल्प लेखक श्री विश्वम्भर सहाय प्रेमी वैदिक धर्म विशारद)

सायं काल के पौने सात बजे ही थे कि एक देवी जिसके वस्त्र रुधिर से सने हुवे थे सहारनपुर की गाड़ी से गाज़ियाबाद रेलवे स्टेशन पर उतरी। उसके आगे-आगे एक यवन वृद्धा थी पीछे दो आर्मड पुलिस के सिपाही थे। देवी किसी विशेष कष्ट के कारण कराहती थी। रेल से उतरकर दोनों सिपाही एक बैंच पर बैठ गये। तथा वह देवी नीचे फ़र्श पर गहरी सांस भर कर लेट गई। मैं भी इसी गाड़ी से उतरा था। रुधिर से भीगी धोती देख कर मेरी व्याकुलता बढ़ गई थी। मैं भी उसी बैंच पर मलिन मुख बैठ गया।

पांच सात मिनट के बाद चौंक कर देवी ने कहा "अरे! ओ भाई मुझे बड़ी भूख लगी है, प्यास के मारे दम निकल रहा है। कुछ दो।"

तीनों ने आपस में विचार किया कि ऐसी दशा में क्या देना चाहिये। उन में से बूढ़ी ने कहा "दूध चाय दो। थोड़ी रोटी भी दे दो।"

देवी ने फिर गहरी सांस खींच कर कहा—क्या मुझे भूखी ही मारोगे? हाय मैं तो कभी इस तरह खाने के लिये न तरसा करती थी।"

मैंने उस एक सिपाही से धीरे से कहा "भाई इसे कुछ न कुछ खाने को दो। इसे पानी पिलाओ यह तड़प रही है। इस पर दया करो।"

उन दोनों सिपाहियों में से एक यवन था। दूसरा बूढ़ा सिक्ख प्रतीत होता था, जिसने पास से चार पैसे की दो रोटियां लेकर उस देवी के हाथ पर रख दीं। देवी ने आह भर कर उनको खा लिया। उस के पश्चात् मिट्टी के एक छोटे से बरतन में उसे पानी दिया गया। फिर तो उस में कुछ शक्ति आगई। डबडबाते नेत्रों से उसने अपनी दुःख-मय अवस्था प्रगट करनी प्रारम्भ की।

इस समय तक मैंने उस देवी से कोई भी प्रश्न न किया था। मैं तो इसी विचार में निमग्न था कि परमात्मा! यह क्या विचित्र घटना है। यह सुकुमारी इस प्रकार रुधिर में क्यों सनी हुई है। इस पर कौन सी विपत्ति पड़ी है? मैं इन बातों को विचार ही रहा था कि देवी फिर कहने लगी? हाय मैंने कभी इस प्रकार ज़मीन पर पैर नहीं रक्खा था। बदन पर कभी रेशम था। आज बद-बूदार कपड़ा। हाय मैं तो पिश्ते खाती थी पर आज यह उबला हुआ मटर खाने को मिला। जेल की सड़ी रोटी— सरसों का साग। अरे..... मुझे अगर यही खाना मिला तो मैं मर जाऊँगी। मैं नहीं बचूंगी।" इसके पश्चात् वह देवी कुछ उन्माद की हँसी-हँस कर और मूर्छित होकर फिर लेट गई।

मुझे इस समय तक कुछ भी पता नहीं चला कि क्या बात है। बार बार यह धारणा करता था कि इन सिपाहियों से पूछूं परन्तु फिर कुछ विचार कर चुप चाप गहरी साँस लेता और उसकी ओर देखने लगता। दश बारह मिनट बीत चुके थे। बुढ़िया ने चाय बेचने वाले से चार पैसे की चाय लेकर उस देवी को दी। उस ने चाय कुछ पी और शेष फेंक दी। फिर उस ने दुःखित शब्दों में कहा— मुझे पगली लिखाया है। हाय मेरी तो शादी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

तहसील दार के घर हुई थी पर मेरा दुर्भाग्य कि वह चल बसा। क्या करूं किस्मत कहाँ ले आई। मुझे जेलखाने भेजा गया। सब कुछ सही पर उस बुड्ढे के यहां नहीं जाऊँगी। धोखा खाया। बेचने वाले कमबख़्त अभी मरे नहीं हैं। दुष्टों ने दो सौ रुपए को बेचा। हाय मेरी बच्ची"। इतना कह कर फिर व्याकुल दशा में पड़ गई। एक दो मिनट बीतने पर वह फिर चैतन्य हुई और धीमे स्वर में कहने लगी— "माई लार्ड! मैं तो फूल— अरे गुलाब के फूल से भी अच्छी थी। मैं तो कसीदे का काम जानती हूं। उम्दा से उम्दा फ्राक सीं सकती हूँ। उसके पास न जाऊंगी। मैं तो हिन्दी उर्दू पढ़ी हूँ। लड़कियाँ पढ़ाऊंगी पर वहाँ न जाऊंगी। अरे बूढ़ा मुझे पागल लिखाता है। मैं उन्मादिनी नहीं! नहीं!! लक्ष्मी देवी! तेरी तो संसार पूजा करता है।

इसी समय मूछों पर हाथ फेरते हुए एक यवन ने कहा— यह तो कञ्जरी है। देखो क्या मक्कारी दिखा रही है।

मुझे उसके इन शब्दों पर क्रोध आया और पूछा— "आपको मालूम है?" मेरे प्रश्न का उत्तर भी उसने नहीं दिया था कि वह देवी, जिसका रुधिर अभी जारी था, क्रोध में बोली— दुष्ट! सीता हूँ। साध्वी सीता हूँ। भस्म कर दूँगी। कञ्जरी बताता है। अरे द्रोपदी के पाँच पति थे। मैंने तो दो ही किए हैं एक चल बसा दूसरा मौजूद है। हैं! मैं तो उसे भी कृष्ण मानती हूँ। पागल लिखाया! पागल!! अरे मुझे पागल न लिखाता तो मैं उसी के चरणों की पूजा करती। एक लड़की है। दूसरा मेरा बच्चा मर गया। चल कमबख़्त! यहाँ से हट! मैं तो फ़ातिमा बेग़म बन कर मजे उड़ाती अगर कञ्जरी बनना मञ्जूर होता।"

मैंने सिपाहियों से कहा— भाई। इसका ख़ून बन्द नहीं होता। कहाँ से लाए हो? इन आदमियों को क्यों बोलने देते हो? हटा क्यों नहीं देते? इसकी हालत तो वैसे ही ख़राब है। ये लोग क्यों छेड़ते हैं?

वृद्ध सिपाही × × ने उन्हें हटाया और नम्र शब्दों में कहा लक्ष्मी देवी चुप पड़ी रहो अब गाड़ी थोड़ी देर में आती है। यह कह कर वह तो अपने खाने में लग गया। थोड़ी देर बाद अलीगढ़ की ओर जाने वाली गाड़ी की घण्टी बजी। उस देवी ने फिर बड़बड़ा कर कहा— मैं तो देहली के खत्री × × की बेटी थी। मैं तो मुलतान भी अच्छे घर में ही गई पर वहाँ मेरे भाग्य फूटे। मैं तो खुद किस्मत को फोड़ कर भागी और धोखे में आकर × × में रेल के बाबू × × के कब्जे में पड़ी। हाय मैंने धोखे में व्याह न किया होता तो मेरे लिए पच्चीस वर्ष का ख़ूब सूरत नौजवान मिलता। मैं इक्कीस साल की वह बूढ़ा पचास साल का। मैं तो × × जेल में जंट से कलक्टर से, जेलर से, सब से कह आई कि मैं इस × × के नहीं जाऊंगी। मर जाऊंगी। जेल की रोटी तो भाई खाई नहीं जायगी— फिर वह देवी दर्द के कारण बेचैन हो गई।

फकफक करती हुई देहली की ओर से गाड़ी आ पहुँची। उन दोनों सिपाहियों ने उस देवी को तथा बुढ़िया को एक ऐसी गाड़ी में जिस में मन्द प्रकाश था चढ़ाया। मैं भी उस गाड़ी में गुरुकुल सिकन्दरा बाद जा रहा था। ठीक उसी डब्बे में जाकर बैठ गया। मैंने खाना बेचने वाले से कुछ भोजन लिया। उस देवी ने बड़े कातर स्वर में दूर से ही कहा— ओ गाढ़े की टोपी वाले बाबू! थोड़ा हमें भी दे दे।" मेरा हृदय अनेक विचारों में डूबा हुआ था, मैंने अपने को संभाल कर प्रेम और सहानुभूति का विचार किया। उसे कुछ खाने को दिया। देवी ने गाड़ी में बैठे बैठे कुछ खाया और

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ठण्डी साँस भर कर तख्ते पर लेट गई। मेरा बहुत देर से विचार हो रहा था कि मैं उसे कोई वस्त्र दूँ। मेरे पास सिवाय एक चादर और एक धोती के कुछ नहीं था। मैंने उस देवी की आवश्यकता को अनुभव कर के वह गाढ़े की मोटी धोती तथा गाढ़े की छोटी चादर उसे दे दी। उन दोनों को पाकर देवी कहने लगी— लक्ष्मी देवी तेरा भाग्य जगा। महात्मा गाँधी के सेवक ने तुझे शुद्ध खद्दर दिया। मैं तो एक दिन उसके दर्शन करूँगी। मैं तो अंग्रेजी भी पढ़ लेती पर मेरा भाग्य!

मेरी समझ में बहुत कुछ घटना का रहस्य आगे लगा था। देवी की अवस्था बीस वर्ष से अधिक थी। रङ्ग गोरा। कद न लम्बा न छोटा; सुन्दर मुख विपत्ति पड़ने पर भी यद्यपि फीका पड़ गया था। परन्तु फिर भी सुन्दर ही प्रतीत होता था। मैं यह समझ गया था कि देवी विधवा होने पर × × में महाशय × × जी से पुनः ब्याही गई है। सम्भव है वह महाशय अधिक वृद्ध हों। इस देवी के मस्तिष्क में किन्हीं कारणों से कुछ विकार है। जेल भी भेजी गई। और इस समय वह जेल से आगरे के पागल खाने (Mental Hospital) ठीक होने जा रही है। मेरी आँखों के सामने वृद्ध विवाह का घोर परिणाम भी मूर्तिमान हो रहा था। देवी फिर गाड़ी में पड़ी पड़ी बड़-बड़ाने लगी—"× × मैं तुझे दो मुंह की सर्पिणी बन कर डसूंगी। तूने मेरा सारा सौन्दर्य नष्ट कर दिया। तुझे उम्दा से उम्दा भोजन बना कर खिलाए। पर तूने मेरा भागना लिखाया, गङ्गा में डूब कर मर जाना लिखाया। मुझे घर से भाग जाने वाली लिखा कर जेलख़ाने भिजवाया। वहाँ की हालत देखकर तो मैं डर गई हूं। मेरे कृष्ण × × तेरा पीटना अच्छा। अरे भाई मुझे उसी के पास पहुँचा दो।" उसने कुछ देर चुप होकर फिर कहा-धर्म क्या रहगया? न जाने किस किस का खाना पड़ेगा। कपड़ा नहीं। मैंतो फटे हुए रेशम से पैर पोछाँ करती थी चाँदी के गिलास में नौकर पानी पिलाया करता था। लक्ष्मी देवी! लक्ष्मी!! तुझे ठुकराकर कौन बच सकता है? फिर भी तेरी चाह में यहाँ पड़े हुए हैं।

इस समय बहुत से अपशब्द भी क्रोध में आकर उस देवी ने उच्चारण किए। परन्तु मुझे उन से भी यही प्रतीत होता था कि उसके हृदय पर गहरी चोट है। दाम्पत्य सुख से वञ्चित महिला उन्मादिनी हो गई है। कभी कभी उसने पीड़ा—वश चीखें भी मारीं। कभी वह स्वामी दयानन्द का नाम लेती और कभी महात्मा गाँधी जी का गुण गान करती। बड़े उत्तम उत्तम भजनों के पद उसने मुख से उच्चारण किए। दो बार उसने दर्द भरा एक पञ्जाबी गीत भी कहा। उसने यही कहा "धर्म नहीं छोड़ूंगी चाहे जान तन से निकले"। मैं तो अच्छी होने पर स्कूल खोलूंगी। अपनी बहिनों को पढ़ाऊँगी। मेरे तो सब भाई हैं। एक दिन वे लक्ष्मी के पैरों की पूजा करेंगे। मैं तो वहाँ मेम को भी भजन सुनाया करूँगी।"

मेरे उतरने का स्टेशन आ गया। बूढ़े × × × सिंह सिपाही ने मेरे प्रति बड़ी कृतज्ञता प्रगट की— देवी का कण्ठ सूख गया था। देवी ने कई बार कहा कि उसके बड़ी पीड़ा है। बीस दिन से रुधिर जा रहा है। कुछ भी हो परन्तु हमें खेद है कि जेल कर्मचारियों ने उसको बिना कपड़ों का प्रबन्ध किए भेजा। अभागे हिन्दू समाजमें न जाने कितनी लक्ष्मियां इस प्रकार का पाशविक अत्याचार सहन कर रही हैं। मेरे गाड़ी से उतरते समय उस देवी ने फिर कुछ शब्द उच्चारण किए—गाँधी के सेवक तेरा भला होगा। तूने मुझे गाढ़े का कफ़न दिया है। हाय! लक्ष्मी देवी का खून बेकार नहीं जायगा।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कृष्ण की मित्रता

(लेखक— श्री पं० वागीश्वर जी विद्यालंकार)

(१)

"अरी ओ कन्हैया की मां ! ज़रा बाहर आकर अपने दुध मुँहे बेटे का हुलिया तो देख ।"

बालक कृष्ण को गवाल बालकों के साथ खेलने के लिये भेज कर यशोदा ने घर के किसी काम को हाथ लगाया ही था कि एक बालक को घसीटती और दोहाई देती हुई मनोरमा बाहर की ड्योढ़ी पर आधमकी। यशोदा ने भीतर से ही पूछा—मनोरमा जीजी ! क्या हुआ ? बाहर खड़ी क्यों आसमान फाड़ रही हो ? यहां आवो। बात तो कहो। मनोरमा ने झुंझला कर कहा—क्या अब भी मुझे ही कहना होगा। अरे अब तो दुनिया कह रही है । ज़रा बाहर आकर अपने दुध मुँहे बेटे का हुलिया तो देख । यह तेरा ही है या किसी और का ?

"हमारे लेखे तो गाँव के सभी बच्चे अपने हैं"—यह कहती हुई यशोदा बाहर आई। देखा कि कन्हैया सिर से पैर तक सब दही में सन रहा है। सूरत भी अच्छी तरह पहिचानी नहीं जाती। उसने तुरन्त बच्चे को गोद में उठा लिया और प्यार करने लगी।

मनोरमा—अब मुझे बातों में कैसे उड़ायगी। मैं भी रँगे हाथों पकड़ लाई हूँ। बहुत दिन तक तो यही समझती रही कि बिल्ली होगी पर आज पता चल गया कि यह बिल्ली नहीं बिल्ला है।

यशोदा—चलो अब किस्सा ख़तम करो। मैं समझा दूंगी। यह फिर तुम्हारे यहां नहीं जावेगा।

मनोरमा—तुम्हारे इस लाड़ प्यार ने ही तो इसे बिगाड़ दिया। किसी का डर ही नहीं मानता।

यशोदा—जीजी ! बच्चा लाड़ प्यार से नहीं मारपीट से ही बिगड़ता है पर मोटी बुद्धिवाले लोग धरती के बदले सूरज को ही चलने वाला समझते हैं। मैंने सुना है कि किसी देश के कानून के अनुसार वहां का राजा कोई अपराध कर ही नहीं सकता। वह ईश्वर का प्रतिनिधि माना जाता है। मेरी राय में तो स्वर्गीय साम्राज्य के अधिकारी वे राजा ये बच्चे ही हैं। लोग पहिले आप ही तो इन्हें बुराई सिखाते हैं और फिर मारते हैं। कैसा अत्याचार है।

मनोरमा—अरी ! यह अपनी भागवत किसी और को सुनाना। हम तो कसाई ही अच्छे। कोख से बच्चा तो तूने ही जना है। हम तो कहीं से पड़े हुए उठा लाये हैं। हमें प्यार करना ही नहीं आता। हम तो दुश्मन हैं, दुश्मन।

यशोदा—जीजी ! माफ़ करो। मैंने कोई बात तुम्हारा दिल दुखाने को नहीं कही थी। तुम तो यूं ही बुरा मान बैठीं।

मनोरमा—बात ही बुरा मानने की है। तुम्हें क्या ख़बर कि हम कैसे छाती पर पत्थर रख कर, खून का घूंट पीकर, अपने बच्चों को पीटती हैं। हमें इस में कोई आनन्द थोड़ा ही आता है। डण्डे ही के डर से तो लल्ला आँख के इशारे पर नाचता है। मजाल है कि सामने चूँ तो करले। तभी तो सारे गाँव में उस के भोलेपन की धूम है। अरे हम तुम्हारी तरह लाड़ प्यार के हिमायती होते तो अब तक कहीं के न रहे होते। हमारी चोटी में इतने बाल कहां कि नटखट बच्चों से रोज़ नुचवा

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सकें। गरीब ब्राह्मण ठहरे। दिन भर दौड़ धूप कर खाने को जुटाना पड़ता है। मचलने पर बच्चे को न पीटें तो सुबह से शाम तक उसी के हो रहे।

यशोदा—मारपीट से बच्चा सुधरता नहीं, ढीठ हो जाता है। जिस घोड़े को सदा चाबुक से चलाया जाता है वह इशारे को समझ ही नहीं सकता। इतना ही नहीं—मार के डर से बच्चा बुराई को छोड़ता तो है नहीं पर उसे ही छिप कर करने लगता है। यह और भी बुरा है। इस से वह डरपोक हो जाता है और झूठ तथा चोरी भी सीख जाता है। इस लिये बच्चे को प्यार से समझा कर उसके अन्दर आत्म सम्मान का भाव पैदा करना चाहिये

इसी समय दूर से आते हुए सुदामा को देख कर मनोरमा बोली—देखो, लल्ला आ रहा है। आहा कैसा सीधा लड़का है। मानो मुँह में ज़बान ही नहीं।

यशोदा—मुँह में जबान न होना तो कोई अच्छीबात नहीं। यों तो मुर्दा सबसे अच्छा रहेगा। उसकी कोई भी इन्द्रिय काम नहीं करती।

मनोरमा— तुझे की बाल की खाल निकालनी तो खूब आगयी है कन्हैया की माँ!

यशोदा—और तुम्हें बालक की खाल निकालनी। क्यों ठीक है न?

मनोरमा ने कितनी ही आँख मटकाई कि सुदामा यशोदा को प्रणाम कर अपने विनय की परीक्षा दे पर मानों उसने देखा ही नहीं। वह दौड़ कर यशोदा को लिपट गया। मनोरमा के क्रोध का ठिकाना न रहा। वह दांत पीस कर मारने को आगे बढ़ी ही थी कि सुदामा खिलखिला कर हंस पड़ा। उसने अपना कुर्ता-टोपी उतार कर फेंक दिया। देख कर मनोरमा भौंचक सी रह गयी और होंठ काटने लगी। अरे यह तो कन्हैय्या है। और जिसे अब तक कन्हैय्या समझ रही थी वह "दूध का धुला" उसी का बेटा सुदामा है। दोनों एक दूसरे का मुँह ताकने लगीं। कन्हैय्या ने कहा—पण्डतानी जी! पालागन। हार मानो और सुदामा भैय्या को हाथ न लगाने की कसम खाओ तो अभी घुँडी खोल दूं, नहीं तो हमारी तुम्हारी छत्तीस।

यशोदा ने कहा—कन्हैय्या! मौसी को और मत चिड़ाओ। तुमने पहिले ही इनका सवा, डेढ़, पौने दो सेर दही खराब कर दिया है अब जले पर नमक न लगाओ। हां, यह तो कहो कि तुमने यह क्या खेल खेला है। कन्हैय्या कहने लगा—अम्मा! बात यह है कि अब हमारे गाँव के लोग अपनी पुरानी चाल छोड़ रहे हैं। जो दही मक्खन हमें खिलाना चाहिये था, पैसे के लालच से वे उसी को मथुरा की गलियों में ले जा कर बेचते हैं। यदि हम खूब दही मक्खन खा कर मोटे ताजे न बनेंगे तो पापी कंस के राज्य को कैसे तहस नहस कर सकेंगे। हमने कई बार कहा भी कि यह काम बुरा है। पर जब किसी के कान पर जूं तक न रेंगी तो हमारी हनुमान मण्डली ने मिल कर यही सोचा कि जिस घर में बेचने के लिये गोरस इकट्ठा किया जावे वहीं जाकर छापा मार लो। कोई देखने वाला दूर से पहिचान न सके इस लिये हम आपस में एक दूसरे से कपड़े बदल लेते हैं। आज सुदामा भैय्या के घर की बारी थी। कपड़े बदल कर, खूब मौका ताक कर हम पहुँचे। पर छींका बहुत ऊँचा निकला। नीचे ऊखल रख कर उस पर सुदामा को चढ़ाया गया। यह इस लिये कि जिसकी चीज़ होती है, वह हम उसी के हाथ से लेकर, बांट कर खाते हैं ताकि हमें चोरी आदि का दोष न लगे। अभी हँडिया पकड़ी ही थी कि किसी के आने की आहट हुई।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जल्दी में वह आँधी हो गई और सारा दही उलट कर इनके सिर पर आ पड़ा। हम सब, सिर पर पैर रख कर भागे। ये ऊखल से उतरते हुए गिर पड़े और पकड़े गये। अब अम्मा! तुम ही कहो कि इस में हमारा कितना दोष है।

यशोदा ने कन्हैया को गोद में उठाकर उसका मुंह चूम लिया। उधर लड़के का हाथ पकड़ मनोरमा ने हाईकोर्ट में हारे हुए मुद्दई की तरह अपने घर की राह ली। सुदामा डर के मारे अब तक थर-थर काँप रहा था। उसमें बोलने की शक्ति न थी। तो भी एकबार उसने मन-ही मन सोचा कि कृष्ण की मित्रता में सुख है या दुःख?

(२)

तीसरे पहर का समय था। कुछ अधिक देर न हुई थी। थोड़ी-सी ठण्डक पड़ी देखकर छाया और मुसाफ़िर, वृक्षों के नीचे से निकल कर लम्बे हो ही रहे थे कि ग़रीब को बुढ़ापे की तरह, दिन को अँधेरे ने बेवक्त में ही घेर लिया। गुरूजी ने कहा था कि वर्षाएँ शुरू होनेवाली हैं। फिर सूखा ईंधन मिलना मुश्किल हो जावेगा। इसलिये जल्दी ही बरसात के लायक लकड़ियाँ जमा कर लो। इसलिये कृष्ण, सुदामा आज शिप्रा नदी के दूसरे पार जंगल में बहुत दूर निकल गये। "यह लकड़ी बहुत अच्छी है—एक तो और लेलूं--जब तुमने एक और ली है तो मैं क्यों न लूं, तुम्हारा बोझ बड़ा हो गया मेरा अभी छोटा ही है।" इन्हीं बातों में उन्होंने बहुत लकड़ियाँ जमा कर लीं। बोझ उठाकर सिर पर रखने को ही थे कि बादल ने कहा—पहले मैं बरस लूँ तब चलने का नाम लेना। आकाश एकदम फट-सा पड़ा। मालूम होता था कि अब बरस कर फिर न बरसेगा। रह रह कर बिजली कड़कती थी तो दिल दहल जाता था। चारों ओर पानी ही पानी होगया। अब रहे सहे प्रकाश के साथ, घर पहुंच सकने की बाकी उमीद भी जाती रही। जिस वृक्ष के नीचे ये खड़े थे उस की जड़ में एक बड़ा खोल सा था जिस के अन्दर एक आदमी मज़े से बैठ सकता था। कृष्ण ने देखा कि सुदामा पीपल के पत्ते की तरह काँप रहा है। उसके दाँत किटकिटा रहे हैं। होठ नीले पड़ गये हैं। सुदामा को उसी खोल में बैठा कर कृष्ण उस के आगे खड़े हो गये ताकि बौछाड़ भीतर न जा सके। सुदामा को कुछ आराम मिला तो होश ठिकाने हुए। उसने कहा—भाई कृष्ण! मैंने कानों को हाथ लगाया। अब तुम्हारे साथ कभी न आऊँगा। तुम्हारे ही कारण यह दिन देखना पड़ा। न घर के रहे न घाट के। एक ओर जाड़े ने नाक में दम कर रक्खा है तो दूसरी ओर भूख के मारे पेट में चूहे कूद रहे हैं। कहीं ऊपर से शेर आगया तो काम ही तमाम है। यद्यपि उन की देर का कारण सुदामा का वह लालच था जो गरीब ब्राह्मण में स्वभाव से होता है तो भी कृष्ण ने इस बात को युक्ति से सिद्ध करने की ज़रूरत न समझी और कहा—मेरे कपड़े तो तुम से ज़्यादह भीग रहे हैं। खाने को तुम्हे नहीं मिला तो मैं भी भूखा ही हूँ। और शेर आगया तो भी पहले मुझ से ही निपटेगा। तुम तो अन्दर बैठे हो। सुदामा ने कहा—इसमें भी तुम्हारी चालाकी है। ज़रुरत पड़ने पर तुम तो एक दम ऊपर चढ़ जाओगे मैं नीचे ही मारा जाऊँगा। कृष्ण ने कहा भाई! वहम का इलाज तो धन्वन्तरी के पास भी नहीं। पर इतना ज़रुर है कि यदि कोई आफ़त आई ही तो पहिले मुझ पर, पीछे तुम पर। सुदामा ने कहा— अच्छा देखा जावेगा। बोलो मत। आफ़त का नाम सुन कर मेरा दिल धड़कने लगता है। मैं सोचता हूं कि तुम्हारी मित्रता में सुख है या दुख। इस के बाद दोनों चुप होगये। सुदामा ने धोती के पल्ले से चने

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

निकाले और धीरे २ खाने शुरु किये । हवा के झोंकों और पानी बरसने के शोर में यह चोरी मज़े में चलने लगी। तो भी कृष्ण ने भांप लिया कि दाल में कुछ काला है और पूछा, भाई ! क्या तुम्हारे पास चमगीदड़ बोलता है । सुदामा ने कुछ झेंपकर कहा—मालूम तो ऐसा ही होता है। फिर रात भर कोई बात नहीं हुई क्यों कि चने खाकर सुदामा को कुछ नींद सी आगयी।

(३)

वसन्त की चांदनी रात थी। कोई मुसाफ़िर दूर पर गा रहा था। पूरे २ शब्द सुनाई नहीं पड़ते थे। भाव कुछ ऐसा था कि फूल अपने बाग और माली से अन्तिम विदाई मांग रहे हैं। कहते हैं—हम तो जारहे हैं। तुम यहीं पर आनन्द से रहो। इतने दिन तक तुम्हारी गोद में हम सब एक साथ फूले फले। आज न मालूम किसे कहां जाना होगा। अगर कोई किसी राजा के सिर पर चढ़ेगा तो कोई कहीं रास्ते में गिर कर लोगों के पैरों से कुचला जावेगा। कोई माला में गुंथ कर किसी प्रेमी के हृदय की शोभा बढ़ावेगा तो कोई किसी देवता के चरणों में पड़ कर सड़ जावेगा। गाने में दर्द था, गले में मिठास। सन्दीपन ऋषी के आश्रम में रहने वाले विद्यार्थियों का हृदय उधर ही खिंच गया। गाने वाला बहुत दूर निकल गया तो वे भी अपने भविष्य के विषय में सोचने लगे कि एक दिन ये सब फूल बिखर जावेंगे। जिनकी शिक्षा पूरी होने वाली थी वे आपस में बातें करने लगे—एक ने कहा, सुधीर ! तुम्हें क्या चिन्ता है। तुम्हारे माता पिता तो धनवान हैं। सुधीर ने कहा—जयन्त ! धनवान होने से ही किसी की सब चिन्तायें मिट नहीं जातीं। धन तो और भी अधिक चिन्ता का कारण है।

सुदामा ने कहा—भाइयो। सब से मौज में तो कृष्ण हैं। शरीर खूब हृष्ट पुष्ट है। विद्या भी अच्छी पढ़ी है। एक बड़े राज्य के उत्तराधिकारी हैं। कृष्ण ने कहा—भाई सुदामा ! मेरे रहते तुम्हें ही किस बात की चिन्ता है। तुम्हारा जो कुछ है वह सब हमारा है और हमारा तो हमारा है ही। अजी हम में तुम में फ़र्क ही क्या है। सब ने कहा—वाह ! ठीक कही।

सुदामा बोले—भाई पैसा हाथ में आने पर तुम हमें कहां याद करने लगे। सामने पड़ने पर पहचान भी न सकोगे। द्रुपद ने भी तो द्रोण को बड़े सब्ज़ बाग दिखाये थे। पर मौका पड़ने पर सीधे मुंह बात तक न की। कृष्ण ने कहा—सब द्रुपद ही नहीं होते। सुदामा बोले—अच्छा अभी बहुत उमर बाकी है कभी परीक्षा हो ही जावेगी। इसी तरह की बातें करते २ सब सो गये।

(४)

भीतर आकर दरबान ने श्री कृष्णचन्द्र जी से कहा—महाराज !

शीस पगा न झगा तन में
प्रभु जानें को आहि बसे केहि ग्रामा
धोती फटी सी लटी दुपटी
अरु पायं उपानह की नहिं सामां।
द्वार खड़्यो द्विज दुर्बल देखि
रह्यो चकि सो वसुधा अभिरामा
दीन दयालु को पूछत धाम
बतावत आपनो नाम सुदामा॥

'सुदामा' नाम सुनते ही कृष्ण जी गदगद हो गये। वे सिंहासन से उतर जल्दी २ बाहर आये और दौड़ कर सुदामा से लिपट गये। देखने वाले अचम्भे में आगये कि कहां तो द्वारका पति कृष्णचन्द्र जी महाराज और कहां द्वार २ का

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

भिखारी गरीब ब्राह्मण ? बड़े प्रेम से अन्दर लाकर कृष्ण जी ने सुदामा को अपने सिंहासन पर बिठाया। पैर धोने के लिये जल मंगवाया और बात चीत करने लगे।

ऐसे बिहाल बिवायन सों भये
कंटक जाल लगे पगजोये
हाय महा दुख पाये सखा तुम
आये इते न कि ते दिन खोये।
देखि सुदामा की दीन दशा
करुणा करिके करुणानिधि रोये
पानी परात को हात छुयो नहिं
नैनन के जलसों पग धोये॥

उचित शिष्टाचार के बाद कृष्ण जी ने पूछा— मित्र ! यह तो कहो—भाबी ने हमारे लिये क्या भेजा है ? सुदामा की स्त्री ने पड़ौस से मांग कर मुट्ठी भर चावल पल्ले में इस लिये बांध दिये थे कि किसी के घर ख़ाली हाथ नहीं जाना चाहिये। पर इतने लोगों के ठाटबाट में उन चावलों को खोलते हुवे सुदामा शरमा गये। कृष्ण जी बोले— भाई सुदामा ! हमारी भाबी ने कुछ मालताल भेजा ज़रूर है। तुम उसे भी वैसे ही हज़म कर जाना चाहते हो जैसे उस दिन रात को गुरुमाता जी के दिये हुवे चनों को। तुम्हारी यह चोरी की आदत क्या अब तक भी न गई। यह कहते हुवे कृष्ण जी ने सुदामा की बगल पर हाथ मारा। सुदामा चारों ओर देखते और पोटली को भीतर ही भीतर छिपाते जाते थे। पर श्री कृष्ण से पाला पड़ा था। वे कब मानने वाले थे। उन्हों ने पोटली छीन ही ली। इस छीना झपटी में पोटली फट गई और चावल बिखर पड़े। श्री कृष्ण उन्हें ही उठा कर बड़े चाव से चबाने लगे।

कुछ दिन तक सुदामा द्वारकापुरी में बड़े ही आराम से रहे। नित्य नये २ प्रकार के भोजन उनके लिये बनते थे। सोने के लिये ऐसे बढ़िया मुलायम गदेले बिछाये जाते थे कि आंख पड़ने से नीचे को लचकते थे। सोने चांदी के हौदों से सजे हाथियों पर सवार होकर हर रोज़ सैर को निकलते थे। जो सुख उन्होंने स्वप्न में भी न देखे थे अब उन्हें ही अनुभव कर रहे थे। यह सब होने पर भी एक चिन्ता उनके मन में लगातार खटकती रहती थी। वह यह कि असली उद्देश्य—जिसके लिये सैंकड़ों मील चल कर द्वारका आये हैं कृष्ण जी को कैसे कहें। कह कर भी यदि काम न बना तो कहीं मुँह दिखाने को न रहेंगे। न कहते बनता था न नकहते। अन्त में एक दिन चलने की ठान ही ली। बहुत आग्रह करने पर श्रीकृष्ण जी ने बड़े ही आदर सत्कार के साथ उन्हें विदा कर दिया पर तब भी यह न पूछा कि आप यहां आये किस लिये थे।

(५)

सुदामा मन ही मन झींखते जाते थे। और सोचते थे— क्या मेरी हालत आँखो से देख कर भी किसी को मेरे उद्देश्य के विषय में कुछ कहने पूछने की ज़रूरत बाकी रह जाती है। मैं तो अपना आयना अपने आप हूं। कृष्ण ने जान बूझ कर मक्कारी की है। सोये हुवे को तो जगाया जा सकता है पर मचले हुवे को कौन जगावे है। ओह ! वह कैसा भोला बना रहा। अब समझ रहा हूं। मेरा इतना सत्कार भी उसने अपनी शान दिखा कर मुझे चिढ़ाने के लिये ही किया था। अरे, मैं तो पहिले ही न जाता था। उसे कितना ही समझाया कि जैसे इतने दिन-कटे हैं, रहे सहे भी वैसे ही काट लें। पर वह कर्कशा कहां मानने वाली थी। मुझे ज़बरदस्ती ठेल ही तो दिया। अब जाकर कहूँगा कि अरी भागवान ! जल्दी कर। देख तेरे देवर ने बहुत धन छकड़ों में लाद कर भेजा है जल्दी २ समेट

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कर रखले। हाय जब अपना सा मुँह लिये ख़ाली हाथ गांव में पहुँचूगा तो लोग फबतियां उड़ाएंगे। इससे तो अच्छा है कि चुल्लू भर पानी में डूब मरूं। देखो तो कृष्ण का हृदय भी कैसा कठोर निकला। बचपन की वे सब बातें एकदम भूल गया। मुझे थोड़ा सा देदेने में उसका क्या घिसा जाता था। चलो जो होना था सो होगया था यह ख़ाक भी छाननी थी छान ली। जिसे परमात्मा ने ही नहीं दिया उसे कौन दे सकता है? पर कृष्ण की धूर्त्तता पर भी क्रोध आए बिना नहीं रहता। तो क्या शाप देकर उसे भस्म करदूं--या—नहीं--अपना बोया अपने आप काटेगा। चलते हुए एक पैसा भी तो नहीं दिया। अच्छा, जैसा उसने हमें दिया. भगवान उसे भी वैसा ही दें।

(६)

बहुत दिनों का लम्बा सफ़र तै कर सुदामा अपने गांव पहुँचे तो रास्ता भूल गये। किसी अनिष्ट की आशङ्का से उनका दिल कांप उठा। देखा कि उनके टूटे फूटे छप्पर की जगह किसी ने अपना बड़ा आलिशान महल खड़ा करलिया है। चारों ओर नौकर चाकर और हथियार बन्द सिपाही घूम रहे हैं। सुन्दर बग़ीचे में तरह २ के फूल खिल रहे हैं और फुहारे छूट रहे हैं। उन्होंने डरते २ एक आदमी से पूछा तो पता चला कि यह मकान किसी और का नहीं उन्हीं का है। वे सोचने लगे कि अपना परिचय कैसे दिया जावे। इन फटे पुराने कपड़ों में अपने आपको सुदामा कहूँगा तो ज़रूर ही जालसाज़ समझ कर लोग मेरी हड्डी पसली तोड़ देंगे।

इसी समय महल की खिड़की के सामने अचानक आई उनकी स्त्री ने दूर से ही पहचान लिया और उन्हें लेने के लिये नीचे आई। जड़ाऊ गहनों से जगमगाती और ज़रदोज़ी साड़ी से झल झलाती नवयौवना कामिनी को अपने आगे झुकते देख पर-स्त्री की शंका से सुदामा पीछे हट गये। स्त्री ने नम्रता से कहा—स्वामिन! आप सन्देह न करें। यह आप की वही दासी है जिसने आपको द्वारका भेजा था। आप की साधना पूरी हुई। अपने बालसखा कृष्ण भगवान का धन्यवाद कीजिये जिन्होंने जीते जागते यह अद्भुत स्वप्न दिखला कर अपनी पुरानी मित्रता को निभाया है। सुदामा का हृदय गदगद होगया। उन्होंने कुछ देर के लिये आंखे बन्द कर लीं शायद उन्हें डर था कि यह सुख स्वप्न कहीं जल्दी ही मिट न जावे।

"धन्य कृष्ण! तुम्हारी मित्रता"

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वशीकरण

[ले० श्री० ब्र० धर्मेन्द्र जी द्वादश श्रेणी]

(१)

"ओ नृशंस, ओ पापी तुझे शर्म नहीं आती—इस अबला पर तू अपने हाथ दिखाकर कौन-सी बहादुरी समझ रहा है ? क्या तुझे खुदा का डर नहीं ? दिन-दहाड़े तुम ऐसा काम कर रहे हो और उस पर तुर्रा यह कि रोके भी न ही रुकते—उत्साह, दुःसाहस की पराकाष्ठा—"

"ज़्यादा बक-झक न कीजिये नहीं तो आपको भी दो-तीन जमा दूँगा, बेतुकी न हाँकिये, होश सँभालकर बोलिये—आप कौन होते हैं रोकने वाले—आपसे हज़ारों को एकबार की लपेट में ऐसे फेंकूं कि पता भी न लगे कि कहाँ गये ! हम जो करते हैं सो ठीक करते हैं—औरतें तो हैं ही इसी लिये।"

"इस शेखी से काम नहीं चलने का, बातें बनाना तो हम भी ख़ूब सीखें हैं पर तुमने तो कमाल कर दिया—ज़िस्म तो इतना पतला है कि हवा के झोंके से भी रुई की तरह उड़ जाये, न इधर का रहे और न उधर का—किसके बल पर इतनी टींटाँ कर रहे हो ?"

"अपना रास्ता देखिये नहीं तो आपका नामो-निशान न रहेगा —बस आपकी बहुत सुन ली और ज़्यादा नहीं सुन सकता—आपको क्या मतलब—हम अपनी मर्ज़ी के मालिक हैं जो दिल में आएगा सो करेंगे किसी की बात न सुनेंगे।"

"गर्दन नापने की धमकियाँ किसी और को सुनाइयेगा—यहाँ तो यह चाल न चलने की। तुमसे एक नहीं लाखों देखे—सबकी यही करतूत है—जिसको देखा उसी पर रोब जमाने की कोशिश—अगर रोब न जमे तो लल्लो-पत्तो से ही काम चलाया।"

"अपने को बड़ा दुनियादार बताते हो तो इससे क्या ? हमें तुमसे बहुतेरे माई के लालों से वास्ता पड़ चुका है—हम वैसे नहीं जैसे तुम समझते हो। इस औरत को हम तुम्हारे देखते-ही-देखते भगा ले जाएँगे। ताक़त हो तो बचाना।"

"आजमाइये अपनी ताक़त—अपनी ताक़त का ग़रूर हो तो आइये दो-दो हाथ हो जायँ—खुला निमन्त्रण है। आवे जिसका जी चाहे—हमने भी माँ का दूध पिया है—देखें तुम्हारे कारनामे—क्या-क्या करतब कर सकते हो ? औरत को बचाएँगे या जान देंगे।"

बस, फिर क्या था दोनों में हाथापाई हो गई—दोनों मँजे पहलवान थे—एक ने पेंच खेला दूसरे ने उसे काट डाला। कुछ देर तक दोनों डटे रहे, हल्ला-गुल्ला मच गया। शहर में इस गुत्था-गुत्थी का समाचार बिजली की तरह फैल गया। ठट्ठ का ठट्ठ जमा हो गया, इसी अवसर पर पोलीस भी आ धमकी। दोनों को बड़े-घर ऐशो-आराम करने के लिये उसके चिन्ह-स्वरूप पहले ही लोह-कंकण (हथ कड़ी) और अयोनूपुर (बेड़ी) बिना किसी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

तकल्लुफ़ के पहना दिये गए। औरत को भी साथ ले गये।

(२)

आज बच्चे से लेकर बूढ़े तक सब की ज़बान पर यह समाचार था— सब इसीपर आलोचना कर रहे थे।

एक ने कहा—ये मुसल्ले बड़े ख़राब हैं स्त्रियों को कुछ समझते ही नहीं।"

दूसरे ने कहा—"उसने तो हद्द कर दी। कहने लगा। ये हमारे ऐशो अशरत के लिये हैं।"

तीसरा—"फिर देखो न कितना साहस कि दिन-दहाड़े ही आप अपना काम किये जा रहे थे और डर का नामोनिशाँ नहीं।"

चौथा—"फिर भले आदमी से लड़ाई करने लगा—उसने आव देखा न ताव और लगा लड़ाई करने।"

पाँचवा—"जब पोलीस आई तो कहने लगा—मैं इस औरत को घर पहुँचाने जा रहा था। इतना सफ़ेद झूठ!"

छठा—"इन मुसलमानों को देखो तो उस पर फूल फेंक रहे थे—इन गधों की अक्ल में इतना न आया की यदि कोई हमारी जोरू की आबरू उतारता तो हम उससे क्या सलूक करते!"

सातवाँ—"फिर कान्स्टेबिलों को भी तो देखो कि हिन्दू के पाँच हन्टर और मुसलमान के तीन हन्टर रसीद किये—भला यह कहाँ का न्याय?

आठवाँ—"ज़माना ही ऐसा है—जातिगत विद्वेष ने ऐसा घर किया है कि विजातीय विजातीय से ऐसी घृणा करता है जैसे मरीज़ कुनीन से।"

नवाँ—"प्रस्ताव तो बड़े पास होते हैं पर अमल किसी पर नहीं होता। हाल ही में तो एक मीटिंग हो चुकी है और उसमें हिन्दु मुस्लिम-ऐक्य के प्रस्ताव पास हुवे हैं और इधर यह हाल, सचमुच कमाल है।"

दसवाँ—"अजी ये प्रस्ताव देहली शहर का नमूना अन्दर मिट्टी बाहर चूना से किसी कदर घट कर नहीं— उधर मुसलमान तो ऐसे प्रस्ताव पास करते हैं कि हिन्दुओं का बायकाट करो—कोई चीज़ काफ़िरों की दुकान से मत लो और इधर मीटिंग में आते ही ये ऐक्य के प्रस्ताव कुछ समझ नहीं पड़ता— कैसी धोखे बाज़ी है।

मतलब यह कि—

जितने मुंह उतनी बातें।
जितने हिन्दू उतनी जातें—

\+ + +

(३)

कचहरी लगी है— भीड़ इतनी कि थाली उछालिये तो सिर पर गिरे— किसी की नाक भिची जा रही है और किसी का सिर। पर मजाल कि कोई अपनी जगह से टस से मस तो हो—मामला कचहरी में पेश था—गवाह अपने २ बयान दे रहे थे—वकील भी अपने २ मुद्दईयों की पैरवी कर रहे थे। मुसलमान जज दोनों ओर की बातें सुन रहा था—अब औरत ने अपना बयान देना शुरू किया—उसने कहा— मैं चाची के यहां जा रही थी—घर से सौ एक कदम आई थी कि यह मुसलमान रास्ते में मुझ से छोड़ छाड़ करने लगा—इधर से ये भले आदमी आ पहुँचे और फिर इन्होंने इसे टोका—पर यह न माना और तकरार होगई। इसी बीच में पोलीस आ पहुंची और हम तीनों को यहां ले आई—आगे हजूर मालिक हैं।

जज—तू झूंठ बोलती है। इतने गवाहों में से किसी ने भी यह बात न कही। साफ २ बात कह।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

औरत—मैंने जो बात कही है उस में राई भर भी झूठ नहीं।

जज—इन बातों से काम न चलेगा। यह मुसलमान तो कहता है कि मैं इसे मामी के घर पहुँचाने जा रहा था।

औरत—कसम राम जी की जो मैंने अपनी तरफ से एक भी बात मिलाई हो।

जज—यों सच न बताओगी अच्छा तुम्हें ३० हन्टर लगाये जायंगे।

जज ने अन्त में यों फैसला दिया—

यह आदमी (हिन्दु की तरफ इशारा करके) दंगई है—इस की मर्जी जान बूझ कर झगड़ा मोल लेने की थी अतः एक साल की कड़ी कैद और ५००) जुर्माना जमानत न देने पर ६ मास की और कैद। इस औरत को ३ महीने की कैद। यह यह मुसलमान बरी!

दूध का दूध और पानी का पानी हो जाने के बाद जनता तितबितर हो गई अखबारों में भी इस पर खूब चर्चा होने लगी मुसलमान सम्पादक जज की न्यायशक्ति की प्रशंसा के पुल बांध ने लगे। पर हिन्दु बेचारे इतना ही लिख कर रह गये—

न्याय ठीक न हुआ—आंखों में धूल झोंकी गई—बीसवीं सदी और फिर ऐसा काम—सरकार का कर्तव्य है कि मामले की ठीक जांच करे और अपने नाम आंच न आने दे। ऐसे न्याय का हम घोर प्रतिवाद करते हैं।

फिर कमाल यह कि इस लेख को कड़ा लेख बता कर सम्पादक और मुद्रक को कैद किया गया। हिन्दु बेचारे हैरान थे—करते तो क्या करते—कुछ करते न बनता था। नम्र प्रस्ताव पास करने तक ही उन का सारा जोर था। आगे तो उनके लिए सरकार ख़ुदा के समान थी। वह जो चाहे करे—जब इस मामले का कुछ न हुआ तो इस की चर्चा बंद होगई। सब अखबार अपना पहले सा काम करने लग गये। मानों कोई बात हुई ही न थी।

(४)

सुख की घड़ी जितनी जल्दी बीतती है दुख की उतनी ही देर में। आखिरकार दिन गिनते २ कैद का वक्त समाप्त हो गया। कैदी बरी होगया। उस ने अपनी डाक्टरी की दुकान फिर से चलानी शुरू की। जेल में जा कर कई कैदी तो बुरी आदतें सीख आते हैं पर यह उन सरीखा न था। इस का दिल पहले से भी नरम होगया था। रोगी का इलाज करता था मानो अपने बच्चे की शुश्रूषा कर रहा हो। गरीब आते तो उन को मुफत दवा देता। मासिक आमदनी तीस रुपये होती पर मजाल जो किसी से भी धोखा करे। उस की डाक्टरी की करामात गरीब २ के मुँह पर थी। जिसे देखो वही उस की तारीफ करता था—पर उस को देखो तो वह पहले सा ही था। अपनी तारीफ़ से फूलता न था—होते २ यह बात उस जज के कानों तक भी पहुँच गई। उस की औरत उसी दिन से जिस दिन कि ऊपर लिखे केस का फैसला दिया गयाथाबीमोर थी। उसे बड़ी बदहज़मी थी। दो रोटी खा लेती तो तीन दिन में हजम होतीं—कोई भारी चीज तो गले से नीचे उतरती ही न थी—जज ने नामी ग्रामी डाक्टरों का इलाज करवा लिया—बहुत रुपये ख़र्च किये। पर कुछ न हुवा। ज्यों २ दवा की त्यों २ मर्ज बढ़ता गया—वे दोनों ही निराश हो चुके थे। पर आज ज्यूं ही एक और डाक्टर की प्रसिद्धि सुनी तो फिर जान में जान आगई। जज अपने आप डाक्टर साहब के पास गये और कहने लगे "मेरी बीबी को बहुत दिनों से

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बदहज़मी है—सब से निराश होकर आपके यहां आया हूँ—आप की बड़ी तारीफ़ सुनी है—आप रोग अच्छा करदें तो बन्दा ज़िन्दगी भर आपका गुलाम रहेगा और जो हुक्म होगा उसे बजालावेगा।"

डाक्टर ने कहा "जज साहब! देखिये मैं अपनी तरफ से कोई बात उठा न रक्खूंगा। इलाज तो मेरे हाथ है पर आगे भगवान् मालिक हैं—फ़ीस तब तक न लूंगा जब तक रोगी का मर्ज़ ठीक न हो जावे।"

जज ने कहा "अच्छा आइये चलिये"—डाक्टर ने उसकी ओर को देखा और उस का इलाज करना शुरू किया? ईश्वर की कृपा से और डाक्टर के इलाज से मरीज़ का रोग ठीक हो गया।"

जजने कहा—"अब आप अपनी फ़ीस और इनाम लीजिये।"

डाक्टर—"मेरी शकल बदल गई है अतः आप मुझे नहीं पहचान सके पर मैं आपको पहिचान गया हूँ।"

जज—"आपका और मेरा साक्षात्कार पहले भी कभी हुआ है? पर मुझे तो याद नहीं पड़ता।"

डाक्टर—"याद करिये उस दिन की बात को याद है न वह औरतवाला मामला।"

जज—(बात काट कर) "ओह! आप वही हैं। मैं तो आपको बिलकुल न पहचान सका, आपकी शकल बिलकुल और हो गई है।"

इतना कहते ही जज डाक्टर के पाँवों पर गिर पड़ा और उसकी आँखों से निरन्तर आँसुओं की धारा बहने लगी; वह कहने लगा— "आप चाहते तो मेरी औरत को उल्टी दवाई देकर मार सकते थे पर आपने ऐसा न किया। आप चाहते तो चपत के बदले चपतवाला मामला कर सकते थे, पर आपने वह नहीं किया। आप धन्य है। डाक्टर ने उसे अपने पैरों पर से उठाते हुए कहा—'मेरी फ़ीस और इनाम यही है कि आप आगे से ऐसा न्याय का ख़ून न किया कीजिये। आपको यहाँ दण्ड न मिला तो न सही पर खुदा के दरबार में तो ऐसे न बचेंगे वहाँ तो जवाब देना ही होगा।"

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जन्माष्टमी और कृष्ण

(लेखक—श्री हरिशरण श्रीवास्तव्य 'मराल' बी. ए एल. एल. बी. वकील मेरठ)

कवि कल्पना—सृष्टि में विचरण करता हुआ कहता है "सबैदिन जात न एक समान"। योगी स्वकीय अनुभवजन्य ज्ञान द्वारा घोषणा करता है कि संसार परिवर्तन शील है"। प्रकृति-परिशीलन के पश्चात् वैज्ञानिक गम्भीर—गवेषण द्वारा इस सिद्धान्त पर पहुंचता है 'कि सुख दुख का पुष्प और कण्टक के समान साथ है,। रात्रि के पश्चात् दिन का आना अनिवार्य्य है। अमावस्या का दारुण अन्धकार पूर्णिमा की शुभ्र ज्योत्स्ना के आगमन का द्योतक है यदि प्रातः काल में देदीप्यमान सिंहासन पर आरूढ़ हो कर प्रभाकर निज समुज्वलआभा से वसुधा तल को प्रकाशित करते हैं, तो सन्ध्या समय श्रान्त—पथिक-वत्, विगत-वैभव-नृप तुल्य अस्त हो जाते हैं। ग्रीष्म में रौद्र रवि के उग्र ताप से प्रतप्त-वसुन्धरा की तीव्र-तृषा वर्षा-काल में अविरल-मेघधारा द्वारा शान्त हो जाती है। संसार-सागर सर्वदा विविध भांति के सुखःदुख, उन्नति-अवनति, उत्कर्ष-अपकर्ष, सम्पत्ति विपत्ति, की तरल तरंगों द्वारा घोर अन्दोलित रहता है। घन-घोर घटा-टोप में, गाढ़-तमोमय वायु-प्रकोप में भी चञ्चल—कामिनी सी दामिनी गगन-मण्डल को निज क्षणिक-प्रभा से आलोकित कर जाती है। इस प्रकार जिस समय अविद्या के घन-समूह से जगत् आच्छादित हो जाता है, ज्ञान के प्रकाश का अस्तित्व प्रायः लोप हो जाता है, पाप-प्रवाह में धर्म, शुभ-कर्म, कर्त्तव्य-मर्म्म बह जाता है, वासना की प्रचण्ड-मारुत प्रबल-वेग से चलने लगती है, अधर्म्म, अन्याय, भ्रष्टाचार की भयानक अग्नि में वेद-विहित उपदेशों की अन्तिम आहुति दे दी जाती है—ऐसे सामाजिक ह्रास के अवसर पर सांसारिक शोचनीय अवस्था को सुधार कर नवीन सांचे में ढालने के लिये, निज गौरव तथा उन्नति को विस्मरण कर अकर्मण्यता के गहन गर्त्त में पड़े हुये जन-समूह को कर्त्तव्य-पाठ पढाकर सन्मार्ग पर लाने के लिये, अनियन्त्रित-अन्याय की कठोरता से प्राणि-मात्र की रक्षा करने के लिये, किसी महान् आत्मा का भूतल पर जन्म होता है, जो निज वैभव-चमत्कार से संसार को चकित, स्तम्भित करके जीवन-यात्रा की समाप्ति पर काल-चक्र की कठोर, क्रूर-गर्जना युक्त मृत्यु की क्रोड़ में अन्तर्लीन हो कर परम पद प्राप्त करती है। अपने अलौकिक आलोक से विद्युज्ज्योति के समान पतित-देश का जीर्णोद्धार करके कर्त्तव्य-पथ दर्शाना ही उसका उद्देश्य होता है।

जिस समय रावण के अन्याय से विद्वन्-मण्डली, ऋषि-समाज, धर्मिक-जन-समुदाय त्रस्त हो रहा था उसी समय मर्य्यादा पुरुषोत्तम महात्मा राम ने उस दुष्ट का संहार किया। जिस समय कंसासुर के आतंक से जन-समाज भयभीत और

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उसके पापा-चरण के भार को धारण करने में असमर्थ भारत-भूमि कम्पायमान हो रही थी उसी समय योगीराज कृष्ण का जन्म हुआ, जिन्होंने उसे अधर्म्म का फल देकर पददलित कर डाला। अस्तु—

सद्योदित सूर्य्य-रश्मि की स्वर्णमयी पीताभा-ज्योति को लखकर कमलिनी खिल उठती है। नव-जात-विधु-मण्डल को अवलोकन कर विकच-बदना कुमुदिनी प्रमुदित, प्रफुल्ल हो जाती है। ऋतुराज के आगमन का हर्षित हो कर कल-कण्ठ-काकली से कोकिल हार्दिक-स्वागत करती है। निर्मल-आकाश को मेघाच्छादित देखकर मुदित-मन मयूर नाचने लगता है। यहीदशा मनुष्य की भी होती है। चिरकाल असहनीय व्यापार की कठोरता से दुःखित क्लेशित चित्त स्वाति—विन्दु को तृषित-चातकवत् एक उद्धारक की बाट जोहा करता है। ऐसी डूबती हुई नौका के कर्ण-धार के जन्म-दिवस पर कहो कितना आनन्द मनाया जाय। निश्चल सागर भी राका-रजनीश की पूर्ण-चन्द्रिका को देखकर अनुराग में उमड़ उठता है। आज जन्म दिवस है, आज जन्माष्टमी है। किस महानुभाव का इस कर्म्म क्षेत्र में आज आगमन हुआ था? उसका—जिसने कर्म्म योग की समुज्वल-प्रतिभा से धरणी-तल को जाज्वल्यमान् बनाया, उसका—जिसने संसार में अमृत-पुत्र कहला कर 'आत्मा अमर है, देह नश्वर' का सच्चा उपदेश-दिया। जन्म-दिवस है उसी योगेश्वर का, जन्माष्टमी है उसी महात्मा की।

प्रायः दृष्टि-गोचर होता है कि तुच्छ वस्तुओं से भी, अथवा तुच्छ-स्थानो में भी महत् उद्देश्य-साधक वस्तुयें उत्पन्न हो जाती हैं। कीचड़ से सुन्दर कमल पैदा होता है। कीट-युक्त शुक्ति से अमूल्य-मौक्तिक निकलता है। काला, कुरूप कोयला हीरा जैसे तेज युक्त-पदार्थ का जन्म--दाता है। कोमल रेशम का उत्पादक क्षुद्र तन्तु--कीट है। इसी भांति कारागार ऐसे आवास में धारा-सम्पात-वृष्टि-युक्त रात्रि में योगीराज कृष्ण का जन्म हुआ था। पिता का स्नेह, माता की ममता रक्षक-प्रहरियों के भय के कारण हृद्धाम में ही रह गई। दुर्भाग्यवश वात्सल्य- रस मरु--भूमि की सरिता के समान मन का मनही में विलीन हो गया। विधाता के प्रकोप से प्रेमांकुर उपज कर बरबस सकुचा गया।

देवि देवकी! दुःखित न होना। शोक के आवेश से म्लान- मुखी न बनना। धैर्य्य धारण कर निज पुत्र को, हृदय के लाल को, उसकी रक्षा के लिये अन्य पिता माता के समर्पण कर दो। व्याकुल न हो। मिलेगा, तुम्हारा अतुल धन, आंखों का तारा, प्राणों से अधिक प्यारा, सुत फिर आन मिलेगा। परन्तु अभी नहीं। अभी धैर्य्य की बारी है। तुम्हारा इस विपत्ति से उद्धारक, परित्राता बन कर फिर मिलेगा। ले जाओ। वसुदेव! ले जाओ। नृशंस कंस के उपर अत्याचार से कृष्ण की रक्षा करो। तुम धीर हो, वास्तविक वीर हो। शोकाकुल हो कर कार्य्य में त्रुटि न करना, नहीं तो बाल-कृष्ण के प्राणों पर आ बनेगी। मन को

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

समझालो कि एक दिन यह ही नन्हा सा बालक तुम्हारे वंश का अवतंस बन कर नृशंस कंस को विध्वंस करेगा। यमुना नदी सामने है। कालिन्दी का प्रवाह वारि- वेग के कारण तीव्र गति से बह रहा है। मूसलाधार वृष्टि हो रही है। जन-शून्य नीरव तट पर वसुदेव नव—जन्मित शिशु को लिये खड़े हैं। वसुदेव! क्या सोचते हो? सोच का समय नहीं है। भयभीत न होना। चित्त में आकुलता का समावेश न हो। भय किस का है? 'घातक से रक्षक बलवान है। बालकृष्ण कुशल पूर्वक गोकुल पहुँच जाते हैं। वसुदेव! धन्य है तुम्हारे धैर्य को, त्याग को। तुम्हारा साहस सराहनीय है। संसार में तुम्हारी उज्वल कीर्ति-पताका सदैव लहराती रहेगी।

ग्वाल-बालों के संग कृष्ण का बाल्य-काल क्रमशः व्यतीत होने लगा। कौन जानता था कि इस राख में ऐसी अग्नि दबी हुई है, जिसके प्रज्वलित होते ही पापी अत्याचारियों का समूह भस्म हो जायगा। किसको ज्ञात था कि इस बालक में ऐसी अलौकिक शक्ति छिपी हुई है कि जिसके सञ्चार से कर्त्तव्य-च्युत भीरु भी कर्त्तव्य पूर्ति पर दृढ़ हो जायेंगे।

यही इस अलौकिक प्रतिभान्वित, अद्भुत-बुद्धि सम्पन्न बालक की जन्म-कथा है। अब कहिये कि ऐसे योगिराज-के जन्म दिवस पर भारतवासी आनन्द क्यों न मनायें? क्यों न इस देश का बच्चा कृष्ण की कीर्ति का कीर्तन करता हुआ, आज सुखी न हो? पुलकित हृदय से आज हम सुख-तान क्यों न अलापें?

यह तो हुई सुख-साज की बात। अब इस महापुरुष की जीवनी की ओर ध्यान दीजिये। उनके सुकृत-कलाप की कथा सुनिये। क्यों आज कृष्ण का इतना मान है? महात्मा कृष्ण, कृष्ण होते हुये भी कैसे भारत की कलित-कीर्त्ति को कमनीय बना कर समुज्वल कर गये। उनके उपदेश, शुभ-कर्म और गुण-गौरव-गरिमा का आज भारत में नहीं समस्त भू-मण्डल में इतना सत्कार क्यों है? उनके इस अलौकिक जीवन-रहस्य की कुञ्जी क्या है?

योगीराज कृष्ण बाल्यवस्था ही से लोकोपकार में प्रवृत्त हो गये थे। अपने कर्तव्या ऽ कर्तव्य का उन्हें विशेष ध्यान था। अल्पा ऽ वस्था ही से उनके चित्त की वृत्ति उच्च साधना में सन्नद्ध हो गई थी। भास्कर चाहे अभी निकला ही क्यों न हो परन्तु, उसकी किरणें ऊँचे २ वृक्ष शिखरों अथवा गिरि-शृंगों ही पर पड़ती हैं। इसी प्रकार उनकी दिव्य-दृष्टि सदैव ही मनुष्य को उच्च-उद्देश्य-साधना द्वारा सत्य-ज्ञान सिखाने की ओर लगी रही। केवल कथन ही नहीं, परन्तु, कठिन-कृत्यों को प्रत्यक्ष रूप में सम्पादन करके मनुष्य को शिक्षा देना ही उनका मन्तव्य था। अपने जीवन को एक आदर्श-जीवन बनाना ही उनको अभीष्ट था। जिस २ समय में वे जिस अवस्था में जहाँ पर रहे, उनके

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्रत्येक कार्य में यही प्रबलाऽऽ कांक्षा प्रधान रूप में प्रतिफलित होती है। ग्वाल-मण्डल में रहते हुये भी उनमें कैसी अद्भुत कर्तव्य निष्ठा थी। गो-पालन के उच्च साधन तथा नियमों में उन्होंने गोपों को पूर्णतया दक्ष बना दिया। गोप गोपांगनाओं को अतुलित विश्व-प्रेम का पाठ पढ़ाया। कपोल- कल्पित इन्द्र की उपासना को छुड़ाकर सच्चे इन्द्र की उपासना की शिक्षा दी। कठिन-क्लेशों की विषम-समस्याओं को निज कुशाग्र बुद्धि द्वारा सरल करके ब्रज की अनेक बार आपत्तियों से रक्षा की। इन्हीं सद्गुणों के कारण ब्रज की आबाल- वृद्ध-वनिता प्रजा का उनसे अनुपम प्रेम था। परन्तु सद्भाव-भावित उनके भव्य-जीवन के चित्र को अनभ्यस्त किं वा अकुशल चित्रकारों के उत्तम बनाने के प्रयत्न ने अत्यन्त अपरूप कर दिया है। किं वा यह भी कहा जा सक्ता है कि उत्तम बना कर दर्शाना उन्हें अभीष्ट ही न था। अस्तु, जो कुछ हो। जिस आवरण और विवरण को उन्हों ने गुण समझ कर मिलाया है वही सब अवगुण बन गया है। परन्तु, सूर्य्य को मेघमालाऽऽच्छादित हो जाने से कोई विशेष हानि नहीं। उन चित्रों में कीचड़ में सने हुये कञ्चन के समान उनकी गुणावलि उपस्थित है। चन्द्र की विमल-चन्द्रिका का जिस भांति मेघ-मण्डल में से छन २ कर आती है उसी प्रकार योगीराज कृष्णचन्द्र के अपूर्व गुण-गौरव की प्रभा भागवत रूपी कालिमायुक्त कांच से स्पष्ट झलक रही है।

महात्मा-कृष्ण बाल्यजीवनोपरान्त एक कर्मयोगी, राजनीति-विद्या-विशारद नीतिज्ञ की भांति संसार-क्षेत्र में पग रखते हैं। यहीं से उन की जीवनी के उत्कृष्ट दर्शनीय दृश्य प्रारम्भ होते हैं। अधिकतर इसी अवस्था के किये हुये कृत्य और दिये हुये उपदेशों के कारण ही भारतवासी उनका हार्दिक सम्मान करते हुये योगेश्वर की उपाधि से विभूषित करते हैं। राजनीति के वह अद्वितीय पण्डित थे। राजाओं में वह अत्यन्त सिद्ध-हस्त और कुशल राज-कर्त्ता थे। बडे २ भूपति उनके बाहुबल से सशंक रहते और उनकी आश्चर्य्य-मयी नीति-प्रतिभा के सन्मुख मस्तक नत करते थे। उनके सुदक्ष विचारों और अनुभव-जन्य ज्ञान द्वारा उस काल के मुनिगण भी शिक्षा लाभ करते थे। उनकी राजनीति निपुणता के विषय में यह कहना यथेष्ट होगा कि राजनीति के तो मानो वह साक्षात् मूर्ति ही थे।

उनके कर्म-योग की विस्मय-करिणी ज्योति का भण्डार भगवद्गीता है। वह अलौकिक गरिमान्वित ग्रन्थ संसार के उच्चकोटि के मनुष्य-कृत ग्रन्थों में सर्वोत्तम, सर्व श्रेष्ठ तथा सर्व-मान्य समझा जाता है। अन्य उत्तम ग्रन्थों में जिसको कञ्चन में रत्न, नक्षत्रों में चन्द्रमा से उपमा दी जाती है। जिससे कर्म योग-विभूति का स्रोत हिमालय से भागीरथी के तुल्य बहा है। उस में श्रीकृष्ण के उन उत्तम उपदेशों का संग्रह है जिनके चमत्कारक प्रभाव ने कर्त्तव्य-च्युत अर्जुन को

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कर्तव्य परायण बनाया और अकर्मण्यता के महा-पातक से बचाया। परन्तु, संसार को अज्ञानान्ध-कार में रखने वाले, अर्थ-लोलुप मनुष्यों ने इसमें भी मेल मिलाप किया है। रेशमी वस्त्र में जीर्ण स्थूल वस्त्र का जोड़ लगाने के समान उनका प्रयत्न निष्फल है। अथवा यों कहिये कि रत्नों में राई का मेल करने के समान व्यर्थ है। इस ग्रन्थ की महिमा के महत्व तथा गुण-गरिमा के रहस्य को समझने के लिये उसके कतिपय उपदेशों का स्पष्टीकरण आवश्यक है।

मनुष्य-समाज का एक अंग शंका करता है कि जिस गीताद्वारा स्वकीय कर्त्तव्य-परांमुख होता हुआ भी अर्जुन कर्त्तव्य-पालन में तत्पर हुआ उस ग्रन्थ के अध्यन से वर्त्तमान समय में अनेकों को वैराग्य उत्पन्न क्यों होता है। यह शंका निर्मूल है। गीता के वास्तविक अर्थों को न समझ कर अज्ञानी पुरुषों का संसार-त्यागी बन जाना ही इस विपरीत फल का कारण है। यह बात स्पष्ट है कि जिस अर्जुन को अपने कर्त्तव्य से वैराग्य उत्पन्न हुआ था उसको निज कर्त्तव्य की ओर पुनः प्रेरित करके युद्ध के लिये कटिबद्ध करना ही योगेश्वर कृष्ण का उद्देश्य था। फिर विचारिये कि गीता कर्म का उपदेश देगी या त्याग का ? कहा भी है :-

(कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन)

'हे मनुष्य ! कर्म करना ही तेरे अधिकार में है' फल की तृष्णा त्याग दे। निष्काम कर्म करता हुआ ही तू संसार में जीवन व्यतीत कर। क्योंकि— कर्मणैवहि संसिद्धिमास्थिता जनकादयः' कर्त्तव्य पालने से ही जनकादिकों को सिद्धि प्राप्त हुई है। आगे चल कर भगवत्गीता में श्रीकृष्ण जी कहते हैं :—

अनाश्रितः कर्म फलं कार्यं कर्म करोति यः।
स सन्यासी च योगी च न निरग्निर्न चाक्रियः॥

अर्थ स्पष्ट है। फलाकांक्षा त्याग कर जो मनुष्य वेद, सच्छास्त्र-विहित कर्त्तव्यों का पालन करते हैं वे ही सच्चे सन्यासी हैं। नित्य कर्म (सन्ध्या-अग्निहोत्र आदि) और कर्त्तव्य का न करने वाला सन्यासी नहीं कहलाता। इस उत्तम उपदेश और वैदिक उपदेश में बहुत कुछ सादृश्य है अथवा यों कहिये कि कोई अन्तर नहीं। वेद भगवान आज्ञा देते हैं कि "कुर्वन्नेवेह कर्माणि" इत्यादि अर्थात कर्त्तव्य कर्म्मों को करते हुये संसार में जीवित रहो। इस संसार में मनुष्य को जीवन किस प्रकार व्यतीत करना चाहिये इसके उत्तर में भगवद्गीता के उपदेशों का सारांश यही निकलता है कि जिस प्रकार कमल तड़ाग में रहता है और तड़ाग जल से परिपूर्ण होता है, परन्तु सलिल-मध्यवर्त्ती होते हुये भी जल का जीवनाधार होने के अतिरिक्त कमल पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता, उसके सु-चिक्कण पत्र पर सलिल-विन्दु नहीं ठहरते, उसी प्रकार मनुष्य को संसार में रहते हुये भी, उसकी विषय-वासना से कुछ भी सम्पर्क न रखते हुये भगवद्-भजन और कर्त्तव्य पालन में तत्पर रहना चाहिये।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अतएव अब ज्ञात हुआ कि कैसे उत्तम महात्मा, राजनीतिज्ञ, कर्मयोगी, पुरुषोत्तम, नर- श्रेष्ठ का यह जन्म दिवस है। प्रति वर्ष आकर भारतवासियों के हृदय में यह शुभ दिवस उसी महात्मा की पवित्र स्मृति को जागृत कर जाता है।

वर्त्तमान काल में भारत वर्ष की जो दुर्गति हो गई है उसका एक मात्र कारण हम लोगों की अकर्मण्यता ही है। यदि प्रत्येक भारतवासी निज कर्त्तव्य- पालन में तत्पर हो जाय तो इस देश, की उन्नति सुगम, सरल और तुरन्त हो जावे। अतः कृष्ण के उपासकों, उनकी विरदावलि बखान करने वालों का कर्त्तव्य- परायण होना अत्यन्त आवश्यक है। प्रति वर्ष आकर यही जन्माष्टमी चेतावनी दे जाती है "कि उठो, अकर्मण्यता की नींद में सोने वालो ! उठो, सर्वस्व खोकर स्वल्पांश ही में सन्तोष करने वालो ! उठो, सम्भलने के साधन न करते हुये भी उन्नति की आशा रखने वालो ! उठो। यदि कृष्ण के लिये तुम्हारे हृदय में कुछ भी आदर है, यदि तुम उसे प्रेम और पवित्रता की दृष्टि से देखते हो, यदि उस योगेश्वर के सन्मान का तुम्हें तनिक भी ध्यान है, यदि उसके 'आत्मा अमर है देह नश्वर' और 'तस्माद्योगी भवार्जुन' के उपदेशों का तनिक भी सत्कार करते हो तो उठो। कर्त्तव्य- पालन में तन, मन, धन से लग जाओ। देशोन्नति- साधन रूपी कर्त्तव्य-यज्ञ की पूर्त्ति में यदि आवश्यकता हो तो अपने प्राणों की भी पूर्णाहुति दे दो। परन्तु कर्त्तव्य-च्युत न होना। स्मरण रहे कि औरों को यह कहने का अवसर न मिले कि कृष्ण-उपासकों में, योगेश्वर के प्रेमियो में, उस महात्मा के भावों में इस समय कर्त्तव्य-परायणता नहीं है। निज कार्य्य-कलाप से यह दिखा दो कि हम में से एक नहीं, अनेक, नहीं नहीं प्रत्येक कर्म योगी बन कर कर्त्तव्य पालन में अपने प्राणों तक को-न्योछावर करने को उद्यत है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

१. चीटियां और घावों का सीना

एक समय था जब कि घावों की चीर फाड़ करने के पश्चात् उनको सीने के लिये चींटे और चीटियां काम में लाई जाती थीं। जब इन्हें घाव के ऊपर रक्खा जाता था तो यह अपने दाँतों द्वारा त्वचा को काट कर घाव के दोनों सिरों को मिला देती थी। और अपने जबाड़ों को बन्द कर लेती थी। कौन ऐसी वस्तु और कौन ऐसा प्रारसी है जिसे मनुष्य अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिये कार्य में नहीं लाता।

२. चेहरे की झुर्झुरियां

गत महायुद्ध में कितने ही पुरुष घायल हुये। उन के चेहरे पर घाव लगे जिस से कि बच तो गये परन्तु वह सदा के लिये कुरूप और बदसूरत होगये किसी का नाक उड़गया तो किसी की ठोड़ी इन कुरुपों को सुरुप बनाने में डाक्टरों ने बड़ी सहायता की। अन्य प्राणियों का मांस और चमड़ा साफ कर के इन टूटे हुये अंगों को सीं दिया गया और उनका पुनरुउद्धार हो गया। आकृति के इस पुर्नोद्धार को बड़ी बात समझा जाता है। परन्तु यह विद्या नितान्त नवीन नहीं। आज से ५०० वर्ष पहिले बियान का जाति के लोग एक बदसूरत नाक को सुन्दर बना सकते थे। माथे पर से चमड़ा काट कर नाक पर जोड़ दिया जाता था। इस के पश्चात उन्होंने इतनी उन्नति की कि माथे के स्थान में बांह पर से चमड़ा काट कर चेहरे को सुन्दर बनाने के काम में लाने लगे।

३. जापान डूब जायगा

"जापान डूब रहा है" मोटे २ अक्षरों में लिखा हुआ यह नोटिस भविष्य आने वाली जनता के सन्मुख एक दिन आयेगा। डाक्टर नोबल का यह मत है कि या तो जापान डूब जायगा या टस-कारोरा समुद्र में उलट जायगा।

उनका अनुमान है कि यह घटना एक लाख वर्ष के भीतर ही घटेगी, और यदि यह हुआ तो इस का कारण जापान में आने वाले भूचाल हो होंगे। गत भूचाल के कारण सागामी खाड़ी का पेंदा जो कि योकोहामा के निकट है— २०० फुट से १०० फुट तक नीचे को दब गया और ऐसा ही

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

एक और झटका इस प्रकार का पल्टा दे सकता है कि फुजियामा को— जापान का एक बड़ा भाग— समुद्र में ढकेल दे और केवल इसकी चोटी ही ऊपर दिखाई देती रहे।

४. मिट्टी के निवासी

पृथिवी की मिट्टी देखने में कितनी अचल और निर्जीव है, परन्तु इस में लखूखा शक्ति शाली प्राणी निवास करते हैं। इन में से कुछ तो सूक्ष्म वीक्षण यन्त्र द्वारा देखे जा सकते हैं और कुछ इतने नन्हें हैं कि उन्हें देखने की हमें कभी आशा नहीं हो सकती। वास्तव में बहुत सूक्ष्म वस्तुओं की खोज द्वारा हमें एक ऐसे संसार का ज्ञान होता है जो कि एक असीम और रहस्य पूर्ण गति से भरा हुआ है।

मिट्टी के इन निवासियों की चार श्रेणियाँ हैं जिन को बैक्टीरया, फुन्जी, ऐलबी और प्रोटोज़ोआ कहते हैं। इन में प्रोटोज़ोआ जो कि लम्बाई में इन्च का २५ हज़ारवां भाग है। सब से बड़े और बैक्टीरया जो कि इंच का २० से ५० हज़ारवाँ हिस्सा भाग है सब से छोटे होते हैं।

एक माशा भर मिट्टी में ४५००००० बैक्टीरया रहते हैं और अन्य श्रेणियों के प्राणी उस के अतिरिक्त हैं। मिट्टी प्रत्येक भाग में जिस पर कि जल, वायु और सूर्य का प्रकाश पड़ता है या प्राणी विद्यमान हैं। इनके ही सहारे हमारी खेती होती है। जिस भूमि में यह विद्यमान न हो वहां से किसी भी उत्तम उपज की आशा नहीं हो सकती। अतः आधुनिक वैज्ञानिक कृषी विद्यालयों में इन सूक्ष्म प्राणियों के रहन सहन, उनके स्वभाव, उनके बल और पराक्रम, उनकी घटती बढ़ती इत्यादि के विषय में विशेष अनुसन्धान होता है। इस से कितनी ही ऐसी बातें पता लगी हैं जिस से कि इन प्राणियों की कृत्रिम विधि द्वारा संख्या वृद्धि कर के खेत की उपज में बढ़ती की गई है।

५. मोटे होने की औषधि-निद्रा

दुबले होने की सब से सरल और शीघ्र सफल होने की एक विधि है लगातार दो रात तक न सोना। इस विधि का बहुत कम प्रचार है। बहुत से व्यक्ति दो सप्ताह तक निराहार रहना पसन्द करते हैं जबरदस्ती रात को जागते रहने से मुटापा भूखे रहने की अपेक्षा दुगणी गति से दूर होता है, उसके साथ भोजन में कोई कमी करने की आवश्यकता नहीं।

एक डाक्टर एक पुरुष के मुटापे का इलाज कर रहा था। उसका ढंग वही भोजन की कमी और व्यायाम पर निर्भर था। इलाज के बीच में ही रोगी की टांग टूट गई और इलाज अथवा व्यायाम बन्द करना पड़ा। डाक्टर को भय था कि ठीक ठीक भोजन रखते हुये भी जो कि रोगी को आराम करने के लिये विवश होना पड़ेगा और इस से बोझ में कमी होना रुक जायगा। परन्तु जब कि उस पुरुष को कांटे पर तोला गया तो पता लगा कि इतने ही समय में—जब कि वह व्यायाम किया करता था— उसके भार में दुगुनी कमी हुई है। इसका कारण यह था कि टांग टूटने की पीड़ा के कारण वह रात को किञ्चित भी न सो सकता था।

६. हाथियों का स्कूल

अमरीका में कान्गो नाम का एक प्रान्त है जहां पर हाथी बहुत होते हैं। इस प्रान्त के एक भाग पर बेल्जियम का राज्य है। वहां की सरकार ने हाथियों को सधाने और शिक्षा देने का विशेष प्रबन्ध किया है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हाथियों को पकड़ने के पश्चात् जो उन्हें पहली शिक्षा दी जाती है वह मानव जाति से सम्पर्क का स्वभाव डालना है और इस के लिये एक विशेष आयोजना की जाती है। यह "संस्कार" दिन में दो बार— सायं और प्रातः किया जाता है। हाथियों को खूंटों से बाँध दिया जाता है और वह महावतों से जिनके हाथों में पेड़ों की पत्तेदार छड़ियां होती हैं घेर दिया जाता है। मुख्य महावत एक मृगया सम्बन्धी गीत गाता है और अन्य महावप छड़ी से हाथियों को ठोक कर ताल देते हैं। यह दस मिनट तक होता रहता है और इस समय में हाथियों को शकरकन्दी, अनानास इत्यादि खिलाते रहते हैं।

जमीन पर से चीज़े उठाना सिखलाने के लिये महावत हाथी पर चढ़ जाता है और उसकी आंखों के सामने एक रस्सी झुलाता है। हाथी इसे अपनी सूंड द्वारा आंखों के सामने से परे हटाने की चेष्टा करता है और पीछे को ढकेलता है इस प्रकार वह शनैः शनैः भूमि पर से वस्तु उठाकर पीछे महावत को पकड़ाना सीख जाता है।

इस सारी शिक्षा की कुञ्जी दया और सहृदयता है। किसी भी अवस्था में हाथी को मारा नहीं जाता। जब भी हाथी किसी आज्ञा का पालन करता है अथवा पालवे का यत्न करता है तो उसे शकरकन्द अथवा अन्य स्वाँदिष्ट वस्तु उपहार रूप से दी जाती है।

हाथियों की दिन चर्या प्रातः काल सूर्य निकलने से पहिले स्नान से आरम्भ होती है। जिस के पश्चात् बच्चे तो खाने पीने के लिये जङ्गल में चले जाते हैं और सधाये हुये हाथी अपने अपने काम पर। जब धूप अधिक तेज हो जाती है तो इन्हें भी काम से छुट्टी मिल जाती है और ११ बजे के लगभग यह भी जङ्गल में चले जाते हैं। पांच बजे सायंकाल तक सब चरते रहते हैं और फिर उन सब को खूंटे से बाँध दिया जाता है। हाथियों के बच्चे जब बड़े हो जाते हैं तो यह बड़ी अच्छी तरह और प्रसन्नता से कार्य करते हैं।

७. वृक्ष हमें ठंडक पहुंचाते हैं

कौन नहीं जानता कि सुन्दर उद्यान में वृक्षों से घिरा हुआ भवन गरमी की मौसम में कितना ठंडा होता है। किसी भी पेड़ के नीचे जायें आप के तप्त शरीर में शीतलता आजाती है। गरमी की दोपहरिया में मीलों चलने पर वृक्षों के नीचे विश्राम कितना सुखद और शान्ति दायक है। क्या कभी आपने सोचा कि वृक्षों से घिरे भवन अथवा सड़क और चौहराये इतने ठंडे क्यों होते हैं। अधिकांश व्यक्ति यही उत्तर देंगे कि वृक्ष साया देते हैं और धूप से रक्षा करते हैं।

परन्तु यह केवल आधा ही उत्तर है क्यों कि वृक्ष साया देने के अतिरिक्त और भी बहुत कुछ करते हैं। वह अपने आस पास ताप की मात्रा और दर्जा बहुत कम कर देते हैं। क्यों कि वह दिन के समय वायु में बहुत से जल छोड़ते है और इस प्रकार वायु को ठंडा और शुद्ध बनाये रखते हैं।

एक वनस्पति विद्या विशारद ने अनुमान किया है कि एक मध्यम श्रेणी के वृक्ष में ७० लाख पत्ते होते हैं। इन सब का क्षेत्रफल २००, वर्ग फुट होता है। यदि इन को जमीन पर बिछा दिया जाय तो यह पांच एकड़ भूमि को ढांप लेंगे। अब आप अनुमान लगायें कि गरमी की ऋतु में यह समस्त क्षेत्र फल वायु में शीतल जल कणों का संचार कर रहा है।

इस से पता लगता है कि गृह और भवन के चहुँ ओर वृक्षों का होना कितना लाभदायक है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

और नगरों में यह कितने आवश्यक हैं। गर्म प्रदेशों में नगरों में, सड़कों पर, चौराहों में और बाजारों में वृक्ष लगाना विलास की बात नहीं वर आवश्यक ही अमरीका के कितने ही नगरों में जब कि रहने के मकानों के बीच किसी मार्ग के बनाने का निश्चय होता है तो जो पहिला कार्य किया जाता है वह मार्ग के दोनों ओर पेड़ लगाना होता है।

ऐसे वृक्षादित गलियों या मुहल्लों में जो घर होते हैं उनका किराया भी अधिक लिया जाता है।

८. पशुओं की नसल में उन्नति

हम ज्योति के किसी पिछले अंक में डाक्टर वारोनाफ की गिल्टियों की जर्राही के विषय में विस्तृत रुप से लिख चुके हैं। आप बन्दरों की गिल्टियां निकाल कर बूड्ढ़े आदमियों के शरीर में जोड़ कर उन्हें युवा बना देते हैं, स्त्रियों में पुरुषों के गुण उत्पन्न कर देते हैं और इसी प्रकार के अन्य कितने ही कौतूहल जनक कार्य कर चुके हैं।

अब आपने फ्रान्स के कृषि विभाग के सरंक्षण में भेड़ों पर तजरुबे किये हैं जिनका परिणाम बहुत अच्छा निकला है। आपने १९२४ में अपने तजरुबे आरम्भ किये थे। एक स्वस्थ भेड़ के शरीर से एक गिल्टी निकालकर उस से कुछ कम आयु वाली भेड़ के शरीर में जोड़ दी। इस का फल बड़ा आश्चर्य जनक निकला। यह छोटी भेड़ दिन प्रति दिन अधिक मोटी और बलिष्ट होने लगी और प्रत्येक बार उस के शरीर से सेर भर अधिक ऊन उतरने लगा। परन्तु इस तजरुबे में एक कमी थी। यह दो भेड़ों की एक भेड बनाई गई थी। इस प्रकार यह तजरुबा वैज्ञानिक दृष्टि कोण से चाहे कितना ही सफल हो आर्थिक दृष्टि से कोई महत्व नहीं रखता।

कोई साल भर हुआ इन "उन्नत" भेड़ों के बच्चे पैदा हुये। उन की वृद्धि को बड़ी चिन्ता और आशामिश्रित उत्सुकता के साथ देखा जाने लगा। पांच महीने की आयु में यह बच्चे दूसरे "अवोन्नत" भेड़ों से भार में ४ सेर अधिक निकले। तजरुबा पूर्णतया सफल रहा।

अब डाक्टर वोरानोफ इस प्रतीक्षा में हैं कि कब यह बच्चे बड़े हों और इन के दूसरों भेड़ों से निकाल कर और गिल्टियां जोड़ी जायें उन की यह इच्छा नहीं कि की गाय जितनी जितनी बड़ी भेड़े उत्पन्न की जायें वरन् वह यह चाहते हैं कि प्रत्येक बार कतरने पर अधिक से अधिक ऊन मिल सके

यह पशु-पालन-पोषण में नितान्त क्रान्ति जनक खोज है। इस से क्या २ लाभ होंगे यह सहज में अनुमान किया जा सक्ता है।

अंग्रेज़ी सरकार भी इन तजरुबों में भाग ले रही है? न्यूज़ीलैन्ड की सरकार ने डाक्टर वारोनाफ को लिखा है कि यह विधि सिखलाने के लिये वह कोई योग्य डाक्टर वहां भेजें। डाक्टर महोदय का कहना है कि आरम्भ में उन्हें गिल्टियां जोड़ने में इस लिये असफला रही कि वह जोड़ी हुई गिल्टी और शरीर की रक्तवाहिनी नालियों में सम्बन्ध जोड़ने में असफल रहे। अब यह रुकावट दूर होगई है और सफलता की पूरी आशा है।

९. लकडी की साड़ियां

नारी-हृदय कितना मृदु है, कितना कोमल है यह कौन नहीं जानता! परपीड़ा से इस पर कितना आघात पहुँचता है यह बतलाने की आवश्यक्ता नहीं। दूसरों के दुःख से दुखित होना इन का स्वभाव है, दया इन का गुण है। इतना होते हुये भी अपने शृंगार रस की तृप्ति के लिये यह दया, कोमलता

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

और मृदुलता को तिलांजली दे सक्ती हैं यह वह स्वयं में भी मानने को तय्यार न होंगी, परन्तु वास्तव में बात ऐसी ही है। कौन स्त्री है जिसे रेशमी वस्त्रों से प्यार नहीं, क्या वृद्ध क्या जवान, क्या बाला और क्या युवती सभी रेशमी वस्त्रों की चमक दमक पर मोहित हैं। इन की कोमलता पर वह निज हृदय की कोमलता न्योछावर करने को तय्यार है। क्या कभी उन्हों ने सोचा है कि यह रेशम जिस पर वह इतना मुग्ध हैं कहां से आता है। यह मकड़ी के जाले जैसा बारीक धागा रेशमी कीड़ों के निज रक्षार्थ बनाये हुये गिलाफ से आता है। कीड़ों की डोडियों या ककून-जिन के भीतर जीवित कीड़े रहते हैं—गरम पानी में डाल कर उबाली जाती हैं। इस से भीतर का कीड़ा मर-जाता है और डोड़ी के ऊपर लिपटा हुआ रेशमी धागा अलग कर लिया जाता है। इस धागे को अलग करने के लिये इस के अतिरिक्त और कोई उपाय नहीं कि इस कीड़े को उबाल कर मार डाला जाय अन्यथा वह स्वयं बड़ा होकर डोडी अथवा गिलाफ को फोड़ कर बाहर निकल आया है और पंखदार तितली का रूप धारण कर उड़ जाता है। इस फूटी हुई डोडी को भी उबाल कर रेशम अलग किया जा सक्ता है परन्तु अब वह धागे की लम्बी तारन रह कर दो दो इञ्च के अनेक टुकड़े बन जाते हैं जिन से कि बट कर धागा बनाना असम्भव है।

आधुनिक विज्ञान ने चाहे कितने ही हिंसा वर्धक यन्त्रों की रचना की हो परन्तु एक कार्य इस ने इतना दया पूर्ण किया है कि हमें मुक्त कण्ठ से इस की प्रसंशा करनी पड़ती है। जहां इस ने स्त्रियों के रेशम-अनुराग की रक्षा की है वहां इन रेशम के कीड़ों को अन होनी मृत्यु से बचा लिया है। अब ऐसी विधि का प्रयोग होने लगा है जिस के द्वारा कृत्रिम रेशम बनाया जा सके। यदि रुई को रसायनिक विधि द्वारा शोरे के तेज़ाब में पकाया जाय तो नाइट्रो सेलयुलोज़ नाम का एक पदार्थ बनता है जो कि तोपों और बन्दूकों में बारुद का काम देता है। परन्तु यदि दूसरी विधि द्वारा इसे ईथर इत्यादि में घोल लिया जाय तो इस से लोडियन नाम का एक पदार्थ बन जाता है जो कि फोटोग्राफी में बड़े काम आता है। १८८४ में कौन्ट चारडोनेट नाम के एक धनवान फोटोग्राफर के यहां कौलोडियन से भरा हुआ एक बर्तन रखा था, उस में अकस्मात कुछ गिर पड़ा और इस से वह कौलोडियन जम कर बर्फ जैसी बन गई। कौन्ट को इस दुर्घटना से बड़ा दुख हुआ परन्तु दूसरे दिन उसने देखा कि इस में रेशमी धागों जैसी अनेक तारे बन गई हैं। इस घटना के पांच साल बाद कौन्ट ने नकली रेशम के नमूनों को पैरिस की प्रदर्शनी में दिखलाया। परन्तु इस रेशम में एक कमी थी कि यह आंच लगने पर बारूद की तरह जल उठता था। इस के पश्चात महाशय आसन ने अनुसेन्धान की ऐसी विधि निकाली जिस से कि यह गुण दूर होगये। और अब इसे काता और बुना जाने लग पड़ा। आज टयबीज नाम के स्थान पर (जो कि बैलजियम की राजधानी से १५ मील दूर है नकली रेशम का सब से बड़ा कारखाना है। इस में १५००० मनुष्य काम करते हैं और ७०० मन रेशम प्रति दिन तय्यार होता है। केवल मजंदूरों को ही पौनेचार क्रोड़ रुपया वेतन के रुप में दिया जाता है। इसी से इस कारखाने के विस्तार का अनुमान हो सक्ता है।

परन्तु अब नकली रेशम और भी कितने ही कारखानों में रुई के अतिरिक्त कितने ही अन्य

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पदार्थों से रेशम बनाया जाता है। अब रसायन शास्त्र के विद्वानों और लकड़हारों ने मिल कर रेशमी कीड़ों को पछाड़ दिया, नहीं, नहीं, मृत्यु से बचा लिया। लकड़हारा शब्द से किंचित हमारे पाठक पाठिकायें चौंक पड़े। परन्तु यह ठीक है कि अब नकली रेशम लकड़ी से बनाया जाता है। नारवे देश में स्प्रूस नाम का एक वृक्ष होता है जिस की लकड़ी के विशेष क्रियाओं द्वारा बड़े बड़े कपड़े जैसी मोटी चादरें तय्यार कर रेशम के कारखानों में भेजी जाती हैं। इन चादरों को क्षार द्वारा थोड़ा सेल्यूलोज़ का रूप दिया जाता है। इस अवस्था में यह रोटी के सूखे टुकड़ों से मिलता है। इन पर अन्य रसायनिक द्रव्यों से क्रिया कर के शीरे जैसा एक पदार्थ तय्यार किया जाता है। अब इसे एक मैशीन में से जिस में कि इतने नन्हें २ असंख्य छिद्र होते हैं कि वह आंखों को दिखलाई भी नहीं पड़ते निकाला जाता है। एक छेद में से निकले हुये धागे में कभी कभी २५ तक रेशे होते हैं। इन धागों को धोकर और अन्य क्रियाओं द्वारा व नरम कर के बट लिया जाता है और बुन कर, रंग कर, छाप कर मन को मोहने वाले रेशम के रूपमें बेंचा जाता है। कहां आंच जलाने की लकडी और रमणी की कोमल देह का कोमल शृंगार।

नकली रेशम रुई, आलू, गोभी, पालक इत्यादि अनेक वस्तुओं से बनाया जा सक्ता है। इनके अतिरिक्त यह और भी कितनी ही वस्तुओं से बनाया जाता है परन्तु इन का नाम गुप्त रखा जाता है।

संसार में इस समय यह जान ने के लिये बड़ी भारी प्रति द्वन्दता है कि किस वस्तु से रेशम बनाया जा सके। रसायन शास्त्री अपनी प्रयोग शालाओं में अनेक वस्तुओं की रेत और पत्तें, घास फूंस इत्यादि पर जांच कर रहे हैं। रद्दी कागज़ और लकड़ी का बुरादा भी इस जांच से बचा नहीं। परन्तु उन की समस्त खोज गुप्त रखी जाती हैं।

नुमायश में दिखलाये गये कपड़ों के नमूनों से ऐसा ज्ञात होता था कि नकली रेशम बनाने की विधि में कमाल हो गया है। प्रत्येक प्रकार का कपड़ा मखमल, बैलार साटन, वायल, झालर इत्यादि सभी विद्यमान थे। नकली रेशम पर सब प्रकार के रंग चढ़ सके हैं। रेशम और रुई के धागो से बुना कपड़ा तो बहुत बढ़िया होता है।

इन कपड़ो पर चार पाँच रंग के फूल पत्ती के नमूने ऐसे बढ़िया होते हैं कि क्या कहना।

आज तजुरबे हो रहें हैं कि नकली रेशम से नकली फूल बनाये जायें। यह ऐसे उत्तम बनते हैं कि एका एक इनका वास्तविक फूलों से पहुँचानना कठिक हो जाता है। एक विचित्र बात देखी कि यदि नकली रेशम पर इतर लगा दिया जाय तो इस की सुगन्ध चिर स्थायी रहती है, असली रेशम की यह बात नहीं। अब रसायन विद्या विशारद नकली इतर बनायेंगे जो कि नकली रेशमी पुष्प गृहण कर रमणियों के सिर और गले की सजावट को बढ़ायेंगे।

पर और अन्य मुलायम चमड़े जिन को पहिनने के लिये युरोपीय महिलायें दीवानी रहती थीं और जिन की प्राप्ति के लिये अनेक निर्दोशक और अहिंसक जानवरों का खून करना पड़ता था अब नकली रेशम से ऐसे अच्छे बनाये जाते हैं कि उनका पहिचानना कठिन है।

इन अनेक निरपराध जीवों की रक्षा के निमित्त विज्ञान की यह उन्नति निसन्देह प्रेसशनीय है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

गृह-प्रबन्ध

१. आज कल ओरमिल (जई की खीर का रिवाज बढता जाता है डाक्टर लोग बीमारी के पीछे बहुदा इसे खाने की सम्मति देते हैं। परन्तु इसे पकाना सब कोई नहीं जानते अतः यह बहुत समय तक आग पर रखना पड़ता है। इसकी सर्वोत्तम विधि यह है कि जई के दानों को रात्री के समय जल में भिगो दो और प्रातः दूध में पका ने से केवल १५ मिण्ट में पक जायगी और स्वादिष्ट भी अधिक होगी।

(२) कई स्थानों पर कुओं के अथवा नदी नालों के जलों में चूना अधिक रहता है इस से यह पानी कडा कहलाता है। ऐसे जल की पहचान यह है कि उस में साबुन मलने से जल्दी झाग नहीं उठता। यदि इस जल में स्त्रियां अपने सिर के बाल धोयें तो सूखने पर वह आपस में चिमट जाते हैं। परन्तु यदि इस जल में थोड़ा सा सिरका डाल या एक निम्बू का रस निचोड़ दे तो नहाने पर बाल नहीं चिमटते।

(३) कोर कपड़ों को जिनमें माया लगी हो ठंडे जल में भिगो कर धोना चाहिये अन्यथा गरम जल से अथवा स्त्री करने पर यह कपड़े पीले पड़ जाते हैं।

(४) रसोई घर को धोने के जल में यदि थोड़ा सा कारबालिक तेज़ाब डाल दें तो फरश पर मक्खियां नहीं बैठतीं।

बर्सात में प्रायः मक्खन खट्टा हो जाता है। यदि इस के पास एक बर्तन में बारीक २ टुकड़े कोयले के रख दिये जायें तो यह खट्टा होने से बचाते हैं।

(६) जिन स्थानों पर टिड्डियां अधिक रहती हों यदि वहां चीनी और सुहागे को मिला कर और बारीक चूर्ण बना कर छिड़कें तो टिड्डियां भाग जाती हैं।

(७) व्रणों और झाड़ुओं को कभी २ अमोनियां मिले पानी से धो डालना चाहिये, उस से वह अधिक चलते हैं।

(८) जिन कपडों का रंग फीका पड गया हो यदि धोने के पीछे उन्हे थोड़े से फिटकरी मिले पानी में डाल कर निचोड़ दिया जाय तो रंग फिर आजाता है।

(९) अंग्रेज़ी मिठाईयों में प्रायः अंडा बहुत वर्त्ता जाता है। यदि इसके स्थान में दूध और शरबत मिला कर वर्त्ता जाय तो भी वही काम निकलता है।

(१०) कपड़ों में नील देते समय यदि नील के पानी में कुछ सोडा मिला दें तो नील के धब्बे नहीं पडते।

(११) सिर के बालों की चिकनाहर सोहागा मिले पानी के धोने से छूट जाती है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

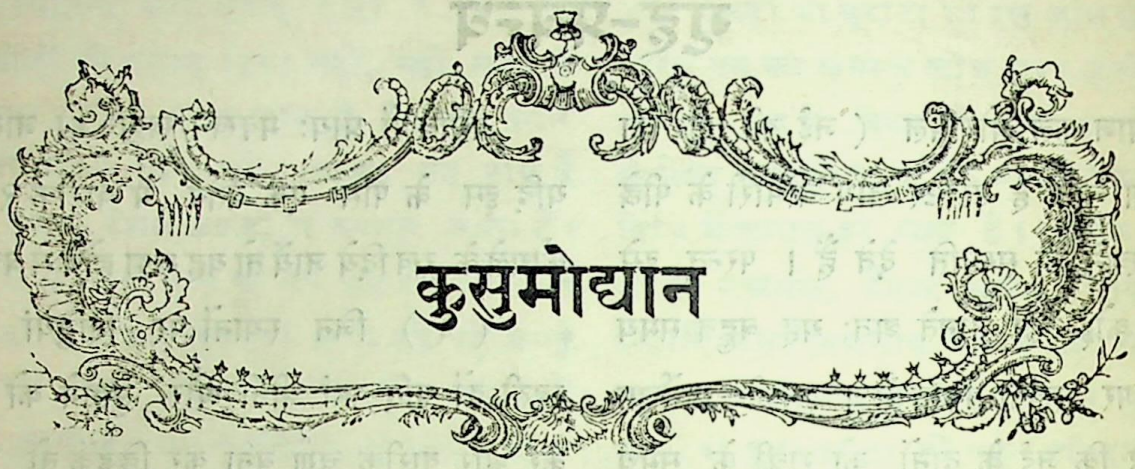

कुसुमोद्यान

१. दीमक की रचनात्मक और विनाशात्मक शक्ति

दीमक को कौन नहीं जानता, जिन देशों में दीमक होती है। वहां के लोग इसके हाथों बड़े तंग रहते हैं। यह बड़े २ लकड़ी-स्तम्भो, किवाड़ों, छत की कड़ियों और जीनों को खा २ कर खोखला कर देती है। पुस्तकों और कपड़ों का नाश कर देती है। सच पूछो तो अगर इसके उपद्रव को रोका न जाय तो नगरों के नगर भस्म कर सकती है।

एक ओर यह नाश कारी कार्य करती है दूसरी ओर रचना भी करती रहती है। दीमक की बस्ती एक प्रकार की प्रजा तंत्र राज्य होती है। जिस में कई प्रकार के व्यक्ति होते हैं। इन में नरों को पर लगे होते हैं। दूसरे काम करने वाले, सिपाही और रानियों के पर नहीं होते। काम करने वाले केवल मकान बनाती रहती हैं। सिपाही केवल बस्ती की रक्षा और प्रबन्ध ठीक रखने पर नियुक्त रहते हैं। बाकी रह गई रानियां। इन्हीं की ओर सारी बस्ती की आंखे लगी रहती हैं। यही सब की ध्येय होती हैं। सब बस्ती इन की पूजा करती है। क्योंकि वे संख्या में वृद्धि करने वाली होती हैं। रानियाँ क्या होती हैं अनगिणत अण्डों के थैले या अंडे देने वाली कलाँ समझिये। जब ये गर्भ धारण करती हैं तो इनका पेट दो हजार गुना बड़ा हो जाता है। उस समय यह बिल्कुल हिल जुल नहीं सकती। एक ही जगह बैठी रहतीं है। फिर ये अण्डे ऐसी फुरती से देती है। मानो कोई फवारा चल रहा हो।

योद्धा दीमक के घोंसले इतने बड़े और पक्के होते हैं कि पथिक लोग देख २ कर चकित रह जाते हैं। विशेष कर जब उनके सूक्ष्म शरीर का भी ध्यान करते हैं। यह घोसले कभी कभी २० फीट ऊँचे होते हैं। इन की दीवारे इतनी ठोस होती हैं कि जंगली जानवर इनके ऊपर चढते हैं तो भी वे नहीं गिरती। उनके अन्दर कोठरी इतनी बड़ी होती हैं एक दर्जन आदमी उन में समा जाते हैं। प्रायः शिकारी शिकार की घात में उन के अन्दर बैठे रहते हैं। आश्चर्य यह है कि दीमक का अपना शरीर बड़ा ही कोमल होता है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

२. अद्भुत मन्दिर

मुझे लोग कहते हैं कि हम को चन्दा दो। मैं पूछता हूँ किस लिये। तो उत्तर मिलता है। हमने मन्दिर बनाना है। मैं कहता हूँ मेरे पास तो देने के लिये कुछ भी नहीं। और होता भी तो स्यात् मैं कुछ न देता। क्योंकि मुझे तुम्हारा मन्दिर पसन्द नहीं, तुम्हारे मन्दिर के साथ कई व्याधियां लगी हैं। पहले तो तुम्हारे मन्दिर का नकशा ही सर्व प्रिय नहीं। कि जब तुम बनाने लगोगे। तो कई झगड़े उठेंगे। टेकेदार अपना स्वार्थ देखेगा। तुम अपनी डुग डुगी बजाओगे। कभी तुम्हारे ऊपर यह दोष लगाया जायेगा कि तुम ने अमुक सम्प्रदाय के कारीगर ज्यादा लगा लिये और कभी उस से भिन्नमत वाले रुष्ट हो जायेंगे। कभी पड़ोसियों से तुम्हारा झगड़ा होगा। कहने का तात्पर्य यह है, कि तुम तो यह चाहोगे कि चाहे पड़ोसी को कष्ट हो। चाहे अपनी अनर्गलता से पवलिक का धन पानी की तरह बह जावे। पर तुम्हारा मन्दिर एक वार खड़ा हो जावे। ताकि लोग देख २ कर वाह वा किया करें। तुम जानते हो कि जब मन्दिर एक वार बन गया तो फिर सब बातें भूल जावेंगी। और जब लोगों को उस में आराम मिलेगा तो तुम्हारे दोषों पर परदा पड़ जावेगा। लोगों की वाह वा के सामने तुम्हारे दोष प्रगट हो जाने पर भी चिर काल तक स्मरण नहीं रहेगे। न हो, पर मेरा यह कहना है कि जो तुम ने पाप किया है उसे वही देखने वाला है जो तुम्हारे पुण्य को देखने वाला है।

इसी लिये मैं तुम्हारे मन्दिर से घबड़ाता हूँ। मैंने तुम को चन्दा नहीं दिया न दे सकता हूँ। मैं तुम्हारे बने हुए मन्दिर में जाना पसन्द नहीं करता परन्तु मुसीवत यह है कि मन्दिर के बिना किसी का गुजारा भी नहीं हो सकता। इसी लिये मैंने तो यही निश्चय किया है कि इस अपनी साढे तीन हाथ की इन्द्र पुरी में ही कोई मन्दिर बनाऊँ। बनाने की भी क्या आवश्यकता है। वहां तो पहले ही बना बनाया मन्दिर मौजूद है। केवल उस की देख रेख करनी है। जब मैं साहस करके अपने आप इस मन्दिर को साफ सुथरा करता हूँ तो मेरा जी ललचा उठता है। और फिर धीरे २ उत्तरोत्तर परिश्रम से मन्दिर के अधिक दिव्य हो जाने पर ऐसा प्रतीत होता है कि मैं चन्द्र लोक में विराज मान होगया। उस समय मैं अपने मन्दिर की शोभा को देख २ कर फूला नहीं समाता। मैं अपने मन्दिर में ऐसा स्थित होता हूं जैसे कोई चक्रवर्ती राजा अपने सिंहासन पर बैठा हो।

तुम पूछोगे कैसे? और तुम मेरी बात पर विश्वास भी नहीं करोगे। पर मैं तुम से कहता हूँ कि मेरी बात में जरा भी अन्तर नहीं। मैं तुम्हारी तरह नहीं हूँ कि अपने मन्दिर में बुलाने के लिये पहले तो नगर में मुनादी करना और फिर इस चिन्ता में डूब जाऊँ कि हाय अमुक आदमी क्यों आगया। यह तो उपद्रव करेगा। अब इसे कैसे बाहर निकालूं। कौन सा नियम बनाऊं कि इसे बाहर जाने पर वाध्य होना पड़े। अथवा किस रीति

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

से पुलिस को इत्तला दूँ कि इस मन्दिर पर से मेरे सिवाय दूसरे का स्वत्व हट जावे।

मैं अपने मन्दिर में किसी को बुलाने के लिये ढोल नहीं बजाता। मैं तारें भी नहीं भेजता। मैं गिडगिडाता भी नहीं। मैं किसी के इनकार करने पर असन्तुष्ट भी नहीं होता। मैं तो आधी रात को चाहूं तो आचार्य गुरुकुल को बुला सकता हूं। और चाहे उनको कितना काम हो। मैं घंटो उन्हें रोक कर उन से लाभ उठा सकता हूं। मेरे मन्दिर में आचार्य गुरुकुल और प्रिन्शीपल जी ए. बी. कालिज पास २ बैठ सकते हैं। मुझे दोनों मूर्तियों से आनन्द प्राप्त होता है। मेरे मन्दिर में वे दोनों आपस में मुख से वार्तालाप करते हैं। सच तो यह है कि मैं उनको अपने २ स्वार्थ की बात ही नहीं करने देता। वे दोनों मेरे ही भले की बातें करने से अवकाश नहीं पाते। मेरे मन्दिर में वे ऐसे लगे रहते हैं जैसे आग से जलते हुए मकान को बचाने के लिये किसी को धडा धड पानी फेंकने के सिवाय और किसी बात की होश ही न हो। मैं बड़े से बड़े महात्मा और अपने अपने कार्य में लगे हुए व्यक्ति को जब चाहूं बुला सकता हूं। मेरे मन्दिर में स्थानाभाव नहीं। जितनी संख्या चाहूं इकट्ठी कर लूं। मेरे मन्दिर में आलोक की भी कमी नहीं उस के सारे द्वार सदा खुले रहते हैं। इस लिये उस में सुन्दर सुगन्धित वायु चलती रहती है। मेरे मन्दिर में आने से कोई नहीं घबड़ाता। मैंने किसी को अपने मन्दिर की शिकायत करते नहीं सुना। मैं जिसे निमंत्रित करता हूं वह मेरे ही सुख की सामग्री एकत्रित करता दिखाई देता है।

मेरे मन्दिर मे भगवान कृष्ण आकर गीता का गायन कर सकते हैं। उसी में महर्षि दयानन्द की पुण्यात्मा मुझे वेदों की कथा सुना सकती है। उसी में महात्मा गान्धी चरखा चला सकते हैं। आहा! कैसा आनन्द है। कैसा मंगल मय दृश्य है। जिस मंदिर की रचना माहमाया ने स्वयं की हो उस की सोभा के क्या कहने। इसी लिये मैने कहा था कि मैं अपने मंदिर में चक्रवर्ती राजा से कम नहीं हूँ। मेरी आज्ञा को कोई टाल नहीं सकता। टाले कैसे इन्हीं महात्माओं की कृपा से मैं सिंहासन पर बैठा हूं। फिर मैं ऐसे चमत्कृत मंदिर को त्याग कर तुम्हारे मंदिर के लिये क्यों तरसता किस। बड़े २ राय बहादुरों ने समाज मंदिरों में पुलिस का आश्रय लिया। और कर भी क्या सकता है। परन्तु अगर मेरे मंदिर में कोई राय बहादुर आजावें तो मुझे पुलिस की थोड़े ही आवश्यकता है। वे तो मेरे इशारे से ही चम्पत हो सकते हैं। पर मेरा मंदिर ऐसा क्यों होने लगा कि उसमें किसी का अनादर हो मेरा मंदिर तो स्वच्छ है। मेरे मंदिर में तो ब्रह्म लोक से पतित पावनी वेद वाणी रूपि गंगा बहती है। जिस में निकृष्ट विचार रूपि लोग नहा नहा कर पुण्यवान होते हैं। और उनके पद चिन्हों पर चल कर मैं भी सुद्धि को प्राप्त होता हूं। तुम पूछोगे वह मंदिर कौन सा है और कैसे उसे लोगों के आवाहन योग्य बनाया है। तो मैं कहूंगा। आंखें खोल कर देख तो। तुम उसी मंदिर में तो बैठे हो। देख नहीं सकते तो कानों से सुनलोः—

यज्ञाग्रतो दूर मुदैति दैवं.....
.....तन्मे मनः शिव संकल्पमस्तु

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हमारी मंजूषा

१. जवानी बनाये रखने के उपाय

पहला भाग—अनुवादक तथा प्रकाशक महाबीरप्रसाद गहमरी, स्वर्गमाला कार्यालय काशी। पृष्ठ १८८ मूल्य ॥≡)

यह पुस्तक पंडित अमृतलाल का सुन्दर जी पढ़ियार वैद्य रचित गुजराती पुस्तक का अनुवाद है। पुस्तक विशेष कर स्त्रियों के लिये लिखी गई है। क्या पुरुष और क्या स्त्री दोनो ही जवान रहने के उत्सुक पाये जाते हैं। जहां जवान पुरुष के साथ बल, पराक्रम और पौरुष का सम्बन्ध है वह स्त्रियों के लिये सुन्दरता, मधुरता और शक्ति जवानी के पर्य्याय वाचि शब्द ही समझे जाते हैं परन्तु कितनी स्त्रियां हैं जो कि सदा जवान रहने के वास्तविक उपायों को जानती हैं। सुन्दर वस्त्र और आभूषणों से देह को सजाने। बाल बनाने तथा पौडर लगाने से जवानी स्थिर नहीं रह सकती। यह बातें तो केवल सुन्दरता की सहायक मात्र हैं। जिस स्त्री के शरीर में बल नहीं, मन में उत्साह नहीं, हृदय में पवित्रता नहीं वह इन कृत्रम उपायों से कभी भी जवान अथवा सुन्दर बनी नहीं रह सकती। प्रस्तुत पुस्तक में जवान रहने के वह उपाय बताये गये हैं जिन से पचास वर्ष की प्रौढ़ा भी बीस वर्ष की सुन्दरी की भान्ति प्रतीत हो और साठ सत्तर वर्ष की बूढी प्रगलभा को मात करे केवल प्रतीत ही न हों वरन स्वयं भी यौवन काल के शारीरिक बांल, उल्लास, उत्साह आशा और स्फूर्ति को निज शरीर में अनुभव करें। मनुश्य के शरीर पर मानसिक विकारों और दैनिक शारीरिक क्रियाओं का जो प्रभाव पड़ता है वह किसी से छिपा नहीं। पुस्तक में बतलाये गये उपायों का आधार मनुष्य स्वभाव का यही मनो वैज्ञानिक तत्त्व है। पुस्तक के आठ प्रकरण हैं और प्रत्येक में जवानी बनाये रखने के वास्तविक उपायों का सरल, सरस, तथा मनोहर रीति से वर्णन किया गया है। लेखक के मतानुसार, पति पर प्रेम रखने, बालकों पर प्रेम करने, सच्ची भक्ति करने, परमार्थ के काम करने, शरीर तथा मन का रोग से ठीक २ सम्बन्ध समझेने, भली प्रकार कसरत करने, काम काजी जीवन बनाने तथा सौन्दर्य बनाये रखने के उपाय करने से जवानी बनी रह सकती है। इन सब विषयों की विवेचता इतनी स्पष्ट, हृदय ग्राती तथा मनोहर है कि किसी भी स्त्री को प्रभावित किये बिना नहीं रह सकती। एक बार पुस्तक पढ़ने से यह भली प्रकार स्पष्ट होजाता है कि उपरोक्त उपाय ही जवानी बनाये रखने के वास्तविक अचूक तरीके हैं। सुन्दरता किस स्त्री को प्रिय नहीं। अन्तिम अध्याय में सुन्द्रता बनाये रखने के अनेक उपाय बतलाये गये हैं। हम प्रत्येक हिन्दी पढ़ी लिखी देवीयों से इस पुस्तक को पढ़ने, मनन करने तथा तदानुकूल आचरण करने का बल पूर्वक अनुरोध करते हैं।

२. भाग्य फेरने की कुंजी—

अनुवादक तथा प्रकाशक महाबीर प्रसाद गहमरी, स्वर्गमाला कार्यालय बनारस। पृष्ट संख्या १७२ मूल्य ॥≡)

इस पुस्तक के मूल लेखक भी महाशय पढ़ियार वैद्य ही हैं। इस संसार में पांच प्रकार के दुख हैं: (१) गरीबी, (२) रोग, (क्लेश), (४) बुढ़ापा और (५) मौत। इन्ही के कारण मनुष्य समाज

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्रत्येक देश और प्रत्येक काल में पीड़ित रहा और रहता है। इन्हीं के कारण हम अपने भाग्य की निन्दा करते हैं। यदि ये दुख संसार से हट जायें तो हमारा भाग्य कितना सुन्दर, हमारा जीवन कितना रसमय बन सकता है। अतः संसार के सब शास्त्रों, सब धर्मों, सब विद्याओं कलाओं, शिल्प, रोज़गार इत्यादि का यही उद्देश्य है। इन्हीं दुखों को मिटाने मी कुंजियाँ इस पुस्तक में बताई हैं। अनेक प्रकार के दृष्टान्त और दलीलों से, विद्वानों के अनुभव और शास्त्र के प्रमाणों से इस पुस्तक में यह साबित किया गया है कि यदि हम चाहें तो बहुत कुछ कर सकते हैं, केवल दृढ़ विचार मन में उतपन्न करने की आवश्यकता है। पुनः कर्म स्वयं होते जाते हैं। विचारों का बल, उनकी शक्ति और उनकी महत्ता समझ ने से सब कार्य सिद्ध हो सकते हैं। अतः इस पुस्तक में विचारों द्वारा अपनी सोई हुई शक्तियों को जगाने की अनेक विधियें बतलायी गई हैं। इष्ट सिद्धि के लिये शुभेच्छा और उत्तम विचारों की कितनी आवश्यकता है, तथा विचारों का असर. विचारों की गति, विचारों का बल, उनका स्वभाव, विचार बदलने की युक्ति, विकासने की कला और भाग्य बदलने में विचारों का किस तरह उद्योग हो सकता है, ये सब बातें विस्तृत रूप से इस पुस्तक में वर्णन की हैं। पुस्तक निःसन्देह उपयोगी और रुचिकर है। हम चाहते हैं कि ऐसी पुस्तकों का हिन्दी संसार में विशेष आदर हो।

(३) मेरी रूस की यात्रा—लेखक कामरेड शौकत उसमानी। प्रकाशक प्रताप प्रेस कानपुर १९२८ मूल्य चार आने १९२०—२१ में जब धर्मान्ध मौलानाओं के उपदेश से अन्धेनैव नीयमाना यथान्धाः के अनुसार सहस्रों भारतवासी मुसलमान अपनी जन्मभूमी को अन्तिम नमस्ते कह कर काबुल, ईरान, मक्का, मदीना तथा टर्की की ओर हिजरत करने जा रहे थे उनके साथ उत्साही तथा साहसी नवयुवक उसमानी भी भारत से चल पड़ा, परन्तु उस की यात्रा का उद्देश्य कुछ और ही था। वह उद्देश्य भारत से बाहर विसाल जगत के दिगदर्शन से अपनी अनुभव तथा ज्ञान वृद्धि करना, तथा संसार के सभी पद दलित तथा विजित पूर्वीय देशों के सामने स्वतंत्रया, समानता, भ्रातृ-भाव के अमली आदर्श स्थापित करने वाले, स्वाधीनता के पुजारियों के पवित्रतम तीर्थ स्थान बोलसेविक रूस की वास्तविक अवस्था से परिचय प्राप्त करना था। रूस जाने के मार्ग में जिन २ कठिनाइयों का सामना हिजरत वालों को करना पड़ा पुस्तक पढ़ने से ही पता लगता है। हिजरत आन्दोलन का चाहे और कोई लाभ हो वा नहीं परन्तु इस से भारत के कूपमण्डूक मुसलमानों की जो सदैव अफगानीस्तान, टर्की, मक्का, मदीना के स्वप्न लेता रहता है—आंखे कुछ २ तो अवश्य खुलीं होंगी उन्होंने अपनी आखों से देख लिया कि बाहर के मुसलमान कितने उदार हैं तथा राष्ट्रीयता और देशभक्ति के सामने इसलाम की रत्ती भर परवाह नहीं करते।

आज संसार भर के लोग रूस की ओर देख रहे हैं, रूस ने साम्राज्यवादिकों तथा धनपतियों पर ऐसी कड़ी तथा मर्म भेदी चोट लगाई है कि उस का कोई उपाय उन से बन नहीं पड़ा। रूस ने चीन, फारस, टर्की अगफानिस्तान इत्यादि अपने एशियाई पड़ौसियों से मैत्री के सम्बन्ध स्थापित करके एशिया को स्वाधीनता का मार्ग दिखला दिया है। यदि इसी संसार को स्वर्ग बनाने की ओर किसी देश ने सब से प्रथम क्रियात्मक कदम

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उठाया है तो वह रूस है। १९२०—२१ के रूस के विषय में उसमानी भाई ने अपनी आखों देखी बातें लिख कर देश का बड़ा भारी उपकार किया है। रूसी क्रान्ति के नेताओं लेनिन ट्रास्की, जीनोव शिशिरन प्रभृति महानुभावों से मिल कर उन से अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति विचार विनिमय करने का सौभाग्य भी उसमानी जी को प्राप्त हुआ है। रूसी के लोगों का आतिथ्य तो भारतवासियों के प्राचीन अतिथिसत्कार को भी मात करता है। प्रत्येक ज्ञान पिपासु भारतयी नर नारी को इस पुस्तक का पाठ करना चाहिये। (छ० द०)

सरोज—(मासिक पत्र) सम्पादक श्रीयुत नवजादिकलाल श्रीवास्तव तथा श्रीरामप्रसाद पाण्डेय। प्रकाशक श्रीबृजकिशोरलाल श्रीवास्तव १५१, मछुआ बाज़ार स्ट्रीट कलकत्ता पृष्ट प्रति मास ७२, मूल्य ५) वार्षिक यह पत्र सरस्वती के आकार में अनेक चित्रों से विभूषित गत ज्येष्ट मास से निकलना आरम्भ हुआ है अब तक इस के तीन अङ्क निकल चुके हैं। पत्र का उद्देष्य हिन्दी भाषा में सरल साहित्य की आलोचना करना है। आज कल हमारी देश भाषा में विकास का युग है। अनेक, पुस्तकें, पत्र और पत्रिकायें प्रकाशित हो रही हैं। सुधा, माधुरी, सरस्वती, विशाल भारत, त्याग भूमि ऐसी पत्रिकायें हैं जिनका किसी भी भाषा को गर्व हो सक्ता है। उन के लेख और कविताये विचार पूर्ण और सार गर्भित रहती हैं। उनका Standrad भी ऊचाँ हैं। अतः यह इतनो सुन्दर और उपयोगी होते हुये भी साधारण जनता के लिये अधिक उपयोगी नहीं होती। वह तो कोई ऐसी साहित्य चाहती है जो कि सरल और मन बहकाने वाला हो। इसी उद्देष्य पूर्ती के लिये 'सरोज' का जनम हुआ है। अतः इस में दिल चस्प और मनोहर कहानियों, व्यँग लेख और चित्रों का ही बाहुल्य है और रहेगा। केवल विभिन्नता के लिये कुछ अन्य साहित्य विषयक लेख तथा कवितायें भी हैं! अब तक के निकले तीनों अङ्क इस उद्देष्य पूर्ति के प्रायस के सफल उदारण हैं। प्रथमांअक में उग्र जी की 'कला का पुरस्कार' शीर्षक गल्प लेखक की प्रतिभा का जाज्वलता उदाहरण है। जिस लेखक की प्रकृति ने पवित्र रचना कला इतनी उत्कृष्ट भाषा में दी हो, उस की लेखनी से "चाकलेर" और परदे में पाप जैसे निकम्मे आचार हीन साहित्य की रचना हो यह बड़े दुर्भाग्य की बात है। इसी प्रकार दूसरे अङ्क की पतिता का हृदय' और तीसरे की प्रेम और मृत्यु शीर्षक कहानियाँ खूब बढ़िया दी हुई हैं। कितने ही अन्य लेख और कवितायें भी बहुत उत्तम निकले हैं। परन्तु हमें ऐसी अच्छी पत्रिका दिल्ली एक्स-प्रेस शीर्षक धारा प्रवाह रूप से निकलने वाला उपन्यास नितान्त अनुचित जान पड़ा। यह एक गन्दी आचार हीन कहानी है जिस को अधूरा भी बन्द कर देना बुरा न होगा। क्या हम सम्पादक महोदयों से आशा रखें कि वह साहित्य को पवित्रता को सुरक्षित रखने का यत्न करेंगे। इसी प्रकार सुधा माधुरी धन्य शीर्षक चित्र भी व्यंग-कला का बहुत उत्तम उदाहरण नहीं! आशा है हमारे आशय को ठीक २ समझा जायगा। अन्त में हम यही कहना चाहते हैं कि पत्रिका बहुत उत्तम निकली है और हमारे सुगम-साहित्य कोश की पूर्ति की इस से बड़ी आशा है। हम आशा। करते हैं कि हिन्दी संसार इसे अवश्य अपनायेगा।

नवयुग (मासिक पत्रिका)-सम्पादक तथा प्रकाशक श्रीयुत सतदेव विद्यालंकार, नवयुग

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कार्यालय, मोहता हाऊस २६स्टैन्ड स्ट्रीट कलकत्ता। पृष्ठ संख्या ६४ मूल्य ५) रुपये वार्षिक यह पत्रिका भी गत रक्षा-बन्धन के दिवस से कलकत्ते से निकलनी आरम्भ हुई है। नवयुग एक विशेष उद्देष्य को लेकर प्रकाशित हुआ है हमारा भारतीय समाज दासत्व के अनेक बन्धनों में फसा हुआ है। दरिद्रता, अन्याय, अनाचार के कुठार सहते २ हमारी समाज एक दम मर्मासन्न हो गयी है। इस अवस्था में न तो स्वास्थ सम्बन्धी साधारण नियम ही कुछ कार्य कर सके हैं और न साधारण औषधियाँ ही। इस समय तो बड़ी तीखी, कड़वी, इधर या उधर करने वाली औषधि की आवश्यकता है। ऐसी औषध के उपयोग में निःसन्देह मृत्यु का भय है, परन्तु जीवन का मार्ग भी वही है। नवयुक के शब्दों में यह औषध क्रान्ति है। —"—इसी नाजुक हालत से हिन्दु समाज को बचाने के लिये, क्रान्ति की, सामाजिक क्रान्ति की ओर चहूँमुख समाजिक क्रान्ति की आवष्यक्ता हे। समाज के जीवन की कृत्रिमता व अस्वाभाविकवा को मिटाकर उस के स्वाभाविक, पूर्ण विकास का मार्ग साफ सुथरा कर देने की आवश्यक्ता है। उसको कूप मण्डूकता के गढे में से एक दम हाथ पकड़ कर बाहर निकाल ने की आवश्यता है। उस के अन्ध विश्वास परम्परावाद रुढ़िवाद और पाखण्ड के बन्धन तोड़ कर उसको एक दम स्वतन्त्र, स्वायत्त व स्वावलम्बी बनाने की आवश्यकता है। इस से पाठक अनुमान कर सकते हैं कि नवयुग का उद्देश्य कितना महान है। परमात्मा करे कि इस की पूर्ति में सफलता प्राप्त हो।

इस अंक में छोटे बड़े सब मिलाकर १८ लेख और कविता हैं। श्रीयुत सात कौड़ी पतिराय जी का 'हिन्द समाज भी मृत प्रायः अवस्था शीर्षक लेख, सुदर्शन की ही गुरु मन्त्र शीर्षक कहानी विचार पूर्ण और सार गर्भित हैं। सम्पादकीय रचनायें पठनीय और विचारनीय हैं। हमें पूरी आशा है कि जिन आशाओं और आकाक्षाओं को ले कर नवयुग ने जन्म लिया है वह उन में सफल रहेगा। श्री सत्यदेव जी को ऐसी बढ़िया पत्रिका निकालने पर हम बधाई देते हैं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

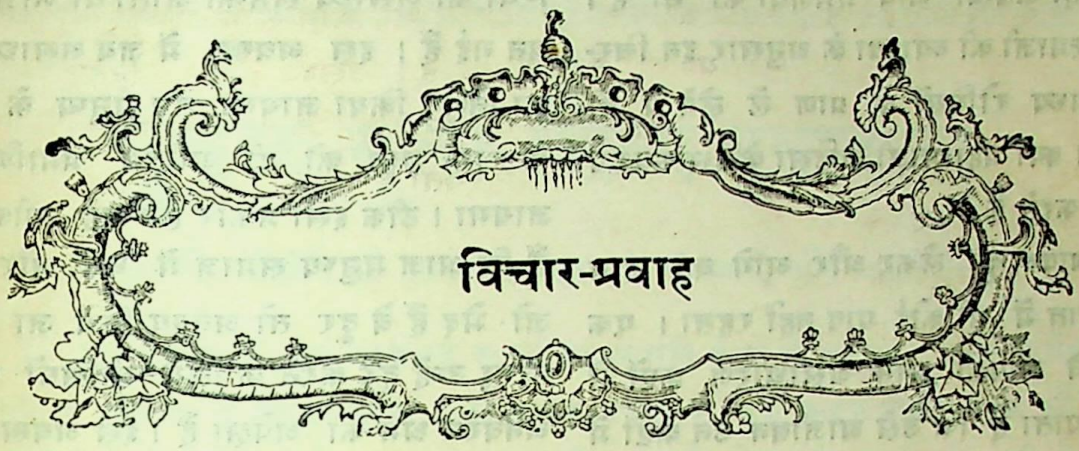

विचार-प्रवाह

१. अहिंसा की हिंसात्मक व्याख्या

महात्मा गान्धी के आश्रम की गोशाला में एक गाय का बछड़ा चिररोगी था। आश्रम के कार्य-कर्त्ताओं के अनथक उद्योग करने पर भी उसका कष्ट कम न हुआ। पशु चिकित्सकों ने बछड़े की बीमारी को असाध्य इकरार दे दिया। बछड़ा बीमारी में जिस कष्ट से बार बार तड़पता था, उसे महात्मा जी सह न सके। अतः उन्होंने विष की तीव्र पिचकारी द्वारा बछड़े के प्राण ले लेने की अनुमति डाक्टरों को देदी। तदनुसार ऐसा ही किया गया।

यह घटना ऊपर की दृष्टि से सम्भवतः बहुत महत्व पूर्ण न जँचे, परन्तु इस घटना को लेकर महात्मा जी ने हिंसा और अहिंसा की जो बड़ी व्याख्या की है, उस की गुरुता में सन्देह नहीं किया जा सकता। महात्मा जी का कहना है कि किसी प्राणी को अनिवार्य कष्ट से छुड़ा देने के लिये यदि कुछ हिंसा भी करनी पड़े तो उसे वास्तव में अहिंसा ही कहना चाहिये, क्योंकि उसका परिणाम स्थायी रूप से अहिंसात्मक है। उदाहरण के लिये उन्होंने डॉक्टरों की चीराफाड़ी को पेश किया है। उनका कथन है कि यदि मनुष्य की बीमारी भी असाध्य हो जाय और उसे कष्ट बहुत अधिक हो तो उसके प्राण ले लेने में अहिंसा समझनी चाहिये।

परन्तु हमारी सम्मति में अहिंसा के स्वरूप की व्याख्या इतनी सहज नहीं है। यदि पूर्ण रूप से इस व्याख्या का अनुसरण किया जाय सम्भवतः इस के अनेक परिणाम इतने भयंकर होंगे कि स्वयं महात्मा जी का दयालु हृदय उनकी कल्पना मात्र से भी काँप उठेगा।

महात्माजी ने अहिंसा की जो यह नई व्याख्या की है, इसमें उन्होंने एक प्राणी की स्वतन्त्र इच्छा को कम महत्व देकर अन्य प्राणियों को उसके सम्बन्ध में विचार करने का, और यदि आवश्यक समझें तो प्राणबध करने का भी अधिकार स्वीकार किया है। हम अपनी इस स्थापना को कुछ और स्पष्ट करना चाहते हैं। जीव मात्र, चाहे कितने ही कष्ट में क्यों न हों, उन्हें प्राणों का मोह बना ही रहता है। यही कारण है कि मनुष्य-समाज में गलित-कुष्ट के मरीज़, अत्यधिक वृद्ध तथा किसी भयंकर रोग के चिररोगी भी मृत्यु का आलिङ्गन करना पसन्द नहीं करते। ये लोग प्रतिक्षण कष्ट से तड़पते हैं, परन्तु यदि इनसे पूछा जाय कि तुम्हारा बध करके तुम्हें इन कष्टों से छुड़ा दिया जाय तो ये असाध्य चिररोगी भी मृत्यु को कभी पसन्द नहीं

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

करेंगे। यही अवस्था अन्य प्राणियों की भी है। परन्तु महात्माजी की व्याख्या के अनुसार इन चिर-दुखी असाध्य रोगियों के प्राण ले लेने में ही अहिंसा है। क्या महात्माजी अहिंसा के इस स्वरूप को पसन्द करते हैं ?

इसी स्थापना को लेकर और आगे बढ़ा जाय तो आत्मघात में भी कोई पाप नहीं रहता। एक मनुष्य अपने आपको इतने असाधारण कष्टों से फँसा हुवा पाता है कि उसे आजीवन उन कष्टों में छुटकारा पाने की आशा नहीं रहती। इस अवस्था में यदि वह आत्मघात द्वारा दो मिनट में ही सदा के लिये अपने सांसारिक कष्टों से छुट्टी पा जाता है तो वह आत्मघात क्यों न करे। क्या महात्माजी आत्मघात को बुरा या अनुचित नहीं समझते ?

एक और बात ! हम पहले ही कह चुके है कि महात्मा जी की इस नई व्याख्या के अनुसार कोई प्राणी कितना दुखी है, इस के निर्णय का सधिकार उस के निकटवासी मनुष्यों को दे दिया जाता है। यदि वे उस के कष्टों को सर्वथा अनिवार्य समझें तो उसे उन कष्टों से छुड़वाने के लिये उस की हत्या भी कर सकते हैं। वास्तव में मनुष्य समाज में बहुत से मनुष्य इतने अधिक गरीब और निर्बल होते हैं कि उन की सारी आयु भारी कष्ट में व्यतीत होती है। साधारणस्थिति के मनुष्य समाज को भिखमगों का जीवन अत्यधिक दुखमय प्रतीत होता है इस लिये क्या वे इन भिखमगों का बध कर दें ? महात्मा जी का कहना है कि पहले दुख को दूर करने का पूरा प्रयत्न करना चाहिये। यदि यह विश्वास हो जाय कि दुख असाध्य है तभी दुखी प्राणी का प्राण बध करना चाहिये। हमारा उन की सेवा में यह नम्रता पूर्वक निवेदन है कि मनुष्य समाज स्वयं पूर्ण ज्ञानी नहीं है। पहले जिन बीमारियों को असाध्य समझा जाता था आज वे साध्य बन गई हैं। इस अवस्था में जब असाध्य बीमारी का निर्णय किया जायगा, तब मनुष्य के आज तक के रोग ज्ञान को ही अन्तिम प्रमाणिक माना जायगा। ठीक इसी प्रकार हम यह स्वीकार करते हैं कि आज मनुष्य समाज में धनी और गरीब के जो भेद हैं वे दूर तो अवश्य किये जा सकते हैं, परन्तु उन्हें दूर करने के लिये बीसियों बरसों के अनवरत श्रम की अपेक्षा है। इस अवस्था में आज कल जो अत्यधिक गरीबी द्वारा सताए गए मनुष्य हैं, उन का कष्ट असाध्य मान कर उन की हत्या कर देने में अहिंसा ही समझनी चाहिये। क्या महात्मा जी अपनी व्याख्या को यहां तक विस्तृत कर देने के लिये तैयार हैं ?

इसी प्रकार अहिंसा की इस नई हिंसात्मक व्याख्या के आधार पर समाज में और भी अनेक भयंकर उपद्रव पैदा किये जा सकते हैं। हमारी तुच्छ सम्मति में यदि महात्मा जी उस बछड़े को किसी दवाई द्वारा बेहोश ही करवा देते तो भी उन का उद्देश्य पूरा हो सकता था। इस अवस्था में बछड़ा अपने जीवन की स्वाभाविक अवधि पर ही मरता और इसे कष्ट तड़पना भी न पड़ता। क्या महात्मा जी इस सम्बन्ध में पुनर्विचार करने की कृपा करेंगे ?

२. ज़बरदस्ती मेहमान !

पिछले १२ अक्तूबर के दिन साइमन सप्तक के सातों शूरवीर फिर से भारत भूमि में ज़बरदस्ती मेहमानी लेने पधारे हैं। ये लोग अब करीब ६ मास तक भारत सरकार की मेहमानी निबाहेंगे। इस गरीब देश का धन व्यर्थ में ही पानी की तरह बहाया जायगा। हमें आशा है कि भारतवर्ष के स्वतन्त्रता प्रेमी नवयुवक इस 'ज़बरदस्ती' मेहमान का यथोचित आतिथ्य करेंगे।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सचित्र

सुचारु सूची शिल्प पत्रावली

सलाई और क्रोशिये की दस्तकारी सिखलाने की सस्ती और अनूठी विधि

इस प्रकार के पत्र इंग्लेण्ड अमरीका इत्यादि देशो में तो बहुत दिनों से निकलते हैं। परन्तु भारत में हिन्दी भाषा द्वारा प्रत्येक वस्तु के लिये अलग अलग कार्ड की रीति से इस कार्य को सिखलाने का यह पहला ही प्रयत्न है जो कार्य पसन्द हो उसी के अनुकूल दो तीन आने खर्च कर कार्ड खरीद लो और घर बैठे बिना किसी की खुशामद के बनालो अब तक निम्न लिखित कार्ड (१४×७) प्रकाशित हो चुके हैं:—

पत्र नं०	मूल्य	पत्र नं०	मूल्य
१—दीर्घ सूची प्रारम्भिक प्रयोग ११ चित्र	।)	५—पुरुषों का लम्बा मौज़ा [सचित्र]	=)
२—बड़ी सादी बनियान [सचित्र]	=)॥	६—पुरुषों का सरल दस्ताना [सचित्र]	=)॥
३—पुरुषों का कुत [सचित्र]	=)॥	७—स्त्रियों का फूलदार कालर [सचित्र]	≡)
—बालिका की ऊनी जर्ज़ी [दुरंगा]	≡)	पुरुषों का जुन्दकोदार मौज़ा [सचि]	=॥)

८ कार्डों का पूरा सैट मूल्य १।=)॥ के स्थान में केवल १) रुपया

कुछ सम्मतियाँ—

सरस्वती इलाहाबाद— यह पत्रावली नारी मात्र के लिये बड़ी उपयोगी है। छपाई सुन्दर भाषा सरल और मूल्य बहुत ही कम।

प्रताप लाहौर—कन्या पाठशालाओं और स्कूल की लड़कियों केलिये बड़े काम की चीज़ है।

गृहलक्ष्मी प्रयाग—हम इन कार्डों का हृदय से प्रचार चाहते हैं।

महारथी देहली—यह कार्ड सस्ते होने के कारण कन्याओं के लिये बड़े उपयोगी हैं।

मैनेजर "ज्योति"

कोठी नम्बर २१, २२ राजपुर रोड देहरादून।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कला कौमुदी

लेखिका श्रीमती ओ३म्वती देवी

चित्र कला कौशल सम्बन्धी अनुपम पुस्तक इस के द्वारा लेखिका ने क्रोशिये के कार्य को बड़ा ही सरल बना दिया है। बिना किसी प्रकार के पहिले ज्ञान के कन्यायें और स्त्रियें केवल इस की ही सहायता से अनेक प्रकार की बिनावट लेसें, फ़ीते, कपड़े इत्यादि बनाना सहज में ही सीख सकी हैं। पुस्तक में इतना विषय है कि किंचित इस से कई गुना दाम की पुस्तकों में भी न होगा। प्रत्येक वस्तु तथा बिनावट का बनाना चित्र देकर बड़ी सरल रीति से सिखाया गया है। देखिये समाचार पत्र इस के विषय में क्या कहते हैं।

"ट्रिब्यून" (अंग्रेज़ी का प्रसिद्ध दैनिक) लाहौर—स्त्रियों के लिये उपयोगी पुस्तक है। अनेक चित्रों द्वारा वस्तु बनाने की विधि बड़ी सरलता से समझाई गई है। सुन्दर नमूनों की लेसें, टेबल क्लाथ, बच्चों के सुन्दर कपड़े और अन्य कई वस्तुओं का बनाना बड़ी सुन्दर रीति से बतलाया गया है। पुस्तक की उपयोगिता के विचार से मूल्य बहुत कम है।

"मतवाला" (कलकत्ता)-यह पुस्तक हमारी बहिनों के बड़े समझ की है। छपाई बहुत अच्छी, कागज़ बहुत अच्छा मोटा चिकना आर्ट। सुचारु शिल्प पत्रावली कार्ड गृहस्थियों के बड़े काम की चीज़ है।

"कर्मवीर" (खांडवा)— ·····पुस्तक में सादे फन्दे से लगाकर तरह तरह की वस्तुओं के बनाने की विधि बड़ी सरलता से समझाई गई है जिसे पढ़कर साधारण पढ़ी लिखी स्त्री भी इस कार्य को सीख सकती है। इस का मूल्य लागत को देखते कम है।

"माधुरी" (लखनऊ)-ऐसी पुस्तकों की हिन्दी साहित्य के लिये बड़ी आवश्यकता है। आशा है इस पुस्तक का अच्छा प्रचार होगा जिस से इस प्रकार की और पुस्तकें भी प्रकाशित की जा सकें। लेखिका और प्रकाशिका दोनों को बधाई।

शीघ्र आर्डर भेजिये मूल्य १॥)

कला कौमुदी तथा शिल्प पत्रावली का पूरा सैट लेने पर २॥=)॥ के स्थान में केवल २।) में दिया जायगा।

कन्या पाठशालाओं और पुस्तक विक्रेताओं को विशेष रियायत

मैनेजर ज्योति—

कन्या गुरुकुल

राजपुरा रोड कोठी नं० २१—२२ देहरादून

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

चौधरी हुलासराय प्रिन्टर तथा पं० रामचन्द्र पब्लिशर के लिये गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में मुद्रित।

Regd. No. A. 1711

वर्ष ६] सितम्बर, १९२८ [संख्या ५, ६
अक्टूबर, १९२८

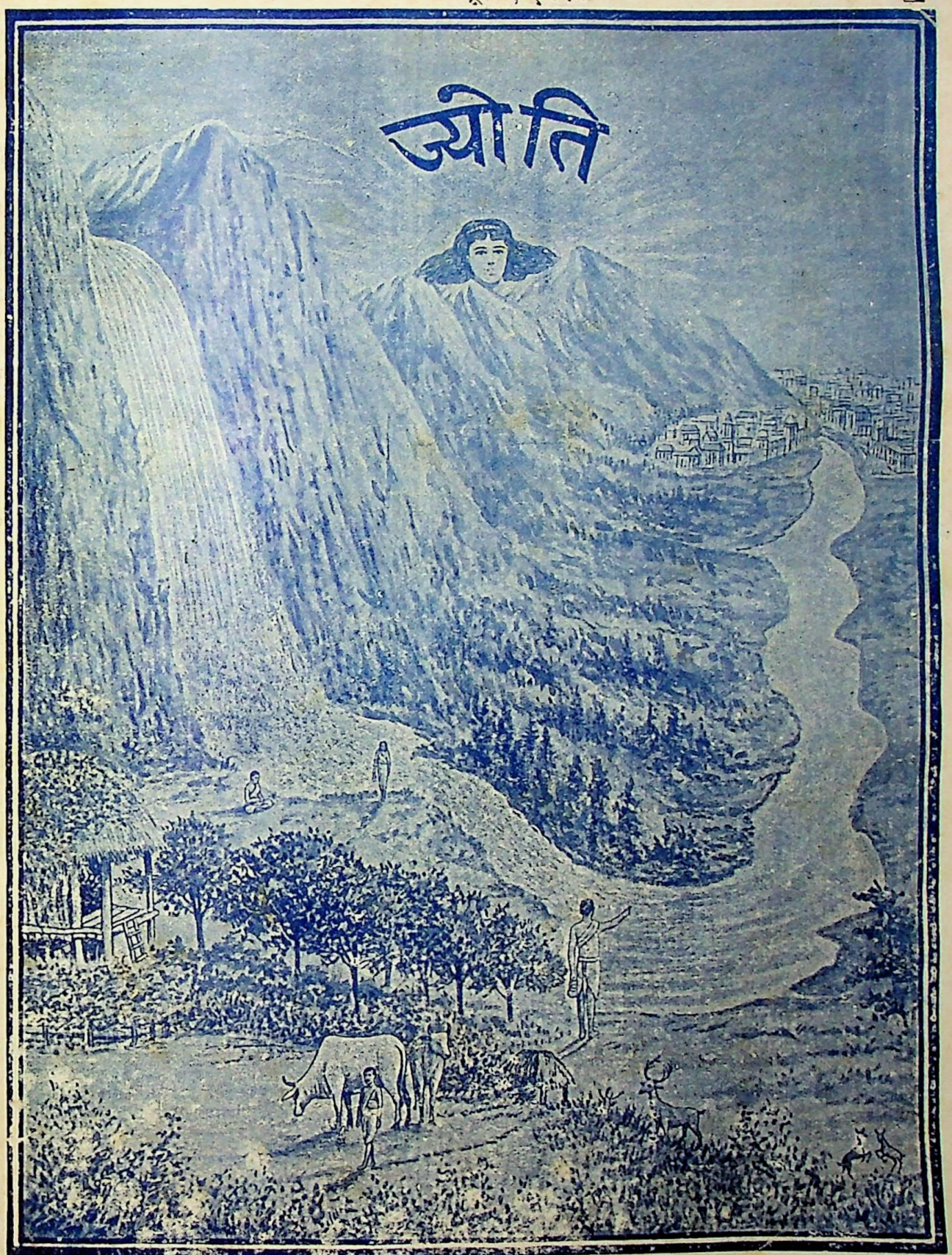

वार्षिक मूल्य ४॥) सम्पादिका— स्त्रियों और विद्यार्थियों से ४)
प्रति संख्या ॥) विद्यावती सेठ बी. ए. विदेश का मूल्य ६)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विषय सूची।

विषय	पृष्ठ से
१. याचना [कविता]— "देव"	१८५
२. चरित्र— लेखक "क्ष"	१८६
३. "अभिलाषा"— श्रीयुत हरिकृष्ण जी मढवाल	१९०
४. उत्तेजना— "जीवन"	१९३
५. गुजरात में हिन्दी-साहित्य— 'गुजराती'	१९४
६. सार्वभौम-वैदिकधर्म— प्रथम अध्याय श्री पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति	२०३
७. भारत-साम्राज्य-विस्तार— नारायण रामरख देशपांडे	२१३
८. टेसू— पं० आनन्दस्वरूप विद्यालंकार	२१६
९. विद्यार्थियों का संगठन – एक विद्यार्थी	२१८
१०. निर्झर— [कविता] श्री प्रियहंस	२२१
११. अभिजनन शास्त्र का एक अंग (कृत्रिमरोध) श्री पं० अत्रिदेव जी विद्यालंकार	२२२
१२. दक्खनी ब्राह्मण— ऐम. राय	२३०
१३. वसन्त— "श्री शान्त"	२३२
१४. सार्वभौम-वैदिकधर्म— द्वितीय अध्याय श्री पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति	२३३
१५. जातकर्म-संस्कार— श्री पं० अत्रिदेव जी आयुर्वेदालंकार	२५०
१६. विचार-प्रवाह—	२५८

लेखकों से निवेदन

१. ज्योति में लेख कविता आदि भेजने वाले महानुभावों को अपने लेख सुस्पष्ट अक्षरोंमें कागज़ के एक ओर ही हाशिया छोड़ कर लिख कर भेजने चाहियें।

२. लेख बहुत लम्बे न होने चाहिएँ। 'ज्योति' पत्रिका के लगभग चार पृष्ठों के लायक लेख हों तो अति उत्तम है।

३. लेखों को घटाने बढ़ाने तथा संशोधित करने का संपादक को पूर्ण अधिकार है।

ज्योति सम्बन्धी पत्र व्यवहार—

आचार्य्या कन्या गुरुकुल

कोठी नं० २१, राजपुर रोड़

(देहरादून)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

लूटो ! लूटो !! ६१ इनाम लूटो !!!

दौलतका खून ! सिर्फ नामके लिये

३॥=) दर्जन दाद की दवा पर ६१ बहुमूल्य वस्तुवें इनाम !

फैशनेबिल "ट्वाय" रिस्टवाच और पाकेटवाच भी इनाम में ही शामिल हैं ॥

इनाम की चीजों को देखते ही दिल फड़क उठेगा ।

कैसा ही नया पुराना ख़राब से ख़राब दाद क्यों न हो इस दवा के लगाते ही २४ घण्टे में बिना किसी कष्ट के जड़ से मिट जाता है । दादकी १२ डिबियोंकी कीमत ३॥=) है और साथ में नीचे की बहुमूल्य ६१ चीजें मुफ्त इनाम में दाद की दवा के साथ भेजी जाती हैं इनामकी चीजें :—

१ ट्वाय पाकेट वाच । २ घड़ीकी चैन । अंगुठी ४ बढ़िया तास । ५ झुन-झुना । ६ सुतका गट्ठा । ७ सुन्दर सुइज बन्डल । ८ नगीनेवाली अंगूठी । ९ बहुत बढ़िया चस्मा । १० खूबसूरत जलछवी । ११ बढ़िया इत्रसी शीशी । १२ खुशबूदार साबुन । १३ बहुत बढ़िया ब्रश । १४ फाउनन्टे पेन । १५ खूबसूरत रुमाल ।

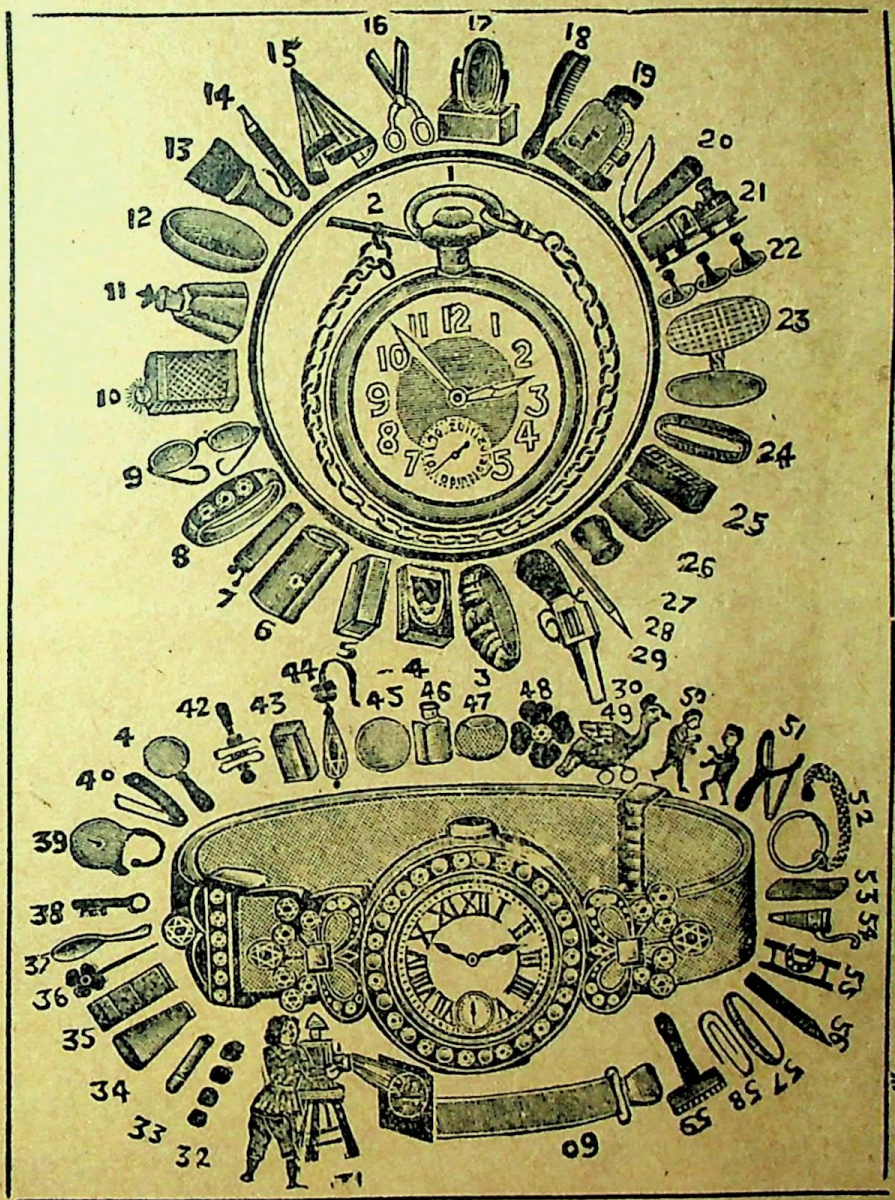

१६ बहुत बढ़िया कैंची । १७ खूबसूरत शीशा । १८ सुन्दर कंघा । १९ सुन्दर खिलौना । २० खूबसूरत चाकू । २१ सुन्दर विचित्र । शीशा । २२ सुन्दर बदाम । २३ बहुत बढ़िया कफके बटाम । २४ खूबसूरत बाली । २५ बहुत बढ़िया पियानो जरमनी हारमोनियम । २६ बालउड़ानेकासाबुन २७ बढ़िया शीशेका दवात २८ सुन्दरपेनसिल क्लिप २९ खूबसूरत पेन्सिल ३० बढ़िया पिस्तौल । ३१ पचास तमासवाला बायसकोप । ३२ बहुत बढ़ियारबड़कीगेंद । ३३ खूबसूरत बांसुरी । ३४ बढ़िया जर्मनी सीटी । ३५ खूबसूरत मनीबेग । ३६ सुन्दर सिरमें लगाने का काटा । ३७ खूबसुरत चम्मच । ३८ चाभी ३९ मजबूत ताला । ४० सुन्दर चिमटी । ४१ दूध या चाय छाननेका यन्त्र । ४२ कानसे मैल निकालनेका यंत्र । ४३ खूबसूरत घुघरु । ४४ खूबसूरत इयर रिङ्ग । ४५ गोली । ४६ खुशबूदार तेलकी शीशी । ४७ सुन्दर, तमाशेकी गेंद । ४८ खूबसूरत नाकका फूल । ४९ आटोमेटिक सुन्दर वत्तक । ५० मस्खरा । ५१ बिचित्र जिभो । ५२ चाभीका रींग । ५३ दांतसे मैल निकालनेका यंत्र । ५४ फौण्टेनबेनकी क्लिप । ५५ छाती पर लगानेका सेफ्टीपेन ५६ नीबी । ५७ ऐंठदार सुन्दर छड़ा । ५८ पेपर क्लिप । ५९ हजामत बनाने का सेफ्टी रेजर । ६० सुन्दर फीता । ६१ बढ़िया 'दवाय' रिष्टवाच ।

पता—दो फ्रेण्ड्स आफ़ इण्डिया, २८१, अपर चितपुर रोड, कलकत्ता ।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विविध विषय विभूषित सुन्दर मासिक पत्रिका.

वर्ष ६ | भाद्रपद १९८५ * सितम्बर १९२८ | संख्या ५

याचना

सत्य स्नेह की सरस लता में,
भोग योग के भव्य भवन में,
मलय-पवन से मुदित मनों में,
कष्ट समय में तृषित जनों में,
नाथ ! नित निज निवास बना दो जी ॥१॥

* * *

मधुर-मन्द-मुख चन्द हास से,
सुन्दर सरस अरु रंग रास से,
मन मोहन मञ्जु-मञ्जरी से,
पुष्प विपिन की प्रणयवल्लरी से,
देव ! अबतो दिव्य स्वरूप दिखा दो जी ॥२॥

* * *

आदर अनुनय प्रणय याचना की,
भक्ति प्रेम की वसन्त वासना की,
नवलनेह के शुभ परिमल की,
कञ्ज कुञ्ज युत विमल महल की,
घनश्याम ! स्नेही की ये प्यास बुझा दो जी ॥३॥

* * *

नट वर ! निज नाद सुनादो
मुरली धर ! मद-मधु चखादो !
भटकों को निज बाट दिखा दो
दुःखियों को निज गोद सुलादो !!
सुमन सुमन से सेज सजा दो जी !!!

* * *

"देव"

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

चरित्र

(लेखक— "च")

कलंक रहित चरित्र अनमोल धन है। किसी राजा की सम्पत्ति के साथ उस की बराबरी नहीं हो सकती। मिहनती, सच बोलने वाला, उदार चित्त एवं सब प्रकार के उत्तम भावों से भरा हुआ सब देशों में सब समाजों में श्रद्धा और प्रेम का भाजन होता है। पृथ्वी में जो कुछ सब से उत्तम हैं उसका वह अधिकारी होता है। उनके न होने से संसार उजाड़ होकर सदा एक न एक उपद्रव खड़ा करता है। वे जिस समाज में रहते हैं वह समाज नदी के जल से सींचे हुए लहलहाते भूखण्ड की भाँति शोभा पाता है। मनुष्य में सचाई उदारता और साधुता चरित्र ही के गुण से बढ़ती हैं।

बुद्धिमान् मनुष्य लोगों में प्रशंसा पाता है। अच्छे चरित्रवाला प्रशंसा के साथ ही लोगों में भक्ति और श्रद्धा का पात्र होता है। प्रतापी पुरुष जब समाज में बुद्धिमानी के कामों के करने में लगता है तो चरित्र से समपन्न मनुष्य समाज में धर्म भाव की उन्नति के लिए यत्न करता है। समाज एक मनुष्य को प्रसिद्ध करता है और दूसरे के ढर्रे पर चलने में व्यग्र होता हैं।

विशेष गुणों में भरे हुए महापुरुष संसार में दुर्लभ हैं। जीवन की छोटी सीमा में बिरले ही मनुष्य बड़ाई की योग्यता पाते हैं। और प्रत्येक विषय में बराबर भाग्यवान् नही होते। जिन में बुद्धि है उन में उद्योग का स्वभाव नहीं। जो उद्योगी हैं, उन में बुद्धि की तेज़ी नहीं। जो सम्पत्तिशाली हैं; उनको सत्कार्य के करने में रुचि ही नहीं और जो सत्कार्य के करने में रुचि रखते हैं उन के पास सम्पत्ति ही नहीं। इस प्रकार इस जगत् में एक दूसरे का अभाव बना रहता है। चरित्र के गुण में इन अनमेल बातों में से बहुतेरी मेल की पाई जाती हैं। चरित्रवाला व्यक्ति जैसे बुद्धि के बढ़ाने वाले कामों में चित्त लगाता है, वैसे ही उद्योग का भी परिचय देता है। जैसे सुमार्ग में रह कर धन के कमाने में प्रवृत्त होता है वैसे ही अच्छे कामों के करने में कमाये हुए धन को लगाता है। असाधारण महापुरुष की पदवी की प्रतिष्ठा को पाकर भी अपनी शक्ति के अनुसार बड़े कामों के करने में संकोच नहीं करता। परोपकार ही से उनको संतोष और तृप्ति होती है। दूसरों की उन्नति करने में उन को आग्रह होता है। वे पिता और माता की भक्ति में तत्पर होकर कुटुम्बियों के साथ जैसा प्रेम रखते हैं, पड़ोसियों के साथ भी वैसा ही सदाचार का परिचय दिया करते हैं तात्पर्य यह है कि जगत् पिता परमात्मा ने उनको जिस अवस्था में रक्खा है, वे उसी अवस्था में रह कर संतुष्ट चित्त से सब भाँति साधुता के सम्मान की रक्षा करते हैं। दूसरे लोग उनके दिखलाए हुए दृष्टान्तों पर चल कर अपनी उन्नति के करने में बद्धपरिकर हो जाते हैं। सूर्य की किरणों के पड़ने से जैसे भूमि खिल उठती है, पूर्णचन्द्र की शीतल किरणों से जैसे संतप्त शरीर शान्त हो जाता है वैसे ही उनके मिलने और उनके साथ रहने से मनुष्य ज्ञानरूपी प्रकाश से खिल उठते हैं, उपदेश पाने से प्रफुल्ल और अच्छे आचारों से दुःख रहित होजाते हैं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

केवल ज्ञान के अनुशीलन के साथ चरित्र की पवित्रता का उतना निकट सम्बन्ध नहीं है, किन्तु इतना सम्बन्ध न होने पर भी विद्या की चर्चा का तिरस्कार करना उचित नहीं है। विद्या के साथ साधुता का संयोग होना आवश्यक है। कभी २ विद्या के साथ बुरे चरित्र भी मिले हुए देखे जाते हैं। कोई मनुष्य साहित्य, विज्ञान और शिल्प शास्त्र में पण्डित हो सकता है; पर साधुता, धर्म वासना, सत्यभाषण और कार्य निष्ठा में उन सब के होने पर लण्ठ किसान की अपेक्षा भी निकम्मा होता है। किसी अच्छे पण्डित और लेखक ने लिखा है। "मैंने बहुतेरी पुस्तकें पढ़ी हैं, बहुतेरे ज्ञानियों को देखा है, बहुतेरे धनशाली पुरुषों के साथ बातचीत की है, परन्तु बिना पढ़े लिखे हुए पुरुष और स्त्रियों ने मुझ से जो मत प्रकट किया है वह सब पुस्तक इत्यादियों की अपेक्षा कहीं अधिक अच्छे हैं।" हम लोग जब तक चन्द्रमा की चाँदनी की तरह विमल भाव का परिचय न दे सकेंगे तब तक जीवन के यथार्थ उद्देश्य के साधन में समर्थ न हो सकेंगे।

विद्या की अपेक्षा धन के सहित चरित्र की उन्नति का अधिक दूर का सम्बन्ध है। धन प्रायः चरित्र को बिगाड़ देता है। धन भोग का व्यसन, असमय का काम और पाप, इन का आपस में बहुत बड़ा सम्बन्ध है। धन जो बुद्धि हीन और विषयी मनुष्य के हाथ पड़े तो बहुतेरे अनर्थों का मूल हो जाता है। इसके विरुद्ध दरिद्रता के सङ्ग साधु चरित्र का बहुत बड़ा सम्बन्ध हैं। संसार में अपने परिश्रम से संभल कर खर्च करने से और अच्छे आचरण पर चलने से बड़े सुख से काल बिताया जा सकता है। किसी ज्ञानी ने अपने लड़के को उपदेश दिया था कि— "चाहे तुम्हारे पास एक कौड़ी भी न हो पर मनुष्यत्व की रक्षा से मुंह मत मोड़ना, क्योंकि हृदय के साधु और मनुष्य के योग्य न होने से किसी का सम्मान नहीं होता।" एक मनुष्य बड़े कष्ट से धन कमा कमा कर अपने कुटुम्ब का पालन पोषण करता था, वह यद्यपि पाठशाला में बहुत दिन तक नहीं पढ़ा था तो भी उसको विलक्षण ज्ञान था। उसके पुस्तकालय में एक धर्म पुस्तक और कई एक साहित्य के ग्रन्थों को छोड़ कर कुछ न था। उस की आमदनी भी मामूली थी। उस अच्छे विचार वाले की कर्त्तव्य निष्ठा, सौम्य प्रकृति और उत्तम व्यवहार की इतनी ख्याति हुई कि जो बहुतेरे धनवानों को नसीब भी नहीं होती।

फल इसका यह है कि अदूरदर्शी लोगों के हाथ में धन पड़ने से केवल अनर्थ ही अनर्थ होता है। उत्तम चरित्र वाले धन को अच्छे कामों में लगाते हैं, वे लोग भोग विलास में पड़कर धन को व्यर्थ ही बहाकर पाप मोल नहीं लेते। इस के विपरीत निरा दरिद्री मनुष्य अपने अनमोल चरित्र रत्न के प्रसाद से जिस अक्षय कीर्त्ति के अधिकारी होता है, उस के आगे बड़े धनी राजा भी भक्ति रस से भरे हुए हृदय से माथा झुकाते हैं। ईसवी सन् १८०० के अन्त में नवद्वीप (नदिया) में रामनाथ तर्कसिद्धान्त नामी एक पण्डित हुए हैं। न्यायशास्त्र में वे अपने समय के एक ही विद्वान् थे। रामनाथ दरिद्री होने पर भी धन के लालच से कभी किसी के दरवजे नहीं गए, वे नवद्वीप के पास के जंगल में कुटी बनाकर रहा करते थे। और उसी कुटी में शान्त होकर शास्त्र विचारा करते थे। उनकी धर्मात्मा पत्नी ने एक वार किसी दूसरे पदार्थ के न मिलने पर कुटी के पास वाले इमली के पेड़ की पत्ती को उबाल कर अन्न के साथ अपने पति के

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

आगे रख दिया। दरिद्र रामनाथ ने अमृत समान मान कर उन्हीं इमली की पत्तियों के साथ भोजन किया। नवद्वीप के राजा ने यह सुनकर कि उनके बराबर कोई दूसरा चरित्र युक्त तथा शास्त्र के जानने वाला नहीं है, बहुत सा धन देना चाहा। धनवान् होने से भोग-लालसा बढ़ेगी, पढ़ने पढ़ाने में विघ्न पड़ेगा। सन्तान होने पर भोग विलासी होकर चरित्र छोड़ देंगे, इसी विचार से निर्धन ब्राह्मण ने धन नहीं लिया। उनकी तेजस्विनी पत्नी ने नवद्वीप के राजा से कहा कि—"बेटा! हम को किसी बात की कमी नहीं हैं, हमारे पहिनने के लिए धोती है, जल पीने के लिए लुटिया है, बिछाने को चटाई है। अधिक क्या? बाएँ हाथ में लोहे का कड़ा है, हमको किसी बात की कमी नहीं है।" नवद्वीप का राजा प्रतिप्राणा इस स्त्री के अनुपम चरित्र बल और तेज को देख कर बड़ा चकित हुआ। यह ब्राह्मण दम्पति अपने सरल सदाचार से जो कीर्त्ति छोड़ गए हैं वह कभी नष्ट नहीं हो सकती। बहुत दिन बीते एक सामान्य झोंपड़ी के रहने वाले, जन्म दरिद्री ब्राह्मण ने केवल अपने अच्छे चरित्र के गुण से इस तरह से संयम करके ज्ञान पाया था कि उस से संसार के जीतने वाले महाराज को भी आश्चर्य होता है।

चरित्र वाले पुरुष सदा विवेक के आधीन रहते हैं। वे झूठी बातों से जितनी घृणा करते हैं, उतना ही सच्ची बातों का आदर करते हैं, उनके हर एक काम में उनकी साधुता टपकती है। यूनान देश के परम प्रसिद्ध दार्शनिक सुकरात ने बार २ दुःख पाने पर भी कभी क्रोध नहीं किया। जिस क्रोध रूपी शत्रु का दबाना बहुत कठिन है; वह मानों आज्ञाकारी सेवक की भाँति सदा सिर झुकाये खड़ा रहता था। मेवाड़ के राणा रायमल के लड़के जयमल के किसी अनुचित काम करने पर एक राजपूत वीर ने क्रोध में आकर उस को मारडाला महात्मा रायमल ने लड़के के घातक को इनाम देकर राजपूत धर्म की मर्यादा की रक्षा की। इसी प्रकार अन्य भी कई दृष्टान्त दिए जासकते हैं। सच्चरित्र लोग इसी तरह से सदा भलाई की ओर श्रद्धा रखते हैं। उनके कृत्यों से भली श्रद्धा, विनय और सुजनता झलका करती है। वे जैसे बड़े बूढ़ों का सन्मान और गुरुजन की ओर भक्ति रखते हैं वैसे ही बन्धु बांधवों पर प्रेम और नौकरों पर स्नेह प्रकट करते हैं। यही नहीं उनके लिए यह सारा विश्व अनन्त प्रेम की डोरी में बंध जाता है। सामान्य लोगों में भी किसी गुण को देख कर उन पर श्रद्धा प्रकट करने से मुंह नहीं मोड़ते। मल्लाह के चाण्डाल होने पर भी उसकी विनति और भलाई से सन्तुष्ट होकर महानुभाव रामचन्द्र ने उसके साथ भाई का सा वर्ताव किया।

सच्चरित्र मनुष्य सदा अपने कर्त्तव्य के करने में लगे रहते हैं। मनुष्य परिवार में बंधा रहता है, इसलिए उस को सब से पहिले माता-पिता स्त्री पुत्र इत्यादि कुटुम्ब-सम्बन्धी कामों को करना पड़ता है। इसके सिवाय हित नात, अपनी जाति तथा परजाति वाले अपने पराये सब के लिए कुछ न कुछ करना ही होता है। चरित्र वाले मनुष्य इन सब कर्त्तव्यों के पालन करने से कभी विमुख नहीं होते। वे माता पिता के साथ आज्ञाकारी सेवक की तरह पेश आते हैं, स्त्री-पुत्र आदियों के साथ शान्त, अच्छे २ उपदेश देने तथा पालन करने वाले की तरह वर्तते हैं। अपनी जाति, परजाति और बिगानों के साथ दया धर्म की निगाह रखते हैं। वे अपने जीवन को तुच्छ समझ कर अपने कर्त्तव्य के निबाहने का यत्न करते हैं। रामचन्द्र जी राज्य

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

के अधिकारी होने वाले थे, परन्तु कर्त्तव्य पालन से इन्कार नहीं किया झट बल्कल वस्त्र पहिन बन जाने के लिये तय्यार होगए।

पहिले इटली देश में पम्पियाई नामक एक बड़ा सम्पन्न नगर था। किसी समय एक फ़ौजी आदमी नगर के पहरे का काम करता था। उसी समय विस्पुवियस नामी ज्वालामुखी पहाड़ से भयङ्कर आग बरसने लगी। लावे के ढेर से सारा शहर छा गया, पर शहर का पहरेदार अपनी जगह से तिल मात्र भी न हटा। नियत स्थान पर खड़ा हो कर पहिरादेना उसका काम था। आग के उत्पात से बिना भौंह सिकोड़े हुए अपने काम के करने के साथ वहीं पर मर गया। उसका शरीर राख की ढेर में मिलगया बस उसकी कीर्त्ति सदा बनी रहेगी। उसकी टोपी हथियार, ढाल आज तक उसके असाधारण चरित्र गुणों को दिखाने के लिए नेयुलस नगर की प्रदर्शिनी में बड़ी शान से रक्खे हुए हैं।

यत्न के बिना चरित्र नहीं बनता और न उच्चभाव ही बनते हैं। चरित्र की उन्नति के लिये आत्मशासन तथा आत्मावलम्बन की बड़ी भारी आवश्यकता है। पृथिवी के चारों ओर संसार को नष्ट करने के लिये पाप मंडरा रहे हैं। चारों ओर प्रलोभन की सामग्री तय्यार है। पाप और लोभ के बीच में पड़कर आत्मशासन की आवश्यकता जान पड़ती है। जिससे पाप उत्पन्न हो और न करने योग्य हो उसे सदा के लिए घृणा सहित त्याग देना चाहिये। आत्मशासन के अभाव में पापों से दूर रह कर भी अच्छे मार्ग पर चला नहीं जा सकता। ऐसे स्थल में प्रायः बुरे मार्ग पर हम अपने पैर रख देते हैं और अपने चरित्र को बिगाड़ बैठते हैं। जब किसी बुरे काम करने की इच्छा हो तो उसी क्षण आत्माशासन के बल से उस इच्छा को दूर कर देना चाहिए। बचपन की शिक्षा और संगति पर चरित्र का सुधार तथा बिगाड़ बहुत अंशों में निर्भर है। सदा बुरी बात की शिक्षा और बुरे संग से बचे रहना चाहिए।

आत्मशासन के साथ उत्तम शिक्षा और अच्छे दृष्टान्त का संयोग रहना हितकर है, क्योंकि सुशिक्षा से अन्तःकरण धुल जाता है। हृदय बढ़ता है और कर्त्तव्य का ज्ञान अटल हो जाता है। धीरे २ उत्तम शिक्षा और उत्तम दृष्टान्तों से चरित्र विमल तथा सुधर जाता है। चरित्र के शुद्ध न होने से शिक्षा सार्थक नहीं होती, परन्तु उलटा विषय ही फल जाता है। चरित्र की शुद्धता पर सदा दृष्टि रखनी चाहिए। शुद्ध भाव की रक्षा, शुद्ध विषय की चिन्ता और शुद्ध ग्रन्थों के विचार करने से शिक्षा को जीतना लाभ पहुँचता है, उससे अधिक चरित्र की भी उन्नति होती है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

"अभिलाषा"

(लेखक— श्रीयुत हरिकृष्ण जी मढवाल)

(१)

कल्याणपुर कन्या महाविद्यालय के छात्रालय के एक कमरे में दो युवतियाँ बैठी हुई परीक्षा की तैय्यारी में संलग्न हैं । मेज़ पर कापियाँ और पुस्तकें फैली हुई हैं । दोनों पुस्तकों के अध्ययन में तल्लीन हैं। यका यक कमला ने अपनी पुस्तक बन्द करके कहा— बहिन ११ बज चुके— अब तो सोना चाहिये— प्रातः ४ बजे उठ कर फिर पढ़ना है । मैं तो पढ़ते पढ़ते थक गई—

चन्दाः— अरी, कल परीक्षा का अन्तिम दिन है— ईश्वर अब तक की भाँति उसे भी भली प्रकार निभा देते तो हमारे उत्तीर्ण होने में कुछ भी संशय नहीं रहता ।

कमलाः— सब अच्छा ही होगा, उसकी कोई चिन्ता नहीं । देखो तो छात्रालय में कैसी निस्तब्धता छाई हुई हैं । हमारे कमरे का प्रकाश इस तमोमय निशा में किसी अन्धेरी गुफा में रखे हुए कौस्तुभ-मणि से कम नहीं लगता होगा ।

चन्दाः— तू स्वयं क्या किसी मणि से कम है ? तभी तो तुझे ऐसी अनूठी उक्तियाँ सूझा करती है सच तो यह है कि कमला का निवासस्थान ही मणियों का आगार है ।

कमलाः—बहिन ! बस मैंने कोई शब्द कहा नहीं कि तू उलट फेर कर मेरे ही लिए उसका प्रयोग करने के लिये तत्पर रहती है । बस अब प्रकाश बन्द करती हूँ । नींद पलकों में झूम रही है । चन्दा तो दो चार करवटें लेकर सो गई लेकिन अभी-अभी की पुस्तक-मग्ना कमला, विचार-मग्ना होकर निद्रा देवी की सुखद गोद को छोड़, कोसों दूर चली गई। उसका व्यग्र मन उसको कभी जीवन-समरस्थली में ले जाकर छोड़ देता है। और कभी सामाजिक जटिल समस्याओं के उलझन में बेचारी उद्विग्न हो कर अपनी विचार धारा का प्रवाह दूसरी ओर मोड़ती है । अब की बार सुख सौरभ मयी वाटिका की शान्ति का कोमल दृश्य है । एक ओर संसार के सम्पूर्ण सुख और दूसरी ओर तलवार की पैनी धार पर चलना । स्वातिका बन कर उस को कोई सा एक मार्ग निश्चित करना होगा । वैवाहिक बन्धन से उसे स्वाभाविक ही अरुचि है उसका विचार आते ही वह करवटें बदलने लगती है। स्वतंत्रता की पतवार से वह अपनी जीवन— नौका खेना चाहती है । परीक्षा की समाप्ति पर कल घर ही जाकर वह क्या करेगी यह विचार उसके हृदय-स्थल में बार २ उठता जाता था । विद्यालय से कुछ लड़कियां स्वयंसेविका बन कर आने वाले कुम्भ में जाने की तैय्यारी कर रही हैं । क्या वह भी उस सेवक-संघ में भर्ती हो जाय ? घर को पत्र लिख कर माता पिता को समझा देना कोई कठिन काम नही है । ऐहिकसुखों पर हँसने का यह अवसर कितना अच्छा है । इन्हीं संकल्प विकल्पों में तरङ्गित होकर वह सो गई ।

* * *

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

(२)

चन्दाः— कमला ! मैं तो आज रात की ही गाड़ी से चली जाऊँगी। मुझे मोंटगोमरी से श्री माता जी का पत्र मिला है और वे मुझे परीक्षा समाप्त होते ही वहां आने के लिए कहती हैं। हमारा परिवार भी वहीं पर है। तू भी कल प्रातः ही हावड़ा एक्सप्रेस से अपने घर चली जावेगी।

कमलाः—मैंने घर न जाने का निश्चय किया है।

चन्दाः— तो कहाँ जावोगी ?

कमलाः— हरिद्वार के कुम्भ में।

चन्दाः— क्या सेवक संघ के साथ ?

कमलाः—हाँ बहिन, मैंने यही विचार किया है।

चन्दाः—तेरी प्रवृत्ति आज कल कुछ निराली हो गई है। देख, अपने घर जाकर माता पिता की सेवा शुश्रूषा और भाई बहनों के निर्मल स्नेह से स्निग्ध होकर, विवाह-विभूति को अपनाकर जीवन की घड़ियों से केलि करना ही मुझे श्रेय जान पड़ता है।

कमलाः—बहिन ! जिसने जीवन को बालकों का क्रीड़ास्थल समझ रक्खा हो उसका वहाँ कन्दुकादि से केलिकरना आश्चर्य नहीं, लेकिन जिसने उसको एक वैज्ञानिक की प्रयोगशाला बना रक्खा है उसको इतना अवसर कहाँ कि प्रयोगशाला के बाहर भी झाँक कर देखे। अच्छा यह तो हुआ। प्यारी चन्दा ! तेरी जुदाई समीप देख कर मेरा हृदय उमड़ रहा है आज तक तू और मैं धूप और छाया, प्रकाश और ताप, स्वर और शब्द की भाँति एक साथ रही हैं। पर समय आज हमें पृथक् २ कर देना चाहता है। आ जी भर कर रोलें, फिर कदाचित् ऐसा सुखद अवसर न आय।

चन्दाः—प्यारी कमला, ईश्वर ने चाहा तो अवश्य फिर तुझ से भेंट होगी। तेरी याद मुझे प्रतिपल आया करेगी। मैं घर पहुँचते ही तुझे हरिद्वार के पते से पत्र लिखूंगी (दोनों एक दूसरे से मिल कर रोती हैं) अरी ! अब स्टेशन जाना है। बहुत दूर है, रो रो कर कुछ नहीं बन पड़ेगा। देख मेरे साथ की लड़कियां तैयार हो गई। मैं भी जाती हूँ अच्छा नमस्ते.....

(३)

कमला एक छोलदारी में पड़ी सो रही है। दिन भर के अनवरत परिश्रम से थकी हुई है। पूर्व दिशा में भगवान् भास्कर उन्मीलित नेत्रों से हरिद्वार में उमड़े हुए जन-समुद्र को देख रहे हैं। उनके कोमल किरण-तन्तु भक्तों के हृदयों को अपनी ओर खींच रहे हैं। एकाएक कमला को एक अस्पष्ट ध्वनि ने जगा दिया— भूमि पर पड़े पड़े वह ध्यान से उसको सुनने लगी। स्वर निकट निकट आ रहा था। जान पड़ा कि कोई एक तारे पर कुछ गारहा है— अहा ! कैसा सुन्दर पद है—

"राह के चलने वाले क्यों, तेरे नैनन नींद विराज रही"

कमला उठ बैठी— उसका मन गायक की मधुर-स्वर लहरी के साथ नाचने लगा। हृदय एक अनिर्वचनीय आनन्द से बल्लियों उछलने लगा। तन पर नशा सा छा गया। एक तारे के तारों के साथ उसके हृदय के तार भी झनझना उठे। वह अपने आपको भूल गई। कुछ देर इसी अवस्था में बैठी रही। जब अपने टैंट से बाहर आकर देखा तो गाने वाला साधू दूर चला गया था— उसका स्वर भी पहिले की भाँति अस्पष्ट होगया था।

कमला नित्यकर्म से निवृत्त हो कर अपने काम पर जाने के लिए लैस होगई। अन्य "सेविकाओं" के समान "संघसर्दार" ने उसकी भी ड्यूटी (Duty) लगा दी— सब के कंधे में नीचे एक झोला लटक रहा था जिस में आवश्यक दवाइयों

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

के साथ साथ अन्य कई वस्तुएँ भी रखी हुई थी। हाथ में एक एक लम्बी लाठी ली हुई थी और गले में एक badge। अपने कैम्प से बाहर आकर कमला भीड़ के साथ साथ हो ली।

मार्ग में अनेक बच्चों और बूढ़ी औरतों की कमला ने सहायता की। उनको मार्ग से हटा कर उनके आश्रमों पर पहुँचाया— अनेकों के शारीरिक कष्टों पर अपना समय और औषधियाँ लगाईं। इसी प्रकार अपने कर्तव्य को पूरा करते हुए वह सन्ध्या के ६ बजे "हर की पैड़ी के चबूतरे पर गई। यहाँ भीड़ असाधारण थी— आदमियों का दम घुट रहा था— कमला ने बड़ी कठिनाई से अपना मार्ग निकाला और Platfom के बीच में आगई। यहाँ कुछ शान्ति थी। लोग बैठे हुए थे— कमला ने देखा-एक युवक एक मेज़ के आगे खड़ा होकर वक्तृता देरहा है। उसका शब्द कमला तक पूर्ण रूप से पहुँच रहा था— उसने जो कुछ सुना वह यह है—

"हम लोग वहाँ पाँच वर्षों से लगातार कार्य्य कर रहे हैं। उन लोगों के अन्दर अब जागृति का प्रादुर्भाव हो रहा है— अन्य सामाजिक विषयों में हमारा सबसे ज़बरदस्त सुधार अछूतोद्धार और हिन्दी प्रचार है। जहाँ मद्रास में आज से ५ वर्ष पहिले अछूतों पर होने वाले लोमहर्षण-अत्याचारों का ठिकाना न था वहाँ अब उनके अधिकार उनको दिए जाने लगे हैं। किसी भी कार्य-कुशल व्यक्ति को दक्षिण का कार्य्य-क्षेत्र विजय-श्री-दायक है। वहाँ के स्त्री-समाज-सुधार का कार्य्य श्रीमती आनन्दी देवी जी कर रही हैं। वहाँ कार्य्य समाप्त करने के अनन्तर हम सब लोग लङ्का द्वीप और मारिशस में प्रचार करने जावेंगे।

सज्जनो! हमारी तीर्थ यात्रा यही है कि देश में और विदेश में मानव-समाज की सेवा करें। देश और काल के अनुसार कार्य्य करना ही धर्म है। यहाँ आये हुए सहस्रों साधू यदि आज जीवन की यथार्थता को समझने लगें तो देश के नेताओं का बहुतसा कार्य्य हल्का हो जाय। हमारे तीर्थ—स्थान व्यभिचार के अड्डे हो गये हैं। देवद्वार अब "परी द्वार" हो गये हैं। स्नान-कुण्ड को कामान्ध लोग इन्द्र का अखाड़ा समझने लगे हैं। मातृभूमि की रूप-गरिमा आज विदेशियों के विलास की सामग्री बन रही है लेकिन प्यारे भाईयो? काल-चक्र घूम रहा है। परिवर्तनशील संसार में पुरानी जर्जर रूढ़ियों और प्रथाओं के शिरच्छेदन करने में हमें संलग्न रहना चाहिये। विधवाओं का तप्त श्वासोच्छ्वास पंडित-प्रवरों के आसनों को हिला रहा है और अछूतों की चीत्कार".....

इतना कहते ही कुछ लोगों ने शोर करना प्रारम्भ किया और कमला आगे नहीं सुन सकी। युवक उस असंख्य जन समूह में अदृश होगया। लोग अंड बंड बकने लगे। आरक्त पश्चिमाकाश, पर्वत शिखर के ज्वलन्त स्वर्ण मुकुट के सदृश शोभित था। कमला एक क्षण के लिये आनन्द निमग्न होगई। उसके नेत्रों से आनन्द और उल्लास छलकने लगा—

रात्रि को कमला अपने टैण्ट में पड़ी हुई पतितपावनी भागीरथी के मृदुल निनाद को हृदयगंम कर रही है। उस का मधुर शब्द और विचित्र कल कल निनाद, अगभंगी के साथ नाचना कूदना, पुरुष और प्रकृति दोनों के पुरातत्व का साक्षात् प्रमाण देरहा है। कोई दूसरा युक्ति-तर्क नहीं केवल एक तरल संगीत-ध्वनि, एक विनीत स्वर, एक तरंगनिन्दित ग्रीवासञ्चालन के

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अतिरिक्त और कुछ नहीं। भगवती भागीरथी के इस अनुनय-प्रवाह में कमला स्वयं भी बह रही है।

कुम्भ भी समाप्त हुआ। अब किधर ? कल्पना और वास्तविकता में पृथ्वी आकाश का अन्तर है। जीवन यात्रा में अनेक असुविधाएँ भोगनी पड़ेंगी। इसके लिए अनेक आवश्यकताएँ अनिवार्य्य हैं। देह के होते हुए देह से नाते तोड़ना असम्भव है। माता पिताओं से अनायास मुंह मोड़ना अपराध है। वास्तव में यह अपराध भी नहीं है तथापि समय विशेष पर यह भी एक अक्षम्य अपराध दिखाई पड़ेगा। एक बार अवश्य उनकी आज्ञा ले लेनी चाहिए। वंशी और छिद्रविहीन बाँस जिस प्रकार क्रम से वाद्य यंत्र और लाठी का काम करते हैं उसी प्रकार एक ही मनुष्य को भिन्न २ अवस्थाओं में होकर गुज़रना पड़ता है। जो नियम एक धूलि-कण में है वही नियम अनन्ताकाश में काम कर रहा है क्योंकि सीमाबद्ध नियम अपनी अंकित रेखा से यव भर भी विचलित नहीं होता है और प्राणिमात्र भी उसी के अन्तर्गत रहते हैं।

श्रेष्ठ जीवन चलत्छक्ति और वृद्धिशक्ति का द्योतक है और इसी की प्राप्ति के लिए सब गुणों को संचारित करना होगा— चलना फिरना होगा। स्थान बदलना होगा।

हम लोग हीरे नहीं-तृण हैं। हीरे की ज्योति हीरे में स्वतः प्रकाशित है उसके प्रकाशित करने के लिए हीरे को तोड़ कर उस में से ज्योति बाहर नहीं निकालनी पड़ती ; परन्तु तृण किसी अन्य वस्तु की अपेक्षा करता है। उसमें जब आग लगाते हैं तभी उस की ज्योति प्रकाशित होती है, सो भी क्षण भरके लिये।

विदुषी कमला ने इन विचारों की उलझन से न जाने कैसे अपना छुटकारा किया— अपने मनमथन से कौन सा निष्कर्षनवनीत निकाला— परन्तु रात्रि के अन्धकार में उसने अकेले ही उसको निगल डाला और करवट बदली।

(क्रमशः)

उत्तेजना।

वीरो ! वृद्धा आर्य्य जाति के प्राण तुम्हीं हो।
निर्बल औ असहाय देश के त्राण तुम्हीं हो।
क्लेशों के अवसान, सौख्य सामान तुम्हीं हो।
सम्प्रति उस के लिए, स्वयं भगवान तुम्हीं हो।
पर कब ? बलि-पथ पर पैर को।
जब अपने रुकने न दो।
सिर धड़ से छुट झुक जाय पर।
तुम झंडा झुकने न दो॥

जीवन।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

गुजरात में हिन्दी-साहित्य

ले०-"गुजराती"

१. हिन्दी भाषा का गुजरात में प्रभाव

गुजरात निवासियों को चिर काल से हिन्दी भाषा का परिचय है। रेलगाड़ी के जारी होने से पूर्व अनेक साधु संत तीर्थ यात्रा के निमित्त इस देश में भ्रमण किया करते थे। गुजराती लोग उनकी भाषा समझते, उनके साथ बात चीत करते और उनका आदर सत्कार करते थे। प्रायः ये सारे साधु हिन्दी में ही बात चीत करते अथवा उपदेश करते। जब भिक्षा मांगने साधु जाते तब गुजराती स्त्रिएं इन से पूछती कि "महाराज ? भूख लगी है ? क्या चाहते हैं" ? प्रायः सब गुजराती स्त्रियां हिन्दी भाषा से परिचित होती थीं। उत्तर भारत के तीर्थ स्थानों में जाने वाले गुजराती स्त्री और पुरुषों को हिन्दी बोलना पड़ता था और उससे वे लौटते समय भली प्रकार हिन्दी सीख कर फिर देश लौटते थे। गुजरात का व्यापारी समुदाय भारत में चक्कर लगाता था, तथा आढ़तियों के साथ हिन्दी में ही लेन देन करता था, उस समय में प्रान्तिक भाषाओं के भिन्न २ होने पर भी हिन्दी भाषा समग्र देश व्यापी, प्रचलित एवं सत्कृत थी।

२. विघ्न के कारण

परन्तु रेलगाड़ी के जारी होने से हजारों मीलों तक सीधा ही व्यवहार होने लगा। थोड़े दिवस पर्यटन कर शीघ्र ही लोग लौट आने लगे। इससे यात्रा के बीच में आए प्रदेशों के लोगों का समागम छूट गया। और अंग्रेजी भाषा के प्रचार के बढ़ने से भिन्न २ प्रान्त के लोग मुख्यतया अंग्रेजी में ही व्यवहार चलाने लगे; जिस से हिन्दी भाषा का उपयोग थोड़ा हो गया और क्रमशः हिन्दी भाषा भुला दी गई। इस अवसर के खोए जाने पर आज हिन्दी भाषा के प्रचार के लिये उलटा भगीरथ प्रयत्न करने का समय आया है।

३. हिन्दी पर गुजरातियों का प्रेम

गुजरातिओं का प्रारम्भ से ही हिन्दी भाषा पर बहुत प्रेम है। इस लिए वे हिन्दी को "भाषा" या "भाखा" के नाम से पुकारते हैं और यदि कोई पुरुष गुजराती की जगह हिन्दी में कोई काव्य रचना करता है तो उसकी बड़ी प्रशंसा होती है। कथानक सुनाने वाले भाटचारण लोग अपनी कथा में दो चार कवित सोरठे या दोहे सुनाते हैं जिस से वह सरस हो जाती है। राज रजवाड़ों में कवि लोग हिन्दी में ही राजाओं की कीर्ति का गान करते थे और इस रीति द्वारा गुर्जर-नरेशों में हिन्दी प्रेम उत्पन्न होता था। वे लोग हिन्दी समझते थे यही बात नहीं परन्तु कईयो ने हिन्दी भाषा में काव्य- रचना की है। "प्रवीण सागर" और "तुलसी कृत-रामायण" तो कई रजवाड़ो में और खास कर गृहस्थियों में अभ्यास रूप से वा शौक के लिए पढ़ा जाता है। रजवाड़ो में गान करने वाले गवैये हिन्दी के पद बहुत गाते हैं। साधारण गुजराती जनता का हिन्दी से गाढ़-परिचय है। गुजरात में हिन्दी साहित्य अति प्राचीन समय से प्रचलित है।

४. हिन्दी साहित्य का प्रचार

गुजरात का हिन्दी साहित्य दो प्रकार का है :— (१) हिन्दी कवियों का लिखा हुवा और

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

गुजरात में बहुतायत से कीर्तित और (२) गुजराती कवियों द्वारा चरित हिन्दी के कवियों द्वारा निर्मित साहित्य में तुलसीदासजी की "रामायण" अथवा "रामचरितमानस" मुख्य हैं गुजरात के भाग्य में कदाचित कोई ऐसा अभागा गाँव होगा जिस में तुलसी कृत रामयण का पाठ न होता हो। लोगों में धार्मिक भावना आज कल की अपेक्षा उस समय अधिक थी इस लिए साधु मण्डलियां रामायण की कथा को याद कर सुनाती फिरती थी और लोग उनके पास आकर बैठते थे। कबीर नानक, मीरा, सूरदास और तुलसीदास इत्यादि महात्माओं के हिन्दी-पद सन्त मण्डलियों और मन्दिरों में धर्म भावना से बहुत गाए जाते थे। आज भी ये गाए जाते हैं और उन्हें लोग समझते हैं। "पंचीकरण" और "विचार सागर" इत्यादि वेदान्त ज्ञान से भरे हुए ग्रन्थों के द्वारा सन्त साधु समुदाय वेदान्त का अभ्यास करता था और आज भी करता है। योग वाशिष्ट रामायण और आत्म पुराण के हिन्दी ग्रन्थ धर्म-भावना और वेदान्त-ज्ञान के लिए लोगों में आज तक भी पढ़े जाते हैं। वल्लभ-सम्प्रदाय का समग्र साहित्य ब्रज अथवा हिन्दी भाषा में है। चोर्यासी और बसो बावन वैष्णव के वार्ता लापों की हिन्दी पुस्तक वैष्णवों के घर-घर पढ़ी जाती हैं। और गो स्वामी श्री हरिराय जी कृत शिक्षा पत्र इत्यादि ग्रन्थ बड़े प्रेम से पढ़े जाते हैं। जो कि हिन्दी में ही है। गोसाईं जी महाराज के स्वजन ब्रज भाषा बोलते हैं। और वैष्णव लोग भली प्रकार समझते हैं। साहित्य रसिक पुरुषों में मधु मालती का सम्वाद पहिले लोगों में इतना प्रिय था कि "दगलबाद दोना नमें चित्ता चोर कमान" इत्यादि कई इसके वाक्य कहावत रूप से प्रचलित हो गए हैं। रसिक प्रिया और कवि प्रिया नायिका भेद और शृंगार रस के ग्रन्थ हैं। इन में इतना अधिक शृंगार—रस का वर्णन किया गया है कि स्वामी नारायण सम्प्रदाय के सेवकों को इस का पढ़ना मना किया गया हैं। रसिक प्रिया एक चातुर्य का ग्रन्थ है और बहुत पढ़ा जाता हैं। इस लिए "रसिक प्रिया बिन चातुरी क्या गीता बिन ज्ञान" यह लोकोक्ति प्रचलित हो गई है। जसुराम का राजनीति का ग्रन्थ आम तौर पर पढ़ा जाता है तथा राज रजवाड़ों में उसका प्रचार है। काव्य साहित्य के अभ्यास के लिए भाषा भूषण, सुन्दर शृंगार, चमत्कार चन्द्रिका, मान मञ्जरी, नाग पिङ्गल इत्यादि ग्रन्थों का अभ्यास करना पड़ता है। भुज की पाठशाला में आज तक इन ग्रन्थों का अभ्यास कराया जाता है। लोगों के घरों में से आजतक इन ग्रन्थों की हाथ से लिखि हुई प्रतियां मिलती हैं। उन से साफ यह पता चलता है कि इन ग्रन्थों का बहुत प्रचार था। दार्शनिक उपदेश देने के लिए हिन्दी के कवि गिरधराय की कुण्डलियां लोगों में बहुत प्रचलित थीं!

५. गुजराती कवियों का हिन्दी साहित्य में भाग

ऊपरके प्रमाणों से सिद्ध किया गया है कि गुजरात में हिन्दी साहित्य का बहुत भाग था। अब खुद गुजराती कवियों ने जो जो ग्रन्थ हिन्दी साहित्य में रचे हैं उनकी ओर नज़र डालिए।

६. नरसिंह मेहता

गुजराती कवियों का प्रारम्भ से ही हिन्दी भाषा में मान था। हिन्दी भाषा में भली प्रकार कविता करने से इन्हें मान मिला हैं। गुजराती के आदि कवि श्री नरसिंह मेहता की हिन्दी में लिखी हुई कविताएं मिलती हैं। गुजराती काव्यसाहित्य

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

की नींव डालने वाले इस भक्त कवि की यात्रा के निमित्त लिखी हुई हिन्दी-कविता कैसी भक्त रस से पूर्ण है जरा इस का भी स्वाद चख लीजिए नरसिंह मेहता के काव्यों में स्थल स्थल पर हिन्दी प्रयोग मालूम पड़ते हैं। इतना ही नहीं निम्न एक स्वतन्त्र हिन्दी-पद दृष्टी गोचर होता है:—

कुन्ज भवन में खोजती खोजत मदन गोपाल,
प्राणनाथ पावे नहीं तातें व्याकुल ब्रज बाल।
चलत चलत व्याकुल भइ ब्रज बाला,
ढूंढती फिरे आय ताल तमाल।
जाइ बुझती चम्पक जाइ
काहु देख्यो नन्द जी को राई।
पिया संग एकान्त रस विलसन राधानार,
कन्ध चढ़ावत को कह्यो तातें तज गयेऊ मुरार।
तहां ओर सखी सब आई,
काहु देख्यो मोहन राई।
मैं तो मान कियो मोरी बाई,
तातें तजी गए जु कन्हाई।

७. लल्लू जी लाल का प्रेमसागर

महात्मा तुलसीदास जी ने बालमीकि रामायण पर भगवान रामचन्द्र जी के गुणानुवाद से भरी हुई हिन्दी रामायण की रचना की है। उसी रीति से श्रीमद्भागवत पर साधु प्रेमदास जी ने प्रेम-सागर नामक श्री कृष्णचरित्र पर ग्रन्थ बनाया है। प्रेम सागर तो वास्तव में प्रेमसागर ही है। यह ग्रन्थ हिन्दी भागवत नाम से भी कहा जाता है। इस के बनाने वाले साधु प्रेमदासजी एक गुजराती लल्लू जी नाम के सिद्धपुर के ब्राह्मण थे, ऐसा जाना जाता है। सम्पूर्ण भारत की सन्त मण्डलियों में प्रेमदास जी का नाम प्रसिद्ध है

८. महेरामण जी का प्रवीणसागर

गुजरात में तथा हिन्दी भाषियों में ऐसा कोई भी काव्यप्रिय जन न होगा कि जिस ने प्रवीण सागर का नाम न सुना हो। प्रवीण सागर तो वास्तव में प्रवीणता का समुद्र है। काव्य अलंकार, वैद्यक, ज्योतिष, संगीत, इतिहास, पुराण, वेदान्त इत्यादि कोई ऐसा विषय नहीं है जो इस में समाया नहो ग्रन्थ सम्वादात्मक है और सम्वादकी नायिका कला प्रवीण और नायक रस सागर के नाम से ग्रन्थ का नाम पड़ा है। जिस से पता चलता है कि इस में कितना ऐतिहासिक-धर्म पड़ा हुवा है, परन्तु इस बात के स्पष्ट करने की इस स्थल पर जरूरत नहीं। ग्रन्थ में काव्य और अलंकार शास्त्र की अद्भुत खूबी समाई हुई है वर्णन चातुर्य अलौकिक है। यह ग्रन्थ राज रजवाड़ों में परमप्रिय और साहित्य प्रेमियों के लिए आत्म-रूप है। बहुत से भाट चारणों का तो यह-जीवन निर्वाह है। गुजरात में ऐसा कोई भी हिन्दी कवि न होगा। जिसकी जबान पर इसके बीस पच्चीस पद न बसते हों। इस ग्रन्थ के निर्माता काठियावाड़ के राज कोट-संस्थान के महाराज महेरामणसिंह जी थे। ये काव्य शास्त्र के उद्भट विद्वान और रसात्मज्ञ थे, अपने पांच सात मित्रों की सहायता से इन्होंने हिन्दी भाषा में रत्न रूप यह ग्रन्थ तय्यार किया। बिना ग्रन्थ को पूरा पढ़े इसकी खूबी का समझ में आना कठिन है। परन्तु रसज्ञ वाचकों के विनोद के लिए यहां दो चार दृष्टान्त देते हैं। नायिका अपने झरोखे में बैठी है। और नायक बाजार में से घोड़े पर चढ़ा हुवा जाता है। उस समय उत्पन्न हुवा दर्शनानुराग को वर्णन करवाता हुवा कविनायिका के मुह से कहलवाता है:—

कटि फेंट छोरन में भृगुटी मरोरन में
सीस पेंच तोरन में अति उरझाय के;

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मन्द मन्द हासन में बरुनी विलासन में
अनन उजासन में चक चोंध जाय के ;
मोती मनी मालन में सोरुनी दुसालन में
चिकुटी के तालन में चेटक लगाय के ;
प्रेमवाण दे गयो न जानिए किते गयो
सुपंथि मनले गयो झरोखे दृग लाय के।
सुगन्ध समीर जैसे हंसवार छीर जैसे,
भूजल मिहिर जैसे मयूखी चढ़ाय के ;
पारद कुमारी जैसे हरिस्वांत धार जैसे,
अभ्र एन सार जैसे धूम्र उरझाय के ;
उक्ति एक दन्त जैसे बोध सन्त जैसे,
मिंत बात मिंत जैसे सेनन जनाय के ;
प्रेम बान दे गयो न जानिए किते गयो
सुपन्थी मन ले गयो झरोखे दृग लायके।
अहि खगराज जैसे, चिरियां सुबाज जैसे,
केहरी सुगाज जैसे, पान निकसाय के ;
जलचर झषाया जैसे मीन २ हाह जैसे,
कीर पंख ग्राह जैसे, फंद उरझायके ,
भागीरथ गंग जैसे, घंटिक कुरंगां जैसे ;
कुहिया कुलंग जैसे, भूतल भ्रमाय के
प्रेमबान दे गयो, न जानिए किते गयो ;
सुपंथी मनले गयो झरोखे दृग लायके।

इस से अधिक सुन्दर वाणी का माधुर्य और हृदय का भाव अन्य किस जगह मिलेगा। प्रकृति के वर्णन करने में तो ग्रन्थकार ने कुछ बाकी नहीं रखा। चमत्कार से भरी हुई उत्प्रेक्षाएं, विविध रस से भरी हुई उपमाएं, तर्क द्वारा लिखी हुई समस्याएं किस चतुर वाचक को मुग्ध नहीं करती। वर्षा वर्णन का एक दृष्टान्त देखिए।

बद्दर पै रंच बंधे, दद्दरन घोर डौंरू,
चद्दर बिछाई हरि हरनाई धर की,
तापर रच्यो हे खेल, व्याल करी कुञ्ज बेल ;
बूढ़ कर श्रौंग गैल, गैल बुन्द छरकी ;
चातुकी के काग कका, कुलके उलूक राग ;
बाग गीध जाग जाग किए पौन भर की,
बीज मुख ज्वाल साजी, चिनगे खद्योत;
सागर बनाई घन, बाजी बाजीगर की।

इस में मदारी बाजीगर जिस रीति से अपने जादू के खेल करता है उसी प्रकार रूप लगा कर वर्षा ऋतु का वर्णन किया है। तार्किकों से अगम्य समस्याओ को भीः—

एक-नवीन समीर चल्यो,
तिन से जलधार घटा बरसे ;
वे जलधार परीं तीन से,
इक पावक ज्वाल घनी दर से ;
पावक ज्वाल भई तिन से,
इक बेल हरि हि हरी रुरसे ;
कोनहि बेल यज्ञ हे कहां,
कही ठोर प्रबीन रहे परसे ॥
घट राखत पानी रहे
कारण कोन प्रबीन
घट फूटे पानी रहे
कारण कोन प्रबीन ॥

इत्यादि, उपदेश प्रद और दृष्टान्त के लिए उपयोगी काव्य इन ग्रन्थों में से इतना

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अधिक प्राप्त हो सकता है कि उत्तम वक्ता को शुद्ध कराने के लिए कहीं दूसरी जगह जाने की जरूरत नहीं। इन में से थोड़ों को भी कण्ठ कर लेने से बहुत साधन हो सकता है। इन में से स्वभाव वर्णन बहुत सुन्दर है:—

सीन हरी दिन एक निशाचर,
लंक लइ दिन एसो हि आयो,
एक दिनां दमयन्ति तजि नल,
एक दिनां फिर हि सुख पायो;
एक दिनां बन पांडव गे अरु
एक दिनां छिनी छत्र धरायो,
शोच प्रबीन कछू न करो,
किरतार यही विधि खेल बनायो॥

उपरला कवित्त तो बहुत लोक प्रिय और सर्व सामान्य हो गया है। सुन्दर २ कविताओं की शृङ्खलाएं इस ग्रन्थ में से दी जा सकती हैं परन्तु लेख के लम्बे होने के भय से ऐसा न करते हुए हम पाठकों को सारे ग्रन्थ के पढ़ने की अनुमति देते हैं। अपने सारे वेदान्ति कवि, जो ज्ञान की छाया के लिए प्रख्यात हैं उन्होंने भी हिन्दी साहित्य की बहुत सेवा की है। विविध पद्य, साखिएं, दोहे' कवित्त इत्यादि सम्पूर्ण हिन्दी कविताओं का यदि संग्रह किया जाय तो एक मोटा ग्रन्थ बन जाएगा।

रविदास और मानदास नाम के महात्मा गुजराती ही थे और बड़ौदे के पास शेरखी गाँव में जिनकी गद्दी है, उन्होंने हिन्दी में बहुत से पद बनाए हैं जो सन्त मण्डलियों में आम तौर से गाए जाते हैं।

९. दादूदयाल

दादू पंथ के चलाने वाले महात्मा दादु जी अहमदाबाद के नागर ब्राह्मण थे, इन के सम्प्रदाय का सारा साहित्य हिन्दी में ही है! सुन्दर दास जी का बनाया हुआ सुन्दर विलास ग्रन्थ हिन्दी में बहुत प्रसिद्ध है।

१०. स्वामी दयानन्द सरस्वती

आर्यसमाज के स्थापक स्वामी दयानन्द सरस्वती एक गुजराती पुरुष थे। इन का बनाया हुवा सत्यार्थ प्रकाश ग्रन्थ हिन्दी में ही है और वह समग्र भारत में पढ़ा जाता है। स्वामी दयानन्द हिन्दी में ही बात चीत करते और व्याख्यान देते थे। उत्तर भारत में इनकी कीर्ति विशेष विख्यात है। आर्यसमाज सम्पूर्ण भारत में प्रसरित है और मुख्यतया पञ्जाब में इसका अधिक प्रभाव है। प्रायः गुजरात के उत्तम संत साधुओं ने थोड़ी या अधिक हिन्दी में दिव्य रचना की है।

११. स्वामी नारायण सम्प्रदाय के कवियों का भाग

स्वामी नारायण सम्प्रदाय के साधुओं ने हिन्दी में कुछ कम भाग नहीं लिया। स्वामी मुक्तानन्द, ब्रह्मानन्द, प्रेमानन्द इत्यादि इस संत समाज के महात्माओं ने हिन्दी में बहुत साहित्य लिखा है। प्रेमानन्द स्वामी का हिन्दीसंगीत-काव्य तो गायकों के कण्ठ के भूषण तुल्य हो गए हैं। "कंगनवा मोहे कर से सरक गयो रे" यह इनकी ठुमरी संगीत समाज को आप्लावित कर देती है। श्री सहजानन्द स्वामी महाराज की सवारी जब बड़ौदे में पधारी उस समय की सवारी के इन के वर्णन की।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

"पधारे वट पतन स्वामीरे
पधारे बट पतन स्वामी,
सहजानन्द महाराज पुरण
पुरुषोत्तम बहु नामी"—पधारे०

यह लावनी इस सम्प्रदाय के भक्तों में बहुत प्रसिद्ध है। इनकी हिन्दी भाषा में गज़लें ठुमरियां और लावनियां बहुत प्रसिद्ध हैं। ब्रह्मानन्द स्वामी तो जाति के बारोट थे और भुज की पाठशाला में पढ़ने के कारण प्रारम्भ ही से हिन्दी में कविता करते थे। ब्रह्म बिलास इत्यादि कितने ही बड़े ग्रन्थ इन्हों ने हिन्दी में लिखे हैं, इनके कवित्त तथा सवैये बहुत प्रभाव कारक तथा भावमय हैं। हिन्दी पद्य इन्हों ने बहुत से लिखे हैं। साधु होते हुए भी इन्हों ने शृंगार में लिखा है। परन्तु इन का शृंगार अपने प्रिय देव श्री हरि के साथ ही है। वह कितना भाव मय है जरा देखियेः—

जरिहु दिन रैन न चैन हिया,
परदेश पिया अब का करिहुं,
करिहुं तन जार के खाख सखि,
एहि पीर से धीर कैसे धरिहुं
धरिहुं शिर जोगन भेख अबे,
भगवा करिके जग में फिरिहुं,
फिरिहुं कब देखिहुं नेनन से,
कहे ब्रह्म मुनि ब्रह में जरिहुं ॥

कहने कि जरुरत नहीं कि इस प्रेमी सन्त ने अपने प्यारे प्रभु के विरह में भगवे वस्त्र धारण कर लिए थे। बीर रसकी उत्पत्ति तो भाट लोगों में पैतृक है। "सूरमा का अङ्ग" लिखते हुए ब्रह्मानन्द स्वामी ने "कायर पर बलवान चढ़ धाता है" ऐसी वाणी कही है :—

घुरे नगारा जंग का, चढे बदन तब रंग,
अरिदल में टूटी परे, जैसे दीप पतंग,
जैसे दीप पतंग, अंग की आशा पाखे,
मार मर मुख कहे, म्यान तरवार न राखे
दाखत ब्रह्मानन्द जिन करि श्याम जुहारा
चढत बदन तब रंग जंग का घुरे नगारा।

× × × ×

लीना खांड़ा हाथ में कीन्हां शिर कुरबान,
सो जग साचा शूरमा, बैरी करत बखान
बैरी करत बखान, मारि घमसान मचावे
अरये शीष अचूक, तन टूट-टूट होई जावे
दाखत ब्रह्मानन्द, संत को धीर प्रवीना
कीना शीष कुरबान, हाथ में खांड़ा लीना

यह युद्ध का उपदेश उन सन्त लोगों के लिए है जिनके सामने षड् रिपु उपस्थित हैं; वैराग्य के ग्रहण करने वालो के लिए संसार—समरस्थली में उतरने का मार्ग है। सत्संग की महिमा का गान करते हुए ब्रह्मानन्द स्वामी कहते हैं कि :—

राज भयो कहा काज सर्यो,
महाराज भयो कहा लाज बढ़ाई,
साह भयो कहा बान बड़ी,
अरु साह भयो कहा आन फिराई,
देवभयो तोउ कहा भयो,
अह मेव बढ्यो तृषणा अधिकाई
ब्रह्म मुनि सत्संग बिना सब,
ओर भयो तो कहा भयो भाई ॥

परन्तु प्रभु भक्ति का उपदेश देते हुए ऐसी फटकार बतलाई है किः—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मद मोह में ही मगरूर फिर्यो,
तन ताकता नारियां ताजियां का
सद् गुरु साहिब का रंग चढ्या नहीं
संग किया नर पाजियां का
ब्रह्मानन्द कहे कैसे बान माने
ते तो घ्राक हे जूतियां औझाझियां का।

ऐसी प्रखर प्रहार करने वाली इन की बहुत सी हिन्दी कवितायें हैं। स्वामी मुक्तानन्द ने भी हिन्दी में बहुत सा साहित्य लिखा है। तुलसीदास जी के बाद इनकी साखियां आज दृष्टान्त रूप से हिन्दी में बहुत बोली जाती हैं। इन तीन संत पुरुषों के सिवाय अन्य कई सम्प्रदायों के सन्तो ने भी हिन्दी में कवितायें लिखीं हैं।

१२—शामलभट्ट.

महा कवि प्रेमानन्द के समकालीन कवि शामल भट्ट ने भी हिन्दी में बहुत काव्य रचना की है। इन की बनाई "अंगद विष्टि" में स्थल स्थल पर कवित्त, कुण्डलियां, छप्पय इत्यादि हिन्दी में लिखे हुए मिलते हैं। इन के दृष्टान्त देने की जरूरत नहीं है। शामल के ऊपर हिन्दी-साहित्य का बड़ा प्रभाव पड़ा है और इस लिए हिन्दीवृत्त—दोहा, चौपाई, कवित्त, छप्पय आदि गुजराती में भी बनाए हैं। महाकवि प्रेमानन्द ने हिन्दी में ही सारी कविता की होती, और समग्र भारत में डंका बजाया होता, परन्तु ये गुजराती भाषा के महाभिमानी और गुजराती भाषा को समृद्ध करने के लिये प्रण लिये हुए थे। गुजराती साहित्य में प्रेमानन्द की तरह ये भी एक महारथी हैं। प्रारम्भ में इन्हों ने हिन्दी में ही कविताएं बनाईं थीं। परन्तु अपने गुरु के प्रतिज्ञा-पाश में बंधे होने के कारण इन्होंने भी पीछे से सब कविताएं गुजराती में ही रचीं।

१३ कवि दयाराम.

गुजरात के रस-मस्त कवि श्री दयाराम ने जितनी काव्य रचना गुजराती में झलकाई हैं, उतनी ही काव्य चमत्कार हिन्दी में भी झलकाया है। इन्होंने हिन्दी में "रसिक रंजन" "सतसैया" "वस्तुवृन्द दीपिका" अलक चरित्र चन्द्रिका" इत्यादि स्वतन्त्र सुन्दर ग्रन्थ लिखे हैं। इनके अतिरिक्त बहुत से संगीत काव्य, पद्य, कवित्त, सवैया इत्यादि लिखे हैं। कवि दयाराम की हिन्दी-वाणियों को जो कोई पढ़ेगा वह बारम्बार मुग्ध हुए विना न रहेगा। इनके कई पद्य तो भिक्षुकों की जीविका हैं और संगीत कविताएं मजलिसों में गवैयों के कण्ठ भूषण रुपाए हैं। रसिक रञ्जन ग्रन्थ तो रसिकों का रंजन करने हारा है। इस कवि की वाणी में चातुर्य तथा रस लवालब भरा है। इस सामान्य बात के कहने में कवि कैसा चमत्कार दिखता है जरा देखिए:—

जो मुख में बांसुरी बजाई रास मण्डल में,
जो मुख अधरामृत सर्वस्व गोपी केरोहै
जो मुख सेां गुह्यबात करो राधाप्यारी संग,
जो मुख रसायन रसिकन के घनेरो है,
जो मुख में विश्वरूप माता कुं दिखायो नाथ,
जो मुख बरदान दिये सतत आप चेरो है
सो मुखारबिन्द सो श्रीकृष्णचन्द्र एक वेर
करुणा करि कहिए प्रभो'दासदयोमेरो है'

कवि भक्त था अपने उद्धार के लिए कैसी युक्ति सोचता है देखिए:—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जो पतित पावन तो मो सो ना पतित कोई,
अधम उधार हो तो मो अधम उधारिये,
जो गरीब के निवाज नाथ हूं गरीब साचो,
रंक के रक्षक हो तो मेहूं रंकतारिये,
दीन के बन्धु हो तो मो सों दीन और कौन,
आरत के त्राता मेरी आरती निवारिए,
अशरण शरण हो तो पर्यो शरण तिहारी
कोई भाँति कृष्ण ? काम दया को तो सारिये,

परन्तु इस से आगे--यह युक्ति प्रभु को न भूलो इस लिए-एक और युक्ति लड़ाता है। कवि प्रभु को डर दिखाता है और इस रीति से अपना उद्धार मांगता है, देखिए:—

पतित के पावन हो अधम उद्धारन हो,
हरि बिट्ठल बर्दहेतु तर्क कैसे जाऊंगो ?
सुधो कबु होत तो तो काहे कुं में शरन ले तो,
अबचाहो साधन नाथ ? कहो कहां ते लाऊंगो,
घर को भुलाय कर्यो तेहू रहे कर्मयोग,
परमानन्द स्वामी द्वार दास दुःख पाऊंगो,
रंक जानि दयाकुं डुबाओगे जो दयानाथ ?
अकेलो नहिं डूबुं के ते बर्द कुं डूबाऊंगो ॥

कवि स्वयं परम भक्त था और प्रभु को यदि भक्त का हृदय कुटिल लगे तो एक विचित्र युक्ति से कारण बतलाता है:—

चाहुं बसाय हृदय में, धरुंत्रिभंगी ध्यान
तातें राख्यो कुटिल उर, हो ही असि सो म्यान।

निम्न एक और युक्ति कृपा-याचना में लगाता है:—

करितुएडगिरे कन चेटी परिवार जीवे,
रच स्हां में देखो मेरी सब पीड़ा जावेगी,
बड़े से जो काहुं करी आतुर की आस पूरे,
आपे सखी सहज मेरो—कहेत अजा नावेगी,
मासुक की मीठी दीठी आसक की जीवनी है
श्रम ना मेहेबुब कों पे मेहेर जवे छावेगी,
कृपानिधे दयानाथ ? जान रायकृष्णचन्द्र
मोय कृपा दृष्टि किए कहा खोट आवेगी ?

इस प्रकार अनेक रत्न कवि के खजाने में भरे पड़े हैं। नए रस में कवि की बाणी विलसती है। कविकी वाणी की मधुरता को देखने के लिए अब कवि की एक संगत कविता लेते हैं:—

पद—राग धनाश्री गति ठुमरी,

मोहे कित ल्याए सघन वन में,
सघन वन में रे सघन वन में--मोहे०
तेरे सों मैं तो डरपत हूं सुन पंछिन के सोर,
कहां संकेत कहां वे रसिया नागर नंद किशोर,
यातों कठिन डगर वेदैयां, क्यों आवेंहांछेल,
तू जाने मैं तो मानुं निश्चे भूलिगेल,--मोहे०
तूं तो बड़ी डरे नाहिंप्यारे, मैं तो छोटा बाल
एते में मिल आए अचानक दया प्रीतम
नन्दलाल ॥ मोहे० ॥

१४—गिरधर दास.

कवि श्री दयाराम के समय में कृष्ण चरित्र के कर्ता वैश्य कविगिरधरदास हो गए हैं। इन्हों ने हिन्दी में पृथक् २ बहुत से पद्य लिखे हैं। हिन्दी भाषा में इन्हों ने कुण्डलियां बड़ी प्रभाओत्पादक लिखी हैं, हिन्दी भाषा की तरफ इनका बड़ा बल था इस लिए गुजराती कविताओं में भी इन्हों ने हिन्दी जबरदस्ती घुसेड़ डाली है, ऐसा देखने में आता है। चरोत्तर के वेणीदास नाम के गृहस्थ साहित्य के बड़े उपासक थे। और खासकर के वे हिन्दी भाषा में ही कविता करते थे। इन्हों ने

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

तथा बालाशंकर उल्लासराय ने मिल कर एक आलंकारिक ग्रन्थ लिखा है। उसका नाम "वृहद् बेनीबाल विलास कर के प्रसिद्ध है। इस ग्रन्थ का उल्लेख बालाशंकर ने अपने "भारती भूषण" ग्रन्थ में किया है जो अब अप्राप्य है।

१५–नर्मदाशंकर और दलपतराय.

प्राचीन तथा अर्वाचीन साहित्य युग के सन्धि के समय कविदलपतराय और नर्मदाशंकर ने हिन्दी में काव्य-रचना की है। दलपतराय ने तो भुज की पाठशाला में अध्ययन किया था इस लिए हिन्दी में बहुत कविता करते थे। "श्रवणाख्यान" नाम का एक हिन्दी ग्रन्थ बना कर इन्हों ने उत्तर भारत के एक राजा को समर्पित किया था। जिस से इन्हें इनाम रूप में बहुत सा द्रव्य प्राप्त हुवा था। स्वामीनारायण सम्प्रदाय के आचार्य के पास रहकर इन्हों ने "पुरुषोत्तम प्रकाश" नामक श्री स्वामी-नारायण के चरित्र ग्रन्थ को हिन्दी में लिखा है

फुटकर छप्पय कुण्डलियां, कवित्त, सवैया इत्यादि इन्हों ने लिखे हैं इनकी गिरा हिन्दी कविओं से कम हो ऐसी बात नहीं है। प्रवीणसागर की कितनी ही लहरें इन्हों ने लिखि हैं ऐसा कहा जाता है।

१६–कवि सवितानारायण.

कवि सविताराम हिन्दी में बहुत अभ्यस्त थे, और एक हिन्दी साहित्य सभा के प्रमुख होने का इन्हें एक दफा मान भी मिला है। ये हिन्दी में बहुत सी कविता करते थे। एक सतसई इन्हों ने बनानी प्रारम्भ की थी पर वह अधूरी ही रह गई। विहारी सत सई पर इन्हों ने टीका लिखी है।

१७–हीराचंद और जीवाराम आदि.

कच्छ के कवि हीराचन्द कहानजी तथा जीवराम अजरामर होगए हैं। इन्हों ने हिन्दी में ही सारी कविताएं की हैं। हीराचन्द कहान जी दलपत और नर्मद के समकालीन थे। इन्हो ने हिन्दी भाषा भूषण पर एक स्वतन्त्र टीका लिखी है और उपमा विलास नामक एक ग्रन्थ लिखा है। इन्हों ने इस के सिवाय कितने ही ग्रन्थ तथा फुटकर कविताएं लिखी हैं। कवि जीवराम तो अभी ही हुए हैं। इन्हों ने भी हिन्दी में ही सारी कविताएं लिखी हैं। कविनाथुराम सुन्दर जी काठियावाड़ में बहुत ही प्रसिद्ध हैं। गुजराती के बाद इन्हों ने हिन्दी में बहुत सी कविताएं की हैं। श्रीश्रेयः साधक अधिकारी वर्ग के संस्थापक श्री नृसिंहाचार्य भी हिन्दी में कविता लिख सके हैं। अहमदाबाद के कविहर्षद हिन्दी में बहुत सी कविता किया करते थे इन्हों ने "नागर चतीसी" नामक एक हिन्दी ग्रन्थ भी लिखा है।

गुजरात के भाट चारण भी हिन्दी में कविता करते हैं। राज रजवाड़ों में अपने बनाए हुए कवित्त सवैया इत्यादियों से सभा-रंजन करते हैं। मुख्यतयाय हिन्दी के ही कवि होते हैं। और इन की कविताएं इतनी अधिक हैं कि यदि इन का संग्रह किया जाय तो एक बड़ा मोटा पोथा तैय्यार हो जाए। इन प्रमाणों से गुजरात का हिन्दी साहित्य बहुत कुछ झलकता है। स्वयं गुजराती कवियों ने हिन्दी साहित्य-क्षेत्र में जो भाग लिया है उसका मूल्य हिन्दी भाषा के प्रचारकों और उत्तेजकों से कम नहीं और भारत की अन्य प्रान्तों की अपेक्षा गुजरात हिन्दी भाषा की सेवा करने में आगे ही रहा है और रहता है। आज भी बहुत से गुजराती विद्वान हिन्दी को भली प्रकार समझ सकते हैं और हिन्दी में अपनी कला को प्रकट कर सकते हैं यह बात गुजरात के लिए गौरवास्पाद तथा आदरणीय है। इति

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सार्वभौम-वैदिकधर्म

ईश्वर और उसका आदेश

ले०— श्री० पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति

प्रस्तावना

वैदिक धर्म सबसे पुराना और सबसे सरल धर्म है। वैदिक धर्ममें ईश्वर सम्बन्धी जो विचार दिया गया है, वह बहुत ऊंचा और सरल है, उस का आचार शास्त्र बहुत सीधा और स्वच्छ है। यह इस ग्रन्थ के लेखक का मत है और इसी के दिखाने के लिये यह पुस्तक आरम्भ की गई है।

लेखक का यह भी सिद्धान्त है कि संसार में व्यापी धर्म वही हो सकता है जो शुद्ध होने के साथ ही साथ सरल भी हो, जिसे समझना कठिन न हो, और जिसे समझ कर व्यवहार में लाना भी सुगम हो। यहाँ सुगमता से भाषा की सुगमता का अभिप्राय नहीं, जो भाषा अपने समय में बिलकुल सुगम हो, वही एक सदी पीछे दुर्गम हो जायगी। जो भाषा जितने पुराने समय की होगी, वह उतनी ही दुर्गम हो जायगी। भाषा की दुर्गमता भाषा के परिवर्तन से सरल हो जाया करती है। पुराने ग्रन्थ का प्रचलित भाषा में अनुवाद कर दीजिये, भाषा की कठिनता दूर जायगी। पुराने अहदनामे की असली भाषा हिब्रू कितनी कठिन है-परन्तु आज बाइबल से सरल पुस्तक मिलना कठिन है। कारण यह है कि उसका सब भाषाओं में अनुवाद मिलता है। भाषा की कठिनता भाषा बदल देने से हल हो जाती है, परन्तु भाव की और अभिप्राय की सरलता भाषान्तर कर देने से दूर नहीं होती। वैदिक धर्म की सरलता से लेखक का तात्पर्य यह है कि वेद ईश्वर और आचार सम्बन्धी जो विचार देता है वे सुगम हैं-भाषा सम्बन्धी कठिनाई के दूर हो जाने पर उन्हें जान लेना, और जान कर इच्छा और प्रयत्न के रहते हुए उसे जीवन में ढाल लेना कठिन नहीं है।

वैदिक धर्म ऊंचा है। वह जीवनमें सहज ही ढाला जा सकता है। तर्क और विवेक उस की पुष्टि करते हैं। यह हम भली प्रकार से दिखा सकते हैं। इस ग्रन्थ में वैदिक धर्म के प्रत्येक अंश की व्याख्या करके, उसे युक्ति और प्रमाण से सिद्ध करने का यत्न किया गया है। किसी वस्तु की उपादेयता को सिद्ध करने का सर्वोत्तम उपाय यह है कि उसके गुण दिखा दिये जायं। सूर्य को तेजस्वी सिद्ध करने के लिये किवाड़ खोल कर बाहिर आजाना और आंख उठा कर ऊपर को देख लेना पर्याप्त है। लेखक का विश्वास है कि यदि वैदिक धर्म का स्वरूप दिखा दिया जाय तो हरेक विवेकशील व्यक्ति उसके आगे सिर झुकाने को तय्यार हो जायगा। दिखा देना ही मना देना है यह लेखक का मत है-और इसी विश्वास पर यह दुर्गम उद्योग किया गया है।

वैदिक धर्म के सिद्धान्तों को मनुष्य मात्र के सन्मुख रखने का कार्य आर्य समाज ने अपने ऊपर लिया है। न केवल शब्द से, अपितु कर्म से भी आर्य

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

समाज वैदिक धर्म को सिद्ध करके दिखाने का यत्न करता है। इस कारण वैदिक धर्म से आर्यसमाज का अटूट और अनन्य सम्बन्ध है। वैदिक धर्म की व्याख्या करते हुए आर्य समाज के बारे में कुछ न कुछ लिखना आवश्यक है। क्या आर्य समाज वेदों के साथ न्याय करता है? क्या आर्यसमाज वेदों का प्रचार केवल शब्द से कर रहा है? या कर सकता है? प्रचार का उचित साधन कौन सा है? इस संस्था का भविष्य क्या है? इन सब प्रश्नों पर विचार करना वैदिक धर्म के प्रसंग में अत्यन्त आवश्यक समझ कर पुस्तक की समाप्ति का भाग आर्यसमाज के अर्पण किया गया है।

पुस्तक का क्रम इस प्रकार है। सारी पुस्तक चार भागों में बांटी गई है। पहला भाग ईश्वर और वेद के सम्बन्ध में प्रकाश डालेगा, दूसरे भाग में आत्मा और प्रकृति से सम्बन्ध रखने वाले वैदिक धर्म के दार्शनिक सिद्धान्तों की व्याख्या होगी तीसरा भाग वर्णाश्रम धर्म के अर्पण होगा। वैदिक धर्म की क्रियात्मक समस्याओं पर इसी भाग में विवाद किया जायगा। चौथा भाग वैदिक धर्म के कार्य में परिणत होने की आशाओं और आर्य समाज के वर्तमान और भविष्य पर प्रकाश डालेगा। इस प्रकार संकल्प यह है कि चार भागों में वैदिक धर्म के हरेक पहलू पर प्रकाश डाल दिया जाय। कार्य बहुत भारी है, और योग्यता की अपेक्षा करता है। लेखक का यह दावा नहीं है कि उसके कन्धे इतना भारी बोझ उठाने की शक्ति रखते हैं या उसमें इतनी योग्यता है, तथापि वैदिक धर्म को समष्टि रूप से एक ही पुस्तक में रखने का कार्य इतना आवश्यक है कि उसके लिये यत्न करना धर्म समझ कर और सब अवान्तर विचारों की उपेक्षा की गई है।

यह उद्देश्य है और यह क्रम है। लेखक अनेक कार्य के झञ्झटों में फंसा हुआ होने के कारण नहीं जानता कि वह कितने समय में इस भारी कार्य को समाप्त कर सकेगा—और कर भी सकेगा या नहीं। तो भी विघ्न या अपूर्णता के डर से कार्य आरम्भ करना बुद्धिमत्ता में शामिल नहीं है। पुस्तक का प्रथम भाग धर्म विवेचकों की सेवा में आदर सहित समर्पित है।

प्रथम अध्याय

धर्म

(१)

प्रश्न

धर्म क्या है? यह प्रश्न कुछ आश्चर्य जनक प्रतीत होता है। जब से मनुष्य जाति के चिन्ह पाये जाते हैं। और जहाँ कहीं भी मनुष्य जाति किसी रूप में रही है, वहाँ किसी न किसी नाम से धर्म अवश्य रहा है। जो वस्तु इतनी पुरानी और इतनी व्यापक है, उसका हम लक्षण पूछें यह कुछ आश्चर्य जनक है, परन्तु जब यह विचार कि जो वस्तु दिन रात व्यवहार में आती है, उसी के बिगड़ने का डर होता है; जो सिक्का दिन रात हाथों में घूमता है, वह अपनी कीमत खो देता है, तब प्रतीत होता है कि पुराना या व्यापी होने से यह नहीं सिद्ध हो सकता कि उस वस्तु के स्वरूप परीक्षा की आवश्यकता नहीं है। धर्म का भाव जितना ही व्यापी है, उतना ही अस्पष्ट है, भिन्न भाषाओं तथा जातियों में न केवल भिन्न ही है, अपितु उलटा है। किसी के लिये मूर्तिपूजा धर्म है, किसी के लिये अधर्म, एक के लिये एक व्यक्ति विशेष पर विश्वास धर्म है, दूसरे के लिये अधर्म। कहीं कर्म का पर्याय वाचक धर्म शब्द है, तो कहीं

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

केवल विश्वास या ईमान को धर्म शब्द से पुकारा जाता है। कोई विचारक धर्म और विज्ञान की लड़ाई दिखाने का यत्न किया करते हैं, परन्तु अन्यों का मत है कि विज्ञान भी धर्म का अङ्ग है। अभ्युदय और निःश्रेयस का कारण धर्म को बताने वाला वैशेषिक दर्शन द्रव्य गुण और कर्म की व्याख्या को आवश्यक समझता है।

धर्म शब्द के अर्थ में जो गड़बड़ है, वह उस के अनुवाद में प्रतिभासित होता है। कई लोग धर्म और मत को पर्याय शब्द समझते हैं, परन्तु अन्य विद्वान् उन दोनों में भेद करते हैं। प्रायः धर्म का अंग्रेज़ी में अनुवाद करते हुए 'Religion' शब्द का प्रयोग करते हैं। अन्य विवेचक उसे ठीक नहीं समझते। 'Law' 'Duty' 'Faith' आदि कई शब्दों से धर्म के अर्थ को बताने का यत्न किया है, परन्तु पूरी सहमति किसी शब्द पर भी नहीं हुई। 'ईमान या 'मज़हब' धर्म के पर्याय वाची हैं, या नहीं, इस प्रश्न का भी अभी तक निश्चित उत्तर नहीं मिला।

इन मतों की विविधता को देख कर यह प्रश्न होता है कि 'धर्म क्या है?' यह प्रश्न सर्वथा निर्मूल या उपेक्षायोग्य नहीं है। 'धर्म धर्म' सब पुकारते हैं, फिर भी पूछना पड़ता है कि धर्म क्या है? इसे आप एक मज़ाक कहें या इस पर दुःख प्रकट करें; सम्भव है आप मनुष्य-जाति की नासमझी पर दो सर्द आहें भरकर रह जायँ, परन्तु यह सत्य है कि धर्म शब्द अब तक भी बहुत संदिग्धार्थ बना हुआ है, और इसका बिना सोचे समझे प्रयोग सन्दिग्धार्थता को प्रतिदिन बढ़ाता जाता है।

(२)

उद्देश्य

धर्म शब्द का वास्तविक अर्थ जानने की बड़ी आवश्यकता है, परन्तु क्या इस एक अध्याय में लेखक यह आशा कर सकता है, कि वह इतने जटिल प्रश्न को निपटा देगा? जिसे बड़े-बड़े विवेचक न निपटा सके, उसे इस ग्रन्थ का लेखक निपटा देगा, यह विचार यदि लेखक का हो तो दुःसाहस है, और यदि अध्येता का है तो दुराशा है। इस छोटे से अध्याय में धर्म की पूरी व्यवस्था करने का असम्भव उद्योग नहीं किया जायगा, अपितु केवल यह यत्न होगा कि धर्म शब्द के भिन्न-भिन्न अर्थों को दिखाकर यह बता दिया जाय कि इस पुस्तक में उस शब्द को किन अर्थों में लिया जायगा।

(३)

'धर्म' और 'धर्मन्'

वेदों में धर्म शब्द का ही प्रयोग नहीं है, वहाँ धर्मन् शब्द का भी प्रयोग है। 'धर्मन्' शब्द का प्रयोग और उसकी व्युत्पत्ति धर्म शब्द के मूलार्थ पर बहुत-सा प्रकाश डालती है। वेद में धर्मन् शब्द का प्रयोग ऐसे स्थलों में है—

यज्ञेन यज्ञ मयजन्त देवा स्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्
ते ह नाकम्महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्तिदेवाः
यजुः। ३१। १६

देवों ने यज्ञ से यज्ञ का यजन किया, यह प्रथम 'धर्मन्' थे। श्रेष्ठ पुरुषों ने श्रेष्ठ कर्मों तथा अग्निहोत्रादि यज्ञों से परमात्मा प्रजापति को प्राप्त किया,—यह उत्कृष्ट 'धर्मन्' है। यहाँ 'धर्मन्' शब्द 'कर्मन्' का पर्यायवाची ही प्रतीत होता है। पहले पद में कहा हुआ कर्म उत्कृष्ट 'धर्मन्' माना गया है। यहाँ धर्म और धर्मन् को एक समझ लेना अनुचित नहीं है।

'धर्मन्' शब्द धर्म का पर्यायवाचक हो सकता है, परन्तु देखना यह है कि उसका धात्वर्थ क्या किया जाता है। निरुक्त में दो स्थानों पर 'धर्मन्' शब्द की व्याख्या है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

धर्मणे धारणाय। निरुक्त। ७। २५

धर्माणं धारयितारम्। निरुक्त। ९। २५

पहले स्थानपर 'धर्मन्' का अर्थ धारण किया है, और दूसरे पर धारण करनेवाला है। 'यज्ञेन यज्ञम्' इत्यादि मन्त्र में 'धर्मन्' न धारण किया का वाचक है और न धारण करने वाले पुरुष का। वह धर्म के अधिक समीप है। प्रतीत होता है कि 'धारयितारम्' से निरुक्तकार का अभिप्राय निम्नलिखित है।

"जो अपनी शक्ति से जगत् का धारण करवाते हैं वे 'धर्मन' हैं।"

सत्येनोत्तभिता भूमिः सत्येनोत्तभिता द्यौः।

इत्यादि मन्त्रों में सत्य को जगत् का आधार कहा गया है। वेद में 'धर्मन्' और 'धर्म' शब्द सत्य के बहुत समीप पाये जाते हैं। 'ऋत' और 'सत्य' शब्दों से ही वेद में प्रायः वह अभिप्राय प्रकाशित किया गया है, जो धर्म शब्द से प्रकट किया जाता है। कहीं 'सत्य' शब्द 'धर्मन्' का विशेषण भी मिलता है (सत्य धर्मणि भूतये) उन स्थानों पर 'धर्मन्' का सत्य शब्द से अभिप्राय वर्णन ही है।

वेद में 'धर्मन्' शब्द 'ऋत' और 'सत्य' का पर्याय वाची तो नहीं—परन्तु उनका समीपवर्ती अवश्य है। परन्तु वेद में उसका प्रयोग बहुत कम होने से उसके 'विशेष' अर्थों तक पहुंचना कठिन है। सामान्य अर्थ जाना जा सकता है और ज्ञात होता है कि वेद में 'धर्मन्' शब्द है भी सामान्यार्थवाची ही। वह सामान्य अर्थ लोकका धारण करने वाला यह प्रतीत होता है।

(४)

क्या ज्ञान और धर्म में भेद है?

जब हम उपनिषदों का अध्ययन करते हैं तब साधारण दृष्टि से तो हम इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि धर्म को ज्ञान से बिल्कुल भिन्न समझा गया है। उपनिषदों में ज्ञान प्रधान है। एक स्थान पर भी ऐसा निर्देश नहीं मिलता जिससे उपनिषदों का उपदेश 'धर्म' की प्राप्ति बताया गया हो। कहीं २ धर्म शब्द आता है, वह कर्म का पर्याय वाची है। यथा—

'त्रयो धर्मस्कन्धाः, यज्ञो ऽध्ययनंदानमिति'। धर्म के यहां तीन स्कन्ध बताये गये हैं। यज्ञ, अध्ययन और दान। ये तीनों कर्म हैं। ज्ञान या विश्वास का उपनिषदों के धर्म शब्द में अन्तर्भाव नहीं है। धर्म केवल ज्ञान से अतिरिक्त कर्तव्य समूह समझा गया है। उपनिषदों में धर्म शब्द का प्रयोग बहुत ही कम है, जहां कहीं है वह भी ज्ञान के अतिरिक्त कर्म का वाचक है। परन्तु अगले विवेचन से ज्ञात होगा कि उपनिषदों में भी धर्म से ज्ञान का ऐसा निर्वासन नहीं किया गया है।

धर्मशब्द क्या है, और क्या नहीं है, यह स्मृतियों से भली प्रकार जाना जा सकता है। दर्शन ग्रन्थों में यद्यपि धर्म शब्द बहुत बार नहीं आया, परन्तु जहां कहीं आया है, इतनी स्पष्टता से आया है, और उसका भाव इतना असन्दिग्ध हो जाता है कि दर्शन ग्रन्थ भी धर्म शब्द का अर्थ और विस्तार जानने में हमारी बहुत सहायता कर सकते हैं।

(५)

दर्शन ग्रन्थों में धर्म का विस्तृत अर्थ

दर्शनग्रन्थों में से वैशिषिक और मीमांसा में धर्म का व्यवच्छेदक लक्षण किया गया है। उस में से वैशेषिक का बहुत विस्तृत और मीमांसा का परिमित है। वैशेषिक् कार ने धर्म का यह लक्षण किया है—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

यतोऽभ्युदय निः श्रेयससिद्धिः स धर्मः।

जिस से (अभ्युदय) इस लोक का ऐश्वर्य और (निःश्रेयस) परलोक का सुख प्राप्त हो वह धर्म है। कर्म ज्ञानमय हो या विश्वासमय-जो भी बहुत अभ्युदय या ऐश्वर्य में साधनभूत हो, वह धर्म कहा जायगा। यह अर्थ बहुत विस्तृत है—और कर्म की चौड़ी से चौड़ी सीमाओं को प्रगट करता है। धर्म का रूप विशाल है ही-उसका ठीक अनुरूप लक्षण इस से अच्छा और कहीं शायद ही किया गया हो। यह फल द्वारा धर्म का लक्षण होने से फल लक्षण कहा जा सकता है।

मीमांसाकारने धर्म का इस प्रकार लक्षण किया है—

चोदनालक्षणोऽर्थो धर्मः।

ऐसा करो, ऐसा न करो, इस प्रकार की आज्ञाओं से विहित या निषिद्ध कर्म का नाम धर्म है। इस में धर्म के कारण द्वारा धर्म का स्वरूप बताया गया है।

इन दोनों लक्षणों में देखने में भिन्नता है परन्तु वस्तुतः कोई विरोध नहीं है। एक में धर्म का कारण बताया गया है, दूसरे में कार्य। धर्म वेद से जाना जाता है और अभ्युदय तथा मोक्ष का साधन है। एक में ज्ञान का हेतु बताया गया है दूसरे में फल। विरोध कोई नहीं। इतना अवश्य है कि यह स्पष्ट जान लेने से कि वेद धर्म का ज्ञान हेतु है, उसकी सीमायें परिचित हो जाती हैं, और यह जानकर कि जो भी अभ्युदय तथा ऐश्वर्य साधन हो वह धर्म है उसकी सीमायें बहुत विस्तृत हो जाती हैं, परन्तु जो लोग यह बात मानते हैं कि वेद में इहलोक और परलोक के सुख के समान साधनों का विधान कर दिया गया है, उनके लिये दोनों लक्षण एक हैं।

यह भी यहां ध्यान में रखना चाहिये कि मीमांसा के सूत्र के केवल कर्म परक अर्थ भाष्यकारों ने किये हैं। जो ज्ञान विधि और निषेध का सहायक हो सकता है, उसे मीमांसा में आवश्यक ही माना गया है। शब्द की नित्यता पर मीमांसा में लम्बा चौड़ा शास्त्रार्थ है। यदि यह मानें कि मीमांसाकार ज्ञान का धर्म से कोई सम्बन्ध नहीं मानते तो मीमांसाकार के व्यवहार से ही उसका खण्डन होता है। मीमांसा के सूत्रका शब्दार्थ इतना है 'प्रेरणा से विहित अर्थ धर्म है।' अर्थ शब्द से ज्ञान को निर्वासित नहीं किया जा सकता। वेद में ज्ञान भी प्रतिपादित है, कर्तव्य कर्म भी। विधि निषेध के समझने में ज्ञान परम सहायक होता है।

इस प्रकार दोनों लक्षणों में परस्पर विरोध नहीं है। धर्म शब्द प्रधानतया विधि में आये हुए कर्मों का नाम है। वह अभ्युदय और निःश्रेयस का हेतु होता है। कर्तव्य कर्म में सहायक होने से वह भी धर्म की परिधि से बिल्कुल बाहिर नहीं हो सकता-वह कर्म के सहायक रूप से साथ रहेगा। हमने देखा था कि उपनिषत्कार ने ज्ञान से अतिरिक्त धर्म बताया है। परन्तु उसमें भी 'अध्ययन' को धर्म कहा गया है। अध्ययन 'ज्ञान प्राप्ति' का नाम है। उपनिषत्कार के मतानुसार भी ज्ञान को धर्म के लिये आवश्यक माना गया है, और ज्ञान प्राप्त करने को धर्मों में गिना गया है।

वेद में 'धारण करने वाला' इस अभिप्राय में धर्म शब्द का प्रयोग है। यह भी बहुत विस्तृत लक्षण है। इस में भी कर्म के सहायक रूप में ज्ञान का समावेश कर लेने में विशेष हानि नहीं।

परन्तु धर्म शब्द में प्रधान तया कर्म का समावेश है, ज्ञान उस के सहायक रूप से ही प्रवेश कर सकता है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

(६)

स्मृतियों में धर्म

स्मृतियों का विषय ही 'धर्म' है, जब हम उनके किये धर्म के लक्षण और व्याख्यान पर दृष्टि डालते हैं तो हमें दर्शनों की अपेक्षा कुछ अधिक विस्तार मिलता है। कई विचार परिपक्व हो गये हैं, कई अधिक विस्मृत होगये हैं। इसका एक कारण समय है और दूसरा यह है कि जहां वैशेषिक या मीमांसा तत्वज्ञान के ग्रन्थ थे, वहाँ स्मृतियों का उद्देश्य ही क्रियात्मक धर्म बताना है।

मीमांसा में कहा गया था कि 'विधिनिषेध द्वारा प्रतिपादित अर्थ धर्म है' स्मृति बतलाती है कि-

वेदः स्मृतिः सदाचारः स्वस्य च प्रियमात्मनः
एतच्चतुर्विधम्प्राहुः साक्षाद्धर्मस्य लक्षणम्। मनु २अ.

वेद, स्मृति, सदाचार और आत्मा का प्रिय-यह चार प्रकार का धर्म का साक्षात् लक्षण है। यह धर्म का कारण लक्षण है।

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः
धीर्विद्या सत्यम क्रोधो दशक धर्मलक्षणम्। मनु।

यह धर्म का स्वरूप लक्षण है।

स्मृति के कारण लक्षण और स्वरूप लक्षण को देखने से हम इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि स्मृतियों के अनुसार धर्म की परीक्षा के-एक नहीं-चार साधन हैं। यद्यपि अन्य स्थान पर स्मृतियों ने भी माना है कि श्रुति से विरुद्ध होने पर अन्य कोई लक्षण माननीय नहीं है। धर्म का स्मृतियों में प्रतिपादित स्वरूप इस बात को व्यक्त करता है कि धर्म क्रियात्मक वस्तु है। किन्तु धर्म में, और विद्या का गिना जाना यह भी बताता है कि धर्म से ज्ञान का सर्वथा निर्वासन नहीं है। ज्ञान भी धर्म के क्रियात्मक जीवन में सहायक है।

"भगवद्गीता को पढ़ने से प्रतीत होता है कि वह भी ज्ञान और कर्म के समुच्चय को ही धर्म मानता है।

(७)

धर्म क्या नहीं है?

इस ऊपर के विवाद से हम यह जान सकते हैं कि धर्म क्या नहीं है? केवल 'ज्ञान' को जो लोग धर्म मानते हैं, हमारा विवेचन उनका खण्डन करता है। केवल 'कर्म' को जो विचारक धर्म शब्द का वाच्य मानते हैं, वह भी हमारे ऊपर के विचार के प्रतिकूल ठहरते हैं। कई लोग विश्वास (Faith) को धर्म का पर्यायवाची समझते हैं, वह भी ठीक नहीं। जिस विश्वास का क्रिया पर उत्तम असर न पड़े, वह निकम्मा है। केवल विश्वास धर्म के साधनों में से एक हो सकता है धर्म के क्षेत्र को नहीं व्याप सकता। धर्म से मुख्यभाव आचरण तथा वृत्तका है। जहाँ तक आचरण तथा वृत्तका ज्ञान सहायक है, वहाँ वह धर्म का साधन है परन्तु जहाँ तक वह आचरण में शामिल है, वहाँ स्वयं धर्म है। केवल ईश्वरविश्वास, केवल अग्नि होत्र, केवल रीतिरिवाज इनमें से कोई धर्म नहीं हो सकता। ऊपर का विवेचन इन बातों को स्पष्ट करदेता है।

(८)

धर्म क्या है?

वैदिक साहित्य में धर्म शब्द उस विस्तृत सिद्धान्त के लिये आता है जो 'धारण करता' है। ऋत और सत्य उसके बहुत समीपस्थ हैं। जो संसार की स्थिति को धारण करता है, वह धर्म है। उसे नियम, व्यवस्था, मर्यादा, कुछ कहिये। वह कैसे जाना जा सकता है? इस प्रकार का उत्तर ढूंढने में यत्न करके ऋषि चार कसौटियों पर

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पहुँचे। वह चार कसौटियां श्रुति, स्मृति, सदाचार, और 'आत्मनः प्रिय' ये हैं। इन चार कसौटियों से धर्म की अर्थात् संसार का शासन करने वाले व्यापक नियमों की परख की जा सकती है। धर्म शब्द को बहुत विस्तृत अर्थों में लें तो वह सारे जगत को धारण करने वाले नियमों का समूह है। उसे केवल मनुष्य के सम्बन्ध में लें तो वह मनुष्य के जीवन सम्बन्धी सब नियमों का समुच्चय है। वेद में धर्म शब्द पहले-अत्यन्त विस्तृत-अर्थों में आया है। दर्शनों और स्मृति ग्रन्थों में वह दूसरे अर्थों में प्रयुक्त हुआ है।

दर्शनों और स्मृतियों में धर्म का जो क्षेत्र माना गया है वह कुछ कम नहीं है। वैशेषिक दर्शन के अनुसार जिस नियम के पालन से ऐहलौकिक या पारलौकिक सुख प्राप्त हो, वह धर्म है। मनुष्यजीवन सम्बन्धी कोई भी कार्य इस क्षेत्र से पृथक् नहीं है। मीमांसा के अनुसार जो विहित है वह धर्म है। जो लोग वेद के विधिविस्तार को जानते हैं, उनसे छिपा नहीं है कि जीवन सम्बन्धी कोई भी विषय वेद के विधान से नहीं बचा। स्मृतियों की ओर देखिये तो भी धर्म की परिधि बहुत लम्बी चौड़ी दिखाई देती है। एक मानव धर्मशास्त्र ही को लीजिये। मनु की रचना केवल धर्म का ज्ञान कराने के लिये हुई है। मनुमहाराज एकान्त में बैठे थे। ऋषि लोगों ने उनके समीप पहुँच कर निम्नलिखित प्रार्थना की।

भगवन् सर्ववर्णानां यथावदनुपूर्वशः।
अन्तरप्रभवाणां च धर्मान्नो वक्तु मर्हसि। मनु। १। २

भगवन! सब वर्णों और अन्तरप्रभवों के धर्मों का क्रम से वर्णन करने की कृपा कीजिये। मनुमहाराज धर्म का वर्णन आरम्भ करते हैं। मनुमहाराज की सम्मति में धर्म का क्षेत्र कितना विस्तृत है-यह जानने के लिये एक बार मनुस्मृतिकी विषय सूचि पर दृष्टि डालना ही पर्याप्त है। पुरुष के चारों आश्रमों के कर्तव्य, राजनियम, सामाजिक नियम, परलोककी व्यवस्था ये सब विषय धर्म के अन्तर्गत हैं। मनुष्य सृष्टि सम्बन्धी कोई भी ऐसा विषय नहीं जो मानव धर्म के अन्तर्गत न हो। धर्म और नियम अपने व्यापक अर्थों में एक हैं। जीवन सम्बन्धी कोई नियम धर्म से बाहर नहीं है।

(९)

Religion और धर्म

पहले पाश्चात्य विद्वान धर्म शब्द का अंग्रेजी में अनुवाद करते हुए Religion शब्द का प्रयोग किया करते थे, परन्तु अब छोड़ रहे हैं। अब वे लोग स्वीकार करते हैं कि धर्म शब्द का पर्यायवाची अंग्रेजी भाषा में कोई शब्द नहीं है। पर्यायवाची शब्द ऐसा होना चाहिये कि वह उस सारे भाव को कह सके, जो मूल शब्द में आता है। हम अभी देखेंगे कि Religion शब्द का विषय बहुत संकुचित है।

कई लोग धर्म शब्द का अनुवाद Duty करते हैं। Duty कर्तव्य है। कर्तव्य शब्द केवल चेतन के साथ सम्बन्ध रखता है और आध्यात्मिक महत्त्व नहीं रखता। कर्तव्य तब बनता है, जब एक नियम से परिणाम निकाल लिया जाता है। वह नियम धर्म है, उसके कारण मनुष्य के लिये मार्ग अनुसरणीय होता है वह कर्तव्य कहाता है। कर्तव्य एक विशेष अवसर और दशा से सम्बन्ध रखता है, धर्म सामान्य नियम है। धर्म कारण है, कर्तव्य कार्य है। अथवा इसे और भी स्पष्ट शब्दों में इस प्रकार कह सकते हैं कि धर्म व्यापक है, कर्तव्य व्याप्य है। इस कारण धर्म शब्द के अर्थ को duty शब्द नहीं कह सकता।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

धर्म और Religion में क्या भेद है? यह स्पष्ट कर देना बहुत आवश्यक है। अब दोनों शब्दों को एक दूसरे के पर्यायवाची न समझते हुए भी लोग ग्रन्थों में और व्यवहार में दोनों का बहुत झमेला कर देते हैं। जो लोग Religion को धर्म का शब्दानुवाद नहीं मानते, वे भी भावानुवाद अवश्य मान लेते हैं। Religion के विषय में A Study of Religion में मार्टिन्यू (Martinue) महाशय लिखते हैं—

Religion can be taken in its simplest form as man's recognition of a world order, or a system of things in which he himself has merged.

'Religion (is a) belief in an everlasting God, that is a Divine mind and will, ruling the universe and holding moral relations with mankind.

Religion शब्द का अत्यन्त सरल अर्थ लेना हो तो यह है कि मनुष्य संसार में व्यवस्था को अंगीकार करे, एक ऐसे संगठन को स्वीकार करे जिस का वह केवल एक भाग है। यह स्वीकृति धर्म कहायगी।

Religion नित्य परमात्मा में विश्वास का नाम है। अर्थात् एक दिव्य मनन शक्ति और इच्छा शक्ति जो संसार का शासन करती है, और मनुष्य जाति के साथ आचार सम्बन्धी सम्बन्ध रखती है—उस में विश्वास Religion है।

संसार में काम करती हुई व्यवस्था Religion नहीं अपितु उसे अंगीकार करना Religon है। दिव्य शक्ति का मनुष्य जाति से जो सम्बन्ध है—वह Religion नहीं, उस दिव्य शक्ति में विश्वास Religion है। विश्वास का नाम Religion है। इसीलिये उसका दूसरा नाम फेथ (Faith) है। 'ईमान' 'मजहब' ये दोनों शब्द भी विश्वास के साथ सम्बन्ध रखते हैं।

एक ओर धर्म शब्द है और दूसरी ओर 'Religion' 'Faith' 'मजहब' 'ईमान' ये सब शब्द हैं। धर्म में और इन शब्दों में भेद स्पष्ट होगया है। धर्म कहते हैं, संसार के चेतन अचेतन पदार्थों के संचालन करने वाले व्यापक नियमों को। सदाचार सम्बन्धी नियम, ईश्वर का अधिष्ठातृत्व यह सब उसके भाग हैं। वह इन तक परिमित नहीं। अन्य ऊपर कहे हुए सब शब्द मनुष्य के ईश्वर विश्वास की ओर निर्देश करते हैं। वह विश्वास, धर्म में एक नियम के रूप में अंग होकर प्रवेश कर सकता है उसके सम्पूर्ण रूप को नहीं कह सकता।

(१०)

धर्म और ईश्वर विश्वास

यद्यपि धर्म और Religion और ईमान में बहुत भेद है, तथापि यह बात असन्दिग्ध है कि भारतवर्ष की प्रजा में धर्म का जो स्थान है, क्रिश्चियनों तथा इस्लाम के अनुयायियों में Religion का वही स्थान है। Religion का जो प्रामाणिक लक्षण ऊपर दिया गया है, योरप के विद्वान प्रायः इस में सहमत हैं। हम यदि संस्कृत में Religion का पर्यायवाची शब्द दें तो 'आस्तिकता' या 'ईश्वर विश्वास' आदि शब्द मिल सकते हैं। धर्म और ईश्वर विश्वास भिन्न है परन्तु क्या उन दोनों में कोई परस्पर सम्बन्ध है?

ईश्वर में विश्वास करने से मनुष्य की आत्मा पर क्या २ प्रभाव पड़ते हैं यह तो ईश्वर प्रकरण में विस्तार से लिखा जायगा, यहां इस बात का

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

निर्देश मात्र करना है कि ईश्वर विश्वास का धर्म से गहरा सम्बन्ध है। यह सम्बन्ध अटूट तो नहीं है—क्योंकि ऐसे दृष्टान्तों का अभाव नहीं है, जहां ईश्वर विश्वास के बिना भी धर्म प्रेम रहा हो परन्तु यह बिना किसी संकोच के कहा जा सकता है कि अधिकांश में इन दोनों का सहवास ही पाया जाता है। कारण क्या है?

धर्म संसार के चलाने वाले व्यापी नियमों का नाम है। मनुष्य की प्रकृति है कि वह नियम को नियन्ता के जोर पर मानता है। नियम कैसा है? यह कोई २ विचारशील ही देखता है, परन्तु नियम किस का बनाया हुआ है? क्या नियम का बनाने वाला नियम का पालन भी करा सकता है? इन प्रश्नों के उत्तरों पर ही प्रजा में नियम पालन की मात्रा का आधार रहता है। धर्म रूपी नियम अच्छे हैं, इस कारण उनके मानने में गिने चुने लोग प्रवृत्त होते हैं, परन्तु उनका चलाने वाला परमात्मा है, वह नियम भङ्ग करने वाले को अवश्य दण्ड देगा, वह धर्मात्मा को अवश्य पारितोषिक देगा, उसका न्याय अटल है—ये विचार धर्म में प्रवृत्ति कराने के अधिक सहायक होते हैं। नियम तभी माना जाता है यदि उसके पालन में लाभ और न पालन में हानि दिखाई दे, ऐसे लोग विरले ही होते हैं, जो निष्काम भाव से पुण्य करते हैं। हानि लाभ का निश्चय देने वाले जज की शक्ति पर किया जाता है। जिस राज्य की कचहरी या पुलिस कमजोर है वहां राजनियम का पालन भी नहीं होता।

ईश्वर धर्म रूपी नियमों का बनाने वाला, और उनको चलाने वाला है। वह सर्वशक्तिमान है। उसके हाथ से कोई अपराधी बच नहीं सकता। यह विश्वास धर्म के पालन में बड़ा भारी सहायक होता है। इस से प्रतीत होता है कि ईश्वर विश्वास धर्म के पालन में बड़ा भारी सहायक है।

कहीं २ धर्म की स्थिति बिना ईश्वर विश्वास के भी पायी जाती है। उसका कारण यह है कि या तो ऐसे स्थानों में भलाई की ओर पूर्व जन्म के संस्कारों से ऐसी प्रबल प्रवृत्ति होती है कि किसी अन्य प्रेरक की आवश्यकता नहीं रहती; या ऐसे स्थानों पर नियामक ईश्वर के स्थान पर 'प्रकृति' 'Nature' 'कुदरत' आदि को रख दिया जाता है। वस्तु कोई रख दीजिये, यदि उसे आप नियम की स्थापना और रक्षा करने वाली मानते हैं तो वह धर्म के लिये प्रेरक कारण बनाती है। बौद्ध लोगों ने कर्म को ही अपरिमित शक्ति से सम्पन्न मान कर धर्म के प्रति प्रेरक कारण बनाया। उनका काम भी चल गया। बौद्ध धर्म ने करोड़ों को ही धर्म का अनुयायी बनाया। ऐसे दृष्टान्तों का अभाव नहीं है, परन्तु ध्यान से देखा जाय तो वहां भी ईश्वर विश्वास को किसी न किसी रूप में रखने का यत्न किया ही जाता है।

(११)

धर्म और उसका प्रयोग

सामान्य नियम, जो मनुष्य जीवन का शासन करते हैं, धर्म कहाते हैं। मनुष्य के व्यवहार में जब वह विषय लाये जाते हैं, तब सामान्य रूप में नहीं रह सकते, उन्हें विशेष रूप में आना पड़ता है। मनुष्य उन नियमों को विशेष व्यवहार में लाता है। उन नियमों के पालन का या वास्तविक जीवन में उन नियमों के आ जाने का नाम सदाचार है। उस व्यावहारिक शास्त्र का नाम सदाचार शास्त्र या Ethics है।

सदाचार श्रेष्ठ आचार जब किसी जाति के प्रयोग में आने लगता है, तब धीरे २ वह मौलिक

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

साधारण नियम लोगों के सन्मुख विशेष क्रियाओं के रूप में आते हैं। जाति के सब लोग इतने समझदार नहीं होते कि वह उन मौलिक नियमों को समझ सकें। वह अपने से पूर्वजों और अधिक योग्यों के व्यवहार को देख कर अवस्थाओं के अनुकूल विशेष नियम बना लेते हैं और उनके अनुसार जातीय और व्यक्तिगत जीवनों को ढाल देते हैं। वह क्रमागत विशेष नियम 'स्मृति धर्म' में गिने जाते हैं।

सब लोग स्मृतियों तक भी नहीं पहुंच सकते। बहुतसों में स्मृतियों तक पहुंचने की शक्ति नहीं, और बहुत से इतनी फुर्सत ही नहीं रखते कि नित्य के काम धन्धे छोड़ कर स्मृतियों से इतिकर्तव्यता जानें। वे अपने बुजुर्गों के चलन के अनुसार चलते हैं, और उसी को धर्म मान लेते हैं। यह 'आचार' या श्रेष्ठों का आचार इस अर्थ में 'सदाचार' कहाता है।

समय आता है कि सामान्य नियम या तो सभी को भूल जाते हैं, या कुछ इने गिने आदमियों के पेट में रह जाते हैं। स्मृति धर्म को स्मृतियों से खोजने का यत्न भी सब नहीं करते। आचार-अपने से बड़ों का आचरण ही उत्कृष्ट हो जाता है, वही माना जाता है, उसी से लोग अपने आचरणों के लिये रास्ता बनाते हैं। तब जिस रास्ते का लोग अवलम्बन करते हैं, उसे 'रूढि' या रिवाज कहते हैं।

रूढि या रिवाज धर्म नहीं है। वह धर्म रूपी सामान्य नियमों के संकुचित रूप स्मृति धर्म अथवा श्रेष्ठों के आचरणों का व्यावहारिक मोटा रूप है। श्रेष्ठों का आचरण भी इन्हीं अर्थों में धर्म है कि वह सामान्य नियमों का एक यथासम्भव विशुद्ध प्रयोग है। स्मृति धर्म धर्म का विशेष दशाओं के अनुकूल प्रयोग है। दशाओं को नापने का काम स्मृतियों के बनाने वाले करते हैं। इस कारण स्मृति धर्म और आचार इन दोनों में मनुष्य बुद्धि का आवश्यक प्रवेश रहता है। रूढि में बुद्धि की अपेक्षा मनुष्य में विद्यमान अनुकरण शक्ति का अधिक प्रयोग रहता है। स्पष्ट है, कि इन तीनों की ही दशाओं में स्मृति, आचार और रूढि में, क्रम से मनुष्यगत निर्बलताओं की अधिकाधिक सम्भावना है।

कभी २ यह तीनों आपस में उलझ जाते हैं। रूढि धीरे २ स्मृति में शामिल हो जाती है। श्रेष्ठों के आचरण रूढि के प्रतिबिम्बमात्र रह जाते हैं। आचार की छाया स्मृति और रूढ़ि दोनों पर पड़ती है। उस समय इन तीनों को भिन्न भिन्न ढूंढ निकालना बहुत कठिन हो जाता है।

इस पुस्तक में शब्दों का प्रयोग ऊपर लिखे अनुसार ही होगा। संग्रह रूप में उन्हें नीचे दिया जाता है।

धर्म = जीवन सम्बन्धी सामान्य नियम

स्मृति धर्म = भिन्न भिन्न ग्रन्थों में प्रतिपादित व्यावहारिक धर्म

आचार = श्रेष्ठों का आचरण। श्रेष्ठ से यहाँ वृद्धों का ग्रहण करना चाहिये।

सदाचार = उत्तम आचरण।

मत = भिन्न २ महापुरुषों द्वारा प्रचारित स्मृति धर्म। जैसे बौद्ध, ईसाई, इस्लाम, शैव, वैष्णव आदि।

सम्प्रदाय = मतों के अवान्तर भेद।

(क्रमशः)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

भारत-साम्राज्य-विस्तार

[लेखक— नारायण रामरुख देशपांडे]

गत अंक में यह सिद्ध किया गया है, कि भारत-साम्राज्य-विस्तार आफ्रिका खंड तक हो चुका था, परन्तु जिन देशों का उल्लेख किया गया है वे सब दक्षिण आफ्रिका से सम्बन्ध रखते हैं, मषण और साची प्रांत दक्षिण आफ्रिका में हैं, इस लिये यह सिद्ध नहीं हो सकता कि सम्पूर्ण आफ्रिका खण्ड पर आर्यों का साम्राज्य था, आज के लेख में इसी पर विचार करेंगे कि वैदिक साहित्यमें उत्तर आफ्रिका का सम्बन्ध रखने वाले आधार मिल सकते हैं या नहीं। वैदिक साहित्य में निम्नलिखित मंत्र मिलता है—

उत स्या श्वेतयावरी वाहिष्ठा वां नदीनाम्।
सिन्धुर्हिरण्यवर्तनिः ॥ १६ ॥ सू० २६ मंत्र ६

इस मन्त्र पर जो भाष्य है वो नीचे उद्धृत किया जाता है—

विश्वमना ऋषिः श्वेतयावरीनाम्न्या नद्या-स्तीरे अश्विनावस्तौत्। अनया नद्यपि स्तुतवतीत्याह उतापिच श्वेतयावरी श्वेतजला यातीति श्वेतयावरी। कीदृशी। सिंधुः स्यंदमाना हिरण्यवर्तनिः हिरण्मय-स्वीयमार्गा-हिरण्योभयकूला स्या एषा श्वेतयावरी नामिका नदीनां अन्यासां नदीनां मध्ये वां युवां वाहिष्ठा स्तुत्या अतिशयेनागन्त्री भवति। एषापि युवां स्तौतीत्यर्थः। यद्वा एषा नदी युवयो रथस्य वाहिष्ठा वोढृतमा सती प्रियकरी भवति यस्मादहमस्याः तीरे युवामस्तुवमिति ॥ भाष्यम् ॥

भाष्य के आरम्भ में बतलाया गया है कि विश्वमना ऋषि ने श्वेतयावरी नाम की नदी के किनारे अश्विनिकुमारों का स्तवन किया। श्वेतया-वरी श्वेत जल से सम्पन्न होकर बहने वाली। सिंधु स्यंदमान (बहने वाली)। हिरण्यवर्तनि जिसका मार्ग हिरण्मय है अथवा जिसके दोनों किनारों पर सुवर्ण है।

"हे अश्विनीकुमारो! इतर नदियों से शीघ्र और जल्द बहा ले जाने वाली श्वेतयावरी नाम की नदी है" यह इस मंत्र का स्पष्ट और सरलार्थ है, तथापि भाष्यकारों ने वाहिष्ठा पद का अर्थ अतिशय स्तवन करने वाली किया है परन्तु इस अर्थ से स्पष्टतया अरुचि उत्पन्न होती है इसलिये उन्होंने यद्वा से प्रारम्भ करके "तुम्हारे रथ को अतिशय वेग से बहा ले जाने वाली" अर्थ बतलाया है। अस्तु।

इस मंत्र के अर्थ पर विचार करने से पहिले उचित मालूम होता है कि एक और मंत्र और उसका भाष्य भी उद्धृत किया जाय और दोनों मन्त्रों के अर्थ पर एक समय ही में विचार किया

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जाय— ताकि सही तात्पर्य निकाला जा सके, वह मंत्र निम्नलिखित है—

स्मदेतया सुकीर्त्याश्विना श्वेतया धिया।
वहेथे शुभ्रयावाना ॥ १६ । सू० २६ मं० ६ ॥

भाष्यः— हे शुभ्रयावाना शोभनशीलगमनवन्तौ हे अश्विना अश्विनौ सुकीर्त्या शोभनस्तुत्या श्वेतया श्वेतजलया धिया धारयित्र्या हिरण्मयकूलवत्या उभयकूलस्थितानां प्राणिनां धनदानेन पोषयित्र्या एतया नद्या स्मत् सुमत् शोभनं वहेथे युवां स्तुतिं प्राप्नुथः । एषा युवामस्तौदित्यर्थः ॥ १६ ॥

वहेथे शब्द का अर्थ भाष्य में "तुम्हारा स्तवन हो रहा है" किया गया है— "शुभ्रयावाना" यह अश्विनिकुमारों का विशेषण है, भाष्य में इस का अर्थ "जिन का नदी रूप गमन मार्ग शुभ्र है" किया गया है परन्तु इस पद का अर्थ "जिनका नदी रूप गमन मार्ग शुभ्र है" यह भी हो सकता है। 'सुकीर्त्या' 'श्वेतया' और 'धिया' यह तीन विशेषण इस मंत्र में "श्वेतयावरी" नदी के हैं और "एतया" यह दर्शक सर्वनाम है। "धिया" का अर्थ धारण करने वाली अर्थात् सुवर्णमय किनारों से युक्त होने के कारण दोनों किनारों पर रहने वाले प्राणियों को धन देकर पोषण करने वाली ऐसा अर्थ भाष्य में किया गया है, "सुकीर्त्या" यानी उत्तम कीर्तिसे संपन्न। "अश्विनिकुमारो श्वेत जल और महान् कीर्ति संपन्न और धारण पोषण करने वाली श्वेतयावरी नदी के कारण तुम बहते जा रहे हो" यह इस मंत्र का अर्थ होता है।

नदी के नाम श्वेतयावरी का और पहिले मंत्र में वर्णित दो विशेषण हिरण्यवर्तनिः और वाहिष्ठा और दूसरे मंत्र में वर्णित तीन विशेषण श्वेतया, धिया और शुभ्रयावाना ऐसे पांच विशेषणों का एकत्रित विचार करके देखना है कि इस संसार की किस नदी के लिये ये विशेषण और नाम संगत हो सकते हैं-श्वेता विशेषण और श्वेतयावरी संज्ञा भागीरथी नदी को दी जा सकती हैं-परन्तु "वाहिष्ठा" यह विशेषण उसमें सार्थक नहीं हो सकता। कारण पूर्व गोलार्ध में जो नदियां बहती हैं, उनमें भागीरथी से दीर्घ प्रदेश पर बहने वाली दस नदियां हैं। इसके अतिरिक्त भागीरथी जिस प्रदेश से बहती है उस प्रदेश में सोने की कानें मुतलक नहीं हैं—उत्तर अमेरिका में "मिसिसिपी" नदी बहुत दीर्घ वाहिनी—अर्थात् वाहिष्ठा है; परन्तु वह श्वेत जल से युक्त और हिरण्यवर्तनिः नहीं है-इतर नदियों की यही अवस्था है-इस वास्ते उत्तर आफ्रिका में नाइल नदी में ये विशेषण सार्थक हो सकते हैं। यह नदी ४२०० मील प्रदेश पर बहती है, और अंदाजन १००० मील तक श्वेत जल से युक्त है— इसी कारण श्वेत नाइल (White Nile) इसकी संज्ञा और "बहुत दूर बहाते जाने-वाली" विशेषण इसी नदी से युक्त किये जा सकते हैं कारण कि इस नदी में जितने दूर प्रदेश पर किश्तियां, नावें, जहाज इत्यादि घूम सकते हैं किसी और नदी में नहीं घूम सकते। वाहिष्ठा का अर्थ अतिशय शीघ्र गतिवान भी किया जाय तो

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

भी इसी नदी से पूर्ण हो सकता है—इस लिये कि इस नदी में इतने जोर के प्रवाह मिले हैं कि किश्तियां नावें चलाना अशक्य हो गया है।

२—दूसरा विशेषण "धिया" है जिसका अर्थ धारण पोषण करने वाली है। अबिसी-निया" प्रांत एक काल में सोने की कानों का आगर कहलाता था। यह नदी मिसर Egypt में बहती है, इसी नदी के कारण यह देश ज़र ख़ेज़ और वैभव सम्पन्न है—धेवडा, कपास, सत्तु, बाजरा, जवार, इत्यादि धान्य तंबाकू, चावल, गन्ना, साग, नील, इत्यादि पैदावार इस देश में होती है; खजूर के वन, अंगूर, संत्रे, नींबू, अंजीर, खरबूजे भी इसी नदी के किनारों पर करसत से होते हैं; "पांचू" की कानें भी इसी नदी के अतराफ हैं

३. "एतया" और "स्या" यानी एषा यह दो दर्शक सर्वनाम नदी के लिये आये हैं—एषा (स्या) यह "एतत्" सर्वनाम का स्त्रीलिंगी प्रथमांत रूप है,— और एतया यह तृतीयांत रूप है। एषा का अर्थ 'यह' है। जिस वस्तु का अंगुली से निर्देश हो सकता है उसी के लिये यह दर्शक सर्वनाम आ सकता है,—विश्वमना ऋषि "स्या" और "एतया" दर्शक सर्वनाम का प्रयोग इस नदी के लिये कर रहा है, अर्थात् यह सिद्ध होता है कि स्तवन करते समय विश्वमना ऋषि इस नदी के किनारे पर था।

४—नाईल नदी की श्वेत नाईल संज्ञा (White Nile) उसी सीमा तक है जहां तक ब्ल्यू नाईल (Blue Nile) अथवा नीलवर्ण नाइल नाम नहीं है। दक्षिण अफ्रिका के एक सरोवर से जो कि विषुवृत्त के दक्षिण में है, श्वेत नाईल का उद्गम हुआ है। और यह सरोवर मध्य अफ्रिका में है। अर्थात वैदिक आर्यों का साम्राज्य केवल अफ्रिका के एक ही दिशा में न था किंतु संपूर्ण अफ्रिका खंड में उसकी व्याप्ति थी—मषण सांची इत्यादि प्रांत दक्षिण अफ्रिका में है तो नाईल नदी उत्तर अफ्रिका और भूमध्य को मिलाती है—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

टेसू

(ले०—पं० आनन्दस्वरूप विद्यालङ्कार)

आचार्य गड़बड़ानन्द की टेसुओं में भक्ति दिन प्रतिदिन बढ़ती जाती है। वह इन्हें देश का नेता * समझा करता है। जिस समय कि जंगल में टेसू अपनी प्रचुर लालिमा को दिग्दिगन्त में फैला रहे होते हैं तो ऐसा मालूम होता है कि मानों सारे जंगल में देशभक्ति, स्वाधीनता और स्वतन्त्रता की आग लग रही है। मानों इस जंगल से कांटों और झाड़ियों का राज्य जल जायेगा और उसकी जगह फिर से आम और केलों का राज्य हो जायगा परन्तु इस लालिमा में गरमी नहीं है। वह तेज, वह ओज, वह वीर्य जो कि कांटों को भस्म करने के लिये चाहिये, इन टेसुओं में नहीं है। यह तो दिखावटी आग है जो व्याख्यानों और अखबारों तक ही रह जाती है। यह वह जोश है जो कि मेज पर मुक्के मार कर ठंडा हो जाता है। आचार्य गड़बड़ानन्द ने टेसुओं की आग से किसी को जलते हुए नहीं देखा।

टेसुओं की यह लाली भी १२ मास नहीं रहती। खाली होली की छुट्टियों से लेकर ईस्टर की छुट्टियों तक ही रहती है। इन दिनों इनकी बहार देखने लायक होती है। आप कांग्रेस पहुंच जाइये टेसू वहां लच्छेदार अंग्रेजी में अपनी लालिमा फैला रहे होंगे। आप हिन्दु महासभा चले जाइये वहां भी आप को टेसू ऊंची आवाज में हवा के अन्दर सां २ करते मिलेंगे। कहां तक गिनायें जो कोई भी कांफ्रेंस हो टेसू जी को आप ज़रूर वहां पाइयेगा। इसलिये आचार्य गड़बड़ानन्द का उपदेश है कि जिसने अपनी सभा को सजाना हो वह दरवाजों पर, विशेष करके सभापति की कुर्सी को इन टेसुओं से खूब सजाये। फिर देखिये कि टेसुओं पर मुग्ध कितने भ्रमर आ जुटते हैं। यदि किसी को टेसू न भी मिल सकें तो वह अखबारों में निकाल दे कि 'हमारी सभा में बड़े टेसू आयेंगे' फिर भी रसिक भ्रमरों की कमी न रहेगी।

पर टेसू होली की छुट्टियों से ईस्टर की छुट्टियों तक ही फूलते हैं, बाद में सूख जाते हैं। लोग इन्हें भट्टी में चढ़ा देते हैं। टेसुओं की यह हालत बहुत ही दयनीय होती है इन का चेहरा कुम्हला जाता है। भट्टी में चढ़ने से इन

---

*—यहां नेताओं से अभिप्राय उन पूजनीय, प्रातःस्मरणीय नेताओं से नहीं है जिन्होंने कि भारत भूमि के लिये सर्वस्व त्याग किया है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

से पीला रंग निकला करता है। इन टेसुओं की लाली के अन्दर पीला रंग छुपा है। यह आचार्य्य गड़बड़ानन्द जैसे किसी २ विज्ञ को ही मालूम रहता है। इस समय टेसू काउन्सिल और एसम्बली की भट्टी में चढ़ा करते हैं। वहाँ सब जोश ठंडा पड़ जाता है। चुनाव के समय जो लाली टेसू दिखाते हैं, काउन्सिलों में वह नहीं रहा करती। उसकी जगह पीला रंग निकला करता है।

किसी २ साल टेसू हद से ज्यादा फूलते हैं। सारे जंगल में टेसू ही टेसू दिखाई देते हैं इन सालों में टेसू चुनाव में लगे रहते हैं। आचार्य्य गडबड़ानन्द ने ऐसे साल दो दो फुट के ढाकों में भी, जिनमें कि अभी पत्ते भी नहीं निकले, टेसू खिलते देखे हैं। आचार्य्य गड़बड़ानन्द इनकी बोली खूब समझता है। यह टेसू इन दिनों घंटों लम्बी वक्तृता दिया करते हैं। परन्तु उसका सार यही होता है कि "हमें वोट दो, हम काउन्सिल में जायेंगे। हमें वोट दो, हम नेता कहायेंगे"।

टेसुओं में मिठास बिल्कुल नहीं होती। किसी २ के अन्दर एक आध बूंद मीठे रस की पाई जाती है। पर आप कहीं इस की तुलना हरे पत्तों में ढके हुए मुश्किल से दिखने वाले, निरीह आमों से न कर डालिये। इतनी ज्यादा लाली के अन्दर कहीं एक आध बूंद मीठे की पाइयेगा। वह भी विरले २ में। यह मिठास भी टेसू के बाहर ही बाहर चिपका होता है, अन्दर नहीं होता। टेसू खाने में बहुत बेस्वाद बकबका सा होता है। न यह मीठा होता है, न कड़वा, न खट्टा, न तीखा। निरा बकबका होता है। इसे जंगली पशु भी नहीं खाते।

इन की लकड़ी किसी काम की नहीं होती इससे कोई चीज नहीं बन सकती। निरी जलाने लायक होती है। जरा सा बोझ डालते ही टूट जाती है। कई तो कुछ महीनों की सादी जेल के बोझ से ही टूट जाते हैं, कई मिनिस्टरी के बोझ से, कई जजी के बोझ से, कोई रायबहादुरी के बोझ से, कोई 'Sir' के बोझ से, कोई बड़ी-बड़ी तनख्वाहों के बोझ से टूट जाते हैं। मतलब यह कि किसी तरह का बोझ पड़े, ढाक की लकड़ी बिल्कुल नहीं सहार सकती। झट टूट जाती है। अन्त में आचार्य्य गड़बड़ानन्द का आशीर्वाद है—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विद्यार्थियों का संगठन

(ले०— एक विद्यार्थी)

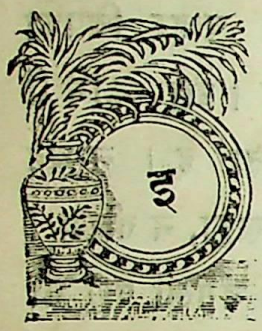

स समय संसार में संगठन की आंधी चल, रही है, चारों ओर इसी की धूमधाम है ; पर हमारे समझदार विद्यार्थियों के कानों पर अब तक जूं भी नहीं रेंगी। सब का सिद्धान्त है, विद्यार्थियों का काम खाना पीना, मौज उड़ाना और एकमात्र पढ़ना है। स्वयं विद्यार्थी राजनीति को बांध समझते हैं, और उस की आहट से डरते और दबते हुए मुंह से एक भी शब्द निकालने को तैयार नहीं होते। उन को सन् २०, २१ का समय याद है, जब उन्होंने महात्मा जी के कहने पर पढ़ना लिखना इस लिये छोड़ा कि वह राजनीति में पदार्पण करेंगे। उन का उद्देश्य पवित्र था, यह कौन नहीं मानेगा ; पर अपने ध्येय को पैरों तले रौंद कर राजनीतिज्ञ बनाना कोई बुद्धिमत्ता नहीं। हमारे देश के बड़े बूढ़ों ने विद्यार्थियों को एकदम निकम्मा और बेकाम सा समझ रक्खा है। यदि ऐसा न होता तो आज धार्मिक या राजनैतिक क्षेत्र में बड़ी २ सभाओं की मेम्बरी—सर्वथा तुच्छ मेम्बरी--प्राप्त करने के लिये अवस्था की बांध नहीं बांध दी जाती। विद्यार्थी दूसरों के गुलाम हैं ; वे गर्भ दास हैं क्योंकि उन का लालन, पालन, भरण, शिक्षा, दीक्षा का प्रबन्ध दूसरों की आधीनता में है। वह स्वयं चाहे कितने विद्वान्, कितने बुद्धिमान हों कुछ नहीं पर उनके बाप दादे चाहे बेपढ़े, अनपढ़े, बेवकूफ क्यों न हों सभी कुछ हैं। मेरा मतलब यह नहीं पितृभक्ति मत करो, मेरा मतलब है पितृभक्ति करो, उन के दीवाने बनो, पर अपने अस्तित्व को साथ रख कर—खो कर नहीं। भारतीय बालकों का पराधीनता मूलमंत्र है और वह आजन्म इसे ही जपते २ दूसरों की ठोकरें खाने के आदी हो गये हैं। वह कुछ नहीं पर उन के बाप दादा सब कुछ हैं। इसी बुद्धि और पाठ के अभ्यास ने नवयुवकों को मंजिलों पीछे छोड़ दिया है। आज सब अपने अधिकार खोजते हैं, सदियों के छिने छिनाये अधिकारों को वापिस लेने की चिन्ता में है, पर विद्यार्थी मौज से सुख की नींद सो रहे हैं, आनन्द से खुर्राटें ले रहे हैं।

आज कोई सभा खोलो उसी में काम करने को बुड्ढे तैयार हैं। मैं तो आर्य कुमार सभाओं में सालों से रहा हूँ पर मैंने कभी कुमार सभाओं का सभापति किसी कुमार को बनते नहीं देखा, मैंने सदा जिम्मेवारी के कामों में बड़ों बूढ़ों को धरना दिये देखा है। मेरी समझ में कुमार सभाओं तथा युवक सभाओं की पृथक् सत्ता का कोई अभिप्राय नहीं, जब कुमार उस के कार्यकर्त्ता न हों। मैं

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

इस बात का मानने वाला नहीं कि नवयुवक नासमझ होते हैं और वे सदा गलतियें करते रहेंगे। उन में जोश भी है और जान भी है, और वे सभी आन्दोलनों के प्राण हैं पर परदे में। उसका श्रेय, उस की वाहवाही लूटने वालों की कमी नहीं। याद रहे बुड्ढे लहलहाते हुए पौधे हैं तो युवक खिले हुए सुगन्ध से गमगमाते फूल। पर पौधे फूलों के लिये हैं फूल पौधों के लिये नहीं। इस उपर्युक्त भूमिका का अभिप्राय एक मात्र अखिल-भारतवर्षीय-विद्यार्थी-परिषद् की स्थापना है। इसका यह आशय नहीं कि ऐसी संस्था ने भारत में अब तक जन्म नहीं लिया। लिया है और शायद है भी पर वह विद्यार्थियों की नहीं उन के पिताओं की है। आज महासभाओं में विद्यार्थी बड़ों के मुंह ताकते हैं, उन पर कोई आपत्ति आती है इधर उधर सहायक खोजते हैं। उन की कोई हिमायती संस्था नहीं जो उन के खोये गये स्वत्वों की रक्षा करे। बात भी ठीक है सभी मतलब के यार हैं। संसार स्वार्थ का पुतला है और स्वार्थ पर सब कुछ बलिदान कर सकता है। पिता पुत्र का पालन करता है किसी भावी आशा से, अतएव याद रहे अपने स्वत्वों की रक्षा करने के लिये अपनी संस्था चाहिये। हम सुनते हैं सैकड़ों यूनिवर्सिटियों में सैकड़ों वार लड़कों पर नाजायज फरमाने जारी किये, सैकड़ों परीक्षाओं में हद से ज्यादह फीस है। हम पूछते हैं क्या किसी ने कौंसिलों में इस के विषय में प्रश्न किये! कौंसिलों में जाने के लिये उमर चाहिये। वह तुम्हारे चुने हुए नहीं फिर वह क्यों तुम्हारे स्वत्वों की रक्षा का प्रश्न उठावें?

मेरी इच्छा केवल हिन्दुओं की नहीं वरन् समस्त भारतीयों की और संभव हो तो यूरोपीय विद्यार्थियों की सम्मिलित परिषद् की स्थापना करने की है। मुझे पता नहीं कि अन्य विद्यार्थी भी मेरा हाथ बटावेंगे या नहीं। मेरा तो संकल्प शुद्ध है और कोई कारण नहीं जो विद्यार्थी मण्डल मुझे धक्का देकर आगे बढ़ने को न प्रेरित करें। मैं इस का आधार धर्म पर नहीं मानता और न मैं हिन्दु विद्यार्थियों के सवाल को समानता से अधिक महत्व देता हूं। मुझे पता नहीं कि यह काम कब होगा पर मैं इस को जल्दी से जल्दी करना चाहता हूँ। इस के लिये स्वर्णीय अवसर बड़ी शीघ्रता से आरहा है। सफलता स्वयं मिलेगी जब इस के लिये कतिपय युवक विद्यार्थी स्वयं तय्यार हो जायेंगे। अब इस विषय में कितने प्रश्न उपस्थित होंगे जिन का निर्णय कर देना अभी से उचित और आवश्यक है। पहला प्रश्न होगा विद्यार्थियों की परिभाषा क्या हो? विद्यार्थी वही होंगे जो अविवाहित हों।

अवस्था की बांध, बांध नहीं समझी जा सकती क्योंकि प्रायः अविवाहित अवस्था ही विद्याध्ययन की अवस्था है। कम से कम कोई भी सुधारक २५ साल से पहले अपनी शादी करना पसन्द नहीं करेगा और इस बांध से कोई गलतफैमी नहीं हो सकती क्योंकि संभव है कोई ४८ साल का पूर्ण

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ब्रह्मचर्य्य धारण कर विद्याभ्यास करता है। वह २५ साल की हद रखने से छूट ही जायगा। ऐसे लोग जिन्होंने विद्याध्ययन में जीवन खपा दिया है और इस के सच्चे अधिकारी हैं हमारे हाथों से छूट जावेंगे।

(१) मुख्य उद्देश्य— विद्यार्थीमात्र में भ्रातृ-भाव पैदा करना होगा।

(२) विद्यार्थियों के स्वत्वों की रक्षा करना और किसी प्रकार की आपत्ति में सब प्रकार की सहायता करना।

(३) उन को राजनीतिकुशल बनाना। पाठकों को पता होना चाहिये कि इस संस्था की नीव राजनीति पर अवलम्बित रहेगी। कोई संस्था जिस में भिन्न २ विचारों के अनुयायी हों धार्मिक आधार पर नहीं ठहर सकती। इसको विद्यार्थियों की कांग्रेस कह सकते हैं।

अब इस का कार्य पत्रों द्वारा स्थान २ में प्रान्तीय विद्यार्थी सभा तथा विद्यार्थी सभाओं को बनवाना और प्रतिनिधियों के बुलाने का प्रबन्ध करना होगा। राजनीति हौआ नहीं और न वह विद्यार्थियों को खा जायगी अतएव विद्यार्थीमात्र को जाग कर और खाटों को छोड़ मैदान में आना चाहिये और अपनी शक्ति दिखाकर जन्मसिद्ध स्वतन्त्रता पाने का यत्न करना चाहिये।

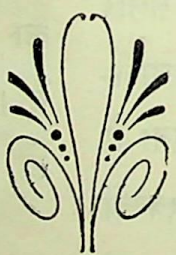

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

निर्झर

किस प्रभात में जागे हो ?
किसे पकड़ने भागे हो ?
कुन्द कुसुम की ले कलियां
मोती की भर अञ्जलियाँ
पारिजात की पंखड़ियां
चन्द्रहार की ये लड़ियां
अश्रु-बिन्दु का लेकर हार
कहाँ चढ़ाने को तैयार !!

* * * * * *

सुधा-वृष्टियाँ सी उज्ज्वल
शुभ्र दृष्टियाँ ये चञ्चल
कहाँ डाल दोगे निर्मल ?
किसे लुभाने को यह छल ?
शैशव सा मनोज्ञ आकार !
यौवन सा प्रचण्ड शृङ्गार !
किसे जताने को निज प्यार
छोड़ चले अपना घर बार ?

* * * * * *

अपनी हृदय-रागिणी आज
किसे सुनाने को यह साज
यह मर्मर है या संगीत
या सृष्टि के मन्त्र पुनीत
किसी 'निराले' की यह तान
या विषाद के हैं ये गान ?
यह व्याकुल मानस की 'आह'
सुनने की न किसी को चाह
सभी जा रहे अपनी राह
नहीं किसी को है परवाह !!

* * * * * *

हृदय हीन पत्थर साकार—
हैं कठोरता के अवतार—
डाल रहे क्यों बारम्बार
इन पर स्नेह मयी जल-धार ?
चल दे यहाँ प्यार मत डाल
ये हैं स्नेह-हीन कंगाल !
रस तेरा पीकर के आप-
तुझे छोड़ देंगे चुपचाप !

* * * * * *

देख सामने होकर मौन-
चली जारही है यह कौन ?
यह वात्सल्य-वीचि वाली
शत शत मत्स्य-नेत्र वाली
प्रेम लोरियाँ जो गाती
निशिदिन एक गीत गाती
शीतल हृदय देख इसका
क्या न इसे पहिचान सका ?

* * * * * *

यह तेरी सरिता माता
जोड़ इसी से बस नाता
यही तुझे गोदी में पाल
निज श्यामल आँचल में डाल
—जहाँ शान्त है हाहाकार
जहाँ 'प्यार' की नहीं पुकार
जहाँ 'निराशा' का अवसान
जहाँ स्नेह का अक्षय दान-
इस जगती-तल के उस पार
जायेगी 'अनन्त' के द्वार !!

——श्री प्रियहंस

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अभिजनन शास्त्र का एक अंग (कृत्रिमरोध)

(ले०— श्री० पं० अत्रिदेव जी विद्यालंकार)

नुष्य की सब इच्छाओं में कामेच्छा—मैथुन की इच्छा, अति प्रबल है यह एक स्वाभाविक बात है जिस प्रकार कि उत्पन्न होते ही बच्चा भूख से चिल्लाता है उसी प्रकार युवावस्था में पदार्पण करने के साथ ही मैथुन की भूख उत्पन्न होती है और प्रत्येक युवा को समय-समय पर इसका अनुभव होता है।

जिस प्रकार भूख की इच्छा प्राकृतिक है, इसलिये ही वह पवित्र है, उसी प्रकार इस इच्छा को भी प्रकृति उत्पन्न करती है, इसलिये यह भी पवित्र है और पूर्ण करने योग्य है।

इस इच्छा को पूर्ण करने के Dr. Hall ने तीन उपाय बताये हैं।

I. Self Abuse— यह दो प्रकार का है Mechanical और Physical.

Mechanical:—हस्त मैथुन-अर्थात् हाथ के द्वारा या किसी अन्य उपाय से उत्पादक अंगों में उत्तेजना उत्पन्न करना।

Physical-इसका कारण शिश्न की त्वचा के नीचे मल का एकत्र होकर उत्तेजना करना; अथवा लिंग के रोग, जैसे Phymasi Perapry-mosis (निरुद्ध प्रकर्ष)।

इस दूसरे कारण को हटाने के लिये तथा कई धर्मों का धार्मिक अंग होने से बहुत से मनुष्य और चिकित्सक भावी आपत्तियों से बचने के लिये Cercumcison खतने का करना आवश्यक तथा स्वास्थ्य के लिये हितकर मानते थे, परन्तु अमेरीका के प्रसिद्ध डाक्टर मैकफीच की सम्मति में यह केवल निरर्थक ही नहीं अपितु अत्यन्त हानिकारक है। उसकी सम्मति में खतने का कार्य शिश्न की मणि को धोने से हो सकता है। यही कारण है कि हिन्दू धर्म में मल-मूत्र-त्याग के समय पानी का पास होना आवश्यक बताया गया है। इसके साथ त्वचा के कटने से सुपारी अरक्षित हो जाती है और थोड़ी सी उत्तेजना-वस्त्रादि से भी शिश्न में रक्त की वृद्धि हो जाती है और कामेच्छा उत्पन्न हो जाती है। क्योंकि उत्पादक-संस्थान के अंगों में वातमण्डल का शरीर के अन्य भाग की अपेक्षा बहुत अधिक सम्बन्ध है। इसी अधिकता के कारण यह सब से अधिक सचेत (Sensitive) है, थोड़े से स्वप्नमात्र से शुक्रच्युति हो जाती है। किसी भी अन्य अंग चक्षु के देखने मात्र से-प्रेमपात्र के ध्यान में आने से चेहरे पर ललाई और प्रसन्नता, आंखों में चमक और और चंचलता और हृदय में आनन्द और उत्साह की लहरें उमड़ आती हैं। दो शरीर और एक प्राण का सच्चा उदाहरण इसी समय मिलता है।

"धन्वी स मार एवैकः द्वयोरेकं करोति यः"

ii दूसरा कारण Immoral women से सम्बन्ध है-इस का विचार करने के साथ ही औपसर्गिक रोगों (Eneral Disease) का प्रश्न एकदम उपस्थित हो जाता है। इस बात से कोई भी चिकित्सक इन्कार नहीं कर सकता कि सब वेश्यायें— कुछ थोड़े समय के लिये और शेष सारे समय के लिये— रोगग्रस्त होती हैं। इस के साथ यह भी प्रत्येक

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

चिकित्सक जानता है कि इन रोगों के संक्रमण की चिकित्सा से (वह रोगी को) पूर्ण स्वस्थ नहीं कर सकता और नाही इन रोगों से बचने का कोई उपाय है। सब कृत्रिम उपाय French leather, Sheath, Antiseptic आदि निश्चय के साथ इन रोगों से मनुष्य की रक्षा नहीं कर सकते।

इस के साथ ही बहुत से व्यक्तियों का विचार है कि बाजारू पेशेवाली औरतों से गृह वाली लड़कियां उत्तम तथा इन रोगों से रहित होती हैं। परन्तु ऐसी लड़कियां बाजारू औरतों से कहीं अधिक भयानक होती हैं। क्योंकि उनको इस विषय में बहुत कम ज्ञान होता है, और पृथक् रहने के कारण वे औपसर्गिक रोगों से बहुत अधिक ग्रस्त रहती हैं तथा इन रोगों के विषय में प्रायः अनभिज्ञ रहती हैं।

औपसर्गिक रोगोंसे मेरा अभिप्राय औपसर्गिक प्रमेह Gonorrhœa और उपदंश-फिरंग Syphlis से है।

इन दोनों रोगों की भयंकरता इस बात से स्पष्ट है कि अमेरिका में २० से ३० तक अन्धों का कारण औपसर्गिक प्रमेह होता है-एवं ७० से९० प्रतिशतक का कारण उपदंश होता है। इन रोगों का प्रभाव यहाँ तक ही नहीं रहता अपितु पुत्र-प्रपौत्रों में चलता जाता है।

अतः मेरी सम्मति में उपरोक्त दोनों उपायों से कोई भी युवक अपनी कामेच्छा को पूर्ण करने का विचार न करेगा।

डाक्टर Hall ने तीसरा उपाय "मातृवत् पर-दारेषु" अर्थात् सबको माता के भाव से देखने को कहा है।

कई युवक कहते हैं कि मैं किसी के धर्म को नष्ट नहीं करता अपितु वह स्वयं (Voluntarily) आकर मुझको बाधित करती है। उनके प्रति यही कथन है कि यदि तुम्हारी बहिन या लड़की का कोई धर्म नष्ट करता हो तो तुम क्या करोगे? तुम्हारी आंखें क्रोध से लाल हो जावेंगी, और एकदम यही-या इस से मिलता जुलता-उत्तर दोगे कि "मैं उसे मारडालूंगा"। प्रिय युवको! इन में कोई किसी की बहिन और कोई किसी की कन्या है, तुम्हारे भी बहिन और कन्यायें हैं, जो व्यवहार तुम अपने लिये चाहते हो वही दूसरे भी चाहते हैं, अतः उसी व्यवहार को अन्यों के लिये भी करो, उनको माता और भगिनी की दृष्टि से देखो-यही पवित्र, शुद्ध उपाय है।

परन्तु जो मनुष्य इस प्रकार तीनों उपायों में से अपनी भूख प्रथम दो उपायों के अतिरिक्त तृतीय उपाय से बुझाने में असमर्थ हों, उनके लिये शास्त्र ने एक उपाय बताया है जिसको विवाह-गृहस्थ-पाणिग्रहण-निकाह आदि कहते हैं। यह एक पवित्र शुद्ध और धार्मिक उपाय है।

सारी आयुभर इन्द्रियदमन-ब्रह्मचर्य्यव्रत-धारण करना प्रत्येक व्यक्ति के लिये असम्भव नहीं तो अत्यन्त दुष्कर अवश्य है। इसीलिये शास्त्रों ने इस कर्म की आवश्यकता को समझ कर धर्म का रूप दे दिया है—

"प्रजनार्थं स्त्रियः सृष्टाः संतानार्थञ्च मानवाः" मनु।

परन्तु विवाह करके आयु भर में एक सन्तान उत्पन्न करने के लिये एक वार ही सम्भोग करना और शेष आयुभर ब्रह्मचर्य्य धारण करना यह सम्भवतः पति पत्नी दोनों के लिये असम्भव होगा। इसके साथ ही २½ वर्ष बाद सम्भोग करना शायद आजकल के संसार में क्रियात्मक रूप से असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य होगा—एवं इसका परिणाम अतिसन्तानोत्पत्ति होता है। जिसके कारण भविष्य में कई प्रकार के सांसारिक-आर्थिक-वैवाहिक कष्टों

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

का भोग करना होता है। अतः इन कष्टों से बचने के सम्पूर्ण उपाय निम्न दो शीर्षकों में आ जाते हैं—

१. उत्तम सन्तान उत्पन्न करना

२. कम सन्तान उत्पन्न करना (क) इन्द्रिय दमन (ख) कृत्रिम निरोध

उत्तम सन्तान उत्पन्न करना—वह कार्य्य राज्य की तरफ से हो सकता है। अमेरिका और स्विटज़र्लैण्ड ने १८९० में अपनी आधी कुष्ठरोग से ग्रस्त प्रजा को पृथक् कर दिया था। १० साल बाद वहां केवल एक कुष्ठी रहा था। इसके साथ ही जो लोग इन्द्रियदमन करने में असमर्थ हैं, उनको सन्तानोत्पत्ति के सर्वथा अयोग्य बांझ (Removing of Testes) अण्डों को नष्ट कर देना चहिये, जिससे कि सन्तान उत्पन्न ही न कर सकें। यदि वह इस प्रकार से असम्भव हो तो कृत्रिम उपायों को प्रयोग में लाने की आवश्यकता होती है।

यद्यपि यह उपाय घृणित और विष के समान है, परन्तु जिस प्रकार संखिया भयानक विष होता हुवा भी कई रोगों के लिये रामवाण औषध है इसी प्रकार यह भी प्रयुक्त होता है।

सन्तानोत्पत्ति के लिये चार वस्तुओं की आवश्यकता है। बिना इन चार वस्तुओं के कोई भी बीज, कोई भी वृक्ष, कोई भी सन्तान उत्पन्न नहीं हो सकती। इसके साथ इन चार वस्तुओं में से किसी एक का अभाव हो अथवा किसी में विकार हो तो भी सन्तानोत्पत्ति नहीं हो सकती।

उन चार वस्तुओं को धन्वन्तरि ने ऋतु, क्षेत्र, अम्बु, बीज इन शब्दों से स्मरण किया है। प्रत्येक वृक्ष का बीज अपने ही काल में उर्वर क्षेत्र में शुद्ध पानी से सींचे जाने पर तथा शुद्ध बीज होने पर वृक्ष उत्पन्न करता है। इसी प्रकार सन्तानोत्पत्ति के लिये ऋतु-मासिक धर्म, क्षेत्र-जननी का गर्भाशय, अम्बु-गर्भ को पोषण करने के लिये रक्त, और बीज-पुरुष का वीर्य इनकी आवश्यकता है।

मासिक धर्म— यदि रजस्वला के साथ सन्तानोत्पत्ति के लिये संगम किया जावे तो जिस प्रकार बहती नदी में वस्तु स्थिर नहीं हो सकती उसी प्रकार गर्भ स्थिति का होना असम्भव है, इसके बाद चतुर्थ दिवस में न होने के बाद गर्भस्थिति हो सकती है। अमेरिका के एक डाक्टर ने भिन्न भिन्न समयों के गर्भधारण का हिसाब लगाया है। उसके अनुसार स्नान के प्रथम दिवस से ६ वें दिवस तक प्रतिशतक संख्या में ४८ गर्भ स्थिर हुए, ९वें दिन से ११ वें दिन तक के गर्भों में ६२ और ११ वें से २३वें दिन तक १३, २३वें से मासिक धर्म के आरम्भ तक ९ गर्भ स्थिर हुवे।

सुश्रुत और मनुस्मृति में कहा है कि जिस प्रकार कमल सूर्य्य की प्रथम किरणों के साथ खुलना आरम्भ होता है और सूर्य की अन्तिम किरण के साथ सायंकाल बन्द हो जाता है; उसी प्रकार गर्भाशय और योनिमुख मासिक धर्म के शुरू में खुलता है और धीरे धीरे बन्द होता हुवा १६ वें दिन तक बन्द हो जाता है। इसके साथ ही शास्त्र में यह भी कहा गया है कि उत्तरोत्तर दिनों में किया हुवा गर्भाधान उत्कृष्ट और बलवान होता है। यही कारण है कि उपरोक्त चिकित्सक की ९वें दिन से ११ वें दिन तक की संख्या सब से अधिक है।

क्षेत्र-बीज के लिये भूमि यदि बञ्जर-अनुर्वरा-है, तो उस में उत्तम बीज भी उत्पन्न नहीं होता— इसी प्रकार यदि गर्भाधान में कोई रोग जैसे अपभ्रंश, वसा की वृद्धि, अर्बुद (Tumour) आदि होगा, तो गर्भ स्थिर नहीं हो सकता।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अम्बु— यदि समय में उत्तम भूमि में बीज बोया जावे परन्तु उसका सिञ्चन न किया जावे तो वह उत्पन्न नहीं होता इसी प्रकार यदि गर्भ का पोषण न हो जैसा कि Chlarisis—Pernicis Analmae. आदि रोगों में होता है—तो गर्भ स्थिर हो कर भी पुष्ट नहीं हो सकता।

बीज— यदि बीज ही न हो तो अङ्कुर उत्पन्न नहीं हो सकता अथवा निर्बल हो तो भी अङ्कुर उत्पन्न करने में असमर्थ होता है—इसी प्रकार याद उत्पत्ति में बीज (वीर्य) का अभाव हो जैसा कि अतिकामेच्छा के प्रबल होने पर अथवा उन औरतों में जो कि बच्चे के लिये अति उत्कण्ठित रहती हैं, गर्भस्थिति का ध्यान-कल्पना-करके मासिक धर्म का बन्द होना, स्तनों में वृद्धि आदि सच्चे लक्षण अनुभव करने लगती हैं, परन्तु यदि संज्ञापहरण करके विज्ञ चिकित्सक परीक्षा करे तो केवल भ्रम ही ज्ञात होता है। इसके साथ यदि अतिकामेच्छा से दो स्त्रियां आपस में मैथुन करें तो जो सन्तान (Fertilization) होगा उस में पितृ भाग अर्थात् कठिन भाग अस्थि आदि का अभाव रहता है। इसके साथ ही यदि वीर्य इषित होगा चाहे पुरुष का शुक्राणु अथवा स्त्री के डिम्ब में किसी एक में दोष हो तो सन्तान उत्पन्न न होगी। यदि उत्पन्न भी होगी तो निर्बल अथवा गर्भपात होने की आशङ्का है।

संक्षेप में गर्भस्थिर न होने के निम्न कारण हैं।

i गर्भाशय में रोग होना यथा(१) मांस मज्जाकी वृद्धि (२) डिम्ब का उत्पन्न न होना (३) गर्भाशय का दग्ध होना जैसा कि छोटी आयु की कन्या से संभोग करना (४) गर्भाशय का उलट जाना अथवा गिरजाना (५) वायु का बढ़ना (६) शीत पैदा होना।

ii रजोधर्म के रोग— (१) मासिक धर्म का न होना (२) ठीक समय पर न होना (३) कम होना (४) कष्ट से होना (५) अधिक होना

iii संयोग का अभाव—(१) पुरुष में शुक्रकीट का अभाव होना (२) गर्भाशय में न पहुँचना

iv मनःशक्ति की प्रतिकूलता— यदि मन प्रतिकूल होंगे तो भी सन्तानोत्पत्ति होनी असम्भव है।

v प्रेम का अभाव।

vi शुक्र और डिम्ब का न मिलना।

सन्तान रोधके सब उपाय उपरोक्त Unpathalogical condition को ध्यान में रख कर स्थिर किये गये हैं—

इसके साथ ही चारों वस्तुओं में क्षेत्र मुख्य है— चूंकि कार्य वहीं उत्पन्न होता है। अतः सन्तान रोधके उपायों का सम्बन्ध स्त्री पक्ष के साथ ही है।

यह सत्य है कि अण्ड के नाश होने पर पुरुष या पशु सन्तानोत्पत्ति के अयोग्य हो जाता है परन्तु उसकी कामेच्छा सदा बनी रहती है, केवल वह उसे संयोग के द्वारा पूर्ण करने में अशक्त होता है। अतः कामाग्नि इस से शान्त नहीं होती हां सन्तान के योग्य अवश्य नहीं रहता।

परन्तु इन कृत्रिम उपायों के द्वारा पुरुष अपनी कामाग्नि को शान्त कर सकता है। अपनी मैथुन की भूख को बुझा सकता है और सन्तानोत्पत्ति से भी सर्वथा नहीं तो बहुत अधिक संख्या में बच सकता है। इसके साथ ही ये उपाय रोगोत्पादक भी नहीं हैं— जिस प्रकार मैक्सिको के प्राचीन मनुष्य अपने अण्ड के बहिःस्राव को रोकने के लिये अपनी अण्डक्रिया को घोड़ों की पीठ पर लगातार आरोहण करने से नष्ट करते थे। इसके विरुद्ध प्राचीन

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

आर्य्य योगक्रिया हठयोग के द्वारा उक्त कार्य्य को नष्ट करते थे। मैक्सिको के पूर्व पुरुषों की क्रिया रोगोत्पादक है और दूसरी आर्यों की क्रिया स्वास्थ्यवर्धक और रोगोत्पत्तिरहित है। इसी प्रकार सन्तानोत्पत्ति के सम्पूर्ण उपाय रोगोत्पत्ति रहित और स्वास्थ्य वर्धक हैं।

संतानरोधके जो भी उपाय हैं वे निम्न दो शीर्षकों के नीचे आजाते हैं।

i Chemical method—रासायनिक उपाय

ii Mechanical method

रासायनिक उपाय—इनके द्वारा शुक्राणु को नष्ट कर दिया जाता है अथवा उनको क्रियाहीन कर देते हैं जिससे कि डिम्ब के साथ उनका संयोग नहीं हो सकता।

Mechanical—इन उपायों के द्वारा शुक्राणु और डिम्ब का पारस्परिक संयोग नहीं होने पाता।

उपरोक्त दोनों उपायों को पृथक् पृथक् अथवा दोनों उपायों को एकत्र करके यदि प्रयोग किया जावे तो भी ये सम्पूर्ण अवस्थाओं में कृतकार्य्य नहीं हो सकते परन्तु बहुत सी अवस्थाओं में इनके द्वारा कृतकार्य्यता प्राप्त होती है। संतानरोधके जो उपाय प्रयुक्त होते हैं वे भी दो प्रकार हैं।

i बिना औषध के—without medicine.

ii औषधियों के द्वारा—with medicine.

बिना औषध के—

i शिश्न का शुक्रच्युति से पृथक्करण—यह उपाय अतिसुरक्षित और प्राकृतिक है परन्तु इस उपाय के प्रयोग करने में कई आपत्तियां हैं। मनुष्य को प्रथम ज्ञान ही नहीं हो सकता कि कब शुक्र च्युति हो जाती है-इसके साथ यदि ज्ञान भी हो जावे तो उस समय वात संस्थान के एकदम थके-श्रान्त-होने से मनुष्य किंकर्तव्य मूढ़ सा हो जाता है अतः उसे इस बात का ज्ञान नहीं हो सकता कि कब शुक्रच्युत हुआ और यदि ज्ञान भी होजावे तो वह उस समय पृथक् करने में असमर्थ होता है।

इसके साथ ही प्रायः शिश्न का अग्रभाग गर्भाशय के मुख तक पहुँच जाता है अथवा गर्भाशय का मुख योनि तक आजाता है अतः शुक्राणु और डिम्ब के मिलने की बहुत अधिक सम्भावना होती है एवं योनि में भी च्युत शुक्राणु अपनी पूंछ की सहायता से गति करता हुवा डिम्ब के मिलने के लिये गर्भाशय में आ पहुंचता है।

इन सब से बढ़ कर कारण यह है कि जिस प्रकार लोहे को चुम्बक से एक विशेष प्रीति है उसी प्रकार डिम्ब को शुक्राणु से विशेष स्नेह है अतः वह शुक्राणु को खींचता है यही कारण है कि पशुओं में डिम्बोत्पत्ति के समय दूसरे लिंग से मिलने की प्रबल उत्कण्ठा होती है और अन्य समय में उनमें इच्छा उत्पन्न नहीं होती। इसलिये यदि मासिक धर्म के बाद शीघ्र मैथुन किया जायेगा तो डिम्ब अवश्य योनि के मुख में भी पड़े शुक्राणु को खींच लेगा।

(गर्भधृति के बाद डिम्ब का न उत्पन्न होना, मासिक धर्म का न होना इस बात की साक्षी है कि इस समय मैथुन करना हानिकारक तथा निरर्थक है) इसलिये योनि वा भग में गिरा हुआ शुक्र संतानोत्पत्ति में कारण बन सकता है परन्तु उसका योनि में क्षरण न होने देना संतानरोध में एक कारण है क्योंकि बिना बीज के संयोग के संतानोत्पत्ति असम्भव है।

ii Sheath-Capsul—यह एक बारीक Gatta Percha जैसे चमड़े के खोल बने होते हैं जो

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कि मैथुन से पूर्व शिश्न के उपर और योनि में रक्खे जाते हैं। यह अत्यन्त पतले और Elastic होते हैं अतः शिश्न के उपर सुगमता से आ जाते हैं।

इनको पहिन कर औपसर्गिक रोगों से बच जाते हैं ऐसा बहुत से व्यक्तियों का विचार है। परन्तु यह इस अर्थ के लिये अतिभयानक कार्य करते हैं क्योंकि पतले होने के कारण संघर्षण से इनके फटने की बहुत आशंका रहती है और Elastic होने के कारण इनका विदीर्ण स्थान नहीं दीख सकता अतः मनुष्य अपने को औपसर्गिक रोग से ग्रस्त औरत के संयोग में सुरक्षित समझता है परन्तु कृमि इस मार्ग से प्रवेश करके मनुष्य के अज्ञान से लाभ उठाकर रोग उत्पन्न करते हैं।

इसके अतिरिक्त इनको पहिन कर मैथुन करने का आनन्द भी अनुभव नहीं होता क्योंकि रबड की तरह Elastic होने से यह शिश्न के मूल के वर्धक नर्व्स की मांसपेशियों को भींच देते हैं, जिस से कि उनके अन्दर पूर्णतः रक्त प्रवेश न होने से उस में उत्तेजना नहीं होती और यदि वे बहुत तंग हों तो मूत्रमार्ग को भी दबा सकते हैं।

उपरोक्त दोनों दोषों के अतिरिक्त यदि संघर्षण के कारण सुपारी के ऊपर का अग्रभाग विदीर्ण हो जावे जैसा कि प्रायः होता है तो शुक्रच्युति होती है और संतानोत्पत्ति की सम्भावना है।

एवं यह Capsul एक बार ही प्रयुक्त हो सकते हैं यदि दो बार प्रयुक्त किये जावें अथवा इनको निकालते समय रोगग्रस्त औरत के साथ संयोग से बाहिर के पार्श्व के स्पर्श के कारण कृमि शिश्न में आ पहुँचते हैं जिससे कि रोग की अधिक सम्भावना है।

परन्तु यदि उचित उपायों को ध्यान में रख कर इन का प्रयोग किया जावे जैसे कि Sheath हटाने से पूर्व उनको बाहर से Antiseptic Lotion आदि से धोकर बाहर करें एवं तदनन्तर अपने हाथों और शिश्न को भी Antiseptic वस्तुओं से धोड़ालें तो यह उपाय भी संतान निरोध में एक अच्छा सहायक है।

iii. Douch हमको यह मालूम है कि यदि शुक्र को गर्भाशय के मुख तक पहुँचने से पूर्व ही अथवा गर्भाशय में पहुंचने पर भी यदि किसी प्रकार से बाहर कर दिया जावे तो संतानोत्पत्ति की बहुत कुछ सम्भावना रुक जाती है, परन्तु यह कार्य्य जितना शीघ्र किया जावे उतना ही उत्तम है और उतना ही अधिक इस की सफलता का अनुमान किया जा सकता है। इसके लिये दूरतक धोने के लिये Douch बस्ति की आवश्यकता होती है। इसकी नली का मुख चौड़ा और लम्बा होना चाहिये यदि यह योनि के मुख को चौड़ा कर सके तो उत्तम है।

हमको यह भी ज्ञात है कि अधिक शीत या अधिक उष्ण अथवा अम्ल (Acid) क्रिया वाले पदार्थ शुक्राणु या किसी भी Microbe को बहुत अधिक सुगमता से शीघ्र नष्ट कर सकते हैं। इस लिये यदि अधिक गरम अथवा शीत पानी का उपयोग किया जावेगा तो शुक्राणु नष्ट हो जाते हैं। एवं यदि कृमिहर-कृमिनाशक पदार्थ जैसे Lysal या त्रिफला कषाय (स्तम्भक गुणी होने से) का प्रयोग किया जावेगा तो भी शुक्राणु नष्ट किये जा सकते हैं।

गर्भाशय में पहुँच कर डिम्ब से मिलने में शुक्राणु को दो-तीन-चार दिन अथवा कई बार सप्ताह तक लग जाता है इसलिये Fertilization की निश्चित तिथि का जानना असम्भव है। उसके चार-पांच दिन आगे पीछे का ज्ञान हो जाता है। इसलिये

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मैथुन के अगले दिन भी योनि को धोया जा सकता है, परन्तु उत्तम यही है कि जितना शीघ्र हो उतना ही शीघ्र भय को दूर कर देना चाहिये।

iv Syringe– Douch की अपेक्षा यह उत्तम है क्योंकि इसके द्वारा योनि का मुख चौड़ा किया जा सकता है एवं योनि के पदार्थों को भली प्रकार धोया जा सकता है जिससे कि सन्तानोत्पत्ति की सम्भावना बहुत दूरी तक हटाई जा सकती है।

v. Quinine Suppositry–हमको यह मालूम है कि Quinine के बहुत हलके घोल में भी यदि किसी कृमि को रख दें तो वह मर जाता है और यदि वह अधिक बलवान है और घोल निर्बल है तो उसे क्रियाहीन अवश्य ही कर देगा, इसके साथ ही काय चिकित्सा शास्त्र हमको यह भी बताता है कि Quiuine गर्भपात करती है, इसलिये गर्भवती स्त्री को बहुत सावधानता से दी जाती है क्योंकि यह गर्भाशय की मांस पेशियों में संकोच उत्पन्न करके गर्भपात करा देती है, एवं इसी संकोच के कारण यह मासिक स्राव को बढ़ाती है—अस्तु Quinine के अन्दर कृमियों को नष्ट या क्रियारहित करने की एक बड़ी भारी शक्ति है। इसी सिद्धान्त के अनुसार जिस प्रकार रक्त में रहने वाले मलेरिया के कृमि को Quinine नष्ट करती है उसी प्रकार वीर्य में रहने वाले शुक्राणु को भी नष्ट करती है, क्योंकि दोनों के रहने का माध्यम एक है अर्थात् दोनों क्षारीय गुण वाले हैं। अतः Quinine शुक्राणु को नष्ट करने में एक बहुत बड़ा कारण बनती है।

इसी कल्पना के आधार पर Quinine की पिचकारी या Quinine की फलवर्ति 'Suppositry' प्रयुक्त होती है। यह एक प्रकार का Plug होता है, जो कि बाजार में Suppositry के नाम से प्रत्येक दुकानदार के यहां मिलता है, परन्तु शोक यह है कि बाजार में जो फलवर्ति मिलती है उनमें Quinine की मात्रा बहुत कम होती है इसका कारण Quinine कामहंगा होना है। यह कार्य्य घर में Quinine के घोल से भी किया जा सकता है।

२ गुने Quinine को १ औन्स पानी में घोल कर उस में थोड़ा सा Citric Acid यदि मिला कर योनि का प्रक्षालन करें तो जहां Quinine अपनी कृमिनाशक शक्ति के द्वारा शुक्राणु को नष्ट करेगी वहां (Acid) अम्ल की उपस्थित के कारण माध्यम उदासीन हो जावेगा जिसका परिणाम यह होगा कि यदि कोई कीटाणु शेष भी रहेगा वह भी माध्यम के विरुद्ध होने से जीवित नहीं रह सकता क्योंकि जो कीटाणु जिस माध्यम में रहते हैं वह उस से विपरीत माध्यम में क्रियारहित या मर जाते हैं क्योंकि उस माध्यम में उनके भोजन का अभाव तथा जीवन शक्ति का ह्रास हो जाता है। अतः शुक्राणु को नष्ट करने में यह भी एक उत्तम साधन है।

vi. Possary— यह एक प्रकार की रबर की फलवर्ति होती है जो कि योनि के द्वारा गर्भाशय के मुख में रक्खी जाती है, इन से गर्भाशय का मुख बन्द रहता है यही कारण है कि गर्भपात के समय गर्भाशय का मुख बन्द करने के लिये इनका प्रयोग होता है। मैथुन से पूर्व यदि इनका प्रयोग किया जावे तो गर्भाशय का मुख बन्द रहेगा जिस से कि शुक्राणु गर्भाशय में न पहुंच सकेंगे, इसके साथ यदि मैथुन के बाद निकाल ली जावें तो शुक्राणु के पहुंचने की आंशका हो जाती है। इसलिये निकालने से पूर्व योनि को Douch के द्वारा धोकर फिर इनको निकालें। उत्तम यह है कि एक रात तक लगी रहने दे और अगले दिन Lysal Lotion से धोकर फिर निकालें।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्रारम्भ में इनका उपयोग किसी योग्य चिकित्सक द्वारा करवाना चाहिये अन्यथा रोग का भय है।

इस उपाय के साथ रबर Possary के स्थान पर Suppositry का भी प्रयोग किया जाता है। इनका भी उद्देश्य गर्भाशय के मुख को बन्द करना ही होता है जिससे शुक्राणु गर्भाशय में प्रविष्ट होकर डिम्ब से न मिल सकें।

vii. Soluble Capsul— घुलने वाले खोल— मक्खी के पर यदि शहद में चिपट जावें तो वह उड़ नहीं सकती इसी प्रकार यदि किसी भी Microbe कीटाणु को तैल जैसे चिकने पदार्थ में छोड़ दिया जावे तो वह क्रिया रहित हो जाता है।

यही बात शुक्राणु के सम्बन्ध में भी है यदि किसी भी स्निग्ध पदार्थ में कीटाणु को रख दिया जावे तो वह क्रियारहित हो जायेगा। इसी सिद्धान्त को लेकर बाजारू औरतें तेल, Vesaline, घी, मक्खन आदि चिकने पदार्थ का प्रयोग करती हैं। इसके साथ ये भगोष्ठ को नर्म भी रखते हैं। भगोष्ठ को नर्म रखने का कार्य प्रकृति की ओर से योनिस्थ ग्रन्थियां करती हैं। परन्तु अधिक मैथुन के कारण ग्रन्थियां अपने कार्य्य में अशक्त हो जाती हैं जिससे कि योनि बड़ी-रूक्ष तथा मैथुन में निर्बल एवं आनन्दरहित हो जाती हैं। इसलिये उपरोक्त दोष के लिये उस में Vesaline आदि का प्रयोग करते हैं।

यह भी किसी अंश तक संतानरोधका कारण है क्योंकि शुक्राणु डिम्ब तक नहीं आसकता।

viii. इन्द्रिय दमन-इन सब से बढ़कर उपाय जितेन्द्रियता है। सम्पर्क ही न करना।

इस का दूसरा भाग अर्थात् औषध की सहायता से सन्तानोत्पत्ति को रोकना वह प्रथम भाग में ही विशेषतः आजाता है। केवल औपसर्गिक रोगों से बचने के लिये विशेषतः Syphlis से बचने के लिये मैथुन से पूर्व ही Calomal की मरहम का प्रयोग करना होता है।

परन्तु क्रियात्मक रूप में पूर्ण सिद्धि के लिये निम्न विधि है—

मैथुन से पूर्व— योनि का प्रक्षालन करके फलवर्ति और Possary का प्रयोग।

मैथुन के पश्चात्— योनि का प्रक्षालन फिर Possary और फलवर्ति को अगले दिन निकालें।

यद्यपि उपरोक्त उपायों से इस कार्य्य में शत प्रतिशतक कृत कार्यता नहीं होती तो भी ९० फी सदी कृतकार्यता देखी गई हैं।

अपनी प्रबल कामेच्छा को जो कि पवित्र उपाय इन्द्रियदमन से रोकने में असमर्थ हैं उनके लिये उपरोक्त कृत्रिम उपाय संतुष्टि के लिये पर्याप्त है।

डाक्टर J-walls ने कामाग्नि के लिये निम्न कथन कहा है।

"जाठराग्नि की धधकती हुई ज्वाला और क्षुधा के बाद प्रज्वलित भीषण कामाग्नि का नम्बर आता है। गहरा विचार करने पर प्रकट होता है कि साधारणतः कामाग्नि की प्रबल लहरों को जीवन पर्यन्त के लिये दबाना असम्भव नहीं तो अत्यन्त कठिन अवश्य है।"

अतः उसको शान्त करने के लिये पवित्र विधि विवाह की रचना हुई एवं उसमें भी संतानोत्पत्ति को नियमित रखने के लिये जिस से कि मनुष्य भावी दुःखों से बच सके वैज्ञानिकों ने ब्रह्मचर्य के अतिरिक्त उससे हीन गुण कृत्रिम उपायों का निर्माण किया— उन्हीं का एक छोटा सा दिग्दर्शन यह किया गया है। इसके विस्तार के लिये शारीरिक क्रिया और रचना (विशेषतः उत्पादक अंगों की) की आवश्यकता है परन्तु विस्तार के भय से वह नहीं लिखा।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

दक्खनी ब्राह्मण

(लेखक— ऐम. राय)

बड़ा धोता, बड़ा पोथा (चोटा) पण्डिता पगड़ा बड़ा।
अक्षरं नैव जानाति ढपोल संखाय नमो नमः ॥

बोलो भगवान् ढपोल संख महाराज की जय, लम्बी धोती वाले की जय, लम्बी चोटी वाले की जय।

दुनिया की अजूबात के अन्दर दक्खनी ब्राह्मण भी एक चीज़ है। लम्बी लांगदार धोती ठीक टखनों तक चली गई है। शरीर पर एक घुटनों तक लम्बा जनेऊ है। सिर पर देखिये तो एक गौ के खुर के बराबर लम्बी चोटी है। इस से आप यह न समझिये कि मामूली गौ के खुर से काम निकल जायेगा। नहीं आपको रोहतक और हिसार के किसी बड़े बैल को ढूंढना होगा। कभी २ एक खुर भी चोटी का मुकाबला न कर सकेगा और दो दो खुर जोड़ने पड़ेंगे।

इस से आप सहज समझ सकते हैं कि कि स्वामी शंकराचार्य के देश में धर्म का प्रतिपालन ठीक पूरी तौर पर होता है। इस धर्म के जुए को ब्राह्मण अनन्त काल और अनवरत परिश्रम से खींचते चले आ रहे हैं। हां कभी २ इस धर्म की गाड़ी को अछूत आकर रोक लेते हैं तो बहुत अनर्थ हो जाता है। सदियों से चलती हुई गाड़ी रुक जाती है और देश जाति में तहलका मच जाता है।

यदि रास्ते में यह तकलीफ न पड़े तो धर्म की गाड़ी को रोकने में किसी की ताकत नहीं होती। वह सीधी Bombay Mail की तरह वायु वेग से दौड़ती जाती है। नहीं, पहाड़ उसका कुछ नहीं बिगाड़ सकते। ब्राह्मण देवता को पैसे देकर अपना स्थान (Seat) रिज़र्व करा लिजिये, फिर आप सीधे स्वर्ग लोक में पहुंच जाइयेगा।

इस गाड़ी की रफ़्तार देख मैं हैरान हो गया। मांस मदिरा मैथुन इस धर्म की गाड़ी को नहीं रोक सकते बशर्ते कि उसकी सड़क में अछूत न आजाय।

इस गूढ़ तत्व का पता लगाने के लिये मैंने अनेक यत्न किये। यह अछूत क्या चीज है जो इस गाडी को एक दम रोक लेती है, जिसके स्पर्श ही नहीं, पर कई गज़ दूर रहने से ही ब्राह्मणत्व नष्ट होजाता है। मैं कई बड़े २ वैज्ञानिकों के पास गया पर रहस्य न खुला। एक विज्ञ ब्राह्मण देवता से पूछा तो उसने कहा कि अछूतों में एक

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

तरह की बिजली (Electricity) रहती है। मैं इसे अधर्म बिजली का नाम देता हूं, जिस की सूक्ष्म किरणों से धर्म की गाड़ी एकदम रुक जाती है। यह अधर्म बिजली दिन में ही काम करती है रात में नहीं। क्योंकि बड़ी बड़ी चोटी वाले उच्च कुल के ब्राह्मण रात को अब्राह्मणियों के यहां आलिङ्गन सुख का उपभोग करते हुए भी धर्म की गाड़ी को खींचे चले जा रहे हैं। इसी तरह असूर्यम्पश्या ब्राह्मणी भी कमनीय कलेवर मुसलमानों तक से स्वर्गीय सुख का अनुभव करती हुई वैदिक मर्यादा का पालन करती चली जा रही है, अपनी रूपज्योत्स्ना को दिग्दिगन्त में फैला कर ब्राह्मणधर्म का विस्तार करती जाती है। पर शर्त यह है कि कहीं अछूत वह सड़क न छू जाय जहां पूज्यपाद ब्राह्मण अपने पद-पङ्कज रखते हों। मदिरा और मांस भी कोई बाधा नहीं देते, खाइये छिप कर पर ब्राह्मणत्व के व्याघातक अछूत से परहेज़। यह सहज शुद्ध ब्राह्मण किसी चीज़ से अशुद्ध नहीं होते। मांस मदिरा इन पर असर नहीं करती। पाखाने के बाद हाथ मांजने की भी इन सहज शुद्धों को ज़रुरत नहीं होती। हां किसी अछूत की छाया न पड़नी चाहिये।

आप यह न समझिये कि मैं सब ब्राह्मणों का ज़िक्र कर रहा हूं। नहीं कई बहुत सदाचारी भी हैं। पर मेरे कहने का मतलब यह है कि उपरोक्त कार्य करते हुए यदि कोई आदमी अछूत से परहेज़ रखता है तो 'क्वचित्स्पर्शं न कुर्वन्ति नलिनिदलमम्बुवत्' कोई चीज भी ब्राह्मणत्व पर व्याघात नहीं कर सकती। इस अधर्म बिजली की रहस्य पाश्चात्य लोग भी नहीं समझ सके हैं। इसकी किरणें..... से भी सूक्ष्म हैं।

मुझे तो धर्म के बचाने का एक ही उपाय दिखता है कि इन अब्राह्मणों को काले-पानी भेज दिया जाय, जहां से वे कभी वापस न आ सकें। फिर देखिये कि ब्राह्मण लोग धर्म को किस गति से इस धर्म भूमि पर खींच लेजाते हैं। फिर कोई बाधा न होगी।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वसन्त

छाई छटा वसन्त की, खेलत फाग अनन्त ।
चहकैं विहगरु द्रुमलता फूलन व्याज हसन्त ॥

* * * *

चम्पा–कुसुमों ने किस उत्सव के हेतु आज,
ब्रह्मचारी का सा पीत पर आज धारा है ?
केवडे ने कहो किस बात पर खुश होके,
भीने भीने सौरभ को खूब यों पसारा है ?
गाल पै गुलाब के गुलाबी किस बात ने दी,
छूटी क्यों पलाश पै गुलाल–भरी धारा है ?
आज ये अनोखा खेल खेलता खिलाड़ी कौन,
यही जानने को चित चञ्चल हमारा है ॥ १ ॥

* * * *

प्रकृति-प्रदर्शनी के दर्शन के हेतु आज,
दूरतम देश छोड़ भारी भीड़ आई है ?
कुल माता ने रचाया उत्सव अनोखा आज,
सोने में सुगन्ध भरी सारी कार्रवाई है ?
दूर दुनियां में कुल चिन्ताओं का भार छोड़,
धर्म-धुनी जनता उमंग भरे आई है ?
पढ़ाई–बढ़ाई के न घण्टे बजते हैं आज,
बालकों के मुख पै अनोखी छटा छाई है ॥ २ ॥

"श्री शान्त"

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सार्वभौम-वैदिकधर्म

द्वितीय अध्याय

धर्म की परख

(ले०— श्री पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति)

पृष्ठ २१२ से आगे

(१)

धर्म और सदाचार

थम अध्याय के अन्तिम खण्ड में हम बता आये हैं कि धर्म नाम के व्यापी सिद्धान्तों का मनुष्य के जीवन के सम्बन्ध में क्रियात्मक प्रयोग सदाचार कहाता है। जो विचारक सदाचार शास्त्र को संसार के चलाने वाले व्यापक नियमों का विशेष प्रयोग नहीं मानते, अपितु एक स्वतन्त्र शास्त्र मानते हैं, वे कभी पूरी सचाई पर नहीं पहुँच सकते। यह असन्दिग्ध बात है कि सदाचारशास्त्र संसार के नियम शास्त्र का एक भाग मात्र है। सदाचार का आधार धर्म है।

पश्चिम के बहुत से विचारक, जिन में ईसाई विचारक भी सम्मिलित हैं, इस बात को अंगीकार नहीं करते। डाक्टर फ्लिण्ट ने अपने ईश्वर वाद सम्बन्धी ग्रन्थ में लिखा है कि सदाचार का आधार Religion नहीं है। इसका कारण यह है कि जो धर्म है, ईसाइयों का Religion उस से बहुत भिन्न है। हम आगे चल कर देखेंगे कि अपने व्यापी अर्थों में ईश्वर विश्वास सदाचार का एक आवश्यक आधार स्तम्भ है, परन्तु इस में तो कोई दूरदर्शी विचारक भी इन्कार न कर सकेगा, कि सदाचार शास्त्र एक व्यापी तत्वज्ञान का भाग होना चाहिये, उन नियमों पर आश्रित होना चाहिये जो सम्पूर्ण संसार का शासन कर रहे हैं।

धर्म पर सदाचार आश्रित है। जीवन सम्बन्धी सत्य नियमों का प्रकाश मनुष्य के व्यवहार में सामान्यतया प्रवृत्ति (Character) और विशेषतया व्यवहार (Conduct) के रूप में प्रकाशित होता है। मनुष्य में व्यापी नियमों की भावना है या नहीं इसका भान प्रवृत्ति और व्यवहार द्वारा ही होता है। धर्म का भाव या अभाव मनुष्य के व्यवहार द्वारा प्रगट होता है। व्यवहार कई प्रकार का है। सच बोलना, चोरी न करना, शान्ति का प्रयोग करना— ये सब व्यवहार हैं, जो धर्म की सूचना देते हैं। ये श्रेष्ठ व्यवहार बताते हैं कि मनुष्य में जीवन सम्बन्धी सत्य नियमों का ज्ञान है, प्रयोग की इच्छा है, या कम से कम संस्कारों के कारण उसकी प्रवृत्ति (Character) धर्मानुकूल है। धैर्य क्षमा सत्य आदि गुण धर्म भाव के चिन्ह अर्थात् लक्षण हैं। मनुस्मृति के निम्नलिखित श्लोक का यही तात्पर्य है—

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धी र्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्॥

(२)

धर्म और सत् (Right)

यथार्थ का नाम सत् है। भाषा में उसके लिये ठीक शब्द है। धर्म और सत् का परस्पर क्या

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सम्बन्ध है ? क्या सत् से धर्म को लक्षित या सूचित कर सकते हैं ?

सदाचार शास्त्र (Ethics) के विचारकों में चिर काल से मतभेद चला आया है। योरपियन सदाचार पर विचार करने वालों ने सत्यविद्याओं में सदाचार के उद्देश्यों पर विवेचना करते हुए जिन जिन उद्देश्यों को माना है, उनकी विस्तृत व्याख्या और आलोचना तीसरी पुस्तक में की जायगी, यहां तो हमें केवल संक्षेप में यह निर्देश करना है कि मुख्यतया उन तत्ववेत्ताओं में तीन मत हैं।

१. Heractitus, Stoics और Kant यह तीन मुख्य नाम उस सम्प्रदाय के प्रतिनिधि हैं, जो सत् (Right) को सदाचार का लक्ष्य मानता है।

२. Democritus, Epicurians और Bentham यह तीन तत्ववेत्ता सुख (Good) को सदाचार का उद्देश्य मानने वाले सम्प्रदाय के प्रतिनिधि माने जा सकते हैं।

३. तीसरा सम्प्रदाय उन लोगों का है जो पूर्णता (Perfection) को सदाचार का लक्ष्य मानते हैं। ग्रीन अन्तरात्मा (Inner self) आदि की पूर्णता को सब से ऊँचा मानते हैं।

इन में भारी विरोध समझा जाता है। इनके गुण दोष विवेचन तीसरे अध्याय में किये जायँगे, यहां हमने यह देखना है कि यह तीनों ही सम्प्रदाय धर्म रूपी सचाई के तीन भिन्न २ पहलुओं को लेकर प्रवृत्त हुए हैं। धर्म को केन्द्र मान लीजिये तो यह तीनों अपने २ स्थान पर सुघड़ता से रखे दिखाई देंगे।

सत् यथार्थ का दूसरा नाम है। जो कुछ संसार के व्यापी और नित्य नियमों के अनुकूल है, वही यथार्थ हो सकता है और रह सकता है, जो इन नियमों के अनुकूल नहीं है, वह किसी दिन नष्ट हो जायगा। यथार्थ और नित्य नियमों में बहुत समीप सम्बन्ध है। दोनों एक दूसरे से सदा सम्बद्ध हैं। सत् में दोनों सम्मिलित हैं धर्म भी और धर्मी भी। उन में से Right शब्द धर्मी अंश को छोड़ कर धर्म का ही ग्रहण करता है। इस कारण हम कह सकते हैं, कि सत् और धर्म प्रायः अभिन्न हैं।

(३)

धर्म और सुख (Happiness या Good)

हमने ऊपर देखा है कि मनुष्य जीवन के संबन्ध में धर्म के व्यवहृत भाग का नाम सदाचार है। हम आगे विवेचना करेंगे कि सदाचार का निश्चय करना हो तो पहले संसार के व्यापी नियमों को, जिनका दूसरा नाम धर्म है, जानो, और फिर उन का मनुष्य जीवन के सम्बन्ध में प्रयोग करो। यहां पर एक और सिद्धान्त हमारे सम्मुख आता है। हमारे प्राचीन विचारकों में से बृहस्पति आचार्य चार्वाकों का गुरु हुआ है। उस ने जीवन का उद्देश्य सुख को बतलाया है, और भले बुरे की परख भी सुख दुःख को ही ठहराया है। वह सदाचार पर विश्वास नहीं रखता कार्य नीति में विश्वास रखता है। इसका चलाया हुआ सम्प्रदाय चार्वाक सम्प्रदाय कहाता है। पश्चिम में भी सुख को ही सदाचार का फल और निमित्त माना जाता है, प्राचीन दार्शनिकों में Democritus और Epicurian सम्प्रदाय के लोग सुखवादी थे, और नये तत्ववेत्ताओं में से Bentham ने Happiness को भले बुरे की कसौटी बताया है। उसके अनुयायी उपयोगितावादी (Utilitarian) कहे जाते हैं। मिल आदि उस के अनुयायी हैं।

ये लोग सुख को सदाचार की कसौटी मानते हैं क्या उनका मत सर्वथा झूठ है इसका विवेचन

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

तीसरी पुस्तक में विस्तार से होगा, यहां इतना संकेत ही पर्याप्त है कि उनके कहने में एक बहुत मोटी सचाई भी है । मनुष्य सुख के लिये सारे यत्न करता है। अच्छे आचरणों का इस लोक में फल यही होना चाहिये कि मनुष्य को सुख प्राप्त हो। बड़े से बड़े आस्तिक भी यह स्वीकार करते हैं। 'सुखार्था हि मानवानां प्रवृत्तिः' यह भारतीय दर्शनकारों का भिन्न २ प्रकार से दोहराया हुआ वाक्य है। आस्तिक भी स्वीकार करते हैं कि सदाचार का फल सामान्यतया सुख होना चाहिये। इतना अंश उपयोगितावाद में सच है।

उनके कथन में अपूर्णता यह है कि एक तो सुख शब्द इतना स्थूल है कि यह उस आस्तिक सन्तोष के भाव को प्रगट नहीं कर सकता, जो सदाचार का मुख्य फल है। दूसरी न्यूनता यह है कि उपयोगिता वादी परलोक को बिल्कुल भुला देते हैं। तीसरी न्यूनता, जो इन्हीं दोनों के कारण उत्पन्न होती है यह है कि जो एक अधूरा परिणाम है, उसे अव्यभिचारी-आवश्यक-परिणाम मान कर उसी को सदाचार की कसौटी बना देते हैं। इन तीन न्यूनताओं के होने पर भी हम सामान्य तौर पर कह सकते हैं कि सदाचार से सुख उत्पन्न होता है। उसे दर्शनों की निश्चित भाषा में 'अभ्युदय' कहते हैं। ऐहलौकिक ऐश्वर्य उत्तम आचरणों का फल है। उत्तम आचरण धर्म के जीवन सम्बन्धी नियमों के पालन का नाम है। इस प्रकार हम इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि इस लोक की दृष्टि से, धर्म, सदाचार द्वारा 'अभ्युदय' या सुख का हेतु होता है। वैशेषिक दर्शन में 'यतोऽभ्युदयनिःश्रेयससिद्धिः स धर्मः' में अभ्युदयसिद्धि से यही तात्पर्य है। इस प्रकार सुख या अभ्युदय को लोकभाषा में धर्म का अधूरा लक्षण कह सकते हैं।

४-धर्म और पूर्णता (Perfectoin)

मनुष्य की शारीरिक, मानसिक और आत्मिक शक्तियों के पूर्ण विकास का नाम पूर्णता है। कोई त्रुटि न रह जाय-उस दशा का नाम 'निर्दोषता' 'शुद्धता' या 'पूर्णता' है। वह कैसे प्राप्त हो सकती है? यह कह कर सिद्धि के लिये अधिक प्रमाण देने की आवश्यकता नहीं कि शरीर, मन और आत्मा के सम्बन्ध में जितने नियम हैं। उनके यथार्थ पालन से ही पूर्णता प्राप्त हो सकती है, वे जीवन-सम्बन्धी नियम संसार के व्यापी नियम धर्म हैं। पूर्णता धर्म से ही प्राप्त हो सकती है। यह पूर्णता पहले खण्ड में दिखाये हुए अभ्युदय से ऊंचे दर्जे पर आती है।

५- धर्म और मोक्ष

पूर्णता का फल मोक्ष है। उसका दूसरा नाम निःश्रेयस है। वह मोक्ष पूर्णता से प्राप्त होता है, और पूर्णता धर्म से उत्पन्न होती है। परम्परा से निःश्रेयस की उत्पत्ति का कारण धर्म ही है। मोक्ष क्या है? पूर्णता किस प्रकार उत्पन्न होती है? इन सब प्रश्नों के उत्तर तीसरे भाग में दिये जायेंगे जहां क्रियात्मक धर्म की व्याख्या होगी। मोक्ष की विशेष व्याख्या दूसरे भाग में की जायगी यहां तो हमें यह देखना अभीष्ट है कि भिन्न २ विचारकों ने भलाई बुराई के जो पैमाने निश्चित किये हैं, वे धर्म के साथ सीधे या प्रकारान्तर से सम्बन्ध रखते हैं, वे अधूरे हैं, क्यों कि मूलभूत कारण को छोड़ जाते हैं। सदाचार का आधार धर्म है। सुख, पूर्णता, और मोक्ष-क्रमशः उसके फल हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि धर्म इस आधार सम्बन्धी संसार की नाभि है। उसी के चारों ओर सब विचार और आदर्श घूमते हैं। इसी कारण धर्मशास्त्रकारों ने कहा है कि

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

'धर्मे सर्वम्प्रतिष्ठितम्'

सब संसार धर्म के ही आश्रय में रहता है। इस विवेचन से धर्म के लक्षण निम्नलिखित प्रकार से किये जा सकते हैं--और धर्म इन्हीं लक्षणों से परखा जा सकता है

(१) जो नियम संसार के धारण करने वाले हैं, उनका नाम धर्म है। 'धारयतीति धर्मः'

(२) सदाचार का बीज धर्म है। 'आचारो धर्म-मूलो हि'

(३) सुख का कारण धर्म है। 'धर्मात् सुखम्'

(४) सांसारिक विभूति का कारण धर्म है। 'यतोऽभ्युदयसिद्धिः स धर्मः'

(५) पूर्णता उत्पन्न करने का साधन धर्म है।

(६) मोक्ष उत्पन्न करने का एक मात्र साधन धर्म है। यतो निःश्रेयससिद्धिः स धर्मः'

तृतीय अध्याय

धर्म के ज्ञान-साधन

१. नियमों का ज्ञान आवश्यक है

यह साधारण बुद्धि की बात है कि किसी राज्य में रहने के लिये उसके नियमों का जान लेना आवश्यक है। राज्य के अधिकारी राजनियमों को प्रकाशित कर देते हैं, और आशा करते हैं कि सारी प्रजा उन नियमों को जान लेगी, और जान कर उनका पालन करेगी। अपराध होने पर यह नहीं पूछा जाता कि 'तुम्हें नियमों का ज्ञान था या नहीं?' नियम की जानकारी न होना नियमभङ्ग का बहाना नहीं हो सकता। इस संसार रूपी राज्य के भी नियम हैं। उन नियमों का पालन करने से ही मनुष्य अपना अभीष्ट-सुख-प्राप्त कर सकता है, अन्यथा नहीं। वही संसार के धारण करने वाले नियम 'धर्म' शब्द से कहे जाते हैं। उनको जानना हरेक पुरुष का कर्तव्य है। यदि वह नियमों से अन-जान रहे और उनका पालन न कर सके, तो दण्ड अवश्य मिलेगा। वह प्रत्यक्ष जगत् में दिखाई देता है। धर्म का जानना आवश्यक है। परन्तु उसे जानने के साधन कौन से हैं?

२. धर्म के 'साक्षात् लक्षण'

मनुष्य धर्म को जानने के लिये कहां जाते हैं? यह देख लेने पर हम कम से कम इतना परिज्ञान अवश्य कर सकेंगे, कि लोक में धर्म के कौन से ज्ञान हेतु या 'लक्ष्यते येन तल्लक्षणम्' 'जिस द्वारा जाना जावे वह लक्षण है' इस अर्थ में लक्षण हैं। वह लक्षण-ज्ञानहेतु-लोक प्रसिद्ध होने से साक्षात् कहाते हैं। मनुस्मृति में मनुभगवान् ने निम्नलिखित श्लोक में धर्म के साक्षात् लक्षणों का वर्णन किया है—

श्रुतिः स्मृतिः सदाचारः स्वस्य च प्रियमात्मनः।
एतच्चतुर्विधम्प्राहुः साक्षाद्धर्मस्य लक्षणम्॥

यह चार धर्म के साक्षात् लक्षण हैं। १ श्रुति २ स्मृति। ३ सदाचार। ४ स्वस्य-आत्मनः-प्रियम्, अपने आत्मा को प्रिय। श्रुति से यहां वेदों का ग्रहण होता है। भारतवर्ष के आर्य मनुस्मृति के समय, और उस से पूर्व वेदों को धर्म का अन्तिम प्रमाण मानते थे। वेद से विरुद्ध अधर्म माना जाता था। वेद के मंत्र ईश्वर की ओर से आये हुए समझे जाते थे। स्मृति उन ग्रन्थों का नाम है जिन में ऋषियों और आचार्यों के सिद्धान्तों के संग्रह हैं। यह आवश्यक नहीं कि जिस ऋषि के नाम से जो स्मृति प्रसिद्ध है, वह उसी ऋषि ने लिखी हो। मनुस्मृति मनु ने नहीं लिखी, धम्मपद बुद्धदेव का लिखा हुआ नहीं है, बाइबल का कर्ता ईसा नहीं है, और लाइकर्गस ने कोई विस्तृत नियम पुस्तक नहीं लिखा। तो भी ये लोग स्मृतिकार हैं, क्योंकि

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ऐसे ग्रन्थ पाये जाते हैं, जिन में इन आचार्यों के सिद्धान्तों का संग्रह है। वे ग्रन्थ उनकी स्मृतियां हैं, उन के सिद्धान्तों का स्मरण रख कर संग्रह किये गये हैं, और चिरकाल तक लोग उनका स्मरण करते हैं। प्रायः मनुष्य जाति का प्रधान भाग स्मृतियों को ही धर्म में प्रमाण मानता है। तीसरा लक्षण सदाचार है। मनुष्य जाति का अज्ञानी भाग श्रुति को नहीं जानता, स्मृति तक पहुँच नहीं सकता। ऐसे लोग बहुत कम हैं, जो श्रुति और स्मृति में से धर्म को ढूंढने का यत्न करते हैं। अधिकतया अज्ञानी प्रजा अपने बुजुर्गों और माने हुए गुरुओं को ही श्रुति और स्मृति का प्रतिनिधि मान कर उनका अनुसरण करती है। धर्म के गुरु लोग–पुरोहित, पादरी, भिक्षु, या मौलवी किसी भी नाम के हों—श्रुति और स्मृति के प्रतिनिधि मान लिये जाते हैं। जाति के बड़े और बूढ़े धर्म के साक्षी माने जाते हैं। चौथा लक्षण 'आत्मनः प्रिय' है। जो अपने को प्रिय हो वही धर्म है। जो लोग धार्मिक दृष्टि से बिलकुल दीन हीन हैं, अथवा जिन्होंने श्रद्धा और विश्वास से ऊपर तर्क को बिठा लिया है, वे दोनों 'अपनी सम्मति' या अपनी प्रिय बात को धर्म और सचाई का सब से उत्कृष्ट प्रमाण मानते हैं। इसके अच्छे और बुरे— दोनों पहलू हैं। दोनों पहलुओं का विवेचन हम आगे करेंगे, यहां यही बताना अभीष्ट है कि ऐसा सम्प्रदाय बहुत प्राचीन काल से चला आया है जो अपने तर्क या अपनी सम्मति या अपनी रुचि को अन्य सब से ऊपर रखकर धर्म की कसौटी मानता है।

३. पृथक २ इनकी अपूर्णता–श्रुति

धर्म के इन चारों ही 'साक्षात् लक्षणों' को जुदा २ लें और केवल एक २ से सारा काम चलाना चाहें तो हमें थोड़े से यत्न से ही ज्ञान हो जायगा कि वैसे काम चलना कठिन है। अकेला धर्म जानने का कोई भी साधन पूर्ण नहीं हो सकता।

हम श्रुति से आरम्भ करते हैं। श्रुति अर्थात् वेद को धर्म का अन्तिम प्रमाण माना है, परन्तु वेद पर अनन्त श्रद्धा रखने वालों को भी निम्नलिखित बातें माननी पड़ेंगी।

(१) वेद में धर्म के मूलसिद्धान्त ही हो सकते हैं-उसके विस्तृत अंग नहीं।

(२) वेद में देश काल की उपेक्षा करके ही उपदेश सम्भव है, विशेष देशकाल के अनुसार धर्म का ज्ञान वेद से नहीं हो सकता।

(३) सिद्धान्त वेद में हैं—उनका प्रयोग व्यक्ति के आधीन है।

(४) संसार के प्रश्नों की सम्भावनायें कभी परिमित नहीं हो सकतीं।

(५) वेद का पूर्ण ज्ञान सब के लिये सम्भव नहीं है। आजकल तो करोड़ों की आबादी में एक भी वेद का पूर्ण ज्ञाता नहीं है। आर्ष काल में भी वेदों की व्याख्या और व्याख्यारीति में मत भेद थे।

इन सब कारणों से स्पष्ट हो जाता है कि केवल वेद को धर्म में प्रमाण मानकर काम नहीं चल सकता। कल्पना में हम वेद को केवल नहीं—परन्तु अन्तिम प्रमाण-मान सकते हैं। यह स्मरण रखना चाहिये 'अन्तिम प्रमाण' शब्द ही उसके सिवाय अन्य प्रमाणों की अपेक्षा करता है।

४. स्मृति

क्या केवल स्मृति को धर्म में प्रमाण मान कर कार्य चल सकता है?

स्मृति देश और काल की अपेक्षा करके प्रवृत्त होती है। मनुष्यों के विशेष देश और विशेष समय की स्थिति को दृष्टि में रख कर आचार्य लोग

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्मृति की रचना करते हैं। एक पुरुष को—चाहे वह कितना ही बड़ा क्यों न हो—बुद्धि भ्रमरहित नहीं हो सकती। न ही वह इस व्यापक जगत् की चौड़ाई तक अपनी बुद्धि को पहुंचा सकता है। फिर स्मृति तो देश और काल की सीमाओं को लांघ ही नहीं सकती। ऐसी दशा में किस प्रकार कहा जा सकता है कि किसी भी मनुष्य की लिखी या कही हुई स्मृति सब देशों या सब समयों के लिये प्रमाण हो कर काम चला सकती है?

मनुस्मृति में जो राज्यसंघटन बताया गया है, वह विशेष दशाओं के सिवाय नहीं चल सकता। कई आज्ञायें या सामान्य सिद्धान्त ऐसे भी होंगे, जिन में परिवर्तन नहीं होता, परन्तु अधिकांश नियम कुरान में भी ऐसे हैं जो मनुष्यों की विशेष दशा को अंगीकार करते हैं। Code Napoleon का प्रयोग मिसर या चीन में नहीं हो सकता। इस प्रकार केवल स्मृति को धर्म में एक मात्र प्रमाण मानकर सारा कार्य नहीं चल सकता।

५. सदाचार

यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामचारतः,
तस्मा च्छास्त्रं प्रमाणं ते कार्याकार्यव्यवस्थितौ।
न स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं नपरां गतिम्।
ज्ञात्वा शास्त्रविधानोक्तं कर्म कर्तुमिहार्हसि।
—गीता॥

क्या केवल बुजुर्गों, विद्वानों या गुरुओं का उपदेश अथवा व्यवहार हमारे लिये प्रमाण हो सकता है?

जिन युक्तियों से स्मृति को धर्मग्रन्थ मानना असम्भव है, उन्हीं युक्तियों से सदाचार को धर्म में अन्तिम प्रमाण मानना भी असम्भव है। धर्म एक सा है—सामान्य नियम एक से ही होने चाहियें। परन्तु संसार के बुजुर्ग, विद्वान और वृद्ध एक दूसरे से भिन्न ही बात करते हैं। 'मुण्डे मुण्डे मति भिन्ना' हरेक सिर की मति भिन्न है। जितने आचार्य हैं—उतने मत हैं। इतनी विभिन्न मति होने पर धर्म का अन्तिम प्रमाण मनुष्यों को कैसे माना जा सकता है।

६. आत्मा को प्रिय

क्या अपनी प्रियता—अपने आपको अच्छा या सुख कारक प्रतीत होना-धर्म का लक्षण माना जा सकता है? बहुत से विद्वान सुख, प्रसन्नता या अनूकूलता को धर्म में प्रमाण मानते हैं। अथवा दूसरे शब्दों में यह कहना उत्तम है कि वे लोग उपयोगिता को कर्तव्याकर्तव्य की कसौटी मानते हैं। उपयोगिता प्रति मनुष्य पृथक् पृथक् है। सुख या उपयोगिता की कमी या अधिकता का निर्णय व्यक्ति स्वयं ही करता है। उपयोगितावादियों के प्रधानमल्ल जान स्टुआर्ट मिलने अपनी Utilitarianism नाम की पुस्तक में लिखा है—

"The creed which accepts as the foundation of morals, Utility, or the Greatest Happiness Principle, holds that actions are right in proportion as they tend to promote happiness, wrong as they tend to produce the reverse of happiness. By happiness is intended pleasure and the absence of pain; by unhappiness, pain and the privation of pleasure."

उपयोगितावाद मानता है कि जो कार्य सुख को उत्पन्न करे वह अच्छा और जो सुख के अभाव अर्थात् दुःख को उत्पन्न करे वह बुरा है। अपने सुख दुःख का सब से उत्कृष्ट निर्णायक स्वयं अपना आप है। परन्तु क्या सामाजिक सदाचार कोई

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सदाचार नहीं? इसका उत्तर उपयोगितावादी यह देते हैं—कि मनुष्य के अन्दर एक स्वाभाविक सामाजिक भाव है, जो उसे बतलाता है कि औरों के हित में ही उसका हित, औरों के सुख में ही उसका सुख है। भलाई या कर्तव्य का अन्तिम प्रमाण अपना सुख है, सामाजिक सुख भी अपने सुख का साधन होने से माननीय है। अन्तिम निर्णायक अपने सुख की राशि ही है। निश्चय करने वाला प्रत्येक व्यक्ति है।

क्या यह कसौटी पर्याप्त है? निम्नलिखित कारणों से केवल इतने से धर्माधर्म या कर्तव्याकर्तव्य का निर्णय नहीं हो सकता।

(१) केवल सुख—अर्थात् अनुकूल अनुभव-मनुष्य का लक्ष्य नहीं हो सकता। केवल इतना लक्ष्य अपूर्ण है। स्वार्थ त्याग, भलाई के लिये बलिदान, आदि ऊंचे कर्तव्य केवल सुख के लिये नहीं किये जाते। यह सब उपयोगितावाद के अनुसार कर्तव्यों की कोटी में नहीं आते।

(२) इतने विस्तृत जगत् में, इतनी विशाल मनुष्य जाति में, भलाई और बुराई की परख परमात्मा या प्रकृति (Nature) ने एक व्यक्ति को रखा हो, यह बिल्कुल बेजोड़ प्रतीत होता है। मनुष्य जाति के सुख की अपेक्षा व्यक्ति अपने अपने सुख को कर्तव्याकर्तव्य विचार में ऊंचा रखे, यह विचारने पर ही बहुत भद्दा प्रतीत होता है। कर्तव्य शास्त्र के विचार से इतना संकुचित लक्ष्य कभी स्वीकार नहीं किया जा सकता।

(३) यह मानना पड़ता है कि अपने लिये कर्तव्याकर्तव्य का अन्तिम निश्चय मनुष्य स्वयं ही करता है। यह भी ठीक है कि किसी मनुष्य को धर्माधर्म के निर्णय में अपनी बुद्धि को दूसरे के यहां गिर्वी न रख देना चाहिये। उसे सब विचारों और कार्यों को स्वयं कसौटी पर रखना चाहिये, परन्तु प्रश्न यह है कि क्या निर्णायक भी वही होगा, और निर्णय का साधन भी वही होगा? कसने वाला भी वही और कसौटी भी वही होगा, धर्माधर्म का निर्णय वह स्वयं करेगा, परन्तु निर्णय का साधनभूत कोई और होना चाहिये।

(४) यदि मनुष्य के सुख दुःख पर, और उसकी निश्चय शक्ति पर ही कर्तव्याकर्तव्य का निर्णय छोड़ दिया जाय तो जितने मनुष्य उतने ही शास्त्र बन सकते हैं। अपने अपने संस्कार, चारों ओर के प्रभाव, शिक्षा के गुण दोष पृथक् पृथक् होने से 'मुझे अधिक से अधिक सुख किस प्रकार मिलेगा?' इस प्रश्न के उत्तर सब लोग भिन्न भिन्न ही देंगे। किसी को परोपकार में सुख प्रतीत होता है, परन्तु किसी को दूसरों का सुख बढ़ाने में कुछ भी सुख दिखाई नहीं देता। किसी को धन कमाना बोझ प्रतीत होता है, दूसरे को अच्छे या बुरे साधनों से धन कमा कर ही सुख का अनुभव होता है। जितने परखने वाले— उतने ही परख के साधन—और उतने ही कर्तव्याकर्तव्य शास्त्र-इस से बढ कर अराजकता इस संसार में क्या हो सकती है?

इन कारणों से केवल आत्मा को प्रिय प्रतीत होना सुख की कसौटी नहीं हो सकती, और अन्य बन्धनों रहित केवल मनुष्य स्वयं अपने कर्तव्याकर्तव्य का परखय्या नहीं हो सकता।

७. चारों में सत्यता के अंश

पदार्थों के ज्ञान के लिये तीन प्रमाण कार्य में लाये जाते हैं। (१) प्रत्यक्ष (२) अनुमान (३) शब्द। इन तीनों प्रमाणों में से अकेला कोई भी पर्याप्त नहीं—और न किसी को छोड़ा ही जा सकता है। स्थूल पदार्थों को प्रत्यक्ष के बिना जानना कठिन है। अन्य प्रमाणों का आधार, और

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जहां उसकी गति हो वहां अन्तिम प्रमाण भी वही है। जहां उसकी गति नहीं, वहां अनुमान की प्रवृत्ति होती है। जहां अनुमान भी कार्य नहीं करता, या जहां अभी अनुमान की शक्ति उत्पन्न न हुई हो, वहां शब्द को प्रमाण मानना पड़ता है। जहां तक शब्द प्रमाण की परीक्षा प्रत्यक्ष और अनुमान से सम्भव हो, अवश्य होनी चाहिये। साथ ही हरेक शब्द प्रमाण नहीं है— आप्त का शब्द ही प्रमाण है। 'शब्द' प्रमाण के वक्ता की आप्तता का निर्णय केवल शब्द से नहीं हो सकता— उसके लिये प्रत्यक्ष और अनुमान का पूरा प्रयोग करना चाहिये। (शास्त्रीय विषय में उपमान अनुमान का अंग हो कर ही आता है, इस कारण यहां उसे छोड़ दिया गया है)

प्रमाणों के साथ तुलना करके जब धर्म के जानने के साधनों पर विचार करते हैं, तब हमें आश्चर्य जनक समानता मिलती है। देखिये—

प्रत्यक्ष = आत्मनः प्रिय

अनुमान = स्मृति, सदाचार

शब्द = श्रुति

धर्म सुख का साधन समझा जाता है। सुख कहां है ? और उसके स्पष्ट साधन कौन से हैं ? यह प्रत्यक्ष का विषय है। सामान्य बातों में इतिकर्तव्यता का ज्ञान परीक्षण, निरीक्षण और अनुभव से हो जाता है। मनुष्य जीवन के अनेक भाग ऐसे हैं, जिन में सृष्टि के नियमों का परिज्ञान प्रत्यक्ष द्वारा हो जाता है। उन विषयों में आत्मा की अनुकूलता और विचार शक्ति पथदर्शक का कार्य दे सकती है।

स्मृति और सदाचार को अनुमान के अन्तर्गत करना शायद आश्चर्यजनक प्रतीत हो, और उन दोनों को एक कोटि में रखना भी कुछ अचम्भे में डालने वाला है। हम उन दोनों को उसी प्रकार एक कोटि में रख सकते हैं, जैसे उपमान को अनुमान की कोटि में रक्खा है। स्मृति क्या है ? लेखबद्ध सदाचार है। सदाचार का शब्दों में समावेश ही स्मृति है। यदि यह क्लिष्ट कल्पना ही प्रतीत हो तो उपमान को सदाचार के समान माना जा सकता है। सादृश्य से इतिकर्तव्यता का ज्ञान ही सदाचार है।

स्मृति का सादृश्य अनुमान से है। स्मृति को शब्द प्रमाण मानना भूल है। जहां पूरी आप्तता का निर्णय हो जाय वहां फिर सन्देह या परस्पर विरोध न होना चाहिये। स्मृतियां भिन्न भिन्न आचार्यों की स्थापनायें हैं। वे व्यापी सिद्धान्तों का विशेष दशा में प्रयोग है। सामान्य व्याप्ति का विशेष दशाओं में प्रयोग अनुमान है— सामान्य सिद्धान्तों का विशेष दशाओं में प्रयोग स्मृति है। स्मृति के सिद्धान्त अटल नहीं, दशा परिवर्तन के साथ उनमें परिवर्तन हो सकता है। लिंग के भेद से अनुमान द्वारा भी भिन्न ही परिणाम निकलता है— व्याप्ति उसी रूप में रहती है।

चार व्यावहारिक प्रमाणों के समान धर्म के ज्ञानसाधन प्रमाण भी चार हैं। यदि कोई विशेष आपत्ति न ज्ञात हो तो दोनों का तीन में भी समावेश किया जा सकता है।

इन में बलाबल का निर्णय कुछ कठिन नहीं है।

स्थूल वस्तुओं में प्रत्यक्ष प्रबल है। भौतिक जगत् में, रोज के साधारण व्यवहार में इहलोक के कामों में आत्मा–आत्मा की प्रवृत्ति और विवेक शक्ति–धर्म का निश्चय कराने में समर्थ हो सकती हैं।

प्रत्यक्ष की सहायता अनुमान करता है। प्रत्यक्ष की सीमा से दो एक हाथ आगे, अनुमान पहुंच जाता है। स्मृति वहीं तक पहुँचती है। जहां

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्रत्येक साधारण बुद्धि वाले आदमी की गति नहीं वहां स्मृति रास्ता दिखाती है।

अनुमान का प्रकारान्तर कहिये या छोटा भाई कहिये उपमान है। स्मृति का छोटा भाई सदाचार है। वह सादृश्य द्वारा धर्म के नियमों का प्रयोग बतलाता है।

जहां न साधारण मनुष्य का प्रत्यक्ष जाता है, और न अनुमान लगाने के लिये 'लिंग दर्शन' की सम्भावना, वहां शब्द प्रमाण कार्य में आता है। आप्त का कथन मानना पड़ता है। मैंने पेरिस नहीं देखा। उसके सदृश कोई बड़ा शहर भी नहीं देखा कि अनुमान लगा सकूं। मेरा भाई पेरिस देख कर आया है—यह मुझे निश्चय है। यह भी मुझे अन्य व्यवहार से निश्चय हो चुका है कि वह जैसा देखता है, वैसा ही कहता है। मैं पेरिस के सम्बन्ध में उसकी बातों पर विश्वास कर लेता हूं। यह स्वाभाविक है और आवश्यक है। उन परोक्ष बातों में, जहां प्रत्यक्ष और अनुमान की गति नहीं, जहां आत्मा की पहुंच नहीं है, स्मृति मूक है, और सदाचार असमर्थ है, वहां शब्द प्रमाण श्रुति का आश्रय लेना पड़ता है। श्रुति वह है, जो सुनी जाय। शब्द सुना जाता है। शब्द और श्रुति एकार्थ वाचक हैं। श्रुति ही शब्द प्रमाण है— अन्य नहीं।

अपने अपने विषय में, एक विशेष सीमा तक सभी प्रमाण हैं। परोक्ष विषय में जहां और प्रमाण अशक्त हैं, वहां श्रुति ही समर्थ है। वह श्रुति कौन सी है? इस प्रश्न पर पीछे विचार होगा— यहां केवल यह दिखाना अभीष्ट है कि जो चारों ज्ञान-साधन बताये गये हैं, उन में से किसी की भी उपेक्षा नहीं हो सकती। स्थान २ पर सब का प्रयोग होना चाहिये यदि इस व्यवस्था को ध्यान में रख कर यत्न किया जाय, तो इस सृष्टि के नियमों का परिज्ञान अर्थात् धर्म-ज्ञान कुछ भी कठिन नहीं हैं।

चतुर्थ अध्याय

मत, धर्म और देवपूजा (Religion)

१. प्रश्न

हम बता आये हैं कि धर्म और Religion भिन्न २ वस्तुएं हैं। अब देखना है कि धर्म में और Religion में क्या सम्बन्ध है? मनुष्य जाति बौद्ध, ईसाई, मुसलमान और भक्ति वाद आदि अनेक भागों में बंटी हुई है। क्या यह भिन्न २ धर्म हैं? यदि धर्म नहीं तो इन का क्या नाम है? इन का धर्म से क्या सम्बन्ध है?

२. Religion का लक्षण

हम पहले अध्याय में देख चुके हैं कि Religion ईसाई विचारकों के मत में ईश्वर विश्वास है। परन्तु जब शास्त्रीय या ऐतिहासिक विवेचन को आरम्भ करते हैं तब ऐसे एकदेशी लक्षण को अन्तिम नहीं मान सकते। Religion पर विचार करते हुए वैज्ञानिक लोग उसे एक बहुत व्यापी वस्तु बना देते हैं और मनुष्य जाति में सामान्य तौर पर विस्तृत श्रद्धा और महत्ता के माप की व्याख्या Religion से ही करते हैं। उस विस्तृत Religion का लक्षण देख कर ही हम यह निश्चय कर सकते हैं कि धर्म से उस का क्या सम्बन्ध है?

मैक्समूलर का मत है कि "Faculty or disposition, which independent of, nay, inspite of sense and reason, enables man to apprehend the infinite under different names, and under varying dignities.

वह मानसिक शक्ति या प्रवृत्ति Religion है जो बुद्धि की पर्वाह न कर के अतीन्द्रिय क्रिया— अपरिमित शक्ति— का बोध करा देती है। बोध के रूप भिन्न २ हैं। तत्व एक है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

यह Religion है। यह मानसिक शक्ति है, परन्तु बुद्धि की पर्वा नहीं करती। तत्वज्ञानी इस लक्षण पर आक्षेप करते हैं। वे कहते हैं कि Religion मानसिक वस्तु नहीं है, अपितु हृदय की वस्तु है। इस तथा अन्य प्रकार के कई आक्षेपों को दूर करने के लिये मैक्समूलर ने अपनी Natural Religion नाम की पुस्तक में Religion का दूसरा लक्षण किया है—

Religion consists in the perception of the infinite under such manifestations as are able to influence the most character of man.

Religion अनन्त शक्ति का ऐसे रूपों में भान है, जिसका मनुष्य के आचरणों पर प्रभाव पड़े।

इस प्रकार केवल भान का नाम Religion प्रतीत होता है। परन्तु इस लक्षण पर यह आक्षेप हुआ है कि Religion केवल 'भान' नहीं है, साथ ही कुछ क्रिया भी है, जिसके विना Religion का भाव अपूर्ण रह जाता है। वही क्रिया 'पूजा' या Worship नाम से कही जाती है। केवल अनन्त शक्ति का भान Religion नहीं है, उसकी पूजा भी उस में सम्मिलित है।

वह पूजा क्यों ? सुख या शान्ति के लिये। इस प्रकार ऐतिहासिक दृष्टि से Religion का लक्षण निम्न लिखित किया जाता है—

'Worship of higher powers from a sense of need,(History of Religion. by Nitze)

आवश्यकता अनुभव करके अपने से ऊंची शक्तियों की पूजा Religion है। संस्कृत में इस भाव को प्रकट करने के लिये सर्वोत्तम शब्द 'देव भावना' है।

३. देव भावना और धर्म

यह पहले बताया जा चुका है कि ईश्वर-विश्वास का धर्म से बड़ा गहरा सम्बन्ध है। धर्म सृष्टि के व्यापक नियमों का नाम है। नियम नियन्ता के जोर पर ही चल सकते हैं। नियन्ता ईश्वर है। नियन्ता पर जितना दृढ़ विश्वास होगा, नियम पालन में उतनी ही अधिक प्रवृत्ति होगी।

देव भावना एक सामान्य परिभाषा है, जिस के अन्दर ईश्वर पूजा या आस्तिक भाव भी आ जाता है। देव भावना के अनन्त भेद हैं। एकेश्वर विश्वास से लेकर पत्थर, लकड़ी, जल तक में देव भावना कर के उस की पूजा देव पूजा के अन्तर्गत है। उस देव भावना का धर्म से क्या सम्बन्ध है ? धर्म संसार में व्याप्त नियम हैं। नियामक की तलाश मनुष्य के हृदय में स्वाभाविक है। जहां वह तलाश तो आरम्भ हो जाती है—और शायद ही कोई हृदय ही जहां वह तलाश न हो— परन्तु ठीक उत्तर नहीं मिलता— न मिलने का कारण चाहे कोई हो— वहां मनुष्य नियन्ता की कल्पनायें करता है। कभी कभी वह एक नहीं—अपितु अनेक नियन्ताओं को मान कर सन्तोष कर लेता है। वह अनेक-देवता-वाद (Polytheisn) कहाता है। कभी वह जड़ों में जीवित भावना कर लेता है— तब मूर्ति वाद (Fatishism), जड़ चेतन वाद (Animism) आदि आरम्भ हो जाते हैं। कभी वह अनेक देवताओं में से एक को प्रधान मान कर उसकी उपासना में लग जाता है, वह Monotheism कहाता है। वाद कोई हो— पर मूल में वही नियम के नियन्ता की तलाश है।

धर्म का हेतु तलाश किया जाय, जगह का नियन्ता ढूंढा जाय, यह प्रवृत्ति सब जगह है। उस के अनेक उत्तर दिये जाते हैं। जो शुद्ध उत्तर

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हैं, वे उत्कृष्ट देव पूजा के भाव के प्रेरक हैं; जो अशुद्ध उत्तर हैं, वे निकृष्ट देव पूजा के भाव के प्रेरक हैं।

३. अनेक मतों की उत्पत्ति के कारण

यदि सृष्टि के आरम्भ से लेकर आज तक का धार्मिक इतिहास पढ़ा जाय तो अनेक मतों की संख्या का पार पाना कठिन होगा। फिर यदि उन के अवान्तर भेदों पर दृष्टि डालें तो मनुष्य बुद्धि शान्त प्रतीत होने लगती है। इन असंख्य मतों और सम्प्रदायों की उत्पत्ति के सामान्य कारणों पर विचार करने से निम्नलिखित परिणाम संग्रह रूप में हमारे संमुख आता है।

अनेक मतों के भेद के कारणों में से निम्नलिखित प्रधान हैं—

(१) देव भावना में भेद—जगत् के अद्भुत कार्यों के कर्ता की तलाश करते हुए किस प्रकार की भिन्न २ देव भावनायें उत्पन्न हो जाती हैं, यह हम ऊपर बता आये हैं। बहुत से मतों के भेद के मूल में यही भावनाभेद है। यहुदियों को मिसर का देवसमूह पसन्द नहीं आया। उन्हें मोज़ेज़ ने एकेश्वरवाद का पाठ पढ़ाया। देव भावना में भेद मतों में भेद का कारण हुआ। यह मूल भेद था। अन्य कई प्रकार के भेद थे—परन्तु वह मुख्य भेद के सन्मुख गौण थे। आइसिस और यहोवा का भेद यहूदियों को मिसरियों से जुदा करने वाला हुआ।

(२) धर्म भावना में भेद—धर्म भावना से हमारा अभिप्राय निम्न है। धर्म जगत् के व्यापी नियमों का नाम है। पूज्य देव में कोई विशेष मतभेद न होने पर भी जीवन सम्बन्धी मौलिक नियमों के सम्बन्ध में इतना भारी मत भेद हो सकता है, कि मतों की भिन्नता उत्पन्न हो जाय। यहूदियों के और ईसाइयों के ईश्वर में कोई विशेष भेद नहीं है। ईसाइयों की ईश्वर सम्बन्धी कल्पना पुराने अहदनामे के पहले अध्याय से ही ली गई है। दोनों मतों में भेद होने का कारण यही हुआ, कि हजरत ईसा संसार को उन नियमों से व्याप्त नहीं मानता था, जिनसे व्याप्त उसके समय के यहूदी आचार्य मानते थे। ब्राह्मण धर्म और बौद्ध धर्म में भी ऐसा ही भेद था। बुद्ध ने पौराणिक देवताओं के विषय में कुछ नहीं कहा था। उसकी सब से मुख्य विशेषता यही थी की वह धर्म को बहुत विस्तृत और उदार समझता था।

(३) संस्थापक में अत्यधिक श्रद्धा—कभी २ अन्य सब कारण गौण हो जाते हैं और संस्थापक का व्यक्तिगत गौरव, और उस के शिष्यों का भक्ति भाव ही मुख्य हो जाते हैं। हजरत मुहम्मद की कामयाबी का रहस्य उस का अपने देशवासी अनुयायियों में महत्त्व था। वह जाति की दशा को जानता था—उसकी बुराइयों का ठीक इलाज भी जानता था। शिष्यों और भक्तों के लिये उसके ईश्वर सम्बन्धी विचार उत्कृष्ट थे, परन्तु उन विचारों की उत्कृष्टता को हेतु या तर्क से समझने की शक्ति उन में नहीं थी। वे मुहम्मद को बड़ा मान कर उसके वाक्यों को सर्वोपरि मानते थे। उन्होंने सिद्धान्त इसलिये समझे क्योंकि उन्हें हजरत मुहम्मद कहता था, और हजरत मुहम्मद इस लिये बड़ा था क्योंकि वह इतना महान् था।

हजरत मुहम्मद ने जो बड़े पैमाने पर किया, प्रत्येक देश और समय में लोगों ने उसे दोहराने का यत्न किया। किसी को थोड़ी बहुत कामयाबी हुई किसी को नहीं। धीरे २ सभी मतों में संस्थापक का व्यक्तिगत महत्त्व एक दूसरे की देखादेखी या मनुष्य स्वभाव के वशंगत हो कर प्रधानता को प्राप्त कर लेता है, परन्तु प्रारम्भ में आवश्यक नहीं

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कि कोई मत केवल संस्थापक के व्यक्तिगत महत्त्व के कारण ही गौरव पाये, यद्यपि यह अंश थोड़ा बहुत सर्वदा रहता है।

मतों की रचना के विस्तृत सिद्धान्तों पर विचार करने से यही तीन मुख्य कारण प्रतीत होते हैं। मतों के भेद के जो अनेक कारण हैं, उनमें से धर्म केवल एक है। भिन्न २ मतों को भिन्न २ धर्म कहना बहुत भ्रमात्मक है। धर्म और वस्तु है—मत और वस्तु, यद्यपि ऊपर लिखे अनुसार उनका गहरा सम्बन्ध है। वह गहरापन और भी स्पष्ट हो जाता है, जब हम देखते हैं कि हरेक मत वादी अपने मत का आधार धर्म को ही बताता है और मत का प्रचार धर्म के चोगे में रह कर ही करना चाहता है।

पांचवा अध्याय

धर्म, श्रद्धा और तर्क

१. श्रद्धा और तर्क में युद्ध

इंग्लैण्ड के हौब्स नाम के प्रसिद्ध विचारक ने माना है कि मनुष्य के ईश्वर सम्बन्धी विचार शब्द प्रमाण पर, और अन्य सब प्रकार के विचार बुद्धि पर अवलम्बित हैं। उसने दो जुदा २ विभाग बना दिये हैं। वह स्वयं बड़ा भारी स्वतन्त्र विचारक था, परन्तु साथ ही वह अपने को गिर्जे का भक्त ईसाई भी कहता था। उसका मत था कि धार्मिक विचारों में तर्क की आवश्यकता नहीं है। न वह विचार तर्क के सामने ठहर ही सकते हैं।

योरप में यह विचार पुराना है—अब तक माना जाता है कि धर्म और विज्ञान इकट्ठे नहीं रह सकते—और न धर्म और स्वतन्त्र विचार एक साथ रह सकते हैं। व्यवहार से योरप इसे सिद्ध कर रहा है। कुछेक अपवादों को छोड़ कर शेष वैज्ञानिक और तत्वज्ञानी Religion को एक पुरानी बची हुई अनावश्यक चीज़ समझते हैं। विकासवाद और प्रकृतिवाद ने लोगों को अनीश्वरवादी बनाने में कोई कसर नहीं छोड़ी। समझा जाता है कि रस-क्रिया-भवन और गिर्जा दोनों एक स्थानपर नहीं रह सकते।

इतिहास पर दृष्टि डालें तो वैज्ञानिकों का यह कार्य कुछ नया नहीं प्रतीत होता। गिर्जे के प्रतिनिधि विज्ञानवादियों पर प्रायः ऐसे आक्रमण करते आये हैं कि यदि विज्ञान और तत्वज्ञान योरप में धर्म को अपना शत्रु समझ लें तो कुछ आश्चर्य नहीं। उन सैकड़ों दृष्टान्तों को किताबों में से संगृहीत किया जा सकता है, जिन में कुछ थोड़े से स्वतन्त्र विचार के लिये विचारक को कठोर दण्ड—मृत्यु तक—भोगने पड़े। मिसर में हिपेशिया (Hypatia) नाम की एक विदुषी थी। वह अलैग्जेण्ड्रिया में तत्वज्ञान सम्बन्धी व्याख्यान देती थी। वह नगरी ईसाई मत की भी एक राजधानी थी। वहां का लाट पादरी सेण्ट साइरिल (St. Cyril) एक कट्टर और अन्ध ईसाई था। वह ईसा की माता मेरी की पूजा गिर्जों में चलाता था। एक तत्वविचारिका विदुषी के व्याख्यानों को वह लाटपादरी इतने ख़तरनाक समझता था कि उसने अपने अनुयायियों को भड़का दिया। एक दिन व्याख्यान देने के लिये जाती हुई वह देवी साइरिल के चेलों में घिर गई। लोगों ने—जिन में से बहुत से पादरी थे—उस देवी के कपड़े उतार डाले, नंगी को घसीट कर लोग गिर्जे में ले गये, और पवित्र डण्डे से उसे मार डाला। उसके शरीरके टुकड़े २ कर दिये गये, हड्डियों से मांस नोच लिया गया, और शेष भाग अग्निसात् कर दिया गया।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पलेगियस नाम के एक ईसाई पादरी के मन में यह विचार उठा कि बाइबिल का यह कहना ठीक नहीं प्रतीत होता कि आदम शुरू २ में अमर था, पीछे से शैतान की प्रेरणा से पाप में फंसकर वह मरणधर्मा होगया। उस की सम्मति थी कि मनुष्य पहले से ही मरणधर्मा था। इस सम्मति का प्रचारमात्र करने के कारण उसे रोम के सम्राट की आज्ञा द्वारा देशनिकाला दिया गया, उस के शिष्य भी देश से निकाल दिये गये, और उन की जायदाद ज़प्त कर ली गई।

समय आया जब मुसलमान सेनापति अमरूने मिसर पर धावा किया। अलैग्ज़ेण्ड्रिया को जीत लेने पर उस अनपढ़ सिपाही को अलैग्ज़ेण्ड्रिया का प्रसिद्ध पुस्तकालय मिला। वहां के एक विद्वान् जोन ने अमरू से प्रार्थना की कि उस पुस्तकालय की पुस्तकें उसे बख़्श दी जांय। अमरू ने इस आवश्यक विषय पर ख़लीफ़ा की राय मांगी। ख़लीफ़ा ने निम्नलिखित उत्तर दिया 'यदि वे पुस्तकें खुदा की किताब क़ुरान के अनुकूल हैं तो व्यर्थ हैं, और उनकी रक्षा आवश्यक नहीं हैं; यदि उसके विरूद्ध हैं तो हानिकारक हैं; इस कारण इन्हें नष्ट कर दो' इस आज्ञा के अनुसार सदियों में एकत्र की गई लाखों पुस्तकें सिपाहियों को चूल्हे में जलाकर रोटी बनाने के लिये बांट दी गईं।

ये तीन दृष्टान्त पर्याप्त हैं। इन्हें पढ़ कर यह सम्मति बना लेना कठिन नहीं है कि तत्वज्ञान और धर्म में स्वाभाविक लड़ाई है। यह तीन तो केवल दृष्टान्त हैं। इतिहास ऐसे दृष्टान्तों से भरा पड़ा है। कौपर्निकस, गैलीलियो और ब्रूनो के साथ ईसाइयों ने जो व्यवहार किया उसे किसने नहीं सुना। जब धर्म का ऊंचा हाथ था तब विज्ञानी और तत्वज्ञानी सताये जाते थे, अब सायंस का ऊंचा हाथ है तो लोगों की ईश्वर पर से श्रद्धा उठ रही है। इस से सिद्ध होता है कि धर्म का विज्ञान और तत्वज्ञान से नैसर्गिक युद्ध है।

धर्म में श्रद्धा प्रधान है। विज्ञान और तत्व ज्ञान में तर्क प्रधान हैं। फलतः श्रद्धा और तर्क एक दूसरे के विरोधी समझे जायेंगे।

२—अपवाद

क्या ऊपर लिखा नियम व्यापी है? क्या सब स्थानों पर धर्म और विज्ञान, श्रद्धा और तर्क, विरोधी शत्रु ही दिखाई देते हैं?

इन प्रश्नों के उत्तर में हमें सभी देशों और जातियों में अपवाद दिखाई देते हैं। यहाँ कुछ दृष्टान्तों की ओर निर्देश ही पर्याप्त होगा। ग्रीस और रोम में उन के प्राचीन धार्मिक विचारों के साथ साथ तत्व ज्ञान की वृद्धि होती रही। एक सुकरात का दृष्टान्त मिलता है, जिस में सम्मति के कारण दण्ड दिया गया है। वहाँ भी मुख्य कारण यह था कि एथेन्स के शासकों ने भ्रम से समझ लिया था कि सुकरात की तर्कणायें देश की जातीय आकृति को ढीला कर देंगी। सामान्य तौर पर ग्रीस और रोम में तत्व ज्ञान का अबाधित संचार रहा। बौद्ध धर्म की तह में खुला हेतुवाद था। शास्त्रीय विचार, विज्ञान, ज्योतिष आदि के साथ उसका कुछ भी संग्राम नहीं हुआ। यहूदी लोग बहुत कट्टर माने जाते थे, परन्तु इतिहास बताता है कि दार्शनिक और वैज्ञानिक विचारों की अन्वेषणा में वे कभी पीछे नहीं रहे। इस्लाम के ख़लीफ़ा ने एक वार सिकन्दरिया का पुस्तकालय अवश्य जलवा दिया था, परन्तु बहुत शीघ्र इस्लाम के अनुयायी इस दशा से पार उतर गये थे। ख़लीफा मायून का नाम विज्ञान के क्षेत्र में

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्रसिद्ध रहेगा। उसने जहाँ एक ओर पृथिवी को गोल सिद्ध करने के लिये परीक्षण कराये, वहाँ कई पुस्तकालय भी स्थापित किये। अल गज़्ज़ाली और एवरोज़ जैसे स्वतन्त्र विचारक इस्लाम में ही पैदा हुए थे। मध्यकालिक योरप को ज्योतिष, गणित और स्वतन्त्र विचार का रास्ता अरब के विद्वानों ने ही दिखाया था।

सारांश यह कि सब धार्मिक मतों का विज्ञान या तत्वविचार के साथ संग्राम रहा हो— ऐसा नहीं है। बहुत अपवाद हैं— थोड़े में नियम है। ऐसी दशा में यह कहना असंगत न होगा कि धार्मिक मतों के साथ विज्ञान या तत्व विचार का युद्ध न होना नियम और युद्ध होना अपवाद है।

३. वेद में श्रद्धा और मेधा

भारतवर्ष में धर्म और विज्ञान, श्रद्धा और ज्ञान, विश्वास और तर्क, ये दोनों एक ही रथ के दो पहिये समझे जाते रहे हैं। भारत वर्ष की आर्य जाति का इतिहास धार्मिक और वैज्ञानिक विचारों की गाढ़ी मित्रता का एक ज्वलन्त दृष्टान्त है। भारत के विचारों का इतिहास वेदों से प्रारम्भ होता है। वेदों में जहां एक ओर श्रद्धा की महिमा का वर्णन है, वहां दूसरी ओर ज्ञान, बुद्धि और मेधा का गौरव बताया गया है। ऋग्वेद के दसवें मण्डल में एक श्रद्धा सूक्त है। उसके कुछ मन्त्र हम नीचे देते हैं:—

श्रद्धयाग्निः समिध्यते श्रद्धया हूयते हविः
श्रद्धां भगस्य मूर्धनि वचसा वेदयामसि। ऋ।१०।१५१।१

परमात्मा की उपासना श्रद्धा द्वारा की जाती है, हवन में आहुति (हवि) श्रद्धा द्वारा ही डाली जाती है, स्तुतियों द्वारा भगवान के सन्मुख हम श्रद्धा की भेंट ही रखते हैं।

श्रद्धां देवा यजमाना वायुगोपा उपासते।
श्रद्धां हृदय्ययाकूत्या श्रद्धया विन्दते वसु॥ ४

यज्ञादि श्रेष्ठ कर्म करने वाले, ईश्वर को अपना रक्षक मानने वाले लोग श्रद्धा की ही उपासना करते हैं। हृदय के आन्तरिक अभिप्राय से वे श्रद्धा की उपासना करते हैं। क्योंकि वसु— ऐश्वर्य श्रद्धा से ही प्राप्त होता है। वसु से यहां आध्यात्मिक और आधिभौतिक ऐश्वर्य से तात्पर्य है।

श्रद्धां प्रातर्हवामहे श्रद्धां मध्यदिनं परि।
श्रद्धां सूर्यस्य निम्रुचि श्रद्धे श्रद्धापयेह नः॥ ५

प्रातः काल, सायं काल, सूर्य के अस्त होने पर, हम श्रद्धा को ही हृदय में निमन्त्रित करते हैं। हम उस से प्रार्थना करते हैं कि हे श्रद्धे! तू हम से श्रद्धा करवा।

व्रतेन दीक्षामाप्नोति दीक्षयाप्नोति दक्षिणाम्।
दक्षिणा श्रद्धामाप्नोति श्रद्धया सत्यमाप्यते॥ य.।१९।३०
दृष्ट्वा रूपे व्याकरोत् सत्यानृते प्रजापतिः।
अश्रद्धामनृते दधात् श्रद्धां सत्ये प्रजापतिः॥ य.।१९।७७

जिस में विश्वास है, उस में श्रद्धा होती है। उत्कट भक्ति, अखण्डित प्रेम, और अकण्टक भावना का नाम श्रद्धा है। वेद में उसे सब श्रेष्ठ कर्मों की प्रेरिका कहा है। उसके लिये प्रार्थना मिलती है। इस प्रकार हम देखते हैं कि वैदिक धर्म में श्रद्धा का स्थान बहुत ऊंचा है। परन्तु क्या इससे तर्क, विचार शक्ति, या बुद्धि का स्थान नीचा हो जाता है? नहीं। वेद में श्रद्धा की महिमा जिस प्रकार बतलाई है, 'मेधा' बुद्धि की महिमा भी उसी प्रकार गाई है। नीचे कुछ मन्त्र मेधाविषयक उद्धृत किये जाते हैं।

यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते।
तया मामद्य मेधयाग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा॥ य०।३२।१४

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विद्वान् और बुजुर्ग जिस मेधा की उपासना करते रहे हैं, उसी मेधासे हे भगवन्! मुझे भी मेधावी बनाओ।

गायत्री मन्त्र वेदों का प्रधान मन्त्र है।

तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि।
धियो यो नः प्रचोदयात्॥

उस सर्वोत्पादक परमदेव परमात्मा के पवित्र तेज का हम ध्यान करें। वह हमारी बुद्धियों को प्रेरित करने वाला हो।

वाजश्च मे प्रसश्चमे प्रयतिश्च मे प्रसितिश्च मे।

धीतिश्चमे इत्यादि में अन्न और सन्तति आदि के साथ धीति-बुद्धि के लिये भी प्रार्थना मिलती है।

मेधाम्मे वरुणो ददातु मेधामग्निः प्रजापतिः।
मयि मेधाममयि प्रजां।

नाना तु विद्या चाविद्या च। यदेव विद्यया करोति श्रद्धयोपनिषदा तदेव वीर्यवत्तरं भवति। छान्दोग्य।

४—भारत वर्ष में तर्क और धर्म का भ्रातृभाव

योरप के एक लेखक ने Religion और Science को ऐसी बहिनें बताया है, जो सदा आपस में लड़ती रहती हैं। परन्तु भारतवर्ष में इससे बिल्कुल उल्टा रहा है। कभी२ विदेशी प्रभाव या अत्यन्त जड़ता के कारण कहीं कहीं श्रद्धा और ज्ञान का युद्ध दिखाई देता हो, परन्तु सामान्यतया प्राचीनतम काल से धार्मिक विचारों की तत्वज्ञान से मित्रता रही है। वेदों में श्रद्धा और तर्क दोनों की महिमा बताई गई है। उपनिषदें, जिनकी धार्मिकता सर्व सम्मत है, तत्वज्ञान की खान हैं। दर्शन ग्रन्थ मोक्ष के साधन बताते हैं, धर्म की व्याख्या करते हैं और और स्वतन्त्र दार्शनिक विचारों द्वारा सृष्टि का रहस्य जानने का यत्न करते हैं। भारतवर्ष में जब तक विदेशी प्रभाव ने लोगों को अनुचित कट्टरपन नहीं सिखाया था, तब तक धर्म का तत्वज्ञान या विज्ञान से युद्ध नहीं दिखाई दिया। सम्पूर्ण इतिहास में ऐसे दृष्टान्त ढूंढने से भी न मिलेंगे, जहां केवल तत्वविचारणा और स्वतन्त्र वैज्ञानिक विचार को धर्म का विरोधी समझ कर दबाया गया हो। यह एक आश्चर्यजनक दृश्य है, जिसे पश्चिम की दुनिया मानने तक का साहस नहीं कर सकती।

५. इनका स्वाभाविक सख्य या विरोध

इस का कारण क्या है? कारण यह है कि भारतवर्ष में निम्न लिखित सचाइयों को सदा स्वीकार किया गया है।

(१) सृष्टि के आधिभौतिक, आधिदैवत तथा आध्यात्मिक नियमों का नाम धर्म है।

(२) तत्वज्ञान तथा विज्ञान इन्हीं नियमों के भिन्न२ पहलुओं के ढूंढने के यत्न का नाम है। इस कारण तत्वज्ञानी और विज्ञानी धर्म के ही उपासक हैं।

(३) सचाई एक है— इस कारण यदि ठीक प्रकार से Philosophy (तत्वज्ञान) और विज्ञान (Science) का प्रयोग किया जायगा तो उस का फल धर्म के यथार्थ रूप का परिज्ञान ही होगा। तत्व ज्ञान और विज्ञान धर्म परिज्ञान के ही साधन हैं।

इस दशा में युद्ध कैसा? युद्ध तब होता है जब धर्म या तत्वज्ञान का स्वरूप उल्टा समझ लिया जाय। Religion और Rationalism या Philosophy या SeiNce में जो युद्ध दिखाई देते हैं, उन की तह में निम्नलिखित भूलें प्रतीत होती हैं—

(१) धर्म केवल ईश्वर पर अहेतुक विश्वास का नाम है।

(२) ईश्वरविश्वास हृदय का विषय है, दिमाग़ का नहीं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

(३) तत्वज्ञान या विज्ञान का कार्य केवल विद्यमान विश्वासों को तोड़ना है, संसार की सारी स्थिति को समझाना नहीं।

(४) भौतिक नियमों के परिज्ञान से ईश्वर पर विश्वास उड़ जायगा।

ऐसे ऐसे भ्रम हैं, जो Religion नाम की संकुचित वस्तु के साथ तत्वविचार का युद्ध कराने के कारण होते हैं। योरप में ईसाइयत का विज्ञान से जो भारी संग्राम हुआ उसके विशेष कारण निम्नलिखित थे—

(१) हज़रत ईसा ने अपने सिद्धान्तों का प्रचार करने में केवल विश्वास और प्रेम से काम लिया। विश्वास और प्रेम की अनिवार्य शक्ति का यह फल हुआ कि, ईसाइयत ने इतनी दुनिया को व्याप लिया, परन्तु क्योंकि ईसा ने लोगों के दिमागों को प्रभावित या जागृत करने का यत्न नहीं किया, इस कारण ईसाई मत सदियों तक योरप में ज्ञान रूपी प्रकाश का शत्रु बना रहा।

(२) सेण्ट आगस्टाइन ने ईसाई मत के दार्शनिक सिद्धान्तों की जड़ पुराने अहदनामे के प्रारम्भिक भाग पर रखी। यह ईसाइयत की घातक अशुद्धि थी। हजरत ईसा ने सृष्टि उत्पत्ति आदि विषयों को मनुष्यों के विचार पर छोड़ दिया था। सेण्ट आगस्टाइन ने एक पुराने कल्पनाप्रधान कथानक ग्रन्थ में ईसाइयों के दिमागों को बांध दिया। परिणाम यह हुआ कि तत्वज्ञान और विज्ञान को सदियों तक ईसाई अन्धकार के किले के साथ टक्करें मारनी पड़ीं।

(३) ईसाई जगत् में 'धर्म' का विस्तृत विचार कभी समझा ही नहीं गया। उनकी दृष्टि में Religion एक छोटी सी संकुचित वस्त रही है जो छुई मुई के पत्ते के समान किसी हल्के से हल्के स्पर्श को भी नहीं सह सकती।

६. तत्व ज्ञान और विज्ञान धर्म ज्ञान के साधन हैं

संसार के व्यापी नियमों का नाम धर्म है। विज्ञान संसार के भौतिक नियमों के ज्ञान का यत्न करता है। विज्ञान धर्म के एक अंग की खोज करता है। इन दोनों में विरोध क्यों होना चाहिये?

तत्वज्ञान संसार के सूक्ष्म रहस्यों और परोक्ष नियमों के ज्ञान का यत्न करता है। वे परोक्ष व्यापी नियम भी धर्म के अन्तर्गत हैं। उन नियमों के ज्ञान का यत्न नियमों का विरोधी कैसे हो सकता है?

धर्मज्ञान और तत्वज्ञान में कोई युद्ध नहीं हो सकता। धर्म का ऐसा विशाल रूप मानने के कारण ही भारतवर्ष में हमें पादरी लोग विज्ञान के पण्डितों से लड़ते दिखाई नहीं देते। धर्म-सत्य नियमों-के जानने के जितने साधन हैं, उन्हें हमारे दर्शन ग्रन्थों में और धर्म ग्रन्थों में स्वीकार किया गया है।

वैशेषिककारने भौतिक नियमों के जानने का जो यत्न किया, उसे वह धर्म के जानने का ही उपाय समझता था। दूसरी ओर धर्म के चार साक्षात् लक्षण बताने वाला ग्रन्थ एक स्मृति ग्रन्थ है। स्मृति ग्रन्थ का दूसरा नाम धर्मशास्त्र है। 'वेदो ऽखिलो धर्ममूलम्' वेद को धर्म का मूल पुस्तक माना गया है-और उसके अंगों को देखिये तो ज्योतिष भी उन में है। भारत में धर्म का ज्योतिष से इतना मेल आश्चर्य में डालने वाला है। ईसाइयत ने चौदवी सदी तक योरप में अपना राज्य रखा। इतिहास साक्षी है कि इतने लम्बे समय में योरप ने एक भी स्वतन्त्र विचारक ज्योतिषी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उत्पन्न नहीं किया। जब कौपर्निकस, गैलीलियो आदिने ज्योतिष का रहस्य जानने का यत्न किया, तब उनके साथ जो व्यवहार किया गया, वह ईसाइयत के इतिहास पर बड़ा गहरा धब्बा है।

७—धर्म और तर्क तथा श्रद्धा

तर्क को हम यहाँ बड़े विस्तृत अर्थों में लेते हैं। तर्क किसी वस्तु के सत्य रूप को जानने के लिये उचित प्रमाणों से उसके विषय में अन्वेषण है। अन्वेषण के कई उपाय हैं। जैसा पदार्थ है, उसका रहस्य जानने के लिये वैसे ही उपाय काम में लाने पड़ते हैं। भौतिक पदार्थों के अन्वेषण के लिये भौतिक विज्ञान की आवश्यकता है। मानसिक रहस्यों का ज्ञान प्राप्त करने के लिये मनोविज्ञान की उपयोगिता है। आत्मा के सदाचार सम्बन्धी विज्ञान की उपलब्धि सदाचार शास्त्र का विषय है। ये सब विज्ञान और तत्वज्ञान के प्रकार धर्म के ज्ञान में ही साधन भूत हैं।

धर्म का परिज्ञान सब से प्रथम आवश्यक है। धर्म को जान कर उस पर श्रद्धा होती है। श्रद्धा का आधार एक विशेष कोटि का ज्ञान ही है। यह समझना भ्रमात्मक है कि श्रद्धा का तर्क से कोई सम्बन्ध नहीं है। तर्क से ज्ञान की प्राप्ति है। जानी हुई बात में निश्चयात्मकता हो जाने पर विश्वास हो जाता है। विश्वास की सहचारिणी श्रद्धा ही सात्विकी श्रद्धा है, बिना भली प्रकार निश्चयात्मक ज्ञान के जो विश्वास या श्रद्धा उत्पन्न हो जाते हैं, वे अन्धविश्वास और अन्धी श्रद्धा के नाम से कहे जाते हैं। वेद में ऐसी श्रद्धा की प्रशंसा नहीं है। संसार में ऐसी श्रद्धा फलदायिनी नहीं होगी।

संसार के व्यापी नियमों का अर्थात् धर्म का परिज्ञान विज्ञान और तत्वज्ञान द्वारा होता है। निश्चयात्मक परिज्ञान हो जाने पर उसमें श्रद्धा उत्पन्न होती है। ऐसी दशा में विज्ञान या तत्वज्ञान का श्रद्धा से युद्ध समझ में ही नहीं आ सकता। जहां युद्ध दिखाई देता है, वहां या तो धर्म का स्वरूप उल्टा समझा गया है और या अन्धी श्रद्धा का नाम श्रद्धा रख दिया गया है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जातकर्म संस्कार

लेखक—पं० अत्रिदेव आयुर्वेदालंकार

१–प्रथम दिवस
२–Early development.
३–भोजन और पाचन
४–वस्त्र और व्यायाम
५–वृद्धि (Growth)और स्वास्थ्य
६–मानसिक उन्नति
७–धात्री का कर्तव्य
८–माता के लिये आवश्यक बातें

प्रथम दिवस—

यह स्वीकार करते हुवे कि शिशु विना किसी बाधा के पूर्ण स्वस्थ उत्पन्न हो गया है अब हमारा क्या कर्तव्य है ?

सब से प्रथम शिशु का जातकर्म संस्कार करना पड़ता है–शिशु की नाभि से २½ च की दूरी पर रेशम या अन्य कोमल पदार्थ से एक बन्ध दें और उस से आध इंच की दूरी पर एक अन्य बन्ध दें, जिससे कि यदि रक्त स्राव होगा भी तो बहुत नहीं होगा, अब किसी कृमिरहित (Disinfect) कैंची या चाकू से उस नल का छेदन करें–(आचार्य्य ने सोना या चांदी की कैंची का उपयोग लिखा है क्यों कि वह और धातुओं की अपेक्षा कृमिरहित (Anti-septic) होते हैं उनके परमाणु घनिष्ट होते हैं)

अब एक रुई के फोये से शिशु के नाक और मुख की श्लेष्मा को सम्यक् प्रकार साफ करें और आंख को टंकण क्षार (Lotion) से धोवें और उनमें ½ % Caustic Lotion डाल दें. शिशु उत्पन्न होते ही चिल्लाता है, जिस से कि श्लेष्मा बाहर होती है,और फेफड़ों में श्वास प्रश्वास की गति होने लगती है,इस लिये प्रथम रुदन (First Cry) आवश्यक है यदि ऐसा न हो तो अपशकुन लक्षण है और इसका यत्न चिकित्सक की सहायता से करना चाहिये।

इसी प्रकार श्रवण शक्ति को उद्बुद्ध करने के लिये शिशु के कानों पर पत्थरों का शब्द करने को ऋषि अत्रि आदेश करते हैं। इसके साथ "अङ्गादङ्गात् सम्भवसि" इत्यादि मन्त्र का पाठ करें।

इसके पश्चात् शिशु के स्नान का प्रबन्ध करें। स्नान का पानी बहुत गरम या बहुत ठण्डा न हो। उसके शरीर को कोमल हाथों से Kalling गति के साथ जैतून के तैल या सरसों लोध्र आटे के उबटन से मालिश करें। यह तब तक मलें, जब तक कि शरीर से मैल की बत्तियां सम्पूर्ण रूप से न उतर जावें। तदनन्तर कोसे गरम पानी से एक २ अंग को पृथक् २ रूप से धोवें, और साथ २ सुखाते

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जावें। शिशु को पानी में गोता न दें। नाभि-नाल को गीला होने से बचावें। फिर फ़लालैन के कपड़े में उसे लपेट दें।

तदनन्तर स्वर्ण भस्म और वच को मधु से मिला कर चटावें-जिस से कि बल्ग़म बाहर हो जावेगा-और शिशु में निर्बलता न होगी (वच और मधु में श्लेष्मा के लिये लेखन गुण है, स्वर्ण बुद्धिप्रद और शीतवीर्य है) तदनन्तर शिशु को, यदि बालक हो तो दक्षिण और कन्या हो तो वाम, स्तन देवें। इसके पश्चात् शिशु को सोने दें।

स्तन—

यद्यपि इस स्तन के देने से बालक को किसी प्रकार का दूध नहीं मिलता, क्योंकि तीन चार दिन तक स्तनों में शुद्ध दूध नहीं आता, अपितु Cosin होती है, जो कि मृदु विरेचक है।

स्तन के स्पर्श से माता को एक विशेष प्रकार का अनुभव होता है जिस से उसका शरीर रोमाञ्चित होता है और स्तनों में दूध आ जाता है। इसका कारण यह है कि जिस प्रकार प्रिय वस्तु के संस्पर्श, स्मरणादि से उत्पादक अंगों में उत्तेजना होती है, और जिस प्रकार अधिक उत्तेजना से शुक्रसरण होता है, ठीक उसी प्रकार माता के स्तनों में भी स्नेह से दूध क्षरण होता है। यही कारण है कि जिन माताओं के स्तनों में दूध नहीं उतरता, उनकी यही चिकित्सा है कि दिन में कई वार स्तन बच्चे को दिया जावे।

जो मातायें शिशु को दूध नहीं पिलाती या अंगी या कपड़े के ऊपर से पिलाती हैं उनके बालक कमज़ोर रहते हैं।

दूध और आर्त्तव का आपस में बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध है।

यदि स्तन ढीले हों तो Quedecalane और पानी मिलाकर उनकी मालिश करें।

यदि स्तनों में दूध न हो तो धात्री का दूध या कृत्रिम दूध देवे। इसके लिये धात्री को जो कि निम्न गुणों वाली हो चुनें।

धात्री—

धात्री युवा और पूर्ण स्वस्थ हो। उसका बालक जीवित हो और समान आयु और समान शील का हो। स्वच्छ तथा उत्तम स्वभाव की हो। यदि श्यामाङ्गी हो तो बहुत उत्तम है। श्यामाङ्गी उसे कहते हैं कि जिसका दूध शीत-ऋतु में उष्ण और ग्रीष्म में शीत हो तथा शिशु से प्यार करने वाली हो।

कृत्रिम दूध—

इसके लिये बहुत से नियम हैं परन्तु संक्षेप से निम्नतालिका है-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

	दुध	खांड	पानी	मलाई	राशि	विशेष
तीसरेसे १०वें दिन तक	½ Table.	⅛ Tea.	1½ Table.	———	२० औन्स.	*Table*–Table-spoonful.
१० वें से ३ सप्ताह तक	½-¾ Table.	½ Tea.	1½ Table.	½ Tea.	३० ,,	*Tea*–Tea-spoon ful,
द्वितीय मास	1½ Table.	⅜ Tea.	2½ Table.	1 Tea.	३२ ,,	
तृतीय मास	2½ Table.	1 Tea.	3 Table.	2 Tea.	३२ ,,	
पञ्चम मास	4 Table.	1½ Tea.	2 Table.	3 Tea.	४० ,,	

दूध पिलाने का नियम—

प्रथम २ महीने तक प्रत्येक २½ घन्टे बाद और फिर ६ मास तक ३½ घन्टे बाद, इसके उपरान्त ४ घन्टे के बाद दें, रात्रि को १या२ बार से अधिक न दें।

संक्षिप्त नियम

१–दूध के समय यदि सोता हो और सोने से न उठे तो बीच में मत देना।

२–दूध देते समय नाक स्तन पर न लगने दें।

३–दूध देते समय सिर को एक हाथ से उंचा रखें और शेष भाग तिरछा।

४–स्तन को दूध पिलाने से पूर्व और पीछे साफ़ करलें।

५–बच्चे के मुख को भी अच्छी प्रकार रुई से साफ़ कर दें।

३–रोते समय चुप करने के लिये स्तन न दें।

७-बीच में न दें।

८–सोते समय छाती पर या बगल पर रख कर न सुलावें और न स्तन दें, अपितु बैठ कर दें।

Early development —

भार–

शिशु का भार प्रायः उत्पन्न होने के प्रथम दिन से तीन दिन तक कुछ घटता है, और फिर बढ़ता है, जिसका कारण मल (Meconium) का निकलना है, जो कि पेट में एकत्रित रहता है। यदि यह न निकले तो एरण्ड का तेल १ड्राम मात्रा में दें। उत्पन्न होते समय भार लड़के का ७½ पौण्ड होता है और कन्या का ७ पौण्ड। उस के बाद प्रथम दो महीने में प्रति सप्ताह ५½ औं० बढ़ता है, २ से ४ महीने तक प्रति सप्ताह ४½ औं० और ४ से ६ महीने तक प्रति सप्ताह ३½ औं० बढ़ता है। २६ सप्ताह में १५ पौं० ५ औन्स और १ साल में तिगुना हो जाता है और अगले चार वर्षों में प्रथम वर्ष का दुगना हो जाता है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उंचाई—

चौथे साल में उत्पत्ति से दुगना हो जाता है अर्थात् १ वर्ष में ५०% बढ़ता है उदाहरण के लिये २० इंच का शिशु ३० इंच हो जावेगा। इसी प्रकार छाती चौथे साल १½ गुनी होती है, यदि कम फैले तो कोई विशेष चिन्ता की आवश्यकता नहीं, क्योंकि शिशु का स्वास्थ्य भार पर निर्भर है। यदि शिशु का भार बढ़ता है तो कोई घबराने की बात नहीं। छाती के लिये प्राणायाम, मुखबन्द कर के गहरा श्वास, रात को भी मुख बन्द कर के नासिका से श्वास लेवे यदि अभ्यास हो तो मुख पर पट्टी बांध दें।

तोलना—

शिशु को प्रथम वर्ष कम से कम ६ मास तक अवश्य प्रति सप्ताह तराजू पर नियत समय पर और नियत कपड़ों में (उत्तम है नग्न) तोलना चाहिये और यदि भार न बढ़े तो चिकित्सक से पूछना चाहिये।

Vaccination या Circumcision,

Vaccination—

Vaccination का समय प्रथम ६ सप्ताह से २ साल तक उत्तम है। इस से शिशु चेचक (Small Pox) से बच जाता है-स्थान को पानी आदि से बचाना चाहिये।

खतना Circumcision.—

कई चिकित्सक इसे आवश्यक समझते हैं क्योंकि इस से स्वास्थ्य (Health) और इन्द्रिय की स्वच्छता रहती है जिस से कि असाधारण तौर पर उत्तेजना नहीं होती इस के लिये भी प्रथम ६ सप्ताह का समय उत्तम है।

कोई २ चिकित्सक इसे आवश्यक नहीं समझते। उनका कहना है कि इससे बाह्य विक्षोभ अधिक होता है और इन्द्रिय में उत्तेजना होती है। अस्तु, लेखक भी इसी के साथ सहमत है।

दांत—प्रथम दाँत ६ महीने से निकलते हैं दाँतों का निकलना स्वाभाविक क्रिया होने से कोई बाधा नहीं देते, परन्तु यदि अपचन या आमाशय का रोग हो तो तकलीफ़ होती है।

२ नीचे के कर्त्तक दांत		६-८ मास
४ ऊपर के "	"	७-९ मास
४ नीचे कर्त्तक और ऊपर नीचे के ८ Moler		१२-१४ "
Canine—		१८-२० "
कुल योग २०		

यही कारण है कि ६ ठे मास से ९ वें मास में माता के दूध के साथ कृत्रिम दूध भी देना स्वीकार करना चाहिये और ९ वें मास से १२ वें मास तक दूध छुड़ा देना चाहिये।

यही कारण है कि ६ ठे महीने में अन्न प्राशन संस्कार का विधान है।

भोजन—

भोजन सर्वथा नरम और पाचक होना चाहिये। भोजन में असुविधा होने से नाना

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्रकार के विकार, मलबन्ध आदि होते हैं। कई मातायें रुपये की इच्छा से शीघ्र दूध छुड़ा देती हैं जिस से कि शिशु कमज़ोर होजाता है। इस के विपरीत कई मातायें गर्भ धारण न होने के लिये अधिक दिनों तक दूध पिलाती हैं जिस से कि उनका स्वास्थ्य ख़राब हो जाता है। भोजन नरम और नियमित होना चाहिये और नियत समय पर होना चाहिये।

गति—

४र्थ मास में सिर ऊपर रखता है, ७ वें मास में रेंगता है और खड़ा होने लगता है। १२ वें मास में चलना आरम्भ करता है। शिशु को शीघ्र खड़े होने का अभ्यास न कराना चाहिये, इस से उसे Ricket हो जाता है।

मल बन्ध—

यह एक साधारण बीमारी है जो कि अनियमित भोजन के कारण होती है—

कारण—i. पैतृक निर्बलता-जिससे आंत कम ज़ोर होती है।
ii. भोजन की कमी
iii. वसा की कमी

चिकित्सा—i. इस के कारण को हटा दें इस के साथ भोजन, खुली वायु और व्यायाम की ओर ध्यान दें।

ii. आन्तों को एरण्ड के तैल से उदर के ऊपर मलें, शीत से बचावें।

iii. Enema दें। परन्तु जहां तक हो इस से बचें। इस के लिये गरम पानी में एरण्ड का तैल दें परन्तु इस से उत्तम फलवर्त्ति या Glycerine की पिचकारी हैं।

त्वग् रोग—

इस में त्वचा पर छोटी २ फुन्सियां होजाती हैं। इसके लिये एक हल्का विरेचन दे दें और अपचन की चिकित्सा करें।

Roughness—

इस के लिये त्वचा को धीरे २ कोमल वस्त्र से रगड़ें और फिर कोई Vaseline आदि लगादें।

कृत्रिम दूध के लिये बोतल को पूर्ण रूप से स्वच्छ रखना आवश्यक है। उसकी Teat को बदलते रहना चाहिये। उत्तम हो यदि बोतलें २ हों, एक साफ़ हो।

दूध को देने से पूर्व उबालना अवश्य चाहिये। उसे मक्खी आदि से बचाकर रखना चाहिये Pusturition करना उत्तम है, इससे Vitamine नहीं मरते।

वस्त्र और व्यायाम

वस्त्र में तीन गुण होने चाहियें— i कोमलता (Softness). ii. हल्कापन iii रक्षा कर सकें।

वस्त्र मुलायम, हल्के तथा ढीले हों। हाथ और पाँव की किसी भी गति में किसी प्रकार की बाधा नहीं आने देनी चाहिये। गर्दन पर खुले हों। इनसे सर्दी आदि की रक्षा हो।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

व्यायाम

शिशु स्वयमेव अपनी व्यायाम आप करता है। वह किसी वस्तु को खींचता है, फेंकता है, चिल्लाता है, रोता है, भागता है, धकेलता है, दौड़ता है, चीख मारता है। परन्तु यह सब उसकी स्वाभाविक क्रिया है, उसे इसके विषय में कुछ ज्ञान नहीं, यही कारण है कि जब वह दौड़ता है तो सिर नीचे करके दौड़ता है, इसलिये उसे बताना चाहिये कि सिर पीछे करके और छाती को आगे निकाल कर दौड़े इत्यादि।

व्यायाम खुली वायु में करनी चाहिये। इसी प्रकार सोते समय दर्वाजे खुले होने चाहियें, परन्तु सीधी वायु और सर्दी से बचाना चाहिये।

शिशु को कड़ी चटाई और बिना सिरहाने या थोड़े से सिरहाने पर, जिससे शरीर समानान्तर रहे, ऐसी अवस्था में सुलाना चाहिये।

यदि रात्रि को मूत्र-स्राव हो तो उसे जगाकर करवा देना चाहिये। इसका कारण वातनाड़ियों की कमज़ोरी (Nerve weakness) है। यह यातो $3\frac{1}{2}$ साल तक स्वयमेव बन्द हो जावेगा, न हो तो चिकित्सा करानी चाहिये।

वृद्धि (Growth)

शिशु का स्वास्थ्य उसके भोजन और पालन पर निर्भर है, परन्तु इसके होते हुए भी कुछ रोग हैं जो कि आक्रमण कर जाते हैं और उनका ज्ञान होना चाहिये—

i. आंत्रवृद्धि (Hernia)–यह एक प्रकार की वंक्षण प्रदेश पर अण्डाकृति सूजन होती है जो कि अण्डकोषों की तरफ़ जाती है। इसमें Navel छिद्र में आँत उतर आती है।

ii. पाषाण गर्दभ (Mumps)— यह एक प्रकार का शोथ है, जो कानों के नीचे होता है। इसमें गला सूज जाता है, मुख खुलता नहीं, निगलना मुश्किल हो जाता है, मलबन्ध, और ज्वर होता है। इसके लिये शिशु को पृथक् करके विरेचन दें और गले पर सेक करें।

iii. विचर्चिका (Roughness)—यह एक Eczema है। इसमें त्वचा पर खाज होती है, और छोटी-छोटी फुन्सियाँ हो जाती हैं, जिनसे पानी निकलता है, और जहाँ पानी लगता है वहाँ और नई फुन्सियाँ पैदा हो जाती हैं। इसका कारण अपचन होता है, उसकी चिकित्सा करें।

iv. दद्रु (Ringworm)— इसमें फुन्सियाँ चारों ओर होकर एक चक्का बनाती हैं, और फैलती जाती हैं। इनमें सिर का दाद अधिक कठिन है। इसके लिये स्थान को स्वच्छ रक्खें, सिर के बालों को कटा कर Formaline Lotion से धो दें और Chrysophanic oint. लगावें।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

V Roshas कोठ

i. Pimples—यह मुख पर होती है। इसके लिये मुख को तौलिये से रगड़ कर Vaseline लगावें।

ii. खसरा (Chickenpox) यह एक प्रकार का कोठ होता है जो माथे पर निकलता है, फिर धीरे धीरे सारे शरीर पर फैल जाता है, और त्वचा लाल होतीं है, यह समूह में होता है।

iii. चेचक Small Pox—इसमें कोठों में पानी भरता है, फिर फटा सा पानी बनकर फट जाते हैं और छिलके छिलके उतरते हैं, ज्वर अधिक होता है।

iv. Measel—इस में कोठ माथे, गालों पर समूह में होते हैं और मुख में श्वेत Spot होते हैं। शिशु को जुखाम, खाँसी, ज्वर होता है।

v. आंत्रज्वर (Typhoid)— इस रोग में ग्रीवा पर कोठ निकलते हैं और ज्वर १०४ या इस से अधिक होता है प्रातः कम और सायं अधिक होता है। इस रोग में Bedsore से रोगी को बचना चाहिये।

इन सब लक्षणों में रोगी को पृथक् कर देना चाहिये। उसके पास ज़्यादा नहीं आना चाहिये। उसके सब उपकरण पृथक् कर देने चाहियें। हाथों को कृमिरहित (Disinfect) रखना चाहिये। चिकित्सक से अवश्य सम्मति लेवे। भोजन द्रव (Liquid) दूध दें।

V1 सर्दी (Cold) इसमें छींके बहुत आती हैं, खाँसी उठती है, कभी कभी ज्वर भी हो जाता है, इसके लिये भपारा Eucalyptis oil आदि का दें।

स्वास्थ्य को जिह्वा बता देती है, इसलिये यदि मलबन्ध हो तो उसकी उचित चिकित्सा करें, अपचन को हटा दें।

V11 अतिसार (Dioarrhia)-इसके लिये यदि अतिसार अधिक हो और अजीर्ण या अपचन हो तो एरण्ड तेल (CasterOil) की एक मात्रा दें अन्यथा चूने का जल (Lime Water) दूधादि में देवें।

V111 कृमि (worms)--अशुद्ध पानी के पीने से आँतों में कृमिहो जाते हैं। ये कृमि मुख्यतः दो प्रकार के हैं—i. गोल (Round.) ii. सूत्र (Thread.) इसके लिये (Salt Enema) आदि दें, और चिकित्सक से सम्मति लें।

IX (Insect)-ये रात को शिशु को सोते समय काटते हैं, इसके लिये शरीर पर तैलादि लगा देना चाहिये और मसहरी का प्रयोग करें, सन्तरे का तेल (Oil Cetanila) उत्तम है।

10 विष (Poison)-यदि विष का पता लगे या सन्देह हो तो—

१. डाक्टर बुलावें २. बोतल या अन्नादि जिससे विष गया हो वह रक्खें ३. यदि विष का पता लगे तो प्रतिविष दें।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

यदि पता न लगे तो—

१. मुख और वस्त्रों को देखें यदि वे जले हों तो वमन न दें।

२. यदि बेहोश हो तो वमन न दें। उसे होश में लाने के लिये शोर Pinch करें परन्तु Smelling salt न सुंघावें।

३. इन दोनों अवस्थाओं से अतिरिक्त वमन देवें।

४. इसके बाद दूध, चाय आदि देवें उत्तेजना दें, सोने न देवें।

xi कुचलना— स्थान को ठण्डे पानी से Pod रख कर बाँध दें और अच्छा होने पर मालिश करें और आराम देवें।

xii जलना—यदि थोड़ा जला हो तो गरम पानी डालें, अधिक जला हो तो अलसी का तेल और चूना मिलाकर लगावें। अङ्ग को आराम दें।

xiii आक्षेप— इसके लिये गरम जल से स्नान (Hot water bath) दें। हाथ पाँव पर राई का लेप कर गरम रक्खें।

xiv अस्थिभंग—चिकित्सक को दिखावें। स्थान को बाँध दें।

xv नकसीर— इसके लिये रोगी को लेटा दें और सिर पर ठण्ढा पानी डालें। हाथों को सिर के ऊपर कर दें।

xvi आंख—यदि आँख में कुछ वस्तु गिर पड़ी हो तो उसे मलें नहीं, अपितु पलक को उलट करके देखकर निकाल दें, अथवा शहद लगा दें या ऊपर की पलक खींच कर नीचे की पलक के ऊपर ऊपर की पलक कर दें।

मानसिक विकास

मैं इस विषय से एकदम अनभिज्ञ हूं, इसलिये मैं कुछ नहीं लिख सकता हूं, तथापि संक्षेप से चन्द पंक्तियां लिखता हूं।

शिशु मन का उपयोग बहुत शीघ्र करने लगता है। वह नाना प्रकार के प्रश्न करता है—क्यों—यह प्रश्न वह प्रत्येक उत्तर में पूछता है? कोई कोई पिता इससे उकता जाते हैं। उन्हें चाहिये कि वे शिशु को सब समझा दें।

यदि वह एक गरम पतीली को छूता है तो उसे विस्तारपूर्वक बता देना चाहिये कि इस से तुम्हारा हाथ जल जावेगा। यदि वह फिर भी न मानें तो उसे करने दें, जिस से वह आगे से न करेगा। शिशुओं को सिखाने का सबसे उत्तम साधन (Instruments) उसके खेल और खिलौने हैं। उसे प्रारम्भ में इन्हीं के द्वारा शिक्षा देनी चाहिये।

शिशु को भूतादि से नहीं डराना चाहिये।

को मत्सरिणि लोकेऽस्मिन्
विद्वान् किञ्चित् चिकीर्षति।
किन्तु कश्चिद् भवेत् साधुः
ततोऽयं मे परिश्रमः॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विचार-प्रवाह

१. दीवाली का सन्देश

वर्ष भर के बाद आज फिर दीवाली आई है। आर्य जाति के वंशधर आज लक्ष्मी पूजा करेंगे, श्री राम की स्मृति मनाएंगे, ऋषि दयानन्द के उपकार याद करेंगे। आज हिन्दुओं के गरीब से गरीब परिवार में भी दो चार मिट्टी के दीये अवश्य जलाए जायेंगे, वर्ष भर आधा पेट भोजन करने वाले भारतीय भी आज कम से कम गुड़ की मिठाई अवश्य खाएंगे, कपड़ों के अभावसे नग्नप्राय रहने वाले इस देश के निवासी भी आज अपने चीथड़ों को धोकर स्वच्छ कर लेंगे, यदि सम्भव हुआ तो एक आध कपड़ा नया भी खरीद लेंगे। हमारा सम्पूर्ण समाज आज खुशी मनाएगा। बाजारों में रोशनी की जायगी, घरों में दीयों की पँक्तियां जलेंगी, लोग लक्ष्मी माता की अभ्यर्थना करेंगे। वर्ष भर दुख से सिसकने वाली हमारी जाति आज थोड़ी देर के लिये, अपना सम्पूर्ण दुःख भुला देगी। यह सब होगा। परन्तु किस लिये?

इस, 'किस लिये?' का उत्तर बहुत कठिन नहीं है। किसी हिन्दू से इस प्रश्न का उत्तर पूछ देखिये। झट से उत्तर मिलेगा—'इसलिये कि हमारे पुरखा भी आज के दिन यही सब कृत्य करते थे। उन पर लक्ष्मी माता की कृपा थी। इस अनुष्ठान से हम पर भी माता प्रसन्न होगी।' परन्तु मालूम नहीं कि लक्ष्मी माता हम आर्यजाति के कमज़ोर वंशधरों पर कब प्रसन्न होगी। हमलोग बाकायदा, नियमपूर्वक पिछले एक हज़ार वर्षों से इसी प्रकार दीये जला कर लक्ष्मी की अर्चना करते आरहे हैं, परन्तु माता प्रसन्न नहीं हुई। विपत्ति आने पर भी हम लोग दीवाली को नहीं भूले,—औरङ्गज़ेब के अत्याचारमय शासन में, जङ्गली नादिरशाह की आंधी के वर्ष, तथा भारतवर्ष के सब से बड़े अत्याचारी और लुटेरे शासक हेस्टिंग्स के ताण्डव नृत्य के दिनों में भी हम लोग दिवाली मनाना नहीं भूल सके। परन्तु इस देश से एक बार रूठ कर, एक हज़ार दीवालियों द्वारा स्तुत किये जाने पर भी लक्ष्मी माता प्रसन्न नहीं हो सकी।

आज भी लक्ष्मी इस देश पर प्रसन्न नहीं है। यहां लोग भूखे मर रहे हैं। जाति के शरीर और दिमाग़ क्रमशः कमज़ोर होते चले जा रहे हैं। आयु का माध्यम २३ वर्ष तक जा पहुंचा है। बीमारियों ने इस देश को अपना घर बना लिया है। प्रति वर्ष ४० लाख के करीब मौतें संक्रामक रोगों के कारण ही हो रही हैं। देश का व्यवसाय और व्यापार नष्ट हो चुका है। इस पर भी देश में साम्प्रदायिक मतान्धता बढ़ रही है—भाई भाई से लड़ रहा है। आश्चर्य है कि हमारी सैंकड़ों अर्चनाएं भी लक्ष्मी को प्रसन्न नहीं कर सकीं। देश की लक्ष्मी बहुत दिन हुए, यह देश छोड़ कर चली गई है-उसे फिर लौटाया नहीं जा सका।

हां, एक दिन माता लक्ष्मी हम लोगों पर भी प्रसन्न रह चुकी है। एक समय हमारे यहां भी माता की सच्ची अर्चना होती रही है। उस समय हम लोग विजयी थे, वीर थे, मिले हुए थे। उस दिन हमारी बाहुओं में बल था, मस्तिष्क में विचार शक्ति थी, हृदय में क्षमा थी और मुख पर सरल मुसकिराहट थी। उन्हीं दिनों ठीक आज के दिन ही, एक साल हम लोगों ने अपने हृदय-सम्राट् रामचन्द्र का स्वागत किया था। इन्हीं रामचन्द्र ने बरसों से चली आरही आर्यों और अनार्यों

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

की लड़ाई का अन्त किया था। वह विजयी आज के दिन ही अपनी विजय यात्रा समाप्त कर वापिस आया था।

हमारी आज की दीवाली उस युग की दीवाली का नाटकमात्र ही सही, परन्तु हम इसे इसी रूप में मनाते चले जायेंगे। हमें विश्वास है कि एक दिन अवश्य इस मुर्दे में जान आ जायगी। एक दिन यही निर्जीव दीवाली भारतीय हृदयों में जीवन का सार फूंक देगी। यह दिन तब आ जायगा जब कोई सच्चा वीर लक्ष्मी पूजा का वास्तविक मर्म समझ जायगा—जब कोई माई का लाल सन्त रामदास की तरह, इस दीवाली के वज्र को हाथ में लेकर भारत में नवीन आत्मा का सञ्चार कर देगा। हमारी आज की दीवाली निर्जीव है सही— परन्तु इस निर्जीव हड्डियों के ढेर में दधीची ऋषि के कंकाल के समान वज्र की दैवीय शक्ति सन्निहित है। यह कठोर वज्र, भारत का कोई शत्रु सहन न कर सकेगा। वह समय आने पर इस देश के निवासी सहसा जाग कर यह अनुभव करने लगेंगे कि हम आज भी वही हैं, जो आज से दो हज़ार वर्ष पूर्व थे!

इस दीवाली में भारतवर्ष के गौरवमय इतिहास का निचोड़ जीवित रूप में विद्यमान है। भारतवासी जिस दिन इस अमृत को पीकर प्राचीन और नवीन को एक ही समझने लगेंगे—उसी दिन सच्ची दीवाली मनाई जा सकेगी। उस दिन संसार की कोई शक्ति लक्ष्मी माता को भारत में आने से रोक नहीं सकेगी।

२. औपनिवेशिक स्वराज्य बनाम पूर्ण स्वतन्त्रता

नेहरू कमेटी की रिपोर्ट के सर्व-दल-सम्मेलन द्वारा स्वीकार किये जाने के बाद से इस देश में औपनिवेशिक स्वराज्य और पूर्ण स्वतन्त्रता के नाम पर खासी बहस उठ खड़ी हुई है। पिछले वर्ष मद्रास कांग्रेस ने 'जातीय महासभा का ध्येय पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त करना है' यह घोषणा की थी। उस समय भी इस प्रश्न पर पर्याप्त विवाद हुआ था। अब सर्व-दल-सम्मेलन ने अपना ध्येय भारत में औपनिवेशिक स्वराज्य स्थापित करना स्वीकार किया है। इस सम्मेलन में कांग्रेस के प्रतिनिधि भी पर्याप्त मात्रा में उपस्थित थे। इस सम्मेलन के प्रधान जातीय महासभा के भी प्रधान हैं, उन्होंने ही यह सम्मेलन आमन्त्रित किया था। अतः यह स्वभाविक था कि कांग्रेस का वह भाग, जो पूर्ण स्वतन्त्रता का पोषक है, इस ध्येय के विरुद्ध आवाज़ उठाता। ऐसा ही हुआ भी है। सर्व-दल-सम्मेलन के निर्णय की प्रतिक्रिया के रूप में पं० जवाहरलाल नेहरू, श्री सुभाशचन्द्र वसु और श्रीयुत् श्री निवास ऐयङ्गर आदि ने कांग्रेस के अन्दर 'स्वाधीन-भारत-संघ' की स्थापना की है। पिछले दिनों इस संघ का बाकायदा संगठन भी कर लिया गया है। श्री निवास ऐयङ्गर महोदय ही इस संघ के प्रधान निर्वाचित हुए हैं। इन्हीं सब अवस्थाओं से देश में आजकल भारत के ध्येय के विषय में खासा विवाद उठ खड़ा हुआ है।

औपनिवेशिक स्वराज्य में भारतवर्ष की स्थिति क्या होगी—इस प्रश्न पर नेहरू कमेटी की रिपोर्ट में पर्याप्त प्रकाश डाला गया है। अन्त में कमेटी के सदस्य इस निर्णय पर पहुंचे हैं कि औपनिवेशिक स्वराज्य में भारतवर्ष अंग्रेज़ी साम्राज्य का अंग बन कर तो रहेगा, परन्तु साम्राज्य का यह अंगीभाव भारतवर्ष की अपनी इच्छा पर ही आश्रित होगा। साम्राज्य की संघशक्ति के द्वारा भारतवर्ष को लाभ ही होगा, हानि नहीं। परन्तु कांग्रेस का बहुमत कमेटी की इस राय से सहमत नहीं है। यहां तक कि

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्वयं माननीय पं० मोतीलाल नेहरू भी व्यक्ति रूप से पूर्ण स्वतन्त्रता के पोषक हैं, उन्होंने अन्य राजनीतिक दलों के साथ समझौते के तौर पर औपनिवेशिक स्वराज्य को सर्व-दल-सम्मेलन का ध्येय बनाना स्वीकार कर लिया है । कांग्रेस का बहुमत पूर्ण स्वतन्त्रता का पक्षपाती है। आज भी कांग्रेस का ध्येय पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त करना ही है।

हमारी सम्मति में वर्तमान समय की अवस्थाओं में इस प्रश्न पर गम्भीर विवाद छेड़ कर आपस में फटाव उत्पन्न कर लेना बुद्धिमत्ता का कार्य नहीं है। जब अवसर निकट आवेगा, तब स्वयं ही इस प्रश्न का अन्तिम निर्णय हो जायगा। यदि स्वराज्य-प्राप्ति के साधनों पर कुछ मतभेद खड़ा होता, तो यह एक समझ आने लायक बात थी, परन्तु केवल ध्येय के प्रश्न पर ही आपस में लड़ कर भेद-भाव पैदा कर लेना कदापि उचित प्रतीत नहीं होता। देश के अन्य सब राजनीतिक दल जिस ध्येय तक पहुँचने में काँग्रेस का साथ देने के लिये तैयार हैं, वहाँ तक जाने में उन्हें साथ ले लेने से देश का ही कल्याण है। इस गम्भीर प्रश्न का अन्तिम निर्णय आज ही कर लेने से क्या लाभ है? औपनिवेशिक स्वराज्य वालों को अपने साथ मिला लेने से अभी तक तो कुछ नहीं छिनता। जिस दिन उन्हें साथ रखने से पूरी स्वाधीनता छिनने की नौबत आ जायगी उस दिन औपनिवेशिक स्वराज्यवादी स्वयं भी पूर्ण स्वाधीनतावादी बन जायँगे। इस सम्बन्ध में विचार करना कुछ बुरा नहीं है, परन्तु केवल इसी कारण आपस में वैमनस्य या अनेकता के भाव ले आना कभी प्रशंसनीय नहीं कहा जा सकता।

× × ×

३. स्वाधीन-भारत-संघ

देश के दो यशस्वी नवयुवक नेताओं के उद्योग से हाल ही में स्वाधीन-भारत-सङ्घ की स्थापना हुई है। यह सङ्घ काँग्रेस का हिस्सा बनकर रहेगा, अर्थात् इसका सदस्य बनने के लिये काँग्रेस का सदस्य बनना भी आवश्यक होगा। सङ्घ का मासिक चन्दा प्रत्येक सदस्य की मासिक आय का शताँश होगा। इस सङ्घ का सङ्गठन आर्यसमाज के सङ्गठन के ढंग पर ही किया गया है। सङ्घ के सदस्यों के लिये एक आवश्यक शर्त यह भी है कि वे सम्प्रदायवादी न हों। किसी सम्प्रदाय या धर्म के नाम पर किसी भी क्षेत्र में कोई विशेष अधिकार माँगना—यह सम्प्रदायवाद की व्याख्या की गई है। हम इस स्वाधीन-भारत-सङ्घ का हार्दिक अभिनन्दन करते हैं। हमें पूर्ण विश्वास है कि देश के नवयुवक पूरी तरह इस सङ्घ के साथ हैं। हमारी यह दृढ़ धारणा है कि पं० जवाहरलाल नेहरू ने काँग्रेस में जो यह नई भावना सम्मिलित की है, वह एक दिन खूब फूले फलेगी।

यह स्वाधीन-भारत-सङ्घ इस देश के लिये एक बिलकुल नवीन ढंग की संस्था है, इसलिये यह आवश्यक है कि इस सङ्घ का सञ्चालन अत्यधिक सावधानता के साथ किया जाय। दिल्ली की अखिल-भारतीय-काँग्रेस-कमेटी के बाद पञ्जाब-केसरी लाला लाजपतराय ने अपने जो संस्मरण लिखे हैं, उनमें पूर्ण स्वाधीनतावादियों पर भी पर्याप्त प्रकाश डाला है। लालाजी का कथन है कि पं० जवाहरलाल नेहरू और सुभाष बाबू के अतिरिक्त स्वाधीन-भारत-सङ्घ के अन्य अधिकाँश कार्यकर्त्ता इस सङ्घ में बहुत प्रकार की ऊँची-नीची भावनाएँ लेकर ही सम्मिलित हुए हैं। यदि लालाजी की यह बात सही है तो हमें भय है कि

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

यह उपयोगी संस्था कहीं उचित विकास से वञ्चित न रह जाय। आशा है कि नवयुवकों के कप्तान पं० जवाहरलाल और सुभाश बाबू इस ओर पूरा ध्यान देंगे। क्या हम यह आशा करें कि कलकत्ता काँग्रेस तक इस सङ्घ के सन्मुख कोई रचनात्मक ठोस कार्य भी प्रस्तुत कर दिया जायगा।

× × ×

४. नेताओं पर प्रहार

बहुत दिनों के बाद पञ्जाब से एक ऐसी ख़बर आई है जिसे सुन कर हम फड़क उठे। वीर पञ्जाब, डायर की गोलियों और ओडवायर के अत्याचारों से प्रताड़ित पञ्जाब, आज भी मर नहीं गया है। उसमें राष्ट्रीयता बाकी है। साइमन सप्तक के पहलवानों का काले झण्डों से स्वागत करने के लिये पञ्जाब का हृदय लाहौर स्टेशन पर पहुँचा। इस हृदय का प्रतिनिधित्व लाहौर के हज़ारों निवासी कर रहे थे। साथ में था पञ्जाब केसरी लाला लाजपतराय। अन्य हिन्दू-मुसलमान नेता भी साथ थे। पूज्य मालवीय जी, पञ्जाब के अतिथि होते हुए भी, इस जलूस का नेतृत्व कर रहे थे। यूंतो भारतवर्ष की पोलीस ही मदान्ध है, परन्तु ख़ासकर पञ्जाब की पोलीस तो सचमुच नादिर-शाह की फ़ौज है। उन्हें अवसर मिले तो सारा प्रान्त लूट खावें। जलूस शान्त था, फिर भी पोलीस ने उस पर डण्डे बरसाये। पञ्जाब के बूढ़े शेर पर ताक-ताक कर पोलीस का एक उज्जड्ड गोरा निशाने लगा रहा था। उसके अन्य सहयोगियों ने ये प्रहार अपने पर लेने के प्रयत्न भी किये, तथापि वह शेर ज़ख्मी होने से न बच सका। पञ्जाब केसरी पूरे धैर्य और गम्भीरता के साथ उन प्रहारों को सहता रहा,—यदि वह चाहता तो उसके इशारे मात्र से ही लोग उस नरपिशाच गोरे के वहीं टुकड़े टुकड़े कर देते; परन्तु उसने वैसा नहीं किया। उसकी अहिंसात्मक प्रतिज्ञा ने उसे वैसा नहीं करने दिया। उसने स्वयं मार खाते हुए भी जनता को भड़कने से रोका। उस दिन सचमुच उसने अपने नेतृत्व के प्रभाव का पूरा परीक्षण किया।

हम उस बूढ़े पञ्जाब केसरी के लिये क्या शब्द कहें? जिस समय आज के अधिकाँश नेता स्कूलों के 'शरारती' विद्यार्थी थे, उन दिनों भारतवर्ष के राजनीतिक आकाश में तीन सितारे चमका करते थे। उन तीन में से आज एक का स्वर्गवास हो चुका है, दूसरा समय के फेर से इस क्षेत्र से बहुत दूर जा पड़ा है; परन्तु उस ज़माने का एक सितारा आज और भी अधिक ज्योति के साथ प्रकाशमान हो रहा है। लोकमान्य का स्वर्गवास हो गया, पाल बाबू किसी और दिशा में फिसल गए, परन्तु यह पञ्जाब केसरी आज भी उतने ही उत्साह के साथ भारतवर्ष के नवयुवकों के लिये प्रकाश-स्तम्भ का कार्य कर रहा है।

लाहौर में उस दिन जनता के नेताओं की सच्ची परीक्षा होगई। एक तरफ़ थे हिन्दू और मुसलमानों के साम्प्रदायिक हितों के ठेकेदार नेता कहलाये जाने वाले लोग, जो सरकार की जूतियां चाटने में ही देशहित समझते हैं; दूसरी तरफ थे, राष्ट्रीय पञ्जाब के पूज्य और अनुभवी अभिभावक, जो पैदल थे, निहत्थे थे, परन्तु दृढ़ थे। एक श्रेणी के नेता मोटरों पर उड़ते हुए प्लेट फार्म पर पहुंचे, पुलिस के दस्तों ने उन्हें झुक कर सलाम किया, वे अपने चमकीले जूते खटखटाते हुए देश के शत्रु का स्वागत करने के लिये जा खड़े हुए। कमीशन आया, ये लोग बड़े अदब के साथ उन की आर्दल में बैठ कर पञ्जाब सरकार के महलों

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

की ओर चल दिये। दूसरी श्रेणी के नेता पैदल ही जूतियां घिसते हुए स्टेशन की तरफ आए। पोलीस ने कांटेदार तारें लगा कर उन के स्वागत का प्रबन्ध पहिले ही कर रक्खा था। वहीं आम सड़क पर खुले मैदान में खड़े रह कर ये लोग काफ़ी समय तक जनता को नियन्त्रण में रखते रहे— इस पर भी पुलीस ने डण्डे बरसा कर इन वीरों की अभ्यर्थना की। हम जानते हैं, इन वीरों में इस योग्यता के व्यक्ति भी थे, जो कि यदि आज भारत स्वाधीन होता तो भारतीय राष्ट्र के राष्ट्रपति पद को भी सम्मानित कर चुके होते। परन्तु देश के दुर्भाग्य से आज वह स्थिति नहीं है। उपर्युक्त दोनों श्रेणियों में से जनता का वास्तविक हितैषी कौन है— इस प्रश्न का निर्णय, आशा है कि पञ्जाबी जनता अब सुगमता के साथ कर सकेगी।

५. स्वराज्य पार्टी का भविष्य

व्यवस्थापिका सभाओं तथा ऐसेम्बली के नवीन निर्वाचन का समय अब निकट आ रहा है। आगामी वर्ष के अक्तूबर मास में नया निर्वाचन प्रारम्भ हो जायगा। देश में, आगामी निर्वाचन के सम्बन्ध में, थोड़ी बहुत चहल पहल अभी से प्रारम्भ हो गई है। भारतवर्ष का राजनीतिक जीवन पिछले तीन वर्षों में अत्यधिक परिवर्तित हुआ है। वर्तमान व्यवस्थापिका सभाओं का निर्वाचन जिस दलबन्दी के आधार पर हुआ था, उस दलबन्दी की आज बुनियाद ही हिल गई है। पिछले निर्वाचन में लाला लाजपतराय तथा मालवीय जी के उद्योग से स्वतन्त्र-कांग्रेस-दल के नाम से एक नये दल का निर्माण हुआ था। उन दिनों स्वराज्य पार्टी के नेता पं० मोतीलाल नेहरू और इस नई पार्टी के नेता लाला लाजपतराय में अनेक गम्भीर मत भेद थे, परन्तु आज वह अवस्था नहीं रही। दोनों दलों के सिद्धान्तों में भी अब कोई वास्तविक भेद नहीं रहा। पिछले निर्वाचन में इस नये ढंग की दलबन्दी का पञ्जाब और युक्तप्रान्त के निर्वाचन पर बहुत बड़ा प्रभाव पड़ा था। इसी दलबन्दी के कारण ही, स्वराज्य पार्टी को पञ्जाब तथा यू० पी० की व्यवस्थापिका सभाओं में बहुत स्थानों पर पराजय हाथ लगी थी। ऐसेम्बली के निर्वाचन में भी स्वराज्य पार्टी के बहुत से उमेदवार नहीं चुने जा सके थे। यहां तक कि पण्डित मोतीलाल जी के अपने प्रान्त में ही श्री रंग ऐयर को छोड कर स्वराज्यदलका अन्य कोई गैर मुसलिम उमेदवार सफल नहीं हो सका था। परन्तु अब परिस्थितियों के प्रभाव से इन दोनों दलों के मतभेद प्रायः दूर हो गए हैं। पिछले दिनों भी दोनों दल प्रायः मिल कर ही कार्य करते रहे हैं। अब आशा की जाती है कि आगामी निर्वाचन में ये दोनों दल परस्पर सहयोग से ही कार्य करेंगे।

दूसरी ओर स्वराज्य दल की आन्तरिक परिस्थितियों में भी बहुत बड़ा परिवर्तन आगया है। युक्तप्रान्त के कमायूं विभाग से बड़ी व्यवस्थापिका सभा में निर्वाचित श्री रंग ऐयर ने खुलम-खुला अपने नेता के बर्खिलाफ़ विद्रोह का झण्डा खड़ा कर दिया है। वह महाशय तो अपने नेता पर अभियोग चलाने तक का विचार कर रहे हैं। मद्रास के एम० के० आचार्य महोदय पहले ही स्वराज्य दल से पृथक् हो चुके हैं। इधर जातीय महासभा के भूतपूर्व अध्यक्ष तथा स्वराज्य दल के उपनेता और मद्रास प्रान्त के सर्व मान्य नेता श्रीयुत श्रीनिवास ऐयङ्गर महोदय भी अपने नेता से कुछ विद्रोह करते हुए प्रतीत होते हैं। लाला लाजपतराय ने तो खुले शब्दों में उन पर यह दोषारोप किया है कि मि० ऐयङ्गर पं० मोतीलाल जी की बढ़ती हुई शक्ति से ईर्ष्या करते हैं। यह

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

दोषारोप चाहे पूर्ण रूप से सत्य न भी हो, परन्तु इतना तो भली प्रकार स्पष्ट है कि स्वराज्य दल के उपनेता महोदय अपने नेता से कम से कम पूर्ण सहयोग की नीति नहीं बरत रहे हैं।

ऐसा प्रतीत होता है कि स्वराज्यदल के अधिकांश मद्रासी सदस्य अपने दल की नीति तथा नेता से सन्तुष्ट नहीं हैं। हमें श्रीनिवास ऐयङ्गर की देशभक्ति तथा बुद्धिमत्ता पर पूर्ण विश्वास है, अतः हमें आशा है कि वह इस आपत्ति के समय फूट के बीज नहीं बोयेंगे। यदि वे स्वराज्य दल से पृथक् भी होगये तो कम से कम उनका दल देशद्रोही कदापि सिद्ध न होगा। पिछले निर्वाचन से पूर्व स्वराज्य दल के तत्कालीन उपनेता लाला लाजपतराय ने अपने दल से विद्रोह कर दिया था, इस निर्वाचन से पूर्व भी यदि स्वराज्य दल के उपनेता महाशय अपने दल से विद्रोह कर देंगे तो यह एक आश्चर्य की घटना ही होगी।

नये निर्वाचन में स्वराज्यदल का भविष्य क्या होगा, इस पर अभी से कुछ भविष्य-वाणी कर सकना केवल साहस का कार्य होगा। हमारा विचार है कि इस सम्बन्ध में कलकत्ता कांग्रेस के बाद ही कुछ निश्चित भविष्यवाणी की जा सकेगी। यदि नेहरू कमेटी की रिपोर्ट को भारतवर्ष के नेताओं का बहुमत स्वीकार कर लेगा, और मुसल्मानों के अधिकांश नेता भी उसका साथ देंगे, तब तो यह निश्चित समझना चाहिये कि आगामी निर्वाचन में स्वराज्यदल को आशातीत विजय प्राप्त होगी। परन्तु स्वयं नेहरू रिपोर्ट का भविष्य भी अभी तक कुछ निश्चित नहीं है।

६. साम्प्रदायिक गवाहियां

साइमन सप्तक का साहस सचमुच सराहनीय है। ये लोग अपना काम इस ढंग से किये चले जाते हैं कि मानो इन्हें देश भर का पूरा सहयोग प्राप्त हो रहा है। गोल के बाद गोल होते जाने पर भी जो खिलाड़ी हिम्मत न हारे वही तो सच्चा खिलाड़ी है। साइमन टीम के सन्मुख जितनी थोड़ी बहुत गवाहियां दी जाती हैं, इनको वह इस प्रकार सुनती है कि मानों देश भर के प्रतिनिधि चुन चुन कर उन के पास लाये जा रहे हैं। मालूम नहीं कि यह धोखा भारतवासियों को दिया जा रहा है, अथवा बृटिश पार्लियामैण्ट को या स्वयं अपने आप को।

पिछले दिनों लाहौर में कमीशन के सन्मुख जो गवाहियां हुईं, वे सचमुच बड़ी मज़ेदार हैं। वहां हिन्दु मुसल्मान तथा सिक्ख—तीनों पंजाबी सम्प्रदायों के गैरराष्ट्रीय नेता डेपूटेशन बना कर कमीशन के सन्मुख तशरीफ़ ले गये। इन गवाहियों को पढ़ते हुए सचमुच नाटक का सा मज़ा आता है। हिन्दू कहते थे, जब तक सम्मिलित निर्वाचन न शुरू किया जाय तब तक हम नये सुधार नहीं चाहते। मुसल्मानों का कथन था कि यदि पृथक् निर्वाचन प्रारम्भ करना हो तो उस के बदले में वर्तमान सुधार भी वापिस ले लो। सिक्खों की मांग थी कि यदि हमें ३० प्रतिशतक स्थान नहीं दिये जाने और निर्वाचन के ढंग में सुधार नहीं करना तो ये सुधार हमारे लिये किसी काम के नहीं हैं। ये सब स्थापनाएं परस्पर कितनी प्रतिकूल हैं। हमारी सम्मति में इन गवाहियों के आधार पर तो केवल एक बात ही की जा सकती है। पंजाब के इन तीनों 'जी हज़ूर' डेपूटेशनों की मांगें परस्पर बिल्कुल विरोधिनी हैं। यदि इन हिन्दू कहलाये जाने वाले लोगों की माँग पूरी की जाय तो मुसल्मान सुधार लौटा लेने की प्रार्थना करेंगे और यदि मुसलमानों की मांग स्वीकार कर ली जाय तो शेष दोनों सम्प्रदाय मचल उठेंगे। अतः इनमें

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

से तो एक भी मांग स्वीकार करना सम्भव न होगा। हां, एक बात ऐसी भी है जिस से शायद इन तीनों डेपूटेशनों को कम से कम विरोध न होगा। वह यह कि वर्तमान सुधार भी पूरी तरह लौटा लिये जांय।

कितनी हास्यास्पद और लज्जाजनक बात है। ये लोग एक देश के होते हुए भी विदेशियों के सम्मुख एक दूसरे की चुगली करने में अपना कल्याण समझ रहे हैं। मनुष्यता का, आत्म गौरव का, इससे बढ़ कर क्या ह्रास हो सकता है।

७. आर्य कांग्रेस

सार्वदेशिक सभा ने इस वर्ष भी पुनः आर्य कांग्रेस करने का प्रस्ताव स्वीकार किया है। सम्भवतः आर्यकांग्रेस का यह अधिवेशन दिसम्बर के प्रारम्भ में करने का विचार था, परन्तु अभी तक कांग्रेस किस नगर में की जाय, यह भी निश्चित नहीं हो पाया है। हमारी सम्मति में इस वर्ष आर्य कांग्रेस करने की कुछ वैसी आवश्यकता भी न थी। पिछले वर्ष की आर्य कांग्रेस में यही निश्चय किया गया था कि आवश्यकता पड़ने पर सार्वदेशिक सभा इस नवीन संस्था की बैठक करवाती रहेगी। परन्तु अब प्रतीत होता है कि इस सम्मेलन को वार्षिक सम्मेलन कर देने का प्रयत्न किया जा रहा है। हमारी सम्मति में यह परिवर्तन आर्य-समाज के लिये हितकर सिद्ध न होगा। पिछले वर्ष आर्यकांग्रेस ने जो कार्यक्रम स्वीकार किया था, वह अभी तक पूरा नहीं किया जा सका, इस अवस्था में कांग्रेस का द्वितीय अधिवेशन करने की कोई आवश्यकता प्रतीत नहीं होती। हमारा विचार है कि बिना आवश्यकता के आर्यकांग्रेस को आहूत करने से आर्य समाज के धन और समय की कुछ न कुछ हानि होने की सम्भावना ही है। क्या हम आशा करें कि सार्वदेशिक सभा के मान्य अधिकारी इस सम्बन्ध में पुनः विचार करने की कृपा करेंगे।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सचित्र

सुचारु सूची शिल्प पत्रावली

सलाई और क्रोशिये की दस्तकारी सिखलाने की सस्ती और अनूठी विधि

इस प्रकार के पत्र इंग्लैण्ड अमरीका इत्यादि देशो में तो बहुत दिनों से निकलते हैं।परन्तु भारत में हिन्दी भाषा द्वारा प्रत्येक वस्तु के लिये अलग अलग कार्ड की रीति से इस कार्य को सिखलाने का यह पहला ही प्रयत्न है जो कार्य पसन्द हो उसी के अनुकूल दो तीन आने खर्च कर कार्ड खरीद लो और घर बैठे बिना किसी की खुशामद के बनालो अब तक निम्न लिखित कार्ड (१४×७) प्रकाशित हो चुके हैं:—

पत्र नं०	मूल्य	पत्र नं०	मूल्य
१—दीर्घ सूची प्रारम्भिक प्रयोग ११ चित्र	।)	५—पुरुषों का लम्बा मौज़ा [सचित्र]	=)
२—बड़ी सादी बनियान [सचित्र]	=)॥	६—पुरुषों का सरल दस्ताना [सचित्र]	=)॥
३—पुरुषों का कुत [सचित्र]	=)॥	७—स्त्रियों का फूलदार कालर [सचित्र]	≡)
—बालिका की ऊनी जर्ज़ी [दुरंगा]	≡)	पुरुषों का नुन्दकोदार मौज़ा [सचि]	=॥)

८ कार्डों का पूरा सैट मूल्य १।=)॥ के स्थान में केवल १) रुपया

कुछ सम्मतियाँ—

सरस्वती इलाहाबाद— यह पत्रावली नारी मात्र के लिये बड़ी उपयोगी है। छपाई सुन्दर भाषा सरल और मूल्य बहुत ही कम।

प्रताप लाहौर—कन्या पाठशालाओं और स्कूल की लड़कियों केलिये बड़े काम की चीज़ है।

गृहलक्ष्मी प्रयाग—हम इन कार्डों का हृदय से प्रचार चाहते हैं।

महारथी देहली—यह कार्ड सस्ते होने के कारण कन्याओं के लिये बड़े उपयोगी हैं।

मैनेजर "ज्योति"

कोठी नम्बर २१, २२ राजपुर रोड देहरादून।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कला कौमुदी

लेखिका श्रीमती ओ३म्वती देवी

चित्र कला कौशल सम्बन्धी अनुपम पुस्तक इस के द्वारा लेखिका ने क्रोशिये के कार्य को बड़ा ही सरल बना दिया है। बिना किसी प्रकार के पहिले ज्ञान के कन्यायें और स्त्रियें केवल इस की ही सहायता से अनेक प्रकार की बिनावट लेसें, फ़ीते, कपड़े इत्यादि बनाना सहज में ही सीख सकी हैं। पुस्तक में इतना विषय है कि किंचित इस से कई गुना दाम की पुस्तकों में भी न होगा। प्रत्येक वस्तु तथा बिनावट का बनाना चित्र देकर बड़ी सरल रीति से सिखाया गया है। देखिये समाचार पत्र इस के विषय में क्या कहते हैं।

"ट्रिब्यून" (अंग्रेज़ी का प्रसिद्ध दैनिक) लाहौर—स्त्रियों के लिये उपयोगी पुस्तक है। अनेक चित्रों द्वारा वस्तु बनाने की विधि बड़ी सरलता से समझाई गई है। सुन्दर नमूनों की लेसें, टेबल क्लाथ, बच्चों के सुन्दर कपड़े और अन्य कई वस्तुओं का बनाना बड़ी सुन्दर रीति से बतलाया गया है। पुस्तक की उपयोगिता के विचार से मूल्य बहुत कम है।

"मतवाला" (कलकत्ता)-यह पुस्तक हमारी बहिनों के बड़े समझ की है। छपाई बहुत अच्छी, कागज़ बहुत अच्छा मोटा चिकना आर्ट। सुचारु शिल्प पत्रावली कार्ड गृहस्थियों के बड़े काम की चीज़ है।

"कर्मवीर" (खांडवा)— ..... पुस्तक में सादे फन्दे से लगाकर तरह तरह की वस्तुओं के बनाने की विधि बड़ी सरलता से समझाई गई है जिसे पढ़कर साधारण पढ़ी लिखी स्त्री भी इस कार्य को सीख सकती है। इस का मूल्य लागत को देखते कम है।

"माधुरी" (लखनऊ) ऐसी पुस्तकों की हिन्दी साहित्य के लिये बड़ी आवश्यकता है। आशा है इस पुस्तक का अच्छा प्रचार होगा जिस से इस प्रकार की और पुस्तकें भी प्रकाशित का जा सक। लेखिका और प्रकाशिका दोनों को बधाई।

शीघ्र आर्डर भेजिये मूल्य १॥)

कला कौमुदी तथा शिल्प पत्रावली का पूरा सैट लेने पर २॥=)॥ के स्थान में केवल २।) में दिया जायगा।

कन्या पाठशालाओं और पुस्तक विक्रेताओं को विशेष रियायत

मैनेजर ज्योति—

कन्या गुरुकुल

राजपुरा रोड कोठी नं० २१—२२ देहरदून

चौधरी हुलासराय प्रिन्टर तथा पं० रमेशचन्द्र पब्लिशर के लिये गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में मुद्रित।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

Regd. No. A. 1711

वर्ष ६] नवम्बर, दिसम्बर, १९२८ [संख्या ७, ८

वार्षिक मूल्य ४॥) प्रति संख्या ॥)

सम्पादिका—
विद्यावती सेठ बी. ए.

स्त्रियों और विद्यार्थियों से ४)
विदेश का मूल्य ६)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विषय सूची।

विषय	पृष्ठ से
१. फूलो 'कविता' (श्री पं० धर्मदत्त जी)	२६५
२ शिक्षागुरु भगवान दयानन्द (श्रीमती सीतादेवी विशारदा)	२६६
३. ज़न्नत और दोज़ख़ के नज़ारे 'कविता' (श्री पं० प्रियव्रत जी विद्यालङ्कार)	२७३
४. कैलॉग पैक्ट (श्री सर्वमित्र जी)	२७४
५. मा (श्री पं० वीरहरि जी विद्यार्थी)	२८०
६. परित्यक्ता (श्री धर्मेन्द्र जी)	२८१
७. मेरे दिल का एक पुराना घाव (श्री आचार्य रामदेव जी)	२८५
८. दिल का दर्द (श्रीयुत गुप्त)	२८८
९. दीपावलि 'कविता' श्री हरिशरण 'मराल'	२९२
१०. अनन्त व्रत (श्री पाण्डेय रामावतार शर्मा एम. ए. विशारद)	२९४
११. हृदय समर्पण (श्री विश्वम्भर सहाय "प्रेमी" वैदिक धर्म विशारद)	२९६
१२. आर्तनाद 'कविता' (हरिशरण 'मराल')	३०१
१३. गर्भाधान और पुंसवन संस्कार (कविराज श्री पं० अत्रिदेव जी गुप्त)	३०२
१४. लक्ष्मी पूजा का पर्व (श्री पं० देवशर्मा जी विद्यालंकार)	३१४
१५. गोजाति के ह्रास के कारण (श्री पं० जगदीशचन्द्र शास्त्री)	३२०
१६. हा ! पञ्जाब केशरी ! (कुमारी पुरुषार्थवती आर्य)	३२३
१७. रजोगुण व तमोगुण (श्री पण्डित हरिशरण जी सिद्धान्तालंकार)	३२४
१८. वेदभाष्य के आधारभूत सिद्धान्त (श्री पं० धर्मदेव जी वेदवाचस्पति)	३३०
१९. विचार प्रवाह—	३३४

लेखकों से निवेदन

१. ज्योति में लेख कविता आदि भेजने वाले महानुभावों को अपने लेख सुस्पष्ट अक्षरोंमें कागज़ के एक ओर ही हाशिया छोड़ कर लिख कर भेजने चाहियें।

२. लेख बहुत लम्बे न होने चाहिएँ। 'ज्योति' पत्रिका के लगभग चार पृष्ठों के लायक लेख हों तो अति उत्तम है।

३. लेखों को घटाने बढ़ाने तथा संशोधित करने का संपादक को पूर्ण अधिकार है।

ज्योति सम्बन्धी पत्र व्यवहार— अथवा—

आचार्य्या कन्या गुरुकुल **सम्पादक ज्योति**

कोठी नं० २१, राजपुर रोड़ (देहरादून)

गुरुकुल कांगड़ी यू.पी.

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

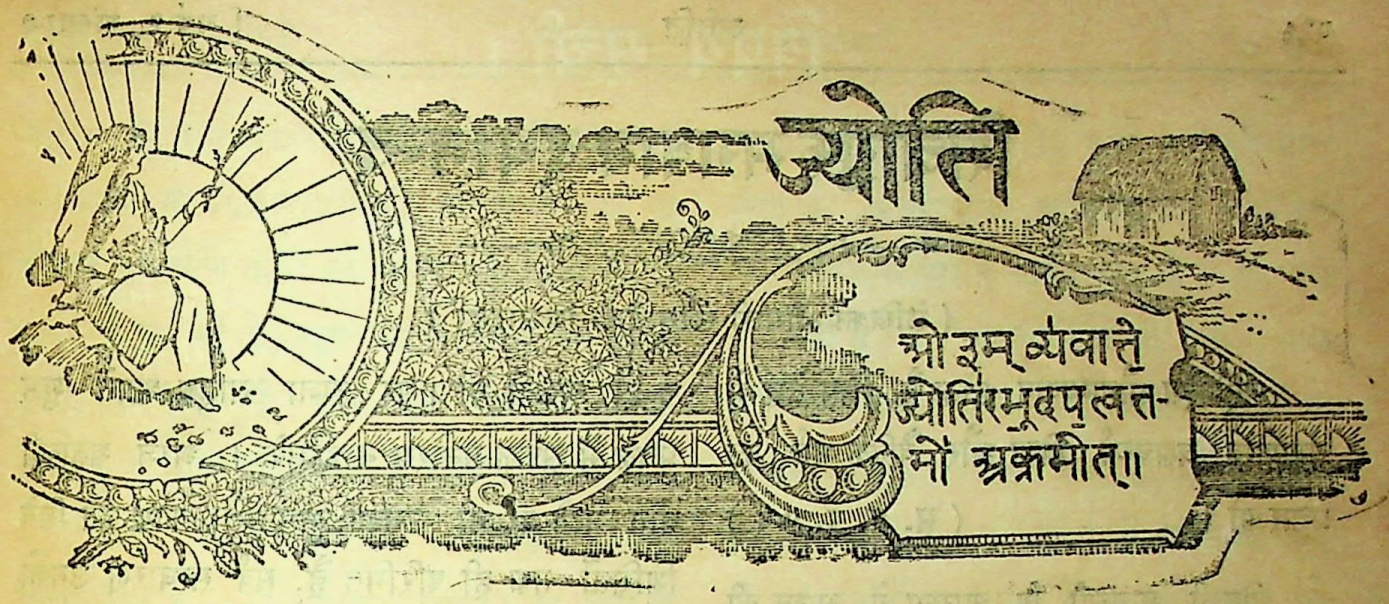

विविध विषय विभूषित सुन्दर मासिक पत्रिका.

वर्ष ६ | कार्तिक १९८५ * नवम्बर १९२८ | संख्या ७

फूलो !!!

फूलो ! खुशी-खुशी से अपने ये दिन बिताना
दिन रात आप हंसना औरों को भी हंसाना।
आंधी तुझे डरावे गर धूप भी सतावे
चेहरे पै तुमने अपने कुछ भी न ग़म दिखाना।
जिसने तुम्हें बनाया जिसने तुम्हें हंसाया
खुशियों में अपने मालिक को तुम न भूल जाना।
उसके चमन को तुमने सुख का सदन बनाना
खुशबू से अपनी इसको बाग़-ए-अदन बनाना।
छोटा हूं या बड़ा हूं इस पर न ध्यान लाना
जो कुछ महक है उसको इस बाग़ में फैलाना।
ठण्डी हवा से अपनी अठखेलियों में तुमने
कर्तव्य को न अपने पल भर कभी भुलाना।
खुश हो के तुमको अपने वो सीस पर चढ़ावे
ऐसे नज़र को अपने मालिक की तुम लुभाना।
माला में कोई उसके मन्दिर में कोई उसके
कोई उसकी राह में ही गिर कर के काम आना।

ले० पं० धर्मदत्त जी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

शिक्षागुरु भगवान दयानन्द

(लेखिका श्रीमती सीतादेवी विशारदा)

वही देश सौभाग्यवान होता है, जिस देश में यथायोग्य ब्रह्मचर्य्य, विद्या और वैदिक धर्म का प्रचार हो। (स. प्र. पृ. ७६)

पिछली शताब्दी के आरम्भ में भारत की राजनीतिक दशा बहुत शोचनीय थी। अशान्त राजनीतिक दशा के कारण भारतवासियों की मानसिक, आर्थिक, सामाजिक दशा और वैयक्तिक जीवन बहुत गिर गये थे। हमारे देश के लोग मूर्खता के कारण अन्धविश्वासी हो गये थे। ऐसा समय था, जब कि ऋषि दयानन्द ने जन्म लिया। ऋषि दयानन्द के सामने बड़ा भारी काम था, वह काम अनायास में ही न हो सकता था। ऋषि दयानन्द ने इस बड़े कार्य को पूरा करने के लिये पहले तैय्यारी की, अपने को योग्य बनाया, और पुनः दृढ संकल्प कर कार्य्य क्षेत्र में जा उतरे। भारत की इस शोचनीय गिरी हुई दशा को सुधारने का एक मात्र उपाय, जो ऋषि को सूझा, वह शिक्षा था। ऋषि दयानन्द से आधी शताब्दी पहले राजा राममोहनराय को भी मातृभूमि के लिये तरस आया था, और देशवासियों को इस गिरी हुई दशा से उठाने का उन्हों ने भी भरसक यत्न किया। राजा साहब ने भी शिक्षा को ही सुधार का मुख्य साधन समझा। लोगों को शिक्षित किये बिना देश का अज्ञान दूर न हो सकता था। पर राजा साहब अपने शुभ प्रयत्न में सफल-मनोरथ न होसके। आज शताब्दी बीत जाने पर भी उनका नाम और काम इने गिने शिक्षितों तक ही परिमित है, सर्व साधारण उनको जानते तक नहीं। इसका कारण राजा साहब ने जिस रीति का, जिस शिक्षा नीति का, अवलम्बन किया, वह ठीक न थी, विदेशी भाषा, साहित्य और आचार को उसमें बड़ा स्थान दिया गया था। अतएव अंग्रेजी पढ़े लिखे ही उससे लाभ उठा सके, सर्व साधारण को उससे कोई लाभ न हुआ। पर इसके विपरीत ऋषि दयानन्द की शिक्षानीति देशी ढंग की थी। उसमें भारतीय सभ्यता, आचार आदि पर विशेष ध्यान दिया गया था, यही कारण है कि आज स्वामी दयानन्द का नाम शिक्षित और अशिक्षित दोनों में समान रूप से प्रसिद्ध है। ऋषि दयानन्द की सफलता का एक कारण यह भी था।

यह ठीक है कि ऋषि दयानन्द ने अंग्रेजी ढंग की शिक्षा न पाई थी। नाहीं पाश्चात्य विद्वानों से पूर्ण रूप से परिचित थे, पर इससे यह न समझना चाहिये कि उनके शिक्षा सिद्धान्त पाश्चात्य विद्वानों के शिक्षा सिद्धान्तों से किसी कदर घटियां हैं। कई अंग्रेजी रंग में रंगे हुए विद्वान कह दिया करते हैं कि स्वामी दयानन्द भारतवासियों को पुनः पण्डिताऊ ढंग की शिक्षा देकर कई शताब्दी पीछे फेंकना

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

चाहता है, उन सज्जनों की जानकारी के लिये हम ऋषि की शिक्षापद्धति की आलोचना कर यह दिखाने का यत्न करेंगे कि ऋषि की शिक्षाप्रणाली वैज्ञानिक ढंग की है, खूब सोच विचार कर उसकी रचना की गई है और वह पाश्चात्य शिक्षा-शास्त्रज्ञों के शिक्षा सिद्धान्तों से समानता रखती है।

शिक्षा के तीन लक्ष्य हैं। बालक (जिसको शिक्षा देनी है), शिक्षक और शिक्षा। इन तीनों के विषय में क्रमशः विचार करते हैं।

(१) अंग्रेजी में एक कहावत है जिसका भावार्थ यह है कि 'बालक मनुष्य का पिता है,' अर्थात् आज जो बालक हैं, कल उन्होंने बड़े हो कर पिता बनना है, देश के समाज को उन्होंने ही बदलना है, देश और समाज का उठाना और गिराना उनके हाथ में है। बड़े हो जाने पर मनुष्य को सुधारा नहीं जासकता, जिस प्रकार का अभ्यास आदि पड़ गया, जैसे बन गये, वैसे ही रहते हैं, पर बालकों को यथेष्ट रीति पर ढाल सकते हैं। अतएव बालक के वैयक्तिक जीवन और भविष्य तथा समाज के भविष्य का आधार बाल्यावस्था में उनकी रक्षा और शिक्षा पर है, इसी कारण बाल शिक्षा का विषय बड़े महत्व का है। पाश्चात्य देशों में इस बात पर खूब ध्यान दिया जाता है। ऋषि दयानन्द बाल शिक्षा और रक्षा के महत्व को खूब समझते थे। ऋषि दयानन्द की सम्मति में बालकों की शिक्षा का आरम्भ तब से होता है जब कि बालक अभी गर्भ में भी नहीं आता, अच्छी सन्तान पैदा करने के लिये माता पिता का अच्छा होना आवश्यक है। माता-पिता का सन्तान पर पूरा २ प्रभाव होता है। मनुस्मृति में लिखा है कि "आत्मा वै जायते पुत्रः" माता पिता की शारीरिक, मानसिक, आत्मिक दशा का सन्तान पर पूरा २ प्रभाव होता है, अतएव ऋषि सत्यार्थ प्रकाश के २य समुल्लास में तथा और अन्य भी कई स्थानों पर लिखते हैं कि माता पिता को, सन्तानोत्पत्ति के कार्य्य की पवित्रता और उत्तर-दातृत्व को खूब समझते हुए, भोजनाच्छादनादि को नियमित रखना चाहिये, मानसिक उद्वेगों को रोकना चाहिये, सदा प्रसन्न चित्त रहना चाहिये, तभी उत्तम सन्तान पैदा होगी। ऋषि ने इन बातों को लक्ष्य में रख कर कई संस्कारों का विधान किया है, जो कि बालक के जन्म के आगे पीछे समय समय पर किये जाते हैं, जिनका उद्देश्य माता पिता की मानसिक और शारीरिक दशा के सुधार और शुद्धि द्वारा या सीधे तौर पर बालक पर प्रभाव डालना है। ऋषि सन्तानोत्पत्ति के कार्य्य को बड़ा पवित्र और उत्तरदातृत्वपूर्ण समझते थे, अतएव इस कार्य के लिये पहले माता पिता को योग्य बनने का उपदेश किया गया है। अयोग्य, स्थिर रोगी, स्पृश्य व्याधि वालों को सन्तानोत्पत्ति का कोई अधिकार नहीं। यह एक ऐसा आवश्यक सत्य है, जिसका महत्व अभी पाश्चात्य देशों ने नहीं समझा, यद्यपि बड़े २ डाक्टर इस सत्य को सिर पटक कर समझा रहे हैं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

(२) पहली शिक्षिका माता है— अगस्त मास के मौडर्न रिव्यू में देशमान्य लाला लाजपत-राय जी ने संयुक्त देश अमेरिका की शिक्षा प्रणाली की अनेक विशेषतायें बताते हुए लिखा है कि अमेरिका की शिक्षाप्रणाली में विशेषता यह है कि वहां प्रारम्भिक पाठशालाओं में तथा स्कूलों में बालकों की शिक्षा देने का काम बहुत कुछ स्त्रियों के हाथ में है। विद्यालय विभाग में पढ़ाने वाले कुल ५,६४,४६०, शिक्षकों में से ४,५१,११८ शिक्षिका स्त्रियां हैं, अर्थात् कुल शिक्षकों के $\frac{४}{५}$ भाग से भी अधिक स्त्रियां हैं। इसका कारण यह है कि बाल्यावस्था में बालक की शरीर रक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिये। बालकों की शरीर रक्षा उन माताओं से, जिन्होंने कि उनको पैदा किया है, अधिक कौन कर सकता है ? एक और भी बात है, बालक के हृदय में स्वाभाविक प्रेम होता है; जो उससे प्रेम करता है बालक अपने आपको उसके आधीन कर देता है, उस पर पूरा विश्वास करता है; उसका कहना मानता है। माता बालक को दण्ड के भय से नहीं, अपितु प्रेम से अपनी ओर आकृष्ट करती है, उसे उत्तम २ शिक्षा देकर सुशील बना सकती है, इस प्रकार माताओं की देख रेख में बालकों को शिक्षा देने से उनकी शारीरिक दशा अनायास ही सुधरेगी और वे सुशील बनेंगे।

मातृ शिक्षा के विषय में सत्यार्थ प्रकाश द्वितीय समुल्लास के आरम्भ में "मातृमान् पितृमान् आचार्यवान् पुरुषो वेद" इस वाक्य को उद्धृत कर ऋषि लिखते हैं कि "जितना माता से सन्तानों को उपदेश और उपकार पहुंचता है, उतना किसी से नहीं। जैसे माता सन्तानों पर प्रेम और उन का हित करना चाहती है उतना अन्य कोई नहीं करता अतः "मातृमान्" अर्थात् "प्रशस्ता धार्मिकी माता विद्यते यस्य स मातृमान्" धन्य वह माता है जो गर्भाधान से लेकर जब तक विद्यापूर्ण न हो सुशीलता का उपदेश करे।"

(३) बालक पर समाज का स्वत्व होना चाहिये— देश के सभी बालक सारी समाज के पुत्र हैं। यदि बालक के माता पिता उसकी रक्षा शिक्षा का प्रबन्ध नहीं कर सकते या नहीं करते तो समाज का कर्तव्य है कि वह ऐसे बालकों की शिक्षा, रक्षा आदि का प्रबन्ध करे।

यह उक्ति प्रसिद्ध है कि 'मनुष्य सामाजिक प्राणी है' अर्थात् मनुष्य स्वभाव से ही अपने जैसे लोगों के समूह में रहना पसन्द करता है। मनुष्य की सब प्रसन्नताओं और उन्नतियों का केन्द्र समाज है। बिना समाज के एक व्यक्ति का रहना दूभर हो जाय, उसके लिये मनुष्य जीवन दुःखदायी बन जाय। जब मनुष्य की उन्नति और सुख का दारोमदार समाज पर है, तो आवश्यक है कि समाज को सुखदायी बनाया जाय, क्योंकि समाज व्यक्तियों से बनता है, अतः व्यक्तियों के उन्नत और सुखी होने से समाज उन्नत होगा, सुखी बनेगा।

शरीर के एक अंग के बिगड़ने से दूसरे अंग भी बिगड़ते हैं, सारा शरीर ही दुःख उठाता है, इसी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्रकार समाज में यदि कोई व्यक्ति अनपढ रह जाय तो उसका दुःख समाज को उठाना पड़ेगा। कई गरीब माता पिता अपने नन्हे नन्हे बच्चों से भी मजदूरी करवाते हैं, और करवाते थे। जो समय, बालक की शिक्षा, शारीरिक, मानसिक उन्नति का है, वह समय यूं ही खराब हो जाता है और बालक खराब हो जाते हैं, जिसका दुखदायी परिणाम सारी जाति को झेलना पड़ता है।

अतएव उच्चजातियां अपने प्रत्येक व्यक्ति का ध्यान रखती हैं, और विशेषतया बालकों का, क्योंकि जो बिगड़ चुके वे तो बिगड़ चुके, पर भावी सन्तान का, जिनके कि अभी सुधरने की आशा है, जिनका बनना बहुत कुछ अपने हाथ में है, उनका पूरा २ ध्यान रक्खा जाता है। आज कल पाश्चात्य देशों में ६ वा ७ वर्ष से लेकर १३ वा १४ वर्ष की आयु तक शिक्षा बाधित है तथा मुफ्त है। यहां पर इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि बाधित शिक्षा का मुफ्त होना आवश्यक है, क्योंकि निर्धन लोग शिक्षा का खर्च नहीं उठा सकते।

व्यक्ति, विशेषतया बालक, और समाज के सम्बन्ध को ध्यान में रखते हुए विद्वान् लोगों ने यह नियम बनाया है कि, उन वैयक्तिक कार्य्यों में जिनका कि प्रभाव प्रधानतया समाज पर पड़ता है, प्रत्येक व्यक्ति को समाज के हित का ध्यान रखना चाहिये, अपनी स्वतंत्रता को समाज के हाथ में कर देना चाहिये, इसी में समाज का और व्यक्ति का कल्याण है, देश का प्रबन्ध इसी प्रकार चलता है। (देखो, आर्यसमाज का १० वां नियम)। उपरोक्त नियम को ध्यान में रख कर समाज की उन्नति के लिये, देश के कल्याण के लिये शिक्षा विषय में वैयक्तिक स्वतन्त्रता छीन ली जाती है, और देश के सब बालकों को बाधित रूप से शिक्षा दी जाती है। ऋषि दयानन्द बालक को समाज की सम्पत्ति समझते थे, अतएव देश के कल्याण की दृष्टि से प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षित करना राज्य का कर्तव्य कहा है। सत्यार्थ प्रकाश तृतीय समुल्लास पृष्ठ ३३ पर "कन्यानां सम्प्रदानं च कुमाराणां च रक्षणम्" इस मनु वाक्य की व्याख्या करते हुए ऋषि दयानन्द लिखते हैं कि "इस में राजनियम और जातिनियम होना चाहिये कि पांचवें वा आठवें वर्ष से आगे कोई अपने लड़कों और लड़कियों को घर में न रख सके, पाठशाला में अवश्य भेज देवे, जो न भेजे वह दण्डनीय हो।"

(४) गुरुकुल शिक्षाप्रणाली—ऋषि दयानन्द के शिक्षणालय को गुरुकुल और शिक्षा प्रणाली को गुरुकुल शिक्षाप्रणाली कहना चाहिये। फ्रैडरिक विलहैम फ्रोबेल के बालोद्यान की तरह गुरुकुल नाम भी बड़ा सार्थक है, इस कुल में कम से कम ११ वर्ष तथा बालकों के गुरुकुल में कम से कम २५ वर्ष तक निरन्तर विद्यार्थी को अध्यापक की देख-रेख में रहना होता है, और उसकी आज्ञानुसार काम करना होता है। इस शिक्षा प्रणाली में निम्न नियम काम करते हैं—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

(क) यह सब जानते हैं कि सब बालकों की रुचि और प्रवृत्ति समान नहीं होती। किसी का मन कथा कहानी में लगता है। किसी का खेल कूद में, एक की स्पर्शेन्द्रिय तेज होती है तो दूसरे की आंख वा श्रवणेन्द्रिय। अस्तु, अध्यापक वा शिक्षक का काम यह है कि वह बालक की प्रवृत्तियों को पहिचाने और उसकी प्रवृत्ति के अनुसार उसे शिक्षा दे। बालक की रुचि के अनुसार शिक्षा देने से वह शीघ्र ही और चाव से बात को समझेगा, अल्प काल और अल्पायास में वह बहुत कुछ जान जायगा। इसके विपरीत बालक की प्रवृत्ति और रुचि की अवज्ञा करके मनमानी शिक्षा देने में समय और श्रम भी अधिक लगेगा, और बालक की मानसिक शक्तियों का ह्रास होगा, अतएव व्यक्ति और समाज का कल्याण इसी में है कि प्रत्येक व्यक्ति को उसकी रुचि के अनुसार शिक्षा दी जाय। यह कोई सुगम काम नहीं, इस के लिये बड़े चतुर विद्वान् अनुभवी शिक्षक की आवश्यकता है, अतएव ऋषि दयानन्द ने योग्य अध्यापक के चुनाव पर बल दिया है। स. प्र. पृष्ठ २६ पर ऋषि लिखते हैं कि "नवें वर्ष के आरम्भ में द्विज अपने सन्तानों का उपनयन करके आचार्य कुल में, जहां पूर्ण विद्वान पुरुष और पूर्ण विदुषी स्त्री शिक्षा और विद्यादान करने वाली हो, वहां लडके और लडकियों को भेज दे।" पुनः स. प्र. पृष्ठ २२ पर लिखते हैं कि "जो अध्यापक पुरुष वा स्त्री दुराचारी हो उनसे शिक्षा न दिलावे, किन्तु जो पूर्ण विद्या-युक्त, धार्मिक हों वे ही पढ़ाने और शिक्षा देने योग्य हैं।"

(ख) अस्तु, योग्य अध्यापक को चुन करे बालक को सर्वथा उसके आधीन कर देना चाहिये। बालक को सदा उसके निकट रहना चाहिये, जिस से कि गुरु बालक की प्रत्येक प्रवृत्ति को पहिचान उसको ठीक रास्ते पर चला सके। इसी प्रकार १६ वर्ष की आयु के ऊपर जब बालक युवावस्था में प्रवेश करता है, उस समय भी उसको योग्य पथ-दर्शक की आवश्यकता होती है। १६ और २४ वर्ष की आयु के बीच का समय बड़ा भयानक होता है, अतएव ऋषि ने ब्रह्मचर्य्य और वीर्य्यरक्षा पर बड़ा जोर दिया है। ऋषि का अपना जीवन ही इस बात का साक्षी है। ऋषि दयानन्द लिखते हैं कि माता पिता को अपनी सन्तान को उपदेश देना चाहिये कि "जो तुम सुशिक्षा, विद्या-ग्रहण और वीर्य्य की रक्षा करने में इस समय चूकोगे, तो तुमको इस जन्म में यह अमूल्य समय प्राप्त नहीं हो सकता"। यह ऋषि की शिक्षा प्रणाली का आधार है, और अभी तक इसी सत्य सिद्धान्त को पाश्चात्य देशों ने नहीं सीखा।

(ग) अमेरिका की शिक्षा प्रणाली की विशेषता बताते हुये मान्य लाला लाजपतराय मौडर्न रिव्यु में लिखते हैं कि "वहां धनी और गरीब, सब के बालक एक साथ शिक्षा पाते हैं" पर ऋषि अपनी शिक्षा प्रणाली में और भी आगे बढ गये हैं। वे लिखते हैं कि "सब को तुल्य वस्त्र, खान, पान, आसन दिये जावें, चाहे

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वे राजकुमार हों, चाहे दस्यु की सन्तान हों, सब को तपस्वी होना चाहिये (स. प्र. पृष्ठ ३३)

(घ) ऋषि शिक्षाविषय में जाति, लिङ्ग आदि का ध्यान छोड़ कर सब के लिये शिक्षा को आवश्यक समझते हैं, अतएव ऋषि ने अथर्ववेद के "ब्रह्मचर्य्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम्" इस वाक्य की व्याख्या करते हुए निम्न शब्दों में स्त्री शिक्षा पर पूर्ण बल दिया है "भला जो पुरुष विद्वान् और स्त्री अविदुषी हो और स्त्री विदुषी और पुरुष अविद्वान् हो तो नित्यप्रति घर में देवासुर संग्राम मचा रहे और सुख कहां"। इसी प्रकार यजुर्वेद के "यथेमां वाचं कल्याणीं" इस मन्त्र की व्याख्या करते हुए अन्त्यज और नीच जाति वालों के लिये भी शिक्षा आवश्यक बताई है।

(ङ) ऋषि दयानन्द स्वतन्त्र विचारक थे। वे बालक को लकीर का फकीर और प्रत्येक बात पर जीहजूर करने वाला नहीं बनाना चाहते थे, वे बालक को स्वतन्त्रविचारक बनाना चाहते थे। अतएव वे लिखते हैं कि "माता पिता का कर्त्तव्य है कि वह सन्तान को उपदेश करें कि 'यान्यस्माकं सुचरितानितानि त्वयोपास्याणि नो इतराणि'"

(५) शिक्षा कैसी होनी चाहिये— यह तो हम पहिले लिख चुके हैं कि ऋषि दयानन्द भारतवासियों के लिये भारतीय ढंग की शिक्षा लाभकारी समझ ते थे, पर साथ ही वे वर्तमान संस्कृत शिक्षाप्रणाली का विरोध भी करते थे, क्योंकि इस में उपयोगी विषय कम हैं, नवीन ग्रन्थों में बाल की खाल उतारी गई है, उन में उद्देश्य के प्रतिपालन पर बल नहीं दिया गया, प्रत्युत साधन पर वादविवाद करने में ही सारा समय लगाया गया है। व्याकरण साधन है, उद्देश्य नहीं। पर हमारे पण्डित लोग बीस-बीस तीस तीस वर्ष केवल व्याकरण पढ़ाने में ही लगा देते हैं, अतएव ऋषि ने नवीन ग्रन्थों का विरोध कर प्राचीन ग्रन्थों को पढ़ाने का अनुरोध किया है, ऋषि दयानन्द शिक्षा का उद्देश्य बालक को पूर्ण बनाना अर्थात् उसकी शारीरिक, मानसिक, आत्मिक उन्नति करना समझते हैं। ऐसे व्यक्तियों से ही समाज पूर्ण बनता है, ऐसे व्यक्ति ही अपना और समाज का उपकार कर सकते हैं। आजकल संसार में शिक्षा को बड़ा महत्व दिया जा रहा है। संसार की सभी जातियों में इस समय घोर स्पर्धा है, प्रत्येक देश इस बात की ताक में है कि कब दूसरा कमजोर हो कि मैं उसे धर दबाऊँ। इस जीवन संग्राम में कुचले जाने से बचने के लिये, संग्राम में विजय पाने के लिये शस्त्रास्त्रों की उत्तमत्ता और अधिकता के साथ २ देशवासियों का शिक्षित होना भी आवश्यक समझा जा रहा है। सान्फ्रान्सिस्को की प्रदर्शनी के मुख्य द्वार पर निम्नलिखित वाक्य लिखे हुए हैं—

जो देश अपने निवासियों को शिक्षित करने में पीछे रह जाता है, वह अपने देश को व्यापारिक दासता की जंजीरों में जकड़ता है, शिक्षा के अभाव के कारण प्रायः जातियों से उनके देश छिन चुके हैं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

आज कल संसार में विजय पाने का एक नया शस्त्र निकल आया है, वह व्यापार है । अल्प खर्च वा मूल्य में वस्तुएं पैदा कर दूसरे देश के काम धन्धों को मार दिया जाता है । पर इस काम के लिये लोगों का शिक्षित होना आवश्यक है, जो देश अधिक शिक्षित है, जिसने विज्ञान में अधिक उन्नति की है, वही सब पर व्यापारिक प्रभुत्व जमाता है, अतएव पाश्चात्य देशों में शिक्षा को बड़ा महत्व दिया जाता है; पिछली शताब्दी में युरोप में पैस्टेलोजी, कोमिनस, फ्रैड्रिक, विलहेम प्रभृति शिक्षाशास्त्रज्ञ बालशिक्षकों ने जन्म लेकर वहां की शिक्षाप्रणाली को बहुत उन्नत किया, उन्होंने शिक्षा को विज्ञान का रूप दिया, जिस से कि अल्प-काल और अल्पश्रम में शिक्षा दी जाती है । पाश्चात्य देशवासी शिक्षा के महत्व को समझते हैं, वे गुणी हैं, अतएव उन्होंने उपरोक्त व्यक्तियों का खूब आदर किया है, वे उन्हें देवता समझते हैं, पर शोक है कि हम ने ऋषि दयानन्द का उस के महान् उपकारों के सामने कुछ भी आदर नहीं किया ।

नवीन भारत को बनाने में ऋषि दयानन्द का बड़ा हाथ है, आजकल के सब प्रचलित आन्दोलनों का आरम्भ ऋषि दयानन्द से होता है । ऋषि का शिक्षाविषयक आन्दोलन बड़े महत्व का और उपयोगी है, एक विद्वान् का कथन है कि:— "शिक्षा प्रचार ही निकटवर्ती भविष्य का नया संन्यास होगा । शिक्षक ही नये संन्यासी होंगे" । ऋषि ने सब प्रकार से अपना कर्त्तव्य निवाहा है, उसका अनुसरण करना हमारा कार्य्य है ।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ज़न्नत और दोज़ख़ के नज़ारे

[रचयिता—श्री० पं० प्रियव्रत जी विद्यालंकार]

इधर है ज़न्नत उधर है दोज़ख़ है जारहे दोनों जाने वाले।
विमान पर बैठ चल दिये इक बँधे खड़े हैं सताने वाले॥
इधर गले में हैं फूलमाला उधर यह हाथों में हथकड़ी हैं।
नज़र हैं आते नज़ारे दोनों ओ देख गोली चलाने वाले॥
थी गोद ख़ाली प्रभु की जिनके लिये वह जा बैठे जाने वाले।
पड़ा है दोज़ख़ की कोठड़ी में बँधा हुआ जेलख़ाने वाले॥
गई अक़ल अब बने हो पागल खुला है दोज़ख़ का पहिला दर यह।
वह देखो ज़न्नत में हँस रहे हैं अक़ल का सिक्का जमाने वाले॥
खुला जो दोज़ख़ का दूसरा दर नज़ारा कुछ और आयेगा तब।
लटकते फाँसी पै कैसे वह हैं बशर जो दोज़ख़ के जाने वाले॥
पड़े सड़ोगे क़बर में तुम जब खुला जो दोज़ख़ का तीसरा दर।
न उठने पावोगे तुम वहाँ से कुराँ पै ईमान लाने वाले॥
पुराना चोला बदल के वह तो नया ही रँग आजमायेंगे कुछ।
तुझे क़यामत के दिन तलक यह न कीड़े छोड़ेंगे खाने वाले॥
तुझे जलाने को देख दोज़ख़ की भट्टी शोले उगल रही है।
क़दम से ज़न्नत भी पाक उनके हुई जो हैं ख़ूँ बहाने वाले॥
न नाम लेवा न पानी देवा उधर कोई होगा चन्द दिन में
झुके इधर उनके पाक क़दमों पै सारे हिन्दू कहाने वाले॥
जो आन रखनी हो हिन्दुओं की तो केसरीबाना डालो "प्रेमी"।
सुना रहे हैं जिगर के ख़ूँ की दिलों में मोहर लगाने वाले॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

केलॉग पैक्ट

(लेखक— श्री सर्वमित्र जी गुरुकुल कांगड़ी)

मनुष्य जाति ने अनन्त काल तक पारस्परिक झगड़ों का निर्णय करने के लिए युद्ध का प्रयोग किया है। पर अब उसे युद्ध की विकरालता का तत्वज्ञान होगया है। गतमहा-युद्ध के कारण आज तक, १० वर्ष बाद तक, भी यूरोप की स्थिति बहुत खराब है। यातायात, विनिमय, व्यापार, व्यवसाय को धक्का पहुंचता है, मुद्रापद्धति को धक्का लगता है, आर्थिक स्थिति खराब हो जाती है। इस प्रत्यक्ष फल को देखकर संसार में नई विचारधारा चली है। वे युद्ध के स्थान पर किसी अन्य वस्तु को निर्णायक बनाना चाहते हैं। दुनिया उस अलौकिक वस्तु की खोज में है। वह अच्छे से अच्छा उपाय ढूंढना चाहती है। राष्ट्र संघ की स्थापना से Arbitration और reconciliation के सिद्धान्तों को माना गया है। पर मनुष्य जाति यहीं तक न ठहरी। उसने दूसरी ओर नजर दौड़ाई। मनुष्य समाज के हृदय में युद्ध के प्रति इतनी घृणा का भाव उत्पन्न होगया है कि वह युद्ध को ग़ैरकानूनी करार देने लगा। १९२२ के मई मास में जिनोआ नगर में ३० राष्ट्रों ने यह प्रस्ताव पास किया कि वे कभी आक्रामक (aggressive) युद्ध नहीं करेंगे। १९२४ के सितम्बर मास में राष्ट्र संघ की एसेम्बली ने एक प्रोटोकल स्वीकृत किया। इस में युद्ध के स्थान पर पञ्चायत को पारस्परिक झगड़ों का निर्णायक बनाया गया था। १९२५ में लोकार्नो पैक्ट पास हुआ, इस में फ्रांस, जर्मनी, बैलिजयम ने शपथ की थी कि वे आपस में कभी युद्ध न करेंगे। सब झगड़ों का निर्णय पंचायत से करावेंगे। १९२७ में हवाना में "पैन अमेरिकन कांग्रेस" ने युद्ध को राष्ट्रीय नीति के तौर पर अस्वीकृत किया था। परन्तु १९२८ की २७ अगस्त को पैरिस में दुनिया के १५ राष्ट्रों ने एक पैक्ट, जिस में युद्ध को गैरकानूनी करार दिया गया था, पर हस्ताक्षर किए। रूस, टर्की आदि दो तीन राष्ट्रों को छोड़ कर शेष सब राष्ट्र इस "अन्तर्राष्ट्रीय-युद्ध-संन्यास-सन्धिपत्र" पर हस्ताक्षर कर चुके हैं। कहा जाता है कि संसार के इतिहास में ईसा की उत्पत्ति के बाद यदि किसी अन्य घटना की ओर इशारा किया जा सकता है तो वह यह सन्धिपत्र है। अब प्रश्न उपस्थित होता है कि जिस पैक्ट को इतना अधिक महत्व दिया जाता है उसका स्वरूप क्या है? हम उसे अपने पाठकों के लाभार्थ यहां देते हैं—

"संयुक्त-राष्ट्र-अमेरिका के राष्ट्रपति, ग्रेटब्रिटेन, आयर्लैण्ड और समुद्रपारवर्ती ब्रिटिश जनपदों के राजा तथा भारतवर्ष के शाहन्शाह, जर्मन साम्राज्य के राष्ट्रपति, इटली राष्ट्र के नरेश, फ्रांस जनतन्त्र के सभापति, जापान राष्ट्र के शाहन्शाह अत्यन्त गम्भीरता पूर्वक यह अनुभव करते हैं कि वे अत्यन्त उच्चस्थान पर आसीन हैं। इसलिये उन का एक बड़ा भारी कर्तव्य है और वह कर्तव्य यह है कि आजकल इन देशों में जो सौख्य, शान्तिमय सम्बन्ध हैं, वे यथावत् बने रहें, यही पर्याप्त नहीं है, आवश्यकता इस बात की भी है कि फिर उपर्युक्त ६ राष्ट्रों के अधीश्वर संसार के किसी भी राष्ट्र के बीच लड़ाई न होने दें।;

इस बात की इच्छा प्रकट करते हैं कि वे अपने कार्यद्वारा यह प्रकट करें कि वे भविष्य में लड़ाई को

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

राष्ट्रीयनीति का आवश्यक साधन बनाने की घोर निन्दा करते हैं और वे आपसे लड़ाई का परित्याग कर अन्तर्राष्ट्रीय युद्धों को शान्तिमय उपायों से निपटा लिया करेंगे। ;

इस बात के लिये आशान्वित हैं कि उनके उदाहरण से प्रोत्साहित होकर संसार के अन्य सब राष्ट्र इस मनुष्यतापूर्ण उपाय में योगदान करें और इस वर्तमान सन्धि की शर्तों के अनुसार कार्य करते रहने से (सब राष्ट्र) अपने अपने जनसमूह को इस सन्धि की लाभकारी शर्तों के अन्तर्गत लाने का प्रयत्न करेंगे और इस प्रकार संसार के सब सभ्यदेशों को वे युद्ध संन्यास के सदुद्योग को पूर्ण सफल बनाने के लिये जुटा सकेंगे ;

यह निश्चय करते हैं कि एक सन्धि की जाय और इस काम के लिये उन्होंने अपने अपने प्रतिनिधि इस प्रकार नियुक्त किए हैं—

(१) संयुक्त राष्ट्र-अमेरिका के राष्ट्रपति,

(२) ब्रेटब्रिटेन, आयर्लैण्ड और समुद्र पारवर्ती ब्रिटिश जनपदों के राजा तथा भारतवर्ष के शाहन्शाह,

(३) जर्मन साम्राज्य के राष्ट्रपति,

(४) इटली राष्ट्र के नरेश,

(५) फ्रांस जनतन्त्र के सभापति,

(६) जापान शाहन्शाह।

इन प्रतिनिधियों ने निम्नलिखित सन्धि की शर्तें स्वीकृत की हैं—

सन्धिपत्र की प्रथम धारा

इस सन्धिपत्र पर हस्ताक्षर करने वाले राष्ट्र अपने अपने जनसमूहों के नाम पर अन्तर्राष्ट्रीय विवादों को सुलझाने के लिए लड़ाई के आश्रय लेने की बात की घोर निन्दा करते हैं और वे राष्ट्रीय नीति के रूप में एक दूसरे के प्रति युद्ध के प्रयोग करने का सर्वथा परित्याग करते हैं।

द्वितीय धारा

इस सन्धिपत्र पर हस्ताक्षर करने वाले राष्ट्र इस बात की प्रतिज्ञा करते हैं कि वे प्रत्येक विवाद ग्रस्त विषय या झगड़े फ़साद का निर्णय सिवाय शान्त उपायों के और किसी भी प्रकार नहीं करेंगे; फिर चाहे वह विवाद या झगड़ा किसी तरह का क्यों न हो और उसका आदि कारण कुछ भी क्यों न हो।

तृतीय धारा

यह सन्धि प्रस्तावना में लिखे हुए राष्ट्रों के शासन विधानों के अनुसार स्वीकृत होगी। जब इन राष्ट्रों की स्वीकृति वाशिङ्गटन के स्टेट डिपार्टमैण्ट के पास पहुंच जायगी तब से यह कार्यरूप में परिणत होगी।

कार्यरूप में परिणात करने के बाद भी आवश्यक समय तक संसार के अन्य राष्ट्र भी इस पर हस्ताक्षर कर सकते हैं।

१९२८ की २७ अगस्त को पैरिस में हस्ताक्षर हुए।

हमने अपने पाठकों के सम्मुख सन्धिपत्र के स्वरूप को रख दिया और अब हम संक्षेप से इसके इतिहास पर विचार करेंगे। १९०८ की १० फर्वरी को फ्रांस और अमरिका ने एक सन्धि की थी। इसका उद्देश्य यह था कि यदि कभी दोनों राष्ट्रों में कोई विवाद या झगड़ा उपस्थित हो तो उसे एक कमीशन तय कर दिया करे। दोनों एकदम लड़ाई के लिये तय्यार न हो जावें। इसे रूट कन्वेन्शन कहा जाता था। इसकी अवधि १९२८ की २७ फर्वरी तक थी। फ्रांस ने देखा कि सन्धि का कार्यकाल समाप्त होने वाला है इस लिये एक नई सन्धि

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

करनी चाहिये। उन दिनों अमरिका में युद्ध को गैरकानूनी करार देने की ओर लोगों का ध्यान गया था। सिनेटर बोरहा इसका प्रवर्तक था। इस लिये १९२७ की ६ एप्रिल को फ्रांस के पर-राष्ट्र-सचिव ब्रियांद ने असोशिएटेड प्रैस द्वारा अमेरिकन जनता के सामने यह प्रस्ताव रखा कि फ्रांस खुले तौर पर अमेरिका के साथ युद्ध को गैर कानूनी करार देने की सन्धि करना चाहता है और यदि इस प्रस्ताव को अमेरिका स्वीकार कर लेता तो फ्रांस को बहुत लाभ था। उसे किसी भी युद्ध में अमेरिका का डर न रहता, यद्यपि अन्य राष्ट्रों को हो सकता था। अमेरिका फ्रांस के किसी भी कार्य का विरोध न कर सकता था। फ्रांस ने कई मध्य यूरोपीय देशों से सैनिक सन्धियाँ की हुईथीं। उन में अमेरिका हस्ताक्षेप नहीं कर सकता था। यदि राष्ट्र संघ फ्रांस को आक्रमण कारी भी उद्घोषित कर दे तो भी वह उसका विरोध नहीं कर सकता था क्योंकि वह सन्धि में बंधा था। इन लाभों को देख कर फ्रांस ने यह प्रस्ताव किया था, पर अमेरिका का परराष्ट्रविभाग भी सीधा साधा न था। उसने अपने मार्ग में इन अड़-चनों को देखा। इसलिए उसने फ्रांस के प्रस्ताव को स्वीकृत नहीं किया, पर इसके स्थान पर फ्रांस से कहा कि दो राष्ट्रों की युद्ध-संन्यास-सन्धि के स्थान पर यदि सब राष्ट्र इस में सहमत हों तो अच्छा है। फ्रांस ने किसी परोपकार के भाव से प्रेरित हो कर तो अपना प्रस्ताव रखा न था इस लिए वह कैलॉग के प्रस्ताव को मानने में ननुनच करने लगा। उसका कहना था कि अमेरिका सब प्रकार के युद्धों को—रक्षणात्मक युद्धों को भी—गैरकानूनी करार देना चाहता है। पर फ्रांस ने कई राष्ट्रों से ऐसी सन्धियां की हुई हैं कि जिनसे वह इन राष्ट्रों पर आक्रमण होने की अवस्था में सहायता देने के लिए बाधित है। उन सन्धियों के आधार पर यूरोप की शान्ति स्थित है। यह सन्धिपत्र उन सन्धियों को दूर करता है, अर्थात् यूरोप की शान्ति को भंग करता है, इस लिये फ्रांस अमेरिका के प्रस्ताव को स्वीकृत करने में असमर्थ है। दोनों देशों में बातचीत चलती रही। फ्रांस ने भी अपना एक अलग ही सन्धिपत्र बनाया। इस में रक्षणात्मक युद्धों को उचित समझा गया था। उसका कहना था कि यदि कोई राष्ट्रयुद्ध-संन्यास-सन्धिपत्र पर हस्ताक्षर करदे, और यदि उस पर कोई राष्ट्र आक्रमण करे तो आक्रान्त राष्ट्र को यह अधिकार होना चाहिये कि वह अपनी रक्षा के लिए युद्ध कर सके। इसके अतिरिक्त उसका यह भी कहना था कि केवल बड़े राज्य ही नहीं, अपितु सब छोटे राष्ट्रों को भी इसमें सम्मिलित करना चाहिए। जब तक संसार के सब राष्ट्र इस सन्धि को स्वीकृत न कर लें इसे कार्यरूप में परिणत न किया जाय। यदि एक राष्ट्र इस सन्धि को तोड़ दे तो अन्य राष्ट्रों को इस सन्धि की शर्तों से मुक्त होने की स्वन्त्रता होनी चाहिये। फ्रांस के सन्धिपत्र में इन बातों का स्पष्टतया उल्लेख था।

अमेरिका ने फ्रांस के प्रस्ताव पर कोई ध्यान न देकर सब बड़े राष्ट्रों के पास अपना सन्धिपत्र भेज दिया। ब्रिटेन में भी वह भेजा गया था। वहां से उत्तर आया कि फ्रांस और अमेरिका के सन्धि पत्रों में कोई मत भेद नहीं है। ब्रिटेन का कहना था कि संसार के कई ऐसे प्रदेश हैं, जिन की रक्षा करना ब्रिटिश साम्राज्य की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इन प्रदेशों में किसी दूसरी शक्ति के हस्तक्षेप को ब्रिटिश सरकार सहन नहीं कर सकती। यदि उन पर आक्रमण होगा तो ब्रिटेन उस प्रदेश की रक्षा के लिए अवश्य ही

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

लड़ेगा। यदि ब्रिटिश सरकार को इन प्रदेशों में पूर्णतया हस्तक्षेप करने का अधिकार दिया जाय तो वह इस सन्धि को स्वीकृत कर सकेगी। जब यह उत्तर अमेरिकन परराष्ट्रसचिव कैलाग के पास पहुँचा तो उसने इसे सन्तोषप्रद माना। अमेरिका स्वयं शान्ति का वास्तविक अभिलाषी नहीं है। यह सब ढकोसला था। वह अपने पैक्ट को सब से स्वीकृत कराना चाहता था। इस के अतिरिक्त वह मुनरो द्वारा स्थापित सिद्धान्त को भी तोड़ना नहीं चाहता था, इस लिए उसने अपने एक भाषण में स्पष्ट तौर पर स्वीकार किया कि प्रत्येक राष्ट्र अपनी रक्षा के लिए उचित उपायों का प्रयोग कर सकता है। उसने स्पष्ट शब्दों में संरक्षण (Reservation) की घोषणा की। अब किसी भी देश का कोई झगड़ा न था। हस्ताक्षर करने से उनका कुछ छिनता तो था नहीं, इस के अतिरिक्त हस्ताक्षर न करने से दुनिया में बदनामी होने का डर अवश्य था। इसलिए सब राष्ट्रों ने इस पर हस्ताक्षर कर दिए।

इस पैक्ट से प्रत्येक देश को लाभ था। छोटे राष्ट्र समझते थे कि राष्ट्र संघ का कोई भी निर्णय तब तक बाध्य नहीं किया जा सकता जब तक कि उस में अमेरिका शामिल न हो। वे समझते थे कि फ्रांस और ब्रिटेन अपने स्वार्थ के लिए ही राष्ट्र संघ का प्रयोग करते हैं। यदि अमेरिका इस में शामिल हो जाय तो उनकी कुछ न चलेगी और इस झगड़े से हम छोटे देश भी कुछ लाभ उठा सकेंगे। इस लिए वे इसके पक्षपाती थे।

इस सन्धिपत्र का प्रवर्तक अमेरिका निस्वार्थभाव से संसार की इस सेवा में तल्लीन न था। उसके भी अपने स्वार्थ थे। वह सारे संसार में अपने आर्थिक साम्राज्यवाद की स्थापना करना चाहता था। दक्षिणी तथा मध्य अमेरिका के राष्ट्र तो उसके पंजे में थे ही, यूरोप को भी अपना शिकार बनाने की सोचने लगा। उसका यही उपाय था। संसार में सब से अधिक धनी देश अमेरिका है। दूसरे देशों में अपने धन की खपत करना उसके लिये आवश्यक है और सब राष्ट्र उससे आर्थिक सहायता लेते हैं। गत महायुद्ध के समय उसने मित्र राष्ट्रों को आर्थिक सहायता दी थी। ब्रिटेन और फ्रांस उसके आगे दुर्बल हैं। आर्थिक साम्राज्यवाद के जाल को बिछाने के लिए इस ढोंग की आवश्यकता थी।

इंग्लैण्ड को भी इस सन्धिपत्र से अनेक लाभ हैं। इस समय सारे संसार में सब से बड़ा साम्राज्य ब्रिटेन का है और यदि कोई राष्ट्र अपना साम्राज्य बढ़ाना चाहता है तो उसे ब्रिटेन से लड़ना पड़ेगा। उसका साम्राज्य ब्रिटेन की हानि पर ही स्थित है और यदि वह अपने विशाल साम्राज्य की रक्षा करना चाहता है तो उसके लिये आवश्यक है कि वह राष्ट्रीय नीति के तौर पर युद्ध की निन्दा करे। दूसरा लाभ यह है कि इस समय तक ब्रिटेन सब से अधिक शक्ति शाली नाविक देश रहा है और गत महा-युद्ध के बाद से अमेरिका भी अपनी नौशक्ति बढ़ाने की चेष्टा कर रहा है। इस समय ब्रिटेन और अमेरिका में नौ-प्रतिस्पर्धा जारी है उसे शान्त करने के लिए इस प्रकार के पैक्ट की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त इस समय एशिया में ब्रिटेन का प्रभाव उड़ रहा है। दो इंग्लिश देशों की सन्धि इसकी पुनः स्थापना में सहायक हो सकती है। और ब्रिटेन और अमेरिका में दक्षिण अमेरिका के सम्बन्ध में झगड़े होते हैं, उन के सुलझाने में मदद मिल सकती है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जर्मनी को भी इस पैक्ट पर हस्ताक्षर करने से लाभ ही है। उसके शस्त्र छिन चुके हैं। निस्सहाय है चुका है, साम्राज्य का स्वप्न टूट चुका है। उसके लिए शान्ति ही आवश्यक है और इससे ही उसकी स्थिति सुधर सकती है।

सन्धि की कैलाग द्वारा की गई व्याख्या से फ्रांस भी सन्तुष्ट है।

यदि किसी राष्ट्र को पैक्ट पर हस्ताक्षर करने से कोई हानि नहीं तो व्यर्थ में बदनाम होना मूर्खता है। इसलिए प्रायः सब राष्ट्रों ने इस पर हस्ताक्षर कर दिये।

अबतक हमने पाठकों के सम्मुख पैक्ट, उसके इतिहास और उसकी स्वीकृति के कारणों का उल्लेख किया है। पर अब प्रश्न यह रह जाता है कि क्या इससे कुछ लाभ भी हो सकेगा। क्या दुनिया से लड़ाई उठ जायगी? इस प्रश्न का बहुत सीधा सादा उत्तर है। न इस से लड़ाई का अन्त होना है और न ही किसी अन्य महत्व पूर्ण प्रभाव का प्रादुर्भाव। इस पैक्ट में अनेक दोष हैं। इस पैक्ट से युद्ध को गैरकानूनी करार दिया गया है। पर विभिन्न राष्ट्रों में जो पारस्परिक झगड़े उठेंगे, उनका कोई इलाज नहीं किया गया है। युद्ध की निन्दा करना उचित है, पर उसके स्थान पर किसी स्थानापन्न की अवश्य ही नियुक्ति होनी चाहिए। इस पैक्ट में इस बात का सर्वथा उल्लेख नहीं है कि राष्ट्रों के पारस्परिक झगड़ों को कौन सुलझाए। इस समय सब से बड़ी अन्तर्राष्ट्रीय परिषद् राष्ट्र-संघ है। अमेरिका उसका प्रभुत्व स्वीकार नहीं कर सकता। राष्ट्रसंघ या अन्य किसी भी संस्था का पैक्ट में उल्लेख नहीं किया गया, जो कि उत्पन्न झगड़ों का फैसला कर सके। पैक्ट में कारण पर कुठाराघात करने का प्रयत्न किया है, पर यदि कार्य-झगड़ा-उत्पन्न ही हो जाय तो उस की दवा का उल्लेख नहीं। इस के अतिरिक्त इस पैक्ट में आत्मरक्षार्थ युद्धों का विधान किया गया है। पर प्रश्न यह है कि यह युद्ध आत्मरक्षार्थ है या नहीं इसका निर्णय कौन करेगा। अब तक कोई भी राष्ट्र इस बात को नहीं कहता कि उसने आक्रामक युद्ध किए हैं, सभी का यह रोना है कि उन्हें अपनी सत्ता पर सन्देह था, इसलिए ही, अपनी स्थिति को मजबूत करने के लिए ही, बाधित होकर इस उपाय का आश्रय लेना पड़ा है। जब तक आक्रामक और आत्मरक्षार्थ युद्धों की स्पष्ट परिभाषा नहीं की जाती तब तक इस सन्धिपत्र का कोई लाभ नहीं है।

यदि वास्तव में ये राष्ट्र ईमानदार हैं तो उन्हें अपनी सेनाएं कम कर देनी चाहिएं। शीघ्रता से निश्शस्त्रीकरण की ओर अग्रसर होना चाहिए। पर यहां अवस्था ही दूसरी है, निश्शस्त्रीकरण के स्थान पर शस्त्रीकरण जोरशोर से हो रहा है। अमेरिका ने नौशक्ति बढ़ाने का ३ अरब डालर का प्रोग्राम पास किया है। अमेरिकन राष्ट्रपति कूलिज का कहना है कि राष्ट्रीयनीति के तौर पर युद्ध-संन्यास और निश्शस्त्रीकरण में कोई सम्बन्ध नहीं है। कूलिज के इस भाष्य से दूसरे देश भी अपना काम साध रहे हैं। फ्रांस भी बड़ी तेजी से नौसेना बढ़ा रहा है? एक अरब के खर्च से वह सारे समुद्री किनारे पर जहाजों की कड़ी बांध देगा। इङ्गलैण्ड भी चुप नहीं है। वह नौशक्ति में अपने प्रतिस्पर्धी अमेरिका को पछाड़ना चाहता है। इसलिए वह चुपचाप फ्रांस से सन्धि भी कर रहा है। कहने का अभिप्राय यह है कि ये राष्ट्र बेईमान हैं। 'मुंह में राम, बगल में छुरी' वाली कहावत चरितार्थ हो रही है। जो अमेरिका शान्ति का नाम लेकर ३ अरब डालरों से जहाज बना रहा है, आवश्यकता पड़ने पर व्यापारी जहाजों

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

को भी जंगी जहाजों में बदलने के कानून पास कर रहा है, जो हेटी, निकारगुआ तथा दक्षिणी अमेरिका को अपने पंजे में फंसाए हुए है, क्या उसे सच्चा शान्ति का दूत समझना बुद्धिमानी है? जो इंग्लैण्ड पेलेस्टाइन, इराक, मिस्र और हिन्दुस्थान में सैनिक बल से शासन कर रहा है, जो सिंगापुर में जहाजी बेड़ा बना रहा है, उसकी ईमानदारी में विश्वास करना अपने को धोखा देना है। जो फ्रांस सारे यूरोप की अशान्ति का कारण है, सैनिक सन्धियां करता है, सैनिक शक्ति को बढ़ाता है, जर्मनी पर अत्याचार करता है, उसकी सचाई पर विश्वास करना अपने को पागल साबित करना है। जो इटली सदा साम्राज्य का स्वप्न लिया करता है जो जापान मंचूरिया पर दांत गाड़े हुए है, उसकी शान्ति-उपासना पर गौर से विचार करना मूर्खता है। यह पैक्ट धूल में मिल जायगा। इस से किसी उद्देश्य की सिद्धि न होगी। यह केवल मात्र शान्ति की ओर एक पग है। यदि सच्ची शान्ति की स्थापना करनी है तो निम्न बातों का होना आवश्यक है—

(१) अन्तर्राष्ट्रीय कानून।

(२) युद्ध को गैरकानूनी करार देना।

(३) Compulsory conciliation.

(४) जो राष्ट्र अन्तर्राष्ट्रीय नियमों का उल्लंघन करे या युद्ध का आश्रय ले उसका सब तरह से बहिष्कार।

(५) निश्शस्त्रीकरण।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मा !

[श्री पं० वीरहरि जी विद्यार्थी]

मा ! क्या यह यथार्थतः सत्य है, जो मैं देख रहा हूँ। आप श्वेतवर्णधारियों के बन्धन में पड़ी हुई हैं। आपके हस्त-पद विकट-बन्धनों से वेष्टित हैं। पापी प्रतिपक्षी आपके साथ असद्व्यवहार कर रहे हैं। वे आपके समक्ष आपकी सन्तति पर भीषण-भयावह अत्याचार कर रहे हैं। वे आपकी बुभुक्षित सन्तति का कीटाणुओं के सदृश वध कर रहे हैं। वे सभी प्रकार से आपके सुपुत्रों का रक्त-शोषण कर रहे हैं। वे उन्हें पद दलित कर रहे हैं। उनके हृदय मानसिक नहीं, अपितु पाषाणिक हैं। हो सकता है पाषाण भी दयार्द्र हो उठे, परन्तु उनके हृदयों में तो रंच-मात्र भी दया-करुणा का नाम नहीं।

× × ×

मा ! अब नहीं सहा जाता। कष्ट की पराकाष्ठा हो गयी। इतना कष्ट-असीम-दुःख-तो रावण, कंसादि के अत्याचारों से भी नहीं हुआ था। आज तो यह दुःख नहीं, प्रत्युत रौरव-नरक की असहनीय निःसीम वेदना है। इससे तो काल-कवलित हो जाना कई गुणा उत्तम है। काल भी इतनी निःशंसता न करेगा —अत्याचार का अक्षय-कोष रिक्त न करेगा। विपक्षियों की कृष्णवर्णा कार्यप्रणाली देखकर लोम हर्षित हो जाते हैं, भय का भूत सिरपर सवार हो जाता है, कालान्तक-विषम-ताप चढ़ आता है। मा ! क्या इतने पर भी सहिष्णुता का आश्रय लिया जा सकता है ?

× × ×

मा ! एक वार कृपा-कोर कर आज्ञा दीजिए। अपने पुत्रों को मंगल-मय शुभाशीर्वाद दीजिए। आपके उत्साह-दान से आपका मरणोन्मुख पुत्र भी शक्ति से भरपूर हो जायगा, और स्फूर्ति का रूप बन जायगा। केवल आप उच्च स्वर से, स्नेह-मयी दृष्टि से एक वार कह दीजिए—"प्राण-प्रिय पुत्रो ! अब बहुत हो गया। उठो और बद्ध परिकर होकर अपना कार्य करो। स्वतन्त्रता प्राप्त करो एवं मुझे बन्धन मुक्त करो।"

× × ×

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

परित्यक्ता

(लेखक— श्री धर्मेन्द्र)

(१)

ह मेरी मसेरी बहिन थी, उस का नाम खेमी था। मसेरी बहिन होते हुए भी वह मुझे सगी बहिन से भी बढ़ कर प्यार करती थी। जब कभी मैं उस के यहां जाता तो वह मुझे कोई न कोई चीज अवश्य दे छोड़ती थी, खाली हाथ कभी न भेजती थी। मुझे खूब याद है कि जब उस का पति उसे संग ले गया था तो वह मुझे भी साथ ले गई थी। वहां वह मेरी माता बन गई थी। हमेशा नहलाती, कपड़े पहिनाती, खिलाती, मेरी पुस्तकें संभाल कर रखती और समय पर स्कूल भेजती थी। एक दिन उसने मुझे दर्जन भर केलों में से एक केला दिया था और कहा उन से (पतिदेवसे) न कहना। उसने चोरी की, पर मेरे लिये, अपने लिये नहीं।

उस का पति उस से अच्छा व्यवहार नहीं करता था— दाल में थोड़ा सा नमक ज्यादा होता तो उसी समय उसे मारने खड़ा हो जाता, रात को दिया जला कर सोती तो कहता यह फजूलखर्ची क्यों ?, दस रोटियां पकाती तो पूछता क्या बरात आई है जो रोटियों का ढेर लगा दिया है ?, अपने आप रात को ऊपर कोठे पर जा सोता और अकेली उसे नीचे अन्धेरे कमरे में सुलाता। उस से कभी हंस कर बात करता ही न था। खेमी उस के लिये पाचिका से बढ़ कर न थी। इस दुर्व्यवहार की शिकायत खेमी भूल कर भी किसी से न करती। हिन्दू आदर्श के अनुसार स्त्री के लिए पति देवता है, चाहे वह कैसे भी बुरे स्वभाव वाला क्यों न हो, पर उस के विषय में पत्नी के लिए एक भी शब्द कहना, यहां तक कि उस का नाम लेना निषिद्ध है।

(२)

रात का समय है, ९ बज चुके हैं, मुलतान शहर के स्टेशन पर लाहौर जाने वाली गाड़ी आई हुई है, एक आदमी प्लेट-फार्म पर घूम रहा है, ऐसा मालूम पड़ता है कि वह किसी की प्रतीक्षा में है, इतने में ही प्रवेश द्वार से तीन स्त्रियों को आते देख वह उन की ओर बढ़ा, इन तीन महिलाओं में से एक का नाम खेमी था, शेष दो में से जो

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बड़ी थी, वह उस की माता और छोटी उस की मासी। अब पाठक समझ गये होंगे कि उपरिवर्णित मनुष्य खेमी के पति बुद्धू को छोड़ और कोई नहीं था। बुद्धू ने खेमी को औरताना कमरे में बिठा दिया, गाड़ी चल पड़ी। मा और मासी बुद्धू और खेमी को विदाई दे कर लौट गईं।

जिस सीट (Seat) पर खेमी बैठी थी, उसी पर उस के साथ दो और औरतें बैठी थीं। बातचीत से मालूम हुवा कि वे दोनों माता और लड़की हैं। वे दोनों खेमी से बातें करने लगीं—

माता— बहिन तुम कहां जाओगी ?

खेमी— मिएटगुमरी।

लड़की— हम दोनों भी वहीं जा रही हैं।

माता— तुम वहां कैसे जा रही हो ?

खेमी—मेरे स्वामी वहीं काम करते हैं— वे मुझे ले जा रहे हैं।

लड़की—वे क्या काम करते हैं।?

खेमी—वे एक स्कूल में पढ़ाते हैं।

खेमी बचपन से ही शर्माती थी, इसलिये वह उन से कोई भी बात न पूछ सकी। इन बातों के होते होते मिएटगुमरी का स्टेशन भी आ गया। बुद्धू ने कुली को बुलवाया और सारा सामान मुसाफ़िरखाने में ले आया। वे दोनों औरतें बुद्धू के पीछे पीछे आ गईं। खेमी और बुद्धू ने सारा सामान तांगे पर लादा, फिर दोनों औरतों को भी बिठा कर बुद्धू ने तांगे वाले से तांगा चलाने को कहा। आध-एक घंटे के बाद तांगा एक स्थान पर ठहर गया। वहां सब उतर गये और सामान भी उतार लिया गया। घर में घुसते ही खेमी ने एकान्त में पति से पूछा-ये कौन हैं ? उसने कहा-ये परदेसिन हैं, इन्हों ने किराये पर मकान लेना है, अब रात को कहां जाँय, इस-लिये मैं इन्हें अपने साथ लेता आया हूं।

अगले दिन खेमी ने घर खूब साफ़ किया जगह जगह जाले लगे हुवे थे, उन्हें उतारा, चूल्हा बनाया, घर में कूड़ा करकट पड़ा था उसे बाहर किया। खेमी के काम में उन दोनों ने तनिक भी सहायता न दी, हां बैठ कर देखने का कष्ट उठाया।

(३)

१. बुद्धू बाज़ार से सब्जी लाता—खेमी से सब्जी चढ़वा कर सारी उन परदेसिनों के हवाले कर देता, न आप खाता और न खेमी के वास्ते बचाता। स्कूल से लौटते समय माल-पूड़े, गुलाब जामुन, लड्डू, कचौरी पेड़े वगैरः ले आता तो उन्हें ही खिलाता। ऐसा यत्न करता था कि खेमी को इस की बू भी न आवे। आप नीचे बैठता तो उन्हें ऊँचे आसन पर बैठाता।

एक दिन बुद्धू ने कहा—इन को भी रहने के लिये एक कमरा दे दो।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

खेमी—'आप जानते हैं कि घर में कितने कमरे हैं? एक सोने का और दूसरा रोटी पकाने का।

बुद्धू—इन में एक का आधा इन्हें दे दो, किराये पर तो कहीं ढूंढने से भी मकान नहीं मिला।

खेमी—आधे से न हमारा गुजारा होगा न इन का।

२. एक दिन स्कूल से लौटते ही बुद्धू ने खेमी से कहा-तुम मुहल्ले में जाकर किसी के यहां बैठ जाओ, मुझे एक काम है। खेमी यह सोच कर कि, किसी मित्र से बातचीत करनी होगी, चली गई। शाम हो गई, दीपक जल गए पर खेमी अब तक मुहल्ले में बैठी हुई प्रतीक्षा करती रही कि कब दर्वाजा खुलता है। प्रतीक्षा करने की भी एक सीमा होती है, इसके बाद मनुष्य अधीर हो जाता है। खेमी भी अधीर हो उठी। उसने कुंडा खटखटाया। कुछ देर बाद बुद्धू ने दरवाज़ा खोला। खेमी ने मित्र की कल्पना की थी, वह झूठी निकली। एक तो मित्र के लिये दरवाजा बन्द करने की आवश्यकता न थी और दूसरे उसने किसी आदमी को गुजरते भी न देखा था। हां, दरवाजा खुलने पर मालूम हुवा कि वे दोनों औरतें घर में थीं। खेमी के हृदय में संशय के अंकुर ने पौधे का रूप धारण किया।

३. एक दिन लड़की की माता ने खेमी को दो गोलियां दीं और कहा-यह हनुमान जी का प्रसाद है, इसे खा लो। खेमी ने वे दोनों गोलियां न खाईं और आले में रख दीं। संशय के अंकुर के पौधे पर कलियां भी लग गईं।

४. एक दिन मां और लड़की, जब बुद्धू के स्कूल से लौटने का समय हुआ, घर से निकल पड़ीं। उस दिन बुद्धू भी न आया। बुद्धू ने उनको उस दिन उस समय एक मकान पर आने को कहा था। वे दोनों वहां जा पहुंची। बुद्धू वहां पहले से ही विराजमान था। कुण्डा खोल कर पहले उन्हें घुसने को कहा और फिर आप घुसा। उसने अपने आप घुसते ही दर्वाजा बन्द कर लिया। जब यह अभिनय हो रहा था तब नीचे से एक स्त्री जा रही थी। उसने बुद्धू को और एक औरत को देख लिया। बस अब उस स्त्री ने झट अनुमान कर लिया कि वह औरत खेमी के सिवाय और कोई नहीं। जब वह स्त्री काम से लौट कर मुहल्ले में आई तो खेमी से कहने लगी-आज तो पति के साथ बड़ी २ सैर कर आई हो।

खेमी—"मैं तो सवेरे से यहीं बैठी हूं। उनकी प्रतीक्षा कर रही हूं। वे अब तक नहीं आये।"

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्त्री— ये मेरी आंखें मुझे कभी धोखा नहीं दे सकती हैं ? पहले तुम घुसी थीं और पीछे बुद्धू ।

खेमी बड़े सोच में पड़ गई, कि हो न हो वही दोनों औरतें वहां गई होंगी। इस ख्याल के आते ही सारा संसार सूना मालूम पड़ने लगा। इतना बड़ा धक्का उस कोमलाङ्गी और कोमल-हृदया के लिये असह्य था । उसे समझ आ गया कि मुझे घर से निकालने का षड्-यन्त्र रचा जा रहा है। संशय के पौधे पर फलियां पक गईं ।

(४)

उपरोक्त घटना के तीन चार दिन बाद खेमी की माता के नाम एक पत्र आया, पत्र इस प्रकार था—

मिएटगुमरी

मेरी प्यारी माता जी !

सादर नमस्ते,

इतने कष्ट सह चुकी हूं कि अब और सहारने की शक्ति भी नहीं रही। प्याला लबा-लब भर गया है। उस में एक भी बूंद और नहीं आ सकती । इस छोटे पत्र में उन षड्-यन्त्रों का, जो मुझे घर से बाहर निकालने के लिये किये जा रहे हैं, वर्णन नहीं हो सकता । वे दोनों औरतें, जो मेरे साथ गाड़ी में बैठी थीं, सारे अनर्थ की जड़ हैं। मैं अपने दुःख की कहानी यदि मुहल्ले वालों से कहूं तो पहले तो विश्वास नहीं करते और विश्वास करते भी हैं तो कहते हैं, हमें इससे क्या, उनकी निन्दा करना शास्त्र के विरुद्ध है। परन्तु जब आप सारी बातें सुनेंगी तो आपको मालूम हो जावेगा कि उन्होंने कैसे अतिमानुष्य कृत्य किये हैं। जल्दी से जल्दी मेरे भाई को भेजें कि वह मुझे यहां से ले जांय ।

आपकी दुःखिता आज्ञाकारिणी पुत्री

खेमी

(५)

बुद्धू को कुछ पता न था कि खेमी ने कोई पत्र लिखा है— उसने स्वयं ही खेमी से पूछा, तुम्हें घर से आये बहुत दिन हो गये हैं, माता जी से मिलने को जी चाहता होगा, कहो तो ले चलूं ।

खेमी ने हां कर दी। बुद्धू खेमी को मुलतान ले आया। वह सास के घर आकर जान बूझ कर पागलों की सी बातें करने लगा, पानी से भरा गिलास पड़ा था उसे ठोकर मार दी, उसे खाने को रोटी दी तो वह खिड़की के रास्ते बाहर फेंक दी, जो सन्दूक पड़ा हुवा था उसकी चीजें एक एक करके बाहर फेंकने लगा। खेमी की मां को पता लग गया कि यह सब इस की शरारतें हैं। उस ने कहा— बस भाई ! क्षमा कर, हमें तङ्ग न कर।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अगले दिन वह मिएटगुमरी चला गया। खेमी को वहीं छोड़ गया, उसने यह कहा कि अमुक दिन आऊंगा, खेमी को ले जाऊंगा, न हीं तो खेमी को किसी आदमी के साथ भेज देना। खेमी ने मां को सारा हाल सुनाया। उसकी मां ने दांतों तले उंगली दबा ली। उसे निश्चय हो गया कि, खेमी को वह अपने पास नहीं रखना चाहता, वह अब दूसरी औरत ही रक्खेगा। खेमी की मां ने मुकदमा किया। पर अदालत में तो सच की विजय नहीं होती, धन की विजय होती है। बुद्धू के पास पर्याप्त धन था, उस ने जज की मुट्ठी गरम की और मुकदमा जीत गया। बस अब खेमी के लिये कोई रास्ता न रहा, वह रात दिन रो रो कर काटती है।

मेरे दिल का एक पुराना घाव

(लेखक— श्री आचार्य रामदेव जी)

बात बहुत पुरानी है— मैं उन दिनों एक हाई स्कूल में हैडमास्टर का कार्य करता था। उस नगर के बहुत से लोगों से मेरी बड़ी घनिष्ठता थी। एक सज्जन तो मेरे बहुत ही अन्तरङ्ग मित्र थे। उनके और मेरे परिवार में भी बड़े सौहार्द का सम्बन्ध हो गया था। उन की एक कन्या थी, जिस से उन्हें अगाध स्नेह था। उनकी केवल मात्र वही एक कन्या थी। उन्होंने उसे अच्छी शिक्षा दी थी। उन दिनों उस कन्या की आयु लगभग १६ बरस की होगी। एक दिन मेरे उन्हीं मित्र महोदय ने मुझ से अनुरोध किया कि मैं उस कन्या को पढ़ाया करूं। वह उसे उच्च शिक्षा देना चाहते थे। मैंने यह अनुरोध स्वीकार कर लिया। वह बहिन मेरे पास पढ़ने के लिये आने लगी। मैंने उसे बहुत ही समझदार पाया। धीरे धीरे मेरे मित्र की वह कन्या मुझे अपना भाई समझने लगी।

मेरी वह बहिन पढ़ाई लिखाई में तो होशियार थी ही। साथ ही उस में स्त्रियोचित गुण भी कूट कर भरे हुए थे। वह बहुत ही नम्र और मीठे स्वभाव की थी, उसके प्रत्येक कार्य से कुलीनता टपकती थी। उस का स्वर अत्यन्त प्रिय और मधुर था। उस का शारीरिक स्वास्थ्य और सौन्दर्य भी सराहनीय था। वह बड़े यत्न से प्रतिदिन अपना पाठ स्मरण कर के मुझे सुनाया करती थी।

एक दिन उसने बड़ी लज्जा अनुभव करते हुए मुझ से कहा— "भाई जी, मुझे 'कुल्यात आर्य मुसाफिर' ला दीजिये। यदि उर्दू की और भी कोई अच्छी पुस्तक आप जानते हों तो वह भी मंगवा दीजिये।"

मुझे मालूम था कि मेरी बहिन उर्दू का एक अक्षर भी नहीं जानती। इसलिये मैंने कुछ आश्चर्यित सा हो कर पूछा— "तुम तो शायद उर्दू बिल्कुल नहीं जानती। फिर 'कुल्यात आर्य मुसाफिर' लेकर क्या करोगी?"

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उसने कोई जवाब नहीं दिया। गहरी लज्जा से उस का सिर बहुत नीचे को झुक गया।

मैं आश्चर्यित था कि इस में लज्जा की क्या बात है। बहुत सोचने पर भी मुझे कोई बात समझ न आई। मैंने उस से फिर पूछा कि वह उर्दू की पुस्तकें क्योंकर चाहती है। मेरे बहुत अधिक बल देने पर उसने बहुत ही धीमी स्वर में उत्तर दिया—"मैं ये पुस्तकें अपने देव के लिये चाहती हूं। वे उर्दू को छोड़ कर और कोई भाषा नहीं जानते।" यह कहते हुए उस का चेहरा लज्जा के मारे लाल होगया था।

मेरे आश्चर्य का अन्त न रहा। मुझे अभी तक यह भी मालूम नहीं था कि मेरी इस बहिन का कहीं विवाह भी हो चुका है। धीरे धीरे मैंने प्रश्नों द्वारा उस से सभी बातें मालूम कर लीं कि उसके पति स्कूल की केवल ५, ६ श्रेणियों तक ही पढ़े हैं अतः उन्हें मामूली उर्दू के अतिरिक्त अन्य कोई भाषा नहीं आती। वह एक प्रथम कोटी की सरकारी नौकरी करते हैं। उनका मासिक केवल १२ या १३ रुपया है। संघ के प्रभाव से उनमें अनेक साधारण बुराइयां, यथा तम्बाकू पीना, घुसती चली जा रही हैं? यह देवी उन्हीं बुराइयों से अपने पति देव का बचाव करने के लिये उन्हें 'कुल्यात आर्य मुसाफिर' समर्पित करना चाहती है।

मेरा माथा घूम गया? ओह, उन्नत चरित्र की सुशील और कुलीन देवी का, नहीं नहीं, मेरी प्यारी बहिन का यही भाग्य था। मेरा गला भर आया। आज मैं अपनी बहिन को पढ़ा न सका। आंसुओं को उठते हुए प्रबल वेग को बड़ी कठिनता से थाम कर मैं शीघ्रता से अपने घर चला गया।

घर आकर मैं एकान्त में अपनी बहिन के लिये जी भर कर रोया। ज्यों ज्यों मैं इस घटना पर विचार करता था, त्यों त्यों मेरा हृदय शोक और दुःख के बोझ से और अधिक दब जाता था। यह तो एक ऐसी दुरवस्था थी जिस से मेरी बहिन का उद्धार भी असम्भव था।

मेरा यह हार्दिक दुःख अपने मित्र पर क्रोध के रूप में बदलने लगा। मैंने सोचा— मेरा मित्र कितना मूर्ख है। अपनी एक मात्र कन्या के साथ उसने यह कैसा दिल दहला देने वाला व्यवहार किया है। उसे आखिर क्या होगया था। अपने हृदय के टुकड़े के साथ यदि उसने यही व्यवहार करना था तो इस कन्या को उसने पढाया लिखाया ही क्यों? फिर मुझे यह भी मालूम था कि मेरे मित्र के हृदय में अपनी कन्या के लिये स्नेह का समुद्र भरा हुवा है।

मैं गुस्से में बौखला हुवा अपने मित्र के पास पहुंचा। वहां मैंने उन्हें खूब आड़े हाथों लिया। मैं ने उन्हें जी भर कर कोसा, परन्तु वह एक अक्षर भी न बोले। वह सिर नीचा किये हुए चुपचाप सभी कुछ सुनते चले जा रहे थे। मैं जोश में, न जाने क्या क्या कह गया। अपनी उत्तेजना कुछ कम हो जाने के अनन्तर जब मैंने उत्तर की आकांक्षा से उन के चेहरे की ओर देखा तो मैं सहसा विचलित होगया। उन की आंखों में विषम वेदना की गहरी छाया स्पष्ट प्रतीत हो रही थी, वे रह रह कर ठण्डे श्वास ले रहे थे। मेरे चुप हो जाने पर उन्होंने जो थोड़े वाक्य कहे, वे सीधे मेरे दिल में जाकर चुभे, उन्हें मैं आजन्म नहीं भूल सकूंगा। उन्होंने कहा—"मित्र! तुम एक पिता के दिल को क्या समझोगे! क्या तुम समझते हो कि मैं ने अपनी सोने की प्रतिमा को यों ही गन्दे जल में प्रवाहित कर दिया? मेरा दिल चीर कर देखो— उस में इस घटना ने कितना गहरा घाव किया

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

है। मैं सब कुछ समझता था— फिर भी, इकलौती कन्या का बाप होकर भी, मैं उसे बचा न सका। मेरे देखते देखते मेरे जिगर का टुकड़ा समाज की राक्षसी प्रथाओं का शिकार बन गया। तुम जानते हो कि हमारी जाति के लोग संख्या में इतने कम हैं कि उन में वर ढूंढ निकालना आसान काम नहीं होता, इस लिये हमारी बिरादरी के लोग अपनी कन्याओं की सगाई बचपन में ही कर देते हैं, ताकि उन्हें पीछे से कन्या के लिये वर मिलना कहीं असम्भव न हो जाय। परन्तु अपनी कन्या को उच्च शिक्षा देने की इच्छा से मैं ने उस की सगाई बचपन में नहीं की। फल यह हुआ कि इस की विवाह योग्य उम्र हो जाने पर अपनी बिरादरी में लड़के तो गिने चुने ही थे। आख़िर लाचार होकर मुझे अपनी बिरादरी में यही एक लड़का मिला। लड़की को आजन्म कुमारी तो रख ही न सकता था, झख मार कर मुझे यहीं सम्बन्ध करना पड़ा।"

मैं कांप उठा। बिरादरी और जाति-पांति के नाम पर हिन्दु समाज में यह कैसा अन्धेर है! मेरी प्यारी बहिन का सम्पूर्ण जीवन हिन्दु जाति की इस भयंकर बेवकूफ़ी पर सदा के लिये कुर्बान कर दिया गया है। मैं ने सोचा इसी तरह हिन्दु जाति के घरानों में उत्पन्न हुईं न जाने कितनी स्वर्ग के राज्य की देवियां प्रतिदिन समाज की इस बेहूदी प्रथा पर बलिदान कर दी जाती होंगी। मैं सिहर उठा। मैं ने एक गरम श्वास लेकर मन ही मन प्रतिज्ञा की कि चाहे कुछ भी क्यों न होजाय, मैं सब कष्ट सहन कर के भी इस जन्म मूलक जाति-पाति का सदैव दुश्मन होकर रहूंगा। उस समय मेरी एक भी सन्तान नहीं थी, परन्तु मैं ने अपने अन्तःकरण में यह दृढ़ निश्चय किया कि ईश्वर की दया से जब मेरी सन्तानें होंगी तब उन का विवाह मैं अवश्य ही जातिबन्धन तोड़ कर करूंगा।

जिस दिन यह घटना हुई थी, उस दिन तक 'आर्य-भ्रातृ-समाज-सभा' का भी जन्म न हुआ था। 'जात पात तोड़क मण्डल' तो बिल्कुल नयी चीज़ है। उस समय तक विवाह के जात पात तोड़क एक कल्पना से भी परे की बात थी। अभी महात्मा मुन्शीराम जी की छोटी कन्या स्वर्गीया अमृत कला और धर्म पुत्री श्रीमती सुमित्रा देवी का विवाह भी नहीं हुआ था। ये सब बातें अभी भविष्य के अज्ञात गर्भ में थी— मैं उसी समय से जन्म मूलक अपरिवर्तनीय जाति पाति का कट्टर विरोधी हूं। उस दिन को आज बहुत अर्सा होगया, आज भी मेरे दिल का वह घाव उतना ही नीला है। आज अवसर आने पर अपनी सन्तानों का विवाह जाति बन्धन तोड़ कर करने से मुझे कुछ न कुछ शान्ति प्राप्त हुई है। परन्तु मेरे दिल का वह घाव तो उसी दिन जाकर भरेगा, जिस दिन आर्य जाति में से जाति पाति का झूठा भेदभाव ही नष्ट हो जायगा। क्या ईश्वर मुझे कभी वह दिन दिखाएगा।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

दिल का दर्द

[एक सच्ची घटना के आधार पर]

(लेखक— श्रीयुत गुप्त)

प्रथम दृश्य ।

(समय—प्रातःकाल । स्थान एक बड़े मकान का आंगन, एक दरी बिछी हुई है, उसके एक किनारे पर कम्बल बिछाकर स्वामी दयानन्द बैठे हुए हैं । बड़े जोर से सरदी पड़ रही है, उनके शरीर पर सिवाय एक लम्बे झोले के और कोई वस्त्र नहीं है । दरी पर गरम कोट, कम्बल, जुराबें दस्ताने आदि पहने हुए बहुत से आदमी बैठे हैं)

स्वामी दयानन्द—भीमसेन ! वह कौन प्रतिष्ठित व्यक्ति हैं जो ईसाई हो जाना चाहते थे ?

भीमसेन— (एक आदमी की ओर इशारा करके) गुरुदेव ! वह महानुभाव यह बैठे हैं । इनका नाम किशोरीलाल है, यह नगर के सब से बड़े सेठों में से हैं । थोड़े ही दिनों में अपने परिवार सहित ईसाई धर्म में प्रविष्ट हो जाने की इन की इच्छा है ।

स्वामी दया०— भाई किशोरी लाल ! आपने संस्कृत पढ़ी है ?

किशोरी०— नहीं महाराज ।

स्वामी दया०— आप को सनातन वैदिक धर्म का कितना ज्ञान है ?

किशोरी०— कुछ विशेष नहीं ।

स्वामी दया०— आपने अपने धार्मिक ग्रन्थों के सम्बन्ध में कुछ सुना है ?

किशोरी०— बहुत तो नहीं, परन्तु पण्डित जी के मुंह से भागवत और महाभारत की कथा कई वार सुनी है ।

स्वामी दया०— आत्मा, परमात्मा और प्रकृति के सम्बन्ध में आपके क्या विचार हैं ?

किशोरी०— महाराज, इस प्रश्न पर मैंने कभी विचार नहीं किया ।

स्वामी दया०— प्राचीन वैदिक सभ्यता से आप क्या मतलब लेते हैं ?

(किशोरी लाल चुप रहते हैं)

स्वामी दया०— आप ने ईसाई धर्म में क्या विशेषता देखी है ?

किशोरी०— महाराज ! हिन्दू लोग बड़ी जहालत में पड़े हुए हैं । सारी हिन्दूजाति अन्दर से बिलकुल खोखली हो चुकी है । अनाथों और विधवाओं पर असंख्य अत्याचार हो रहे हैं । तिस पर जात-पात, संस्कार, दहेज आदि की प्रथाएं नाक में दम किये रहती हैं । इन सब बुराइयों से बचने का और कोई उपाय मुझे प्रतीत नहीं होता ।

स्वामी दया०— देखो भाई किशोरी लाल ! एक अच्छे भले जवान के लिये ज़रासा बीमार हो जाने पर आत्मघात कर लेना सब से बड़ी कायरता है । अगर आर्यजाति अपने असली कर्म से परे हट कर दुःखी हो रही है तो उसे ठीक मार्ग पर लाने के लिये यत्न करना ही बुद्धिमत्ता है । मैं समझता था कि ईसाइयत में किन्हीं उच्च सिद्धान्तों को पाकर आप ईसाई हो जाना चाहते हैं । मुझे बताइये आप ईसाई होकर अपना या अपने भाइयों का क्या उपकार कर लेंगे । आप के ईसाई हो जाने से क्या आप की जाति में से सब बुराइयां निकल जायेंगी । आप सोचते होंगे कि कम से कम आप तो इन बुराइयों से बच जावेंगे । परन्तु यह आपका भ्रम

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

है। अगर आप चाहें तो अपने सनातन धर्म पर दृढ़ रहते हुए ही बहुत सुगमता से इन बुराइयों से बच सकते हैं। आप आर्यजाति की प्राचीनता और ऊंची सभ्यता पर आत्माभिमान अनुभव कीजिये। (कुछ देर के लिये चुप होकर फिर कहने लगते हैं) मुझे आश्चर्य है— क्या आप को अपने अहिंसा के सिद्धान्त से घृणा हो गई है? अथवा अपनी प्राचीन सभ्यता आप को व्यर्थ मालूम पड़ने लगी है। अगर आप के दिल में हिन्दुओं की दुर्दशा के लिये दुःख और सहानुभूति है तो आइये, मैं आपको निमंत्रित करता हूं, इन्हें अज्ञानान्धकार से निकालने में मेरा साथ दीजिये।

(किशोरी लाल कोई उत्तर नहीं देते)

स्वामी दया०— बताइये क्या विचार है?

किशोरी०—महाराज, मैं अपना धर्म परिवर्तित नहीं करूंगा। मेरे उद्धार के लिये आप का आशीर्वाद चाहिये।

स्वामी दया०— तुम्हीं अपने सबसे बड़े शिक्षक हो। उस परम पिता को हर समय साक्षी रखकर स्वयं अपने पर शासन करो, संसार की कोई शक्ति तुम्हें अपने धर्म से ज़रा भी हटा न सकेगी। ईश्वर तुम्हें बल दे।

किशोरी०—(कुछ देर चुप रहकर) महाराज, आज रात को मेरे अभागे घर में भोजन से मुझे कृतार्थ कीजिये।

स्वामी दया०—भोजन के सम्बन्ध में भीमसेन से पूछिये। वह जहाँ मेरा प्रबन्ध करेगा, मुझे उस से इन्कार नहीं होगा (घड़ी देख कर) स्वाध्याय का समय हो गया।

(उठकर अन्दर चले जाते हैं)

किशोरी०—पंडित जी! दास की प्रार्थना स्वीकार हो।

भीम०—गुरु महाराज आठ बजे भोजन किया करते हैं, उस समय मैं उन्हें साथ लेकर आप के यहां आजाऊँगा।

किशोरी०—आपका अनुग्रह।

(सब जाते हैं।)

[द्वितीय दृश्य]

(समय—सायंकाल। स्थान—गंगातट। स्वामी दयानन्द अकेले साधारण चाल से टहल रहे हैं। गंगा के निर्मल जल को वह स्थिर दृष्टि से देख रहे हैं।)

स्वामी दयानन्द—यह पवित्र भागीरथी कितनी सुन्दर है! हमारे प्राचीन ऋषि कितने पवित्र स्थान पर निवास किया करते थे। एक स्वच्छ जल वाली विशालकाय नदी वेग से बहती चली जा रही है, नदी के दूसरे पार घना जंगल है, बिल्कुल सन्नाटा है। ईश्वर की इस महान सृष्टि में कितनी सुन्दरता, शान्ति और प्रसन्नता भरी हुई है। जी चाहता है, यह सब टंटे छोड़ कर, फिर से इन्हीं जंगलों में भटका करूं, शान्ति पूर्वक अपनी महान साधना में रम जाऊँ। (इतने में नदी के दूसरे पार मोर बोलता है, स्वामी दयानन्द कुछ देर तक चुपचाप खड़े होकर उसका मधुर कण्ठ स्वर सुनने लगते हैं। फिर वह कहने लगते हैं) ओह, भारत माता का प्राकृतिक सौन्दर्य अब भी वही है। यह सस्य-श्यामला भूमि आज भी उतनी ही महिमा शालिनी है, जितनी कि आज से हजारों वर्ष पूर्व थी। यह सब वही है। परन्तु इस गौरव शाली देश में बसने वाली वह प्राचीन आर्य जाति आज "वही" नहीं रही! (वह कुछ चिन्तित से होकर चुपचाप धीरे २ टहलने लगते हैं) वह सामने दूर पर तीर्थ के मन्दिरों के बड़े २ कलश दीख रहे हैं। आज एकादशी स्नान है। चलूं, देखूं वहाँ क्या हो रहा है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

(वह उसी ओर चल देते हैं)

(पर्दा बदलता है। बहुत बड़ी भीड़ थोड़े से स्थान में स्नान कर रही है। उस में स्त्री और पुरुष दोनों शामिल हैं। पण्डे और ब्राह्मण अपने यजमानों को स्नान करवा रहे हैं। स्वामी दयानन्द ऊपर से खड़े होकर यह दृश्य देख रहे हैं। स्नान भूमि के पास ही एक अन्धेरे स्थान पर दो तीन युवा कन्याएं केवल गीली धोतियां पहिन कर बैठी हैं। एक ब्राह्मण भी उन्हीं के पास बैठे हैं। उन कन्याओं के पिता का देहान्त हो चुका है, ब्राह्मण देवता उन्हीं के सम्बन्ध में कोई क्रिया-काण्ड कर रहे हैं। ब्राह्मण देवता के भाव अच्छे प्रतीत नहीं होते। वह रह रह कर जो चेष्टाएं दिखा रहे हैं, वे अश्लील हैं। अचानक स्वामी दयानन्द की नज़र उस ओर पड़ती है, वह कांप उठते हैं। इसके बाद वह शीघ्रता से एक ओर चले जाते हैं।

[तृतीय दृश्य]

(स्थान—शहर के बीच का एक बड़ा मकान। समय—रात्री का प्रथम प्रहर। बरामदे में सेठ किशोरीलाल, उनकी धर्मपत्नी और दो पुत्र बैठे हैं। पास ही भोजन का प्रबन्ध है।)

किशोरीलाल—बड़े भारी महात्मा हैं ! जब वह बोलते हैं तो सुनने वाले को मन्त्र मुग्ध सा कर लेते हैं। जान्हवी ! आज का दिन हमारे लिये बहुत ही अहोभाग्य का है। आज वह महात्मा हमारे अतिथि हैं। खूब खातिरदारी और श्रद्धा से उन्हें भोजन परोसना।

जान्हवी—बहुत देर हो गई, वह अभी तक नहीं आये।

किशोरी०—किसी काम से उन्हें देर हो गई होगी। जनक को उन्हें लाने के लिये भेजा था, उस के साथ आते ही होंगे।

जान्हवी—वह महात्मा यहाँ और कब तक रहेंगे ?

किशोरी०—उन्हें सिर्फ एक ही धुन है, एक ही फिकर है, वह है आर्य सभ्यता का उद्धार किस प्रकार हो। इसके लिये उन्हें जहाँ जाना होगा वहाँ जांयगे। यहां अगर उन्होंने अपनी और अधिक आवश्यकता अनुभव की तो वह कुछ दिन और भी रहेंगे।

(जनक आता है। सब उसकी ओर देखने लगते हैं)

जनक—पिता जी, वह अपने स्थान पर नहीं है। पण्डित जी का कहना है कि वह प्रतिदिन इस समय तक अवश्य अपने स्थान पर वापिस आ जाया करते थे, आज न मालूम क्यों इतनी देर हो गई। अकेले सैर पर गये थे, अभी तक वापिस नहीं आये। पण्डित जी ने कहा है कि जब वह वापिस आ जांयगे तो मैं स्वयं उन्हें अपने साथ लेता आऊँगा।

किशोरी०— (घबरा कर) अच्छा ! अभी तक वापिस नहीं आये ! बहुत से अज्ञानी पुरुष उनके शत्रु हैं, ईश्वर कुशल करे।

(सब चुप रहते हैं)

किशोरी०— आओ जनक, फिर उनके स्थान पर चलें।

(दोनों जाते हैं।)

[चतुर्थ दृश्य]

(समय—आधी रात। स्थान—गङ्गा तट का एकान्त रेतीला किनारा। एकादशी का चांद आकाश के बीच में प्रकाशित हो रहा है। रेत पर स्वामी दयानन्द घुटनों में मुंह देकर सिर झुकाये हुए सिसक सिसक कर रो रहे हैं। उन्होंने अपना चोला उतार कर एक ओर रख दिया है। एक लंगोट को छोड़ कर उनके शरीर पर और कोई वस्त्र नहीं है। सख्त सरदी पड़ रही है। गंगा की धारा से घना कुहर उठ रहा है। चारों ओर बिल्कुल सन्नाटा है। वह धीरे २ प्रार्थना कर रहे हैं।)

स्वामी दयानन्द— दयामय ! ये लोग ना-समझ हैं, तू इन्हें सुबुद्धि प्रदान कर। इस हतभाग्य जाति ने ऐसा कौनसा कार्य किया था, जिसके

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

लिये कि आज उसकी यह दुर्दशा हो रही है। पिता! क्या तेरी असीम दया का एक कण भी इस अभागी आर्यजाति को नहीं मिलेगा।

(वह फिर सिर झुकाकर रोने लगे। बहुत देर बाद वह फिर कहने लगे।)

ओफ़, कितना अधः पतन है! प्राचीन ऋषियों की सन्तान, अपने को अब भी ब्राह्मण कहकर पुजवाने वाले लोग, अपनी जाति की आर्य पुत्रियों से ही इस प्रकार के कुत्सित व्यवहार करते हैं। कितना लज्जाजनक दृश्य है। हाय, धर्म के नाम पर इस लोक का सब से बड़ा पाप खुले रूप में किया जा रहा है--कितना बड़ा ढोंग है? अब तक मैं समझता था कि आर्यत्व तो नष्ट हो गया, परन्तु हिन्दू जाति के रूप में उसका ढांचा अवश्य बचा हुआ है, परन्तु आज मालूम हुआ कि हाय, वह ढांचा भी अब बाकी नहीं बचा है।

(वह चुप होकर गंगा की बड़ी बड़ी लहरों में पड़ते हुए चांद के प्रतिबिम्ब को देखने लगे। इसी समय कुछ अस्पष्ट सा गाना सुनाई पड़ता है।)

स्वामी दया०—(चौंक कर) यह कौन गा रहा है

(थोड़ी देर में कुछ गंवार गाते गाते प्रवेश करते हैं। स्वामी दयानन्द के पास पहुंचते ही विस्मय से उनका गाना बन्द हो जाता है। वे धीरे धीरे आपस में बातें करने लगते हैं।)

१ गंवार— अरे यह कौन है?

२ गंवार— सचमुच अरे यह कौन है?

३ गंवार— भूत।

(सब चुप हो जाते हैं, थोड़ी देर में एक और गंवार बोल उठता है।)

४ गंवार— पागल होगा।

(इसी बीच में वे कुछ दूर निकल जाते हैं। कुछ दूर होते ही वे फिर से अपना गान प्रारम्भ कर देते हैं।)

स्वामी दया०— ये लोग कितने अबोध हैं। इन्हें अपनी अवस्था का ज्ञान ही नहीं है। देवस्वरूप प्राचीन भारत बिलकुल दीन होकर, कङ्गाल बनकर विलाप कर रहा है, उस के आर्तनाद से यह नदी, ये जङ्गल, यह पहाड़ सब पूरी तरह प्रतिनादित हो चुके हैं, परन्तु ये भारत के अपने पुत्र इस प्रकार मस्ती में चले जा रहे हैं— मानो कुछ हुआ ही नहीं है, मानो इन में जीवन ही नहीं है।

(इसी समय उन्हें फिर से वही दृश्य याद आ जाता है और वह ठण्डी रेत पर लेटकर शोक पूर्ण गम्भीरता से कुछ सोचने लगते हैं।)

[पञ्चम दृश्य]

(समय— प्रातःकाल। स्थान— स्वामी दयानन्द का निवासगृह। स्वामी दयानन्द एक बरामदे में एक कुर्सी पर बैठे हैं। नीचे दरी पर—भीमसेन, किशोरी लाल, जनक तथा कुछ अन्य व्यक्ति बैठे हुए हैं। सब लोग चुप हैं। स्वामी दयानन्द आज बहुत उदास प्रतीत हो रहे हैं।)

भीम०— (बड़े विनय से) गुरुदेव, रात को बड़ी देर तक वह आप की प्रतीक्षा करते रहे। हम सब लोग सचमुच बहुत घबरा रहे थे।

स्वामी दया०— हां; किशोरी लाल! मुझे क्षमा करो। कल सायंकाल एक ऐसी घटना हो गई, जिस से मेरा हृदय अभी तक उदास है। मैं बाधित होकर तुम्हारे यहां नहीं आ सका।

किशोरी०— महाराज! मैं तो आप के चरणों का दास हूं।

(स्वामी दयानन्द एक ठण्डा श्वास लेकर चुप ही रहते हैं। सारी सभा में फिर से सन्नाटा छा जाता है।)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

दीपावलि

[१]

दीपमालिके ! दीपक तेरे
जगमग ज्योति जगाते हैं।
प्रेम-भाव से कृष्ण-निशा को
बहुतेरा अपनाते हैं ।
स्नेह-सिक्त, सित, तूल-वर्तिका
से लौ स्वयं लगाते हैं।
प्रीति-पन्थ में खोया सब कुछ
यों कोरे रह जाते हैं॥

[२]

नष्ट हुये फिर भी जीवन का
भेद न किंचित पाया है।
क्षणिक काल की अद्भुत कैसी
विश्व बीच यह माया है।
किसने ? क्योंकर ? कौन हेतु से ?
इनको आज जलाया है ।
इस रहस्य को, अयि दीपावलि !
तू ने ही समझाया है॥

[३]

क्षुद्र मृत्तिका-पिण्ड मात्र है
ज्योतिर्मय विभ्रम का पात्र।
अन्तर्दाहिन् ज्वाल धूम से
हुआ संस्कृत गीला गात्र।
तैल-तैलिनी-संयोजन ही
सारा इनका उज्वल शास्त्र।
कान्ति-कला से बन बैठे ज्यों
नीरव-निशि के छोटे छात्र॥

[४]

गूढ़ तत्व को समझ रहे हैं
मानो शीश हिलाते हैं ।
मोह-मग्न वा जीवन युग की
अस्थिरता दर्शाते हैं ।
कोरे आकर स्वल्प समय में
फिर कोरे बन जाते हैं।
किन्तु, भूत वैभव के कुछ कुछ
शेष चिन्ह रम जाते हैं॥

[५]

गुह्य ज्ञात हो देखा सहसा
नर जीवन का भी ये मर्म्म।
किन्तु, कहां तुलना चेतन में
प्रचलित कैसे कलुषित-कर्म्म।
ज्ञानवान् हो ज्ञान हीन हैं
समझ नहीं सकते निज धर्म्म।
बने अन्ध अनुगामी तेरे
बढ़ा दिवाली यों तम-वर्म्म॥

[६]

नवल-लता सम क्षीर-सिन्धु से
कहें चंचला आई है ।
अहोरात्रि भगवान् विष्णु को
जिसकी संगति भाई है ।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विश्व-क्षेत्र में भी जिससे ही
सारी ललित लुनाई है।
किन्तु पूज कर पास बुलाते
कैसी जड़ मति छाई है॥

[७]

द्यूत-प्रिये ! तव कुमति-राज्य ने
कुत्सित करी कमाई है।
तमोरूप स्वयमेव इसी से
निबिड़ कालिमा छाई है।
स्वच्छ संग, रुचिकर गृह निर्मल
ये केवल निपुणाई है।
क्या इस से ही पुण्य भूमि-की
तू ने करी सफाई है॥

[८]

अहो तमिस्रे ! क्रूर-कला में
वह दिव्य-द्युति का भण्डार।
प्रकट हुआ जिसकी आभा से
चकित, चमत्कृत था संसार।
गिरती पड़ती वृद्धा मां को
जो था इक आश्रय-दातार।
भग्न प्राय भारत-नौका को
दुख सागर से लिया उबार॥

[९]

ज्योति-पुञ्ज, गुण-धाम, ज्ञान-निधि
किया अन्ततः तू ने लुप्त।
जिस से फिर निश्चेष्ट बने से
हो अचेत रहे सब सुप्त।
कुटिल-काल ! हा गूढ़-गर्भ में
हुई आत्मायें बहु गुप्त।
अब न और तेरी चालों से
रहता ये जग और प्रसुप्त॥

[१०]

कारण ? शत-संवत्सर बीते
हुआ विश्व में नव-उन्मेष।
जिस को ऋषि-जीवन-आहुति से
मिला प्रबल बल था सविशेष।
उदित वेद-रवि के प्रकाश को
सब देखें इक टक अनिमेष।
सुदिन दुर्दिनों में आना वह
रहा और केवल अब शेष॥

—हरिशरण 'मराल'

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अनन्त व्रत

(ले०—पाण्डेय रामावतार शर्म्मा एम.ए.विशारद)

हमारे अनेकों व्रत हैं। वर्ष का स्यात् ही कोई मास व्रत से खाली आता है और आकर अनाहत लौट जाता है। हम व्रतों के सम्मान के लिये सदा उद्यत रहते हैं और कई दिन पहले से उनकी राह ताकते रहते हैं। व्रत तो बिना हमारे निमंत्रण दिए भी निश्चित समय पर आ ही जाते हैं। हमारा उनसे साक्षात् होता है, और वे कुछ कहने सुनने की भी चेष्टा करते हैं। पर हम क्या करते हैं? हमसे उनका क्या सम्मान बन पड़ता है? हम उनकी बातें कितने ध्यान से सुनते हैं? उत्तर की क्या आवश्यकता है, जब व्रत हमारे हैं और हम व्रतों के दास हैं, उनका क्या सम्मान हम से बन पड़ता है, यह हमारा हृदय जानता है।

आज भी एक व्रत है। इसका नाम अनन्त व्रत है। सारा दिन समाप्त हुआ। व्रत का आधा भाग चला गया और यह तेजी से चला जा रहा है। आज ही का रोज़ तो सदा नहीं रहेगा, आज के अनन्तर अन्य दिवस आवेगा, कल होगा। कल के आरम्भ से अनन्त व्रत का अन्त हो जायगा। क्या गति है। क्या निस्सारता है। हमारी बुद्धि क्या बराबर घास चरने जाया करती है? नाम करण तो हमने किया है। नाम तो रक्खा अनन्त, पर दो चार दिन कौन कहे, एक दिन भी पूरा होते न होते अनन्त व्रत सान्त हो गया। जैसे आया था, वैसे ही जाता बना। क्या हमारे व्रतों के नामकरण भी साहुओं के पंच कौड़ी, छकौड़ी नामकरण के सदृश हैं? तब तो इस संस्कार का दुरुपयोग हमारा सनातन स्वभाव है।

अनन्त व्रत आया, और चला गया। हमने क्या किया? भोर से दोपहर तक सुन्दर भोजन के यत्न में बेचैन रहे। दोपहर को पूजा की और भर पेट खाया। भोजन का काल जान बूझ कर दोपहर के उपरान्त देर करके रक्खा। इसमें भी भेद था, व्रतियों को रात में भोजन नहीं करना था। यदि व्रत में श्रद्धा रख भोजन कम करते या देर करके न खाते तो रात में पेट की कुलबुलाहट कब्जे से बाहर हो जाती और सम्भव था कि व्रत भंग करने पर बाध्य हो जाते। कितने पेट प्रेमी हो भी जाते हैं। बस खाया, पीया और अनन्त व्रत का लाभ उठाया।

हां, पूजा की बात भूली नहीं जा सकती। हमने अनन्त व्रत की पूजा भी की। पूजा की विधि न पूछें। क्या सारमय पूजा थी। कटोरे के जल मिश्रित थोड़े दूध को क्षीर सागर माना, तागे के दो चार गोल-मटोल लपेटनों को खीर में डाल कर कई हाथ लगाए, और मथन किया। पाया क्या?—अनन्त गोसांई। पाकर माथे चढ़ाया। बस दो चार मथन के उपरान्त सान्त सूतमय अनन्त को बाँह में बाँधा और सुन्दर भोजन से पेट-पूजा की।

यही हमारी व्रत-विधि है और इसी उपदेश के लिए हमारे व्रत आते हैं। खाते हैं, पीते हैं, मौज उड़ाते हैं। असंख्य ऐसी कुटियाँ भी हैं जिनके निवासियों को माथे की टीका के लिए भी दुग्ध नहीं मिलता, क्षीरसागर का मथना तो दूर रहा। जिन्हें दो चार कटोरे दूध मिल जाते हैं, उन्हें मथन और तदुपरान्त पेट-भरण से ही काम है। कहाँ हैं

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

भारत में क्षीर सागर को मथन कर अलभ्य रत्नों के निकालने वाले वीरवर ? यह तो पेट-पूजा का एक साधन है, जिसका हमने प्रयोग किया। इसी पेट पूजा के पीछे हम वर्षों से विह्वल हैं। किसी प्रकार इसे भरते आरहे हैं। पर हाय ! इस उदर कन्दरा की गहराई न जाने कितनी है कि इस में हमारा गौरव, हमारी उज्ज्वल कीर्ति, हमारा वैभव, हमारी विद्या, हमारी वीरता, हमारी चेतना आदि अनन्त धर्म्मफल समा गए, पर यह अभी तक ज्यों की त्यों है।

अतएव, हे अनन्त व्रत ! जा ही रहे हो, जावो और बारबार आने के पहले कुछ हमारी दशा पर भी विचार कर लिया करो। हम वर्षों से तुम्हारा सम्मान कर रहे हैं। अब क्या तुम कुछ दिन धैर्य-धारण नहीं कर सकते ? क्या हमारे ही सदृश तुम भी पेटू हो ? हम तो पेट पालन में परेशान हैं। इस कन्दरा को भर कर सबल होने दो। यह तो भद्रता समझो कि इतने दिनों से तुम्हारा सत्कार कर रहे हैं, नहीं तो हममें है क्या ? हम न तो देव हैं, न असुर ; न हम बिच्छू पकड़ सकते हैं, न चूहा ; न हम नदी में तैर सकते हैं, न गड्ढे में। फिर सागर का मथन हम क्यों करने लगे, उसमें भी असम्भव बात क्षीरसागर की। हमारे पास गौवें कहां जो क्षीर का सागर बहेगा ! कँटया का भरना भी तो कठिन है, पाइप-गंगा के जल से उसे पवित्र करना पड़ता है। गौवें तो प्रतिदिन बीफ से पेटपूजा के मूल्य में बूचरखानों में मोक्ष लाभ कर रही हैं ? हम में आसुरी बल तो आगया है, पर देवों का काम कौन करेगा ? व्रत बाबा ! दया करो, मंदरा उठा कर, चला फिरा कर यदि अलभ्य रत्न मिलेंगे ही तो हमें स्वीकार नहीं। यहां तो वाकिङ्ग स्टिक (Walking stick) भारी हो रही है। इस दशा में अनन्त गोसांई के लोभ में सागर मथने चलें और प्राण पर आपड़े, तब तो खूब बना। वही बात होगी, 'चौबे गए छब्बे होने, दूबे होकर आये'। फिर अनन्त गोसांई की खोज की चिन्ता ही क्या ? कितने टीकाधारी गोसांई बाबा सोटा भाजते बिना खोजे ही हमारे द्वार पर अनन्त लीलाएं दिखा रहे हैं। आगे दया करो, हम से अधिक परिश्रम नहीं बनता, रहने दो हमें इन्हीं अनन्त लीलाओं के गोसांइयों के बीच मस्त।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हृदय समर्पण

(ले०—विश्वम्भर सहाय "प्रेमी" वैदिक धर्म विशारद)

(१)

अमावस्या की अंधेरी छाई हुई है। दीपमालिका का शुभ उत्सव मनाये जाने की तैयारियाँ हो रही हैं। इधर उधर दीपक जल रहे हैं। भिन्न २ प्रकार का प्रकाश गहरे अंधकार को समूल नष्ट करने की चेष्टा कर रहा है, परन्तु बेचारा कृत्रिम प्रकाश सर्वत्र किस प्रकार से उजेला कर सकता है? सुहावने भवन पुत जाने पर अपनी छटा अनोखी ही दिखा रहे हैं। ग्रीष्म का कहीं भी पता नहीं है। शीत काल का प्रारम्भ तो हो चुका है, परन्तु गुलाबी-जाड़ा ही पड़ता समझिये। रजनी का वास्तविक आनन्द क्या है, इसको समझने की चेष्टा करने वाले जन अपनी अपनी प्रकृति के अनुकुल समझने तथा उसे अनुभव करने में लगे हुये हैं।

इस अवसर पर जहाँ साधु जन हरि कीर्त्तन करने की चिन्ता में लगे हुये हैं, व्यापारी जन अपने व्यापार को उन्नत करने का प्रयत्न कर रहे हैं, वहाँ एक नहीं किन्तु अनेक जन ऐसे भी हैं जो धनवान बनने के लिये द्यूत क्रीडा में यहाँ तक निमग्न हैं कि वे अपनी सती साध्वी देवियों के आभूषण उतारने में भी लज्जा नहीं करते। सैकड़ों की संख्या में इधर उधर जुआरी दाव पेंच लगा रहे हैं। शिक्षित कहलाने वालों में से भी न जाने कितने महानुभावों ने अपनी पासबुकों का रुपया चुकता किया होगा। इन पर सरकारी कर्मचारियों की भी तीव्र दृष्टि दिखाई नहीं पड़ती।

यह सब कुछ होते हुये भी शकुन्तला उस गहरी निशा में अपने रहने के मकान का द्वार बंद किये, चुप चाप रुग्णावस्था में पड़ी हुई, अपने प्राणनाथ की प्रतीक्षा कर रही है। उसके पास केवल एक छोटा सा दीपक टिमटिमा रहा है, चारपाई के कोने पर दो तीन रंगीन कवर की पुस्तकें पड़ी हुई हैं। सेवा करने के लिये केवल एक कहारी विद्यमान है।

(२)

यदुनाथ प्रतिष्ठित ब्राह्मण कुलोत्पन्न युवक है। सोलह वर्ष की आयु होने पर ही उसने इन्ट्रेंस की परीक्षा पास कर ली थी। थोड़े समय पश्चात् उसे प्रयत्न करने से × × × कार्यालय में नौकरी मिल गई और चार वर्ष से वह वहीं उसी जगह कार्य कर रहा है। यद्यपि यदुनाथ का मन अपने रसिक प्रिय मित्रों में बहुत लगता था परन्तु जिस समय से उसने विवाह किया है उसी समय से वह उन सबको भूल बैठा है।

यदुनाथ ने विवाह करने के समय अनेक चेष्टायें की थीं कि उसका विवाह किसी योग्य सुन्दरी से हो, जो वर्तमान फैशन के जाल में भली प्रकार से जकड़ी हुई हो और अंग्रेजी शिक्षा से भी परिचित हो। परन्तु उस के पिता धन के इच्छुक थे, वह किसी धनिक की पुत्री से ही विवाह कर देने पर तुले हुये थे। अतः यदुनाथ की इच्छा के विपरीत ही विवाह हो गया।

विवाह हो चुकने के २ वर्ष पश्चात् कुटुम्बियों को अनेक आशाओं ने घेर लिया। उसके पिता

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

की प्रबल इच्छा थी कि वे पौत्र का मुख अवलोकन करें। परन्तु अभाग्यवश उनकी यह साध पूरी न हो पाती थी।

(३)

शकुन्तला जिस समय मिडिल कक्षा में पढ़ती थी उस समय उसकी अवस्था केवल १४ वर्ष के लगभग ही थी। मिडिल परीक्षा देकर उसको × × की पाठशाला में नौकरी मिलगई।

शकुन्तला को उसके पिता ने पूर्ण स्वतंत्रता दे दी थी। लगातार १ वर्ष × × की पाठशाला में नौकरी करने के पश्चात् उस की इच्छा नार्मल पास करने की हो गई। वह अपना समस्त व्यय देख भाल कर करती थी। उसके पिता ने भी उसकी यथेष्ट सहायता की। अभी तक शकुन्तला विवाह बंधन में नहीं पड़ी थी। यही कारण था कि उसकी शिक्षा भली प्रकार से हो रही थी।

नॉर्मल परीक्षा पास करने के पश्चात् उसकी अवस्था लगभग १८ वर्ष की हो गई थी। उसने विचार किया कि अब पिता जी के भारी दुःख को मिटा देना चाहिये। उसके पिताजी सदैव सामाजिक कुरीतियों के बंधन की गाथायें लिख लिख कर उसके पास भेजा करते थे। अतः समस्त बातों पर पूर्ण विचार करके शकुन्तला ने भी अपना विवाह कर लेने का ही निश्चय कर लिया।

(४)

पाठकों को याद होगा कि यदुनाथ का मन अपनी पत्नी से न मिलता था। वह उस पर प्रेम करता था, परन्तु शुष्क। वह कभी कभी बातें करता था, परन्तु हृदय मुर्झाने वाली। उसकी कमलिनी का कमल रूपी मन ललचाता था, परन्तु प्रेम रहित पति का मिलना उसको बिना खिले ही छोड़ देता था। यद्यपि यदुनाथ की पत्नी सुमति बड़ी सुशीला थी। घर के प्रत्येक कार्य में निपुण थी, पतिव्रता थी, घर के कुटुम्बियों का आदर सत्कार करने वाली थी परन्तु पश्चिमी बनाव से पूर्णतया अनभिज्ञ थी। इसी कारण यदुनाथ उससे असन्तुष्ट था।

यहाँ पर यह प्रगट कर देना भी आवश्यक प्रतीत होता है कि जिस समय वह एन्ट्रेंस में पढ़ता था, उस समय वह शकुन्तला के पिता के पास प्रायः जाया करता था। शकुन्तला और यदुनाथ के पिता दोनों परस्पर घनिष्ठ संबन्ध रखते थे। इसी कारण इन दोनों का भी परस्पर घनिष्ट ही संबन्ध था। एक दिन दोपहर के ३ बजे काले काले बादल उमड़ आये। नन्हीं नन्हीं बूंदे पड़ने लगीं। थोड़ी देर ही में इतना अँधेरा हुआ कि पास के मनुष्य को पहिचानना भी कठिन हो गया। इस प्रलय के भयंकर समय में पीछे से आकर किसी ने शकुन्तला की आंखें मींच लीं।

शकुन्तला ने बिना देखे ही चिल्ला कर कहा—"नाथ! आप यहां कैसे?"

"शकुन्तले! तुमने इस अंधेरे में मुझे किस प्रकार जान लिया।"

"आपके कोमल स्पर्श ने मुझे बतला दिया। अच्छा अब घर चलो। देखो बूंदे तेजी से पड़ने लगीं।"

इसके पश्चात् वे दोनों अपने अपने घर चले गये।

(५)

यदुनाथ के पिता ने आज्ञा दे दी थी कि तुम अपना दूसरा विवाह कर सकते हो, जिस से उनको मरने से पूर्व पौत्र का दर्शन हो जाय।

शकुन्तला पढ़ी लिखी थी। प्रत्येक बात को भली प्रकार समझती थी, परन्तु प्रेम की भूखी थी।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अनेक वार शकुन्तला ने यदुनाथ से विवाह कर लेने की प्रार्थना की, परन्तु वह व्यर्थ हो गई। इस वार स्वयं यदुनाथ ने शकुन्तला को पत्र लिखा।

प्यारी शकुन्तला !

नमस्ते,

तुम्हारे प्रेम का भूखा मन आज उतावला हो रहा है। मेरा अन्तिम निश्चय बहुत विचार के पश्चात् यही हुआ है कि मैं तुम्हारा पाणिग्रहण करूं। मेरे विचार में इस मास की २७ तारीख उपयुक्त होगी।

यदुनाथ.

पत्र पाकर शकुन्तला का मुख कमल खिल उठा। उसने अपने जीवन को धन्य माना और पत्रोत्तर में अपना वास्तविक प्रेम प्रगट कर दिया।

साथ ही शकुन्तला ने अपने पिता जी को भी विवाह का समस्त समाचार भेज दिया। पिता जी को तिथि आदि से भी सूचित कर दिया।

पहिले तो पिता जी इस समाचार से सहमत न हुये परन्तु उनको यदुनाथ के समान और योग्य वर नहीं मिलता था। इसके साथ ही शकुन्तला के आग्रह को भी वह नहीं टाल सकते थे। इस कारण उन्होंने भी अपनी स्वीकृति भेज दी।

(६)

परमात्मा का कोप- वह भी भयंकर कोप- न जाने किस अपराध के कारण, २७ सितम्बर को यदुनाथ के सन्मुख उपस्थित हो गया। आंधी का प्रचण्ड वेग था। पृथ्वी पर वर्षा की बूंदे बड़ी तेजी से पड़ रही थीं। घरों में गृह कार्य करने के लिये दीपक जलाने पड़े। वायु के झोंके उन्हें भी बुझाने पर तुले हुये थे। इसी प्रकार की घटना यदुनाथ के सामने पहिले भी प्रेम-मिलन के समय हो चुकी थी परन्तु वह इस से कहीं घटकर थी।

इतना होते हुये भी ज्यों त्यों पण्डित ने सत्यनारायण की कथा समाप्त की। विवाह समय के समस्त मंत्रों का उच्चारण हो चुकने पर यदुनाथ ने शकुन्तला का पाणि-ग्रहण किया।

शकुन्तला के पिता ने विवाह के समय अपनी शक्ति के अनुसार आवश्यक वस्तुयें वर को भेंट की। यहां पर इतना लिख देना भी आवश्यक जान पड़ता है कि यह विवाह व्यर्थ के झगड़ों से बिल्कुल बचा हुआ था। न बेतुका लश्कर यदुनाथ के साथ था और न बेटी वाले के नाक में दम कर देने वाला वर का पिता ही था, जो अपनी नई नई तरह तरह की मांग पेश करता।

विवाह सम्पन्न हो चुकने पर शकुन्तला के पिता ने सादर विदा किया।

(७)

आज १ अक्तूबर है। यदुनाथ कार्यालय में काम कर रहे हैं। उधर शकुन्तला की छुट्टी भी समाप्त हो चुकी है इस लिये वह भी अपनी × × की पाठशाला में पढ़ा रही है।

इस समय तक सुमति देवी को तनिक भी पता नहीं है कि उसके पति यदुनाथ ने अपना दूसरा विवाह कर लिया है। यद्यपि वह यदुनाथ के पास ही रहती थी, परन्तु जिन दिनों यदुनाथ ने अपना दूसरा विवाह किया था, वह अपने पिता के घर गई हुई थी।

पिता के यहां से लौटने पर उसे पति का वह शुष्क प्रेम भी प्राप्त न हुआ, जिसको वह बहुत समय से किसी न किसी प्रकार प्राप्त कर लेती थी।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अनेक प्रयत्न करने पर भी वह अपने पूज्य देव को प्रसन्न न कर सकी। परमात्मा की शक्ति के सन्मुख उसकी समस्त शक्ति तुच्छ थी।

रात्रि का गहरा अन्धकार वेग से बढ़ रहा था, टिमटिमाता हुआ चांद भी छिपने ही वाला था। सुमति अँधेरे रङ्ग की सुरमई साड़ी पहने हुये अपने कमरे से निकल कर पति के कमरे में गई। उसने धीरे धीरे पग बढ़ाया और सजी हुई मेज के पास जाकर एक खुला हुआ लिफ़ाफा उठा लिया। साधारण पढ़ी हुई थी, बड़े प्रयत्न के साथ उसने लिफ़ाफा पढ़ा। गहरी सांस लेकर वह वहीं मूर्छित होकर गिर पड़ी।

(८)

यदुनाथ पर बड़ी आपत्ति आई। इधर कार्यालय का बहुत काम था। उधर शकुन्तला की बीमारी का समाचार व्याकुल कर रहा था। बड़ा प्रयत्न करने पर उन्हें १ सप्ताह की छुट्टी मिली। वे छुट्टी लेकर हृदय नगर की ओर चल दिये। हृदय नगर पहुंच कर उन्होंने कूंवा सेठ में जाकर २६ नम्बर का मकान तलाश किया। द्वार बन्द था। आवाज किसे देते। बाहर द्वार पर खड़े हुये द्वार ही को खटखटाने लगे।

कहारी ने द्वार पर आकर पूछा "आप कौन हैं"

यदुनाथ ने उत्तर में कहा— "क्या शकुन्तला इसी मकान में रहती है?"

कहारी ने फिर पूछा— "वही जो यहां ×× की पाठशाला में पढ़ाती हैं?"

यदुनाथ ने कहा—"हां! उसी की तलाश है।" इतना सुनकर कहारी ने द्वार खोल दिया। यदुनाथ ने घर में प्रवेश किया।

शकुन्तला, जिसे कई दिन से अपने पति की प्रतीक्षा में अनेक दुःख की घड़ियां बितानी पड़ी थीं, अपने हृदय देव को सन्मुख पाकर प्रफुल्लित हो उठी। यदुनाथ ने नेत्र भर कर देखा और विस्मय के साथ कहा—"शकुन्तले! तुम्हारी यह दशा क्यों कर होगई"?

शकुन्तला ने बड़ी प्रसन्नता प्रगट करते हुये कहा—"नाथ! अब आप आगये हैं। अब सब ठीक हो जायगी।"

यदुनाथ ने योग्य चिकित्सक ×× वैद्य की दवा प्रारम्भ करा दी और उस की सेवा शुश्रुषा करने लगे।

प्रातः काल के ८ ही बजे होंगे कि किसी ने द्वार पर आकर यदुनाथ को आवाज़ दी। वे घर से निकल कर बाहर आये।

तारघर के चपरासी ने हस्ताक्षर करा के उनका तार दे दिया। तार को पढ़कर वे बड़े असमंजस में पड़ गये। घर से चलते समय यद्यपि उन्होंने सुमति को हल्के बुख़ार में पड़े हुये छोड़ा था, परन्तु ४-५ दिन के अन्दर ही उसकी शोचनीय दशा का समाचार पाकर वे चिन्तित हो गये। सम्भव है चिन्ता का कारण लोक-लाज ही हो। क्योंकि प्रेम को तो उन्होंने अपने हृदय में स्थान ही नहीं दिया था।

यदुनाथ के सन्मुख विकट समस्या उपस्थित हो गई। इधर शकुन्तला की दशा भी ख़राब थी। उधर सुमति की बीमारी का तार था। कभी सोचते कि यह तार बनावटी तो नहीं है और कभी सोचते कि मेरी अनुपस्थिति में ही सुमति न चल बसे। अन्त में उन्होंने लौट जाने का ही निश्चय कर लिया।

(९)

दोपहर के २ बजे हृदय नगर से यदुनाथ ने प्रस्थान कर दिया। रात्रि के ११ बजे वे अपने स्थान

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पर पहुंच गये। द्वार खुला हुआ था। घर के दालान में पहुँचने पर "प्राणनाथ" शब्द कराहती हुई धीमी आवाज से निकलता हुआ उसके कान में पड़ा।

यदुनाथ ने जल्दी से आगे बढ़कर सुमति के मस्तक पर अपना हाथ रख दिया। यह प्रेम-कर का वह स्पर्श था, जिसका अनुभव सुमति ने केवल एक बार ही इस प्रकार किया था। मानसिक ताप से सुमति जल रही थी। उसने नेत्र खोले और कातर दृष्टि से यदुनाथ की ओर देखा। बड़े व्यथित शब्दों में उसने कहा "नाथ! अपनी शकुन्तला की भली प्रकार रक्षा करना। यह दासी आप के योग्य नहीं। जिस हृदय मंदिर में आपने मुझे एक दिन स्थान दिया था उसी को आज आप कपट से नहीं नहीं, नाथ! × × प्रेम से शकुन्तला का बना चुके हो। अंतिम बार आपके चन्द्र मुख के दर्शन करने थे। नाथ! इसी कारण ये प्राण अभी तक शेष थे। लो, अब दासी को विदाई दो।" इतना कह कर सुमति ने अपने दोनों नेत्र फाड़ दिये और वह इस संसार से विदा हो गई।

यदुनाथ नहीं जानता था कि साध्वी तपस्विनी देवियों की मृत्यु पत्थर को भी पिघला देती है। उसके अन्तःकरण में भारी वेदना होने लगी। वह अचेत हो कर "प्यारी सुमति! प्यारी सुमति!" पुकारने लगा। परन्तु यह सब समय से चूक जाने के कारण व्यर्थ था। धैर्य्य धारण करके उसने सामाजिक रीतियों के अनुसार उसका दाह-संस्कार किया।

(१०)

मनुष्य को किसी वस्तु की वास्तविक आवश्यकता उसके अभाव में ही प्रतीत हुआ करती है। अवगुण गुण प्रतीत होते हैं और जिन्हें मनुष्य गुण समझा करता है वे अवगुण प्रतीत होने लगते हैं। यही दशा इस समय भी हुई। सुमति की मृत्यु उसके लिये भयंकर घाव हो गई। परन्तु इस घाव का उचित मरहम भी अभी उसके पास था। इस लिये वेदना छिपी हुई थी।

पंद्रह दिन बीत जाने पर उसने निश्चय किया कि वह कार्यालय से एक मास की छुट्टी लेवे और शकुन्तला की बीमारी का यथेष्ट इलाज करावे परन्तु जिस समय वह बैठा हुआ कार्यालय को दरख़ास्त लिख रहा था, उसी समय किसी ने उसके कमरे में प्रवेश किया।

यदुनाथ ने ऊपर नेत्र उठाकर देखा, शकुन्तला खड़ी हुई है। उसका सारा शरीर रुग्णता के कारण सूख गया है। वह लाली, जो किसी दिन दीपक को भी फीका कर देती थी, तनिक भी नहीं थी। मुख का सारा तेज विलीन हो चुका था।

यदुनाथ ने उसे चारपाई पर बिठाया और पूछा "शकुन्तला! तुम यहां बिना सूचना दिये ही क्यों आ गई?

"नाथ! आपके दारुण दुःख का समाचार मुझे भी ज्ञात हो गया। मुझे यह भी लिखा गया है कि तुम्हारे कारण ही सुमति की मृत्यु हुई है।"

यदुनाथ ने कहा "नहीं शकुन्तला नहीं! इस पाप का सारा बोझ तो मुझ पर ही है। इसमें तुम्हारा तनिक भी अपराध नहीं है। अब तो मुझे तुम्हारे जीवन की विशेष चिन्ता है"।

शकुन्तला की दशा पहले ही ख़राब थी। तपेदिक ने उसे बिलकुल मृतक समान कर दिया था। जीवन के समस्त चिन्ह नष्ट हो चुके थे। न मालूम मृत्यु की घड़ी उसे हृदय नगर से ही वहां ले आई थी।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्रातः काल के ८ बजे यदुनाथ नगर के प्रतिष्ठित वैद्य × × से औषधि लाये। इस समय शकुन्तला बड़ी प्रसन्न चित्त प्रतीत होती थी। उसने हंसते हंसते दवा पी कर कहा—नाथ दासी आपकी कुछ सेवा न कर सकी। उलटा आपको ही कष्ट दिया है"।

यदुनाथ ने कहा "शकुन्तले! आज तो तुम्हारा मन बड़ा प्रसन्न प्रतीत होता है"।

शकुन्तला ने कहा "नाथ! शरीर का समस्त रोग नष्ट ही हुआ समझिये" इतना कह कर उसने अपने दोनों हाथ बढ़ाये और यदुनाथ के चरण छू लिये। उसने चरण रज मस्तक पर लगाकर कहा "नाथ! अन्दर ही अन्दर मेरे हृदय को कोई भारी आघात पहुँचा रहा है। मेरे नेत्रों के सन्मुख मृत्यु नृत्य कर रही है। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि, मैं इस समय अंतिम दर्शन कर रही हूं।"

यदुनाथ ने समझा कि ज्वर की तीव्रता के कारण शकुन्तला ऐसा प्रस्ताव कर रही है। अतः उसने एक चम्मच दवा और मुंह में डाली। धीरे धीरे मस्तक पर दवा मलने लगा। परन्तु यह सब व्यर्थ था। जीवन रूपी दीपक का समस्त तैल जल चुका था। पतला सा हवा का झोंका लगा और वह भी सदैव के लिये बुझ गया।

यदुनाथ पाषाणवत् देखता ही रह गया। अब से पंदरह दिन पूर्व वह इसी स्थान पर एक सुन्दर पुष्प को मुर्झाते हुये देख चुका था। आज परमात्मा के प्रबल कोप के कारण दूसरा वही दृश्य देखना पड़ा। उसको सान्त्वना देने वाला कोई भी न था। उसके हृदय पर भारी आघात लगा। ऐसा आघात जिसका सहन करना उस दुःखी हृदय के लिये असम्भव था। उसने अपने टूटे हृदय को शकुन्तला की लाश पर पटक दिया और अपना हृदय समर्पण करके न जाने किस लोक को विदा हो गया।

आर्तनाद

हृदय की पीर हरो, हृदयेश!
चौपट नगरी बिन राजा के
मचा हुआ अन्धेर।
भले बुरे सब एक भाव हैं।
मन मानी मुठ-भेर॥
कुमति-कल्पित-करणी के क्लेश। हृदय०।
गृह-पति! ये घर बार तुम्हारा
अन्धकार में लीन।
सुख-सम्पति को लिये जा रहे
पांच चोर अब छीन॥
तुम्हें क्या हुई न चिन्ता लेश। हृदय०।
दुर्गुण-दुर्योधन दल बल से
है स-गर्व अभिषिक्त।
दुःशासन द्वारा, हा! मानस
हुआ न्याय से रिक्त॥
सुमति नारी के, खिंचते केश। हृदय०।
ज्योतिर्मय! मन्दिर निशिदिन
जहां तुम्हारा वास।
नहीं ज्ञान-दीपक से होता
तिमिर-त्रास का नाश॥
न करिये जीवन जटिल, जगेश!। हृदय०।
"डूब रहा बेड़ा, देखें तो
करलो इसको पार।
क्या उधार खाये से बैठे
करने को उद्धार?"
कहे यों दुर्दिन का आवेश। हृदय०।

—हरिशरण 'मराल'

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

गर्भाधान और पुंसवन संस्कार

(लेखक – कविराज श्री पं० अत्रिदेव जी गुप्त)

(आयुर्वेद की दृष्टि से)

शुद्धे शुक्रार्त्तवे सत्वः स्वकर्मक्लेशनोदितः
गर्भः सम्पद्यते युक्तिवशादग्निरिवारणौ ।

गर्भ—

शुद्ध शुक्र और शुद्ध आर्त्तव के मेल होने से तथा कर्मपाक के कारण और सम्पूर्ण सहायक कारणों से गर्भ उत्पन्न होता है, जिस प्रकार कि मथ्य-मन्थनादि सामग्री की उपस्थिति में अग्नि की उत्पत्ति होती है । सहायक कारण मूल प्रकृति, महान्, अहंकार, पञ्चतन्मात्रा, एकादश इन्द्रिय, पञ्चमहाभूत इन से तथा चेतनाधातु के मेल से गर्भ होता है ।

चेतनाधातु का तथा सहायक कारणों का प्रवेश—

"तेजो यथार्करश्मिमां स्फटिकेन तिरस्कृतम्
नेन्धनं दृश्यते गच्छत् सत्वो गर्भाशयं तथा"

जिस प्रकार से सूर्य की किरणों का तेज सूर्य कान्त मणि से तिरस्कार होने पर इन्धन को जलाता हुआ दीखता नहीं परन्तु इन्धन जल जाता है, इसी प्रकार सत्व के गमन का भी अनुमान कार्य्य से किया जाता है । यहां पर सत्व शब्द उपलक्षण मात्र है, उससे महाभूतादिका भी ग्रहण करना चाहिये ।

शुक्र क्या है ?

"एते सप्त स्वयं स्थित्वा देहं दधति यन्नृणाम्
रसासृङ्मांसमेदोऽस्थिमज्जाशुक्राणि धातवः"

भुक्तद्रव्य का रस तीन भागों में विभक्त होता है— १ मल–२ स्थूल–३ सूक्ष्म । स्थूल भाग उसी धातु में रहता है और सूक्ष्म भाग अग्रिम धातु में गमन करता है । एवं मलभाग उसी धातु के मल में चला जाता है । रस से मज्जा पर्य्यन्त परिवर्तन होने में प्रत्येक अवस्था में पांच दिन १½ दण्ड रहना पड़ता है ।

जिस प्रकार कि बाह्य अग्नि द्वारा ईक्षुरस के परिपाक होने पर उससे मैल निकलता है, उसी प्रकार शरीर की उष्मा से आहार रस पकता है और उससे मल निकलता है । उस मल का नाम 'कफ' है । यह कफ घ्राण वायु से गति कर के शरीर के आन्तरिक कफ से मिलकर उसकी पुष्टि करता है । स्थूल भाग-शरीरस्थ रस से मिल कर तथा व्यान वायु के द्वारा गति करता हुवा धमनी मार्ग में गमन करता है और शरीर के क्लेद को पुष्ट करता है । शेष सूक्ष्म भाग व्यान वायु द्वारा गति करके रक्त के स्थान प्लीहा (Spleen), यकृत (Liver) आदि में आता है । वहां पांच दिन १½ दण्ड रहता है फिर रक्तोष्मा से पककर तीन भागों में विभक्त होता है—मल, सूक्ष्म, स्थूल । स्थूल भाग रक्तकी पुष्टि करता है । मल भाग रक्तके मल अर्थात् पित्त स्थान की पुष्टि करता है और सूक्ष्म भाग व्यान वायु द्वारा मांसस्थान में ले जाया जाता है ।

जिस प्रकार ईक्षुरस से वार वार मल निःसरण होता है उसी प्रकार मज्जापर्य्यन्त मल निकलता रहता है ।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अन्त में जिस प्रकार सैकड़ों बार तपा कर सोना शुद्धनिर्मल हो जाता है, उसी प्रकार मज्जा का सूक्ष्म भाग जब शिरा धमनी से होता हुवा व्यान वायु द्वारा शुक्र के स्थान में आता है, तो शुक्राग्नि द्वारा पकने पर उसका मल नहीं निकलता, अपितु स्थूल और सूक्ष्म दो ही भाग होते हैं।

स्थूल भाग वहीं रहता है और सूक्ष्म भाग ओज में परिवर्त्तित हो जाता है।

ओज—

"ओजः सर्वशरीरस्थं स्निग्धं शीतं स्थिरं सितम्
सोमात्मकं शरीरस्य बलपुष्टिकरं परम्
उत्साहप्रतिभाधैर्य्यलावण्यसुकुमारता
यन्नाशे नियतं नाशो···· ···· ····"

(लावण्य शब्द से यहां अभिप्राय साहित्यदर्पण के तृतीय परिच्छेद में कृत लावण्य के लक्षण से है)

ओज सम्पूर्ण शरीर में स्नेह भाग है, जो कि चेष्टा को करता है, जिसके नाश होने से निश्चय से नाश है।

शुद्धवीर्य ?

"यथा पयसि सर्पिस्तु गुडश्चेक्षुरसे तथा
एवं हि सकले काये-शुक्रं तिष्ठति देहिनाम्
स्फटिकाभं द्रवं स्निग्धं मधुरं मधुगन्धि च
शुद्ध मिच्छन्ति केचिन्तु तैलक्षौद्रनिभं तथा"

शुद्ध वीर्य-स्फिट के समान उज्वल, जरा नीलिमा लिये, द्रव, मसृण, मधुर पाक-रस तथा-मधुगन्धी-शहद के समान सुगन्ध तथा तैल घी के समान गाढ़ा होता है। दिवार पर से नीचे नहीं बहता।

आर्त्तव—

"द्वादशवर्षादुर्ध्वं आपञ्चाशद्समाः स्त्रियाः
मासि मासि भगद्वारा प्रकृत्यैवार्त्तवं स्रवेत्"
"शशासृक्प्रतिमं यच्च यद्वा लाक्षारसोपमम्
तदार्त्तवं प्रशंसन्ति यद्वासो न रञ्जयेत्।

१२ वर्ष से ५० वर्ष की आयु तक प्रत्येक मास में स्वभावतः आर्त्तव होता है। आर्त्तव यह एक स्वाभाविक क्रिया है। जिस प्रकार कि आहार के रस से शुक्र बनता है उसी प्रकार यह भी बनता है। जब Graffion folical पक जाता है, तो वह फटता है, उसके फटने के समय गर्भाशय से यह रक्त जाता है। इसका समय २७ या २८ दिन के बाद या इससे अधिक या कम दिनों के अन्तर से होता है। इस समय गर्भाशय (Filopian) और डिम्ब-ग्रन्थियां सूज जाती हैं। इसी लिये शीतोपचार मना है। ठण्डे देशों में यह समय १२ वर्ष के स्थान में १६ या १४ वर्ष होता है। खरगोश के खून के समान अथवा लाक्षारस के समान और कपड़े को न रंगे वह आर्त्तव उत्तम है।

स्त्रियों में वीर्य—

जिस प्रकार पुरुषों में वीर्य सप्तम धातु है, उस प्रकार जननियों में नहीं। अपितु शुक्र बनने से पूर्व आर्त्तव सप्तम धातु मानी जाती है और शुक्र अष्टम। यह शुक्र सन्तति पैदा करने में कुछ भाग नहीं लेता है।

"ततः स्थूलभागो रसो मासेन पुंसां शुक्रं स्त्रीणां आर्तव शुक्रञ्च भवति—एतेन स्त्रीणां सप्तमो धातुरार्त्तवं शुक्रञ्चाष्टमम्"
"योषितोऽपि स्रवत्येव शुक्रं पुंसां समागमे तन्न गर्भस्य किञ्चित् करोति·····'

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सुरत व्यापार के समय कफ धातु का स्रंसन होता है। उसी की तरफ यहां निर्देश है, क्योंकि वात्सायन कामसूत्र में हम ऐसे प्रयोग देखते हैं जिन से Women Impotency (स्त्रियों में क्लीबता) के लिये प्रयोग दिये गये हैं। इसका गर्भ से कुछ भी सम्बन्ध नहीं है सिर्फ शुक्र के समान इसका रंग होने से आचार्य ने शुक्र नाम दिया है। परन्तु साधारण स्वास्थ्य का इससे बहुत सम्बन्ध है, क्योंकि यदि इस में अधिक तरलता पाई जाये तो जननी का साधारण स्वास्थ्य भी कमजोर होगा जैसा Liver या Anexmia पाण्डु में।

इसके साथ हम सुश्रुत में निम्न वचन भी देखते हैं—

"घृतपिण्डो यथैवाग्निमाश्रित्य प्रविलीयते
विसर्पत्यार्त्तवं नार्यः तथा पुंसां समागमे"

जिस प्रकार कि अग्नि की आंच से घी पिघल जाता है उसी प्रकार पुरुष के सम्भोग से स्त्रियों में आर्त्तव गति करता है। यहां पर कफ को ही आर्त्तव रूप से कहा है। क्योंकि वन्ध्या रोगों में योनिद्रावण करने वाले योगों का यही अभिप्राय है।

गर्भाधान कालः—

"तस्मादादानमाग्नेयम्"

आचार्य ने वर्ष के १२ मास दो भागों में बांटे हैं—१-उत्तरायण २-दक्षिणायन। प्रथम को आदान कहते हैं, दूसरे को विसर्ग।

आदान—(शिशिर, वसन्त, ग्रीष्म) इनमें सूर्य उत्तरायण को जाता है, और सब प्राणियों का बल खींच लेता है। इस लिये इसे आदान काल कहते हैं, इसमें वनस्पतियों तथा मनुष्यों का बल घट जाता है और सूर्य बलवान होता है।

"सौम्यत्वादत्रा सोमो हि"

विसर्ग—(वर्षा, शरद्, हेमन्त) इस में सोम अर्थात् चन्द्रमा बलवान होता है। इस में सब प्राणियों और वनस्पतियों को चन्द्रमा बल देता है। इस लिये इसे विसर्ग काल कहा है। इसमें सौम्य गुण प्रधान होता है और प्राणियों का बल बढ़ा होता है।

इस लिये विसर्ग काल उत्तम है।

कौनसी ऋतु—

आयुर्वेद में हम पढ़ते हैं कि अम्ल, लवण, मधुर यह तीन रस क्रम से, अर्थात् वर्षा में अम्ल, शरद् में लवण और हेमन्त में मधुर रस प्रधान होते हैं। इसके साथ यह भी पढ़ते हैं कि:—

१. "अत्यन्तमुष्णकटुतिक्तकषायमम्लं
क्षारञ्च शाकमथवा लवणाधिकं च।
कामी सदैव रतिमान् वनिताभिलाषी
नो भक्षयेदिति समस्तजनप्रसिद्धिः"

अर्थात् अति उष्ण, कटु, तिक्त, कषाय, अम्ल, लवण, क्षार, शाक यह न खावे।

२. "यत्किंचिन्मधुरं स्निग्धं जीवनं बृंहणं गुरु
हर्षणं मनसश्चैव सर्वं तद् वृष्य मुच्यते"

अर्थात्—जो कुछ मधुर रस वाली वस्तु, स्निग्ध, जीवनीय, हर्ष करने वाली है, वह वृष्य है।

इस लिये हेमन्त ऋतु में मधुर रस होने से यह ऋतु शेष वर्षा, शरद् (लवण-अम्ल रस वाले) ऋतुओं की अपेक्षा उत्तम है। इस लिये मुनि ने कहा है—

"शीतेऽग्र्यं वृष्टिधर्मे ह्यल्पं बलं मध्यँस्तु शेषयोः"

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थात्— हेमन्त ऋतु में मनुष्यों का बल उत्तम होता है, शिशिर, वसन्त में मध्यम तथा वर्षा, ग्रीष्म में अल्प होता है।

और भी—

गीता के विभूति अध्याय में हम पढ़ते हैं कि-

"मासानां मार्गशीर्षोऽस्मि" [गीता अ० १०]

अर्थात् मासों में मार्गशीर्ष का महीना हूँ, क्योंकि यह श्रेष्ठ है (विस्तार के लिये भगवद्गीता रहस्य देखिये)

प्रत्येक मनुष्य का स्वास्थ्य और भार इसी ऋतु में उत्तम हो जाता है । इस लिये मार्गशीर्ष और पौष यह दो मास उत्तम हैं।

गर्भाधान—

"दिने व्यतीते नियतं संकुचत्यम्बुजं यथा
ऋतौ व्यतीते नार्य्यास्तु योनिः संव्रियते तथा"

गर्भाधान काल से १ मास पूर्व पुरुष ब्रह्मचर्य व्रत को धारण करके सर्पि और औदन (घी-चावल) खावे, एवं ब्रह्मचारिणी १ मास तक तैल और औदन खावे। फिर ऋतुकाल के चतुर्थ दिवस स्नानादि करके देवताओं का मङ्गल पूजन करें, रात्रि में सम्भोग करें। परन्तु १४ दिन पीछे योनि का मुख बन्द हो जाता है, इस लिये इन्हीं दिनों में गर्भ धारण हो सकता है। प्रथम तीन दिवस निन्दित हैं-

इच्छानुकूल सन्तान—

१. अथ य इच्छेत् पुत्रो मे पण्डितो विगीतः समितिंगमः शुश्रूषितो वाचं भाषिता जायेत सर्वान्वेदाननुब्रवीत सर्वमायुरियादिति माꣳसौदनं पाचयित्वा सर्पिष्मन्तमश्नीयातामीश्वरौ जनयितवा औक्षेण वार्षभेण वा" बृहदारण्यक ६। ४। १८॥

अर्थ—जो यह चाहे कि मेरा पुत्र पण्डित, सभा में बोलने वाला, सुन्दर वाणी बोलने वाला, सब वेदों का ज्ञाता, सम्पूर्ण आयु का भोगने वाला हो तो-मांस और चावल पका कर घी से खावें। मांस ऊक्ष या ऋषभ का हो।

ऊक्ष का अर्थ बैल है या और भू है, एवं ऋषभ का अर्थ श्रेष्ठ है। यदि ऋषभ का यह अर्थ है तो बकरी का मांस उत्तम है। क्योंकि चरक में हम पढ़ते हैं कि—

"नातिशीतं गुरु स्निग्धं मांस माज मदोषलम्
शरीरधातुसामान्या दनभिष्यन्दि बृंहणम्"

अर्थात्— बकरी का मांस न तो बहुत ठण्डा है न गरम है, स्निग्ध है और हमारे शरीर के समान उसकी रचना (Composition) है, यह सब होते हुए भी अभिष्यन्दि नहीं है यही इसकी खासियत है, क्योंकि रोहित मत्स्य भी समान गुण है, परन्तु वह अभिष्यन्दि होकर बृंहण है। इसलिये बकरी का और भू का मांस उत्तम है।

ओदन—

"शालयो मधुरा शीता लघुपाका बलप्रदाः
पित्तघ्नाल्पानिलकफाः स्निग्धबद्धाल्पवर्चसाः"

अर्थात्— चावल मधुर रस, मधुर पाक, शीत वीर्य्य, लघु पाक, बल देने वाला, स्निग्ध, बद्धमूत्रादि करने वाले हैं।

कौनसा उत्तम है—

"षष्टिको मधुरः शीतो लघुर्वृष्यस्त्रिदोषहा"
"रक्तशालिस्त्रिदोषघ्नश्चक्षुष्यः शुक्रमूत्रलः
तृष्णाघ्नो बलकृत्.....

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

शाठी चावल मधुर, शीत वीर्य्य, लघु, वृष्य (शुक्रवर्धक), त्रिदोष नाशक है। लाल चावल त्रिदोषनाशक, चक्षुष्य, शुक्र और मूत्रल है।

घृत—

"घृतं बुद्ध्यग्निशुक्रौजोमेदःस्मृतिकफावहम्
स्नेहोत्तमं योगवाहि सर्वथा मधुरं हिमम्"
"गव्यं घृतं घृतश्रेष्ठं चक्षुष्यं बलवर्धनम्"

घी, बुद्धि, अग्नि, शुक्र, ओज, मेद, मेधा को बढ़ाता है। गाय का घी उत्तम है।

मांसपाकविधि—

यह दो प्रकार से प्रायः बरता जाता है।
१ मांसरस, २ वेशवार—

मांसरस—"बृंहणः प्रीणियो वृष्यः चक्षुष्यो व्रणहा रसः"
"द्रव्यतो द्विगुणं मांसं सर्व्वतो द्विगुणं पयः
पादस्थं संस्कृतं ह्येष षडंगो यूष उच्यते"

द्रव्य से दुगना मांस, सब से दुगना दूध डाल कर $\frac{1}{8}$ शेष करे।

"अन्नं मांसादिभिः सार्धं स्याद् गुरु बृंहणम्"

वेसवार—

"निरस्थि पिशितं पिष्टं गुडघृतान्वितम्
कृष्णामरिचसंयुक्तं वेशवार इति स्मृतम्"

बिना अस्थि के मांस को पिप्पलि, कालीमिरच, गुड घी से बनावे। (विस्तार के लिये वाग्भट्ट सूत्रस्थान अध्याय ६ को देखिये)

ओदनपाकविधि—

यवागुषड्गुणेऽभ्यसि

एक कड़ाही में घी को गरम करके उसमें नागकेसर, केसर, लौंग, पिप्पली, जायफल, जावित्री (न होने पर-लता कस्तूरी) डाल दीजिये। उसमें फिर धोकर चावल डाल दीजिये। उसे घी में अच्छी प्रकार चला दीजिये। फिर ६ गुणा, ४ गुणा, ८ गुणा दूध डाल दीजिये और ढांप कर पकने दीजिये। जब सब दूध सूख जावे तब उतार कर थोड़ा सा कर्पुर और कस्तरी मिला दीजिये।

नागकेसर आदि का गुण—

"पिप्पली शृंगवेरञ्च मरिचं केशरं तथा
घृतेन सह पातव्यं वन्ध्यापि लभते सुतम्"

पिप्पली—शुण्ठी-मिर्च-नागकेसर इन को घी से पीवे।

थोड़ासा विचार—

भागवत में हम पढ़ते हैं कि—

"लोके व्यवायामिषमद्यसेवा
नित्यास्ति जन्तो र्न हि तत्र चोदना
व्यवस्थितस्तेषु विवाहयज्ञः

भागवत दशम स्कन्ध।

अर्थात् संसार में मैथुन-मांस-मद्य के लिए किसी को कहना नहीं पड़ता परन्तु उसके लिये नियम की आवश्यकता पड़ती है। अर्थात् मैथुन के लिए विवाह और मांस का भक्षण यज्ञ में ही करें। (विस्तार के लिए गीता रहस्य देखिये)

बृहदारण्यक उपनिषद् में उपरोक्त जो श्रुति आई है वह भी यज्ञ प्रकरण की है। सम्भवतः पुत्रेष्टि यज्ञ का प्रकरण है। क्योंकि

"य एन श्ं शुष्के स्थाणौ निषिञ्चे
ज्जायेरञ्छाखाः प्ररोहेयुः पलाशानीति"

बृहदा० ६, ३.

जो इस को सूखे टुण्ड पर भी डालेगा उस में भी हरी शाखा उत्पन्न हो जायेंगी। इस प्रकार पांच

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बार यही पाठ आया है।

उपरोक्त दोनों वचनों को यदि यज्ञ प्रकरण में स्वीकार करलें तो दोनों की एकार्थता, एकान्वय, सिद्ध हो जाता है।

२. स य इच्छेत् पुत्रो मे शुक्लो जायेत वेदमनु-
ब्रवीत सर्वमायुरियादिति क्षीरौदनं पाचयित्वा—
बृहदा०। ६। ४। १४।

अर्थात् जो चाहे कि मेरा पुत्र गौरवर्ण और एक वेद को पढ़े, सम्पूर्ण आयु को भोगे, वह—दूध चावल खावे।

क्षीर का निघण्टु—

"क्षीरं स्वादुरसं स्निग्धं ओजस्यं धातुवर्धनम्"

अर्थात्—दूध स्वादु, मधुर, स्निग्ध, ओज और शुक्रादि धातु को बढ़ाने वाला है।

पाकविधि—

द्रव्यादष्टगुणं क्षीरं क्षीरात् तोयं चतुर्गुणम्
क्षीरावशेषः कर्त्तव्यः क्षीरपाके त्वयं विधिः"

नाग केसर आदि वस्तुओं से ४ गुना दूध और दूध से ४ गुना पानी फिर दूध ही बचावे।

थोड़ा सा विचार—

शिशु का रंग तेज पदार्थ के ऊपर निर्भर है। यदि तेज धातु आप पदार्थ से मिले तो वर्ण गौर होता है पृथिवी से मिले तो कृष्ण वर्ण। यदि इन दोनों से मिले तो सांवला (सुश्रुत शारीर)

३. अथ य इच्छेत् पुत्रो मे कपिलः पिंगलो जायेत द्वौ वेदौ अनुब्रवीत सर्वमायुरियादिति दध्योदनं पाचयित्वा·····बृहदा-६-४-१५.

जो चाहे कि दो वेद को पढ़े, कपिल और पिंगल वर्ण हो, वह दही चावल खावे

दही का निघण्टु—

"दध्यम्लं मधुरं ग्राही-गुरुरूष्णं वातनाशनम्
मेदःशुक्रबलश्लेष्मपित्तरक्ताग्निशोफकृत
गव्यं दधि च मंगल्यं वातघ्नं शुचि रोचकम्
स्निग्धं मधुरं विपाकि मधुरं दीपनं बलवर्धनम्"

दही—अम्ल, मधुर, ग्राही, गुरु, ऊष्मवीर्य, वात-नाशक, मेद शुक्र बल श्लेष्म वर्द्धक है। गो कदधि-मंगल, पवित्र, मधुर, स्निग्ध, बल वर्धक है।

इसको पीपल या उदुम्बर अथवा वट के बर्तन में जमाकर उसी लकड़ी की मथनी से मथना चाहिये (संस्कार विधि देखिये)। निघन्टु आगे स्पष्ट करूंगा। पुत्रोत्पत्ति के लिये अश्वत्थ और न्यग्रोध का प्रयोग होता है।

"कुरण्टमूलं धातक्याः कुसुमानि वटांकुराः
·····गर्भप्रदं ध्रुवम्"

३. "अथ य इच्छेत् पुत्रो मे श्यामो लोहिताक्षो जायेत त्रीन्वेदाननुब्रवीत सर्वमायुरियादित्यु-दौदनं पाचयित्वा सर्पिष्मन्तम्···बृहदा.६-४-१६.

जो चाहे कि मेरा पुत्र श्याम या लाल आँखों वाला हो वह चावल को घी से खावे।

४. "अथ य इच्छेत् दुहिता मे पण्डिता जायेत सर्वमायुरियादिति तिलौदनं पाचयित्वा···बृहदा-रण्यक ६-४-१७.

जो चाहे कि मेरी कन्या पण्डिता सम्पूर्ण उमर भोगे, वह तिलों के साथ चावल खावे।

तिल—

"तिलो विपाके मधुरो बलिष्ठः
स्निग्धो व्रणालेपन एव पथ्यः।
दन्त्योग्निमेधाजननः·····"

"तिलेषु सर्वेष्वसितः प्रधानो मध्यः सितो·····"

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

तिल विपाक में मधुर, बलकारक, स्निग्ध, व्रण हितकर, दन्त्य, मेधा वर्धक है। काले तिल रज प्रवर्तक हैं-गर्भाशय शुद्ध करते हैं—

"इच्छतां यादृशं पुत्रं तद्रूपचरिताश्च ताः"

थोड़ा सा विचार—

प्रश्न उठता है कि क्या एक बार ऐसा खाने से उपरोक्त फल सिद्ध हो सकता है ? इसका उत्तर यही है कि औषधियों का प्रभाव दो प्रकार का है। १-चिन्त्य २-अचिन्त्य। जिस प्रकार कि सहदेवी के शिर में बांधने से विषमज्वर (Malaria) नहीं आता। तुलसी की जड़ को दक्षिणपार्श्व में बांधने से वीर्यच्युति नहीं होती। च्यवन मन्त्र से कठिन प्रसूति (Difficult Labour) सुगम हो जाता है। यह सब औषध का प्रभाव है। इसी प्रकार यदि इनका भी प्रभाव स्वीकार कर लें तो प्रश्न हल होजाता है।

मन्त्र—

"अहिरसि आयुरसि सर्वतः प्रतिष्ठासि धाता त्वाम् दधातु
विधाता त्वां दधातु ब्रह्मवर्चसा भवति
ब्रह्मा बृहस्पतिः विष्णुः सोमः सूर्य्यस्तथाऽश्विनौ
भगोऽथ मित्रावरुणौ वीरं ददतु मे सुतम्"

सद्योगृहीत गर्भ के लक्षण—

आर्त्तवरोध, श्रान्ति, ग्लानि, उरुभाग में अवसन्नता, पिपासा, योनि में स्फुरण होता है।

गृहीतगर्भा—स्तन में कार्ष्ण्य, रोमोद्गम, अक्षिस्पन्दन, वमन, लाला प्रसेक, अवसन्नता बच्चे को हृदय ध्वनि जो कि नाभि और Left Anterior Superior Iliac Spine के बीच में सुनाई देती है।

मास मास में परिवर्त्तन—

प्रथम मास में—शुक्र और शोणित सिर्फ प्रथम दिवस की ही अवस्था में रहते हैं।

द्वितीय मास में—वात पित्त कफ द्वारा कलल अर्थात् घन होता है।

तृतीय मास में—दो हाथ और दो पांव और एक मस्तिष्क यह पांच अंग सूक्ष्म रूप से बनते हैं।

चतुर्थ मास में—सब अंग उपांग स्पष्ट होते हैं। इस मास में हृदय का शब्द (Heart beat) सुनाई पड़ता है, जिससे चेतना धातु का ज्ञान होता है। इस अवस्था में जननी को दौहृद (Two-Heart) कहते हैं। संख्या १५० के करीब होती है।

पंचम मास—मन का जन्म होता है।

षष्ठ मास—बुद्धि का जन्म होता है।

सप्तम—सब अंग प्रत्यंग साफ़ होजाते हैं।

अष्टम मास—ओज धातु का प्रादुर्भाव-यह ओज धातु कभी तो माता में जाता है और कभी बच्चे में। जिस समय बच्चे में होता है, तो माता उदास और शिशु प्रसन्न होता है। जब ओज धातु माता में होता है तो माता प्रसन्न और शिशु उदास होता है। यदि उस अवस्था में बच्चा भूमिष्ठ हो जावे तो वह मृत होता है और यदि भूमिष्ठ होने के समय ओज धातु शिशु में हो तो जीवित होता है।

नवम-दशम—सन्तान भूमिष्ठ होती है।

पुत्र कन्या—

"आधिक्ये रेतसः पुत्रः कन्या स्यादार्त्तवेऽधिके
नपुंसकं तयोः साम्ये यथेच्छा पारमेश्वरी।"

इसके लिये संसार में बहुत सी कल्पनायें प्रसिद्ध हैं। जैसेः—

१.-अधिक शुक्र से पुरुष और अधिक आर्त्तव से कन्या।

२. समदिवस में गर्भाधान करने से पुत्र, विषम दिवसों में कन्या।

३. जिस जननी के भाई नहीं हैं, उससे कन्या ही होती है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

"यस्य न भवेद् भ्राता न विज्ञायेत वा कुलम्
..... पुत्रिकाधर्मशंकया" मनुः

४. यदि शुक्र कीटाणु (Sperm) वाम अण्ड से जावे तो कन्या और दक्षिण से जावे तो पुत्र उत्पन्न होता है।

५. औषध प्रयोग-जैसे पुंसवन संस्कार में बट-अश्वत्थ आदि से।

विचार—

१. साधारणतः पुरुष का वाम अण्ड दक्षिण अण्ड की अपेक्षा ½ इञ्च नीचे लटकता है और जननी को सब स्थानों पर वामांगी के नाम से कहा है-एवं पुत्र और कन्या की पहिचान में आचार्य्य ने यह बताया है कि यदि जननी के वाम स्तन में गुद-गुदी और वाम अक्षिस्पन्दन हो तो कन्या और दक्षिण स्तन में स्पर्श हो तो पुत्र उत्पन्न होता है। इसके साथ वहीं यह भी पढ़ते हैं कि पुत्रकामी पुरुष दक्षिण पांव से शय्यारोहण करे और दक्षिण नासापुट में ही औषध का प्रयोग करे एवं तुलसी की मूल को भी वीर्य्य स्तम्भन के लिये दक्षिण पार्श्व में धारण करे।

इससे स्पष्ट है कि पुरुष के दक्षिण और स्त्री के वाम भाग में क्रम से पुत्र और कन्या की उत्पत्ति करने की शक्ति है।

इसलिये यदि पुरुष के दक्षिण अण्ड से Sperm जननी के दक्षिण पार्श्व के अण्डडिम्ब (Ovum) से मिलेगा तो पुत्र और यदि वाम अण्ड का कीटाणु वाम ओर के डिम्ब से मिले तो कन्या और यदि उलटे मिलें अर्थात् दक्षिण वाम से तो नपुंसक होता है क्योंकि पुरुष स्त्री दोनों के गुण उसमें पाये जाते हैं।

जननी का डिम्ब (Ovum) प्रत्येक मास बदल-बदल कर आता है अर्थात एक वार दक्षिण पार्श्व से, दूसरी वार वाम पार्श्व से। एक मास में प्रथम वार का टूटा Connective Tissue नया बन जाता है और Graffion follical पक जाता है अर्थात् Repair (मरम्मत) हो जाता है और पहिले को आराम मिल जाता है।

२. ऊपर लिखा है कि पुरुष का वाम अण्ड दक्षिण अण्ड से ½ इञ्च नीचे रहता है। इस लिये इसकी क्रिया दक्षिण अण्ड की अपेक्षा कुछ शीघ्र हो जाती है, जिससे कि Sperm निकल कर पहिले जाता है और इसी प्रकार जननी की ओर से भी वाम पार्श्व का डिम्ब पहिले चलता है, जिनके मेल से कन्या की उत्पत्ति होती है। इस लिये प्रायः प्रथम सन्तान यदि बची रहे तो कन्या देखने में आती है। लोक में प्रथम कन्या होना शुभ चिन्ह गिना जाता है।

३.-मनुस्मृति में हम पढ़ते हैं कि जिस कन्या के भाई न हो उससे विवाह न करे, क्योंकि उससे कन्या ही पैदा होने की सम्भावना है। क्योंकि उसके पिता और माता का दक्षिण अण्ड एक प्रकार से क्षीण (Atrophied) हो गया है जिससे कि कन्या का भी दक्षिण पार्श्व कमजोर रहा है।

इस के साथ सुश्रुत में यह भी पढ़ते हैं कि माता पिता का जो भाग निर्बल होता है शिशु का वही भाग निर्बल या नष्ट हो जाता है।

प्रश्न होता है कि अन्धे के अन्धा क्यों नहीं होता आँखों वाले के अन्धा क्यों होता है इसका उत्तर आचार्य्य कर्मफल को मानते है। (सुश्रुत देखिये) अथवा वात पित्त कफ इनमें से जो भी कुपित हो कर विकृत हो जावे वह अंगादि विकार कर देता है।

४. ऋतु काल की प्रथम तीन रात्रियां छोड़ कर शेष १२ दिन गर्भाधान के लिये उचित हैं

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

क्योंकि प्रथम तीन रात्रियों में आर्त्तव रहता है, इस लिये उनमें शुक्र नहीं ठहरता, जिस प्रकार कि बहते पानी में बालू। एवं एकादशी भी निन्द्य है, क्योंकि इस दिन उपवास रखा जाता है। शेष दिनों में त्रयोदशी के दिन सम्भोग करने से नपुंसक सन्तान होती है। शेष चतुर्थ, षष्ठ, अष्टम, दशम, द्वादश में पुत्र और शेषों में कन्या उत्पन्न होती है।

आचार्य्य वाग्भट्ट इसका कारण अचिन्त्य हेतु को मानते हैं। अचिन्त्य हेतु वह है कि जिसके सम्बन्ध में हम कुछ नहीं कह सकते। जैसे कि चित्रक और दन्ती (Craton) का समान रस, वीर्य, विपाक होने पर भी चित्रक विरेचक (pergative) नहीं है और जमालगोटा (Craton) तीव्र विरेचक (strong-pergative) है। इसका कारण अचिन्त्य प्रभाव है। एवं अपामार्ग की बाली से सुख प्रसूति होना आदि है।

"तासु हि रात्रिस्वार्त्तवमल्पं भवति"

युग्मरात्रियों में स्त्री का आर्तव कम हो जाता है, और अयुग्म रात्रियों में अधिक हो जाता है।

शुक्रसरण—

"स्रोतोभिः स्यन्दते देहात् समन्ताच्छुक्रवाहिभिः
हर्षेणोदीरितं रागात् संकल्पाच्च मनोभवात्"

कामेच्छा से अथवा संकल्प अथवा चिन्तन से और सरल व्यापार से उत्पन्न ऊष्मा से वायु कुपित होती है। वह वायु मेढ्र मार्ग से शुक्र को बाहर भेजती है जो कि गर्भाशय में आये हुवे आर्त्तव से मिलता है।

"वस्तौ सम्भृत्य निर्याति स्थलान्निम्नमिवोदकम्"

यही कारण है कि कामेच्छा को रोकने के लिये प्राणायाम द्वारा प्राण वायु को रोका जाता है।

यह एक साधारण और स्वाभाविक क्रिया है। इसमें यह बात विचारने योग्य है कि शुक्र जो कि सारे शरीर में रक्त के समान फैला हुआ है उसमें इच्छा द्वारा एक नये प्रकार का चक्कर (circulation) आरम्भ हो जाता है। उससे सम्पूर्ण अस्थियों से शुक्र निकलता है जिस प्रकार कि नये घड़े से पानी निकलता है इसको निकालने में अण्ड (Testes) एक निमित्त होते हैं। जिस प्रकार कि उपवृक्क (Suprarenal gland) शरीर के रक्त से Adernaline को अलग कर देती है, उसी प्रकार अण्ड भी वीर्य को बाहर कर देते हैं। इस कार्य में दोनों अण्ड भाग लेते हैं।

अब यदि हम किसी प्रकार से वाम अण्ड की क्रियाशक्ति बन्द या कम कर सकें तो दक्षिण अण्ड की क्रिया बढ़ जावेगी। यदि इसको Atrophide करा दें तो वह एक प्रकार से रोग हो जाता है। इसलिये यदि किसी अन्य कारण से हम दक्षिण अण्ड को ऊपर रक्खें अर्थात् वाम अण्ड को उसकी स्वाभाविक अर्थात् $\frac{1}{2}$ इञ्च नीचे की अवस्था में रहने दें तो सम्भवतः पुत्र हो सके। अथवा वाम अण्ड की क्रियाशक्ति कम कर दें।

पुंसवन संस्कार

जब आचार्य यह कह चुके हैं कि शुक्र के अधिक होने से पुत्र और आर्त्तव के अधिक होने से कन्या होती है तो फिर पुत्र से कन्या किस प्रकार हो सकती है, जब कि गर्भ धारण हो चुका है। इसका उत्तर भी आचार्य देते हैं—

"बली पुरुषकारो हि दैव मप्यतिवर्त्तते।"

वाग्भट्ट

अर्थात् पुरुषार्थ बलवान है, वह दैव को भी बदल सकता है। अपि शब्द यहाँ ज़ोर देने के वास्ते

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

है। परन्तु इसके साथ यह भी बात है कि यदि स्त्री-गर्भ बलवान है तो हज़ारों पुंसवन से भी पुत्र नहीं हो सकता। इस बात से यह नियम करता है।

"दैवं पुरुषकारेण दुर्बलं ह्यु पहन्यते
दैवेन चेतरत् कर्म्म प्रकृष्टेनोपहन्यते"

इसलिये सम्यक् प्रकार से किये हुवे पुंसवन की सिद्धि-असिद्धि स्वाभाविक हीनबल पर निर्भर है।

समय—

"गर्भपुन्सवनान्यत्र पूर्वं व्यक्तेः प्रयोजयेत्"

अर्थात् गर्भ के स्त्री-पुरुषादि लक्षण उत्पन्न होने से पूर्व पुंसवन कर्म करे। पुंसवन संस्कार द्वितीय मास में करे क्योंकि तृतीय मास में लक्षण व्यक्त होते हैं—

"ङ्गाङ्गिव्यक्तिस्तु तृतीये मासे भवति इति मास-द्वयं यावत् पुन्सवनं कर्म्म कुर्यादिति"

शिवदास

इसलिये द्वितीय मास में गर्भ परिवर्तन हो सकता है।

विधि—

इसके लिये बहुत-सी विधियाँ आयुर्वेद में भिन्न-भिन्न शास्त्रों में लिखी हैं—

१. लक्ष्मण भार्याः चैतेषु अहःसु लक्ष्मणा-वट-शुंग-सहदेवी-विश्वदेवानामन्यतमं क्षीरेणाभिसुत्य त्रींश्च-तुरो विन्दून् दधातु दक्षिणनासापुटे पुत्रकामायै वामे दुहितृकामायै।

अर्थात् वट शुंग या सहदेवी के दुध की तीन-चार बूँद दक्षिण नासा में पत्नी के देवे उसे गेरे नहीं।

वट का विचार—

i. 'गोष्ठजातस्य वटस्य प्रागुत्तरशाखजे शुभे
शुंगे माषौ तथा गौरसर्षपौ दधियोजितौ
पुष्यपीतौ.....,,

ii. नासयास्येन वा पीतं वटशुंगाष्टकं तथा—

iii. "शमीमश्वत्थमारूढः तत्र पुंसवनं कृतम्
तद्वै पुत्रस्य वेदनम्.....,,

अथवा अश्वत्थ के ऊपरस्थित शमी का कषाय देवे।

निघन्टु—

i. वट और अश्वत्थ (पीपल) यह समान गुण हैं। दोनों ही शीतवीर्य, रक्त दोष नाशक, वर्ण प्रसाद करनेवाले, योनिविशोधक।

ii. लोगों में पुत्रकामी स्त्रियाँ इन दोनों की पूजा करती हैं।

iii. दोनों ही पूज्य हैं। उपनिषद् में अश्वत्थ और न्यग्रोध (वट) का ही उदाहरण दिया गया है। (विस्तार के लिये गीता-रहस्य का १५वाँ अध्याय देखिये।)

iv. "अश्वत्थः सर्ववृक्षाणाम्" गीता

सब वृक्षों में अश्वत्थ मैं हूँ—यहाँ पर अश्वत्थ वट और उडुम्बर (गूलर) का उपलक्षक है।

२. "पुष्ये पुरुषकं हैमं राजतं वाथवायसम्"

अर्थात्— पुष्यनक्षत्र में सोना चांदी वा लोहे की पुरुष प्रतिमा बनाकर उसे अग्नि में लाल करके दूध में बुझावे (ठण्डा करे)। उस दुध की एक अञ्जली पीवे।

निघण्टु—

i. "सुवर्णस्य रूप्यकस्य चूर्णे-ताम्रस्य चाज्यसंमिश्रे
पीते शुद्धे क्षेत्रे भेषजयोगाद्भवेद् गर्भः"

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सोना-चांदी ताम्र भस्म इसको घी से खावे

ii. लोहे के लिये लौह रसायन को देखिये—(रसायनाधिकार)

३. "गौरदण्डमपामार्ग-जीवकर्षभपौर्यकान्
पिबेत् पुष्ये जले पिष्टान्....."

पुष्य नक्षत्र में, गौर दण्डी, अपामार्ग, जीवक, ऋषभक इनको दूध में पीसकर पीवे।

गौर दण्डी— लक्ष्मणा।

अपामार्ग— चिड़चिड़ा।

जीवक— ऋषभक।

लक्ष्मणा—

"पयसा लक्ष्मणामूलं पुत्रोत्पादस्थितिप्रदम्"

लक्ष्मणा को दुग्ध से पीवे।

अपामार्ग—

यह कल्प क्रिया में प्रशस्त है। इसी से कल्प किया जाता है।

(विस्तार के लिये चरक सूत्र स्थान अपामार्ग अध्याय और कल्प स्थान देखिये)

४. "क्षीरेण श्वेतबृहतीमूलं नासापुटे स्वयं
पुत्रार्थं दक्षिणे....."

स्त्री दूध से श्वेत बृहती (कण्टकारी) की जड़ को पीसकर दक्षिण नासापुट में पुत्रेच्छा से देवे—

निघण्टु—

बृहती वाजीकरण और वृष्य होने से (वाजीकरणाधिकार) प्रायः तैल चूर्णों में प्रयुक्त होती है। यह आयुर्वेद के जानने वालों से छिपा नहीं है।

५. "औषधीर्जीवनीयाश्च बाह्यान्तरुपयोजयेत्"

अर्थात् जीवनीय औषधियों से बाह्य अन्तः प्रयोग करे।

निघण्टु—

"जीवन्तीकाकोल्यौ मेदे द्वे मुद्गमाषपर्ण्यौ च
ऋषभक जीवक मधुकं चेतिगणो जीवनाख्यः"

अर्थात् १० औषधियां जीवनीय वर्ग में हैं। इसलिये इनसे प्रस्तुत औषध, अवलेह, घृत, अमृतप्राशादिका अन्तः प्रयोग, जीवकादि तेल का बाह्य प्रयोग करे।

६. "पीत्वाथो भवलिंगीबीजं कन्या न सूते स्त्री"

अर्थात् शिवलिंगी के बीजों को दूध से पीस कर स्त्री खा ले तो उसके कन्या नहीं होती अपितु पुत्र ही होता है।

७. गौवों के बांधने या बैठने के स्थान पर उत्पन्न वट वृक्ष की ईशान कोण की शाखा की शुंगें १ माषा तथा १ माषा श्वेत सरसों इनको दधि के साथ पुष्य नक्षत्र में पीवे।

८. 'संजीवनी बूटी' नाम की पुस्तक में स्वामी सत्यदेव जी ने एक विधि लिखी है कि जिस से दक्षिण अण्ड (Testes) ऊंचा रक्खा जा सके। इस में उन्होंने लंगोट बांधना बताया है। जिस से वाम अण्ड (Left Testes) पर दबाव रहे परन्तु यह काम आसनों से सुगमता से हो सकता है क्योंकि वीर्य शुक्र वाहिनी नसों (Forvasa difference) के द्वारा अण्ड से शुक्राशय में जाता है जो कि Bladder के पीछे छोटी छोटी थैलियां हैं।

इसलिये यदि vasa-difference पर जो कि Spermatic cord के साथ हो कर जाता है दबाव दिया जा सके तो वीर्य नहीं जा सकता। यही कारण है कि गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करने वाले व्यक्तियों के लिये इन आसनों का निरन्तर अभ्यास करना निषिद्ध है क्योंकि इस से शुक्रवाहिनी नसें मर जाती हैं अर्थात् (Degenrate) होती हैं, इसलिये इन पर दबाव दिया जावेगा तो

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वाम शुक्रवाहिनी से वीर्य-शुक्राशय में न जाकर दक्षिण से जावेगा— इसके लिये उत्तान पादासन आदि आसन उत्तम हैं।

यहां पर एक बात विचारने की है कि शास्त्र में पुंसवन ही संस्कार का वर्णन है जिस से कि पुत्र पैदा होता है। इसी बात को आचार्यों ने पुष्ट किया है— परन्तु कन्या के लिये ऐसा कोई उपाय शास्त्र ने नहीं बताया और जो भी कहे हैं वे बहुत थोड़े। इसका सम्भवतः कारण—

१. लोक में पुत्रैषणा ही प्रबल होती है— वही स्वर्ग दिलाने वाला होता है। (देखिये चरक सूत्रस्थान)

२. अथवा कन्या उत्पन्न होने की बहुत सम्भावना है। क्योंकि आर्त्तव का परिमाण शुक्रसे अधिक है "चत्वारो रजसः स्त्रियां" अर्थात् चार अञ्जलि प्रमाण रज का है और पुरुष में भी वामाण्ड ही प्रथम क्रिया करने में समर्थ होता है।

यह बात ध्यान रखने योग्य है कि यह संस्कार द्वितीय मास में ही हो सकता है क्योंकि अगले मास में अंग प्रत्यंग का विभाग होजाता है तथा चतुर्थ मास में हृदय के शब्द की आवाज से कन्या और पुत्र का थोड़ा सा ज्ञान होजाता है— क्योंकि कन्या की धड़कन १७५ और पुत्र की १५० के लगभग होती हैं, परन्तु यह बात साफ है कि दोनों की संख्या में १० और १५ का अन्तर अवश्य होता है— परन्तु यह कोई बिल्कुल निश्चित चिन्ह नहीं है।

(विस्तार के लिये 'Text Book-of Midwifery' by Johnson. देखिये।)

अस्तु इस लेख को यहीं समाप्त करता हूं। क्योंकि इस से अगला विषय दूसरे सम्बन्ध में पहुँच जाता है। इस लेख में हो सकता है कि कोई आवश्यक बात भी रह गई हो और अनावश्यक बात लिखी गई हों। अस्तु आचार्य के निम्न शब्दों का ध्यान रखते हुवे आप इस बात पर ध्यान न देंगे—

"नहि अस्ति आयुर्वेदस्य पारम् तस्मादप्रमत्तः शश्वदनियोगमभिगच्छेत्" (आत्रेय-विमानस्थान)

"कृत्स्नोहि लोको बुहिमतामाचार्यः शत्रुश्चाबुद्धिमताम्'

(आत्रेय-विमानस्थान)।

"न हि सर्वं जानाति"

(कौटिल्य)

आयुर्वेद शास्त्र का कोई पार नहीं इस लिये इसे निरन्तर अध्ययन करे एवं शहद की मक्खी की तरह जहां जहाँ से आयुर्वेद शास्त्र देखे वहां वहां से ग्रहण करे। बुद्धिमानों का सारा संसार ही गुरु है— इसलिये यदि इस में कोई बात अशुद्ध हो तो आप माफ़ी दें।

एक और भी बात है— मेरे पूज्य आंगलचिकित्सा के श्रद्धेय उपाध्याय कहा करते थे कि मनुष्यत्व को सिद्ध करने के लिये उससे गलती का होना आवश्यक है उससे गलती नहीं होती तो वह मनुष्य नहीं अपितु··· देवता··· है। मनुष्य को मनुष्य न कहना उसका अपमान करना है। जब तक वह मनुष्य कोटि में है तो उससे गलती या अशुद्धि होना असम्भव नहीं। इसलिये यदि इस लेख में कुछ त्रुटि रह गई हो तो कृपया आप उसे शुद्ध या पूरा करने की कोशिश करें।

यह विषय सिर्फ आयुवद से ही सम्बन्ध नहीं रखता अपितु धर्म शास्त्र और ज्योतिष के साथ भी बड़ा घनिष्ट सम्बन्ध है। इसी लिये—

"उपाध्यायोऽथ पुत्रीयं कुर्वीत विधिवद्विधम्"

"प्रागदक्षिणेन पादेन शय्यां मौहूर्त्तिकाज्ञया"

अर्थात् उपाध्याय-पुरोहित-पुत्रेष्टि विधि को करे और शय्यारोहण ज्योतिष की आज्ञा से करे।

इसलिये इसको पूर्ण करना मेरे लिये एकदम कठिन था क्योंकि ज्योतिष शास्त्र से मैं सर्वथा अनभिज्ञ हूँ और न कोई धर्मशास्त्र का ही पण्डित हूं एवं धर्मशास्त्र का भी मैं कोई निर्णायक नहीं हूँ इसलिये यदि इस में गल्ती हो तो वह क्षम्य है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

लक्ष्मी-पूजा का पर्व*

(ले०— श्री पं० देवशर्मा जी विद्यालंकार)

हम भारतवासी लक्ष्मी को भूल चुके हैं अथवा लक्ष्मी देवता हम को त्याग चुकी है। अतः देश भर में जहां देखो गरीबी का ही रोना है। व्यापारियों से पूछो तो वे कहते हैं कि हमें इस में कुछ नहीं बचता, सरकारी नौकर तो पहिले ही मारे-मारे फिरते हैं। पर ऐसे 'धन कमाने वाले' थोड़े से लोगों के अतिरिक्त जो भारतीय जनता का समुद्र पड़ा हुआ है उस में कोई प्रवेश नहीं करता। हम पढ़े लिखे लोग इन की हालत जानने की आवश्यकता ही नहीं समझते। हम इनसे इतनी दूर हो गये हैं कि यदि कोई इन की सच्ची कथा हमें सुनाता है तो हमें उस पर विश्वास नहीं जमता। ये हैं भारत के किसान और मजदूर, जो कि कम से कम २० करोड़ हैं, जिन में से आधों को एक समय सूखा भोजन ही नसीब होता है, जिन में से लाखों एक दुर्भिक्ष आ जाने पर चल बसते हैं। यह है तीन चौथाई असली भारत, जिस को यदि हम देखें तो हमें पता लगेगा, कि हमें लक्ष्मी देवता की आराधना की जरूरत है, तथा यह आराधना हमें ठीक तरह करनी चाहिये। भारत में पूर्व काल से कार्तिकी अमावस का दिन लक्ष्मी पूजा का दिन समझा जाता है। यह वैश्य वर्ण का विशेष त्यौहार है। इस लिये हमें इस पूजा के त्योहार को यूं ही व्यर्थ के 'हा हा हू हू' में नहीं गवां देना चाहिये।

२. दीपित हृदयों से निकली दिवाली

हां यह सच है कि इस त्योहार से हम जो कुछ शक्ति ले सकते हैं उसे न ले कर हम इसे यूं ही बिताते हैं। ये इतने दीपक जला कर हम क्यों बैठे हैं? आज कार्तिक अमावस्या की यह इच्छा नहीं है कि हम उसे दीपों की माला पहिना कर सजावें 'लजावें', पकवानखा कर उसे भोग चढ़ावें 'चिढ़ावें'। इस अमावस्या के वे दिन तो कब के बीत चुके जब कि यह उस भारतवर्ष में आया करती थी जो कि धन धान्य से पूर्ण था, सुखी था, स्वस्थ था, अपने नियत कर्म में मस्त था, कुछ दुनिया की चिन्ता न थी, देश के तपस्वी ब्राह्मण और वीर क्षत्रिय इस की रक्षा में तत्पर थे। पर अब तो अमावस उन गुलामों की बड़ी भारी बस्ती में प्रति वर्ष आती है, जो कि दासता में इतने फंस चुके हैं कि इसी में जैसे तैसे जीते रहना चाहते हैं और ऐसे जिन्दा रहने के लिये अपने पर सब अत्याचार करने में नहीं हिचकते। हम ऐसे पालतू दास बन चुके हैं। अपना धन, बल, गौरव, ज्ञान, सब गंवा चुके हैं। ओः! तो क्या हम उसी तरह दिवाली मनाते जा सकते हैं जैसे कि हमारे वीर और विजयी पुरुषाओं ने मनानी शुरू की थी तो निर्जीव नकल करते जाने से क्या लाभ?

मेरे भाई कहते हैं "क्या हमें अपने भव्य अतीत की स्मृति में दिवाली कर के खुशी न मनानी चाहिये? क्या हमें गौरव पूर्ण अतीत की स्मृति ऊंचा नहीं उठाती" पर हम देखें कि हमें भूत की ही स्मृति नहीं करनी चाहिये किन्तु साथ ही भविष्य पर भी दृष्टि डालनी चाहिये। बल्कि यदि इन दोनों में से हमें कभी एक का ही चुनाव करना

* गुरुकुल में दिवाली के दिवस सभा में पढ़ा गया।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पड़े तो हमें गये भूत को भूल कर अनागत भविष्य को ही दृष्टि में रख कर चलना चाहिये। पर मेरा कथन तो इतना है कि हमें वर्तमान में भूत की स्मृति इस प्रकार से करनी चाहिये, जिस से कि वह स्मृति हमें भविष्य में बढ़ा सके-उन्नत कर सके। आज कल की कार्तिक अमावस्याओं में यदि हम अपने अतीत के दीपकों को अपने मन में ही स्मृति रूप में रख कर जलायें अर्थात् उज्वल अतीत द्वारा पहले अपने वर्तमान के बुझे हुए हृदयों को दीपित करने का यत्न करें और इस आन्तर कार्य के लिये यह आवश्यक संयम रखें कि जब तक हृदय दीपित न हो जायं तब तक बाहर के निर्जीव दिये जलाने से बाज रहें तो इस प्रकार मनाया गया पर्व भविष्य के उस दिन को जल्दी ले आवेगा जब कि एक दिन हमारे आर्थिक तथा राजनीतिक मुक्ति पा जाने के कारण हमारे हृदय स्वभावतः इतने दीपित हो उठेंगे कि हमें बाहिरी दीपावली मनाने को विवश करेंगे। वह सजीव दीपावली होगी। आज की दीपावली हमारे हृदय से निकली हुई नहीं है, यदि हम जान बूझ कर अपनी वर्तमान अवस्था को भुला न दें। इस लिये यह झूठी दिवाली मनाते जाना हमारी सच्ची दिवाली के आने में देर करने का कारण बन रहा है।

२. लक्ष्मी पूजा की विधि

तो यह सच्ची दिवाली किस तरह से आवेगी? दिल से प्रेरित हो कर स्वभावतः निकलेगी? यह होगा लक्ष्मी पूजन से। पर लक्ष्मी पूजन दीवारों पर निरर्थक लकारें बनाने से, विदेशी सामान खरीदने से या जुआ खेलने से न होगा। आज हमारे कुल में कुछ लोगों ने ६ घण्टे तक दो चर्खे चला कर लक्ष्मी पूजा की है। इसी तरह खादी खरीद कर, अन्य स्वदेशी कौशल के सामान खरीद कर, देश की सम्पत्ति बढ़ाने वाले व्रत स्वीकार करके भी लक्ष्मी पूजा की जा सकती है, एवं कृषि तथा पशु पालन की दिशा में इस दिन कोई उपयोगी कार्य करना चाहिये। आज के दिन का आमोद प्रमोद भी इसी दिशा में होना चाहिये पर इस पर्व के मनाने की देश व्यापी विधि सूत्रचक्र या खादी से संबन्ध रखने वाली ही हो सकती है। क्योंकि इसी व्यवसाय के नाश से भारत की $\frac{3}{4}$ जनता में दारिद्र्य का सूत्रपात हुआ था तथा आज इसी के पुनरुज्जीवन द्वारा एक ओर जहां भारत के गरीबों को लक्ष्मी का संदेश मिलेगा, वहां दूसरी ओर भारत से बाहर जाने वाली लक्ष्मी शक्ति का प्रवाह रुकेगा और हमारे राजनीतिक सम्बन्ध को सुधार देगा। इस लिये लक्ष्मी पूजा की सामग्री आजकल चर्खा है-सूत्र चक्र है। यह चक्र जिस दिन भारत में फिर घर घर चलने लगेगा तो लक्ष्मी देवी आराद्ध होगयी-सिद्ध हो गयी-जानो। भारत की राजनीतिक पराधीनता तो बाह्य तौर पर इतना होने से भी पहिले दूर हो जाना संभव है, किन्तु हमारी आन्तरिक पूरी स्वाधीनता तभी होगी जब कि यह चर्खा अपने पूरे अर्थों में भारत में स्थिर हो जायगा—दूसरे शब्दों में कहें तो जब कि वैदिक सभ्यता-वह सादगी तथा उच्च जीवन की सभ्यता-जिस में ग्राम का मुख्य स्थान है-भारत में बद्धमूल हो जायगी। चर्खा उस सभ्यता पर हमें पहुंचाने वाली मुख्य वस्तु है अतः इसे ही प्रतीक लेकर हमें चलना है।

आप कहेंगे ६ घंटे में काते ८, १० तोले सूत से क्या बनेगा? इस प्रकार का विचार बहुत से भद्र पुरुषों के मन में आया करता है। कई भाईयों ने सूत कातना शुरू कर के इसे छोड़ दिया, जब कि

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

देखा कि इस से इतनी अल्पमात्रा में उत्पत्ति होती है। पर इस में दीर्घदृष्टि का अभाव स्पष्ट दीखता है। जिन की दृष्टि विस्तृत व्यापक राष्ट्र को देख सकती है उन्हें ऐसा भ्रम नहीं हो सकता। नहीं तो यह कहना कि 'इतने से मेरे कातने से क्या होगा ? इससे दारिद्रय कैसे हटेगा ?' ऐसा ही है जैसे कि आज जब आप सहभोज खाने जायंगे तब मिठाई का एक कण मुख में डाल कर कोई ठहर जाय और सोचने लगे कि 'इस से तो भूख नहीं मिटी और कहते हैं कि अन्न खाने से भूख मिट जाती है' इस लिये वह और खाना छोड़ कर उठ खड़ा हो। भूख तो पेट भर खाने से मिटेगी, पर भोजन का एक एक कण भूख मिटाने में अवश्य सहायक होगा, इसी तरह देश की भूख तो तब मिटेगी, जब चर्खा इतना चल पड़ेगा कि उन की बेकारी न रहेगी पर हमारा काता एक इंच सूत उसे मिटाने में अवश्य सहायक होगा। यदि सचमुच यही विह्वलता है कि इतने जरा से सूत से क्या होगा तो स्वयं कातते, दूसरों को कातने की प्रेरणा क्यों नहीं करते ? थोड़ा थोड़ा देकर भूखे भारत को तरसाते क्यों हो ? जरा सा खाने से तो भूख और चमकती है।

सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात्।

यह वर्णन यदि किसी अलौकिक यज्ञ पुरुष का नहीं है, तो लोक में सहस्रों हाथ पैर वाला यज्ञ-पुरुष राष्ट्र पुरुष ही हो सकता है। ६० करोड़ भुजाओं वाला भारत राष्ट्र यदि चाहे तो क्या नहीं कर सकता यदि भारत के दो करोड़ हाथ भी हिल पड़ें-उन्हें चर्खा मिल जाय-तो भी भारत अपने को दो वर्ष में तृप्त करके इतनी शक्ति वाला हो जाय कि वह अपने बन्धन काट कर तो अवश्य खड़ा हो जाय। पर अपने ही काम के लिये अपने हाथ नहीं हिलते। हम थोड़ी थोड़ी अव्यवस्थित चेष्टायें करके अपने राष्ट्रात्मा को तरसा रहे हैं। यदि हम अपनी तृप्ति के लिये ही व्यवस्थित चेष्टा करें तो हमारा राष्ट्र तृप्त होकर अपनी होश में खड़ा होजाय और तब परजीवी कीड़े (Parasite) की तरह हमारी कमजोरी पर आश्रित साम्राज्य भी इस तरह खड़ा न रह सके।

फिर आप कहेंगे कि चर्खा कातने को उन्हें कहो जिन्हें कि इस तरह के सहायक पेशे की जरूरत है— हमें कातने को क्यों कहते हो। पर नहीं, आप पढ़े लिखे लोगों का कातना जरूरी है। आप के बिना काते उन का कातना शुरू करना कठिन है। उन को कतवाने के लिये आप को कातना उतना ही जरूरी है जितना कि अन्न को पेट में पहुंचाने के लिये उस को मुख में डालना जरूरी है। मुख ब्राह्मण है। जब तक ब्राह्मण रास्ता न दिखाएंगे तब तक अन्य वर्ण उधर नहीं जासकते। ग्रामीण लोग हम पढ़े लिखे लोगों के ही आचरणों को ग्रहण करते हैं। यदि आप को अपनी आमदनी के लिये कातने की जरूरत नहीं है तो आप निःस्वार्थ होकर यज्ञार्थ (राष्ट्र के लिये या गरीबों के लिये) कातिये, ठीक उसी तरह जैसे कि मुख भोजन को अपने लिये नहीं ग्रहण करता है, किन्तु पेट तक पहुँचाने के लिए ग्रहण करता है। यही ब्राह्मणों का काम है। सच्चे ब्राह्मणों के द्वारा ही चर्खा उन तक पहुंच सकेगा। इसी दृष्टि से (अत एव समझ बूझ कर श्रद्धा के साथ) यदि हम गुरुकुलवासी आध घंटा रोज ही यथार्थ सूत कातें तो जो इस का प्रभाव होगा उस की हम अभी कल्पना तक नहीं कर सकते। पर यह प्रभाव तभी है जब यह श्रद्धा से किया जाय। सूत कातना यज्ञ रूप तभी बनेगा जब कि हम इसे सचमुच इतने बड़े भारी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

परोपकार का कारण समझ कर कातेंगे। नहीं तो केवल थोड़े से सूत की उत्पत्ति ही इस का फल होगा। पर यह फल भी थोड़ा नहीं है, यह भी मिल कर बहुत बड़ी वस्तु हो जायगी।

४. जागरण

कहते हैं कि इस अमावस्या को रात भर लगातार जागते रहने से लक्ष्मी दर्शन देती है। इस का मतलब मैं यह लेता हूं, भारत के इस अन्धकार काल में लगातार जागते हुए यदि हम खादी प्रचार आदि लक्ष्मी की खोज में लगे रहेंगे तभी हमें लक्ष्मी मिलेगी। पर हम जागने में बहुत कच्चे हैं, थोड़ी देर खोज में जागते हैं, पर फिर ऊंघने लगते हैं और धीरे धीरे सो जाते हैं। गुरुकुल में तीन साल हुए लगभग २०, २५ व्यक्तियों ने चर्खा-संघ की सभासदी स्वीकार कर प्रतिमास एक हजार गज सूत कातने का निश्चय किया था—एवं लक्ष्मी की खोज करने वालों में भर्ती हुए थे। किन्तु देर तक जागते न रहे, उन में से शायद एक आध ही स्थिर रहा हो। बाकी सब सो गये। मैं आज लक्ष्मी पूजनोत्सव के दिन फिर आप को नम्रता पूर्वक जगाना चाहता हूं और यह संदेश सुनाना चाहता हूं कि लक्ष्मी जागृत रहने से ही मिलती है इस लिये जब तक यह भारत पर छायी अंधियारी रात न गुजर जाय तब तक सावधानी से जागृत रहिये। क्या आप यह सुनेंगे ?

५. लक्ष्मी और जुआ

यह बड़ा आश्चर्य है कि भारत वासी आज के दिन लक्ष्मी पूजा के लिये जुआ खेलते हैं। केवल आज के दिन नहीं खेलते किन्तु आज से प्रारम्भ कर सालभर जुए द्वारा ही लक्ष्मी (?) की आराधना करते हैं क्यों कि हम यह चेष्टा करते रहते हैं कि किसी तरह बिना श्रम किये हमें धन मिल जाय और यही जुआ (द्यूत) है। बिना अपने श्रम द्वारा अर्जन किये धन पा लेने की संभावना में अनिश्चित व आलस्य मय जीवन बिताना ही निरन्तर द्यूत-क्रीड़ा है। क्या हमारा जीवन ऐसा ही नहीं है? हम में से 'धन कमाने वालों' में से वैद्य वकील व्यापारी आदियों में से-कितने हैं जो कि ईमानदारी से कमाते हैं, जो वास्तव में किसी हितकारी वस्तु की अपने श्रम से उत्पत्ति कर के कमाते हैं ? क्या हम प्रायः दूसरे के मुख के कौर को छीन लेना ही धन कमाना नहीं समझते ? ऐसी कमाई की लक्ष्मी लक्ष्मी नहीं हैं, मैं इसे 'लक्ष्मी असुरी' कहता हूँ। यह लक्ष्मी देवी नहीं है। द्यूत के साथ जिस धोखे की लक्ष्मी का संबन्ध है वह यह लक्ष्मी असुरी है। लक्ष्मी देवी तो इस से बिलकुल विपरीत वस्तु है। लक्ष्मी देवी तो उद्योग मय जीवन में बसती है। लक्ष्मी देवी वहां आविर्भूत होती है जहां मनुष्योन्नति के लिये वास्तविक उपयोगी वस्तु की श्रम से उत्पत्ति की जाती है (दूसरे का हिस्सा नहीं छीना जाता) और यह उत्पत्ति भी ऐसे साधन से की जाती है जिस से कि सब के साथ न्याय होता है। इसी लिये मैंने कहा है कि आजकल चर्खा लक्ष्मी देवी की प्रतीक है। बहुत से ऐसे लोग जिन्हें चर्खे से लक्ष्मी की प्राप्ति नहीं दीखती, उन के यह सादी सी बात न समझ सकने का कारण मैंने प्रायः पाया है कि उन कि आंखें लक्ष्मी असुरी से इतनी चौंधियायी रहती हैं कि वे लक्ष्मी देवी को पहचान नहीं सकते। लक्ष्मी असुरी के कृत्रिम परिवार को हम इतना अपना चुके होते हैं कि अपनी आत्मीया लक्ष्मी देवी को सामने देख कर भी हमें उस से प्रेम नहीं उत्पन्न होता। इसलिये उद्योग मय जीवन छोड़ कर दूसरे के हिस्से को छीन लेना यद्यपि आसान है और छीन लेने की आशा में आलस्य मय जीवन

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बिताना और भी आसान है किन्तु धोखा न खाना चाहिये कि उससे हमारे पास लक्ष्मी असुरी तो बेशक झट से आ जायगी, पर लक्ष्मी देवी कभी नहीं। शायद इसी लिये भारत वासी द्यूत द्वारा आसान लक्ष्मी पूजा (?) कर के चाहते तो हैं सुखी होना किन्तु दिनों दिन आर्थिक कष्ट में पड़ते जाते हैं। उल्टे रस्ते चलने का यह फल क्यों न हो।

किन्तु यह नहीं समझ आता कि भारत देश में लक्ष्मी पूजा का द्यूत के साथ संबन्ध कब से जुड़ गया। प्राचीन इतिहास की किस अशुभ घड़ी में यह उल्टा संबन्ध जुड़ा। भारत की (बल्कि संसार की) सब से पुरानी धर्म पुस्तक ऋग्वेद में स्पष्ट आदेश है

अक्षैर्मा दीव्यः, कृषिमित्कृषस्व
वित्ते रमस्व बहु मन्यमानः । ऋ. १०-३४-१३

"जुआ मत खेल, खेती कर। इस प्रकार लब्ध धन को बहुत मानता हुआ इसी में आनन्दित रह"। कितने स्पष्ट शब्द हैं।

यह तो बतलाने की जरूरत नहीं कि खादी की उत्पत्ति खेती (कृषि) का ही एक भाग है।

(६) सहभोज

इस दिन हमें सहभोज अवश्य करना चाहिये पर राष्ट्रीय दृष्टि से सहभोज। सहभोज का अर्थ है साथ (मिल कर) खाना। इस दिन हम अखिल राष्ट्र के साथ भोजन करें। जब हमें विदित है कि हमारे कम से कम १० करोड़ राष्ट्र भाई ऐसे दारिद्र्यग्रस्त हैं, जो कि पेट भर खाना क्या होता है इसे नहीं जानते, तो उन सबके साथ खाने के लिये हमारा भोजन आज क्या होना चाहिये यह आप ही सोच लें। क्या उनके साथ हमें एक भी दिन न खाना चाहिये। इस दिन यदि सब छोटे बड़े कुल वासी मिल कर इसी तरह बैठें और एक मोटी रोटी पर नमक की डली या कुछ शाक रख कर खायें तो यह वास्तविक सहभोज होगा। अभी तक तो हम असहभोज करते हैं-जो भोजन अन्य सब को कभी नसीब नहीं है उसे बनवाकर खाते हैं, उन सब से जुदा भोजन करते हैं। साल भर में कम से कम एक दिन तो ऐसे राष्ट्रीय सहभोज को करना ही चाहिये। जन्मोत्सव वार्षिकोत्सव आदि समयों पर आज जैसे भोजनों के लिये अवकाश हो सकता है पर आज जैसे राष्ट्रीय त्योहार के भोजन की विशेषता तो उपयुक्त प्रकार की ही होनी चाहिये।

(७) पर्व मनाने का क्रम

इस प्रकार विचार करते हुये इस पर्व के दो तीन दिनों को हमें कैसे मनाना चाहिये इस के लिये निम्नलिखित निर्देश किये जा सकते हैं। अनुभवी कार्य कर्त्ता लोग स्वयं इन्हें और अधिक ठीक ठाक कर लेने की कृपा करेंगे।

१. सब को चाहिये कि वे खूब सफाई और स्वच्छता करें। आस पास की नालियों को, घरों को, घर की सब वस्तुओं को साफ सुन्दर स्वच्छ बना लें।

२. धनी लोगों को चाहिये कि वे सुन्दर से सुन्दर बहुमूल्य खादी खरीदें तथा अन्य स्वदेशी कला की उत्तम वस्तुएँ खरीद कर लक्ष्मी के विस्तार में लक्ष्मी का सदुपयोग करें।

आज के दिन कुछ न कुछ खरीदने में प्रत्येक मनुष्य माहात्म्य समझे। विदेशी खिलौने, रंगीन कागज, आतिशबाजी का सामान आदि विदेशी वस्तुओं तथा बाजारी हानिकारक मिठाइयां खरीदने का जो घोर कृत्य इस पर्व पर किया जाता है वह सर्वथा बन्द हो।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

३. माताओं को चाहिये कि वे आज से नई रूई को कातने के लिये चर्खे चलाने शुरू करें। अब तक नई कपास आ जाती है उसे ओट धुन कर आज सुन्दर चर्खे से कुछ न कुछ जरूर कातना चाहिये और फिर जाड़ों भर कातने का काम जारी रखना चाहिये।

४. बालक बालिकाओं को चाहिये कि वे लक्ष्मी वर्धक कोई मनोरंजन करें जैसा कातने का सान्मुख्य (Match), मिल कर वृक्षों को सींचना आदि। वे रामायण की कथा सुनें तथा एतद्विषयक व्याख्यान सुनें।

५. सायंकाल भूमि, कृषियंत्र, पशु, चर्खा आदि की पूजा होनी चाहिये। कोई ऐसी विधि की जाय जिससे कि मन में इनके विषय में पूजा भाव उत्पन्न हो। इन के स्वास्थ्य वृद्धि के लिये प्रार्थना हो।

आतिशबाजी नहीं छोड़नी चाहिये। दीपक नहीं जलाने चाहिएँ। कुछ बिना जले दीपकों को पंक्ति में रख देना पर्य्याप्त है। इन के पास अग्नि जला कर, हो सके तो हवन कर के, इस के प्रकाश में बुझे हुवे दीपकों को देखना चाहिये तथा लक्ष्मी-वर्धक कोई व्रत ग्रहण करने चाहियें, जैसे, विदेशी चीज़ नहीं लूंगा, खादी ही पहिनूंगा, नियम से सूत कातूंगा, गौ का ही दूध पीऊँगा इत्यादि।

फिर गांव के सब लोग या मोहल्ले के सब लोग मिल कर सादे से सादे भोजन करें।

(८) रामायण को दोहराना

यदि हम इस तरह से इस पर्व को कुछ काल मनावेंगे तो हम उस दिन दीपावली जलाने की घड़ी को भी फिर शीघ्र ले आयेंगे। यदि दीपावली का रामायण से कुछ सम्बन्ध है तो अपनी दीपावली को पुनरुज्जीवित करने के लिये हमें फिर रामायण को दोहराना होगा, समुद्र पार गई सीता को जब राम पुनः अयोध्या लाये थे और रामराज्य प्रारंभ हुआ था तब हर्ष के मारे अयोध्या ने दीपावली रची थी। हमने सुन रखा है कि राम विष्णु थे और सीता लक्ष्मी थी। अब जब विष्णु, अर्थात् हमारा संगठन रूप यज्ञ (यज्ञो वै विष्णुः) जब लक्ष्मी देवी को समुद्र पार से लौटा लाने में सफल होगा और राम राज्य (भारत का स्वराज्य) स्थापित होगा तभी हम अपने हृदयों में भरे आनन्दमय प्रकाश को जो स्वभावतः बाहर दीपावली जला कर निकालेंगे वही दीपावली होगा। उस दिन से फिर यह अमावस दीपावली से दीपित हो जायगी। तब तक तो मैं इस दिन को 'दीपावली' न पुकार कर लक्ष्मी पूजा का दिन या कार्तिकी अमावस कहना ही प्रिय अनुभव करता हूँ।

हे जगदन्तरात्मन्! इस अमावस को उजेली कर। हे भारत! इस अमावस को उजेली कर। हे प्रत्येक भारत वासी की आत्मा! इस अमावस को उजेली कर॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

गोजाति के ह्रास के कारण *

(ले०— श्री पं० जगदीशचन्द्र शास्त्री)

प्रत्येक देश में पालतू पशु देशीय सम्पत्ति का एक बड़ा अंश समझा जाता है परन्तु हमारा देश और देशों की अपेक्षा पशुधन में भी दरिद्र है। एक तो हमारे देश में सब के पास कम पशु हैं, दूसरे दिन-दिन गोवंश केवल ह्रास ही होता दृष्टिगोचर हो रहा है। गोब्राह्मण-प्रतिपालक हिन्दुओं की पुण्य भूमि में गोवध का इतना व्यापक और भीषण रूप देख कर कलेजा कांप उठता है। नीचे एक तालिका दी जाती है कि और देशों की अपेक्षा हमारे देश में पशुओं की कितनी कमी है:—

सन् १९१७ की पशु गणना

देश	घोड़े	गाय बैल	भेड़	बकरी	सुअर	प्रतिमनुष्य पशु
	लाख	लाख	लाख	लाख	लाख	
इङ्गलैण्ड	१८¾	१२३	२७७	——	३०	१.०
आस्ट्रेलिया	२४½	९९	७२८½	——	८¾	१७.०
कनाडा	३४	८०	२३½	——	३६¼	२.३
फ्रांस	२४	१२४	१०६	——	४२	१.३
जर्मनी	३३½	२१४	६१½	४३	१७२	.९
जापान	१५¾	१४	——	१	३	.२४
अमेरिका	२१२	६४५	४७६	——	६७५	२.४
भारत १९१२	१७	१५००	२३०	३३६	——	.७

इस तुलनात्मक तालिका से भिन्न भिन्न देशों के पशुओं की तुलना करते हुए यह भूल नहीं जाना चाहिए कि जहां अन्यान्य देशों में कृषिकार्य मशीनों से होता है वहां हिन्दुस्तान में केवल बैलों से। फिर भी यहां पशु बिलकुल थोड़े हैं। सन् १९१३ में यहां पर कुल ४ करोड़ गाय भैंसें थी। ये साल भर दूध न देकर आधे साल दूध देती हैं अतः ३१

* लेखक की अप्रकाशित पुस्तक 'गोरक्षा' से।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

करोड भारतीयों का जीवन केवल दो करोड़ गाय भैंसों पर निर्भर है। औसत निकालने से १५ मनुष्य के हिस्से एक गाय या भैंस पड़ती है। कैसी शोचनीय अवस्था है। नीचे एक और तालिका दी जाती है जिस से पता लगेगा कि दिन दिन भारतीय गोधन का किस तेजी से ह्रास हो रहा है।

भारत की पशु गणना १९१६ से २१ तक लाखों में

वर्ष	बैल और सांढ़	गाय	भैंसे	भैंस	बछड़े
१९१६-१७	४९४	३७५$\frac{1}{3}$	५५३$\frac{3}{8}$	१३६$\frac{3}{10}$	४३१$\frac{1}{3}$
१९१७-१८	४९३$\frac{1}{3}$	३७४$\frac{1}{3}$	५५$\frac{5}{8}$	१३६$\frac{1}{3}$	४३०$\frac{1}{3}$
१९१८-१९	४९३$\frac{1}{3}$	३७४$\frac{1}{8}$	५६$\frac{1}{2}$	१३६$\frac{1}{3}$	४२०$\frac{3}{4}$
१९१९-२०	४९२$\frac{1}{4}$	३७१$\frac{1}{2}$	५५$\frac{1}{3}$	१३३$\frac{1}{4}$	४०८$\frac{3}{8}$
१९२०-२१	४८९$\frac{1}{4}$	३७०$\frac{5}{8}$	५४$\frac{1}{3}$	१३३$\frac{1}{8}$	४०३$\frac{1}{3}$

१९१६ से २१ तक के जो अङ्क दिए गये हैं, उन से स्पष्ट है कि प्रतिवर्ष सामान्यतः पशुओं का और विशेषतः गौओं का ह्रास होता जा रहा है। आगरा के परलोकवासी रायबहादुर बैजनाथ जी रिटायर्ड जज ने भी इस ह्रास के कारणों पर विचार किया है। आप का कहना है कि पहले पशु नहीं कटते थे इसलिए स्वाभाविक मृत्यु के सिवाय कोई और कारण संख्या में कमी का न था। सन् १८७१ में जो हिसाब गवर्नरजेनरल लार्ड मेयो के सामने हुआ उसमें दो आदमी पीछे एक पशु दिखलाया गया था। संयुक्त प्रान्त में गवर्मेन्ट ने १९०९ में एक 'केटल कानफ्रेन्स' बुलायी थी, उसमें एक नक्शा पेश किया गया था, जिस के अनुसार यू.पी. में १८९९ में कुल ६३,१०,१७१ गौऐं थीं पर १९०९ में कुल ६२,८२,६४८ रह गईं। इस गणना में १९०९ में गौओं में ६,६५,७२७ की और बैलों में ७,७५,५०९ की कमी है। इनके प्रधान कारण अकाल और चारे की कमी थी।

इसके विरुद्ध पंजाब में १९०४ और १९०९ में जो गणना हुई उस में कहीं वृद्धि और कहीं क्षय हुआ। पर पंजाब में उनकी संख्या बढ़ गई। १९०४ में वहां ३३,०३,९६८ गौएँ थीं पर १९०९ में ३३,८३, ६४५ हो गईं। इस का कारण यह है कि संयुक्त प्रान्त में पञ्जाब की भांति सूखे मांस की तिजारत नहीं है। वहां के डाइरेक्टर साहब सीगे जरायत लिखते हैं,—"चारे की कमी और खालों की कीमत बढ़ना बहुत से जानवरों के, जो न मारे जाते, मारे जाने का कारण है। सिवाय नकारा जानवरों के बहुत सा हिस्सा बंजारों के हाथ बिकता है। जब चारा कम होता है किसानों के हाथों से दिल्ली और उस के पास के बाज़ारों में चला जाता है। बछिया, जो परवरिश पाकर अच्छी गाय हो जाती, कसाइयों के हाथ चली जाती हैं। अगर घर पर जानवरों के पालने में बेहतरी होगी, तो गौओं की कमी की शिकायत नहीं रहेगी।"*

इस के अतिरिक्त चमड़े के व्यवसाय की अधिकता ने भी गौवंश के ह्रास में सहायता दी है। बहुधा चमड़े के व्यवसायी देशी कसाइयों और चमारों से ठेका ले लेते हैं कि इतने रुपये में तुम्हें इतना चमड़ा देना होगा। लोभ के वश वे घास में या अन्य किसी चीज में विष मिला कर खिला देते

* Cattle and Dairying.

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हैं, कभी तेज छुरी की नोक में विष लगा कर गौओं के शरीर में घुसा देते हैं। संक्रामक रोग वाले मृत पशुओं के शरीर का कुछ भाग दूसरे गांव में रख देते हैं, जिससे पशु रोग फैलाने लग जाता है और उनकी बन आती है।

ऊपर की प्रक्रियाओं के श्रवण मात्र से ही रोमांच हो जाता है। लेकिन कसाइयों के द्वारा पशुओं का भीषण वध उत्तरोत्तर बढ़ता ही जाता है। गर्भिणी गौओं और बछियों पर भी उन की दया-दृष्टि नहीं होती। दूध के व्यवसायी बछड़ों को पालना व्यवसाय की दृष्टि से हानिकारक समझते हैं और कसाई के हाथ उसे सौंप देते हैं। इसके अतिरिक्त दूध के लिये भी पशुओं पर भीषण अत्याचार किये जाते हैं। लोभवश हम उनका दूध निकाल लेते हैं और बछड़ों को थोड़ा सा आहार मिलता है और वे बिचारे भूखों ही मर जाते हैं। धोका देकर दूध निकालने की प्रथा भी कम भयंकर नहीं है। इस से गौओं की गर्भ धारण करने की शक्ति नष्ट हो जाती है और निदान उसे कसाइयों के हाथ जाना पड़ता है।

हमने बहुत विचार के बाद गोवध के कुछ मूलकारण निर्धारित किए हैं। जो निम्न हैं:—

(१) अबाध गोहत्या
(२) मांस भोजियों के लिए गोवध
(३) चमड़ा, हड्डी, चर्बी और सूखे मांस का व्यापार
(४) गौओं का व्यापार
(५) गो जाति पर अनेक अमानुषिक अत्याचार
(६) डेयरियों और चर्मालयों का अभाव
(७) गोचर भूमि और गोखाद्य की कमी
(८) गोपालन और गवायुर्वेद का अज्ञान और गोसाहित्य की न्यूनता।

जहाँ तक हमारी स्थूल दृष्टि पहुँची है, गोवंश के ह्रास के ये मूल कारण ऐसे हैं, जिनका प्रतिकार प्रत्येक हिन्दू को शीघ्रातिशीघ्र करना चाहिए। इन कारणों के प्रत्येक अंग पर विचार तो हम आगे के परिच्छेदों में विशद रूप से करेंगे। परन्तु प्रतिवर्ष होने वाले गोवध के अङ्क श्री व्रजमोहनलाल वर्मा की 'गोरक्षा' नामक पुस्तिका से मिले हैं, वे यहां उद्धृत करते हैं—

(१) केन्टोन्मेन्ट एरिया में	२ लाख
(२) फौजी रकबोंमें ठेकेदारोंकी मार्फत	३ लाख
(३) अन्यरीतिसे यानी कस्साब खानोंके द्वारा	७ लाख
(४) सूखे मांसके व्यापारकेलिए	१० लाख
(५) म्युनिसिपेलिटियोंकी हदमें	२५ लाख
(६) यूनियनबोर्डकी हदमें	१ लाख २५ हजार
(७) डिस्ट्रिक्टबोर्ड और नोटी-फाइड एरिया में	१" ६ "
(८) देहातोंमें सूखे मांस तथा चमड़े के लिये	५ लाख
कुल	६६ लाख ३१ हजार

इस का प्रमाण इस बात से मिलता है कि १६१२ में चमड़े के १,१७,८०,०५० थान विदेश भेजे गए, अर्थात् हम लगभग ५० करोड़ रुपए इस घातक व्यापार में नष्ट कर रहे हैं। इसके अतिरिक्त सन् १६१२ में ६,४४,५८८ उम्दा से उम्दा गौएँ और बैल (२८ करोड़ रुपयों के) विदेश भेजे गये। इसके बाद इस व्यापार की किस तेजी से वृद्धि हो रही है उसका वर्णन हम आगे चल कर करेंगे। सर जान उड्रफ़ने इस ह्रास को रोकने के तीन उपाय बतलाये हैं।

पहला उपाय है कि गोरों के लिये सरकार विदेशों से मांस मंगवावे। साथ ही भारतीय गाय और बैलोंका विदेशों में भेजना

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बन्द कर दे। दूसरा उपाय यह है कि शहरों में गौओं का रहना म्यूनिसिपैलिटियों के द्वारा बन्द कर दिया जाय। क्योंकि वहाँ स्थान की कमी से पशु बड़े तंग रहते हैं। फूका करने के लिये म्यूनिसिपेलिटी के कम वेतन पाने वाले कर्मचारियों को जो कानूनी नियम तोड़ने पर भी आनाकानी करते हैं, कठिन दण्ड की व्यवस्था होनी चाहिये। तीसरा दूध की परीक्षा और सर्टीफिकेट के लिये कानून बनाया जाय।

वास्तव में सर जान उड्रफ जैसे अनुभवी व्यक्ति के उपाय यदि कार्य रूप में आ जायें, तो यह समस्या यों ही सुलझ सकती है। क्या हमारे एम. एल. ए. इधर ध्यान देंगे ?

हा ! पञ्जाब केशरी !

(कुमारी पुरुषार्थवती आर्य्य)

(१)

तेज-राशि, शोभा-द्युति-धाम,
भारत-नभ-नक्षत्र-ललाम,
जाति-जन-जीवन, सुखद-निलाम,
देश-दुख-दलन-निरत-अभिराम,
क्लेश-पीड़ित-भारत-सुख-साज,
'लाज' दुखिया-जननी की लाज !

(२)

देश, निज तज कलत्र, धन, धाम
कभी भी तजा न जिनका ध्यान,
छोड़ उन बन्धु जनों को आज
कहां पर जाके रहे विराज ?

(३)

धर्मवीर, रणधीर, महान
जाति की शान, हिन्द के प्रान,
तुम बिन सूना सकल समाज,
'लाज' खोये-भारत की लाज।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

रजोगुण व तमोगुण

(लेखक— पं० हरिशरण जी सिद्धान्तालङ्कार)

१. तैरनेका साम्मुख्य

क नदीके किनारे बहुत सारा जनसमूह एकत्र हुआ है। वहाँ सिंह-तैरी का साम्मुख्य होने वाला है। थोड़ी देरमें साम्मुख्य प्रारम्भ होता है। देखते देखते कुछ तैराक परले पार लग जाते हैं। परन्तु कई नदीके प्रबल वेगसे आहत हो बह जाते हैं। इस समय सारे जनसमूहको तीन भागोंमें बाँटा जा सकता है:—

१. सबसे प्रथम वे, जो कि केवल दर्शकके रूप में वहाँ विद्यमान हैं, जो साम्मुख्यमें भाग न लेकर केवल एक Passive part कर रहे हैं। इन्हें हम निष्क्रियावस्थामें कह सकते हैं। ये नदीके इस पार ही खड़े हैं, इन्होंने नदीमें जानेका कष्ट ही नहीं किया।

२. इनसे ठीक विपरीत दूसरी सीमापर वे हैं, जो कि नदीके अन्दर घुसे, उसके वेगको जीत कर पार कर गये, और अब परले पार पहुँच सानन्द विश्राम कर रहे हैं। वर्तमानमें ये भी निष्क्रिय हैं। परन्तु इनकी निष्क्रियता और प्रथम भागस्थ मनुष्योंकी निष्क्रियतामें पर्याप्त भेद है।

३. इन दोनों—इस पार व उस पार स्थित—मनुष्योंके अतिरिक्त एक तीसरे भी मनुष्य हैं, जो कि नदीके अन्दर प्रविष्ट हुए, परन्तु नदीके प्रबल प्रवाहको जीत न सके, और परिणामतः बह गये। इनकी अवस्था दोनों प्रकारके मनुष्योंसे भिन्न है। वे कुछ दुःखका अनुभव कर रहे हैं।

इस पारस्थित मनुष्य भी यही समझते हैं कि वे, जो कि पार नहीं लग सके, बड़े दुःखी हैं। ये उन्हें नाना उपायोंसे निरुत्साहित व शर्मिन्दा भी करते हैं। यह भी कहते हैं कि इससे यही अच्छा था कि तुम हमारी तरह तैरते ही ना। ये अपनी अवस्थाको उनकी अपेक्षा कहीं अच्छी समझते हैं। परन्तु परले पार पहुँचे हुए व्यक्ति उनकी अवस्थाको कुछ भिन्न ही दृष्टिसे देखते हैं। वे समझते हैं कि इन्होंने नदीमें घुसने का साहस किया है, तो आज नहीं कल, कल नहीं परसों, ये अवश्य ही हमारी तरह नदीके वेगको जीत कर इस पार पहुँच विश्रान्तिका अनुभव करेंगे। अस्तु, हम उपरोक्त तीन मनुष्योंके विभागोंको निम्न कोष्ठकके द्वारा स्पष्ट रूपमें देख सकते हैं:—

इसपार	मध्यमें	उसपार
दर्शक	बहते हुए	पार पहुँचे हुए
(आनन्द में)	(कुछ दुःखित)	(आनन्दपूर्वक विश्रान्ति में)

२. हौकी का मैच

एक और उदाहरण लीजिये। बड़ा भारी Tournament होने वाला है। सहस्रोंकी संख्या में दर्शक उपस्थित हैं। शीघ्र ही खेल आरम्भ होता है। दो दल (parties) खेलने लगते हैं, और शतशः व्यक्ति बड़ी उत्कण्ठासे दो भागोंमें विभक्त होकर देखने लगते हैं। दर्शक नानाविध चेष्टाओंसे खिलाड़ियोंको प्रोत्साहित करते हुए अपनी खुशी को प्रकट कर रहे हैं। एक घण्टेके बाद खेल

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

समाप्त होता है। जीता हुआ दल इस समय दर्शकों से भी कहीं बढ़ कर आनन्दित है— उसके आनन्द में एक शान है, Grandure है, सुषमा है, जो कि दर्शकोंके आनन्दमें अनुपलभ्य थी।

इन दोनों आनन्दयुक्त जनसमूहोंके अतिरिक्त एक दुःखी दल भी है जो कि खेलमें कृतकार्य नहीं हुआ। वह इतना दुःखी है कि वहां अधिक देर तक ठहरना भी उचित नहीं समझता, और झट पट वहांसे चला जाता है।

यहां भी जनसमूह तीन विभागोंमें बंटा हुआ है। १. दर्शक निष्क्रिय हैं, २. विजेता कृतकार्य हो चुके हैं, ३. तथा इन दोनोंके मध्यमें पराभूत हैं, इन्हें कृतकार्यता प्राप्त नहीं हुई। ये दुःखी हैं, दर्शक लोग भी इन्हें दुःखीके रूपमें देखते हैं। परन्तु इनको जीतने वाले इनकी अवस्थाको एक भिन्न ही रूपमें देखते हैं— वे समझते हैं कि क्रीड़ाक्षेत्रमें उतरे हुए ये कभी न कभी विजेता भी अवश्य बनेंगे। इन तीनों विभागों को भी निम्न रूपमें स्पष्ट देखा जासकता है:—

१. Visitors (वीक्षक)	२. विजित	३. विजेता
आनन्दित	दुःखी	आनन्दित

३. मनुष्यकी शैशवावस्था

इन दोनों उदाहरणोंसे भी एक अधिक स्थूल उदाहरण लीजिये, प्रत्येक मनुष्य किसी समय अपनी अत्यन्त शैशवावस्थामें था। उस समय वह इधर उधर चलनेका प्रयत्न भी न करता था। परिणामतः वह उस अवस्थामें गिरा पड़ा भी नहीं। परन्तु कुछ महीनोंके बाद उसकी वह अवस्था व्यतीत हो गयी। उसने निष्क्रियावस्थाको छोड़ उठने व चलनेका प्रयत्न प्रारम्भ किया। अपने उस प्रयत्नमें वह सैंकडों वार गिरा, उसे चोटें भी आयीं, दुःख भी हुआ। परन्तु यह अवस्था भी शीघ्र ही व्यतीत होगयी, वह सानन्द इधर उधर भागने लगा, वह चलने फिरनेमें होने वाले कष्टोंका ख्याल कर चलना प्रारम्भ ही न करता, तो वह आज इस आनन्दपूर्वक विक्रमणकी अवस्थाको कभी प्राप्त न कर सकता।

४. छतपर पहुंचना

यहां आप अपनी छतपर पहुंचने के उदाहरण को देखिये। गर्मियोंके दिनोंमें नीचे अधिक गर्मी है। इच्छा होती है कि ऊपर जाकर सोयें। परन्तु एक सुस्त व्यक्ति ऊपर चढ़नेके परिश्रमसे घबरा कर सीढ़ीपर अपना पांव भी नहीं रखता। नीचे ही निष्क्रियावस्थामें खड़ा है। इसके विपरीत एक दूसरा व्यक्ति ऊपर पहुँच चुका है, वह भी वर्तमानमें, नीचे ठहरे हुएके समान ही निष्क्रियावस्थामें है। दोनों आनन्दमें है। परन्तु ऊपरले व निचलेके आनन्दमें आकाश व पातालका भेद है। दोनोंका आनन्द समान नहीं है। इन दोनोंके अतिरिक्त एक तीसरा व्यक्ति बिस्तरा लिये ऊपर चढ़ रहा है। निचला समझता है कि वह-चढ़ता हुआ व्यक्ति बड़े कष्टमें है। वह स्वयं भी अपने को दुःखी अनुभव करता है, मनमें सोचता है कि अरे, नीचे ही सो रहते तो अच्छा था, बिस्तरेके उठानेका कष्ट तो न होता। परन्तु ऊपरला व्यक्ति उसे उत्साहित करता है और उसकी मदद करता है, जिससे कि वह भी उसके समान ऊपर पहुँच जाये।

५. विद्यार्थि-जीवन

अन्तमें एक विद्यार्थि-जीवनको लीजिये। तीन भाई हैं। (१) उनमें सबसे बड़ा विद्यार्थि-जीवनके कष्टोंको झेल कर स्नातक (Graduate) होचुका है। वह घोर तपस्याके बाद आत्मज्ञान को प्राप्त कर दुःखोंसे ऊपर पहुँच गया (२) इसका एक मँझला भाई अभी विद्यार्थि-जीवन ही बिता

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

रहा है— उसे नानाविध कष्ट होते हैं। शिशिर ऋतु में प्रातः काल उठना, तुषारावृत घास पर चलते हुए नित्य कर्मोंसे निवृत्त होना, नानाविध कष्टों व प्रलोभनोंको जीत कर पढ़ाईमें लगे रहना, खाने पीनेकी सुविधा न होना, एवं उसका जीवन 'कुतो विद्यार्थिनः सुखम्' इस उक्तिके अनुसार वस्तुतः ही आरामका न होकर कष्टमय है। इस अवस्थामें वह बीचबीचमें घबरा जाता है। उसके मनमें आता है कि 'अरे, कहां पढ़नेमें लग गये, घर में ही रहते तो अच्छा था।' ऐसे समयमें उसका बड़ा भाई उसे समझाता है, उसे प्रोत्साहित करता है। (३) इनके अतिरिक्त तीसरा छोटा भाई अभी घरपर ही है, वह आनन्दमें मस्त है। यथेष्ट सोता है, खाता है, पीता है, आनन्दसे खेलता है, पढ़ने का झञ्झट नहीं, नियममें जकड़े जानेका कष्ट नहीं, आनन्द ही आनन्द है। पञ्चदशीकार इसकी अवस्थाका वर्णन करते हुए लिखते हैं:—

अतिबालः स्तनं पीत्वा मृदुशय्यागतो हसन्।
रागद्वेषाद्यनुत्पत्तेरानन्दैकस्वभावभाक् ॥ ११।५०।

उसका पढ़ने वाला मँझला भाई उसकी अवस्था को देख ईर्ष्या करता है। मनमें कभी-कभी माता-पिताको भी कोसता होगा कि कहां मुझे आपत्समुद्रमें फेंक दिया।

इतना ही नहीं। घर पर किसी प्रिय बन्धुकी मृत्यु होजाय तो ज्ञानी भी दुःखी नहीं होता, बच्चा भी अज्ञानके कारण खेलता रहता है। यह बीच का व्यक्ति ही, जो न पूर्ण है, नाहीं बिलकुल अज्ञानी, दुःखी होता है। महाभारतकारने ठीक लिखा है।

"ये च मूढतमा लोके ये च बुद्धेः परं गताः।'
त एव सुखमेधन्ते मध्यमः क्लिश्यते जनः ॥ शान्तिपर्व २५।२८।

६. अवस्था-त्रय

वस्तुतः तमोगुणकी अवस्था पूर्ण अज्ञानकी है। "अज्ञानं तमसः फलम्" (मनु.)। सत्वगुणकी अवस्था ज्ञानकी। "सत्वस्य लक्षणं ज्ञानम्" (मनु.)। इन दोनों अवस्थाओंमें स्थित मनुष्य दुःखी नहीं होते। मध्यमावस्था रजोगुणकी है, जिस समय मनुष्य अज्ञानकी अकर्मण्यावस्थाको छोड़ नानाविध कष्टोंको झेलता हुआ ज्ञानकी सात्विक स्थितिकी ओर जा रहा होता है। इस समय उसे नानाविध कष्टोंका अनुभव होता है। "क्लिश्यत्यन्तरितो जनः" (व्यास)। इसीको हम इस रूपमें भी कह सकते हैं कि तमोगुणी सुषुप्तावस्थामें है। सत्वगुणी जागरितावस्थामें। तथा रजोगुणी स्वप्नावस्थामें * जिसमें वह नाना काल्पनिक संयोग वियोगों व लाभालाभोंसे सुखी व दुःखी हो रहा होता है।

७. रजोगुणमें दुःख

उपरोक्त दृष्टिसे वृक्ष सुषुप्त हैं, सामान्य प्राणी स्वप्नावस्थामें हैं, और योगी ज्ञानी प्रबुद्धा-(जागरिता)वस्थामें। वृक्षोंको आप तीक्ष्ण कुठारोंसे काटिये, उन्हें कोई कष्ट नहीं। दूसरी तरफ़, कुमारिल भट्ट जैसे ज्ञानियोंको भी तुषानलमें भस्म होते हुए ज़रा भी कष्ट नहीं। काला-

* स्वप्नावस्थामें जङ्गलमें जाते हुए शेर मिल जाता है, बड़ी घबराहट होती है। किसी समीपस्थ बन्धुकी मृत्यु हो जाती है और दुःख-पर्वत मस्तकपर आ टूटता है। हमारे शत्रुओंको करोड़ों रुपयोंका लाभ हो जाता है, हमें हानि हो जाती है। ये सब मिथ्याज्ञान मनुष्यको उस समय बहुत पीड़ित करते हैं। स्वप्नमें कभी कभी अपनी मृत्यु भी होती हुई दिखाई देती है, और मनुष्य बड़ा घबरा जाता है। परन्तु जागरित होने पर यह सब कष्ट नष्ट हो जाते हैं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

नूस जैसे महात्मा भी स्वयं प्रज्वालित चितापर सानन्द बैठ जाते हैं, उन्हें कष्टका लेश भी नहीं होता। कष्ट तो है मध्यमावस्थामें विद्यमान प्राणियोंको, जो कि अपने प्रियतम पुत्रके प्राण-परित्राणके लिये भी थोड़ा सा अपना मांस देते हुए पीड़ित होते हैं, ज़रासा कष्ट आने पर व्याकुल हो जाते हैं। मृत्युसे बचनेकेलिये, कोई भी पाप नहीं, जिसका वे अवलम्बन न कर सकते हों। इन्हें धन जन सभीके कारण कष्ट है, आराम नहीं-वस्तुतः यह मध्यमावस्था कष्टकी ही है। अभी तक हमने जो उदाहरण देखे, उनसे यह बात स्पष्ट ही है। इसे हम निम्न रूप में प्रकट कर सकते हैं:-

	तम में	रज में	सत्व में
(१)	तैरी का सान्मुख्य इस पार ठहरे हुए	बहते हुए व लहरों से आहत होते हुए	उस पार पहुंचे हुए
(२)	होकी का मैच	दर्शक	विजित	विजेता
(३)	चलने का अभ्यास	अत्यन्त शिशु निष्क्रिय	चलनेके प्रयत्नमें गिरता पड़ता हुआ	अभ्यस्त
(४)	छदिरारोहण	नीचे ही खड़ा हुआ	चढ़ता हुआ	ऊपर पहुँचा हुआ
(५)	तीन भाई	कनिष्ठ अज्ञानी	मध्यम ज्ञानोपार्जन के लिये प्रयत्नशील	ज्ञानी.
(६)	अवस्थात्रय	सुषुप्त (वृक्ष) प्रारम्भ	स्वप्न (सामान्य प्राणी) मध्य	प्रबुद्ध (ज्ञानी) अन्त

एवं मध्यमें स्थित रजोगुणी सभी उदाहरणोंमें दुःखी है।

८. रजोगुणकी श्रेष्ठताका कारण

प्रश्न पैदा होता है कि तमोगुणी दुःखमें फंसे हुए नहीं, रजोगुणी दुःखी हैं। तब क्यों रजोगुण को तमोगुणसे अच्छा समझा जाय। इस प्रश्न का उत्तर उपरोक्त उदाहरणोंके देख चुकनेके बाद सरल ही है।

तमोगुण तथा सत्वगुणके आनन्दमें एक भेद है। तमोगुणमें जहां दुःखका अनुभव नहीं, वहां सुख भी नहीं है। वह एक Negative अवस्था है, ऋणात्मक स्थिति है। इसके विपरीत सत्वगुणावस्था Positive है, धनात्मक है, भावात्मक है। रजोगुणमें मनुष्य ऋणात्मकसे धनात्मक स्थिति की ओर जा रहा होता है। यह अवस्था यद्यपि ऊपरसे देखनेमें दुःखवाली मालूम होती है, परन्तु इसका परिणाम सुख है। इसके विपरीत तमोगुणकी अवस्था है, जो सुखमय मालूम होती है। परन्तु इस आलस्यमय अवस्थाका परिणाम दुःख है। व्यास महर्षि के साथ मिल कर हम कह सकते हैं कि "सुखं दुःखान्तमालस्यं, दाक्ष्यं दुःखं सुखोदयम्"।

९. पुष्प, कच्चा फल तथा परिपक्व फल

(अथवा)

तम रज तथा सत्व

तमोगुणकी अवस्थाको यदि हम एक पुष्प से उपमा दें, तो रजोगुण वह कच्चा फल है जो पकनेकी तय्यारी कर रहा है, तथा सत्वगुण परिपक्व चमकता हुआ फल है। देखनेमें कच्चा फल, फूलकी अपेक्षा कम सुन्दर है, परन्तु फूलकी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अपेक्षा वह कहीं अगली स्थितिमें है, वह शीघ्र ही परिपक्व फलके रूपमें पहुँच बहुत अधिक चमकने लगेगा। एक नारंगीका पेड़, जिस समय पुष्पाच्छादित हो, सुन्दर लगता है। उसके बाद कच्चे फल आजाने पर सौन्दर्यकी कमी हो जाती है। परन्तु कुछ ही समय उपरान्त वे फल परिपक्व हो जाते हैं और उससमय नारंगी रङ्गके फलोंसे रंगे उस वृक्षका दृश्य आसेचनक ही हो जाता है। ठीक यही बात तम, रज तथा सत्वकी है। एवं दुःखमय होते हुए भी, कम सुन्दर होते हुए भी, रजोगुण तमोगुणसे उत्कृष्ट है। और सुन्दर प्रतीत होते हुए भी तमोगुण रजोगुणसे अवर है।

१० मनुष्योंकी विपरीत-वृत्ति

तमोगुण अवर है, रजोगुण उत्कृष्ट। परन्तु यह भी हम देख चुके हैं कि तमोगुण देखनेमें अधिक सुन्दर है। नारियल पथ्य है, बेर अपथ्य। परन्तु सौन्दर्य तो बेरमें ही अधिक है, और परिणामतः एक छोटा लड़का नारियल और बेरमें, बेरको पसन्द करता है। सामान्य मनुष्योंकी भी यही अवस्था है। जब मनुष्य तमोगुणकी अवस्थासे रजोगुणकी ओर जाता है, तब उसे नानाविध कष्ट होते हैं, जो कि तमोगुण की अवस्था में न होते थे। उन कष्टोंसे घबरा कर वह प्रायः फिर तमोगुण की ओर लौटनेका प्रयत्न करता है।

साथ ही, एक और भी बात है कि तमोगुण की अवस्थामें उसे कोई आत्माकी आवाज (Voice of conscience) सुनाई न पड़ती थी, परन्तु परिणामतः मनुष्य उस अवस्थामें कुछ भी करता जाय उसे वह आवाज़ पीड़ित (Prick) न करती थी। परन्तु अब तो जब वह कोई अशुभ कर्म करने लगता है, उसे उस कार्यसे रोकता हुआ अन्दरसे एक शब्द सुनाई पड़ता है। मनुष्य मनका दास होता हुआ उस कार्यको करना चाहता है पर अन्दरकी आवाज़ उसे रोकती है। इस दुविधासे व्याकुल हो, वह तमोगुणकी अवस्थाकी ओर लौटना चाहता है, जिससे कि वह इस दुविधासे मुक्त हो सके। परन्तु यदि मनुष्य सदैव तमोगुण की अवस्थाकी ओर ही लौट जाय तो वह उन्नति कभी न कर सकेगा। उन्नतिकी सम्भावना तो तभी है, जब कि वह इन आभ्यन्तर आवाज़ोंको सुनता हुआ, धीमे धीमे अकार्य कर्मोंको छोड़, कर्तव्य कर्मोंका उपादान करता जाय।

११. मादक द्रव्योंका उपयोग

परन्तु मनुष्य शब्दसे पीड़ित न होनेके लिये मादक (Intoxicating) वस्तुओंका उपयोग करता है, ताकि वे ज्ञानकेन्द्र, जो कि अकार्यको न करनेकी उठी हुई आवाज़को सुननेके साधन हैं, अकार्यकारी (Inactive) हो जायं, उनको वह आवाज़ सुनाई ही न पड़े। टॉलस्टॉय (Tolstoy) अपने एक निबन्धमें लिखता है कि "जिस समय उसे उस कामसे रोकता हुआ अन्दरसे एक शब्द उठता है, उससे न पीड़ित होनेके लिये वह सिगरटें या अन्य किसी मादक पदार्थका आश्रय लेता है और अकार्यको बिना किसी रुकावटके कर देता है। फिर वैसे ही कार्यका समय उपस्थित होता है, फिर अन्दरसे आवाज़ आती है, और वह उसे न सुननेके लिये पुनः उसी अपने प्रिय सहायककी शरण लेता है। यही क्रिया सारे जीवनमें आवृत्त होती रहती है और परिणामतः मनुष्य वहींका वहीं रह जाता है और कुछ उन्नति नहीं कर सकता।"

१२. रेखागणितका विद्यार्थी

उपरोक्त बातको अधिक स्पष्ट रूपमें समझने के लिये हमें एक रेखागणितके विद्यार्थीका

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उदाहरण देखना चाहिये। वह रेखागणितके प्रश्न हल कर रहा है। एक प्रश्न कुछ कठिन आ जाता है उसे वह सोचने लगता है। थोड़ी देर सोचनेपर जब समझ नहीं आता तो वह अपने दिमाग़को अधिक कष्ट न देनेके लिये, पास ही पड़ी हुई Solutions की पुस्तकको उठा लेता है और प्रश्नको हल कर लेता है। पुनः ऐसे प्रश्नके आने पर, वह फिर उसी क्रियाको दुहराता है और इस प्रकार सोचनेके कष्टसे बचा रहता है।

एवं उसे कष्ट तो नहीं होता, सवाल भी हल हो जाता है परन्तु इससे उसकी बुद्धि विकसित नहीं होती, वह उन्नति नहीं कर कर पाता। परीक्षा आती है, प्रश्नोंको देख, अभ्यस्त उपायका अवलम्बन करनेमें असमर्थ होने से, वह घबरा जाता है और परीक्षामें अनुत्तीर्ण हो जाता है।

ठीक इसी प्रकार मादक द्रव्य मनुष्यको रजोगुणकी अवस्थासे तमोगुणकी ओर ले जाते हैं। वह तात्कालिक आत्म-शब्द-श्रवणकी व्यथासे तो बच जाता है, परन्तु इससे उसकी अवस्था कोई उच्च नहीं होती। धर्मशास्त्रोंमें इसी अवगुणके कारण मादक द्रव्योंके सेवनका निषेध है। "न मद्यमांससेवी स्यात्।" यह मनुष्योंके लिये सामान्य उपदेश है।

सो यदि मनुष्य मादक द्रव्योंका सेवन न कर पर्वतकटक-रूप रजोगुणसे उपत्यका-रूप तमोगुण की ओर लौटनेका प्रयत्न न करेगा, तो अवश्य ही समीप भविष्य में सत्वगुणकी दीप्यमान अधित्यकापर पहुंच जायगा।

१३. उपसंहार

(१) तमोगुणकी अवस्थामें रजोगुणकी अवस्थाकी अपेक्षा अधिक सुख प्रतीत होता है।

(२) पर, याथार्थ्य यह है कि रजोगुणकी अवस्था, सत्वगुणकी ओर जानेका एक प्रयत्न है, जहाँ कि उत्कृष्ट आनन्दकी उपलब्धि है। लेकिन तमोगुण एक निष्क्रियावस्था है जिसमें कि उच्च अवस्थाकी ओर जानेकेलिये प्रयत्न ही नहीं किया जा रहा।

(३) मनुष्य ऊपर चढ़नेमें होने वाले कष्टोंसे घबराकर नीचेकी ओर जानेका प्रयत्न करते हैं, इसलिये वे मादक द्रव्योंकी शरण लेते हैं, परन्तु यह उन्नतिका मार्ग नहीं।

सत्य व असत्यमें जो भेद है। वही भेद सात्विक व तामस आनन्दमें हैं। हमें तामस आनन्दको छोड़ प्रयत्न करना चाहिये कि हम सात्विक आनन्द प्राप्त कर सकें।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वेद-भाष्यके आधारभूत सिद्धान्त

प्राक्कथन

(ले०— श्री पं. धर्मदेव जी वेदवाचस्पति)

प्रोफ़ेसर मैक्समूलरके शब्दोंमें संसारके पुस्तकालयमें वेद सबसे प्राचीन ग्रन्थ[1] है। वेदोत्पत्ति का समय[2] कुछ भी मान लिया जाय, तो भी इसकी अत्यन्त प्राचीनतामें किसी प्रकारका सन्देह नहीं हो सकता।

भाषा केवल विचारोंके अभिव्यक्त स्वरूपका नाम है, अथवा दूसरे शब्दोंमें ध्वन्यात्मक विचारों का नाम ही भाषा है। इसलिये किसी भाषाका पूरा ज्ञान किये बिना अक्षरोंमें छिपे हुए भाव या विचारको जान सकना असम्भव है। किसी भाषा के पूर्ण ज्ञानके लिये उस भाषाके शब्दों, मुहावरों और उक्तियोंका ज्ञान प्राप्त करना परमावश्यक है। यह शब्द समयानुसार प्रायः बदलते रहते हैं। जो शब्द या मुहावरा आज एक भावका द्योतन करनेके लिये प्रयुक्त होता है, वही शब्द या मुहावरा आजसे पूर्व या बादमें भी उसी भावको प्रकट करता था तथा करता रहेगा, यह नहीं कहा जा सकता। अतएव भाषाकी प्राचीनताके साथ-साथ उस भाषाका पूर्ण परिज्ञान करना कठिन होता जाता है। वैदिक संस्कृत भाषा यदि संसारकी सब भाषाओंकी जन्मदात्री या मातृभाषा नहीं, तो कम से कम आर्यवंशीय भाषाओंकी प्रथम श्रेणीमें अवश्य कही जा सकती है। इसलिये ऐसी अत्यन्त प्राचीन भाषाका पूर्ण परिज्ञान करना सरल काम नहीं।

आज कल, जब कि ग्रीक तथा लेटिन भाषाओं के कतिपय ग्रन्थ भी अर्थज्ञानकी दृष्टिसे अभी सन्देहावस्थामें हैं, तो वेदोंकी प्राचीनतम भाषा का ठीक ठीक ज्ञान प्राप्त कर सकना किस तरह सरल कहा जा सकता है।

वेदके भाष्य करनेमें भिन्न-भिन्न विद्वानोंने भिन्न-भिन्न मार्गका अवलम्बन किया है। अब तक भारतवर्षमें याज्ञिक, ऐतिहासिक तथा निरुक्त-

---

१— देखो A History of Ancient Sanskrit Literature पृ. २८७.

२— भिन्न भिन्न विद्वान् वेदों का काल भिन्न भिन्न मानते हैं। उदाहरणार्थः—

मैक्समूलर—	कमसे कम	८०० ई. पू.,		अधिक से अधिक	१५००, ई. पू.
मैकडॉनल—	"	१०००	" ,	"	२००० "
हौग—	"	१४००	" ,	"	२००० "
ह्विटनी—	"	१५००	" ,	"	२००० "
जैकोबी—	"	१५००	" ,	"	४००० "
तिलक—	"	१५००	" ,	"	८००० "
पाश्चात्य—	"	२४००००	" ,	"	६००,०००,००० "

—प्रो० इन्द्र कृत—आर्यसमाज का इतिहास' पृ. ६—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कार आदियोंके वेदार्थ करनेमें भिन्न-भिन्न उपाय रहे हैं। नवयुगप्रवर्तक महर्षि दयानन्द जी सरस्वतीने धार्मिक, सामाजिक तथा राजनीतिक सुधारोंके अतिरिक्त वेदभाष्य-शैलीमें एक क्रान्तिकारक परिवर्तन कर दिया है। सायण, महीधर, उव्वट तथा उनका अनुकरण करने वाले पाश्चात्य विद्वानोंकी वेद-भाष्य-शैलीसे स्वामी दयानन्द जी सरस्वतीका मतभेद था। यद्यपि उनके भाष्य में नैरुक्तोंके पक्षको बहुत सीमा तक अपनाया गया है, तथापि उसके साथ साथ कुछ ऐसे सिद्धान्त भी हैं जिससे उसमें कुछ अन्तर आ गया है। इसी दृष्टिभेदके कारण वेदविषयक सम्मति में बड़ा भारी फ़र्क नज़र आता है। इसलिये वेद-विषयक विचारों या सिद्धान्तोंको मालूम करनेके पूर्व यह जान लेना आवश्यक है, कि वेदभाष्यके लिये कौन सी शैली उपयुक्त हो सकती है।

किसी वस्तुका नाम या संज्ञा उस वस्तुके लक्षणका संक्षिप्त स्वरूप होता है। वस्तुका जिस प्रकारका स्वरूप हमारे सम्मुख आता है, उससे उत्पन्न भावको विस्तारमें प्रकट न करके संक्षेप में तीन चार अक्षरोंमें कह देते हैं। इस संक्षेपको ही संज्ञा या नाम कहते हैं; जैसे, हाथके साधन से अभीष्ट-प्राप्ति की जाती है इसलिए इसे 'काम करने वाला' न कह कर संक्षेप में 'कर' कह देते हैं। इसीप्रकार सूर्य रश्मियोंद्वारा जल आदि लेता है इस वास्ते सूर्यरश्मियोंको भी 'कर' कह देते हैं। एवमेव हाथीकी सूंड, मालगुजारी तथा हस्त-परिमाणके लिये भी 'कर' शब्दका प्रयोग होता है। इस प्रकारके शब्द धात्विक (Etymological) पहिले ये सहचारी भाव गौण रूपमें होते हैं; परन्तु कभी-कभी पीछेसे इन भावोंका द्योतन करानेके लिये ही वह शब्द प्रयुक्त होने लगता है। इसप्रकारके शब्दोंको ऐतिहासिक (Historical) कह सकते हैं। जिसप्रकार 'ठग' शब्द मध्यभारतके प्रसिद्ध हत्यारोंके लिये प्रयुक्त होता था, परन्तु पीछेसे वह शब्द उन ठगोंके एक सहचारी गुण या भाव—धोखा—देने वाले मनुष्योंके लिये प्रयुक्त होने लगा। इसीप्रकार नवाब आदि शब्दोंका अर्थ पहिले अर्थोंकी अपेक्षा कुछ विपरीत हो गया है। कई वार तो कुछ शब्दों का अपना अर्थ सर्वथा लुप्त हो जाता है, और उस में दूसरे शब्दका अर्थ आ जाता है। परन्तु इन दो प्रकारके शब्दोंके अतिरिक्त याद्दच्छिक (Dogmatic) शब्द भी होते हैं, जिनकी उत्पत्ति, कहलाते हैं। परन्तु ये शब्द एक ही अर्थमें प्रयुक्त नहीं होते। प्रत्येक शब्द किसी भाव (Conception) को अभिव्यक्त करनेकेलिये प्रयुक्त होता है। परन्तु कोई भी भाव अपने विशुद्ध रूपमें नहीं पाया जाता। प्रत्येक भावके साथ कुछ अन्य भावोंका साहचर्य्य (Association) होता है। किसी रूपमें, धातुसे नहीं कही जा सकती। किसी भावको अभिव्यक्त करनेके लिये कोई शब्द प्रयुक्त कर दिया जाता है। उदाहरणार्थ, 'क्ष-किरण' (X. Ray) शब्द है।

प्रत्येक वस्तुका उपर्युक्त तीन प्रकारके नामों में किसी एक प्रकारका नाम होता है। परन्तु प्रारम्भमें, सृष्टिके आदिमें भाषाकी उत्पत्ति किस प्रकार हुई, भिन्न-भिन्न वस्तुओंके भिन्न-भिन्न विशेष नाम क्या पड़े, इसका उत्तर दे सकना अत्यन्त कठिन है। बड़े बड़े विद्वानोंने इस विषय पर विचार किया, परन्तु कोई भी इस प्रश्नको पूरी तरहसे नहीं सुलझा सका। इस समस्याकी जटिलता को अनुभव करते हुए प्रसिद्ध ग्रीक दार्शनिक प्लेटो अपनी 'Cratylus' नामक पुस्तक

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

में लिखते हैं— "सम्भवतः भाषा मनुष्य द्वारा आविष्कृत नहीं हुई होगी'। इसी भावको दूसरी तरह से फ्रांस के विचारक रूसो ने प्रकट किया है[२]।

हमारी सम्मतिमें विचारके साथ-साथ भाषा भी ईश्वरदत्त मानी जा सकती है। बादशाह अकबर तथा अन्य कई विद्वानोंद्वारा किये गए परीक्षणोंके आधारपर, हमें यह मानना पड़ेगा, कि मनुष्य बिना सिखाए कुछ भी नहीं सीखता है। वह अपने माता पिता तथा गुरुजनोंसे सीखता है। उसके माता-पिता अपने माता-पिता से सीखते हैं। इसप्रकार कारणपरम्परासे आदि पुरुषोंको सिखानेवाला कोई होना चाहिये। और वह परमेश्वरके अतिरिक्त और कोई नहीं हो सकता[३]। उसे 'पूर्वेषामपि गुरुः कालेनानवच्छेदात्, मानना ही पड़ता है। भाषा विचारका रूपान्तरमात्र है। ध्वन्यात्मक विचार का नाम भाषा है। जर्मनीके दार्शनिक विद्वान् वीर्शोका कथन है, कि बिना भाषाके कोई विचार हो ही नहीं सकता। जो विचार मनुष्यमें होता है उसे किसी शब्दके शरीरमें हम देख सकते हैं। जब हमें रूपका ज्ञान हो रहा होता है तब हम यह ज्ञान कर रहे होते हैं कि यह रूप है, उस गुणका पूरा ज्ञान (Conception)'रूप' शब्दद्वारा प्राप्त कर रहे होते हैं। यह हो सकता है, कि कई वार हमें किसी ज्ञानको अभिव्यक्त करनेका उचित शब्द न मिले। परन्तु यह नहीं हो सकता, कि उस ज्ञानका अभिव्यञ्जक कोई भी शब्द हमारे पास न हो। उस ज्ञानका हम कुछ शब्दोंके सम्मिश्रण द्वारा अप्रतिबोध रूपसे ज्ञान कर रहे होते हैं। इसलिये ज्ञान के साथ भाषा भी ईश्वरदत्त माननी पड़ती है। जो वस्तु जिस प्रकारका ज्ञान देती है उसका नाम भी उसी गुण, भाव या क्रियाका अभिव्यञ्जक होना चाहिये, अर्थात् ईश्वरीय-ज्ञान-अभिव्यञ्जक शब्द यौगिक होने चाहियें। उदाहरणार्थ— गच्छतीति गौः पृथिवी। समुद्रुवन्त्याप अस्मादिति समुद्रमन्तरिक्षम्[४]।

यदि यह मान लिया जाए कि, भाषा मनुष्य द्वारा आविष्कृत है, तथापि भाषाकी उत्पत्ति तथा विकासका कोई निश्चित सिद्धान्त निकाल सकना अत्यन्त दुष्कर है। बहुतसे विद्वानोंने इस समस्या को सुलझानेका प्रयास किया है; परन्तु कोई भी सन्तोषजनक नहीं कहा जा सकता।

१. कइयोंका मत है कि वस्तुओंके देखनेसे बालकके मुखसे अनायास जो आश्चर्यसूचक ध्वनि निकली वह वस्तुका नाम पड़ गया। २. कुछ एक विद्वानों का मत है कि आसपासकी वस्तुओं (कुत्ता, बिल्ली, बिजली आदि) की ध्वनि सुन कर उनके अनुसार उनका नाम पड़ गया। ३. इसके अतिरिक्त एक और तीसरा मत है, जिसके अनुसार काम करते समय परिश्रमके कारण मनुष्यके मुंहसे, जो अनायास ध्वनि निकल पड़ी, वही उस वस्तुका नाम पड़ गया। इन तीनों सिद्धान्तों का नाम क्रमशः—Minetic, Onmatopoetic तथा Interjectional है। परन्तु इन सिद्धान्तोंमें कितनी सचाई है, इसमें उन्हें स्वयं सन्देह है। ये केवल कल्पनामात्र हैं।

१—प्रो० मैक्समूलरकृत 'Natunal Religion' से उद्धृत। वे लिखते हैं–Plato said in the Cratylust hat language could not possibly have been invented by men. पृ० २३७.

उपर्युक्त पुस्तक से उद्धृत।–Roussean makes the same confession .....See de Bouild. पृ० २३७

२–पातञ्जल योगद शनम्।

३–निरुक्त–(नैगम काण्ड) २।२।१, तथा २।३।३,

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उपर्युक्त सिद्धान्तोंके अनुसार कुछ शब्दोंकी उत्पत्ति तो समझमें आती है, परन्तु सम्पूर्ण भाषा में ऐसे शब्द ३० भी नहीं होंगे। किसी वस्तुका नाम वृक्ष, मनुष्य या समुद्र आदि क्यों पड़ा, यह इन सिद्धान्तोंसे समझमें नहीं आता।

इस समस्याको सुलझानेका कुछ प्रयत्न भारतीय वैयाकरणों तथा निरुक्तकारोंने किया है। बिना भाषाके विचार हो ही नहीं सकता। जो विचार हम करते हैं वह किसी शब्दके आवरणमें कर सकते हैं। इसलिये विचारोंके ध्वन्यात्मक स्वरूपका ही नाम भाषा है। अर्थात्, जिस वस्तुके देखनेसे जो विचार उत्पन्न होते हैं वही ध्वन्यात्मक विचार भाषा या शब्द कहलाते हैं। भाषाकी उत्पत्तिका कारण कोई विचार(Concept) ही मानना चाहिये। इसी बातको दृष्टिमें रखते हुए भारतीय वैयाकरणों तथा निरुक्तकारोंने शब्दों की-नामोंकी-उत्पत्ति धातुओं वा आख्यातों से प्रायः मानी है। यही सिद्धान्त युरोपमें न्योरे (Noire) ने 'Synergastic Theory' के नामसे प्रचलित किया था। इसी सिद्धान्तको स्वीकार करते हुए प्रो० मैक्समूलर लिखते हैं— "But we know that originally every word was a sentence. When a man said सरित् (river) he realy said 'running (सर्) here (इत्). When he said दारु (tree), he said splitting (दर्) here (ऊ)" † इसी प्रकार आगे चल कर लिखते हैं— "To the true philosopher the synergastic theory is the only one which approaches or touches the answer of the problem, that has to be solved, namely how concepts arose and how concepts were expresssed. ‡

अर्थात् प्रारम्भमें प्रत्येक शब्द वाक्यरूप था। जब मनुष्य 'सरित्' (नदी) कहता था, वह वस्तुतः कह रहा होता था कि 'दौड़ रही है'। जब वह 'दारु' (वृक्ष) कहता था, तब वह वस्तुतः कह रहा होता था, 'यह फट रहा है'। इस प्रकार किसी वस्तुके किसी गुणविशेष या क्रियाविशेषको देख कर उस वस्तुका वह नाम पड़ जाता था।

एक सच्चे विचारकको Synergastic theory ही सन्तोष दे सकती है। क्योंकि इसी सिद्धान्तसे हम समस्याको हल कर सकते हैं, कि किस तरह विचार उत्पन्न हुए और किस तरह उन को अभिव्यक्त किया गया।

क्योंकि भाषा और विचारका अभिन्न सम्बन्ध है। इसलिये यदि इस सम्बन्धका शुद्ध स्वरूप बताना हो तो, हम उसे इन शब्दोंमें कह सकते हैं- ध्वनि संयुक्त विचारका नाम भाषा नहीं, प्रत्युत ध्वनिरहित भाषाका नाम विचार है-अर्थात् भाषा ऋण (—) ध्वनि = विचार कहलाता है। भाषा और विचारका यदि कोई भेद है तो, ध्वनिमात्रका भेद है।[1]

इस सिद्धान्तके अनुसार उक्त प्रोफ़ेसर तथा कतिपय विद्वान् इस परिणाम पर पहुँचे हैं कि भाषा विचारका अभिव्यक्त रूपान्तरमात्र है, अतएव कुछ धातुओंसे ही ये सब शब्द बने हैं। अर्थात् प्रायः सब शब्द यौगिक हैं। यह मत प्राच्य निरुक्तकार यास्काचार्य्यका भी है।[2]

† Natural Religion by Max muller p. 281

‡ Natural Religion by Max muller p. 375

१—Science of Language-by M. Muller.

२— इतीमानि चत्वारि पदजातानि आनुक्रान्तानि नामाख्याते चोपसर्गनिपाताश्च। तत्र नामान्याख्यातजानीति शाकटायनो निरुक्तसमयश्च। नि० १।४।११।

न त्वेव न निर्ब्रूयात्। नि० २।१।१॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

परन्तु इतनेसे सारी समस्याको हम हल नहीं कर सकते हैं। इससे, इतना तो स्पष्ट हो जाता है कि कुछ धातुओंसे इन शब्दोंकी उत्पत्ति तथा विकास किस प्रकार हुआ। परन्तु उन धातुओंका मनुष्यने किस तरह आविष्कार किया, यह समझना दुष्कर है। कुछ एक विद्वानोंने अपनी अपनी कल्पनायें की हैं, परन्तु किसी भी कल्पनाको सिद्धान्तका रूप नहीं दिया जा सकता। इसलिये, भाषा मनुष्य द्वारा विकसित हुई है या नहीं, इस विषयको यहीं समाप्त करके अपने प्रकृत विषय पर आते हैं।

इस विचार-परम्परासे इतना तो हम समझ सकते हैं, कि चाहे भाषा ईश्वरीय हो या मनुष्यद्वारा आविष्कृत; भाषाके प्रारम्भमें शब्द यौगिक थे, रूढ़ि नहीं।

विचार प्रवाह

सेनापति की पुण्य स्मृति में

वह चला गया। माता का वह लाल सचमुच बड़ा आत्माभिमानी था, इसी से वह यह भारी अपमान सहन नहीं कर सका-रूठ कर सदा के लिये चला गया। हमने कानों से सुना कि अब वह नहीं रहा, परन्तु अन्तःकरण को इस बात पर विश्वास नहीं हुवा। वह वीर सेनापति इस आड़े समय में अपनी सेना को अनाथ कर के चला जायगा, यह बात कल्पना से भी परे की थी। परन्तु अब कलकत्ते के राष्ट्रीय समारोह में सम्मिलित होकर इस कठोर सत्य पर विश्वास करना ही पड़ा। वहां देखा, मातृभक्तों के उस बड़े मेले में, नेताओं के उस जमाव में, वह सिंहगर्जना कहीं सुनाई न दी। हाय, वह वीर सेनापति सचमुच चला गया है, ऐसी जगह चला गया है, जहां से कोई लौट कर वापस नहीं आता।

हमारा सेनापति ऐसे आड़े समय गया है, जब उस की सब से अधिक आवश्यकता थी। आज देश के सन्मुख एक कार्यक्रम उपस्थित किया गया है, परन्तु उस कार्यक्रम को चालू करने के लिये जिन अनथक, कर्मवीर, प्रभावशाली सेनापतियों की आवश्यकता थी-उन में से एक सर्वश्रेष्ठ कोटि का सेनापति आज महाकाल द्वारा हम लोगों से बहुत दूर लेजाया गया है। मातृभूमि के भयंकर अपमान से क्षुब्ध होकर आज विभिन्न दलोंके राष्ट्रीय भारत पुत्र एक होने का प्रयत्न कर रहे हैं, इस आड़े अवसर पर राष्ट्रीय पुकार की अवहेलना करने वाले देश द्रोहियों की भी कमी नहीं है—परन्तु आज ऐसे बेमौके हमारा वह नायक चला गया, जो निर्भीकता से इन देश द्रोहियों के साथ लोहा ले सकता था। हमारी माता कहीं अभागिनी तो नहीं? कुछ सदी पूर्व उस का एक वह पुत्र -शिवाजी-उस समय चला गया, जब स्वतन्त्र महाराष्ट्र साम्राज्य को उस की सब से अधिक आवश्यकता थी। इन पिछले १० वर्षों में ही हमारी माता, बिलकुल बेमौके, ऐसे वज्रप्रहार सहने को बाधित होती रही है। असहयोग आन्दोलन के जन्म के साथ ही साथ देश के मस्तक का 'तिलक' मिट गया। सरकार से वैध युद्ध का मोरचा लेते

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हुए इस देश का 'देशबन्धु' छिन गया। सदियों से रूढ़ी के गुलाम भारतवासियों के सामाजिक और वैयक्तिक जीवन में स्वाधीनता की पुण्य भावना का संचार करते हुए वीर शिरोमणि श्रद्धानन्द शहीद होगया और आज ऐसे वेवख्त पञ्जाब केसरी की सिंह गर्जना शान्त होगई है। यह हमारा अभाग्य नहीं तो क्या है!

आज जी खोल कर रोने की इच्छा होती है, मगर राष्ट्र का भयंकर अपमान रोने नहीं देता। यह भारी दुख, जिस का जन्म माता के असह्य अपमान से हुवा है, क्रोध और ग्लनि के रूप में परिवर्तित होता जा रहा है। हमारे राष्ट्र नायकों का कहना है-'लाजपतराय मरे नहीं, वह ज़िन्दा हैं। लाला जी कभी मर नहीं सकते। उनकी भावना अमर है।' सचमुच लाला जी आज मर कर अमर बन गए हैं। उन की सिंह गर्जना आज स्थूल वायु में गम्भीर कम्पन तो अवश्य उत्पन्न नहीं कर रही, तथापि वह और भी अधिक ओजस्वी बन कर भारतवर्ष के सैकड़ों, हज़ारों हृदयों में गहराई तक घर कर गई है—अब सूक्ष्म होते हुए भी वह विनष्ट नहीं होगी। उन के विचार आज स्वाधीन भारत के विचार बन गए हैं। लाला जी आज सचमुच अमर हो गए हैं।

हमारा सेनापति अब इस युद्ध क्षेत्र में हमें शाब्दिक आदेश देने कभी न आवेगा। जब तक उस का भौतिक शरीर जीवित था, तब तक वह हमारी श्रद्धा, भक्ति, क्रोध, खिन्नता—आदि सभी भावनाओं का पात्र बन सकता था। हमने उस के जीवन काल में अनेक वार उस के विचारों से असहमति प्रकट की है। कई बार ऐसे अवसर भी आए हैं, जब हम, उस के अनुयाई, उस से रुष्ट भी हुए हैं। यह सब कुछ हुवा है। वह जब तक जीवित था, तब तक वह मनुष्य था, वह मरण धर्मा था, वह अपूर्ण था। आज यह भौतिक देह छोड़ कर हमारा वह वीर सेनापति देवता बन गया है, अमर होगया है, अब उस में कोई त्रुटि या न्यूनता बाकी नहीं रही। हमारी दृष्टि में अब लाला लाजपतराय और स्वतन्त्रता की भावना—दोनों पर्यायवाची बन गए हैं।

उस वीर के अपने शब्दों में, उस की अमर आत्मा अब देश के स्वतन्त्रता-प्रेमी नवयुवकों को दूसरे लोक से आशीर्वाद दिया करेगी। यह आशीर्वाद माता की पुत्र के प्रति सद् भावनाओं से बढ़ कर सच्चा होगा, यह आशीर्वाद योगियों की ईश्वर प्राप्ति की इच्छा से भी बढ़ कर गहरा होगा, यह आशीर्वाद पराधीन भारतवर्ष की दुर्बल नसों अमृत का कार्य करेगा। हम उस दिन की प्रतीक्षा में हैं, जिस दिन लाला लाजपतराय के सम्पूर्ण जीवन की जागृत और सुप्त अवस्था में निरन्तर देखा हुवा स्वप्न क्रियात्मक रूप धारण करेगा।

वीर सेनापति का आशीर्वाद सफल हो!

२. राष्ट्रीय कौन्वेन्शन

पिछले सप्ताह सम्पूर्ण देश टकटकी लगा कर कलकत्ते की तरफ़ देखता रहा है। इस वर्ष कलकत्ते में राष्ट्रीय महासभा के साथ ही साथ एक ऐसे सम्मेलन की आयोजना की गई थी, जो कुछ अंशों में महासभा से भी बढ़ कर महत्वपूर्ण था। यह सम्मेलन राष्ट्रीय कौन्वेन्शन के रूप में किया गया था। इस कौन्वेन्शन में देश भर के प्रायः सभी विभिन्न राजनीतिक या धार्मिक दल निमन्त्रित किये गये थे। दो एक दलों को छोड़ कर अन्य सभी दलों ने इस सम्मेलन में पूर्ण रूप से भाग भी लिया था। इस दृष्टि से यह सम्मेलन भारतवर्ष

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

के इतिहास में एक सर्वथा नई चीज़ था। राष्ट्र की मांग सुन कर विभिन्न विचारों के प्रायः सभी राष्ट्र सेवक राष्ट्रीय समस्याओं को सुलझाने के लिये एकत्र हुए थे।

कौन्वेन्शन के सभापति का पद डा० मुख्तार अहमद अन्सारी ने ग्रहण किया था। पिछले वर्ष तक आप राष्ट्रीय महासभा के भी अध्यक्ष थे। हमें यह कहते हुए बड़ा हर्ष होता है कि आप ने सभापति के कठिन कार्य को भली प्रकार निबाहा हम स्वयं इस कौन्वेन्शन में प्रतिनिधि रूप से सम्मिलित हुए थे, अतः हमें ज्ञात है कि इस सम्मेलन की कार्रवाही को नियन्त्रण में रख कर सञ्चालित करना कितना कठिन कार्य था। सभापति से यदि ज़रा सी त्रुटि भी हो जाती, तो इस महासभा को नियन्त्रण में रखना सर्वथा असम्भव हो जाता। इस कौन्वेन्शन में सर्वथा प्रतिकूल विचारों के लोग भी सम्मलित हुए थे, ऐसे दलों के प्रतिनिधि भी सम्मलित हुए थे—जिन्हें अबतक एक दूसरे को शत्रु समझा जाता रहा है। यह सब होते हुए भी, जहां तक हमारा ज्ञान है, सम्मेलन के सभापति पर, उस की किसी व्यवस्था के कारण, कोई भी व्यक्ति पक्षपात या अन्याय का दोष नहीं लगा सकता। इस कुशलता के लिये डा० अन्सारी साहब सम्पूर्ण राष्ट्र की ओर से धन्यवाद के पात्र हैं।

यह बात हमें बिना आनाकानी के स्वीकार कर लेनी चाहिये कि इस कौन्वेन्शन को आदर्श सफलता प्राप्त नहीं हुई। कौन्वेन्शन का उद्देश्य यह था कि वह देश के सन्मुख कोई ऐसी शासन व्यवस्था प्रस्तुत करे जिस से राष्ट्र का अधिकतम बहुमत सहमत हो सके। इस में सन्देह नहीं कि कौन्वेन्शन ने जो निर्णय किये हैं उन से अब भी राष्ट्र का बहुमत अवश्य सहमत है। परन्तु जो लोग कौन्वेन्शन के निर्णयों से सहमत नहीं, उन की संख्या भी कम था उपेक्षणीय नहीं है। जो लोग देशद्रोही और सरकार की जूतियां चाटने वाले हैं, उन की बात जाने दीजिये। उन लोगों का दिमाग़ उन का अपना दिमाग़ नहीं है, उन का दिमाग़ और उन का अन्तः करण बिका हुवा है, पराधीन है, अतः हम उन से किसी उचित विवेक की आशा ही नहीं कर सकते। इन लोगों के अतिरिक्त ऐसे लोग भी हैं, जो सच्चे और ईमानदार हैं, परन्तु जिन के विचार हमारे विचारों से मेल नहीं खाते। इन में से कतिपय दल और व्यक्ति कौन्वेन्शन के निर्णयों से सहमत नहीं हो सके। मि० जिन्हां को हम ऐसे ही व्यक्तियों में समझते हैं। वे मुस्लिम लीग के प्रतिनिधि की हैसियत से कौन्वेन्शन में कुछ यांगें लेकर आए थे, उन की अधिकांश मांगें बहुमत से अस्वीकृत होगईं। इस का अभिप्राय यह है कि मुस्लिम लीग को अभी तक कौन्वेन्शन के निर्णयों से सहमत नहीं कहा जा सकता। इसी प्रकार सिक्ख लीग की मांगें भी कौन्वेन्शन में स्वीकार नहीं हुई, फलतः वे लोग सामूहिक रूप से कौन्वेन्शन पण्डाल को छोड़ कर उठ गए।

तथापि हम कौन्वेशन को असफल नहीं मान सकते। हमें उस से निराशा भी नहीं है। कौन्वेशन सफल हुवा है, उस ने एक बहुत बड़ा कार्य किया है। देश के वर्तमान अविश्वासपूर्ण वायुमण्डल में इतनी सफलता भी आश्चर्यजनक ही माननी चाहिये। हमें इस बात का भारी सन्तोष है कि मुस्लिम लीग को छोड़ कर भारत वर्ष भर के अन्य सम्पूर्ण राजनीतिक दल अब सब भेदभाव भुला कर एक ही झण्डे के नीचे एकत्र होगए हैं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सचित्र

सुचारु सूची शिल्प पत्रावली

सलाई और क्रोशिये की दस्तकारी सिखलाने की सस्ती और अनूठी विधि

इस प्रकार के पत्र इंग्लैण्ड अमरीका इत्यादि देशों में तो बहुत दिनों से निकलते हैं। परन्तु भारत में हिन्दी भाषा द्वारा प्रत्येक वस्तु के लिये अलग अलग कार्ड की रीति से इस कार्य को सिखलाने का यह पहला ही प्रयत्न है जो कार्य पसन्द हो उसी के अनुकूल दो तीन आने खर्च कर कार्ड खरीद लो और घर बैठे बिना किसी की खुशामद के बनालो अब तक निम्न लिखित कार्ड (१४×७) प्रकाशित हो चुके हैं:—

पत्र नं०	मूल्य	पत्र नं०	मूल्य
१—दीर्घ सूची प्रारम्भिक प्रयोग ११ चित्र	।)	५—पुरुषों का लम्बा मौज़ा [सचित्र]	=)
२—बड़ी सादी बनियान [सचित्र]	=)॥	६—पुरुषों का सरल दस्ताना [सचित्र]	=)॥
३—पुरुषों का कुर्ता [सचित्र]	=)॥	७—स्त्रियों का फूलदार कालर [सचित्र]	≡)
—बालिका की ऊनी जर्ज़ी [दुरंगा]	≡)	पुरुषों का बुन्दकीदार मौज़ा [सचि]	=॥)

८ कार्डों का पूरा सैट मूल्य १।=)॥ के स्थान में केवल १) रुपया

कुछ सम्मतियाँ—

सरस्वती इलाहाबाद— यह पत्रावली नारी मात्र के लिये बड़ी उपयोगी है। छपाई सुन्दर भाषा सरल और मूल्य बहुत ही कम।

प्रताप लाहौर—कन्या पाठशालाओं और स्कूल की लड़कियों केलिये बड़े काम की चीज़ है।

गृहलक्ष्मी प्रयाग—हम इन कार्डों का हृदय से प्रचार चाहते हैं।

महारथी देहली—यह कार्ड सस्ते होने के कारण कन्याओं के लिये बड़े उपयोगी हैं।

मैनेजर "ज्योति"

कोठी नम्बर २१, २२ राजपुर रोड देहरादून।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कला कौमुदी

लेखिका श्रीमती ओ३म्वती देवी

चित्र कला कौशल सम्बन्धी अनुपम पुस्तक इस के द्वारा लेखिका ने क्रोशिये के कार्य को बड़ा ही सरल बना दिया है। बिना किसी प्रकार के पहिले ज्ञान के कन्यायें और स्त्रियें केवल इस की ही सहायता से अनेक प्रकार की बिनावट लेसें, फ़ीते, कपड़े इत्यादि बनाना सहज में ही सीख सकी हैं। पुस्तक में इतना विषय है कि किंचित इस से कई गुना दाम की पुस्तकों में भी न होगा। प्रत्येक वस्तु तथा बिनावट का बनाना चित्र देकर बड़ी सरल रीति से सिखाया गया है। देखिये समाचार पत्र इस के विषय में क्या कहते हैं।

"ट्रिब्यून" (अंग्रेज़ी का प्रसिद्ध दैनिक) लाहौर—स्त्रियों के लिये उपयोगी पुस्तक है। अनेक चित्रों द्वारा वस्तु बनाने की विधि बड़ी सरलता से समझाई गई है। सुन्दर नमूनों की लेसें, टेबल क्लाथ, बच्चों के सुन्दर कपड़े और अन्य कई वस्तुओं का बनाना बड़ी सुन्दर रीति से बतलाया गया है। पुस्तक की उपयोगिता के विचार से मूल्य बहुत कम है।

"मतवाला" (कलकत्ता)-यह पुस्तक हमारी बहिनों के बड़े समझ की है। छपाई बहुत अच्छी, कागज़ बहुत अच्छा मोटा चिकना आर्ट। सुचारु शिल्प पत्रावली कार्ड गृहस्थियों के बड़े काम की चीज़ है।

"कर्मवीर" (खांडवा)— .....पुस्तक में सादे फन्दे से लगाकर तरह तरह की वस्तुओं के बनाने की विधि बड़ी सरलता से समझाई गई है जिसे पढ़कर साधारण पढ़ी लिखी स्त्री भी इस कार्य को सीख सकती है। इस का मूल्य लागत को देखते कम है।

"माधुरी" (लखनऊ)-ऐसी पुस्तकों की हिन्दी साहित्य के लिये बड़ी आवश्यकता है। आशा है इस पुस्तक का अच्छा प्रचार होगा जिस से इस प्रकार की और पुस्तकें भी प्रकाशित का जा सक। लेखिका और प्रकाशिका दोनों को बधाई।

शीघ्र आर्डर भेजिये — मूल्य १॥)

कला कौमुदी तथा शिल्प पत्रावली का पूरा सैट लेने पर २॥=)॥ के स्थान मे केवल २।) में दिया जायगा।

कन्या पाठशालाओं और पुस्तक विक्रेताओं को विशेष रियायत

मैनेजर ज्योति—

कन्या गुरुकुल

राजपुरा रोड कोठी नं० २१—२२ देहरदून

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

चौधरी हुलासराय प्रिन्टर तथा पं० रमेशचन्द्र पब्लिशर के लिये गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में मुद्रित।

Regd. No. A. 1711

वर्ष ६] जनवरी १९२९ [संख्या ६

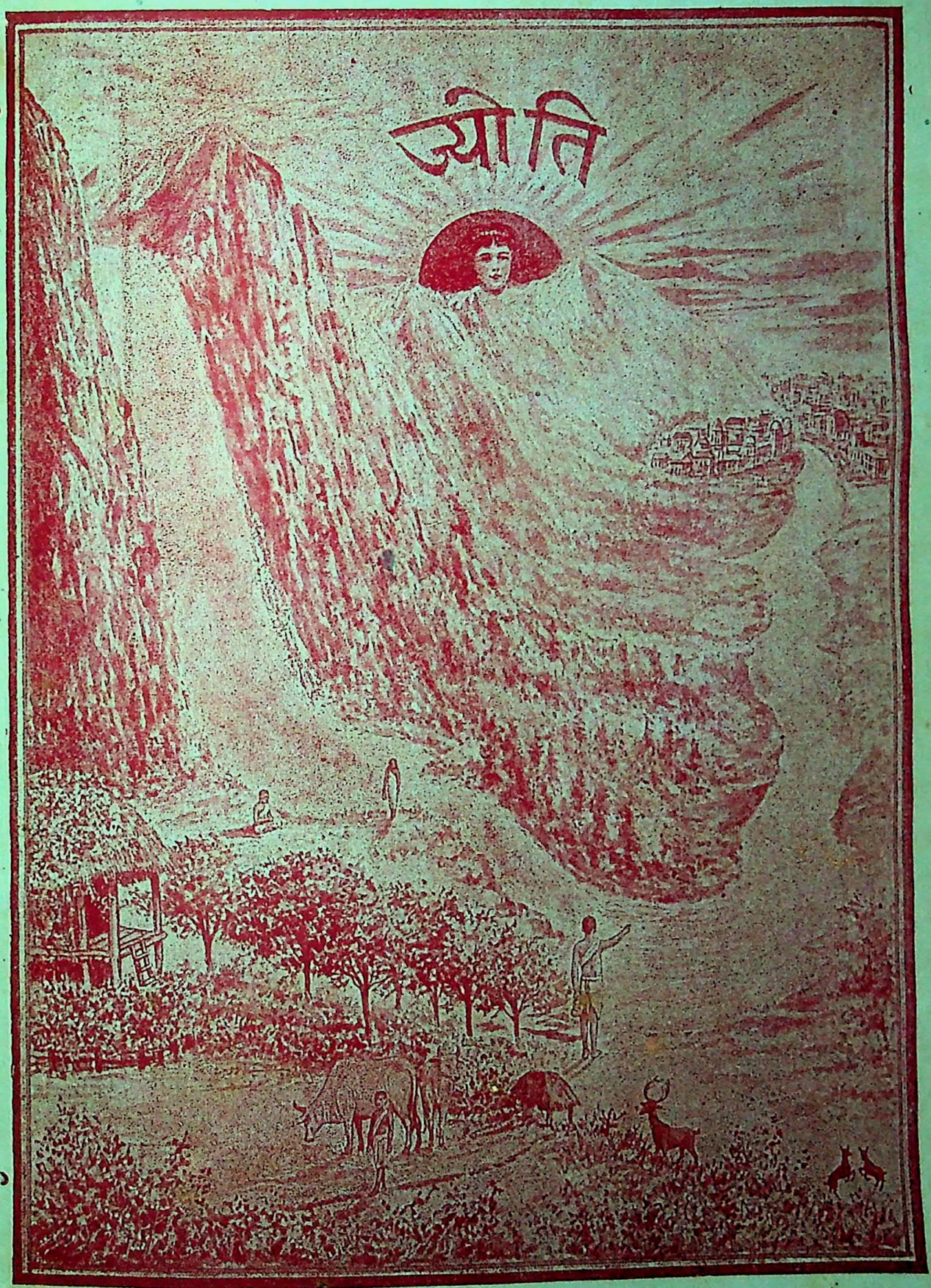

वार्षिक मूल्य ४॥) प्रति संख्या ॥)

सम्पादक—

विद्यावती सेठ बी. ए., चन्द्रगुप्त विद्यालंकार

विद्यार्थियों, स्त्रियों से ४) विदेशका मूल्य ६)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विषय सूची।

विषय	पृष्ठ से
१. मेरी जीवन कथा के कुछ पृष्ठ [धर्मपिता श्रद्धानन्द के संस्मरण] (ले०—श्री आचार्य रामदेव जी)	३३७
२. मृत्यु तथा स्वामी दयानन्द (ले०— श्री पं० हरिशरण जी सिद्धान्तालंकार)	३४६
३. आवश्यक स्त्री-शिक्षा-समस्या (ले० श्री पं० सच्चिदानन्ददास 'बटुक', काशी)	३४६
४. वीर बनो 'कविता' (श्री पं० हरीशरण 'मराल', वकील मेरठ)	३५२
५. वेद-भाष्यके आधारभूत सिद्धान्त (ले०— श्री पं० धर्मदेव जी वेदवाचस्पति)	३५
६. अपराधी कौन है ? 'कहानी' (ले०— श्री पं० चन्द्रगुप्त जी विद्यालंकार)	३६
७. ब्रह्मचर्य्य की वैज्ञानिक व्याख्या (ले०— श्री प्रो० राहु एम. ए.)	३७
८. श्रद्धानन्द-सप्तक 'कविता' (श्री पं० चमूपति जी एम. ए.)	३७
९. पाणिनि द्वारा वर्णित प्रजातन्त्र राज्य (ले०— श्री पं० सर्वमित्र जी)	३७
१०. विचार प्रवाह—	

लेखकों से निवेदन

१. ज्योति में लेख, कविता आदि भेजने वाले महानुभावों को अपने लेख सुस्पष्ट अक्षरों कागज़ के एक ओर ही ,हाशिया छोड़ कर लिख कर भेजने चाहियें।

२. लेख बहुत लम्बे न होने चाहिएँ। 'ज्योति' पत्रिका के लगभग चार पृष्ठों के लायक ले हों तो अति उत्तम है।

३. लेखों को घटाने बढ़ाने तथा संशोधित करने का संपादक को पूर्ण अधिकार है।

ज्योति सम्बन्धी पत्र व्यवहार— अथवा—

आचार्य्या कन्या गुरुकुल सम्पादक ज्योति

कोठी नं० २१, राजपुर रोड गुरुकुल कांगड़ी यू

(देहरादून)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

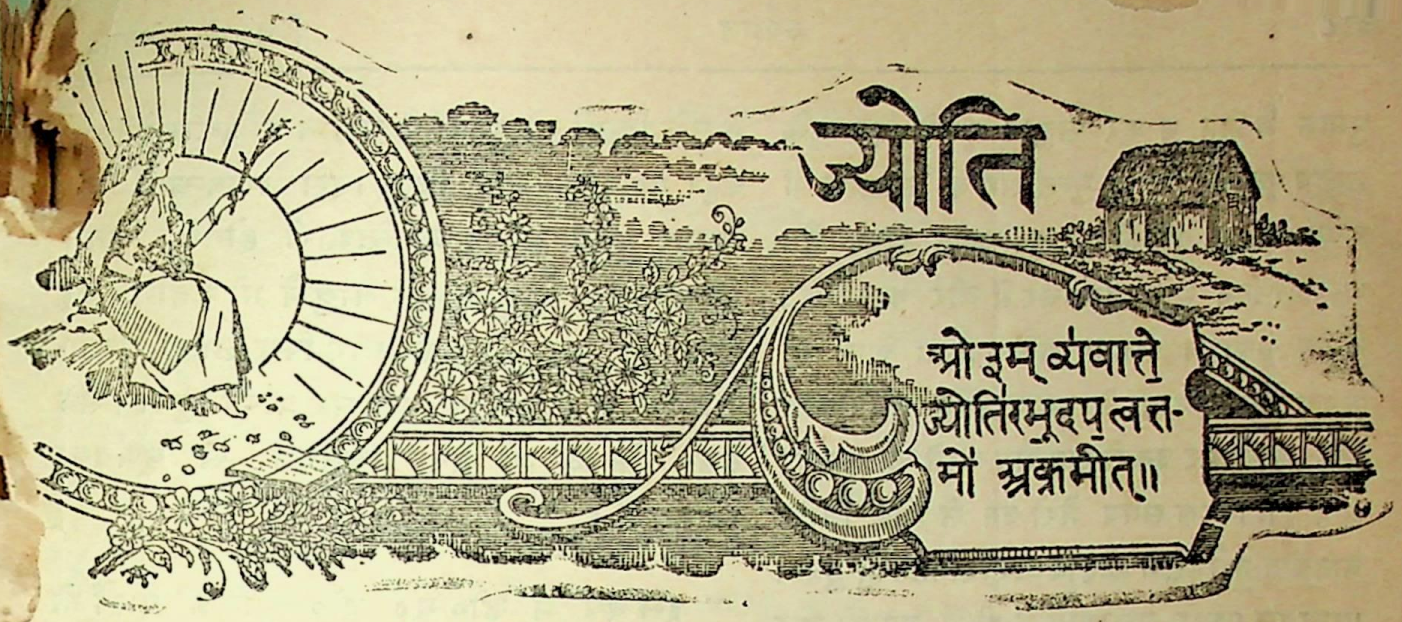

विविध विषय विभूषित सुन्दर मासिक पत्रिका.

वर्ष ६ | पौष १९८५ * जनवरी १९२९ | संख्या ६

धर्मपिता श्रद्धानन्द के संस्मरण

(ले०— श्री आचार्य रामदेव जी)

(१)

विवाह के लिये मेरी बरात जालन्धर गई थी। लाला हंसराज जी मेरे मौसेरे भाई हैं, वह भी मेरी बरात में सम्मिलित थे। मेरी पत्नी कुछ वर्षों तक कन्या महाविद्यालय जालन्धर में शिक्षा ग्रहण कर चुकी थी, अतः विवाह में कन्यापक्ष की ओर से लाला देवराज जी और लाला मुन्शीराम जी भी सम्मलित हुए थे। मेरी आयु उस समय केवल १३ वर्ष की ही थी, फिर भी मुझ में अपनी कालिज पार्टी के लिये अदम्य उत्साह था। आर्य-समाज की दूसरी पार्टी, महात्मा पार्टी, को मैं आर्य समाज का कट्टर शत्रु समझता था। संस्कार में लाला हंसराज जी मेरे निकट ही बैठे हुए थे। मुझे उसी समय दिखाया गया—'महात्मा पार्टी का नेता मुन्शीराम वह सामने बैठा हुवा है।' मैंने उन्हें आज पहली बार देखा। मेरी आँखों में उन के लिये अश्रद्धा, क्रोध और अपमान भरा हुवा था। मैंने सोचा—'यही व्यक्ति आर्य समाज की आन्तरिक अशान्ति का मूल कारण है!'

पंद्रह दिन बाद मैं अपनी ससुराल में गया। पांच, चार दिन वहां रहना आवश्यक था। मैं समझता था कि ससुराल में तो इतना समय यूंही कट जायगा, इस से मैं कोई पुस्तक अपने साथ नहीं ले गया था। परन्तु मेरी यह धारणा अशुद्ध साबित हुई। मेरे लिये दिन काटना मुश्किल हो गया। मुझे बचपन से ही पढ़ने का व्यसन है, परन्तु अपने श्वसुरालय में पढ़ने योग्य कोई भी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पुस्तक मैं प्राप्त न कर सका। दूसरे दिन मुझे मालूम हुवा कि लाला मुन्शीराम की लाइब्रेरी में अच्छी अच्छी पुस्तकों का खूब अच्छा संग्रह है। अभी दो दिन मुझे जालन्धर में और काटने थे। मैं यह प्रलोभन रोक न सका। प्रातः काल ही लाला मुन्शीराम जी के घर उपस्थित हुवा। आज मुझे पहली वार उन से बातचीत करने का अवसर प्राप्त हुवा। उस समय मेरी उन से कोई विशेष बातचीत नहीं हुई, न कोई विचार विनिमय ही हुवा। परन्तु इस पहली मुलाकात में ही मैं उन की ओर आकर्षित हो गया। मैंने अनुभव किया-उन की आंखों में एक विशेष आकर्षण है, उन की वाणी में एक विशेष प्रभाव है;— यह व्यक्ति चाहे और कुछ हो या न हो, आर्य समाज का शत्रु नहीं हो सकता। केवल १० मिनट की बात चीत में मेरा हृदय उन की ओर आकर्षित हो गया और उन के हृदय में मेरे लिये प्रेम उत्पन्न हो गया।

(२)

सन् १८९७ की बात है, मैं तब डी० ए० वी० कौलिज लाहौर के प्रथम वर्ष में पढ़ता था। उन दिनों कालिज पार्टी स्त्रियों को उच्च शिक्षा देने के सख़्त बर्खिलाफ थी, परन्तु महात्मा पार्टी वालों ने तो जालन्धर में कन्या महाविद्यालय ही खोल रक्खा था। दोनों पार्टियों के सिद्धान्तों में यह भी एक भारी भेद था।। तब तक गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना नहीं हुई थी, इस से महात्मा पार्टी की मुख्य संस्था जालन्धर का कन्या महाविद्यालय ही समझी जाती थी। इस समय तक मैं लाला मुन्शीराम जी से अनेक वार मिल चुका था। इन्हीं दिनों मैंने जान स्टुअर्ट मिल की Subjection of Women नामक पुस्तक पढ़ी। इस पुस्तक का मेरे विचारों पर बड़ा भारी प्रभाव पड़ा। मिल की अकाट्य युक्तियों ने मुझे स्त्रियों को पुरुषों के समान अधिकार देने का कट्टर पक्षपाती बना दिया। इस सम्बन्ध में मेरे विचार इतने अधिक क्रान्तिकारी होगये, जितने कि सम्भवतः वे आज, इस आयु में भी न होंगे। यह पुस्तक पढ़ कर मुझे एक वार फिर लाला मुन्शीराम जी से मिलने का अवसर प्राप्त हुवा। मैंने देखा कि वे भी मेरे विचारों से पूर्णतया सहमत हैं।

इस वर्ष मैं डी० ए० वी० कालिज पार्टी के मुखपत्र आर्य मैसन्जर (Arya Messenger) का सम्पादक भी था। यह पत्र अंग्रेजी में प्रकाशित होता था। जालन्धर से लाहौर वापिस आकर मैंने इस पत्र में अपनी एक कहानी प्रकाशित की। इस कहनी की नायिक कन्या महाविद्यालय जालन्धर की प्रतिनिधि स्वरूप थी। विवाह के अनन्तर इस ने अपने आचरण और शिक्षा के प्रभाव से अपने आचार—भ्रष्ट पति का उद्धार कर दिया। मेरी इस कहानी का उद्देश्य कन्या महाविद्यालय जालन्धर की जी खोल कर प्रशंसा करना था, अतः डी० ए० वी० कालिज पार्टी में इस कहानी के विरुद्ध बहुत आन्दोलन हुवा। लोग इस बात को सह नहीं सके। डी० ए० वी० कालिज का मुख पत्र और उस में महात्मा पार्टी के कन्या महाविद्यालय की प्रशंसा! कालिज के अधिकारी इस भारी अनर्थ को सह नहीं सके, यहां तक कि लाला हंसराज जी ने भी मुझे बुला कर, भावी में ऐसा न करने का आदेश दिया।

(३)

उपर्युक्त घटना के दो वर्ष बाद मेरे क्रान्तिकारी विचार क्रियात्मक रूप धारण करने लगे। मैं अब कालिज के तृतीय वर्ष में पढ़ता था। मैंने अपने

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

घर में से पर्दा उठा देने का निश्चय किया। इसी उद्देश्य से एक दिन घर आकर, मैंने अपने दो तीन मित्रों का परिचय अपनी पत्नी से करवा दिया। उन दिनों यह घटना आज की अपेक्षा बहुत अधिक असाधारण थी। मेरे घर में भारी आन्दोलन खड़ा हो गया। घर के लोग मुझ पर ताने कसते थे, परन्तु मैं उनकी किसी बात का जवाब न देता था। सारा दिन तो इसी प्रकार निकल गया, परन्तु रात को पिता जी ने मुझे अपने पास बुलाया। मैं स्वयं इसी बात की प्रतीक्षा कर रहा था। उस समय रात के १० बज चुके थे।

पिता जी ने कहा—"तुम्हारी बदौलत आज हमारे घर में वह दुर्घटना होगई, जो आज तक कल्पना से भी परे थी। तुम ने अपने परिवार की नाक काट दी।"

मैंने धीमी स्वर में उन का विरोध किया। उन्होंने मुझे बहुत तरह से समझाया, परन्तु मैं उन से सहमत नहीं हो सका। मैं बार बार यही कहता रहा कि भावी में भी मैं ऐसा ही करता रहूँगा।

आख़िर तंग आकर उन्हों ने कहा—"यदि तुम्हें इस घर में रहना हो तो तुम्हें इस सम्बन्ध में मेरी आज्ञा का पालन करना ही होगा।"

मैंने अपनी बात एक बार और दुहरा दी—"मैं तो यही उचित समझता हूं और भविष्य में इसी तरह रहूँगा।"

पिता जी क्रोध में आगये। उन्हों ने नाराज़गी से कहा—"तब तुम्हें यह घर छोड़ देना पड़ेगा।"

मैंने धीमे स्वर में कहा—"जो आप की आज्ञा।"

क्षण भर बाद मैंने फिर पूछा—"कब निकलूं? अभी या प्रातः काल।"

उन्हों ने भर्राई हुई स्वर में उत्तर दिया—"प्रातः काल।"

प्रातः मैं कुछ पुस्तकें लेकर डी० ए० वी० कालिज पहुंचा। वहां पहुँच कर मुझे मालूम हुवा कि मुझे वहां से भी एक सप्ताह के लिये निकाल दिया गया है।[1]

मैं अपना बस्ता बगल में दबा कर डी० ए० वी० कालिज के आहाते से बाहर हो गया। इस समय मैं अपने घर और कालिज, दोनों से बहिष्कृत हो चुका था। बहुत देर तक मैं यों ही, बिना उद्देश्य के, लाहौर के बाहर की सड़कों पर, धीमे धीमे चलता चला गया। अन्त में, दोपहर के बाद गोलबाग के एक पेड़ की साया में मैं अपना बस्ता रख कर बैठ गया। गोलबाग़ की पगदण्डी और पास के राजपथ पर लोग आ-जा रहे थे, शाम हो जाने के कारण पेड़ के घने पत्तों में चिड़ियां चहचहाने लगी थीं। इन सब में कुछ भी नई बात नहीं थी। आज से पूर्व भी इसी पेड़ के नीचे से मैं बीसियों बार निकल चुका हूंगा। परन्तु आज मेरे लिये सभी कुछ नया हो गया था। मेरा बरसों का परिचित लाहौर शहर भी मेरे लिये आज बिल्कुल अपरिचित के समान बन गया। उस पेड़ की साया में घाटों तक बैठ कर मैंने खूब सोचा कि कहां जाऊँ। परन्तु कुछ सूझ न पड़ा।

---

१ मुझ पर दो अभियोग लगाए गए थे—पहला तो यह कि मैंने महात्मा पार्टी के वेद प्रचार फण्ड में धन जमा करने का प्रयत्न किया था; दूसरा यह कि मैं डी० ए० वी० कालिज में महात्मा पार्टी का प्रचार किया करता हूं। अन्त में मुझे यह आज्ञा दी गई कि मैं वेद प्रचार फण्ड के लिये एकत्र किये गए धन को वापिस लौटा दूं। यह स्वीकार न करने पर मुझे डी०ए० वी० कालिज से प्रमाणपत्र लेकर पृथक् हो जाना पड़ा।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सूर्य्यास्त से थोड़ी देर पूर्व मेरे एक दोस्त अचानक वहां आ निकले, उन्हों ने मुझे इस प्रकार पेड़ के नीचे बस्ता लिये हुए उदास बैठा देख कर पूछा—"इस तरह यहां क्यों बैठे हो ?"

उत्तर में मैंने उन्हीं से पूछा—"तो फिर कहां जाऊँ ?"

उन्हों ने बहुत ही आश्चर्य से कहा—"कहां जाऊँ का क्या मतलब; अपने घर जाओ और कहां !"

मैंने उन्हें सारी घटना कह सुनाई। वह मुझे अपने घर लेगए। मुझे आश्रय मिल गया।

दो दिन बीत गए। मेरे पिता जी से मेरा निष्कासन सहा न गया। आखिर पिता का ही दिल तो था। उन्होंने मुझे बुलवा भेजा। अब मेरी बारी थी। मैंने रूठ कर घर जाने से इन्कार कर दिया।

चार पांच दिन में यह घटना जालन्धर में लाला मुन्शी राम जी को भी ज्ञात हुई। वह अगली ही गाड़ी से लाहौर पहुँचे। लाहौर में मेरे मित्र के मकान पर पहुँच कर उन्हों ने मुझे बुलाया। मुझे एक टक देखते रह कर उन्हों ने कहना शुरु किया—"रामदेव ! आज से तुम मेरे पुत्र हो। घर से निकाले जाने की तुम कोई चिन्ता न करो। मैं तुम्हारा पालन करूंगा। किसी दूसरे कालिज में तुम्हें एम० ए० तक पढ़ाऊंगा।"

मेरी आंखों में आंसू भर आये।—यह कैसा महान आत्मा है! मेरा गला भर आया। घर से निकलने के बाद आज ही पहली वार मेरी आंखों में आंसू आये। मैं ने सचमुच आज एक नवीन पिता प्राप्त कर लिया।

परन्तु मुझे यह ज्ञात था कि लाला मुन्शीराम दिन रात सामाजिक कार्यों में व्यस्त रहने के कारण वकालत छोड़ चुके हैं, अतः उन पर अपने कारण से आर्थिक बोझ डालना मुझे स्वीकार न था। उन्हों ने बार बार मुझे पुनः कालिज में प्रविष्ट होने की प्रेरणा की, परन्तु मैं तैयार न हुवा। आखिर उन्हों ने मुझे 'आर्य-पत्र' के सम्पादकीय विभाग में काम दिलवा दिया।

(४)

मेरे धर्मपिता लाला मुन्शीराम अब महात्मा मुन्शीराम बन चुके थे। अब उन का सम्पूर्ण समय सामाजिक सेवा में ही व्यतीत होता था। अपने व्यक्तित्व को उन्होंने आर्यसमाज के साथ एक कर दिया था। मैं भी इन दिनों जालन्धर छावनी के विक्टर हाईस्कूल में हैडमास्टर के पद पर नियुक्त था। इस कारण मुझे प्रतिदिन महात्मा जी के दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त होता था। प्रतिदिन उन के निवासस्थान पर जा कर मैं उन के विचारों द्वारा लाभ उठाया करता था।

महात्मा जी ने सुमित्रा देवी नाम की एक सौभाग्यवती कन्या को अपनी धर्मपुत्री बनाया हुवा था। सुमित्रा देवी कन्या महाविद्यालय जालन्धर में शिक्षा ग्रहण करती थी। विवाहयोग्य आयु हो जाने पर महात्मा जी ने इस कन्या का विवाह जातिपांति के बंधन तोड़ कर करने का निश्चय किया। खोज करने पर उन्हें इस कन्या के लिये डा० गुरुदत्त नामक एक सुयोग्य वर भी प्राप्त हो गया। महात्मा जी अपनी धर्मपुत्री के इस आदर्श विवाह की तैयारी करने लगे।

एक दिन सांझ के समय मैं महात्मा जी के स्थान पर पहुंचा। मैं ने कुछ विस्मय के साथ देखा कि सदैव प्रसन्नता और उत्साह के असीम भण्डार बन कर रहने वाले महात्मा मुन्शीराम आज कुछ उदास प्रतीत होते हैं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कुछ देर तक उन के पास यों ही चुप चाप बैठे रह कर मैं ने पूछा—"महात्मा जी, आज आप उदास क्यों हैं ?"

वह चुप ही रहे। उन्होंने कोई उत्तर नहीं दिया। मैंने बड़े आग्रह से कई बार उनकी उदासी का कारण पूछा। अन्त में मेरे बहुत अनुरोध करने पर उन्हें उत्तर दिया—"मेरी उदासी के दो कारण हैं। पहला तो यह कि सुमित्रा देवी का विवाह मैं जाति बन्धन तोड़ कर कर रहा हूं, अतः लोग मुझ से अत्यन्त नाराज़ हैं। यह नाराज़गी यदि मुझ तक ही सीमित रहती, तब तो कोई बात ही न थी, परन्तु मेरे साथ ही साथ लोग तुम्हें भी गालियां देते हैं, क्यों कि तुम अकेले ही इस काम में मेरे मददगार हो। लोग तुम्हें 'गुरुदत्त का साला' कहते हैं। मेरे कारण तुम्हें भी कष्ट हो रहा है, यह बात मुझे सहन नहीं होती।'

मैंने बीच में ही रोक कर कहा— "इस में क्या बुराई है। मैं स्वयं सुमित्रा को अपनी धर्म-बहिन समझता हूँ। लोग मुझे सैकड़ों बार 'गुरुदत्त का साला' कहें। मैं इसे ज़रा भी बुरा न मानूंगा।"

महात्मा जी ज़रा मुस्कराए। उनका चेहरा अब उतना उदास न रहा। उन्होंने फिर कहना शुरू किया—"खैर, मेरी उदासी का दूसरा कारण यह है कि मैं सुमित्रा का विवाह गुरुदत्त से करने जा रहा हूं अतः मेरे सम्पूर्ण रिश्तेदार मुझ से बहुत नाराज़ थे। कई दिन से मेरे भाई मुझे अलग कर देने की धमकियां दे रहे थे। आज मुझ से यह सहा न गया। मैंने, अभी कुछ समय पूर्व ही, घर की सब चाबियां अपने भाई को दे दी हैं। अब इस घर में मेरा कुछ भी नहीं रहा। मैं ने सभी कुछ अपने भाई को दे दिया है। इस सामान से अब मेरा कोई सम्बन्ध नहीं।"

मैं कुछ उत्तेजित होगया। मैंने कहा— "नहीं, आप ने यह ठीक नहीं किया है। आप को सामान का बटवारा करने के लिये तैयार होजाना चाहिये था। इस प्रकार सारा सामान छोड़ कर आप ने ठीक नहीं किया।"

उन्होंने पूछा—"क्यों ? मुझे तो इस अवस्था में यही उचित प्रतीत होता है। मेरे कारण मेरे भाई क्यों कष्ट सहें। लोग उन्हें भी तो सता रहे हैं।"

मैंने कहा—"आप अपनी दृष्टि से तो इतना बड़ा त्याग बड़ी खुशी से कर सकते हैं, परन्तु आप की सन्तानें भी तो हैं। उन के लिये भी तो अवश्य ही कुछ चाहिये था।"

उन्हों ने बड़ी निश्चिन्ता से उत्तर दिया— "अपनी सन्तानों का पालन मैं स्वयं अपने बाहुबल से करूँगा। इस बात की मुझे ज़रा भी चिन्ता नहीं है।"

मैं सहसा पूछ बैठा—"तो फिर आप उदास क्यों हैं ?"

महात्मा जी ने बड़ी शान्ति से उत्तर दिया— "आज तक मैं स्वयं अपने परिवार को पालता रहा हूँ। अपने भाइयों की सब आवश्यकताओं को पूरा करना मैं अपना कर्तव्य समझता रहा हूँ। आज अपना सम्पूर्ण सामान एक साथ छोड़ कर मैं जब यह सोचता हूँ कि अपने भाइयों को मैं अब भविष्य में कहां से दे सकूँगा, तब मेरा हृदय बोझ से दब जाता है।"

मानवीय चिन्ता का यह दैवीय कारण मेरी कल्पना से भी परे की वस्तु था। मैं कुछ भी कह न सका, केवल चुपचाप विस्मय से उस महात्मा की ओर देखने लगा।

(५)

गुरुकुल कांगड़ी का वार्षिकोत्सव है। खूब चहल पहल हैं। बड़ी संख्या में हम लोगों के इष्ट-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जन और मित्र आए हुए हैं। सारा दिन मिलने जुलने में ही बीत जाता है। इन्हीं दिनों की एक प्रातः काल मास्टर आत्माराम जी अमृतसरी मेरे पास आए। आते ही उन्होंने कहा—"एक बात सुनिये।"

मैंने पूछा—"क्या?"

उन्हों ने बड़ी सर्तकता से उत्तर दिया—"पिछले सद्धर्मप्रचारक में आर्यभ्रातृ सभा का पक्ष लेकर जो लेख प्रकाशित हुवा है। उस के सम्बन्ध में मैं अभी अभी महात्मा मुन्शीराम जी से कह आया हूँ कि वह लेख रामदेव जी का ही लिखा हुवा है।"

इस लेख में महात्मा मुन्शीराम जी पर बहुत से व्यक्तिगत ताने और आक्षेप थे, इस लिये मैं ने चौंक कर कहा—"उस लेख के लिये आप भी ज़िम्मेवार हैं, फिर उसे केवल मेरे नाम पर ही आप किस तरह डालना चाहते हैं।"

मास्टर जी ने बड़ी समझदारी की स्वर में कहा—"क्या होगया! आप ही कुर्बानी का बकरा बन जाइये। आप से महात्मा जी का विशेष संबन्ध है, आप से यदि वह थोड़ा सा नाराज़ भी होगए तो कोई खास हर्ज नहीं।"

एक वार मास्टर जी से सत्य के नाम पर अपील कर के भी मैं शहीद बनने को तैयार होगया।

मास्टर आत्मराम जी वहां से चले गए। मैं अकेला बैठ कर इस विचित्र परिस्थिति पर विचार करने लगा। इसी समय डिंगा निवासी श्री भगतराम जी ने आकर मुझ से कहा—"चलो महात्मा मुन्शीराम जी तुम्हें बुलाते है।"

मुझे विश्वास था कि अपने धर्मपिता के सामने कोई बात छिपा कर रखना मेरे लिये आसान नहीं हैं, उधर मैं मास्टर आत्माराम जी से शहीद बनने का वायदा भी कर चुका था अतः मैं ने उन के पास जाने से इन्कार कर दिया। परन्तु भगत राम जी मुझ से आयु में बड़े थे। उन के सामने मेरा बस न चल सका। वे ज़बरदस्ती मुझे महात्मा जी के पास खींच ही लाए।

आज गङ्गा की बाढ़ के कारण गुरुकुल के अधिकांश मकान भूमिसात हो चुके हैं, परन्तु वह कमरा, अपने साथ के अधिकांश कमरे बह जाने पर भी लगभग उसी तरह से विद्यमान है। यह उनका कार्यालय था। कमरे में वह अकेले ही बैठे हुए थे। उन का चेहरा अत्यधिक गम्भीर था। मैं कमरे में प्रविष्ट होकर उनके सामने ही एक कुर्सी खींच कर बैठ गया। वे चुपचाप बैठे हुए थे।

मेरी आंखों में आंसू भर आए। महात्मा जी की आंखों से भी आंसू झरने लगे। कुछ देर तक हम दोनों इसी प्रकार चुपचाप आंसू बहाते रहे। इस के बाद उन्होंने पूछा—"सद्धर्म प्रचारक में वह लेख तुम्हारा ही लिखा हुवा है?"

मैंने कहा—"मेरा ही समझिये।"

उन्हों ने कहा—"चालाक बनने की कोशिश न करो। मुझे मालूम है, वह लेख केवल तुम्हारा लिखा हुवा ही नहीं है। झूठ बोलने के लिये जो साहस चाहिये, वह तुम में नहीं है।"

मेरी रुलाई अब फूट पड़ी। सिसकियां भरते हुए मैंने कहा—"इस लेख का उत्तरदायित्व तो मुझ पर ही है। मुझे क्षमा कीजिये।"

इस के कुछ दिन बाद महात्मा मुन्शीराम जी का जालन्धर से लिखा हुआ एक पत्र मुझे प्राप्त हुवा। उसका निम्नलिखित वाक्य मैं आजन्म नहीं भूल सकता—"I had almost lost a son, but thank God, I have recovered him." अर्थात्—"मैंने अपना एक पुत्र लगभग खो दिया थ, परन्तु ईश्वर का धन्यवाद है कि वह मुझे पुनः प्राप्त हो गया।"

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

(६)

सामाजिक जीवन में अनेक परिवर्तन हुए। आर्य समाज के सन्मुख बहुत सी नई नई समस्याएं आई। अनेक आन्दोलन हुए। कभी किसी विषय के सम्बन्ध में महात्मा मुन्शीराम जी से मेरा मत मिला, कभी नहीं भी मिला। मेरे धर्मपिता और मुझ में अनेक सम्मति भेदों के अवसर पर लेखों द्वारा गरमागरम बहस भी हो गई। कई अवसरों पर मैंने उनका लिहाज़ नहीं किया और उन्होंने भी मुझे नहीं छोड़ा। यह सब कुछ हुवा। हमारे सामाजिक सम्बन्ध में कुछ कठोरता भी आगई। कई बरस इसी तरह निकल गए।

इन्हीं दिनों यह घोषणा हुई कि महात्मा मुन्शीराम जी शीघ्र ही सन्यास लेने वाले हैं। साथ ही गुरुकुल की स्वामिनी सभा ने मुझ से यह अनुरोध किया कि मैं गुरुकुल के आचार्य का कार्य संभाल लूं। मैं कुछ हिचकिचाया। कारण यह था कि गुरुकुल के प्रबन्ध की छोटी मोटी बातों के सम्बन्ध में कई बार महात्मा मुन्शीराम जी से मेरा मतभेद रह चुका था। मैंने सोचा— 'चलो, महात्मा जी के सामने दिल खोल कर रख दूँ। इस के बाद जो कुछ होगा, देखा जायगा।'

रात को सोने से पूर्व मेरे सामने महात्मा मुन्शीराम जी का संन्यास अपने धर्मपिता के संन्यास के रूप में आया। मुझे वर्तमान काल के कलह भूलने लगे। मुझे अपने धर्मपिता का वह पुण्य और प्रेममय सम्बन्ध स्मरण आया जो उन्होंने मेरे घर से निकल जाने के बाद मुझ से स्थापित किया था। मुझे अपने पिता का यह वाक्य याद आया— "ईश्वर का धन्यवाद है कि मैं ने अपना पुत्र पुनः प्राप्त कर लिया!" मैं विचलित हो उठा। मेरे हृदय का सम्पूर्ण वैमनस्य एक साथ भस्म हो गया। मैं ने शीघ्र ही अपने धर्म पिता के दर्शन करने का निश्चय किया।

महात्मा मुन्शीराम जी अपने गंगातट के बंगले में अकेले बैठे हुए थे। मैं उन के पास पहुँचा। उन्हें नमस्कार कर के बड़ी धीमी और शान्त स्वर में मैं ने कहा—"महात्मा जी, यदि आप मेरे लिये फिर से मेरे वही धर्मपिता मुन्शीराम बन सकते हों तो मैं कुछ निवेदन करना चाहता हूँ।"

वह कुछ क्षणों तक बड़ी भावमयी दृष्टि से मेरी तरफ़ देखते रह कर बोले—"रामदेव! आज नहीं, आज से १५ दिन पूर्व ही मेरे दिल से तुम्हारे प्रति सब प्रतिकूल भाव बिलकुल नष्ट हो चुके हैं। अब हमारे बीच में कोई खाई नहीं रही। हम दोनों का सम्बन्ध पवित्र और अटूट है। मैं स्वयं दो एक दिन में तुम्हें बुला कर अपना दिल साफ़ कर लेने के लिये कहने वाला था। कहो, क्या कहना चाहते हो?"

मेरा हृदय अपने धर्म पिता के प्रति श्रद्धा और सम्मान से भर उठा। मैं ने कहा— "महात्मा जी, स्वयं सन्यास ले लेने के उपरान्त आप गुरुकुल किसे सौंपना चाहते हैं?"

उन्हों ने शीघ्रता से उत्तर दिया—"तुम्हें। इस सम्बन्ध में मेरे हृदय में और कोई विकल्प ही नहीं है। मेरा पूर्ण विश्वास है कि मेरी वास्तविक भावना को तुम ही भली प्रकार समझते हो। लोगों का ख्याल है कि हम दोनों के विचार परस्पर बहुत प्रतिकूल है; परन्तु वास्तव में यह बात सही नहीं है। हम दोनों में मतभेद बहुत कम है, और एकमत बहुत ज्यादा। मुझे विश्वास है कि मेरे बाद तुम्हीं सफलता से गुरुकुल का सञ्चालन कर सकते हो। तुम में कमज़ोरियां भी हैं। उन कमज़ोरियों को भी मैं जानता हूँ। परन्तु कमज़ोरियां

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

किस में नहीं होती। मुझ में भी तो अनेक बड़ी २ दुर्बलताएं हैं।"

अपने धर्मपिता के इस आदेश को मैं ने कर्तव्य का आह्वान समझा। मेरी सब दुविधाएं दूर होगईं। मैंने गुरुकुल के आचार्य पद का भार लेने का निश्चय कर लिया।

(७)

समय गुज़रता चला गया। पिता पुत्र के मत भेद वहीं समाप्त नहीं हो गए थे; अनेक सिद्धान्त के प्रश्नों पर फिर से मतभेद उत्पन्न हुए। अनेक मतभेद मिट गए, अनेक बने रहे। परन्तु इन मतभेदों से हमारे हार्दिक पवित्र सम्बन्ध में जरा भी आंच नहीं पहुँची।

धर्म पिता के महाबलिदान से कुछ मास पूर्व मैंने उन से प्रार्थना की कि अब आप शेष जीवन गुरुकुल में ही बिताइये। गुरुकुल में रह कर कुलवासियों में नवीन स्फूर्ति का सञ्चार कीजिये। यह प्रार्थना स्वीकार हुई। स्वामी जी ने गुरुकुल में रहने के लिये गुरुकुल की स्वामिनी सभा को पत्र लिखा। गुरुकुल की स्वामिनी सभा को इस से बढ़ कर प्रसन्नता और किस बात से हो सकती थी। परन्तु इस सम्बन्ध में सभा ने जो प्रस्ताव स्वीकार किया, उस की रचना स्वामी जी को खटकी। उन्हों ने गुरुकुल में आकर रहने का विचार छोड़ दिया। मैं सभा के उस अधिवेशन में उपस्थित न था, इस कारण यह घटना मुझे कुछ समय बाद मालूम हुई।

स्वामी जी ने अब कनखल में ही मकान बनवा कर रहने का निश्चय किया। ज़मीन के लिये उन्होंने बयाना भी दे दिया। गुरुकुल की स्वामिनी सभा (आर्यप्रतिनिधि सभा पञ्जाब की अन्तरङ्ग सभा) को जब यह बात ज्ञात हुई तो सभा के सब सदस्यों को बहुत अधिक दुख हुवा। स्वामी जी सभा से बहुत नाराज़ होगए थे, अतः किसी महानुभाव को उन के पास जाकर सभा का वास्तविक भाव स्पष्ट करने का साहस न होता था। कुछ दिनों बाद जब ज़मीन के सम्बन्ध में स्वामी जी कनखल पधारे, तब मैं उन की सेवा में पहुंचा।

बातचीत के सिलसिले में मैंने उन से निवेदन किया-"स्वामी जी, अन्तरङ्ग सभा के प्रस्ताव का वह अभिप्राय नहीं था, जो आपने लिया है।"

स्वामी जी ने उत्तर दिया—"यह भी सम्भव है। परन्तु प्रस्ताव को ऐसा गोलमाल बनाया ही क्यों गया, जिस से कोई दूसरा मतलब लिया जा सके।"

मैंने स्वीकार किया कि सचमुच प्रस्ताव में कुछ भी अस्पष्टता नहीं होनी चाहिये थी। साथ ही मैंने निवेदन किया—"अन्तरङ्ग सभा के उस अधिवेशन में मैं उपस्थित नहीं था, अन्यथा यह नौबत कदापि न आती।"

स्वामी जी ने आश्चर्य से पूछा— "तुम उस अधिवेशन में नहीं थे?"

मैंने उत्तर दिया—"नहीं जी!"

मेरे धर्म पिता ने कुछ मुसकिरा कर उत्तर दिया—"तो फिर मुझे अब अन्तरंग सभा से कोई शिकायत नहीं रही।"

मैं ने अनुरोध किया—"तो अब गुरुकुल में ही चल कर रहिये।"

उन्हों ने कहा—"अब तो मैं ज़मीन का बयाना भी दे चुका हूं।"

मैं ने हठ किया— "मेरी खातिर उसे जाने दीजिये।"

स्वामी जी तैयार होगये। मैं ने उन से यह भी निवेदन किया कि मैं अन्तरंग सभा का प्रस्ताव

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बदलवा दूंगा। स्वामी जी ने अब गुरुकुल चल कर रहने का पूर्ण निश्चय कर लिया।

परन्तु शायद विधाता को यह बात मंजूर नहीं थी। पहले तो वह कुछ आवश्यक कामों में व्यस्त रहे। फिर दिसम्बर के शुरु में वह बीमार पड़ गए।

(८)

उस महान आत्मा के अमर पद प्राप्त करने से केवल चार दिन पूर्व ही गुरुकुल का स्नातक चिरञ्जीव केशवदेव दिल्ली में उनके दर्शनों के लिये गया। स्वामी जी तब रुग्ण शैया पर लेटे हुए थे। अपने एक शिष्य को अपने दर्शनों के लिये आया हुवा देख कर स्वामी जी उठ कर बैठ गए। केशव के सिर पर हाथ रख कर उन्हों ने वेदमन्त्र पढ़ कर उसे आशीर्वाद दिया।

बातचीत के प्रसङ्ग में उन्हें ज्ञात हुवा कि केशवदेव शीघ्र ही मद्रास जा रहा है। स्वामी जी को यह ज्ञात था कि प्रो० रामदेव जी आजकल कलकत्ता में गुरुकुल के लिये धन संग्रह का कार्य कर रहे हैं, अतः उन्होंने उस से पूछा कि—"क्या तुम कलकत्ता होते हुए मद्रास जाओगे?"

केशव के यह स्वीकार करने पर उन्हों ने कहा—"कलकत्ते में प्रो० रामदेव जी से मिल कर उन्हें मेरा एक सन्देश दे देना।"

केशवदेव ने कहा—"आज्ञा कीजिये।"

स्वामी जी ने उत्तर दिया—"रामदेव जी से कहना कि चाहे हम दोनों में कितने ही मत भेद क्यों न हों, फिर भी हम दोनों के विचारों में बड़ी समानता है। गुरुकुल के प्रति मेरी भावना को केवल वही समझते हैं। उन से कहना, वह चाहे गुरुकुल को किसी स्थान पर ले जांय, इस सम्बन्ध में अब मेरा कोई मतभेद नहीं रहा। परन्तु गुरुकुल का वह स्वयं सञ्चालन करें, गुरुकुल की भावना को वह अवश्य जीवित बनाए रक्खें—यह मेरा उन के प्रति आदेश है।"

परन्तु भाग्यचक्र से केशव के कलकत्ता पहुंचने से पूर्व ही वह महान आत्मा यह लोक छोड़ कर चली गई।

आज अपने अन्तःकरण की साक्षी देकर मैं यह घोषणा करता हूँ कि मैं अपने धर्मपिता का अन्तिम आदेश पालने के उद्देश्य से ही अभी तक गुरुकुल कांगड़ी का भारी बोझ अपने कन्धों पर लिये हुए हूँ। मेरा प्रतिज्ञात सेवा काल पर्याप्त समय से समाप्त हो चुका है, अब यदि मैं चाहूं तो नियमानुसार गुरुकुल के उत्तरदायित्व से मुक्त हो सकता हूँ। मेरा स्वास्थ्य भी अब काफी बिगड़ चुका है, वह मुझे अब इतनी बड़ी प्रबन्ध सम्बन्धी उलझनों में पड़ने की आज्ञा नहीं देता। फिर भी मैं यह भारी बोझ संभाले हुए हूँ। इस का केवल मात्र एक ही कारण है—वह कारण है अपने धर्म-पिता का अन्तिम आदेश।

मुझे मालूम है-मेरे कुछ स्नेही, मेरे अब तक गुरुकुल में बने रहने के कारण मुझ पर कुपित हैं; कुछ सज्जन मेरे स्वास्थ्य को देख कर चिन्तित भी हैं, कुछ लोग आश्चर्यित हैं, और कतिपय महानुभाव यह भी समझ सकते हैं कि इस बुढ़ापे में सन्मान और उच्चाभिलाषा के वशीभूत होकर ही मैं गुरुकुल की बागडोर को अपने हाथों से नहीं छोड़ रहा हूँ। यह सब कुछ मैं जानता हूँ, फिर भी अपने उत्तरदायित्व को छोड़ नहीं सकता।

कई वार प्रबन्ध सम्बन्धी कठिनाइयों का सामना करते हुए जी में आता है कि अब ये झंझट छोड़ कर अलग हो जाओ, तुम्हारा स्वास्थ्य अब

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

तुम्हें यह काम करने की आज्ञा नहीं देता। कभी कभी यह काम छोड़ कर विस्तृत क्षेत्र में कार्य करने की अभिलाषा भी उत्पन्न होती है। परन्तु अगले ही क्षण अपने धर्मपिता का अन्तिम आदेश मेरी सब दुर्बलताओं को दूर कर देता है। उन की पुण्य स्मृति मुझ में नए सिरे से उत्साह और साहस का सञ्चार कर देती है। मैं यह कार्य करते हुए, किसी ऐसे योग्य उत्तराधिकारी की तालाश में हूँ जो मेरे धर्मपिता की इस पवित्र थाती को उन्हीं की ऊंची भावनाओं के साथ संभाल सके।

मृत्यु तथा स्वामी दयानन्द

(श्री पं० हरिशरण जी सिद्धान्तालंकार)

१. मृत्युरूप आपत्ति

ख्य दर्शनमें एक पंक्ति आती है "पुरुषः खलु वैराग्यान्मोक्षशास्त्रे प्रवर्तते। वैराग्यञ्च द्वेधा, शोकादिना धा जन्मान्तरीयदुरितक्षयाद्वा" अर्थात् मनुष्य वैराग्य के कारण मोक्षमार्गमें प्रवृत्त होता है। और वह वैराग्य प्राक्तन पापोंके नाश व प्रियबन्धुओं की मृत्यु से उत्पन्न शोक के कारण होता है। एव आपत्ति मनुष्यको शोकमें डाल विरक्त कर मोक्ष मार्ग में प्रवृत्त कराती है। आपत्ति एक स्वागत करने योग्य वस्तु है। यदि संसारके अन्दर आपत्ति बिलकुल न होती तो मनुष्य शायद ही वैराग्यको प्राप्त कर पुरुषार्थके साधनमें प्रवृत्त होते। गीतामें परमेश्वरका प्रथम भक्त आर्त व्यक्ति कहा गया है। यह भी इस बातकी सूचना देता है कि आपत्ति मनुष्यको धर्ममार्गकी ओर ले जाती है। यदि बुद्ध भगवानको संसारके आपत्तिमय दृश्य देखनेको न मिलते तो वे विरक्त हो, तपस्वी बन, संसार के अन्दर अहिंसा धर्मको विस्तृत करनेकी नींव न डाल सकते। हमारे आजके नायकका दिन मनानेका समय भी उपस्थित न होता, यदि उनपर भी बहिन व प्रिय चाचाका मृत्युरूप दुःख न पड़ता। इस दुःखने उनके हृदयमें वैराग्यकी तरंगको पैदा कर दिया। यह वैराग्य क्रमशः विचार करने पर अधिकाधिक पुष्ट होता गया और परिणामतः इसने उस होनहार बालक मूलशङ्करको घरसे भगा दिया। ऐसे वैराग्यके अवसर हम लोगों केलिये भी परमेश्वरकी ओरसे उपस्थित हुआ करते हैं। परन्तु हम तो उनपर विचार कर, वैराग्य के भावको पुष्ट करनेके बजाय, उनको भूल जाने की कोशिश किया करते हैं। 'नष्टं नेच्छन्ति शोचितम्' यह गीतावाक्य प्रमाण रूपसे पेश कर, हमारा प्रयत्न होता है कि, वह क्षणिक वैराग्य कहीं स्थिर रूप न धारण करले। परन्तु अपनी स्थितिपर न विचार कर अपनेको ही अज्ञानमें रख धोखा देना यह उचित नहीं है। वस्तुतः यही Turning point होता है, जो कि हमारे जीवनोंमें सदाके लिये एक परिवर्तन पैदा कर सकता है। प्रतिवर्ष हमारे यहां भी कोई न कोई ऐसी दुर्घटना हो जाती है, जो कि हमें अपने जीवनमें एक विशेष परिवर्तन के लिये सहायक हो सकती है। संसारमें प्रतिक्षण ऐसी घटनाएं होती रहती हैं, परन्तु वे सब घटनाएं सामान्य मनुष्योंके जीवनोंमें कोई विशेष परिवर्तन करती हुई दिखाई नहीं देतीं। यह वस्तुतः ही बड़े आश्चर्यकी बात है कि मृत्युको देखते हुए भी हम उसको दूर करनेके लिये कोई प्रयत्न नहीं करते। वन पर्वमें यक्ष-युधिष्ठिर-संवाद में भी 'किमाश्चर्यं' इस यक्षके प्रश्नका उत्तर देते हुए

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

युधिष्ठिर कहते हैं:—'अहन्यहनि भूतानि गच्छन्तीह यमालयम् । शेषाः स्थावरमिच्छन्ति किमाश्चर्यमतः परम् ।' एवं अधिकसे अधिक आश्चर्यकी बात यह है कि मृत्यु की घटना भी हमारे जीवनोंमें कोई प्रभाव नहीं डालती । उसका कारण ऊपर बतलाया ही जा चुका है । वस्तुतः उसपर विचार करनेके स्थान पर नाना प्रकारके विनोदों द्वारा हम तो उसे भूल जानेका प्रयत्न किया करते हैं । हम मृत्युके याथार्थ्यको देखते ही नहीं । हमारी दृष्टि उथली होती है । और यथार्थताको न देखनेके कारण, उससे हम प्रभावित भी नहीं होते । परिणामतः हम इतर मनुष्योंमें ही गणनीय रह जाते हैं । उच्च कोटिके मनुष्य नहीं बन सकते । मृत्यु हमारे लिये तो सामान्य बात है । परन्तु भावीमें महापुरुष होने वाले व्यक्तिके लिये यह सामान्य घटना कैसे हो सकती थी । कार्लाइलने तो सामान्य तथा विशेष-इन द्विविध व्यक्तियोंके अन्दर भेद ही यही किया है कि:—

A hero as I repeat has this first distinction which indeed we may call first and last, the Alpha and Omega of his whole heroism, that he looks through the shows of things into things. अर्थात् एक वीर की वीरता इसी में है कि वह पदार्थों के प्रतीयमान रूपमें ही न उलझ कर, उनकी गहराई तक पहुंचता है, और असलीयतको जान लेता है।

(Hero as a Prophet.)

एवं इस बालक मूलशंकरकेलिये वे दो मृत्यु की घटनाएं सामान्य घटनायें न थीं । उसने मृत्यु पर पर्याप्त विचार किया । उसके याथार्थ्यको देख, उससे मुक्त होनेकेलिये प्रयत्न करनेका निश्चय किया । घरमें अपने उद्देश्यकी सिद्धिके लिये सहायक परिस्थिति न देख कर, अपितु विघातक समझकर उसने घरको छोड़ दिया । शतशः विघ्नोंके आने पर भी अपने प्रयत्नको न छोड़ा । अन्तमें मथुरामें सद्गुरुको प्राप्त कर गन्तव्य मार्गका ज्ञान प्राप्त किया ।

२. स्वामीजीका जीवन तथा मुक्तिका मार्ग

यह हम ऊपर बतला ही चुके हैं कि बालक मूलशंकरका उद्देश्य मृत्युसे मुक्त होनेका था उसीके लिये वह घरसे भागा, नाना-विध कष्टोंको झेला, व प्रलोभनोंका सामना किया । कई लोग कहा करते हैं कि यह सब कुछ कर चुकनेके बाद वह अपने उद्देश्यको भूल गया, और एकान्तमें एक निर्लेप निस्पृह योगीका जीवन बिताने के बजाय संसारके झमेलोंमें फँस गया । अन्ततः खण्डन मण्डन व नाना संस्थाओंकी स्थापना कर संस्थित हो गया । परन्तु, क्या यह विचार ठीक है ? आइये अपने नायकको अन्त समयमें मृत्युशय्यापर पड़ा हुआ जरा देखिये तो सही ! सारे शरीरपर व्रण ही व्रण हो रहे हैं । देखनेवालोंकेलिये दर्शनजन्य वेदना ही असह्य हो रही है । परन्तु उस अवस्थामें भी उस जीवन्मुक्त संन्यासीको किसी प्रकारका कष्ट नहीं । 'O God ! Thy will be done.' यह शब्द कहते हुए मुस्कराता हुआ वह मुक्तात्मा वस्तुतः ही इस शरीरबन्धनसे मुक्त हो जाता है । क्या मृत्यु पर विजय पाना कुछ और चीज़ है ? इस शरीरने तो छुटना अवश्य है । परन्तु छुटते हुए यह हमें छोड़ कष्टको देने वाला न हो, अपितु हम ही इसे एक बन्धन समझ सहर्ष छोड़ कर परम शान्तिको प्राप्त करें, यही मृत्युपर विजय पाना है, यही मुक्त होना है ।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जब परिणामको देखने पर हम पाते हैं कि हमारा नायक अपने उद्देश्यमें सफल हुआ, तब उसका सारा जीवन भी जो कि साधनरूप था वह उपयुक्त ही था, वह उसे अपने उद्देश्यकी ओर ही ले जारहा था, यह मानना ही पड़ता है। यदि साधनकी उपयुक्तता व अनुपयुक्तता उसके फलसे निश्चित की जा सकती है, यदि एक वृक्ष फलके द्वारा पहिचाना जा सकता है, तो हमारे नायकका जीवन अपने परम पुरुषार्थ (मोक्ष) की सिद्धिके लिये एक उपयुक्त ही साधन था। वस्तुतः आम लोगोंका यह विचार ही ठीक नहीं है, कि मुक्तिके लिये साधन करनेवाले व्यक्तिको इस संसारके समराङ्गणमें न आ, एकान्त विपिनप्रान्तमें ही जीवन यापन करना चाहिये। यह संसार तो कुरु-क्षेत्र है। कार्लाइल के शब्दों में "This universe is nothing but an infinite conjugation of the verb to do." गीतामें इसे 'धर्मक्षेत्र' यह विशेषण दिया है। वह एकान्तवासी योगी जो कि अपने भाइयोंको कष्टमय अवस्थामें देखता हुआ भी उनकी अवस्थाको सुधारनेके प्रयत्नको एक झंझटकी दृष्टिसे देखता है और उस झंझटमें न पड़ एकान्तवासको ही पसन्द करता है, वह धर्मसे पतित हो रहा है, उसने अपने उद्देश्य प्राप्तिकेलिये उपयुक्त साधन को समझा नहीं, उसने कर्मको एक बन्धनका कारण मान लिया है। उसे महाभारतमें दिये गये वेदसे उद्धृत उपदेशको स्मरण करना चाहिये कि "तदिदं वेदवचनं कुरु कर्म त्यजेति च। तस्मा-द् धर्मानिमान् सर्वान् नाभिमानात् समाचरेत्" वेदका उपदेश है कि मनुष्य कर्मशील जीवन व्यतीत करे। 'कुर्वन्नेवेह कर्माणि' यहाँ 'एव' शब्द, कर्म करने के अतिरिक्त कर्म न करनेका कोई मार्ग है ही नहीं, ऐसा निश्चय रूपसे प्रतिपादित कर रहा है। 'कुरु कर्म'। इस उपदेश के साथ ही 'त्यज' यह द्वितीय उपदेश किया है। 'I am the worker of it.' यह घमण्ड उसमें न हो। आइये, अपने नायक को देखिये, कि उसका जीवन उपरोक्त वेदके उपदेशके अनुकूल कहाँ तक है। उसके कार्यक्षेत्रमें उतरनेके बाद प्रारम्भका जीवन तो बहुत कुछ Obscurity (एकान्त)का है उसमें तो लोकसंग्रहके लिये कार्य करते हुए अभिमानका सम्पर्क होना कठिन ही है। मध्यका जीवन, जिसमें कि उन्होंने लोक-समाजमें लोकभाषामें ही उपदेश तथा खण्डन-मण्डनात्मक कार्य प्रारम्भ किया, उसमें उन्होंने कहीं अपनी प्रतिष्ठा प्राप्तिके उद्देश्यसे कोई कार्य किया नहीं। कहीं ट्रैक्टों के द्वारा अपनी विजय घोषणा नहीं की, भाषणों में अपनी विजयकी आत्मकथा नहीं सुनाई। एवं मध्यका जीवन भी निरभिमानतासे कर्ममें व्यतीत कर अन्तमें जब नानाविध संस्थाओंकी स्थापना की, उनमें कहीं अपने नामका सम्बन्ध नहीं किया। कहीं स्वयं प्रधान नहीं बने। उन्होंने तो यहाँ तक प्रयत्न किया कि उनका चित्र भी न लिया जा सके। कहीं उनके अनुयायी उनके व्यक्तित्वके उपासक ही न बन जाँय। एवं हमारा आजका नायक अपनी Ego का, I-nessका किसी भी प्रकारसे कोई भी चिन्ह न उत्पन्न होने देनेका पूर्ण प्रयत्न करता हुआ, एक निरभिमान कर्मशील जीवन व्यतीत कर इस संसारसे इस जनिमृतिरूप चक्रसे अतीत हो गया। हमें भी चाहिये कि हम अपना वैयक्तिक सुधार कर अपना सारा जीवन धन जोड़नेमें, Mammonकी उपासनामें ही व्यतीत न कर, निरभिमानतापूर्वक लोकसंग्रहकेलिये काम करें, और इस प्रकार शुद्ध हो परमेश(God)के उपासक हों। शुद्ध

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्वार्थमय जीवन व्यतीत करना, धनसंग्रह और भोग विलासमें पड़े रहना, यह तामस जीवन है। जीविका करते हुए प्रतिष्ठा प्राप्तिके उद्देश्यसे समाज में काम करना, और जहां समाजमें उच्च स्थान न मिले वहां उसके प्राप्त करनेके स्तुति निन्दा में प्रसित होना यह राजस जीवन है, परन्तु परम पुरुषार्थको लक्ष्य कर इस कर्मभूमिमें जब तक हैं तब तक पूर्ण निरभिमानतासे लोकसंग्रहार्थ कर्ममयजीवन व्यतीत करना यह सात्विक जीवन है। घरको छोड़ते हुए हमारे नायकने सब से निकृष्ट तामस जीवनको तो छोड़ ही दिया था। उसके बाद ओखीमठाधीश तथा जोधपुराधीश आदिके दिये गये प्रलोभनोंको लात मार उसने राजस जीवनको भी दूरसे ही त्याग दिया। सम्पूर्ण जीवनमें प्रतिष्ठा की लिप्सा नहीं की एवं सत्वप्रधान जीवन व्यतीत कर शरीरको छोड़ गुणातीत हो त्रिगुणातीत अवस्थाको प्राप्त किया। हमारेलिये हमारे नायकका जीवन आदर्श है, हमें इसे अपना लक्ष्य बना प्रतिदिन उन्नतिके मार्ग पर आक्रमण करना चाहिये।

आवश्यक स्त्री-शिक्षा-समस्या

(ले०— श्री सच्चिदानन्ददास 'बटुक', काशी)

वर्त्तमान युग क्रान्तिका है। प्राचीन सभ्यताओंका गर्व करनेवाले पूर्वीय-संसारपर इस क्रान्तिका जो प्रभाव पड़ा है, वह किसीसे छिपा नहीं।

उन्नति-मार्गमें स्त्री-पुरुषोंकाजीवन-रथ अभिलषित सीमा-तक तभी पहुंच सकता है जब, उसके दोनों पहियोंकी गति समान हो। राष्ट्र-निर्माणमें शिक्षाका बहुत बड़ा भाग है। इधर कुछ वर्षोंसे भारतीय शिक्षित जनताका ध्यान स्त्रीशिक्षाके प्रश्नपर विशेष रूप से आकृष्ट हो रहा है।

स्त्री पुरुषकी अर्धाङ्गिनी मानी गयी है। शिक्षित पुरुष और अशिक्षित स्त्रीमें समता कदापि नहीं हो सकती। आधे अङ्गके अस्वस्थ रहते हुए पूरा अङ्ग कभी स्वस्थ नहीं रह सकता, और समताके बिना परस्पर प्रेम की आशा रखना तो असम्भव ही है। जब स्त्री-पुरुषमें परस्पर मनका मेलही न होगा तो उन्नति क्या होगा?

स्त्रीको सेवा-समयमें सेवक, विपत्तिसमय में मित्र और गृह-प्रबन्धमें मन्त्री कहा गया है। सेवक, मंत्री और मित्र मूर्ख हों तो, कितना कष्ट होगा? पुनः, जब किसीके, तीनों ही मूर्ख-शिरोमणि हों तो उसकी क्या दशा होगी?

जन्म-कालसे समझदार होनेकी अवस्था तक बालक अधिकांश समय अपनी माताके पासही बिताता है, और जिसप्रकार माताके आचार, विचार, विवेक, ज्ञान, शील, स्वभाव इत्यादि होते हैं, वैसेही गुण बालकमें भी उत्पन्न हो जाते हैं। यही नहीं वरन् जो बल और शक्ति लेकर पुरुष बाह्य संसारमें निकलते हैं उसकी भी देनेवाली उनकी माताएँ ही होती हैं, अर्थात् हमारे बालकों का भार स्त्रियोंपर ही निर्भर है, और मनुष्य स्त्रियों से ही बनते हैं। पुनः, यदि उनमें अविद्या, मूर्खता एवं कुशिक्षिता प्रवाहित हों तो, उनमें कितना बल होगा, और वे मनुष्यको बनानेमें कहाँ-तक समर्थ होंगी।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पुरुषोंको तो कार्यालयमें एकही काम करना पड़ता है; किन्तु, स्त्रियोंको अपने घरके कार्यालयमें अनेक कार्य करने पड़ते हैं।

यह तो सब लोगोंको विदित ही है कि, अशिक्षित मित्रसे शिक्षित शत्रु भला; फिर, स्त्री-समाजको, जिसपर इतना गुरुतर भार हो, शिक्षासे वञ्चित रखना कहाँ तक न्याययुक्त है?

उपरोक्त बातोंको विचारते हुए स्पष्ट है कि, अशिक्षित स्त्रियोंके रहनेका परिणाम उन्नति शिखर उठानेके बदले अवनतिका गड्ढा खोदनेमें ही लग जायेंगे।

अतः, यह प्रमाणित बात है कि, किसी जाति अथवा देशकी–नैतिक, सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक—कोईभी उन्नति उसके स्त्री-समाजकी शिक्षापर ही निर्भर है।

× × ×

स्त्रियोंके बिगड़नेमें शिक्षाका कुछ दोष नहीं, वरन् दोष उनकी अज्ञानताका ही है। यदि स्त्रियाँ ही शिक्षासे बिगड़ जाती हैं तो क्या पुरुष उससे बिगड़ नहीं सकते? जो शिक्षा राष्ट्रोपयोगी नागरिक नहीं बना सकती, उसको शिक्षाके नामसे पुकारना निरी मूर्खता है।

जिन स्त्रियोंको धर्म-नीतिकी शिक्षा मिलती है, वे भूलकर भी सत्य-पथसे अलग नहीं होतीं तथा शिक्षाद्वारा तत्वको समझती हुईं अपने धर्मको नहीं तजतीं। इसके विरुद्ध जो स्त्रियाँ धर्म-नीति की शिक्षा से वञ्चित हैं, वे ही, अपने स्वभावके दोष वा कुसंगति के कारण अथवा लोभवश दुष्टजनोंकी कूटनीतिको न समझ उनके जालमें फँस जाती हैं और शीलको भ्रष्ट कर देती हैं।

शिक्षा उसीका नाम हो सकता है, जिस साधन या मार्गके द्वारा शरीर, मन और आत्माकी शक्तियाँ पूरी तरह या अधिक-से-अधिक विकसित होती हैं। "शिक्षा माता है। यह स्वाभविक पशुताको दबाकर देवत्व प्रदान करती है। दुर्गुणोंको दबाकर सद्गुणोंका विकास करती है। अच्छी बातोंको समझने और उनके अनुसार कार्य करने की क्षमता उत्पन्न करती है।" शिक्षा स्वार्थ है, सच्चे 'मैं'(अहंभाव)को विकसित करनेका। शिक्षा लालसा है, समस्त मानव-सृष्टिके उद्धारकी। शिक्षा प्रवृत्ति है, समस्त मानवबन्धुओंके सुन्दर और निर्बाध सफल जीवनयापनकी। अतः इसका क्रियात्मक रूप या परिणाम—प्रेम, अहिंसा और सेवा है। शिक्षा-सम्पन्न अथवा शिक्षित इसका मूर्त्त-रूप है। उसमें होनी चाहिये इच्छा, महदिच्छा, परमेच्छा, सच्ची और दृढ़ लगन, अपनेमें इसे क्रियात्मक रूप देनेकी।

विद्या सदा ही पवित्र है,और उसकेलिये स्त्री-पुरुष दोनों ही बराबर हैं। जो कोई उसको ग्रहण करेगा, वह पवित्र बन जायगा। जिन स्त्रियों ने उत्तम शिक्षा ग्रहण की है, वे अपनी दूसरी बहनोंको भी सुबुद्धि देकर सुधार सकती हैं; और उन्हें कोई ठग ही नहीं सकता। "चन्दन विष व्यापत नहीं, लिपटे रहत भुजंग"। अतः, यह सिद्ध है कि, शिक्षासे कभी स्त्रियाँ नहीं बिगड़ सकतीं।

× × ×

स्त्री-शिक्षाका क्या प्रकार होना चाहिये? भारतीय संस्कृति वर्त्तमान शिक्षाके अनुरूप है अथवा नहीं? किसी भी वस्तुकी उपयोगिता अथवा अनुपयोगिता, लाभ तथा हानि तज्जन्य परिणामोंसे ही भली प्रकार अनुभव हो सकती है। गत एक शताब्दीके शिक्षाके इतिहास तथा उसके परिणाम क्या सन्तोषप्रद हैं?

यदि शान्ति-पूर्वक विचार किया जाय तो, प्रत्यक मनस्वी इस बातको अनुभव करे बिना न

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

रहेगा कि आधुनिक शिक्षाने, धर्म-शिक्षाकी कमीके कारण, हमारे देशके युवकोंकी जो हीन अवस्था कर रखी है, आचार, विचार और शरीरमें घुन लगा दिया है, वह हमारी बहिनोंके लिये कदापि वाञ्छनीय नहीं है। ऐसी शिक्षा देकर अपनी बहिनों का जीवन नष्ट न करना चाहिये। भावी सन्तति—जिसपर राष्ट्रका भविष्य निर्भर है—शिक्षित माताओंद्वारा ही निर्मित होगी, अतएव, उनपर भारी उत्तरदायित्व है। इनको अनुकूल शिक्षा देना जितना आवश्यक है, उतना ही वर्त्तमान विषैली शिक्षासे बचाना भी आवश्यक है। अतएव, इनके लिए उस शिक्षाकी आवश्यकता है कि, जिसके द्वारा वे भावी भारतके निर्माणमें सहायक हो सकें। यूनिवर्सीटीकी डिग्रियोंकी उनको इतनी आवश्यकता नहीं है, जितनी वास्तविक शिक्षाकी। अर्थात् प्रथम अपने मुख्य उत्तरदायित्वका पालन करना अधिक श्रेयस्कर है।

यहाँके नारीसमाजमें तो, हमें उन्हीं प्राचीन सद्गुणोंको रक्षित रखना पड़ेगा, जिसके कारण भारतका नाम आज भी ऊँचा है। मेरी समझमें यह उचित प्रतीत होता है कि, भारतको भारत ही रखकर उसकी पुनरुन्नति करें, और सती देवियों का अनुकरण कर योग्य शिक्षा-द्वारा भारतीय सभ्यताका परिचय दें। ईश्वरने भी स्त्री-पुरुषोंको समान स्वभाव व प्रकृतिका नहीं बनाया, इनके केवल समानाधिकार ही नहीं है, अपितु माताओंके अधिकार पुरुषों से भी अधिक हैं; अतः, स्त्रियोंकोपुरुषोंकी भाँति शिक्षा देना प्राकृतिक नियमों के प्रतिकूल है।

आज हमें, अपने देशमें ऐसी वीर और शिक्षित माताओंकी आवश्यकता है, जो प्राचीन वीराङ्गनाओंकी भाँति, देश, जाति, तथा सतीत्व के मान-रक्षाके हेतु, अपने प्राण-तक अर्पण करनेमें न हिचकें, जो भारतोत्थान करें, जो हम कायरोंको धर्मका उपदेश दें और वीरताका पाठ पढ़ावें, जिससे हमारा इस पराधीनतासे पीछा छूटे।

इसके लिए, उन्हें पुस्तकीय शिक्षाके साथ-ही-साथ ऐसी शिक्षा देनी चाहिये, ऐसी-ऐसी बातें सुनानी चाहिये जिनसे बाल्यावस्थासे ही उनमें निर्भयता, साहस तथा वीरताके भाव भर जाँए; उन्हें ऐसी शिक्षा मिलनी चाहिए, जिससे वे संयोगवश संकट पड़नेपर वीरतासे कामलें अपने शत्रुका भेजा-तक बाहर निकाल सकें; उन्हें ऐसी शस्त्र-शिक्षा देनी चाहिये कि, वे अत्याचारियोंको छूरी, लाठी, बन्दूकसे मार डालने-तकमें तत्पर रह सकें; उनके मस्तिष्क ऐसे विचारोंसे भर देने चाहिएं कि, धर्म तथा सतीत्वके आगे सब धन, ऐश्वर्य्य, आभूषण और सुख तुच्छ हैं।

पुनश्च, स्त्रियोंको व्यवहार सम्बन्धी शिक्षा—धर्म, नीति, शास्त्र, गृह-प्रबन्ध, धात्री, बाल, पाक, कला-कौशल, आरोग्य, संगीत और शस्त्र शिक्षा—देना उचित है। उपरोक्त शिक्षायें देखनेमें अधिक प्रतीत होती हैं; किन्तु, अभ्यास करनेसे बहुत थोड़े समयमें सीखी जा सकती हैं।

शिक्षा-दीक्षा तथा आचार-विचार-को ध्यानमें रखकर विज्ञ-समाज स्त्री-शिक्षाकी उन्नतिमें अग्रसर होगा, ऐसी आशा ही नहीं वरन् दृढ़ विश्वास है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वीर बनो

(लेखक—श्री हरिशरण 'मराल', वकील, मेरठ)

बजी दुन्दभी, भेरी धमकी,
उठो शूर रण-धीर बनो।
जन्म-भूमि की रक्षा करलो,
आन रखो, प्रण-वीर बनो।
असुर-नाश-हित त्रिपुरारी के,
सुभटो ! तीखे तीर बनो।
देश, जाति पै मर मिटने को,
भारतीय ! अब वीर बनो॥

* * *

कायरता दो छोड़, अड़ो अब,
युद्धस्थल में बन चट्टान।
हो नृसिंह गर्जो केहरिसम,
जय निश्चय लो मन में ठान।
अविचल गिरि से रहो विपद में,
सागर सम गम्भीर बनो।
देश, जाति पै मर मिटने को,
भारतीय ! अब वीर बनो॥

* * *

अहा ! तुम्हारे पूर्व पुरुष तो,
करते थे भूतल पर राज।
नहीं देश अपना अब अपना,
पड़ी तुम्हीं पर ऐसी गाज।
हां ! दधिचि-सन्तान कहाकर,
अब तो वज्र-शरीर बनो।
देश, जाति पै मर मिटने को,
भारतीय ! अब वीर बनो॥

* * *

इसी भूमि पै तो जन्मे थे,
वीर शिवाजी और प्रताप।
हों स्वतंत्र यह मन्त्र हमारा,
करते रहें इसी का जाप।
पैज पालने को तत्पर हो,
हठ-धारी हम्मीर बनो।
देश जाति पै मर मिटने को,
भारतीय ! अब वीर बनो॥

* * *

नन्दन-बन सा फूल रहा था,
लगी उसी में है अब आग।
सदा दव अनुकूल रहा था,
हाय ! उसी का यह दुर्भाग।
उजड़ गया जो उपवन उसकी,
तुम ही सुरभि-समीर बनो।
देश, जाति पै मर मिटने को,
भारतीय ! अब वीर बनो॥

* * *

एक वार तो ज्योति जगाकर,
अन्धकार को करो विलीन।
चाहे क्षण में जीवन-दीपक,
हो अनन्त में अन्तर्लीन।
चपला सी उर-नभ में दमके,
ऐसी ललित-लकीर बनो।
देश जाति पै मर मिटने को,
भारतीय ! अब वीर बनो॥

* * *

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

गिरे हुये जो भाई नीचे,
उन्हें उठाकर करलो प्यार।
मिले तुम्हारे हृदय सिन्धु में,
उनके क्षुद्र-प्रेम की धार॥
पतितों को पावन करने को,
निर्मल गंगा-नीर बनो।
देश जाति पै मर मिटने को,
भारतीय! अब वीर बनो॥

* * *

कातर जन को शीतल कर दें,
निकलें ऐसे मीठे बोल।
शान्त-मूर्ति अभिराम राम सी,
परशु-हृदयका ले मन मोल॥
क्षमा-शील वसुधावत् होकर,
मृदुभाषी कल-कीर बनो।
देश जाति पै मर मिटने को,
भारतीय! अब वीर बनो॥

* * *

तुम भविष्य के निर्माता हो,
अतः न होना कभी निराश।
विफल-मनोरथ आज हुये तो,
कल निश्चय ही सुफल-प्रयास।
जननी की आशा के अम्बर,
मत चिन्ता के चीर बनो।
देश, जाति पै मर मिटने को,
भारतीय! अब वीर बनो॥

* * *

द्वार द्वार पर अलख जगाते,
राष्ट्र-गीत गुंजारो तुम।
जन्म-सिद्ध स्वाधीन सभी हैं,
यह ही भाव उचारो तुम॥
जगे जाति, लौ यही, साध यह,
सब कुछ त्याग फ़कीर बनो।
देश जाति पै मर मिटने को,
भारतीय! अब वीर बनो॥

* * *

देख भाल कर भी दृग नीचे,
जो अन्धों की करते होड़।
ठीक मार्ग पर लाना उनको,
विनय सहित दोनों कर जोड़।
भूले भटकों के दुःख हरने,
तुम रमते रहगीर बनो।
देश जाति पै मर मिटने को,
भारतीय! अब वीर बनो॥

* * *

चाहे विपदाओं का सिर पर,
भारी पर्वत टूट पड़े।
हो न धैर्य का बन्धन ढीला,
पड़ें कष्ट पर कष्ट कड़े॥
क्लेश न दे औरों को किंचित्,
ऐसी पर की पीर बनो।
देश, जाति पै मर मिटने को,
भारतीय! अब वीर बनो॥

* * *

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हृदय-कुञ्ज में हे बलवीरो !
विकसे नव आशा का फूल ।
जन्म-भूमि को भेंट करो फिर,
कञ्ज-कलेवर मंगल-मूल ॥
सद्योदित सौभाग्य-सूर्य्य हो,
मत फूटी तक़दीर बनो ।
देश जाति पै मर मिटने को,
भारतीय ! अब वीर बनो ॥

शौर्य्य-शील योधागण ! बढ कर,
नूतन युग में करो प्रवेश ।
महावीर बलधाम बनोगे,
तो सीधे होंगे भुवनेश ॥
विश्व-विदित यह सत्य समझ कर,
बस 'मराल' मति धीर बनो ।
देश, जाति पै मर मिटने को,
भारतीय ! अब वीर बनो ॥

वेद-भाष्यके आधारभूत सिद्धान्त

प्राक्कथन

(ले०— श्री पं. धर्मदेव जी वेदवाचस्पति)

(क्रमशः)

यदि उपर्युक्त सिद्धान्तको मान लिया जावे तो वेदके विषयमें भी हमें इसी दृष्टिसे विचार करना होगा। वेदकी प्राचीनतामें किसी भी विद्वान्को सन्देह न होना चाहिए। इसलिए वेदोंको यदि मनुष्यकृत भी मान लिया जाय, तब भी, वैदिक शब्दोंको यौगिक मानना अनिवार्य है। इस कारण प्रो०मैक्स-मूलर को भी वैदिक शब्दोंकी यौगिकता को स्वीकार करना पड़ा है। वह लिखते हैं कि "Names are to be found in the Vedas, in a still fluid state. They never appear as appelatives, nor yet as proper names, they are organic, not yet broken or smoothed down. (A History of Ancient Sanskrit Literature. p. 755.)

इसलिए यदि वेदार्थ करते समय हम निरुक्तकारके सिद्धान्तको क्रियात्मक रूप दें तो हमारा यह कार्य बुद्धिशून्य वा अनुचित न समझा जाना चाहिये। इससे हमारा यह अभिप्राय कदापि नहीं कि वेदार्थ करनेकी एकमात्र विधि शब्दका धात्वर्थ निकालना है। हमारी सम्मतिमें वैदिक शब्द ठोस पदार्थकी तरह नहीं हैं, जिनका विपरिणाम न हो सके। ये शब्द द्रवके समान तरल हैं, जो अपने आधार-प्रकरण-के अनुसार अपने अर्थका बाह्य रूप बदल भी सकते हैं। जिस प्रकार 'कर' शब्दका हरएक स्थानपर 'हाथ' अर्थ करना अपनी अनभिज्ञता प्रदर्शित करना होगा,

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उसीप्रकार, वैदिक शब्दों—देव, इन्द्र, मित्र,वरुण अग्नि आदि— का प्रत्येक स्थानपर एक ही अर्थ करना अपनी अनभिज्ञता जाहिर करना होगा। इन शब्दोंको ठोस पदार्थके समान समझना अथवा इन्हें रूढ़ि शब्द कहना भूल होगी। वेदके शब्द यौगिक हैं इसकी पुष्टिकेलिये वेदमंत्रोंकी आभ्यन्तरिक साक्षियाँ उपस्थित की जा सकती हैं। उदाहरणार्थः—अथर्ववेदके तृतीय काण्डका १३ वां सूक्त इस तरह है—

यददः संप्रयतिरहावनदता हते। तस्मादा नद्यो नाम.॥१॥
यत्प्रेषिता०। तदाप्नोदिन्द्रो वो यती स्तस्मादापो०॥२॥
अपकामं० अवीवरत् वो हि कम् इन्द्रो०
तस्माद्वार्नाम०॥३॥
एकोवो०। उदानिषुर्महीरिति तस्मादुदक-
मुच्यते॥४॥
इत्यादि.

इस मतपर जो कुछ आक्षेप किये जा सकते हैं, वे सब गार्ग्यमत स्थापन करते हुए यास्काचार्य ने संक्षेप से दे दिये हैं, और साथ ही अगले खण्ड में उनका उत्तर भी दिया है।[1] इस समय उनका निर्देश करते हुए अन्तमें फिर यही दोहराते हैं कि वैदिक शब्द यौगिक हैं, रूढ़ि नहीं।

परिणाम

इसप्रकार यदि हम उपर्युक्त स्थापना को मान लें कि "ध्वनिरहित भाषा का नाम विचार है अथवा जो विचार किसी धातु द्वारा ध्वन्यात्मक स्वरूप धारण कर लेता है वही शब्द है" तो निसर्गतः हम निम्न परिणामोंपर पहुँचते हैं—

(क) प्रत्येक वस्तु भिन्न-भिन्न प्रकारके गुणों से युक्त होती है। किसी वस्तुका एक ही पहलू नहीं होता। इसलिये जब किसी वस्तुका कोई गुण या पहलू हमारे सामने आता है तो उस गुण या पहलूके अनुकूल ही भिन्न-भिन्न विचार (Concepts) हमारे दिलमें उठते हैं। इस लिए एक वस्तुके भिन्न-भिन्न गुणों या पहलुओंके देखनेसे उत्पन्न विचारोंको भिन्न-भिन्न शब्दोंके रूपमें प्रकट करते हैं। इसलिए एक ही वस्तुके भिन्न-भिन्न गुणोंको प्रकट करने वाले भिन्न-भिन्न नाम पड़ जाते हैं। उदाहरणार्थ सूर्य है, जिसके भिन्न-भिन्न गुणों के कारण भिन्न-भिन्न नाम पड़ गये हैं।[2]

(१) स्वः = सूर्य = सु + ईरणः, = अन्धकार को दूर भगाने वाला है।

(२) पृश्निः = सूर्य = प्राश्नुते एनं वर्णः = शुभ्र-वर्णसे व्याप्त है।

(३) नाकः = सूर्य = नेता भासाम् = प्रकाशका नायक है।

(४) गौः = सूर्य = गमयति रसान् = जल खींच लेता है।

इसीप्रकार मेघके भिन्न-भिन्न नाम हैं।[2]

(१) मेघः = बादल = मेहति = जलसे सींचता है।

(२) उपलः = बादल = उपरमन्तेऽस्मिन्नभ्राणि = इस में धुंधलापन होता है।

(३) पर्वतः = बादल = पर्ववान् भवति = पर्व-वाला होता है।

इस प्रकार कई शब्दोंके उदाहरण पेश किये जा सकते हैं। एक पदार्थके बहुत सारे नाम पड़ जानेके कारण पर विचार करते हुए प्रो० मैक्स मूलर लिखते हैं—Each could express one side only of whatever had to be named,

१ निरुक्त— १। ११, १२॥

१. निरुक्त— २। ४। १४।
२. निरुक्त— २। ६। २२।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

and not satisfied with one partial name, the early framers of language, produced one name after the other. ‡

प्रो० मैक्समूलरका कहना है कि वस्तुओं के जो पहलू प्राचीन पुरुषोंके सामने आते थे उसीके अनुसार वे पदार्थका नाम रख देते थे। फिर उस नामसे असन्तुष्ट होकर दूसरा नाम रख देते थे। इस कारण प्राचीन भाषाओंमें एक पदार्थके बहुत से नाम पाये जाते हैं। परन्तु हमें यह समझमें नहीं आता कि यह क्यों स्वीकार किया जावे कि किसी वस्तुका दूसरा नाम इसलिये पड़ा कि क्योंकि पहले नामसे लोगोंको सन्तोष न था। यदि विचार ही ध्वनित होकर भाषाका रूप धारण कर लेता है, तो इसमें क्या आश्चर्य है कि किसी वस्तुके भिन्न-भिन्न गुणों या पहलुओंको देख कर भिन्न-भिन्न नाम रख दिये हों।

(ख) इसके विपरीत, दूसरा परिणाम यह निकलता है कि कुछ एक वस्तुओंमें किसी एक साम्यको देख कर उन सब वस्तुओंके एक ही नाम रख दिये हों। अर्थात् एक ही शब्द बहुत सारी वस्तुओंका द्योतक हो सकता है। 'कर' शब्दका दृष्टान्त पहले दिया जा चुका है। इस समय दो एक शब्दोंका उदाहरण देना पर्याप्त होगा। गौ शब्दके निम्न अर्थ हैं—

गौः— पृथिवी निघण्टु १। १।
गावः— रश्मयः निघण्टु १। ६।
गौः— वाणी निघण्टु १। ११।
गौः— पशुविशेषः निरुक्त २। २। ५।
गौः— आदित्यः निरुक्त २। २। ५।

इन सबमें गमनकी समानता है, इसी समानताको भिन्न-भिन्न वस्तुओंमें देख कर इन सब वस्तुओंका एक नाम रख दिया गया है। इसी प्रकार—

काष्ठा = दिशः = क्रान्त्वा स्थिता भवन्ति
काष्ठा = उपदिशाः— "
काष्ठा = आदित्यः "
काष्ठा = आज्यन्तः "
काष्ठा = आपः " निरुक्त २।५।१५।

इसीप्रकार अन्य भी कतिपय शब्द उदाहरणार्थ पेश किये जा सकते हैं।

(ग) इसके अतिरिक्त तीसरा परिणाम यह निकलता है कि किसी वस्तुके एक अंशको भी उस नामसे पुकारा जा सकता है। क्योंकि कभी २ किसी वस्तु (अवयवी) विषयक विचारात्मक शब्दसे अवयवोंको भी अभिव्यक्त कर देते हैं। इसे संस्कृत में ताद्धित प्रयोग कहते हैं। उदाहरणार्थ 'गौ' शब्दका ताद्धित प्रयोग होता है—

गौ = पशु.
गौ = दूध.
गौ = गोचर्म.
गौ = ज्या.
गौ = सरेस तथा तांत (निरुक्त. २। २। ५)

इसप्रकारके प्रयोग केवल संस्कृत भाषा में ही नहीं है, प्रत्येक भाषामें इस तरहके शब्द पाये जाते हैं। इसीकारण प्रायः सभी भारतीय भाष्यकारों ने उपर्युक्त नियमोंके अनुसार एक शब्दके अनेक अर्थ, अनेक पदार्थोंकेलिए एक शब्द तथा ताद्धित प्रयोग स्वीकार किये हैं। केवल भारतीय भाष्यकारोंने ही यह नहीं किया अपितु ग्रिफ़िथ, मैक्समूलर, ह्विटनी आदि पाश्चात्य विद्वानोंने भी बहुतसे स्थलोंपर पर इस नियमको ध्यानमें रक्खा है।

यदि निर्वचन सिद्धान्त (Synergastic theory) ठीक है, यदि शब्द यौगिक हैं, और परिणामतः

‡ A History of Ancient Sanskrit Literature. पृ० २७७, २७८

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हमारे उपर्युक्त परिणाम युक्तिसंगत और हकीकत में अपनी हस्ती रखते हैं तो यह कहनेमें हम अत्युक्ति या विचारशून्यतासे काम न ले रहे होंगे यदि हम स्वीकार करें कि बहुत सम्भवतः, इन्द्र, मित्र, वरुण, अग्नि आदि शब्द किसी वस्तुके भिन्न भिन्न पहलुओंके द्योतक भी हो सकते हैं और इनमेंसे प्रत्येक शब्द भिन्न-भिन्न पदार्थोंका अभिव्यञ्जक हो सकता है।

पाश्चात्य विद्वान् उपर्युक्त नियमोंके अनुसार गौ, काष्ठा आदि शब्दोंके अर्थ करते हैं, परन्तु अग्नि, मित्र, वरुण, इन्द्र आदिकेलिए उन नियमों का प्रयोग करते हुए संकोच करते हैं। वे इन्हें प्राकृतिक अधिष्ठातृ देव (Deified Natural Phenomena) समझते हैं, और उसके अनुसार वेदोंमें भूतवाद (Animism) तथा बहुदेवतावाद (Polytheism) आदि देखते हैं। उपर्युक्त नियमोंका इन शब्दोंकेलिये प्रयोग क्यों नहीं करते यह हमें समझमें नहीं आता।

हां, इन शब्दोंके साथ देव या देवता शब्द का सम्बन्ध होनेसे पाश्चात्य विद्वान् रोमन-साहित्य या ग्रीक साहित्यके आधारपर देवताका अर्थ God करते हैं। परन्तु हमारी सम्मतिमें, देवता शब्दका वही अर्थ या तात्पर्य समझना जो ग्रीक या रोमन साहित्यमें है, नितान्त भ्रममूलक है। इस विषयकी बाह्य साक्षियोंको छोड़ कर अन्तःसाक्षियोंसे ही हम अपने पक्षको पुष्ट करना पर्याप्त समझते हैं—

देवता विचार

देवता शब्दका क्या अर्थ है? इस से किस वस्तु विशेषका बोध होता है? यह निश्चय करनेकेलिये इसके जन्म स्थान धातुका ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है। 'देव' शब्द दिवु धातु से बना है। यह धातु क्रीड़ा विजिगीषा, व्यवहार, द्युति, स्तुति, मोद, मद, स्वप्न कान्ति तथा गति अर्थोंमें प्रयुक्त होती है। इसलिये जब 'देव' या देवता शब्दका प्रयोग करते हैं तो इसका अर्थ केवल God नहीं समझना चाहिये, प्रत्युत क्रीड़ा, द्युति, स्तुति आदि क्रियाओं वा विचारोंको प्रकट करने वाला एक शब्द समझना चाहिये। भिन्न-भिन्न स्थानोंपर भिन्न-भिन्न विचार प्रकट करनेकेलिए इसका प्रयोग हो सकता है। 'देव' शब्दको विशिष्ट व्यक्ति (Concrte noun) नहीं समझना चाहिये। इसलिये यदि केवल शब्दों की आलोचनासे भाषाके यथार्थतत्वको समझने की कोशिश करेंगे तो कभी सफल न होंगे। इसके लिये यह आवश्यक है कि हम शब्दों के भीतर विद्यमान मानसिक व्यापार को समझने की कोशिश करें। इसके साथ यह भी ज़रूरी है कि एक प्रकरणके अनुसार किसी शब्दके अर्थको जाननेकी कोशिश करें। क्योंकि भाषामें शब्द स्वतंत्र नहीं रहते। किसी भावके प्रकाशके निमित्त एक सम्पूर्ण वाक्य ही चिन्ताका स्वल्पतम उपादान या सब से छोटा अंश है। इसलिये किसी शब्दके यथार्थ तत्वको समझने के लिए वाक्यमें उस का किस तरह प्रयोग किया है, इसका अनुसन्धान करना चाहिये। निर्वचन सिद्धान्त (Synergastic theory) के माननेपर तो उपर्युक्त सिद्धान्त और भी आवश्यक मालूम पड़ने लगता है। इसलिये 'देव' शब्दका यथार्थ ज्ञान सब प्रकरणोंको देख कर कर सकते हैं। 'देव' शब्दका निर्वचन करते हुए यास्काचार्य लिखते हैं—'देवो दानाद्वा दीपनाद्वा द्योतनाद्वा द्युस्थानो भवतीति वा'। अर्थात् दिव्यता, दानशीलता, द्युति तथा द्युस्थान में रहने के कारण किसी वस्तुको 'देव' कहा जा सकता है। कहनेका तात्पर्य यह है कि जिन पदार्थोंमें यह गुण पाये जाते हैं वे 'देव' या 'देवता' कहलाते हैं। इसलिये 'देव' शब्दका वही

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ समझना जो ग्रीक साहित्य में 'Theos' का है अथवा रोमन साहित्य में Deus का है भूल होगी। उपर्युक्त दानशीलता आदि गुण विशेषके कारण प्रायः प्रत्येक वस्तु देव कही जा सकती है। अत एव यदि देवता शब्दको और अधिक स्पष्ट करना हो तो निरुक्तकार महर्षि यास्काचार्यके शब्दोंमें इस प्रकार कर सकते हैं।

"अथातो दैवतम्— तद्यानि नामानि प्राधान्यस्तुतीनां देवतानां तद्दैवत मित्याचक्षते। सैषा देवतोपपरीक्षा। यत्काम ऋषि र्यस्यां देवतायामार्थपत्यमिच्छन् स्तुतिं प्रयुङ्क्ते तद्दैवतः स मंत्रो भवति" ॥ निरुक्त ७. १. १।

अर्थात् मुख्यतया वर्णन किये जाने वाले देवताओंके नाम जिसमें वर्णित हों वह दैवत काण्ड कहलाता है। देवता परिज्ञान करनेकी विधि यह है कि सर्वद्रष्टा परमात्मा जिस अर्थके प्रकाश की कामना करता हुआ जिस देवतामें उस अर्थ के स्वामित्व की इच्छा करता हुआ जिस देवताके वर्णनको प्रयुक्त करता है वह मंत्र उस देवता वाला होता है। कहनेका तात्पर्य यह कि जिस मंत्रमें जिस वस्तुका मुख्य वर्णन हो वह उस मंत्रका देवता कहलाता है।

इसीलिये प्रत्येक वेदका अनुशीलन करने वाला व्यक्ति यह देख सकता है कि वेदमें इषुधि, रथ, कवच, वर्म, धनुष, ज्या, आर्त्नी, हस्तघ्न तथा युद्धभूमि आदि देवता शब्दसे पुकारे गये हैं। इन बातोंको देख कर प्रो० मैक्समूलरको देवता-विषयक अपने विचार बदलने पड़े हैं। वह लिखते हैं— "हमें यह कभी नहीं भूलना चाहिये कि प्राचीन देवमालामें जिसे हम देव कहते हैं वे निर्गुण तथा जीवित व्यक्ति नहीं। 'देव शब्द का जिसका हम God अनुवाद करते हैं, विशेषण या किसी गुणका अभिव्यञ्जक होनेके सिवाय और कोई तात्पर्य नहीं।

इस लिए यदि किसी मंत्र ‡ में बहुत से पदार्थों के साथ देवता शब्दका प्रयोग किया हो तो वहां वैयक्तिक देवों (Gods) का वर्णन नहीं समझना चाहिये।

परिणामतः यदि इन्द्र वरुण आदि शब्द एक वस्तुके भिन्न-भिन्न पहलुओं या गुणोंके द्योतक हैं और देवता शब्द Gods या Godsessकेलिए प्रयुक्त नहीं होता तो इन्द्र देवता, वरुण देवता आदि सम्मिलित पदोंसे ग्रीक, रोमन या पौराणिक साहित्यके अनुसार वैयक्तिक देवताओं (Gods) की कल्पना करना अनुचित होगा। अतएव वैदिक साहित्यके प्राचीन ग्रन्थोंमें इनके यौगिक अर्थ किये गये हैं। उदाहरणार्थः—

"क्षत्रं वा इन्द्रो विशो मरुतः" ॥ शत. २.५ २.२७।
"प्राणोदानौ वा इन्द्राग्नी" ॥ शत. २.५.२.८।
"अर्धमासौ मित्रावरुणौ" ॥ शत. २. ४. ४. १८।
"मनो वै सविता" ॥ ऐत. १. ३२. इत्यादि।

इसीप्रकार जमदग्नि, अत्रि, वशिष्ठ, भारद्वाज आदि भी यौगिक होनेसे विशेषणवाचक शब्द समझने चाहिएं। ऋषिविशेषके नाम नहीं हैं।

दृष्टि-कोण

बहुतसे विद्वान् विकासवादके सिद्धान्तको स्वयंसिद्ध मान कर वेदादि प्राचीन ग्रन्थोंका अनुशीलन करना प्रारम्भ करते हैं। वे लोग विकासवाद सिद्धान्तके इतना

‡ अग्निर्देवता वायुर्देवता सूर्योदेवता चन्द्रमा वसवो देवता रुद्रो देवतादित्या देवता मरुतो देवता विश्वेदेवा देवता बृहस्पतिर्देवतेन्द्रो देवता वरुणो देवता ॥ यजु १४। २०।

यस्य त्रयस्त्रिंश द्देवा अङ्गे गात्र विभेजिरे। तान्वै त्रयस्त्रिंशदेवाने ब्रह्मविदो विदुः ॥ अथर्वा १०। ७। १७

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कायल हो चुके हैं कि जब कभी किसी प्राचीन ग्रन्थ या सभ्यतापर विचार करते हैं तो उस में क्रमिक विकासको ढूंढनेका प्रयत्न करते हैं। इसके अनुसार वे सब विचारों तथा घटनाओंको ढालनेकी कोशिश करते हैं। विकासवादके सिद्धान्तको सिद्ध मानकर प्राचीन ग्रन्थोंका अनुशीलन कर किसी प्रकारकी सम्मति जाहिर करनेका वही मूल्य है जो बिना परीक्षा किये हुये ही सोनेको तांबा या हंसको बगुला कहनेका है। विकासवादका सिद्धान्त प्राचीन ग्रन्थोंका अनुशीलन करके निश्चित किया जा सकता है। बिना किसी पूर्व निर्धारित विचारके इन प्राचीन ग्रन्थों के अध्ययन की आवश्यकता है। संभव है कि एक ही काल में भिन्न-भिन्न देशोंमें भिन्न-भिन्न विचार काम कर रहे हों, जैसा कि आजकल भी दृष्टिगोचर होता है। इसलिये क्योंकि ये सब ग्रन्थ प्राचीन काल के हैं, और उससमय एक देशमें बहुदेवतावाद पाया जाता था इस वास्ते अन्य देशोंमें भी बहुदेवतावादकी विचारधारा प्रवाहित हो रही होगी यह कल्पना करना अयुक्तिसंगत होगा। इस लिये हम वेद के अध्ययनकर्ताओंसे यह निवेदन करेंगे कि विकासवादको स्वीकार करके उसे इस में ढूंढने की कोशिश न करे, प्रत्युत सब प्रकारकी कल्पनाओंको दूर करके इनका अध्ययन करें।

आधार

पाश्चात्यविद्वानोंके भाष्योंका आधार प्रारम्भमें प्रायः करके सायण, महीधर, तथा उव्वट आदिके भाष्य ही रहे हैं। महीधर आदि भाष्यकारोंने वैदिक शब्दों के अर्थ ९० % लौकिक भाषाके अनुसार किया हैं और स्वकालीन प्रचलित विचारोंको वेदों में दिखानेकी कोशिश की है। कोई भी बुद्धिमान लौकिकभाषाके अनुसार वैदिक शब्दोंके अर्थ करनेका दुस्साहस न करेगा। लौकिक भाषासे वेदोंकी भाषा जानने में पर्याप्त मात्रामें सहायता मिलती है। परन्तु लौकिक भाषाके शब्दोंके अभिप्रायके अनुकूल ही वैदिक शब्दोंका अर्थ तथा तात्पर्य समझना मूर्खता है। भाषा परिवर्तनशील है। जो भाषा प्राचीन समयमें मिश्र, ग्रीस, रोम आदि में बोली जाती थी वही भाषा आजकल भी वहां बोली जाती है यह कोई नहीं कह सकता। कुछ शब्दोंके अर्थका प्रसार होगया है। बहुतसे शब्दों का अर्थ सीमित होगया है। एलिज़ाबैथ के समयकी अंग्रेजीमें तथा आधुनिक अंग्रेजीमें बड़ा भारी अन्तर आगया है। शैक्सपीयरके काव्योंका आधुनिक प्रचलित भाषाके अनुसार अर्थ करना जिसप्रकार नासमझी है इसीप्रकार लौकिक संस्कृत भाषाके अनुसार वैदिक शब्दोंका अर्थ निर्णय करना भी नितान्त अनभिज्ञताका परिचायक होगा। इसलिये वैदिक शब्दोंके अर्थका निर्णय करनेके लिये या तो प्राचीन ग्रन्थों–ब्राह्मणों आदिका आश्रय लेना चाहिये अथवा स्वयं वेद मंत्रों से ही अर्थ निर्णय करना चाहिये। इस विषय में महर्षि दयानन्द सरस्वतीद्वारा प्रदर्शित मार्ग अधिक सहायक हो सकता है।

उपसंहार

वेदके अध्ययनकेलिये जिन आधारभूत सिद्धान्तोंका उल्लेख करना आवश्यक समझा, संक्षेपमें उन पर प्रकाश डालनेका मैंने साहस किया है। इन्हीं आधारभूत सिद्धान्तों को अंगीकार करके यह निबन्ध लिखा गया है, इसलिये इन सिद्धान्तोंकी पुष्टिमें कुछ शब्द कहनेकी आवश्यकता अनुभव हुई। उसीके अनुसार थोड़े बहुत अध्ययनसे वेदमें जो दार्शनिक विचार उपलब्ध हुए हैं उन्हें क्रमबद्ध करने का प्रयास किया गया है। मेरा यह प्रयत्न कहां

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

तक सफल तथा यथार्थ होगा यह मैं नहीं कह सकता, "प्रांशुलभ्ये फले मोहादुद्बाहुरिव वामनः" कविकी उक्तिकी तरह ही मुझे यह साहस प्रतीत होता है। हीरोंकी पहिचान जवाहरी ही कर सकता है। नानाविध रत्नोंके ढेरमें से हीरों या मोतियोंका चुनना और भी अधिक दुष्कर हो जाता है। विषयकी गूढ़ता तथा उच्चताको देख कर तो अपने प्रयासकी सफलतामें और भी अधिक सन्देह होने लगता है। महर्षि गौतम, कणाद तथा जैमिनि, शंकर आदि दार्शनिक विद्वान् भी जिसके गाम्भीर्यको अनुभव करते थे और जिस की तह में जाकर रत्न कोश को प्राप्त करना अशक्य समझते थे उसी वेद भगवानके गुह्यरत्नों को बिना तपस्या या विशेष अध्ययनके जान सकना मुझ जैसे व्यक्तिकेलिये कहां तक सम्भव हो सकता है। परन्तु तो भी 'पश्य देवस्य काव्यं न ममार न जीर्यति' इस वैदिक आदेशके अनुसार ऐसे अविनाशी दिव्य काव्यका ज्ञान प्राप्त करना उचित समझ कर कुछ प्रयास किया है। यद्यपि काव्यके मर्मको कवि लोग ही जान सकते हैं तथापि अपनी परिमित शक्तिके अनुसार इतस्ततः बिखरे हुए फूलोंको एक सूत्रमें पिरोनेका साहस किया है। अन्तमें, ईश्वरसे यही प्रार्थना है कि वह मुझे इस कार्यमें सफलता प्रदान करे।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अपराधी कौन है ?

(श्रीयुत चन्द्रगुप्त विद्यालंकार)

(१)

बंसी का जिस्म सचमुच ईश्वर की देन था। क़द तो उसका मझोला था, परन्तु सीना भरा हुआ, डौले मज़बूत और पट्ठे कसरती थे। सुबह उठते ही दो घण्टे कसरत करके दो एक काली मिरचों के साथ आध पाव भर मक्खन खाना उस का दैनिक कार्य था। सांझ को मालिश करके अपने हमजोलियों के साथ वह कुश्ती खेला करता था। गांव भर के हिन्दू नौजवानों का वह मुखिया बना हुवा था। उस के हमजोलियों में उसके समान मज़बूत दूसरा व्यक्ति नहीं था। इस कारण कुश्ती में वह एक साथ दो या तीन आदमियों का मुक़ाबला किया करता था। प्रकृति ने अपनी सारी उदारता उसके शरीर में ही खर्च कर दी थी अतः उस का दिमाग़ तो उतना अच्छा न था, परन्तु दिल का वह बड़ा साफ़ था। रोज कुश्ती के बाद गरमियों में सरदाई और सरदी के दिनों में गरम दूध का दौर चला करता था। बंसी के साथी रोज़ घरवालों से चुरा छिपा कर १०, १५ बादाम बनिये से खरीद लाते, काली मिरच और खांड का खर्च खुद बंसी के ज़िम्मे ही था। वास्तव में बात यह थी कि कुश्ती के समय बंसी ऐसा विकट रूप धारण कर लेता था कि यदि वह अपने साथियों को मुफ़्त में खांड खिलानेका प्रलोभन न देता तो उसके अखाड़े में उस के सिवाय शायद ही कोई दूसरा व्यक्ति फटकता। गांव के पतले सुकड़े नवयुवक भी बंसी के शरबत के लोभ से, उसके दो चार मज़बूत हाथ खा कर अपना मुंह या पीठ लाल करवा लिया करते। कुश्ती समाप्त होने के बाद जब सरदाई घोटने का वक्त आता तो बंसी चौधरी बन कर अपने साथियोंको खूब मज़ेदार बातें सुनाया करता था। बंसी को अत्युक्ति से प्रेम था, उस के भोले दिमाग़ को यदि कोई चीज़ पसन्द आती तो वह उस का ऐसा बखान करता कि मानो वह दुनियां में सब से अच्छी वस्तु है। वह जब किसी के बर्खिलाफ़ होजाता तो उस की रक्षा स्वयं ब्रह्मा भी नहीं कर सकते थे।

बंसी की उमर लगभग २८ बरस की थी, परन्तु वह अभी तक अविवाहित ही था। सम्भवतः उस का जन्म विवाह करने के लिये हुवा ही न था। घर में उस की मां तथा एक छोटा भाई था। आजीविका का कार्य मुख्यतया छोटे भाई पर ही आश्रित था, फिर भी घर में बंसी का सन्मान छोटे भाई की अपेक्षा बहुत अधिक था; कारण यह कि गांव में इस परिवार की प्रतिष्ठा का वास्तविक आधार बंसी ही था। गुड़गांवा ज़िले के रोहां गाव वाली यह बंसी के कसरती नौजवानों की मण्डली आसपास के दस, बारह ग्रामों तक विख्यात थी।

बंसी जहां अपने साथियों को शौक से कुश्ती लड़ना और कसरत करना सिखाता, वहां वह उन्हें देश विदेश की खबरें सुनता, नये नये विचार देता और उन में नवयुवकोचित जोश भरा करता था। वह कभी कहता कि अब हम लोगों का ज़माना है, देख लेना थोड़े ही दिनों में किसान लोग ही मुल्क में राज करने लगेंगे। विलायत में रूस नाम का

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

एक राज है, वहां लोगों ने राजा को मार दिया है और किसान लोग राज करते हैं। इसी प्रकार अपने दो एक हिन्दी के साप्ताहिक पत्रों के आधार पर वह अपने साथियों को दुनिया भर की खबरें सुनाया करता था। इस का नतीजा यह हुवा कि रौलट एक्ट के दिनों में रोहां गाँव के इन नौजवानों ने रौलट एक्ट का एक अंग्रेज़ के आकार में गधे पर जुलूस निकाला और उसे नहर के किनारे पर गांव की चौकी के सामने जाकर ही जला आए। असहयोग के दिनों में महात्मा गान्धी के दैवीय कारनामों पर इस मण्डली के लोगों को अगाध विश्वास हो गया था। ये सब के सब लोग वालण्टीअर बनने को तैयार होगये थे; इसी की बदौलत ये लोग सोचा करते थे कि स्वराज मिलने पर गांधी जी से कह कर हम लोग अपनी मालगुज़ारी माफ़ करवा लेंगे। स्वराज्य मिलने का पूरा निश्चय हो जाने के कारण, यह बंसी की पार्टी गांव के सिपाही तथा पटवारियों तक से बिलकुल निडर हो गई थी।

आजकल शुद्धि और संगटन की लहर में ये बंसी के दल के लोग हिन्दू सभा कायम कर के संगटन का प्रचार किया करते थे। गुड़गांवा नगर की हिन्दू सभा के मन्त्री ने रोहां के नायक का सम्मानास्पद पद बंसी को ही दे दिया था। अपने को सारे गांव के हिन्दुओं का लीडर पाकर आजकल कसरत के समय को छोड़ कर बंसी का सारा समय हिन्दू सभा के कार्यों और बस्ती के थोड़े से मुसलमानों की देख भाल में गुज़रता था।

(२)

बंसी को थोड़ी देर के लिये चुप हुवा देख कर पण्डित भूधरशर्मा ने फटे बांस की रगड़ के समान चिरचिराती हुई आवाज़ में कहा—"औरतों की जात का कोई विस्वास नहीं है। इन के छल को, जो है सो, स्वयं महादेव भी नहीं समझ सकते।"

बंसी अपना तेल से सना हुवा पीतलमढ़ा ठोस बांस का डण्डा लिये दरवाज़े के पास खड़ा था, पण्डित भूधर की बात सुनकर उसने एक बार अपने पास बैठी हुई दोनों हतभागिनी महिलाओं की ओर देखा, उस के बाद उसने क्रोधभरी निगाह पण्डित जी की ओर फेरी। भूधर शर्मा ने जब बंसी के समान एक हट्टे कट्टे ग्रामीण नवयुवक को अपनी ओर घूरते हुए देखा तब वह चुप हो रहे। पञ्चायत में थोड़ी देर के लिये सन्नाटा सा छा गया। थोड़ी देर के बाद इस शान्ति को भंग करते हुए हिन्दू सभा के मन्त्री ने बंसी से कहा—"हां, हां, यह तो पञ्चायत के सब लोग समझ गए कि ये दोनों मुसलमान औरतें हिन्दू बनना चाहती हैं, परन्तु यह तो बताओ कि तुमने इन्हें पाया कहां?"

बंसी ने ज़रा तेज़ी से उत्तर दिया—"यही तो कह रहा था। इन पण्डित जी को बीच ही में टोक कर गालियां देने से रोको। नहीं तो, कहे देता हूं, अच्छा न होगा।"

हिन्दू सभा के मन्त्री ने बड़ी शान्ति से कहा—"बंसी, नाराज़ होने की बात नहीं। पण्डित जी तो सिर्फ इतना ही कहना चाहते थे कि आजकल ज़माना ज़रा नाज़ुक है, इस से किसी को अपने में मिलाते हुए ज़रा संभल कर कदम रखना चाहिये। औरतों का मामला ठहरा। ऐसा न हो कि पीछे से पछताना पड़े।"

बंसी की पण्डित जी के प्रति नाराज़गी तो दूर न हुई परन्तु अब इस सम्बन्ध में और कुछ न कह कर उसने उन दोनों अबलाओं की रामकहानी सुनानी प्रारम्भ की। उसने कहा—"पञ्चो! ईश्वर के नाम पर दया धर्म से काम लेना। ये दोनों औरतें

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बहुत ही सताई हुई हैं। दोनों अपने जीवन से पूरी तरह निराश हो चुकी थीं। अब मेरे समझाने पर आप के दरबार में शरण पाने के लिये आई हैं। आप लोग इन्हें निराश न कीजियेगा।"

हिन्दू सभा के मन्त्री ने देखा कि बंसी वास्तविक घटना न सुना कर अपना लैक्चर ही झाड़ता चला जाता है, अतः उन्होंने बड़ी नरमी से बंसी को रोक कर आज की घटना स्वयं पञ्चों से कहनी प्रारम्भ की। उन्होंने कहा—"कल इस गुड़गांवा भर में यह खबर मशहूर थी कि फरीदपुर में मुसलमान लोग एक टूटे हुए मन्दिर की मरम्मत करवा उसे मस्जिद बना डालना चाहते हैं। परम्परागत किम्वदन्तियों से ज्ञात होता है कि किसी समय इस टूटे हुए मन्दिर के स्थान पर सूर्य देवता का एक प्रसिद्ध मन्दिर था। मध्यकाल में जैन लोगों ने बल पूर्वक इस मन्दिर को 'जिन भगवान' का मन्दिर बना डाला। उस के बाद नसिरुद्दीन नाम के एक खूंखार मुसलमान ने इस जिन भगवान के मन्दिर को मस्जिद के रूप में परिवर्तित कर दिया। मुसलमानी हकूमत के आखिरी दिनों में हमारे यशस्वी जाटोंने फिर से इस मस्जिद को महादेव का मन्दिर बना दिया। कालान्तर में असावधानता के कारण यह मन्दिर टूट फूट गया। फरीदपुर में मन्दिरों की कमी तो है ही नहीं इसलिये हिन्दुओं ने इस मन्दिर की मरम्मत की ओर ध्यान न दिया। अब इन दिनों मुसलमान लोग उस स्थान पर फिर से मस्जिद बना देना चाहते हैं। इसी बात पर फरीदपुर में रोज़ लड़ाई की आशंका रहती है। सरकारने वहां पोलिस की संख्या बढ़ा दी है। परन्तु फिर भी खिलाफ़ती मुसलमान दल के दल बांध कर ४, ४ या ५, ५ की टोलियों में फरीदपुर पहुंच रहे हैं। यही बात देख कर मैंने बंसी को मन्दिर की चौकसी के लिये आज प्रातः काल भेजा था। मुझे यह विश्वास था कि बंसी अकेला १०० दुश्मनों का मुकाबला कर लेगा।" इतना कह कर मंत्री महोदय ने बंसी की ओर देखा। बंसी अभी तक आश्चर्य से मंत्री जी द्वारा कही जाने वाली मन्दिर-मस्जिद-घटना का वर्णन सुन रहा था। यह देख कर उसे निराशा हो रही थी कि मंत्री जी ने अब तक उसका नाम क्यों नहीं लिया। अब अन्त में अपना नाम लिया जाता सुन कर वह सन्तोष से अपने मज़बूत डण्डे पर हाथ फेरने लगा। मंत्री महाशय ने फिर कहना प्रारम्भ किया— "अच्छा तो बंसी अपने काम के लिये आज प्रातः काल फरीदपुर जा ही रहा था कि मार्ग में नहर के किनारे उसे दो बेहोश मुसलमान औरतें पड़ी मिलीं। उन्हें होश में लाकर बंसी मेरे पास ले आया। पूछने से ज्ञात हुवा कि ये दोनों रमणियां हिन्द बनना चाहती हैं। मेरे बहुत पूछने पर भी अब तक ये दोनों अपनी राम कहानी सुनाने को तैयार नहीं हुईं। इनका कहना था कि हम पञ्चायत में ही अपनी अ.पबीती सुनाएंगी। मैंने भी यही उचित समझा। यह औरतों का संगीन मामला ठहरा, इस से मैंने भी यह काम अकेली हिन्दू सभा पर न छोड़ कर आपकी पञ्चायत का ही आश्रय लिया है। गुड़गाँवा का हित आप लोगों पर ही आश्रित है। आप इन अबलाओं की रामकहानी ध्यान से सुन कर, जैसा उचित समझें, निर्णय दीजियेगा।"

सारी पञ्चायत में सन्नाटा छा गया। गांव के बहुत से लोग चौपाल के आंगन में पञ्चायत की कार्रवाई देखने के लिये जमा हुए थे। सब के सब लोग दम साध कर उन स्त्रियों की कथा सुनने की उत्सुकता पूर्वक प्रतीक्षा करने लगे।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

(३)

मन्त्री महोदय के इशारा करते ही दोनों स्त्रियों में से बड़ी स्त्री उठ कर खड़ी होगई। धीरे धीरे अपना बुरका उतार कर उसने उपस्थित पंचों को झुक कर प्रणाम किया। लोगों ने देखा कि उस स्त्री की उमर ढल चुकी है, मुख पर कुछ २ झुरियां पड़ने लगी हैं। शरीर कृश और वर्ण गौर है। थोड़ा २ बुढ़ापा आजाने पर भी वह स्त्री बदसूरत प्रतीत नहीं होती। पंचों को नमस्कार करने के बाद उसने कुछ कांपती हुई सी, धीमी परन्तु स्पष्ट आवाज़ में कहना शुरू किया—"चौधरियो, मेरा नाम मुसम्मात बेगम है। मेरी जन्मभूमि यही गुड़-गावां गांव ही है। अपनी उमर के ये ३५ साल मैंने इसी गांव में काटे हैं, फिर भी आप लोगों में से मेरा कोई वाकिफ़ नहीं है। मैं आप के सुपरिचित कल्लू धोबी की पत्नी हूँ। यह मेरी लड़की है, इस का नाम ज़ानिब है।"

बेगम की यह बात सुनते ही सब लोग आश्चर्य चकित हो कर उस की ओर देखने लगे। कल्लू ने एक हिन्दू औरत को ज़बरदस्ती मुसलमान बना कर उससे विवाह किया था, यह बात गाँव भर के लोग भली प्रकार जानते थे। कल्लू धोबी आज-कल गुड़गांवां के मुसलमानों का तबलीगी नेता बना हुआ था। उसे इस बात पर घमण्ड था कि उस ने एक हिन्दू स्त्री को मुसलमान बना कर उस से शादी की है— अतः यह देख कर सब लोगों के विस्मय का अन्त न रहा कि वही कल्लू की पत्नी आज फिर से हिन्दू बनने के लिये क्यों उतावली हो रही है। बेगम अभी तक कहती चली जारही थी- "मैं जन्म की हिन्दू स्त्री हूँ। मेरी जन्म की जात 'अहीर' है। मुझे अपना बचपन का नाम तो याद नहीं, परन्तु इतना याद है मेरी मां मुझे 'रानी' नाम से बुलाया करती थी। मैं अभागिनी बचपन ही से दुखों की मारी हुई हूं। मेरी मां बचपन में मेरा विवाह कर के मर गई थी। जिस अहीर से मेरी शादी हुई थी, उस से कालान्तर में मेरी यह सन्तान हुई। इस लड़की का नाम मैंने नथिया रक्खा था। मैं जब २५ वर्ष की थी तब मेरे पति का देहान्त हो गया। उसके बाद से मैं विधवा हो कर जीवन व्यतीत करने लगी।"

इतना कह कर बेगम सहसा चुप होगई। उसने बंसी की ओर इशारा किया। मन्त्री जी ने जब दोनों स्त्रियों के सम्बन्ध में स्वयं कथन प्रारम्भ किया था तब, वह निराश होकर बैठ गया था। यह बात स्वयं मन्त्री जी को भी ज्ञात नहीं थी कि बेगम ने अपनी सम्पूर्ण कहानी बंसी को पहले ही सुना दी है और बंसी उसे मेहनत कर के लिख लाया है। बंसी मंत्री महोदय की बहुत इज़्ज़त करता था अतः जब उस ने देखा कि उन्होंने उसे रोककर स्वयं यह कार्य अपने पर ले लिया है, तब उसे बड़ी निराशा हुई। अब स्वयं बेगम से अनुमति पाकर बंसी फिर से प्रसन्न हो उठा। लोगों को समझ नहीं आया कि बेगम के इस इशारे का क्या अभिप्राय है, परन्तु बंसी इस की परवाह किये बिना ही अपना लिखा हुवा वक्तव्य पढ़ने लगा। उसने कहा—

(४)

"दोस्तो! करीब आठ साल पुरानी एक घटना का ज़िकर करने लगा हूं। बरसात की मौसम थी, चौमासे का दूसरा महीना था, उस साल वर्षा और सालों की अपेक्षा बहुत अधिक हो रही थी। खेतीबाड़ी का काम बन्द था। लोग घरों से बाहर भी कम निकलते थे। रोहां की गलियों में पानी जमा हो जाने के कारण बदबू और बीमारी बढ़ रही थी। प्रतिदिन इस कसबे के किसी न

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

किसी गरीब निवासी के कच्चे मकान के गिर जाने की खबर सुनाई देती थी। इन दुर्घटनाओं में किसी का वर्ष भरके लिये सञ्चित किया हुवा अनाज गीला हो जाता था और किसी के जानवर दबकर मर-जाते थे। ये सब परिस्थियां किसी निकट के भयंकर दुर्भिक्ष की सूचना दे रही थीं, परन्तु रोहां के निवासियों का ध्यान इस ओर ज़रा भी न था। उन की सम्पूर्ण बातचीत और विचारों का विषय यहां के दो मुखिया ब्राह्मणों की वैयक्तिक लड़ाई बना हुवा था। सुभीते के लिये मैं इन दोनों पुरोहितों का नाम हरिशंकर और गोपाल रख लेता हूँ। प्राचीन काल से यही दोनों घराने हमारे समाज के मुखिया समझे जाया करते थे।

इन दोनों घरानों का पारस्परिक वैमनस्य तो समाज में इन घरानों की मुख्यता बनने से भी पुराना है। 'सहज पके सो मीठा होय' के मसले के अनुसार इन दोनों घरानों में वंश परम्परा से चली आती हुई शत्रुता पं० गोपाल शर्मा और पं० हरिशंकर शर्मा के भयंकर वैर के रूप में प्रगट हुई। दोनों घरानों की तरफ़दारी कर के हमारा यह सम्पूर्ण गांव भी दो भागों में विभक्त हो गया था। दोनों ओर से कुछ लैठत भी तैयार कर लिये गए थे। यही कारण था कि उस साल बरसात की मौसम में, गांव पर भारी विपत आजाने पर भी गांव के लोगों का ध्यान उस दलबन्दी से हटा नहीं। असल में श्राद्ध के दिन निकट आरहे थे, अतः दोनों ब्राह्मणों की दलबन्दी और भी अधिक बढ़ गई थी। लोग घरों में बैठे-बैठे इसी बात की चर्चा किया करते थे। दोनों पण्डित घरानों में इतनी भयंकर लड़ाई होते हुए भी, मज़ा यह था कि दोनों पण्डितों के घर भी बिलकुल निकट-निकट ही थे। बापदादाओं के घर ठहरे, उन्हें छोड़ा तो जा ही न सकता था। लोगों में यह मशहूर था कि इन दोनों पण्डितों में हरिशंकर शर्मा परले दर्जे का धूर्त और कुटिल है। पण्डित गोपाल शर्मा यद्यपि बिलकुल महात्मा न थे, तथापि इन के हृदय में दया धर्म का पर्याप्त स्थान था। इन दोनों पण्डितों में एक का शस्त्र कुटिलता थी और दूसरे का शस्त्र सहानुभूति और भद्र व्यवहार।

एक दिन दोपहर के समय धीरे-धीरे बूंदा-बांदी हो रही थी। गलियों में थोड़ा-थोड़ा कुहरा छाया हुवा था। सब लोग खा पीकर अपने घरों में आराम कर रहे थे। इसी समय पं० गोपाल शर्मा के घर के दरवाज़े पर एक पर्दानशीन औरत आकर खड़ी हो गई। उसकी चाल ढाल और पोशाक से प्रतीत होता था कि वह कोई भद्र हिन्दू महिला है। गली में उस समय सन्नाटा था। केवल पं० हरिशंकर शर्मा के घर से किसी छोटे बालक के रोने की आवाज़ इस निस्तब्धता को भंग कर रही थी। वह हिन्दू रमणी सकुचाती हुई पं० गोपाल शर्मा के दरवाजे पर जा खड़ी हुई। भाग्य से पण्डित जी का एक अड़ियल स्वभाव का यजमान उन के बरामदे में एक खाट पर लेटे-लेटे हुक्का गुड़गुड़ा रहा था। नींद से उस की आंखें कभी कभी झपक जाती थीं, परन्तु थोड़े से झोंके लेकर वह चौंक कर जाग उठता था। अचानक इस मनुष्य की नज़र दरवाजे पर पड़ी। उसने गरज कर पूछा—"कौन है ?"

महिला ने कोई जवाब न दिया।

अब यह यजमान महोदय खाट से उतर कर खड़े हो गए। उन्होंने चिल्ला कर कहा—"अबे, अपने आप जवाब देगी, या मुझ से जवाब निकलवाएगी।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वह स्त्री भयभीत होकर दीवार की ओट में हो गई। अब तो उस मनुष्य के क्रोध का ठिकाना न रहा। वह गुस्से में भर कर चिल्लाता हुवा दरवाज़े की ओर आया। उसे शायद यह सन्देह हुवा कि पं० हरिशकंर ने किसी बदमाश को स्त्री के वेश में हमारे पुरोहित जी का खून के करने के लिये भेजा है। वह व्यक्ति बड़े ज़ोर से चिल्ला-चिल्ला कर हरिशकंर के लिये गालियां बकने लगा। आस पास के सब घरों की शान्ति भंग हो गई। इस बेलमय में कौन सी नई दुर्घटना घटी है, यह देखने के लिये समीप के सब घरों के लोग बाहर आकर खड़े होगए। यहां तक कि साथ के घर से पं० हरिशकंर भी, अपने नाम पर पड़ते हुए इन अभिशापों का स्रोत देखने के लिये बाहर चले आए। परन्तु वह अकेले नहीं आए, दो चार दण्डधारी शरीर रक्षक भी उन के साथ थे। उन्होंने देखा कि उनके नाम पर एक पर्दानशीन स्त्री को गालियां दी जा रही हैं।

इसी समय पं० गोपाल भी अपने घर से बाहर निकले। उन्होंने बाहर आते ही उस व्यक्ति का नाम लेकर पूछा—"क्या माजरा है?"

वह भलामानस अभी पण्डित जी को कुछ उत्तर देने ही वाला था कि पर्दानशीन स्त्री रोती हुई घर में घुस कर पण्डित गोपाल के पैरों पर गिर पड़ी। उस ने धीरे-धीरे सिसकियां लेते हुए कहा—"मैं बड़ी आपत्तियों की मारी हुई हूँ। मेरी रक्षा कीजिये।"

पण्डित जी ने उसे आश्वासन देकर उस से पूछा—"मुझ से क्या चाहती हो?"

उसने कहा—"मैं आप से अकेले में बात करना चाहती हूँ।"

पण्डित जी से बात करते हुए उस महिला ने अपना आवरण उतार दिया था। पण्डित जी ने देखा कि यद्यपि अपने वस्त्रों से वह किसी अत्यन्त गरीब घराने की प्रतीत होती है, तथापि उस की सुन्दरता में इस गरीबी का कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ा।

पण्डित जी एक क्षण तक तो झिझके। इस के बाद उन्हों ने उसे अपने पीछे आने का ईशारा किया। दोनों जने एक एकान्त कमरे में चले गए।

पं० गोपाल शर्मा का वह क्रोधी यजमान दुबककर बरामदे में खड़ा होरहा।

पं० हरिशंकर शर्मा इस समय तक स्तब्ध से खड़े रह कर इस घटना को देख रहे थे। जब उन्हें किसी और दर्शक ने आकर सूचना दी कि गोपाल शर्मा के पैरों का अहीर जाति की एक स्त्री ने स्पर्श किया और इस के बाद वह उसे लेकर एकान्त में चले गये, तब उन की प्रसन्नता का अन्त न रहा। उन्होंने एक दम चिल्लाना शुरू किया—"ब्राह्मण कुल कलंक! बदमाश! व्यभिचारी! किसी का धर्म भ्रष्ट कर रहा है!" लोगों को अभी तक इस सम्पूर्ण घटना का कुछ भी तात्पर्य समझ न आया था। अब सभी लोग कानाफूंसी करने लगे। पं० गोपाल शर्मा के घर के बाहर गली में एक बड़ी भीड़ जमा हो गई।

१५, २० मिनट बाद जब पण्डित गोपाल शर्मा उसी महिला को लेकर घर से बाहर आए, तब उन्होंने देखा कि उनके घर के बाहर भारी भीड़ लगी हुई है। उन के बाहर आते ही पं० हरिशंकर ने चिल्ला-चिल्ला कर उन पर आचारहीनता के भयंकर अपराधों की बौछार प्रारम्भ की। पण्डित गोपाल शर्मा जब कमरे से बाहर आए थे, तब उन का चेहरा अत्यन्त गम्भीर था, अब ज़रा सी बात पर अपने प्रतियोगी हरिशंकर को इतना बकता हुवा देख कर वह मुस्करा उठे। परन्तु वह बेचारे भ्रम में थे।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

गांव वालों ने इस ज़रा सी घटना का एक अत्यन्त गहरा अभिप्राय ले लिया। उन्होंने यह जानने की आवश्यकता भी नहीं समझी कि वह अहीर जाति की विधवा आज पहली वार क्या फरियाद ले कर यहां आई थी। गांव का वायुमण्डल पण्डित गोपाल शर्मा के एक दम प्रतिकूल होगया।

(५)

उपर्युक्त घटना के सातवें दिन ही हमारे गांव में दो भारी घटनाएँ एक साथ घटीं। इनमें से पहली घटना तो यह थी कि गाँव भर ने पण्डित गोपाल शर्मा का बहिष्कार कर दिया। ब्राह्मण हरिशंकर हमारी समाज के एकमात्र विधाता रह गए। यह घटना तो उन दिनों गाँव के बच्चे-बच्चे तक को ज्ञात थी, परन्तु दूसरी घटना को आज तक हमारे गाँव का कोई निवासी नहीं जानता।

हमारे गाँव के पश्चिम भाग में, जहां मुसलमानों की आबादी है, एक अहीर जाति की विधवा रहती थी। उस का घर मुसलमानों के घरों के बिल्कुल नज़दीक था, अर्थात् हिन्दू घरों के अन्त में उसका घर था। यह अहीर विधवा उन दिनों पूर्ण युवती थी। उसका शारीरिक सौन्दर्य अच्छे-अच्छे घरानों की नव युवतियों के लिये भी स्पृहणीय था। हमारा हिन्दू समाज इस अभागिनी विधवा की ओर बिल्कुल उपेक्षा की दृष्टि से देखता था। तथापि यह हिन्दू विधवा अपने धर्म पर स्थिर रहती थी। उसे खाने पीने और पहनने का कष्ट था, फिर भी उस ने कभी इस की परवाह नहीं की। परन्तु समाज की उस के प्रति यह अपेक्षा देख कर धीरे-धीरे उस पर एक और बड़ी भयंकर मुसीबत आगई। इस मुसीबत से भी हमारे समाज के किसी व्यक्ति ने उसे बचाने का प्रयत्न नहीं किया। उसका रूप रङ्ग देख कर पास के घरों के कुछ मुसलमान शोहदे उसे तंग करने लगे। जब कभी किसी भी काम के लिये वह बाहर निकलती, उस पर ताने कसे जाते। वे नौजवान गुण्डे रात दिन उसे घेरे रहते, उस पर बोलियां कसते। उन्हें देख कर उसकी इच्छा होती थी कि कहीं नदी में डूब कर आत्मघात करलूं। वह उनकी आवाजें सुन कर जलती थी, शर्मिन्दा होती थी, क्रोधित होती थी। यदि उस में सती के समान शाप देने की शक्ति होती, तो वह उन कुलांगारों को वहीं भस्म कर देती। परन्तु वह लाचार थी, कोई उस की मदद न करता था। वे बदमाश शोहदे उस पर ताने कसते और हिन्दू लोग भी उन्हें सुन कर हंसा करते, उन तानों का मज़ा लिया करते थे। वह बेचारी बिल्कुल निस्सहाय थी। उसके घर में एक छोटी लड़की को छोड़ कर और कोई आत्मीय नहीं था। वह कभी ईश्वर को याद कर के रोती और कभी अपनी दुरवस्था का ध्यान कर के आँसू बहाती थी। रोहां गाँव के ५, ६ हज़ार हिन्दुओं में एक भी उस का मददगार न था।

एक वार अचानक उसे याद आया कि उस के अहीर पति ने उस के सन्मुख कई वार इसी गाँव के एक बड़े भारी पण्डितजी महाराज की दयालुता का वर्णन किया था। अहीर उनके घर दूध पहुंचाने जाता था। उन का नाम पण्डित गोपाल शर्मा था। उन का घर गाँव की पूर्वीय सीमा के निकट था। सब ओर से पूर्णतः निराश हो कर अपनी दुख-कहानी सुनाने के लिये उस गरीब अहीरन ने इन्हीं पंडित जी का आश्रय लेने का निश्चय किया। अपने अच्छे से अच्छे कपड़े पहिन कर वह लोगों से उनके घर का पता पूछते-पूछते, उनके पास पहुंची। परन्तु उस अभागिनी पर शायद शनिदेवता का शाप था। वह बेचारी उनके पास पहुंच भी गई। उन्होंने उस की कहानी बड़ी सहानुभूति से सुनी भी और

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उसे आश्वासन देकर उस के उद्धार के लिये यत्न करने का वचन भी दिया। परन्तु घटनाचक्र से वह अभागिनी उन के लिये भी पत्थर की नाव सिद्ध हुई। हरिशंकर ने उन के एकान्त वार्तालाप द्वारा लोगों में जो भ्रान्ति फैला दी, उससे पण्डित गोपाल शर्मा अपना बचाव न कर सके।

उधर जब यह घटना उन आतातायी गुण्डों ने सुनी तब उनकी प्रसन्नता का पारावार न रहा उन्हें इस बात का पूर्ण विश्वास होगया कि अब उनके मार्ग में और कोई बाधा शेष नहीं रही। वे चाहे अहीर विधवा से जो कुछ करलें, अब कोई उन की ओर उङ्गली तक न उठाएगा। वे लोग निश्चिन्त होकर अपने कार्य में सिद्धि प्राप्त करने के लिये किसी षडयन्त्र की रचना करने लगे।

जिस दिन गाँव की पञ्चायत ने पं० गोपाल शर्मा का बहिष्कार किया था, उससे एक दिन पहले की घटना है। रात का समय था। दिन भर वर्षा होने के बाद आस्मान साफ़ होचुका था। गाँव की गलियों में पानी भरा होने के कारण मेंढक और झिल्लियों के शोर से कान फटे जाते थे। लोग रात का भोजन कर रहे थे। वह बेचारी अभागी अहीरन भी चौके में बैठी अपनी छोटी लड़की को दूध पिला रही थी। वह स्वयं तीन दिन से भूखी थी, इन तीन दिनों में वह एक बार भी अपने घर से बाहर न निकली थी। जिस प्रकार कष्ट मात्रा से अधिक बढ़ जाने पर शरीर चेतनाशून्य हो जाता है उसी प्रकार उस दुखिनी का भविष्य सर्वथा अन्धकारपूर्ण होजाने के कारण उसकी भविष्य-चिन्ता ही नष्ट होगई थी। उसके सामने था, केवल वर्तमान, ठोस वर्तमान। परन्तु इस वर्तमान का स्वरूप भी कुछ कम भयंकर न था। उसका घर चूने लगा था, उसे अन्दर घुसते हुए भी भय प्रतीत होता था। आंगन में मेंढक चिल्ला रहे थे। तीन दिन से वह आंगन का दरवाज़ा बन्द किए बरामदे में बैठी थी। बालिका को दूध पिलाते पिलाते अचानक उसे आंगन में किसी चीज़ के धम्म से गिरने की आवाज़ आई, उसने भयभीत हो कर देखा। अँधेरे में उसे दिखाई दिया कि उसकी मृत्यु का सन्देश लिये हुए एक मनुष्य आंगन में खड़ा है! धीरे धीरे वह मनुष्य दरवाज़े की ओर बढ़ा, उसने आंगन का दरवाज़ा खोल दिया। दरवाज़ा खुलते ही चार और मनुष्य भी अन्दर प्रविष्ट होगए। दरवाज़ा फिर से बन्द कर दिया गया। वे पांचों आदमी शीघ्रता से उस बेचारी के सामने जाकर खड़े हो गए। चूल्हे के ऊपर, दीवार के छेद में रक्खा हुवा दीपक टिमटिमा रहा था। उसके धुंधले प्रकाश में वह हिन्दू रमणी सम्पूर्ण हिन्दू जाति की असहायता का मूर्तिमान रूप धारण किये बैठी थी। भय से वह इतनी स्तब्ध हो गई थी कि उन्हें देख कर वह न हिल सकी, और न चिल्ला ही सकी। परन्तु बालिका का भय इस अचेतनता की हद्द को न पहुंचा था, वह अबोध बालिका इन ५ अपरिचित व्यक्तियों को देख कर चिल्ला उठी। उस की आवाज़ सुन कर अहीरन को भी साहस हुवा। वह चिल्ला २ कर रोने लगी। आस पास के सब हिन्दू घरों में वह करुणापूर्ण ध्वनि पहुंची। परन्तु उसे सुन कर किसी हिन्दू नवयुवक का खून न उबला। लोगों में आत्मा थी ही कहां? हां, केवल तमाशा देखने के लोभ से बहुत से लोग वहां आ जमा हुए। उन के आने से पूर्व एक मुसलमान ने अहीरन के बरतनों को और दूसरे ने उस अहीरन को छू लिया। इस के बाद वे चौके से बाहर आंगन में आकर खड़े होगये। लोगों के पूछने पर उन्होंने कहा कि हम लोग इस से दूध खरीदने आए थे; परन्तु इसने खुद ही हमें छू लिया। जब हमने इसे रोका, तो यों चिल्लाने लगी।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

लोगों को उनकी इस बात में अविश्वास का कोई कारण दिखाई न दिया। लोगों ने सोचा, जो कामुक स्त्री पण्डित गोपाल के घर में जाकर उसे धर्मभ्रष्ट कर सकती है, वह अपने घर आये हुए लोगों से क्या यह व्यवहार नहीं कर सकती ?

अगले दिन से लोगों ने अहीरन के दूध का भी बायकाट कर दिया। इसके दो दिन बादकी प्रातः काल उस अहीरन का घर खुला पाया गया। वहां कोई प्राणी नहीं था। लोगों ने उस के सम्बन्ध में भिन्न २ कल्पनाएं की। अधिकांश लोगों का यही विचार था कि उसने कन्या सहित नदी में डूब कर आत्मघात कर लिया है। परन्तु वास्तव में यह बात न थी। वह अभागिनी अत्याचार-पीड़िता मुसलमानों के आश्रय में चली गई थी। थोड़े दिन बाद ही उन पाचों गुण्डों के मुखिया एक धोबी के लड़के ने उस से विवाह कर लिया।"

इतना कह कर बंसी थोड़ी देर के लिये यह जानने के उद्देश्य से रुका कि उसके व्याख्यान लोगों पर कुछ असर भी पड़ रहा है या नहीं। लोगों ने देखा कि पण्डित भूधर शर्मा के चेहरे पर हवाइयां उड़ रही हैं।

(६)

एक बार पण्डित भूधर शर्मा के चेहरे की ओर देख कर बंसी ने कहा—"इस के बाद का वृतान्त विस्तार से सुनाने की आवश्यकता नहीं है। उस धोबी ने एक दिन के लिये भी उस अहीरन को आराम नहीं दिया। उस के यहाँ भी वह सदैव तंग और उदास रहती थी। उसे वह केवल अपनी वासना तृप्ति का साधन ही समझता रहा। ७, ८ बरस बीत जाने पर जब अहीरन की वह बालिका भी कुछ युवती होगई, तो वह बदमाश धोबी उस पर भी अपने हथकण्डे चलाने का यत्न करने लगा। इस बात की भनक मिलते ही परसों रात को उस अहीरन ने अपनी लड़की को साथ लेकर वह घर छोड़ दिया। उसने सोचा था कि नहर के किनारे जाकर वे दोनों अभागिनी मां और बेटी, अफ़ीम के द्वारा आत्मघात कर लेंगी। परन्तु अफ़ीम मात्रा से कम होने के कारण वे दोनों बेहोश तो होगईं, मर न सकीं। शायद परमात्मा की कुछ ऐसी ही इच्छा थी। इस के बाद का वृतान्त आप को ज्ञात ही है। मेरे बहुत दिलासा देने पर फिर से वे दोनों हिन्दू धर्म में आने को तैयार होगई हैं।"

इसके बाद बंसी ने बड़े मार्मिक शब्दों में अपील करते हुए कहा-"पञ्चों ! अब ज़माना बदल रहा है। अपने पुराने पापों का प्रायश्चित करलो। ईश्वर किये का फल ज़रूर देता है। तुम लोग खुद अपने पापों का फल पा रहे हो। मैंने अभी जो घटना वर्णन की है, उसे सुन कर मुझे बताओ कि इस घटना में अपराधी कौन हैं ? हिन्दू या मुसलमान ?" इतना कह कर बंसी चुप हो रहा।

बंसी के भाषण का लोगों पर भारी प्रभाव पड़ा। लोग चकित और लज्जित होकर उन दोनों आजन्म पीड़िता अबलाओं की ओर देख रहे थे। लोगों को यह समझने में देर न लगी कि बंसी की कहानी के पं० हरिशंकर शर्मा हमारे गांव के पण्डित भूधर शर्मा हैं। और पण्डित गोपाल इस गांव के पं० रामलाल शर्मा हैं।

× × × ×

अगले दिन बड़े उत्साह और समारोह द्वारा उन दोनों अभागिनी महिलाओं को अपनी जाति में मिला लिया गया। पण्डित रामलाल को पञ्चायत में बुला कर, सब पञ्चों ने उनके चरणों में सिर रख कर उनसे क्षमा मांगी। उनका भाग्य फिर से चमक उठा। पं० भूधर शर्मा का जाति बहिष्कार तो नहीं किया गया, परन्तु समाज में उनका मान बिल्कुल न रहा। वह स्वयं भी अब किसी से मिलते हुए झेंपा करते हैं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ब्रह्मचर्य की वैज्ञानिक व्याख्या

(ले०—प्रो० राहु एम० ए०)

रतीय जनता का निरन्तर ह्रास हो रहा है। जिधर देखिये उधर ही पतले सुकड़े, पीले, कमज़ोर आदमी नज़र आते हैं, कद छोटे हो रहे हैं, मानसिक शक्ति क्षीण होती जारही है। जहां पाश्चात्य देशों के मनुष्यों की औसतन आयु ४५ से ५० वर्ष तक है, वहां भारतीय २३ साल की उमर में ही कबर में विश्राम करने की तैयारी कर लेते हैं। भारत में मृत्यु संख्या बहुत अधिक है। लाखों बालक एक साल की उमर से पहले ही मर जाते हैं। इस सब का कारण क्या है? भिन्न-भिन्न लोग भिन्न-भिन्न कारण बतलायेंगे। कोई भारतीयों की गरीबी को सब अनर्थों का मूल बतलायगा। कोई राजनीतिक पराधीनता को इस ह्रास का मूल समझेगा। कोई सामाजिक बुराइयों व शिक्षा के अभाव को इस दुरवस्था का कारण कहेगा। परन्तु इन सब के अतिरिक्त मुख्य बात ब्रह्मचर्य या इन्द्रिय संयम का अभाव है, जिस से इन्कार करना किसी के लिये भी सम्भव नहीं है। भारत में जो ह्रास हमें आजकल दिखाई दे रहा है, उसका एक मूलहेतु ब्रह्मचर्य का न होना है। यही कारण है कि वर्तमान युग के सब से बड़े सुधारक स्वामी दयानन्द ने ब्रह्मचर्य पर इतना ज़ोर दिया था। इसी को दृष्टि में रख कर आजकल महात्मा गाँधी समय समय पर इन्द्रिय संयम पर नवयुवकों का ध्यान आकृष्ट करते रहते हैं। इसमें सन्देह नहीं, कि भारतकी भावी सन्तति का सुधार ब्रह्मचर्य द्वारा ही हो सकता है। इसी से शरीर, मन और आत्मा तीनों की एक साथ उन्नति सम्भव है। भारत अपनी सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक और आर्थिक दासताओं से तभी मुक्त हो सकता है, जब उसके नवयुवक शक्ति-सम्पन्न हों, उनके शरीर में बल हो और हृदय में साहस हो।

ब्रह्मचर्य पर ज़ोर तो बहुत दिया जाता है। सभी सुधारक और प्रचारक इसे सब रोगों की एकमात्र औषध बताते हैं। पुराने शास्त्रों ने भी इसका बड़ा गुणगान किया है। पर ब्रह्मचर्य है क्या चीज़? किस प्रकार ब्रह्मचर्य के नियमों का पालन किया जासकता है? इस को अब तक किसी लेखक ने स्पष्ट करने का प्रयत्न नहीं किया था। आख़िरकार, इस प्रकार का एक ग्रन्थ हिन्दी भाषा में प्रकाशित हुआ है, जिसमें ब्रह्मचर्य का ठीक ठीक स्वरूप बताया गया है, जिसमें उन बातों को बड़े स्पष्ट रूप में नवयुवकों के सम्मुख रखा गया है, जिनको जाने बिना इन्द्रियसंयम हो ही नहीं सकता। यह ग्रन्थ है— प्रो० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार का 'ब्रह्मचर्य सन्देश' †। हम चाहते हैं, कि भारत का प्रत्येक बालक व बालिका, प्रत्येक युवक व युवती-इस ग्रन्थ को आदि से लेकर अन्त तक अच्छी तरह पढ़े और सोचे। जिन बातों को इसमें बताया गया है, उनका पूरी तरह मनन करे। इनके अनुसार कार्य करे। हमें पूरा विश्वास है, कि इस ग्रन्थ को पढ़ने में जो समय लगेगा, वह नष्ट नही होगा। उसका सद्व्यय होगा, उससे जीवन में एक नई स्फूर्ति, एक नवीन उमङ्ग पैदा होगी। इस ग्रन्थ के अध्ययन से उन तथ्यों का पता लगेगा,

† यह पुस्तक 'अलङ्कार' कार्यालय, गुरुकुल काङ्गड़ी, से प्राप्त हो सकती है। मूल्य २)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जिनका अनुसरण कर भारत की वर्तमान और भावी सन्तति अपना सुधार कर सकती है। हम समझते हैं कि इस ग्रन्थ से एक बड़ी कमी पूर्ण हुई है और हिन्दी जानने वालों को इस से पूरा-पूरा लाभ उठाना चाहिये। इसी दृष्टि से इस ग्रन्थ का संक्षिप्त परिचय हम पाठकों के सम्मुख उपस्थित करना चाहते हैं।

पुस्तक के प्रारम्भ में लेखक ने प्रश्न उठाया है कि क्या यह ब्रह्मचर्य का विषय गोपनीय है? निस्सन्देह, आजकल इस विषय को गोपनीय व रहस्यमय समझा जाता है। माता-पिता बालकों को इस सम्बन्ध में पूरी तरह अन्धकार में रखते हैं, गुरुजन तो अक्षराभ्यास करा देना ही अपना कर्तव्य समझते हैं। सोसायटी में इस विषय पर बोलना ही अश्लीलता समझी जाती है। फिर अबोध बालकों का क्या अपराध, अगर वे ब्रह्मचर्य के विषय में कुछ भी ज्ञान न रखते हुवे उसके नियमों का उल्लङ्घन करें। आवश्यकता इस बात की है, कि ब्रह्मचर्य का पूरा पूरा ज्ञान बालकों को दिया जाय। इस सम्बन्ध में कोई भी बात रहस्यमय व गोपनीय न समझी जाय। लेखक ने बड़े भावुक शब्दों में इस बात के लिये अपील की है कि आजकल के माता-पिता और गुरुजन इस विषय पर ध्यान दें और इसे भी बालकों की आवश्यक शिक्षा का महत्वपूर्ण भाग समझने लगें। खेद इस बात का है कि इस विषय पर जो ज्ञान वर्तमान समय में देने का प्रयत्न हो रहा है, वह बहुत ही अश्लील और असभ्य भाषा में है। उससे सुधार के स्थान पर बिगाड़ होता है। प्रो० सत्यव्रत के ग्रन्थ की विशेषता ही यह है, कि इसमें इस नाज़ुक विषय को बहुत ही सभ्य शब्दों में प्रगट किया गया है। उसके पढ़ने से पाठकों में पवित्र भावों का संचार होता है।

विषय की उपयोगिता को स्पष्ट करने के बाद लेखक ने जनन-प्रक्रिया की वैज्ञानिक व्याख्या की है, ग्रन्थ का यह भाग बहुत उपयोगी और लाभप्रद है। जो लोग कहा करते हैं, कि बालकों को यह पूछने पर कि 'वे कहां से आये' क्या उत्तर दिया जाय, उन्हें यह अध्याय अवश्य पढ़ना चाहिये। इसमें लेखक ने बतलाया है कि वनस्पतियों तथा प्राणियों की उत्पत्ति एक ही मूल-तत्व से हुई है। इस तत्व का नाम है 'प्रोटोप्लाज़्म'। इसके भीतर हर समय दो क्रियाएँ होती रहती हैं। एक क्रिया से वह जीवन-रहित पदार्थ को अपने अन्दर लेकर जीवन का अङ्ग बना देता है, दूसरी क्रिया से जीवन के अङ्गीभूत पदार्थ को भीतर से निकाल कर जीवन-रहित बना देता है। यही क्रिया 'जीवन' का आरम्भ है। प्रोटोप्लाज़्म, जो जीवन का मूलभूत भौतिक तत्व है, जब वनस्पति जगत् का प्रारम्भ करता है तब इस का नाम 'बैक्टीरिया' होता है, और जब यह प्राणि-जगत् का प्रारम्भ करता है तब इसका नाम 'अमीबा' होता है। बैक्टीरिया से स्थावर तथा अमीबा से जंगम जगत् का प्रारम्भ होता है। इस के आगे ग्रन्थकर्ता ने न्यूक्लियस, कोष्ठ-विभजन, लिङ्ग-भेद आदि आवश्यक विषयों को बड़ी सरल भाषा में समझाया है। उत्पादन के मूल भूत सिद्धान्तों का वर्णन कर उन्हें पौधों, छोटे प्राणियों, बड़े प्राणियों तथा मनुष्यों में भी घटाकर दिखाया है। इस अध्याय को पढ़ कर एक बच्चा भी समझ सकता है कि जनन-प्रक्रिया किस प्रकार चलती है, और यह सब कुछ जानते हुए उस के हृदय में अश्लीलता की छाया तक भी नहीं पड़ सकती।

'जनन-प्रक्रिया' के आगे 'उत्पादक अंगों' का विशद रूप से वर्णन किया गया है। लेखक का कथन है—"इन अंगों के सम्बन्ध में विद्यार्थी का मस्तिष्क रहस्य के काले-काले बादलों से घिरा रहता

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

है। वे बादल घनीभूत होकर उस युवक की जीवन नौका को तूफ़ान में धकेलते हुए डांवाडोल न कर दें, इसलिये इन अंगों का ज्ञान वैज्ञानिक दृष्टि से प्रत्येक के लिये आवश्यक है।" यह लिख कर उत्पादक अंगों में से प्रत्येक अङ्ग का ऐसा स्पष्ट परन्तु वैज्ञानिक भाषा में वर्णन किया गया है जो प्रत्येक नवयुवक के पढ़ने लायक है। इस पुस्तक के एक-एक पृष्ठ को पढ़ने से मालूम होता है कि इस कठिन तथा सुकुमार विषय की वैज्ञानिक विशद व्याख्या किस प्रकार की जा सकती है।

'ब्रह्मचर्य्य सन्देश' का ५वां अध्याय 'यौवन तथा पुरुषत्व' पर लिखा गया है। डा० कोवन के शब्दों में लेखक का कथन है—'यह समझना बड़ी भारी भूल है कि किशोरावस्था का प्रारम्भ विवाह के लिये अनुकूल समय है। लोगों का यह समझना, कि इस समय स्त्री विवाह तथा सन्तानोत्पत्ति के योग्य होगई है, भ्रममूलक है। शरीर-क्रिया-विज्ञान के अनुसार विवाह सदा समुन्नत-शरीर पुरुष तथा स्त्री में ही होना चाहिये। किशोरावस्था के प्रारम्भ में शरीर की अस्थियां पूर्णरूप से उन्नत नहीं होतीं, जिस का अर्थ यह है कि उत्पादक-तत्व अभी पूर्णरूप से परिपुष्ट नहीं हुआ होता।' इसके बाद लेखक ने 'पुरुषत्व' की वैज्ञानिक व्याख्या की है। उनका कथन है—'किशोरावस्था में शारीरिक तथा मानसिक परिवर्तन होने का कारण अण्ड कोशों का ही अन्तः तथा बहिः स्राव है। इसी लिये जिन व्यक्तियों के अण्डकोश निकाल दिये जाते हैं उन में पुरुषत्व नहीं आता। एक ही आयु तथा एक ही वंश के दो बछड़े लेकर उन में से एक के अण्डकोश काट दिये जांय और दूसरे के प्राकृतिक तौर पर बढ़ने दिए जायं तो साल भर में दोनों में बड़ा भारी भेद स्पष्ट दीख पड़ेगा। जिस का अण्डच्छेद नहीं किया गया, उस प्राणी का शरीर पूर्ण रूप से विकसित, शक्तिशाली तथा असीम उत्साह से भरा हुआ होगा; परन्तु उसके साथी की गर्दन और सींग छोटे-छोटे होंगे, माथे पर ज़रा से बाल तथा भोली शक्ल पर कमज़ोरी के निशान दिखाई देंगे। यही अवस्था घोड़े की भी होगी।' इसके आगे लिखा है—'अण्डकोशों के अन्तः स्राव से ही पुरुष में पुरुषत्व तथा स्त्री में स्त्रीत्व आता है। अमेरिका में ऐसे परीक्षण किये जा रहे हैं, जिन में इन ग्रन्थियों को एक व्यक्ति के शरीर में से निकाल कर दूसरे के शरीर में जोड़ देने से उसकी सारी प्रक्रिया ही बदल जाती है। पुरुषों की ग्रन्थियां निकाल डालने से उनका पुरुषत्व रुक जाता हो, इतनी ही नहीं, परन्तु जिन का पुरुषत्व खो जाता है उन के शरीर में इन ग्रन्थियों का रस डालने से खोया हुआ पुरुषत्व लौट आता है। यदि यह बात सत्य है तो प्राचीन आर्यों का यह विचार, कि ब्रह्मचर्य्य से मृत्यु को जीता जा सकता है, ठीक है। ब्रह्मचर्य्य का अभिप्राय, शरीर-क्रिया-विज्ञान की दृष्टि से, इन जनन-ग्रन्थियों को स्वस्थ रखना ही तो है। ब्रह्मचारी को जनन ग्रन्थियों के स्राव का संयम करना चाहिये क्योंकि इस से आयु तथा स्वास्थ्य दोनों का लाभ होता है और कुचेष्टाओं से उत्पादक-ग्रन्थियां क्षीण हो जाती हैं।' ऊर्ध्व रेता तथा आदित्य ब्रह्मचारी की व्याख्या करते हुए लिखा है—'प्राचीन काल के योगी लोग ऐसे-ऐसे अभ्यास जानते थे, जिन के द्वारा बहिःस्राव शरीर के रक्त में पुनः संचरित होकर जीवन में नूतन शक्ति को भर देता था। ऐसे महात्माओं को ऊर्ध्वरेता या आदित्य ब्रह्मचारी कहा जाता था।'

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

छटे से लेकर दसवें अध्यायों में 'इन्द्रिय निग्रह' पर खूब विस्तार से लिखा गया है। लेखक का कथन है कि जीवन दो प्रकार का होता है, स्वाभाविक तथ अस्वाभाविक। यदि स्वाभाविक जीवन व्यतीत किया जाय तो इन्द्रिय निग्रह का प्रश्न ही नहीं उठता, इन्द्रिय निग्रह स्वयं हो जाता है, उसके लिये प्रयत्न नहीं करना पड़ता। परन्तु आजकल हमारा जीवन अत्यन्त अस्वाभाविक हो रहा है। इस अस्वाभाविक जीवन से ही संयम टूटता है। संयम को दो प्रकार से तोड़ा जा रहा है; जानते बूझते हुए, या अनजाने। जान बूझ कर संयम तोड़ने को लेखक ने तीन भागों में बांटा है—आत्म व्यभिचार (हस्त मैथुनादि), पत्नी व्यभिचार तथा वेश्या व्यभिचार। अनजाने संयम तोड़ने या टूट जाने को लेखक ने स्वप्नदोष का नाम दिया है। इस प्रकार इस ग्रन्थ में आत्म व्यभिचार, पत्नी व्यभिचार, वेश्या व्यभिचार तथा स्वप्नदोष इन चार शीर्षकों से चार विस्तृत अध्याय लिखे गये हैं जो सम्पूर्ण नवयुवकों तथा नवयुवतियों के मनन करने योग्य हैं। इन में भी आत्म व्यभिचार तथा स्वप्नदोष के अध्याय युवक समाज के लिये विशेष महत्व के हैं। इन दोनों अध्यायों में उक्त बीमारियों के कारणों, परिणामों तथा उपचारों पर विस्तार पूर्वक लिखा गया है। 'आत्म-व्यभिचार' अध्याय में लेखक ने कुछ ऐसे युवकों की जीवन घटनाएँ दी हैं, जिन्हों ने हस्त मैथुन की कुचेष्टा का शिकार होने का अपना सम्पूर्ण इतिहास लिखा है। इन घटनाओं को पढ़ कर मनोविज्ञान का विद्यार्थी ऐसी आदतों से छुटकारा पाने के लिये बहुत कुछ सीख सकता है। इन घटनाओं का उल्लेख कर के ग्रन्थकर्ता ने लिखा है—'पाठक! इन अनुभवों के साथ अपने जीवन की नोटबुक मिला कर देखो। क्या इन अनुभवों में तुम्हें अपने जीवन की घटनाओं की प्रतिध्वनि सुनाई नहीं पड़ती? क्या तुम भी बाल्य ऋतु की किसी स्मरणकाल, एकान्त में बैठ कर, किसी दिन, किसी पाठशाला के स्कूल में तो नहीं पड़ गये थे, अपने स्वप्न के किसी साथी के शिकार तो नहीं बन गये थे? क्या तुम्हें याद नहीं कि पहले-पहल तुम में प्रतिरोध करने की इच्छा वेग से उठी थी—तुम ने खूब बल लगा कर बचने की कोशिश की, परन्तु अफ़सोस, तुम्हारे शिकारी ने अपना पञ्जा ढीला न होने दिया। आह! आत्मा की निर्बलता का वह क्षण, देव तथा असुर भाव का वह संग्राम! तुम ने उस समय अपने को ढीला छोड़ दिया! पत्ते को आंधी उड़ा ले गई, तिनके को दरिया बहा ले गया। इस गिरावट के अगले क्षण तुम्हारी क्या दशा हुई थी!—लज्जा के मारे तुम ज़मीन में गड़े जा रहे थे; यह लज्जा नहीं, लज्जा का ज्वर था! क्या उस समय तुम्हें अपने अन्तरात्मा से घृणा नहीं हो गई थी? क्या उस समय तुमने पश्चात्तापपूर्ण हृदय से परमात्मा के सम्मुख हाथ जोड़ कर निस्सहाय अवस्था में यह प्रार्थना नहीं की थी, कि यदि फिर दुबारा तुम्हारे आत्मा की पवित्रता पर ऐसा ही हमला हो तो शक्तिमान् भगवान् तुम्हें उच्च-स्वर से 'नकार' कहने की शक्ति दें? और क्या फिर परीक्षा का अवसर उपस्थित नहीं हुआ; और क्या उस समय भी प्रतिरोध, प्रलोभन की प्रबलता तथा अन्त में तुम्हारी लज्जा-जनक हार नहीं हुई? क्या उस समय तुम पर लज्जा का पहाड़ नहीं टूट पड़ा? क्या उस समय तुम में अपने मुख को दर्पण में देखने की शक्ति रह गई थी? और क्या यह किस्सा तुम्हारे जीवन में बार-बार दोहराया नहीं जाता रहा? यहाँ तक कि अन्त में तुम्हारी प्रतिरोध-शक्ति सर्वथा नष्ट हो गई और तुम इस

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

घातक आदत के पूर्णतया दास हो गये ? ऐसे क्षण भी आये जब कि तुम ने इस आदत से छुटकारा पाने के लिये हाथ-पाँव मारे, शायद कभी-कभी तुम ने समझा भी कि तुम छूट गये, परन्तु तुम्हारी निराशा, आश्चर्य और दुःख का पारावार न रहा जब तुम्हें एक भयंकर अँधेरी रात को यह मालूम हुआ कि अर्ध-निद्रित अवस्था में तुम इस आदत के गुलाम हो रहे थे ! ये अनुभव हैं जो प्रायः प्रत्येक नवयुवक को अपने जीवन में प्राप्त हुए होंगे !!"

१२ से १६ अध्यायों में 'इन्द्रि-निग्रह' पर ऐसा वैज्ञानिक विवेचन किया गया है, जैसा हम ने किसी अन्य पुस्तक में नहीं देखा। इन अध्यायों की एक-एक बात पाठक का ब्रह्मचर्य्य में विश्वास दृढ़ कराती है। स्थानाभाव से हम इन अध्यायों के उद्धरण यहाँ पर नहीं दे सकते।

इस पुस्तक से निस्सन्देह जहाँ ब्रह्मचर्य्य के महान् सिद्धान्त के प्रचार में सहायता पहुँचेगी वहां हिन्दी भाषा का भी मुख उज्वल होगा।

श्रद्धानन्द-सप्तक

(श्री पं० चमूपति जी एम० ए०)

किया स्वदेश स्वजाति का, सीस वार उद्धार।
अश्रद्धा-युग में हुए, श्रद्धा के अवतार ॥

कहते लोग वकील हा ! छोड़ रहा घरबार।
हिमगिरि सुरसरि सोचते, अहो ! बड़ा परिवार ॥

भारत के सब जाय हैं, जग जननी के पूत।
छूमन्तर से शुद्धि के, करदी छूत अछूत ॥

घर में जा अल्लाह के, दिया खूब उपदेश।
अल्लह औ' प्रभु एक हैं, तजो द्वैत औ' द्वेष ॥

घुस न सकी सरकार की, जिस उर में संगीन।
देश-बन्धु की गोलियां, हुई वहीं लव-लीन ॥

दयानन्द की वेदी पर, दिया सीस-बलिदान।
लेखराम के सत्सखा, मुन्शीराम महान् ॥

आर्य-तत्व के स्नेह का, जलता जहां प्रदीप।
उस निज प्रिय कुल के रहो, स्वामिन् ! सदा समीप ॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पाणिनि द्वारा वर्णित प्रजातन्त्र राज्य

(ले०—श्रीयुत सर्वमित्र जी)

पाणिनि ने अपनी अष्टाध्यायी में भिन्न भिन्न शब्दों के निर्माण के लिये भिन्न भिन्न नियम बनाएहैं। उनमें संघ से सम्बन्ध रखने वाले शब्द भी हैं। पाणिनि ने उनका भी वर्णन किया है। इस प्रकार इस राजनीतिक झंझटों से छूटे हुए व्यक्ति से भी अपनी सत्ता स्वीकार कराना संघों की प्रमुखता को सूचित करता है। पाणिनि ने निम्न गणराज्यों का वर्णन किया है[1]—

१. वृक = वृकाट्टेण्यण् (५. ३. ११५)
२. दामनि = दामन्यादि—
३. त्रिगर्तषष्ठ = त्रिगर्तषष्ठाच्छः (५. ३. ११६)

यह ६ गणराज्यों का संघ (League) था। इसमें निम्न लिखित ६ गणराज्य सम्मिलित थे।

(i) कौण्डोपरथ
(ii) पाण्डकी
(iii) कौष्टुकि
(iv) जालमानि
(v) ब्रह्मगुप्त
(vi) जालकि

} त्रिगर्तषष्ठ[2]

४. यौधेय आदि
५. पार्श्वादि

} = पार्श्वादियौधेयादिभ्योऽणञौ (५. ३. ११७)

पाणिनि इन्हें 'आयुधजीविनः' कहता है। कौटिल्य 'आयुध जीविनः' के स्थान पर 'शस्त्रोपजीविनः' शब्द का प्रयोग करता है। इस से प्रतीत लगता है कि ये सैनिक पेशा संघ थे। पर यह इस का वास्तविक अर्थ नहीं है। कौटिल्य गणराज्यों के शासन विधान के दो भेद करता है— १. शस्त्रोपजीविनः और २. राजशब्दोपजीविनः। 'राजशब्दोपजीविनः' का अर्थ है, संघों के वे शासक जो अपने आगे राजा की उपाधि लगाएं। यहां यह अर्थ तो हो नहीं सकता कि वे संघ 'राजा' के शब्द से अपना निर्वाह करते हैं। 'उपजीविनः' का अर्थ केवल निर्वाह करने वाले ही नहीं हैं पर इसका एक दूसरा अर्थ भी हैं। मनुस्मृति के टीकाकार कुल्लूक भट्ट ने 'उपजीवेयुः' का अर्थ 'अनुत्तिष्ठेयुः[3]' किया है। इससे शस्त्रोपजीविनः का अर्थ स्पष्ट होजाता है— अर्थात् वे संघ सैनिक शिक्षा प्राप्त करते थे। उन्होंने सैनिक चातुर्य को चरम सीमा तक पहुंचा दिया था।

ग्रीक लेखक भी इस अर्थ से सहमत हैं। ग्रीक लेखकों ने[1] पार्णिनि के 'आयुधजीवि संघ' क्षुद्रक और मालव के विषय में लिखा है कि इसकी आबादी बहुत अधिक थी। उनका राज्य लम्बा चौड़ा था। उसमें कई शहर थे। ये नगर अतीव सुन्दर थे। इन लोगों ने नागरिक जीवन को प्राप्त किया था। इस वर्णन से स्पष्ट है कि ग्रीक लोग आयुध-जीवि-संघ को

१. अवनीन्द्र कुमार विद्यालंकार— अलंकार (१९८४) १२०- १२८ पृष्ठ

२. आहुस्त्रिगर्तषष्ठांस्तु कौण्डोपरथदाण्ड की।
कौष्टुकिर्जालमानिश्च ब्रह्मगुप्तौऽथजालकिः ॥ काशिका पृ० ४५६

३. ब्राह्मणाः ब्रह्मयोनिस्थाः ये स्वकर्म व्यवस्थिताः।
ते सम्यक् उपजीवेयुः षट् कर्माणि यथाक्रमम् ॥७४॥
अध्यापनमध्ययनं यजनं याजनं तथा।
दानं प्रतिग्रहश्चैव षटकर्माण्यग्र जन्मनः ॥ ७५ ॥ मनुः १०
कुल्लूक—उपजीवेयुः—अनुत्तिष्ठेयुः

१. Curtius. Bk IX. Ch. IV

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सैनिक पेशा नहीं समझते थे। परन्तु वे लोग कहते हैं कि इन संघों में सैनिक चातुर्य अपनी चरम सीमा तक पहुंच गया था। इन्हीं आयुधजीवि संघों में से अकेले क्षुद्रक संघ ने ही सिकन्दर को जीत लिया था। पतञ्जलि ने अपने महाभाष्य में इनकी ओर निर्देश भी किया है। इसके अतिरिक्त ग्रीक लोगों ने ऐसे संघों का भी वर्णन किया है जहां कि सैनिक चातुर्य पर बहुत ध्यान नहीं दिया जाता था। रङ्गवी लिखता है कि मुसीकनी संघ किसी भी विषय में युद्धादि में-जीत करना बुरा समझते थे। इससे स्पष्ट है कि दो प्रकार के संघ हुआ करते थे। एक तो वे जहां सैनिक चातुर्य की चरम सीमा तक पहुंचा दिया जाता था और दूसरे वे जहां इस की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता। ये विभिन्न शासन विधानों की विशेषताएं हैं।

इनके अतिरिक्त पाणिनि निम्न संघों का भी उल्लेख करता है। ग्रीक लेखकों या बौद्ध साहित्य से ज्ञात होता है कि ये भी संघराज्य थे।

(१) मद्र[४]
(२) वृञ्जि[४]
(३) राजन्य[५]
(४) अन्धकवृष्णि[६]
(५) महाराज[७]
(६) भर्ग[८]

इन सब संघों पर विस्तार से पीछे कहेंगे। केवल अन्धकवृष्णि संघ का ही यहां विस्तार से वर्णन करेंगे। अन्धकवृष्णि संघ आधुनिक परिभाषा में Coneferation था। इनके दो सभापति होते थे। कृष्ण इसी संघ का निर्वाचित राजा था। पुराणों में इन्हें सात्वत कहा गया है, और ऐतरेय-ब्राह्मण[९] के अनुसार सात्वतों का शासन विधान 'भोज्य' था। इनके शासकों को भोज कहते थे। महाभारत[१०] में इस संघ के शासकों को भोज कहा है। इसके साथ ही यादवों की एक शाखा का नाम भी भोज है। महाभारत के सभापर्व में लिखा है कि दशार्ण (वृष्णी) राजारहित थे[१]। इनको शाप दिया गया था कि तुम में कोई अभिषिक्त राजा न होगा। शान्तिपर्व के ८४ वें अध्याय से स्पष्ट है कि अन्धक वृष्णि एक संघ (Confederation) था। सब परस्पर स्वतन्त्र थे। इनके दो सभापति होते थे। इनके कई सिक्के उपलब्ध हुए हैं, उनसे इस पर प्रकाश पड़ता है। वे सिक्के गण की ओर से प्रचलित किये गये हैं[२]। पर वृष्णियों के सिक्के अन्य गणराज्यों से भिन्न हैं। मालव, यौधेय और अर्जुनायनगणों की मुद्राओं पर अङ्कित हैं—मालवगणस्य जयः", "यौधेयगणस्य जयः", "अर्जुनायनगणस्य जयः"। पर वृष्णिसंघ की मुद्रा पर अङ्कित है "वृष्णिराजन्यगणस्य जयः"। यहाँ गण और राजन्य इकट्ठे आए हैं। यहाँ राजन्य का अभिप्राय राजा तो हो ही नहीं सकता, क्योंकि राजा और गण का कोई सम्बन्ध नहीं। पाणिनि इस विषय में प्रकाश डालता है। पाणिनि का "राजन्यबहुवचन द्वन्द्वे-

२. एकाकिभिक्षुप्रकैर्जितम् Kielnorn, II. P, 412
३. " " xv ३१
४. मद्रवृज्योःकन् । ४ । २ । १३१ ।
५. राजन्यादिभ्यो वुञ् । ४ । २ । ५३ ।
६. राजन्यबहुवचन द्वन्द्वेन्धकवृष्णिषु । ६ । २ । ३४ ।
७. महाराजाद्वञ् । ४ । ३ । ९७ ।
८. न प्राच्यभर्गादियौधेयादिभ्यः । ४ । १ । १७८ ।

९ अष्टाध्यायी ८ । १४ ।
१०. " ३७ ।
१. ३७-५
२. Cunnuingham. Coins of Ancient India, P. 71
3. Ibid PP. 77 89

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

न्धकवृष्णिषु"[४] यह सूत्र सूचित कर रहा है कि अन्धक और वृष्णिसंघ के दो राजन्य थे। काशिकाकार कहते हैं, कि यह नियम अन्धकवृष्णिसंघ के सभ्यों में लागू नहीं होता, केवल राज्यों में ही लगता है।[५] स्पार्टा की तरह इनके दो राजा होते थे। कात्यायन ने अक्रूर और वासुदेव के दलों का निर्देश किया है।[६] महाभारत में अन्धकों का नेता अक्रूर लिखा है और राजन्यों के युगल बदल कर आते हैं—वासुदेव और उग्रसेन, अक्रूर और वासुदेव, शिनि और वासुदेव। इससे स्पष्ट है कि राजन्य चुने भी जाते थे।

इन संघों के अङ्क और लक्षण अलग-अलग होते थे।[७] श्री जायसवाल ने 'लक्षण' का अर्थ मुद्रा या मोहर का स्थिर निशान और 'अङ्क' का अर्थ शासकों के परिवर्तन के साथ परिवर्तित होने वाला चिन्ह किया है।[८] इसके अतिरिक्त नगर की सभाओं की मुद्राओं के भी अलग-अलग अङ्क और लक्षण थे।[९]

इन में से कई संघों की दो नियामक सभाएं थीं और कइयों की एक। पाणिनि इन्हें 'उत्तराधार्य' और 'अनत्तराधार्य' शब्दों से सूचित करता है।[१०] 'उत्तराधार्य' में दो नियामक सभाएँ थी और 'अनुत्तराधार्य' में एक। पाली साहित्य में इनके लिये 'काय' और 'निकाय' शब्द आये हैं। पाणिनि तीन निकायों का नाम बताता है। सपिण्ड निकाय, मौण्ड्यनिकाय, चिक्कणीनिकाय।[११]

४. ६। २। ३४

५. राजन्यवाचिनां बहुवचनान्तानां यो द्वन्द्वोऽन्धकवृष्णिषु वर्तते, तत्र पूर्वपदं प्रकृतिस्वरं भवति। श्वाफल्कचैत्राः, शिनिवासुदेवाः। ·····अन्धकवृष्णय एते न तु राजन्याः। राजन्य ग्रहणमिह अभिषिक्तवंश्यानां क्षत्रियाणां ग्रहणार्थम्। एतेचनाभिषिक्तवंश्याः। ····· बहुवचनग्रहणं किम् संकर्षण वासुदेवौ।·····"पृ० ५४६७

६. अक्रूरवयर्ग्यः। अक्रूरवर्गीणः। वासुदेवधर्मिणः पाणिनि के ४। २। १०४ पर

७. संघाकलक्षणेष्वज्ञजिजाण। ४ ५। १२७। पाणिनि

८. Jayasaval-Hindu Polity—P. 42, 43.

९. घोषग्रहणमपि कर्तव्यम्। ४२ । ४ ।२ १२७ पर

१०. संघेचानौत्तराधार्ये ३। ३। पर वार्तिक।

११. Jayasaval-Hindus Polity—P, dd

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

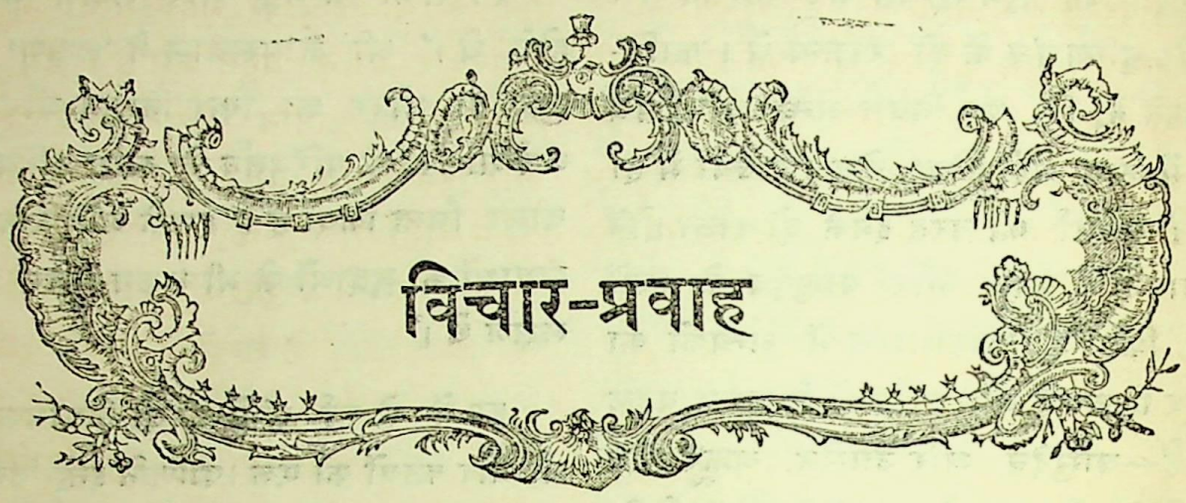

विचार-प्रवाह

१. कौन्वेन्शन और सिक्ख

कौन्वेन्शन के सम्बन्ध में एक बात हमें खुले दिल से स्वीकार कर लेनी चाहिये। वह यह कि कौन्वेन्शन ने सिक्खों के साथ न्याय नहीं किया। स्वयं महात्मा गान्धी और महामना मालवीय जी जैसे व्यक्तियों ने इस तथ्य को स्पष्ट रूप में स्वीकार किया है। सिक्ख लोग पञ्जाब का एक बहुत ही महत्वपूर्ण अल्पमत हैं। उनके अधिकारों की अवहेलना करना नितान्त अनुचित होगा। सिद्धान्त रूप में हमारा यह स्थिर विश्वास है कि भारतवर्ष में से साम्प्रदायिक निर्वाचन की प्रथा जितनी शीघ्र नष्ट हो जाय, उतना ही इस देश का कल्याण है। साथ ही किसी खास सम्प्रदाय के लिये व्यवस्थापिका सभाओं में, स्थान सुरक्षित करना भी हमारी सम्मति में सिद्धान्त रूप से उचित नहीं है। यह होते हुए भी हम इस बात को स्वीकार करते हैं कि देश के वर्तमान अविश्वासमय वायुमण्डल में अल्पमत के सम्प्रदायों की, स्थान सुरक्षित करवाने की मांग भी अस्वाभाविक नहीं है। यही कारण है कि नेहरू रिपोर्ट ने मुसलमानों की इस मांग को, उन प्रान्तों में जहां उनका अल्पमत है, स्वीकार कर लिया है। हम इसे बुरा या अनुचित नहीं कह सकते। परन्तु ठीक इसी युक्ति के आधार पर, हमारा विचार है कि वही रियायत पञ्जाब में सिक्खों के साथ भी की जानी चाहिये थी। हम पहिले ही कह चुके हैं कि सिक्ख लोग पञ्जाब की एक अत्यधिक महत्व पूर्ण अल्प संख्या है। पञ्जाब के भूमि कर का चालीस प्रतिशत भाग सिक्खों द्वारा दिया जाता है। पञ्जाब में सम्भवतः एक भी ज़िला ऐसा नहीं, जिस में सिक्खों का पूर्ण बहुमत हो। यह महत्वपूर्ण जाति सम्पूर्ण पञ्जाब में, बिखरे हुए रूप में फैली हुई है। इस अवस्था में यदि साम्प्रदायिक आधार पर निर्वाचन किया जाय तो पञ्जाब की व्यवस्थापिका सभा में अवश्य ही सिक्ख लोग अपनी संख्या से भी कम अनुपात में निर्वाचित होंगे, क्योंकि नेहरू रिपोर्ट में उनके लिये कोई स्थान सुरक्षित नहीं किया गया है। इस लिये हमारा विचार है कि, यदि सिक्ख लोग चाहें तो, पञ्जाब में उनके लिये उन की आबादी के अनुपात से स्थान अवश्य सुरक्षित कर देने चाहियें। सिक्ख लोग इस बात की मांग कर रहे हैं, इसका सब से बड़ा प्रमाण यह है कि कौन्वेन्शन में यह मांग आने पर सिक्ख सम्प्रदाय के सरदार मङ्गल-सिंह जैसे नेता ने भी-जो स्वयं नेहरू कमेटी के सदस्य थे— इस मांग के पक्ष में अपना मत दिया था।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कौन्वेन्शन का कलकत्ता अधिवेशन तो समाप्त होगया है। परन्तु सभापति ने यह घोषणा की है कि इस महत्वपूर्ण संघ का एक और अधिवेशन भी, कोई उचित अवसर पाकर अवश्य किया जायगा, अतः किसी दल को निराश नहीं होजाना चाहिये। हमें पूर्ण आशा है कि कौन्वेन्शन का आगामीअधिवेशन और भी अधिक आशापूर्ण और व्यापक होगा।

२. औपनिवेशिक स्वराज्य बनाम पूर्ण स्वाधीनता

कौन्वेन्शन की बैठक में जिन प्रश्नों पर खूब प्रबलता से वादविवाद हुआ, उन में से एक प्रश्न औपनिवेशिक स्वराज्य और पूर्ण स्वाधीनता का भी था। अन्त में औपनिवेशिक स्वराज्य का प्रस्ताव बहुत बड़े बहुमत से स्वीकार हुवा, इस बात का हमें हार्दिक सन्तोष है। हम इस प्रश्न की तार्किक मीमांसा करना उचित नहीं समझते। व्यक्तिगत दृष्टि से हम औपनिवेशिक स्वराज्य को भारतवर्ष के लिये उपयुक्त भी स्वीकार नहीं करते। तथापि समझौते के नाम पर, एकता के पवित्र नाम पर, हम बड़ी प्रसन्नता से औपनिवेशिक स्वराज्य को ही कुछ समय के लिये भारतवर्ष का ध्येय मान लेना पसन्द करेंगे। इस प्रस्ताव के प्रस्तावक श्रीयुत जे० एम० सेन गुप्त के शब्दों में हम औपनिवेशिक स्वराज्य को पूर्ण स्वाधीनता की प्राप्ति का साधन बनाना चाहते हैं। क्योंकि यह बात स्वीकार कर लेने से देश के विभिन्न दलों में एकता होजाने की सम्भावना है, और उस एकता से भारतवर्ष को स्वाधीनता और भी निकट आजायगी, इस में सन्देह हो ही नहीं सकता। कौन्वेन्शन में इस प्रश्न पर बोलते हुए कुछ पूर्ण स्वाधीनतावादी महानुभाव दोनों अवस्थाओं की तार्किक बहस में उतर आए, यह बात हमारी दृष्टि में सर्वथा अवाञ्छनीय थी।

यह देख कर हमें और भी दुख हुआ कि इन पूर्ण स्वाधीनतावादी महानुभावों में सच्चे और ईमानदार व्यक्ति बहुत कम हैं। हमें ज्ञात है कि नवयुवकों के कप्तान श्रीयुत जवाहरलाल नेहरू और सुभाषचन्द्र बोस भी पूर्ण स्वाधीनतावादी हैं, ये दोनों नररत्न हैं, खरा सोना हैं—इन वीरों के सम्बन्ध में हमें कुछ भी वक्तव्य नहीं है। परन्तु सर अली इमाम के शब्दों में—"इन पूर्ण स्वाधीनता का ढोल पीटने वाले लोगों में अनेक महाशय ऐसे भी हैं, जो अन्दर से कट्टर साम्प्रदायिक हैं, जो अपने को भारतीय न समझ कर पहले मुसलमान या हिन्दू समझते हैं, जो अपने दिमाग़ में अफ़गानिस्तान को हिन्दोस्तान पर चढ़ा लाने का स्वप्न लिया करते हैं। ये लोग एक ही सांस में पूर्ण स्वाधीनता और साम्प्रदायिक निर्वाचन की, सर्वथा विरोधी, बातें न मालूम किस प्रकार बक जाते हैं।"

हमें शोक है कि एक समय महात्मा गान्धी का दायां हाथ कहलाये जाने वाले अली बन्धु भी इसी कोटी के पूर्ण स्वतन्त्रतावादी हैं। २३ दिसम्बर को कलकत्ते में जो मुहम्मदअली, पूर्ण स्वाधीनता के पक्ष में लम्बा और जोशीला भाषण देकर आया था, वही साम्प्रदायिक मुहम्मदअली एक जनवरी को दिल्ली में मुसलमानों के लिये सर्वथा पृथक् निर्वाचन की मांग करता है! न मालूम इस प्रकार की कोरी बकवाद का क्या अभिप्राय है।

इस बात से हमें बहुत सन्तोश हुआ कि पूर्ण स्वाधीनता के ईमानदार समर्थक और सच्चे राष्ट्रीय नेता श्रीयुत श्रीनिवास ऐयंगर व्यक्तिगत रूप से औपनिवेशिक स्वराज्य के विरोधी नहीं बने। एकता के नाम पर उन्होंने अपने विचारों

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

को झुका दिया। इस आदर्श वीरता और साहस के लिये वे राष्ट्र भर की ओर से साधुवाद पाने के अधिकारी हैं।

३. मुसल्मानों की मांगें

कलकत्ता के कौन्वेन्शन में मि० जिन्हा ने मुसल्मानों के प्रतिनिधि की हैसियत से जो मांगे पेश की थीं, उनमें से दो मांगें स्वीकार कर ली गईं। शेष चार मुख्य मांगें, जो स्वीकार नहीं की गईं, ये थीं—

१. केन्द्रीय व्यवस्थापिका सभाओं में मुसल्मानों के लिये कम से कम एक तिहाई स्थान अवश्य सुरक्षित कर दिये जांय।

२. सिन्ध को एकदम पृथक् प्रान्त बना दिया जाय।

३. पञ्जाब और बंगाल में मुसल्मानों के अधिकतम स्थानों की संख्या निश्चित कर दी जाय।

४. भारतवर्ष में प्रान्तीय सरकारों को अधिकाधिक शक्तिशाली बनाने का प्रयत्न किया जाय।

हमारी सम्मति में मुस्लिमलीग की ये चारों मांगें अयुक्तियुक्त और अनधिकारपूर्ण हैं। ख़ास कर यह अन्तिम मांग तो कभी स्वीकार करने के योग्य ही नहीं है। हम तो इसे गैर राष्ट्रीय और भारत के लिये अहितकर कहने को भी तैयार हैं। राजनीति का प्रत्येक विद्यार्थी जानता है कि जर्मनी तभी जाकर एक प्रबल राष्ट्र बन पाया, जब वहां की केन्द्रीय सरकार को शक्तिशाली बना दिया गया। वहां यदि प्रशिया के बहुमत से घबराकर अन्य प्रान्त विद्रोह कर अलग हो जाते, तो जर्मनी को कोई पूछता तक भी नहीं। प्रिन्स बिस्मार्क ने इस घुंडी को समझा था; उसने जर्मनी की केन्द्रीय सरकार को इतना शक्तिशाली बना डाला कि लोग वहां की विभिन्न रियासतों की सत्ता तक ही भूल से गए। सर तेज बहादुर सप्रू के शब्दों में—"आज आस्ट्रेलियन जनता इस बात के लिये पछता रही है कि किस बुरी घड़ी में उन्होंने संयुक्त राष्ट्र अमेरिका की शासन पद्धति का अनुसरण किया था। स्वयं संयुक्त राष्ट्र अमेरिका भी दिन प्रतिदिन केन्द्रीय शासनको अधिक शक्तिशाली बनाने का प्रयत्न कर रहा है।" सर सप्रू ने कौन्वेन्शन में इस प्रस्ताव पर भाषण करते हुए बड़े युक्तियुक्त रूप से मि० जिन्हा की इस मांग का तीव्र विरोध किया था। भारतवर्ष आज से हज़ारों वर्ष पूर्व भी, मौर्य साम्राज्य में, एक केन्द्रीय शासन वाला देश रह चुका है। आज तो इस देश की भलाई के लिये यह और भी अधिक आवश्यक है कि इस देश की केन्द्रीय सरकार बहुत अधिक शक्तिशाली हो।

मुस्लीम लीग की इस मांग को छोड़ कर अन्य मांगों पर, हमारी सम्मतिमें, कोई न कोई समझौता अवश्य हो सकता था। देश के वर्तमान अविश्वासमय वायुमण्डल में अल्पमत का बहुमत पर अविश्वास होना अस्वाभाविक नहीं है। इस अवस्था में दो विकल्प हो सकते हैं। पहला तो यह कि बहुमत अल्पमत की अवहेलना करते हुए भी स्वराज्य प्राप्त कर ले और दूसरा यह कि जिस किसी प्रकार अल्पमत को सन्तुष्ट कर के उसे अपने साथ लेकर स्वराज्य प्राप्ति के लिये प्रयत्न किया जाय। इस देश में मुसल्मानों की संख्या ७ करोड़ है, हमारा दृढ़ विश्वास है कि उन की अवलेहना कर के इस देश का बहुमत कुछ भी प्राप्त नहीं कर सकता। इस लिये वर्तमान परिस्थितियों में उपर्युक्त दूसरा विकल्प ही कार्य में लाना होगा। हम पहले ही कह चुके हैं कि तर्क और न्याय के आधार पर मुसल्मानों की मांगों का कभी समर्थन नहीं किया जा

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सकता। फिर भी, एकता के नाम पर, देश की अत्यधिक महत्वपूर्ण अल्प संख्या को अपने साथ लेने के नाम पर, हम इस बात का समर्थन करते हैं कि तर्क और न्याय की सीमा का उल्लंघन कर के भी उन्हें अपने साथ मिला लिया जाय। परन्तु इस के लिये राष्ट्रीयता की कुर्बानी नहीं करनी चाहिये। हमारा विश्वास है कि मुसलमानों की चौथी मांग सीधा राष्ट्रीयता पर आघात करती है, अतः हम उसे कभी स्वीकार करने के पक्ष में नहीं हैं। दूसरी ओर हम यह भी स्वीकार करते हैं कि उन की पहली तीनों मांगें भारतवर्ष की राष्ट्रीयता पर सीधा आघात नहीं करतीं। हिन्दू लोग यदि मुसलमानों को केन्द्रीय व्यवस्थापिका सभाओं में एक तिहाई स्थान देदें, तो भी उन का बहुमत तो नष्ट होता ही नहीं। इस अवस्था में यदि साम्प्रदायिक दृष्टि से केन्द्रीय व्यवस्थापिका सभा किसी प्रश्न पर विचार करे, तो भी मुसलमान लोग हिन्दुओं का कुछ बिगाड़ नहीं सकते। इसलिये हमारी दृष्टि में यह प्रश्न ऐसा नहीं है, जिस पर समझौता असम्भव हो। संसार भर के इतिहास में जिस-जिस देश ने स्वतन्त्रता प्राप्त की है, वहां अल्पमत को अपने साथ रखने के लिये बहुमत ने सदैव न्याय और तर्क को तिलाञ्जलि दी है, वहां अल्पमत को अनुपात से अधिक अधिकार अवश्य प्राप्त हुए हैं। आज भी कैनाडा की केन्द्रीय व्यवस्थापिका सभा में ४० प्रतिशत फ्रान्सीसी लोग अवश्य चुने जाते हैं, यद्यपि उनकी संख्या इस से बहुत कम है। इसी प्रकार मिश्र की सरकार को अपने मन्त्री मण्डल में अपने देश की एक बहुत ही छोटी अल्पसंख्या का एक प्रतिनिधि अवश्य नियुक्त करना पड़ता है।

हम आशा करते हैं कि कौन्वेन्शन के आगामी अधिवेशन तक हमारे मुसलमान भाई अवश्य धैर्य धारण किये रहेंगे। और तब इस प्रश्न पर अवश्य ही कोई न कोई समझौता हो सकेगा।

४. कलकत्ता कांग्रेस

बड़े दिनों की छुट्टियों में १९२८ की कांग्रेस बड़ी शान्ति और उत्साह के साथ समाप्त होगई। पिछले वर्ष के अन्तिम मासों में सारा देश बड़ी उत्सुकता से इसी कांग्रेस की प्रतीक्षा करता रहा है। लोगों को इस कांग्रेस से बड़ी-बड़ी आशाएं थीं। आज से करीब ८ बरस पूर्व कलकत्ता में ही कांग्रेस का एक विशेष अधिवेशन करके देश ने असहयोग संग्राम का प्रारम्भ किया था। यह सम्भावना थी कि इस साल भी ठीक उसी तरह, भारतवर्ष के इतिहास में किसी नवीन अध्याय का प्रारम्भ किया जायगा। यह सम्भावना पूरी होगी या नहीं, यह बात तो आगामी कुछ मासों की परिस्थितियों द्वारा ही स्पष्ट हो सकेगी, परन्तु इतना तो इस समय भी कहा जा सकता है कि कलकत्ता कांग्रेस को पूरी सफलता प्राप्त हुई। इस का सब से बड़ा प्रमाण यह है कि इस कांग्रेस में प्रायः सभी प्रान्तों के प्रतिनिधियों की पूर्ण संख्या सम्मिलित हुई थी। सम्भवतः कांग्रेस के इतिहास में इतने प्रतिनिधि सम्मिलित होने का यह दूसरा ही अवसर है। इसी तरह जुलूस, प्रबन्ध, भीड़ भड़क्का, प्रदर्शनी, उत्साह, सभापति का भाषण, नेताओं का जमाव, प्रस्ताव—आदि सभी दृष्टियों से कलकत्ता कांग्रेस की सफलता में सन्देह नहीं किया जा सकता। कांग्रेस के दिनों में देशबन्धु-नगर में जितनी भीड़ जमा रहती थी, उसका अनुमान वही लोग कर सकते हैं जो प्रतिनिधि या दर्शक रूप से इस कांग्रेस में सम्मिलित हुए थे।

परन्तु इस कलकत्ता कांग्रेस का एक स्याह पहलू भी है। महात्मा गान्धी ने अपने कलकत्ता के

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

संस्मरणों में इस स्याह पहलू की खूब विस्तार के साथ चरचा की है। हमें स्वयं भी इस सम्बन्ध की कुछ घटनाओं का कटु अनुभव उठाना पड़ा है। हमें यह भली प्रकार ज्ञात है कि अनेक प्रान्तीय कांग्रेस कमेटियों के ज़िम्मेवार समझे जाने वाले प्रधान मन्त्रियों ने, प्रतिनिधि टिकट अनधिकारी लोगों को धन के एवज़ में बेच कर अपनी ज़िम्मेवारी का निहायत नाजायज़ इस्तेमाल किया था। यहां तक कि इन मेहरबानों की कृपा से कुछ सी० आई० डी० के लोगों को भी प्रतिनिधि टिकट हासिल करने का अवसर मिल गया था। इस सम्बन्ध में, हमारी सम्मति में, शीघ्र ही कोई क्रांतिकारी परिवर्तन करना नितान्त आवश्यक है। यदि हम कांग्रेस को सचमुच की प्रतिनिधि सभा बनाना चाहते हैं, तो हमें प्रतिनिधियों के निर्वाचन को इतनी उपेक्षा के साथ नहीं देखना चाहिये।

कलकत्ता में एक और बात हमें बहुत खटकी। हमें ऐसा अनुभव हुवा कि शायद कलकत्ता कांग्रेस के कार्यकर्ताओं ने कांग्रेस को 'व्यापारी कांग्रेस' बना रक्खा है। धन कमाने के लिये कांग्रेस की संरक्षा में कुछ ऐसे काम भी किये गए, जिन्हें साधारणतया अत्यन्त घृणा की दृष्टि से देखा जाता है। प्रदर्शनी में जूए का प्रबन्ध, इन्हीं बातों में से एक था। इस का परिणाम यह हुवा है कि बंगाल प्रान्तीय कांग्रेस को इस कांग्रेस से कई लाख का मुनाफ़ा हुवा है। हमारी सम्मति में कांग्रेस को इतना मंहगा करना उसकी वास्तविक उन्नति में बाधक सिद्ध होगा। क्योंकि वास्तविक भारतवर्ष इतना अधिक गरीब है कि वह कांग्रेस के भारी खर्चों से घबरा कर वहां प्रवेश ही न पा सकेगा।

इस वर्ष कांग्रेस का जो पण्डाल बनाया गया था वह हमारी सम्मति में अत्यधिक दोषपूर्ण था। पण्डाल बिलकुल समतल था, उस में गहराई लाने की ज़रा भी कोशिश नहीं की गई। सम्भवतः लाउड स्पीकरों के भरोसे पर ही ऐसा किया गया था। परन्तु प्रतिनिधि और दर्शक—जो कांग्रेस में सम्मिलित होते हैं— केवल आवाज़ सुनने के प्रलोभन से ही वहां नहीं जाते। वे मञ्च पर बैठे हुए नेताओं के 'दर्शन' भी करना चाहते हैं। कांग्रेस के कार्यकर्ताओं को यह बात भली प्रकार स्मरण रखनी चाहिये। इस वर्ष इसी कारण पण्डाल में असाधारण अव्यवस्था रही। जब सभापति महोदय पण्डाल में आते थे, तब वहां बिलकुल अराजकता सी छा जाती थी। फिर इतने बड़े पण्डाल में प्रवेश द्वार केवल एक ही रक्खा गया था। यह बात इतनी अधिक दोषपूर्ण थी कि इस से कांग्रेस की व्यवस्था में भारी आघात पहुंचा। वास्तव में प्रत्येक प्रान्त के प्रतिनिधियों के लिये अलग-अलग मार्ग रहने चाहियें— यह बात बहुत कठिन नहीं है।

सभापति का जुलूस बहुत शानदार था। परन्तु उसमें स्वर्गीय लाला लाजपतराय के तैल चित्र का अभाव बहुत खटकता था। सन १९२० में, जब कलकत्ता में कांग्रेस का विशेष अधिवेशन हुवा था, कांग्रेस के सभापति लाला लाजपतराय के जुलूस में सब से आगे लोकमान्य तिलक का भव्य तैलचित्र रक्खा गया था। लोकमान्य का उसी वर्ष देहावसान हुवा था। देशबन्धु दास स्वयं इसी तैलचित्र के साथ-साथ चल रहे थे। इस वर्ष, मालूम नहीं, कलकत्ता कांग्रेस के कार्यकर्ताओं को यह बात क्यों नहीं सूझी।

५. सभापति का भाषण

कलकत्ता कांग्रेस में, राष्ट्रपति पं० मोतीलाल नेहरू का भाषण, सचमुच एक बहुत ही उत्कृष्ट कोटि का भाषण था। नेहरू जी आज भारतवर्ष के

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

राजनीतिक आकाश के सब से अधिक चमकीले सितारों में से एक हैं। महात्मा गान्धी के बाद आप ही ऐसे व्यक्ति हैं, जिन पर देश की अधिकांश जनता पूरा विश्वास रखती है। आप की राजनीतिक सूझ और प्रतिभा की धाक तो इङ्गलैण्ड के बड़े-बड़े राजनीतिज्ञ भी स्वीकार करते हैं। फिर पिछले वर्ष देश में जो सब से बड़ी और महत्वपूर्ण घटना, एक सर्वसम्मत राष्ट्रीय मांग तैयार करने के रूप में हुई, उसका सब से बड़ा श्रेय आप ही को है। इस कारण लोग आप के भाषण से बड़ी ऊँची आशाएँ करते थे। हमें इस बात का पूर्ण सन्तोष है कि वह आशा भली प्रकार पूरी हुई। आप ने अपने भाषण में नेहरू कमेटी की रिपोर्ट की जो सिफारिश और वकालत की है, वह अत्यधिक योग्यतापूर्ण है। औपनिवेशिक स्वराज्य के सम्बन्ध में आप का यह वाक्य प्रत्येक भारतवासी को हृदय में धारण कर लेना चाहिये—"यदि मुझे मेहनत कर के स्वराज्य लेना होगा तो मैं पूर्ण स्वराज्य ही लूंगा, परन्तु यदि औपनिवेशिक स्वराज्य स्वयं मिल जायगा तो उसके लेने से भी इन्कार नहीं करूंगा!" हमें यह समझ नहीं आता कि इस फारमूले के बाद भी इस सम्बन्ध में कोई विवाद शेष रह सकता है।

६. कांग्रेस के निर्णय

कलकत्ता कांग्रेस का वातावरण बिल्कुल सन्देहपूर्ण और अनिश्चितता का था। बार-बार प्रतिनिधियों को यह आशंका होती थी कि कहीं माननीय सभापति पं० मोतीलाल नेहरू को अपने पद से त्यागपत्र न देना पड़े। इसका एकमात्र कारण नेहरू रिपोर्ट द्वारा स्वीकृत औपनिवेशिक स्वराज्य के आधार भूत सिद्धान्त स्वीकार करने के सम्बन्ध का मतभेद था। 'पूर्ण-स्वाधीनता' का नाम कितना मीठा और आकर्षक प्रतीत होता है! खास कर जनता को—जिस के प्रतिनिधि कांग्रेस में सम्मिलित हुए थे—तो इस के लिये बड़ी आसानी से उकसाया जा सकता था। इस कारण ३१ दिसम्बर १९२८ के १२ बजे तक, अर्थात् सन् १९२८ अन्तिम क्षण तक, यह सन्देह बना रहा कि माननीय सभापति महोदय के नेतृत्व को कांग्रेस स्वीकार करती है या नहीं। इस प्रस्ताव की इतनी अधिक महत्ता होने के कारण ही महात्मा गाँन्धी जैसे व्यक्ति द्वारा यह प्रस्ताव पेश करवाया गया था। इस प्रस्ताव में केवल एक वर्ष, सन् १९२९, के लिये ही कांग्रेस ने औपनिवेशिक स्वराज्य की मांग को अपना ध्येय माना है। महात्मा जी ने स्वयं इस बात की घोषणा की है कि ३१ दिसम्बर १९२९ की रात को, मैं अंग्रेजी सरकार से अन्तिम वार औपनिवेशक स्वराज्य की आशा लगा कर सोऊंगा, यदि तब भी मेरी आशा सफल न हुई तो अगली प्रातः काल मैं पूर्ण स्वाधीनता का कट्टर हिमायती बन कर उठूंगा। सुभाशबाबू जैसे नेताओं ने इस प्रस्ताव का घोर विरोध किया था—उनका कथन था कि इस प्रस्ताव द्वारा कांग्रेस अपना झण्डा नीचे झुका रही है। हमारी सम्मति में यदि सुभाष बाबू इस शाब्दिक विवाद की अपेक्षा कोई ठोस कार्यक्रम प्रतिनिधियों के सम्मुख उपस्थित कर सकते, तो इससे देशका अधिक कल्याण था। इस दशा में यह सम्भावना भी की जा सकती थी कि स्वयं महात्मा गान्धी ही सुभाश बाबू के समर्थक बन जाते।

कांग्रेस ने दूसरा महत्वपूर्ण प्रस्ताव एक कार्यक्रम के रूप स्वीकार किया है। यह प्रस्ताव भी स्वयं महात्मा गान्धी ने ही पेश किया था। इस प्रकार इस वर्ष की कांग्रेस की सफलता का मुख्य श्रेय महात्मा गान्धी को ही है। इस प्रस्ताव में, यह वर्ष देश को असहयोग संग्राम की तैयारी करने के लिये दिया गया है। कांग्रेस ने यह प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकार किया है। महात्मा गान्धी इस वर्ष पुनः राजनीतिक क्षेत्र में नेतृत्व करने के लिये उतरे है, हम उनका इस क्षेत्र में पुनः सहर्ष स्वागत करते हैं। यह निस्संकोच कहा जा सकता है कि आज भी गान्धी जी ही भारत-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वर्ष के एक मात्र सर्वमान्य नेता हैं। इस महती शक्ति को 'बुझी हुई गोली' समझना भूल है। इस शक्ति को अपने राहनुमा के पद पर नियुक्त कर के कलकत्ता कांग्रेस ने देश की सब से बड़ी सेवा की है। महात्मा जी जो कुछ कहते हैं—उसे समझ बूझ कर, करने की इच्छा से कहते हैं। कलकत्ता कांग्रेस ने उन का कार्यक्रम सर्व सम्मति से स्वीकार किया अर्थात् कांग्रेस ने इस कार्यक्रम को चालू करने का नेतृत्व उन्हें दिया है। महात्मा जी स्वयं इस उत्तरदायित्व को समझते हैं। उन्होने अब इस साल विदेश जाने का कार्यक्रम इसी कारण स्थगित कर दिया है। आशा की यह जो नई रेखा पैदा हुई है— यह देश के सम्पूर्ण आकाश मण्डल को व्याप्त करले।

७. वायसराय का भाषण

गत २८ जनवरी को दिल्ली में बड़ी व्यवस्थापिका सभा के नये सत्र का उद्घाटन करते हुए वायसराय ने जो भाषण दिया है, वह भाषण की दृष्टि से निस्सन्देह तारीफ़ करने योग्य है। हमने पिछले दिनों, वायसराय का कलकत्ते के यूरोपियन एसोसियेशन में दिया हुआ भाषण पढ़ा था, इसलिये हमें यह कदापि आशा नहीं थी कि इस अवसर पर वायसराय महोदय इतना संयत भाषण दे सकेंगे। इस समझदारी के लिये हम दिल खोल कर लार्ड इरविन को साधुवाद देते हैं। वायसराय ने अपने भाषणमें कोई विशेष नई बात नहीं कही। लेबर कमीशन की नियुक्ति को छोड़ कर उनके अन्य सम्पूर्ण भाषण का अधिकांश भाग लोगों ने पहले ही अनुमान कर रक्खा था। वायसराय ने नेहरू रिपोर्ट की तारीफ़ की है, परन्तु उसे सर्वसम्मत स्वीकार नहीं किया है। कलकत्ता कांग्रेस की एक साल की चुनौती का उन्होंने बड़ा गोलमाल जवाब दिया है। परन्तु इस जवाब द्वारा यह स्पष्ट होगया है कि कांग्रेस की यह चुनौती अवश्य ही बहरे कानों पर पड़ेगी। सरकार इस एक वर्ष में भारतवर्ष को औपनिवेशिक स्वराज्य नहीं दे सकती। वायसराय ने अपने भाषण में साइमन कमीशन की खूब सिफारिश की है। उनका कथन है कि इङ्गलैण्ड अपनी १९१७ की प्रतिज्ञा कभी भंग नहीं करेगा। हमारी सम्मति में तो साइमन कमीशन की नियुक्ति में भारतीयों का सर्वथा बहिष्कार कर के इङ्गलैण्ड ने अपनी वह प्रतिज्ञा पहले ही भंग कर दी है। वायसराय के भाषण का कांग्रेस के सभापति पं० मोतीलाल नेहरू ने बड़ा समुचित उत्तर दे दिया है। वायसराय महोदय को वह उत्तर भारतवर्ष का उत्तर समझना चाहिये।

८. शारदाबिल का भाग्य

बड़ी व्यवस्थापिका सभा ने श्रीयुत हरविलास शारदा का बालविवाह निषेध मसविदा अनिश्चित काल के लिये स्थगित कर दिया है। शारदा महोदय को सरकार ने पहले यह आशा दिलाई थी कि सरकार उन के बिल का समर्थन करेगी। परन्तु ऐन मौके पर सरकार ने उन्हें धोखा दिया। सरकार का यह असभ्य और ईमानदारी-शून्य व्यवहार उन लोगों की आंखें खोल देगा, जो सरकार को सुधारों का पक्षपाती समझते हैं। एक पराधीन और स्वाधीन देश की सरकार में यही तो अन्तर है। जो बातें देशवासियों के लिये अत्यधिक महत्व की हैं, जिन पर राष्ट्रीय जीवन की दीवार खड़ी होनी है—उन्हें यह विदेशी सरकार ज़रा से स्वार्थ के लिये पावों तले कुचल सकती है। मालूम हुआ है कि श्रीयुत शारदा महोदय को सरकार के इस व्यवहार से भारी धक्का पहुंचा है। उन्होंनें अपना बिल पेश करते हुए जो भाषण दिया था, वह बहुत ही महत्वपूर्ण और मार्मिक था। सचमुच यदि बड़ी व्यवस्थापिका सभा में स्त्री सदस्याएं भी पर्याप्त संख्या में होतीं, तो क्या कभी इस महत्वपूर्ण बिल के साथ इतनी उपेक्षा का व्यवहार हो सकता?

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सचित्र

सुचारु सूची शिल्प पत्रावली

सलाई और क्रोशियेकी दस्तकारी सिखलाने की सस्ती और अनूठी विधि

इस प्रकार के पत्र इंग्लैण्ड अमरीका इत्यादि देशों में तो बहुत दिनों से निकलते हैं। परन्तु भारत में हिन्दी भाषा द्वारा प्रत्येक वस्तु के लिये अलग अलग कार्ड की रीति से इस कार्य को सिखलाने का यह पहला ही प्रयत्न है जो कार्य पसन्द हो उसी के अनुकूल दो तीन आने खर्च कर कार्ड खरीद लो और घर बैठे बिना किसी की खुशामद के बनालो अब तक निम्न लिखित कार्ड (१४×७) प्रकाशित हो चुके हैं:—

पत्र नं०	मूल्य	पत्र नं०	मूल्य
१—दीर्घ सूची प्रारम्भिक प्रयोग ११ चित्र	।)	५—पुरुषों का लम्बा मौज़ा [सचित्र]	=)
२—बड़ी सादी बनियान [सचित्र]	=)॥	६—पुरुषों का सरल दस्ताना [सचित्र]	=)॥
३—पुरुषों का कुर्ता [सचित्र]	=)॥	७—स्त्रियों का फूलदार कालर [सचित्र]	≡)
—बालिका की ऊनी जर्ज़ी [दुरंगा]	≡)	पुरुषों का बुन्दकीदार मौज़ा [सचि]	=॥)

८ कार्डों का पूरा सैट मूल्य १।=)॥ के स्थान में केवल १) रुपया

कुछ सम्मतियाँ—

सरस्वती इलाहाबाद— यह पत्रावली नारी मात्र के लिये बड़ी उपयोगी है। छपाई सुन्दर भाषा सरल और मूल्य बहुत ही कम।

प्रताप लाहौर—कन्या पाठशालाओं और स्कूल की लड़कियों केलिये बड़े काम की चीज़ है।

गृहलक्ष्मी प्रयाग—हम इन कार्डों का हृदय से प्रचार चाहते हैं।

महारथी देहली—यह कार्ड सस्ते होने के कारण कन्याओं के लिये बड़े उपयोगी हैं।

मैनेजर "ज्योति"

कोठी नम्बर २१, २२ राजपुर रोड देहरादून।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कला कौमुदी

लेखिका श्रीमती ओ३म्वती देवी

चित्र कला कौशल सम्बन्धी अनुपम पुस्तक इस के द्वारा लेखिका ने क्रोशिये के कार्य को बड़ा ही सरल बना दिया है। बिना किसी प्रकार के पहिले ज्ञान के कन्यायें और स्त्रियें केवल इस की ही सहायता से अनेक प्रकार की बिनावट लेसें, फ़ीते, कपड़े इत्यादि बनाना सहज में ही सीख सकी हैं। पुस्तक में इतना विषय है कि किंचित इस से कई गुना दाम की पुस्तकों में भी न होगा। प्रत्येक वस्तु तथा बिनावट का बनाना चित्र देकर बड़ी सरल रीति से सिखाया गया है। देखिये समाचार पत्र इस के विषय में क्या कहते हैं।

"ट्रिब्यून" (अंग्रेज़ी का प्रसिद्ध दैनिक) लाहौर—स्त्रियों के लिये उपयोगी पुस्तक है। अनेक चित्रों द्वारा वस्तु बनाने की विधि बड़ी सरलता से समझाई गई है। सुन्दर नमूनों की लेसें, टेबल क्लाथ, बच्चों के सुन्दर कपड़े और अन्य कई वस्तुओं का बनाना बड़ी सुन्दर रीति से बतलाया गया है। पुस्तक की उपयोगिता के विचार से मूल्य बहुत कम है।

"मतवाला" (कलकत्ता)-यह पुस्तक हमारी बहिनों के बड़े समझ की है। छपाई बहुत अच्छी, कागज़ बहुत अच्छा मोटा चिकना आर्ट। सुचारु शिल्प पत्रावली कार्ड गृहस्थियों के बड़े काम की चीज़ है।

"कर्मवीर" (खांडवा)— .....पुस्तक में सादे फन्दे से लगाकर तरह तरह की वस्तुओं के बनाने की विधि बड़ी सरलता से समझाई गई है जिसे पढ़कर साधारण पढ़ी लिखी स्त्री भी इस कार्य को सीख सकती है। इस का मूल्य लागत को देखते कम है।

"माधुरी" (लखनऊ)-ऐसी पुस्तकों की हिन्दी साहित्य के लिये बड़ी आवश्यकता है। आशा है इस पुस्तक का अच्छा प्रचार होगा जिस से इस प्रकार की और पुस्तकें भी प्रकाशित का जा सक। लेखिका और प्रकाशिका दोनों को बधाई।

शीघ्र आर्डर भेजिये मूल्य १॥)

कला कौमुदी तथा शिल्प पत्रावली का पूरा सैट लेने पर २॥=)॥ के स्थान मे केवल २।) में दिया जायगा।

कन्या पाठशालाओं और पुस्तक विक्रेताओं को विशेष रियायत

मैनेजर ज्योति-

कन्या गुरुकुल

राजपुरा रोड कोठी नं० २१-२० देहरदून

गङ्गाराम पाठक प्रिन्टर तथा पं० रमेशचन्द्र पब्लिशर के लिये गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में मुद्रित।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

Regd. No. A. 1711

वर्ष ६] फरवरी १९२९ [संख्या १०

वार्षिक मूल्य. ४॥) प्रति संख्या ॥)

सम्पादक—

विद्यार्थियों, स्त्रियों से ४) विदेशका मूल्य ६)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

विषय सूची।

विषय	पृष्ठ से
१. बुझा हुआ दीपक (कविता)	
श्री पं० बुद्धदेव जी विद्यालंकार	३८५
२. कुरान में वेदांश. अनादि-त्रयी	
ले० पं० चमूपति जी एम. ए.	३८६
३. बालक की संध्या (कविता)	
श्री हरिशरण 'मराल'	३९५
४. वेदों में दार्शनिक विचार	
ले० श्री पं० धर्मदेव जी वेदवाचस्पति	३९६
५. भोजन विधि	
ले० श्री पं० सत्यदेव जी विद्यालंकार, वैद्यभूषण	४०३
६. अम्मी (कविता)	
श्री पं० चमूपति जी एम. ए.	४०६
७. मुन्नी (कहानी)	
ले० श्री पं० चन्द्रगुप्त जी विद्यालंकार	४०७
८. अन्तर्नाद श्री पं शंकरदेव जी विद्यालंकार	४१२
९. बौद्धसाहित्य में जनतन्त्र राज्य	
ले० श्री पं० सर्वमित्र जी	४१३
१०. स्वाधीनता के संग्राम में स्त्रियों का कर्तव्य	
श्रीमती सीतादेवी जी विशारदा	४१९
११. गुरुकुल के स्नातक क्या कर रहे हैं ?	
ले० प्रो० सत्यव्रत जी सिद्धान्तालंकार	४२०
१२. साहित्य-समीक्षा	४२५
१३. विचार-प्रवाह	४२८
१४. कन्या-गुरुकुल-समाचार	४३२

लेखकों से निवेदन

१. ज्योति में लेख, कविता आदि भेजने वाले महानुभावों को अपने लेख सुस्पष्ट अक्षरों कागज़ के एक ओर ही ,हाशिया छोड़ कर लिख कर भेजने चाहियें।

२. लेख बहुत लम्बे न होने चाहिएँ। 'ज्योति' पत्रिका के लगभग चार पृष्ठों के लायक लेख हों तो अति उत्तम है।

३. लेखों को घटाने बढ़ाने तथा संशोधित करने का संपादक को पूर्ण अधिकार है।

ज्योति सम्बन्धी पत्र व्यवहार— अथवा—

आचार्य्या कन्या गुरुकुल **सम्पादक ज्योति**

कोठी नं० २१, राजपुर रोड़ (देहरादून) गुरुकुल कांगड़ी यू.पी.

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विविध विषय विभूषित सुन्दर मासिक पत्रिका.

वर्ष ६ | माघ १९८५ * फरवरी १९२९ | संख्या १०

बुझा हुआ दीपक

मैं पीतल का प्याला।
पीट पीट हारा ठठियारा गया न कूब निकाला॥
किसी अकारण वत्सल ने आ दीवट पर बैठाला।
तेल डाल बत्ती सजवाई अपने हाथों बाला॥
लौ जागी किस्मत भी जागी बना दोष पद वाला।
छिपे दोष उसने जब उन पर उजला पर्दा डाला॥
खुले भेद जो छिपे हुए थे तम का टूटा ताला।
पा प्रकाश मेरा रत्नों की चमक दो बाला॥
वह भी दिन देखे जब मेरा काजल गया सम्भाला।
नैनों चढ़ सिंगार कहाया हुआ जगत मतवाला॥
हाय दई ! इतनी क्यों खटकी तुझे भला वह बाला।
एक झपक में हुई दिवाली मेरी आज दिवाला॥
आग विरह की विरही जाने जलूँ शीत की ज्वाला।
कहां गया वह जलना जिसके कारण यह तन पाला॥
अहो पथिक कुण्डी मत खोलो जपूँ यही मैं माला।
"बहुत भला हो अँधियारे में छिपा रहे मुँह काला"॥

बुद्धदेव विद्यालङ्कार

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कुरान में वेदांश

(३)

(ले०— श्री पं० चमूपति जी एम. ए.)

अनादि-त्रयी

तत्व और तथ्य

आगस्ट कामटे का कहना है कि वस्तुओं का तत्व हमारे ज्ञान की पहुँच से बाहर है। हम केवल दृश्य (Phenomena) ही को जान सकते हैं। अतः वस्तुओं के स्वरूप—आदि कारण तथा अन्तिम उद्देश्य—(first and final cause) के वृथा विचार को छोड़ कर उनकी दृश्य अवस्थाओं (Phenomenal States) को ही मानव ज्ञान की चरम सीमा समझना चाहिये। इस के विपरीत दर्शन आरम्भ से ही अपने पर्यायों में 'तत्व-ज्ञान' की गणना करता आया है। दार्शनिकों की खोज आदि काल से 'तत्व क्या है?' इस जिज्ञासा के समाधान में लगी रही है। दृश्य तथ्य है जो तत्व के सहारे से रहता है। वस्तुओं की दृश्यमान अवस्थाओं के नियम हैं सही। उनके आविष्कार से विज्ञान मानव समाज की एक बहुत बड़ी आवश्यकता को पूरा करता है। परन्तु वह वस्तुएँ स्वयं क्या हैं? यह प्रश्न भी मानव प्रकृति का अनिवार्य अनुपेक्षणीय आग्रह प्रतीत होता है।

ऋग्वेद में आया है:—

को अद्धा वेद क इह प्रवोचत कुत आजाता
कुत इयं विसृष्टिः। ऋ १०. १२-८६

कौन जानता है? कौन इस विषय में मुंह खोले, यह विविध सृष्टि कैसे हो गई? कहां से आई?

अन्यत्र कहा है:—

किं स्विदासीदधिष्ठानमारम्भरणं कतमत्स्वित् कथासीत्
यतो भूमिं जनयन् विश्वकर्मा विद्यामौणोन्महिना वि
श्वचक्षाः। १०. ८१. ८

आधार क्या था? आदिकारण क्या था,? कैसा था? जिस से सर्वद्रष्टा सर्वकर्त्ता परमेश्वर ने संसार को पैदा कर अपने ज्ञान का प्रकाश किया।

अद्वैत-वाद

यह आदि कारण की खोज ही तो है—उस नित्य आधार की जिस के रहते इस परिवर्तन-शील संसार में स्थिरता रहती है। कई चिचारकों की सम्मति में कार्यों की अपेक्षा कारणों की संख्या कम होनी चाहिये। थोड़े से तत्व भी सम्बन्ध-भेद से अधिक तथ्यों—अवस्थाओं—की सृष्टि कर सकते हैं। सम्भावना इस के विपरीत भी है, यथा अनेक अवयव परस्पर संयुक्त हो कर एक अवयवी की उत्पति भी करलेते हैं। परन्तु दर्शन की सन्तुष्टि विचार्य पदार्थों (Categories of thought) की संख्या घटाने में है। यदि किसी और प्रकार ऐसा करना सम्भव न हो तो वर्गीकरण द्वारा अनेकों को एक बना देना तो सम्भव हो है। पदार्थों की संख्या कम करने की यह वृत्ति कई दार्शनिकों की अवस्था में अपने स्वाभाविक परिणाम एक्य या अद्वैत-वाद की स्थापना तक जा पहुंची है। अद्वैत दर्शन का चहेता सिद्धान्त इस लिये है कि इस में संबन्ध (relation) की समस्या से छुट्टी मिल जाती है। सम्बन्ध अनेकों में ही हो सकता है। और उस पर प्रश्न भी उठता है कि यह संबन्ध क्या है? क्यों है? किसने कराया है? दो पदार्थों में यह तीसरी कड़ी कैसे आई? इस सम्बन्ध का सम्बन्ध सम्बद्ध पदार्थों से फिर और सम्बन्ध द्वारा होगा? उस सम्बन्ध का फिर और सम्बन्ध द्वारा? और यदि कोई सम्बन्ध कराने

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वाला मानलें तो वह एक और संबन्ध-शृंखला का हेतु बन जायगा। इस अनन्त गोरखधन्धे से अद्वैती अद्वैती होने मात्र से ही छूट जाता है। उस के मत में दो हैं ही नहीं। सम्बन्ध किन में हो?

एकपदार्थवाद

पदार्थों की संख्या वैशेषिककार छः और उन के पीछे के नैय्यायिक सात निश्चित करते हैं, यथा (१) द्रव्य (२) गुण (३) कर्म (४) सामान्य (५) विशेष (६) समवाय, (७) और अभाव। अद्वैती को इन पदार्थों के मानने में कठिनाई यह है कि द्रव्य का गुण से, क्रिया का द्रव्य से, विशेष का विशिष्ट से, कार्य का कारण से और फिर इन सब का परस्पर सम्बन्ध क्योंकर होता है? भिन्न पदार्थों का अपनी अपनी सत्ता का क्षेत्र है—सब का अपना जुदा जुदा जगत् है। वे क्यों एक दूसरे की सत्ता में बराबर या न बराबर के हिस्सेदार—दाल भात में मूसल चन्द—होते हैं? इस उलझन का सुलझाव अद्वैती यह कह कर करता है कि गुण गुणी, क्रिया क्रियावान्, विशेष विशिष्ट, कारण कार्य सब एक हैं। इन सब में समान है सत् या सत्ता। वही है, शेष सब छलावा है। शंकर के अद्वैत में ब्रह्म ही को सत् माना है और वह निर्विशेष है। यूनानी तत्वदर्शी पार्मेनेडीज़ का सिद्धान्त भी यही था कि सत् (being) है। पार्मेनेडीज़ हमारे इन्द्रिय-गोचर या सामान्य-बुद्धिगोचर वस्तु को असत् (Non-being) कहता था, जो है ही नहीं और जिसके संबन्ध में कुछ कहा ही नहीं जा सकता। निर्विशेष सत् ही है। वह एक है। अब यदि सत् को सत् रखने के लिये उस की व्यावृत्ति असत् से करनी हो और इस लिये अभाव या असत् को पृथक् पदार्थ—विचार्य वस्तु—माना जाए तो वह उक्त अद्वैत को पूर्ण विशुद्ध अद्वैत न रहने देगा। मांडूक्योपनिषद् के ७ वें मन्त्र की व्याख्या करते हुए शंकर लिखते हैं:—

सर्वशब्दनिमित्तशून्यत्वात्तस्य शब्दानाभिधेयत्वमित्यतो विशेषप्रतिषेधनेव च तुरीयं निर्दिदिक्षति। शून्यं तर्हि तन्न मिथ्याविकल्पस्य निर्निमित्तत्वानुपपत्तेः।

अर्थात् शब्द की कोई वृत्ति तुरीय ब्रह्म में नहीं लगती अतः वह शब्द से अवाच्य है। उसका निर्देश निषेधपूर्वक होता है। (पूर्व-पक्षी कहता है) तब वह शून्य होगा। (शंकर कहते हैं) नहीं। मिथ्या विकल्प निराधार नहीं होता।

यहाँ ब्रह्म की शून्यता की कल्पना प्रतिपक्षी के मुँह में डाल कर और उस को स्वयं अतर्क्य न कह कर शंकर ने अभाव को सम्भवतः विचार्य तो मान ही लिया है। और उस से ब्रह्म की व्यावृत्ति भी कर ली है। इसके अतिरिक्त ब्रह्म के साथ अविद्या को प्रपञ्च का हेतु मान कर और उसका लक्षण सदसदनिर्वचनीय करके— अर्थात् वह है या नहीं? इसे अनिर्णीत ही नहीं, अनिर्णेय कह कर—असत् को एक प्रकार से एक ऐसा पदार्थ स्वीकार कर लिया है जिसको अद्वैत सत् हज़म नहीं कर सका। व्यावृत्ति की आवश्यकता रहते विशेष मानना ही होगा। और फिर सत् और असत् के अतिरिक्त सदसत्-अनिर्वचनीय एक तीसरे पदार्थ की कल्पना भी कर रखी है। शांकर अद्वैत में अविद्या को तो—यदि वह ब्रह्म से व्यावर्त्य न हो—निर्विशेष कहा जा सकता है, क्योंकि वह सत् और असत् के भी निर्देशसे बाहर है, परन्तु ब्रह्म को नहीं। या फिर शंकर के पदार्थ दो प्रकार के हैं— एक सत्, दूसरे सदसदनिर्वचनीय। खूब अद्वैत है! जर्मन तत्ववेत्ता हीगल निरपेक्ष-ब्रह्मवादी (Absolute Idealist) है। उसने असत् के पर्याय सत् से सविशेष सत् की उत्पत्ति की कल्पना की है। अद्वैतवाद की पराकाष्ठा इस वाद में जाकर हुई है। परन्तु हीगल का दर्शन

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

तो प्रसिद्ध कथानकानुसार हीगल के अपने शब्दों में "एक ही मनुष्य * समझा था और वह भी अशुद्ध है। संभवतः वह पुरुष स्वयं हीगल था।

यह हुई एक-पदार्थ-वादियों की गति। शंकर को एक ऐसे पदार्थ की कल्पना करनी पड़ी है जिस के विषय में यह भी नहीं कहा जा सकता कि वह है या नहीं? हीगल ने सत् असत् को समानार्थक बना दिया है। निर्विशेष सत् से सविशेष सत् का प्रादुभाव कैसे होता है? यह विचार दोनों के मत में एक माया-जाल है जो इसी सदसदनिर्वचनीय या सदसत्-सामानाधिकरण्य के ज्ञानातीत सूत्र से ताना जाता है।

विशिष्टाद्वैत

निर्विशेष सत् के पीछे सविशेष सत् वाले आते हैं। इनकी दृष्टि में विशेष्य एक रहे, विशेष अनेक होने से उसका अद्वैत् बना रहता है। भारत में रामानुज ने विशिष्टाद्वैत का प्रतिपादन किया। यूरोप में स्पिनोज़ा विशिष्टाद्वैती था। स्पिनोज़ा हीगल से पहिले हुआ। उसे यूरोप के अर्वाचीन अद्वैत-वादियों का प्रथम पुरुष कहना चाहिये। उस की दृष्टि में द्रव्य (substance) एक है परमेश्वर, चित् और extension (रामानुज के मत में अचित्) उस के (attributes) विशेष हैं। मैंने एट्रिब्यूट का अनुवाद विशेष कर दिया है क्योंकि इन की आपस में व्यावृत्ति होती है। स्पिनोज़ा इन्हें द्रव्य का सार (essence) मानता है। रामानुज इन्हें ब्रह्म का शरीर कहता है। स्पिनोज़ा के मत में विशेष वस्तुतः अनन्त हैं। चित् और अचित् तो वह दो विशेष हैं जो मानव बोध में आते हैं, यद्यपि हमारे सामान्यतया अनुभूत चित् और अचित् से वे सर्वथा भिन्न हैं। परमात्मा के सब विशेष अपने परिमाण में अनन्त हैं। उन की संख्या अनन्त होने से परमेश्वर अनन्तों का अनन्त है। सांसारिक चित् और अचित् परमेश्वर के विशेषों के प्रकार (mode) हैं। रामानुज भी चित् और अचित् अर्थात् जीवों और प्राकृतिक वस्तुओं को ब्रह्म के "प्रकार" बताते हैं, परन्तु इनके हां "विशेष" और "प्रकार" पर्याय हैं। यह ब्रह्म में और इन में अभेद मानते हैं। स्पिनोज़ा की तरह इनके हां एट्रिब्यूट ईश्वर और उस के वैयक्तिक (individual) प्रकारों के बीच की कड़ी नहीं। स्पिनोज़ा का मोड पराश्रित होता है। द्रव्य (सब्सटेंस) और विशेष (एट्रिब्यूट) स्वाश्रित। आश्रय की दृष्टि से द्रव्य (Substance) और उस के विशेष (attributes) में भेद नहीं है। दोनों स्वाश्रित हैं। भेद संख्या का प्रतीत होता है। वही वस्तु एक होती हुई द्रव्य है और अनेक होकर विशेष। इस एकता और अनेकता का समन्वय क्योंकर हो? *

स्पिनोजाके लेखानुसार द्रव्य वास्तविक है और विशेषों की प्रतीति चित् (mind) को होती है। अब यह एक में अनेक की प्रतीति ईश्वर को तो हो नहीं सकती। और जो चित् ईश्वर के विशेष हैं वे ईश्वर से भिन्न नहीं। ऐसी अवस्था में इन विशेषों के अतिरिक्त कोई और चित् भी मानना होगा जो ईश्वर से भिन्न है और उसे एक का दर्शन अनेकता के रूप में होता है। इस प्रकार तो इस वाद में न द्रव्य-परक एकता रही न पदार्थ-परक।

* Encyclopaedia Britannica—Article on Hegel।

* By attribute I understand that which the mind perceives as constituting the essence of substance.

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

फ़िष्टे ने अहन्तत्व (ego) और अनहतत्व दोनोंका उत्पादक अहन्तत्व ही को माना है। वह भिन्न २ अहन्तत्वों का कारण निरपेक्ष निर्विशेष अहम् (absolute ego) को मानता है। निर्विशेष से विशेषों की उत्पत्ति क्योंकर होती है ? वह स्वयं लिखता है कि इस समस्या का सुलझाव मानव तर्क से बाहर है। *

अहन्तत्व-वाद

विशेष अहन्तत्व या जीव निर्विशेष अहम् के अंश हैं। और जो अंश एक बार हो गए वे अन्तिम बोध को पाकर भी स्थिर रहेंगे। ‡ शांकरों के विपरीत यहां बहुत्व (plurality) सादि और अनन्त है। रामानुज के मत में विचार्य यह है कि चित् तथा अचित्, जिन्हें ब्रह्म का शरीर कहा है, इनका अभिमानी ब्रह्म है या जीव अपने शरीर का आप स्वतन्त्र सञ्चालक है ? यदि ब्रह्म अभिमानी है तो हमारे बुरे भले का उत्तरदायित्व उसी पर होगा। और यदि हम स्वयं अपने शरीरादि के अभिमानी हैं तो ब्रह्म को शरीरी कहना वाग्जाल है। रामानुज ब्रह्म को शरीरी नियामक आधार तथा प्रयोजक के अर्थ में कहते हैं सो तो त्रैती भी कहते ही हैं। इनका त्रैतियों से भेद यह है कि यह चिदचित् को ब्रह्म का प्रकार बताते हैं। परन्तु यह प्रकारवाद केवल शब्दाडंबर ही है। जीव और प्रकृति ब्रह्म के 'प्रकार' कैसे ?

प्रकृतिवादी भी अपने आप को एक-द्रव्यवादी कहता है। ऐटम-वाद के रूप में तो यह वाद एकद्रव्यवाद कहला नहीं सकता। ऐटम बहुसंख्य भी हैं और बहुविध भी। इनमें समानता केवल ऐटम होने

प्रकृति वाद

की है। इस वाद के सामने—जहां तक इस वाद का उद्देश्य प्राकृतिक जगत् की रचना का स्पष्टीकरण करना है—प्रकृति (matter) और शक्ति (force) के पारस्परिक संबध की समस्या है। इन्हें गुण-गुणी माना जाय या कुछ और ? प्रकृति का गुण निष्क्रियता (inertia) है। न्यूटन के शब्दों में

प्रत्येक पिण्ड अपनी स्थिति या समान रूप से एक सीध में गति करने की अवस्था में स्थिर रहता है, सिवाय उस दशा के कि बाहर की शक्तियां उसकी अवस्था को बदल दें। (एंटियीडस्टिक थियरीज़ पृ. १५९)

इसके विपरीत शक्ति का सरलतम रूप है गति। निष्क्रिय द्रव्य का गुण स्वतन्त्र गति मानना वदतो-व्याघात है। ऐटमों में शक्ति न होने की स्थिति में इन में संयोग न होगा। कई लोगों का विचार है कि प्रत्येक ऐटम में स्वाभाविक आकर्षण शक्ति निहित है, इस शक्ति के बल से ऐटम एक दूसरे को खेंचते हैं और इस प्रकार आपस में स्वतः संयुक्त हो जाते हैं। परन्तु न्यूटन का मत इस के विपरीत है। उसने लिखा है:—

आप कभी-कभी आकर्षण को प्रकृति का स्वभाव, उसका आवश्यक गुण, बताते हैं। कृपया यह विचार मेरे सिर न मढ़िये। आकर्षण का कारण क्या है ? मैं जानने का दावा नहीं करता। पृ. १६०।

फिर कहा है :—

यह बात कि आकर्षण प्रकृति में स्वभावतः, उसके अपने अन्दर, उसके स्वरूप में पाया जाय जिससे कि एक पिण्ड दूसरे पिण्ड पर ख़ोल में कुछ दूरी के होते बिना किसी

* Fichte pronounces the rise of the original limits of the individual incomprehensible. Ueberweg's History of Philosophy val. II p. 205

‡ According to Fichte, into those elements, or individual parts, into which being originally severed, it remains severed eternally. Ueberweg's History of Philosophy. voll II p. 211

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ऐसी वस्तु के बीच में आये, जिसके द्वारा और जिसमें से उन पिण्डों की शक्ति और क्रिया एक दूसरे पर प्रभाव डाले, क्रिया करे, मेरी दृष्टि में ऐसी अतर्क्य बात है कि मेरा विश्वास है, कोई मनुष्य भी जिसे दार्शनिक विषयों में सोचने का कुछ भी सामर्थ्य है इस (भूल) में न पड़ेगा। पृ. १६१, १६२।

गति का परिणाम ताप है और ताप का फोरियर द्वारा निर्धारित सूत्र यह है :—

$$त = \frac{म \; व \; (त_1 - त_2)}{ल} + स$$

त= वाहित या विकीर्ण ताप; म= उस द्रव्य का स्थिर प्रभाव जो वाहन या विकरण का साधन है; व= cros section काट का वर्गफल; त१= आरम्भिक ताप; त२= शेष ताप; ल= माध्यम की लम्बाई ; स= समय सैंकडों में।

इस सूत्र में हमें केवल स अर्थात् समय से काम है। यदि संसार के संपूर्ण ताप, जिस के सहारे संसार की स्थिति है, के वहन या विकरण का समय सादि और अनन्त माना जाय तो हम आदिम क्षण को शून्य निश्चित कर उसके पीछे आने वाले क्षणों को १, २, ३, इत्यादि कहते जायेंगे। परन्तु यदि समय अनादि भी हो और अनन्त भी तो आदिम क्षण तो कोई होगा नहीं , हम शून्य क्षण किसी कल्पित क्षण को मानेंगे। उसके पूर्व के क्षण -१,-२,-३ इत्यादि होंगे। और पश्चात् के १, २, ३ इत्यादि। यथा—

-४-३-२-१ ० १ २ ३ ४

और किसी प्रकार इस समय की गणना नहीं हो सकती। समय को अनादि मानने की अवस्था में शून्य से पूर्व का स ऋण राशि हो जायगा और उसके ऋण होने से त अर्थात् वाहित या विकीर्ण ताप भी ऋण होगा। इसे सर विलियम जानसन ने असंभव राशि माना है और यह स्पष्टतया असंभव है ही। इसलिए ताप का आरम्भ मानना होगा अर्थात् प्रकृति-गत गति का आरम्भ। इससे पूर्व गति potential निष्क्रिय अप्रकट रूप में थी। इस अप्रकट निष्क्रिय अवस्था से प्रकट सक्रिय अवस्था में लाने के लिये किसी चेतन की आवश्यकता है।

अरिस्टाटल ने प्रकृति को नित्य माना है। परन्तु इस निष्क्रिय में प्रथम क्रिया का कारण ईश्वर को स्वीकार किया है। ऋषि दयानन्द लिखते हैं:—

जो स्वभाव से जगत् की उत्पत्ति होवे तो विनाश कभी न होवे और जो विनाश भी स्वभाव से मानो तो उत्पत्ति न होगी।..... और जो निमित्त के होने से उत्पत्ति और नाश मानोगे तो निमित्त उत्पन्न और विनष्ट होने वाले द्रव्यों से पृथक् मानना पड़ेगा। जो स्वभाव ही से उत्पत्ति और विनाश होता तो एक समय ही में उत्पत्ति और विनाश का होना संभव नहीं। सत्यार्थ प्रकाश पृ० २२९

अर्थात् प्रलय काल में प्रकृति में निष्क्रियता रहती है और सृष्टि-अवस्था में गति। इसकी व्यवस्था परमेश्वर करता है।

ऐटमों को बहुसंख्य माने पीछे उन्हें व्यवस्था पूर्वक संयुक्त वियुक्त करने का काम किसी चित् शक्ति का ही माना जा सकता है। अचित् स्वयं अपने नियमों तथा शक्तियों का भी तो इस प्रकार बुद्धि-पूर्वक पालन तथा प्रयोग नहीं कर सकता।

आत्मा की सत्ता

प्रकृतिवादी के सामने एक और पहेली है जीवन और मनन की। चित् चित् ही से पैदा होता है। कृत्रिम रुधिर बना लिया। हड्डी बनाली। मांस मज्जा तथा तन्तु-संस्थान बना लिये। सार यह कि जो अंश एक सजीव शरीर में होते हैं, वे सब कृत्रिम विधियों से तैयार कर लिये परन्तु इनके संयोग से बने पुतले में जान न आई पर न आई; जिस से स्पष्ट

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सिद्ध है कि जीवन का कारण प्रकृति नहीं, जीवन-धर्मा कोई और सत् है। वह सत् है आत्मा। यही अवस्था ज्ञान की क्रियाओं की है। ऐसे उदाहरण हैं जनमें मस्तिष्क के खोखला हो जाने की अवस्था में भीआत्मा ने अपना काम बिना प्राकृतिक साधन के चालाया है, यथा—

एडमण्ड पेरियर ने एकेडमी ओफ़ साइन्सिज़ में अपने २२ दिसम्बर १९१३ के व्याख्यान में डाक्टर रबिंसन का एक (observation) अनुभव प्रस्तुत किया कि एक मनुष्य एक वर्ष के लगभग बिना किसी दुःख या मानसिक पीड़ा के जीता रहा जब कि उसका मस्तिष्क pulp पिलपिले गूदे की अवस्था में पहुंच चुका था। और सिवाय एक महान् protext abcess फोड़े के कुछ न था। जुलाई १९१४ में डाक्टर हैनोपियन सोसाइटीओफ़ सर्जरी में एक शस्त्र क्रिया का वृत्त लाये जो बेकर हॉस्पिटल में एक छोटी सी लड़की पर किया गया था। ..... trepanning मस्तिक खोलने पर ज्ञातहुआ कि उसके मस्तिष्क का बहुत सा भाग वस्तुतः pulp पिलपिले गूदे की दशा में है..... लड़की अच्छी हो गई। डेथ ऐण्ड इट्स मिस्टरी पृ० ३८-३९

परन्तु यदि यह घटनाएं चमत्कार भी समझ ली जाएं या यह कहा जाए कि इनकी जांच में कसर रही है, तो भी मानसिक अवस्थाओं को शरीर की क्रियाओं का रूप देना असम्भव है। प्रकृति-वादियों की धारणा यह है कि मनोभाव यथा सुख, दुःख, प्रत्यक्ष, स्मृति, तर्क, इच्छा इत्यादि केवल मस्तिष्क-गत आणविक गति का रूपान्तर हैं। परन्तु जैसा कट्टर प्रकृतिवादी प्रो० ड्रिण्डल स्वयं लिखते हैं:—

"मस्तिष्क की भौतिक क्रियाओं के ज्ञान द्वारा उनके साथ साथ होने वाले मानसिक तथ्यों के रहस्य में प्रवेश पाना विचारातीत है। यह माना कि एक निश्चित विचार और मस्तिष्क की निश्चित आणविक गति साथ साथ होती है।... परन्तु हम नहीं जानते क्यों? यदि हमारे मन और इन्द्रियां इतनी विकसित शक्ति तथा प्रकाश-युक्त हो जाएं कि हम मस्तिष्क के प्रत्येक अणु को देख और अनुभव करसकें, उनकी गतियों, उनके समूहों और यदि उन में विद्युद्विसर्जन होता हो तो उस को भी अवगत कर सकें, यदि हमें उक्तगतियों से संगत विचार और अनुभूति की अवस्थाओं का भी पूर्ण ज्ञान हो सके, तोभी इस समस्या के समाधान मेंउतने ही असमर्थ रहेंगे जैसे उस से पूर्व थे कि यह भौतिक प्रक्रियाएं चेतनता के तथ्यों के साथ किस प्रकार सम्बद्ध हैं। इन दो प्रकार के तथ्यों के बीच की खाड़ी हमारे विचार द्वारा पार नहीं की जा सकती।" पृ० १७२

इस प्रकार जैसे प्राकृतिक जगत् में प्रकट हो रही रचना और व्यवस्था का स्रष्टीकरण ईश्वर को सत् स्वीकार करने ही से होता है, वैसे ही जीवन और चिन्तन की पहेली भी नहीं बूझी जा सकती जब तक कि जीवों की पृथक् सत्ता स्वीकार न की जाए।

शुद्धाद्वैत-वाद

अन्त में हमें शुद्धाद्वैतियों के विचार पर भी एक संक्षिप्त दृष्टि डाल जानी चाहिये। इस वाद के प्रतिपादक भारतवर्ष में वल्लभ हुए है। उनके विचार में नित्य द्रव्य केवल परमेश्वर है और वह अपनी इच्छा मात्र से जगत् को आविर्भूत करता है। इन्हों ने वेदान्त सूत्र १. १. २ "जन्माद्यस्य यतः" का अन्वय यों भी किया है:— जन्म आद्यस्य आकाशस्य यत इति। अर्थात् जिस से प्रथम तत्व आकाश की उत्पत्ति हुई (वह ब्रह्म)। जन्म पर कहते हैं:—

तदाधारस्य पूर्वमविद्यमानत्वात्।

इसका आधार अर्थात् जिस पदार्थ का जन्म हुआ है, वह पहिले नहीं होता।

आर्य होने के कारण यह असत् मात्र से सत् की उत्पत्ति तो मानने से रहे, परन्तु लिखा है:—

तत्र किं समवायि निमित्तं कर्तृवा। .....यद्येकमेव स्यात् तदा क्रिया ज्ञान शक्त्योर्निरतिशयत्वं भज्येत। मृदादि-साधारण्यं च स्यात्।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

तो क्या (ब्रह्म) उपादान कारण है या कर्तृ कारण।..... यदि इन में से एक हो तो उसकी क्रिया और ज्ञान की शक्ति परिमित हो जायगी। और वह मट्टी आदि के सदृश रह जायगा। (इस लिये वह कर्ता भी है और उपादान भी)।

इसी को अंग्रेज़ी में एक मात्र कारण (efficient cause) कहते हैं। शंका हो सकती है कि उपादान कारण होने से उस में विकार आएगा। कहते हैं—

अविक्रियमाण एवात्मानं करोति।

बिना विकृत हुए अपने आपको सृजता है।

कोई कहे, इस प्रकार तो उपादान कारण के लक्षण में विरोध होगा। कहते हैं:—

विरुद्धसर्वधर्माश्रयत्वं तु ब्रह्मण भूषणाय।

परस्पर विरोधी धर्मों का आश्रय होना ब्रह्म का भूषण है

ऐसों से शास्त्रार्थ कौन करे ? आगे फिर लिखा है:—

"अन्यपदार्थसृष्टौ वैषम्यनैर्घृण्ये स्याताम्। कर्माधीनत्वे अनीशता।..... ततः सर्वमाहात्म्यनाश एवस्यात्

दूसरे पदार्थ के बनाने में असमानता और अकृपा होगी। कहो, जैसा जिसका कर्म हो, वैसा उसको बना दे, तो इसमें मोहताजी है।..... इस से तो ईश्वर का सब महत्व नष्ट हुआ।

यही सिद्धान्त मुसलमानों और ईसाइयों का है। उनकी युक्तियां भी यही हैं। विकार भी न हो और उपादान भी बना रहे, यह असत् मात्र से सत् बनाना होगा, इस मत का एक मात्र आधार ईश्वर की सर्वशक्तिमत्ता है।

प्रो० फिलन्ट लिखते हैं:—

'क्या असत् से सत् की उत्पत्ति अतर्कणीय है ? नहीं। इस अर्थ में अतर्कणय नहीं कि वह विचार का विषय ही न होसके— इस प्रकार अतर्कणीय नहीं जैसे केन्द्र-रहित वृत्त या त्रिकोण वर्ग अतर्कणीय हैं, अर्थात् उस अर्थ में अतर्कणीय नहीं जिससे ऐसी उक्ति को ही असम्भव उक्ति कह दियाजाए।..... यदि मन असत् से सत् की उत्पत्ति को स्वभावतः अविचार्य अर्थात् आत्म-विरोधी तर्कणा न सिद्ध कर सके तो वह उसे अज्ञेय (अतर्क्य) नहीं कह सकता।"

एंटि-थीइष्टिक थियरीज़ पृ० १५७

इन प्रोफ़ेसर महाशय के मत में असंभव वह तर्क है जिस में आत्म-विरोध पाया जाए।

एक और स्थान पर कहते हैं:—

'इस लिये इस परिणाम से आगे जाने के लिये कोई युक्ति नहीं कि प्रकृति नैसर्गिक शक्तियों और प्रक्रियाओं द्वारा असत् से सत् नहीं की जासकती।' पृ० १५४

तो किससे की जा सकती है ?

वह (विज्ञान) साक्षी देता है कि प्रकृति नैसर्गिक प्रक्रियाओं अथवा मनुष्य के कौशल से नष्ट (सत् से असत्) नहीं होती और इस से इस परिणाम पर पहुंचता है कि जो पदार्थ इस से पूर्व सत् से असत् नहीं हुआ, उसका भविष्य में भी विनाश न होगा। परन्तु विज्ञान इस परिणाम को अंगीकार नहीं करता कि प्रकृति सत् से असत् या असत् से सत् अनन्त शक्ति द्वारा भी नहीं हो सकती। पृ० १५५

कामटे का खण्डन करते हुए लिखा है:—

उन लोगों के लिये जिनका विश्वास है कि..... (कार्य) कारण का विचार तर्कणा की क्रिया की अनिवार्य शर्त है.....

पृ० १९५

यही विश्वास इनका अपना है। लिखा है:—

निर्विकल्प अनुभूति (sensation) विचार की उत्पत्ति ही इस (कार्य कारण की भावना) के द्वारा करती है। कार्य-कारण का नियम न हो तो विचार ही न हो सके। (थीइजम प्र० ९९)

यदि प्रत्येक कार्य का कारण होना चाहिये तो वह कारण पर्याप्त (sufficient) होना चाहिये।..... यदि प्रत्येक कार्य का कारण पर्याप्त न हो तो कुछ कार्य बिना कारण के रह जाएंगे। पृ० १००

इस से पता लगा कि प्रो० फिलंट के मत में बिना कारण के कार्य की कल्पना या तो आत्म-विरोधी होने के कारण अतर्क्य है, (और नितान्त असत् से सत् की उत्पत्ति इस आत्म-विरोध के

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अन्तर्गत है) या कार्य-कारण का विचार मानव तर्कणा का एक स्वतन्त्र अवश्यंभावी अंग है जिसके बिना तर्कणा हो ही नहीं सकती। अनन्त शक्ति द्वारा भी कारण के बिना कार्य की उत्पत्ति असम्भावनीय है। प्रकृति में जड़ता है जो ईश्वर में नहीं। ईश्वर वह गुण अपने कार्य को कैसे देता है जो उस में स्वयं नहीं ? तो क्या ईश्वर प्रकृति का पर्याप्त कारण हुआ ?

असत् से सत् की उत्पत्ति की असम्भावना को फ्लिंट अच्छी तरह समझते हैं। वे लिखते हैं :—

उन (बहुत से गंभीर विचारकों) की यह सम्मति हो गई है कि प्रकृति अपनी सत्ता में शक्ति है, केवल शक्ति है। सम्पूर्ण प्राकृतिक संसार अन्ततः शक्तियों में विश्लिष्ट किया जा सकता है, और यह शक्तियां इच्छा-शक्ति के आविष्कार या आविर्भाव मात्र ही हैं। पृ. ११२

जगत् को शक्ति और शक्ति को इच्छा-शक्ति का कार्य मान लिया तो नितान्त असत् तो सत् का तो कारण न रहा। हम ऊपर देख चुके हैं कि प्राकृतिक शक्ति का सरलतम रूप गति है। यह फ्लिंट को भी अभिमत है। अब गति बिना किसी द्रव्य की कल्पना के इन "गम्भीर विचारकों" ही की तर्कणा में आ सकती है। टिंडल के उस कथन का उद्धरण—जिस का उल्लेख मैं ऊपर कर आया हूँ और जिस में मानसिक भावों और मस्तिष्क के अन्दर होने वाली आणविक गतियों में एक अनतिक्रम्य खाड़ी का होना बताया गया है, फ्लिंट ने अचित् से चित् की उत्पत्ति की असम्भावना सिद्ध करने को अपने सिद्धान्त के अनुकूल समझ कर—किया है। यदि चित् और अचित् के बीच की खाड़ी अचित् से चित् की सिद्धि करने के लिये अनतिक्रम्य है तो चित् से अचित् को सिद्धि करती दफ़े वही खाड़ी अतिक्रमणीय कैसे हो जाती है ? प्राकृतिक गति को चेतनता का रूप देना उतना ही दुस्साहस है जितना चेतनता को प्राकृतिक गति का रूप देना। प्राकृतिक गति का आधार प्रकृति ही की मानना पड़ता है और वह स्वतः सत् है।

मैंने संक्षेप में आप के संमुख एक-पदार्थ-वाद तथा एक-द्रव्य-वाद के मुख्य मुख्य संप्रदायों की समालोचना की है। बहुत्व-वाद में दर्शन के सामने सम्बन्ध की समस्या आती है। अनेक आपस में सम्बद्ध क्यों हैं ? अद्वैती इस क्यों का उत्तर नहीं देता, उस के आगे आखें मीच लेता है। उसके विचार में गुण और गुणी में तर्कणा-गत भेद भी नहीं। विशेष (differentia) भेद का मूल है। अद्वैती सिरे से विशेष की सत्ता से ही इनकार कर देता है। उस का पदार्थ है निरपेक्ष सत् (Absolute being) परन्तु आप ने देख लिया कि यह निरपेक्ष सत् हीगल के हां असत् का पर्याय है और शांकर मत में अविद्या के लक्षण में उस को असत् से व्यावृत्त नहीं किया जा सकता। निरपेक्ष सत् वालों ने पहेली बुझाई नहीं, उस से उपेक्षा करली है। विशिष्ट अद्वैत में विशिष्ट एक है और विशेष अनेक। और विशिष्ट का विशेषों से एक साथ भेद भी हैं और अभेद भी। विशेष अनेक प्रतीत होते हैं। और यह प्रतीति मिथ्या भी नहीं। इस प्रतीति का आश्रय किसी और चित् को मानना होगा जो ईश्वर के विशेषों से भिन्न हो क्योंकि वे तो यहाँ प्रतीति का विषय ही हैं। तब अद्वैत कहां रहा ? शुद्धाद्वैत में जड़ता की उत्पत्ति बिना कारण के माननी पड़ती है।

जेम्स का निम्न लिखित आक्षेप इन सब प्रकार के अद्वैतवादों पर एक सा लागू है:—

"यह (निरपेक्ष वाद) बुराई की विचारात्मक समस्या प्रस्तुत करता है, और हमें इस विस्मय में छोड़ जाता है कि निरपेक्ष की पूर्णता को क्या आवश्यकता है कि वह जीवन के इन

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

गर्हित विशेष रूपों को ग्रहण करे जिन्हों ने हमारे मानव विचार के लिये दिन दहाड़े अंधेरे कर रक्खा है"

दूसरे शब्दों में केवल पूर्ण निरपेक्ष ब्रह्म ही के होते जगत् में अपूर्णता और पाप कहां से आए हैं? आगे चल कर फिर कहा है:—

वह (ईश्वर) एक बाहर की (अपने से सत्ता में पृथक्) परिस्थिति में काम करता है। उस पर सीमाएं हैं। उसके शत्रु हैं। जोहन मिल ने निश्चय सच कहा था कि यदि ईश्वर को धार्मिक वस्तु के रूप में रखना है तो उस की सर्वशक्तिमत्ता का विचार छोड़ देना चाहिए। पृ० १२५

अभिप्राय यह है कि केवल ईश्वर को नित्य सत् मानने से संसार में विद्यमान अपूर्णता का या तो कोई कारण न बताया जा सकेगा या स्वयं ईश्वर उस का कारण हो जायगा। इन तर्क- तथा धर्म-विरुद्ध स्थितियों से बचने के लिये ईश्वर के अतिरिक्त और द्रव्यों की सत्ता माननी आवश्यक है।

मिल महोदय लिखते हैं:—

नेचर में इस कल्पना का कोई कारण नहीं कि प्रकृति या शक्ति या इन का कोई गुण उस सत्तावान् (ईश्वर) ने बनाया जो इन के संस्थानों या समूहों का रचयिता है। (थ्री एसेज़ ऑन रेलिजन पृ० १७७)

वेद का सिद्धान्त

प्रकृतिवाद की समीक्षा करते हुए हम यह धारणा स्थिर कर चुके हैं कि प्रकृति के साथ साथ हमें जीवों और ईश्वर को भी सत्तावान् मानने की आवश्यकता है। सम्बन्ध(relation)जिस की समस्या का समाधान अद्वैती से नहीं हुआ,स्थिर रहा है। उसे सत् समझ लें तो बहुत्ववाद ही का आश्रय लेना पड़ता है। संबन्ध बहुत्व का सहचर्ती है। इस बहुत्ववाद में तीन वर्गों की सत्ता माननी होगी। इन तीन को काण्ट ने अज्ञातत्रयी (Three ideas) और दयानन्द ने अनादि-त्रयी कहा है।

ऋग्वेद में आया है:—

इन्द्रः शाश्वतां साधारणः।

यहां शाश्वत् या नित्य बहुत माने हैं— कम से कम तीन। सो वर्गों की दृष्टि से तो नित्य द्रव्य तीन हैं ही और व्यष्टि-दृष्टि से देखा जाय तो असंख्य हैं।

और जगह आया है:—

त्रयः केशिन ऋतुथा विचक्षते संवत्सरे वपत एक एषाम्।
विश्वमेको विचष्टे शचीभिर्ध्राजिरेकस्य ददृशे न रूपम्।
ऋ० १. १६६. ४४

तीन सत्तावान् समयानुकूल कार्य करते है। एक काल में (कर्म का बीज) बोता है। एक अपनी शक्तियों से देखता है। और एक की गति देखी जाती है, स्वरूप नहीं।

[शेष फिर]

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बालक की सन्ध्या

थक कर शय्या साज, रात्रि को जब लेटूँ मैं।
पिता। प्रेम से तुझे पुत्रवत् तब भेटूं मैं॥
रक्षा करना, ईश! सदा माता की मेरी।
स्वस्थ रहै बलयुक्त अमित वर्षों की ढेरी॥
करना रक्षण, नाथ! पिता का भी तुम मेरे।
नित्य नवाऊँ शीश उन्हें सादर सम तेरे॥
जो सब उत्तम भाव सरल मानस में आवें।
मात पिता उर बीच हर्ष आशा उपजावें॥
पालन करना, प्रभो! युगल भ्राता का मेरे।
दुष्ट-कर्म्म, आलस्य न आवें जिससे तेरे॥
सभी परस्पर प्रेम-भाव हिलमिल हिय धारें।
मात पिता अरु भ्रात इसे ही जग विस्तारें॥
और पुनः, भगवान्! दान ये मुझको दीजै।
बुद्धि विमल हो, देव। विशद मन मेरा कीजै॥
जिससे अन्तिम नींद त्याग कर जागूं ऐसे।
मुक्ति-महोदधि मध्य सिद्ध साधक हो जैसे॥

हरिशरण 'मराल'

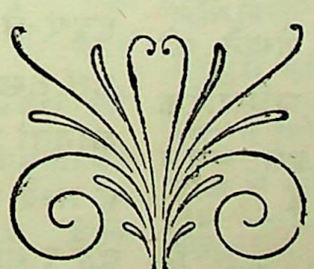

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वेदों में दार्शनिक विचार

प्रथमअध्याय (प्रकृति)

(ले०— श्री पं० धर्मदेव जी वेदवाचस्पति)

संसार एक विचित्र पहेली है। मनुष्य इस सांसारिक घटनाचक्र में अपने आपको एक क्षुद्र प्राणी अनुभव करता है। पंचभूतों के परिवर्तन तथा विकार और द्युलोकस्थ सूर्य, चन्द्र तारों आदि का निःस्पन्द होकर दिन रात नियमबद्ध अविरत गति करना मनुष्य को इस स्थूल संसार या सांसारिक घटनाचक्र से किसी अन्य वस्तु का संकेत करता है। उसी संकेत को समझने के लिये, अपने मन में उत्पन्न हुए २ संशयों को दूर करने के लिये मनुष्य इस संसार में घुस कर वास्तविक नियमों तथा शक्तियों को जानने का प्रयत्न करता है।

यही 'संप्रश्न'—संसार को देख कर प्रश्नों का उत्पन्न होना दार्शनिक विचारों का जन्मस्थान है। मन की इस उद्विग्नता को—उत्पन्न हुए २ प्रश्नों के सुलझाने की अभिलाषा को—शान्त करने के लिये मनुष्य संसार में छिपे हुए रत्नों को देखने की कोशिश करता है। जिस समय इन सांसारिक घटनाओं से परे किसी अदृश्य वस्तु का इस स्थूल संसार के साथ सम्बन्ध देख लेता है— वही वास्तविक दर्शन है, वही फ़िलासफ़ी है। वेद के शब्दों में—"सतो बन्धुमसति निरविन्दन्। हृदि प्रतीष्या कवयो मनीषा। ऋ १०। १२९। ४। मनःशील क्रान्तदर्शी कवि लोग ही सत्—स्थूल संसार का असत्—सूक्ष्मवस्तु के साथ सम्बन्ध जान सकते हैं। 'असत्' और 'सत्' के पारस्परिक सम्बन्ध को देखने का नाम ही 'दर्शन' है।

परन्तु मनुष्य अल्पज्ञ है। उसके साधन अपूर्ण हैं। इस व्यक्त संसार की तह में क्या २ छिपा हुआ है यह संपूर्णतया जान सकना असंभव है। यद्यपि मनुष्य के ज्ञान की कोई निश्चित सीमा नहीं बना सकते तथापि उसके ज्ञान के साधनों और उपायों को देख कर इतना अवश्य कह सकते हैं कि मनुष्य कभी भी सम्पूर्णतया नहीं जान सकता, वह सर्वज्ञ नहीं हो सकता। किसी अनिश्चित मर्यादा तक वह वस्तुओं के स्वरूप को जान सकता है परन्तु अन्त में ऐसी अवस्था आजाती है कि जब न्यूटन की तरह अनुभव करता है कि "मैं अभी तक सागर के किनारे पड़े हुए कुछ कंकर ही प्राप्त कर सका हूँ।" अन्त में ऐसी अवस्था आजाती है जब वह उपनिषद् के निम्न वाक्य की सचाई को हृदय से अनुभव करने लगता है कि—"यस्यामतं तस्य मतं मतं यस्य न वेद सः। अविज्ञातं विजानतां विज्ञातमविजानताम्॥ केन २। ३॥ "नाहं मन्ये सुवेदेति नो न वेदेति वेद च। यो न स्तद्वेद तद्वेद नो न वेदेति वेद च॥ केन २। २॥

यह सब कुछ होते हुए भी अपने हृदय से उत्पन्न हुए २ प्रश्नों से इतना उद्विग्न हो जाता है। कि संसार को देख कर कह उठता है:—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अनिकित्वाञ्चिकितुषश्चिदत्र पृच्छामि विद्वां न विद्वाञ्जिगत्स्तम्भ षडिमा रजांसि—॥ ऋ. १। १६४। ६॥

इह प्रवीतु य ईमङ्ग वेदास्य वामस्य निहितं पदं वेः ऋ. १। १६४। ७॥[1]

जिज्ञासु के मन में बार २ यही प्रश्न उठता है—

किं स्विदासीदधिष्ठान मारम्भणं कतमस्वित् कथासीत्॥ ऋ. १७। ८१। ८॥

किं स्विद्वनं क उ स वृक्ष आस यतो द्यावापृथिवी निष्टतक्षुः॥ ४॥

अर्थात् इस संसार का आधार कौन था। इस का प्रारंभ किस वस्तु से हुआ था और वह वस्तु कैसी थी॥ १॥ वह कौनसा जङ्गल था, वह कौन सा वृक्ष था जिससे यह घढ़ा गया है॥ २॥

इस प्रकार यह संसार क्या है? किस वस्तु से बना है? किस तरह बना है? किसने बनाया है? क्यों बनाया है? इत्यादि प्रश्न भिन्न २ रूप में मनुष्य के मन में उठते रहते हैं। मनुष्य इस जिज्ञासा को पूर्ण किये बिना नहीं रह सकता। महात्मा बुद्ध ने अपने शिष्यों को ऐसी समस्याओं में न पड़ने का उपदेश दिया। इस प्रकार के प्रश्न करने वालों को उन्होंने बहुत निरुत्साहित किया और उनको स्पष्ट मना कर दिया कि मेरे से ऐसे प्रश्न न किया करो। मैंने तुम्हें इन प्रश्नों को सुलझाने के लिये अपना शिष्य नहीं बनाया (२) परन्तु इतने से क्या उनके शिष्यों ने अपनी इच्छा को दबा लिया? उनके निर्वाण के उपरान्त बौद्ध फिलासफ़ी का भी भारतमें पर्याप्त प्रचार और विस्तार हुआ है। मनुष्य की इस नैसर्गिक अभिलाषा को दबाना नितान्त असंभव है। दबाई हुई यह इच्छा दबाई हुई वायु की भाँति अधिक वेग से उठेगी। इस जिज्ञासा का उत्पन्न होना और उस की पूर्ति करके तदनुकूल जीवन रहस्य जानना ही मनुष्य की विशेषता है इसलिये मनुष्य को अपने वास्तविक स्वरूप में स्थित रखने के लिये इन नैसर्गिक जिज्ञासाओं को किसी हद तक पूर्ण करना अत्यन्त आवश्यक है। अतएव वेद में इन जिज्ञासाओं को दबाने का यत्न नहीं किया प्रत्युत स्थान २ पर एतादृश प्रश्नों को मनुष्य के मन में घर करने के लिये सृष्टि उत्पत्ति आदि विषयक प्रश्न उठाए गए हैं और साथ ही उनका उत्तर भी दिया गया है।

इन समस्याओं को किस तरह सुलझाया गया है। पूर्वोक्त प्रश्नों का वेद में क्या उत्तर दिया गया है इस को हम इस निबन्ध में क्रमशः स्पष्ट करने का प्रयत्न करेंगे।

यह संसार क्या है?

यह संसार तीन स्थूल विभागों में विभक्त है। जिस पर हम सब मनुष्य पशु आदि रहते हैं वह भूलोक है। जो हमारे ऊपर प्रकाशमान सूर्य तारे आदि दिखाई देते हैं वे द्युलोक के अन्तर्गत हैं। इसके अतिरिक्त, दोनों लोकों के बीच में जो रिक्तस्थान है जिसमें वायु चलती है, बादल गरजते हैं, और रह-रह कर विद्युत् चमकती है, जो दोनों लोकों के बीच में खोखला स्थान दिखाई देता है उसका नाम अन्तरिक्ष (अन्तराक्षान्तम्) है।

इन तीनों लोकों की वस्तुओं में नित्य कुछ न कुछ परिवर्तन और विकार नज़र आता हैं। ये सब वस्तुएँ किसी अन्य वस्तु के रूप में परिवर्तित हो

१—अर्थ—अज्ञानी मैं ज्ञानी पुरुषों से पूछता हूं कि किसने इन छः लोकों को धारण किया हुआ है। हे प्रिय! जो मनुष्य इस सुन्दर संसार के आश्रय को जानता हो वह मुझे बतावे।

२—मालुक्य पुत्त वाद (मज्झिम निकाय)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जाती हैं। इन का कोई कारण होना चाहिये। यह संसार किन स्थूल भूतों का बना हुआ है यह प्रश्न यजुर्वेद में एक नये ढंग से किया गया है। यजुर्वेद २३।५१ में लिखा है—

"केष्वन्तः पुरुष आविवेश कान्यन्तः पुरुषे अर्पितानि॥
"एतद्ब्रह्मन्वयल्हामसि त्वा किस्विन्नः प्रतिवोचास्यत्र॥"

अर्थः—हे ज्ञानी पुरुष! किन वस्तुओं के अन्दर परमेश्वर प्रविष्ट हुआ है, और कौन सी वस्तु परमेश्वर में स्थापित हैं। हम आप से यही पूछते हैं कि वह क्या है। आप इस विषय में हमें उत्तर दें।

अगले मंत्र में इसका उत्तर दिया है—पञ्चस्वन्तः पुरुष आविवेश तान्यन्तः पुरुषे अर्पितानि। एतत्वा प्रतिमन्वानो अस्मि न माययाभवस्युत्तरो मत्॥

अर्थः—हे जिज्ञासु! पांच (भूतों) में परमेश्वर व्याप्त है और पांच (भूत) ही पुरुष में आश्रित हैं। इस विषय में मैं तेरा समाधान करता हूं। तू मुझ से ज्ञान में उत्कृष्ट नहीं है।

पुरुष (परमात्मा) व्यापक है यह सिद्धान्त स्वीकार करने पर स्वभावतः यह प्रश्न उठता है कि वह किन में व्याप्त है। व्याप्य व्यापक सम्बन्ध भिन्न-भिन्न में ही हो सकता है। जब हम कहते हैं कि परमात्मा व्याप्त है तो इसका यह तात्पर्य होता है कि वह किसी दूसरी वस्तु में प्रविष्ट है। वह दूसरी वस्तु क्या है? इसका उत्तर दिया है—"पंचस्वाविवेश"। अर्थात् वह परमेश्वर पांच(भूतों) में व्याप्त है। फलतः परमात्मा से अतिरिक्त इस संसार में पांच (भूत) हैं।

क्या यह पांच भूत ही इस संसार में हैं। इसी से यह सारा जगत् बना हुआ है? क्या इन्हीं पांच भूतों से सृष्टि का प्रारम्भ हुआ? इस का कुछ दिग्दर्शन अथर्व वेद के १०।८।५ में हो जाता है। वहां लिखा है:—

इदं सवित र्विजानीहि षड्यमा एक एकजः।
तस्मिन् हायित्वमिच्छन्ते य एषामेक एकजः॥

अर्थः—हे शिष्य! तू यह जान ले कि इस संसार में (कार्य कारण के भेद की दृष्टि से) छः का जोड़ा है। जिन ६ में से एक अकेला होता हुआ दूसरों का उत्पादक है और उसी में ही शेष (पांच) लीन हो जाते हैं।

अर्थात् कार्य कारण के भेद से इस संसार में छः वस्तुएँ (एक कारण + ५ कार्य) हैं। वे कार्य अन्त में प्रलयावस्था—में अपने कारण में लीन हो जाते हैं अर्थात् केवल मूल कारण ही रह जाता है।

इससे दो परिणाम निकलते हैं (१) केवल कार्य रूप (विकृति मात्र) जगत् ५ प्रकार का है और कारणरूप (प्रकृति मात्र) जगत् एक प्रकार का है (२) सांख्य और योग दर्शन की तरह कारण कार्य से अभिन्न भी है और भिन्न भी है।

परन्तु ये पांच विकार कौन-कौन से हैं? प्रकृति के अन्तिम कार्य-कार्य कौन से हैं? इसका निर्देश ऋग्वेद के मृत्यु सूक्त में कुछ कुछ मिलता है। मनुष्य की मृत्यु के बाद शरीर का कौनसा पदार्थ किस तत्व में लीन हो जाता है-यह वर्णन पढ़ने से सृष्टि के अन्तिम विकार का स्वरूप ज्ञात हो सकता है। ऋ १०।१६।३ में लिखा है—"सूर्यं चक्षु गच्छतु वातमात्मा द्यां च गच्छ पृथिवीं च धर्मणा। अपो वा गच्छ यदि तत्र ते हितमोषधीषु प्रतितिष्ठा शरीरैः॥" इससे मिलता जुलता अथर्व १८।२।७ मंत्र मिलता है—"सूर्यं च चक्षुषा गच्छ वातमात्मना दिवं च गच्छ पृथिवीं च धर्मभिः॥ अपो वा गच्छ यदि तत्र ते हितमोषधीषु प्रतितिष्ठा शरीरैः॥"

१. एकः सन् यो व्यात् पंच जनयति इत्येकजः।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ये मन्त्र शव दाह के समय बोले जाते हैं। इसमें यह प्रार्थना की गई है कि हे मनुष्य! तेरा शरीर सूर्य (तेज) में, वायु में, द्यौ (आकाश) में, पृथिवी में और जल में चला जावे। इससे स्पष्ट प्रतीत होता है कि मृत्यु के बाद नष्ट होता हुआ यह शरीर अपने कारणों-पंच भूतों में-लीन हो जाताहै। फलतः यह संसार पांच भूतों-पृथिवी जल, सूर्य (तेज), वायु और द्यौ (आकाश) से बना हुआ है।

संक्षेप में संसार के दृश्य पदार्थ नष्ट होते हुए पांच भूतों में विभक्त हो जाते है। और ये ५ भूत भी प्रलयकाल में, अपने कारण एक 'एकज' (मूल प्रकृति) में लीन हो जाते हैं। परन्तु वह मूल प्रकृति क्या है? अथवा यह संसार किस वस्तु से बना है यह प्रश्न बहुत विवादास्पद है। भिन्न-भिन्न विद्वान् इसका भिन्न-भिन्न उत्तर देने का प्रयास करते हैं। परन्तु वेद में इस समस्या को किस तरह हल किया है इस पर हम कुछ प्रकाश डालेंगे।

यह संसार किस वस्तु से बना है?

डाक्टर वेणी माधव डी. लिट अपनी Pre-Buddhistic Indian Philosophy में सृष्टि-युत्पत्ति के विषय में भिन्न-भिन्न ऋषियों के नाम से भिन्न भिन्न मत दर्शाते हुए लिखते हैं कि ब्रह्मणस्पति ऋषि अभाव से भाव स्वरूप जगत् की उत्पत्ति मानते थे। इस बात की पुष्टि में वह ऋ. १०। ७२। २ मंत्र पेश करते हैं— "देवानां प्रथमे युगे ऽसतः सदजायत॥" अर्थात् देवों के प्रारम्भ काल में असत् (अभाव) से (भाव) की उत्पत्ति हुई।

इस मंत्र में उक्त महोदय ने सत् का अर्थ भाव और असत् का अर्थ अभाव किया है। हमें यह अर्थ उचित प्रतीत नहीं होता। यद्यपि सत् शब्द का अर्थ भाव और असत् का अर्थ अभाव भी होता है तथापि केवल यही अर्थ नहीं होता। इस अर्थ के अतिरिक्त कुछ और अर्थ भी होता है। उदाहरणार्थ कतिपय ऐसे मन्त्र पेश किये जा सकते हैं जिनसे मालूम होजाता है कि असत् और सत् शब्द का अर्थ अभाव और भाव के अतिरिक्त कुछ और ही होना चाहिये। वह निम्न मंत्र है—"असच्चसच्चपरमे व्योमन् दक्षस्य जन्मन्नदितेरुपस्थे। ऋ १०। ५। ७॥ असच्च यत्र सच्चात्तं स्कंभं तं ब्रूहि कतमः स्विदेव सः। ऋ. १०। ७। १०॥ सन्नुच्छिष्टे असञ्श्चोभौ……। अ. ११। ७। ३॥ सतश्च योनिमसतश्च विवः। अ. ४। १। १॥

इन मंत्रों में सत् और असत् का समुच्चय में प्रयोग होने से यही प्रतीत होता है कि कम से कम इन स्थलों में सत् और असत् का प्रयोग भाव और अभाव अर्थ में प्रयुक्त नहीं किया गया। क्योंकि सत् और असत् का भाव और अभाव अर्थ करने से मंत्रों का अभिप्राय स्पष्ट नहीं होता। यदि सत् और असत् का अर्थ क्रमशः भाव और अभाव किया जावे तो उपर्युक्त मंत्रों का अर्थ इस प्रकार होगा—

(१) सर्वशक्तिमान् अविनाशी परमेश्वर के आश्रय में भाव और अभाव है।

(२) भाव और अभाव जिसके आश्रय में है उस स्कंभ का प्रवचन करो।

(३) ब्रह्म ने भाव और अभाव की योनि को अभिव्यक्त किया।

इस प्रकार सत् और असत् शब्द का अर्थ भाव और अभाव करने से अभिप्राय स्पष्ट नहीं होता। इसलिये यह स्वीकार करना पड़ता है कि सत् और असत् का अर्थ केवल भाव और अभाव ही नहीं प्रत्युत् इसके अतिरिक्त इनका कुछ और अर्थ भी है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हां, "देवानां प्रथमे युगेऽसतः सदजायत । ऋ १०।७२।२। से इतना अवश्य प्रतीत होता है कि 'असत्' से 'सत्' की उत्पत्ति हुई। इतना ही नहीं कि केवल उपर्युक्त मंत्र में ही 'असत्' से 'सत्' की उत्पत्ति बताई गई है अपितु "असति सत् प्रतिष्ठितम्" अ. १७।१। १६ इत्यादि मंत्र के आधार पर भी यह कहा जा सकता है कि वेद में 'असत्' से 'सत्' की उत्पत्ति मानी गई है। परन्तु इसका यह कभी तात्पर्य नहीं कि अभाव से भाव की उत्पत्ति मानी गई है।

सत् और असत् का अर्थः—

अब विचारणीय यह है कि यदि सत् और असत् शब्द का अर्थ केवल भाव और अभाव नहीं तो क्या है। ब्रह्मसूत्र २।१।१७। "असद्व्यपदेशान्नेति चेन्न धर्मान्तरेण वाक्यशेषात्" की व्याख्या करते हुए श्री स्वामी शङ्कराचार्य लिखते हैं—"·····इह तावत् 'असदेवेदमग्र आसीत्' (छा० ३।११।१) इत्यसच्छब्देनोपक्रमे यत्तदेव पुनस्तच्छब्देन परामृश्य सदिति विशिनष्टि— 'तत् सदासीत् इति— 'असद्वा इदमग्र आसीत् (तै. २।७।१) इत्यत्रापि तदात्मानं स्वयमकुरुत' इति वाक्यशेषे विशेषणान्नात्यन्तासत्वम्·····नामरूपव्याकृतं हि वस्तु सच्छब्दार्हं लोके प्रसिद्धम्। अतः प्राङ् नामरूपाव्याकरणादसदित्युपचर्यते।

अर्थात् नाम और रूप से रहित वस्तु विशेष का नाम 'असत्' है। अभाव ही असत् का अर्थ नहीं। वाचस्पत्य कोश में भी लिखा है।

इसलिये प्रो० ग्रिफिथ महोदय भी अथर्व १०।७।१० मंत्र के फुट नोट में स्यूर का अर्थ उद्धृत करते हुए लिखते हैं— Non-existence and existence: all that possesses the potentiality of existence as well as all that actually existes.[1] अर्थात् जो वस्तु प्रत्यक्ष रूप से स्थित न हो परन्तु जिसमें रहने की गुप्त शक्ति हो उसे 'असत्' कहते हैं। जो वस्तु प्रत्यक्ष रूप से स्थित हो उसे 'सत्' कहते है।

इसलिये "देवानां प्रथमे युगेऽसतः सदजायत" और "असति सत्प्रतिष्ठितम्" मंत्र में असत् से सत् की उत्पत्ति का तात्पर्य अभाव से भाव की की उत्पत्ति नहीं, प्रत्युत प्रत्यक्ष रूप से अस्थित एवं शक्ति रूप से इस स्थूल को धारण करने वाले, नाम रूप से रहित वस्तु विशेष से नाम रूप वाले इस स्थूल जगत् की उत्पत्ति बताई गई है। दूसरे शब्दों में कहना हो तो इस तरह कह सकते हैं कि इस स्थूल जगत् से पूर्व एक ऐसी अवस्था थी जब कि वस्तुओं का भेद न था उस समय न वस्तुओं का ऐसा रूप था न नाम। सब एक रूप हुए-हुए थे। उस एक रुप 'असत्' वस्तु से इस स्थूल जगत् की उत्पत्ति हुई। जिस प्रकार घड़ी, बर्तन, लैंप आदि की उत्पत्ति किसी ऐसी वस्तु से हुई जो इनकी अपेक्षा एक रूप थी और जिस में इन पदार्थों को उत्पन्न करने की शक्ति विद्यमान थी उसी प्रकार यह विविध नाम रूप वाले जगत् की उत्पत्ति भी एक ऐसी वस्तु से हुई जो एक रूप है और जिस में इस संसार को उत्पन्न करने की शक्ति विद्यमान् है। उस वस्तु को दार्शनिक परिभाषा में 'असत्' कहते हैं। इसी प्रकार असत् से सत् की उत्पत्ति का तात्पर्य बिल्कुल स्पष्ट हो जाता है।

परन्तु आज विचारणीय विषय यह है कि वह कौनसी वस्तु है जो नाम रूप से रहित है और

१. The hymns of the Atharveda-Part II पृष्ठ २७.

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जिसमें इस स्थूल संसार को उत्पन्न करने की शक्ति विद्यमान् है। इस प्रश्न का उत्तर ऋग्वेद के नासदीय सूक्त (ऋ. १०। १२९) के कुछ मंत्रों से मिलता है इसलिये अब उनको लेते हैं।

सृष्टि का मूल तत्व

इस संसार का मूल कारण कौन है इस बात पर निम्न मंत्र प्रकाश डालते हैं जो इस प्रकार हैं—

नासदासीन्नो सदासीन्नासीद्रजो नो व्योमा परोयत्।
किमावरीवः कुह कस्य शर्मन्नम्भः किमासीद्गहनं गभीरम्॥
न मृत्युरासीदमृतं न तर्हि न रात्र्या अन्ह आसीत्प्रकेतः।
आनीदवातं स्वधया तदेकं तस्माद्धान्यन्न परं किंचन आस॥२॥
तम आसीत्तमसा गूढ़मग्रेऽप्रकेतं सलिलं सर्वमा इदम्।
तुच्छ्येनाभ्वपिहितं यदासीत्तपसस्तन्महिना जायतैकम्॥३॥

उस समय (प्रलय काल) में न सत् था और न असत्। उस समय न यह पृथिवी लोक था न वह सुदूरवर्ती द्यूलोक। तब कहां क्या ढका हुआ था और किसके आश्रय से क्या था? क्या बड़ा गंभीर समुद्र उस समय था॥ १॥ उस समय न मृत्यु और न अमृतता थी। नाही रात्रि और दिन का भेद था। केवल वह एक (ब्रह्म) स्वधा (अन्न अर्थात् जड़ रूप प्रकृति) के साथ बिना वायु के प्राण धारण कर रहा था। उस से उच्च और कोई न था॥ २॥ उस समय महान् घोर अन्धकार था यह सब संसार अप्रतर्क्य और अविज्ञेय सलिल रूप था। जो सलिल अभाव से व्याप्त था (अर्थात् नाम रूपा व्याकृत था) वह एक रूप सलिल तप के प्रभाव से (भिन्न-भिन्न रूपों में) उत्पन्न हो गया।

इस में बताया है कि प्रलय काल में एक चैतन्य स्वरूप परमात्मा था और इसके अतिरिक्त, उस के आश्रित एक 'सलिल' था। उस समय न सत् था न असत्। अर्थात् प्रलय काल में पुरुषार्थ क्षम (भोग और अपवर्ग में सहायक) यह स्थूल जगत न था। परन्तु साथ ही इस का यह अभिप्राय नहीं कि उस समय यह जगत् शश विषाण की तरह तुच्छ रूप था। यह कार्य जगत् कारण रूप से भी अपने मूल कारण में न रहता हो, यह नहीं था। उस समय कोई लोक न था, मृत्यु और अमृतता न थी, और नाहीं दिन और रात के भेद का ज्ञान था। इस कारण यह जगत् पुरुषार्थ क्षम तो बिलकुल न था। नाहीं यह जगत केवल तुच्छ रूप था प्रत्युत कारणात्मना अवश्य विद्यमान था। श्री कृष्ण महाराज ने गीता में कहा है कि 'नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते ऽसतः—अर्थात् न अभाव वस्तु की कभी सत्ता (उत्पत्ति) होती है और न कभी सद्वस्तु का कभी नाश होता है। इसी सत्कार्यवाद के सिद्धान्त का इस जगह समर्थन किया गया है। अस्तु।

पूर्व इसके कि 'सलिल' शब्द का कुछ स्पष्टीकरण किया जाय हम कुछ ऐसे मंत्र उपस्थित करना चाहते हैं जिन में सृष्टि मूल के उपादान कारण का कुछ मूल मिलता है—

"आपो अग्रे विश्वमायन् गर्भं दधाना अमृता ऋतज्ञाः। यासु देवीष्वधिदेव एक आसीत् कस्मै देवाय हविषा विधेम॥ अ.। ४। ३। ६॥"

"आपो वत्सं जनयन्ती गर्भमग्रे समैरयन्—"अथर्व ४। २। ८॥

"तमिद्गर्भं प्रथमं दध्र आपो यत्र देवा समगच्छन्त विश्वे"। ऋ १०। ८२। ६॥

अर्थ—सृष्टि से पूर्व अविनश्वर, सृष्टि के नियमों को देखने वाले आपः सारे संसार को गर्भ रूप में धारण करता हुआ व्याप्त हो रहा था। इन्हीं 'दिव्य आपः' में सब का अधिपति परमेश्वर विद्यमान् था॥ १॥ सृष्टि के आदि में 'आपः'ने गर्भ में धारण किये हुए संसार रूपी वत्स को उत्पन्न किया॥ २॥ जिस परम देव परमात्मा को सब लोक प्राप्त होते हैं उसी परमात्मा को सृष्टि के आदि में 'आपः' धारण करते थे॥ ३॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

नासदीय सूक्त में इस संसार का मूल कारण 'सलिल' बताया गया है। और इन उपर्युक्त मंत्रों में 'आपः' को सृष्टि का कारण बताया गया है। इस से इतना स्पष्ट है कि 'आप' और 'सलिलः' का एक ही अर्थ है। परन्तु इन का अर्थ क्या है यह विचारणीय है।

पाश्चात्य विद्वान् 'सलिल' और आपः का अर्थ जल (water) करते हैं। परन्तु यह अर्थ कहां तक ठीक है यह हम नहीं कह सकते। वैदिक ऋचाओं में किये गये जल के वर्णन से 'सलिल' का अर्थ जल प्रतीत नहीं होता। इन मंत्रों में 'सलिल' को 'सत्' और 'असत्' से भिन्न कहा है जो साधारण जल में संगत नहीं होता। प्रलय काल में अवस्थित मूल कारण (प्रकृति) का नाम 'सलिल' है।[1] इसी प्रकार के सत् और असत् से भिन्न मूल उपादान कारण को पातञ्जल योग दर्शन के भाष्य कार श्री व्यास महाराज ने प्रकृति प्रधान या अव्यक्त नाम दिया है। वह लिखते हैं—

"प्रति संसृज्यमानाश्च तस्मिन्नेव सत्तामात्रे महत्यात्मनि अवस्थाप्य यत्तन्निः सत्तासत्तं निःसदसत् निरसदव्यक्त-मलिङ्गं स प्रधानं तत्प्रतियन्ति ॥ योग दर्शन साधन पाद १९ सूत्र ॥

१. सलिलं = सति लीनं भवति।

२. आपः = आप्नोतेः।

जिस वस्तु विशेष को भाष्यकार ने प्रधान या प्रकृति नाम दिया है उसी को नासदीयसूक्त में 'सलिल' नाम दिया गया है। नाम में भेद है, वस्तु में भेद नहीं। इस लिये 'सलिल' शब्द का अर्थ यदि हम प्रकृति करें तो अयुक्त न होगा।

इस तरह हम इस परिणाम पर पहुँचे कि असत् (नामरूपाव्याकृत प्रकृति) सलिल और आपः एक वस्तु है। एक वस्तु के यह भिन्न-भिन्न तीन नाम है। यही जगत् का मूल उपादान कारण हैं। इसी बात को 'बृहज्जाबालोपनिषद्' में स्वीकार करते हुए लिखा है—

"आपो वा इदमसत्सलिलमेव" स प्रजापति रेकः पुस्कर पर्णो समभवत्। तस्यान्तर्मनसि कामः समवर्तत इदं सृजेयमिति ॥ तस्माद्यत्पुरुषो मनसाभिगच्छति तद्वाचा वदति। तत्कर्मणा करोति। तदेषाभ्यनूक्ता। कामस्तदग्रे समवर्तताधि। मनसो रेतः प्रथमंयदासीत्। सतो बन्धुमसति निरविन्दन् हृदि प्रतीष्या कवयो मनीषेति।"

परन्तु अब विचारणीय है कि उस आदि मूल उपादान कारण 'सलिल' या आपः' का क्या स्वरूप हैं। और उस से किस तरह सृष्टि का विकास हुआ।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

भोजनविधि

(ले०—श्री पं० सत्यदेव जी विद्यालंकार, वैद्य भूषण)

"विधिहीनस्य यज्ञस्य कर्ता धर्ता विनश्यति"

समझा जाता है कि उदर रूपी अग्निकुण्ड में विधि और नियम को तोड़ कर यज्ञ करने वाले का कुछ भी नहीं बिगड़ता, लेकिन लेखक का यह दृढ़ विश्वास है कि लोहे के अग्नि कुण्ड में अशुद्धि से चरु आदि डालने से सम्भवतः उतनी हानि नहीं होती जितनी कि इस उदर रूपी अग्निकुण्ड में एक बार भी तनिक सी अशुद्धि से हवि डाल देने से होती है। यमराज के घर का पाहुना, विकराल काल की डरावनी मूर्ति को देख कर जो बीमार दीन और हीन आवाज़ में वैद्यराज की शरण में जाकर त्राहि २ की पुकार करता है वही धन्वन्तरि महाराज की कृपादृष्टि से रोग से मुक्त होकर, इस उदर रूपी अग्निकुण्ड में अविधि पूर्वक यज्ञ करने से तनिक भी संकोच नहीं करता। संकोच नहीं करता केवल इतना ही नहीं, अपितु अवहेलना करता है कि आज! इन वैद जी का कहा न सुनो यह तो नीम ही खिलावेंगे। ये तो मौत के बड़े भाई हैं। मौत तो केवल प्राण ही हरती है ये प्राण और धन सभी कुछ हरलेते हैं। बस इन को दूर से ही नमस्कार किया करो।

लेकिन लेखक ऐसे भोलेभाले लोगों के प्रति सच्चे हृदय से यह संदेश पहुँचाना चाहता है कि जिन वैद्यराज की गोली काल के पंजों से छुड़ाती है उन ही वैद्यराज की महिमा को सदा हृदय में धारण कर के प्रातः सायं उन की ही पूजा किया करो और उन के आदेश के अनुसार ही इस उदर रूपी अग्निकुण्ड में हवन किया करो। इस यज्ञ का ऋत्विक् समझदार, शास्त्रवेत्ता और निःस्वार्थ वैद्य महाराज को ही बनाया करो किसी अनाड़ी को नहीं।

पाकशाला तथा पाचक

भोजन के पकाने में शुद्धि की नितान्त आवश्यकता है। पाकशाला शुद्ध और (रम्य स्थान में होनी चाहिये। आस पास कीचड़ और दुर्गन्ध आदि न होनी चाहिये। पाक शाला में नित्य कृमिनाशक धूप और गुग्गुलु आदि से हवन होना चाहिये। ऐसा करने से भोजन को कृमियों के विष से सुरक्षित किया जा सकता है और आगन्तुक व्याधियों से शरीर की रक्षा की जा सकती है।

भोजन बनाने वाले सदाचारी और निपुण वैद्यकशास्त्र से परिचित हों, ताकि विरुद्ध और निषिद्ध आहारों को न बना कर ऋतु आदि के अनुकूल भोजनों को उत्तमतया बनावें। भोजन से पूर्व स्नान से देह की शुद्धि करें। हाथों की शुद्धि पर विशेष ध्यान देना चाहिये, क्योंकि उन की अशुद्धि से रोग भोजन के द्वारा संक्रान्त हो सकता है। स्वेद आदि मल से भी अन्न की रक्षा करें। प्रमेह तथा अन्य संक्रामक रोगों से ग्रस्त पाचकों को भोजन न बनाने देना चाहिये। मांसाहारी तथा अन्य मल में काम करने वाले भंगी चमार आदि और गन्दे विचार वाले व्यक्तियों के हाथ का भी भोजन न खाना चाहिये।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

भोजन को उचित पात्रों में ढक कर रखना चाहिये। मक्खियों आदि के द्वारा कृमि संक्रमण करते हैं और रोग उत्पन्न करते हैं। खुले रहने से दूध आदि में अन्यान्य जोश उठने लगते हैं जो कि अनेक अवस्थाओं में हानिकारक होते हैं।

भोजन करने से पूर्व स्नान करने से भूख अच्छी लगती है क्योंकि त्वचा की रक्तवाहिनियों के शीत से संकुचित हो जाने के कारण रक्त बाहर न आकर आभ्यन्तरिक अङ्गों अर्थात् आमाशय और यकृत् इत्यादि की ओर अधिक जाता है; जिस से कि पाचकरस अधिक बनते हैं और भोजन सम्यक्तया पच जाता है। यदि स्नान सम्भव न हो तो पैर तो अवश्यमेव धो लेने चाहिये।

भोजन से पूर्व व्यायाम का प्रभाव स्नान से ठीक उलटा होता है। रक्त की गति त्वचा में होती है। इस लिये आमाशय आदि में रक्त की पर्याप्त मात्रा के न पहुँचने से भूख कम लगती है और बदहज़मी की शिकायत रहती है।

स्नान करने के बाद आचमन करके प्रसन्नता पूर्वक भोजन करना चाहिये। उत्तम से उत्तम भोजन भी यदि गुस्से, शोक या चिन्ता से खाया जाता है तो पचता नहीं और हानि करता है। आचमन से दिल प्रसन्न, शान्त तथा एकाग्र होता है।

चरक भगवान् ने भोजन करने के विषय में कुछ नियम दिये हैं। यहां उनका संक्षेप से वर्णन किया जाता है।

उष्णमश्नीयात्—

भोजन उष्ण करना चाहिये, क्योंकि इस से स्वाद अधिक आता है और पाचक पित्त भी अधिक निकलता है। मुख की श्लेष्मा या लाला में टायलिन(ptyaline)तापक एक पदार्थ होता है जो कि ३८-४१ शतांश के ताप पर श्वेतसार पर सब से अधिक काम करता है। ६०० से अधिक उष्णता पर तथा शीत पर भी वह मन्द हो जाता है। अतः श्वेतसार वाले भोजन ठीक पच सके इस के लिये भोजन उष्ण ही करना चाहिये।

स्निग्धम श्नीयात्—

भोजन स्निग्ध करना चाहिये। स्निग्ध भोजन स्वादु होता है। पाचक पित्त को अधिक निकालता है इस लिये भोजन को भली प्रकार से पचाता है। वात की गति को ठीक करता है और पित्त के द्वारा मल को निकालता है। इस लिये मलबन्ध नहीं होने पाता भोजन मात्रा में

मात्रावदश्नीयात्—

ही खाना चाहिये। न्यून भोजन करने से वात की वृद्धि होती है और शरीर कृश तथा दुर्बल हो जाता है। अधिक भोजन करने से यह पचता नहीं, आमाशय रोगी हो जाता है। पेट दर्द अफ़ारा, खट्टे डकार तथा कब्ज आदि से शरीर पीड़ित रहता है।

जीर्णे श्नीयात्—

प्रथम भोजन के पच जाने पर ही दूसरा भोजन करना उचित है। उद्गारशुद्धि, मलत्याग, क्षुधा तथा लघुता से आहार जीर्ण समझा जाता है। अजीर्ण की अवस्था में किया गया भोजन विदाह (सड़ांद) उत्पन्न करता है तथा बदहज़मी के अन्य उपद्रवों को उत्पन्न करता है।

नातिद्रुतमश्नीयात्—

भोजन जल्दी २ निगल न लेना चाहिये। ऐसा करने से मुख की श्लेष्मा या लाला के असर से भोजन वंचित रह जाता है और अजीर्ण उत्पन्न करता है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

नातिविलम्बितमश्नीयात्—

बहुत देर लगा कर खाने से भोजन शीत और बेस्वाद हो जाता है। इस लिये यथोचित मात्रा में नहीं खाया जाता। इस के अतिरिक्त आंतों को यदि सर्वथा काम न करना पड़े तो वे निर्बल हो जाती हैं और मल बन्ध कर देती हैं।

अजल्पन्नहसन्तलना भुंजीत्—

भोजन को धीरे २ चबा २ कर शान्ति से चुपचाप करने से आमाशय का पाचक पित्त भी भली प्रकार निकलता है। दो बिल्लियों पर किए गए परीक्षणों से यह बात बिलकुल स्पष्ट हो जावेगी।

एक बिल्ली को बेहोश कर के मुख की श्लेष्मा या लाला के अभाव से रहित भोजन आमाशय में डाल दिया गया। बहुत देर के बाद देखने से भी आमाशय में पित्त न मिला।

एक और बिल्ली को मुखसे भोजन दिया गया परन्तु उसके गले में छिद्र कर के उसे बाहर निकाल लिया जाता था, इस प्रकार आमाशय में किसी भी प्रकार का भोजन न पहुंचा; परन्तु पेट को देखने से उस में पित्त पाया गया। इस प्रकार ध्यान से चबा २ कर खाने से पित्त अधिक निकलता है जिस से कि भोजन ठीक तरह से पच जाता है। भोजन के साथ जल तथा अन्य द्रव पदार्थों के पीने की आदत जहां तक कम हो अच्छा है। द्रव-पदार्थ साथ पीने से भोजन को निगलने की आदत पड़ जाती है और लाला के सम्यक्तया न मिलने पर पाक ठीक नहीं होता। आमाशय भी भारी हो जाता है और काम करने में चित्त नहीं लगता है। यदि प्यास अधिक लगती हो तो भोजन के मध्य में थोड़ा सा जल पी लेना चाहिये। परन्तु यदि स्नान तथा आचमन पूर्वक भोजन का अभ्यास किया जावेगा तो जल पीने की आवश्यकता कम प्रतीत होगी।

इस प्रकार भूख के अनुसार भोजन कर के स्वच्छ और शीतल पानी से मुख साफ़ करना चाहिये। पानी से दांत और गला शुद्ध करना चाहिये। ऐसा करने से दांतों में भोजन के टुकड़े नहीं रहने पाते और दांत कीड़ों वा अन्य प्रकारों से खराब होने से बच जाते हैं।

भोजन के अनन्तर पूर्ण विश्राम करे। 'भुक्त्वा राजवदातिष्ठेत्'। बोलने चालने, हंसने और घूमने फिरने से रक्त की गति आमाशय को ओर आवश्यकता से कम होती है और इस कारण भोजन का उपयुक्त पाक कठिन होता है। इस लिये भोजन के बाद प्रसन्नता पूर्वक कम से कम आध घंटा बांए पासे लेट कर आराम करे।

भोजन के बाद पान खाने से आमाशय की बात-नाड़ियों(Gastric nerves)में उत्तेजना मिलती है। जिसका परिणाम यह होता है कि पाचक पित्त के अधिक निकलने से भोजन को पचने में सहायता मिलती है; इस लिये भोजन के बाद पान का सेवन करना चाहिये परन्तु इस का भी व्यसन डाल लेना अच्छा नहीं है; क्योंकि प्रतिदिन इस प्रकार से आमाशय को उत्तेजित करने से उस की अपनी शक्ति नष्ट हो जाती है। किन्तु खाने के बाद तमाखू वा हुक्का आदि कभी न पीना चाहिये।

इसी प्रकार इसके साथ भोजन के बाद स्नान करने से भी शरीर का ताप कम होजाता है, इस लिये स्नान भोजन के पूर्व तो प्रशस्त है, परन्तु उसके बाद किसी भी प्रकार उचित नहीं है।

भोजन के बाद मानसिक परिश्रम भी पाचन क्रिया में बाधा डालता है; क्योंकि रक्त का बहुत सारा भाग मस्तिष्क में चला जाता है। अतः भोजन के समय तथा उसके बाद कम से कम १ घण्टे तक सब प्रकार के मानसिक काम से छुट्टी मनानी चाहिये।

भोजन के एकदम बाद सोना भी स्वास्थ्य को हानि पहुँचाता है। कफ वृद्धि से ज़ुकाम तथा भारीपन आदि तकलीफ़ होती है। अतः भोजन से पूर्व स्नान करने से पहिले ही यदि आवश्यक हो तो कुछ नींद लेनी चाहिये।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अम्मी

आई ! आई ! मैय्या आई !
कब की खोई अम्मी पायी !!
इन आँखों के आगे झलकी !
स्नेह-सुधा पलकों में छलकी !!
हरा हुआ फिर सूखा जीवन ,
जाग उठा वह सोया बचपन ।
लो ! पृथिवी पर लुढ़क चला मैं,
उन बाहों की ओर बढ़ा मैं ।
चीख़ उठा 'मां ! गले लगा लो,
दूध छुआ कर मुँह चिपका लो ।'
मैं मैला, छाती उजली है,
बहुत बार यह मैल धुली है ।
घृणा तुझे मेरे पापों से ?
शीतलतर है तू तापों से ।
कौन कहे अब, मैला हूं मैं ?
मां उजली है, उजला हूं मैं ।

अम्मी ! अब के चली न जाना,
कर सनाथ न अनाथ बनाना ।
मिला चाव का स्वर्ग नया है,
नया व्योम है नयी हवा है ।
मां ! तू इन आँखों में छा जा,
बुझे न, ऐसी ज्योति जगा जा ।
ज्यों ज्यों आये निशा सलोनी,
खेलें तारे आंख मिचौनी,
मैं तेरे आंचल में मचलूं,
क्षण क्षण में, पल पल में मचलूं ।
ऊषाओं की हो उजियाली,
सन्ध्याओं की बन जा लाली ।
पवन-झकोरों की लोरी तू,
विस्तृत पृथिवी की गोदी तू ।
फैली हुई उदार दिशायें,
हैं मेरी अम्मी की बाहें ।
बालायें गातीं मदमाती !
उमड़ रही अम्मी की छाती !!
इस सुरसरि में डूब रहा मैं,
हूं हर जाया का जाया मैं ।
लो ! फिर नन्हा हृदय विकल है,
व्योम मुझे नीला आंचल है ।
और जगज्जनी क्या जानूं ?
तेरी विस्तृत छबि पहिचानूं ।

श्री पं० चमूपति जी एम० ए०

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मुन्नी

(ले०— श्री पं० चन्द्रगुप्त जी विद्यालंकार)

मुन्ना बचपन से ही अत्यधिकचञ्चल स्वभाव की थी। यद्यपि एक बहुत छोटे घराने में उस का जन्म हुआ था, परन्तु अपने बालकोचित मनोहारी चपल स्वभाव के कारण वह गांव भर के लोगों की प्रिय होगई थी। मुन्नी के माता पिता किसी ऐसी जाति के थे जिन के साथ द्विज लोगों का हुक्का पानी नहीं हो सकता। जब वह चार साल की ही थी तभी उस के माता पिता का देहान्त हो गया था। मुन्नी के पिता की मृत्यु के बाद उसकी माता अपनी परम्परागत कुम्भकार की आजीविका को छोड़कर काग़ज के खिलौने बनाने का काम करने लगी थी। उस छोटे से घर में मुन्नी और उसकी अभागिनी माता को छोड़ कर और कोई प्राणी न रहता था। मुन्नी अपनी मा की लाड़ली बेटी थी, उस अभागिनी विधवा की एकमात्र सहायका थी।

मुन्नी अब ६ साल की लड़की हो चुकी है। वह गांव भर के प्रत्येक निवासी से परिचित है। इसका स्वभाव दिनभर ऊधम करने का है; अपने से छोटी उमर के लड़कों पर शासन करने में उसे अपूर्व आनन्द अनुभव होता है, वह बालकों की नेतृ बन कर किसी को पीटती है, किसी को प्यार करती है, किसी को तंग करती है। इस उमर में भी उसने अपनी माता की आजीविका में किसी प्रकार की सहायता देना प्रारम्भ नहीं किया है, अपितु वह सदैव माता के कामों में बाधा ही पहुंचाया करती है, कभी वह मौज में आकर खिलौना बनाने के लिये रंग कर रखे हुए कागज़ों पर काली या लाल स्याही के छींटे डाल देती है, कभी बने बनाये खिलौनों को उठा कर अपने साथियों में बाँट देती है, परन्तु यह सब करने पर भी उसे अपनी माता से कभी डांट नहीं सुननी पड़ती। लोग कहते हैं कि मुन्नी की माता उसे राजकुमारी की तरह पालती है। मुन्नी देखने सुनने में अच्छी है, इस कारण उसे किसी भी घर में जाने की रोक टोक नहीं है; वह गांव भर के लड़कों की मुखिया बनी हुई है। उसका स्वभाव अत्यन्त कौतूहलपूर्ण और निर्भय है, जहां पांच सात लोगों को इकट्ठा जमा देखती है, चट से वहां जा पहुँचती है। गांव के बूढ़ों की पञ्चायत में, तहसीलदार की अदालत में, पटवारी की महफ़िल में—सबकहीं बालिका मुन्नी का अप्रतिहन प्रवेश है। वह किसी से डरना नहीं जानती।

नीच कुल की अनाथ बालिका मुन्नी के दिन इसी प्रकार आनन्द पूर्वक कटने लगे।

(२)

पञ्चतन्त्रकार पण्डित विष्णु शर्मा अगर भविष्य द्रष्टा होते तो वह यह कभी न लिखते कि युवावस्था एक मद है, जिसे पीकर मनुष्य सब कुछ भूल जाता है। आज काल हिन्दुओं के अधिकांश गरीब घरों में जब लड़की की युवावस्था आजाती है तब उसके घर वाले घोर चिन्ता में मग्न हो जाते हैं। स्वयं वह लड़की भी एक विचित्र दशा में डाल दी जाती है। युवावस्था उसे कोई मद तो

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

नहीं पिलाती, अपितु उसे चेतनावस्था का एक ठोस रूप प्रत्यक्ष करा देती है। घर के लोगों को नींद लेना हराम हो जाता है।

मुन्नो अब १४ बरस की हो चुकी है, उस का रूप अब ऐसा नहीं रहा जिसे लेकर वह घर घर घूमे फिरे। जिस प्रकार कच्ची अम्बियां वायु के छोटे २ झोंकों द्वारा भी खूबी हिलती डुलती हैं, परन्तु वही अम्बियां पक्के आम बन कर आंधी के प्रबल वेग के साथ भी हिण्डोले में बैठ कर झूमने से इन्कार कर देते हैं, उसी प्रकार मुन्नो भी अब प्रायः सारा दिन अपने घर में अपनी माता के निकट ही व्यतीत करती है, उस के स्वभाव की चञ्चलता अब भी कम नहीं हुई परन्तु वह चञ्चलता अब शिल्प कुशलता के रूप में परिणत हो चुकी है, उस के बनाये हुए खिलोने बहुत ही सुन्दर होते हैं।

मुन्नो आजकल पहले की तरह असंयत स्वच्छ-जल के पहाड़ी झरने के समान यथेष्ट इधर उधर नहीं घुमती, इसका एक और कारण भी है। अब जब कभी वह बाहर निकलती है तब लोग, विशेष कर गांव की औरतें, उसे अभी तक कुमारी रहने के कारण ताने देती हैं। शुरु शुरु में तो वह इन तानों का बड़े क्रोधके साथ उत्तर दिया करती थी, परन्तु कुछ दिनों से उस ने अपनी पराजय स्वीकार कर ली है, अर्थात् बाहर अधिक घूमना फिरना ही छोड़ दिया है। वह सोचती है, यह लोग कितने मूर्ख हैं, मानों मेरे व्याह किये बिना संसार में प्रलय हो जायगी। मुन्नी की माता भी आज कल इसी चिन्ता में निमग्न रहती है।

इसी गांव में करतार नाम का एक नवयुवक रहता था। करतार के मां बाप गांव की दृष्टि में गरीब नहीं थे। गांव में उनका यथेष्ट मान था, परन्तु करतार अपने मां बाप का कुपूत वंशधर था। उस ने शराब जूआ आदि में मां बाप की सम्पूर्ण जायदाद समाप्त कर डाली। वह जात का जुलाहा था। उस के बुरे स्वभाव के कारण ही, २६ बरस की उमर हो जाने पर भी, कोई व्यक्ति उसके साथ अपनी लड़की की शादी करने का साहस न करता था।

मा बाप की जायदाद पर हाथ साफ़ कर के आज कल उसने एक नया पेशा अख़्तियार किया था। महीने में पांच सात दिन गांव से बाहर रह कर वह भिन्न २ प्रकार का सामान गांव में बेचने के लिये लाया करता था, एक सप्ताह में यह सामान बेच कर वह इतना धन प्राप्त कर लेता था, कि उस से वह महीना भर आराम से रह सके। करतार का लाया हुआ माल देख कर लोग आश्चर्य चकित होते थे। वह कपड़े, बरतन, कोठ, कमीज़ आदि सभी प्रकार की वस्तुएँ लाया करता था, गांव के अन्य दूकानदारों की अपेक्षा उस का माल कम क़ीमत में मिलता था। यह देख कर लोग हैरान हो रहे थे। कुछ लोग तो उस की व्यापारिक बुद्धि पर श्रद्धा भी करने लगे थे।

इसी करतार ने मुन्नी की अनाश्रिता दुखिया माता का उद्धार कर दिया; उसे और उसकी मुन्नी को नरक से बचा लिया। उसने बिना कोई दहेज लिये ही गरीब मुन्नी से विवाह कर लिया।

(३)

मुन्नी नये घर में गई तो थी, परन्तु उस के कर्म तीन मास बाद ही उसे फिर से अपनी माता के घर घसीट लाए। विवाह के तीन मास बाद ही अचानक उसके पतिदेव न जाने कहां गुम हो गये। एक दिन वह किसी को सूचना दिये बिना ही घर से गायब होगये थे, उस के बाद उनका

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पता मालूम नहीं हो सका। पुलिस ने करतार के नाम वारण्ट जारी किया हुवा है, परन्तु बहादुर करतार पुलीस को भी चकमा दे गये हैं।

बात यह हुई थी कि एक दिन करतार अपने पेशे के लिए कहीं गांव से बाहर गया हुआ था। उस के जाने के दो दिन बाद ही दोपहर के समय थानेदार दो सिपाहियों को लेकर उसके घर आया। करतार को आवाज़ दी गई, परन्तु वह तो बाहर गया हुआ था। मुन्नी परदा करके दरवाज़े पर आ खड़ी हुई। थानेदार ने मुन्नी से पूछा कि करतार कहां गया हुवा है? करतार कहां जाता है, इस बात को करतार के अतिरिक्त और कोई नहीं जानता था, इसलिये मुन्नी इस प्रश्न का जवाब न दे सकी। थानेदार करतार के घर की तालाशी लेकर उस में से बहुत सा माल बरामद कर के सिपाहियों के साथ वापिस चला गया। मुन्नी को अब रहस्य समझने में देर न लगी। वह समझ गई कि उस के पतिदेव गांव में जिस माल का सफलता पूर्वक व्यापार करते हैं, उस के लाने में उन्हें एक पाई भी व्यय नहीं करना पड़ता; वह सब समान वे पैसों द्वारा नहीं अपितु ताकत के ज़रिये ही लाते हैं। करतार जो कपड़े बेचा करता था, उन में से किसी पर धोबी द्वारा बनाये गए निशान द्वारा ही उसकी चोरी पकड़ी गई थी।

पुलीस को मालूम था कि करतार जब बाहर जाता है तब ५, ६ दिन से पहिले कभी वापिस नहीं आता। इस लिये वे लोग उस की ओर से निश्चिन्त थे। परन्तु सौभाग्यवश करतार इस वार उसी दिन रात के समय घर आ पहुंचा। करतार के लिए दरवाज़ा खोलने को जाकर मुन्नी ने देखा कि आज उसका चेहरा बहुत प्रसन्न है। आज वह कोई भारी गठरी उठा कर नहीं लाया है। उसके हाथ में एक मजबूत डण्डे के सिवाय और कोई चीज़ नहीं है। मुन्नी उस के चेहरे की ओर देख कर और भी अधिक भयभीत हो उठी।

चांदनी रात थी। आंगन में आकर करतार ने अपने कोट के अन्दर की दोनों जेबों में से दो छोटी-छोटी पोटलियां निकालीं। इन पोटलियों को उसने मुसकराते हुए खोला। पोटली के खुलते ही मुन्नी और भी अधिक डर गई। उसने चांदनी के उजेले में देखा कि उसके सामाने सोने के बहुत से आभूषण चमक रहे हैं। मुन्नी को इस की कल्पना भी न थी। आभूषण देख कर वह सहसा सिसक २ कर रोने लगी। करतार भौंचक्का सा रह गया, उस ने सोचा—'यह क्या मामला है।' करतार को बहुत अधिक देर तक सोच बिचार में डूबे रहने का अवसर न मिला। मुन्नी ने उसे धीरे-धीरे आज की सम्पूर्ण घटना सुनादी। इस के बाद कोई कुछ नहीं बोला। दोनों अपने २ स्थान पर सोने के लिए चले गये। प्रातः काल उठ कर मुन्नी ने देखा कि करतार कहीं गायब होगया है। सोने के वे आभूषण भी घर में नहीं रहे हैं। मुन्नी समझ गई है कि अब पतिदेव के दर्शन इस जन्म में होने दुर्लभ हैं।

इस घटना के कुछ दिन बाद ही मुन्नी अपने घर चली आई। पुलीस अब भी उस से करतार के सम्बन्ध से पूछ ताछ करने का बहुत यत्न करती है परन्तु वह उसके सम्बन्ध में कुछ जानती ही नहीं, बताये तो क्या बताये।

मुन्नी माता के घर रहती है। परन्तु इस मुन्नी और कुमारी मुन्नी में बड़ा भारी अन्तर है। मानो मुन्नी का नया जन्म हुआ है। उस का यह जन्म यन्त्रणा के गर्भ से हुवा है, इसी कारण तो यह

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

नहीं पिलाती, अपितु उसे चेतनावस्था का एक ठोस रूप प्रत्यक्ष करा देती है। घर के लोगों को नींद लेना हराम हो जाता है।

मुन्नो अब १४ बरस की हो चुकी है, उस का रूप अब ऐसा नहीं रहा जिसे लेकर वह घर घर घूमे फिरे। जिस प्रकार कच्ची अम्बियां वायु के छोटे २ झोंकों द्वारा भी खूबी हिलती डुलती हैं, परन्तु वही अम्बियां पक्के आम बन कर आंधी के प्रबल वेग के साथ भी हिण्डोले में बैठ कर झूमने से इन्कार कर देते हैं, उसी प्रकार मुन्नो भी अब प्रायः सारा दिन अपने घर में अपनी माता के निकट ही व्यतीत करती है, उस के स्वभाव की चञ्चलता अब भी कम नहीं हुई परन्तु वह चञ्चलता अब शिल्प कुशलता के रूप में परिणत हो चुकी है, उस के बनाये हुए खिलौने बहुत ही सुन्दर होते हैं।

मुन्नी आजकल पहले की तरह असंयत स्वच्छ-जल के पहाड़ी झरने के समान यथेष्ट इधर उधर नहीं घुमती, इसका एक और कारण भी है। अब जब कभी वह बाहर निकलती है तब लोग, विशेष कर गांव की औरतें, उसे अभी तक कुमारी रहने के कारण ताने देती हैं। शुरु शुरु में तो वह इन तानों का बड़े क्रोधके साथ उत्तर दिया करती थी, परन्तु कुछ दिनों से उस ने अपनी पराजय स्वीकार कर ली है, अर्थात् बाहर अधिक घूमना फिरना ही छोड़ दिया है। वह सोचती है, यह लोग कितने मूर्ख हैं, मानों मेरे व्याह किये बिना संसार में प्रलय हो जायगी। मुन्नी की माता भी आज कल इसी चिन्ता में निमग्न रहती है।

इसी गांव में करतार नाम का एक नवयुवक रहता था। करतार के मां बाप गांव की दृष्टि में गरीब नहीं थे। गांव में उनका यथेष्ट मान था, परन्तु करतार अपने मां बाप का कुपूत वंशधर था। उस ने शराब जूआ आदि में मां बाप की सम्पूर्ण जायदाद समाप्त कर डाली। वह जात का जुलाहा था। उस के बुरे स्वभाव के कारण ही, २६ बरस की उमर हो जाने पर भी, कोई व्यक्ति उसके साथ अपनी लड़की की शादी करने का साहस न करता था।

मा बाप की जायदाद पर हाथ साफ़ कर के आज कल उसने एक नया पेशा अख़्तियार किया था। महीने में पांच सात दिन गांव से बाहर रह कर वह भिन्न २ प्रकार का सामान गांव में बेचने के लिये लाया करता था, एक सप्ताह में यह सामान बेच कर वह इतना धन प्राप्त कर लेता था, कि उस से वह महीना भर आराम से रह सके। करतार का लाया हुआ माल देख कर लोग आश्चर्य चकित होते थे। वह कपड़े, बरतन, कोठ, कमीज़ आदि सभी प्रकार की वस्तुएँ लाया करता था, गांव के अन्य दूकानदारों की अपेक्षा उस का माल कम क़ीमत में मिलता था। यह देख कर लोग हैरान हो रहे थे। कुछ लोग तो उस की व्यापारिक बुद्धि पर श्रद्धा भी करने लगे थे।

इसी करतार ने मुन्नी की अनाश्रिता दुखिया माता का उद्धार कर दिया; उसे और उसकी मुन्नी को नरक से बचा लिया। उसने बिना कोई दहेज लिये ही गरीब मुन्नी से विवाह कर लिया।

(३)

मुन्नी नये घर में गई तो थी, परन्तु उस के कर्म तीन मास बाद ही उसे फिर से अपनी माता के घर घसीट लाए। विवाह के तीन मास बाद ही अचानक उसके पतिदेव न जाने कहां गुम हो गये। एक दिन वह किसी को सूचना दिये बिना ही घर से गायब होगये थे, उस के बाद उनका

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पता मालूम नहीं हो सका। पुलिस ने करतार के नाम वारण्ट जारी किया हुवा है, परन्तु बहादुर करतार पुलीस को भी चकमा दे गये हैं।

बात यह हुई थी कि एक दिन करतार अपने पेशे के लिए कहीं गांव से बाहर गया हुआ था। उस के जाने के दो दिन बाद ही दोपहर के समय थानेदार दो सिपाहियों को लेकर उसके घर आया। करतार को आवाज़ दी गई, परन्तु वह तो बाहर गया हुआ था। मुन्नी परदा करके दरवाज़े पर आ खड़ी हुई। थानेदार ने मुन्नी से पूछा कि करतार कहां गया हुवा है? करतार कहां जाता है, इस बात को करतार के अतिरिक्त और कोई नहीं जानता था, इसलिये मुन्नी इस प्रश्न का जवाब न दे सकी। थानेदार करतार के घर की तालाशी लेकर उस में से बहुत सा माल बरामद कर के सिपाहियों के साथ वापिस चला गया। मुन्नी को अब रहस्य समझने में देर न लगी। वह समझ गई कि उस के पतिदेव गांव में जिस माल का सफलता पूर्वक व्यापार करते हैं, उस के लाने में उन्हें एक पाई भी व्यय नहीं करना पड़ता; वह सब समान वे पैसों द्वारा नहीं अपितु ताकत के ज़रिये ही लाते हैं। करतार जो कपड़े बेचा करता था, उन में से किसी पर धोबी द्वारा बनाये गए निशान द्वारा ही उसकी चोरी पकड़ी गई थी।

पुलीस को मालूम था कि करतार जब बाहर जाता है तब ५, ६ दिन से पहिले कभी वापिस नहीं आता। इस लिये वे लोग उस की ओर से निश्चिन्त थे। परन्तु सौभाग्यवश करतार इस बार उसी दिन रात के समय घर आ पहुंचा। करतार के लिए दरवाज़ा खोलने को जाकर मुन्नी ने देखा कि आज उसका चेहरा बहुत प्रसन्न है। आज वह कोई भारी गठरी उठा कर नहीं लाया है। उसके हाथ में एक मजबूत डण्डे के सिवाय और कोई चीज़ नहीं है। मुन्नी उस के चेहरे की ओर देख कर और भी अधिक भयभीत हो उठी।

चांदनी रात थी। आंगन में आकर करतार ने अपने कोट के अन्दर की दोनों जेबों में से दो छोटी-छोटी पोटलियां निकालीं। इन पोटलियों को उसने मुसकराते हुए खोला। पोटली के खुलते ही मुन्नी और भी अधिक डर गई। उसने चांदनी के उजेले में देखा कि उसके सामाने सोने के बहुत से आभूषण चमक रहे हैं। मुन्नी को इस की कल्पना भी न थी। आभूषण देख कर वह सहसा सिसक २ कर रोने लगी। करतार भौंचक्का सा रह गया, उस ने सोचा—'यह क्या मामला है।' करतार को बहुत अधिक देर तक सोच बिचार में डूबे रहने का अवसर न मिला। मुन्नी ने उसे धीरे-धीरे आज की सम्पूर्ण घटना सुनादी। इस के बाद कोई कुछ नहीं बोला। दोनों अपने २ स्थान पर सोने के लिए चले गये। प्रातः काल उठ कर मुन्नी ने देखा कि करतार कहीं गायब होगया है। सोने के वे आभूषण भी घर में नहीं रहे हैं। मुन्नी समझ गई है कि अब पतिदेव के दर्शन इस जन्म में होने दुर्लभ हैं।

इस घटना के कुछ दिन बाद ही मुन्नी अपने घर चली आई। पुलीस अब भी उस से करतार के सम्बन्ध से पूछ ताछ करने का बहुत यत्न करती है परन्तु वह उसके सम्बन्ध में कुछ जानती ही नहीं, बताये तो क्या बताये।

मुन्नी माता के घर रहती है। परन्तु इस मुन्नी और कुमारी मुन्नी में बड़ा भारी अन्तर है। मानो मुन्नी का नया जन्म हुआ है। उस का यह जन्म यन्त्रणा के गर्भ से हुवा है, इसी कारण तो यह

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मुन्नी इतनी अधिक सहन शीला है। मां और बेटी दोनों दुखिया हैं, पहले अगर बुढ़िया अन्धी थी तो मुन्नी उस की जीवित जागृत लाठी थी, परन्तु अब तो वह लाठी भी एक भारी लोहदण्ड का रूप धारण कर चुकी है। मां और बेटी दोनों लोगों के ताने सुनती हैं, परन्तु किसी का जवाब नहीं देतीं।

हत भागिनी मुन्नी की मानसिक दशा आज कल क्या है, इसे समझना कठिन है। वह स्त्री हैं और शायद अबला है। परन्तु अबला होने से क्या; उसके पास एक ऐसा प्रेममय दिल है, जो बलवान पुरुषों के पास भी नहीं होता। समाज के अत्याचारी कानून के अनुसार वह अपना दिल एक अनाचारी चोर को दे चुकी है ; वही चोर अब उस का हृदय देव है। संसार की आंखों में करतार चोर हैं परन्तु मुन्नी के हृदय पर वह एक देवता के समान अंकित है। वह हिन्दू नारी है। पति ही उसका एक मात्र आराध्य देव है।

इसी प्रकार अभागिनी, अनाश्रिता मुन्नी अपने दिन काटने लगी। बरस पर बरस बीतने लगे।

(४)

करतार जब घर से भाग कर बिना किसी लक्ष्य के चला, तब वह अत्यन्त उदास था। गहनों की पोठली उसकी छाती पर बँधी हुई थी। वह बड़ी तेज़ी से भागा जारहा था, परन्तु उसके हृदय में ज़रा भी उत्साह न था। उसके दिल पर मानो एक भारी बोझ रक्खा हुआ था। उसे इस बात का दुख नहीं था कि उसके पेशे की सूचना पुलीस को मिल गई है। क्रान्तिकारी लोग जिस प्रकार क्रान्तिवादी दल में सम्मिलित होकर अपने प्राणों की ममता त्याग देते हैं, चोर लोग भी उसी प्रकार चोरी का पेशा स्वीकार करके जेलखाने को अपना स्थिर-निवास (Head Quarter) समझ लेते हैं। करतार बहुत अधिक दुखित इस लिये था कि आज उसे अपनी भारी भूल मालूम होगई थी। आज उसने अनुभव किया कि उसने मुन्नी का स्वभाव समझने में ज़रा भी सफलता प्राप्त नहीं की थी।

करतार जब व्याह के बाद मुन्नी को अपने घर लाया था, तब वह समझता था कि मुन्नी को प्रसन्न रखने के लिये उसे अपनी आर्थिक दशा खूब सुधारनी होगी। जब वह देखता था कि मुन्नी रात-दिन उदास रहती है तब वह समझता था कि मैंने उसे यथेष्ट आभूषण नहीं दिये इसी से वह मुझ से परांमुख है ; मेरे यहाँ वह हँसती नहीं, मुस्कराती नहीं, खुल कर बात चीत नहीं करती। अपनी पत्नी की यही मूक-मांग पूरा करने के लिये वह ये गहने चुरा कर लाया था। इन आभूषणों को चुराकर वह समझा था कि मानो मैंने मुन्नी का दिल चुरा लिया है। परन्तु कल रात उसे सहसा अपनी भयंकर भूल मालूम हुई। मुन्नी तो इन गहनों से घृणा करती है! इस समय उसने मुन्नी को पहिचाना। अपने बिस्तरे पर जाकर वह अश्रुपूर्ण नेत्रों से इस बात पर पश्चाताप करता रहा कि वह मुन्नी को पहले क्यों नहीं पहिचान पाया। यह मुन्नी गहनों को प्यार नहीं करती, यह तो मुझे प्यार करती है। कुछ देर इन्हीं भावों में मग्न रह कर उसे पुलीस की याद आई। उसने सोचा— वह घड़ी कितनी असह्य होगी, जब मुन्नी के सामने मेरे हाथों में हथकड़ी डाली जायगी। वह उस दृश्य को कल्पना ही न कर सका। इसी से वह रातों-रात भाग खड़ा हुवा।

करतार जिस ओर से बचना चाहता था वही दिशा उसे चुम्बक की तरह खींच रही थी। वह

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

चाहता था कि अब चोरी का पेशा न किया जाय। परन्तु इस के अतिरिक्त वह करे भी तो क्या। वह जादूगर की पुतली की तरह अपने सहायक चोरों के पास पहुँचा। उनके समूह का स्थिर सदस्य बन गया। करतार का शरीर अच्छा था, चोरी करने का हुनर भी उस में कूट-कूट कर भरा हुआ था, अतः शीघ्र ही चोरों में उसकी स्थिति बहुत उच्च होगई।

करतार चोर था, चोरों का सरदार था। वह अपनी दृष्टि में आप ही गिरा हुआ था। उसने स्वयं अपनी आत्मा का घात किया था। धीरे-धीरे इस समूह में रह कर क्रूरता, नृशंसता आदि प्रवृत्तियाँ उसके स्वभाव के रूप में परिणत होने लगीं। परन्तु इस अवस्था में भी उसके हृदय के एक कोने में प्रकाश की एक रेखा दिखाई देती थी। यह प्रकाश की रेखा, उसकी मुन्नी की पुण्य-स्मृति थी। कभी वह सोचता था कि मुन्नो को भी किसी तरह यहाँ बुला लिया जाय, परन्तु मुन्नी का वह अन्तिम दिन का स्वरूप उसकी आँखों के सामने बिल्कुल ताज़ा हो उठता था। इस स्वरूप को देख कर उसे मुन्नी एक अगम्य देवी सी जान पड़ती थी।

धीरे धीरे करतार अपनी हृदय-देवी की प्रकाश-पूर्ण मूर्ति को भुलाने लगा। आख़िर चोरों की संगत में रह कर वह कहाँ तक पवित्र रह सकता था। पहले पहल वह अपने दल में स्त्रियों के ऊपर अत्याचार न करने के लिए कड़ा निरीक्षण रखता था। वह जहाँ भी डाका डालता था, वहाँ किसी स्त्री पर किसी प्रकार का अत्याचार न होने देता था। परन्तु धीरे-धीरे उस के स्वभाव में ढील आने लगी। इस मामले को लेकर बहुत बार उनके दल में झगड़ा होजाता था अतः धीरे-धीरे वह इस ओर से तटस्थ रहने लगा; वह दूसरों के प्रति उदासीन होकर भीस्वयं स्त्री-जाति की इज़्ज़त करता था। इसके बाद क्रमशः वह अपने साथियों की स्त्रियों का अपमान करता हुवा देख कर मज़ा लेने लगा। करतार का का सम्पूर्ण अधः पतन होगया। मुन्नी की पवित्र स्मृति उसके दिल में बहुत धुंधले रूप में रह गई।

(५)

करतार को घर से भागे हुए लग-भग १३ बरस बीत चुके थे। सायंकाल का समय था। गरमियों के दिन थे, दिन भर गरमी के कारण सम्पूर्ण बन में सन्नाटा छाया रहा था। इस समय नई स्फूर्ति पाकर प्रत्येक वृक्ष नाना प्रकार के पक्षियों के कलरव से गूंज उठा। सूर्य्य अस्त हो रहा था, सूर्य्य देव का पराजय देख कर मानों सम्पूर्ण बन के असंख्य पक्षी चिल्ला चिल्ला कर उन्हें चिड़ा रहे थे। अंधेरा नहीं हुवा था। अन्धकार होने में अभी पर्याप्त समय शेष था, इसी समय एक सन्यासिनी उस निर्जन जंगल में एक शोक मय गीत गाने लगी। वह संन्यासिनी बिल्कुल अकेली थी; शायद मार्ग भटक कर इस जंगल मेंचली आई थी। संन्यासिनी की आयु लगभग २८ बरस की होगी। उसके प्रत्येक अंग से सुन्दरता फूट रही थी।

सन्यासिनी का गीत अभी समाप्त नहीं हुवा था कि ५, ७ लाठी-बन्द डाकुओं ने उसे घेर लिया। संन्यासिनी अत्यन्त भयभीत होगई। परन्तु अगले ही क्षण उसने संभल कर कहा—"मेरे पास तो कुछ भी नहीं है, मैं सन्यासिनी हूँ।" एक डाकू ने हँसकर सन्यासिनी की इस बात पर बड़ी अश्लील टिप्पणी की। इसी समय दूसरे डाकू ने हाथ बढ़ा कर उस संन्यासिनी को पकड़ना चाहा; वह बेचारी चिल्ला कर एक ओर भागी। सब डाकुओं ने दौड़कर उस बिस्सहाया को पकड़ लिया; वह अबला यथा शक्ति

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अपना बचाव करने कायल करने लगी। संन्यासिनी अपूर्व सुन्दरी थी, अतः उसके लिये डाकुओं मेंपरस्पर झगड़ा खड़ा होगया। वह बेचारी ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाने लगी। ठीक इसी समय एक और व्यक्ति वहाँ आया। उसके आते ही तीन डाकू उस अबला को छोड़ कर अलग खड़े हो गये। दो व्यक्ति अभी तक आपस में छीना झपटी कर रहे थे। नवागन्तुक डाकुओं का सरदार था, परन्तु संन्यासिनी ने उसे अपनी तरह ही कोई यात्री ही समझा। उसकी ओर देखकर वह "बचाओ! बचाओ!!" चिल्लाने लगी। सरदार सहसा ठिठक कर खड़ा हो गया। उसे कुछ प्राचीन अतीत स्मरण हो आया। इसके अगले क्षण वह चीखती हुई आवाज़ में चिल्ला उठा—"मुन्नी!" संन्यासिनी की आँखों के सामने से मानो परदा हट गया; उसने पुकारा—"प्राणनाथ!"

बिजली के समान वेग से करतार ने तलवार म्यान से निकाल कर एकदम दोनों आक्रमणकारियों का सिर काट गिराया। शेष तीनों डाकू अचानक अपने सरदार का यह भयंकर स्वरूप देख कर समझे कि वह पागल होगया है। उन्होंने करतार पर हमला किया, परन्तु करतार में उस समय न जाने कहाँ से देवताओं का सा बल आगया था। तीनों डाकू चोट खा कर भागे।

इस घटना के बाद किसी को मालूम नहीं हुवा कि वे दोनों कहाँ गये।

॥ अन्तर्नाद ॥

[१]

गंगा की ये तरल लहरें कौन सा गीत गातीं।
कुञ्जों की ये सरस कलियां कौन सा हास्य लातीं॥
आकाशी ये लघुतर दिए ज्योति कैसी जगाते।
सौन्दर्यों की बहु-विध छटा फूल कैसी दिखाते॥

[२]

तो भी देखो, सकल दुनियां दुःख का ही धाम है।
चीत्कारों से विविध जन के पूर्ण सारी मही है॥
दीनों की ये दुखमय -कथा क्या न निःशेष होगी।
अन्यायों की दुष्पर्द घटा क्या न ये दूर होगी॥

शंकरदेव विद्यालंकार

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बौद्धसाहित्य में जनतन्त्र

ले०— श्री० पं० सर्वमित्र जी

बुद्ध ने जिन राज्यों में प्रचार किया था, उनमें गणराज्य भी थे। इस लिए बुद्ध के प्रचार का वर्णन करते हुए वे प्रसंगवश उन गणराज्यों का भी उल्लेख कर देते हैं। बौद्ध साहित्य में निम्न गणराज्य पाए जाते हैं[1]:—

१. शाक्य
२. सुंसुमार पर्वत के भोग
३. अल्यकप्प के बुली
४. केसपुत्त के कालाय
५. रामगाम के कोलिय
६. कुशीनर के मल्ल
७. पावा के मल्ल
८. पिप्पलीवन के मोरिय
९. मिथिला के विदेह
१०. वैशाली के लिच्छवी

इन में वृज्जी, मत्स्य और शाक्यों की राजनिति की महत्ता थी। हम इन सब का विवरण नीचे देंगे—

शाक्य— बुद्ध का जन्म शाक्य जनतन्त्र में हुआ था, इसलिए बौद्ध साहित्य में इसका बहुत वर्णन आता है। शाक्य जनतन्त्र था। इसका निर्वाचित शासक 'राजा' कहलाता था। इस 'राजा' शब्द के कारण पहले शाक्य जनतन्त्र को राज्यतन्त्र समझा जाता रहा। बुद्ध शाक्य राजा शुद्धोदन का पुत्र था—राजा का नहीं।[2] बौद्ध साहित्य में पहिले शुद्धोदन को राजा कहा है, पर पीछे से उसे शाक्य शुद्धोदन लिखा है।[3] शुद्धोदन के बाद भद्दिय चुना गया था और वह शाक्य राजा बन गया।[4] इस से स्पष्ट है कि इन का राजा निर्वाचित होता है। शाक्य लोग कोशल के अधीन थे। पर ये अपना स्वतन्त्र शासन करते थे। विरुद्धक ने इनका सर्वथा नाश कर दिया। ये लोग अपने निर्णय शाक्य परिशा या शाक्यपरिषद् में करते थे। इसके ५०० शाक्य सदस्य थे। रीज़ डेविड्स ने शाक्यों को शासन पद्धति का इस प्रकार वर्णन किया है —

"राज्य—रीज़ डेविड्स clan शब्द का प्रयोग करता है पर वह अशुद्ध है, इसलिए हम उसके स्थान पर गणराज्य या राज्य शब्द का प्रयोग करेंगे—की शासन और न्याय पद्धति सभाओं में की जाती थी। इस में युवा और वृद्ध समान रूप से उपस्थित होते थे। सब को समान वोट देने का अधिकार था। सभा सन्थागार में होती थी। इस प्रकार की सभा में ही राजा प्रसेनजित् के प्रस्ताव (किसी शाक्य लड़की से विवाह करने का) पर विचार हुआ था। अम्बट्ठ किसी कार्य-वश कपिलवस्तु गया था। वहां उसने शाक्यों की परिषद् का अधिवेशन देखा था[6]।

---

१. Rhys Davids— *Buddhist India* — P 22
२. Oldenberg—Buddha P.99
३. Rhys Davids an doldenberg—Vinaya Pitak. I. P. 208
४. Rockhill = life of Buddha—P. 57
५. Rpys Davids—Buddhist India—P. 19
६. सर्व शाक्यगणं सन्निपत्यैव मीमांसते राजाश द्धोदनः ..... शाक्यगणेन् सार्धंसभानरे निषण्णेभूत्।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

"एक राजा किस प्रकार और कितने समय के लिए चुना जाता था, यह हमें पता नहीं है, परन्तु वह निर्वाचित अवश्य किया जाता था। वह शाक्य परिषद् के अधिवेशनों में सभापति बनता था। यदि अधिवेशन न हो रहा हो तो वह देश का शासन करता था। उसकी उपाधि 'राजा' थी। सम्भवतः उसकी स्थिति रोमन कौंसल और ग्रीक एंकर जैसी थी।

एक पर लिखा है कि बुद्ध का छोटा चाचा भद्दिय शाक्यों का राजा था, दूसरी जगह पर पढ़ते हैं कि बुद्ध का पिता शुद्धोदन (जिसे एक स्थान पर शाक्य कहा है) राजा था।"

लिच्छवी— लिच्छवी जनतन्त्र राज्यों में से एक प्रसिद्ध राज्य था। कोशल और लिच्छवीयों की कभी नहीं बनती थी। एक बार कोशल के राजा अजातशत्रु ने बुद्ध के पास अपने प्रधानामात्य वस्सकार को भेजा। वस्सकार ने बुद्ध से पूछा कि यदि हम वैज्जेनों पर आक्रमण करेंगे तो क्या जीत जावेंगे। बुद्ध ने वस्सकार को सुनाने की इच्छा से पूछा [1]।

"आनन्द ! क्या तुम जानते हो कि वैज्जेन लोग अपनी राजनीतिक सभाएँ करते हैं ?"

आनन्द ने उत्तर दिया—"भगवान् ! मैंने ऐसा ही सुना है।"

इस पर बुद्ध ने कहा—"जब तक वैज्जेन लोग इसी प्रकार अपनी सभाएं करते रहेंगे, तब तक उनके अवनत होने का कोई डर नहीं है। वे निरन्तर समृद्ध होते जावेंगे।"

इसी बातचीत में बुद्ध ने कहा—"आनन्द, जब तक वैज्जेनलोग मिल कर संगठन में कार्य करेंगे, जब तक वे प्राचीन रीति रिवाजों का संघ में पालन करेंगे, जब तक कि वे किसी बात को पहिले निश्चित किए बिना नहीं करेंगे, जब तक कि वे अपनी प्राचीन परम्पराओं के अनुसार कार्य करेंगे, जब तक कि वे संघ के वृद्ध पुरुषों की सम्मति के अनुसार आचरण करते रहेंगे..... तब तक वैज्जेन लोगों की ह्रास के स्थान पर उन्नति होगी।"

इस सन्दर्भ से स्पष्टतया प्रतीत होता है कि वैज्जेन (लिच्छवी) लोगों का एक संघ (Confederation) था उसमें वे सब प्रकार का कार्य सभाओं द्वारा करते थे। यह बात नहीं कि लिच्छवी और मल्ल राज्यों का सम्मिलित कार्य ही परिषदों में होता हो पर वे अपने देश के वैयक्तिक कार्यों को भी परिषद् में किया करते थे। जातकों में इन्हें गणराजा कहा गया है।

यह तो निश्चित है कि लिच्छवी गणराज्य था। पर प्रश्न यह है कि इसकी शासन व्यवस्था किस प्रकार की थी। जातकों में ७७०७ लिच्छवी राजाओं का वर्णन है। इसी प्रकार उपराजा सेनापति और भाण्डागारिकों की संख्या भी ७७०७ है [2]। यहां राज्य का अर्थ उन अर्थों में नहीं हो सकता, जिन में शाक्य प्रजातन्त्र लिया जाता है। यह संख्या जातकों की प्रस्तावना में आती है। सम्भवतः इस संख्या का इस प्रकार समाधान हो सके—

फ्रांस की १८ वीं सदी में अनेक छोटे मोटे ज़मींदार बरसाती मेंडकों की तरह निकल आए थे। शायद इसी प्रकार वैशाली में भी इनकी

---

२. Rhys Davids—Buddhist Suttas—P. 3—4

२. तत्थ निच्चकालं रज्जं कारेन्वा वसन्तानं येव राजूनं सत्तसहस्सानि सत्तसतानि सत्त च. राजानो होन्ति तत्तका, येव उपराजानो तत्तका सेनापतिनो तत्तका, भण्डागारिका। जातक I पृ० ५०४

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उत्पत्ति हुई हो। ये लोग फ्रांस के ज़मींदारों की तरह ऐश आराम से, सज धज कर राजधानी में रहते थे। इनकी ज़मीनों की रक्षा के लिए, उसके निरीक्षण तथा प्रबन्ध के लिए एक व्यक्ति की आवश्यकता थी। वह उपराजा होता था। आमदनी आदि का हिसाब 'भाण्डागारिक' रखता था। लिच्छवी शस्त्रोपजीवी तो थे ही, इसके अतिरिक्त उन्हें सम्राज्य राजाओं का डर रहता था। इस लिये अपनी सेना को नियंत्रण में रखने के लिए एक सेनापति की आवश्यकता थी। मध्यकालीन यूरोप में जिस प्रकार मातहत ज़मींदारों के नाईटस को बड़े ज़मींदार आवश्यकता होने पर बुला लिया करते थे, उसी प्रकार गण के आदेश से इन जमींदारों के आदमी भी बुला लिए जाते होंगे— नाइट्स और शस्त्रोपजीवी लिच्छवियों को हम एक नहीं मानते। नाइट्स सैनिक पेशा लोग थे पर लिच्छवियों की अवस्था दूसरी थी, फिर भी उन्हें अवश्य ही गण की ओर से लड़ने के लिए नाइट्स की तरह बुलाया जाता होगा।

इस प्रकार इन जमींदारों के अपने अपने इलाक़े में शासन होता था। सारे देश का शासन ये सब ज़मींदार मिल कर करते थे। ये परिषदों में बैठते थे और वहाँ वाद विवाद करते थे।[1] इस परिषद में जो निर्णय होते थे, उसके अनुसार काम होता था। इस परिषद् में से ही राजा, उपराजा, सेनापति और भाण्डागारिक निर्वाचित होते थे। ये सारे देश के राजा, उपराजा, सेनापति और भाण्डागारिक थे। इन राजकुलों में से ही किसी को इन पदों पर नियुक्त किया जाता था। जब कोई व्यक्ति मर जाता था तब उसका पुत्र राजा बनता था। जिस प्रकार इंग्लैण्ड की सरदार सभा में जब कोई लार्ड मरता है, तो उसका पुत्र लार्ड बना दिया जाता है और उसे अपने पिता की तरह सरदार सभा में मत आदि देने का अधिकार होता है। जब इस प्रकार नया आदमी राजा बनने लगता था, तब अभिषेक किया जाता था। इसी प्रकार सम्पूर्ण देश के राजा बनने पर भी अभिषेक होता था। इनके अभिषेक के लिए वैशाली में एक पुष्करणी थी।[2] इस प्रकार राज्य शासन में केवल एक ही श्रेणी का अधिकार था। वे सब समान थे इस लिए वे अपने को राजा कहते थे। सारे देश के राजा को भी वे अपने समान ही समझते थे। आज कल रूस में जिस प्रकार राष्ट्रपति और साधारण मज़दूर सभी कांम्रेड् (comrade) हैं उसी तरह ये लोग भी ऊंचनीच का भाव छोड़ कर अपने को उसके ही समान समझते होंगे।[3]

इन परिषदों में केवल राजनीतिक कार्य ही नहीं होते थे, अपितु धार्मिक काम भी इन्हीं में किए जाते थे। महावस्तु में लिखा है कि लिच्छवियों ने अपने में से एक व्यक्ति को दूत बना कर भेजा।[4]

लिच्छवियों में न्याय के मामले में राजा सबसे बड़ा था। इसके अतिरिक्त एक न्याय मन्त्री भी होता था। यह परदेसी भी हो सकता था।[5] लिच्छवियों की रक्षा के लिए बहुत प्रबन्ध था।

१. फौसबूल, जातक, भाग ३. पृ० १
लिच्छवी राजनम् सत्तसससानि सत्तसतानि सत्तच लिच्छवी वसिंसु। ते सब्बेपि पटिपुच्छावितक्का आदेसु।

२. जातक. ४. पृ. १४८—
वैशालिनगरे गण—राजकुलानं अभिषेक-पोक्खरणीं

३. नौच—मध्य—वृद्ध ज्येष्ठानुपालिता एकैक एव मन्यते अहं राजा अहंराजेति। न कस्यचिच्छिष्यत्वमुपगच्छति।

४. १. २५४. वैशालिकानां लिच्छवीनां वचनेन ॥ ललितविस्तार अ. ३.

5. Turnour, T. A. B. B. VII. PP. 99485,

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सारे मुकद्दमों का रिकार्ड रखा जाता था। इन पुस्तकों 'पवेनि-पट्ठक' कहते थे। इस में अपराध और उसका दण्ड लिखा जाता था। राजा को ही दण्ड देने का अधिकार था, इस लिए उसके ही निर्णय इसमें लिखे जाते थे।

यदि कोई आदमी अपराध करता था तो वह सब से प्रथम विनिच्चय महामात्य के सुपुर्द किया जाता था। श्रीयुत जायसवाल ने इसका अर्थ न्यायाधीशों का न्यायालय (Court of Justices) किया है। इसमें साधारण मुकद्दमे आते थे। यदि वह अपराधी निकलता तो उसे दण्ड नहीं दिया जाता था। उसकी अपील होती थी। इस न्यायालय का प्रधान 'वोहारिक' या व्यवहारिक होता था। इस में यदि वह अपराधी साबित होता था तो वह हाईकोर्ट में पेश किया जाता था। उसका अध्यक्ष सूत्रधर था। इस के बाद यदि अभियुक्त अपराधी सिद्ध हो तो उसकी अष्ठकुलक में अपील होती थी। अभी तक अष्ठकुलक का अर्थ आठ फ़िरकों के प्रतिनिधि किया जाता रहा है, पर श्री जायसवाल इसे आठ आदमियों की जूरी बताते हैं।[1] इसके बाद भी अभियुक्त को दण्ड नहीं मिलता था। वह क्रमशः भाण्डागारिक, सेनापति, उपराजा और राजा के सामने पेश किया जाता था। यदि सब उसे अपराधी ठहराते तब राजा पवेनिपट्ठक के अनुसार नाप तोल कर दण्ड देता था। इस पद्धति में अपराधी के छूट जाने की सम्भावना रह सकती थी, पर निरपराध व्यक्ति दण्ड का भागी नहीं हो सकता था।

लिच्छवियों और विदेहों का संयुक्तसंघ था। इन दोनों का संयुक्त नाम समवज्जि था।[2] जैन सूत्रों[3] में लिच्छवी और मल्ल जनतन्त्र के संयुक्त संघ का वर्णन है। यह संघ महावीर की मृत्युतक रहा। इस संघ परिषद (Federal Council) में १८ सदस्य थे। इनमें ९ लिच्छावी थे और ९ मल्ल थे। जैनसूत्रों में इन संघ राजाओं का वर्णन काशी कोशल के प्रदेश में है। महावीर की मृत्यु के बाद कोशल के साम्राज्य को काशी कोशल के नाम से कहा जाने लगा; पर बौद्ध साहित्य में हमें इस प्रकार की कोई साक्षी नहीं मिलती। बौद्ध पाली ग्रन्थों की आपेक्षा जैन ग्रन्थ अर्वाचीन हैं। श्रीयुत जायसवाल का विचार है कि यदि जैन ग्रन्थों को सत्य ही मानना है तो इसे इस प्रकार संगत किया जा सकता है कि इस समय मगध वैज्जनों पर आक्रमण कर रहा था। एक बार लिच्छवी हार भी गए थे इस लिए अपनी रक्षा के लिए उन्होंने काशी-कोशल के साथ संघ (confederation) का निर्माण किया होगा। क्योंकि संघ आत्मरक्षार्थ ही बनाए जाते हैं। पर यह मानना अनुचित होगाकि काशी—कोशल ने वैज्जेन संघ को जीत लिया हो।[4]

यद्यपि राजनीतिक दृष्टि से लिच्छवियों की प्रमुखता थी फिर भी मल्ल और लिच्छवियों को संघपरिषद में समान अधिकार थे।

मल्ल

कौटिल्य मल्लों को 'राजशब्दोपजीवी' लिखता है। वृद्ध घोष ने भी मल्लों को राजशब्दोपजीवी लिखा है।[5] मज्झिम निकाय में गण और संघों का उदाहरण देते हुए लिच्छवियों और मल्लों कानाम लिया है। इस से

1. Jayasval—Hindu Polity P. 53.
2. Cf. Rhys Davids-Buddhist India P. 24.
3. Jayasval-Hindu Polity P. 54.
4. Dialogues of Buddha, Part III. P. 201.
5. Dialogues of Budha Part I. P. 231.

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्पष्ट है कि मल्ल एक आदर्श गण राज्य था। मल्ल लोग दो भागों में विभक्त थे[1]– एक पावा के मल्ल और दूसरे कुशीनारा के। दोनों की पृथक् पृथक् परिषदें थी। इन्हीं में धार्मिक और राजनीतिक समस्याओं पर विचार होता था। सन्थागार में बैठे हुए मल्लों को आनन्द ने बुद्ध की भावी मृत्यु का हाल बताया था।[2] इसी प्रकार बुद्ध के शव का क्या किया जाय, इसका निर्णय भी उन्होंने अपनी परिषद् में किया था। दीघनिकाय में 'पुरिस' पदाधिकारी का नाम मिलता है।[3] पर यह नहीं कह सकते कि वह कोई बड़ा कर्मचारी होगा। इसके बारे में कोई प्रकाश नहीं पड़ता। रीज़ डेविड्स ने इसे नौकर लिखा हैं।[4]

मल्ल और लिच्छवी परस्पर प्रेम से रहते थे। जैन सुत्तों के अनुसार मल्ल और लिच्छवी एक संयुक्त संघ में बंधे थे; पर इनके विवाद का वर्णन धम्मपद[5] में आता है। एक बार मल्ल सेनापति बन्धुल की स्त्री मल्लिका ने वैशाली के राजाओं के अभिषेक करने की पुष्करिणी में स्नान करना चाहा। बन्धुल उसे रथ पर बैठा कर ले चला। लिच्छवियों ने उसे रोका, पर उसने उन को मार भगाया। वह सस्त्रीक उस पुष्पकरिणी में नहा लिया। इसके बाद वह रथ पर सवार होकर अपनी जगह जाने के लिए प्रस्तुत हुआ। इतने में लिच्छवी इकट्ठे होगए थे। उन्होंने उसका पीछा किया। पर वे पीछा करते करते ही मर से गए। जब उनकी वर्दियां खोली गई तब वे मरे पड़े थे।

मल्ल स्वतन्त्र गणराज्य था। पर मगध की साम्राज्यवादी तलवार का वार कौन रोक सकता था। मल्ल भी मगध के शिकञ्जों में कसे गए।

कोलिय गणराज्य शाक्य गणराज्य के समीप ही था। महावस्तु में कौलियों की उत्पत्ति एक शाक्य स्त्री और एक भिक्खु से है। शाक्य स्त्री सुन्दर थी। उसे कोढ़ हो गया। वह जंगल में छोड़ दी गई। वहां उसका भिक्खु से मेल होगया। इस भिक्खु का नाम कोल था। इस दम्पन्ती के १६ लड़के और १६ लड़कियां हुई। जब इनकी अच्छी अवस्था होगई तो उनकी माता ने इन्हें शाक्यों के रीति रिवाजों से परिचित कराकर शाक्यों के पास भेज दिया। जब ये कपिलवस्तु पहुंचे, उस समय शाक्य संस्थागार में बैठे थे। वहीं पर ये लोग भी चले गए। इनका व्यवहार शाक्यों के जैसा था। लोगों को आश्चर्य हुआ कि ये कौन हैं। इस पर हाल बताया गया। वे शाक्य थे, इस लिए उनका शाक्य लड़कियों से विवाह हुआ। कोल के पुत्र होने के कारण उनका नाम कोलिय पड़ा।[6] इसके अतिरिक्त कोलियों की उत्पत्ति के सम्बन्ध में सुमंगल विलासनी,[7] कुनाल जातक[8] और थेरगाथा[9] में विभिन्न वर्णन मिलते हैं।

कौलिय

जातकों में शाक्यों और कोलियों की लड़ाई के सम्बन्ध में एक कथा आती है। शाक्य और

1, Digha Nikaya, vol II. p. 164
2. Buddist suttas. p. 102
3. Digha Nikaya, Val. II, P, 159
4. Buddhist india, p. 21
5. Fausboll, pp. 218–220
6. Vol. I, pp. 352–355.
7. PP. 260–262
8. Jatak-Fausboll, V., P. 413
9. Yerse 529, P. 59

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कोलियों के देशों के बीच में एक नदी बहती थी।[1] इसका नाम रोहणी था। उसका पानी कौन ले, इस सम्बन्ध में दोनों से कहा सुनी होगई। इतने में लड़ाई की नौबत आगई। बुद्ध ने बीच में पड़ कर इसे शान्त कर दिया।[2]

भग्ग, कालाम और मोरिय के सम्बन्ध में बौद्ध ग्रन्थों में बहुत कम लिखा हुआ है। बुद्ध के समय भाग्गों पर उदयन का लड़का बोधी शासन कर रहा था।[3] इस प्रकार यह वत्स के आधीन हो चुका था।

१. पस्सन्तुतं साकियां कोलिया च पच्छामुखं रोहिणीयं तरन्तं। थेरगाथा। ५२९। पृ० ५९

2. Cowell-Jatak, val V, P. 219

3. Majibim Nikay, val II, pt. I; pp. 332 338

—:※:—

स्वाधीनता के संग्राम में स्त्रियों का कर्तव्य

(श्रीमती सीतादेवी जी विशारदा.)

प्रत्येक इतिहास ज्ञाता इस बात को भली भांति जानता है कि आज तक स्त्रियों की सहायता के बिना किसी भी कार्य्य में सम्यक सफलता प्राप्त नहीं हो सकी। इस देश में कई जातियों का उत्थान तथा पतन हुआ, कई क्रान्तियां हुइ, सदैव ही स्त्रियां उन में भाग लेती रहीं। प्राचीन काल में भी ललनायें रणभूमि में स्वयं जाकर युद्ध करती थीं, अपने पतियों तथा भाईयों को भी प्रोत्साहित करती थीं। क्या आज हम दुर्गावती लक्ष्मीबाई के नाम को भूल गये हैं, जिन्होंने कि स्वतन्त्रता के लिये अपने प्राणों को तृणवत न्योछावर कर दिया था।

स्वनाम धन्य उन राजपूत रमणियों के कृत्यों को कौन नहीं जानता। जिस समय कि जसवन्त-सिंह पराजित होकर वापस आता है तो महारानी सिसोदिया द्वार बन्द करवा देती है, तथा पत्र द्वारा उसे सूचित करती है कि शत्रु को परास्त कर घर वापस आना, अन्यथा युद्धभूमि में ही प्राण दे देना। यदि कायरों की भांति युद्ध भूमि से पीठ फेर कर घर लौटोगे तो तुम्हारे जैसे कुल कलङ्क के लिये यहां स्थान नहीं है। अपने कुकृत्यों से वीर क्षत्राणी माता के दूध को कलङ्कित न करो।' उस वीर रमणी का एक २ शब्द वीर रस से पूर्ण है। महारानी लक्ष्मी-बाई ने किस प्रकार अंग्रेजों से युद्ध किया और घोर विपत्तियों के आने पर भी वह किंचित मात्र विचलित नहीं हुई। अंग्रेजों ने उसे पीड़ित करने के लिये पाशविक अत्याचार किये, परन्तु अकेली लक्ष्मीबाई बड़ी वीरता से उनका सान्मुख्य करती रही। निदान इसी प्रकार वीरता से युद्ध करती हुई वह वीर नारी वीरगति को प्राप्त हुई। इसी प्रकार अन्य भी कई उदाहरण हमारे सन्मुख उपस्थित हैं। रूस के इतिहासाध्ययन से ज्ञात होता है कि वहां की स्वाधीनता की नींव नवयुवतियों के रुधिर से सींची गई है। वहां के स्वतन्त्रता-युद्ध की

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सफलता का मुख्य कारण स्त्रियां ही थीं। रूस की नेत्री, वीर बाला कैथोराइन के नाम को कौन नहीं जानता। रूसी जनता को स्वतन्त्रता का बिगुल बजा कर उसने ही जगाया था। मातृ भूमि की स्वाधीनता के लिये ज़ारशाही को समूल नष्ट करने का दृढ़ संकल्प कर उसने हंसते २ अनेक विपत्तियों को सहन किया। २३ वर्ष तक जेल में कठोर यम-यातनाओं से उसे पीड़ित किया गया, परन्तु वह अपने उद्देश्य से विचलित नहीं हुई, अन्त समय तक स्वतन्त्रता के लिये तन मन धन से प्रयत्न करती रही। सोफिया तथा फ़ीना ने भी स्वतन्त्रता के लिये अपने प्राण त्याग कर किये। इस समय भारतीय महिलाओं को भी अपनी अन्य देश की बहिनों का अनुकरण करना चाहिये। भारत का भविष्य नवयुवतियों पर ही निर्भर करता है। क्या हम अपनी सारी आयु आमोद प्रमोद तथा अन्य कार्य्यों में ही व्यतीत कर देंगी, क्या देश को स्वतन्त्र करना हमारा कर्त्तव्य नहीं है। क्या हमारा देश सदा ही गुलाम रहेगा। आज दो सौ साल से पराधीनता की बेड़ियों में जकड़े हुए हम लोग नहीं समझ सके हैं कि पराधीनता में क्या दुख है। अपना सर्वस्व नष्ट करके भी हमारी कुम्भकर्णी निद्रा भङ्ग नहीं हुई। अन्य देशों ने स्वाधीनता प्राप्त करली है, क्या जगद्-गुरु, प्राचीन भारत सब से पीछे रह जायगा? सब नवयुवतियों को स्वाधीनता संग्राम के लिये तैय्यार हो जाना चाहिये। इस देश में अब भी दुर्गावती, कैथो-राइन, फीना, जैसी आत्मत्याग करने वाली देवियों की आवश्यकता है। अब हमें देश के लिये बलिदान करना होगा। हमारा मुख्य उद्देश्य देश को स्वाधीन करना है। अब प्लेटफार्म पर खड़े होकर, व्याख्यान देकर, या 'सारे जहां से अच्छा, हिन्दो-सतां हमारा' इत्यादि भजन गान कर तथा लम्बे लम्बे प्रस्ताव पास करने से स्वाधीनता न मिलेगी, परन्तु अपने क्रियात्मक जीवन से सिद्ध करना होगा कि स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है, उसके लिये हम मर मिटेंगे। इस समय हमारा देश गुलाम है, गुलाम लोग सुख पूर्वक नहीं रह सकते, अतः भोग विलास इत्यादि सांसा-रिक सुखों का त्याग करना होगा। स्वाधीनता प्राप्त करके जब ३२ करोड़ नर नारी सुख पूर्वक अपना जीवन व्यतीत करेंगे, उसी समय सच्चे सुख की प्राप्ति होगी। स्वतन्त्र होकर ही भारत उन्नत मस्तक होकर अपने पूर्व गौरव को प्राप्त करेगा।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

गुरुकुल के स्नातक क्या कर रहे हैं ?

(लेखक— प्रो० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार.)

ऐसे अवसर पर, जब कि गुरुकुल-काँगड़ी विश्वविद्यालय अपनी सफलता के २७ वर्ष समाप्त कर उन्नति-पथ पर आगे क़दम रखने वाला है, जनता को यह सोचने और गुरुकुल के संचालकों से पूछने का पूरा अधिकार है कि गुरुकुल की पढ़ाई समाप्त कर यहाँ के ब्रह्मचारी क्या करेंगे ? वैसे तो यह प्रश्न आज से १०, १२ वर्ष पहले किया जाता था, अब नहीं किया जाता। उस समय गुरुकुल से स्नातक निकलने शुरु ही हुए थे, और सर्व-साधारण को उनके भविष्य में सदा शंका बनी रहती थी। पर अब, जब कि गुरुकुल से १८० के लगभग स्नातक निकल चुके हैं, और जीवन-यात्रा को सफलता से निभा रहे हैं, यह प्रश्न कुछ असंगत-सा जान पड़ता है। फिर भी कभी-कभी यह आवाज़ किसी-न-किसी कोने से उठती हुई सुनाई पड़ ही जाती है। इस लिये इस प्रश्न के विषय में भी दो-चार शब्द जनता के सम्मुख रख देना उचित ही प्रतीत होता है।

जब गुरुकुल के स्नातकों की जीविका के विषय में प्रश्न किया जाता है, उस समय इस बात को सर्वथा भुला दिया जाता है कि यह प्रश्न गुरुकुल के स्नातकों के लिये ही नहीं, भारत के सम्पूर्ण शिक्षा प्राप्त कर रहे विद्यार्थियों के विषय में एक-समान है। आज सरकारी कमीशन भी कह रहे हैं कि हमारे स्कूल और कॉलेज जितने विद्यार्थियों को हर साल निकालते हैं, उन्हें काम पर लगाने के लिये सरकारी के पास काफ़ी नौकरियाँ नहीं हैं।

सन् १९२१ की 'मनुष्य-गणना' के अनुसार भारत अंग्रेज़ीकी जन-संख्या २४ करोड़ से ऊपर है, जिस में १४ ९६ ५३१ मनुष्यों को सरकारी नौकरी मिल सकती है ; क्योंकि सरकार के पास कुल इतनी ही नौकरियाँ हैं। इनमें चपरासी तक की नौकरी भी शामिल है। इस हिसाब के अनुसार सौ में साढ़े निन्यानवे आदमी भी सरकारी नौकरियों की कोई आशा नहीं कर सकते। सौ में से कुल आधे आदमी को सरकारी नौकरी मिल सकती है। इसके साथ यह भी ध्यान में रखना चाहिये कि ये सब नौकरियाँ भरी हुई हैं, ख़ाली नहीं। इसी का यह परिणाम है कि पिछले दिनों आसाम सरकार की रिपोर्ट में छपा था कि वहाँ एक ग्रामीण पाठशाला में एक अध्यापक के छुट्टी जाने पर उसके स्थान में कुछ देर तक काम करने के लिये एक 'ग्रेजुएट' ने १५) मासिक पर काम करना स्वीकार कर लिया।

जितने विद्यार्थी आज सरकारी विद्यालयों में उच्च शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं, सबके सम्मुख रोटी का विकट प्रश्न उपस्थित है। काशी विद्या-पीठ में समावर्तन-सम्भाषण देते हुए श्रीयुत भगवानदास जी ने कहा था कि स्वदेशी शिक्षणालयों के विद्यार्थियों की आजीविका के विषय में उन्होंने एक बार गुरुकुल-काँगड़ी के संस्थापक स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज से प्रश्न किया। स्वामी जी ने उत्तर दिया कि सरकारी डिगरियाँ हासिल कर १०० में १ को भी कठिनता से नौकरी मिलती है—९९ विद्यार्थी आजविका के प्रश्न को किस प्रकार हल करते हैं ?

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्वामी जी ने फिर कहा कि सरकारी कॉलेजों के ९९ छात्रों के सम्मुख जो प्रश्न है, वह हमारे यहाँ १०० के सम्मुख है—बस, इतना ही तो अन्तर है! भाई परमानन्द जी ने गुरुकुल पर लिखते हुए एक बार लिखा था कि गुरुकुल के सामने आजीविका का प्रश्न रखना बिलकुल ढकोसला है। स्कूलों और कालेजों के विद्यार्थी तथा उनके माता-पिता १४ साल इस भ्रम में गुज़ार देते हैं कि लड़का बी०ए० होगा, और उनके आर्थिक संकट दूर हो जायँगे। अर्ज़ी ले-लेकर बी० ए०, एम्० ए०, दौड़ते हैं। फिर नौकरी ढूँढने में ४-५ साल तक भटकना पड़ता है। तब कहीं जाकर हमारे लोगों का भ्रम टूटता है, और उनकी समझ में आता है कि वे दिन, जब बी० ए० बन कर रोटी का सवाल हल हो जाता था, चले गए। अब रोटी का सवाल हल करने के लिये कोई दूसरा काम करना चाहिये। गुरुकुल के स्नातकों और उनके माता-पिताओं को यह भ्रम नहीं होता। वे अपनी शिक्षा प्रारम्भ करने के दिन से ही जानते हैं कि हमारी आजीविका का प्रश्न सरकारी नौकरी से नहीं हल हो सकता। विद्याभ्यास समाप्त करते ही कोई स्वतन्त्र पेशा अख़्तियार करना चाहिये। आज कल तो इस प्रकार का 'भ्रम' न होना नफ़े में गिना जाना चाहिये; क्योंकि यह भ्रम बहुत मँहगा पड़ता है, और इसमें लेने-के-देने पड़ जाते हैं। इसके साथ ही गुरुकुल की शिक्षा से लाभ कितना है! विद्यार्थी को अपनी भाषा, अपनी सभ्यता, अपनी संस्कृति, अपनी राष्ट्रीयता, अपने धर्म का परिज्ञान हो जाता है; वह ब्रह्मचर्य-पूर्वक अपने जीवन को बिताना सीख जाता है; परतन्त्रता तथा दासता के भावों को घृणा करना उसके जीवन का मुख्य कर्तव्य हो जाता है। क्या जीवन के अमूल्य धन, इन रत्नों को ठुकरा कर सौ में से एक को नौकरी दिलाने के लिए गुरुकुल जैसी राष्ट्रीय संस्था के सम्मुख जीविका का प्रश्न कोई प्रश्न रहता है? हमारे नव-युवकों को यह सीखने की आवश्यकता है कि वे दासता से मिलने वाले मोहनभोग को ठुकरा कर आज़ादी से मिलने वाली सूखी रोटी पर गुज़ारा करें।

आजीविका के प्रश्न पर विचार करते हुए एक और बात का भी ध्यान रखना आवश्यक है। आजकल आजीविका के प्रश्न की विकटता का मुख्य कारण हमारी आवश्यकताओं का बढ़ जाना है। हम लोग खाने पीने तथा शरीर की अन्य आवश्यकताओं को पूरा करने में उतना ख़र्च नहीं करते, जितना फ़िज़ूल-ख़र्ची में उड़ा देते हैं। गुरुकुल में शिक्षा प्राप्त करते हुए विद्यार्थी आवश्यकताओं को नियमित करना सीख जाते हैं। इस कारण इनका जीवन-संग्राम उतना विकट नहीं रहता। वे थोड़े में भी मज़े से गुज़ारा कर सकते हैं; क्योंकि वे वहाँ ब्रह्मचर्य के जीवन को तपस्या और ग़रीबी में गुज़ारते हैं। जो विद्यार्थी सौ रुपए मासिक व्यय करके आज बी० ए० पास होता है, उसके लिये ५० रुपये की नौकरी करते हुए परिवार का बोझ उठाना असम्भव-सा है, परन्तु २०-२५ रुपए मासिक व्यय से शिक्षा प्राप्त करने के अनन्तर गुरुकुल के स्नातक के लिये ५० रु० से अपनी आजीविका चलाना उतना कठिन नहीं रहता। इसका यह अभिप्राय नहीं कि आवश्यकतायें कम करके कमाने की शक्ति को भी घटा दिया जाय। परन्तु कमाने की शक्ति पूरी रखते हुए आवश्यकताओं को कम करने का परिणाम जीवन के लिये अवश्य सुखप्रद होगा। गुरुकुल के स्नातकों के कमाने की शक्ति सरकारी नौकरियों को छोड़कर अन्य सब

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

दिशाओं में विकसित हो सकती है, और होती है; परन्तु उनकी आवश्यकताएँ कम रहती हैं।

केवल रोटी कमा लेना ही जीवन का उद्देश्य नहीं। खाने के लिये जीना गुरुकुल नहीं सिखाता। हाँ, जीने के लिये खाना आवश्यक है। जीना किसी आदर्श, किसी ध्येय के लिये है। गुरुकुल के स्नातक भी इस ध्येय को सम्मुख रखते हुए अपनी जीवन-यात्रा निबाहते हैं। यदि वे लखपति नहीं, तो इसे वे शर्म की बात नहीं समझते। हाँ, वे तब शर्माते हैं, जब कोई उन पर उँगली उठाकर कह सके कि ये देश या जाति की सेवा नहीं कर रहे हैं। यही तो उनके जीवन का लक्ष्य है। लोग पूछते हैं, गुरुकुल के स्नातकों ने क्या किया? सुनिये, १९८४ सम्वत् तक गुरुकुल विश्वविद्यालय से १७५ स्नातक शिक्षा समाप्त कर निकल चुके थे। इनमें से १४ उसी साल निकले थे। शेष १४७ में से दुर्भाग्य वश ६ का देहान्त हो चुका है। इस प्रकार अवशिष्ट १५१ स्नातकों में से जो-जो जिस-जिस काम पर लगे हुवे हैं, उनका ब्योरा इस प्रकार हैं:-

दस स्नातक गुरुकुल विश्वविद्यालय विभाग में उपाध्याय तथा अन्य कार्य पर लगे हुवे हैं। एक स्नातक गुरुकुल वृन्दावन में प्रोफ़ेसर है। तीन स्नातक गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ में, दो गुरुकुल मुलतान में, तीन गुरुकुल सूपा में, एक नवसारी गुरुकुल में, तीन गुरुकुल कुरुक्षेत्र में, दो रामताल गुरुकुल में, एक मटिण्डु गुरुकुल में, एक कमालिया में, एक वेटसोनी में, एक गुजरांवाला गुरुकुल में, एक स्यालकोट में अधिष्ठाता तथा प्रबन्धक का कार्य कर रहे हैं। इस प्रकार गुरुकुलों तथा शाखाओं में कार्य करने वाले स्नातकों की संख्या ३० है।

राजनैतिक कार्य में दो स्नातक लगे हुवे हैं। पं० जयदेव वेदालंकार महात्मा गाँधी के आश्रम में तथा पं० अमरनाथ विद्यालङ्कार लाला लाजपतराय की Servants of the People Society में कार्य कर रहे हैं। ग्यारह स्नातक साहित्य की सेवा में ही लगे हुवे हैं, जिनमें से पं० इन्द्रजी विद्यावाचस्पति तथा पं० जयदेव शर्मा विद्यालङ्कार का नाम उल्लेखनीय है। पं० जयदेव शर्मा ने अभी सामवेद-भाष्य प्रकाशित किया है जिसकी पं० सातवलेकर जी जैसे विद्वानों ने मुक्तकण्ठ से प्रशंसा की है। वह इस समय इसी प्रकार शेष तीनों वेदों का भाष्य करने में लगे हुवे हैं।

आर्य समाज की सेवा में उपदेशक के तौर से २३ स्नातक लगे हुए हैं। इनमें से पं० युधिष्ठिरजी का नाम विशेषतः उल्लेखनीय है। आपने गुरुकुल रजत-जयन्ती महोत्सव पर सन्यास धारण कर सीधे ब्रह्मचर्य्य से तुरीयाश्रम में प्रवेश किया था। पं० देवशर्मा जी विद्यालङ्कार तथा पं० सत्यानन्द जी विद्यालंकार योग साधन में लगे हुवे हैं। स्नातकों में से कुछ विदेश प्रचार के लिये भी जा चुके हैं। पं० ईश्वरदत्तजी विद्यालङ्कार तथा पं० सत्यव्रतजी सिद्धान्तालङ्कार अफ्रीका में बड़ी सफलता से प्रचार कर चुके हैं। पं० बुद्धदेव जी विद्यालङ्कार ने छः महिने से अधिक समय अफ्रीका प्रचार में लगाया है, और उन्हें बड़ी कृतकार्यता प्राप्त हुई है। बर्मा में पं० सत्यपाल और पं० यशपाल ने बड़ी उत्तमता से कार्य किया है। मद्रास प्रान्त में पं० सत्यव्रत जी तथा पं० देवश्वरजी कई साल तक रहे हैं और पिछले कई वर्षों से पं० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति और पं० केशवदेव जी सिद्धान्तालङ्कार काम कर रहे हैं। इन सबको अपने कार्य में बड़ी सफलता प्राप्त हुई है। पं० केशवदेव जी सिद्धान्तालङ्कार के प्रयत्न से मद्रास प्रान्त में ५५०० से ऊपर दलितों और ईसाइयों की शुद्धियाँ

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अब तक हो चुकी हैं, और पं० धर्मदेव जी के प्रयत्न से कई नवीन समाजें स्थापित हो चुकी हैं। पं० सत्यव्रत जी सिद्धान्तालङ्कार ने बंगलौर में एक गुरुकुल भी स्थापित किया था जो अब तक चल रहा है। इसमें सब जातियों के बालक लिये जाते हैं। इस दृष्टि से ब्राह्मणत्व से आक्रान्त दक्षिण भारत में यह बड़े महत्व का आश्रम है। मैसूर सरकार की तरफ़ से इसे सहायता भी मिलती है।

विधवा विवाह सहायक सभा की ओर से पं० दीनानाथ जी कलकत्ता में और पं० नवरत्न जी यू.पी. में कार्य कर रहे हैं।

इनके अतिरिक्त १६ स्नातक ऐसे हैं जो निजू कार्य करते हुवे समाज-सेवा कर रहे हैं। ये अपने-अपने शहरों में या तो आर्यसमाजों के मंत्री हैं या प्रधान हैं। इनके उत्साह पूर्ण कार्य से जनता में प्रचार का कार्य खूब होता रहता है। पाँच स्नातकों ने शारीरिक व्यायाम में सिद्धहस्तता प्राप्त की है। वे भी समाजों के उत्सवादि पर जाते रहते हैं। इनकी संख्या जोड़ देने से २४ स्नातक ऐसे हैं जो निजू कार्य करते हुवे भी समाज सेवा करते रहते हैं।

तेरह स्नातक बड़े कृतकार्य वैद्य हैं। १८ स्नातक व्यापार में लगे हुए हैं। सात स्नातक अपनी योग्यता बढ़ाने के लिये विदेश में शिक्षा प्राप्त कर रहे तथा कर चुके हैं। इनमें से पं० प्राणनाथ विद्यालङ्कार तथा पं० विनायकराव का नाम उल्लेख योग्य है। पं० प्राणनाथ जी इस समय पी० एच० डी० तथा डी० एस० सी० दोनों परीक्षाएं पास कर के हिन्दू यूनिवर्सिटी में पढ़ा रहे हैं। पं० विनायकराव इँगलेंण्ड में जाकर बैरिस्टर हो आये हैं। पिछले साल ४ स्नातक सीनियर केम्ब्रिज में बैठे थे जिन में से तीन उसी साल गुरुकुल से निकले थे। इनमें एक के पिता का देहान्त हो गया था, इस लिये वह तैयारी न कर सकने के कारण अनुत्तीर्ण हो गया। बाकी तीनों पास हुए; और उनमें से एक तो अपने केन्द्र में सब अँग्रेज़ लड़कों के भी फेल हो जाने पर पास हो गया। सीनियर केम्ब्रिज की अंग्रेजी की योग्यता बी० ए० की समझी जाती है। एक स्नातक डाक्टरी पढ़कर Ship Surgeon हो गये हैं।

दो साल हुवे जब कि गुरुकुल के स्नातकों में से ७ के पीछे १ पुस्तक लेखक था, परन्तु इस साल ५ स्नातकों पीछे १ पुस्तक लेखक है। जनता की सेवा को ही आजीविका समझने वाले स्नातकों की संख्या ६३ है, जो कि प्रतिशतक के हिसाब से ४५ पड़ती है। यदि इस संख्या में उन स्नातकों को भी गिन लिया जाय जो अपनी आजीविका के लिये अन्य साधन का आश्रय लेते हुवे जनता की सेवा कर रहे हैं; तो सार्वजनिक जीवन में भाग लेने वाले स्नातकों की संख्या १४१ में से ८७ हो जाती है।

इस प्रकरण में गुरुकुल के स्नातकों द्वारा उत्पन्न किये हुवे साहित्य की तरफ़ जनता का ध्यान आकर्षित करना आवश्यक है। जैसा कि पहले कहा जा चुका है, स्नातकों में से ५ पीछे एक ग्रन्थकार है; और अभी कई ग्रन्थ ऐसेभी है जो प्रकाशित होने वाले हैं। वैदिक-साहित्य में पं० चन्द्रमणि जी, पं० विश्वनाथ जी, पं० जयदेव जी के ग्रन्थ किसी भी वैदिक विद्वान् के लिए मान्य हैं। पिछले साल ओरियण्टल कान्फ्रेन्स में गुरुकुल की तरफ़ से पं० विश्वनाथ जी, पं० वागीश्वर जी तथा पं० सत्यकेतु जी सम्मिलित हुए थे और उनके निबन्धों तथा भाषणों का सब विद्वानों ने बड़ा मान किया था। अभी आचार्य रामदेव जी ने भारतवर्ष

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

के इतिहास का दूसरा खण्ड लिखा है। जिसके लिखने में गुरुकुल के स्नातक पं० चन्द्रगुप्त जी तथा पं० सत्यकेतु जी ने बड़ी सहायता दी है। गुरुकुल की साहित्य-परिषद् से अनेक स्नातकों की पुस्तकें प्रकाशित होती रहती हैं। दूसरे पुस्तक-विक्रेताओं की तरफ़ से भी स्नातकों के ग्रन्थ प्रकाशित होते ही रहते हैं। पं० विश्वनाथ जी का सामवेद विषयक एक ग्रन्थ शीघ्र-ही प्रकाशित होने वाला है। प्रो० सत्यकेतु जी ने मौर्य-वंश पर एक बृहत् पुस्तक लिखी है जो हाल ही में इन्डियन प्रेस इलाहाबाद से प्रकाशित हुई है। इस ग्रन्थरत्न के भूमिका लेखक हैं; सुप्रसिद्ध ऐतिहासिक काशीप्रसाद जायसवाल, पटना।

पं० विश्वनाथ जी कन्या-गुरुकुल के महाविद्यालय विभाग के लिये अथर्ववेद के मन्त्रों का संग्रह तैयार कर रहे हैं। यह ग्रन्थ भी शीघ्र-ही प्रकाशित होगा। गुरुकुल ने आर्यभाषा के साहित्य को जो वेग दिया है वह अन्य किसी संस्था से नहीं हुआ। अभी शाहपुर राज्य के राजकुमार श्री उमेदसिंह जी की तरफ़ से हिन्दी की जो गद्दी स्थिर हुई है उस पद पर हिन्दी के सर्वमान्य विद्वान्, हिन्दी साहित्य सम्मेलन के वर्तमान सभापति श्री पं० पद्मसिंह जी शर्मा कार्य कर रहे हैं। वे कतिपय बहुत ही महत्व पूर्ण पुस्तकें लिख रहे हैं और उन्हें गुरुकुल की ओर से प्रकाशित किया जायगा। इन विचारों को सम्मुख रखते हुए क्या गुरुकुल के स्नातकों से प्रश्न किया जा सकता है कि इस संख्या में शिक्षा प्राप्त कर वे क्या करेंगे ?

फिर भी गुरुकुल ने आजीविका के व्यावहारिक प्रश्न को दृष्टि से ओझल नहीं किया। इस समय गुरुकुल में एक 'आयुर्वेद-महाविद्यालय' (Medical College) खुला हुआ है। इस में आयुर्वेद के साथ-साथ ऐलोपैथी और सर्जरी का पूरा-पूरा अध्ययन होता है। हिमालय की घाटी निकट होने के कारण, गुरुकुल के औषध-निर्माण कार्य में सुविधा भी प्राप्त है। जो विद्यार्थी इस महाविद्यालय में शिक्षा प्राप्त करना चाहें वे अपने माता-पिता की सलाह से इस महाविद्यालय में भरती हो सकते हैं। इस समय तक गुरुकुल के स्नातकों में २५ आयुर्वेद का कार्य कर रहे हैं। इस महाविद्यालय के अतिरिक्त 'रजत-जयन्ती' के शुभ अवसर पर स्वर्गवासी पूज्य स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज ने एक शिल्प-महाविद्यालय (Industrial College) खोलने के लिये सवा लाख रुपयों की अपील की थी। यदि इस महाविद्यालय के लिये पर्याप्त धन आ गया तो आजीविका के प्रश्न को हल करने में गुरुकुल एक और क़दम आगे रक्खेगा। हमें आशा है, इस प्रश्न पर हम पर्याप्त प्रकाश डाल चुके।

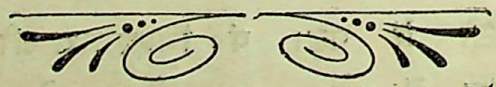

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

साहित्य-समीक्षा

मौर्य साम्राज्य का इतिहास—ले० प्रो० सत्यकेतु जी विद्यालंकार, प्रकाशक इण्डियन प्रेस इलाहाबाद. पृष्ठ संख्या ७१८+१०, चित्र संख्या ८। रायल आठ पेजी साइज़। नक्शे ३. कपड़े की सुन्दर जिल्द सहित। मूल्य ५) रु०

राष्ट्र भाषा हिन्दी का साहित्य बड़ी शीघ्रता से कदम भर रहा है—यह "मौर्य-साम्राज्य का इतिहास" नामक विशाल ग्रन्थ इस बात का एक बहुत बड़ा प्रमाण है। निस्सङ्कोच भाव से हिन्दी प्रेमी जनता इस पुस्तक पर गर्व कर सकती है। इस ग्रन्थरत्न के भूमिका लेखक, सुप्रसिद्ध ऐतिहासिक श्रीयुत काशी प्रसाद जायसवाल का कथन है कि अब तक ऐसी कृतियाँ केवल अंग्रेज़ी भाषा में ही होती रही हैं। हम जायसवाल महोदय की इस बात से पूरी तरह सहमत हैं। भारतवर्ष के इतिहास में मौर्यकाल का युग सब से अधिक चमकदार और गरिमापूर्ण है। इस युग में निस्सन्देह भारतवर्ष संसार की सब से बड़ी शक्ति था। इस मौर्य साम्राज्य के समान, उन्नत, सभ्य, सुशासित और शक्तिशाली साम्राज्य उस समय इस पृथिवी के अन्य किसी भाग पर नहीं था—इस बात से संसार भर का कोई भी प्रामाणिक एतिहासिक इन्कार नहीं कर सकता। मौर्यकाल के बाद यह गौरव इस देश को फिर कभी प्राप्त नहीं हो सका। परन्तु अभी तक हिन्दी तो क्या, अंग्रेज़ी तक में भी इस सम्पूर्ण युग के सम्बन्ध में कोई एक क्रमबद्ध, प्रामाणिक और विस्तृत इतिहास नहीं लिखा गया था। चन्द्रगुप्त मौर्य, कौटिलीय अर्थशास्त्र, सम्राट् अशोक आदि पर अलग अलग कुछ प्रमाणिक ग्रन्थ तो अवश्य लिखे गये थे परन्तु भारतवर्षके इस सब से अधिक महत्वपूर्ण युग पर अभी तक कोई एक क्रमबद्ध ग्रन्थ नहीं लिखा गया था। हिन्दी भाषा के लिये यह बड़े गौरव का विषय है कि प्रो० सत्यकेतु जी ने स्वयं संस्कृत तथा पाली के सम्पूर्ण आधार-ग्रन्थों का गहरा स्वाध्याय कर के, वर्तमान सहायक ग्रन्थों की मदद लेते हुए, इस युग के सम्बन्ध में यह एक प्रामाणिक ग्रन्थ हिन्दी में तैयार किया है। अपनी भूमिका के अन्त में जायसवाल महोदय ने प्रोफ़ेसर साहब को, यह महान ग्रन्थ लिखने के उपलक्ष में सम्पूर्ण देश की ओर से बधाई दी है। हम समझते हैं कि प्रोफ़ेसर साहब के इस महान् अध्यवसाय के उपलक्ष में उन्हें देश की ओर से बधाई देने का कार्य संसार-प्रसिद्ध ऐतिहासिक जायसवाल से बढ़ कर अन्य किसी योग्य व्यक्ति के हाथ में सौंपा ही न जा सकता था।

यह ग्रन्थ २८ लम्बे लम्बे अध्यायों में विभक्त है। ग्रन्थ के पहले तीन अध्याय–'मौर्य इतिहास के लिये आवश्यक समग्री', 'तिथिक्रम का निर्णय' और 'साम्राज्य का विकास'— ऐतिहासिकों के लिये विशेष महत्व की वस्तु हैं। विशेष कर तीसरा अध्याय तो लेखक की अपनी बिल्कुल मौलिक कृति है। अभी तक किसी अन्य ऐतिहासिक ने इस ढंग पर मौर्य साम्राज्य के विकास का वर्णन नहीं किया है। अगले १० अध्याय मौर्य साम्राज्य के संस्थापक प्रतापी सम्राट् चन्द्रगुप्त मौर्य पर लिखे गये हैं। ये अध्याय ३७५ पृष्ठों में समाप्त हुवे हैं। इन अध्याओं के सम्बन्ध में हम इतना ही कह सकते हैं कि इस भाग में चन्द्रगुप्त मौर्य के शासन काल की सम्पूर्ण ज्ञातव्य घटनाओं का बहुत

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ही मनोरञ्जक और ऐतिहासिक ढंग पर वर्णन किया गया है। आज से दो हज़ार वर्ष पूर्व के भारतवर्ष में संगठित शासन व्यवस्था, सेनाप्रबन्ध, राष्ट्रीय आय व्यय के समुन्नत सिद्धान्त, जल सेना विभाग, टकसाल, जनगणना की विकसित पद्धति, व्यापार व्यवसाय की सुव्यवस्था सम्बन्धी वर्णन पढ़ कर कौन ऐसा भारतवासी होगा जिस की छाती जातीय गौरव के अभिमान से न फूल उठे। पुस्तक का चौदहवां अध्याय सम्राट् चन्द्रगुप्त की मृत्यु और सम्राट् बिन्दुसार के शासन काल पर है। पन्द्रहवें अध्याय से पुस्तक का द्वितीय भाग प्रारम्भ होता है। इस के २१४ पृष्ठों में समाप्त होने वाले ग्यारह अध्यायों में अशोक कालीन भारतवर्ष का इतिहास संकलित है। प्रो० सत्यकेतु ने अशोक को एक नये रूप में संसार के सन्मुख उपस्थित किया है। इस भाग के 'विविध देशों में बौद्धधर्म का विस्तार', 'सम्राट् अशोक का इतिहास में स्थान' और 'भारतीय इतिहास पर अशोक की नीति का प्रभाव' शीर्षक तीन अध्याय तो बिलकुल नई शैली पर बड़ी खोज के साथ लिखे गए हैं। साथ में अशोक के धम्म-विजय के क्षेत्र का मानचित्र देकर पुस्तक की उपयोगिता और भी अधिक बढ़ा दी गई है। सम्राट् अशोक का यह एशिया व्यापी विशाल धम्म-साम्राज्य संसार भर के इतिहास में एक अद्भुत और निराली वस्तु है। रोम का ईसाई साम्राज्य और अरब का इस्लाम-साम्राज्य इस की चरण-धूलि लेने योग्य भी नहीं है। यही कारण है कि वर्तमान काल के सर्वश्रेष्ठ ऐतिहासिक एच० जी० वेल्स ने संसार भर के सम्राटों में से केवल सम्राट् अशोक को ही संसार के सर्वश्रेष्ठ ६ महापुरुषों की गणना में स्थान दिया है। पुस्तक के अन्तिम तीन अध्याय-जिनके शीर्षक 'मौर्य साम्राज्य के पतन का राजनीतिक इतिहास', 'मौर्य साम्राज्य के पतन की विवेचना' और 'मौर्य कालीन शिक्षणालय' हैं— ऐतिहासिक जगत के लिये बिलकुल नई वस्तु हैं। इन अध्यायों को पढ़ कर पाठक यह सहज में ही कल्पना कर सकते हैं कि लेखक को ये अध्याय लिखने में कितना महान अध्यवसाय करना पड़ा होगा। पुस्तक के अन्त में 'सहायक-पुस्तक सूची' और ३२ पेजों की शब्दानुक्रमणिका ने उस की उपयोगिता को और भी अधिक बढ़ा दिया है।

पुस्तक की छपाई, सफ़ाई के सम्बन्ध में हमें कुछ भी वक्तव्य नहीं है। इण्डियन प्रेस अपनी इस विशेषता के लिये देश भर में प्रसिद्ध ही है। तथापि हमारी सम्मति में, अभी शीर्षकों के टाइप आदि का चुनाव करने में कला और आकर्षकता सम्बन्धी गुञ्जाइश अवश्य रह गई है। इसी प्रकार प्रूफ़ सम्बन्धी गलतियों का भी सर्वथा अभाव नहीं है। यद्यपि ७५० पृष्ठों के विशाल ग्रन्थ में २०-२५ प्रूफ़ सम्बन्धी अशुद्धियां रह जाना हिन्दी साहित्य के वर्तमान स्टैण्डर्ड के अनुसार बिलकुल नगण्य ही समझा जायगा, तथापि पुस्तक की महत्ता और इण्डियन प्रेस की ख्याति की दृष्टि से इन थोड़ी सी साधारण अशुद्धियों का न रहना ही अधिक उत्तम था।

इस वर्ष हिन्दी साहित्य सम्मेलन का वार्षिक मंगलप्रसाद पारितोषिक इतिहास विषय पर दिया जाना है। हमारे लिये यह अत्यधिक हर्ष का विषय है कि 'मौर्य साम्राज्य का इतिहास' जैसे ग्रन्थों के कारण, हिन्दी—साहित्य की तरह हिन्दी-इतिहास का विषय भी अब, इस पुरस्कार के लिये प्रतिस्पर्धा—शून्य नहीं रहा।

चन्द्रगुप्त विद्यालंकार

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

श्री श्री चण्डी—प्रथम खण्ड—मधु—कैटभ—वध ; व्याख्याता श्रीमान् राजा-शशिशेखरेश्वर राय बहादुर ; प्रकाशक— श्री श्रीशचन्द्र शर्म्मा ; मिलने का पता—पता नहीं ; पृष्ठ संख्या प्रस्तावना आदि सहित १३४ ; काग़ज़ उत्तम ; छपाई-सफ़ाई साधारण ; मूल्य ॥) प्रति खण्ड।

पौराणिक पंडितों में चण्डी ग्रन्थ का बड़ा आदर है। यह ग्रन्थ मार्कण्डेय पुराणान्तर्गत वर्णित एक आख्यायिका का पृथक् रूप हैं। इसकी अनेक प्रान्तीय भाषाओं में अनेक टीकायें हो चुकी हैं। प्रस्तुत पुस्तक के टीकाकार ने समस्त चण्डी ग्रन्थ को तीन खण्डों में समाप्त करने का विचार किया है। इस प्रथम खण्ड में मुर-कैटभ दैत्यों के संहार का वर्णन है। इसमें साधारण टीका के अतिरिक्त टीकाकार ने राजनीतिक व्याख्या भी सम्मिलित की है। श्लोकान्तर्गत एक एक शब्द को यथावत् समझाने के लिये अनेक उक्तियों तथा युक्तियों का सहारा लिया गया है और इस कार्य में लेखक प्रायः सफल भी हुआ है ; किन्तु कहीं कहीं तर्क तथा प्रमाणों की इतनी झड़ियां लगा दी गई हैं कि यथार्थ अर्थ समझने के बदले पाठकों में भ्रम तथा उलझन में पड़ने की आशंका है। चण्डी ग्रन्थ का महात्म्य वर्णन करते हुए लेखक ने उसके समक्ष गीता जैसे तत्वज्ञान-संयुक्त आदर्श ग्रन्थ को भी नीचा दिखाने का साहस किया है। हमारी समझ से यह बात किसी को भी स्वीकार नहीं होगी। संशयात्मक पदों को स्पष्ट करने के लिये चण्डी ग्रन्थ के अन्य टीकाकारों की उक्तियों के उद्धरण तथा विभिन्न भाषाओं की कई पुस्तकों के अंश भी उद्धृत किये गये हैं। श्लोकों की व्याख्या साधारणतया सन्तोषप्रद हुई है। भाषा व्यवहारिक है ; किन्तु लेखक ने कहीं कहीं पर श्लोक के जटिल पदों द्वारा ही अपना प्रयोजन सिद्ध किया है, मानो कि उनके पर्यायवाचक शब्द मिलने ही असम्भव थे, जिस से आधुनिक अल्पज्ञ कर्मकण्डी पंडितों के समझने का कोई रास्ता प्रतीत नहीं होता। छापने में स्थान स्थान पर अशुद्धियां रह गई है। आशा है कि वे द्वितीय संस्करण में शुद्ध कर दी जायगी।

भारतवर्ष के इतिहास का रंगीन ऐटलस—रचयिता लाला रामचन्द्र जी लाहौर ; प्रकाशक-इंडियन हौस बुकसेलर्स अन्दर मोरी दरवाज़ा लाहौर; मूल्य १) ; चित्र संख्या ३० काग़ज़ छपाई-सफ़ाई अत्युत्तम।

इतिहास का अध्यन करते समय घटनास्थलों का सम्यक् ज्ञान प्राप्त करने के लिये ऐतिहासिक ऐटलस की परम आवश्यकता होती है। इतिहास पढ़ने वाले विद्यार्थी भली-भाँति जानते हैं कि नक़शे को देखने से वर्णित विषय का किस प्रकार सजीव चित्र हृदय पर अङ्कित हो जाता है। प्रस्तुत ऐटलस में भारतीय इतिहास सम्बन्धी भिन्न-भिन्न शासकों तथा वंशों के समय के चित्र दर्शाये गये हैं और साथ ही प्रत्येक चित्र के सामने देश की तत्कालीन परिस्थिति एवं राजकीय दशा का भी संक्षेप रूप से उल्लेख किया गया है, जिस में विद्यार्थियों के लिये उपयोगी सामग्री भरी पड़ी है। लेखक ने एक प्रकार से सम्पूर्ण इतिहास की प्रमुख घटनाओं का वर्णन कर गागर में सागर भरने का प्रयास किया है। प्रायः सभी चित्र वर्तमान इतिहासकारों के निर्दिष्ट मत के अनुकूल प्रतीत होते हैं। अन्त में प्रसिद्ध प्रसिद्ध युद्धों की एक तालिका भी दी गई है, जिसमें प्रत्येक युद्ध की तिथि तथा जेता-विजेता का नाम भी दे दिया गया है। यह ऐटलस हिन्दी मिडिल तथा नार्मल स्कूल के विद्यार्थियों के लिये भी बड़े काम की चीज़ है। अतएव इतिहास के प्रत्येक विद्यार्थी को इससे अवश्य लाभ उठाना चाहिये।

शिवनारायण सिंह

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विचार-प्रवाह

१. दमन का प्रारम्भ.

हम लोग अपने राजनीतिक आन्दोलन में कहां तक सफल होते हैं, इसका एक बड़ा माकूल पैमाना हमारे पास है। यह पैमाना छोटी से छोटी चीज़ को भी ठीक ठीक मापता है। हमें इस बात की खुशी है कि यह पैमाना इस साल के शुरू से ही हमारी क्रियाओं को बहुत वज़नदार सिद्ध कर रहा है। इसमें सन्देह नहीं कि इस विदेशी सरकार की दमन नीति का यह पैमाना कभी कभी हमारे लिये बहुत महंगा भी साबित होता है, परन्तु इस की तुला में अपना भारी वज़न देख कर हमारा उत्साह भी अवश्य बढ़ जाया करता है।

पिछले दिनों इङ्गलैण्ड के हाउस आफ कौमन्स में एक प्रश्न का उत्तर देते हुए अर्ल विण्टरटन ने जो भाव प्रदर्शित किए थे, उन से यह भली प्रकार विदित हो गया था कि अब भारत सरकार शीघ्र ही दमनचक्र का प्रहार शुरु करेगी। यह काम शुरु हो गया है। इसका सब से पहला और सब से बड़ा सबूत महात्मा गान्धी की गिरफ़्तारी है। यद्यपि अर्ल विण्टरटन के कथनानुसार बंगाल सरकार ने यह कार्य भारत सचिव या भारत सरकार से अनुमति लेकर नहीं किया, तथापि इस घटना पर भारतसचिव ने जो टिप्पणी की है उससे विदित होता है कि वह महात्मा गांधी की इस गिरफ़्तारी को अमन और कानून की दृष्टि से सर्वथा उचित और वाञ्छनीय समझता है। उसकी दृष्टि में यदि ऐसी अवस्थाओं में कलकत्ते की पोलीस महात्मा गांधी को गिरफ़्तार न करती, तब ही वह अपने कर्तव्य का पालन न कर रही होती। अतः यह भली प्रकार स्पष्ट है कि अब सरकार देश में किस नीति का प्रारम्भ करना चाहती है। हमें पूर्ण विश्वास है कि बंगाल सरकार के इस साहस का अनुकरण करने में अन्य प्रान्तों की सरकारें भी पीछे न रहेंगी। भारत-सचिव तो इन्हें शाबासी देने के लिए तैयार ही बैठे हैं।

अभी हाल ही में पं० जवाहरलाल नेहरू और उसके बाद माननीय पं० मोतीलाल नेहरू ने दस दस बरस के बाद होने वाली कुछ महत्व-पूर्ण घटनाओं के असाधारण सदृश्य की ओर क्रमशः जनता और सरकार का ध्यान खींचा है। निस्सन्देह घटनाओं का निम्न लिखित सादृश्य चकित करने वाला है :—

१९१७ में मौण्ट फोर्ड कमीशन की नियुक्ति हुई थी।
१९२७ में साइमन कमीशन की नियुक्ति हुई।
१९१८ में रौलट एक्ट पास हुआ।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

१९२८ में पब्लिक सेफ्टी बिल पास हुआ है।
१९१८ और १९१९ में अफ़गान युद्ध हुआ।
१९२८ और १९२९ में अब अफ़गानिस्तान में गृह-कलह हो रहा है।
१९१९ के मार्च मास में महात्मा गांधी गिरफ़्तार हुए थे।
१९२९ के मार्च में महात्मा गांधी गिरफ़्तार हुए हैं।
१९१९ के एप्रिल में जलियान वाला बाग का हत्या काण्ड हुआ।
१९२९ के एप्रिल में न जाने क्या घटना हो?
१९२० में असहयोग आन्दोलन शुरु हुवा था।
१९३० में पुनः असहयोग आन्दोलन शुरु करने का नोटिस कांग्रेस ने दिया हुवा है।

समाज-शास्त्र के अनुभवी विद्वानों का कथन है कि मनुष्य-समाज में राजनीतिक आन्दोलन सदैव वक्राकार रेखाओं की तरह से होते हैं। आन्दोलन का उग्र स्वरूप एक बार कुछ ढीला पड़ कर फिर और भी अधिक वेग से उभड़ता है। हमें विश्वास है कि इन दो तीन वर्षों में भारतवर्ष की राजनीतिक क्रान्ति भी खूब रंग पकड़ेगी। सरकार का दमन चक्र, क्रान्ति की इन चिनगारियों को भयंकर अग्निकाण्ड का स्वरूप दे देगा।

२. सरकार पर अविश्वास का प्रस्ताव

पिछले दिनों बड़ी व्यवस्थापिका सभा में सरकार की ओर से एग्ज़ीक्यूटिव कौन्सिल के वेतन की मांग पेश किये जाने पर, विरोधी दल के नेता माननीय पं० मोतीलाल नेहरू ने यह मद्द घटा कर केवल १) कर देने का प्रस्ताव पेश किया था। इस प्रस्ताव पर खूब गरमागरम बहस हुई। अन्त में प्रस्ताव के पक्ष में ६३ और विपक्ष में ५२ वोट आने से प्रस्ताव स्वीकार हो गया। यह स्मरण रखना चाहिये कि प्रस्ताव के पक्ष में मत देने वाले ये ६३ सदस्य जनता के निर्वाचित प्रतिनिधि थे। दूसरी ओर विपक्ष के ५२ वोटों में से १० वोट यूरोपियन सदस्यों के, १० वोट सरकारी अधिकारियों के तथा २६ वोट सरकार द्वारा नामज़द सदस्यों के थे। निर्वाचित प्रतिनिधियों के केवल ६ वोट ही प्रस्ताव के विरोध में आये। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि इस प्रस्ताव के पक्ष में ६३ और विरोध में केवल ६ वोट ही आये।

माननीय पं० मोतीलाल नहरू ने अपना प्रस्ताव पेश करते हुए जो भाषण दिया वह अत्यधिक महत्वपूर्ण और सरकार को चेतावनी देने वाला था। आपने राष्ट्रीय मांगों का इतिहास पेश करते हुए कहा कि कांग्रेस तथा देश के अन्य नेता सदैव सरकार से इज्ज़त पूर्वक समझौता करने के लिये तैयार रहे हैं, परन्तु सरकार ने ही सदैव राष्ट्रीय मांगों को ठुकराया है। बड़ी व्यवस्थापिका सभा-प्रतिवर्ष सरकार पर, इस सम्बन्ध में कुछ भी कार्य्यवाही न करने के कारण, अविश्वास का प्रस्ताव पास करती रही है— परन्तु सरकार के कानों पर कभी जूं भी नहीं रेंगी। कांग्रेस के सभापति की हैसियत से आपने बड़े स्पष्ट शब्दों में सरकार को यह चेतावनी दी कि यदि वह इस वर्ष के अन्त तक अपना रुख बदलने का प्रयत्न नहीं करेगी तो बाधित होकर कांग्रेस को फिर से असहयोग आन्दोलन का प्रारम्भ करना पड़ेगा। आप ने यह भी कहा कि समझौते का मार्ग अभी तक बन्द नहीं हुआ है, मगर सरकार स्वयं उससे लाभ नहीं उठाती। प्रस्ताव के पक्ष में मि. जयकर, पं० मालवीय जी और श्रीयुत श्रीनिवास आयंगर के भाषण भी बड़े महत्वपूर्ण हुवे। मि. क्रेरार का भाषण साइमन कमीशन के साथ सहयोग करने के पक्ष में एक अरोचक उपदेश था।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विचार-प्रवाह

१. दमन का प्रारम्भ.

हम लोग अपने राजनीतिक आन्दोलन में कहां तक सफल होते हैं, इसका एक बड़ा माकूल पैमाना हमारे पास है। यह पैमाना छोटी से छोटी चीज़ को भी ठीक ठीक मापता है। हमें इस बात की खुशी है कि यह पैमाना इस साल के शुरू से ही हमारी क्रियाओं को बहुत वज़नदार सिद्ध कर रहा है। इसमें सन्देह नहीं कि इस विदेशी सरकार की दमन नीति का यह पैमाना कभी कभी हमारे लिये बहुत महंगा भी साबित होता है, परन्तु इस की तुला में अपना भारी वज़न देख कर हमारा उत्साह भी अवश्य बढ़ जाया करता है।

पिछले दिनों इङ्गलैण्ड के हाउस आफ कौमन्स में एक प्रश्न का उत्तर देते हुए अर्ल विण्टरटन ने जो भाव प्रदर्शित किए थे, उन से यह भली प्रकार विदित हो गया था कि अब भारत सरकार शीघ्र ही दमनचक्र का प्रहार शुरु करेगी। यह काम शुरु हो गया है। इसका सब से पहला और सब से बड़ा सबूत महात्मा गान्धी की गिरफ़्तारी है। यद्यपि अर्ल विण्टरटन के कथनानुसार बंगाल सरकार ने यह कार्य भारत सचिव या भारत सरकार से अनुमति लेकर नहीं किया, तथापि इस घटना पर भारतसचिव ने जो टिप्पणी की है उससे विदित होता है कि वह महात्मा गांधी की इस गिरफ़्तारी को अमन और कानून की दृष्टि से सर्वथा उचित और वाञ्छनीय समझता है। उसकी दृष्टि में यदि ऐसी अवस्थाओं में कलकत्ते की पोलीस महात्मा गांधी को गिरफ़्तार न करती, तब ही वह अपने कर्तव्य का पालन न कर रही होती। अतः यह भली प्रकार स्पष्ट है कि अब सरकार देश में किस नीति का प्रारम्भ करना चाहती है। हमें पूर्ण विश्वास है कि बंगाल सरकार के इस साहस का अनुकरण करने में अन्य प्रान्तों की सरकारें भी पीछे न रहेंगी। भारत-सचिव तो इन्हें शाबासी देने के लिए तैयार ही बैठे हैं।

अभी हाल ही में पं० जवाहरलाल नेहरू और उसके बाद माननीय पं० मोतीलाल नेहरू ने दस दस बरस के बाद होने वाली कुछ महत्व-पूर्ण घटनाओं के असाधारण सदृश्य की ओर क्रमशः जनता और सरकार का ध्यान खींचा है। निस्सन्देह घटनाओं का निम्न लिखित सादृश्य चकित करने वाला है :—

१९१७ में मौण्ट फोर्ड कमीशन की नियुक्ति हुई थी।
१९२७ में साइमन कमीशन की नियुक्ति हुई।
१९१८ में रौलट एक्ट पास हुआ।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

१९२८ में पब्लिक सेफ्टी बिल पास हुआ है।
१९१८ और १९१९ में अफ़गान युद्ध हुआ।
१९२८ और १९२९ में अब अफ़गानिस्तान में गृह-कलह हो रहा है।
१९१९ के मार्च मास में महात्मा गांधी गिरफ़्तार हुए थे।
१९२९ के मार्च में महात्मा गांधी गिरफ़्तार हुए हैं।
१९१९ के एप्रिल में जलियान वाला बाग का हत्या काण्ड हुआ।
१९२९ के एप्रिल में न जाने क्या घटना हो?
१९२० में असहयोग आन्दोलन शुरु हुवा था।
१९३० में पुनः असहयोग आन्दोलन शुरु करने का नोटिस कांग्रेस ने दिया हुवा है।

समाज-शास्त्र के अनुभवी विद्वानों का कथन है कि मनुष्य-समाज में राजनीतिक आन्दोलन सदैव वक्राकार रेखाओं की तरह से होते हैं। आन्दोलन का उग्र स्वरूप एक बार कुछ ढीला पड़ कर फिर और भी अधिक वेग से उभड़ता है। हमें विश्वास है कि इन दो तीन वर्षों में भारतवर्ष की राजनीतिक क्रान्ति भी खूब रंग पकड़ेगी। सरकार का दमन चक्र, क्रान्ति की इन चिनगारियों को भयंकर अग्निकाण्ड का स्वरूप दे देगा।

२. सरकार पर अविश्वास का प्रस्ताव

पिछले दिनों बड़ी व्यवस्थापिका सभा में सरकार की ओर से एग्ज़ीक्यूटिव कौन्सिल के वेतन की मांग पेश किये जाने पर, विरोधी दल के नेता माननीय पं० मोतीलाल नेहरू ने यह मद्द घटा कर केवल १) कर देने का प्रस्ताव पेश किया था। इस प्रस्ताव पर खूब गरमागरम बहस हुई। अन्त में प्रस्ताव के पक्ष में ६३ और विपक्ष में ५२ वोट आने से प्रस्ताव स्वीकार हो गया। यह स्मरण रखना चाहिये कि प्रस्ताव के पक्ष में मत देने वाले ये ६३ सदस्य जनता के निर्वाचित प्रतिनिधि थे। दूसरी ओर विपक्ष के ५२ वोटों में से १० वोट यूरोपियन सदस्यों के, १० वोट सरकारी अधिकारियों के तथा २६ वोट सरकार द्वारा नामज़द सदस्यों के थे। निर्वाचित प्रतिनिधियों के केवल ६ वोट ही प्रस्ताव के विरोध में आये। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि इस प्रस्ताव के पक्ष में ६३ और विरोध में केवल ६ वोट ही आये।

माननीय पं० मोतीलाल नहरू ने अपना प्रस्ताव पेश करते हुए जो भाषण दिया वह अत्यधिक महत्वपूर्ण और सरकार को चेतावनी देने वाला था। आपने राष्ट्रीय मांगों का इतिहास पेश करते हुए कहा कि कांग्रेस तथा देश के अन्य नेता सदैव सरकार से इज्ज़त पूर्वक समझौता करने के लिये तैयार रहे हैं, परन्तु सरकार ने ही सदैव राष्ट्रीय मांगों को ठुकराया है। बड़ी व्यवस्थापिका सभा-प्रतिवर्ष सरकार पर, इस सम्बन्ध में कुछ भी कार्य्यवाही न करने के कारण, अविश्वास का प्रस्ताव पास करती रही है— परन्तु सरकार के कानों पर कभी जूं भी नहीं रेंगी। कांग्रेस के सभापति की हैसियत से आपने बड़े स्पष्ट शब्दों में सरकार को यह चेतावनी दी कि यदि वह इस वर्ष के अन्त तक अपना रुख बदलने का प्रयत्न नहीं करेगी तो बाधित होकर कांग्रेस को फिर से असहयोग आन्दोलन का प्रारम्भ करना पड़ेगा। आप ने यह भी कहा कि समझौते का मार्ग अभी तक बन्द नहीं हुआ है, मगर सरकार स्वयं उससे लाभ नहीं उठाती। प्रस्ताव के पक्ष में मि. जयकर, पं० मालवीय जी और श्रीयुत श्रीनिवास आयंगर के भाषण भी बड़े महत्वपूर्ण हुवे। मि. क्रेरार का भाषण साइमन कमीशन के साथ सहयोग करने के पक्ष में एक अरोचक उपदेश था।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

इस प्रस्ताव पर एसेम्बली के उपाध्यक्ष मि० याकूब और मि० जिन्हा व्यर्थ में ही एक अप्रासङ्गिक वाद-विवाद को बीच में घसीट लाए। माननीय नहरू जी ने अपने भाषण में नहरू-रिपोर्ट का भी निर्देश किया था। इस बात को ये दोनों महानुभाव सह नहीं सके। नहरू जी ने साफ़ शब्दों में कह दिया था कि प्रस्ताव के पक्ष में मत देने का अर्थ नहरू रिपोर्ट के पक्ष में मत देना नहीं है। उन्होंने कहा—"नहरू रिपोर्ट इस समय इस असेम्बली से भी बहुत अधिक महत्वपूर्ण संस्था के सामने विचारार्थ उपस्थित है, वह संस्था देशकी जनता है। अतः मैं इस हाऊस से नहरू रिपोर्ट के सम्बन्ध में कोई सम्मति नहीं चाहता।" परन्तु फिर भी मि० जिन्हा नहरू रिपोर्ट के विरोध में अपना भाषण देने लगे। उन्होंने तो यहां तक कह डाला कि नहरू रिपोर्ट से कोई भी मुसलमान सहमत नहीं हैं। नहरू जी ने जब इस स्थापना का खण्डन किया तब आप गर्म होगए। तथापि अपने भाषण के पिछले हिस्से में मि० जिन्हा ने नेहरू जी के प्रस्ताव का ज़ोरदार समर्थन ही किया। उन का यह कार्य्य अवश्य सराहनीय है। इस के दो तीन दिन बाद ही एसेम्बली ने सरकार को फौज़ी खर्च की मांग भी नामंजूर कर दी है। यह होते हुए भी हमें विश्वास है कि सरकार एसेम्बली की इन कार्यवाहियों की तिलभर भी परवाह न करेगी। उसे तो अपनी सैनिक शक्ति पर गर्व है। इतना ही नहीं, हमें यह भी पूर्ण विश्वास है कि इङ्गलैण्ड के बड़े बड़े अख़बार नहरू जी के इस प्रस्ताव के स्वीकार होजाने को कुछ भी महत्व न देंगे। वे महत्व देंगे—मि० जिन्हा की उन बातों को, जो उन्होंने नासमझी से एसेम्बलीमें कहीं। इस बात को वे मोटे मोटे अक्षरों में छापेंगे, इस पर मज़ेदार टिप्पणियां करेंगे, परन्तु वे इस बात को भूल जांयगे कि ६ बरसों से लगातार भारतवर्ष की बड़ी व्यवस्थापिका सभा हर वर्ष सरकार पर अविश्वास का प्रस्ताव स्वीकार करती आरही है। वह इस बात को भी भूल जांयगे कि शासन व्यवस्था के विस्तार सम्बन्धी मतभेदों के हुते हुए भी भारतवर्ष का प्रत्येक नेता—चाहे वह हिन्दू हो या मुसलमान—किसी भी दशा में औपनिवेशिक स्वराज्य से कम में सन्तुष्ट नहीं हो सकता। परन्तु दूसरी ओर यह भी स्मरण रखना चाहिये कि इस भूल का, इस गर्व का, इस दम्भ का, परिणाम न तो स्वयं उन अखबारों के लिये अच्छा होगा और न बृटिश साम्राज्य के लिये ही अच्छा सिद्ध होगा।

३. गुरुकुल कांगड़ी का अगामी वार्षिकोत्सव

गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी का २७ वां वार्षिकोत्सव बहुत निकट आचुका है। सम्भवतः 'ज्योति' का यह अंक जब तक पाठकों के हाथ में पहुंचेगा तब तक गुरुकुल के वार्षिकोत्सव में तीन चार दिन ही शेष रहेंगे। गुरुकुल का वार्षिकोत्सव अब एक पृथक् संस्था का स्वरूप धारण कर चुका है। यह अपने ढंग का एक निराला ही मेला है। इस में दूर दूर से, भारतवर्ष के सभी प्रान्तों से, सहस्रों सुशिक्षित नर नरी एकत्र होते हैं। भरतवर्ष भर में सुशिक्षित नर नारियों का ऐसा मेला, कांग्रेस को छोड़ कर, शायद ही कहीं और लगता हो। गुरुकुल का वार्षिकोत्सव हज़ारों आर्य नर नारियों को प्रतिवर्ष नव जीवन, नवीन स्फूर्ति और नई भावनाओं का उपदेश देता है। अभी हाल ही में, गुरुकुल विश्वविद्यालय के वर्तमान मुख्याधिष्ठाता तथा आचार्य्य रामदेव जी ने एक बड़ी मार्मिक घटना का वर्णन, अपने लाहौर में दिये हुये एक भाषण में किया था। घटना इस प्रकार है—

"कुछ वर्ष हुए गरमियों के एक सायंकाल, मैं गुरुकुल के महता द्वार से निकल कर सैर के लिये

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अकेला जा रहा था। द्वार से थोड़ी ही दूर पर मुझे मैले कुचैले कपड़ों वाली एक देवी गुरुकुल की तरफ़ धीरे धीरे आती हुई मिली। उस की आयु ४० बरस से अधिक होगी। उस के चेहरे पर गहरी व्यथा की छाप स्पष्ट पड़ी हुई थी—इस पर भी वह देवी कुलीन प्रतीत होती थी। मेरा ध्यान सहसा उस की तरफ़ आकृष्ट हो गया। देवी निकट आगई थी। मैंने कहा—"माता जी, नमस्ते !"

देवी ने एक वात्सल्य पूर्ण आशीर्वाद देकर मुझ से पूछा—"गुरुकुल कितनी दूर रह गया है ?" वह बहुत थक गई थी।

मैंने उत्तर दिया—"अब आप गुरुकुल की भूमी में पहुंच गई हैं।"

देवी ने फिर पूछा—"गुरुकुल के बड़े पण्डित जी कहां हैं ?"

मैंने कहा—"माता जी ! आज्ञा कीजिये।"

देवी को जब मालूम हुवा कि गुरुकुल का आचार्य है मैं ही हूं— तब वह मेरे पैरों की तरफ़ नमस्कार करने के लिये झुकी। मैंने उसे ऐसा करने से मना किया। इस के बाद आंखों में आंसू भर कर देवी ने अपने मैले कुचैले कपड़ों को टटोलना शुरु किया। थोड़ी देर में एक फटे हुए, मैले कपड़े की गांठ खोलकर देवी ने चांदी के ७ रु० बाहर निकाले। मैं देवी के हृदय की उदारता पर मन ही मन आश्चर्यित हो ही रहा था कि उस ने स्वयं एक बड़ी करुण कथा मुझे सुनानी शुरु की। देवी ने कहा—"ये रुपये मेरी ओर से नहीं, अपितु मेरे पुत्र की ओर से गुरुकुल को दान हैं। मेरा केवल एक ही लड़का था। उस की उमर २०,२२ बरस की थी। परन्तु थोडे ही दिन हुए भगवान से उसे मुझ अभागिन से छीन लिया ! मैं सनातनी हूं। परन्तु मेरा पुत्र पिछले दो सालों से गुरुकुल के जलसे पर आया करता था। गुरुकुल के इन जलसोंने उस पर कुछ ऐसा जादू किया कि वह नियम पूर्वक प्रतिदिन आर्यों की संध्या और हवन करने लगा। भगवान के दूत जब उस की आत्मा को लेने आये, तब मैंने उस से पूछा—'बेटा, तेरी कोई मर्ज़ी है ?"

मेरे लाल ने अटकते अटकते उत्तर दिया—"अम्मा ! मेरी एक ही ख्वाहिश है। मेरे मरने के बाद मेरा सारा सामान बेच कर, उस से जो रुपये मिलें, उन्हें हरिद्वार जाकर अपने हाथों से गुरुकुल के बड़े पण्डित जी को दे आना।"

इतना कह वह देवी अपने बच्चे की याद में फूट फूट कर रोने लगी। मैं देवी को आश्वासन देकर उसे गुरुकुल की अतिथिशाला में लेगया।

उस दिन दो बातें बड़े स्पष्ट रूप में मेरे सन्मुख आईं। पहले तो अपने गम्भीर उत्तरदायित्व का स्मरण आया—मुझ पर उस पवित्र कुल का उत्तरदायित्व है, जिसे ऐसा देव-दुर्लभ दान आता है। दूसरा यह कि गुरुकुल का वार्षिकोत्सव अब स्वयं अपने में एक अलग संस्था बन गया है।"

४. क्षमा प्रार्थना.

'ज्योति' का यह अंक बहुत देर में निकल रहा है। इस का मुख्य कारण यह है कि मुझे पिछले मास कुछ आवश्यक कारणों से गुरुकुल से बाहर रहना पड़ा। पाठक यह विश्वास रक्खें कि बहुत शीघ्र 'ज्योति' को हम पुनः अपने स्थान पर ले आने का प्रयत्न करेंगे।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कन्या-गुरुकुल-समाचार

स्वास्थ्य:— ईश्वर की कृपा से इस मास भी कन्याओं का स्वास्थ्य बहुत ही उत्तम रहा है। ब्रह्मचारिणियों के चेहरे प्रफुल्ल तथा स्वस्थ हैं। केवल एक कन्या ५-७ दिन के लिये साधारण ज्वराक्रान्त हुई थी, किन्तु ईश्वर-कृपा से वह भी शीघ्र ही स्वस्थ हो गई और अब रोगीगृह खाली ही है। अन्य वर्षों की अपेक्षा इस वर्ष सरदियां बहुत ही शान्त तथा निरोगता पूर्वक निभी है। इसके लिये परमपिता परमात्मा का धन्यवाद है।

पाठ्यक्रम:— पाठ्य क्रम भी बहुत ही उत्तमता से चल रहा है। १ म् से ७ म् श्रेणीं अपनी नवीन श्रेणियों की पढ़ाई में संलग्न हो गई हैं और अधिकारी तथा नवम् श्रेणी अपनी वार्षिक परीक्षा की तयारी के लिये पढ़ाई में संलग्न हैं। उनका विशेष समय पुस्तकों के साथ ही बीत रहा है। परीक्षा काल निकट ही आ गया है और कन्याएं भी स्वाध्यायशीलता तथा परिश्रम में कुछ कमी नहीं दिखा रही हैं।

अध्यापिकाएं अब भरपूर संख्या में हो गई हैं। गतमास में तीन चार योग्य तथा विदुषी देवियां अध्यापन के लिये नियुक्त हुई हैं। जिनमें श्रीमती चन्द्रावती देवी लखनपाल M.A. का नाम विशेष उल्लेखनीय है। शिक्षा विभाग सुयोग्य देवियों से पूरा हो गया है।

उत्सव तथा सभाएं:— ३ मार्च से १० मार्च तक कन्याओं ने बड़े समारोह के साथ दयानन्द सप्ताह (ऋषिबोध-उत्सव) मनाया है। ३ मार्च के प्रभात समय में बड़ी श्रेणियों की कन्याएं अध्यापिकाओं सहित कीर्तन करने निकली थी। कीर्तन गुरुकुल के पार्श्ववर्ती सड़कों से गुज़र कर दिलाराम तथा करणपुर की सड़क से रिसपन्ना की ओर होता हुआ कुल में वापिस लौटा। आगे आगे 'ओ३म्' का झण्डा अपना आशीर्वादी हाथ देहरानिवासियों की ओर उठा रहा था, पीछे कन्याओं की मण्डलियां अध्यापिकाओं सहित मनोहर भजन गाती जा रहीं थीं। उस सुललित स्वर ने स्वर्गीय समय उपस्थित कर दिया था। यह समय मथुरा की जन्मशताब्दी का स्मरण करवा रहा था। जिन्होंने मथुरा के नयनाभिराम नगरकीर्तन के दृश्य को देखा होगा वही इस कीर्तन को भी विचार सकते हैं। आस-पास के लोग इस मनोहारी दृश्य को देख कर मुग्ध हो गये। अन्तिम दिन कुल परिवार में सहभोज हुआ और कन्याओं ने बड़ी आयोजना के साथ सभा की, जिस में अध्यापिकायें तथा बाहर की कुछ देवियां भी सम्मिलित थीं। इस प्रकार बड़े समारोह के साथ यह उत्सव मनाया तथा समाप्त किया गया।

राष्ट्रीय महासभा के निर्देशानुसार नेहरू रिपोर्ट के समथन में १०मार्च को एक सभा हुई जिस में कन्याओं ने रिपोर्ट का समर्थन करते हुए सारे सप्ताह चर्खा चलाने का निश्चय किया। यद्यपि कुल में सब ब्रह्मचारिणियां तथा अध्यापिकाएं खद्दर पहिनती हैं, फिर भी जो अध्यापिकाएं विशेष रूप से खद्दर धारण नहीं करती थीं उन सब ने खद्दर धारण करने का संकल्प किया। अध्यापिकाओं ने आस पास की कोठियों में जा कर अन्यों से भी खद्दर पहरने का व्रत धारण करने का आग्रह तथा खद्दर बेचने का कार्यक्रम निर्धारित किया। उसी दिन नगर-कांग्रेस कमेटी का भी उत्सव था। जिस में कुलाचार्या जी तथा प्रायः सबही अध्यापिकाओं ने भी बड़े उत्साह से भाग लिया। जिस से नगर

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कांग्रेस के अधिवेशन की शोभा द्विगुणित तथा फलीभूत हो गई। अध्यापिकायें अवकाश के समय आर्य परिवारों में खद्दर बेच रही हैं तथा सबसे खद्दर पहिनने की प्रतिज्ञा करवा रही हैं। कन्या गुरुकुल से १४ कर्मचारिणियां तथा कर्मचारी कांग्रेस के सदस्य बने हैं।

कन्या गुरुकुल कमीशनः—

गुरुकुल के स्थाई भवन के स्थान का निश्चय करने के लिये स्वामिनी सभा ने एक कमीशन नियुक्त किया था जिसका कार्य गुरुकुल का स्थान निश्चय कर अपनी रिपोर्ट पेश करना है। विविध स्थानों से होता हुआ यह कमीशन १२ फ़रवरी को प्रातःकाल देहरादून पहुँचा। सभा की ओर से कमीशन के प्रधान पं० ठाकुरदत्त जी शर्मा अमृतधारा लाहौर नियत किये गये थे और श्री आचार्य रामदेव जी, श्री विद्यावती जी सेठ आचार्या कन्या गुरुकुल, पं० विश्वम्भरनाथ जी उपप्रधान सभा, प्रो० मूलराज जी बी. ए. बी. टी., रायबहादुर मोहनलाल जी शिमला तथा महाशय कृष्ण जी B.A. सम्पादक प्रताप, सभासद नियत हुए थे। अन्तिम दो सज्जनों को छोड़ कर शेष महानुभाव देहरादून तथा उसके पार्श्ववर्ती कुछ एक स्थानों का निरीक्षण कर उसी शाम को लौट गये। उसके पश्चात सभा ने डा० धर्मवीर जी F.R.C.S, D.P.H. (London) को निरीक्षणार्थ भेजा। डाक्टर साहेब ने बड़े प्रेम और लगन से कन्याओं के स्वास्थ्य का निरीक्षण किया। पानी तथा देहरादून के जलवायु के सम्बन्ध में हैल्थ ऑफिसर के साथ परामर्श किया तथा देहरादून में गुरुकुलार्थ दो एक स्थानों का निरीक्षण भी किया। अपना सब आवश्यक कार्य समाप्त कर तथा गुरुकुल का निरीक्षण कर डाक्टर साहब उसी शाम को लौट गये। गुरुकुल का प्रबन्ध, कन्याओं के स्वास्थ्य तथा पाठ्यक्रम को देख कर आप बड़े प्रसन्न हुए और प्रबन्ध एवं शिक्षा सुप्रबन्ध के लिये अधिकारियों की सराहना करते रहे। गुरुकुल का स्थाई भवन कहां हो— इस सम्बन्ध में कमीशन ने तथा डाक्टर साहेब ने अपनी रिपोर्ट अभी तक सभा में नहीं दी है। आशा है कि उनकी रिपोर्ट पहुँचने ही वाली होगी और फिर सभा अपना निश्चय शीघ्र ही दे देगी। काङ्गड़ी का उत्सव समाप्त होने के पश्चात ही कार्यकर्त्ताओं का ध्यान इस ओर लग जायेगा और स्थायी भवन की आयोजना होने लगेगी। आशा है कि हमारे कृपालु संरक्षक तथा गुरुकुल के शुभचिन्तक सतर्क रहेंगे और अपना कर्तव्य समझ कर स्थाई भवन के लिए अभी से धनसंग्रह करने पर लग जावेंगे ताकि समय पर धन की कमी बाधक न हो।

कन्या गुरुकुल प्रदर्शनीः—

जैसा कि पूर्व सूचित किया गया है, इस वर्ष एक सुयोग्य देवी के सराहनीय परिश्रम से कुल-कन्याओं ने लगभग डेढ़ हज़ार रुपयों की कीमत का उत्तमोत्तम कोशिया, तथा नीडल का काम तैयार किया है। जो दर्शनीय तथा प्रशंसनीय है। सर्व साधारण के देखने के लिये तथा कुल की ब्रह्मचारिणियों की कला-कुशलता दिखलाने के लिए इन वस्तुओं की कांगड़ी के उत्सव पर एक प्रदर्शनी करने की आयोजना की गई है। चीजें देखने योग्य हैं, अतः आर्यजनता तथा विशेष कर संरक्षकों को साग्रह सूचित किया जाता है कि वे इस अवसर से लाभ उठावें। यह जानने के लिए कि पठन पाठन के अतिरिक्त उनकी पुत्रियां क्या कला योग्यता प्राप्त कर रही हैं वे गुरुकुल कांगड़ी के उत्सव पर अवश्य पधारने का कष्ट करें।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कला कौमुदी

लेखिका श्रीमती ओ३म्वती देवी

चित्र कला कौशल सम्बन्धी अनुपम पुस्तक इस के द्वारा लेखिका ने क्रोशिये के कार्य को बड़ा ही सरल बना दिया है। बिना किसी प्रकार के पहिले ज्ञान के कन्यायें और स्त्रियें केवल इस की ही सहायता से अनेक प्रकार की बिनावट लेसें, फ़ीते, कपड़े इत्यादि बनाना सहज में ही सीख सकी हैं। पुस्तक में इतना विषय है कि किंचित इस से कई गुना दाम की पुस्तकों में भी न होगा। प्रत्येक वस्तु तथा बिनावट का बनाना चित्र देकर बड़ी सरल रीति से सिखाया गया है। देखिये समाचार पत्र इस के विषय में क्या कहते हैं।

"ट्रिब्यून" (अंग्रेज़ी का प्रसिद्ध दैनिक) लाहौर—स्त्रियों के लिये उपयोगी पुस्तक है। अनेक चित्रों द्वारा वस्तु बनाने की विधि बड़ी सरलता से समझाई गई है। सुन्दर नमून की लेसें, टेबल क्लाथ, बच्चों के सुन्दर कपड़े और अन्य कई वस्तुओं का बनाना बड़ी सुन्दर रीति से बतलाया गया है। पुस्तक की उपयोगिता के विचार से मूल्य बहुत कम है।

"मतवाला" (कलकत्ता)-यह पुस्तक हमारी बहिनों व बड़े समझ की है। छपाई बहुत अच्छी, कागज़ बहुत अच्छा मोटा चिकना आर्ट। सुचारु शिल्प पत्रावली कार्ड गृहस्थियों के बड़े काम की चीज़ है।

"कर्मवीर" (खांडवा)— .....पुस्तक में सादे फन्दे से लगाकर तरह तरह की वस्तुओं के बनाने की विधि बड़ी सरलता से समझाई गई है जिसे पढ़कर साधारण पढ़ी लिखी स्त्री भी इस कार्य को सीख सकती है। इस का मूल्य लागत को देखते कम है।

"माधुरी" (लखनऊ) ऐसी पुस्तकों की हिन्दी साहित्य के लिये बड़ी आवश्यकता है। आशा है इस पुस्तक का अच्छा प्रचार होगा जिस से इस प्रकार की और पुस्तकें भी प्रकाशित की जा सक। लेखिका और प्रकाशिका दोनों को बधाई।

शीघ्र आर्डर भेजिये मूल्य १॥)

कला कौमुदी तथा शिल्प पत्रावली का पूरा सैट लेने पर २॥=)॥ के स्थान मे केवल २।) में दिया जायगा।

कन्या पाठशालाओं और पुस्तक विक्रेताओं को विशेष रियायत

मैनेजर ज्योति—

कन्या गुरुकुल

राजपुरा रोड कोठी नं० २१—२२ देहरादून

गङ्गाराम पाठक प्रिन्टर तथा पं० रमेशचन्द्र पब्लिशर के लिये गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में मुद्रित।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

Regd. No. A. 1711

वर्ष ६] मार्च, एप्रिल १९२९ [संख्या ११,१२

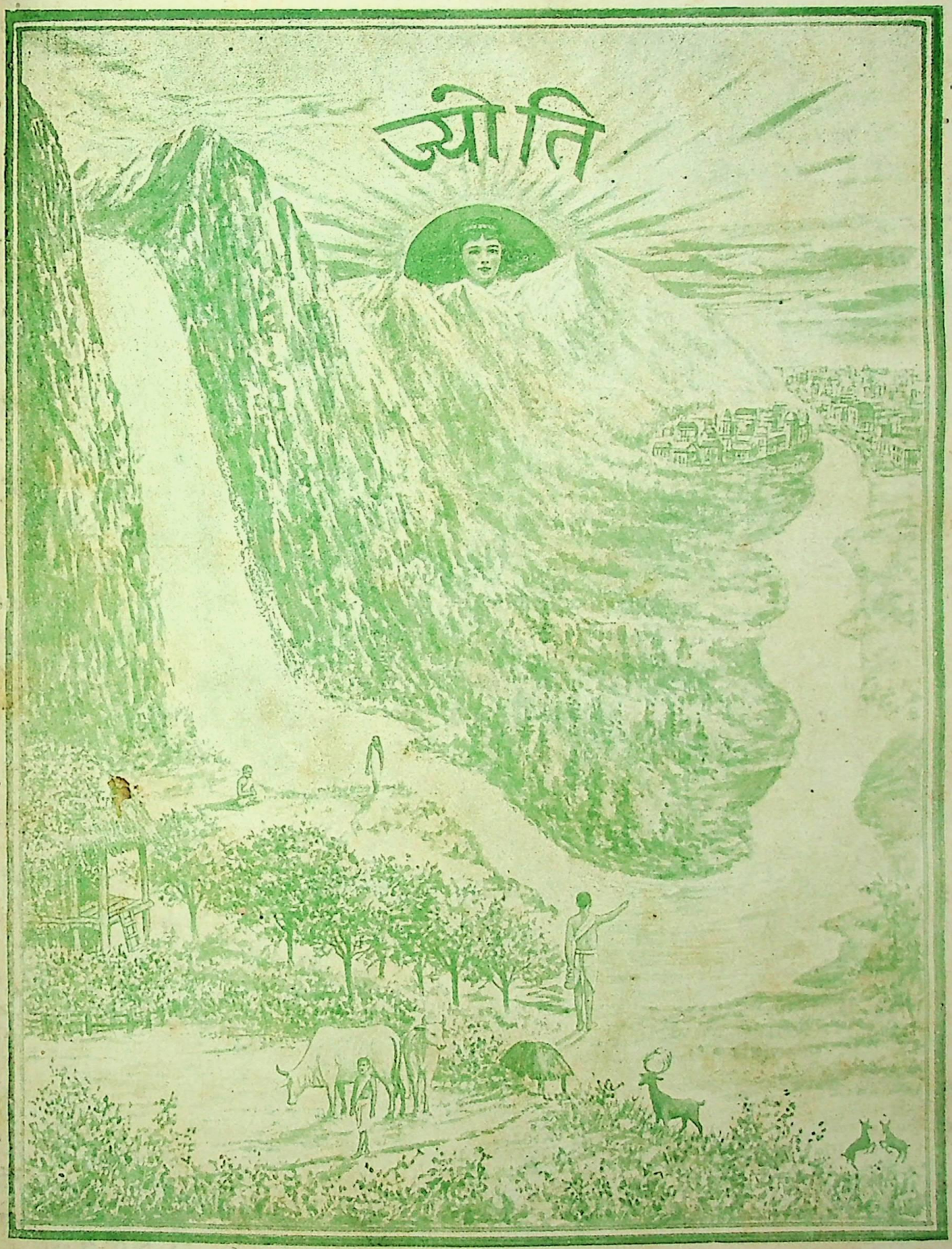
ज्योति

वार्षिक मूल्य ४॥) प्रति संख्या ॥)

सम्पादक—
विद्यावतीसेठ बी. ए., चन्द्रगुप्त विद्यालंकार

विद्यार्थियों, स्त्रियों से ४) विदेशका मूल्य ६)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विषय सूची।

विषय	पृष्ठ से
१. राष्ट्रीय शिक्षा— [लेखक—श्री आचार्य रामदेव जी	४३५
२. कामना (कविता) [लेखक—"कृपा" नारायणसिंह जमालपुर	४५०
३. कुरान में वेदांश [लेखक—श्री प्रो० चमूपति जी एम. ए.	४५१
४. रंग है (कविता) [लेखक—श्री रामजी वाजपेयी, वाराणसी	४५६
५. स्मृति की झलक (कहानी) [लेखक—श्री कृष्ण पांडे कलकत्ता	४५७
६. अश्रु (कविता) [लेखक—महावीर प्रसाद "मधुल"	४६
७. वेदों में दार्शनिक विचार [लेखक— श्री पं० धर्मदेव जी वेदवाचस्पति	४६
८. पुनर्मिलन (कविता) [लेखक—'प्रिय हंस'	४७
९. वाह रे (कविता) [लेखक— श्रीराम	४७
१०. "वाह रे मैं !" [आचार्य गडबड़ानन्द	४७
११. विचार प्रवाह	४७
१२. गुरुकुल समाचार	४८

लेखकों से निवेदन

१. ज्योति में लेख, कविता आदि भेजने वाले महानुभावों को अपने लेख सुस्पष्ट अक्षरों कागज़ के एक ओर ही, हाशिया छोड़ कर लिख कर भेजने चाहियें।

२. लेख बहुत लम्बे न होने चाहिएँ। 'ज्योति' पत्रिका के लगभग चार पृष्ठों के लायक लेख हों तो अति उत्तम है।

३. लेखों को घटाने बढ़ाने तथा संशोधित करने का संपादक को पूर्ण अधिकार है।

ज्योति सम्बन्धी पत्र व्यवहार— अथवा—

आचार्य्या कन्या गुरुकुल सम्पादक ज्योति

कोठी नं० २१, राजपुर रोड गुरुकुल कांगड़ी

(देहरादून) यू.पी.

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

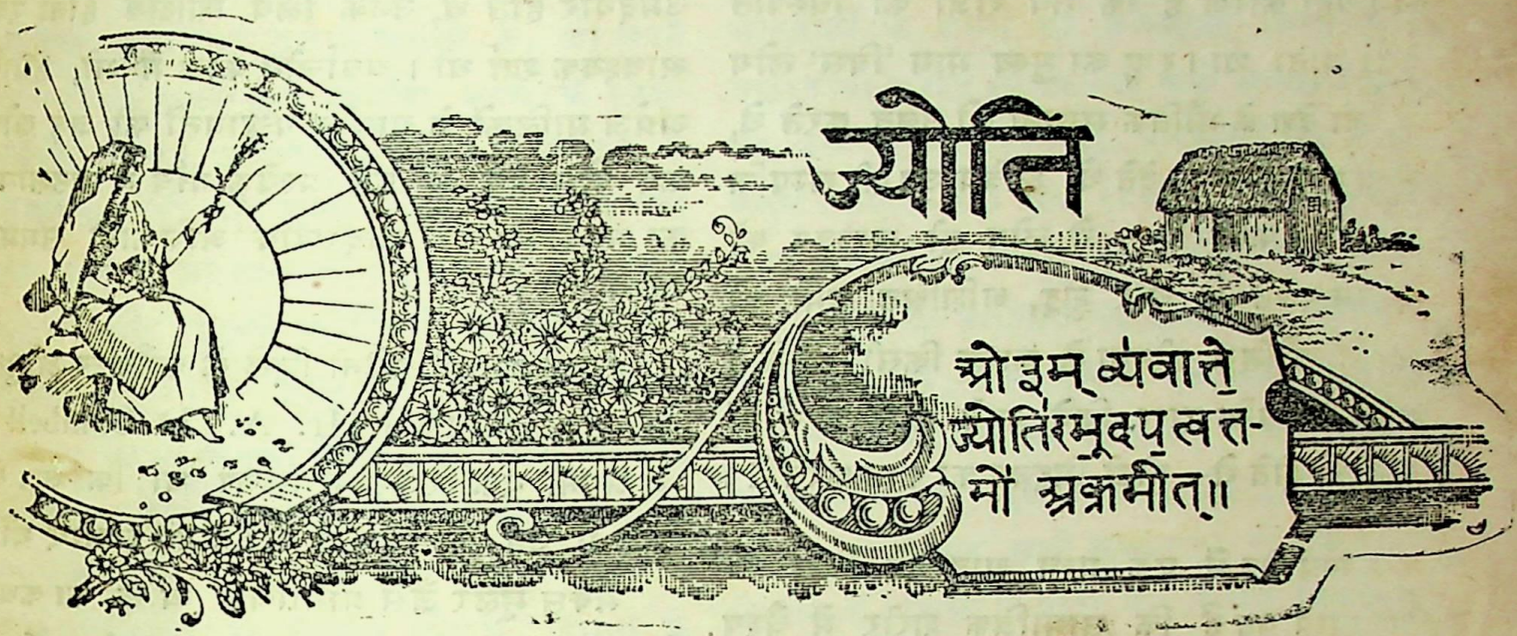

विविध विषय विभूषित सुन्दर मासिक पत्रिका.

वर्ष ६ | फाल्गुन, चैत्र. १९८५ * मार्च, एप्रिल. १९२९ | संख्या ११, १२

राष्ट्रीय शिक्षा

(श्री आचार्य रामदेव जी)

पूजनीय बापू जी, गुजरात विद्यापीठ के स्नातकों, देवियों तथा भद्र पुरुषो !

हमें कहा जाता है कि शिक्षा अंग्रेज़ी हुकूमत की उन अनगिनत 'कृपाओं' में से एक है, जो उस ने हम पर की हैं। दुनियां के लोगों तथा नौकर-शाही की संरक्षा में शिक्षा ग्रहण करने वाले भारतीय लड़के लड़कियों को यह बताया जाता है कि अंग्रेज़ों के आने से पूर्व-इस देश में विद्या पर कुछ कुलीनों का ही पूर्ण-सत्व था, शेष लोग निपट-अशिक्षा तथा पूर्ण-अज्ञान में ही डूबे हुए थे। जिन लोगों को हमारी उदीयमान सन्तति के लिये पाठ्य पुस्तकें बनाने का कार्य सौंपा गया है, वे हमें कहते हैं कि प्राचीन भारत में पवित्र ज्ञान के दरवाज़ों पर स्वार्थी ब्राह्मण पहरेदार का कार्य करते थे— बहुत थोड़े से, विशेष अधिकार प्राप्त लोग ही इन द्वारों में प्रवेश पा सकते थे; परन्तु वास्तव में सत्य इस से भिन्न है। अत्यन्त प्रभावशाली सामाजिक विधान-कार मनु ने बड़े स्पष्ट शब्दों में कहा है कि जो ब्राह्मण, क्षत्रिय या वैश्य एक विशेष आयु तक अपने बच्चों का यज्ञोपवीत संस्कार नहीं कर देते—जिस का अभिप्राय यह है कि बच्चों को पढ़ना लिखना सिखाना शुरु नहीं करते, वे व्रात्य बन जाते हैं और व्रात्य लोगों का संस्कारों में तथा सामाजिक कार्यों में बहिष्कार करना चाहिये। यह स्मरण रखना चाहिये कि किसी भी सुशासित देश की तरह प्राचीन भारत में वैश्य लोग—जिनमें किसान, शिल्पी तथा उद्योगजोवि श्रेणियां सम्मिलित हैं—ही सब से अधिक संख्या में

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

थी। यही कारण है कि तब राजा को विस्पति कहा जाता था। राष्ट्र का मुख्य भाग 'विस' लोग थे, जो देश के भौतिक साधनों को उन्नत करते थे, ब्राह्मण उन्हें शिक्षा देते थे, क्षत्रिय उन की सम्पत्ति की रक्षा करते थे— ये लोग ही स्वराज्य को कायम रखते थे और शूद्र, अशिक्षित श्रमी, जो अपनी बौद्धिक हीनता के कारण किसी विकसित सामाजिक शक्ति द्वारा किये जाने वाले कार्य में असमर्थ होते थे—मोटी मिहनत का काम करते थे।

स्वयं वेद में एक मन्त्र आता है जिस का अभिप्राय यह है कि सामाजिक शरीर में वैश्य पेट, मेदा, हृदय और जंघा का काम करते हैं। मनुष्य के शरीर में ये सब भाग ही उन पोषक पदार्थों का संग्रह, आत्मीय-करण और विभाग करते हैं जो शरीर को धारण करने के लिये आवश्यक हैं। यह बात बड़ी अर्थपूर्ण है कि वेद के पुरुषसूक्त में ब्राह्मण को सामाजिक शरीर का मस्तिष्क कहा है, क्षत्रिय इस शरीर के बाहु हैं जो आन्तरिक और बाह्य रक्षा की शक्ति की प्रतिनिधि हैं। वैश्य इस शरीर के उरु या जंघाएं हैं, जो खेत बोने तथा समस्त राष्ट्र को प्रेम से पालने की प्रतिनिधि हैं और शूद्र इसके पैर हैं जो अमानसिक श्रम के प्रतिनिधि हैं। यह मन्त्र अथर्ववेद में कुछ भिन्न रूप में आया है। अथर्ववेद में 'उरु' के स्थान पर 'मध्य' शब्द आया है, जिस का अभिप्राय शरीर के मध्यभाग से है। इस प्रकार हमारे प्राचीन शास्त्रकारों की स्थायी श्रुति के अनुसार वैश्य सामाजिक शरीर का सम्पूर्ण मध्यभाग हैं, अर्थात् जनता में वही लोग हैं। प्राचीन भारत में शिक्षा इतनी व्यापक थी कि हाल ही में दक्कन में प्राप्त हुए प्राचीन लेख के अनुसार उस ज़माने में ब्राह्मण लोग ग्रामीण पञ्चायतों के सदस्य बनने के उमेदवार होते थे, उनके लिये शिक्षित होना एक आवश्यक शर्त थी। अर्वाचीन काल में भी, हमारे अंग्रेज़ मालिकों के ग्रामीण पञ्चायतों की जड़ खोद कर फेंक देने से पूर्व, प्रत्येक गाँव में पाठशाला का अध्यापक एक आदरणीय अधिकारी समझा जाता था।

सन १८२५ में बलेनी ज़िले के कलैक्टर श्रीयुत् ए० डी० कैम्बल (Mr. A. D. Cambell) ने अपनी एक रिपोर्ट में लिखा था कि उस के ज़िले में उन दिनों ५३३ शिक्षा की संस्थाएं थीं।

मैक्स मूलर जैसे प्रामाणिक व्यक्ति का कथन है कि बंगाल में अंग्रेजों के आगमन से पूर्व वहां ८० हज़ार स्कूल थे, इस का अभिप्राय यह हुवा कि वहां प्रति ४०० मनुष्यों की आबादी पर एक स्कूल था। उन दिनों भारतवर्ष में जनता की शिक्षा का ढंग इतना उत्तम, वैज्ञानिक और सस्ता था कि अधिक विद्वान लोग अपने से कम विद्वानों को पढ़ाते थे और साथ ही अपनी योग्यता को स्थिर करते थे। इंग्लैण्ड के शिक्षा विभाग ने सचमुच भारतवर्ष से ही इस ढंग का अनुकरण किया था।

हम लोग आज राष्ट्रीय-जागृति की दशा में हैं, इस दशा में अब यह विवाद का विषय नहीं रहा कि वह शिक्षा पद्धति जिस का माध्यम विद्यार्थियों की मातृभाषा नहीं है और जो देश की परम्परागत प्रथाओं और प्राचीन साहित्य पर आश्रित नहीं है तथा जो विदेश से लाई गई है, वह केवल मानसिक यन्त्र के चक्र का अर्गल ही सिद्ध होगी। वह मौलिकता का नाश करेगी और विचारों के स्वाभाविक विकास में बाधक बनेगी। यह पद्धति विद्यार्थियों को उस तोते के समान बना देती है, जो धाराप्रवाहिक रूप से बोल तो सकता है, परन्तु उन बोले गए शब्दों को, अपनाया हुवा न होने के कारण

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

समझ नहीं सकता। यह पद्धति विद्यार्थी को नकलची बना देती है, मौलिक नहीं बनाती। यह उन्हें पढ़ा लिखा गुलाम बनाती है, जो अपने स्वामियों के समक्ष कुछ निर्माण करने के लिये उपयोगी साधन जुटा सकें। अधिक से अधिक वे संग्रहकर्ता श्रमी और क्लार्क ही बन पाते हैं, वे ऐसे श्रमी होते हैं जो ज्ञानमयी इमारत बनाने के लिये अनुभवी और कुशल कारीगरों के सन्मुख सामान जुटा सकें। जब कभी एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र का अपहरण करना चाहता है तो वह अपनी सभ्यता को विजित राष्ट्र पर थोपने का प्रयत्न करता है ताकि उनके हृदय से स्वाधीनता रूपी अग्नि की चिनगारियां ही बिल्कुल नष्ट होजांय और वे दिमाग़ के ऐसे गुलाम बन जांय कि उन में विदेशी शासन का प्रतिरोध करने की इच्छा ही नष्ट हो जावे। यह कहा जाता है कि अंग्रेज़ों ने अंग्रेज़ी साम्राज्य में बड़ी-बड़ी भूलें की और यह साम्राज्य बनाया नहीं गया, अपितु अवस्थाओं के फेर से स्वयं बन गया है। यह बात, सम्भव है कि बिल्कुल सही हो। परन्तु यह कदापि नहीं कहा जा सकता कि भारतवर्ष की आधुनिक अस्वाभाविक और अराष्ट्रीय शिक्षा-पद्धति अंग्रेज़ शासकों के असम्बद्ध और अपर-स्वाश्रित फ़रमानों द्वारा, समय की आवश्यक मांगों के अनुसार, कभी यों ही आगे या पीछे लेजाई गई है और फलतः वह बिना जाने बूझे किये हुए कार्यों-अथवा दोष पूर्ण कार्यों-का फल है। अंग्रेजों ने इस देश में यह पद्धति जान बूझ कर, विशेष उद्देश्य से, और भावी परिणामों को सोच विचार कर जारी की है। जानबुझ की यह सूक्ष्म दर्शिता उसके स्थिर-गौरव और उस की यह मक्कारी उस की स्थिर-बदनामी को सूचित करने वाली भी कही जा सकती है।

हमें यह बात समझने के लिये वर्तमान शिक्षा-पद्धति के इतिहास पर नज़र डालनी चाहिये। भारतवर्ष के लोगों को वास्तविक शिक्षा देने उत्तरदायी अंग्रेज़ शासकों को कभी अभीष्ट न थ वह इस के अवश्यम्भावी परिणामों को भ प्रकार जानते थे। सन् १८३१ के अन्वेशण मे मेजर जनरल सर स्मिथ के० बी०ई० ने कहा था—

"शिक्षा का परिणाम यह होगा कि मतमतान्तरों के वे सब अन्धविश्वास नष्ट होजांयगे, जिन के कारण अभी तक यह देश हमारे अधीन रहा है। यह अन्धविश्वास मुसल्मानों के हिन्दुओं के प्रति और इसी प्रकार सभी सम्प्रदायों के एक दूसरे के प्रति हैं। शिक्षा के द्वारा उन के मन विकसित होजांयगे, और उन्हें अपनी विशाल शक्ति का ज्ञा हो जायगा।"

इंग्लैण्ड के हाउस औफ़ लार्ड्स की एक उच्च समिति के सन्मुख गवाही देते हुए श्रीयुत जे०सी० मार्शमैन ने १५ जून १८३३ के दिन कहा था—

"प्रस्ताव से एक बहुत ही स्मरणीय विवाद उत्पन्न हुवा जिस में भारतवर्ष पर अधिकार करने के बाद पहली ही वार शिक्षा के सम्बन्ध में कोर्ट आफ़ डायरैक्टर के विचार जनता के सन्मुख आए। इस अवसर पर एक डायरैक्टर ने कहा कि हम लोगों ने हाल ही में अपनी मूर्खता के कारण अमेरिका को अपने हाथ से खोया है। हमारी मूर्खता यहथी कि हमने वहां स्कूल और कालिज खोलने की अनुमति दे दी, हमें यह मूर्खता भारतवर्ष में फिर से नहीं दोहरानी चाहिये। यदि भारतवासी किसी किस्म की शिक्षा चाहते हैं तो उन्हें इस उद्देश्य के लिये इंग्लैण्ड में आना चाहिये।"

भारतवर्ष में अंग्रेज़ शासकों की निरन्तर यही मनोवृत्ति रही है। भारतवर्ष को पराधीन रखने

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

चाहिये, इंग्लैण्ड के लाभ के लिये उस का खून चूसना चाहिये, और ऐसा कोई काम नहीं करना चाहिये जिस से यह फन्दा ढीला पड़े। इसी लिये उन्होंने किसी नियमित शिक्षा पद्धति को प्रचलित करने की सलाह नहीं दी। वर्तमान भारतीय शिक्षणालयों को गोलाबारी की तरह से अचानक और बड़ी बड़ी सहायताएं—जब तक कि उस के सलाहकार मालकम और मैकाले जैसे साहब जान बूझ कर शिक्षा की कोई उत्तम प्रणाली निश्चित नहीं करते—इस बन्धन को ढीला होने के बजाय मज़बूत ही करेंगी। इस के लिये बहुत अधिक और अखण्डनीय प्रमाण हैं। मैकाले के साले सर चार्ल्स ट्रेवेलियन ने हाउस आफ़ लार्ड्स की एक उपसमिति के सन्मुख गवाही देते हुए २३ जून १८५३ के दिन कहा था—

"भारत वर्ष के उन्हीं वास्तविक विचारों के अनुसार···हिन्दू और मुसल्मान दोनों हमें हड़प करने वाले विदेशी समझते हैं, जिन्होंने उन का देश उन से छीन लिया है और उन्हें धन, पद तथा सन्मान से वियुक्त कर दिया है। भारतीयों को यूरोपियन शिक्षा देने का प्रभाव यह होगा कि उन्हें एक बिलकुल नया सबक मिल जायगा। इस ढंग से शिक्षित नौजवान देशी ढंग से स्वाधीनता प्राप्ति के निजू उपाय बन्द कर देंगे और अपने देश की संस्थाओं के सुधार की तरफ़ ध्यान देने लगेंगे, जिस का अन्तिम परिणाम वैध स्वराज्य की स्थापना होगा। वे हमें शत्रु और हड़प करने वाला समझना बन्द कर देंगे और अपना मित्र, संरक्षक और शक्तिशाली, लाभदायी सहायक समझने लगेंगे, जिन की छत्रछाया में वे अपने देश के पुनरुद्धार का क्रमिक प्रयत्न करेंगे·····भावी में बहुत लम्बे अरसे तक वे अपने देश में देशी सरकार स्थापित करने में असमर्थ रहेंगे। वे पहले लोग होंगे जो इस पद्धति से कष्ट उठाएंगे, वे सार्वजनिक क्रोध के भागी बनेंगे, और उन का यही हित होगा कि वे हमारे साथ रहें। ज्यों ज्यों यह श्रेणी बढ़ती चली जायगी, त्यों त्यों हम लोगों से सम्बन्ध रखने वाले लोगों का अनुपात भी बढता जायगा।"

एक और खरीते में, २४ मार्च १८२८ को, श्री युत वार्डन ने कहा था कि अंग्रेज़ी भाषा का अधिकाधिक, विस्तृत प्रसार ही इङ्गलैण्ड और भारतवर्ष को परस्पर अधिकतम स्थिरता से बांध सकता है। सर चार्ल्स ट्रेवेलियन ने, जिसे मैं अभी उद्धृत कर चुका हूं, सन् १८५३ में एक पार्लियामैंट्री कमेटी के सन्मुख एक निबन्ध प्रस्तुत किया था, इस का शीर्षक था—"विभिन्न शिक्षापद्धतियों को भारत वर्ष में प्रचलित करने की राजनीतिक प्रवृत्ति।" यहां इस खरीते के कुछ नमूने के संक्षिप्त उद्धरण प्रस्तुत किये जाते हैं—

"दूसरी ओर अंग्रेज़ी साहित्य का प्रभाव अंग्रेज़ी सम्बध के अनुकूल प्रभाव डाले बिना नहीं रह सकता। हमारे साहित्य द्वारा हम से पूर्णतः परिचित हो कर भारतीय नवयुवक हमें विदेशी समझना ही बन्द कर देते हैं। वे हमारे महापुरुषों का उसी उल्लास से स्मरण करते हैं, जैसा कि हम लोग करते हैं। उसी ढंगमें शिक्षित होकर, उन्हीं वस्तुओं के लिये रुचि धारण कर और हमारे साथ उन्हीं कार्यों में लग कर वे भारत वासी (हिन्दू) की अपेक्षा अंग्रेज़ अधिक बन जाते हैं। जिस प्रकार रोमन साम्राज्य के ग़ौल निवासी, ग़ौल या इटैलियन की अपेक्षा रोमन अधिक बन जाते थे। हम जो कुछ हैं, वह इस के अतिरिक्त और किस बात का प्रभाव है कि हम लोग अंग्रेजों में रहते और अंग्रेज़ी बोलते हैं, अंग्रेज़ी विचारों को लेते हैं

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

और अंग्रेजी मानसिक प्रवृत्तियां बनाते हैं? यही तो वे भी करते हैं। हमारी भाषा के माध्यम द्वारा वे सर्वोत्तम अंग्रेज़ों से बात चीत करते हैं, और हमारी जाति के सम्बन्ध में उस से भी अधिक ऊंचा विचार बनाते हैं जितना कि वे लोग हमारे राष्ट्र के लोगों से व्यक्तिगत परिचय प्राप्त करने पर बना सकते।

....

"हमारी (भारतीय) प्रजा में जिन लोगों के विचार अंग्रज़ी ढांचे में ढले हैं, उन से बढ़ कर और कोई श्रेणी नहीं, जो हमें बहुत अधिक आवश्यक समझती हो। ऐसे लोग अब कोई विशुद्ध स्वदेशी ढंग की सरकार स्थापित करने के योग्य ही नहीं रहे। उनकी शिक्षा ही उन्हें अपने स्वदेश भाईयों से सर्वथा पृथक बना देती है। इस श्रेणी के लोग अभी तक बहुत अल्पसंख्या में हैं, परन्तु इस में वे नए नए नवयुवक निरन्तर बढ़ रहे हैं, जो अंग्रेजी संस्थाओं में शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं।"

साथ ही सरकार को अंग्रेजी ढंग से चलाने के लिये अंग्रेज़ लोग सस्ते क्लार्क और आधीनस्थ सहकारी भी चाहते हैं।

अंग्रेज़ लोगों की यह कदापि इच्छा नहीं थी कि इस शिक्षापद्धति द्वारा भारतवर्ष में मौलिक विचारक और नेता उत्पन्न हों। मैकाले के भारत में आने से ३० बरस पूर्व बैण्टिङ्क की ओर से श्रीयुत थैकरे ने लिखा था—

"हम सेनापति, राजनितिज्ञ और व्यवस्थापक लोग नहीं चाहते; हम परिश्रमी किसान चाहते हैं।" इस वाक्य में मैकाले साहब ने यह और जोड़ दिया कि हम आज्ञाकारी क्लार्क और आधीनस्थ दब्बू कर्मचारी भी चाहते हैं। इसी कारण से उस ने शिक्षा-संस्थाओं की स्थापना की, इन का उद्देश्य भूरे, उथले यूरोपियन और गिलट वाले नकली अंग्रेज़ तैयार करना था। इस बात की पुष्टि के लिये हम मैकाले के अपने वाक्य उद्धृत करते हैं—

"हमें इस देश के करोड़ों शासित वासियों तथा अपने बीच में दुभाषिये का काम करने के लिये एक श्रेणी तैयार करने का पूर्ण प्रयत्न करना चाहिये। व्यक्तियों की यह श्रेणी वंश तथा रंग में भारतीय होगी परन्तु रुचि, सम्मति, भाषा तथा बुद्धि में अंग्रेज़ होगी।"

एक और आंग्लविद्वान् डा०डफ़ ने लिखा था—

"राष्ट्रीय विचार तथा स्वभाव बनाने पर भाषा का जो प्रभाव पड़ता है—ख़ास कर यदि उस भाषा का सम्बन्ध किसी उच्चज्ञान के भण्डार से हो—उस पर बहुत कम ध्यान दिया गया है और उसे समझने की कोशिश नहीं की गई। जब रोमन लोग किसी प्रान्त को जीतते थे, तब वे उसे रोमन प्रभाव युक्त बना देने का भी प्रयत्न करते थे। अर्थात् वे उन की रुचि, अधिक-उन्नत रोमन भाषा तथा साहित्य की ओर कर देते थे, इस से विजित प्रान्त के गीत, कथाएं तथा इतिहास—विचार, भाव और प्रवृत्ति—सभी पर रोमन छाप पड़ जाती थी और इस का परिणाम रोमन हितों की दृष्टि से बहुत अच्छा सिद्ध होता था।"

लार्ड बैन्टिङ्क ने भारतीय शिक्षणालयों में देशी भाषा-माध्यम का स्थान अंग्रेज़ी को देने के सम्बन्ध में जो क़ानून बनाया था, वह डा०डफ़ की सम्मत्ति में गहरी नीति का सर्वश्रेष्ट प्रहार था। परन्तु सभ्यता पर इस प्रकार विजय पाने के द्वारा केवल राजनीतिक पराधीनता को स्थिर करना ही उद्देश्य नहीं था, इसे व्यापारिक अपहरण के रूप में भी इस्तेमाल किया गया था। सन् १८५५ के शिक्षा

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

के खरीते में हम पढ़ते हैं कि लार्ड बैन्टिङ्क द्वारा प्रचलित की गई शिक्षा पद्धति के द्वारा—

"उन बहुत सी वस्तुओं को हम अधिक परिमाण तथा अधिक निश्चय से प्राप्त कर सकेंगे, जो हमारे उत्पादकों के लिये आवश्यक हैं और हमारे देश में बहुत अधिक व्यवहृत होती हैं, साथ ही हम अंग्रेज़ी श्रम की लगभग कभी समाप्त न होने वाली मांग उत्पन्न कर सकेंगे।"

वास्तविक शिक्षा के नाम पर विल्सन जैसे प्राच्यविद्या-विशारद और प्राच्य भाषाओं के विद्वान् पुरुष ने इस पद्धति का विरोध भी किया, परन्तु वह व्यर्थ सिद्ध हुवा। उन का कथन था कि कोई जाति अपनी भाषा के बिना शिक्षित और सभ्य नहीं बन सकती और देशी भाषाओं का विनाश करना जाति का नाश करना, या कम से कम सम्पूर्ण जातीय गुणों का नाश करना, सिद्ध होगा। भाषा, विचार और सत्ता का परस्पर इतना घनिष्ट सम्बन्ध है कि उसे पृथक् नहीं किया जा सकता। परन्तु मैकाले तथा अन्य अंग्रेज़ विद्वानों का मुख्य उद्देश्य भारतीय जनता को शिक्षित बनना था ही नहीं, इस का उद्देश्य तो भारतीयों का अपने स्वार्थ के लिये अपहरण करना था। अंग्रेज़ों के आगमन से पूर्व देशी भाषाओं के पुनरुद्धार से जो स्थिति उत्पन्न होगई थी, उस से इन लोगों को सावधान कर दिया गया था। एक माननीय सज्जन ने शिवाजी के सम्बन्ध में लिखा था—

"इस में कोई संदेह नहीं हो सकता कि पिछली दो सदियों में महाराष्ट्र देश में अपनी भाषा का जो साहित्य उत्पन्न हुआ था, उस ने शिवाजी तथा उन के साथियों में हिन्दू धर्म की गहरी भावना भर दी थी और इस भावना द्वारा ही मुसलमानों के प्रति घृणा और क्रान्ति की वह शक्ति उत्पन्न हुई, जिस का नेतृत्व शिवा जी ने किया था।"

'बौम्बे क्वार्टर्ली रिव्यू' के सन् १८५७ के अक्टूबर अंक में इस उपर्युक्त उद्धरण को दे कर एक लेखक ने लिखा था—

"क्या यह (देशी भाषा में लिखा साहित्य), अंग्रेज़ी सरकार के विरोध में भी कोई प्रभाव उत्पन्न करेगा या नहीं?—यह समय ही बता सकेगा।

साथ ही भारतवर्ष ही वह पहला देश नहीं है, जिसे पराधीन बनाने के लिये अँग्रेजों ने, उस की भौतिक विजय के साथ ही साथ, बौद्धिक विजय करने के उद्देश्य से उस की उत्साहना के स्रोत को ही विषाक्त कर दिया और उन में पृथक् राष्ट्रीयता तथा सभ्यता की भावना को ही ढीला कर दिया है। प्रो० एच० होलमैन ने अपनी 'इंङ्गलिश नैशनल एजूकेशन' नामक पुस्तक में लिखा है—

"सन् १५३१ में अंग्रेजी प्रिवी कौन्सिल की अध्यक्षता में कार्य करने वाली आयरिश पार्लियामैण्ट ने आयरिश लोगों को अंग्रेज़ बनाने के लिये, एक स्थानीय स्कूल की स्थापना की थी।"

यह एक ऐतिहासिक तथ्य है कि अंग्रेज़ सरकार ने आयरिश भाषा का दमन करने के लिये अगणित कानून बनाये थे। रानी एलिज़ाबेथ के समय में डैन्मार्क के राजा तक को भी प्राचीन हस्तलिखित आयरिश पुस्तकों का अनुवाद करने के लिये एक आयर्लैण्ड वासी को नियुक्त करने की आज्ञा, यह सोच कर नहीं दी गई थी कि इसके द्वारा अंग्रेजी-हितों को आघात पहुँचेगा। आठवाँ हैनरी आयर्लैण्ड के चर्चों के लिये अंग्रेज़ी को आवश्यक बनाना चाहता था..... परिणामतः यह नियम बना दिया गया कि यदि कोई आयरिश पादरी अंग्रेजी न जानता हो तो वह उसके स्थान

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पर भी आयरिश भाषा से काम न लेकर लेटिन भाषा का ही उपयोग करे[1]!"

कौन कह सकता है कि मैकाले साहब की जान-बूझ कर प्रचलित की गई वह नीति भारतवर्ष में भली प्रकार सफल नहीं हुई। इस सम्बन्ध में यह तथ्य ध्यान में रखना चाहिये कि भारतवर्ष कोई असभ्य देश नहीं था, यहां पर देसी ढंग के विद्वान् पहले से ही विद्यमान थे और हमारे अंग्रेज मालिकों को यहां नए सिरे से रंगने के लिये सफ़ेद चादर नहीं मिली। इस प्राणशक्ति-नाशक शिक्षा पद्धति ने इस देश में एक ऐसी अल्पसंख्या उत्पन्न कर दी है, जिसे पढ़ी लिखी जमात समझा जाता है, जिस का वास्तविक भारतवर्ष से कोई सभ्यता का सम्बन्ध नहीं है, जो सात समुद्र पार वाले इङ्गलैण्ड को ही अपना अध्यात्मिक घर समझती है! हमारे राष्ट्रीय इतिहास में इस बड़े पहलू का प्रभाव बिल्कुल स्पष्ट पड़ रहा है। इन परिणामों को इस प्रकार संग्रहीत किया जा सकता है—

(१) अंग्रेजी पढ़े लिखे लोग एक विशेष प्रकार की 'तुच्छता का अनुभव' (inferiority complex) कर रहे हैं। वे एक ऐसी दशा में हैं, जिस के लिये कोई और अधिक उपयुक्त नाम न मिलने के कारण मैं उसे 'नयेपन की ख़बत' (Modernity Complex) कहता हूं। उन्हें अपने प्राचीन पुरखाओं में राजनीतिक उन्नति या सामाजिक सुधारणाओं की, उन स्थानों पर भी जहां ये बातें बड़े स्पष्ट रूप में मिल सकती हैं, प्रवृत्ति दिखाई नहीं देती, परन्तु विदेशों की करामातों के सम्बन्ध में, जिन की अवस्थाएं भारत से भिन्न थी और इस कारण जिन में सामाजिक विकास कुछ और ढंग से हुवा, उन्हें चट से विश्वास हो जाता है। वे लोग जो कुछ पुराना है, उस की एकदम निन्दा करते हैं और जो कुछ नया है, उस की जी खोल कर तारीफ़ करते हैं,—यद्यपि हम अभी तक यह बात निश्चित रूप में नहीं कह सकते कि वास्तव में पुराना क्या है और नया क्या है।

हमें कहा जाता है कि प्रजातन्त्र शासनका विचार बिल्कुल अर्वाचीन है और प्राचीन भारत में या तो असभ्य एकतन्त्र शासन था, अथवा पीसने वाला कुलीनतन्त्र था। अभी तक हम यह भी जानते हैं कि फ़ासिज़्म एक अधिकतम अर्वाचीन प्रवृत्ति है, और साम्राज्यवाद— जिस से बढ़ कर स्वभाग्य-निर्णय का और कोई बड़ा शत्रु नहीं—भी अर्वाचीन संस्था है, यह बात हमें खुद अपनी कीमत पर ज्ञात है। क्या यह तथ्य है कि प्राचीन लोग सदैव एकतन्त्र या पुरोहित-तन्त्र शासन को ही पसन्द करते थे? दूसरी ओर क्या यह सिद्ध नहीं होगया कि संसार का पूर्वीय खण्ड ही एक समय प्रजातन्त्र शासन प्रणाली का घर और पोषक रहा है? मुझे अथर्ववेद के उस मन्त्र को यहां उद्धृत करने की आवश्यकता नहीं, जिस में— सभी अनुवादकों के अनुसार— राजा को चुनने का स्पष्ट वर्णन आया है। (७-२) इस मन्त्र में कहा है कि राजा को 'सभा' और 'समिति' की अनुमति से राजकार्य करना चाहिये। यहां सभा और समिति का अभिप्राय क्रमशः मन्त्रीसभा और लोकसभा है। मुझे ब्राह्मणों का वह उद्धरण भी यहां देने की आवश्यकता नहीं, जिस में 'विराज्य' अर्थात् राजारहित राष्ट्रों का वर्णन आता है और जिन में निर्वाचित राजा के राज्याभिषेक के समय, उसे अध्वर्यु द्वारा डण्डे से पीटने का इस लिये विधान है कि कहीं राजा अपने को दण्ड से ऊपर न समझ

१. इन में से अधिकांश उद्धरण मेजर बसु की 'ऐजूकेशन अण्डर ब्रिटिश रूल' नामक पुस्तक से लिये गए हैं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ले। यह विधान रोम के इस कानूनी सिद्धान्त का सीधा विरोध है कि राजा कोई अपराध नहीं कर सकता। साथ ही मुझे महाभारत का वह श्लोक भी यहां उद्धृत करने की आवश्यकता नहीं, जिस में कहा है कि राजा राजसिंहासन पर बैठने से पूर्व यह प्रतिज्ञा करता है—

"मैं सदैव देश को ब्रह्म समझूंगा। और विधि-पूर्वक जो जो नियम बनाये जांयगे, उन का मैं बिना विरोध पालन करूंगा और अपनी इच्छा के अनुसार कोई काम नहीं करूंगा।"

(शान्तिपर्व ५६। १०६। १०७)

ये सब प्रमाण घृणा के साथ यह कह रद्द कर दिये जांयगे कि ये तो दुनियां से बहुत दूर, प्रकृति की एकान्त गोदी में बैठे हुए उन सन्तों और महात्माओं की सदिच्छाएं मात्र ही हैं, जो दुनियां से दूर रह कर विचारों का ताना बाना बुना करते थे—कभी इस देश में ये बातें व्यावहारिक रूप में नहीं आईं। चाहे कुछ भी क्यों न हो, ये सिद्धान्त— मैंने केवल वे प्रमाण ही उद्धृत किये हैं, जिनका दूसरा अर्थ हो ही नहीं सकता—कम से कम इतना तो अवश्य सिद्ध करते हैं कि प्राचीन भारतीय प्रजातंत्र की भावना तथा इस के विस्तृत प्रयोगों से अपरिचित नहीं थे। इसी कारण से, मैं यह बताने की कोशिश भी नहीं करूँगा कि सम्पूर्ण वैदिक साहित्य में एक राष्ट्र पर दूसरे राष्ट्र की विजय का कोई वर्णन नहीं है। चक्रवर्ती सम्राट् की कल्पना केवल उस सार्वभौम साम्राज्य की कल्पना है, जो अपना मुख्य सम्राट् स्वयं चुनता है। इस साम्राज्य के अधीनस्थ सम्पूर्ण राष्ट्र अपने आन्तरिक कानून बनाने में पूर्ण स्वतन्त्र हैं, परन्तु वे एक दूसरे पर आक्रमण नहीं कर सकते। 'आर्य' और 'दस्यु' का भेद आचार-सम्बन्धी है, जाति-सम्बन्धी नहीं। महाभारत में भी हम पढ़ते हैं कि प्राचीन काल में प्रत्येक राजा ने कुछ सन्यासियों की एक परामर्श-समिति बनाई हुई थी। ये सन्यासी अन्तर्राष्ट्रीय नेता होते थे। इन में एक सन्यासी अवश्य ऐसा होता था, जिस का जन्म किसी शत्रुराष्ट्र में हुवा हो। इस समिति को यह भी अधिकार था कि यदि राजा किसी दूसरे देश के हितों के विरुद्ध कोई कानून बनाने लगे तो उस कानून को अस्वीकार कर दे। महाभारत (अनुशासन पर्व ६१। ३२-३४।) में यह भी कहा है कि यदि राजा राष्ट्र का नाशक सिद्ध हो तो उसे जनता मार भी सकती है (निहन्यते)। कौटिल्य ने कहा है-"प्रकृति कोपः सर्व कोपेभ्यः गरीयान्।" अर्थात् जनता (प्रजा) का क्रोध सब क्रोधों से बड़ा है।

हमें बताया जाता है कि प्राचीन राजा लोग अपने दैवीय अधिकार से शासन करते थे। परन्तु वास्तव में स्मृतिकार लोगों की यह दृष्टि नहीं है। शुक्रनिति (अध्याय १. ३७५-३७८ IV , II. २५६) में लिखा है—

"राजा कोई श्वर ने प्रजा का सेवक बनाया है। प्रजा उस की सेवाओं के लिये उसे कर देती है। वह स्वामी या प्रभु केवल इसी लिये है कि वह रक्षा करता है।"

इस के बाद (७। ३३६ में)

"क्या एक बढ़िया रथ पर सवार होकर कुत्ता भी एक राजा के समान, सुन्दर प्रतीत नहीं होता। क्या इसी लिये कवियों ने राजा की ठीक उपमा कुत्ते से नहीं दी?"

यहां तक कि शुक्रनीति (१। ७५५), में (Recall) की प्रथा का प्रारम्भिक रूप भी प्राप्त होता है। आचार्य शुक्र ने राजा को सलाह दी है कि वह उस राजकर्मचारी को बर्खास्त कर

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

दे, जिस के विरुद्ध १०० नागरिकों ने अभियोग स्थापित किया हो। आचार्य शुक्र इस से भी एक कदम और आगे गए हैं; उन्होंने मन्त्रियों के उत्तर-दायित्व के सिद्धान्त को भी प्रतिपादित किया है। उन का कथन है—"क्या उस राज्य में कभी उन्नति हो सकती है, जिस का राजा मन्त्रियों से भय न खाता हो। ·····जो राजा अपने पारिषदों और मन्त्रियों की सलाह नहीं सुनता वह शासक के रूप में एक चोर है, वह प्रजा का धन लूट रहा है।" राजनीति शास्त्र के उस महान पण्डित ने राजा को सलाह दी है-"राजा सदैव अपने पारिषदों, राजकर्म-चारियों, और सभा के सदस्यों की खूब सोचविचार कर दी गई सलाहों पर ही अमल करे, अपनी इच्छा से वह कोई कार्य न करे।" जैसा कि मैंने कहा है, मैं इन प्रमाणों की शिक्षाओं पर विशेष बल नहीं दूंगा। मैं अब ऐतिहासिक प्रमाणों की ओर आता हूं। सम्भवतः यहां कुछ ऐसे लोग भी हो सकते हैं जो रामायण को केवल एक काल्पनिक वस्तु समझते हों। ऐसे लोग इस तथ्य को कोई महत्ता नहीं देंगे कि रामचन्द्र ने लंका को जीता परन्तु उसे अपने साम्राज्य का अंग नहीं बना लिया; इतना ही नहीं, उस ने लंका के स्वराज्य में ज़रा भी बाधा न देकर उसे रावण के भाई को ही सौंप दिया। परन्तु बौद्ध संघों के सम्बन्ध में तो कोई सन्देह नहीं हो सकता? क्या संसार भर में कोई और धर्म ऐसा है, जिस का संगठन इस प्रकार प्रजातन्त्र शासन के सिद्धान्तों पर किया गया हो? महात्मा बुद्ध ने यह सिद्धान्त कहां से सीखा कि प्रत्येक बात का अन्तिम निर्णय भिक्षुओं के मत गिन कर किया जाय? यदि उस ज़माने में प्रजातन्त्र शासन की पद्धति नहीं थी तो महात्मा बुद्ध ने सन्थागाध (Assembly Hall) का उद्घाटन संस्कार किस प्रकार किया था? उस युग में भी, जिसे सभी लोग ऐतिहासिक मानते हैं,— यह इस लिये कि इस से पूर्व के युग को अनैतिहासिक कहा जाता है— हमें राजा के निर्वाचन के अनेक उदाहरण मिलते है। गोपाल (७३०—४०) नाम का एक सैनिक का पुत्र प्रकृति (प्रजा) द्वारा राजा बना दिया गया। प्रधानामात्य भान्दी की अध्यक्षता में एक लोकसभा हुई जिस में हर्षवर्धन (६०६—४७) को उत्तरीय भारत का सम्राट् निर्वाचित किया गया। प्रजा की सब श्रेणियों ने मिल कर रुद्रदेव (१३५—५०) को पूर्वीय भारत का शासक चुना था। इन तथ्यों पर कोई आशंका नहीं करता, क्यों कि इन पर आशंका की ही नहीं जा सकती। इन की पुष्टि शिलालेखों और राजकीय खरीतों तक से होती है। फिर, उस प्रजातन्त्र के सम्बन्ध में क्या कहा जायगा, जो ईसा की चौथी शताब्दी तक विद्यमान था? इस प्रजातन्त्र का वर्णन केवल भारतीय—हिन्दू, बौद्ध और जैन-इतिवृत्त में ही नहीं है, अपितु ग्रीक और लेटिन साहित्य में भी इस का वर्णन मिलता है। महाभारत का कथन है कि प्रजातन्त्र में सभी एक समान (सदृशःसर्वे) हैं। महात्मा बुद्ध का जन्म स्वयं शाक्य प्रजातन्त्र में हुवा था। भारतवर्ष के इतिहास में केवल राजावेन को ही अहिंसात्मक क्रान्ति द्वारा गद्दी से नहीं उतारा गया था, अपितु ऐतिहासिक युग में राजा बिन्दुसार को भी उस की प्रजा ने अपने पुत्र के लिये गद्दी छोड़ देने को बाधित किया था।[२]

मैं अब सामाजिक सुधार के क्षेत्र में आता हूं। हम लोग पर्दे को एक हिन्दूप्रथा मानते हैं, यद्यपि सीता और द्रौपदी बिना पर्दे के रहती थीं। उत्तर-

१. इन में से बहुत से उद्धरणों के लिये मैं अपने मित्र प्रो० विनयकुमार सरकार का कृतज्ञ हूं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

रामचरित का प्रत्येक पाठक जानता होगा कि कौशल्या और जनक की परस्पर बड़ी मित्रता थी, इसी प्रकार द्रौपदी और कृष्ण की भी परस्पर बड़ी मित्रता थी। रामायण द्वारा हमें यह ज्ञात होता है कि यदि सीता जानबूझ कर बन जाने में रामचन्द्र का साथ न देती तो नियम-पूर्वक यह उसी का अधिकार था कि पति की अनुपस्थिति में अयोध्या के साम्राज्य का वह शासन करे। फिर बालविवाह को भी शास्त्रों के आधार पर ही पुष्ट किया जाता है। यद्यपि जिन लोगों ने शास्त्र पढ़े हैं, उन में से कोई भी इस बात का खण्डन नहीं कर सकता कि प्राचीन भारत में लड़के लड़कियों के विवाह के लिये न्यूनतम आयु की अवधि क्रमशः २५ और १६ बरस थी।

वर्णव्यवस्था पर बहुत अधिक दोष दिया जाता है और इस के कारण प्राचीन भारतीय सभ्यता की भी निन्दा की जाती है, परन्तु यह करते हुए यह आसानी के साथ भुलादिया जाता है कि प्राचीन काल में वर्ण केवल कार्य पर ही आश्रित होते थे, इन का विवाह और सह-भोजन आदि से कोई सम्बन्ध नहीं था। यह कौन नहीं जानता कि क्षत्रिय राजा दशरथ ने अपनी कन्या का विवाह ऋष्य-शृङ्ग-नामक एक ब्राह्मण नवयुवक से किया था। यह भी तथ्य है कि द्रौपदी के स्वयंवर में ब्राह्मणरूप में गये हुए अर्जुन को किसी ने स्वयंवर की शर्त पूरी करने से नहीं रोका।

साथ ही यह भी प्रवृत्ति है कि हमारे वर्तमान कष्ट, लड़ाई और भेदभाव का सारा दोष 'धर्म' पर ही दिया जाता है। यह भी अंग्रेज़ी शिक्षापद्धति द्वारा लाई गई नयेपन की ख़बत (Modernity complex) का ही परिणाम है। यूरोप में प्रोटेस्टैण्ट धर्म का प्रचार करने में असहिष्णुता एक प्रधान कारण थी और रोमनकैथलिक न्यायालय (Inquisitions) तो प्रसिद्ध ही हैं। परन्तु भारतवर्ष इस दिशा में भी अपने ही ढंग से उन्नत हुवा है। सम्भवतः एक अपवाद के साथ सभी मुग़ल बादशाहों ने, स्वयं सच्चे मुसलमान रहते हुए भी, हिन्दूधर्म को संरक्षित किया था। अशोक स्वयं बौद्ध होते हुए भी, ब्राह्मणों का सन्मान करता था और उन की संस्थाओं को आर्थिक सहायता देता था। कौटिल्य ने वैदिक दर्शनों के साथ नास्तिक दर्शनों के पढ़ने की भी सलाह दी है। धर्म की आत्मा प्रेम, सत्य, और दान है। यदि ये सुरक्षित हैं तो रुढ़ियां और प्रथाएं स्वयं जीवित रहेंगी तथा उन में स्वयं उचित और आवश्यक परिवर्त्तन आते रहेंगे। बौद्ध रूढ़ियां चाहे पुराने दकियानूसी विश्वासों से भिन्न हों, परन्तु वास्तव में वैदिक धर्म और बौद्धधर्म एक ही हैं। दोनों ही धार्मिक आचार बनाने के लिये सब से अधिक मुख्यता सत्य और अहिंसा को ही देते हैं। अतः हम भारतीयों-को फ्रांन्स और रूस के उदाहरण देकर भौतिकवाद और सन्देहवाद की अगाध गहराई में जाने की आवश्यकता नहीं है। फ्रान्स और रूस के बड़े बड़े ईसाई धर्माधिकारियों ने उन देशों के गरीबों को दबाने में कुलीन और उच्चश्रेणी के लोगों का साथ दिया था, इस प्रकार वे उस क्रांन्ति को और भी निकट ले आए जो प्रकृति की ओर से 'अधर्म' के विरुद्ध होनी थी, यह क्रान्ति बुराई के साथ कुछ भलाई को भी ले गई। मेरा यह विश्वास है कि सामाजिक सुधार के क्षेत्र में भी धर्म और व्यवहार को तलाक देकर, आत्माहीन पाश्चात्य सभ्यताका बुद्धिरहित अनुकरण हमें केवल अवनत और मनुष्यत्व-विहीन ही बनाएगा। आप पश्चिम की नकल कर के बालविवाह का नाश तो कर

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सकते हैं, परन्तु यदि आप अपने प्राचीन ब्रह्मचर्याश्रम का पुनरुद्धार नहीं करते, तब आप के इस परिवर्तन का यह परिणाम भी हो सकता है कि पश्चिम की नकल कर के आप के नवयुवक सामाजिक भय से निडर होकर अपनी पाशविक प्रवृत्तियों को चरितार्थ करने लगें। मैं कह नहीं सकता कि इन दोनों बुराइयों में से भारत वर्ष के लिये कौन सी बुराई अधिक बड़ी है। बालविवाह की मनुष्यत्व-नाशक प्रथा ने, हमारा सम्पूर्ण पुरुषत्व नष्ट कर के, हमें स्वाधीनता की इच्छारहित, रुग्ण और दुर्बल बना दिया है, दूसरी ओर अबाधित और असयंत स्वाधीनता भी इसी प्रकार के परिणाम उत्पन्न कर सकती है। स्त्रियों में से परदे की इस क्रूरप्रथा का अवश्य विनाश करो, परन्तु इस के साथ उन्हें धर्म के उन बन्धनों से विमुक्त मत करो, जो बन्धन पुरुष और स्त्री दोनों के लिये एक समान हैं। हमारी सभ्यता का सार आत्मसंयम है। आत्मसंयम और ब्रह्मचर्य से परिवार की संख्या सीमित रखो, परन्तु इस के लिये 'कृत्रिम-उपायों' जैसे बन्धन-रहित, ढकेहुए और नाशक ढंग इस्तेमाल मत करो। सबतरह से इस कठोर वंश परम्परागत जाति-प्रथा का नाश करो, परन्तु इस के साथ प्राचीन सुव्यवस्थित वर्ण व्यवस्था का संहार न करो। इस वर्णव्यवस्था में समाज, ब्राह्मण—वे स्वाभाविक नेता, अथवा प्लेटो के शब्दों में संरक्षक, विद्वान और ऊंचे आचार वाले लोग जो जानबूझ कर गरीब जीवन व्यतीत करते हों, या समाज के पवित्र कार्यों को करते हों; क्षत्रिय—वे सैनिक या क्रियाशील पुरुष, योद्धा और ऐसे राज कर्मचारी जो किसी भले उद्देश्य के लिये अपने शरीर के खून का अन्तिम बिन्दु तक दे सकें, वैश्य—वे लोग जो राष्ट्र के भौतिक सामान की वृद्धि करते हैं और शूद्र,—वे लोग जो अपनी बौद्धिक निर्बलता के कारण जान-बूझ कर अपनी शारीरिक शक्ति द्वारा उन्नत्ति में सहायता देते हैं—इन चार वर्णों में बंटा होता है। सब को अपनी उन्नति का समान अवसर तो अवश्य होना चाहिये, परन्तु नकली समानता उत्पन्न करने का प्रयत्न नहीं करना चाहिये, क्योंकि हम सब लोग असमान बन कर ही पैदा हुवे हैं, यद्यपि हम सब के लिये इस जन्म तथा भावी जन्मों में उन्नति की अनन्त सम्भावनायें मौजूद हैं।

(२) इस विदेशीशिक्षा का दूसरा प्रभाव यह पड़ा है कि भारतीय विद्यार्थियों के हृदयों पर इस बात की गहरी छाप पड़ गई है कि यूरोप निवासी तथा अन्य गोरी जातियां, रंगीन और एशियावासी लोगों से अधिक उन्नत हैं और ये रंगीन जातियां तभी जिन्दा रह सकता हैं जब ये आन्तरिक और बाह्य स्वरूप में पूरी तरह पाश्चात्य बन जावें। इसी प्रवृत्ति ने इस देश में सर हरिसिंह गौड़ की 'मौडर्न लीग' को जन्म दिया है, जिस के सदस्यों को जून की पिघला देने वाली गरमियों में भी अंग्रेज़ी कपड़ों में बंध कर रहना पड़ता है! उन्हें अपने घर में भी सदैव अंग्रेज़ी बोलनी पड़ती है। इसी प्रवृत्ति द्वारा ही अफ़ग़ानिस्तान में अमीर अमानुल्लाह ने अपने कर्मचारियों को अंग्रेज़ी पोशाक पहिनने और दाड़ी कटवा डालने की आज्ञा दी थी। कुछ लोगों का यह ख्याल है कि पश्चिम के देशों की वर्तमान अवस्था के वास्तविक कारण उन की समय-पालकता, कर्तव्यपरायणता, कानून की आज्ञाकारिता, और नियन्त्रण आदि गुण न होकर उन के हैट, कोट, लम्बी एड़ी के बूट और नैकटाई आदि हैं। यह गुलाम मनोवृत्ति की नकल है, किसी चीज़ को अपना लेना नहीं। यह सब

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हृदय पर अशुद्ध शिक्षा द्वारा जानबूझ कर डाली गई अशुद्ध प्रवृत्तियों का ही परिणाम है। हमारे बालकों और कन्याओं को यूरोपियन इतिहास तो खूब विस्तार से पढ़ाया जाता है, परन्तु अपने देश का इतिहास बहुत कम, और वह भी एक विशेष दृष्टिकोण से, पढ़ाया जाता है। पूर्वीय लोगों पर पाश्चात्यों का अधिकार ईश्वर का विधान नहीं है। सदैव यह होता भी नहीं रहा है। कुछ पिछली पीढ़ियों से ही यह बात होने लगी है। प्राचीन ऐतिहासिक युग में एशिया का स्थान सदैव आक्रमणकर्त्ता के रूप में रहा है। ईसा से पांचवी सदी पूर्व डेरियस और ज़र्कसीज़ ने अपनी सेनाओं द्वारा यूनान पर आक्रमण किया था। इन सेनाओं में प्रायः सभी ऐशियाई जातियों के सैनिक थे, पंजाब के हिन्दू भी इन में सम्मिलित थे।

ईसा की आठवीं सदी में मुसलमान (Saracens) की सेनाओं ने सम्पूर्ण यूरोप को आक्रान्त कर लिया था। ये सेनाएं दक्षिणी फ्रान्स और स्पेन तक जा पहुंचीं थीं। सीथिअन, मोग़ल और तारतार लोगों की बौद्ध और शामनी (Shamanist) सेनाओं ने उत्तरीय यूरोप पर आक्रमण किया था। १३ वीं सदी में सम्पूर्ण रूस चीन के अधीन था।

सन १४५३ में तुर्क लोगों का कौन्स्टैन्टिनोपल पर अधिकार कर लेना एक और महत्वपूर्ण ऐतिहासिक तथ्य है। यूरोपियन मुख्यता प्रारम्भ होने का काल १७५७ से शुरु होता है। परन्तु ये १५० साल सम्पूर्ण इतिहास में एक बहुत छोटा भाग हैं। इस भौतिक विजय के साथ साथ एशिया ने एक और चमकदार कार्य्य किया है। इस ने संसार को उपनिषदों के लेखक, राम, कृष्ण, लोत्ज़ी, बुद्ध, ईसा, मुहम्मद, नानक, चैतन्य—और इन बुरे दिनों में भी एक दयानन्द, एक रामकृष्ण परमहंस, एक गांधी और एक टागौर दिया है। जब इतिहास का अध्यन इस प्रकार विस्तार से किया जाता है और एक दृश्य के बाद दूसरा दृश्य आंखों के सन्मुख दृष्टिगोचर होता है तब एशिया को, विशेष कर भारतवर्ष को, अपने भूतकाल पर लज्जित होने का कोई कारण नहीं रहता और उसे अपने भविष्य के सम्बन्ध में भी निराश होने की ज़रुरत नहीं रहती।

यह भी एक विशेष बात का द्योतक है कि इस देश में अब तक स्वतंत्रता के लिये जितने आन्दोलन हुवे हैं, वे सब भारतीय सभ्यता में पले हुए हृदयों में ही उत्पन्न हुए थे, मैकाले के भूरे अंग्रेज़ों में नहीं। अंग्रेजी हुकूमत के बर्खिलाफ़ सम्भवतः अकेली ही वह सफल सशस्त्र क्रान्ति, जिसे 'सन् ५७ का गदर' कहा जाता है, उन लोगों में पैदा हुई थी जिन्हें अर्वाचीन सभ्यता अपनी ओर आकृष्ट नहीं कर सकी थी। कांग्रेस की स्थापना पढ़े लिखे लोगों ने की थी, परन्तु इस के प्रारम्भिक दिनों में कांग्रेस के नेता भारत और इङ्गलैण्ड के सम्बन्ध को ईश्वरीय समझते थे। वे लोग स्वराज्य नहीं मांगते थे, वे चाहते थे कि हम अंग्रेज़ी पढ़े लिखे लोगों को अपने अंग्रेज़ प्रभुओं के चरणों में बैठ कर अभी कुछ और सीखने का अवसर प्राप्त हो। उन दिनों के महान् नेता बड़े उत्साह के साथ मैकाले और बर्क का नाम लेते थे तथा अपने बन्धन की जंजीरों को स्वयं और भी अधिक जकड़ना चाहते थे। यह एक विचित्र बात है कि उन्हीं दिनों, जब कांग्रेस के बड़े बड़े नेता भारत और इङ्गलैण्ड के पारस्परिक सम्बन्ध को ईश्वरीय विधान समझ कर अंग्रेजी शासन के प्रति पूर्ण-भक्ति प्रगट करते थे, भारतीय स्वतन्त्रता के लिये

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

आर्य समाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द ने सब से पूर्व 'स्वराज्य' शब्द का प्रयोग किया और यह स्वामी दयानन्द अंग्रेजी का एक शब्द भी नहीं जानते थे। बहुत समय तक बंगाल ही स्वाधीनता के आन्दोलन का नेतृत्व करता रहा, इसका कारण यही था कि बंकिमचन्द्र और रवीन्द्रनाथ टागौर ने अपनी भाषा में एक ऐसा साहित्य उत्पन्न कर दिया था, जिस ने लाखों बंगालियों को आशा का सन्देश पहुँचाया। ये दोनों चुनी हुई बातों का पुनरुद्धार करने वाले थे। तिलक भारतीय जनता का हृदय-सम्राट् इस लिये नहीं था कि वह एक सरकारी विश्वविद्यालय का स्नातक था। वह जनता का हृदय-सम्राट् इस लिये था कि वह सरकारी विश्वविद्यालय का स्नातक होते हुए भी सम्पूर्णतः भारतीय था, वह भारतीय सभ्यता के पूर्ण और शुद्ध प्रतिनिधियों में से एक था, उस का विश्वास था कि भारत का एक विशेष उद्देश्य है, एक विशेष सन्देश है—इस सन्देश को सुनाने के लिये भारतवर्ष को अवश्य जीवित रहना चाहिये। उस की शक्ति का रहस्य यह था कि वह भारतीय प्रथाओं से पूरी तरह वाकिफ़ था और भारतीयों की उन्नति के लिये आवश्यकतानुसार उन्हें इस्तेमाल कर सकता था। महाराष्ट्र का वह पूजनीय देव, फरगूसन कालिज का उपाध्याय तिलक नहीं था, अपितु वह केसरी का संपादक और गीता-रहस्य का लेखक तिलक था। इस बात से कौन इन्कार कर सकता है कि वर्तमान समय का भारतवर्ष का सर्वश्रेष्ठ व्यक्ति, गान्धी इस लिये सर्वश्रेष्ठ नहीं है कि वह बैरिस्टर की हैसियत से अंग्रेज़ी कानूनों के सही या गलत माने लगाया करता था, परन्तु वह बड़ा इस लिये है कि वह एक सन्त है, एक महात्मा है और जन्म से वैश्य होते हुए भी वह प्राचीन ढंग का एक आदर्श ब्राह्मण है। वह बड़ा इस लिये है कि वह इस यन्त्र-युग में भी प्रारम्भिक युग के चरखे का प्रचार करना चाहता है। वह सर्वश्रेष्ठ इस लिये है कि भारत की जनता उसे अपने में से समझती है।

भारतवर्ष में राष्ट्रीय शिक्षा का इतिहास विभिन्न स्वरूपों में प्रकट हुवा है। स्वराज्य के सर्वप्रथम मन्त्र-दाता महर्षि दयानन्द ने गुरुकुल के आदर्श का पुनरुद्धार किया, जिस के अनुसार हरिद्वार में गुरुकुल की स्थापना की गई। इस गुरुकुल का मुख्य उद्देश्य वैदिक स्वाध्याय की उन्नति करना होते हुए भी यह अर्वाचीन ढंग का सर्व प्रथम विश्वविद्यालय है जिस ने सभी विषयों को, उन विषयों को भी जिन्हें भूल से अर्वाचीन समझा जाता है, मातृभाषा में पढ़ाने का परीक्षण किया है। इस विश्वविद्यालय से अब तक करीब २०० स्नातक निकल चुके हैं, इन में प्रत्येक ५ स्नातकों के पीछे एक स्नातक ग्रन्थकार है। इस विश्वविद्यालय ने हिन्दी साहित्य की उन्नति तथा प्राचीन सभ्यता के प्रसार के लिये प्रचारक उत्पन्न करने में बड़ा कार्य किया है। इस संस्था ने भारतवर्ष की राजनीतिक तथा संस्कृति-सम्बन्धी स्वाधीनता के क्षेत्र में भी अपना हिस्सा भली प्रकार पूरा किया है। गुरुकुल की स्थापना के कुछ वर्ष बाद ही से आप को प्रत्येक राष्ट्रीय विश्वविद्यालय के अध्यापकों में एक न एक कांगड़ी का स्नातक अवश्य प्राप्त होगा। बंगाल में राष्ट्रीय-शिक्षा-समिति (National Council of Education) की स्थापना हुई थी। इस समिति ने न केवल राष्ट्रीय स्कूल और कालिज खोलने का उपयोगी कार्य ही किया अपितु प्रो० विनयकुमार सरकार जैसे अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के विद्वानों को प्रोत्साहना देने का कार्य भी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

किया। इसके बाद महात्मा गान्धी ने वर्तमान समय की हत्यारहित क्रान्ति—असहयोग-आन्दोलन—को जन्म दिया। अपने पहले प्रवाह में इस ने एक के बाद एक महाविद्यालय और विश्वविद्यालयों को तहस नहस कर दिया। विद्यार्थियों ने महात्मा के रण-आह्वान का समुचित उत्तर दिया, और हजारों विद्यार्थी, दासों के पोषण-गृह कालिजों को छोड़ कर महात्मा द्वारा संचालित, स्वतन्त्रता के केन्द्र विद्यापीठों में प्रविष्ट होगए। बाद में यह आन्दोलन शिथिल पड़ गया। वह क्यों शिथिल हुवा इस के कारणों पर यहाँ विचार करने की आवश्यकता नहीं है। परन्तु अब भी निराश होने की ज़रूरत नहीं है। अंग्रेज़ी-अधिकार के दिन समाप्त होगए। वह जादू अब उतर गया है। वह आकर्षण अब नहीं रहा। लोगों की मनोवृत्ति बदल गई है। आजकल जो लोग सरकारी कालिजों में शिक्षा पा रहे हैं, वे अंग्रेज़ बनने की इच्छा से यह काम नहीं कर रहे। वे वहां केवल इस लिये शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं कि इस के बिना वे स्वयं साहस कर के कोई और क्रियात्मक कार्य कर ही नहीं सकते, क्योंकि अंग्रेजी-प्रभाव में प्रभावित भारतवर्ष में कोई उन्नति करने का अवसर ही नहीं है। इस विदेशी नौकरशाही ने हमारा शिल्प नष्ट कर दिया है और अब हमें उसे पुनर्जीवित करने का अवसर नहीं दिया जा रहा। जब तक भारतवर्ष अपना जन्मसिद्ध अधिकार और अपना लक्ष्य स्वराज्य हासिल नहीं कर लेता तब तक उस के उद्धार की कोई आशा नहीं है। एक बार फिर भारत के नौजवानों को हज़ारों की संख्या में स्वराज्य-सेना के सैनिक बनने का अवसर दो। मुझे विश्वास है कि सरदार गान्धी के तुरही बजाते ही भारतीय नौजवान यह काम कर देंगे। जब तक भारतवर्ष स्वाधीन नहीं हो जाता तब तक विशुद्ध राजनीतिक विश्वविद्यालयों का एकमात्र कार्य यह है कि वे उन सैनिकों को तैयार करें जो स्वतन्त्रता के लिये काम करें, स्वतन्त्रता के लिये जियें और स्वतन्त्रता के लिये मरें।

आयर्लैण्ड का उदाहरण हमें कुछ मदद दे सकता है। आयर्लैण्ड के पार्नल जैसे वैध आन्दोलन कर्ताओं ने पीढ़ियों तक आन्दोलन मचाया, परन्तु उन्हें बहुत कम सफलता उपलब्ध हुई। सन १९०५ में आर्थर ग्रीफिथ्स ने जिस 'सिन फेन' (Sin Fain) आन्दोलन का प्रारम्भ किया वह स्पष्ट रूप से १८९३ में स्थापित की गई गैलिक लीग का विकसित स्वरूप था। सन १९१८ के निर्वाचनों में सिन फीनर लोग विजयी हुवे। ये सिनफीनर आयरिश लोगों को दास बनाने के लिये खोले हुए अंग्रेजी शिक्षणालयों का बहिष्कार करते थे और क्रमशः बहुत से मामलों में इन्हों ने अंग्रेज़ी सरकार को अपनी मांगे स्वीकार करने के लिये बाधित भी कर दिया।

यह बात भी अर्थपूर्ण है कि आयरिश क्रान्ति के अधिकांश नेता वहां के राष्ट्रीय शिक्षणालयों के प्राफ़ेसर थे, जो अपने विद्यार्थियों को स्वतन्त्रता के युद्ध के लिये तैयार किया करते थे। डी वेलेरा गणित के उपाध्याय थे, स्वयं सेवकों का सेनापति मैकनिल प्राचीन आयरिश इतिहास का उपाध्याय था, और अस्थायी सरकार का अध्यक्ष पीअर्स डब्लिन के बाहर राष्ट्रीयशिक्षा का संचालन कर रहा था। साथ ही यह बात भी अर्थपूर्ण है कि भारतवर्ष के राष्ट्रीय शिक्षणालय भी वही बात दोहरा रहे हैं। गुरुकुल काङ्गड़ी के संस्थापक स्वामी श्रद्धानन्द जेल गए, गुजरात विद्यापीठ के अध्यक्ष गिडवानी जेल गए और वर्तमान राष्ट्रीय

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

आन्दोलन के अधिकांश कार्यकर्त्ता या तो इन राष्ट्रीय विद्यापीठों के भूतपूर्व उपाध्याय हैं, या स्नातक हैं, और या कुछ समय तक वहाँ शिक्षा ग्रहण कर चुके हैं। यदि तुम्हारी संख्या कम है, तो इस कारण निराश मत होवो। अंग्रेजी शिक्षा-पद्धति उस पूर्णिमा के चांद की तरह है जो कल से घटेगा और हमारी यह राष्ट्रीय शिक्षापद्धति दूज का वह चांद है जो थोड़े दिनों में पूर्ण हो जायगा। जैसा कि मैंने कहा-भविष्य हमारे हाथ में है। हमें विश्वास के साथ भविष्य के आवरण में दृष्टि डालनी चाहिये और उस समय का स्मरण करना चाहिये जब भारतवर्ष आज़ाद हो जायगा, और उस स्वाधीन-भारत की असंख्यात पीढ़ियां, साबरमती के इस महात्मा की अध्यक्षता में स्वाधीनता-संग्राम की शिक्षा ग्रहण करने वाले, स्वतन्त्रता के गरिमाशाली अग्रवीरों को बड़े अभिमान के साथ स्मरण किया करेंगी। स्वाधीन-भारत के सहस्रों नरनारी साबरमती के उस महात्मा के शिष्यों को याद किया करेंगे जो देशभक्ति के साथ साथ मनुष्य प्रेम की शिक्षा देता है, जिस में अवतारों के समान ऊंचे आदर्श बनाने की शक्ति के साथ ही साथ एक सेनापति की सी व्यावहारिक योग्यता भी है, जिस में एक चतुर राजनीतिज्ञ की नीतिमत्ता के साथ ही साथ निष्कपट महात्मापन भी है। असीमित गुणों का यह दुर्लभ्य आगार इस विकट-युग की सब से अधिक आवश्यक वस्तु है और मुझे तुम्हारा यह भाग्य देख कर ईर्ष्या पैदा होती है कि तुम्हें इस महात्मा के चरणों में बैठने का अवसर प्राप्त है। यह संस्था फले फूले, इस का उच्च उद्देश्य पूर्ण हो और इस के स्नातक स्वराज्य और उस के चिन्ह स्वरूप चर्खे का सन्देश इस प्राचीन भूमि के सुदूर ग्रामों तक पहुँचा दें।[1]

वन्दे मातरम्।

१. गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद के गत दीक्षान्त-संस्कार (Convocation) पर दिया गया दीक्षान्त-भाषण (Convocation-Address.)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कामना

(लेखक—"कृपा" नारायणसिंह, जमालपुर)

[१]

नाथ ! हमारी अचल कामना,
कभी न उसे भुलाऊँगी !
प्राण नाथ ! की दासी बनकर—
सेवा कुछ कर पाऊँगी !!

[२]

नाथ ! न मेरी आशा पर तुम,
चिन्ह निराशा का देना ।
भाव-विहीन शून्य मानस में—
भाव अनोखा भर देना ॥

[३]

चरण कमल की दासी हूं मैं,
सेवा उनकी करना है ।
क्षुद्र देह की प्रेम भेंट से—
जीवन सुख से भरना है ॥

[४]

नाथ ! तुम्हारी अचल प्रतिज्ञा,
बतलाओ अब कहां गई !
"मैं तेरा हूं–तू मेरा" सब—
प्रीति-रीति अब लुप्त हुई !!

[५]

तेरी हूं इस लिए स्वामि ! मैं,
तेरे पीछे आई हूं ।
कठिन परिश्रम से तुझको मैं—
ढूंढ, यहां पर, पाई हूं ॥

(६)

जीवन-नैय्या बीच धार में,
नाथ ! यहां तक लाई हूं ।
आशा है अब पार करोगे—
तेरा ध्यान लगाई हूं ॥

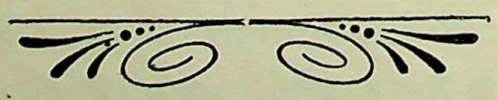

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कुरान में वेदांश

III

(अनादि-त्रयी.)

[गतांक से आगे]

(लेखक— श्री प्रो० चमूपति जी एम० ए०)

आओ अब ज़रा कुरान की आयतों पर दृष्टि डालें और देखें कि उन में इस विषय का कैसा विवेचन किया है। आधुनिक मुसलमानों का विश्वास तो वल्लभ के दर्शन अर्थात् शुद्धाद्वैत से मिलता जुलता है। परन्तु हमें इस समय मुसल्मानों के मन्तव्य से काम नहीं; हमें कुरान का सिद्धान्त जानना है।

कुरान और साम्प्रदायिक इसलाम

सन् १९०८ ई० में मेरठ की आर्य डिबेटिंग क्लब के उत्सव के अवसर पर मौलाना आज़ाद सुबहानी ने एक निबन्ध पढ़ा था; उस में आप ने लिखा था:—

धर्म को दर्शन के सिद्धान्तों से कोई लगाव नहीं। पवित्र इसलाम ने इन जटिल समस्याओं से मनुष्यों को सदा अलग रखने का प्रयत्न किया और स्वयं अलग रहा। सारा कुरान और हदीस छान मारो। कहीं प्रधान और प्रकृति का वर्णन न पाओगे। आत्मा के विषय में पूछा गया था। यदि उत्तर दिया जाता तो यहीं से इसलाम में व्यर्थ-वाद की नीव पड़ती।... .....इसलाम विशेषता से न प्रकृति के सादित्व की प्रतिज्ञा करता है न अनादित्व की, क्योंकि प्रकृति का विचार स्पष्टतया कुरान और हदीस में कहीं भी नहीं।

मौलाना शिब्ली अपने पुस्तक "इलमुलकलाम" में लिखते हैं:—

मुतकल्लिमीन (इसलामी युक्तिकारों) के मत में संसार का अनादित्व धर्म के विरुद्ध है, परन्तु कुरान और हदीस में संसार के अनादित्व सादित्व का कोई संकेत नहीं। सांप्रदायिक युक्तिकार कहते हैं कि यदि संसार अनादि होगा तो परमेश्वर उस का स्रष्टा न हो सकेगा; परन्तु तत्ववेत्ताओं की दृष्टि में अनादित्व और स्रष्टृत्व परस्पर विरोधी गुण नहीं।

पृ० १७३

यह तो इन दो उद्धरणों से सिद्ध है कि शुद्धाद्वैत कुरान का सिद्धान्त नहीं, पीछे के सांप्रदायिक युक्तिकारों की घड़न्त है। मौलाना लिखते हैं:—

प्रायः यूनानी दार्शनिक संसार (प्रकृति) के अनादित्व को स्वीकार करने वाले थे। उदाहरणतया अरस्तू की रुचि भी इसी ओर थी। परन्तु संसार (प्रकृति) का अनादि होना इसलाम के मन्तव्यों के विरुद्ध था। इस लिये उक्त विद्वान् (इब्न मसकवियः) ने यूनानियों में से उस संप्रदाय की सम्मति स्वीकार की जो सादित्व का माननेवाला था।

पृ० १३३

इस से यह स्पष्ट है कि नित्य पदार्थों के संम्बन्ध में इसलामी मन्तव्य कुरान पर आश्रित नहीं। इसलाम के राज्य में दर्शन का मुंह रुँधा रहा है। मौलाना लिखते हैं:—

मोतज़िला ने जो कुछ कहना था खुल कर कहा।..... इस का परिणाम यह हुआ कि उन का एक पुस्तक भी इस समय विद्यमान नहीं। पृ० १६२

मौलाना ने पुस्तक लिखा तो यह सिद्ध करने को है कि इसलाम विचार की स्वाधीनता का प्रतिपादक रहा है, परन्तु पुस्तक में स्थान स्थान पर कुफ़्र की व्यवस्थाओं तथा विचारकों के वध आदि का वर्णन आता है। किसी मुसलमान ने कभी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

किसी प्रकार शुद्धाद्वैत को इसलाम का सिद्धान्त समझ लिया। बस अब इस से भिन्न मत रखना जान पर खेल जाना था।

कुरान के अनुशीलन से मैं इस परिणाम पर पहुंचा हूँ कि कुरान वेद की तरह बहुत्व-वादी है। इस के नित्य द्रव्य भी वही तीन वर्ग हैं जिन्हें वेद ने "त्रयः केशिनः" कहा है।

अनादि प्रवाह

आर्य सिद्धान्त के अनुसार सृष्टि प्रवाह से अनादि है। वेद की काव्यमयी भाषा में—

तन्त्रमेके युवती विरूपे अभ्याक्रामं वयतः षण्मयूखम्। प्रान्या तन्तूं स्तिरते धक्त अन्या नापवृञ्जाते न गमातो अन्तम्॥
तयोरहं परिष्टत्यन्त्योरिव न विजानामि कतरा परस्तात्।
पुमानेनद् वयत्युद्गृणत्ति पुमानेनद् विजभाराधिनाके॥

अ० १०. ७. ४२-४३

एक ही कीलों के तन्त्र को दो परस्पर विरोधिनी मिश्रणामिश्रणात्मक शक्तियां (विकृति और प्रकृति) घेर कर बुनती बिगाड़ती हैं। एक तन्तु फैलाती है, दूसरी इकट्ठा करती है। न उस में गांठ आने देती हैं न उस का अन्त करती हैं। इन सर्व ओर से नाचती हुई सी शक्तियों में से मैं नहीं जानता कौनसी पीछे आती है। पुरुष (परमात्मा) इस को बुनता है और लपेटता है। पुरुष इसे आनन्द में धारण करता है।

'न गमातो अन्तम्' और 'न जानामि कतरा परस्तात्' इन दो वाक्यों में अनादि और अनन्त प्रवाह का भाव किस सुन्दरता से आगया है। कुरान में क़यामत के वर्णन में कहा है—

जब लपेट लेंगे आसमान को जैसे लपटता है गट्ठा कागज़ों का। जैसे की थी पूर्व सृष्टि, उसे फिर करेंगे। प्रतिज्ञा है हम पर। निश्चय हम करने वाले हैं। (सू० अंबिया रु० ७)

"जैसे की थी पहिली सृष्टि" पढ़ कर एक आर्य को "यथा पूर्वमकल्पयत्" की स्मृति आनी स्वाभाविक है। वेद में तन्त्र का लपेटना और फैलाना आया है और कुरान में कागज़ों के गट्ठे का लपेटना और फैलाना। स्पष्टतया कुरान भी पूर्व और पर सृष्टि को मानता है। कयामत के रूप में स्पष्ट प्रलय का वर्णन है और तदनन्तर सृष्टि करना कहा है। पर-सृष्टि को पूर्व-सृष्टि के सदृश कह कर निःसन्देह सृष्टियों के प्रवाह की ओर संकेत किया है। लपटे हुए दफ़्तर के फिर फैलने से यह भाव भी व्यक्त होता है कि सृष्टि अभाव से नहीं, भाव से होती है।

यथा पूर्वमकल्पयत्

आर्य्य दर्शन के अनुसार परमात्मा इस सृष्टि में निमित्त कारण है। अरबी में निमित्त कारण का अनुवाद 'इल्लत फ़ाइली' किया जाता है। मज़े की बात यह है कि उसी आयत में जहां 'यथा पूर्वमकल्पयत्' का वर्णन है, अल्लाह अपने आप को

निमित्त कारण

निश्चय हम हैं फ़ाइल—

निमित्त कारण कहता है। यदि इस वाक्य की रचना दार्शनिक है और उस में अनपेक्षित शब्दों को भरती नहीं तो इस कथन मात्र से ही अल्लाह ने उपादान कारणों से अपनी स्पष्ट व्यावृत्ति कर ली है। अब विचार यह होगा कि सृष्टि का उपादान कारण कौन है? मानव शरीर के बनाने में तो "मट्टी" लिखी है—

उपादान

पहिले बनाया मनुष्य को मट्टी से। सू० सिजदा रु. १

और आत्मा की सत्ता को इस से अलग स्वीकार किया ही है। लिखा है:—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

और फूंका उस में अपने रूह से। सू० सिजदा. रु १

आत्मा

रूह वस्तु क्या है? यह प्रश्न भी कुरान में उठाया गया है:—

और पूछते हैं तुझ से आत्मा के विषय में, कह आत्मा परमात्मा के आदेश से है और नहीं दिये गये तुम ज्ञान परन्तु थोड़ा। सू० बनी इस्राईल रु० १०

आत्मा के स्वरूप का स्पष्टीकरण नहीं किया परन्तु इस में सन्देह नहीं कि इसे "मट्टी" से स्पष्टतया पृथक् माना है। यह शरीर में फूंकी गई है। दार्शनिक भाषा में उसे शरीर से संयुक्त किया है। जैसे हम आगे चल कर देखेंगे, कुरान में आत्मा को एक ही नहीं, अनेक जन्मों में कर्म-फल का भोक्ता कहा है, जिस से स्पष्ट है कि किसी नूतन जन्म के समय ही उसे नया नहीं बनाया जाता, किन्तु वह उस से पूर्व विद्यमान होती है, और नया उस का संयोग मात्र ही होता है। उच्छ्वास (या फूंकने) की क्रिया मैथुनी अमैथुनी दोनों सृष्टियों में समान रूप से कही है; अतः आदम की रचना में भी इस उच्छ्वास का अर्थ संयोग होगा। उपनिषद् में परमात्मा की समस्त रचना को उस 'महान् भूत' का उच्छ्वास कहा है। इस उच्छवास का अभिप्राय अनायास रचना लिया जाता है। वेद में आया है:—

प्रजास्त्वाऽनुप्राणन्तु। य-४-२५

प्रजाएं तेरे प्राण से प्राण लें।

आत्मा और शरीर का पृथक् २ विवेचन निम्न-लिखित मंत्र में हुआ है:—

अपाङ् प्राङेतिस्वधया गृभीतोऽमर्त्यो मर्त्येतिना सयोनिः। ता शश्वन्ता विषूचीना वियन्ता न्यन्यं चिक्युर्न निचिक्युरन्यम्। ऋ. १-१६४-३८

खल्क़ का अर्थ

कुरान में मनुष्य तथा अन्य ब्रह्माण्ड की सृष्टि का वर्णन अनेक स्थलों पर आया है। परन्तु अत्यन्ताभाव से भाव की उत्पत्ति का निर्देश कहीं नहीं किया। इस प्रकार की उत्पादन-क्रिया—अत्यन्ताभाव से भाव की सृष्टि कर देने—के भाव का द्योतक कुरान में कोई शब्द ही नहीं। सृष्टि-कर्ता को कुरान में ख़ालिक़ कहते हैं। इस का धातु 'ख़ल्क़' है। इस धातु और इस के अतिरिक्त 'जाल' धातु के प्रयोग के कुछ उदाहरण आप के सन्मुख उपस्थित करता हूँ:—

१. और पहिले बनाया मनुष्य को मट्टी से। सू० सिजदा रु० १.

२. निश्चय मैं सृष्टि करता हूं मनुष्य की मट्टी सड़ी हुई से। सू० हजर रु० ३

३. बनाया मनुष्य को वीर्य से। सू० नहुरा रु० १

४. और बनाईं हमने पानी से सब चीज़ें जीती। सू० अंबिया रु० ३

५. ऐ लोगो! हमने बनाया तुम को पुरुष से और स्त्री से। सू० काफ़ रु० २

६. और बसाते हैं हम तुम को माताओं के पेट में एक रचना के पीछे दूसरी रचना अंधेरे में तीन रचनाएं।

७. और जिस ने बनाया तुम को मट्टी से.....सो जब वह चाहता है कुछ सो वह कहता है उसे, होजा, सो वह हो जाता है। सू० मोमिन रु० ७

८. बनाया तुम को मट्टी से फिर वीर्य से और रचा तुम्हें मनुष्य। सू० कहफ़ रु० ५।

अवस्था-परिणाम

इन सारे उद्धरणों में 'खल्क़' अथवा 'जाल' धातु का प्रयोग हुआ है परन्तु सब जगह उपादान कारण निमित्त कारण से अलग विद्यमान है। छठे उद्धरण में मां के पेट में तीन रचनाएं करने का वर्णन है। भाष्यकार यहां पहिली रचना वीर्य से दूसरी फुटकी से और तीसरी बोटी से मानते हैं। ये सब सत् कारण हैं और इन से उत्तरोत्तर कार्य की सृष्टि होती है। दूसरे शब्दों में कुरान में सृष्टि करने का अभिप्राय नितान्त अभाव से भाव को प्रादुर्भूत करना नहीं, किन्तु विद्यमान कारण ही को कार्य में रूपान्तरित करना है। 'खल्क़'

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

और 'जाल' दोनों धातु अवस्था-परिवर्तन के ही द्योतक हैं। इस स्थापना के निम्न लिखित प्रमाण और पोषक होंगे:—

रचा तुम को निर्बलता से फिर बनाई निर्बलता के पश्चात् शक्ति फिर बनाई शक्ति के पश्चात् निर्बलता। सू० रूम रु० ३

यह वर्णन बाल्य-काल से बुढ़ापे तक के स्थिति-परिणाम का है। परमात्मा केवल निमित्त कारण ही है, इस का वर्णन फिर इस आयत में किया है:—

निश्चय हमने रचे उन के लिये, उस से जिस पर हमारे हाथों की क्रिया है, पशु।

प्रकृति की स्थूल अवस्था पृथिवी है। इस अवस्था पर आने तक परमात्मा के 'हाथ की क्रिया' अर्थात् रचयितृत्व का कुछ अंश अपना प्रभाव कर चुका होता है।

पशुओं की अमैथुनी सृष्टि का वर्णन इन शब्दों में किया है:—

निकाले उन के लिये पशु पृथिवी में से। सू० नह्ल रु० ६

अभाव से भाव के उत्पादन में परिवर्तन एक ही बार हो जायगा। इस क्रिया में परिणाम की अनेक स्थितियां नहीं हो सकतीं। इस के विपरीत यदि विद्यमान कारण से ही कार्य की उत्पत्ति होनी हो तो वह धीरे-धीरे भी चल सकती है। उदाहरणतया सांख्य की प्रक्रिया को लें तो प्रकृति से महान्, महान् से अहंकार, इत्यादि अवस्थाएं ऐसी आती हैं जिन्हें कारण तथा कार्य दोनों कहा जा सकता है; और इस सारी परिणाम-प्रक्रिया को सृष्टि कहा जाता है। कुरान में मनुष्य की रचना के सम्बन्ध में कहा है:—

क्या तुम सन्देह में हो जिलाने के विषय में। सो निश्चय हम ने तुम्हें रचा मट्टी से, वीर्य से, फुटकीसे, बोटी से, रचे गए से और न रचे गए से। सू० हज० रु० १

'न रचे गए' का अर्थ भाष्यकारों ने 'अधूरे रचे गए' किया है। यहां धातु वही 'ख़ल्क़' है। यदि उस का अभिप्राय अभाव से भाव की उत्पत्ति करना हो तो इस अभाव मात्र से भाव बना देने में अधूरेपन की स्थिति को कहां स्थान होता? भावमात्र अधूरा नहीं हो सकता।

अनेक ख़ालिक़

अभाव से भाव के उत्पन्न करने की शक्ति यदि हो भी तो परमात्मा के सिवा और किसी में कोई मुसलमान इस शक्ति को नहीं मानता। परन्तु कुरान में तो लिखा है:—

और शुभ है प्रभु अच्छा सृष्टि-कर्त्ताओं में। सू० मोमिनून रु० १

सृष्टिकर्त्ता अनेक होने की अवस्था में हम सृष्टि-कर्ता का अर्थ अभाव से भाव का आविष्कार करने वाला नहीं, किन्तु आर्य दर्शन की परिभाषा में निमित्त कारण या इल्लत फ़ाइली लेंगे, जो जीवादि भी हैं।

असत् से नहीं

अब तक अभाव से भाव की उत्पत्ति के निषेध का परिणाम कुरान की आयतों से अर्थापत्ति द्वारा निकाला गया है। 'ख़ल्क़' धातु का प्रयोग ही उपादान कारण के वर्णन-सहित हुआ है। इस अर्थापत्ति को कोई समझदार दुरुह न कहेगा। तो भी यदि कहीं कुरान के अपने शब्दों में शुद्धाद्वैत का निराकरण मिल जाए तो वह इस विषय में निर्णायक प्रमाण होगा। कहा ही तो है:—

क्या तुम बनाए गए हो असत् से या हो तुम स्वयं बनाने वाले? सू० तूर रु. १

इस काकु में कुरान जहां उपादान कारण की ओर संकेत करता है कि वह असत् नहीं, वहां निमित्त कारण का प्रतिपादन भी साथ-साथ कर जाता है कि वह परमात्मा है। इस वाक्य की विद्यमानता

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

में कुरान को शुद्धाद्वैत का प्रतिपादक कहना उसके स्पष्ट शब्दों से उपेक्षा करना है।

अन्त में मैं कुरान के उन उद्धरणों पर विचार करना चाहता हूँ जिनसे शुद्धाद्वैती कुरान से अपने अभिमत विचार की तर्कणा करते हैं:—

अप्रतर्क्य सत्

और निश्चय बनाया तुझे पूर्व इसके और न था तू कोई वस्तु। सू मर्यम रु. १

'सूरा मर्यम' में ही एक और स्थल पर लिखा है:—

और कहता है मनुष्य, जब मैं मर जाऊंगा, क्या निकाला जाऊंगा जीता? क्या स्मरण नहीं करता मनुष्य कि हमने पैदा किया उस को पहिले इस से और न था वह कुछ। रु. ५

जब एक जगह काकु के रूप में कह दिया कि तुम अभाव मात्र से भाव की अवस्था में नहीं लाए गए तो यहां मनुष्य की पूर्वावस्था को अभाव या असत् 'कोई चीज़ न' कहने का प्रयोजन? कुरान के भाष्यकार कुरान के अर्थ समझने का सब से उत्तम गुर यह बताते हैं कि "मानिय कुरां ज़ि कुरां ब पुर्स" अर्थात् कुरान के अर्थ कुरान से पूछो। देखें कुरान स्वयं इस असत् का अर्थ क्या करता है? लिखा है:—

निश्चय आई है मनुष्य पर वह घड़ी समय से जब यह न था कोई वस्तु निर्वचनीय। सू० दहर रु. १

अर्थात् असत् का अर्थ हुआ अनिर्वचनीय सत्। आर्य दर्शन में प्रकृति की इस अवस्था को अव्यक्त, अप्रतर्क्य आदि शब्दों से पुकारा गया है। योगभाष्यकार इसी को सदसत् कहते हैं अर्थात् कारणावस्था में सत् विद्यमान और कार्य्यावस्था में अभी असत् अविद्यमान। स्वयं वेद कहता है:—

नासदासीन्नो सदासीत्तदानीम्। ऋ.१०. १२०.१
तब असत् न था और न सत् था।

क्या था? वहीं लिखा है:—

तम आसीत् तमसा गूढ़मग्रेऽप्रकेतं सलिलं सर्वमा इदम।'
ऋ. १०. १२९. ३.

अंधकार था अक्रिया से आच्छादित अव्यक्त सर्वप्रलय।

सृष्टि की इस क्रिया को कुरान-कार उदाहरण देकर भी समझाते हैं।

निश्चय अल्लाह फाड़ने वाला है दानों का और गुठलियों का (ऐसे ही) निकालता है जीते को मरे से और मरे को जीते से।
सू० अनआम रु. १२

निश्चय बनाया हम ने तुम को। क्या तुम नहीं मानते? क्या तुमने देखा जब तुम डालते हो मट्टी। क्या तुम पैदा करते हो या हम? सू० वाकिआ० रु० २।

सृष्टि करने में गुठली और मट्टी के दृष्टान्त

ईक्षण

दोनों स्पष्ट सत् ही से सत् की उत्पति का प्रतिपादन कर रहे हैं। कई कहते हैं परमात्मा के कथन-मात्र से सृष्टि हो गई। इसका वर्णन कुरान में कई स्थलों पर है। एक उद्धरण मैं ऊपर दे आया हूं। एक और उद्धरण यह है—

रचा उसे मट्टी से और फिर कहा उसे होजा और वह हो गया। सू० आल अमरान आ० ५८

यहां अव्यय 'फिर' विशेष ध्यान देने योग्य है। पहिले उपादान से रचना हुई है। फिर उसे कहा है—होजा। यह तो आर्य दर्शन सम्मत 'ईक्षण' का आलंकारिक अनुवाद मात्र ही है।

इस प्रकार आप ने कुरान को अपनी अन्तःसाक्षी से देख लिया कि कुरान वेद की तरह त्रैत-वादी है। यही नहीं कि इस में वल्लभ-सम्मत शुद्धाद्वैत का प्रतिपादन नहीं, यहां तो इस मत का स्पष्ट निराकरण विद्यमान है। प्रकृति को कहीं मट्टी, कहीं सड़ी हुई मट्टी, कहीं पानी इत्यादि इत्यादि नाम दिये हैं। आत्मा का विस्तृत विवेचन करने से इनकार किया है, परन्तु उस की सत्ता

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

और 'जाल' दोनों धातु अवस्था-परिवर्तन के ही द्योतक हैं। इस स्थापना के निम्न लिखित प्रमाण और पोषक होंगे:—

रचा तुम को निर्बलता से फिर बनाई निर्बलता के पश्चात् शक्ति फिर बनाई शक्ति के पश्चात् निर्बलता। सू० रूम रु० ३

यह वर्णन बाल्य-काल से बुढ़ापे तक के स्थिति-परिणाम का है। परमात्मा केवल निमित्त कारण ही है, इस का वर्णन फिर इस आयत में किया है:—

निश्चय हमने रचे उन के लिये, उस से जिस पर हमारे हाथों की क्रिया है, पशु।

प्रकृति की स्थूल अवस्था पृथिवी है। इस अवस्था पर आने तक परमात्मा के 'हाथ की क्रिया' अर्थात् रचयितृत्व का कुछ अंश अपना प्रभाव कर चुका होता है।

पशुओं की अमैथुनी सृष्टि का वर्णन इन शब्दों में किया है:—

निकाले उन के लिये पशु पृथिवी में से। सू० नहल रु० ६

अभाव से भाव के उत्पादन में परिवर्तन एक ही वार हो जायगा। इस क्रिया में परिणाम की अनेक स्थितियां नहीं हो सकतीं। इस के विपरीत यदि विद्यमान कारण से ही कार्य की उत्पत्ति होनी हो तो वह धीरे-धीरे भी चल सकती है। उदाहरणतया सांख्य की प्रक्रिया को लें तो प्रकृति से महान्, महान् से अहंकार, इत्यादि अवस्थाएं ऐसी आती हैं जिन्हें कारण तथा कार्य दोनों कहा जा सकता है; और इस सारी परिणाम-प्रक्रिया को सृष्टि कहा जाता है। कुरान में मनुष्य की रचना के सम्बन्ध में कहा है:—

क्या तुम सन्देह में हो जिलाने के विषय में। सो निश्चय हम ने तुम्हें रचा मट्टी से, वीर्य से, फुटकीसे, बोटी से, रचे गए से और न रचे गए से। सू० हज० रु० १

'न रचे गए' का अर्थ भाष्यकारों ने 'अधूरे रचे गए' किया है। यहां धातु वही 'ख़ल्क़' है। यदि उस का अभिप्राय अभाव से भाव की उत्पत्ति करना हो तो इस अभाव मात्र से भाव बना देने में अधूरेपन की स्थिति को कहां स्थान होता? भावमात्र अधूरा नहीं हो सकता।

अनेक ख़ालिक़

अभाव से भाव के उत्पन्न करने की शक्ति यदि हो भी तो परमात्मा के सिवा और किसी में कोई मुसलमान इस शक्ति को नहीं मानता। परन्तु कुरान में तो लिखा है:—

और शुभ है प्रभु अच्छा सृष्टि-कर्त्ताओं में। सू० मोमिनून रु० १

सृष्टिकर्त्ता अनेक होने की अवस्था में हम सृष्टि-कर्ता का अर्थ अभाव से भाव का आविष्कार करने वाला नहीं, किन्तु आर्य दर्शन की परिभाषा में निमित्त कारण या इल्लत फ़ाइली लेंगे, जो जीवादि भी हैं।

असत् से नहीं

अब तक अभाव से भाव की उत्पत्ति के निषेध का परिणाम कुरान की आयतों से अर्थापत्ति द्वारा निकाला गया है। 'ख़ल्क़' धातु का प्रयोग ही उपादान कारण के वर्णन-सहित हुआ है। इस अर्थापत्ति को कोई समझदार दुरूह न कहेगा। तो भी यदि कहीं कुरान के अपने शब्दों में शुद्धाद्वैत का निराकरण मिल जाए तो वह इस विषय में निर्णायक प्रमाण होगा। कहा ही तो है:—

क्या तुम बनाए गए हो असत् से या हो तुम स्वयं बनाने वाले? सू० तूर रु. १

इस काकु में कुरान जहां उपादान कारण की ओर संकेत करता है कि वह असत् नहीं, वहां निमित्त कारण का प्रतिपादन भी साथ-साथ कर जाता है कि वह परमात्मा है। इस वाक्य की विद्यमानता

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

में कुरान को शुद्धाद्वैत का प्रतिपादक कहना उसके स्पष्ट शब्दों से उपेक्षा करना है।

अन्त में मैं कुरान के उन उद्धरणों पर विचार करना चाहता हूँ जिनसे शुद्धाद्वैती कुरान से अपने अभिमत विचार की तर्कणा करते हैं:—

अप्रतर्क्य सत्

और निश्चय बनाया तुझे पूर्व इसके और न था तू कोई वस्तु। सू मर्यम रु. १

'सूरा मर्यम' में ही एक और स्थल पर लिखा है:—

और कहता है मनुष्य, जब मैं मर जाऊंगा, क्या निकाला जाऊंगा जीता? क्या स्मरण नहीं करता मनुष्य कि हमने पैदा किया उस को पहिले इस से और न था वह कुछ। रु. ५

जब एक जगह काकु के रूप में कह दिया कि तुम अभाव मात्र से भाव की अवस्था में नहीं लाए गए तो यहां मनुष्य की पूर्वावस्था को अभाव या असत् 'कोई चीज़ न' कहने का प्रयोजन? कुरान के भाष्यकार कुरान के अर्थ समझने का सब से उत्तम गुर यह बताते हैं कि "मानिय कुरां ज़ि कुरां ब पुर्स" अर्थात् कुरान के अर्थ कुरान से पूछो। देखें कुरान स्वयं इस असत् का अर्थ क्या करता है? लिखा है:—

निश्चय आई है मनुष्य पर वह घड़ी समय से जब यह न था कोई वस्तु निर्वचनीय। सू० दहर रु. १

अर्थात् असत् का अर्थ हुआ अनिर्वचनीय सत्। आर्य दर्शन में प्रकृति की इस अवस्था को अव्यक्त, अप्रतर्क्य आदि शब्दों से पुकारा गया है। योगभाष्यकार इसी को सदसत् कहते हैं अर्थात् कारणावस्था में सत् विद्यमान और कार्य्यावस्था में अभी असत् अविद्यमान। स्वयं वेद कहता है:—

नासदासीन्नो सदासीत्तदानीम्। ऋ.१०. १२०.१
तब असत् न था और न सत् था।

क्या था? वहीं लिखा है:—

तम आसीत् तमसा गूढमग्रेऽप्रकेतं सलिलं सर्वमा इदम।'
ऋ. १०. १२९. ३.

अंधकार था अक्रिया से आच्छादित अव्यक्त सर्वप्रलय।

सृष्टि की इस क्रिया को कुरान-कार उदाहरण देकर भी समझाते हैं।

निश्चय अल्लाह फाड़ने वाला है दानों का और गुठलियों का (ऐसे ही) निकालता है जीते को मरे से और मरे को जीते से।
सू० अनआम रु. १२

निश्चय बनाया हम ने तुम को। क्या तुम नहीं मानते? क्या तुमने देखा जब तुम डालते हो मट्टी। क्या तुम पैदा करते हो या हम? सू० वाकिआ० रु० २।

ईक्षण

सृष्टि करने में गुठली और मट्टी के दृष्टान्त दोनों स्पष्ट सत् ही से सत् की उत्पति का प्रतिपादन कर रहे हैं। कई कहते हैं परमात्मा के कथन-मात्र से सृष्टि हो गई। इसका वर्णन कुरान में कई स्थलों पर है। एक उद्धरण मैं ऊपर दे आया हूं। एक और उद्धरण यह है—

रचा उसे मट्टी से और फिर कहा उसे होजा और वह हो गया। सू० आल अमरान आ० ५८

यहां अव्यय 'फिर' विशेष ध्यान देने योग्य है। पहिले उपादान से रचना हुई है। फिर उसे कहा है—होजा। यह तो आर्य दर्शन सम्मत 'ईक्षण' का आलंकारिक अनुवाद मात्र ही है।

इस प्रकार आप ने कुरान को अपनी अन्तःसाक्षी से देख लिया कि कुरान वेद की तरह त्रैत-वादी है। यही नहीं कि इस में वल्लभ-सम्मत शुद्धाद्वैत का प्रतिपादन नहीं, यहां तो इस मत का स्पष्ट निराकरण विद्यमान है। प्रकृति को कहीं मट्टी, कहीं सड़ी हुई मट्टी, कहीं पानी इत्यादि इत्यादि नाम दिये हैं। आत्मा का विस्तृत विवेचन करने से इनकार किया है, परन्तु उस की सत्ता

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

को स्पष्ट स्वीकार किया है और परमात्मा को 'फ़ाइल' कह कर उसे सृष्टि का निमित्त कारण ही माना है।

इसलाम में शुद्धाद्वैत के प्रचार का कारण संभवतः यह हो कि कुरान के प्रणयन-काल से ही कुरान के पाठक तार्किक विचार से अनभिज्ञ रहे हैं। मौलाना आज़ाद सुबहानी ने तो खुले शब्दों में कहा ही है कि उन्हें जान बूझ कर तर्क से अलग रखा गया। परन्तु कुछ परम्परागत सचाइयां अनजाने में भी लोगों की बोलचाल तथा विचार-व्यवहार में स्थिर रहती हैं। हमें प्रसन्नता है कि कुरान के रचयिता द्वारा उस के जाने या अनजाने में वैदिक सचाई ने इसलाम के धर्म-पुस्तक में जगह पाई है। इस के विपरीत शुद्धाद्वैत, जैसे मौलाना शिबली ने लिखा ही है, पीछे के साम्प्रदायिक युक्तिकारों की कल्पना है।

रंग है।

(लेखक— श्री रामजी बाजपेयी, वाराणसी)

संकट सकल दुरि होहिं सुमरन हीं तें,
उर में उमगि आवै अधिक उमंग है।
पाप के पहार छार होहिं ताहि छिन माहिं,
जबै छेड़ि बैठै तेरो दर्शन प्रसंग है॥
पग के परत मग कोटि जग्य फल होत,
गरिमा गजब ऐसी मातु तव गंग है।
ईस होय सीस पै चढ़ावै वारि और न्हाये,
विष्णु करि डारत तुरंत ही तरंग है॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्मृति की झलक।

(लेखक—श्री कृष्ण पांडे कलकत्ता)

(१)

बात बहुत पुरानी है, उस को घटे लगभग बीस वर्ष होगये, एक युग से भी अधिक बीत गया। फिर भी उस की स्मृति मेरे लिये सदा ताजी है। जब कभी उन दिनों की याद आती है, तो घंटों मेरा लिखना पढ़ना छूट जाता है, उन्हीं पुरानी-बीती हुई बातों को याद किया करता हूँ।

वह उस समय नौ वर्ष की थी। उस के पिता किसी सरकारी काम से बनारस आये थे। उन का मकान ठीक हमारे घर के सामने था। हम दोनों साथ खेलते कूदते, खाते पीते थे। उमर के साथ साथ धीरे २ हम दोनों की मित्रता बढ़ती गई। मेरी मा का विचार था, कि हम दोनों का विवाह हो जाय। हम दोनों में खूब मेल है, एक दूसरे को क्षण भर भी छोड़ना नहीं चाहते, अतः उस के माता पिता भी इस सम्बन्ध से राजी थे। मुझे जब इस का पता लगा कि हम दोनों का विवाह होगा तो बड़ी खुशी हुई। एक दिन मैंने बातों ही बातों में पूछा—"कमला! मेरे साथ तुम्हारे ब्याह की बात चीत हो रही है?"

एक हलका-सा धक्का देकर उसने कहा—"हट्!"

"हट क्या?" मैंने उस का एक हाथ पकड़ कर कहा—"मेरी मा की इच्छा है कि तुम्हारे साथ मेरा विवाह हो, तुम्हारे माता पिता भी इस सम्बंध से राजी हैं। फिर अड़चन किस बात की है। हां यदि तुम्हारा मन नहीं हो तो दूसरी बात है।"

"हम दोनों की इच्छा अनिच्छा में क्या धरा है।" कमला ने थोड़ी देर चुप रह कर कहा—"इस अनहोनी बात में क्या रक्खा है इसे जाने दो।"

उस समय कमला की बात मेरी समझ में नहीं आई। मैंने यही समझा, कि कमला मेरे साथ विवाह करने में राजी नहीं है। इसी से वह इसे अनहोनी बात कहती है। अतः उस पर मुझे बहुत क्रोध आया मैं उससे कई दिनों तक बोला नहीं। वह बिचारी आती और बातें करने की चेष्टा करती, मेरे अकारण रोष का कारण पूछती, पर मैं उसे कुछ जबाब नहीं देता। यदि वह अधिक तंग करती तो रुखाई से, इतना ही कह कर मुँह फेर लेता—

"इस समय जाओ, मेरे पढ़ने में हर्ज होता है।" वह बेचारी लाचार होकर मुँह लटकाये चली जाती। कभी २ उस की बड़ी २ आँखों में मोती छलकने लगते, पर मैं उस पर कुछ ध्यान नहीं देता था।

परन्तु कुछ दिनों बाद मुझे पता लगा, कि इस में कमला का कोई अपराध नहीं है। उस के पिता आर्य समाजी हैं, इस लिये मेरे पिता जी इस सम्बन्ध से राजी नहीं हुए।

× × × × ×

कमला के पिता की बदली पंजाब को हो गई। इस लिये वह सब वहां चले गये। मैं भी कुछ दिनों बाद कलकत्ते पढ़ने चला आया।

कई वर्ष हो गये। पता नहीं कमला कहां है और उस का ब्याह हुआ कि नहीं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

(२)

"महेश बाबू घर में है ?" बाहर से किसी ने पुकारा। मैंने कलम छोड़कर सिगरेट जलाते हुए उत्तर दिया—"कौन है, ऊपर चले आइये।" क्षण भर बाद ही डाक्टर बिहारीलाल ने हांफते हांफते कमरे में प्रवेश किया।

"अहो ! बड़े भाग। आज किधर रास्ता भूल पड़े ?'

"क्या कभी आता नहीं हूं ?"

"क्या मैंने यही कहा है ? ख़ैर·····कहिये अच्छे तो हैं ?"

"किसी तरह दिन काटता हूँ।"

सिगरेट केस उन के हाथ में देते हुए मैंने पूछा—"क्यों ? ऐसी क्या तकलीफ़ है ?"

"रोगियों को देखते २ मैं स्वयं रोगी होगया हूं।" सिगरेट की एक लम्बी फूंक तानकर उन्होंने पूछा-"महेश बाबू ! क्या आज कल आप के हाथ में ज्यादा काम है ?"

"नहीं, कोई अधिक काम तो नहीं है। यह गल्प पूरी करनी है सो इसे आज लिख डालूंगा। इस के बाद कुछ दिन विश्राम करने का इरादा है। क्यों ? आप अपना मतलब कहिये।"

"तो चलिये, कुछ दिन बाहर घूम आवें।'

मैंने आश्चर्य से पूछा-"बाहर कहां ?"

"वैद्यनाथ जी।" थोड़ी देर ठहर कर डाक्टर बिहारीलाल फिर बोले-"यह केवल मेरा ही अनुरोध नहीं हैं। इस में मेरी स्त्री की भी विशेष इच्छा है। उस ने आप से निवेदन किया है कि यदि आप हम लोगों के साथ चलना स्वीकार करें तो हमारी यात्रा सुख पूर्वक बीतेगी और हमें बड़ी प्रसन्नता होगी।"

इस अयाचित निमंत्रण पर मैं विचारने लगा। मुझे चुप देख कर डाक्टर साहब ने फिर उत्सुक होकर पूछा—

"क्यों ? कहिये क्या इच्छा है ?"

"आप लोगों की इस कृपा के लिये मैं अभारी हूं। भला मुझ में इतनी शक्ति कहां है जो मैं आप लोगों की इस आज्ञा को टाल सकूं। हां, आप लोग कब जायेंगे ?"

"कल के मेल से।"

"कलही।"

मैं विचार में पड़ गया थोड़ी देर सोचने के बाद मैंने सिर खुजलाते २ कहा—"तब मुझे दो दिन की छुट्टी देनी पड़ेगी। आप लोग अपना ठिकाना लिखा जाइये। मैं दो दिन बाद आऊंगा।"

अपना ठिकाना लिखा कर प्रसन्न होकर डाक्टर साहब ने कहा—"बस, मेरा काम पूरा हुआ। मैं इस समय इसी लिये आया था।"····· "देखिये अपना वायदा मत भूलियेगा। अब मुझे आज्ञा दें।" इतना कह कर डाक्टर साहब जाने को प्रस्तुत हुए। मैंने नमस्कार करते हुए उत्तर दिया—"नहीं, ऐसा भी कभी हो सकता है।"

डाक्टर साहब चले गये। उन के जाने के बाद मैं सोचने लगा-डाक्टर साहब जब मिलते हैं तभी अपनी स्त्री की बात कहते हैं। जान पड़ता है उन का पारिवारिक जीवन बहुत ही आनन्द दायक हैं। एक लम्बी सांस लेकर मैंने मन ही मन कहा-"क्यों न होगा ? सभी मेरी तरह अभागे थोड़े ही हैं ? फिर भी इन पुस्तकों से किसी तरह दिन काटता हूँ। आह ! यदि यह साहित्य न होता तो मेरी क्या दशा होती ?·····कमला तुमने मेरा जीवन नष्ट कर दिया।·····ओह ! इस बात का विचार करते ही चक्कर आता है।,

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

(३)

दो दिनों में अपने हाथ का काम समाप्त कर तीसरे दिन वैद्यनाथ जी पहुँच गया। स्टेशन पर डाक्टर बिहारीलाल, मेरी अगवानी के लिये खड़े थे। कुली के सिर पर सामान रख कर हम दोनों प्लेट-फार्म के बाहर आये। बाहर आकर मैंने पूछा—

"आप, का बंगला यहां से कितनी दूर है?"

"यही पांच मिनट का रास्ता है।" डाक्टर साहब कहने लगे—"आप आज आवेंगे, यह सुन कर मेरी स्त्री बहुत प्रसन्न है। आप लेखक हैं, सौन्दर्य्योपासक हैं, प्राकृतिक दृश्य आप को रुचिकर होगा, इस लिये आपके लिये पहाड़ की तरफ का कमरा सजा कर उस ने रक्खा है।"

मैंने डाक्टर साहब की स्त्री की बुद्धिकी मन ही मन प्रशंसा कर के प्रकाश्य रूप में कहा—

"आप लोग शिक्षित हैं, स्त्रियों को भी सुशिक्षा देते हैं, इस लिये वह पुरुषों के मनोभावों को समझने में समर्थ हैं। देखिये यदि और स्त्रियों की भांति आप की स्त्री भी अशिक्षित होतीं तो क्या मुझे बिना देखे ही मेरी पसन्द का कमरा ठीक कर सकती थीं? मेरी तो धारणा है कि कदापि नहीं। स्त्री शिक्षा के विरोधी समझते हैं कि स्त्रियों को पढ़ाने से वे लोग गृह-कार्य छोड़कर दिन रात किस्सा कहानी और उपन्यास ही पढ़ा करेंगी। इस लिये वह केवल उन्हें अपढ़ ही नहीं रखते वरन संसार को बाहरी अवस्था से भी अनभिज्ञ रखते हैं। यही क्यों, घर के भीतर भी उन्हें पूरी स्वतंत्रता नहीं है। जो सास श्वसुर माता पिता के समान माने जाते हैं, उनके आगे डेढ़ हाथ का घूंघट डाल कर उनका मुंह जबरन बन्द कर देते हैं। इस अनावश्यक पर्दा प्रथा के कारण हमारा स्त्री समाज दिन दिन कमजोर होता जा रहा है। न मालूम इस सत्यानाशी प्रथा का कब अन्त होगा।"

डाक्टर साहब ने कहा—"लेकिन अब इस ओर समाज के युवक दल का ध्यान आकर्शित हो गया है। और वे लोग इसे दूर करने के लिये जीतोड़ परिश्रम भी करते हैं।"

"ठीक है।" मैंने कुछ उत्तेजित होकर कहा—"लेकिन उनके साथ हमारी सहानुभूति कहां हैं? समाज के पुराने-वृद्ध-पंचों में खलबली पड़ गई है। उनके पेट में चूहे कूदने लगे हैं। वे लोग युवक दल पर खड्गहस्त हो रहे हैं, भरसक भरपूर बाधा उपस्थित करते हैं। यदि उन का बश चले तो वे आन्दोलन कर्त्ताओं को जीते जी जमीन में गाड़ दें।"

बातों ही बातों में हम लोग बहुत दूर चले आये। डाक्टर साहब ने एक छोटे से पहाड़ी टीले की ओर इशारा करके कहा—

"हम लोग पहुँच गये। देखिये, वही मेरा बंगला है।"

"बंगला तो बहुत ही एकान्त स्थान में है?"

"हां, एकान्त देख कर ही तो मैंने यहां बंगला बनवाया है। वहां शहर में दिन रात मोटर गाड़ियों की गड़गड़ाहट और मनुष्यों के कोलाहल से जी घबरा उठता है। इसी लिये बीच २ में ज़रा शान्ति पाने के लिये घूमने निकल आता हूँ। यदि यहां आकर भी उसी कोलाहल में रहना पड़े, तो फिर घर छोड़ कर यहां जंगल में आने की आवश्यकता ही क्या है?"

—"उधर नहीं; इधर आइये—यह रास्ता है।"

पश्चात्ती की हरी २ लता के बीच बंगले का फाटक है। फाटक से ही लाल कंकरदार मिट्टी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

की सीधी सड़क, दोनों ओर मेंहदी के छटे हुए छोटे २ गाछ, उसके बाद थोड़ी २ दूर के फासले पर देशी बिलायती रंग बिरंगे फूलों के गाछ, उसके आगे एक गोलाकार दूबदार ज़मीन, जिसके बीचों बीच एक संगमरमर की बिलायती स्त्री-मूर्ति, उसके चारों ओर लोहे की सुन्दर कुर्सियां और उसके बाद ही सुन्दर ढंग से बना हुआ बंगला। इस को देख कर एकाएक मुंह से निकल पड़ता है कि इस उद्यानगृह का अधिकारी शौकीन, सुरुचिसम्पन्न और धनवान है।

भीतर बैठने के हौल में प्रवेश करते ही एक फैन्सी कुर्सी, मेरे सामने रखकर डाक्टर साहब ने कहा—"आप बैठिये मैं अभी अपनी स्त्री को खबर देकर आता हूँ। क्योंकि सर्व प्रथम उसके साथ आपका परिचय कराना आवश्यक है।"

इतना कह कर डाक्टर साहब भीतर चले गये। मैं चुपचाप बैठा २ हाल की सजावट देखने लगा। हाल में पूरे माप का हरा मिर्जापुरी कालीन बिछा था, उस पर कायदे से दस बारह कुर्सियां पड़ी थीं, एक ओर टेबिल पर हारमोनियम और उस के ठीक सामने दूसरी ओर टेबिल पर ग्रामोफोन रक्खा था। दरवाजों पर रेशमी स्क्रीन परदे पड़े थे। इस के अलावा और कोई विशेष सामान नहीं था। परन्तु इस से क्या हुआ ? सामान कितना ही क्यों न हो उसे सजाने वाला चाहिये। मैं इसी उधेड़बुन में था कि पीछे से शब्द सुनाई दिया। घूम कर देखा, डाक्टर साहब एक रमणी का हाथ पकड़े मेरी ओर आरहे हैं। मैं नत मस्तक हो खड़ा हो गया।

"यही मेरी सहधर्मिणी हैं।" मेरे पास आकर डाक्टर साहब ने कहा—"और यही प्रसिद्ध गल्प लेखक महेश बाबू हैं।"

मैंने नमस्कार करने के लिये सिर उठाया। रमणी की ओर देखते ही मेरी दृष्टि स्थिर हो गई। मुझे आज के पहले कभी यह विश्वास न था, कि कभी इस जन्म में इस मुख का दर्शन होगा। उस को देख कर एकाएक बाल्यावस्था का स्मरण हो आया। आह ! वह मेरी चिर परिचित बीस वर्ष पहले की अभिन्न हृदया कमला थी। हम दोनों एक दूसरे को आश्चर्य चकित हो देखने लगे, कमरे में सन्नाटा छा गया। मैंने उस सन्नाटे को भंग करते हुए करुणस्वर में कहा—"कमला !" स्वप्न में चौंक कर उठे हुए व्यक्ति की भांति उसने उत्तर दिया—"महेश !"

डाक्टर साहब क्षण भर तक निर्व्वाक रुप से आश्चर्य पूर्वक कभी मुझे और कभी कमला को देखने लगे। तीव्र कौतुहल का प्रथम मुहुर्त टलने के बाद उन्होंने पूछा—"यह क्या मामला है महेश बाबू ? क्या ईश्वर के दूत आकर पहले से ही आप दोनों में परिचय करा गये थे ? यह तो अभूत-पूर्व कांड है !"

× × ×

भोजन के उपरान्त कुछ देर विश्राम करने के बाद मैं जब अपने निर्दिष्ट कमरे से बाहर निकला, तब सन्ध्या हो गई थी। कमला पति के साथ मेरी प्रतीक्षा कर रही थी। मेरे पहुँचते ही डाक्टर साहब ने कहा—"आइये, आइये, हम लोग आप ही की इन्तज़ार कर रहे थे। बैठिये..... अरे कौन है, ज़रा लीला को भीतर भेज दो और चाय ले आओ।"

लीला कमला की एकमात्र लाड़ली सन्तान है। थोड़ी देर में ही वह एक काठ के घोड़े के कान मड़ोरते मड़ोरते, उसकी कठोर पीठ को अपने

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कोमल छोटे हाथों से मारती— "निघोला घोला छल—जोल छे छल"—करती हुई आगई।

मैंने लपक कर उसे गोद में लेकर कमला से कहा— "कमला लड़कपन में जैसी तुम थी लीला भी ठीक वैसी ही है।"

अपने विकट हास्य से सारे हाल को गुंजाते हुए डाक्टर साहब ने पूछा—"क्यों लड़कपन में ये कैसी थी, सुशील थीं या दुष्ट?"

मैं लीला के गोरे गुलाबी मुख पर छोटी २ नागिनियों के समान अस्तव्यस्त बिखरे हुए घुङ्घराले बालों को संवारने में व्यस्त था। डाक्टर साहब के विकट स्वर ने मेरा ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर लिया। मैंने हँसते २ कहा—"बड़ी ही दुष्ट थीं।"

कमला ने एक बार तिरछी नज़र से मेरी ओर देखा। मैंने उसकी तरफ़ बिना कुछ ध्यान दिये ही कहा—"इन की दुष्टता का एक किस्सा सुनिये। एक बार इनकी माता ने एक गुलाब जामुन मुझे और एक इन्हें दिया। मैंने बुद्धिमान बालक की भांति झट से उसकी सद्गति करदी। लेकिन यह चुपचाप खड़ी २ उसे निरखने लगीं। एक गुलाबजामुन से राजी नहीं हुईं। थोड़ी देर घुमा फिरा कर देखने के बाद कहा—"मैं एक नहीं थाबूधी, दो नूधी।" आप समझे नहीं, उस समय ये खाँऊगी को 'थाबूधी' और लूंगी को 'नूधी' कहती थीं। क्या समझते हैं, बाल्यकाल से ही मौलिकता की ओर इनका पूरा ध्यान रहा है।"

"हाः हाः हाः हाः····· लचमुच ····· हाः हाः हाः।" डाक्टर साहब बुरी तरह हँसने लगे।

"जाओ, मैं जाती हूँ।" कमला तीक्ष्ण दृष्टि से मेरी ओर देख कर जाने लगी। डाक्टर साहब ने उस को बैठाते हुए कहा—"अरे कहां जाती हो? तुम्हारे जाने से तो सारी महफ़िल वीरान हो जायगी। आओ बैठो।"

कमला ने अभिमान से कहा—"तुम लोग मिल कर मुझे तंग करो और मैं चुप चाप बैठी बैठी सहती रहूं, क्यों?"

"नहीं तुम भी अपना पक्ष समर्थन करो।" डाक्टर साहब ने कहा।

"नहीं इसकी कोई आवश्यकता नहीं।" कमला ने बात टालते हुए कहा— "लो चाय पीना है तो पिओ।"

सब कोई चुपचाप चाय पान करने लगे। कमरे में सन्नाटा छा गया। लेकिन डाक्टर साहब को इस तरह का सन्नाटा पसन्द नहीं है। चाय पीते पीते उन्होंने कहा— "हां महेश बाबू! मैं ने लक्ष किया है कि आप की गल्पों से एक प्रकार की वेदना की ध्वनि निकलती है; और इस तरह आप खूब हास्यरस की सृष्टि कर सकते हैं।"

प्रश्न सुनकर मैं चकित होगया। मुझे यह ध्यान भी नहीं था कि डाक्टर साहब मेरी गल्पों को इतने गौर से पढ़ते हैं। मैंने कहा— "आप मेरी गल्पों पर इतना लक्ष करते हैं इसका मुझे स्वप्न में भी ध्यान नहीं था। देखिये मनुष्य बाहरी अवस्था में अपने को भुलाना चाहता है। वह यह नहीं सोचता कि उस की कृतियों से असली भाव प्रकट हो जाता है। नकल— बनावट—अधिक दिन तक नहीं चलती। जिस लेख का लेखक स्वयं हँसता है, उसके पाठक भी हँसते हैं। और जिस का लेखक स्वयं रोता है उसके पाठक भी उसके साथ सहानुभूति के आंसू बहाते हैं। और फिर जब हमें पाठकों के साथ ही दिन रात रहना है, तब उन से धोखा करने का क्या प्रयोजन!"

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

"तब यही समझना होगा कि आप को किसी बात का दुख है।" डाक्टर साहब ने कहा। मैंने दबी जबान से उत्तर दिया—"जो समझें।"

चाय का प्याला रखते हुए डाक्टर साहब ने फिर कहा—"लेकिन इस तरह से तो गृहस्थी में नहीं रहा जा सकता महेश बाबू!"

"इसी लिये तो मैंने व्याह नहीं किया। संसार से मेरा क्या सम्बन्ध है? इस विशाल विश्व में साहित्य के सिवा और मेरा कोई कुटुम्बी नहीं है।"

मेरे इस उत्तर को सुनकर डाक्टर साहब चकित होगये। और कमला एक दर्दभरी सांस लेकर मुझे देखने लगी।

(४)

किसी ने कहा है कि चूहे को स्वर्ग में भी दर्जी का कार्य करना पड़ता है। वैसे ही डाक्टरों को भी आराम नहीं। डाक्टर बिहारी लाल यहां कुछ दिन विश्राम करने के लिये आये थे, पर वह उनके भाग्य में बदा नहीं था।

दूसरे दिन संध्या को जैसे ही हम लोग घूमने के लिये घर से निकले कि बाहर दरवाजे पर एक व्यक्ति ने लम्बी सलाम करके कहा—"मेरा भाई बहुत बीमार है। एक बार चलने की कृपा करें।"

डाक्टर साहब ने हँसते हँसते कहा—"क्यों नहीं! जान पड़ता है यह रोगी मुझे यहां भी सुख से नहीं रहने देंगे। इनके मारे तो मैं तंग आगया।"

आगन्तुक ने हाथ जोड़ कर कहा—"डाक्टर बाबू! रोगी की धारणा है कि यदि डाक्टर बिहारीलाल दवा न देंगे तो वह मर जायगा, एक बार दया कर के उसे देख लीजिये, नहीं तो उसके प्राण नहीं बचेंगे।"

"अच्छा! अच्छा!!" डाक्टर साहब अपनी प्रसंशा सुन मन ही मन खुश होकर बोले—"अच्छी बात है। यदि रोगियों की बुद्धि इतनी तेज़ होने लगेगी तो मुझे अपना प्राण बचाना मुश्किल हो जायगा। चलो बाबा.....महेश बाबू! आप लोग चलें, मैं यदि जल्दी ही छुट्टी पागया तो आप लोगों से मिल जाऊँगा।"

कमला ने बीच में ही बात काट कर कहा—"तब आज जाना स्थगित ही करदें न?"

मैंने भी उसकी हां में हां मिलाते हुए कहा—"हां ठीक तो है।"

लेकिन डाक्टर साहब कब मानने लगे। उन्होंने माथा खुजलाते-खुजलाते कहा—'स्त्री बुद्धि प्रलय कारी' महेश बाबू! आप इनकी बातों में मत आइयें। थोड़ी देर स्वच्छ वायु में घूमने से इनका माथे का दर्द मिट जायगा। यह तो कुछ समझती नहीं हैं।"

कमला ने कहा—"मेरा दर्द मिट गया।"

"भ्रम, भ्रम," डाक्टर साहब ने कहा—"यह केवल मन का भ्रम है। दर्द वैसा ही बना हुआ है, घर में जाते ही बढ़ जायगा। जाओ थोड़ी देर घूम आओ।"

कमला इस पर कुछ नहीं बोली। डाक्टर साहब आगन्तुक व्यक्ति के साथ रोगी को देखने चले गये।

उस समय सूर्यदेव विश्राम के लिये दूर की पहाड़ियों में धीरे-धीरे प्रस्थान कर रहे थे। आकाश के स्वर्ण मण्डित पट पर कोई चित्रकार अपनी अदृश्य तूलिका से विचित्र रंग आंक रहा था। उसकी अनुपम छटा से सदूर वनभूमि की नवीन श्यामलता सम्मुज्वल हो उठी।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मैंने कमला से कहा— "चलो कमला थोड़ी देर घूम आवें।"

उसने कोई उत्तर नहीं दिया। चुपचाप मेरे पीछे होली। दोनों ओर ऊँची नीची पहाड़ियों के बीच टेढ़ी मेढ़ी सड़क से हम लोग चलने लगे। मैंने एक बार कमला की ओर देख कर कहा—

"शहरों में हम लोग प्रकृति के इस अभूतपूर्व आशीर्वाद से वंचित रहते हैं। यह सब दृश्य क्या केवल देखने के लिये हैं ? नहीं। इन को देखने से हृदय में एक प्रकार की शान्ति होती है। मन की संकीर्णता दूर होती है। मनुष्य समझता है कि इस विशाल विश्व में वह केवल धन कमाने, रुपये पैसे का हिसाब रखने के लिये ही नहीं आया है। प्रकृति के प्राकृतिक सौन्दर्य से हम जो वास्तविक शिक्षा ग्रहण करते हैं, वह हजारों पुस्तकें पढ़ने से भी नहीं मिल सकती।"

मैं अपने आप बकता जा रहा था। कमला मेरी बात सुनती है या नहीं, इस ओर मेरा ज़रा भी ध्यान नहीं था। मैंने घूमकर देखा— कमला मेरे पीछे-पीछे सिर नीचा किये चुप चाप चल रही है।

मैंने पूछा—कमला ! क्या तुम्हें यह अच्छा नहीं लगता ?"

"नहीं।"

"क्यों ? क्या तुम्हारी तबीयत ठीक नहीं है !"

"नहीं।"

"तब ?"

"मालूम नहीं।"

कमला के इन संक्षिप्त विरक्ति पूर्ण उत्तरों से मैंने अपना अपमान समझा। क्यों ? इसमें मेरा क्या दोष है ? जिसके लिये वह मुझ से इतनी विरक्त हो रही है। मैं कोई कड़ी बात कहने वाला ही था कि कमला ने कहा—"घूमना तो होगया, अब घर चलो।"

मेरा मुख इस अयाचित अपमान से तमतमा उठा। जैसे मैं ही जबर्दस्ती उसे यहां लाया हूं। इस अपमान को सहने की शक्ति मुझ में नहीं रही। मैंने पुकारा—"कमला !"

मेरे भर्राये हुए स्वर की पुकार सुन कर कमला चौंक पड़ी। उसने एक बार मेरी ओर देखा और फिर नत मस्तक होगई।

मैंने तीक्ष्ण स्वर में कहा—"कमला ! मैंने ऐसा कौनसा अपराध किया है जिसके लिये तुम मुझे बार-बार अपमानित कर रही हो।" कमला निरुत्तर रही। मैंने फिर कहा—"मैं यहां आने के बाद से ही देखता हूँ कि तुम मुझ से अच्छी तरह बात नहीं करती। मेरे सामने आने में संकोच करती हो, मुझ से जो तुम्हारा पुराना परिचय है वह कहने में भी तुम्हें लज्जा आती है। मैं तुम्हारे लिये आफ़त हूँ। मेरे जाने से तुम्हें शान्ति मिलेगी....."

बीच में ही बात काट कर कमला ने कहा— "हां, हां, तुम चले जाओ, तुम्हारे जाने से मुझे शान्ति मिलेगी।"

मैं उसके इस उत्तर को सुन कर स्तम्भित होगया। मुझे स्वप्न में भी यह ख्याल न था कि कमला के लिये मैं एक आफत हूं—"इसमें तुम्हारा कोई दोष नहीं है कमला !"

मैंने धीरे धीरे कहा— "संसार का यही नियम है। लेकिन मैं तो तुम्हें भूल गया था। अपने साहित्य को लेकर मस्त था। फिर तुमने मुझे क्यों बुलाया ? क्यों मेरी नज़र के सामने आई ? कमला, कमला, यह कहां का आतिथ्य सत्कार है ? मेरी बात का जवाब दो !"

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कमला लड़खड़ाती हुई मेरे सामने आकर खड़ी हो गई। उसकी बड़ी २ आंखों से मोतियों की वर्षा हो रही थी। वह नतजानू हो रोते रोते बोली —"मुझे माफ़ करो भाई! यदि तुम मेरी अवस्था को समझते....."

झां झां झां झां करता वायु का जबर्दस्त झोंका आया। हम दोनों अपने मनोभावों में इतने व्यस्त थे कि यह भी अनुभव करने का मौका न मिला कि चारों ओर से बादल घिर आये हैं। वायु के इस झोंके ने हम दोनों को चौंका दिया। मैंने घबराकर कहा—

कमला चलो, बड़े ज़ोर से पानी बरसेगा।"

कमला के उठने के पहले ही मेघ ने अपना कार्य आरम्भ कर दिया। आंधी पानी दोनों एक साथ। चारों ओर अंधकार छागया, आंधी के प्रचंड झोंकों ने हम दोनों को धूल से भर दिया। मैंने चिल्ला कर पुकारा-"कमला.....कमला....." किन्तु मेरा चीत्कार हवा के वेग में मिल गया। कमला उसे नहीं सुन सकी। मैंने अंधे की भांति कमला का हाथ अपने हाथ में पकड़ लिया। किसी तरह गिरते पड़ते हम दोनों एक बड़े पहाड़ के नीचे आकर रुक गये। पहाड़ का अगला हिस्सा कुछ लम्बा और नीचे की ओर झुका हुआ था। अतः इस से थोड़ा सा आश्रय मिला। मैंने पूछा—"कमला! अब घर कैसे चलें?"

"न मालूम वह अपने मन में क्या सोचते होंगे।" कमला ने भीतस्वर में उत्तर दिया।

इतनी देर तक इस प्राकृतिक विप्लव में हम अपनी अवस्था को भूल गये थे। परन्तु कमला के इस उत्तर ने मुझे फिर उसी उधेड़बुन में डाल दिया। कमला का पहले कठोर और रूखे स्वर में बातें करना, फिर क्षण भर बाद ही क्षमा प्रार्थना करना आदि बात एक एक करके मुझे याद आने लगी। मैंने सोचा— इस असहाया रमणी के हृदय में कितना द्वन्द मचा है। एक ओर विवेक उसे सावधान करता है, तो दूसरी तरफ़ उसके हृदय की कोमल वृत्तियां उसे अपनी ओर खींच रही हैं। वह साधारण स्त्री नहीं है, शिक्षित होने के कारण अभी तक अपने को संभाले हुए है। मैं इन सब बातों को जितना ही सोचने लगा, उतना ही मेरा हृदय कमला के प्रति भक्ति और प्रेम से परिपूर्ण हो उठा।

सामने के एक वृक्ष पर कड़कड़ाती हुई बिजली गिरी। उसके विकट और भयानक गर्जन से कमला घबरा गई। वह अपने को संभाल नहीं सकी। अज्ञानावस्था में मेरे कंधे पर अपना सिर रख कर खड़ी हो रही। मैंने उसके बिखरे हुए बालों को ठीक कर के कहा—

"कमला! भय लगता है?"

कमला ने कोई उत्तर नहीं दिया। वह उसी तरह मुझ पर अपना सारा भार डाल कर खड़ी मुझे एकाएक बाल्यकाल का स्मरण हो आया। मैंने पूछा—"कमला! क्या फिर हम लोगों का लड़कपन आगया?" कमला इस बार भी निरुत्तर रही। उसके बिखरे बाल मेरे मुँह पर नाचने लगे। मुझे ऐसा जान पड़ा कि मानो कमला रो रही है। मैंने विस्मित होकर पूछा— "रोती क्यों हो कमला?"

कमला ने इस बार सिर उठाया। उसकी आंखें सावन भादों के तालाब की तरह भरी हुई थीं और उनसे मोती टपकते थे। मेरे दोनों हाथ पकड़ कर उसने कहा— "भाई! मुझे क्षमा करो।"

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

"क्यों ? क्या कहती हो कमला ? खुल कर कहो।"

कमला ने उसी स्वर में कहा—"भाई ! यदि तुम मुझ पर दया न करोगे तो मेरी गृहस्थी नष्ट हो जायगी। मैं दीन दुनिया दोनों से चली जाऊँगी।"

मैंने कोई उत्तर नहीं दिया। चुपचाप सुनतारहा।

"मेरी अवस्था पर एक बार विचार कर देखो। मैं अपनी इच्छा से तुम्हारी अवहेलना नहीं करती। मैं पहले तुम से प्रेम करती थी, अब भय करती हूं। तुम्हारा कोई दोष नहीं है। तुम विद्वान और चरित्रवान हो, अपने को संभाल सकते हो। लेकिन मेरे मन का तो कोई उपाय नहीं है। उस पर तो मैं विश्वास नहीं कर सकती ! मैं एक सामान्य स्त्री हूं। यदि मैं सावधान न होऊँ तो ईश्वर के सामने क्या उत्तर दूँगी ? तुम्हीं बताओ। भाई ! इसी लिये मैं इतनी कठोर हुई थी, लेकिन तुम को सामने देख कर मैं सब कुछ भूल जाती हूँ, अपनी अवस्था का मुझे ज़रा भी ज्ञान नहीं रहता। .....अभी थोड़ी देर पहले मेरी क्या हालत थी, मैं निर्लज्ज की भांति तुम्हारे कंधे पर सिर रख कर ....." इसके आगे वह बोल नहीं सकी, उच्च स्वर से रोने लगी। कुछ काल तक हम लोग इसी अवस्था में खड़े रहे। हठात् मनुष्य के कंठस्वर ने हमारा ध्यान अपनी ओर खींच लिया। मैंने देखा, जैसे कोई लालटेन लिये हमारी ओर चला आरहा है। रोशनी धीरे-धीरे और भी पास आगई। जान पड़ा, जैसे डाक्टर साहब मुझे पुकार रहे हैं। मैंने कमला से कहा—

"कमला ! तुम्हारे पति हम लोगों को खोजते खोजते यहां आगये हैं। आंसू पोंछ कर सावधान हो जाओ। और.....और तुम्हारी बात का जवाब कल दूंगा। परन्तु इतना ख्याल रखना कि मैं पापी नहीं हूं।"

(५)

कमला ने रात को डाक्टर साहब से मेरे साथ अपना पूर्व परिचय तथा यहां आने के बाद की सभी बातें खोल कर कहदीं। परन्तु यह मुझे मालूम नहीं हुवा। मैंने रात को ही निश्चय कर लिया कि कल भोर की गाड़ी से वापस चला जाऊँगा। दूसरे दिन जब डाक्टर साहब को यह मालूम हुआ तो वह मेरे कमरे में आये, मैं उस समय अपना बिस्तर बांध रहा था। उन्होंने कहा—

"महेश बाबू ! मैंने सुना है, आप भागना चाहते हैं ?"

मैंने कहा—"भागना नहीं, जाना चाहता हूँ।"

"ऊँ हूँ" डाक्टर साहब ने सिर हिलाते २ कहा—"यह नहीं हो सकता, हम जब छोड़ेंगे तभी तो आप जायेंगे ? मैं आपका हाथ पकड़ लूंगा और लीला को सिखा दूँगा कि वह आपकी मूंछ पकड़ ले। फिर देखूं आप किस तरह जाते हैं ?"

मैंने एक मलीन हँसी हँसते हुए कहा—"मुझे क्षमा करें डाक्टर बाबू ! मैं अब किसी प्रकार यहां नहीं ठहर सकता। आपके हाथ पकड़ने से भी नहीं और लीला के मूछ पकड़ने से भी नहीं। आप इस बात का ख्याल भी न करें कि मुझे यहां किसी तरह का कष्ट है। मैं सच कहता हूं, आपके यहां मैं राजा की तरह सुख पूर्वक रहा हूँ। किन्तु अब नहीं ठहर सकता। मुझे क्षमा करें।"

मेरे उत्तर से वह हताश होगये। मैंने सुना वह चिन्तित मन से यह कहते जा रहे हैं—"नहीं नहीं, ये लोग देवता हैं। मनुष्यों से इनकी तुलना नहीं की जा सकती।"

आज तक मैं इसका मतलब नहीं समझ सका।

(संकलित)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कमला लड़खड़ाती हुई मेरे सामने आकर खड़ी हो गई। उसकी बड़ी २ आंखों से मोतियों की वर्षा हो रही थी। वह नतजानू हो रोते रोते बोली —"मुझे माफ़ करो भाई ! यदि तुम मेरी अवस्था को समझते....."

झां झां झां झां करता वायु का जबर्दस्त झोंका आया। हम दोनों अपने मनोभावों में इतने व्यस्त थे कि यह भी अनुभव करने का मौका न मिला कि चारों ओर से बादल घिर आये हैं। वायु के इस झोंके ने हम दोनों को चौंका दिया। मैंने घबराकर कहा—

कमला चलो, बड़े ज़ोर से पानी बरसेगा।"

कमला के उठने के पहले ही मेघ ने अपना कार्य आरम्भ कर दिया। आंधी पानी दोनों एक साथ। चारों ओर अंधकार छागया, आंधी के प्रचंड झोंकों ने हम दोनों को धूल से भर दिया। मैंने चिल्ला कर पुकारा-"कमला.....कमला....." किन्तु मेरा चीत्कार हवा के वेग में मिल गया। कमला उसे नहीं सुन सकी। मैंने अंधे की भांति कमला का हाथ अपने हाथ में पकड़ लिया। किसी तरह गिरते पड़ते हम दोनों एक बड़े पहाड़ के नीचे आकर रुक गये। पहाड़ का अगला हिस्सा कुछ लम्बा और नीचे की ओर झुका हुआ था। अतः इस से थोड़ा सा आश्रय मिला। मैंने पूछा—"कमला ! अब घर कैसे चलें ?"

"न मालूम वह अपने मन में क्या सोचते होंगे।" कमला ने भीतस्वर में उत्तर दिया।

इतनी देर तक इस प्राकृतिक विप्लव में हम अपनी अवस्था को भूल गये थे। परन्तु कमला के इस उत्तर ने मुझे फिर उसी उधेड़बुन में डाल दिया। कमला का पहले कटोर और रूखे स्वर में बातें करना, फिर क्षण भर बाद ही क्षमा प्रार्थना करना आदि बात एक एक करके मुझे याद आने लगी। मैंने सोचा— इस असहाया रमणी के हृदय में कितना द्वन्द मचा है। एक ओर विवेक उसे सावधान करता है, तो दूसरी तरफ़ उसके हृदय की कोमल वृत्तियां उसे अपनी ओर खींच रही हैं। वह साधारण स्त्री नहीं है, शिक्षित होने के कारण अभी तक अपने को संभाले हुए है। मैं इन सब बातों को जितना ही सोचने लगा, उतना ही मेरा हृदय कमला के प्रति भक्ति और प्रेम से परिपूर्ण हो उठा।

सामने के एक वृक्ष पर कड़कड़ाती हुई बिजली गिरी। उसके विकट और भयानक गर्जन से कमला घबरा गई। वह अपने को संभाल नहीं सकी। अज्ञानावस्था में मेरे कंधे पर अपना सिर रख कर खड़ी हो रही। मैंने उसके बिखरे हुए बालों को ठीक कर के कहा—

"कमला ! भय लगता है ?"

कमला ने कोई उत्तर नहीं दिया। वह उसी तरह मुझ पर अपना सारा भार डाल कर खड़ी मुझे एकाएक बाल्यकाल का स्मरण हो आया। मैंने पूछा—"कमला ! क्या फिर हम लोगों का लड़कपन आगया ?" कमला इस बार भी निरुत्तर रही। उसके बिखरे बाल मेरे मुँह पर नाचने लगे। मुझे ऐसा जान पड़ा कि मानो कमला रो रही है। मैंने विस्मित होकर पूछा— "रोती क्यों हो कमला ?"

कमला ने इस बार सिर उठाया। उसकी आंखें सावन भादों के तालाब की तरह भरी हुई थीं और उनसे मोती टपकते थे। मेरे दोनों हाथ पकड़ कर उसने कहा— "भाई ! मुझे क्षमा करो।"

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

"क्यों ? क्या कहती हो कमला ? खुल कर कहो।"

कमला ने उसी स्वर में कहा—"भाई ! यदि तुम मुझ पर दया न करोगे तो मेरी गृहस्थी नष्ट हो जायगी। मैं दीन दुनिया दोनों से चली जाऊँगी।"

मैंने कोई उत्तर नहीं दिया। चुपचाप सुनतारहा।

"मेरी अवस्था पर एक बार विचार कर देखो। मैं अपनी इच्छा से तुम्हारी अवहेलना नहीं करती। मैं पहले तुम से प्रेम करती थी, अब भय करती हूं। तुम्हारा कोई दोष नहीं है। तुम विद्वान और चरित्रवान हो, अपने को संभाल सकते हो। लेकिन मेरे मन का तो कोई उपाय नहीं है। उस पर तो मैं विश्वास नहीं कर सकती ! मैं एक सामान्य स्त्री हूं। यदि मैं सावधान न होऊँ तो ईश्वर के सामने क्या उत्तर दूँगी ? तुम्हीं बताओ। भाई ! इसी लिये मैं इतनी कठोर हुई थी, लेकिन तुम को सामने देख कर मैं सब कुछ भूल जाती हूँ, अपनी अवस्था का मुझे ज़रा भी ज्ञान नहीं रहता। .....अभी थोड़ी देर पहले मेरी क्या हालत थी, मैं निर्लज्ज की भांति तुम्हारे कंधे पर सिर रख कर ....." इसके आगे वह बोल नहीं सकी, उच्च स्वर से रोने लगी। कुछ काल तक हम लोग इसी अवस्था में खड़े रहे। हठात् मनुष्य के कंठस्वर ने हमारा ध्यान अपनी ओर खींच लिया। मैंने देखा, जैसे कोई लालटेन लिये हमारी ओर चला आरहा है। रोशनी धीरे-धीरे और भी पास आगई। जान पड़ा, जैसे डाक्टर साहब मुझे पुकार रहे हैं। मैंने कमला से कहा—

"कमला ! तुम्हारे पति हम लोगों को खोजते खोजते यहां आगये हैं। आंसू पोंछ कर सावधान हो जाओ। और.....और तुम्हारी बात का जवाब कल दूंगा। परन्तु इतना ख्याल रखना कि मैं पापी नहीं हूं।"

(५)

कमला ने रात को डाक्टर साहब से मेरे साथ अपना पूर्व परिचय तथा यहां आने के बाद की सभी बातें खोल कर कहदीं। परन्तु यह मुझे मालूम नहीं हुवा। मैंने रात को ही निश्चय कर लिया कि कल भोर की गाड़ी से वापस चला जाऊँगा। दूसरे दिन जब डाक्टर साहब को यह मालूम हुआ तो वह मेरे कमरे में आये, मैं उस समय अपना बिस्तर बांध रहा था। उन्होंने कहा—

"महेश बाबू ! मैंने सुना है, आप भागना चाहते हैं ?"

मैंने कहा—"भागना नहीं, जाना चाहता हूँ।"

"ऊँ हूँ" डाक्टर साहब ने सिर हिलाते २ कहा—"यह नहीं हो सकता, हम जब छोड़ेंगे तभी तो आप जायेंगे ? मैं आपका हाथ पकड़ लूंगा और लीला को सिखा दूँगा कि वह आपकी मूंछ पकड़ ले। फिर देखूं आप किस तरह जाते हैं ?"

मैंने एक मलीन हँसी हँसते हुए कहा—"मुझे क्षमा करें डाक्टर बाबू ! मैं अब किसी प्रकार यहां नहीं ठहर सकता। आपके हाथ पकड़ने से भी नहीं और लीला के मूछ पकड़ने से भी नहीं। आप इस बात का ख्याल भी न करें कि मुझे यहां किसी तरह का कष्ट है। मैं सच कहता हूं, आपके यहां मैं राजा की तरह सुख पूर्वक रहा हूँ। किन्तु अब नहीं ठहर सकता। मुझे क्षमा करें।"

मेरे उत्तर से वह हताश होगये। मैंने सुना वह चिन्तित मन से यह कहते जा रहे हैं—"नहीं नहीं, ये लोग देवता हैं। मनुष्यों से इनकी तुलना नहीं की जा सकती।"

आज तक मैं इसका मतलब नहीं समझ सका।

(संकलित)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अश्रु

(लेखक— महावीर प्रसाद "मञ्जुल")

आः ! क्रोधानल का परिताप; क्लेश—कठिन का क्रूर कलाप ;
शोक समाहत का वह—शाप; शमन करें क्यों अश्रु-न आप ॥ १ ॥

तुम से सब दुख के जलवाह ; अश्रु ! गगन की लेते राह— ;
व्याधि आधि की सरित अथाह—पार कराते बन मल्लाह ॥ २ ॥

तुम हिय के अन्तर्हित भाव—करते व्यक्त बना प्रस्ताव
क्रूर-करों से भी तुम अश्रु !—बहुधा करते प्राण बचाव ॥ ३ ॥

जब हो उठता हर्षोद्रेक ; तब दृग जो करते अभिषेक ;
बिन्दु अहा ! उसका प्रत्येक ; अश्रु ! कराते मूल्य-विवेक ॥ ४ ॥

तुम हो उपकारों के मूल ; तुम से जग होता अनुकूल ;
जब दृग में जाते हो मूल ; क्रूर तभी होते मृदु फूल ॥ ५ ॥

तुम हिय भावों का अनुवाद ; प्रकटित करते हर्ष—विषाद ।
तुम खोते सहसा उन्माद—; और विवशता आती— याद ॥ ६ ॥

तुम बच्चों के मित्र महान—; करा हृदय-भावों का ज्ञान—
मातृ-प्रेम का कर उत्थान— तुम ही कराते अमृत पान ॥ ७ ॥

अश्रु ! आप की निर्मल धार— देती बहा पाप परिवार ;
जब टूटे आशा का तार— तब तुम देते हो मन मार ॥ ८ ॥

जब विरही के उठती पीर— तब तुम देते आकर धीर ;
अश्रु ! बिन्दु भर लख दृग-तीर, सहसा कायर बनते वीर ॥ ९ ॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वेदों में दार्शनिक विचार

(४)

(ले०—श्री पं. धर्मदेव जी वेदवाचस्पति)

प्रकृति का स्वरूप

ड् दर्शनों में जिस सरलता से प्रकृति का स्वरूप पता लग सकता है, उस तरह वेदों में प्रकृति का स्वरूप जान सकना अत्यन्त कठिन है। वैदिक ऋचाओं के अनुसार प्रकृति का स्वरूप क्या है, यह हमें किसी एक स्थान पर सरलता से नहीं मिलता। स्थान २ पर बिखरे हुए मोतियों को एकत्र करने की कठिनता वेदानुशीलन प्रेमी स्वयं जानते ही है। इस लिए जो थोड़े बहुत मंत्र इस बात के लिये मिले हैं, उन्हीं के आधार पर कुछ लिखने का प्रयत्न करेंगे।

प्रकृति त्रिगुणमयी है

ज्येष्ठ ब्रह्म का वर्णन करते हुए अथर्व १०।८।४३ में ब्रह्म के निवास मन्दिर-शरीर-का वर्णन किया है कि-"पुण्डरीकं नवद्वारं त्रिभिर्गुणेभिरावृतम्। तस्मिन्न यद्यक्षमात्मन्वत् तद्वै ब्रह्मविदो विदुः॥" अर्थ—नौ द्वार (दो नेत्र, दो कान, दो नाक, एक मुख, एक मूत्रद्वार तथा गुदा) वाला एकशरीर रूपी पुण्डरीक है जो तीन गुणों से आवृत है। उस पुण्डरीक में जो आत्मायुक्त पूजनीय ब्रह्म है उसे ब्रह्मज्ञानी ही जानते हैं।

इस से दो परिणाम निकलते हैं कि (१) आत्मा ब्रह्म और शरीर पृथक् २ वस्तुएं हैं (२) यह शरीर तीन गुणों वाला है। ये तीन गुण क्या २ है? इसका स्पष्ट वर्णन तो वेद में कहीं उपलब्ध नहीं होता। संभवतः ये तीन गुण सत्व, रज, तम रूप प्रकृति के लिये कहे गये हैं। यह एक मंत्र है जिससे प्रकृति का त्रिगुण रूप होना ज्ञात होता है।

अनादि और अनन्त

कार्य कारण संबन्ध से प्रकृति या सलिल वा आपः को जगत् का आदि मूल उपादान कारण बताया गया है। वह आदि मूल कारण किसी से उत्पन्न नहीं होना चाहिये, क्योंकि यदि वह भी किसी से उत्पन्न होगा तो जगत् का आदि मूल कारण वह वस्तु होगी जो 'सलिल' का भी मूल है न कि 'सलिल' या 'आपः'। इस कारण 'मूले मूलाभावाद्-मूलं मूलम्' इस सिद्धान्त के अनुसार प्रकृति को या सलिल या आपः को भी मूलरहित अर्थात् अनादि होना चाहिये। प्रकृति अनादि है या नहीं इसका निर्णय दो प्रकार से हो सकता है। एक तरीका तो यह है कि प्रलयकाल या सृष्ट्युत्पत्ति का वर्णन पढ़ कर यह देखा जावे कि सलिल का कोई कारण माना है या नहीं। यदि प्रकृति की उत्पत्ति नहीं बताई गई, तो हम अनुमान कर सकते हैं कि प्रकृति अनादि होगी और दूसरा तरीका यह है कि स्पष्ट शब्दों में प्रकृति को अनादि कह दिया गया हो।

यदि प्रथम उपाय से कुछ देखने की कोशिश करें तब तो यही प्रतीत होता है कि आपः या अनादि है क्योंकि कहीं भी उसकी उत्पत्ति का वर्णन नहीं आया। नासदीय सूक्त में प्रलय का वर्णन करते हुए लिखा है—"आनीदवातं स्वधया

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

तदेकं तस्माद्धान्यन्न परः किंचन आस ।" अर्थात् उस समय (प्रलय काल) में प्रकृति सहित ब्रह्म प्राण धारण कर रहा था। कहने का तात्पर्य है यह कि प्रलय ब्रह्म और प्रकृति विद्यमान थी। यदि ये दोनों अथवा इन में से कोई एक किसी अन्य का कार्य होता तो केवल उसी कारण का वर्णन किया जाता। परन्तु ऐसा न करके प्रकृति और ब्रह्म की सत्ता का प्रलयकाल में ज़िकर करना इसी परिणाम पर पहुँचाता है कि वक्ता का तात्पर्य दोनों को अनादि और अनन्त कहना है। इसी प्रकार निम्न मंत्रों से भी सृष्टि के आदि में 'आपः' और परमात्मा का वर्णन करने से यही प्रतीत होता है कि इन दोनों को अनादि माना गया है। मंत्र इस प्रकार है—

आपो अग्रे विश्वमायन् गर्भं दधाना अमृता ऋतज्ञाः। यासु देवीष्वधि देव एक आसीत् कस्मै० .....॥ अ०४।२।६॥

आपो वत्सं जनयन्ती गभमग्रे समैरयन्—॥ अ. ४।२।८॥

तमिद्गर्भं प्रथमं दध आपो यत्र देवाः समगच्छन्त विश्वे॥ ऋ. १०।८२।६॥

यदि आपः का कोई कारण होता तो उसे इस विश्व का कारण माना जाता। उस समय 'आपो अग्रे विश्वमायन्' न कह कर '—अग्रे विश्वमावन्' कहा जाता। साथ ही ब्रह्म के और 'आपः' का इकट्ठा वर्णन करना स्पष्ट बता रहा है कि ब्रह्म और आपः पृथक २ हैं। इन में से कोई किसी का कारण या कार्य नहीं। आपः स्वयं अनादि हैं, इस विषयक कुछ मन्त्र पेश किये जाते हैं। अथर्व १०। ८। ३० में लिखा है—

एषा सत्ती सनमेव जातैषा पुराणी परि सर्वबभूव। मही देव्युषसो विभाती सैकेनैकेन मिषिता विचष्टे॥ १०।८।२६॥

इन मंत्रों में 'सनत्नी' 'सनमेव जाता' तथा 'पुराणी' या 'पूरभूमं' शब्द प्रकृति के अनादिता के द्योतक हैं। इस एक मन्त्र में ही बड़े जोरदार शब्दों में प्रकृति की अनादिता का प्रतिपादन किया है। इन शब्दों का अर्थ इस प्रकार है।

(i) सत्ती = सनं तनी = सनातनी = सदैव विद्यमान।

(ii) सनं एव जाता = सदैव विद्यमान।

(iii) पुराणी—पुरा सत् नवा = अर्थात् पुराणी होती हुई भी नवीन है। अर्थात् अनादि काल से नवीन चली आ रही है। इस कारण प्रकृति को अनादि मानना पड़ता है।

जिसकी उत्पत्ति नहीं हुई उसका विनाश भी नहीं हो सकता। यदि प्रकृति अनादि है तो वह अनन्त भी होनी चाहिए। प्रकृति या 'आपः' अनन्त भी हैं इसके विषय में निम्न मंत्र विचारणीय है:—"आपो अग्रे विश्वमावन् गर्भं दधाना अमृता ऋतज्ञाः। अ. ४।२।६॥ अर्थात् सृष्टि के आदि में अविनाशी (अमृताः) तथा सांसारिक नियमों को धारण करने वाले 'आपः' प्रकृति ने सारे संसार को धारण किया हुआ था।

इस मंत्र में जो 'अमृताः' शब्द है उस से प्रकृति के नाशरहित होने की सूचना दी है। इस लिए प्रकृति को अनन्त मानना पड़ता है। इसी प्रकार अ. १।१६४।३८। मंत्र में जीव के वर्णन से स्पष्ट प्रतीत होता है कि वैदिक मतानुसार जीव और प्रकृति हमेशा रहने वाले हैं। उन का कभी नाश नहीं होता। मंत्र इस प्रकार है—आपाङ् प्राङेति स्वधया गृभीतोऽमर्त्यो मर्त्येना सयोनिः। ता शश्वन्ता विषूचीना वियन्ता न्यन्यं विक्यु र्न निचिक्युरन्यम्॥ ऋ. १।१६४।३८॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ—अन्न अर्थात् शरीर से पकड़ा हुआ, इस मरणधर्मा के साथ रहने वाला अमर जीवात्मा इधर उधर (योनियाँ में) आता जाता है। वे दोनों (प्रकृति और जीवात्मा) नित्य रहने वाले, इतस्ततः गति करने वाले, और गतिशील हैं॥ साधारण जन इन में से एक को जानते हैं और एक को नहीं।

इस प्रकार इस मंत्र का 'शश्वन्ता' पद भी इसी परिणाम पर पहुंचाता है कि प्रकृति अनन्त है। इस के अतिरिक्त 'अदिति' शब्द स्वयं इस परिणाम पर पहुँचाता है। अथर्व ७ म काण्ड के छठे सूक्त में प्रकृति का वर्णन प्रतीत होता है।[1] 'दो अवखण्डने' से इट् प्रत्यय और निषेधार्थ में न ञ् समास करने पर 'अदिति' शब्द की सिद्धि होती है। जिसका धात्वर्थ यह है कि जिसका नाश न हो। अथर्व ७।६।१ में सारे संसार को अदिति कहा गया है। इसके अतिरिक्त "आदित्याः" (अदितेरुत्पन्नाः) वा इमा प्रजाः।तां १३।६।५॥ वाक्य का तात्पर्य भी यही प्रतीत होता है। शतपथ ब्राह्मण में अदिति के निर्वचन से भी यही प्रतीत होता है कि प्रलय काल में यह संसार जिस वस्तु में लीन हो जाता है उसे अदिति कहते हैं। शत० १०।६।५।५। में लिखा है—"सर्वं वा अत्तीति तददितेरदितित्वम्।" अर्थात् क्योंकि यह सारे संसार को अपने में लीन कर लेती है अतः इसे अदिति कहते हैं। इसी कारण ही प्रकृति को सांख्य में प्रधान नाम दिया गया है—प्रधीयन्ते कार्याणि अस्मिन् इति" अर्थात् सब कार्य जगत् इस प्रकृति में लीन हो जाता है। अथर्व ७।६।२ में "तुविक्षत्रामजरन्तीमुरूचीं ..... ।' इत्यादि विशेषणों में अजरन्ती (कभी नष्ट न होने वाली) विशेषण प्रकृति के अविनश्वरता का पोषक है।

अब विचारणीय यह है कि इस जगत् का जो

जड़

उपादान कारण है वह जड़ है, या चेतन। 'कारणगुणपूर्वको कार्यगुणो दृष्टः' या 'Like p,oduces like' सिद्धान्त के अनुसार प्रकृति को जड़ मानना पड़ता है। प्रकृति जड़ है या नहीं इस विषय पर निम्न मन्त्र कुछ प्रकाश डालते हैं। इन में से पहला मन्त्र इस प्रकार है—

१. अदिति द्यौरदिति रन्तरिक्ष मदिति र्माता स पिता स पुत्रः। विश्वे देवा अदिति पंचजना अदितिः जात मदितिर्जनित्वम्॥

मही मूषु मातरं सुव्रतानाममृतस्य पत्नी मवसे हुवेमहे।
तुविक्षत्रामजरन्ती मुरूचीं सुशर्माणमदितिं सुप्रणीतिम्॥

पुण्डरीकं नवद्वारं त्रिभिर्गुणेभिरावृतम्।
तस्मिन् यद्यक्षमात्मन्वत् तद्वै ब्रह्मविदो विदुः॥
अथर्व १०।८।४३॥

इस मन्त्र में त्रिगुणात्मक प्रकृति के अतिरिक्त आत्मा और यक्ष का वर्णन करने से यही प्रतीत होता है कि प्रकृति को अचेतन (जड़) माना गया है। इस के अतिरिक्त एक और मंत्र है—

स्कम्भेनेमे विष्टभिते द्यौश्च भूमिश्च तिष्ठतः।
स्कम्भ इदं सर्वमात्मन्वत् यत् प्राणन्निमिषच्च यत्॥
अ. १०।८।२॥

इस में बताया है कि दो प्रकार का संसार स्कम्भ के आश्रय में है। (१) जो स्थावर (तिष्ठत्) है। (२) जो प्राणत् और निमिषत् है। इस मन्त्र में पहली कोटि के संसार में इस स्थूल ब्रह्माण्ड (द्युलोक से पृथिवी तक) को गिना है। दूसरी कोटि वाली वस्तुओं को आत्मा वाली (आत्मन्वत्) गिना है। इस से मालूम पड़ता है कि आत्मा वाली वस्तुएं प्राणन किया करती हैं (यथा मनुष्य पशु पक्षी), या निमेष किया करती हैं (यथा वृक्ष, क्योंकि इन का नाम 'अन्तः संज्ञ' भी है, । इस प्रकार इस स्थूल संसार को तिष्ठत् या स्थावर या जड़ माना है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पुनर्मिलन

छेड़ रहा है क्यों गुलाब की पँखुड़ी से रह रह कर ?
ओ मेरे नन्हे अजान ! मैं हूँ श्मशान के पथ पर !!
हाय लाल ! बहियाँ न डाल, मोती बखेर मत अपने
मैं सच्चे करने आऊँगा अपने सुन्दर सपने ।

× × × × ×

ढला दिवस, हो चली साँझ, दीपक में स्नेह चुका है
इस नीरस दिल को सम्हाल कर जग में कौन सका है !
मेरे जीवन के प्रभात में जो कलियाँ मुसकाईं
उन में से न एक भी अब तो पड़ती है दिखलाई !!!

× × × × ×

इसी लिये होकर सवार अब टिकटी पर मैं चलना
चिता-भस्म लूँ छान देख लूँ कौन कौन है मिलना ।
उन सब को ले एक बार फिर किलकारी भर लूँगा
शैशव के पंखों पर चढ़ कर तुझ से आन मिलूँगा ।

'प्रिय हंस'

वार है ।

वार है न पार तेरे ज्ञान सिन्धु उत्तम को,
तीन लोक जन जस गावत तुहार है ।
हार है कविन के गले की मातु सुन्दर तें,
स्रष्टा चतुरानन की चतुर सुनार है ॥
ना रहै इच्छा कछु पावै जब मनुज तोहिं,
जगतीतल भुषण होय तेरी दरकार है ।
का रहै पावइ को तेरी कृपा दृष्टि भये,
वीणा हाथ लीन्हे मातु हंस पै सवार है ।

—श्री राम

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

"वाह रे मैं !"

(आचार्य गड़बड़ानन्द)

परमात्मा ने किसी को छोटा नहीं बनाया, किसी को बड़ा नहीं बनाया; दुनियां में तो जो छोटा होकर रहे वह छोटा, जो बड़ा होकर रहे वह बड़ा। अकड़ कर चलो, दुनियां तुम्हारे सामने रेंगने लगेगी ; रेंगने लगो, तो दुनियां तुम्हारे सामने अकड़ने लगेगी। मानी हुई बात है: दबने लगो तो तुम्हें दबाने वाले एक-एक ईंट के नीचे से निकल आयेंगे, दबाने लगो तो आस्मान में उड़ने वाले तुम्हारी एड़ियों के नीचे स्वयं आ-आ कर रुंदने लगेंगे। दुनियां में बड़ा बनने का तरीका है अपने को छोटा न समझना, दूसरों को छोटा बनाने का तरीका है अपने को उन से बहुत—बहुत हीं—बड़ा समझना। जिस के एक वाक्य में दस बार 'मैं' दोहराई जाय वह यदि आज साधारण आदमी दीखता है,तो,कल तो अवश्य असाधारण दीखने लगेगा, यदि आज साधारण से कुछ अधिक जान पड़ता है तो कल असाधारण से कुछ अधिक अवश्य ही जान पड़ेगा। जो आदमी बड़ा बनने के पीछे हाथ धोकर पड़ा है उस का महामन्त्र है, दुनियां को काठ का उल्लू समझना और तोते की तरह अपनी 'मैं' की रट लगाये जाना। जब वह किसी भलेमानस के सामने उसे उल्लू समझ कर बात करता है, और निरन्तर, दिनों,महीनों, वर्षों यही समझ कर किये ही चलता है तो एक-न-एक दिन उस का पलड़ा भारी हो ही जाता है। लोग यदि उल्लू नहीं भी होते तो भी उस की 'मैं' के सामने कुछ देर के लिये उल्लू बन जाते हैं और वह पट्ठा अपनी पीठ ठोकता हुआ उछल कर कहता है: 'वाह रे मैं !'

यदि कोई व्यक्ति अपने को बड़ा समझ कर और दूसरों को छोटा समझ कर बड़ा बनता है तो उसे देख कई लोग तिलमिला उटते हैं। वे कहते हैं, यह घमण्डी है ! परन्तु इतना कह देने से कुछ नहीं बिगड़ता। ज़रा सोचने की बात है कि एक ही मनुष्य को 'शैतान' भी कहा जा सकता है और उसी गुण के लिये उसे 'अक्लमन्द' भी कह सकते हैं। उसी आदमी को कई लोग 'बुद्धू' कहते हैं और उस के बुद्धूपन को दूसरे 'सीधापन' कहते हैं। एक ही आदमी को 'झूठा' भी कहा जा सकता है और झूठा न कह कर 'चालाक' भी कहा जा सकता है। हरेक बात के लिये अपना २ दृष्टि-कोण है। यदि कोई हमें 'घमण्डी' कहे तो इस से क्यों बिगड़ना, अपने-राम तो इसी को स्वात्माभिमान कहते हैं, वही स्वात्माभिमान जिसे अंग्रेजी में सैल्फ़-रिस्पेक्ट कहते हैं, वही न, जिस के विषय में कवि ने कहा है: 'पादाहतं यदुत्थाय मूर्धानमधिरोहति !' इसलिये 'घमण्डी' होना कोई

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बुरी बात नहीं है । जो अपने आप को कुछ समझता है, दुनियां भी उसे कुछ समझने लगती है। जो हरेक के सामने हाथ जोड़ता है, हरेक को 'जी' कह कर पुकारता है वह फिर इसी काम का रह जाता है, वह दूसरों से हाथ जुड़वा नहीं सकता, 'जी' कहलवा नहीं सकता।

लखनऊ में हमारे एक दोस्त हैं जिन पर बड़े होने की धुन सवार है, साथ ही वे इस विद्या में महाप्रवीण हैं। एक दिन उन्हें कुछ मित्रों सहित किसी सज्जन ने अपने घर पर भोजन के लिये निमन्त्रित किया । उस बेचारे के घर में बैठने की जगह थोड़ी थी। जिस कमरे में उस ने सब लोगों के बैठने का प्रबन्ध किया था उस में एक बड़ी-सी चौकी पड़ी थी। घर दुमञ्जिले पर था, जगह बहुत थोड़ी थी, इस लिये चौकी को कमरे से बाहर निकाल कर रखना भी कठिन था। उस ने दो आसन चौकी पर भी बिछा दिये ; सोचा होगा, इस मण्डली में जो सब से बड़े होंगे वे इस पर विराज जायंगे। मण्डली कमरे में प्रविष्ट हुई तो इन 'वाह रे मैं!' की आंखें चौकी पर पड़ीं। भगत ने मण्डली के एक सज्जन को चौकी पर बैठने के लिये कहा। इधर ये हज़रत नीचे बिछे आसनों में से एक पर बैठने के लिये आधा झुके ही थे कि 'बहुत अच्छा' कह कर लपक कर चौकी पर जा कूदे। लोग सोचने लगे, चौकी पर लपक कर दूसरों से ऊंची जगह पर जा बैठना तो इन की घुट्टी में है, परन्तु 'बहुत अच्छा' कहने का क्या मतलब ? भोजन के उपरान्त एक मनचले ने पूछ ही लिया, "महाशय ! यह 'बहुत अच्छा' आप ने क्या कहा था ?" बोले: 'उन्हों ने चौकी पर बैठने को जो कहा था !' इतने में आवाज़ सुनाई दी: 'इन्हें इस से क्या मतलब कि उन्हों ने किस से कहा था। उन्हों ने चौकी परे बैठने के लिये कहा था ; लिहाज़ा, इन्हीं से कहा होगा !' इन्हीं सज्जन के विषय में सुना गया है कि वह जब भी किसी को पुकारते हैं, 'तुम' कह कर पुकारते हैं। दूसरा आदमी शिष्टाचार में ही मरा रहता है। दिल में जला-भुना करता है। सोचता रहता है, इस में शिष्टाचार नहीं तो मैं इसे क्यों खोऊं। इधर ये हज़रत बेधड़क हो 'तुम' का इस्तेमाल जारी रखते हैं। ख़ास कर बीस आदमियों के बीच में खड़े हुए किसी को—जिस किसी पर मन चला—'तुम' कह कर पुकार मारते हैं। उन बीस पर तो इन के रोब का सिक्का पूरा जम जाता है। यदि कहीं डर हो कि दूसरा भी अपने-सा रुस्तम न निकल आये तो 'तुम' शब्द का प्रकट रूप से प्रयोग न किया, ऐसा वाक्य घड़ा जिस का मतलब वही निकल आये। मसलन, पूछ लिया, किधर जाते हो ? अर्थात्, 'तुम' किधर जाते हो ! दूसरा भी कहीं 'तुम' कहने वाला ही निकल आया तो 'तू' के शस्त्र का हल्का-सा इस्तेमाल कर लिया, लेकिन किया ऐसे ढंग पर जिस से किसी को बुरा न लगे। कह दिया, अरे यार, तू तो मानता ही नहीं ! और यह भी बीस-तीस आदमियों की मौजूदगी में। यदि वह बिगड़े तो

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सब के सामने उसे बेवकूफ़ बनाया और न बिगड़े तब तो तीर निशाने पर बैठ ही गया। इतना साहस थोड़ों में होता है जो 'तुम' और 'तू' का जवाब तू-तुमक्कड़ में दें, अक्सर लोग सुन ही लेते हैं और झेंप कर, दूसरा चारा न देख, पास खड़े हुओं पर यही असर डालने के कोशिश करते हैं कि इन दोनों में बड़ी लंगोटिया यारी है।

तरकीबों से बड़े बनने वाले इन 'वाह रे मैं' को एक और हुनर याद है। ये जब किसी से मिलते हैं, उसे प्रणाम ज़रूर करते हैं। यदि पहले उस ने हाथ जोड़ दिये तब तो उस का ऐसे लहज़े से उत्तर दिया जैसे उसे आशीर्वाद दे रहे हों, जैसे उस ने इन्हें महात्मा समझ कर हाथ जोड़े थे, केवल शिष्टाचार के कारण नहीं। यदि उस ने पहले हाथ न जोड़े तो इस हाव--भाव से हाथ उठाए, जिस से उस के और देखने वालों के दिल में अच्छी तरह बैठ जाय कि वह प्रणाम करना भूल गया था, उस के कर्तव्य को इन्होंने याद दिला दिया, और इतने बड़े होकर भी इन्हों ने पहले नमस्कार कर दिया। इस में तो शक नहीं कि ये 'वाह रे मैं' अक्सर रोज़ ही लोगों को इस तरह की उन की भूलें याद कराते रहते हैं और लोग भी रोज़ ही ऐसी भूलें करने से बाज़ नहीं आते, परन्तु इस से उन्हें मतलब ? उन्हें खूब अच्छी तरह से मालूम है कि दुनियां बेवकूफों से भरी हुई है। लोगों से हाथ जुड़वाना कोई कठिन काम नहीं, उस के लिये भले ही कुछ देर के लिये खुद ही क्यों न हाथ जोड़ने पड़ें। आखिर इस से ज्यादह संतोष की क्या बात हो सकती है कि हाथ जोड़ते हुए भी दिल में यह ख्याल हो कि क्योंकि इन लोगों से यह काम कराना है इसलिये, चलो, कुछ देर के लिये यह ड्रिल भी कर लो।

कुछ लोगों का कहना है कि अपने मिथ्याभिमान की भूख को खुराक देते रहने से कोई बड़ा थोड़ो-ही बनता है। परन्तु कितनी बड़ी भूल है ! क्या उन लोगों का यह कहना है कि यदि किसी में स्वात्माभिमान न हो तो मिथ्याभिमान भी न हो ? यही मिथ्याभिमान, जब लोगों के सन्मुख बार २ आता है तो स्वात्माभिमान हो जाता है। यह तो संसार की आदत ही है। जिस बात को वे बार २ सुनते रहते हैं उसे सच्ची समझने लगते हैं, जिस चीज़ को बार २ देखते रहते हैं उसे मिथ्या से यथार्थ कहने लगते हैं। जिन महापुरुषों को परमात्मा ने लोगों की आंखों में धूल झोंकने की अद्भुत शक्ति दी है वे इस शक्ति से लाभ क्यों न उठाएँ ? क्या शहरों में रोज़ देखा नहीं जाता, दो-दो फीट के ठिंगने ऐसे तन कर चलते हैं जैसे दस फ़ीट के लम्बे-चौड़े जवान हों। जब उन से कोई बात की जाती है तब वे बड़े-बड़े लाला लोगों को शरमा देने वाली बातों में उस का जवाब देते हैं। बस, इसी तरह बरतने से आदमी दुनियां में बड़ा बन जाता है। बड़ों के सींग थोड़े-ही लगे हैं, ना ही बड़े आदमी आस्मान से टपकते हैं। छोटे-बड़े सभी इसी जमीन से

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उपजते हैं परन्तु ढोल लेकर अपने नाम का ढिंढोरा पीटने वालों को दुनियां बड़ा कहने लगती है, और ढोल की आवाज से दुबक जाने वालों को छोटा! व्यवहार-कुशलता इसी का तो नाम है। तुम्हारे दुनियां में आते ही सवाल पेश होगा, क्या तुम इतना दम रखते हो कि घड़ी २ "मैं"-"मैं" की रट लगा कर, मौके-बेमौके 'मैं' की जगह "हम" का इस्तेमाल कर के, अपने छोटे २ कामों को—छींक मारने तक को—इस तरह सुना कर, जिस से लोगों पर यह असर हो कि वे इतिहास में अमर हो जाने वाली घटनाएँ हैं, संसारी तुच्छ जीवों पर अपनी छाप जमा सको? क्या तुम इतना साहस रखते हो कि जिस व्यक्ति से कद में चार इंच छोटे हो उस से अपने को दो इंच लम्बा कह सको? क्या तुम अपने से आयु में तीस दिन छोटे व्यक्ति पर, उसे हर समय यह कह कर कि आख़िर आप मुझ से आयु में छोटे ही हैं, यह असर डाल सकते हो कि वह अनुभव करने लगे कि वह तुम से तीस दिन नहीं तीस बरस छोटा है? क्या तुम अपने से १० साल बड़े व्यक्ति को समझा सकते हो कि, आख़िर, तुम्हारी और उस की उम्र में कोई बहुत ज्यादह फ़रक तो नहीं है, दोनों की उम्र लगभग बराबर ही है? क्या जब कोई मजलिस लग रही हो, और कोई बड़ा आदमी किसी बड़े आदमी की तरफ मुखातिब होकर कोई बात सब को सुना रहा हो, उस समय ज़ोर २ से 'हां'—'हां' की दाद देकर तुम दूसरे सुनने वालों पर यह असर डालने की कोशिश कर सकते हो कि वास्तव में तुम्हारी तरफ़ मुखातिब होकर ही बात की जा रही है? और क्या, जब लोग तुम्हारे इस अहमकपन पर धीमे २ मुस्किराने लगें तब तुम उन पर ऐसी नज़र फेंक सकते हो जिस से पता चले कि तुम नहीं, पर वे ही अहमक हैं? क्या यह सब कुछ तुम्हारे जीवन का, तुम्हारे स्वभाव का, तुम्हारी प्रकृति का ऐसा हिस्सा बन गया है कि तुम्हें उस का कुछ पता ही नहीं, मानो तुम्हारे लिये ये बातें ऐसी हैं ही नहीं जिन पर लोगों की आंखें जमें या जिन पर लोगों को उंगली उठाने का मौका हो? क्या तुम्हारी रग २ से, रोम २ से, एक २ अदा से यह स्वभाव टपका पड़ता है, चू रहा है, या बरस रहा है, और तुम उसे ऐसे ही नहीं देख सकते जैसे अपनी आंखकी पुतली को? यदि तुम में ये गुण हैं तो तुम वास्तव में व्यवहार-कुशल हो और हर घड़ी, बड़ी खुशी से 'वाह रे मैं!' का हर्षनाद कर सकते हो। बड़े बनने वालों के यही तो लक्षण हैं। जिन महापुरुषों में ये गुण होते हैं वे दुनियां के कान पकड़ कर उसे अपने चरण-कमलों पर ला खींचते हैं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

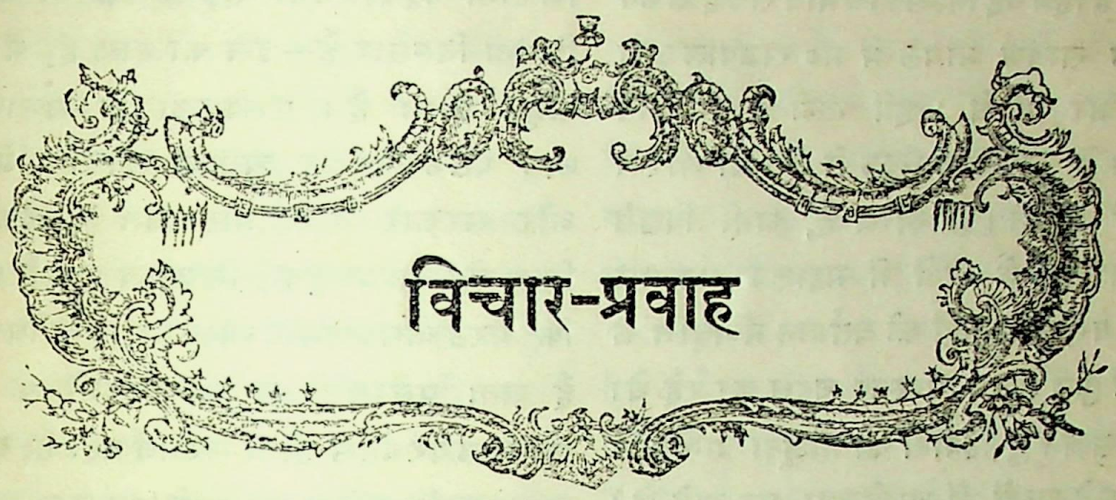

विचार-प्रवाह

१. शहीद राजपाल.

वीर राजपाल अब इस दुनियां में नहीं रहे। उन्हें अमरपद प्राप्त होगया है। उन पर कातिलों की नज़रें बरसों से थीं। उन पर आक्रमण करने वाले दो नरपशु गिरफ्तार भी होगए, फिर भी उन को कतल करने का उद्योग करने वाले नालायकों का जोश ठण्डा नहीं पड़ा। देश का वायुमण्डल बदल गया। रंगीला रसूल की याद लोगों को भूल गई। हिन्दू मुसलमान परस्पर समझौते की ख्वाहिश ज़ाहिर करने लगे, परन्तु कुछ पामरों का जबरदस्त गुट्ट अब भी यही समझता रहा कि राजपाल का खून कर के ही रसूल की इज्ज़त बचाई जा सकती है।

कोई मनुष्य महज़ किसी दूसरे द्वारा हत्या कर दिये जाने से ही शहीद नहीं बन जाता। शहीद वह है, जो जानबूझ कर जान को हथेली पर लिये लिये घूमता फिरे। शहीद वह है, जो कायर बन कर छिपे हमले न करे। शहीद वह है, जिस में रूह हो, लगन हो और हिम्मत हो। राजपाल सचमुच इसी कोटि के व्यक्ति थे। वह दूसरों के कार्यों का परिणाम अपनी छाती पर झेलना जानते थे। वह बरसों से सर पर कफन बांधे रखकर भी भयभीत नहीं हुए, घबराये नहीं। उन्होंने शक्ति पाकर भी अपने दुश्मनों तक के भावों के सन्मुख सिर झुकाया। और सब से बढ़ कर अपने दिल में किसी साम्प्रदाय विशेष के प्रति घृणा का भाव न आने दिया। इसी से हम कहते हैं कि वह सचमुच वीर थे।

राजपाल तो ज़िन्दा हालत में भी शहीद थे; कातिल ने तो सिर्फ उन की शहादत का सबूत भर दुनियां को दिया है। वे लोग नासमझ हैं, अबोध हैं, जो कहते हैं कि एक पागल मुसलमान ने म० राजपाल का बध कर के उन्हें वह इज्ज़त देदी है, जिस के वह योग्य नहीं थे। उन्हें राजपाल के वीर और पवित्र हृदय से जानकारी नहीं है, वे राजपाल को केवल "रंगीला रसूल" के प्रकाशक के रूप में ही देखते हैं। इस में शक नहीं कि यदि रंगीला रसूल प्रकाशित न होता तो अच्छा था, परन्तु ठीक उतने ही बल के साथ हम कहते हैं कि यदि योगिराज कृष्ण और ऋषि दयानन्द पर कीच उछालने का साहस करने वाली पुस्तकें भी प्रकाशित न होतीं, तो अच्छा था। यह सब हुआ, और सचमुच अच्छा नहीं हुआ। परन्तु इस सारे सिलसिले में म० राजपाल कहां तक क़सूरवार थे— हमें

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

देखना यह है। हम यह निस्संकोच भाव से कह सकते हैं कि इस सम्पूर्ण मामले में म० राजपाल ज़रा भी कसूरवार न थे। हमें भली प्रकार ज्ञात है कि उन के हृदय में न रसूल से द्वेश था और न मुसलमानों से घृणा। हमें स्मरण है, अभी पिछले ही वर्ष, सरदियों के दिनों में महाशय राजपाल की दुकान पर, मुसलमानों की वर्तमान मनोवृत्ति के सम्बन्ध में कुछ सज्जन परस्पर बहस कर रहे थे। अधिकांश सज्जन मुसलमानों की मौजूदा मनोवृत्ति की बड़े कड़े शब्दों में आलोचना कर रहे थे। म० राजपाल इस से कुछ ही समय पूर्व एक पामर मुसलमान के हाथों से गहरी चोट खा चुके थे, फिर भी वह इस बहस को बड़ी अनिच्छा से सुन रहे थे। वह चुपचाप व्यस्त होकर अपनी दूकान का कोई हिसाब देख रहे थे। थोड़ी देर में जब उन्होंने देखा कि मुसलमानों के विरोध में बोलने वाले सज्जन कुछ अधिक आवेश में आगए हैं, तब उन्होंने बड़ी सरल मुस्कराहट हंस कर केवल इतना ही कहा—"भाई साहब, क्यों मुसलमानों की सारी ज़मात की जमात पर ये तोहमतें लगा रहे हो। अच्छे और बुरे लोग तो सभी जमातों में होते हैं।"

म० राजपाल अब नहीं रहे। अब केवल उनकी स्मृति बाकी है। उनकी स्मृति एक नेता की नहीं, अपितु एक वीर और कर्तव्यपरायण सिपाही की है और इसी कारण यह और भी अधिक पवित्र तथा अभिमान की वस्तु है। ऋषि दयानन्द के चेले अभी तक कायर नहीं बने। उन में हिम्मत है, जान है, मर्दानगी है— म० राजपाल ने यह लोक छोड़ कर इस बात का सबूत दे दिया है।

२. पब्लिक सेफ्टी आर्डीनान्स

भारतवर्ष जैसे प्राचीन और वृद्धतम देश को खेलने कूदने के लिये 'एसेम्बली' नाम का जो खिलौना दिया गया है, वह कितना बोदा और कितना निस्सार है—इस का हाल ही में एक और सबूत मिला है। एसेम्बली के सभापति माननीय पटेल ने यह व्यवस्था दी कि मेरठ केस और सरकार द्वारा प्रस्तावित पब्लिक सेफ्टी बिल के आधारभूत सिद्धान्त एक हैं और क्योंकि मेरठ केस अभी न्यायालय के विचाराधीन है अतः एसेम्बली के स्थिरनियमों के अनुसार इस बिल पर बहस होना सम्भव नहीं है, इस कारण जब तक मेरठ केस का कोई निर्णय नहीं हो जाता तब तक एसेम्बली में यह बिल पेश करने की आज्ञा मैं नहीं देसकता। सभापति पटेल की यह व्यवस्था बिलकुल उचित और नियमानुकूल थी। फिर भी गोरे पत्र इस पर बेतरह बौखला गये। सरकारी सदस्यों ने जीजान से सभापति की इस व्यवस्था के बर्खिलाफ़ बावेला मचाया। परन्तु निर्भीक सभापति ने नियमों के सम्मुख किसी की परवाह नहीं की, उन्होंने अपनी यह व्यवस्था दे ही डाली। परन्तु सरकार हार मानने वाली नहीं। ११ एप्रिल को सभापति ने अपनी यह व्यवस्था दी और इस से अगले दिन ही वायसराय ने अपना फरमान प्रकाशित करके पब्लिक सेफ्टी बिल को पब्लिक सेफ्टी आर्डीनान्स के रूप में, इस अभागे देश में जारी कर दिया।

इस मज़ेदार परन्तु आवेशजनक नाटक में तीन बातें विशेष ध्यान देने योग्य हैं। पहली बात है, सभापति के निर्णय के सम्बन्ध में। बहुत से गोरे पत्रों ने सभापति की व्यवस्था को गैरकानूनी और अवैध कहा ही था, गृह सदस्य मि० क्रेरार ने भी इस कार्य को सभापति के अधिकारों से बाहर बताया था; साथ ही स्वयं राजराजेश्वर, सर्व शक्तिमान, अपरम्पार, महा-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

महिम वायसराय महोदय ने भी सभापति के इस कार्य को 'नियमों की इच्छा के प्रतिकूल' बतलाया। फिर भी इस मामले में सभापति को ही सर्वोपरि प्रामाणिक व्यक्ति स्वीकार करते हुए आपने श्री केरार की इस घोषणा का व्यावहारिक समर्थन नहीं किया कि सरकार अवश्य ही इस बिल को एसेम्बली में विचारार्थ प्रस्तुत करेगी। आपने सांप भी मार लिया और लाठी को भी चोट न आने दी। यह मसविदा अपने फरमान द्वारा पास कर दिया। अब विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या सभापति का निर्णय सचमुच एसेम्बली के नियमों की इच्छा के विरुद्ध है। जिन दिनों मेरठ केस के अभियुक्त देश भर में एक साथ छापा मार कर गिरफ्तार किये गए थे, उन दिनों माननीय पं० मोतीलाल नेहरू ने इस मामले पर विचार करने के लिये एसेम्बली को स्थगित करने का प्रस्ताव उपस्थित किया था। गिरफ्तारियां अभी अभी हुई थीं, सरकार ने उन के सम्बन्ध में कोई विज्ञप्ति भी प्रकाशित नहीं की थी, इस कारण सभापति पटेल ने नहरू जी के इस प्रस्ताव को नियमविरुद्ध करार नहीं दिया। परन्तु उस वक्त न मालूम किस 'नियम की इच्छा से' परममाङ्गेश्वर, परम-भट्टारक वायसराय महोदय ने बीच में दखल देकर पण्डित जी के प्रस्ताव को एसेम्बली में पेश करने से रोक दिया। क्या हमें यह पूछने का अधिकार है कि यदि वायसराय का वह हस्ताक्षेप नियमों की इच्छा के विरुद्ध नहीं था तब सभापति की यह व्यवस्था क्यों नियमों की इच्छा के विरुद्ध ऐलान की गई है।

साथ ही वायसराय महोदय ने यह भी घोषणा की है कि क्यों कि सभापति का यह निर्णय वर्तमान नियमों की इच्छा के प्रतिकूल है और फिर भी इन नियमों में ऐसी व्यवस्था देने की गुञ्जाइश मौजूद है, इस लिये हमें शीघ्र ही इन नियमों में परिवर्तन कर के इस गुञ्जाइश को निकाल डालना चाहिये। हमें दूसरी आपत्ति वायसराय के इस वक्तव्य पर है। सम्भवतः शीघ्र ही व्यवस्थापिका सभा के नियमों में ऐसा परिवर्तन कर भी दिया जायगा। परन्तु क्या किसी स्वाधीन देश में ऐसी ही अवस्था उत्पन्न होने पर वहां का राष्ट्रपति इसी प्रकार, पार्लियामैण्ट के स्थिरनियमों में परिवर्तन कर डालने की इच्छा प्रकट करता? यह विदेशी नौकरशाही भारतीय शासन विधान में केवल एक समय ही परिवर्तन करने की इच्छा प्रकट करती है। वह तब, जब कि सरकार अपनी किसी इच्छा में कोई कानूनी बाधा रुकावट के रूप में खड़ी देखती है। स्वाधीन देशों में, इस अवस्था में इस से ठीक उलटी दशा होती।

तीसरी बात यह है कि हमारी सम्मति में सरकार को पब्लिक सेफ्टी कानून की ही आवश्यकता नहीं थी— आर्डीनान्स तो दूर की बात है। मौजूदा कानून ही सभी आवश्यक बातों के लिये—जिन्हें सरकार आवश्यक समझती है— पर्याप्त हैं। हमारी स्थापना का सब से बड़ा प्रमाण मेरठ-केस है। मेरठकेस इस नये आर्डीनान्स के आधार पर नहीं चलाया जा रहा है। इस केस में भारतीय दण्ड विधान की एक और धारा ही काम में लायी जा रही है। दो विदेशी भी इस धारा में लपेटे गए हैं। इस लिये हमारी यह युक्तियुक्त और प्रबल धारणा है कि यह आर्डीनान्स प्रचलित कर के सरकार भारतवर्ष में से स्वाधीन विचारों की जड़ उखाड़ना चाहती है। यदि मेरठ केस के सम्पूर्ण अभियुक्तों को न्यायालय निरपराध कह कर छोड़ दे, तब शायद सरकार पब्लिक

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सेफ्टी बिल की आवश्यकता को कुछ अंश तक सिद्ध कर सके।

परन्तु सरकार को यह बात सदैव स्मरण रखनी चाहिये कि विचार स्वाधीनता की इस नई लहर को रोक सकना सरकार के लिये सम्भव नहीं है। यह लहर इस देश में भी आकर ही रहेगी।

२. दमन-चक्र

महात्मा गांधी की गिरफ्तारी के बाद सभी समझदार नेताओं ने यह आशंका प्रकट की थी कि अब सम्भवतः सरकार भारतवर्ष की राजनीतिक जागृति को कुचलने के लिये दमन-चक्र का प्रहार करेगी। यह अशंका सत्य प्रमाणित हुई है। पिछले दिनों देश भर के कोने-कोने से ३१ मजदूर नेता पकड़ कर मेरठ जेल में एकत्र किये गए हैं। इन पर सम्राट के साम्राज्य को उखाड़ फेंकने के लिये षड़यन्त्र करने का अभियोग लगाया गया है। देश में जगह जगह तालाशियां भी ली गई हैं। लाहौर, दिल्ली, कानपुर, लखनऊ, मेरठ, अलाहबाद, मैनपुरी, बनारस, बम्बई, कलकत्ता आदि अनेक नगरों में पोलीस कई बार छापा डाल चुकी है। इन तालाशियों में पोलीस भगवद्गीता जैसे ग्रन्थों को भी, न जाने क्या सोच कर, अपने साथ लेगई है। इस सम्बन्ध में भी अनेक गिरफ्तारियां हुई हैं। हाल ही में लाहौर के सुप्रसिद्ध नेता, पञ्जाब प्रान्तीय कांग्रेस के सभापति, डा० सत्यपाल को भी सरकार ने गिरफ्तार कर लिया है। डाक्टर साहब ने पिछले १० मार्च को दिल्ली की एक सभा में, भाषण दिया था, उसी के सिलसिले में उन्हें गिरफ्तार किया गया है। यह सभा राष्ट्रपति पं० मोतीलाल नहरू के सभापतित्व में हुई थी। ये सब मामले अभी अदालतों में विचाराधीन हैं, अतः इन के सम्बन्ध में कुछ लिखना कानून की रुह से जुर्म समझा जायगा।

परन्तु मेरठ केस के सम्बन्ध में एक बात लिखना अनुचित न होगा। इस अभियोग में जो लोग गिरफ्तार हुए हैं, उन की संख्या ३१ है। इन में से १० बंगाल के, १३ बम्बई के, ५ युक्त प्रान्त के और ३ पञ्जाब के निवासी हैं। यदि इन सब अभियुक्तों पर एकसाथ अभियोग चलाना ही आवश्यक था, तब भी यह अभियोग बम्बई या कलकत्ता में चलाना चाहिये था, क्यों कि अधिकांश अभियुक्त इन्हीं दो स्थानों के हैं। यदि यह अभियोग उत्तरीय भारत में ही चलाना था, तो भी इलाहाबाद या लाहौर इस काम के लिये चुने जा सकते थे। मेरठ युक्तप्रान्त का एक अत्यन्त साधारण नगर है। ३१ अभियुक्तों में से केवल दो व्यक्ति ही मेरठ में गिरफ्तार हुए हैं। इस दशा में, इस अप्रसिद्ध नगर में अभियुक्तों को एकत्र करने में, न जाने सरकार को क्या लाभ प्रतीत हुआ है। इस से सरकार को कोई विशेष लाभ हुवा हो या न हुवा हो, अभियुक्तों को अत्यधिक अवश्य हानि हुई है। मेरठ में बैठ कर उन्हें अच्छे अच्छे वकील जुटाने में बड़ा व्यय करना पड़ेगा। साथ ही अपने रिश्तेदारों से बहुत दूर कर दिये जाने के कारण उन्हें शारीरिक तथा मानसिक कष्ट भी कम न होगा। इस पर भी मज़ा यह है कि मेरठ में इन अभियुक्तों को जिस जेल में रक्खा गया हैं, वह जेल नगर से कई मील की दूरी पर है। मेरठ जेल में आजकल हैजा फैल जाने से इन अभियुक्तों को देहरादून ले आया गया है, परन्तु कौन कह सकता है कि उन्हें फिर मेरठ लौटा न ले आया जायगा। फिर, कानूनी मदद का कष्ट तो देहरादून में भी उसी प्रकार से बना रहेगा।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सरकार ने यह जो कुछ किया, वह तो उस के लिये स्वाभाविक ही था। एक विदेशी सरकार से इस से अधिक आशा ही क्या की जा सकती है। हमें देखना यह है कि भारतवर्ष की आत्मा इस दमन-चक्र से जागती है या नहीं।

४. साइमन-टीम लण्डन में.

भारतवर्ष के बेबुलाये मेहमान आख़िर अपने घर वापस लौट गए। इन ज़बरदस्ती-मेहमानों के मुखिया सर जौन साइमन ने इस देश से चलते हुए सुख और दुख दोनों प्रकार के भावों का प्रकाश किया था। उन्होंने कहा था— इस महमान-नवाज़ देश से जुदा होने का तो मुझे दुख है, परन्तु अपने घर जाने की खुशी है।

अमूमन ऐसे मौकों पर कोई महमान खुशी ज़ाहिर नहीं किया करता। इस मौके पर प्रसन्नता प्रकट करने का मतलब ही यही है कि अभ्यागत अपने गृही से अप्रसन्न है। अगर सचमुच साइमन महोदय ने यह अनुभव किया है कि इस देश में उन का स्वागत नहीं किया, तब हम अपने देश वासियों को इस विजय के लिये बधाई देते हैं। यह असम्भव है कि साइमन टीम अपने को इस देश का मेहमान समझती रही हो। जिन लोगों को दिन रात पोलीस के पहरे में रहना पड़ता हो, जिन के कहीं पहुँचते ही वहां के निवासियों पर घोड़े दौड़ाने की आवश्यकता अनुभव की जाय, जिन्हें नगरों के छोटे २ बालक भी गुबारे उड़ा कर 'साइमन, लौट जाओ!' का सन्देश दें, जिन के आने से नगर में हड़ताल हो जाय, लोग मातमी कपड़े पहन लें— वे भी यदि यह कहें कि हमारा अत्यधिक हार्दिक स्वागत हो रहा है, तब वे लोग या तो वीतराग योगी हैं, या निरे बेवक़ूफ़ और पागल हैं और या ढोंगी हैं। साइमन-सप्तक को वीतराग योगी कहना तो उनका अपमान करना है, उन्हें बेवकूफ़ मानने को जी नहीं चाहता, इस लिये उन के सम्बन्ध में तीसरा विकल्प मानने को ही लाचार होना पड़ता है है—साइमन टीम ढोंगी है और सचमुच सिद्ध-हस्त ढोंगी है।

इस टीम का ढोंग कम से कम अपने देश-वासियों के सन्मुख तो अवश्य ही भली प्रकार सफल हो जाता, यदि इस टीम के लण्डन पहुंचने पर स्टेशन के चारों ओर पोलीस का पहरा न रक्खा जाता, साइमन महोदय स्टेशन के किसी चोर दरवाज़े से न निकल भागते और शान्त बहिष्कार-प्रदर्शकों को पोलीस बलप्रयोग करके उठा न ले जाती। साइमन कमीशन के लण्डन में पहुंचने पर वहां जो कुछ हुआ, उस पर टिप्पणी करना व्यर्थ है।

५. सशस्त्र क्रान्ति का प्रयत्न

पिछले दिनों दिल्ली के ऐसेम्बली भवन में जो बम फेंके गए थे, वे यद्यपि आतिशबाज़ी के बड़े पठाकों से बढ़ कर कुछ प्रतीत नहीं होते, तथापि उन के सम्बन्ध में दो बातें बिना हिचकि-चाहट के कहनी चाहियें। सब से पूर्व हम उस दुर्घटना से घायल होने वाले एसेम्बली के सदस्यों से सहानुभूति और समवेदना प्रकट करते हैं। एसोशिएटिड प्रेस के तारों से मालूम होता है कि उनकी चोटें मामूली थीं, इस लिये हम आशा करते हैं कि अब तक वे पूर्ण स्वास्थ्य-लाभ कर चुके होंगे। दूसरी बात यह है कि जिन लोगों ने यह कार्य किया है, उन्हें बड़े खेद के साथ यह अनुभव करना चाहिए कि उन के इस कार्य से देश की राजनीतिक प्रगति में बाधा ही पहुँची है। हम कांग्रेस के सदस्य हैं, कांग्रेस का

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ध्येय पूर्ण शान्तिमय उपायों से स्वराज्य प्राप्त करना है, यह ध्येय हम पूरी तरह स्वीकार करते हैं। इसी कारण हमारा यह दृढ़ विश्वास है कि इस प्रकार बम आदि गिराने से स्वराज्य प्राप्त नहीं होगा। अतः हम बिना हिचकिचाहट के इस कार्य की तीव्र निन्दा करते हैं।

बम दुर्घटना के बाद से अभी तक प्रायः प्रतिदिन देश के किसी न किसी भाग में कोई न कोई लाल चिट्ठी अवश्य पहुँच रही है। इन चिट्ठियों में हत्या करने की धमकियां हुआ करती हैं, यद्यपि आज तक एक भी हत्या की नहीं गई। मालूम नहीं कि यह कार्य कुछ मनचले इकले दुकले व्यक्तियों का है अथवा इस की ओट में सशस्त्र क्रान्ति करने का बाकायदा प्रयत्न हो रहा है। यदि दूसरा विकल्प ही ठीक है और सचमुच कुछ भारतीय अपनी जान देने और दूसरों की जानें लेने पर तुल गए हैं तो हम अपने देशभाइयों से यह स्पष्ट शब्दों में निवेदन करना चाहते हैं कि इस प्रकार के कार्यों से भारतवर्ष स्वराज्य प्राप्त नहीं कर सकेगा। यह प्रवृत्ति भारतीय आदर्शों के विरुद्ध है। इस मार्ग पर चलने से चरम कल्याण हासिल न होगा।

परन्तु इस प्रवृत्ति के लिये वास्तविक उत्तरदाता कौन है? भारत के नौजवानों को इस हेय मार्ग की तरफ़ चुम्बक की तरह खींचने का ज़िम्मेवार कौन है? हम पञ्जाब केसरी लाला लाजपतराय के शब्दों में निस्संकोच यह कह सकते हैं कि इस की ज़िम्मेवारी खुद विदेशी नौकरशाही के सिर पर है। यह पूर्ण रूप से स्वाभाविक है कि नौजवानों में आज़ादी की ख़्वाइश हो, वे आज़ादी के लिये तड़पें, आज़ादी के लिये तीव्र आन्दोलन करें। राष्ट्र के समझदार और अनुभवी नेताओं के दिखाये मार्ग पर चल कर वे स्वराज्यप्राप्ति का वैध और शान्तिमय आन्दोलन करने के लिये तड़पते हैं, छटपटाते हैं, परन्तु नौकरशाही के गर्वोन्मत्त पुर्ज़े उन की इस सदिच्छा को कुचल डालना चाहते हैं। नतीजा यह होता है शरीर की गर्मी फोड़े के रूप में प्रगट होती है। वे उत्साही नवयुवक सशस्त्र क्रान्तिवादी बन जाते हैं।

जिस दिन सरकार के कुछ नृशंस और पामर पुर्ज़ों ने भारतीयों के हृदय-सम्राट् पञ्जाब के बूढ़े शेर पर लाठियां बरसाई थी, उस दिन उस शेर ने गरज कर कहा था कि सरकार के ऐसे ऐसे कारनामों से ही बम्ब बनाने वाले और रिवाल्वर चलाने वाले लोग पैदा होते हैं। कौन कह सकता है कि बम बनाने की फैक्टरी की वास्तविक आधारशिला उस दिन, सरकार ने अपने हाथों से लाहौर स्टेशन पर नहीं रक्खी थी। हम चाहते हैं कि सरकार अब भी चेत जाय। वह इतिहास के उन अटल और सत्य सिद्धान्तों को समझने का प्रयत्न करे, जो ऐसी दशा में पराधीन जातियों के नवयुवक मस्तिष्कों का संचालन किया करते हैं। अन्यथा भविष्य में इस अभागे देश में जो कुछ भी होगा, उस का उत्तरदायित्व सरकार के अपने काले कारनामों पर ही होगा।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

गुरुकुल समाचार

या सत्र प्रारम्भ होगया है। इस नए सत्र में ब्रह्मचारियों में पूर्व से ही बड़ा उत्साह दिखाई देरहा है। महाविद्यालय की सभाओं के चुनाव हो चुके हैं और सभाओं के साप्ताहिक अधिवेशन नियम पूर्वक आरम्भ हो गये हैं। "वाग्वर्धिनी सभा" के मन्त्री श्री ब्र० सर्वमित्र जी त्रयोदश तथा उपमन्त्री श्री ब्र. शत्रुघ्न जी द्वादश चुने गये हैं।

"संस्कृतोत्साहिनी सभा" के मन्त्री श्री ब्र. हरिदेव जी त्रयोदश तथा उपमन्त्री श्री ब्र. सत्यदेव जी द्वादश चुने गये हैं।

"साहित्य परिषत्" के मन्त्री श्री ब्र. चन्द्रकान्त जी चतुर्दश तथा उपमन्त्री श्री ब्र. सुरेन्द्रनाथ जी त्रयोदश चुने गये हैं।

"वाग्वर्धिनी सभा" का विशेषाधिवेशन "कविता—गल्प सम्मेलन" कविराज श्री पं. धर्मदत्त जी विद्यालङ्कार के सभापतित्व में बड़े समारोह से २१-१-८६ को हुआ। सम्मेलन अपूर्व था रात को ८ से १० बजे तक इस का समय निश्चित किया गया था, परन्तु कवियों की रसमयी, मनोहारिणी कविताओं तथा गल्प लेखकों की उत्तम, आनन्ददायक गल्पों को सुनने के लिये श्रोतागण अति उत्सुक थे; अतः समय सीमित न रह सका।

श्री ब्र० सत्यपाल जी द्वादश की कविता बहुत पसन्द की गई। श्री ब्र० सुरेन्द्र जी, श्री ब्र० रामेश्वर जी, श्री ब्र० नित्यानन्द जी, श्री ब्र० रामप्रसाद जी तथा श्री ब्र० सत्यदेव जी की कविता में भी अच्छी थीं। श्री पं० चन्द्रगुप्त जी विद्यालङ्कार की गल्प अपूर्व थी। श्री ब्र० विनोदचन्द जी की गल्प भी उत्तम थी। श्री पं० चमूपति जी एम. ए., श्री पं० वागीश्वर जी विद्यालंकार की कवितायें भी श्रवणीय थीं। श्री डा० राधाकृष्ण जी एम. बी. बी. एस की कविता भी अति विनोदमयी थी, जिसे श्रोताओं ने बहुत पसन्द किया। अन्त में श्री सभापति जी ने कविताओं के विषय में कहा 'कि इस वार की कवितायें गतवर्षों की अपेक्षा कहीं बढ़ कर हैं। यदि ब्रह्मचारियों में कविता तथा गल्प निर्माण में ऐसा ही उत्साह तथा लगन रही तो शीघ्र ही हिन्दी साहित्य की उन्नति होने की सम्भावना है, और अपनी उत्तम कृति भी सुनाई।

तदनन्तर धन्यवाद पुरस्सर सभा विसर्जित हुई।

अंग्रेज़ी की उन्नति के लिये "College-Union" के अधिवेशन भी नियम पूर्वक प्रारम्भ होगये हैं। इस के मन्त्री श्री ब्र० केशवदेव जी चतुर्दश तथा उपमन्त्री श्री ब्र० धर्मेन्द्रनाथ जी त्रयोदश चुने गये हैं। सप्ताह में एक वार इस का अधिवेशन हो जाता है। दो एक साल तक इसके स्थगित रहने की प्रतिक्रिया यह हुई है कि ब्रह्मचारी इस में बड़े उत्साह से भाग लेने लग गये हैं। सभा में अंग्रेजी के उपाध्याय भी सम्मिलित हो कर ब्रह्मचारियों के उत्साह को बढ़ाते हैं।

यद्यपि गतवर्षों में इस सत्र में खेलें नहीं होती रहीं, तथापि इस साल खेलें नियमानुसार होरही हैं। खेलों में ब्रह्मचारी बड़ा आनन्द अनुभव करते हैं। इस वर्ष क्रीड़ामन्त्री श्री ब्र० श्वेतकेतु जी चतुर्दश तथा उपक्रीड़ामन्त्री श्री ब्र० विद्यारत्न जी चुने गये हैं। इसी प्रकार सब क्रीड़ाओं के

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

११०४७५

मुखियाओं का निर्वाचन भी हो चुका है। फुटबौल के मुखिया श्री ब्र० धर्मेन्द्रनाथ जी त्रयोदश, हौकी के मुखिया श्री ब्र० देवनाथ जी चतुर्दश तथा क्रिकेट के मुखिया श्री ब्र० सत्यदेव जी त्रयोदश निर्वाचित हुए हैं। सप्ताह में कोई न कोई सान्मुख्य अवश्य ही होजाता है। कुछ ही दिनों में चार बड़े रोचक सान्मुख्य हो चुके हैं।

१. फुटबौल का सान्मुख्य—सब से अधिक रोचक यह सान्मुख्य हुआ। एक दल उपाध्यायों का था तथा दूसरा दल कभी खेल में भाग न लेने वाले ब्रह्मचारियों का था जिसे गुरुकुलीय परिभाषा में 'अनन्य दल' कहा जाता है। क्रीड़ा-क्षेत्र में इस सान्मुख्य को देखने के लिये बड़ी भीड़ जमा थी। सब ब्रह्मचारी तथा कर्मचारी क्रीड़ाक्षेत्र में दर्शक रूप से उपस्थित हुए थे। ठीक ५$\frac{3}{8}$ बजे श्री आचार्य जी ने दोनों दलों के मध्य में खड़े होकर खेल प्रारम्भ करने के लिये फुटबौल फेंका। खेल अति दर्शनीय हुआ। दोनों दल पूरे उत्साह में थे। खेल में दोनों ओर दो२ गोल हुए और परिणामतः दोनों दल समान रहे। समय पर्याप्त हो जाने के कारण इस खेल को आगामी सप्ताह के लिये स्थगित कर दिया गया।

२. बौली बौल चौमुखी सान्मुख्य— यह सान्मुख्य ६।१।८६ को बड़े उत्साह से हुआ। खेल महाविद्यालय के सामने के स्थान में हुआ। दर्शकों के आराम के लिये चारों ओर कुर्सियां लगायी गई थीं। यह सान्मुख्य भी अतिरोचक तथा चित्ताकर्षक हुआ। सब से पूर्व श्री ब्र० हरिश्चन्द्र जी और श्री ब्र० श्वेतकेतु जी के दल का सान्मुख्य हुआ जिस में श्री ब्र० श्वेतकेतु जी का दल विजयी रहा। फिर श्री ब्र० सत्यपाल जी तथा श्री ब्र० हरिदेव जी के दल का सान्मुख्य हुआ जिस में श्री ब्र० हरिदेव जी का दल विजयी रहा। अन्त में (final) श्री ब्र० श्वेतकेतु जी तथा श्री ब्र० हरिदेव जी के दल का सान्मुख्य हुआ जिस में श्री ब्र० श्वेतकेतु जी का दल विजयी रहा। इस प्रकार यह चौमुखी सान्मुख्य भी बड़े आनन्द पूर्वक पूर्ण हुआ।

३. क्रिकेट सान्मुख्य— इस में श्री ब्रह्मचारी सत्यदेव जी तथा श्री ब्रह्मचारी चित्रांगद जी के दलों का सान्मुख्य हुआ। जिस में श्री ब्र० चित्रांगद जी का दल विजयी रहा।

४. हौकी सान्मुख्य— उपर्युक्त 'कविता गल्प सम्मेलन' के उपलक्ष्य में आज २२।१।८६ को सायंकाल क्रीड़ा-क्षेत्र में 'आयुर्वेद महाविद्यालय' तथा 'वेदमहाविद्यालय, के ब्रह्मचारियों का हौकी मे सान्मुख्य हुआ जो अति दर्शनीय था। सान्मुख्य में दोनों दल बराबर रहे।

नवीन वर्ष के "वाद्यदल" का चुनाव हो चुका है। श्री ब्र० राजेन्द्र जी नायक चुने गये हैं तथा श्री ब्र० धीरेन्द्र जी सहायक नायक चुने गये हैं। 'वाद्यदल' के सदस्य प्रतिदिन ग्रीष्म की अधिकता होने पर भी एक घण्टा भर अभ्यास करते हैं।

मुखिया महोदय नियम पूर्वक जिस उत्साह तथा लगन से सदस्यों को अभ्यास करा रहे हैं। उस से प्रतीत होता है कि इस वार 'वाद्यदल का एक उत्तमदल शीघ्र ही तैयार हो जायगा। इस मास के पश्चात् एक उत्तम Band Master के बुलाये जाने का प्रबन्ध भी किया जारहा है।

कुश्ती तथा देशी खेलें भी इस वर्ष नियम पूर्वक हो रही हैं। देशी खेलों के मुखिया श्री ब्र० देवदत्त जी चतुर्दश चुने गये हैं। अखाड़े में प्रतिदिन ब्रह्मचारी कुश्ती लड़ते हैं। एक कुश्ती मास्टर भी ब्रह्मचारियों की शारीरिक उन्नति के लिये बाहर से बुला लिये गये हैं जो बड़ी लगन से ब्रह्मचारियों को कुश्ती सिखा रहे हैं॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सचित्र

सुचारु सूची शिल्प पत्रावली

सलाई और क्रोशियेकी दस्तकारी सिखलाने की सस्ती और अनूठी विधि

इस प्रकार के पत्र इंग्लैण्ड अमरीका इत्यादि देशों में तो बहुत दिनों से निकलते हैं। परन्तु भारत में हिन्दी भाषा द्वारा प्रत्येक वस्तु के लिये अलग अलग कार्ड की रीति से इस कार्य को सिखलाने का यह पहला ही प्रयत्न है। जो कार्य पसन्द हो उसी के अनुकूल दो तीन आने खर्च कर कार्ड खरीद लो और घर बैठे बिना किसी की खुशामद के बनालो। अब तक निम्न लिखित कार्ड (१४×७) प्रकाशित हो चुके हैं:—

पत्र नं०	मूल्य	पत्र नं०	मूल्य
१—दीर्घ सूची प्रारम्भिक प्रयोग ११ चित्र।	।)	५—पुरुषों का लम्बा मौज़ा [सचित्र]	=)
२—बड़ी सादी बनियान [सचित्र]	=)॥	६—पुरुषों का सरल दस्ताना [सचित्र]	=)॥
३—पुरुषों का कुर्ता [सचित्र]	=)॥	७—स्त्रियों का फूलदार कालर [सचित्र]	≡)
—बालिका की ऊनी जर्सी [दुरंगा]	≡)	पुरुषों का बुन्दकोदार मौज़ा [सचि]	=॥)

८ कार्डों का पूरा सैट मूल्य १।=)॥ के स्थान में केवल १) रुपया

कुछ सम्मतियाँ—

सरस्वती इलाहाबाद— यह पत्रावली नारी मात्र के लिये बड़ी उपयोगी है। छपाई सुन्दर भाषा सरल और मूल्य बहुत ही कम।

प्रताप लाहौर—कन्या पाठशालाओं और स्कूल की लड़कियों केलिये बड़े काम की चीज़ है।

गृहलक्ष्मी प्रयाग—हम इन कार्डों का हृदय से प्रचार चाहते हैं।

महारथी देहली—यह कार्ड सस्ते होने के कारण कन्याओं के लिये बड़े उपयोगी हैं।

मैनेजर "ज्योति"

कोठी नम्बर २१, २२ राजपुर रोडदेहरादून।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कला कौमुदी

लेखिका श्रीमती ओ३म्वती देवी

चित्र कला कौशल सम्बन्धी अनुपम पुस्तक-इस के द्वारा लेखिका ने क्रोशिये के कार्य को बड़ा ही सरल बना दिया है। बिना किसी प्रकार के पहिले ज्ञान के कन्यायें और स्त्रियें केवल इस की ही सहायता से अनेक प्रकार की बिनावट लेसें, फ़ीते, कपड़े इत्यादि बनाना सहज में ही सीख सकी हैं। पुस्तक में इतना विषय है कि किंचित इस से कई गुना दाम की पुस्तकों में भी न होगा। प्रत्येक वस्तु तथा बिनावट का बनाना चित्र देकर बड़ी सरल रीति से सिखाया गया है। देखिये समाचार पत्र इस के विषय में क्या कहते हैं।

"ट्रिब्यन" (अंग्रेज़ी का प्रसिद्ध दैनिक) लाहौर—स्त्रियों के लिये उपयोगी पुस्तक है। अनेक चित्रों द्वारा वस्तु बनाने की विधि बड़ी सरलता से समझाई गई है। सुन्दर नमून की लेसें, टेबल क्लाथ, बच्चों के सुन्दर कपड़े और अन्य कई वस्तुओं का बनाना बड़ी सुन्दर रीति से बतलाया गया है। पुस्तक की उपयोगिता के विचार से मूल्य बहुत कम है।

"मतवाला" (कलकत्ता)-यह पुस्तक हमारी बहिनों के बड़े समझ की है। छपाई बहुत अच्छी, कागज़ बहुत अच्छा मोटा चिकना आर्ट। सुचारु शिल्प पत्रावली कार्ड गृहस्थियों के बड़े काम की चीज़ है।

"कर्मवीर" (खांडवा)— .....पुस्तक में सादे फन्दे से लगाकर तरह तरह की वस्तुओं के बनाने की विधि बड़ी सरलता से समझाई गई है जिसे पढ़कर साधारण पढ़ी लिखी स्त्री भी इस कार्य को सीख सकती है। इस का मूल्य लागत को देखते कम है।

"माधुरी" (लखनऊ)-ऐसी पुस्तकों की हिन्दी साहित्य के लिये बड़ी आवश्यकता है। आशा है इस पुस्तक का अच्छा प्रचार होगा जिस से इस प्रकार की और पुस्तकें भी प्रकाशित का जा सक। लेखिका और प्रकाशिका दोनों को बधाई।

शीघ्र आर्डर भेजिये मूल्य १॥)

कला कौमुदी तथा शिल्प पत्रावली का पूरा सैट लेनें पर २॥=)॥ के स्थान मे केवल २।) में दिया जायगा।

कन्या पाठशालाओं और पुस्तक विक्रेताओं को विशेष रियायत

मैनेजर ज्योति-

'कन्या गुरुकुल

राजपुरा रोड कोठी नं० २१-२२ देहरादून

गङ्गाराम पाठक प्रिन्टर तथा पं० रमेशचन्द्र पब्लिशर के लिये गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में मुद्रित।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

Compiled
1999-2000

110474

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA